अंगुत्तरा निकया

त्रिपिटक की संरचना
करने के लिए

त्रिपिटक
विनय पिटक
सुत्त पिटक
दीघा निकया
मज्झिमा निकया
सम्युत्त निकया
अंगुत्तरा निकया
खुद्दका निकया

अभिधम्म पिटक

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय

पाली संस्करण : संस्करण 2 के पाठों के प्रत्येक खंड में पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण उपलब्ध कराए गए हैं।

प्रस्तावना : अंगुत्तरा निकाय ("क्रमिक प्रवचनों का संग्रह") सुत्त पिटक के पाँच निकायों (संग्रहों) में से चौथा निकाय है। अंगुत्तरा निकाय में बुद्ध द्वारा कहे गए सूत्र संख्यात्मक क्रम में संकलित हैं, अर्थात् 'एक' के ग्रंथों में प्रत्येक विषय के लिए उपदेश हैं, जबकि 'दो' के ग्रंथों में दो विषयों के लिए उपदेश हैं, और इसी प्रकार आगे भी। हालांकि, गहन अध्ययन करने पर यह देखा जा सकता है कि आरंभिक ग्रंथों में रोजमर्रा की जिंदगी से जुड़े सरल विषय हैं, जबकि बाद के ग्रंथों में उच्चतर विषय हैं और अंतिम अध्यायों में समाधि अवस्थाओं और ध्यान से संबंधित विषयों को व्याख्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार, अंगुत्तरा निकाय प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाली सांसारिक घटनाओं से लेकर उच्चतर घटनाओं तक चरण दर चरण आगे बढ़ता है। अंगुत्तरा निकाय की एक और बड़ी विशेषता यह है कि इसमें बुद्ध द्वारा संप्रेषित किया जाने वाला सारा ज्ञान सरल भाषा में समाहित है। अतः यह अनुशंसा की जाती है कि अंगुत्तरा निकाय को बिना किसी अंतराल या अंतराल के, आरंभ से अंत तक, अंतिम अध्यायों तक निरंतर पढ़ा जाए। मूल अर्थों को यथासंभव यथार्थ बनाए रखने का प्रयास किया गया है, यद्यपि आध्यात्मिक/दिव्य पहलुओं की पूर्ण समझ के लिए पाली संस्करण का पठन और ध्यान का अभ्यास आवश्यक है। पाली को आध्यात्मिक जागृति की भाषा माना जा सकता है।
कुछ महत्वपूर्ण सूत्र इस प्रकार हैं:
2:4.2 माता-पिता का ऋण चुकाना; 3.16 आत्मसंयम; 3.61 चार महान सत्य;
4:23 तथागत (बुद्ध; पूर्णतः प्रबुद्ध) क्या हैं?; 5:23 मन को शुद्ध करने से प्राप्त मानसिक शक्तियाँ; 5:24 अनैतिक मार्ग, अनैतिकता के बुरे परिणाम, जैसे ब्रह्मचर्य तोड़ना आदि; 5:28 पाँच प्रकार की समाधि का विस्तृत वर्णन (2:26 और 5:27 में भी); 5:75 और 5:76 ब्रह्मचारी योद्धा (योद्धजीव) के समान है; 5.192 ब्राह्मण क्या है; 5.211 भिक्षुओं/पवित्रों का अपमान करने से होने वाले पाँच खतरे; 6.2 अलौकिक शक्तियाँ; 6.18 अहिंसा; 6.60 हठ: समाधि अवस्था भी खो सकती है। 6.63 बुद्ध दूसरों के मन को कैसे जान सकते हैं; 7.49 धारणाएँ (सन्ना) - वैराग्य कैसे विकसित करें; 7.50 और 7.51 कामुकता; 7.55 गंतव्य - निर्वाण पर; 7.56 तिस्सा - ब्रह्मों और उनके ज्ञान पर व्याख्यान; 7.61 उनींदापन, आलस्य, इनसे कैसे निपटें; 7.62 करुणा/दया ब्रह्म जगत की ओर ले जाती है; 7.64 क्रोध; 7.66 संसार का विनाश; 7.71 विद्यार्थी का विकास; 7.72 अग्नि (अनैतिकता के लिए); 7.74 मनुष्य का जीवन अल्प है; 8.11 जैसे चूजा अंडे का छिलका तोड़ता है; 8.36 क्रिया फल (कर्म); 8.40 बुरे कर्मों के परिणाम; 8.41 और 8.42 उपोसथ; 8.46 देवता (देवियाँ); 8.47 एक अच्छी पत्नी। 8.64, 8.65, 8.66 जागृति की प्रक्रिया; 9.18-9.19 उपोसथ और देवता; 9.21 भारत के बारे में (जम्बुद्वीप); 9.27 धारा में प्रवेश की शर्तें; 9.31 ध्यान/समाधि के प्रभाव; 9.32, 9.33 और 9.36 ध्यान की नौ अवस्थाएँ; 9.34 निर्वाण सुख/आनंद है; 9.39 दुष्ट मारा को कैसे पराजित करें; 9.41 ज्ञानोदय प्रक्रिया का विस्तृत विवरण; 10:21 बुद्ध की दस शक्तियाँ क्या हैं?; 10.29 ब्रह्मांड; 10.46

उपोसथ (उपवास) और ध्यान के लाभ; 10.60 अनित्यता और विस्तृत अनापान; 10.61 अविज्जा; 10.69 और 10.70 भिक्षुओं को अनुमत दस प्रकार के प्रवचन। 10.89 संतों पर झूठा आरोप लगाना - कोकालिका (देखें 11.6) विपत्ति; 10.97 अहनेय्या - महान कौन है; 10.99 उपली - अभ्यास कैसे करें; 10.170 निकटवर्ती तट और दूरवर्ती तट; 10.176 पवित्रता; 10.177 मृतकों के लिए दान; 10.216, 10.219 कर्म और पुनर्जन्म; 10.217-10.218 कर्म; 11.1-11.3 शील (नैतिकता) का महत्व; 11.9 समाधि अवस्था: ध्यानमग्न व्यक्ति की पूजा इंद्र, ब्रह्मा और देवता करते हैं; 11.10 क्षत्रिय श्रेष्ठ हैं - ब्रह्मा सनत्कुमार कहें; 11.11 ध्यान कैसे करें (विस्तार से); 11.16 करुणा के लाभ; 11.17 ग्वाला: बौद्ध धर्म का अभ्यास कैसे करें

अंतर्वस्तु

1अंगुत्तर निकाय संस्करण 2-नया और पूर्ण
2अंगुत्तरा निकाय का श्लोक-दर-श्लोक अनुवाद
3अंगुत्तरा निकया संस्करण 1 - पुराना और अपूर्ण
4अंग्रेज़ी अनुवाद डाउनलोड करें/देखें
5हिंदी संस्करण (AN1 से AN3)
6मूल पाली संस्करण

00:02
41:20

अंगुत्तर निकाय संस्करण 2-नया और पूर्ण
AN1. एक की पुस्तक - संस्करण 2 3
AN2. दो की पुस्तक - संस्करण 2 47
AN3. तीन की पुस्तक - संस्करण 2 99
AN4. चार की पुस्तक - संस्करण 2 271
AN5. पांच की पुस्तक - संस्करण 2 507
AN6. छह की पुस्तक - संस्करण 2 718
AN7. सात की पुस्तक - संस्करण 2 846
AN8. आठ की पुस्तक - संस्करण 2 951
AN9. नौ की पुस्तक - संस्करण 2 1075
AN10. दस की पुस्तक - संस्करण 1154
AN11. ग्यारह की पुस्तक – संस्करण 1347
भिक्कू बी. बोधि के संस्करण में परिवर्तन और उनकी व्याख्याएँ 1380
अंगुत्तरा निकाय का श्लोक-दर-श्लोक अनुवाद
AN1-एकजनों की पुस्तक-श्लोक दर श्लोक 1383

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय >> 1.एक की पुस्तक

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का पहला भाग है। यह भिक्खु बोधि का संशोधित संस्करण है।

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

अगला (AN2) >>>>

अंतर्वस्तु

11. एककनिपात की पुस्तक (एककनिपात)

1.1I. मन की आसक्तियाँ (रूपादि-वग्गो)

1.2द्वितीय. बाधा खंड का परित्याग (निवारण-पहाना-वाग्गो)

1.3तृतीय. बोझिल (अकममानिया-वाग्गो)

1.4चतुर्थ. अदम्य धारा (अदंता-वाग्गो)

1.5वी. स्पाइक सेक्शन (पनिहिताच्चा-वाग्गो)

1.6VI. चित्त (चेतना) प्रकाशमान है।

1.7सातवीं. ऊर्जा का जागरण आदि खंड (विरियारम्भादि-वग्गो)

1.8आठवीं. अच्छी मित्रता आदि अनुभाग (कल्याणमित्तदि-वाग्गो)

1.9नौवीं. आलस्य आदि धारा (पामदादी-वाग्गो)

1.10X. दूसरा सुस्ती आदि खंड (दुतिया-पमादादी-वाग्गो)

1.11XI. बुरा-धम्म धारा (अधम्म-वाग्गो)

1.12बारहवीं. गैर अपराध धारा (अनापत्ति-वाग्गो)

1.13XIII. एक व्यक्ति अनुभाग (एकपुग्गला-वाग्गो)

1.14XIV. अग्रणी (शिष्य) अनुभाग (एटाडग्गा-वाग्गो)

1.14.1i. पहला उप-अध्याय (भिक्षु) 188-197

1.14.2ii. द्वितीय उप-अध्याय 198-208

1.14.3iii. तीसरा उप-अध्याय 209-218

1.14.4iv. चौथा उप-अध्याय 219-234

1.14.5वी. पांचवां उपअध्याय (नन/भिक्कुनिस) 235-247

1.14.6vi. छठा उप-अध्याय (पुरुष गृहस्थ अनुयायी) 248-257

1.14.7vii. सातवाँ उप-अध्याय (महिला गृहस्थ अनुयायी) 258 — 267

1.15XV. असंभव 149 (अत्थाना)

1.16XVI. एक बात 159[एकधम्म]

1.16.1i. पहला उपअध्याय

1.16.2ii. दूसरा उप-अध्याय

1.16.3iii. तीसरा उप-अध्याय 172

1.16.4iv. जंबुद्वीप (भारत) पुनरावृत्ति श्रृंखला [चौथा उप-अध्याय] 322 365

1.17सत्रहवाँ भाग: आत्मविश्वास बढ़ाने वाले गुण

1.18XVIII. उंगली चटकाने वाला अनुभाग

1.19XIX. माइंडफुलनेस (ध्यान) शरीर की ओर निर्देशित [204] (कायगाता-सती-वाग्गो)

1.20XX. मृत्युहीन धारा 214 (अमाता-वाग्गो सं. अमृत वर्ग)

1. एककनिपात की पुस्तक (एककनिपात)

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

शत्रुओं पर विजय पाने वाले, सत्यनिष्ठा से पूर्णतः प्रबुद्ध भगवान को प्रणाम।

I. मन की आसक्तियाँ (रूपादि-वग्गो)

(अर्थ : रूप-रूप, सद्दो-आवाज, गंधो-गंध, रसो-स्वाद, फोत्थब्बो-स्पर्श)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

1

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं (मठवासियों), मुझे स्त्री के रूप के अलावा कोई और रूप (रूप) दिखाई नहीं देता जो पुरुष के मन को इतना मोहित करता हो। स्त्री का रूप पुरुष के मन को मोहित करता है।"

2

"भिक्षुओं, मुझे स्त्री की आवाज के समान कोई और आवाज नहीं दिखती जो पुरुष के मन को इतना मोहित कर ले। स्त्री की आवाज पुरुष के मन को मोहित कर लेती है।"

3

"भिक्षुओं, मुझे स्त्री की गंध के समान कोई और गंध नहीं दिखती जो मनुष्य के मन को इतना मोहित कर ले। स्त्री की गंध मनुष्य के मन को मोहित कर लेती है।" 18

4

"भिक्षुओं, मुझे स्त्री के स्वाद के अलावा कोई और ऐसा स्वाद नहीं दिखता जो पुरुष के मन को इतना मोहित कर ले। स्त्री का स्वाद पुरुष के मन को मोहित कर लेता है।" 19

5

भिक्षुओं, मुझे स्त्री के स्पर्श के समान कोई और स्पर्श दिखाई नहीं देता जो मनुष्य के मन को इतना मोहित कर ले। स्त्री का स्पर्श मनुष्य के मन को मोहित कर लेता है।

6

"भिक्षुओं, मुझे पुरुष के रूप के अलावा कोई और रूप (रूप) दिखाई नहीं देता जो स्त्री के मन को इतना मोहित कर ले। पुरुष का रूप ही स्त्री के मन को मोहित कर लेता है।"

7

"भिक्षुओं, मुझे पुरुष की ध्वनि के अलावा कोई और ऐसी ध्वनि दिखाई नहीं देती जो स्त्री के मन को इतना मोहित कर ले। पुरुष की ध्वनि ही स्त्री के मन को मोहित कर लेती है।"

8

"भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई दूसरी गंध नहीं दिखती जो किसी स्त्री के मन को पुरुष की गंध की तरह इतना मोहित कर ले। पुरुष की गंध ही स्त्री के मन को मोहित कर लेती है।"

9

"भिक्षुओं, मुझे पुरुष के स्वाद के अलावा कोई और ऐसा स्वाद नहीं दिखता जो स्त्री के मन को इतना मोहित कर ले। पुरुष का स्वाद ही स्त्री के मन को मोहित कर लेता है।"

10

"भिक्षुओं (संतों), मुझे ऐसा कोई दूसरा स्पर्श नहीं दिखता जो किसी स्त्री के मन को पुरुष के स्पर्श जितना मोहित कर दे। पुरुष का स्पर्श ही स्त्री के मन को मोहित कर देता है।" [3]

द्वितीय. बाधा खंड का परित्याग (निवारण-पहाना-वाग्गो)

(निवारण-आवरण/परतें, पहाना-हटाना, वाग्गो-खण्ड)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

11

भिक्षुओं, मुझे आकर्षण के लक्षण के अलावा और कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जिससे अजन्मी कामुक इच्छा उत्पन्न हो और उत्पन्न होकर इतनी बढ़ जाए। 23 क्योंकि जो व्यक्ति आकर्षण के लक्षण पर लापरवाही से ध्यान देता है, उसकी अजन्मी कामुक इच्छा उत्पन्न होती है और बढ़ती जाती है।

12

भिक्षुओं, मुझे घृणास्पद वस्तु के चिह्न के अलावा कोई और ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती जिससे अजन्मी दुर्भावना उत्पन्न होती हो और उत्पन्न दुर्भावना इतनी अधिक बढ़ती और फैलती हो। 24 क्योंकि जो व्यक्ति घृणास्पद वस्तु के चिह्न पर लापरवाही से ध्यान देता है, उसमें अजन्मी दुर्भावना उत्पन्न होती है और उत्पन्न दुर्भावना बढ़ती और फैलती है।

13

भिक्षुओं, मुझे असंतोष, सुस्ती, आलसी अंगड़ाई, भोजन के बाद की नींद और मन की आलस्य के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिससे अनचाही सुस्ती और नींद उत्पन्न होती हो और बढ़ती और फैलती हो। सुस्त मन वाले व्यक्ति के लिए अनचाही सुस्ती और नींद उत्पन्न होती है और बढ़ती और फैलती है।

14

"भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई दूसरा कारण नहीं दिखता जिससे अनवजह बेचैनी और पश्चाताप उत्पन्न हो और उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप इतना बढ़ और फैल जाए जितना कि अशांत मन। 26 अशांत मन वाले व्यक्ति में अनवजह बेचैनी और पश्चाताप उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप इतना बढ़ और फैल जाता है।" [4]

15

भिक्षुओं, मुझे लापरवाही से ध्यान देने के अलावा और कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जिससे अनपेक्षित संदेह उत्पन्न होता हो और उत्पन्न संदेह इतना बढ़ता और फैलता हो। 27 क्योंकि जो लापरवाही से ध्यान देता है, उसमें अनपेक्षित संदेह उत्पन्न होता है और उत्पन्न संदेह बढ़ता और फैलता है।

16

"भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई दूसरा कारण नहीं दिखता जिससे अचेतन कामुक इच्छा उत्पन्न न हो और उत्पन्न कामुक इच्छा का त्याग हो, सिवाय उस अप्रियता के चिह्न के। 29 क्योंकि जो व्यक्ति अप्रियता के चिह्न पर ध्यान देता है, उसकी अचेतन कामुक इच्छा उत्पन्न नहीं होती और उत्पन्न कामुक इच्छा का त्याग हो जाता है।" 30

17

"भिक्षुओं, मुझे प्रेम-कृपा (मेत्ता) द्वारा मन की मुक्ति के अलावा कोई और ऐसी चीज दिखाई नहीं देती जिससे अनचाही दुर्भावना उत्पन्न न हो और उत्पन्न दुर्भावना का त्याग हो जाए। 31 जो प्रेम-कृपा द्वारा मन की मुक्ति पर ध्यान देता है, उसकी अनचाही दुर्भावना उत्पन्न नहीं होती और उत्पन्न दुर्भावना का त्याग हो जाता है।" 32

18

भिक्षुओं, मुझे उत्तेजना, दृढ़ता और परिश्रम के तत्व के अलावा और कोई कारण नहीं दिखता जिससे अनवजित सुस्ती और उनींदापन उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न सुस्ती और उनींदापन का त्याग होता है। 33 क्योंकि जिसने ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत कर लिया है, उसमें अनवजित सुस्ती और उनींदापन उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न सुस्ती और उनींदापन का त्याग हो जाता है। 34

19

भिक्षुओं, मुझे मन की शांति के सिवा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिससे अनचाही बेचैनी और पश्चाताप न उत्पन्न हो और उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप का त्याग हो जाए। 35 शांत मन वाले व्यक्ति में अनचाही बेचैनी और पश्चाताप उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप का त्याग हो जाता है। 36

20

"भिक्षुओं, मुझे ध्यानपूर्वक ध्यान देने के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिससे अनचाहा संदेह उत्पन्न न हो और उत्पन्न संदेह दूर हो जाए। 37 क्योंकि जो ध्यानपूर्वक ध्यान देता है, उसका अनचाहा संदेह उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न संदेह दूर हो जाता है।" 38

तृतीय. बोझिल (अकममानिया-वाग्गो)

(अकम्मानिया-कठोर/जिद्दी)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

21

"भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अविकसित होने पर इतनी अनियंत्रित हो। अविकसित मन ही अनियंत्रित होता है।"

22

"भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो विकसित होने पर इतनी सुगम हो। एक विकसित मन ही सुगम होता है।"

23

"भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिसका अविकसित होना इतना बड़ा नुकसान पहुंचाता हो। अविकसित मन बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

24

"भिक्षुओं, मुझे मन के विकास के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो इतने महान कल्याण की ओर ले जाती हो। एक विकसित मन ही महान कल्याण की ओर ले जाता है।"

25

"भिक्षुओं (मठवासियों), मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अविकसित और अप्रकट होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो: मन, जब अविकसित और अप्रकट होता है, तो बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

26

भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती जो विकसित और प्रकट होने पर इतना महान लाभ प्रदान करती हो। मन, जब विकसित और प्रकट होता है, तो महान लाभ प्रदान करता है।

27

भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अविकसित और अविकसित होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो। अविकसित और अविकसित मन ही बड़ा नुकसान पहुंचाता है।

28

भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती, जिसे विकसित और सँवारा जा सके और जिससे इतना महान लाभ प्राप्त हो सके। मन, जब विकसित और सँवारा जाता है, तो महान लाभ की ओर ले जाता है।

29

भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अविकसित और अविकसित होने पर इतना कष्ट देती हो। मन, जब अविकसित और अविकसित होता है, तो कष्ट देता है।

30

भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती, जिसे विकसित और पोषित करने से इतना सुख मिलता हो। मन, जब विकसित और पोषित होता है, तो सुख प्रदान करता है।

चतुर्थ. अदम्य धारा (अदंता-वाग्गो)

(अदांता अनटेम्ड/वाइल्ड)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

31

भिक्षुओं, 'मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अनियंत्रित होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो। अनियंत्रित मन बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाता है।'

32

"भिक्षुओं, मुझे मन के सिवा कोई और ऐसी वस्तु नहीं दिखती जिसे वश में करने से इतना महान लाभ प्राप्त होता हो। वश में किया हुआ मन ही महान लाभ की ओर ले जाता है।"

33

"भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और चीज [7] दिखाई नहीं देती, जिस पर असुरक्षा बरतने से इतना बड़ा नुकसान होता हो। असुरक्षित मन से बहुत नुकसान होता है।"

34

"भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिसकी रक्षा करने से इतना बड़ा लाभ प्राप्त होता हो। एक संरक्षित मन ही बड़े लाभ की ओर ले जाता है।"

35

"भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो असुरक्षित होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो। असुरक्षित मन बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

36

"भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिसकी रक्षा करने से इतना महान लाभ प्राप्त होता हो। संरक्षित मन ही महान लाभ की ओर ले जाता है।"

37

"भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अनियंत्रित होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो। अनियंत्रित मन बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

38

"भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिसे संयमित करने से इतना महान लाभ प्राप्त होता हो। संयमित मन महान लाभ की ओर ले जाता है।"

39

भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अनियंत्रित, बेकाबू, असुरक्षित और बेकाबू होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो। अनियंत्रित, बेकाबू, असुरक्षित और बेकाबू मन ही बड़ा नुकसान पहुंचाता है।

40

"भिक्षुओं, मुझे मन के सिवा कोई और वस्तु दिखाई नहीं देती, जिसे वश में करने, सुरक्षित रखने, संरक्षित करने और नियंत्रित करने से इतना महान लाभ प्राप्त होता हो। मन, जब वश में किया जाता है, सुरक्षित रखा जाता है, संरक्षित किया जाता है और नियंत्रित किया जाता है, तो महान लाभ की ओर ले जाता है।" [8]

____

____

वी. स्पाइक सेक्शन (पनिहिताच्चा-वाग्गो)

____

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

____

41

भिक्षुओं, मान लीजिए पहाड़ी धान या जौ की एक बाली गलत दिशा में गिर गई हो और उसे हाथ या पैर से दबा दिया जाए। यह असंभव है कि वह हाथ या पैर को छेदकर खून निकाले। इसका कारण क्या है? क्योंकि बाली गलत दिशा में गिरी है। ठीक उसी प्रकार, यह असंभव है कि भटके हुए मन वाला भिक्षु अज्ञान को भेदकर सच्चे ज्ञान को जागृत करे और निर्वाण प्राप्त करे। इसका कारण क्या है? क्योंकि मन भटका हुआ है।

42

भिक्षुओं, मान लीजिए कि पहाड़ी धान या जौ की एक सुव्यवस्थित बाली को हाथ या पैर से दबाया जाए। संभव है कि वह हाथ या पैर को छेद दे और खून निकल आए। इसका कारण क्या है? क्योंकि बाली सुव्यवस्थित है। इसी प्रकार, एक सुव्यवस्थित मन वाला भिक्षु अज्ञान को भेदकर सच्चे ज्ञान को जागृत कर निर्वाण प्राप्त कर सकता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका मन सुव्यवस्थित है।

43

"हे भिक्षुओं, मैंने अपने मन से एक मानसिक रूप से भ्रष्ट व्यक्ति के मन को घेर लिया है और मैं समझता हूँ कि यदि यह व्यक्ति इस समय मर जाए, तो उसे सीधे नरक में पहुँचा दिया जाएगा। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका मन भ्रष्ट है। मानसिक भ्रष्टता के कारण ही शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, कुछ प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

44

"हे भिक्षुओं, मैंने एक शांत मन वाले व्यक्ति के मन को अपने मन से ग्रहण किया है और मैं समझता हूँ कि यदि [9] यह व्यक्ति इस समय मर जाए तो उसे स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाएगा जैसे उसे वहाँ लाया गया हो। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका मन शांत है। 42 मन की शांति के कारण ही शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, कुछ प्राणी यहाँ एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

45

भिक्षुओं, मान लीजिए कि एक तालाब का पानी मैला, गंदा और कीचड़ भरा है। तब किनारे पर खड़ा एक अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें तैरते और आराम करते हुए सीप, कंकड़, मछलियों के झुंड नहीं देख सकता। इसका कारण क्या है? क्योंकि पानी मैला है। ठीक उसी प्रकार, एक मैले मन वाले भिक्षु के लिए अपना भला, दूसरों का भला, या दोनों का भला जानना या श्रेष्ठ भिक्षुओं के योग्य ज्ञान और दृष्टि में अलौकिक विशिष्टता प्राप्त करना असंभव है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका मन मैला है। 43

46

भिक्षुओं, मान लीजिए कि एक साफ, शांत और निर्मल जल का तालाब है। उस तालाब के किनारे खड़ा एक अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति सीपियाँ, कंकड़-पत्थर और मछलियों के झुंड को तैरते और विश्राम करते हुए देख सकता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि जल निर्मल है। ठीक इसी प्रकार, निर्मल मन वाले भिक्षु के लिए अपने भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को जानना और श्रेष्ठ लोगों के योग्य ज्ञान और दृष्टि में असाधारण विशिष्टता प्राप्त करना संभव है। 44 इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका मन निर्मल है।

47

"भिक्षुओं, जिस प्रकार चंदन को लचीलेपन और सुगमता के मामले में सर्वश्रेष्ठ वृक्ष घोषित किया गया है, उसी प्रकार मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी वस्तु नहीं दिखती जो विकसित और पोषित होने पर इतनी लचीली और सुगम हो। एक विकसित और पोषित मन लचीला और सुगम होता है।" [10]

48

"भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो इतनी जल्दी बदलती हो। 45 मन कितनी जल्दी बदलता है, इसका उपमा देना आसान नहीं है।"

49

"हे भिक्षुओं, यह मन प्रकाशमान है, परन्तु यह आकस्मिक दोषों से दूषित है।" 46

50

"भिक्षुओं, यह मन प्रकाशमान है और यह आकस्मिक दोषों से मुक्त है।"

VI. चित्त (चेतना) प्रकाशमान है।

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

51

"हे भिक्षुओं, यह मन प्रकाशमान है, परन्तु यह आकस्मिक दोषों से दूषित है। अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति इसे इसके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता; अतः मैं कहता हूँ कि अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति के मन का कोई विकास नहीं होता।" 47

52

"भिक्षुओं, यह मन प्रकाशमान है और आकस्मिक दोषों से मुक्त है। ज्ञानी शिष्य इसे यथार्थ रूप में समझता है; अतः मैं कहता हूँ कि ज्ञानी शिष्य के लिए मन का विकास संभव है।" 48

53

"भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु क्षण भर के लिए भी प्रेम और करुणा (मेत्ता) का भाव धारण करे, तो वह ध्यान (सम्मोहन) से रहित भिक्षु कहलाता है, जो गुरु की शिक्षाओं का पालन करता है, उनकी सलाह मानता है और देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ नहीं करता। 49 तो फिर, जो इसे विकसित करते हैं, वे कितने अधिक प्रशंसनीय होंगे!"

54

भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु पल भर के लिए भी प्रेम और करुणा (मेत्ता) का भाव विकसित कर ले, तो वह ध्यान (सम्मोहन) से रहित भिक्षु कहलाता है, जो गुरु की शिक्षाओं का पालन करता है, उनकी सलाह मानता है और देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ नहीं खाता। तो फिर, जो इसे विकसित करते हैं, वे कितने महान होंगे!

55

भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु पल भर के लिए भी प्रेम और करुणा (मेत्ता) के भाव में तल्लीन हो जाए, तो वह ऐसा भिक्षु कहलाता है जो ध्यान (सम्मोहन) से रहित नहीं है, जो गुरु की शिक्षाओं पर अमल करता है, जो उनकी सलाह मानता है और जो देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ नहीं खाता। तो फिर, जो इसे विकसित करते हैं, वे कितने महान होंगे!

56

भिक्षुओं, जो भी अकुशल गुण हानिकारक हैं, जो अकुशल गुणों में भाग लेते हैं और उनसे संबंधित हैं, उन सभी का अग्रदूत मन है। 50 मन पहले उत्पन्न होता है, उसके बाद अकुशल गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं।

57

भिक्षुओं, चाहे वे किसी भी प्रकार के हानिकारक (अकुशल) गुणों का सेवन करें, लाभकारी (कुशल) गुणों का उपयोग करें और लाभकारी (कुशल) गुणों से संबंधित हों, इन सभी का अग्रदूत मन है। मन पहले उत्पन्न होता है, उसके बाद लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं।

58

भिक्षुओं, मुझे आलस्य के समान कोई ऐसी चीज दिखाई नहीं देती जो अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) को उत्पन्न करे और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को कम करे। 51 आलस्य में अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण कम हो जाते हैं।

59

भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई चीज नजर नहीं आती जो जागृति की तरह अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को उत्पन्न करे और अकुशल (हानिकारक) गुणों को कम करे। जो जागृत होता है, उसके लिए अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और अकुशल (हानिकारक) गुण कम हो जाते हैं।

60

भिक्षुओं, मुझे आलस्य के समान कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अकारण हानिकारक (अकुशल) गुणों को उत्पन्न करे और लाभकारी (कुशल) गुणों को कम करे। आलसी व्यक्ति में अकारण हानिकारक (अकुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण कम हो जाते हैं।

सातवीं. ऊर्जा का जागरण आदि खंड (विरियारम्भादि-वग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

61

भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई भी कारण नहीं दिखता जिससे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जागृत होने पर अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुण कम हों। जिस व्यक्ति में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जागृत हो जाती है, उसमें अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।

62

भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई भी चीज दिखाई नहीं देती जो अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) को उत्पन्न करे और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुणों को कम करे, जैसा कि प्रबल इच्छा करती है। 52 प्रबल इच्छा वाले व्यक्ति में अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण कम हो जाते हैं।

63

भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हों, जैसा कि इच्छाओं की कमी से होता है। 53 जिन लोगों की इच्छाएं कम होती हैं, उनके लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।

64

भिक्षुओं, मुझे असंतोष के कारण अजन्मे अकुशल गुणों का उत्पन्न होना और लाभकारी गुणों का क्षय होना भी दिखाई नहीं देता। 54 जो व्यक्ति संतुष्ट नहीं है, उसमें अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न होते हैं और लाभकारी गुण क्षय होते हैं।

65

"भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे संतोष के कारण अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हों। 55 जो संतुष्ट है, उसके लिए अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम होते हैं।" [13]

66

भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई चीज नजर नहीं आती जो अस्वाभाविक (अकुशल) गुणों को उत्पन्न करे और उत्पन्न (कुशल) गुणों को कम करे, सिवाय लापरवाही से ध्यान देने के। क्योंकि जो लापरवाही से ध्यान देता है, उसके अस्वाभाविक (अकुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न (कुशल) गुण कम हो जाते हैं।

67

भिक्षुओं, मुझे ध्यानपूर्वक ध्यान देने के समान कोई ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती जो अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को उत्पन्न करे और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुणों को कम करे। जो व्यक्ति ध्यानपूर्वक ध्यान देता है, उसके अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।

68

भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न हों और लाभकारी गुण नष्ट हों, जैसा कि पूर्ण ज्ञान की कमी से होता है। जो पूर्ण रूप से ज्ञानी नहीं होता, उसमें अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न होते हैं और लाभकारी गुण नष्ट हो जाते हैं।

69

भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हों, जैसा कि पूर्ण ज्ञान (संपजन्न) से होता है। 56 पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने वाले के लिए, अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।

70

"भिक्षुओं, मुझे बुरी मित्रता के समान कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अव्यक्त हानिकारक (अकुशल) गुणों को उत्पन्न करे और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुणों को कम करे। बुरे मित्रों के साथ रहने वाले व्यक्ति में अव्यक्त हानिकारक (अकुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण कम हो जाते हैं।" [14]

आठवीं. अच्छी मित्रता आदि अनुभाग (कल्याणमित्तदि-वाग्गो)

(कल्याण-शुभकामनाएं; मित्र-दोस्त)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

71

भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई भी कार्य दिखाई नहीं देता जो अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को उत्पन्न करे और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुणों को कम करे, जैसा कि अच्छी मित्रता करती है। अच्छे मित्रों के साथ रहने वाले व्यक्ति के लिए, अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं। 57

72

भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न हों और लाभकारी गुण नष्ट हों, जैसा कि अकुशल गुणों का अनुसरण और उनका अनासक्ति करना होता है। अकुशल गुणों का अनुसरण और लाभकारी गुणों का अनासक्ति करना अजन्मे अकुशल गुणों को उत्पन्न करता है और लाभकारी द्वैत को नष्ट करता है।

73

भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हों, जैसा कि लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करने और हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण न करने से होता है। लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करने और हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण न करने से अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) कम हो जाते हैं।

74

भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई चीज नजर नहीं आती जो अनादि ज्ञान के तत्वों को उत्पन्न होने से रोकती हो और उत्पन्न ज्ञान के तत्वों को विकास द्वारा पूर्णता तक पहुंचने से रोकती हो, सिवाय लापरवाही से ध्यान देने के। क्योंकि जो लापरवाही से ध्यान देता है, उसके अनादि ज्ञान के तत्व उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न ज्ञान के तत्व विकास द्वारा पूर्णता तक नहीं पहुंचते।

75

भिक्षुओं, मुझे ध्यानपूर्वक ध्यान देने के अलावा कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जो ज्ञान के अजन्मे तत्वों को उत्पन्न करे और ज्ञान के उत्पन्न तत्वों को विकास द्वारा पूर्णता तक पहुंचाए। [15] जो ध्यानपूर्वक ध्यान देता है, उसके लिए ज्ञान के अजन्मे तत्व उत्पन्न होते हैं और ज्ञान के उत्पन्न तत्व विकास द्वारा पूर्णता तक पहुंचते हैं।

76

"भिक्षुओं, सगे संबंधियों का देहांत नगण्य है। सबसे बुरी चीज जो खोनी पड़ती है वह है पन्ना (दिव्य ज्ञान)।"

77

भिक्षुओं, रिश्तेदारों की संख्या में वृद्धि महत्वहीन है। सबसे अच्छी वृद्धि तो पन्ना (दिव्य ज्ञान) में ही होनी चाहिए। इसलिए, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: 'हम पन्ना (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि करेंगे।' आपको इसी प्रकार अभ्यास करना चाहिए।

78

भिक्षुओं, धन की हानि नगण्य है। सबसे बुरी चीज जो खोनी पड़ती है वह है पन्ना (दिव्य ज्ञान)।"

79

भिक्षुओं, धन की वृद्धि महत्वहीन है। सबसे उत्तम चीज जिसमें वृद्धि करनी चाहिए वह है पन्ना (दिव्य ज्ञान)। इसलिए, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: 'हम पन्ना (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि करेंगे।' आपको इसी प्रकार अभ्यास करना चाहिए।

80

"भिक्षुओं, यश का खोना तुच्छ है। सबसे बुरी चीज जो खोनी पड़ती है वह है पन्ना (दिव्य ज्ञान)।"

81

"भिक्षुओं, यश में वृद्धि महत्वहीन है। सबसे अच्छी चीज जिसमें वृद्धि करनी चाहिए वह है पन्ना (दिव्य ज्ञान)। इसलिए, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: 'हम पन्ना (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि करेंगे।' इसी प्रकार आपको अभ्यास करना चाहिए।" [16]

नौवीं. आलस्य आदि धारा (पामदादी-वाग्गो)

(पमादा की असावधानी/आलस्य)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

82

"भिक्षुओं, मुझे आलस्य से अधिक हानि पहुँचाने वाली कोई और वस्तु दिखाई नहीं देती। आलस्य अत्यंत हानि का कारण बनता है।"

83

"भिक्षुओं, मुझे जागरूकता से बढ़कर कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो इतनी बड़ी भलाई की ओर ले जाए। जागरूकता ही बड़ी भलाई की ओर ले जाती है।"

84-85

(84) "भिक्षुओं, मुझे आलस्य के समान कोई ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती जो इतनी बड़ी हानि पहुँचाती हो... (85) ... जो ऊर्जा के संचार (प्रयास/वीर्य) के समान कोई बड़ी भलाई पहुँचाती हो: .

86. ". तीव्र इच्छा . . . (87) . . . इच्छाओं की कमी . . ."

88 ".1. असंतोष (89) . . . संतोष ..."

90 "...लापरवाही से ध्यान देना...(91) ...सावधानी से ध्यान देना..."

92 ". . . पूर्ण समझ का अभाव (संपजन्ना) . . . (93) . . . पूर्ण समझ।"

94 "... बुरी दोस्ती . . . (95) . . . अच्छी दोस्ती ..."

96 "...हानिकारक (अकुशलनम्) गुणों का अनुसरण और लाभकारी (कुशलनम्) गुणों का अनुसरण न करना... (97) ... लाभकारी (कुशलनम्) गुणों का अनुसरण और हानिकारक (अकुशलनम्) गुणों का अनुसरण न करना। लाभकारी (कुशलनम्) गुणों का अनुसरण और हानिकारक (अकुशलनम्) गुणों का अनुसरण न करना महान कल्याण की ओर ले जाता है।"

X. दूसरा सुस्ती आदि खंड (दुतिया-पमादादी-वाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

98

"आंतरिक कारकों में, हे भिक्षुओं, मुझे आलस्य से अधिक हानि पहुँचाने वाला एक भी कारक दिखाई नहीं देता। आलस्य अत्यंत हानि का कारण बनता है।"

99

"भिक्षुओं, आंतरिक कारकों में मुझे एक भी ऐसा कारक नहीं दिखता जो सतर्कता के समान महान कल्याण की ओर ले जाता हो। [17] सतर्कता महान कल्याण की ओर ले जाती है।"

100 "भिक्षुओं, आंतरिक कारकों में मुझे आलस्य के समान कोई ऐसा कारक नहीं दिखता जो इतना बड़ा नुकसान पहुंचाता हो... (101) ... जो ऊर्जा के संचार (प्रयास/वीर्य) के समान कोई बड़ा लाभ पहुंचाता हो..." 60

102 "...प्रबल इच्छा... 103 ...इच्छाओं की अल्पता..."

104 . . असंतोष .'. . 105 . . . संतोष . .

106 . . लापरवाही से ध्यान देना . . . (107) . . . सावधानीपूर्वक ध्यान देना ..."

108 . . पूर्ण बोध का अभाव (संपजन्ना) . . . 109 . . . पूर्ण बोध (संपजन्ना)..."

110 "भिक्षुओं, बाह्य कारकों में मुझे ऐसा एक भी कारक नहीं दिखता जो बुरी मित्रता जितना बड़ा नुकसान पहुंचाता हो...."

111 "भिक्षुओं, मुझे बाह्य कारकों में कोई कारक दिखाई नहीं देता।"

यहां तक कि एक भी कारक जो अच्छी दोस्ती जैसी महान भलाई की ओर ले जाता है।

112 "भिक्षुओं, आंतरिक कारकों में मुझे एक भी ऐसा कारक नहीं दिखता जो हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करने और लाभकारी (कुशल) गुणों का अनुसरण न करने जितना बड़ा नुकसान पहुंचाता हो..."

113 . . . जो लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करने और हानिकारक (अकुशल) गुणों का अनुसरण न करने के समान ही महान कल्याण की ओर ले जाता है। लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करना और हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण न करना महान कल्याण की ओर ले जाता है।

114

भिक्षुओं, मुझे आलस्य के समान कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अच्छे धम्म (मार्ग) के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हो। आलस्य ही अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण है।

115

"भिक्षुओं (मठवासियों), मुझे ऐसा कोई भी साधन दिखाई नहीं देता जो अच्छे धम्म की निरंतरता, उसके पतन न होने और उसके लुप्त न होने में जागरूकता की तरह सहायक हो। [18] जागरूकता ही अच्छे धम्म की निरंतरता, उसके पतन न होने और उसके लुप्त न होने की ओर ले जाती है।"

116 "भिक्षुओं (मठवासियों), मुझे आलस्य के अलावा कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हो..."

117 . . . जिससे अच्छे धम्म की निरंतरता, उसका पतन न होना और उसका लुप्त न होना सुनिश्चित होता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) के जागरण के रूप में...

118 "...प्रबल इच्छा ...119... इच्छाओं की कमी . ."

120 . . असंतोष . . . 121 . . . संतोष ..."

122 . . लापरवाही से ध्यान देना . . . 123. . . सावधानीपूर्वक ध्यान देना . . ."

124 "... पूर्ण समझ का अभाव (संपजन्ना)... 125 ... पूर्ण समझ..."

126 "...बुरी दोस्ती... 127 ...अच्छी दोस्ती ..."

128 "... हानिकारक (अकुसल) गुणों (धम्म) की खोज और लाभकारी (कुसल) की खोज न करना, योग्य है... 129 ...। लाभकारी (कुसल) गुणों की खोज और हानिकारक (अकुसल) गुणों (धम्म) की खोज। लाभकारी (कुसल) गुणों (धम्म) की खोज और हानिकारक (अकुसल) की खोज न करना। गुण (धम्म) अच्छे धम्म की निरंतरता, गैर-गिरावट और गैर-लुप्ति की ओर ले जाता है।"

130

"भिक्षुओं, जो भिक्षु अधर्म (गलत मार्ग) को धर्म के रूप में समझाते हैं, वे अनेक लोगों के हितैषी होते हैं, अनेक लोगों के दुःख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और पीड़ा, देवताओं और मनुष्यों के लिए कारण बनते हैं। 61 ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धर्म को लुप्त कर देते हैं।"

131 — 139

(131) "भिक्षुओं, वे भिक्षु जो धम्म (मार्ग) को गैर-धम्म के रूप में व्याख्या करते हैं... (132) ... अनुशासनहीनता को अनुशासन के रूप में... (133) ... अनुशासनहीनता के रूप में... (134) ...जो तथागत (बुद्ध) द्वारा कहा और उच्चारित नहीं किया गया है, उसे उनके द्वारा कहा और उच्चारित किया गया है... (135) ...जो तथागत (बुद्ध) द्वारा कहा और उच्चारित किया गया है, उसे उनके द्वारा कहा और उच्चारित नहीं किया गया है... (136) ...जो तथागत (बुद्ध) द्वारा अभ्यास नहीं किया गया है, उसे उनके द्वारा अभ्यास किया गया है... (137) ...जो तथागत (बुद्ध) द्वारा अभ्यास किया गया है, उसे अभ्यास नहीं किया गया है।" उसके द्वारा. . . (138) . . . जो तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित नहीं किया गया है, (139) . . . जो तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित नहीं किया गया है, वह अनेक लोगों के लिए हानि, अनेक लोगों के लिए दुख, अनेक लोगों के लिए विनाश, हानि और पीड़ा, देवताओं और मनुष्यों के लिए कष्ट का कारण बनता है। ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धम्म (मार्ग) को लुप्त कर देते हैं। 63

XI. बुरा-धम्म धारा (अधम्म-वाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

140

"भिक्षुओं, वे भिक्षु जो बुरे धर्म (गलत मार्ग) को बुरे धर्म के रूप में समझाते हैं, वे अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, देवताओं और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए कार्य कर रहे हैं। ये भिक्षु बहुत पुण्य कमाते हैं और इस अच्छे धर्म को कायम रखते हैं।"

141 — 149

(141) "भिक्षुओं, वे भिक्षु जो धम्म (मार्ग) को धम्म के रूप में समझाते हैं... (142) ... बुरे अनुशासन को बुरे अनुशासन के रूप में... (143) ... अनुशासन को अनुशासन के रूप में... (144) ... जो तथागत (बुद्ध) द्वारा नहीं कहा और नहीं बोला गया है, उसे उनके द्वारा नहीं कहा और नहीं बोला गया है... (145) ... जो तथागत (बुद्ध) द्वारा कहा और बोला गया है, उसे उनके द्वारा कहा और नहीं बोला गया है... [20] (146) ... जो तथागत (बुद्ध) द्वारा अभ्यास नहीं किया गया है, उसे उनके द्वारा अभ्यास नहीं किया गया है... (147) ... जो अभ्यास किया गया है... तथागत (बुद्ध) द्वारा बताए गए आचरणों का पालन किया जाता है... (148) ... तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित न किए गए आचरणों का पालन किया जाता है... (149) ... तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित आचरणों का पालन किया जाता है, वे हैं अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों, देवताओं और मनुष्यों के भले, कल्याण और सुख के लिए कार्य करना। ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धर्म का पालन करते हैं।

बारहवीं. गैर अपराध धारा (अनापत्ति-वाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

150

“भिक्षुओं, जो भिक्षु अहिंसा को अहिंसा बताते हैं, वे अनेक लोगों के हित में कार्य करते हैं, अनेक लोगों को दुखी करते हैं, अनेक लोगों, देवताओं और मनुष्यों के विनाश, हानि और पीड़ा का कारण बनते हैं। ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धर्म को लुप्त होने का कारण बनते हैं।”

151 — 159

(151) "भिक्षु (मठवासी), वे भिक्षु जो अपराध को अपराध नहीं बताते... (152) ... एक हल्के अपराध को गंभीर अपराध बताते हैं... (153) ... एक गंभीर अपराध को हल्के अपराध बताते हैं... (154) ... एक घोर अपराध को घोर अपराध नहीं बताते... (155) ... एक ऐसे अपराध को जो घोर नहीं है, घोर अपराध बताते हैं... (156) ... एक उपचार योग्य अपराध को अउपचार योग्य अपराध बताते हैं... [21] (157) ... एक अउपचार योग्य अपराध को उपचार योग्य अपराध बताते हैं (158) ... एक ऐसे अपराध को जिसका निवारण संभव है, बिना निवारण वाले अपराध बताते हैं... (159) ... एक ऐसे अपराध को जिसका निवारण संभव नहीं है, निवारण योग्य अपराध बताते हैं, वे अनेक लोगों के नुकसान, अनेक लोगों के दुख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और पीड़ा के लिए कार्य कर रहे हैं। देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य। 66 ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धम्म (मार्ग) को लुप्त कर देते हैं।

160

"भिक्षुओं, जो भिक्षु अपराध न करने की व्याख्या करते हैं, वे अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, देवताओं और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए कार्य कर रहे हैं। ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धर्म का पालन करते हैं।"

161 -169

(161) "भिक्षु (मठवासी), वे भिक्षु जो किसी अपराध को अपराध के रूप में समझाते हैं... (162) ... हल्के अपराध को हल्के अपराध के रूप में समझाते हैं... (163) ... गंभीर अपराध को गंभीर अपराध के रूप में समझाते हैं... (164) ... घोर अपराध को घोर अपराध के रूप में समझाते हैं... (165) ... जो अपराध घोर नहीं है उसे घोर अपराध नहीं समझाते... (166) ... उपचार योग्य अपराध को उपचार योग्य अपराध के रूप में समझाते हैं... (167) ... अउपचार योग्य अपराध को अउपचार योग्य अपराध के रूप में समझाते हैं... (168) ... निवारण योग्य अपराध को निवारण योग्य अपराध के रूप में समझाते हैं... (169) ... बिना निवारण वाले अपराध को बिना निवारण वाले अपराध के रूप में समझाते हैं, वे अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, कल्याण और खुशी के लिए कार्य कर रहे हैं।" देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य। ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस अच्छे धम्म को बनाए रखते हैं।" [22]

XIII. एक व्यक्ति अनुभाग (एकपुग्गला-वाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

170

भिक्षुओं, एक ऐसा व्यक्ति है जो अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, संसार के प्रति करुणा, देवताओं और मनुष्यों के भले, कल्याण और सुख के लिए संसार में अवतरित होता है। 67 वह एक व्यक्ति कौन है? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध। यही वह एक व्यक्ति है जो संसार में अवतरित होता है... देवताओं और मनुष्यों के भले, कल्याण और सुख के लिए।

171-174

"भिक्षुओं, संसार में एक व्यक्ति का अवतार दुर्लभ है... (172)... संसार में एक असाधारण व्यक्ति का उदय हुआ है... (173)... एक व्यक्ति की मृत्यु पर अनेक लोग शोक मनाते हैं... (174) 68... संसार में एक अद्वितीय, अतुलनीय, बेजोड़, अद्वितीय, बेमिसाल, बेमिसाल, दो पैरों पर चलने वाले प्राणियों में श्रेष्ठ। 70 वह कौन है? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध। यही वह व्यक्ति है जो संसार में उदय हुआ है, जो... दो पैरों पर चलने वाले प्राणियों में श्रेष्ठ है।"

175-186

"भिक्षुओं (मठवासियों), एक व्यक्ति का प्रकटीकरण महान दृष्टि का प्रकटीकरण है... (175) महान प्रकाश का प्रकटीकरण... (176) महान प्रकाश का प्रकटीकरण... (177) महान दीप्ति का प्रकटीकरण... (178) छह अतुलनीय चीजों का प्रकटीकरण... (179) चार विश्लेषणात्मक ज्ञान की प्राप्ति... (180) अनेक तत्वों का भेदन... (181) तत्वों की विविधता का भेदन... (182) सच्चे ज्ञान और मुक्ति के फल की प्राप्ति [23]... (183) धारा-प्रवेश (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के फल की प्राप्ति... (184) एक बार लौटने के फल की प्राप्ति (1 पुनर्जन्म (सकदागामी)... (185)... अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म न होना) के फल की प्राप्ति... (186)... अरहंतत्व के फल की प्राप्ति। वह कौन है? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध। यही वह व्यक्ति है जिसका प्रकटीकरण महान दृष्टि का प्रकटीकरण है... अरहंतत्व के फल की प्राप्ति।

187

भिक्षुओं, मुझे एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं दिखता जो तथागत (बुद्ध) द्वारा स्थापित धम्म के अद्वितीय चक्र को सारिपुत्त की तरह उचित रूप से गतिमान रखता हो। सारिपुत्त तथागत (बुद्ध) द्वारा स्थापित धम्म के अद्वितीय चक्र को उचित रूप से गतिमान रखता है।

XIV. अग्रणी (शिष्य) अनुभाग (एटाडग्गा-वाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

i. पहला उप-अध्याय (भिक्षु) 188-197

(188) "भिक्षुओं, मेरे भिक्षु शिष्यों में वरिष्ठता में सबसे श्रेष्ठ अन्नकोंडन्ना हैं।" 74

(189) "...महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने वालों में सारिपुत्त हैं।" 75

(190) "...मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) रखने वालों में महामोग्गलाना भी शामिल हैं।" 76

(191) "...तपस्या प्रथाओं का प्रतिपादन करने वालों में महाकस्सपा भी शामिल हैं।" 77

(192) "...दिव्य दृष्टि रखने वालों में अनुराधा भी शामिल है।" 78

(193) "...प्रतिष्ठित परिवारों में से भद्दिया कलिगोधायपुत्त हैं।" 79

(194) "...मधुर आवाज वालों में लकुंतका भद्दिया भी शामिल हैं।" 80

(195) "...सिंह की दहाड़ रखने वालों में पिंडोला भारद्वाज भी शामिल हैं।" 81

(196) "...धम्म (मार्ग) पर बोलने वालों में पुरिना मंतानिपुत्त भी शामिल हैं।" 82

(197) "...संक्षेप में कही गई बात का अर्थ विस्तार से समझाने वालों में महाकच्चना भी शामिल है।" [24]

---

ii. द्वितीय उप-अध्याय 198-208

(198) "भिक्षुओं (मठवासियों), मेरे उन भिक्षु शिष्यों में जो मन से शरीर का सृजन करते हैं, उनमें सबसे श्रेष्ठ चुल्लपंथक हैं।" 83

(199) ". . . मानसिक रूपांतरण में कुशल लोगों में कुल्लापंथक शामिल हैं।"

(200) "...धारणा (सन्ना/संज्ञा) के रूपांतरण में निपुण लोगों में महापंथक भी शामिल हैं," 84

(201) "...उनमें से एक सुभूति हैं जो बिना किसी संघर्ष के निवास करते हैं।" 85

(202) ...दान के योग्य लोगों में सुभूति भी शामिल हैं।"

(203) "...वनवासियों में रेवता खदिरावनिया हैं।" 86

(204) "...ध्यान करने वालों में कंखारेवत भी शामिल हैं।" 87

(205) "...ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाने वालों में सोना कोलिविसा भी शामिल है।" 88

(206) "...इनमें उत्कृष्ट वक्ताओं में सोना कुटिकन्ना भी शामिल हैं।" 89

(207) "...लाभ प्राप्त करने वालों में सिवाह भी शामिल है।" 90

(208) "...विश्वास के माध्यम से संकल्पित लोगों में वक्कल भी शामिल हैं।" 91

---

iii. तीसरा उप-अध्याय 209-218

(209) "भिक्षुओं (भिक्षुओं), मेरे भिक्षु शिष्यों में से जो प्रशिक्षण की इच्छा रखते हैं, उनमें सबसे आगे राहुल हैं।"

(210) "...उन लोगों में से जो आस्था के कारण [सन्यासी जीवन में] चले गए हैं, उनमें रत्थपाल भी शामिल हैं।" 93

(211) "...भोजन टिकट लेने वालों में सबसे पहले कुंडाधना का नाम आता है..." 94

(212) "...प्रेरित काव्य रचने वालों में वाग्गीसा भी शामिल हैं।" 95

(213) ". . . सभी मामलों में विश्वास जगाने वालों में उपसेना वाहगंतपुत्त हैं;" 96 .

(214) "...आवास आवंटित करने वालों में डब्बा मल्लपुत्त भी शामिल हैं।" 97

(215) "...देवताओं (देवदूतों) को प्रसन्न करने वाले और उन्हें प्रिय लगने वालों में पिलिन्दवच्छ भी शामिल है।" 98

(216) "...प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) शीघ्र प्राप्त करने वालों में बहिया दारुचिरिया है।" 99

(217) "...बहुभाषी लोगों में कुमार कस्सपा भी शामिल हैं।" 100

(218) "...विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त करने वालों में महाकोत्थिता भी शामिल है।" 101

---

iv. चौथा उप-अध्याय 219-234

(219) "मेरे भिक्षु शिष्यों में, जो विद्वान हैं, उनमें सबसे श्रेष्ठ आनंद हैं।" 102

(220) "... अच्छी याददा वालों में आनंद भी है।" [25]

(221) ...तेजी से समझने वालों में आनंद भी शामिल है।" 103

(222) "...दृढ़ संकल्पियों में आनंद भी शामिल है।" 104

(223) "... निजी परिचारकों में आनंद है।"

(224) . . बड़े दल-भंगिमाओं वाले लोगों में उरुवेला भी शामिल है

kassapa." 105 'अगर

(225) "...उन लोगों में से जो परिवारों में विश्वास जगाते हैं

कलुदयी।" 106

(226) "...अच्छे स्वास्थ्य वालों में बक्कुला भी शामिल है।" 107

(227) "...पूर्व जन्मों को याद करने वालों में शोभिता भी शामिल है।" 108

(228) "...अनुशासन के समर्थकों में उपाली भी शामिल हैं।" 109

(229) "...भिक्षुओं को उपदेश देने वालों में नंदका भी शामिल हैं।" 110

(230) "...इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करने वालों में नंदा भी शामिल हैं।" 111

(231) "...भिक्षुओं को उपदेश देने वालों में महा कप्पिन भी शामिल हैं।" 112

(232) "...अग्नि तत्व में निपुणता रखने वालों में सागाता भी शामिल है।" 113

(233) "...वाक्पटु प्रवचन प्राप्त करने वालों में राधा भी शामिल हैं।" 114

(234) "...मोटे वस्त्र पहनने वालों में मोगराजा भी शामिल है।" 115

वी. पांचवां उपअध्याय (नन/भिक्कुनिस) 235-247

(235) "भिक्खु (भिक्षु), वरिष्ठता में मेरे भिक्खुनी (नन) शिष्यों में सबसे अग्रणी महापजापति गौतमी हैं।" 116

(236) "...महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने वालों में खेमा भी शामिल है।" 117

(237) "... मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) वाले लोगों में उप्पला वन्ना है।" 118

(238) "...अनुशासन का पालन करने वालों में पटाकारा भी शामिल हैं।" 119

(239) "...धम्म पर बोलने वालों में धम्म दिन्ना भी शामिल है।" 120

(240) "...ध्यानियों में नंदा भी शामिल हैं।" 121

(241) "...जो ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करते हैं उनमें सोना भी शामिल है।" 122

(242) "...दिव्य दृष्टि रखने वालों में सकुला भी शामिल है।" 123

(243) "...प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) शीघ्र प्राप्त करने वालों में भद्दा कुंडलकेश है।" 124

(244) "...पूर्व जन्मों को याद करने वालों में भद्दा कपिला भी शामिल हैं।" 125

(245) "... उन लोगों में से जो महान प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) प्राप्त करते हैं, भद्दा कक्काना हैं," 126

(246) "...मोटे वस्त्र पहनने वालों में किसागोतामी भी शामिल है।" 127

(247) "...विश्वास के माध्यम से संकल्पित लोगों में सिगालामाता भी शामिल है।" 128

---

vi. छठा उप-अध्याय (पुरुष गृहस्थ अनुयायी) 248-257

(248) "मेरे पुरुष गृहस्थ अनुयायियों में से, शरण लेने वाले पहले भिक्षु (भिक्षु) तपस्सा और भल्लिका हैं।" [26] 129

(249) ...दानदाताओं में गृहस्थ सुदत्ता अनाथपिंडिका भी शामिल हैं।" 130

(250) "...धम्म पर बोलने वालों में मच्छिकासंद का गृहस्थ चित्त भी शामिल है।" 131

(251) "...दूसरों को आकर्षित करने और उनका भरण-पोषण करने के चार साधनों का उपयोग करने वालों में अलावी का हत्थका भी शामिल है।" 132

(252) ...उत्कृष्ट दान देने वालों में महानमा शाक्य है।" 133

(253) "...जो लोग प्रसन्नतापूर्वक दान करते हैं उनमें वैशाली का गृहस्थ उगा भी शामिल है।" 134

(254) "... संघ के सेवकों में गृहस्थ उग्गता है।" 135

(255) "...अटूट विश्वास रखने वालों में सूरा अंबत्था भी शामिल हैं।" 136

(256) "...लोगों पर विश्वास रखने वालों में जीवक कोमरभच्च भी शामिल हैं।" 137

(257) "...जिन पर भरोसा किया जाता है उनमें गृहस्थ नकुलपिता भी शामिल हैं।" 138

---

vii. सातवाँ उप-अध्याय (महिला गृहस्थ अनुयायी) 258 — 267

(258) "भिक्षुओं (सन्यासियों), मेरी महिला गृहस्थ अनुयायियों में सबसे पहले शरण लेने वाली सुजाता है, जो सेनानी की पुत्री है।" 139

(259) "... दानदाताओं में विशाखा मिगारमाता भी शामिल हैं।" 140

(260) "... विद्वानों में खुज्जुत्तारा भी शामिल हैं।" 141

(261) "...उन लोगों में जो प्रेम और करुणा (मेट्टा) में निवास करते हैं, उनमें समवती भी शामिल हैं।" 142

(262) "...ध्यानियों में उत्तरा नंदमाता हैं।" 543

(263) "...उत्कृष्ट दान देने वालों में कोलियन पुत्री सुप्पावासा भी शामिल है।" 144

(264) "...बीमारों की सेवा करने वालों में महिला अनुयायी सुप्पिया भी शामिल है।" 145

(265) ... अटूट विश्वास रखने वालों में कटियानी भी शामिल हैं।

(266) "...जिनके साथ घनिष्ठ संबंध हैं उनमें गृहिणी नकुलमाता भी शामिल हैं।" 147

(267) ...जिनका विश्वास सुनी-सुनाई बातों पर आधारित है, उनमें कुलाघरिका की महिला अनुयायी काली भी शामिल है।" 148

XV. असंभव 149 (अत्थाना)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

268

"यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि दृष्टि में सिद्ध कोई (प्रबुद्ध) व्यक्ति किसी भी सशर्त घटना (संहार/संस्कार/भावना) को स्थायी मान सकता है; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है [27] कि कोई सांसारिक व्यक्ति किसी सशर्त घटना (संहार/संस्कार/भावना) को स्थायी मान सकता है; ऐसी संभावना है।" 150

269

भिक्षुओं, यह असंभव और अकल्पनीय है कि दृष्टि में सिद्ध पुरुष किसी भी सत्वभूत घटना (संहार/संस्कार/भावनाओं) को सुखद समझे; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि सांसारिक पुरुष कुछ सत्वभूत घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) को सुखद समझे; ऐसी संभावना है।

270

"भिक्षुओं, यह असंभव और अकल्पनीय है कि ज्ञान में निपुण व्यक्ति किसी भी चीज़ को आत्मा मान सके; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि सांसारिक व्यक्ति किसी चीज़ को आत्मा मान ले; ऐसी संभावना है।" 152

271 — 276

(271) "यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति अपनी माता का वध कर सकता है... (272) कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति अपने पिता का वध कर सकता है... (273) कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति किसी अरहंत का वध कर सकता है... (274) कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति घृणा के भाव से तथागत का रक्त बहा सकता है... (275) कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति संघ में फूट डाल सकता है... (276) कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति बुद्ध के अतिरिक्त किसी अन्य को गुरु मान सकता है; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि कोई सांसारिक व्यक्ति बुद्ध के अतिरिक्त किसी अन्य को गुरु मान सकता है; ऐसी संभावना है।" 153

277

"यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि दो पूर्णतः प्रबुद्ध बुद्ध अरहंत 154 [28] एक ही विश्व व्यवस्था में समकालीन रूप से प्रकट हो सकें; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि एक पूर्णतः प्रबुद्ध बुद्ध अरहंत एक ही विश्व व्यवस्था में प्रकट हो सकें; ऐसी संभावना है।" 155

278

"भिक्षुओं, यह असंभव और अकल्पनीय है कि एक ही विश्व व्यवस्था में दो चक्र-चालक सम्राट एक साथ उत्पन्न हो सकें; ऐसी कोई संभावना नहीं है। 156 परन्तु यह संभव है कि एक ही विश्व व्यवस्था में एक चक्र-चालक सम्राट उत्पन्न हो सके; ऐसी संभावना है।"

279 -283

(279) "यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि कोई स्त्री पूर्णतः प्रबुद्ध बुद्ध अरहंत हो सकती है... (280) ...कि कोई स्त्री चक्र चलाने वाली सम्राट हो सकती है... (281) ...कि कोई स्त्री सक्का (इंद्र) का पद धारण कर सकती है... (282) ...कि कोई स्त्री मार का पद धारण कर सकती है... (283) ...कि कोई स्त्री ब्रह्मा का पद धारण कर सकती है; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि कोई पुरुष ब्रह्मा का पद धारण कर सकता है; ऐसी संभावना है।" 157

284 -286

(284) "हे भिक्षुओं, यह असंभव और अकल्पनीय है कि शारीरिक दुराचार से वांछित, मनभावन, सुखद परिणाम प्राप्त हो सके... (285) ... कि मौखिक दुराचार से वांछित, मनभावन, सुखद परिणाम प्राप्त हो सके... (286) ... कि मानसिक दुराचार से वांछित, मनभावन, सुखद परिणाम प्राप्त हो सके; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि मानसिक दुराचार से अवांछित, अप्रिय, अप्रिय परिणाम प्राप्त हो सके [शारीरिक दुराचार से... मौखिक दुराचार से...]; ऐसी संभावना है।"

287— 289

(287) "यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि शारीरिक अच्छे आचरण से कोई अवांछित, अप्रिय परिणाम उत्पन्न हो सकता है [29] . . . (288) . . . कि मौखिक अच्छे आचरण से कोई अवांछित, अप्रिय परिणाम उत्पन्न हो सकता है ... (289) . . . कि मानसिक अच्छे आचरण से कोई अवांछित, अप्रिय परिणाम उत्पन्न हो सकता है; ऐसी कोई संभावना नहीं है। लेकिन यह संभव है कि मानसिक अच्छे आचरण से वांछित, सुखद परिणाम उत्पन्न हो सकता है [शारीरिक अच्छे आचरण से . . . मौखिक अच्छे आचरण से . . .]; ऐसी संभावना है।" 153

290 - 292

(290) "यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि शारीरिक दुराचार में लिप्त व्यक्ति, शरीर के विखंडन के कारण, मृत्यु के बाद, किसी अच्छे स्थान, किसी स्वर्गलोक में पुनर्जन्म ले सके... (291) ... कि मौखिक दुराचार में लिप्त व्यक्ति, शरीर के विखंडन के कारण, मृत्यु के बाद, किसी अच्छे स्थान, किसी स्वर्गलोक में पुनर्जन्म ले सके... (292) ... कि मानसिक दुराचार में लिप्त व्यक्ति, शरीर के विखंडन के कारण, मृत्यु के बाद, किसी अच्छे स्थान, किसी स्वर्गलोक में पुनर्जन्म ले सके; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव

है कि शारीरिक दुराचार ... मौखिक दुराचार ... में लिप्त व्यक्ति, मानसिक दुराचार में लिप्त व्यक्ति, शरीर के विखंडन के कारण, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में पुनर्जन्म ले सके... बुरी नियति, निम्न लोक में, नरक में; ऐसी संभावना है।

293 -295

(293) "यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि शारीरिक अच्छे आचरण में संलग्न कोई व्यक्ति, उस कारण से, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म ले (294) ... कि मौखिक अच्छे आचरण में संलग्न कोई व्यक्ति, उस कारण से, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म ले ... (295) ... कि मानसिक अच्छे आचरण में संलग्न कोई व्यक्ति, उस कारण से, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म ले; ऐसी कोई संभावना नहीं है। लेकिन यह संभव है [30] कि कोई व्यक्ति [शारीरिक अच्छे आचरण में ... मौखिक अच्छे आचरण में ...] मानसिक अच्छे आचरण में संलग्न हो, उस कारण से, इसलिए, शरीर के नष्ट होने के बाद, मृत्यु के बाद, एक अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म होना संभव है।

XVI. एक बात 159[एकधम्म]

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

i. पहला उपअध्याय

296

भिक्षुओं, एक ऐसी चीज है जिसका विकास और अभ्यास करने से केवल निब्बिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण प्राप्त होता है। 160 वह एक चीज क्या है? बुद्ध का स्मरण। 161 यही वह एक चीज है जिसका विकास और अभ्यास करने से केवल निब्बिदा... निर्वाण प्राप्त होता है।

297

(297) "भिक्षुओं, एक ऐसी चीज है जिसका विकास और अभ्यास करने से केवल निब्दिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण प्राप्त होता है। वह एक चीज क्या है? धम्म का स्मरण... संघ का स्मरण... सद्गुणों का स्मरण... उदारता का स्मरण... देवताओं का स्मरण... श्वास का ध्यान... मृत्यु का ध्यान... शरीर का ध्यान... शांति का स्मरण... यही वह एक चीज है जिसका विकास और अभ्यास करने से केवल निब्दिदा और निर्वाण प्राप्त होता है।"

---

ii. दूसरा उप-अध्याय

298

भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न हों और उत्पन्न होकर इतनी वृद्धि और विस्तार हो जितना कि गलत दृष्टिकोण से होता है। गलत दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होकर बढ़ते और विस्तार होते हैं।

299

"भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण इतने अधिक बढ़ें और फैलें जितना सही दृष्टि से होता है। [31] सही दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए, अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) बढ़ते और फैलते हैं।"

300

भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न न हों और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण इतने अधिक कम हो जाएँ जितना कि गलत दृष्टिकोण। 165 गलत दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए, अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) कम हो जाते हैं।

301

भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न न हों और उत्पन्न अकुशल गुण कम हो जाएँ, सिवाय सही दृष्टि के। 166 सही दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न अकुशल गुण कम हो जाते हैं।

302

"भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई भी चीज नजर नहीं आती जिससे अनपेक्षित गलत विचार उत्पन्न हो और उत्पन्न गलत विचार इतना बढ़ जाए जितना कि लापरवाही से ध्यान देने से। लापरवाही से ध्यान देने वाले व्यक्ति के लिए अनपेक्षित गलत विचार उत्पन्न होता है और उत्पन्न गलत विचार बढ़ता ही जाता है।" 167

303

"भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई भी चीज दिखाई नहीं देती जिससे अजन्मा सही दृष्टिकोण उत्पन्न हो और उत्पन्न सही दृष्टिकोण में इतनी वृद्धि हो जितनी कि सजग ध्यान से होती है। सजग ध्यान से देखने पर अजन्मा सही दृष्टिकोण उत्पन्न होता है और उत्पन्न सही दृष्टिकोण में वृद्धि होती है।" 168

304

भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिसके कारण शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं, सिवाय गलत दृष्टि के। गलत दृष्टि रखने वाले प्राणी, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।

305

"भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता [32] जिसके कारण शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, प्राणी अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं, सिवाय सही दृष्टि के। सही दृष्टि रखने वाले प्राणी, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

306

भिक्षुओं, गलत दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए, उसके द्वारा उस दृष्टिकोण के अनुसार किए गए सभी शारीरिक कर्म, वाणी कर्म और मानसिक कर्म, और उसकी सभी आत्म-जागरूकता, लालसा, प्रवृत्ति और संस्कार, सभी अवांछित, अप्रिय और हानि एवं पीड़ा की ओर ले जाते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका दृष्टिकोण गलत है। मान लीजिए, भिक्षुओं, नीम, खीरा या करेला का एक बीज नम मिट्टी में बोया गया। मिट्टी और पानी से वह जो भी पोषक तत्व ग्रहण करता है, वे सभी उसके कड़वे, तीखे और अप्रिय स्वाद का कारण

बनते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि बीज खराब है। इसी प्रकार, गलत दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए, सभी अवांछित, अप्रिय और हानि एवं पीड़ा की ओर ले जाते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका दृष्टिकोण गलत है।

307

भिक्षुओं, सही दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए, वह जो भी शारीरिक कर्म, वाणी कर्म और मानसिक कर्म करता है, और जो भी उसकी (आत्म)जागरूकता, लालसा, झुकाव और चरित्र (संस्कार) होते हैं, वे सब वांछित, वांछनीय और सुखद, कल्याण और सुख की ओर ले जाते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि दृष्टि अच्छी है। मान लीजिए, भिक्षुओं, गन्ने, पहाड़ी चावल या अंगूर का एक बीज नम मिट्टी में बोया गया। मिट्टी और पानी से वह जो भी पोषक तत्व ग्रहण करता है, वे सब उसके मीठे, सुखद और लजीज स्वाद की ओर ले जाते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि बीज अच्छा है। इसी प्रकार, सही दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए... सब कुछ वांछित, वांछनीय और सुखद, कल्याण और सुख की ओर ले जाता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि दृष्टि अच्छी है।

---

iii. तीसरा उप-अध्याय 172

308

भिक्षुओं, एक ऐसा व्यक्ति है जो संसार में अनेक लोगों के हितैष, अनेक लोगों के दुःख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और कष्ट के लिए, देवताओं और मनुष्यों के लिए उत्पन्न होता है। वह कौन है? वह एक ऐसा व्यक्ति है जिसका दृष्टिकोण गलत है और जिसकी सोच भ्रामक है। वह अनेक लोगों को अच्छे धर्म से दूर ले जाता है और उन्हें बुरे धर्म में स्थापित करता है। यही वह व्यक्ति है जो संसार में अनेक लोगों के हितैष, अनेक लोगों के दुःख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और कष्ट के लिए, देवताओं और मनुष्यों के लिए उत्पन्न होता है।

309

भिक्षुओं, एक ऐसा व्यक्ति है जो अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों के सुख, अनेक लोगों के भले, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए संसार में प्रकट होता है। वह एक व्यक्ति कौन है? वह सही दृष्टिकोण और उचित परिप्रेक्ष्य वाला व्यक्ति है। वह अनेक लोगों को बुरे धर्म से दूर करके अच्छे धर्म में स्थापित करता है। यही वह एक व्यक्ति है जो अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों के सुख, अनेक लोगों के भले, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए संसार में प्रकट होता है।

310

"भिक्षुओं, मुझे गलत मत से बढ़कर कोई और निंदनीय बात नहीं दिखती। गलत मत ही सबसे निंदनीय बात है।"

311

"भिक्षुओं, मुझे मक्खली जैसा कोई और व्यक्ति नहीं दिखता जो इतने सारे लोगों की हानि, इतने सारे लोगों के दुख, इतने सारे लोगों के विनाश, हानि और इतने सारे लोगों, देवताओं (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के कष्ट के लिए इतना अधिक कार्य कर रहा हो। 175 जिस प्रकार नदी के मुहाने पर लगाया गया जाल अनेक मछलियों के लिए हानि, कष्ट, विपत्ति और आपदा लाता है, उसी प्रकार मक्खली भी मानो "लोगों के लिए एक जाल" है 176 जो अनेक प्राणियों की हानि, कष्ट, विपत्ति और आपदा के लिए संसार में उत्पन्न हुआ है।" [34]

312

भिक्षुओं, जो व्यक्ति गलत ढंग से व्याख्या किए गए धम्म और अनुशासन में दूसरों को प्रोत्साहित करता है, जिसे वह प्रोत्साहित करता है, और जो इस प्रकार प्रोत्साहित होकर उसके अनुसार अभ्यास करता है, वे सभी बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म गलत ढंग से व्याख्या किया गया है।

313

भिक्षुओं, जो व्यक्ति सुस्पष्ट धम्म और अनुशासन में दूसरों को प्रोत्साहित करता है, जिसे वह प्रोत्साहित करता है, और जो इस प्रकार प्रोत्साहित होकर उसके अनुसार अभ्यास करता है, वे सभी बहुत पुण्य अर्जित करते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म सुस्पष्ट है।

314

"भिक्षुओं, जिनके धर्म और अनुशासन की व्याख्या ठीक से नहीं की गई है, उनमें संयम का ज्ञान दान देने वाले को होना चाहिए, न कि दान प्राप्त करने वाले को। 177 इसका कारण क्या है? क्योंकि उस धर्म की व्याख्या ठीक से नहीं की गई है।"

315

"भिक्षुओं (सम्भावों) को सुस्पष्ट धम्म और अनुशासन के साथ संयम का ज्ञान होना चाहिए, दान देने वाले को नहीं। 178 इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म (मार्ग) सुस्पष्ट है।"

316

"भिक्षुओं, जो कोई भी गलत ढंग से व्याख्या किए गए धम्म और अनुशासन में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाता है, वह दुख में रहता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म गलत ढंग से व्याख्या किया गया है।"

317

"भिक्षुओं, जो कोई भी सुस्पष्ट धम्म और अनुशासन में आलसी होता है, वह दुख में लीन रहता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म सुस्पष्ट है।"

318

"भिक्षुओं, जो भी धर्म और अनुशासन की गलत व्याख्या में आलसी होता है, वह सुख में रहता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उस धर्म की गलत व्याख्या की गई है।"

319

"भिक्षुओं, जो कोई भी सुस्पष्ट धम्म और अनुशासन में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाता है, वह सुखी रहता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म सुस्पष्ट है।"

320

"भिक्षुओं, जिस प्रकार मल की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है, उसी प्रकार मैं अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की थोड़ी सी मात्रा की भी प्रशंसा नहीं करता, यहाँ तक कि एक पल के लिए भी नहीं।" 179

321

"भिक्षुओं (मठवासियों), जिस प्रकार मूत्र की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है... लार की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है... मवाद की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है... [35]... रक्त की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है, उसी प्रकार मैं अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की थोड़ी सी मात्रा की भी प्रशंसा नहीं करता, यहाँ तक कि एक उंगली चटकाने के लिए भी नहीं।"

---

iv. जंबुद्वीप (भारत) पुनरावृत्ति श्रृंखला [चौथा उप-अध्याय] 322 365

322 "जिस प्रकार, इस जंबूद्वीप (भारत) में भिक्षुओं (भिक्षुओं) के लिए रमणीय उद्यान, उपवन, भूदृश्य और कमल के तालाब अल्प हैं, जबकि पहाड़ियाँ और ढलानें, पार करने में कठिन नदियाँ, ठूंठ और काँटों वाले स्थान और ऊबड़-खाबड़ पहाड़ अधिक संख्या में हैं, उसी प्रकार शुष्क भूमि पर जन्म लेने वाले प्राणी अल्प हैं; जल में जन्म लेने वाले प्राणी अधिक संख्या में हैं।"

323 "...इसी प्रकार, मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी अल्प हैं; मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेने वाले प्राणियों की संख्या अधिक है। ...इसी प्रकार, मध्य प्रांतों में पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी अल्प हैं; बाहरी प्रांतों में असभ्य विदेशियों के बीच पुनर्जन्म लेने वाले प्राणियों की संख्या अधिक है।" 184

324 "...इसी प्रकार, बुद्धिमान, समझदार, चतुर और अच्छी तथा बुरी बातों का अर्थ समझने में सक्षम प्राणी अल्प हैं; जबकि मूर्ख, बेवकूफ और मंदबुद्धि प्राणी अधिक हैं, जो अच्छी और बुरी बातों का अर्थ समझने में असमर्थ हैं।"

325 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जिन्हें पन्ना (दिव्य ज्ञान) की श्रेष्ठ दृष्टि प्राप्त है ; उन प्राणियों की संख्या कहीं अधिक है जो भ्रमित और अज्ञान में डूबे हुए हैं।" 185

326 . . इसी प्रकार तथागत (बुद्ध) के दर्शन पाने वाले प्राणी अल्प हैं; उन्हें न देख पाने वाले प्राणियों की संख्या कहीं अधिक है।

327 . . इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जिन्हें तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन सुनने का सौभाग्य प्राप्त होता है; [36] इससे कहीं अधिक वे हैं जिन्हें इसे सुनने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता है।"

328 "...इसी प्रकार, धम्म को सुनकर उसे मन में धारण करने वाले प्राणी अल्प हैं; धम्म को सुनकर उसे मन में धारण न करने वाले प्राणी अधिक संख्या में हैं।"

329 ". : . इसी प्रकार, वे प्राणी भी अल्प हैं जो मन में रखे गए उपदेशों के अर्थ की जांच करते हैं; वे अधिक संख्या में हैं जो मन में रखे गए उपदेशों के अर्थ की जांच नहीं करते हैं।"

330 "...इसी प्रकार, वे प्राणी अल्प हैं जो धम्म का अर्थ और उसे समझते हैं तथा उसके अनुसार अभ्यास करते हैं; वे अधिक संख्या में हैं जो धम्म का अर्थ और उसे नहीं समझते तथा उसके अनुसार अभ्यास नहीं करते।" 186

331 "...इसी प्रकार, वे प्राणी अल्प हैं जो तात्कालिकता उत्पन्न करने वाली चीजों के प्रति तात्कालिकता की भावना विकसित करते हैं; उन प्राणियों की संख्या अधिक है जो तात्कालिकता उत्पन्न करने वाली चीजों के प्रति तात्कालिकता की भावना विकसित नहीं करते हैं।" 187

332 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो तात्कालिकता की भावना से प्रेरित होने पर सावधानीपूर्वक प्रयास करते हैं; वे अधिक संख्या में हैं जो तात्कालिकता की भावना से प्रेरित होने पर सावधानीपूर्वक प्रयास नहीं करते हैं।"

333 "इसी प्रकार, वे प्राणी अल्प हैं जो समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), मन की एकाग्रता (एकगचित्त, संस्कृत: एकग्रचित्त), जो मुक्ति पर आधारित है, प्राप्त करते हैं; वे अधिक संख्या में हैं जो समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), मन की एकाग्रता, जो मुक्ति पर आधारित है, प्राप्त नहीं करते हैं।" 188

334 . . इसी प्रकार, स्वादिष्ट भोजन का उत्तम स्वाद प्राप्त करने वाले प्राणी अल्प हैं; ऐसे प्राणी कहीं अधिक हैं जिन्हें ऐसा भोजन प्राप्त नहीं होता, बल्कि वे कटोरे में परोसे गए जूठे टुकड़ों पर ही जीवन यापन करते हैं।

335 "...इसी प्रकार, अर्थ का स्वाद, धम्म का स्वाद, मुक्ति का स्वाद प्राप्त करने वाले प्राणी अल्प हैं; अर्थ का स्वाद, धम्म का स्वाद, मुक्ति का स्वाद प्राप्त न करने वाले अधिक हैं। 189 अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम अर्थ का स्वाद, धम्म का स्वाद, मुक्ति का स्वाद प्राप्त करेंगे।' [37]

336-338 "हे भिक्षुओं, जिस प्रकार इस जंबूद्वीप (भारत) में रमणीय उद्यान, उपवन, प्राकृतिक दृश्य और कमल के तालाब अल्प हैं, जबकि पहाड़ियाँ और ढलानें, दुर्गम नदियाँ, कंद और काँटों वाले स्थान और ऊबड़-खाबड़ पर्वत अधिक हैं, उसी प्रकार मनुष्य के रूप में मृत्यु के बाद मनुष्य के बीच पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी अल्प हैं। मनुष्य के रूप में मृत्यु के बाद नरक में, पशु जगत में, व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी अधिक हैं।" 191

339-341 : ...इसी प्रकार, वे प्राणी भी अल्प हैं जो मनुष्य के रूप में मृत्यु के बाद देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे प्राणी कहीं अधिक हैं जो मनुष्य के रूप में मृत्यु के बाद नरक में ... पशु जगत में ... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेते हैं।'

342-344 "...इसी प्रकार, वे प्राणी भी अल्प हैं जो देवों (देवदूतों/देवताओं) के रूप में मृत्यु के बाद देवों (देवदूतों/देवताओं) के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे प्राणी कहीं अधिक हैं जो देवों (देवदूतों/देवताओं) के रूप में मृत्यु के बाद नरक में ... पशु जगत में ... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेते हैं।"

345-347 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो देवों (देवदूतों/ईश्वरों) के रूप में मृत्यु के बाद मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे अधिक संख्या में हैं जो देवों (देवदूतों/ईश्वरों) के रूप में मृत्यु के बाद नरक में... पशु जगत में... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेते हैं।"

348-350 "...इसी प्रकार, वे प्राणी भी अल्प हैं जो नरक से निकलने के बाद मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे अधिक संख्या में हैं जो नरक से निकलने के बाद नरक में ही पुनर्जन्म लेते हैं... पशु जगत में... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में।"

351-353 . .इसी प्रकार, वे प्राणी भी अल्प हैं जो नरक से मृत्यु के बाद देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे अधिक संख्या में हैं जो नरक से मृत्यु के बाद नरक में ही पुनर्जन्म लेते हैं... पशु जगत में... . . . . . व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में।"

354-356 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो पशुलोक से मृत्यु के बाद मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे अधिक संख्या में हैं जो पशुलोक से मृत्यु के बाद नरक में... पशुलोक में... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेते हैं।"

357-359 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो पशुलोक से मृत्यु के बाद देवों (देवदूतों/देवताओं) के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। अधिक संख्या में वे हैं [38] जो पशुलोक से मृत्यु के बाद नरक में ... पशुलोक में ... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेते हैं।"

360-362 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो पीड़ित आत्माओं के लोक से मृत्यु के बाद मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। ऐसे प्राणी कहीं अधिक हैं जो पीड़ित आत्माओं के लोक से मृत्यु के बाद नरक में... पशु जगत में... पीड़ित आत्माओं के लोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

363-365 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो पीड़ित आत्माओं के लोक से मृत्यु के बाद देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। उनसे कहीं अधिक वे प्राणी हैं जो पीड़ित आत्माओं के लोक से मृत्यु के बाद नरक में... पशु जगत में... पीड़ित आत्माओं के लोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

सत्रहवाँ भाग: आत्मविश्वास बढ़ाने वाले गुण

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

366-381 "भिक्षुओं (साधुओं), यह निश्चित रूप से एक प्रकार का लाभ है, अर्थात्, (378) वनवासी होना, (379) भिक्षा से प्राप्त भोजन पर जीवन यापन करना, (380) चिथड़े के वस्त्र धारण करना, (381) केवल तीन वस्त्र धारण करना, 193 (382) धम्म पर वक्ता होना, (383) अनुशासन का पालन करने वाला होना, (384) महान विद्वत्ता, (385) दीर्घकालीन होना, (386) उचित आचरण होना, (387) अनुचरों का होना, (388) एक बड़ा अनुचर होना, (389) अच्छे परिवार से आना, (390) सुंदर होना, (391) एक उत्कृष्ट वक्ता होना, (392) कम इच्छाएँ रखना, (393) अच्छा स्वास्थ्य होना।"

XVIII. उंगली चटकाने वाला अनुभाग

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

382

भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु पल भर के लिए भी पहली ध्यान अवस्था (सम्मोहन) प्राप्त कर लेता है, तो वह ध्यान से रहित भिक्षु नहीं कहलाता, जो गुरु की शिक्षाओं पर अमल करता है, उनकी सलाह मानता है और देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ नहीं खाता। तो फिर, जो लोग ध्यान का अभ्यास करते हैं, वे और भी अधिक ध्यानशील होंगे!

383 — 389

भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु पल भर के लिए भी द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) ... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) ... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) ... प्रेम और करुणा से मन की मुक्ति ... करुणा से मन की मुक्ति ... परोपकारी आनंद से मन की मुक्ति ... उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्षा) से मन की मुक्ति प्राप्त कर लेता है, तो वह ध्यान से रहित भिक्षु नहीं कहलाता, जो गुरु की शिक्षाओं पर अमल करता है, उनकी सलाह मानता है और देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ नहीं करता। तो फिर, जो लोग इसका अभ्यास करते हैं, वे कितने अधिक गुणवान होंगे!

390-393

"...शरीर में शरीर को देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है, [197] उत्साही, पूर्णतः बोधशील, सती (ध्यान करते हुए), संसार के प्रति लालसा और निराशा को दूर करते हुए... संवेदनाओं में वेदना को देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है... मन में मन को देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है... घटनाओं में धम्म को देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है, उत्साही, पूर्णतः बोधशील, सती (ध्यान करते हुए), संसार के प्रति लालसा और निराशा को दूर करते हुए...

394-397

"... उत्पन्न न हुए अकुशल गुणों (धम्म) के उत्पन्न न होने की इच्छा उत्पन्न करता है; प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, मन लगाता है और प्रयास करता है... उत्पन्न हुए अकुशल गुणों (धम्म) के त्याग की इच्छा उत्पन्न करता है; प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, मन लगाता है और प्रयास करता है... (408) उत्पन्न न हुए लाभकारी गुणों (कुशल) के उत्पन्न होने की इच्छा उत्पन्न करता है; प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, मन लगाता है और प्रयास करता है... उत्पन्न हुए लाभकारी गुणों (धम्म)

के रखरखाव, उनके क्षय न होने, वृद्धि, विस्तार और विकास द्वारा पूर्णता की इच्छा उत्पन्न करता है; प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, मन लगाता है और प्रयास करता है..."

398 — 401

"...इच्छा और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है... मन और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है... अन्वेषण और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है..."

402 — 406

... आस्था की शक्ति विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति विकसित करता है... सतीत्व (ध्यान/सतीत्व) की शक्ति विकसित करता है... समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की शक्ति विकसित करता है... दिव्य ज्ञान (पन्न) की शक्ति विकसित करता है...

407 - 411 आस्था की शक्ति विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति विकसित करता है... ध्यान (सती/ध्यान) की शक्ति विकसित करता है... समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) की शक्ति विकसित करता है... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति विकसित करता है...

412 - 418

"...सती ध्यान (ध्यान/सती) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है...धर्म (घटनाओं के विवेक) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है...वीर्य (ऊर्जा/वीर्य) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है [40]...पीति (आनंद) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है...शांति के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है...समाधि (आत्म-लीनता/सन्यास) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है...उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्ष/उपेक्ष) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है..."

419 -426

"...सही दृष्टिकोण विकसित करता है...सही इरादा विकसित करता है...सही वाणी विकसित करता है...सही कर्म विकसित करता है...सही आजीविका विकसित करता है...सही प्रयास विकसित करता है...सही ध्यान (सती/सजगता) विकसित करता है...सही समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) विकसित करता है..."

427— 434

"... आंतरिक रूप से रूपों को समझने वाला, बाहरी रूप से सीमित, सुंदर या बदसूरत रूपों को देखता है, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, इस प्रकार बोध करता है: 'जान, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को समझने वाला, बाहरी रूप से असीम, सुंदर या बदसूरत रूपों को देखता है, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न समझने वाला, बाहरी रूप से सीमित, सुंदर या बदसूरत रूपों को देखता है, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न समझने वाला, बाहरी रूप से असीम, सुंदर या बदसूरत रूपों को देखता है, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न समझने वाला, बाहरी रूप से नीले रंग के, नीले रंग के, नीले आभा वाले, नीले रंग के, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न समझने वाला, बाहरी रूप से पीले रंग के रूपों को देखता है, पीले रंग का, पीले रंगत वाला, पीले रंग से आभास युक्त, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न देख पाने वाला, बाह्य रूप से रूपों को देखता है, लाल रंग के, लाल रंग के, लाल रंगत वाले, लाल रंग से आभास युक्त, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'...

आंतरिक रूप से रूपों को न देख पाने वाला, बाह्य रूप से रूपों को देखता है, सफेद रंग के, सफेद रंगत वाले, सफेद रंग से आभास युक्त, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ...'

435 -442

...रूप धारण करने वाला रूपों को देखता है... [41] आंतरिक रूप से रूपों को न देखने वाला बाहरी रूप से रूपों को देखता है... केवल 'सुंदर' पर केंद्रित है... रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करने के साथ, इंद्रिय-प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने के साथ, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देने के साथ, 'अंतरिक्ष अनंत है' को समझते हुए, अनंत अंतरिक्ष के आधार में प्रवेश करता है और निवास करता है... अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करने के साथ, 'चेतना अनंत है' को समझते हुए, अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है... चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का बोध करते हुए, वह शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है... शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, वह न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (अबोध) के आधार में प्रवेश करता है और निवास करता है... न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, वह बोध (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है...

443 — 452

... पृथ्वी कसीना का विकास करता है... 200 जल कसीना का विकास करता है... अग्नि कसीना का विकास करता है... वायु कसीना का विकास करता है... नीला कसीना का विकास करता है... पीला कसीना का विकास करता है... लाल कसीना का विकास करता है... सफेद कसीना का विकास करता है... आकाश कसीना का विकास करता है... चेतना कसीना का विकास करता है...

453 — 462

"...अनाकर्षकता की अनुभूति विकसित करता है...मृत्यु की अनुभूति विकसित करता है...भोजन की अरुचि की अनुभूति विकसित करता है...संपूर्ण संसार में आनंदहीनता की अनुभूति विकसित करता है...अनित्यता की अनुभूति विकसित करता है...अनित्य में पीड़ा की अनुभूति विकसित करता है...पीड़ा में अनात्म की अनुभूति विकसित करता है...त्याग की अनुभूति विकसित करता है...वैराग की अनुभूति विकसित करता है...निरस्तता की अनुभूति विकसित करता है...

463 — 472

... अनित्यता (अनित्यता/अनित्यता) की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... अनात्म की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... [42] मृत्यु की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... भोजन की अरुचि की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... संपूर्ण संसार में आनंदहीनता की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... कंकाल की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... कृमिग्रस्त शव की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... पीले पड़े शव की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... फटे हुए शव की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... फूले हुए शव की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... :"

473 -482

बुद्ध का स्मरण विकसित होता है... धम्म का स्मरण विकसित होता है... संघ का स्मरण विकसित होता है... सद्गुणों का स्मरण विकसित होता है... दान देने का स्मरण विकसित होता है... देवताओं का स्मरण विकसित होता है... श्वास का ध्यान (सामंजस्य/सती) विकसित होता है... मृत्यु का ध्यान (सामंजस्य/सती) विकसित होता है... शरीर के प्रति सजगता (सामंजस्य/सती) विकसित होती है... शांति का स्मरण विकसित होता है...

483 - 492

"...प्रथम ध्यान के साथ आस्था की क्षमता विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की क्षमता विकसित करता है... ध्यान (सती) की क्षमता विकसित करता है... समाधि (स्व-लीन/सन्यास) की क्षमता विकसित करता है... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की क्षमता विकसित करता है...

आस्था की शक्ति विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति विकसित करता है... ध्यान (सती) की शक्ति विकसित करता है... समाधि (स्व-लीन/सन्यास) की शक्ति विकसित करता है... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति विकसित करता है..."

493-562

"... दूसरे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) के साथ... ... तीसरे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) के साथ... चौथे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) के साथ... प्रेमपूर्ण दया (मेत्ता) के साथ... करुणा के साथ... परोपकारी आनंद के साथ... उदासीनता (अंदर ही अंदर समाहित/उपेक्खा) के साथ... विश्वास की शक्ति विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति विकसित करता है... सती (ध्यान) की शक्ति विकसित करता है... समाधि (आत्म-लीन/सम्मोहन) की शक्ति विकसित करता है... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति विकसित करता है... विश्वास की शक्ति विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति विकसित करता है... सती (ध्यान) की शक्ति विकसित करता है... समाधि (आत्म-लीन/सम्मोहन) की शक्ति विकसित करता है... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति विकसित करता है।" मैं भिक्षुओं से कहता हूँ, "वह भिक्षु कहलाता है जो ध्यान (सम्मोहन अवस्था) से रहित न हो, जो गुरु की शिक्षाओं का पालन करे, जो उनकी सलाह माने और जो देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ न करे। तो फिर, जो लोग इसका अभ्यास करते हैं, वे और भी अधिक बुद्धिमान होंगे!"

XIX. माइंडफुलनेस (ध्यान) शरीर की ओर निर्देशित [204] (कायगाता-सती-वाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

563

"भिक्षुओं, जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपने मन से विशाल सागर को समाहित कर लेता है, उसमें सागर में गिरने वाली सभी धाराएँ समाहित हो जाती हैं, ठीक उसी प्रकार जो कोई भी शरीर को लक्षित करते हुए सती (यानी विपश्यना) का अभ्यास और विकास करता है, वह सच्चे ज्ञान से संबंधित सभी लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को समाहित कर लेता है।" 203

564-570

भिक्षुओं, एक बात, जब विकसित और पोषित की जाती है, (576) तो वह तीव्र तत्परता की भावना उत्पन्न करती है 200 ... (577) महान कल्याण की ओर ले जाती है (578) बंधन से महान सुरक्षा की ओर ले जाती है ... (579) सती ध्यान और पूर्ण बोध की ओर ले जाती है ... (580) ज्ञान और दृष्टि की प्राप्ति की ओर ले जाती है ... (581) इसी जीवन में सुखद निवास की ओर ले जाती है ... (582) ज्ञान और मुक्ति के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है। वह एक बात क्या है? शरीर के प्रति निर्देशित सजगता। यही वह एक बात है, जब विकसित और पोषित की जाती है, तो ज्ञान और मुक्ति के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है।

571

भिक्षुओं, जब एक चीज विकसित और पोषित होती है, तो शरीर शांत हो जाता है, मन शांत हो जाता है, विचार और परीक्षा शांत हो जाते हैं, और सच्चे ज्ञान से संबंधित सभी लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्ण हो जाते हैं। वह एक चीज क्या है? शरीर पर केंद्रित सती (ध्यान)। [44] जब यह एक चीज विकसित और पोषित होती है, तो शरीर शांत हो जाता है... और धम्म के सच्चे ज्ञान से संबंधित सभी लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्ण हो जाते हैं।

572

भिक्षुओं, जब किसी एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न अकुशल गुण त्याग दिए जाते हैं। वह एक चीज क्या है? शरीर पर केंद्रित सती ध्यान। जब इस एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न अकुशल गुण त्याग दिए जाते हैं।

573

भिक्षुओं, जब किसी एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण बढ़ते और फैलते हैं। वह एक चीज क्या है? शरीर पर केंद्रित ध्यान। जब इस एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण बढ़ते और फैलते हैं।

574

भिक्षुओं, जब किसी एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, (586) तो अज्ञान का त्याग हो जाता है... (587) सच्चा ज्ञान उत्पन्न होता है... (588) 'मैं हूँ' का अहंकार त्याग दिया जाता है... (589) अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं... (590) बंधन टूट जाते हैं। वह एक चीज क्या है? शरीर पर केंद्रित सती ध्यान। जब इस एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो अज्ञान का त्याग हो जाता है... सच्चा ज्ञान उत्पन्न होता है... 'मैं हूँ' का अहंकार त्याग दिया जाता है... अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं... बंधन टूट जाते हैं।

575 -576

भिक्षुओं, एक बात, जब विकसित और अभ्यास की जाती है, (591) तो वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा भेद की ओर ले जाती है... (592) अनासक्ति के माध्यम से निर्वाण की ओर ले जाती है। 211 वह एक बात क्या है? शरीर पर केंद्रित सती ध्यान। यही वह एक बात है, जब विकसित और अभ्यास की जाती है, तो वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा भेद की ओर ले जाती है... अनासक्ति के माध्यम से निर्वाण की ओर ले जाती है।

577 -579

भिक्षुओं, जब किसी एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, (593) तो अनेक तत्वों का ज्ञान प्राप्त होता है... (594) तत्वों की विविधता का ज्ञान प्राप्त होता है... (595) अनेक तत्वों का विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त होता है। 212 वह एक चीज क्या है? वह शरीर पर केंद्रित सती ध्यान है। जब इस एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो विभिन्न तत्वों का ज्ञान प्राप्त होता है... तत्वों की विविधता का ज्ञान प्राप्त होता है... विभिन्न तत्वों का विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त होता है।

580 — 583

भिक्षुओं, एक ही बात है, जब उसका विकास और अभ्यास किया जाता है, तो वह (596) धारा-प्रवेश (सात पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है... (597) एक बार लौटने (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है... (598) अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म नहीं) के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है [45]... (599) अरहंतत्व के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है। वह एक बात क्या है? वह शरीर पर केंद्रित सती ध्यान है। यही वह एक बात है, जिसका विकास और अभ्यास करने पर धारा-प्रवेश (सात पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के फल की प्राप्ति होती है... एक बार लौटने के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है... अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म नहीं) के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है। अरहंत पद के फल की प्राप्ति के लिए।"

584 -599

भिक्षुओं, एक बात, जब विकसित और पोषित की जाती है, तो (600) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की प्राप्ति होती है... (601) बुद्धि की वृद्धि होती है... (602) पन्ना (दिव्य ज्ञान) का विस्तार होता है... (603) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की महानता होती है ... (604) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की विविधता होती है... (605) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की विशालता होती है... (606) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की गहराई होती है... (607) अतुलनीय

पन्ना (दिव्य ज्ञान) की अवस्था होती है ... (608) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की व्यापकता होती है... (609) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की प्रचुरता होती है... (610) पन्ना की तीव्र प्राप्ति होती है। (दिव्य ज्ञान)... (611) पन्ना (दिव्य ज्ञान) के उत्तोलन की ओर... (612) पन्ना (दिव्य ज्ञान) के आनंद की ओर... (613) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शीघ्रता की ओर... (614) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की तीक्ष्णता की ओर ... (615) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की भेदनशीलता की ओर । 213 वह एक चीज क्या है? शरीर पर केंद्रित सती ध्यान। यही वह चीज है, जिसे विकसित और पोषित करने पर पन्ना (दिव्य ज्ञान) की भेदनशीलता प्राप्त होती है ।

XX. मृत्युहीन धारा 214 (अमाता-वाग्गो सं. अमृत वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

600

"भिक्षु (सन्यासी), वे अमरता (अमृत) का सेवन नहीं करते जो शरीर पर केंद्रित सती ध्यान का अभ्यास नहीं करते। वे अमरता (अमृत) का सेवन करते हैं जो शरीर पर केंद्रित सती ध्यान का अभ्यास करते हैं।"

601

भिक्षुओं, जिन्होंने शरीर को समर्पित ध्यान (सती) नहीं किया है, उन्हें अमरता (अमृत) प्राप्त नहीं हुई है। जिन्होंने शरीर को समर्पित ध्यान (सती) किया है, उन्हें अमरता (अमृत) प्राप्त हुई है।

602

"भिक्षु (मठवासी), वे अमरत्व (अमृत) से विमुख हो जाते हैं जो शरीर पर केंद्रित सती ध्यान से विमुख हो जाते हैं। वे अमरत्व (अमृत) से विमुख नहीं होते जो शरीर पर केंद्रित सती ध्यान से विमुख नहीं होते।"

603

"भिक्षुओं ने अमरता (अमृत) की उपेक्षा की है, जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान का त्याग किया है। [46] जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान का त्याग किया है, उन्होंने अमरता (अमृत) का पालन किया है।"

604

"भिक्षु (संतों), वे अमरत्व (अमृत) के प्रति आलसी होते हैं जो शरीर पर केंद्रित ध्यान (सती) के प्रति आलसी होते हैं। वे अमरत्व (अमृत) के प्रति आलसी नहीं होते जो शरीर पर केंद्रित ध्यान के प्रति आलसी नहीं होते।"

605

"भिक्षुओं (संतों) ने अमरता (अम्रता/अमृत) को भुला दिया है, जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान को भुला दिया है। उन्होंने अमरता (अम्रता/अमृत) को नहीं भुलाया है, जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान को नहीं भुलाया है।"

606

"भिक्षुओं ने अमरत्व (अमृत) की प्राप्ति नहीं की है, जिन्होंने शरीर को समर्पित ध्यान (सती) का अभ्यास नहीं किया है। जिन्होंने शरीर को समर्पित ध्यान (सती) का अभ्यास किया है, उन्होंने अमरत्व (अमृत) की प्राप्ति की है।"

607

"भिक्षुओं ने अमरत्व (अमृत) का विकास नहीं किया है, जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान (ध्यान/सती) का विकास नहीं किया है। जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान (ध्यान/सती) का विकास किया है, उन्होंने अमरत्व (अमृत) का विकास किया है।"

608

"भिक्षुओं ने अमरत्व (अमृत) की साधना नहीं की है, जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान का अभ्यास नहीं किया है। जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान का अभ्यास किया है, उन्होंने अमरत्व (अमृत) की साधना की है।"

609

"भिक्षुओं (सन्तुओं) ने अमरत्व (अमृत) को प्रत्यक्ष रूप से नहीं जाना है, जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान का प्रत्यक्ष अनुभव नहीं किया है। जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान का प्रत्यक्ष अनुभव किया है, उन्होंने अमरत्व (अमृत) को प्रत्यक्ष रूप से जाना है।"

610

"भिक्षुओं ने अमरत्व (अमृत) को पूरी तरह से नहीं समझा है, जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान को पूरी तरह से नहीं समझा है। जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान को पूरी तरह से समझ लिया है, उन्होंने अमरत्व (अमृत) को पूरी तरह से समझ लिया है।"

611

"भिक्षुओं (संतों) ने अमरत्व (अम्रत/अमृत) को नहीं जाना है, जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान को नहीं जाना है। जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान को जाना है, उन्होंने अमरत्व (अम्रत/अमृत) को जान लिया है।"

द बुक ऑफ द वन्स पूरी हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय >> 2.दो की पुस्तक

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का दूसरा भाग है। यह भिक्खु बी. बोधि का संशोधित संस्करण है।

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN1) अगला (AN3) >>>>

अंतर्वस्तु

1दो की किताब (दुकाननिपात)

1.1I. कर्म क्रिया खंड (कम्मा-करण-वग्गा)

1.1.11. दोष (वज्जा)

1.1.22. प्रयास (पढ़ना)

1.1.33. पीड़ा उत्पन्न होना (तपनीय)

1.1.44 पीड़ा उत्पन्न न करना (अतापनिया)

1.1.55 ज्ञात (उपनेट)

1.1.66 बंधन (संयोजन)

1.1.77 अंधकार (कान्हा संस्कृत: कृष्ण)

1.1.88 उजकारा (सुक्का)

1.1.99 चरित्र (कैरिया सं. कैरिट्रा)

1.1.1010 वर्ष ऋतु में प्रवेश करना

1.2द्वितीय. अनुशासित अंक (अधिकरण)

1.3तृतीय. बाल (बचकाना)

1.4चतुर्थ. एकमत

1.5वी. सभा (पेरिसा सं. परिषद)

1.6VI. लोग (पुग्गला)

1.7VII. सुख

1.8आठवीं. एक आधार के साथ (सा-निमित्त)

1.99. धम्म (मार्ग)

1.10X. बाला (बचकाना/नासमझ)

1.11XI. ऐसी इच्छाएँ जिनमें त्यागना कठिन है (आसा-दु-पजाहा)

1.12बारहवीं. आकांक्षी (अयाचना)

1.13XIII. दान (दाना)

1.14XIV. उदारता (संथारा)

1.15XV. ध्यानात्मक प्रभाव (समापट्टी)

1.16XVI. क्रोध (कोढ़ा सं. क्रोध)

1.17XVII. अकुसला (हानिकारक)

1.18XVIII. विशिष्ट अशोक शृंखला [335] (विनय)

1.19XIX. कामवासना (राग) और इसी प्रकार पुनरावृति। श्रृंखला [338]

दो की पुस्तक (दुकानिपाता)

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

उस भगवान को नमन, शत्रुओं का नाश करने वाले, सही मायने में पूर्णतः प्रबुद्ध (जागृत) भगवान।

00:00

00:00

I. कर्म क्रिया अनुभाग (कम्मा-करण-वग्गा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

1. दोष (वज्जा)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!" "आदरणीय महोदय!" भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, ये दो दोष हैं। कौन से दो? वर्तमान जीवन से संबंधित दोष और भविष्य के जीवन से संबंधित दोष। और वर्तमान जीवन से संबंधित दोष क्या है? यहाँ, कोई देखता है कि जब राजा किसी लुटेरे, किसी अपराधी को गिरफ्तार करते हैं, तो वे उसे अनेक प्रकार के

दंड देते हैं: वे उसे कोड़ों से पिटवाते हैं, बेंत से पिटवाते हैं, लाठियों से पिटवाते हैं; वे उसके हाथ काट देते हैं, उसके पैर काट देते हैं, उसके हाथ और पैर दोनों काट देते हैं; उसके कान काट देते हैं, उसकी नाक काट देते हैं, उसके कान और नाक दोनों काट देते हैं; वे उसे दलिया के बर्तन, 'पॉलिश किए हुए खोल की छाल', 'राहु के मुख', 'अग्नि की माला', 'ज्वलित हाथ', 'घास की पत्तियों' [48], 'छाल की पोशाक', 'हिरण', 'मांस के हुक', 'सिक्कों', 'लाइ अचार', 'धुरी की पिन' और 'लुढ़की हुई पल्लियास' के अधीन करते हैं; और वे उस पर उबलता हुआ तेल छिड़कते हैं, और वे उसे कुत्तों से कुतरवाते हैं, और वे उसे जिंदा खंभों पर लटका देते हैं, और वे तलवार से उसका सिर काट देते हैं। 216

उसके मन में यह विचार आता है: 'जब राजा किसी लुटेरे या अपराधी को गिरफ्तार करते हैं, तो उसके बुरे कर्मों के कारण उसे अनेक दंड देते हैं: उसे कोड़ों से पिटवाते हैं... तलवार से उसका सिर कटवा देते हैं। अब यदि मैं ऐसा कोई बुरा कर्म करूँ और राजा मुझे गिरफ्तार कर लें, तो वे मुझे भी वही दंड देंगे। वे मुझे कोड़ों से पिटवाएंगे... तलवार से मेरा सिर कटवा देंगे।' इस जीवन के पाप से भयभीत होकर वह दूसरों की संपत्ति नहीं लूटता। 217 इसे ही इस जीवन का पाप कहा जाता है।

"और भविष्य के जीवन से संबंधित दोष क्या है? यहाँ, कोई इस प्रकार विचार करता है: 'शारीरिक दुराचार का भविष्य के जीवन में बुरा, कष्टदायी परिणाम होता है; वाणी का दुराचार का भविष्य के जीवन में बुरा, कष्टदायी परिणाम होता है; मानसिक दुराचार का भविष्य के जीवन में बुरा, कष्टदायी परिणाम होता है। अब यदि मैं शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त रहूँ, तो शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, मैं दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लूँगा!' [49] भविष्य के जीवन से संबंधित दोष से भयभीत होकर, वह शारीरिक दुराचार का त्याग करता है और शारीरिक अच्छे आचरण का विकास करता है; वह वाणी के दुराचार का त्याग करता है और वाणी के अच्छे आचरण का विकास करता है; वह मानसिक दुराचार का त्याग करता है और मानसिक अच्छे आचरण का विकास करता है; वह स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। इसे भविष्य के जीवन से संबंधित दोष कहा जाता है। "ये, भिक्षुओं, दो दोष हैं। अतः, भिक्षुओं, आप इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करें: 'हम वर्तमान जीवन से संबंधित दोष से डरेंगे; हम भविष्य के जीवन से संबंधित दोष से डरेंगे। हम दोषों से डरेंगे और दोषों में खतरा देखेंगे।' इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए। यह आशा की जाती है कि जो व्यक्ति दोषों से डरता है और दोषों में खतरा देखता है, वह सभी दोषों से मुक्त हो जाएगा।

---

2. प्रयास (पधाना)

भिक्षुओं, संसार में दो प्रकार के प्रयास करना कठिन है। वे कौन से दो प्रयास हैं? पहला, गृहस्थों का प्रयास जो घर में रहकर भिक्षुओं को वस्त्र, भिक्षा, आवास, बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन सामग्री दान करते हैं; और दूसरा, गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में जाने वालों का प्रयास जो सभी प्राप्तियों का त्याग करते हैं। ये दो प्रयास संसार में करना कठिन हैं।

"हे भिक्षुओं, इन दो प्रयासों में सबसे प्रमुख प्रयास समस्त प्राप्ति का त्याग करना है। 219 अतः, हे भिक्षुओं, आपको इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: 'हम समस्त प्राप्ति का त्याग करने का प्रयास करेंगे।' इसी प्रकार आपको अभ्यास करना चाहिए।"

---

3. पीड़ा उत्पन्न करना (तपनीय)

भिक्षुओं, ये दो बातें पीड़ा का कारण बनती हैं। वे दो बातें क्या हैं? यहाँ, किसी ने शारीरिक दुराचार किया है लेकिन शारीरिक सत्कार नहीं किया; मौखिक दुराचार किया है लेकिन मौखिक सत्कार नहीं किया; मानसिक दुराचार किया है लेकिन मानसिक सत्कार नहीं किया। वह पीड़ा में है, [यह सोचकर]: 'मैंने शारीरिक दुराचार किया है'; वह पीड़ा में है, [यह सोचकर]: 'मैंने शारीरिक सत्कार नहीं किया है'; वह पीड़ा में है, [यह सोचकर]: 'मैंने मौखिक दुराचार किया है'; वह पीड़ा में है, [यह सोचकर]: 'मैंने मौखिक सत्कार नहीं किया है'; वह पीड़ा में है, [यह सोचकर]: 'मैंने मानसिक दुराचार किया है'; वह पीड़ा में है, [यह सोचकर]: 'मैंने मानसिक सत्कार नहीं किया है'। भिक्षुओं, यही दो बातें पीड़ा का कारण बनती हैं।

---

4 पीड़ा उत्पन्न न करना (अतापनिया)

भिक्षुओं, ये दो बातें हैं जो पीड़ा का कारण नहीं बनतीं। [50] वे दो बातें क्या हैं? यहाँ, किसी ने शारीरिक रूप से अच्छा आचरण किया है और शारीरिक दुराचार से परहेज किया है; मौखिक रूप से अच्छा आचरण किया है और मौखिक दुराचार से परहेज किया है; मानसिक रूप से अच्छा आचरण किया है और मानसिक दुराचार से परहेज किया है। उसे पीड़ा नहीं होती, [यह जानकर]: 'मैंने शारीरिक रूप से अच्छा आचरण किया है'; उसे पीड़ा नहीं होती, [यह जानकर]: 'मैंने शारीरिक दुराचार से परहेज किया है'; उसे पीड़ा नहीं होती, [यह जानकर]: 'मैंने मौखिक रूप से अच्छा आचरण किया है'; उसे पीड़ा नहीं होती, [यह जानकर]: 'मैंने मौखिक दुराचार से परहेज किया है'; उसे पीड़ा नहीं होती, [यह जानकर]: 'मैंने मानसिक दुराचार से परहेज किया है'; उसे पीड़ा नहीं होती, [यह जानकर]: 'मैंने मानसिक दुराचार से परहेज किया है'। भिक्षुओं, ये दो बातें हैं जो पीड़ा का कारण नहीं बनतीं।

---

5 ज्ञात (उपन्नत)

"भिक्षुओं, मैंने स्वयं दो बातें जानी हैं: लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति असंतोष और निरंतर प्रयास। 221

मैंने अथक परिश्रम किया, और संकल्प लिया: 'इच्छा से, केवल मेरी त्वचा, नसें और हड्डियाँ ही रह जाएँ, और मेरे शरीर का मांस और रक्त सूख जाए, लेकिन मैं तब तक अपनी ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) में शिथिलता नहीं डालूँगा जब तक कि मैं वह प्राप्त न कर लूँ जो पुरुषोचित बल, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और परिश्रम से प्राप्त किया जा सकता है। 222 हे भिक्षुओं, आलस्य से ही मैंने ज्ञान प्राप्त किया; आलस्य से ही मैंने बंधन से अद्वितीय सुरक्षा प्राप्त की। 223 हे भिक्षुओं, यदि तुम भी अथक परिश्रम करोगे, और संकल्प लोगे: 'इच्छा से, केवल मेरी त्वचा, नसें और हड्डियाँ ही रह जाएँ, और मेरे शरीर का मांस और रक्त सूख जाए, लेकिन मैं तब तक अपनी ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) में शिथिलता नहीं डालूँगा जब तक कि मैं वह प्राप्त न कर लूँ जो पुरुषोचित बल, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और परिश्रम से प्राप्त किया जा सकता है।' तुम भी शीघ्र ही प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इस जीवन में ब्रह्मचर्य के उस अतुलनीय लक्ष्य को जान लोगे, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करते हैं, और उसमें प्रवेश करके तुम उसमें निवास करोगे। अतः, भिक्षुओं, तुम इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करो: 'हम अथक परिश्रम करेंगे, [संकल्पित होकर]: "चाहे मेरी त्वचा, नसें और हड्डियाँ ही रह जाएँ, और मेरे शरीर का मांस और रक्त सूख जाए, परन्तु मैं अपनी ऊर्जा (वीर्य) को तब तक शिथिल नहीं होने दूँगा जब तक मैं उस लक्ष्य को प्राप्त न कर लूँ जो पुरुष शक्ति, ऊर्जा (वीर्य) और परिश्रम से प्राप्त किया जा सकता है।" तुम्हें इसी प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।'

---

6 बंधन (संयोजन)

भिक्षुओं, ये दो बातें हैं। वे कौन सी दो बातें हैं? बंधनकारी वस्तुओं में संतुष्टि देखना और बंधनकारी वस्तुओं में अनासक्ति (अनुपसी) देखना। 224 जो बंधनकारी वस्तुओं में संतुष्टि देखता है, वह [51] कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग नहीं करता। कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग न करने से व्यक्ति पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त नहीं होता; मैं कहता हूँ कि वह दुख से मुक्त नहीं होता।

जो व्यक्ति ध्यान में लीन होकर बंधनकारी वस्तुओं से विरक्त हो जाता है, वह राग, द्वेष और मोह का त्याग कर देता है। राग, द्वेष और मोह का त्याग करने से वह पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त हो जाता है; वह दुख से मुक्त हो जाता है, मैं कहता हूँ। भिक्षुओं, ये दो बातें हैं।

---

7 अंधकार (कान्हा संस्कृत: कृष्ण)

"भिक्षुओं, ये दो अंधकारमय गुण हैं। कौन से दो? नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। यही दो अंधकारमय गुण हैं।"

---

8 उज्ज्वल (सुक्का)

"भिक्षुओं, ये दो उज्ज्वल गुण हैं। वे दो कौन से हैं? नैतिक लज्जा और नैतिक भय। 225 यही दो उज्ज्वल गुण हैं।"

---

9 चरित्र (कैरिया सं. कैरिट्रा)

भिक्षुओं, ये दो उज्ज्वल गुण संसार की रक्षा करते हैं। वे दो गुण कौन से हैं? नैतिक लज्जा और नैतिक भय। यदि ये दो उज्ज्वल गुण संसार की रक्षा न करते, तो यहाँ माता, मौसी, गुरुओं की पत्नियों और अन्य सम्मानित व्यक्तियों के प्रति संयम नहीं देखा जाता। 226 संसार बकरियों और भेड़ों, मुर्गियों और सूअरों, कुत्तों और सियार की तरह अनैतिक हो जाता। परन्तु क्योंकि ये दो उज्ज्वल गुण संसार की रक्षा करते हैं, इसलिए यहाँ माता, मौसी, गुरुओं की पत्नियों और अन्य सम्मानित व्यक्तियों के प्रति संयम देखा जाता है।

---

10 वर्षा ऋतु में प्रवेश करना

"भिक्षुओं (मठवासियों), वर्षा ऋतु में प्रवेश करने के ये दो अवसर हैं। 227 कौन से दो? पहला और दूसरा। ये वर्षा ऋतु में प्रवेश करने के दो अवसर हैं।" [52] .

II. अनुशासनात्मक मुद्दे (अधिकरण)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

11

भिक्षुओं, ये दो शक्तियाँ हैं। कौन सी दो? चिंतन की शक्ति और विकास की शक्ति। और चिंतन की शक्ति क्या है? यहाँ, कोई इस प्रकार चिंतन करता है: 'शारीरिक दुराचार का फल वर्तमान जीवन और भविष्य जीवन दोनों में बुरा होता है; वाणी का दुराचार का फल वर्तमान जीवन और भविष्य जीवन दोनों में बुरा होता है; मानसिक दुराचार का फल वर्तमान जीवन और भविष्य जीवन दोनों में बुरा होता है।' ऐसा चिंतन करने के बाद, वह शारीरिक दुराचार का त्याग कर अच्छे शारीरिक आचरण का विकास करता है; वह वाणी का त्याग कर अच्छे वाणी के आचरण का विकास करता है; वह मानसिक दुराचार का त्याग कर अच्छे मानसिक आचरण का विकास करता है; वह स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। इसे चिंतन की शक्ति कहते हैं।

और विकास की शक्ति क्या है? विकास की शक्ति प्रशिक्षुओं की शक्ति है। 229 प्रशिक्षु की शक्ति पर भरोसा करके व्यक्ति कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग कर देता है। कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग करने के बाद व्यक्ति कोई हानिकारक कार्य (अकुशल) नहीं करता; वह किसी भी बुरे कार्य का अनुसरण नहीं करता। इसे ही विकास की शक्ति कहते हैं। भिक्षुओं, ये दो शक्तियाँ हैं।

12

भिक्षुओं, ये दो शक्तियाँ हैं। कौन सी दो? चिंतन की शक्ति और विकास की शक्ति। और चिंतन की शक्ति क्या है? यहाँ, कोई इस प्रकार चिंतन करता है: 'शारीरिक दुराचार का फल वर्तमान जीवन और भविष्य जीवन में बुरा होता है; वाणी का दुराचार का फल वर्तमान जीवन और भविष्य जीवन में बुरा होता है; मानसिक दुराचार का फल वर्तमान जीवन और भविष्य जीवन में बुरा होता है।' ऐसा चिंतन करने के बाद, वह शारीरिक दुराचार का त्याग करके शारीरिक सुवाह्य आचरण का विकास करता है; वह वाणी का त्याग करके वाणी का सुवाह्य आचरण का विकास करता है; वह मानसिक दुराचार का त्याग करके मानसिक सुवाह्य आचरण का विकास करता है; वह स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। इसे चिंतन की शक्ति कहते हैं।

"और विकास की शक्ति क्या है? यहाँ, [53] एक भिक्षु एकांत, वैराग्य और निश्चिंतता पर आधारित सती (ध्यान) के ज्ञानोदय तत्व का विकास करता है, जो मुक्ति में परिपक्व होता है। वह घटनाओं के विवेक (धम्म) के ज्ञानोदय तत्व का विकास करता है... ऊर्जा (वीर्य) के ज्ञानोदय तत्व का... आनंद (पीति) के ज्ञानोदय तत्व का... शांति (पासद्धि) के ज्ञानोदय तत्व का... समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) के ज्ञानोदय तत्व का... उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) के ज्ञानोदय तत्व का जो एकांत, वैराग्य और निश्चिंतता पर आधारित है, जो मुक्ति में परिपक्व होता है। इसे ही विकास की शक्ति कहते हैं।" "हे भिक्षुओं, ये दो शक्तियाँ हैं।"

13

भिक्षुओं, ये दो शक्तियाँ हैं। कौन सी दो? चिंतन की शक्ति और विकास की शक्ति। और चिंतन की शक्ति क्या है? यहाँ, कोई इस प्रकार चिंतन करता है: 'शारीरिक दुराचार का फल वर्तमान जीवन और भविष्य जीवन में बुरा होता है; वाणी का दुराचार का फल वर्तमान जीवन और भविष्य जीवन में बुरा होता है; मानसिक दुराचार का फल वर्तमान जीवन और भविष्य जीवन में बुरा होता है।' ऐसा चिंतन करने के बाद, वह शारीरिक दुराचार का त्याग करके शारीरिक सुवाह्य आचरण का विकास करता है; वह वाणी का त्याग करके वाणी का सुवाह्य आचरण का विकास करता है; वह मानसिक दुराचार का त्याग करके मानसिक सुवाह्य आचरण का विकास करता है; वह स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। इसे चिंतन की शक्ति कहते हैं।

और विकास की शक्ति क्या है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल हैं। विचार और चिंतन के शांत होने पर, वह द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन नहीं होते। परमानंद (पीति) के भी लुप्त होने पर, वह समभाव में, सचेत (ध्यानशील/सती) और पूर्णतः बोध करते हुए, शरीर सहित सुख (सुख) का अनुभव करता है; वह तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसके बारे में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव में, सचेत (ध्यानशील/सती) है, जो निवास करता है...' खुशी से। सुख और दुख का त्याग करके, और पहले ही आनंद और उदासी के दूर हो जाने के बाद, वह चौथे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) द्वारा सती ध्यान का शुद्धिकरण होता है। इसे विकास की शक्ति कहा जाता है। "ये, भिक्षुओं, दो शक्तियाँ हैं।"

14

भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) के पास दो प्रकार के धम्म उपदेश हैं। वे दो कौन से हैं? संक्षेप में और विस्तार से। 230 तथागत (बुद्ध) के पास दो प्रकार के धम्म उपदेश हैं।

15

भिक्षुओं, यदि किसी विशेष अनुशासन संबंधी मुद्दे के संबंध में, 231 अपराध करने वाला भिक्षु और उसे फटकारने वाला भिक्षु दोनों अपने-अपने बारे में गहन चिंतन न करें, तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह अनुशासन संबंधी मुद्दा [54] लंबे समय तक कटुता और द्वेष का कारण बनेगा और भिक्षु चैन से नहीं रह पाएंगे। लेकिन यदि अपराध करने वाला भिक्षु और उसे फटकारने वाला भिक्षु दोनों अपने-अपने बारे में गहन चिंतन करें, तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह अनुशासन संबंधी मुद्दा लंबे समय तक कटुता और द्वेष का कारण नहीं बनेगा और भिक्षु चैन से रह पाएंगे।

और अपराध करने वाला भिक्षु अपने आत्मचिंतन कैसे करता है? यहाँ, अपराध करने वाला भिक्षु इस प्रकार आत्मचिंतन करता है: 'मैंने शरीर से एक विशेष अकुशल अपराध किया है। 232 उस भिक्षु ने मुझे ऐसा करते देखा। यदि मैंने शरीर से कोई विशेष अकुशल अपराध न किया होता, तो वह मुझे ऐसा करते नहीं देखता। परन्तु क्योंकि मैंने शरीर से कोई विशेष अकुशल अपराध किया, इसलिए उसने मुझे ऐसा करते देखा। जब उसने मुझे शरीर से कोई विशेष अकुशल अपराध करते देखा, तो वह अप्रसन्न हो गया। अप्रसन्न होकर उसने अपनी अप्रसन्नता मुझसे व्यक्त की। क्योंकि उसने अपनी अप्रसन्नता मुझसे व्यक्त की, इसलिए मैं भी अप्रसन्न हो गया। अप्रसन्न होकर मैंने दूसरों को सूचित किया। इस प्रकार इस मामले में मैंने ही अपराध किया, ठीक वैसे ही जैसे कोई यात्री अपने माल पर सीमा शुल्क से बचने पर करता है। 233 इसी प्रकार अपराध करने वाला भिक्षु अपने आत्मचिंतन करता है। वह स्वयं।

और निंदक भिक्षु स्वयं पर गहन चिंतन कैसे करता है? यहाँ, निंदक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'इस भिक्षु ने शरीर से एक विशेष अकुशल दुराचार किया है। मैंने उसे ऐसा करते देखा। यदि इस भिक्षु ने शरीर से कोई विशेष अकुशल दुराचार न किया होता, तो मैं उसे ऐसा करते नहीं देखता। [55] परन्तु क्योंकि उसने शरीर से एक विशेष अकुशल दुराचार किया, इसलिए मैंने उसे ऐसा करते देखा। जब मैंने उसे शरीर से कोई विशेष अकुशल दुराचार करते देखा, तो मैं अप्रसन्न हो गया। अप्रसन्न होकर मैंने उससे अपनी अप्रसन्नता व्यक्त की। 234 क्योंकि मैंने उससे अपनी अप्रसन्नता व्यक्त की, इसलिए वह अप्रसन्न हो गया। अप्रसन्न होकर उसने दूसरों को सूचित किया। इस प्रकार इस मामले में मैं ही वह था जिसने अपराध किया, ठीक वैसे ही जैसे कोई यात्री अपने माल पर सीमा शुल्क से बचने पर करता है। इसी प्रकार निंदक भिक्षु अपने आप पर गहन चिंतन करता है। वह स्वयं।

हे भिक्षुओं, यदि किसी विशेष अनुशासन संबंधी मुद्दे के संबंध में, अपराध करने वाला भिक्षु और उसे फटकारने वाला भिक्षु दोनों अपने-अपने आत्मचिंतन न करें, तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह अनुशासन संबंधी मुद्दा लंबे समय तक कटुता और द्वेष का कारण बनेगा और भिक्षुओं को चैन नहीं मिलेगा। परन्तु यदि अपराध करने वाला भिक्षु और उसे फटकारने वाला भिक्षु दोनों अपने-अपने आत्मचिंतन का अभ्यास करें, तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह अनुशासन संबंधी मुद्दा लंबे समय तक कटुता और द्वेष का कारण नहीं बनेगा और भिक्षुओं को चैन मिलेगा।

16

फिर एक ब्राह्मण भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वह एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से बोला, “हे गौतम गुरु, ऐसा क्यों होता है कि शरीर के क्षरण के बाद कुछ प्राणी मृत्यु के बाद दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं?” बुद्ध ने उत्तर दिया, “हे ब्राह्मण, धर्म के विपरीत आचरण, अधर्मी आचरण के कारण ही कुछ प्राणी शरीर के क्षरण के बाद मृत्यु के बाद दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।” 235

"पर ऐसा क्यों है, हे गुरु गौतम, कि शरीर के क्षरण के बाद, मृत्यु के बाद, कुछ प्राणी एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं?" बुद्ध: "हे ब्राह्मण, धम्म के अनुसार आचरण, धार्मिक आचरण [56] के कारण, शरीर के क्षरण के बाद, मृत्यु के बाद, कुछ प्राणी एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! उत्कृष्ट, गुरु गौतम! गुरु गौतम ने अनेक तरीकों से धम्म को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग आकृतियाँ देख सकें। मैं अब गुरु गौतम, धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। गुरु गौतम मुझे आज से जीवन भर के लिए शरण लेने वाला गृहस्थ अनुयायी समझें।"

17

तब ब्राह्मण जनुस्सोनी भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से बोले, “हे गौतम गुरु, ऐसा क्यों है कि शरीर के क्षोभ के बाद कुछ प्राणी मृत्यु के लोक में, बुरे भाग्य में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं?”

"हे ब्राह्मण, कर्मों और अकर्मों के फलस्वरूप ही कुछ प्राणी शरीर के विखंडन के बाद मृत्यु के समय दुख लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।" "हे गुरु गौतम, ऐसा क्यों होता है कि कुछ प्राणी शरीर के विखंडन के बाद मृत्यु के समय अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेते हैं?" "हे ब्राह्मण, कर्मों और अकर्मों के फलस्वरूप ही कुछ प्राणी शरीर के विखंडन के बाद मृत्यु के समय अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेते हैं।" 236 "गुरु गौतम ने संक्षेप में जो कथन कहा है, उसका विस्तृत अर्थ मुझे समझ नहीं आया। यदि गुरु गौतम मुझे 'ओह अम्मा' सिखा दें, तो मैं इसका विस्तृत अर्थ समझ पाऊंगा।" "तो हे ब्राह्मण, ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।" [57]

“जी हां,” ब्राह्मण जानूसोनी ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

हे ब्राह्मण, यहाँ किसी ने शारीरिक दुराचार के कर्म किए हैं, न कि शारीरिक सुख के; उसने मौखिक दुराचार के कर्म किए हैं, न कि मौखिक सुख के; उसने मानसिक दुराचार के कर्म किए हैं, न कि मानसिक सुख के। अतः किए गए और न किए गए कर्मों के कारण ही कुछ प्राणी शरीर के क्षोभ के बाद मृत्यु के समय दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं। परन्तु किसी ने शारीरिक सुख के कर्म किए हैं, न कि शारीरिक दुराचार के; उसने मौखिक सुख के कर्म किए हैं, न कि मौखिक दुराचार के; उसने मानसिक सुख के कर्म किए हैं, न कि मानसिक दुराचार के। अतः किए गए और न किए गए कर्मों के कारण ही कुछ प्राणी शरीर के क्षोभ के बाद मृत्यु के समय अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेते हैं।

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... [जैसा कि 2:16 में है] ... गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

18

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा, "आनंद, मैं स्पष्ट रूप से कहता हूँ कि शारीरिक दुराचार, वाणी दुराचार और मानसिक दुराचार नहीं करना चाहिए।" "हे भंते, चूंकि भगवान (बुद्ध) ने स्पष्ट रूप से कहा है कि शारीरिक दुराचार, वाणी दुराचार और मानसिक दुराचार नहीं करना चाहिए, तो इस प्रकार कार्य करने में क्या खतरा है?" "आनंद, मैंने स्पष्ट रूप से कहा है कि शारीरिक दुराचार, मौखिक दुराचार और मानसिक दुराचार नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से यह खतरा उत्पन्न होता है: व्यक्ति स्वयं को दोषी ठहराता है; ज्ञानी लोग जाँच-पड़ताल करके उसकी निंदा करते हैं; उसके बारे में बुरी अफवाहें फैलती हैं; वह भ्रमित अवस्था में मरता है; और शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। मैंने स्पष्ट रूप से कहा है कि शारीरिक दुराचार, मौखिक दुराचार और मानसिक दुराचार नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से यह खतरा उत्पन्न होता है।"

"मैं निश्चित रूप से कहता हूँ, आनंद, [58] कि शारीरिक, मौखिक और मानसिक रूप से अच्छे आचरण के कर्म करने चाहिए।" "चूँकि, भंते, भगवान (बुद्ध) ने निश्चित रूप से कहा है कि शारीरिक, मौखिक और मानसिक रूप से अच्छे आचरण के कर्म करने चाहिए, तो ऐसा करने से क्या लाभ अपेक्षित है?" "आनंद, मैंने निश्चित रूप से कहा है कि शारीरिक, मौखिक और मानसिक रूप से अच्छे आचरण के कर्म करने चाहिए क्योंकि ऐसा करने से यह लाभ अपेक्षित है: व्यक्ति स्वयं को दोष नहीं देता; ज्ञानी लोग जाँच-पड़ताल करके उसकी प्रशंसा करते हैं; व्यक्ति को अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त होती है; व्यक्ति बिना किसी भ्रम के मरता है; और शरीर के नष्ट होने के बाद, मृत्यु के बाद, व्यक्ति एक अच्छे स्थान, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेता है। मैंने निश्चित रूप से कहा है कि शारीरिक, मौखिक और मानसिक रूप से अच्छे आचरण के कर्म करने चाहिए क्योंकि ऐसा करने से यह लाभ अपेक्षित है।"

19

भिक्षुओं, अकुशल कर्मों का त्याग करो! अकुशल कर्मों का त्याग संभव है। यदि अकुशल कर्मों का त्याग संभव न होता, तो मैं यह न कहता: 'भिक्षुओं, अकुशल कर्मों का त्याग करो!' परन्तु क्योंकि अकुशल कर्मों का त्याग संभव है, इसलिए मैं कहता हूँ: 'भिक्षुओं, अकुशल कर्मों का त्याग करो!' यदि अकुशल कर्मों का त्याग हानि और पीड़ा का कारण होता, तो मैं तुम्हें इसका त्याग करने के लिए न कहता। परन्तु क्योंकि अकुशल कर्मों का त्याग कल्याण और सुख की ओर ले जाता है, इसलिए मैं कहता हूँ: 'भिक्षुओं, अकुशल कर्मों का त्याग करो!'

भिक्षुओं, लाभकारी (कुशल) गुणों का विकास करो! लाभकारी (कुशल) गुणों का विकास संभव है। यदि लाभकारी (कुशल) गुणों का विकास संभव न होता, तो मैं यह न कहता: 'भिक्षुओं, लाभकारी (कुशल) गुणों का विकास करो!' परन्तु क्योंकि लाभकारी (कुशल) गुणों का विकास संभव है, इसलिए मैं कहता हूँ: 'भिक्षुओं, लाभकारी (कुशल) गुणों का विकास करो!' यदि लाभकारी (कुशल) गुणों का विकास हानि और पीड़ा का कारण बनता, तो मैं तुम्हें इसका विकास करने के लिए न कहता। परन्तु क्योंकि लाभकारी (कुशल) गुणों का विकास कल्याण और सुख की ओर ले जाता है, इसलिए मैं कहता हूँ: 'भिक्षुओं, लाभकारी (कुशल) गुणों का विकास करो!'

---

20 [237]

भिक्षुओं, ये दो बातें हैं जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हैं। वे दो बातें क्या हैं? [59] गलत ढंग से लिखे गए शब्द और वाक्यांश तथा गलत ढंग से व्याख्या किया गया अर्थ। 238 जब शब्द और वाक्यांश गलत ढंग से लिखे जाते हैं, तो उनका अर्थ गलत ढंग से व्याख्या किया जाता है। यही दो बातें अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हैं।

21

भिक्षुओं, ये दो बातें हैं जो उत्तम धम्म की निरंतरता, अवक्रमण न होने और लुप्त न होने का कारण बनती हैं। वे दो बातें क्या हैं? सुस्पष्ट शब्द और वाक्यांश तथा सुस्पष्ट अर्थ। 239 जब शब्द और वाक्यांश सुस्पष्ट रूप से लिखे जाते हैं, तो उनका अर्थ भी सुस्पष्ट होता है। यही दो बातें उत्तम धम्म की निरंतरता, अवक्रमण न होने और लुप्त न होने का कारण बनती हैं।

III. बाल (बचकाना)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

22

"भिक्षुओं, दो प्रकार के बल (बचकाना) होते हैं। वे कौन से दो हैं? एक वह जो अपने अपराध को अपराध नहीं मानता और दूसरा वह जो धर्म के अनुसार, स्वीकारोक्ति करने वाले के अपराध को स्वीकार नहीं करता। ये दो प्रकार के बल (बचकाना) हैं। [240] "भिक्षुओं, दो

प्रकार के ज्ञानी होते हैं। वे कौन से दो हैं? एक वह जो अपने अपराध को अपराध मानता है और दूसरा वह जो धर्म के अनुसार, स्वीकारोक्ति करने वाले के अपराध को स्वीकार करता है। ये दो प्रकार के ज्ञानी हैं।"

23

"भिक्षुओं, ये दोनों तथागत (बुद्ध) का गलत चित्रण करते हैं। कौन से दो? एक घृणा से भरा हुआ और घृणा को अपने मन में पालता हुआ, और दूसरा अपनी गलतफहमी के कारण आस्था से परिपूर्ण। ये दोनों तथागत (बुद्ध) का गलत चित्रण करते हैं।" 241

---

24 [242]

भिक्षुओं, ये दो तथागत (बुद्ध) का गलत अर्थ निकालते हैं। वे दो कौन हैं? [60] एक वह जो तथागत (बुद्ध) द्वारा न कहे गए वचन की व्याख्या इस प्रकार करता है जैसे उसने कहा हो, और दूसरा वह जो तथागत (बुद्ध) द्वारा कहे गए वचन की व्याख्या इस प्रकार करता है जैसे उसने कहा न हो। ये दोनों तथागत (बुद्ध) का गलत अर्थ निकालते हैं। भिक्षुओं, ये दो तथागत (बुद्ध) का गलत अर्थ नहीं निकालते। वे दो कौन हैं? एक वह जो तथागत (बुद्ध) द्वारा न कहे गए वचन की व्याख्या इस प्रकार करता है जैसे उसने कहा न हो, और दूसरा वह जो तथागत (बुद्ध) द्वारा कहे गए वचन की व्याख्या इस प्रकार करता है जैसे उसने कहा हो। ये दोनों तथागत (बुद्ध) का गलत अर्थ नहीं निकालते।

25

"भिक्षुओं, ये दोनों तथागत (बुद्ध) का गलत अर्थ निकालते हैं। कौन से दो? एक जो ऐसे प्रवचन की व्याख्या करता है जिसका अर्थ स्पष्ट है, और उसे स्पष्ट अर्थ वाले प्रवचन के रूप में प्रस्तुत करता है, और दूसरा जो ऐसे प्रवचन की व्याख्या करता है जिसका अर्थ स्पष्ट है, और उसे स्पष्ट अर्थ वाले प्रवचन के रूप में प्रस्तुत करता है। ये दोनों तथागत (बुद्ध) का गलत अर्थ निकालते हैं।" [243]

26

भिक्षुओं, ये दोनों तथागत (बुद्ध) का गलत अर्थ नहीं निकालते। वे कौन से दो हैं? एक वह जो किसी ऐसे प्रवचन की व्याख्या करता है जिसका अर्थ स्पष्ट है, और दूसरा वह जो किसी ऐसे प्रवचन की व्याख्या करता है जिसका अर्थ स्पष्ट है। ये दोनों तथागत (बुद्ध) का गलत अर्थ नहीं निकालते।

27

"भिक्षुओं (मठवासियों), गुप्त कर्म करने वाले के लिए दो गंतव्यों में से एक की अपेक्षा की जा सकती है: नरक या पशुलोक। [244]
"स्पष्ट कर्म करने वाले के लिए दो गंतव्यों में से एक की अपेक्षा की जा सकती है: देवलोक या मनुष्यलोक।"

---

28 [245]

भिक्षुओं, जो गलत मत रखते हैं, उनके लिए दो में से एक गंतव्य निश्चित है: नरक या पशुलोक।

29

"भिक्षुओं, सही दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्ति के लिए दो गंतव्यों में से एक की अपेक्षा की जा सकती है: देवलोक या मनुष्यलोक।"

30

भिक्षुओं, अनैतिक व्यक्ति के लिए दो ही स्थान हैं: नरक या पशुलोक। सद्‌गुणी व्यक्ति के लिए दो ही स्थान हैं: देवलोक या मनुष्यलोक।

31

"भिक्षुओं (सन्यासियों), दो लाभों को देखते हुए, मैं जंगलों और वनों में एकांतवास में शरण लेता हूँ। 247 वे दो लाभ क्या हैं? मैं अपने लिए इसी जीवन में एक सुखद निवास देखता हूँ [61] और मुझे आने वाली पीढ़ियों के लिए करुणा है। 248 इन दो लाभों को देखते हुए, मैं जंगलों और वनों में एकांतवास में शरण लेता हूँ।"

32

भिक्षुओं, ये दो बातें सच्चे ज्ञान से संबंधित हैं। [249] वे दो बातें क्या हैं? समभाव (समाथा) और अंतर्दृष्टि (विपश्यना)। समभाव विकसित होने पर क्या लाभ होता है? मन का विकास होता है। मन विकसित होने पर क्या लाभ होता है? कामवासना (राग) का त्याग होता है। अंतर्दृष्टि (विपश्यना) विकसित होने पर क्या लाभ होता है? ज्ञान (दिव्य ज्ञान) का विकास होता है। ज्ञान (दिव्य ज्ञान) विकसित होने पर क्या लाभ होता है? अज्ञान का त्याग होता है। [250] कामवासना (राग) से दूषित मन मुक्त नहीं होता, और अज्ञान से दूषित ज्ञान (दिव्य ज्ञान) का विकास नहीं होता। अतः, भिक्षुओं, कामवासना (राग) के मिटने से मन मुक्त होता है, और अज्ञान के मिटने से ज्ञान (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति होती है। [251]

IV. एकमत (समाचित्त)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

33

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें बुरे और अच्छे व्यक्ति के लोक के बारे में सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।" "जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा: . .

और बुरे व्यक्ति का स्तर क्या है? बुरा व्यक्ति कृतघ्न और निःकृतज्ञ होता है। क्योंकि कृतघ्नता और निःकृतज्ञता को बुरे लोग ही बढ़ावा देते हैं। कृतघ्नता और निःकृतज्ञता पूरी तरह से बुरे व्यक्ति के स्तर से संबंधित हैं। और अच्छे व्यक्ति का स्तर क्या है? अच्छा व्यक्ति

कृतज्ञ और आभारी होता है। क्योंकि कृतज्ञता और कृतज्ञता को अच्छे लोग ही बढ़ावा देते हैं। कृतज्ञता और कृतज्ञता पूरी तरह से अच्छे व्यक्ति के स्तर से संबंधित हैं।

34

भिक्षुओं, दो ऐसे व्यक्ति हैं जिनका प्रतिफल आसानी से नहीं चुकाया जा सकता। वे कौन से दो व्यक्ति हैं? माता-पिता। यदि कोई अपनी माता को एक कंधे पर [62] और अपने पिता को दूसरे कंधे पर उठाकर सौ वर्ष की आयु तक जीवित रहे; और उनकी सेवा करते हुए, उन्हें मलहम लगाए, उनकी मालिश करे, उन्हें स्नान कराए और उनके अंगों को रगड़े, और वे वहीं मूत्र और मल त्याग करें, तब भी उसने अपने माता-पिता के लिए पर्याप्त कार्य नहीं किया होगा और न ही उनका प्रतिफल चुकाया होगा। यदि कोई अपने माता-पिता को सात रत्नों से परिपूर्ण इस विशाल पृथ्वी पर सर्वोच्च स्वामी और शासक के रूप में स्थापित कर दे, तब भी उसने अपने माता-पिता के लिए पर्याप्त कार्य नहीं किया होगा और न ही उनका प्रतिफल चुकाया होगा। इसका कारण क्या है? माता-पिता अपने बच्चों के लिए बहुत बड़े सहायक होते हैं; वे उनका पालन-पोषण करते हैं, उन्हें भोजन कराते हैं और उन्हें संसार का ज्ञान कराते हैं। लेकिन, भिक्षुओं, यदि कोई अपने माता-पिता के विश्वास में कमी होने पर उन्हें प्रोत्साहित करे, उन्हें विश्वास में स्थिर करे और उन्हें दृढ़ करे; यदि कोई अपने माता-पिता के अनैतिक होने पर उन्हें प्रोत्साहित करे, उन्हें सद्गुणों में दृढ़ करे और उन्हें दृढ़ करे; यदि कोई अपने माता-पिता के कंजूस होने पर उन्हें प्रोत्साहित करे, उन्हें उदारता में दृढ़ करे और उन्हें दृढ़ करे; यदि कोई अपने माता-पिता के नासमझ होने पर उन्हें प्रोत्साहित करे, उन्हें दृढ़ करे और उन्हें पन्ना (दिव्य ज्ञान) में दृढ़ करे: इस प्रकार, व्यक्ति ने अपने माता-पिता के लिए पर्याप्त किया है, उन्हें प्रतिफल दिया है और उनके लिए पर्याप्त से अधिक किया है।' 252

35

फिर एक ब्राह्मण भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर, वह एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से बोला, "गुरु गौतम क्या कहते हैं, वे क्या घोषणा करते हैं?" "ब्राह्मण, मैं कर्म और अकर्म के सिद्धांत का प्रतिपादन करता हूँ।" 253 "परन्तु गुरु गौतम किस प्रकार कर्म और अकर्म के सिद्धांत का प्रतिपादन करते हैं?"

मैं शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार के संबंध में अकर्म का प्रतिपादन करता हूँ; मैं अनेक प्रकार के अकुशल गुणों (धम्म) के संबंध में अकर्म का प्रतिपादन करता हूँ। मैं अच्छे शारीरिक, वाणी और मानसिक आचरण के संबंध में कर्म का प्रतिपादन करता हूँ; मैं अनेक प्रकार के कुशल गुणों (धम्म) के संबंध में कर्म का प्रतिपादन करता हूँ। हे ब्राह्मण, इसी प्रकार मैं कर्म का सिद्धांत और अकर्म का सिद्धांत प्रतिपादित करता हूँ।

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! उत्कृष्ट, गुरु गौतम! गुरु गौतम ने अनेक तरीकों से धम्म (मार्ग) को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरे हुए को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग आकृतियाँ देख सकें। मैं अब गुरु गौतम, धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। गुरु गौतम मुझे आज से जीवन भर के लिए शरण लेने वाला गृहस्थ अनुयायी समझें।"

36

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, [63] उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा, “हे भंते, संसार में कौन भेंट के योग्य है, और कहाँ भेंट दी जानी चाहिए?” “हे गृहस्थ, संसार में दो ही भेंट के योग्य हैं: प्रशिक्षु और प्रशिक्षण से परे (अरहंत/प्रबुद्ध)। 254 ये दो ही संसार में भेंट के योग्य हैं और इन्हीं को भेंट दी जानी चाहिए।”

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह कहने के बाद, गुरु सुगत (भगवान बुद्ध) ने आगे यह कहा:

इस संसार में प्रशिक्षु और प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके व्यक्ति

दान करने वालों के उपहारों के पात्र हैं;

शरीर, वाणी और मन से शुद्ध,

वे दान करने वालों के लिए क्षेत्र हैं;

उन्हें जो कुछ दिया जाता है वह महान फल देता है।

37

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस समय पूज्य सारिपुत्त पूर्वी उद्यान में मिगारमाता के महल में सावत्थी में निवास कर रहे थे। वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, "मित्रों, भिक्षुओं!" 255 "मित्र!" उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"मित्रों, मैं तुम्हें आंतरिक रूप से बंधे हुए और बाह्य रूप से बंधे हुए व्यक्ति के बारे में सिखाऊंगा। 256 ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।" "जी, मित्र," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"और हे मित्रों, आंतरिक रूप से विवश व्यक्ति कौन है? यहाँ, एक भिक्षु गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, सुचारु आचरण और आश्रय से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह देवों (देवदूतों/देवताओं) के एक निश्चित क्रम में पुनर्जन्म लेता है। वहाँ से विमुख होकर, वह एक प्रतिवर्ती है, जो इस अवस्था में लौटता है। इसे आंतरिक रूप से विवश व्यक्ति कहा जाता है, जो एक प्रतिवर्ती है, जो इस अवस्था में लौटता है। 257 [64]

हे मित्रों, बाह्य बंधनों में जकड़ा हुआ व्यक्ति कौन है? यहाँ, भिक्षु गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, सुचारु आचरण और आश्रय से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी भय देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। मन की एक निश्चित शांतिपूर्ण मुक्ति प्राप्त करके, वह उसमें निवास करता है। 238 शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह देवों (देवदूतों/देवताओं) के एक निश्चित क्रम में पुनर्जन्म लेता है। वहाँ से विमुख होकर, वह अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म न लेने वाला) होता है, जो इस अवस्था में वापस नहीं आता। इसे बाह्य बंधनों में जकड़ा हुआ व्यक्ति कहा जाता है, जो अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म न लेने वाला) होता है, जो इस अवस्था में वापस नहीं आता। 259

"हे मित्रों, भिक्षु गुणी होता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। वह इंद्रिय सुखों से विरक्ति, उनके प्रति वैराग्य और उनके निवारण का अभ्यास करता है। 260 वह जन्म की अवस्थाओं से विरक्ति, उनके प्रति वैराग्य और उनके निवारण का अभ्यास करता है। 261 वह तृष्णा के नाश का अभ्यास करता है। वह लोभ के नाश का अभ्यास करता है। 262 शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह देवों (देवदूतों/देवताओं) के एक निश्चित क्रम में पुनर्जन्म लेता है! वहाँ से निकलकर, वह अजन्मा होता है, जो इस अवस्था में वापस नहीं आता। इसे बाह्य रूप से बंधनों में जकड़ा हुआ व्यक्ति कहा जाता है, जो अजन्मा (पृथ्वी पर पुनर्जन्म नहीं लेने वाला, अनागामी) होता है, जो इस अवस्था में वापस नहीं आता।" 263

तब कई समान विचारधारा वाले देवता (देवदूत) 264 भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हो गए और उनसे कहा, "भंते, पूर्वी उद्यान में मिगारमाता के भवन में, पूज्य सारिपुत्त भिक्षुओं को आंतरिक और बाह्य रूप से बंधे हुए व्यक्ति के बारे में उपदेश दे रहे हैं। सभा रोमांचित है। हे भंते, यदि भगवान (बुद्ध) करुणावश पूज्य सारिपुत्त के पास जाएँ तो अच्छा होगा।" 265 भगवान (बुद्ध) मौन रहकर सहमत हो गए। फिर, जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को अंदर

खींच लेता है, वैसे ही भगवान (बुद्ध) जेतवन से अंतर्धान हो गए और पूर्वी उद्यान में मिगारमाता के भवन में पूज्य सारिपुत्त की उपस्थिति में पुनः प्रकट हुए। वे तैयार आसन पर बैठ गए। आदरणीय सारिपुत्त [65] ने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने आदरणीय सारिपुत्त से कहा:

"हे सारिपुत्त, यहाँ अनेक समरूप देवताओं ने मेरे पास आकर मुझे प्रणाम किया, मेरे एक ओर खड़े हो गए और बोले: 'भंते, पूर्वी उद्यान में स्थित मिगारमाता के महल में, पूज्य सारिपुत्त भिक्षुओं को आंतरिक और बाह्य रूप से बंधे हुए व्यक्ति के विषय में उपदेश दे रहे हैं। सभा रोमांचित है। हे भंते, यदि भगवान (बुद्ध) करुणावश पूज्य सारिपुत्त के पास जाएँ तो अच्छा होगा।' "वे देवता - दस, बीस, तीस, चालीस, पचास और यहाँ तक कि साठ की संख्या में - सुई की नोक जितनी छोटी जगह में भी खड़े हैं, फिर भी एक-दूसरे के स्थान का अतिक्रमण नहीं करते। हे सारिपुत्त, शायद आप सोच रहे हों: 'निश्चित रूप से, वहीं पर उन देवताओं ने अपने मन को इस प्रकार विकसित किया होगा कि दस... और यहाँ तक कि साठ की संख्या में भी सुई की नोक जितनी छोटी जगह में खड़े हैं।' फिर भी एक दूसरे के अतिक्रमण न करें। लेकिन इसे इस तरह से नहीं देखा जाना चाहिए। बल्कि, यहीं पर उन देवताओं (देवदूतों) ने अपने मन को इस प्रकार विकसित किया कि दस... और यहाँ तक कि साठ की संख्या में भी सुई की नोक जितनी छोटी जगह में खड़े होकर भी एक दूसरे के अतिक्रमण न करें। [266]

अत: हे सारिपुत्त, तुम्हें इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: 'हमारी इंद्रियाँ और मन शांत रहेंगे। 267 तुम्हें इसी प्रकार अभ्यास करना चाहिए। जब तुम्हारी इंद्रियाँ और मन शांत होंगे, तो तुम्हारा शारीरिक कर्म शांत होगा, तुम्हारा वाणी कर्म शांत होगा और तुम्हारा मानसिक कर्म शांत होगा। [यह सोचते हुए:] 'हम अपने साथी भिक्षुओं की केवल शांतिपूर्ण सेवा करेंगे,' हे सारिपुत्त, तुम्हें इसी प्रकार अभ्यास करना चाहिए। हे सारिपुत्त, अन्य संप्रदायों के वे तपस्वी जो धम्म की इस व्याख्या को सुनने से वंचित रह गए।'

38

मैंने ऐसा सुना है। एक बार पूज्य महाकच्चना कद्दमा झील के किनारे वारणा में निवास कर रहे थे। [66] तब ब्राह्मण अरमदंडा पूज्य महाकच्चना के पास आए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा, "हे गुरु कच्चना, ऐसा क्यों होता है कि क्षत्रिय क्षत्रियों से, ब्राह्मण ब्राह्मणों से और गृहस्थ गृहस्थों से लड़ते हैं?" "हे ब्राह्मण, कामवासना (राग) के प्रति आसक्ति, उसके बंधन, उसके प्रति आसक्ति, उसके प्रति आसक्ति, उसे दृढ़ता से पकड़े रहने के कारण ही क्षत्रिय क्षत्रियों से, ब्राह्मण ब्राह्मणों से और गृहस्थ गृहस्थों से लड़ते हैं।"

"हे कच्चान, ऐसा क्यों होता है कि तपस्वी तपस्वियों से लड़ते हैं?" "हे ब्राह्मण, यह इसलिए होता है क्योंकि विचारों के प्रति वासना (राग) के पालन-पोषण, उसके बंधन, उसके आसक्ति, उसके प्रति आसक्ति और उस पर दृढ़ता से टिके रहने के कारण तपस्वी तपस्वियों से लड़ते हैं।"

"क्या संसार में कोई ऐसा है जिसने इंद्रिय सुखों के लिए कामवासना (राग) के प्रति इस आसक्ति, दृढ़ता से पकड़े रहने और विचारों के लिए कामवासना (राग) के प्रति इस आसक्ति (राग) के प्रति इस आसक्ति (राग) के प्रति इस आसक्ति (राग) के प्रति इस आसक्ति (राग) के प्रति इस आसक्ति (राग) के प्रति इस आसक्ति (राग) के प्रति इस आसक्ति (राग) के प्रति इस आसक्ति (राग) के प्रति इस आसक्ति (राग), वशीकरण (आसक्ति (राग) ...

यह सुनकर ब्राह्मण अरमादंडा अपने आसन से उठे, अपना ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर डाला, अपना दाहिना घुटना जमीन पर टिकाया, भगवान (बुद्ध) की ओर आदरपूर्वक प्रणाम किया और तीन बार यह प्रेरणादायक वचन दोहराया:

भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, को प्रणाम! भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, को प्रणाम! भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, को प्रणाम! वास्तव में, उस भगवान (बुद्ध) ने इंद्रिय सुखों के प्रति राग के लगाव, उसके बंधन, उस पर आसक्ति, उस पर आसक्ति, उस पर दृढ़ता से टिके रहने और उस पर दृढ़ता से टिके रहने पर विजय प्राप्त कर ली है।

"उत्कृष्ट, गुरु कच्चाना! उत्कृष्ट, गुरु कच्चाना! गुरु कच्चाना ने अनेक तरीकों से धम्म को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग आकृतियाँ देख सकें। गुरु कच्चाना, मैं अब गुरु गौतम, धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। गुरु कच्चाना, मुझे आज से जीवन भर के लिए शरण लेने वाला गृहस्थ अनुयायी समझें।"

39

एक बार पूज्य महाकच्चना मधुरा में गुंडा वन में निवास कर रहे थे। तब ब्राह्मण कंदरायर्त पूज्य महाकच्चना के पास आए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा: "मैंने सुना है, गुरु कच्चना: 'तपस्वी कच्चना वृद्ध, उम्रदराज, वृद्धावस्था से पीड़ित, जीवन के अंतिम चरण में पहुँच चुके ब्राह्मणों को प्रणाम नहीं करते; न ही उनके लिए खड़े होते हैं और न ही उन्हें आसन देते हैं। यह सत्य है, क्योंकि गुरु कच्चना वृद्ध, उम्रदराज, वृद्धावस्था से पीड़ित, जीवन के अंतिम चरण में पहुँच चुके ब्राह्मणों को प्रणाम नहीं करते; न ही उनके लिए खड़े होते हैं और न ही उन्हें आसन देते हैं। यह उचित नहीं है। गुरु कच्चना" 269

"ब्राह्मण, भगवान (बुद्ध), अरहंत, [68] पूर्णतः प्रबुद्ध, जो सब कुछ जानते और देखते हैं, उन्होंने वृद्ध और युवा की अवस्था का वर्णन किया है। चाहे कोई वृद्ध हो—जन्म से अस्सी, नब्बे या सौ वर्ष का—यदि वह इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, उनमें लीन रहता है, 270 इंद्रिय सुखों की तीव्र इच्छा से ग्रस्त रहता है, इंद्रिय सुखों के विचारों में डूबा रहता है, और इंद्रिय सुखों की खोज में उत्सुक रहता है, तो उसे नासमझ (बचकाना) वृद्ध माना जाता है। परन्तु चाहे कोई युवा हो, काले घने बालों वाला, यौवन के वरदान से परिपूर्ण, जीवन के सर्वोपरि, यदि वह इंद्रिय सुखों का आनंद नहीं लेता, उनमें लीन नहीं रहता, इंद्रिय सुखों की तीव्र इच्छा से ग्रस्त नहीं रहता, इंद्रिय सुखों के विचारों में डूबा नहीं रहता, और इंद्रिय सुखों की खोज में उत्सुक नहीं रहता, तो उसे बुद्धिमान वृद्ध माना जाता है।"

यह सुनकर ब्राह्मण कंदरायहा अपने आसन से उठे, अपना ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर डाला और युवा भिक्षुओं के चरणों में सिर झुकाकर बोले: "आप बड़े भिक्षुओं, आप बड़ों के स्तर पर हैं; हम युवक, युवकों के स्तर पर हैं।"

"उत्कृष्ट, गुरु कच्चाना! . . . [जैसा कि 2:37 में है] . . . गुरु कच्चाना मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

40

भिक्षुओं, जब लुटेरे शक्तिशाली होते हैं, तो राजा कमजोर हो जाते हैं। उस समय राजा को अपनी राजधानी में प्रवेश करते समय, बाहर जाते समय या दूरदराज के प्रांतों का भ्रमण करते समय निश्चिंतता रहती है। उस समय ब्राह्मण और गृहस्थ भी अपने नगरों और गांवों में प्रवेश करते समय, बाहर जाते समय या बाहर काम करते समय निश्चिंत नहीं रहते। इसी प्रकार, जब दुष्ट भिक्षु शक्तिशाली होते हैं, तो अच्छे भिक्षु कमजोर हो जाते हैं। उस समय अच्छे भिक्षु संघ के बीच चुपचाप बैठे रहते हैं या दूरदराज के प्रांतों में चले जाते हैं। इससे अनेक लोगों को हानि होती है, अनेक लोग दुखी होते हैं, अनेक लोगों, देवताओं और मनुष्यों का विनाश, हानि और कष्ट होता है। [69]

भिक्षुओं, जब राजा बलवान होते हैं, तब लुटेरे कमजोर होते हैं। उस समय राजा अपनी राजधानी में प्रवेश करते समय, बाहर जाते समय और दूर-दराज के प्रांतों का भ्रमण करते समय निश्चिंत रहते हैं। उस समय ब्राह्मण और गृहस्थ भी अपने नगरों और गांवों में प्रवेश करते समय, बाहर जाते समय और बाहर के कार्यों में लगे रहते हैं। इसी प्रकार, जब सलीकेदार भिक्षु बलवान होते हैं, तब दुष्ट भिक्षु कमजोर होते हैं। उस समय दुष्ट भिक्षु संघ के बीच चुपचाप बैठे रहते हैं या दूसरे लोकों की ओर प्रस्थान कर जाते हैं। 273 यह अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, कल्याण और सुख के लिए है, चाहे वे देव हों या मनुष्य।

41

41.1 "भिक्षुओं, मैं दो प्रकार के लोगों के कुकर्म की प्रशंसा नहीं करता; एक गृहस्थ और दूसरा संन्यासी। चाहे गृहस्थ हो या संन्यासी, कुकर्म का पालन करने वाले सच्चे मार्ग, लाभकारी धम्म (कुशल) को प्राप्त नहीं कर पाते। 275

41.2 "भिक्षुओं, मैं दो प्रकार के लोगों के सही अभ्यास की प्रशंसा करता हूँ: एक गृहस्थ और दूसरा संन्यासी। चाहे गृहस्थ हो या संन्यासी, सही ढंग से अभ्यास करने वाले सही अभ्यास के कारण ही वे सच्चे मार्ग, लाभकारी धम्म (कुशल) को प्राप्त करते हैं।"

42

भिक्षुओं, वे भिक्षु जो गलत ढंग से प्राप्त प्रवचनों के माध्यम से धम्म के अर्थ और सार को त्याग देते हैं, जिनकी शब्दावली सही शब्दावली की मात्र दिखावटी होती है, वे अनेक लोगों के लिए हानि, दुःख, विनाश, हानि और पीड़ा का कारण बनते हैं, चाहे वे देव हों या मनुष्य। ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और अच्छे धम्म को लुप्त कर देते हैं।

"भिक्षुओं, वे भिक्षु जो सुशिक्षित प्रवचनों के साथ धम्म के अर्थ और अनुरूपता का पालन करते हैं, जिनकी शब्दावली मात्र दिखावटी नहीं है, वे अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के कल्याण और खुशी के लिए कार्य कर रहे हैं। ये भिक्षु (भिक्षु) बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और अच्छे धम्म को बनाए रखते हैं।" [70]

वी. सभाएं (पेरिसा सं. परिषद)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

43

भिक्षुओं, दो प्रकार की सभाएँ होती हैं। कौन सी दो? सतही सभा और गहरी सभा। और सतही सभा क्या है? वह सभा जिसमें भिक्षु बेचैन, अहंकारी, अभिमानी, बातूनी, बेतरतीब बातों वाले, अव्यवस्थित ध्यान वाले, पूर्ण बोध से रहित, असामंजस्यपूर्ण, भटकते मन वाले और शिथिल इंद्रियों वाले होते हैं, उसे सतही सभा कहते हैं।

और गहन सभा क्या है? वह सभा जिसमें भिक्षु बेचैन, अहंकारी, अभिमानी, बातूनी और निरर्थक बातों से रहित होते हैं, बल्कि सती ध्यान स्थापित कर लेते हैं, पूर्णतः बोध रखते हैं, समाधि में लीन रहते हैं, एकाग्रचित्त होते हैं और इंद्रियों को संयमित रखते हैं, उसे गहन सभा कहते हैं। हे भिक्षुओं, ये दो प्रकार की सभाएँ हैं। इन दो प्रकार की सभाओं में गहन सभा सर्वोपरि है। 278

44

भिक्षुओं, दो प्रकार की सभाएँ होती हैं। कौन सी दो? विभाजित सभा और सामंजस्यपूर्ण सभा। और विभाजित सभा क्या है? वह सभा जिसमें भिक्षु आपस में बहस और झगड़े करते हैं, विवाद में पड़ते हैं और एक-दूसरे को तीखे शब्दों से घायल करते हैं, उसे विभाजित सभा कहते हैं। 279

“और सामंजस्यपूर्ण सभा क्या है? वह सभा जिसमें भिक्षु एकमत होकर, सद्भाव से, बिना किसी विवाद के, दूध और पानी की तरह एक दूसरे में घुलमिलकर, एक दूसरे को स्नेह भरी दृष्टि से देखते हुए निवास करते हैं, उसे सामंजस्यपूर्ण सभा कहते हैं। “हे भिक्षुओं, ये दो प्रकार की सभाएँ हैं। इन दो प्रकार की सभाओं में सामंजस्यपूर्ण सभा सर्वोपरि है।”

45

भिक्षुओं, दो प्रकार की सभाएँ होती हैं। कौन सी दो? निम्न श्रेणी की सभा और श्रेष्ठ श्रेणी की सभा। [71] और निम्न श्रेणी की सभा क्या है? इस प्रकार की सभा में वरिष्ठ भिक्षु विलासी और लापरवाह होते हैं, पतन में अग्रणी होते हैं, एकांतवास के कर्तव्य का त्याग करते हैं; वे अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाते। अगली पीढ़ी के लोग भी उनका अनुसरण करते हैं। 280 वे भी विलासी और लापरवाह हो जाते हैं, पतन में अग्रणी होते हैं, एकांतवास के कर्तव्य का त्याग करते हैं; वे भी अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाते। अभी तक अवास्तविक। इसे निम्न स्तर की सभा कहा जाता है।

और अग्रणी भिक्षुओं की सभा क्या है? इस प्रकार की सभा में वरिष्ठ भिक्षु विलासी और लापरवाह नहीं होते, बल्कि पतन का त्याग करके एकांतवास में नेतृत्व करते हैं; वे अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने, अभी तक अप्राप्त को सिद्ध करने और अभी तक अप्राप्त को सिद्ध करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाते हैं। अगली पीढ़ी उनके उदाहरण का अनुसरण करती है। वे भी विलासी और लापरवाह नहीं होते, बल्कि पतन का त्याग करके एकांतवास में नेतृत्व करते हैं; वे भी अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने, अभी तक अप्राप्त को सिद्ध करने और अभी तक अप्राप्त को सिद्ध करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाते हैं। इसे ही अग्रणी भिक्षुओं की सभा कहते हैं। हे भिक्षुओं, ये दो प्रकार की सभाएँ हैं। इन दो प्रकार की सभाओं में अग्रणी भिक्षुओं की सभा सबसे श्रेष्ठ है। 281

46

भिक्षुओं, दो प्रकार की सभाएँ होती हैं। कौन सी दो? श्रेष्ठों की सभा और नीचों की सभा। और नीचों की सभा क्या है? वह सभा जिसमें भिक्षु यह नहीं समझते कि वास्तव में क्या है: 'यह दुख है'; यह नहीं समझते कि वास्तव में क्या है: 'यह दुख का कारण है'; यह नहीं समझते कि वास्तव में क्या है: 'यह दुख का निवारण है'; यह नहीं समझते कि वास्तव में क्या है: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है', उसे नीचों की सभा कहते हैं।

"और श्रेष्ठों की सभा क्या है? वह सभा जिसमें भिक्षु (भिक्षु) यह समझते हैं कि वास्तव में क्या है: 'यह दुख है'; यह समझते हैं कि वास्तव में क्या है: 'यह दुख का कारण है'; [72] यह समझते हैं कि वास्तव में क्या है: 'यह दुख का निवारण है'; यह समझते हैं कि वास्तव में क्या है: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है', उसे श्रेष्ठों की सभा कहा जाता है। 252 "हे भिक्षुओं, ये दो प्रकार की सभाएँ हैं। इन दो प्रकार की सभाओं में श्रेष्ठों की सभा सर्वोपरि है।"

47

भिक्षुओं, सभाएँ दो प्रकार की होती हैं। कौन सी दो? सभा की निम्नतम श्रेणी और सभा की उत्तम श्रेणी। और सभा की निम्नतम श्रेणी क्या है? वह सभा जिसमें भिक्षु इच्छा, घृणा, मोह या भय के कारण गलत मार्ग पर चल पड़ते हैं, उसे सभा की निम्नतम श्रेणी कहा जाता है। 283

"सर्वसम्मति का सर्वश्रेष्ठ कौन सा है? वह सभा जिसमें भिक्षु इच्छा, घृणा, मोह या भय के कारण कुटिल मार्ग पर नहीं चलते, उसे सर्वश्रेष्ठ सभा कहते हैं। हे भिक्षुओं, ये दो प्रकार की सभाएँ हैं। इन दो प्रकार की सभाओं में सर्वश्रेष्ठ सभा सर्वोपरि है।"

48

भिक्षुओं, दो प्रकार की सभाएँ होती हैं। कौन सी दो? एक वह सभा जो व्यर्थ की बातों में प्रशिक्षित होती है, प्रश्नोत्तर में नहीं, और दूसरी वह सभा जो प्रश्नोत्तर में प्रशिक्षित होती है, व्यर्थ की बातों में नहीं। 284 और वह सभा क्या है जो व्यर्थ की बातों में प्रशिक्षित होती है, प्रश्नोत्तर में नहीं? यहाँ, इस प्रकार की सभा में, जब तथागत (बुद्ध) द्वारा दिए गए वे प्रवचन पढ़े जाते हैं जो गहरे अर्थ वाले, संसार से परे, शून्यता से जुड़े हुए हैं, तो भिक्षु उन्हें सुनना नहीं चाहते, उन पर ध्यान नहीं देते, न ही उन्हें समझने के लिए अपना मन लगाते हैं; वे नहीं सोचते कि उन शिक्षाओं का अध्ययन और ज्ञान करना चाहिए। परन्तु जब वे प्रवचन पढ़े जाते हैं जो केवल कवियों द्वारा रचित कविताएँ हैं, शब्दों और वाक्यांशों में सुंदर हैं, बाहरी लोगों द्वारा रचित हैं, शिष्यों द्वारा बोले गए हैं, तो वे उन्हें सुनना चाहते हैं, उन पर ध्यान देते हैं, और उन्हें समझने के लिए अपना मन लगाते हैं; वे सोचते हैं कि उन शिक्षाओं का अध्ययन और ज्ञान करना चाहिए। 285 और उन शिक्षाओं को सीखने के बाद, वे नहीं वे आपस में उनके बारे में पूछताछ करते हैं या उनकी गहन जांच करते हैं, [73] [पूछते हैं]: 'यह कैसे है? इसका क्या अर्थ है?' वे अस्पष्ट बातों का खुलासा नहीं करते और अस्पष्ट बातों को स्पष्ट नहीं करते, या कई पेचीदा बिंदुओं के बारे में अपनी उलझन दूर नहीं करते। इसे व्यर्थ की बातों में प्रशिक्षित सभा कहा जाता है, पूछताछ में नहीं।

और वह सभा किस काम की जो प्रश्नोत्तर में प्रशिक्षित हो, न कि व्यर्थ की बातों में? यहाँ, इस प्रकार की सभा में, जब वे प्रवचन सुनाए जाते हैं जो केवल कवियों द्वारा रचित कविताएँ हैं, शब्दों और वाक्यांशों में सुंदर हैं, बाहरी लोगों द्वारा रचित हैं, शिष्यों द्वारा बोले गए हैं, तो भिक्षु उन्हें सुनना नहीं चाहते, उन पर ध्यान नहीं देते, न ही उन्हें समझने के लिए अपना मन लगाते हैं; वे उन शिक्षाओं को अध्ययन और सीखना उचित नहीं समझते। परन्तु जब तथागत (बुद्ध) द्वारा बोले गए वे प्रवचन सुनाए जाते हैं जो गहन हैं, अर्थ में गहन हैं, संसार से परे हैं, शून्यता से जुड़े हैं, तो भिक्षु उन्हें सुनना चाहते हैं, उन पर ध्यान देते हैं, और उन्हें समझने के लिए अपना मन लगाते हैं; वे उन शिक्षाओं को अध्ययन और सीखना उचित समझते हैं। और उन शिक्षाओं को सीखने के बाद, वे एक दूसरे से उनके बारे में प्रश्नोत्तर करते हैं और उनका गहन विश्लेषण करते हैं, [पूछते हैं]: 'यह कैसे है? इसका अर्थ क्या है?' वे अस्पष्ट बातों को प्रकट करते हैं, अस्पष्टताओं को स्पष्ट करते हैं और अनेक उलझनों को सुलझाते हैं। इसे प्रश्नोत्तर में प्रशिक्षित सभा कहते हैं, न कि व्यर्थ की बातों में। हे भिक्षुओं, ये दो प्रकार की सभाएँ हैं। इन दोनों प्रकार की सभाओं में, प्रश्नोत्तर में प्रशिक्षित सभा श्रेष्ठ है, न कि व्यर्थ की बातों में।

49

भिक्षुओं, दो प्रकार की सभाएँ होती हैं। कौन सी दो? एक वह सभा जो सांसारिक वस्तुओं को महत्व देती है, अच्छे धम्म को नहीं, और दूसरी वह सभा जो अच्छे धम्म को महत्व देती है, सांसारिक वस्तुओं को नहीं। 286 और वह सभा क्या है जो सांसारिक वस्तुओं को महत्व देती है, अच्छे धम्म को नहीं? यहाँ, इस प्रकार की सभा में भिक्षु श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थों की उपस्थिति में एक-दूसरे की प्रशंसा करते हुए कहते हैं: 'अमुक भिक्षु दोनों प्रकार से मुक्त हैं; अमुक भिक्षु पन्ना (दिव्य ज्ञान) से मुक्त हैं; [74] अमुक भिक्षु शरीर साक्षी हैं; अमुक भिक्षु दृष्टि प्राप्त कर चुके हैं; अमुक भिक्षु आस्था से मुक्त हैं; अमुक भिक्षु धम्म के अनुयायी हैं; अमुक भिक्षु आस्था के अनुयायी हैं; अमुक भिक्षु गुणी और अच्छे चरित्र वाले हैं; अमुक भिक्षु अनैतिक और बुरे चरित्र वाले हैं।' 287 इस प्रकार वे प्राप्त करते हैं वे इन लाभों से बंधे रहते हैं, इनके प्रति आसक्त रहते हैं, इनमें अंधाधुंध लीन रहते हैं, इनमें निहित खतरे को नहीं देखते, इनसे मुक्ति का मार्ग नहीं समझते। इसे सांसारिक वस्तुओं को महत्व देने वाली सभा कहा जाता है, न कि अच्छे धर्म को।

और वह सभा कौन सी है जो सांसारिक वस्तुओं की बजाय अच्छे धर्म को महत्व देती है? इस प्रकार की सभा में भिक्षु श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थों के सामने एक-दूसरे की प्रशंसा नहीं करते, यह कहते हुए कि 'अमुक भिक्षु दोनों ही दृष्टियों से मुक्त है... अमुक अनैतिक और बुरे चरित्र का है।' वे इस प्रकार लाभ प्राप्त करते हैं, जिनका उपयोग वे उनसे बंधे बिना, उनके प्रति आसक्ति रहित होकर, उनमें अंधाधुंध लीन हुए बिना, उनमें निहित खतरे को देखते हुए और उससे बचने का मार्ग समझते हुए करते हैं। इसे ही सांसारिक वस्तुओं की बजाय

अच्छे धर्म को महत्व देने वाली सभा कहते हैं। हे भिक्षुओं, ये दो प्रकार की सभाएँ हैं। इन दो प्रकार की सभाओं में से, सांसारिक वस्तुओं की बजाय अच्छे धर्म को महत्व देने वाली सभा सर्वोपरि है।

50

भिक्षुओं, दो प्रकार की सभाएँ होती हैं। कौन सी दो? अधर्मी सभा और धर्मी सभा। और अधर्मी सभा क्या है? इस सभा में धम्म (मार्ग) के विपरीत अनुशासनात्मक कार्य किए जाते हैं और धम्म के अनुसार अनुशासनात्मक कार्य नहीं किए जाते; अनुशासन के विपरीत अनुशासनात्मक कार्य किए जाते हैं और अनुशासन के अनुसार अनुशासनात्मक कार्य नहीं किए जाते। धम्म के विपरीत अनुशासनात्मक कार्यों की व्याख्या की जाती है और धम्म के अनुसार अनुशासनात्मक कार्यों की व्याख्या नहीं की जाती; अनुशासन के विपरीत अनुशासनात्मक कार्यों की व्याख्या की जाती है और अनुशासन के अनुसार अनुशासनात्मक कार्यों की व्याख्या नहीं की जाती। भिक्षुओं, इसे अधर्मी सभा कहते हैं। यह अधर्मी होने के कारण ही इस सभा में धम्म के विपरीत अनुशासनात्मक कार्य किए जाते हैं... [75] ... और अनुशासन के अनुसार अनुशासनात्मक कार्यों की व्याख्या नहीं की जाती। 288

"और धार्मिक सभा क्या है? इस सभा में धम्म के अनुसार अनुशासनात्मक कार्य किए जाते हैं और धम्म के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्य नहीं किए जाते; अनुशासन के अनुसार अनुशासनात्मक कार्य किए जाते हैं और अनुशासन के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्य नहीं किए जाते। धम्म के अनुसार अनुशासनात्मक कार्यों की व्याख्या की जाती है और धम्म (मार्ग) के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यों की व्याख्या नहीं की जाती; अनुशासन के अनुसार अनुशासनात्मक कार्यों की व्याख्या की जाती है और अनुशासन के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यों की व्याख्या नहीं की जाती। हे भिक्षुओं, इसे ही धार्मिक सभा कहते हैं। धार्मिक होने के कारण ही इस सभा में धम्म के अनुसार अनुशासनात्मक कार्य किए जाते हैं और अनुशासन के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यों की व्याख्या नहीं की जाती। हे भिक्षुओं, ये दो प्रकार की सभाएँ हैं। इन दो प्रकार की सभाओं में धार्मिक सभा सर्वोपरि है।"

51

"भिक्षुओं, दो प्रकार की सभाएँ होती हैं। कौन सी दो? एक वह सभा जो धम्म (मार्ग) के विपरीत कार्य करती है और दूसरी वह सभा जो धम्म के अनुसार कार्य करती है [जैसा कि 2:49 में है]..."

"भिक्षुओं, ये दो प्रकार की सभाएँ हैं। इन दो प्रकार की सभाओं में से, धम्म के अनुसार कार्य करने वाली सभा सर्वोपरि है।"

52

भिक्षुओं, दो प्रकार की सभाएँ होती हैं। कौन सी दो? एक वह सभा जो अधार्मिक (गलत मार्ग) की बात करती है और दूसरी वह सभा जो धम्म की बात करती है। और वह सभा क्या है जो अधार्मिक (गलत मार्ग) की बात करती है? यहाँ, इस प्रकार की सभा में भिक्षु एक अनुशासनिक मुद्दे पर चर्चा करते हैं, जो धम्म के अनुरूप हो सकता है या धम्म के विपरीत हो सकता है। 289 इस मुद्दे पर चर्चा करने के बाद, वे एक-दूसरे को समझाने का प्रयास नहीं करते और न ही स्वयं को समझाने देते हैं; वे विचार-विमर्श नहीं करते और न ही विचार-विमर्श का स्वागत करते हैं। समझाने और विचार-विमर्श करने की शक्ति का उपयोग न करते हुए, [76] अपनी राय छोड़ने को तैयार न होते हुए, वे उस अनुशासनिक मुद्दे को और भी दृढ़ता से गलत तरीके से पकड़ लेते हैं, और अपनी स्थिति पर अडिग रहते हुए घोषणा करते हैं: 'केवल यही सत्य है; इसके अलावा कुछ भी गलत है।' इसे अधार्मिक (गलत मार्ग) की बात करने वाली सभा कहा जाता है।

और वह सभा क्या है जो धम्म का उपदेश देती है? इस प्रकार की सभा में भिक्षु किसी अनुशासन संबंधी मुद्दे पर विचार करते हैं, जो धम्म के अनुरूप हो भी सकता है और उसके विपरीत भी। मुद्दे पर विचार करने के बाद, वे एक-दूसरे को समझाते हैं और स्वयं भी दूसरों की बात मानते हैं; वे विचार-विमर्श करते हैं और विचार-विमर्श का स्वागत करते हैं। समझाने और विचार-विमर्श करने की शक्ति से युक्त,

अपने मत को त्यागने के लिए तत्पर, वे उस अनुशासन संबंधी मुद्दे को और अधिक दृढ़ता से नहीं पकड़ते, न ही अपने मत पर अड़े रहकर यह घोषणा करते हैं: 'केवल यही सत्य है; इसके अतिरिक्त सब कुछ गलत है।' इसे ही धम्म का उपदेश देने वाली सभा कहते हैं। हे भिक्षुओं, ये दो प्रकार की सभाएँ हैं। इन दो प्रकार की सभाओं में, धम्म का उपदेश देने वाली सभा सर्वोपरि है।

VI. लोग (पुग्गला)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

53

भिक्षुओं, संसार में दो ऐसे व्यक्ति हैं जो अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों के सुख, देवों और मनुष्यों के भले, कल्याण और सुख के लिए अवतरित होते हैं। वे कौन से दो हैं? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध और चक्र चलाने वाले सम्राट। ये दो ही व्यक्ति संसार में अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों के सुख, देवों और मनुष्यों के भले, कल्याण और सुख के लिए अवतरित होते हैं। 290

54

"भिक्षुओं, संसार में दो असाधारण व्यक्ति प्रकट हो रहे हैं। [77] वे दो कौन हैं? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध और चक्र घुमाने वाले सम्राट। ये दो असाधारण व्यक्ति हैं जो संसार में प्रकट हो रहे हैं।"

55

भिक्षुओं, दो ऐसे व्यक्ति हैं जिनके निधन पर अनेक लोग शोक मनाते हैं। वे कौन से दो व्यक्ति हैं? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति और चक्र घुमाने वाले सम्राट। ये दो ऐसे व्यक्ति हैं जिनके निधन पर अनेक लोग शोक मनाते हैं।

56

"भिक्षुओं, ये दो व्यक्ति स्तूप के योग्य हैं। 291 वे दो कौन हैं? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध और चक्र घुमाने वाले सम्राट। ये दो ही स्तूप के योग्य हैं।"

57

"भिक्षुओं, ये दो प्रबुद्ध हैं। कौन से दो? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध और पच्चेकबुद्ध 92। ये दो प्रबुद्ध हैं।"

58

"भिक्षुओं, दो ऐसे हैं जो वज्रपात से भयभीत नहीं होते। वे कौन से दो हैं? एक भिक्षु जिसके सारे दोष नष्ट हो गए हों और एक शुद्ध नस्ल का हाथी। ये दो ही हैं जो वज्रपात से भयभीत नहीं होते।" 293

59

"भिक्षुओं, दो ऐसे हैं जो वज्रपात से भयभीत नहीं होते। वे कौन से दो हैं? एक भिक्षु जिसके सारे दोष नष्ट हो गए हों और एक उत्तम नस्ल का घोड़ा। ये दो ही हैं जो वज्रपात से भयभीत नहीं होते।"

60

भिक्षुओं, दो ऐसे हैं जो वज्रपात से भयभीत नहीं होते। वे कौन से दो हैं? एक भिक्षु जिसके सारे दोष नष्ट हो गए हों और एक सिंह, जो पशुओं का राजा है। ये दो ही हैं जो वज्रपात से भयभीत नहीं होते।

61

"भिक्षुओं (मठवासियों), दो कारणों से फ़ॉन मनुष्य भाषा नहीं बोलते। 294 वे दो कारण क्या हैं? [विचार करते हुए:] 'हमें झूठ नहीं बोलना चाहिए, और हमें किसी दूसरे को तथ्यों के विपरीत गलत तरीके से प्रस्तुत नहीं करना चाहिए। इन्हीं दो कारणों से फ़ॉन मनुष्य भाषा नहीं बोलते।' [78]

62

भिक्षुओं, स्त्रियाँ दो बातों में असंतुष्ट और अतृप्त होकर मरती हैं। वे दो बातें क्या हैं? यौन संबंध और बच्चे को जन्म देना। स्त्रियाँ इन दो बातों में असंतुष्ट और अतृप्त होकर मरती हैं।

63

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें बुरे और अच्छे लोगों के साथ सहवास के बारे में सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।" "जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

और बुरे लोगों के बीच सहवास कैसे होता है, और बुरे लोग एक साथ कैसे रहते हैं? यहाँ, एक वरिष्ठ भिक्षु के मन में यह विचार आता है: 'एक वरिष्ठ भिक्षु—या मध्यम स्तर का भिक्षु या कनिष्ठ भिक्षु—को मुझे सुधारना नहीं चाहिए। 295 मुझे किसी वरिष्ठ भिक्षु, या मध्यम स्तर के भिक्षु या कनिष्ठ भिक्षु को नहीं सुधारना चाहिए। यदि कोई वरिष्ठ भिक्षु मुझे सुधारता है, तो वह बिना सहानुभूति के, न कि सहानुभूतिपूर्वक ऐसा कर सकता है। तब मैं उसे "नहीं!" कहूँगा और उसे परेशान करूँगा, 296 और [अपनी गलती] देखकर भी मैं उसका प्रायश्चित नहीं करूँगा। यदि मध्यम स्तर का भिक्षु मुझे सुधारता है... यदि कनिष्ठ भिक्षु मुझे सुधारता है, तो वह बिना सहानुभूति के, न कि सहानुभूतिपूर्वक ऐसा कर सकता है। तब मैं उसे "नहीं!" कहूँगा और उसे परेशान करूँगा, और [अपनी गलती] देखकर भी मैं उसका प्रायश्चित नहीं करूँगा। मध्यम स्तर के भिक्षु के मन में भी यही विचार आता है... एक कनिष्ठ भिक्षु से: 'एक वरिष्ठ भिक्षु - या मध्यम स्तर का भिक्षु या कनिष्ठ भिक्षु - मुझे सुधार न दे। मुझे भी किसी वरिष्ठ भिक्षु को नहीं सुधारना चाहिए... [79] ... और [अपना अपराध] देखकर भी मैं उसका प्रायश्चित नहीं करूँगा।' इसी प्रकार बुरे लोगों में सहवास होता है, और इसी प्रकार बुरे लोग एक साथ रहते हैं।

"और हे भिक्षुओं, अच्छे भिक्षुओं में सहवास कैसे होता है, और अच्छे भिक्षु एक साथ कैसे रहते हैं? यहाँ एक वरिष्ठ भिक्षु के मन में यह विचार आता है: 'एक वरिष्ठ भिक्षु, एक मध्यम श्रेणी का भिक्षु और एक कनिष्ठ भिक्षु मुझे सुधारें। मुझे एक वरिष्ठ भिक्षु, एक मध्यम श्रेणी के भिक्षु और एक कनिष्ठ भिक्षु को सुधारना चाहिए। यदि कोई वरिष्ठ भिक्षु मुझे सुधारें, तो वे सहानुभूतिपूर्वक ऐसा कर सकते हैं, सहानुभूतिहीन नहीं। तब मैं उन्हें 'अच्छा!' कहूँगा और उन्हें परेशान नहीं करूँगा, और अपनी गलती देखकर उसका प्रायश्चित करूँगा। यदि कोई मध्यम श्रेणी का भिक्षु मुझसे बात करे... यदि कोई कनिष्ठ भिक्षु मुझे सुधारें, तो वे सहानुभूतिपूर्वक ऐसा कर सकते हैं, सहानुभूतिहीन नहीं। तब मैं उन्हें 'अच्छा!' कहूँगा और उन्हें परेशान नहीं करूँगा, और अपनी गलती देखकर उसका प्रायश्चित करूँगा। यह विचार एक मध्यम श्रेणी के भिक्षु के मन में भी आता है... एक कनिष्ठ भिक्षु के मन में भी।" [भिक्षु]: 'एक वरिष्ठ [भिक्षु]— एक मध्यम स्तर का और एक कनिष्ठ [भिक्षु]— मुझे सुधारें। मैं एक वरिष्ठ [भिक्षु] को सुधारूँ... और [अपनी गलती] देखकर उसका प्रायश्चित करूँ।' इसी प्रकार अच्छे लोगों में सहवास होता है, और इसी प्रकार अच्छे लोग एक साथ रहते हैं।

64

भिक्षुओं, जब किसी अनुशासन संबंधी मुद्दे पर दोनों पक्षों के बीच शब्दों का आदान-प्रदान, विचारों में उद्दंडता, और आक्रोश, कड़वाहट और झुंझलाहट [80] आंतरिक रूप से हल नहीं हो जाती, 298 तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह अनुशासन संबंधी मुद्दा लंबे समय तक कटुता और शत्रुता को जन्म देगा, और भिक्षु चैन से नहीं रह पाएंगे। भिक्षुओं, जब किसी अनुशासन संबंधी मुद्दे पर दोनों पक्षों के बीच शब्दों का आदान-प्रदान, विचारों में उद्दंडता, और आक्रोश, कड़वाहट और झुंझलाहट आंतरिक रूप से हल नहीं हो जाती, तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह अनुशासन संबंधी मुद्दा लंबे समय तक कटुता और शत्रुता को जन्म नहीं देगा, और भिक्षु चैन से रह पाएंगे।

VII. सुख

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

65

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो प्रकार? गृहस्थ का सुख और संन्यासी का सुख। 300 ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दो प्रकार के सुखों में संन्यासी का सुख सर्वोपरि है।

66

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो? इंद्रिय सुख और वैराग्य का सुख। ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दोनों प्रकार के सुखों में वैराग्य का सुख सर्वोपरि है।

67

"भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो? एक, प्राप्ति से जुड़ा सुख और दूसरा, प्राप्ति रहित सुख। ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दोनों प्रकार के सुखों में, प्राप्ति रहित सुख सर्वोपरि है।" 301

68

भिक्षुओं, दो प्रकार की खुशियाँ होती हैं। कौन सी दो? [81] दोषयुक्त खुशी और दोषरहित खुशी। ये दो प्रकार की खुशियाँ हैं। इन दो प्रकार की खुशियों में दोषरहित खुशी सर्वोपरि है।

69

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो? सांसारिक सुख और आध्यात्मिक सुख। 302 ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दो प्रकार के सुखों में आध्यात्मिक सुख सर्वोपरि है।

70

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो? श्रेष्ठ सुख और नीच सुख। ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दोनों प्रकार के सुखों में श्रेष्ठ सुख सर्वोपरि है।

71

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो? शारीरिक सुख और मानसिक सुख। ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दोनों प्रकार के सुखों में मानसिक सुख सर्वोपरि है।

72

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो प्रकार? एक सुख जिसमें पिति लीन हो और दूसरा सुख जिसमें पिति लीन न हो। ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दोनों प्रकार के सुखों में पिति लीन न होने वाला सुख सर्वोपरि है।

73

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो प्रकार? सुखदायक सुख और उदासीनता का सुख (अंतर्मुखी ध्यान/उपेक्खा)। ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दोनों प्रकार के सुखों में उदासीनता का सुख (अंतर्मुखी ध्यान/उपेक्खा ध्यान) सर्वोपरि है। 304

74

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो? समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का सुख और समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) के बिना सुख। ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दो प्रकार के सुखों में, समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का सुख सर्वोपरि है।

75

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो? एक सुख जो आनंद (पीति) की उपस्थिति पर आधारित है और दूसरा सुख (पीति) के अभाव पर आधारित है। [82] ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दो प्रकार के सुखों में से, आनंद (पीति) के अभाव पर आधारित सुख सर्वोपरि है। 305

76

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो? भौतिक सुख पर आधारित सुख और उदासीनता (अंतर्मुखी ध्यान/उपेक्षा) पर आधारित सुख। ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दोनों प्रकार के सुखों में, उदासीनता (अंतर्मुखी ध्यान/उपेक्षा) पर आधारित सुख सर्वोपरि है।

77

भिक्षुओं, दो प्रकार के सुख होते हैं। कौन से दो प्रकार? एक शरीर पर आधारित सुख और दूसरा निराकार पर आधारित सुख। ये दो प्रकार के सुख हैं। इन दोनों प्रकार के सुखों में निराकार पर आधारित सुख सर्वोपरि है। 306

आठवीं. एक आधार के साथ (सा-निमित्त)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

78

भिक्षुओं, अकुशल (हानिकारक) गुणों का कोई आधार होता है, वे बिना आधार के उत्पन्न नहीं होते। इस आधार का त्याग करने से ये अकुशल (हानिकारक) गुण उत्पन्न नहीं होते। 307

79

भिक्षुओं, अकुशल (हानिकारक) गुणों का उद्भव किसी स्रोत से होता है, स्रोत के बिना नहीं। इस स्रोत का त्याग करने से ये अकुशल (हानिकारक) गुण उत्पन्न नहीं होते।

80

भिक्षुओं, अकुशल (हानिकारक) बुरे गुण (धम्म) किसी कारण से उत्पन्न होते हैं, बिना कारण के नहीं। इस कारण का त्याग करने से ये अकुशल (हानिकारक) बुरे गुण (धम्म) उत्पन्न नहीं होते।

81

भिक्षुओं, अकुशल (हानिकारक) गुण (धम्म) कर्मों के कारण उत्पन्न होते हैं, कर्मों के बिना नहीं। इन कर्मों का त्याग करने से ये अकुशल (हानिकारक) गुण (धम्म) उत्पन्न नहीं होते। 308

82

"भिक्षुओं (मठवासियों), अकुशल (हानिकारक) गुण (धम्म) किसी शर्त के साथ उत्पन्न होते हैं, बिना शर्त के नहीं। इस शर्त का त्याग करने से ये अकुशल (हानिकारक) गुण (धम्म) उत्पन्न नहीं होते।" [83]

83

भिक्षुओं, अकुशल (हानिकारक) गुण रूप के साथ ही उत्पन्न होते हैं, रूप के बिना नहीं। इस रूप का त्याग करने से ये अकुशल (हानिकारक) गुण उत्पन्न नहीं होते।

84

भिक्षुओं, अकुशल (हानिकारक) गुण वेदना के साथ ही उत्पन्न होते हैं, वेदना के बिना नहीं। वेदना का त्याग करने से ये अकुशल (हानिकारक) गुण उत्पन्न नहीं होते।

85

भिक्षुओं, अकुशल (हानिकारक) गुण (धम्म) चेतना (सन्ना/संज्ञा) के साथ उत्पन्न होते हैं, चेतना (सन्ना/संज्ञा) के बिना नहीं। इस चेतना (सन्ना/संज्ञा) का त्याग करने से ये अकुशल (हानिकारक) गुण (धम्म) उत्पन्न नहीं होते।

86

भिक्षुओं, अकुशल (हानिकारक) गुण चेतना के साथ ही उत्पन्न होते हैं, चेतना के बिना नहीं। चेतना का त्याग करने पर ये अकुशल (हानिकारक) गुण उत्पन्न नहीं होते।

87

भिक्षुओं, अकुशल (हानिकारक) गुण (धम्म) बद्धता के आधार पर उत्पन्न होते हैं, न कि बद्धता के बिना। बद्धता का त्याग करने से ये अकुशल (हानिकारक) गुण (धम्म) उत्पन्न नहीं होते।

---

9. धम्म (मार्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

88

"भिक्षुओं, ये दो धर्म हैं। कौन से दो? मन की मुक्ति और पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति। यही दो धर्म हैं।" 309

---

89 - 98

भिक्षुओं, ये दो धर्म हैं। वे कौन से दो धर्म हैं? (89) परिश्रम और अनासक्ति... (90) मन (नाम) और रूप (शरीर)... (91) सच्चा ज्ञान और मुक्ति... (92) अस्तित्व का दृष्टिकोण (भाव/पुनर्जन्म का कारण) और विनाश का दृष्टिकोण... (93) नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही... (94) नैतिक लज्जा और नैतिक भय... (95) सुधारना कठिन होना और बुरी मित्रता... (96) सुधारना आसान होना और अच्छी मित्रता... (97) तत्वों में निपुणता और ध्यान में निपुणता... [84] (98) अपराधों के संबंध में निपुणता और अपराधों से पुनर्वास में निपुणता। ये दो धर्म हैं।

X. बाला (बचकाना/नासमझ)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

99

भिक्षुओं, दो प्रकार के मूर्ख होते हैं। कौन से दो प्रकार के? एक वह जो अपने ऊपर न आने वाली विपत्ति की जिम्मेदारी लेता है और दूसरा वह जो अपने ऊपर आने वाली विपत्ति की जिम्मेदारी नहीं लेता। यही दो प्रकार के मूर्ख हैं।

100

"भिक्षुओं, दो प्रकार के ज्ञानी पुरुष होते हैं। वे कौन से दो प्रकार के पुरुष हैं? एक वह जो अपने ऊपर आने वाली विपत्तियों की जिम्मेदारी लेता है और दूसरा वह जो अपने ऊपर न आने वाली विपत्तियों की जिम्मेदारी नहीं लेता: 310 ये दो प्रकार के ज्ञानी पुरुष हैं।"

101

भिक्षुओं, दो प्रकार के मूर्ख होते हैं। वे कौन से दो प्रकार के मूर्ख हैं? एक वह जो निषिद्ध को जायज़ समझता है और दूसरा वह जो जायज़ को निषिद्ध समझता है। 3 ये दो प्रकार के मूर्ख होते हैं।

102

भिक्षुओं, दो प्रकार के ज्ञानी लोग होते हैं। कौन से दो प्रकार के? एक वह जो अस्वीकार्य को अस्वीकार्य मानता है और दूसरा वह जो स्वीकार्य को स्वीकार्य मानता है। यही दो प्रकार के ज्ञानी लोग हैं।

103

भिक्षुओं, दो प्रकार के मूर्ख होते हैं। कौन से दो प्रकार के? एक वह जो अपराध न होने को भी अपराध समझता है और दूसरा वह जो अपराध होने को अपराध न होने के रूप में देखता है। यही दो प्रकार के मूर्ख होते हैं।

104

"भिक्षुओं, दो प्रकार के ज्ञानी लोग होते हैं। वे कौन से दो प्रकार के होते हैं? एक वह जो अपराध न होने को अपराध नहीं मानता और दूसरा वह जो अपराध होने को अपराध मानता है। यही दो प्रकार के ज्ञानी लोग हैं।" [85]

105

भिक्षुओं, दो प्रकार के मूर्ख होते हैं। कौन से दो प्रकार? एक वह जो अधर्म (गलत मार्ग) को धर्म समझता है और दूसरा वह जो धर्म को अधर्म (गलत मार्ग) समझता है। यही दो प्रकार के मूर्ख हैं।

106

भिक्षुओं, दो प्रकार के ज्ञानी व्यक्ति होते हैं। कौन से दो? एक वह जो अधर्म (गलत मार्ग) को अधर्म (गलत मार्ग) के रूप में देखता है और दूसरा वह जो धर्म को धर्म के रूप में देखता है...ये दो प्रकार के ज्ञानी व्यक्ति हैं।

107

भिक्षुओं, दो प्रकार के मूर्ख होते हैं। कौन से दो प्रकार के? एक वह जो अनुशासनहीनता को अनुशासन समझता है और दूसरा वह जो अनुशासनहीनता को अनुशासनहीनता समझता है। यही दो प्रकार के मूर्ख होते हैं।

108

भिक्षुओं, दो प्रकार के ज्ञानी व्यक्ति होते हैं। कौन से दो? एक वह जो अनुशासनहीनता को अनुशासनहीनता के रूप में देखता है और दूसरा वह जो अनुशासन को अनुशासन के रूप में देखता है। यही दो प्रकार के ज्ञानी व्यक्ति हैं।

109

भिक्षुओं, दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष बढ़ जाते हैं। वे कौन से दो प्रकार हैं? एक वह जो किसी ऐसे मामले पर पश्चाताप करता है जिस पर पश्चाताप करने की आवश्यकता नहीं है, और दूसरा वह जो किसी ऐसे मामले पर पश्चाताप नहीं करता जिस पर पश्चाताप करना चाहिए। इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष बढ़ जाते हैं।

110

भिक्षुओं, दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष नहीं बढ़ते। वे कौन से दो प्रकार हैं? एक वह जो किसी ऐसे मामले के लिए पश्चाताप नहीं करता जिसके लिए पश्चाताप करना आवश्यक नहीं है, और दूसरा वह जो किसी ऐसे मामले के लिए पश्चाताप करता है जिसके लिए पश्चाताप करना आवश्यक है। इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष नहीं बढ़ते।

111

भिक्षुओं, दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष बढ़ जाते हैं। वे कौन से दो हैं? एक वह जो निषिद्ध को जायज़ समझता है और दूसरा वह जो जायज़ को निषिद्ध समझता है। इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष बढ़ जाते हैं।

112

भिक्षुओं, दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष नहीं बढ़ते। वे कौन से दो हैं? एक वह जो अस्वीकार्य को अस्वीकार्य मानता है और दूसरा वह जो स्वीकार्य को स्वीकार्य मानता है। इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष नहीं बढ़ते।

113

भिक्षुओं, दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष बढ़ जाते हैं। वे दो कौन हैं? [86] एक वह जो अपराध न होने को अपराध समझता है और दूसरा वह जो अपराध होने को अपराध न समझने वाला है। 312 इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष बढ़ जाते हैं।

114

भिक्षुओं, दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष नहीं बढ़ते। वे कौन से दो प्रकार हैं? एक वह जो अपराध न होने को अपराध नहीं समझता और दूसरा वह जो अपराध होने को अपराध समझता है। 313 इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष नहीं बढ़ते।

115

भिक्षुओं, दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष बढ़ जाते हैं। वे कौन से दो प्रकार के व्यक्ति हैं? एक वह जो अधर्म (गलत मार्ग) को धर्म समझता है और दूसरा वह जो धर्म को अधर्म (गलत मार्ग) समझता है। इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष बढ़ जाते हैं।

116

भिक्षुओं, दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष नहीं बढ़ते। वे कौन से दो प्रकार हैं? एक वह जो अधर्म (गलत मार्ग) को अधर्म (गलत मार्ग) के रूप में देखता है और दूसरा वह जो धर्म को धर्म के रूप में देखता है। 314 इन दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष नहीं बढ़ते। 77

117

भिक्षुओं, दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष बढ़ जाते हैं। वे कौन से दो प्रकार हैं? एक वह जो अनुशासनहीनता को अनुशासन समझता है और दूसरा वह जो अनुशासनहीनता को अनुशासनहीन समझता है। इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष बढ़ जाते हैं।

118

भिक्षुओं, दो प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष नहीं बढ़ते। वे कौन से दो प्रकार हैं? एक वह जो अनुशासनहीनता को अनुशासनहीनता के रूप में देखता है और दूसरा वह जो अनुशासन को अनुशासन के रूप में देखता है। इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए दोष नहीं बढ़ते।

XI. ऐसी इच्छाएँ जिन्हें त्यागना कठिन है (आसा-दु-पजाहा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

119

"भिक्षुओं, इन दो इच्छाओं का त्याग करना कठिन है। कौन सी दो? लाभ की इच्छा और जीवन की इच्छा। इन दो इच्छाओं का त्याग करना कठिन है।" 315 [87]

120

भिक्षुओं, संसार में दो प्रकार के व्यक्ति दुर्लभ हैं। वे कौन से दो प्रकार के व्यक्ति हैं? एक जो दूसरों की सहायता करने में पहल करता है और दूसरा जो कृतज्ञ और आभारी है। संसार में दो प्रकार के व्यक्ति दुर्लभ हैं।

121

भिक्षुओं, संसार में दो प्रकार के व्यक्ति दुर्लभ हैं। वे कौन से दो प्रकार के व्यक्ति हैं? एक जो संतुष्ट है और दूसरा जो संतुष्टि प्रदान करता है। संसार में ये दो प्रकार के व्यक्ति दुर्लभ हैं।

122

"भिक्षुओं, इन दो प्रकार के व्यक्तियों को संतुष्ट करना कठिन है। वे कौन से दो प्रकार हैं? एक वह जो अपने लाभ को संचित करता है और दूसरा वह जो अपने लाभ को लुटा देता है। 316 इन दो प्रकार के व्यक्तियों को संतुष्ट करना कठिन है।"

123

भिक्षुओं, इन दो प्रकार के व्यक्तियों को संतुष्ट करना आसान है। वे कौन से दो प्रकार हैं? एक वह जो अपने लाभ का संचय नहीं करता और दूसरा वह जो अपने लाभ को बर्बाद नहीं करता। इन दो प्रकार के व्यक्तियों को संतुष्ट करना आसान है।

124

भिक्षुओं, राग उत्पन्न होने के लिए ये दो शर्तें हैं। वे दो शर्तें क्या हैं? आकर्षक और उदासीन ध्यान। यही दो शर्तें हैं जिनसे प्रेम उत्पन्न होता है। 317

125

भिक्षुओं, द्वेष उत्पन्न होने के दो कारण होते हैं। वे दो कारण क्या हैं? घृणा और लापरवाही भरी दृष्टि। यही दो कारण हैं जिनसे द्वेष उत्पन्न होता है।

126

भिक्षुओं, गलत दृष्टिकोण उत्पन्न होने के लिए ये दो स्थितियाँ हैं। वे दो क्या हैं? दूसरे व्यक्ति का कथन और लापरवाही से ध्यान देना। ये दो स्थितियाँ गलत दृष्टिकोण उत्पन्न होने का कारण हैं।

127

भिक्षुओं, सही दृष्टि उत्पन्न होने के लिए ये दो शर्तें हैं। वे दो शर्तें क्या हैं? दूसरे व्यक्ति का वचन और ध्यानपूर्वक सुनना। यही दो शर्तें सही दृष्टि उत्पन्न होने के लिए आवश्यक हैं।

128

"भिक्षुओं, दो प्रकार के अपराध होते हैं। कौन से दो? [88] एक हल्का अपराध और एक गंभीर अपराध। ये दो प्रकार के अपराध हैं।" 318

129

भिक्षुओं, दो प्रकार के अपराध होते हैं। कौन से दो? एक गंभीर अपराध और दूसरा गंभीर अपराध नहीं। ये दो प्रकार के अपराध हैं।

130

भिक्षुओं, दो प्रकार के अपराध होते हैं। कौन से दो? एक निवारण योग्य अपराध और एक असाध्य अपराध। ये दो प्रकार के अपराध हैं।

XII. आकांक्षी (अयाचना)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

131

"भिक्षुओं, आस्था से परिपूर्ण और सही आकांक्षा रखने वाले भिक्षु को इस प्रकार आकांक्षा रखनी चाहिए: 'मैं सारिपुत्त और मोग्गलाना के समान बनूँ!' यही मेरे भिक्षु शिष्यों के लिए मानक और मानदंड है, अर्थात् सारिपुत्त और मोग्गलाना।"

132

"भिक्षुओं, आस्थावान और सही आकांक्षा रखने वाली भिक्षुणी को यह आकांक्षा रखनी चाहिए: 'मैं खेमा और उप्पलावन की भिक्षुणियों के समान बनूँ!' यही मेरी शिष्याओं, अर्थात् खेमा और उप्पलावन की भिक्षुणियों के लिए आदर्श और मानदंड है।" 320

133

"भिक्षुओं (सम्मोहनों), आस्थावान और सही आकांक्षा रखने वाले एक पुरुष उपासक को इस प्रकार आकांक्षा करनी चाहिए: 'मैं चित्त गृहस्थ और अलवी के हत्थक के समान बनूँ!' यही मेरे पुरुष शिष्यों के लिए मानक और मानदंड है, अर्थात् चित्त गृहस्थ और अलवी के हत्थक।" 321

134

"भिक्षुओं (सन्यासियों), आस्था से परिपूर्ण, सही आकांक्षा रखने वाली महिला अनुयायी को इस प्रकार आकांक्षा रखनी चाहिए: 'मैं कुज्जुत्तारा और वेलुकांतकी नंदमाता जैसी महिला अनुयायी बन जाऊं।' यही मेरी महिला शिष्यों, अर्थात् कुज्जुत्तारा और वेलुकांतकी नंदमाता के लिए मानक और मानदंड है।"

---

135 [323]

भिक्षुओं, दो गुणों से युक्त: अज्ञानी, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे दो गुण क्या हैं? बिना जांच-पड़ताल किए वह निंदा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करता है। बिना जांच-पड़ताल किए वह प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की निंदा करता है। इन दो गुणों से युक्त अज्ञानी,

अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

भिक्षुओं में दो गुण होते हैं: बुद्धिमान, योग्य और नेक भिक्षु स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे दो गुण क्या हैं? छानबीन और विश्लेषण करने के बाद, वह निंदा के योग्य व्यक्ति की निंदा करता है। छानबीन और विश्लेषण करने के बाद, वह प्रशंसा के योग्य व्यक्ति की प्रशंसा करता है। इन दो गुणों से युक्त बुद्धिमान, योग्य और नेक भिक्षु स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

---

136 [324]

"दो गुणों से युक्त भिक्षु, अज्ञानी, अयोग्य, दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे दो गुण क्या हैं? बिना जांच-पड़ताल किए, वह संदेह के योग्य बात पर विश्वास कर लेता है। बिना जांच-पड़ताल किए, वह विश्वास के योग्य बात पर संदेह करता है। इन दो गुणों से युक्त अज्ञानी, अयोग्य, दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। [90]

"भिक्षुओं में दो गुण होते हैं: बुद्धिमान, योग्य और नेक भिक्षु स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखते हैं; वे निष्कलंक होते हैं और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होते हैं; और वे बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं। वे दो गुण क्या हैं? जांच-पड़ताल करने के बाद, वे संदेह के योग्य मामले पर संदेह करते हैं। जांच-पड़ताल करने के बाद, वे विश्वास के योग्य मामले पर विश्वास करते हैं। इन दो गुणों से युक्त बुद्धिमान, योग्य और नेक भिक्षु स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखते हैं; वे निष्कलंक होते हैं और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होते हैं; और वे बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं।"

137

भिक्षुओं, दो व्यक्तियों के प्रति कुकर्म करने से, अज्ञानी, अयोग्य, दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे दो कौन हैं? उसकी माता और उसके पिता। इन दोनों व्यक्तियों के प्रति कुकर्म करने से, अज्ञानी, अयोग्य, दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

भिक्षुओं, दो व्यक्तियों के प्रति उचित व्यवहार करने पर, बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह बुद्धिमानों के बीच निर्दोष और निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य अर्जित करता है। वे दो कौन हैं? उसकी माता और उसके पिता। इन दोनों व्यक्तियों के प्रति उचित व्यवहार करने पर, बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह बुद्धिमानों के बीच निर्दोष और निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य अर्जित करता है।

138

"भिक्षुओं, दो व्यक्तियों के प्रति कुकर्म करने पर, अज्ञानी, अयोग्य, दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे दो कौन हैं? तथागत (बुद्ध) और तथागत (बुद्ध) का एक शिष्य। 325 इन दो व्यक्तियों के प्रति कुकर्म करने पर, अज्ञानी, अयोग्य, दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।" [91]

भिक्षुओं, दो व्यक्तियों के प्रति उचित व्यवहार करने पर, बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह बुद्धिमानों के बीच निर्दोष और निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य अर्जित करता है। वे दो कौन हैं? तथागत (बुद्ध) और तथागत (बुद्ध) का एक शिष्य। इन दोनों व्यक्तियों के प्रति उचित व्यवहार करने पर, बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह बुद्धिमानों के बीच निर्दोष और निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य अर्जित करता है।

139

भिक्षुओं, ये दो धर्म हैं। कौन से दो? अपने मन को शुद्ध करना और संसार की किसी भी वस्तु से आसक्ति न रखना। 326 यही दो धर्म हैं।

140

भिक्षुओं, ये दो धर्म हैं। कौन से दो? क्रोध और शत्रुता। यही दो धर्म हैं।

141

भिक्षुओं, ये दो धर्म हैं। कौन से दो? क्रोध का निवारण और शत्रुता का निवारण। यही दो धर्म हैं।

XIII. दान (दाना)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

142

भिक्षुओं, दो प्रकार के दान होते हैं। कौन से दो? भौतिक वस्तुओं का दान और धम्म (दिव्य) का दान। ये दो प्रकार के दान हैं। इन दोनों प्रकार के दानों में धम्म का दान सर्वोपरि है।

143

"भिक्षुओं, दो प्रकार की भेंटें होती हैं। कौन सी दो? भौतिक वस्तुओं की भेंट और धम्म की भेंट। ये दो प्रकार की भेंटें हैं। इन दो प्रकार की भेंटों में धम्म की भेंट सर्वोपरि है।" [92]

144

भिक्षुओं, उदारता दो प्रकार की होती है। कौन से दो प्रकार? भौतिक वस्तुओं के प्रति उदारता और धम्म के प्रति उदारता। ये दो प्रकार की उदारता हैं। इन दो प्रकार की उदारता में, धम्म के प्रति उदारता सर्वोपरि है।

145

भिक्षुओं, त्याग के दो प्रकार होते हैं। कौन से दो प्रकार? भौतिक वस्तुओं का त्याग और धम्म का त्याग। ये दो प्रकार के त्याग हैं। इन दोनों प्रकार के त्याग में धम्म का त्याग सर्वोपरि है।

146

भिक्षुओं, धन के दो प्रकार होते हैं। कौन से दो प्रकार? भौतिक धन और धर्म का धन। ये दो प्रकार के धन हैं। इन दोनों प्रकार के धन में धर्म का धन सर्वोपरि है।

147

भिक्षुओं, दो प्रकार के भोग होते हैं। कौन से दो? भौतिक वस्तुओं का भोग और धम्म का भोग। इन दो प्रकार के भोगों में धम्म का भोग सर्वोपरि है।

148

भिक्षुओं, दो प्रकार की साझेदारी होती है। कौन से दो प्रकार? भौतिक वस्तुओं की साझेदारी और धम्म की साझेदारी। ये दो प्रकार की साझेदारी हैं। इन दोनों प्रकार की साझेदारी में, धम्म की साझेदारी सर्वोपरि है।

149

भिक्षुओं, अनुकूल संबंध बनाए रखने के ये दो तरीके हैं। 327 वे दो तरीके क्या हैं? भौतिक वस्तुओं के साथ अनुकूल संबंध बनाए रखना और धम्म के साथ अनुकूल संबंध बनाए रखना। ये दो तरीके अनुकूल संबंध बनाए रखने के हैं। इन दोनों तरीकों में से, धम्म के साथ अनुकूल संबंध बनाए रखना सर्वोपरि है।

150

भिक्षुओं, दो प्रकार की सहायता उपलब्ध है। कौन सी दो प्रकार की सहायता? भौतिक वस्तुओं से संबंधित सहायता और धम्म (दिव्य मार्ग) से संबंधित सहायता। ये दो प्रकार की सहायता हैं। इन दोनों प्रकार की सहायता में धम्म (दिव्य मार्ग) से संबंधित सहायता सर्वोपरि है।

151

"भिक्षुओं, करुणा दो प्रकार की होती है। 328 कौन से दो प्रकार? भौतिक वस्तुओं के प्रति करुणा और धर्म (दिव्य) के प्रति करुणा। ये दो प्रकार की करुणा हैं। इन दो प्रकार की करुणा में, धर्म (दिव्य) के प्रति करुणा सर्वोपरि है।" [93]

XIV. उदारता (संथारा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

152

भिक्षुओं, दो प्रकार की उदारता होती है। 329 वे दो प्रकार कौन से हैं? भौतिक वस्तुओं के प्रति उदारता और धर्म (दिव्य) के प्रति उदारता। ये दो प्रकार की उदारता हैं। इन दो प्रकार की उदारता में धर्म के प्रति उदारता सर्वोपरि है।

153

भिक्षुओं, आतिथ्य सत्कार दो प्रकार का होता है। कौन से दो प्रकार? भौतिक वस्तुओं से आतिथ्य सत्कार और धम्म से आतिथ्य सत्कार। ये दो प्रकार के आतिथ्य सत्कार हैं। इन दोनों प्रकार के आतिथ्य सत्कार में धम्म से आतिथ्य सत्कार सर्वोपरि है।

154

भिक्षुओं, दो प्रकार की खोजें होती हैं। कौन सी दो? भौतिक वस्तुओं की खोज और धम्म की खोज। ये दो प्रकार की खोजें हैं। इन दोनों प्रकार की खोजों में, धम्म की खोज सर्वोपरि है।

155

भिक्षुओं, दो प्रकार की खोजें होती हैं। कौन सी दो? भौतिक वस्तुओं की खोज और धम्म की खोज। ये दो प्रकार की खोजें हैं: इन दोनों प्रकार की खोजों में, धम्म की खोज सर्वोपरि है।

156

भिक्षुओं, दो प्रकार की खोज होती है। कौन सी दो? भौतिक वस्तुओं की खोज और धम्म की खोज। ये दो प्रकार की खोज हैं। इन दोनों प्रकार की खोजों में, धम्म की खोज सर्वोपरि है।

157

भिक्षुओं, दो प्रकार की श्रद्धा होती है। कौन से दो प्रकार? भौतिक वस्तुओं की श्रद्धा और धम्म की श्रद्धा। ये दो प्रकार की श्रद्धा हैं। इन दोनों प्रकार की श्रद्धा में धम्म की श्रद्धा सर्वोपरि है।

158

भिक्षुओं, अतिथि को भेंट करने के लिए दो प्रकार के उपहार हैं। 330 वे दो प्रकार क्या हैं? भौतिक वस्तुओं का उपहार और धम्म का उपहार। अतिथि को भेंट करने के लिए ये दो प्रकार के उपहार हैं। इन दो प्रकार के उपहारों में से धम्म का उपहार सर्वोपरि है।

159

"भिक्षुओं, सफलता दो प्रकार की होती है। कौन सी दो? भौतिक वस्तुओं से संबंधित सफलता और धम्म से संबंधित सफलता। ये दो प्रकार की सफलताएँ हैं। इन दो प्रकार की सफलताओं में से, धम्म (मार्ग) से संबंधित सफलता सर्वोपरि है।" [94]

160

भिक्षुओं, दो प्रकार की उन्नति होती है। कौन सी दो? भौतिक वस्तुओं में उन्नति और धम्म में उन्नति। ये दो प्रकार की उन्नति हैं। इन दोनों प्रकार की उन्नति में धम्म में उन्नति सर्वोपरि है।

161

भिक्षुओं, दो प्रकार के रत्न होते हैं। कौन से दो? भौतिक रत्न और धम्म रत्न। ये दो प्रकार के रत्न हैं। इन दोनों प्रकार के रत्नों में धम्म रत्न सर्वोपरि है।

162

भिक्षुओं, संचय के दो प्रकार होते हैं। कौन से दो प्रकार? भौतिक वस्तुओं का संचय और धर्म का संचय। ये दो प्रकार के संचय हैं। इन दोनों प्रकार के संचय में धर्म का संचय सर्वोपरि है।

163

भिक्षुओं, दो प्रकार के विस्तार होते हैं। कौन से दो प्रकार? भौतिक वस्तुओं में विस्तार और धम्म में विस्तार। ये दो प्रकार के विस्तार हैं। इन दोनों प्रकार के विस्तारों में, धम्म में विस्तार सर्वोपरि है।

XV. ध्यानात्मक प्राप्ति (समापट्टी)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

164

"भिक्षुओं, ये दो गुण हैं। कौन से दो? ध्यान की अवस्था में प्रवेश करने की कुशलता और ध्यान की अवस्था से बाहर निकलने की कुशलता। यही दो गुण हैं।" 531

165-180

भिक्षुओं, ये दो गुण हैं। वे दो क्या हैं? (165) सत्यनिष्ठा और नम्रता... (166) धैर्य और सौम्यता... (167) वाणी की कोमलता और आतिथ्य सत्कार... (168) अहिंसा और पवित्रता... (169) इंद्रियों के द्वारों को न रोकना और भोजन में संयम... (170) इंद्रियों के द्वारों को रोकना और भोजन में संयम... (171) चिंतन की शक्ति और विकास की शक्ति... (172) सती ध्यान की शक्ति और समाधि की शक्ति... [95]... (173) समभाव और विपश्यना... (174) सद्गुणों में विफलता और दृष्टि में विफलता... (175) सद्गुणों की संपदा... दृष्टिकोण की संपदा (संपदा)... (176) सद्गुणी आचरण की पवित्रता और दृष्टिकोण की पवित्रता... (177) दृष्टिकोण की पवित्रता और अपने दृष्टिकोण के अनुसार प्रयास करना... (178) लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के संबंध में असंतोष और प्रयास में अथका... (179) उलझन और पूर्ण समझ (संपजन्न) का अभाव... (180) सती ध्यान और पूर्ण समझ (संपजन्न)। ये दो गुण हैं।

XVI. क्रोध (कोढ़ा सं. क्रोध)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

181-185 [332]

भिक्षुओं, ये दो गुण हैं। कौन से दो? (181) क्रोध और शत्रुता... (182) निंदा और उद्दंडता... (183) ईर्ष्या और कंजूसी... (184) छल और धूर्तता... (185) नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। ये दो गुण हैं।

---

186 -190

भिक्षुओं, ये दो गुण हैं। वे दो कौन से हैं? (186) क्रोध और शत्रुता का अभाव... (187) निंदा और उद्दंडता का अभाव... (188) ईर्ष्या और कंजूसी का अभाव... (189) छल और धूर्तता का अभाव... (190) नैतिक लज्जा और नैतिक भय। ये दो गुण हैं।

XVII. अकुसला (हानिकारक)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

191 - 200

भिक्षुओं को दो गुणों से युक्त होने पर दुख भोगना पड़ता है। वे दो गुण क्या हैं? क्रोध और शत्रुता... निंदा और उद्दंडता... ईर्ष्या और कंजूसी... छल और धूर्तता... नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। इन दो गुणों से युक्त होने पर दुख भोगना पड़ता है।

भिक्षुओं को दो गुण प्राप्त होते हैं, जिससे वे सुखी जीवन व्यतीत करते हैं। वे दो गुण क्या हैं? क्रोध और शत्रुता का अभाव... निंदा और अभिमान का अभाव... ईर्ष्या और कंजूसी का अभाव... छल और कपट का अभाव... नैतिक लज्जा और नैतिक भय। इन दो गुणों से युक्त व्यक्ति सुखी जीवन व्यतीत करता है।

भिक्षुओं, ये दो गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं। वे दो गुण कौन से हैं? क्रोध और शत्रुता... निंदा और उद्दंडता... ईर्ष्या और कंजूसी... छल और धूर्तता... नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। ये दो गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं।

भिक्षुओं, ये दो गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे दो गुण कौन से हैं? क्रोध और शत्रुता का अभाव... निंदा और अभिमान का अभाव... ईर्ष्या और कंजूसी का अभाव... छल और कपट का अभाव... नैतिक लज्जा और नैतिक भय। ये दो गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकते हैं।

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में दो गुण होने पर उन्हें नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे दो गुण कौन से हैं? क्रोध और शत्रुता... निंदा और उद्दंडता; ईर्ष्या और कंजूसी... छल और धूर्तता... नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। इन दो गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं को, जिनमें दो गुण होते हैं, स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे दो गुण क्या हैं? क्रोध और शत्रुता का अभाव... निंदा और अभिमान का अभाव... ईर्ष्या और कंजूसी का अभाव... छल और धूर्तता का अभाव... नैतिक लज्जा और नैतिक भय। इन दो गुणों के होने पर, व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में दो गुण होते हैं, शरीर के क्षोभ के साथ मृत्यु के बाद, कोई व्यक्ति दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। वे दो गुण क्या हैं? क्रोध और शत्रुता... निंदा और उद्दंडता... ईर्ष्या और कंजूसी... छल और धूर्तता... नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। इन दो गुणों से युक्त व्यक्ति, शरीर के क्षोभ के साथ मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेता है।"

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में दो गुण होते हैं, शरीर के नष्ट होने पर मृत्यु के बाद, वे यहाँ एक अच्छे स्थान पर, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं। वे दो गुण क्या हैं? क्रोध और शत्रुता का अभाव... निंदा और अभिमान का अभाव... ईर्ष्या और कंजूसी का अभाव... छल और कपट का अभाव... नैतिक लज्जा और नैतिक भय। इन दो गुणों से युक्त, शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वे यहाँ एक अच्छे स्थान पर, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

भिक्षुओं, ये दो हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) हैं। वे कौन से दो हैं? क्रोध और शत्रुता... निंदा और उद्दंडता... ईर्ष्या और कंजूसी... छल और धूर्तता... नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। ये दो हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) हैं।

भिक्षुओं, ये दो लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) हैं। वे कौन से दो गुण हैं? क्रोध न करना और शत्रुता न करना... निंदा न करना और उद्दंडता न करना... ईर्ष्या न करना और कंजूसी न करना... छल न करना और धूर्तता न करना... नैतिक लज्जा और नैतिक भय। ये दो लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) हैं।

भिक्षुओं, ये दो निंदनीय गुण हैं। वे कौन से दो गुण हैं? क्रोध और शत्रुता... निंदा और उद्दंडता... ईर्ष्या और कंजूसी... छल और धूर्तता... नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। ये दो निंदनीय गुण हैं।

भिक्षुओं, ये दो निष्कलंक गुण हैं। वे कौन से दो गुण हैं? क्रोध न करना और शत्रुता न करना... निंदा न करना और उद्दंड न होना... ईर्ष्या न करना और कंजूसी न करना... छल न करना और धूर्तता न करना... नैतिक लज्जा और नैतिक भय। ये दो निष्कलंक गुण हैं।

भिक्षुओं, ये दो गुण हैं जिनका परिणाम दुख होता है। वे कौन से दो गुण हैं? क्रोध और शत्रुता... निंदा और उद्दंडता... ईर्ष्या और कंजूसी... छल और धूर्तता... नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। ये दो गुण हैं जिनका परिणाम दुख होता है।

भिक्षुओं, ये दो गुण हैं जिनका परिणाम सुख होता है। वे कौन से दो गुण हैं? क्रोध और शत्रुता का अभाव... निंदा और अभिमान का अभाव... ईर्ष्या और कंजूसी का अभाव... छल और कपट का अभाव... नैतिक लज्जा और नैतिक भय। ये दो गुण हैं जिनका परिणाम सुख होता है।

भिक्षुओं, दो ऐसे गुण हैं जिनसे दुख होता है। वे कौन से दो गुण हैं? क्रोध और शत्रुता... निंदा और उद्दंडता... ईर्ष्या और कंजूसी... छल और धूर्तता... नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। ये दो गुण दुख का कारण बनते हैं।

भिक्षुओं, सुख की प्राप्ति के लिए ये दो गुण आवश्यक हैं। वे कौन से दो गुण हैं? क्रोध और शत्रुता का अभाव... निंदा और अभिमान का अभाव... ईर्ष्या और कंजूसी का अभाव... छल और कपट का अभाव... नैतिक लज्जा और नैतिक भय। यही दो गुण सुख की प्राप्ति का कारण बनते हैं।

भिक्षुओं, ये दो कष्टदायक गुण हैं। वे कौन से दो गुण हैं? क्रोध और शत्रुता... निंदा और उद्दंडता... ईर्ष्या और कंजूसी... छल और धूर्तता... नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही। ये दो कष्टदायक गुण हैं।

भिक्षुओं, ये दो अहानिकारक गुण हैं। वे कौन से दो गुण हैं? क्रोध और शत्रुता का अभाव... निंदा और अभिमान का अभाव... ईर्ष्या और कंजूसी का अभाव... छल और कपट का अभाव... नैतिक लज्जा और नैतिक भय। ये दो अहानिकारक गुण हैं।

XVIII. अनुशासन पुनरावृत्ति श्रृंखला [335] (विनय)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

201

भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) ने अपने शिष्यों के लिए प्रशिक्षण नियम इन दो कारणों से निर्धारित किए हैं। वे दो कारण क्या हैं? संघ के कल्याण और संघ की सहजता के लिए... अनुशासनहीन व्यक्तियों को नियंत्रण में रखने और सुशासन वाले भिक्षुओं के आराम से रहने के लिए... इस जीवन से संबंधित दोषों को रोकने और भविष्य के जन्मों से संबंधित दोषों को दूर करने के लिए... इस जीवन से संबंधित शत्रुता को रोकने और भविष्य के जन्मों से संबंधित शत्रुता को दूर करने के लिए... इस जीवन से संबंधित दोषों को रोकने और भविष्य के जन्मों से संबंधित दोषों को दूर करने के लिए... इस जीवन से संबंधित खतरों को रोकने और भविष्य के जन्मों से संबंधित खतरों को दूर करने के लिए... इस जीवन से संबंधित हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) के निवारण के लिए और भविष्य के जन्मों से संबंधित हानिकारक गुणों के निवारण के लिए... गृहस्थों पर दया करने और बुरी इच्छाओं वाले गुटों को रोकने के लिए... ताकि अविश्वासियों में

आत्मविश्वास उत्पन्न हो और आत्मविश्वासियों का आत्मविश्वास बढ़े... अच्छे धम्म की निरंतरता और अनुशासन को बढ़ावा देने के लिए। इन्हीं दो कारणों से तथागत (बुद्ध) ने अपने शिष्यों के लिए प्रशिक्षण नियम निर्धारित किए हैं।

---

202 — 230

"भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) (202) ने अपने शिष्यों के लिए पतिमोक्खा का विधान इन्हीं दो कारणों से किया है। . . [इस सूत्र और आगे आने वाले सूत्रों की व्याख्या ऊपर बताए अनुसार की जानी चाहिए] . . 337

(203) . . पतिमोक्खा का पाठ निर्धारित किया है

(204) "... ने पतिमोक्खा के निलंबन का प्रावधान किया है ..."

(205) . .ने निमंत्रण समारोह निर्धारित किया है. . ."

(206) ...ने निमंत्रण समारोह के निलंबन का प्रावधान किया है..."

(207) ". . . निंदा का कानूनी कार्य निर्धारित किया है . ."

(208) "...ने निर्भरता के कानूनी कृत्य को निर्धारित किया है..."

(209) "...ने देश निकाला की कानूनी प्रक्रिया निर्धारित की है..."

(210) "...ने सुलह के कानूनी अधिनियम को निर्धारित किया है..."

(211) ". . . ने निलंबन के कानूनी अधिनियम को निर्धारित किया है . . ."

(212) "...ने परिवीक्षा लगाने का प्रावधान किया है..."

(213) "...ने शुरुआत में वापस भेजने का प्रावधान किया है..."

(214) "...ने प्रायश्चित लागू करने का प्रावधान किया है..."

(215) "...ने पुनर्वास निर्धारित किया है ..."

(216) ". . ने बहाली निर्धारित की है. ."

(217) "...ने हटाने का निर्देश दिया है ..."

(218) "...ने पूर्ण दीक्षा निर्धारित की है ..."

(219) ". . ने एक कानूनी कार्य निर्धारित किया है जिसमें एक गति शामिल है. ."

(220) "...ने एक कानूनी अधिनियम निर्धारित किया है जिसमें दूसरे [कारक] के रूप में एक प्रस्ताव शामिल है ..."

(221) "...ने एक कानूनी अधिनियम निर्धारित किया है जिसमें चौथे [कारक] के रूप में एक प्रस्ताव शामिल है..."

(222) "...ने [प्रशिक्षण नियम] निर्धारित किया है जबकि ऐसा कोई नियम नहीं था

इससे पहले निर्धारित किया गया था...

(223) "...ने [पहले से निर्धारित प्रशिक्षण नियम में] एक संशोधन जोड़ा है..."

(224) "... ने उपस्थिति के आधार पर निष्कासन निर्धारित किया है ..."

(225) "...स्मरण के कारण हटाने का निर्देश दिया है..."

(226) "...ने [अतीत के] पागलपन के कारण निष्कासन निर्धारित किया है..."

(227) "...ने [अपराध की] स्वीकृति निर्धारित की है..."

(228) ". . .ने बहुमत की राय निर्धारित की है. ."

(229) "...ने गंभीर दुराचार की घोषणा का प्रावधान किया है..."

(230) "...ने घास से ढकने का विधान किया है। वे दो कारण क्या हैं? संघ के कल्याण के लिए और संघ की सुगमता के लिए... अच्छे धम्म की निरंतरता के लिए और अनुशासन को बढ़ावा देने के लिए। इन्हीं दो कारणों से तथागत (बुद्ध) ने घास से ढकने का विधान किया है।"

XIX. कामवासना (राग) और इसी प्रकार पुनरावृति। श्रृंखला [338]

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

231

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए दो चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे दो चीजें क्या हैं? समभाव (समथ ध्यान) और अंतर्दृष्टि (विपश्यना)। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन दो चीजों का विकास करना आवश्यक है।

232-246

भिक्षुओं, कामवासना (राग) की पूर्ण समझ के लिए... कामवासना (राग) के पूर्ण नाश के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए... कामवासना (राग) के नाश के लिए... कामवासना (राग) के लुप्त होने के लिए... कामवासना (राग) के मार्ग के लुप्त होने के लिए... कामवासना (राग) के निवारण के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए, इन दो चीजों का विकास करना है। वे दो चीजें क्या हैं? समभाव (समथ ध्यान) और अंतर्दृष्टि (विपश्यना)। कामवासना (राग) के त्याग के लिए, इन दो चीजों का विकास करना है। भिक्षुओं, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के लिए... पूर्ण समझ के लिए... पूर्ण नाश के लिए... त्याग के लिए... नाश के लिए... लुप्त होना... लुप्त हो जाना... रुक जाना... त्याग देना... घृणा का त्याग... मोह का त्याग... क्रोध का त्याग... शत्रुता का त्याग... निंदा का त्याग... अभिमान का त्याग... ईर्ष्या का त्याग... कंजूसी का त्याग... छल का त्याग... धूर्तता का त्याग... हठ का त्याग... उग्रता का त्याग... अहंकार का त्याग... घमंड का त्याग... नशा का त्याग... आलस्य का त्याग, इन दो चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे दो चीजें क्या हैं? समभाव (समथ ध्यान) और अंतर्दृष्टि (विपश्यना)। आलस्य के त्याग के लिए, इन दो चीजों का विकास करना आवश्यक है।

द बुक ऑफ द टूज़ पूरी हो गई है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय >> 3.तीनों की पुस्तक

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का तीसरा भाग है। यह भिक्खु बोधि का संशोधित संस्करण है।

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN2) अगला (AN4) >>>>

अंतर्वस्तु

1त्रिकों की पुस्तक (टिकानिपाता)

1.1पहले पचास

1.1.1I. मूर्ख (बाला)

1.1.1.11. खतरा (भया)

1.1.1.22 विशेषताएँ (लक्खना)

1.1.1.33. सोच (सिंटी)

1.1.1.44. अपराध (अक्काया)

1.1.1.55 लापरवाही से (अयोनिसो)

1.1.1.66 हानिकारक (अकुसाला सं. अकुशल)

1.1.1.77 निंदनीय (सवज्जा)

1.1.1.88 कष्टदायक (सबयबज्जा)

1.1.1.99. मैम्ड (खाता संस्कृत क्षत)

1.1.1.1010 दाग (माला)

1.1.2II. रथकार (रथकारा)

1.1.2.111 सुप्रसिद्ध (नाटा)

1.1.2.212 स्मरणीय (सरनिया संस. स्मरणीय)

1.1.2.313 अपेक्षा (असमसा सं. आकांक्षा)

1.1.2.414 व्हील-टर्निंग (कैक्कवट्टी सं. चक्रवर्ती)

1.1.2.515 राजा सैकेटाना 349

1.1.2.616 अचूक (अपन्नक)

1.1.2.717 स्वयं (अत्त-ब्यबाधा)

1.1.2.818 देव (देवदूत/देवता) (देवलोक)

1.1.2.919 दुकानदार (1) (पापनिका1)

1.1.2.1020 दुकानदार (2) (पापानिका2)

1.1.3III. व्यक्ति (पुग्गला)

1.1.3.121 समिद्ध

1.1.3.222 मरीज़ (गिलाना)

1.1.3.323 चरित्र/व्यवहार (संस्कार बिना संस्कार)

1.1.3.424 सहायक (बहुकारा)

1.1.3.525 हीरा (वजिरुपमा)

1.1.3.626 से संबद्ध होना (सेवितब्बा)

1.1.3.727 घृणा (जिगुच्चितब्बा)

1.1.3.828 गोबर जैसी वाणी (गुठभानी)

1.1.3.929 अंधा (अंधा)

1.1.3.1030 उलटा (अवकुज्जा)

1.1.4IV. देवदूत (दिव्य संदेशवाहक)

1.1.4.131 ब्रह्मा (सब्रह्मक)

1.1.4.232 आनंद

1.1.4.333 सारिपुत्त 368

1.1.4.434 कारण (निदान)

1.1.4.535 हत्थका

1.1.4.636 संदेशवाहक 379 (देवदूत)

1.1.4.737 (7) राजा (1) (चतुम्हाराजा)

1.1.4.838 (8) राजा (2)

1.1.4.939 नाजुक (सुखुमाला)

1.1.4.1040 अधिकारी (अधिपतेय्या)

1.1.5वी. लघु अध्याय (कुलवाग्गो)

1.1.5.141 वर्तमान (सम्मुखीभव)

1.1.5.242 मामले (तिथाना)

1.1.5.343 लाभ (अत्थवास)

1.1.5.444 सहज प्रवाह (कथापवत्ती)

1.1.5.545 बुद्धिमान (पंडित)

1.1.5.646 गुणी (सिलवंता)

1.1.5.747 संस्कार (भावना) लक्षण (संखतलखना)

1.1.5.848 असंस्कार (असंस्कार) लक्षण (असन्खतलक्खाना)

1.1.5.949 पर्वतों का राजा (पब्बटा-राजा)

1.1.5.1050 अभ्यास उत्साह (अटप्पा-कारनिया)

1.1.5.1151 एक मास्टर चोर (महा-कोरा सं. चोर)

1.2दूसरा पचास

1.2.1(6)I. ब्राह्मण

1.2.1.152 दो ब्राह्मण (1)

1.2.1.253 दो ब्राह्मण (2)

1.2.1.354 एक ब्राह्मण

1.2.1.455. परिभजक (घूमने वाला तपस्वी)

1.2.1.556 निब्बाना (निब्बूता)

1.2.1.657 जनसंख्या में कमी (पालोका)

1.2.1.758 वच्छगोत्ता

1.2.1.859 टिकान्ना

1.2.1.960 जानूसोनी

1.2.1.1061 संगरवा

1.2.2(7)II. महावग्गो (महावग्गो)

1.2.2.162 संप्रदायवादी (तित्थयातनादिसुत्तम)

1.2.2.263 तीन खतरे

1.2.2.364 वेनागपुरा (नागपुर)

1.2.2.465 सरभा

1.2.2.566 केसापुट्टिया 4S5

1.2.2.667 सलहा

1.2.2.7बातचीत के 68 आधार (कथावत्थु)

1.2.2.869 अन्य संप्रदाय (अन्नतित्तिया)

1.2.2.9हानि के 70 मूल कारण (अकुसला-मूला)

1.2.2.1071 उपोसथा (उपवास)

1.2.3III. आनंद खंड

1.2.3.172 चन्ना

1.2.3.273 अजीवका

1.2.3.374 महानम सक्यान

1.2.3.475 निगंथा (जैन)

1.2.3.576 को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए (निवेसाका)

1.2.3.677 अस्तित्व (पुनर्जन्म का कारण)1 (भाव1)

1.2.3.778 अस्तित्व (कारणात्मक)2 [चेतन क्रिया और आकांक्षा] (भाव2)

1.2.3.879 स्थापना (सिलब्बता संस्कृत: शीलव्रत)

1.2.3.980 सुगंध (गंध जटा)

1.2.3.1081 अभिभू (चुलानिका)

1.2.4IV. तपस्वी (समना)

1.2.4.182 तपस्वी (समना)

1.2.4.283 गधा 518 (गर्धबा)

1.2.4.384 खेत (खेट्टा)

1.2.4.485 युवा वज्जि (वज्जिपुत्त)

1.2.4.586 प्रशिक्षु (सेक्खा)

1.2.4.687 प्रशिक्षण की प्रक्रिया (1) (पथम-सिक्ख-सुत्तम)

1.2.4.788 प्रशिक्षण की प्रक्रिया (2) (दुतिया-सिक्खा-सुत्तम)

1.2.4.889 प्रशिक्षण की प्रक्रिया (3) (तातिया-सिक्खा-सुत्तम)

1.2.4.990 प्रशिक्षण (1) (पथम-सिक्खट्टय-सुत्तम)

1.2.4.1091 प्रशिक्षण (2) (दुतिया-सिक्खट्टया-सुत्तम)

1.2.4.1192 पंचधा (संकव)

1.2.5V. नमक का एक टुकड़ा 533 (लोनाका-पल्ला)

1.2.5.193 अत्यावश्यक (अक्कायिका)

1.2.5.294 विवेकाधिकार (पविवेक)

1.2.5.395 शरद ऋतु 537 (सारदा सं. शरद)

1.2.5.496 सभाएं (पेरिसा बिना परिषद)

1.2.5.597 थोरब्रेड (1) (पथमा-अजानिया)

1.2.5.698 थोरब्रेड (2) (दुतिया-अजानिया)

1.2.5.799 थोरब्रेड (3) (तातिया-अजानिया)

1.2.5.8100 छाल का कपड़ा (पोत्थाका)

1.2.5.9101 नमक का एक टुकड़ा

1.2.5.10102 मृदा निष्कासनकर्ता (पम्सुधोवका)

1.2.5.11103 ए गोल्डस्मिथ 565

1.3तीसरा पचास

1.3.1I. ज्ञानोदय

1.3.1.1104 आत्मज्ञान से पहले (पुब्बेवा-संबोध-सुत्तम)

1.3.1.2105 संतुष्टि (1) [563] (पथमा-असदा-सुत्तम)

1.3.1.3106 संतुष्टि (2) (दुतिया-असदा-सुत्तम)

1.3.1.4107 तपस्वी एवं ब्राह्मण [569] (समना ब्राह्मण)

1.3.1.5108 विलाप (रन्ना)

1.3.1.6109 कोई तृप्ति नहीं (अतिति सं. अतृप्ति)

1.3.1.7110 असुरक्षित (अरक्षिता सं. अरक्षित)

1.3.1.8111 विफलता (ब्यपन्ना सं. व्यय)

1.3.1.9112 कारण (1) (निदाना1)

1.3.1.10113 कारण (2) (निदाना2)

1.3.2II. दुख के लोक की ओर अग्रसर (अपायिका-वग्गो)

1.3.2.1114 दुख के लोक की ओर अग्रसर (अपयिका-सुत्तम)

1.3.2.2115 दुर्लभ (दुल्लभा सं. दुर्लभ)

1.3.2.3116 अथाह (अप्पमेय्या सं. अप्रमनिया)

1.3.2.4117 भेद (अनेंजा सं. अनेन्या)

1.3.2.5118 असफलताएँ और उपलब्धियाँ (सम्पदा) (विपत्ति-सम्पदा)

1.3.2.6119 पासे (अपन्नका)

1.3.2.7120 गतिविधि (कम्मंता)

1.3.2.8121 पवित्रता (1) (सोसेय्या1 सं. शुचिता)

1.3.2.9122 पवित्रता (2) (सोसेय्या2 सं. शुचिता)

1.3.2.10123 संतत्व (मनीय्या संस. मुनित्वा)

1.3.3III. कुसिनारा [584]

1.3.3.1124 कुसिनारा

1.3.3.2125 तर्क (बंधन)

1.3.3.3126 गोतमका

1.3.3.4127 भरंडू

1.3.3.5128 हत्थाका

1.3.3.6129 प्रदूषण (कटुविया)

1.3.3.7130 अनुरुद्ध (1)

1.3.3.8131 अनुरुद्ध (2)

1.3.3.9132 छिपा हुआ (पटिच्चन्ना)

1.3.3.10पत्थर पर उकेरी गई 133 पंक्तियाँ

1.3.4IV. एक योद्धा (योद्धाजीव)

1.3.4.1134 एक योद्धा (योद्धाजीव)

1.3.4.2135) सभाएं (पेरिसा बिना परिषद्)

1.3.4.3136 एक मित्र (मित्ता सं. मित्रा)

1.3.4.4137 उदय (उप्पदा सं. उत्पद)

1.3.4.5138 एक बाल कम्बल (केस-कम्बाला बिना केश-कम्बाला)

1.3.4.6139 धन (संपदा)

1.3.4.7140 विकास 605 (बुद्धि सं. वृद्धि)

1.3.4.8141 घोड़े (1) (अस्साखालुंका सं. अश्व..)

1.3.4.9142 घोड़े (2) (अस्सापरस्सा सं. अश्वपुरुष)

1.3.4.10143 घोड़े (3) (अस्सजानिया संस अश्व-जना)

1.3.4.11144 मोर अभयारण्य (एल) 607 (मोरा-निवापा1 सं. मयूरा..)

1.3.4.12145 मोर अभयारण्य (2) (मोरा-निवापा2 संस. मयूरा..)

1.3.4.13146 मोर अभयारण्य (3) (मोरा-निवापा3 सं. मयूरा..)

1.3.5V. शुभ (मंगल-वग्गो)

1.3.5.1147 हानिकारक (अकुसाला सं. अकुशल)

1.3.5.2148 निंदनीय (सवज्जा)

1.3.5.3149 अधर्मी (विसमा)

1.3.5.4150 अशुद्ध (असुची)

1.3.5.5151 अपंग (1) (खाता1 बिना क्षता)

1.3.5.6152 अपंग (2) (खाता2 सं. क्षता)

1.3.5.7153 अपंग (3) (खाता3 सं. क्षता)

1.3.5.8154 अपंग (4) (खाता4 सं. क्षता)

1.3.5.9155 श्रद्धांजलि (वंदना)

1.3.5.10156 सुप्रभात (पब्बन्हा सं. पूरवन्हा)

1.3.6VI. अभ्यास के तरीके [609] (अचेलाका)

1.3.6.1157 (सती ध्यान की स्थापना) [610]

1.3.6.2158—163 (सही प्रयास, आदि) [613]

1.3.7VII. कर्म के मार्ग (कर्म/कार्यों की श्रृंखला) (कर्म-पथपेय्यलम संस्कृत कर्म..)

1.3.7.1164-183 [614]

1.3.8आठवीं. वासना (राग) आदि श्रृंखला 615 (राग-पय्यालम)

त्रिकों की पुस्तक (टिकानिपाता)

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

उस भगवान को नमन, शत्रुओं का नाश करने वाले, सही मायने में पूर्णतः प्रबुद्ध (जागृत) भगवान।

पहले पचास

I. मूर्ख (बाला)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

1. खतरा (भया)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, जो भी संकट उत्पन्न होते हैं, वे सब मूर्खों के कारण उत्पन्न होते हैं, बुद्धिमानों के कारण नहीं। जो भी विपत्तियाँ उत्पन्न होती हैं, वे सब मूर्खों के कारण उत्पन्न होती हैं, बुद्धिमानों के कारण नहीं। जो भी दुर्भाग्य उत्पन्न होते हैं, वे सब मूर्खों के कारण उत्पन्न होते हैं, बुद्धिमानों के कारण नहीं। जिस प्रकार सरकंडे या घास से बने घर में लगी आग, नुकीली छत वाले, अंदर-बाहर से प्लास्टर किए हुए, हवा रहित, कुंडी लगे और खिड़कियाँ बंद घर को भी जला देती है; उसी प्रकार, जो भी संकट उत्पन्न होते हैं... वे सब मूर्खों के कारण उत्पन्न होते हैं, बुद्धिमानों के कारण नहीं। (1) इस प्रकार, भिक्षुओं, मूर्ख संकट लाते हैं, बुद्धिमान संकट नहीं लाते; (2) मूर्ख विपत्ति लाते हैं, बुद्धिमान विपत्ति नहीं लाते; (3) मूर्ख दुर्भाग्य लाते हैं, बुद्धिमान दुर्भाग्य नहीं लाते। बुद्धिमान से कोई संकट नहीं होता; बुद्धिमान से कोई विपत्ति नहीं आती; बुद्धिमान से कोई दुर्भाग्य नहीं आता। व्यक्ति।

अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम उन तीन गुणों से बचेंगे जिनके कारण व्यक्ति मूर्ख कहलाता है, और हम उन तीन गुणों को अपनाएंगे और उनका अभ्यास करेंगे जिनके कारण व्यक्ति बुद्धिमान कहलाता है।' इसी मार्ग पर आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए। [102]

---

2 विशेषताएँ (लक्खना)

भिक्षुओं, मूर्ख व्यक्ति की पहचान उसके कर्मों से होती है; बुद्धिमान व्यक्ति की पहचान भी उसके कर्मों से होती है। पन्ना (दिव्य ज्ञान) अपनी अभिव्यक्ति में चमकता है। 339

भिक्षुओं, जिसमें तीन गुण हों, उसे मूर्ख समझा जाना चाहिए। वे तीन गुण कौन से हैं? शारीरिक दुराचार, वाणी दुराचार और मानसिक दुराचार। जिसमें ये तीन गुण हों, उसे मूर्ख समझा जाना चाहिए। जिसमें तीन गुण हों, उसे बुद्धिमान समझा जाना चाहिए। वे तीन गुण कौन से हैं? शारीरिक सुवाह, वाणी सुवाह और मानसिक सुवाह। जिसमें ये तीन गुण हों, उसे बुद्धिमान समझा जाना चाहिए।

अतः, भिक्षुओं, आपको स्वयं को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम उन तीन गुणों से बचेंगे जिनके कारण व्यक्ति मूर्ख कहलाता है, और हम उन तीन गुणों का पालन करेंगे जिनके कारण व्यक्ति बुद्धिमान कहलाता है।' इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

3. सोच (सिंटी)

भिक्षुओं, मूर्ख व्यक्ति में मूर्खता के ये तीन लक्षण, ये तीन संकेत और ये तीन अभिव्यक्तियाँ होती हैं। 340 वे तीन क्या हैं? यहाँ, मूर्ख व्यक्ति बुरा सोचता है, बुरा बोलता है और बुरा काम करता है। यदि मूर्ख व्यक्ति बुरा न सोचता, बुरा न बोलता और बुरा काम न करता, तो बुद्धिमान लोग उसे कैसे पहचानते: 'यह व्यक्ति मूर्ख है, बुरा है'? परन्तु क्योंकि मूर्ख व्यक्ति बुरा सोचता है, बुरा न बोलता है और बुरा काम करता है, इसलिए बुद्धिमान लोग उसे पहचानते हैं: 'यह व्यक्ति मूर्ख है, बुरा है।' ये मूर्ख व्यक्ति के तीन लक्षण, ये तीन संकेत और ये तीन अभिव्यक्तियाँ हैं।

"बुद्धिमान व्यक्ति में ये तीन गुण होते हैं, ये तीन लक्षण होते हैं, ये तीन अभिव्यक्तियाँ होती हैं। वे तीन क्या हैं? यहाँ, एक बुद्धिमान व्यक्ति अच्छी तरह सोचता है, अच्छी तरह बोलता है और अच्छी तरह कार्य करता है। यदि बुद्धिमान व्यक्ति अच्छी तरह नहीं सोचता, अच्छी तरह नहीं बोलता और अच्छी तरह कार्य नहीं करता, तो बुद्धिमान लोग उसे कैसे पहचानते: 'यह व्यक्ति बुद्धिमान है, एक अच्छा इंसान है'? [103] लेकिन क्योंकि बुद्धिमान व्यक्ति अच्छी तरह सोचता है, अच्छी तरह बोलता है और अच्छी तरह कार्य करता है, इसलिए बुद्धिमान लोग उसे पहचानते हैं: 'यह टेलो बुद्धिमान है, एक अच्छा इंसान है।' ये बुद्धिमान व्यक्ति के तीन गुण हैं, ये तीन लक्षण होते हैं, ये तीन अभिव्यक्तियाँ होती हैं।"

अतः... [जैसा कि 3:2 में है]... इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए। 341

---

4. अपराध (अक्काया)

भिक्षुओं, वह व्यक्ति जिसमें तीन गुण हों, मूर्ख कहलाता है। वे तीन गुण क्या हैं? (1) वह अपने अपराध को अपराध नहीं मानता। (2) जब वह अपने अपराध को अपराध मानता है, तो वह धर्म के अनुसार उसका प्रायश्चित नहीं करता। (3) जब कोई दूसरा व्यक्ति उसके सामने अपना अपराध स्वीकार करता है, तो वह धर्म के अनुसार उसे स्वीकार नहीं करता। वह व्यक्ति जिसमें ये तीनों गुण हों, मूर्ख कहलाता है।

तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को ही ज्ञानी कहा जाना चाहिए। वे तीन गुण क्या हैं? (1) वह अपराध को अपराध के रूप में देखता है। (2) जब वह अपराध को अपराध के रूप में देखता है, तो वह धर्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करता है। (3) जब कोई दूसरा व्यक्ति उसके सामने अपना अपराध स्वीकार करता है, तो वह धर्म के अनुसार उसे स्वीकार करता है। इन तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को ही ज्ञानी कहा जाना चाहिए।

इसलिए... आपको इसी तरह से खुद को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

5 लापरवाही से (अयोनिसो)

भिक्षुओं, जिसमें तीन गुण हों, उसे मूर्ख समझा जाना चाहिए। वे तीन गुण क्या हैं? (1) वह लापरवाही से प्रश्न पूछता है; (2) वह लापरवाही से प्रश्न का उत्तर देता है; (3) जब कोई दूसरा व्यक्ति सावधानीपूर्वक, सुविचारित और सुसंगत शब्दों और वाक्यों में प्रश्न का उत्तर देता है, तो वह उसे स्वीकार नहीं करता। जिसमें ये तीनों गुण हों, उसे मूर्ख समझा जाना चाहिए।

तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को बुद्धिमान माना जाना चाहिए। वे तीन गुण क्या हैं? (1) वह सावधानीपूर्वक प्रश्न पूछता है; (2) वह सावधानीपूर्वक प्रश्न का उत्तर देता है; (3) जब कोई दूसरा व्यक्ति सुविचारित और सुसंगत शब्दों और वाक्यों में सावधानीपूर्वक प्रश्न का उत्तर देता है, तो वह उसे स्वीकार करता है। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को बुद्धिमान माना जाना चाहिए।

इसलिए... आपको इसी तरह से खुद को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

6 हानिकारक (अकुसाला सं. अकुशल)

भिक्षुओं, जो तीन गुणों से युक्त हो, उसे मूर्ख समझा जाना चाहिए। वे तीन गुण क्या हैं? [104] हानिकारक (अकुशल) शारीरिक क्रिया, हानिकारक (अकुशल) वाणी क्रिया और हानिकारक (अकुशल) मानसिक क्रिया। जो इन तीनों गुणों से युक्त हो, उसे मूर्ख समझा जाना चाहिए।

तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को बुद्धिमान माना जाना चाहिए। वे तीन गुण कौन से हैं? लाभकारी (कुशल) शारीरिक क्रिया, लाभकारी (कुशल) वाणी और लाभकारी (कुशल) मानसिक क्रिया। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को बुद्धिमान माना जाना चाहिए।

इसलिए... आपको इसी तरह से खुद को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

7 निंदनीय (सवज्जा)

भिक्षुओं, जिसमें तीन गुण हों, उसे मूर्ख समझना चाहिए। वे तीन गुण कौन से हैं? निंदनीय शारीरिक कर्म, निंदनीय वाणी और निंदनीय मानसिक कर्म। जिसमें ये तीनों गुण हों, उसे मूर्ख समझना चाहिए।

"तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को ही बुद्धिमान माना जाना चाहिए। वे तीन गुण कौन से हैं? दोषरहित शारीरिक क्रिया, दोषरहित वाणी और दोषरहित मानसिक क्रिया। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को ही बुद्धिमान माना जाना चाहिए।"

इसलिए... आपको इसी तरह से खुद को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

8 कष्टदायक (सबयबज्जा)

भिक्षुओं, जिसमें तीन गुण हों, उसे मूर्ख समझना चाहिए। वे तीन गुण कौन से हैं? कष्टदायी शारीरिक क्रिया, कष्टदायी वाणी और कष्टदायी मानसिक क्रिया। जिसमें ये तीनों गुण हों, उसे मूर्ख समझना चाहिए।

"तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को बुद्धिमान माना जाना चाहिए। वे तीन गुण कौन से हैं? कष्टरहित शारीरिक क्रिया, कष्टरहित वाणी और कष्टरहित मानसिक क्रिया। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को बुद्धिमान माना जाना चाहिए।"

इसलिए, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम उन तीन गुणों से बचेंगे जिनके कारण व्यक्ति मूर्ख कहलाता है, और हम उन तीन गुणों को अपनाएंगे और उनका पालन करेंगे जिनके कारण व्यक्ति बुद्धिमान कहलाता है? इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए?' [105]

---

9. मैम्ड (खाता संस्कृत क्षत)

भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त अज्ञानी, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे तीन गुण क्या हैं? शारीरिक दुराचार, वाणी दुराचार और मानसिक दुराचार। इन तीन गुणों से युक्त अज्ञानी, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को निर्बल और अक्षुण्ण रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे तीन गुण क्या हैं? शारीरिक सुवाह्य आचरण, वाणी सुवाह्य आचरण और मानसिक सुवाह्य आचरण। इन तीन गुणों से युक्त बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और अक्षुण्ण रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

---

10 दाग (माला)

भिक्षुओं, जो तीन गुणों से युक्त होते हैं और तीन दोषों का त्याग नहीं करते, उन्हें नरक में ऐसे डाल दिया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे तीन दोष क्या हैं? (1) अनैतिक होना और अनैतिकता के दोष का त्याग न करना। (2) ईर्ष्यालु होना और ईर्ष्या के दोष का त्याग न करना। (3) कंजूस होना और कंजूसी के दोष का त्याग न करना। इन तीन गुणों से युक्त होने और इन तीन दोषों का त्याग न करने पर, उन्हें नरक में ऐसे डाल दिया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।

"भिक्षुओं (सन्यासियों) को तीन गुणों से युक्त और तीन दोषों का त्याग करने पर स्वर्ग में ऐसे प्रवेश मिलता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे तीन क्या हैं? (1) वे गुणी होते हैं और अनैतिकता के दोष का त्याग कर चुके होते हैं। (2) वे ईर्ष्यालु नहीं होते और ईर्ष्या के दोष का त्याग कर चुके होते हैं। (3) वे कंजूस नहीं होते और कंजूसी के दोष का त्याग कर चुके होते हैं। इन तीन गुणों से युक्त और इन तीन दोषों का त्याग करने पर स्वर्ग में ऐसे प्रवेश मिलता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।" [106]

II. रथकार (रथकारा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

11 सुप्रसिद्ध (नाटा)

"भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त एक प्रसिद्ध भिक्षु अनेक लोगों के नुकसान, अनेक लोगों के दुख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और पीड़ा का कारण बन रहा है। देवताओं और मनुष्यों के लिए। वे तीन गुण क्या हैं? वह उन्हें असंगत शारीरिक क्रिया, असंगत वाणी और असंगत [मानसिक] गुणों के लिए प्रोत्साहित करता है। 342 इन तीन गुणों से युक्त एक प्रसिद्ध भिक्षु अनेक लोगों के नुकसान, अनेक लोगों के दुख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और पीड़ा का कारण बन रहा है, देवताओं और मनुष्यों के लिए।

"भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त एक प्रसिद्ध भिक्षु अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए कार्य करता है। वे तीन गुण क्या हैं? वह उन्हें सामंजस्यपूर्ण शारीरिक क्रिया, सामंजस्यपूर्ण वाणी और सामंजस्यपूर्ण मानसिक गुणों के लिए प्रोत्साहित करता है। इन तीन गुणों से युक्त एक प्रसिद्ध भिक्षु अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, कल्याण और सुख के लिए, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए कार्य करता है।"

---

12 स्मरणीय (सरनिया संस. स्मरणीय)

भिक्षुओं, एक प्रधान क्षत्रिय राजा को जीवन भर इन तीन स्थानों को याद रखना चाहिए। वे तीन स्थान कौन से हैं? (1) पहला स्थान जहाँ उसका जन्म हुआ। (2) दूसरा स्थान जहाँ उसे क्षत्रिय राजा के रूप में प्रधान बनाया गया। (3) और तीसरा स्थान जहाँ युद्ध में विजय प्राप्त करने के बाद वह विजयी हुआ और युद्धक्षेत्र में अग्रणी बना। ये तीन स्थान हैं जिन्हें एक प्रधान क्षत्रिय राजा को जीवन भर याद रखना चाहिए। [107]

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, एक भिक्षु को अपने जीवन भर इन तीन स्थानों को याद रखना चाहिए। वे तीन स्थान कौन से हैं? (1) पहला स्थान वह है जहाँ उसने अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, गेरुए वस्त्र धारण करके गृहस्थ जीवन त्याग दिया। (2) दूसरा स्थान वह है जहाँ उसने सत्य को समझा: 'यह दुख है', 'यह दुख का कारण है', 'यह दुख का निवारण है', और 'यह दुख निवारण का मार्ग है'। (3) और तीसरा स्थान वह है जहाँ उसने दोषों के नाश के साथ, इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान से मन की निष्कलंक मुक्ति, प्रभात (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास किया। 343 ये तीन स्थान हैं जिन्हें एक भिक्षु को अपने जीवन भर याद रखना चाहिए।"

---

13 अपेक्षा (असमसा सं. आकांक्षा)

भिक्षुओं, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से तीन प्रकार हैं? एक जो अपेक्षा रहित है, एक जो अपेक्षा से परिपूर्ण है, और एक जिसने अपेक्षा पर विजय प्राप्त कर ली है।

(1) "हे भिक्षुओं, वह व्यक्ति कौन है जो अपेक्षा नहीं रखता? यहाँ, एक व्यक्ति का पुनर्जन्म निम्न कुल में हुआ है—चांडलाओं, बाँस श्रमिकों, शिकारियों, गाड़ी बनाने वालों या फूल बीनने वालों के कुल में—एक ऐसा कुल जो गरीब है, जिसके पास भोजन और पेय कम है, जिसका जीवन यापन कठिन है, जहाँ भोजन और वस्त्र मुश्किल से प्राप्त होते हैं; और वह कुरूप, बदसूरत, बौना, और बहुत सी बीमारियों से ग्रस्त है: अंधा, अपंग, लंगड़ा या लकवाग्रस्त। उसे भोजन, पेय, वस्त्र और वाहन प्राप्त नहीं होते; मालाएँ, सुगंध और लेप; बिस्तर, आवास और प्रकाश। वह सुनता है: 'क्षत्रियों ने फलाँ-फलाँ क्षत्रिय का अभिषेक किया है।' उसे यह विचार नहीं आता: 'क्षत्री मेरा अभिषेक कब करेंगे?' इसे ही अपेक्षाहीन व्यक्ति कहा जाता है।"

(2) "और वह व्यक्ति जो आशा से परिपूर्ण है, वह क्या है? [108] यहाँ, एक प्रधान क्षत्रिय राजा का सबसे बड़ा पुत्र, जिसका राज्याभिषेक होना तय है, परन्तु अभी तक नहीं हुआ है, अविचल अवस्था में है। 345 वह सुनता है: क्षत्रियों ने फलाँ क्षत्रिय का राज्याभिषेक कर दिया है। उसके मन में आता है: 'क्षत्रिय मेरा राज्याभिषेक कब करेंगे?' यही आशा से परिपूर्ण व्यक्ति कहलाता है।"

(3) और वह व्यक्ति कौन है जिसने अपेक्षा पर विजय प्राप्त कर ली है? उदाहरण के लिए, एक प्रधान क्षत्रिय राजा सुनता है: 'फलां क्षत्रिय का क्षत्रियों द्वारा अभिषेक किया गया है।' उसके मन में यह विचार नहीं आता: 'मुझे भी क्षत्रिय कब अभिषेक करेंगे?' इसका कारण क्या है? क्योंकि अभिषेक होने पर उसकी पूर्व अपेक्षा समाप्त हो गई। यही अपेक्षा पर विजय प्राप्त करने वाला व्यक्ति कहलाता है।

ये तीन प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में पाए जाते हैं।

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, भिक्षुओं में भी तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से तीन प्रकार हैं? एक जो अपेक्षाहीन है, एक जो अपेक्षा से परिपूर्ण है, और एक जो अपेक्षा पर विजय प्राप्त कर चुका है।"

(1) "हे भिक्षुओं, अपेक्षाहीन व्यक्ति कौन है? यहाँ, कोई व्यक्ति अनैतिक, बुरे चरित्र वाला, अपवित्र और संदिग्ध आचरण वाला, अपने कार्यों में गुप्त, तपस्वी होते हुए भी तपस्वी नहीं, ब्रह्मचारी होते हुए भी ब्रह्मचारी नहीं, भीतर से सड़ा हुआ, भ्रष्ट और पतित है। वह सुनता है: 'अमुक भिक्षु ने अपने दोषों का नाश करके, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में मन की निष्कलंक मुक्ति, दीप्तिमान (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है।' उसे यह विचार नहीं आता: 'मैं भी कब अपने दोषों का नाश करके, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में मन की निष्कलंक मुक्ति, दीप्तिमान (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करूँगा और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करूँगा?' यही अपेक्षाहीन व्यक्ति कहलाता है।"

(2) "और वह व्यक्ति कौन है जो आशाओं से परिपूर्ण है? यहाँ, एक भिक्षु गुणी और अच्छे चरित्र का है। वह [109] सुनता है: 'अमुक भिक्षु ने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।' उसके मन में यह विचार आता है: 'मैं भी कब दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करूँगा, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करूँगा?' इसे आशाओं से परिपूर्ण व्यक्ति कहा जाता है।

(3) और वह व्यक्ति कौन है जिसने अपेक्षा पर विजय प्राप्त कर ली है? यहाँ, भिक्षु एक अरहंत है, वह जिसके दोष नष्ट हो गए हैं। वह सुनता है: 'अमुक भिक्षु ने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।' उसके मन में यह विचार नहीं आता: 'मैं भी कब दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करूँगा, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करूँगा?' इसका कारण क्या है? क्योंकि मुक्ति प्राप्त करने पर उसकी पिछली मुक्ति की अपेक्षा समाप्त हो गई। इसे अपेक्षा पर विजय प्राप्त करने वाला व्यक्ति कहा जाता है।

"हे भिक्षुओं, भिक्षुओं के बीच ये तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं।"

---

14 व्हील-टर्निंग (कैक्कवट्टी सं. चक्रवर्ती)

"भिक्षुओं (साधुओं), यहां तक कि एक चक्र चलाने वाला सम्राट, एक धर्मात्मा राजा जो धम्म के अनुसार शासन करता है, वह भी अपने ऊपर एक राजा के बिना चक्र नहीं चलाता।"

जब यह कहा गया, तो एक भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "परन्तु, हे भंते, चक्र घुमाने वाले राजा से भी श्रेष्ठ राजा कौन है, वह धर्मात्मा राजा कौन है जो धम्म के अनुसार शासन करता है?"

"यह धम्म है, भिक्षु," भगवान (बुद्ध) ने कहा। 346 "यहाँ, हे भिक्षु, एक चक्र-घुमाने वाला सम्राट, धर्म के अनुसार शासन करने वाला एक धर्मी राजा, जो केवल धर्म पर निर्भर रहता है, धर्म का आदर, सम्मान और पूजा करता है, धर्म को अपना मानक, ध्वज और अधिकार मानता है, अपने दरबार में लोगों को धार्मिक संरक्षण, आश्रय और सुरक्षा प्रदान करता है। फिर, एक चक्र-घुमाने वाला सम्राट, धर्म के अनुसार शासन करने वाला एक धर्मी राजा, जो केवल धर्म पर निर्भर रहता है, धर्म का आदर, सम्मान और पूजा करता है, धर्म को अपना मानक, ध्वज और अधिकार मानता है, अपने क्षत्रिय सामंतों, अपनी सेना, [110] ब्राह्मणों और गृहस्थों, नगर और ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों, तपस्वियों और ब्राह्मणों, और पशुओं और पक्षियों को धार्मिक संरक्षण, आश्रय और सुरक्षा प्रदान करता है। इन सभी प्राणियों को ऐसा

धार्मिक संरक्षण, आश्रय और सुरक्षा प्रदान करने के बाद, वह चक्र-घुमाने वाला सम्राट, धर्म के अनुसार शासन करने वाला एक धर्मी राजा, केवल धर्म के माध्यम से ही चक्र घुमाता है, 347 एक ऐसा पहिया जिसे कोई भी शत्रुतापूर्ण मनुष्य वापस नहीं घुमा सकता। 348

(1) "इसी प्रकार, हे भिक्षु, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, धर्म के धर्मी राजा, केवल धर्म पर निर्भर रहते हुए, धर्म का आदर, सम्मान और पूजा करते हुए, धर्म को अपना मानक, ध्वज और अधिकार मानकर, शारीरिक क्रियाओं के संबंध में धार्मिक संरक्षण, आश्रय और रक्षा प्रदान करते हुए कहते हैं: 'ऐसी शारीरिक क्रियाओं का अभ्यास करना चाहिए; ऐसी शारीरिक क्रियाओं का अभ्यास नहीं करना चाहिए।'"

(2) "फिर तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, धर्म के धर्मी राजा, धर्म पर ही भरोसा करते हुए, धर्म का आदर, सम्मान और पूजा करते हुए, धर्म को अपना मानक, ध्वज और अधिकार मानते हुए, मौखिक कर्म के संबंध में धार्मिक संरक्षण, आश्रय और रक्षा प्रदान करते हुए कहते हैं: 'ऐसे मौखिक कर्म का अभ्यास करना चाहिए; ऐसे मौखिक कर्म का अभ्यास नहीं करना चाहिए।'

(3) "फिर तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, धर्म के धर्मी राजा, धर्म पर ही भरोसा रखते हुए, धर्म का आदर, सम्मान और पूजा करते हुए, धर्म को अपना मानक, ध्वज और अधिकार मानते हुए, मानसिक कर्म के संबंध में धार्मिक संरक्षण, आश्रय और सुरक्षा प्रदान करते हुए कहते हैं: 'ऐसे मानसिक कर्म का अभ्यास करना चाहिए; ऐसे मानसिक कर्म का अभ्यास नहीं करना चाहिए।'

"शारीरिक क्रिया, वाणी क्रिया और मानसिक क्रिया के संबंध में ऐसी धार्मिक सुरक्षा, आश्रय और रक्षा प्रदान करके, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, धम्म के धर्मी राजा, केवल धम्म के माध्यम से ही धम्म के अद्वितीय चक्र को गतिमान करते हैं, एक ऐसा चक्र जिसे किसी भी तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार में किसी के द्वारा भी वापस नहीं मोड़ा जा सकता है।"

---

15 राजा सैकेटाना 349

एक बार भगवान (बुद्ध) इसिपताना के हिरण पार्क में बरनासी में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!" [तस्वीर]

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, अतीत में सचेतना नामक एक राजा था। तब राजा सचेतना ने एक सारथी से कहा, 'मित्र सारथी, छह माह बाद एक युद्ध होगा। क्या तुम मेरे लिए नए पहिए बना सकते हो?' सारथी ने उत्तर दिया, 'जी, मैं बना सकता हूँ।' छह माह से छह दिन कम समय में सारथी ने एक पहिया तैयार कर दिया। राजा सचेतना ने फिर सारथी से पूछा, 'छह दिन बाद एक युद्ध होगा। क्या नए पहिए तैयार हो गए हैं?' सारथी ने उत्तर दिया, 'जी, पिछले छह माह से छह दिन कम समय में मैंने एक पहिया तैयार कर दिया है।' - 'परन्तु, मित्र सारथी, क्या तुम अगले छह दिनों में मेरे लिए दूसरा पहिया भी बना सकते हो?' - 'जी, मैं बना सकता हूँ।' सारथी ने उत्तर दिया। फिर, अगले छह दिनों में सारथी ने दूसरा पहिया भी तैयार कर दिया। वह नए पहिए राजा सचेतना के पास लाया और बोला, 'यह नए पहिए हैं जो X ने आपके लिए बनाए हैं, जी,' — 'हे मेरे रथ निर्माता, छह महीने से छह दिन कम समय में बने पहिए और छह दिन में बने पहिए में क्या अंतर है? मुझे तो कोई अंतर नहीं दिखता।' — 'अंतर है, स्वामी। अंतर को ध्यान से देखिए।'

फिर रथ बनाने वाले ने उस पहिये को घुमाया जिसे पूरा करने में छह दिन लगे थे। वह अपनी शक्ति के अनुसार घूमता रहा, 350 और फिर लड़खड़ाकर खाई में गिर गया। लेकिन वह पहिया जिसे पूरा करने में छह महीने [112] से छह दिन कम लगे थे, अपनी शक्ति के अनुसार घूमता रहा और फिर धुरी पर जड़े हुए की तरह स्थिर हो गया। 351

"[राजा ने पूछा:] 'हे मित्र रथ निर्माता, ऐसा क्यों है कि जिस पहिए को पूरा करने में छह दिन लगे, वह अपनी गति के अनुसार लुढ़का और फिर लड़खड़ाकर जमीन पर गिर गया, जबकि जिस पहिए को पूरा करने में छह महीने से छह दिन कम लगे, वह अपनी गति के अनुसार लुढ़का और फिर धुरी पर स्थिर होकर रुक गया?'"

"[रथकार बनाने वाले ने उत्तर दिया:] 'हे स्वामी, जिस पहिये को पूरा करने में छह दिन लगे, उसका किनारा टेढ़ा, दोषपूर्ण और खराब है; उसकी तीलियाँ भी टेढ़ी, दोषपूर्ण और खराब हैं; और उसका केंद्र भी टेढ़ा, दोषपूर्ण और खराब है। इसी कारण वह बल के साथ लुढ़का और फिर लड़खड़ाकर जमीन पर गिर गया। परन्तु जिस पहिये को पूरा करने में छह महीने से छह दिन कम लगे, उसका किनारा टेढ़ा, दोषपूर्ण और खराब नहीं है; उसकी तीलियाँ भी टेढ़ी, दोषपूर्ण और खराब नहीं हैं; और उसका केंद्र भी टेढ़ा, दोषपूर्ण और खराब नहीं है। इसी कारण वह बल के साथ लुढ़का और फिर धुरी पर जड़े हुए की तरह स्थिर हो गया।"

भिक्षुओं, हो सकता है कि आप सोचें: 'उस समय रथ बनाने वाला कोई और था,' लेकिन आपको ऐसा नहीं सोचना चाहिए। उस समय मैं स्वयं रथ बनाने वाला था। तब मैं लकड़ी की टेढ़ी-मेढ़ी बनावट, दोषों और खामियों में निपुण था। लेकिन अब मैं अरहंत हूँ, पूर्णतः प्रबुद्ध, (1) शरीर की टेढ़ी-मेढ़ी बनावट, दोषों और खामियों में निपुण; (2) वाणी की टेढ़ी-मेढ़ी बनावट, दोषों और खामियों में निपुण; और (3) मन की टेढ़ी-मेढ़ी बनावट, दोषों और खामियों में निपुण।

"कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी जिसने शरीर, वाणी और मन की कुटिलता, दोषों और खामियों का त्याग नहीं किया है [113] वह इस धम्म और अनुशासन से गिर गया है, ठीक उसी तरह जैसे छह दिनों में बनकर तैयार हुआ पहिया [जमीन पर गिर गया]।

"कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी जिसने शरीर, वाणी और मन की कुटिलता, दोषों और कमियों का त्याग कर दिया है, वह इस धम्म और अनुशासन में उसी प्रकार स्थापित हो जाता है, जैसे छह महीने से छह दिन कम समय में बनकर तैयार हुआ चक्र [स्थिर रहा]।"

अतः, भिक्षुओं, तुम इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करो: 'हम शरीर की कुटिलता, दोषों और खामियों का त्याग करेंगे; हम वाणी की कुटिलता, दोषों और खामियों का त्याग करेंगे; हम मन की कुटिलता, दोषों और खामियों का त्याग करेंगे।' इसी प्रकार तुम्हें स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

16 अचूक (अपन्नक)

"भिक्षुओं (मठवासियों) में तीन गुण होते हैं: एक भिक्षु निर्दोष मार्ग का अभ्यास करता है और दोषों के नाश की नींव रखता है। 352 वे तीन गुण क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करता है, भोजन में संयम बरतता है और जागृति पर ध्यान केंद्रित करता है। 353

(1) "हे भिक्षुओं, एक भिक्षु अपनी इंद्रियों के द्वारों की रक्षा कैसे करता है? यहाँ, किसी रूप को आँख से देखकर, एक भिक्षु उसके लक्षणों और विशेषताओं को नहीं समझता। क्योंकि यदि वह आँख की इंद्रिय को अनियंत्रित छोड़ दे, तो उसे लालसा और उदासी जैसी बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ घेर सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम बरतता है; वह आँख की इंद्रिय की रक्षा करता है, वह आँख की इंद्रिय पर संयम रखता है। कान से ध्वनि सुनकर... नाक से गंध सूंघकर... जीभ से स्वाद चखकर... शरीर से स्पर्शित वस्तु का अनुभव करके... मन से किसी मानसिक घटना को जानकर, एक भिक्षु उसके लक्षणों और विशेषताओं को नहीं समझता। क्योंकि यदि वह मन की इंद्रिय को अनियंत्रित छोड़ दे, तो उसे लालसा और उदासी जैसी बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ घेर सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम बरतता है; वह मन की रक्षा करता है।" वह मन की शक्ति को नियंत्रित करता है। इसी प्रकार भिक्षु इंद्रिय शक्तियों के द्वारों की रक्षा करता है। [114]

(2) "भिक्षु भोजन में संयम कैसे बरतता है? यहाँ, ध्यानपूर्वक विचार करने पर, भिक्षु न तो मनोरंजन के लिए, न ही नशे के लिए, न ही शारीरिक सौंदर्य और आकर्षण के लिए भोजन ग्रहण करता है, बल्कि केवल इस शरीर के भरण-पोषण और रखरखाव के लिए, हानि से बचने के लिए, और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) में सहायता करने के लिए भोजन ग्रहण करता है, यह सोचते हुए कि: 'इस प्रकार मैं पुरानी वेदना को समाप्त करूँगा और नई वेदना को जागृत नहीं होने दूँगा, और मैं स्वस्थ और दोषरहित रहूँगा और शांति से रहूँगा।' इस प्रकार भिक्षु भोजन में संयम बरतता है।"

(3) "एक भिक्षु किस प्रकार जागृति पर ध्यान केंद्रित करता है? यहाँ, दिन के दौरान, चलते-फिरते और बैठते हुए, एक भिक्षु अपने मन को बाधक गुणों से शुद्ध करता है। रात्रि के पहले पहर में, चलते-फिरते और बैठते हुए, वह अपने मन को बाधक गुणों से शुद्ध करता है। रात्रि के मध्य पहर में, वह उठने का विचार मन में रखते हुए, एक पैर दूसरे पर रखकर, सिंह मुद्रा में दाहिनी ओर लेट जाता है, ध्यानमग्न और

पूर्णतः बोध करते हुए। उठने के बाद, रात्रि के अंतिम पहर में, चलते-फिरते और बैठते हुए, वह अपने मन को बाधक गुणों से शुद्ध करता है। इस प्रकार एक भिक्षु जागृति पर ध्यान केंद्रित करता है।"

"जो भिक्षु इन तीनों गुणों से युक्त होता है, वह निर्दोष मार्ग का अभ्यास कर रहा होता है और उसने दोषों के नाश की नींव रख दी होती है।"

---

17 स्वयं (अत्त-ब्यबाधा)

भिक्षुओं, ये तीन गुण स्वयं के कष्ट, दूसरों के कष्ट और हम दोनों के कष्ट का कारण बनते हैं। वे तीन कौन से गुण हैं? शारीरिक दुराचार, वाणी दुराचार और मानसिक दुराचार। ये तीन गुण स्वयं के कष्ट, दूसरों के कष्ट और हम दोनों के कष्ट का कारण बनते हैं।

"ये तीन [अन्य] गुण स्वयं के कष्ट, दूसरों के कष्ट और दोनों के कष्ट का कारण नहीं बनते। वे तीन कौन से हैं? शारीरिक सुव्यवहार/वाक्य सुव्यवहार और मानसिक सुव्यवहार। ये तीन गुण स्वयं के कष्ट, दूसरों के कष्ट और दोनों के कष्ट का कारण नहीं बनते।" [115]

---

18 देव (देवदूत/देवता) (देवलोक)

"भिक्षुओं, यदि अन्य संप्रदायों के तपस्वी आपसे इस प्रकार पूछें: 'मित्रों, क्या आप देवलोक में पुनर्जन्म के लिए तपस्वी गौतम के मार्गदर्शन में ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करते हैं?' तो क्या आप घृणा, अपमान और तिरस्कार से भर नहीं जाएंगे?"

"हां, भंते।"

"इस प्रकार, भिक्षुओं, चूंकि तुम दिव्य जीवन, दिव्य सौंदर्य, दिव्य सुख, दिव्य महिमा और दिव्य अधिकार से घृणा, अपमानित और निराश हो, तो तुम्हें शारीरिक दुराचार, वाणी दुराचार और मानसिक दुराचार से और भी अधिक घृणा, अपमानित और निराश होना चाहिए।"

---

19 दुकानदार (1) (पापनिका1)

भिक्षुओं, तीन कारकों से युक्त एक दुकानदार न तो अप्राप्त धन अर्जित कर सकता है और न ही अर्जित धन को बढ़ा सकता है। वे तीन कारक क्या हैं? यहाँ, एक दुकानदार सुबह, दोपहर और शाम को अपने काम में लगन से नहीं बैठता। इन तीन कारकों से युक्त एक दुकानदार न तो अप्राप्त धन अर्जित कर सकता है और न ही अर्जित धन को बढ़ा सकता है।

इसी प्रकार, तीन कारकों से युक्त भिक्षु न तो अप्राप्त लाभकारी (कुशल) अवस्था को प्राप्त कर सकता है और न ही पूर्वप्राप्त लाभकारी (कुशल) अवस्था को बढ़ा सकता है। वे तीन कारक क्या हैं? यहाँ, भिक्षु सुबह, दोपहर या शाम को समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) के विषय में लगन से ध्यान नहीं लगाता है। इन तीन कारकों से युक्त भिक्षु न तो अप्राप्त लाभकारी (कुशल) अवस्था को प्राप्त कर सकता है और न ही पूर्वप्राप्त लाभकारी (कुशल) अवस्था को बढ़ा सकता है। [116]

भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त होकर एक दुकानदार अप्राप्त धन अर्जित करने और पहले से अर्जित धन को बढ़ाने में सक्षम होता है। वे तीन गुण क्या हैं? यहाँ, एक दुकानदार सुबह, दोपहर और शाम को लगन से अपने काम में लगा रहता है। इन तीन गुणों से युक्त होकर एक दुकानदार अप्राप्त धन अर्जित करने और पहले से अर्जित धन को बढ़ाने में सक्षम होता है।

इसी प्रकार, तीन गुणों से युक्त भिक्षु अप्राप्त लाभकारी (कुशल) अवस्था को प्राप्त करने और पूर्वप्राप्त लाभकारी (कुशल) अवस्था को बढ़ाने में सक्षम होता है। वे तीन गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु सुबह, दोपहर और शाम को समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) के किसी विषय पर

लगन से ध्यान लगाता है। इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु अप्राप्त लाभकारी (कुशल) अवस्था को प्राप्त करने और पूर्वप्राप्त लाभकारी (कुशल) अवस्था को बढ़ाने में सक्षम होता है।

---

20 दुकानदार (2) (पापानिका2)

"भिक्षुओं (साधुओं) में तीन गुण होते हैं, जिससे दुकानदार शीघ्र ही अपार धन-संपत्ति प्राप्त कर लेता है। वे तीन गुण क्या हैं? यहाँ, दुकानदार की दृष्टि तेज होती है, वह जिम्मेदार होता है और उसके संरक्षक होते हैं।"

(1) "और हे भिक्षुओं, एक दुकानदार की नज़र कितनी तेज़ होती है? यहाँ, एक दुकानदार किसी वस्तु के बारे में जानता है: 'यदि इस वस्तु को इस कीमत पर खरीदा जाए और इस कीमत पर बेचा जाए, तो इसमें इतनी पूंजी लगेगी और इतना लाभ होगा।' इस प्रकार एक दुकानदार की नज़र तेज़ होती है।"

(2) "और दुकानदार किस प्रकार उत्तरदायी होता है? यहाँ, दुकानदार वस्तुओं की खरीद-बिक्री में कुशल होता है। इसी प्रकार एक दुकानदार उत्तरदायी होता है।"

(3) "एक दुकानदार के हितैषी कैसे होते हैं? यहाँ, धनी, संपन्न, समृद्ध गृहस्थ और गृहस्थों के पुत्र उसे इस प्रकार जानते हैं: 'यह अच्छा दुकानदार पैनी नजर रखता है और जिम्मेदार है; वह अपनी पत्नी और बच्चों का भरण-पोषण करने में सक्षम है और समय-समय पर हमें भी भुगतान करता है।' इसलिए वे उसके पास धन जमा करते हुए कहते हैं: 'हे मित्र दुकानदार, इससे धन कमाकर अपनी पत्नी और बच्चों का भरण-पोषण करो और समय-समय पर हमें भी भुगतान करो।' इस प्रकार एक दुकानदार के हितैषी होते हैं।"

"इन तीन कारकों के होने से एक दुकानदार शीघ्र ही अपार और प्रचुर धन प्राप्त कर लेता है।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त भिक्षु शीघ्र ही विशाल और प्रचुर लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त कर लेता है। वे तीन गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु की दृष्टि तेज होती है, वह जिम्मेदार होता है और उसके उपकारी होते हैं।"

(1) "और हे भिक्षुओं, एक भिक्षु की दृष्टि कैसे तीव्र होती है? यहाँ, एक भिक्षु (भिक्षु) इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह पीड़ा है'... 'यह पीड़ा के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार एक भिक्षु की दृष्टि तीव्र होती है।"

(2) "भिक्षु किस प्रकार उत्तरदायित्व रखता है? यहाँ, भिक्षु ने अकुशल गुणों (धम्म) का त्याग करने और कुशल गुणों (धम्म) को ग्रहण करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न की है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, और कुशल गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता। इसी प्रकार भिक्षु उत्तरदायित्व रखता है।"

(3) "एक भिक्षु को संरक्षक कैसे मिलते हैं? यहाँ, समय-समय पर एक भिक्षु उन भिक्षुओं के पास जाता है जो विद्वान हैं, विरासत के उत्तराधिकारी हैं, धम्म के विशेषज्ञ हैं, अनुशासन के विशेषज्ञ हैं, रूपरेखाओं के विशेषज्ञ हैं, 354 और पूछता है: 'यह कैसे है, भंते? इसका क्या अर्थ है?' तब वे पूजनीय भिक्षु उसे वह प्रकट करते हैं जो प्रकट नहीं हुआ है, अस्पष्ट को स्पष्ट करते हैं, और अनेक पेचीदा बिंदुओं के बारे में उसकी उलझन को दूर करते हैं। इस प्रकार एक भिक्षु (भिक्षु) को संरक्षक मिलते हैं।" [118]

"इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु शीघ्र ही विशाल और प्रचुर लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त कर लेता है।"

III. व्यक्ति (पुग्गला)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

21 समिद्ध

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब पूज्य सावित्था और पूज्य महाकोत्थिता, पूज्य सारिपुत्त के पास आए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए। तब पूज्य सारिपुत्त ने पूज्य सावित्था से कहा:

"मित्र सविथा, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति विद्यमान पाए जाते हैं। वे कौन से तीन हैं? शरीर दर्शी, दृष्टि प्राप्त व्यक्ति और आस्था द्वारा मुक्त व्यक्ति। 355 ये तीन प्रकार के व्यक्ति संसार में विद्यमान पाए जाते हैं। इन तीनों प्रकार के व्यक्तियों में से आप किसे सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ मानते हैं?"

"मित्र सारिपुत्त, उन तीन प्रकार के व्यक्तियों में से, मैं आस्था द्वारा मुक्त हुए व्यक्ति को सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ मानता हूँ। 356 इसका कारण क्या है? क्योंकि इस व्यक्ति की आस्था शक्ति सर्वोपरि है।"

तब पूज्य सारिपुत्त ने पूज्य महाकोत्थिता से कहा: "मित्र कोत्थिता, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति विद्यमान पाए जाते हैं... [119] इन तीनों प्रकार के व्यक्तियों में से आप किसे सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ मानते हैं?"

"मित्र सारिपुत्त, उन तीन प्रकार के व्यक्तियों में से, मैं देहधारी साक्षी को सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ मानता हूँ। इसका कारण क्या है? क्योंकि इस व्यक्ति में समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) की क्षमता प्रबल होती है।"

तब पूज्य महाकोत्थिता ने पूज्य सारिपुत्त से कहा, "मित्र सारिपुत्त, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति विद्यमान हैं... इन तीनों प्रकार के व्यक्तियों में से आप किसे सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ मानते हैं?"

"मित्र कोत्थिता, उन तीन प्रकार के व्यक्तियों में से, मैं दृष्टि प्राप्त व्यक्ति को सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ मानता हूँ। इसका कारण क्या है? क्योंकि इस व्यक्ति की पन्ना (दिव्य ज्ञान) क्षमता सर्वोपरि है।"

तब पूज्य सारिपुत्त ने पूज्य सवित्था और पूज्य महाकोत्थिता से कहा, "मित्रों, हम सबने अपने-अपने आदर्श के अनुसार व्याख्या कर दी है। आइए, हम भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें इस विषय की जानकारी दें। जब वे हमें इसका अर्थ समझाएंगे, तो हम इसे ध्यान में रखेंगे।"

"जी हां, मित्र," पूज्य सवित्थ और पूज्य महाकोत्थिता ने उत्तर दिया। तब पूज्य सारिपुत्त, पूज्य सवित्थ और पूज्य महाकोत्थिता भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। [120] पूज्य सारिपुत्त ने उन्हें सारी बातचीत बताई।

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "सारिपुत्त, इस विषय पर निश्चित घोषणा करना और यह कहना आसान नहीं है कि 'इन तीन प्रकार के व्यक्तियों में से, यह व्यक्ति सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ है।'"

(1) "यह संभव है कि आस्था द्वारा मुक्त हुआ व्यक्ति अर्हतत्व के लिए अभ्यास कर रहा हो, जबकि शरीर साक्षी और दृष्टि प्राप्त कर चुके व्यक्ति एक बार जन्म लेने वाले (एक बार पुनर्जन्म, सकदागामी) या एक बार जन्म न लेने वाले (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी) हो सकते हैं। सारिपुत्त, इस विषय पर निश्चित घोषणा करना और यह कहना आसान नहीं है कि 'इन तीन प्रकार के व्यक्तियों में से यह व्यक्ति सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ है।'"

(2) "यह संभव है कि जो व्यक्ति शारीरिक साक्षी है वह अरहंतत्व के लिए अभ्यास कर रहा हो, जबकि आस्था से मुक्त और दृष्टि प्राप्त व्यक्ति एक बार जन्म लेने वाले (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) या एक बार जन्म न लेने वाले (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी) हों। सारिपुत्त, इस विषय पर निश्चित घोषणा करना और यह कहना आसान नहीं है कि 'इन तीन प्रकार के व्यक्तियों में से यह व्यक्ति सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ है।'"

(3) "यह संभव है कि दृष्टि प्राप्त व्यक्ति अरहंत पद के लिए साधना कर रहा हो, जबकि आस्था और शरीर साक्षी द्वारा मुक्त व्यक्ति एक बार जन्म लेने वाले (सकदागामी) या जन्म न लेने वाले (अनगामी) हों। सारिपुत्त, इस विषय पर कोई निश्चित घोषणा करना और यह कहना आसान नहीं है कि 'इन तीन प्रकार के व्यक्तियों में से यह व्यक्ति सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ है।'"

---

22 मरीज़ (गिलाना)

भिक्षुओं, संसार में तीन प्रकार के रोगी पाए जाते हैं। वे कौन से तीन प्रकार के रोगी हैं? (1) यहाँ, एक रोगी उचित भोजन, उचित औषधि [121] और योग्य परिचारक मिले या न मिले, वह अपने रोग से ठीक नहीं होगा। (2) दूसरा रोगी उचित भोजन, उचित औषधि और योग्य परिचारक मिले या न मिले, वह अपने रोग से ठीक हो जाएगा। (3) एक अन्य रोगी अपने रोग से तभी ठीक होगा जब उसे उचित भोजन मिले, न मिलने पर नहीं; केवल तभी ठीक होगा जब उसे उचित औषधि मिले, न मिलने पर नहीं; और केवल तभी ठीक होगा जब उसे योग्य परिचारक मिले, न मिलने पर नहीं।

"भोजन, औषधि और एक कुशल परिचारक विशेष रूप से उस रोगी के लिए निर्धारित किए गए हैं जो उचित भोजन मिलने पर ही स्वस्थ होगा, न मिलने पर नहीं; उचित औषधि मिलने पर ही स्वस्थ होगा, न मिलने पर नहीं; और कुशल परिचारक मिलने पर ही स्वस्थ होगा, न मिलने पर नहीं। लेकिन इस रोगी के कारण अन्य रोगियों की भी सेवा की जानी चाहिए। ये तीन प्रकार के रोगी संसार में पाए जाते हैं।"

भिक्षुओं, संसार में रोगियों के समान तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे तीन कौन से हैं? (1) यहाँ, कुछ व्यक्ति लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर नहीं चलेंगे, चाहे उन्हें तथागत (बुद्ध) के दर्शन हों या न हों, और चाहे उन्हें तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म और अनुशासन सुनने को मिले या न हों। 358 (2) फिर एक अन्य व्यक्ति लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलेंगे, चाहे उन्हें तथागत (बुद्ध) के दर्शन हों या न हों, और चाहे उन्हें तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म और अनुशासन सुनने को मिले या न हों। (3) और एक अन्य व्यक्ति लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर तभी चलेंगे जब उन्हें तथागत (बुद्ध) के दर्शन होंगे, न कि यदि वे उन्हें देखने में असफल रहते हैं; केवल तभी जब उसे तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म और अनुशासन सुनने को मिले, न कि यदि वह इसे सुनने में असफल रहता है। [122]

धम्म की शिक्षा विशेष रूप से उस व्यक्ति के लिए निर्धारित की गई है जो उचित (कुशल) गुणों (धम्म) में सत्यता के मार्ग पर चलना चाहता है, बशर्ते उसे तथागत (बुद्ध) के दर्शन हों, न कि उनके दर्शन; बशर्ते उसे तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म (मार्ग) और अनुशासन सुनने का अवसर मिले, न कि न सुनने का। इस व्यक्ति के कारण ही अन्य लोगों को भी धम्म की शिक्षा दी जानी चाहिए। ये तीन प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में विद्यमान रोगियों के समान पाए जाते हैं।

---

23 चरित्र/व्यवहार (संस्कार बिना संस्कार)

"भिक्षुओं, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से तीन प्रकार हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, यहाँ कुछ व्यक्ति कष्टदायक शारीरिक लक्षण/व्यवहार (संस्कार/संस्कार), कष्टदायक वाणी/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) और कष्टदायक मानसिक लक्षण/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) उत्पन्न करते हैं। 389 परिणामस्वरूप, उनका पुनर्जन्म कष्टदायक संसार में होता है। जब उनका पुनर्जन्म कष्टदायक संसार में होता है, तो कष्टदायक संपर्क उन्हें स्पर्श करते हैं। कष्टदायक संपर्कों से स्पर्श होने पर, वे केवल पीड़ादायक कष्टदायक संवेदनाएँ (वेदना) अनुभव करते हैं, जैसे कि नरक के प्राणियों के मामले में होता है।

(2) "कोई अन्य व्यक्ति अहानिकारक शारीरिक चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार), अहानिकारक वाणी/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) और अहानिकारक मानसिक चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) उत्पन्न करता है। फलस्वरूप, वह अहानिकारक संसार में पुनर्जन्म लेता है। जब वह अहानिकारक संसार में पुनर्जन्म लेता है, तो अहानिकारक स्पर्श उसे स्पर्श करते हैं। अहानिकारक स्पर्शों से स्पर्श होने पर, वह अहानिकारक संवेदनाओं (वेदना) का अनुभव करता है, जो अनन्य रूप से सुखद होती हैं, जैसे तेजस्वी देवों (देवदूतों/देवताओं) के मामले में। 360

(3) "एक अन्य प्राणी शारीरिक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के व्यवहार उत्पन्न करता है, साथ ही पीड़ादायक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के मौखिक और मानसिक व्यवहार भी उत्पन्न करता है। परिणामस्वरूप, [123] उसका पुनर्जन्म पीड़ादायक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के संसार में होता है। जब उसका पुनर्जन्म पीड़ादायक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के संसार में होता है, तो पीड़ादायक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के संपर्क उसे स्पर्श करते हैं। पीड़ादायक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के संपर्कों से स्पर्श होने पर, वह पीड़ादायक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार की संवेदनाओं (वेदना), मिश्रित सुख और दुख का अनुभव करता है, जैसा कि मनुष्यों, कुछ देवताओं और कुछ निम्न लोकों के प्राणियों के मामले में होता है। 361

"हे भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान तीन प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

24 सहायक (बहुकारा)

"भिक्षुओं, ये तीन व्यक्ति एक दूसरे के सहायक हैं। वे कौन से तीन व्यक्ति हैं?"

(1) "वह व्यक्ति जिसके माध्यम से दूसरा व्यक्ति बुद्ध, धम्म और संघ की शरण में गया है। यह व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का सहायक है।"

(2) "पुनः, वह व्यक्ति जिसके माध्यम से दूसरा व्यक्ति यह समझ पाता है कि वास्तव में क्या है; 'यह दुख है,' 'यह दुख का कारण है,' 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख निवारण का मार्ग है।' यह व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के लिए सहायक होता है।" 362

(3) "फिर, वह व्यक्ति जिसके माध्यम से, दोषों के नाश के साथ, दूसरा व्यक्ति प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव करता है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है, वह व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के लिए सहायक होता है।"

"ये तीनों व्यक्ति एक दूसरे व्यक्ति के लिए सहायक हैं।"

"मैं कहता हूँ, भिक्षुओं, कि इन तीनों व्यक्तियों से अधिक किसी दूसरे व्यक्ति की सहायता करने वाला कोई नहीं है। मैं यह भी कहता हूँ कि इन तीनों व्यक्तियों को प्रणाम करके, उनके लिए उठ खड़े होकर, आदरपूर्वक अभिवादन करके, उचित आचरण करके और उन्हें वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन भेंट करके उनका प्रतिफल देना आसान नहीं है।"

---

25 हीरा (वजिरुपमा)

"भिक्षुओं (संतों), संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। [124] वे तीन कौन से हैं? एक जिसका मन खुले घाव के समान है, एक जिसका मन बिजली के समान है, और एक जिसका मन हीरे के समान है।

(1) "हे भिक्षुओं, वह व्यक्ति कैसा है जिसका मन खुले घाव के समान है? यहाँ, ऐसा व्यक्ति क्रोधशील और आसानी से चिढ़ जाता है। थोड़ी सी आलोचना भी उसे क्रोधित कर देती है और वह उग्र, शत्रुतापूर्ण और हठी हो जाता है; वह चिड़चिड़ापन, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करता है। जैसे किसी मवाद भरे घाव पर यदि कोई छड़ी या कांटा चुभोया जाए तो उससे और अधिक द्रव निकलता है, वैसे ही यहाँ ऐसा व्यक्ति क्रोधशील है... और चिड़चिड़ापन, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करता है। ऐसे व्यक्ति को खुले घाव के समान मन वाला कहा जाता है।"

(2) "और वह व्यक्ति कौन है जिसका मन बिजली के समान है? यहाँ, कोई व्यक्ति यथार्थ को समझता है: 'यह दुख है', 'यह दुख का कारण है', 'यह दुख का निवारण है' और 'यह दुख निवारण का मार्ग है'। जैसे रात के घने अंधेरे में, अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति बिजली की चमक से आकृतियाँ देख सकता है, वैसे ही कोई व्यक्ति यहाँ यथार्थ को समझता है: 'यह दुख है'... 'यह दुख निवारण का मार्ग है।' ऐसे व्यक्ति को बिजली के समान मन वाला कहा जाता है।"

(3) “और वह व्यक्ति कौन है जिसका मन हीरे के समान है? यहाँ, दोषों के नाश होने पर, कोई व्यक्ति प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में मन की निष्कलंक मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करता है और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है। जैसे हीरा किसी भी चीज को काट सकता है, चाहे वह रत्न हो या पत्थर, उसी प्रकार, दोषों के नाश होने पर, कोई व्यक्ति प्रत्यक्ष ज्ञान से मन की निष्कलंक मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करता है और उसमें निवास करता है। ऐसे व्यक्ति को हीरे के समान मन वाला कहा जाता है।”

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान तीन प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

26 से संबद्ध होना (सेवितब्बा)

"भिक्षुओं (मठवासियों), संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे तीन कौन से हैं? (1) एक व्यक्ति ऐसा है जिसके साथ संगति नहीं करनी चाहिए, जिसका अनुसरण नहीं करना चाहिए और जिसकी सेवा नहीं करनी चाहिए; (2) एक व्यक्ति ऐसा है जिसके साथ संगति करनी चाहिए, जिसका अनुसरण करना चाहिए और जिसकी सेवा करनी चाहिए; और (3) [125] एक व्यक्ति ऐसा है जिसके साथ आदर और सम्मान के साथ संगति करनी चाहिए, जिसका अनुसरण करना चाहिए और जिसकी सेवा करनी चाहिए।"

(1) "और हे भिक्षुओं, किस प्रकार के व्यक्ति से संगति नहीं रखनी चाहिए, उसका अनुसरण नहीं करना चाहिए और उसकी सेवा नहीं करनी चाहिए? यहाँ, कुछ व्यक्ति सद्गुणों (शील), ध्यान (समाधि) और दिव्य ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में हीन होते हैं। ऐसे व्यक्ति से सहानुभूति और करुणा के सिवा संगति नहीं रखनी चाहिए, उसका अनुसरण नहीं करना चाहिए और उसकी सेवा नहीं करनी चाहिए।"

(2) और किस प्रकार के व्यक्ति के साथ संगति करनी चाहिए, किसका अनुसरण करना चाहिए और किसकी सेवा करनी चाहिए? यहाँ, कोई व्यक्ति शील, समाधि और दिव्य ज्ञान में समान है। ऐसे व्यक्ति के साथ संगति करनी चाहिए, उसका अनुसरण करना चाहिए और उसकी सेवा करनी चाहिए। इसका क्या कारण है? [क्योंकि हम यह मानते हैं:] 'चूंकि हम शील के मामले में समान हैं, इसलिए हम शील पर चर्चा करेंगे और यह हमारे बीच सहजता से प्रवाहित होगी और हम सहज महसूस करेंगे। चूंकि हम समाधि के मामले में समान हैं, इसलिए हम समाधि पर चर्चा करेंगे और यह हमारे बीच सहजता से प्रवाहित होगी और हम सहज महसूस करेंगे। चूंकि हम दिव्य ज्ञान के मामले में समान हैं, इसलिए हम दिव्य ज्ञान पर चर्चा करेंगे और यह हमारे बीच सहजता से प्रवाहित होगी और हम सहज महसूस करेंगे। इसलिए ऐसे व्यक्ति के साथ संगति करनी चाहिए, उसका अनुसरण करना चाहिए और उसकी सेवा करनी चाहिए।'

(3) और किस प्रकार के व्यक्ति के साथ संगति करनी चाहिए, उसका अनुसरण करना चाहिए और आदर एवं सम्मान के साथ उसकी सेवा करनी चाहिए? यहाँ, कोई व्यक्ति सद्गुणों (शील), समाधि और दिव्य ज्ञान में श्रेष्ठ है। ऐसे व्यक्ति के साथ संगति करनी चाहिए, उसका अनुसरण करना चाहिए और आदर एवं सम्मान के साथ उसकी सेवा करनी चाहिए। इसका क्या कारण है? [क्योंकि व्यक्ति विचार करता है:] 'इस प्रकार मैं उन सद्गुणों (शील) को पूरा करूँगा जिन्हें मैंने अभी तक पूरा नहीं किया है या विभिन्न पहलुओं में उन सद्गुणों (शील) की सहायता करूँगा जिन्हें मैंने पूरा कर लिया है। मैं उन समाधि की अवस्थाओं को पूरा करूँगा जिन्हें मैंने अभी तक पूरा नहीं किया है या विभिन्न पहलुओं में उन समाधि की अवस्थाओं की सहायता करूँगा जिन्हें मैंने पूरा कर लिया है। मैं उन सद्गुणों (शील) को पूरा करूँगा जिन्हें मैंने अभी तक पूरा नहीं किया है या विभिन्न पहलुओं में उन सद्गुणों (शील) की सहायता करूँगा जिन्हें मैंने पूरा कर लिया है। मैंने जो दिव्य ज्ञान प्राप्त किया है, उसका सार। 363 अतः ऐसे व्यक्ति के साथ आदरपूर्वक संगति करनी चाहिए, उसका अनुसरण करना चाहिए और उसकी सेवा आदरपूर्वक करनी चाहिए।

"ये भिक्षुओं, संसार में विद्यमान पाए जाने वाले तीन प्रकार के व्यक्ति हैं।" [126]

अपने से कमतर व्यक्ति के साथ संगति करने वाला व्यक्ति पतन की ओर जाता है;

अपने बराबर के व्यक्ति के साथ संगति करने वाला व्यक्ति पतन की ओर नहीं जाता;

श्रेष्ठ व्यक्ति की सेवा करने से व्यक्ति का शीघ्र विकास होता है;

इसलिए आपको अपने से श्रेष्ठ व्यक्ति का अनुसरण करना चाहिए।

---

27 घृणा (जिगुच्छितब्बा)

भिक्षुओं, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे तीन प्रकार क्या हैं? (1) एक व्यक्ति ऐसा है जिससे घृणा करनी चाहिए, जिसके साथ संगति नहीं करनी चाहिए, जिसका अनुसरण नहीं करना चाहिए और जिसकी सेवा नहीं करनी चाहिए; (2) एक व्यक्ति ऐसा है जिससे उदासीनता (अंदर की ओर विलीन होकर/उपेक्खा) रखनी चाहिए, जिसके साथ संगति नहीं करनी चाहिए, जिसका अनुसरण नहीं करना चाहिए और जिसकी सेवा नहीं करनी चाहिए; और (3) एक व्यक्ति ऐसा है जिसके साथ संगति करनी चाहिए, जिसका अनुसरण करना चाहिए और जिसकी सेवा करनी चाहिए।

(1) "हे भिक्षुओं, किस प्रकार के व्यक्ति से घृणा करनी चाहिए, उससे संगति नहीं करनी चाहिए, उसका अनुसरण नहीं करना चाहिए और उसकी सेवा नहीं करनी चाहिए? यहाँ, कोई व्यक्ति अनैतिक, बुरे चरित्र वाला, अपवित्र, संदिग्ध आचरण वाला, गुप्त रूप से कार्य करने वाला, तपस्वी होते हुए भी न होने वाला, ब्रह्मचारी होते हुए भी न होने वाला, भीतर से सड़ा हुआ, भ्रष्ट और पतित है। ऐसे व्यक्ति से घृणा करनी चाहिए, उससे संगति नहीं करनी चाहिए, उसका अनुसरण नहीं करना चाहिए और उसकी सेवा नहीं करनी चाहिए। इसका कारण क्या है? भले ही कोई ऐसे व्यक्ति का अनुसरण न करे, फिर भी उसके बारे में बुरी अफवाह फैलती है: 'उसके बुरे मित्र, बुरे साथी और बुरे सहपाठी हैं।' जिस प्रकार मल से होकर गुजरने वाला साँप, भले ही वह किसी को काटे नहीं, फिर भी उसे लहूलुहान कर देता है, उसी प्रकार, भले ही कोई ऐसे व्यक्ति का अनुसरण न करे, फिर भी उसके बारे में बुरी अफवाह फैलती है: 'उसके बुरे मित्र, बुरे साथी और बुरे सहपाठी हैं।' अतः ऐसे व्यक्ति से घृणा करनी चाहिए, उससे संगति नहीं करनी चाहिए, उसका अनुसरण नहीं करना चाहिए और उसकी सेवा नहीं करनी चाहिए।"

(2) और किस प्रकार के व्यक्ति को उदासीनता (अंदर ही अंदर सिमटकर/उपेक्खा) से देखा जाना चाहिए, जिसके साथ संगति न की जाए, जिसका अनुसरण न किया जाए और जिसकी सेवा न की जाए? यहाँ, कुछ व्यक्ति क्रोधी [127] होते हैं और आसानी से चिढ़ जाते हैं। यहाँ तक कि अगर उनकी थोड़ी सी भी आलोचना की जाए तो वे अपना आपा खो देते हैं और चिढ़ जाते हैं, शत्रुतापूर्ण और हठी हो जाते हैं; वे चिड़चिड़ापन, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करते हैं। जैसे एक मवाद भरे घाव को अगर किसी छड़ी या टुकड़े से मारा जाए तो उससे और भी अधिक मवाद निकलता है, वैसे ही... जैसे तिन्दुका वृक्ष की जलती हुई लकड़ी को अगर किसी छड़ी या टुकड़े से मारा जाए तो वह और भी अधिक चटकने और सुलगने लगती है, वैसे ही... जैसे मल का गड्ढा अगर किसी छड़ी या टुकड़े से मारा जाए तो और भी अधिक दुर्गंधयुक्त हो जाता है, वैसे ही कुछ व्यक्ति यहाँ क्रोधी होते हैं और... चिड़चिड़ापन, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करते हैं। ऐसे व्यक्ति को उदासीनता (अंदर ही अंदर सिमटकर/उपेक्खा) से देखा जाना चाहिए, उसके साथ संगति करना, उसका अनुसरण करना और उसकी सेवा करना। किस कारण से? [इस विचार से:] 'वह मेरा अपमान कर सकता है, मुझे गाली दे सकता है और मुझे हानि पहुँचा सकता है।' इसलिए ऐसे व्यक्ति को उदासीनता (अंदर ही अंदर उपेक्षा) से देखना चाहिए, उसके साथ संगति नहीं करनी चाहिए, उसका अनुसरण नहीं करना चाहिए और उसकी सेवा नहीं करनी चाहिए।

(3) और किस प्रकार के व्यक्ति की संगति करनी चाहिए, उसका अनुसरण करना चाहिए और उसकी सेवा करनी चाहिए? यहाँ, कोई व्यक्ति गुणी और अच्छे चरित्र का है। ऐसे व्यक्ति की संगति करनी चाहिए, उसका अनुसरण करना चाहिए और उसकी सेवा करनी चाहिए। इसका कारण क्या है? भले ही कोई ऐसे व्यक्ति के उदाहरण का अनुसरण न करे, फिर भी उसके बारे में अच्छी बातें फैलती हैं: 'उसके अच्छे मित्र हैं, अच्छे साथी हैं, अच्छे सहपाठी हैं।' अतः ऐसे व्यक्ति की संगति करनी चाहिए, उसका अनुसरण करना चाहिए और उसकी सेवा करनी चाहिए।

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान तीन प्रकार के व्यक्ति हैं।"

[एक आयत संलग्न है जो 3:26 में दी गई आयत के समान है,]

---

28 गोबर जैसी वाणी (गुठभानी)

"भिक्षुओं (मठवासियों), संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। [128] वे तीन कौन से हैं? एक जिसकी वाणी गोबर के समान है, एक जिसकी वाणी फूलों के समान है, और एक जिसकी वाणी शहद के समान है।"

(1) "हे भिक्षुओं, वह व्यक्ति कौन है जिसकी वाणी गोबर के समान है? यदि उसे किसी परिषद, सभा, अपने सगे-संबंधियों के समक्ष, अपने संघ या न्यायालय में बुलाया जाए और साक्षी के रूप में इस प्रकार प्रश्न किया जाए: 'हे हे जन, जो कुछ तुम जानते हो, बताइए', तो वह न जानते हुए कहता है, 'मैं जानता हूँ', या जानते हुए कहता है, 'मैं नहीं जानता'; न देखते हुए कहता है, 'मैं देखता हूँ', या देखते हुए कहता है, 'मैं नहीं देखता', इस प्रकार वह जानबूझकर अपने स्वार्थ के लिए, या किसी अन्य के स्वार्थ के लिए, या किसी तुच्छ सांसारिक उद्देश्य के लिए झूठ बोलता है। 364 इसे ही गोबर के समान वाणी वाला व्यक्ति कहा जाता है।"

(2) और वह व्यक्ति कौन है जिसकी वाणी फूलों के समान है? यदि उसे किसी परिषद, सभा, अपने रिश्तेदारों के समक्ष, अपने संघ या न्यायालय में बुलाया जाए और उससे साक्षी के रूप में इस प्रकार प्रश्न किया जाए: 'हे महोदय, जो कुछ आप जानते हैं, बताइए,' तो न जानते हुए वह व्यक्ति कहता है, 'मैं नहीं जानता', या जानते हुए कहता है, 'मैं जानता हूँ'; न देखते हुए वह कहता है, 'मैं नहीं देखता', या देखते हुए कहता है, 'मैं देखता हूँ'; वह जानबूझकर अपने स्वार्थ के लिए, या किसी दूसरे के स्वार्थ के लिए, या किसी तुच्छ सांसारिक उद्देश्य के लिए झूठ नहीं बोलता। यही वह व्यक्ति कहलाता है जिसकी वाणी फूलों के समान है।

(3) और वह व्यक्ति कौन है जिसकी वाणी शहद के समान है? यहाँ, कोई व्यक्ति कठोर वाणी का त्याग करके, कठोर वाणी से दूर रहता है। वह ऐसे शब्द बोलता है जो कोमल, कानों को भाने वाले और मनभावन होते हैं, जो हृदय को छूते हैं, शिष्ट होते हैं, अनेकों को प्रिय होते हैं और अनेकों को प्रसन्न करते हैं। यही वह व्यक्ति है जिसकी वाणी शहद के समान है।

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान तीन प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

29 अंधा (अंधा)

भिक्षुओं, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से तीन प्रकार हैं? अंधा व्यक्ति, एक आँख वाला व्यक्ति और दो आँख वाला व्यक्ति।

(1) "हे भिक्षुओं, अंधा व्यक्ति क्या है? यहाँ, किसी व्यक्ति में उस प्रकार की दृष्टि [129] का अभाव है जिससे वह अप्राप्त धन अर्जित कर सके और अर्जित धन को बढ़ा सके, और उसमें उस प्रकार की दृष्टि का भी अभाव है जिससे वह लाभकारी (कुशल) और हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म), निंदनीय और निर्दोष गुणों, निम्न और उच्च गुणों, अंधकार और प्रकाश गुणों और उनके विपरीत गुणों को जान सके। इसे ही अंधा व्यक्ति कहा जाता है।"

(2) “एक आँख वाला व्यक्ति कौन है? यहाँ, किसी व्यक्ति की आँख ऐसी होती है जिससे वह अप्राप्त धन अर्जित कर सकता है और अर्जित धन को बढ़ा सकता है, लेकिन उसमें वह आँख नहीं होती जिससे वह लाभकारी (कुशल) और हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म), निंदनीय और निर्दोष गुणों, निम्न और उच्च गुणों, अंधकारमय और प्रकाशमय गुणों और उनके विपरीत गुणों को जान सके। इसे ही एक आँख वाला व्यक्ति कहा जाता है।”

(3) "दो आँखों वाला व्यक्ति कौन है? यहाँ, किसी व्यक्ति की ऐसी आँख होती है जिससे वह अप्राप्त धन अर्जित कर सकता है और अर्जित धन को बढ़ा सकता है, और उसकी ऐसी आँख भी होती है जिससे वह लाभकारी (कुशल) और हानिकारक (अकुशल) गुणों

(धम्म), निंदनीय और निर्दोष गुणों, निम्न और उच्च गुणों, अंधकारमय और प्रकाशमय गुणों और उनके विपरीत गुणों को जान सकता है। इसे दो आँखों वाला व्यक्ति कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान तीन प्रकार के व्यक्ति हैं।"

उसके पास न तो इतना धन है

और न ही वह पुण्य कर्म करता है;

दृष्टिहीन व्यक्ति

दोनों ही मामलों में अशुभ चाल चलता है।

जिस व्यक्ति को एक आंख वाला बताया गया है,

वह एक पाखंडी है जो धन की लालसा रखता है,

(कभी) धार्मिक रूप से

(और कभी) अधार्मिक रूप से।

चोरी-छिपे और कपटपूर्ण कृत्यों

तथा झूठे वचनों के द्वारा

कामुक सुखों में लिप्त व्यक्ति

धन संचय करने में निपुण होता है।

यहाँ से नरक में जाकर

एक आँख वाला व्यक्ति पीड़ा भोगता है।

दो आँखों वाला व्यक्ति सबसे श्रेष्ठ माना जाता है ।

उसका धन 365 उसके अपने परिश्रम से अर्जित होता है,

और वह भी उचित कर्मों से।

फिर वह

व्यक्ति पूर्ण निश्चय के साथ, एकाग्र मन से दान करता है।

वह एक उत्तम अवस्था में पुनर्जन्म लेता है

, जहाँ जाने के बाद शोक नहीं होता।

अंधे और एक आंख वाले व्यक्ति से दूर रहना चाहिए ,

बल्कि दो आंखों वाले व्यक्ति से मित्रता करनी चाहिए, क्योंकि वही

सबसे श्रेष्ठ व्यक्ति है।

---

30 उलटा (अवकुज्जा)

भिक्षुओं, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से तीन हैं? एक वह व्यक्ति जिसका पन्ना (दिव्य ज्ञान) उल्टा होता है, एक वह व्यक्ति जिसका पन्ना (दिव्य ज्ञान) गोद के समान होता है, और एक वह व्यक्ति जिसका पन्ना (दिव्य ज्ञान) चौड़ा होता है।

(1) "हे भिक्षुओं, वह व्यक्ति कौन है जिसका पन्ना (दिव्य ज्ञान) उल्टा है? यहाँ, कोई व्यक्ति अक्सर भिक्षुओं से धम्म (मार्ग) सुनने के लिए मठ जाता है। भिक्षु उसे सही अर्थ और शब्दों के साथ, आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम धम्म सिखाते हैं; वे पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) प्रकट करते हैं। जब वह अपनी सीट पर बैठा होता है, तो वह आरंभ, मध्य या अंत की उस बात पर ध्यान नहीं देता। अपनी सीट से उठने के बाद भी, वह आरंभ, मध्य या अंत की उस बात पर ध्यान नहीं देता। जैसे, जब कोई घड़ा उल्टा कर दिया जाता है, तो उसमें डाला गया पानी बह जाता है और वहाँ नहीं रहता, उसी प्रकार, कोई व्यक्ति अक्सर भिक्षुओं से धम्म सुनने के लिए मठ जाता है। ... अपनी सीट से उठने के बाद भी, वह आरंभ की उस बात पर ध्यान नहीं देता।" मध्य में, या अंत में। इसे उलटे पन्ना (दिव्य ज्ञान) वाला व्यक्ति कहा जाता है।

(2) "और वह व्यक्ति कौन है जिसके पास गोद के समान पन्ना (दिव्य ज्ञान) है? यहाँ, कोई व्यक्ति अक्सर भिक्षुओं से धम्म सुनने के लिए मठ जाता है। भिक्षु उसे सही अर्थ और शब्दों के साथ, आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम धम्म सिखाते हैं; वे पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) प्रकट करते हैं। जब वह अपनी सीट पर बैठा होता है, तो वह आरंभ, मध्य और अंत में उस प्रवचन पर ध्यान देता है। परन्तु अपनी सीट से उठने के बाद, वह आरंभ, मध्य या अंत में उस प्रवचन पर ध्यान नहीं देता। जैसे, जब किसी व्यक्ति के लप्समम के बीज, चावल के दाने, केक और बेर पर विभिन्न खाद्य पदार्थ बिखरे होते हैं - यदि वह उस सीट से उठते समय अपना ध्यान (ध्यान/सती) खो देता है, [131] तो वह उन्हें चारों ओर बिखेर देगा, उसी प्रकार, कोई व्यक्ति अक्सर भिक्षुओं से धम्म सुनने के लिए मठ जाता है। भिक्षु, परन्तु अपने आसन से उठने के बाद, वह आरंभ में, मध्य में या अंत में उस प्रवचन पर ध्यान नहीं देता। इसे ही गोद के समान ज्ञान (दिव्य ज्ञान) वाला व्यक्ति कहा जाता है।

(3) "विस्तृत ज्ञान से परिपूर्ण व्यक्ति कौन है? यहाँ, कोई व्यक्ति अक्सर भिक्षुओं से धर्म का उपदेश सुनने के लिए मठ जाता है। भिक्षु उसे उचित अर्थ और शब्दों के साथ, आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम धर्म का उपदेश देते हैं; वे पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) प्रकट करते हैं। जब वह अपने आसन पर बैठा होता है, तो वह आरंभ, मध्य और अंत में उस उपदेश पर ध्यान देता है। अपने आसन से उठने के बाद, वह फिर से आरंभ, मध्य और अंत में उस उपदेश पर ध्यान देता है। जैसे, जब कोई घड़ा सीधा रखा जाता है, तो उसमें डाला गया पानी वहीं रहता है और बहता नहीं है, उसी प्रकार, कोई व्यक्ति अक्सर भिक्षुओं से धर्म का उपदेश सुनने के लिए मठ जाता है। ... अपने आसन से उठने के बाद, वह फिर से आरंभ, मध्य और अंत में उस उपदेश पर ध्यान देता है। इसे विस्तृत ज्ञान से परिपूर्ण व्यक्ति कहा जाता है।" विस्तृत पन्ना (दिव्य ज्ञान)।

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान तीन प्रकार के व्यक्ति हैं।"

जिस व्यक्ति का पन्ना (दिव्य ज्ञान) उलटा होता है,

जो मूर्ख और विवेकहीन होता है, वह

अक्सर भिक्षुओं के पास

धम्म का उपदेश सुनने जाता है।

फिर भी वह व्यक्ति

प्रवचन के

आरंभ, मध्य और अंत में कुछ भी नहीं समझ पाता,

क्योंकि उसमें पन्ना (दिव्य ज्ञान) का पूर्ण अभाव होता है।

जिस व्यक्ति के पास गोद के समान पन्ना (दिव्य ज्ञान) होता है,

उसे पहले वाले से श्रेष्ठ माना जाता है।

वह भी अक्सर भिक्षुओं के पास

(उनसे धम्म का उपदेश सुनने के लिए) जाता है।

अपनी सीट पर बैठे-बैठे

वह भाषण की

शुरुआत, मध्य और अंत के शब्दों को समझ लेता है।

लेकिन उठने के बाद वह न केवल समझ पाता है,

बल्कि जो कुछ सीखा था उसे भूल भी जाता है।

व्यापक ज्ञान (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने वाला व्यक्ति

इन सबमें श्रेष्ठ माना जाता है।

वह भी अक्सर भिक्षुओं के पास

धम्म का उपदेश सुनने के लिए जाता है।

अपनी सीट पर बैठे-बैठे ही

वह भिक्षु द्वारा दिए गए प्रवचन के

आरंभ, मध्य और अंत में प्रयुक्त शब्दों को समझ लेता है।

यह उत्तम इरादों वाला,

एकाग्रचित्त व्यक्ति, जो कुछ सुनता है उसे ग्रहण करता है।

धम्म के अनुसार अभ्यास करके

वह दुखों का अंत कर सकता है।

———————————————————————

———————————————————————

IV. देवदूत (दिव्य संदेशवाहक)

———————————————————————

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

———————————————————————

31 ब्रह्मा (सब्रह्मक)

(1) भिक्षुओं, वे परिवार ब्रह्मा के साथ निवास करते हैं जहाँ घर में माता-पिता का आदर उनके बच्चे करते हैं। (2) वे परिवार प्रथम गुरुओं के साथ निवास करते हैं जहाँ घर में माता-पिता का आदर उनके बच्चे करते हैं। (3) वे परिवार दानयोग्य लोगों के साथ निवास करते हैं जहाँ घर में माता-पिता का आदर उनके बच्चे करते हैं।

भिक्षुओं, 'ब्रह्म' माता-पिता के लिए एक उपाधि है। 'प्रथम शिक्षक' माता-पिता के लिए एक उपाधि है। 'दान योग्य' माता-पिता के लिए एक उपाधि है। इसका क्या कारण है? माता-पिता अपने बच्चों के लिए सहायक होते हैं: वे उनका पालन-पोषण करते हैं, उन्हें पोषण देते हैं और उन्हें संसार से परिचित कराते हैं।

माता-पिता को "ब्रह्मा"

और "प्रथम गुरु" कहा जाता है।

वे अपने बच्चों से उपहार प्राप्त करने के योग्य हैं,

क्योंकि वे अपनी संतान के प्रति करुणा रखते हैं।

इसलिए एक बुद्धिमान व्यक्ति को उनका आदर करना चाहिए,

उन्हें उचित सम्मान देना चाहिए,

उन्हें भोजन और पेय पदार्थ,

वस्त्र और बिस्तर प्रदान करना चाहिए,

उनकी मालिश और स्नान कराना चाहिए

और उनके पैर धोना चाहिए।

माता-पिता की इस सेवा के कारण ,

बुद्धिमान लोग इस संसार में प्रशंसा पाते हैं

और मृत्यु के बाद स्वर्ग में आनंदित होते हैं।

---

32 आनंद

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, क्या कोई भिक्षु समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि (1) इस चेतन शरीर के संबंध में उसका 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति न रहे; (2) सभी बाह्य वस्तुओं के संबंध में उसका 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति न रहे; और (3) वह मन की उस मुक्ति में प्रवेश कर उसमें निवास कर सके, जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त मुक्ति है, जिसके माध्यम से उसमें प्रवेश करने और निवास करने वाले के लिए 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति नहीं रह जाती?" 366 "हाँ, आनंद।" "परन्तु भंते, वह समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था कैसे प्राप्त कर सकता है?" [133] "यहाँ, आनंद, एक भिक्षु इस प्रकार सोचता है: 'यह शांतिदायक है, यह उदात्त है, अर्थात् सभी गतिविधियों का शांत होना, सभी प्राप्तियों का त्याग, तृष्णा का नाश, वैराग्य, निर्वाण।' इस प्रकार, आनंद, एक भिक्षु समाधि की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि इस चेतन शरीर के संबंध में उसका 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति न रहे; सभी बाह्य वस्तुओं के संबंध में उसका 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति न रहे; और वह मन की उस मुक्ति में प्रवेश करके निवास करेगा, जो पाण्ड (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त मुक्ति है, जिसके माध्यम से उसमें प्रवेश करने और निवास करने वाले के लिए 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति नहीं रह जाती। और इसी संदर्भ में मैंने परायण में, 'के प्रश्न' में कहा था। पुन्नका': 367

संसार के उतार-चढ़ाव को समझकर, वह संसार की किसी भी बात से विचलित नहीं होता। शांत, निर्मल, चिंतामुक्त, इच्छाहीन, वह पुनर्जन्म और वृद्धावस्था को पार कर चुका है।

---

33 सारिपुत्त 368

तब पूज्य सारिपुत्त भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"सारिपुत्त, मैं धम्म (मार्ग) का संक्षिप्त उपदेश दे सकता हूँ; मैं धम्म का विस्तृत उपदेश दे सकता हूँ; मैं धम्म का संक्षिप्त और विस्तृत दोनों उपदेश दे सकता हूँ। जो लोग इसे समझ सकते हैं, वे ही दुर्लभ हैं।"

"यही समय है, हे भगवान (बुद्ध)। यही समय है सुगत (भगवान बुद्ध) का। भगवान (बुद्ध) को धम्म का संक्षिप्त उपदेश देना चाहिए; उन्हें धम्म का विस्तृत उपदेश देना चाहिए; उन्हें धम्म का संक्षिप्त और विस्तृत दोनों रूप में उपदेश देना चाहिए। ऐसे लोग होंगे जो धम्म को समझ सकेंगे।"

अत: सारिपुत्त, तुम्हें इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: (1) इस चेतन शरीर के संबंध में 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति नहीं रहेगी; (2) सभी बाह्य वस्तुओं के संबंध में 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति नहीं रहेगी; और (3) हम मन की उस मुक्ति में प्रवेश करेंगे और निवास करेंगे, जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त मुक्ति है, जिसके माध्यम से उसमें प्रवेश करने और निवास करने वाले के लिए 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति नहीं रह जाती। सारिपुत्त, इसी प्रकार तुम्हें अभ्यास करना चाहिए।

"जब, सारिपुत्त, एक भिक्षु [134] में इस चेतन शरीर के संबंध में 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति नहीं रहती; जब उसमें सभी बाह्य वस्तुओं के संबंध में 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति नहीं रहती; और जब वह मन की उस मुक्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त मुक्ति है, जिसके माध्यम से उसमें प्रवेश करने और निवास करने वाले के लिए 'मैं', 'मेरा' और अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति नहीं रह जाती, तब उसे तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) का नाश करने वाला, बंधन से मुक्त और अहंकार को पूर्णतः तोड़कर दुख का अंत करने वाला भिक्षु कहा जाता है। और इसी संदर्भ में मैंने परायण में, 'उदय के प्रश्न' 360 में कहा था।"

" इंद्रिय संवेदनाओं (सन्ना/संग्या) और निराशा दोनों का त्याग ;

सुस्ती का निवारण,

पश्चाताप का निवारण; 370

" धर्म पर चिंतन के बाद प्राप्त शुद्ध उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) और सती ध्यान (ध्यान/सती) :

यही अंतिम ज्ञान द्वारा मुक्ति है,

अज्ञान का नाश है।" 371

---

34 कारण (निदान)

भिक्षुओं, कर्म की उत्पत्ति के ये तीन कारण हैं। वे तीन क्या हैं? लोभ कर्म की उत्पत्ति का एक कारण है; द्वेष कर्म की उत्पत्ति का एक कारण है; मोह कर्म की उत्पत्ति का एक कारण है।

(1) हे भिक्षुओं, लोभ से उत्पन्न, लोभ के कारण या लोभ से उत्पन्न कोई भी कर्म, जहाँ कहीं भी पुनर्जन्म लेता है, फलित होता है। जहाँ कहीं भी वह कर्म फलित होता है, वहीं व्यक्ति को उसका फल भोगना पड़ता है, चाहे इसी जीवन में, या अगले पुनर्जन्म में, या किसी अन्य अवसर पर। 372

(2) "घृणा से उत्पन्न, घृणा के कारण या घृणा से पैदा हुआ कोई भी कर्म, जहाँ कहीं भी व्यक्ति पुनर्जन्म लेता है, वहीं फलता-फूलता है। जहाँ कहीं भी वह कर्म फलता-फूलता है, वहीं व्यक्ति को उसका फल भोगना पड़ता है, चाहे इसी जीवन में, या अगले पुनर्जन्म में, या किसी अन्य अवसर पर।"

(3) "मोह से उत्पन्न, मोह से पैदा हुआ, मोह के कारण हुआ, मोह से उत्पन्न हुआ कोई भी कर्म जहाँ कहीं भी पुनर्जन्म लेता है, फल देता है। जहाँ कहीं भी वह कर्म फल देता है, [135] वहीं व्यक्ति को उसका परिणाम भुगतना पड़ता है, चाहे इसी जीवन में हो, या अगले जन्म में, या किसी बाद के अवसर पर।"

भिक्षुओं, मान लीजिए कि साबुत, अक्षुण्ण, हवा और सूर्य की गर्मी से अप्रभावित, उपजाऊ और अच्छी तरह से संरक्षित बीज अच्छी तरह से तैयार खेत में बो दिए जाएं और उन्हें पर्याप्त वर्षा मिले: इस प्रकार, वे बीज उगेंगे, बढ़ेंगे और परिपक्व होंगे। इसी प्रकार, लोभ, घृणा, मोह, मोह से उत्पन्न, मोह के कारण या मोह से उत्पन्न कोई भी कर्म, जहां भी व्यक्ति पुनर्जन्म लेता है, वहीं फलता-फूलता है। जहां भी वह कर्म फलता-फूलता है, वहीं व्यक्ति को उसका फल भोगना पड़ता है, चाहे इसी जीवन में, या अगले जन्म में, या किसी अन्य अवसर पर।

"कर्म की उत्पत्ति के ये तीन कारण हैं।"

भिक्षुओं, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन अन्य कारण हैं। वे तीन क्या हैं? लोभ रहित होना कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है; घृणा रहित होना कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है; और मोह रहित होना कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है।

(1) "हे भिक्षुओं, लोभ रहित कर्म से उत्पन्न, लोभ रहित कारण से उत्पन्न, लोभ रहित कर्म से उत्पन्न कोई भी कर्म लोभ के समाप्त होने पर त्याग दिया जाता है; वह जड़ से काट दिया जाता है, ताड़ के ठूंठ के समान मिटा दिया जाता है, ताकि वह भविष्य में फिर से उत्पन्न न हो सके?" 373

(2) "कोई भी कर्म (कर्म/कर्म) जो अहिंसा से उत्पन्न हुआ हो, अहिंसा से प्रेरित हो, अहिंसा से उत्पन्न हुआ हो, घृणा के समाप्त होने पर त्याग दिया जाता है; वह जड़ से काट दिया जाता है, ताड़ के ठूंठ की तरह मिटा दिया जाता है, ताकि वह भविष्य में फिर से उत्पन्न न हो सके।"

(3) "मोहहीनता से उत्पन्न, मोहहीनता से उत्पन्न, मोहहीनता के कारण, मोहहीनता से उत्पन्न कोई भी कर्म मोहहीनता के समाप्त होने पर त्याग दिया जाता है; यह जड़ से काट दिया जाता है, ताड़ के ठूंठ की तरह मिटा दिया जाता है ताकि यह भविष्य में फिर से उत्पन्न न हो सके।"

मान लीजिए भिक्षुओं, कुछ बीज अक्षुण्ण, अक्षुण्ण, [136] हवा और सूर्य की गर्मी से अप्रभावित, उपजाऊ और अच्छी तरह संरक्षित हैं। फिर एक व्यक्ति उन्हें आग में जलाकर राख कर देता है और राख को तेज हवा में बिखेर देता है या नदी की तेज धारा में बहा देता है। इस तरह, वे बीज जड़ से कट जाते हैं, ताड़ के ठूंठ की तरह नष्ट हो जाते हैं, ताकि वे भविष्य में फिर से उत्पन्न न हों। इसी प्रकार, कोई भी कर्म जो लोभ रहित* . . घृणा रहित . . . मोह रहित (मोह रहित) से उत्पन्न होता है, मोह रहित (मोह रहित) से उत्पन्न होता है, मोह रहित (मोह रहित) से उत्पन्न होता है, मोह रहित (मोह रहित) से उत्पन्न होता है, मोह रहित (मोह रहित) से त्याग दिया जाता है; यह जड़ से कट जाता है, ताड़ के ठूंठ की तरह नष्ट हो जाता है, ताकि यह भविष्य में फिर से उत्पन्न न हो।

"भिक्षुओं, ये कर्म की उत्पत्ति के तीन कारण हैं।"

लोभ, घृणा और मोह से उत्पन्न अज्ञानी व्यक्ति द्वारा किए गए कर्म ,

चाहे वे थोड़े हों या अधिक,

यहीं अनुभव किए जाने हैं:

इसके लिए कोई अन्य स्थान नहीं है। 374

इसलिए एक बुद्धिमान व्यक्ति को

लोभ, घृणा और मोह से उत्पन्न किसी भी कर्म का त्याग करना चाहिए।

ज्ञान प्राप्त करने वाले भिक्षु को

सभी बुरे मार्गों का त्याग करना चाहिए। 375

---

35 हत्थका

एक बार भगवान (बुद्ध) अलवी में एक गौशाला में गायों के रास्ते पर बिछे पत्तों के ढेर पर विराजमान थे। तभी अलवी के हत्थक (376) व्यायाम के लिए टहलते हुए भगवान (बुद्ध) को वहाँ बैठे हुए देखा। तब वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, क्या भगवान (बुद्ध) ने अच्छी नींद ली?"

"जी हां, राजकुमार, मुझे अच्छी नींद आई। मैं दुनिया के उन कुछ लोगों में से एक हूं जिन्हें अच्छी नींद आती है।"

"पर, भंते, सर्दियों की रातें ठंडी होती हैं। यह आठ दिनों का अंतराल है, वह समय जब बर्फ गिरती है। 377 मवेशियों के खुरों से रौंदी गई ज़मीन खुरदरी है, पत्तों का फैलाव कम है, [137] पेड़ों पर पत्ते कम हैं, गेरुए वस्त्र ठंडक देते हैं, और ठंडी हवा चलती है। फिर भी भगवान (बुद्ध) कहते हैं: 'हाँ, राजकुमार, मैं अच्छी तरह सोया। मैं संसार में उन लोगों में से हूँ जो अच्छी तरह सोते हैं।"

"तो फिर, राजकुमार, मैं इस मामले में आपसे प्रश्न करूँगा। आप अपनी इच्छानुसार उत्तर दें। आपका क्या विचार है, राजकुमार? एक गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र का घर नुकीली छत वाला, अंदर और बाहर से प्लास्टर किया हुआ, हवा रहित, कुंडी लगे हुए और खिड़कियाँ बंद वाला हो सकता है। वहाँ उसका पलंग कालीनों, कंबलों और आवरणों से ढका हो सकता है, जिस पर हिरण की खाल का उत्कृष्ट आवरण हो, ऊपर चंदवा हो और दोनों सिरों पर लाल तकिए हों। एक तेल का दीपक जल रहा होगा और उसकी चारों पत्नियाँ अत्यंत सुखद तरीके से उसकी सेवा कर रही होंगी। आपका क्या विचार है, क्या वह अच्छी नींद सोएगा या नहीं, या इस बारे में आपका क्या विचार है?

"वह चैन से सोएगा, भंते। वह दुनिया के उन लोगों में से एक होगा जो चैन से सोते हैं।"

(1) "हे राजकुमार, आपका क्या विचार है? क्या उस गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र में काम (राग) से उत्पन्न शारीरिक और मानसिक ज्वर उत्पन्न हो सकती है, जो उसे इस प्रकार सताएगी कि वह ठीक से सो नहीं पाएगा?"

"हां, भंते।"

"उस गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र में कामवासना (राग) से उत्पन्न शारीरिक और मानसिक ज्वर उत्पन्न हो सकती है, जो उसे इस प्रकार सताएगी कि उसे नींद नहीं आएगी; परन्तु तथागत (बुद्ध) ने ऐसी कामवासना (राग) का त्याग कर उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो। इसलिए मुझे अच्छी नींद आई है।"

(2) "राजकुमार, आपका क्या विचार है? क्या उस गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र में घृणा से उत्पन्न शारीरिक और मानसिक ज्वर उत्पन्न हो सकती है... (3) ...मोह से उत्पन्न शारीरिक और मानसिक ज्वर, जो उसे इस प्रकार सताएगी कि वह ठीक से सो नहीं पाएगा?"

"हां, भंते।"

"उस गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र में मोह (मोह) के कारण शारीरिक और मानसिक बुखार उत्पन्न हो सकता है, जो उसे इतना कष्ट देगा कि वह ठीक से सो नहीं पाएगा; परन्तु तथागत (बुद्ध) ने ऐसे मोह (मोह) का त्याग कर उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, [138] उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो सके। इसलिए मैं अच्छी तरह सोया हूँ।"

निर्वाण प्राप्त कर चुके,

शांत हो चुके, प्राप्ति से रहित और

इंद्रिय सुखों से अछूते ब्राह्मण को सदा अच्छी नींद आती है ।

सभी मोह-मायाओं को त्यागकर,

हृदय की पीड़ा को दूर करके,

शांत व्यक्ति

मन की शांति प्राप्त करके अच्छी नींद सोता है। 378

---

36 संदेशवाहक 379 (देवदूत)

"भिक्षुओं, ये तीन दिव्य दूत हैं। 380 वे तीन कौन हैं?"

"हे भिक्षुओं, यहाँ एक व्यक्ति ने शरीर, वाणी और मन से दुराचार किया है। फलस्वरूप, शरीर के क्षोभ के साथ, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, एक बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। वहाँ नरक के रक्षक उसे दोनों भुजाओं से पकड़कर यमराज के सामने ले जाते हैं, 381 [कहते हैं]: 'हे महाराज, इस व्यक्ति ने अपने माता-पिता के प्रति उचित व्यवहार नहीं किया; इसने तपस्वियों और ब्राह्मणों के प्रति उचित व्यवहार नहीं किया; और इसने परिवार के बड़ों का सम्मान नहीं किया। महाराज, आप इसे उचित दंड दें!'"

(1) "तब राजा यम ने प्रथम दिव्य दूत के बारे में उससे प्रश्न, पूछताछ और जिरह की: 'हे भले मनुष्य, क्या तुमने मनुष्यों के बीच प्रकट होने वाले प्रथम दिव्य दूत को नहीं देखा?' और उसने उत्तर दिया: 'नहीं, भगवान, मैंने उसे नहीं देखा।'

तब यमराज ने उससे कहा, "परन्तु हे जन, क्या तूने मनुष्यों में कभी किसी ऐसे पुरुष या स्त्री को नहीं देखा, जो अस्सी, नब्बे या सौ वर्ष का हो, दुर्बल हो, छत के खंभे की तरह झुका हुआ हो, टेढ़ा-मेढ़ा चलता हो, छड़ी के सहारे लड़खड़ाता हो, बीमार हो, जवानी खो चुका हो, दांत टूटे हों, बाल सफेद और कम हों या गंजे हों, त्वचा झुर्रीदार हो और अंग धब्बेदार हों?" और उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, "जी, भगवान, मैंने ऐसा देखा है।"

तब यमराज ने उससे कहा: 'हे भले मनुष्य, क्या तुम्हें, एक बुद्धिमान और परिपक्व व्यक्ति होने के नाते, यह बात नहीं सूझी: "मैं भी बुढ़ापे के अधीन हूँ, मैं बुढ़ापे से मुक्त नहीं हूँ। अब मुझे अपने शरीर, वाणी और मन से भलाई करनी चाहिए"?' [139] - 'नहीं, भगवान, मैं नहीं कर सका। मैं आलसी था।'

तब यमराज कहते हैं, "हे हे जन, आलस्य के कारण तूने अपने शरीर, वाणी और मन से कोई अच्छा कर्म नहीं किया। निश्चय ही, लोग तेरे आलस्य के अनुरूप ही तेरे साथ व्यवहार करेंगे। तेरा वह बुरा कर्म न तो तेरे माता-पिता ने किया है, न तेरे भाई-बहन ने, न तेरे मित्रों और साथियों ने, न तेरे रिश्तेदारों और परिवार के सदस्यों ने, न देवताओं ने, न तपस्वियों और ब्राह्मणों ने। बल्कि तूने ही वह बुरा कर्म किया है, और तुझे स्वयं उसका फल भोगना होगा।"

(2) "जब यमराज ने प्रथम दैवीय दूत के बारे में उससे पूछताछ, विचार-विमर्श और जिरह की, तो उसने फिर से द्वितीय दैवीय दूत के बारे में उससे पूछताछ, विचार-विमर्श और जिरह की: 'हे भगवान, क्या तुमने मनुष्यों के बीच प्रकट हुए द्वितीय दैवीय दूत को नहीं देखा?' और उसने उत्तर दिया: 'नहीं, भगवान, मैंने उसे नहीं देखा।'"

तब यमराज ने उससे कहा: 'परन्तु, हे भले मनुष्य, क्या तूने कभी मनुष्यों में किसी ऐसे पुरुष या स्त्री को नहीं देखा जो बीमार, पीड़ित, गंभीर रूप से अस्वस्थ हो, अपने ही मूत्र और मल में पड़ा हो, जिसे कुछ लोग उठा रहे हों और कुछ लोग नीचे रख रहे हों?' और उसने उत्तर दिया: 'जी, भगवान, मैंने यह देखा है।'

तब यमराज ने उससे कहा, "हे स्वामी, क्या तुम्हें, एक बुद्धिमान और परिपक्व व्यक्ति होने के नाते, यह बात नहीं सूझी कि "मैं भी रोगग्रस्त हूँ, मैं रोग से मुक्त नहीं हूँ। अब मुझे अपने शरीर, वाणी और मन से भलाई करनी चाहिए?" — "नहीं, भगवान, मैं ऐसा नहीं कर सका। मैं आलसी था।"

तब यमराज कहते हैं: [140] 'हे हे जन, आलस्य के कारण तूने अपने शरीर, वाणी और मन से कोई अच्छा कर्म नहीं किया। निश्चय ही, लोग तेरे आलस्य के अनुरूप ही तेरे साथ व्यवहार करेंगे। तेरा वह बुरा कर्म न तो तेरे माता-पिता ने किया, न तेरे भाई-बहन ने, न तेरे मित्रों और साथियों ने, न तेरे रिश्तेदारों और परिवार के सदस्यों ने, न देवताओं ने, न तपस्वियों और ब्राह्मणों ने। बल्कि तूने ही वह बुरा कर्म किया है, और तुझे स्वयं उसका फल भोगना होगा।' ...

(3) "जब यमराज ने दूसरे दिव्य दूत के बारे में उससे पूछताछ, विचार-विमर्श और जिरह की, तो उन्होंने फिर से तीसरे दिव्य दूत के बारे में उससे पूछताछ, विचार-विमर्श और जिरह की: 'हे भगवान, क्या तुमने मनुष्यों के बीच प्रकट हुए तीसरे दिव्य दूत को नहीं देखा?' और उसने उत्तर दिया: 'नहीं, भगवान, मैंने उसे नहीं देखा।'"

तब यमराज ने उससे कहा: 'परन्तु, हे भले मनुष्य, क्या तुमने कभी मनुष्यों में किसी ऐसे पुरुष या स्त्री को नहीं देखा, जो एक, दो या तीन दिन पहले मरा हो, और जिसका शव फूला हुआ, पीला और सड़ रहा हो?' और उसने उत्तर दिया: 'जी, भगवान, मैंने ऐसा देखा है।'

तब यमराज ने उससे कहा, "हे स्वामी, क्या तुम्हें, एक बुद्धिमान और परिपक्व व्यक्ति होने के नाते, यह बात नहीं सूझी कि मैं भी मृत्यु के अधीन हूँ, मृत्यु से मुक्त नहीं हूँ। तो क्या मुझे अपने शरीर, वाणी और मन से अच्छा कार्य करना चाहिए?" "नहीं, भगवान, मैं ऐसा नहीं कर सका। मैं आलसी था।"

तब यमराज कहते हैं, "हे हे जन, आलस्य के कारण तूने अपने शरीर, वाणी और मन से कोई अच्छा कर्म नहीं किया। निश्चय ही, लोग तेरे आलस्य के अनुरूप ही तेरे साथ व्यवहार करेंगे। तेरा वह बुरा कर्म न तो तेरे माता-पिता ने किया है, न तेरे भाई-बहन ने, न तेरे मित्रों और साथियों ने, न तेरे रिश्तेदारों और परिवार के सदस्यों ने, न देवताओं ने, न तपस्वियों और ब्राह्मणों ने। बल्कि तूने ही वह बुरा कर्म किया है, और तुझे स्वयं उसका फल भोगना होगा।"

"जब, भिक्षुओं, राजा यम ने तीसरे दिव्य दूत के बारे में उससे पूछताछ, विचार-विमर्श और जिरह की, तो वह चुप हो गया। [141] तब नरक के रक्षकों ने उसे पंच प्रकार की यातनाएँ दीं। उन्होंने एक हाथ में लाल गर्म लोहे का खंभा गाड़ दिया और दूसरे हाथ में भी; उन्होंने एक पैर में लाल गर्म लोहे का खंभा गाड़ दिया और दूसरे पैर में भी; उन्होंने उसकी छाती के बीचोंबीच लाल गर्म लोहे का खंभा गाड़ दिया। वहाँ उसे पीड़ादायक, कष्टदायक और चुभने वाली संवेदनाएँ (वेदना) महसूस हुईं, 382 फिर भी जब तक उसका बुरा कर्म समाप्त नहीं हो जाता, तब तक उसकी मृत्यु नहीं हुई।"

इसके बाद नरक के रक्षक उसे नीचे गिरा देते हैं और कुल्हाड़ियों से उसकी वेदना भेदते हैं। वहाँ उसे असहनीय पीड़ा, क्षोभ और चुभन का अनुभव होता है, फिर भी जब तक उसका बुरा कर्म समाप्त नहीं हो जाता, वह मरता नहीं। इसके बाद नरक के रक्षक उसे उल्टा लटका देते हैं और कुल्हाड़ियों से उसकी वेदना भेदते हैं। इसके बाद नरक के रक्षक उसे रथ में जोतकर जलती, धधकती और चमकती हुई जमीन पर आगे-पीछे दौड़ाते हैं। इसके बाद नरक के रक्षक उसे जलते, धधकते और चमकते हुए कोयलों के एक बड़े ढेर पर ऊपर-नीचे चढ़ाते हैं। इसके बाद नरक के रक्षक उसे उल्टा लटकाकर जलते, धधकते और चमकते हुए लाल-गर्म तांबे के कड़ाहे में डाल देते हैं। वहाँ वह झाग के भंवर में पकता है। और जैसे-जैसे वह झाग के भंवर में पकता है, उसे कभी ऊपर, कभी नीचे, कभी इधर-उधर

धकेला जाता है। वहाँ उसे असहनीय पीड़ा, क्षोभ और चुभन का अनुभव होता है। उसे वेदनाएं तो होती हैं, लेकिन जब तक उसका बुरा कर्म समाप्त नहीं हो जाता, तब तक उसकी मृत्यु नहीं होती।

इसके बाद नरक के रक्षक उसे महानर में फेंक देते हैं। अब, भिक्षुओं, उस महानर के बारे में:

"इसके चार कोने और चार दरवाजे हैं

और इसे अलग-अलग हिस्सों में बांटा गया है;

यह लोहे की दीवारों से घिरा हुआ है

और लोहे की छत से बंद है।"

"इसका फर्श भी लोहे का बना है

और इसे तब तक गर्म किया जाता है जब तक कि यह आग की लपटों से चमकने न लगे।

इसका चूल्हा पूरे सौ योजन का है

जिसे यह सर्वव्यापी रूप से कवर करता है।"

"एक बार, हे भिक्षुओं, अतीत में राजा यम ने सोचा: 'संसार में जो लोग बुरे कर्म करते हैं, उन्हें अनेक प्रकार की यातनाएँ दी जाती हैं। काश, मैं मनुष्य बन जाऊँ! काश, संसार में तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध पुरुष का जन्म हो! काश, मैं उस भगवान (बुद्ध) की सेवा कर सकूँ! काश, भगवान (बुद्ध) मुझे धर्म का उपदेश दें, और मैं उनके धर्म को समझ सकूँ!'"

"भिक्षुओं (सन्यासियों), मैं किसी अन्य तपस्वी या ब्राह्मण से सुनी हुई बात को दोहरा नहीं रहा हूँ, बल्कि मैं उस विषय पर बोल रहा हूँ जिसे मैंने स्वयं जाना, देखा और समझा है।"

ईश्वरीय दूतों द्वारा चेतावनी दिए जाने के बावजूद,

जो लोग

लंबे समय तक आलसी बने रहते हैं, वे दुःख में डूबे रहते हैं

और निम्न लोक में चले जाते हैं।

लेकिन यहाँ वे भले लोग हैं जो

दिव्य दूतों द्वारा चेतावनी दिए जाने पर भी, धर्म के प्रति

कभी आलसी नहीं होते ; जिन्होंने आसक्ति को जन्म-मृत्यु का कारण मानकर, अनासक्ति के द्वारा जन्म-मृत्यु के अंत से मुक्ति प्राप्त कर ली है: वे सुखी लोग हैं जिन्होंने सुरक्षा प्राप्त कर ली है; 383 उन्होंने इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त कर लिया है। सभी शत्रुता और संकटों पर विजय प्राप्त करके, उन्होंने सभी दुखों को पार कर लिया है।

---

37 (7) राजा (1) (चतुम्हाराजा)

भिक्षुओं (मठवासियों), (1) पखवाड़े की आठवीं तिथि को, चारों महान राजाओं के मंत्री और सभा सदस्य इस संसार में विचरण करते हैं, 384 [यह सोचते हुए]: 'हम आशा करते हैं कि बहुत से लोग अपने माता-पिता के प्रति उचित व्यवहार करते हों, तपस्वियों और ब्राह्मणों के प्रति उचित व्यवहार करते हों, परिवार के बड़ों का आदर करते हों, उपोसथ का पालन करते हों, अतिरिक्त व्रत के दिनों का पालन करते हों और पुण्य कर्म करते हों।' 385 (2) पखवाड़े की चौदहवीं तिथि को, चारों महान राजाओं के पुत्र इस संसार में विचरण करते हैं, [यह सोचते हुए]: 'हम आशा करते हैं कि बहुत से लोग अपने माता-पिता के प्रति उचित व्यवहार करते हों... [143] ...और पुण्य कर्म करते हों।' (3) पंद्रहवीं तिथि को, उपोसथ के दिन, चारों महान राजा स्वयं इस संसार में विचरण करते हैं, [यह सोचते हुए]: 'हम आशा करते हैं कि बहुत से लोग अपने माता-पिता के प्रति उचित व्यवहार करते हों... और पुण्य कर्म करते हों।

"हे भिक्षुओं, यदि माता-पिता के प्रति उचित व्यवहार करने वाले और पुण्य कर्म करने वाले लोगों की संख्या कम हो, तो जब चारों महान राजा सुधम्म सभा भवन में मिलते हैं और साथ बैठे होते हैं, तो वे तावतिंसा देवताओं को यह सूचना देते हैं: 'हे महोदय, माता-पिता के प्रति उचित व्यवहार करने वाले और पुण्य कर्म करने वाले लोगों की संख्या कम हो।' तब, इस कारण तावतिंसा देवता अप्रसन्न हो जाते हैं और कहते हैं: 'हाय, देवताओं की संख्या घटेगी और असुरों की संख्या बढ़ेगी!'"

लेकिन यदि बहुत से लोग अपने माता-पिता के प्रति उचित व्यवहार करते हैं और पुण्य कर्म करते हैं, तो चारों महान राजा सुधम्म सभा भवन में उपस्थित होकर तावतिंसा देवताओं को यह सूचना देते हैं: 'हे महोदय, बहुत से लोग अपने माता-पिता के प्रति उचित व्यवहार करते हैं, तपस्वियों और ब्राह्मणों के प्रति उचित आचरण करते हैं, परिवार के बड़ों का आदर करते हैं, उपोसथ का पालन करते हैं, अतिरिक्त व्रतों का पालन करते हैं और पुण्य कर्म करते हैं। तब तावतिंसा देवता प्रसन्न होकर कहते हैं: 'सचमुच, स्वर्गिक मंडली फलेगी-फूलेगी और असुरों की मंडली का पतन होगा!'

भिक्षुओं (सन्यासियों) ने एक बार अतीत में, जब देवों (देवदूतों/देवताओं) के शासक सक्का (इंद्र) तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) का मार्गदर्शन कर रहे थे, तब उन्होंने यह श्लोक पढ़ा: 386

"जो व्यक्ति मेरे समान बनना चाहता है, उसे चौदहवें, पंद्रहवें और अष्टम तिथि को तथा विशेष पखवाड़ों के दौरान आठों कारकों में पूर्ण

उपोसथा का पालन करना चाहिए ।" 387

"हे भिक्षुओं, इस श्लोक का पाठ देवताओं के स्वामी सक्का (इंद्र) ने गलत तरीके से किया था, सही तरीके से नहीं। इसका उच्चारण गलत था, सही नहीं। इसका कारण क्या है? क्योंकि देवताओं के स्वामी सक्का (इंद्र) कामवासना (राग), द्वेष (दोष) और मोह (मोह) से रहित नहीं हैं। परन्तु उस भिक्षु के मामले में जो अरहंत है—जिसके सारे दोष नष्ट हो चुके हैं, जिसने ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत किया है, जो करना आवश्यक था वह किया है, बोझ उतार दिया है, अपने लक्ष्य तक पहुँच गया है, जिसने जन्म के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म के कारण) को पूरी तरह से नष्ट कर दिया है, जो अंतिम ज्ञान से पूर्णतः मुक्त हो गया है—उसके लिए यह कहना उचित है:

"'वह व्यक्ति जो मेरे जैसा हो... और विशेष पखवाड़े के दौरान।'"

"इसका क्या कारण है? क्योंकि वह भिक्षु कामवासना (राग), घृणा और मोह (मोह) से रहित है।"

---

38 (8) राजा (2)

भिक्षुओं ने एक बार अतीत में, जब देवों के स्वामी सक्का (इंद्र) तावतिंसा देवों का मार्गदर्शन कर रहे थे, तब उन्होंने यह श्लोक पढ़ा था: 388

"'वह व्यक्ति जो मेरे जैसा हो... और विशेष पखवाड़े के दौरान।'"

"हे भिक्षुओं, इस श्लोक का पाठ देवताओं के स्वामी सक्का (इंद्र) ने गलत तरीके से किया था, सही तरीके से नहीं। इसका उच्चारण गलत था, सही नहीं। इसका कारण क्या है? क्योंकि देवताओं के स्वामी सक्का (इंद्र) पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु से, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त नहीं हैं; वे दुख से मुक्त नहीं हैं, मैं कहता हूँ। परन्तु उस भिक्षु के मामले में जो अरहंत है—जिसके सारे दोष नष्ट हो गए हैं...जो अंतिम ज्ञान से पूर्णतः मुक्त हो गया है—उसके लिए यह कहना उचित है:

"'वह व्यक्ति जो मेरे जैसा होगा ... और विशेष पखवाड़े के दौरान।' [145]

"इसका क्या कारण है? क्योंकि वह भिक्षु पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्त है, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त है; वह दुख से मुक्त है, मैं कहता हूँ।"

---

39 नाजुक (सुखुमाला)

भिक्षुओं, मेरे पिता के निवास पर मेरा अत्यंत कोमल, बल्कि अत्यंत कोमल पालन-पोषण हुआ। मेरे आनंद के लिए कमल के तालाब बनाए गए थे: उनमें से एक में नीले कमल खिलते थे, दूसरे में लाल कमल और तीसरे में सफेद कमल। 389 मैं केवल काशी से प्राप्त चंदन का ही प्रयोग करता था और मेरा सिर का वस्त्र, जैकेट, निचला वस्त्र और ऊपरी वस्त्र सभी काशी के कपड़े से बने थे। 390 दिन-रात मेरे ऊपर एक सफेद चंदवा रहता था ताकि ठंड और गर्मी, धूल, घास और ओस मुझ पर न जमे।

मेरे पास तीन महल थे: एक सर्दियों के लिए, एक गर्मियों के लिए और एक बरसात के मौसम के लिए। 393 मैं बरसात के चार महीने बरसात के महल में बिताता था, जहाँ संगीतकार मेरा मनोरंजन करते थे, जिनमें से कोई भी पुरुष नहीं था, 392 और मैं महल से बाहर नहीं निकलता था। जबकि दूसरे लोगों के घरों में दासों, श्रमिकों और नौकरों को भोजन में खट्टी दलिया के साथ टूटा हुआ चावल दिया जाता था, मेरे पिता के निवास में उन्हें उत्तम पहाड़ी चावल, मांस और उबले हुए चावल दिए जाते थे।

(1) "ऐसी शान-शौकत और नाजुक जीवन के बीच, मेरे मन में यह विचार आया: 'एक अनपढ़ सांसारिक व्यक्ति, यद्यपि स्वयं वृद्धावस्था के अधीन है, पर वृद्धावस्था से मुक्त नहीं है, जब वह किसी दूसरे वृद्ध व्यक्ति को अपनी स्थिति को अनदेखा करते हुए देखता है तो उसे घृणा, अपमान और तिरस्कार का अनुभव होता है। 393 अब मैं भी वृद्धावस्था के अधीन हूँ और वृद्धावस्था से मुक्त नहीं हूँ। ऐसी स्थिति में, यदि मैं किसी दूसरे वृद्ध व्यक्ति को देखकर घृणा, अपमान और तिरस्कार का अनुभव करूँ, तो यह मेरे लिए उचित नहीं होगा।' जब मैंने इस प्रकार विचार किया, तो मेरी यौवन की मोहताज पूरी तरह से त्याग गई।"

(2) "[फिर, मेरे मन में यह विचार आया:] 'एक अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति, यद्यपि स्वयं रोगग्रस्त होता है, रोग से मुक्त नहीं, किसी अन्य बीमार व्यक्ति को देखकर घृणा, अपमान और तिरस्कार का अनुभव करता है, अपनी स्थिति को अनदेखा करते हुए। अब मैं भी रोगग्रस्त हूँ और रोग से मुक्त नहीं हूँ। ऐसी स्थिति में, यदि मैं किसी अन्य बीमार व्यक्ति को देखकर घृणा, अपमान और तिरस्कार का अनुभव करूँ, तो यह मेरे लिए उचित नहीं होगा।' जब मैंने इस प्रकार चिंतन किया, तो स्वास्थ्य के प्रति मेरा मोह पूरी तरह से समाप्त हो गया।"

(3) "[फिर से मेरे मन में यह विचार आया:] 'एक अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति, यद्यपि स्वयं मृत्यु के अधीन है, मृत्यु से मुक्त नहीं, किसी अन्य मृत व्यक्ति को देखकर घृणा, अपमान और तिरस्कार का अनुभव करता है, अपनी स्थिति को अनदेखा करते हुए। अब मैं भी मृत्यु के अधीन हूँ और मृत्यु से मुक्त नहीं हूँ। ऐसी स्थिति में, यदि मैं किसी अन्य मृत व्यक्ति को देखकर घृणा, अपमान और तिरस्कार का अनुभव करूँ, तो यह मेरे लिए उचित नहीं होगा।' जब मैंने इस प्रकार चिंतन किया, तो जीवन के प्रति मेरा मोह पूरी तरह से समाप्त हो गया।"

भिक्षुओं, तीन प्रकार के नशे होते हैं। 394 वे तीन क्या हैं? यौवन का नशा, स्वास्थ्य का नशा और जीवन का नशा। (1) एक अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति, यौवन के नशे में चूर होकर, शरीर, वाणी और मन से दुराचार करता है। शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के समय, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। (2) एक अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति, स्वास्थ्य के नशे में चूर होकर, शरीर, वाणी और मन से दुराचार करता है। शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के समय, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। (3) एक अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति, जीवन के नशे में चूर होकर, शरीर, वाणी और मन से दुराचार करता है। शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के समय, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है।

"जवानी के नशे में चूर होकर भिक्षु प्रशिक्षण त्याग देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है; या स्वास्थ्य के नशे में चूर होकर वह प्रशिक्षण त्याग देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है; या जीवन के नशे में चूर होकर वह प्रशिक्षण त्याग देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।"

"संसार के वे लोग जो बीमारी,

बुढ़ापे और मृत्यु के अधीन हैं, अपनी प्रकृति के अनुसार

जीवन यापन करने वाले अन्य लोगों से घृणा करते हैं। 395"

"यदि मैं ऐसे स्वभाव वाले प्राणियों से घृणा करने लगूँ ,

तो यह मेरे लिए उचित नहीं होगा

क्योंकि मेरा स्वभाव भी वैसा ही है।"

"इस प्रकार निवास करते हुए, मैंने

बिना किसी प्राप्ति के अवस्था को जान लिया था, और त्याग में सुरक्षा पाकर

मैंने सभी व्यसनों -

स्वास्थ्य,

यौवन और जीवन के व्यसन - पर विजय प्राप्त कर ली थी।" 396

"तब मुझमें उत्साह उत्पन्न हुआ

क्योंकि मैंने निर्वाण को स्पष्ट रूप से देख लिया था।

अब मैं

इंद्रिय सुखों में लिप्त होने में असमर्थ हूँ।

ब्रह्मचर्य (पवित्र जीवन) पर भरोसा करते हुए,

मैं कभी पीछे नहीं हटूँगा।" 397

---

40 अधिकारी (अधिपतेय्या)

भिक्षुओं, ये तीन प्राधिकार हैं। कौन से तीन? स्वयं को प्राधिकार मानते हुए, संसार को प्राधिकार मानते हुए और धम्म को प्राधिकार मानते हुए। 398

(1) "और हे भिक्षुओं, स्वयं को अपना अधिकार मानने का क्या अधिकार है? यहाँ, वन में, वृक्ष की तलहटी में, या किसी खाली कुटिया में जाकर, एक भिक्षु (सन्यासी) इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में वस्त्र, भिक्षा, आवास, या यह या वह बनने के लिए नहीं गया, 399 बल्कि [इस विचार के साथ]: "मैं पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु में डूबा हुआ हूँ; दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा में। मैं दुःख में डूबा हुआ हूँ, दुःख से पीड़ित हूँ। शायद दुःख के इस पूरे समूह का अंत देखा जा सकता है।" [148] गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में जाने वाले के रूप में, मेरे लिए उन इंद्रिय सुखों की खोज करना उचित नहीं होगा जो मैंने त्याग दिए हैं, या उनसे भी बदतर हों।' फिर वह इस प्रकार चिंतन करता है: 'मेरे भीतर ऊर्जा निरंतर जागृत रहेगी; ध्यान (सती) बिना किसी भ्रम के स्थापित होगा; मेरा शरीर शांत और अशांत रहेगा; मेरा मन एकाग्रम और एकाग्रता से भरा रहेगा।' स्वयं को अपना अधिकार मानकर, वह हानिकारक (अकुशल) का त्याग करता है और लाभकारी (कुशल) का विकास करता है; वह निंदनीय का त्याग करता है और निष्कलंक का विकास करता है; वह स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। इसे ही स्वयं को अपना अधिकार मानना कहते हैं।

(2) "हे भिक्षुओं, संसार को अपना अधिकार मानकर क्या है? यहाँ, वन में, वृक्ष की तलहटी में, या किसी खाली कुटिया में जाकर, एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में वस्त्र के लिए नहीं गया... बल्कि [इस विचार के साथ]: "मैं पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु में लीन हूँ..." शायद इस पूरे दुख के अंत का कोई रास्ता दिखाई दे। गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी बनने के कारण, मेरे मन में कामुक विचार, दुर्भावना के विचार या हानि पहुँचाने के विचार आ सकते हैं। परन्तु संसार विशाल है। संसार के इस विशाल संसार में ऐसे तपस्वी और ब्राह्मण हैं जिनके पास दिव्य शक्ति और दृष्टि है और जो दूसरों के मन को जानते हैं। वे दूर से ही चीजों को देख लेते हैं, परन्तु पास होने पर भी वे स्वयं दिखाई नहीं देते; वे अपने मन से दूसरों के मन को जान लेते हैं। वे मुझे इस प्रकार जानते होंगे: 'इस कुल के व्यक्ति को देखो: यद्यपि यह आस्था के कारण गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी बना है, परन्तु यह अकुशल अवस्थाओं से दूषित है।' ऐसे देवता भी हैं जिनके पास दिव्य शक्ति और दृष्टि है और जो दूसरों के मन को जानते हैं। वे दूर से भी देख लेते हैं, परन्तु पास होने पर भी वे स्वयं दिखाई नहीं देते; वे भी अपने मन से दूसरों के मन को जान लेते हैं। वे भी मुझे इस प्रकार जानते होंगे: "इस कुलवासी को देखो: यद्यपि इसने आस्था के कारण गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन अपनाया है, फिर भी यह अकुशल (हानिकारक) अवस्थाओं से दूषित है।" फिर वे इस प्रकार चिंतन करते हैं: 'मुझमें ऊर्जा निरंतर जागृत रहेगी; ध्यान (सती) बिना किसी भ्रम के स्थापित होगा; मेरा शरीर शांत रहेगा; मेरा मन समाधि में लीन और एकाग्र (एकगग् संस्कृत: एकग्र) होगा।' संसार को अपना अधिकार मानकर, वे अकुशल (हानिकारक) का त्याग कर कुशल (सुखदायक) का विकास करते हैं; वे निंदनीय (हानिकारक) का त्याग कर निर्दोष (हानिकारक) का विकास करते हैं; वे स्वयं को पवित्रता में बनाए रखते हैं। इसे ही संसार को अपना अधिकार मानना कहते हैं।

(3) "हे भिक्षुओं, धम्म को अपना अधिकार क्यों मानना चाहिए? यहाँ, वन में, वृक्ष की छाया में, या किसी खाली कुटिया में जाकर, एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में वस्त्र के लिए नहीं गया... बल्कि इस विचार से गया: 'मैं पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु के चक्र में लीन हूँ... शायद इस पूरे दुख के अंत का कोई मार्ग दिखाई दे।' धम्म का भगवान (बुद्ध) द्वारा भली-भांति वर्णन किया गया है, जो प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होता है, तात्कालिक है, दर्शन के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक है, और ज्ञानी व्यक्तियों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जा सकता है। मेरे कुछ साथी भिक्षु हैं जो इसे जानते और देखते हैं। इस भली-भांति वर्णित धम्म और अनुशासन में गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में जाने वाले व्यक्ति के लिए आलसी और सुस्त होना अनुचित होगा।" फिर वे इस प्रकार चिंतन करते हैं: 'मेरे भीतर ऊर्जा निरंतर जागृत रहेगी; ध्यान (सती) बिना किसी भ्रम के स्थापित होगा; मेरा शरीर शांत और अशांत रहेगा; मेरा मन एकाग्रम और एकाग्रता से भरा रहेगा।' धम्म को अपना आधार मानकर वे हानिकारक (अकुशल) का त्याग करते हैं और लाभकारी (कुशल) का विकास करते हैं; वे निंदनीय का त्याग करते हैं और निर्दोष का विकास करते हैं; वे स्वयं को पवित्र बनाए रखते हैं। इसे ही धम्म को अपना आधार मानना कहते हैं।

"भिक्षुओं, ये तीन ही प्रमुख अधिकारी हैं।"

जो व्यक्ति बुरा कर्म करता है, उसके लिए

संसार में कोई स्थान "छिपा हुआ" नहीं है।

हे मनुष्य, तुम्हारा अंतर्मन जानता है

कि वह सत्य है या असत्य। 400

वास्तव में, महोदय, आप साक्षी स्वरूप

अपने अच्छे स्वरूप को तुच्छ समझते हैं; आप अपने भीतर विद्यमान

दुष्ट स्वरूप को छुपाते हैं । 401 [150]

देव और तथागत

संसार में अधर्मी लोगों को अन्यायपूर्ण कार्य करते हुए देखते हैं।

इसलिए

स्वयं को सर्वोपरि मानते हुए सचेत रहना चाहिए;

संसार को सर्वोपरि मानते हुए सजग और ध्यानमग्न रहना चाहिए;

और धम्म को

सर्वोपरि मानते हुए धर्म के मार्ग पर चलना चाहिए।

सच्चे परिश्रम से साधक कभी पतित नहीं होता।

मारा को पराजित करके

और अंत के निर्माता पर विजय प्राप्त करके,

साधक पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त हो जाता है।

ऐसा ऋषि, ज्ञानी, संसार का ज्ञाता,

किसी भी चीज से स्वयं को नहीं जोड़ता। 402

वी. लघु अध्याय (कुलवाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

41 वर्तमान (सम्मुखीभव)

भिक्षुओं, जब तीन बातें मौजूद हों, तो आस्थावान कुलवासी बहुत पुण्य अर्जित करता है। वे तीन बातें क्या हैं? (1) जब आस्था मौजूद हो, तो आस्थावान कुलवासी बहुत पुण्य अर्जित करता है। (2) जब दान करने योग्य वस्तु मौजूद हो, तो आस्थावान कुलवासी बहुत पुण्य अर्जित करता है। (3) जब दान के योग्य व्यक्ति मौजूद हों, तो आस्थावान कुलवासी बहुत पुण्य अर्जित करता है। जब ये तीनों बातें मौजूद हों, तो आस्थावान कुलवासी बहुत पुण्य अर्जित करता है।

---

42 मामले (तिथाना)

भिक्षुओं, तीन स्थितियों में आस्था और विश्वास की अवधारणा समझी जा सकती है। वे तीन स्थितियाँ क्या हैं? जब व्यक्ति सदाचारी लोगों के दर्शन की इच्छा रखता है; जब व्यक्ति उत्तम धम्म सुनने की इच्छा रखता है; और जब व्यक्ति कंजूसी के दाग से मुक्त, उदार, त्याग में प्रसन्न, दान-पुण्य में समर्पित, दान देने और साझा करने में प्रसन्न मन से घर में निवास करता है। इन तीनों स्थितियों में ही व्यक्ति में आस्था और विश्वास की अवधारणा समझी जा सकती है।

जो व्यक्ति सद्‌गुणी लोगों को देखना चाहता है,

जो अच्छे धर्म को सुनना चाहता है,

जिसने कंजूसी के दाग को दूर कर दिया है,

उसे आस्थावान व्यक्ति कहा जाता है। [151]

---

43 लाभ (अत्थवास)

भिक्षुओं, जब तीन लाभ दिखाई देते हैं, तो दूसरों को धम्म (मार्ग) का उपदेश देना ही पर्याप्त है। वे तीन लाभ क्या हैं? (1) धम्म का उपदेश देने वाला व्यक्ति अर्थ और धम्म का अनुभव करता है। (2) धम्म का श्रोता भी अर्थ और धम्म का अनुभव करता है। (3) धम्म का उपदेश देने वाला और सुनने वाला दोनों ही अर्थ और धम्म का अनुभव करते हैं। इन तीन लाभों को देखते हुए, दूसरों को धम्म का उपदेश देना ही पर्याप्त है।

---

44 सहज प्रवाह (कथापवत्ती)

भिक्षुओं, तीन स्थितियों में वार्ता सुचारू रूप से प्रवाहित होती है। वे तीन स्थितियाँ क्या हैं? (1) जब धम्म का उपदेशक अर्थ और धम्म का अनुभव करता है। (2) जब धम्म का श्रोता अर्थ और धम्म का अनुभव करता है। (3) जब धम्म का उपदेशक और श्रोता दोनों अर्थ और धम्म का अनुभव करते हैं। इन तीनों स्थितियों में वार्ता सुचारू रूप से प्रवाहित होती है।

---

45 बुद्धिमान (पंडित)

भिक्षुओं, बुद्धिमानों और भले लोगों द्वारा ये तीन बातें बताई गई हैं। वे तीन बातें क्या हैं? (1) दान देना बुद्धिमानों और भले लोगों द्वारा बताया गया है। (2) भिक्षु दीक्षा लेना बुद्धिमानों और भले लोगों द्वारा बताया गया है। (3) माता-पिता की सेवा करना बुद्धिमानों और भले लोगों द्वारा बताया गया है। ये तीनों बातें बुद्धिमानों और भले लोगों द्वारा बताई गई हैं।

अच्छे लोग दान,

अहिंसा, आत्मसंयम, आत्म-नियंत्रण,

माता-पिता की सेवा

और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के शांतिपूर्ण अनुयायियों की सेवा का उपदेश देते हैं। 404

ये वे अच्छे कर्म हैं

जिनका अनुसरण बुद्धिमान व्यक्ति को करना चाहिए।

दूरदृष्टि वाला श्रेष्ठ व्यक्ति

शुभ लोक में जाता है।

---

46 गुणी (सिलवंता)

"भिक्षुओं (सन्यासियों), जब सद्गुणी संन्यासी किसी गाँव या कस्बे पर निर्भर होकर निवास करते हैं, तो वहाँ के लोग तीन तरीकों से बहुत पुण्य कमाते हैं। वे तीन तरीके क्या हैं? [152] शरीर, वाणी और मन से। जब सद्गुणी संन्यासी किसी गाँव या कस्बे पर निर्भर होकर निवास करते हैं, तो वहाँ के लोग इन तीन तरीकों से बहुत पुण्य कमाते हैं।"

---

47 संस्कार (भावना) लक्षण (संखतलखना)

भिक्षुओं, संस्कार (भावना/परिस्थितिजन्य घटना, अर्थात् इंद्रिय सुख) को परिभाषित करने वाले ये तीन लक्षण हैं। 405 वे तीन क्या हैं? एक उद्‌भव देखा जाता है, एक लुप्त होना देखा जाता है, और उसके बने रहने के दौरान उसका परिवर्तन देखा जाता है। ये तीन लक्षण संस्कार (भावना/परिस्थितिजन्य घटना) को परिभाषित करते हैं।

---

48 असंस्कार (असंस्कार) लक्षण (असन्खतलक्खाना)

असंस्कार (भावहीन/अबद्ध/सदाहस्थ घटना) के लक्षण (असंखटलक्खना) "भिक्षुओं, असंस्कार (भावहीन/अबद्ध) को परिभाषित करने वाले ये तीन लक्षण हैं। 406 वे तीन क्या हैं? न तो इसका उद्‌भव होता है, न ही इसका लुप्त होना दिखाई देता है, और इसके बने रहने के दौरान इसमें कोई परिवर्तन नहीं होता है। ये तीन लक्षण असंस्कार (भावहीन/अबद्ध) को परिभाषित करते हैं।"

नोट: गैर-संस्कार से तात्पर्य समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की दिव्य अवस्था से प्रतीत होता है, अर्थात् वह अतिचेतना जो उत्पन्न नहीं होती, बल्कि वह हमेशा विद्यमान रहती है, उसे केवल खोजे जाने की आवश्यकता होती है।

---

49 पर्वतों का राजा (पब्बटा-राजा)

"भिक्षुओं (साधुओं) के अनुसार, हिमालय, जो पर्वतों का राजा है, पर आधारित विशाल साल के वृक्ष तीन प्रकार से उगते हैं। वे तीन प्रकार क्या हैं? (1) वे शाखाओं, पत्तियों और पत्तों के रूप में उगते हैं; (2) वे छाल और टहनियों के रूप में उगते हैं; और (3) वे कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी के रूप में उगते हैं। हिमालय, जो पर्वतों का राजा है, पर आधारित विशाल साल के वृक्ष इन तीन प्रकार से उगते हैं।"

इसी प्रकार, जब परिवार का मुखिया आस्थावान होता है, तो उस पर निर्भर परिवार के लोग तीन प्रकार से उन्नति करते हैं। वे तीन प्रकार क्या हैं? (1) वे आस्था में उन्नति करते हैं; (2) वे सदाचारी व्यवहार में उन्नति करते हैं; और (3) वे (दिव्य) ज्ञान में उन्नति करते हैं। जब परिवार का मुखिया आस्थावान होता है, तो उस पर निर्भर परिवार के लोग इन तीनों प्रकार से उन्नति करते हैं।

जैसे किसी विशाल वन क्षेत्र में

चट्टानी पर्वत पर निर्भर होकर उगने वाले पेड़ महान "वन स्वामी" बन सकते हैं, वैसे ही, जब यहाँ किसी परिवार के मुखिया में आस्था और सद्‌गुण होते हैं, तो उसकी पत्नी, बच्चे और रिश्तेदार सभी उस पर निर्भर हो जाते हैं; वैसे ही उसके मित्र, उसका पारिवारिक दायरा और उस पर निर्भर लोग भी। [153]

जो लोग नैतिक रूप से सजग होते हैं, वे

उस गुणी व्यक्ति के अच्छे आचरण,

उदारता और अच्छे कर्मों को देखकर

उसका अनुकरण करते हैं।

धर्म के अनुसार,

अच्छे गंतव्य की ओर ले जाने वाले मार्ग पर चलकर,

सुख की इच्छा रखने वाले लोग

देवलोक में आनंदित होते हैं।

---

50 अभ्यास उत्साह (अटप्पा-कारनिया)

भिक्षुओं, तीन स्थितियों में तप का अभ्यास करना चाहिए। वे तीन स्थितियाँ क्या हैं? (1) अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) के उत्पन्न न होने के लिए तप का अभ्यास करना चाहिए। (2) अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के उत्पन्न होने के लिए तप का अभ्यास करना चाहिए। (3) उत्पन्न शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) को सहन करने के लिए तप का अभ्यास करना चाहिए जो पीड़ादायक, कष्टदायक, तीक्ष्ण, चुभने वाली, कष्टदायी, अप्रिय और जीवन शक्ति को क्षीण करने वाली हों। इन तीनों स्थितियों में तप का अभ्यास करना चाहिए।

जब कोई भिक्षु अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) के अजन्मे होने के लिए, अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के उत्पन्न होने के लिए, और उत्पन्न हुई शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) को सहन करने के लिए उत्साह का अभ्यास करता है जो पीड़ादायक, कष्टदायक, तीक्ष्ण, चुभने वाली, कष्टदायक, अप्रिय और जीवन शक्ति को नष्ट करने वाली होती हैं, तो उसे दुख का पूर्ण अंत करने के लिए उत्साही, सतर्क और सती भिक्षु कहा जाता है।

---

51 एक मास्टर चोर (महा-कोरा सं. चोर)

"भिक्षुओं (साधुओं) में तीन कारक होते हैं, एक कुशल चोर घरों में सेंध लगाता है, धन लूटता है, डकैती करता है और राजमार्गों पर घात लगाता है। वे तीन कारक क्या हैं? यहाँ, एक कुशल चोर असमान परिस्थितियों, घने जंगलों और शक्तिशाली लोगों पर निर्भर करता है।"

(1) "और एक माहिर चोर किस प्रकार विषम परिस्थितियों पर निर्भर करता है? यहाँ, एक माहिर चोर उन नदियों पर निर्भर करता है जिन्हें पार करना कठिन होता है और ऊबड़-खाबड़ पहाड़ों पर। इस प्रकार एक माहिर चोर विषम परिस्थितियों पर निर्भर करता है।"

(2) "और एक माहिर चोर झाड़ियों पर कैसे निर्भर करता है? यहाँ, एक माहिर चोर गन्ने की झाड़ी, [154] पेड़ों की झाड़ी, एक छोटा जंगल, 407 या एक बड़े घने जंगल पर निर्भर करता है। इस तरह एक माहिर चोर झाड़ियों पर निर्भर करता है।

(3) "और एक माहिर चोर शक्तिशाली लोगों पर कैसे निर्भर करता है? यहाँ, एक माहिर चोर राजाओं या राजमंत्रियों पर निर्भर करता है। वह सोचता है: "यदि कोई मुझ पर किसी बात का आरोप लगाएगा तो ये राजा या राजमंत्री मामले को खारिज कर देंगे। यदि कोई उस पर किसी बात का आरोप लगाएगा, तो वे राजा या राजमंत्री मामले को खारिज कर देंगे। इसी तरह एक माहिर चोर शक्तिशाली लोगों पर निर्भर करता है।"

"इन तीन कारकों के होने से ही एक माहिर चोर घरों में सेंध लगाता है, धन लूटता है, डकैती करता है और राजमार्गों पर घात लगाकर हमला करता है।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त एक दुष्ट भिक्षु स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है, निंदनीय होता है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र होता है, और बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे तीन गुण क्या हैं? यहाँ, एक दुष्ट भिक्षु असमान, घने जंगलों और शक्तिशाली लोगों पर निर्भर रहता है।"

(1) "और एक दुष्ट भिक्षु विषमता पर कैसे निर्भर करता है? यहाँ, एक दुष्ट भिक्षु अधार्मिक शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्मों में संलग्न होता है। इसी प्रकार एक दुष्ट भिक्षु विषमता पर निर्भर करता है।"

(2) "और एक दुष्ट भिक्षु झाड़ियों पर कैसे निर्भर करता है? यहाँ, एक दुष्ट भिक्षु गलत दृष्टिकोण रखता है, एक चरमपंथी दृष्टिकोण अपनाता है। इसी प्रकार एक दुष्ट भिक्षु झाड़ियों पर निर्भर करता है।"

(3) "और एक दुष्ट भिक्षु शक्तिशाली लोगों पर कैसे निर्भर करता है? यहाँ, एक दुष्ट भिक्षु राजाओं या राजमंत्रियों पर निर्भर करता है। वह सोचता है: 'यदि कोई मुझ पर किसी बात का आरोप लगाए, तो ये राजा या राजमंत्री मामले को खारिज कर देंगे। यदि कोई उस पर किसी बात का आरोप लगाए, तो वे राजा या राजमंत्री मामले को खारिज कर देंगे।' इसी प्रकार एक दुष्ट भिक्षु शक्तिशाली लोगों पर निर्भर करता है। [155]

"इन तीन गुणों के कारण ही एक दुष्ट भिक्षु स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है, निंदनीय होता है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र होता है, और बहुत से पुण्य उत्पन्न करता है।"

दूसरा पचास

(6)I. ब्राह्मण

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

52 दो ब्राह्मण (1)

फिर दो वृद्ध, उम्रदराज, जीवन के अंतिम पड़ाव पर पहुँच चुके, एक सौ बीस वर्ष के दो ब्राह्मण भगवान (बुद्ध) के पास आए और उन्हें प्रणाम किया। प्रणाम और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त करने के बाद, वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"हम ब्राह्मण हैं। हे गुरु गौतम, जो एक सौ बीस वर्ष के वृद्ध हैं। हमने न तो कोई अच्छा और लाभकारी कार्य किया है और न ही अपने लिए कोई आश्रय बनाया है। हे गुरु गौतम, हमें उपदेश दें और ऐसा मार्गदर्शन करें जिससे हमारा दीर्घकालिक कल्याण और सुख प्राप्त हो!"

"हे ब्राह्मणों, तुम सचमुच बूढ़े हो चुके हो, उम्र के बोझ से दबे हो, जीवन के अंतिम पड़ाव पर पहुँच चुके हो, एक सौ बीस वर्ष के हो चुके हो, परन्तु तुमने न तो कोई अच्छा और लाभकारी कर्म किया है, न ही अपने लिए कोई आश्रय बनाया है। निश्चय ही यह संसार वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु से बह जाता है। परन्तु यद्यपि संसार वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु से बह जाता है, फिर भी जब कोई व्यक्ति इस दुनिया से चला जाता है, तो शारीरिक, वाणी और मानसिक संयम ही आश्रय, पनाहगाह, द्वीप, शरण और सहारा प्रदान करता है।"

जीवन बहता चला जाता है, जीवनकाल छोटा है,

वृद्धों के लिए कोई आश्रय नहीं है।

मृत्यु के इस खतरे को स्पष्ट रूप से देखते हुए,

व्यक्ति को ऐसे पुण्य कर्म करने चाहिए जो सुख प्रदान करें। 408

जब कोई इस जीवन से विदा होता है, तो

शरीर, वाणी और मन पर आत्म-नियंत्रण

और जीवित रहते हुए किए गए पुण्य कर्म ही

उसे सुख की ओर ले जाते हैं। [156]

---

53 दो ब्राह्मण (2)

फिर दो ब्राह्मण, जो वृद्ध, उम्रदराज, जीवन के अंतिम चरण में पहुँच चुके थे, जिनकी आयु एक सौ बीस वर्ष थी, भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे और उनसे कहा:

"हम ब्राह्मण हैं। हे गुरु गौतम, आप वृद्ध हैं... एक सौ बीस वर्ष के। लेकिन हमने न तो कोई अच्छा और लाभकारी कार्य किया है, न ही अपने लिए कोई आश्रय बनाया है। हे गुरु गौतम, हमें उपदेश दें और ऐसा मार्गदर्शन करें जिससे हमारा कल्याण और सुख दीर्घकाल तक बना रहे!"

"हे ब्राह्मणों, तुम सचमुच बूढ़े हो चुके हो, उम्र के बोझ से दबे हो, जीवन के अंतिम पड़ाव पर पहुँच चुके हो, एक सौ बीस वर्ष के हो चुके हो, परन्तु तुमने न तो कोई अच्छा और लाभकारी कर्म किया है, न ही अपने लिए कोई आश्रय बनाया है। निश्चय ही यह संसार वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु से जल रहा है। परन्तु यद्यपि संसार वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु से जल रहा है, फिर भी जब कोई इस दुनिया से विदा हो जाता है, तो शारीरिक, वाणी और मानसिक संयम ही आश्रय, पनाहगाह, द्वीप, शरण और सहारा प्रदान करता है।"

जब किसी के घर में आग लग जाती है,

तो बाहर निकाला गया बर्तन

ही उसके लिए उपयोगी होता है,

न कि वह बर्तन जो अंदर जल गया हो।

अतः, क्योंकि संसार

वृद्धावस्था और मृत्यु की ज्वाला से घिरा हुआ है, इसलिए

दान देकर इसकी भरपाई करनी चाहिए:

जो दिया जाता है, वह उचित रूप से वसूल हो जाता है। 409

जब कोई इस जीवन से विदा होता है, तो

शरीर, वाणी और मन पर आत्म-नियंत्रण

और जीवित रहते हुए किए गए पुण्य कर्म ही

उसे सुख प्रदान करते हैं।

---

54 एक ब्राह्मण

तब एक ब्राह्मण भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे कहा:

"गुरु गौतम, ऐसा कहा जाता है: 'प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान धम्म, प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान धम्म।' 420 धम्म किस प्रकार प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक, देखने के लिए आमंत्रित करने वाला, लागू करने योग्य, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किए जाने योग्य है?"

(1) “जो ब्राह्मण काम (राग) से उत्तेजित होकर, कामना से ग्रस्त होकर, मन में उसी का वास रखकर [157] स्वयं को, दूसरों को और दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा रखता है, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। परन्तु जब काम (राग) का त्याग हो जाता है, तो वह न तो स्वयं को, न दूसरों को और न ही दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा रखता है, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं करता। इसी प्रकार धम्म प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होता है।

(2) घृणा से भरा हुआ, घृणा से ग्रस्त, और घृणा से ग्रस्त मन वाला व्यक्ति स्वयं को, दूसरों को और दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा रखता है, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। परन्तु जब घृणा का त्याग हो जाता है, तो वह स्वयं को, दूसरों को या दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा नहीं रखता, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं करता। इसी प्रकार धम्म प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होता है।

(3) "जो व्यक्ति मोह से ग्रस्त है, जिसका मन मोह में डूबा हुआ है, वह स्वयं को, दूसरों को और दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा रखता है, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। परन्तु जब मोह का त्याग हो जाता है, तो वह स्वयं को, दूसरों को या दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा नहीं रखता, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं करता। इसी प्रकार धम्म प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक और दर्शन के लिए आमंत्रित करने वाला है, व्यावहारिक है, और ज्ञानियों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाने वाला है।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! उत्कृष्ट, गुरु गौतम! गुरु गौतम ने अनेक तरीकों से धम्म (मार्ग) को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग आकृतियाँ देख सकें। मैं अब गुरु गौतम, धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। गुरु गौतम मुझे आज से जीवन भर के लिए शरण लेने वाला गृहस्थ अनुयायी समझें।"

---

55. परिभजक (घूमने वाला तपस्वी)

तब एक ब्राह्मण तपस्वी भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे कहा:

"गुरु गौतम; ऐसा कहा जाता है: 'प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान धम्म, प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान धम्म। धम्म किस प्रकार प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक, दर्शन के लिए आमंत्रित करने वाला, व्यावहारिक और ज्ञानियों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाने वाला है?"

(1) “ब्राह्मण, जो काम (राग) से उत्तेजित होकर, चाहत से ग्रस्त होकर, मन में लीन होकर, अपने कष्ट, दूसरों के कष्ट, या दोनों के कष्ट का इरादा करता है, और मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। परन्तु जब काम (राग) का त्याग हो जाता है, तो वह अपने

कष्ट, दूसरों के कष्ट, या दोनों के कष्ट का इरादा नहीं करता, और उसे मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं होता। [158] काम (राग) से उत्तेजित होकर, काम (राग) से ग्रस्त होकर, मन में लीन होकर, देह, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त होता है। परन्तु जब काम (राग) का त्याग हो जाता है, तो वह देह, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त नहीं होता। काम (राग) से उत्तेजित होकर, काम (राग) से ग्रस्त होकर, मन में लीन होकर, अपने भले, दूसरों के भले, या दोनों के भले को सही-सही नहीं समझ पाता। परन्तु जब काम (राग) का त्याग हो जाता है, तो वह जो इसे वास्तव में अपने हित में, दूसरों के हित में और दोनों के हित में समझता है। हे ब्राह्मण, इसी मार्ग से धम्म प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होता है... और ज्ञानी व्यक्ति इसे स्वयं अनुभव कर सकते हैं।

(2) "घृणा से भरा हुआ, घृणा से अभिभूत..."

(3) जो व्यक्ति मोह से ग्रस्त होकर, अपने आप को, दूसरों को, या दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा रखता है, वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। परन्तु जब मोह का त्याग हो जाता है, तो वह अपने आप को, दूसरों को, या दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा नहीं रखता, और न ही उसे मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव होता है। जो व्यक्ति मोह से ग्रस्त होकर, अपने आप को, या दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा रखता है, वह शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त रहता है। परन्तु जब मोह का त्याग हो जाता है, तो वह शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त नहीं रहता। जो व्यक्ति मोह से ग्रस्त होकर, अपने आप को, दूसरों को, या दोनों को वास्तव में क्या भला है, यह नहीं समझ पाता। परन्तु जब मोह का त्याग हो जाता है, जब वह इसे त्याग देता है, तो वह समझता है कि यह वास्तव में उसका अपना भला है, दूसरों का भला है और दोनों का भला है। इसी तरह से धम्म प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक और देखने के लिए आमंत्रित करने वाला होता है, यह व्यावहारिक होता है और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाता है।

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

---

56 निब्बाना (निब्बूता)

तब ब्राह्मण जनुसोनी भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे कहा:

"गुरु गौतम, ऐसा कहा जाता है: 'प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाला निर्वाण, प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाला निर्वाण। निर्वाण किस प्रकार प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, तात्कालिक है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, लागू करने योग्य है, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जा सकता है?'" [159]

(1) "ब्राह्मण, जो काम (राग) से उत्तेजित होकर, काम (राग) में डूबा हुआ हो, और काम (राग) से ग्रस्त मन से, स्वयं को, दूसरों को, या दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा रखता है, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। परन्तु जब काम (राग) का त्याग हो जाता है, तो वह स्वयं को, दूसरों को, या दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा नहीं रखता, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं करता। इसी प्रकार निर्वाण प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होता है।"

(2) "घृणा से भरा हुआ, घृणा से ग्रस्त ...

(3) जो व्यक्ति मोह से ग्रस्त है, जिसका मन मोह में डूबा हुआ है, वह स्वयं को, दूसरों को, या दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा रखता है, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। परन्तु जब मोह का त्याग हो जाता है, तो वह स्वयं को, दूसरों को, या दोनों को कष्ट पहुँचाने का इरादा नहीं रखता, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं करता। इसी प्रकार निर्वाण प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होता है।

"हे ब्राह्मण, जब कोई कामवासना (राग) की पूर्णतः नाश, घृणा (घृणा) की पूर्णतः नाश और मोह (मोह) की पूर्णतः नाश का अनुभव करता है, तो इसी प्रकार निर्वाण प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होता है, तत्काल प्राप्त होता है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक होता है, और ज्ञानी व्यक्तियों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाता है।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... गुरु गौतम मुझे गृहस्थ अनुयायी समझें जो आज से जीवन भर के लिए शरण लेने आया है।"

---

57 जनसंख्या में कमी (पालोका)

फिर एक धनी ब्राह्मण भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे कहा:

"हे गुरु गौतम, मैंने वृद्ध ब्राह्मणों को सुना है जो उम्र के बोझ से दबे हुए हैं, गुरुओं के गुरु हैं, वे कहते हैं: 'पहले यह संसार इतना घनी आबादी वाला था कि ऐसा लगता था मानो लोगों के बीच कोई जगह ही न हो। गाँव, कस्बे और राजधानियाँ इतनी पास-पास थीं कि उनके बीच से मुर्गे उड़ सकते थे।' 411 हे गुरु गौतम, ऐसा क्यों है कि वर्तमान में लोगों की संख्या घट गई है, जनसंख्या में कमी देखी जा रही है, 412 और गाँव, [160] कस्बे, शहर और जिले लुप्त हो गए हैं?" 413

(1) "हे ब्राह्मण, वर्तमान में लोग अधर्म (पाप) में लिप्त हैं, अधर्मी लोभ से ग्रस्त हैं, और गलत धर्म से पीड़ित हैं। 414 परिणामस्वरूप, वे शस्त्र उठाकर एक दूसरे का वध करते हैं। अतः बहुत से लोग मरते हैं। यही कारण है कि वर्तमान में जनसंख्या में कमी आई है, जनसंख्या में गिरावट देखी जा रही है, और गाँव, कस्बे, शहर और जिले लुप्त हो गए हैं:

(2) “फिर, वर्तमान में लोग अधर्म (पाप) में लिप्त हैं, अधर्मी लोभ से ग्रस्त हैं, गलत धर्म से पीड़ित हैं। जब ऐसा होता है, तो पर्याप्त वर्षा नहीं होती। परिणामस्वरूप, अकाल पड़ता है, अनाज की कमी हो जाती है; फसलें खराब होकर भूसे में बदल जाती हैं। इसलिए बहुत से लोग मर जाते हैं। यही एक और कारण है कि वर्तमान में लोगों की संख्या में गिरावट आई है, जनसंख्या में कमी देखी जा रही है, और गाँव, कस्बे, शहर और जिले लुप्त हो गए हैं।”

(3) "फिर, वर्तमान में लोग अधर्म (पाप) में लिप्त हैं, अधर्मी लोभ से ग्रस्त हैं, गलत धर्म से पीड़ित हैं। जब ऐसा होता है, तो यक्ष जंगली अमानवीय आत्माओं (अमानुस्से) को मुक्त कर देते हैं। 415 इसलिए बहुत से लोग मर जाते हैं। यही एक और कारण है कि वर्तमान में लोगों की संख्या घट गई है, जनसंख्या में कमी आई है, और गाँव, कस्बे, शहर और जिले लुप्त हो गए हैं।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

---

58 वच्छगोत्ता

तब तपस्वी वच्छगोत्त भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे और उनसे बोले:

"गुरु गौतम, मैंने सुना है: 'संन्यासी गौतम कहते हैं: "भिक्षा केवल मुझे ही दी जानी चाहिए, [161] दूसरों को नहीं; भिक्षा केवल मेरे शिष्यों को ही दी जानी चाहिए, दूसरों के शिष्यों को नहीं। केवल मुझे दी गई भिक्षा ही फलदायी है, दूसरों को दी गई भिक्षा नहीं; केवल मेरे शिष्यों को दी गई भिक्षा ही फलदायी है, दूसरों के शिष्यों को दी गई भिक्षा नहीं।"' क्या जो लोग ऐसा कहते हैं वे गुरु गौतम के कहे हुए वचन को ही बताते हैं और उन्हें गलत तरीके से प्रस्तुत नहीं करते? क्या वे धम्म (मार्ग) के अनुसार व्याख्या करते हैं ताकि उन पर कोई उचित आलोचना या निंदा का आधार न बने? 416 क्योंकि हम गुरु गौतम को गलत तरीके से प्रस्तुत नहीं करना चाहते।"

हे वच्छा, जो कहते हैं कि तपस्वी गौतम कहते हैं: “दान केवल मुझे ही देना चाहिए... केवल मेरे शिष्यों को दिया गया दान ही फलदायी होता है, दूसरों के शिष्यों को दिया गया दान नहीं”, वे मेरे कहे हुए वचन को नहीं दोहराते, बल्कि असत्य और असत्य कथन से मेरा गलत अर्थ निकालते हैं। जो किसी दूसरे को दान देने से रोकता है, वह तीन लोगों के लिए बाधा और ठोकर उत्पन्न करता है। वे तीन कौन हैं? वह दानकर्ता के पुण्य प्राप्ति में बाधा उत्पन्न करता है, दान प्राप्त करने वालों को दान मिलने से रोकता है, और इस प्रकार वह स्वयं को भी अपंग और घायल कर लेता है। जो किसी दूसरे को दान देने से रोकता है, वह इन तीनों लोगों के लिए बाधा और ठोकर उत्पन्न करता है।

लेकिन, वच्छा, मैं कहता हूँ कि यदि कोई बर्तन धोने का पानी कूड़ेदान या गटर में इस विचार से भी फेंक दे कि ‘यहाँ के जीव इससे अपना जीवन यापन कर सकें’, तो भी पुण्य प्राप्त होता है। फिर मनुष्यों को दान देने से कितना अधिक पुण्य प्राप्त होता है! परन्तु मैं कहता हूँ कि

सदाचारी व्यक्ति को दिया गया दान अनैतिक व्यक्ति को दिए गए दान से अधिक फलदायी होता है। और सबसे योग्य प्राप्तकर्ता वह है जिसने पाँचों गुणों का त्याग कर पाँचों गुणों को धारण किया हो।

"उसने किन पाँच कारकों का त्याग किया है? कामुक (यौन) इच्छा, द्वेष, सुस्ती [162] और उनींदापन, बेचैनी और पश्चाताप, और संदेह। ये वे पाँच कारक हैं जिनका उसने त्याग किया है।"

और उनमें कौन से पाँच गुण मौजूद हैं? सद्गुणपूर्ण आचरण, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), पन्ना (दिव्य ज्ञान), मुक्ति, और प्रशिक्षण से परे मुक्ति का ज्ञान और दर्शन। ये पाँच गुण उनमें मौजूद हैं।

"मैं इस प्रकार कहता हूँ कि जो व्यक्ति पाँचों गुणों का त्याग कर पाँचों गुणों को धारण करता है, उसे जो कुछ भी दिया जाता है वह बहुत फलदायी होता है।"

किसी भी प्रकार के पशुओं में,

चाहे वे काले, सफेद, लाल, सुनहरे,

चित्तीदार, एकसमान या कबूतर के रंग के हों,

पालतू बैल

वही होता है जो भार वहन कर सकता है,

बलवान होता है और अच्छी गति से आगे बढ़ता है।

वे बोझ को सीधे उसी पर लादते हैं;

उन्हें उसके रंग से कोई लेना-देना नहीं होता।

इसी प्रकार, मनुष्यों में भी,

किसी भी प्रकार के पुनर्जन्म में—

चाहे वे क्षत्रिय हों, ब्राह्मण हों, वेस्स हों,

शुद्ध, चांडल हों या सफाईकर्मी हों—

किसी भी प्रकार के लोगों में,

सुसंस्कृत और अच्छे व्यवहार वाला व्यक्ति जन्म लेता है:

वह जो धम्म में दृढ़, आचरण में सदाचारी,

वाणी में सत्यनिष्ठ, नैतिक लज्जा से युक्त होता है;

जिसने पुनर्जन्म और मृत्यु का त्याग कर दिया है,

ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) में परिपूर्ण है,

बोझ से मुक्त, अनासक्त,

जिसने अपना कार्य पूर्ण कर लिया है, जो दोषों से मुक्त है;

जो संसार की सभी चीजों से परे जाकर

अनासक्ति के द्वारा निर्वाण प्राप्त कर चुका है: उस निर्मल क्षेत्र में बोया गया

अर्पण वास्तव में विशाल होता है ।

अज्ञानी,

बुद्धिहीन, मंदबुद्धि और अज्ञानी लोग

पवित्र व्यक्तियों की सेवा नहीं करते

, बल्कि अपना दान बाहर के लोगों को देते हैं।

लेकिन जो लोग पवित्र व्यक्तियों,

ऋषि माने जाने वाले बुद्धिमान व्यक्तियों की सेवा करते हैं,

और जिनकी सुगत (भगवान बुद्ध) में आस्था

गहरी और दृढ़ है,

वे देवलोक जाते हैं

या अच्छे परिवार में जन्म लेते हैं।

क्रमिक चरणों में आगे बढ़ते हुए,

वे बुद्धिमान व्यक्ति निर्वाण प्राप्त करते हैं। [163]

---

59 टिकान्ना

तब ब्राह्मण टिकन्ना भगवान (बुद्ध) के पास पहुंचा और

फिर उनसे अभिवादन का आदान-प्रदान करने के बाद, एक तरफ बैठे ब्राह्मण टिकन्ना ने भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में, उन ब्राह्मणों की प्रशंसा की जिन्होंने त्रिविध ज्ञान में महारत हासिल की थी: "ये वे ब्राह्मण हैं जो त्रिविध ज्ञान में निपुण हैं; ये वे ब्राह्मण हैं जो त्रिविध ज्ञान में निपुण हैं।"

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "पर हे ब्राह्मण, ब्राह्मण उस ब्राह्मण का वर्णन कैसे करते हैं जो त्रिविध ज्ञान का ज्ञाता हो?"

"हे गौतम गुरु, यहाँ एक ब्राह्मण हैं जो अपने माता-पिता दोनों की ओर से श्रेष्ठ कुल के हैं, शुद्ध वंश के हैं, और सातवीं पीढ़ी तक उनकी वंशावली निर्विवाद और निष्कलंक है। वे भजनों के पाठकर्ता और संरक्षक हैं, तीनों वेदों के शब्दकोश, अनुष्ठान, ध्वनिविज्ञान और

व्युत्पत्ति के ज्ञाता हैं, और पाँचवें वेद के रूप में इतिहास के ज्ञाता हैं; भाषा विज्ञान और व्याकरण में निपुण, वे प्राकृतिक दर्शन और महान पुरुष के लक्षणों में पूर्णतः पारंगत हैं। ब्राह्मण इसी प्रकार से त्रिविध ज्ञान के ज्ञाता ब्राह्मण का वर्णन करते हैं।"

"वरुद्ध के अनुशासन में त्रिविध ज्ञान का पारंगत ब्राह्मण, उस ब्राह्मण से बिल्कुल भिन्न होता है जो ब्राह्मणों द्वारा वर्णित त्रिविध ज्ञान का पारंगत होता है।"

"पर किस प्रकार? गुरु गौतम, क्या कोई व्यक्ति भगवान की विद्या में त्रिविध ज्ञान का स्वामी बन सकता है? यदि गुरु गौतम मुझे धम्म का ऐसा उपदेश दें जिससे यह स्पष्ट हो जाए कि भगवान की विद्या में त्रिविध ज्ञान का स्वामी कैसे बना जाता है, तो यह अच्छा होगा।"

"तो फिर, ब्राह्मण, ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

“जी जी,” ब्राह्मण टिकन्ना ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

हे ब्राह्मण, इंद्रिय सुखों से विरक्त और अकुशल अवस्थाओं से विरक्त होकर भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल होते हैं। विचार और चिंतन के शांत होने पर वह द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त होता है, जिसमें विचार और चिंतन नहीं होते। परमानंद (पीति) के भी लुप्त होने पर वह समभाव में, सती और सचेत होकर, पूर्णतः बोध करते हुए, शरीर सहित सुख (सुख) का अनुभव करता है; वह तृतीय ध्यान (सतीमोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसके बारे में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव में, सती और सुखी है।' सुख और दुख के त्याग के साथ, और पहले से ही आनंद और निराशा के बीत जाने के साथ; [164] वह चौथे ध्यान (सतीव्र अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जो न तो कष्टदायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) द्वारा ध्यान (सती/ध्यान) का शुद्धिकरण होता है।

(1) जब उसका मन इस प्रकार आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) होता है, शुद्ध, निर्मल, दोषरहित, लचीला, स्थिर और अविचलित होता है, तब वह उसे अपने पूर्व जन्मों के स्मरण के ज्ञान की ओर निर्देशित करता है। वह अपने अनेक पूर्व जन्मों का स्मरण करता है, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म, चार जन्म, पाँच जन्म, दस जन्म, बीस जन्म, तीस जन्म, चालीस जन्म, पचास जन्म, सौ जन्म, हजार जन्म, एक लाख जन्म, कई युगों का विश्व-विनाश, कई युगों का विश्व-विकास, कई युगों का विश्व-विनाश और विश्व-विकास, इस प्रकार: 'वहाँ मेरा ऐसा नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मेरा ऐसा अनुभव था।' सुख-दुख का ऐसा ही मेरा जीवनकाल था; वहाँ से निकलकर मेरा पुनर्जन्म कहीं और हुआ, और वहाँ भी मेरा नाम ऐसा ही रखा गया, मैं ऐसे कुल का था, मेरा रूप-रंग ऐसा था, मेरा भोजन ऐसा था, सुख-दुख का ऐसा ही मेरा अनुभव था, मेरा जीवनकाल ऐसा ही था; वहाँ से निकलकर मेरा पुनर्जन्म यहाँ हुआ। इस प्रकार वह अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके स्वरूप और विवरणों सहित याद करता है।

'यह उनके द्वारा प्राप्त किया गया पहला सच्चा ज्ञान है। अज्ञान का निवारण हुआ है, सच्चे ज्ञान का उदय हुआ है; अंधकार का निवारण हुआ है, प्रकाश का उदय हुआ है, जैसा कि तब होता है जब कोई सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी रहता है।'

(2) "जब उसका मन इस प्रकार आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) होता है, शुद्ध, निर्मल, दोषरहित, लचीला, स्थिर और अविचलित होता है, तो वह उसे प्राणियों के मृत्यु और पुनर्जन्म के ज्ञान की ओर निर्देशित करता है। दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मानवीय दृष्टि से श्रेष्ठ है, वह प्राणियों को मृत्यु और पुनर्जन्म लेते हुए, हीन और श्रेष्ठ, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली देखता है, और वह समझता है कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है: 'ये प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से दुराचार किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा की, गलत मत रखा और गलत मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं; परन्तु ये प्राणी जिन्होंने शरीर से अच्छे आचरण किए, जिन लोगों ने श्रेष्ठ लोगों की निंदा नहीं की, जिन्होंने सही दृष्टिकोण रखा और सही दृष्टिकोण पर आधारित कर्म किए, वे शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय, एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं। इस प्रकार, शुद्ध और मनुष्य से परे दिव्य दृष्टि से, वे प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए, हीन और श्रेष्ठ, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, देखते हैं और समझते हैं कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं।

"यह उनके द्वारा प्राप्त किया गया दूसरा सच्चा ज्ञान है। अज्ञान का निवारण हुआ है, सच्चे ज्ञान का उदय हुआ है; अंधकार का निवारण हुआ है, प्रकाश का उदय हुआ है, जैसा कि तब होता है जब कोई सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी रहता है।"

(3) "जब उसका मन इस प्रकार आत्म-मग्न (समाहित/समाधि में) होता है, शुद्ध, निर्मल, दोषरहित, लचीला, स्थिर और अविचलित होता है, तो वह उसे दोषों के नाश के ज्ञान की ओर निर्देशित करता है। वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख है'; वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का मूल है'; वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का निवारण है'; वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।'" वह वास्तविकता को समझता है: 'ये हैं दोष'; वह वास्तविकता को समझता है: 'यह दोषों का मूल है'; वह वास्तविकता को समझता है: 'यह दोषों का निवारण है'; वह वास्तविकता को समझता है: 'यह दोषों के निवारण की ओर ले जाने वाला मार्ग है।'

जब वह इस प्रकार ज्ञान प्राप्त करता है और देखता है, तो उसका मन कामुकता के दोष से, अस्तित्व के दोष से (भाव/पुनर्जन्म का कारण) और अज्ञान के दोष से मुक्त हो जाता है। जब वह मुक्त हो जाता है, तब उसे यह ज्ञान प्राप्त होता है: 'यह मुक्त हो गया है।' वह समझता है: 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य जीवन जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आने का कोई अधिकार नहीं है।'

"यह उनके द्वारा प्राप्त किया गया तीसरा सच्चा ज्ञान है। अज्ञान का निवारण हुआ है, सच्चे ज्ञान का उदय हुआ है; अंधकार का निवारण हुआ है, प्रकाश का उदय हुआ है, जैसा कि तब होता है जब कोई सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी रहता है।"

जिसका सद्गुण न डगमगाता है,

जो सजग और ध्यानमग्न है,

जिसका मन एकाग्र

(एकग्ग संस्कृत: एकग्र) है, जो पूरी तरह से आत्म-मग्न (समाहित) है;

"ज्ञानी, अंधकार का निवारण करने वाला,

त्रिविध ज्ञान का वाहक, मृत्यु पर विजय प्राप्त करने वाला;

जिसे सभी का त्याग करने वाला,

देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों का उपकारक कहा जाता है।"

"तीनों ज्ञानों से परिपूर्ण,

जो मोह से रहित होकर निवास करते हैं;

लोग उनकी पूजा करते हैं, बुद्ध

गौतम, जो अपना अंतिम शरीर धारण करते हैं।"

जो अपने पिछले जन्मों के निवासों को जानता है,

जो स्वर्ग और दुख के लोक को देखता है,

और जिसने पुनर्जन्म के विनाश को प्राप्त कर लिया है,

वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) में निपुण ऋषि है। 419

"इन तीन प्रकार के ज्ञान के माध्यम से ही

व्यक्ति त्रिगुण ज्ञान प्राप्त ब्राह्मण बनता है।

मैं उसे त्रिगुण ज्ञान का स्वामी कहता हूँ,

न कि उस दूसरे को जो मंत्रों का उच्चारण करता है।"

"हे ब्राह्मण, इसी प्रकार से व्यक्ति परमपिता के अनुशासन में त्रिविध ज्ञान का स्वामी बन जाता है।"

"गुरु गौतम, जो भगवान की विद्या में त्रिविध ज्ञान के ज्ञाता हैं, वे ब्राह्मणों की विद्या में त्रिविध ज्ञान के ज्ञाता से बिल्कुल भिन्न हैं। और ब्राह्मणों की विद्या में त्रिविध ज्ञान का ज्ञाता भगवान की विद्या में त्रिविध ज्ञान के ज्ञाता के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं है।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

---

60 जानूसोनी

तब ब्राह्मण जनुसोनी भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे कहा:

"हे गौतम गुरु, जिसके पास भी कोई यज्ञ, स्मृति भोज, भोग-विलास या दान करने के लिए कुछ हो, वह उसे उन ब्राह्मणों को दान कर दे जो त्रिविध ज्ञान में पारंगत हों।" 420

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "पर हे ब्राह्मण, ब्राह्मण उस ब्राह्मण का वर्णन कैसे करते हैं जो त्रिविध ज्ञान का ज्ञाता हो?"

"हे गौतम गुरु, यहाँ एक ब्राह्मण दोनों तरफ से उत्तम कुल का है... [जैसा कि 3:58 में है]... और महान पुरुष के लक्षणों में निपुण है। ब्राह्मण इसी प्रकार त्रिविध ज्ञान के स्वामी का वर्णन करते हैं।"

"वरिष्ठ के अनुशासन में त्रिविध ज्ञान के पारखी ब्राह्मण, ब्राह्मणों द्वारा वर्णित ब्राह्मण से बिल्कुल भिन्न होता है।"

"पर किस प्रकार से? गुरु गौतम, क्या कोई व्यक्ति भगवान की विद्या में त्रिविध ज्ञान का स्वामी होता है? यदि गुरु गौतम मुझे धम्म का ऐसा उपदेश दें जिससे यह स्पष्ट हो जाए कि भगवान की विद्या में त्रिविध ज्ञान का स्वामी कैसे बना जाता है, तो यह अच्छा होगा।"

"तो फिर, ब्राह्मण, ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

“जी हां,” ब्राह्मण जानूसोनी ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"यहाँ, हे ब्राह्मण, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... [सभी 3:58 के अनुसार, नीचे तक:] [167]... यह उसके द्वारा प्राप्त तीसरा सच्चा ज्ञान है। अज्ञान का निवारण हुआ है, सच्चे ज्ञान का उदय हुआ है; अंधकार का निवारण हुआ है, प्रकाश का उदय हुआ है, जैसा कि तब होता है जब कोई सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी रहता है।"

"सद्‌गुणों और नियमों का पालन करने में परिपूर्ण,

दृढ़ निश्चयी और संयमी,

जिसका मन एकाग्र

(एकगग्ग संस्कृत: एकग्र) और पूर्णतः आत्म-मग्न (समाहित) हो।"

जो अपने पिछले जन्मों के निवासों को जानता है,

जो स्वर्ग और दुख के लोक को देखता है,

और पुनर्जन्म के विनाश तक पहुँच चुका है,

वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) में परिपूर्ण ऋषि है। [168]

"इन तीन प्रकार के ज्ञान के माध्यम से ही

व्यक्ति त्रिगुण ज्ञान प्राप्त ब्राह्मण बनता है।

मैं उसे त्रिगुण ज्ञान का स्वामी कहता हूँ,

न कि उस दूसरे को जो मंत्रों का उच्चारण करता है।"

"हे ब्राह्मण, इसी प्रकार से व्यक्ति परमपिता के अनुशासन में त्रिविध ज्ञान का स्वामी बन जाता है।"

"गुरु गौतम की विद्या में त्रिविध ज्ञान के ज्ञाता, ब्राह्मणों की विद्या में त्रिविध ज्ञान के ज्ञाता से बिल्कुल भिन्न होते हैं। और ब्राह्मणों की विद्या में त्रिविध ज्ञान के ज्ञाता, गुरु गौतम की विद्या में त्रिविध ज्ञान के ज्ञाता के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं होते।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

---

61 संगरवा

तब ब्राह्मण संगरव भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। फिर एक तरफ बैठकर ब्राह्मण संगरव ने भगवान (बुद्ध) से यह कहा:

"गुरु गौतम, हम ब्राह्मण यज्ञ करते हैं और दूसरों को भी यज्ञ करने के लिए प्रेरित करते हैं। स्वयं यज्ञ करने वाला और दूसरों को यज्ञ करने के लिए प्रेरित करने वाला, दोनों ही पुण्य कर्म करते हैं, जो अनेक लोगों के लिए लाभकारी होता है, अर्थात् यज्ञ पर आधारित कर्म। परन्तु जो अपने परिवार को त्यागकर संन्यासी जीवन में प्रवेश करता है, वह केवल स्वयं को ही वश में करता है, केवल स्वयं को ही शांत करता है और केवल स्वयं को ही निर्वाण की ओर ले जाता है। ऐसे में, वह पुण्य कर्म करता है, जो केवल एक व्यक्ति के लिए लाभकारी होता है, अर्थात् संन्यासी जीवन में प्रवेश करने पर आधारित कर्म।"

"तो फिर, ब्राह्मण, मैं इस विषय पर आपसे प्रश्न करूँगा। आप अपनी इच्छानुसार उत्तर दें। आपका क्या विचार है, ब्राह्मण? यहाँ, तथागत (बुद्ध) संसार में प्रकट होते हैं, एक अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण, सौभाग्यशाली, संसार के ज्ञाता, मनुष्यों को वश में करने में अद्वितीय प्रशिक्षक, देवों और मनुष्यों के गुरु, एक प्रबुद्ध, एक भगवान (बुद्ध)। वे कहते हैं: 'आओ, यही मार्ग है, यही

तरीका है। इसके अनुसार अभ्यास करते हुए, मैंने स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की अद्वितीय पराकाष्ठा का अनुभव किया है और इसे दूसरों को भी बताया है। आओ, तुम भी इसी प्रकार अभ्यास करो। इसके अनुसार अभ्यास करते हुए, तुम भी प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की अद्वितीय पराकाष्ठा का अनुभव करोगे और उसमें निवास करोगे।" इस प्रकार शिक्षक इस धम्म का उपदेश देते हैं और अन्य लोग [169] तदनुसार अभ्यास करते हैं। ऐसे सैकड़ों, हजारों, लाखों लोग हैं जो ऐसा करते हैं। आपका क्या विचार है? जब ऐसा है, तो क्या भिक्षु बनने का वह कार्य एक पुण्यकारी अभ्यास है जो एक व्यक्ति तक सीमित है या अनेक लोगों तक?

"जब ऐसा हो, तो गुरु गौतम, यह एक पुण्यकारी अभ्यास है जो कई लोगों तक फैलता है, अर्थात् यह भिक्षु बनने की दिशा में आगे बढ़ने पर आधारित है।"

यह सुनकर पूज्य आनंद ने ब्राह्मण सहगारव से कहा, "हे ब्राह्मण, इन दोनों प्रथाओं में से कौन सी आपको अधिक सरल और कम हानिकारक लगती है, और कौन सी अधिक फलदायी और लाभकारी है?"

तब ब्राह्मण सहगारव ने पूज्य आनंद से कहा, "मैं गुरु गौतम और गुरु आनंद को आदर और प्रशंसा के योग्य मानता हूँ।" 422

दूसरी बार पूज्य आनंद ने ब्राह्मण से कहा, "ब्राह्मण, मैं आपसे यह नहीं पूछ रहा हूँ कि आप किसे आदर और प्रशंसा के योग्य मानते हैं। मैं आपसे यह पूछ रहा हूँ कि इन दोनों प्रथाओं में से कौन सी आपको सरल, कम हानिकारक और अधिक फलदायी लगती है?"

लेकिन दूसरी बार ब्राह्मण सहगारवा ने उत्तर दिया: "मैं गुरु गौतम और गुरु आनंद को आदर और प्रशंसा के योग्य मानता हूँ।"

तीसरी बार पूज्य आनंद ने ब्राह्मण से कहा: "ब्राह्मण, मैं आपसे यह नहीं पूछ रहा हूँ कि आप किसे आदर और प्रशंसा के योग्य मानते हैं। मैं आपसे यह पूछ रहा हूँ कि इन दोनों प्रथाओं में से कौन सी आपको सरल और कम हानिकारक लगती है, और साथ ही अधिक फलदायी और लाभकारी भी है?"

लेकिन तीसरी बार ब्राह्मण सहगारव ने उत्तर दिया: "मैं गुरु गौतम और गुरु आनंद को आदर और प्रशंसा के योग्य मानता हूँ।" [170]

तब भगवान (बुद्ध) ने सोचा, "तीसरी बार भी ब्राह्मण सहगारव, आनंद द्वारा पूछे गए एक उचित प्रश्न का उत्तर देने में हिचकिचा रहा है। मुझे उसे छोड़ देना चाहिए।" तब भगवान (बुद्ध) ने ब्राह्मण सहगारव से कहा, "हे ब्राह्मण, आज राजमहल में जब राजा के दल एकत्रित होकर बैठे थे, तब उनके बीच क्या बातचीत हुई?"

"बातचीत इस प्रकार हुई। गुरु गौतम ने कहा: 'पहले भिक्षुओं की संख्या कम थी, लेकिन अलौकिक मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) प्रदर्शित करने वाले भिक्षु अधिक थे। लेकिन अब भिक्षुओं की संख्या अधिक है, लेकिन अलौकिक मानसिक शक्ति प्रदर्शित करने वाले भिक्षु कम हैं।' आज राजा के दल के बीच यही चर्चा हुई।"

"हे ब्राह्मण, तीन प्रकार के चमत्कार होते हैं। वे कौन से तीन हैं? मानसिक शक्ति का चमत्कार (जादू/इद्धि), मन पढ़ने का चमत्कार और शिक्षा का चमत्कार। 423"

(1) "हे ब्राह्मण, मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का चमत्कार क्या है? यहाँ, एक भिक्षु अनेक प्रकार की मानसिक शक्तियों (जादू/इद्धि) का प्रयोग करता है: एक होकर वह अनेक हो जाता है; अनेक होकर वह एक हो जाता है; वह प्रकट होता है और लुप्त हो जाता है; वह बिना किसी अवरोध के दीवार, प्राचीर, पर्वत के आर-पार ऐसे चला जाता है मानो अंतरिक्ष में; वह पृथ्वी में ऐसे गोता लगाता है मानो वह जल हो; वह जल पर ऐसे चलता है मानो वह पृथ्वी हो, बिना डूबे; पालथी मारकर वह पक्षी की तरह अंतरिक्ष में विचरण करता है; वह अपने हाथ से इतने शक्तिशाली और बलिष्ठ चंद्रमा और सूर्य को स्पर्श करता है और सहलाता है; वह ब्रह्म जगत के समान सुंदर शरीर पर महारत हासिल करता है। इसे ही मानसिक शक्ति का चमत्कार कहते हैं।"

(2) "और हे ब्राह्मण, मन-पढ़ने का चमत्कार क्या है? एक ऐसा व्यक्ति है जो किसी संकेत के माध्यम से, 24 यह घोषणा करता है: 'तुम्हारा विचार ऐसा है, तुम ऐसा सोच रहे हो, तुम्हारा मन ऐसी अवस्था में है।' और चाहे वह अनेक घोषणाएँ करे, वे ठीक-ठीक वैसी ही होती हैं, अन्यथा नहीं।"

"फिर भी, कोई व्यक्ति किसी संकेत के आधार पर [मन की स्थिति] घोषित नहीं करता, [171] बल्कि वह लोगों, आत्माओं या देवताओं (देवदूतों) की [बोलने की] आवाज़ सुनता है और फिर घोषणा करता है: 'तुम्हारा विचार ऐसा है, तुम ऐसा सोच रहे हो, तुम्हारा मन ऐसी अवस्था में है। और भले ही वह कई घोषणाएँ करे, वे बिलकुल वैसी ही होती हैं, अन्यथा नहीं।"

"फिर, कोई व्यक्ति किसी चिह्न के आधार पर या लोगों, आत्माओं या देवताओं (देवदूतों) की आवाज़ सुनकर [मन की स्थिति] की घोषणा नहीं करता, बल्कि वह किसी विषय पर विचार और विश्लेषण करते समय विचारों के प्रसार की आवाज़ सुनता है और फिर घोषणा करता है: 'आपका विचार ऐसा है, आप ऐसा सोच रहे हैं, आपका मन ऐसी अवस्था में है।' और भले ही वह कई घोषणाएँ करे, वे बिल्कुल वैसी ही होती हैं, अन्यथा नहीं।"

"फिर, कोई व्यक्ति किसी चिह्न के आधार पर, या लोगों, आत्माओं, या देवताओं (देवदूतों) की [भाषण देने की] आवाज़ सुनकर, या किसी विषय पर विचार और विश्लेषण करते समय विचारों के प्रसार की आवाज़ सुनकर [मन की स्थिति] की घोषणा नहीं करता, बल्कि वह अपने स्वयं के मन से उस व्यक्ति के मन को ग्रहण करता है जिसने बिना विचार और विश्लेषण के समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त कर ली है और वह समझ जाता है: 'इस व्यक्ति की मानसिक गतिविधियाँ इस प्रकार व्यवस्थित हैं कि इसके तुरंत बाद वह यह विचार करेगा। 426 और भले ही वह कई घोषणाएँ करे, वे ठीक वैसी ही होती हैं, अन्यथा नहीं। इसे मन-पढ़ने का चमत्कार कहा जाता है।"

(3) "हे ब्राह्मण, उपदेश का चमत्कार क्या है? यहाँ, कोई दूसरों को इस प्रकार उपदेश देता है: 'इस तरह सोचो, उस तरह नहीं! इस पर ध्यान दो, उस पर नहीं! इसे छोड़ दो और उसमें प्रवेश करो और उसमें निवास करो!' यही उपदेश का चमत्कार कहलाता है।" 427

"हे ब्राह्मण, ये तीन प्रकार के आश्चर्य हैं। इन तीनों आश्चर्यों में से कौन सा आश्चर्य आपको सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ लगता है?"

"इनमें से, हे गुरु गौतम, जब कोई व्यक्ति इस चमत्कार का प्रदर्शन करता है, जिसके द्वारा वह विभिन्न प्रकार की मानसिक शक्तियों का प्रयोग करता है... ब्रह्म जगत तक शरीर पर महारत हासिल करता है, तो केवल वही व्यक्ति इस चमत्कार का अनुभव करता है और यह केवल उसी को प्राप्त होता है। यह चमत्कार मुझे किसी जादू की चाल जैसा लगता है।"

"हे गुरु गौतम, जब कोई व्यक्ति इस चमत्कार का प्रदर्शन करता है, जिसके द्वारा वह किसी संकेत के आधार पर दूसरे की मनस्थिति का वर्णन करता है... लोगों, आत्माओं या देवताओं (देवदूतों) की आवाज़ सुनकर... जब वह किसी विषय पर विचार और विश्लेषण कर रहा होता है, तब विचारों के प्रसार की आवाज़ सुनकर... अपने मन से उस व्यक्ति के मन को समाहित करके जिसने समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त कर ली है, जो विचार और विश्लेषण से रहित है, जिससे वह समझता है: [172] 'इस व्यक्ति की मानसिक गतिविधियाँ इस प्रकार व्यवस्थित हैं कि इसके तुरंत बाद वह यह विचार करेगा। और, भले ही वह कई घोषणाएँ करे, वे ठीक वैसी ही होती हैं, अन्यथा नहीं। फिर से, केवल वही व्यक्ति जो इस चमत्कार का प्रदर्शन करता है, इसका अनुभव करता है और यह केवल उसी को घटित होता है। यह चमत्कार भी मुझे एक जादुई चाल जैसा लगता है।"

"परन्तु, हे गौतम गुरु, जब कोई व्यक्ति इस चमत्कार का प्रदर्शन करता है और दूसरों को इस प्रकार निर्देश देता है: 'इस तरह सोचो, उस तरह नहीं! इस पर ध्यान दो, उस पर नहीं! इसे त्याग दो और उसमें प्रवेश करो और निवास करो!'— यह चमत्कार मुझे उन तीनों चमत्कारों में सबसे उत्कृष्ट और उदात्त लगता है।"

यह विस्मयकारी और अद्भुत है। हे गुरु गौतम, उन्होंने इसे कितनी खूबसूरती से व्यक्त किया है! हम गुरु गौतम को इन तीन चमत्कारों को करने में सक्षम मानते हैं। क्योंकि गुरु गौतम अनेक प्रकार की मानसिक शक्तियों (जादू/इद्धि) का प्रयोग करते हैं... शरीर से लेकर ब्रह्म जगत तक, वे शरीर पर पूर्ण अधिकार रखते हैं। गुरु गौतम अपने मन से समाधि (स्व-लीनता/समाधि) प्राप्त व्यक्ति के मन को समाहित कर लेते हैं, जो विचार और परीक्षा से रहित होता है, और वे समझते हैं: 'इस व्यक्ति की मानसिक गतिविधियाँ इस प्रकार हैं कि इसके तुरंत बाद वह यह विचार सोचेगा।' और गुरु गौतम [दूसरों को] इस प्रकार निर्देश देते हैं: 'इस तरह सोचो, उस तरह नहीं! इस पर ध्यान दो, उस पर नहीं! इस (विचार) को त्याग दो और उसमें प्रवेश करो और लीन हो जाओ!'

"निश्चित रूप से, ब्राह्मण, आपके शब्द ताक-झांक और दखलंदाजी भरे हैं। 428 फिर भी, मैं आपको उत्तर दूंगा। मैं अनेक प्रकार की मानसिक शक्तियों (जादू/इद्धि) का प्रयोग करता हूँ... ब्रह्म जगत तक शरीर पर मेरा पूर्ण अधिकार है। मैं अपने मन से उस व्यक्ति के मन

को समाहित कर लेता हूँ जिसने समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर ली है जो विचार और परीक्षा से रहित है, जिससे मैं समझ जाता हूँ: 'इस व्यक्ति की मानसिक गतिविधियाँ इस प्रकार हैं कि इसके तुरंत बाद वह यह विचार सोचेगा।' और मैं [दूसरों को] इस प्रकार निर्देश देता हूँ: 'इस तरह सोचो, उस तरह नहीं! इस पर ध्यान दो, उस पर नहीं! इस (विचार) को त्याग दो और उसमें प्रवेश करो और लीन हो जाओ!'"

लेकिन, गुरु गौतम, क्या गुरु गौतम के अलावा कोई और भिक्षु है जो इन तीन चमत्कारों को कर सकता है?

“यहाँ केवल एक सौ, दो सौ, तीन सौ, चार सौ या पाँच सौ भिक्षु ही नहीं हैं, बल्कि इससे भी अधिक हैं जो इन तीन चमत्कारों को कर सकते हैं।” “पर वे भिक्षु इस समय कहाँ निवास कर रहे हैं?” [173] “यहाँ, ब्राह्मण, भिक्षुओं के इस संघ में।” “उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... गुरु गौतम मुझे गृहस्थ अनुयायी समझें जो आज से जीवन भर के लिए शरण में आया है।”

---

(7)II. महावग्गो (महावग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

62 संप्रदायवादी (तित्थयातनादिसुत्तम)

"भिक्षुओं (मठवासियों), ये तीन संप्रदायगत सिद्धांत हैं 429, जिन पर जब बुद्धिमानों द्वारा प्रश्न उठाए जाते हैं, पूछताछ की जाती है और जिरह की जाती है, और उनके निष्कर्ष तक पहुँचाया जाता है, तो अंततः वे निरंकुश हो जाते हैं। 430 वे तीन सिद्धांत क्या हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, कुछ तपस्वी और ब्राह्मण इस प्रकार का मत और मत रखते हैं: 'इस व्यक्ति को जो भी अनुभव होता है—चाहे सुख हो, दुख हो, या दुख-सुख का अभाव हो—वह सब अतीत में किए गए कर्मों का परिणाम है।' (2) कुछ अन्य तपस्वी और ब्राह्मण इस प्रकार का मत और मत रखते हैं: 'इस व्यक्ति को जो भी अनुभव होता है—चाहे सुख हो, दुख हो, या दुख-सुख का अभाव हो—वह सब ईश्वर की सृजनात्मक क्रिया का परिणाम है।' (3) और कुछ अन्य तपस्वी और ब्राह्मण इस प्रकार का मत और मत रखते हैं: 'इस व्यक्ति को जो भी अनुभव होता है—चाहे सुख हो, दुख हो, या दुख-सुख का अभाव हो—वह सब बिना किसी कारण या शर्त के घटित होता है।' 431

"भिक्षुओं, मैंने उन तपस्वियों और ब्राह्मणों से संपर्क किया जो इस प्रकार का सिद्धांत और मत रखते हैं: 'इस व्यक्ति को जो कुछ भी अनुभव होता है - चाहे सुख हो, दुख हो, या न दुख हो न सुख - वह सब पिछले कर्मों के कारण होता है,' 432 और मैंने उनसे कहा: 'क्या यह सच है कि आप पूज्यवर ऐसा सिद्धांत और मत रखते हैं?' जब मैंने उनसे यह पूछा, तो उन्होंने इसकी पुष्टि की। [174] तब मैंने उनसे कहा: 'ऐसी स्थिति में, यह पिछले कर्मों के कारण ही है कि आप जीवन का नाश करते हैं, जो नहीं दिया गया है उसे लेते हैं, यौन क्रियाओं में लिप्त होते हैं, झूठ बोलते हैं, फूट डालने वाली बातें करते हैं, कठोर बातें करते हैं, व्यर्थ की बातों में लिप्त होते हैं; आप लालसा से भरे होते हैं, द्वेषपूर्ण मन रखते हैं और गलत विचार रखते हैं।' 433

जो लोग अपने अतीत के कर्मों को ही मूल सत्य मानते हैं, उनमें न तो उचित कर्म करने की इच्छा होती है और न ही अनुचित कर्मों से बचने की, और न ही वे इस दिशा में कोई प्रयास करते हैं। चूंकि वे यह नहीं समझते कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए, इसलिए वे भ्रमित मन के होते हैं, वे स्वयं को सुरक्षित नहीं रखते, और ऐसे में उन्हें 'संन्यासी' कहना भी उचित नहीं होगा। यह उन तपस्वियों और ब्राह्मणों का मेरा पहला उचित खंडन था जो इस प्रकार का सिद्धांत और दृष्टिकोण रखते हैं।

(2) "तब, हे भिक्षुओं, मैं उन तपस्वियों और ब्राह्मणों के पास गया जो इस प्रकार का सिद्धांत और मत रखते हैं: 'इस व्यक्ति को जो कुछ भी अनुभव होता है—चाहे सुख हो, दुख हो, या न दुख हो न सुख—वह सब ईश्वर की सृजनात्मक गतिविधि के कारण होता है,' और मैंने उनसे कहा: 'क्या यह सच है कि आप पूज्यवर ऐसा सिद्धांत और मत रखते हैं?' जब मैंने उनसे यह पूछा, तो उन्होंने इसकी पुष्टि की। तब मैंने उनसे कहा: ऐसे में, यह ईश्वर की सृजनात्मक गतिविधि के कारण ही है कि आप जीवन का नाश करें, जो नहीं दिया गया है उसे ग्रहण करें, यौन क्रियाओं में लिप्त हों, झूठ बोलें, फूट डालने वाली बातें करें, कठोर बातें करें, व्यर्थ की बातों में लिप्त हों; आप लालसा से भरे हों, द्वेषपूर्ण मन रखें और गलत विचार रखें।"

जो लोग ईश्वर की सृजनात्मक गतिविधि को ही मूल सत्य मानते हैं, उनमें न तो यह इच्छा होती है कि क्या किया जाना चाहिए और क्या नहीं किया जाना चाहिए, और न ही वे इस संबंध में कोई प्रयास करते हैं। चूंकि वे यह नहीं समझते कि क्या किया जाना चाहिए और क्या नहीं किया जाना चाहिए, इसलिए वे भ्रमित मन के होते हैं, वे स्वयं को सुरक्षित नहीं रखते, और यहां तक कि उन्हें 'तपस्वी' कहना भी उचित नहीं होगा। यह उन तपस्वियों और ब्राह्मणों का मेरा दूसरा वैध खंडन था जो इस प्रकार का सिद्धांत और दृष्टिकोण रखते हैं। [175]

(3) "तब, हे भिक्षुओं, मैं उन तपस्वियों और ब्राह्मणों के पास गया जो इस प्रकार का सिद्धांत और मत रखते हैं: 'इस व्यक्ति को जो भी अनुभव होता है—चाहे सुख हो, दुख हो, या न दुख हो—वह सब बिना किसी कारण या शर्त के होता है,' और मैंने उनसे कहा: 'क्या यह सच है कि आप पूज्यवर ऐसा सिद्धांत और मत रखते हैं?' जब मैंने उनसे यह पूछा, तो उन्होंने इसकी पुष्टि की। तब मैंने उनसे कहा: 'ऐसी स्थिति में, यह बिना किसी कारण या शर्त के है कि आप जीवन का नाश करें, जो नहीं दिया गया है उसे ग्रहण करें, यौन क्रियाओं में लिप्त हों, झूठ बोलें, फूट डालने वाली बातें करें, कठोर बातें करें, व्यर्थ की बातों में लिप्त हों; आप लालसा से भरे हों, द्वेषपूर्ण मन रखें और गलत मत रखें।'

जो लोग कारण और परिस्थिति के अभाव को ही मूल सत्य मानते हैं, उनमें न तो उचित कर्म करने की इच्छा होती है और न ही अनुचित कर्मों से बचने की, और न ही वे इस संबंध में कोई प्रयास करते हैं। चूंकि वे किसी भी बात को सत्य और वैध नहीं मानते, इसलिए वे भ्रमित मन के होते हैं, स्वयं को सुरक्षित नहीं रखते, और यहां तक कि उन्हें 'संन्यासी' कहना भी उचित नहीं होगा। यह उन तपस्वियों और ब्राह्मणों का मेरा तीसरा वैध खंडन था जो इस प्रकार के सिद्धांत और दृष्टिकोण को मानते हैं।

"भिक्षुओं, ये तीन संप्रदायगत सिद्धांत हैं, जिन पर जब बुद्धिमानों द्वारा प्रश्न उठाए जाते हैं, पूछताछ की जाती है और जिरह की जाती है, और जब इन्हें निष्कर्ष तक पहुँचाया जाता है, तो अंततः निष्क्रियता की स्थिति उत्पन्न होती है।"

लेकिन, भिक्षुओं, मेरे द्वारा सिखाया गया यह धम्म अखंडित, निष्कलंक, निर्दोष और बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा निरोधित नहीं है। 434 और मेरे द्वारा सिखाया गया वह धम्म क्या है जो अखंडित, निष्कलंक, निर्दोष और बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा निरोधित नहीं है?

"'ये छह तत्व हैं': हे भिक्षुओं, यह मेरे द्वारा सिखाया गया धम्म है जो अखंडित है... बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अप्रतिबंधित है। 'ये संपर्क के लिए छह इंद्रियां हैं'... 'ये अठारह मानसिक परीक्षाएं हैं'... 'ये चार आर्य सत्य हैं': हे भिक्षुओं, यह मेरे द्वारा सिखाया गया धम्म (मार्ग) है जो अखंडित, निष्कलंक, निर्दोष और बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अप्रतिबंधित है।"

जब यह कहा गया: 'ये छह तत्व ([लोक] धातु) हैं: भिक्षुओं, यह मेरे द्वारा सिखाया गया धम्म है जो अखंडित है... बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अप्रतिबंधित है,' तो ऐसा क्यों कहा गया? ये छह तत्व हैं: पृथ्वी तत्व (पथवी), जल तत्व (अपो), अग्नि तत्व (तेजो), वायु तत्व (वायो), आकाश तत्व (आस्कस), और चेतना तत्व (विन्नान)। 435 जब यह कहा गया: 'ये छह तत्व हैं': भिक्षुओं, यह मेरे द्वारा सिखाया गया धम्म है जो अखंडित है... बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अप्रतिबंधित है, तो इसी कारण ऐसा कहा गया। नोट: दुनिया 6 घटनाओं (लोक धातु) से बनी है: पृथ्वी (ठोसता), जल (तरलता), अग्नि (ऊष्मा), वायु (गैस)। स्थान (आयतन) और चेतना (जागरूकता)

जब यह कहा गया: 'ये संसार से संपर्क करने के लिए छह इंद्रियां (आयतन) हैं: हे भिक्षुओं, यह मेरे द्वारा सिखाया गया धर्म है जो अखंडित है... बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अप्रतिबंधित है,' तो ऐसा क्यों कहा गया? संपर्क के लिए ये छह इंद्रियां हैं: आंख, कान, नाक,

जीभ, शरीर और मन। जब यह कहा गया: 'ये संसार से संपर्क करने के लिए छह इंद्रियां हैं: हे भिक्षुओं, यह मेरे द्वारा सिखाया गया धर्म है जो अखंडित है... बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अप्रतिबंधित है,' तो इसी कारण ऐसा कहा गया।

जब यह कहा गया कि 'ये अठारह मानसिक परीक्षाएँ हैं': हे भिक्षुओं, यह मेरे द्वारा सिखाया गया अखंडित धम्म है: .. बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अप्रतिबंधित, ऐसा क्यों कहा गया? 436 किसी रूप को आँख से देखकर, व्यक्ति उस रूप की परीक्षा करता है जो आनंद (सोमनस्स) का आधार है; वह उस रूप की परीक्षा करता है जो उदासी (डोमनस्स) का आधार है; वह उस रूप की परीक्षा करता है जो उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) का आधार है। कान से ध्वनि सुनकर... नाक से गंध सूंघकर... जीभ से स्वाद चखकर... शरीर से स्पर्शित वस्तु का अनुभव करके... मन से किसी मानसिक घटना (विचार) को जानकर, व्यक्ति उस मानसिक घटना की परीक्षा करता है जो आनंद का आधार है; वह उस मानसिक घटना की परीक्षा करता है जो उदासी का आधार है; वह उस मानसिक घटना की परीक्षा करता है जो... उदासीनता (भीतर विलीनता/उपेक्खा) का आधार। जब यह कहा गया: 'ये अठारह मानसिक परीक्षाएँ हैं': हे भिक्षुओं, यह मेरे द्वारा सिखाया गया धम्म है जो अखंडित है... बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अप्रतिबंधित है, इसी कारण यह कहा गया था।

जब यह कहा गया: 'ये चार आर्य सत्य हैं': हे भिक्षुओं, यह मेरे द्वारा सिखाया गया धम्म (मार्ग) है जो अखंडित है... बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा निरोधित नहीं है, यह क्यों कहा गया? छह तत्वों पर निर्भरता से [भविष्य के] भ्रूण का अवतरण होता है। 437 जब अवतरण होता है, तब मन (नाम) और शरीर (रूप) होते हैं; मन (नाम) और शरीर (रूप) की स्थिति के साथ, छह इंद्रिय क्षेत्र होते हैं; छह इंद्रिय क्षेत्रों की स्थिति के साथ, संपर्क होता है; संपर्क की स्थिति के साथ, वेदना (संवेदना) होती है। अब जो महसूस करता है, उसके लिए मैं घोषणा करता हूँ: 'यह दुख है', 'यह दुख का कारण है', 'यह दुख का निवारण है' और 'यह दुख के निवारण का मार्ग है'।

भिक्षुओं, दुख का आर्य सत्य क्या है? पुनर्जन्म दुख है, बुढ़ापा दुख है, बीमारी दुख है, मृत्यु [177] दुख है; शोक, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा दुख है; इच्छा पूरी न होना दुख है; संक्षेप में, आसक्ति से ग्रस्त पाँचों स्कंध दुख हैं। इसे ही दुख का आर्य सत्य कहते हैं।

भिक्षुओं, दुख की उत्पत्ति का आर्य सत्य क्या है? अज्ञान की स्थिति में, चरित्र/व्यवहार (संस्कार) उत्पन्न होता है; चरित्र/व्यवहार (संस्कार) की स्थिति में, चेतना उत्पन्न होती है; चेतना की स्थिति में, मन (नाम) और शरीर (शरीर) उत्पन्न होते हैं; मन (नाम) और शरीर (शरीर) की स्थिति में, छह इंद्रियां उत्पन्न होती हैं; छह इंद्रियों की स्थिति में, स्पर्श उत्पन्न होता है; स्पर्श की स्थिति में, संवेदना उत्पन्न होती है; संवेदना (वेदना) की स्थिति में, तृष्णा उत्पन्न होती है; तृष्णा (तृष्णा) की स्थिति में, आसक्ति उत्पन्न होती है; आसक्ति की स्थिति में, अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) उत्पन्न होता है; अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की स्थिति में, पुनर्जन्म होता है; पुनर्जन्म की स्थिति में, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा उत्पन्न होती है। यही इस संपूर्ण दुख का मूल है। दुःख। इसे दुःख की उत्पत्ति का महान सत्य कहा जाता है। 436

भिक्षुओं, दुखों के निवारण का आर्य सत्य क्या है? अज्ञान के पूर्णतः मिट जाने और निवारण के साथ ही गुणों (संस्कार) का निवारण होता है; गुणों/व्यवहार (संस्कार) के निवारण के साथ ही (शारीरिक) चेतना का निवारण होता है; चेतना के निवारण के साथ ही मन (नाम) और रूप (शरीर) का निवारण होता है; मन (नाम) और रूप (शरीर) के निवारण के साथ ही छह इंद्रियों का निवारण होता है; छह इंद्रियों के निवारण के साथ ही संपर्क का निवारण होता है; संपर्क के निवारण के साथ ही संवेदना (वेदना) का निवारण होता है; संवेदना (वेदना) के निवारण के साथ ही तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) का निवारण होता है; तृष्णा के निवारण के साथ ही आसक्ति का निवारण होता है; आसक्ति के निवारण के साथ ही अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का निवारण होता है; जन्म का कारण (भाव), पुनर्जन्म का अंत; पुनर्जन्म के अंत के साथ ही वृद्धावस्था, मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा समाप्त हो जाती है। यही समस्त दुःख का अंत है। इसी को दुःख के अंत का महान सत्य कहते हैं।

भिक्षुओं, दुखों के निवारण का आर्य सत्य क्या है? यह आर्य अष्टांगिक मार्ग ही है; अर्थात्, सही दृष्टि, सही अभिकल्पना, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता) और सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन)। यही दुखों के निवारण का आर्य सत्य कहलाता है।

"जब यह कहा गया कि 'ये चार आर्य सत्य हैं': हे भिक्षुओं, यह मेरे द्वारा सिखाया गया धम्म है जो अखंडित, निष्कलंक, निर्दोष और बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा निरोधित नहीं है,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।" [178]

---

63 तीन खतरे

"भिक्षुओं (संतों), अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति माता और पुत्र को अलग करने वाले इन तीन खतरों की बात करता है। 439 वे तीन खतरे कौन से हैं?"

(1) एक समय ऐसा आता है जब भीषण प्रलय मच जाती है। जब प्रलय मच जाती है, तो वह गांवों, कस्बों और शहरों को जलाकर राख कर देती है। जब गांव, कस्बे और शहर जल रहे होते हैं, तो मां को अपना बेटा नहीं मिलता और बेटे को अपनी मां नहीं मिलती। यही वह पहला संकट है जो मां और बेटे को अलग करता है, जिसके बारे में अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति बात करता है।

(2) “फिर एक समय ऐसा आता है जब एक बड़ा वर्षा बादल उठता है। जब वह बड़ा वर्षा बादल उठता है, तो एक भयंकर प्रलय आती है। जब प्रलय आती है, तो गाँव, कस्बे और शहर बह जाते हैं। जब गाँव, कस्बे और शहर बह रहे होते हैं, तो माँ को अपना बेटा नहीं मिलता और बेटे को अपनी माँ नहीं मिलती। यह दूसरा संकट है जो माँ और बेटे को अलग करता है, जिसके बारे में अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति बात करता है।”

(3) "फिर, जंगल में भयंकर उथल-पुथल का समय आता है, जब ग्रामीण लोग अपने वाहनों पर सवार होकर चारों ओर भागने लगते हैं। जब जंगल में भयंकर उथल-पुथल होती है और ग्रामीण लोग अपने वाहनों पर सवार होकर चारों ओर भागने लगते हैं, तब माँ को अपना बेटा नहीं मिलता और बेटे को अपनी माँ नहीं मिलती। यही वह तीसरा संकट है जो माँ और बेटे को अलग करता है, जिसके बारे में अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति बात करता है।"

"ये वे तीन खतरे हैं जो मां और बेटे को अलग करते हैं, जिनके बारे में अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति बात करता है।"

"भिक्षुओं, माता-पुत्र के पुनर्मिलन के समय तीन प्रकार के खतरे उत्पन्न होते हैं, जिन्हें अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति माता-पुत्र को अलग करने वाले खतरे बताता है। 440 वे तीन कौन से हैं?"

(1) "एक समय ऐसा आता है जब भीषण प्रलय मच जाती है। जब भीषण प्रलय मच जाती है, तो वह गांवों, कस्बों और शहरों को जला देती है। जब गांव, कस्बे और शहर जल रहे होते हैं, तो कभी-कभी ऐसा अवसर आता है जब माँ [179] अपने बेटे को और बेटा अपनी माँ को पाता है। माँ और बेटे के पुनर्मिलन का यह पहला संकट है जिसे अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति माँ और बेटे को अलग करने वाले संकट के रूप में वर्णित करता है।"

(2) "फिर, एक समय ऐसा आता है जब एक बड़ा वर्षा बादल उठता है। जब बड़ा वर्षा बादल उठता है, तो एक भयंकर बाढ़ आती है। जब भयंकर बाढ़ आती है, तो गाँव, कस्बे और शहर बह जाते हैं। जब गाँव, कस्बे और शहर बह रहे होते हैं, तो कभी-कभी ऐसा अवसर आता है जब माँ अपने बेटे को और बेटा अपनी माँ को पाता है। यह दूसरा संकट है जब माँ और बेटे का पुनर्मिलन होता है, जिसे अनपढ़ सांसारिक व्यक्ति माँ और बेटे को अलग करने वाले संकट के रूप में बताता है।"

(3) "फिर, जंगल में भयंकर उथल-पुथल का समय आता है, जब ग्रामीण लोग अपने वाहनों पर सवार होकर चारों ओर भागने लगते हैं। जब जंगल में भयंकर उथल-पुथल होती है और ग्रामीण लोग अपने वाहनों पर सवार होकर चारों ओर भाग रहे होते हैं, तो कभी-कभी ऐसा अवसर आता है जब माँ अपने बेटे को और बेटा अपनी माँ को पा लेता है। यह तीसरा संकट है जब माँ और पुत्र का पुनर्मिलन होता है, जिसे अनपढ़ सांसारिक व्यक्ति माँ और पुत्र को अलग करने वाले संकट के रूप में वर्णित करता है।"

"मां और बेटे के पुनर्मिलन के दौरान ये तीन खतरे उत्पन्न होते हैं, जिन्हें अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति मां और बेटे को अलग करने वाले खतरे के रूप में वर्णित करता है।"

भिक्षुओं, माता और पुत्र को अलग करने वाले ये तीन खतरे हैं। 441 वे तीन खतरे कौन से हैं? वृद्धावस्था का खतरा, बीमारी का खतरा और मृत्यु का खतरा।

(1) "जब बेटा बूढ़ा हो रहा होता है, तो माँ अपनी यह इच्छा पूरी नहीं कर पाती: 'मैं बूढ़ी हो जाऊँ, लेकिन मेरा बेटा बूढ़ा न हो!' और जब माँ बूढ़ी हो रही होती है, तो बेटा अपनी यह इच्छा पूरी नहीं कर पाता: 'मैं बूढ़ा हो जाऊँ, लेकिन मेरी माँ बूढ़ी न हो!'"

(2) "जब बेटा बीमार पड़ जाता है, तो माँ अपनी यह इच्छा पूरी नहीं कर पाती: 'मैं बीमार पड़ जाऊँ, लेकिन मेरा बेटा बीमार न पड़े!' और जब माँ बीमार पड़ जाती है, तो बेटा अपनी यह इच्छा पूरी नहीं कर पाता: 'मैं बीमार पड़ जाऊँ, लेकिन मेरी माँ बीमार न पड़े!'"

(3) "जब बेटा मर रहा होता है, तो माँ अपनी यह इच्छा पूरी नहीं कर सकती: 'मुझे मरने दो, लेकिन मेरा बेटा न मरे!' और जब माँ मर रही होती है, तो बेटा अपनी यह इच्छा पूरी नहीं कर सकता: 'मुझे मरने दो, लेकिन मेरी माँ न मरे!'"

"ये तीन खतरे हैं जो माँ और बेटे को अलग करते हैं। [180]

भिक्षुओं, एक मार्ग है, एक ऐसा रास्ता है जो माता-पुत्र के पुनर्मिलन के समय इन तीन संकटों से मुक्ति और विजय दिलाता है, और उन तीन संकटों से भी जो माता-पुत्र को अलग करते हैं। और वह मार्ग क्या है? वह यही श्रेष्ठ अष्टमार्ग है; अर्थात्, सही दृष्टि, सही अभिलाषा, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता) और सही समाधि (स्व-लीनता)। यही वह मार्ग है जो माता-पुत्र के पुनर्मिलन के समय इन तीन संकटों से मुक्ति और विजय दिलाता है, और उन तीन संकटों से भी जो माता-पुत्र को अलग करते हैं।

---

64 वेनागपुरा (नागपुर)

एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक विशाल संघ के साथ कोसलों में भ्रमण कर रहे थे, जब वे वेनागपुरा नामक कोसल के ब्राह्मण गाँव पहुँचे। वेनागपुरा के ब्राह्मण गृहस्थों ने सुना: "सुना जाता है कि शाक्य वंश से निकले तपस्वी गौतम वेनागपुरा आए हैं। अब उस गुरु गौतम के बारे में यह शुभ सूचना फैली है कि "भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, संसार के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय गुरु हैं, देवदूतों/देवताओं के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।" अपने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इस संसार को, इसके देवों (देवदूतों/देवताओं), मार और ब्रह्मा सहित, इस जनसंख्या को, इसके तपस्वियों और ब्राह्मणों सहित, इसके देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों सहित, भली-भांति जान लेने के बाद, वह इसे दूसरों को भी ज्ञात कराते हैं। वे एक ऐसे धर्म का उपदेश देते हैं जो आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम है, उचित अर्थ और शब्दों के साथ; वे एक पूर्णतः परिपूर्ण और पवित्र ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का प्रकटीकरण करते हैं। ऐसे अरहंतों को देखना सौभाग्य की बात है।

तब वेनागपुरा के ब्राह्मण गृहस्थ भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे। कुछ ने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए; कुछ ने उनसे अभिवादन किया [181] और अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त करने के बाद एक तरफ बैठ गए; कुछ ने आदरपूर्वक उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए; कुछ ने अपना नाम और कुल बताया और एक तरफ बैठ गए; कुछ चुप रहे और एक तरफ बैठ गए। तब वेनागपुरा के ब्राह्मण वच्छगोत्त ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है। हे गौतम गुरु, उनकी इंद्रियां कितनी शांत हैं और उनकी त्वचा का रंग कितना शुद्ध और तेजस्वी है। जैसे शरद ऋतु में पीला बेर शुद्ध और तेजस्वी होता है, वैसे ही गौतम गुरुओं की इंद्रियां शांत हैं और उनकी त्वचा का रंग शुद्ध और तेजस्वी है। जैसे डंठल से तोड़ा गया ताड़ का फल शुद्ध और तेजस्वी होता है, वैसे ही गौतम गुरुओं की इंद्रियां शांत हैं और उनकी त्वचा का रंग शुद्ध और तेजस्वी है। जैसे किसी कुशल सुनार द्वारा भट्टी में बड़ी कुशलता से गढ़ा गया उत्तम सोने का आभूषण, लाल ब्रोकेड पर रखा हुआ, चमकता है और प्रकाशमान होता है, वैसे ही गौतम गुरुओं की इंद्रियां शांत हैं और उनकी त्वचा का रंग शुद्ध और तेजस्वी है।"

"चाहे कितने ही उच्च और आलीशान बिस्तर हों—अर्थात् सोफा, दीवान, लंबे बालों वाला कंबल, विभिन्न रंगों का कंबल, सफेद कंबल, फूलों की डिज़ाइन वाला ऊनी कंबल, रुई का रजाई, जानवरों की आकृतियों से सजा ऊनी कंबल, दोहरी किनारी वाला ऊनी कंबल, एक किनारी वाला ऊनी कंबल, रत्नों से जड़ी रेशमी चादर, रेशम के धागों से बनी और रत्नों से जड़ी चादर, नर्तकी का गलीचा, हाथी का गलीचा, घोड़े का गलीचा, रथ का गलीचा, हिरण की खाल का गलीचा, कदली हिरण की खाल से बना बिस्तर, ऊपर चंदवा और दोनों सिरों पर लाल तकिए वाला पलंग—गुरु गौतम निःसंदेह ये सब बिना किसी परेशानी या कठिनाई के आसानी से प्राप्त कर लेते हैं।" 442

"ब्राह्मण, इस प्रकार के उच्च और विलासितापूर्ण बिस्तर उन लोगों को दुर्लभ रूप से प्राप्त होते हैं जो संन्यासी जीवन में चले गए हैं, और यदि वे प्राप्त भी हो जाते हैं, तो उनकी अनुमति नहीं है।"

"परन्तु, ब्राह्मण, तीन प्रकार के उच्च और विलासितापूर्ण पलंग हैं जो इस समय मैं बिना किसी कष्ट या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त कर लेता हूँ। वे तीन कौन से हैं? [182] दिव्य उच्च और विलासितापूर्ण पलंग, दिव्य उच्च और विलासितापूर्ण पलंग और श्रेष्ठ उच्च और विलासितापूर्ण पलंग। 443 ये तीन प्रकार के उच्च और विलासितापूर्ण पलंग हैं जो इस समय मैं बिना किसी कष्ट या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त कर लेता हूँ।"

(1) "परन्तु, हे गौतम स्वामी, वह दिव्य उच्च और विलासितापूर्ण पलंग क्या है जिसे आप इस समय बिना किसी कष्ट या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त कर लेते हैं?"

"हे ब्राह्मण, जब मैं किसी गाँव या नगर में आश्रित होकर रहता हूँ, तो सुबह मैं वस्त्र धारण करता हूँ, भिक्षापात्र और वस्त्र लेकर भिक्षा मांगने के लिए उस गाँव या नगर में जाता हूँ। भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, मैं किसी उपवन में जाता हूँ। वहाँ मुझे जो घास या पत्ते मिलते हैं, उन्हें इकट्ठा करके एक ढेर बना लेता हूँ और बैठ जाता हूँ। अपने पैरों को क्रॉस करके और शरीर को सीधा करके, मैं अपने सामने ध्यान (सती) स्थापित करता हूँ। फिर, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, अकुशल अवस्थाओं से विरक्त होकर, मैं प्रथम ध्यान (सन्यास अवस्था) में प्रवेश करता हूँ और उसमें लीन रहता हूँ, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल होते हैं। विचार और चिंतन के शांत होने पर, मैं द्वितीय ध्यान (सन्यास अवस्था) में प्रवेश करता हूँ और उसमें लीन रहता हूँ, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और जो समाधि (स्व-लीनता/सन्यास) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन नहीं होते हैं।" पीति (आनंद) के लुप्त होने के साथ ही, मैं समभाव और सतीत्व में पूर्णतः बोध रखते हुए शरीर के साथ सुख का अनुभव करता हूँ; मैं उस तीसरे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करता हूँ और निवास करता हूँ जिसके बारे में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव वाला, सतीत्व में रहने वाला और सुखी है।' सुख-दुख का त्याग करके, और पहले ही प्रसन्नता-निःसंवेदन के लुप्त हो जाने के साथ, मैं चौथे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करता हूँ और निवास करता हूँ, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर ध्यान) द्वारा सतीत्व की शुद्धि होती है।

“हे ब्राह्मण, जब मैं ऐसी अवस्था में होता हूँ, यदि मैं इधर-उधर चलता हूँ, तो उस समय मेरा इधर-उधर चलना दिव्य होता है। 444 यदि मैं खड़ा होता हूँ, तो उस समय मेरा खड़ा होना दिव्य होता है। यदि मैं बैठा होता हूँ, तो उस समय मेरा बैठना दिव्य होता है। यदि मैं लेट जाता हूँ, तो उस समय यह मेरा दिव्य उच्च और विलासितापूर्ण पलंग होता है। यह वह [183] दिव्य उच्च और विलासितापूर्ण पलंग है जिसे मैं इस समय बिना किसी कष्ट या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त कर सकता हूँ।”

"यह आश्चर्यजनक और अद्‌भुत है। गुरु गौतम! गुरु गौतम के अलावा और कौन है जो बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, अपनी इच्छा से इतना दिव्य और आलीशान बिस्तर प्राप्त कर सकता है?"

(2) "परन्तु, हे गौतम स्वामी, वह दिव्य उच्च और विलासितापूर्ण पलंग क्या है जिसे आप इस समय बिना किसी कष्ट या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त कर लेते हैं?"

"हे ब्राह्मण, जब मैं किसी गाँव या नगर पर निर्भर होकर निवास करता हूँ, तो सुबह मैं वस्त्र धारण करता हूँ, भिक्षापात्र और वस्त्र लेकर भिक्षा मांगने के लिए उस गाँव या नगर में जाता हूँ। भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, मैं किसी उपवन में जाता हूँ। वहाँ मुझे जो घास या पत्ते मिलते हैं, उन्हें इकट्ठा करके एक ढेर बना लेता हूँ और बैठ जाता हूँ। अपने पैरों को क्रॉस करके और शरीर को सीधा करके, मैं अपने सामने ध्यान (सती) स्थापित करता हूँ। फिर मैं प्रेम और करुणा से भरे मन से एक दिशा में व्याप्त रहता हूँ, इसी प्रकार दूसरी दिशा, तीसरी दिशा और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए, जैसे मैं स्वयं के लिए हूँ, मैं प्रेम और करुणा से भरे मन से, विशाल, उच्च, असीम, बिना द्वेष और बिना दुर्भावना के, संपूर्ण जगत में व्याप्त रहता हूँ। मैं करुणा से भरे मन से एक दिशा में व्याप्त रहता हूँ... परोपकारी आनंद से भरे मन से... एक ऐसा मन जो उदासीनता से ओतप्रोत है (भीतर समाहित/उपेक्खा), उसी प्रकार द्वितीय, तृतीय और चतुर्थांश भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए,

जैसे कि स्वयं के लिए, मैं उदासीनता से ओतप्रोत (भीतर समाहित/उपेक्खा) मन से, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित, समस्त संसार में व्याप्त हूँ।

"हे ब्राह्मण, जब मैं ऐसी अवस्था में होता हूँ, यदि मैं इधर-उधर चलता हूँ, तो उस समय मेरा चलना दिव्य होता है। यदि मैं खड़ा होता हूँ, तो उस समय मेरा खड़ा होना दिव्य होता है। यदि मैं बैठा होता हूँ, तो उस समय मेरा बैठना दिव्य होता है। यदि मैं लेट जाता हूँ, तो उस समय यह मेरा दिव्य उच्च और सुखदायक पलंग होता है। यह वही दिव्य उच्च और सुखदायक पलंग है जिसे मैं इस समय बिना किसी कष्ट या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त कर सकता हूँ।" [184]

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है। गुरु गौतम! गुरु गौतम के अलावा और कौन बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, अपनी इच्छा से इतना ऊंचा और आलीशान पलंग प्राप्त कर सकता है?"

(3) "परन्तु, हे गौतम स्वामी, वह उत्तम ऊँचा और विलासितापूर्ण पलंग क्या है जो आप इस समय बिना किसी कष्ट या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त कर लेते हैं?"

"हे ब्राह्मण, जब मैं किसी गाँव या नगर में आश्रित होकर निवास करता हूँ, तो सुबह मैं वस्त्र धारण करता हूँ, भिक्षापात्र और वस्त्र लेकर उस गाँव या नगर में भिक्षा मांगने जाता हूँ। भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, मैं किसी उपवन में जाता हूँ। वहाँ मुझे जो घास या पत्ते मिलते हैं, उन्हें इकट्ठा करके एक ढेर बना लेता हूँ और बैठ जाता हूँ। अपने पैरों को क्रॉस करके और शरीर को सीधा करके, मैं अपने सामने ध्यान (सती) स्थापित करता हूँ। तब मैं इस प्रकार समझता हूँ: मैंने लोभ का त्याग कर दिया है, उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो। मैंने घृणा का त्याग कर दिया है, उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो। मैंने मोह का त्याग कर दिया है, उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो। 445"

"हे ब्राह्मण, जब मैं ऐसी अवस्था में हूँ, यदि मैं इधर-उधर चलता हूँ, तो उस समय मेरा चलना श्रेष्ठ है। यदि मैं खड़ा हूँ, तो उस समय मेरा खड़ा होना श्रेष्ठ है। यदि मैं बैठा हूँ, तो उस समय मेरा बैठना श्रेष्ठ है। यदि मैं लेट जाता हूँ, तो उस समय यही मेरा श्रेष्ठ, ऊँचा और आरामदायक पलंग है। यही वह श्रेष्ठ, ऊँचा और आरामदायक पलंग है जिसे मैं इस समय बिना किसी कष्ट या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त कर सकता हूँ।"

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है। गुरु गौतम! गुरु गौतम के अलावा और कौन बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, अपनी इच्छा से इतना उत्तम और आलीशान पलंग प्राप्त कर सकता है?"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! उत्कृष्ट, गुरु गौतम! गुरु गौतम ने अनेक तरीकों से धर्म को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग रूपों को देख सकें। अब हम गुरु गौतम की शरण में, धर्म की शरण में और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाते हैं। गुरु गौतम हमें उन गृहस्थ अनुयायियों के रूप में समझें जिन्होंने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

---

65 सरभा

एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। उस समय सरभा नामक एक तपस्वी ने हाल ही में इस धर्म और अनुशासन को त्याग दिया था। 446 वह राजगृह में एक सभा को बता रहे थे: "मैंने शाक्य पुत्र का अनुसरण करने वाले तपस्वियों का धर्म (मार्ग) सीखा है। उनका धर्म सीखने के बाद, मैंने उस धर्म और अनुशासन को त्याग दिया।"

फिर एक सुबह, कई भिक्षुओं ने वस्त्र धारण किए, अपने भिक्षापात्र और वस्त्र लिए और भिक्षा मांगने के लिए राजगृह में प्रवेश किया। तभी उन्होंने राजगृह में एक सभा को संबोधित करते हुए तपस्वी सरभा को ऐसा कथन करते हुए सुना। जब वे भिक्षु राजगृह में भिक्षा मांगने के बाद भोजन करके लौटे, तो वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, तपस्वी सरभा, जिन्होंने हाल ही में इस धर्म और अनुशासन को त्याग दिया है, राजगृह में एक सभा को बता रहे थे: 'मैंने शाक्य पुत्र का अनुसरण करने वाले तपस्वियों का धर्म (मार्ग) सीखा है। उनका धर्म सीखने के बाद, मैंने वह धर्म और अनुशासन त्याग दिया।' हे भंते, यह अच्छा होगा यदि भगवान (बुद्ध) सप्पिनिका नदी के किनारे स्थित तपस्वियों के उद्यान में जाएँ और करुणावश तपस्वी सरभा के पास जाएँ।" भगवान (बुद्ध) मौन रहकर सहमत हो गए।

फिर, शाम को, भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और सप्पिनिका नदी के किनारे स्थित तपस्वियों के उद्यान में गए। वे तपस्वी सरभा के पास पहुँचे, उनके लिए तैयार किए गए आसन पर बैठ गए और उनसे कहा: "क्या यह सच है, सरभा, कि तुम कहते रहे हो: मैंने शाक्य पुत्र का अनुसरण करने वाले तपस्वियों का धर्म सीखा है। उनका धर्म सीखने के बाद, मैंने उस धर्म और अनुशासन को छोड़ दिया?" यह सुनकर तपस्वी सरभा चुप रहे।

दूसरी बार भगवान (बुद्ध) ने तपस्वी सरभा से कहा, "हे सरभा, मुझे बताओ, तुमने शाक्य पुत्र का अनुसरण करने वाले तपस्वियों का धर्म कैसे सीखा है? यदि तुमने इसे पूर्णतः नहीं सीखा है, तो मैं इसे पूर्ण कर दूंगा। परन्तु यदि तुमने इसे पूर्णतः सीख लिया है, तो मैं प्रसन्न होऊंगा।" परन्तु दूसरी बार भी तपस्वी सरभा मौन रहे।

तीसरी बार भगवान (बुद्ध) ने तपस्वी सरभा से कहा: 447 "हे सरभा, मुझे बताओ, तुमने शाक्य पुत्र का अनुसरण करने वाले तपस्वियों का धर्म कैसे सीखा है? यदि तुमने इसे पूर्णतः नहीं सीखा है, तो मैं इसे पूर्ण कर दूंगा। परन्तु यदि तुमने इसे पूर्णतः सीख लिया है, तो मैं प्रसन्न होऊंगा।" परन्तु तीसरी बार भी तपस्वी सरभा मौन रहे।

तब उन तपस्वियों ने तपस्वी सरभा से कहा, “हे सरभा, तपस्वी गौतम ने तुम्हें तुम्हारी हर माँग पूरी करने का प्रस्ताव दिया है। हे सरभा, बोलो! तुमने शाक्य पुत्र के अनुयायी तपस्वियों का धर्म कैसे सीखा है? यदि तुमने इसे पूर्णतः नहीं सीखा है, तो तपस्वी गौतम इसे तुम्हारे लिए पूर्ण कर देंगे। परन्तु यदि तुमने इसे पूर्णतः सीख लिया है, तो वे प्रसन्न होंगे।” यह सुनकर तपस्वी सरभा मौन, व्याकुल, झुके हुए, उदास, स्तब्ध और अवाक बैठे रहे।

तब भगवान (बुद्ध) ने यह जानकर कि तपस्वी सरभा चुपचाप, व्याकुल, झुके हुए, उदास, स्तब्ध और मौन बैठे हैं, उन तपस्वियों से कहा:

(1) “यदि कोई मेरे बारे में कहे: ‘यद्यपि आप पूर्णतः प्रबुद्ध होने का दावा करते हैं, तो भी आप इन विषयों में पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं हैं’ [187] तो मैं उससे इस विषय पर गहन प्रश्न पूछ सकता हूँ, उससे पूछताछ कर सकता हूँ और उससे जिरह कर सकता हूँ। 49 जब मैं उससे गहन प्रश्न पूछ रहा हूँ, उससे पूछताछ कर रहा हूँ और जिरह कर रहा हूँ, तो यह असंभव और अकल्पनीय है कि वह तीन परिणामों में से एक या दूसरे का शिकार न हो: वह या तो टालमटोल वाला उत्तर देगा और चर्चा को किसी अप्रासंगिक विषय की ओर मोड़ देगा; [या] क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करेगा; या तपस्वी सरभा की तरह चुपचाप, व्याकुल, झुका हुआ, उदास, स्तब्ध और मौन बैठा रहेगा। 450

(2) "हे तपस्वियों, यदि कोई मेरे विषय में कहे: 'यद्यपि आप अपने दोषों के नाश होने का दावा करते हैं, तो भी आपने इन दोषों को पूरी तरह नाश नहीं किया है,' तो मैं उससे इस विषय पर गहन प्रश्न पूछूंगा, उससे पूछताछ करूंगा और उससे जिरह करूंगा। जब मैं उससे गहन प्रश्न पूछूंगा, उससे जिरह करूंगा और जिरह करूंगा, तो यह असंभव और अकल्पनीय है कि वह तीन परिणामों में से किसी एक का सामना न करे: वह या तो टालमटोल वाला उत्तर देगा और चर्चा को किसी अप्रासंगिक विषय की ओर मोड़ देगा; [या] क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करेगा; या तपस्वी सरभा की तरह चुपचाप, व्याकुल, झुका हुआ, उदास, स्तब्ध और मौन बैठा रहेगा।"

(3) "हे तपस्वियों, यदि कोई मेरे विषय में कहे: 'धम्म का अभ्यास करने वाले को दुखों के पूर्ण नाश की ओर नहीं ले जाता, जो उस लक्ष्य के लिए है जिसके लिए आप इसका उपदेश देते हैं', तो मैं उससे इस विषय पर गहन प्रश्न पूछ सकता हूँ, उससे पूछताछ कर सकता हूँ और उससे जिरह कर सकता हूँ। जब मैं उससे गहन प्रश्न पूछूँ, उससे पूछताछ करूँ और जिरह करूँ, तो यह असंभव और अकल्पनीय है कि वह तीन परिणामों में से किसी एक का सामना न करे: वह या तो टालमटोल वाला उत्तर देगा और चर्चा को किसी अप्रासंगिक विषय की ओर मोड़ देगा, [या] क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करेगा, या तपस्वी सरभा की तरह चुपचाप, व्याकुल, झुका हुआ, उदास, दुखी और मौन बैठा रहेगा।"

फिर भगवान (बुद्ध) ने सप्पिनिका नदी के किनारे स्थित तपस्वियों के उद्यान में तीन बार सिंह के समान दहाड़ लगाई और वायु में ऊपर उठकर चले गए। 52

फिर, भगवान (बुद्ध) के जाने के तुरंत बाद, उन तपस्वियों ने तपस्वी सरभा को खूब खरी-खोटी सुनाई, 453 [कहते हुए:] “जैसे एक विशाल जंगल में एक बूढ़ा सियार सोचता है: मैं शेर की दहाड़ मारूंगा और फिर भी केवल सियार की तरह ही रोता और चिल्लाता है, वैसे ही, हे मित्र सरभा, तपस्वी गौतम की अनुपस्थिति में यह दावा करते हुए कि 'मैं शेर की दहाड़ मारूंगा,' [188] तुम केवल सियार की तरह ही रोते और चिल्लाते रहे। जैसे, हे मित्र सरभा, एक चूजा सोचता है: 'मैं मुर्गे की तरह गाऊंगा,' और फिर भी केवल चूजे की तरह ही गाता है, वैसे ही, हे मित्र सरभा, तपस्वी गौतम की अनुपस्थिति में यह दावा करते हुए कि 'मैं मुर्गे की तरह गाऊंगा,' तुम केवल चूजे की तरह ही गाते रहे। 454 जैसे, हे मित्र सरभा, एक बैल खाली गौशाला में गहरी आवाज में रंभाने की सोचता है, वैसे ही, हे मित्र सरभा, तपस्वी गौतम की अनुपस्थिति में तुमने सोचा कि तुम ऐसा कर सकते हो गहरी गर्जना करो।" [इस तरह] उन तपस्वियों ने तपस्वी सरभा को शब्दों से जमकर फटकारा।

---

66 केसापुट्टिया 4S5

एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक विशाल संघ के साथ कोसल पर्वतमाला में भ्रमण कर रहे थे, जब वे कलामों के कस्बे केशपुत्त पहुँचे। केशपुत्त के कलामों ने सुना: “सुना जाता है कि शाक्य वंश से निकले तपस्वी गौतम केशपुत्त आए हैं। अब उस गुरु गौतम के बारे में यह शुभ सूचना फैली है कि ‘वह भगवान (बुद्ध) पूर्णतः प्रबुद्ध अरहंत हैं... [जैसा कि 3:63 में है]... [और] पूर्णतः शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन का दर्शन कराते हैं।’ ऐसे अरहंतों को देखना सौभाग्य की बात है।”

तब केशपुत्त के कलाम भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे। कुछ ने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए... [जैसा कि 3:63 पर है]... कुछ चुप रहे और एक तरफ बैठ गए। एक तरफ बैठे कलामों ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, कुछ तपस्वी और ब्राह्मण केशपुत्त आते हैं। वे अपने सिद्धांतों की व्याख्या और स्पष्टीकरण करते हैं, परन्तु दूसरों के सिद्धांतों की निंदा, अपमान, उपहास और निंदा करते हैं। परन्तु कुछ अन्य तपस्वी और ब्राह्मण केशपुत्त आते हैं, [189] और वे भी अपने सिद्धांतों की व्याख्या और स्पष्टीकरण करते हैं, परन्तु दूसरों के सिद्धांतों की निंदा, अपमान, उपहास और निंदा करते हैं। भंते, हम असमंजस में हैं कि इन अच्छे तपस्वियों में से कौन सत्य बोलता है और कौन असत्य। 7

"हे कलामस, तुम्हारा व्याकुल होना उचित है, तुम्हारा संशय होना उचित है; तुम्हारे मन में एक पेचीदा विषय को लेकर संदेह उत्पन्न हो गया है। 456 आओ, कलामस, मौखिक परंपरा, शिक्षा की वंशावली, सुनी-सुनाई बातों, शास्त्रों के संग्रह, तार्किक तर्क, अनुमानित तर्क, तर्कपूर्ण चिंतन, मनन करने के बाद किसी मत को स्वीकार करना, वक्ता की दिखावटी योग्यता, या यह सोचकर कि 'संन्यासी हमारा गुरु है', मत मानो। 457 परन्तु जब हे कलामस, तुम स्वयं जान लो: 'ये बातें अकुशल हैं; ये बातें निंदनीय हैं; ये बातें बुद्धिमानों द्वारा निंदनीय हैं; इन बातों को स्वीकार करने और अपनाने से हानि और पीड़ा होती है,' तब तुम्हें इन्हें त्याग देना चाहिए।"

(1) "कलमास, आपका क्या विचार है? जब किसी व्यक्ति में लालच उत्पन्न होता है, तो क्या वह उसके कल्याण के लिए होता है या उसके लिए हानिदायक होता है?" 453

"उसके नुकसान के लिए, भंते।"

"लालची कलामस, जो लोभ से ग्रस्त है, उसका मन लोभ में डूबा हुआ है, वह जीवन का नाश करता है, दूसरों की पत्नियों के साथ अनैतिक संबंध रखता है और झूठ बोलता है; और वह दूसरों को भी ऐसा करने के लिए उकसाता है। क्या इससे उसे लंबे समय तक हानि और कष्ट भोगना पड़ेगा?"

"हां, भंते।"

(2) "कलमास, तुम क्या सोचते हो? जब किसी व्यक्ति में घृणा उत्पन्न होती है, तो क्या वह उसके कल्याण के लिए होती है या उसके नुकसान के लिए?"

"उसके नुकसान के लिए, भंते।"

"कलमास, एक ऐसा व्यक्ति जो घृणा से भरा हुआ है, घृणा से ग्रस्त है, जिसका मन घृणा से ग्रस्त है, जीवन को नष्ट करता है... और वह दूसरों को भी ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता है। क्या इससे उसे लंबे समय तक हानि और पीड़ा सहनी पड़ेगी?"

"हां, भंते।"

(3) "कलमास, तुम क्या सोचते हो? जब किसी व्यक्ति में मोह उत्पन्न होता है, तो क्या वह उसके कल्याण के लिए होता है या उसके लिए हानिदायक होता है?"

"उसके नुकसान के लिए, भंते।" [190]

"कलमस, एक ऐसा व्यक्ति जो भ्रम में डूबा हुआ है, मोह से ग्रस्त है, जिसका मन मोह में लीन है, वह जीवन का नाश करता है... और वह दूसरों को भी ऐसा करने के लिए प्रेरित करता है। क्या इससे उसे लंबे समय तक हानि और कष्ट भोगना पड़ेगा?"

"हां, भंते।"

"कलमास, तुम्हारा क्या विचार है? क्या ये बातें लाभकारी (कुसल) हैं या हानिकारक (अकुसल)?" - "हानिकारक (अकुसल), भंते।" - "दोषी या निर्दोष?" - "दोषी, भंते।" - "बुद्धिमानों द्वारा निंदा की गई या प्रशंसा की गई?" - "बुद्धिमानों द्वारा निंदा की गई, भंते।" - "स्वीकृत और ग्रहण किए जाने पर, क्या इनसे हानि और पीड़ा होती है या नहीं, या तुम इसे कैसे लेते हो?" - "स्वीकृत और ग्रहण किए जाने पर, इनसे हानि और पीड़ा होती है। इसलिए हम इन्हें ग्रहण करते हैं।"

इसलिए, कलामास, जब हमने कहा: 'आओ, कलामास, मौखिक परंपरा का अनुसरण मत करो... बल्कि जब तुम स्वयं जान लो: "ये बातें हानिकारक (अकुसला) हैं; ये बातें निंदनीय हैं; ये बातें बुद्धिमानों द्वारा निंदित हैं; इन बातों को अपनाने और अभ्यास करने से हानि और पीड़ा होती है," तो तुम्हें इन्हें त्याग देना चाहिए,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।

"हे कलामों, मौखिक परंपरा, शिक्षा की वंशावली, सुनी-सुनाई बातों, शास्त्रों के संग्रह, तार्किक तर्क, अनुमान आधारित तर्क, तर्कपूर्ण चिंतन, मनन के बाद किसी मत को स्वीकार करने, वक्ता की दिखावटी योग्यता, या यह सोचकर कि 'संन्यासी हमारा गुरु है' के आधार पर मत चलो। बल्कि जब तुम स्वयं जान लो कि 'ये बातें लाभकारी (कुशल) हैं; ये बातें निष्कलंक हैं; इन बातों की बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसा की जाती है; इन बातों को स्वीकार करने और अपनाने से कल्याण और सुख प्राप्त होता है', तब तुम्हें इनके अनुसार जीवन जीना चाहिए।"

(1) "कलमास, तुम क्या सोचते हो? जब किसी व्यक्ति में लोभ रहित भावना उत्पन्न होती है, तो क्या यह उसके कल्याण के लिए होती है या उसके लिए हानि के लिए?"

"भंते, उसके कल्याण के लिए।"

"कलमस, एक ऐसा व्यक्ति जो लोभ रहित है, लोभ से ग्रस्त नहीं है, जिसका मन लोभ से ग्रस्त नहीं है, जो जीवन का नाश नहीं करता, जो किसी को नहीं दिया गया है उसे नहीं लेता, किसी दूसरे की पत्नी के साथ दुर्व्यवहार नहीं करता, न ही झूठ बोलता है; और न ही वह दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता है। [191] क्या इससे उसे लंबे समय तक कल्याण और सुख प्राप्त होगा?"

"हां, भंते।"

(2) "कलमास, तुम क्या सोचते हो? जब किसी व्यक्ति में घृणा का अभाव उत्पन्न होता है, तो क्या यह उसके कल्याण के लिए होता है या उसके लिए हानि के लिए?"

"भंते, उसके कल्याण के लिए।"

"कलमस, वह व्यक्ति जो घृणा से रहित है, घृणा से ग्रस्त नहीं है, जिसका मन घृणा से ग्रस्त नहीं है, जो जीवन का विनाश नहीं करता... न ही वह दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता है। क्या इससे उसका दीर्घकालिक कल्याण और सुख प्राप्त होगा?"

"हां, भंते।"

(3) "कलमास, तुम क्या सोचते हो? जब किसी व्यक्ति में मोह (अविमुखता) उत्पन्न होती है, तो क्या यह उसके कल्याण के लिए होती है या उसके लिए हानि के लिए?"

"भंते, उसके कल्याण के लिए।"

"कलमस, जो व्यक्ति मोह से मुक्त है, जिसका मन मोह में लीन नहीं है, वह जीवन का विनाश नहीं करता... न ही दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रेरित करता है। क्या इससे उसे दीर्घकाल तक कल्याण और सुख प्राप्त होगा?"

"हां, भंते।"

"कलमास, तुम्हारा क्या विचार है? क्या ये बातें लाभकारी (कुशल) हैं या हानिकारक (अकुशल)?" "लाभकारी (कुशल), भंते।" - "निंदनीय या निर्दोष?" "निर्दोष, भंते।" - "बुद्धिमानों द्वारा निंदा की गई या प्रशंसा की गई?" - "बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसा की गई, भंते।" - "स्वीकृत और पालन किए जाने पर, क्या इनसे कल्याण और सुख प्राप्त होता है या नहीं, या तुम इसे कैसे लेते हो?" - "स्वीकृत और पालन किए जाने पर, इनसे कल्याण और सुख प्राप्त होता है। इसलिए हम इन्हें स्वीकार करते हैं।"

इसलिए, कलामास, जब हमने कहा: 'आओ, कलामास, मौखिक परंपरा पर मत चलो... बल्कि जब तुम स्वयं जान लो: "ये बातें लाभकारी (कुशल) हैं; ये बातें निष्कलंक हैं; ये बातें बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित हैं; ये बातें, यदि स्वीकार की जाएं और अपनाई जाएं, तो कल्याण और सुख की ओर ले जाती हैं," तो तुम्हें [192] उनके अनुसार जीवन जीना चाहिए, इसी कारण यह कहा गया था।

"तब, कलामास, वह श्रेष्ठ शिष्य, जो लालसा से रहित, द्वेष से रहित, भ्रमित नहीं, पूर्णतः ज्ञाता, सदा सजग (ध्यानमग्न/सती) है, प्रेम और करुणा से परिपूर्ण मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है... करुणा से परिपूर्ण मन से... परोपकारी आनंद से परिपूर्ण मन से... उदासीनता (भीतर लीन/उपेक्खा) से परिपूर्ण मन से, इसी प्रकार दूसरी, तीसरी और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह उदासीनता (भीतर लीन/उपेक्खा) से परिपूर्ण मन से, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित मन से, संपूर्ण विश्व में व्याप्त रहता है।"

“यह श्रेष्ठ शिष्य, कलामास, जिसका मन इस प्रकार से द्वेष रहित, दुर्भावना रहित, निर्मल और शुद्ध है, ने इसी जीवन में चार आश्वासन प्राप्त कर लिए हैं।”

“उसे जो पहला आश्वासन मिला है, वह यह है: यदि दूसरा लोक है, और यदि अच्छे और बुरे कर्मों का फल और परिणाम होता है, तो संभव है कि शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, मेरा पुनर्जन्म एक अच्छे गंतव्य में, एक स्वर्गीय लोक में होगा।”

"दूसरी निश्चितता जो उसने प्राप्त की है वह यह है: यदि कोई दूसरा लोक नहीं है, और अच्छे और बुरे कर्मों का कोई फल और परिणाम नहीं है, तब भी यहीं, इसी जीवन में, मैं बिना किसी द्वेष और दुर्भावना के, कष्टों से मुक्त होकर सुख में रहता हूँ।"

“तीसरा आश्वासन जो उसने प्राप्त किया है वह यह है: 'मान लो कि बुराई करने वाले पर बुराई आती है। तो, जब मेरे मन में किसी के प्रति कोई बुरी मंशा नहीं है, तो मुझे कष्ट कैसे हो सकता है, क्योंकि मैंने कोई बुरा काम नहीं किया है?' 459 ' .

“उसे जो चौथा आश्वासन प्राप्त हुआ है, वह यह है: 'मान लीजिए कि बुराई करने वाले पर कोई बुराई नहीं आती। तब मैं स्वयं को दोनों ही दृष्टियों से शुद्ध पाता हूँ। 460

“इस श्रेष्ठ शिष्य, कलामास, जिसका मन इस प्रकार द्वेष रहित, दुर्भावना रहित, निर्मल और शुद्ध है, ने इसी जीवन में इन चारों आश्वासनों को प्राप्त कर लिया है।” 461

“ऐसा ही है। भगवान (बुद्ध)! ऐसा ही है। सुगत (भगवान बुद्ध)! यह श्रेष्ठ शिष्य जिसका मन इस प्रकार बिना द्वेष, बिना दुर्भावना, निर्मल और शुद्ध है, [193] ने इसी जीवन में चार आश्वासन प्राप्त कर लिए हैं।

“पहली निश्चितता जो उसने प्राप्त की है... [जैसा ऊपर है, नीचे तक:] ... चौथी निश्चितता जो उसने प्राप्त की है वह यह है: 'मान लीजिए कि बुराई करने वाले पर कोई विपत्ति नहीं आती। तब यहीं मैं स्वयं को दोनों दृष्टियों से शुद्ध पाता हूँ/

“यह श्रेष्ठ शिष्य, भंते, जिसका मन इस प्रकार से शत्रुता रहित, द्वेष रहित, निर्मल और शुद्ध है, उसने इसी जीवन में इन चार आश्वासनों को प्राप्त कर लिया है।”

“उत्कृष्ट, भंते! ... हम भगवान (बुद्ध), धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाते हैं। भगवान (बुद्ध) हमें उन गृहस्थ अनुयायियों के रूप में स्वीकार करें जिन्होंने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।”

---

67 सलहा

मैंने ऐसा सुना है। एक बार पूज्य नंदका पूर्वी उद्यान में स्थित मिगारमाता के महल में सावत्थी में रह रहे थे। तब मिगार के पोते सलहा और पेखुनिया के पोते रोहाना पूज्य नंदका के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब पूज्य नंदका ने सलहा से कहा:

"आओ, सलहा, मौखिक परंपरा, शिक्षा की वंशावली, सुनी-सुनाई बातों, शास्त्रों के संग्रह, तार्किक तर्क, अनुमानित तर्क, तर्कपूर्ण चिंतन, मनन के बाद किसी मत को स्वीकार करने, वक्ता की दिखावटी योग्यता, या यह सोचकर कि 'संन्यासी हमारा गुरु है', मत मानो। परन्तु जब तुम स्वयं जान लो: 'ये बातें हानिकारक (अकुशल) हैं; ये बातें निंदनीय हैं; ये बातें बुद्धिमानों द्वारा निंदनीय हैं; इन बातों को स्वीकार करने और अपनाने से हानि और पीड़ा होती है, तब तुम्हें इन्हें त्याग देना चाहिए।"

(1) "सलाहा, तुम्हें क्या लगता है, क्या लालच है?"

"हां, भंते।"

"मेरा कहना है कि इसका अर्थ है लालसा। एक लालची व्यक्ति, जो लालसा से भरा होता है, जीवन को नष्ट करता है, बिना माँगे चीज़ें ले लेता है, दूसरे की पत्नी के साथ व्यभिचार करता है और झूठ बोलता है; और वह दूसरों को भी ऐसा करने के लिए उकसाता है। क्या इससे उसे लंबे समय तक हानि और कष्ट सहना पड़ेगा?"

"हां, भंते।"

(2) "सलहा, तुम्हें क्या लगता है, क्या नफरत है?"

"हां, भंते।"

"मेरा मानना है कि इसका अर्थ दुर्भावना है। घृणा से भरा, दुर्भावना से ग्रसित व्यक्ति जीवन को नष्ट करता है... और वह दूसरों को भी ऐसा करने के लिए उकसाता है। क्या इससे उसे लंबे समय तक हानि और पीड़ा सहनी पड़ेगी?"

"हां, भंते।"

(3) "सलाहा, तुम्हें क्या लगता है, क्या कोई मोह (मोह) है?"

"हां, भंते।"

"मेरा मानना है कि इसका अर्थ अज्ञान है। अज्ञान में डूबा हुआ भ्रमित व्यक्ति जीवन को नष्ट करता है... और वह दूसरों को भी ऐसा करने के लिए प्रेरित करता है। क्या इससे उसे लंबे समय तक हानि और पीड़ा सहनी पड़ेगी?"

"हां, भंते।"

"सला, तुम्हारा क्या विचार है? क्या ये बातें लाभकारी (कुसला) हैं या हानिकारक (अकुसला)?" - "हानिकारक (अकुसला), भंते।" - "दोषी या निर्दोष?" - "दोषी, भंते।" - "बुद्धिमानों द्वारा निंदा की गई या प्रशंसा की गई?" - "बुद्धिमानों द्वारा निंदा की गई, भंते।" - "स्वीकृत और ग्रहण किए जाने पर, क्या इनसे हानि और पीड़ा होती है या नहीं, या तुम इसे कैसे लेते हो?" [195] - "स्वीकृत और ग्रहण किए जाने पर, इनसे हानि और पीड़ा होती है। इसलिए हम इसे ग्रहण करते हैं।"

इसलिए, सलहा, जब हमने कहा: "आओ, सलहा, मौखिक परंपरा का अनुसरण मत करो... बल्कि जब तुम स्वयं जान लो: 'ये बातें हानिकारक (अकुसला) हैं; ये बातें निंदनीय हैं; बुद्धिमानों द्वारा इनकी निंदा की जाती है; इन बातों को अपनाने और अभ्यास करने से हानि और पीड़ा होती है', तो तुम्हें इन्हें त्याग देना चाहिए, इसी कारण से यह कहा गया था।"

"आओ, सलहा, मौखिक परंपरा, शिक्षा की वंशावली, सुनी-सुनाई बातों, शास्त्रों के संग्रह, तार्किक तर्क, अनुमान आधारित तर्क, तर्कपूर्ण चिंतन, मनन के बाद किसी मत को स्वीकार करने, वक्ता की दिखावटी योग्यता, या यह सोचकर कि 'संन्यासी हमारा गुरु है' के आधार पर मत चलो। बल्कि जब तुम स्वयं जान लो कि 'ये बातें लाभकारी (कुशल) हैं; ये बातें निष्कलंक हैं; ये बातें बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित हैं; इन बातों को स्वीकार करने और अपनाने से कल्याण और सुख प्राप्त होता है,' तब तुम्हें इनके अनुसार जीवन जीना चाहिए।"

(1) "सलाहा, तुम्हारा क्या विचार है, क्या लालच न होना जैसी कोई चीज है?"

"हां, भंते।"

"मेरा मानना है कि इसका अर्थ है लालसा का अभाव। लोभ रहित, लालसा रहित व्यक्ति जीवन का नाश नहीं करता, अनधिकृत वस्तुएँ नहीं लेता, दूसरे की पत्नी के साथ अनैतिक संबंध नहीं बनाता, न ही झूठ बोलता है; और न ही वह दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता है। क्या इससे उसे दीर्घकाल तक कल्याण और सुख प्राप्त होगा?"

"हां, भंते।"

(2) "सलाहा, तुम्हारा क्या विचार है, क्या घृणा नहीं होती?"

"हां, भंते।"

"मेरा मानना है कि इसका अर्थ सद्भावना है। एक व्यक्ति जो द्वेष रहित है, सद्भावना से भरा है, वह जीवन का विनाश नहीं करता... न ही वह दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता है। क्या इससे उसका कल्याण और सुख दीर्घकाल तक बना रहेगा?"

"हां, भंते।"

(3) "सलाहा, तुम्हारा क्या विचार है, क्या मोह (मोह) नहीं होता?"

"हां, भंते।"

"मेरा कहना है कि इसका अर्थ है सच्चा ज्ञान। एक भ्रममुक्त व्यक्ति, [196] जिसने सच्चे ज्ञान को प्राप्त कर लिया है, जीवन का विनाश नहीं करता... न ही वह दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता है। क्या इससे उसका कल्याण और सुख लंबे समय तक बना रहेगा?"

"हां, भंते।"

"सलाह, तुम्हारा क्या विचार है? क्या ये बातें लाभकारी (कुशल) हैं या हानिकारक (अकुशल)?" "लाभकारी (कुशल), भंते-" - "दोषी या निर्दोष?" - "निर्दोष, भंते।" "बुद्धिमानों द्वारा निंदा की गई या प्रशंसा की गई?" - "बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसा की गई, भंते।" - "स्वीकृत और अपनाई गई, क्या इनसे कल्याण और सुख प्राप्त होता है या नहीं, या तुम इसे कैसे लेते हो?" - "स्वीकृत और अपनाई गई, इन बातों से कल्याण और सुख प्राप्त होता है। इसलिए हम इन्हें अपनाते हैं।"

इसलिए, सलहा, जब हमने कहा: 'आओ, सलहा, मौखिक परंपरा का अनुसरण मत करो... बल्कि जब तुम स्वयं जान लो: "ये बातें लाभकारी (कुशल) हैं; ये बातें निर्दोष हैं; ये बातें बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित हैं; ये बातें, यदि स्वीकार की जाएं और अपनाई जाएं, तो कल्याण और सुख की ओर ले जाती हैं," तो तुम्हें इनके अनुसार जीवन जीना चाहिए, इसीलिए यह कहा गया था।

"तब, सलहा, वह श्रेष्ठ शिष्य, जो इस प्रकार लालसा से रहित, द्वेष से रहित, भ्रमित नहीं, पूर्णतः ज्ञाता, सदा सजग (ध्यानमग्न/सती) है, प्रेम और करुणा से परिपूर्ण मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है... करुणा से परिपूर्ण मन से... परोपकारी आनंद से परिपूर्ण मन से... उदासीनता से परिपूर्ण (भीतर समाहित/उपेक्खा) मन से, इसी प्रकार दूसरी, तीसरी और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह उदासीनता से परिपूर्ण (भीतर समाहित/उपेक्खा) मन से, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित मन से, समस्त संसार में व्याप्त रहता है।"

तब वह इस प्रकार समझता है: 'यह है; निम्न है; उच्च है; और जो कुछ भी बोध (सन्ना/संग्य) से संबंधित है, उससे आगे भी मुक्ति है।' 462 जब वह इस प्रकार जानता और देखता है, तो उसका मन कामुकता के दोष से, अस्तित्व के दोष (भावो/पुनर्जन्म का कारण) से और अज्ञान के दोष से मुक्त हो जाता है। [197] जब वह मुक्त हो जाता है, तो यह ज्ञान प्राप्त होता है: '[यह] मुक्त हो गया है।' वह समझता है: 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आने की कोई आवश्यकता नहीं है।'

वह इस प्रकार समझता है: 'पहले लोभ था; वह हानिकारक (अकुशल) था। अब लोभ नहीं है; इसलिए यह लाभकारी (कुशल) है। पहले घृणा थी; वह हानिकारक (अकुशल) थी। अब लोभ नहीं है; इसलिए यह लाभकारी (कुशल) है। पहले मोह था; वह हानिकारक (अकुशल) था। अब मोह नहीं है; इसलिए यह लाभकारी (कुशल) है।' ...

"इस प्रकार इसी जीवन में वह भूख से मुक्त होकर, तृप्त और शांत होकर, परमानंद का अनुभव करता है, स्वयं दिव्य बन जाता है।" 463

बातचीत के 68 आधार (कथावत्थु)

भिक्षुओं, बातचीत के ये तीन आधार हैं। वे तीन क्या हैं? (1) अतीत का जिक्र करते हुए, कोई कहेगा: 'ऐसा अतीत में था' (2) भविष्य का जिक्र करते हुए, कोई कहेगा: 'ऐसा भविष्य में होगा' (3) वर्तमान का जिक्र करते हुए, कोई कहेगा: 'ऐसा अभी, इस समय है।'

भिक्षुओं, बातचीत के संदर्भ में ही किसी व्यक्ति को बातचीत के योग्य या अयोग्य समझा जा सकता है। यदि किसी व्यक्ति से कोई ऐसा प्रश्न पूछा जाए जिसका उत्तर स्पष्ट रूप से दिया जाना चाहिए और वह स्पष्ट रूप से उत्तर न दे; यदि कोई ऐसा प्रश्न पूछा जाए जिसका उत्तर भेद करके दिया जाना चाहिए और वह भेद किए बिना उत्तर दे; यदि कोई ऐसा प्रश्न पूछा जाए जिसका उत्तर प्रतिप्रश्न के साथ दिया जाना चाहिए और वह प्रतिप्रश्न पूछे बिना उत्तर दे; यदि कोई ऐसा प्रश्न पूछा जाए जिसे अलग रखा जाना चाहिए और वह उसे अलग न रखे, तो ऐसी स्थिति में वह व्यक्ति बातचीत के योग्य नहीं है। 464

लेकिन यदि इस व्यक्ति से कोई ऐसा प्रश्न पूछा जाए जिसका उत्तर स्पष्ट रूप से दिया जाना चाहिए और वह स्पष्ट रूप से उत्तर दे; [यदि उससे] कोई ऐसा प्रश्न पूछा जाए जिसका उत्तर भेद करने के बाद दिया जाना चाहिए और वह भेद करने के बाद उत्तर दे; [यदि उससे] कोई ऐसा प्रश्न पूछा जाए जिसका उत्तर प्रतिप्रश्न के साथ दिया जाना चाहिए और वह प्रतिप्रश्न के साथ उत्तर दे; [यदि उससे] कोई ऐसा प्रश्न पूछा जाए जिसे अलग रखा जाना चाहिए और वह उसे अलग रख दे, तो ऐसी स्थिति में यह व्यक्ति बोलने के योग्य है।

भिक्षुओं, बातचीत के संदर्भ में ही किसी व्यक्ति को बातचीत के योग्य या अयोग्य समझा जाना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति से कोई प्रश्न पूछा जाए और वह अपने पक्ष और विरोधी पक्ष के प्रति दृढ़ न रहे; यदि वह अपनी रणनीति पर अडिग न रहे; यदि वह ज्ञात तथ्य के बारे में अपने कथन पर अडिग न रहे; यदि वह प्रक्रिया पर अडिग न रहे, तो ऐसे में वह व्यक्ति बातचीत के योग्य नहीं है।

लेकिन यदि इस व्यक्ति से कोई प्रश्न पूछा जाता है और वह अपनी स्थिति और विरोधी स्थिति के संबंध में दृढ़ रहता है; यदि वह अपनी रणनीति में दृढ़ रहता है; यदि वह ज्ञात तथ्य के बारे में अपने कथन में दृढ़ रहता है; यदि वह प्रक्रिया में दृढ़ रहता है, तो ऐसे मामले में यह व्यक्ति बोलने के योग्य है।

भिक्षुओं, बातचीत के संदर्भ में ही किसी व्यक्ति को बातचीत के योग्य या अयोग्य समझा जाना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति से कोई प्रश्न पूछा जाए और वह टालमटोल वाला उत्तर दे, चर्चा को अप्रासंगिक विषय की ओर मोड़ दे और क्रोध, घृणा और कटुता प्रदर्शित करे, तो ऐसी स्थिति में वह व्यक्ति बातचीत के अयोग्य है।

लेकिन अगर इस व्यक्ति से कोई प्रश्न पूछा जाता है और वह टालमटोल वाला जवाब नहीं देता, चर्चा को किसी अप्रासंगिक विषय की ओर नहीं मोड़ता, या क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित नहीं करता, तो ऐसे मामले में यह व्यक्ति बात करने के योग्य है।

भिक्षुओं, बातचीत के संदर्भ में ही किसी व्यक्ति को बातचीत के योग्य या अयोग्य समझा जाना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति से कोई प्रश्न पूछा जाए और वह प्रश्नकर्ता को अभिभूत कर दे, उसे कुचल दे, उसका उपहास करे और उसकी किसी छोटी सी गलती को पकड़ ले, तो 466 ऐसे मामले में वह व्यक्ति बातचीत के अयोग्य है।

लेकिन अगर इस व्यक्ति से कोई प्रश्न पूछा जाता है और वह [प्रश्नकर्ता को] अभिभूत नहीं करता, न ही उसे कुचलता है, न ही उसका उपहास करता है, न ही उसकी किसी मामूली गलती को पकड़ता है, तो ऐसे मामले में यह व्यक्ति बोलने के योग्य है।

भिक्षुओं, बातचीत के संदर्भ में ही किसी व्यक्ति को सहायक अवस्था वाला या सहायक अवस्था वाला समझा जाना चाहिए। जो व्यक्ति ध्यान से नहीं सुनता, वह सहायक अवस्था में नहीं होता; जो सुनता है, वह सहायक अवस्था में होता है। सहायक अवस्था वाला व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से एक बात को जानता है, एक बात को पूर्णतः समझता है, एक बात का त्याग करता है और एक बात को अनुभव करता है। प्रत्यक्ष रूप से एक बात को जानकर, एक बात को पूर्णतः समझकर, एक बात का त्याग करके और एक बात को अनुभव करके ही वह सही मोक्ष प्राप्त करता है। 467

"यही, भिक्षुओं, वार्ता का लक्ष्य है, चर्चा का लक्ष्य है, सहायक स्थिति का लक्ष्य है, सुनने का लक्ष्य है, अर्थात् अनासक्ति के माध्यम से मन की मुक्ति।" [199]

जो लोग झगड़ालू इरादे से बोलते हैं,

अपनी राय में अड़े रहते हैं, अभिमान से फूले हुए होते हैं,

नीच होते हैं, सद्गुणों पर हमला करते हैं, 468

एक दूसरे पर हमला करने के अवसर तलाशते हैं।

जब उनका विरोधी

बुरी बातें बोलता है और गलती करता है तो वे आपस में प्रसन्न होते हैं,

उसकी घबराहट और हार पर खुशी मनाते हैं;

लेकिन श्रेष्ठ जन ऐसी बातों में शामिल नहीं होते।

यदि कोई बुद्धिमान व्यक्ति उचित समय जानकर,

बिना झगड़ालू या अहंकारी हुए, बोलना चाहे , तो उसे श्रेष्ठ व्यक्तियों द्वारा अपनाए जाने वाले, धम्म और अर्थ से जुड़े वचन

बोलने चाहिए ।469

वह उद्दंड या आक्रामक नहीं होता,

उसका मन घमंडी नहीं होता, और

वह ईर्ष्या से मुक्त होकर

सही ज्ञान के आधार पर बोलता है।

उसे अच्छी तरह से व्यक्त की गई बातों की सराहना करनी चाहिए

, लेकिन बुरी तरह से कही गई बातों पर हमला नहीं करना चाहिए।

उसे

दूसरों की कमियां निकालने का अभ्यास नहीं करना चाहिए, न ही उनकी गलतियों को उजागर करना चाहिए;

उसे अपने प्रतिद्वंदी को दबाना या कुचलना नहीं चाहिए,

न ही झूठे शब्द बोलने चाहिए।

वास्तव में, अच्छे लोगों के बीच चर्चा

ज्ञान और आत्मविश्वास के लिए होती है।

उच्च वर्ग के लोग इसी प्रकार चर्चा करते हैं;

यही उच्च वर्ग के लोगों की चर्चा है।

यह समझकर बुद्धिमान व्यक्ति को

अहंकार नहीं करना चाहिए, बल्कि चर्चा करनी चाहिए।

---

69 अन्य संप्रदाय (अन्नतित्तिया)

भिक्षु (सन्यासी), अन्य संप्रदायों के तपस्वी आपसे पूछ सकते हैं: 'मित्रों, ये तीन चीजें हैं। कौन सी तीन? लोभ, घृणा और मोह। ये तीन हैं। मित्रों, इनके बीच क्या भेद, क्या अंतर, क्या फर्क है?' यदि आपसे यह पूछा जाए, तो आप क्या उत्तर देंगे?'

"भंते, हमारी शिक्षाएं भगवान (बुद्ध) में निहित हैं, भगवान (बुद्ध) द्वारा निर्देशित हैं, भगवान (बुद्ध) की शरण लो। यदि भगवान (बुद्ध) इस कथन का अर्थ स्पष्ट कर दें तो अच्छा होगा। उनसे सुनकर भिक्षु इसे याद रखेंगे।"

“तो सुनो, भिक्षुओं, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।” “जी, भंते,” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं, यदि अन्य संप्रदायों के तपस्वी आपसे ऐसा प्रश्न पूछें, [200] तो आपको उन्हें इस प्रकार उत्तर देना चाहिए: 'हे मित्रों, कामवासना (राग) थोड़ी निंदनीय है परन्तु धीरे-धीरे मिटती है; घृणा बहुत निंदनीय है परन्तु शीघ्र मिटती है; मोह (मोह) बहुत निंदनीय है और धीरे-धीरे मिटती है।" 171

(1) "[मान लीजिए वे पूछते हैं:] 'लेकिन, मित्रों, अजन्मी कामवासना क्यों उत्पन्न होती है और उत्पन्न कामवासना क्यों बढ़ती और फैलती है?' आपको उत्तर देना चाहिए: 'आकर्षक वस्तु। जो व्यक्ति लापरवाही से आकर्षक वस्तु पर ध्यान देता है, उसकी अजन्मी कामवासना उत्पन्न होती है और बढ़ती और फैलती है। मित्रों, यही अजन्मी कामवासना उत्पन्न होने और उत्पन्न कामवासना बढ़ने और फैलने का कारण है।'

(2) "[मान लीजिए वे पूछते हैं:] लेकिन हे मित्रों, अजन्मी घृणा (दोष संस्कृत: द्वेष) के उत्पन्न होने और उत्पन्न घृणा के बढ़ने और फैलने का कारण क्या है? आपको उत्तर देना चाहिए: 'एक घृणित वस्तु। जो व्यक्ति लापरवाही से किसी घृणित वस्तु पर ध्यान देता है, उसमें अजन्मी घृणा उत्पन्न होती है और उत्पन्न घृणा बढ़ती और फैलती है। हे मित्रों, यही कारण है कि अजन्मी घृणा उत्पन्न होती है और उत्पन्न घृणा बढ़ती और फैलती है।"

(3) "[मान लीजिए वे पूछते हैं:] 'लेकिन हे मित्रों, अजन्मा मोह (मोह) क्यों उत्पन्न होता है और उत्पन्न मोह (मोह) क्यों बढ़ता और फैलता है?' आपको उत्तर देना चाहिए: 'लापरवाह ध्यान। जो लापरवाही से ध्यान देता है, उसके लिए अजन्मा मोह (मोह) उत्पन्न होता है और उत्पन्न मोह (मोह) क्यों बढ़ता और फैलता है। हे मित्रों, यही कारण है कि अजन्मा मोह (मोह) उत्पन्न होता है और उत्पन्न मोह (मोह) क्यों बढ़ता और फैलता है।"

(1) "[मान लीजिए वे पूछते हैं:] 'लेकिन हे मित्रों, अजन्मी कामवासना क्यों नहीं उठती और उठी हुई कामवासना क्यों त्याग दी जाती है?' आपको उत्तर देना चाहिए: 'एक अप्रिय वस्तु। जो व्यक्ति अप्रिय वस्तु पर ध्यानपूर्वक ध्यान देता है, उसकी अजन्मी कामवासना नहीं उठती और उठी हुई कामवासना त्याग दी जाती है। हे मित्रों, यही कारण है कि अजन्मी कामवासना नहीं उठती और उठी हुई कामवासना त्याग दी जाती है।

(2) "[मान लीजिए वे पूछते हैं:] 'लेकिन हे मित्रों, इसका क्या कारण है कि अजन्मा द्वेष (दोष संस्कृत: द्वेष) उत्पन्न होता है और उत्पन्न द्वेष का त्याग हो जाता है?' आपको उत्तर देना चाहिए: 'प्रेमपूर्ण करुणा द्वारा मन की मुक्ति। जो व्यक्ति प्रेमपूर्ण करुणा (मेत्ता) द्वारा मन की मुक्ति पर ध्यानपूर्वक ध्यान देता है, उसके लिए अजन्मा द्वेष उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न द्वेष का त्याग हो जाता है। हे मित्रों, यही कारण है कि अजन्मा द्वेष उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न द्वेष का त्याग हो जाता है।'

(3) "[मान लीजिए वे पूछते हैं: 'लेकिन हे मित्रों, इसका क्या कारण है कि अजन्मा मोह उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न मोह का त्याग हो जाता है?' आपको उत्तर देना चाहिए: 'सावधानीपूर्वक ध्यान देना। जो व्यक्ति ध्यानपूर्वक ध्यान देता है, उसके लिए अजन्मा मोह उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न मोह का त्याग हो जाता है। हे मित्रों, यही कारण है कि अजन्मा मोह उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न मोह का त्याग हो जाता है।'"

ध्यान दें: यहाँ कामवासना (राग) का अर्थ सांसारिक वस्तुओं (वस्तुओं, प्राणियों/लोगों आदि) के प्रति आकर्षण है। द्वेष (दोष, संस्कृत: द्वेष) का अर्थ सांसारिक चीजों से अरुचि है और मोह (मोह) का अर्थ अंधा मन, भ्रमित मन (अर्थात वह व्यक्ति जो मानता है कि यह संसार और इसके सुख वांछनीय हैं) है।

हानि के 70 मूल कारण (अकुसला-मूला)

"भिक्खुओं (भिक्षुओं), ये तीन हानिकारक (अकुसल) जड़ें हैं। कौन सी तीन? हानिकारक (अकुसल) जड़, लालच (लोभो); हानिकारक (अकुसल) जड़, घृणा (दोसो सं. दवेश); और हानिकारक (अकुसल) जड़, भ्रम (मोह)।

(1) भिक्षुओं, जो भी लोभ उत्पन्न होता है, वह हानिकारक (अकुशल) है। लोभग्रस्त व्यक्ति शरीर, वाणी और मन से जो भी कर्म करता है, वह भी हानिकारक (अकुशल) है। जब लोभग्रस्त व्यक्ति, लोभ से ग्रस्त होकर, मन से लोभित होकर, किसी दूसरे को झूठे बहाने से कष्ट

पहुँचाता है—हत्या, कारावास, ज़ब्ती, निंदा या निर्वासन द्वारा—यह सोचकर कि: मैं शक्तिशाली हूँ, मुझे शक्ति चाहिए—तो वह भी हानिकारक (अकुशल) है। इस प्रकार, लोभ से उत्पन्न, लोभ के कारण, लोभ से उत्पन्न और लोभ से ग्रस्त अनेक हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) उसमें उत्पन्न होते हैं।

(2) "जो भी घृणा (दोष संस द्वेष) उत्पन्न होती है, वह हानिकारक (अकुसल) है। घृणा से परिपूर्ण व्यक्ति द्वारा शरीर, वाणी और मन से किया गया प्रत्येक कर्म भी हानिकारक (अकुसल) है। जब घृणा से परिपूर्ण व्यक्ति, घृणा से ग्रस्त होकर, मन में घृणा का भाव रखकर, किसी दूसरे को यह सोचकर कष्ट पहुँचाता है कि: मैं शक्तिशाली हूँ, [202] मुझे शक्ति चाहिए, तो वह भी हानिकारक (अकुसल) है। इस प्रकार, घृणा से उत्पन्न, घृणा के कारण, घृणा से प्रेरित और घृणा से ग्रस्त अनेक हानिकारक (अकुसल) गुण उसमें उत्पन्न होते हैं।

(3) "जो भी मोह उत्पन्न होता है, वह अकुशल होता है। जो भी कर्म मोहग्रस्त व्यक्ति शरीर, वाणी और मन से करता है, वह भी अकुशल होता है। जब कोई मोहग्रस्त व्यक्ति मोह से ग्रस्त होकर, मन में मोह मग्न होकर, किसी झूठे बहाने से दूसरे को कष्ट पहुँचाता है... [यह सोचकर]: 'मैं शक्तिशाली हूँ, मुझे शक्ति चाहिए,' तो वह भी अकुशल होता है। इस प्रकार, मोह से उत्पन्न अनेक अकुशल गुण उसमें उत्पन्न होते हैं; जो मोह के कारण होते हैं, मोह से उत्पन्न होते हैं और मोह से ग्रस्त होते हैं। "ऐसे व्यक्ति को, भिक्षुओं, अनुचित समय पर बोलने वाला, झूठ बोलने वाला, अनुत्पादक, अधार्मिक (गलत मार्ग पर चलने वाला) और अनुशासनहीन बोलने वाला कहा जाता है। और ऐसे व्यक्ति को अनुचित समय पर बोलने वाला क्यों कहा जाता है..." अनुशासनहीनता की बात कौन करता है? यह व्यक्ति हत्या, कारावास, संपत्ति ज़ब्ती, निंदा या देश निकाला जैसे झूठे बहाने बनाकर दूसरे पर अत्याचार करता है - यह सोचकर कि: मैं शक्तिशाली हूँ, मुझे शक्ति चाहिए। इसी प्रकार, जब उससे तथ्यों के अनुसार बात की जाती है, तो वह [निंदा करने वाले को] तुच्छ समझता है, वह [अपनी गलतियों को] स्वीकार नहीं करता। जब उससे तथ्यों के विपरीत बात की जाती है, तो वह कही गई बात को समझने का प्रयास नहीं करता।

'इस कारण से यह असत्य है; इस कारण से यह तथ्य के विपरीत है। इसलिए ऐसे व्यक्ति को अनुचित समय पर बोलने वाला, झूठ बोलने वाला, लाभहीन बोलने वाला, गैर-धम्म (गलत मार्ग) पर चलने वाला और अनुशासनहीन बोलने वाला कहा जाता है।'

"ऐसा व्यक्ति, जो लोभ से उत्पन्न अकुशल गुणों (धम्म) से ग्रस्त है, ... मोह से उत्पन्न गुणों (मोह) से ग्रस्त है, और जिसका मन इन गुणों से ग्रस्त है, वह इसी जीवन में कष्ट, पीड़ा, व्यथा और बुखार में लीन रहता है, और मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, उसके लिए एक बुरा गंतव्य अपेक्षित है।"

मान लीजिए कि एक वृक्ष 473 तीन मलुवा लताओं से घिरा हुआ है। उस पर विपत्ति और विपत्ति दोनों ही विपत्तियाँ आएँगी। ठीक इसी प्रकार, लोभ [203] से उत्पन्न, घृणा से उत्पन्न, मोह (मोह) से उत्पन्न, अकुशल गुणों (धम्म) से ग्रस्त व्यक्ति, जिसका मन इन गुणों से ग्रस्त है, इसी जीवन में कष्ट, पीड़ा, व्यथा और बुखार में लीन रहता है, और मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, उसके लिए एक बुरा गंतव्य निश्चित है। ये तीन अकुशल जड़ें हैं।

भिक्षुओं, ये तीन लाभकारी (कुशल) मूल हैं। वे तीन कौन से हैं? लाभकारी (कुशल) मूल, लोभ रहित होना; लाभकारी (कुशल) मूल, घृणा रहित होना; और लाभकारी (कुशल) मूल, मोह रहित होना।

(1) भिक्षुओं, जो कुछ भी लोभ रहित होता है, वह लाभकारी (कुशल) है। जो भी कर्म लोभ रहित व्यक्ति शरीर, वाणी और मन से करता है, वह भी लाभकारी (कुशल) है। जब लोभ रहित व्यक्ति, लोभ से ग्रस्त न होकर, लोभ से ग्रस्त मन से रहित होकर, किसी दूसरे को झूठे बहाने से – हत्या, कारावास, ज़ब्ती, निंदा या निर्वासन द्वारा – यह सोचकर कष्ट नहीं पहुँचाता कि 'मैं शक्तिशाली हूँ, मुझे शक्ति चाहिए', तो वह भी लाभकारी (कुशल) है। इस प्रकार अनेक लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उसमें उत्पन्न होते हैं, जो लोभ रहित होने से उत्पन्न होते हैं, लोभ रहित होने के कारण होते हैं, लोभ रहित होने से उत्पन्न होते हैं और लोभ रहित होने की स्थिति से उत्पन्न होते हैं।

(2) "जो कुछ भी घृणा रहित होता है, वह लाभकारी (कुशल) है। जो भी कर्म घृणा रहित व्यक्ति शरीर, वाणी और मन से करता है, वह भी लाभकारी (कुशल) है। जब कोई घृणा रहित व्यक्ति, घृणा से ग्रस्त हुए बिना, और घृणा से प्रेरित हुए बिना, किसी झूठे बहाने से दूसरे

को कष्ट नहीं पहुँचाता... तो वह भी लाभकारी (कुशल) है। इस प्रकार, घृणा रहित, घृणा रहित, घृणा रहित से उत्पन्न और घृणा रहित से बद्ध अनेक लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उसमें उत्पन्न होते हैं।"

(3) "जो कुछ भी मोहहीनता से उत्पन्न होता है, वह लाभकारी (कुशल) है। जो व्यक्ति मोहहीन है, वह शरीर, वाणी और मन से जो भी कर्म करता है, वह भी लाभकारी (कुशल) है। जब कोई व्यक्ति मोहहीन होकर, मोह से ग्रस्त हुए बिना, किसी झूठे बहाने से दूसरे को कष्ट नहीं पहुँचाता, तो वह भी लाभकारी (कुशल) है। इस प्रकार [204] अनेक लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उसमें उत्पन्न होते हैं, जो मोहहीनता से उत्पन्न होते हैं, मोहहीनता से उत्पन्न होते हैं, मोहहीनता से व्युत्पन्न होते हैं और मोहहीनता से वातानुकूलित होते हैं।"

भिक्षुओं, ऐसे व्यक्ति को उचित समय पर बोलने वाला, तथ्यों के अनुसार बोलने वाला, लाभकारी वचन बोलने वाला, धर्म का उपदेश देने वाला और अनुशासन का उपदेश देने वाला कहा जाता है। और ऐसे व्यक्ति को उचित समय पर बोलने वाला और अनुशासन का उपदेश देने वाला क्यों कहा जाता है? यह व्यक्ति किसी दूसरे को झूठे बहाने से कष्ट नहीं पहुँचाता—हत्या, कारावास, संपत्ति ज़ब्त करना, निंदा करना या देश निकाला देना—यह सोचकर कि मैं शक्तिशाली हूँ, मुझे शक्ति चाहिए। इस प्रकार, जब तथ्यों के अनुसार उससे बात की जाती है, तो वह अपनी गलतियों को स्वीकार करता है; वह निंदा करने वाले का तिरस्कार नहीं करता। जब तथ्यों के विपरीत बात की जाती है, तो वह कही गई बात को स्पष्ट करने का प्रयास करता है: फलाँ-फलाँ कारण से यह असत्य है; फलाँ-फलाँ कारण से यह तथ्यों के विपरीत है। इसलिए ऐसे व्यक्ति को उचित समय पर बोलने वाला, तथ्यों के अनुसार बोलने वाला, लाभकारी वचन बोलने वाला, धर्म का उपदेश देने वाला और अनुशासन का उपदेश देने वाला कहा जाता है।

ऐसा व्यक्ति लोभ, घृणा और मोह से उत्पन्न अकुशल गुणों को जड़ से त्याग देता है, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान नष्ट कर देता है, ताकि वे भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हों। वह इसी जीवन में सुखपूर्वक रहता है, बिना किसी कष्ट, पीड़ा या बुखार के, और इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

मान लीजिए कि एक पेड़ तीन मलुवा लताओं से घिरा हुआ है। फिर एक आदमी फावड़ा और टोकरी लेकर आता है। वह लताओं को जड़ से काट देता है, उन्हें खोदकर निकाल लेता है और उनकी जड़ों को, यहाँ तक कि उनकी छोटी-छोटी जड़ों और रेशों को भी, खींचकर निकाल लेता है। वह लताओं को टुकड़ों में काटता है, टुकड़ों को फाड़ता है और उन्हें पतले टुकड़ों में बदल देता है। फिर वह उन टुकड़ों को हवा और धूप में सुखाता है, आग में जलाता है, [205] उन्हें राख में बदल देता है और राख को तेज हवा में उड़ा देता है या नदी की तेज धारा में बहा देता है। इस तरह, वे मलुवा लताएँ जड़ से कट जाती हैं, ताड़ के ठूंठ की तरह नष्ट हो जाती हैं ताकि वे भविष्य में फिर से न उग सकें।

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, ऐसा व्यक्ति लोभ, घृणा और मोह से उत्पन्न अकुशल गुणों (धम्म) को जड़ से त्याग देता है, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान नष्ट कर देता है, ताकि वे भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हों। वह इसी जीवन में सुखपूर्वक रहता है, बिना किसी कष्ट, पीड़ा या बुखार के, और इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त करता है। ये तीन लाभकारी (कुशल) मूल हैं।"

---

71 उपोसथा (उपवास)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) पूर्वी उद्यान में स्थित मिगारमाता के महल में सावत्थी में निवास कर रहे थे। तब उपोसथ के दिन विशाखा मिगारमाता भगवान (बुद्ध) के पास आईं, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गईं। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"विशाखा, तुम दिन के बीच में क्यों आ गई हो?"

"आज भंते, मैं उपोसथ व्रत कर रहा हूँ।"

"विशाखा, उपोसथ तीन प्रकार के होते हैं। वे तीन कौन से हैं? ग्वालों का उपोसथ, निगंथों (जैनों) का उपोसथ, 474 और कुलीनों का उपोसथ।"

(1) "हे विशाखा, ग्वालों का उपोसथा कैसे देखा जाता है? मान लीजिए, विशाखा, शाम को एक ग्वाला गायों को उनके मालिकों को लौटाता है। वह इस प्रकार सोचता है: 'आज गायें फलाँ स्थान पर चरीं और फलाँ स्थान पर पानी पिया। कल गायें फलाँ स्थान पर चरेंगी और फलाँ स्थान पर पानी पिएंगी।' इसी प्रकार, यहाँ उपोसथा का अवलोकन करने वाला कोई व्यक्ति इस प्रकार सोचता है: 'आज मैंने यह और वह भोजन खाया; आज मैंने इस और उस प्रकार का भोजन किया। [206] कल मैं यह और वह भोजन खाऊँगा; कल मैं इस और उस प्रकार का भोजन करूँगा।' इस प्रकार वह दिन भर मन में लोभ और लालसा लिए रहता है। इसी प्रकार ग्वालों का उपोसथा देखा जाता है। इस प्रकार देखा गया ग्वालों का उपोसथा न तो बहुत फलदायी और लाभदायक है, न ही असाधारण रूप से उज्ज्वल और व्यापक है।

(2) "हे विशाखा, निगंथों (जैनों) का उपोसत कैसे मनाया जाता है? हे विशाखा, निगंथ (जैन) नामक तपस्वी हैं। वे अपने शिष्यों को इस प्रकार आदेश देते हैं: 'हे हे जन, पूर्व दिशा में सौ योजन से अधिक दूरी पर रहने वाले जीवों के प्रति हिंसा का दंड त्याग दो। पश्चिम दिशा में सौ योजन से अधिक दूरी पर रहने वाले जीवों के प्रति हिंसा का दंड त्याग दो। उत्तर दिशा में सौ योजन से अधिक दूरी पर रहने वाले जीवों के प्रति हिंसा का दंड त्याग दो। दक्षिण दिशा में सौ योजन से अधिक दूरी पर रहने वाले जीवों के प्रति हिंसा का दंड त्याग दो।' इस प्रकार वे उन्हें कुछ जीवों के प्रति सहानुभूति और करुणा रखने का आदेश देते हैं, लेकिन दूसरों के प्रति नहीं। उपोसत के दिन, वे अपने शिष्यों को इस प्रकार आदेश देते हैं: 'हे हे जन, सभी वस्त्र त्यागकर यह पाठ करो: 'मैं कहीं भी किसी का नहीं हूँ, और न ही कहीं भी किसी का कुछ है जो मेरा हो।' मेरा। 476 परन्तु उसके माता-पिता जानते हैं: 'यह हमारा पुत्र है' और वह जानता है: 'ये मेरे माता-पिता हैं।' उसकी पत्नी और बच्चे जानते हैं: 'यह हमारा सहारा है' और वह जानता है: 'ये मेरी पत्नी और बच्चे हैं।' उसके दास, श्रमिक और सेवक जानते हैं: 'यह हमारा स्वामी है' और वह जानता है: 'ये मेरे दास, श्रमिक और सेवक हैं।' इस प्रकार, जब उन्हें सत्य का पालन करने का आदेश दिया जाना चाहिए, तब निगंथ उन्हें झूठी बातें करने का आदेश देते हैं। मैं कहता हूँ, यह झूठी बातें हैं। जब वह रात बीत जाती है, तो वह उन वस्तुओं का उपयोग करता है जो उसे दी नहीं गई हैं। मैं कहता हूँ, यह वह लेना है जो दिया नहीं गया है (चोरी)। निगंथों के उपोसथा का पालन इसी प्रकार किया जाता है। जब कोई निगंथों के मार्ग में उपोसथा का पालन करता है, तो वह उपोसथा न तो बहुत फलदायी और लाभकारी होती है, न ही असाधारण रूप से तेजस्वी और व्यापक होती है।

(3) "हे विशाखा, श्रेष्ठों (बुद्धों के मार्ग) का उपोसथा कैसे किया जाता है? [207] परिश्रम से दूषित मन शुद्ध होता है। 477 और परिश्रम से दूषित मन कैसे शुद्ध होता है? यहाँ, हे विशाखा, एक श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का इस प्रकार स्मरण करता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' जब एक श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का स्मरण करता है, तो उसका मन शांत हो जाता है, आनंद उत्पन्न होता है, और मन के दोष उसी प्रकार दूर हो जाते हैं जैसे किसी का सिर, जब गंदा होता है, परिश्रम से शुद्ध हो जाता है।

"और हे विशाखा, परिश्रम से गंदे सिर को कैसे साफ किया जाता है? शुद्धिकरण के लिए लेप, मिट्टी, जल और व्यक्ति के उचित प्रयास से। इसी प्रकार, जब सिर गंदा होता है, तो परिश्रम से साफ होता है। इसी प्रकार, दूषित मन भी परिश्रम से साफ होता है। और परिश्रम से दूषित मन कैसे साफ होता है? यहाँ, हे विशाखा, एक श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का इस प्रकार स्मरण करता है: 'भगवान (बुद्ध) ...देवताओं और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं। जब एक श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का स्मरण करता है, तो उसका मन शांत हो जाता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के विकार दूर हो जाते हैं। इसे ब्रह्मा के उपोसथ का अवलोकन करने वाला श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है, जो ब्रह्मा के साथ निवास करता है, और ब्रह्मा का ध्यान करने से ही उसका मन शांत होता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के विकार दूर हो जाते हैं।" 478 इसी प्रकार परिश्रम द्वारा दूषित मन शुद्ध होता है।

"विशाखा, दूषित मन परिश्रम से शुद्ध होता है। और परिश्रम से दूषित मन कैसे शुद्ध होता है? यहाँ, विशाखा, एक श्रेष्ठ शिष्य धम्म (मार्ग) का स्मरण इस प्रकार करता है: 'भगवान (बुद्ध) द्वारा धम्म का भली-भांति वर्णन किया गया है, यह प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान है, तात्कालिक है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक है, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाना है। जब एक श्रेष्ठ शिष्य धम्म का स्मरण करता है, तो उसका मन शांत हो जाता है, आनंद उत्पन्न होता है, और मन के दोष [208] उसी प्रकार दूर हो जाते हैं जैसे शरीर, जब गंदा होता है, परिश्रम से शुद्ध हो जाता है।"

"हे विशाखा, परिश्रम से गंदे शरीर को कैसे शुद्ध किया जाता है? स्नान करने वाले ब्रश, चूने के पाउडर, जल और व्यक्ति के उचित प्रयास से। इसी प्रकार, जब शरीर गंदा होता है, तो परिश्रम से शुद्ध होता है। इसी प्रकार, दूषित मन भी परिश्रम से शुद्ध होता है। और परिश्रम से दूषित मन कैसे शुद्ध होता है? हे विशाखा, यहाँ एक श्रेष्ठ शिष्य धम्म का स्मरण इस प्रकार करता है: 'भगवान (बुद्ध) द्वारा धम्म की अच्छी व्याख्या की गई है', जिसे ज्ञानी स्वयं अनुभव कर सकते हैं। जब एक श्रेष्ठ शिष्य धम्म का स्मरण करता है, तो उसका मन शांत हो जाता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के विकार दूर हो जाते हैं। इसे धम्म के उपोसथ का पालन करने वाला, धम्म के साथ रहने वाला श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है, और धम्म का चिंतन करने से ही उसका मन शांत होता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के विकार दूर हो जाते हैं। इसी प्रकार परिश्रम से दूषित मन शुद्ध होता है।"

"हे विशाखा, दूषित मन परिश्रम से शुद्ध होता है। और परिश्रम से दूषित मन कैसे शुद्ध होता है? यहाँ, हे विशाखा, एक श्रेष्ठ शिष्य संघ का स्मरण इस प्रकार करता है: 'भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का संघ अच्छे मार्ग का अनुसरण करता है, सीधे मार्ग का अनुसरण करता है, सच्चे मार्ग का अनुसरण करता है, उचित मार्ग का अनुसरण करता है; अर्थात्, चार युग्मों के व्यक्तियों का, आठ प्रकार के व्यक्तियों का - भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का यह संघ दान के योग्य है, आतिथ्य के योग्य है, भेंट के योग्य है, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है। जब एक श्रेष्ठ शिष्य संघ का स्मरण करता है, तो उसका मन शांत हो जाता है, आनंद उत्पन्न होता है, और मन के दोष उसी प्रकार दूर हो जाते हैं जैसे एक गंदा कपड़ा परिश्रम से साफ हो जाता है।"

"और हे विशाखा, परिश्रम से गंदे कपड़े को कैसे साफ किया जाता है? [209] ऊष्मा, क्षार, गोबर, जल और व्यक्ति के उचित प्रयास से। इसी प्रकार परिश्रम से गंदा कपड़ा साफ होता है। उसी प्रकार, दूषित मन परिश्रम से साफ होता है। और परिश्रम से दूषित मन कैसे साफ होता है? यहाँ, हे विशाखा, एक श्रेष्ठ शिष्य संघ का स्मरण इस प्रकार करता है: 'भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का संघ उत्तम मार्ग का अभ्यास कर रहा है... संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र। जब एक श्रेष्ठ शिष्य संघ का स्मरण करता है, तो उसका मन शांत हो जाता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के विकार दूर हो जाते हैं। इसे संघ के उपोसथ का अवलोकन करने वाला, संघ के साथ रहने वाला श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है, और संघ का चिंतन करने से ही उसका मन शांत होता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के विकार दूर हो जाते हैं। इसी प्रकार दूषित मन को शुद्ध किया जाता है।" परिश्रम द्वारा शुद्ध किया गया।

"हे विशाखा, दूषित मन परिश्रम से शुद्ध होता है। और परिश्रम से दूषित मन कैसे शुद्ध होता है? यहाँ, हे विशाखा, एक श्रेष्ठ शिष्य अपने सदाचारी आचरण को याद करता है, जो अटूट, दोषरहित, निर्मल, बेदाग, मुक्तिदायक, ज्ञानियों द्वारा प्रशंसित, अछूता और समाधि (आत्म-मग्नता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाला है। जब एक श्रेष्ठ शिष्य अपने सदाचारी आचरण को याद करता है, तो उसका मन शांत हो जाता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के दोष उसी प्रकार दूर हो जाते हैं जैसे परिश्रम से गंदा दर्पण साफ हो जाता है।"

"और हे विशाखा, परिश्रम से गंदा दर्पण कैसे साफ होता है? तेल, राख, कपड़े के रोल और व्यक्ति के उचित प्रयास से। इसी प्रकार परिश्रम से गंदा दर्पण साफ होता है। उसी प्रकार, दूषित मन परिश्रम से साफ होता है। और परिश्रम से दूषित मन कैसे साफ होता है? [210] हे विशाखा, यहाँ एक श्रेष्ठ शिष्य अपने निरंतर पुण्य कर्मों का स्मरण करता है... जिससे समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त होती है। जब एक श्रेष्ठ शिष्य अपने पुण्य कर्मों का स्मरण करता है, तो उसका मन शांत हो जाता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के विकार दूर हो जाते हैं। इसे वह श्रेष्ठ शिष्य कहते हैं जो पुण्य कर्मों के उपोसथ का पालन करता है, जो पुण्य कर्मों के साथ रहता है, और पुण्य कर्मों का चिंतन करने से ही उसका मन शांत होता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के विकार दूर हो जाते हैं। इसी प्रकार परिश्रम से दूषित मन साफ होता है।"

"हे विशाखा, दूषित मन परिश्रम से शुद्ध होता है। और परिश्रम से दूषित मन कैसे शुद्ध होता है? यहाँ, विशाखा, एक श्रेष्ठ शिष्य देवताओं का स्मरण करते हुए कहते हैं: 'चार महान राजाओं द्वारा शासित देवता हैं, तावतिंसा देवता, यम देवता, तुषिता देवता, सृष्टि में आनंदित होने वाले देवता, दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले देवता, ब्रह्मा के साथ रहने वाले देवता, और इनसे भी उच्चतर देवता। 479 मुझे भी उन देवताओं के समान ही आस्था है, जिसके कारण जब वे यहाँ से चले गए, तो वहाँ उनका पुनर्जन्म हुआ; मुझमें भी ऐसा ही सद्‌गुण है... ऐसा ही ज्ञान है... ऐसी ही उदारता है।" उन देवताओं (देवदूतों) के पास ऐसा ही दिव्य ज्ञान था, जिसके कारण जब वे यहाँ से चले गए, तो वहाँ उनका पुनर्जन्म हुआ। जब कोई श्रेष्ठ शिष्य अपने और उन देवताओं (देवदूतों) में निहित आस्था, सदाचार, ज्ञान, उदारता और दिव्य ज्ञान का स्मरण करता है, तो उसका मन शांत हो जाता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के दोष उसी प्रकार दूर हो जाते हैं जैसे परिश्रम से अशुद्ध सोना शुद्ध हो जाता है।

"और हे विशाखा, अशुद्ध सोने को परिश्रम से कैसे शुद्ध किया जाता है? भट्टी, नमक, लाल चाक, फूंक मारने वाली पाइप और चिमटे की सहायता से, और व्यक्ति के उचित प्रयास से। इसी प्रकार अशुद्ध सोने को परिश्रम से शुद्ध किया जाता है। उसी प्रकार, दूषित मन को भी परिश्रम से शुद्ध किया जाता है। [211] और दूषित मन को परिश्रम से कैसे शुद्ध किया जाता है? यहाँ, हे विशाखा, एक श्रेष्ठ शिष्य देवताओं (देवदूतों) का स्मरण करते हुए कहते हैं: 'चार महान राजाओं द्वारा शासित देवता (देवदूत/देवता) हैं... और इनसे भी ऊँचे देवता (देवदूत/देवता) हैं। मुझमें भी ऐसा ही विश्वास... ऐसा ही ज्ञान (दिव्य ज्ञान) है जैसा उन देवताओं (देवदूतों) के पास था, जिसके कारण जब वे यहाँ से चले गए, तो वहाँ उनका पुनर्जन्म हुआ।' जब कोई श्रेष्ठ शिष्य अपने और उन देवताओं में विद्यमान आस्था, सदाचार, ज्ञान, उदारता और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का स्मरण करता है, तो उसका मन शांत हो जाता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के विकार दूर हो जाते हैं। इसे ही श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जो देवताओं (देवदूतों) के उपोसथा का अवलोकन करता है, जो देवताओं (देवदूतों) के साथ निवास करता है, और देवताओं (देवदूतों) का ध्यान करने से ही उसका मन शांत होता है, आनंद उत्पन्न होता है और मन के विकार दूर हो जाते हैं। इसी प्रकार परिश्रम से दूषित मन शुद्ध होता है।

(i) "इस महान शिष्य, विशाखा, ने इस प्रकार चिंतन किया: 480 'जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे जीवन-हत्या का त्याग करते हैं और उससे दूर रहते हैं; दंड (हिंसा) और शस्त्र को त्यागकर, वे विवेकशील और दयालु होकर सभी प्राणियों के प्रति करुणामयी भाव से निवास करते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी जीवन-हत्या का त्याग करूंगा और उससे दूर रहूंगा; दंड (हिंसा) और शस्त्र को त्यागकर, मैं भी विवेकशील और दयालु होकर सभी प्राणियों के प्रति करुणामयी भाव से निवास करूंगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूंगा और उपोसथ का पालन करूंगा।'

(ii) "जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे बिना दी हुई वस्तुएँ लेने से परहेज़ करते हैं; वे केवल दी हुई वस्तुएँ ही लेते हैं, केवल दी हुई वस्तुओं की ही अपेक्षा करते हैं, और हृदय से ईमानदार होते हैं, चोरी से रहित होते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी बिना दी हुई वस्तुएँ लेने से परहेज़ करूँगा; मैं केवल दी हुई वस्तुएँ ही स्वीकार करूँगा, केवल दी हुई वस्तुओं की ही अपेक्षा करूँगा, और हृदय से ईमानदार रहूँगा, चोरी से रहित। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।"

(hi) "जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे यौन क्रिया का त्याग करते हैं और ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, अलग रहते हैं, यौन संबंध से परहेज करते हैं, जो आम आदमी का अभ्यास है। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी यौन क्रिया का त्याग करूँगा और ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा, अलग रहूँगा, यौन संबंध से परहेज करूँगा, जो आम आदमी का अभ्यास है। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा। [212]

(iv) "जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे झूठे वचनों का त्याग करते हैं और उनसे दूर रहते हैं; वे सत्य बोलते हैं, सत्य का पालन करते हैं; वे विश्वसनीय और भरोसेमंद होते हैं, संसार को धोखा नहीं देते। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी झूठे वचनों का त्याग करूँगा और उनसे दूर रहूँगा; मैं सत्य का वक्ता और सत्य का अनुयायी बनूँगा, विश्वसनीय और भरोसेमंद बनूँगा, संसार को धोखा नहीं दूँगा। मैं इस मामले में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथ का पालन करूँगा।"

(v) "अरहंत जीवन भर आलस्य के आधार माने जाने वाले मदिरा, शराब और मादक पदार्थों का त्याग करते हैं और उनसे दूर रहते हैं। आज रात-दिन मैं भी आलस्य के आधार माने जाने वाले मदिरा, शराब और मादक पदार्थों का त्याग करूँगा और उनसे दूर रहूँगा। मैं इस मामले में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।"

(6) "अरहंत जीवन भर दिन में एक बार भोजन करते हैं, रात में और उचित समय के बाहर भोजन करने से परहेज़ करते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी दिन में एक बार भोजन करूँगा, रात में और उचित समय के बाहर भोजन करने से परहेज़ करूँगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।"

(vii) "अरहंत जब तक जीवित रहते हैं, वे नृत्य, गायन, वाद्य संगीत और अनुचित प्रदर्शनों से परहेज करते हैं, और माला धारण करके तथा सुगंध और मलहम लगाकर स्वयं को अलंकृत करने से भी परहेज करते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी नृत्य, गायन,

वाद्य संगीत और अनुचित प्रदर्शनों से परहेज करूँगा, और माला धारण करके तथा सुगंध और मलहम लगाकर स्वयं को अलंकृत करने से भी परहेज करूँगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।"

(viii) "अरहंत अपने जीवन भर ऊँचे और आलीशान पलंगों का उपयोग नहीं करते; वे एक छोटे पलंग या पुआल की चटाई पर लेटते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी ऊँचे और आलीशान पलंगों का उपयोग नहीं करूँगा; मैं एक छोटे पलंग या पुआल की चटाई पर लेटूँगा। मैं इस मामले में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।"

"हे विशाखा, इसी प्रकार से श्रेष्ठ पुरुषों के उपोसथा का पालन किया जाता है। जब कोई श्रेष्ठ पुरुषों के मार्ग में उपोसथा का पालन करता है, तो यह बहुत फलदायी और लाभदायक होता है, असाधारण रूप से उज्ज्वल और सर्वव्यापी होता है।"

"यह किस हद तक महान फलदायी और लाभदायक है? यह किस हद तक असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी है? मान लीजिए, विशाखा, कोई इन सोलह महान देशों पर संभगवानता और राजत्व का प्रयोग करे, जो सात बहुमूल्य तत्वों से भरपूर हैं, 482 [213] अर्थात्, [देश] अंगन (बंगाल), मगध, काशी, कोसल, वज्जी, मल्ल, चेति, वाहग, कुरु, पांचाल, मच्छ, सूरसेन, अस्सक, अवंती, गांधार और कंबोजन: 483 तो यह उन आठ तत्वों में पूर्ण उपोसथ पालन के सोलहवें भाग के भी बराबर नहीं होगा। इसका कारण क्या है? क्योंकि मानवीय राजत्व दिव्य सुख की तुलना में तुच्छ है।"

"चार महान राजाओं द्वारा शासित देवताओं के लिए, एक रात और एक दिन पचास मानव वर्षों के बराबर होता है; ऐसे तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और ऐसे बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। चार महान राजाओं द्वारा शासित देवताओं का जीवनकाल पाँच सौ दिव्य वर्ष होता है। हे विशाखा, यह संभव है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष जो इन आठ कारकों में पूर्ण उपोसथ का पालन करता है, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, चार महान राजाओं द्वारा शासित देवताओं के साथ पुनर्जन्म ले। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि दिव्य सुख की तुलना में मानव राजत्व तुच्छ है।"

तावतिंसा देवताओं के लिए एक रात और एक दिन सौ मानव वर्षों के बराबर होता है; तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। तावतिंसा देवताओं का जीवनकाल एक हजार दिव्य वर्ष होता है। हे विशाखा, यह संभव है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष जो इन आठों तत्वों में पूर्ण उपोसथा का पालन करता है, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय, तावतिंसा देवताओं के साथ पुनर्जन्म ले। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि दिव्य सुख की तुलना में मानव राजत्व तुच्छ है।

यमदेवों के लिए एक रात और एक दिन दो सौ मानव वर्षों के बराबर होता है; ऐसे तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और ऐसे बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। यमदेवों का जीवनकाल दो हजार दिव्य वर्ष होता है। हे विशाखा, यह संभव है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष जो इन आठ कारकों में पूर्ण उपोसथ का पालन करता है, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय, यमदेवों के साथ पुनर्जन्म ले। इसी संदर्भ में [214] मैंने कहा था कि मनुष्य का राजत्व दिव्य सुख के तुलनीय नहीं है।

तुषिता देवों के लिए एक रात और एक दिन चार सौ मानव वर्षों के बराबर होता है; ऐसे तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और ऐसे बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। तुषिता देवों का जीवनकाल चार हजार दिव्य वर्ष होता है। हे विशाखा, यह संभव है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष जो इन आठों तत्वों में पूर्ण उपोसथ का पालन करता है, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय तुषिता देवों के साथ पुनर्जन्म ले। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि मनुष्य का राजत्व दिव्य सुख के तुल्य तुच्छ है।

सृष्टि में आनंद लेने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) के लिए एक रात और एक दिन आठ सौ मानव वर्षों के बराबर होता है; ऐसे तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और ऐसे बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। सृष्टि में आनंद लेने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल आठ हजार दिव्य वर्ष होता है। हे विशाखा, यह संभव है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष जो इन आठों तत्वों में पूर्ण उपोसथ का पालन करता है, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, सृष्टि में आनंद लेने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म ले। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि दिव्य सुख की तुलना में मानव राजत्व तुच्छ है।

"दूसरों द्वारा सृजित वस्तुओं को नियंत्रित करने वाले देवताओं के लिए एक रात और एक दिन सोलह सौ मानव वर्षों के बराबर होता है; तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। देवताओं का जीवनकाल सोलह हजार दिव्य वर्ष

होता है। हे विशाखा, यह संभव है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष जो इन आठों तत्वों में पूर्ण उपोसथ का पालन करता है, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, देवताओं के साथ पुनर्जन्म ले। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि दिव्य सुख के आगे मानव राजत्व व्यर्थ है।"

किसी को भी जीवित प्राणी की हत्या नहीं करनी चाहिए और न ही बिना माँगी वस्तु लेनी चाहिए;

झूठ नहीं बोलना चाहिए और न ही मादक पदार्थों का सेवन करना चाहिए;

यौन क्रिया और व्यभिचार से बचना चाहिए;

रात में या अनुचित समय पर भोजन नहीं करना चाहिए।

माला नहीं पहननी चाहिए और न ही इत्र लगाना चाहिए;

नीची पलंग या जमीन पर बिछी चटाई पर सोना चाहिए; कहते हैं कि यही बुद्ध द्वारा घोषित

आठ प्रकार के उपोसथ हैं , जिन्होंने दुखों का अंत किया।

सूर्य और चंद्रमा जहाँ तक घूमते हैं,

प्रकाश बिखेरते हैं, देखने में इतने सुंदर,

अंधकार को दूर करने वाले, आकाश में विचरण करते हुए,

वे आकाश में चमकते हैं, 465 दिशाओं को रोशन करते हैं।

इस क्षेत्र में जो भी धन-संपत्ति विद्यमान है—

मोती, रत्न, और उत्कृष्ट बेरिल, 486

सींग का सोना और पर्वतीय सोना,

और हताका नामक प्राकृतिक सोना—487

वे आठों कारकों में पूर्ण उपोसथा के सोलहवें भाग के भी बराबर नहीं हैं ,

ठीक वैसे ही जैसे तारों के सभी समूह

चंद्रमा की चमक से मेल नहीं खाते। 488

अत: गुणी स्त्री या पुरुष,

उपोसथा के आठों पहलुओं का पूर्ण पालन करके

और पुण्य को सुख का स्रोत बनाकर,

निर्दोष रूप से स्वर्गिक अवस्था में प्रवेश करता है।

III. आनंद खंड

पालीं संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

72 चन्ना

एक बार भगवान बुद्ध सावत्थी नगर के पास अनथपिंडिका द्वारा दिए गए जेतवन में ठहरे हुए थे। तब तपस्वी चन्ना पूज्य आनंद के पास आए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और पूज्य आनंद से कहा:

"मित्र आनंद, क्या आप कामवासना (राग), घृणा (दोसो संस द्वेष) और मोह (मोह) के त्याग की सलाह देते हैं?"

"हाँ, दोस्त।" [216]

लेकिन आपने ऐसा कौन सा खतरा देखा है जिसके कारण आप कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) के त्याग का विधान करते हैं?

(1) हे मित्र, कामवासना से उत्तेजित होकर, कामवासना में डूबा हुआ मन अपने लिए, दूसरों के लिए और दोनों के लिए कष्ट का इरादा रखता है, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। परन्तु जब कामवासना का त्याग हो जाता है, तो वह न तो अपने लिए, न दूसरों के लिए और न ही दोनों के लिए कष्ट का इरादा रखता है, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं करता।

कामवासना से उत्तेजित, कामवासना में डूबा हुआ, मन में लीन रहने वाला व्यक्ति देह, वाणी और मन से दुराचार करता है। परन्तु कामवासना का त्याग करने पर व्यक्ति देह, वाणी और मन से दुराचार नहीं करता। कामवासना से उत्तेजित, कामवासना में डूबा हुआ, मन में लीन रहने वाला व्यक्ति यह नहीं समझ पाता कि वास्तव में कामवासना में ही उसका, दूसरों का और हम सबका भला है। परन्तु कामवासना का त्याग करने पर व्यक्ति यह समझ पाता है कि वास्तव में कामवासना में ही उसका, दूसरों का और हम सबका भला है। कामवासना अंधत्व, दृष्टिहीनता और अज्ञान की ओर ले जाती है; यह ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में बाधक है, दुख से जुड़ी है और निर्वाण की ओर नहीं ले जाती।

(2) "घृणा से भरा हुआ, घृणा से ग्रस्त ...

(3) "मोह से ग्रस्त, मोह में डूबा हुआ व्यक्ति, जिसका मन मोह से ग्रस्त है, अपने कष्ट, दूसरों के कष्ट और दोनों के कष्ट का इरादा करता है, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। परन्तु जब मोह का त्याग हो जाता है, तो वह अपने कष्ट, दूसरों के कष्ट या दोनों के कष्ट का इरादा नहीं करता, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं करता।"

"मोह से ग्रस्त, मोह में डूबा हुआ व्यक्ति, जिसका मन मोह से ग्रस्त है, शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त रहता है। परन्तु जब मोह का त्याग हो जाता है, तो वह शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त नहीं होता। मोह से ग्रस्त, मोह में डूबा हुआ व्यक्ति, जिसका मन मोह से ग्रस्त है, अपने हित, दूसरों के हित और दोनों के हित को सही मायने में नहीं समझ पाता। परन्तु जब मोह का त्याग हो जाता है, तो व्यक्ति अपने हित, दूसरों के हित और दोनों के हित को सही मायने में समझ पाता है। मोह अंधता, दृष्टिहीनता और ज्ञान की कमी की ओर ले जाता है; यह पन्ना (दिव्य ज्ञान) में बाधक है, दुख से जुड़ा है और निर्वाण की ओर नहीं ले जाता।"

"काम (राग), दुष्य (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) में इन खतरों को देखकर, हम इनके त्याग की सलाह देते हैं।"

लेकिन क्या कोई मार्ग है, मित्र, क्या कामवासना (राग), दुष्य (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) के त्याग का कोई रास्ता है?

"मित्र, कामवासना, घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) से मुक्ति पाने का एक मार्ग है।"

लेकिन वह मार्ग क्या है, वह तरीका क्या है जिससे कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग किया जा सकता है?

"यह वही श्रेष्ठ अष्टमार्ग है, अर्थात् सही दृष्टिकोण... सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन)। यही वह मार्ग है, जो कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) के त्याग की ओर ले जाता है।"

"हे मित्र, यह मार्ग उत्तम है, काम (राग), द्वेष और मोह (मोह) के त्याग का मार्ग उत्तम है। हे मित्र आनंद, बस सतर्क रहना ही पर्याप्त है।"

---

73 अजीवका

एक बार पूज्य आनंद कोसंबी में घोषिता उद्यान में निवास कर रहे थे। तब एक गृहस्थ, जो आजीवकों का शिष्य था, पूज्य आनंद के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और उनसे कहा:

(1) "भंते आनंद, जिनका धम्म भली-भांति समझाया गया है? (2) संसार में कौन अच्छे मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं? (3) संसार में कौन सुगत (भगवान बुद्ध) हैं?" 491

"तो फिर, गृहस्वामी, मैं इस मामले में आपसे प्रश्न करूंगा। आपको जो उचित लगे, वैसा उत्तर देना चाहिए।"

(1) "हे गृहस्थ, तुम क्या सोचते हो? क्या कामवासना (राग), घृणा (दोषो सान. द्वेष) और मोह (मोह) के त्याग की शिक्षा देने वालों का धम्म (मार्ग) अच्छी तरह से समझाया गया है या नहीं, या तुम इसे कैसे समझते हो?" [218]

"जो लोग कामवासना (राग), घृणा और मोह (मोह) के त्याग का उपदेश देते हैं, उनका धम्म भली-भांति समझाया गया है। अतः मैं उसे स्वीकार करता हूँ।"

(2) "हे गृहस्थ, आपका क्या विचार है? क्या राग, दोष और मोह का त्याग करने का अभ्यास करने वाले संसार में सही मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं या नहीं, या आप इसे कैसे समझते हैं?"

"जो लोग कामवासना (राग), दुष्य (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग करने का अभ्यास करते हैं, वे संसार में अच्छे मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं। इसलिए मैं इसे मानता हूँ।"

(3) "हे गृहस्थ, आपका क्या विचार है? क्या वे लोग जिन्होंने कामवासना (राग), द्वेष (दोष/मोह) और मोह (मोह) का त्याग कर दिया है, उन्हें जड़ से उखाड़ फेंकते हैं, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान मिटा देते हैं, ताकि वे संसार में भविष्य में उत्पन्न होने वाले सुगतों (भगवान बुद्ध) के अधीन न रहें, या आप इस बारे में क्या सोचते हैं?"

"जिन्होंने कामवासना (राग), द्वेष (दोष/मोह) और मोह (मोह) का जड़ से त्याग कर उन्हें ताड़ के पेड़ के ठूंठ के समान नष्ट कर दिया है, ताकि वे भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हों, वे संसार में सुगत (भगवान बुद्ध) हैं। मेरा यही मानना है।"

"इस प्रकार, हे गृहस्थ, आपने कहा है: 'जो लोग काम (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) के त्याग का उपदेश देते हैं, उनका धर्म भली-भांति समझाया गया है।' आपने कहा है: 'जो लोग काम (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) के त्याग का अभ्यास करते हैं, वे संसार में शुभ मार्ग का अनुसरण करते हैं।' और आपने कहा है: 'जिन्होंने काम (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का जड़ से त्याग कर उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान नष्ट कर दिया है, ताकि वे भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हों, वे संसार में सुगत (भगवान बुद्ध) हैं।"

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है, भंते, कि यहाँ न तो अपने धर्म की प्रशंसा की गई है और न ही दूसरों के धर्म की निंदा की गई है, बल्कि केवल धर्म का उसके अपने क्षेत्र में उपदेश दिया गया है। अर्थ स्पष्ट किया गया है, लेकिन स्वयं को इसमें शामिल नहीं किया गया है।" 492

"भंते आनंद, आप कामवासना (राग), द्वेष (दोष/मोह) और मोह (मोह) के त्याग का धर्म सिखाते हैं, [219] अतः आपका धर्म सुविचारित है। आप कामवासना (राग), द्वेष और मोह (मोह) के त्याग का अभ्यास कर रहे हैं, अतः आप संसार में उत्तम मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं। आपने कामवासना (राग), द्वेष और मोह (मोह) का जड़ से त्याग कर उन्हें जड़ से काट दिया है, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उनका ऐसा संहार कर दिया है कि वे भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हों, अतः आप संसार में सुगत (भगवान बुद्ध) हैं।"

"उत्कृष्ट, भंते! उत्कृष्ट, भंते! परम आनंद ने अनेक तरीकों से धम्म को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग आकृतियाँ देख सकें। भंते आनंद, मैं अब भगवान (बुद्ध), धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। परम आनंद मुझे गृहस्थ अनुयायी समझें जो आज से जीवन भर के लिए शरण में गया है।"

---

74 महानम सक्यान

एक बार भगवान (बुद्ध) कपिलवस्तु के बरगद उद्यान में शाक्यों के बीच निवास कर रहे थे। उस समय भगवान (बुद्ध) हाल ही में बीमारी से ठीक हुए थे। तब शाक्य महानामा ने भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा;

"हे भंते, मैंने बहुत समय से भगवान (बुद्ध) द्वारा सिखाए गए धम्म को इस प्रकार समझा है: 'ज्ञान उसे प्राप्त होता है जो समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में होता है, न कि उसे जो समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से रहित होता है। क्या समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) ज्ञान से पहले आती है, भंते, या ज्ञान समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से पहले आता है?"

तब पूज्य आनंद के मन में यह विचार आया: "भगवान (बुद्ध) अभी हाल ही में अपनी बीमारी से ठीक हुए हैं, फिर भी यह महानामा शाक्य उनसे एक बहुत ही गहन प्रश्न पूछ रहे हैं। मैं महानामा शाक्य को एक तरफ ले जाकर उन्हें धम्म का उपदेश देता हूँ।"

तब पूज्य आनंद ने महानमा शाक्य का हाथ पकड़कर उसे एक तरफ ले गए और उससे कहा: "भगवान (बुद्ध) ने प्रशिक्षु के सद्गुणी आचरण और प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के सद्गुणी आचरण, प्रशिक्षु की समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) [220] और प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), प्रशिक्षु के पन्ना (दिव्य ज्ञान) और प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के पन्ना (दिव्य ज्ञान) के बारे में बात की है।

(1) "और हे महानामा, प्रशिक्षु का सद्गुणी आचरण क्या है? यहाँ, भिक्षु सद्गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, अच्छे आचरण और सुचारु आचरण से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके, वह उनका अभ्यास करता है। इसे प्रशिक्षु का सद्गुणी आचरण कहा जाता है।"

(2) "और प्रशिक्षु की समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) क्या है? 493 यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। [जैसा कि 3:58 पर है] ... चौथी ध्यान (सम्मोहन अवस्था) ... इसे प्रशिक्षु की समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) कहा जाता है।"

(3) "और प्रशिक्षु का पन्ना (दिव्य ज्ञान) क्या है? यहाँ, एक भिक्षु इसे वास्तव में समझता है: 'यह दुख है' . . . [जैसा कि 3:12 में है] . . . 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसे प्रशिक्षु का पन्ना (दिव्य ज्ञान) कहा जाता है।"

जब यह श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार सद्गुणपूर्ण आचरण, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में निपुण हो जाता है, और दोषों का नाश हो जाता है, तो वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव कर लेता है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है। 494

"इसी प्रकार, हे महानामा, भगवान (बुद्ध) ने प्रशिक्षु के सदाचारी आचरण और प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के सदाचारी आचरण के बारे में; प्रशिक्षु की समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के बारे में; प्रशिक्षु के पन्ना (दिव्य ज्ञान) और प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के पन्ना (दिव्य ज्ञान) के बारे में बताया है।"

---

75 निगंथा (जैन)

एक बार पूज्य आनंद वैशाली में विशाल वनक्षेत्र में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। तभी लिच्छवी अभय और लिच्छवी पंडितकुमार पूज्य आनंद के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। 495 तब लिच्छवी अभय ने पूज्य आनंद से कहा:

"भंते, निगंथ नटपुत्त सर्वज्ञ और सर्वदर्शी होने का दावा करते हुए कहते हैं, [कहते हैं]: "जब मैं चलता हूँ, खड़ा होता हूँ, सोता हूँ और जागता हूँ, तब भी ज्ञान और दृष्टि निरंतर मेरे साथ रहती है। 496 वे तपस्या के माध्यम से पुराने कर्मों का नाश करने और नए कर्मों का सृजन न करके पुल को ध्वस्त करने का विधान करते हैं। 497 [221] इस प्रकार, कर्मों के नाश से दुख का नाश होता है। दुख के नाश से वेदना का नाश होता है। वेदना के नाश से सभी दुख दूर हो जाते हैं। इस प्रकार, सीधे दिखाई देने वाली इस शुद्धि के द्वारा दुख पर विजय प्राप्त होती है। 498 इस विषय में भगवान (बुद्ध) क्या कहते हैं?"

"अभय, भगवान (बुद्ध), जो अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं और सब कुछ जानते और देखते हैं, उन्होंने प्राणियों के शुद्धिकरण, दुःख और विलाप पर विजय, पीड़ा और निराशा के निवारण, विधि की प्राप्ति और निर्वाण की प्राप्ति के लिए इन तीन प्रकार के शुद्धिकरण का विधिवत वर्णन किया है। वे तीन कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, अभय, एक भिक्षु गुणी है... [जैसा कि 3:73 में है]... प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनमें अभ्यास करता है, वह कोई नया कर्म नहीं बनाता और बार-बार संपर्क में आने वाले पुराने कर्मों का अंत करता है। 499 यह क्षीणन प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक है, जो देखने के लिए आमंत्रित करता है, लागू करने योग्य है, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जा सकता है।

(2) "हे अभय, जब यह भिक्षु सद्गुणों में निपुण होकर, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, अकुशल अवस्थाओं से विरक्त होकर, प्रथम ध्यान में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... [जैसा कि 3:58 में है]... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था)। वह कोई नया कर्म नहीं करता और बार-बार संपर्क में आने वाले पुराने कर्मों का अंत करता है। कर्मों का क्षीण होना प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक और प्रत्यक्ष होता है, जो देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक होता है और ज्ञानी व्यक्तियों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जा सकता है।"

(3) "हे अभय, जब यह भिक्षु इस प्रकार सद्गुणों और समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) में निपुण हो जाता है, तब दोषों के नाश के साथ, वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, ज्ञान द्वारा मुक्ति (पन्न) का अनुभव करता है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है। वह कोई नया कर्म नहीं सृजित करता है और पुराने कर्मों को, जिनसे वह बार-बार संपर्क में आया है, समाप्त कर देता है। यह नाश प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक और प्रत्यक्ष है, जो देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक है, और ज्ञानी व्यक्तियों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जा सकता है। 500

"हे अभय, ये तीन प्रकार के शुद्धिकरण हैं जिनका उचित वर्णन भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, जो सब कुछ जानते और देखते हैं, ने प्राणियों के शुद्धिकरण, दुःख और विलाप पर विजय, पीड़ा और निराशा के निवारण, विधि की प्राप्ति और निर्वाण की प्राप्ति के लिए किया है।"

यह सुनकर लिच्छवी पंडितकुमार ने लिच्छवी अभय से कहा: "हे मित्र अभय, क्या तुम पूज्य आनंद को उनके सुविचारित शब्दों के लिए धन्यवाद नहीं देते?"

"हे मित्र, मैं पूज्य आनंद के सुस्पष्ट शब्दों के लिए उनका धन्यवाद कैसे न करूँ? [222] यदि कोई पूज्य आनंद के सुस्पष्ट शब्दों के लिए उनका धन्यवाद न करे, तो उसका सिर फट जाएगा!"

---

76 को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए (निवेसाका)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: '

"आनंद, जिन लोगों के प्रति आपके मन में करुणा है और जो आपको उचित समझते हैं, चाहे वे मित्र हों या साथी, रिश्तेदार हों या परिवार के सदस्य, उन्हें आपको तीन बातों में प्रोत्साहित करना चाहिए, स्थिर करना चाहिए और स्थापित करना चाहिए। वे तीन बातें क्या हैं?"

(1) "उन्हें बुद्ध में अटूट विश्वास में प्रोत्साहित, स्थिर और स्थापित किया जाना चाहिए, इस प्रकार: 'भगवान (बुद्ध) . . . [जैसा कि 3:70 में है] . . . देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के शिक्षक, प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध) हैं।

(2) "उन्हें धम्म (मार्ग) में अटूट विश्वास के साथ प्रोत्साहित, स्थिर और स्थापित किया जाना चाहिए, इस प्रकार: 'धम्म की व्याख्या भगवान (बुद्ध) द्वारा अच्छी तरह से की गई है, जो प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देते हैं... [जैसा कि 3:70 में है]... बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाना है।

(3) "उन्हें संघ में अटूट विश्वास के साथ प्रोत्साहित, स्थिर और स्थापित किया जाना चाहिए, इस प्रकार: 'भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का संघ अच्छे मार्ग का अभ्यास कर रहा है... [जैसा कि 3:70 में है] ... . संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है।

"आनंद, हो सकता है कि चारों महान तत्वों—पृथ्वी तत्व, जल तत्व, अग्नि तत्व और वायु तत्व—में परिवर्तन हो, परन्तु बुद्ध में अटूट विश्वास रखने वाले श्रेष्ठ शिष्य में परिवर्तन नहीं हो सकता। इस संदर्भ में परिवर्तन यह है कि बुद्ध में अटूट विश्वास रखने वाला यह श्रेष्ठ शिष्य नरक में, पशुलोक में या व्यथित आत्माओं के लोक में पुनर्जन्म ले सकता है। ऐसा असंभव है। [223]

"आनंद, हो सकता है कि चारों महा तत्वों—पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु—में परिवर्तन हो, परन्तु उस श्रेष्ठ शिष्य में परिवर्तन नहीं हो सकता जो धम्म में, संघ में अटूट विश्वास रखता हो। इस संदर्भ में परिवर्तन यह है कि संघ में अटूट विश्वास रखने वाला यह श्रेष्ठ शिष्य नरक में, पशुलोक में या व्यथित आत्माओं के लोक में पुनर्जन्म ले। ऐसा असंभव है।"

"आनंद, जिन लोगों के प्रति आपके मन में करुणा है और जो सोचते हैं कि आपकी बात सुनी जानी चाहिए, चाहे वे मित्र हों या साथी, रिश्तेदार हों या परिवार के सदस्य, उन्हें इन तीन बातों में आपके द्वारा प्रोत्साहित, स्थिर और सफल बनाया जाना चाहिए।"

---

77 अस्तित्व (पुनर्जन्म का कारण)1 (भाव1)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, ऐसा कहा जाता है: 'अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण), अस्तित्व (भावो)। भंते, किस प्रकार अस्तित्व (भावो) है?" 503

(1) "हे आनंद, यदि इंद्रिय जगत में कर्म (कर्म/कार्य) परिपक्व न हो रहे हों, तो क्या इंद्रिय जगत के अस्तित्व को समझा जा सकेगा?"

"नहीं, भंते।"

"इस प्रकार, आनंद, अज्ञान से बाधित और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से जकड़े प्राणियों के लिए, कर्म (कर्म/कार्य) वह क्षेत्र है, चेतना बीज है, और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) वह नमी है जिससे उनकी चेतना निम्नतम लोक में स्थापित हो सके। इस प्रकार भविष्य में नवगठित अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) का सृजन होता है।" 504

(2) "हे आनंद, यदि रूप जगत में कर्म (कर्म/कार्य) परिपक्व न हो रहे हों, तो क्या रूप-मंडल के अस्तित्व को समझा जा सकेगा?"

नहीं, भंते।

"इस प्रकार, आनंद, अज्ञान से बाधित और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से जकड़े प्राणियों के लिए, कर्म (कार्य) वह क्षेत्र है, चेतना वह बीज है, और तृष्णा वह नमी है जिससे उनकी चेतना मध्यम स्तर पर स्थापित हो सके। इस प्रकार भविष्य में पुनर्जन्म (भावो/पुनर्जन्म का कारण) की उत्पत्ति होती है।"

(3) "यदि, आनंद, निराकार क्षेत्र में कर्म (कर्म/कर्म) परिपक्व न हो रहे हों, तो क्या निराकार-क्षेत्र अस्तित्व को पहचाना जा सकेगा?" [224]

"नहीं, भंते।"

"इस प्रकार, आनंद, अज्ञान से बाधित और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से जकड़े प्राणियों के लिए, कर्म (कार्य) वह क्षेत्र है, चेतना बीज है, और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) वह नमी है जिससे उनकी चेतना उच्चतर लोक में स्थापित हो सके। इस प्रकार भविष्य में नवगठित अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) का सृजन होता है।"

"आनंद, इसी प्रकार अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) है।"

---

78 अस्तित्व (कारणात्मक)2 [चेतन क्रिया और आकांक्षा] (भाव2)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे कहा:

"भंते, ऐसा कहा जाता है: अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण), अस्तित्व (भावो)। भंते, किस प्रकार अस्तित्व (भावो) है?"

(1) "हे आनंद, यदि इंद्रिय जगत में कर्म (कर्म/कार्य) परिपक्व न हो रहे हों, तो क्या इंद्रिय-मंडल के अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का पता लगाया जा सकेगा?"

"नहीं, भंते।"

"इस प्रकार, आनंद, अज्ञान से बाधित और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से जकड़े प्राणियों के लिए, कर्म (कार्य/कर्म) क्षेत्र है, चेतना बीज है, और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) उनके सचेतन कर्म और निम्न लोक में स्थापित होने की आकांक्षा के लिए नमी है। इस प्रकार भविष्य में नवगठित अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) का सृजन होता है।"

(2) "हे आनंद, यदि रूप जगत में कर्म (कर्म/कार्य) परिपक्व न हो रहे हों, तो क्या रूप-मंडल के अस्तित्व को समझा जा सकेगा?"

"नहीं, भंते।"

"इस प्रकार, आनंद, अज्ञान से बाधित और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से जकड़े प्राणियों के लिए कर्म (कार्य) क्षेत्र है, चेतना बीज है और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) उनके सचेतन कर्म और मध्य लोक में स्थापित होने की आकांक्षा के लिए नमी है। इस प्रकार भविष्य में नवगठित अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) का सृजन होता है।"

(3) "हे आनंद, यदि निराकार जगत में कर्म (कर्म/कार्य) फलित न हो रहे हों, तो क्या निराकार जगत का अस्तित्व देखा जा सकेगा?"

"नहीं, भंते।"

"इस प्रकार, आनंद, अज्ञान से बाधित और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से जकड़े प्राणियों के लिए कर्म (कार्य) क्षेत्र है, चेतना बीज है और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) उनके सचेतन कर्म और उच्चतर लोक में स्थापित होने की आकांक्षा के लिए नमी है। इस प्रकार भविष्य में नवजन्म (भावो/पुनर्जन्म का कारण) का सृजन होता है।"

"आनंद, इसी प्रकार अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) है।" [225]

---

79 स्थापना (सिलब्बता संस्कृत: शीलव्रत)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे। . . . तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"आनंद, क्या सभी आचरण और अनुष्ठान, [तपस्वी] जीवन शैली और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) सार के रूप में स्थापित होने पर फलदायी होते हैं?" 506

"ऐसा पूरी तरह से नहीं है, भंते।"

"तो फिर, आनंद, उनमें अंतर करो।"

"भंते, मान लीजिए कोई आचरण और नियम, संयमपूर्ण जीवनशैली और ब्रह्मचर्य का पालन करता है, उन्हें सार मानकर। यदि अकुशल गुण बढ़ते हैं और कुशल गुण घटते हैं, तो ऐसे आचरण और नियम, संयमपूर्ण जीवनशैली और ब्रह्मचर्य, जिन्हें सार मानकर स्थापित किया गया है, निष्फल हैं। परन्तु यदि अकुशल गुण घटते हैं और कुशल गुण बढ़ते हैं, तो ऐसे आचरण और नियम, संयमपूर्ण जीवनशैली और ब्रह्मचर्य, जिन्हें सार मानकर स्थापित किया गया है, फलदायी हैं।"

आदरणीय आनंद ने यही कहा। गुरुजी सहमत हो गए। तब आदरणीय आनंद ने यह सोचकर कि "गुरुजी सहमत हो गए हैं," भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और फिर बाईं ओर मुड़ गए।

फिर, पूज्य आनंद के जाने के कुछ ही समय बाद, भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं, आनंद एक प्रशिक्षु हैं (अरहंत नहीं), लेकिन उनके समान ज्ञान प्राप्त करना आसान नहीं है।"

---

80 सुगंध (गंध जटा)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे कहा:

"भंते, तीन सुगंधें ऐसी हैं जो हवा के साथ फैलती हैं, लेकिन हवा के विपरीत नहीं। वे तीन कौन सी हैं? जड़ों की सुगंध, लकड़ी की सुगंध और फूलों की सुगंध। ये तीनों सुगंधें हवा के साथ फैलती हैं, लेकिन हवा के विपरीत नहीं। क्या कोई ऐसी सुगंध है जो हवा के साथ, हवा के विपरीत और हवा के साथ-साथ दोनों दिशाओं में फैलती हो?"

"आनंद, एक ऐसी सुगंध है जो हवा के साथ फैलती है, [2263 हवा के विपरीत, और हवा के साथ और हवा के विपरीत दोनों ओर]।"

"लेकिन, भंते, ये कैसी खुशबू है?"

"हे आनंद, जिस भी गाँव या कस्बे में कोई पुरुष या स्त्री बुद्ध, धम्म और संघ की शरण में गया हो; वह गुणी और अच्छे चरित्र का हो, जीवन-नष्ट करने, बिना माँगी वस्तुएँ लेने, यौन दुराचार, झूठी वाणी और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से दूर रहता हो, जो आलस्य

का आधार हैं; और वह कंजूसी के दाग से रहित हृदय से घर में रहता हो, उदार, दानशील, त्याग में आनंदित, दान के प्रति समर्पित, देने और बाँटने में प्रसन्न रहता हो— ऐसे में, सभी क्षेत्रों के तपस्वी और ब्राह्मण उसकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं: फलाँ गाँव या कस्बे में कोई पुरुष या स्त्री बुद्ध, धम्म और संघ की शरण में गया है... दान देने और बाँटने में प्रसन्न रहता है।"

"देवता (देवदूत) और आत्माएँ भी प्रशंसा करते हुए कहती हैं: 'अमुक गाँव या कस्बे में एक पुरुष या स्त्री ने बुद्ध, धम्म और संघ की शरण ली है... वह गुणी और अच्छे चरित्र का है... दान देने और साझा करने में आनंदित होता है।'

"आनंद, यह वह सुगंध है जो हवा के साथ, हवा के विपरीत और हवा के साथ-साथ विपरीत दिशा में भी फैलती है।"

फूलों की सुगंध हवा के विपरीत नहीं फैलती, न चंदन, तगारा, 508 या चमेली की सुगंध। परन्तु अच्छे लोगों की सुगंध हवा के विपरीत फैलती है: अच्छे व्यक्ति की सुगंध हर दिशा में व्याप्त हो जाती है। 509

---

81 अभिभू (चुलानिका)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे . . . [227] . . . और उनसे कहा:

"भंते, मैंने भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में यह सुना; उनकी उपस्थिति में मैंने यह सीखा: 'अभिभू, भगवान (बुद्ध) सिखि (पूर्व में बुद्ध), ब्रह्म जगत में रहते हुए, हजार गुना विश्व व्यवस्था में अपनी वाणी का प्रसार किया। 510 भंते, भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, अपनी वाणी को कितनी दूर तक पहुंचा सकते हैं?"

"वह आनंद के शिष्य थे। तथागत (बुद्ध) अतुलनीय हैं।" 511

दूसरी बार पूज्य आनंद ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, मैंने भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में यह सुना... भंते, भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, अपनी वाणी को कितनी दूर तक पहुंचा सकते हैं?"

"वह आनंद के शिष्य थे। तथागत (बुद्ध) अतुलनीय हैं।"

तीसरी बार पूज्य आनंद ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, मैंने भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में यह सुना है... भंते, भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, अपनी वाणी को कितनी दूर तक पहुंचा सकते हैं?"

"क्या तुमने सुना है, आनंद, एक हजार गुना लघु विश्व प्रणाली के बारे में?"

"यही समय है, हे भगवान (बुद्ध)। यही समय है, हे सुगत (भगवान बुद्ध)। भगवान (बुद्ध) को बोलना चाहिए। भगवान (बुद्ध) से यह सुनकर भिक्षु इसे अपने मन में धारण करेंगे।"

"तो फिर, आनंद, ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," पूज्य आनंद ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

(1) "जिस संसार में सूर्य और चंद्रमा घूमते हैं और अपनी चमक से दिशाओं को प्रकाशित करते हैं, उसके हजार गुना को हजार गुना लघु जगत प्रणाली कहा जाता है। 512 उस हजार गुना जगत प्रणाली में हजार चंद्रमा, हजार सूर्य, हजार शिनेरु पर्वतों के राजा, हजार जंबूदीप (भारत), हजार अपरागोयन, हजार उत्तरकुर, हजार पुब्बाविदेह, 513 और हजार चार महान महासागर; हजार चार महान राजा, हजार देवताओं के स्वर्ग, जिन पर चार महान राजाओं का शासन है, हजार तावतिंसा स्वर्ग, हजार यम स्वर्ग, हजार तुषिता स्वर्ग, सृष्टि में आनंदित होने वाले हजार देवताओं के स्वर्ग, दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले हजार देवताओं के स्वर्ग, हजार ब्रह्म जगत हैं।

(2) "एक ऐसा संसार जो हजार गुना हजार गुना लघु संसार प्रणाली है, उसे हजार की घात दो वाली मध्यम संसार प्रणाली कहा जाता है। 514 (3) एक ऐसा संसार जो हजार गुना हजार की घात दो वाली मध्यम संसार प्रणाली है, उसे हजार की घात तीन वाली महान संसार प्रणाली कहा जाता है। आनंद, तथागत (बुद्ध) हजार की घात तीन वाली महान संसार प्रणाली में अपनी वाणी को जहाँ तक चाहें पहुँचा सकते हैं।"

"लेकिन हे भंते, तथागत (बुद्ध) हजार की घात एक तिहाई विशाल विश्व व्यवस्था में अपनी वाणी को अपनी इच्छानुसार किस प्रकार से संप्रेषित कर सकते हैं?"

"आनंद, यहाँ तथागत (बुद्ध) अपने प्रकाश से हजार की घात एक तिहाई विशाल विश्व व्यवस्था को व्याप्त करते हैं। जब वे प्राणी उस प्रकाश को ग्रहण करते हैं, तब तथागत (बुद्ध) अपनी वाणी को प्रक्षेपित करते हैं और उन्हें उसकी ध्वनि सुनाते हैं। आनंद, इसी प्रकार तथागत (बुद्ध) हजार की घात एक तिहाई विशाल विश्व व्यवस्था में अपनी वाणी को जहाँ तक चाहें, पहुँचा सकते हैं।" 515

यह सुनकर पूज्य आनंद ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"यह मेरा सौभाग्य है! मैं बहुत भाग्यशाली हूँ कि मेरे शिक्षक ने मुझे यह सौभाग्य दिया है।"

यह बहुत शक्तिशाली और बलवान है।"

यह सुनकर पूज्य उदय ने पूज्य आनंद से कहा, "हे मित्र आनंद, तुम्हारे गुरु इतने शक्तिशाली और सामर्थ्यवान हैं, इससे तुम्हें क्या लेना-देना है?" 516

जब यह कहा गया, तो भगवान (बुद्ध) ने पूज्य उदयि से कहा: "ऐसा मत कहो, उदयि! ऐसा मत कहो, उदयि! 517 उदयि, यदि आनंद राग से मुक्त हुए बिना मर जाए, तो अपने विश्वास के कारण वह सात बार देवताओं के बीच स्वर्गीय राजत्व और इस जंबूद्वीप में सात बार महान राजत्व का प्रयोग करेगा। परन्तु इसी जीवन में आनंद को परम निर्वाण प्राप्त होगा।" [229]

IV. तपस्वी (समना)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

82 तपस्वी (समना)

भिक्षुओं, तपस्वी को तीन प्रकार के तपस्वी कार्यों का पालन करना चाहिए। वे तीन कौन से हैं? (1) उच्चतर सद्‌गुणों का प्रशिक्षण लेना, (2) उच्चतर मन का प्रशिक्षण लेना और (3) उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण लेना। ये तीन तपस्वी कार्य हैं जिनका पालन तपस्वी को करना चाहिए।

अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम उच्चतर सद्‌गुणों का प्रशिक्षण लेने की तीव्र इच्छा रखेंगे; हम उच्चतर मन का प्रशिक्षण लेने की तीव्र इच्छा रखेंगे; हम उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण लेने की तीव्र इच्छा रखेंगे।' इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

83 गधा 518 (गर्धबा)

भिक्षुओं, मान लीजिए एक गधा मवेशियों के झुंड के ठीक पीछे चल रहा है, [यह सोचते हुए]: 'मैं भी एक गाय हूँ। मैं भी एक गाय हूँ।' 519 (1) लेकिन उसका रूप गायों जैसा नहीं होगा, (2) उसकी रेंकने की आवाज़ गायों जैसी नहीं होगी, और (3) उसके पदचिह्न गायों जैसे नहीं होंगे। फिर भी वह मवेशियों के झुंड के ठीक पीछे चलता है, [यह सोचते हुए]: 'मैं भी एक गाय हूँ। मैं भी एक गाय हूँ।'

"इसी प्रकार, एक भिक्षु भिक्षुओं के संघ के ठीक पीछे चल रहा होगा, [यह सोचते हुए]: 'मैं भी एक भिक्षु हूँ। मैं भी एक भिक्षु हूँ।' (1) परन्तु उच्च सद्गुणों का प्रशिक्षण लेने की उसकी इच्छा अन्य भिक्षुओं जैसी नहीं होती; (2) उच्च मन का प्रशिक्षण लेने की उसकी इच्छा अन्य भिक्षुओं जैसी नहीं होती; (3) उच्च ज्ञान (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण लेने की उसकी इच्छा अन्य भिक्षुओं जैसी नहीं होती। फिर भी वह भिक्षुओं के संघ के ठीक पीछे चलता है, [यह सोचते हुए]: 'मैं भी एक भिक्षु हूँ, मैं भी एक भिक्षु हूँ।'"

अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण लेने की तीव्र इच्छा रखेंगे; हम उच्चतर मन का प्रशिक्षण लेने की तीव्र इच्छा रखेंगे; हम उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण लेने की तीव्र इच्छा रखेंगे।' इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

84 खेत (खेट्टा)

भिक्षुओं, किसान के ये तीन प्रारंभिक कार्य हैं। वे तीन क्या हैं? (1) यहाँ, किसान सबसे पहले खेत की अच्छी तरह जुताई और हैरो करता है। (2) इसके बाद, वह उचित समय पर बीज बोता है। (3) और फिर वह समय-समय पर खेत की सिंचाई और जल निकासी करता है। ये किसान के तीन प्रारंभिक कार्य हैं।

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, भिक्षु के तीन प्रारंभिक कार्य हैं। वे तीन क्या हैं? (1) उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण लेना, (2) उच्चतर मन का प्रशिक्षण लेना, और (3) उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण लेना। ये भिक्षु के तीन प्रारंभिक कार्य हैं।"

अतः, भिक्षुओं, आपको स्वयं को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम उच्चतर सद्गुणों, उच्चतर मन और उच्चतर ज्ञान (दिव्य ज्ञान) के प्रशिक्षण के लिए तीव्र इच्छा रखेंगे।' इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

85 युवा वज्जि (वज्जिपुत्त)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। तब एक वज्जी भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया और उनसे कहा:

"भंते, हर छह महीने में डेढ़ सौ से अधिक प्रशिक्षण नियम पाठ के लिए आते हैं। मैं उन सबका अभ्यास नहीं कर सकता।"

"क्या आप तीन प्रशिक्षणों में प्रशिक्षण ले सकते हैं, भिक्खु: उच्च सात्विक व्यवहार में प्रशिक्षण (आधि-सिल-सिक्खाय), उच्च मन में प्रशिक्षण (आधि-चित्त-सिक्खाय), और उच्च पन्ना में प्रशिक्षण (दिव्य ज्ञान/आधि-पन्ना-सिक्खाय)?"

"मैं कर सकता हूँ, भंते।"

इसलिए, हे भिक्षु, तीन प्रकार के प्रशिक्षणों में लगन रखो: उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण, उच्चतर मन का प्रशिक्षण और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण। जैसे-जैसे तुम इनमें लगन रखोगे, कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग करोगे। कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग करने से तुम कोई भी हानिकारक कार्य (अकुशल) नहीं करोगे और न ही किसी बुरे कार्य का सहारा लोगे।

फिर, कुछ समय बाद, उस भिक्षु ने उच्चतर सद्गुणों, उच्चतर मन और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण लिया। [231] जैसे-जैसे उसने [231] इनका प्रशिक्षण लिया, उसने कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग कर दिया। कामवासना (राग),

घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) के त्याग के साथ, उसने कोई भी हानिकारक (अकुशल) कार्य नहीं किया और किसी भी बुरे कार्य का सहारा नहीं लिया।

---

86 प्रशिक्षु (सेक्खा)

फिर एक भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे बोला: "भंते, कहा जाता है: 'एक प्रशिक्षु, एक प्रशिक्षु,' कोई किस प्रकार से प्रशिक्षु होता है?"

"वह प्रशिक्षण देता है, भिक्षु, इसलिए उसे प्रशिक्षु कहा जाता है। और वह किस बात का प्रशिक्षण देता है? वह उच्चतर सद्गुणों (अधिशील) का प्रशिक्षण देता है; वह उच्चतर मन (अधिचित्त) का प्रशिक्षण देता है; वह उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान/अधिपन्न) का प्रशिक्षण देता है। वह प्रशिक्षण देता है, भिक्षु, इसलिए उसे प्रशिक्षु कहा जाता है।"

प्रशिक्षु जब

सीधे मार्ग पर प्रशिक्षण लेता है, तो

सर्वप्रथम विनाश का ज्ञान उत्पन्न होता है,

जिसके तुरंत बाद अंतिम ज्ञान प्राप्त होता है। 520

इसके बाद, जब अस्तित्व के बंधन (भाव/पुनर्जन्म का कारण) टूट जाते हैं,

तो अंतिम ज्ञान से मुक्त व्यक्ति को

यह ज्ञान प्राप्त होता है:

"मेरी मुक्ति अविचल है।" 521

---

87 प्रशिक्षण की प्रक्रिया (1) (पथम-सिक्ख-सुत्तम)

भिक्षुओं, प्रत्येक छह महीने में डेढ़ सौ से अधिक प्रशिक्षण नियम पाठ के लिए प्रकाशित होते हैं; जो कुलवासी अपना भला चाहते हैं, वे इनका अभ्यास करते हैं। ये सभी तीन प्रशिक्षणों के अंतर्गत आते हैं। वे तीन कौन से हैं? उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण, उच्चतर मन का प्रशिक्षण और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण। ये तीन प्रशिक्षण हैं जिनमें ये सब समाहित है।

"यहाँ, भिक्षुओं, एक भिक्षु सद्गुणों का पालन करता है, परन्तु समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास केवल सीमित मात्रा में ही करता है। वह छोटे और गौण प्रशिक्षण नियमों के उल्लंघन में अपकृत्य करता है और फिर स्वयं को सुधारता है। 522 इसका क्या कारण है? क्योंकि मैंने यह नहीं कहा कि वह ऐसा करने में असमर्थ है। 523 परन्तु ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूलभूत प्रशिक्षण नियमों के संबंध में, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के अनुरूप, 524 उसका आचरण स्थिर और दृढ़ रहता है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके वह उनका अभ्यास करता है। तीनों बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, [232] वह एक धारा-प्रवेशक (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) है, निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं, नियति में स्थिर, और ज्ञानोदय उसका गंतव्य है।"

एक अन्य भिक्षु सद्गुणों का पालन करता है, परन्तु समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास सीमित मात्रा में ही करता है। वह लघु एवं गौण प्रशिक्षण नियमों का उल्लंघन करता है, फिर भी स्वयं को सुधार लेता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि मैंने यह नहीं कहा कि वह ऐसा करने में असमर्थ है। परन्तु ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूलभूत प्रशिक्षण नियमों के विषय में, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के अनुरूप, उसका आचरण स्थिर और दृढ़ रहता है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके वह उनका अभ्यास करता है। तीनों बंधनों के पूर्ण नाश और लोभ, घृणा और मोह (मोह) के कम होने से वह एक बार फिर इस संसार में लौटकर दुखों का अंत करने वाला होता है।

एक अन्य भिक्षु सद्गुणों का पालन करते हुए समाधि में लीन हो जाता है, परन्तु प्राण (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास सीमित मात्रा में ही करता है। वह लघु एवं गौण प्रशिक्षण नियमों का उल्लंघन करता है, फिर भी स्वयं को सुधार लेता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि मैंने यह नहीं कहा कि वह ऐसा करने में असमर्थ है। परन्तु ब्रह्मचर्य जीवन के मूलभूत प्रशिक्षण नियमों के विषय में, ब्रह्मचर्य जीवन के अनुरूप, उसका आचरण स्थिर और दृढ़ रहता है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके वह उनका अभ्यास करता है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, वह स्वतः पुनर्जन्म लेता है और उस लोक से वापस लौटे बिना ही वहाँ परम निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

एक अन्य भिक्षु सद्गुणों, समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का पालन करता है। वह छोटे-मोटे प्रशिक्षण नियमों के उल्लंघन में दोषी हो जाता है, फिर भी स्वयं को सुधार लेता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि मैंने यह नहीं कहा कि वह ऐसा करने में असमर्थ है। परन्तु ब्रह्मचर्य (संन्यासी पवित्र जीवन) के मूलभूत प्रशिक्षण नियमों के संबंध में, ब्रह्मचर्य (संन्यासी पवित्र जीवन) के अनुरूप, उसका आचरण स्थिर और दृढ़ रहता है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके वह उनका अभ्यास करता है। दोषों के नाश के साथ, वह इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करता है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है।

"इस प्रकार, भिक्षुओं, जो आंशिक साधना करता है, उसे आंशिक सफलता मिलती है; जो पूर्ण साधना करता है, उसे पूर्णता प्राप्त होती है। मैं कहता हूँ, ये प्रशिक्षण नियम व्यर्थ नहीं हैं।"

---

88 प्रशिक्षण की प्रक्रिया (2) (दुतिया-सिक्खा-सुत्तम)

भिक्षुओं, प्रत्येक छह महीने में डेढ़ सौ से अधिक प्रशिक्षण नियम पाठ के लिए आते हैं; जो कुलवासी अपना भला चाहते हैं [233] वे इनका अभ्यास करते हैं। ये सभी तीन प्रशिक्षणों के अंतर्गत आते हैं। वे तीन कौन से हैं? उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण, उच्चतर मन का प्रशिक्षण और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण। ये तीन प्रशिक्षण हैं जिनमें यह सब समाहित है।

"यहाँ, भिक्षुओं, एक भिक्षु सद्गुणों का पालन करता है, परन्तु समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास केवल सीमित मात्रा में करता है। वह छोटे और गौण प्रशिक्षण नियमों के उल्लंघन में अपकृत्य करता है और फिर स्वयं को सुधार लेता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि मैंने यह नहीं कहा कि वह ऐसा करने में असमर्थ है। परन्तु ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूलभूत प्रशिक्षण नियमों के संबंध में, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के अनुरूप, उसका व्यवहार स्थिर और दृढ़ होता है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके, वह उनका अभ्यास करता है। तीनों बंधनों के पूर्ण नाश से वह अधिकतम सात बार मोक्ष प्राप्त करने वाला होता है, जो देवताओं (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के बीच अधिकतम सात बार विचरण और भ्रमण करने के बाद दुखों का अंत करता है। 525 तीनों बंधनों के पूर्ण नाश से वह कुल-कुल मोक्ष प्राप्त करने वाला होता है, जो अच्छे परिवारों के बीच दो या तीन बार विचरण और भ्रमण करने के बाद तीन बंधनों के पूर्ण नाश से, वह एक बीज प्राप्त करने वाला है जो मानव जीवन में एक बार फिर जन्म लेकर (भाव/पुनर्जन्म का कारण) दुखों का अंत करता है। तीन बंधनों के पूर्ण नाश और लोभ, घृणा और मोह के कम होने से, वह एक बार जन्म लेने वाला (एक बार पुनर्जन्म, सकदागामी) है जो इस संसार में केवल एक बार फिर आकर दुखों का अंत करता है।

एक अन्य भिक्षु सद्गुणों और समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) का पालन करता है, परन्तु पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास सीमित मात्रा में ही करता है। वह लघु एवं गौण प्रशिक्षण नियमों का उल्लंघन करता है, फिर भी स्वयं को सुधार लेता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि मैंने यह नहीं कहा कि वह ऐसा करने में असमर्थ है। परन्तु ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूलभूत प्रशिक्षण नियमों के संबंध में,

ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के अनुरूप, उसका आचरण स्थिर और दृढ़ है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके वह उनका अभ्यास करता है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, वह एक छलांग ऊपर की ओर, अकनित्त लोक की ओर अग्रसर होता है... परिश्रम से निर्वाण प्राप्त करने वाला... बिना परिश्रम के निर्वाण प्राप्त करने वाला... उतरते ही निर्वाण प्राप्त करने वाला... इस अंतराल में निर्वाण प्राप्त करने वाला। 526

एक अन्य भिक्षु सद्गुणों, समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का पालन करता है। वह [234] छोटे और गौण प्रशिक्षण नियमों के संबंध में अपराध करता है और स्वयं को सुधार लेता है। इसका क्या कारण है? क्योंकि मैंने यह नहीं कहा है कि वह ऐसा करने में असमर्थ है। परन्तु ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूलभूत प्रशिक्षण नियमों के संबंध में, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के अनुरूप, उसका व्यवहार स्थिर और दृढ़ है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके, वह उनमें अभ्यास करता है। दोषों के नाश के साथ, वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से, इसी जीवन में, मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव करता है, और उसमें प्रवेश करके, वह उसमें निवास करता है।

"इस प्रकार, भिक्षुओं, जो आंशिक साधना करता है, उसे आंशिक सफलता मिलती है; जो पूर्ण साधना करता है, उसे पूर्णता प्राप्त होती है। मैं कहता हूँ, ये प्रशिक्षण नियम व्यर्थ नहीं हैं।"

---

89 प्रशिक्षण की प्रक्रिया (3) (तातिया-सिक्खा-सुत्तम)

भिक्षुओं, प्रत्येक छह महीने में डेढ़ सौ से अधिक प्रशिक्षण नियम पाठ के लिए प्रकाशित होते हैं; जो कुलवासी अपना भला चाहते हैं, वे इनका अभ्यास करते हैं। ये सभी नियम इन तीन प्रशिक्षणों के अंतर्गत आते हैं। वे तीन कौन से हैं? उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण, उच्चतर मन का प्रशिक्षण और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण। ये तीन प्रशिक्षण हैं जिनमें ये सब समाहित है।

"यहाँ, भिक्षुओं, एक भिक्षु सद्गुण, एकाग्रता और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का पालन करता है। वह छोटे और गौण प्रशिक्षण नियमों के उल्लंघन में गलती करता है और फिर स्वयं को सुधार लेता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि मैंने यह नहीं कहा कि वह ऐसा करने में असमर्थ है। परन्तु ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूलभूत प्रशिक्षण नियमों के संबंध में, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के अनुरूप, उसका व्यवहार स्थिर और दृढ़ होता है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके वह उनका अभ्यास करता है। दोषों के नाश के साथ, वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करता है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है।"

यदि वह पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ इसे प्राप्त और भेद नहीं पाता, तो वह अंतराल में ही निर्वाण प्राप्त कर लेता है। यदि वह पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ इसे प्राप्त और भेद नहीं पाता, तो वह उतरते ही निर्वाण प्राप्त कर लेता है... बिना प्रयास के निर्वाण प्राप्त कर लेता है... प्रयास से निर्वाण प्राप्त कर लेता है... एक छलांग ऊपर की ओर, अकनित्थ लोक की ओर।

यदि वह तीनों बंधनों के पूर्ण नाश और लोभ, घृणा और मोह (मोह) के कम होने से इसे प्राप्त और भेद नहीं पाता, तो वह एक बार जन्म लेने वाला (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) है, जो इस संसार में केवल एक बार फिर जन्म लेकर दुखों का अंत करता है। यदि वह तीनों बंधनों के पूर्ण नाश से इसे प्राप्त और भेद नहीं पाता, तो वह एक बीज प्राप्त करने वाला है, जो मनुष्य रूप में एक बार फिर जन्म लेकर दुखों का अंत करता है। यदि वह तीनों बंधनों के पूर्ण नाश से इसे प्राप्त और भेद नहीं पाता, तो वह कुल-कुल प्राप्त करने वाला है, जो अच्छे परिवारों में दो या तीन बार विचरण करने के बाद दुखों का अंत करता है। यदि वह तीनों बंधनों के पूर्ण नाश से इसे प्राप्त और भेद नहीं पाता, तो वह अधिकतम सात बार जन्म लेने वाला है, जो देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करने के बाद दुखों का अंत करता है। अधिकतम सात बार करने से कष्ट का अंत हो जाता है।

"इस प्रकार, भिक्षुओं, जो पूर्णतः साधना करता है, उसे पूर्णता प्राप्त होती है; जो आंशिक साधना करता है, उसे आंशिक सफलता मिलती है। मैं कहता हूँ, ये प्रशिक्षण नियम व्यर्थ नहीं हैं।"

---

90 प्रशिक्षण (1) (पथम-सिक्खट्टय-सुत्तम)

भिक्षुओं, ये तीन प्रकार के प्रशिक्षण हैं। कौन से तीन? उच्चतर सद्गुणी आचरण का प्रशिक्षण, उच्चतर मन का प्रशिक्षण और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण।

और हे भिक्षुओं, उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण क्या है? यहाँ, एक भिक्षु सद्गुणी होता है... प्रशिक्षण नियमों का पालन करने के बाद, वह उनका अभ्यास करता है। इसे ही उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण कहा जाता है।

और हे भिक्षुओं, उच्चतर मन का प्रशिक्षण क्या है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, कुशाप जैसी अवस्थाओं से विरक्त होकर, भिक्षु प्रथम ध्यान में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... इसे ही उच्चतर मन का प्रशिक्षण कहा जाता है।

भिक्षुओं, उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण क्या है? यहाँ, भिक्षु इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसे ही उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण कहा जाता है।

"भिक्षुओं, ये तीन प्रकार के प्रशिक्षण हैं।"

---

91 प्रशिक्षण (2) (दुतिया-सिक्खट्टया-सुत्तम)

भिक्षुओं, ये तीन प्रकार के प्रशिक्षण हैं। कौन से तीन? उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण, उच्चतर मन का प्रशिक्षण और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण।

और हे भिक्षुओं, उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण क्या है? यहाँ, एक भिक्षु सद्गुणी होता है... प्रशिक्षण नियमों का पालन करने के बाद, वह उनका अभ्यास करता है। इसे ही उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण कहा जाता है।

"और हे भिक्षुओं, उच्चतर मन का प्रशिक्षण क्या है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, एक भिक्षु प्रथम ध्यान में प्रवेश करता है और निवास करता है... [236] चतुर्थ ध्यान (समाधि अवस्था) में... इसे ही उच्चतर मन का प्रशिक्षण कहा जाता है।"

और हे भिक्षुओं, उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण क्या है? यहाँ, दोषों के नाश के साथ, एक भिक्षु प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव करता है, और उसमें प्रवेश करने के बाद, वह उसमें निवास करता है।

"भिक्षुओं, ये तीन प्रकार के प्रशिक्षण हैं।"

ऊर्जावान, बलवान और दृढ़ निश्चयी,

ध्यानमग्न, सचेत (ध्यान/सती) और अपनी इंद्रियों को सुरक्षित रखते हुए,

व्यक्ति को उच्चतर सद्गुण,

उच्चतर मन और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास करना चाहिए।

जैसा पहले, वैसा बाद में;

जैसा बाद में, वैसा पहले;

जैसा नीचे, वैसा ऊपर;

जैसा ऊपर, वैसा नीचे;

जैसे दिन में, वैसे ही रात में;

जैसे रात में, वैसे ही दिन में, असीम समाधि (आत्म-लीनता/तल्लीनता) से

सभी दिशाओं पर विजय प्राप्त करते हुए 528

वे उसे मार्ग का प्रशिक्षु कहते हैं,

जिसका आचरण पूरी तरह से शुद्ध हो चुका है।

वे उसे संसार में प्रबुद्ध,

एक बुद्धिमान व्यक्ति कहते हैं जिसने साधना को पूर्ण कर लिया है। 29

तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के नाश से मुक्त हुए व्यक्ति के लिए,

चेतना के समाप्त होने के साथ ही

मन की मुक्ति

दीपक के बुझने के समान है। 530

---

92 पंचधा (संकव)

एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक विशाल संघ के साथ कोसल पर्वतमाला में भ्रमण कर रहे थे, जब वे कोसल के पाखधा नगर पहुँचे। तब वे पाखधा के निकट ही निवास करने लगे।

उस समय भिक्षु कस्सपगोत्ता पहकाधा में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को प्रशिक्षण नियमों से संबंधित धम्म प्रवचन देकर उपदेश दिया, प्रोत्साहित किया, प्रेरित किया और प्रसन्न किया। फिर, जब भगवान (बुद्ध) प्रशिक्षण नियमों से संबंधित धम्म (मार्ग) पर प्रवचन देकर भिक्षुओं को उपदेश दे रहे थे और प्रसन्न कर रहे थे, तब भिक्षु कस्सपगोत्ता अधीर और कड़वे हो गए, [यह सोचकर]: "यह तपस्वी बहुत कठोर है।" 531

फिर, पाखधा में अपनी इच्छा अनुसार कुछ समय निवास करने के बाद, भगवान (बुद्ध) राजगृह की यात्रा पर निकल पड़े। यात्रा करते-करते, भगवान (बुद्ध) अंततः राजगृह पहुँचे। [237] वहाँ, राजगृह में, भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर निवास करने लगे। फिर,

भगवान (बुद्ध) के जाने के कुछ ही समय बाद, भिक्षु कस्सपगोत्ता पश्चाताप और खेद से भर गया, [सोचते हुए]: "यह मेरा दुर्भाग्य और हानि है कि जब भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं को प्रशिक्षण नियमों से संबंधित धम्म (मार्ग) प्रवचन देकर उपदेश दे रहे थे, प्रोत्साहित कर रहे थे, प्रेरित कर रहे थे और प्रसन्न कर रहे थे, तब मैं अधीर और कठोर हो गया, [सोचते हुए]: "यह तपस्वी बहुत कठोर है। अब मुझे भगवान (बुद्ध) के पास जाकर अपने अपराध को स्वीकार करना चाहिए।"

तब भिक्षु कस्सपगोत्ता ने अपना कमरा साफ किया, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र लिया और राजगृह के लिए निकल पड़े। अंततः वे राजगृह पहुँचे और गिद्ध शिखर पर्वत पर गए। उन्होंने भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और कहा:

"भंते, एक बार भगवान (बुद्ध) कोसलन के पंकधा नगर में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को प्रशिक्षण नियमों से संबंधित धर्म प्रवचन देकर उपदेश दिया, प्रोत्साहित किया, प्रेरित किया और प्रसन्न किया। जब वे उपदेश दे रहे थे और उन्हें प्रसन्न कर रहे थे, तब मैं अधीर और कड़वी भावना से भर गया, यह सोचकर कि 'यह तपस्वी बहुत कठोर है।' फिर, पंकधा में अपनी इच्छा अनुसार निवास करने के बाद, भगवान (बुद्ध) राजगृह की यात्रा पर निकल पड़े। उनके जाने के कुछ ही समय बाद, मैं पश्चाताप और खेद से भर गया, यह सोचकर कि 'यह मेरा दुर्भाग्य और हानि है कि जब भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं को प्रशिक्षण नियमों से संबंधित धर्म प्रवचन देकर उपदेश दे रहे थे और उन्हें प्रसन्न कर रहे थे, तब मैं अधीर और कड़वी भावना से भर गया, यह सोचकर कि 'यह तपस्वी बहुत कठोर है।' अब मुझे भगवान (बुद्ध) के पास जाकर अपने अपराध का पश्चाताप करना चाहिए।"

"भंते, मैंने एक अपराध [238] किया है कि जब भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं को प्रशिक्षण नियमों से संबंधित धम्म प्रवचन द्वारा उपदेश दे रहे थे, प्रोत्साहित कर रहे थे, प्रेरित कर रहे थे और प्रसन्न कर रहे थे, तब मैंने नासमझी, मूर्खता और अकुशलता से अधीर और कड़वाहट का भाव अपना लिया, यह सोचते हुए कि 'यह तपस्वी बहुत कठोर है।' भंते, भगवान (बुद्ध) मेरे इस अपराध को भविष्य में संयम के लिए किए गए अपराध के रूप में स्वीकार करें।"

"निश्चित रूप से, कस्सपा, आपने एक अपराध किया है क्योंकि जब मैं भिक्षुओं को प्रशिक्षण नियमों से संबंधित धम्म पर प्रवचन देकर प्रोत्साहित, प्रेरित और प्रसन्न कर रहा था, तब आपने इतनी नासमझी, मूर्खता और अकुशलता से अधीर और कड़वे हो गए, यह सोचते हुए कि 'यह तपस्वी बहुत कठोर है।' लेकिन चूंकि आप अपने अपराध को अपराध मानते हैं और धम्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करते हैं, इसलिए हम इसे स्वीकार करते हैं। क्योंकि गुरु के अनुशासन में वृद्धि इसी में है कि व्यक्ति अपने अपराध को अपराध माने, धम्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करे और भविष्य में संयम का पालन करे।"

(1) "हे कस्सपा, यदि कोई वरिष्ठ भिक्षु प्रशिक्षण लेने की इच्छा न रखता हो और प्रशिक्षण लेने की प्रशंसा न करता हो; यदि वह प्रशिक्षण न लेने की इच्छा रखने वाले अन्य भिक्षुओं को प्रशिक्षण के लिए प्रोत्साहित न करता हो; और यदि वह प्रशिक्षण लेने की इच्छा रखने वाले भिक्षुओं की सच्ची, वास्तविक और समयोचित प्रशंसा न करता हो, तो मैं ऐसे वरिष्ठ भिक्षु की प्रशंसा नहीं करता। इसका कारण क्या है? क्योंकि अन्य भिक्षु, [यह सुनकर] कि 'गुरु उसकी प्रशंसा करते हैं', उससे संगति कर सकते हैं, और जो उससे संगति करते हैं वे उसके उदाहरण का अनुसरण कर सकते हैं। यदि वे उसके उदाहरण का अनुसरण करते हैं, तो इससे उन्हें लंबे समय तक हानि और कष्ट होगा। इसलिए मैं ऐसे वरिष्ठ भिक्षु की प्रशंसा नहीं करता।"

(2) "हे कस्सपा, यदि कोई मध्यम स्तर का भिक्षु... (3) यदि कोई कनिष्ठ भिक्षु प्रशिक्षण लेने की इच्छा न रखता हो और प्रशिक्षण लेने की प्रशंसा न करता हो; यदि वह प्रशिक्षण न लेने की इच्छा रखने वाले अन्य भिक्षुओं को प्रशिक्षण में प्रोत्साहित न करता हो; और यदि वह प्रशिक्षण लेने की इच्छा रखने वाले भिक्षुओं की सच्ची, वास्तविक और समयोचित प्रशंसा न करता हो, तो मैं ऐसे कनिष्ठ भिक्षु की प्रशंसा नहीं करता। इसका कारण क्या है? क्योंकि अन्य भिक्षु, [यह सुनकर]: 'गुरु उसकी प्रशंसा करते हैं,' उससे संगति कर सकते हैं, और जो उससे संगति करते हैं [239] वे उसके उदाहरण का अनुसरण कर सकते हैं। यदि वे उसके उदाहरण का अनुसरण करते हैं, तो इससे उन्हें लंबे समय तक हानि और कष्ट होगा। इसलिए मैं ऐसे कनिष्ठ भिक्षु की प्रशंसा नहीं करता।"

(1) "हे कस्सपा, यदि कोई वरिष्ठ भिक्षु प्रशिक्षण लेने की इच्छा रखता है और प्रशिक्षण लेने की प्रशंसा करता है; यदि वह उन अन्य भिक्षुओं को प्रशिक्षण के लिए प्रोत्साहित करता है जो प्रशिक्षण लेने की इच्छा नहीं रखते; और यदि वह प्रशिक्षण लेने की इच्छा रखने वाले भिक्षुओं की सच्ची, वास्तविक और समयोचित प्रशंसा करता है, तो मैं ऐसे वरिष्ठ भिक्षु की प्रशंसा करता हूँ। इसका कारण क्या है? क्योंकि अन्य भिक्षु, [यह सुनकर] कि 'गुरु उसकी प्रशंसा करते हैं', उससे संगति कर सकते हैं, और जो उससे संगति करते हैं वे उसके

उदाहरण का अनुसरण कर सकते हैं। यदि वे उसके उदाहरण का अनुसरण करते हैं, तो इससे उन्हें दीर्घकालिक कल्याण और सुख प्राप्त होगा। अतः मैं ऐसे वरिष्ठ भिक्षु की प्रशंसा करता हूँ।"

(2) "हे कस्सपा, यदि कोई मध्यम स्तर का भिक्षु... (3) यदि कोई कनिष्ठ भिक्षु प्रशिक्षण लेने की इच्छा रखता है और प्रशिक्षण लेने की प्रशंसा करता है; यदि वह प्रशिक्षण न लेने की इच्छा रखने वाले अन्य भिक्षुओं को प्रशिक्षण के लिए प्रोत्साहित करता है; और यदि वह प्रशिक्षण लेने की इच्छा रखने वाले भिक्षुओं की सच्ची, वास्तविक और समयोचित प्रशंसा करता है, तो मैं ऐसे कनिष्ठ भिक्षु की प्रशंसा करता हूँ। इसका कारण क्या है? क्योंकि अन्य भिक्षु, [यह सुनकर]: 'गुरु उसकी प्रशंसा करते हैं/ उससे संगति कर सकते हैं, और जो उससे संगति करते हैं वे उसके उदाहरण का अनुसरण कर सकते हैं। यदि वे उसके उदाहरण का अनुसरण करते हैं, तो इससे उन्हें लंबे समय तक कल्याण और सुख प्राप्त होगा। इसलिए मैं ऐसे कनिष्ठ भिक्षु की प्रशंसा करता हूँ।"

V. नमक का एक टुकड़ा 533 (लोनाका-पल्ला)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

93 अत्यावश्यक (अक्कायिका)

भिक्षुओं, किसान के ये तीन अत्यावश्यक कार्य हैं। 534 वे तीन कार्य क्या हैं? (1) सर्वप्रथम, किसान शीघ्रतापूर्वक और पूर्णतः खेत की जुताई करता है और उसे शीघ्रतापूर्वक और पूर्णतः समतल करता है। (2) इसके बाद, वह शीघ्रतापूर्वक बीज बोता है। (3) और फिर वह शीघ्रतापूर्वक [240] खेत की सिंचाई और जल निकासी करता है। ये किसान के तीन अत्यावश्यक कार्य हैं।

"इस किसान के पास कोई मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) या आध्यात्मिक सामर्थ्य नहीं है [जिससे वह आदेश दे सके]: 'मेरी फसलें आज से उगना शुरू हो जाएं! वे कल पक जाएं! वे परसों फल देने लगें!' लेकिन, ऋतुओं के परिवर्तन के साथ, एक समय आता है जब फसलें उगती हैं, पकती हैं और फल देती हैं।"

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, भिक्षु के तीन अत्यावश्यक कार्य हैं। वे तीन क्या हैं? (1) उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण लेना, (2) उच्चतर मन का प्रशिक्षण लेना, और (3) उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण लेना। ये भिक्षु के तीन अत्यावश्यक कार्य हैं।"

"इस भिक्षु के पास कोई मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) या आध्यात्मिक सामर्थ्य नहीं है [जिससे वह आदेश दे सके]: 'आज, कल या परसों मेरा मन अनासक्ति के द्वारा दोषों से मुक्त हो जाए!' बल्कि, जैसे-जैसे यह भिक्षु उच्च सद्गुणी आचरण, उच्च मन और उच्च पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अभ्यास करता है, एक ऐसा अवसर आता है जब उसका मन अनासक्ति के द्वारा दोषों से मुक्त हो जाता है।"

अतः, भिक्षुओं, आपको स्वयं को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम उच्चतर सद्गुणों, उच्चतर मन और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) के प्रशिक्षण को ग्रहण करने की तीव्र इच्छा रखेंगे।' इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

94 विवेकाधिकार (पविवेक)

"भिक्षुओं (साधुओं) और अन्य संप्रदायों के तपस्वियों ने तीन प्रकार के विवेक का विधान किया है। वे तीन कौन से हैं? वस्त्रों के संबंध में विवेक, भिक्षा के संबंध में विवेक और आवास के संबंध में विवेक।" 535

"भिक्षुओं, अन्य संप्रदायों के तपस्वी वस्त्रों के संबंध में यही विवेकपूर्ण वस्त्र धारण करते हैं: वे भांग के वस्त्र, भांग मिश्रित वस्त्र, कफ़न, चिथड़े के वस्त्र, वृक्ष की छाल, हिरण की खाल, हिरण की खाल की पट्टियों से बने वस्त्र, कुश घास, छाल या लकड़ी के बुरादे से बने वस्त्र, सिर के बालों या पशु ऊन से बना कंबल, [241] उल्लू के पंखों से बना आवरण धारण करते हैं। यही अन्य संप्रदायों के तपस्वी वस्त्रों के संबंध में विवेकपूर्ण वस्त्र धारण करते हैं।"

"अन्य संप्रदायों के तपस्वी भिक्षा भोजन के संबंध में यही विवेकपूर्ण आचरण निर्धारित करते हैं: वे हरी सब्जियां, बाजरा, जंगली चावल, खाल के टुकड़े, काई, चावल की भूसी, चावल का झाग, तिल का आटा, घास या गोबर खाते हैं। वे वन की जड़ों और फलों पर निर्भर रहते हैं; वे गिरे हुए फलों का सेवन करते हैं। अन्य संप्रदायों के तपस्वी भिक्षा भोजन के संबंध में यही विवेकपूर्ण आचरण निर्धारित करते हैं।"

"अन्य संप्रदायों के तपस्वी आवास के संबंध में विवेकपूर्ण तरीके से यही सलाह देते हैं: जंगल, वृक्ष की तलहटी, श्मशान भूमि, जंगलों और वनों में दूरस्थ आवास, खुला आकाश, भूसे का ढेर, भूसे का घर। अन्य संप्रदायों के तपस्वी आवास के संबंध में विवेकपूर्ण तरीके से यही सलाह देते हैं।"

"अन्य संप्रदायों के तपस्वियों द्वारा बताए गए विवेक के ये तीन प्रकार हैं।"

"इस धम्म और अनुशासन में, भिक्षुओं के लिए तीन प्रकार के विवेक होते हैं। वे तीन कौन से हैं?"

"यहाँ, (1) एक भिक्षु गुणी है; उसने अनैतिकता का त्याग कर दिया है और उससे एकांतवास में रहता है। (2) वह सही दृष्टिकोण रखता है; उसने गलत दृष्टिकोण का त्याग कर दिया है और उससे एकांतवास में रहता है। 536 (3) वह ऐसा व्यक्ति है जिसके भ्रम नष्ट हो गए हैं: उसने दोषों का त्याग कर दिया है और उनसे एकांतवास में रहता है।

जब कोई भिक्षु गुणी होता है, जिसने अनैतिकता का त्याग कर उससे एकांतवास किया हो; जब वह सही दृष्टिकोण वाला होता है, जिसने गलत दृष्टिकोण का त्याग कर उससे एकांतवास किया हो; जब वह ऐसा होता है जिसके सारे दोष नष्ट हो गए हों, जिसने दोषों का त्याग कर उनसे एकांतवास किया हो, तब उसे वह भिक्षु कहा जाता है जिसने सर्वोच्च स्तर प्राप्त किया हो, जिसने सार को प्राप्त किया हो, जो शुद्ध हो और सार में स्थापित हो।

भिक्षुओं, मान लीजिए कि एक किसान के खेत में धान पक गया है; किसान तुरंत पौधों को कटवाएगा। फिर वह तुरंत पौधों को इकट्ठा करवाएगा। फिर वह तुरंत [242] उन्हें [खलिहान में] ले जाएगा। फिर वह तुरंत उन्हें ढेर लगाएगा, उनकी पिसाई करवाएगा, भूसा और भूसी अलग करवाएगा और फटककर साफ करेगा। फिर वह तुरंत उसे लाकर कूटवाएगा और भूसी अलग करवाएगा। इस प्रकार, किसान के धान के दाने सबसे आगे होंगे, सार को प्राप्त करेंगे, शुद्ध होंगे और सार में स्थापित होंगे।

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु गुणी होता है... सही दृष्टिकोण वाला होता है... जिसने दोषों का त्याग कर उनसे एकांतवास किया होता है, तब उसे सर्वोत्कृष्ट, सार को प्राप्त करने वाला, शुद्ध और सार में स्थापित भिक्षु कहा जाता है।"

---

95 शरद ऋतु 537 (सारदा सं. शरद)

भिक्षुओं, जिस प्रकार शरद ऋतु में, जब आकाश निर्मल और बादलों से रहित होता है, सूर्य आकाश में आरोहण करते हुए अपने प्रकाश और किरणों से समस्त अंधकार को दूर कर देता है, उसी प्रकार जब किसी श्रेष्ठ शिष्य में निष्कलंक, निर्मल धम्म-दृष्टि उत्पन्न होती है, तब दृष्टि के उत्पन्न होने के साथ ही वह तीन बंधनों का त्याग कर देता है: व्यक्तिगत अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) का दृष्टिकोण, संदेह और आचरण एवं अनुष्ठानों की गलत समझ। 538

इसके बाद, जब वह लालसा और द्वेष की दो अवस्थाओं से विमुख हो जाता है, तब वह इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, अकुशल अवस्थाओं से विरक्त होकर, प्रथम ध्यान (सम्मोहन) अवस्था में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न

परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त होती है, जिसमें चिंतन और आत्मनिरीक्षण भी शामिल होता है; हे भिक्षुओं, यदि उस अवसर पर श्रेष्ठ शिष्य का देहांत हो जाए, तो ऐसा कोई बंधन नहीं है जिससे वह इस संसार में लौट सके। 539

---

96 सभाएं (पेरिसा बिना परिषद)

"भिक्षुओं (मठवासियों), तीन प्रकार की सभाएँ होती हैं। 540 वे तीन कौन सी हैं? अग्रणी की सभा, विभाजित सभा और सामंजस्यपूर्ण सभा। [243]

(1) "हे भिक्षुओं, अग्रणी भिक्षुओं की सभा क्या है? इस प्रकार की सभा में वरिष्ठ भिक्षु विलासी और शिथिल नहीं होते, बल्कि पतन का त्याग करके एकांतवास में नेतृत्व करते हैं; वे अभी तक अप्राप्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए, अभी तक अप्राप्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए, और अभी तक अप्राप्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाते हैं। अगली पीढ़ी के भिक्षु भी उनका अनुसरण करते हैं। वे भी विलासी और शिथिल नहीं होते, बल्कि पतन का त्याग करके एकांतवास में नेतृत्व करते हैं; वे भी अभी तक अप्राप्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए, अभी तक अप्राप्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए, और अभी तक अप्राप्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाते हैं। इसे ही अग्रणी भिक्षुओं की सभा कहते हैं।"

(2) "और विभाजित सभा क्या है? यहाँ, वह सभा जिसमें भिक्षु बहस और झगड़े में पड़ जाते हैं और एक दूसरे को चुभने वाले शब्दों से घायल करते हैं, उसे विभाजित सभा कहा जाता है।

(3) "और सामंजस्यपूर्ण सभा क्या है? यहाँ, वह सभा जिसमें भिक्षु सामंजस्य में, सद्भाव से, बिना किसी विवाद के, दूध और पानी की तरह घुलमिलकर, एक दूसरे को स्नेह भरी दृष्टि से देखते हुए निवास करते हैं, उसे सामंजस्यपूर्ण सभा कहा जाता है।

जब भिक्षु एकता और सद्भाव में, बिना किसी विवाद के, दूध और पानी की तरह एक होकर, एक-दूसरे को स्नेह भरी दृष्टि से देखते हुए निवास करते हैं, तब वे बहुत पुण्य कमाते हैं। उस समय भिक्षु दिव्य धाम में निवास करते हैं, अर्थात् परोपकारी आनंद के माध्यम से मन की मुक्ति में। जब व्यक्ति आनंदित होता है, तो उसे परमानंद (पीति) प्राप्त होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि (सम्मोहन) में लीन हो जाता है।

जैसे, जब वर्षा होती है और पहाड़ की चोटी पर मोटी बूँदों के रूप में पानी बरसता है, तो वह ढलान से नीचे बहता हुआ दरारों, नालों और छोटी नदियों को भर देता है; ये भरकर तालाबों को भर देते हैं; ये भरकर झीलों को भर देते हैं; ये भरकर धाराओं को भर देते हैं; ये भरकर नदियों को भर देते हैं; और ये भरकर सागर को भर देते हैं; ठीक उसी प्रकार, जब भिक्षु सद्भाव में, बिना किसी विवाद के, दूध और पानी की तरह एक होकर, एक-दूसरे को स्नेह भरी दृष्टि से देखते हुए निवास करते हैं, तो उस अवसर पर वे बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं। उस अवसर पर भिक्षु दिव्य धाम में निवास करते हैं, अर्थात् परोपकारी आनंद के माध्यम से मन की मुक्ति में। जब व्यक्ति आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) हो जाता है।

"भिक्षुओं, ये तीन प्रकार की सभाएँ हैं।"

---

97 थोरब्रेड (1) (पथमा-अजानिया)

भिक्षुओं (सन्यासियों) में तीन गुण होते हैं: राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का प्रतीक माना जाता है। वे तीन गुण क्या हैं? यहाँ, राजा के उत्तम नस्ल के घोड़े में सुंदरता, शक्ति और गति होती है। इन तीनों गुणों के कारण, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा... राजत्व का प्रतीक माना जाता है।

इसी प्रकार, तीन गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य होता है, और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र होता है। वे तीन गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु सौंदर्य, शक्ति और गति से युक्त होता है।

(1) "भिक्षु में सौंदर्य कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त होता है, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। इसी प्रकार भिक्षु में सौंदर्य होता है।"

(2) "भिक्षु को बल कैसे प्राप्त होता है? यहाँ, भिक्षु हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करता है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है। इसी प्रकार भिक्षु को बल प्राप्त होता है।"

(3) "और भिक्षु को गति कैसे प्राप्त होती है? यहाँ, भिक्षु इसे वास्तव में समझता है: 'यह दुख है' और 'यह दुख का मूल है', [245] और 'यह दुख का निवारण है' और 'यह दुख के निवारण की ओर ले जाने वाला मार्ग है।' इसी प्रकार भिक्षु को गति प्राप्त होती है।"

"इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होता है और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र होता है।"

---

98 थोरब्रेड (2) (दुतिया-अजानिया)

[सभी 3:96 के समान हैं, केवल कारक (3) में निम्नलिखित अंतर है:]

"और एक भिक्षु को गति कैसे प्राप्त होती है? यहाँ, पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ, एक भिक्षु स्वतः पुनर्जन्म लेता है, और उस लोक से कभी वापस लौटे बिना ही अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। इसी प्रकार एक भिक्षु को गति प्राप्त होती है।"

"इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु... विश्व के लिए पुण्य का एक अतुलनीय क्षेत्र है।"

---

99 थोरब्रेड (3) (तातिया-अजानिया)

[सभी 3:96 के समान, केवल कारक (3) में निम्नलिखित अंतर के साथ:] [246]

"और भिक्षु को गति कैसे प्राप्त होती है? यहाँ, दोषों के नाश के साथ, भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव कर लिया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इस प्रकार भिक्षु को गति प्राप्त होती है।"

"इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु... विश्व के लिए पुण्य का एक अतुलनीय क्षेत्र है।"

---

100 छाल का कपड़ा (पोत्थाका)

भिक्षुओं, जब छाल से बना कपड़ा नया होता है, तो वह भद्दा, असुविधाजनक और कम मूल्यवान होता है। जब वह पुराना हो जाता है, तब भी वह भद्दा, असुविधाजनक और कम मूल्यवान होता है। वे पुराने कपड़े का उपयोग बर्तन साफ करने के लिए करते हैं या उसे कूड़े के ढेर में फेंक देते हैं।

(1) (i) 543 "इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, यदि कोई कनिष्ठ भिक्षु अनैतिक हो, बुरे चरित्र का हो, तो मैं कहता हूँ, यह उसकी कुरूपता है। [247] जैसे छाल से बना कपड़ा कुरूप होता है, वैसे ही, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति भी वैसा ही है।

(ii) "जो लोग उससे संगति करते हैं, उसकी शरण लेते हैं, उसकी सेवा करते हैं और उसके उदाहरण का अनुसरण करते हैं, उनके लिए यह लंबे समय तक हानि और पीड़ा का कारण बनता है। मैं कहता हूँ, यही उसकी असुविधा है। जिस प्रकार छाल से बना कपड़ा असुविधाजनक होता है, उसी प्रकार यह व्यक्ति भी है।"

(iii) "जब वह वस्त्र, भिक्षा, आवास, बीमारों के लिए दवाइयाँ और भोजन स्वीकार करता है, तो यह [स्वीकृति] उन लोगों के लिए कोई बड़ा फलदायी या लाभकारी नहीं है जो ऐसी वस्तुएँ प्रदान करते हैं। मैं कहता हूँ, यह उसके तुच्छ मूल्य का होने का प्रमाण है। जिस प्रकार छाल से बना कपड़ा तुच्छ मूल्य का होता है, उसी प्रकार, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति भी वैसा ही है।"

(2) "यदि कोई मध्यम स्तर का भिक्षु ...

(3) "यदि कोई वरिष्ठ भिक्षु अनैतिक है, बुरे चरित्र का है, तो मैं कहता हूँ, यह उसकी कुरूपता में गिना जाता है... [जैसा कि ऊपर बताया गया है]... जैसे छाल से बना कपड़ा कम मूल्य का होता है, वैसे ही, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति भी वैसा ही है।"

"यदि ऐसा कोई वरिष्ठ भिक्षु संघ के बीच में बोलता है, तो भिक्षु उससे कहते हैं: 'तुम्हें, जो एक अकुशल और नासमझ हो, बोलने का अधिकार किसने दिया? क्या तुम भी खुद को बोलने का हकदार समझते हो?' तब वह क्रोधित और असंतुष्ट हो जाता है और ऐसी बात कहता है जिसके कारण संघ उसे निष्कासित कर देता है, मानो छाल से बने वस्त्र को कूड़े के ढेर पर फेंक दिया गया हो।" 544

भिक्षुओं, जब काशी का कपड़ा नया होता है, तो वह सुंदर, आरामदायक और बहुत मूल्यवान होता है। [248] जब वह पहना हुआ होता है, तब भी काशी का कपड़ा सुंदर, आरामदायक और बहुत मूल्यवान होता है। जब वह पुराना हो जाता है, तब भी काशी का कपड़ा सुंदर, आरामदायक और बहुत मूल्यवान होता है। वे काशी के पुराने कपड़े का उपयोग रत्नों को लपेटने के लिए करते हैं या उसे सुगंधित डिब्बे में रखते हैं।

(1) (i) "इसी प्रकार, यदि कोई कनिष्ठ भिक्षु गुणी और अच्छे चरित्र का हो, तो मैं कहता हूँ कि यह उसकी सुंदरता के समान है। जैसे काशी का कपड़ा सुंदर होता है, वैसे ही, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति भी वैसा ही है।"

(ii) "जो लोग उससे संगति करते हैं, उसकी शरण लेते हैं, उसकी सेवा करते हैं और उसके उदाहरण का अनुसरण करते हैं, उन्हें लंबे समय तक कल्याण और सुख प्राप्त होता है। मैं कहता हूँ, यही उसकी सुखदायकता है। जिस प्रकार काशी का कपड़ा सुखदायक होता है, उसी प्रकार यह व्यक्ति भी सुखदायक है।"

(iii) "जब वह वस्त्र, भिक्षा, आवास, बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन स्वीकार करता है, तो यह [स्वीकृति] उन लोगों के लिए बहुत फलदायी और लाभकारी होती है जो [ऐसी वस्तुएँ भेंट करते हैं]। मैं कहता हूँ, यह उसके बहुमूल्य होने का प्रमाण है। जिस प्रकार काशी का कपड़ा बहुमूल्य होता है, उसी प्रकार, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति भी बहुमूल्य है।"

(2) "यदि कोई मध्यम स्तर का भिक्षु ...

(3) "यदि कोई वरिष्ठ भिक्षु गुणी और अच्छे चरित्र का हो, तो मैं कहता हूँ कि यही उसकी सुंदरता है। . . . [ऊपर बताए अनुसार] . . . जैसे काशी का कपड़ा बहुत मूल्यवान होता है, वैसे ही, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति भी वैसा ही है।"

"यदि ऐसा कोई वरिष्ठ भिक्षु संघ के बीच में बोलता है, [249] तो भिक्षु कहते हैं: 'कृपया आदरणीय लोग शांत रहें। एक वरिष्ठ भिक्षु धम्म और अनुशासन पर बोल रहे हैं।' उनके उन शब्दों को उसी प्रकार संरक्षित किया जाना चाहिए, जैसे वे काशी से लाए गए वस्त्र को सुगंधित डिब्बे में रखते हैं। 545

अत: हे भिक्षुओं, तुम इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करो: 'हम काशी के वस्त्र के समान होंगे, छाल से बने वस्त्र के समान नहीं।' तुम्हें इसी प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

101 नमक का एक टुकड़ा

भिक्षुओं, यदि कोई इस प्रकार कहे कि 'मनुष्य कर्म का फल ठीक उसी प्रकार भुगतता है जिस प्रकार उसने उसे सृजित किया है', तो ऐसे में ब्रह्मचर्य जीवन संभव नहीं होगा और दुखों का पूर्ण अंत करने का कोई अवसर भी नहीं मिलेगा। 346 परन्तु यदि कोई इस प्रकार कहे कि 'जब कोई व्यक्ति किसी विशेष प्रकार का कर्म सृजित करता है, तो उसे उसका फल ठीक उसी प्रकार मिलता है', तो ऐसे में ब्रह्मचर्य जीवन संभव है और दुखों का पूर्ण अंत करने का अवसर मिलता है। 347

"यहाँ, भिक्षुओं, किसी व्यक्ति ने तुच्छ बुरे कर्म किए हैं फिर भी वह उसे नरक की ओर ले जाता है, जबकि यहाँ किसी अन्य व्यक्ति ने ठीक वही तुच्छ कर्म किए हैं फिर भी उसका अनुभव इसी जीवन में होता है, बिना किसी अंश के भी, प्रचुर मात्रा में तो दूर की बात है।"

"किस प्रकार का व्यक्ति तुच्छ बुरे कर्म करता है जो उसे नरक की ओर ले जाता है? यहाँ, कुछ व्यक्ति शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित हैं; वे सीमित हैं और उनका चरित्र नीच है, 548 और वे दुख में रहते हैं। 549 जब ऐसा व्यक्ति तुच्छ बुरे कर्म करता है, तो वह उसे नरक की ओर ले जाता है।"

"ऐसा कौन सा व्यक्ति है जो बिल्कुल वही तुच्छ बुरे कर्म करता है और फिर भी उसका फल इसी जीवन में भुगतना पड़ता है, बिना एक अंश भी दिखाई दिए, प्रचुर मात्रा में फल तो दूर की बात है? यहाँ, कोई व्यक्ति शरीर, सद्गुण, मन और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में विकसित है। वह असीम है और उसका चरित्र उदात्त है, और वह असीम रूप से निवास करता है। 550 जब ऐसा व्यक्ति बिल्कुल वही तुच्छ बुरे कर्म करता है, तो उसका फल इसी जीवन में भुगतना पड़ता है, बिना एक अंश भी दिखाई दिए, प्रचुर मात्रा में फल तो दूर की बात है। 551

(1) "मान लीजिए कि कोई व्यक्ति पानी से भरे एक छोटे कटोरे में नमक का एक टुकड़ा डाल दे। भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? क्या नमक का वह टुकड़ा कटोरे में मौजूद थोड़ी मात्रा में पानी को नमकीन और पीने योग्य नहीं बना देगा?"

"हां, भंते। किस कारण से? क्योंकि कटोरे में पानी सीमित है, इसलिए नमक का वह टुकड़ा उसे नमकीन और पीने लायक नहीं बना देगा।"

लेकिन मान लीजिए कि कोई व्यक्ति गंगा नदी में नमक का एक टुकड़ा डाल दे। भिक्षुओं, आपका क्या विचार है? क्या नमक का वह टुकड़ा गंगा नदी को खारा और पीने योग्य नहीं बना देगा?

"नहीं, भंते। किस कारण से? क्योंकि गंगा नदी में पानी की मात्रा बहुत अधिक है, इसलिए नमक का वह टुकड़ा इसे खारा और पीने योग्य नहीं बनाएगा।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, यहाँ किसी व्यक्ति ने तुच्छ बुरे कर्म किए हैं, फिर भी वह उसे नरक की ओर ले जाता है, जबकि यहाँ किसी अन्य व्यक्ति ने ठीक वही तुच्छ कर्म किए हैं, फिर भी उसका फल इसी जीवन में भुगतना पड़ता है, बिना किसी अंश के, प्रचुर मात्रा में फल की तो बात ही छोड़िए।"

"ऐसा कौन सा व्यक्ति है जो तुच्छ बुरे कर्म करता है और नरक में जाता है? यहाँ, कुछ व्यक्ति शरीर, सद्गुण, मन और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होते हैं। जब ऐसा व्यक्ति तुच्छ बुरे कर्म करता है, तो वह नरक में चला जाता है।"

"ऐसा कौन सा व्यक्ति है जो बिल्कुल वही तुच्छ बुरे कर्म करता है और फिर भी उसका फल इसी जीवन में भुगतना पड़ता है, जबकि उसका एक अंश भी दिखाई नहीं देता, प्रचुर मात्रा में फल मिलना तो दूर की बात है? यहाँ, कोई व्यक्ति शरीर, सद्गुण, मन और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से परिपूर्ण है। जब ऐसा व्यक्ति बिल्कुल वही तुच्छ बुरे कर्म करता है, तो उसका फल इसी जीवन में भुगतना पड़ता है, जबकि उसका एक अंश भी दिखाई नहीं देता, प्रचुर मात्रा में फल मिलना तो दूर की बात है।"

(2) "यहाँ, भिक्षुओं, किसी को आधा कहपना, एक कहपना, [251] या सौ कहपना [चोरी करने] के लिए कैद किया जाता है, 553 जबकि किसी अन्य को उतनी ही राशि [चोरी करने] के लिए कैद नहीं किया जाता है।

"आधे कहपना, एक कहपना या सौ कहपना चोरी करने के लिए किस तरह के व्यक्ति को जेल भेजा जाता है? यहाँ, कोई गरीब है, जिसके पास थोड़ी संपत्ति और धन है। ऐसे व्यक्ति को आधे कहपना, एक कहपना या सौ कहपना चोरी करने के लिए जेल भेजा जाता है।"

"ऐसा कौन सा व्यक्ति है जिसे आधा कहपना, एक कहपना या सौ कहपना चुराने पर कारावास नहीं होता? यहाँ, कोई व्यक्ति धनी है, जिसके पास बहुत धन और संपत्ति है। ऐसा व्यक्ति आधा कहपना, एक कहपना या सौ कहपना चुराने पर कारावास नहीं होता।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, किसी व्यक्ति ने तुच्छ बुरे कर्म किए हैं, फिर भी वह उसे नरक की ओर ले जाता है, जबकि यहाँ किसी अन्य व्यक्ति ने ठीक वही तुच्छ कर्म किए हैं, फिर भी उसे इसी जीवन में बिना किसी अवशेष के, यहाँ तक कि एक अंश भी दिखाई दिए बिना, प्रचुर मात्रा में अवशेष की तो बात ही छोड़िए, भोगना पड़ता है।"

"ऐसा कौन सा व्यक्ति है जो तुच्छ बुरे कर्म करता है और नरक में जाता है? यहाँ, कोई व्यक्ति शारीरिक रूप से अविकसित है... और उसमें ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की कमी है। जब ऐसा व्यक्ति तुच्छ बुरे कर्म करता है, तो वह नरक में जाता है।"

"ऐसा कौन सा व्यक्ति है जो बिल्कुल वही तुच्छ बुरे कर्म करता है और फिर भी उसका फल इसी जीवन में भुगतना पड़ता है, बिना एक अंश भी दिखाई दिए, प्रचुर मात्रा में फल तो दूर की बात है? यहाँ, कोई व्यक्ति शरीर, सद्गुण, मन और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में विकसित है। जब ऐसा व्यक्ति बिल्कुल वही तुच्छ बुरे कर्म करता है, तो उसका फल इसी जीवन में भुगतना पड़ता है, बिना एक अंश भी दिखाई दिए, प्रचुर मात्रा में फल तो दूर की बात है।"

(3) "भिक्षुओं (मठवासियों), भेड़ व्यापारी या कसाई का मामला लो, [252] जो किसी ऐसे व्यक्ति को फांसी दे सकता है, कैद कर सकता है, जुर्माना लगा सकता है या अन्यथा दंडित कर सकता है जिसने उसकी एक भेड़ चुराई है, लेकिन किसी अन्य व्यक्ति के साथ ऐसा नहीं कर सकता जिसने उसकी भेड़ चुराई है।

"भेड़ का व्यापारी या कसाई किस प्रकार के व्यक्ति को भेड़ चुराने के लिए फांसी दे सकता है, कैद कर सकता है, जुर्माना लगा सकता है या अन्य दंड दे सकता है? एक गरीब व्यक्ति, जिसके पास कम संपत्ति और धन हो। भेड़ का व्यापारी या कसाई ऐसे व्यक्ति को भेड़ चुराने के लिए फांसी दे सकता है, कैद कर सकता है, जुर्माना लगा सकता है या अन्य दंड दे सकता है।"

"भेड़ चुराने पर भेड़ व्यापारी या कसाई किस प्रकार के व्यक्ति को फांसी, कारावास, जुर्माना या अन्य दंड नहीं दे सकता? एक ऐसा व्यक्ति जो धनी हो, जिसके पास बहुत पैसा और दौलत हो, जैसे कोई राजा या राजमंत्री। भेड़ व्यापारी या कसाई ऐसे व्यक्ति को भेड़ चुराने पर फांसी, कारावास, जुर्माना या अन्य दंड नहीं दे सकता; वह केवल उससे विनती कर सकता है: 'महोदय, मेरी भेड़ लौटा दीजिए या मुझे उसका भुगतान कर दीजिए।'"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, किसी व्यक्ति ने तुच्छ बुरे कर्म किए हैं फिर भी वह उसे नरक की ओर ले जाता है, जबकि यहाँ किसी अन्य व्यक्ति ने ठीक वही तुच्छ कर्म किए हैं फिर भी उसे इसी जीवन में बिना किसी अवशेष के, यहाँ तक कि थोड़े से भी अवशेष के बिना, भुगतना पड़ता है, प्रचुर मात्रा में अवशेष तो दूर की बात है।"

"किस प्रकार का व्यक्ति तुच्छ बुरे कर्म करता है जो उसे नरक की ओर ले जाता है? यहाँ, कुछ व्यक्ति शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित हैं; वे सीमित हैं और उनका चरित्र नीच है, और वे दुख में रहते हैं। जब इस प्रकार का [253] व्यक्ति तुच्छ बुरे कर्म करता है, तो वह उसे नरक की ओर ले जाता है।"

"ऐसा कौन सा व्यक्ति है जो बिल्कुल वही तुच्छ बुरे कर्म करता है और फिर भी उसका फल इसी जीवन में भुगतना पड़ता है, जबकि उसका एक अंश भी दिखाई नहीं देता, प्रचुर मात्रा में फल मिलना तो दूर की बात है? यहाँ, कोई व्यक्ति शरीर, सद्गुण, मन और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से परिपूर्ण है। वह असीम है, उसका चरित्र उदात्त है और वह असीम रूप से निवास करता है। जब ऐसा व्यक्ति बिल्कुल वही तुच्छ बुरे कर्म करता है, तो उसका फल इसी जीवन में भुगतना पड़ता है, जबकि उसका एक अंश भी दिखाई नहीं देता, प्रचुर मात्रा में फल मिलना तो दूर की बात है।"

भिक्षुओं, यदि कोई इस प्रकार कहे कि 'कर्म का फल ठीक उसी प्रकार भुगता जाता है जिस प्रकार उसने उसे सृजित किया है', तो ऐसे में ब्रह्मचर्य जीवन संभव नहीं है और दुखों का पूर्ण अंत करने का कोई अवसर भी नहीं मिलता। परन्तु यदि कोई इस प्रकार कहे कि 'जब कोई व्यक्ति किसी विशेष प्रकार का कर्म सृजित करता है, तो उसे उसका फल ठीक उसी प्रकार भुगतना पड़ता है', तो ऐसे में ब्रह्मचर्य जीवन संभव है और दुखों का पूर्ण अंत करने का अवसर मिलता है।

---

102 मृदा निष्कासनकर्ता (पम्सुधोवका)

भिक्षुओं, सोने में कई प्रकार की अशुद्धियाँ होती हैं: मिट्टी, कंकड़ और बजरी। मिट्टी हटाने वाला या उसका शिष्य पहले सोने को एक पात्र में डालकर धोता है, फिर उसे साफ करता है। जब ये अशुद्धियाँ निकल जाती हैं, तो सोने में मध्यम आकार की अशुद्धियाँ रह जाती हैं: महीन कंकड़ और मोटी रेत। मिट्टी हटाने वाला या उसका शिष्य उसे फिर से धोता है, फिर उसे साफ करता है। जब ये अशुद्धियाँ निकल जाती हैं, तो सोने में सूक्ष्म अशुद्धियाँ रह जाती हैं: महीन रेत और काली धूल। इसलिए मिट्टी हटाने वाला या उसका शिष्य उसे फिर से धोता है, फिर उसे साफ करता है। जब ये अशुद्धियाँ निकल जाती हैं, तो केवल सोने के कण ही रह जाते हैं।

"सुनार या उसका प्रशिक्षु अब सोने को एक पिघलने वाले बर्तन में डालता है, और उसे हवा देता है, पिघलाता है, [254] और गलाता है। लेकिन जब यह हो भी जाता है, तब भी सोना अभी तक स्थिर नहीं होता है और अशुद्धियाँ पूरी तरह से नहीं हटाई जाती हैं। 555 सोना अभी तक लचीला, सुचारु और चमकदार नहीं है, बल्कि अभी भी भंगुर है और काम के लिए ठीक से उपयुक्त नहीं है।

लेकिन जब सुनार या उसका शागिर्द सोने को लगातार हवा से तराशता, पिघलाता और आकार देता रहता है, तो एक समय ऐसा आता है जब सोना जम जाता है और उसमें से सारी अशुद्धियाँ निकल जाती हैं, जिससे सोना लचीला, संभालने में आसान और चमकदार हो जाता है, और काम के लिए पूरी तरह से उपयुक्त हो जाता है। तब सुनार उससे जिस भी प्रकार का आभूषण बनाना चाहे—चाहे कंगन हो, झुमके हों, हार हो या सोने की माला—वह अपना उद्देश्य पूरा कर सकता है।

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु उच्च मन में लीन होता है, (1) उसमें स्थूल दोष होते हैं: शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार। एक गंभीर, योग्य भिक्षु उन्हें त्याग देता है, दूर करता है, समाप्त करता है और मिटा देता है। जब ऐसा हो जाता है, (2) उसमें मध्यम दोष रह जाते हैं: कामुक विचार, द्वेष के विचार और हानि पहुँचाने के विचार। एक गंभीर, योग्य भिक्षु उन्हें त्याग देता है, दूर करता है, समाप्त करता है और मिटा देता है। जब ऐसा हो जाता है, (3) उसमें सूक्ष्म दोष रह जाते हैं: अपने रिश्तेदारों के बारे में विचार, अपने देश के बारे में विचार और अपनी प्रतिष्ठा के बारे में विचार। 557 एक गंभीर, योग्य भिक्षु उन्हें त्याग देता है, दूर करता है, समाप्त करता है और मिटा देता है। जब ऐसा हो जाता है, तब धम्म से संबंधित विचार रह जाते हैं। 558 वह समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) शांत और उदात्त नहीं है, न ही इसे प्राप्त किया जा सकता है।" पूर्ण शांति, 559 एकीकरण प्राप्त नहीं हुआ, बल्कि [अशुद्धियों] को बलपूर्वक दबाकर नियंत्रित और परास्त किया गया है। 560

लेकिन, भिक्षुओं, एक समय ऐसा आता है जब उसका मन आंतरिक रूप से स्थिर, शांत, एकीकृत और आत्म-मग्न (समाधि/समाधि) हो जाता है। वह समाधि (आत्म-मग्नता/समाधि) शांत और उदात्त होती है, जो पूर्ण समाधि शांति से प्राप्त होती है और एकीकरण तक पहुँचती है; इसे [अपवित्रताओं को] बलपूर्वक दबाकर नियंत्रित या रोका नहीं जाता है। 561 तब, उपयुक्त आधार होने पर, वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा प्राप्त किसी भी अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम होता है, जिसकी ओर वह अपना मन झुकाता है। 562 [255]

"यदि वह चाहे: 563 'मैं विभिन्न प्रकार की मानसिक शक्तियों का प्रयोग कर सकूँ: एक होकर अनेक बन सकूँ; अनेक होकर एक बन सकूँ; प्रकट और लुप्त हो सकूँ; बिना किसी बाधा के दीवार, प्राचीर, पर्वत से होकर अंतरिक्ष में जा सकूँ; पृथ्वी में ऐसे गोता लगा सकूँ जैसे वह जल हो; जल पर बिना डूबे ऐसे चल सकूँ जैसे वह पृथ्वी हो; पालथी मारकर पक्षी की तरह अंतरिक्ष में यात्रा कर सकूँ; अपने हाथों से शक्तिशाली और बलिष्ठ चंद्रमा और सूर्य को स्पर्श और सहला सकूँ; ब्रह्म जगत तक शरीर पर महारत हासिल कर सकूँ', तो वह इसे साकार करने में सक्षम है, बशर्ते इसके लिए एक उपयुक्त आधार हो।"

"यदि वह चाहे: 'क्या मैं, दिव्य श्रवण शक्ति के साथ, जो शुद्ध है और मानवीय श्रवण शक्ति से परे है, दोनों प्रकार की ध्वनियों को सुन सकता हूँ, दिव्य और मानवीय, दूर और पास की ध्वनियों को,' तो वह इसे साकार करने में सक्षम है, बशर्ते कि इसके लिए एक उपयुक्त आधार हो।"

यदि वह चाहे: 'मैं अन्य प्राणियों और व्यक्तियों के मन को अपने मन से घेरकर समझ सकूँ। मैं कामवासना से ग्रस्त मन को कामवासना से ग्रस्त मन के रूप में और निर्जन मन को निर्जन मन के रूप में समझ सकूँ; घृणा से ग्रस्त मन को घृणा से ग्रस्त मन के रूप में और निर्जन मन को निर्जन मन के रूप में समझ सकूँ; मोह से ग्रस्त मन को मोह से ग्रस्त मन के रूप में और निर्जन मन को मोह से मुक्त मन

के रूप में समझ सकूँ; संकुचित मन को संकुचित और विचलित मन को विचलित समझ सकूँ; उदात्त मन को उदात्त और अधोमुखी मन को अधोमुखी समझ सकूँ; श्रेष्ठ मन को श्रेष्ठ और अपोमुखी मन को अपोमुखी समझ सकूँ; आत्ममग्न मन को आत्ममग्न और असामंजस्यपूर्ण मन को असामंजस्यपूर्ण समझ सकूँ।' मुक्त मन मुक्त ही रहता है और अमुक्त मन अमुक्त ही रहता है। 564 वह इसे साकार करने में सक्षम है, बशर्ते कि इसके लिए उपयुक्त आधार हो।

यदि वह चाहे: 'क्या मैं अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) को याद कर सकता हूँ, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म, चार जन्म, पाँच जन्म, दस जन्म, बीस जन्म, तीस जन्म, चालीस जन्म, पचास जन्म, सौ जन्म, हज़ार जन्म, एक लाख जन्म, विश्व-विनाश के अनेक युग, विश्व-विकास के अनेक युग, विश्व-विनाश और विश्व-विकास के अनेक युग इस प्रकार: "वहाँ [256] मेरा ऐसा नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु थी; वहाँ से निकलकर, मेरा कहीं और पुनर्जन्म हुआ, और वहाँ भी मेरा ऐसा ही नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु थी; वहाँ से गुजरकर, मेरा यहाँ पुनर्जन्म हुआ है"— क्या मैं इस प्रकार अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके पहलुओं और विवरणों सहित याद कर सकता हूँ? उपयुक्त आधार होने पर वह इसे साकार करने में सक्षम है।

यदि वह चाहे: 'क्या मैं, अपनी दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मानवीय दृष्टि से परे है, प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देख सकता हूँ, निम्न और उच्च, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, और यह समझ सकता हूँ कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है: "ये प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से दुराचार किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा की, गलत मत रखा और गलत मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं; परन्तु वे प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण का पालन किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा नहीं की, जिन्होंने सही दृष्टि रखी और सही दृष्टि पर आधारित कर्म किए, शरीर के विखंडन के बाद मृत्यु के समय अच्छे स्थान, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं। - इस प्रकार, दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मनुष्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है, मैं प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देख सकूँ, निम्न और उच्च, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, और समझ सकूँ कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है। उपयुक्त आधार होने पर वह इसे अनुभव करने में सक्षम है।

यदि वह यह इच्छा करे: 'मैं दोषों के नाश के साथ, इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव करूँ, और उसमें प्रवेश करने के बाद, उसमें निवास करूँ', तो वह इसे प्राप्त करने में सक्षम है, बशर्ते कि इसके लिए एक उपयुक्त आधार हो।

---

103 ए गोल्डस्मिथ 565

उच्चतर मन (अधि-चित्त) "भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु उच्चतर मन के प्रति समर्पित होता है, तो उसे समय-समय पर तीन लक्षणों पर ध्यान देना चाहिए। 566 (1) समय-समय पर उसे समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) के लक्षण पर ध्यान देना चाहिए, (2) समय-समय पर परिश्रम के लक्षण पर, और (3) समय-समय पर उदासीनता (भीतर ध्यान केंद्रित करना/उपेक्खा) के लक्षण पर ध्यान देना चाहिए।"

यदि कोई भिक्षु जो उच्च मन के प्रति समर्पित है, केवल समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की अवस्था पर ध्यान केंद्रित करता है, तो संभव है कि उसका मन आलस्य की ओर प्रवृत्त हो जाए। यदि वह केवल परिश्रम की अवस्था पर ध्यान केंद्रित करता है, तो संभव है कि उसका मन बेचैनी की ओर प्रवृत्त हो जाए। यदि [257] वह केवल उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) की अवस्था पर ध्यान केंद्रित करता है, तो संभव है कि उसका मन दोषों के नाश के लिए उचित रूप से आत्म-लीन (सम्मोहन/सम्मोहन) न हो पाए। परन्तु जब कोई भिक्षु जो उच्च मन के प्रति समर्पित है, समय-समय पर समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की अवस्था पर, समय-समय पर परिश्रम की अवस्था पर और समय-समय पर उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) की अवस्था पर ध्यान देता है, तो उसका मन लचीला, सुगम और प्रकाशमान, कोमल और दोषों के नाश के लिए उचित रूप से आत्म-लीन (सम्मोहन/सम्मोहन) हो जाता है। दाग।

भिक्षुओं, मान लीजिए कि एक सुनार या उसका शागिर्द भट्टी तैयार करे, तवे को गर्म करे, चिमटे से थोड़ा सोना लेकर तवे में डाले। फिर वह समय-समय पर उस पर फूँक मारे, उस पर पानी छिड़के और बीच-बीच में देखता रहे। यदि सुनार या उसका शागिर्द केवल सोने पर

फूँक मारता रहे, तो संभव है कि सोना जल जाए। यदि वह केवल सोने पर पानी छिड़कता रहे, तो संभव है कि सोना ठंडा हो जाए। यदि वह केवल देखता रहे, तो संभव है कि सोना उचित आकार का न हो पाए। लेकिन यदि सुनार या उसका शागिर्द समय-समय पर उस पर फूँक मारे, उस पर पानी छिड़के और बीच-बीच में देखता रहे, तो सोना लचीला, सुचारु, चमकदार और काम के लिए उपयुक्त हो जाएगा। फिर सुनार उससे जो भी आभूषण बनाना चाहे—चाहे कंगन हो, झुमके हों, हार हो या सोने की माला—वह अपना उद्देश्य पूरा कर सकता है।

"इसी प्रकार, जब कोई भिक्षु उच्चतर मन के प्रति समर्पित होता है, तो उसे समय-समय पर तीन लक्षणों पर ध्यान देना चाहिए। समय-समय पर उसे समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के लक्षण पर ध्यान देना चाहिए, समय-समय पर परिश्रम के लक्षण पर और समय-समय पर उदासीनता (भीतर ध्यान केंद्रित करना/उपेक्खा) के लक्षण पर ध्यान देना चाहिए।"

"यदि कोई भिक्षु उच्चतर मन के प्रति समर्पित होकर केवल समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की अवस्था पर ध्यान केंद्रित करे, [258] तो संभव है कि उसका मन आलस्य की ओर विवश हो जाए। यदि वह केवल परिश्रम की अवस्था पर ध्यान केंद्रित करे, तो संभव है कि उसका मन बेचैनी की ओर विवश हो जाए। यदि वह केवल उदासीनता (भीतर ध्यान केंद्रित करना/उपेक्खा) की अवस्था पर ध्यान केंद्रित करे, तो संभव है कि उसका मन दोषों के नाश के लिए उचित रूप से आत्म-लीन (सम्मोहन/सम्मोहन) न हो पाए। परन्तु जब वह समय-समय पर समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की अवस्था पर, समय-समय पर परिश्रम की अवस्था पर और समय-समय पर समभाव की अवस्था पर ध्यान देता है, तो उसका मन कोमल, सुगम और प्रकाशमान हो जाता है, भंगुर नहीं, बल्कि दोषों के नाश के लिए उचित रूप से आत्म-लीन (सम्मोहन/सम्मोहन) हो जाता है। तब, उपयुक्त आधार होने पर, वह वास्तविक साधना में सक्षम हो जाता है।" प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा प्राप्त की जा सकने वाली किसी भी अवस्था का अभिकल्पन करना, जिसकी ओर वह अपना मन झुका सकता है।

यदि वह चाहे: 'क्या मैं विभिन्न प्रकार की मानसिक शक्तियों का उपयोग कर सकता हूँ 7 . . . [सभी 3:101 के अनुसार, यहाँ तक:] . . ; यदि वह चाहे: 'क्या मैं दोषों के नाश के साथ, इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को स्वयं अनुभव कर सकता हूँ, और उसमें प्रवेश करके, उसमें निवास कर सकता हूँ' तो वह इसे अनुभव करने में सक्षम है, बशर्ते कि इसके लिए एक उपयुक्त आधार हो।

तीसरा पचास

I. ज्ञानोदय

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

104 आत्मज्ञान से पहले (पुब्बेवा-संबोध-सुत्तम)

"भिक्षुओं, मेरे ज्ञानोदय से पहले, जब मैं मात्र एक बोधिसत्व था, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं हुआ था, तब मेरे मन में यह विचार आया: (1) 'संसार में क्या तृप्ति (असदो संस्कृत असवाद) है? (2) इसमें क्या खतरा (अदिनवो) है? (3) इससे क्या मुक्ति (निसारणा) है?' 567

"तब, भिक्षुओं, मुझे यह विचार आया: 'संसार पर निर्भरता से उत्पन्न होने वाला सुख और आनंद ही संसार में संतुष्टि है। संसार क्षणभंगुर, दुखमय और परिवर्तनशील है, यही संसार में खतरा है। संसार के प्रति इच्छा और कामवासना (राग) का त्याग और परित्याग ही संसार से मुक्ति है।"

"हे भिक्षुओं, जब तक मुझे संसार में वास्तविक सुखों का, खतरे का और उससे बचने के उपाय का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं था, तब तक मैंने इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/देवता), मार और ब्रह्मा विद हैं, इस जनसंख्या में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण, देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य विद हैं, अतुलनीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दावा नहीं किया। परन्तु जब मुझे संसार में वास्तविक सुखों का, खतरे का और उससे बचने के उपाय का प्रत्यक्ष ज्ञान हुआ, तब मैंने इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य विद हैं, अतुलनीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दावा किया।"

"मुझे यह ज्ञान और दृष्टि प्राप्त हुई: 'मेरे मन की मुक्ति अविचल है; यह मेरा अंतिम पुनर्जन्म है; अब और कोई नवजन्म (भाव/पुनर्जन्म का कारण) नहीं है'।"

---

105 संतुष्टि (1) [563] (पथमा-असदा-सुत्तम)

(1) "भिक्षुओं, मैं संसार में संतुष्टि (असद) की खोज में निकला। संसार में जो भी संतुष्टि (असद, असवाद रहित) है, वह मुझे मिल गई। मैंने अपने दिव्य ज्ञान से स्पष्ट रूप से देख लिया है कि संसार में संतुष्टि कितनी दूर तक फैली हुई है।"

(2) "मैं संसार में खतरे (आदिनाव) की खोज में निकला। संसार में जो भी खतरा है, वह मुझे मिल गया। मैंने अपने दिव्य ज्ञान से स्पष्ट रूप से देख लिया है कि संसार में खतरा कितना व्यापक है।"

(3) "मैंने संसार से मुक्ति (निसारणा) की खोज में प्रस्थान किया। संसार से जो भी मुक्ति संभव है—वह मैंने पा ली। मैंने अपने दिव्य ज्ञान से स्पष्ट रूप से देख लिया है कि संसार से मुक्ति कितनी दूर तक फैली हुई है।"

भिक्षुओं, जब तक मुझे संसार में मिलने वाले सुखों को उनके वास्तविक स्वरूप में, संकटों को संकट के रूप में और उनसे मुक्ति को मुक्ति के रूप में प्रत्यक्ष रूप से ज्ञात नहीं हुआ, तब तक मैंने इस संसार में, इसके देवों (देवदूतों/देवताओं), मार और ब्रह्मा के साथ, इस पीढ़ी में, इसके तपस्वियों और ब्राह्मणों के साथ, इसके देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के साथ, अतुलनीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दावा नहीं किया। परन्तु जब मुझे संसार में मिलने वाले सुखों को उनके वास्तविक स्वरूप में, संकटों को संकट के रूप में और उनसे मुक्ति को मुक्ति के रूप में प्रत्यक्ष रूप से ज्ञात हुआ, तब मैंने इस संसार में, इसके देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के साथ, अतुलनीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दावा किया।

"मुझे यह ज्ञान और दृष्टि प्राप्त हुई: 'मेरे मन की मुक्ति अविचल है; यह मेरा अंतिम पुनर्जन्म है; अब और कोई नवजन्म अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) नहीं है।'"

---

106 संतुष्टि (2) (दुतिया-असदा-सुत्तम)

भिक्षुओं, (1) यदि संसार में सुख न होता, तो प्राणी उससे मोहित न होते; परन्तु संसार में सुख होने के कारण प्राणी उससे मोहित हो जाते हैं। (2) यदि संसार में भय न होता, तो प्राणी उससे विरक्त न होते; परन्तु संसार में भय होने के कारण प्राणी उससे विरक्त हो जाते हैं। (3) यदि संसार से मुक्ति न होती, तो प्राणी उससे मुक्त न होते; परन्तु संसार से मुक्ति होने के कारण प्राणी उससे मुक्त हो जाते हैं।

भिक्षुओं, जब तक प्राणी संसार में मिलने वाले सुख को सुख के रूप में, खतरे को खतरे के रूप में और उससे बचने के उपाय को बचने के उपाय के रूप में प्रत्यक्ष रूप से नहीं जान लेते, तब तक वे इस संसार से, जिसमें देव (देवदूत/भगवान), मार और ब्रह्मा हैं, इस संसार से, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण हैं, देव (देवदूत/भगवान) और मनुष्य हैं, से मुक्त नहीं हो पाते; वे इससे विरक्त नहीं हो पाते, इससे मुक्त नहीं हो पाते, और न ही वे विवशता से मुक्त मन से निवास करते हैं। परन्तु जब प्राणी संसार में मिलने वाले सुख को सुख के रूप में, खतरे को खतरे के रूप में और उससे बचने के उपाय को बचने के उपाय के रूप में प्रत्यक्ष रूप से जान लेते हैं, तब वे इस संसार से, जिसमें देव (देवदूत/भगवान) और मनुष्य हैं, मुक्त हो जाते हैं, इससे विरक्त हो जाते हैं, और विवशता से मुक्त मन से निवास करते हैं।

---

107 तपस्वी एवं ब्राह्मण [569] (समना ब्राह्मण)

"भिक्षुओं, वे तपस्वी या ब्राह्मण जो (1) संसार में मिलने वाली संतुष्टि को संतुष्टि के रूप में, (2) खतरे को खतरे के रूप में और (3) उससे बचने को बचाव के रूप में नहीं समझते: मैं इन्हें तपस्वियों में तपस्वी या ब्राह्मणों में ब्राह्मण नहीं मानता, और ये पूजनीय व्यक्ति प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इसका अनुभव करके इसी जीवन में तपस्या के लक्ष्य या ब्राह्मणत्व के लक्ष्य में प्रवेश नहीं करते और उसमें निवास नहीं करते।"

"परन्तु वे तपस्वी और ब्राह्मण जो संसार में सुख को सुख के रूप में, खतरे को खतरे के रूप में और उससे मुक्ति को मुक्ति के रूप में समझते हैं: इन्हें मैं तपस्वियों में तपस्वी और ब्राह्मणों में ब्राह्मण मानता हूँ, और ये पूजनीय व्यक्ति प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा स्वयं इसका अनुभव करके इसी जीवन में तपस्या और ब्राह्मणत्व के लक्ष्य में प्रवेश करते हैं और निवास करते हैं।" [261]

---

108 विलाप (रन्ना)

भिक्षुओं, (1) भगवान की साधना में गाना विलाप के समान है। (2) भगवान की साधना में नाचना पागलपन है। (3) भगवान की साधना में दांत दिखाते हुए अत्यधिक हंसना बचकानापन है। इसलिए, भिक्षुओं, गाने और नाचने के विषय में इस पुल को तोड़ दो। जब तुम धम्म में आनंदित होकर मुस्कुराते हो, तो बस मुस्कुराओ। 570

---

109 कोई तृप्ति नहीं (अतिति सं. अतृप्ति)

भिक्षुओं, तीन ऐसी चीजें हैं जिनमें लिप्त होने से तृप्ति नहीं मिलती (तित्ति संस्कृत: तृप्ति)। वे तीन चीजें कौन सी हैं? (1) सोने में लिप्त होने से तृप्ति नहीं मिलती। (2) शराब और मदिरा के सेवन से तृप्ति नहीं मिलती। (3) यौन संबंध बनाने से तृप्ति नहीं मिलती। ये तीन चीजें हैं जिनमें लिप्त होने से तृप्ति नहीं मिलती।

---

110 असुरक्षित (अरक्षिता सं. अरक्षित)

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"गृहस्थ, जब मन असुरक्षित होता है, तो शारीरिक, मौखिक और मानसिक क्रियाएं भी असुरक्षित हो जाती हैं।"

जिसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म संरक्षित नहीं होते, उसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म दूषित हो जाते हैं। 573 जिसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म दूषित हो जाते हैं, उसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म सड़ जाते हैं। जिसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म सड़ जाते हैं, उसकी मृत्यु अच्छी नहीं होगी। 572

"मान लीजिए कि एक नुकीली छत वाले घर की छप्पर ठीक से नहीं बनाई गई है: तो छत का शिखर, शहतीरें और दीवारें असुरक्षित हो जाती हैं; छत का शिखर, शहतीरें और दीवारें दूषित हो जाती हैं; छत का शिखर, शहतीरें और दीवारें सड़ जाती हैं।"

"इसी प्रकार, हे गृहस्थ, [262] जब मन असुरक्षित होता है, तो शारीरिक, मौखिक और मानसिक क्रियाएँ असुरक्षित हो जाती हैं। . . . जिसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म भ्रष्ट हैं, उसकी मृत्यु अच्छी नहीं होगी।"

"हे गृहस्थ, जब मन सुरक्षित रहता है, तो शारीरिक, मौखिक और मानसिक क्रियाएं सुरक्षित रहती हैं।"

जिसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म सुरक्षित हैं, उसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म दूषित नहीं होते।

जिसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म दूषित नहीं होते, उसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कार्य भ्रष्ट नहीं होते। जिसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म भ्रष्ट नहीं होते, उसकी मृत्यु सुखद होती है।

मान लीजिए कि एक नुकीली छत वाला घर अच्छी तरह से छप्पर से ढका हुआ है: तो छत का शिखर, शहतीरें और दीवारें सुरक्षित रहती हैं; छत का शिखर, शहतीरें और दीवारें दूषित नहीं होतीं; छत का शिखर, शहतीरें और दीवारें सड़ती नहीं हैं।

"इसी प्रकार, हे गृहस्थ, जब मन, शरीर और वाणी की रक्षा हो; और मानसिक कर्मों की रक्षा हो... तो जिसके शारीरिक, वाणी और मानसिक कर्म भ्रष्ट नहीं होते, उसे सुखद मृत्यु प्राप्त होगी।"

---

111 विफलता (ब्यपन्ना सं. व्यय)

तब भगवान (बुद्ध) ने गृहस्थ अनाथपिंडिका से कहा:

"गृहस्थ, जब मन कमजोर हो जाता है, तो शारीरिक, मौखिक और मानसिक क्रियाएं भी विफल हो जाती हैं; जिसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म विफल हो जाते हैं, उसकी मृत्यु सुखद नहीं होती।"

मान लीजिए कि एक नुकीली छत वाले घर की छप्पर ठीक से नहीं बनाई गई है: तो छत का शिखर, शहतीरें और दीवारें सब ढह जाती हैं। ठीक उसी प्रकार, जब मन विफल हो जाता है, तो शारीरिक, मौखिक और मानसिक क्रियाएं विफल हो जाती हैं। जिसके शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्म विफल हो जाते हैं, उसकी मृत्यु सुखद नहीं होती।

"हे गृहस्थ, जब मन दृढ़ रहता है, तो शारीरिक, वाणी और मानसिक कर्म भी दृढ़ रहते हैं। जिसके शरीर, वाणी और मन के कर्म दृढ़ रहते हैं, उसे सुखद मृत्यु प्राप्त होती है।"

"मान लीजिए कि एक नुकीली छत वाला घर अच्छी तरह से छप्पर से ढका हुआ है: तो छत का शिखर, [263] शहतीरें और दीवारें नहीं गिरतीं। ठीक उसी प्रकार, जब मन विफल नहीं होता, तो शारीरिक, वाणी और मानसिक क्रियाएँ विफल नहीं होतीं। जिसके शरीर, वाणी और मन के कर्म विफल नहीं होते, उसे अच्छी मृत्यु प्राप्त होगी।"

---

112 कारण (1) (निदाना1)

भिक्षुओं, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन कारण हैं। वे तीन क्या हैं? लोभ (अनैतिक) कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है; घृणा (अनैतिक) कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है; मोह (अनैतिक) कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है।

(1) "लालच से उत्पन्न, लालच से पैदा हुआ, लालच के कारण हुआ या लालच से उत्पन्न कोई भी कर्म हानिकारक (अकुशल) और निंदनीय है तथा दुख का कारण बनता है। वह कर्म कर्मों की उत्पत्ति का कारण बनता है, न कि कर्मों की समाप्ति का।" 573

(2) "घृणा से उत्पन्न कोई भी कर्म... (3) मोह से उत्पन्न, मोह से उत्पन्न, मोह से उत्पन्न कोई भी कर्म अकुशल और निंदनीय है और दुख का कारण बनता है। वह कर्म कर्मों की उत्पत्ति का कारण बनता है, न कि कर्मों की समाप्ति का।"

ये कर्मों की उत्पत्ति के तीन कारण हैं। 574

भिक्षुओं, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन अन्य कारण हैं। 575 वे तीन क्या हैं? लोभ रहित होना कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है; घृणा रहित होना कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है; मोह रहित होना कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है।

(1) "अनासक्ति से उत्पन्न, अनिच्छुक, अनिच्छुक के कारण या अनिच्छुक से उत्पन्न कोई भी कर्म लाभकारी और दोषरहित होता है और सुख प्रदान करता है। वह कर्म (गलत कर्मों) के निवारण की ओर ले जाता है, न कि कर्मों के सृजन की ओर।"

(2) "कोई भी कर्म जो घृणा रहित होकर किया गया हो... (3) कोई भी कर्म जो मोह रहित होकर किया गया हो, मोह रहित होकर उत्पन्न हुआ हो, मोह रहित होकर किया गया हो, या मोह रहित होकर उत्पन्न हुआ हो, वह लाभकारी और निष्फल होता है और सुख प्रदान करता है। वह कर्म (गलत) कर्मों के निवारण की ओर ले जाता है, न कि कर्मों के सृजन की ओर।"

"कर्म की उत्पत्ति के ये तीन [अन्य] कारण हैं।"

---

113 कारण (2) (निदाना2)

भिक्षुओं, कर्म की उत्पत्ति के ये तीन कारण हैं... वे तीन क्या हैं? (1) अतीत में घटी उन चीजों के संदर्भ में इच्छा उत्पन्न होती है जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं। (2) भविष्य में घटी उन चीजों के संदर्भ में इच्छा उत्पन्न होती है जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं। (3) वर्तमान में विद्यमान उन चीजों के संदर्भ में इच्छा उत्पन्न होती है जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं।

(1) "हे भिक्षुओं, अतीत में घटी उन चीजों के संदर्भ में इच्छा कैसे उत्पन्न होती है जो इच्छा और राग का आधार हैं? व्यक्ति अतीत में घटी उन चीजों के बारे में सोचता है और उनका मानसिक विश्लेषण करता है जो इच्छा और राग का आधार हैं। ऐसा करने पर इच्छा उत्पन्न होती है। जब इच्छा उत्पन्न होती है, तो व्यक्ति उन चीजों से बंध जाता है। इस मानसिक आसक्ति को ही मैं बंधन कहता हूँ। इसी प्रकार अतीत में घटी उन चीजों के संदर्भ में इच्छा उत्पन्न होती है जो इच्छा और राग का आधार हैं।"

(2) "और भविष्य में होने वाली उन चीजों के संबंध में इच्छा कैसे उत्पन्न होती है जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं? व्यक्ति भविष्य में होने वाली उन चीजों के बारे में सोचता है और मानसिक रूप से उनका विश्लेषण करता है जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं। ऐसा करने पर इच्छा उत्पन्न होती है। जब इच्छा उत्पन्न होती है, तो व्यक्ति उन चीजों से बंध जाता है। मानसिक आसक्ति को ही मैं बंधन कहता हूँ। इसी प्रकार भविष्य में होने वाली उन चीजों के संबंध में इच्छा उत्पन्न होती है जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं।"

(3) "और वर्तमान में विद्यमान उन वस्तुओं के संदर्भ में इच्छा कैसे उत्पन्न होती है जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं? व्यक्ति वर्तमान में विद्यमान उन वस्तुओं के बारे में सोचता है और मानसिक रूप से उनका विश्लेषण करता है जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं। ऐसा करने पर इच्छा उत्पन्न होती है। जब इच्छा उत्पन्न होती है, तो व्यक्ति उन वस्तुओं से बंध जाता है। मानसिक आसक्ति को ही मैं बंधन कहता हूँ। इसी प्रकार वर्तमान में विद्यमान उन वस्तुओं के संदर्भ में इच्छा उत्पन्न होती है जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं।"

"कर्म (कर्म/कर्मों) की उत्पत्ति के ये तीन कारण हैं। 576 [265]

भिक्षुओं, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन अन्य कारण हैं। वे तीन क्या हैं? इच्छा अतीत में घटित उन चीजों के संदर्भ में उत्पन्न नहीं होती जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं। इच्छा भविष्य में घटित उन चीजों के संदर्भ में उत्पन्न नहीं होती जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं। इच्छा वर्तमान में विद्यमान उन चीजों के संदर्भ में उत्पन्न नहीं होती जो इच्छा और कामवासना (राग) का आधार हैं।

(1) "हे भिक्षुओं, अतीत में घटी उन चीजों के प्रति इच्छा कैसे उत्पन्न नहीं होती जो इच्छा और राग का आधार हैं? व्यक्ति अतीत में घटी उन चीजों के भविष्य के परिणाम को समझ लेता है जो इच्छा और राग का आधार हैं। भविष्य के परिणाम को समझकर वह उनसे बचता है। 577 उनसे बचकर वह मन से वैराग्यमय हो जाता है और प्राण (दिव्य ज्ञान) से परिपूर्ण होकर देखता है। 578 इस प्रकार अतीत में घटी उन चीजों के प्रति इच्छा उत्पन्न नहीं होती जो इच्छा और राग का आधार हैं।"

(2) "हे भिक्षुओं, भविष्य में होने वाली उन चीजों के प्रति इच्छा कैसे उत्पन्न नहीं होती जो इच्छा और राग का आधार हैं? व्यक्ति भविष्य में होने वाली उन चीजों के परिणाम को समझ लेता है जो इच्छा और राग का आधार हैं। परिणाम को समझकर वह उनसे दूर रहता है। उनसे दूर रहकर वह वैराग्यमय हो जाता है और दिव्य ज्ञान से परिपूर्ण होकर देखता है। इस प्रकार भविष्य में होने वाली उन चीजों के प्रति इच्छा उत्पन्न नहीं होती जो इच्छा और राग का आधार हैं।"

(3) "हे भिक्षुओं, वर्तमान में विद्यमान उन वस्तुओं के प्रति इच्छा कैसे उत्पन्न नहीं होती जो इच्छा और राग का आधार हैं? व्यक्ति वर्तमान में विद्यमान उन वस्तुओं के भावी परिणाम को समझता है जो इच्छा और राग का आधार हैं। भावी परिणाम को समझकर वह उससे बचता है। उससे बचकर वह मन से वैराग्यमय हो जाता है और दिव्य ज्ञान से परिपूर्ण होकर देखता है। इस प्रकार वर्तमान में विद्यमान उन वस्तुओं के प्रति इच्छा उत्पन्न नहीं होती जो इच्छा और राग का आधार हैं।"

"कर्म की उत्पत्ति के ये तीन [अन्य] कारण हैं।"

II. दुख के लोक की ओर अग्रसर (अपायिका-वग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

114 दुख के लोक की ओर अग्रसर (अपयिका-सुत्तम)

भिक्षुओं, तीन ऐसे हैं जो यदि अपने इस दोष का त्याग नहीं करते हैं, तो वे दुख के लोक में, नरक में जाने के लिए बाध्य हैं। वे तीन कौन हैं? [266] (1) वह जो ब्रह्मचारी न होते हुए भी ब्रह्मचारी होने का दावा करता है; (2) वह जो ब्रह्मचारी जीवन जी रहे एक शुद्ध ब्रह्मचारी पर ब्रह्मचर्य का उल्लंघन करने का निराधार आरोप लगाता है; और (3) वह जो इस प्रकार का सिद्धांत और मत रखता है: "इंद्रिय सुखों में कोई दोष नहीं है," और फिर इंद्रिय सुखों में लिप्त हो जाता है। 579 ये तीन ऐसे हैं जो यदि अपने इस दोष का त्याग नहीं करते हैं, तो वे दुख के लोक में, नरक में जाने के लिए बाध्य हैं।

---

115 दुर्लभ (दुल्लभा सं. दुर्लभ)

भिक्षुओं, संसार में तीन व्यक्तियों का प्रकटीकरण दुर्लभ है। वे तीन कौन हैं? (1) तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है। (2) तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन का उपदेश देने वाला व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। (3) कृतज्ञ और आभारी व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। इन तीनों व्यक्तियों का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है।

---

116 अथाह (अप्पमेय्या सं. अप्रमनिया)

भिक्षुओं, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से तीन प्रकार हैं? एक जिसे आसानी से मापा जा सकता है (सुप्पमेय्यो), एक जिसे मापना कठिन है (दुप्पमेय्यो), और एक जिसे मापा नहीं जा सकता (अप्पमेय्यो)।

(1) "हे भिक्षुओं, वह व्यक्ति कौन है जिसका आसानी से आकलन किया जा सकता है? यहाँ, ऐसा व्यक्ति बेचैन, अहंकारी, आत्मसंतुष्ट, बातूनी, बातों में अस्पष्टता रखने वाला, उलझन में रहने वाला, पूर्ण समझ से रहित (संपजन्न), असामहित (असमाहित), भटकते मन वाला और इंद्रियों के शिथिल होने वाला होता है। इसे ही आसानी से आकलन किया जाने वाला व्यक्ति कहा जाता है।"

(2) “और वह व्यक्ति कौन है जिसका आकलन करना कठिन है? यहाँ, ऐसा व्यक्ति जो बेचैन, अहंकारी और आत्म-प्रशंसक नहीं है; वह बातूनी और बेतरतीब बातों वाला नहीं है; उसकी सती ध्यान साधना स्थापित है और वह पूर्णतः समर्थ है, समाधि में लीन है, एकाग्रचित्त है, और उसकी इंद्रियाँ संयमित हैं। यही वह व्यक्ति कहलाता है जिसका आकलन करना कठिन है।”

(3) "और वह व्यक्ति कौन है जो अतुलनीय है? यहाँ, भिक्षु एक अरहंत है, जिसके दोष नष्ट हो चुके हैं। इसे अतुलनीय व्यक्ति कहा जाता है।"

"ये तीन प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में विद्यमान पाए जाते हैं" [267]

---

117 भेद (अनेंजा सं. अनेन्या)

"भिक्षुओं, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से तीन प्रकार हैं?"

(1) हे भिक्षुओं, जब कोई व्यक्ति रूप-बोधों पर पूर्ण विजय प्राप्त कर लेता है, इंद्रियों के प्रभाव से उत्पन्न संवेदनाओं (सन्ना/संज्ञा) का निवारण कर लेता है, और विविधता की संवेदनाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान नहीं देता, तो वह 'अंतरिक्ष अनंत है' का बोध करते हुए अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह उसमें आनंदित होता है, उसकी इच्छा करता है और उसमें तृप्ति पाता है। यदि वह उसमें दृढ़ रहे, उस पर एकाग्र रहे, उसमें बार-बार निवास करे और मृत्यु के समय उसे न खोए, तो उसका पुनर्जन्म अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ होता है। अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के देवों (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल 20,000 युगों का होता है। सांसारिक व्यक्ति जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवों (देवदूतों/देवताओं) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो उसका पुनर्जन्म अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ होता है। देवों (देवदूतों/देवताओं) के पास रहने वाला व्यक्ति या तो नरक में जाता है, पशु जगत में जाता है, या पीड़ित आत्माओं (भूतों) के लोक में जाता है। 580 परन्तु भगवान (बुद्ध) का शिष्य जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवों (देवदूतों/देवताओं) का पूरा जीवनकाल व्यतीत कर लेता है, तो वह उसी अवस्था में अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। यही वह अंतर है, यही वह भिन्नता है, यही वह भेद है जो ज्ञानी श्रेष्ठ शिष्य और अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति में है, अर्थात् जब भविष्य का गंतव्य और पुनर्जन्म होता है। 581

(2) “फिर, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, ‘चेतना अनंत है’ का अनुभव करते हुए, कोई व्यक्ति अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह उसका आनंद लेता है, उसकी इच्छा करता है और उसमें तृप्ति पाता है। यदि वह उसमें दृढ़ रहे, उस पर एकाग्र रहे, उसमें निरंतर निवास करे और मृत्यु के समय उसे न खोए, तो वह अनंत चेतना के आधार पर स्थित देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) के देवताओं (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल 40,000 युगों का होता है। सांसारिक व्यक्ति जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/देवताओं) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह या तो नरक, पशुलोक या व्यथित आत्माओं के लोक में जाता है। परन्तु भगवान (बुद्ध) का शिष्य वहीं रहता है। वह अपने पूरे जीवन वहीं रहता है, और जब वह उन देवों (देवदूतों/देवताओं) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह उसी अवस्था में अंतिम निर्वाण प्राप्त करता है। यही वह अंतर है, यही वह भिन्नता है, यही वह भेद है [268] जो शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य और अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति के बीच है, अर्थात् जब भविष्य का गंतव्य और पुनर्जन्म होता है।

(3) “हे भिक्षुओं, चेतना की अनंतता के आधार को पूर्णतः पार करके, ‘कुछ नहीं है’ का अनुभव करते हुए, कोई व्यक्ति यहाँ शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह उसमें आनंदित होता है, उसकी इच्छा करता है और उसमें तृप्ति पाता है। यदि वह उसमें दृढ़ रहे, उस पर एकाग्र रहे, उसमें निरंतर निवास करे और मृत्यु के समय उसे न खोए, तो वह शून्यता के आधार के देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। शून्यता के क्षेत्र (आयतन) के देवताओं (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल 60,000 युगों का होता है। सांसारिक व्यक्ति जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/देवताओं) का संपूर्ण जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह या तो नरक, पशुलोक या व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में जाता है।” लेकिन भगवान (बुद्ध) का शिष्य जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह उसी अवस्था में अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। यही वह अंतर है, वही भिन्नता है, वही भेद है जो ज्ञानी शिष्य और अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति में है, यानी जब भविष्य में गंतव्य और पुनर्जन्म का सवाल आता है।

"भिक्षुओं, ये तीन प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में विद्यमान पाए जाते हैं।"

---

118 असफलताएँ और उपलब्धियाँ (सम्पदा) (विपत्ति-सम्पदा)

भिक्षुओं, ये तीन प्रकार की विफलताएँ (विपत्ति) हैं। वे तीन क्या हैं? सद्‌गुणपूर्ण आचरण में विफलता, मन में विफलता (विपत्ति), और दृष्टि में विफलता (विपत्ति)।

(1) "और सद्‌गुणों में विफलता (विपत्ति) क्या है? यहाँ, कोई जीवन नष्ट करता है, जो नहीं दिया गया है उसे लेता है, यौन दुराचार में लिप्त होता है, झूठ बोलता है, फूट डालता है, कठोर बोलता है और व्यर्थ की बातों में लिप्त होता है। इसे सद्‌गुणों में विफलता (विपत्ति) कहा जाता है।"

(2) "मन में विफलता (विपत्ति) क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति लालसा से भरा हुआ है और उसके मन में दुर्भावना है। इसे मन में विफलता (विपत्ति) कहते हैं।"

(3) "दृष्टि में विफलता (विपत्ति) क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति गलत दृष्टिकोण रखता है और उसका परिप्रेक्ष्य इस प्रकार है: "कुछ भी दिया नहीं जाता, कुछ भी बलिदान नहीं किया जाता, कुछ भी अर्पित नहीं किया जाता; अच्छे और बुरे कर्मों का कोई फल या परिणाम नहीं होता; न यह संसार है, न दूसरा संसार; न माता है, न पिता; कोई भी प्राणी स्वतः पुनर्जन्म नहीं लेता; संसार में ऐसे कोई तपस्वी और ब्राह्मण नहीं हैं जो सही आचरण और सही अभ्यास करते हों और स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा इस संसार और दूसरे संसार का अनुभव कर लें और दूसरों को भी इसका ज्ञान कराएँ।" इसे दृष्टि में विफलता (विपत्ति) कहते हैं।

"पुण्य आचरण में विफलता (विपत्ति) के कारण, शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं। मन की विफलता (विपत्ति) के कारण... दृष्टि की विफलता (विपत्ति) के कारण, शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

"ये, भिक्षुओ, तीन असफलताएं (विपत्ति) हैं।

भिक्षुओं, ये तीन सिद्धियाँ (संपदा) हैं। वे तीन क्या हैं? सद्‌गुणपूर्ण आचरण में सिद्धि (संपदा), मन में सिद्धि (संपदा), और दृष्टि में सिद्धि (संपदा)।

(1) "और सद्‌गुणों में संपदा क्या है? यहाँ, व्यक्ति जीव-जंतुओं को नष्ट करने से, बिना माँगे वस्तुएँ लेने से, यौन दुराचार से, झूठी वाणी से, फूट डालने वाली वाणी से, कठोर वाणी से और व्यर्थ की बातों से परहेज़ करता है। इसे सद्‌गुणों में संपदा कहा जाता है।"

(2) "और मन में संपदा क्या है? यहाँ, व्यक्ति लालसा रहित है और उसका मन द्वेष से मुक्त है। इसे मन में संपदा कहते हैं।"

(3) "संपदा (संपदा) क्या है? यहाँ, सही दृष्टि और सही परिप्रेक्ष्य रखने वाला व्यक्ति इस प्रकार है: 'जो दिया जाता है, बलिदान किया जाता है और अर्पित किया जाता है; अच्छे और बुरे कर्मों का फल और परिणाम होता है; यह संसार और परलोक है; माता-पिता हैं; स्वतः पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी हैं; संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले तपस्वी और ब्राह्मण हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इस संसार और परलोक का अनुभव किया है और उन्हें दूसरों को भी ज्ञात कराते हैं।' इसे संपदा (संपदा) कहा जाता है। [270]

"पुण्य कर्मों में संपदा के कारण, शरीर के क्षोभ के साथ, मृत्यु के बाद, प्राणी एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं। मन में संपदा के कारण... दृष्टि में संपदा के कारण, शरीर के क्षोभ के साथ, मृत्यु के बाद, प्राणी एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

"भिक्षुओं, ये तीन सिद्धियाँ (संपदा) हैं।"

---

119 पासे (अपन्नका)

भिक्षुओं, ये तीन प्रकार की विफलताएँ (विपत्ति) हैं। वे तीन क्या हैं? सद्‌गुणपूर्ण आचरण में विफलता, मन में विफलता (विपत्ति), और दृष्टि में विफलता (विपत्ति)।

और सद्‌गुणपूर्ण आचरण में विफलता (विपत्ति) क्या है? यहाँ कोई जीवन का नाश करता है... [जैसा कि 3:117 में है]... इसे दृष्टि में विफलता (विपत्ति) कहा जाता है।

"पुण्य आचरण में विफलता (विपत्ति) के कारण, शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं। मन की विफलता (विपत्ति) के कारण... दृष्टि की विफलता (विपत्ति) के कारण, शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

"जिस प्रकार पासा, ऊपर उछालने पर जहाँ भी गिरता है, वहीं स्थिर हो जाता है, उसी प्रकार सद्‌गुणों में विफलता (विपत्ति) के कारण... मन की विफलता (विपत्ति) के कारण... दृष्टि की विफलता (विपत्ति) के कारण, शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

"ये, भिक्षुओ, तीन असफलताएं (विपत्ति) हैं।

भिक्षुओं, ये तीन सिद्धियाँ (संपदा) हैं। वे तीन क्या हैं? सद्‌गुणपूर्ण आचरण में सिद्धि (संपदा), मन में सिद्धि (संपदा), और दृष्टि में सिद्धि (संपदा)।

और हे भिक्षुओं, सद्‌गुणपूर्ण आचरण में संपदा क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति जीवन के विनाश से परहेज करता है... [जैसा कि 3:117 में है]... इसे ही संपदा कहा जाता है।

"पुण्य कर्मों में संपदा के फलस्वरूप, शरीर के क्षोभ के साथ मृत्यु के बाद, प्राणी स्वर्गलोक में एक अच्छे स्थान पर पुनर्जन्म लेते हैं। मन में संपदा के फलस्वरूप... दृष्टि में संपदा के फलस्वरूप, शरीर के क्षोभ के साथ मृत्यु के बाद, प्राणी स्वर्गलोक में एक अच्छे स्थान पर पुनर्जन्म लेते हैं।"

जिस प्रकार पासा ऊपर उछालने पर जहाँ गिरता है वहीं स्थिर हो जाता है, उसी प्रकार सद्‌गुणों में संपदा (संपदा) के कारण... मन में संपदा (संपदा) के कारण... दृष्टि में संपदा (संपदा) के कारण, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, प्राणी एक अच्छे गंतव्य, एक स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।

"हे भिक्षुओं, ये तीन सिद्धियाँ (संपदाएँ) हैं।"

---

120 गतिविधि (कम्मंता)

भिक्षुओं, ये तीन प्रकार की विफलताएँ (विपत्ति) हैं। वे तीन क्या हैं? कर्म में विफलता, आजीविका में विफलता (विपत्ति) और दृष्टि में विफलता (विपत्ति)।

(1) "और कर्म में विफलता (विपत्ति) क्या है? यहाँ, कोई जीवन को नष्ट करता है... और व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है। इसे कर्म में विफलता (विपत्ति) कहते हैं।"

(2) "और आजीविका में विफलता (विपत्ति) क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति गलत आजीविका का है और गलत प्रकार की आजीविका से जीविका कमाता है। इसे आजीविका में विफलता (विपत्ति) कहा जाता है।"

(3) "दृष्टि में विफलता (विपत्ति) क्या है? [271] यहाँ, कोई व्यक्ति गलत दृष्टिकोण रखता है और उसका परिप्रेक्ष्य इस प्रकार है: 'कुछ भी दिया हुआ नहीं है... संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले कोई तपस्वी और ब्राह्मण नहीं हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा

स्वयं इस संसार और परलोक का अनुभव किया हो और फिर दूसरों को उनका ज्ञान कराते हों। इसे दृष्टि में विफलता (विपत्ति) कहा जाता है।

ये तीन विफलताएँ (विपत्ति) हैं।

भिक्षुओं, ये तीन सिद्धियाँ (संपदा) हैं। वे तीन क्या हैं? कर्म में सिद्धि (संपदा), जीविका में सिद्धि (संपदा), और दृष्टि में सिद्धि (संपदा)।

(1) "और कर्म में संपदा क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति जीव-जंतुओं के विनाश से और व्यर्थ की बातों से परहेज करता है। इसे कर्म में संपदा कहते हैं:

(2) "और आजीविका में संपदा क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति सही आजीविका का है और सही प्रकार की आजीविका से जीविका कमाता है। इसे आजीविका में संपदा कहा जाता है।"

(3) "संपदा क्या है? यहाँ, किसी का सही दृष्टिकोण और परिप्रेक्ष्य इस प्रकार है: 'जो दिया गया है, वही है... संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले तपस्वी और ब्राह्मण हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इस संसार और परलोक का अनुभव किया है और उन्हें दूसरों को भी ज्ञात कराते हैं।' इसे संपदा कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये तीन सिद्धियाँ (संपदा) हैं।"

121 पवित्रता (1) (सोसेय्या1 सं. शुचिता)

भिक्षुओं, ये तीन प्रकार की पवित्रताएँ हैं। वे कौन सी तीन हैं? शारीरिक पवित्रता, वाणी की पवित्रता और मानसिक पवित्रता!

(I) "शारीरिक पवित्रता क्या है? यहाँ, व्यक्ति जीवन को नष्ट करने से, जो नहीं दिया गया है उसे लेने से और यौन दुराचार से परहेज करता है। इसे शारीरिक पवित्रता कहा जाता है।"

(2) "और मौखिक शुद्धता क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति झूठी वाणी, फूट डालने वाली वाणी, कठोर वाणी और व्यर्थ की बकवास से परहेज करता है। इसे मौखिक शुद्धता कहा जाता है।"

(3) "और मानसिक शुद्धता क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति लालसा रहित, द्वेष रहित, [272] और सही दृष्टिकोण रखता है। इसे मानसिक शुद्धता कहा जाता है।

"भिक्षुओं, ये तीन शुद्धि हैं।"

---

122 पवित्रता (2) (सोसेय्या2 सं. शुचिता)

भिक्षुओं, ये तीन प्रकार की पवित्रताएँ हैं। वे कौन सी तीन हैं? शारीरिक पवित्रता, वाणी की पवित्रता और मानसिक पवित्रता।

(1) "और शारीरिक पवित्रता क्या है? यहाँ, एक भिक्षु जीवन के विनाश से, जो नहीं दिया गया है उसे लेने से और यौन गतिविधि से परहेज करता है। इसे शारीरिक पवित्रता कहा जाता है।"

(2) "और वाणी की शुद्धता क्या है? यहाँ, भिक्षु झूठे वचन, फूट डालने वाले वचन, कठोर वचन और व्यर्थ की बातों से परहेज़ करता है। इसे वाणी की शुद्धता कहते हैं।"

(3) "और मानसिक शुद्धता क्या है? 583 यहाँ, जब किसी भिक्षु में कामुक इच्छा होती है, तो वह समझता है: 'मुझमें कामुक इच्छा है'; या जब उसमें कामुक इच्छा नहीं होती, तो वह समझता है: 'मुझमें कामुक इच्छा नहीं है'; और वह यह भी समझता है कि अजन्मी कामुक इच्छा कैसे उत्पन्न होती है, उत्पन्न हुई कामुक इच्छा का त्याग कैसे होता है, और त्यागी हुई कामुक इच्छा भविष्य में फिर से कैसे उत्पन्न नहीं होती है।

"जब उसमें दुर्भावना होती है... जब उसमें सुस्ती और आलस्य होता है... जब उसमें बेचैनी और पश्चाताप होता है... [273]... जब उसमें संदेह होता है, तो वह समझता है: 'मुझमें संदेह है'; या जब उसमें संदेह नहीं होता है, तो वह समझता है: 'मुझमें संदेह नहीं है'; और वह यह भी समझता है कि अनहोनी संदेह कैसे उत्पन्न होती है, कैसे उत्पन्न संदेह का त्याग होता है, और कैसे त्यागी हुई संदेह भविष्य में फिर से उत्पन्न नहीं होती है। इसे मानसिक शुद्धता कहते हैं।"

"भिक्षुओं, ये तीन शुद्धि हैं।"

शरीर से शुद्ध, वाणी से शुद्ध,

मन से शुद्ध, दोषरहित

-

वे शुद्ध व्यक्ति को, पवित्रता में सिद्ध पुरुष को,

"

वह जिसने बुराई को धो डाला है" कहते हैं।

---

123 संतत्व (मनीय्या संस. मुनित्वा)

भिक्षुओं, तीन प्रकार की संतता होती है। वे कौन से तीन प्रकार हैं? शारीरिक संतता, वाणी की संतता और मानसिक संतता।

(1) "और शारीरिक पवित्रता क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति जीवन के विनाश से, जो नहीं दिया गया है उसे लेने से और यौन गतिविधि से परहेज करता है। इसे शारीरिक पवित्रता कहा जाता है।"

(2) "और मौखिक पवित्रता क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति झूठे भाषण से, फूट डालने वाले भाषण से, कठोर भाषण से और व्यर्थ की बातों से परहेज करता है। इसे मौखिक पवित्रता कहा जाता है।"

(3) "मानसिक संतत्व क्या है? यहाँ, दोषों के नाश के साथ, एक भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान से, इसी जीवन में, मन की निष्कलंक मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इसे ही मानसिक संतत्व कहते हैं।"

"हे भिक्षुओं, ये तीन प्रकार की संतता हैं।"

शरीर से ऋषि, वाणी से ऋषि,

मन से ऋषि, दोषरहित:

वे मौन में परिपूर्ण ऋषि को

"वह जिसने सब कुछ त्याग दिया है" कहते हैं। [274]

III. कुसिनारा [584]

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

124 कुसिनारा

एक बार भगवान (बुद्ध) कुसिनारा में बलिहारणा वन के घने जंगल में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया...

"हे भिक्षुओं, एक भिक्षु किसी गाँव या कस्बे पर निर्भर होकर रहता है। एक गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्र उसके पास आता है और उसे अगले दिन के भोजन के लिए आमंत्रित करता है। यदि वह चाहे तो भिक्षु स्वीकार कर लेता है। रात्रि बीत जाने पर, सुबह भिक्षु वस्त्र धारण करता है, अपना कुंड और वस्त्र लेकर उस गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र के निवास पर जाता है। वह तैयार की गई चौकी पर बैठता है और वह गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्र अपने हाथों से उसे विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसता है और तृप्त करता है। (1) उसके मन में यह विचार आता है: 'कितना अच्छा है कि यह गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्र अपने हाथों से मुझे विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसता है और तृप्त करता है!' (2) उसके मन में यह भी विचार आता है: 'काश भविष्य में भी यह गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्र अपने हाथों से मुझे इसी प्रकार विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसता रहे और तृप्त करता रहे!'" (3) वह उस भोजन का उपयोग उससे बंधे हुए, उसके प्रति आसक्त, उसमें अंधाधुंध लीन होकर करता है, उसमें निहित खतरे को अनदेखा करते हुए और उससे बचने के उपाय को न समझते हुए। वह उसके संबंध में कामुक विचार रखता है; वह दुर्भावना के विचार रखता है; वह हानि पहुँचाने के विचार रखता है। मैं कहता हूँ कि ऐसे भिक्षु को जो कुछ दिया जाता है, वह अधिक फलदायी नहीं होता। इसका कारण क्या है? क्योंकि भिक्षु आलसी है।

"यहाँ, एक भिक्षु किसी गाँव या कस्बे पर निर्भर होकर रहता है। एक गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्र उसके पास आता है और उसे अगले दिन के भोजन के लिए आमंत्रित करता है। यदि वह चाहे तो भिक्षु स्वीकार कर लेता है। रात्रि बीत जाने पर, सुबह भिक्षु वस्त्र धारण करता है, अपना कुंड और वस्त्र लेकर उस गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र के निवास पर जाता है। वह तैयार की गई चौकी पर बैठता है और वह गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्र अपने हाथों से उसे विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसता है और तृप्त करता है। (1) उसके मन में यह विचार नहीं आता: 'कितना अच्छा है कि यह गृहस्थ [275] या गृहस्थ का पुत्र अपने हाथों से मुझे विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसता है और तृप्त करता है!' (2) उसके मन में यह विचार भी नहीं आता: 'हे भविष्य में भी, यह गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्र अपने हाथों से मुझे इसी प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसता रहे और तृप्त करे!'" (3) वह उस भोजन का उपयोग उससे बंधे बिना, उसके प्रति आसक्त हुए बिना, और उसमें अंधाधुंध लीन हुए बिना करता है, बल्कि उसमें निहित खतरे को पहचानते हुए और उससे बचने का मार्ग समझते हुए करता है। वह उसके संबंध में त्याग के विचार करता है; वह सद्भावना के विचार करता है; वह अहिंसा के विचार करता है। मैं कहता हूँ कि ऐसे भिक्षु को जो कुछ भी दिया जाता है, वह बहुत फलदायी होता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि भिक्षु सचेत रहता है।

---

125 तर्क (बंधन)

"भिक्षुओं, जहाँ कहीं भी भिक्षु आपस में बहस और झगड़े करते हुए एक-दूसरे को तीखे शब्दों से घायल करते हैं, वहाँ मेरा ध्यान उस ओर लगाने में भी असहजता होती है, वहाँ जाने की तो बात ही छोड़िए। मैं उनके बारे में यह निष्कर्ष निकालता हूँ: 'निश्चित रूप से, उन पूजनीय भिक्षुओं ने तीन चीजों का त्याग कर तीन अन्य चीजों का अभ्यास किया है।'"

उन्होंने किन तीन चीजों का त्याग किया है? त्याग का विचार, सद्भावना का विचार और अहिंसा का विचार। यही तीन चीजें हैं जिनका उन्होंने त्याग किया है।

उन्होंने किन तीन चीजों का पोषण किया है? कामुक विचार, द्वेषपूर्ण विचार और हानि पहुंचाने के विचार। यही तीन चीजें हैं जिनका उन्होंने पोषण किया है।

"जहाँ कहीं भी भिक्षु वाद-विवाद और झगड़े में पड़ जाते हैं और विवाद में पड़ जाते हैं... मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ: 'निश्चित रूप से, उन पूजनीय भिक्षुओं ने इन तीन चीजों का त्याग कर इन तीन [अन्य] चीजों का अभ्यास किया है।'

"'भिक्षुओं, जहाँ कहीं भी भिक्षु एकमत होकर, सद्‌भाव से, बिना किसी विवाद के, दूध और पानी की तरह एक दूसरे में समाहित होकर, एक दूसरे को स्नेह भरी दृष्टि से देखते हुए निवास करते हैं, वहाँ जाने में मुझे कोई संकोच नहीं होता, ध्यान लगाने की तो बात ही अलग है। मैं निष्कर्ष निकालता हूँ: 'निःसंदेह, उन पूजनीय भिक्षुओं ने तीन चीजों का त्याग कर तीन अन्य चीजों का पालन किया है।'

"'वे तीन चीजें क्या हैं जिन्हें उन्होंने त्याग दिया है? [276] कामुक विचार, दुर्भावना के विचार और हानि पहुँचाने के विचार। ये तीन चीजें हैं जिन्हें उन्होंने त्याग दिया है।

उन्होंने किन तीन चीजों का अभ्यास किया है? त्याग का विचार, सद्‌भावना का विचार और अहिंसा का विचार। यही तीन चीजें हैं जिनका उन्होंने अभ्यास किया है।

"जहाँ कहीं भी भिक्षु सद्‌भाव से निवास कर रहे हैं... मेरा निष्कर्ष यह है: 'निश्चित रूप से, उन पूजनीय भिक्षुओं ने इन तीन चीजों का त्याग कर इन तीन [अन्य] चीजों का अभ्यास किया है।"

---

126 गोतमका

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में गौतमक मंदिर में निवास कर रहे थे। 585 वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया...

भिक्षुओं, (1) मैं धम्म का उपदेश प्रत्यक्ष ज्ञान के द्वारा देता हूँ, प्रत्यक्ष ज्ञान के बिना नहीं। (2) मैं धम्म (मार्ग) का उपदेश आधार सहित देता हूँ, आधारहीन नहीं। (3) मैं धम्म का उपदेश प्रतिकारक के रूप में देता हूँ, प्रतिकार रहित नहीं। 586 क्योंकि मैं धम्म का उपदेश प्रत्यक्ष ज्ञान के द्वारा देता हूँ, प्रत्यक्ष ज्ञान के बिना नहीं; क्योंकि मैं धम्म का उपदेश आधार सहित देता हूँ, आधारहीन नहीं; क्योंकि मैं धम्म का उपदेश प्रतिकारक के रूप में देता हूँ, प्रतिकार रहित नहीं, इसलिए मेरे उपदेश पर अमल किया जाना चाहिए, मेरे निर्देशों पर अमल किया जाना चाहिए। आपके लिए इतना ही काफी है कि आप प्रसन्न हों, इतना ही काफी है कि आप आनंदित हों: "भगवान (बुद्ध) पूर्णतः प्रबुद्ध हैं! भगवान (बुद्ध) ने धम्म की अच्छी व्याख्या की है! संघ उत्तम मार्ग का अनुसरण कर रहा है!"

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। भिक्षु भगवान (बुद्ध) के इस कथन से प्रसन्न हुए। और जब यह प्रवचन दिया जा रहा था, तब हजार रूपों वाली विश्व व्यवस्था कांप उठी।

---

127 भरंडू

एक बार भगवान (बुद्ध) कोसल पर्वतों के बीच भ्रमण कर रहे थे, जब वे कपिलवस्तु पहुँचे। महानामा नामक शाक्य ने सुना, "भगवान (बुद्ध) कपिलवस्तु पहुँच गए हैं।" तब महानामा भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ खड़े हो गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"जाओ, महानामा, और कपिलवस्तु में एक उपयुक्त विश्राम गृह ढूँढ़ो जहाँ हम रात भर ठहर सकें।" [277]

"जी, भंते," महानामा ने उत्तर दिया। फिर वे कपिलवस्तु में प्रवेश कर गए और पूरे शहर में खोजबीन की, लेकिन उन्हें कोई उपयुक्त विश्रामगृह नहीं मिला जहाँ भगवान (बुद्ध) रात्रि विश्राम कर सकें। अतः वे भगवान (बुद्ध) के पास लौट आए और उनसे कहा: "भंते,

कपिलवस्तु में कोई उपयुक्त विश्रामगृह नहीं है जहाँ भगवान (बुद्ध) रात्रि विश्राम कर सकें। परन्तु भरंडु कलामा, जो पूर्व में भगवान (बुद्ध) के सह-भिक्षु थे, [यहाँ हैं]। 587 भगवान (बुद्ध) रात्रि उनके आश्रम में व्यतीत करें।”

"जाओ, महानामा, और मेरे लिए एक चटाई तैयार करो।"

"जी हां, भंते," महानामा ने उत्तर दिया। फिर वे भारंदु के आश्रम गए, चटाई बिछाई, पैर धोने के लिए पानी रखा, भगवान (बुद्ध) के पास लौटे और कहा:

"हे भंते, मैंने चटाई बिछा दी है और पैर धोने के लिए पानी रख दिया है। भगवान (बुद्ध) अपनी सुविधानुसार जा सकते हैं।"

तब भगवान (बुद्ध) भरंडु के आश्रम में गए, उनके लिए तैयार किए गए आसन पर बैठे और अपने चरण धोए। तब महानामा के मन में यह विचार आया: "भगवान (बुद्ध) के साथ रहने का यह उचित समय नहीं है, क्योंकि वे थके हुए हैं। मैं उनसे कल मिलूंगा।" फिर उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और चले गए।

फिर, जब रात बीत गई, तो महानामा भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"महानामा, संसार में तीन प्रकार के शिक्षक पाए जाते हैं। वे कौन से तीन प्रकार के शिक्षक हैं?"

(1) "यहाँ, महानामा, कुछ शिक्षक इंद्रिय सुखों की पूर्ण समझ का निर्देश देते हैं, लेकिन रूपों या संवेदनाओं (वेदना) का नहीं। (2) एक अन्य शिक्षक इंद्रिय सुखों और रूपों की पूर्ण समझ का निर्देश देते हैं, लेकिन संवेदनाओं (वेदना) का नहीं। (3) एक अन्य शिक्षक इंद्रिय सुखों, रूपों और संवेदनाओं (वेदना) की पूर्ण समझ का निर्देश देते हैं। ये तीन प्रकार के शिक्षक हैं जो संसार में विद्यमान हैं। क्या इन तीनों प्रकार के शिक्षकों का लक्ष्य एक ही है या भिन्न-भिन्न?"

जब यह कहा गया, तो कलामा भारंदु ने महानामा से कहा: "महानामा, आप भी यही कहिए।" लेकिन भगवान (बुद्ध) ने महानामा से कहा: "महानामा, आप कुछ और कहिए।"

दूसरी बार... तीसरी बार भरंडु कलामा ने महानामा से कहा: "वही कहो, महानामा।" लेकिन भगवान (बुद्ध) ने महानामा से कहा: "कुछ और कहो, महानामा।"

तब भारंदु के मन में यह विचार आया: "संन्यासी गौतम ने प्रभावशाली महानामा शाक्य के समक्ष तीन बार मेरा खंडन किया है। बेहतर होगा कि मैं कपिलवस्तु छोड़ दूं।"

फिर कलाम भारंडु कपिलवस्तु छोड़कर चले गए। जब वे कपिलवस्तु छोड़कर गए, तो वे हमेशा के लिए चले गए और कभी वापस नहीं लौटे।

---

128 हत्थाका

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब, जब रात हो गई, तो युवा देव (देवदूत/भगवान) हत्थक, जो पूरे जेतवन को प्रकाशित कर रहे थे, भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे। पास पहुँचकर, [यह सोचते हुए:] "मैं भगवान (बुद्ध) के सामने खड़ा होऊंगा," वे नीचे धंस गए, उतर गए और स्थिर नहीं रह सके। जैसे घी या तेल रेत पर डालने पर नीचे धंस जाता है, उतर जाता है और स्थिर नहीं रहता, वैसे ही युवा देव (देवदूत/भगवान) हत्थक, [यह सोचते हुए:] "मैं भगवान (बुद्ध) के सामने खड़ा होऊंगा," नीचे धंस गए, उतर गए और स्थिर नहीं रह सके। [279]

तब भगवान (बुद्ध) ने हत्थक से कहा: "एक स्थूल शरीर बनाओ, हत्थक।"

"जी, भंते," हत्थक ने उत्तर दिया। फिर उसने एक स्थूल शरीर बनाया, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और एक तरफ खड़ा हो गया। तब भगवान (बुद्ध) ने उससे कहा:

"हत्थका, क्या वे शिक्षाएँ जो तुम्हें अतीत में, जब तुम मनुष्य थे, याद आती थीं, अब तुम्हें याद आ रही हैं?" 589

"भंते, वे शिक्षाएँ जो मुझे अतीत में, मनुष्य रूप में रहते हुए, याद थीं, अब मुझे याद आ रही हैं; और वे शिक्षाएँ जो मुझे अतीत में, मनुष्य रूप में रहते हुए, याद नहीं थीं, अब मुझे याद आ रही हैं। 590 जिस प्रकार भगवान (बुद्ध) अब भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष और स्त्री गृहस्थ अनुयायियों, राजाओं और राजमंत्रियों, संप्रदायिक शिक्षकों और उनके शिष्यों से घिरे हुए हैं, उसी प्रकार मैं अन्य युवा देवताओं (देवदूतों/देवताओं) से घिरा हुआ हूँ। युवा देवता (देवदूत/देवता) दूर से भी मेरे पास आते हैं, [यह सोचकर]: 'हम युवा देवता (देवदूत/देवता) हत्थक से धम्म सुनेंगे।'"

"हे भंते, मैं तीन बातों में अतृप्त और अतृप्त होकर मरा। वे तीन बातें क्या थीं? (1) मैं भगवान (बुद्ध) के दर्शन में अतृप्त और अतृप्त होकर मरा। (2) मैं अच्छे धम्म (बुद्ध का मार्ग) को सुनने में अतृप्त और अतृप्त होकर मरा। (3) मैं संघ (भिक्षुओं का संघ) की सेवा में अतृप्त और अतृप्त होकर मरा। मैं इन तीनों बातों में अतृप्त और अतृप्त होकर मरा।"

" भगवान (बुद्ध) के दर्शन करने,

अच्छे धम्म को सुनने

और संघ की सेवा करने से मुझे कभी तृप्ति नहीं होती थी। "

उच्चतर सद्गुणों का प्रशिक्षण प्राप्त करते हुए,

मैंने अच्छे धर्म का उपदेश सुनकर आनंद उठाया। हत्थका इन तीनों चीजों से पर्याप्त रूप से लाभान्वित न होकर

अविहा 591 (उच्चतर स्वर्ग) में पुनर्जन्म ले चुका है।

---

129 प्रदूषण (कटुविया)

एक बार भगवान (बुद्ध) इसिपताना के हिरण पार्क में बरनासी में निवास कर रहे थे। फिर, सुबह, भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र लिया और भिक्षा मांगने के लिए बरनासी में प्रवेश किया। [280] पशुओं को जोतने वाले अंजीर के वृक्ष के पास भिक्षा मांगते हुए, 592 भगवान (बुद्ध) ने एक असंतुष्ट भिक्षु को देखा, जो बाहरी संतुष्टि की तलाश में था, 593 वह भ्रमित मन का था, पूर्ण समझ से रहित था, असामहित था, उसका मन भटक रहा था और उसकी इंद्रियां शिथिल थीं। उसे देखकर उन्होंने उस भिक्षु से कहा:

"भिक्षु! अपने आप को अपवित्र मत करो। 594 हे भिक्षु, यह अपरिहार्य है कि मक्खियाँ उस व्यक्ति का पीछा करेंगी और उस पर हमला करेंगी जिसने अपने आप को अपवित्र कर लिया है और दुर्गंध से दूषित हो गया है।" 595

तब, भगवान (बुद्ध) द्वारा इस प्रकार प्रेरित किए जाने पर, उस भिक्षु में तत्परता की भावना उत्पन्न हुई। 595

जब भगवान (बुद्ध) बनारस में भिक्षा मांगने गए थे, भोजन करने के बाद, जब वे भिक्षा मांगने के बाद लौटे, तो उन्होंने भिक्षुओं को संबोधित किया:

भिक्षुओं, आज सुबह मैंने प्राण त्यागे, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किया और भिक्षा मांगने के लिए बनारस में प्रवेश किया। पशुओं को जोतने वाले अंजीर के वृक्ष के पास भिक्षा मांगते हुए मैंने एक असंतुष्ट भिक्षु को देखा जो बाहरी सुख की तलाश में था, उसका मन व्याकुल था, वह पूर्ण रूप से बोधहीन था, उसका ध्यान भंग था, उसका मन भटक रहा था और उसकी इंद्रियां शिथिल थीं। उसे देखकर मैंने उस भिक्षु से कहा: 'भिक्षु, भिक्षु! अपने आप को अपवित्र मत करो; यह अपरिहार्य है, भिक्षु, कि मक्खियां उसका पीछा करेंगी और उस पर हमला करेंगी जो अपवित्र हो गया है और दुर्गंध से दूषित हो गया है।' तब, मेरे इस प्रकार उपदेश से उस भिक्षु को चिंता हुई। यह सुनकर एक भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से पूछा: "हे भंते, 'अपवित्रता' से क्या तात्पर्य है? 'दुर्गंध' क्या है?" और ये 'मक्खियाँ' क्या हैं?

(1) "हे भिक्षु, लालसा ही 'अशुद्धता' कहलाती है। (2) दुर्भावना 'दुर्गंध' है। (3) बुरे (अकुशल) विचार 'मक्खियाँ' हैं। यह अपरिहार्य है कि मक्खियाँ उस व्यक्ति का पीछा करेंगी और उस पर हमला करेंगी जिसने स्वयं को अशुद्ध कर लिया है और दुर्गंध से दूषित हो गया है।" [281]

कामवासना (राग) पर आधारित विचार रखने वाली मक्खियाँ, इंद्रियों के मामले में बेलगाम, आँख और कान के मामले में असुरक्षित

व्यक्ति का पीछा करती रहेंगी ।

जो भिक्षु अपवित्र है,

दुर्गंध से दूषित है,

वह निर्वाण से बहुत दूर है

और केवल दुख ही भोगता है।

चाहे गाँव हो या जंगल,

बचकाना नासमझ व्यक्ति,

अपने लिए शांति प्राप्त किए बिना,

मक्खियों द्वारा पीछा किया जाता रहता है। 597

लेकिन जो लोग सदाचारी आचरण में निपुण हैं

और पन्ना (दिव्य ज्ञान) और शांति में आनंदित होते हैं,

वे शांतिप्रिय लोग

मक्खियों का नाश करके सुखी जीवन व्यतीत करते हैं।

---

130 अनुरुद्ध (1)

तब पूज्य अनुराधा भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "हे भंते, दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मानवीय दृष्टि से परे है, मैं देखता हूँ कि शरीर के क्षत-विक्षत होने पर, मृत्यु के बाद स्त्रियाँ अधिकतर दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेती हैं। स्त्रियों में ऐसे कौन से गुण होते हैं जिनके कारण शरीर के क्षत-विक्षत होने पर, मृत्यु के बाद वे दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेती हैं?"

"जब किसी स्त्री में तीन गुण होते हैं, अनुरुद्ध, तो शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेती है। वे तीन गुण क्या हैं?"

(1) "हे अनुरुद्ध, सुबह के समय स्त्री कंजूसी के कलंक से ग्रस्त मन से घर में रहती है। (2) दोपहर के समय वह ईर्ष्या से ग्रस्त मन से घर में रहती है। (3) और शाम को वह कामवासना (राग) से ग्रस्त मन से घर में रहती है। जब उसमें ये तीनों गुण होते हैं, तो शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, स्त्री दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेती है।"

---

131 अनुरुद्ध (2)

तब पूज्य अनुराद्ध पूज्य सारिपुत्त के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर, [282] वे एक तरफ बैठ गए और पूज्य सारिपुत्त से कहा:

"हे मित्र सारिपुत्त, मैं अपनी दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मनुष्य की दृष्टि से परे है, इस हजार रूपों वाली विश्व व्यवस्था का अवलोकन करता हूँ। मुझमें ऊर्जा निरंतर जागृत है; मेरा ध्यान (सती) बिना किसी भ्रम के स्थापित है; मेरा शरीर शांत है; मेरा मन समाधि में लीन और एकाग्र है। फिर भी, अनासक्ति के कारण मेरा मन अभी तक दोषों से मुक्त नहीं हुआ है।"

[आदरणीय सारिपुत्त ने कहा:] (1) "मित्र अनुरुद्ध, जब तुम सोचते हो: 'शुद्ध और मनुष्य से परे दिव्य दृष्टि से मैं हजार गुना विश्व व्यवस्था का अवलोकन करता हूँ' तो यह तुम्हारा अहंकार है।

(2) "और जब तुम सोचते हो: 'मुझमें ऊर्जा बिना शिथिल हुए जागृत है; मेरा ध्यान (सती) बिना भ्रम के स्थापित है; मेरा शरीर बिना अशांति के शांत है; मेरा मन एकाग्र (समाहिता) और एकाग्र (एकग्गा संस्कृत एकग्र) है' तो यही तुम्हारी बेचैनी है।

(3) "और जब तुम सोचते हो: 'फिर भी मेरा मन अनासक्ति के द्वारा भी दोषों से मुक्त नहीं हुआ है', तो यही तुम्हारा पश्चाताप है। अच्छा होगा कि तुम इन तीनों गुणों का त्याग कर दो और इन पर ध्यान देना बंद कर दो। इसके बजाय, अपने मन को अमर (अमृत) तत्व की ओर लगाओ।"

कुछ समय बाद पूज्य अनुराधा ने उन तीनों गुणों का त्याग कर उनका पालन करना बंद कर दिया। इसके बजाय, उन्होंने अपना ध्यान अमरता (अमृत) तत्व की ओर लगाया। फिर, एकांत में रहते हुए, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ, पूज्य अनुराधा ने इसी जीवन में ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) के उस अतुलनीय लक्ष्य को प्रत्यक्ष ज्ञान से जान लिया, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन अपनाते हैं, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें लीन हो गए। उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से जाना, "पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।" और पूज्य अनुराधा अरहंतों में से एक बन गए।

---

132 छिपा हुआ (पटिच्चन्ना)

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं जो गुप्त रहने पर फलती-फूलती हैं, प्रकट होने पर नहीं। वे तीन बातें क्या हैं? (i) स्त्रियाँ गुप्त रहने पर फलती-फूलती हैं, प्रकट होने पर नहीं। (2) ब्राह्मणों के भजन गुप्त रहने पर फलते-फूलते हैं, प्रकट होने पर नहीं। (3) और गलत विचार गुप्त रहने पर फलते-फूलते हैं, प्रकट होने पर नहीं। ये तीन बातें गुप्त रहने पर फलती-फूलती हैं, प्रकट होने पर नहीं।

भिक्षुओं, ये तीन चीजें हैं जो प्रकट होने पर ही चमकती हैं, छिपी रहने पर नहीं। वे तीन चीजें कौन सी हैं? (1) चंद्रमा प्रकट होने पर चमकता है, छिपा रहने पर नहीं। (2) सूर्य प्रकट होने पर चमकता है, छिपा रहने पर नहीं। (3) तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म और अनुशासन प्रकट होने पर ही चमकते हैं, छिपे रहने पर नहीं। ये तीन चीजें प्रकट होने पर ही चमकती हैं, छिपी रहने पर नहीं।

पत्थर पर उकेरी गई 133 पंक्तियाँ

भिक्षुओं, संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से तीन प्रकार हैं? एक वह जो पत्थर पर उकेरी गई रेखा के समान है, दूसरा वह जो जमीन पर उकेरी गई रेखा के समान है, और तीसरा वह जो पानी पर उकेरी गई रेखा के समान है।

(1) "और किस प्रकार का व्यक्ति पत्थर पर खुदी हुई रेखा के समान होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अक्सर क्रोधित होता है, और उसका क्रोध लंबे समय तक बना रहता है। जिस प्रकार पत्थर पर खुदी हुई रेखा हवा और पानी से तुरंत नहीं मिटती बल्कि लंबे समय तक बनी रहती है, उसी प्रकार कोई व्यक्ति अक्सर क्रोधित होता है, और उसका क्रोध लंबे समय तक बना रहता है। इसे ही पत्थर पर खुदी हुई रेखा के समान व्यक्ति कहा जाता है।"

(2) और किस प्रकार का व्यक्ति जमीन पर खुदी हुई रेखा के समान होता है? यहाँ, कुछ लोग अक्सर क्रोधित होते हैं, लेकिन उनका क्रोध लंबे समय तक नहीं टिकता। जैसे जमीन पर खुदी हुई रेखा हवा और पानी से जल्दी मिट जाती है और लंबे समय तक नहीं टिकती, वैसे ही कुछ लोग अक्सर क्रोधित होते हैं, लेकिन उनका क्रोध लंबे समय तक नहीं टिकता। ऐसे व्यक्ति को जमीन पर खुदी हुई रेखा के समान कहा जाता है।

(3) "और किस प्रकार का व्यक्ति जल में उकेरी गई रेखा के समान होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति, यहाँ तक कि जब उससे कठोर और अप्रिय तरीके से बात की जाती है, तब भी अपने विरोधी के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाए रखता है, उससे मेलजोल रखता है और उसका अभिवादन करता है। जैसे जल में उकेरी गई रेखा शीघ्र ही लुप्त हो जाती है और लंबे समय तक नहीं टिकती, वैसे ही कोई व्यक्ति, यहाँ तक कि जब उससे कठोर और अप्रिय तरीके से बात की जाती है, तब भी अपने विरोधी के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाए रखता है, उससे मेलजोल रखता है और उसका अभिवादन करता है। इसे जल में उकेरी गई रेखा के समान व्यक्ति कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये तीन प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में विद्यमान पाए जाते हैं।"

IV. एक योद्धा (योद्धाजीव)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

134 एक योद्धा (योद्धाजीव)

भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त एक योद्धा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का कारक माना जाता है। वे तीन गुण क्या हैं? यहाँ, एक योद्धा दूरगामी निशानेबाज, सटीक निशानेबाज और विशालकाय शरीर को भेदने वाला होता है। इन तीन गुणों से युक्त एक योद्धा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का कारक माना जाता है। इसी प्रकार, तीन गुणों से युक्त एक भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का पात्र होता है। वे तीन गुण क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु दूरगामी निशानेबाज, सटीक निशानेबाज और विशालकाय शरीर को भेदने वाला होता है।

(1) "और यदि कोई भिक्षु लंबी दूरी का निशानेबाज हो तो क्या होगा? यहाँ, किसी भी प्रकार का रूप— चाहे भूतकाल, भविष्यकाल या वर्तमान, आंतरिक या बाह्य, स्थूल या सूक्ष्म, निम्न या उच्च, दूर या निकट— भिक्षु सभी रूपों को सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) से इस प्रकार देखता है: 'यह मेरा नहीं है, यह मैं नहीं हूँ, यह मेरा स्वरूप नहीं है।'" किसी भी प्रकार की वेदना (संवेदना) . . . [285] . . . किसी भी प्रकार की अनुभूति (संज्ञा/संज्ञा) . . . किसी भी प्रकार के लक्षण/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) . . . किसी भी प्रकार की चेतना — चाहे भूतकाल हो, भविष्यकाल हो या वर्तमानकाल, आंतरिक हो या बाह्य, स्थूल हो या सूक्ष्म, निम्न हो या उच्च, दूर हो या निकट — एक भिक्षु सभी चेतना को उसके वास्तविक स्वरूप में सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) से इस प्रकार देखता है: 'यह मेरा नहीं है, यह मैं नहीं हूँ, यह मेरा स्व नहीं है।' इसी प्रकार एक भिक्षु दूरदृष्टि में निपुण होता है।

(2) "एक भिक्षु कैसे निशानेबाज होता है? यहाँ, एक भिक्षु यथार्थ को समझता है: 'यह दुख है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का मूल है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का निवारण है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार एक भिक्षु निशानेबाज होता है।"

(3) "और भिक्षु किस प्रकार एक विशाल शरीर को विभाजित करता है? यहाँ, भिक्षु अज्ञान के विशाल समूह को विभाजित करता है। इसी प्रकार भिक्षु एक विशाल शरीर को विभाजित करता है।"

"इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होता है और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र होता है।"

---

135) सभाएं (पेरिसा बिना परिषद्)

"भिक्षुओं (मठवासियों), ये तीन प्रकार की सभाएँ होती हैं। कौन सी तीन? व्यर्थ की बातों में प्रशिक्षित सभा, पूछताछ में प्रशिक्षित सभा और सीमाओं तक प्रशिक्षित सभा। ये तीन प्रकार की सभाएँ हैं।" 600 [286] .

---

136 एक मित्र (मित्ता सं. मित्रा)

भिक्षुओं, ऐसे मित्र की संगति करनी चाहिए जिसमें तीन गुण हों। वे तीन गुण क्या हैं? (1) भिक्षु वह देता है जो देना कठिन होता है। (2) वह वह करता है जो करना कठिन होता है। (3) वह धैर्यपूर्वक वह सहन करता है जो सहन करना कठिन होता है। ऐसे मित्र की संगति करनी चाहिए जिसमें ये तीनों गुण हों।

---

137 उदय (उप्पदा सं. उत्पद)

(1) "भिक्षुओं, चाहे तथागत (बुद्ध) उत्पन्न हों या न हों, वह नियम, धम्म की वह स्थिरता, धम्म का वह निश्चित मार्ग अटल रहता है: 601 'सभी बद्ध घटनाएँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ) अनित्य हैं।' एक तथागत (बुद्ध) इस बात को जागृत करते हैं और इसे भेदते हैं, और फिर वे इसकी व्याख्या करते हैं, इसका उपदेश देते हैं, इसका प्रचार करते हैं, इसे स्थापित करते हैं, इसका खुलासा करते हैं, इसका विश्लेषण करते हैं और इसे इस प्रकार स्पष्ट करते हैं: 'सभी बद्ध घटनाएँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ) अनित्य हैं।' 602

(2) "भिक्षुओं, चाहे तथागत (बुद्ध) उत्पन्न हों या न हों, वह नियम, धम्म की वह स्थिरता, धम्म का वह निश्चित मार्ग अटल रहता है: 'सभी बद्ध घटनाएँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ) दुखदायी हैं।' तथागत (बुद्ध) इस बात को जागृत करते हैं और इसे भेदते हैं, और फिर वे इसकी व्याख्या करते हैं, इसका उपदेश देते हैं, इसका प्रचार करते हैं, इसे स्थापित करते हैं, इसका खुलासा करते हैं, इसका विश्लेषण करते हैं और इसे इस प्रकार स्पष्ट करते हैं: 'सभी बद्ध घटनाएँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ) दुखदायी हैं।'"

(3) "भिक्षुओं (मठवासियों), चाहे तथागत (बुद्ध) उत्पन्न हों या न हों, वह नियम, धम्म की वह स्थिरता, धम्म का वह निश्चित मार्ग, अटल रहता है: 'सभी घटनाएँ (धम्म) अनात्म हैं।' तथागत (बुद्ध) इस बात को जागृत करते हैं और इसे भेदते हैं, और फिर वे इसकी व्याख्या करते हैं, इसका उपदेश देते हैं, इसकी घोषणा करते हैं, इसे स्थापित करते हैं, इसका खुलासा करते हैं, इसका विश्लेषण करते हैं और इसे इस प्रकार स्पष्ट करते हैं: 'सभी घटनाएँ (धम्म) अनात्म हैं।'"

---

138 एक बाल कम्बल (केस-कम्बाला बिना केश-कम्बाला)

भिक्षुओं के लिए, बालों से बना कंबल सबसे घटिया बुना हुआ वस्त्र माना जाता है। 603 बालों से बना कंबल सर्दी में ठंडा और गर्मी में गर्म होता है, बदसूरत, दुर्गंधयुक्त और असुविधाजनक होता है। इसी प्रकार, मक्खली का सिद्धांत विभिन्न तपस्वियों के सिद्धांतों में सबसे घटिया माना जाता है। 604 खोखले मक्खली का सिद्धांत और मत है: 'कोई कर्म नहीं, कोई कर्म नहीं, कोई ऊर्जा नहीं' [287]

(1) "भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं), भगवान (बुद्धों), अरहंतों, अतीत के पूर्णतः प्रबुद्ध लोगों ने कर्म (कर्म/कार्यों) का सिद्धांत, कर्मों का सिद्धांत, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) का सिद्धांत सिखाया। फिर भी खोखला मनुष्य मखली अपने इस दावे से उनका खंडन करता है: 'न तो कर्म (कर्म/कार्यों) का अस्तित्व है, न कोई कर्म का, न कोई ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) का।'"

(2) भविष्य के भगवान (बुद्ध), अरहंत और पूर्णतः प्रबुद्ध पुरुष भी कर्म (कर्म/कार्यों) का सिद्धांत, कर्मों का सिद्धांत और ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) का सिद्धांत सिखाएंगे। फिर भी खोखला मनुष्य मखली अपने इस दावे से उनका खंडन करता है: 'न तो कर्म (कर्म/कार्यों) का अस्तित्व है, न कोई कर्म का, न कोई ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) का।'

(3) "इस समय मैं अरहंत हूँ, पूर्णतः प्रबुद्ध हूँ, और मैं कर्म का सिद्धांत, कर्मों का सिद्धांत, ऊर्जा का सिद्धांत सिखाता हूँ। फिर भी खोखला मनुष्य मखली अपने इस दावे से मेरा खंडन करता है: 'न कर्म है, न कोई कर्म है, न कोई ऊर्जा है।'"

"जिस प्रकार नदी के मुहाने पर लगाया गया जाल अनेक मछलियों को हानि, पीड़ा, विपत्ति और आपदा पहुंचाता है, ठीक उसी प्रकार खोखला मनुष्य मखली भी एक प्रकार से 'लोगों के लिए जाल' है, जो अनेक प्राणियों को हानि, पीड़ा, विपत्ति और आपदा पहुंचाने के लिए संसार में उत्पन्न हुआ है।"

---

139 धन (संपदा)

भिक्षुओं, ये तीन धन हैं। कौन से तीन? आस्था का धन, सद्गुणों का धन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का धन। यही तीन धन हैं।

---

140 विकास 605 (बुद्धि सं. वृद्धि)

भिक्षुओं, तीन प्रकार की वृद्धि होती है। वे कौन से तीन प्रकार हैं? आस्था में वृद्धि, सद्गुणपूर्ण आचरण में वृद्धि और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि। ये तीन प्रकार की वृद्धि हैं।

---

141 घोड़े (1) (अस्साखालुंका सं. अश्व..)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें तीन प्रकार के जंगली घोड़ों और जंगली घोड़ों के समान तीन प्रकार के व्यक्तियों के बारे में सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।"

“जी हां, भंते,” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और हे भिक्षुओं, जंगली घोड़ों के तीन प्रकार क्या हैं? [288] (1) यहाँ, एक प्रकार के जंगली घोड़े में गति तो है, लेकिन सुंदरता या उचित अनुपात नहीं। (2) दूसरे प्रकार के जंगली घोड़े में गति और सुंदरता तो है, लेकिन उचित अनुपात नहीं। (3) और एक अन्य प्रकार के जंगली घोड़े में गति, सुंदरता और उचित अनुपात तीनों हैं। ये जंगली घोड़ों के तीन प्रकार हैं।"

और हे भिक्षुओं, जंगली घोड़े के समान तीन प्रकार के व्यक्ति कौन से हैं? (1) यहाँ, एक प्रकार का व्यक्ति जो जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति तो है, लेकिन सुंदरता या सुडौल शरीर नहीं। (2) दूसरे प्रकार का व्यक्ति जो जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति और सुंदरता तो है, लेकिन सुडौल शरीर नहीं। (3) और एक तीसरे प्रकार का व्यक्ति जो जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति, सुंदरता और सुडौल शरीर तीनों ही हैं।

(1) "और जो व्यक्ति जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति तो होती है, पर सुंदरता या सुडौल शरीर क्यों नहीं? यहाँ, एक भिक्षु इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दुख है।' और 'यह दुख का कारण है।' और 'यह दुख का निवारण है।' और 'यह दुख निवारण का मार्ग है।' मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। परन्तु जब उससे धम्म या अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह हिचकिचाता है और उत्तर नहीं देता।"

मैं कहता हूँ, यही उसकी सुंदरता की कमी है। और उसे वस्त्र, भिक्षा, आवास, बीमारों के लिए दवाइयाँ और भोजन सामग्री नहीं मिलती। मैं कहता हूँ, यही उसके उचित अनुपात की कमी है; इस प्रकार, एक जंगली घोड़े के समान व्यक्ति में गति तो होती है, लेकिन सुंदरता या उचित अनुपात नहीं होते।

(2) "और एक ऐसा व्यक्ति जो जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति और सुंदरता तो है, पर सही अनुपात नहीं? यहाँ, एक भिक्षु इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दुख है', ... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। और जब उससे धम्म या अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह उत्तर देता है और अविचलित रहता है। मैं कहता हूँ, यही उसकी सुंदरता है। परन्तु उसे वस्त्र ... और बीमारों के लिए भोजन प्राप्त नहीं होता। मैं कहता हूँ, यही उसके सही अनुपात का अभाव है। इस प्रकार [289] एक ऐसा व्यक्ति जो जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति और सुंदरता तो है, पर सही अनुपात नहीं।"

(3) "और एक व्यक्ति जंगली घोड़े के समान गति, सौंदर्य और उचित अनुपात कैसे धारण करता है? यहाँ, एक भिक्षु इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दुख है,' और 'यह दुख का कारण है,' और 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख निवारण का मार्ग है।' मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। और जब उससे धम्म या अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह उत्तर देता है और संकोच नहीं करता। मैं कहता हूँ, यही उसका सौंदर्य है। और वह वस्त्र प्राप्त करता है... और बीमारों के लिए भोजन प्राप्त करता है। मैं कहता हूँ, यही उसका उचित अनुपात है। इस प्रकार एक व्यक्ति जो जंगली घोड़े के समान है, गति, सौंदर्य और उचित अनुपात धारण करता है।"

"हे भिक्षुओं, ये तीन प्रकार के व्यक्ति हैं जो जंगली घोड़ों के समान हैं।"

---

142 घोड़े (2) (अस्सापरस्सा सं. अश्वपुरुष)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें तीन प्रकार के अच्छे घोड़ों और तीन प्रकार के अच्छे घोड़ों के समान व्यक्तियों के बारे में सिखाऊंगा। 606 सुनो..."

भिक्षुओं, अच्छे घोड़ों के तीन प्रकार क्या हैं? (1) यहाँ, एक प्रकार का अच्छा घोड़ा गति तो रखता है, लेकिन उसमें सुंदरता या सुडौलपन नहीं होता। (2) दूसरे प्रकार का अच्छा घोड़ा गति और सुंदरता दोनों रखता है, लेकिन उसमें सुडौलपन नहीं होता। (3) एक अन्य प्रकार का अच्छा घोड़ा गति, सुंदरता और सुडौलपन तीनों रखता है। यही अच्छे घोड़ों के तीन प्रकार हैं।

और हे भिक्षुओं, अच्छे घोड़ों के समान तीन प्रकार के व्यक्ति कौन से हैं? (1) यहाँ, एक प्रकार का व्यक्ति जो अच्छे घोड़े के समान है, उसमें गति तो होती है, लेकिन सौंदर्य या उचित अनुपात नहीं होता। (2) दूसरे प्रकार का व्यक्ति जो अच्छे घोड़े के समान है, उसमें गति और सौंदर्य दोनों होते हैं, लेकिन उचित अनुपात नहीं होता। (3) फिर भी एक तीसरे प्रकार का व्यक्ति जो अच्छे घोड़े के समान है, उसमें गति, सौंदर्य और उचित अनुपात तीनों होते हैं। [290]

(1) "और जो व्यक्ति अच्छे घोड़े के समान है, उसमें गति तो होती है, पर सौंदर्य या सुडौल शरीर क्यों नहीं? यहाँ, पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, भिक्षु स्वतः पुनर्जन्म लेने वाला बन जाता है, और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए, वहाँ अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। परन्तु जब उससे धर्म या अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह हिचकिचाता है और उत्तर नहीं देता। मैं कहता हूँ, यही उसकी सुंदरता का अभाव है। और उसे वस्त्र, भिक्षा, आवास, औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन भी प्राप्त नहीं होता। मैं कहता हूँ, यही उसके सुडौल शरीर का अभाव है। इस प्रकार, जो व्यक्ति अच्छे घोड़े के समान है, उसमें गति तो होती है, पर सौंदर्य या सुडौल शरीर नहीं।"

(2) "और एक ऐसा व्यक्ति जो अच्छे घोड़े के समान है, उसमें गति और सुंदरता तो है, पर सही अनुपात नहीं? यहाँ, पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, एक भिक्षु स्वतः पुनर्जन्म लेने वाला बन जाता है, और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए, वहाँ अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। और जब उससे धम्म या अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह उत्तर देता है और अविचलित रहता है। मैं कहता हूँ, यही उसकी सुंदरता है। परन्तु उसे वस्त्र और बीमारों के लिए भोजन नहीं मिलता। मैं कहता हूँ, यही उसके सही अनुपात का अभाव है। इस प्रकार एक ऐसा व्यक्ति जो अच्छे घोड़े के समान है, उसमें गति और सुंदरता तो है, पर सही अनुपात नहीं।"

(3) "और एक अच्छे घोड़े के समान व्यक्ति में गति, सौंदर्य और उचित अनुपात कैसे होते हैं? यहाँ, पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, एक भिक्षु स्वतः पुनर्जन्म लेने वाला बन जाता है, और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए, वहाँ अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। और जब उससे धम्म या अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह उत्तर देता है और विचलित नहीं होता। मैं कहता हूँ, यही उसका सौंदर्य है। और वह वस्त्र प्राप्त करता है... और बीमारों के लिए भोजन प्राप्त करता है। मैं कहता हूँ, यही उसका उचित अनुपात है। इस प्रकार एक अच्छे घोड़े के समान व्यक्ति में गति, सौंदर्य और उचित अनुपात होते हैं।"

"भिक्षुओं, ये तीन प्रकार के व्यक्ति अच्छे घोड़ों के समान हैं।"

---

143 घोड़े (3) (अस्सजानिया संस अश्व-जना)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें तीन प्रकार के उत्तम नस्ल के घोड़ों और तीन प्रकार के उत्तम नस्ल के व्यक्तियों के बारे में सिखाऊंगा। सुनो... [291]

भिक्षुओं, तीन प्रकार के उत्तम नस्ल के घोड़े कौन-कौन से हैं? यहाँ, एक प्रकार का उत्तम नस्ल का घोड़ा... गति, सुंदरता और सही अनुपात से युक्त है। ये तीन प्रकार के उत्तम नस्ल के घोड़े हैं।

"और हे भिक्षुओं, तीन प्रकार के उत्तम नस्ल के व्यक्ति कौन से हैं? यहाँ, एक प्रकार के व्यक्ति में गति, सुंदरता और सही अनुपात होते हैं।"

और एक श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष में गति, सौंदर्य और सुगठित शरीर का गुण कैसे होता है? यहाँ, दोषों के नाश के साथ, एक भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। यही उसकी गति है। और जब उससे धम्म या अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह उत्तर देता है और संकोच नहीं करता। यही उसका सौंदर्य है। और वह वस्त्र प्राप्त करता है... और बीमारों के लिए भोजन प्राप्त करता है। यही उसका सुगठित शरीर है। इस प्रकार एक श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष में गति, सौंदर्य और सुगठित शरीर का गुण होता है।

"ये भिक्षुओं, तीन प्रकार के उत्तम और शुद्ध संस्कार वाले व्यक्ति हैं।"

---

144 मोर अभयारण्य (एल) 607 (मोरा-निवापा1 सं. मयूरा..)

एक बार भगवान (बुद्ध) राजगृह में तपस्वियों के उद्यान, मोर अभयारण्य में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: ...

"भिक्षुओं में तीन गुण होते हैं, और वे देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ होते हैं: वे जो परम लक्ष्य तक पहुँच चुके हैं, बंधनों से परम सुरक्षा प्राप्त कर चुके हैं, परम ब्रह्मचर्य जीवन जी चुके हैं, और परम उद्देश्य को प्राप्त कर चुके हैं। वे तीन गुण क्या हैं? (1) प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के सद्‌गुणों का समूह, (2) प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) का समूह, और (3) प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के पन्ना (दिव्य ज्ञान) का समूह। 608 इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ होते हैं... और परम उद्देश्य को प्राप्त कर लेते हैं।"

---

145 मोर अभयारण्य (2) (मोरा-निवापा2 संस. मयूरा..)

"भिक्षु (मनोभक्षी), तीन गुणों से युक्त भिक्षु, देवताओं और मनुष्यों में श्रेष्ठ है: वह जो परम निष्कर्ष पर पहुँच चुका है, बंधनों से परम सुरक्षा प्राप्त कर चुका है, परम ब्रह्मचर्य जीवन जी चुका है और परम लक्ष्य को प्राप्त कर चुका है। वे तीन गुण क्या हैं? [292] (1) मानसिक शक्ति का चमत्कार (जादू/इद्धि), (2) मन-पठन का चमत्कार (आदेशना), और (3) उपदेश का चमत्कार (अनुशासना)। इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु, देवताओं और मनुष्यों में श्रेष्ठ है... और परम लक्ष्य को प्राप्त कर चुका है।"

नोट: यह जादू यानी इद्धि (जादुई शक्तियां), आदेशना (दूसरों के मन को पढ़ना), अनुशासना (दूसरों को अपने निर्देशानुसार कार्य करने के लिए प्रेरित करना) के बारे में है।

---

146 मोर अभयारण्य (3) (मोरा-निवापा3 सं. मयूरा..)

"भिक्षु (मनोभक्षी), तीन गुणों से युक्त भिक्षु, देवताओं और मनुष्यों में श्रेष्ठ है: वह जो परम लक्ष्य तक पहुँच चुका है, बंधनों से परम सुरक्षा प्राप्त कर चुका है, परम आध्यात्मिक जीवन जी चुका है और परम उद्देश्य को प्राप्त कर चुका है। वे तीन गुण क्या हैं? (1) सही दृष्टिकोण, (2) सही ज्ञान और (3) सही मुक्ति। इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु, देवताओं और मनुष्यों में श्रेष्ठ है... और परम उद्देश्य को प्राप्त कर चुका है।"

V. शुभ (मंगल-वग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

147 हानिकारक (अकुसाला सं. अकुशल)

भिक्षुओं, जिनमें तीन गुण होते हैं, उन्हें नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे तीन गुण क्या हैं? हानिकारक (अकुशल) शारीरिक क्रिया, हानिकारक (अकुशल) वाणी और हानिकारक (अकुशल) मानसिक क्रिया। इन तीनों गुणों वाले व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।

तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे तीन गुण क्या हैं? लाभकारी (कुशल) शारीरिक क्रिया, लाभकारी (कुशल) वाणी क्रिया और लाभकारी (कुशल) मानसिक क्रिया। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

नोट: अकुसला का अर्थ है हानिकारक

---

148 निंदनीय (सवज्जा)

भिक्षुओं, जिनमें तीन गुण होते हैं, उन्हें नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे तीन गुण क्या हैं? निंदनीय शारीरिक कर्म, निंदनीय वाणी कर्म और निंदनीय मानसिक कर्म। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।

"तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे तीन गुण क्या हैं? निष्कलंक शारीरिक कर्म, निष्कलंक वाणी कर्म और निष्कलंक मानसिक कर्म। इन तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।" [293]

---

149 अधर्मी (विसमा)

भिक्षुओं, जिनमें तीन गुण होते हैं, उन्हें नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो: वे तीन गुण क्या हैं? अधार्मिक शारीरिक कर्म, अधार्मिक वाणी कर्म और अधार्मिक मानसिक कर्म। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।

तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे तीन गुण कौन से हैं? धार्मिक शारीरिक कर्म, धार्मिक वाणी और धार्मिक मानसिक कर्म। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

150 अशुद्ध (असुची)

भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे तीन गुण क्या हैं? अशुद्ध शारीरिक कर्म, अशुद्ध वाणी कर्म और अशुद्ध मानसिक कर्म। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे तीन गुण कौन से हैं? शुद्ध शारीरिक क्रिया, शुद्ध वाणी और शुद्ध मानसिक क्रिया। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

151 अपंग (1) (खाता1 बिना क्षता)

भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त अज्ञानी, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे तीन गुण क्या हैं? हानिकारक (अकुशल) शारीरिक क्रिया, हानिकारक (अकुशल) वाणी और हानिकारक (अकुशल) मानसिक क्रिया। इन तीनों गुणों से युक्त होने के कारण... वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

तीन गुणों से युक्त, बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट रहित रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे तीन गुण क्या हैं? लाभकारी (कुशल) शारीरिक क्रिया, लाभकारी (कुशल) वाणी और लाभकारी (कुशल) मानसिक क्रिया। इन तीनों गुणों से युक्त होकर वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

---

152 अपंग (2) (खाता2 सं. क्षता)

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में तीन गुण होते हैं... निंदनीय शारीरिक कर्म, निंदनीय वाणी कर्म और निंदनीय मानसिक कर्म..."

"तीन गुणों से युक्त... दोषरहित शारीरिक क्रिया, दोषरहित वाणी और दोषरहित मानसिक क्रिया..."

---

153 अपंग (3) (खाता3 सं. क्षता)

"भिक्षुओं (मठवासियों) में तीन गुण होते हैं... अधर्मी शारीरिक कर्म, अधर्मी वाणी कर्म और अधर्मी मानसिक कर्म। , . . [294]

"भिक्षुओं में तीन गुण होते हैं... धार्मिक शारीरिक कर्म, धार्मिक वाणी कर्म और धार्मिक मानसिक कर्म।"

---

154 अपंग (4) (खाता4 सं. क्षता)

"भिक्षुओं (साधुओं) में तीन गुण होते हैं... अशुद्ध शारीरिक क्रिया, अशुद्ध मौखिक क्रिया और अशुद्ध मानसिक क्रिया..."

भिक्षुओं में तीन गुण होते हैं... शुद्ध शारीरिक क्रिया, शुद्ध वाणी और शुद्ध मानसिक क्रिया। इन तीनों गुणों से युक्त बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों द्वारा उसकी निंदा नहीं की जा सकती; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

---

155 श्रद्धांजलि (वंदना)

"भिक्षुओं, तीन प्रकार की प्रणाम विधियाँ हैं। वे कौन सी तीन विधियाँ हैं? देह से, वाणी से और मन से। ये तीन प्रकार की प्रणाम विधियाँ हैं।"

---

156 सुप्रभात (पब्बन्हा सं. पूरवन्हा)

भिक्षुओं, जो लोग सुबह के समय शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण में संलग्न होते हैं, उनकी सुबह शुभ हो। जो लोग दोपहर के समय शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण में संलग्न होते हैं, उनकी दोपहर शुभ हो। और जो लोग शाम के समय शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण में संलग्न होते हैं, उनकी शाम शुभ हो।

ब्रह्मचर्य का पालन करने वालों को दान देने वालों के लिए वास्तव में शुभ और मंगलमय

सुबह और आनंदमय उदय,

एक अनमोल क्षण और एक आनंदमय घड़ी

आएगी ।

शरीर और वाणी के नेक कर्म,

नेक विचार और आकांक्षाएँ:

जब कोई नेक कर्म करता है

तो उसे नेक लाभ प्राप्त होते हैं।

जिन लोगों को ऐसे लाभ प्राप्त होते हैं,

वे बुद्ध की शिक्षाओं में उन्नति करते हैं।

आप और आपके सभी संबंधी

स्वस्थ और सुखी रहें!

VI. अभ्यास के तरीके [609] (अचेलाका)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

157 (सती ध्यान की स्थापना) [610]

भिक्षुओं, साधना के ये तीन मार्ग हैं। वे तीन कौन से हैं? स्थूल साधना मार्ग, कष्टदायक साधना मार्ग और मध्यम साधना मार्ग। 611

(1) "हे भिक्षुओं, अभ्यास का स्थूल मार्ग क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति इस प्रकार का सिद्धांत और मत रखता है: 'इंद्रिय सुखों में कोई दोष नहीं है।' और फिर इंद्रिय सुखों में लिप्त हो जाता है। इसे ही अभ्यास का स्थूल मार्ग कहा जाता है।"

(2) "और अभ्यास का कठोर तरीका क्या है? 612 यहाँ, कोई व्यक्ति नग्न अवस्था में जाता है, परंपराओं को अस्वीकार करता है, अपने हाथों को चाटता है, पूछे जाने पर नहीं आता, पूछे जाने पर नहीं रुकता; वह लाया गया भोजन या विशेष रूप से बनाया गया भोजन या भोजन के निमंत्रण को स्वीकार नहीं करता; वह किसी बर्तन से, किसी कटोरे से, किसी दहलीज के पार, किसी छड़ी के पार, किसी मूसल के पार, दो लोगों के साथ भोजन करने से, किसी गर्भवती महिला से, किसी बच्चे को दूध पिलाने वाली महिला से, किसी पुरुष द्वारा रखी गई महिला से, जहाँ भोजन वितरित करने का किया जाता है, जहाँ कोई कुत्ता प्रतीक्षा कर रहा होता है, जहाँ मक्खियाँ भिनभिना रही होती हैं, कुछ भी ग्रहण नहीं करता; वह मछली या मांस स्वीकार नहीं करता; वह शराब, मदिरा या किण्वित पेय नहीं पीता।

वह एक घर में भिक्षा मांगने के दौरान एक निवाला खाता है; वह दो घरों में दो निवाले खाता है... वह सात घरों में सात निवाले खाता है। वह एक थाली, दो थाली... सात थाली खाकर दिन गुजारता है। वह दिन में एक बार, दो दिन में एक बार... सात दिन में एक बार भोजन करता है; इस प्रकार वह हर पखवाड़े में एक बार तक नियमित अंतराल पर भोजन करने का अभ्यास करता है।

वह हरी सब्जियां, बाजरा, जंगली चावल, खाल के टुकड़े, काई, चावल की भूसी, चावल की मैल, तिल का आटा, घास या गोबर खाता है। वह जंगल की जड़ों और फलों पर निर्भर रहता है; वह गिरे हुए फलों को खाता है।

"वह भांग के वस्त्र, भांग मिश्रित कपड़े के वस्त्र, कफ़न के वस्त्र, चिथड़े के वस्त्र; पेड़ की छाल, मृग की खाल, मृग की खाल की पट्टियों से बने वस्त्र; कुसा घास, छाल के कपड़े, या लकड़ी के बुरादे के कपड़े से बने वस्त्र; सिर के बालों [296] या पशु ऊन से बना एक लबादा; उल्लू के पंखों से बना एक आवरण पहनता है।

वह व्यक्ति है जो बाल और दाढ़ी नोचता है, और ऐसा करने का अभ्यास करता है। वह व्यक्ति है जो लगातार खड़ा रहता है, और बैठने का त्याग करता है। वह व्यक्ति है जो लगातार उकड़ू बैठा रहता है, और उकड़ू बैठने की मुद्रा में ही लगा रहता है। वह व्यक्ति है जो कांटों की गद्दी का उपयोग करता है; वह कांटों की गद्दी को अपना बिस्तर बनाता है। वह दिन में तीन बार, शाम सहित, जल स्नान करने का अभ्यास करता है। इस प्रकार वह अनेक तरीकों से शरीर को कष्ट और पीड़ा पहुँचाने का अभ्यास करता है। इसे कष्टदायी अभ्यास कहा जाता है।

(3) "मध्य मार्ग क्या है? यहाँ, भिक्षु शरीर को शरीर में देखते हुए (अनुपसी में) तल्लीन रहता है, पूर्णतः बोध करते हुए, सती भाव से ध्यान लगाता है, संसार के प्रति लालसा और निराशा को त्यागकर। वह वेदनाओं को वेदनाओं में देखते हुए (अनुपसी में) तल्लीन रहता है... मन को मन में... धर्मों को धर्मों में देखते हुए, पूर्णतः बोध करते हुए, सती भाव से ध्यान लगाता है, संसार के प्रति लालसा और निराशा को त्यागकर। इसे मध्य मार्ग कहते हैं।"

"भिक्षुओं, ये अभ्यास के तीन मार्ग हैं।"

158—163 (सही प्रयास, आदि) [613]

(158) "भिक्षुओं, अभ्यास के ये तीन मार्ग हैं। वे तीन कौन से हैं? स्थूल अभ्यास मार्ग, कष्टदायक अभ्यास मार्ग और मध्यम अभ्यास मार्ग।"

(1) "और हे भिक्षुओं, अभ्यास का स्थूल मार्ग क्या है? . . . [जैसा कि 3:156 में है] . . . इसे अभ्यास का स्थूल मार्ग कहा जाता है।

(2) "और अभ्यास का कठोर तरीका क्या है? . . . [जैसा कि 3:156 में है] . . . इसे अभ्यास का कठोर तरीका कहा जाता है।

(3) "और अभ्यास का मध्य मार्ग क्या है? यहाँ, एक भिक्षु अजन्मे बुरे/हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं के अजन्मे होने की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। वह उत्पन्न बुरे हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं के त्याग की इच्छा उत्पन्न करता है... अजन्मे लाभकारी (कुशल) अवस्थाओं के उत्पन्न होने की इच्छा... उत्पन्न लाभकारी (कुशल) अवस्थाओं के रखरखाव की इच्छा, उनके पतन न होने, वृद्धि, विस्तार और विकास द्वारा पूर्णता की इच्छा; [297] वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है।

(159) "...वह मनोवृत्ति (जादू/इद्धि) के आधार का विकास करता है जो इच्छा और प्रयास के कार्यों के कारण समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) धारण करती है। वह मनोवृत्ति (जादू/इद्धि) के आधार का विकास करता है जो ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और प्रयास के कार्यों के कारण समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) धारण करती है... जो मन और प्रयास के कार्यों के कारण समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) धारण करती है... जो अन्वेषण और प्रयास के कार्यों के कारण समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) धारण करती है... ।"

(160) "...वह आस्था की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, सती ध्यान की शक्ति, समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की शक्ति, और दिव्य ज्ञान की शक्ति विकसित करता है: ..."

(161) "...वह आस्था की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, सती ध्यान (ध्यान/सतीत्व) की शक्ति, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की शक्ति, और दिव्य ज्ञान (पन्न) की शक्ति विकसित करता है...."

(162) "...वह सती (ध्यान/सती) के ज्ञानोदय कारक, घटनाओं के विवेक के ज्ञानोदय कारक, वीरता (प्रयास/वीर्य) के ज्ञानोदय कारक, पीति (आनंद) के ज्ञानोदय कारक, शांति (पासद्धि) के ज्ञानोदय कारक, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के ज्ञानोदय कारक, और उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) के ज्ञानोदय कारक का विकास करता है..."

(163) . . वह सही दृष्टिकोण, सही इरादा, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही जागरूकता, सही समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) विकसित करता है। इसे अभ्यास का मध्य मार्ग कहा जाता है।

"भिक्षुओं, ये अभ्यास के तीन मार्ग हैं।"

VII. कर्म के मार्ग (कर्म/कार्यों की श्रृंखला) (कर्म-पथपेय्यलम संस्कृत कर्म..)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

164-183 [614]

(164) "भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे तीन गुण क्या हैं? (1) जो स्वयं जीवन का नाश करता है, (2) जो दूसरों को जीवन का नाश करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) जो जीवन के नाश का समर्थन करता है। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

(165) "भिक्षुओं, तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे तीन गुण क्या हैं? (1) वह स्वयं जीवन-नष्ट करने से परहेज करता है, (2) दूसरों को जीवन-नष्ट करने से परहेज करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) जीवन-नष्ट करने से परहेज करने का समर्थन करता है। इन तीन गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

(166) ". . . (1) व्यक्ति वह लेता है जो उसे स्वयं नहीं दिया गया है, (2) दूसरों को वह लेने के लिए प्रोत्साहित करता है जो उसे नहीं दिया गया है, और (3) वह लेने का अनुमोदन करता है जो उसे नहीं दिया गया है. . ."

(167) ". . . (1) व्यक्ति स्वयं को जो नहीं दिया गया है उसे लेने से परहेज करता है, (2) दूसरों को भी वह लेने से परहेज करने के लिए प्रोत्साहित करता है जो उसे नहीं दिया गया है, और (3) वह लेने से परहेज करने का समर्थन करता है जो उसे नहीं दिया गया है...."

(168) "... (1) व्यक्ति स्वयं यौन दुराचार में संलग्न होता है, (2) दूसरों को [298] यौन दुराचार में संलग्न होने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) यौन दुराचार में संलग्न होने का अनुमोदन करता है। .

(169) (1) व्यक्ति स्वयं यौन दुराचार से परहेज करता है, (2) दूसरों को यौन दुराचार से परहेज करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) यौन दुराचार से परहेज करने का समर्थन करता है। ..."

(170) ". . (1) व्यक्ति स्वयं झूठ बोलता है, (2) दूसरों को झूठ बोलने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) झूठे भाषण का समर्थन करता है। ..."

(171) "... (1) व्यक्ति स्वयं झूठे भाषण से परहेज करता है, (2) दूसरों को झूठे भाषण से परहेज करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) झूठे भाषण से परहेज करने का समर्थन करता है। ., ."

(172) "...(1) व्यक्ति स्वयं विभाजनकारी बातें करता है, (2) दूसरों को विभाजनकारी बातें करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) विभाजनकारी भाषण का समर्थन करता है। ..."

(173) .(1) व्यक्ति स्वयं विभाजनकारी भाषण से परहेज करता है, (2) दूसरों को विभाजनकारी भाषण से परहेज करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) विभाजनकारी भाषण से परहेज करने का समर्थन करता है। ..."

(174) ": . . (1) व्यक्ति स्वयं कठोर बोलता है, (2) दूसरों को कठोर बोलने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) कठोर वाणी का अनुमोदन करता है. . ."

(175) ". /.(1) व्यक्ति स्वयं कठोर वाणी से परहेज करता है, (2) दूसरों को कठोर वाणी से परहेज करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) कठोर वाणी से परहेज करने का समर्थन करता है। ..."

(176) "... (1) व्यक्ति स्वयं व्यर्थ की बातों में लिप्त होता है, (2) दूसरों को व्यर्थ की बातों में लिप्त होने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) व्यर्थ की बातों में लिप्त होने का अनुमोदन करता है।"

(177) ", . . (1) व्यक्ति स्वयं व्यर्थ की बातों से परहेज करता है, (2) दूसरों को व्यर्थ की बातों से परहेज करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) व्यर्थ की बातों से परहेज करने का समर्थन करता है। ..."

(178) ". . . (1) व्यक्ति स्वयं लालसा से भरा होता है, (2) दूसरों को लालसा में प्रोत्साहित करता है, और (3) लालसा को स्वीकार करता है।

(179) ". . . (1) व्यक्ति स्वयं लालसा रहित है, (2) दूसरों को लालसा रहित होने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) लालसा रहित होने का अनुमोदन करता है. . . [299]

(180) . . (1) व्यक्ति स्वयं दुर्भावना रखता है, (2) दूसरों को दुर्भावना में प्रोत्साहित करता है, और (3) दुर्भावना का अनुमोदन करता है. . .

(181) ". . . (1) व्यक्ति स्वयं द्वेष रहित होता है, (2) दूसरों को द्वेष रहित होने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) द्वेष रहित होने का अनुमोदन करता है... ।"

(182) ". . . (1) व्यक्ति स्वयं गलत दृष्टिकोण रखता है, (2) दूसरों को गलत दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) गलत दृष्टिकोण का समर्थन करता है. . ."

(183) (1) व्यक्ति स्वयं सही दृष्टिकोण रखता है, (2) दूसरों को सही दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) सही दृष्टिकोण का समर्थन करता है। इन तीनों गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

आठवीं. वासना (राग) आदि श्रृंखला 615 (राग-पय्यालम)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

184

भिक्षुओं, कामवासना (राग) के प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के लिए तीन चीजों [616] का विकास करना आवश्यक है। वे तीन चीजें क्या हैं? शून्य समाधि (स्व-लीनता/समाधि), चिह्नरहित समाधि (स्व-लीनता/समाधि), और इच्छारहित समाधि (स्व-लीनता/समाधि)। [617] कामवासना (राग) के प्रत्यक्ष ज्ञान के लिए इन तीन चीजों का विकास करना आवश्यक है।

185 — 353

भिक्षुओं, कामवासना (राग) की पूर्ण समझ के लिए... उसके पूर्ण विनाश के लिए... उसके त्याग के लिए... उसके विनाश के लिए... उसके लुप्त होने के लिए... उसके मिट जाने के लिए... उसके अंत के लिए... उसके त्याग के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए, इन तीन चीजों का विकास करना आवश्यक है।

भिक्षुओं (सन्यासियों), प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के लिए... पूर्ण समझ के लिए... पूर्ण विनाश के लिए... त्याग के लिए... विनाश के लिए... लुप्त होने के लिए... मिट जाने के लिए... समाप्ति के लिए... त्याग के लिए... घृणा... मोह... क्रोध... शत्रुता... निंदा... उद्दंडता... ईर्ष्या... कंजूसी... छल... चालाकी... हठ... उग्रता... अहंकार... घमंड... नशा... "आलस्य से मुक्ति पाने के लिए तीन चीजों का विकास करना चाहिए। वे तीन क्या हैं? शून्य समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), चिह्नरहित समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), और इच्छारहित समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन)। आलस्य से मुक्ति पाने के लिए इन तीन चीजों का विकास करना चाहिए।" भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। प्रसन्न होकर वे भिक्षु भगवान (बुद्ध) के इस कथन से आनंदित हुए।

द बुक ऑफ द थ्रीज़ पूरी हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय >> 4.चारों की पुस्तक

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का चौथा खंड है। यह भिक्खु बोधि का संशोधित संस्करण है।

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN3) अगला (AN5) >>>>

अंतर्वस्तु

1द बुक ऑफ द फोर (चतुक्कनिपाटा)

1.1पहले पचास

1.1.1आई. भंडागामवग्गो

1.1.1.11 अनुबुद्ध

1.1.1.22 गिरे हुए (पापतिता)

1.1.1.33 अपंग (1) (खाता1 सं. क्षत्)

1.1.1.44 अपंग (2) (खाता2 सं. क्षत)

1.1.1.55 धारा के साथ (अनु-सोटा संस्कृत अनु-स्ट्रोटा)

1.1.1.66. अल्पज्ञानी (अप्पस्सुता संस. अल्प-श्रुता)

1.1.1.77 वे सजाते हैं (शोभना सं. शोभना)

1.1.1.88आत्मविश्वास (वेसाराज)

1.1.1.99 तृष्णा का उदय (तन्हुप्पा सं. तृष्णा-उत्पाद)

1.1.1.1010 बंधन (योग)

1.1.2II. पैदल चलने वाला भाग (Caravaggo sans. Chara-varga)

1.1.2.111 चलना [639]

1.1.2.212. सद्गुणपूर्ण आचरण (शीला सान. शील)

1.1.2.313 प्रयास करना (प्रस्थान के बिना पढ़ना)

1.1.2.414. संयम (संवर)

1.1.2.515 घोषणाएँ (पन्नत्ती)

1.1.2.616 विशेषज्ञता (सोखुम्मा)

1.1.2.717 गलत पाठ्यक्रम (1) (agati1)

1.1.2.818 गलत पाठ्यक्रम (2) (agati2)

1.1.2.919 गलत पाठ्यक्रम (3) (agati3)

1.1.2.1020 भोजन का एक समनुदेशक (भट्टुद्देसका)

1.1.3III. उरुवेला

1.1.3.121 उरुवेला (एल) 649

1.1.3.222 उरुवेला (2)

1.1.3.323 लोक (विश्व)

1.1.3.424 कलाका

1.1.3.525 ब्रह्मचर्य जीवन (ब्रह्मचर्य)

1.1.3.626 धोखेबाज 673 (कुहा)

1.1.3.727 संतोष (संतुष्टि सं. संतुष्टि)

1.1.3.828 कुलीन वंशावली 678 (आर्य-वंश बिना आर्य-वंश)

1.1.3.929 धम्म कारक (धम्मपद)

1.1.3.1030 तपस्वी (परिब्बाजक सं. परिवज्रका)

1.1.4IV. चक्र भाग (चक्कावग्गो)

1.1.4.131 पहिया (चक्र के बिना कक्का)

1.1.4.232 रिश्तों को कायम रखना (संगहा सं. संग्रह)

1.1.4.333 सिंह (सिहा बिना सिंघा)

1.1.4.434 विश्वास (अग्गप्पसाद)

1.1.4.535 वासाकारा

1.1.4.636 डोना

1.1.4.737 गैर-गिरावट (अपरिहानी)

1.1.4.838 पीछे हटना (पतिलीन)

1.1.4.939 उज्जया

1.1.4.1040 उदय

1.1.5वी. रोहितासावग्गो

1.1.5.141. समाधि-भावना (ध्यानमग्न अवस्था)

1.1.5.242 प्रश्न (पन्हा-व्याकरण सं. प्रश्न-व्याकरण)

1.1.5.343 क्रोध (1) (कोढ़ा1 सं. क्रोध)

1.1.5.444 क्रोध (2) (कोढ़ा1 सं. क्रोध)

1.1.5.545 रोहितास्सा (एल) [723]

1.1.5.646 रोहितास्सा (2)

1.1.5.747 सुविदुरा (दूर-दूर)

1.1.5.848 विशाखा 727

1.1.5.949 विपल्लस (इनवर्जन)

1.1.5.1050 दोष (उपक्किलेशा संस्कृत उपक्लेश)

1.2दूसरा पचास

1.2.1I. पुण्य की धाराएँ (पुन्नभिसन्द)

1.2.1.1योग्यता की 51 धाराएँ (1) (पुन्नभिसन्ध1 सं. पुण्य..)

1.2.1.252 पुण्य की धाराएँ (2) 737 (पुन्ना-भिसंदा2 सं. पुण्य..)

1.2.1.353 साथ रहना (1) (संवसा1)

1.2.1.454 (4) साथ रहना (2) (संवसा2)

1.2.1.555 जीवन में एकरूपता (1) (समजीवी1)

1.2.1.656 (6) जीवन में समान (2) (समजीवी2)

1.2.1.757 सुप्पवास

1.2.1.858 सुदत्ता

1.2.1.959 भोजन

1.2.1.1060 आम आदमी का उचित अभ्यास (Gihisamici sans. Gruhi..)

1.2.2द्वितीय. योग्य कर्म अनुभाग (पट्टकमवाग्गो)

1.2.2.161 पुण्य कर्म (पट्ट-कर्म)

1.2.2.262 स्वतंत्रता मोर्चा ऋण (अनन्या)

1.2.2.363 ब्रह्मा 752 के साथ

1.2.2.464 हेल 753 (निरया)

1.2.2.565 प्रपत्र (रूपा)

1.2.2.666 कामवासना के साथ (सरगा)

1.2.2.767 सांप (अहिराज)

1.2.2.868 देवदत्ता

1.2.2.969. प्रयास (पधाना)

1.2.2.1070 अधर्मी 762 (अधम्मिक सं. अधर्मिक)

1.2.3III. अचूक (अपन्नक)

1.2.3.171. प्रयास (पधाना)

1.2.3.272 सम्यक दृष्टि (सम्मा-दिट्ठी सं. सम्यक दृष्टि)

1.2.3.373. अच्छा व्यक्ति (सप्पुरिशा संस्कृत: सतपुरुष)

1.2.3.474 सर्वोपरि (1) (अग्गा1 संस्कृत आगरा)

1.2.3.575 सर्वोपरि (2)(अग्गा2 संस्कृत आगरा)

1.2.3.676 कुसिनारा

1.2.3.777 अकल्पनीय मामले (अचिन्तय्या)

1.2.3.878 प्रसाद (दक्षिणा बिना दक्षिणा)

1.2.3.979 व्यवसाय (वनिज्जा सं. वाणीज्य)

1.2.3.1080 कंबोजा

1.2.4चतुर्थ. अडिग (मैकला संस. अकला)

1.2.4.181 जीवन का विनाश (पानीपत सं. प्राणि-पाता)

1.2.4.282 असत्य भाषण (मुसावदा सं. मिथ्या-वड़ा)

1.2.4.383 तिरस्कार (अवन्नाराहा सं. अवरणीय-अराहा)

1.2.4.484 क्रोध (कोढ़ा स्नस. क्रोध)

1.2.4.585 अंधकार 775 (तमोतामा)

1.2.4.686 बेंट डाउन (ओनाटोनाटा)

1.2.4.787 पुत्र (पुत्त)

1.2.4.888 बंधन (संयोजन)

1.2.4.989 सम्यक दृष्टि (सम्मादिथि सं. सम्यक-दृष्टि)

1.2.4.1090 समुच्चय (खंड बिना स्कंध)

1.2.5V. असुर अनुभाग

1.2.5.191 असुर

1.2.5.292 समाधि (1)

1.2.5.393 समाधि (2)

1.2.5.494 समाधि (3)

1.2.5.595 श्मशान की लकड़ी (चावलाटा)

1.2.5.696 वांट (राग-विनय)

1.2.5.797 तेज बुद्धि वाला (खिप्पानिसांती)

1.2.5.898 स्वयं का कल्याण (अत्तहिता संस्कृत: आत्मा-हिता)

1.2.5.999 प्रशिक्षण नियम (सिक्खपाद सं. शिष्यपाद)

1.2.5.10100 पोटालिया

1.3तीसरा पचास

1.3.1I. बादल (वलहका)

1.3.1.1101 बादल (1) (वलाहाका)

1.3.1.2102 बादल (2) (वलाहाका)

1.3.1.3103 बर्तन (कुंभ)

1.3.1.4पानी के 104 तालाब (उदकरहाड़ा)

1.3.1.5105 आम (अंबा सं. अमरा)

1.3.1.6106 आम2 (अंबा2 संस अमरा)

1.3.1.7107 (7) चूहे (म्यूज़िका सं. मशक)

1.3.1.8108 बैल (बालीबड्डा)

1.3.1.9109 पेड़ (रुक्खा सं. वृक्ष)

1.3.1.10110 वाइपर (असिविसा)

1.3.2II. केसी अनुभाग

1.3.2.1111 केसी

1.3.2.2112 स्पीड (जावा)

1.3.2.3113 गोड (पटोडा)

1.3.2.4114 नर हाथी (नाग)

1.3.2.5115 विलेख (थाना)

1.3.2.6116 सतर्कता (अप्पमदा सं. अप्रमाद)

1.3.2.7117 रखवाली (अरक्खा सं. अरक्षण)

1.3.2.8118 प्रेरक 801 (संवेजानिया सं. संवेगा)

1.3.2.9119 खतरे (1) (भया1)

1.3.2.10120 खतरे (2) (भया2)

1.3.3तृतीय. ख़तरे अनुभाग (भयावग्गो)

1.3.3.1121 आत्म-निन्दा (अत्तनुवदा)

1.3.3.2122 तरंगें [806] (उमिभया)

1.3.3.3123 अंतर (1) (नाना कराना1)

1.3.3.4124 अंतर (2) (नाना कराना2)

1.3.3.5125 प्रेम-कृपा (1) (मेटा1 सं. मैत्री)

1.3.3.6126 प्रेम-कृपा (2) (मेटा2 सं. मैत्री)

1.3.3.7127 आश्चर्यजनक तथागत(बुद्ध)(1) (तथागताचार्य1)

1.3.3.8128 आश्चर्यजनक तथागत(बुद्ध)(2) (तथागताचार्य2)

1.3.3.9129 आश्चर्यजनक आनंद (आनंदचार्य) [825]

1.3.3.10130 अद्भुत सम्राट (चक्कावत्तिआचरिया)

1.3.4IV. व्यक्ति (पुग्गला)

1.3.4.1131 बेड़ियाँ

1.3.4.2132 विवेक (पतिभाना)

1.3.4.3133 शीघ्र समझ का (उग्घटितन्नु)

1.3.4.4134 प्रयास (उत्थानफल)

1.3.4.5135 निंदनीय (सा-वज्जा)

1.3.4.6136 सदाचारी व्यवहार (1) (सिला1 सं. शील)

1.3.4.7137 सदाचारी व्यवहार (2) (सिला2 संस. शील)

1.3.4.8138 निकेत (निकत्था)

1.3.4.9139 धम्म वक्ता (धम्मकथिका)

1.3.4.10140 वक्ता (वादी)

1.3.5वी. ग्लो (अभा)

1.3.5.1141 ग्लो (अभा)

1.3.5.2142 मूलांक (पभा सं. प्रभा)

1.3.5.3143 बत्तियाँ (आलोका)

1.3.5.4144 लस्ट्रेस (ओभासा)

1.3.5.5145 प्रकाशक (पज्जोटा सं. प्रज्वलित)

1.3.5.6146 बार (1) (कला1)

1.3.5.7147 बार (2) (कला2)

1.3.5.8148 बुरा आचरण (1) (दुकारिता सं. दुष्चरित्र)

1.3.5.9149 अच्छा आचरण (2) (सुच्चरित संस. सद्धरित्र)

1.3.5.10150 एसेंस (सारा)

1.4चौथा पचास

1.4.1I. इंद्रिय शक्तियाँ

1.4.1.1151 इंद्रिय संकाय

1.4.1.2152 आस्था (सद्धबाला सं. श्रद्धाबाला)

1.4.1.3153 पन्ना (दिव्य ज्ञान) (पन्नबल संस्कृत: प्रज्ञाबल)

1.4.1.4154 ध्यान की शक्ति (सतिबाला सं. स्मृतिबाला)

1.4.1.5155 प्रतिबिंब (पतिसंखानाबाला)

1.4.1.6156 इऑन (कप्पा संस्कृत कल्प)

1.4.1.7157 रोग

1.4.1.8158 पतन (परिहानी)

1.4.1.9159 भिक्षुणी (भिक्षुणी)

1.4.1.10160 एक सुगत (बुद्ध) का अनुशासन [847] (सुगत-विनय)

1.4.2II. अभ्यास के तरीके (पतिपदा)

1.4.2.1161 संक्षेप में [849] (संखित्त सं. संक्षिप्त)

1.4.2.2162 विस्तार से (वित्थरा सं. विस्तारा)

1.4.2.3163 अनाकर्षकता (असुभा सं. अशुभा)

1.4.2.4164 क्षमा (1) (खमा1 सं. क्षमा)

1.4.2.5165 रोगी (2) (खेमा1 सं. क्षेमा)

1.4.2.6166 दोनों (उभय)

1.4.2.7167 मोग्गलाना

1.4.2.8168 सारिपुत्त

1.4.2.9169 परिश्रम के माध्यम से (सासंखार)

1.4.2.10170 युगनद्धा में (युगनद्धा)

1.4.3III. सचेतन क्रिया (संचेतनिया)

1.4.3.1171 सचेतन क्रिया (चेतना) 863

1.4.3.2172 विश्लेषण (विभक्ति सं. विभक्ति)

1.4.3.3173 कोत्थिता

1.4.3.4174 आनंद

1.4.3.5175 उपवन

1.4.3.6176 आकांक्षी [886] (अयाकाना)

1.4.3.7177 राहुल

1.4.3.8178 जलाशय (जम्बाली)

1.4.3.9179 निब्बाना

1.4.3.10180 महान संदर्भ [891] (महापदेश)

1.4.4IV. ब्राह्मण

1.4.4.1181 योद्धा (योद्धाजीव)

1.4.4.2182 गारंटर (पतिभोग)

1.4.4.3183 हर्ड (सुता)

1.4.4.4184 निडर (अभय)

1.4.4.5185 ब्राह्मण सत्य (ब्राह्मणसच्च)

1.4.4.6186 अकुमेन (उमग्गा)

1.4.4.7187 वासाकारा

1.4.4.8188 उपका

1.4.4.9189 बोध (सच्चीकरणीय)

1.4.4.10190 उपोसथा

1.4.5V. महान अध्याय

1.4.5.1191 इसके बाद कान (सोतानुगाता)

1.4.5.2192 तथ्य (थाना)

1.4.5.3193 भद्दिया

1.4.5.4194 सपुगम

1.4.5.5195 वप्पा

1.4.5.6196 सलहा

1.4.5.7197 मल्लिका

1.4.5.8198 स्व-पीड़ा 927 (अट्टनतापा)

1.4.5.9199 तृष्णा (तन्हा सं. तृष्णा)

1.4.5.10200 स्नेह (पेमा सं. प्रेम)

1.5पांचवां पचास

1.5.1I. अच्छा व्यक्ति (सप्पुरिशा संस्कृत: सतपुरुष)

1.5.1.1201 प्रशिक्षण नियम (सिक्खपाद बिना शिक्षापद)

1.5.1.2202 विश्वास से रहित (असद्ध बिना अश्रद्ध)

1.5.1.3203 सात कर्म (सत्तकम्मा बिना...कर्म)

1.5.1.4204 दस कर्म (दसकम्मा सं. दास-कर्म)

1.5.1.5205 अष्टांगिक (अट्ठांगिका सं. अष्टांगिक)

1.5.1.6206 दस गुना पथ

1.5.1.7207 बुरा चरित्र (1) (पापधम्म1 बिना पाप-धर्म)

1.5.1.8208 बुरा चरित्र (2) (पापधम्म2 बिना पाप-धर्म)

1.5.1.9209 बुरा चरित्र (3) (पापधम्म3 बिना पाप-धर्म)

1.5.1.10210 (10) बुरा चरित्र (4) (पापधम्म1 बिना पाप-धर्म)

1.5.2II. सभा (परिसा परिषद रहित सभा)

1.5.2.1211 विधानसभा (पेरिसा सं. परिषद)

1.5.2.2212 दृश्य (दिट्ठी बिना दृष्टि)

1.5.2.3213 कृतघ्नता (अकातन्नुता)

1.5.2.4214 जीवन का विनाश (पनातिपति)

1.5.2.5215 पथ (1) (मग्गा1 सं. मार्ग)

1.5.2.6216 पथ (2) (मग्गा2 सं. मार्ग)

1.5.2.7अभिव्यक्ति के 217 पाठ्यक्रम (1) (वोहरपथा1)

1.5.2.8अभिव्यक्ति के 218 पाठ्यक्रम (2) (वोहरपथा2)

1.5.2.9219 नैतिक रूप से निर्लज्ज (अहिरिका)

1.5.2.10220 अनैतिक (दुस्सिला संस्कृत दुश्शील)

1.5.3III. कदाचार

1.5.3.1221 कदाचार (दुकारिता सं. दुष्चरित्र)

1.5.3.2222 (2) दृश्य (दिट्ठी बिना दृष्टि)

1.5.3.3223 कृतघ्नता (अकातन्नुता)

1.5.3.4224 जीवन का विनाश (पनातिपति)

1.5.3.5225 पथ (1) (मग्गा1 सं. मार्ग)

1.5.3.6226 पथ (2) (मग्गा2 संस्कृत मार्ग)

1.5.3.7अभिव्यक्ति के 227 पाठ्यक्रम (1) (वोहरपथ)

1.5.3.8अभिव्यक्ति के 228 पाठ्यक्रम (2) (वोहरपथ)

1.5.3.9229 नैतिक रूप से निर्लज्ज (अहिरिका)

1.5.3.10230 नासमझ (दुप्पन्ना सं. दुष्प्रज्ञ)

1.5.3.11231 कवि

1.5.4IV. कर्म (कर्म के बिना)

1.5.4.1232 संक्षेप में (संखित्त सं. संक्षिप्त)

1.5.4.2233 विस्तार से (वित्थरा सं. विस्तारा)

1.5.4.3234 सोनाकायना

1.5.4.4235 प्रशिक्षण नियम (1) (सिक्खपाद1 सं. शिष्यपाद)

1.5.4.5236 प्रशिक्षण नियम (2) (सिक्खपाद2 सं. शिष्यपाद)

1.5.4.6237 नोबल पथ (अरियामग्गा सं. आर्य-मार्ग)

1.5.4.7238 आत्मज्ञान कारक (बोज्झांगा सं. बोध्यांगा)

1.5.4.8239 निंदनीय (सवज्जा)

1.5.4.9240 अहानिकारक (अब्यबज्जा)

1.5.4.10241 तपस्वी (समान सं. श्रमण)

1.5.4.11अच्छे व्यक्ति के 242 लाभ (सप्पुरिसा-निसंसा)

1.5.5वी. ख़तरे और भय (अपपत्ति-भाया)

1.5.5.1243 विच्छेदक (संघ-भेदक)

1.5.5.2244 अपराध (अपत्तिभया)

1.5.5.3245 प्रशिक्षण (सिक्खनिसंसा)

1.5.5.4246 लेटना (सेय्या सं. शैय्या)

1.5.5.5247 स्तूप के योग्य (थुपा-राहा)

1.5.5.6248 पन्ना (दिव्य ज्ञान) की वृद्धि (पन्ना-बुद्धि सं. प्रज्ञा-वृद्धि)

1.5.5.7249 सहायक (बहुकारा)

1.5.5.8250 घोषणाएँ (1) (वोहारा1)

1.5.5.9251 घोषणाएँ (2) (वोहारा2)

1.5.5.10252 घोषणाएँ (3) (वोहारा3)

1.5.5.11253 घोषणाएँ (4) (वोहारा4)

1.5.6VI. प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिज्ञान सं. अभिज्ञान)

1.5.6.1254 प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिज्ञान सं. अभिज्ञान)

1.5.6.2255 Quests (परियेसन)

1.5.6.3256 निर्वाह (संगहवत्थु सं. संग्रह-वस्तु)

1.5.6.4257 मलुक्यपुत्त (सं. मलुक्य-पुत्र)

1.5.6.5258 परिवार/कुल (कुला)

1.5.6.6259 थोरब्रेड (1) (अजानिया)

1.5.6.7260 थोरब्रेड (2) (अजानिया2)

1.5.6.8261 शक्तियां (बाला)

1.5.6.9262 वन (अरन्ना सं. अरण्य)

1.5.6.10263 क्रिया (कर्म बिना कर्म)

1.5.7VII. कर्मों के मार्ग (कर्मपथ संस्कृत: कर्म-पथ)

1.5.7.1264 जीवन का विनाश (पनातिपति)

1.5.7.2265 - 273 जो नहीं दिया गया है उसे लेना, इत्यादि।

1.5.8आठवीं. वासना (राग) और आगे दोहराव श्रृंखला (राग)

1.5.8.1274 ध्यान साधना (सती) की विधियाँ

1.5.8.2275 चार सही प्रयास

1.5.8.3276 मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) के चार आधार

1.5.8.4277 -303

1.5.8.5304 — 783

द बुक ऑफ द फोर (चतुक्कनिपाटा)

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

उस भगवान को नमन, शत्रुओं का नाश करने वाले, सही मायने में पूर्णतः प्रबुद्ध (जागृत) भगवान।

पहले पचास

आई. भंडागामवग्गो

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

1 अनुबुद्ध

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) भंडागामा में वज्जियों के बीच निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा: 618 “भिक्षुओं (मठवासियों), चार बातों को न समझने और उनमें पारंगत न होने के कारण ही हम इतने लंबे समय तक (पुनर्जन्मों में) भटकते रहे हैं। 619 वे चार बातें क्या हैं?

"भिक्षुओं, उत्तम सद्गुणों, उत्तम समाधि (आत्म-लीनता/तल्लीनता), उत्तम पन्ना (दिव्य ज्ञान) और उत्तम मुक्ति को न समझने और उनमें प्रवेश न करने के कारण ही हम इतने लंबे समय तक भटकते और भटकते रहे हैं।"

"उत्कृष्ट सद्गुणपूर्ण आचरण को समझ लिया गया है और उसमें पारंगत हो चुका है। उत्कृष्ट समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) को समझ लिया गया है और उसमें पारंगत हो चुका है। उत्कृष्ट पन्ना (दिव्य ज्ञान) को समझ लिया गया है और उसमें पारंगत हो चुका है। उत्कृष्ट मुक्ति को समझ लिया गया है और उसमें पारंगत हो चुका है। अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की लालसा (तन्हा/तृष्णा) का नाश हो चुका है; अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का मार्ग नष्ट हो चुका है; अब कोई नया अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) नहीं है।"

यह वही है जो भगवान (बुद्ध) ने कहा। यह कहने के बाद, सुगत (भगवान बुद्ध), गुरु ने आगे यह कहा: [2]

"पुण्य आचरण, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), पन्ना (दिव्य ज्ञान),

और अतुलनीय मुक्ति,

इन सभी बातों को महान गौतम ने

स्वयं समझा था।"

इन बातों को प्रत्यक्ष रूप से जानकर

बुद्ध ने भिक्षुओं को धम्म (मार्ग) का उपदेश दिया।

गुरु, दुखों का अंत करने वाले,

दूरदर्शी, ने निर्वाण प्राप्त कर लिया है।

---

2 गिरे हुए (पापतिता)

सावत्थी में: "भिक्षुओं, जिसके पास चार चीजें नहीं होतीं, वह इस धर्म और अनुशासन से भटक गया माना जाता है। वे चार चीजें क्या हैं? (1) जिसके पास उत्तम सद्गुणी आचरण नहीं होता, वह इस धर्म और अनुशासन से भटक गया माना जाता है। (2) जिसके पास उत्तम समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) नहीं होती... (3) जिसके पास उत्तम पन्ना (दिव्य ज्ञान) नहीं होता... (4) जिसके पास उत्तम मुक्ति नहीं होती, वह इस धर्म और अनुशासन से भटक गया माना जाता है। जिसके पास ये चारों चीजें नहीं होतीं, वह इस धर्म और अनुशासन से भटक गया माना जाता है।"

लेकिन, भिक्षुओं, इस धर्म और अनुशासन में चार चीजों से युक्त व्यक्ति सुरक्षित माना जाता है। वे चार चीजें क्या हैं? (1) जो व्यक्ति उत्तम सद्गुणों से युक्त है, वह इस धर्म और अनुशासन में सुरक्षित माना जाता है। (2) जो व्यक्ति उत्तम समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से युक्त है... (3) जो व्यक्ति उत्तम पन्ना (दिव्य ज्ञान) से युक्त है... (4) जो व्यक्ति उत्तम मुक्ति से युक्त है, वह इस धर्म और अनुशासन में सुरक्षित माना जाता है। इन चारों चीजों से युक्त व्यक्ति इस धर्म और अनुशासन में सुरक्षित माना जाता है।

ढहकर गिर पड़े, वे दूर चले जाते हैं;

लालची फिर लौट आते हैं।

कार्य पूरा हो गया, आनंद में ही आनंद मिलता है;

सुख से ही सुख प्राप्त होता है। 623

---

3 अपंग (1) (खाता1 सं. क्षत्)

"भिक्षुओं (सन्यासियों), चार गुणों से युक्त, अज्ञानी, अयोग्य, दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय [3] है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत अधिक पाप उत्पन्न करता है। वे चार गुण क्या हैं?"

(1) बिना जांच-पड़ताल किए वह उस व्यक्ति की प्रशंसा करता है जो निंदा का पात्र है। (2) बिना जांच-पड़ताल किए वह उस व्यक्ति की निंदा करता है जो प्रशंसा का पात्र है।

(3) बिना जांच-पड़ताल किए, वह संदेह के योग्य मामले पर विश्वास कर लेता है। (4) बिना जांच-पड़ताल किए, वह विश्वास के योग्य मामले पर संदेह करता है। इन चारों गुणों से युक्त, नासमझ, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत अधिक पाप उत्पन्न करता है।

"भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त बुद्धिमान, सक्षम और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों द्वारा उसकी निंदा नहीं की जा सकती; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे चार गुण क्या हैं?"

(1) "जांच-पड़ताल करने के बाद, वह निंदा के पात्र व्यक्ति की निंदा करता है। (2) जांच-पड़ताल करने के बाद, वह प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करता है। (3) जांच-पड़ताल करने के बाद, वह संदेह के योग्य मामले पर संदेह करता है। (4) जांच-पड़ताल करने के बाद, वह विश्वास के योग्य मामले पर विश्वास करता है। इन चारों गुणों से युक्त, बुद्धिमान, सक्षम और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह निर्दोष है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे है; और वह बहुत पुण्य अर्जित करता है।"

जो निंदा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करता है,

या प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की निंदा करता है, वह

अपने मुख से एक अशुभ तीर चलाता है

जिससे उसे कोई सुख नहीं मिलता। 624

पासे में दुर्भाग्यपूर्ण चाल

चलकर अपनी सारी संपत्ति खो देना

, स्वयं सहित सब कुछ खो देना मामूली बात है; लेकिन सुगत (भगवान बुद्ध) के प्रति द्वेष रखना

कहीं अधिक दुर्भाग्यपूर्ण चाल है । 625

एक लाख छत्तीस

निरब्बुद और पाँच निरब्बुद के लिए,

श्रेष्ठ व्यक्तियों की निंदा करने वाला नरक में जाता है,

क्योंकि उसने उन्हें बुरी वाणी और मन से बदनाम किया है। 626

---

4 अपंग (2) (खाता2 सं. क्षत)

भिक्षुओं, चार व्यक्तियों के प्रति कुकर्म करने पर, अज्ञानी, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे चार कौन हैं? (1) अपनी माता के प्रति कुकर्म करने पर, अज्ञानी, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। (2) अपने पिता के प्रति कुकर्म करने पर... (3) तथागत (बुद्ध) के प्रति कुकर्म करने पर... (4) तथागत (बुद्ध) के शिष्य के प्रति कुकर्म करने पर... इन चारों व्यक्तियों के प्रति कुकर्म करने पर, अज्ञानी, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह इससे बहुत अधिक नकारात्मक परिणाम उत्पन्न होते हैं।

भिक्षुओं, चार व्यक्तियों के प्रति उचित व्यवहार करने पर, बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य अर्जित करता है। वे चार कौन हैं? (1) अपनी माता के प्रति उचित व्यवहार करने पर, बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य अर्जित करता है। (2) अपने पिता के प्रति उचित व्यवहार करने पर... (3) तथागत (बुद्ध) के प्रति उचित व्यवहार करने पर... (4) तथागत (बुद्ध) के शिष्य के प्रति उचित व्यवहार करने पर... इन चारों व्यक्तियों के प्रति उचित व्यवहार करने पर, बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट से बचाए रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य अर्जित करता है।

जो व्यक्ति

अपने माता-पिता,

प्रबुद्ध तथागत (बुद्ध),

या अपने शिष्य के प्रति गलत व्यवहार करता है, [5]

वह बहुत अधिक पाप उत्पन्न करता है।

माता-पिता के प्रति उस अनुचित आचरण के कारण ,

बुद्धिमान लोग इस संसार में उसकी आलोचना करते हैं

और मृत्यु के बाद वह दुख के लोक में जाता है।

जो व्यक्ति

अपने मातृभूमि पिता

या अपने शिष्य के प्रति सही व्यवहार करता है,

वह बहुत पुण्य अर्जित करता है।

माता-पिता के प्रति उस धर्मपरायण आचरण के कारण ,

बुद्धिमान लोग इस संसार में प्रशंसा पाते हैं

और मृत्यु के बाद स्वर्ग में आनंदित होते हैं। 627

---

5 धारा के साथ (अनु-सोटा संस्कृत अनु-स्ट्रोटा)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? धारा के साथ बहने वाला; धारा के विपरीत बहने वाला; आंतरिक रूप से दृढ़; और वह जो पार कर चुका है और उससे भी आगे बढ़ चुका है, वह ब्राह्मण जो उच्च स्थान पर स्थित है। 628

(1) "और वह व्यक्ति कौन है जो धारा के साथ बहता है? यहाँ, कोई व्यक्ति कामुक सुखों में लिप्त होता है और बुरे कर्म करता है। इसे धारा के साथ बहने वाला व्यक्ति कहा जाता है।"

(2) "धारा के विपरीत चलने वाला व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति न तो इंद्रिय सुखों में लिप्त होता है और न ही बुरे कर्म करता है। पीड़ा और निराशा में भी, आँसू भरी आँखों से रोते हुए, वह पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करता है। यही धारा के विपरीत चलने वाला व्यक्ति कहलाता है।"

(3) "और वह व्यक्ति कौन है जो आंतरिक रूप से दृढ़ है? यहाँ, पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ, कोई व्यक्ति स्वतः पुनर्जन्म लेता है, और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए, वहाँ अंतिम निर्वाण प्राप्त करता है। इसे आंतरिक रूप से दृढ़ व्यक्ति कहा जाता है।"

(4) "और वह कौन है जिसने पार कर लिया है और आगे बढ़ गया है, वह ब्राह्मण जो उच्च भूमि पर खड़ा है? [6] यहाँ, छोटे-छोटे दोषों के नाश के साथ, किसी व्यक्ति ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से, इसी जीवन में, मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इसे ही पार कर लेने वाला और आगे बढ़ जाने वाला व्यक्ति, वह ब्राह्मण जो उच्च भूमि पर खड़ा है, कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

वे लोग जो इंद्रिय सुखों में अनियंत्रित हैं, कामवासना (राग) से मुक्त नहीं हैं, यहाँ इंद्रिय सुखों का आनंद ले रहे हैं, बार-बार पुनर्जन्म और वृद्धावस्था में लौट रहे हैं, तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) में डूबे हुए हैं, वे ही "धारा के साथ बहने वाले" हैं।

इसलिए, सती साधना में निपुण एक बुद्धिमान व्यक्ति, जो इंद्रिय सुखों और बुरे कर्मों का सहारा नहीं लेता, उसे कष्टदायी होने पर भी इंद्रिय सुखों का त्याग कर देना चाहिए: ऐसे व्यक्ति को "धारा के विपरीत चलने वाला" कहा जाता है।

जिसने पाँच दोषों का त्याग कर दिया है,

एक सिद्ध प्रशिक्षु, 630 प्रतिगामी नहीं,

मन की महारत प्राप्त कर ली है, उसकी इंद्रियाँ शांत हैं:

इस व्यक्ति को "आंतरिक रूप से दृढ़" कहा जाता है।

जिसने ऊँच-नीच के सभी ज्ञान को भस्म कर दिया है,

उन्हें इस प्रकार जला दिया है कि वे लुप्त हो गए हैं और उनका अस्तित्व समाप्त हो गया है:

वह ऋषि जिसने ब्रह्मचर्य (पवित्र जीवन) व्यतीत किया है,

संसार के अंत तक पहुँच गया है, उसे

"परलोक का मार्ग प्रशस्त करने वाला" कहा जाता है।

---

6. अल्पज्ञानी (अप्पस्सुता संस. अल्प-श्रुता)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक अल्पज्ञानी जो अपने ज्ञान पर ध्यान नहीं देता; एक अल्पज्ञानी जो अपने ज्ञान पर ध्यान देता है; एक अतिज्ञानी जो अपने ज्ञान पर ध्यान नहीं देता; और एक अतिज्ञानी जो अपने ज्ञान पर ध्यान देता है।

(1) "और वह व्यक्ति अल्पज्ञानी कैसे है जो अपने ज्ञान पर ध्यान नहीं देता? [7] यहाँ, किसी ने कम ज्ञान प्राप्त किया है—अर्थात, प्रवचनों (सूत्र), मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याओं, छंदों (गाथाओं), प्रेरित कथनों (उदना), उद्धरणों (इतिवुत्तक), पुनर्जन्म कथाओं (जातक), आश्चर्यजनक वृत्तांतों और प्रश्न-उत्तरों 631 का—पर वह अपने ज्ञान का अर्थ नहीं समझता; वह धम्म को नहीं समझता; और वह धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं करता। इस प्रकार, वह व्यक्ति अल्पज्ञानी है जो अपने ज्ञान पर ध्यान नहीं देता।"

(2) "और जो व्यक्ति अपने ज्ञान पर केंद्रित है, वह अल्पज्ञानी कैसे है? यहाँ, किसी ने प्रवचनों और प्रश्नोत्तरों का अल्पज्ञान प्राप्त किया है, परन्तु अपने ज्ञान का अर्थ समझकर और धम्म को समझकर वह धम्म के अनुसार अभ्यास करता है। इस प्रकार, जो व्यक्ति अपने ज्ञान पर केंद्रित है, वह अल्पज्ञानी कहलाता है।"

(3) "वह व्यक्ति जो बहुत ज्ञानी है, वह अपने ज्ञान पर ध्यान क्यों नहीं देता? यहाँ, किसी ने बहुत कुछ सीखा है—अर्थात् प्रवचनों का... प्रश्न-उत्तरों का—परन्तु वह अपने ज्ञान का अर्थ नहीं समझता; वह धम्म को नहीं समझता; और वह धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं करता। इस प्रकार, वह व्यक्ति बहुत ज्ञानी है जो अपने ज्ञान पर ध्यान नहीं देता।"

(4) और जो व्यक्ति अपने ज्ञान पर एकाग्रचित्त है, वह किस प्रकार ज्ञानवान कहलाता है? यहाँ, किसी व्यक्ति ने बहुत कुछ सीखा है—अर्थात् प्रवचनों का... प्रश्न-उत्तरों का— और अपने ज्ञान का अर्थ समझकर तथा धम्म को समझकर वह धम्म के अनुसार अभ्यास करता है। इस प्रकार, जो व्यक्ति अपने ज्ञान पर एकाग्रचित्त है, वह ज्ञानवान कहलाता है।

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

यदि किसी व्यक्ति के पास ज्ञान की कमी है

और वह सद्गुणों में स्थिर नहीं है,

तो लोग उसकी आलोचना दोनों ही मामलों में करते हैं,

सद्गुणपूर्ण व्यवहार और ज्ञान के मामले में।

यदि किसी व्यक्ति के पास ज्ञान कम हो,

परन्तु वह सद्‌गुणों में भलीभांति दृढ़ हो,

तो लोग उसके सदाचारी आचरण की प्रशंसा करते हैं;

उसका ज्ञान सफल हो गया है। 32

यदि कोई व्यक्ति अत्यधिक विद्वान है

परन्तु सद्‌गुणों में स्थिर नहीं है, तो

वे उसकी सद्‌गुणहीनता के लिए उसकी आलोचना करते हैं;

उसका ज्ञान सफल नहीं हुआ। [8]

यदि कोई व्यक्ति अत्यधिक विद्वान है

और सद्‌गुणों में स्थिर है, तो

लोग उसकी दोनों ही बातों,

सदाचार और ज्ञान, के लिए उसकी प्रशंसा करते हैं।

जब बुद्ध का कोई शिष्य अत्यंत विद्वान हो,

धम्म का ज्ञाता हो, और

शुद्ध पर्वतीय स्वर्ण के सिक्के के समान पन्ना (दिव्य ज्ञान) से परिपूर्ण हो, तो भला

उसे दोष देने का अधिकार किसे है?

यहां तक कि देव (देवदूत/भगवान) भी ऐसे व्यक्ति की प्रशंसा करते हैं;

ब्रह्मा भी उसकी प्रशंसा करते हैं।

---

7 वे सजाते हैं (शोभना सं. शोभना)

"भिक्षुओं (मठवासियों), ये चार प्रकार के व्यक्ति जो सक्षम, अनुशासित, आत्मविश्वासी, विद्वान, धम्म के ज्ञाता और धम्म के अनुसार अभ्यास करने वाले होते हैं, संघ की शोभा बढ़ाते हैं। वे चार कौन से हैं?"

(1) "योग्य, अनुशासित, आत्मविश्वासी, विद्वान, धम्म के ज्ञाता और धम्म के अनुसार अभ्यास करने वाला भिक्षु संघ की शोभा बढ़ाता है। (2) योग्य भिक्षुणी (भिक्षुणी)... (3) योग्य पुरुष गृहस्थ अनुयायी... (4) योग्य, अनुशासित, आत्मविश्वासी, विद्वान, धम्म के ज्ञाता और धम्म के अनुसार अभ्यास करने वाली स्त्री गृहस्थ अनुयायी संघ की शोभा बढ़ाती है।"

"भिक्षुओं (मठवासियों), ये चार प्रकार के व्यक्ति जो सक्षम, अनुशासित, आत्मविश्वासी, विद्वान, धम्म के समर्थक और धम्म के अनुसार अभ्यास करने वाले होते हैं, संघ की शोभा बढ़ाते हैं।"

जो व्यक्ति सक्षम और आत्मविश्वासी हो,

विद्वान हो, धम्म का ज्ञाता हो, और

धम्म के अनुरूप अभ्यास करता हो,

उसे संघ का आभूषण कहा जाता है।

सद्गुणों में निपुण भिक्षु,

विद्वान भिक्षुणी,

आस्थावान पुरुष अनुयायी,

आस्थावान स्त्री अनुयायी:

ये वे हैं जो संघ को सुशोभित करते हैं;

ये संघ के आभूषण हैं।

8आत्मविश्वास (वेसाराज)

"भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) में चार प्रकार का आत्मविश्वास होता है, जिसके द्वारा वे प्रधान बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, [9] सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं। 633 वे चार कौन से हैं?"

(1) "मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता जिसके आधार पर कोई तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार में कोई भी मुझे यह कहकर फटकार सके कि: 'यद्यपि तुम पूर्णतः प्रबुद्ध होने का दावा करते हो, परन्तु तुम इन विषयों में पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं हो।' क्योंकि मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता, इसलिए मैं निश्चिंत, निर्भय और आत्मविश्वासी होकर निवास करता हूँ।"

(2) "मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता जिसके आधार पर कोई तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार का कोई भी व्यक्ति मुझे यह कहकर फटकार सके कि: 'यद्यपि तुम अपने दोषों के नाश होने का दावा करते हो, तुमने इन दोषों को पूरी तरह से नाश नहीं किया है।' क्योंकि मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता, इसलिए मैं निश्चिंत, निर्भय और आत्मविश्वासी होकर निवास करता हूँ।"

(3) "मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता जिसके आधार पर कोई तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार का कोई भी व्यक्ति मुझे यह कहकर फटकार सके कि 'जिन चीजों को तुमने बाधक बताया है, वे उनमें संलग्न होने वाले को बाधक नहीं बना सकतीं।' क्योंकि मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता, इसलिए मैं निश्चिंत, निर्भय और आत्मविश्वासी होकर निवास करता हूँ।"

(4) "मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता जिसके आधार पर कोई तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार में कोई भी मुझे यह कहकर फटकार सके: 'धम्म का अभ्यास करने वाले को वह पूर्ण दुख-निवारण नहीं मिलता जिसके लिए तुम उसका उपदेश देते हो।' 634 चूंकि मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता, इसलिए मैं निश्चिंत, निर्भय और आत्मविश्वासी रहता हूँ।"

"हे भिक्षुओं, ये वे चार प्रकार के आत्मविश्वास हैं जो तथागत (बुद्ध) में पाए जाते हैं, जिनके द्वारा वे प्रमुख बैल का स्थान धारण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्मा के चक्र को गतिमान करते हैं।"

विभिन्न रूपों में प्रतिपादित,

तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अपनाए गए ये सैद्धांतिक मार्ग

तथागत (बुद्ध) तक नहीं पहुँचते,

जो आत्मविश्वास से परिपूर्ण हैं और

सैद्धांतिक मार्गों से परे जा चुके हैं। 635

पूर्णतः, सब कुछ पर विजय प्राप्त करके, उन्होंने समस्त प्राणियों के प्रति करुणा से प्रेरित होकर

धर्म के चक्र को गतिमान किया । प्राणी ऐसे व्यक्ति को प्रणाम करते हैं। देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों में सर्वश्रेष्ठ, जो अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म) से परे चले गए हैं। [10]

---

9 तृष्णा का उदय (तन्हुप्पा सं. तृष्णा-उत्पाद)

भिक्षुओं, भिक्षु में तृष्णा उत्पन्न होने के ये चार तरीके हैं। वे चार तरीके कौन से हैं? वस्त्रों, भिक्षा, आवास या जीवन यापन के लिए भिक्षु में तृष्णा उत्पन्न होती है। 636 ये चार तरीके हैं जिनसे भिक्षु में तृष्णा उत्पन्न होती है।

तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) को अपना साथी बनाकर

मनुष्य इस दीर्घकाल में भटकता रहता है।

एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाते हुए

वह संसार पर विजय प्राप्त नहीं कर पाता।

इस खतरे को जानते हुए

कि तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) ही दुख का मूल कारण है,

तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से मुक्त, अभिलाषा से रहित,

एक भिक्षु को ध्यानपूर्वक भ्रमण करना चाहिए।

10 बंधन (योग)

भिक्षुओं, ये चार बंधन हैं। कौन से चार? कामुकता का बंधन, अस्तित्व का बंधन (भाव/पुनर्जन्म का कारण), दृष्टिकोण का बंधन और अज्ञान का बंधन।

(1) "हे भिक्षुओं, कामुकता का बंधन क्या है? यहाँ, व्यक्ति कामुकता से संबंधित उनके उद्भव, क्षय, तृप्ति, खतरे और मुक्ति को उनके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझ पाता। जब व्यक्ति इन बातों को उनके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता, तब कामुकता से संबंधित राग, आनंद, आसक्ति, मोह, प्यास, जुनून, आसक्ति और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) उसके भीतर गहराई से विद्यमान हो जाती हैं। इसे ही कामुकता का बंधन कहते हैं।"

(2) "इंद्रिय बंध ऐसा ही है। और अस्तित्व का बंध कैसा है? यहाँ व्यक्ति अस्तित्व की अवस्थाओं के संबंध में उत्पत्ति और क्षय, तृप्ति, संकट और मुक्ति को उनके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझ पाता। 637 जब व्यक्ति इन बातों को उनके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता, तब अस्तित्व के प्रति राग, आनंद, आसक्ति, मोह, प्यास, जुनून, आसक्ति और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) अस्तित्व की अवस्थाओं के संबंध में व्यक्ति के भीतर गहराई से विद्यमान हो जाती हैं। इसे ही अस्तित्व का बंध कहते हैं।"

(3) "इंद्रिय बंध और अस्तित्व बंध ऐसे ही होते हैं। और दृष्टि बंध कैसे होता है? यहाँ, व्यक्ति दृष्टि के संबंध में उत्पत्ति और क्षय, तृप्ति, खतरा और पलायन को उनके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता। जब व्यक्ति इन चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता, [11] तब दृष्टि के प्रति राग, दृष्टि में आनंद, दृष्टि के प्रति आसक्ति, दृष्टि के प्रति मोह, दृष्टि के प्रति प्यास, दृष्टि के प्रति जुनून, दृष्टि के प्रति आसक्ति और दृष्टि के प्रति तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) गहरी चेतना में विद्यमान हो जाती है; इसे दृष्टि बंध कहते हैं।"

(4) "इंद्रिय बंधन, अस्तित्व बंधन और दृष्टि बंधन इस प्रकार हैं। और अज्ञान का बंधन कैसे होता है? यहाँ व्यक्ति छह इंद्रियों के संपर्क में आने वाले अनुभवों के संदर्भ में उत्पत्ति और क्षय, तृप्ति, भय और पलायन को उनके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझ पाता। जब व्यक्ति इन चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता, तब छह इंद्रियों के संपर्क में आने वाले अनुभवों के संदर्भ में उसके भीतर अज्ञान और अनभिज्ञता गहराई से विद्यमान हो जाती है। इसे ही अज्ञान का बंधन कहते हैं। इंद्रिय बंधन, अस्तित्व बंधन, दृष्टि बंधन और अज्ञान बंधन इस प्रकार हैं।"

"मनुष्य अकुशल (अशुल) बुरी अवस्थाओं से जकड़ा हुआ है जो अपवित्र करने वाली, पुनर्जन्म की ओर ले जाने वाली, कष्टदायी, दुख में परिपक्व होने वाली और भविष्य में पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु की ओर ले जाने वाली होती हैं; इसलिए कहा जाता है कि मनुष्य 'बंधन से सुरक्षित नहीं' है। ये चार बंधन हैं।"

भिक्षुओं, ये चार प्रकार के बंधन हैं जिन्हें तोड़ा जा सकता है। वे चार कौन से हैं? कामुकता का बंधन, अस्तित्व का बंधन, दृष्टियों का बंधन और अज्ञान का बंधन।

(1) "हे भिक्षुओं, कामुकता के बंधन का टूटना क्या है? यहाँ व्यक्ति कामुकता से संबंधित उनके उद्भव, क्षय, तृप्ति, खतरे और मुक्ति को उनके वास्तविक स्वरूप में समझता है। जब व्यक्ति इन बातों को उनके वास्तविक स्वरूप में समझ लेता है, तब कामुकता से संबंधित कामवासना (राग), कामुकता से मिलने वाला आनंद, कामुकता से भरा स्नेह, कामुकता से भरा मोह, कामुकता से भरी प्यास, कामुकता से भरी वासना, कामुकता से भरी आसक्ति और कामुकता की लालसा (तन्हा/तृष्णा) उसमें नहीं रहती। इसे ही कामुकता के बंधन का टूटना कहते हैं।"

(2) "इस प्रकार है कामुकता का बंधन टूटना। और जीवन का बंधन कैसे टूटता है? यहाँ, कोई व्यक्ति जीवन की अवस्थाओं के संदर्भ में उत्पत्ति और क्षय, तृप्ति, संकट और मुक्ति को उनके वास्तविक स्वरूप में समझता है। जब कोई इन चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप

में समझ लेता है, तब जीवन की अवस्थाओं के संदर्भ में व्यक्ति के भीतर जीवन के प्रति कामवासना (राग), जीवन में आनंद, जीवन के प्रति स्नेह, जीवन के प्रति आसक्ति, जीवन के प्रति प्यास, जीवन के प्रति जुनून, जीवन के प्रति लगाव और जीवन के प्रति लालसा (तन्हा/तृष्णा) नहीं रहती। इसे ही जीवन का बंधन टूटना कहते हैं।"

(3) "इस प्रकार हैं कामुकता का बंधन टूटना और अस्तित्व का बंधन टूटना (भाव/पुनर्जन्म का कारण)। और दृष्टियों का बंधन कैसे टूटता है? यहाँ, व्यक्ति दृष्टियों के संबंध में उत्पत्ति और क्षय, संतुष्टि, खतरे और [12] मुक्ति को उनके वास्तविक स्वरूप में समझता है। जब कोई इन चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में समझ लेता है, तो दृष्टियों के प्रति वासना (राग), दृष्टियों में आनंद, दृष्टियों के प्रति आसक्ति, दृष्टियों के प्रति प्यास, दृष्टियों के प्रति जुनून, दृष्टियों के प्रति लगाव और दृष्टियों के प्रति तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) व्यक्ति के भीतर नहीं रहती। इसे दृष्टियों का बंधन टूटना कहते हैं।"

(4) "इंद्रिय बंधन का टूटना, अस्तित्व बंधन का टूटना और दृष्टि बंधन का टूटना इस प्रकार है। और अज्ञान बंधन का टूटना कैसे संभव है? यहाँ, व्यक्ति छह इंद्रियों के संपर्क में उत्पत्ति और क्षय, संतुष्टि, खतरे और पलायन को उनके वास्तविक स्वरूप में समझता है। जब व्यक्ति इन चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में समझ लेता है, तो छह इंद्रियों के संपर्क में अज्ञान और अज्ञानता उसके भीतर नहीं रहती। इसे अज्ञान बंधन का टूटना कहते हैं। इंद्रिय बंधन का टूटना, अस्तित्व बंधन का टूटना, दृष्टि बंधन का टूटना और अज्ञान बंधन का टूटना इस प्रकार है।"

"जो व्यक्ति अकुशल (अशुल) बुरी अवस्थाओं से विरक्त हो जाता है, जो अपवित्र करने वाली, पुनर्जन्म की ओर ले जाने वाली, कष्टदायी, दुख में परिपक्व होने वाली और भविष्य में पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु की ओर ले जाने वाली होती हैं, उन्हें वह 'बंधन से मुक्त' कहता है। ये बंधनों के चार विच्छेद हैं।"

कामुकता के बंधन

और अस्तित्व के बंधन से जकड़े हुए,

विचारों के बंधन से जकड़े हुए,

अज्ञान से प्रेरित होकर,

प्राणी संसार में चलते रहते हैं,

पुनर्जन्म और मृत्यु के चक्र में बंधे रहते हैं।

लेकिन इंद्रिय सुखों और अस्तित्व के बंधन को पूर्णतः समझकर ,

विचारों के बंधन को उखाड़कर

और अज्ञान को विलीन करके,

ऋषियों ने सभी बंधनों को तोड़ दिया है;

वे बंधन से परे चले गए हैं। 63a [13]

———————————————————

II. पैदल चलने वाला भाग (Caravaggo sans. Chara-varga)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

11 चलना [639]

(1) "भिक्षुओं, यदि किसी भिक्षु के मन में चलते समय कामुक विचार, द्वेष का विचार या हानि पहुँचाने का विचार उत्पन्न होता है, और वह उसे सहन करता है, उसका त्याग नहीं करता, उसे दूर नहीं करता, उसे समाप्त नहीं करता और उसे मिटा नहीं देता, तो वह भिक्षु उत्साह और नैतिक भय से रहित कहा जाता है; वह चलते समय निरंतर आलसी और ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) से रहित रहता है।

(2) यदि किसी भिक्षु के मन में खड़े-खड़े कामुक विचार उत्पन्न हो... (3) यदि किसी भिक्षु के मन में बैठे-बैठे कामुक विचार उत्पन्न हो... (4) यदि किसी भिक्षु के मन में जागते हुए लेटे-लेटे कामुक विचार, द्वेष का विचार या हानि पहुँचाने का विचार उत्पन्न हो, और वह उसे सहन करे, उसका त्याग न करे, उसे दूर न करे, उसे समाप्त न करे और उसे मिटा न दे, तो उस भिक्षु को उत्साह और नैतिक भय से रहित कहा जाता है; वह जागते हुए लेटे-लेटे लगातार आलसी और ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) से रहित रहता है।

(1) "लेकिन, भिक्षुओं, यदि किसी भिक्षु के मन में चलते समय कामुक विचार, द्वेष का विचार या हानि पहुँचाने का विचार उत्पन्न होता है, और वह उसे सहन नहीं करता बल्कि उसका त्याग करता है, उसे दूर करता है, उसे समाप्त करता है और उसे मिटा देता है, तो उस भिक्षु को उत्साही और कुकर्म से भयभीत कहा जाता है; वह चलते समय निरंतर और सतत ऊर्जावान और दृढ़ रहता है।"

(2) "यदि किसी भिक्षु के मन में खड़े-खड़े कामुक विचार उत्पन्न हो... (3) यदि किसी भिक्षु के मन में बैठे-बैठे कामुक विचार उत्पन्न हो... (4) यदि किसी भिक्षु के मन में जागते हुए लेटे-लेटे कामुक विचार, द्वेष का विचार या हानि पहुँचाने का विचार उत्पन्न हो, और वह उसे सहन न करे, बल्कि उसका त्याग कर दे, उसे दूर कर दे, उसे समाप्त कर दे, [14] और उसे मिटा दे, तो उस भिक्षु को उत्साही और कुकर्म से भयभीत कहा जाता है; वह चलते-फिरते निरंतर ऊर्जावान और दृढ़ रहता है।"

चलते-फिरते हो या खड़े हो,

बैठे हो या लेटे हो,

जो व्यक्ति

गृहस्थ जीवन से जुड़े बुरे विचारों में डूबा रहता है, वह भ्रामक चीजों के प्रति आसक्त होकर

एक भयावह मार्ग पर चल पड़ा है : ऐसा भिक्षु सर्वोच्च ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता।

लेकिन जो व्यक्ति चलते,

खड़े होते, बैठे या लेटे हुए भी

अपने विचारों को शांत कर लेता है

और विचारों को शांत करने में आनंद लेता है,

ऐसा भिक्षु ही

सर्वोच्च ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

---

12. सद्‌गुणपूर्ण आचरण (शीला सान. शील)

भिक्षुओं, सदाचारी आचरण का पालन करते हुए, पतिमोक्ख का ध्यान रखते हुए निवास करो। पतिमोक्ख द्वारा संयमित, सुचारु आचरण और आश्रय से युक्त रहो, सूक्ष्म दोषों में भी खतरे को पहचानो। इन दोषों को स्वीकार करने के बाद, प्रशिक्षण नियमों का पालन करो। जब तुम यह कर लो, तो आगे क्या करना चाहिए?

(1) "भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु चलते समय लालसा और द्वेष से मुक्त हो गया हो; यदि उसने सुस्ती और उन्मत्तता, बेचैनी और पश्चाताप, और संदेह का त्याग कर दिया हो; 640 यदि उसकी ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) बिना शिथिल हुए जागृत हो; यदि उसका ध्यान (ध्यान/सती) स्थापित और निर्मल हो; यदि उसका शरीर शांत और अविचलित हो; यदि उसका मन आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) और एकाग्र (एकग्गा संस्कृत एकग्र) हो, तो उस भिक्षु को उत्साही और कुकर्म से भयभीत कहा जाता है; वह निरंतर और सतत रूप से चलते समय ऊर्जावान और दृढ़ रहता है।

(2) "यदि कोई भिक्षु खड़े-खड़े ही लालसा और द्वेष से मुक्त हो जाए... (3) यदि कोई भिक्षु बैठे-बैठे ही लालसा और द्वेष से मुक्त हो जाए... [15] ... (4) यदि कोई भिक्षु जागते हुए लेटे-लेटे ही लालसा और द्वेष से मुक्त हो जाए; यदि उसने सुस्ती, उन्मत्तता, बेचैनी, पश्चाताप और संदेह को त्याग दिया हो; यदि उसकी ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) बिना शिथिल हुए जागृत हो; यदि उसकी जागरूकता स्थिर और स्पष्ट हो; यदि उसका शरीर शांत और अविचलित हो; यदि उसका मन आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) और एकाग्र हो, तो उस भिक्षु को उत्साही और कुकर्म से भयभीत कहा जाता है; वह जागते हुए लेटे-लेटे ही निरंतर ऊर्जावान और दृढ़ रहता है।"

चलने में संयमित, खड़े होने में संयमित,

बैठने और लेटने में संयमित;

संयमित होकर, एक भिक्षु अपने अंगों को अंदर की ओर खींचता है,

और संयमित होकर, उन्हें फैलाता है।

ऊपर, आर-पार और नीचे,

जहाँ तक संसार फैला हुआ है, वह एक ऐसा व्यक्ति है जो समुच्चय के रूप में ऐसे घटनाक्रमों (धम्म) के

उद्‌भव और लुप्त होने का सूक्ष्म अध्ययन करता है ।

जो मन की समता (समथा) के लिए अनुकूल है, उसमें प्रशिक्षण प्राप्त करने वाला , सदा सचेत (ध्यान करने वाला/सती) रहने वाला,

ऐसे भिक्षु

को निरंतर दृढ़ निश्चयी कहा जाता है।

---

13 प्रयास करना (प्रस्थान के बिना पढ़ना)

भिक्षुओं, ये चार उचित प्रयास हैं। वे चार क्या हैं? (1) यहाँ, एक भिक्षु अजन्मे अहानिकारक अकुशल अवस्थाओं के उत्पन्न न होने की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत करता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। (2) वह उत्पन्न अहानिकारक अकुशल अवस्थाओं के त्याग की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत करता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। (3) वह अजन्मे लाभकारी (कुशल) अवस्थाओं के उत्पन्न होने की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत करता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। (4) वह उत्पन्न लाभकारी (कुशल) अवस्थाओं की निरंतरता, उनके क्षय न होने, वृद्धि, विस्तार और विकास द्वारा पूर्णता की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत करता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। ये चार उचित प्रयास हैं।

जो लोग सही ढंग से प्रयास करते हैं,

वे मारा के क्षेत्र पर विजय प्राप्त कर लेते हैं;

वे अनासक्त हो जाते हैं,

पुनर्जन्म और मृत्यु के भय से परे हो जाते हैं।

वे संतुष्ट और शांत हैं,

क्योंकि उन्होंने मारा और उसके वाहन (शरीर) पर विजय प्राप्त कर ली है;

उन सुखी लोगों ने

नामुची की समस्त सेनाओं को परास्त कर दिया है। 641

---

14. संयम (संवर)

भिक्षुओं, ये चार प्रकार के प्रयास हैं। कौन से चार? संयम द्वारा प्रयास, त्याग द्वारा प्रयास, विकास द्वारा प्रयास और संरक्षण द्वारा प्रयास।

(1) "हे भिक्षुओं, संयम द्वारा प्रयास करना क्या है? यहाँ, किसी आकृति को आँख से देखकर, भिक्षु उसके लक्षणों और विशेषताओं को नहीं समझ पाता। क्योंकि यदि वह आँख की इंद्रिय को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी जैसी बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम का अभ्यास करता है, वह आँख की इंद्रिय की रक्षा करता है, वह आँख की इंद्रिय का संयम अपनाता है। कान से ध्वनि सुनकर... नाक से गंध सूंघकर... जीभ से स्वाद चखकर... शरीर से स्पर्शित वस्तु का अनुभव करके... मन से किसी मानसिक घटना को जानकर, भिक्षु उसके लक्षणों और विशेषताओं को नहीं समझ पाता। क्योंकि यदि वह मन की इंद्रिय को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी जैसी बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम का अभ्यास करता है, वह मन की इंद्रिय की रक्षा करता है, वह मन की इंद्रिय का संयम अपनाता है। इसे ही संयम द्वारा प्रयास करना कहते हैं।"

(2) "त्याग द्वारा प्रयास क्या है? यहाँ, एक भिक्षु (साधु) उत्पन्न कामुक विचार को सहन नहीं करता; वह उसका त्याग करता है, उसे दूर करता है, उसे समाप्त करता है और उसे मिटा देता है। वह द्वेष के विचार को सहन नहीं करता... हानि पहुँचाने के विचार को सहन नहीं

करता... अकुशल (हानिकारक) अवस्थाओं को जब भी वे उत्पन्न हों; वह उनका त्याग करता है, उन्हें दूर करता है, उन्हें समाप्त करता है और उन्हें मिटा देता है। इसे त्याग द्वारा प्रयास कहा जाता है।"

(3) "और विकास द्वारा प्रयास क्या है? यहाँ, एक भिक्षु सती (ध्यान/सती) के ज्ञान तत्व का विकास करता है, जो एकांत, वैराग्य (विराग) और समाप्ति पर आधारित है, और मुक्ति में परिपक्व होता है। वह घटनाओं के विवेक (धम्म) के ज्ञान तत्व का विकास करता है... ऊर्जा (प्रयास/विरिया) के ज्ञान तत्व का... आनंद (पीति) के ज्ञान तत्व का... शांति (पासद्धि) के ज्ञान तत्व का... समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) के ज्ञान तत्व का... उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) के ज्ञान तत्व का, जो एकांत, वैराग्य और समाप्ति पर आधारित है, और मुक्ति में परिपक्व होता है। इसे विकास द्वारा प्रयास कहा जाता है। [17]

(4) "और संरक्षण द्वारा प्रयास क्या है? यहाँ, एक भिक्षु समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की एक उत्कृष्ट वस्तु की रक्षा करता है: 642 कंकाल की अनुभूति (सन्ना/संग्य), कृमिग्रस्त शव की अनुभूति (सन्ना/संग्य), पीले पड़े शव की अनुभूति (सन्ना/संग्य), सड़ते हुए शव की अनुभूति (सन्ना/संग्य), फटे हुए शव की अनुभूति (सन्ना/संग्य), फूले हुए शव की अनुभूति (सन्ना/संग्य)। इसे संरक्षण द्वारा प्रयास कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये चार प्रकार के प्रयास हैं।"

संयम और त्याग,

विकास और संरक्षण: सूर्य के सन्यासी ने

इन चार साधनाओं की शिक्षा दी थी। इन्हीं के द्वारा एक उत्साही भिक्षु यहाँ दुखों का नाश प्राप्त कर सकता है।

---

15 घोषणाएँ (पन्नत्ती)

"भिक्षुओं, श्रेष्ठ भिक्षुओं की ये चार घोषणाएँ हैं। वे चार कौन सी हैं?"

(1) शरीर धारण करने वालों में सबसे श्रेष्ठ राहु हैं, जो असुरों के स्वामी हैं। 643 (2) इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वालों में सबसे श्रेष्ठ राजा मंधाता हैं। 644 (3) अधिकार का प्रयोग करने वालों में सबसे श्रेष्ठ मार हैं। (4) इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/देवता), मार और ब्रह्मा विराजमान हैं, इस जनसंख्या में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण, देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य हैं, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति को सबसे श्रेष्ठ घोषित किया गया है। ये चार घोषणाएँ हैं जो श्रेष्ठ व्यक्तियों की घोषणा करती हैं।

राहु शरीरधारी देवताओं में सर्वोपरि है,

मंधाता इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले देवताओं में सर्वोपरि है;

मार शासकों में सर्वोपरि है,

जो शक्ति और यश से ओतप्रोत है।

इस संसार में , ऊपर, नीचे और चारों ओर फैले हुए सभी देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ ,

जहाँ तक संसार का विस्तार है,

बुद्ध को सर्वोपरि घोषित किया गया है।

---

16 विशेषज्ञता (सोखुम्मा)

भिक्षुओं, ये चार प्रकार की विशेषज्ञताएँ हैं। 645 वे चार क्या हैं? (1) यहाँ, एक भिक्षु रूप (ज्ञान) की सर्वोच्च विशेषज्ञता रखता है। वह रूप (ज्ञान) की किसी अन्य विशेषज्ञता को इससे अधिक उत्कृष्ट या उदात्त नहीं देखता; वह रूप (ज्ञान) की किसी अन्य विशेषज्ञता की इससे अधिक उत्कृष्ट या उदात्त इच्छा नहीं रखता। (2) वह संवेदना (वेदना) [18] [18] की सर्वोच्च विशेषज्ञता रखता है... (3) ... अनुभूति (संज्ञा) की सर्वोच्च विशेषज्ञता... (4) ... अपने गुणों/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) को जानने की सर्वोच्च विशेषज्ञता। वह अपने गुणों/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) की किसी अन्य विशेषज्ञता को इससे अधिक उत्कृष्ट या उदात्त नहीं देखता; वह रूप (ज्ञान) की किसी अन्य विशेषज्ञता की इच्छा नहीं रखता। किसी अन्य व्यक्ति की तुलना में अपने गुणों/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) को अधिक उत्कृष्ट या श्रेष्ठ जानना।

"ये चार प्रकार की विशेषज्ञताएं हैं।"

रूप (स्वरूप) की विशेषज्ञता,

संवेदनाओं (वेदना) की उत्पत्ति,

अनुभूति (संज्ञा) के उत्पन्न होने

और लुप्त होने के ज्ञान से;

अपने गुणों/व्यवहार (संस्कार) को पराये

, दुखमय और स्वयं से भिन्न जानकर,

वास्तव में वह भिक्षु जो सही दृष्टि रखता है,

शांत अवस्था में आनंदित होता है। वह मार और उसके वाहन (शरीर) पर विजय प्राप्त करके

अपना अंतिम शरीर धारण करता है ।

17 गलत पाठ्यक्रम (1) (agati1)

भिक्षुओं, गलत मार्ग अपनाने के ये चार तरीके हैं। कौन से चार? व्यक्ति इच्छा, घृणा, मोह या भय के कारण गलत मार्ग अपनाता है। ये चार तरीके हैं गलत मार्ग अपनाने के।

यदि कोई व्यक्ति इच्छा, घृणा, भय या मोह (मनोभाव) के कारण

धम्म का उल्लंघन करता है, तो

उसकी प्रसिद्धि

कृष्ण पक्ष में चंद्रमा की तरह फीकी पड़ जाती है।

---

18 गलत पाठ्यक्रम (2) (agati2)

भिक्षुओं, गलत मार्ग पर न चलने के ये चार तरीके हैं। वे चार तरीके कौन से हैं? मनुष्य इच्छा, घृणा, मोह या भय के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता। गलत मार्ग पर न चलने के ये चार तरीके हैं।

यदि कोई व्यक्ति इच्छा, घृणा, भय या मोह (मोह) के माध्यम से धम्म का उल्लंघन नहीं करता है , तो

उसकी प्रसिद्धि

शुक्ल पक्ष के चंद्रमा के समान पूर्ण हो जाती है।

---

19 गलत पाठ्यक्रम (3) (agati3)

भिक्षुओं, गलत मार्ग अपनाने के ये चार तरीके हैं। वे चार क्या हैं? [19] व्यक्ति इच्छा के कारण गलत मार्ग अपनाता है [जैसा कि 4:17 में है]... ये गलत मार्ग अपनाने के चार तरीके हैं।

भिक्षुओं, गलत मार्ग पर न चलने के ये चार तरीके हैं। वे चार कौन से हैं? कोई भी व्यक्ति इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता... [जैसा कि 4:18 में है]... ये गलत मार्ग पर चलने के चार तरीके हैं।

यदि कोई व्यक्ति इच्छा, घृणा, भय या मोह (मोह) के कारण

धम्म का उल्लंघन करता है, तो

उसकी प्रसिद्धि

कृष्ण पक्ष के चंद्रमा की तरह फीकी पड़ जाती है।

यदि कोई व्यक्ति इच्छा, घृणा, भय या मोह (मोह) के माध्यम से धम्म का उल्लंघन नहीं करता है , तो

उसकी प्रसिद्धि

शुक्ल पक्ष के चंद्रमा के समान पूर्ण हो जाती है।

---

20 भोजन का एक समनुदेशक (भट्टुद्देसका)

भिक्षुओं, यदि भोजन परोसने वाले किसी व्यक्ति में चार गुण हों, तो उसे नरक में ऐसे डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? वह इच्छा, घृणा, मोह या भय के कारण गलत मार्ग अपनाता है। यदि भोजन परोसने वाले किसी व्यक्ति में ये चार गुण हों, तो उसे नरक में ऐसे डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

भिक्षुओं, यदि भोजन परोसने वाले में चार गुण हों, तो वह स्वर्ग में ऐसे प्रवेश करता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? वह इच्छा, घृणा, मोह या भय के कारण गलत मार्ग नहीं अपनाता। यदि भोजन परोसने वाले में ये चार गुण हों, तो वह स्वर्ग में ऐसे प्रवेश करता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

वे लोग जो इंद्रिय सुखों में अनियंत्रित हैं, जो अधर्मी हैं, जो धम्म का आदर नहीं करते, जो इच्छा, घृणा और भय के कारण भटक गए हैं, 648 उन्हें दूषित सभा कहा जाता है।

ऐसा ज्ञानी तपस्वी ने कहा है। अतः वे अच्छे व्यक्ति जो प्रशंसनीय हैं, धम्म में दृढ़ हैं, कोई बुराई नहीं करते, इच्छा, घृणा और भय से अविचलित हैं, उन्हें विशिष्ट सभा कहा जाता है। ऐसा ज्ञानी तपस्वी ने कहा है। [20]

III. उरुवेला

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

21 उरुवेला (एल) 649

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, " भिक्षुओं?"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं (संतों), एक बार पूर्ण ज्ञान प्राप्ति के तुरंत बाद मैं उरुवेला में नेरंजारा नदी के किनारे बकरियों के बरगद के पेड़ के पास निवास कर रहा था। तब एकांत में अकेले रहते हुए मेरे मन में यह विचार आया: आदर और श्रद्धा के बिना रहना कष्टदायी है। अब मैं किस तपस्वी या ब्राह्मण का आदर, सम्मान करूँ और उस पर निर्भर रहूँ?"

तब मुझे यह विचार आया: (1) यदि मेरे सद्‌गुणों का सत्कार अपूर्ण होता, तो उसे पूर्ण करने के लिए मैं किसी अन्य तपस्वी या ब्राह्मण का आदर, सम्मान और उस पर आश्रित होकर निवास करता। परन्तु इस संसार में, जहाँ देव (देवदूत/देवता), मार और ब्रह्मा विद हैं, और इस जनसंख्या में, जहाँ तपस्वी और ब्राह्मण, देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य विद हैं, मुझे अपने से अधिक सद्‌गुणों में निपुण कोई अन्य तपस्वी या ब्राह्मण नहीं दिखाई देता, जिसका मैं आदर, सम्मान और जिस पर आश्रित होकर निवास कर सकूँ।

(2) यदि मेरी समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) अपूर्ण हो, तो उसे पूर्ण करने के लिए मैं किसी अन्य तपस्वी या ब्राह्मण का आदर, सम्मान और उस पर आश्रित होकर निवास करूंगा। परन्तु... मुझे अपने से अधिक समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में निपुण कोई अन्य तपस्वी या ब्राह्मण दिखाई नहीं देता।

(3) "यदि मेरा कुल ज्ञान (दिव्य ज्ञान) अपूर्ण होता, तो उसे पूर्ण करने के लिए मैं किसी अन्य तपस्वी या ब्राह्मण का आदर, सम्मान और उस पर निर्भर रहता। परन्तु... मुझे कोई दूसरा तपस्वी या ब्राह्मण मुझसे अधिक ज्ञानवान नहीं दिखाई देता। ..."

(4) "यदि मेरी मुक्ति की समग्र प्राप्ति अपूर्ण होती, तो उसे पूर्ण करने के लिए मैं किसी अन्य तपस्वी या ब्राह्मण का आदर, सम्मान और उस पर आश्रित होकर निवास करता। परन्तु इस संसार में, जहाँ देव (देवदूत/देवता), मार और ब्रह्मा विद हैं, और इस जनसंख्या में, जहाँ तपस्वी और ब्राह्मण, देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य विद हैं, मुझे अपने से अधिक सिद्ध मुक्ति प्राप्त कोई अन्य तपस्वी या ब्राह्मण नहीं दिखाई देता, जिसका मैं आदर, सम्मान और जिस पर आश्रित होकर निवास कर सकूँ।"

मुझे यह विचार आया: 'तो फिर मुझे केवल इसी धम्म का आदर, सम्मान और उस पर ही निर्भर रहना चाहिए, जिसके बारे में मुझे पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो चुका है।'

"तब ब्रह्मा सहमपति [21] ने अपने मन से मेरे मन में प्रतिबिंबित प्रतिबिंब को जान लिया और ब्रह्मलोक से विलीन होकर मेरे समक्ष इस प्रकार प्रकट हुए जैसे कोई बलवान पुरुष अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को अंदर खींचता है। उन्होंने अपना ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर डाला, दाहिना घुटना जमीन पर रखकर झुके, आदरपूर्वक मुझे प्रणाम किया और कहा: 'ऐसा ही है, भगवान (बुद्ध)! ऐसा ही है, सुगत (भगवान बुद्ध)! भंते, जो अतीत में अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध थे—वे भगवान (बुद्ध) भी केवल धम्म का आदर, सम्मान और उस पर निर्भर रहते थे: जो भविष्य में अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध होंगे—वे भगवान (बुद्ध) भी केवल धम्म का आदर, सम्मान और उस पर निर्भर रहेंगे। जो भगवान (बुद्ध) वर्तमान में अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, वे भी केवल धम्म का आदर, सम्मान और उस पर निर्भर रहेंगे। धम्म।'

"ब्रह्म सहमपति ने यही कहा था। इतना कहने के बाद उन्होंने आगे यह कहा:

"अतीत के सिद्ध बुद्ध,

भविष्य के बुद्ध

और वर्तमान बुद्ध

जो अनेकों के दु:खों को दूर करते हैं:

वे सभी अच्छे धम्म का आदर करते हुए निवास करते थे, अब निवास करते हैं

और [भविष्य में] निवास करेंगे। "

यही बुद्धों का स्वभाव है।

अत: जो व्यक्ति कल्याण की कामना करता है, और

महानता की आकांक्षा रखता है, उसे बुद्धों की शिक्षाओं का स्मरण करते हुए

अच्छे धम्म का आदर करना चाहिए ।

"ब्रह्म सहमपति ने यही कहा था। फिर उन्होंने मुझे प्रणाम किया और मुझे अपने दाहिनी ओर रखते हुए वहीं अंतर्धान हो गए। तब, ब्रह्मा के अनुरोध और अपने लिए उचित बात को समझते हुए, मैंने उस धम्म (मार्ग) का आदर, सम्मान और पालन किया, जिस पर मैं पूर्णतः प्रबुद्ध हो चुका था। और अब जब संघ ने महानता प्राप्त कर ली है, तो मैं संघ का भी आदर करता हूँ।" [22]

---

22 उरुवेला (2)

भिक्षुओं, एक बार पूर्ण ज्ञान प्राप्ति के तुरंत बाद मैं उरुवेला में नेरंजारा नदी के किनारे बकरियों के बरगद के वृक्ष के पास निवास कर रहा था। तभी कई वृद्ध, उम्रदराज, जीवन के बोझ से दबे हुए, जीवन के अंतिम चरण में पहुँच चुके ब्राह्मण मेरे पास आए और मुझसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त करने के बाद वे एक तरफ बैठ गए और मुझसे बोले:

"हमने सुना है, गुरु गौतम: 'संन्यासी गौतम वृद्ध, उम्रदराज, उम्र के बोझ से दबे हुए, जीवन के अंतिम पड़ाव पर पहुँच चुके ब्राह्मणों को प्रणाम नहीं करते; न ही उनके लिए खड़े होते हैं और न ही उन्हें आसन देते हैं।' यह सत्य है, क्योंकि गुरु गौतम वृद्ध, उम्रदराज, उम्र के बोझ से दबे हुए, जीवन के अंतिम पड़ाव पर पहुँच चुके ब्राह्मणों को प्रणाम नहीं करते; न ही उनके लिए खड़े होते हैं और न ही उन्हें आसन देते हैं। यह उचित नहीं है, गुरु गौतम।" 651

तब मुझे यह बात समझ में आई: इन पूजनीय लोगों को यह नहीं पता कि एक बुजुर्ग क्या होता है या वे कौन से गुण हैं जो किसी को बुजुर्ग बनाते हैं। चाहे कोई व्यक्ति कितना भी बूढ़ा हो - जन्म से अस्सी, नब्बे या सौ वर्ष का - यदि वह अनुचित समय पर बोलता है, झूठ बोलता है, अनुत्पादक बातें बोलता है, धम्म और अनुशासन के विपरीत बोलता है, यदि वह अनुचित समय पर व्यर्थ, तर्कहीन, बेतुकी और अनुत्पादक बातें बोलता है, तो उसे एक नासमझ (बचकाना) बुजुर्ग माना जाता है।

लेकिन भले ही कोई व्यक्ति युवा हो, काले बालों वाला युवक हो, यौवन के आशीर्वाद से संपन्न हो, जीवन के चरम पर हो, यदि वह उचित समय पर बोलता है, सत्य बोलता है, लाभकारी बोलता है, धम्म और अनुशासन पर बोलता है, और यदि वह उचित समय पर ऐसे शब्द बोलता है जो रिकॉर्ड करने योग्य हों, तर्कसंगत हों, संक्षिप्त हों और लाभकारी हों, तो उसे एक बुद्धिमान बुजुर्ग माना जाता है।

भिक्षुओं, ऐसे चार गुण हैं जो किसी को वरिष्ठ बनाते हैं। वे चार गुण कौन से हैं?

(1) "यहाँ, भिक्षु गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त रहता है, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनमें अभ्यास करता है।"

(2) "उसने बहुत कुछ सीखा है," [23] वह जो कुछ सीखा है उसे याद रखता है और उसे संजोता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में अच्छी हों, मध्य में अच्छी हों और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों - ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मन से जांचा है और दृष्टि से भली-भांति समझा है।

(3) "वह ऐसा व्यक्ति है जो इच्छा से, बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, चार ध्यान (तन्विता) प्राप्त करता है जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं।

(4) "दोषों के नाश होने से उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।"

"ये चार गुण हैं जो किसी को बुजुर्ग बनाते हैं।"

वह मंदबुद्धि व्यक्ति जिसका मन अशांत है

, जो बहुत बकवास करता है,

जिसके विचार अस्थिर हैं,

जो बुरी शिक्षा में आनंद लेता है,

बुरे विचार रखता है, अनादर करता है,

वह एक बड़े व्यक्ति के कद से बहुत दूर है।

परन्तु जो सद्गुणों में परिपूर्ण,

विद्वान और विवेकशील,

दृढ़ता के कारकों में आत्मसंयमित,

जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) से अर्थ को स्पष्ट रूप से देखता है;

समस्त घटनाओं से परे,

बंजर नहीं, विवेकशील; 653

जिसने जन्म-मृत्यु का त्याग कर दिया हो, जो

ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) में परिपूर्ण हो,

जिसमें कोई दोष न हो —

वही भिक्षु है जिसे मैं 'वरिष्ठ' कहता हूँ।

दोषों के नाश होने पर

भिक्षु को 'वरिष्ठ' कहा जाता है।

---

23 लोक (विश्व)

भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) संसार के प्रति पूर्णतः जागृत हो चुके हैं; तथागत (बुद्ध) संसार से विरक्त हैं। तथागत (बुद्ध) संसार की उत्पत्ति के प्रति पूर्णतः जागृत हो चुके हैं; तथागत (बुद्ध) ने संसार की उत्पत्ति का त्याग कर दिया है। तथागत (बुद्ध) संसार के अंत के प्रति पूर्णतः जागृत हो चुके हैं; तथागत (बुद्ध) ने संसार के अंत का ज्ञान प्राप्त कर लिया है। तथागत (बुद्ध) संसार के अंत की ओर ले जाने वाले मार्ग के प्रति पूर्णतः जागृत हो चुके हैं; तथागत (बुद्ध) ने संसार के अंत की ओर ले जाने वाले मार्ग का विकास कर दिया है।

(1) "भिक्षुओं (मठवासियों), इस संसार में इसके देवों (देवदूतों/देवताओं), मार और ब्रह्मा के साथ, इस जनसंख्या में इसके तपस्वियों और ब्राह्मणों, इसके देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के बीच, जो कुछ भी देखा, सुना, अनुभव किया, जाना, प्राप्त किया, खोजा, [24]

मन द्वारा परखा जाता है—वह सब कुछ जिसके प्रति तथागत (बुद्ध) पूर्णतः जागृत हो चुके हैं; इसलिए उन्हें तथागत (बुद्ध) कहा जाता है। 656 .

(2) “भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) उस रात के बीच के अंतराल में जो कुछ भी बोलते, कहते या समझाते हैं, जब वे पूर्णतम ज्ञान प्राप्त करते हैं और जब वे अंतिम निर्वाण प्राप्त करते हैं, 657 वह सब कुछ सत्य है, अन्यथा नहीं; इसलिए उन्हें तथागत (बुद्ध) कहा जाता है। 658

(3) “भिक्षुओं, जैसा तथागत (बुद्ध) कहते हैं, वैसा ही वे करते हैं; जैसा वे करते हैं, वैसा ही वे बोलते हैं। क्योंकि वे जैसा बोलते हैं वैसा ही करते हैं और जैसा करते हैं वैसा ही बोलते हैं, इसलिए उन्हें तथागत (बुद्ध) कहा जाता है।” 659

(4) "भिक्षुओं, इस संसार में, जहाँ देव (देवता), मार और ब्रह्मा विद हैं, इस जनसंख्या में, जहाँ तपस्वी और ब्राह्मण, देव (देवता) और मनुष्य विद हैं, तथागत (बुद्ध) ही सर्वविजयी, अजेय, सर्वज्ञानी और भगवानत्वशाली हैं; अतः उन्हें तथागत (बुद्ध) कहा जाता है।"

समस्त संसार को प्रत्यक्ष रूप से जानने के कारण—

संसार में जो कुछ भी है, उसे यथावत जानने

के कारण—वह समस्त संसार से विरक्त हो जाता है,

समस्त संसार से विरक्त हो जाता है।

वह सभी बाधाओं को दूर करने वाला,

सभी बंधनों को खोलने वाला ज्ञानी है।

वह परम शांति,

निर्वाण को प्राप्त कर चुका है, जो भय से परे है।

वह बुद्ध हैं, उनके सारे दोष नष्ट हो चुके हैं,

वे निर्भीक हैं, उनके सारे संदेह दूर हो चुके हैं;

उन्होंने सभी कर्मों का नाश कर लिया है और

वे सभी प्राप्तियों के निर्वाह में मुक्त हो चुके हैं।

वह भगवान (बुद्ध) हैं, बुद्ध हैं,

वह अतुलनीय सिंह हैं;

इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/भगवान) हैं,

उन्होंने ब्रह्मा के चक्र को गतिमान किया।

इस प्रकार, वे सभी देव (देवदूत/भगवान) और मनुष्य

जिन्होंने बुद्ध की शरण ली है

, एकत्रित होकर उन्हें प्रणाम करते हैं,

जो संशय से मुक्त महान व्यक्ति हैं।

जब उसे वश में किया जाता है, तो वह सर्वश्रेष्ठ वश में करने वाला होता है; जब

वह शांतिप्रिय होता है, तो वह शांति लाने वालों में सबसे दूरदर्शी होता है;

जब उसे मुक्त किया जाता है, तो वह मुक्तिदाताओं का मुखिया होता है;

जब वह पार कर जाता है, तो वह पार कराने वालों में सर्वश्रेष्ठ मार्गदर्शक होता है।

इस प्रकार वे सचमुच उस महान व्यक्ति को प्रणाम करते हैं जो संकोच से मुक्त है।

इस संसार में, देवताओं सहित,

कोई भी आपकी बराबरी नहीं कर सकता।

---

24 कलाका

[मैंने ऐसा सुना है।] 660 एक बार भगवान (बुद्ध) साकेत में, कालका उद्यान में निवास कर रहे थे। 665 वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा: [25]

"भिक्षुओं, इस संसार में, जहाँ देव, मार और ब्रह्मा विद्यमान हैं; इस जनसंख्या में, जहाँ तपस्वी और ब्राह्मण, देव और मनुष्य विद्यमान हैं; जो कुछ भी देखा, सुना, अनुभव किया, जाना, खोजा या मन द्वारा परखा जाता है—वह सब मुझे ज्ञात है। भिक्षुओं, इस संसार में, जहाँ देव, मार और ब्रह्मा विद्यमान हैं; इस जनसंख्या में, जहाँ तपस्वी और ब्राह्मण, देव और मनुष्य विद्यमान हैं; जो कुछ भी देखा, सुना, अनुभव किया, जाना, खोजा या मन द्वारा परखा जाता है—वह सब मुझे प्रत्यक्ष रूप से ज्ञात है। तथागत (बुद्ध) को भी यह ज्ञात था, परन्तु तथागत (बुद्ध) इसके अधीन नहीं हुए।"

भिक्षुओं, यदि मैं कहूँ, 'इस संसार में, इसके देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ... जो कुछ भी देखा, सुना, अनुभव किया, जाना, प्राप्त किया, खोजा, मन द्वारा परखा जाता है - वह मैं नहीं जानता,' तो यह मेरी ओर से एक झूठ होगा।

भिक्षुओं, यदि मैं कहूँ, 'इस संसार में, इसके देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ... जो कुछ भी देखा, सुना, अनुभव किया, जाना, प्राप्त किया, खोजा, मन द्वारा परखा जाता है - उसे मैं जानता भी हूँ और नहीं भी जानता,' तो यह भी बिलकुल एक ही बात होगी। 664

भिक्षुओं, यदि मैं कहूँ, 'इस संसार में, इसके देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ... जो कुछ भी देखा, सुना, अनुभव किया, जाना, प्राप्त किया, खोजा, मन द्वारा परखा जाता है—वह मैं न तो जानता हूँ और न ही नहीं जानता,' तो यह मेरी ओर से एक दोष होगा। 665

(1) अतः, जो कुछ देखा जा सकता है, उसे देखकर तथागत (बुद्ध) न तो देखे हुए को गलत समझते हैं, न ही अनदेखे को, न ही देखे जा सकने वाले को, और न ही देखने वाले को। 666 (2) जो कुछ सुना जा सकता है, उसे सुनकर वे न तो सुने हुए को गलत समझते हैं, न ही अनसुने को, न ही सुने जा सकने वाले को, और न ही सुनने वाले को; (3) जो कुछ महसूस किया जा सकता है, उसे महसूस करके वे न तो महसूस किए गए को गलत समझते हैं, न ही महसूस किए गए को, और न ही महसूस किए जा सकने वाले को, और न ही महसूस करने वाले को। (4) जो कुछ जाना जा सकता है, उसे जानकर वे न तो जाने हुए को गलत समझते हैं, न ही न जाने हुए को, और न ही जाने जा सकने वाले को, और न ही जानने वाले को।

"इस प्रकार, भिक्षुओं, जो प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से स्थिर रहते हैं, तथागत (बुद्ध) भी स्थिर हैं। 667 और मैं कहता हूँ, उस स्थिर व्यक्ति से अधिक उत्कृष्ट या श्रेष्ठ कोई स्थिर व्यक्ति नहीं है।"

आत्मसंयमित लोगों के बीच, स्थिर बुद्ध किसी भी देखी, सुनी या महसूस की गई बात को, जिसे दूसरों ने सत्य माना हो,

स्पष्ट रूप से सत्य या असत्य नहीं मानते । 668 क्योंकि वे इस बाण को देख चुके हैं 669 जिससे लोग चिपके रहते हैं और जुड़े रहते हैं, [26] (कहते हुए) "मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ, यह बिल्कुल ऐसा ही है," तथागत (बुद्ध) किसी भी बात से चिपके नहीं रहते।

---

25 ब्रह्मचर्य जीवन (ब्रह्मचर्य)

"भिक्षुओं, यह ब्रह्मचर्य जीवन लोगों को धोखा देने और उन्हें फुसलाने के लिए नहीं, न ही लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा के लिए, न ही वाद-विवाद में जीत के लिए, और न ही इस विचार से कि 'लोग मुझे इस रूप में जानें', बल्कि यह ब्रह्मचर्य जीवन संयम, त्याग, वैराग्य और समाप्ति के लिए जिया जाता है।" 670

भगवान (बुद्ध) ने ब्रह्मचर्य जीवन का उपदेश दिया, जो

परंपरा पर आधारित नहीं था, बल्कि निर्वाण की प्राप्ति का मार्ग था, और संयम और त्याग

के लिए जिया जाता था । 671

यह महान प्राणियों का मार्ग है, 672

महान ऋषियों द्वारा अनुसरण किया जाने वाला मार्ग है।

जो लोग

बुद्ध द्वारा सिखाई गई शिक्षाओं के अनुसार इसका अभ्यास करते हैं,

गुरु के मार्गदर्शन पर अमल करते हैं,

वे दुखों का अंत करेंगे।

---

26 धोखेबाज 673 (कुहा)

(1) "भिक्षुओं, जो भिक्षु छलकारी, हठी, बातूनी, ढोंगी, अभिमानी और असामंजस्यपूर्ण हैं, वे मेरे भिक्षु नहीं हैं। 674 (2) वे इस धर्म और अनुशासन से भटक गए हैं, और वे इस धर्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त नहीं करते हैं। (3) परन्तु जो भिक्षु ईमानदार, सच्चे, दृढ़, आज्ञाकारी और पूर्णतः समाधि में लीन हैं, वे मेरे भिक्षु हैं। (4) वे इस धर्म और अनुशासन से नहीं भटके हैं, और वे इस धर्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करते हैं।"

जो लोग कपटी, हठी, बातूनी,

ढोंगी, अभिमानी और असामंजस्यपूर्ण (असमहित) होते हैं,

वे उस धम्म में प्रगति नहीं करते

जो पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति ने सिखाया है।

लेकिन जो लोग ईमानदार और सच्चे,

दृढ़, आज्ञाकारी और पूरी तरह से आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) होते हैं, वे

उस धम्म (मार्ग) में प्रगति करते हैं

जिसे पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति ने सिखाया है।

---

27 संतोष (संतुष्टि सं. संतुष्टि)

"भिक्षुओं, ये चार तुच्छ वस्तुएँ हैं, जो आसानी से प्राप्त हो जाती हैं और निंदनीय हैं। वे चार कौन सी हैं?"

(1) "फटे-पुराने वस्त्र अन्य वस्त्रों के बीच तुच्छ हैं, आसानी से प्राप्त किए जा सकते हैं [27] और निर्दोष हैं। (2) भिक्षा का एक टुकड़ा भोजन के बीच तुच्छ है, आसानी से प्राप्त किया जा सकता है और निर्दोष है। (3) पेड़ की जड़ आवास के बीच तुच्छ है, आसानी से प्राप्त किया जा सकता है और निर्दोष है। (4) सड़ा हुआ मूत्र औषधियों के बीच तुच्छ है, आसानी से प्राप्त किया जा सकता है और निर्दोष है,' 75

"ये चार तुच्छ वस्तुएँ हैं, जो आसानी से प्राप्त हो जाती हैं और निष्पाप हैं। जब कोई भिक्षु तुच्छ और आसानी से प्राप्त होने वाली वस्तुओं से संतुष्ट हो जाता है, तो मैं कहता हूँ कि उसमें तपस्वी जीवन के एक गुण मौजूद हैं।"

जब कोई निर्दोष, तुच्छ और आसानी से प्राप्त होने वाली चीजों से संतुष्ट रहता है ; जब किसी का मन आवास, वस्त्र, पेय और भोजन के कारण

व्याकुल नहीं होता , तो उसे कहीं भी कोई बाधा नहीं आती ।676

ये गुण, जिन्हें

तपस्वी जीवन के अनुरूप कहा जा सकता है,

एक भिक्षु 677 द्वारा प्राप्त किए जाते हैं

जो संतुष्ट और सतर्क होता है।

---

28 कुलीन वंशावली 678 (आर्य-वंश बिना आर्य-वंश)

"भिक्षुओं, ये चार श्रेष्ठ वंश हैं, जो आदिम, दीर्घकालिक, पारंपरिक, प्राचीन, शुद्ध और कभी भी अछूते नहीं रहे हैं, जो न तो अछूते हैं और न ही अछूते रहेंगे, जिन्हें बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अस्वीकार नहीं किया गया है। वे चार कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, भिक्षु किसी भी प्रकार के वस्त्र से संतुष्ट रहता है, और वह किसी भी प्रकार के वस्त्र से संतुष्टि की प्रशंसा करता है, और वह वस्त्र के लिए अनुचित खोज में संलग्न नहीं होता। 679 यदि उसे वस्त्र न मिले तो वह विचलित नहीं होता, और यदि उसे वस्त्र मिल जाए तो वह उससे बंधे बिना, उसके प्रति आसक्त हुए बिना, और उसमें अंधाधुंध लीन हुए बिना उसका उपयोग करता है, उसमें निहित खतरे को देखते हुए और उससे बचने का मार्ग समझते हुए। फिर भी वह इस कारण से स्वयं की प्रशंसा नहीं करता और न ही दूसरों की निंदा करता है। जो भिक्षु इसमें कुशल, परिश्रमी, पूर्णतः बोधशील और सदा सजग (ध्यान/सती) है, उसे प्राचीन, आदिम श्रेष्ठ वंश में स्थित कहा जाता है।"

(2) "भिक्षु किसी भी प्रकार के भिक्षा भोजन से संतुष्ट रहता है, और वह किसी भी प्रकार के भिक्षा भोजन से संतुष्टि की प्रशंसा करता है, और वह भिक्षा भोजन के लिए अनुचित खोज में संलग्न नहीं होता। यदि उसे भिक्षा भोजन न मिले तो वह विचलित नहीं होता, और यदि उसे कुछ भिक्षा भोजन मिले तो वह उससे बंधे बिना, उसके प्रति आसक्त हुए बिना, और उसमें अंधाधुंध लीन हुए बिना उसका उपयोग करता है, उसमें निहित खतरे को देखते हुए और उससे बचने का मार्ग समझते हुए। [28] फिर भी वह इस कारण स्वयं की प्रशंसा नहीं करता और न ही दूसरों की निंदा करता है। जो भिक्षु इसमें कुशल, परिश्रमी, पूर्णतः बोधशील और सदा सजग (ध्यानशील/सती) है, उसे प्राचीन, आदिम, श्रेष्ठ वंश में स्थित कहा जाता है।"

(3) "भिक्षु किसी भी प्रकार के आवास से संतुष्ट रहता है, और वह किसी भी प्रकार के आवास से संतुष्टि की प्रशंसा करता है, और वह आवास के लिए अनुचित खोज में संलग्न नहीं होता। यदि उसे आवास न मिले तो वह विचलित नहीं होता, और यदि उसे आवास मिल जाए तो वह उससे बंधे बिना, उसके प्रति आसक्त हुए बिना, और उसमें अंधाधुंध लीन हुए बिना उसका उपयोग करता है, उसमें निहित खतरे को देखते हुए और उससे बचने का मार्ग समझते हुए। फिर भी वह इस कारण से स्वयं की प्रशंसा नहीं करता और न ही दूसरों की निंदा करता है। जो भिक्षु इसमें कुशल, परिश्रमी, पूर्णतः समझदार और सदा सचेत (ध्यान/सती) होता है, उसे प्राचीन, आदिम श्रेष्ठ वंश में स्थित कहा जाता है।"

(4) "फिर, एक भिक्षु विकास में आनंद पाता है, विकास से प्रसन्न होता है, त्याग में आनंद पाता है, त्याग से प्रसन्न होता है। 680 फिर भी वह इस कारण स्वयं की प्रशंसा नहीं करता और न ही दूसरों की निंदा करता है। जो भिक्षु इसमें कुशल, परिश्रमी, पूर्णतः बोधशील और सदा सचेत (ध्यान/सती) रहता है, उसे प्राचीन, आदिम श्रेष्ठ वंश में खड़ा माना जाता है।"

"ये, भिक्षुओं, चार श्रेष्ठ वंश हैं, आदिम, लंबे समय से चले आ रहे, पारंपरिक, प्राचीन, शुद्ध और कभी भी मिलावट रहित नहीं, जो न तो मिलावट वाले हैं और न ही मिलावट वाले होंगे, जिन्हें बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अस्वीकार नहीं किया गया है।"

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु इन चार श्रेष्ठ वंशों से युक्त होता है, यदि वह पूर्व दिशा में निवास करता है तो वह असंतोष पर विजय प्राप्त करता है; असंतोष उसे पराजित नहीं कर सकता; यदि वह पश्चिम दिशा में निवास करता है तो भी असंतोष पर विजय प्राप्त करता है; यदि वह उत्तर दिशा में निवास करता है तो भी असंतोष पर विजय प्राप्त करता है; यदि वह दक्षिण दिशा में निवास करता है तो भी असंतोष पर विजय प्राप्त करता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह एक दृढ़ व्यक्ति है जो असंतोष और प्रसन्नता दोनों पर विजय प्राप्त करता है।

असंतोष दृढ़ व्यक्ति को पराजित नहीं कर सकता, 681

(क्योंकि) दृढ़ व्यक्ति असंतोष से पराजित नहीं होता, 682

दृढ़ व्यक्ति असंतोष को पराजित करता है,

क्योंकि दृढ़ व्यक्ति असंतोष का पराजयकर्ता है। (29)

कर्मों का त्याग कर चुके उस निर्धारक को कौन रोक सकता है ? शुद्ध सोने के सिक्के के

समान उस व्यक्ति पर दोष लगाने का अधिकार किसे है ? यहां तक कि देवदूत भी ऐसे व्यक्ति की प्रशंसा करते हैं; ब्रह्मा भी उनकी प्रशंसा करते हैं।

---

29 धम्म कारक (धम्मपद)

"भिक्षुओं, ये चार धम्म तत्व हैं, 683 मूल, जो लंबे समय से चले आ रहे हैं, पारंपरिक हैं, प्राचीन हैं, शुद्ध हैं और कभी भी इनमें कोई मिलावट नहीं हुई है, और न ही भविष्य में होगी, और जिन्हें बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों ने अस्वीकार नहीं किया है। वे चार कौन से हैं?"

(1) "अनासक्ति एक धर्म तत्व है, जो आदिम, दीर्घकालिक, पारंपरिक, प्राचीन, शुद्ध और कभी भी अशुद्ध न हुआ हो, जो न तो अशुद्ध हो रहा है और न ही अशुद्ध होगा, जिसे बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अस्वीकृत नहीं किया गया है। (2) सद्भावना एक धर्म तत्व है, जो आदिम, दीर्घकालिक है... (3) सही सती ध्यान एक धर्म तत्व है, जो आदिम, दीर्घकालिक है... (4) सही समाधि एक धर्म तत्व है, जो आदिम, दीर्घकालिक है और जिसे बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अस्वीकृत नहीं किया गया है।

"ये चार धम्म कारक हैं, जो मूल, दीर्घकालिक, पारंपरिक, प्राचीन, शुद्ध और कभी भी अशुद्ध न हुए हैं, जिनमें न तो अशुद्धता है और न ही भविष्य में अशुद्धता होगी, और जिन्हें बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अस्वीकार नहीं किया गया है।"

व्यक्ति को मनोकामना से मुक्त होकर , सद्भावपूर्ण हृदय से रहना चाहिए ।

उसे सचेत (ध्यान/सती)

और एकाग्रचित्त (एकग्रचित्त) रहना चाहिए,

आंतरिक रूप से पूर्णतः आत्म-मग्न (समाहित) होना चाहिए।

---

30 तपस्वी (परिब्बाजक सं. परिवज्रका)

एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। उस समय सप्पिनी नदी के किनारे स्थित तपस्वियों के उद्यान में कई प्रसिद्ध तपस्वी निवास कर रहे थे, जिनमें अन्नभार, वरधरा, तपस्वी शकुलुदयी और अन्य प्रसिद्ध तपस्वी शामिल थे।

फिर, शाम को, भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और सप्पिनी नदी के किनारे स्थित तपस्वियों के उद्यान में गए। वे वहाँ तैयार किए गए आसन पर बैठ गए और वहाँ उपस्थित लोगों से बोले:

तपस्वियों, ये चार धम्म (धार्मिक) कारक हैं जो...

आदिम, [30] लंबे समय से चले आ रहे, पारंपरिक, प्राचीन, शुद्ध और पहले कभी मिलावट रहित नहीं, जो मिलावट नहीं कर रहे हैं और न ही मिलावट करेंगे, जिन्हें बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अस्वीकार नहीं किया गया है। वे चार कौन से हैं?

(1) "अनासक्ति एक ऐसा धम्म तत्व है जो मौलिक, प्राचीन, पारंपरिक, प्राचीन, शुद्ध और कभी भी अशुद्ध न हुआ हो, जो न तो अशुद्ध हो रहा है और न ही होगा, जिसे बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अस्वीकृत नहीं किया गया है। (2) सद्भावना एक मौलिक, प्राचीन धम्म तत्व है... (3) सही ध्यान (सती/सजगता) एक मौलिक, प्राचीन धम्म तत्व है... (4) सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) एक मौलिक, प्राचीन धम्म तत्व है... जिसे बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अस्वीकृत नहीं किया गया है।"

"ये चार धम्म कारक हैं जो मौलिक, लंबे समय से चले आ रहे, पारंपरिक, प्राचीन, शुद्ध और कभी भी मिलावट रहित नहीं हैं, जिनमें न तो मिलावट हो रही है और न ही होगी, और जिन्हें बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अस्वीकार नहीं किया गया है।"

(1) "हे तपस्वियों, यदि कोई कहे: 'मैं इस धर्म तत्व, यानी अनासक्ति को अस्वीकार कर दूँगा और किसी ऐसे तपस्वी या ब्राह्मण की ओर इशारा करूँगा जो अनासक्ति से परिपूर्ण हो, इंद्रिय सुखों के प्रति अत्यधिक आसक्ति रखता हो,' तो मैं उसे इस प्रकार उत्तर दूँगा: 'उसे आने दो, बोलने दो और बातचीत करने दो। मुझे देखने दो कि वह कितना महान है!' वास्तव में, उसके लिए अनासक्ति को धर्म तत्व के रूप में अस्वीकार करना और किसी ऐसे तपस्वी या ब्राह्मण की ओर इशारा करना असंभव होगा जो अनासक्ति से परिपूर्ण हो, इंद्रिय सुखों के प्रति अत्यधिक आसक्ति रखता हो।"

(2) यदि कोई कहे: 'मैं सद्भावना के इस धम्म कारक को अस्वीकार कर दूंगा और एक ऐसे तपस्वी या ब्राह्मण की ओर इशारा करूंगा जिसके मन में द्वेष और घृणा का भाव है,' तो मैं उसे इस प्रकार उत्तर दूंगा: 'उसे आने दो, बोलने दो और बातचीत करने दो। मुझे देखने दो कि वह कितना महान है!' वास्तव में, उसके लिए सद्भावना को धम्म कारक के रूप में अस्वीकार करना और एक ऐसे तपस्वी या ब्राह्मण की ओर इशारा करना असंभव होगा जिसके मन में द्वेष और घृणा का भाव हो।

(3) यदि कोई कहे: 'मैं सही ध्यान (सती/सजगता) के इस धम्म तत्व को अस्वीकार कर दूंगा और किसी ऐसे तपस्वी या ब्राह्मण की ओर इशारा करूंगा जिसका मन भ्रमित है और जिसमें पूर्ण बोध (संपजन्न) का अभाव है,' तो मैं उसे इस प्रकार उत्तर दूंगा: 'उसे आने दो, बोलने दो और बातचीत करने दो। मुझे देखने दो कि वह कितना महान है!' वास्तव में, उसके लिए सही ध्यान (सती/सजगता) को धम्म तत्व के

रूप में अस्वीकार करना और किसी ऐसे तपस्वी या ब्राह्मण की ओर इशारा करना असंभव होगा जिसका मन भ्रमित है और जिसमें पूर्ण बोध (संपजन्न) का अभाव है।

(4) "यदि कोई कहे: 'मैं सही समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) के इस धम्म कारक को अस्वीकार कर दूंगा और एक ऐसे तपस्वी या ब्राह्मण की ओर इशारा करूंगा जो असामहिता से विचलित है और जिसका मन भटकता रहता है' तो मैं उसे इस प्रकार उत्तर दूंगा: 'उसे आने दो, बोलने दो, [31] और बातचीत करने दो। मुझे देखने दो कि वह कितना महान है!' वास्तव में, उसके लिए सही समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) को धम्म कारक के रूप में अस्वीकार करना और एक ऐसे तपस्वी या ब्राह्मण की ओर इशारा करना असंभव होगा जो असामहिता से विचलित है और जिसका मन भटकता रहता है।

"यदि हे तपस्वियों, कोई यह सोचता है कि इन चार धम्म कारकों की निंदा और खंडन किया जाना चाहिए, तो इसी जीवन में वह चार उचित आलोचनाओं और निंदा के आधारों का पात्र हो जाता है। 684 वे चार क्या हैं?"

यदि आप इस धर्म तत्व, यानी अनासक्ति का तिरस्कार और खंडन करते हैं, तो आपको उन तपस्वियों और ब्राह्मणों को भी पूजा और प्रशंसा के योग्य मानना चाहिए जो लालसा से भरे हुए हैं और इंद्रिय सुखों के प्रति अत्यधिक आसक्त हैं। यदि आप इस धर्म तत्व, यानी सद्भावना का तिरस्कार और खंडन करते हैं, तो आपको उन तपस्वियों और ब्राह्मणों को भी पूजा और प्रशंसा के योग्य मानना चाहिए जिनके मन में दुर्भावना और घृणा का भाव है। यदि आप इस धर्म तत्व, यानी सती/सजगता का तिरस्कार और खंडन करते हैं, तो आपको उन तपस्वियों और ब्राह्मणों को भी पूजा और प्रशंसा के योग्य मानना चाहिए जो भ्रमित मन वाले हैं और पूर्ण बोध से रहित हैं। यदि आप इस धर्म तत्व, यानी समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) का तिरस्कार और खंडन करते हैं, तो आपको उन तपस्वियों और ब्राह्मणों को भी पूजा और प्रशंसा के योग्य मानना चाहिए जो असामहित हैं और जिनका मन भटकता रहता है।

"हे तपस्वियों, यदि कोई यह सोचता है कि इन चार धम्म सिद्धांतों की निंदा और खंडन किया जाना चाहिए, तो इसी जीवन में वह इन चार उचित आलोचनाओं और निंदा के आधारों का पात्र हो जाता है। यहां तक कि उक्कला के तपस्वी वस्सा और भान्हा, जो अकारणता, निष्क्रियता और शून्यवाद के समर्थक थे, उन्होंने भी यह नहीं सोचा कि इन चार धम्म सिद्धांतों की निंदा और खंडन किया जाना चाहिए। इसका कारण क्या था? निंदा, आक्रमण और खंडन के भय से।" 685

सद्भावना वाला, सदा सचेत (ध्यान/सती),

भीतरी तौर पर अच्छी तरह से आत्म-मग्न (समाहित/समाधि में),

लालसा को दूर करने का प्रशिक्षण लेने वाला,

सचेत कहलाता है। [32]

IV. चक्र भाग (चक्कावग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

31 पहिया (चक्र के बिना कक्का)

भिक्षुओं, ये चार चक्र हैं। जब ये चार चक्र घूमते हैं, तो जिन देवताओं और मनुष्यों के पास ये चक्र होते हैं, वे शीघ्र ही महानता और धन की प्रचुरता प्राप्त कर लेते हैं: वे चार चक्र कौन से हैं? उपयुक्त स्थान में निवास करना, अच्छे व्यक्तियों पर भरोसा करना, सही संकल्प और भूतकाल में किए गए पुण्य कर्म। 686 ये चार चक्र हैं। जब ये चार चक्र घूमते हैं, तो जिन देवताओं और मनुष्यों के पास ये चक्र होते हैं, वे शीघ्र ही महानता और धन की प्रचुरता प्राप्त कर लेते हैं।

जब कोई व्यक्ति उपयुक्त स्थान पर निवास करता है

और नेक लोगों से मित्रता करता है,

जब उसने सही संकल्प लिए हों

और अतीत में पुण्य कर्म किए हों , तो उसे

अनाज, धन, प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा के साथ-साथ सुख भी प्राप्त होता है।

---

32 रिश्तों को कायम रखना (संगहा सं. संग्रह)

भिक्षुओं, सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने के ये चार साधन हैं। वे चार कौन से हैं? दान देना, मधुर वाणी, परोपकारी आचरण और निष्पक्षता। 68 ये सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने के चार साधन हैं।

दान देना, मधुर वाणी,

परोपकारी आचरण और

विभिन्न सांसारिक परिस्थितियों में निष्पक्षता,

जैसा कि प्रत्येक मामले के लिए उपयुक्त हो:

अनुकूल संबंध बनाए रखने के ये साधन

एक चलते हुए रथ के मुख्य आधार के समान हैं।

यदि सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने के ऐसे साधन न हों ,

तो न तो माता और न ही पिता अपने बच्चों से

सम्मान और आदर प्राप्त कर सकेंगे ।

लेकिन चूंकि अनुकूल संबंध बनाए रखने के ये साधन मौजूद हैं ,

इसलिए बुद्धिमान लोग उनका सम्मान करते हैं;

इस प्रकार वे महानता प्राप्त करते हैं

और उनकी बहुत प्रशंसा की जाती है। [33]

---

33 सिंह (सिहा बिना सिंघा)

भिक्षुओं, संध्याकाल में पशुओं का राजा सिंह अपनी मांद से निकलता है, शरीर फैलाता है, चारों दिशाओं का अवलोकन करता है और तीन बार सिंह की गर्जना करता है। फिर वह शिकार की तलाश में निकल पड़ता है।

शेर की दहाड़ सुनकर अधिकतर जानवर डर, घबराहट और दहशत से भर जाते हैं। बिलों में रहने वाले अपने बिलों में घुस जाते हैं; पानी में रहने वाले पानी में चले जाते हैं; जंगलों में रहने वाले जंगलों में चले जाते हैं; और पक्षी आकाश की ओर भाग जाते हैं। यहाँ तक कि गाँवों, कस्बों और राजधानियों में मजबूत रस्सियों से बंधे राजसी हाथी भी अपनी रस्सियाँ तोड़कर भाग निकलते हैं; डर के मारे वे पेशाब और मल त्याग करते हुए इधर-उधर भागने लगते हैं। शेर जानवरों में इतना शक्तिशाली है, जानवरों का राजा है, इतना राजसी और बलवान है।

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, जब तथागत (बुद्ध) संसार में अवतरित होते हैं, जो पूर्णतः प्रबुद्ध, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण, सौभाग्यशाली, संसार के ज्ञाता, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक, देवों और मनुष्यों के गुरु, प्रबुद्ध पुरुष, भगवान (बुद्ध), वे धम्म का उपदेश इस प्रकार देते हैं: '(1) ऐसा है व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण), (2) ऐसा है व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का उद्‌गम, (3) ऐसा है व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का अंत, (4) ऐसा है व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के अंत का मार्ग।' 688

"जब वे देव (देवदूत/देवता) जो दीर्घायु, सुंदर, सुख से परिपूर्ण और ऊंचे महलों में दीर्घकाल तक निवास करते हैं, तथागत (बुद्ध) के धम्म उपदेश सुनते हैं, तो वे अधिकतर भय, तत्परता और आतंक से भर जाते हैं, इस प्रकार: 669 'ऐसा लगता है कि हम वास्तव में अनित्य हैं, यद्यपि हम स्वयं को स्थायी समझते थे; ऐसा लगता है कि हम वास्तव में क्षणभंगुर हैं, यद्यपि हम स्वयं को शाश्वत समझते थे; ऐसा लगता है कि हम वास्तव में अनात्म हैं, यद्यपि हम स्वयं को शाश्वत समझते थे। ऐसा लगता है कि हम अनित्य, क्षणभंगुर, अनात्म हैं, व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) में समाहित हैं।' 690 तथागत (बुद्ध) इतने शक्तिशाली हैं, वे इस संसार में अपने देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ इतने राजसी और पराक्रमी हैं।" [34]

जब प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के माध्यम से बुद्ध, जो इस संसार में अपने देवों (देवदूतों/देवताओं) सहित

अद्वितीय गुरु हैं , धम्म के चक्र को गतिमान करते हैं,

वह व्यक्तिगत अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण), इसका निवारण,

व्यक्तिगत अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) की उत्पत्ति और दुख को शांत करने वाले

अष्टमार्ग का उपदेश देते हैं।

तब तो लंबी आयु वाले, सुंदर और महिमा से परिपूर्ण देवता भी शेर की दहाड़ सुनकर

भयभीत और आतंकित हो जाते हैं ।

"ऐसा प्रतीत होता है कि हम अनित्य हैं,

व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) से परे नहीं हैं," [वे कहते हैं], जब वे पूर्णतः मुक्त, स्थिर

अरहंत के वचन सुनते हैं ।

---

34 विश्वास (अग्गप्पसाद)

"भिक्षुओं, विश्वास के ये चार प्रमुख प्रकार हैं। वे चार कौन से हैं?"

(1) “जितने भी प्राणी हैं, चाहे वे निराकार हों या दो पैर वाले, चार पैर वाले या अनेक पैर वाले, चाहे सजीव हों या निराकार, चाहे बोधगम्य हों या अबोधगम्य, या न बोधगम्य हों या अबोधगम्य, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, उन सब में सर्वोपरि घोषित किए जाते हैं। जो बुद्ध पर विश्वास रखते हैं, वे सर्वोपरि पर विश्वास रखते हैं, और जो सर्वोपरि पर विश्वास रखते हैं, उनका परिणाम सर्वोपरि होता है।”

(2) “जिस हद तक धर्म (धर्म) बद्ध हैं, उनमें श्रेष्ठ अष्टमार्ग सर्वोपरि घोषित किया गया है। जो श्रेष्ठ अष्टमार्ग में विश्वास रखते हैं, वे सर्वोपरि धर्म में विश्वास रखते हैं, और जो सर्वोपरि धर्म में विश्वास रखते हैं, उनका परिणाम सर्वोपरि होता है।”

(3) “जिस हद तक धम्म (घटनाएं) बद्ध या अनिरक्त हैं, उनमें वैराग (वैराग) सर्वोपरि घोषित किया गया है, अर्थात् अहंकार का नाश, प्यास का निवारण, आसक्ति का उखाड़ना, चक्र का अंत, तृष्णा का नाश, वैराग्य, निश्चिंतता, निर्वाण। जो धम्म में विश्वास रखते हैं, वे सर्वोपरि में विश्वास रखते हैं, और जो सर्वोपरि में विश्वास रखते हैं, उनका परिणाम सर्वोपरि होता है।”

(4) “जितने भी संघ या समूह हैं, तथागत (बुद्ध) के शिष्यों का संघ उनमें सबसे श्रेष्ठ घोषित किया गया है, अर्थात् चार युग्मों के व्यक्तियों में, आठ प्रकार के व्यक्तियों में—भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का यह संघ दान के योग्य है, आतिथ्य के योग्य है, भेंटों के योग्य है, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है, और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है। [35] जो संघ में विश्वास रखते हैं, वे श्रेष्ठ में विश्वास रखते हैं, और जो श्रेष्ठ में विश्वास रखते हैं, उनका परिणाम श्रेष्ठ होता है।”

"ये आत्मविश्वास के चार प्रमुख प्रकार हैं।"

जो लोग सर्वोपरि धर्म के प्रति आश्वस्त हैं,

सर्वोपरि धर्म को जानते हैं,

सर्वोपरि बुद्ध में आश्वस्त हैं—

जो अतुलनीय हैं, और भेंट के योग्य हैं;

जो लोग सर्वोत्कृष्ट धम्म में विश्वास रखते हैं,

वैराग्य की आनंदमय शांति में;

जो लोग सर्वोत्कृष्ट संघ में विश्वास रखते हैं,

पुण्य के अतुलनीय क्षेत्र में;

जो लोग श्रेष्ठ व्यक्तियों को दान देते हैं, उन्हें

श्रेष्ठ प्रकार के पुण्य प्राप्त होते हैं:

श्रेष्ठ आयु, सौंदर्य, यश,

अच्छी प्रतिष्ठा, सुख और शक्ति।

जो ज्ञानी व्यक्ति सर्वोपरि

धम्म पर ध्यान केंद्रित करते हुए, सर्वोपरि धम्म पर लीन

होकर, देव (देवदूत/भगवान) या मनुष्य बनकर आनंदित होता है, वह

सर्वोपरि प्राप्ति कर प्रसन्न होता है।

---

35 वासाकारा

एक बार भगवान (बुद्ध) राजगृह में बांस के वन में, गिलहरियों के अभयारण्य में निवास कर रहे थे। तब मगध के प्रधान ब्राह्मण वस्साकर भगवान (बुद्ध) के पास आए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"गुरु गौतम, हम चार गुणों से युक्त व्यक्ति को महान ज्ञानवान (दिव्य ज्ञान से परिपूर्ण) कहते हैं। वे चार गुण क्या हैं? (1) वह विभिन्न क्षेत्रों में अत्यधिक पारंगत है। (2) वह विभिन्न कथनों का अर्थ समझता है, जिससे वह कह सकता है: "इस कथन का यह अर्थ है; उस कथन का यह अर्थ है।" (3) उसकी स्मृति अच्छी है; वह बहुत पहले कही और की गई बातों को याद रखता है! (4) वह गृहस्थ के विविध कार्यों को कुशलतापूर्वक और लगन से करता है; वह उन्हें ठीक से करने और व्यवस्थित करने के लिए उनमें उचित विवेक रखता है। हम इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को महान ज्ञानवान (दिव्य ज्ञान से परिपूर्ण) कहते हैं। यदि गुरु गौतम को लगता है कि मेरी बात स्वीकार्य है, तो वे इसे स्वीकार्य बनाएं। यदि उन्हें लगता है कि मेरी बात अस्वीकार्य है, तो वे इसे अस्वीकार करें।"

"मैं न तो आपके [कथन] का समर्थन करता हूँ, ब्राह्मण, और न ही इसे अस्वीकार करता हूँ। [36] बल्कि, मैं चार [अन्य] गुणों से युक्त व्यक्ति को महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) वाला महान पुरुष बताता हूँ। वे चार गुण क्या हैं? (1) वह अनेक लोगों के कल्याण और सुख के लिए अभ्यास कर रहा है; वह वह है जिसने अनेक लोगों को श्रेष्ठ मार्ग में, अर्थात् धम्म की अच्छाई में, धम्म के लाभ में स्थापित किया है। 693 (2) वह जो चाहे सोचता है, सोचता है और जो नहीं सोचना चाहता, नहीं सोचता; वह जो चाहे इरादा करता है, करता है और जो नहीं करना चाहता, नहीं करता; इस प्रकार उसने विचार के मार्गों पर मानसिक भगवानत्व प्राप्त कर लिया है। (3) वह इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) प्राप्त करता है जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं। (4) दोषों के नाश के साथ, उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से, इसी जीवन में, स्वयं को दोषरहित मुक्ति का अनुभव कराया है।" पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मन/मुक्ति प्राप्त करना, और उसमें प्रवेश करने के बाद, वह उसमें निवास करता है।

"मैं न तो आपके [कथन] का समर्थन करता हूँ, ब्राह्मण, और न ही इसे अस्वीकार करता हूँ। लेकिन मैं इन चारों गुणों से युक्त व्यक्ति को महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) वाला महान पुरुष कहता हूँ।"

यह विस्मयकारी और अद्भुत है। हे गुरु गौतम, हे गुरु गौतम ने इसे कितनी खूबसूरती से व्यक्त किया है। और हम गुरु गौतम को इन चार गुणों से युक्त मानते हैं: (1) क्योंकि वे अनेक लोगों के कल्याण और सुख के लिए साधना करते हैं; उन्होंने अनेक लोगों को श्रेष्ठ मार्ग में, अर्थात् धम्म की अच्छाई में, धम्म के लाभ में स्थापित किया है। (2) वे जो चाहें सोचते हैं, वह सोचते हैं और जो न चाहें, वह नहीं सोचते; वे जो चाहें, वह ठानते हैं और जो न चाहें, वह नहीं ठानते; इस प्रकार उन्होंने विचार के मार्गों पर मानसिक आधिपत्य प्राप्त कर लिया है। (3) वे इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इस जीवन में ही उच्च मन के चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त कर लेते हैं, जो सुखद निवास स्थान हैं। (4) दोषों के नाश के साथ, उन्होंने इस जीवन में ही प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करते हैं। इसे।"[37]

"निश्चित रूप से, ब्राह्मण, आपके शब्द ताक-झांक और अतिक्रमणकारी हैं। 694 फिर भी, मैं आपको उत्तर दूंगा। (1) वास्तव में, मैं अनेक लोगों के कल्याण और सुख के लिए साधना कर रहा हूँ; मैंने अनेक लोगों को श्रेष्ठ मार्ग में, अर्थात् धम्म की अच्छाई में, धम्म के लाभकारी (कुशल) गुणों में स्थापित किया है। (2) मैं जो सोचना चाहता हूँ वही सोचता हूँ और जो नहीं सोचना चाहता वह नहीं सोचता; मैं जो इरादा करना चाहता हूँ वही करता हूँ और जो नहीं करना चाहता वह नहीं करता; इस प्रकार मैंने विचार के मार्गों पर मानसिक

भगवानत्व प्राप्त कर लिया है। (3) मैं इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इस जीवन में ही उच्च मन के चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त करता हूँ जो सुखद निवास स्थान हैं। (4) दोषों के नाश के साथ, मैंने इस जीवन में ही प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके, मैं उसमें निवास करता हूँ।"

वह जिसने समस्त प्राणियों के कल्याण के लिए

मृत्यु के जाल से मुक्ति पाई; जिसने देवताओं और मनुष्यों के लाभ के लिए

धम्म, विधि का प्रकटीकरण किया ; वह जिसमें अनेक लोग दर्शन और श्रवण करके विश्वास प्राप्त करते हैं;

जो मार्ग और अपतटीय मार्ग दोनों में निपुण है;

वह निष्कलंक जिसने अपना कार्य पूर्ण कर लिया;

वह प्रबुद्ध जो अपने अंतिम शरीर को धारण किए हुए है,

उसे "महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) वाला महान पुरुष" कहा जाता है।

---

36 डोना

एक बार भगवान (बुद्ध) उक्कत्था और सेतव्य के बीच राजमार्ग पर यात्रा कर रहे थे। ब्राह्मण दोना भी उक्कत्था और सेतव्य के बीच राजमार्ग पर यात्रा कर रहे थे। ब्राह्मण दोना ने तब भगवान (बुद्ध) के पदचिह्नों के हजार तीलियों वाले पहिए देखे, जो उनके रिम और हब सहित, हर तरह से पूर्ण थे। 95 और सोचा: "यह आश्चर्यजनक और अद्‌भुत है! ये निश्चित रूप से किसी मनुष्य के पदचिह्न नहीं हो सकते!" [38]

तब भगवान (बुद्ध) राजमार्ग छोड़कर एक वृक्ष के नीचे बैठ गए, अपने पैरों को क्रॉस करके, शरीर को सीधा करके, और अपने सामने ध्यान (सती) स्थापित कर लिया। भगवान (बुद्ध) के पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए, ब्राह्मण डोना ने भगवान (बुद्ध) को वृक्ष के नीचे बैठे देखा—सुंदर, विश्वास जगाने वाले, शांत इंद्रियों और शांत मन वाले, सर्वोच्च संयम और समता (समथा) प्राप्त कर चुके, एक नियंत्रित और सुरक्षित हाथी की तरह। तब वह भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे कहा:

(1) "क्या आप देव (देवदूत/भगवान) हो सकते हैं, महोदय?" 696

मैं देव (देवदूत/भगवान) नहीं बनूंगा, ब्राह्मण।

(2) "क्या आप गंधब्बा बन सकते हैं, महोदय?" 697

"मैं गंधब्बा नहीं बनूंगा, ब्राह्मण।"

(3) "क्या आप यक्ष बन सकते हैं, महोदय?"

"मैं यक्ष नहीं बनूंगा, ब्राह्मण।"

(4) "क्या आप एक इंसान हो सकते हैं, महोदय?"

"मैं ब्राह्मण मनुष्य नहीं बनूंगा।"

जब आपसे पूछा जाए: 'क्या आप देव (देवदूत/भगवान) बन सकते हैं, महोदय?' तो आप कहते हैं: 'मैं देव (देवदूत/भगवान) नहीं बनूंगा, ब्राह्मण।' जब आपसे पूछा जाए: 'क्या आप गंधर्व बन सकते हैं, महोदय?' तो आप कहते हैं: 'मैं गंधर्व नहीं बनूंगा, ब्राह्मण।' जब आपसे

पूछा जाए: 'क्या आप यक्ष बन सकते हैं, महोदय?' तो आप कहते हैं: 'मैं यक्ष नहीं बनूंगा, ब्राह्मण।' जब आपसे पूछा जाए: 'क्या आप मनुष्य बन सकते हैं, महोदय?' तो आप कहते हैं: 'मैं मनुष्य नहीं बनूंगा, ब्राह्मण।' तो फिर आप क्या बन सकते हैं, महोदय?

(1) "ब्राह्मण, मैंने उन दोषों का त्याग कर दिया है जिनके कारण मैं देव (देवदूत/भगवान) बन सकता था; मैंने उन्हें जड़ से काट दिया है, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उन्हें मिटा दिया है ताकि वे भविष्य में फिर से उत्पन्न न हों। (2) मैंने उन दोषों का त्याग कर दिया है जिनके कारण मैं गण धब्बा बन सकता था... (3) ... यक्ष बन सकता था... (4) ... मनुष्य बन सकता था; मैंने उन्हें जड़ से काट दिया है, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उन्हें मिटा दिया है ताकि वे भविष्य में फिर से उत्पन्न न हों। जैसे नीला, लाल या सफेद कमल का फूल, यद्यपि जल में जन्म लेता है और जल में ही बढ़ता है, जल से ऊपर उठकर खड़ा रहता है [39], वैसे ही, यद्यपि मैं संसार में जन्म लेता हूँ और संसार में ही बढ़ता हूँ, मैंने संसार पर विजय प्राप्त कर ली है और संसार से अछूता रहता हूँ। हे ब्राह्मण, मुझे याद रखना... बुद्ध।

मैंने उन सभी दोषों को नष्ट कर दिया है जिनके कारण

मेरा पुनर्जन्म देव (देवदूत/भगवान)

या आकाश में विचरण करने वाले गंधर्व के रूप में हो सकता था;

जिनके कारण मैं यक्ष की अवस्था में पहुँच सकता था

या मनुष्य के रूप में वापस आ सकता था: 698

मैंने इन दोषों को दूर कर दिया है।

जैसे सुंदर सफेद कमल

जल से अपवित्र नहीं होता, वैसे ही

मैं संसार से अपवित्र नहीं हुआ हूँ;

अतः, हे ब्राह्मण, मैं बुद्ध हूँ। 699

---

37 गैर-गिरावट (अपरिहानी)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त भिक्षु पतन से अछूता रहता है और निर्वाण के निकट होता है। वे चार गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु सद्‌गुणों में निपुण होता है, इंद्रियों को वश में रखता है, खान-पान में संयम बरतता है और सचेत रहता है।

(1) "भिक्षु सद्‌गुणों में कैसे सिद्ध होता है? यहाँ, भिक्षु सद्‌गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है, अच्छे आचरण और आश्रय का पालन करता है, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। इस प्रकार भिक्षु सद्‌गुणों में सिद्ध होता है।"

(2) "भिक्षु (साधु) इंद्रियों के द्वारों की रक्षा कैसे करता है? यहाँ, आँख से किसी रूप को देखकर, भिक्षु उसके चिह्नों और विशेषताओं को नहीं समझता। क्योंकि यदि वह आँख की इंद्रिय को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम का अभ्यास करता है; वह आँख की इंद्रिय की रक्षा करता है, वह आँख की इंद्रिय के संयम का पालन करता है। कान से ध्वनि सुनकर; नाक से गंध सूंघकर; जीभ से स्वाद चखकर; शरीर से स्पर्शित वस्तु का अनुभव करके; मन से किसी मानसिक घटना को जानकर, भिक्षु उसके चिह्नों और विशेषताओं को नहीं समझता। क्योंकि यदि वह मन की इंद्रिय को

अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम का अभ्यास करता है; वह मन की इंद्रिय की रक्षा करता है, वह आँख की इंद्रिय के संयम का पालन करता है।" मन की शक्ति। इसी प्रकार एक भिक्षु इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करता है।

(3) "भिक्षु भोजन में संयम कैसे बरतता है? यहाँ, ध्यानपूर्वक विचार करने पर, भिक्षु न तो मनोरंजन के लिए, न ही नशे के लिए, न ही शारीरिक सौंदर्य और आकर्षण के लिए भोजन ग्रहण करता है, बल्कि केवल इस शरीर के भरण-पोषण और रखरखाव के लिए, हानि से बचने के लिए, और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) में सहायता करने के लिए भोजन ग्रहण करता है, यह सोचते हुए: 'इस प्रकार मैं पुरानी भावना (वेदना) को समाप्त करूँगा और नई भावना (वेदना) को जागृत नहीं करूँगा, 700 और मैं स्वस्थ और निर्दोष रहूँगा और आराम से रहूँगा।' इस प्रकार भिक्षु भोजन में संयम बरतता है।"

(4) "एक भिक्षु जागृति पर कैसे ध्यान केंद्रित करता है? यहाँ, दिन के दौरान, चलते-फिरते और बैठते हुए, एक भिक्षु अपने मन को बाधक गुणों से शुद्ध करता है। रात्रि के पहले पहर में, चलते-फिरते और बैठते हुए, वह अपने मन को बाधक गुणों से शुद्ध करता है। रात्रि के मध्य पहर में वह उठने का विचार मन में रखते हुए, एक पैर दूसरे पर रखकर, सिंह मुद्रा में दाहिनी ओर लेट जाता है, ध्यानमग्न और पूर्णतः बोध करते हुए। उठने के बाद, रात्रि के अंतिम पहर में, चलते-फिरते और बैठते हुए, वह अपने मन को बाधक गुणों से शुद्ध करता है। इस प्रकार एक भिक्षु जागृति पर ध्यान केंद्रित करता है।"

"इन चार गुणों से युक्त भिक्षु पतन से अप्रतिम होता है और निर्वाण के निकट होता है।"

सदाचारी आचरण में स्थिर,

इंद्रियों पर संयमित,

खान-पान में संयमी,

जागृत रहने का ध्यान रखने वाला:

एक भिक्षु इस प्रकार

दिन-रात अथक परिश्रम करते हुए,

लाभकारी गुणों (धम्म) का विकास करते हुए,

बंधन से मुक्ति प्राप्त करता है।

जो भिक्षु सतर्कता में आनंद लेता है,

आलस्य के खतरे को देखकर, वह

पतन से अछूता रहता है;

वह निर्वाण के निकट होता है। 702

---

38 पीछे हटना (पतिलीन)

"भिक्षु (मठवासी), वह भिक्षु जिसने व्यक्तिगत सत्यों का निराकरण कर दिया है, खोज का पूर्णतः त्याग कर दिया है और शारीरिक गतिविधियों को शांत कर दिया है, उसे पीछे हट गया कहा जाता है। 703

(1) "और हे भिक्षुओं, एक भिक्षु ने व्यक्तिगत सत्यों का खंडन कैसे किया है? 704 यहाँ, साधारण तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा माने जाने वाले सामान्य व्यक्तिगत सत्य चाहे जो भी हों—अर्थात्, 'संसार शाश्वत है' या 'संसार शाश्वत नहीं है'; 'संसार सीमित है' या 'संसार अनंत है'; 'आत्मा और शरीर एक ही हैं' या 'आत्मा एक है, शरीर दूसरी'; 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान हैं' या 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान नहीं हैं' या 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी हैं और विद्यमान नहीं भी हैं' या 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान हैं और न ही विद्यमान नहीं हैं'— एक भिक्षु ने इन सभी का त्याग कर खंडन किया है, इन्हें छोड़ दिया है, अस्वीकार कर दिया है, त्याग दिया है और त्याग दिया है। 705 इसी प्रकार एक भिक्षु ने व्यक्तिगत सत्यों का निवारण किया है।

(2) "एक भिक्षु ने खोज का पूर्णतः त्याग कैसे किया है? यहाँ, एक भिक्षु ने इंद्रिय सुखों की खोज और अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की खोज को त्याग दिया है और आध्यात्मिक जीवन की खोज को शांत कर दिया है। 06 इसी प्रकार एक भिक्षु ने खोज का पूर्णतः त्याग किया है।"

(3) "एक भिक्षु ने शारीरिक क्रियाओं को कैसे शांत किया है? यहाँ, सुख और दुख का त्याग करके, और पहले से ही आनंद और उदासी के दूर हो जाने के साथ, एक भिक्षु चौथे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) द्वारा सती ध्यान का शुद्धिकरण होता है। इस प्रकार एक भिक्षु ने शारीरिक क्रियाओं को शांत किया है। 707

(4) "और भिक्षु किस प्रकार पीछे हटता है? यहाँ, भिक्षु 'मैं हूँ' के अहंकार को जड़ से उखाड़ फेंकता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना देता है, उसे मिटा देता है ताकि वह भविष्य में फिर से उत्पन्न न हो सके। इसी प्रकार भिक्षु पीछे हटता है।"

"भिक्षुओं (मठवासियों), एक भिक्षु जिसने व्यक्तिगत सत्यों का निवारण कर दिया है, पूरी तरह से खोज का त्याग कर दिया है, और शारीरिक गतिविधि को शांत कर दिया है, उसे पीछे हटने वाला कहा जाता है।" [42]

इंद्रिय सुखों की खोज,

अस्तित्व की खोज (भाव/पुनर्जन्म का कारण),

ब्रह्मचर्य जीवन की खोज;

"यही सत्य है" की दृढ़ पकड़,

ऐसे दृष्टिकोण जो अतिशयोक्तिपूर्ण हैं: 708

जो व्यक्ति कामवासना (राग) से पूर्णतः विरक्त हो चुका हो,

तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के नाश से मुक्त हो चुका हो, वह

ऐसी खोज को त्याग देता है

और उसके दृष्टिकोण जड़ से उखड़ जाते हैं।

वह शांत, सजग (ध्यानमग्न/सती) भिक्षु, जो

स्थिर, अजेय और

अहंकार से मुक्त होकर प्रबुद्ध हो चुका है,

उसे ही पीछे हटने वाला भिक्षु कहा जाता है।

---

39 उज्जया

तब ब्राह्मण उज्जैन भगवान (बुद्ध) के पास पहुंचा और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर, वह एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"क्या गुरु गौतम बलिदान की प्रशंसा करते हैं?"

"हे ब्राह्मण, मैं सभी यज्ञों की प्रशंसा नहीं करता, न ही सभी यज्ञों की प्रशंसा करने से परहेज़ करता हूँ। (1) मैं उस हिंसक यज्ञ की प्रशंसा नहीं करता जिसमें गाय, बकरी, भेड़, मुर्गी और सूअर मारे जाते हैं, जिसमें विभिन्न प्राणियों को वध के लिए ले जाया जाता है। (2) इसका कारण क्या है? क्योंकि अरहंत और अरहंतत्व के मार्ग पर चल चुके लोग हिंसक यज्ञ में भाग नहीं लेते।"

(3) "परन्तु मैं अहिंसक यज्ञ की प्रशंसा करता हूँ जिसमें मवेशी, बकरियाँ, भेड़ें, मुर्गियाँ और सूअर नहीं मारे जाते, जहाँ विभिन्न प्राणियों का वध नहीं किया जाता, अर्थात् नियमित दान, पारिवारिक परंपरा के अनुसार दिया जाने वाला यज्ञ। 709 (4) इसका कारण क्या है? क्योंकि अरहंत और अरहंत पद के मार्ग पर चलने वाले लोग अहिंसक यज्ञ में भाग लेते हैं।" 710

अश्वमेध यज्ञ, मानव यज्ञ,

सम्मपासा, वजपेय्य, [43] निरग्गला: 711

ये बड़े यज्ञ, हिंसा से भरे हुए, 712

महान फल नहीं लाते।

सही आचरण के महान द्रष्टा ऐसे

बलिदान में शामिल नहीं होते

जहाँ बकरियाँ, भेड़ें, मवेशी आदि हों।

और विभिन्न प्राणियों की बलि दी जाती है।

लेकिन जब वे नियमित रूप से पारिवारिक रीति-रिवाज के अनुसार

हिंसा रहित बलिदान चढ़ाते हैं, तो

बकरियों, भेड़ों, मवेशियों

या अन्य प्राणियों की बलि नहीं दी जाती है।

सही आचरण के महान ऋषि यही बलिदान देते हैं।

बुद्धिमान व्यक्ति को यह बलिदान देना चाहिए;

यह बलिदान बहुत फलदायी होता है।

ऐसा बलिदान करने वाले के लिए

यह वास्तव में बेहतर है, कभी बुरा नहीं।

ऐसा बलिदान सचमुच विशाल है

और देवता (देवदूत) भी प्रसन्न होते हैं।

---

40 उदय

तब ब्राह्मण उदयि भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे कहा:

(गद्य भाग 4:39 के समान है।)

जब कोई यज्ञ समयोचित और स्वीकार्य हो,

अच्छी तरह से तैयार हो और अहिंसक हो, [44] तो

ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के आत्म-नियंत्रित अनुयायी

ऐसे यज्ञ में भाग लेते हैं।

संसार में वे लोग जिन्होंने आवरण हटा दिए हैं, 713

समय और गंतव्य से परे जाने वाले, 714

वे बुद्ध जो यज्ञ में निपुण हैं 15

इस प्रकार के यज्ञ की प्रशंसा करते हैं।

उपयुक्त दान तैयार करने के बाद,

चाहे वह साधारण प्रकार का हो या मृतक की स्मृति में, व्यक्ति ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के अनुयायियों के लिए उपजाऊ खेत में विश्वासपूर्वक निःस्वार्थता करता है ।

जब विधिपूर्वक प्राप्त की गई वस्तु को

विधिपूर्वक, विधिपूर्वक,

भेंट के योग्य लोगों को अर्पित किया जाता है, तो

बलिदान विशाल होता है और देवता (देवदूत) प्रसन्न होते हैं।

विश्वास से परिपूर्ण ज्ञानी व्यक्ति,

उदार मन से इस प्रकार त्याग करने के बाद,

सुखमय संसार में,

दुःख रहित लोक (स्वर्ग) में पुनर्जन्म लेता है।

वी. रोहितासावग्गो

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

41. समाधि-भावना (ध्यानमग्न अवस्था)

भिक्षुओं, समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) की ये चार अवस्थाएँ हैं। वे चार कौन सी हैं? (1) समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) की एक अवस्था है जो इसी जीवन में सुखपूर्वक निवास करने की ओर ले जाती है। (2) समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) की एक अवस्था है जो ज्ञान और दृष्टि प्राप्त करने की ओर ले जाती है। (3) समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) की एक अवस्था है जो आत्म-मग्न (समाहित/समाहिता) ध्यान और पूर्ण बोध की ओर ले जाती है। (4) समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) की एक अवस्था है जो दोषों के नाश की ओर ले जाती है।

(1) "हे भिक्षुओं, समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) की वह अवस्था क्या है जो इसी जीवन में सुखमय निवास की ओर ले जाती है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, भिक्षु प्रथम ध्यान (ध्यानमग्न अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल हैं। विचार और चिंतन के शांत होने पर, वह द्वितीय ध्यान (ध्यानमग्न अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और जो समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन नहीं होते हैं। परमानंद (पीति) के भी लुप्त होने पर, वह समभाव में, सचेत (ध्यानमग्न/सती) और पूर्णतः बोध करते हुए, शरीर सहित सुख (सुख) का अनुभव करता है; वह तृतीय ध्यान (ध्यानमग्न अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है।" जिसे श्रेष्ठ जन घोषित करते हैं: वह समभाव वाला, सती (ध्यानमग्न), सुखी जीवन जीने वाला है। सुख और दुख का त्याग करके, और पहले से ही सुख और उदासी के दूर हो जाने के बाद, वह चौथे ध्यान (सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर में विलीन होना) द्वारा आत्म-मग्न (सम्मोहन) ध्यान का शुद्धिकरण होता है। इसे समाधि (सम्मोहन) का विकास कहा जाता है जो इसी जीवन में सुखी जीवन जीने की ओर ले जाता है। 717

(2) "समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) का वह विकास क्या है जो ज्ञान और दृष्टि की प्राप्ति की ओर ले जाता है? 718 यहाँ, एक भिक्षु प्रकाश की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान देता है; वह दिन की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) पर इस प्रकार ध्यान केंद्रित करता है: 'जैसे दिन में, वैसे ही रात में; जैसे रात में, वैसे ही दिन में।' 719 इस प्रकार, खुले और निश्चिंत मन से, वह प्रकाश से परिपूर्ण मन विकसित करता है। यही समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) का वह विकास है जो ज्ञान और दृष्टि की प्राप्ति की ओर ले जाता है।"

(3) "समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) का वह विकास क्या है जो आत्म-मग्न (समाहित/समाहिता) ध्यान और पूर्ण बोध की ओर ले जाता है? यहाँ, एक भिक्षु वेदना (संवेदना) को उत्पन्न होते ही, बने रहते ही और लुप्त होते ही जानता है; वह संज्ञा (संज्ञा) को उत्पन्न होते ही, बने रहते ही और लुप्त होते ही जानता है; वह विचारों को उत्पन्न होते ही, बने रहते ही और लुप्त होते ही जानता है। 720 यही समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) का वह विकास है जो आत्म-मग्न (समाहिता/समाहिता) ध्यान और पूर्ण बोध (संपजन्न) की ओर ले जाता है।"

(4) "और समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) की वह अवस्था क्या है जो दोषों के नाश की ओर ले जाती है? यहाँ, एक भिक्षु आसक्ति के अधीन पाँच स्कंधों में उत्पत्ति और अपाप का चिंतन करता है: 'ऐसा है रूप, ऐसी है उत्पत्ति, ऐसा है अपाप; ऐसी है वेदना... ऐसी है संज्ञा/संज्ञा... ऐसे हैं संस्कार/संस्कार... ऐसी है चेतना, ऐसी है उत्पत्ति, ऐसा है अपाप।' यही समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) की वह अवस्था है जो दोषों के नाश की ओर ले जाती है।"

"ये समाधि (ध्यानमग्न अवस्था) के चार विकास हैं। और इसी के संदर्भ में मैंने परायण में, 'पुन्नक के प्रश्न' में कहा था:

संसार के उतार-चढ़ाव को समझकर,

वह संसार की किसी भी बात से विचलित नहीं होता।

शांत, निर्मल, चिंतामुक्त, इच्छाहीन,

वह पुनर्जन्म और वृद्धावस्था को पार कर चुका है।

---

42 प्रश्न (पन्हा-व्याकरण सं. प्रश्न-व्याकरण)

भिक्षुओं, प्रश्नों के उत्तर देने के ये चार तरीके हैं। 722 वे चार तरीके क्या हैं? (1) एक प्रश्न का उत्तर स्पष्ट रूप से देना होता है; (2) एक प्रश्न का उत्तर भेद करते हुए देना होता है; (3) एक प्रश्न का उत्तर प्रतिप्रश्न के साथ देना होता है; और (4) एक प्रश्न को अलग रखना होता है। ये प्रश्नों के उत्तर देने के चार तरीके हैं।

एक प्रकार के प्रश्न का स्पष्ट उत्तर दिया जाता है,

दूसरे का उत्तर अंतर स्पष्ट करने के बाद दिया जाता है;

तीसरे के लिए प्रतिप्रश्न पूछना चाहिए,

लेकिन चौथे को छोड़ देना चाहिए।

जब कोई भिक्षु प्रत्येक प्रकार के प्रश्न का उचित उत्तर देना जानता है ,

तो उसे

चारों प्रकार के प्रश्नों में कुशल कहा जाता है।

उस पर हमला करना कठिन है, उसे हराना कठिन है, वह

गहरा है, उस पर आक्रमण करना कठिन है; वह लाभकारी और हानिकारक

दोनों ही चीजों में निपुण है ।

बुद्धिमान व्यक्ति हानिकारक चीजों से दूर रहता है

और लाभकारी चीजों को अपनाता है।

लाभकारी मार्ग पर चलकर ही

दृढ़ निश्चयी व्यक्ति को बुद्धिमान कहा जाता है।

---

43 क्रोध (1) (कोढ़ा1 सं. क्रोध)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? (1) वह जो क्रोध को महत्व देता है, अच्छे धर्म को नहीं; (2) वह जो निंदा को महत्व देता है, अच्छे धर्म को नहीं; (3) वह जो लाभ को महत्व देता है, अच्छे धर्म को नहीं; और (4) वह जो मान को महत्व देता है, अच्छे धर्म को नहीं। संसार में ये चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं।

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? (1) वह जो क्रोध की अपेक्षा अच्छे धर्म को महत्व देता है; (2) वह जो निंदा की अपेक्षा अच्छे धर्म को महत्व देता है; (3) वह जो लाभ की अपेक्षा अच्छे धर्म को महत्व देता है; (4) वह जो मान-सम्मान की अपेक्षा अच्छे धर्म को महत्व देता है। संसार में ये चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं।

जो भिक्षु क्रोध और निंदा को महत्व देते हैं,

जो लाभ और मान-सम्मान को महत्व देते हैं, वे पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति द्वारा सिखाए गए

उत्तम धम्म में प्रगति नहीं कर पाते ।

लेकिन जो लोग अच्छे धम्म को महत्व देते हैं,

जो अतीत में भी इसी प्रकार रहते थे और अब भी इसी प्रकार रहते हैं, वे वास्तव में पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति द्वारा सिखाए गए

धम्म में वृद्धि करते हैं ।

---

44 क्रोध (2) (कोढ़ा1 सं. क्रोध)

भिक्षुओं, ये चार बातें उत्तम धर्म के विरुद्ध हैं। वे कौन सी चार बातें हैं? (1) क्रोध को महत्व देना, जो उत्तम धर्म का विरुद्ध है; (2) निंदा को महत्व देना, जो उत्तम धर्म का विरुद्ध है; (3) लाभ को महत्व देना, जो उत्तम धर्म का विरुद्ध है; और (4) मान को महत्व देना, जो उत्तम धर्म का विरुद्ध है। ये चार बातें उत्तम धर्म के विरुद्ध हैं।

भिक्षुओं, ये चार अन्य बातें हैं जो उत्तम धर्म के अनुरूप हैं। वे चार बातें क्या हैं? (1) क्रोध के बजाय उत्तम धर्म का महत्व; (2) निंदा के बजाय उत्तम धर्म का महत्व; (3) लाभ के बजाय उत्तम धर्म का महत्व; और (4) मान के बजाय उत्तम धर्म का महत्व। ये चार अन्य बातें उत्तम धर्म के अनुरूप हैं।

जो भिक्षु क्रोध और निंदा को महत्व देते हैं,

जो लाभ और सम्मान को महत्व देते हैं,

वे उपजाऊ खेत में सड़े हुए बीजों के समान हैं:

वे अच्छे धम्म में नहीं बढ़ते हैं।

लेकिन जो लोग अच्छे धम्म को महत्व देते हैं,

जो अतीत में भी इसी प्रकार रहते थे और अब भी इसी प्रकार रहते हैं,

वे नम औषधीय पौधों के समान हैं:

वे धम्म में बढ़ते हैं।

---

45 रोहितास्सा (एल) [723]

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब, जब रात हो चुकी थी, अत्यंत सुंदर युवा देव (देवदूत/भगवान) रोहितास्सा, जो पूरे जेतवन को प्रकाशित कर रहे थे, भगवान (बुद्ध) के पास आए। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हो गए और बोले: "हे भंते, क्या यह संभव है कि यात्रा करके संसार के उस छोर को जाना, देखा या पहुँचा जा सके, जहाँ कोई जन्म नहीं लेता, बूढ़ा नहीं होता और मरता नहीं, [48] न मरता है और न पुनर्जन्म लेता है?"

"मैं कहता हूँ, मित्र, कि यात्रा करने से मनुष्य संसार के उस छोर को जान, देख या पहुँच नहीं सकता जहाँ मनुष्य का जन्म नहीं होता, जहाँ वह बूढ़ा होकर मरता नहीं, जहाँ वह देहांत नहीं करता और पुनर्जन्म नहीं लेता।"

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है, भंते, कि भगवान (बुद्ध) ने इसे कितनी अच्छी तरह से कहा है: मैं कहता हूँ, मित्र, कि यात्रा करने से मनुष्य संसार के उस छोर को जान, देख या पहुँच नहीं सकता जहाँ कोई जन्म नहीं लेता, बूढ़ा नहीं होता और मरता नहीं, और न ही मरता है और न ही पुनर्जन्म लेता है।"

"हे भंते, अतीत में मैं भोज का पुत्र रोहितास्सा नामक एक ऋषि था, जो मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) से युक्त था और आकाश में यात्रा करने में सक्षम था। मेरी गति ताड़ के वृक्ष की छाया में दृढ़ धनुष वाले प्रशिक्षित, कुशल और अनुभवी धनुर्धर द्वारा आसानी से चलाए गए प्रकाश बाण के समान थी। मेरे कदम इतने विशाल थे कि मैं पूर्वी सागर से पश्चिमी सागर तक पहुँच सकता था। फिर, जब मैं ऐसी गति और ऐसे विशाल कदमों से चल रहा था, तो मेरे मन में यह इच्छा उत्पन्न हुई: मैं यात्रा करके संसार के अंत तक पहुँचूँगा। सौ वर्ष का जीवनकाल होने के कारण, मैंने सौ वर्ष तक बिना रुके यात्रा की, सिवाय खाने, पीने, चबाने और स्वाद लेने के लिए, शौच और मूत्र त्यागने के लिए, और नींद से थकान दूर करने के लिए; फिर भी मैं संसार के अंत तक पहुँचे बिना ही मार्ग में ही मर गया।"

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है, भंते, कि भगवान (बुद्ध) ने इसे कितनी अच्छी तरह से कहा है: मैं कहता हूँ, मित्र, कि यात्रा करने से मनुष्य संसार के उस छोर को जान, देख या पहुँच नहीं सकता जहाँ कोई जन्म नहीं लेता, बूढ़ा नहीं होता और मरता नहीं, और न ही मरकर पुनर्जन्म लेता है।"

"मैं कहता हूँ, मित्र, कि यात्रा करने से मनुष्य उस संसार के अंत को जान, देख या पहुँच नहीं सकता जहाँ जन्म नहीं होता, बुढ़ापा नहीं आता और मृत्यु नहीं होती, मृत्यु नहीं होती और पुनर्जन्म नहीं होता: फिर भी मैं कहता हूँ कि संसार के अंत तक पहुँचे बिना दुख का अंत नहीं हो सकता। इसी असीम शरीर में, जो चेतना (सन्न/संज्ञा) और मन से परिपूर्ण है, मैं (1) संसार, (2) संसार की उत्पत्ति, (3) संसार का अंत और (4) संसार के अंत की ओर ले जाने वाले मार्ग की घोषणा करता हूँ।" [49]

संसार के अंत तक

यात्रा करके कभी नहीं पहुंचा जा सकता;

फिर भी संसार के अंत तक पहुंचे बिना

दुखों से मुक्ति नहीं मिलती।

इसलिए ज्ञानी, संसार का ज्ञाता,

जिसने संसार के अंत तक पहुंचकर ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत किया है,

संसार के अंत को जानकर शांति प्राप्त करता है और

इस लोक या किसी अन्य लोक की इच्छा नहीं रखता।

---

46 रोहितास्सा (2)

फिर जब वह रात बीत गई, तो भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं, पिछली रात, जब रात आगे बढ़ रही थी, तो अत्यंत सुंदर युवा देव (देवदूत/भगवान) रोहितास्सा, जो पूरे जेतवन को प्रकाशित कर रहे थे, मेरे पास आए, मुझे प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हो गए और बोले:

"क्या यह संभव है, भंते, कि यात्रा करके संसार के उस छोर को जाना, देखा या पहुँचा जा सके, जहाँ कोई जन्म नहीं लेता, बूढ़ा नहीं होता और मरता नहीं, और न ही मरकर पुनर्जन्म लेता है?"

[इसके बाद जो कुछ भी आता है वह 4:45 के समान है, जिसमें छंद भी शामिल हैं, लेकिन प्रथम पुरुष कथावाचक स्वर में बोला गया है।] [50]

---

47 सुविदुरा (दूर-दूर)

"भिक्षुओं, ये चार जोड़े अत्यंत एक दूसरे से बहुत दूर हैं। वे चार कौन से हैं? (1) आकाश और पृथ्वी। (2) समुद्र के निकट और दूर के किनारे। (3) वह स्थान जहाँ सूर्योदय होता है और वह स्थान जहाँ सूर्यास्त होता है। (4) अच्छे का उपदेश और बुरे का उपदेश। ये चार जोड़े अत्यंत एक दूसरे से बहुत दूर हैं।" [51]

आकाश और पृथ्वी बहुत दूर हैं,

सागर का दूर का किनारा दूर कहा जाता है,

और इसी प्रकार सूर्योदय और सूर्यास्त के स्थान

में भी बहुत अंतर है।

लेकिन वे कहते हैं कि

अच्छे और बुरे लोगों की शिक्षाएँ और भी अधिक भिन्न होती हैं। 726

अच्छे लोगों की संगति स्थिर होती है;

जब तक वह बनी रहती है, तब तक वह एक जैसी रहती है।

परन्तु बुरे लोगों की संगति चंचल होती है;

इस प्रकार अच्छे लोगों की शिक्षा बुरे लोगों की शिक्षा

से बहुत दूर होती है।

---

48 विशाखा 727

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस अवसर पर पूज्य विशाखा पंचलिपुत्त सभा भवन में भिक्षुओं को धर्म प्रवचन दे रहे थे, उनका उपदेश दे रहे थे, उन्हें प्रेरित कर रहे थे और उन्हें प्रसन्न कर रहे थे। उनका प्रवचन परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट, अर्थपूर्ण, व्यापक और निर्बाध था।

फिर, शाम को, भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और सभा भवन की ओर बढ़े। वे निर्धारित आसन पर बैठ गए और भिक्षुओं को संबोधित करते हुए बोले, "भिक्षुओं, सभा भवन में भिक्षुओं को धर्म प्रवचन से उपदेश, प्रोत्साहन, प्रेरणा और आनंद कौन दे रहा है, जो परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट, अर्थपूर्ण, व्यापक और अबाधित वाणी में दिया गया है?"

"यह आदरणीय विशाखा पंचलिपुत्त थे, भंते।"

तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य विशाखा पंचलिपुत्त से कहा: "शाबाश, शाबाश, विशाखा! यह अच्छा है कि तुम सभा भवन में भिक्षुओं को धम्म (मार्ग) प्रवचन से उपदेश, प्रोत्साहन, प्रेरणा और प्रसन्नता प्रदान कर रहे हो, जो परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट, अर्थपूर्ण, व्यापक और अबाधित वाणी में बोला गया हो।"

जब ज्ञानी व्यक्ति अज्ञानी लोगों के बीच होता है,

तो वे उसे नहीं पहचान पाते यदि वह बोलता नहीं। 725 परन्तु जब वह बोलता है और अमरता (अमृत्य) की शिक्षा देता है, तो

वे उसे पहचान लेते हैं ।

उन्हें धम्म का पाठ और व्याख्या करनी चाहिए;

उन्हें ऋषियों का ध्वज बुलंद करना चाहिए।

सुविचारित शब्द ही ऋषियों का ध्वज हैं:

क्योंकि धम्म ही ऋषियों का ध्वज है। [52]

---

49 विपल्लस (इनवर्जन)

भिक्षुओं, ये चार प्रकार की धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), मन की धारणाएँ और दृष्टिकोण हैं। 729 वे चार क्या हैं? (1) वह धारणा (सन्ना/संज्ञा), मन और दृष्टिकोण की धारणा जो अनित्य को स्थायी मान लेती है; (2) वह धारणा (सन्ना/संज्ञा), मन और दृष्टिकोण की धारणा जो दुखदायी को सुखदायी मान लेती है; 730 (3) वह धारणा (सन्ना/संज्ञा), मन और दृष्टिकोण की धारणा जो अनात्म को आत्म मान लेती है; (4) वह धारणा (सन्ना/संज्ञा), मन और दृष्टिकोण की धारणा जो अनाकर्षक को आकर्षक मान लेती है। ये धारणा (सन्ना/संज्ञा), मन और दृष्टिकोण की चार प्रकार की धारणाएँ हैं।

भिक्षुओं, ये चार प्रकार की धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), मन की धारणाएँ और दृष्टिकोण हैं। ये चार कौन सी हैं? (1) वह धारणा (सन्ना/संज्ञा), मन और दृष्टिकोण जो अनित्य को अनित्य मानता है; (2) वह धारणा (सन्ना/संज्ञा), मन और दृष्टिकोण जो दुख को दुख मानता है; (3) वह धारणा (सन्ना/संज्ञा), मन और दृष्टिकोण जो अनात्म को अनात्म मानता है; (4) वह धारणा (सन्ना/संज्ञा), मन और दृष्टिकोण जो अनाकर्षक को अनाकर्षक मानता है। ये धारणा (सन्ना/संज्ञा), मन और दृष्टिकोण की चार प्रकार की धारणाएँ हैं।

अनित्य में स्थायित्व देखना,

दुख में सुख देखना,

अनात्म में आत्मा देखना,

और अनाकर्षक में आकर्षण देखना,

प्राणी गलत विचारों का सहारा लेते हैं,

उनके मन विक्षिप्त हो जाते हैं, उनकी धारणा (सन्ना/संज्ञा) विकृत हो जाती है।

ऐसे लोग मारा के बंधन में जकड़े रहते हैं

और बंधन से मुक्ति नहीं पा सकते।

वे संसार में निरंतर

जन्म-मृत्यु के चक्र में फंसे रहते हैं।

लेकिन जब बुद्ध संसार में प्रकट होते हैं,

एक तेजस्वी प्रकाश बिखेरते हुए,

वे उस धम्म को प्रकट करते हैं जो

दुख को शांत करने की ओर ले जाता है।

इसे सुनकर बुद्धिमान लोगों ने

अपना विवेक वापस पा लिया है।

उन्होंने अनित्य को अनित्य

और दुख को दुख के रूप में देखा है।

उन्होंने अनात्म को अनात्म के रूप में

और अनाकर्षक को अनाकर्षक के रूप में देखा है।

सही दृष्टि प्राप्त करके

उन्होंने सभी दुखों पर विजय प्राप्त कर ली है। [53]

---

50 दोष (उपक्किलेशा संस्कृत उपक्लेश)

भिक्षुओं, सूर्य और चंद्रमा के ये चार दोष हैं जिनके कारण सूर्य और चंद्रमा न तो चमकते हैं, न ही प्रकाशमान होते हैं और न ही विकिरण करते हैं। वे चार दोष क्या हैं? बादल सूर्य और चंद्रमा का दोष हैं जिनके कारण सूर्य और चंद्रमा न तो चमकते हैं, न ही विकिरण करते हैं; कोहरा सूर्य और चंद्रमा का दोष है 732 . . . धुआँ और धूल सूर्य और चंद्रमा का दोष हैं . . . और असुरों के स्वामी राहु सूर्य और चंद्रमा का दोष हैं जिनके कारण सूर्य और चंद्रमा न तो चमकते हैं, न ही विकिरण करते हैं और न ही विकिरण करते हैं। ये सूर्य और चंद्रमा के चार दोष हैं जिनके कारण सूर्य और चंद्रमा न तो चमकते हैं, न ही विकिरण करते हैं और न ही विकिरण करते हैं।

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, तपस्वियों और ब्राह्मणों में चार दोष होते हैं, जिनके कारण कुछ तपस्वी और ब्राह्मण प्रकाशमान, प्रज्वलित और प्रकाशमान नहीं होते। वे चार दोष कौन से हैं?"

(1) कुछ तपस्वी और ब्राह्मण ऐसे हैं जो मदिरा और शराब पीते हैं और उससे परहेज नहीं करते। यह तपस्वियों और ब्राह्मणों का पहला दोष है, जिसके कारण कुछ तपस्वी और ब्राह्मण प्रकाशमान, प्रज्वलित और प्रकाशमान नहीं होते।

(2) "कुछ तपस्वी और ब्राह्मण ऐसे हैं जो यौन संबंध में लिप्त रहते हैं और यौन संबंध से परहेज नहीं करते। यह तपस्वियों और ब्राह्मणों का दूसरा दोष है, जिसके कारण कुछ तपस्वी और ब्राह्मण प्रकाशमान, प्रज्वलित और प्रकाशमान नहीं होते।"

(3) कुछ तपस्वी और ब्राह्मण ऐसे हैं जो सोना और चांदी स्वीकार करते हैं और सोना और चांदी लेने से परहेज नहीं करते। यह तपस्वियों और ब्राह्मणों का तीसरा दोष है, जिसके कारण कुछ तपस्वी और ब्राह्मण प्रकाशमान, प्रज्वलित और प्रकाशमान नहीं होते।

(4) कुछ तपस्वी और ब्राह्मण ऐसे हैं जो कुटिल जीविका से जीविका कमाते हैं और कुटिल जीविका से विमुख नहीं होते। यही तपस्वियों और ब्राह्मणों का चौथा दोष है, जिसके कारण कुछ तपस्वी और ब्राह्मण प्रकाशमान, प्रज्वलित और प्रकाशमान नहीं होते।

"ये तपस्वियों और ब्राह्मणों के चार दोष हैं [54], जिनके कारण कुछ तपस्वी और ब्राह्मण प्रकाशमान, प्रज्वलित और प्रकाशमान नहीं होते।" 733

कुछ तपस्वी और ब्राह्मण

कामवासना (राग) और घृणा से ग्रस्त होकर इधर-उधर भटकते हैं;

अज्ञान से विवश मनुष्य

सुखद चीजों में आनंद की तलाश करते हैं।

वे शराब और मदिरा पीते हैं,

यौन गतिविधियों में लिप्त होते हैं;

अज्ञानी लोग

चांदी और सोना स्वीकार करते हैं।

कुछ तपस्वी और ब्राह्मण

गलत तरीके से जीवन यापन करते हैं। ये वे दोष हैं जिनका वर्णन सूर्य के सन्यासी

बुद्ध ने किया है।

इनसे अपवित्र होकर,

कुछ तपस्वी और ब्राह्मण—

अशुद्ध, धूल भरे प्राणी— 734

न तो चमकते हैं और न ही दमकते हैं।

अंधकार में डूबे हुए,

तृष्णा के दास (तन्हा/तृष्णा), बहते हुए,

वे नया जीवन (भावो/पुनर्जन्म) ग्रहण करते हैं

और उस भयानक श्मशान भूमि को भर देते हैं।

दूसरा पचास

I. पुण्य की धाराएँ (पुन्नभिसन्द)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

योग्यता की 51 धाराएँ (1) (पुन्नभिसन्ध1 सं. पुण्य..)

भिक्षुओं, पुण्य की ये चार धाराएँ हैं, लाभकारी (कुशल) धाराएँ हैं, सुख के पोषक तत्व हैं - स्वर्गीय, सुख में परिपक्व होने वाले, स्वर्ग की ओर ले जाने वाले - जो वांछित, अभिलाषायुक्त और सुखद, यानी व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाते हैं। वे चार धाराएँ कौन सी हैं? 735

(1) जब कोई भिक्षु दिए गए वस्त्र का उपयोग करते हुए असीम एकाग्रता में प्रवेश करता है और उसमें लीन रहता है, तो उसे असीम पुण्य, लाभकारी (कुशल) तत्वों की धारा, सुख का पोषण प्राप्त होता है... जो उसके कल्याण और सुख की ओर ले जाता है। (2) जब कोई भिक्षु दिए गए भिक्षा भोजन का उपयोग करते हुए असीम समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें लीन रहता है, तो उसे असीम पुण्य, लाभकारी (कुशल) तत्वों की धारा, सुख का पोषण प्राप्त होता है... जो उसके कल्याण और सुख की ओर ले जाता है। [55] (3) जब कोई भिक्षु दिए गए आवास का उपयोग करते हुए असीम समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें लीन रहता है, तो उसे असीम पुण्य, लाभकारी (कुशल) तत्वों की धारा, सुख का पोषण प्राप्त होता है... जो . . , व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाता है। (4) जब कोई भिक्षु बीमारों के लिए दी गई औषधियों और सामग्री का उपयोग करते हुए असीम समाधि (स्व-लीनता/समाधि) में प्रवेश करता है और उसमें लीन रहता है, तो उसे असीम पुण्य की धारा, लाभकारी (कुशल) की धारा, सुख का पोषण प्राप्त होता है . . . जो व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाता है।

"ये पुण्य की चार धाराएँ हैं, लाभकारी (कुसल) तत्वों की धाराएँ हैं, सुख के पोषक तत्व हैं - स्वर्गीय, सुख में परिपक्व होने वाले, स्वर्ग के लिए सहायक - जो वांछित, अभिलाषा और सुखद, व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाते हैं।"

भिक्षुओं, जब किसी श्रेष्ठ शिष्य में पुण्य की ये चार धाराएँ, लाभकारी (कुशल) धाराएँ होती हैं, तो उसके पुण्य को इस प्रकार मापना आसान नहीं है: 'केवल इतना ही उसका पुण्य प्रवाह, लाभकारी (कुशल) प्रवाह, सुख का पोषण है; ... जो ... व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाता है'; बल्कि, इसे सीधे तौर पर पुण्य के एक अगणनीय, असीम, विशाल भंडार के रूप में गिना जाता है।

भिक्षुओं, जिस प्रकार विशाल सागर में पानी को इस प्रकार मापना आसान नहीं है: 'इतने गैलन पानी है,' या 'इतने सैकड़ों गैलन पानी है,' या 'इतने हजारों गैलन पानी है,' या 'इतने लाखों गैलन पानी है'; बल्कि इसे केवल पानी के एक अथाह, असीम, विशाल भंडार के रूप में माना जाता है; ठीक उसी प्रकार, जब एक श्रेष्ठ शिष्य इन चार पुण्य धाराओं से युक्त होता है... तो इसे भी केवल पुण्य के एक अथाह, असीम, विशाल भंडार के रूप में माना जाता है।

जैसे लोगों द्वारा उपयोग की जाने वाली अनेक नदियाँ,

नीचे की ओर बहते हुए, महासागर में पहुँचती हैं,

जो जल का विशाल भंडार है, असीम सागर है,

रत्नों के ढेर का भयानक भंडार है; [56]

वैसे ही पुण्य की धाराएँ उस बुद्धिमान व्यक्ति तक पहुँचती हैं

जो भोजन, पेय और वस्त्र दाता है;

वे पलंगों, कुर्सियों और आवरणों के दाता तक उसी प्रकार पहुँचते हैं

जैसे नदियाँ अपना जल समुद्र तक ले जाती हैं।

---

52 पुण्य की धाराएँ (2) 737 (पुन्ना-भिसंदा2 सं. पुण्य..)

भिक्षुओं, पुण्य की ये चार धाराएँ हैं, लाभकारी (कुशल) धाराएँ हैं, सुख के पोषक तत्व हैं - स्वर्गीय, सुख में परिपक्व होने वाले, स्वर्ग की ओर ले जाने वाले - जो वांछित, अभिलाषायुक्त और सुखद, व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाते हैं। वे चार धाराएँ कौन सी हैं?

(1) "यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य बुद्ध में इस प्रकार अटूट विश्वास रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, संसार के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' यह पुण्य की पहली धारा है।"

(2) "फिर, एक श्रेष्ठ शिष्य धम्म में अटूट विश्वास रखता है, इस प्रकार: 'भगवान (बुद्ध) द्वारा धम्म की अच्छी तरह व्याख्या की गई है, यह प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, तात्कालिक है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक है, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जा सकता है।' यह पुण्य का दूसरा स्रोत है। ..."

(3) "फिर, एक श्रेष्ठ शिष्य संघ में इस प्रकार अटूट विश्वास रखता है: 'भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का संघ अच्छे मार्ग का अनुसरण करता है, सीधे मार्ग का अनुसरण करता है, सच्चे मार्ग का अनुसरण करता है, उचित मार्ग का अनुसरण करता है; अर्थात्, चार युग्मों के व्यक्ति, आठ प्रकार के व्यक्ति - भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का यह संघ दान के योग्य है, आतिथ्य के योग्य है, भेंट के योग्य है, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।' यह पुण्य की तीसरी धारा है। . . ."

(4) "पुनः, एक श्रेष्ठ शिष्य में श्रेष्ठों द्वारा प्रिय, अटूट, दोषरहित, निष्कलंक, निर्मल, मुक्तिदायक, बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, अछूता, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाला सद्‌गुणपूर्ण आचरण होता है। यह पुण्य की चौथी धारा है।"

"ये पुण्य की चार धाराएँ हैं, लाभकारी (कुसल) तत्वों की धाराएँ हैं, सुख के पोषक तत्व हैं - स्वर्गीय, सुख में परिपक्व होने वाले, स्वर्ग के लिए सहायक - जो वांछित, अभिलाषा और सुखद, व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाते हैं।"

जब किसी की आस्था तथागत (बुद्ध) में

अटूट और दृढ़ होती है,

और उसका आचरण अच्छा होता है, जो

श्रेष्ठ लोगों को प्रिय और प्रशंसित होता है;

जब किसी को संघ में विश्वास होता है

और उसका दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है, तब

वे कहते हैं कि वह गरीब नहीं है,

उसका जीवन व्यर्थ नहीं गया है।

अत: बुद्धिमान व्यक्ति को

बुद्धों की शिक्षाओं को याद रखते हुए,

आस्था और सदाचारी व्यवहार,

विश्वास और धम्म के दर्शन पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। 738

---

53 साथ रहना (1) (संवसा1)

एक बार भगवान बुद्ध मधुरा और वेरांजा के बीच राजमार्ग पर यात्रा कर रहे थे। कई गृहस्थ पुरुष और महिलाएं भी उसी राजमार्ग पर यात्रा कर रहे थे। तब भगवान बुद्ध राजमार्ग छोड़कर एक वृक्ष के नीचे बैठ गए। गृहस्थ पुरुषों और महिलाओं ने भगवान बुद्ध को वहां बैठे देखा और उनके पास जाकर उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान बुद्ध ने उनसे कहा:

"गृहस्थों, साथ रहने के ये चार तरीके हैं। वे चार क्या हैं? एक पापी दूसरे पापी के साथ रहता है; एक पापी किसी देवी के साथ रहता है; एक देव (देवदूत/भगवान) किसी पापी के साथ रहता है; एक देव (देवदूत/भगवान) किसी देवी (देवदूत/देवी) के साथ रहता है।"

(1) "हे गृहस्थों, एक दुष्ट दूसरे दुष्ट के साथ कैसे रहता है? [58] यहाँ पति जीवन का नाश करने वाला, बिना माँगे वस्तुएँ लेने वाला, यौन दुराचार में लिप्त, झूठ बोलने वाला और आलस्य के आधार मदिरा, शराब और मादक पदार्थों का सेवन करने वाला है; वह अनैतिक और बुरे चरित्र का है; वह कंजूसी के कलंक से ग्रस्त हृदय से घर में रहता है; वह संन्यासियों और ब्राह्मणों का अपमान और निंदा करता है। और उसकी पत्नी भी जीवन का नाश करने वाली है... वह संन्यासियों और ब्राह्मणों का अपमान और निंदा करती है। इस प्रकार एक दुष्ट दूसरे दुष्ट के साथ रहता है।"

(2) "और एक दुष्ट व्यक्ति किसी देवी (देवी) के साथ कैसे रहता है? यहाँ पति जीवन का संहार करने वाला है... वह तपस्वियों और ब्राह्मणों का अपमान और निंदा करता है। परन्तु उसकी पत्नी जीवन के संहार से, बिना माँगी वस्तुएँ लेने से, यौन दुराचार से, झूठी वाणी से और आलस्य के आधार मदिरा, शराब और मादक पदार्थों से दूर रहती है; वह गुणी और अच्छे चरित्र की होती है; वह कंजूसी के दाग से मुक्त हृदय से घर में रहती है; वह तपस्वियों और ब्राह्मणों का अपमान या निंदा नहीं करती। इसी प्रकार एक दुष्ट व्यक्ति किसी देवी (देवदूत/देवी) के साथ रहता है।"

(3) "और एक देव (देवदूत/भगवान) एक पापी के साथ कैसे रहता है? यहाँ पति वह है जो जीवन का विनाश नहीं करता... वह तपस्वियों और ब्राह्मणों का अपमान या निंदा नहीं करता। परन्तु उसकी पत्नी जीवन का विनाश करने वाली है... वह तपस्वियों और ब्राह्मणों का अपमान और निंदा करती है। इसी प्रकार एक देव (देवदूत/भगवान) एक पापी के साथ रहता है।"

(4) "और एक देव (देवदूत/ईश्वर) एक स्त्री देव के साथ कैसे रहता है? यहाँ, पति वह है जो जीवन के विनाश से परहेज करता है... वह तपस्वियों और ब्राह्मणों का अपमान या निंदा नहीं करता। और उसकी पत्नी भी जीवन के विनाश से परहेज करती है... वह तपस्वियों और ब्राह्मणों का अपमान या निंदा नहीं करती। इसी प्रकार एक देव (देवदूत/ईश्वर) एक स्त्री देव (देवदूत/ईश्वर) के साथ रहता है। [59]

"ये साथ रहने के चार तरीके हैं।"

जब पति-पत्नी दोनों ही अनैतिक,

कंजूस और दुर्व्यवहारी होते हैं, तो वे एक साथ दुखदायी जीवन व्यतीत करते हैं।

पति अनैतिक,

कंजूस और हिंसक है,

लेकिन पत्नी गुणी,

दानशील और उदार है।

वह एक देवी (परी/देवी) है जो

एक दुष्ट पति के साथ रहती है।

पति सदाचारी,

दानशील और उदार है,

परन्तु उसकी पत्नी अनैतिक,

कंजूस और दुर्व्यवहार करने वाली है।

वह

एक देवदूत (देवदूत/भगवान) पति के साथ रहने वाली एक दुष्ट स्त्री है।

पति-पत्नी दोनों ही आस्थावान,

दानशील और संयमी हैं,

धार्मिक जीवन जीते हैं और

एक-दूसरे से मधुर शब्दों में बात करते हैं।

तब उन्हें अनेक लाभ प्राप्त होते हैं

और वे सुखी रहते हैं। जब दोनों में एकरूपता होती है, तो

उनके शत्रु दुखी हो जाते हैं ।

यहां धम्म का अभ्यास करने के बाद, वे

सद्गुणी आचरण और अनुष्ठानों में उसी प्रकार से भाग लेते हैं, और

[मृत्यु के बाद] देवलोक में आनंदित होकर,

वे इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हैं।

---

54 (4) साथ रहना (2) (संवसा2)

भिक्षुओं, साथ रहने के ये चार तरीके हैं। वे चार तरीके कौन से हैं? एक पापी दूसरे पापी के साथ रहता है; एक पापी किसी देवी के साथ रहता है; एक देवी किसी पापी के साथ रहती है; एक देवी किसी देवी के साथ रहती है।

[श्लोकों सहित शेष भाग 4:53 के समान है, परन्तु भिक्षुओं को संबोधित है।] [60—61]

---

55 जीवन में एकरूपता (1) (समजीवी1)

एक बार भगवान (बुद्ध) भेषकला वन के हिरण उद्यान में स्थित सुमसुमारागिरा में भगों के बीच निवास कर रहे थे। फिर सुबह, भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, अपना कुंड और वस्त्र धारण किया और गृहस्थ नकुलपिता के निवास पर गए, जहाँ वे तैयार आसन पर बैठ गए। तब गृहस्थ नकुलपिता और गृहिणी नकुलमाता भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। 740 तब गृहस्थ नकुलपिता ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, जब मैं छोटा था और नकुलमाता का विवाह मुझसे हुआ था, तब से मुझे याद नहीं कि मैंने कभी उसके विरुद्ध विचार में भी कोई अपराध किया हो, कर्म से तो दूर की बात है। भंते, हम कामना करते हैं कि हम न केवल इस जीवन में, बल्कि भविष्य के जन्मों में भी एक-दूसरे से मिलें।"

गृहिणी नकुलमाता ने बदले में भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, जब मैं एक युवती थी और मेरा विवाह युवा गृहस्थ नकुलपिता से हुआ था, तब से मुझे याद नहीं कि मैंने कभी विचार में भी उनके विरुद्ध कोई अपराध किया हो, कर्म से तो बिल्कुल भी नहीं। हे भंते, हम न केवल इस जीवन में बल्कि भविष्य के जन्मों में भी एक-दूसरे से मिलना चाहते हैं।" [62]

गृहस्थों, यदि पति-पत्नी दोनों इस जीवन में ही नहीं बल्कि भविष्य के जन्मों में भी एक-दूसरे को देखना चाहते हैं, तो उन्हें एक ही आस्था, एक ही सदाचारी व्यवहार, एक ही उदारता और एक ही ज्ञान (दिव्य ज्ञान) रखना चाहिए। तब वे इस जीवन में ही नहीं बल्कि भविष्य के जन्मों में भी एक-दूसरे को देख सकेंगे।

पति और पत्नी दोनों ही आस्थावान,

परोपकारी और आत्मसंयमित हैं, वे

धार्मिकता से अपना जीवन व्यतीत करते हैं और

एक-दूसरे से मधुर शब्दों में बात करते हैं।

तब उन्हें अनेक लाभ प्राप्त होते हैं

और वे शांति से रहते हैं। जब दोनों में सद्गुणों की समानता पाई जाती है तो

उनके शत्रु दुखी हो जाते हैं ।

यहां धम्म का अभ्यास करने के बाद, वे

सद्गुणी आचरण और अनुष्ठानों में उसी प्रकार से भाग लेते हैं, और

[मृत्यु के बाद] देवलोक में आनंदित होकर,

वे इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हैं।

---

56 (6) जीवन में समान (2) (समजीवी2)

भिक्षुओं, यदि पति-पत्नी दोनों एक दूसरे को न केवल इस जीवन में बल्कि भविष्य के जन्मों में भी देखना चाहते हैं, तो उन्हें एक ही आस्था, एक ही सदाचारी व्यवहार, एक ही उदारता और एक ही ज्ञान (दिव्य ज्ञान) रखना चाहिए। तब वे न केवल इस जीवन में बल्कि भविष्य के जन्मों में भी एक दूसरे को देख सकेंगे।

[ये आयतें 4:55 की आयतों के समान हैं]

---

57 सुप्पवास

एक बार भगवान (बुद्ध) सज्जनेला नामक कोलियन नगर के पास कोलियनों के बीच निवास कर रहे थे। फिर सुबह, भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, अपना कुंड और वस्त्र लिया और कोलियन पुत्री सुप्पवासा के निवास पर गए, जहाँ वे तैयार आसन पर बैठ गए। 741 तब कोलियन पुत्री सुप्पवासा [63] ने अपने हाथों से भगवान (बुद्ध) को विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसे और उन्हें तृप्त किया। जब भगवान (बुद्ध) ने भोजन समाप्त कर लिया और अपना कुंड रख दिया, तो कोलियन पुत्री सुप्पवासा एक तरफ बैठ गईं। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

सुप्पवासा, एक श्रेष्ठ महिला शिष्या जो भोजन दान करती है, प्राप्तकर्ताओं को चार चीजें प्रदान करती है। वे चार चीजें क्या हैं? वह जीवन, सौंदर्य, सुख और शक्ति प्रदान करती है। (1) जीवन दान करने के कारण, वह स्वयं भी जीवन का भागीदार होती है, चाहे वह दिव्य हो या मनुष्य। (2) सौंदर्य दान करने के कारण, वह स्वयं भी सौंदर्य का भागीदार होती है, चाहे वह दिव्य हो या मनुष्य। (3) सुख दान करने के कारण, वह स्वयं भी सुख का भागीदार होती है, चाहे वह दिव्य हो या मनुष्य। (4) शक्ति दान करने के कारण, वह स्वयं भी शक्ति का भागीदार होती है, चाहे वह दिव्य हो या मनुष्य। सुप्पवासा, एक श्रेष्ठ महिला शिष्या जो भोजन दान करती है, प्राप्तकर्ताओं को ये चार चीजें प्रदान करती है।

जब कोई व्यक्ति उत्तम आचरण वाले, धर्मनिष्ठ व्यक्तियों को

शुद्ध, स्वादिष्ट और सुगंधयुक्त भोजन देता है, तो पुण्य को पुण्य से जोड़ने वाले उस दान को संसार के जानकार अत्यंत फलदायी मानते हैं । 742

ऐसी उदारता को याद करने वाले लोग

आनंद से प्रेरित होकर संसार में निवास करते हैं।

कंजूसी के दाग और उसकी जड़ को मिटाकर,

निर्दोष होकर वे स्वर्गलोक में प्रवेश करते हैं।

---

58 सुदत्ता

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे... तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"गृहस्थ, भोजन देने वाला एक श्रेष्ठ शिष्य, प्राप्तकर्ताओं को चार चीजें देता है। वे चार चीजें क्या हैं? [64] वह जीवन, सौंदर्य, सुख और शक्ति देता है। (-1) जीवन देकर वह स्वयं भी जीवन का भागीदार बनता है, चाहे वह दिव्य हो या मनुष्य। (2) सौंदर्य देकर वह स्वयं भी सौंदर्य का भागीदार बनता है, चाहे वह दिव्य हो या मनुष्य। (3) सुख देकर वह स्वयं भी सुख का भागीदार बनता है, चाहे वह दिव्य हो या मनुष्य। (4) शक्ति देकर वह स्वयं भी शक्ति का भागीदार बनता है, चाहे वह दिव्य हो या मनुष्य। गृहस्थ, भोजन देने वाला एक श्रेष्ठ शिष्य, प्राप्तकर्ताओं को ये चार चीजें देता है।"

जो व्यक्ति संयमी लोगों को समय पर आदरपूर्वक भोजन देता है, जो दूसरों द्वारा दिए गए भोजन को खाते हैं, वह उन्हें चार चीजें प्रदान करता है: जीवन, सौंदर्य, सुख और शक्ति। जो व्यक्ति जीवन और सौंदर्य प्रदान करता है, जो सुख और शक्ति प्रदान करता है, वह जहां भी पुनर्जन्म लेता है, वहां दीर्घायु और प्रसिद्धि प्राप्त करता है।

---

59 भोजन

"भिक्षुओं, जब कोई दानदाता भोजन देता है, तो वह प्राप्तकर्ताओं को चार चीजें देता है। वे चार चीजें क्या हैं? ... [जैसा कि पिछले सूत्र में है] ... भिक्षुओं, जब कोई दानदाता भोजन देता है, तो वह प्राप्तकर्ताओं को ये चार चीजें देता है।"

[ये आयतें 4:58 के समान हैं।] [65]

---

60 आम आदमी का उचित अभ्यास (Gihisamici sans. Gruhi..)

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे... भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"गृहस्थ, एक श्रेष्ठ शिष्य जो चार गुणों से युक्त है, गृहस्थ के लिए उचित मार्ग का अनुसरण कर रहा है, एक ऐसा मार्ग जो यश की प्राप्ति और स्वर्ग की ओर ले जाता है। वे चार गुण क्या हैं?"

"हे गृहस्थ, यहाँ एक श्रेष्ठ शिष्य भिक्षुओं के संघ को वस्त्र देकर, भिक्षा देकर, आवास प्रदान करके, और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन उपलब्ध कराकर उनकी सेवा करता है।"

"गृहस्थ, इन चार गुणों से युक्त एक श्रेष्ठ शिष्य गृहस्थ के लिए उचित मार्ग का अभ्यास कर रहा है, एक ऐसा मार्ग जो यश की प्राप्ति और स्वर्ग की ओर ले जाता है।"

जब ज्ञानी व्यक्ति

गृहस्थों के लिए उचित मार्ग का अनुसरण करते हैं, तो वे

सदाचारी भिक्षुओं को

वस्त्र, भिक्षा, आवास और औषधियाँ प्रदान करके उनकी सेवा करते हैं।

उन दोनों के लिए दिन-रात

पुण्य बढ़ता रहता है;

उत्तम कर्म करने के कारण

वे स्वर्गिक अवस्था को प्राप्त करते हैं।

द्वितीय. योग्य कर्म अनुभाग (पट्टकमवाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

61 पुण्य कर्म (पट्ट-कर्म)

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे... भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: [66]

"गृहस्थ, संसार में ये चार चीजें हैं जिनकी कामना की जाती है, जो वांछनीय हैं, जो सुखद हैं, लेकिन जो मुश्किल से ही प्राप्त होती हैं। वे चार चीजें कौन सी हैं?"

(1) "मनुष्य सोचता है: 'मुझे सही तरीके से धन प्राप्त हो!' संसार में यही पहली चीज है जिसकी कामना की जाती है... और जो संसार में बहुत कम ही प्राप्त होती है। ..."

(2) "धर्मपूर्वक धन अर्जित करने पर व्यक्ति सोचता है: 'मुझे और मेरे रिश्तेदारों और गुरुओं को प्रसिद्धि मिले!' 744 यह दूसरी बात है... जो संसार में शायद ही कभी प्राप्त होती है।

(3) "धर्मपूर्वक धन अर्जित करने और अपने लिए तथा अपने रिश्तेदारों और गुरुओं के लिए प्रसिद्धि प्राप्त करने पर, व्यक्ति सोचता है: 'काश मैं दीर्घायु होऊं और दीर्घ जीवन का आनंद लूं!' यह तीसरी बात है... जो संसार में दुर्लभ रूप से प्राप्त होती है।"

(4) "धर्मपूर्वक धन अर्जित करके, अपने और अपने रिश्तेदारों और गुरुओं के लिए प्रसिद्धि प्राप्त करके, दीर्घायु होकर और दीर्घ जीवन का आनंद लेकर, व्यक्ति सोचता है: 'शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, मुझे एक अच्छे गंतव्य में, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म मिले!' यह चौथी बात है... जो संसार में दुर्लभ रूप से प्राप्त होती है।"

"ये चार चीजें हैं जिनकी कामना की जाती है, जो वांछनीय होती हैं, जो मनभावन होती हैं, और जो संसार में शायद ही कभी प्राप्त होती हैं।"

"हे गृहस्थ, उन चार चीजों को प्राप्त करने के लिए चार अन्य चीजें हैं। वे चार चीजें क्या हैं? विश्वास में सिद्धि (संपदा), सद्गुणपूर्ण व्यवहार में सिद्धि (संपदा), उदारता में सिद्धि (संपदा), और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्धि (संपदा)।"

(1) "हे गृहस्थ, विश्वास में संपदा क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य विश्वास से परिपूर्ण है; वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार विश्वास रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में सिद्ध हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' इसे ही विश्वास में संपदा कहा जाता है।"

(2) "और सद्गुणी आचरण में संपदा क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य जीवन के विनाश से दूर रहता है... शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से दूर रहता है, जो आलस्य का आधार हैं। इसे सद्गुणी आचरण में संपदा कहा जाता है।"

(3) "और उदारता में संपदा क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य कंजूसी के दाग से मुक्त मन से घर में रहता है, उदार, खुले हाथों वाला, त्याग में आनंदित, दान के प्रति समर्पित, देने और बाँटने में आनंदित होता है। इसे उदारता में संपदा कहा जाता है।"

(4) "और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में संपदा क्या है? [67] यदि कोई लालसा और अधर्मी लोभ से ग्रस्त हृदय से निवास करता है, तो वह उन कार्यों को करता है जिनसे बचना चाहिए और अपने कर्तव्य की उपेक्षा करता है, जिससे उसकी प्रसिद्धि और सुख नष्ट हो जाते हैं। यदि कोई दुर्भावना से ग्रस्त हृदय से . . . सुस्ती और उन्मत्तता से . . . बेचैनी और पश्चाताप से . . . संदेह से ग्रस्त हृदय से निवास करता है, तो वह उन कार्यों को करता है जिनसे बचना चाहिए और अपने कर्तव्य की उपेक्षा करता है, जिससे उसकी प्रसिद्धि और सुख नष्ट हो जाते हैं।"

"हे गृहस्थ, जब किसी श्रेष्ठ शिष्य को यह समझ आ जाए कि 'लालच और अधर्मी लोभ मन को दूषित करते हैं,' तो वह इनका त्याग कर देता है। जब उसे यह समझ आ जाए कि 'द्वेष मन को दूषित करता है,' तो वह इसका त्याग कर देता है। जब उसे यह समझ आ जाए कि 'सुस्ती और आलस्य मन को दूषित करते हैं,' तो वह इनका त्याग कर देता है। जब उसे यह समझ आ जाए कि 'बेचैनी और पश्चाताप

मन को दूषित करते हैं,' तो वह इनका त्याग कर देता है। जब उसे यह समझ आ जाए कि 'संदेह मन को दूषित करता है,' तो वह इसका त्याग कर देता है।"

"हे गृहस्थ, जब किसी श्रेष्ठ शिष्य ने यह समझ लिया हो कि 'लालसा और अधर्मी लोभ मन को दूषित करते हैं' और उनका त्याग कर दिया हो; जब उसने यह समझ लिया हो कि 'द्वेष... सुस्ती और उनींदापन... बेचैनी और पश्चाताप... संदेह मन को दूषित करते हैं' और उनका त्याग कर दिया हो, तब वह महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) वाला, व्यापक पन्ना (दिव्य ज्ञान) वाला, सर्वव्यापी दृष्टि वाला श्रेष्ठ शिष्य कहलाता है। इसे पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्धि (संपदा) कहा जाता है।"

"ये चार [अन्य] चीजें हैं जो उन चार चीजों को प्राप्त करने की ओर ले जाती हैं जिनकी कामना की जाती है, जो वांछनीय हैं, जो सुखद हैं और जो संसार में दुर्लभ रूप से प्राप्त होती हैं।"

"ऊर्जावान परिश्रम से अर्जित धन, भुजाओं के बल से संचित धन, माथे के पसीने से अर्जित धन, न्यायसंगत ढंग से प्राप्त धन से, वह श्रेष्ठ शिष्य चार पुण्य कर्म करता है। वे चार कर्म कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, गृहस्थ, परिश्रमपूर्वक अर्जित धन से... उचित परिश्रम से कमाए गए धन से, श्रेष्ठ शिष्य स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में अपना भरण-पोषण करता है; वह अपने माता-पिता को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में उनका भरण-पोषण करता है; वह अपनी पत्नी और बच्चों, अपने दासों, श्रमिकों और सेवकों को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में उनका भरण-पोषण करता है; वह अपने मित्रों और साथियों को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में उनका भरण-पोषण करता है। यह धन के सदुपयोग का पहला उदाहरण है, जिसका उचित उपयोग किया गया है और एक योग्य उद्देश्य के लिए प्रयोग किया गया है।"

(2) "फिर, परिश्रमपूर्वक और धार्मिक रूप से अर्जित धन से, श्रेष्ठ शिष्य आग, बाढ़, राजाओं, चोरों या अप्रिय उत्तराधिकारियों से होने वाली हानियों से बचाव के लिए प्रावधान करता है; वह स्वयं को उनसे सुरक्षित रखता है: यह धन का दूसरा उदाहरण है जिसका सदुपयोग किसी योग्य कार्य के लिए किया गया है।"

(3) "फिर, परिश्रमपूर्वक और धार्मिक रूप से अर्जित धन से, श्रेष्ठ शिष्य पाँच आहुति देता है: रिश्तेदारों, अतिथियों, पूर्वजों, राजा और देवताओं (देवदूतों) को। यह धन के सदुपयोग का तीसरा उदाहरण है... एक नेक कार्य के लिए।"

(4) "फिर, परिश्रमपूर्वक अर्जित धन से... धार्मिक रूप से अर्जित धन से, श्रेष्ठ शिष्य उन तपस्वियों और ब्राह्मणों को भिक्षा का एक उत्थानकारी अर्पण स्थापित करता है - एक ऐसा अर्पण जो स्वर्गीय है, 746 सुखदायी है, स्वर्ग की ओर ले जाता है - जो नशा और आलस्य से दूर रहते हैं, जो धैर्य और नम्रता में स्थिर रहते हैं, जो स्वयं को वश में रखते हैं, शांत करते हैं और निर्वाण के लिए स्वयं को प्रशिक्षित करते हैं। यह धन के सदुपयोग का चौथा उदाहरण है, जिसका उचित उपयोग किया गया है और एक योग्य कार्य के लिए प्रयोग किया गया है।"

"हे गृहस्थ, ये चार पुण्य कर्म हैं जो एक श्रेष्ठ शिष्य परिश्रमपूर्वक अर्जित धन से करता है, जो उसने अपने परिश्रम से, अपनी भुजाओं के बल से, अपने माथे के पसीने से कमाया है, जो उचित रूप से अर्जित धन है। जब कोई व्यक्ति इन चार पुण्य कर्मों के अलावा किसी अन्य कार्य पर अपना धन व्यतीत करता है, तो वह धन व्यर्थ हो जाता है, फिजूलखर्ची हो जाती है, व्यर्थ खर्च हो जाता है। परन्तु जब कोई व्यक्ति इन चार पुण्य कर्मों पर अपना धन व्यतीत करता है, तो वह धन उचित उपयोग में लाया जाता है, उचित प्रयोग में लाया जाता है, एक पुण्य कार्य के लिए उपयोग किया जाता है।"

मैंने धन का आनंद लिया है,

अपने आश्रितों का भरण-पोषण किया है

और विपत्तियों पर विजय प्राप्त की है।

मैंने उत्थानकारी दान दिया है

और पाँचों आहुतियाँ संपन्न की हैं।

मैंने गुणी भिक्षुओं और

संयमी ब्रह्मचारियों की सेवा की है। 747

"मैंने वह सब उद्देश्य प्राप्त कर लिया है जो

घर पर रहने वाले एक बुद्धिमान व्यक्ति को

धन की इच्छा रखने में हो सकता है;

मैंने जो किया है उससे मुझे कोई पछतावा नहीं है।"

इस बात को याद करके मनुष्य

श्रेष्ठ धर्म में दृढ़ रहता है।

इस जीवन में लोग उसकी प्रशंसा करते हैं

और मृत्यु के बाद वह स्वर्ग में आनंदित होता है।

---

62 स्वतंत्रता मोर्चा ऋण (अनन्या)

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे... भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

गृहस्थ, समय और अवसर के अनुसार, इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले एक सामान्य व्यक्ति को चार प्रकार के सुख प्राप्त हो सकते हैं। वे चार कौन से हैं? स्वामित्व का सुख, आनंद का सुख, ऋणमुक्ति का सुख और निष्कलंकता का सुख। 748

(1) "हे गृहस्थ, स्वामित्व का सुख क्या है? यहाँ, एक कुलवासी ने अथक परिश्रम से धन अर्जित किया है, अपनी भुजाओं के बल से इकट्ठा किया है, अपने माथे के पसीने से कमाया है, यह धन उचित रूप से अर्जित किया गया है। जब वह सोचता है, मैंने अथक परिश्रम से धन अर्जित किया है... उचित रूप से अर्जित किया है, तो उसे सुख और आनंद का अनुभव होता है। इसे ही स्वामित्व का सुख कहते हैं।"

(2) "आनंद का सुख क्या है? यहाँ, एक कुलवासी अपने परिश्रम से अर्जित धन का आनंद लेता है, जो उसकी भुजाओं के बल से, उसके माथे के पसीने से कमाया गया है, जो उचित रूप से अर्जित किया गया है, और उससे वह अपने धन का आनंद लेता है और पुण्य कर्म करता है। जब वह सोचता है, 'मैं अपने परिश्रम से अर्जित धन का आनंद लेता हूँ और पुण्य कर्म करता हूँ,', तो उसे सुख और आनंद का अनुभव होता है। इसे ही आनंद का सुख कहते हैं।"

(3) "ऋण से मुक्ति का सुख क्या है? यहाँ, एक कुलवासी पर किसी का कोई ऋण नहीं है, चाहे वह छोटा हो या बड़ा। जब वह सोचता है, 'मुझ पर किसी का कोई ऋण नहीं है, चाहे वह छोटा हो या बड़ा', तो उसे सुख और आनंद का अनुभव होता है। इसे ही ऋण से मुक्ति का सुख कहते हैं।"

(4) "और निष्पापता का सुख क्या है? हे गृहस्थ, देखो, एक श्रेष्ठ शिष्य निष्पाप शारीरिक, वाणी और मानसिक कर्मों से संपन्न है। [70] जब वह सोचता है, मैं निष्पाप शारीरिक, वाणी और मानसिक कर्मों से संपन्न हूँ, तो उसे सुख और आनंद का अनुभव होता है। इसे निष्पापता का सुख कहते हैं।"

"इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाला एक सामान्य व्यक्ति समय और अवसर के अनुसार चार प्रकार के सुख प्राप्त कर सकता है।"

ऋण से मुक्ति की खुशी को जानने के बाद,

व्यक्ति को स्वामित्व की खुशी को याद करना चाहिए।

आनंद का अनुभव करते हुए,

मनुष्य तब पन्ना (दिव्य ज्ञान) से चीजों को स्पष्ट रूप से देख पाता है।

चीजों को स्पष्ट रूप से देखते हुए, बुद्धिमान व्यक्ति

दोनों प्रकार के सुखों को जानता है।

दूसरा,

निर्दोषता के आनंद के सोलहवें भाग के भी बराबर नहीं है। 751

---

63 ब्रह्मा 752 के साथ

(1) भिक्षुओं, वे परिवार ब्रह्मा के साथ निवास करते हैं जहाँ घर में माता-पिता का आदर उनके बच्चे करते हैं। (2) वे परिवार प्रथम गुरुओं के साथ निवास करते हैं जहाँ घर में माता-पिता का आदर उनके बच्चे करते हैं। (3) वे परिवार प्रथम देवताओं के साथ निवास करते हैं जहाँ घर में माता-पिता का आदर उनके बच्चे करते हैं। (4) वे परिवार दानयोग्य लोगों के साथ निवास करते हैं जहाँ घर में माता-पिता का आदर उनके बच्चे करते हैं।

"'ब्रह्म, भिक्षुओं' माता-पिता के लिए एक उपाधि है। 'प्रथम गुरु' माता-पिता के लिए एक उपाधि है। 'प्रथम देवता' माता-पिता के लिए एक उपाधि है। 'दान योग्य' माता-पिता के लिए एक उपाधि है। और क्यों? माता-पिता अपने बच्चों के लिए बहुत सहायक होते हैं: वे उनका पालन-पोषण करते हैं, उन्हें दुनिया दिखाते हैं।"

माता-पिता को "ब्रह्म"

और "प्रथम गुरु" कहा जाता है। वे अपने बच्चों के प्रति करुणा रखते हैं

, इसलिए वे अपने बच्चों से उपहार प्राप्त करने के योग्य हैं । अतः एक बुद्धिमान व्यक्ति को उनका आदर करना चाहिए और उनके साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार करना चाहिए।

हमें उन्हें भोजन और पेय पदार्थ,

कपड़े और बिस्तर उपलब्ध कराने चाहिए,

उनकी मालिश और स्नान कराना चाहिए

और उनके पैर धोने चाहिए।

माता-पिता की उस सेवा के कारण ,

बुद्धिमान लोग इस संसार में प्रशंसा पाते हैं

और मृत्यु के बाद स्वर्ग में आनंदित होते हैं। [71]

---

64 हेल 753 (निरया)

भिक्षुओं, जिसमें चार गुण होते हैं, उसे नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? वह जीवन का नाश करता है, बिना माँगे वस्तुएँ लेता है, यौन दुराचार में लिप्त होता है और झूठ बोलता है। जिसमें ये चार गुण होते हैं, उसे नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

जीवन का विनाश करना, बिना माँगे वस्तुएँ लेना,

झूठी बातें बोलना

और दूसरों की पत्नियों के साथ व्यभिचार करना:

बुद्धिमान लोग ऐसे कृत्यों की प्रशंसा नहीं करते।

---

65 प्रपत्र (रूपा)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? (1) वह जो रूप के आधार पर निर्णय लेता है, जिसका विश्वास रूप पर आधारित होता है। (2) वह जो वाणी के आधार पर निर्णय लेता है, जिसका विश्वास वाणी पर आधारित होता है। (3) वह जो तपस्या के आधार पर निर्णय लेता है, जिसका विश्वास तपस्या पर आधारित होता है। (4) वह जो धर्म के आधार पर निर्णय लेता है, जिसका विश्वास धर्म पर आधारित होता है। संसार में ये चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं।

जो लोग रूप के आधार पर निर्णय लेते हैं

और जो वाणी के आधार पर अनुसरण करते हैं, वे

कामवासना और राग के वश में आ चुके हैं;

वे लोग नहीं समझते। 755

जो भीतर का ज्ञान नहीं रखता

और बाहर का दृश्य नहीं देखता, वह '

चारों ओर से अवरुद्ध एक मूर्ख की तरह है, जो

वाणी के वश में आ जाता है।'

जो व्यक्ति भीतरी बातों को नहीं जानता,

फिर भी बाहरी रूप को स्पष्ट रूप से देखता है,

फल को बाहरी रूप से देखकर,

वह भी वाणी के बहकावे में आ जाता है।

लेकिन जो व्यक्ति भीतर की बातों को समझता है और जो बिना किसी बाधा के

बाहर की चीजों को स्पष्ट रूप से देखता है , वह बातों से बहक नहीं जाता।

---

66 कामवासना के साथ (सरगा)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? कामवासना (राग), घृणा करने वाले, भ्रमित और अहंकारी। संसार में यही चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं।" [72]

मोहक चीजों से मोहित प्राणी,

जो कुछ भी मनभावन लगता है उसमें आनंद की तलाश करते हैं,

मोह से बंधे नीच प्राणी, 756

अपने बंधन को बढ़ाते हैं।

अज्ञानी लोग कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) से उत्पन्न

हानिकारक (अकुशल) कर्म (कर्म/कार्य) करते हैं: कष्टदायक कर्म जो पीड़ा उत्पन्न करते हैं।

अज्ञान से विवश,

अंधे, दृष्टिहीन लोग,

अपने स्वभाव के अनुसार,

इस बारे में इस प्रकार नहीं सोचते। 757

67 सांप (अहिराज)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उसी समय सावत्थी में एक भिक्षु को सांप ने काट लिया और उसकी मृत्यु हो गई। 758 तब कई भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और कहा: "भंते, सावत्थी में एक भिक्षु को सांप ने काट लिया और उसकी मृत्यु हो गई।"

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] “हे भिक्षुओं, उस भिक्षु ने प्रेम और करुणा (मेट्टा) की भावना से सर्पों के चारों वंशों को व्याप्त नहीं किया। यदि उसने ऐसा किया होता, तो उसे सर्प ने न काटा होता और उसकी मृत्यु न हुई होती। वे चार वंश कौन से हैं? विरुपाक्ख वंश, एरापथ वंश, छव्यपुत्त वंश और काला गौतम वंश। निश्चय ही, उस भिक्षु ने प्रेम और करुणा की भावना से सर्पों के इन चारों वंशों को व्याप्त नहीं किया। यदि उसने ऐसा किया होता, तो उसे सर्प ने न काटा होता और उसकी मृत्यु न हुई होती।”

"मैं आप भिक्षुओं से आग्रह करता हूँ कि आप अपनी सुरक्षा, बचाव और संरक्षण के लिए इन चारों नाग वंशों में प्रेम और करुणा (मेट्टा) का भाव व्याप्त करें।"

मुझे विरुपाक्खा नागों के प्रति प्रेम और दया है;

एरापथ नागों के प्रति भी मेरे मन में प्रेम है;

मुझे छब्यपुत्त नागों के प्रति प्रेम और दया है;

काले गौतम नागों के प्रति भी मेरे मन में प्रेम है।

मैं बिना पैरों वाले प्राणियों के प्रति प्रेम और दया भाव रखता हूँ;

दो पैरों वाले प्राणियों के प्रति भी मेरे मन में प्रेम और दया भाव है।

मैं चार पैरों वाले प्राणियों के प्रति प्रेम और दया भाव रखता हूँ;

अनेक पैरों वाले प्राणियों के प्रति भी मेरे मन में प्रेम और दया भाव है।

मुझे निराकार प्राणियों से हानि न हो;

दो पैरों वाले प्राणियों से मुझे कोई हानि न हो;

चार पैरों वाले प्राणियों से मुझे कोई हानि न हो;

अनेक पैरों वाले प्राणियों से मुझे कोई हानि न हो।

सभी प्राणियों, सभी जीवित चीजों,

सभी जीवों, सभी को

सौभाग्य प्राप्त हो;

किसी पर भी कोई विपत्ति न आए।

बुद्ध असीम हैं, धम्म असीम है,

संघ असीम है; रेंगने वाले जीव, सर्प, बिच्छू,

कनखजूरे, मकड़ी, छिपकली और चूहे सीमित हैं। मैंने

सुरक्षा बनाई है, मैंने रक्षा की है। जीव पीछे हटें। मैं

भगवान (बुद्ध) को प्रणाम करता हूँ, सात पूर्णतः

प्रबुद्धों को प्रणाम करता हूँ। 760

---

68 देवदत्ता

एक बार देवदत्त के चले जाने के तुरंत बाद भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। 761 वहाँ भगवान (बुद्ध) ने देवदत्त के संदर्भ में भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, "भिक्षुओं, देवदत्त की उपलब्धि, सम्मान और प्रशंसा ही उसके अपने विनाश का कारण बनी। (1) जिस प्रकार केले का वृक्ष फल देकर अपना ही विनाश कर लेता है, उसी प्रकार देवदत्त की उपलब्धि, सम्मान और प्रशंसा ही उसके अपने विनाश का कारण बनी। (2) जिस प्रकार बाँस फल देकर अपना ही विनाश कर लेता है, उसी प्रकार देवदत्त की उपलब्धि, सम्मान और प्रशंसा ही उसके अपने विनाश का कारण बनी। (3) जिस प्रकार सरकंडा फल देकर अपना ही विनाश कर लेता है, उसी प्रकार देवदत्त की उपलब्धि, सम्मान और प्रशंसा ही उसके अपने विनाश का कारण बनी। (4) जिस प्रकार खच्चर गर्भवती होकर अपना ही विनाश कर लेती है, उसी प्रकार देवदत्त की उपलब्धि, सम्मान और प्रशंसा ही उसके अपने विनाश का कारण बनी।"

जैसे इसका फल केले को नष्ट कर देता है,

जैसे इसका फल बांस और नरकट को नष्ट कर देता है,

जैसे इसका भ्रूण खच्चर को नष्ट कर देता है,

वैसे ही सम्मान दुष्ट मनुष्य को नष्ट कर देता है।

---

69. प्रयास (पधाना)

भिक्षुओं, ये चार प्रकार के प्रयास हैं। कौन से चार? संयम द्वारा प्रयास, त्याग द्वारा प्रयास, विकास द्वारा प्रयास और संरक्षण द्वारा प्रयास।

(1) "हे भिक्षुओं, संयम द्वारा प्रयास करना क्या है? यहाँ, भिक्षु अजन्मे अकुशल गुणों (धम्म) के अजन्मे होने की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। इसे संयम द्वारा प्रयास करना कहते हैं।"

(2) "त्याग द्वारा प्रयास क्या है? यहाँ, एक भिक्षु उत्पन्न बुरे (अकुशल) गुणों के त्याग की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। इसे त्याग द्वारा प्रयास कहा जाता है।"

(3) "और विकास द्वारा प्रयास क्या है? यहाँ, एक भिक्षु अविकसित लाभकारी (कुशल) गुणों के उत्पन्न होने की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। इसे ही विकास द्वारा प्रयास कहा जाता है।"

(4) "और संरक्षण द्वारा प्रयास क्या है? यहाँ, एक भिक्षु उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के रखरखाव, उनके क्षय न होने, वृद्धि, विस्तार और विकास द्वारा पूर्णता के लिए इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। इसे संरक्षण द्वारा प्रयास कहा जाता है।"

ये चार प्रयास हैं।

संयम और त्याग,

विकास और संरक्षण: सूर्य के सन्यासी द्वारा सिखाए गए

इन चार प्रयासों के माध्यम से, जो भिक्षु इनमें उत्साही होता है, वह दुखों का नाश प्राप्त कर सकता है।

---

70 अधर्मी 762 (अधम्मिक सं. अधर्मिक)

भिक्षुओं, जब राजा अधर्मी होते हैं, 763 तो राजसी सामंत अधर्मी हो जाते हैं। जब राजसी सामंत अधर्मी होते हैं, तो ब्राह्मण और गृहस्थ अधर्मी हो जाते हैं। 764 जब ब्राह्मण और गृहस्थ अधर्मी होते हैं, तो नगरों और गांवों के लोग अधर्मी हो जाते हैं। जब नगरों और गांवों के लोग अधर्मी होते हैं, तो सूर्य और चंद्रमा अपनी राह से भटक जाते हैं। जब सूर्य और चंद्रमा अपनी राह से भटक जाते हैं, तो नक्षत्र और तारे अपनी राह से भटक जाते हैं। जब नक्षत्र और तारे अपनी राह से भटक जाते हैं, तो दिन और रात अपनी राह से भटक जाते हैं... महीने और पखवाड़े अपनी राह से भटक जाते हैं... ऋतुएँ और वर्ष अपनी राह से भटक जाते हैं। जब ऋतुएँ और वर्ष अपनी राह से भटक जाते हैं, तो हवाएँ अनियमित रूप से चलने लगती हैं। जब हवाएँ अनियमित रूप से चलने लगती हैं, तो देवता (देवदूत) नाराज हो जाते हैं। जब देवता (देवदूत) नाराज हो जाते हैं, तो पर्याप्त वर्षा नहीं होती। जब पर्याप्त वर्षा नहीं होती, तो फसलें अनियमित रूप से पकती हैं। जब लोग पकी हुई फसलें खाते हैं, तो अनियमित रूप से, वे अल्पायु, बदसूरत, कमजोर और बीमार हो जाते हैं। 765

भिक्षुओं, जब राजा धर्मपरायण होते हैं, तो राजसी सामंत धर्मपरायण हो जाते हैं। जब राजसी सामंत धर्मपरायण होते हैं, तो ब्राह्मण और गृहस्थ धर्मपरायण हो जाते हैं। जब ब्राह्मण और गृहस्थ धर्मपरायण होते हैं, तो नगर और ग्रामीण क्षेत्र के लोग धर्मपरायण हो जाते हैं। जब नगर और ग्रामीण क्षेत्र के लोग धर्मपरायण होते हैं, तो सूर्य और चंद्रमा अपने मार्ग पर चलते हैं। जब सूर्य और चंद्रमा अपने मार्ग पर चलते हैं, तो नक्षत्र और तारे अपने मार्ग पर चलते हैं। जब नक्षत्र और तारे अपने मार्ग पर चलते हैं, तो दिन और रात अपने मार्ग पर चलते हैं... महीने और पखवाड़े अपने मार्ग पर चलते हैं... ऋतुएँ और वर्ष अपने मार्ग पर चलते हैं। जब ऋतुएँ और वर्ष अपने मार्ग पर चलते हैं, तो हवाएँ नियमित रूप से और स्थिर रूप से चलती हैं। जब हवाएँ नियमित रूप से और स्थिर रूप से चलती हैं, तो देवता (देवदूत) क्रोधित नहीं होते। जब देवता (देवदूत) क्रोधित नहीं होते, तो पर्याप्त वर्षा होती है। जब पर्याप्त वर्षा होती है, तो फसलें समय पर पकती हैं। जब लोग समय पर पकी हुई फसलें खाते हैं, तो वे दीर्घायु होते हैं। सुंदर, मजबूत और स्वस्थ।"

जब मवेशी किसी नदी को पार कर रहे होते हैं, यदि मुखिया बैल टेढ़ा-मेढ़ा जाता है, तो बाकी सभी बैल भी टेढ़े-मेढ़े जाते हैं क्योंकि उनका नेता टेढ़ा-मेढ़ा गया है।

इसी प्रकार, मनुष्यों में भी,

जब मुखिया माने जाने वाला व्यक्ति

अधर्मी व्यवहार करता है, तो

अन्य लोग भी ऐसा ही करते हैं। [76] यदि राजा अधर्मी हो तो

पूरा राज्य निराश हो जाता है ।

जब मवेशी किसी जलधारा को पार कर रहे हों,

यदि मुखिया बैल सीधे पार चला जाता है, तो

बाकी सभी बैल भी सीधे पार चले जाते हैं

क्योंकि उनका नेता सीधा चला गया है।

इसी प्रकार, मनुष्यों में भी,

जब मुखिया

उचित आचरण करता है, तो

अन्य लोग भी वैसा ही करते हैं। यदि राजा धर्मी हो, तो

सारा राज्य प्रसन्न होता है ।

III. अचूक (अपन्नक)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

71. प्रयास (पधाना)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त भिक्षु अचूक मार्ग का अनुसरण कर रहा है और उसने दोषों के नाश की नींव रखी है। 766 वे चार गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु गुणी, विद्वान, ऊर्जावान और बुद्धिमान है। इन चार गुणों से युक्त भिक्षु अचूक मार्ग का अनुसरण कर रहा है और उसने दोषों के नाश की नींव रखी है।

---

72 सम्यक दृष्टि (सम्मा-दिट्ठी सं. सम्यक दृष्टि)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त भिक्षु अचूक मार्ग का अनुसरण कर रहा है और उसने दोषों के नाश की नींव रखी है। वे चार गुण कौन से हैं? त्याग का विचार, सद्भावना का विचार, अहिंसा का विचार और सही दृष्टिकोण। 767 इन चार गुणों से युक्त भिक्षु [77] अचूक मार्ग का अनुसरण कर रहा है और उसने दोषों के नाश की नींव रखी है।

---

73. अच्छा व्यक्ति (सप्पुरिशा संस्कृत: सतपुरुष)

"भिक्षुओं, चार गुणों वाला व्यक्ति बुरा समझा जा सकता है। वे चार गुण कौन से हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, यहाँ एक बुरा व्यक्ति दूसरों के दोषों को बिना पूछे भी उजागर कर देता है, तो पूछे जाने पर वह कितना अधिक उजागर करेगा। परन्तु जब उससे पूछा जाता है, तो प्रश्नों के द्वारा प्रेरित होकर वह दूसरों के दोषों के बारे में बिना किसी अंतराल या चूक के, पूर्णतः और विस्तार से बताता है। इससे यह समझा जा सकता है: 'यह व्यक्ति बुरा है।

(2) "एक बुरा व्यक्ति दूसरों के गुणों का खुलासा तब भी नहीं करता जब उससे उनके बारे में पूछा जाता है, तो बिना पूछे तो वह और भी कम करता है। लेकिन जब उससे उनके बारे में पूछा जाता है, तो भले ही उसे प्रश्नों द्वारा प्रेरित किया जाए, वह दूसरों के गुणों के बारे में अधूरी जानकारी और कमियों के साथ बोलता है, पूरी तरह या विस्तार से नहीं। इससे यह समझा जा सकता है: 'यह व्यक्ति बुरा है।'"

(3) "फिर, एक बुरा व्यक्ति अपने दोषों को पूछे जाने पर भी प्रकट नहीं करता, तो बिना पूछे तो और भी कम। लेकिन जब उससे उनके बारे में पूछा जाता है, तो भले ही प्रश्नों द्वारा प्रेरित किया जाए, वह अपने दोषों के बारे में अपूर्णता और चूक के साथ बोलता है, पूर्ण रूप से या विस्तार से नहीं। इससे यह समझा जा सकता है: यह व्यक्ति एक बुरा व्यक्ति है।"

(4) "एक बुरा व्यक्ति अपने गुणों का खुलासा तब भी कर देता है जब उससे पूछा नहीं जाता, तो पूछे जाने पर वह और भी अधिक करता है। लेकिन जब उससे पूछा जाता है, तो प्रश्नों के माध्यम से वह बिना किसी अंतराल या चूक के, पूरी तरह और विस्तार से अपने गुणों के बारे में बताता है। इससे यह समझा जा सकता है: 'यह व्यक्ति बुरा है।'"

"इन चार गुणों वाले व्यक्ति को बुरा व्यक्ति समझा जा सकता है।"

"भिक्षुओं, जो व्यक्ति चार गुणों से युक्त होता है, उसे अच्छा व्यक्ति समझा जा सकता है। वे चार गुण कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, भिक्षुओं, एक अच्छा व्यक्ति पूछे जाने पर भी दूसरों के दोषों का खुलासा नहीं करता, तो बिना पूछे तो और भी कम। परन्तु जब उससे उनके बारे में पूछा जाता है, तब, यद्यपि प्रश्नों द्वारा प्रेरित होकर, वह दूसरों के दोषों के बारे में अंतराल और चूक के साथ बोलता है, [78] पूरी तरह या विस्तार से नहीं। इससे समझा जा सकता है: 'यह व्यक्ति एक अच्छा व्यक्ति है।'

(2) "फिर, एक अच्छा व्यक्ति दूसरों के गुणों को बिना पूछे भी प्रकट करता है, तो पूछे जाने पर वह कितना अधिक प्रकट करेगा। लेकिन जब उससे उनके गुणों के बारे में पूछा जाता है, तो वह प्रश्नों के माध्यम से बिना किसी अंतराल या चूक के, पूरी तरह और विस्तार से दूसरों के गुणों के बारे में बताता है। इससे यह समझा जा सकता है: 'यह व्यक्ति एक अच्छा इंसान है।'"

(3) "फिर, एक अच्छा व्यक्ति अपने दोषों को पूछे जाने पर भी प्रकट करता है, तो पूछे जाने पर कितना अधिक। लेकिन जब उससे उनके बारे में पूछा जाता है, तो प्रश्नों के माध्यम से वह बिना किसी अंतराल या चूक के, पूरी तरह और विस्तार से अपने दोषों के बारे में बताता है। इससे यह समझा जा सकता है: 'यह व्यक्ति एक अच्छा इंसान है।'"

(4) "फिर, एक अच्छा व्यक्ति अपने गुणों का खुलासा पूछे जाने पर भी नहीं करता, तो बिना पूछे तो और भी कम। लेकिन जब उससे उनके बारे में पूछा जाता है, तो प्रश्नों के माध्यम से वह अपने गुणों के बारे में अधूरी जानकारी और कम शब्दों में बताता है, पूरी तरह या विस्तार से नहीं। इससे यह समझा जा सकता है: 'यह व्यक्ति अच्छा है।'"

"इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को अच्छा व्यक्ति समझा जा सकता है।"

भिक्षु (मठवासी), 768 जब दुल्हन को पहली बार घर में लाया जाता है, चाहे रात हो या दिन, तो शुरुआत में वह अपनी सास, ससुर, पति और यहाँ तक कि दासों, श्रमिकों और नौकरों के प्रति तीव्र नैतिक शर्म और भय की भावना रखती है। लेकिन कुछ समय बाद, उनके साथ रहने और घनिष्ठता के परिणामस्वरूप, वह अपनी सास, ससुर और पति से कहती है: 'चले जाओ! तुम्हें क्या पता?'

"इसी प्रकार, जब यहाँ कोई भिक्षु गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करता है, चाहे रात में हो या दिन में, तो प्रारंभ में वह भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष गृहस्थ अनुयायियों, स्त्री गृहस्थ अनुयायियों और यहाँ तक कि मठ के कर्मचारियों और नौसिखियों के प्रति तीव्र नैतिक लज्जा और भय की भावना रखता है। परन्तु कुछ समय बाद, उनके साथ रहने और घनिष्ठता के फलस्वरूप, वह अपने गुरु और उपदेशक से भी कहता है: 'चले जाओ! तुम्हें क्या पता?'"

अत: हे भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम नवविवाहित दुल्हन के समान मन से निवास करेंगे।' आपको इसी प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

74 सर्वोपरि (1) (अग्गा1 संस्कृत आगरा)

भिक्षुओं, ये चार बातें सर्वोपरि हैं: कौन सी चार? सर्वोपरि सद्‌गुणपूर्ण आचरण, सर्वोपरि समाधि, सर्वोपरि ज्ञान और सर्वोपरि मुक्ति। यही चार बातें सर्वोपरि हैं।

---

75 सर्वोपरि (2)(अग्गा2 संस्कृत आगरा)

"भिक्षुओं, ये चार बातें सर्वोपरि हैं। वे कौन सी चार बातें हैं? सर्वोपरि रूप, सर्वोपरि वेदना, सर्वोपरि अनुभूतियाँ और सर्वोपरि अवस्थाएँ। यही चार बातें सर्वोपरि हैं।" 769

---

76 कुसिनारा

एक बार भगवान (बुद्ध) उपवत्तना में मल्लों के साल के वन में दो साल के पेड़ों के बीच कुसिनारा में निवास कर रहे थे, जब उन्हें अंतिम निर्वाण प्राप्त हुआ था। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, ऐसा हो सकता है कि किसी एक भिक्षु को भी बुद्ध, धम्म या संघ, मार्ग या अभ्यास के बारे में कुछ संदेह या अनिश्चितता हो। 770 तो पूछो, भिक्षुओं। बाद में पश्चाताप मत करो, यह सोचकर कि 'हमारे गुरु हमारे सामने उपस्थित थे, फिर भी हम उनकी उपस्थिति में भगवान (बुद्ध) से प्रश्न नहीं कर सके।'

यह सुनकर भिक्षु चुप हो गए। दूसरी बार... तीसरी बार भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया... और तीसरी बार भी भिक्षु चुप रहे।

तब भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, "भिक्षुओं, हो सकता है कि आप गुरु के प्रति आदर के कारण प्रश्न न पूछें। तो अपने प्रश्न किसी मित्र से पूछें।" यह सुनकर भी भिक्षु चुप रहे। तब पूज्य आनंद ने भगवान (बुद्ध) से कहा, "यह आश्चर्यजनक और अद्‌भुत है, भंते! मुझे विश्वास है कि इस संघ में एक भी भिक्षु ऐसा नहीं है जिसे बुद्ध, धम्म, संघ, मार्ग या साधना के बारे में कोई संदेह या अनिश्चितता हो।"

"आनंद, तुम विश्वास से बोल रहे हो, लेकिन तथागत (बुद्ध) यह बात निःसंदेह जानते हैं। क्योंकि इन पाँच सौ भिक्षुओं में से सबसे छोटा भिक्षु भी सात जन्मों का मार्ग प्रशस्त करने वाला (सोतपत्ति) है, जो निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं है, जिसका भाग्य निश्चित है और जो ज्ञानोदय की ओर अग्रसर है।"

---

77 अकल्पनीय मामले (अचिन्तय्या)

भिक्षुओं, ये चार अकल्पनीय विषय हैं 771 जिनका विचार करने का प्रयास नहीं करना चाहिए; जो इनका विचार करने का प्रयास करता है, उसे या तो पागलपन या निराशा का सामना करना पड़ता है। वे चार कौन से हैं? (1) बुद्धों का क्षेत्र एक अकल्पनीय विषय है जिसका विचार करने का प्रयास नहीं करना चाहिए; जो इसका विचार करने का प्रयास करता है, उसे या तो पागलपन या निराशा का सामना करना पड़ता है। (2) ध्यान में लीन व्यक्ति का क्षेत्र एक अकल्पनीय विषय है। (3) कर्मों का परिणाम एक अकल्पनीय विषय है। (4) संसार के बारे में चिंतन एक अकल्पनीय विषय है जिसका विचार करने का प्रयास नहीं करना चाहिए; जो इसका विचार करने का प्रयास करता है, उसे या तो पागलपन या निराशा का सामना करना पड़ता है। 772 ये चार अकल्पनीय विषय हैं जिनका विचार करने का प्रयास नहीं करना चाहिए; जो इनका विचार करने का प्रयास करता है, उसे या तो पागलपन या निराशा का सामना करना पड़ता है।

---

78 प्रसाद (दक्षिणा बिना दक्षिणा)

भिक्षुओं, भेंटों के ये चार शुद्धिकरण हैं। 773 वे चार क्या हैं? (1) एक भेंट है जो दाता के माध्यम से शुद्ध होती है लेकिन प्राप्तकर्ता के माध्यम से नहीं; (2) एक भेंट है जो प्राप्तकर्ता के माध्यम से शुद्ध होती है लेकिन दाता के माध्यम से नहीं; (3) एक भेंट है जो न तो दाता और न ही प्राप्तकर्ता के माध्यम से शुद्ध होती है; (4) एक भेंट है जो दाता और प्राप्तकर्ता दोनों के माध्यम से शुद्ध होती है। [81]

(1) "हे भिक्षुओं, दानदाता के द्वारा दान कैसे शुद्ध होता है, जबकि प्राप्तकर्ता के द्वारा नहीं? यहाँ दानदाता गुणी और अच्छे चरित्र का है, परन्तु प्राप्तकर्ता अनैतिक और बुरे चरित्र के हैं। इसी प्रकार दानदाता के द्वारा दान शुद्ध होता है, जबकि प्राप्तकर्ता के द्वारा नहीं।"

(2) “और भेंट प्राप्तकर्ताओं के द्वारा कैसे शुद्ध होती है, दाता के द्वारा नहीं? यहाँ, दाता अनैतिक और बुरे चरित्र का है, परन्तु प्राप्तकर्ता गुणी और अच्छे चरित्र के हैं। इस प्रकार भेंट प्राप्तकर्ताओं के द्वारा शुद्ध होती है, दाता के द्वारा नहीं।”

(3) "और कोई भेंट दाता या प्राप्तकर्ता के द्वारा कैसे शुद्ध नहीं होती? यहाँ, दाता अनैतिक और बुरे चरित्र का है, और प्राप्तकर्ता भी अनैतिक और बुरे चरित्र के हैं। इस प्रकार कोई भेंट दाता या प्राप्तकर्ता के द्वारा शुद्ध नहीं होती।"

(4) "दानदाता और प्राप्तकर्ता दोनों के माध्यम से भेंट कैसे शुद्ध होती है? यहाँ, दानदाता गुणी और अच्छे चरित्र का है, और प्राप्तकर्ता भी गुणी और अच्छे चरित्र के हैं। इस प्रकार दानदाता और प्राप्तकर्ता दोनों के माध्यम से भेंट शुद्ध होती है।"

"ये चार प्रकार की भेंटों का शुद्धिकरण है।"

---

79 व्यवसाय (वनिज्जा सं. वाणीज्य)

तब पूज्य सारिपुत्त भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "भंते, (1) ऐसा क्यों है कि यहाँ एक व्यक्ति के लिए उसका व्यवसाय असफल (विपत्ति) हो जाता है? (2) ऐसा क्यों है कि दूसरे के लिए उसी प्रकार का व्यवसाय उसकी अपेक्षाओं को पूरा नहीं करता? (3) ऐसा क्यों है कि किसी अन्य के लिए उसी प्रकार का व्यवसाय उसकी अपेक्षाओं को पूरा करता है? (4) और ऐसा क्यों है कि किसी अन्य के लिए उसी प्रकार का व्यवसाय उसकी अपेक्षाओं से कहीं अधिक सफल होता है?"

(1) "यहाँ, सारिपुत्त, कोई व्यक्ति किसी तपस्वी या ब्राह्मण के पास जाता है और उसे अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ माँगने के लिए आमंत्रित करता है, [82] परन्तु उसे वह वस्तु नहीं देता जो माँगी गई थी। जब वह वहाँ से चला जाता है, यदि वह इस संसार में वापस आता है, तो वह जो भी व्यवसाय करता है, वह असफल (विपत्ति) हो जाता है।"

(2) कोई दूसरा व्यक्ति किसी तपस्वी या ब्राह्मण के पास जाता है और उसे अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ माँगने के लिए आमंत्रित करता है। वह उसे वस्तुएँ तो दे देता है, पर उसकी अपेक्षाएँ पूरी नहीं करता। जब वह वहाँ से इस दुनिया से चला जाता है, और यदि वह इस दुनिया में वापस आता है, तो वह जो भी काम करता है, वह उसकी अपेक्षाएँ पूरी नहीं करता।

(3) कोई दूसरा व्यक्ति किसी तपस्वी या ब्राह्मण के पास जाता है और उसे अपनी आवश्यकता की वस्तु मांगने के लिए आमंत्रित करता है। वह उसे वह वस्तु देता है और उसकी अपेक्षाओं को पूरा करता है। जब वह वहां से इस दुनिया से चला जाता है, यदि वह इस दुनिया में वापस आता है, तो वह जो भी व्यवसाय करता है, वह उसकी अपेक्षाओं को पूरा करता है।

(4) कोई व्यक्ति किसी तपस्वी या ब्राह्मण के पास जाता है और उसे अपनी आवश्यकता की वस्तु मांगने के लिए आमंत्रित करता है। वह उसे वह वस्तु प्रदान करता है और उसकी अपेक्षाओं से कहीं अधिक देता है। जब वह वहां से इस दुनिया से चला जाता है, यदि वह इस दुनिया में वापस आता है, तो वह जो भी व्यवसाय करता है, वह उसकी अपेक्षाओं से कहीं अधिक सफल होता है।

"यही कारण है कि यहाँ किसी एक व्यक्ति का व्यवसाय असफल (विपत्ति) हो जाता है, किसी दूसरे व्यक्ति के लिए उसी प्रकार का व्यवसाय उसकी अपेक्षाओं को पूरा नहीं करता, किसी तीसरे व्यक्ति के लिए उसी प्रकार का व्यवसाय उसकी अपेक्षाओं को पूरा करता है, और किसी तीसरे व्यक्ति के लिए उसी प्रकार का व्यवसाय उसकी अपेक्षाओं से कहीं अधिक सफल होता है।"

---

80 कंबोजा

एक बार भगवान (बुद्ध) कोसंबी में घोषिता उद्यान में निवास कर रहे थे। तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले:

"भंते, ऐसा क्यों है कि महिलाएं परिषद में नहीं बैठतीं, न ही व्यापार करती हैं, और न ही कंबोजा जाती हैं?" 774

"आनंद, स्त्रियाँ क्रोधशील होती हैं; ईर्ष्यालु होती हैं; कंजूस होती हैं; नासमझ होती हैं। इसीलिए स्त्रियाँ सभाओं में नहीं बैठतीं, व्यापार में शामिल नहीं होतीं और न ही कंबोजा जाती हैं।"

चतुर्थ. अडिग (मैकला संस. अकला)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

81 जीवन का विनाश (पानीपत सं. प्राणि-पाता)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण कौन से हैं? एक जीवन का नाश करता है, बिना दी हुई वस्तुएँ लेता है, यौन दुराचार में लिप्त होता है और झूठ बोलता है। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण कौन से हैं? वह व्यक्ति जीवन-नष्ट करने से, बिना माँगी वस्तुएँ लेने से, यौन दुराचार से और झूठी वाणी से विमुख रहता है। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

82 असत्य भाषण (मुसावदा सं. मिथ्या-वड़ा)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? झूठ बोलने वाला, फूट डालने वाला, कठोर बोलने वाला और व्यर्थ की बातों में लिप्त रहने वाला। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। [84]

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? वह व्यक्ति जो झूठी वाणी, फूट डालने वाली वाणी, कठोर वाणी और व्यर्थ की बातों से दूर रहता है। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

83 तिरस्कार (अवन्नाराहा सं. अवरणीय-अराहा)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? (1) बिना जाँच-पड़ताल किए, निंदा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करना। (2) बिना जाँच-पड़ताल किए, प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की निंदा करना। (3) बिना जाँच-पड़ताल किए, संदेह के योग्य बात पर विश्वास करना। (4) बिना जाँच-पड़ताल किए, विश्वास के योग्य बात पर संदेह करना। इन चारों गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति स्वर्ग में ऐसे प्रवेश करता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? (1) गहन छानबीन करने के बाद, वह निंदा के योग्य व्यक्ति की निंदा करता है। (2) गहन छानबीन करने के बाद, वह प्रशंसा के योग्य व्यक्ति की प्रशंसा करता है। (3) गहन छानबीन करने के बाद, वह संदेह के योग्य मामले पर संदेह करता है। (4) गहन छानबीन करने के बाद, वह विश्वास के योग्य मामले पर विश्वास करता है। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति स्वर्ग में ऐसे प्रवेश करता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

84 क्रोध (कोढ़ा स्नस. क्रोध)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? एक व्यक्ति क्रोध को महत्व देता है, अच्छे धर्म को नहीं; एक व्यक्ति निंदा को महत्व देता है, अच्छे धर्म को नहीं; एक व्यक्ति लाभ को महत्व देता है, अच्छे धर्म को नहीं; एक व्यक्ति सम्मान को महत्व देता है, अच्छे धर्म को नहीं। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। [85]

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? वह धर्म का सम्मान करता है, क्रोध का नहीं; वह धर्म का सम्मान करता है, निंदा का नहीं; वह धर्म का सम्मान करता है, लाभ का नहीं; वह धर्म का सम्मान करता है, मान का नहीं। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

85 अंधकार 775 (तमोतामा)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? अंधकार से अंधकार की ओर जाने वाला, अंधकार से प्रकाश की ओर जाने वाला, प्रकाश से अंधकार की ओर जाने वाला और प्रकाश से प्रकाश की ओर जाने वाला।

(1) "हे भिक्षुओं, मनुष्य अंधकार से अंधकार की ओर कैसे बढ़ रहा है? यहाँ, कोई व्यक्ति नीच कुल में पुनर्जन्म लेता है - चांडाल, बाँस श्रमिक, शिकारी, गाड़ी बनाने वाले या फूल बीनने वालों के कुल में 776 - एक ऐसा कुल जो गरीब है, जिसके पास भोजन और पेय कम है, जिसका जीवन यापन कठिन है, जहाँ भोजन और वस्त्र बड़ी मुश्किल से प्राप्त होते हैं; और वह कुरूप, बदसूरत, बौना, बहुत सी बीमारियों से ग्रस्त - अंधा, अपंग, लंगड़ा या लकवाग्रस्त है। उसे भोजन, पेय, वस्त्र और वाहन प्राप्त नहीं होते; मालाएँ, सुगंध और लेप; बिस्तर, आवास और प्रकाश। वह शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त रहता है। फलस्वरूप, शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। इस प्रकार मनुष्य अंधकार से अंधकार की ओर बढ़ रहा है।"

(2) "और कोई व्यक्ति अंधकार से प्रकाश की ओर कैसे अग्रसर होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति एक निम्न परिवार में पुनर्जन्म लेता है... जहाँ भोजन और वस्त्र कठिनाई से प्राप्त होते हैं; और वह कुरूप है... या लकवाग्रस्त है। उसे भोजन... और प्रकाश नहीं मिलता। वह शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण में लगा रहता है। फलस्वरूप, मृत्यु के बाद शरीर के नष्ट होने पर, वह एक अच्छे गंतव्य, एक स्वर्गीय लोक में पुनर्जन्म लेता है। इस प्रकार एक व्यक्ति अंधकार से प्रकाश की ओर अग्रसर होता है।"

(3) "और कोई व्यक्ति प्रकाश से अंधकार की ओर कैसे अग्रसर होता है? [86] यहाँ, कोई व्यक्ति उच्च कुल में पुनर्जन्म लेता है—एक समृद्ध क्षत्रिय कुल, एक समृद्ध ब्राह्मण कुल, या एक समृद्ध गृहस्थ कुल—एक ऐसा कुल जो धनवान है, अपार संपत्ति से युक्त है, प्रचुर मात्रा में सोने-चांदी से युक्त है, प्रचुर खजाने और सामान से युक्त है, प्रचुर धन और अनाज से युक्त है; और वह सुंदर, आकर्षक, सुशोभित और अत्यंत सुंदर रंगत वाला है। उसे भोजन, पेय, वस्त्र और वाहन प्राप्त होते हैं; मालाएँ, सुगंध और लेप; बिस्तर, आवास और प्रकाश। वह शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त रहता है। फलस्वरूप, शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। इस प्रकार एक व्यक्ति प्रकाश से अंधकार की ओर अग्रसर होता है।"

(4) "और कोई व्यक्ति प्रकाश से प्रकाश की ओर कैसे बढ़ता है? यहाँ, कोई व्यक्ति उच्च कुल में पुनर्जन्म लेता है... प्रचुर धन और अनाज के साथ; और वह सुंदर है... अत्यंत सुंदर रंगत वाला। उसे भोजन... और प्रकाश प्राप्त होता है। वह शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण में लगा रहता है। फलस्वरूप, मृत्यु के बाद शरीर के नष्ट होने पर, वह एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेता है। इस प्रकार एक व्यक्ति प्रकाश से प्रकाश की ओर बढ़ता है।"

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

86 बेंट डाउन (ओनाटोनाटा)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? जो और अधिक झुकता है, जो झुकता है और उठता है, जो उठता है और उठता है, और जो उठता है और अधिक उठता है।

"ये चार प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में पाए जाते हैं।"

---

87 पुत्र (पुत्त)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? अविचल तपस्वी, लाल कमल तपस्वी, श्वेत कमल तपस्वी और तपस्वियों में सबसे कोमल तपस्वी।"

(1) "और हे भिक्षुओं, एक व्यक्ति कैसे अविचल तपस्वी होता है? यहाँ, एक भिक्षु मार्ग का अभ्यास करने वाला प्रशिक्षु है जो बंधन से अतुलनीय सुरक्षा की आकांक्षा रखता है। जैसे [87] एक प्रधान-अभिषेकित क्षत्रिय राजा का सबसे बड़ा पुत्र—जो अभिषेक के योग्य है लेकिन अभी तक अभिषेक नहीं हुआ है—अविचल अवस्था प्राप्त कर लेता, 779 वैसे ही एक भिक्षु मार्ग का अभ्यास करने वाला प्रशिक्षु है जो बंधन से अतुलनीय सुरक्षा की आकांक्षा रखता है। 780 इसी प्रकार एक व्यक्ति अविचल तपस्वी होता है।"

(2) "और कोई व्यक्ति श्वेत कमल तपस्वी कैसे होता है? यहाँ, दोषों के नाश के साथ, एक भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव कर लिया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है; फिर भी वह शरीर के संपर्क में आकर आठ मुक्ति में निवास नहीं करता। इसी प्रकार एक व्यक्ति श्वेत कमल तपस्वी होता है।" 781

(3) "और कोई व्यक्ति लाल कमल तपस्वी कैसे होता है? यहाँ, दोषों के नाश के साथ, एक भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव कर लिया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है; और वह शरीर के साथ आठ मुक्ति का संपर्क स्थापित करके उसमें निवास करता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति लाल कमल तपस्वी होता है।"

(4) "और तपस्वियों में एक कोमल तपस्वी कैसे होता है? यहाँ, एक भिक्षु आमतौर पर वही वस्त्र धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, शायद ही कभी वह वस्त्र धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो; 783 वह आमतौर पर वही भिक्षाभोजन ग्रहण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, शायद ही कभी वह भिक्षाभोजन ग्रहण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो; वह आमतौर पर वही आवास धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, शायद ही कभी वह आवास धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो; वह आमतौर पर वही औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन सामग्री धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट की गई हों, शायद ही कभी वह जो उसे विशेष रूप से भेंट न की गई हों। उसके साथी भिक्षु, जिनके साथ वह रहता है, आमतौर पर उसके साथ शरीर, वाणी और मन से सुखद व्यवहार करते हैं, शायद ही कभी अप्रिय व्यवहार करते हैं। वे आमतौर पर उसे वही भेंट करते हैं जो उसे पसंद हो, शायद ही कभी अप्रिय भेंट करते हैं। पित्त, कफ, वायु या इनके संयोजन से उत्पन्न असुविधा; 784 जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न असुविधा; लापरवाहीपूर्ण व्यवहार से उत्पन्न असुविधा; हमले से उत्पन्न असुविधा; या कर्मों के फलस्वरूप उत्पन्न असुविधाएँ—ये उसमें अक्सर उत्पन्न नहीं होतीं। 785 वह शायद ही कभी बीमार होता है। वह इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इस जीवन में ही उच्च मन की चार ध्यान अवस्थाओं (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त कर लेता है, जो सुखद निवास स्थान हैं। दोषों के नाश के साथ, उसने इस जीवन में ही प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति का अनुभव किया है, [88] पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इस प्रकार वह तपस्वियों में एक कोमल तपस्वी है।

भिक्षुओं, यदि किसी के बारे में सही कहा जा सकता है: 'वह तपस्वियों में सबसे कोमल तपस्वी है', तो यह बात ठीक मेरे बारे में ही कही जा सकती है। क्योंकि मैं आमतौर पर वही वस्त्र धारण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट किया गया है, शायद ही कभी ऐसा वस्त्र धारण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट नहीं किया गया हो; मैं आमतौर पर वही भिक्षाभोजन ग्रहण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट किया

गया है, शायद ही कभी ऐसा भिक्षाभोजन ग्रहण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट नहीं किया गया हो; मैं आमतौर पर वही आवास धारण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट किया गया है, शायद ही कभी ऐसा आवास धारण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट नहीं किया गया हो; मैं आमतौर पर वही औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन सामग्री का उपयोग करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट की गई हैं, शायद ही कभी ऐसी औषधियों और भोजन सामग्री का उपयोग करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट नहीं की गई हों। जिन भिक्षुओं के साथ मैं रहता हूँ, वे आमतौर पर मेरे साथ देह, वाणी और मन से सुखद व्यवहार करते हैं, शायद ही कभी अप्रिय व्यवहार करते हैं। वे आमतौर पर मुझे वही भेंट करते हैं जो मुझे पसंद है, शायद ही कभी अप्रिय भेंट करते हैं। पित्त, कफ, वात या इनके संयोजन से उत्पन्न असुविधा; जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न असुविधा; लापरवाहीपूर्ण व्यवहार से उत्पन्न असुविधा; हमले से उत्पन्न असुविधा; या कर्मों के फलस्वरूप उत्पन्न असुविधाएँ मुझमें अक्सर उत्पन्न नहीं होतीं। मैं शायद ही कभी बीमार पड़ता हूँ। मैं इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इस जीवन में ही उच्च मन की चार ध्यान अवस्थाएँ प्राप्त कर लेता हूँ, जो सुखद निवास स्थान हैं। दोषों के नाश के साथ, मैंने इस जीवन में ही प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, दैवीय ज्ञान द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके मैं उसमें निवास करता हूँ। यदि किसी के बारे में सही कहा जा सकता है कि वह तपस्वियों में सबसे कोमल तपस्वी है, तो यह बात ठीक मेरे बारे में ही कही जा सकती है।

"हे भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

88 बंधन (संयोजन)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? अविचल तपस्वी, श्वेत कमल तपस्वी, लाल कमल तपस्वी और तपस्वियों में सबसे कोमल तपस्वी।

(1) "और हे भिक्षुओं, एक व्यक्ति कैसे अविचलित तपस्वी होता है? यहाँ, तीन बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ, [89] एक भिक्षु धारा-प्रवेशक (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) होता है, जो अब निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं होता, नियति में स्थिर होता है, ज्ञानोदय की ओर अग्रसर होता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति अविचलित तपस्वी होता है।"

(2) "और कोई व्यक्ति श्वेत कमल तपस्वी कैसे होता है? यहाँ, तीनों बंधनों के पूर्ण नाश और लोभ, घृणा और मोह (मोह) के कम होने से, एक भिक्षु एक बार जन्म लेने वाला (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) होता है, जो इस संसार में केवल एक बार फिर आकर दुखों का अंत करता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति श्वेत कमल तपस्वी होता है।"

(3) "और कोई व्यक्ति लाल कमल तपस्वी कैसे होता है? यहाँ, पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, एक भिक्षु स्वतः पुनर्जन्म लेने वाला होता है, जो उस लोक से वापस आए बिना ही वहाँ अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार एक व्यक्ति लाल कमल तपस्वी होता है।"

(4) "और एक व्यक्ति तपस्वियों में कोमल तपस्वी कैसे होता है? यहाँ, दोषों के नाश के साथ, एक भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की निष्कलंक मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इस प्रकार एक व्यक्ति तपस्वियों में कोमल तपस्वी होता है।"

"हे भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

89 सम्यक दृष्टि (सम्मादिथि सं. सम्यक-दृष्टि)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? अविचल तपस्वी, श्वेत कमल तपस्वी, लाल कमल तपस्वी और तपस्वियों में सबसे कोमल तपस्वी।

(1) "और हे भिक्षुओं, एक व्यक्ति कैसे अविचलित तपस्वी होता है? यहाँ, एक भिक्षु सही दृष्टिकोण, सही इरादे, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही चेतना और सही समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) वाला होता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति अविचलित तपस्वी होता है।"

(2) "और कोई व्यक्ति श्वेत कमल तपस्वी कैसे होता है? यहाँ, एक भिक्षु सही दृष्टिकोण, सही इरादे, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता), सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), सही ज्ञान और सही मुक्ति वाला होता है; फिर भी वह शरीर से संपर्क में रहकर आठ मुक्ति में निवास नहीं करता। [90] इसी प्रकार एक व्यक्ति श्वेत कमल तपस्वी होता है।"

(3) "और कोई व्यक्ति लाल कमल तपस्वी कैसे होता है? यहाँ, एक भिक्षु सही दृष्टि, सही इरादे, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता), सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), सही ज्ञान और सही मुक्ति वाला होता है; और वह शरीर के साथ आठ मुक्ति का संपर्क स्थापित करके निवास करता है। इस प्रकार एक व्यक्ति लाल कमल तपस्वी होता है।"

(4) "और कोई व्यक्ति तपस्वियों में कोमल तपस्वी कैसे हो सकता है? यहाँ, एक भिक्षु आमतौर पर वही वस्त्र धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, शायद ही कभी ऐसा वस्त्र जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो... [जैसा कि 4:87 में है]... यदि किसी के बारे में सही कहा जा सकता है: 'वह तपस्वियों में कोमल तपस्वी है,' तो यह बात ठीक मेरे बारे में ही कही जा सकती है।"

"हे भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।" 786

---

90 समुच्चय (खंड बिना स्कंध)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? अविचल तपस्वी, श्वेत कमल तपस्वी, लाल कमल तपस्वी और तपस्वियों में सबसे कोमल तपस्वी।

(1) "और हे भिक्षुओं, एक व्यक्ति कैसे अविचल तपस्वी होता है? यहाँ, एक भिक्षु (भिक्षु) एक प्रशिक्षु है जिसने अपने मन के आदर्श को प्राप्त नहीं किया है, जो बंधन से अतुलनीय सुरक्षा की आकांक्षा में रहता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति अविचल तपस्वी होता है।"

(2) "और कोई व्यक्ति श्वेत कमल तपस्वी कैसे होता है? यहाँ, एक भिक्षु आसक्ति के अधीन पाँचों स्कंधों में उत्पन्न होने और विलीन होने का अवलोकन (अनुपसी में) करते हुए ध्यान लगाता है: 'ऐसा रूप है, ऐसा इसका उद्गम है, ऐसा इसका क्षय है; ऐसी संवेदना (वेदना) है, ऐसा इसका उद्गम है, ऐसा इसका क्षय है; ऐसी अनुभूति (संज्ञा) है, ऐसा इसका उद्गम है, ऐसा इसका क्षय है; ऐसे व्यक्ति के गुण/व्यवहार (संस्कार) हैं, ऐसा उनका उद्गम है, ऐसा उनका क्षय है; ऐसी चेतना है, ऐसा इसका उद्गम है, ऐसा इसका क्षय है'; फिर भी वह आठ मुक्ति के शरीर से संपर्क में रहकर ध्यान नहीं लगाता। इसी प्रकार एक व्यक्ति श्वेत कमल तपस्वी होता है।"

(3) "और कोई व्यक्ति लाल कमल तपस्वी कैसे होता है? यहाँ, एक भिक्षु आसक्ति के अधीन पाँच स्कंधों में उत्पन्न होने और विलीन होने का अवलोकन (अनुपसी में) करते हुए निवास करता है: 'ऐसा रूप है, ऐसा इसका उद्गम है, ऐसा इसका क्षय है; ऐसी संवेदना (वेदना) है... ऐसी अनुभूति (संज्ञा) है... ऐसे लक्षण/व्यवहार (संस्कार) हैं... ऐसी चेतना है, ऐसा इसका उद्गम है, [91] ऐसा इसका क्षय है'; और वह शरीर से आठ मुक्ति का संपर्क रखते हुए निवास करता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति लाल कमल तपस्वी होता है।"

(4) "और कोई व्यक्ति तपस्वियों में कोमल तपस्वी कैसे हो सकता है? यहाँ, एक भिक्षु आमतौर पर वही वस्त्र धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, शायद ही कभी ऐसा वस्त्र जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो... [जैसा कि 4:87 में है] ... यदि किसी के बारे में सही कहा जा सकता है: 'वह तपस्वियों में कोमल तपस्वी है' तो यह बात ठीक मेरे बारे में ही कही जा सकती है।"

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

V. असुर अनुभाग

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

91 असुर

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? असुर अपने अनुयायियों के साथ, असुर देवों के साथ, देव असुर असुरों के साथ, और देव देव देवों के साथ।

(1) "हे भिक्षुओं, असुरों के दल वाला व्यक्ति असुर कैसे हो सकता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अनैतिक, बुरे चरित्र का है, और उसका दल भी अनैतिक, बुरे चरित्र का है। इसी प्रकार कोई व्यक्ति असुरों के दल वाला असुर होता है।"

(2) "और कोई व्यक्ति देवों (देवदूतों/देवताओं) के दल के साथ असुर कैसे हो सकता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अनैतिक, बुरे चरित्र का है, परन्तु उसका दल गुणी, अच्छे चरित्र का है। इसी प्रकार कोई व्यक्ति देवों (देवदूतों/देवताओं) के दल के साथ असुर होता है।"

(3) "और कोई व्यक्ति असुरों के दल के साथ देव (देवदूत/देवता) कैसे हो सकता है? [92] यहाँ, कोई व्यक्ति गुणी, अच्छे चरित्र का है, परन्तु उसका दल अनैतिक, बुरे चरित्र का है। इसी प्रकार कोई व्यक्ति असुरों के दल के साथ देव होता है।

(4) "और कोई व्यक्ति देवों (देवदूतों/देवताओं) के दल के साथ देव (देवता/देवता) कैसे होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति गुणी, अच्छे चरित्र वाला होता है, और उसका दल भी गुणी, अच्छे चरित्र वाला होता है। इसी प्रकार कोई व्यक्ति देवों (देवदूतों/देवताओं) के दल के साथ देव (देवता/देवता) होता है।"

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

92 समाधि (1)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? (1) कुछ व्यक्ति मन की आंतरिक समता (शमथा) प्राप्त करते हैं, लेकिन घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान (पन्न) प्राप्त नहीं करते। (2) कुछ अन्य व्यक्ति घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान (पन्न) प्राप्त करते हैं, लेकिन मन की आंतरिक समता (शमथा) प्राप्त नहीं करते। (3) एक अन्य व्यक्ति न तो मन की आंतरिक समता (शमथा) प्राप्त करता है और न ही घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान (पन्न) प्राप्त करता है। (4) और एक अन्य व्यक्ति मन की आंतरिक समता (शमथा) और घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान (पन्न) दोनों प्राप्त करता है। ये संसार में पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।

---

93 समाधि (2)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? (1) कुछ व्यक्ति मन की आंतरिक समता (शमथा) प्राप्त करते हैं, लेकिन घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान प्राप्त नहीं करते। (2) कुछ अन्य व्यक्ति घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान प्राप्त करते हैं, लेकिन मन की आंतरिक समता (शमथा) प्राप्त नहीं करते। (3) एक अन्य व्यक्ति न तो मन की आंतरिक समता (शमथा) प्राप्त करता है और न ही घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान प्राप्त करता है। (4) और एक अन्य व्यक्ति मन की आंतरिक समता (शमथा) और घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान प्राप्त करता है।

(1) "भिक्षुओं, इनमें से जो व्यक्ति मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त कर लेता है, परन्तु घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त नहीं कर पाता, उसे मन की आंतरिक समता (समथा) पर आधारित होकर घटनाओं में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। फिर, कुछ समय बाद, वह मन की आंतरिक समता (समथा) और घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) दोनों प्राप्त कर लेता है।"

(2) "जो व्यक्ति घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त कर लेता है, लेकिन मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त नहीं करता, उसे घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) के उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) पर आधारित होना चाहिए और मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। तब, कुछ समय बाद, वह घटनाओं के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) और मन की आंतरिक समता (समथा) दोनों प्राप्त कर लेता है।"

(3) “जिस व्यक्ति को न तो मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त होती है और न ही घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त होता है, उसे इन दोनों लाभकारी (कुशल) गुणों को प्राप्त करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध (संपजन्न) का प्रयास करना चाहिए। जिस प्रकार किसी व्यक्ति के वस्त्र या सिर में आग लग जाए तो वह अपने वस्त्र या सिर की आग बुझाने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयास करता है, उसी प्रकार उस व्यक्ति को इन दोनों लाभकारी (कुशल) गुणों को प्राप्त करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयास करना चाहिए। फिर, कुछ समय बाद, उसे मन की आंतरिक समता और धम्म में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना प्राप्त हो जाता है। विपश्यना (अंतर्दृष्टि) (धम्म)।

(4) "जो व्यक्ति मन की आंतरिक समता (समथा) और घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्च पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त कर लेता है, उसे उन्हीं लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) पर आधारित होकर दोषों (आसवों) के नाश (खया सं. क्षय) तक पहुँचने का और प्रयास करना चाहिए।"

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

94 समाधि (3)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? (1) हे भिक्षुओं, यहाँ कुछ व्यक्ति मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त करते हैं, परन्तु घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त नहीं करते। [94] (2) कुछ अन्य व्यक्ति घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करते हैं, परन्तु मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त नहीं करते। (3) एक अन्य व्यक्ति न तो मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त करता है और न ही घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करता है। (4) और एक अन्य व्यक्ति मन की आंतरिक समता (समथा) और घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) दोनों प्राप्त करता है।

(1) "भिक्षुओं, इनमें से जो व्यक्ति मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त कर लेता है, परन्तु घटनाओं के विषय में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान (दिव्य ज्ञान) प्राप्त नहीं कर पाता, उसे उस व्यक्ति के पास जाना चाहिए जो घटनाओं (धम्म) के विषय में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान (दिव्य ज्ञान) प्राप्त कर लेता है और उससे पूछना चाहिए: 'हे मित्र, संहार/संस्कार/भावनाओं को कैसे देखा जाना चाहिए? संहार/संस्कार/भावनाओं का अन्वेषण कैसे किया जाना चाहिए? विपश्यना (अंतर्दृष्टि) द्वारा संहार/संस्कार/भावनाओं का बोध कैसे किया जाना चाहिए?'" तब दूसरा व्यक्ति उसे इस मामले को देखकर और समझकर इस प्रकार उत्तर देता है: 'संबद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) को इस प्रकार देखा जाना चाहिए, इस प्रकार खोजा जाना चाहिए, इस प्रकार अंतर्दृष्टि (विपश्यना) द्वारा समझा जाना चाहिए।' 768 फिर, कुछ समय बाद, वह मन की आंतरिक समता (समथा) और घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) दोनों प्राप्त करता है।

(2) "जो व्यक्ति घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करता है, लेकिन मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त नहीं करता, उसे मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त करने वाले व्यक्ति के पास जाकर उससे पूछना चाहिए: 'हे मित्र,

मन को कैसे स्थिर किया जाए? मन को कैसे शांत किया जाए? मन को कैसे एकीकृत किया जाए? मन को कैसे आत्म-मग्न (समाधि/समाहिता) किया जाए?' तब दूसरा व्यक्ति उसे अपने अनुभव और समझ के अनुसार उत्तर देता है: 'मन को इस प्रकार स्थिर, इस प्रकार शांत, इस प्रकार एकीकृत और इस प्रकार आत्म-मग्न (समाहिता/समाहिता) किया जाना चाहिए।' 789 फिर, कुछ समय बाद, वह घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) और मन की आंतरिक समता (समथा) दोनों प्राप्त कर लेता है।

(3) "जिस व्यक्ति को न तो मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त होती है और न ही घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त होता है, उसे इन दोनों को प्राप्त करने वाले व्यक्ति के पास जाकर उससे पूछना चाहिए: 'हे मित्र, मन को कैसे स्थिर किया जाए? मन को कैसे शांत किया जाए? मन को कैसे एकीकृत किया जाए? मन को कैसे आत्म-मग्न (समाधि/समहिता) किया जाए? बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) को कैसे देखा जाए? बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) का कैसे अन्वेषण किया जाए? बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) को अंतर्दृष्टि (विपश्यना) द्वारा कैसे समझा जाए?'" तब दूसरा व्यक्ति उसे इस विषय को देखकर और समझकर उत्तर देता है: 'मन को इस प्रकार स्थिर, इस प्रकार शांत, इस प्रकार एकीकृत, इस प्रकार आत्म-मग्न (समाधि/समाहित) करना चाहिए। बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) को इस प्रकार देखना चाहिए, इस प्रकार खोजना चाहिए, इस प्रकार अंतर्दृष्टि (विपश्यना) द्वारा समझना चाहिए।' फिर, कुछ समय बाद, [95]-वह मन की आंतरिक समता (समाथा) और घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) दोनों प्राप्त करता है।

(4) "जो व्यक्ति मन की आंतरिक समता (समथा) और घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का उच्च पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त कर लेता है, उसे उन्हीं लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) पर आधारित होकर दोषों के नाश के लिए और प्रयास करना चाहिए।"

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

95 श्मशान की लकड़ी (चावलाटा)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? (1) वह जो न तो अपने कल्याण के लिए और न ही दूसरों के कल्याण के लिए साधना करता है; (2) वह जो दूसरों के कल्याण के लिए साधना करता है, लेकिन अपने कल्याण के लिए नहीं;

(3) वह व्यक्ति जो स्वयं के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, लेकिन दूसरों के कल्याण के लिए नहीं, और (4) वह व्यक्ति जो स्वयं के कल्याण और दूसरों के कल्याण दोनों के लिए अभ्यास कर रहा है।

(1) "मान लो, भिक्षुओं, एक दाह संस्कार की लकड़ी दोनों सिरों से जल रही हो और बीच में गोबर से सनी हो: उसे न तो गाँव में और न ही जंगल में लकड़ी के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। ठीक इसी प्रकार, मैं कहता हूँ, वह व्यक्ति है जो न तो अपने कल्याण के लिए और न ही दूसरों के कल्याण के लिए साधना करता है।"

(2) भिक्षुओं, इनमें से जो व्यक्ति दूसरों के कल्याण के लिए साधना करता है, न कि अपने स्वयं के कल्याण के लिए, वह पहले दो व्यक्तियों में अधिक श्रेष्ठ और श्रेष्ठ है। (3) जो व्यक्ति अपने स्वयं के कल्याण के लिए साधना करता है, न कि दूसरों के कल्याण के लिए, वह पहले तीन व्यक्तियों में अधिक श्रेष्ठ और श्रेष्ठ है।

(4) जो व्यक्ति स्वयं और दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास करता है, वह इन चारों व्यक्तियों में सबसे श्रेष्ठ, सबसे अच्छा, सबसे प्रमुख, सबसे श्रेष्ठ और सबसे उत्तम है। जैसे गाय से दूध, दूध से दही, दही से मक्खन, मक्खन से घी और घी से मलाई बनती है, जो इन सब में श्रेष्ठ मानी जाती है, वैसे ही जो व्यक्ति स्वयं और दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास करता है, वह इन चारों व्यक्तियों में सबसे श्रेष्ठ, सबसे अच्छा, सबसे प्रमुख, सबसे उत्तम और सबसे उत्तम है। [96]

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

96 वांट (राग-विनय)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? (1) वह जो स्वयं के कल्याण के लिए साधना करता है, परन्तु दूसरों के कल्याण के लिए नहीं; (2) वह जो दूसरों के कल्याण के लिए साधना करता है, परन्तु स्वयं के कल्याण के लिए नहीं; (3) वह जो न तो स्वयं के कल्याण के लिए और न ही दूसरों के कल्याण के लिए साधना करता है; और (4) वह जो स्वयं के कल्याण और दूसरों के कल्याण दोनों के लिए साधना करता है।

(1) "हे भिक्षुओं, कोई व्यक्ति अपने कल्याण के लिए अभ्यास कैसे करता है, जबकि वह दूसरों के कल्याण के लिए नहीं? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने राग, द्वेष और मोह को दूर करने के लिए अभ्यास करता है, परन्तु दूसरों को भी ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता। इस प्रकार वह व्यक्ति अपने कल्याण के लिए अभ्यास करता है, जबकि वह दूसरों के कल्याण के लिए नहीं।"

(2) और कोई व्यक्ति दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास कैसे कर रहा है, जबकि वह स्वयं अपने कल्याण के लिए अभ्यास नहीं कर रहा है? यहाँ, कोई व्यक्ति दूसरों को कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) दूर करने के लिए प्रोत्साहित करता है, परन्तु स्वयं अपनी कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) दूर करने का अभ्यास नहीं करता। इस प्रकार वह व्यक्ति दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, जबकि वह स्वयं अपने कल्याण के लिए अभ्यास नहीं कर रहा है।

(3) और जो व्यक्ति न तो अपने कल्याण के लिए और न ही दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, वह कैसे है? यहाँ, कोई व्यक्ति न तो अपने राग, द्वेष और मोह को दूर करने के लिए अभ्यास करता है, और न ही दूसरों को उनके राग, द्वेष और मोह को दूर करने के लिए प्रोत्साहित करता है। इस प्रकार, व्यक्ति न तो अपने कल्याण के लिए और न ही दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है।

(4) "और कोई व्यक्ति अपने और दूसरों के कल्याण के लिए कैसे अभ्यास करता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने राग, द्वेष और मोह को दूर करने के लिए अभ्यास करता है, और वह दूसरों को भी अपने राग, द्वेष और मोह को दूर करने के लिए प्रोत्साहित करता है। [97] इस प्रकार एक व्यक्ति अपने और दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास करता है।"

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

97 तेज बुद्धि वाला (खिप्पानिसांती)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? (1) वह जो स्वयं के कल्याण के लिए साधना करता है, परन्तु दूसरों के कल्याण के लिए नहीं; (2) वह जो दूसरों के कल्याण के लिए साधना करता है, परन्तु स्वयं के कल्याण के लिए नहीं; (3) वह जो न तो स्वयं के कल्याण के लिए और न ही दूसरों के कल्याण के लिए साधना करता है; और (4) वह जो स्वयं के कल्याण और दूसरों के कल्याण दोनों के लिए साधना करता है।

(1) "हे भिक्षुओं, ऐसा व्यक्ति कैसे है जो अपने कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, न कि दूसरों के कल्याण के लिए? यहाँ, कोई व्यक्ति लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं पर शीघ्र ध्यान देता है, सुनी हुई शिक्षाओं को याद रख पाता है और उनका अर्थ समझता है। अर्थ और धम्म को समझकर वह धम्म के अनुसार अभ्यास करता है। परन्तु वह एक अच्छा वक्ता नहीं है; उसकी वाणी परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थपूर्ण नहीं है; और वह अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश, प्रोत्साहन, प्रेरणा और प्रसन्नता नहीं देता। इस प्रकार वह व्यक्ति अपने कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, न कि दूसरों के कल्याण के लिए।"

(2) "और कैसे एक व्यक्ति दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, लेकिन अपने कल्याण के लिए नहीं? यहाँ, कुछ व्यक्ति लाभकारी(कुशल) शिक्षाओं पर ध्यान देने में तेज नहीं है, उसने जो शिक्षाएँ सुनी हैं उन्हें ध्यान में रखने में असमर्थ है, और उसने जो शिक्षाएँ रखी हैं, उनके अर्थ की जांच नहीं करता है। अर्थ और धम्म की कोई समझ न होने के कारण, वह धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं करता है। हालाँकि, वह अच्छी डिलीवरी के साथ एक अच्छा वक्ता है; वह वाणी से उपहार में मिला है जो परिष्कृत, स्पष्ट, स्पष्ट, अर्थ

को व्यक्त करने वाला है; और वह अपने साथी भिक्षुओं को निर्देश देता है, प्रोत्साहित करता है, प्रेरित करता है, और प्रसन्न करता है। यह इस तरह से है कि एक व्यक्ति दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, लेकिन अपने कल्याण के लिए नहीं। [98]

(3) "और कैसे एक व्यक्ति न तो अपने कल्याण के लिए और न ही दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है? यहाँ, कुछ व्यक्ति लाभकारी(कुशल) शिक्षाओं पर ध्यान देने में तेज नहीं है ... वह धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं करता है। इसके अलावा, वह अच्छी डिलीवरी के साथ एक अच्छा वक्ता नहीं है। और वह अपने साथी साधुओं को निर्देश नहीं देता, प्रोत्साहित नहीं करता, प्रेरित नहीं करता, और खुश नहीं करता। इस तरह से एक व्यक्ति न तो अपने भले के लिए और न ही दूसरों के भले के लिए अभ्यास कर रहा है।

(4) "और कोई व्यक्ति अपने भले और दूसरों के भले के लिए कैसे अभ्यास कर रहा है? यहाँ, कोई व्यक्ति फायदेमंद (कुशल) शिक्षाओं पर ध्यान देने में तेज़ है... वह धम्म के अनुसार अभ्यास करता है। इसके अलावा, वह एक अच्छा वक्ता है और अच्छी डिलीवरी भी करता है... और वह अपने साथी साधुओं को निर्देश देता है, प्रोत्साहित नहीं करता, प्रेरित नहीं करता, और खुश नहीं करता। इस तरह से एक व्यक्ति अपने भले और दूसरों के भले के लिए अभ्यास कर रहा है।

"ये, भिक्षुओं, दुनिया में पाए जाने वाले चार तरह के लोग हैं।"

---

98 अपना भला (अत्तहिता बिना आत्म-हित)

"भिक्षुओं, दुनिया में ये चार तरह के लोग पाए जाते हैं। कौन से चार? (1) जो अपनी भलाई के लिए प्रैक्टिस कर रहा है लेकिन दूसरों की भलाई के लिए नहीं; (2) जो दूसरों की भलाई के लिए प्रैक्टिस कर रहा है लेकिन अपनी भलाई के लिए नहीं; (3) जो न तो अपनी भलाई के लिए प्रैक्टिस कर रहा है और न ही दूसरों की भलाई के लिए; और (4) जो अपनी भलाई और दूसरों की भलाई दोनों के लिए प्रैक्टिस कर रहा है। ये दुनिया में पाए जाने वाले चार तरह के लोग हैं।"

---

99 ट्रेनिंग रूल्स (शिक्षकपद बिना शिष्यपद)

"भिक्षुओं, दुनिया में ये चार तरह के लोग पाए जाते हैं। कौन से चार? (1) जो अपनी भलाई के लिए प्रैक्टिस कर रहा है [99] लेकिन दूसरों की भलाई के लिए नहीं; (2) जो दूसरों की भलाई के लिए प्रैक्टिस कर रहा है लेकिन अपनी भलाई के लिए नहीं; (3) जो न तो अपनी भलाई के लिए प्रैक्टिस कर रहा है और न ही दूसरों की भलाई के लिए; और (4) जो अपनी भलाई और दूसरों की भलाई दोनों के लिए प्रैक्टिस कर रहा है।

(1) "और कैसे, भिक्षुओं, कोई व्यक्ति अपने कल्याण के लिए अभ्यास करता है लेकिन दूसरों के कल्याण के लिए नहीं? यहाँ, कोई व्यक्ति खुद जीवन के विनाश से दूर रहता है लेकिन दूसरों को जीवन के विनाश से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता है। वह खुद जो नहीं दिया गया है उसे लेने से दूर रहता है लेकिन दूसरों को जो नहीं दिया गया है उसे लेने से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता है। वह खुद यौन दुराचार से दूर रहता है लेकिन दूसरों को यौन दुराचार से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता है। वह खुद मिथ्या भाषण से दूर रहता है लेकिन दूसरों को मिथ्या भाषण से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता है। वह खुद शराब, वाइन और नशीले पदार्थों से दूर रहता है, जो आलस्य का आधार हैं, लेकिन दूसरों को उनसे दूर रहने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता है। यह इस तरह है कि एक व्यक्ति अपने कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है लेकिन दूसरों के कल्याण के लिए नहीं।

(2) "और कैसे कोई व्यक्ति दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है लेकिन अपने कल्याण के लिए नहीं? यहाँ, कोई व्यक्ति खुद जीवन के विनाश से दूर नहीं रहता है लेकिन वह दूसरों को जीवन के विनाश से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित करता है। . . वह खुद शराब, वाइन और नशीली चीज़ों से दूर नहीं रहता, जो आलस की वजह हैं, लेकिन वह दूसरों को इनसे दूर रहने के लिए बढ़ावा देता है। इस तरह एक इंसान दूसरों की भलाई के लिए प्रैक्टिस कर रहा होता है, अपनी भलाई के लिए नहीं।

(3) "और कोई इंसान न तो अपनी भलाई के लिए प्रैक्टिस कर रहा है और न ही दूसरों की भलाई के लिए? यहाँ, कोई इंसान खुद ज़िंदगी की बर्बादी से दूर नहीं रहता और दूसरों को ज़िंदगी की बर्बादी से दूर रहने के लिए बढ़ावा नहीं देता। . . . वह खुद शराब, वाइन और नशीली चीज़ों से दूर नहीं रहता, जो आलस की वजह हैं, और दूसरों को भी इनसे दूर रहने के लिए बढ़ावा नहीं देता। इस तरह कोई इंसान न तो अपनी भलाई के लिए प्रैक्टिस कर रहा है और न ही दूसरों की भलाई के लिए।

(4) "और कोई इंसान अपनी भलाई और दूसरों की भलाई, दोनों के लिए प्रैक्टिस कैसे कर रहा है? यहाँ, कोई इंसान खुद ज़िंदगी की बर्बादी से दूर रहता है और दूसरों को भी ज़िंदगी की बर्बादी से दूर रहने के लिए बढ़ावा देता है। . . . वह खुद शराब, वाइन और नशीली चीज़ों से दूर रहता है, जो आलस की वजह हैं, और दूसरों को भी इनसे दूर रहने के लिए बढ़ावा देता है। इस तरह वह अपनी भलाई और दूसरों की भलाई, दोनों के लिए प्रैक्टिस कर रहा है। "भिक्षुओं, ये दुनिया में पाए जाने वाले चार तरह के लोग हैं।" [1001]

---

100 पोटलिया

फिर तपस्वी पोटलिया भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे नमस्ते किया। जब उन्होंने नमस्ते और अच्छी बातचीत की, तो तपस्वी पोटलिया एक तरफ बैठ गए, और भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: "पोटालिया, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? (1) यहाँ, कोई व्यक्ति किसी ऐसे व्यक्ति की निंदा करता है जो निंदा का पात्र है, और उसकी निंदा सटीक, सत्य और समयोचित होती है; परन्तु वह किसी ऐसे व्यक्ति की प्रशंसा नहीं करता जो प्रशंसा का पात्र है, यद्यपि उसकी प्रशंसा सटीक, सत्य और समयोचित होती। (2) कोई अन्य व्यक्ति किसी ऐसे व्यक्ति की प्रशंसा करता है जो प्रशंसा का पात्र है, और उसकी प्रशंसा सटीक, सत्य और समयोचित होती है; परन्तु वह किसी ऐसे व्यक्ति की निंदा नहीं करता जो निंदा का पात्र है, यद्यपि उसकी निंदा सटीक, सत्य और समयोचित होती। (3) एक अन्य व्यक्ति किसी ऐसे व्यक्ति की निंदा नहीं करता जो निंदा का पात्र है, यद्यपि उसकी निंदा सटीक, सत्य और समयोचित होती; और वह किसी ऐसे व्यक्ति की प्रशंसा भी नहीं करता जो प्रशंसा का पात्र है, यद्यपि उसकी प्रशंसा सटीक, सत्य और समयोचित होती। (4) और एक अन्य व्यक्ति किसी ऐसे व्यक्ति की निंदा करता है जो निंदा का पात्र है, और उसकी निंदा सटीक, सत्य और समयोचित होती है; और वह किसी ऐसे व्यक्ति की प्रशंसा भी करता है जो निंदा का पात्र है।" प्रशंसा के योग्य है, और यह प्रशंसा सटीक, सत्य और समयोचित है। ये चार प्रकार के व्यक्ति संसार में विद्यमान पाए जाते हैं। अब, पोटालिया, इन चारों प्रकार के व्यक्तियों में से कौन सा व्यक्ति आपको सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ प्रतीत होता है?

"हे गौतम जी, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। 790 [101] इन चारों में से, मुझे सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ वह व्यक्ति प्रतीत होता है जो निंदा के योग्य व्यक्ति की निंदा नहीं करता, भले ही निंदा सटीक, सत्य और समयोचित हो; और जो प्रशंसा के योग्य व्यक्ति की प्रशंसा नहीं करता, भले ही प्रशंसा सटीक, सत्य और समयोचित हो। इसका कारण क्या है? क्योंकि हे गौतम जी, श्रेष्ठ तो उदासीनता (भीतर में समा जाना/उपेक्खा) है।"

"हे पोटालिया, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। इन चारों में से सबसे उत्कृष्ट और महान वह है जो निंदा के पात्र व्यक्ति की निंदा करता है और वह निंदा सटीक, सत्य और समयोचित होती है; और जो प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा भी करता है और वह प्रशंसा सटीक, सत्य और समयोचित होती है। इसका कारण क्या है? क्योंकि हे पोटालिया, श्रेष्ठता किसी विशेष परिस्थिति में बोलने के उचित समय के ज्ञान में निहित है।" 791

"हे गौतम जी, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। इन चारों में से, मुझे सबसे उत्कृष्ट और श्रेष्ठ वह व्यक्ति प्रतीत होता है जो निंदा के पात्र व्यक्ति की निंदा करता है और वह निंदा सटीक, सत्य और समयोचित होती है; और जो प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा भी करता है और वह प्रशंसा सटीक, सत्य और समयोचित होती है। इसका कारण क्या है? क्योंकि हे गौतम जी, श्रेष्ठता किसी विशेष परिस्थिति में बोलने के उचित समय के ज्ञान में निहित है।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! उत्कृष्ट, गुरु गौतम! गुरु गौतम ने अनेक तरीकों से धम्म को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग

आकृतियों को देख सकें। मैं अब गुरु गौतम, धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जो आज से जीवन भर के लिए शरण में गया है।" [102]

तीसरा पचास

I. बादल (वलहका)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

101 बादल (1) (वलाहाका)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, चार प्रकार के बादल होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक जो गरजता है लेकिन वर्षा नहीं करता; एक जो वर्षा करता है लेकिन गरजता नहीं; एक जो न तो गरजता है और न ही वर्षा; और एक जो गरजता और वर्षा दोनों करता है। ये चार प्रकार के बादल हैं। इसी प्रकार, संसार में बादलों के समान चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार के व्यक्ति हैं? एक जो गरजता है लेकिन वर्षा नहीं करता; एक जो वर्षा करता है लेकिन गरजता नहीं; एक जो न तो गरजता है और न ही वर्षा; और एक जो गरजता और वर्षा दोनों करता है।

(1) "और हे भिक्षुओं, वह व्यक्ति कैसे हो सकता है जो गरजता तो है पर वर्षा नहीं करता? यहाँ, कोई व्यक्ति केवल बातें करता है, कर्म नहीं करता। इसी प्रकार वह व्यक्ति गरजता तो है पर वर्षा नहीं करता। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस बादल के समान है जो गरजता तो है पर वर्षा नहीं करता।"

(2) "और वह व्यक्ति कैसा है जो बारिश तो करता है पर गरजता नहीं? यहाँ, कोई व्यक्ति करने वाला है, बोलने वाला नहीं। इसी तरह वह व्यक्ति बारिश तो करता है पर गरजता नहीं। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस बादल के समान है जो बारिश तो करता है पर गरजता नहीं।"

(3) "और वह व्यक्ति कैसा है जो न तो गरजता है और न ही बारिश करता है? यहाँ, कोई व्यक्ति न तो बोलने वाला है और न ही करने वाला। इसी तरह वह व्यक्ति है जो न तो गरजता है और न ही बारिश करता है। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस बादल के समान है जो न तो गरजता है और न ही बारिश करता है।"

(4) "और वह व्यक्ति कैसे है जो गरजता भी है और बारिश भी करता है? यहाँ, कोई व्यक्ति बोलने वाला भी है और करने वाला भी। इसी तरह से वह व्यक्ति गरजता भी है और बारिश भी करता है। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति ठीक उस बादल के समान है जो गरजता भी है और बारिश भी करता है।"

"हे भिक्षुओं, ये चार प्रकार के व्यक्ति हैं जो बादलों के समान संसार में विद्यमान पाए जाते हैं।" [103J]

---

102 बादल (2) (वलाहाका)

"भिक्षुओं, ये चार प्रकार के बादल हैं। कौन से चार? [जैसा ऊपर बताया गया है]..."

(1) "और हे भिक्षुओं, वह व्यक्ति कैसे हो सकता है जो गरजता तो है पर वर्षा नहीं करता? यहाँ, कोई व्यक्ति धम्म में पारंगत है—सूत्र, गद्य-पद, व्याख्याएँ, गाथाएँ, प्रेरित कथन, इतिवुत्तक, जातक कथाएँ, अद्‌भुत वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर—पर वह वास्तव में यह नहीं समझता: 'यह दुख है,' 'यह दुख का कारण है,' 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार वह व्यक्ति गरजता तो है पर वर्षा नहीं करता। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस बादल के समान है जो गरजता तो है पर वर्षा नहीं करता।"

(2) "और वह व्यक्ति कैसा है जो बारिश तो करता है लेकिन गरजता नहीं? यहाँ, कोई व्यक्ति धम्म— प्रवचनों... प्रश्न-उत्तर—में पारंगत नहीं है, परन्तु वह इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार वह व्यक्ति बारिश तो करता है लेकिन गरजता नहीं। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस बादल के समान है जो बारिश तो करता है लेकिन गरजता नहीं।"

(3) "और वह व्यक्ति कैसे हो सकता है जो न तो गरजता है और न ही वर्षा करता है? यहाँ, व्यक्ति धम्म— प्रवचनों... प्रश्न-उत्तर—में पारंगत नहीं है, और वह इसे यथार्थ रूप में नहीं समझता: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार वह व्यक्ति है जो न तो गरजता है और न ही वर्षा करता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस बादल के समान है जो न तो गरजता है और न ही वर्षा करता है।"

(4) "और वह व्यक्ति कैसे है जो गरजता भी है और वर्षा भी करता है? यहाँ, वह व्यक्ति धम्म में पारंगत है— प्रवचन (सूत्र), मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, श्लोक (गाथाएँ), प्रेरित कथन (उदन), उद्धरण, पुनर्जन्म कथाएँ (जातक), अद्‌भुत वृत्तांत, और प्रश्न-उत्तर—और वह इसे यथावत समझता है: 'यह दुख है,' और 'यह दुख का मूल है,' और 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार वह व्यक्ति गरजता भी है और वर्षा भी करता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति ठीक उस बादल के समान है जो गरजता भी है और वर्षा भी करता है। [104]

"भिक्षुओं, ये समय जगत में विद्यमान बादलों के समान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

103 बर्तन (कुंभ)

भिक्षुओं, चार प्रकार के पात्र होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक जो खाली और ढका हुआ है; एक जो भरा हुआ और खुला है; एक जो खाली और खुला है; और एक जो भरा हुआ और ढका हुआ है। ये चार प्रकार के पात्र हैं। इसी प्रकार, संसार में पात्र के समान चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार के व्यक्ति हैं? एक जो खाली और ढका हुआ है; एक जो भरा हुआ और खुला है; एक जो खाली और खुला है; और एक जो भरा हुआ और ढका हुआ है।

(1) "हे भिक्षुओं, मनुष्य किस प्रकार खाली और ढका हुआ होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आगे-पीछे जाने, आगे-पीछे देखने, अंगों को समेटने और फैलाने, वस्त्र धारण करने और बाह्य वस्त्र एवं कुंड धारण करने के तरीके से विश्वास जगाता है; परन्तु वह वास्तव में यह नहीं समझता: 'यह दुख है,' 'यह दुख का कारण है,' 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार मनुष्य खाली और ढका हुआ होता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति एक खाली और ढके हुए बर्तन के समान है।"

(2) "और एक व्यक्ति कैसे परिपूर्ण और खुला होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आने-जाने के तरीके से, और अपने बाहरी वस्त्र और कटोरा ले जाने से विश्वास नहीं जगाता; बल्कि वह इसे जैसा है वैसा ही समझता है: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी मार्ग में व्यक्ति परिपूर्ण और खुला होता है। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति एक भरे हुए और खुले बर्तन के समान है।"

(3) "और कोई व्यक्ति कैसे खाली और खुला होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आने-जाने के तरीके से विश्वास नहीं जगाता... और अपने बाहरी वस्त्र और कटोरा ले जाने से; और वह वास्तव में यह नहीं समझता कि 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी तरह से एक व्यक्ति खाली और खुला होता है। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति एक खाली और खुले बर्तन के समान है।"

(4) "और कोई व्यक्ति कैसे परिपूर्ण और ढका हुआ होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आगे बढ़ने और लौटने के तरीके से, आगे और बगल में देखने से, अंगों को सिकोड़ने और फैलाने से, अपने वस्त्र पहनने और अपना बाहरी वस्त्र और कटोरा ले जाने से विश्वास जगाता है; [105] और वह वास्तव में समझता है: 'यह दुख है,' और 'यह दुख का मूल है,' और 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख के निवारण की ओर ले जाने वाला मार्ग है।' इसी तरह से एक व्यक्ति परिपूर्ण और ढका हुआ होता है। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति एक भरे हुए और ढके हुए बर्तन के समान है।"

"ये भिक्षुओं, संसार में विद्यमान पाए जाने वाले घड़ों के समान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

पानी के 104 तालाब (उदकरहाड़ा)

भिक्षुओं, चार प्रकार के जलकुंड होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक जो उथला है पर गहरा प्रतीत होता है; एक जो गहरा है पर उथला प्रतीत होता है; एक जो उथला है और उथला प्रतीत होता है; और एक जो गहरा है और गहरा प्रतीत होता है। ये चार प्रकार के जलकुंड हैं। 793 इसी प्रकार, संसार में पाए जाने वाले जलकुंडों के समान चार प्रकार के व्यक्ति होते हैं। वे कौन से चार प्रकार के हैं? एक जो उथला है पर गहरा प्रतीत होता है; एक जो गहरा है पर उथला प्रतीत होता है; एक जो उथला है और उथला प्रतीत होता है; और एक जो गहरा है और गहरा प्रतीत होता है।

(1) "और हे भिक्षुओं, वह व्यक्ति कैसे है जो सतही होते हुए भी गहरा प्रतीत होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आगे-पीछे चलने, आगे-पीछे देखने, अंगों को समेटने और फैलाने, वस्त्र धारण करने और बाह्य वस्त्र एवं कुंड धारण करने के तरीके से विश्वास जगाता है; परन्तु वह वास्तव में यह नहीं समझता: 'यह दुख है,' 'यह दुख का कारण है,' 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार एक व्यक्ति सतही होते हुए भी गहरा प्रतीत होता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस उथले जलकुंड के समान है जो गहरा प्रतीत होता है। [106]

(2) और वह व्यक्ति कैसा है जो गहरा तो है पर उथला प्रतीत होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आने-जाने के तरीके से, और अपने वस्त्र और कटोरा ले जाने से विश्वास नहीं जगाता; बल्कि वह वास्तविकता को समझता है: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार एक व्यक्ति गहरा तो होता है पर उथला प्रतीत होता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस गहरे तालाब के समान है जो उथला प्रतीत होता है।

(3) और वह व्यक्ति कैसा है जो खोखला है और खोखला प्रतीत होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आने-जाने के तरीके से विश्वास नहीं जगाता... और अपने वस्त्र और कटोरा ले जाने के तरीके से; और वह वास्तव में यह नहीं समझता: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी तरह से एक व्यक्ति खोखला होता है और खोखला प्रतीत होता है। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति एक उथले और उथले प्रतीत होने वाले जलकुंड के समान है।

(4) और वह व्यक्ति कैसे है जो गहरा है और गहरा प्रतीत होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आगे बढ़ने और लौटने के तरीके, आगे और बगल में देखने, अंगों को सिकोड़ने और फैलाने, अपने वस्त्र पहनने और अपना बाहरी वस्त्र और कटोरा ले जाने के तरीके से विश्वास जगाता है; और वह जैसा वास्तव में है वैसा ही समझता है: 'यह दुख है,' और 'यह दुख का कारण है,' और 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी तरह से एक व्यक्ति गहरा होता है और गहरा प्रतीत होता है। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति गहरे और गहरे प्रतीत होने वाले जल के कुंड के समान है।

"ये भिक्षु, संसार में विद्यमान जल के कुंडों के समान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

105 आम (अंबा सं. अमरा)

भिक्षुओं, चार प्रकार के आम होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक जो कच्चा है पर पका हुआ दिखता है; एक जो पका हुआ है पर कच्चा दिखता है; एक जो कच्चा है और कच्चा दिखता है; और एक जो पका हुआ है और पका हुआ दिखता है। ये चार प्रकार के आम हैं। इसी प्रकार, संसार में आमों के समान चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक जो कच्चा है पर पका हुआ दिखता है; एक जो पका हुआ है पर कच्चा दिखता है; एक जो कच्चा है और कच्चा दिखता है; और एक जो पका हुआ है और पका हुआ दिखता है।

(1) "और हे भिक्षुओं, वह व्यक्ति कैसे अपरिपक्व होकर भी पका हुआ प्रतीत हो सकता है? [107] यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आगे-पीछे चलने, आगे-पीछे देखने, अंगों को समेटने और फैलाने, वस्त्र धारण करने और बाह्य वस्त्र एवं कुंड धारण करने के तरीके से विश्वास जगाता है; परन्तु वह वास्तव में यह नहीं समझता: 'यह दुख है,' 'यह दुख का कारण है,' 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार एक व्यक्ति अपरिपक्व होकर भी पका हुआ प्रतीत होता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस आम के समान है जो कच्चा होकर भी पका हुआ प्रतीत होता है।"

(2) "और वह व्यक्ति कैसा है जो परिपक्व होते हुए भी अपरिपक्व प्रतीत होता है?" यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आने-जाने के तरीके से, और अपने वस्त्र और कटोरा ले जाने से विश्वास नहीं जगाता; बल्कि वह वास्तविकता को समझता है: 'यह पीड़ा है'... 'यह पीड़ा के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार एक व्यक्ति परिपक्व होते हुए भी अपरिपक्व प्रतीत होता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस आम के समान है जो पका हुआ होते हुए भी अपरिपक्व प्रतीत होता है।

(3) और जो व्यक्ति अपरिपक्व है और अपरिपक्व प्रतीत होता है, वह कैसा है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आने-जाने के तरीके से विश्वास नहीं जगाता... और अपने वस्त्र और कटोरा ले जाने के तरीके से; और वह वास्तव में यह नहीं समझता कि 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी तरह से एक व्यक्ति अपरिपक्व है और अपरिपक्व प्रतीत होता है। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति बिल्कुल एक कच्चे आम के समान है जो कच्चा है और कच्चा प्रतीत होता है।

(4) "और एक परिपक्व और परिपक्व दिखने वाला व्यक्ति कैसा होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने आगे-पीछे चलने, आगे-पीछे देखने, अंगों को समेटने और फैलाने, वस्त्र पहनने, बाहरी वस्त्र और कटोरा धारण करने के तरीके से विश्वास जगाता है; और वह वास्तव में समझता है: 'यह दुख है,' 'यह दुख का कारण है,' 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार एक व्यक्ति परिपक्व होता है और परिपक्व दिखता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति एक पके हुए और पके हुए आम के समान है।"

"ये भिक्षुओं, संसार में पाए जाने वाले आमों के समान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

106 आम2 (अंबा2 संस अमरा)

[इस सूत्र का कोई पाठ किसी भी संस्करण में नहीं मिलता। वग्ग के अंत में उद्दाना श्लोक कहता है: द्वे होंति अंबानी, "दो आम हैं," संभवतः इसी कारण बे ने इसे यह शीर्षक दिया है। एमपी केवल इतना कहता है, "छठा स्पष्ट है।" सी और बे दोनों ने इस टिप्पणी का उल्लेख करते हुए एक टिप्पणी लिखी है: "टीका कहती है, 'छठा स्पष्ट है' लेकिन यह प्रामाणिक पाठ में नहीं मिलता।"]

---

107 (7) चूहे (म्यूज़िका सं. मशक)

भिक्षुओं, चूहे चार प्रकार के होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक जो बिल बनाता है लेकिन उसमें नहीं रहता; एक जो बिल में रहता है लेकिन बिल नहीं बनाता; एक जो न तो बिल बनाता है और न ही उसमें रहता है; और एक जो बिल बनाता भी है और उसमें रहता भी है। ये चार प्रकार के चूहे हैं। इसी प्रकार, संसार में चूहे के समान चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार के हैं? एक जो बिल बनाता है लेकिन उसमें नहीं रहता; एक जो बिल में रहता है लेकिन बिल नहीं बनाता; एक जो न तो बिल बनाता है और न ही उसमें रहता है; और एक जो बिल बनाता भी है और उसमें रहता भी है। [108]

(1) "और हे भिक्षुओं, वह व्यक्ति कैसे है जो गड्ढा तो बनाता है, पर उसमें रहता नहीं? यहाँ, कोई व्यक्ति धम्म—सूत्रों, गद्य-पदों के मिश्रण, व्याख्याओं, गाथाओं, प्रेरित कथनों (उदान), उद्धरणों (इतिवुत्तक), जातक कथाओं, अद्भुत वृत्तांतों और प्रश्न-उत्तरों—में पारंगत तो है, पर वह इसे वास्तव में नहीं समझता: 'यह दुख है,' 'यह दुख का कारण है,' 'यह दुख का निवारण है,' और 'यह दुख निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार वह व्यक्ति गड्ढा तो बनाता है, पर उसमें रहता नहीं। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस चूहे के समान है जो गड्ढा तो बनाता है, पर उसमें रहता नहीं।"

(2) "और वह व्यक्ति कैसे है जो एक गड्ढे में रहता है लेकिन कोई गड्ढा नहीं बनाता? यहाँ, कोई व्यक्ति धम्म— प्रवचनों... प्रश्न-उत्तर—में पारंगत नहीं होता, परन्तु वह इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार वह व्यक्ति एक गड्ढे में रहता है लेकिन कोई गड्ढा नहीं बनाता। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस चूहे के समान है जो एक गड्ढे में रहता है लेकिन कोई गड्ढा नहीं बनाता।"

(3) "और वह व्यक्ति कैसे है जो न तो गड्ढा खोदता है और न ही उसमें रहता है? यहाँ, कोई व्यक्ति धम्म— प्रवचनों... प्रश्न-उत्तर—में पारंगत नहीं है, और वह इसे वास्तव में नहीं समझता: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार वह व्यक्ति है जो न तो गड्ढा खोदता है और न ही उसमें रहता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस चूहे के समान है जो न तो गड्ढा खोदता है और न ही उसमें रहता है।"

(4) "और वह व्यक्ति कैसे है जो गड्ढा बनाता भी है और उसमें रहता भी है? यहाँ, कोई व्यक्ति धम्म (मार्ग) में महारत हासिल कर लेता है—सूत्र, गद्य और पद्य का मिश्रण, व्याख्याएँ, श्लोक, प्रेरित कथन, उद्धरण, जातक कथाएँ, अद्भुत वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर—और वह इसे यथार्थ रूप में समझ लेता है: 'यह दुख है', 'यह दुख का मूल है', 'यह दुख का निवारण है' और 'यह दुख निवारण का मार्ग है'। इसी प्रकार वह व्यक्ति गड्ढा बनाता भी है और उसमें रहता भी है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस चूहे के समान है जो गड्ढा बनाता भी है और उसमें रहता भी है।"

"भिक्षुओं, ये चार प्रकार के प्राणी हैं जो चूहों के समान संसार में पाए जाते हैं।"

---

108 बैल (बालीबड्डा)

भिक्षुओं, ये चार प्रकार के बैल होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? [109] एक वह जो अपने पशुओं के प्रति क्रोधित होता है, दूसरों के पशुओं के प्रति नहीं; एक वह जो दूसरों के पशुओं के प्रति क्रोधित होता है, अपने पशुओं के प्रति नहीं; एक वह जो अपने पशुओं और दूसरों के पशुओं दोनों के प्रति क्रोधित होता है; और एक वह जो न तो अपने पशुओं के प्रति और न ही दूसरों के पशुओं के प्रति क्रोधित होता है। ये चार प्रकार के बैल हैं। इसी प्रकार, संसार में बैलों के समान चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार के हैं? एक वह जो अपने पशुओं के प्रति क्रोधित होता है, दूसरों के पशुओं के प्रति नहीं; एक वह जो दूसरों के पशुओं के प्रति क्रोधित होता है, अपने पशुओं के प्रति नहीं; एक वह जो अपने पशुओं और दूसरों के पशुओं दोनों के प्रति क्रोधित होता है; और एक वह जो न तो अपने पशुओं के प्रति और न ही दूसरों के पशुओं के प्रति क्रोधित होता है।

(1) "और हे भिक्षुओं, कोई व्यक्ति अपने पशुओं के प्रति क्रोधित क्यों होता है, जबकि दूसरों के पशुओं के प्रति नहीं? यहाँ, कोई व्यक्ति अपने दल को डराता है, लेकिन दूसरों के दल को नहीं। इसी प्रकार, कोई व्यक्ति अपने पशुओं के प्रति क्रोधित होता है, जबकि दूसरों के पशुओं के प्रति नहीं। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस बैल के समान है जो अपने पशुओं के प्रति क्रोधित होता है, जबकि दूसरों के पशुओं के प्रति नहीं।"

(2) और कोई व्यक्ति दूसरों के पशुओं पर क्रोधित क्यों होता है, जबकि अपने पशुओं पर नहीं? यहाँ, कोई व्यक्ति दूसरों के दल को डराता है, लेकिन अपने दल को नहीं। इसी प्रकार, कोई व्यक्ति दूसरों के पशुओं पर क्रोधित होता है, जबकि अपने पशुओं पर नहीं। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस बैल के समान है जो दूसरों के पशुओं पर क्रोधित होता है, जबकि अपने पशुओं पर नहीं।

(3) और कोई व्यक्ति अपने पशुओं और दूसरों के पशुओं दोनों के प्रति कैसे क्रोधित होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति दूसरों के दल और अपने दल दोनों को डराता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति अपने पशुओं और दूसरों के पशुओं दोनों के प्रति क्रोधित होता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति बैल के समान है जो अपने पशुओं और दूसरों के पशुओं दोनों के प्रति क्रोधित होता है।

(4) और कोई व्यक्ति अपने पशुओं पर और दूसरों के पशुओं पर क्रोधित क्यों नहीं होता? यहाँ, कोई व्यक्ति न तो अपने दल को डराता है और न ही दूसरों के दल को। इसी प्रकार, कोई व्यक्ति न तो अपने पशुओं पर और न ही दूसरों के पशुओं पर क्रोधित होता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति बैल के समान है, जो न तो अपने पशुओं पर और न ही दूसरों के पशुओं पर क्रोधित होता है।

"हे भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान बैल के समान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

109 पेड़ (रुक्खा सं. वृक्ष)

भिक्षुओं, ये चार प्रकार के वृक्ष हैं। वे कौन से चार हैं? [110] एक जो कोमल लकड़ी का है और कोमल लकड़ी के वृक्षों से घिरा है; एक जो कोमल लकड़ी का है और कठोर लकड़ी के वृक्षों से घिरा है; एक जो कठोर लकड़ी का है और कोमल लकड़ी के वृक्षों से घिरा है; और एक जो कठोर लकड़ी का है और कठोर लकड़ी के वृक्षों से घिरा है। ये चार प्रकार के वृक्ष हैं। इसी प्रकार, संसार में वृक्षों के समान चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? एक जो कोमल लकड़ी का है और कोमल लकड़ी के वृक्षों से घिरा है; एक जो कोमल लकड़ी का है और कठोर लकड़ी के वृक्षों से घिरा है; एक जो कठोर लकड़ी का है और कोमल लकड़ी के वृक्षों से घिरा है; और एक जो कठोर लकड़ी का है और कठोर लकड़ी के वृक्षों से घिरा है।

(1) "हे भिक्षुओं, जो व्यक्ति कोमल लकड़ी का बना हो और उसके चारों ओर कोमल लकड़ी के वृक्ष हों, वह कैसा होता है? यहाँ, एक व्यक्ति अनैतिक है, बुरे चरित्र का है, और उसका अनुयायी भी अनैतिक है, बुरे चरित्र का है। इसी प्रकार, एक व्यक्ति कोमल लकड़ी का बना होता है और उसके चारों ओर कोमल लकड़ी के वृक्ष होते हैं। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस वृक्ष के समान है जो कोमल लकड़ी का बना हो और उसके चारों ओर कोमल लकड़ी के वृक्ष हों।"

(2) "और एक व्यक्ति जो कोमल लकड़ी का बना हो, लेकिन कठोर लकड़ी के पेड़ों से घिरा हो, वह कैसे हो सकता है? यहाँ, एक व्यक्ति अनैतिक, बुरे चरित्र का है, लेकिन उसके अनुयायी गुणी, अच्छे चरित्र के हैं। इसी तरह एक व्यक्ति कोमल लकड़ी का बना होता है, लेकिन कठोर लकड़ी के पेड़ों से घिरा होता है। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति ठीक उसी प्रकार के पेड़ के समान है जो कोमल लकड़ी का बना हो, लेकिन कठोर लकड़ी के पेड़ों से घिरा हो।"

(3) "और वह व्यक्ति कैसा है जो कठोर लकड़ी का बना हो लेकिन उसके चारों ओर नरम लकड़ी के पेड़ हों? यहाँ, एक व्यक्ति गुणी और अच्छे चरित्र का है, परन्तु उसका अनुयायी अनैतिक और बुरे चरित्र का है। ठीक इसी प्रकार, एक व्यक्ति कठोर लकड़ी का बना होता है लेकिन उसके चारों ओर नरम लकड़ी के पेड़ होते हैं। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति ठीक उसी प्रकार है जैसे कोई कठोर लकड़ी का बना पेड़ नरम लकड़ी के पेड़ों से घिरा हो।"

(4) "और एक व्यक्ति कठोर लकड़ी से बना होता है और कठोर लकड़ी के पेड़ों से घिरा होता है, ऐसा कैसे कहा जा सकता है? यहाँ, एक व्यक्ति गुणी और अच्छे चरित्र वाला है, और उसके अनुयायी भी गुणी और अच्छे चरित्र वाले हैं। इसी प्रकार एक व्यक्ति कठोर लकड़ी से बना होता है और कठोर लकड़ी के पेड़ों से घिरा होता है। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति ठीक उसी प्रकार है जैसे एक कठोर लकड़ी से बना और कठोर लकड़ी के पेड़ों से घिरा हुआ वृक्ष।"

"हे भिक्षुओं, ये चार प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में विद्यमान वृक्षों के समान पाए जाते हैं।"

---

110 वाइपर (असिविसा)

भिक्षुओं, चार प्रकार के विषैले साँप होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक वह जिसका विष शीघ्र निकलता है लेकिन घातक नहीं होता; दूसरा वह जिसका विष घातक होता है लेकिन शीघ्र नहीं निकलता; तीसरा वह जिसका विष शीघ्र और घातक दोनों होता है; और चौथा वह जिसका विष न तो शीघ्र निकलता है और न ही घातक। ये चार प्रकार के विषैले साँप हैं। [111] इसी प्रकार, संसार में विषैले साँपों के समान चार प्रकार के मनुष्य पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक वह जिसका विष शीघ्र निकलता है लेकिन घातक नहीं होता; तीसरा वह जिसका विष घातक होता है लेकिन शीघ्र नहीं निकलता; चौथा वह जिसका विष शीघ्र और घातक दोनों होता है; और चौथा वह जिसका विष न तो शीघ्र निकलता है और न ही घातक।

(1) "और हे भिक्षुओं, ऐसा व्यक्ति कैसे है जिसका विष शीघ्रता से प्रकट होता है, परन्तु घातक नहीं? यहाँ, कोई व्यक्ति अक्सर क्रोधित होता है, परन्तु उसका क्रोध अधिक देर तक नहीं रहता। इसी प्रकार, ऐसा व्यक्ति है जिसका विष शीघ्रता से प्रकट होता है, परन्तु घातक नहीं। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस विषैले साँप के समान है जिसका विष शीघ्रता से प्रकट होता है, परन्तु घातक नहीं।"

(2) "और वह व्यक्ति कैसा होता है जिसका विष तो तीव्र होता है, पर तुरंत प्रकट नहीं होता? यहाँ, व्यक्ति को अक्सर क्रोध नहीं आता, परन्तु उसका क्रोध लंबे समय तक बना रहता है। इसी प्रकार वह व्यक्ति ऐसा होता है जिसका विष तो तीव्र होता है, पर तुरंत प्रकट नहीं होता। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस विषैले साँप के समान है जिसका विष तो तीव्र होता है, पर तुरंत प्रकट नहीं होता।"

(3) "और वह व्यक्ति कैसा होता है जिसका विष शीघ्रता से उभरता है और घातक होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति अक्सर क्रोधित हो जाता है, और उसका क्रोध लंबे समय तक बना रहता है। इसी तरह वह व्यक्ति ऐसा होता है जिसका विष शीघ्रता से उभरता है और घातक होता है। इसलिए, मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस विषैले साँप के समान है जिसका विष शीघ्रता से उभरता है और घातक होता है।"

(4) "और वह व्यक्ति कैसा है जिसका विष न तो शीघ्र प्रकट होता है और न ही घातक? यहाँ, व्यक्ति को बार-बार क्रोध नहीं आता और उसका क्रोध भी लंबे समय तक नहीं रहता। इसी प्रकार वह व्यक्ति ऐसा है जिसका विष न तो शीघ्र प्रकट होता है और न ही घातक। अतः मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस विषैले साँप के समान है जिसका विष न तो शीघ्र प्रकट होता है और न ही घातक।"

"ये भिक्षुओं, संसार में विद्यमान पाए जाने वाले सर्पों के समान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।" [112]

II. केसी अनुभाग

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

111 केसी

तब अश्व प्रशिक्षक केसी भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गया। तब भगवान (बुद्ध) ने उससे कहा:

"केसी, तुम एक कुशल घुड़सवार प्रशिक्षक के रूप में जाने जाते हो, आखिर घोड़े को वश में करने के लिए उसे अनुशासित कैसे किया जाता है?"

"भंते, मैं एक तरह के घोड़े को नरमी से, दूसरी तरह के घोड़े को सख्ती से और तीसरी तरह के घोड़े को नरमी और सख्ती दोनों से अनुशासित करता हूँ।"

"लेकिन, केसी, अगर तुम्हारे द्वारा वश में किया जाने वाला घोड़ा इनमें से किसी भी तरीके से अनुशासन नहीं मानता है, तो तुम उससे कैसे निपटोगी?"

"भंते, अगर मेरे द्वारा वश में किया जाने वाला घोड़ा इनमें से किसी भी विधि से अनुशासन नहीं मानता, तो मैं उसे मार डालता हूँ। क्यों? ताकि मेरे गुरु संघ पर कोई कलंक न लगे। लेकिन, भंते, भगवान (बुद्ध) वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं। भला भगवान (बुद्ध) किसी व्यक्ति को वश में करने के लिए कैसे अनुशासित करते हैं?"

मैं एक प्रकार के व्यक्ति को कोमल ढंग से, दूसरे प्रकार के व्यक्ति को कठोर ढंग से, और तीसरे प्रकार के व्यक्ति को कोमल और कठोर दोनों तरह से अनुशासित करता हूँ। (1) हे केशी, यह कोमल विधि है: 'शारीरिक सुवाह्य आचरण ऐसा है, और उसका परिणाम ऐसा है; वाणी का सुवाह्य आचरण ऐसा है, और उसका परिणाम ऐसा है; मानसिक सुवाह्य आचरण ऐसा है, और उसका परिणाम ऐसा है; देव (देवदूत/भगवान) ऐसे हैं, मनुष्य ऐसे हैं। (2) यह कठोर विधि है: 'शारीरिक दुराचार ऐसा है, और उसका परिणाम ऐसा है; वाणी का दुराचार ऐसा है, और उसका परिणाम ऐसा है; मानसिक दुराचार ऐसा है, और उसका परिणाम ऐसा है; नरक ऐसा है, पशुलोक ऐसा है, और पीड़ित आत्माओं का क्षेत्र ऐसा है। (3) यह कोमल और कठोर विधि है: 'शारीरिक सुवाह्य आचरण ऐसा है, और उसका परिणाम ऐसा है; शारीरिक दुराचार ऐसा है, और उसका परिणाम ऐसा है; वाणी का सुवाह्य आचरण ऐसा है।' ऐसा है मौखिक अच्छे आचरण का परिणाम; ऐसा है मौखिक दुराचार, ऐसा है मौखिक दुराचार का परिणाम। ऐसा है मानसिक अच्छा आचरण, ऐसा है मानसिक अच्छे आचरण का परिणाम; ऐसा है मानसिक दुराचार, ऐसा है मानसिक दुराचार का परिणाम। ऐसे हैं देव (देवदूत/भगवान), ऐसे हैं मनुष्य; ऐसा है नरक, ऐसा है पशु जगत, ऐसा है पीड़ित आत्माओं का क्षेत्र।

"परन्तु, भंते, यदि कोई व्यक्ति जिसे तुम वश में करना चाहते हो, इन विधियों में से किसी से भी अनुशासन नहीं मानता, [113] तो भगवान (बुद्ध) उससे कैसे निपटते हैं?"

(4) "यदि मेरे द्वारा वश में किया जाने वाला कोई व्यक्ति इनमें से किसी भी विधि से अनुशासन नहीं मानता, तो मैं उसे मार डालता हूँ।"

"परन्तु, भंते, भगवान (बुद्ध) के लिए जीवन का विनाश करना उचित नहीं है। फिर भी वे कहते हैं, 'तो मैं उसे मार डालता हूँ।'"

"यह सत्य है, केशी, कि तथागत (बुद्ध) के लिए जीवन का विनाश करना उचित नहीं है। परन्तु जब कोई व्यक्ति, जिसे वश में किया जाना है, सौम्य विधि, कठोर विधि, या सौम्य एवं कठोर दोनों विधियों से अनुशासन नहीं मानता, तो तथागत (बुद्ध) यह समझते हैं कि उससे बात करना और उसे उपदेश देना उचित नहीं है, और उनके ज्ञानी साथी भिक्षु भी यही सोचते हैं। क्योंकि, केशी, यही बुद्ध की शिक्षा में 'हत्या' है: तथागत (बुद्ध) यह समझते हैं कि किसी से बात करना और उसे उपदेश देना उचित नहीं है, और उसके ज्ञानी साथी भिक्षु भी यही सोचते हैं कि किसी से बात करना और उसे उपदेश देना उचित नहीं है।"

"हे भंते, उसका वध वास्तव में उचित ही हुआ है, जब तथागत (बुद्ध) यह सोचते हैं कि उससे बात नहीं करनी चाहिए और उसे उपदेश नहीं देना चाहिए, और उसके बुद्धिमान साथी भिक्षु भी यही सोचते हैं कि उससे बात नहीं करनी चाहिए और उसे उपदेश नहीं देना चाहिए।"

"उत्कृष्ट, भंते! उत्कृष्ट, भंते! भगवान (बुद्ध) ने अनेक तरीकों से धम्म को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग आकृतियाँ देख सकें। मैं अब भगवान (बुद्ध), धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। भगवान (बुद्ध) मुझे गृहस्थ अनुयायी समझें जो आज से जीवन भर के लिए शरण में गया है।"

---

112 स्पीड (जावा)

"भिक्षुओं (साधुओं) में चार गुण होते हैं, जो राजा के उत्तम नस्ल के घोड़े के समान होते हैं। यह घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का प्रतीक माना जाता है। वे चार गुण क्या हैं? सत्यनिष्ठा, गति, धैर्य और सौम्यता। इन चार गुणों से युक्त होने के कारण, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजत्व का प्रतीक माना जाता है।"

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है। वे चार गुण कौन से हैं? सत्यनिष्ठा, शीघ्रता, धैर्य और नम्रता। इन चार कारकों

से युक्त [114] भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है।"

---

113 गोड (पटोडा)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के उत्तम नस्ल के घोड़े पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं?"

(1) "यहाँ, भिक्षुओं, एक विशेष प्रकार का उत्तम नस्ल का घोड़ा अंकुश की छाया देखते ही उत्तेजित हो जाता है और सोचने लगता है: 'आज मेरा प्रशिक्षक मुझे क्या कार्य देगा? मैं उसे संतुष्ट करने के लिए क्या करूँ?' ऐसा ही एक उत्तम नस्ल का घोड़ा यहाँ है। यह दुनिया में पाया जाने वाला पहला उत्तम नस्ल का घोड़ा है।"

(2) "एक प्रकार का उत्कृष्ट नस्ल का घोड़ा अंकुश की छाया देखते ही न तो विचलित होता है और न ही उसमें कोई तत्परता उत्पन्न होती है, परन्तु अंकुश से उसके बाल टकराने पर वह विचलित हो जाता है और तत्परता का भाव उत्पन्न कर लेता है, यह सोचते हुए: 'आज मेरा प्रशिक्षक मुझे क्या कार्य देगा? मैं उसे संतुष्ट करने के लिए क्या कर सकता हूँ?' ऐसा ही एक प्रकार का उत्कृष्ट नस्ल का घोड़ा है। यह दुनिया में पाया जाने वाला दूसरा प्रकार का उत्कृष्ट नस्ल का घोड़ा है।"

(3) "एक और, एक विशेष प्रकार का उत्तम नस्ल का घोड़ा अंकुश की छाया देखते ही या अंकुश से अपने बालों पर चोट लगते ही न तो विचलित होता है और न ही उसमें कोई तत्परता उत्पन्न होती है, परन्तु अंकुश से अपनी खाल पर चोट लगने पर वह विचलित होता है और तत्परता उत्पन्न करता है, यह सोचते हुए: 'आज मेरा प्रशिक्षक मुझे क्या कार्य देगा? मैं उसे संतुष्ट करने के लिए क्या कर सकता हूँ?' ऐसा ही एक विशेष नस्ल का उत्तम नस्ल का घोड़ा है। यह विश्व में पाया जाने वाला तीसरा प्रकार का उत्तम नस्ल का घोड़ा है।"

(4) "फिर, एक प्रकार का उत्कृष्ट शुद्ध नस्ल का घोड़ा न तो डंडे की छाया देखकर उत्तेजित होता है और न ही उसमें कोई जल्दबाजी की भावना उत्पन्न होती है, न ही जब उसके बालों पर डंडे से प्रहार किया जाता है, न ही जब उसकी खाल पर डंडे से प्रहार किया जाता है, बल्कि वह उत्तेजित होता है और उसमें जल्दबाजी की भावना उत्पन्न होती है जब उसकी हड्डी पर डंडे से प्रहार किया जाता है, यह सोचते हुए: [115] 'आज मेरा प्रशिक्षक मुझे क्या कार्य देगा? मैं उसे संतुष्ट करने के लिए क्या कर सकता हूँ?' ऐसा ही एक प्रकार का उत्कृष्ट शुद्ध नस्ल का घोड़ा है। यह दुनिया में पाया जाने वाला उत्कृष्ट शुद्ध नस्ल के घोड़े का चौथा प्रकार है।

"ये दुनिया में पाई जाने वाली उत्कृष्ट नस्ल के घोड़ों की चार किस्में हैं।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के उत्तम और श्रेष्ठ व्यक्ति पाए जाते हैं। वे चार कौन से हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, एक विशेष प्रकार का श्रेष्ठ पुरुष सुनता है: फलाँ गाँव या नगर में कोई स्त्री या पुरुष बीमार पड़ गया है या मर गया है। वह इससे विचलित हो जाता है और उसे तुरंत कार्रवाई करने की आवश्यकता महसूस होती है। विचलित होकर वह सावधानीपूर्वक प्रयास करता है। दृढ़ निश्चय के साथ वह शरीर से ही परम सत्य को अनुभव करता है और उसे अपने प्राणों (दिव्य ज्ञान) से भेदकर उसे देखता है। 795 मैं कहता हूँ कि यह श्रेष्ठ पुरुष उस श्रेष्ठ घोड़े के समान है जो अंकुश की छाया देखते ही विचलित हो जाता है और तुरंत कार्रवाई करने की आवश्यकता महसूस करता है। ऐसा ही एक प्रकार का श्रेष्ठ पुरुष है। संसार में पाया जाने वाला यह पहला प्रकार का श्रेष्ठ पुरुष है।"

(2) "एक प्रकार का श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष यह सुनकर विचलित नहीं होता कि फलाँ गाँव या कस्बे में कोई स्त्री या पुरुष बीमार पड़ गया है या मर गया है। बल्कि वह स्वयं किसी बीमार या मरे हुए स्त्री या पुरुष को देखता है। इससे वह विचलित हो जाता है और उसे तत्परता का भाव प्राप्त होता है। विचलित होकर वह सावधानीपूर्वक प्रयास करता है। दृढ़ निश्चय के साथ वह शरीर से ही परम सत्य को अनुभव करता है और उसमें भेदन (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करके उसे देखता है। मैं कहता हूँ कि यह श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष उस श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष के समान है जो अंकुश लगने पर विचलित हो जाता है और तत्परता का भाव प्राप्त कर लेता है। ऐसा एक प्रकार का श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष होता है। संसार में पाए जाने वाले श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष का यह दूसरा प्रकार है।"

(3) "एक प्रकार का श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष यह सुनकर विचलित नहीं होता कि फलाँ गाँव या कस्बे में कोई स्त्री या पुरुष बीमार पड़ गया है या मर गया है, न ही वह स्वयं किसी स्त्री या पुरुष को बीमार या मृत देखता है। बल्कि, उसके किसी रिश्तेदार या परिवार के सदस्य के बीमार या मृत पड़ने पर वह विचलित हो जाता है और उसे तुरंत कार्रवाई करने की आवश्यकता महसूस होती है। [116] विचलित होकर वह सावधानीपूर्वक प्रयास करता है, दृढ़ निश्चय के साथ वह शरीर से ही परम सत्य को अनुभव करता है और उसमें प्राण (दिव्य ज्ञान) का संचार करके उसे देखता है। मैं कहता हूँ कि यह श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष उस श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष के समान है जो अंकुश लगने पर विचलित हो जाता है और तुरंत कार्रवाई करने की आवश्यकता महसूस करता है। ऐसा ही एक प्रकार का श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष होता है। यह संसार में पाए जाने वाले श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष का तीसरा प्रकार है।"

(4) "एक प्रकार का श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष यह नहीं सुनता कि फलां गांव या कस्बे में कोई स्त्री या पुरुष बीमार पड़ गया है या मर गया है, न ही वह स्वयं किसी बीमार या मरते हुए स्त्री या पुरुष को देखता है, न ही उसके किसी रिश्तेदार या परिवार के सदस्य के बीमार पड़ने या मरने को देखता है। बल्कि, वह स्वयं पीड़ादायक, कष्टदायी, तीक्ष्ण, चुभने वाली, कष्टदायक, अप्रिय और जीवन शक्ति को क्षीण करने वाली शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) से ग्रस्त होता है। वह इससे विचलित होता है और तत्परता का भाव प्राप्त करता है। विचलित होकर वह सावधानीपूर्वक प्रयास करता है। दृढ़ निश्चय के साथ वह शरीर से ही परम सत्य का अनुभव करता है और पन्ना (दिव्य ज्ञान) से शरीर को भेदकर उसे देखता है। मैं कहता हूं कि यह श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष उस श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष के समान है जो अंकुश लगने पर विचलित होता है और तत्परता का भाव प्राप्त करता है। ऐसा ही एक प्रकार का श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष है। यह संसार में विद्यमान श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष का चौथा प्रकार है।"

"हे भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान चार प्रकार के श्रेष्ठ और शुद्ध कुलीन व्यक्ति हैं।"

---

114 नर हाथी (नाग)

"भिक्षुओं (साधुओं), राजा के सांड हाथी के चार गुण होते हैं, इसलिए वह राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का प्रतीक माना जाता है। वे चार गुण क्या हैं? यहाँ, राजा का सांड हाथी वह है जो सुनता है, जो विनाश करता है, जो धैर्यपूर्वक सहन करता है और जो आगे बढ़ता है।"

(1) "और हे भिक्षुओं, राजा का नर हाथी किस प्रकार ध्यान से सुनता है? यहाँ, हाथी प्रशिक्षक उसे जो भी कार्य सौंपता है, चाहे उसने वह कार्य पहले किया हो या नहीं, राजा का नर हाथी उस पर ध्यान देता है, उस पर तत्पर रहता है, अपना पूरा मन उस पर लगाता है और उत्सुकता से सुनता है। इसी प्रकार राजा का नर हाथी ध्यान से सुनता है।"

(2) "और राजा का बैल हाथी किस प्रकार विनाशक होता है? यहाँ, जब राजा का बैल हाथी युद्ध में प्रवेश करता है, तो वह हाथियों और हाथी सवारों को नष्ट कर देता है; वह घोड़ों और घुड़सवारों को नष्ट कर देता है; [117] वह रथों और रथ चालकों को नष्ट कर देता है; वह पैदल सेना को नष्ट कर देता है। इस प्रकार राजा का बैल हाथी विनाशक होता है।"

(3) "और राजा का हाथी धैर्यपूर्वक सहन करने वाला कैसे होता है? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में प्रवेश करता है, तो वह धैर्यपूर्वक भाले, तलवार, तीर और कुल्हाड़ियों से होने वाले प्रहारों को सहन करता है; वह ढोल, केतली, शंख और ढोल की गड़गड़ाहट को सहन करता है। इसी प्रकार राजा का हाथी धैर्यपूर्वक सहन करने वाला होता है।"

(4) "और राजा का नर हाथी किस प्रकार चलता है? यहाँ, राजा का नर हाथी तुरंत उस क्षेत्र में चला जाता है जहाँ हाथी प्रशिक्षक उसे भेजता है, चाहे वह पहले कभी वहाँ गया हो या नहीं। इस प्रकार राजा का नर हाथी चलता है।"

"इन चार गुणों से युक्त होने के कारण, राजा का हाथी राजा के योग्य होता है, राजा का सहायक होता है और राजत्व के एक कारक के रूप में गिना जाता है।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है। वे चार गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु वह है जो सुनता है, जो विनाश करता है, जो धैर्यपूर्वक सहन करता है, और जो आगे बढ़ता है।"

(1) "हे भिक्षुओं, एक भिक्षु वह कैसे होता है जो सुनता है? यहाँ, जब तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म (मार्ग) और अनुशासन का उपदेश दिया जा रहा होता है, तो एक भिक्षु उस पर ध्यान देता है, उस पर एकाग्रता से विचार करता है, अपना पूरा मन उस पर लगाता है और उत्सुकतापूर्वक सुनता है। इसी प्रकार एक भिक्षु वह होता है जो सुनता है।"

(2) "और भिक्षु विनाशक कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु उत्पन्न कामुक विचार को सहन नहीं करता, बल्कि उसका त्याग करता है, उसे दूर करता है, उसे समाप्त करता है और उसे मिटा देता है। वह द्वेष के विचार को सहन नहीं करता... हानि पहुँचाने के विचार को सहन नहीं करता... समय-समय पर उत्पन्न होने वाली किसी भी अन्य बुरी (अकुशल) अवस्था को सहन नहीं करता, बल्कि उनका त्याग करता है, उन्हें दूर करता है, उन्हें समाप्त करता है और उन्हें मिटा देता है। इसी प्रकार भिक्षु विनाशक होता है।"

(3) "भिक्षु वह कैसे होता है जो धैर्यपूर्वक सहन करता है? यहाँ, भिक्षु धैर्यपूर्वक सर्दी और गर्मी; भूख और प्यास; मक्खियों, मच्छरों, हवा, जलते सूरज और सर्पों के संपर्क; अभद्र और अपमानजनक वाणी; [118] वह उत्पन्न शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) को सहन करने में सक्षम होता है जो पीड़ादायक, कष्टदायी, तीखी, चुभने वाली, कष्टदायक, अप्रिय और जीवन शक्ति को क्षीण करने वाली होती हैं। इसी प्रकार भिक्षु वह होता है जो धैर्यपूर्वक सहन करता है।"

(4) "और भिक्षु कैसे वह है जो जाता है? यहाँ, भिक्षु शीघ्र ही उस क्षेत्र में जाता है जहाँ वह इस लंबे समय में पहले कभी नहीं गया है, अर्थात् सभी गतिविधियों के शांत होने, सभी प्राप्तियों के त्याग, तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के नाश, वैराग्य, निश्वास, निर्वाण (निब्बान) की ओर। इस प्रकार भिक्षु वह है जो जाता है।"

"इन चार गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य होता है... विश्व के लिए पुण्य का एक अतुलनीय क्षेत्र।"

---

115 विलेख (थाना)

भिक्षुओं, कर्मों के ये चार प्रकार हैं। 796 वे चार क्या हैं? (1) एक ऐसा कर्म है जो करने में अप्रिय है और जिससे हानि होगी। (2) एक ऐसा कर्म है जो करने में अप्रिय है और जिससे लाभ होगा। (3) एक ऐसा कर्म है जो करने में सुखद है और जिससे हानि होगी। (4) एक ऐसा कर्म है जो करने में सुखद है और जिससे लाभ होगा।

(1) "भिक्षुओं, सर्वप्रथम उस कर्म पर विचार करो जो करने में अप्रिय हो और जिससे हानि सिद्ध हो। यह कर्म दो आधारों पर नहीं किया जाना चाहिए: क्योंकि यह करने में अप्रिय है और इससे हानि सिद्ध होगी। यह कर्म दोनों आधारों पर नहीं किया जाना चाहिए।"

(2) "इसके बाद, उस कर्म का उदाहरण लीजिए जो करने में अप्रिय है, पर लाभप्रद सिद्ध होगा। इसी उदाहरण से यह समझा जा सकता है कि पुरुष शक्ति, पुरुष ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और पुरुष परिश्रम के संदर्भ में कौन मूर्ख है और कौन बुद्धिमान। मूर्ख इस प्रकार चिंतन नहीं करता: 'यद्यपि यह कर्म करने में अप्रिय है, फिर भी [119] इससे लाभ होगा।' अतः वह वह कर्म नहीं करता, और उसका उससे परहेज करना हानिकारक सिद्ध होता है। परन्तु बुद्धिमान इस प्रकार चिंतन करता है: 'यद्यपि यह कर्म करने में अप्रिय है, फिर भी इससे लाभ होगा।' अतः वह वह कर्म करता है, और इससे लाभ सिद्ध होता है।

(3) "अब उस कर्म का उदाहरण लीजिए जो करने में सुखद तो है, लेकिन हानिप्रद सिद्ध होगा। इसी उदाहरण से यह समझा जा सकता है कि पुरुष शक्ति, ऊर्जा और परिश्रम के मामले में कौन मूर्ख है और कौन बुद्धिमान। मूर्ख व्यक्ति यह नहीं सोचता कि 'यद्यपि यह कर्म करने में सुखद है, फिर भी हानिप्रद सिद्ध होगा।' अतः वह कर्म करता है और हानिप्रद सिद्ध होता है। परन्तु बुद्धिमान व्यक्ति यह सोचता है कि 'यद्यपि यह कर्म करने में सुखद है, फिर भी हानिप्रद सिद्ध होगा।' अतः वह कर्म नहीं करता और उससे परहेज करना लाभकारी सिद्ध होता है।"

(4) "इसके बाद, उस कार्य का उदाहरण लें जिसे करना सुखद है और जो लाभकारी सिद्ध होगा। इस कार्य को दोनों आधारों पर किया जाना चाहिए: क्योंकि यह करना सुखद है और क्योंकि यह लाभकारी सिद्ध होता है। इस कार्य को दोनों आधारों पर किया जाना चाहिए।"

"भिक्षुओं, ये कर्म के चार प्रकार हैं।"

---

116 सतर्कता (अप्पमदा सं. अप्रमाद)

"भिक्षुओं, चार ऐसे अवसर हैं जब सतर्कता का अभ्यास करना चाहिए। वे चार कौन से हैं?"

(1) शारीरिक दुराचार का त्याग करो और शारीरिक सुवाह्य आचरण विकसित करो; इसमें आलसी मत बनो। (2) मौखिक दुराचार का त्याग करो और मौखिक सुवाह्य आचरण विकसित करो; इसमें आलसी मत बनो। (3) मानसिक दुराचार का त्याग करो और मानसिक सुवाह्य आचरण विकसित करो; इसमें आलसी मत बनो। (4) गलत दृष्टिकोण का त्याग करो और सही दृष्टिकोण विकसित करो; इसमें आलसी मत बनो। [120]

"भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु शारीरिक दुराचार का त्याग करके शारीरिक सुवाह्य आचरण अपना लेता है; जब वह मौखिक दुराचार का त्याग करके मौखिक सुवाह्य आचरण अपना लेता है; जब वह मानसिक दुराचार का त्याग करके मानसिक सुवाह्य आचरण अपना लेता है; जब वह गलत दृष्टिकोण का त्याग करके सही दृष्टिकोण अपना लेता है, तब उसे भविष्य में मृत्यु से भय नहीं होना चाहिए।" 797

---

117 रखवाली (अरक्खा सं. अरक्षण)

"भिक्षुओं (साधुओं), जो अपने कल्याण के लिए तल्लीन हैं, उन्हें चार प्रकार से सतर्कता, ध्यान (सती/ध्यान) और मन की रक्षा का अभ्यास करना चाहिए। वे चार कौन से हैं?"

(1) “मेरा मन कामवासना (राग) जगाने वाली चीजों से उत्तेजित न हो!” अपने कल्याण पर ध्यान केंद्रित करने वाले व्यक्ति को इस प्रकार सतर्कता, ध्यान और मन की रक्षा का अभ्यास करना चाहिए।

(2) "मेरा मन घृणा उत्पन्न करने वाली चीजों के प्रति घृणा से न भर जाए!" अपने कल्याण पर ध्यान केंद्रित करने वाले व्यक्ति को सतर्कता, ध्यान (सती) और मन की रक्षा का अभ्यास करना चाहिए।

(3) "'मेरा मन भ्रम पैदा करने वाली चीजों से भ्रमित न हो!' अपने कल्याण पर ध्यान केंद्रित करने वाले व्यक्ति को इस प्रकार सतर्कता, ध्यान और मन की रक्षा का अभ्यास करना चाहिए।

(4) "'मेरा मन उन चीजों से मदहोश न हो जाए जो मदहोश करती हैं!' 799 अपने कल्याण पर ध्यान केंद्रित करने वाले व्यक्ति को सतर्कता, ध्यान (सती) और मन की रक्षा का अभ्यास करना चाहिए।

"भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु का मन कामवासना (राग) उत्पन्न करने वाली चीजों से उत्तेजित नहीं होता क्योंकि उसने कामवासना (राग) से मुक्ति पा ली है; जब उसका मन घृणा उत्पन्न करने वाली चीजों के प्रति घृणा से भरा नहीं होता क्योंकि उसने घृणा से मुक्ति पा ली है; जब उसका मन मोह उत्पन्न करने वाली चीजों से भ्रमित नहीं होता क्योंकि उसने मोह (मोह) से मुक्ति पा ली है; जब उसका मन मदहोश करने वाली चीजों से मदहोश नहीं होता क्योंकि उसने मदहोशी से मुक्ति पा ली है, तब वह न तो डरता है, न कांपता है, न थरथराता है और न ही भयभीत होता है, और न ही वह अन्य तपस्वियों के शब्दों से विचलित होता है।" 800

---

118 प्रेरक 801 (संवेजानिया सं. संवेगा)

भिक्षुओं, आस्थावान कुल के इन चार प्रेरणादायक स्थानों को अवश्य देखना चाहिए। वे चार स्थान कौन से हैं? (1) वह स्थान जहाँ तथागत (बुद्ध) का जन्म हुआ था, वह एक प्रेरणादायक स्थान है जिसे आस्थावान कुल के व्यक्ति को अवश्य देखना चाहिए। (2) वह स्थान जहाँ तथागत (बुद्ध) को अद्वितीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त हुआ था, वह एक प्रेरणादायक स्थान है जिसे आस्थावान कुल के व्यक्ति को अवश्य देखना चाहिए। (3) वह स्थान जहाँ तथागत (बुद्ध) ने अद्वितीय धम्म चक्र को गतिमान किया था, वह एक प्रेरणादायक स्थान है

जिसे आस्थावान कुल के व्यक्ति को अवश्य देखना चाहिए। (4) वह स्थान जहाँ तथागत (बुद्ध) ने निर्वाण तत्व द्वारा पूर्ण निर्वाण प्राप्त किया था, वह एक प्रेरणादायक स्थान है जिसे आस्थावान कुल के व्यक्ति को अवश्य देखना चाहिए। [121] हे भिक्षुओं, ये चार प्रेरणादायक स्थान हैं जिन्हें अवश्य देखना चाहिए। किसी ऐसे कबीले के सदस्य द्वारा देखा जाए जो आस्थावान हो।" 802

---

119 खतरे (1) (भया1)

भिक्षुओं, ये चार खतरे हैं। कौन से चार? पुनर्जन्म का खतरा, वृद्धावस्था का खतरा, बीमारी का खतरा और मृत्यु का खतरा। ये चार खतरे हैं।

---

120 खतरे (2) (भया2)

भिक्षुओं, ये चार खतरे हैं। कौन से चार? आग का खतरा, बाढ़ का खतरा, राजा से खतरा और चोर से खतरा। ये चार खतरे हैं।

तृतीय. ख़तरे अनुभाग (भयावग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

121 आत्म-निन्दा (अत्तनुवदा)

भिक्षुओं, ये चार खतरे हैं। कौन से चार? आत्म-निंदा का खतरा, दूसरों द्वारा निंदा का खतरा, दंड का खतरा और बुरे गंतव्य का खतरा।

(1) "हे भिक्षुओं, आत्मनिंदा का खतरा क्या है? यहाँ, कोई इस प्रकार विचार करता है: 'यदि मैं शारीरिक, वाणी या मानसिक दुराचार में लिप्त हो जाऊँ, तो क्या मैं अपने आचरण के कारण स्वयं को धिक्कार नहीं दूँगा?' आत्मनिंदा के खतरे से भयभीत होकर, वह शारीरिक दुराचार का त्याग कर शारीरिक सुवाह्य आचरण अपनाता है; वह वाणी दुराचार का त्याग कर वाणी सुवाह्य आचरण अपनाता है; वह मानसिक दुराचार का त्याग कर मानसिक सुवाह्य आचरण अपनाता है; वह स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। इसे ही आत्मनिंदा का खतरा कहते हैं।"

(2) "और दूसरों द्वारा निंदा का खतरा क्या है? [122] यहाँ, कोई इस प्रकार विचार करता है: 'यदि मैं शारीरिक, मौखिक या मानसिक दुराचार में लिप्त हो जाऊँ, तो क्या दूसरे मेरे व्यवहार के कारण मेरी निंदा नहीं करेंगे?' दूसरों द्वारा निंदा के खतरे से भयभीत होकर, वह शारीरिक दुराचार का त्याग कर अच्छे शारीरिक आचरण को अपनाता है; वह मौखिक दुराचार का त्याग कर अच्छे मौखिक आचरण को अपनाता है; वह मानसिक दुराचार का त्याग कर अच्छे मानसिक आचरण को अपनाता है; वह स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। इसे ही दूसरों द्वारा निंदा का खतरा कहा जाता है।"

(3) "और दंड का क्या खतरा है? 803 यहाँ, कोई देखता है कि जब राजा किसी अपराध करने वाले चोर को गिरफ्तार करते हैं, तो वे उसे अनेक प्रकार के दंड देते हैं: वे उसे कोड़ों से पिटवाते हैं, बेंत से पीटते हैं, लाठियों से पिटवाते हैं; वे उसके हाथ काट देते हैं, उसके पैर काट देते हैं, उसके हाथ और पैर दोनों काट देते हैं; उसके कान काट देते हैं, उसकी नाक काट देते हैं, उसके कान और नाक दोनों काट देते हैं; वे उसे 'दलिया' के बर्तन, 'पॉलिश किए हुए शंख से बनी दाढ़ी', 'राहु के मुख', 'अग्नि की माला', 'ज्वलित हाथ', 'घास की पत्तियों', 'छाल

की पोशाक', 'हिरण', 'मांस के हुक', 'सिक्कों', 'लाइ अचार', 'धुरी की पिन', 'लुढ़कती हुई पल्लिया' के अधीन करते हैं; और वे उस पर उबलता हुआ तेल छिड़कवाते हैं, और वे उसे कुत्तों से कुतरवाते हैं, और वे उसे जिंदा सूली पर चढ़ा देते हैं।" एक खूंटी लगाई गई, और उन्होंने तलवार से उसका सिर काट दिया।

उसके मन में यह विचार आता है: 'जब राजा किसी चोर को अपराध करते हुए गिरफ्तार करते हैं, तो वे उसे उसके बुरे कर्मों के कारण कई तरह की सजाएँ देते हैं: वे उसे कोड़ों से पिटवाते हैं... वे तलवार से उसका सिर कटवा देते हैं। अब अगर मैं ऐसा कोई बुरा काम करूँ, और राजा मुझे गिरफ्तार कर लें, तो वे मुझे भी वही सजाएँ देंगे। वे मुझे कोड़ों से पिटवाएँगे... वे तलवार से मेरा सिर कटवा देंगे।' सजा के भय से वह दूसरों की संपत्ति लूटने नहीं जाता। इसे ही सजा का भय कहते हैं। [1231]

(4) "और बुरे अंजाम का खतरा क्या है? यहाँ, कोई इस प्रकार विचार करता है: 'शारीरिक दुराचार के बुरे परिणाम आने वाले जन्मों में होते हैं; वाणी के बुरे परिणाम होते हैं; मानसिक दुराचार के बुरे परिणाम आने वाले जन्मों में होते हैं। अब यदि मैं शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त रहूँ, तो शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, मैं दुख के लोक में, बुरे अंजाम में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लूँगा। बुरे अंजाम के खतरे से भयभीत होकर, वह शारीरिक दुराचार का त्याग कर अच्छे शारीरिक आचरण का विकास करता है; वह वाणी के दुराचार का त्याग कर अच्छे वाणी के आचरण का विकास करता है; वह मानसिक दुराचार का त्याग कर अच्छे मानसिक आचरण का विकास करता है; वह स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। इसे ही बुरे अंजाम का खतरा कहा जाता है।

"भिक्षुओं, ये चार खतरे हैं।" 805

122 तरंगें [806] (उमिभया)

भिक्षुओं, जल में प्रवेश करने वाले को चार प्रकार के खतरों का सामना करना पड़ता है। वे चार खतरे कौन से हैं? लहरों का खतरा, मगरमच्छों का खतरा, भंवरों का खतरा और भयंकर मछलियों का खतरा। जल में प्रवेश करने वाले को इन्हीं चार खतरों का सामना करना पड़ता है। इसी प्रकार, गृहस्थ जीवन छोड़कर धर्म और अनुशासन में संन्यासी बनने वाले कुल के अनुयायी को भी चार प्रकार के खतरों का सामना करना पड़ता है। वे चार खतरे कौन से हैं? लहरों का खतरा, मगरमच्छों का खतरा, भंवरों का खतरा और भयंकर मछलियों का खतरा।

(1) "और हे भिक्षुओं, लहरों का खतरा क्या है? यहाँ, एक कुल का व्यक्ति गृहस्थ जीवन से विमुख होकर संन्यासी जीवन में इस विचार के साथ चला गया है: 'मैं पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु में डूबा हुआ हूँ; दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा में। मैं दुख में डूबा हुआ हूँ, दुख से पीड़ित हूँ। शायद इस पूरे दुख के समूह का अंत हो सकता है।' फिर, उसके इस प्रकार संन्यासी जीवन में जाने के बाद, उसके साथी भिक्षु उसे उपदेश और निर्देश देते हैं: 'तुम्हें इस तरह आगे बढ़ना चाहिए, इस तरह लौटना चाहिए; [124] इस तरह आगे देखना चाहिए, इस तरह बगल में देखना चाहिए; अपने अंगों को इस तरह समेटना चाहिए, उन्हें इस तरह फैलाना चाहिए; तुम्हें अपने वस्त्र इस तरह पहनने चाहिए और अपने बाह्य वस्त्र और कुंड को इस तरह ले जाना चाहिए।' वह सोचता है: 'पहले, जब मैं गृहस्थ था, तब मैं दूसरों को उपदेश और शिक्षा देता था। लेकिन अब ये [भिक्षु], जो मेरे पुत्र या पोते की आयु के हैं, मुझे उपदेश और शिक्षा देने का साहस कर रहे हैं।' क्रोधित और असंतुष्ट होकर वह प्रशिक्षण त्याग देता है और निम्न लोक में लौट जाता है। इसे वह भिक्षु कहते हैं जिसने लहरों के खतरे के कारण प्रशिक्षण त्याग दिया और निम्न लोक में लौट गया। "लहरों का खतरा" क्रोध और चिड़चिड़ापन का प्रतीक है। इसे ही लहरों का खतरा कहा जाता है।

(2) "और कुंभिल मगरमच्छों का क्या खतरा है? यहाँ, एक कुलवासी ने गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश किया है, इस विचार के साथ: 'मैं पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु के चक्र में डूबा हुआ हूँ; दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा में। मैं दुख में डूबा हुआ हूँ, दुखों से पीड़ित हूँ। शायद इस पूरे दुख के चक्र का अंत हो सकता है।' फिर, उसके इस प्रकार संन्यासी जीवन में प्रवेश करने के बाद, उसके साथी भिक्षु उसे उपदेश और निर्देश देते हैं: 'तुम इसका सेवन कर सकते हो, परन्तु उसका नहीं; तुम इसे खा सकते हो, परन्तु उसका नहीं; तुम इसका स्वाद ले सकते हो, परन्तु उसका नहीं; तुम इसे पी सकते हो, परन्तु उसका नहीं। तुम वही खा सकते हो, चख सकते हो और ग्रहण कर सकते हो जो अनुमत है, न कि जो अनुमत नहीं है। तुम उचित समय के भीतर खा सकते हो, चख सकते हो और ग्रहण कर सकते हो, उचित समय के बाहर नहीं।' वह सोचता है: 'पहले, जब मैं गृहस्थ था, तो मैं जो चाहता था, वह सब ग्रहण करता था और जो नहीं चाहता था, वह नहीं ग्रहण करता था। मैं जो चाहता था, वह खाता था और जो नहीं चाहता था, वह नहीं खाता था। मैं जो

चाहता था, वह चखता था और जो नहीं चाहता था, वह नहीं चखता था। मैं जो चाहता था, वह पीता था और जो नहीं चाहता था, वह नहीं पीता था। मैंने उचित समय के भीतर और उचित समय के बाहर, दोनों तरह से ग्रहण, खाया, चखा और पिया। [125] लेकिन अब जब निष्ठावान गृहस्थ हमें उचित समय के बाहर दिन में स्वादिष्ट चीजें खाने को देते हैं, तो ये [भिक्षु] हमारे मुंह पर पट्टी बांध देते हैं।' क्रोधित और असंतुष्ट होकर, वह प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है। इसे मगरमच्छों के खतरे के कारण प्रशिक्षण छोड़कर निम्न जीवन में लौटने वाला भिक्षु कहा जाता है। 'मगरमच्छों का खतरा' अत्यधिक भोजन करने का एक नाम। इसे मगरमच्छों का खतरा कहा जाता है।

(3) "और अवतारों के भंवरों का क्या खतरा है? यहाँ, एक कुलवासी आस्था के कारण गृहस्थ जीवन छोड़कर बेघर हो गया है, इस विचार के साथ: 'मैं पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु के चक्र में डूबा हुआ हूँ; दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा में। मैं दुख में डूबा हुआ हूँ, दुखों से पीड़ित हूँ। शायद इस पूरे दुख के चक्र का अंत संभव हो सके।'" फिर, इस प्रकार संन्यासी जीवन में प्रवेश करने के बाद, वह सुबह वस्त्र धारण करता है, भिक्षापात्र और वस्त्र धारण करता है, और भिक्षा मांगने के लिए किसी गाँव या कस्बे में प्रवेश करता है, शरीर, वाणी और मन को असंयमित रखते हुए, सती ध्यान स्थापित किए बिना, इंद्रियों को अनियंत्रित रखते हुए। वह वहाँ किसी गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र को पाँचों इंद्रिय सुखों से परिपूर्ण होकर आनंद लेते हुए देखता है। उसके मन में यह विचार आता है: 'पहले, जब मैं गृहस्थ था, तब मैं पाँचों इंद्रिय सुखों से परिपूर्ण होकर आनंद लेता था। मेरे परिवार में धन है। मैं उस धन का आनंद भी ले सकता हूँ और पुण्य कर्म भी कर सकता हूँ। अब मुझे साधना छोड़ देनी चाहिए और निम्न जीवन में लौट जाना चाहिए ताकि मैं उस धन का आनंद भी ले सकूँ और पुण्य कर्म भी कर सकूँ।' अतः वह साधना छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है। इसे वह भिक्षु कहा जाता है जिसने भंवरों के खतरे के कारण साधना छोड़ दी और निम्न जीवन में लौट गया। 'भंवरों का खतरा' इंद्रिय सुख के पांचों स्रोतों को दिया गया एक नाम है। इसे ही 'भंवरों का खतरा' कहा जाता है।

(4) "और भयंकर मछली (सुसुका) का क्या खतरा है? यहाँ, एक कुलवासी ने विश्वास के साथ गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश किया है, इस विचार के साथ: 'मैं पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु में डूबा हुआ हूँ; दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा में। मैं दुख में डूबा हुआ हूँ, दुख से पीड़ित हूँ। शायद इस पूरे दुख के समूह का अंत हो सकता है।' फिर, इस प्रकार संन्यासी जीवन में प्रवेश करने के बाद, वह सुबह वस्त्र धारण करता है, भिक्षापात्र और वस्त्र लेकर किसी गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने के लिए जाता है, शरीर, वाणी और मन पर कोई नियंत्रण नहीं रखता, सचेतनता स्थापित नहीं करता, इंद्रियों को अनियंत्रित रखता है। वहाँ वह स्त्रियों को अस्त-व्यस्त और ढीले वस्त्रों में देखता है। उन्हें देखकर उसके मन में कामवासना (राग) उत्पन्न हो जाती है। कामवासना (राग) से ग्रस्त होकर वह साधना त्याग देता है और निम्न लोक में लौट जाता है। इसे वह भिक्षु कहा जाता है जिसने भयंकर मछली के खतरे के कारण साधना त्याग दी और निम्न लोक में लौट गया। 'भयंकर मछली का खतरा' स्त्रियों के लिए प्रयुक्त शब्द है।

"हे भिक्षुओं, ये वे चार खतरे हैं जिनका सामना उस कुलवासी को करना पड़ सकता है जो गृहस्थ जीवन से विमुख होकर इस धम्म और अनुशासन में संन्यासी जीवन व्यतीत करने के लिए प्रस्थान करता है।"

---

123 अंतर (1) (नाना कराना1)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं?"

(1) हे भिक्षुओं, इंद्रिय सुखों से विरक्त और अकुशल अवस्थाओं से विरक्त होकर, कोई व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न आनंद और सुख से युक्त होता है, जिसमें चिंतन और आत्मनिरीक्षण भी शामिल होता है। वह इसका आनंद लेता है, इसकी इच्छा करता है और इसमें तृप्ति पाता है। यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, इस पर एकाग्र रहता है, इसमें बार-बार निवास करता है और मृत्यु के समय इसे नहीं खोता है, तो वह ब्रह्मा की संगति के देवताओं के साथ पुनर्जन्म लेता है। ब्रह्मा की संगति के देवताओं का जीवनकाल एक युग होता है। 818 सांसारिक व्यक्ति जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवताओं का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह नरक, पशुलोक या व्यथित आत्माओं के लोक में जाता है। 609 परन्तु भगवान (बुद्ध) का शिष्य जीवन भर वहीं रहता है। जीवन, और जब वह उन देवों (देवदूतों/देवताओं) का संपूर्ण जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो

वह उसी अवस्था में अंतिम निर्वाण प्राप्त करता है। 810 यही वह अंतर है, यही वह भिन्नता है, यही वह भेद है जो शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य और अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति के बीच है, अर्थात् जब भविष्य का गंतव्य और पुनर्जन्म होता है। 811 [127]

(2) "फिर, कोई व्यक्ति, विचार और परीक्षा के शांत होने पर, दूसरे ध्यान (सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त होता है, बिना विचार और परीक्षा के। वह इसका आनंद लेता है, इसकी इच्छा करता है और इसमें संतुष्टि पाता है। यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, इस पर केंद्रित रहता है, अक्सर इसमें निवास करता है और मरने पर इसे नहीं खोता है, तो वह प्रकाशमान देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। प्रकाशमान देवों (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल दो युगों का होता है। 812 सांसारिक व्यक्ति जीवन भर वहीं रहता है और जब वह उन देवों (देवदूतों/देवताओं) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह नरक, पशुलोक या पीड़ित आत्माओं के लोक में जाता है। लेकिन भगवान (बुद्ध) का शिष्य जीवन भर वहीं रहता है और जब वह जब कोई व्यक्ति उन देवों (देवदूतों/देवताओं) का संपूर्ण जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह उसी अवस्था में अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। यही वह अंतर है, वही भिन्नता है, वही भेद है जो शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य और अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति में होता है, अर्थात् भविष्य की मंजिल और पुनर्जन्म के समय।

(3) "फिर, कुछ व्यक्ति, जब उनकी पीति (आनंद) भी लुप्त हो जाती है, तो वे समभाव में रहते हैं और सती (ध्यान करते हुए) और पूर्णतः बोध रखते हुए, शरीर सहित सुख का अनुभव करते हैं; वे उस तृतीय ध्यान (तंद्रा) में प्रवेश करते हैं और निवास करते हैं जिसके विषय में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव में रहने वाला, सती (ध्यान करते हुए) और सुखी है।'" वह इसका आनंद लेता है, इसकी इच्छा रखता है और इसमें संतुष्टि पाता है। यदि वह इसमें दृढ़ रहे, इस पर एकाग्र रहे, अक्सर इसमें लीन रहे और मरने पर इसे न खोए, तो उसका पुनर्जन्म तेजस्वी देवों (देवदूतों/देवदूतों) के साथ होता है। तेजस्वी देवों (देवदूतों/देवदूतों) का जीवनकाल चार युगों का होता है। 813 सांसारिक व्यक्ति जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवों (देवदूतों/देवदूतों) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह नरक, पशुलोक या व्यथित आत्माओं के लोक में जाता है। परन्तु भगवान (बुद्ध) का शिष्य जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवों (देवदूतों/देवदूतों) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह उसी अवस्था में परम निर्वाण प्राप्त करता है। यही वह अंतर है, यही वह भिन्नता है, यही वह भेद है जो शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य और अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति में है, अर्थात्; जब भविष्य का गंतव्य और पुनर्जन्म।

(4) "फिर, कोई व्यक्ति सुख और दुख का त्याग करके, और पहले ही आनंद और उदासी के टल जाने के बाद, चौथे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो कष्टदायी है और न ही सुखदायी, जिसमें उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) द्वारा सती ध्यान का शुद्धिकरण होता है। वह इसका आनंद लेता है, इसकी इच्छा करता है और इसमें संतुष्टि पाता है। [128] यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, इस पर एकाग्र रहता है, इसमें बार-बार निवास करता है, और मरने पर इसे नहीं खोता है, तो वह महान फल वाले देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। महान फल वाले देवताओं (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल पाँच सौ युगों का होता है। 314 सांसारिक व्यक्ति वहाँ जीवन भर रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/देवताओं) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह नरक, पशुलोक या पीड़ित आत्माओं के लोक में जाता है। परन्तु भगवान (बुद्ध) का शिष्य वहाँ जीवन भर रहता है।" जीवन, और जब वह उन देवों (देवदूतों/देवताओं) का संपूर्ण जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह उसी अवस्था में अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। यही वह अंतर है, वही भिन्नता है, वही भेद है जो शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य और अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति में है, अर्थात् भविष्य की मंजिल और पुनर्जन्म के समय।

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

124 अंतर (2) (नाना कराना2)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं?"

(1) "यहाँ, भिक्षुओं; इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... कोई व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... वह वहाँ रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और चेतना से संबंधित सभी घटनाओं (धम्म) का चिंतन करता है, जो अनित्य, पीड़ा,

रोग, फोड़ा, तीर, दुःख, कष्ट, पराये, विघटनशील, शून्य और अनात्म के रूप में हैं। 815 मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, वह शुद्ध लोकों के देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। 816 यह पुनर्जन्म सांसारिक लोगों के साथ साझा नहीं किया जाता है।

(2) "फिर, कोई व्यक्ति, विचार और परीक्षा के शांत होने पर, दूसरे ध्यान (सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। (3) आनंद (पीति) के लुप्त होने पर... वह तीसरे ध्यान (सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... (4) सुख और दुख के त्याग के साथ, और पहले आनंद और निराशा के लुप्त होने के साथ, वह चौथे ध्यान (सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) द्वारा सती ध्यान का शुद्धिकरण होता है। वह (ध्यान में) रूप, संवेदना (वेदना), बोध (संज्ञा/संज्ञा), चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार), और चेतना से संबंधित सभी घटनाओं (धम्म) को अनित्य, पीड़ा, रोग, फोड़े, तीर, दुःख, कष्ट, पराया, विघटनकारी, खाली आदि के रूप में देखता है। अनात्म। शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह शुद्ध लोकों के देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। यह पुनर्जन्म सांसारिक लोगों के साथ साझा नहीं किया जाता है।

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

125 प्रेम-कृपा (1) (मेटा1 सं. मैत्री)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, यहाँ एक व्यक्ति प्रेममयी (मेट्टा) मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है, [129] इसी प्रकार दूसरी दिशा, तीसरी दिशा और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह प्रेममयी (मेट्टा) मन से संपूर्ण संसार में व्याप्त रहता है, जो विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित है। वह इसका आनंद लेता है, इसकी इच्छा करता है और इसमें संतुष्टि पाता है। यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, इस पर एकाग्र रहता है, इसमें बार-बार निवास करता है, और मरने पर इसे नहीं खोता है, तो वह ब्रह्मा की संगति के देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। 817 ब्रह्मा की संगति के देवताओं (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल एक युग है। सांसारिक व्यक्ति वहाँ जीवन भर रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/देवताओं) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह नरक में जाता है, पशु जगत में, या पीड़ित आत्माओं के लोक में। परन्तु भगवान (बुद्ध) का शिष्य जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) का पूरा जीवनकाल व्यतीत कर लेता है, तो उसी अवस्था में उसे परम निर्वाण प्राप्त होता है। यही वह अंतर है, यही वह भिन्नता है, यही वह भेद है जो ज्ञानी श्रेष्ठ शिष्य और अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति में है, अर्थात् भविष्य की मंजिल और पुनर्जन्म के समय।

(2) "फिर, कोई व्यक्ति करुणा से भरे मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है, उसी प्रकार दूसरी दिशा, तीसरी दिशा और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह करुणा से भरे विशाल, उदात्त, असीम, बिना द्वेष और बिना दुर्भावना वाले मन से संपूर्ण संसार में व्याप्त रहता है। वह इसका आनंद लेता है, इसकी इच्छा करता है और इसमें संतुष्टि पाता है। यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, इस पर केंद्रित रहता है, इसमें बार-बार निवास करता है और मरने पर इसे नहीं खोता है, तो वह प्रकाश की धारा वाले देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। प्रकाश की धारा वाले देवताओं (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल दो युगों का होता है। सांसारिक व्यक्ति जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/देवताओं) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह नरक, पशुलोक या पीड़ित आत्माओं के लोक में जाता है। लेकिन भगवान (बुद्ध) का शिष्य जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो उसी अवस्था में उसे परम निर्वाण प्राप्त होता है। यही वह अंतर है, यही वह भिन्नता है, यही वह भेद है जो ज्ञानी शिष्य और अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति में है, यानी जब भविष्य में मृत्यु और पुनर्जन्म का सामना करना पड़ता है।

(3) "फिर, कोई व्यक्ति परोपकारी आनंद से परिपूर्ण मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है, उसी प्रकार दूसरी दिशा, तीसरी दिशा और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह परोपकारी आनंद से परिपूर्ण, विशाल, उदात्त, असीम, बिना द्वेष और बिना दुर्भावना वाले मन से संपूर्ण संसार में व्याप्त रहता है। वह इसका आनंद लेता है, इसकी

इच्छा करता है और इसमें संतुष्टि पाता है। यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, इस पर केंद्रित रहता है, इसमें बार-बार निवास करता है और मरने पर इसे नहीं खोता है, तो वह तेजस्वी देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। तेजस्वी देवों (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल चार युगों का होता है। सांसारिक व्यक्ति जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवों (देवदूतों/देवताओं) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह नरक, पशुलोक या पीड़ित आत्माओं के लोक में जाता है। लेकिन भगवान (बुद्ध) का शिष्य जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो उसी अवस्था में उसे परम निर्वाण प्राप्त होता है। यही वह अंतर है, यही वह भिन्नता है, यही वह भेद है जो ज्ञानी शिष्य और अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति में है, यानी जब भविष्य में गंतव्य और पुनर्जन्म का सवाल आता है।

(4) "फिर, कोई व्यक्ति यहाँ एक दिशा में उदासीनता (भीतर समाहित/उपेक्खा) से परिपूर्ण मन से व्याप्त रहता है, इसी प्रकार दूसरी दिशा, तीसरी दिशा और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह समस्त संसार में उदासीनता (भीतर समाहित/उपेक्खा) से परिपूर्ण मन से व्याप्त रहता है, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित। वह इसका आनंद लेता है, इसकी इच्छा करता है और इसमें संतुष्टि पाता है। यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, इस पर एकाग्र रहता है, इसमें बार-बार निवास करता है और मरने पर इसे नहीं खोता है, तो वह महान फल वाले देवताओं (देवदूतों/देवदूतों) के साथ पुनर्जन्म लेता है। महान फल वाले देवताओं (देवदूतों/देवदूतों) का जीवनकाल पाँच सौ युगों का होता है। सांसारिक व्यक्ति वहाँ जीवन भर रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/देवदूतों) का पूरा जीवनकाल पूरा कर लेता है, तो वह नरक में जाता है। कुछ लोग पशु जगत में, या पीड़ित आत्माओं के लोक में चले जाते हैं। परन्तु भगवान (बुद्ध) का शिष्य जीवन भर वहीं रहता है, और जब वह उन देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) का पूरा जीवनकाल व्यतीत कर लेता है, तो उसी अवस्था में उसे परम निर्वाण प्राप्त होता है। यही वह अंतर है, यही वह भिन्नता है, यही वह भेद है जो ज्ञानी शिष्य और अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति में है, अर्थात् भविष्य की मंजिल और पुनर्जन्म के समय।

"ये, भिक्षुओं, संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।" [130]

---

126 प्रेम-कृपा (2) (मेटा2 सं. मैत्री)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं?"

(1) "यहाँ, भिक्षुओं, कोई व्यक्ति एक दिशा में मेत्ता से भरे मन से व्याप्त होकर निवास करता है, इसी प्रकार दूसरी दिशा, तीसरी दिशा और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, आर-पार और सर्वत्र, तथा सभी के प्रति, जैसा कि स्वयं के प्रति, वह मेत्ता से भरे मन से सम्पूर्ण जगत में व्याप्त होकर निवास करता है, विशाल, श्रेष्ठ, अपरिमित, शत्रुता रहित, द्वेष रहित। वह ध्यान में रूप, वेदना, सन्ना/संज्ञा, चरित्र/व्यवहार, तथा चेतना से सम्बन्धित जो भी घटनाएँ (धम्म) हैं, उन्हें क्षणभंगुर, दुःख, रोग, फोड़े, तीर, दुख, क्लेश, पराया, विघटित, शून्य, अनात्मा के रूप में देखता है। शरीर के टूटने पर, मृत्यु के पश्चात, वह शुद्ध परमात्मा के देवों (स्वर्गदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। (2) "फिर, कोई व्यक्ति करुणा से ओतप्रोत मन के साथ एक चौथाई में व्याप्त होकर निवास करता है... (3)... परोपकारी आनंद... (4)... उदासीनता (भीतर वापस लेना/उपेक्षा), इसी तरह दूसरी तिमाही, तीसरी तिमाही और चौथी तिमाही में। इस तरह ऊपर, नीचे, पार और हर जगह, और सभी के प्रति स्वयं की तरह, वह उदासीनता (भीतर वापस लेना/उपेक्षा) से ओतप्रोत, विशाल, ऊंचा, अथाह, शत्रुता रहित, द्वेष रहित मन से पूरे विश्व में व्याप्त रहता है। वह रूप, वेदना, संज्ञा, चरित्र/व्यवहार, और चेतना से जुड़ी हर चीज़ (धम्म) पर विचार करता है, उसे कुछ समय का नहीं, दुख, बीमारी, फोड़ा, तीर, दुख, तकलीफ, पराया, टूटने वाला, खाली, खुद से अलग मानता है। शरीर के टूटने के बाद, मौत के बाद, वह पवित्र जगहों के देवों (फ़रिश्ते/भगवान) के साथ दोबारा जन्म लेता है। यह एक ऐसा पुनर्जन्म है जो दुनिया वालों के साथ शेयर नहीं किया जाता।

"भिक्षुओं, ये दुनिया में पाए जाने वाले चार तरह के लोग हैं।"

---

127 अचंभित करने वाले तथागत (बुद्ध)(1) (तथागताचार्य1)

"भिक्षुओं, एक तथागत (बुद्ध), एक अरहंत, एक पूर्ण ज्ञानी के प्रकट होने के साथ, चार अचंभित करने वाली और अद्‌भुत चीजें प्रकट होती हैं। 818 कौन सी चार?

(1) "हे भिक्षुओं, जब कोई बोधिसत्व तुषिता स्वर्ग से विदा होकर सजग और पूर्ण बोध (संपजन्न) के साथ अपनी माता के गर्भ में प्रवेश करता है, तब इस संसार में, जहाँ देव (देवदूत/ईश्वर), मार और ब्रह्मा विद हैं, इस जनसंख्या में, जहाँ तपस्वी और ब्राह्मण, देव (देवदूत/ईश्वर) और मनुष्य विद हैं, एक असीम तेजस्वी प्रकाश प्रकट होता है, जो देव (देवदूत/ईश्वर) की दिव्य महिमा से भी कहीं अधिक है। यहाँ तक कि उन संसारिक अंतरालों में भी, जो निर्जन और अगाध हैं, अंधकार और अपार अंधकार के उन क्षेत्रों में जहाँ सूर्य और चंद्रमा का प्रकाश, जो इतने शक्तिशाली और बलवान हैं, नहीं पहुँचता, 819 वहाँ भी एक असीम तेजस्वी प्रकाश प्रकट होता है, जो देव (देवदूत/ईश्वर) की दिव्य महिमा से भी कहीं अधिक है। वहाँ पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी इस प्रकाश से एक दूसरे को पहचानते हैं और कहते हैं: 'यद्यपि, ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ अन्य प्राणी भी पुनर्जन्म लेकर आए हैं।'" 820 [131] यह पहली आश्चर्यजनक और अद्‌भुत बात है जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के प्रकट होने के साथ प्रकट होती है।

(2) "फिर, जब कोई बोधिसत्व पूर्ण चेतना और बोध के साथ अपनी माता के गर्भ से जन्म लेता है, तब इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/ईश्वर), मार और ब्रह्मा विराजमान हैं, इस जनसंख्या में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण हैं, देव (देवदूत/ईश्वर) और मनुष्य हैं, एक असीम तेजस्वी प्रकाश प्रकट होता है, जो देव (देवदूत/ईश्वर) की दिव्य महिमा से भी बढ़कर होता है। उन संसारिक कालखंडों में भी... [प्राणी] कहते हैं: वास्तव में, ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ अन्य प्राणी पुनर्जन्म लेकर आए हैं। यह दूसरी विस्मयकारी और अद्‌भुत बात है जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के प्रकट होने पर प्रकट होती है।"

(3) "फिर, जब तथागत (बुद्ध) अतुलनीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करते हैं, तब इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/देवता), मार और ब्रह्मा विराजमान हैं, इस जनसंख्या में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण हैं, देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य हैं, एक असीम तेजस्वी प्रकाश प्रकट होता है, जो देव (देवदूत/देवता) की दिव्य महिमा से भी बढ़कर होता है। उन सांसारिक कालखंडों में भी... [प्राणी] कहते हैं: 'वास्तव में, ऐसा प्रतीत होता है कि अन्य प्राणी यहाँ पुनर्जन्म लेकर आए हैं।' यह तीसरा आश्चर्यजनक और अद्‌भुत तथ्य है जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्ण रूप से प्रबुद्ध व्यक्ति के प्रकट होने पर प्रकट होता है।"

(4) "फिर, जब तथागत (बुद्ध) धम्म के अतुलनीय चक्र को गतिमान करते हैं, तब इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/ईश्वर), मार और ब्रह्मा हैं, इस जनसंख्या में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण हैं, देव (देवदूत/ईश्वर) और मनुष्य हैं, एक असीम तेजस्वी प्रकाश प्रकट होता है, जो देव (देवदूत/ईश्वर) की दिव्य महिमा से भी बढ़कर होता है। यहां तक कि उन संसारिक अंतरालों में भी, जो खाली और अथाह हैं, अंधकार और अपार अंधकार के क्षेत्रों में, जहां सूर्य और चंद्रमा का प्रकाश, जो इतने शक्तिशाली और बलवान हैं, नहीं पहुंचता, वहां भी एक असीम तेजस्वी प्रकाश प्रकट होता है, जो देव (देवदूत/ईश्वर) की दिव्य महिमा से भी बढ़कर होता है। वहां पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी इस प्रकाश से एक-दूसरे को पहचानते हैं और कहते हैं: 'वास्तव में, ऐसा लगता है कि यहां अन्य प्राणी भी पुनर्जन्म लेकर आए हैं।'" यह चौथी आश्चर्यजनक और अद्‌भुत बात है जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के प्रकट होने के साथ प्रकट होती है।

"भिक्षुओं, ये चार विस्मयकारी और अद्‌भुत बातें हैं जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के प्रकट होने के साथ प्रकट होती हैं।"

---

128 आश्चर्यजनक तथागत(बुद्ध)(2) (तथागताचार्य2)

"भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के प्रकट होने पर, चार आश्चर्यजनक और अद्‌भुत बातें प्रकट होती हैं। वे चार बातें क्या हैं?"

(1) "लोग आसक्ति में आनंद लेते हैं, आसक्ति में प्रसन्न होते हैं, आसक्ति में मग्न होते हैं। लेकिन जब तथागत (बुद्ध) अनासक्ति के बारे में धम्म का उपदेश देते हैं, तो लोग सुनने की इच्छा रखते हैं, और वे ध्यान से सुनते हैं और उसे समझने का प्रयास करते हैं। तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के प्रकट होने पर प्रकट होने वाली यह पहली आश्चर्यजनक और अद्भुत बात है।"

(2) "लोग अहंकार में आनंद लेते हैं, अहंकार में प्रसन्न होते हैं, अहंकार में मग्न होते हैं। [132] परन्तु जब तथागत (बुद्ध) अहंकार के निवारण हेतु धम्म का उपदेश देते हैं, तो लोग सुनना चाहते हैं, वे ध्यान से सुनते हैं और उसे समझने का निश्चय करते हैं। यह दूसरी विस्मयकारी और अद्भुत बात है जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध पुरुष के प्रकट होने पर प्रकट होती है।

(3) "लोग उत्तेजना में आनंद लेते हैं, उत्तेजना में प्रसन्न होते हैं, उत्तेजना में आनंदित होते हैं। लेकिन जब तथागत (बुद्ध) शांति की ओर ले जाने वाले धम्म का उपदेश देते हैं, तो लोग सुनना चाहते हैं, वे ध्यान से सुनते हैं और उसे समझने का प्रयास करते हैं। यह तीसरा आश्चर्यजनक और अद्भुत तथ्य है जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के प्रकट होने पर प्रकट होता है।"

(4) "लोग अज्ञान में डूबे रहते हैं, अंडे की तरह पूरी तरह से ढके रहते हैं। 824 लेकिन जब तथागत (बुद्ध) अज्ञान को दूर करने के लिए धम्म का उपदेश देते हैं, तो लोग सुनने की इच्छा रखते हैं, और वे ध्यान से सुनते हैं और उसे समझने का निश्चय करते हैं। यह चौथा आश्चर्यजनक और अद्भुत तथ्य है जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के प्रकट होने पर प्रकट होता है।"

"भिक्षुओं, ये चार विस्मयकारी और अद्भुत बातें हैं जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के प्रकट होने के साथ प्रकट होती हैं।"

---

129 आश्चर्यजनक आनंद (आनंदचार्य) [825]

भिक्षुओं, आनंद के बारे में ये चार आश्चर्यजनक और अद्भुत बातें हैं। वे चार बातें क्या हैं?

(1) "यदि भिक्षुओं का कोई समूह आनंद से मिलने आता है, तो वे उन्हें देखकर प्रसन्न हो जाते हैं। यदि आनंद उनसे धम्म पर प्रवचन देते हैं, तो वे उनके भाषण से भी प्रसन्न हो जाते हैं, और आनंद के मौन होने पर भी भिक्षुओं का वह समूह अतृप्त रहता है।"

(2) "यदि भिक्षुणियों का कोई समूह आनंद से मिलने आता है, तो वे उन्हें देखकर प्रसन्न हो जाते हैं। यदि आनंद उनसे धम्म पर प्रवचन देते हैं, तो वे उनके भाषण से भी प्रसन्न हो जाते हैं, और भिक्षुणियों का वह समूह आनंद के मौन होने पर भी तृप्त नहीं होता।"

(3) "यदि पुरुष गृहस्थ अनुयायियों की कोई सभा आनंद से मिलने आती है, तो वे उन्हें देखकर प्रसन्न होते हैं। यदि आनंद उनसे धम्म पर प्रवचन देते हैं, तो वे उनके भाषण से भी प्रसन्न होते हैं, और आनंद के मौन होने पर भी पुरुष गृहस्थ अनुयायियों की वह सभा अतृप्त रहती है।"

(4) "यदि स्त्री-दास अनुयायियों का कोई समूह आनंद से मिलने आता है, तो वे उन्हें देखकर प्रसन्न हो जाते हैं। यदि आनंद उनसे धम्म पर प्रवचन देते हैं, तो वे उनके भाषण से भी प्रसन्न हो जाते हैं, और जब आनंद मौन हो जाते हैं तब भी स्त्री-दास अनुयायियों का वह समूह अतृप्त रहता है।"

"भिक्षुओं, ये आनंद के बारे में चार आश्चर्यजनक और अद्भुत बातें हैं।" [133]

---

130 अद्भुत सम्राट (चक्कावत्तिआचरिया)

भिक्षुओं, चक्र घुमाने वाले सम्राट के बारे में ये चार आश्चर्यजनक और अद्भुत बातें हैं। वे चार बातें क्या हैं?

(1) "यदि क्षत्रियों की कोई सभा किसी चक्र घुमाने वाले सम्राट को देखने आती है, तो वे उसे देखकर प्रसन्न हो जाते हैं। यदि चक्र घुमाने वाला सम्राट उनसे बात करता है, तो वे उसके भाषण से भी प्रसन्न हो जाते हैं, और जब चक्र घुमाने वाला सम्राट मौन हो जाता है, तब भी क्षत्रियों की वह सभा अतृप्त रहती है।

(2) "यदि ब्राह्मणों की कोई सभा किसी चक्र-घुमाने वाले सम्राट को देखने आती है, तो वे उसे देखकर प्रसन्न हो जाते हैं। यदि चक्र-घुमाने वाला सम्राट उनसे बात करता है, तो वे उसके भाषण से भी प्रसन्न हो जाते हैं, और ब्राह्मणों की वह सभा चक्र-घुमाने वाले सम्राट के मौन होने पर भी तृप्त नहीं होती।"

(3) "यदि गृहस्थों की कोई सभा चक्र घुमाने वाले सम्राट को देखने आती है, तो वे उसे देखकर प्रसन्न होते हैं। यदि चक्र घुमाने वाला सम्राट उनसे बात करता है, तो वे उसके भाषण से भी प्रसन्न होते हैं, और गृहस्थों की वह सभा चक्र घुमाने वाले सम्राट के मौन होने पर भी तृप्त नहीं होती।"

(4) 'यदि तपस्वियों की कोई सभा चक्र घुमाते हुए सम्राट को देखने आती है, तो वे उसे देखकर प्रसन्न हो जाते हैं। यदि चक्र घुमाते हुए सम्राट उनसे बात करते हैं, तो वे उनके भाषण से भी प्रसन्न हो जाते हैं, और तपस्वियों की वह सभा तब भी तृप्त नहीं होती जब चक्र घुमाते हुए सम्राट मौन हो जाते हैं।

"भिक्षुओं, ये चक्र चलाने वाले सम्राट के बारे में चार आश्चर्यजनक और अद्‌भुत बातें हैं।"

"तो, भिक्षुओं, आनंद के बारे में ये चार आश्चर्यजनक और अद्‌भुत बातें हैं। वे चार क्या हैं?... [4:129 के अनुसार पूरा]..."

"भिक्षुओं, ये आनंद के बारे में चार आश्चर्यजनक और अद्‌भुत बातें हैं।"

IV. व्यक्ति (पुग्गला)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

131 बेड़ियाँ

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं?"

"(1) हे भिक्षुओं, यहाँ किसी व्यक्ति ने निम्न बंधनों, पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों, या अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का त्याग नहीं किया है। 826 [134] (2) किसी अन्य व्यक्ति ने निम्न बंधनों का त्याग कर दिया है, परन्तु पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों या अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का नहीं। (3) किसी अन्य व्यक्ति ने निम्न बंधनों और पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों का त्याग कर दिया है, परन्तु अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का नहीं। (4) और किसी अन्य व्यक्ति ने निम्न बंधनों, पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों, और अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का त्याग कर दिया है।"

(1) "किस प्रकार का व्यक्ति निम्न बंधनों, पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों, या अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का त्याग नहीं करता है? एक बार पुनर्जन्म लेने वाला (1 पुनर्जन्म, सकदागामी)। 827 इस व्यक्ति ने निम्न बंधनों, पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों, या अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का त्याग नहीं किया है।"

(2) "वह किस प्रकार का व्यक्ति है जिसने निम्न बंधनों का त्याग कर दिया है, परन्तु पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों या अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का नहीं? वह जो धारा के विपरीत दिशा में बंधा हुआ है और अकनित्थ लोक की ओर अग्रसर है। 826 इस व्यक्ति ने निम्न बंधनों का त्याग कर दिया है, परन्तु पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों या अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का नहीं।"

(3) "वह किस प्रकार का व्यक्ति है जिसने निम्न बंधनों और पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों को त्याग दिया है, परन्तु अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म के कारण) को नहीं त्यागा है? वह व्यक्ति जो इस अंतराल में अंतिम निर्वाण प्राप्त करता है। 829 इस व्यक्ति ने निम्न बंधनों और पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों को त्याग दिया है, परन्तु अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म के कारण) को नहीं त्यागा है।"

(4) "किस प्रकार के व्यक्ति ने निम्न बंधनों, पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों और अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का त्याग किया है? अरहंत ने। क्योंकि इस व्यक्ति ने निम्न बंधनों, पुनर्जन्म प्राप्त करने के बंधनों और अस्तित्व प्राप्त करने के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का त्याग किया है।"

"ये भिक्षुओं, संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।" [135]

---

132 विवेक (पतिभाना)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक वह जिसकी विवेकशक्ति तीक्ष्ण है परन्तु सहज नहीं; एक वह जिसकी विवेकशक्ति सहज है परन्तु तीक्ष्ण नहीं; एक वह जिसकी विवेकशक्ति तीक्ष्ण और सहज दोनों है; और एक वह जिसकी विवेकशक्ति न तो तीक्ष्ण है और न ही सहज। संसार में यही चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं।

---

133 शीघ्र समझ का (उग्घटितन्नु)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक जो शीघ्रता से समझ जाता है; एक जो विस्तार से समझता है; एक जिसे मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है; और एक जिसके लिए शब्द ही सर्वोपरि है। संसार में पाए जाने वाले ये चार प्रकार के व्यक्ति हैं।" 831

---

134 प्रयास (उत्थानफल)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? एक जो अपने कर्मों के फल से जीवन यापन करता है, परन्तु अपने कर्मों के फल से नहीं; एक जो अपने कर्मों के फल से जीवन यापन करता है, परन्तु अपने प्रयासों के फल से नहीं; एक जो अपने प्रयासों और कर्मों दोनों के फल से जीवन यापन करता है; और एक जो न तो अपने प्रयासों के फल से और न ही अपने कर्मों के फल से जीवन यापन करता है। संसार में ये चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं।

---

135 निंदनीय (सा-वज्जा)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? निंदनीय, अति निंदनीय, अल्प निंदनीय और निर्दोष।

(1) "और हे भिक्षुओं, कोई व्यक्ति कैसे निंदनीय होता है? यहाँ, व्यक्ति निंदनीय शारीरिक क्रिया, निंदनीय वाणी और निंदनीय मानसिक क्रिया में संलग्न होता है। इसी प्रकार व्यक्ति निंदनीय होता है। [136]

(2) "और कोई व्यक्ति मुख्यतः दोषी कैसे होता है? यहाँ, व्यक्ति शारीरिक क्रिया करता है जो मुख्यतः दोषी होती है, मौखिक क्रिया करता है जो मुख्यतः दोषी होती है, और मानसिक क्रिया करता है जो मुख्यतः दोषी होती है। इसी प्रकार से कोई व्यक्ति मुख्यतः दोषी होता है।"

(3) "और कोई व्यक्ति थोड़ा दोषी कैसे होता है? यहाँ, एक व्यक्ति शारीरिक क्रिया में संलग्न होता है जो अधिकतर निर्दोष होती है, मौखिक क्रिया में संलग्न होता है जो अधिकतर निर्दोष होती है, और मानसिक क्रिया में संलग्न होता है जो अधिकतर निर्दोष होती है: इसी तरह से एक व्यक्ति थोड़ा दोषी होता है।

(4) "और कोई व्यक्ति कैसे निर्दोष होता है? यहाँ, व्यक्ति निर्दोष शारीरिक क्रिया, निर्दोष वाणी और निर्दोष मानसिक क्रिया में संलग्न होता है। इसी प्रकार व्यक्ति निर्दोष होता है।"

"ये चार प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में विद्यमान पाए जाते हैं।" 833

---

136 सदाचारी व्यवहार (1) (सिला1 सं. शील)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? (1) हे भिक्षुओं, यहाँ कुछ व्यक्ति पुण्य कर्म, समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का पालन नहीं करते। (2) एक अन्य व्यक्ति पुण्य कर्म का पालन तो करता है, पर समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का पालन नहीं करता। (3) एक अन्य व्यक्ति पुण्य कर्म और समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) का पालन तो करता है, पर पन्ना (दिव्य ज्ञान) का पालन नहीं करता। (4) और एक अन्य व्यक्ति पुण्य कर्म, समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का पालन करता है। संसार में ये चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं।

---

137 सदाचारी व्यवहार (2) (सिला2 संस. शील)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं?"

(1) "यहाँ, भिक्षुओं, कोई व्यक्ति सद्गुणी आचरण को महत्व नहीं देता या सद्गुणी आचरण को अधिकार नहीं मानता, वह ऐसा नहीं करता

समाधि (स्वयं में लीन होना/सम्मोहन) को महत्व देता है या समाधि (स्वयं में लीन होना/सम्मोहन) को अधिकार के रूप में स्वीकार करता है, और पन्ना (दिव्य ज्ञान) को महत्व नहीं देता है या पन्ना (दिव्य ज्ञान) को अधिकार के रूप में स्वीकार नहीं करता है।

(2) "दूसरा व्यक्ति सद्गुणी आचरण को महत्व देता है और सद्गुणी आचरण को अधिकार मानता है, परन्तु समाधि (स्व-लीनता/समाधि) को महत्व नहीं देता और न ही समाधि (स्व-लीनता/समाधि) को अधिकार मानता है, और न ही पन्ना (दिव्य ज्ञान) को महत्व देता है और न ही पन्ना (दिव्य ज्ञान) को अधिकार मानता है।

(3) "एक अन्य व्यक्ति सद्गुणी आचरण को महत्व देता है और सद्गुणी आचरण को अधिकार मानता है, समाधि (स्व-लीनता/समाधि) को महत्व देता है और समाधि (स्व-लीनता/समाधि) को अधिकार मानता है, लेकिन पन्ना (दिव्य ज्ञान) को महत्व नहीं देता है और न ही पन्ना (दिव्य ज्ञान) को अधिकार मानता है।

(4) "और एक अन्य व्यक्ति सद्गुणी आचरण को महत्व देता है और सद्गुणी आचरण को अधिकार मानता है, समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) को महत्व देता है और समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) को अधिकार मानता है, और पन्ना (दिव्य ज्ञान) को महत्व देता है और पन्ना (दिव्य ज्ञान) को अधिकार मानता है।

"ये चार प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में विद्यमान पाए जाते हैं।"

---

138 निकेत (निकत्था)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? एक वह जिसने शरीर से तपस्या की है, परन्तु मन से नहीं; एक वह जिसने शरीर से तपस्या नहीं की है, परन्तु मन से; एक वह जिसने न शरीर से और न मन से तपस्या की है; और एक वह जिसने शरीर और मन दोनों से तपस्या की है।

(1) "हे भिक्षुओं, ऐसा कैसे हो सकता है कि कोई व्यक्ति शरीर से तो तपस्या करे, पर मन से तपस्या न करे? यहाँ, कोई व्यक्ति जंगलों और वनों में एकांतवास में जाता है, परन्तु वहाँ वह कामुक विचार, द्वेषपूर्ण विचार और हानि करने के विचार करता है। इस प्रकार वह व्यक्ति शरीर से तो तपस्या कर लेता है, परन्तु मन से तपस्या नहीं करता।"

(2) "और कोई व्यक्ति शरीर से एकांतवास पर न जाकर मन से एकांतवास पर कैसे जाता है? यहाँ, कोई व्यक्ति जंगलों और वनों में एकांतवास में नहीं जाता, बल्कि वह त्याग, सद्भावना और अहिंसा के विचार करता है। इस प्रकार वह व्यक्ति शरीर से एकांतवास पर नहीं जाता, बल्कि मन से एकांतवास पर जाता है।"

(3) "और कोई व्यक्ति न तो शरीर से और न ही मन से एकांतवास पर कैसे जाता है? यहाँ, कोई व्यक्ति जंगलों और वनों में एकांतवास में नहीं जाता, [138] और वह कामुक विचार, द्वेषपूर्ण विचार और हानि पहुँचाने के विचार सोचता है। इस प्रकार से कोई व्यक्ति न तो शरीर से और न ही मन से एकांतवास पर जाता है।"

(4) “और कोई व्यक्ति शरीर और मन दोनों से कैसे एकांतवास पर जाता है? यहाँ, कोई व्यक्ति जंगलों और वनों में स्थित एकांतवासों में जाता है, और वहाँ वह त्याग, सद्भावना और अहिंसा के विचार करता है। इस प्रकार व्यक्ति शरीर और मन दोनों से एकांतवास पर जाता है।”

"ये भिक्षुओं, संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

139 धम्म वक्ता (धम्मकथिका)

"भिक्षुओं, धम्म (मार्ग) के चार प्रकार के वक्ता होते हैं। वे कौन से चार प्रकार के वक्ता हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, यहाँ कोई धम्म वक्ता कम बोलता है और उसका भाषण निरर्थक है, और उसकी सभा सार्थक और निरर्थक में अंतर करने में कुशल नहीं है। ऐसी सभा द्वारा ऐसे धम्म वक्ता को धम्म वक्ता माना जाता है।"

(2) "एक अन्य धम्म वक्ता कम बोलता है, परन्तु उसका भाषण अर्थपूर्ण होता है, और उसकी सभा अर्थपूर्ण और निरर्थक में अंतर करने में निपुण होती है। ऐसी सभा द्वारा ऐसे धम्म वक्ता को धम्म वक्ता माना जाता है।"

(3) "एक अन्य धम्म (मार्ग) वक्ता बहुत बोलता है, परन्तु उसका भाषण निरर्थक होता है, और उसकी सभा सार्थक और निरर्थक में अंतर करने में कुशल नहीं होती। ऐसी सभा ऐसे धम्म वक्ता को ही धम्म वक्ता मानती है।"

(4) "और एक अन्य धम्म वक्ता बहुत बोलता है और [उसका भाषण] अर्थपूर्ण होता है, और उसकी सभा अर्थपूर्ण और निरर्थक में अंतर करने में कुशल होती है। ऐसी सभा द्वारा ऐसे धम्म वक्ता को धम्म वक्ता माना जाता है।"

"भिक्षुओं, ये चार प्रकार के धम्म वक्ता हैं।"

---

140 वक्ता (वादी)

भिक्षुओं, ये चार वक्ता हैं। कौन से चार? [139] (1) एक वक्ता ऐसा है जो अर्थ को तो पूर्णतः व्यक्त करता है, पर वाक्य रचना को नहीं। (2) एक वक्ता ऐसा है जो वाक्य रचना को तो पूर्णतः व्यक्त करता है, पर अर्थ को नहीं। (3) एक वक्ता ऐसा है जो अर्थ और वाक्य रचना दोनों को पूर्णतः व्यक्त करता है। (4) और एक वक्ता ऐसा है जो न तो अर्थ को पूर्णतः व्यक्त करता है और न ही वाक्य रचना को। ये चार वक्ता हैं। यह असंभव और अकल्पनीय है कि जो व्यक्ति चारों विश्लेषणात्मक ज्ञान रखता हो, वह न तो अर्थ को पूर्णतः व्यक्त कर सके और न ही वाक्य रचना को। 835

वी. ग्लो (अभा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

141 ग्लो (अभा)

भिक्षुओं, ये चार प्रकाश हैं। कौन से चार? चंद्रमा का प्रकाश, सूर्य का प्रकाश, अग्नि का प्रकाश और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रकाश। ये चार प्रकाश हैं। इन चारों प्रकाशों में, पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रकाश सर्वोपरि है।

---

142 मूलांक (पभा सं. प्रभा)

भिक्षुओं, ये चार प्रकाश हैं। कौन से चार? चंद्रमा का प्रकाश, सूर्य का प्रकाश, अग्नि का प्रकाश और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रकाश। ये चार प्रकाश हैं। इन चारों प्रकाशों में, पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रकाश सर्वोपरि है।

---

143 बत्तियाँ (आलोका)

भिक्षुओं, ये चार प्रकाश हैं। कौन से चार? चंद्रमा का प्रकाश, सूर्य का प्रकाश, अग्नि का प्रकाश और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रकाश। ये चार प्रकाश हैं। इन चारों प्रकाशों में, पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रकाश सर्वोपरि है।

---

144 लस्ट्रेस (ओभासा)

"भिक्षुओं, ये चार प्रकाश हैं। कौन से चार? चंद्रमा का प्रकाश, सूर्य का प्रकाश, अग्नि का प्रकाश और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रकाश। [140] ये चार प्रकाश हैं। इन चारों प्रकाशों में, पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रकाश सर्वोपरि है।"

---

145 प्रकाशक (पज्जोटा सं. प्रज्वलित)

भिक्षुओं, ये चार प्रकाशमान पिंड हैं। कौन से चार? चंद्रमा एक प्रकाशमान पिंड है, सूर्य एक प्रकाशमान पिंड है, अग्नि एक प्रकाशमान पिंड है और पन्ना (दिव्य ज्ञान) एक प्रकाशमान पिंड है। ये चार प्रकाशमान पिंड हैं। इन चारों प्रकाशमान पिंडों में, पन्ना (दिव्य ज्ञान) सर्वोपरि है।

---

146 बार (1) (कला1)

भिक्षुओं, ये चार काल हैं। कौन से चार? धम्म सुनने का काल, धम्म पर चर्चा करने का काल, समभाव (समथान) का काल, और अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का काल। ये चार काल हैं।

---

147 बार (2) (कला2)

भिक्षुओं, इन चारों काल को उचित रूप से विकसित और समन्वित करने से धीरे-धीरे दोषों का नाश होता है। वे चार काल कौन से हैं? धम्म सुनने का समय, धम्म पर चर्चा करने का समय, समभाव (समथान) का समय और अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का समय। इन चारों काल को उचित रूप से विकसित और समन्वित करने से धीरे-धीरे दोषों का नाश होता है।

"जैसे, जब बारिश होती है और पहाड़ की चोटी पर मोटी बूंदों के रूप में पानी बरसता है, तो पानी ढलान के साथ बहता है और दरारों, नालों और छोटी नदियों को भर देता है; ये भरकर तालाबों को भर देते हैं; ये भरकर झीलों को भर देते हैं; ये भरकर धाराओं को भर देते हैं; ये भरकर नदियों को भर देते हैं; और ये भरकर विशाल महासागर को भर देते हैं; उसी प्रकार, ये चारों काल, सही ढंग से विकसित और समन्वित होने पर, धीरे-धीरे दोषों के विनाश में परिणत होते हैं।" [141]

---

148 बुरा आचरण (1) (दुकारिता सं. दुष्चरित्र)

भिक्षुओं, चार प्रकार के मौखिक दुराचार होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? झूठा वाणी, फूट डालने वाली वाणी, कठोर वाणी और व्यर्थ की बातें। ये चार प्रकार के मौखिक दुराचार हैं।

---

149 अच्छा आचरण (2) (सुच्चरित संस. सद्चरित्र)

भिक्षुओं, चार प्रकार के सुचारु आचरण होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? सत्यवादी वाणी, विभाजनरहित वाणी, सौम्य वाणी और विवेकपूर्ण वाणी। ये चार प्रकार के सुचारु आचरण हैं।

---

150 एसेंस (सारा)

भिक्षुओं, ये चार सार तत्व हैं। कौन से चार? सद्गुणी आचरण का सार, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का सार, पन्ना (दिव्य ज्ञान) का सार और मुक्ति का सार। ये चार सार तत्व हैं।

चौथा पचास

I. इंद्रिय शक्तियाँ

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

151 इंद्रिय संकाय

भिक्षुओं, ये चार शक्तियाँ हैं। कौन सी चार? श्रद्धा (सद्धा/श्रद्धा), ऊर्जा (वीर्य/प्रयास), सती (ध्यान) और समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन)। ये चार शक्तियाँ हैं।

---

152 आस्था (सद्धबाला सं. श्रद्धाबाला)

"भिक्षुओं, ये चार शक्तियाँ हैं। कौन सी चार? विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, सती (ध्यान) की शक्ति और समाधि (स्व-लीन/तल्लीनता) की शक्ति। ये चार शक्तियाँ हैं।" [142]

---

153 पन्ना (दिव्य ज्ञान) (पन्नबल संस्कृत: प्रज्ञाबल)

भिक्षुओं, ये चार शक्तियाँ हैं। कौन सी चार? पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, निष्कलंकता की शक्ति और संघ की शक्ति। ये चार शक्तियाँ हैं।

---

154 ध्यान की शक्ति (सतिबाला सं. स्मृतिबाला)

भिक्षुओं, ये चार शक्तियाँ हैं। कौन सी चार? सती ध्यान की शक्ति, समाधि की शक्ति, दोषरहितता की शक्ति और संघ की शक्ति। ये चार शक्तियाँ हैं।

---

155 प्रतिबिंब (पतिसंखानाबाला)

भिक्षुओं, ये चार शक्तियाँ हैं। कौन सी चार? चिंतन की शक्ति, विकास की शक्ति, दोषरहितता की शक्ति और संघ की शक्ति। ये चार शक्तियाँ हैं।

---

156 इऑन (कप्पा संस्कृत कल्प)

"भिक्षुओं, युग के ये चार अगणनीय विभाजन हैं। 838 वे चार कौन से हैं?"

(1) "वह समय जिसके दौरान एक युग समाप्त हो जाता है, जिसकी गणना 'इतने वर्षों' या 'इतने सैकड़ों वर्षों' या 'इतने हज़ार वर्षों' या 'इतने लाखों वर्षों' के रूप में आसानी से नहीं की जा सकती है।" 839

(2) "वह समय जिसके दौरान एक युग विघटन की अवस्था में रहता है, जिसकी गणना आसानी से 'इतने वर्षों' या 'इतने सैकड़ों वर्षों' या 'इतने हज़ार वर्षों' या 'इतने लाखों वर्षों' के रूप में नहीं की जा सकती है।"

(3) "वह समय जिसके दौरान एक युग विकसित होता है, जिसकी गणना आसानी से 'इतने वर्षों' या 'इतने सैकड़ों वर्षों' या 'इतने हज़ार वर्षों' या 'इतने लाखों वर्षों' के रूप में नहीं की जा सकती है।

(4) "वह समय जिसके दौरान एक युग विकास की अवस्था में रहता है, जिसकी गणना आसानी से 'इतने वर्षों' या 'इतने सैकड़ों वर्षों' या 'इतने हज़ार वर्षों' या 'इतने लाखों वर्षों' के रूप में नहीं की जा सकती है।"

"भिक्षुओं, ये एक युग के चार अगणनीय विभाजन हैं।"

---

157 रोग

भिक्षुओं, दो प्रकार के रोग होते हैं। कौन से दो? [143] शारीरिक रोग और मानसिक रोग। ऐसे लोग मिलते हैं जो एक, दो, तीन, चार और पाँच वर्ष; दस, बीस, तीस, चालीस और पचास वर्ष; और यहाँ तक कि सौ वर्ष और उससे भी अधिक समय तक शारीरिक रूप से स्वस्थ रहने का दावा कर सकते हैं। लेकिन जिनके दोष नष्ट हो चुके हैं, उनके अलावा संसार में ऐसे लोग मिलना कठिन है जो एक क्षण के लिए भी मानसिक रूप से स्वस्थ रहने का दावा कर सकें।

भिक्षुओं, भिक्षु को ये चार रोग होते हैं। वे चार क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु में तीव्र इच्छाएँ होती हैं, वह कष्ट भोगता है, और किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास, या बीमारों के लिए औषधि और भोजन से संतुष्ट नहीं होता। (2) क्योंकि उसमें तीव्र इच्छाएँ होती हैं, वह कष्ट भोगता है, और किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास, और बीमारों के लिए औषधि और भोजन से संतुष्ट नहीं होता, इसलिए वह यश, लाभ, सम्मान और प्रशंसा की बुरी इच्छाओं के आगे झुक जाता है। (3) वह यश, लाभ, सम्मान और प्रशंसा प्राप्त करने के लिए स्वयं को उत्तेजित करता है, प्रयास करता है और मेहनत करता है। (4) वह धूर्तता से परिवारों के पास जाता है, धूर्तता से बैठता है, धूर्तता से धम्म पर प्रवचन देता है, और धूर्तता से अपने मल-मूत्र को रोके रखता है। ये भिक्षु को होने वाले चार रोग हैं।

अत: हे भिक्षुओं, तुम इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करो: 'हम तीव्र इच्छाओं के वश में नहीं रहेंगे और कष्ट नहीं सहेंगे, तथा किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास, औषधि और बीमारों के लिए भोजन से असंतुष्ट नहीं होंगे। हम मान्यता, लाभ, सम्मान और प्रशंसा की बुरी इच्छाओं के आगे नहीं झुकेंगे। हम मान्यता, लाभ, सम्मान और प्रशंसा प्राप्त करने के लिए स्वयं को उत्तेजित नहीं करेंगे, न ही प्रयास करेंगे और न ही परिश्रम करेंगे। हम धीरजपूर्वक सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास, मक्खियों, मच्छरों, हवा, जलते सूरज और सर्पों के संपर्क को सहन करेंगे; अभद्र और अपमानजनक वाणी को सहन करेंगे; हम उत्पन्न होने वाली वेदनाओं (वेदाना) को सहन करेंगे जो पीड़ादायक, कष्टदायी, तीक्ष्ण, चुभने वाली, कष्टदायी और जीवन शक्ति को क्षीण करने वाली हों।' हे भिक्षुओं, इसी प्रकार तुम स्वयं को प्रशिक्षित करो।

---

158 पतन (परिहानी)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, [144] भिक्षुओं!"

"मित्र!" उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"मित्रों, कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी जो आंतरिक रूप से चार बातों का अवलोकन करता है, वह इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है: मैं लाभकारी (कुशल) गुणों में पतित हो रहा हूँ। इसे भगवान (बुद्ध) पतन कहते हैं। वे चार बातें क्या हैं? काम (राग) की अधिकता, घृणा (घृणा) की अधिकता, मोह (मोह) की अधिकता, और उसका पन्ना (दिव्य ज्ञान) नेत्र संभव और असंभव के गहन मामलों में प्रवेश नहीं करता। 842 कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी जो आंतरिक रूप से इन चार बातों का अवलोकन करता है, वह इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है: 'मैं लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में पतित हो रहा हूँ। इसे भगवान (बुद्ध) पतन कहते हैं।'"

"मित्रों, कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी जो आंतरिक रूप से चार बातों का अवलोकन करता है, वह इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है: मैं लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में क्षीण नहीं हो रहा हूँ। इसे भगवान (बुद्ध) द्वारा अवनति कहा जाता है। वे चार बातें क्या हैं? काम (राग) का कम होना, घृणा का कम होना, मोह (मोह) का कम होना, और उनकी पन्ना (दिव्य ज्ञान) दृष्टि संभव और असंभव के गहन विषयों में

विचरण करती है। कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी जो आंतरिक रूप से इन चार बातों का अवलोकन करता है, वह इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है: मैं लाभकारी (कुशल) गुणों में क्षीण नहीं हो रहा हूँ। इसे भगवान (बुद्ध) द्वारा अवनति कहा जाता है।"

---

159 भिक्षुणी (भिक्षुणी)

एक बार पूज्य आनंद कोसंबी में, घोषिता उद्यान में निवास कर रहे थे। तब एक भिक्षुणी ने एक व्यक्ति से कहा, "हे सज्जन, आ, गुरु आनंद के पास जाइए और मेरे नाम से उनके चरणों में सिर रखकर उन्हें प्रणाम कीजिए।" तब आप कहें, "भंते, फलां भिक्षुणी बीमार, पीड़ित और गंभीर रूप से अस्वस्थ हैं। वे गुरु आनंद के चरणों में सिर रखकर उन्हें प्रणाम करती हैं।" तब आप कहें, "हे भंते, यदि दयावश गुरु आनंद भिक्षुणियों के निवास स्थान पर उस भिक्षुणी से मिलने आएं तो अच्छा होगा।"

"जी हां, महोदया," उस व्यक्ति ने उत्तर दिया। फिर वह पूज्य आनंद के पास पहुंचा, [145] उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और अपना संदेश दिया। पूज्य आनंद ने मौन रहकर सहमति दी।

तब पूज्य आनंद ने वस्त्र धारण किए, अपना कुंड और वस्त्र लिया और भिक्षुणियों के कक्ष में चले गए। जब उस भिक्षुणी ने दूर से पूज्य आनंद को आते देखा, तो उसने सिर से नीचे तक अपने आप को ढक लिया और अपने पलंग पर लेट गई। 43 तब पूज्य आनंद उस भिक्षुणी के पास गए, नियत आसन पर बैठ गए और उससे कहा:

"बहन, यह शरीर पोषण से उत्पन्न हुआ है; पोषण पर निर्भर रहने पर पोषण का त्याग करना चाहिए। यह शरीर तृष्णा से उत्पन्न हुआ है; तृष्णा पर निर्भर रहने पर तृष्णा का त्याग करना चाहिए। यह शरीर अहंकार से उत्पन्न हुआ है; अहंकार पर निर्भर रहने पर अहंकार का त्याग करना चाहिए। यह शरीर संभोग से उत्पन्न हुआ है, परन्तु संभोग के विषय में भगवान (बुद्ध) ने पुल को ध्वस्त करने की घोषणा की है।"

(1) जब यह कहा गया: 'बहन, यह शरीर पोषण से उत्पन्न हुआ है; पोषण पर निर्भर रहते हुए पोषण का त्याग करना चाहिए,' तो ऐसा क्यों कहा गया? बहन, ध्यानपूर्वक विचार करने पर, एक भिक्षु न तो मनोरंजन के लिए, न ही नशे के लिए, न ही शारीरिक सौंदर्य और आकर्षण के लिए भोजन ग्रहण करता है, बल्कि केवल इस शरीर के भरण-पोषण, हानि से बचने और ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) में सहायता करने के लिए भोजन ग्रहण करता है, यह सोचते हुए: 'इस प्रकार मैं पुरानी वेदना को समाप्त करूँगा और नई वेदना को उत्पन्न नहीं होने दूँगा, और मैं स्वस्थ और निर्दोष रहूँगा और शांति से रहूँगा।' कुछ समय बाद, पोषण पर निर्भर रहते हुए, वह पोषण का त्याग कर देता है। 45 जब यह कहा गया: 'बहन, यह शरीर पोषण से उत्पन्न हुआ है; पोषण पर निर्भर रहते हुए पोषण का त्याग करना चाहिए,' तो इसी कारण ऐसा कहा गया।

(2) "जब यह कहा गया: 'यह शरीर तृष्णा से उत्पन्न हुआ है; तृष्णा पर निर्भर रहते हुए, तृष्णा का त्याग करना चाहिए,' तो यह किस कारण से कहा गया? हे बहन, यहाँ एक भिक्षु सुनता है: 'अमुक नाम के भिक्षु ने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।' वह सोचता है: "मैं कब दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव करूँगा, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करूँगा?" कुछ समय बाद, तृष्णा पर निर्भर रहते हुए, वह तृष्णा का त्याग कर देता है।" जब यह कहा गया: 'यह शरीर तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से उत्पन्न हुआ है; तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) पर निर्भर रहते हुए, तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) का त्याग करना चाहिए', तो इसी कारण से यह कहा गया था।

(3) "जब यह कहा गया: 'यह शरीर अहंकार से उत्पन्न हुआ है; अहंकार पर निर्भरता में अहंकार का त्याग करना चाहिए।' यह किसके संदर्भ में कहा गया था? यहाँ, बहन, एक भिक्षु सुनता है: 'अमुक नाम के भिक्षु ने, दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की निष्कलंक मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।' वह सोचता है: 'उस पूजनीय भिक्षु ने, दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की निष्कलंक मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। क्यों, मैं भी ऐसा कर

सकता हूँ!'" कुछ समय बाद, अहंकार पर निर्भरता में रहते हुए, वह अहंकार का त्याग कर देता है। जब यह कहा गया था: 'यह शरीर अहंकार से उत्पन्न हुआ है; अहंकार पर निर्भरता में रहते हुए, अहंकार का त्याग करना चाहिए', तो इसी कारण से यह कहा गया था।

(4) "हे बहन, यह शरीर यौन संबंध से उत्पन्न हुआ है, परन्तु यौन संबंध के विषय में भगवान (बुद्ध) ने पुल के विध्वंस की घोषणा की है।" 846

तब उस भिक्षुणी ने अपने पलंग से उठकर अपना ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर डाला और पूज्य अरंदा के चरणों में सिर झुकाकर पूज्य आनंद से कहा, "भंते, मैंने जो नासमझी, मूर्खता और अकुशलता से व्यवहार किया, उससे मैंने पाप किया है। हे भंते, भगवान आनंद मेरे इस पाप को भविष्य में संयम के लिए पाप मानकर स्वीकार करें।"

"निश्चित रूप से, बहन, आपने जो नासमझी, मूर्खता और अकुशलता से व्यवहार किया, वह एक अपराध है। लेकिन चूंकि आप अपने अपराध को अपराध मानती हैं और धम्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करती हैं, इसलिए हम इसे स्वीकार करते हैं। क्योंकि यह भगवान के अनुशासन में वृद्धि है कि कोई अपने अपराध को अपराध माने, धम्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करे और भविष्य में संयम का पालन करे।" [147]

---

160 एक सुगत (बुद्ध) का अनुशासन [847] (सुगत-विनय)

"भिक्षुओं, जब तक सुगत (भगवान बुद्ध) या सुगत (भगवान बुद्ध) का अनुशासन संसार में रहता है, यह अनेक लोगों के कल्याण के लिए, अनेक लोगों की खुशी के लिए, संसार के प्रति करुणा से, देवताओं और मनुष्यों के भले, कल्याण और सुख के लिए होता है।"

"और हे भिक्षुओं, सुगत (भगवान बुद्ध) कौन हैं? यहाँ तथागत (बुद्ध) संसार में प्रकट होते हैं, एक अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण, सौभाग्यशाली, संसार के ज्ञाता, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु, प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध)। यही सुगत (भगवान बुद्ध) हैं।"

और सुगत (भगवान बुद्ध) का अनुशासन क्या है? वे सही अर्थ और शब्दों के साथ उस धम्म का उपदेश देते हैं जो आरंभ में अच्छा, मध्य में अच्छा और अंत में अच्छा है; वे पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्रकट करते हैं। यही सुगत (भगवान बुद्ध) का अनुशासन है। अतः जब तक सुगत (भगवान बुद्ध) या सुगत (भगवान बुद्ध) का अनुशासन संसार में रहता है, तब तक यह अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, संसार के प्रति करुणा, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के कल्याण, सुख और भलाई के लिए होता है।

भिक्षुओं, ये चार बातें हैं जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हैं। वे चार बातें कौन सी हैं?

(1) "यहाँ भिक्षु ऐसे प्रवचन सीखते हैं जो गलत तरीके से सीखे गए हैं, जिनमें शब्द और वाक्यांश गलत ढंग से लिखे गए हैं। 843 जब शब्द और वाक्यांश गलत ढंग से लिखे जाते हैं, तो अर्थ की गलत व्याख्या होती है। यही पहली बात है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती है।"

(2) "भिक्षुओं को सुधारना कठिन है और उनमें ऐसे गुण होते हैं जो उन्हें सुधारना कठिन बनाते हैं। वे अधीर होते हैं और आदरपूर्वक उपदेश स्वीकार नहीं करते। यही दूसरा कारण है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनता है।"

(3) "फिर, वे भिक्षु जो विद्वान हैं, विरासत के उत्तराधिकारी हैं, धम्म के विशेषज्ञ हैं, अनुशासन के विशेषज्ञ हैं, रूपरेखाओं के विशेषज्ञ हैं, वे आदरपूर्वक दूसरों को प्रवचन नहीं देते। उनके देहांत हो जाने पर, प्रवचन जड़ से ही कट जाते हैं, और उन्हें संरक्षित करने वाला कोई नहीं बचता। यही तीसरा कारण है जो उत्तम धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनता है।"

(4) "फिर, वरिष्ठ भिक्षु विलासी [148] और लापरवाह हैं, पतन में अग्रणी हैं, एकांतवास के कर्तव्य का त्याग करते हैं; वे अभी तक अप्राप्त, अभी तक अप्राप्य, अभी तक अप्राप्य के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं जगाते। अगली पीढ़ी उनके उदाहरण का अनुसरण

करती है। वे भी विलासी और लापरवाह हो जाते हैं, पतन में अग्रणी हैं, एकांतवास के कर्तव्य का त्याग करते हैं; वे भी अभी तक अप्राप्त, अभी तक अप्राप्य, अभी तक अप्राप्य के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं जगाते। यह चौथा कारण है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनता है।"

"ये चार बातें हैं जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हैं।"

भिक्षुओं, ये चार अन्य बातें हैं जो अच्छे धम्म की निरंतरता, अवनति और विस्मृति न होने की ओर ले जाती हैं। वे चार बातें क्या हैं?

(1) "यहाँ भिक्षु सुस्थापित प्रवचनों का अध्ययन करते हैं, जिनमें सुस्थापित शब्द और वाक्यांश होते हैं। जब शब्द और वाक्यांश सुस्थापित होते हैं, तो उनका अर्थ स्पष्ट हो जाता है। यही वह प्राथमिक कारक है जो उत्तम धम्म की निरंतरता, उसके क्षय न होने और उसके लुप्त न होने की ओर ले जाता है।"

(2) "भिक्षुओं को सुधारना आसान होता है और उनमें ऐसे गुण होते हैं जो उन्हें सुधारना आसान बनाते हैं। वे धैर्यवान होते हैं और आदरपूर्वक उपदेश ग्रहण करते हैं। यही वह दूसरी बात है जो अच्छे धम्म की निरंतरता, उसके पतन न होने और उसके लुप्त न होने का कारण बनती है।"

(3) "फिर, वे भिक्षु जो विद्वान हैं, विरासत के उत्तराधिकारी हैं, धम्म के विशेषज्ञ हैं, अनुशासन के विशेषज्ञ हैं, रूपरेखाओं के विशेषज्ञ हैं, आदरपूर्वक दूसरों को प्रवचन देते हैं। उनके देहांत होने पर भी प्रवचन जड़ से नष्ट नहीं होते, क्योंकि उन्हें संरक्षित करने वाले मौजूद होते हैं। यही वह तीसरा कारण है जो उत्तम धम्म की निरंतरता, अवनति और विलोपन न होने का कारण बनता है।"

(4) "फिर, वरिष्ठ भिक्षु विलासी और लापरवाह नहीं होते, बल्कि वे पतन का त्याग करके एकांतवास में नेतृत्व करते हैं; वे अभी तक अप्राप्त, अभी तक अप्राप्य और अभी तक अप्राप्त की गई अनुभूति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जागृत करते हैं। अगली पीढ़ी उनके उदाहरण का अनुसरण करती है। वे भी विलासी और लापरवाह नहीं होते, बल्कि वे पतन का त्याग करके एकांतवास में नेतृत्व करते हैं; वे भी अभी तक अप्राप्त, अभी तक अप्राप्य और अभी तक अप्राप्त की गई अनुभूति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जागृत करते हैं। यही वह चौथा तत्व है जो अच्छे धम्म की निरंतरता, अवनति और अपाप्यता की ओर ले जाता है। [149]

"भिक्षुओं, ये चार बातें हैं जो उत्तम धम्म की निरंतरता, अवक्रमण न होने और लुप्त न होने की ओर ले जाती हैं।"

II. अभ्यास के तरीके (पतिपदा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

161 संक्षेप में [849] (संखित्त सं. संक्षिप्त)

भिक्षुओं, साधना के ये चार तरीके हैं। वे कौन से चार तरीके हैं? (1) सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ पीड़ादायक साधना; (2) त्वरित प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ पीड़ादायक साधना; (3) सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ सुखद साधना; और (4) त्वरित प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ सुखद साधना। 850 ये साधना के चार तरीके हैं।

---

162 विस्तार से (वित्थरा सं. विस्तारा)

भिक्षुओं, साधना के ये चार तरीके हैं। वे चार कौन से हैं? (1) वह साधना जो सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ कष्टदायी होती है; (2) वह साधना जो त्वरित प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ कष्टदायी होती है; (3) वह साधना जो सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ सुखद होती है; और (4) वह साधना जो त्वरित प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ सुखद होती है।

(1) "हे भिक्षुओं, वह साधना क्या है जो सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से पीड़ादायक होती है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वभाव से कामवासना (राग) के प्रति प्रबल प्रवृत्त होता है और अक्सर कामवासना (राग) से उत्पन्न पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। स्वभाव से वह घृणा के प्रति प्रबल प्रवृत्त होता है और अक्सर घृणा से उत्पन्न पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। स्वभाव से वह मोह (मोह) के प्रति प्रबल प्रवृत्त होता है और अक्सर मोह (मोह) से उत्पन्न पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। ये पाँच शक्तियाँ उसमें दुर्बल उत्पन्न होती हैं: विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (वीर्य) की शक्ति, सती (ध्यान) की शक्ति, समाधि (स्व-लीन) की शक्ति और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की शक्ति; क्योंकि ये पाँच शक्तियाँ उसमें दुर्बल हैं, इसलिए वह दोषों के नाश की तात्कालिक अवस्था को सुस्ती से प्राप्त करता है। 851 इसे सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से पीड़ादायक साधना कहते हैं।"

(2) "वह साधना क्या है जो शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान के साथ कष्टदायी होती है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वभाव से कामवासना (राग) . . . घृणा . . . मोह (मोह) के प्रति प्रबल प्रवृत्त होता है और अक्सर मोह (मोह) से उत्पन्न पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। उसमें ये पाँच शक्तियाँ प्रमुखता से उत्पन्न होती हैं: [150] विश्वास की शक्ति . . . पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। क्योंकि ये पाँच शक्तियाँ उसमें प्रमुख होती हैं, वह शीघ्र ही दोषों के नाश की तात्कालिक अवस्था को प्राप्त कर लेता है। इसे ही वह साधना कहते हैं जो शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान के साथ कष्टदायी होती है।"

(3) "और वह अभ्यास क्या है जो सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान के साथ सुखद होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वभाव से कामवासना (राग) के प्रति प्रबल प्रवृत्त नहीं होता और कामवासना (राग) से उत्पन्न पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं करता। स्वभाव से वह घृणा के प्रति प्रबल प्रवृत्त नहीं होता और घृणा से उत्पन्न पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं करता। स्वभाव से वह मोह (मोह) के प्रति प्रबल प्रवृत्त नहीं होता और मोह (मोह) से उत्पन्न पीड़ा और निराशा का अनुभव नहीं करता। ये पाँच गुण उसमें दुर्बल उत्पन्न होते हैं: विश्वास का गुण... ज्ञान का गुण। क्योंकि ये पाँच गुण उसमें दुर्बल हैं, इसलिए वह दोषों के नाश की तात्कालिक अवस्था को धीरे-धीरे प्राप्त करता है। इसे ही वह अभ्यास कहते हैं जो सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान के साथ सुखद होता है।"

(4) "प्रथम प्रत्यक्ष ज्ञान से प्रसन्न करने वाला अभ्यास क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वभाव से कामवासना (राग) . . . घृणा . . . मोह (मोह) के प्रति प्रबल प्रवृत्त नहीं होता और मोह (मोह) से उत्पन्न पीड़ा और निराशा का अनुभव अक्सर नहीं करता। उसमें ये पाँच शक्तियाँ प्रमुखता से उत्पन्न होती हैं: आस्था की शक्ति . . . पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। क्योंकि ये पाँच शक्तियाँ उसमें प्रमुख हैं, वह शीघ्र ही दोषों के नाश की तात्कालिक अवस्था को प्राप्त कर लेता है। इसे ही प्रत्यक्ष ज्ञान से प्रसन्न करने वाला अभ्यास कहते हैं।"

"भिक्षुओं, ये अभ्यास के चार तरीके हैं।"

---

163 अनाकर्षकता (असुभा सं. अशुभा)

[प्रारंभिक अनुच्छेद ऊपर दिए गए अनुसार है।]

(1) "हे भिक्षुओं, वह साधना क्या है जो सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से पीड़ादायक होती है? यहाँ, एक भिक्षु शरीर की अनाकर्षकता को निहारते हुए, भोजन की अरुचि को अनुभव करते हुए, समस्त संसार में अनाकर्षकता को निहारते हुए, सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता को निहारते हुए (ध्यान/अनुपसी में) रहता है; और उसे मृत्यु का बोध (सन्न/संज्ञा) आंतरिक रूप से सुस्थापित होता है। वह इन पाँच प्रशिक्षार्थियों पर निर्भर रहता है: विश्वास की शक्ति, नैतिक लज्जा की शक्ति, नैतिक भय की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति और पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। 852 ये पाँच शक्तियाँ उसमें दुर्बल रूप से उत्पन्न होती हैं: विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, सती (ध्यान/सती) की शक्ति, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) की

शक्ति। इन पाँचों शक्तियों के दुर्बल होने के कारण, व्यक्ति दोषों के नाश की तात्कालिक अवस्था को धीमी गति से प्राप्त करता है। इसे धीमी प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से युक्त कष्टदायी साधना कहते हैं।

(2) "वह साधना क्या है जो शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान के साथ कष्टदायी होती है? यहाँ, एक भिक्षु शरीर की अनाकर्षकता को निहारते हुए (अनुपसी में) ध्यान लगाता है... और उसे मृत्यु का ज्ञान (सन्ना/संज्ञा) आंतरिक रूप से अच्छी तरह स्थापित होता है। वह इन पाँच प्रशिक्षण शक्तियों पर निर्भर रहता है: विश्वास की शक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच शक्तियाँ उसमें प्रमुखता से जागृत होती हैं: विश्वास की शक्ति... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। क्योंकि ये पाँच शक्तियाँ प्रमुख हैं, वह शीघ्र ही दोषों के नाश की तात्कालिक अवस्था को प्राप्त कर लेता है। इसे ही वह साधना कहते हैं जो शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्ना) के साथ कष्टदायी होती है।"

(3) "और वह साधना क्या है जो सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान से सुखद हो? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और परीक्षा शामिल होती है। विचार और परीक्षा के शांत होने पर, वह द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त होता है, बिना विचार और परीक्षा के। परमानंद (पीति) के भी लुप्त होने पर, वह समभाव में निवास करता है और सचेत (ध्यान/सती) और पूर्णतः बोध करते हुए, वह शरीर के साथ सुख (सुख) का अनुभव करता है; वह तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है जिसके बारे में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव में है, सती (ध्यानमग्न), सुख में रहने वाला। सुख और दुख का त्याग करके, और पहले से ही आनंद और उदासी के दूर हो जाने के बाद, वह चौथे ध्यान (सती अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो कष्टदायी है और न ही सुखदायी, जिसमें उदासीनता (भीतर ध्यान/सती) द्वारा सती (ध्यानमग्नता) का शुद्धिकरण होता है। वह इन पाँच अभ्यासी शक्तियों पर निर्भर रहता है: विश्वास की शक्ति... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच शक्तियाँ उसमें दुर्बल रूप से उत्पन्न होती हैं: विश्वास की शक्ति... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। क्योंकि ये पाँच शक्तियाँ दुर्बल हैं, वह दोषों के नाश की तात्कालिक अवस्था को धीरे-धीरे प्राप्त करता है। इसे सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के साथ सुखदायी अभ्यास कहा जाता है।

(4) "और वह साधना क्या है जो शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान से प्रसन्न करती है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... [152] चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में। वह इन पाँच प्रशिक्षण शक्तियों पर निर्भर रहते हुए निवास करता है: विश्वास की शक्ति... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच शक्तियाँ उसमें प्रमुखता से जागृत होती हैं: विश्वास की शक्ति... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। क्योंकि ये पाँच शक्तियाँ प्रमुख हैं, वह शीघ्र ही दोषों के नाश की तात्कालिक अवस्था को प्राप्त कर लेता है। इसे ही शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से प्रसन्न करने वाली साधना कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये अभ्यास के चार तरीके हैं।"

---

164 क्षमा (1) (खमा1 सं. क्षमा)

भिक्षुओं, अभ्यास के ये चार तरीके हैं। कौन से चार? अधीर अभ्यास, धैर्यपूर्ण अभ्यास, वशीकरण अभ्यास और शांत करने वाला अभ्यास।

(1) "और हे भिक्षुओं, अधीर अभ्यास क्या है? इसमें, जो व्यक्ति अपमान करता है, वह उसका अपमान करता है, जो उसे डांटता है, वह उसे डांटता है, और जो उससे बहस करता है, उससे बहस करता है। इसे अधीर अभ्यास कहते हैं।"

(2) "और धैर्यपूर्ण व्यवहार क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति अपमान करने वाले का अपमान नहीं करता, डांटने वाले को डांटता नहीं है, और बहस करने वाले से बहस नहीं करता। इसे ही धैर्यपूर्ण व्यवहार कहते हैं।"

(3) "और संयम साधना क्या है? यहाँ, किसी आकृति को आँख से देखकर, भिक्षु उसके चिह्नों और विशेषताओं को नहीं समझता। क्योंकि यदि वह आँख की इंद्रिय को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और निराशा की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम का अभ्यास करता है; वह आँख की इंद्रिय की रक्षा करता है, वह आँख की इंद्रिय पर संयम का कार्य करता है। कान से ध्वनि सुनकर... नाक से गंध सूंघकर... जीभ से स्वाद चखकर... शरीर से स्पर्शित वस्तु का अनुभव करके... मन से किसी मानसिक घटना को जानकर, भिक्षु उसके चिह्नों और विशेषताओं को नहीं समझता। क्योंकि यदि वह मन की इंद्रिय को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और निराशा की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम का अभ्यास करता है; [153] वह मन की इंद्रिय की रक्षा करता है, वह मन की इंद्रिय पर संयम का कार्य करता है। इसे संयम साधना कहा जाता है।" अभ्यास।

(4) "और शांत करने का अभ्यास क्या है? यहाँ, एक भिक्षु उत्पन्न कामुक विचार को सहन नहीं करता; वह उसे त्याग देता है, दूर करता है, शांत करता है, समाप्त करता है और मिटा देता है। 853 वह द्वेष के विचार को सहन नहीं करता... हानि पहुँचाने के विचार को... बुरे हानिकारक (अकुशल) विचारों को जब भी वे उत्पन्न होते हैं; वह उन्हें त्याग देता है, दूर करता है, शांत करता है, समाप्त करता है और मिटा देता है। इसे शांत करने का अभ्यास कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये अभ्यास के चार तरीके हैं।"

---

165 रोगी (2) (खेमा1 सं. क्षेमा)

भिक्षुओं, साधना के ये चार तरीके हैं। वे कौन से चार तरीके हैं? अधीर साधना, धैर्यवान साधना, वशीकरण साधना और शांत करने की साधना।

(1) "हे भिक्षुओं, अधीर साधना क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति सर्दी और गर्मी, भूख और प्यास, मक्खियों, मच्छरों, हवा, जलते सूरज और सर्पों के संपर्क, अभद्र और अपमानजनक वाणी को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर पाता; वह उत्पन्न शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) को सहन करने में असमर्थ होता है जो पीड़ादायक, कष्टदायी, तीक्ष्ण, चुभने वाली, कष्टदायी और जीवन शक्ति को नष्ट करने वाली होती हैं। इसे अधीर साधना कहते हैं।"

(2) "और धैर्यवान अभ्यास क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति धैर्यपूर्वक सर्दी और गर्मी सहन करता है... अभद्र और अपमानजनक वाणी को सहन करता है; वह उत्पन्न शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) को सहन करने में सक्षम होता है जो पीड़ादायक, कष्टदायक, तीखी, चुभने वाली, कष्टदायी, अप्रिय और जीवन शक्ति को क्षीण करने वाली होती हैं। इसे ही धैर्यवान अभ्यास कहते हैं।"

(3) . "और हे भिक्षुओं, वशीकरण का अभ्यास क्या है? . . . [जैसा कि 4:164 में है]..."

(4) "और हे भिक्षुओं, शांत करने का अभ्यास क्या है? . . . [जैसा कि 4:164 में है] ...

"भिक्षुओं, ये अभ्यास के चार तरीके हैं।" [154]

---

166 दोनों (उभय)

भिक्षुओं, साधना के ये चार तरीके हैं। वे चार कौन से हैं? (1) वह साधना जो सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ कष्टदायी होती है; (2) वह साधना जो त्वरित प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ कष्टदायी होती है; (3) वह साधना जो सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ सुखद होती है; और (4) वह साधना जो त्वरित प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के साथ सुखद होती है।

(1) "सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान के साथ कष्टदायी अभ्यास विधि को दोनों कारणों से निम्नतर घोषित किया गया है: क्योंकि यह कष्टदायी है और क्योंकि प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) सुस्त है। अभ्यास की यह विधि दोनों कारणों से निम्नतर घोषित की गई है।"

(2) "प्रसारण की वह विधि जो त्वरित प्रत्यक्ष ज्ञान के साथ कष्टदायी होती है, उसे कष्टदायी होने के कारण निम्नतर घोषित किया जाता है।

(3) "सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से सुखद अभ्यास विधि को उसकी सुस्ती के कारण निम्नतर घोषित किया गया है।

(4) "प्रथा को सुहावना बनाने वाली और प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने वाली अभ्यास विधि को दोनों कारणों से श्रेष्ठ घोषित किया गया है: क्योंकि अभ्यास सुहावना है और क्योंकि प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) शीघ्र प्राप्त होता है। इस विधि को दोनों कारणों से श्रेष्ठ घोषित किया गया है।"

"भिक्षुओं, ये अभ्यास के चार तरीके हैं।"

---

167 मोग्गलाना

तब पूज्य सारिपुत्त पूज्य महामोग्गलाना के पास पहुँचे और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और पूज्य महामोग्गलाना से बोले, “मित्र मोग्गलाना, साधना के ये चार तरीके हैं। वे कौन से चार हैं? (1) सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान से पीड़ादायक साधना; (2) शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान से पीड़ादायक साधना (अभिन); (3) सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान से सुखदायक साधना (अभिन); और (4) शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान से सुखदायक साधना (अभिन)। इन चारों साधना तरीकों में से किस एक तरीके से आपका मन अनासक्ति के कारण दोषों से मुक्त हुआ?” [155]

"हे मित्र सारिपुत्त, इन चार साधना विधियों में से, शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान से परिपूर्ण कष्टदायी विधि के द्वारा ही मेरे मन को अनासक्ति के कारण दोषों से मुक्ति मिली।" 854

---

168 सारिपुत्त

तब पूज्य महामोग्गलाना पूज्य सारिपुत्त के पास गए और उनसे कहा:

"मित्र सारिपुत्त, साधना के ये चार तरीके हैं। वे कौन-से तरीके हैं? (1) सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान से युक्त कष्टदायक साधना; (2) शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान से युक्त कष्टदायक साधना; (3) सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान से युक्त सुखदायक साधना; और (4) शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान से युक्त सुखदायक साधना। इन चारों में से किस साधना के माध्यम से अनासक्ति के कारण आपका मन दोषों से मुक्त हुआ?"

"हे मित्र मोग्गलाना, अभ्यास के इन चार तरीकों में से, वह तरीका जो शीघ्र प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के साथ सुखद है, उसके माध्यम से ही मेरा मन अनासक्ति के कारण दोषों से मुक्त हुआ।"

---

169 परिश्रम के माध्यम से (सासंखार)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं?"

(1) यहाँ, कुछ व्यक्ति इसी जीवन में परिश्रम से निर्वाण प्राप्त करते हैं। (2) कुछ अन्य व्यक्ति शरीर के विखंडन के साथ परिश्रम से निर्वाण प्राप्त करते हैं। (3) कुछ अन्य व्यक्ति इसी जीवन में बिना परिश्रम के निर्वाण प्राप्त करते हैं। (4) और कुछ अन्य व्यक्ति शरीर के विखंडन के साथ बिना परिश्रम के निर्वाण प्राप्त करते हैं।

(1) "हे भिक्षुओं, मनुष्य इस जीवन में परिश्रम द्वारा निर्वाण कैसे प्राप्त करता है? यहाँ, भिक्षु शरीर की अनाकर्षकता का अवलोकन करते हुए, भोजन की अरुचि का अनुभव करते हुए, समस्त संसार में अनाकर्षकता का अवलोकन करते हुए, समस्त बद्ध घटनाओं

(संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता का अवलोकन करते हुए (ध्यान/अनुपसी में) रहता है; और उसे मृत्यु का बोध (सन्न/संज्ञा) [156] आंतरिक रूप से सुस्थापित होता है। वह इन पाँच प्रशिक्षण शक्तियों पर निर्भर रहता है: विश्वास की शक्ति, नैतिक लज्जा की शक्ति, नैतिक भय की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति और पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच शक्तियाँ उसमें प्रमुखता से उत्पन्न होती हैं: विश्वास, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य), सजगता और समाधि (स्वयं) की शक्ति। ये पाँचों शक्तियाँ (सम्मोहन/तल्लीनता) और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) प्रमुख हैं, इसलिए व्यक्ति इसी जीवन में परिश्रम द्वारा निर्वाण प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार व्यक्ति इसी जीवन में परिश्रम द्वारा निर्वाण प्राप्त करता है।

(2) "और शरीर के विखंडन के साथ परिश्रम द्वारा व्यक्ति निर्वाण कैसे प्राप्त करता है? यहाँ, एक भिक्षु शरीर की अनाकर्षकता को देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है... और उसे मृत्यु का ज्ञान (सन्ना/संज्ञा) आंतरिक रूप से अच्छी तरह स्थापित होता है। वह इन पाँच प्रशिक्षण शक्तियों पर निर्भर रहता है: विश्वास की शक्ति... और ज्ञान (दिव्य ज्ञान)। ये पाँच शक्तियाँ उसमें दुर्बल रूप से उत्पन्न होती हैं: विश्वास की शक्ति... और ज्ञान (दिव्य ज्ञान)। क्योंकि ये पाँच शक्तियाँ दुर्बल हैं, इसलिए वह शरीर के विखंडन के साथ परिश्रम द्वारा निर्वाण प्राप्त करता है। इस प्रकार व्यक्ति शरीर के विखंडन के साथ परिश्रम द्वारा निर्वाण प्राप्त करता है।"

(3) “और मनुष्य इस जीवन में बिना किसी प्रयास के निर्वाण कैसे प्राप्त करता है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, अकुशल अवस्थाओं से विरक्त, भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में। वह इन पाँच प्रशिक्षार्थियों पर निर्भर रहते हुए निवास करता है: विश्वास की शक्ति... और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच शक्तियाँ उसमें प्रमुखता से जागृत होती हैं: विश्वास की शक्ति... और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। क्योंकि ये पाँच शक्तियाँ प्रमुख होती हैं, इसलिए वह इस जीवन में बिना किसी प्रयास के निर्वाण प्राप्त करता है। इस प्रकार मनुष्य इस जीवन में बिना किसी प्रयास के निर्वाण प्राप्त करता है।”

(4) "और शरीर के विखंडन के साथ बिना किसी प्रयास के निर्वाण कैसे प्राप्त होता है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, अकुशल अवस्थाओं से विरक्त, भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में। वह इन पाँच प्रशिक्षु शक्तियों पर निर्भर रहते हुए निवास करता है: विश्वास की शक्ति... और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच शक्तियाँ उसमें दुर्बल रूप से उत्पन्न होती हैं: विश्वास की शक्ति... और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। क्योंकि ये पाँच शक्तियाँ दुर्बल हैं, इसलिए वह शरीर के विखंडन के साथ बिना किसी प्रयास के निर्वाण प्राप्त करता है। इस प्रकार व्यक्ति शरीर के विखंडन के साथ बिना किसी प्रयास के निर्वाण प्राप्त करता है।"

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

170 युगनद्धा में (युगनद्धा)

एक बार पूज्य आनंद कोसंबी में घोषिता उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ पूज्य आनंद ने भिक्षुओं को संबोधित किया:

"मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र,” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य आनंद ने यह कहा: [157]

"मित्रों, जिस भी भिक्षु या भिक्षुणी ने मेरी उपस्थिति में अरहंतत्व की प्राप्ति की घोषणा की है, उसने इन चार मार्गों 857 या उनमें से किसी एक मार्ग से ऐसा किया है। वे चार मार्ग कौन से हैं?..."

(1) "यहाँ, एक भिक्षु समभाव से पहले अंतर्दृष्टि (विपश्यना) विकसित करता है। जैसे-जैसे वह समभाव से पहले अंतर्दृष्टि (विपश्यना) विकसित करता है, मार्ग उत्पन्न होता है। 858 वह इस मार्ग का अनुसरण करता है; इसे विकसित करता है और इसका अभ्यास करता है। जैसे-जैसे वह इस मार्ग का अनुसरण, विकास और अभ्यास करता है, बंधन त्याग दिए जाते हैं और अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं। 859

(2) "फिर, एक भिक्षु अंतर्दृष्टि (विपश्यना) से पहले समभाव (समथा) विकसित करता है। 860 जैसे-जैसे वह अंतर्दृष्टि (विपश्यना) से पहले समभाव (समथा) विकसित करता है, मार्ग उत्पन्न होता है। वह इस मार्ग का अनुसरण करता है, इसे विकसित करता है और इसका अभ्यास करता है। जैसे-जैसे वह इस मार्ग का अनुसरण, विकास और अभ्यास करता है, बंधन त्याग दिए जाते हैं और अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं।"

(3) "फिर, एक भिक्षु समभाव (समथा) और अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का एक साथ विकास करता है। 861 जैसे-जैसे वह समभाव (समथा) और अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का एक साथ विकास करता है, मार्ग उत्पन्न होता है। वह इस मार्ग का अनुसरण करता है, इसे विकसित करता है और इसका अभ्यास करता है। जैसे-जैसे वह इस मार्ग का अनुसरण, विकास और अभ्यास करता है, बंधन त्याग दिए जाते हैं और अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं।"

(4) "फिर एक भिक्षु का मन धम्म के विषय में बेचैनी से ग्रस्त हो जाता है। 862 परन्तु एक ऐसा अवसर आता है जब उसका मन आंतरिक रूप से स्थिर, शांत, एकाग्र और एकाग्र हो जाता है। तब उसमें मार्ग उत्पन्न होता है। वह इस मार्ग का अनुसरण करता है, इसे विकसित करता है और इसका अभ्यास करता है। जैसे-जैसे वह इस मार्ग का अनुसरण, विकास और अभ्यास करता है, बंधन त्याग दिए जाते हैं और अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं।"

"हे मित्रों, जिस भी भिक्षु या भिक्षुणी ने मेरी उपस्थिति में अरहंतत्व की प्राप्ति की घोषणा की है, उसने इन चार मार्गों या उनमें से किसी एक मार्ग का अनुसरण किया है।"

III. सचेतन क्रिया (संचेतनिया)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

171 सचेतन क्रिया (चेतना) 863

भिक्षुओं, जब शरीर होता है, तब शारीरिक सचेतन क्रिया [158] के कारण आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं; जब वाणी होती है, तब वाणी सचेतन क्रिया के कारण आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं; जब मन होता है, तब मानसिक सचेतन क्रिया के कारण आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं—अज्ञान स्वयं ही स्थिति है। 864

भिक्षुओं, या तो व्यक्ति स्वयं ही उस शारीरिक चरित्र/व्यवहार (संस्कार) का प्रदर्शन करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं, या फिर दूसरों द्वारा उस शारीरिक चरित्र/व्यवहार (संस्कार) को उत्पन्न कराया जाता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं। या तो पूर्ण बोध (संपजन्न) के साथ व्यक्ति उस शारीरिक चरित्र/व्यवहार (संस्कार) का प्रदर्शन करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं, या फिर पूर्ण बोध के बिना व्यक्ति उस शारीरिक चरित्र/व्यवहार (संस्कार) का प्रदर्शन करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं। 866

भिक्षुओं, या तो व्यक्ति स्वयं उस वाणी/व्यवहार (संस्कार/आचरण) का पालन करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं, या फिर दूसरों द्वारा प्रेरित होकर वह वाणी/व्यवहार (संस्कार/आचरण) करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं। या तो पूर्ण बोध (संपजन्न) के साथ व्यक्ति उस वाणी/व्यवहार (संस्कार/आचरण) का पालन करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं, या फिर पूर्ण बोध के बिना व्यक्ति उस वाणी/व्यवहार (संस्कार/आचरण) का पालन करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं।

भिक्षुओं, या तो व्यक्ति स्वयं उस मानसिक चरित्र/व्यवहार (संस्कार/आचरण) का पालन करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं, या फिर दूसरों द्वारा प्रेरित होकर वह मानसिक चरित्र/व्यवहार (संस्कार/आचरण) करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं। या तो पूर्ण बोध (संपजन्न) के साथ व्यक्ति उस मानसिक चरित्र/व्यवहार (संस्कार/आचरण) का पालन करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं, या फिर पूर्ण बोध के बिना व्यक्ति उस मानसिक चरित्र/व्यवहार (संस्कार/आचरण) का पालन करता है जिससे आंतरिक रूप से सुख और दुख उत्पन्न होते हैं।

"अज्ञान इन अवस्थाओं में समाहित है। 866 परन्तु अज्ञान के पूर्णतः लुप्त हो जाने और समाप्त हो जाने पर वह शरीर अस्तित्वहीन हो जाता है जिसके कारण मन में सुख और दुख उत्पन्न होते हैं; वह वाणी अस्तित्वहीन हो जाती है जिसके कारण मन में सुख और दुख उत्पन्न होते हैं; वह मन अस्तित्वहीन हो जाता है जिसके कारण मन में सुख और दुख उत्पन्न होते हैं। 867 वह क्षेत्र अस्तित्वहीन हो जाता है, वह स्थान [159] अस्तित्वहीन हो जाता है, वह आधार अस्तित्वहीन हो जाता है, वह स्थान अस्तित्वहीन हो जाता है जिसके कारण मन में सुख और दुख उत्पन्न होते हैं। 868

भिक्षुओं, व्यक्तित्व की ये चार उपलब्धियाँ हैं। 869 वे चार क्या हैं? (1) व्यक्तित्व की एक ऐसी उपलब्धि है जिसमें स्वयं की सचेतन क्रिया संचालित होती है, न कि दूसरों की सचेतन क्रिया। (2) व्यक्तित्व की एक ऐसी उपलब्धि है जिसमें स्वयं की सचेतन क्रिया संचालित होती है, न कि स्वयं की सचेतन क्रिया। (3) व्यक्तित्व की एक ऐसी उपलब्धि है जिसमें स्वयं की सचेतन क्रिया और दूसरों की सचेतन क्रिया दोनों संचालित होती हैं। (4) और व्यक्तित्व की एक ऐसी उपलब्धि है जिसमें न तो स्वयं की सचेतन क्रिया और न ही दूसरों की सचेतन क्रिया संचालित होती है। ये हैं... व्यक्तित्व की चार उपलब्धियाँ।

यह सुनकर पूज्य सारिपुत्त ने भगवान (बुद्ध) से कहा, "भंते, भगवान (बुद्ध) ने संक्षेप में जो कहा है, उसका अर्थ मैं विस्तार से इस प्रकार समझता हूँ: (1) उस वैयक्तिकता की प्राप्ति में जिसमें व्यक्ति की स्वयं की सचेतन क्रिया संचालित होती है, न कि दूसरों की सचेतन क्रिया, उसी के कारण प्राणी उस समूह से विदा हो जाते हैं। (2) उस वैयक्तिकता की प्राप्ति में जिसमें दूसरों की सचेतन क्रिया संचालित होती है, न कि व्यक्ति की स्वयं की सचेतन क्रिया, उसी के कारण प्राणी उस समूह से विदा हो जाते हैं। (3) उस वैयक्तिकता की प्राप्ति में जिसमें व्यक्ति की स्वयं की सचेतन क्रिया और दूसरों की सचेतन क्रिया दोनों संचालित होती हैं, उसी के कारण प्राणी उस समूह से विदा हो जाते हैं। (4) परन्तु, भंते, किस प्रकार के देवों (देवदूतों/देवताओं) को उस वैयक्तिकता की प्राप्ति के रूप में समझा जाना चाहिए जिसमें न तो व्यक्ति की स्वयं की सचेतन क्रिया संचालित होती है और न ही दूसरों की सचेतन क्रिया।" न ही दूसरों की सचेत क्रियाएं संचालित होती हैं?" 873

"हे सारिपुत्त, वे उस क्षेत्र (आयतन) के देव (देवदूत/देवता) हैं जो न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति से ग्रसित है।"

"हे भंते, ऐसा क्यों है कि उस समूह से मरने वाले कुछ प्राणी पुनरावर्ती होते हैं, जो इस अवस्था में वापस आते हैं, जबकि [160] अन्य गैर-पुनरावर्ती (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी) होते हैं, जो इस अवस्था में वापस नहीं आते?" 874

"हे सारिपुत्त, यहाँ एक व्यक्ति ने निम्न बंधनों का त्याग नहीं किया है। इसी जीवन में वह न तो सबोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। वह इसका आनंद लेता है, इसकी इच्छा करता है और इसमें संतुष्टि पाता है। यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, इस पर एकाग्र रहता है, इसमें निरंतर निवास करता है और मृत्यु के समय इसे नहीं खोता है, तो वह न तो सबोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में देवताओं के साथ पुनर्जन्म लेता है। जब वह वहाँ से चला जाता है, तो वह एक प्रतिवर्ती होता है जो इस अवस्था में वापस आता है।"

लेकिन यहाँ किसी दूसरे व्यक्ति ने निम्न बंधनों का त्याग कर दिया है। इसी जीवन में वह उस अवस्था में प्रवेश करता है और निवास करता है जहाँ न तो चेतना (सन्न/संज्ञा) होती है और न ही अचेतना। वह उसमें आनंदित होता है, उसकी इच्छा करता है और उसमें तृप्ति पाता है। यदि वह उसमें दृढ़ रहे, उस पर एकाग्र रहे, उसमें लगातार निवास करे और मृत्यु के समय उसे न खोए, तो उसका पुनर्जन्म देवताओं के साथ उसी अवस्था में होता है जहाँ न तो चेतना (सन्न/संज्ञा) होती है और न ही अचेतना। जब वह वहाँ से चला जाता है, तो वह अजन्मा (पारिवारिक पुनर्जन्म रहित, अनागामी) होता है, जो इस अवस्था में वापस नहीं आता।

"हे सारिपुत्त, यही कारण है कि इस समूह से कुछ प्राणी जो इस दुनिया से चले जाते हैं, वे पुनरावर्ती होते हैं, जो इस अवस्था में वापस आते हैं, जबकि अन्य पुनरावर्ती (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी) होते हैं, जो इस अवस्था में वापस नहीं आते हैं।"

---

172 विश्लेषण (विभक्ति सं. विभक्ति)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

"मित्र!" उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

(1) "मित्रों, पूर्ण दीक्षा के आधे महीने बाद, मैंने अर्थ के विभाजन और निरूपण के माध्यम से उसके विश्लेषणात्मक ज्ञान को प्राप्त किया। 875 मैं इसे अनेक तरीकों से समझाता हूँ, सिखाता हूँ, घोषित करता हूँ, स्थापित करता हूँ, प्रकट करता हूँ, विश्लेषण करता हूँ और स्पष्ट करता हूँ। 876 जो कोई भी भ्रमित या अनिश्चित हो, वह मुझसे प्रश्न लेकर आए; मैं उसे अपने उत्तर से संतुष्ट करूँगा। 877 हमारे शिक्षक, जो हमारे उपदेशों में अत्यंत कुशल हैं, उपस्थित हैं। 878

(2) "मेरे पूर्ण दीक्षा ग्रहण के आधे महीने बाद मैंने धम्म के विभाजन और निरूपण के माध्यम से उसके विश्लेषणात्मक ज्ञान को प्राप्त किया। मैं अनेक तरीकों से उसकी व्याख्या करता हूँ, उसे सिखाता हूँ, उसका प्रचार करता हूँ, उसे स्थापित करता हूँ, उसे प्रकट करता हूँ, उसका विश्लेषण करता हूँ और उसे स्पष्ट करता हूँ। जो कोई भी भ्रमित या अनिश्चित हो, वह मुझसे प्रश्न लेकर आ सकता है; मैं उसे अपने उत्तर से संतुष्ट करूँगा। हमारे गुरु, जो हमारे उपदेशों में अत्यंत कुशल हैं, उपस्थित हैं।"

(3) "मेरे पूर्ण दीक्षा संस्कार के आधे महीने बाद मैंने भाषा के विभाजन और संरचना के माध्यम से उसके विश्लेषणात्मक ज्ञान को प्राप्त किया। मैं इसे अनेक तरीकों से समझाता हूँ, सिखाता हूँ, घोषित करता हूँ, स्थापित करता हूँ, प्रकट करता हूँ, विश्लेषण करता हूँ और स्पष्ट करता हूँ। जो कोई भी उलझन में हो या अनिश्चित हो, वह मुझसे प्रश्न लेकर आ सकता है; मैं उसे अपने उत्तर से संतुष्ट करूँगा। हमारे शिक्षक, जो हमारी शिक्षाओं में अत्यंत कुशल हैं, उपस्थित हैं।"

(4) "मेरे पूर्ण दीक्षा संस्कार के आधे महीने बाद, मैंने इसके विभाजन और निरूपण के माध्यम से विवेक के विश्लेषणात्मक ज्ञान को प्राप्त किया। मैं इसे अनेक तरीकों से समझाता हूँ, सिखाता हूँ, घोषित करता हूँ, स्थापित करता हूँ, प्रकट करता हूँ, विश्लेषण करता हूँ और स्पष्ट करता हूँ। जो कोई भी भ्रमित या अनिश्चित हो, वह मुझसे प्रश्न लेकर आ सकता है; मैं उसे अपने उत्तर से संतुष्ट करूँगा। हमारे शिक्षक, जो हमारी शिक्षाओं में अत्यंत कुशल हैं, उपस्थित हैं।"

---

173 कोत्थिता

तब पूज्य महाकोत्थिता पूज्य सारिपुत्त के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और पूज्य सारिपुत्त से पूछा:

(1) "मित्र, छह इंद्रियों के निरंतर लुप्त होने और संपर्क स्थापित करने की क्षमता समाप्त होने के साथ, क्या कुछ और भी बचा है?" 879

"ऐसा मत कहो, दोस्त।"

(2) "छह इंद्रियों के संपर्क के लिए शेषफल के लुप्त होने और समाप्ति के साथ, क्या और कुछ नहीं है?"

"ऐसा मत कहो, दोस्त।"

(3) "संपर्क के लिए छह इंद्रियों के शेषफल के लुप्त होने और समाप्ति के साथ, क्या कुछ और भी है और कुछ और भी नहीं है?"

"ऐसा मत कहो, दोस्त।"

(4) "संपर्क के लिए छह इंद्रियों के शेषफल के लुप्त होने और समाप्त होने के साथ, क्या न तो कुछ और है और न ही कुछ और नहीं है?"

"ऐसा मत कहो, मित्र।" 880

मित्र, जब तुमसे पूछा जाए: 'छह इंद्रियों के निरंतर क्षीण होने और समाप्त होने के साथ, क्या कुछ और भी है?' तो तुम कहोगे: 'ऐसा मत कहो, मित्र।' और जब तुमसे पूछा जाए: 'छह इंद्रियों के निरंतर क्षीण होने और समाप्त होने के साथ, क्या कुछ और नहीं है?... क्या कुछ और भी है और कुछ भी नहीं है?... क्या न तो कुछ और है और न ही कुछ भी नहीं है?' [प्रत्येक स्थिति में] तुम कहोगे: 'ऐसा मत कहो, मित्र।' इस कथन का अर्थ किस प्रकार समझा जाना चाहिए?

(1) "मित्र, यदि कोई कहता है: 'समाधि/सम्मोहन में छह इंद्रियों के शेषफल के लुप्त होने और संपर्क के लिए उनके समाप्त होने के साथ, कुछ और है तो वह उस चीज को बढ़ाता है जिसे बढ़ाना नहीं चाहिए। 881 (2) यदि कोई कहता है: 'मित्र, छह इंद्रियों के शेषफल के लुप्त होने और संपर्क के लिए उनके समाप्त होने के साथ, कुछ और नहीं है तो वह उस चीज को बढ़ाता है जिसे बढ़ाना नहीं चाहिए। (3) यदि कोई कहता है: 'मित्र, छह इंद्रियों के शेषफल के लुप्त होने और संपर्क के लिए उनके समाप्त होने के साथ, कुछ और भी है और कुछ और नहीं भी है तो वह उस चीज को बढ़ाता है जिसे बढ़ाना नहीं चाहिए। (4) यदि कोई कहता है: 'मित्र, छह इंद्रियों के शेषफल के लुप्त होने और संपर्क के लिए उनके समाप्त होने के साथ, न तो कुछ और है और न ही कुछ और नहीं है तो वह उस चीज को बढ़ाता है जिसे बढ़ाना नहीं चाहिए।

"मित्र, छह इंद्रियों के संपर्क की सीमा जितनी दूर तक फैली है, उतनी ही दूर तक इंद्रिय-भ्रम (प्रपंच) की सीमा भी फैली है। छह इंद्रियों के धीरे-धीरे लुप्त होने और समाप्त होने के साथ ही इंद्रिय-भ्रम (प्रपंच) का भी अंत हो जाता है, इंद्रिय-भ्रम (प्रपंच) शांत हो जाता है।"

---

174 आनंद

तब पूज्य आनंद ने पूज्य महा कोत्थिता के पास जाकर उनसे अभिवादन किया।

[यह सूत्र 4:173 के बिल्कुल समान है, सिवाय इसके कि यहाँ आनंद प्रश्न पूछते हैं और महाकोत्थिता उत्तर देते हैं।] 883 [163]

---

175 उपवन

तब पूज्य उपवन पूज्य सारिपुत्त के पास गए और उनसे कहा:

(1) "मित्र सारिपुत्त, क्या ज्ञान के माध्यम से कोई व्यक्ति लक्ष्य-निर्माता बनता है?" 884

"ऐसा नहीं है, दोस्त।"

(2) "तो क्या कोई आचरण के माध्यम से लक्ष्य-निर्माता बन जाता है?"

"ऐसा नहीं है, दोस्त।"

(3) "तो क्या कोई ज्ञान और आचरण के माध्यम से लक्ष्य-निर्माता बन जाता है?"

"ऐसा नहीं है, दोस्त।"

(4) "तो क्या कोई व्यक्ति ज्ञान और आचरण के अलावा किसी अन्य माध्यम से लक्ष्य-निर्माता बनता है?"

"ऐसा नहीं है, दोस्त।"

जब आपसे पूछा जाए: 'मित्र सारिपुत्त, क्या ज्ञान के माध्यम से कोई व्यक्ति लक्ष्य-प्राप्त होता है?' तो आप कहते हैं: 'ऐसा नहीं है, मित्र।' जब आपसे पूछा जाए: 'तो क्या आचरण के माध्यम से कोई व्यक्ति लक्ष्य-प्राप्त होता है? ...ज्ञान और आचरण के माध्यम से? ...ज्ञान और आचरण के अलावा अन्य तरीकों से?' [प्रत्येक स्थिति में] आप कहते हैं: 'ऐसा नहीं है, मित्र।' तो फिर किस प्रकार कोई व्यक्ति लक्ष्य-प्राप्त होता है?

(1) हे मित्र, यदि कोई ज्ञान के माध्यम से लक्ष्य प्राप्त कर ले, तो आसक्ति रखने वाला भी लक्ष्य प्राप्त कर लेगा। (2) यदि कोई आचरण के माध्यम से लक्ष्य प्राप्त कर ले, तो आसक्ति रखने वाला भी लक्ष्य प्राप्त कर लेगा। (3) यदि कोई ज्ञान और आचरण के माध्यम से लक्ष्य प्राप्त कर ले, तो आसक्ति रखने वाला भी लक्ष्य प्राप्त कर लेगा। (4) यदि कोई ज्ञान और आचरण के अलावा किसी अन्य माध्यम से लक्ष्य प्राप्त कर ले, तो सांसारिक व्यक्ति ही लक्ष्य प्राप्त कर लेगा; क्योंकि सांसारिक व्यक्ति ज्ञान और आचरण से रहित होता है।

"मित्र, आचरण में कमी वाला व्यक्ति चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में नहीं जानता और न ही देखता है। आचरण में निपुण व्यक्ति [164] चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानता और देखता है। चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानने और देखने से व्यक्ति लक्ष्य-निर्माता बन जाता है।" 885

---

176 आकांक्षी [886] (अयाकाना)

(1) "भिक्षुओं, आस्था से परिपूर्ण, सही आकांक्षा रखने वाले भिक्षु को इस प्रकार आकांक्षा रखनी चाहिए: 'मैं सारिपुत्त और मोग्गलाना के समान बनूँ!' यही मेरे भिक्षु शिष्यों के लिए मानक और मानदंड है, अर्थात् सारिपुत्त और मोग्गलाना।"

(2) "भिक्षुओं, आस्था से परिपूर्ण, सही आकांक्षा रखने वाली भिक्षुणी को इस प्रकार आकांक्षा करनी चाहिए: 'मैं खेमा और उप्पलावन की भिक्षुणियों के समान बनूँ!' यही मेरी भिक्षुणी शिष्यों, अर्थात् खेमा और उप्पलावन की भिक्षुणियों के लिए मानक और मानदंड है।"

(3) "भिक्षुओं (मठवासियों), आस्थावान पुरुष अनुयायी, सही आकांक्षा रखते हुए, इस प्रकार आकांक्षा करें: 'मैं चित्त गृहस्थ और अलाव्ल के हत्थक के समान बनूँ!' यही मेरे पुरुष गृहस्थ शिष्यों के लिए मानक और मानदंड है, अर्थात् चित्त गृहस्थ और अलाव्ल के हत्थक।"

(4) "भिक्षुओं (साधुओं), आस्थावान और सही आकांक्षा रखने वाली स्त्री-शैतान को इस प्रकार आकांक्षा करनी चाहिए: 'काश मैं कुज्जुत्तरा और वेलुकांतकी नंदमाता जैसी स्त्री-शैतान बन जाऊं!' यही मेरी स्त्री-शैतान शिष्यों, अर्थात् कुज्जुत्तरा और वेलुकांतकी नंदमाता के लिए आदर्श और मानदंड है।"

---

177 राहुल

तब पूज्य राहुल भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: 887

(1) "राहुला, आंतरिक पृथ्वी तत्व और बाह्य पृथ्वी तत्व एक ही पृथ्वी तत्व हैं। इसे सही ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से यथार्थ रूप में देखना चाहिए: 'यह मेरा नहीं है, यह मैं नहीं हूँ, यह मेरा स्वरूप नहीं है।' सही ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से इसे यथार्थ रूप में देखने पर, व्यक्ति पृथ्वी तत्व से विरक्त हो जाता है; वह मन को पृथ्वी तत्व से अलग कर लेता है। 888

(2) "राहुला, आंतरिक जल तत्व और बाह्य जल तत्व [1651] केवल जल तत्व ही हैं। इसे सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) के साथ यथार्थ रूप में देखा जाना चाहिए: 'यह मेरा नहीं है, यह मैं नहीं हूँ; यह मेरा स्व नहीं है।' इसे सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) के साथ यथार्थ रूप में देखने पर, व्यक्ति जल तत्व से विरक्त हो जाता है; वह मन को जल तत्व से अलग कर लेता है।

(3) "राहुल, आंतरिक अग्नि तत्व और बाह्य अग्नि तत्व, दोनों ही अग्नि तत्व हैं। इसे सही ज्ञान से यथार्थ रूप में देखना चाहिए: 'यह मेरा नहीं है, यह मैं नहीं हूँ, यह मेरा स्वरूप नहीं है।' सही ज्ञान से इसे यथार्थ रूप में देखने पर, व्यक्ति अग्नि तत्व से विरक्त हो जाता है; उसका मन अग्नि तत्व से विरक्त हो जाता है।"

(4) "राहुल, आंतरिक वायु तत्व और बाह्य वायु तत्व एक ही वायु तत्व हैं। इसे सही ज्ञान से यथार्थ रूप में देखना चाहिए: 'यह मेरा नहीं है, यह मैं नहीं हूँ, यह मेरा स्वरूप नहीं है।' सही ज्ञान से इसे यथार्थ रूप में देखने पर व्यक्ति वायु तत्व से विरक्त हो जाता है; मन वायु तत्व से विरक्त हो जाता है।"

"हे राहुल, जब कोई भिक्षु इन चार तत्वों में स्वयं या स्वयं से संबंधित किसी भी चीज को नहीं पहचानता, तो उसे तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) का त्याग करने वाला, बंधनों से मुक्त और अहंकार को पूरी तरह से तोड़कर दुखों का अंत करने वाला भिक्षु कहा जाता है।"

---

178 जलाशय (जम्बाली)

"भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु मन की एक निश्चित शांतिपूर्ण मुक्ति में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के निवारण पर ध्यान देता है। 889 ऐसा करते समय, उसका मन इसकी ओर प्रवृत्त नहीं होता, न ही आत्मविश्वास प्राप्त करता है, न ही स्थिर होता है और न ही इस पर ध्यान केंद्रित करता है। इस भिक्षु से व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के निवारण को प्राप्त करने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। मान लीजिए कि कोई व्यक्ति गोंद लगे हाथ से किसी शाखा को पकड़ ले। उसका हाथ उससे चिपक जाएगा, उससे जुड़ जाएगा और उससे जकड़ जाएगा। उसी प्रकार, एक भिक्षु मन की एक निश्चित शांतिपूर्ण मुक्ति में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है...। इस भिक्षु से व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के निवारण को प्राप्त करने की अपेक्षा नहीं की जा सकती।"

(2) "यहाँ, एक भिक्षु मन की एक निश्चित शांतिपूर्ण मुक्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है। [166] वह व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के निवारण पर ध्यान देता है। ऐसा करते समय, उसका मन उस ओर प्रवृत्त होता है, आत्मविश्वास प्राप्त करता है, स्थिर हो जाता है और उस पर ध्यान केंद्रित करता है। इस भिक्षु से व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के निवारण को प्राप्त करने की अपेक्षा की जा सकती है। मान लीजिए कि कोई व्यक्ति स्वच्छ हाथ से एक शाखा को पकड़ ले। उसका हाथ उससे चिपकेगा नहीं, उससे जुड़ेगा नहीं, उससे जकड़ा नहीं जाएगा। उसी प्रकार, एक भिक्षु मन की एक निश्चित शांतिपूर्ण मुक्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है। ... इस भिक्षु से व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के निवारण को प्राप्त करने की अपेक्षा की जा सकती है।"

(3) "यहाँ, एक भिक्षु मन की एक निश्चित शांतिपूर्ण मुक्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है। वह अज्ञान के विखंडन पर ध्यान देता है। ऐसा करते समय, उसका मन अज्ञान की ओर प्रवृत्त नहीं होता, न ही उस पर विश्वास प्राप्त करता है, न ही स्थिर होता है और न ही उस पर एकाग्र होता है। इस भिक्षु से अज्ञान के विखंडन की प्राप्ति की अपेक्षा नहीं की जा सकती। मान लीजिए कि एक जलाशय कई वर्षों पुराना है। एक व्यक्ति उसके प्रवेश द्वार बंद कर दे और निकास द्वार खोल दे, और पर्याप्त वर्षा न हो। ऐसी स्थिति में, यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि जलाशय का तटबंध टूट जाएगा। उसी प्रकार, एक भिक्षु मन की एक निश्चित शांतिपूर्ण मुक्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है। इस भिक्षु से अज्ञान के विखंडन की प्राप्ति की अपेक्षा नहीं की जा सकती।"

(4) "यहाँ, एक भिक्षु प्रवेश करता है और मन की एक निश्चित शांतिपूर्ण मुक्ति में निवास करता है। वह अज्ञान के विघटन पर ध्यान देता है। ऐसा करते समय, उसका मन अज्ञान की ओर प्रवृत्त होता है, आत्मविश्वास प्राप्त करता है, स्थिर हो जाता है और उस पर एकाग्र हो जाता है। इस भिक्षु से अज्ञान के विघटन की प्राप्ति की अपेक्षा की जा सकती है। मान लीजिए कि एक जलाशय कई वर्षों पुराना है। एक व्यक्ति उसके प्रवेश द्वार खोल दे और निकास द्वार बंद कर दे, और पर्याप्त वर्षा हो। ऐसी स्थिति में, यह अपेक्षा की जा सकती है कि जलाशय का तटबंध टूट जाएगा। उसी प्रकार, एक भिक्षु प्रवेश करता है और मन की एक निश्चित शांतिपूर्ण मुक्ति में निवास करता है।

वह अज्ञान के विघटन पर ध्यान देता है। [167] ऐसा करते समय, उसका मन अज्ञान की ओर प्रवृत्त होता है, आत्मविश्वास प्राप्त करता है, स्थिर हो जाता है और उस पर एकाग्र हो जाता है। इस भिक्षु से अज्ञान के विघटन की प्राप्ति की अपेक्षा की जा सकती है।

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान पाए जाने वाले चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

179 निब्बाना

तब पूज्य आनंद पूज्य सारिपुत्त के पास गए और उनसे कहा:

"हे मित्र सारिपुत्त, ऐसा क्यों है कि कुछ प्राणी इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त नहीं कर पाते?"

"हे मित्र आनंद, यहाँ कुछ प्राणी इसे ठीक से नहीं समझते: 'ये धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा) क्षय से संबंधित हैं; ये धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा) स्थिरता से संबंधित हैं; ये धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा) भेद से संबंधित हैं; ये धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा) भेद से संबंधित हैं।' इसीलिए यहाँ कुछ प्राणी इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त नहीं कर पाते।"

"हे मित्र सारिपुत्त, ऐसा क्यों है कि कुछ प्राणी इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं?"

"हे मित्र आनंद, यहाँ कुछ प्राणी इसे यथार्थ रूप में समझते हैं: 'ये धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा) क्षय से संबंधित हैं; ये धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा) स्थिरता से संबंधित हैं; ये धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा) भेद से संबंधित हैं; ये धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा) भेद से संबंधित हैं।' इसीलिए कुछ प्राणी इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं।" 890

---

180 महान संदर्भ [891] (महापदेश)

एक बार भगवान (बुद्ध) आनंद मंदिर के पास भोगनगर में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं (मठवासियों), मैं तुम्हें ये चार महान संदर्भ सिखाऊंगा। 892 [168] ध्यान से सुनो और गौर करो; मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, वे चार महान संदर्भ क्या हैं?

(1) "हे भिक्षुओं, एक भिक्षु कह सकता है: 'भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में मैंने यह सुना; उनकी उपस्थिति में मैंने यह सीखा: 'यह धम्म है; यह अनुशासन है; यह गुरु की शिक्षा है!'" उस भिक्षु के कथन को न तो स्वीकार करना चाहिए और न ही अस्वीकार करना चाहिए। इसे स्वीकार या अस्वीकार किए बिना, आपको उन शब्दों और वाक्यांशों को अच्छी तरह से सीखना चाहिए और फिर प्रवचनों में उनकी खोज करनी चाहिए और अनुशासन में उन्हें खोजना चाहिए। 893 यदि, प्रवचनों में उनकी खोज करने और अनुशासन में उन्हें खोजने पर, [आप पाते हैं कि] वे प्रवचनों में शामिल नहीं हैं और अनुशासन में नहीं देखे जाते हैं, तो आपको यह निष्कर्ष निकालना चाहिए: 'निश्चित रूप से, यह भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्ण रूप से प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन नहीं है। इस भिक्षु ने इसे गलत तरीके से सीखा है।' इसलिए आपको इसे त्याग देना चाहिए।

लेकिन एक भिक्षु कह सकता है: 'भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में मैंने यह सुना; उनकी उपस्थिति में मैंने यह सीखा: 'यह धम्म है; यह अनुशासन है; यह गुरु की शिक्षा है!' उस भिक्षु के कथन को न तो स्वीकार करना चाहिए और न ही अस्वीकार करना चाहिए। इसे स्वीकार या अस्वीकार किए बिना, आपको उन शब्दों और वाक्यांशों को अच्छी तरह से सीखना चाहिए और फिर प्रवचनों में उनकी खोज

करनी चाहिए और अनुशासन में उन्हें खोजना चाहिए। यदि, प्रवचनों में उनकी खोज करने और अनुशासन में उन्हें खोजने पर, आप पाते हैं कि वे प्रवचनों में शामिल हैं और अनुशासन में देखे जा सकते हैं, तो आपको यह निष्कर्ष निकालना चाहिए: 'निश्चित रूप से, यह भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्ण रूप से प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन है। इस भिक्षु ने इसे अच्छी तरह से सीखा है।' आपको इस प्रथम महान संदर्भ को याद रखना चाहिए।

(2) "तब एक भिक्षु कह सकता है: 'अमुक निवास में एक संघ वरिष्ठ और प्रतिष्ठित भिक्षुओं के साथ निवास कर रहा है। मैंने उस संघ की उपस्थिति में यह सुना; और उनकी उपस्थिति में यह सीखा:

"यह धम्म है; यह अनुशासन है; यह गुरु की शिक्षा है।" उस भिक्षु के कथन को न तो स्वीकार करना चाहिए और न ही अस्वीकार करना चाहिए। इसे स्वीकार या अस्वीकार किए बिना, आपको उन शब्दों और वाक्यांशों को अच्छी तरह से सीखना चाहिए और फिर प्रवचनों में उनकी खोज करनी चाहिए और अनुशासन में उन्हें खोजना चाहिए। यदि, प्रवचनों में उनकी खोज करने और अनुशासन में उन्हें खोजने पर, [आप पाते हैं कि] वे प्रवचनों में शामिल नहीं हैं और अनुशासन में नहीं देखे जाते हैं, तो आपको यह निष्कर्ष निकालना चाहिए: 'निश्चित रूप से, यह भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्ण रूप से प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन नहीं है। [169] उस संघ ने इसे गलत तरीके से सीखा है।' इसलिए आपको इसे त्याग देना चाहिए। . .

लेकिन... यदि आप प्रवचनों में उनकी खोज करें और अनुशासन में उन्हें ढूंढें, और पाएं कि वे प्रवचनों में शामिल हैं और अनुशासन में देखे जा सकते हैं, तो आपको यह निष्कर्ष निकालना चाहिए: 'निश्चित रूप से, यह भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन है। उस संघ ने इसे भली-भांति सीखा है।' आपको इस दूसरे महान संदर्भ को याद रखना चाहिए।

(3) तब कोई भिक्षु कह सकता है: 'अमुक निवास में अनेक वरिष्ठ भिक्षु निवास करते हैं जो विद्वान हैं, विरासत के उत्तराधिकारी हैं, धम्म के ज्ञाता हैं, अनुशासन के ज्ञाता हैं, रूपरेखाओं के ज्ञाता हैं। उन वरिष्ठों की उपस्थिति में मैंने यह सुना; उनकी उपस्थिति में मैंने यह सीखा: "यही धम्म है; यही अनुशासन है; यही गुरु का उपदेश है!"' उस भिक्षु के कथन को न तो स्वीकार करना चाहिए और न ही अस्वीकार करना चाहिए। स्वीकार या अस्वीकार किए बिना, आपको उन शब्दों और वाक्यांशों को अच्छी तरह से सीखना चाहिए और फिर प्रवचनों में उनकी खोज करनी चाहिए और अनुशासन में उन्हें खोजना चाहिए। यदि, प्रवचनों में उनकी खोज करने और अनुशासन में उन्हें खोजने पर, [आप पाते हैं कि] वे प्रवचनों में शामिल नहीं हैं और अनुशासन में नहीं पाए जाते हैं, तो आपको यह निष्कर्ष निकालना चाहिए: 'निश्चित रूप से, यह भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्ण रूप से प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन नहीं है। उन वरिष्ठों ने इसे गलत तरीके से सीखा है।' अतः आपको इसे त्याग देना चाहिए।

लेकिन... यदि आप प्रवचनों में इनकी खोज करें और अनुशासन में इन्हें ढूंढें, और पाएं कि ये प्रवचनों में शामिल हैं और अनुशासन में देखे जा सकते हैं, तो आपको यह निष्कर्ष निकालना चाहिए: 'निश्चित रूप से, यह भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन है। इसे उन वरिष्ठों ने अच्छी तरह से सीखा है।' आपको इस तीसरे महान संदर्भ को याद रखना चाहिए।

(4) "तब एक भिक्षु कह सकता है: फलां-फलां निवास में एक वरिष्ठ भिक्षु निवास करते हैं [170] जो विद्वान हैं, विरासत के उत्तराधिकारी हैं, धम्म के ज्ञाता हैं, अनुशासन के ज्ञाता हैं, रूपरेखाओं के ज्ञाता हैं। उस वरिष्ठ भिक्षु की उपस्थिति में मैंने यह सुना; उनकी उपस्थिति में मैंने यह सीखा: 'यह धम्म है; यह अनुशासन है; यह गुरु की शिक्षा है!' उस भिक्षु के कथन को न तो स्वीकार करना चाहिए और न ही अस्वीकार करना चाहिए। इसे स्वीकार या अस्वीकार किए बिना, आपको उन शब्दों और वाक्यांशों को अच्छी तरह से सीखना चाहिए और फिर प्रवचनों में उनकी खोज करनी चाहिए और अनुशासन में उन्हें खोजना चाहिए। यदि, प्रवचनों में उनकी खोज करने और अनुशासन में उन्हें खोजने पर, [आप पाते हैं कि] वे प्रवचनों में शामिल नहीं हैं और अनुशासन में नहीं देखे जाते हैं, तो आपको यह निष्कर्ष निकालना चाहिए: 'निश्चित रूप से, यह भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्ण रूप से प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन नहीं है। उस वरिष्ठ भिक्षु ने इसे गलत तरीके से सीखा है।' इसलिए आपको इसे त्याग देना चाहिए।

लेकिन एक भिक्षु कह सकता है: "अमुक निवास में एक वरिष्ठ भिक्षु निवास करते हैं जो विद्वान हैं, विरासत के उत्तराधिकारी हैं, धम्म के ज्ञाता हैं, अनुशासन के ज्ञाता हैं, रूपरेखाओं के ज्ञाता हैं। उस वरिष्ठ भिक्षु की उपस्थिति में मैंने यह सुना; उनकी उपस्थिति में मैंने यह सीखा: 'यही धम्म है; यही अनुशासन है; यही गुरु की शिक्षा है!'" उस भिक्षु के कथन को न तो स्वीकार करना चाहिए और न ही अस्वीकार करना चाहिए। इसे स्वीकार या अस्वीकार किए बिना, आपको उन शब्दों और वाक्यांशों को अच्छी तरह से सीखना चाहिए

और फिर प्रवचनों में उनकी खोज करनी चाहिए और अनुशासन में उन्हें खोजना चाहिए। यदि, प्रवचनों में उनकी खोज करने और अनुशासन में उन्हें खोजने पर, [आप पाते हैं कि] वे प्रवचनों में शामिल हैं और अनुशासन में देखे जा सकते हैं, तो आपको यह निष्कर्ष निकालना चाहिए: 'निश्चित रूप से, यह भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्ण रूप से प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन है। उस वरिष्ठ भिक्षु ने इसे अच्छी तरह से सीखा है।' आपको इस चौथे महान संदर्भ को याद रखना चाहिए।"

"भिक्षुओं, ये चार महान संदर्भ हैं।" 894

IV. ब्राह्मण

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

181 योद्धा (योद्धाजीव)

"भिक्षुओं (साधुओं) में चार गुण होते हैं, एक योद्धा राजा के योग्य होता है, राजा का सहायक होता है और राजत्व का एक कारक माना जाता है। वे चार गुण क्या हैं? यहाँ, एक योद्धा युद्ध कौशल में निपुण होता है, लंबी दूरी का निशानेबाज होता है, सटीक निशानेबाज होता है और एक विशाल शरीर को विच्छेदित करने में सक्षम होता है।"

इन चार गुणों से युक्त एक योद्धा राजा के योग्य होता है, राजा का सहायक होता है और राजत्व का एक कारक माना जाता है। [171] इसी प्रकार, चार गुणों से युक्त एक भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का पात्र होता है। वे चार गुण क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु निशानेबाजी में कुशल होता है, लंबी दूरी का निशानेबाज होता है, सटीक निशानेबाज होता है और एक विशाल शरीर को विच्छेदित करने वाला होता है।

(1) "हे भिक्षुओं, भिक्षु स्थानों में कैसे निपुण होता है? यहाँ, भिक्षु गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, सुचारु आचरण और आश्रय से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरे को पहचानता हुआ निवास करता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। इस प्रकार भिक्षु स्थानों में निपुण होता है।"

(2) "एक भिक्षु दूरदृष्टि वाला निशानेबाज कैसे होता है? यहाँ, किसी भी प्रकार का रूप— चाहे भूतकाल, भविष्यकाल या वर्तमान, आंतरिक या बाह्य, स्थूल या सूक्ष्म, निम्न या उच्च, दूर या निकट— एक भिक्षु सभी रूपों को सही पन्न (दिव्य ज्ञान) से इस प्रकार देखता है: 'यह मेरा नहीं है, यह मैं नहीं हूँ, यह मेरा स्वरूप नहीं है'। किसी भी प्रकार की वेदना... किसी भी प्रकार की अनुभूति... किसी भी प्रकार के संस्कार... किसी भी प्रकार की चेतना— चाहे भूतकाल, भविष्यकाल या वर्तमान, आंतरिक या बाह्य, स्थूल या सूक्ष्म, निम्न या उच्च, दूर या निकट— एक भिक्षु सभी चेतना को सही पन्न (दिव्य ज्ञान) से इस प्रकार देखता है: 'यह मेरा नहीं है, यह मैं नहीं हूँ, यह मेरा स्वरूप नहीं है'। इसी प्रकार एक भिक्षु दूरदृष्टि वाला निशानेबाज होता है।" लंबी दूरी का निशानेबाज।

(3) "एक भिक्षु (साधु) निशानेबाज कैसे होता है? यहाँ, एक भिक्षु यथार्थ को समझता है: 'यह दुख है'; वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का मूल है'; वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का निवारण है'; वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है'। इसी प्रकार एक भिक्षु निशानेबाज होता है।"

(4) "और भिक्षु किस प्रकार एक विशाल शरीर को विभाजित करता है? यहाँ, भिक्षु अज्ञान के विशाल समूह को विभाजित करता है। इस प्रकार भिक्षु एक विशाल शरीर को विभाजित करने वाला होता है।"

"इन चार गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।" [172]

---

182 गारंटर (पतिभोग)

भिक्षुओं, चार चीजों के विरुद्ध कोई गारंटर नहीं हो सकता, न कोई तपस्वी, न कोई ब्राह्मण, न कोई देव (देवता), न मार, न ब्रह्मा, और न ही संसार में कोई और। वे चार चीजें कौन सी हैं?

(1) "कोई भी गारंटी नहीं दे सकता, न तो कोई तपस्वी... न ही दुनिया में कोई और, कि जो बुढ़ापे के अधीन है वह बूढ़ा नहीं होगा।"

(2) "कोई भी गारंटी नहीं दे सकता, न तो कोई तपस्वी...; न ही दुनिया में कोई भी, कि जो बीमारी के अधीन है वह बीमार नहीं पड़ेगा।"

(3) "कोई भी गारंटी नहीं दे सकता, न तो कोई तपस्वी... न ही संसार में कोई और, कि जो मृत्यु के अधीन है वह नहीं मरेगा।"

(4) "कोई भी गारंटी नहीं दे सकता, न तो कोई तपस्वी... न ही संसार में कोई और, कि बुरे कर्म - दूषित, पुनर्जन्म के लिए सहायक (भाव/पुनर्जन्म का कारण), कष्टदायी, दुख में परिपक्व, भविष्य में पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु की ओर ले जाने वाले - अपना परिणाम नहीं देंगे।"

"भिक्षुओं, इन चार चीजों के विरुद्ध कोई गारंटर नहीं हो सकता, न कोई तपस्वी, न कोई ब्राह्मण, न कोई देव (देवदूत/भगवान), न मारा, न ब्रह्मा, और न ही संसार में कोई और।"

---

183 हर्ड (सुता)

एक बार भगवान (बुद्ध) राजगृह में बांस के वन में, गिलहरियों के अभयारण्य में निवास कर रहे थे। तब मगध के प्रधान ब्राह्मण वस्साकर भगवान (बुद्ध) के पास आए और उनसे अभिवादन किया। . . . फिर एक तरफ बैठकर उन्होंने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"गुरु गौतम, मेरा यह मत है कि जब कोई देखी हुई वस्तु के बारे में यह कहता है कि 'मैंने ऐसा देखा', तो इसमें कोई दोष नहीं है; जब कोई सुनी हुई वस्तु के बारे में यह कहता है कि 'मैंने ऐसा सुना', तो इसमें कोई दोष नहीं है; जब कोई महसूस की हुई वस्तु के बारे में यह कहता है कि 'मैंने ऐसा महसूस किया', तो इसमें कोई दोष नहीं है; जब कोई जानी हुई वस्तु के बारे में यह कहता है कि 'मैंने ऐसा जाना', तो इसमें कोई दोष नहीं है।"

(1) "मैं यह नहीं कहता, ब्राह्मण, कि देखी गई हर चीज़ के बारे में बात की जाए, न ही मैं यह कहता हूँ कि जो कुछ भी नहीं देखा गया उसके बारे में बात नहीं की जानी चाहिए। (2) मैं यह नहीं कहता कि सुनी गई हर चीज़ के बारे में बात की जाए, न ही मैं यह कहता हूँ कि जो कुछ भी नहीं सुना गया उसके बारे में बात नहीं की जानी चाहिए। (3) मैं यह नहीं कहता कि इंद्रियों द्वारा अनुभव की गई हर चीज़ के बारे में बात की जाए, न ही मैं यह कहता हूँ कि इंद्रियों द्वारा अनुभव न की गई किसी भी चीज़ के बारे में बात नहीं की जानी चाहिए। (4) मैं यह नहीं कहता कि बोध की गई हर चीज़ के बारे में बात की जाए, न ही मैं यह कहता हूँ कि बोध न की गई किसी भी चीज़ के बारे में बात नहीं की जानी चाहिए। क्योंकि, ब्राह्मण, यदि कोई व्यक्ति देखी गई चीज़ के बारे में बात करता है, तो अकुशल गुण बढ़ते हैं और कुशल गुण घटते हैं, तो मैं कहता हूँ कि उसे देखी गई चीज़ के बारे में बात नहीं करनी चाहिए। परन्तु यदि कोई व्यक्ति देखी गई चीज़ के बारे में बात करता है, तो अकुशल गुण घटते हैं और कुशल गुण बढ़ते हैं, तो मैं कहता हूँ कि उसे देखी गई चीज़ के बारे में बात करनी चाहिए।"

(2) "यदि कोई सुनी हुई बात के बारे में बोलने पर अकुशल गुण बढ़ जाते हैं और धम्म कम हो जाता है, तो मैं कहता हूँ कि उसे सुनी हुई बात नहीं बोलनी चाहिए। परन्तु यदि कोई सुनी हुई बात के बारे में बोलने पर अकुशल गुण कम हो जाते हैं और धम्म बढ़ जाता है, तो मैं कहता हूँ कि उसे सुनी हुई बात बोलनी चाहिए।"

(3) "यदि कोई व्यक्ति अपने द्वारा अनुभव की गई बातों के बारे में बोलते समय अकुशल गुणों में वृद्धि और धम्म गुणों में कमी देखे, तो मैं कहता हूँ कि उसे अपने द्वारा अनुभव की गई बातों के बारे में नहीं बोलना चाहिए। परन्तु यदि कोई व्यक्ति अपने द्वारा अनुभव की गई बातों के बारे में बोलते समय अकुशल गुणों में कमी और धम्म गुणों में वृद्धि देखे, तो मैं कहता हूँ कि उसे अपने द्वारा अनुभव की गई बातों के बारे में बोलना चाहिए।"

(4) "यदि किसी व्यक्ति द्वारा बोधित विषय पर बोलने से अकुशल गुण बढ़ते हैं और लाभकारी गुण घटते हैं, तो मैं कहता हूँ कि उसे बोधित विषय पर नहीं बोलना चाहिए। परन्तु यदि किसी व्यक्ति द्वारा बोधित विषय पर बोलने से अकुशल गुण घटते हैं और लाभकारी गुण बढ़ते हैं, तो मैं कहता हूँ कि उसे बोधित विषय पर बोलना चाहिए।"

तब मगध के प्रधान ब्राह्मण वस्साकरा, भगवान (बुद्ध) के कथन से प्रसन्न और प्रसन्न होकर अपने आसन से उठे और चले गए।

---

184 निडर (अभय)

तब ब्राह्मण जनुसोनी भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। . . . फिर एक तरफ बैठकर उन्होंने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"गुरु गौतम, मेरा यह मत और विचार है कि मृत्यु के अधीन कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो मृत्यु से भयभीत और डरा हुआ न हो।"

"हे ब्राह्मण, कुछ लोग मृत्यु से भयभीत और डरे हुए होते हैं, परन्तु कुछ लोग मृत्यु से भयभीत और डरे हुए नहीं होते।"

"और हे ब्राह्मण, मृत्यु के अधीन वे कौन हैं जो मृत्यु से भयभीत और डरे हुए हैं?"

(1) "यहाँ, कोई व्यक्ति कामवासना (राग), इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और इंद्रिय सुखों की लालसा (तन्हा/तृष्णा) से रहित नहीं है। जब वह किसी गंभीर और दुर्बल करने वाली बीमारी से ग्रसित हो जाता है, तो वह सोचता है: 'हाय, मेरे प्रिय इंद्रिय सुख मुझे छोड़ देंगे, और मुझे उन इंद्रिय सुखों को छोड़ना पड़ेगा।' वह शोक करता है, व्याकुल होता है और विलाप करता है; वह छाती पीटते हुए रोता है और भ्रमित हो जाता है। यह मृत्यु के अधीन वह व्यक्ति है जो मृत्यु से भयभीत और भयभीत है।"

(2) "फिर भी, कोई व्यक्ति कामवासना (राग), इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से रहित नहीं होता। जब वह किसी गंभीर और दुर्बल करने वाली बीमारी से ग्रसित हो जाता है, तो वह सोचता है: 'हाय, मेरा यह प्रिय शरीर मुझे छोड़ देगा, और मुझे इस शरीर को छोड़ना पड़ेगा।' वह शोक करता है, व्याकुल होता है और पश्चाताप करता है; वह छाती पीटते हुए रोता है और भ्रमित हो जाता है। यह भी मृत्यु के अधीन है जो मृत्यु से भयभीत और भयभीत है।"

(3) "फिर, किसी ने न तो कोई अच्छा और लाभकारी (कुशल) काम किया है और न ही अपने लिए कोई आश्रय बनाया है, बल्कि उसने बुराई, क्रूरता और अपवित्रता का काम किया है। जब वह किसी गंभीर और दुर्बल करने वाली बीमारी से ग्रसित हो जाता है, तो वह सोचता है: 'हाय, मैंने न तो कोई अच्छा और लाभकारी (कुशल) काम किया है और न ही अपने लिए कोई आश्रय बनाया है, बल्कि मैंने बुराई, क्रूरता और अपवित्रता का काम किया है। जब मैं मर जाऊंगा, तो मुझे उचित दंड मिलेगा।' वह शोक करता है, व्याकुल होता है और विलाप करता है; वह सीना पीटते हुए रोता है और भ्रमित हो जाता है। यह भी मृत्यु के अधीन है जो मृत्यु से भयभीत और भयभीत है।"

(4) "यहाँ भी कोई व्यक्ति उत्तम धम्म के विषय में उलझन में है, संशय में है और अनिर्णय की स्थिति में है। जब वह किसी गंभीर और दुर्बल कर देने वाली बीमारी से ग्रसित हो जाता है, तो वह सोचता है: 'हाय, मैं उत्तम धम्म के विषय में उलझन में हूँ, संशय में हूँ और अनिर्णय की स्थिति में हूँ।' वह दुखी होता है, व्याकुल होता है और विलाप करता है; वह सीना पीटते हुए रोता है और भ्रमित हो जाता है। यह भी मृत्यु के अधीन एक व्यक्ति है जो मृत्यु से भयभीत और भयभीत है।"

"ये चारों मृत्यु के अधीन हैं जो मृत्यु से भयभीत और आतंकित हैं। [175]

"और हे ब्राह्मण, मृत्यु के अधीन कौन हैं जो मृत्यु से भयभीत और डरे नहीं हैं?"

(1) "यहाँ, वह व्यक्ति कामवासना (राग), इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और इंद्रिय सुखों की लालसा (तन्हा/तृष्णा) से रहित है। जब वह किसी गंभीर और दुर्बल करने वाली बीमारी से ग्रसित हो जाता है, तो वह यह नहीं सोचता: 'हाय, मेरे प्रिय इंद्रिय सुख मुझे छोड़ देंगे, और मुझे उन इंद्रिय सुखों को छोड़ना पड़ेगा।' वह शोक नहीं करता, व्याकुल नहीं होता और विलाप नहीं करता; वह छाती पीट-पीटकर नहीं रोता और भ्रमित नहीं होता। यह वह व्यक्ति है जो मृत्यु के अधीन है, लेकिन मृत्यु से भयभीत नहीं होता।"

(2) "फिर, एक ऐसा व्यक्ति है जो कामवासना (राग), इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और देह के प्रति लालसा (तन्हा/तृष्णा) से रहित है। जब वह किसी गंभीर और दुर्बल करने वाली बीमारी से ग्रसित हो जाता है, तो वह यह नहीं सोचता: 'हाय, मेरा यह प्रिय शरीर मुझे छोड़ देगा, और मुझे इस शरीर को छोड़ना पड़ेगा।' वह शोक नहीं करता, व्याकुल नहीं होता, विलाप नहीं करता; वह छाती पीट-पीटकर नहीं रोता और भ्रमित नहीं होता। यह भी मृत्यु के अधीन है जो मृत्यु से भयभीत और भयभीत नहीं होता।"

(3) "फिर, एक व्यक्ति ने बुराई, क्रूरता और अपवित्रता का कार्य नहीं किया, बल्कि अच्छा और लाभकारी (कुशल) कार्य किया और अपने लिए आश्रय बनाया। जब वह किसी गंभीर और दुर्बल करने वाली बीमारी से ग्रसित हो जाता है, तो वह सोचता है: 'निःसंदेह, मैंने कोई बुराई, क्रूरता और अपवित्रता का कार्य नहीं किया, बल्कि मैंने अच्छा और लाभकारी (कुशल) कार्य किया और अपने लिए आश्रय बनाया। जब मैं मर जाऊंगा, तो मुझे उचित भाग्य प्राप्त होगा।' वह शोक नहीं करता, व्याकुल नहीं होता और विलाप नहीं करता; वह छाती पीट-पीटकर नहीं रोता और भ्रमित नहीं होता। यह भी मृत्यु के अधीन है, जो मृत्यु से भयभीत और भयभीत नहीं है।"

(4) "फिर, एक व्यक्ति अविचलित, संशयमुक्त और उत्तम धम्म के प्रति दृढ़ निश्चयी है। जब वह किसी गंभीर और दुर्बल करने वाली बीमारी से ग्रसित हो जाता है, तो वह सोचता है: 'मैं अविचलित, संशयमुक्त और उत्तम धम्म के प्रति दृढ़ निश्चयी हूँ।' वह शोक नहीं करता, व्याकुल नहीं होता और विलाप नहीं करता; वह छाती पीट-पीटकर नहीं रोता और भ्रमित नहीं होता। [176] यह भी मृत्यु के अधीन वह व्यक्ति है जो मृत्यु से भयभीत और भयभीत नहीं है।"

"हे ब्राह्मण, ये चार ऐसे हैं जो मृत्यु के अधीन हैं, फिर भी मृत्यु से भयभीत नहीं होते।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! . . [4:100 बजे] . . . गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

---

185 ब्राह्मण सत्य (ब्राह्मणसच्च)

एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। उस समय सप्पिनी नदी के किनारे स्थित तपस्वियों के उद्यान में कई प्रसिद्ध तपस्वी निवास कर रहे थे, जिनमें अन्नभार, वरधरा, सकुलुदयी और अन्य प्रसिद्ध तपस्वी शामिल थे। फिर, शाम को, भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और सप्पिनी नदी के किनारे स्थित तपस्वियों के उद्यान में गए। उस समय अन्य संप्रदायों के तपस्वी भी एकत्रित होकर एक साथ बैठे थे, तभी यह संवाद हुआ: "ब्राह्मण सत्य ऐसे हैं, ब्राह्मण सत्य ऐसे हैं।"

तब भगवान (बुद्ध) उन तपस्वियों के पास गए, उनके लिए तैयार किए गए आसन पर बैठ गए और उनसे पूछा: "हे तपस्वियों, अभी आप किस चर्चा में लगे हुए थे? वह कौन सी बातचीत चल रही थी?"

"हे गौतम गुरु, हम सब यहाँ एकत्रित होकर बैठे थे, तभी यह चर्चा शुरू हुई: 'ब्राह्मणों के सत्य यही हैं, ब्राह्मणों के सत्य यही हैं।'"

"सन्यासियों, मैंने स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान से इन चार ब्राह्मण सत्यों का अनुभव करके इनका प्रचार किया है। वे चार सत्य कौन से हैं?"

(1) "हे तपस्वियों, यहाँ एक ब्राह्मण कहता है: 'सभी प्राणियों को बख्शा जाना चाहिए।' ऐसा कहकर ब्राह्मण सत्य बोलता है, असत्य नहीं। इस कारण वह स्वयं को 'तपस्वी' या 'ब्राह्मण' नहीं समझता। वह यह भ्रम भी नहीं पालता कि 'मैं श्रेष्ठ हूँ', 'मैं समान हूँ' या 'मैं बदतर हूँ।' बल्कि, उस सत्य को प्रत्यक्ष रूप से जानकर, वह केवल प्राणियों के प्रति सहानुभूति और करुणा से प्रेरित होकर अभ्यास कर रहा है।"

(2) "फिर एक ब्राह्मण इस प्रकार कहता है: [177] 'सभी इंद्रिय सुख क्षणभंगुर, दुखद और परिवर्तनशील हैं।' ऐसा कहकर ब्राह्मण सत्य बोलता है, असत्य नहीं। इस कारण वह स्वयं को 'तपस्वी' या 'ब्राह्मण' नहीं समझता। वह यह भ्रम नहीं पालता कि 'मैं श्रेष्ठ हूँ', 'मैं समान हूँ' या 'मैं बदतर हूँ।' बल्कि, इस सत्य को प्रत्यक्ष रूप से जानकर वह केवल इंद्रिय सुखों से विरक्ति (निबिद्दा) के लिए, उनके लुप्त होने और समाप्त होने के लिए साधना करता है।"

(3) "फिर एक ब्राह्मण कहता है: 'सभी अवस्थाएँ अनित्य, दुखदायी और परिवर्तनशील हैं।' ऐसा कहकर ब्राह्मण सत्य बोलता है, असत्य नहीं। इस कारण वह स्वयं को 'तपस्वी' या 'ब्राह्मण' नहीं समझता। वह यह भ्रम भी नहीं पालता कि 'मैं श्रेष्ठ हूँ', 'मैं समान हूँ' या 'मैं बदतर हूँ।' बल्कि, इस सत्य को प्रत्यक्ष रूप से जानकर वह केवल अवस्थाओं से विरक्ति (निब्बिद) के लिए, उनके लुप्त होने और समाप्त होने के लिए साधना करता है।"

(4) "फिर, हे तपस्वियों, एक ब्राह्मण इस प्रकार कहता है: 'मैं कहीं भी किसी का नहीं हूँ, और न ही कहीं भी कोई ऐसी चीज़ है जो मेरी हो।' 896 इस प्रकार बोलते हुए, एक ब्राह्मण सत्य बोलता है, असत्य नहीं। वह इस कारण स्वयं को 'तपस्वी' या 'ब्राह्मण' नहीं समझता। वह यह भ्रम नहीं करता कि 'मैं श्रेष्ठ हूँ' या 'मैं समान हूँ' या 'मैं बदतर हूँ'। बल्कि, वह इस सत्य को प्रत्यक्ष रूप से जानता है कि वह शून्यता के मार्ग का अभ्यास कर रहा है। 897

"हे तपस्वियों, ये वे चार ब्राह्मण सत्य हैं जिनका मैंने स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव करके प्रचार किया है।"

---

186 अकुमेन (उमग्गा)

फिर एक भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे कहा:

(1) "भंते, संसार किसके द्वारा निर्देशित है? संसार किसके द्वारा घसीटा जाता है? जो उत्पन्न हुआ है, क्या वह उसके वश में हो जाता है?" 898

"शाबाश, शाबाश भिक्षु! आपकी बुद्धि उत्कृष्ट है। आपका विवेक उत्कृष्ट है। आपका प्रश्न उत्तम है। क्योंकि आपने यह पूछा है: 'भंते, संसार किसके द्वारा निर्देशित होता है? संसार किसके द्वारा घसीटा जाता है? जो उत्पन्न हुआ है, क्या वह उसके वश में हो जाता है?'"

"हां, भंते।"

"हे भिक्षु, संसार मन द्वारा निर्देशित है; यह मन द्वारा इधर-उधर घसीटा जाता है; जब मन जागृत हो जाता है, [संसार] उसके नियंत्रण में आ जाता है।" [178]

“अच्छा, भंते,” कहते हुए वह भिक्षु भगवान (बुद्ध) के इस कथन से प्रसन्न और आनंदित हुआ। फिर उसने भगवान (बुद्ध) से एक और प्रश्न पूछा:

(2) "हे भंते, कहा जाता है, 'धम्म का विद्वान, धम्म का विद्वान।' धम्म का विद्वान किस प्रकार होता है?"

"शाबाश, शाबाश भिक्षु! आपकी बुद्धि उत्कृष्ट है। आपका विवेक उत्कृष्ट है। आपका प्रश्न उत्तम है। आपने इस प्रकार पूछा है: 'हे भंते, कहा जाता है, "धर्म का विद्वान, धर्म का विद्वान।" धर्म का विद्वान किस प्रकार कहलाता है?'"

"हां, भंते।"

"मैंने अनेक शिक्षाएँ दी हैं, भिक्षु: प्रवचन (सूत्र), गद्य और पद्य का मिश्रण, व्याख्याएँ (गाथाएँ), प्रेरित वचन (उदन), उद्धरण, जातक कथाएँ (जन्म कथाएँ), अद्भुत वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर। यदि कोई व्यक्ति चार पंक्तियों के श्लोक का अर्थ और धम्म भी सीख ले और उसके अनुसार अभ्यास करे, तो यही उसके लिए 'धम्म का विद्वान' कहलाने के लिए पर्याप्त है।"

“अच्छा, भंते,” कहते हुए वह भिक्षु भगवान (बुद्ध) के इस कथन से प्रसन्न और आनंदित हुआ। फिर उसने भगवान (बुद्ध) से एक और प्रश्न पूछा:

(3) "कहा जाता है, भंते, 'ज्ञानी, गहन ज्ञान से परिपूर्ण; ज्ञानी, गहन ज्ञान से परिपूर्ण/ किस प्रकार कोई गहन ज्ञान से परिपूर्ण होता है?"

"शाबाश, शाबाश भिक्षु! आपकी बुद्धि उत्कृष्ट है। आपका विवेक उत्कृष्ट है। आपका प्रश्न उत्तम है। आपने पूछा है: 'हे भंते, कहा जाता है, "ज्ञानी, गहन ज्ञान से परिपूर्ण; ज्ञानी, गहन ज्ञान से परिपूर्ण।" गहन ज्ञान से परिपूर्ण व्यक्ति किस प्रकार ज्ञानी होता है?'"

"हां, भंते।"

"हे भिक्षु, एक भिक्षु ने सुना है: 'यह दुख है,' और उसने इस ज्ञान को अपने भेदकर इसका अर्थ समझ लिया है। उसने सुना है: 'यह दुख का मूल है,' और उसने इस ज्ञान को अपने भेदकर इसका अर्थ समझ लिया है। उसने सुना है: 'यह दुख का निवारण है,' और उसने इस ज्ञान को अपने भेदकर इसका अर्थ समझ लिया है। उसने सुना है: 'यह दुख निवारण का मार्ग है,' और उसने इस ज्ञान को अपने भेदकर इसका अर्थ समझ लिया है। इसी मार्ग से गहन ज्ञान प्राप्त होता है।"

“अच्छा, भंते,” कहते हुए वह भिक्षु भगवान (बुद्ध) के इस कथन से प्रसन्न और आनंदित हुआ। फिर उसने भगवान (बुद्ध) से एक और प्रश्न पूछा:

(4) "कहा जाता है, भंते, 'महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) वाला एक बुद्धिमान व्यक्ति, महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) वाला एक बुद्धिमान व्यक्ति।' किस प्रकार कोई महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) वाला बुद्धिमान व्यक्ति होता है?" [179]

"शाबाश, शाबाश भिक्षु! आपकी बुद्धि उत्कृष्ट है। आपका विवेक उत्कृष्ट है। आपका प्रश्न उत्तम है। आपने इस प्रकार पूछा है: 'हे भंते, कहा जाता है, "एक महान ज्ञानी (दिव्य ज्ञान) वाला बुद्धिमान व्यक्ति, एक महान ज्ञानी (दिव्य ज्ञान) वाला बुद्धिमान व्यक्ति।" किस प्रकार कोई महान ज्ञानी (दिव्य ज्ञान) वाला बुद्धिमान व्यक्ति होता है?'"

"हां, भंते।"

"हे भिक्षु, यहाँ महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) से युक्त ज्ञानी व्यक्ति न तो स्वयं को कष्ट पहुँचाना चाहता है, न दूसरों को, और न ही दोनों को। बल्कि, जब वह चिंतन करता है, तो वह केवल अपने कल्याण, दूसरों के कल्याण, दोनों के कल्याण और समस्त विश्व के कल्याण के बारे में ही सोचता है। 900 इसी प्रकार व्यक्ति महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) से युक्त ज्ञानी व्यक्ति होता है।"

---

187 वासाकारा

एक बार भगवान (बुद्ध) राजगृह में बांस के वन में, गिलहरियों के अभयारण्य में निवास कर रहे थे। तब मगध के प्रधान ब्राह्मण वस्साकर भगवान (बुद्ध) के पास आए और उनसे अभिवादन किया। . . . फिर एक तरफ बैठकर उन्होंने भगवान (बुद्ध) से कहा:

(1) "मास्टर गौतम, क्या कोई बुरा व्यक्ति किसी बुरे व्यक्ति के बारे में जान सकता है: 'यह व्यक्ति बुरा व्यक्ति है'?"

"हे ब्राह्मण, यह असंभव और अकल्पनीय है कि एक बुरा व्यक्ति किसी बुरे व्यक्ति के बारे में यह जान सके: 'यह व्यक्ति बुरा है'।"

(2) "तो क्या कोई बुरा व्यक्ति किसी अच्छे व्यक्ति के बारे में यह जान सकता है: 'यह व्यक्ति अच्छा व्यक्ति है'?"

"यह भी असंभव और अकल्पनीय है कि एक बुरा व्यक्ति किसी अच्छे व्यक्ति के बारे में यह जान सके: 'यह व्यक्ति अच्छा है।'"

(3) "तो क्या एक अच्छा व्यक्ति किसी अच्छे व्यक्ति के बारे में जान सकता है: 'यह व्यक्ति एक अच्छा व्यक्ति है'?"

"ऐसा संभव है कि एक अच्छा व्यक्ति किसी अच्छे व्यक्ति को पहचान सके: 'यह व्यक्ति एक अच्छा इंसान है'।"

(4) "तो क्या कोई अच्छा व्यक्ति किसी बुरे व्यक्ति के बारे में जान सकता है: 'यह व्यक्ति बुरा व्यक्ति है'?"

"ऐसा भी संभव है कि एक अच्छा व्यक्ति किसी बुरे व्यक्ति के बारे में जानता हो: 'यह व्यक्ति बुरा है।'"

यह आश्चर्यजनक और विस्मयकारी है। गुरु गौतम, गुरु गौतम ने इसे कितनी अच्छी तरह से कहा है: 'हे ब्राह्मण, यह असंभव और अकल्पनीय है कि एक बुरा व्यक्ति किसी बुरे व्यक्ति के बारे में जान सके... [जैसा कि ऊपर बताया गया है]... यह भी संभव है कि एक अच्छा व्यक्ति किसी बुरे व्यक्ति के बारे में जान सके: "यह व्यक्ति बुरा है।"'

एक बार गुरु गौतम, ब्राह्मण तोदेय्या की सभा के सदस्य दूसरों की निंदा करते हुए कह रहे थे: 'यह राजा एलय्या मूर्ख है, क्योंकि वह तपस्वी रामपुत्त पर पूर्ण विश्वास रखता है और उन्हें प्रणाम करके, उनके सामने उठकर, आदरपूर्वक अभिवादन करके और उनके प्रति उचित शिष्टाचार का पालन करके उन्हें सर्वोच्च सम्मान देता है। 901 राजा एलय्या के ये सामंत - यमक, मोग्गल्ला, उगा, नविन्दक, गंधब्बा और अग्गिवेशा - भी मूर्ख हैं, क्योंकि वे भी तपस्वी रामपुत्त पर पूर्ण विश्वास रखते हैं और उन्हें प्रणाम करके, उनके सामने उठकर, आदरपूर्वक अभिवादन करके और उनके प्रति उचित शिष्टाचार का पालन करके उन्हें सर्वोच्च सम्मान देते हैं।' तब ब्राह्मण तोदेय्या ने उन्हें इस प्रकार समझाया: 'महोदय, कार्यों और प्रशासनिक कर्तव्यों से संबंधित मामलों में, फरमानों और घोषणाओं के मामले में, क्या राजा इलेय्या उन लोगों से भी अधिक बुद्धिमान और चतुर नहीं हैं जो वास्तव में चतुर हैं?'

"[उन्होंने उत्तर दिया:] जी हाँ, महाराज, कार्यों और प्रशासनिक कर्तव्यों से संबंधित मामलों में, फरमानों और घोषणाओं के मामले में, राजा एलय्या बुद्धिमान और बहुत चतुर लोगों से भी अधिक चतुर हैं।"

"लेकिन, महोदय, [उन्होंने कहा,] 'यह इसलिए है क्योंकि तपस्वी रामपुत्त बुद्धिमान राजा एलय्या से अधिक बुद्धिमान हैं, कार्यों और प्रशासनिक कर्तव्यों, आदेशों और घोषणाओं से संबंधित मामलों में इस चतुर [राजा] से अधिक चतुर हैं, इसलिए राजा एलय्या को उन पर पूरा भरोसा है और वे उन्हें सम्मान देकर, उनके लिए उठकर, आदरपूर्वक उनका अभिवादन करके और उनके प्रति उचित शिष्टाचार का पालन करके उन्हें सर्वोच्च सम्मान देते हैं।'

"'महोदय, आप क्या सोचते हैं कि कार्यों और प्रशासनिक कर्तव्यों, फरमानों और घोषणाओं से संबंधित मामलों में, राजा एजेय्या के सामंत - यमक, मोग्गल्ला, [181] उगा, नविन्दकी, गंधब्बा, अग्गिवेशा - उन लोगों से भी अधिक बुद्धिमान और चतुर हैं जो बहुत चतुर हैं?'"

"जी हाँ, महोदय, कार्यों और प्रशासनिक कर्तव्यों से संबंधित मामलों में, फरमानों और घोषणाओं के मामले में, राजा एलय्या के सामंत - यमाका... अग्गिवेस्सा - बुद्धिमान और बहुत चतुर लोगों से भी अधिक चतुर हैं।"

"लेकिन, महोदय, तपस्वी रामपुत्त राजा एलय्या के सामंतों से अधिक बुद्धिमान हैं, कार्यों और प्रशासनिक कर्तव्यों, आदेशों और घोषणाओं से संबंधित मामलों में उन चतुर [सामंतों] से भी अधिक कुशल हैं, इसीलिए राजा एलय्या के सामंत उन पर पूर्ण विश्वास रखते हैं और उन्हें सम्मानपूर्वक प्रणाम करके, उनके लिए खड़े होकर, आदरपूर्वक उन्हें प्रणाम करके और उनके प्रति उचित शिष्टाचार का पालन करके उन्हें सर्वोच्च सम्मान देते हैं।" 902

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है। गुरु गौतम, आपने इसे कितनी खूबसूरती से कहा है: 'यह असंभव और अकल्पनीय है कि एक बुरा व्यक्ति किसी बुरे व्यक्ति के बारे में यह जान सके: "यह व्यक्ति बुरा है।" यह भी असंभव और अकल्पनीय है कि एक बुरा व्यक्ति किसी अच्छे व्यक्ति के बारे में यह जान सके: "यह व्यक्ति अच्छा है।" यह संभव है कि एक अच्छा व्यक्ति किसी अच्छे व्यक्ति के बारे में यह जान सके: "यह व्यक्ति अच्छा है।" यह भी संभव है कि एक अच्छा व्यक्ति किसी बुरे व्यक्ति के बारे में यह जान सके: "यह व्यक्ति बुरा है।" और अब, गुरु गौतम, हमें जाना होगा। हम व्यस्त हैं और हमारे पास बहुत काम है।"

"हे ब्राह्मण, आप अपनी सुविधानुसार जा सकते हैं।"

तब मगध के प्रधान ब्राह्मण वस्साकरा, भगवान (बुद्ध) के कथन से प्रसन्न और प्रसन्न होकर अपने आसन से उठे और चले गए।

188 उपका

एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। तब उपक मंदिकापुत्त भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले:

"भंते, मेरा यह मत और विचार है कि यदि कोई दूसरों की आलोचना करता है और उसे किसी भी तरह से प्रमाणित नहीं करता है, तो वह दोषी और अपराधी है।"

"यदि उपका, कोई दूसरों की आलोचना करता है और उसे प्रमाणित नहीं करता, तो वह दोषी और दंडनीय है। परन्तु तुम दूसरों की आलोचना करते हो और उसे प्रमाणित नहीं करते, इसलिए तुम दोषी और दंडनीय हो।"

"भंते, जैसे कोई मछली को पानी से बाहर निकलते हुए बड़े फंदे से पकड़ लेता है, ठीक वैसे ही, जब मैं बाहर निकला, तो भगवान (बुद्ध) ने मुझे वाद-विवाद में एक बड़े फंदे से पकड़ लिया।"

(1) "उपक, मैंने घोषणा की है: 'यह हानिकारक (अकुसला) है।' तथागत (बुद्ध) ने इस विषय पर असीमित शब्दों और वाक्यांशों के साथ असीमित धम्म शिक्षाएँ दी हैं, [घोषणा करते हुए]: 'ऐसे और ऐसे कारणों से, यह हानिकारक (अकुसला) है।'"

(2) "उपक, मैंने घोषणा की है: 'जो हानिकारक (अकुशल) है, उसका त्याग करना चाहिए।' तथागत (बुद्ध) ने इस विषय पर असीमित धम्म उपदेश दिए हैं, असीमित शब्दों और वाक्यांशों में, [घोषणा करते हुए]: 'ऐसे और ऐसे कारणों से, जो हानिकारक (अकुशल) है, उसका त्याग करना चाहिए।'

(3) "उपक, मैंने घोषणा की है: 'यह लाभकारी (कुशल) है।' तथागत (बुद्ध) के पास इस विषय में असीमित धम्म शिक्षाएँ हैं, असीमित शब्दों और वाक्यांशों के साथ, [घोषणा करते हुए]: 'ऐसे और ऐसे कारणों से, यह लाभकारी (कुशल) है।"

(4) "उपक, मैंने घोषणा की है: 'जो लाभकारी (कुशल) है, उसका विकास किया जाना चाहिए।' तथागत (बुद्ध) ने इस विषय में असीमित धम्म शिक्षाएँ दी हैं, असीमित शब्दों और वाक्यांशों के साथ, [घोषणा करते हुए]: 'ऐसे और ऐसे कारणों से, जो लाभकारी (कुशल) है, उसका विकास किया जाना चाहिए।"

तब उपक मंदिकापुत्त, भगवान (बुद्ध) के कथन से प्रसन्न और आनंदित होकर, अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और दाहिनी ओर मुख करके उनकी परिक्रमा की। फिर वे मगध के राजा अजातसत्तु वेदेहिपुत्त के पास गए और उन्हें भगवान (बुद्ध) के साथ हुई अपनी पूरी बातचीत बताई।

जब उसने ये कहा, तो राजा अजातसत्तु क्रोधित और असंतुष्ट हो गए और उपक मंदिकापुत्त से बोले, "यह नमक बनाने वाले का लड़का कितना दुस्साहसी है! कितना अशिष्ट और कितना निर्भीक है कि यह सोचता है कि वह भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध पर हमला कर सकता है। चले जाओ, उपक, यहाँ से! मेरी दृष्टि से दूर हो जाओ!"

---

189 बोध (सच्चीकरणीय)

"भिक्षुओं (संतों), ये चार बातें हैं जिन्हें जानना आवश्यक है। वे चार बातें कौन सी हैं? [183]

"कुछ बातें शरीर द्वारा अनुभव की जानी हैं; कुछ बातें स्मृति द्वारा अनुभव की जानी हैं; कुछ बातें आंखों द्वारा अनुभव की जानी हैं; कुछ बातें पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा अनुभव की जानी हैं।"

(1) हे भिक्षुओं, शरीर द्वारा किन बातों का अनुभव किया जा सकता है? हे भिक्षुओं, शरीर द्वारा आठ मोक्षों का अनुभव किया जा सकता है। (2) और स्मृति द्वारा किन बातों का अनुभव किया जा सकता है? स्मृति द्वारा अपने पिछले जन्मों के निवासों का अनुभव किया जा सकता है। (3) और नेत्र द्वारा किन बातों का अनुभव किया जा सकता है? नेत्र द्वारा प्राणियों के मृत्यु और पुनर्जन्म का अनुभव किया जा

सकता है। (4) और दीप्तिमान (दिव्य ज्ञान) द्वारा किन बातों का अनुभव किया जा सकता है? दीप्तिमान (दिव्य ज्ञान) द्वारा दोषों के नाश का अनुभव किया जा सकता है।

"भिक्षुओं, ये चार चीजें हैं जिन्हें प्राप्त करना है।"

---

190 उपोसथा

एक बार भगवान (बुद्ध) पूर्वी उद्यान में स्थित मिगारमाता के महल में सावत्थी में निवास कर रहे थे। उस अवसर पर, उपोसथ के दिन, भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के संघ से घिरे बैठे थे। तब, पूरी तरह से मौन भिक्षुओं के संघ का अवलोकन करने के बाद, भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया:

भिक्षुओं, यह सभा व्यथा से मुक्त है; यह सभा व्यथा रहित, शुद्ध और सार में स्थिर है। ऐसा भिक्षु संघ, ऐसी सभा संसार में दुर्लभ है। ऐसा भिक्षु संघ, ऐसी सभा दान, आतिथ्य, भेंट और आदर के योग्य है; संसार के लिए अद्वितीय पुण्य क्षेत्र है। ऐसे भिक्षु संघ, ऐसी सभा को दिया गया थोड़ा सा दान भी प्रचुर हो जाता है, जबकि अधिक दान तो और भी प्रचुर हो जाता है। ऐसे भिक्षु संघ, ऐसी सभा को देखने के लिए कई योजन की यात्रा करना भी उचित है, चाहे कंधे पर थैला ही क्यों न हो। ऐसा है यह भिक्षु संघ। [184]

इस संघ में ऐसे भिक्षु हैं जिन्होंने देवों (देवदूतों/भगवानों) की अवस्था प्राप्त कर ली है। इस संघ में ऐसे भिक्षु हैं जिन्होंने ब्रह्माओं की अवस्था प्राप्त कर ली है। इस संघ में ऐसे भिक्षु हैं जिन्होंने अविचलितता प्राप्त कर ली है। इस संघ में ऐसे भिक्षु हैं जिन्होंने श्रेष्ठता की अवस्था प्राप्त कर ली है।

(1) "एक भिक्षु ने देव की अवस्था कैसे प्राप्त की? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल हैं। विचार और चिंतन के शांत होने पर, वह द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन नहीं होते हैं। परमानंद (पीति) के भी लुप्त होने पर, वह समभाव में निवास करता है और सचेत (ध्यान/सती) और पूर्णतः बोध करते हुए, वह शरीर के साथ सुख (सुख) का अनुभव करता है; वह तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जिसके बारे में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव में है, सती (ध्यानमग्न), वह व्यक्ति जो आनंद में रहता है। सुख-दुख का त्याग करके, और सुख-दुख के पहले ही बीत जाने के बाद, वह चौथी ध्यान अवस्था (सती) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो कष्टदायी है और न ही सुखदायी, जिसमें उदासीनता (भीतर ध्यान/सती) द्वारा सती ध्यान का शुद्धिकरण होता है। इसी प्रकार एक भिक्षु देव (देवदूत/भगवान) की अवस्था प्राप्त करता है।

(2) "एक भिक्षु ब्रह्म की अवस्था कैसे प्राप्त करता है? यहाँ, एक भिक्षु प्रेममयी (मेट्टा) मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है, उसी प्रकार दूसरी, तीसरी और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह प्रेममयी (मेट्टा) मन से संपूर्ण विश्व में व्याप्त रहता है, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित। वह करुणा से भरे मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है... परोपकारी आनंद से भरे मन से... उदासीनता (भीतर लीन/उपेक्खा) से भरे मन से, उसी प्रकार दूसरी, तीसरी और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह उदासीनता (भीतर लीन/उपेक्खा) मन से संपूर्ण विश्व में व्याप्त रहता है।" विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित। इसी प्रकार एक भिक्षु ब्रह्म की अवस्था प्राप्त करता है।

(3) "एक भिक्षु ने अविचलितता कैसे प्राप्त की? यहाँ, रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने से, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का अनुभव करते हुए, एक भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, 'चेतना अनंत है' का अनुभव करते हुए, वह अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, वह शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता

है और निवास करता है। शून्यता के आधार पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, वह प्रवेश करता है और निवास करता है..." वह अवस्था (आयतन) न तो प्रत्यक्ष और न ही अप्रत्यक्ष है। इसी प्रकार भिक्षु अविचलित अवस्था को प्राप्त करता है।

(4) "और एक भिक्षु (साधु) ने श्रेष्ठ अवस्था कैसे प्राप्त की? यहाँ, एक भिक्षु यथार्थ को समझता है: 'यह दुख है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का मूल है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का निवारण है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार एक भिक्षु ने श्रेष्ठ अवस्था प्राप्त की है।" [185]

V. महान अध्याय

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

191 इसके बाद कान (सोतानुगाता)

"भिक्षुओं, जब कोई व्यक्ति शिक्षाओं को सुनकर, मौखिक रूप से पढ़कर, मन से उनका परीक्षण करके और दृष्टि से उनका भली-भांति अध्ययन करके उनका पालन करता है, तो चार लाभों की अपेक्षा की जा सकती है। वे चार लाभ क्या हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु धम्म में पारंगत होता है: प्रवचन (सूत्र), मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, श्लोक (गाथाएँ), प्रेरित कथन (उदन), उद्धरण (इतिवृत्तक), पुनर्जन्म कथाएँ (जातक), अद्भुत वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर। उसने उन शिक्षाओं को सुनकर, मौखिक रूप से सुनाकर, मन से उनका परीक्षण करके और दृष्टि से उनका गहन अध्ययन करके उनका अवलोकन किया है। वह व्याकुल मन से परास्त हो जाता है और देवों (देवदूतों/देवताओं) के एक विशेष समूह में पुनर्जन्म लेता है। वहाँ, सुखी लोग उसे धम्म के अंश सुनाते हैं। 904 उसकी स्मृति का उदय धीमा होता है, परन्तु फिर वह प्राणी शीघ्र ही भेद्यता प्राप्त कर लेता है। यह पहला लाभ है जिसकी अपेक्षा तब की जाती है जब कोई शिक्षाओं को सुनकर, मौखिक रूप से सुनाकर, मन से उनका परीक्षण करके और दृष्टि से उनका गहन अध्ययन करके उनका अवलोकन करता है।"

(2) "फिर, एक भिक्षु धम्म में पारंगत हो जाता है: प्रवचनों और प्रश्न-उत्तरों में। उसने उन शिक्षाओं को सुनकर, मौखिक रूप से सुनाकर, मन से उनका परीक्षण करके और दृष्टि से भलीभांति समझकर उनका अवलोकन किया है। वह व्याकुल मन से इसलोक में विलीन हो जाता है और देवों (देवदूतों/देवताओं) के एक विशेष समूह में पुनर्जन्म लेता है। वहाँ, सुखी लोग उसे धम्म के अंश नहीं सुनाते, बल्कि एक ऐसा भिक्षु जो मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) से परिपूर्ण है और जिसने मन पर विजय प्राप्त कर ली है, देवों (देवदूतों/देवताओं) की सभा को धम्म का उपदेश देता है। उसे यह आभास होता है: 'यही वह धम्म और अनुशासन है जिसमें मैंने पूर्व में ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत किया था।' उसकी स्मृति का उदय धीमा होता है, परन्तु फिर वह प्राणी शीघ्र ही बोधगम्य हो जाता है। मान लीजिए कोई व्यक्ति ढोल की ध्वनि में निपुण हो: राजमार्ग पर यात्रा करते समय वह ढोल की ध्वनि सुन सकता है और उसे जरा भी आश्चर्य नहीं होगा। वह ध्वनि को लेकर असमंजस में या अनिश्चित होता; बल्कि वह निष्कर्ष निकालता: 'यह ढोल की ध्वनि है।' इसी प्रकार, एक भिक्षु धम्म (मार्ग) [186] में पारंगत हो जाता है, ... उसकी स्मृति का उदय धीमा होता है, परन्तु वह शीघ्र ही बोधगम्यता प्राप्त कर लेता है। यह दूसरा लाभ है जिसकी अपेक्षा तब की जाती है जब कोई शिक्षाओं को सुनकर, मौखिक रूप से पढ़कर, मन से उनका परीक्षण करके और दृष्टि से उनका भली-भांति अध्ययन करके उनका अनुपालन करता है।

(3) "फिर, एक भिक्षु धम्म में महारत हासिल करता है: प्रवचनों और प्रश्न-उत्तरों में। उसने उन शिक्षाओं को सुनकर, मौखिक रूप से सुनाकर, मन से उनका परीक्षण करके और दृष्टि से भलीभांति समझकर उनका अवलोकन किया है। वह व्याकुल मन से इस दुनिया से विदा होता है और देवों (देवदूतों/देवताओं) के एक विशेष समूह में पुनर्जन्म लेता है। वहाँ, सुखी लोग उसे धम्म के अंश नहीं सुनाते, न ही

मन पर महारत हासिल कर चुका कोई भिक्षु देवों (देवदूतों/देवताओं) की सभा को धम्म की शिक्षा देता है। परन्तु एक युवा देव (देवदूत/देवता) देवों (देवदूतों/देवताओं) की सभा को धम्म की शिक्षा देता है। उसे यह आभास होता है: 'यही वह धम्म और अनुशासन है जिसमें मैंने पूर्व में ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत किया था।'" उनकी स्मृति का विकास धीमा होता है, लेकिन फिर वे शीघ्र ही पारंगत हो जाते हैं। मान लीजिए कोई व्यक्ति शंख की ध्वनि में निपुण हो। राजमार्ग पर यात्रा करते समय यदि उन्हें शंख की ध्वनि सुनाई दे, तो वे उस ध्वनि को लेकर बिल्कुल भी भ्रमित या अनिश्चित नहीं होंगे; बल्कि वे यही निष्कर्ष निकालेंगे: 'यह शंख की ध्वनि है।' ठीक इसी प्रकार, एक भिक्षु धम्म में पारंगत हो जाता है... उनकी स्मृति का विकास धीमा होता है, लेकिन फिर वे शीघ्र ही पारंगत हो जाते हैं। यह तीसरा लाभ है जो तब प्राप्त होता है जब कोई व्यक्ति शिक्षाओं को सुनकर, मौखिक रूप से पढ़कर, मन से उनका परीक्षण करके और दृष्टि से उनका गहन अध्ययन करके उनका अनुपालन करता है।

(4) "फिर, एक भिक्षु धम्म में महारत हासिल करता है: प्रवचनों और प्रश्न-उत्तरों में। उसने उन शिक्षाओं को सुनकर, मौखिक रूप से सुनाकर, मन से उनका परीक्षण करके और दृष्टि से भलीभांति समझकर उनका अनुसरण किया है। वह व्याकुल मन से इस दुनिया से विदा होता है और देवों (देवदूतों/देवताओं) के एक विशेष समूह में पुनर्जन्म लेता है। वहाँ, सुखी लोग उसे धम्म के अंश नहीं सुनाते, न ही मन पर महारत हासिल कर चुका कोई भिक्षु देवों (देवदूतों/देवताओं) की सभा को धम्म (मार्ग) सिखाता है, न ही कोई युवा देव (देवदूत/देवता) देवों (देवदूतों/देवताओं) की सभा को धम्म सिखाता है। फिर भी, स्वतः पुनर्जन्म लेने वाला एक प्राणी स्वतः पुनर्जन्म लेने वाले दूसरे प्राणी को याद दिलाता है: 'क्या आपको याद है, प्रिय महोदय? क्या आपको याद है कि हम पहले कहाँ ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत करते थे?'" दूसरा कहता है: 'मुझे याद है, महोदय। मुझे याद है।' उसकी स्मृति धीरे-धीरे जागृत होती है, लेकिन फिर वह व्यक्ति शीघ्र ही विशिष्टता प्राप्त कर लेता है। मान लीजिए दो मित्र कीचड़ में साथ खेले थे। संयोगवश वे जीवन में बाद में एक-दूसरे से मिलते हैं। तब एक मित्र दूसरे से कहता है: 'क्या तुम्हें यह याद है, मित्र? क्या तुम्हें वह याद है, मित्र?' और दूसरा कहता है: [187] 'मुझे याद है, मित्र, मुझे याद है।' इसी प्रकार, एक भिक्षु धम्म में महारत हासिल करता है... उसकी स्मृति धीरे-धीरे जागृत होती है, लेकिन फिर वह व्यक्ति शीघ्र ही विशिष्टता प्राप्त कर लेता है। यह चौथा लाभ है जो तब प्राप्त होता है जब कोई शिक्षाओं को सुनकर, मौखिक रूप से पढ़कर, मन से उनका परीक्षण करके और दृष्टि से उनका गहन अध्ययन करके उनका अनुपालन करता है।

"जब कोई व्यक्ति शिक्षाओं को सुनकर, उनका मौखिक पाठ करके, उनका मन से विश्लेषण करके और उन्हें देखकर भली-भांति समझ लेता है, तो उसे ये चार लाभ प्राप्त होने की अपेक्षा होती है।"

---

192 तथ्य (थाना)

"भिक्षुओं, चार तथ्यों से लोगों के बारे में चार तथ्य जाने जा सकते हैं। वे चार तथ्य कौन से हैं?"

(1) "एक साथ रहने से उनके सदाचारी व्यवहार का पता चल सकता है, और यह केवल लंबे समय के बाद ही, आकस्मिक रूप से नहीं; एक चौकस व्यक्ति द्वारा, न कि लापरवाह व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।"

(2) "उनके साथ व्यवहार करने से ही उनकी सत्यनिष्ठा का पता चल सकता है, और यह भी लंबे समय के बाद ही, लापरवाही से नहीं; एक चौकस व्यक्ति द्वारा, न कि लापरवाह व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।"

(3) विपत्ति में उनका धैर्य तभी जाना जा सकता है, और वह भी लंबे समय बाद, यूँ ही नहीं; एक सजग व्यक्ति द्वारा, न कि असावधान व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।

(4) "उनका पन्ना (दिव्य ज्ञान) बातचीत के द्वारा जाना जा सकता है, और यह केवल लंबे समय के बाद ही, आकस्मिक रूप से नहीं; एक चौकस व्यक्ति द्वारा, न कि असावधान व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।"

(1) "कहा गया था: 'एक साथ रहने से ही उनके सदाचारी व्यवहार का पता चल सकता है, और यह भी लंबे समय के बाद ही, आकस्मिक रूप से नहीं; एक चौकस व्यक्ति द्वारा, न कि असावधान व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।' यह किसलिए कहा गया था?"

"यहाँ, भिक्षुओं, किसी दूसरे व्यक्ति के साथ रहने से, व्यक्ति उसे इस प्रकार जान पाता है: 'इस पूज्यवर का आचरण लंबे समय से टूटा हुआ, दोषपूर्ण, कलंकित और दागदार रहा है, और वह निरंतर सद्‌गुणी आचरण का पालन नहीं करता है। यह पूज्यवर अनैतिक है, सद्‌गुणी नहीं।'

लेकिन दूसरे मामले में, किसी दूसरे व्यक्ति के साथ रहने से, व्यक्ति उसे इस प्रकार जान पाता है: 'इस पूजनीय व्यक्ति का आचरण लंबे समय से अटूट, निर्दोष, बेदाग और निष्कलंक रहा है, [188] और वह निरंतर सदाचारी व्यवहार का पालन करता है। यह पूजनीय व्यक्ति सदाचारी है, अनैतिक नहीं।'

"इसी कारण यह कहा गया था: 'एक साथ रहने से ही उनके सदाचारी व्यवहार का पता चल सकता है, और वह भी लंबे समय के बाद, आकस्मिक रूप से नहीं; एक चौकस व्यक्ति द्वारा, न कि लापरवाह व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।'

(2) "आगे यह भी कहा गया: 'उनके साथ व्यवहार करने से ही उनकी ईमानदारी का पता चल सकता है, और वह भी लंबे समय बाद, लापरवाही से नहीं; एक सतर्क व्यक्ति द्वारा, न कि लापरवाह व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।' यह किसलिए कहा गया था?"

"यहाँ, भिक्षुओं, किसी व्यक्ति से व्यवहार करते समय, उसे इस प्रकार जाना जाता है: 'यह पूज्यवर एक व्यक्ति से एक प्रकार से, दो से दूसरे प्रकार से, तीन से तीसरे प्रकार से और अनेक से अनेक व्यक्तियों से तीसरे प्रकार से व्यवहार करते हैं। एक मामले में उनका व्यवहार दूसरे मामले में उनके व्यवहार से भिन्न होता है। 905 यह पूज्यवर दूसरों के साथ अपने व्यवहार में अपवित्र हैं, ऐसे व्यवहारों में शुद्ध नहीं हैं।'

लेकिन दूसरे मामले में, किसी व्यक्ति से व्यवहार करते समय, उसे इस प्रकार जाना जाता है: 'जिस प्रकार वह एक व्यक्ति से व्यवहार करता है, उसी प्रकार वह दो, तीन या अनेक लोगों से व्यवहार करता है। एक मामले में उसका व्यवहार दूसरे मामले में उसके व्यवहार से भिन्न नहीं होता। यह पूजनीय व्यक्ति दूसरों के साथ अपने व्यवहार में शुद्ध है, ऐसे व्यवहार में अशुद्ध नहीं है।'

"इसी कारण यह कहा गया था: 'उनके साथ व्यवहार करने से ही उनकी ईमानदारी का पता चल सकता है, और वह भी लंबे समय के बाद, लापरवाही से नहीं; एक सतर्क व्यक्ति द्वारा, न कि लापरवाह व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।'

(3) "आगे यह भी कहा गया: 'दुर्भाग्य में ही उनकी सहनशीलता का पता चल सकता है, और वह भी लंबे समय बाद, यूँ ही नहीं; एक सजग व्यक्ति द्वारा, न कि असावधान व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।' यह किसलिए कहा गया था?"

"यहाँ, भिक्षुओं, किसी व्यक्ति को सगे-संबंधियों, धन या स्वास्थ्य की हानि का दुख होता है, परन्तु वह इस प्रकार चिंतन नहीं करता: 'संसार में मनुष्य का जीवन ऐसा है कि आठ सांसारिक परिस्थितियाँ संसार के चारों ओर घूमती हैं, और संसार इन आठ सांसारिक परिस्थितियों के चारों ओर घूमता है, अर्थात् लाभ और हानि, बदनामी और प्रसिद्धि, निंदा और प्रशंसा, और सुख और दुख।' अतः जब उसे सगे-संबंधियों, धन या स्वास्थ्य की हानि होती है, तो वह शोक करता है, व्याकुल होता है और विलाप करता है; वह छाती पीटते हुए रोता है और भ्रमित हो जाता है।"

लेकिन एक अन्य मामले में, कोई व्यक्ति रिश्तेदारों, [189] धन या स्वास्थ्य की हानि से पीड़ित होता है, लेकिन वह इस प्रकार चिंतन करता है: 'संसार में मानव जीवन ऐसा है कि आठ सांसारिक परिस्थितियाँ संसार के चारों ओर घूमती हैं, और संसार इन आठ सांसारिक परिस्थितियों के चारों ओर घूमता है, अर्थात् लाभ और हानि, बदनामी और प्रसिद्धि, निंदा और प्रशंसा, और सुख और दुख।' इस प्रकार जब वह रिश्तेदारों, धन या स्वास्थ्य की हानि से पीड़ित होता है, तो वह शोक नहीं करता, व्याकुल नहीं होता और विलाप नहीं करता; वह अपनी छाती पीटते हुए नहीं रोता और भ्रमित नहीं होता।

इसी कारण यह कहा गया था: 'दुर्भाग्य में ही उनकी सहनशीलता का पता चल सकता है, और वह भी लंबे समय के बाद, यूं ही नहीं; एक सचेत व्यक्ति द्वारा, न कि असावधान व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।'

(4) "आगे यह भी कहा गया: 'उनका पन्ना (दिव्य ज्ञान) वार्तालाप द्वारा ही जाना जा सकता है, और वह भी लंबे समय के बाद, आकस्मिक रूप से नहीं; एक सजग व्यक्ति द्वारा, न कि असावधान व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।' यह किसलिए कहा गया था?"

"यहाँ, भिक्षुओं, जब किसी से बातचीत करते हैं, तो यह पता चलता है: 'इस पूज्यवर के आरंभ करने, प्रश्न पूछने और उसे प्रस्तुत करने के तरीके से यह प्रतीत होता है कि वे बुद्धिमान नहीं, बल्कि मूर्ख हैं। इसका कारण क्या है? यह पूज्यवर गहन, शांत, उदात्त, तर्क से परे, सूक्ष्म और बुद्धिमानों को बोध होने योग्य विषयों पर बात नहीं करते। जब यह पूज्यवर धम्म पर बोलते हैं, तो वे न तो संक्षेप में और न ही विस्तार से उसके अर्थ की व्याख्या, शिक्षण, वर्णन, स्थापना, प्रकटीकरण, विश्लेषण और स्पष्टीकरण कर पाते हैं। यह पूज्यवर बुद्धिमान नहीं, बल्कि मूर्ख हैं।" जैसे कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति तालाब के किनारे खड़ा होकर किसी छोटी मछली को पानी से बाहर निकलते हुए देखे तो वह सोचेगा: 'मछली के निकलने के तरीके, उससे बनने वाली लहरों और उसकी ताकत को देखकर लगता है कि यह छोटी मछली है, बड़ी नहीं,' ठीक उसी तरह, किसी व्यक्ति से बातचीत करते समय पता चलता है: 'इस आदरणीय व्यक्ति के प्रश्न पूछने के कारण को देखकर लगता है कि वह बुद्धिमान नहीं बल्कि नासमझ है।'

लेकिन एक अन्य मामले में, किसी से बातचीत करते समय, व्यक्ति को पता चलता है: 'जिस तरह से यह पूज्यवर किसी प्रश्न को आरंभ करते हैं, उसे सूत्रबद्ध करते हैं और प्रस्तुत करते हैं, उससे यह प्रतीत होता है कि वे बुद्धिमान हैं, मूर्ख नहीं। इसका क्या कारण है? यह पूज्यवर गहन, शांत, उदात्त, तर्क से परे, सूक्ष्म और बुद्धिमानों के लिए बोधगम्य विषयों पर बात करते हैं। जब यह पूज्यवर धम्म पर बोलते हैं, तो वे संक्षेप में और विस्तार से दोनों तरह से उसके अर्थ की व्याख्या, शिक्षण, वर्णन, स्थापना, प्रकटीकरण, विश्लेषण और स्पष्टीकरण करने में सक्षम होते हैं। यह पूज्यवर बुद्धिमान हैं, मूर्ख नहीं।' जैसे कि यदि कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति किसी तालाब के किनारे खड़ा होकर एक बड़ी मछली को निकलते हुए देखे, [190] तो वह सोचेगा: 'जिस तरह से यह मछली निकलती है, इससे बनने वाली लहरों और इसकी ताकत से यह प्रतीत होता है कि यह एक बड़ी मछली है, छोटी नहीं,' उसी प्रकार, किसी से बातचीत करते समय, व्यक्ति को पता चलता है: 'जिस तरह से यह पूज्यवर आरंभ करते हैं, जब कोई व्यक्ति प्रश्न बनाता है और पूछता है, तो वह बुद्धिमान है, मूर्ख नहीं।

"इसी कारण यह कहा गया था: 'उनका पन्ना (दिव्य ज्ञान) वार्तालाप के माध्यम से जाना जा सकता है, और यह केवल लंबे समय के बाद ही, आकस्मिक रूप से नहीं; एक चौकस व्यक्ति द्वारा, न कि असावधान व्यक्ति द्वारा; और एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा, न कि मूर्ख व्यक्ति द्वारा।'

"भिक्षुओं, ये चार तथ्य [लोगों के बारे में] हैं जिन्हें चार अन्य तथ्यों से जाना जा सकता है।"

---

193 भद्दिया

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले महल में निवास कर रहे थे। तब लिच्छवी भद्दिया भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और उनसे कहा:

"भंते, मैंने यह सुना है: 'संन्यासी गौतम एक जादूगर हैं जो एक ऐसी जादुई शक्ति जानते हैं जिससे वे अन्य संप्रदायों के गुरुओं के शिष्यों को परिवर्तित कर देते हैं।' क्या ऐसा कहने वाले लोग भगवान (बुद्ध) के कहे हुए वचन को ही प्रकट करते हैं और उन्हें गलत तरीके से प्रस्तुत नहीं करते? क्या वे धम्म (मार्ग) के अनुसार व्याख्या करते हैं ताकि उन पर कोई उचित आलोचना या निंदा का आधार न बने? क्योंकि हम भगवान (बुद्ध) को गलत तरीके से प्रस्तुत नहीं करना चाहते।" 907

"हे भद्दिया, मौखिक परंपरा, शिक्षा की वंशावली, सुनी-सुनाई बातों, शास्त्रों के संग्रह, तार्किक तर्क, अनुमानित तर्क, तर्कपूर्ण चिंतन, मनन के बाद किसी मत को स्वीकार करने, वक्ता की दिखावटी योग्यता, या यह सोचकर कि 'संन्यासी हमारा गुरु है', मत जाओ। परन्तु जब तुम स्वयं जान लो कि 'ये बातें अकुशल हैं; ये बातें निंदनीय हैं; बुद्धिमानों द्वारा इनकी निंदा की जाती है; इन बातों को स्वीकार करने और अपनाने से हानि और पीड़ा होती है,' तब तुम इन्हें त्याग दो।" 908

(1) "भद्दिया, तुम क्या सोचते हो? जब किसी व्यक्ति में लालच उत्पन्न होता है, तो क्या वह उसके कल्याण के लिए होता है या उसके नुकसान के लिए?"

"उसके नुकसान के लिए, भंते।"

"लालची भड़िया, जो लोभ से ग्रस्त है, उसका मन लोभ में डूबा हुआ है, वह जीवन का नाश करता है, दूसरों की पत्नियों के साथ अनैतिक संबंध रखता है और झूठ बोलता है; और वह दूसरों को भी ऐसा करने के लिए उकसाता है। क्या इससे उसे लंबे समय तक हानि और कष्ट भोगना पड़ेगा?"

"हां, भंते।"

(2) "भद्दिया, तुम क्या सोचते हो? जब किसी व्यक्ति में घृणा... (3) ... भ्रम... (4) ... उग्रता उत्पन्न होती है, तो क्या यह उसके कल्याण के लिए है या उसके नुकसान के लिए?" 909

"उसके नुकसान के लिए, भंते।"

"भड़िया, एक उग्र स्वभाव का व्यक्ति, क्रोध से ग्रस्त होकर और उसी आवेश में डूबा हुआ, जीवन का नाश करता है... और दूसरों को भी ऐसा करने के लिए उकसाता है। क्या इससे उसे लंबे समय तक हानि और कष्ट भोगना पड़ेगा?"

"हां, भंते।"

भद्दिया, तुम्हारा क्या विचार है? क्या ये बातें लाभकारी हैं या हानिकारक? भंते, हानिकारक। भंते, क्या ये निंदनीय हैं या निर्दोष? भंते, क्या ये निंदनीय हैं या बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित? भंते, बुद्धिमानों द्वारा निंदनीय। भंते, क्या इन्हें स्वीकार करने और अपनाने से हानि और पीड़ा होती है? या तुम इसे कैसे लेते हो? भंते, क्या इन्हें स्वीकार करने और अपनाने से हानि और पीड़ा होती है? इसलिए हम इन्हें स्वीकार करते हैं।

"इस प्रकार, भद्दिया, जब हमने कहा: 'आओ, भद्दिया, मौखिक परंपरा [192] पर मत चलो ... परन्तु जब तुम स्वयं जान लो: "ये बातें हानिकारक (अकुसला) हैं; ये बातें निंदनीय हैं; ये बातें बुद्धिमानों द्वारा निंदित हैं; ये बातें, यदि अपनाई और अभ्यास की जाएं, तो हानि और पीड़ा की ओर ले जाती हैं," तो तुम्हें इन्हें त्याग देना चाहिए', इसी कारण यह कहा गया था।

"आओ, भद्दिया, मौखिक परंपरा, शिक्षा की वंशावली, सुनी-सुनाई बातों, ग्रंथों के संग्रह, तार्किक तर्क, अनुमान आधारित तर्क, तर्कपूर्ण चिंतन, मनन के बाद किसी मत को स्वीकार करने, वक्ता की दिखावटी योग्यता, या यह सोचकर कि 'संन्यासी हमारा गुरु है' के आधार पर मत चलो। बल्कि जब तुम स्वयं जान लो कि 'ये बातें लाभकारी (कुशल) हैं; ये बातें निष्कलंक हैं; ये बातें बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित हैं; इन बातों को स्वीकार करने और अपनाने से कल्याण और सुख प्राप्त होता है', तब तुम्हें इनके अनुसार जीवन जीना चाहिए।"

(1) "भद्दिया, तुम क्या सोचते हो? जब किसी व्यक्ति में लोभ रहित भाव उत्पन्न होता है, तो क्या यह उसके कल्याण के लिए होता है या उसके लिए हानि के लिए?"

"भंते, उसके कल्याण के लिए।"

"भड़िया, वह व्यक्ति जो लोभ रहित हो, लोभ से ग्रस्त न हो, जिसका मन लोभ में डूबा न हो, जो जीवन का नाश न करे, दूसरों की वस्तु न ले, किसी दूसरे की पत्नी के साथ दुर्व्यवहार न करे, और न ही झूठ बोले; और न ही दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करे। क्या इससे उसे दीर्घकालिक कल्याण और सुख प्राप्त होगा?"

"हां, भंते।"

(2) "भद्दिया, तुम क्या सोचते हो? जब किसी व्यक्ति में अहिंसा... (3) ... मोह... (4) ... उग्रता का अभाव उत्पन्न होता है, तो क्या यह उसके कल्याण के लिए है या उसके लिए हानिदायक है?"

"भंते, उसके कल्याण के लिए।"

"भड़िया, एक शांत स्वभाव का व्यक्ति, जो उग्रता से ग्रस्त नहीं होता, जिसका मन उग्रता से ग्रस्त नहीं होता, वह जीवन का विनाश नहीं करता... न ही दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता है। क्या इससे उसे दीर्घकाल तक कल्याण और सुख प्राप्त होगा?"

"हां, भंते।"

भद्दिया, तुम्हारा क्या विचार है? क्या ये बातें लाभकारी (कुशल) हैं या हानिकारक (अकुशल)? — "लाभकारी (कुशल), भंते।" — "निंदनीय या निर्दोष?" — "निर्दोष, भंते।" — "बुद्धिमानों द्वारा निंदा की गई या प्रशंसा की गई?" — "बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसा की गई, भंते।" [193] — "स्वीकृत और ग्रहण किए जाने पर, क्या इनसे कल्याण और सुख प्राप्त होता है या नहीं, या तुम इसे कैसे लेते हो?" — "स्वीकृत और ग्रहण किए जाने पर, इनसे कल्याण और सुख प्राप्त होता है। इसलिए हम इसे ग्रहण करते हैं।"

"इस प्रकार, भद्दिया, जब हमने कहा: 'आओ, भद्दिया, मौखिक परंपरा का अनुसरण मत करो... बल्कि जब तुम स्वयं जान लो: "ये बातें लाभकारी (कुशल) हैं; ये बातें निर्दोष हैं; ये बातें बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित हैं; ये बातें, यदि स्वीकार की जाएं और अपनाई जाएं, तो कल्याण और सुख की ओर ले जाती हैं," तो तुम्हें इनके अनुसार जीवन जीना चाहिए,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।"

भद्दिया, संसार के भले लोग अपने शिष्यों को इस प्रकार प्रोत्साहित करते हैं: 'हे भले मनुष्य, तुम लोभ को निरंतर दूर करो। जब तुम लोभ को निरंतर दूर करोगे, तो तुम लोभ से उत्पन्न कोई भी कर्म नहीं करोगे, चाहे वह देह, वाणी या मन से हो। तुम घृणा को निरंतर दूर करो। जब तुम घृणा को निरंतर दूर करोगे, तो तुम घृणा से उत्पन्न कोई भी कर्म नहीं करोगे, चाहे वह देह, वाणी या मन से हो। तुम मोह को निरंतर दूर करो। जब तुम मोह को निरंतर दूर करोगे, तो तुम मोह से उत्पन्न कोई भी कर्म नहीं करोगे, चाहे वह देह, वाणी या मन से हो। तुम उग्रता को निरंतर दूर करो। जब तुम उग्रता को निरंतर दूर करोगे, तो तुम उग्रता से उत्पन्न कोई भी कर्म नहीं करोगे, चाहे वह देह, वाणी या मन से हो।'

जब यह कहा गया, तो लिच्छवी भद्दिया ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"उत्कृष्ट, भंते! . . . [4:111 पर] .. . भगवान (बुद्ध)

मुझे एक आम अनुयायी समझो जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

"अब, भद्दिया, क्या मैंने तुमसे कहा था: 'आओ, भद्दिया, मेरे शिष्य बनो और मैं तुम्हारा गुरु बनूंगा?'"

"बिल्कुल नहीं, भंते।"

"परन्तु, भद्दिया, यद्यपि मैं इस प्रकार बोलता हूँ और अपने उपदेशों की घोषणा इस प्रकार करता हूँ, फिर भी कुछ तपस्वी और ब्राह्मण असत्य, निराधार, झूठे और गलत तरीके से मेरा गलत अर्थ निकालते हैं जब वे कहते हैं: 'तपस्वी गौतम एक जादूगर हैं जो एक ऐसी जादुई शक्ति जानते हैं जिससे वे अन्य संप्रदायों के गुरुओं के शिष्यों को परिवर्तित कर देते हैं।'"

"हे भंते, यह परिवर्तनकारी जादू कितना उत्तम है! यह परिवर्तनकारी जादू कितना अच्छा है! यदि मेरे प्रिय सगे-संबंधी और परिवार के सदस्य इस परिवर्तन से परिवर्तित हो जाएँ, तो इससे उनका दीर्घकालिक कल्याण और सुख होगा। यदि सभी क्षत्रिय इस परिवर्तन से परिवर्तित हो जाएँ, तो इससे उनका दीर्घकालिक कल्याण और सुख होगा। यदि सभी ब्राह्मण... वेस... शुद्ध इस परिवर्तन से परिवर्तित हो जाएँ, तो इससे उनका दीर्घकालिक कल्याण और सुख होगा।"911

"ऐसा ही है, भद्दिया, ऐसा ही है! यदि सभी क्षत्रिय इस परिवर्तन द्वारा अकुशल गुणों का त्याग करके लाभकारी गुणों (धम्म) को अपना लें, तो इससे उनका दीर्घकालिक कल्याण और सुख प्राप्त होगा। यदि सभी ब्राह्मण, वेस्स और शुद्ध इस परिवर्तन द्वारा अकुशल गुणों (धम्म) का त्याग करके लाभकारी गुणों (धम्म) को अपना लें, तो इससे उनका दीर्घकालिक कल्याण और सुख प्राप्त होगा। यदि यह संसार, अपने देवताओं, मार और ब्रह्मा सहित, यह जनसंख्या, अपने तपस्वियों और ब्राह्मणों सहित, अपने देवताओं और मनुष्यों सहित, इस परिवर्तन द्वारा अकुशल गुणों (धम्म) का त्याग करके लाभकारी गुणों (धम्म) को अपना लें, तो इससे उनका दीर्घकालिक कल्याण और सुख प्राप्त होगा।" यदि ये विशाल साल के वृक्ष हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करके लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को अपना लें, तो यह परिवर्तन इन विशाल साल के वृक्षों के लिए भी लंबे समय तक कल्याण और सुख का कारण बनेगा, यदि वे ऐसा चुन सकें। 912 तो मनुष्य के लिए यह कितना अधिक होगा!

---

194 सपुगम

एक बार पूज्य आनंद कोलियन नगर सपुगम के पास कोलियनों के बीच निवास कर रहे थे। तभी सपुगम से कुछ युवा कोलियन पूज्य आनंद के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब पूज्य आनंद ने उनसे कहा:

"ब्याग्घपज्जों, पवित्रता के लिए प्रयास करने के ये चार कारक हैं 913 जिन्हें भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, जानने और देखने वाले [195] ने प्राणियों के शुद्धिकरण, दुःख और विलाप पर विजय पाने, पीड़ा और निराशा दूर करने, विधि की प्राप्ति और निर्वाण की प्राप्ति के लिए सही ढंग से समझाया है। वे चार कौन से हैं? सद्गुणी आचरण की पवित्रता के लिए प्रयास करने का कारक, मन की पवित्रता के लिए प्रयास करने का कारक, दृष्टि की पवित्रता के लिए प्रयास करने का कारक और मुक्ति की पवित्रता के लिए प्रयास करने का कारक। 914

(1) "और हे ब्याग्घपज्जों, सद्गुणों की शुद्धता के लिए प्रयास करने का कारक क्या है? यहाँ, एक भिक्षु सद्गुणी है... [जैसा कि 4:181 में है]... वह उनमें अभ्यास करता है। इसे सद्गुणों की शुद्धता कहा जाता है। इच्छा, प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सजगता और पूर्ण बोध (संपजन्न) [इस आशय से लागू किया गया]: 'मैं सद्गुणों की शुद्धता को, जिसे मैंने अभी तक पूरा नहीं किया है, इसी प्रकार पूरा करूँगा या विभिन्न पहलुओं में सद्गुणों की शुद्धता में, जिसे मैंने पूरा किया है, पन्ना (दिव्य ज्ञान) से सहायता करूँगा' 915 - इसे सद्गुणों की शुद्धता के लिए प्रयास करने का कारक कहा जाता है।"

(2) "हे ब्याग्घपज्जों, मन की शुद्धता के लिए प्रयास करने का कारक क्या है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु चौथी ध्यान अवस्था में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। इसे मन की शुद्धता कहते हैं। इच्छा, प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सती ध्यान और संपज्ञान (इस आशय से) कि 'मैं जिस प्रकार मन की शुद्धता को अभी तक पूर्ण नहीं कर पाया हूँ, उसे पूर्ण कर लूँ या विभिन्न पहलुओं में पूर्ण की गई मन की शुद्धता में ऋण (दिव्य ज्ञान) से सहायता करूँ'— इसे मन की शुद्धता के लिए प्रयास करने का कारक कहते हैं।"

(3) "और हे ब्याग्घपज्जों, दृष्टि की शुद्धता के लिए प्रयास करने का कारक क्या है? यहाँ, एक भिक्षु इसे यथावत समझता है: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसे दृष्टि की शुद्धता कहा जाता है। 916 इच्छा, प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध [इस आशय के साथ]: 'मैं इसी प्रकार दृष्टि की शुद्धता को पूर्ण करूँगा जिसे मैंने अभी तक पूर्ण नहीं किया है या विभिन्न पहलुओं में दृष्टि की शुद्धता में पन्ना (दिव्य ज्ञान) से सहायता करूँगा जिसे मैंने पूर्ण कर लिया है' - इसे दृष्टि की शुद्धता के लिए प्रयास करने का कारक कहा जाता है।"

(4) "और हे ब्याग्घपज्जों, मुक्ति की शुद्धता के लिए प्रयास करने का कारक क्या है? वही श्रेष्ठ शिष्य, सद्गुणपूर्ण आचरण की शुद्धता के लिए प्रयास करने के इस कारक, [196] मन की शुद्धता के लिए प्रयास करने के इस कारक और दृष्टिकोण की शुद्धता के लिए प्रयास करने के इस कारक से युक्त होकर, आसक्ति उत्पन्न करने वाली चीजों से अपने मन को अलग करता है और मुक्ति लाने वाली चीजों के माध्यम से अपने मन को मुक्त करता है। इस प्रकार वह सही मुक्ति प्राप्त करता है। इसे मुक्ति की शुद्धता कहा जाता है। 917 इच्छा,

प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सती ध्यान और संपजन्न (इस आशय से किया गया) – 'मैं इसी प्रकार उस मुक्ति की शुद्धता को पूर्ण करूँगा जिसे मैंने अभी तक पूर्ण नहीं किया है या विभिन्न पहलुओं में उस मुक्ति की शुद्धता में पन्ना (दिव्य ज्ञान) से सहायता करूँगा जिसे मैंने पूर्ण कर लिया है' – इसे मुक्ति की शुद्धता के लिए प्रयास करने का कारक कहा जाता है।

"हे ब्याग्घपज्जों, ये वे चार कारक हैं जो परम ज्ञानी और साक्षी भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध ने प्राणियों के शुद्धिकरण, दु:ख और विलाप पर विजय, पीड़ा और निराशा के निवारण, विधि की प्राप्ति और निर्वाण की प्राप्ति के लिए उचित रूप से प्रतिपादित किए हैं।"

---

195 वप्पा

एक बार भगवान (बुद्ध) कपिलवस्तु के बरगद उद्यान में शाक्यों के बीच निवास कर रहे थे। तभी निगंथों के शिष्य वप्पथे शाक्य ने पूज्य महामोग्गलाना के पास आकर उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब पूज्य महामोग्गलाना ने उनसे कहा:

"हे वप्पा, यदि कोई शरीर, वाणी और मन से बंधा हुआ है, तो अज्ञान के मिटने और सच्चे ज्ञान के उदय के साथ, क्या आपको ऐसा कुछ दिखाई देता है जिसके कारण भविष्य के जन्मों में उस व्यक्ति पर पीड़ादायक संवेदना (वेदना) उत्पन्न करने वाले दोष आ सकते हैं?"

"मुझे ऐसी संभावना दिखती है, भंते। अतीत में किसी ने कोई बुरा कर्म किया होगा जिसका फल अभी तक नहीं मिला है। इसी कारण भविष्य में किसी व्यक्ति पर पीड़ादायक वेदना (कलंक) का प्रभाव पड़ सकता है।" 918

जब पूज्य महामोग्गलाना और शाक्य वप्पा के बीच यह बातचीत चल रही थी, उसी शाम भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए [197] और सभाघर में गए। वे निर्धारित आसन पर बैठ गए और पूज्य महामोग्गलाना से बोले: "हे मोग्गलाना, अभी आप किस चर्चा में लगे हुए थे? और आपकी वह बातचीत क्या थी जो चल रही थी?"

[यहाँ पूज्य महामोग्गलाना ने शाक्य वप्पा के साथ अपनी पूरी बातचीत का वर्णन किया है, और अंत में कहा है:]

"हे भंते, यही बातचीत मैं शाक्य वप्पा से कर रहा था जब भगवान (बुद्ध) वहाँ पहुँचे।"

तब भगवान (बुद्ध) ने शाक्य वप्पा से कहा, "हे वप्पा, यदि तुम जो स्वीकार करने योग्य है उसे स्वीकार करो और जो अस्वीकार करने योग्य है उसे अस्वीकार करो; और यदि जब तुम मेरे शब्दों का अर्थ न समझ पाओ, तो मुझसे उनके बारे में और प्रश्न पूछो, यह कहते हुए: 'यह कैसे है, भंते? इसका क्या अर्थ है?'; तब हम इस पर चर्चा कर सकते हैं।"

"भंते, मैं भगवान (बुद्ध) के समक्ष जो स्वीकार करना चाहिए, उसे स्वीकार करूँगा और जो अस्वीकार करना चाहिए, उसे अस्वीकार करूँगा; और जब मुझे उनके शब्दों का अर्थ समझ में नहीं आएगा, तो मैं उनसे इस बारे में और प्रश्न पूछूँगा, 'भंते, यह कैसे है? इसका क्या अर्थ है?' तो आइए इस पर चर्चा करें।"

(1) "वप्पा, आपका क्या विचार है? शारीरिक कर्मों के कारण उत्पन्न होने वाले वे कष्टदायी और ज्वरकारी दोष, उनसे परहेज करने पर उत्पन्न नहीं होते। व्यक्ति कोई नया कर्म नहीं बनाता और बार-बार संपर्क में आने से पुराने कर्मों का भी अंत कर देता है। 919 [198]। यह क्षय प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, तत्काल होता है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, लागू होता है, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जा सकता है। वप्पा, क्या आपको ऐसा कुछ दिखाई देता है जिसके कारण भविष्य के जन्मों में ऐसे व्यक्ति पर कष्टदायी वेदना उत्पन्न करने वाले दोष आ सकते हैं?"

"नहीं, भंते।"

(2) "हे वप्पा, आपका क्या विचार है? वाणी के वचनों से उत्पन्न होने वाले वे कष्टदायी और ज्वरकारी दोष, उनसे परहेज करने पर उत्पन्न नहीं होते। व्यक्ति कोई नया कर्म नहीं बनाता और बार-बार संपर्क में आने से पुराने कर्मों का भी अंत हो जाता है। यह क्षय प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, तत्काल होता है, जो व्यक्ति को आकर देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक होता है, और ज्ञानी व्यक्ति स्वयं

इसका अनुभव कर सकता है। हे वप्पा, क्या आपको ऐसा कुछ दिखाई देता है जिसके कारण भविष्य के जन्मों में ऐसे व्यक्ति पर कष्टदायी वेदना उत्पन्न करने वाले दोष आ सकते हैं?"

"नहीं, भंते।"

(3) "हे वप्पा, आपका क्या विचार है? मानसिक कार्यों से उत्पन्न होने वाले वे कष्टदायी और ज्वरकारी दोष, उनसे परहेज करने पर उत्पन्न नहीं होते। व्यक्ति कोई नया कर्म नहीं बनाता और बार-बार संपर्क में आने से पुराने कर्मों का भी अंत कर देता है। यह क्षय प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, तत्काल होता है, जो व्यक्ति को आकर देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक होता है, और ज्ञानी व्यक्तियों द्वारा स्वयं अनुभव किया जाता है। हे वप्पा, क्या आपको ऐसा कुछ दिखाई देता है जिसके कारण भविष्य के जन्मों में ऐसे व्यक्ति पर कष्टदायी वेदना उत्पन्न करने वाले दोष आ सकते हैं?"

"नहीं, भंते।"

(4) "हे वप्पा, आपका क्या विचार है? अज्ञान के मिट जाने और सच्चे ज्ञान के उदय के साथ, अज्ञान की स्थिति से उत्पन्न होने वाले वे कष्टदायी और पीड़ादायक दोष अब नहीं रहते। वह कोई नया कर्म नहीं बनाता और बार-बार संपर्क में आने वाले पुराने कर्मों का भी अंत कर देता है। यह क्षय प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, तत्काल होता है, जो देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक होता है, और ज्ञानी व्यक्तियों द्वारा स्वयं अनुभव किया जा सकता है। हे वप्पा, क्या आपको ऐसा कुछ दिखाई देता है जिसके कारण भविष्य के जन्मों में ऐसे व्यक्ति पर कष्टदायी वेदना उत्पन्न करने वाले दोष आ सकते हैं?"

"नहीं, भंते।"

इस प्रकार पूर्णतः मन से मुक्त भिक्षु, वप्पा, छह स्थिर अवस्थाओं को प्राप्त करता है। किसी रूप को आँख से देखकर वह न तो प्रसन्न होता है और न ही दुखी, बल्कि समभाव, सजग और पूर्ण ज्ञान में लीन रहता है। 920 किसी ध्वनि को कान से सुनकर... किसी गंध को नाक से सूंघकर... किसी स्वाद का अनुभव जीभ से करके... किसी वस्तु को शरीर से स्पर्श करके... किसी मानसिक घटना को मन से जानकर वह न तो प्रसन्न होता है और न ही दुखी, बल्कि समभाव, सजग और पूर्ण ज्ञान में लीन रहता है।

जब उसे शरीर से जुड़ी किसी वेदना का अनुभव होता है, तो वह समझता है: 'मुझे शरीर से जुड़ी किसी वेदना का अनुभव हो रहा है।' जब उसे जीवन से जुड़ी किसी वेदना का अनुभव होता है, तो वह समझता है: 'मुझे जीवन से जुड़ी किसी वेदना का अनुभव हो रहा है।' वह समझता है: 'जीवन के समाप्त होने के बाद, शरीर के टूटने से, जो कुछ भी अनुभव किया जाता है, उसमें आनंद न लेकर, वह यहीं ठंडा हो जाएगा।' 921

"मान लीजिए, वप्पा, किसी ठूंठ के कारण छाया दिखाई देती है। तब [199] एक आदमी फावड़ा और टोकरी लेकर आएगा। वह ठूंठ को जड़ से काट देगा, उसे खोदकर निकाल देगा और उसकी जड़ों को, यहाँ तक कि महीन जड़ों और रेशों को भी, उखाड़ देगा। वह ठूंठ को टुकड़ों में काटेगा, टुकड़ों को फाड़ेगा और उन्हें पतले टुकड़ों में बदल देगा। फिर वह उन टुकड़ों को हवा और धूप में सुखाएगा, आग में जलाएगा और राख बना देगा। ऐसा करने के बाद, वह राख को तेज हवा में उड़ा देगा या नदी की तेज धारा में बहा देगा। इस प्रकार, उस ठूंठ पर निर्भर छाया जड़ से कट जाएगी, ताड़ के ठूंठ की तरह मिट जाएगी, इस प्रकार कि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो सके। 922

"इसी प्रकार, वप्पा, मन से पूर्णतः मुक्त भिक्षु छह स्थिर निवासों को प्राप्त करता है। किसी रूप को दृष्टि से देखकर... किसी मानसिक घटना को मन से जानकर, वह न तो प्रसन्न होता है और न ही दुखी, बल्कि समभाव, सचेतन और पूर्णतः बोध में रहता है। जब वह शरीर में समाप्त होने वाली किसी संवेदना (वेदना) का अनुभव करता है, तो वह समझता है... 'जीवन की समाप्ति के बाद, शरीर के विखंडन के साथ, जो कुछ भी अनुभव किया जाता है, उसमें आनंद न लेकर, वह यहीं पर ठंडा हो जाएगा।'"

जब यह कहा गया, तो निगंथों (जैनों) के शिष्य, शाक्य वप्पा ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मान लो, भंते, एक व्यक्ति लाभ की लालसा में घोड़ों को पालने का काम करता है, लेकिन उसे लाभ नहीं होता, बल्कि केवल थकान और कष्ट ही मिलते हैं। ठीक उसी प्रकार, लाभ की लालसा में, मैं नासमझ निगंथों की सेवा करता हूँ, लेकिन मुझे लाभ नहीं होता, बल्कि केवल थकान और कष्ट ही मिलते हैं। आज से,

नासमझ निगंथों पर मेरा जो भी विश्वास था, मैं उसे तेज हवा में उड़ा देता हूँ या नदी की धारा में बहा देता हूँ। "उत्कृष्ट, भंते! . . . [200] . . . भगवान (बुद्ध) मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें, जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

---

196 सलहा

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। तब लिच्छवी साल्हा और लिच्छवी अभय भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब लिच्छवी साल्हा ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, कुछ तपस्वी और ब्राह्मण दो बातों के द्वारा जलप्रलय पार करने का दावा करते हैं: सद्गुणपूर्ण आचरण के शुद्धिकरण द्वारा और तपस्या और वैराग्य के द्वारा। 923 इस विषय में भगवान (बुद्ध) क्या कहते हैं?"

"मैं कहता हूँ, सलहा, कि सद्गुणों का शुद्धिकरण तपस्या का एक कारक है। परन्तु वे तपस्वी और ब्राह्मण जो तपस्या और वैराग्य का समर्थन करते हैं, जो तपस्या और वैराग्य को सार मानते हैं, और जो तपस्या और वैराग्य का पालन करते हैं, वे जलप्रलय को पार करने में असमर्थ हैं। 924 इसके अलावा, वे तपस्वी और ब्राह्मण जिनका शारीरिक, वाणी और मानसिक आचरण अशुद्ध है, और जिनकी आजीविका अशुद्ध है, वे ज्ञान और दृष्टि, अतुलनीय ज्ञानोदय के लिए असमर्थ हैं।"

"मान लो, सालहा, एक आदमी नदी पार करना चाहता है और एक तेज कुल्हाड़ी लेकर एक जंगल में जाता है। वहाँ उसे एक बड़ा, सीधा, ताजा, बिना फल की कली वाला साल का पौधा दिखाई देता है। वह उसे जड़ से काट देता है, ऊपर का हिस्सा काट देता है, सारी शाखाएँ और पत्ते पूरी तरह से हटा देता है, कुल्हाड़ी से उसकी छंटाई करता है, फिर छोटी कुल्हाड़ी से उसकी छंटाई करता है, खुरचनी से उसे खुरचता है, पत्थर से उसे चमकाता है और नदी पार करने के लिए निकल पड़ता है। सालहा, तुम्हें क्या लगता है? क्या वह आदमी नदी पार कर पाएगा?"

"नहीं, भंते। किस कारण से? क्योंकि यद्यपि उस साल के पौधे को बाहरी रूप से पूरी तरह से तैयार कर लिया गया है, [201] वह भीतर से शुद्ध नहीं हुआ है। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि साल का पौधा डूब जाएगा और मनुष्य को विपत्ति और आपदा का सामना करना पड़ेगा।"

"इसी प्रकार, हे सलहा, वे तपस्वी और ब्राह्मण जो तपस्या और वैराग्य का समर्थन करते हैं, जो तपस्या और वैराग्य को सार मानते हैं, और जो तपस्या और वैराग्य का पालन करते हैं, वे जलप्रलय पार करने में असमर्थ हैं। साथ ही, वे तपस्वी और ब्राह्मण जिनका शारीरिक, वाणी और मानसिक व्यवहार अशुद्ध है, और जिनकी आजीविका अशुद्ध है, वे ज्ञान और दृष्टि, अतुलनीय ज्ञानोदय प्राप्त करने में असमर्थ हैं।"

"परन्तु, सलहा, वे तपस्वी और ब्राह्मण जो तपस्या और वैराग्य का समर्थन नहीं करते, जो तपस्या और वैराग्य को सार नहीं मानते, और जो तपस्या और वैराग्य का पालन नहीं करते, वे जलप्रपात पार करने में सक्षम हैं। साथ ही, वे तपस्वी और ब्राह्मण जिनका शारीरिक, वाणी और मानसिक आचरण शुद्ध है, और जिनकी आजीविका शुद्ध है, वे ज्ञान और दृष्टि, अतुलनीय ज्ञानोदय के योग्य हैं।"

"मान लो, सालहा, एक आदमी नदी पार करना चाहता है और एक तेज कुल्हाड़ी लेकर एक जंगल में जाता है। वहाँ उसे एक बड़ा, सीधा, ताजा, बिना फल वाली कली का पौधा दिखाई देता है। वह उसे जड़ से काट देता है, ऊपर का हिस्सा काट देता है, सारी शाखाएँ और पत्ते हटा देता है, कुल्हाड़ी से उसकी छंटाई करता है, फिर छोटी छेनी से उसे अच्छी तरह साफ करता है, खुरचनी से उसे खुरचता है, पत्थर से उसे चमकाता है और उससे एक नाव बनाता है। फिर वह उसमें चप्पू और पतवार लगाता है और नदी पार करने के लिए निकल पड़ता है। सालहा, तुम्हें क्या लगता है? क्या वह आदमी नदी पार कर पाएगा?"

"जी हां, भंते। किसलिए? क्योंकि उस साल के पौधे को बाहर से अच्छी तरह तैयार किया गया है, अंदर से शुद्ध किया गया है, नाव का रूप दिया गया है और उसमें चप्पू और पतवार लगाई गई है। इसलिए यह उम्मीद की जा सकती है कि साल का पौधा डूबेगा नहीं और वह आदमी सुरक्षित रूप से दूसरे किनारे तक पहुंच जाएगा।"

(1) "इसी प्रकार, सलहा, वे तपस्वी और ब्राह्मण जो तपस्या और वैराग्य का समर्थन नहीं करते, जो तपस्या और वैराग्य को सार नहीं मानते, और जो तपस्या और वैराग्य का पालन नहीं करते, वे जलप्रपात पार करने में सक्षम हैं। साथ ही, वे तपस्वी और ब्राह्मण [202] जिनका शारीरिक, वाणी और मानसिक आचरण शुद्ध है, और जिनकी आजीविका शुद्ध है, वे ज्ञान और दृष्टि, अतुलनीय ज्ञानोदय के योग्य हैं।"

"यद्यपि एक योद्धा को तीरंदाजी के अनेक करतबों का ज्ञान होता है, फिर भी वह राजा बनने, राजा का सहायक बनने और राजत्व का एक कारक माने जाने के योग्य तभी होता है जब उसमें तीन गुण हों। वे तीन गुण क्या हैं? वह लंबी दूरी का निशानेबाज हो, सटीक निशानेबाज हो और विशालकाय शरीर को भेदने में सक्षम हो।"

(2) "जैसे योद्धा लंबी दूरी का निशानेबाज होता है, वैसे ही श्रेष्ठ शिष्य को सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त होती है। चाहे कोई भी रूप हो—भूतकाल, भविष्यकाल या वर्तमान, आंतरिक या बाह्य, स्थूल या सूक्ष्म, निम्न या उच्च, दूर या निकट—सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त श्रेष्ठ शिष्य सभी रूपों को उनके वास्तविक स्वरूप में सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) से इस प्रकार देखता है: "यह मेरा नहीं है, यह मैं नहीं हूँ, यह मेरा स्वरूप नहीं है। चाहे किसी भी प्रकार की वेदना हो... चाहे किसी भी प्रकार की अनुभूति हो—चाहे किसी के भी संस्कार हों... चाहे जो भी हो।" चेतना चाहे किसी भी प्रकार की हो—भूतकाल हो, भविष्यकाल हो या वर्तमानकाल, आंतरिक हो या बाह्य, स्थूल हो या सूक्ष्म, निम्न हो या उच्च, दूर हो या निकट—सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में लीन एक श्रेष्ठ शिष्य सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) के साथ समस्त चेतना को उसके वास्तविक स्वरूप में देखता है और कहता है: 'यह मेरी नहीं है, यह मैं नहीं हूँ, यह मेरा स्वरूप नहीं है।'

(3) "जिस प्रकार योद्धा एक कुशल निशानेबाज होता है, उसी प्रकार श्रेष्ठ शिष्य का भी सही दृष्टिकोण होता है। सही दृष्टिकोण वाला श्रेष्ठ शिष्य यथार्थ को समझता है: 'यह दुख है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का कारण है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का निवारण है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।'"

(4) "जिस प्रकार योद्धा एक विशाल शरीर को विच्छेदित कर देता है, उसी प्रकार श्रेष्ठ शिष्य को भी उचित मुक्ति प्राप्त होती है। उचित मुक्ति प्राप्त श्रेष्ठ शिष्य अज्ञान के विशाल समूह को विच्छेदित कर देता है।" 925

---

197 मल्लिका

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में, जेतवन में, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब रानी मल्लिका भगवान (बुद्ध) के पास आईं, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गईं और उनसे कहा: 926 [203]

(1) "भंते, ऐसा क्यों है कि यहाँ कुछ स्त्रियाँ (i) बदसूरत, कुरूप और भद्दी हैं; (ii) गरीब, निर्धन और निर्धन हैं; और (iii) उनका कोई प्रभाव नहीं है? (2) और ऐसा क्यों है कि कुछ (i) बदसूरत, कुरूप और भद्दी हैं; लेकिन (ii) धनी, अपार संपत्ति वाली; और (iii) प्रभावशाली हैं? (3) और ऐसा क्यों है कि यहाँ कुछ स्त्रियाँ (i) सुंदर, आकर्षक और सुरुचिपूर्ण हैं, जिनका रंग अत्यंत सुंदर है; लेकिन (ii) गरीब, निर्धन और निर्धन हैं; और (iii) उनका कोई प्रभाव नहीं है? (4) और ऐसा क्यों है कि कुछ (i) सुंदर, आकर्षक और सुरुचिपूर्ण हैं, जिनका रंग अत्यंत सुंदर है; (ii) धनी, अपार संपत्ति वाली; और (iii) प्रभावशाली हैं?"

(1) "हे मल्लिका, यहाँ (i) कुछ स्त्री क्रोधी और आसानी से चिढ़ जाती हैं। थोड़ी सी आलोचना भी उन्हें क्रोधित कर देती है और वे चिड़चिड़ी, शत्रुतापूर्ण और हठी हो जाती हैं; वे क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करती हैं, (ii) वे तपस्वियों या ब्राह्मणों को भोजन और पेय; वस्त्र और वाहन; मालाएँ, सुगंध और लेप; बिस्तर, आवास और प्रकाश व्यवस्था जैसी वस्तुएँ दान नहीं करतीं, (iii) और वे ईर्ष्यालु होती हैं, जो दूसरों को दिए गए लाभ, सम्मान, आदर, श्रद्धा और पूजा से ईर्ष्या, द्वेष और ईर्ष्या करती हैं। जब वे उस अवस्था से इस संसार में लौट आती हैं, जहाँ कहीं भी उनका पुनर्जन्म होता है (i) वे कुरूप, विकृत और बदसूरत होती हैं; (ii) गरीब, निर्धन और निर्धन होती हैं; और (iii) उनका प्रभाव नहीं होता है।

(2) "दूसरी स्त्री (i) क्रोध की प्रवृत्ति वाली और आसानी से चिढ़ जाने वाली होती है। . . (ii) परन्तु वह तपस्वियों या ब्राह्मणों को वस्तुएँ दान करती है। . . (iii) और वह ईर्ष्या रहित होती है, वह जो दूसरों को दिए गए लाभ, सम्मान, आदर, श्रद्धा और पूजा से ईर्ष्या, द्वेष या ईर्ष्या नहीं करती। जब वह उस अवस्था से चली जाती है, यदि वह इस संसार में वापस आती है, जहाँ कहीं भी [204] उसका पुनर्जन्म होता है (i) वह कुरूप, विकृत और बदसूरत होती है; (ii) परन्तु वह धनी होती है, उसके पास बहुत धन और संपत्ति होती है; और (iii) प्रभावशाली होती है।

(3) "एक और स्त्री (i) क्रोध करने की प्रवृत्ति वाली या अक्सर चिढ़ने वाली नहीं होती। भले ही उसकी बहुत आलोचना की जाए, वह अपना आपा नहीं खोती और चिड़चिड़ी, शत्रुतापूर्ण और हठी नहीं होती; वह क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित नहीं करती, (ii) परन्तु वह तपस्वियों या ब्राह्मणों को वस्तुएँ नहीं देती। . . . (iii) और वह ईर्ष्यालु होती है, जो दूसरों को दिए गए लाभ, मान-सम्मान, आदर, श्रद्धा और पूजा से ईर्ष्या, द्वेष और ईर्ष्या करती है। जब वह उस अवस्था से चली जाती है, यदि वह इस संसार में वापस आती है, जहाँ कहीं भी उसका पुनर्जन्म होता है (i) वह सुंदर, आकर्षक और सुशोभित होती है, रंगत की सर्वोच्च सुंदरता से युक्त होती है; (ii) परन्तु वह गरीब, निर्धन, कम धन वाली होती है; (iii) और प्रभावहीन होती है।

(4) "और एक अन्य स्त्री (i) क्रोध करने की प्रवृत्ति वाली या अक्सर चिढ़ने वाली नहीं होती। . . . (ii) और वह तपस्वियों या ब्राह्मणों को वस्तुएँ दान करती है। . . . (iii) और वह ईर्ष्या रहित होती है, जो दूसरों को दिए गए लाभ, सम्मान, आदर, श्रद्धा और पूजा से ईर्ष्या, द्वेष या ईर्ष्या नहीं करती। जब वह उस अवस्था से इस दुनिया से चली जाती है, यदि वह इस दुनिया में वापस आती है, जहाँ कहीं भी उसका पुनर्जन्म होता है (i) वह सुंदर, आकर्षक और सुशोभित होती है, रंगत की सर्वोच्च सुंदरता से युक्त होती है; (ii) धनी होती है, अपार धन और संपत्ति वाली होती है; और (iii) प्रभावशाली होती है।

"मल्लिका, यही कारण है कि यहाँ कुछ स्त्रियाँ (i) बदसूरत, कुरूप और भद्दी हैं; (ii) गरीब, निर्धन और निर्धन हैं; और (iii) उनका कोई प्रभाव नहीं है। यही कारण है कि कुछ (i) बदसूरत, कुरूप और भद्दी हैं; लेकिन (ii) धनी, अपार संपत्ति वाली; और (iii) प्रभावशाली हैं। यही कारण है कि यहाँ कुछ स्त्रियाँ (i) सुंदर, आकर्षक और सुरुचिपूर्ण हैं, जिनका रंग अत्यंत सुंदर है; लेकिन (ii) गरीब, निर्धन और निर्धन हैं; और (iii) उनका कोई प्रभाव नहीं है। यही कारण है कि कुछ (i) सुंदर, आकर्षक और सुरुचिपूर्ण हैं, जिनका रंग अत्यंत सुंदर है; (ii) धनी, अपार संपत्ति वाली; और (iii) प्रभावशाली हैं।"

यह सुनकर रानी मल्लिका ने भगवान (बुद्ध) से कहा: “हे भंते, मेरा मानना है कि (i) पिछले जन्म में मैं क्रोधशील और अक्सर चिढ़ जाती थी; यहाँ तक कि थोड़ी सी आलोचना पर भी मैं अपना आपा खो बैठती थी और चिढ़ जाती थी, [205] शत्रुतापूर्ण, हठी और क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करती थी। इसलिए अब मैं बदसूरत, कुरूप और भद्दी हूँ। (ii) लेकिन मेरा मानना है कि पिछले जन्म में मैंने तपस्वियों या ब्राह्मणों को वस्तुएँ दान की थीं... बिस्तर, आवास और प्रकाश। इसलिए अब मैं धनी हूँ, मेरे पास अपार धन और संपत्ति है। (iii) और मेरा मानना है कि पिछले जन्म में मैं ईर्ष्या रहित थी, दूसरों को दिए गए लाभ, सम्मान, आदर, श्रद्धा और पूजा से ईर्ष्या, द्वेष या ईर्ष्या नहीं करती थी। इसलिए अब मैं प्रभावशाली हूँ। इस दरबार में क्षत्रिय, ब्राह्मण और गृहस्थ परिवारों की लड़कियाँ हैं जिन पर मेरा अधिकार है।”

आज से, हे भंते, (i) मैं क्रोध करने और बार-बार चिढ़ने की प्रवृत्ति नहीं रखूंगा। यहां तक कि जब मेरी बहुत आलोचना की जाएगी तब भी मैं अपना आपा नहीं खोऊंगा और चिढ़कर, शत्रुतापूर्ण और हठी नहीं बनूंगा; मैं क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित नहीं करूंगा। (ii) और मैं तपस्वियों या ब्राह्मणों को वस्तुएँ दान करूंगा: भोजन और पेय; वस्त्र और वाहन; मालाएँ, सुगंध और लेप; बिस्तर, आवास और प्रकाश। (iii) और मैं ईर्ष्यालु नहीं बनूंगा, जो दूसरों को दिए गए लाभ, सम्मान, आदर, श्रद्धा और पूजा से ईर्ष्या, द्वेष और ईर्ष्या करता है।

"उत्कृष्ट, भंते! . . . [4:111 पर] . . . भगवान (बुद्ध) मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जो आज से जीवन भर के लिए शरण में गया है।"

---

198 स्व-पीड़ा 927 (अट्टनतापा)

भिक्षुओं, संसार में चार प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से चार हैं? (1) एक प्रकार का व्यक्ति स्वयं को पीड़ा देता है और पीड़ा देने का अभ्यास करता है। (2) दूसरे प्रकार का व्यक्ति दूसरों को पीड़ा देता है और पीड़ा देने का अभ्यास करता है। (3) एक और प्रकार का

व्यक्ति स्वयं को पीड़ा देता है और पीड़ा देने का अभ्यास करता है, और दूसरों को भी पीड़ा देता है और पीड़ा देने का अभ्यास करता है। (4) और एक और प्रकार का व्यक्ति न तो स्वयं को पीड़ा देता है और न ही पीड़ा देने का अभ्यास करता है, [206] और न ही दूसरों को पीड़ा देता है और न ही पीड़ा देने का अभ्यास करता है। क्योंकि वह न तो स्वयं को पीड़ा देता है और न ही दूसरों को, इसलिए इसी जीवन में वह भूख रहित, तृप्त और शीतल, आनंद का अनुभव करते हुए, स्वयं दिव्य बन जाता है। 928

(1) "हे भिक्षुओं, जो व्यक्ति स्वयं को पीड़ा देता है और स्वयं को पीड़ा पहुँचाने का अभ्यास करता है, वह कैसे है? 929 यहाँ, एक व्यक्ति नग्न रहता है, रीति-रिवाजों का उल्लंघन करता है, अपने हाथ चाटता है, बुलाए जाने पर नहीं आता, बुलाए जाने पर नहीं रुकता; वह लाया हुआ भोजन या विशेष रूप से बनाया गया भोजन या भोजन का निमंत्रण स्वीकार नहीं करता; वह बर्तन से, कटोरे से, दहलीज के पार से, छड़ी के पार से, मूसल के पार से, साथ में भोजन करने वाले दो लोगों से, गर्भवती महिला से, बच्चे को दूध पिलाने वाली महिला से, पुरुष द्वारा रखी गई महिला से, जहाँ भोजन वितरित करने का दिया जाता है, जहाँ कुत्ता प्रतीक्षा कर रहा होता है, जहाँ मक्खियाँ भिनभिना रही होती हैं, कुछ भी ग्रहण नहीं करता; वह मछली या मांस ग्रहण नहीं करता, वह शराब, मदिरा या किण्वित पेय नहीं पीता। वह एक घर में [भिक्षा पर], एक निवाला भोजन पर रहता है; वह दो घरों में, दो निवाले भोजन पर रहता है... वह सात घरों में, सात निवाले भोजन पर रहता है। वह एक दिन में एक थाली पर, दो थालियों पर रहता है।" वह दिन में सात थालियों में भोजन करता है। वह दिन में एक बार, दो दिन में एक बार... सात दिन में एक बार; इस प्रकार, वह हर पखवाड़े तक नियमित अंतराल पर भोजन करने का अभ्यास करता है।

वह हरी सब्जियां, बाजरा, जंगली चावल, खाल के टुकड़े, काई, चावल की भूसी, चावल की मैल, तिल का आटा, घास या गोबर खाता है। वह जंगल की जड़ों और फलों पर निर्भर रहता है; वह गिरे हुए फलों को खाता है।

वह भांग के वस्त्र, भांग मिश्रित कपड़े के वस्त्र, कफन से बने वस्त्र, चिथड़ों से बने वस्त्र, पेड़ की छाल से बने वस्त्र, हिरण की खाल से बने वस्त्र, हिरण की खाल की पट्टियों से बने वस्त्र, कुसा घास से बने वस्त्र, छाल के कपड़े या लकड़ी के बुरादे से बने कपड़े; सिर के बालों या जानवरों की ऊन से बना लबादा, उल्लू के पंखों से बना आवरण पहनता है।

वह व्यक्ति है जो बाल और दाढ़ी नोचता है, बाल और दाढ़ी नोचने का अभ्यास करता है। वह व्यक्ति है जो लगातार खड़ा रहता है, बैठने का त्याग करता है। वह व्यक्ति है जो लगातार उकडू बैठा रहता है, उकडू बैठने की मुद्रा बनाए रखने में लगा रहता है। वह व्यक्ति है जो कांटों का गद्दा इस्तेमाल करता है; वह कांटों के गद्दे को अपना बिस्तर बनाता है। वह शाम समेत दिन में तीन बार पानी से स्नान करने का अभ्यास करता है। [207] इस प्रकार वह अनेक तरीकों से शरीर को कष्ट देने और उसे पीड़ा पहुँचाने का अभ्यास करता है। इसी तरह व्यक्ति स्वयं को कष्ट देता है और स्वयं को यातना देने का अभ्यास करता है।

(2) और जो व्यक्ति दूसरों को सताता है और उन्हें यातना देने का काम करता है, वह कैसे कहलाता है? यहाँ, कोई व्यक्ति भेड़ काटने वाला, सूअर काटने वाला, पक्षी पकड़ने वाला, जंगली जानवरों को फँसाने वाला, शिकारी, मछुआरा, चोर, जल्लाद, जेल का वार्डन, या ऐसा ही कोई अन्य रक्तरंजित व्यवसाय करने वाला हो सकता है। इस प्रकार, कोई व्यक्ति दूसरों को सताता है और उन्हें यातना देने का काम करता है।

(3) "और वह व्यक्ति कैसा है जो स्वयं को पीड़ा देता है और दूसरों को भी पीड़ा देता है और दूसरों को भी पीड़ा देता है? यहाँ, कोई व्यक्ति प्रधान-अभिषिक्त क्षत्रिय राजा या धनी ब्राह्मण है। उसने नगर के पूर्व में एक नया यज्ञ मंदिर बनवाया, अपने बाल और दाढ़ी मुंडवा ली, खुरदुरे हिरण की खाल से वस्त्र पहना, घी और तेल से शरीर को चिकना किया और हिरण के सींग से अपनी पीठ खुजलाई। वह अपनी प्रधान रानी और ब्राह्मण महायाजक के साथ यज्ञ मंदिर में प्रवेश करता है। वहाँ वह घास से ढकी नंगी भूमि पर लेट जाता है। राजा एक ही रंग के बछड़े वाली गाय के पहले थन के दूध पर जीवित रहता है, जबकि प्रधान रानी दूसरे थन के दूध पर और ब्राह्मण महायाजक तीसरे थन के दूध पर जीवित रहता है; चौथे थन का दूध वे अग्नि में डाल देते हैं, और बछड़ा बचे हुए दूध पर जीवित रहता है। वह कहता है: 'ऐसा ही हो।' बहुत से बैलों का बलिदान किया जाए, बहुत से बछड़ों का बलिदान किया जाए, बहुत सी बछियों का बलिदान किया जाए, बहुत सी बकरियों का बलिदान किया जाए, बहुत सी भेड़ों का बलिदान किया जाए, बलिदान के खंभों के लिए बहुत से पेड़ काटे जाएं, और बलिदान के लिए घास काटी जाए। [208] फिर उसके दास, दूत और सेवक तैयारी करते हैं। वे आँसू भरी आँखों से रोते हैं,

सजा की धमकियों और भय से प्रेरित होते हैं। इसी तरह एक व्यक्ति स्वयं को पीड़ा देता है और दूसरों को भी पीड़ा देता है और दूसरों को भी पीड़ा देता है।

(4) "और वह व्यक्ति कैसे है जो स्वयं को कष्ट नहीं देता और न ही स्वयं को कष्ट देने का अभ्यास करता है, और न ही दूसरों को कष्ट देता है और न ही दूसरों को कष्ट देने का अभ्यास करता है—वह व्यक्ति जो स्वयं को और दूसरों को कष्ट न देने के कारण इसी जीवन में भूख रहित, तृप्त और शीतल, आनंद का अनुभव करते हुए, स्वयं दिव्य बन जाता है?"

हे भिक्षुओं, यहाँ तथागत (बुद्ध) संसार में प्रकट होते हैं, जो पूर्णतः प्रबुद्ध, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण, सौभाग्यशाली, संसार के ज्ञाता, मनुष्यों को वश में करने में अद्वितीय प्रशिक्षक, देवों और मनुष्यों के गुरु, प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध) हैं। उन्होंने अपने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इस संसार को, इसके देवों, मार और ब्रह्मा सहित, इस जनसंख्या को, इसके तपस्वियों और ब्राह्मणों सहित, इसके देवों और मनुष्यों सहित, जान लिया है और इसे दूसरों को ज्ञात कराते हैं। वे उस धम्म का उपदेश देते हैं जो आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम है, उचित अर्थ और शब्दों के साथ; वे पूर्णतः शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्रकट करते हैं।

"एक गृहस्थ, गृहस्थ पुत्र या किसी अन्य कुल में जन्मा व्यक्ति इस धम्म को सुनता है। तब वह तथागत (बुद्ध) में आस्था प्राप्त करता है और इस प्रकार विचार करता है: 'गृहस्थ जीवन भीड़भाड़ वाला और धूल भरा है; संन्यासी जीवन में प्रवेश करना खुला और विशाल है। घर में रहते हुए ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीना आसान नहीं है, जो पूर्णतः परिपूर्ण और शुद्ध शंख के समान है। मान लीजिए कि मैं अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, गेरुए वस्त्र पहनकर गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करता हूँ। बाद में, छोटी या बड़ी संपत्ति का त्याग करके, छोटे या बड़े रिश्तेदारों के समूह को छोड़कर, वह अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, गेरुए वस्त्र पहनकर गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करता है।"

इस प्रकार संन्यासी जीवन में प्रवेश करके और भिक्षुओं के प्रशिक्षण और जीवन शैली को अपनाकर, जीवन-विनाश का त्याग करके, वह जीवन-विनाश से दूर रहता है; दंड (हिंसा) और शस्त्र त्यागकर, सचेत और दयालु होकर, वह सभी प्राणियों के प्रति करुणामय रहता है। जो नहीं दिया गया है उसे लेने का त्याग करके, वह जो नहीं दिया गया है उसे लेने से दूर रहता है; [209] वह केवल वही लेता है जो दिया गया है, केवल वही चाहता है जो दिया गया है, और चोरी के विचारों के बिना ईमानदारी से रहता है। यौन गतिविधि का त्याग करके, वह ब्रह्मचर्य का पालन करता है, अलग रहता है, यौन संबंध से दूर रहता है, जो आम आदमी का अभ्यास है।

वह झूठे वचनों का त्याग करके झूठ से दूर रहता है; वह सत्य बोलता है, सत्य का पालन करता है; वह विश्वसनीय और भरोसेमंद है, संसार को धोखा नहीं देता। वह फूट डालने वाले वचनों का त्याग करके फूट डालने वाले वचनों से दूर रहता है; वह यहाँ सुनी हुई बातों को दूसरों से अलग करने के लिए कहीं और नहीं दोहराता, न ही वह दूसरों से सुनी हुई बातों को दूसरों से अलग करने के लिए दोहराता है; इस प्रकार वह विभाजित लोगों को एकजुट करने वाला, एकता का समर्थक, सद्भाव का आनंद लेने वाला, सद्भाव में प्रसन्न होने वाला, सद्भाव को बढ़ावा देने वाले वचन बोलने वाला है। वह कठोर वचनों का त्याग करके कठोर वचनों से दूर रहता है; वह कोमल, कानों को भाने वाले, मनभावन, हृदय को छूने वाले, शिष्ट वचन बोलता है जो बहुतों को प्रिय और स्वीकार्य होते हैं। वह व्यर्थ की बातों का त्याग करके व्यर्थ की बातों से दूर रहता है; वह उचित समय पर बोलता है, सत्य बोलता है, लाभकारी बोलता है, धर्म पर बोलता है। अनुशासन; वह उचित समय पर ऐसे शब्द बोलता है जो रिकॉर्ड करने योग्य, तर्कसंगत, संक्षिप्त और लाभकारी हों।

वह बीजों और पौधों को नुकसान नहीं पहुँचाता। वह दिन में एक बार भोजन करता है, रात में और उचित समय के बाहर भोजन करने से परहेज़ करता है। वह नृत्य, गायन, वाद्य संगीत और अनुचित प्रदर्शनों से परहेज़ करता है। वह मालाएँ पहनने और सुगंध और मलहम लगाने से खुद को सजाने-संवारने से परहेज़ करता है। वह ऊँचे और बड़े पलंगों से परहेज़ करता है। वह सोना और चाँदी, कच्चा अनाज, कच्चा मांस, स्त्रियाँ और लड़कियाँ, पुरुष और महिला दास, बकरियाँ और भेड़ें, मुर्गे और सूअर, हाथी, मवेशी, घोड़े और घोड़ियाँ, खेत और ज़मीन लेने से परहेज़ करता है। वह संदेशवाहकों के रूप में जाने और सामान पहुँचाने से परहेज़ करता है; खरीद-फरोख्त से; बाट, धातुओं और माप में धोखाधड़ी से; रिश्वत लेने, छल करने, कपट करने और कपट से। वह चोट पहुँचाने, हत्या करने, बाँधने, डकैती, लूटपाट और हिंसा से परहेज़ करता है।

वह अपने शरीर की रक्षा के लिए वस्त्रों और पेट भरने के लिए भिक्षा भोजन से संतुष्ट रहता है, और जहाँ कहीं भी जाता है, केवल इन्हीं को अपने साथ लेकर जाता है। जैसे एक पक्षी जहाँ कहीं भी जाता है, [210] अपने पंखों को ही अपना एकमात्र बोझ मानकर उड़ता है,

उसी प्रकार एक भिक्षु अपने शरीर की रक्षा के लिए वस्त्रों और पेट भरने के लिए भिक्षा भोजन से संतुष्ट रहता है, और जहाँ कहीं भी जाता है, केवल इन्हीं को अपने साथ लेकर जाता है। इन सभी उत्तम सद्‌गुणों से युक्त होकर वह अपने भीतर निष्कलंक आनंद का अनुभव करता है।

किसी आकृति को आँखों से देखकर भी वह उसके लक्षणों और विशेषताओं को पकड़ नहीं पाता। क्योंकि यदि वह अपनी दृष्टि को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी जैसी बुरी और हानिकारक अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम बरतता है; वह दृष्टि की रक्षा करता है, दृष्टि को नियंत्रित करता है। किसी ध्वनि को कान से सुनकर, किसी गंध को नाक से सूंघकर... किसी स्वाद को जीभ से चखकर... किसी वस्तु को शरीर से स्पर्श करके... किसी मानसिक घटना को मन से जानकर भी वह उसके लक्षणों और विशेषताओं को पकड़ नहीं पाता। क्योंकि यदि वह अपने मन को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी जैसी बुरी और हानिकारक अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम बरतता है; वह मन की रक्षा करता है, मन को नियंत्रित करता है। इंद्रियों पर इस श्रेष्ठ संयम के कारण वह अपने भीतर निर्मल आनंद का अनुभव करता है।

वह आगे बढ़ने और लौटने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह आगे देखने और पीछे देखने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह अपने अंगों को मोड़ने और फैलाने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह अपने वस्त्र पहनने और अपने बाहरी वस्त्र और कटोरे को ले जाने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह खाने, पीने, भोजन ग्रहण करने और स्वाद लेने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह शौच और मूत्र त्यागने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह चलने, खड़े होने, बैठने, सोने, जागने, बात करने और चुप रहने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है।

"उत्कृष्ट सद्‌गुणों, इंद्रियों के संयम, सती ध्यान और संपजन्न जैसी पूर्ण चेतना से युक्त होकर वह एकांत स्थान पर शरण लेता है: जैसे जंगल, वृक्ष की जड़, पर्वत, घाटी, पहाड़ी गुफा, श्मशान भूमि, घनी झाड़ियाँ, खुला स्थान या भूसे का ढेर।"

भोजन करने के बाद, अपने भ्रमण से लौटने पर, वह अपने पैरों को क्रॉस करके बैठ जाता है, शरीर को सीधा करता है और अपने सामने ध्यान (सती) स्थापित करता है। संसार के प्रति लालसा का त्याग करके, वह लालसा से मुक्त मन से रहता है; वह अपने मन को लालसा से शुद्ध करता है। द्वेष और घृणा का त्याग करके, वह सभी प्राणियों के प्रति करुणा से मुक्त मन से रहता है; वह अपने मन को द्वेष और घृणा से शुद्ध करता है। सुस्ती और आलस्य का त्याग करके, [211] वह सुस्ती और आलस्य से मुक्त, प्रकाश का बोध करते हुए, सचेत (सती) और पूर्णतः बोध करते हुए रहता है; वह अपने मन को सुस्ती और आलस्य से शुद्ध करता है। बेचैनी और पश्चाताप का त्याग करके, वह बिना किसी व्याकुलता के, आंतरिक रूप से शांत मन से रहता है; वह अपने मन को बेचैनी और पश्चाताप से शुद्ध करता है। संदेह का त्याग करके, वह संदेह से परे जाकर, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के बारे में अविचलित होकर रहता है; वह अपने मन को संदेह से शुद्ध करता है।

इस प्रकार इन पाँच बाधाओं, मन के दोषों, पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करने वाले गुणों का त्याग करके, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, और अकुशल (हानिकारक) अवस्थाओं से विरक्त होकर, वह प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल हैं। विचार और चिंतन के शांत होने पर, वह द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन नहीं होते हैं। आनंद (पीति) के भी लुप्त होने पर, वह समभाव में, सचेत (सती) होकर और पूर्णतः बोध करते हुए, शरीर से सुख का अनुभव करता है; वह तृतीय ध्यान (सती) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसके बारे में श्रेष्ठ जन कहते हैं: वह समभाव में, सचेत (सती) होकर, वह है जो... वह आनंदपूर्वक निवास करता है। सुख और दुख का त्याग करके, और पहले से ही सुख और निराशा के बीत जाने के बाद, वह चौथे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) द्वारा सचेतनता (सती) का शुद्धिकरण होता है।

जब उसका मन इस प्रकार आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) हो जाता है, शुद्ध, निर्मल, अशुद्धियों से मुक्त, लचीला, स्थिर और अविचलित हो जाता है, तो वह उसे पिछले जन्मों के स्मरण के ज्ञान की ओर निर्देशित करता है... [जैसा कि 3:58 §1 में है] ... प्राणियों के मृत्यु और पुनर्जन्म के ज्ञान की ओर... [जैसा कि 3:58 §2 में है] ... दोषों के नाश के ज्ञान की ओर। वह इसे यथार्थ रूप में समझता है:

'यह दुख है'; वह इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दुख का मूल है'; वह इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दुख का निवारण है'; वह इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' वह इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'ये दोष हैं'; वह इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दोषों का मूल है'; वह इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दोषों का निवारण है'; वह इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दोषों के निवारण की ओर ले जाने वाला मार्ग है'।

जब वह इस प्रकार ज्ञान प्राप्त करता है और देखता है, तो उसका मन कामुकता के दोष से, अस्तित्व के दोष से (पुनर्जन्म का कारण) और अज्ञान के दोष से मुक्त हो जाता है। मुक्त होने पर उसे यह ज्ञान प्राप्त होता है: 'यह मुक्त हो गया है।' वह समझता है: 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य जीवन जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आने का कोई अधिकार नहीं है।'

"इसी प्रकार वह व्यक्ति होता है जो न तो स्वयं को पीड़ा देता है और न ही स्वयं को पीड़ा देने का अभ्यास करता है, और न ही दूसरों को पीड़ा देता है और न ही दूसरों को पीड़ा देने का अभ्यास करता है - वह व्यक्ति, जो न तो स्वयं को और न ही दूसरों को पीड़ा देता है, इसी जीवन में भूख रहित, तृप्त और शीतल होकर आनंद का अनुभव करता है, और स्वयं दिव्य बन जाता है।"

"भिक्षुओं, ये संसार में विद्यमान चार प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

199 तृष्णा (तन्हा सं. तृष्णा)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के बारे में सिखाऊंगा—वह फँसाने वाली, बहने वाली, व्यापक और चिपचिपी 932—जिससे यह संसार घुटकर और लिपटा हुआ है, और जिससे यह एक उलझी हुई डोरी, एक गाँठदार धागे का गोला, सरकंडों और झाड़ियों का ढेर बन गया है, [212] जिससे यह दुख के तल, बुरे गंतव्य, निम्न लोक, संसार से आगे नहीं बढ़ पाता। ध्यान से सुनो; मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

और हे भिक्षुओं, वह तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) क्या है—वह फँसाने वाली, बहने वाली, व्यापक और चिपचिपी—जिसने इस संसार को जकड़ लिया है और घेर लिया है, और जिससे यह एक उलझी हुई डोरी, एक गाँठदार धागे का गोला, सरकंडों और झाड़ियों का ढेर बन गई है, जिससे यह दुख के तल, बुरे गंतव्य, निम्न लोक, संसार से आगे नहीं बढ़ पाती?

भिक्षुओं, आंतरिक तृष्णा से संबंधित अठारह प्रकार की तृष्णाएं (तन्हा/तृष्णा) हैं और बाह्य तृष्णा से संबंधित अठारह प्रकार की तृष्णाएं (तन्हा/तृष्णा) हैं।

और आंतरिक से संबंधित तृष्णा की अठारह धाराएँ क्या हैं? जब 'मैं हूँ' की धारणा होती है, तब 'मैं ऐसा हूँ', 'मैं बिल्कुल ऐसा हूँ', 'मैं अन्यथा हूँ', 'मैं स्थायी हूँ', 'मैं क्षणभंगुर हूँ', 'मैं हो सकता हूँ', 'मैं ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं बिल्कुल ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं अन्यथा हो सकता हूँ', 'मैं हो सकता हूँ', 'मैं ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं बिल्कुल ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं अन्यथा हो सकता हूँ', 'मैं ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं अन्यथा हो सकता हूँ' जैसी धारणाएँ भी होती हैं। ये आंतरिक से संबंधित तृष्णा की अठारह धाराएँ हैं।

और बाह्य से संबंधित तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) की अठारह धाराएँ क्या हैं? 934 जब यह धारणा होती है, 'मैं इसके कारण हूँ,' 935 तो ये धारणाएँ भी होती हैं: 'मैं इसके कारण ऐसा हूँ,' 'मैं इसके कारण ऐसा हूँ,' 'मैं इसके कारण अलग हूँ,' 'मैं इसके कारण स्थायी हूँ,' 'मैं इसके कारण क्षणभंगुर हूँ,' 'मैं इसके कारण हो सकता हूँ,' 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँ,' 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँ,' 'मैं इसके कारण अलग हो सकता हूँ,' 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँ,' 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँ,' 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँ,' 'मैं इसके कारण अलग हूँगा,' 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँगा,' 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँगा,' 'मैं इसके कारण अलग हो सकता हूँगा,' ये बाह्य से संबंधित तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) की अठारह धाराएँ हैं।

इस प्रकार आंतरिक से संबंधित अठारह तृष्णा धाराएँ हैं, और बाह्य से संबंधित अठारह तृष्णा धाराएँ हैं। इन्हें छत्तीस तृष्णा धाराएँ कहा जाता है। ऐसी छत्तीस तृष्णा धाराएँ भूतकाल से संबंधित हैं, छत्तीस भविष्य से संबंधित हैं, [213] और छत्तीस वर्तमान से संबंधित हैं। इस प्रकार कुल एक सौ आठ तृष्णा धाराएँ हैं।

"यही वह तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) है— जो फँसाने वाली, बहने वाली, व्यापक और चिपचिपी है— जिससे यह संसार घुटकर और लिपटकर रह गया है, और जिससे यह एक उलझी हुई डोरी, एक गाँठदार धागे का गोला, सरकंडों और झाड़ियों का ढेर बन गया है, जिससे यह दुख के तल, बुरे गंतव्य, निम्न लोक, संसार से आगे नहीं बढ़ पाता।" 936

---

200 स्नेह (पेमा सं. प्रेम)

भिक्षुओं, ये चार चीजें जन्म लेती हैं। वे चार क्या हैं? स्नेह से स्नेह उत्पन्न होता है; स्नेह से घृणा उत्पन्न होती है; घृणा से स्नेह उत्पन्न होता है; और घृणा से घृणा उत्पन्न होती है।

(1) "हे भिक्षुओं, स्नेह से स्नेह कैसे उत्पन्न होता है? यहाँ, एक व्यक्ति दूसरे के लिए वांछनीय, प्रेमयोग्य और सुखद है। दूसरे लोग उस व्यक्ति के साथ ऐसा व्यवहार करते हैं जो वांछनीय, प्रेमयोग्य और सुखद हो। दूसरे व्यक्ति के मन में यह विचार आता है: 'दूसरे लोग उस व्यक्ति के साथ, जो मेरे लिए वांछनीय, प्रेमयोग्य और सुखद है, ऐसा व्यवहार करते हैं जो वांछनीय, प्रेमयोग्य और सुखद हो।' इस प्रकार वह उनके प्रति स्नेह उत्पन्न करता है। इसी प्रकार स्नेह से स्नेह उत्पन्न होता है।"

(2) "और स्नेह से घृणा कैसे उत्पन्न होती है? यहाँ, एक व्यक्ति दूसरे के लिए वांछनीय, प्रिय और सुखद है। दूसरे उस व्यक्ति के साथ इस तरह व्यवहार करते हैं जो अवांछनीय, अप्रिय और अप्रिय है।

दूसरे व्यक्ति के मन में यह विचार आता है: 'दूसरे लोग उस व्यक्ति के साथ, जो मुझे प्यारा, प्रिय और अच्छा लगता है, वैसा व्यवहार करते हैं जैसा मुझे नापसंद, अप्रिय और नापसंद है।' इस प्रकार वह उनसे घृणा करने लगता है। इसी प्रकार स्नेह से घृणा का जन्म होता है।

(3) "और घृणा से स्नेह कैसे उत्पन्न होता है? यहाँ, एक व्यक्ति दूसरे के लिए अवांछनीय, अप्रिय और नापसंद करने योग्य है। दूसरे लोग उस व्यक्ति के साथ अवांछनीय, अप्रिय और नापसंद करने योग्य व्यवहार करते हैं। दूसरे व्यक्ति के मन में यह विचार आता है: 'दूसरे लोग उस व्यक्ति के साथ, जो मेरे लिए अवांछनीय, अप्रिय और नापसंद करने योग्य है, अवांछनीय, अप्रिय और नापसंद करने योग्य व्यवहार करते हैं।' इस प्रकार वह उनके प्रति स्नेह उत्पन्न करता है। इसी प्रकार घृणा से स्नेह उत्पन्न होता है।"

(4) "और घृणा से घृणा कैसे उत्पन्न होती है? यहाँ, एक व्यक्ति दूसरे के लिए अवांछनीय, अप्रिय [214] और अरुचिकर है। दूसरे उस व्यक्ति के साथ ऐसा व्यवहार करते हैं जो वांछनीय/प्रिय और सुखद होता है। दूसरे के मन में यह विचार आता है: 'दूसरे उस व्यक्ति के साथ, जो मेरे लिए अवांछनीय, अप्रिय और अरुचिकर है, ऐसा व्यवहार करते हैं जो वांछनीय, प्रिय और सुखद है।' इस प्रकार वह उनके प्रति घृणा उत्पन्न करता है। इसी प्रकार घृणा से घृणा उत्पन्न होती है।"

"ये चार चीजें जन्म लेती हैं।"

जब कोई भिक्षु इंद्रिय सुखों से एकांत में रहकर प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, उस समय उसमें स्नेह से उत्पन्न स्नेह नहीं होता, स्नेह से उत्पन्न घृणा नहीं होती, घृणा से उत्पन्न स्नेह नहीं होता और घृणा से उत्पन्न घृणा नहीं होती।

"जब विचार और चिंतन शांत हो जाते हैं और भिक्षु द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... तृतीय ध्यान में... चतुर्थ ध्यान में... उस समय उसमें स्नेह से उत्पन्न स्नेह नहीं होता, स्नेह से उत्पन्न घृणा नहीं होती, घृणा से उत्पन्न स्नेह नहीं होता और घृणा से उत्पन्न घृणा नहीं होती।"

जब भिक्षु दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कर लेता है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है, तब वह आसक्ति से उत्पन्न आसक्ति का त्याग कर देता है, उसे जड़ से काट देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान मिटा देता है, ताकि वह भविष्य में उत्पन्न न हो सके; वह आसक्ति से उत्पन्न घृणा का त्याग कर देता है, उसे जड़ से काट देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान मिटा देता है, ताकि वह भविष्य में उत्पन्न न हो सके; वह घृणा से उत्पन्न आसक्ति का त्याग कर देता है, उसे जड़ से काट देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान मिटा देता है, ताकि वह भविष्य में उत्पन्न न हो सके; और वह घृणा से उत्पन्न घृणा का त्याग कर देता है, उसे जड़ से काट देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान मिटा देता है, ताकि वह भविष्य में उत्पन्न न हो सके।

"इसे भिक्षु कहा जाता है जो न तो कुछ उठाता है और न ही कुछ दूर धकेलता है, जो क्रोधित नहीं होता, न ही प्रज्वलित होता है और न ही चिंतन करता है।"

"और एक भिक्षु कैसे सीखता है? 937 यहाँ, एक भिक्षु रूप को आत्मा के रूप में, या आत्मा को रूप धारण करने वाले के रूप में, या रूप को आत्मा में, या आत्मा को रूप में देखता है। वह संवेदना (वेदना) को आत्मा के रूप में देखता है... [215]... बोध (संज्ञा/संज्ञा) को आत्मा के रूप में... अपने चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) को आत्मा के रूप में... चेतना को आत्मा के रूप में, या आत्मा को चेतना धारण करने वाले के रूप में, या चेतना को आत्मा में, या आत्मा को चेतना में देखता है। इसी प्रकार एक भिक्षु सीखता है।"

और एक भिक्षु कैसे ग्रहण नहीं करता? यहाँ, एक भिक्षु रूप को आत्मा नहीं मानता, न ही आत्मा को रूप धारण करने वाला मानता है, न ही रूप को आत्मा में मानता है, न ही आत्मा को रूप में मानता है। वह वेदना को आत्मा नहीं मानता... बोध को आत्मा नहीं मानता... अपने संस्कार को आत्मा नहीं मानता... चेतना को आत्मा नहीं मानता, न ही आत्मा को चेतना धारण करने वाला मानता है, न ही चेतना को आत्मा में मानता है, न ही आत्मा को चेतना में मानता है। इसी प्रकार एक भिक्षु ग्रहण नहीं करता।

"और एक भिक्षु कैसे दूर भगाता है? यहाँ, एक भिक्षु अपमान करने वाले का अपमान करता है, डांटने वाले को डांटता है, और बहस करने वाले से बहस करता है। इसी तरह एक भिक्षु दूर भगाता है।"

और एक भिक्षु कैसे किसी को दूर नहीं धकेलता? यहाँ, एक भिक्षु अपमान करने वाले का अपमान नहीं करता, डांटने वाले को डांटता नहीं है, और बहस करने वाले से बहस नहीं करता। इसी तरह एक भिक्षु किसी को दूर नहीं धकेलता।

"और एक भिक्षु कैसे तपता है? जब 'मैं हूँ' की धारणा होती है, तो 'मैं ऐसा हूँ', 'मैं बिल्कुल ऐसा हूँ', 'मैं अलग हूँ', 'स्थायी हूँ', 'मैं क्षणभंगुर हूँ', 'मैं हो सकता हूँ', 'मैं ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं बिल्कुल ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं अलग हो सकता हूँ', 'मैं हो सकता हूँ', 'मैं ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं बिल्कुल ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं अलग हो सकता हूँ', 'मैं होऊंगा', 'मैं ऐसा होऊंगा/मैं बिल्कुल ऐसा होऊंगा', 'मैं अलग होऊंगा' जैसी धारणाएँ भी होती हैं। इसी प्रकार एक भिक्षु तपता है।"

और भिक्षु कैसे क्रोधित नहीं होता? जब 'मैं हूँ' की धारणा नहीं होती, तो 'मैं ऐसा हूँ' जैसी धारणाएँ भी नहीं होतीं... [216] ... 'मैं कुछ और हो जाऊँगा।' इसी तरह भिक्षु क्रोधित नहीं होता।

और एक भिक्षु किस प्रकार प्रज्वलित होता है? जब यह धारणा होती है कि 'मैं इसके कारण हूँ', तो ये धारणाएँ भी उत्पन्न होती हैं: 'मैं इसके कारण ऐसा हूँ', 'मैं इसके कारण ऐसा हूँ', 'मैं इसके कारण अलग हूँ', 'मैं इसके कारण स्थायी हूँ', 'मैं इसके कारण क्षणभंगुर हूँ', 'मैं इसके कारण हो सकता हूँ', 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं इसके कारण ऐसा हो सकता हूँ', 'मैं इसके कारण अलग हो सकता हूँ', 'मैं इसके कारण होऊँगा', 'मैं इसके कारण ऐसा होऊँगा', 'मैं इसके कारण ऐसा होऊँगा', 'मैं इसके कारण ऐसा होऊँगा', 'मैं इसके कारण अलग होऊँगा'। इसी प्रकार एक भिक्षु प्रज्वलित होता है।

और एक भिक्षु कैसे प्रज्वलित नहीं होता? जब यह धारणा नहीं होती कि 'मैं इस कारण से हूँ', तब यह धारणा भी नहीं होती कि 'मैं इस कारण से ऐसा हूँ' ... 'मैं इस कारण से अलग हो जाऊँगा'। इसी प्रकार एक भिक्षु प्रज्वलित नहीं होता।

और एक भिक्षु किस प्रकार चिंतन करता है? 938. यहाँ, एक भिक्षु ने 'मैं हूँ' की धारणा को जड़ से नहीं त्यागा है, उसे ताड़ के ठूंठ की तरह नहीं बनाया है, उसे मिटा नहीं दिया है ताकि वह भविष्य में फिर से उत्पन्न न हो सके। इसी प्रकार एक भिक्षु चिंतन करता है।

"और एक भिक्षु चिंतन कैसे नहीं करता? यहाँ, एक भिक्षु ने 'मैं हूँ' की धारणा को त्याग दिया है, उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में उत्पन्न न हो सके। इसी प्रकार एक भिक्षु चिंतन नहीं करता।" [217]

पांचवां पचास

I. अच्छा व्यक्ति (सप्पुरिशा संस्कृत: सतपुरुष)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

201 प्रशिक्षण नियम (सिक्खपाद बिना शिक्षापद)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें बुरे व्यक्ति और बुरे व्यक्ति से भी कमतर व्यक्ति के बारे में, अच्छे व्यक्ति और अच्छे व्यक्ति से भी श्रेष्ठ व्यक्ति के बारे में सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और गौर करो; मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

(1) "हे भिक्षुओं, बुरा व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जीवन का नाश करता है, जो नहीं दिया गया है उसे लेता है, यौन दुराचार में लिप्त होता है, झूठ बोलता है, और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं। यही बुरा व्यक्ति कहलाता है।"

(2) "और बुरे व्यक्ति से भी नीच कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति स्वयं जीवन का नाश करता है और दूसरों को भी जीवन का नाश करने के लिए उकसाता है; वह स्वयं वह लेता है जो उसे नहीं दिया गया है और दूसरों को भी वह लेने के लिए उकसाता है जो उसे नहीं दिया गया है; वह स्वयं यौन दुराचार में लिप्त होता है और दूसरों को भी यौन दुराचार में लिप्त होने के लिए उकसाता है; वह स्वयं झूठ बोलता है और दूसरों को भी झूठ बोलने के लिए उकसाता है; वह स्वयं शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं, और दूसरों को भी शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करने के लिए उकसाता है, जो आलस्य का आधार हैं। यही व्यक्ति बुरे व्यक्ति से भी नीच है।"

(3) "अच्छा व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जीवन की हानि से दूर रहता है, जो बिना माँगे कुछ लेने से दूर रहता है, जो यौन दुराचार से दूर रहता है, जो झूठी बातों से दूर रहता है, और जो शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से दूर रहता है, जो आलस्य का आधार हैं। यही व्यक्ति अच्छा कहलाता है।"

(4) "और अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जो स्वयं जीवन-विनाश से दूर रहता है और दूसरों को भी जीवन-विनाश से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित करता है; वह स्वयं अनचाही वस्तुएँ लेने से दूर रहता है और दूसरों को भी अनचाही वस्तुएँ लेने से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित करता है; वह स्वयं यौन दुराचार से दूर रहता है और दूसरों को भी यौन दुराचार से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित करता है; वह स्वयं झूठी वाणी से दूर रहता है और दूसरों को भी झूठी वाणी से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित करता है; वह स्वयं मदिरा, शराब और मादक पदार्थों से दूर रहता है, जो आलस्य का आधार हैं, और दूसरों को भी मदिरा, शराब और मादक पदार्थों से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित करता है, जो आलस्य का आधार हैं। इसे ही अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कहा जाता है।" [218]

---

202 विश्वास से रहित (असद्ध बिना अश्रद्ध)

[4:201 के अनुसार आरंभ।]

(1) "और हे भिक्षुओं, बुरा व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जो आस्थाहीन, नैतिक रूप से निर्लज्ज, नैतिक रूप से लापरवाह, अज्ञानी, आलसी, भ्रमित और मूर्ख है। यही बुरा व्यक्ति कहलाता है।"

(2) "और बुरे व्यक्ति से हीन कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जो स्वयं आस्थाहीन है और दूसरों को भी आस्थाहीन होने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं नैतिक रूप से निर्लज्ज है और दूसरों को भी नैतिक रूप से निर्लज्ज होने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं नैतिक रूप से लापरवाह है और दूसरों को भी नैतिक रूप से लापरवाह होने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं ज्ञान में कमी रखता है और दूसरों को भी ज्ञान में कमी रखने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं आलसी है और दूसरों को भी आलस्य के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं भ्रमित है और दूसरों को भी भ्रमित होने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं अज्ञानी है और दूसरों को भी ज्ञान की कमी के लिए प्रेरित करता है। इसे ही बुरे व्यक्ति से हीन कहा जाता है।"

(3) "अच्छा व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जो आस्था से परिपूर्ण है, नैतिक लज्जा और नैतिक भय से ग्रस्त है; और विद्वान, ऊर्जावान, सती (ध्यानमग्न) और बुद्धिमान है। इसे ही अच्छा व्यक्ति कहा जाता है।"

(4) "और अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जो स्वयं आस्था में सिद्ध है और दूसरों को आस्था में सिद्ध होने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं नैतिक लज्जा रखता है और दूसरों को नैतिक लज्जा रखने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं नैतिक भय रखता है और दूसरों को नैतिक भय रखने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं विद्वान है और दूसरों को सीखने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं ऊर्जावान है और दूसरों को ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं सचेत (ध्यान/सती) है और दूसरों को सचेतनता (ध्यान/सती) स्थापित करने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं बुद्धिमान है और दूसरों को पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्ध होने के लिए प्रेरित करता है। इसे ही अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कहा जाता है।"

---

203 सात कर्म (सत्तकम्मा बिना...कर्म)

[4:201 के अनुसार आरंभ।] [219]

(1) "और हे भिक्षुओं, बुरा व्यक्ति कौन है? यहाँ, कोई जीवन नष्ट करता है, जो नहीं दिया गया है उसे लेता है, यौन दुराचार में लिप्त होता है, झूठ बोलता है, फूट डालता है, कठोर बोलता है, और व्यर्थ की बातों में लिप्त होता है।

(2) "और बुरे व्यक्ति से भी नीच कौन है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वयं जीवन का नाश करता है और दूसरों को भी जीवन का नाश करने के लिए प्रेरित करता है... वह स्वयं व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है और दूसरों को भी व्यर्थ की बातों में लिप्त रहने के लिए प्रेरित करता है। इसे ही बुरे व्यक्ति से भी नीच कहा जाता है।"

(3) "अच्छा व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जीवन के विनाश से परहेज़ करता है... व्यर्थ की बातों से परहेज़ करता है। इसे ही अच्छा व्यक्ति कहा जाता है।"

(4) "और अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जो स्वयं जीवन-विनाश से दूर रहता है और दूसरों को भी जीवन-विनाश से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित करता है... वह स्वयं व्यर्थ की बातों से दूर रहता है और दूसरों को भी व्यर्थ की बातों से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसे ही अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कहा जाता है।"

---

204 दस कर्म (दसकम्मा सं. दास-कर्म)

[4:201 के अनुसार आरंभ।] [220]

(1) "और हे भिक्षुओं, बुरा व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जीवन का नाश करता है... व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है; वह लालसा से भरा रहता है, द्वेष रखता है और गलत दृष्टिकोण रखता है। यही बुरा व्यक्ति कहलाता है।"

(2) "और बुरे व्यक्ति से भी नीच कौन है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वयं जीवन का विनाश करता है और दूसरों को भी जीवन का विनाश करने के लिए प्रेरित करता है... वह स्वयं गलत दृष्टिकोण रखता है और दूसरों को भी गलत दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसे ही बुरे व्यक्ति से भी नीच कहा जाता है।"

(3) "अच्छा व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जीवन के विनाश से दूर रहता है... व्यर्थ की बातों से दूर रहता है; वह लालसा रहित, सद्भावपूर्ण और सही दृष्टिकोण वाला होता है। यही अच्छा व्यक्ति कहलाता है।"

(4) "और अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जो स्वयं जीवन-विनाश से दूर रहता है और दूसरों को भी जीवन-विनाश से दूर रहने के लिए प्रेरित करता है... वह स्वयं निर्धन है और दूसरों को भी निर्धनता के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं सद्भावपूर्ण है और दूसरों को भी सद्भावपूर्ण रहने के लिए प्रेरित करता है; वह स्वयं सही दृष्टि रखता है और दूसरों को भी सही दृष्टि रखने के लिए प्रेरित करता है। इसे ही अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कहा जाता है।"

205 अष्टांगिक (अट्ठांगिका सं. अष्टांगिक)

[4:201 के अनुसार आरंभ।]

(1) "और हे भिक्षुओं, बुरा व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति गलत दृष्टिकोण, गलत इरादे, गलत वाणी, गलत कर्म, गलत आजीविका, गलत प्रयास, गलत ध्यान (ध्यान/सती) और गलत समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) वाला है। [221] इसे बुरा व्यक्ति कहा जाता है।

(2) "और बुरे व्यक्ति से हीन कौन है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वयं गलत दृष्टिकोण रखता है और दूसरों को भी गलत दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करता है... वह स्वयं गलत समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में लीन रहता है और दूसरों को भी गलत समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में प्रेरित करता है। इसे ही बुरे व्यक्ति से हीन कहा जाता है।"

(3) "अच्छा व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति सही दृष्टिकोण, सही इरादे, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता) और सही समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) वाला होता है। इसे अच्छा व्यक्ति कहा जाता है।"

(4) "और अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कौन है? यहाँ वह व्यक्ति जो स्वयं सही दृष्टि रखता है और दूसरों को भी सही दृष्टि रखने के लिए प्रेरित करता है... वह स्वयं सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में रहता है और दूसरों को भी सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में प्रेरित करता है। इसे ही अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कहा जाता है।"

---

206 दस गुना पथ

[4:201 के अनुसार आरंभ।]

(1) "और हे भिक्षुओं, बुरा व्यक्ति कौन है? [222] यहाँ, कोई व्यक्ति गलत दृष्टिकोण वाला है... गलत समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), गलत ज्ञान और गलत मुक्ति वाला है। इसे बुरा व्यक्ति कहा जाता है।

(2) "और बुरे व्यक्ति से हीन कौन है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वयं गलत दृष्टिकोण रखता है और दूसरों को भी गलत दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है... वह स्वयं गलत मुक्ति का पालन करता है और दूसरों को भी गलत मुक्ति का पालन करने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसे ही बुरे व्यक्ति से हीन कहा जाता है।"

(3) "और...अच्छा व्यक्ति कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति सही दृष्टिकोण वाला... सही समाधि (आत्म-लीनता/तल्लीनता), सही ज्ञान और सही मुक्ति वाला है। इसे ही अच्छा व्यक्ति कहा जाता है।"

(4) "और अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति जो स्वयं सही दृष्टि रखता है और दूसरों को भी सही दृष्टि रखने के लिए प्रेरित करता है... वह स्वयं सही मुक्ति प्राप्त करता है और दूसरों को भी सही मुक्ति प्राप्त करने के लिए प्रेरित करता है। इसे ही अच्छे व्यक्ति से श्रेष्ठ कहा जाता है।"

---

207 बुरा चरित्र (1) (पापधम्म1 बिना पाप-धर्म)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें सिखाऊंगा कि क्या बुरा है और उससे भी बुरा क्या है। और मैं तुम्हें सिखाऊंगा कि क्या अच्छा है और उससे भी बेहतर क्या है। सुनो..."

(1) "और हे भिक्षुओं, बुरा क्या है? यहाँ, कोई जीवन का विनाश करता है... और गलत दृष्टिकोण रखता है। इसे बुरा कहा जाता है।"

(2) "और उस बुराई से भी बदतर क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वयं जीवन को नष्ट करता है और दूसरों को भी जीवन को नष्ट करने के लिए प्रोत्साहित करता है... वह स्वयं गलत दृष्टिकोण रखता है और दूसरों को भी गलत दृष्टिकोण रखने के लिए प्रेरित करता है। इसे उस बुराई से भी बदतर कहा जाता है।"

(3) "और अच्छा क्या है? यहाँ, कोई जीवन के विनाश से परहेज़ करता है... और सही दृष्टिकोण रखता है। [223] इसे अच्छा कहा जाता है।

(4) "और उस अच्छाई से बेहतर क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वयं जीवन-विनाश से परहेज़ करता है और दूसरों को भी जीवन-विनाश से परहेज़ करने के लिए प्रोत्साहित करता है... वह स्वयं सही दृष्टिकोण रखता है और दूसरों को भी सही दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करता है। इसे ही उस अच्छाई से बेहतर कहा जाता है।"

---

208 बुरा चरित्र (2) (पापधम्म2 बिना पाप-धर्म)

[4:207 पर आरंभिक दृश्य।]

(1) "और हे भिक्षुओं, बुरा क्या है? यहाँ, किसी का दृष्टिकोण गलत है... गलत मुक्ति है। इसे बुरा कहा जाता है।"

(2) "और उस बुराई से भी बदतर क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वयं गलत दृष्टिकोण रखता है और दूसरों को भी गलत दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है... वह स्वयं गलत मुक्ति का पालन करता है और दूसरों को भी गलत मुक्ति का पालन करने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसे ही उस बुराई से भी बदतर कहा जाता है।"

(3) "और अच्छा क्या है? यहाँ, कोई सही दृष्टिकोण रखता है... सही मुक्ति का। इसे अच्छा कहा जाता है।"

(4) "और उस अच्छाई से बेहतर क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वयं सही दृष्टिकोण रखता है और दूसरों को भी सही दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है... वह स्वयं सही मुक्ति प्राप्त करता है और दूसरों को भी सही मुक्ति प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसे ही उस अच्छाई से बेहतर कहा जाता है।"

---

209 बुरा चरित्र (3) (पापधम्म3 बिना पाप-धर्म)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें एक बुरे चरित्र वाले व्यक्ति के बारे में और उससे भी बुरे चरित्र वाले व्यक्ति के बारे में सिखाऊंगा। मैं तुम्हें एक अच्छे चरित्र वाले व्यक्ति के बारे में और उससे भी बेहतर चरित्र वाले व्यक्ति के बारे में सिखाऊंगा। सुनो..."

(1) "और हे भिक्षुओं, बुरे चरित्र का कौन है? यहाँ, कोई जीवन का नाश करता है... और गलत मत रखता है। इसे बुरे चरित्र का कहा जाता है।"

(2) "और इससे भी बदतर चरित्र वाला कौन है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वयं जीवन का विनाश करता है और दूसरों को भी जीवन का विनाश करने के लिए प्रोत्साहित करता है... वह स्वयं गलत दृष्टिकोण रखता है और दूसरों को भी गलत दृष्टिकोण रखने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसे और भी बदतर चरित्र वाला कहा जाता है।"

(3) "अच्छे चरित्र वाला व्यक्ति कौन होता है? यहाँ, वह व्यक्ति जीवन के विनाश से परहेज करता है... और सही दृष्टिकोण रखता है। इसे ही अच्छे चरित्र वाला व्यक्ति कहा जाता है।"

(4) "और इससे भी श्रेष्ठ चरित्र वाला कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति स्वयं जीवन-विनाश से दूर रहता है और दूसरों को भी जीवन-विनाश से दूर रहने के लिए प्रोत्साहित करता है... वह स्वयं सही दृष्टिकोण रखता है और दूसरों को भी सही दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करता है। इसे ही श्रेष्ठ चरित्र वाला कहा जाता है।"

---

210 (10) बुरा चरित्र (4) (पापधम्म1 बिना पाप-धर्म)

[4:209 पर आरंभिक दृश्य।]

(1) "और हे भिक्षुओं, बुरे चरित्र वाला व्यक्ति कौन होता है? यहाँ, किसी व्यक्ति का गलत दृष्टिकोण है... गलत मुक्ति का। इसे बुरे चरित्र वाला व्यक्ति कहा जाता है।"

(2) "और इससे भी बदतर चरित्र वाला कौन है? यहाँ, कोई व्यक्ति स्वयं गलत दृष्टिकोण रखता है [225] और दूसरों को भी गलत दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है... वह स्वयं गलत मुक्ति का पालन करता है और दूसरों को भी गलत मुक्ति के लिए प्रोत्साहित करता है। इसे और भी बदतर चरित्र वाला कहा जाता है।"

(3) "अच्छे चरित्र वाला व्यक्ति कौन होता है? यहाँ, कोई व्यक्ति सही दृष्टिकोण रखता है... सही मुक्ति का। इसे अच्छे चरित्र वाला व्यक्ति कहा जाता है।"

(4) "और इससे भी श्रेष्ठ चरित्र वाला कौन है? यहाँ, वह व्यक्ति स्वयं सही दृष्टिकोण रखता है और दूसरों को भी सही दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है... वह स्वयं सही मुक्ति का मार्ग अपनाता है और दूसरों को भी सही मुक्ति के मार्ग पर चलने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसे ही श्रेष्ठ चरित्र वाला कहा जाता है।"

II. सभा (परिसा परिषद रहित सभा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

211 विधानसभा (पेरिसा सं. परिषद)

भिक्षुओं, ये चार बातें किसी सभा की कमियाँ हैं। कौन सी चार? एक भिक्षु जो अनैतिक हो, बुरे चरित्र का हो; एक भिक्षुणी जो अनैतिक हो, बुरे चरित्र की हो; एक पुरुष गृहस्थ अनुयायी जो अनैतिक हो, बुरे चरित्र का हो; और एक स्त्री गृहस्थ अनुयायी जो अनैतिक हो, बुरे चरित्र की हो। ये चारों बातें किसी सभा की कमियाँ हैं।

"भिक्षुओं, ये चार किसी सभा के आभूषण हैं। कौन से चार? एक गुणी, अच्छे चरित्र वाला भिक्षु; [226] एक गुणी, अच्छे चरित्र वाली भिक्षुणी; एक गुणी, अच्छे चरित्र वाला पुरुष गृहस्थ अनुयायी; और एक गुणी, अच्छे चरित्र वाली स्त्री गृहस्थ अनुयायी। ये चारों किसी सभा के आभूषण हैं।"

---

212 दृश्य (दिट्ठी बिना दृष्टि)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण कौन से हैं? शारीरिक दुराचार, वाणी दुराचार, मानसिक दुराचार और गलत दृष्टिकोण। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण कौन से हैं? शारीरिक सुवाह्य आचरण, वाणी का सुवाह्य आचरण, मानसिक सुवाह्य आचरण और सही दृष्टिकोण। इन चारों गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

213 कृतघ्नता (अकातन्नुता)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण कौन से हैं? शारीरिक दुराचार, वाणी दुराचार, मानसिक दुराचार और कृतघ्नता। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण कौन से हैं? शारीरिक सुवाह्य आचरण, वाणी का सुवाह्य आचरण, मानसिक सुवाह्य आचरण और कृतज्ञता। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

214 जीवन का विनाश (पनातिपति)

[4:214-19 4:213 के समान ही पैटर्न का अनुसरण करते हैं, जिसमें निम्नलिखित गुण क्रमशः नरक और स्वर्ग में पुनर्जन्म के लिए जिम्मेदार हैं।]

"...एक व्यक्ति जीवन का नाश करता है, जो उसे नहीं दिया गया है उसे छीन लेता है, यौन दुराचार में लिप्त होता है और झूठ बोलता है..."

"...जीवन की हत्या से, जो नहीं दिया गया है उसे लेने से, यौन दुराचार से और झूठे भाषण से परहेज़ किया जाता है। ..." [227]

---

215 पथ (1) (मग्गा1 सं. मार्ग)

"...एक का दृष्टिकोण, इरादा, वाणी और कर्म सब गलत हैं। ..."

"... एक व्यक्ति सही दृष्टिकोण, सही इरादे, सही वाणी और सही कर्म वाला होता है।

---

216 पथ (2) (मग्गा2 सं. मार्ग)

"...एक गलत आजीविका, गलत प्रयास, गलत ध्यान (ध्यान/सती) और गलत समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का अनुसरण करता है। ..."

"...सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता) और सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में विश्वास रखने वाला व्यक्ति..."

अभिव्यक्ति के 217 पाठ्यक्रम (1) (वोहरपथा1)

"...एक कहता है कि उसने वह देखा है जो उसने नहीं देखा; एक कहता है कि उसने वह सुना है जो उसने नहीं सुना; एक कहता है कि उसने वह महसूस किया है जो उसने महसूस नहीं किया; एक कहता है कि उसने वह जान लिया है जो उसने नहीं जाना... 239

"...एक कहता है कि उसने वह नहीं देखा जो उसने नहीं देखा; एक कहता है कि उसने वह नहीं सुना जो उसने नहीं सुना; एक कहता है कि उसने वह नहीं महसूस किया जो उसने नहीं महसूस किया; एक कहता है कि उसने वह नहीं जाना जो उसने नहीं जाना..."

अभिव्यक्ति के 218 पाठ्यक्रम (2) (वोहरपथा2)

"...एक कहता है कि उसने वह नहीं देखा जो उसने देखा है; एक कहता है कि उसने वह नहीं सुना जो उसने सुना है; एक कहता है कि उसने वह नहीं महसूस किया जो उसने महसूस किया है; एक कहता है कि उसने वह नहीं जाना जो उसने जाना है..."

"...एक व्यक्ति कहता है कि उसने वह देखा है जो उसने देखा है; एक व्यक्ति कहता है कि उसने वह सुना है जो उसने सुना है; एक व्यक्ति कहता है कि उसने वह महसूस किया है जो उसने महसूस किया है; एक व्यक्ति कहता है कि उसने वह जाना है जो उसने जाना है..."

---

219 नैतिक रूप से निर्लज्ज (अहिरिका)

"...एक व्यक्ति आस्थाहीन, अनैतिक, नैतिक रूप से निर्लज्ज और नैतिक रूप से लापरवाह होता है।"

"...व्यक्ति आस्थावान, गुणी और नैतिक लज्जा तथा नैतिक भय से परिपूर्ण होता है..."

---

220 अनैतिक (दुस्सिला संस्कृत दुस्शील)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण कौन से हैं? वह आस्थाहीन, अनैतिक, आलसी और मूर्ख होता है। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

"भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? [228] जो आस्थावान, गुणी, ऊर्जावान और बुद्धिमान हो। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

III. कदाचार

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

221 कदाचार (दुकारिता सं. दुष्चरित्र)

भिक्षुओं, चार प्रकार के मौखिक दुराचार होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? झूठा वाणी, फूट डालने वाली वाणी, कठोर वाणी और व्यर्थ की बातें। ये चार प्रकार के मौखिक दुराचार हैं।

भिक्षुओं, चार प्रकार के सुचारु आचरण होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? सत्यवादी वाणी, कठोर वाणी, सौम्य वाणी और विवेकपूर्ण वाणी। ये चार प्रकार के सुचारु आचरण हैं।

---

222 (2) दृश्य (दिट्ठी बिना दृष्टि)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त अज्ञानी, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे चार गुण क्या हैं? शारीरिक दुराचार, वाणी दुराचार, मानसिक दुराचार और गलत दृष्टिकोण। इन चार गुणों से युक्त होने के कारण... वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

"भिक्षु (साधु), चार अन्य गुणों से युक्त, बुद्धिमान, योग्य, नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट रहित रखता है; वह निर्दोष है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा से परे है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे चार गुण क्या हैं? शारीरिक सुव्यवहार, मौखिक सुव्यवहार, मानसिक सुव्यवहार और सही दृष्टिकोण। इन चार गुणों से युक्त होकर... वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।" [229]

---

223 कृतघ्नता (अकातन्नुता)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त अज्ञानी, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे चार गुण क्या हैं? शारीरिक दुराचार, वाणी दुराचार, मानसिक दुराचार और कृतघ्नता। इन चार गुणों से युक्त होने के कारण... वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

"भिक्षुओं, चार अन्य गुणों से युक्त बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को निर्बल और अक्षुण्ण रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे चार गुण कौन से हैं? शारीरिक सुव्यवहार, मौखिक सुव्यवहार, मानसिक सुव्यवहार और कृतज्ञता। इन चार गुणों से युक्त होकर... वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।"

---

224 जीवन का विनाश (पनातिपति)

"...वह जीवन को नष्ट करता है, जो दिया नहीं गया उसे छीन लेता है, यौन दुराचार में लिप्त रहता है और झूठ बोलता है..."

"...वह जीवन की हत्या से परहेज करता है, जो नहीं दिया गया है उसे लेने से परहेज करता है, यौन दुराचार से परहेज करता है और झूठी बातों से परहेज करता है..."

---

225 पथ (1) (मग्गा1 सं. मार्ग)

"...उसकी सोच, इरादा, वाणी और कर्म सब गलत हैं..."

"...वह सही दृष्टिकोण, सही इरादे, सही वाणी और सही कर्म वाला है..."

---

226 पथ (2) (मग्गा2 संस्कृत मार्ग)

"...उसकी आजीविका, प्रयास, सती ध्यान और समाधि गलत हैं। ..."

"...वह सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता) और सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में लीन है..."

अभिव्यक्ति के 227 पाठ्यक्रम (1) (वोहरपथ)

"...वह कहता है कि उसने वह देखा है जो उसने नहीं देखा; वह कहता है कि उसने वह सुना है जो उसने नहीं सुना; वह कहता है कि उसने वह महसूस किया है जो उसने महसूस नहीं किया; वह कहता है कि उसने वह जाना है जो उसने नहीं जाना।"

"...वह कहता है कि उसने वह नहीं देखा जो उसने नहीं देखा; वह कहता है कि उसने वह नहीं सुना जो उसने नहीं सुना; वह कहता है कि उसने वह महसूस नहीं किया जो उसने महसूस नहीं किया; वह कहता है कि उसने वह नहीं जाना जो उसने नहीं जाना..."

अभिव्यक्ति के 228 पाठ्यक्रम (2) (वोहरपथ)

"...वह कहता है कि उसने वह नहीं देखा जो उसने देखा है; वह कहता है कि उसने वह नहीं सुना जो उसने सुना है; वह कहता है कि उसने वह नहीं महसूस किया जो उसने महसूस किया है; वह कहता है कि उसने वह नहीं जाना जो उसने जाना है।"

"...वह कहता है कि उसने जो देखा है, वह देखा है; वह कहता है कि उसने जो सुना है, वह सुना है; वह कहता है कि उसने जो महसूस किया है, वह महसूस किया है; वह कहता है कि उसने जो जाना है, वह समझा है।"

---

229 नैतिक रूप से निर्लज्ज (अहिरिका)

"...वह आस्थाहीन, अनैतिक, नैतिक रूप से निर्लज्ज और नैतिक रूप से लापरवाह है..."

"...वह आस्थावान, गुणी और नैतिक लज्जा और नैतिक भय से परिपूर्ण है... [230]

---

230 नासमझ (दुप्पन्ना सं. दुष्प्रज्ञ)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त, अज्ञानी, अयोग्य और दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वह क्या है? वह आस्थाहीन, अनैतिक, आलसी और अज्ञानी है। इन चार गुणों से युक्त होने के कारण... वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

"भिक्षुओं, चार अन्य गुणों से युक्त बुद्धिमान, सक्षम और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट रहित रखता है; वह निर्दोष है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे चार गुण क्या हैं? वह आस्थावान, गुणी, ऊर्जावान और बुद्धिमान होता है। इन चार गुणों से युक्त होकर... वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।"

---

231 कवि

भिक्षुओं, कवियों के चार प्रकार होते हैं। वे कौन से चार प्रकार हैं? चिंतनशील कवि, कथात्मक कवि, उपदेशात्मक कवि और प्रेरणादायक कवि। 940 ये कवियों के चार प्रकार हैं।

IV. कर्म (कर्म के बिना)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

232 संक्षेप में (संखित्त सं. संक्षिप्त)

भिक्षुओं, मैंने स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव से इन चार प्रकार के कर्मों का वर्णन किया है। ये चार प्रकार कौन से हैं? एक है अंधकारमय कर्म, जिसका फल अंधकारमय होता है; एक है प्रकाशमय कर्म, जिसका फल उज्ज्वल होता है; एक है अंधकारमय और प्रकाशमय कर्म, जिसका फल अंधकारमय और प्रकाशमय दोनों होता है; और एक ऐसा कर्म, जो न अंधकारमय है और न प्रकाशमय, जिसका फल भी अंधकारमय और प्रकाशमय दोनों होता है; और एक ऐसा कर्म, जो न अंधकारमय है और न प्रकाशमय, तथा एक ऐसा कर्म, जो कर्मों के नाश की ओर ले जाता है। ये चार प्रकार के कर्म हैं जिनका मैंने स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव से वर्णन किया है।

---

233 विस्तार से (वित्थरा सं. विस्तारा)

भिक्षुओं, मैंने स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इन चार प्रकार के कर्मों का वर्णन किया है। वे चार कौन से हैं? एक है अंधकारमय कर्म जिसका फल अंधकारमय होता है; एक है प्रकाशमय कर्म जिसका फल प्रकाशमय होता है; एक है अंधकारमय और प्रकाशमय कर्म जिसका फल अंधकारमय और प्रकाशमय दोनों होता है; और एक ऐसा कर्म जो न अंधकारमय है और न प्रकाशमय, जिसका फल भी अंधकारमय और प्रकाशमय दोनों नहीं होता; और एक ऐसा कर्म जो कर्मों के नाश की ओर ले जाता है।

(1) "हे भिक्षुओं, अंधकारमय कर्म और अंधकारमय फल क्या हैं? यहाँ, कोई व्यक्ति कष्टदायी शारीरिक व्यवहार, कष्टदायी वाणी और कष्टदायी मानसिक व्यवहार करता है। 942 परिणामस्वरूप, वह एक कष्टदायी संसार में पुनर्जन्म लेता है। ऐसे संसार में पुनर्जन्म लेने पर, उसे कष्टदायी स्पर्श प्राप्त होते हैं। कष्टदायी स्पर्शों से स्पर्श होने पर, वह केवल कष्टदायी वेदनाएँ (पीड़ा) अनुभव करता है, जैसे नरक के प्राणियों को होती हैं। इसे अंधकारमय कर्म और अंधकारमय फल कहा जाता है।"

(2) "और उज्ज्वल कर्म और उज्ज्वल फल क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति कष्ट रहित शारीरिक व्यवहार (संस्कार), कष्ट रहित वाणी व्यवहार (संस्कार), और कष्ट रहित मानसिक व्यवहार (संस्कार) करता है। 943 परिणामस्वरूप, वह कष्ट रहित संसार में पुनर्जन्म लेता है। 944 जब वह ऐसे संसार में पुनर्जन्म लेता है, तो उसे कष्ट रहित संपर्क प्राप्त होते हैं। कष्ट रहित संपर्कों से स्पर्शित होकर, वह केवल

सुखदायक, कष्ट रहित संवेदनाओं (वेदना) का अनुभव करता है, जैसे तेजस्वी देवों के मामले में होता है। 945 इसे उज्ज्वल कर्म और उज्ज्वल फल कहा जाता है।"

(3) "अंधकारमय और प्रकाशमय कर्म, जिसका परिणाम अंधकारमय और प्रकाशमय दोनों हो, क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति शारीरिक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के व्यवहार, मौखिक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के व्यवहार, और मानसिक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के व्यवहार करता है। परिणामस्वरूप, उसका पुनर्जन्म पीड़ादायक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के संसार में होता है। जब उसका ऐसे संसार में पुनर्जन्म होता है, [232] तो पीड़ादायक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के संपर्क उसे स्पर्श करते हैं। पीड़ादायक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार के संपर्कों से स्पर्श होने पर, वह पीड़ादायक और गैर-पीड़ादायक दोनों प्रकार की संवेदनाओं, मिश्रित सुख और दुख का अनुभव करता है, जैसा कि मनुष्यों, कुछ देवताओं और कुछ अन्य प्राणियों में होता है। निम्न लोक। इसे अंधकारमय और प्रकाशमय कर्म (कर्म/कार्य) कहा जाता है, जिसका परिणाम भी अंधकारमय और प्रकाशमय होता है।

(4) "वह कर्म क्या है जो न अंधकारमय है और न ही प्रकाशमय, जिसका फल भी अंधकारमय है और जो कर्मों के नाश की ओर ले जाता है? अंधकारमय फल वाले कर्मों का त्याग करने का सचेतन कर्म, प्रकाशमय फल वाले कर्मों का त्याग करने का सचेतन कर्म, और अंधकारमय और प्रकाशमय फल वाले कर्मों का त्याग करने का सचेतन कर्म: यही कर्म कहलाता है जो न अंधकारमय है और न ही प्रकाशमय, जिसका फल भी अंधकारमय है और जो कर्मों के नाश की ओर ले जाता है।"

"भिक्षुओं, ये चार प्रकार के कर्म हैं जिनकी घोषणा मैंने स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा करने के बाद की है।"

234 सोनाकायना

तब ब्राह्मण शिखमोग्गलाना भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे और उनसे अभिवादन किया। . . . फिर एक तरफ बैठकर उन्होंने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"पुराने समय में, गुरु गौतम, बहुत समय पहले, ब्राह्मण शिष्य सोनाकायना मेरे पास आए और बोले: "संन्यासी गौतम सभी कर्मों से विरक्ति का उपदेश देते हैं। परन्तु कर्मों से विरक्ति का उपदेश देकर वे संसार के विनाश का समर्थन करते हैं। हे गुरु, यह संसार, जिसका सार कर्म है, कर्मों के फलस्वरूप ही चलता है।"

[भगवान (बुद्ध):] "हे ब्राह्मण, मुझे तो ब्राह्मण शिष्य सोनाकायना को देखने का भी आभास नहीं है। फिर ऐसी चर्चा कैसे हो सकती थी? हे ब्राह्मण, मैंने स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव (अभिन) से इन चार प्रकार के कर्मों का प्रतिपादन किया है। वे चार कौन से हैं?"

[सूत्र का शेष भाग 4:233 के समान है..] [233]

---

235 प्रशिक्षण नियम (1) (सिक्खपाद1 सं. शिष्यपाद)

(4:233 पर आरंभिक दृश्य)

(1) "हे भिक्षुओं, अंधकारमय कर्म और अंधकारमय फल क्या हैं? यहाँ, कोई व्यक्ति जीवन का नाश करता है, जो नहीं दिया गया है उसे लेता है, यौन दुराचार में लिप्त होता है, झूठ बोलता है, और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं। इसे अंधकारमय कर्म और अंधकारमय फल कहा जाता है।"

(2) "और उज्ज्वल कर्म और उज्ज्वल फल क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति जीव-जंतुओं को नष्ट करने से बचता है, बिना दी हुई वस्तुएँ लेने से बचता है, यौन दुराचार से बचता है, झूठी वाणी से बचता है और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से परहेज करता है, जो आलस्य का आधार हैं। इसे उज्ज्वल कर्म और उज्ज्वल फल कहा जाता है।"

(3) "अंधकारमय और प्रकाशमय कर्म, जिसका परिणाम अंधकारमय और प्रकाशमय दोनों हो, क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति शारीरिक और गैर-अकारण दोनों प्रकार के व्यवहार करता है, मौखिक और मानसिक दोनों प्रकार के व्यवहार करता है। परिणामस्वरूप, उसका

पुनर्जन्म ऐसे संसार में होता है जो पीड़ादायक और गैर-अकारण दोनों है। ऐसे संसार में पुनर्जन्म होने पर, उसे पीड़ादायक और गैर-अकारण दोनों प्रकार के संपर्क प्राप्त होते हैं। पीड़ादायक और गैर-अकारण दोनों प्रकार के संपर्कों से स्पर्श होने पर, उसे पीड़ादायक और गैर-अकारण दोनों प्रकार की संवेदनाएँ (वेदनाएँ) प्राप्त होती हैं, जिनमें सुख और दुख दोनों मिश्रित होते हैं, जैसा कि मनुष्यों और कुछ अन्य प्राणियों में होता है। देव (देवदूत/भगवान) और कुछ निम्न लोकों के प्राणी। इसे अंधकारमय और प्रकाशमय कर्म कहा जाता है, जिसका परिणाम भी अंधकारमय और प्रकाशमय होता है।

(4) और वह कर्म क्या है जो न अंधकारमय है और न ही प्रकाशमय, तथा जिसका परिणाम भी अंधकारमय है, तथा जो कर्मों के विनाश की ओर ले जाता है? अंधकारमय कर्मों का त्याग करने का सचेतन कर्म, प्रकाशमय कर्मों का त्याग करने का सचेतन कर्म, और अंधकारमय और प्रकाशमय कर्मों का त्याग करने का सचेतन कर्म, जो अंधकारमय और प्रकाशमय दोनों हैं, और जिनका परिणाम भी अंधकारमय और प्रकाशमय दोनों है: यही कर्म कहलाता है जो न अंधकारमय है और न ही प्रकाशमय, तथा जिसका परिणाम भी अंधकारमय है, तथा जो कर्मों के विनाश की ओर ले जाता है।

"भिक्षुओं, ये चार प्रकार के कर्म हैं जिनकी घोषणा मैंने स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा करने के बाद की है।"

---

236 प्रशिक्षण नियम (2) (सिक्खपाद2 सं. शिष्यपाद)

(4:233 पर आरंभिक दृश्य)

(1) "और हे भिक्षुओं, अंधकारमय कर्म और अंधकारमय फल क्या है? यहाँ, कोई अपनी माता का वध करता है, अपने पिता का वध करता है, किसी अरहंत का वध करता है, घृणा के भाव से तथागत (बुद्ध) का रक्त बहाता है, या संघ में फूट डालता है। [235] इसे अंधकारमय कर्म और अंधकारमय फल कहा जाता है।"

(2) "और उज्ज्वल कर्म और उज्ज्वल फल क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति जीव-जंतुओं को नष्ट करने से, बिना दी हुई वस्तुएँ लेने से, यौन दुराचार से, झूठी बातों से, फूट डालने वाली बातों से, कठोर बातों से और व्यर्थ की बातों से दूर रहता है; वह लालसा रहित, सद्भावपूर्ण और सही दृष्टिकोण वाला होता है। इसे उज्ज्वल कर्म और उज्ज्वल फल कहा जाता है।"

(3) "और अंधकारमय और प्रकाशमय कर्म (कर्म/कार्य) क्या है जिसका परिणाम अंधकारमय और प्रकाशमय हो? . . . [जैसा कि 4:235 में है] . . : इसे अंधकारमय और प्रकाशमय कर्म (कर्म/कार्य) कहा जाता है जिसका परिणाम अंधकारमय और प्रकाशमय हो।"

(4) "वह कर्म क्या है जो न अंधकारमय है और न प्रकाशमय, जिसका परिणाम भी अंधकारमय है और न प्रकाशमय, वह कर्म जो कर्मों के विनाश की ओर ले जाता है? ... [जैसा कि 4:235 में है] ... इसे ही वह कर्म कहते हैं जो न अंधकारमय है और न प्रकाशमय, जिसका परिणाम भी अंधकारमय है और न प्रकाशमय, वह कर्म जो कर्मों के विनाश की ओर ले जाता है।"

"भिक्षुओं, ये चार प्रकार के कर्म हैं जिनकी घोषणा मैंने स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा करने के बाद की है।"

---

237 नोबल पथ (अरियामग्गा सं. आर्य-मार्ग)

"भिक्षुओं, मैंने स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव (अभिन) के आधार पर चार प्रकार के कर्मों की घोषणा की है। वे चार कौन से हैं?"

(4:233 से लेकर 236 तक सभी)

और वह कर्म क्या है जो न अंधकारमय है और न ही प्रकाशमय, जिसका फल भी न अंधकारमय है और न ही प्रकाशमय, वह कर्म जो कर्मों के नाश की ओर ले जाता है? सही दृष्टि, सही इरादा, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान

(सती/सजगता) और सही समाधि: यही वह कर्म कहलाता है जो न अंधकारमय है और न ही प्रकाशमय, जिसका फल भी न अंधकारमय है और जो कर्मों के नाश की ओर ले जाता है।

"भिक्षुओं, ये चार प्रकार के कर्म हैं जिनकी घोषणा मैंने स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा करने के बाद की है।"

---

238 आत्मज्ञान कारक (बोज्झांगा सं. बोध्यांगा)

"भिक्षुओं, मैंने स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव (अभिन) के आधार पर चार प्रकार के कर्मों की घोषणा की है। वे चार कौन से हैं?"

(4:233 से लेकर 237 तक सभी)

और वह कर्म क्या है जो न अंधकारमय है और न ही प्रकाशमय, जिसका परिणाम भी न अंधकारमय है और न ही प्रकाशमय, वह कर्म जो कर्मों के विनाश की ओर ले जाता है? सती ध्यान का ज्ञान, घटनाओं के विवेक का ज्ञान, वीरता का ज्ञान, पीति का ज्ञान, शांति का ज्ञान, समाधि का ज्ञान और उदासीनता का ज्ञान: यही वह कर्म कहलाता है जो न अंधकारमय है और न ही प्रकाशमय, जिसका परिणाम भी न अंधकारमय है और जो कर्मों के विनाश की ओर ले जाता है।

"भिक्षुओं, ये चार प्रकार के कर्म हैं जिनकी घोषणा मैंने स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिनय) द्वारा करने के बाद की है।"

---

239 निंदनीय (सवज्जा)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? निंदनीय शारीरिक कर्म, निंदनीय वाणी, निंदनीय मानसिक कर्म और निंदनीय दृष्टिकोण। इन चारों गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण कौन से हैं? दोषरहित शारीरिक कर्म, दोषरहित वाणी कर्म, दोषरहित मानसिक कर्म और दोषरहित दृष्टि। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

240 अहानिकारक (अब्यबज्जा)

"भिक्षुओं (मठवासियों), चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? कष्टदायी शारीरिक क्रिया, कष्टदायी वाणी, कष्टदायी मानसिक क्रिया और कष्टदायी दृष्टि। इन चारों गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। [238]

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? कष्ट रहित शारीरिक क्रिया, कष्ट रहित वाणी, कष्ट रहित मानसिक क्रिया और कष्ट रहित दृष्टि। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

241 तपस्वी (समान सं. श्रमण)

"भिक्षुओं, 'केवल यहीं एक तपस्वी, दूसरा तपस्वी, तीसरा तपस्वी और चौथा तपस्वी होता है। अन्य संप्रदाय तपस्वियों से रहित हैं।' 947 इसी प्रकार तुम्हें अपने सिंह की गर्जना सही ढंग से करनी चाहिए।"

(1) "हे भिक्षुओं, प्रथम तपस्वी कौन है? यहाँ, तीन बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, भिक्षु धारा-प्रवेशक (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) बन जाता है, निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं रहता, नियति में स्थिर होकर ज्ञानोदय की ओर अग्रसर होता है। यही प्रथम तपस्वी है।"

(2) "दूसरा तपस्वी कौन है? यहाँ, तीनों बंधनों के पूर्ण नाश और लोभ, घृणा और मोह (मोह) के कम होने के साथ, एक भिक्षु एक बार फिर इस संसार में लौटकर दुखों का अंत करने वाला होता है। यही दूसरा तपस्वी है।"

(3) "तीसरा तपस्वी कौन है? यहाँ, पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ, एक भिक्षु स्वतः पुनर्जन्म लेता है, और उस लोक से वापस आए बिना ही वहाँ अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। यही तीसरा तपस्वी है।"

(4) "और चौथा तपस्वी कौन है? यहाँ, दोषों के नाश के साथ, एक भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान से, इसी जीवन में, मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। यही चौथा तपस्वी है।"

"भिक्षुओं, 'केवल यहीं एक तपस्वी, दूसरा तपस्वी, तीसरा तपस्वी और चौथा तपस्वी है। अन्य संप्रदायों में तपस्वी नहीं हैं।' इसी प्रकार तुम्हें अपने सिंह के समान दहाड़ का सही उच्चारण करना चाहिए।" [239]

अच्छे व्यक्ति के 242 लाभ (सप्पुरिसा-निसंसा)

भिक्षुओं, एक अच्छे व्यक्ति पर भरोसा करने से चार लाभ प्राप्त होते हैं। वे चार लाभ क्या हैं? एक तो उत्तम सद्गुणों में वृद्धि; दूसरा उत्तम समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में वृद्धि; तीसरा उत्तम पन्ना (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि; और चौथा उत्तम मुक्ति में वृद्धि। एक अच्छे व्यक्ति पर भरोसा करने से ये चारों लाभ प्राप्त होते हैं।

वी. ख़तरे और भय (अपपत्ति-भाया)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

243 विच्छेदक (संघ-भेदक)

एक बार भगवान (बुद्ध) कोसंबी में घोषिता उद्यान में निवास कर रहे थे। तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"क्या वह अनुशासनात्मक मामला सुलझ गया है, आनंदा?" 948

"भंते, उस अनुशासनहीनता के मुद्दे का समाधान कैसे हो सकता है? पूज्य अनुराधा के शिष्य बहिया अभी भी संघ में फूट डालने पर तुले हुए हैं, लेकिन पूज्य अनुराधा इस बारे में एक शब्द भी नहीं कहना चाहते।"

"लेकिन, आनंद, अनुराद्ध ने संघ के बीच अनुशासन संबंधी मुद्दों पर कब ध्यान दिया है? क्या आपको, सारिपुत्त और मोग्गलाना को, उत्पन्न होने वाले किसी भी अनुशासन संबंधी मुद्दे को हल नहीं करना चाहिए?"

"इन चार लाभों को देखकर, दुष्ट भिक्षु आनंद संघ में फूट डालने में प्रसन्न होता है। वे चार लाभ क्या हैं?"

(1) "यहाँ, एक दुष्ट भिक्षु अनैतिक, बुरे चरित्र का, अपवित्र, संदिग्ध आचरण वाला, अपने कार्यों में गुप्त, तपस्वी होते हुए भी संन्यासी नहीं, ब्रह्मचारी होते हुए भी ब्रह्मचारी नहीं, [240] भीतर से सड़ा हुआ, भ्रष्ट, पतित होता है। उसे यह विचार आता है: 'यदि भिक्षुओं को पता चल जाए कि मैं अनैतिक... पतित हूँ, और वे एकजुट हैं, तो वे मुझे निष्कासित कर देंगे, परन्तु यदि वे गुटों में बँट जाएँ तो वे मुझे निष्कासित नहीं करेंगे।' इस पहले लाभ को देखकर, एक दुष्ट भिक्षु संघ में फूट डालने में प्रसन्न होता है।

(2) "एक दुष्ट भिक्षु गलत मत रखता है; वह अतिवादी मत का सहारा लेता है। उसके मन में यह विचार आता है: यदि भिक्षुओं को पता चल जाए कि मैं गलत मत रखता हूँ, कि मैं अतिवादी मत का सहारा लेता हूँ, और वे एकजुट हों, तो वे मुझे निष्कासित कर देंगे, परन्तु यदि वे गुटों में बँट जाएँ तो वे मुझे निष्कासित नहीं करेंगे।" इस दूसरे लाभ को देखकर दुष्ट भिक्षु संघ में फूट डालने में प्रसन्न होता है।

(3) "एक दुष्ट भिक्षु कुटिल जीविका का पालन करता है; वह कुटिल जीविका से अपना जीवन यापन करता है। उसके मन में यह विचार आता है: 'यदि भिक्षुओं को पता चल जाए कि मैं कुटिल जीविका का पालन करता हूँ और कुटिल जीविका से अपना जीवन यापन करता हूँ, और वे एकजुट हों, तो वे मुझे निष्कासित कर देंगे, परन्तु यदि वे गुटों में बँट जाएँ तो वे मुझे निष्कासित नहीं करेंगे।' इस तीसरे लाभ को देखकर, एक दुष्ट भिक्षु संघ में फूट डालने में प्रसन्न होता है।"

(4) "फिर, एक दुष्ट भिक्षु लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा का इच्छुक होता है। उसके मन में यह विचार आता है: 'यदि भिक्षुओं को पता चल जाए कि मैं लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा का इच्छुक हूँ, और वे एकजुट हो जाएँ, तो वे मेरा आदर, सम्मान, आदर और पूजा नहीं करेंगे; परन्तु यदि वे गुटों में बँट जाएँ, तो वे मेरा आदर, सम्मान, आदर और पूजा करेंगे।' इस चौथे लाभ को देखकर, एक दुष्ट भिक्षु संघ में फूट डालने में प्रसन्न होता है।"

"इन चारों लाभों को देखकर, दुष्ट भिक्षु आनंद संघ में फूट डालने में प्रसन्न होता है।"

---

244 अपराध (अपत्तिभया)

"भिक्षुओं, अपराध करने के ये चार खतरे हैं। वे चार क्या हैं?"

(1) "मान लो, भिक्षुओं, कि वे किसी चोर, किसी अपराधी को गिरफ्तार करके राजा के सामने पेश करें और कहें: 'महाराज, यह एक चोर, एक अपराधी है। महाराज, इस पर दंड लगाइए।' राजा उनसे कहेंगे: [241] 'जाओ, सज्जनों, और इस आदमी की बाहों को एक मजबूत रस्सी से उसकी पीठ के पीछे कसकर बांध दो, उसका सिर मुंडवा दो, और ढोल की अशुभ थाप के साथ उसे गली-गली, चौक-चौक घुमाओ। फिर उसे दक्षिणी द्वार से बाहर ले जाओ और शहर के दक्षिण में उसका सिर काट दो।' राजा के आदमियों ने आदेशानुसार कार्य किया और उस व्यक्ति का सिर शहर के दक्षिण में काट डाला। किनारे पर खड़ा कोई व्यक्ति सोच सकता था: 'सचमुच, इस आदमी ने कोई जघन्य, निंदनीय अपराध किया होगा, जिसकी सज़ा सिर कलम करना है, क्योंकि राजा के आदमियों ने उसके हाथ एक मजबूत रस्सी से कसकर पीछे बांध दिए... और शहर के दक्षिण में उसका सिर काट डाला। वास्तव में, मैं कभी ऐसा जघन्य, निंदनीय, सिर कलम करने लायक अपराध नहीं करूँगा।'

इसी प्रकार, जब किसी भिक्षु या भिक्षुणी ने पराजिका अपराधों के संबंध में खतरे की ऐसी तीव्र अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) विकसित कर ली हो, तो यह अपेक्षा की जा सकती है कि जिसने कभी पराजिका अपराध नहीं किया है, वह ऐसा अपराध नहीं करेगा; और जिसने ऐसा अपराध किया है, वह धम्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करेगा।

(2) "मान लीजिए, भिक्षुओं, कोई व्यक्ति अपने आप को काले वस्त्र में लपेट ले, अपने बाल खोल दे, अपने कंधे पर गदा रख ले और लोगों की एक बड़ी भीड़ से कहे: 'हे सज्जनों, मैंने एक निंदनीय, दंडनीय, बुरा कर्म किया है। मुझे वह करने दीजिए जिससे आप मुझसे प्रसन्न हों।' किनारे पर खड़ा कोई व्यक्ति सोच सकता है: 'वास्तव में, इस व्यक्ति ने अवश्य ही एक निंदनीय, दंडनीय, बुरा कर्म किया होगा, क्योंकि उसने अपने आप को काले वस्त्र में लपेट लिया है, अपने बाल खोल दिए हैं, अपने कंधे पर गदा रख ली है और लोगों की एक बड़ी भीड़ से कहता है: "हे सज्जनों, मैंने एक निंदनीय, दंडनीय, बुरा कर्म किया है। मुझे वह करने दीजिए जिससे आप मुझसे प्रसन्न हों।" [242] वास्तव में, मुझे कभी भी ऐसा निंदनीय, दंडनीय, बुरा कर्म नहीं करना चाहिए।'

इसी प्रकार, जब किसी भिक्षु या भिक्षुणी ने संघादिशेष अपराधों के संबंध में खतरे की ऐसी तीव्र समझ (सन्ना/संग्या) विकसित कर ली हो, तो यह अपेक्षा की जा सकती है कि जिसने कभी संघादिशेष अपराध नहीं किया है, वह ऐसा अपराध नहीं करेगा, और जिसने ऐसा अपराध किया है, वह धम्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करेगा। 951

(3) "मान लीजिए, भिक्षुओं, कोई व्यक्ति अपने आप को काले कपड़े में लपेट ले, अपने बाल खोल दे, अपने कंधे पर राख की बोरी रख ले और लोगों की एक बड़ी भीड़ से कहे: 'हे सज्जनों, मैंने एक निंदनीय, निंदनीय, बुरा कर्म किया है, जिसका दंड राख की बोरी है। मुझे वह करने दीजिए जिससे आप मुझसे प्रसन्न हों।' किनारे पर खड़ा कोई व्यक्ति सोच सकता है: 'सचमुच, इस व्यक्ति ने अवश्य ही एक निंदनीय, निंदनीय, बुरा कर्म किया होगा, जिसका दंड राख की बोरी है, क्योंकि इसने अपने आप को काले कपड़े में लपेट लिया है, अपने बाल खोल दिए हैं, अपने कंधे पर राख की बोरी रख ली है और लोगों की एक बड़ी भीड़ से कहता है: 'हे सज्जनों, मैंने एक निंदनीय, निंदनीय, बुरा कर्म किया है, जिसका दंड राख की बोरी है। मुझे वह करने दीजिए जिससे आप मुझसे प्रसन्न हों।' वास्तव में, मैं कभी भी ऐसा निंदनीय, बुरा कर्म नहीं करूँगा, जिसका दंड राख की बोरी हो।'

इसी प्रकार, जब किसी भिक्षु या भिक्षुणी ने पचित्ति अपराधों के संबंध में खतरे की ऐसी तीव्र समझ (सन्ना/संज्ञा) विकसित कर ली हो, तो यह अपेक्षा की जा सकती है कि जिसने कभी पचित्ति अपराध नहीं किया है, वह ऐसा अपराध नहीं करेगा, और जिसने ऐसा अपराध किया है, वह धम्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करेगा। 953

(4) "मान लीजिए, भिक्षुओं, कोई व्यक्ति अपने आप को काले कपड़े में लपेट ले, अपने बाल खोल दे और लोगों की एक बड़ी भीड़ से कहे: 'हे सज्जनों, मैंने एक बुरा, निंदनीय, दंडनीय कर्म किया है। मुझे वह करने दीजिए जिससे आप मुझसे प्रसन्न हों।' किनारे पर खड़ा कोई व्यक्ति सोच सकता है: 'सचमुच, इस व्यक्ति ने एक बुरा, निंदनीय, दंडनीय कर्म किया होगा, क्योंकि उसने अपने आप को काले कपड़े में लपेट लिया है, अपने बाल खोल दिए हैं और लोगों की एक बड़ी भीड़ से कहता है: [243] "हे सज्जनों, मैंने एक बुरा, निंदनीय, दंडनीय कर्म किया है। मुझे वह करने दीजिए जिससे आप मुझसे प्रसन्न हों।" वास्तव में, मुझे कभी भी ऐसा बुरा, निंदनीय, दंडनीय कर्म नहीं करना चाहिए।

इसी प्रकार, जब किसी भिक्षु या भिक्षुणी ने पतिदेशीय अपराधों के संबंध में खतरे की ऐसी तीव्र समझ (सन्ना/संग्या) विकसित कर ली हो, तो यह अपेक्षा की जा सकती है कि जिसने कभी पतिदेशीय अपराध नहीं किया है, वह ऐसा अपराध नहीं करेगा, और जिसने ऐसा अपराध किया है, वह धम्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करेगा। 954

"भिक्षुओं, ये चार अपराध के खतरे हैं।"

---

245 प्रशिक्षण (सिक्खनिसंसा)

भिक्षुओं, यह ब्रह्मचर्य जीवन प्रशिक्षण को लाभ मानकर, पन्ना (दिव्य ज्ञान) को मार्गदर्शक मानकर, मुक्ति को मूल मानकर और सती ध्यान को अपना अधिकार मानकर व्यतीत किया जाता है।

(1) "हे भिक्षुओं, प्रशिक्षण से क्या लाभ है? यहाँ, उचित आचरण संबंधी प्रशिक्षण 956 मैंने अपने शिष्यों को निर्धारित किया है ताकि जो आत्मविश्वासहीन हैं वे आत्मविश्वास प्राप्त करें और जो आत्मविश्वासी हैं वे अपने आत्मविश्वास में वृद्धि करें। इस उचित आचरण संबंधी प्रशिक्षण को ठीक उसी प्रकार ग्रहण करें जैसे मैंने अपने शिष्यों को निर्धारित किया है, इसे अटूट, त्रुटिरहित, बेदाग और निष्कलंक रखते हुए, ताकि जो आत्मविश्वासहीन हैं वे आत्मविश्वास प्राप्त करें और जो आत्मविश्वासी हैं वे अपने आत्मविश्वास में वृद्धि करें। इन्हें ग्रहण करने के बाद, प्रशिक्षण नियमों का अभ्यास करें।"

"पुनः, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूलभूत प्रशिक्षण 957 का मैंने अपने शिष्यों को दुखों के पूर्णतः नाश के लिए विधान किया है। इस ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूलभूत प्रशिक्षण को ठीक उसी प्रकार ग्रहण किया जाता है जिस प्रकार मैंने अपने शिष्यों को दुखों के पूर्णतः नाश के लिए, उन्हें अक्षुण्ण, दोषरहित, निष्कलंक और बेदाग रखते हुए, इसका विधान किया है। इन्हें ग्रहण करने के बाद, व्यक्ति प्रशिक्षण नियमों का अभ्यास करता है। इसी प्रकार यह प्रशिक्षण अपना लाभ देता है।"

(2) "और पन्ना (दिव्य ज्ञान) इसका पर्यवेक्षक कैसे है? यहाँ, मैंने अपने शिष्यों को दुखों के पूर्णतः नाश के लिए ये शिक्षाएँ दी हैं। इन शिक्षाओं का पन्ना (दिव्य ज्ञान) से उसी प्रकार विश्लेषण किया जाता है जिस प्रकार मैंने अपने शिष्यों को दुखों के पूर्णतः नाश के लिए ये शिक्षाएँ दी हैं। इसी प्रकार पन्ना (दिव्य ज्ञान) इसका पर्यवेक्षक है। [958]

(3) "और मुक्ति इसका मूल तत्व कैसे है? यहाँ, मैंने अपने शिष्यों को दुख के पूर्ण विनाश के लिए शिक्षाएँ दी हैं। मुक्ति के माध्यम से व्यक्ति उन शिक्षाओं का अनुभव ठीक उसी प्रकार करता है जिस प्रकार मैंने उन्हें अपने शिष्यों को दुख के पूर्ण विनाश के लिए सिखाया है। इसी प्रकार मुक्ति इसका मूल तत्व है।"

(4) "और सती ध्यान (ध्यान) इसका अधिकार कैसे है? व्यक्ति का सती ध्यान आंतरिक रूप से इस प्रकार स्थापित होता है: मैं अच्छे आचरण से संबंधित उस प्रशिक्षण को पूरा करूँगा जिसे मैंने अभी तक पूरा नहीं किया है या विभिन्न पहलुओं में अच्छे आचरण से संबंधित उस प्रशिक्षण में पन्ना (दिव्य ज्ञान) से सहायता करूँगा जिसे मैंने पूरा कर लिया है।" [960] और व्यक्ति का सती ध्यान आंतरिक रूप से इस प्रकार स्थापित होता है: मैं ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूल सिद्धांतों से संबंधित उस प्रशिक्षण को पूरा करूँगा जिसे मैंने अभी तक पूरा नहीं किया है या विभिन्न पहलुओं में ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूल सिद्धांतों से संबंधित उस प्रशिक्षण में पन्ना (दिव्य ज्ञान) से सहायता करूँगा जिसे मैंने पूरा कर लिया है।" और मनन (सती ध्यान) आंतरिक रूप से इस प्रकार स्थापित होता है: 'मैं इसी प्रकार उन शिक्षाओं का गहन अध्ययन (दिव्य ज्ञान) से करूँगा जिनका मैंने अभी तक अध्ययन नहीं किया है, या उन शिक्षाओं में विभिन्न पहलुओं से सहायता करूँगा जिनका मैंने अध्ययन किया है।' और मनन (सती ध्यान) आंतरिक रूप से इस प्रकार स्थापित होता है: 'मैं इसी प्रकार उस धम्म का मोक्ष के माध्यम से अनुभव करूँगा जिसका मैंने अभी तक अनुभव नहीं किया है, या उस धम्म में विभिन्न पहलुओं से सहायता करूँगा जिसका मैंने अनुभव किया है।' इसी प्रकार मनन (सती ध्यान) ही इसका आधार है।

अत: जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, यह ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) प्रशिक्षण को लाभ के रूप में, पन्ना (दिव्य ज्ञान) को मार्गदर्शक के रूप में, मुक्ति को अपने मूल में और सती (ध्यान) को अपने अधिकार के रूप में लेकर जिया जाता है,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।

---

246 लेटना (सेय्या सं. शैय्या)

भिक्षुओं, लेटने की ये चार मुद्राएँ हैं। कौन सी चार? शव की मुद्रा, कामुक की मुद्रा, सिंह की मुद्रा और तथागत (बुद्ध) की मुद्रा।

(1) "और शव की मुद्रा क्या होती है? शव आमतौर पर अपनी पीठ के बल सपाट पड़े होते हैं। इसे शव की मुद्रा कहा जाता है।

(2) "और कामुक व्यक्ति की मुद्रा क्या है? कामुक व्यक्ति आमतौर पर अपनी बाईं ओर लेटता है। इसे कामुक व्यक्ति की मुद्रा कहा जाता है।

(3) "और सिंह की मुद्रा क्या है? सिंह, जो पशुओं का राजा है, अपनी दाहिनी ओर लेटता है, एक पैर को दूसरे से ढककर और अपनी पूंछ को जांघों के बीच दबाकर। जब वह जागता है, तो वह अपने अगले पैरों को ऊपर उठाता है और अपने पिछले पैरों की ओर देखता है। यदि सिंह को अपने शरीर में कोई अव्यवस्था या सूजन दिखाई देती है, तो वह अप्रसन्न होता है। यदि उसे अपने शरीर में कोई अव्यवस्था या सूजन दिखाई नहीं देती है, तो वह प्रसन्न होता है। इसे सिंह की मुद्रा कहा जाता है।"

(4) तथागत (बुद्ध) की मुद्रा क्या है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, तथागत प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करते हैं और निवास करते हैं... चतुर्थ ध्यान में। इसे तथागत (बुद्ध) की मुद्रा कहा जाता है।

"ये चार मुद्राएँ हैं।"

---

247 स्तूप के योग्य (थुपा-राहा)

"भिक्षुओं, ये चार स्तूप के योग्य हैं। कौन से चार? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध; पच्चेकबुद्ध; तथागत (बुद्ध) का शिष्य; और विश्व सम्राट। ये चार स्तूप के योग्य हैं।" 961

---

248 पन्ना (दिव्य ज्ञान) की वृद्धि (पन्ना-बुद्धि सं. प्रज्ञा-वृद्धि)

भिक्षुओं, ये चार बातें पन्ना (दिव्य ज्ञान) की वृद्धि की ओर ले जाती हैं। वे चार बातें क्या हैं? अच्छे व्यक्तियों की संगति, अच्छे धम्म का श्रवण, ध्यानपूर्वक चिंतन और धम्म के अनुसार अभ्यास। ये चार बातें पन्ना (दिव्य ज्ञान) की वृद्धि की ओर ले जाती हैं। 962

---

249 सहायक (बहुकारा)

"भिक्षुओं, ये चार बातें मनुष्य के लिए सहायक हैं। वे चार बातें क्या हैं? अच्छे व्यक्तियों की संगति, अच्छे धम्म का श्रवण, ध्यानपूर्वक चिंतन और धम्म के अनुसार अभ्यास। [246] ये चार बातें मनुष्य के लिए सहायक हैं।"

---

250 घोषणाएँ (1) (वोहारा1)

भिक्षुओं, ये चार नीच कथन हैं। कौन से चार? जो आपने नहीं देखा उसे देखने का दावा करना, जो आपने नहीं सुना उसे सुनने का दावा करना, जो आपने नहीं महसूस किया उसे महसूस करने का दावा करना, जो आपने नहीं जाना उसे जानने का दावा करना। ये चार नीच कथन हैं।

---

251 घोषणाएँ (2) (वोहारा2)

भिक्षुओं, ये चार श्रेष्ठ कथन हैं। वे चार क्या हैं? यह कहना कि आपने वह नहीं देखा जो आपने नहीं सुना जो आपने नहीं सुना जो आपने नहीं महसूस किया जो आपने महसूस नहीं किया जो आपने महसूस नहीं किया जो आपने नहीं जाना जो आपने नहीं जाना। ये चार श्रेष्ठ कथन हैं।

---

252 घोषणाएँ (3) (वोहारा3)

भिक्षुओं, ये चार नीच कथन हैं। कौन से चार? जो देखा है उसे न देखने का कहना, जो सुना है उसे न सुनने का कहना, जो महसूस किया है उसे न महसूस करने का कहना, और जो जाना है उसे न जानने का कहना। ये चार नीच कथन हैं।

---

253 घोषणाएँ (4) (वोहारा4)

भिक्षुओं, ये चार श्रेष्ठ घोषणाएँ हैं। वे चार कौन सी हैं? जो देखा है उसे कहना, जो सुना है उसे कहना, जो महसूस किया है उसे कहना, जो जाना है उसे कहना, जो जाना है उसे कहना। ये चार श्रेष्ठ घोषणाएँ हैं।

VI. प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिज्ञान सं. अभिज्ञान)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

254 प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिज्ञान सं. अभिज्ञान)

भिक्षुओं, ये चार बातें हैं। वे चार बातें क्या हैं? (1) वे बातें हैं जिन्हें प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा पूर्णतः समझा जा सकता है। (2) वे बातें हैं जिन्हें प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा त्यागा जा सकता है। (3) वे बातें हैं जिन्हें प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा विकसित किया जा सकता है। (4) वे बातें हैं जिन्हें प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा अनुभव किया जा सकता है।

(1) "और हे भिक्षुओं, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) द्वारा पूर्णतः क्या समझा जा सकता है? आसक्ति के अधीन पाँच समूह। इन्हें प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा पूर्णतः समझा जा सकने वाला कहा जाता है।"

(2) "प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा किन चीजों का त्याग करना चाहिए? अज्ञान और अस्तित्व के लिए तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) (भावो/पुनर्जन्म का कारण)। इन्हें प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा त्यागी जाने वाली चीजें (अभिन) कहा जाता है।"

(3) "प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा विकसित की जाने वाली वस्तुएँ क्या हैं? समभाव (समथा) और अंतर्दृष्टि (विपश्यना)। इन्हें प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा विकसित की जाने वाली वस्तुएँ कहा जाता है।"

(4) "प्रत्यक्ष ज्ञान से क्या-क्या चीजें प्राप्त होती हैं? सच्चा ज्ञान और मुक्ति। इन्हें प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से प्राप्त होने वाली चीजें कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये चार चीजें हैं।"

---

255 Quests (परियेसन)

भिक्षुओं, ये चार नीच खोजें हैं। 965 वे चार क्या हैं? (1) जो स्वयं वृद्धावस्था के अधीन है, वह केवल वृद्धावस्था से संबंधित चीजों की ही खोज करता है; (2) जो स्वयं रोग के अधीन है, वह केवल रोग से संबंधित चीजों की ही खोज करता है; (3) जो स्वयं मृत्यु के अधीन है, वह केवल मृत्यु से संबंधित चीजों की ही खोज करता है; और (4) जो स्वयं अपवित्रता के अधीन है, वह केवल अपवित्रता से संबंधित चीजों की ही खोज करता है। ये चार नीच खोजें हैं।

भिक्षुओं, ये चार प्रमुख खोज हैं। वे चार क्या हैं? (1) जो स्वयं वृद्धावस्था के अधीन है, वृद्धावस्था के खतरे को समझकर अमरता की खोज करता है; बंधनों से अतुलनीय सुरक्षा, निर्वाण; (2) जो स्वयं रोग के अधीन है, रोग के खतरे को समझकर रोगमुक्त, बंधनों से अतुलनीय सुरक्षा, निर्वाण; (3) जो स्वयं मृत्यु के अधीन है, मृत्यु के खतरे को समझकर अमरता की खोज करता है; बंधनों से अतुलनीय सुरक्षा, निर्वाण; (4) जो स्वयं अपवित्रता के अधीन है, अपवित्रता के खतरे को समझकर निष्कलंक, बंधनों से अतुलनीय सुरक्षा, निर्वाण। ये चार प्रमुख खोज हैं।

---

256 निर्वाह (संगहवत्थु सं. संग्रह-वस्तु)

भिक्षुओं, सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने के ये चार साधन हैं। वे चार क्या हैं? दान देना, मधुर वाणी, परोपकारी आचरण और निष्पक्षता। ये सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने के चार साधन हैं।

---

257 मलुक्यपुत्त (सं. मलुक्य-पुत्र)

तब पूज्य मलुक्यपुत्त भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: 967 "भंते, यह अच्छा होगा यदि भगवान (बुद्ध) मुझे संक्षेप में धम्म का उपदेश दें, ताकि भगवान (बुद्ध) से धम्म सुनकर मैं एकांत में, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ रह सकूँ।"

"मालुंक्यापुत्त, अब हम युवा भिक्षुओं से क्या कहें जब आप जैसे वृद्ध, कमजोर और उम्रदराज व्यक्ति तथागत (बुद्ध) से संक्षिप्त उपदेश मांगें?"

"भंते, हे भगवान (बुद्ध) मुझे संक्षेप में धम्म का उपदेश दें! हे सुगत (भगवान बुद्ध) मुझे संक्षेप में धम्म का उपदेश दें! शायद मैं भगवान (बुद्ध) के कथन का अर्थ समझ सकूँ; शायद मैं भगवान (बुद्ध) के कथन का उत्तराधिकारी बन सकूँ।"

"हे मालुक्यपुत्त, भिक्षु के लिए तृष्णा के ये चार स्रोत हैं। वे चार क्या हैं? भिक्षु में तृष्णा वस्त्रों, भिक्षा, आवास या जीवन यापन के लिए उत्पन्न होती है। 968 ये भिक्षु के लिए तृष्णा के चार स्रोत हैं। [249] हे मालुक्यपुत्त, जब कोई भिक्षु तृष्णा का त्याग कर देता है, उसे जड़ से काट देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान नष्ट कर देता है, जिससे वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो, तो उसे तृष्णा का नाश करने वाला, बंधन तोड़ने वाला और अहंकार को पूरी तरह से तोड़कर दुखों का अंत करने वाला भिक्षु कहा जाता है।"

तब पूज्य मलुक्यपुत्त, भगवान (बुद्ध) द्वारा इस प्रकार प्रेरित होकर, अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और चले गए।

फिर, एकांतवास में, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ, पूज्य मलुक्यपुत्त ने अल्पकाल में ही प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से ब्रह्मचर्य जीवन के उस श्रेष्ठ लक्ष्य को जान लिया, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन अपनाते हैं, और उसमें प्रवेश करके वे लीन हो गए। उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान से जाना: "पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य जीवन जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी जन्म-मृत्यु का कोई आरोहण नहीं है।" और पूज्य मलुक्यपुत्त अरहंतों में से एक बन गए।

---

258 परिवार/कुल (कुला)

भिक्षुओं, धन की प्रचुरता प्राप्त करने के बाद जो भी परिवार दीर्घकाल नहीं रह पाते, वे सभी चार कारणों से या उनमें से किसी एक विशेष कारण से दीर्घकाल नहीं रह पाते। वे चार कारण क्या हैं? (1) वे खोई हुई वस्तु की खोज नहीं करते; (2) वे जीर्ण-शीर्ण वस्तु का जीर्ण-शीर्ण होना नहीं सुधारते; (3) वे अत्यधिक खाने-पीने में लिप्त रहते हैं; या (4) वे किसी अनैतिक स्त्री या पुरुष को अपना मुखिया नियुक्त करते हैं। धन की प्रचुरता प्राप्त करने के बाद जो भी परिवार दीर्घकाल नहीं रह पाते, वे सभी इन चार कारणों से या उनमें से किसी एक विशेष कारण से दीर्घकाल नहीं रह पाते। 969

भिक्षुओं, धन की प्रचुरता प्राप्त करने के बाद जो भी परिवार दीर्घकाल तक टिके रहते हैं, वे सभी चार कारणों से, या उनमें से किसी एक विशेष कारण से, दीर्घकाल तक टिके रहते हैं। वे चार कारण क्या हैं? (1) वे खोई हुई चीजों की खोज करते हैं; (2) वे जीर्ण-शीर्ण चीजों का जीर्णोद्धार करते हैं; (3) वे खाने-पीने में संयम बरतते हैं; और (4) वे किसी गुणी स्त्री या पुरुष को अपना मुखिया नियुक्त करते हैं। धन की प्रचुरता प्राप्त करने के बाद जो भी परिवार दीर्घकाल तक टिके रहते हैं, वे सभी इन चार कारणों से, या उनमें से किसी एक विशेष कारण से, दीर्घकाल तक टिके रहते हैं। [250]

---

259 थोरब्रेड (1) (अजानिया)

भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) के लिए, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा चार गुणों से युक्त होता है, जो राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का प्रतीक माना जाता है। 970 वे चार गुण क्या हैं? यहाँ, राजा के उत्तम नस्ल के घोड़े में सुंदरता, शक्ति, गति और उचित अनुपात होते हैं। इन चार गुणों से युक्त होने के कारण, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा... राजत्व का प्रतीक माना जाता है।

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य; आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है। वे चार गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु सौंदर्य, बल, गति और उचित अनुपात से युक्त होता है।"

(1) "भिक्षु में सौंदर्य कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त होता है, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। इसी प्रकार भिक्षु में सौंदर्य होता है।"

(2) "भिक्षु को बल कैसे प्राप्त होता है? यहाँ, भिक्षु ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को प्रेरित किया है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है। इसी प्रकार भिक्षु को बल प्राप्त होता है।"

(3) "भिक्षु को गति कैसे प्राप्त होती है? यहाँ, भिक्षु यथार्थ को समझता है: 'यह दुख है'; वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का मूल है'; वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का निवारण है'; वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' इसी प्रकार भिक्षु को गति प्राप्त होती है।"

(4) "और एक भिक्षु सही अनुपात कैसे प्राप्त करता है? यहाँ, भिक्षु वह है जो वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन प्राप्त करता है। इसी प्रकार एक भिक्षु सही अनुपात प्राप्त करता है। [251]

"इन चार गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होता है और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र होता है।"

---

260 थोरब्रेड (2) (अजानिया2)

[सब कुछ 4:259 के समान है, केवल निम्नलिखित अंतर के साथ:] 971 (3) "और एक भिक्षु (साधु) गति कैसे प्राप्त करता है? यहाँ, दोषों के नाश के साथ, एक भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इसी प्रकार एक भिक्षु गति प्राप्त करता है।" [252]

---

261 शक्तियां (बाला)

भिक्षुओं, ये चार शक्तियाँ हैं। कौन सी चार? ऊर्जा की शक्ति (प्रयास/वीर्य), ध्यान की शक्ति (सती), समाधि की शक्ति (स्व-लीन/सम्मोहन), और पन्ना की शक्ति (दिव्य ज्ञान)। ये चार शक्तियाँ हैं।

---

262 वन (अरन्ना सं. अरण्य)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त भिक्षु वनों और झाड़ियों में एकांतवास करने के योग्य नहीं होते। वे चार गुण क्या हैं? [वे सोचते हैं] (1) कामुक विचार, (2) द्वेषपूर्ण विचार, और (3) हानि पहुँचाने के विचार; और (4) वे नासमझ, मूर्ख और मंदबुद्धि होते हैं। इन चार गुणों से युक्त भिक्षु वनों और झाड़ियों में एकांतवास करने के योग्य नहीं होते।

"चार अन्य गुणों से युक्त भिक्षु वनों और झाड़ियों में एकांतवास करने के योग्य होता है। वे चार गुण क्या हैं? (1) वह त्याग के विचार रखता है, (2) सद्भावना का भाव रखता है, और (3) अहिंसा का भाव रखता है; और (4) वह बुद्धिमान होता है, मूर्ख या मंदबुद्धि नहीं। इन चार गुणों से युक्त भिक्षु वनों और झाड़ियों में एकांतवास करने के योग्य होता है।"

---

263 क्रिया (कर्म बिना कर्म)

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) में चार गुण होते हैं, अज्ञानी, अयोग्य, दुष्ट व्यक्ति स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है; वह निंदनीय है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे चार गुण क्या हैं? निंदनीय शारीरिक कर्म, निंदनीय वाणी, निंदनीय मानसिक कर्म और निंदनीय दृष्टि। [253] इन चार गुणों से युक्त होने के कारण... वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।"

भिक्षुओं, चार अन्य गुणों से युक्त बुद्धिमान, योग्य और नेक व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और चोट रहित रखता है; वह निर्दोष होता है और बुद्धिमानों की दृष्टि में निंदा से परे होता है; और वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे चार गुण क्या हैं? निर्दोष शारीरिक कर्म, निर्दोष वाणी कर्म, निर्दोष मानसिक कर्म और निर्दोष दृष्टि। इन चार गुणों से युक्त होकर... वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

VII. कर्मों के मार्ग (कर्मपथ संस्कृत: कर्म-पथ)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

264 जीवन का विनाश (पनातिपति)

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? वह स्वयं जीवन का नाश करता है; वह दूसरों को जीवन का नाश करने के लिए प्रोत्साहित करता है; वह जीवन के नाश का समर्थन करता है; और वह जीवन के नाश की प्रशंसा करता है। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? वह स्वयं जीवन-नष्ट करने से परहेज करता है; वह दूसरों को भी जीवन-नष्ट करने से परहेज करने के लिए प्रोत्साहित करता है; वह जीवन-नष्ट करने से परहेज करने का समर्थन करता है; और वह जीवन-नष्ट करने से परहेज करने की प्रशंसा करता है। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

265 - 273 जो नहीं दिया गया है उसे लेना, इत्यादि।

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? 972 (1) वह स्वयं वह लेता है जो उसे नहीं दिया गया है... [254] ... यौन दुराचार में लिप्त रहता है... झूठ बोलता है... फूट डालता है... कठोर बोलता है... [255] ... व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है... लालसा से भरा रहता है... द्वेष रखता है... गलत मत रखता है; (2) वह दूसरों को गलत मत में प्रोत्साहित करता है; (3) वह गलत मत का समर्थन करता है; और (4) वह गलत मत की प्रशंसा करता है। इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

भिक्षुओं, चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चार गुण क्या हैं? (1) वह स्वयं अनचाही वस्तुएँ लेने से परहेज करता है... सही दृष्टिकोण रखता है; (2) वह दूसरों को सही दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है; (3) वह सही दृष्टिकोण का समर्थन करता है; और (4) वह सही दृष्टिकोण की प्रशंसा करता है। [256] इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

आठवीं. वासना (राग) और आगे दोहराव श्रृंखला (राग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

274 ध्यान साधना (सती) की विधियाँ

भिक्षुओं, राग के प्रत्यक्ष ज्ञान के लिए चार चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे चार चीजें क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु शरीर को शरीर में देखते हुए, पूरी तरह से समझते हुए, सती भाव से ध्यान लगाते हुए, संसार के प्रति लालसा और निराशा को दूर करते हुए ध्यान में रहता है। (2) वह वेदनाओं को वेदनाओं में देखते हुए ध्यान में रहता है... (3) मन को मन में देखते हुए... (4) घटनाओं को घटनाओं में देखते हुए, पूरी तरह से समझते हुए, सती भाव से ध्यान लगाते हुए, संसार के प्रति लालसा और निराशा को दूर करते हुए। राग के प्रत्यक्ष ज्ञान के लिए इन चार चीजों का विकास करना आवश्यक है।

---

275 चार सही प्रयास

भिक्षुओं, राग के प्रत्यक्ष ज्ञान के लिए चार चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे चार चीजें क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु अजन्मे अहानिकारक अकुशल अवस्थाओं के उत्पन्न न होने की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत करता है, अपने मन को लगाता है और परिश्रम करता है। (2) वह उत्पन्न अहानिकारक अकुशल अवस्थाओं के त्याग की इच्छा उत्पन्न करता है... (3) ... अजन्मे लाभकारी अवस्थाओं के उत्पन्न होने की इच्छा उत्पन्न करता है... (4) ... उत्पन्न लाभकारी अवस्थाओं के रखरखाव, उनके अवनति, वृद्धि, विस्तार और विकास द्वारा पूर्णता के लिए; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत करता है, अपने मन को लगाता है और परिश्रम करता है। राग के प्रत्यक्ष ज्ञान के लिए इन चार चीजों का विकास करना आवश्यक है।

---

276 मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) के चार आधार

भिक्षुओं, राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए चार चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे चार चीजें क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु उस मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है जो इच्छा और कर्मों के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में लीन रहती है। (2) वह उस मानसिक शक्ति (जादू) का आधार विकसित करता है जो ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में लीन रहती है... (3) ...जो मन के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में लीन रहती है... (4) ...जो खोज और कर्मों के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में लीन रहती है। राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन चार चीजों का विकास करना आवश्यक है।

---

277 -303

"भिक्षुओं (संतों), कामवासना (राग) की पूर्ण समझ के लिए... उसके पूर्ण विनाश के लिए... उसके त्याग के लिए... [257]... उसके विनाश के लिए... उसके लुप्त होने के लिए... उसके मिट जाने के लिए... उसके रुकने के लिए... उसके त्याग के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए, इन चार चीजों का विकास करना चाहिए।" 97

---

304 — 783

भिक्षुओं, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के लिए... पूर्ण समझ के लिए... पूर्ण विनाश के लिए... त्याग के लिए... विनाश के लिए... लुप्त होने के लिए... मिट जाने के लिए... समाप्ति के लिए... त्याग के लिए... घृणा के लिए... मोह के लिए... क्रोध के लिए... शत्रुता के लिए... निंदा के लिए... उद्दंडता के लिए... ईर्ष्या के लिए... कंजूसी के लिए... छल के लिए... धूर्तता के लिए... हठ के लिए... उग्रता के लिए... अहंकार के लिए... घमंड के लिए... नशा के लिए... आलस्य के लिए, इन चार चीजों का विकास करना है। वे चार क्या हैं? (1) यहाँ, एक भिक्षु ध्यान (अनुपसी) में रहते हुए देखता है... शरीर में शरीर . . . (2) . . . संवेदनाओं में भावनाएँ (वेदना) . . . (3) . . . मन में मन . . . (4) . . . घटनाओं में धम्म, उत्साही, पूर्णतः बोधशील, सती (ध्यान करते हुए), संसार के प्रति लालसा और निराशा को दूर करते हुए। (1) यहाँ, एक भिक्षु अजन्मे बुरे हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं के अजन्मे होने की इच्छा उत्पन्न करता है . . . (2) . . . उत्पन्न बुरे हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं के त्याग के लिए . . . (3) . . . अजन्मे लाभकारी (कुशल) अवस्थाओं के उत्पन्न होने के लिए . . . (4) . . . उत्पन्न लाभकारी (कुशल) अवस्थाओं के रखरखाव के लिए, उनके अवनति, वृद्धि, विस्तार और विकास द्वारा पूर्णता के लिए; वह प्रयास करता है। ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जागृत करता है, मन लगाता है और प्रयास करता है। (1) यहाँ, एक भिक्षु मनोकामना के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है... (2) ...जो ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) प्राप्त करता है... (3) ...जो मन के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) प्राप्त करता है... (4) ...जो अन्वेषण और प्रयास के कार्यों के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) प्राप्त करता है। आलस्य के त्याग के लिए, इन चार चीजों को विकसित करना आवश्यक है।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह सुनकर भिक्षु प्रसन्न हुए और भगवान (बुद्ध) के इस कथन से उन्हें बहुत आनंद हुआ।

द बुक ऑफ द फोर का काम पूरा हो गया है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय >> 5.पांचों की पुस्तक

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का पांचवा खंड है। यह भिक्खु बोधि का संशोधित संस्करण है।

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN4) अगला (AN6) >>>>

अंतर्वस्तु

1पंचकनिपाता की पुस्तक

1.1पहले पचास

1.1.1I. प्रशिक्षु की शक्तियाँ (सेखाबाला सं. शिष्य-बाला)

1.1.1.11 संक्षेप में (संखित्त सं. संक्षिप्त)

1.1.1.22 विस्तार से (विड्डता सं. विस्तारा)

1.1.1.33. दुख (दुक्खा)

1.1.1.44. मानो वहाँ लाया गया हो (यथाभट)

1.1.1.55 प्रशिक्षण (सिक्खा सं. शिक्षा)

1.1.1.66 प्रवेश करना (समापत्ति)

1.1.1.77 कामुक सुख (काम)

1.1.1.88 फॉलिंग अवे (कैवाना)

1.1.1.99 अनादरपूर्ण (1) (अगरवा1)

1.1.1.1010 अनादरपूर्ण (2) (अगरवा2)

1.1.2II. शक्तियाँ (बाला)

1.1.2.111. पहले कभी नहीं सुना गया (अननुस्सुता)

1.1.2.212 शिखर (1) (कुटा)

1.1.2.313 संक्षेप में (संखित्त सं. संक्षिप्त)

1.1.2.414 विस्तृत रूप से (विड्डता)

1.1.3=15 देखा जाना (दत्तब्बा सं. दृष्टव्य)

1.1.3.116 शिखर (2) (पुनाकुटा)

1.1.3.217 कल्याण (1) (हिता1)

1.1.3.318 कल्याण (2) (हिता2)

1.1.3.419 कल्याण (3) (हिता3)

1.1.3.520 कल्याण (4) (हिता4)

1.1.4तृतीय. पंचांगिका

1.1.4.121 अनादरपूर्ण (1) (अगरवा1)

1.1.4.222 अनादरपूर्ण (2) (अगरवा2)

1.1.4.323 दोष (उपक्किलेशा संस्कृत उपक्लेश)

1.1.4.424 अनैतिक (दुस्सिल)

1.1.4.525 सहायता प्राप्त (अनुगहिता)

1.1.4.626 मुक्ति (विमुत्तयातन)

1.1.4.727 समाधि (स्वयं में लीन होना/सम्मोहन अवस्था)

1.1.4.828 पंचगुणित (पंचांगिका)

1.1.4.929. चलते हुए ध्यान (चंकमा संस्कृत: चंकरामना)

1.1.4.1030 नागिता

1.1.5IV. सुमना-वग्गो

1.1.5.131 सुमाना

1.1.5.232 कुंडी [1003]

1.1.5.333 उगाहा

1.1.5.434 सिहा (सिहा सेनापति सं. सिंघा/शेर)

1.1.5.535 दान के लाभ (दाननिसंसा)

1.1.5.636 समय पर दान (कलादान)

1.1.5.737 भोजन का दान (भोजन)

1.1.5.838 आस्था (सद्ध बिना श्रद्धा)

1.1.5.939 Son (Putta sans. Putra)

1.1.5.1040 साल के पेड़ [1018]

1.1.6वी. मुंडा राजा अनुभाग (मुंडा-राजा-वाग्गो)

1.1.6.141 उपयोग (आदिया)

1.1.6.242. अच्छा व्यक्ति (सप्पुरिशा संस्कृत: सद्पुरुष)

1.1.6.343 इच्छा की गई (इत्था)

1.1.6.444 मनभावनता प्रदान करने वाला (मनपदायी)

1.1.6.545 योग्यता की धाराएँ 1035 (पुन्नभिसन्द)

1.1.6.646 उपलब्धियाँ (संपदा)

1.1.6.747 धन (धन)

1.1.6.848 अप्राप्य परिस्थितियाँ (अलब्बनियाथाना)

1.1.6.949 कोसला

1.1.6.1050 नारदा

1.2दूसरा पचास

1.2.1I. बाधा अनुभाग (निवारणावग्गो)

1.2.1.151 आवरण/बाधाएं (अवराना)

1.2.1.252 हानिकारक ढेर (अकुशलरासी सं. अकुशल-राशि)

1.2.1.353 कारक (पधानियंगा)

1.2.1.454 अवसर (समय)

1.2.1.555 माता और पुत्र (मातापुत्त)

1.2.1.656 उपदेशक (उपज्झाय सं. उपाध्याय)

1.2.1.757 विषय-वस्तु

1.2.1.858 लिच्छवी युवक

1.2.1.959 वृद्धावस्था में साधु जीवन में चले गए (1) (वुद्धपब्बजिता सं. वृद्ध प्रवरजिता)

1.2.1.1060 वृद्धावस्था में साधु जीवन में चले गए (2) (वुद्धपब्बजिता सं. वृद्ध प्रवरजिता)

1.2.2द्वितीय. संज्ञान (सन्ना सं. संज्ञा)

1.2.2.161 धारणाएँ (1)(सन्ना1 सं. संज्ञा)

1.2.2.262 धारणाएँ (2) (सन्न2 सं. संज्ञा)

1.2.2.363 वृद्धि (1) (वधि1 सं. वृद्धि)

1.2.2.464 विकास (2) (वद्धि2 सं. वृद्धि)

1.2.3=65 चर्चा (सकच्छा)

1.2.3.166 जीवन शैली (सजीव)

1.2.3.267 मानसिक शक्ति (जादू) के आधार (1) (इद्धिपाद1)

1.2.3.368 मानसिक शक्ति (जादू) के आधार (2) (इद्धिपाद 2)

1.2.3.469 मोहभंग (निब्बिडा)

1.2.3.570 दशों का नाश (असवक्खय सं. आश्रव-क्षय)

1.2.4III. योद्धा (योद्धाजीव)

1.2.4.171 मन की मुक्ति (1) (सीटोविमुट्टीफला1 सं. सेटो-विमुक्ति-फला)

1.2.4.272 मन की मुक्ति (2) (सीटोविमुट्टीफला2 सं. सेटो-विमुक्ति-फला)

1.2.4.373 वह जो धम्म में निवास करता है (1) (धम्मविहारी1 सं. धर्म-विहारी)

1.2.4.474 वह जो धम्म में निवास करता है (2) (धम्मविहारी2 सं. धर्म विहारी)

1.2.4.575 योद्धा (1) (योद्धाजीव1)

1.2.4.676 योद्धा (2) (योद्धाजीव2)

1.2.4.777 भविष्य के संकट (1) (अनागत-भय1)

1.2.4.878 भविष्य के संकट (2) (अनागत-भाया2)

1.2.4.979 भविष्य के संकट (3) (अनागत-भय3)

1.2.4.1080 भविष्य के संकट (4) (अनागत-भाया4)

1.2.5IV. वरिष्ठ भिक्षु (थेरा संस्कृत: स्थिवरा)

1.2.5.181 उत्तेजक राग

1.2.5.282 अभाव रहित (वितराग)

1.2.5.383 एक षड्यंत्रकारी (कुहाका)

1.2.5.484 विश्वासहीन (असद्ध बिना अश्रद्ध)

1.2.5.585. धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता (अक्खमा)

1.2.5.686 विश्लेषणात्मक ज्ञान (पतिसंभिदपट्टा)

1.2.5.787 सदाचारी (सिलवंता सं. शीलवंता)

1.2.5.888 वरिष्ठ भिक्षु (थेरा संस्कृत: स्थिवरा)

1.2.5.989 एक प्रशिक्षु (1) (सेखा1 सं. शिष्य)

1.2.5.1090 एक प्रशिक्षु (2) (सेखा2 सं. शिष्य)

1.2.6वी. काकुधवग्गा

1.2.6.191 धन (1) (संपदा1)

1.2.6.292 धन (2) (संपदा2)

1.2.6.393 घोषणाएँ (व्याकरण सं. व्यक्त-करण)

1.2.6.494 आराम से रहना (फासुविहार)

1.2.6.595 अविचल (अकुप्पा)

1.2.6.696 जो कुछ सीखा है (सुताधारा)

1.2.6.797 वार्ता (कथा)

1.2.6.898 एक वनवासी (अरन्नक)

1.2.6.999 सिंह (सिहा बिना सिंघा)

1.2.6.10100 ककुधा थेरा

1.3तीसरा पचास

1.3.1I. आराम से रहना (फासुविहार)

1.3.1.1101 डरपोकपन (सरज्जा)

1.3.1.2102 संदिग्ध (उसंकिता सं. शंकित)

1.3.1.3103 एक महान चोर (महा-कोरा)

1.3.1.4104 एक प्रसन्न तपस्वी [1116] (समानसुखुमाला)

1.3.1.5105 आराम (फासुविहार)

1.3.1.6106 आनंद

1.3.1.7107 सदाचारी आचरण (शीला सान. शील)

1.3.1.8108 वन बियॉन्ड ट्रेनिंग (असेखा सं. आशीष्य)

1.3.1.9109 चारों दिशाओं में घर पर (Catuddisa sans. Caturdisha)

1.3.1.10110 वन (अरन्ना सं. अरण्य)

1.3.2द्वितीय. अंधकविन्द [1120]

1.3.2.1111 परिवारों का एक आगंतुक (कुलुपाका)

1.3.2.2112 एक परिचारक भिक्षु (पच्चसमाना)

1.3.2.3113 सम्यक समाधि (सम्मा-समाधि सं. सम्यक-समाधि)

1.3.2.4114 अंधकविंदा

1.3.2.5115 कंजूस नन (मच्चरिनी)

1.3.2.6116 स्तुति (वन्नना सं. वंदना)

1.3.2.7117 ईर्ष्यालु (इस्सुकिनी)

1.3.2.8118 गलत दृश्य (मिचदिट्ठिका सं. मिथ्या-दृष्टि)

1.3.2.9119 गलत भाषण (मिचावाका सं. मिथ्या-वाका)

1.3.2.10120 गलत प्रयास (मिचावयामा)

1.3.3III. बीमार (गिलाना)

1.3.3.1121. बीमार (गिलाना सैंस. ग्लानी)

1.3.3.2122 माइंडफुलनेस (ध्यान) की स्थापना (सतिसुपत्थिता सं. स्मृति-सु-प्रतिष्ठिता)

1.3.3.3123 एक परिचारक (1) (उपत्थक1 सं. उपष्टक)

1.3.3.4124 एक परिचारक (2) (उपत्थक2 सं. उपष्टक)

1.3.3.5125 जीवन शक्ति (1) (अनयुस्स1)

1.3.3.6126 जीवन शक्ति (2) (अनयुस्स2)

1.3.3.7127 अलग रहना (वापाका)

1.3.3.8128 एक तपस्वी का सुख (समानसुख सं. श्रमणसुखा)

1.3.3.9129 घाव (परिकुप्पा)

1.3.3.10130 आपदाएँ (ब्यासन)

1.3.4IV. राजा

1.3.4.1131 पहिया घुमाना (1) (चक्कनुवत्तन1 सं. चक्रानुवर्तन)

1.3.4.2132 पहिया घुमाना (2) (चक्कनुवत्तन2 सं. चक्रानुवर्तन)

1.3.4.3133 धर्मी राजा 1133 (धम्मराज सं. धर्मराज)

1.3.4.4134 किसी भी दिशा में (यस्सामदिसम सं. यथादिशा)

1.3.4.5135 तड़प (पत्थाना1)

1.3.4.6136 तड़प (2) (पत्थाना2)

1.3.4.7137 छोटी नींद (अप्पमसुपति सं. अल्पा-सुशुप्ति)

1.3.4.8138 भोजन का उपभोक्ता (भट्टदक)

1.3.4.9139 धैर्यपूर्वक खड़ा नहीं रह सकता (अक्खामा बिना अक्षमा)

1.3.4.10140 जो सुनता है (सोता संस. श्रोता)

1.3.5वी. टी.एल.के.एन.ए ...

1.3.5.1141 देने के बाद, व्यक्ति अवजानति का तिरस्कार करता है।

1.3.5.2142 उल्लंघन करता है (अरभाति)

1.3.5.3143 सरंददा

1.3.5.4144 टिकंदकी

1.3.5.5145 नरक (निरया)

1.3.5.6146 मित्र (मित्ता सं. मित्रा)

1.3.5.7147 बुरे व्यक्ति का दान (असप्पुरिसादना संस्कृत: असदपुरुषदाना)

1.3.5.8148 अच्छे व्यक्ति का दान (सप्पुरिसादना संस्कृत: सद्पुरुषदाना)

1.3.5.9149 अस्थायी रूप से मुक्त (1) (समयविमुत्त1 सं. समय-विमुक्ति)

1.3.5.10150 (10) अस्थायी रूप से मुक्त (2) (समयविमुत्त2 सं. समय-विमुक्ति)

1.4चौथा पचास

1.4.1I. अच्छा धम्म (सद्धम्म)

1.4.1.1151 धार्मिकता का निश्चित मार्ग1 [1149] (सममत्तनीयमा1)

1.4.1.2152 धर्म का निश्चित मार्ग (2) (सममत्तनीयमा2)

1.4.1.3153 धर्म का निश्चित मार्ग (3) (सम्मत्तनीयम2)

1.4.1.4154 अच्छे धम्म का पतन (1) (सद्धम्मसम्मोसा1 सं. सद्-धर्मस्य..)

1.4.1.5155 अच्छे धम्म का पतन (2) (सद्धम्मसम्मोसा2 सं. सद्-धर्मस्य..)

1.4.1.6156 अच्छे धम्म का पतन (3) (सद्धम्मसम्मोसा3 सं. सद्-धर्मस्य..)

1.4.1.7157 गलत तरीके से संबोधित वार्ता (दुक्कथा संस्कृत: दुश-कथा)

1.4.1.8158 डरपोकपन [1153] (सरज्जा)

1.4.1.9159 उदयि

1.4.1.10160 दूर करना कठिन (दुप्पतिविनोदय)

1.4.2II. आक्रोश (अघट)

1.4.2.1161 आक्रोश दूर करना (1) (अघाट पतिविनय1)

1.4.2.2162 आक्रोश दूर करना (2) (अघाट पतिविनय1)

1.4.2.3163 चर्चाएँ (सकच्छा)

1.4.2.4164 जीवन शैली (सजीव)

1.4.2.5165 प्रश्न पूछना (पन्हा पुच्चा सं. प्रश्न-पुच्चा)

1.4.2.6166 निरोध (Cessation)

1.4.2.7167 निंदा करना (कोडाना)

1.4.2.8168 सदाचारी आचरण (शीला सान. शील)

1.4.2.9169 शीघ्र बोध (खिप्पानिसन्ती)

1.4.2.10170 भद्दाजी

1.4.3तृतीय. द ले फॉलोअर (उपासका)

1.4.3.1171 कायरता (सरज्जा)

1.4.3.2172 आत्म-विश्वास (विसारदा)

1.4.3.3173 नरक (निरया)

1.4.3.4174 शत्रु (वेरा सं. वैर)

1.4.3.5175 कैंडला

1.4.3.6176 आनंद (पिति सान. प्रीति)

1.4.3.7177 व्यापार (वनिज्जा)

1.4.3.8178 राजा

1.4.3.9179 ए लेमैन (गिही सं. गृही)

1.4.3.10180 गावेसी

1.4.4चतुर्थ. वनवासी (अरन्नवग्गो सं. अरण्य-वर्ग)

1.4.4.1181 वनवासी (अरन्निका)

1.4.4.2182-190 चिथड़े-मटके वस्त्र आदि धारण करने वाले (सिवारा)

1.4.5वी. ब्राह्मण

1.4.5.1191 सोना

1.4.5.2192 डोना ब्राह्मण

1.4.5.3193 संगरवा [1191]

1.4.5.4194 करणपाली

1.4.5.5195 पिंगियानी

1.4.5.6196 महान स्वप्न (महा सुपिना सं. महा स्वप्न)

1.4.5.7197 Rain (Vassa sans. Varsha)

1.4.5.8198 भाषण (वाका सं. वचना)

1.4.5.9199 परिवार/कुल (कुला)

1.4.5.10200 पलायन (निसारनिया सं. निस्साराना)

1.5पांचवां पचास

1.5.1आई. किमिला

1.5.1.1201 किमिला

1.5.1.2202 धम्म सुनना (धम्म स्सवना सं. धर्म श्रवण)

1.5.1.3203 थोरब्रेड [1211] (अस्साजानिया सं. अश्व..)

1.5.1.4204 शक्तियां (बाल)

1.5.1.5205 मानसिक बांझपन 1212 (चेतोखिला)

1.5.1.6206 बंधन [1214] (विनीबंध)

1.5.1.7207 चावल का दलिया (यागू बिना खीर)

1.5.1.8208 ब्रश करना (दंतकत्था)

1.5.1.9209 स्वर-संयोजन (गीतासर)

1.5.1.10210 भ्रमित मन के साथ (मुत्थसती)

1.5.2II. अपमान करने वाला (अक्कोसाका)

1.5.2.1211 अपमान करने वाला (अक्कोसाका)

1.5.2.2212 तर्कों का खंडन (भंडानकारक)

1.5.2.3213 सदाचारी आचरण (शीला सान. शील)

1.5.2.4224 बोलना' बहुत (बहुभानी सं. बहु-वाणी)

1.5.2.5215 अधीरता (1) (अक्खन्ति सं. अशांति)

1.5.2.6226 अधीरता (2) (अक्खन्ति2 सं. अशांति)

1.5.2.7227 विश्वास जगाने में असमर्थ (1) (अपसादिका1)

1.5.2.8218 विश्वास जगाने में असमर्थ (2) (अपसादिका2)

1.5.2.9219 अग्नि (अग्गी संस्कृत अग्नि)

1.5.2.10220 मधुरा (मथुरा शहर)

1.5.3III. लंबी यात्रा (दिघाचारिका)

1.5.3.1221 लंबी भटकन (1) (दिघाकारिका1)

1.5.3.2222 लंबी भटकन (2) (दिघाकारिका2)

1.5.3.3223 (3) बहुत लंबे समय तक निवास करना (अतिनिवासा)

1.5.3.4224 कंजूस (मच्छरी)

1.5.3.5225 वह व्यक्ति जो परिवारों से मिलने जाता है (1) (कुलुपाका1)

1.5.3.6226 जो परिवारों से मिलने जाता है (2) (कुलुपाका2)

1.5.3.7227 धन (भोग)

1.5.3.8228 देर रात का भोजन (उस्सुरभट्ट)

1.5.3.9229 काला साँप (1) (कान्हासप्पा1 सं. कृष्ण-सर्प)

1.5.3.10230 काला साँप (2) (कान्हा सप्पा सं. कृष्णा सर्प)

1.5.4IV. निवासी (आवासिका)

1.5.4.1231 निवासी (आवासिका)

1.5.4.2232 मनभावन (पिया सं. प्रिया)

1.5.4.3233 सौंदर्यीकरण (शोभना)

1.5.4.4234 बहुत मददगार (बहुपकारा)

1.5.4.5235 दयालु (अनुकम्पा)

1.5.4.6236 वह जो तिरस्कार का पात्र हो (1) (अवन्नारहा1)

1.5.4.7237 निंदा के योग्य व्यक्ति (2) (अवन्नारहा2)

1.5.4.8238 वह जो तिरस्कार का पात्र हो (3) (अवन्नाराहा3)

1.5.4.9239 कृपणता (1) (मैकचरिया1)

1.5.4.10240 कृपणता (2) (मैकचरिया2)

1.5.5वी. कदाचार (दुकारिता सं. दुष्चरित्र)

1.5.5.1241 कदाचार (दुकारिता सं. दुष्चरित्र)

1.5.5.2242 शारीरिक दुराचार (कायदुच्चरिता सं. काया दुष्चरित्र)

1.5.5.3243 मौखिक कदाचार

1.5.5.4244 मानसिक दुराचार (मनोदुच्चरिता सं. मनो दुष्चरित्र)

1.5.5.5245 दुराचार पर एक और (दुश्चरित्रा2 सं. दुश्चरित्रा)

1.5.5.6246 शारीरिक दुराचार पर एक और (कायादुकारिता2 सं. काया दुष्चरित्र)

1.5.5.7247 मौखिक कदाचार पर एक और (वासीदुक्कारिता2 सं. वाका दुष्चरित्र)

1.5.5.8248 मानसिक दुराचार पर एक और (मनोदुकारिता2 सं. मनो दुष्चरित्र)

1.5.5.9249 ए चार्नेल ग्राउंड (शिवथिका)

1.5.5.10250 किसी व्यक्ति पर विश्वास (पुग्गलप्पसाद)

1.6छठा पचास

1.6.1I. पूर्ण समन्वय [1235] (उपसम्पदा)

1.6.1.1252 पूर्ण दीक्षा कौन दे सकता है (उपसंपदेतब्बा)

1.6.1.2252 निर्भरता (निस्सया)

1.6.1.3253 नौसिखिया (सामनेरा)

1.6.1.4254 कंजूसी (मच्छरिया)

1.6.1.5255 कृपणता का परित्याग (मैकचरियाप्पहाना)

1.6.1.6256 प्रथम झाना (ट्रान्स अवस्था) (पथमा झा सं. प्रथम ध्यान)

1.6.1.7257-263 दूसरा झाना (ट्रान्स अवस्था), आदि [1239] (दुतियाझाना..)

1.6.1.8264 प्रथम झाना (ट्रान्स अवस्था) पर एक और (अपरापथमाझाना)

1.6.1.9265—271 दूसरे झाना पर (ट्रान्स अवस्था), आदि (अपरादुतियाझाना)

1.7अध्याय के अतिरिक्त प्रवचन [1240]

1.7.1I. सहमत पुनरावृत्ति श्रृंखला (सम्मुतिपेय्यालम)

1.7.1.1272 भोजन का एक निर्दिष्टी (भट्टुद्देसका)

1.7.1.2273-285 आवास आदि नियुक्त करने वाला (सेनसनपन्नपका)

1.7.2द्वितीय. प्रशिक्षण नियम दोहराव श्रृंखला (सिक्खपदपेय्यलम)

1.7.2.1286 एक भिक्षु (मठवासी)

1.7.2.2287-292 भिक्षुणी (भिक्षुणी) आदि

1.7.2.3293 एक आजीवका

1.7.2.4294 — 302 ए निगांथा, इत्यादि।

1.7.3III वासना (राग) और आगे की पुनरावृत्ति श्रृंखला (रागपेय्यलम)

पंचकनिपाता की पुस्तक

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

उस भगवान को नमन, शत्रुओं का नाश करने वाले, सही मायने में पूर्णतः प्रबुद्ध (जागृत) भगवान।

पहले पचास

I. प्रशिक्षु की शक्तियाँ (सेखाबाला सं. शिष्य-बाला)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

1 संक्षेप में (संखित्त सं. संक्षिप्त)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं, ये पाँच प्रशिक्षु शक्तियाँ हैं। 974 कौन सी पाँच? विश्वास की शक्ति, नैतिक लज्जा की शक्ति, नैतिक भय की शक्ति, ऊर्जा की शक्ति और पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच प्रशिक्षु शक्तियाँ हैं। इसलिए, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम विश्वास की शक्ति, एक प्रशिक्षु शक्ति, प्राप्त करेंगे; हम नैतिक लज्जा की शक्ति, एक प्रशिक्षु शक्ति, प्राप्त करेंगे; हम नैतिक भय की शक्ति, एक प्रशिक्षु शक्ति, प्राप्त करेंगे; हम ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, एक प्रशिक्षु शक्ति, प्राप्त करेंगे; हम पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति, एक प्रशिक्षु शक्ति, प्राप्त करेंगे।' इस प्रकार, भिक्षुओं, आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।" [यह भगवान (बुद्ध) ने कहा। प्रसन्न होकर, वे भिक्षु भगवान (बुद्ध) के कथन से प्रसन्न हुए।] 975 [2]

---

2 विस्तार से (वित्थता सं. विस्तारा)

सावत्थी में, "भिक्षुओं, प्रशिक्षुओं की ये पाँच शक्तियाँ हैं। वे पाँच कौन सी हैं? आस्था की शक्ति, नैतिक लज्जा की शक्ति, नैतिक भय की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति और पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति।"

(1) "और हे भिक्षुओं, आस्था की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य आस्था से परिपूर्ण है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' इसे ही आस्था की शक्ति कहते हैं।"

(2) "नैतिक लज्जा की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य को नैतिक लज्जा का बोध होता है; वह शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार से लज्जित होता है; वह अकुशल गुणों को ग्रहण करने से लज्जित होता है। इसे नैतिक लज्जा की शक्ति कहा जाता है।"

(3) "नैतिक भय की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य कुकर्म से भयभीत होता है; वह शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार से भयभीत होता है; वह अकुशल गुणों को प्राप्त करने से भयभीत होता है। इसे नैतिक भय की शक्ति कहा जाता है।"

(4) "और ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को प्रेरित किया है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है। इसे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति कहा जाता है।"

(5) "पन्न (दिव्य ज्ञान) की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य बुद्धिमान है; वह उस पन्न (दिव्य ज्ञान) से युक्त है जो उद्भव और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है।977 इसे पन्न (दिव्य ज्ञान) की शक्ति कहा जाता है।"

"ये पाँच प्रशिक्षु शक्तियाँ हैं, इसलिए, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम विश्वास की शक्ति, एक प्रशिक्षु की शक्ति, धारण करेंगे; हम नैतिक लज्जा की शक्ति, एक प्रशिक्षु की शक्ति, धारण करेंगे; हम नैतिक भय की शक्ति, एक प्रशिक्षु की शक्ति, धारण करेंगे; हम ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, एक प्रशिक्षु की शक्ति, धारण करेंगे; हम पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति, एक प्रशिक्षु की शक्ति, धारण करेंगे।' इस प्रकार, भिक्षुओं, आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।"

---

3. दुख (दुक्खा)

"भिक्षुओं में पाँच गुण होते हैं, फिर भी वे इसी जीवन में कष्टों, पीड़ाओं और बुखार से ग्रस्त रहते हैं, और शरीर के विखंडन के बाद मृत्यु के समय उनका भाग्य बुरा ही होता है। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु आस्थाहीन, नैतिक रूप से निर्लज्ज, नैतिक रूप से लापरवाह, आलसी और मूर्ख होता है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु इसी जीवन में कष्टों, पीड़ाओं और बुखार से ग्रस्त रहते हैं, और शरीर के विखंडन के बाद मृत्यु के समय उनका भाग्य बुरा ही होता है।"

भिक्षु (भिक्षु), पाँच अन्य गुणों से युक्त होकर, इस जीवन में सुखपूर्वक निवास करते हैं— बिना किसी कष्ट, पीड़ा या बुखार के— और शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय, उनके लिए एक अच्छे गंतव्य की अपेक्षा की जा सकती है। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु आस्था से परिपूर्ण होते हैं, नैतिक लज्जा का भाव रखते हैं, नैतिक भय रखते हैं, और ऊर्जावान और बुद्धिमान होते हैं। इन पाँच गुणों से युक्त होकर, भिक्षु इस जीवन में सुखपूर्वक निवास करते हैं— बिना किसी कष्ट, पीड़ा या बुखार के— और शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय, उनके लिए एक अच्छे गंतव्य की अपेक्षा की जा सकती है।

---

4. मानो वहाँ लाया गया हो (यथाभट)

"भिक्षुओं (मठवासियों), पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु आस्थाहीन, नैतिक रूप से निर्लज्ज, नैतिक रूप से लापरवाह, आलसी और मूर्ख होता है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। [4]

"भिक्षुओं में पाँच अन्य गुण होते हैं, और उन्हें स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु आस्था से परिपूर्ण होता है, नैतिक लज्जा का भाव रखता है, नैतिक भय रखता है, और ऊर्जावान एवं बुद्धिमान होता है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

---

5 प्रशिक्षण (सिक्खा सं. शिक्षा)

भिक्षुओं, कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी जो प्रशिक्षण त्यागकर निम्न जीवन में लौट जाता है, इस जीवन में ही पाँच उचित आलोचनाओं और निंदा के आधारों का पात्र बनता है। वे पाँच क्या हैं? (1) 7 आपने लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में विश्वास नहीं रखा। (2) आपने लाभकारी (कुशल) गुणों के विकास में नैतिक लज्जा का भाव नहीं रखा। (3) आपने लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में नैतिक भय नहीं रखा। (4) आपने लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं रखी। (5) आपने लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में पन्ना (दिव्य ज्ञान) नहीं रखा। कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी जो प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है, उसे इसी जीवन में इन पांच उचित आलोचनाओं और निंदा के आधारों का सामना करना पड़ता है।

भिक्षुओं, कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी जो पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करता है, पीड़ा और निराशा में भी, आँसू भरी आँखों से रोते हुए, इसी जीवन में प्रशंसा के पाँच उचित कारण प्राप्त करता है। वे पाँच क्या हैं? (1) आपने लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति आस्था रखी है। (2) आपने लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति नैतिक लज्जा का भाव रखा है। (3) आपने लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति नैतिक भय रखा है। (4) आपने लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) रखी है। (5) आपने लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति ज्ञान (दिव्य ज्ञान) प्राप्त किया है। कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी जो पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीता है, दर्द और निराशा के साथ भी, आँसू भरे चेहरे से रोते हुए, [5] इसी जीवन में प्रशंसा के इन पाँच उचित कारणों को प्राप्त करता है।"

---

6 प्रवेश करना (समापत्ति)

(1) "भिक्षुओं, जब तक लाभकारी गुणों के विकास में आस्था दृढ़ बनी रहती है, तब तक हानिकारक (अकुशल) मार्ग पर प्रवेश करना संभव नहीं है। परन्तु जब आस्था लुप्त हो जाती है और अविश्वास हावी हो जाता है, तब हानिकारक (अकुशल) मार्ग पर प्रवेश करना संभव हो जाता है।"

(2) "जब तक लाभकारी गुणों को विकसित करने में नैतिक लज्जा की भावना दृढ़ता से स्थापित रहती है, तब तक हानिकारक (अकुशल) मार्ग पर चलना संभव नहीं है। परन्तु जब नैतिक लज्जा की भावना लुप्त हो जाती है और व्यक्ति नैतिक निर्लज्जता से ग्रस्त हो जाता है, तब हानिकारक (अकुशल) मार्ग पर चलना संभव हो जाता है।"

(3) "जब तक लाभकारी गुणों को विकसित करने में नैतिक भय दृढ़ता से स्थापित रहता है, तब तक हानिकारक (अकुशल) मार्ग पर प्रवेश नहीं होता। परन्तु जब नैतिक भय लुप्त हो जाता है और नैतिक भय का अभाव हावी हो जाता है, तब हानिकारक (अकुशल) मार्ग पर प्रवेश होता है।"

(4) जब तक ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के संवर्धन में स्थिर रहती है, तब तक हानिकारक (अकुशल) मार्ग पर प्रवेश नहीं होता। परन्तु जब ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) समाप्त हो जाती है और आलस्य हावी हो जाता है, तब हानिकारक (अकुशल) मार्ग पर प्रवेश होता है।

(5) "जब तक धर्म (दिव्य ज्ञान) लाभकारी गुणों (धम्म) के संवर्धन में दृढ़ रहता है, तब तक अकुशल (हानिकारक) मार्ग पर चलना संभव नहीं है। परन्तु जब अकुशल (हानिकारक) ज्ञान लुप्त हो जाता है और अकुशल (हानिकारक) ज्ञान का अभाव ग्रस्त हो जाता है, तब अकुशल (हानिकारक) मार्ग पर चलना संभव हो जाता है।"

---

7 कामुक सुख (काम)

"भिक्षु (साधु), अधिकांशतः इंद्रिय सुखों में लीन रहते हैं। जब कोई कुलवासी हंसिया और डंडा त्यागकर गृहस्थ जीवन छोड़कर घर-बार त्याग देता है, तो उसे आस्था के कारण संन्यासी कहा जा सकता है। इसका कारण क्या है? किसी भी प्रकार का इंद्रिय सुख एक युवक को प्राप्त हो सकता है। निम्न, मध्यम और श्रेष्ठ सभी इंद्रिय सुखों को केवल इंद्रिय सुख ही माना जाता है। [6]

मान लीजिए एक छोटा बच्चा, जो नासमझ है और पीठ के बल लेटा हुआ है, अपनी नर्स की लापरवाही के कारण अपने मुंह में कोई छड़ी या कंकड़ डाल लेता है। उसकी नर्स तुरंत उसकी देखभाल करेगी और उसे निकालने की कोशिश करेगी। अगर वह उसे जल्दी नहीं निकाल पाती, तो वह अपने बाएं हाथ से बच्चे के सिर को सहारा देगी और अपने दाहिने हाथ की उंगली से उसे निकालकर देगी, चाहे खून ही क्यों न निकल आए। ऐसा क्यों? बच्चे को कुछ तकलीफ तो होगी ही - मैं इससे इनकार नहीं करता - लेकिन नर्स को उसकी भलाई और कल्याण के लिए, उस पर दया करके ऐसा करना ही होगा। हालांकि, जब बच्चा बड़ा हो जाता है और समझदार हो जाता है, तो नर्स उसकी परवाह करना छोड़ देगी, यह सोचकर: 'अब बच्चा अपना ख्याल खुद रख सकता है। वह आलसी नहीं होगा।'

"इसी प्रकार, जब तक कोई भिक्षु लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति आस्था, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति लज्जा, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति नैतिक भय, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में निपुण नहीं हो जाता, तब तक वह सिद्ध नहीं हो सकता।"

मुझे अब भी उसकी देखभाल करनी होगी। लेकिन जब वह भिक्षु धर्मपरायणता में निपुण हो जाए, धर्मपरायणता में निपुण हो जाए, धर्मपरायणता में निपुण हो जाए, तब मैं उसके बारे में निश्चिंत हो जाता हूँ, यह सोचकर कि 'भिक्षु अब अपनी देखभाल स्वयं कर सकता है। वह आलसी नहीं होगा।' 978

---

8 फॉलिंग अवे (कैवाना)

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु धर्म से भटक जाता है और उत्तम धर्म में स्थापित नहीं हो पाता। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) विश्वासहीन भिक्षु धर्म से भटक जाता है और उत्तम धर्म में स्थापित नहीं हो पाता। (2) नैतिक रूप से निर्लज्ज भिक्षु... (3) नैतिक रूप से लापरवाह भिक्षु... (4) आलसी भिक्षु... (5) अज्ञानी भिक्षु धर्म से भटक जाता है और उत्तम धर्म में स्थापित नहीं हो पाता। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु धर्म से भटक जाता है और उत्तम धर्म में स्थापित नहीं हो पाता।

भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त भिक्षु धर्म से विमुख नहीं होते, बल्कि उत्तम धर्म में स्थापित रहते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) आस्था से युक्त भिक्षु धर्म से विमुख नहीं होते, बल्कि उत्तम धर्म में स्थापित रहते हैं। (2) नैतिक लज्जा से युक्त भिक्षु... (3) नैतिक भय से युक्त भिक्षु... (4) ऊर्जावान भिक्षु... (5) बुद्धिमान भिक्षु धर्म से विमुख नहीं होते, बल्कि उत्तम धर्म में स्थापित रहते हैं। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु धर्म से विमुख नहीं होते, बल्कि उत्तम धर्म में स्थापित रहते हैं।

---

9 अनादरपूर्ण (1) (अगरवा1)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, अनादरपूर्ण और असावधान भिक्षु धर्म से विमुख हो जाता है और अच्छे धर्म में स्थापित नहीं हो पाता; वे पाँच गुण क्या हैं? (1) अनादरपूर्ण और असावधान, आस्थाहीन भिक्षु धर्म से विमुख हो जाता है और अच्छे धर्म में स्थापित नहीं हो पाता। (2) अनादरपूर्ण और असावधान, नैतिक रूप से निर्लज्ज भिक्षु... (3) अनादरपूर्ण और असावधान, नैतिक रूप से लापरवाह भिक्षु... (4) अनादरपूर्ण और असावधान, आलसी भिक्षु... (5) अनादरपूर्ण और असावधान, मूर्ख भिक्षु धर्म से विमुख हो जाता है और अच्छे धर्म में स्थापित नहीं हो पाता। इन पाँच गुणों से युक्त, अनादरपूर्ण और असावधान भिक्षु धर्म में स्थापित नहीं हो पाता। [8]

भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त, आदरणीय और विनम्र भिक्षु धर्म के मार्ग से नहीं भटकता, बल्कि उसमें स्थापित रहता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) श्रद्धा से परिपूर्ण और विनम्र भिक्षु धर्म के मार्ग से नहीं भटकता, बल्कि उसमें स्थापित रहता है। (2) नैतिक लज्जा का भाव रखने वाला और विनम्र भिक्षु... (3) नैतिक भय रखने वाला और विनम्र भिक्षु... (4) ऊर्जावान और विनम्र भिक्षु... (5) बुद्धिमान और विनम्र भिक्षु धर्म के मार्ग से नहीं भटकता, बल्कि उसमें स्थापित रहता है। इन पाँच गुणों से युक्त, आदरणीय और विनम्र भिक्षु धर्म के मार्ग से नहीं भटकता, बल्कि उसमें स्थापित रहता है।

---

10 अनादरपूर्ण (2) (अगरवा2)

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, अनादरपूर्ण और असावधान भिक्षु इस धम्म (मार्ग) और अनुशासन में उन्नति, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करने में सक्षम नहीं है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) अनादरपूर्ण और असावधान, आस्थाहीन भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में उन्नति, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करने में सक्षम नहीं है। (2) अनादरपूर्ण और असावधान भिक्षु जो नैतिक रूप से निर्लज्ज है... (3) अनादरपूर्ण और असावधान भिक्षु जो नैतिक रूप से लापरवाह है... (4) अनादरपूर्ण और असावधान भिक्षु जो आलसी है... (5) अनादरपूर्ण और असावधान भिक्षु जो नासमझ है, इस धम्म और अनुशासन में उन्नति, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करने में सक्षम नहीं है। इन पाँच गुणों से युक्त, अनादरपूर्ण और असावधान भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में उन्नति, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करने में सक्षम नहीं है। इस धम्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करने के लिए।

भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त, एक आदरणीय और विनम्र भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करने में सक्षम होता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) आस्था से परिपूर्ण आदरणीय और विनम्र भिक्षु इस धम्म (मार्ग) और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करने में सक्षम होता है। (2) नैतिक लज्जा का भाव रखने वाला आदरणीय और विनम्र भिक्षु... (3) नैतिक भय रखने वाला आदरणीय और विनम्र भिक्षु... [9]... (4) ऊर्जावान आदरणीय और विनम्र भिक्षु... (5) बुद्धिमान आदरणीय और विनम्र भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करने में सक्षम होता है। इन पाँच गुणों से युक्त, एक आदरणीय और विनम्र भिक्षु वृद्धि प्राप्त करने में सक्षम होता है। इस धम्म और अनुशासन में प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करना।"

II. शक्तियाँ (बाला)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

11. पहले कभी नहीं सुना गया (अननुस्सुता)

"भिक्षुओं, मैं यह दावा करता हूँ कि मैंने उन चीजों के प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) की प्राप्ति कर ली है जिनके बारे में मैंने पहले कभी नहीं सुना था।" 979

"तथागत (बुद्ध) की ये पाँच शक्तियाँ हैं, जिनके द्वारा वे प्रधान बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं। 980 वे पाँच कौन सी हैं? विश्वास की शक्ति, नैतिक लज्जा की शक्ति, नैतिक भय की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति और पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच शक्तियाँ हैं जो तथागत (बुद्ध) के पास हैं, जिनके द्वारा वे प्रधान बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं।" [10]

---

12 शिखर (1) (कुटा)

भिक्षुओं, ये पाँच प्रकार की प्रशिक्षण शक्तियाँ हैं। ये पाँच कौन सी हैं? आस्था की शक्ति, नैतिक लज्जा की शक्ति, नैतिक भय की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति और पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच प्रशिक्षण शक्तियाँ हैं। इन पाँच प्रशिक्षण शक्तियों में, पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति सर्वोपरि है, जो अन्य सभी शक्तियों को स्थिर रखती है, उन्हें एकीकृत करती है। जिस प्रकार शिखर वाली छत वाले घर का शिखर मुख्य भाग होता है, जो अन्य सभी भागों को स्थिर रखता है, उन्हें एकीकृत करता है, उसी प्रकार इन पाँच प्रशिक्षण शक्तियों में, पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति सर्वोपरि है, जो अन्य सभी शक्तियों को स्थिर रखती है, उन्हें एकीकृत करती है।

अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: (1) 'हम विश्वास की शक्ति, एक प्रशिक्षु की शक्ति; (2) नैतिक लज्जा की शक्ति, एक प्रशिक्षु की शक्ति; (3) नैतिक भय की शक्ति, एक प्रशिक्षु की शक्ति; (4) ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, एक प्रशिक्षु की शक्ति; (5) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति, एक प्रशिक्षु की शक्ति।' इस प्रकार, भिक्षुओं, आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।'

---

13 संक्षेप में (संखित्त सं. संक्षिप्त)

भिक्षुओं, ये पाँच शक्तियाँ हैं। कौन सी पाँच? विश्वास की शक्ति, ऊर्जा की शक्ति (प्रयास/वीर्य), ध्यान की शक्ति (सती), समाधि की शक्ति (स्व-लीन/सन्दूक), और ज्ञान की शक्ति (दिव्य ज्ञान)। ये पाँच शक्तियाँ हैं।

---

14 विस्तृत रूप से (विठ्ठता)

भिक्षुओं, ये पाँच शक्तियाँ हैं। कौन सी पाँच? विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, सती (ध्यान) की शक्ति, समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की शक्ति और दिव्य ज्ञान (पन्न) की शक्ति।

(1) "और हे भिक्षुओं, विश्वास की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य विश्वास से संपन्न है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार विश्वास रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं... [जैसा कि 5:2 में है] ... प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध)।' [11] इसे विश्वास की शक्ति कहा जाता है।

(2) "और ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को प्रेरित किया है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है। इसे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति कहा जाता है।"

(3) "और सती ध्यान की शक्ति क्या है? यहाँ, श्रेष्ठ शिष्य सती ध्यान में है, सर्वोच्च सती ध्यान और सतर्कता से परिपूर्ण है, वह जो बहुत पहले किए और कहे गए कार्यों को याद रखता है और उनका स्मरण करता है। इसे ही सती ध्यान की शक्ति कहते हैं।"

(4) समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) की शक्ति क्या है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल हैं। विचार और चिंतन के शांत होने पर, वह द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जिसमें मन की परम शांति और एकीकरण होता है और जो समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, बिना विचार और चिंतन के। परमानंद (पीति) के भी लुप्त होने पर, वह समभाव में निवास करता है और सचेत (ध्यान/सती) और पूर्णतः बोध करते हुए, वह शरीर के साथ सुख (सुख) का अनुभव करता है; वह तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है जिसके बारे में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव में है, सती (ध्यानमग्न), जो आनंद में रहता है। सुख और दुख का त्याग करके, और पहले से ही सुख और उदासी के दूर हो जाने के बाद, वह चौथी ध्यान (सती अवस्था) में प्रवेश

करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो दुखदायी है और न ही सुखदायी, जिसमें उदासीनता (भीतर ध्यान/सती) द्वारा सती (ध्यानमग्नता) का शुद्धिकरण होता है। इसे समाधि (स्व-लीनता/सतीत्व) की शक्ति कहा जाता है।

(5) "पन्न (दिव्य ज्ञान) की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य बुद्धिमान होता है; वह उस पन्न (दिव्य ज्ञान) से युक्त होता है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। इसे पन्न (दिव्य ज्ञान) की शक्ति कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये पाँच शक्तियाँ हैं।"

= 15 देखने योग्य (दत्तब्बा सं. द्दष्टव्य)

भिक्षुओं, ये पाँच शक्तियाँ हैं। कौन सी पाँच? विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, सती (ध्यान) की शक्ति, समाधि (स्व-अवशोषण/तंद्रा) की शक्ति, [12] और पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति।

(1) "हे भिक्षुओं, आस्था की शक्ति कहाँ देखी जा सकती है? आस्था की शक्ति सात पुनर्जन्मों (सोतपत्ति) के चार कारकों में देखी जा सकती है।" 82 (2) और ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति कहाँ देखी जा सकती है? ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति चारों सही प्रयासों में देखी जा सकती है। (3) और ध्यान (सती) की शक्ति कहाँ देखी जा सकती है? ध्यान (सती) की शक्ति ध्यान (सती) की चारों अवस्थाओं में देखी जा सकती है। (4) और समाधि (स्व-लीन/सन्यास) की शक्ति कहाँ देखी जा सकती है? समाधि (स्व-लीन/सन्यास) की शक्ति चारों ध्यान अवस्थाओं में देखी जा सकती है। (5) और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की शक्ति कहाँ देखी जा सकती है? ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की शक्ति चारों आर्य सत्यों में देखी जा सकती है।

"भिक्षुओं, ये पाँच शक्तियाँ हैं।"

---

16 शिखर (2) (पुनाकुटा)

भिक्षुओं, ये पाँच शक्तियाँ हैं। कौन सी पाँच? विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, सती ध्यान की शक्ति, समाधि की शक्ति और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच शक्तियाँ हैं। इन पाँच शक्तियों में, ज्ञान की शक्ति सर्वोपरि है, जो सभी को एकाग्र रखती है, जो उन्हें एकीकृत करती है, जैसे कि शिखर वाली छत वाले घर का शिखर मुख्य भाग होता है, जो सभी को एकाग्र रखता है, उसी प्रकार इन पाँच शक्तियों में, ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की शक्ति सर्वोपरि है, जो सभी को एकाग्र रखती है, जो उन्हें एकीकृत करती है।

---

17 कल्याण (1) (हिता1)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, एक भिक्षु अपने स्वयं के कल्याण के लिए अभ्यास करता है, न कि दूसरों के कल्याण के लिए। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, एक भिक्षु स्वयं सद्गुणों में निपुण है, परन्तु दूसरों को सद्गुणों में निपुण होने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता; (2) वह स्वयं समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) में निपुण है, परन्तु दूसरों को एकाग्रता में निपुण होने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता; (3) वह स्वयं ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में निपुण है, परन्तु दूसरों को ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में निपुण होने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता; (4) वह स्वयं मुक्ति में निपुण है, परन्तु दूसरों को मुक्ति में निपुण होने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता; (5) वह स्वयं मुक्ति के ज्ञान और द्दष्टि (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) में निपुण है, परन्तु दूसरों को मुक्ति के ज्ञान और द्दष्टि (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) में निपुण होने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता। [13] इन पाँच गुणों से युक्त, एक भिक्षु अपने स्वयं के कल्याण के लिए साधना करता है, न कि दूसरों के कल्याण के लिए।

---

18 कल्याण (2) (हिता2)

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, एक भिक्षु दूसरों के कल्याण के लिए साधना करता है, न कि अपने स्वयं के कल्याण के लिए। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, एक भिक्षु स्वयं सद्गुणों में सिद्ध नहीं होता, परन्तु वह दूसरों को सद्गुणों में सिद्ध होने के लिए प्रोत्साहित करता है; (2) वह स्वयं समाधि में सिद्ध नहीं होता, परन्तु वह दूसरों को समाधि में सिद्ध होने के लिए प्रोत्साहित करता है; (3) वह स्वयं ज्ञान में सिद्ध नहीं होता, परन्तु वह दूसरों को ज्ञान में सिद्ध होने के लिए प्रोत्साहित करता है; (4) वह स्वयं मोक्ष में सिद्ध नहीं होता, परन्तु वह दूसरों को मोक्ष में सिद्ध होने के लिए प्रोत्साहित करता है; (5) वह स्वयं मोक्ष के ज्ञान और दृष्टि में सिद्ध नहीं होता, परन्तु वह दूसरों को मोक्ष के ज्ञान और दृष्टि में सिद्ध होने के लिए प्रोत्साहित करता है। इन पाँच गुणों से युक्त, एक भिक्षु दूसरों के कल्याण के लिए साधना करता है, न कि स्वयं के कल्याण के लिए। अपने स्वयं के कल्याण के लिए।"

---

19 कल्याण (3) (हिता3)

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु न तो अपने कल्याण के लिए और न ही दूसरों के कल्याण के लिए साधना करते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु स्वयं सद्गुणों में निपुण नहीं होते और न ही दूसरों को सद्गुणों में निपुण होने के लिए प्रोत्साहित करते हैं; (2) वे स्वयं समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में निपुण नहीं होते और न ही दूसरों को समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में निपुण होने के लिए प्रोत्साहित करते हैं; (3) वे स्वयं ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में निपुण नहीं होते और न ही दूसरों को ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में निपुण होने के लिए प्रोत्साहित करते हैं; (4) वे स्वयं मोक्ष में निपुण नहीं होते और न ही दूसरों को मोक्ष में निपुण होने के लिए प्रोत्साहित करते हैं; (5) वे स्वयं मोक्ष के ज्ञान और दृष्टि में निपुण नहीं होते और न ही दूसरों को मोक्ष के ज्ञान और दृष्टि में निपुण होने के लिए प्रोत्साहित करते हैं (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन)। [14] इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु न तो अपने कल्याण के लिए और न ही दूसरों के कल्याण के लिए साधना करते हैं। न तो स्वयं के कल्याण के लिए और न ही दूसरों के कल्याण के लिए।"

---

20 कल्याण (4) (हिता4)

भिक्षु (भिक्षु), पाँच गुणों से युक्त होकर, अपने और दूसरों के कल्याण के लिए साधना करते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु स्वयं सद्गुणों में निपुण होते हैं और दूसरों को भी सद्गुणों में निपुण होने के लिए प्रेरित करते हैं; (2) वे स्वयं समाधि में निपुण होते हैं और दूसरों को भी समाधि में निपुण होने के लिए प्रेरित करते हैं; (3) वे स्वयं ज्ञान में निपुण होते हैं और दूसरों को भी ज्ञान में निपुण होने के लिए प्रेरित करते हैं; (4) वे स्वयं मोक्ष में निपुण होते हैं और दूसरों को भी मोक्ष में निपुण होने के लिए प्रेरित करते हैं; (5) वे स्वयं मोक्ष के ज्ञान और दर्शन में निपुण होते हैं और दूसरों को भी मोक्ष के ज्ञान और दर्शन में निपुण होने के लिए प्रेरित करते हैं। इन पाँच गुणों से युक्त होकर, भिक्षु अपने और दूसरों के कल्याण के लिए साधना करते हैं।

तृतीय. पंचांगिका

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

21 अनादरपूर्ण (1) (अगरवा1)

"(1) भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु अनादरपूर्ण और असावधान होता है, और उसका व्यवहार अपने साथी भिक्षुओं के अनुकूल नहीं होता, तो उसके लिए उचित आचरण के गुण का पालन करना असंभव है। [15] (2) उचित आचरण के गुण का पालन किए बिना, उसके लिए प्रशिक्षु के गुण का पालन करना असंभव है। (3) प्रशिक्षु के गुण का पालन किए बिना, उसके लिए सद्गुणी आचरण का पालन करना असंभव है। (4) सद्गुणी आचरण का पालन किए बिना, उसके लिए सही दृष्टिकोण का पालन करना असंभव है। (5) सही दृष्टिकोण का पालन किए बिना, उसके लिए सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का पालन करना असंभव है। 983 "(l) परन्तु, भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु आदरपूर्ण और असावधान होता है, और उसका व्यवहार अपने साथी भिक्षुओं के अनुकूल होता है, तो उसके लिए उचित आचरण के कर्तव्य का पालन करना संभव है। (2) उचित आचरण का कर्तव्य पूरा करने के बाद, उसके लिए प्रशिक्षु का कर्तव्य पूरा करना संभव है। (3) प्रशिक्षु का कर्तव्य पूरा करने के बाद, उसके लिए सद्गुणी आचरण करना संभव है। (4) सद्गुणी आचरण करने के बाद, उसके लिए सही दृष्टिकोण अपनाना संभव है। (5) सही दृष्टिकोण अपनाने के बाद, उसके लिए सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त करना संभव है।

---

22 अनादरपूर्ण (2) (अगरवा2)

(1) भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु अनादरपूर्ण और असभ्य होता है, और उसका व्यवहार अपने साथी भिक्षुओं के अनुकूल नहीं होता, तो उसके लिए उचित आचरण के गुण का पालन करना असंभव है। (2) उचित आचरण के गुण का पालन किए बिना, उसके लिए प्रशिक्षु के गुण का पालन करना असंभव है। (3) प्रशिक्षु के गुण का पालन किए बिना, उसके लिए सद्गुणों के समूह का पालन करना असंभव है। (4) सद्गुणों के समूह का पालन किए बिना, उसके लिए एकाग्रता के समूह का पालन करना असंभव है। (5) समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) के समूह का पालन किए बिना, उसके लिए पन्ना (दिव्य ज्ञान) के समूह का पालन करना असंभव है।

"(1) परन्तु, भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु आदरपूर्ण और विनम्र होता है, और उसका व्यवहार अपने साथी भिक्षुओं के अनुकूल होता है, तो वह उचित आचरण के गुण को पूरा कर सकता है। (2) उचित आचरण के गुण को पूरा करने के बाद, वह प्रशिक्षु के गुण को पूरा कर सकता है। (3) प्रशिक्षु के गुण को पूरा करने के बाद, वह सद्गुणों के समूह को पूरा कर सकता है। (4) सद्गुणों के समूह को पूरा करने के बाद, वह समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) के समूह को पूरा कर सकता है। [16] (5) समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) के समूह को पूरा करने के बाद, वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) के समूह को पूरा कर सकता है।"

---

23 दोष (उपक्किलेशा संस्कृत उपक्लेश)

भिक्षुओं, 984 सोने में ये पाँच दोष होते हैं, जिनके कारण सोना लचीला, सुचारु और चमकदार नहीं रहता, बल्कि भंगुर और काम के लिए अनुपयुक्त हो जाता है। वे पाँच कौन से हैं? लोहा, तांबा, टिन, सीसा और चांदी। ये सोने के पाँच दोष हैं, जिनके कारण सोना लचीला, सुचारु और चमकदार नहीं रहता, बल्कि भंगुर और काम के लिए अनुपयुक्त हो जाता है। लेकिन जब सोना इन पाँच दोषों से मुक्त हो जाता है, तो वह लचीला, सुचारु और चमकदार हो जाता है, लचीला और काम के लिए उपयुक्त हो जाता है। तब उससे किसी भी प्रकार का आभूषण बनाना चाहे—चाहे कंगन हो, झुमके हों, हार हो या सोने की माला—वह अपने उद्देश्य की पूर्ति कर सकता है। 985

भिक्षुओं, मन में पाँच प्रकार के दोष होते हैं, जिनसे दूषित मन लचीला, सुगम और प्रकाशमान नहीं रहता, बल्कि भंगुर और उचित रूप से समाधि में लीन नहीं हो पाता, जिससे दोषों का नाश नहीं हो पाता। वे पाँच कौन से हैं? कामुक इच्छा, द्वेष, सुस्ती और उन्मत्तता, बेचैनी और पश्चाताप, और संशय। ये मन के पाँच दोष हैं, जिनसे दूषित मन लचीला, सुगम और प्रकाशमान नहीं रहता, बल्कि भंगुर और उचित रूप से समाधि में लीन नहीं हो पाता, जिससे दोषों का नाश नहीं हो पाता। परन्तु जब मन इन पाँच दोषों से मुक्त हो जाता है, तो वह लचीला, सुगम, प्रकाशमान, कोमल और उचित रूप से समाधि में लीन हो जाता है, जिससे दोषों का नाश होता है। तब, उपयुक्त आधार होने पर, व्यक्ति किसी भी अनुभूति को प्राप्त करने में सक्षम हो जाता है। प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा प्राप्त की जा सकने वाली अवस्था, जिसकी ओर मन को प्रेरित किया जा सकता है। 986

यदि कोई यह इच्छा करे: 'काश मैं अनेक प्रकार की मानसिक शक्तियों का प्रयोग कर सकूँ; एक होकर अनेक बन सकूँ; अनेक होकर एक बन सकूँ; प्रकट और लुप्त हो सकूँ; किसी दीवार, प्राचीर, पर्वत के आर-पार अंतरिक्ष की तरह निर्बाध रूप से जा सकूँ; पृथ्वी में जल की तरह समाहित और बहिर्मुख हो सकूँ; जल पर पृथ्वी की तरह बिना डूबे चल सकूँ; पालथी मारकर पक्षी की तरह अंतरिक्ष में विचरण कर सकूँ; अपने हाथों से शक्तिशाली और बलिष्ठ चंद्रमा और सूर्य को स्पर्श और सहला सकूँ; शरीर पर ब्रह्म जगत तक भगवानत्व प्राप्त कर सकूँ।' तो उपयुक्त आधार होने पर वह इसे साकार करने में सक्षम है।

"यदि कोई यह इच्छा करे: 'क्या मैं, दिव्य श्रवण शक्ति के साथ, जो शुद्ध है और मानवीय श्रवण शक्ति से परे है, दोनों प्रकार की ध्वनियों को सुन सकता हूँ, दिव्य और मानवीय, दूर और पास की ध्वनियों को, तो उपयुक्त आधार होने पर वह इसे साकार करने में सक्षम है।"

यदि कोई चाहे तो: 'मैं अन्य प्राणियों और व्यक्तियों के मन को अपने मन से समाहित करके समझ सकूँ। मैं कामवासना से ग्रस्त मन को कामवासना से ग्रस्त मन के रूप में और निर्जन मन को निर्जन मन के रूप में समझ सकूँ; [18] घृणा से ग्रस्त मन को घृणा से ग्रस्त मन के रूप में और निर्जन मन को निर्जन मन के रूप में समझ सकूँ; मोह से ग्रस्त मन को मोह से ग्रस्त मन के रूप में और निर्जन मन को मोह से रहित मन के रूप में समझ सकूँ; संकुचित मन को संकुचित और विचलित मन को विचलित समझ सकूँ; उच्च मन को उच्च और निम्न मन को निम्न समझ सकूँ; श्रेष्ठ मन को श्रेष्ठ और अपरिभाज्य मन को अपरिभाज्य समझ सकूँ; आत्ममग्न मन को आत्ममग्न और असामंजस्यपूर्ण मन को असामहिता; मुक्त मन मुक्त ही रहता है और अमुक्त मन अमुक्त ही रहता है; उपयुक्त आधार होने पर व्यक्ति इसे अनुभव करने में सक्षम होता है।

यदि कोई चाहे तो: 'क्या मैं अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) को याद कर सकता हूँ, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म, चार जन्म, पाँच जन्म, दस जन्म, बीस जन्म, तीस जन्म, चालीस जन्म, पचास जन्म, सौ जन्म, हज़ार जन्म, एक लाख जन्म, संसार के विघटन के अनेक युग, संसार के विकास के अनेक युग, संसार के विघटन और संसार के विकास के अनेक युग इस प्रकार: 'वहाँ मेरा ऐसा नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु होती थी; वहाँ से निकलकर, मेरा कहीं और पुनर्जन्म हुआ, और वहाँ भी मेरा ऐसा ही नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु होती थी; वहाँ से गुजरकर, मेरा यहाँ पुनर्जन्म हुआ" — क्या मैं इस प्रकार अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) के पहलुओं और विवरणों को याद कर सकता हूँ, उपयुक्त आधार होने पर इसे महसूस किया जा सकता है। [19]

यदि कोई चाहे तो: 'क्या मैं, अपनी दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मानवीय दृष्टि से परे है, प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देख सकता हूँ, निम्न और उच्च, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, और यह समझ सकता हूँ कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है: 'ये प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से दुराचार किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा की, गलत मत रखा और गलत मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं;' परन्तु वे प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण का पालन किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा नहीं की, जिन्होंने सही दृष्टि रखी और सही दृष्टि पर आधारित कर्म किए, शरीर के विखंडन के बाद मृत्यु के समय एक अच्छे स्थान, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं" — इस प्रकार, दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मनुष्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है, मैं प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देख सकूँ, निम्न और उच्च, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, और यह समझ सकूँ कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं, उपयुक्त आधार होने पर इसे अनुभव किया जा सकता है।

यदि कोई चाहे: "मैं दोषों के नाश के साथ, इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कर सकूँ, और उसमें प्रवेश करने के बाद, उसमें निवास कर सकूँ, तो उपयुक्त आधार होने पर वह इसे अनुभव करने में सक्षम है।"

24 अनैतिक (दुस्सिल)

भिक्षुओं (सन्यासियों), (1) अनैतिक व्यक्ति के लिए, सद्गुणों से रहित व्यक्ति के लिए, (2) सही समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) अपने निकटवर्ती कारण से वंचित हो जाती है। जब सही समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) नहीं होती, तो सही समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) से रहित व्यक्ति के लिए, (3) चीजों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन अपने निकटवर्ती कारण से वंचित हो जाता है। जब चीजों के

वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन नहीं होता, तो चीजों के वास्तविक स्वरूप के ज्ञान और दर्शन (यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन संस्कृत: यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन) से रहित व्यक्ति के लिए, (4) विरंजक और वैराग्य अपने निकटवर्ती कारण से वंचित हो जाते हैं। जब विरंजक और वैराग्य नहीं होते, तो विरंजक और वैराग्य से रहित व्यक्ति के लिए, (5) मुक्ति के ज्ञान और दर्शन अपने निकटवर्ती कारण से वंचित हो जाते हैं। 987

मान लीजिए एक पेड़ में शाखाएँ और पत्ते कम हैं। तो उसकी शाखाएँ पूरी तरह से विकसित नहीं होतीं; उसकी छाल, [20] कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी भी पूरी तरह से विकसित नहीं होतीं। ठीक उसी प्रकार, एक अनैतिक व्यक्ति, जो सद्गुणों से रहित है, के लिए उचित एकाग्रता अपने मूल कारण से वंचित रहती है। जब उचित समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) नहीं होती... तो मुक्ति का ज्ञान और दर्शन (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) अपने मूल कारण से वंचित रहता है।

भिक्षुओं, (1) एक गुणी व्यक्ति के लिए, जिसका आचरण गुणी हो, (2) सही समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) उसका निकटतम कारण है। जब सही समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) हो, तो सही समाधि प्राप्त व्यक्ति के लिए, (3) चीजों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन उसका निकटतम कारण है। जब चीजों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन हो (यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन), तो चीजों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन प्राप्त व्यक्ति के लिए, (4) निब्बिदा और वैराग्य उसका निकटतम कारण है। जब विरग्य और वैराग्य हो, तो विरग्य और वैराग्य प्राप्त व्यक्ति के लिए, (5) मुक्ति का ज्ञान और दर्शन उसका निकटतम कारण है।

मान लीजिए एक पेड़ है जिसमें शाखाएँ और पत्ते हैं। फिर उसकी शाखाएँ पूर्ण रूप से बढ़ती हैं; उसकी छाल, कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी भी पूर्ण रूप से बढ़ती हैं। ठीक उसी प्रकार, एक गुणी व्यक्ति के लिए, जिसका आचरण गुणी है, सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) उसका मूल कारण है। जब सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) होती है... तब मुक्ति का ज्ञान और दर्शन उसका मूल कारण होता है।

---

25 सहायता प्राप्त (अनुगहिता)

भिक्षुओं, जब सही दृष्टिकोण पाँच कारकों द्वारा समर्थित होता है, तो इसका फल मन की मुक्ति होता है, मन की मुक्ति इसका फल और लाभ दोनों है; इसका फल पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति है, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति इसका फल और लाभ दोनों है। 988 वे पाँच क्या हैं? [21] यहाँ, सही दृष्टिकोण सद्गुणी आचरण, विद्या, चर्चा, शांति और अंतर्दृष्टि (विपश्यना) द्वारा समर्थित है। जब सही दृष्टिकोण इन पाँच कारकों द्वारा समर्थित होता है, तो इसका फल मन की मुक्ति होता है, मन की मुक्ति इसका फल और लाभ दोनों है; इसका फल पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति है, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति इसका फल और लाभ दोनों है।

---

26 मुक्ति (विमुत्तयातन)

भिक्षुओं, मुक्ति के ये पाँच आधार हैं, जिनके माध्यम से यदि कोई भिक्षु सजग, उत्साही और दृढ़ संकल्पित होकर निवास करता है, तो उसका अमुक्त मन मुक्त हो जाता है, उसके अविभाजित दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं, और वह बंधन से अब तक अछूती, अतुलनीय मुक्ति प्राप्त कर लेता है। वे पाँच कौन से हैं?

(1) "यहाँ, हे भिक्षुओं, गुरु या गुरु के पद पर आसीन कोई साथी भिक्षु किसी भिक्षु को धम्म की शिक्षा देता है। गुरु या गुरु के पद पर आसीन कोई साथी भिक्षु जिस भी प्रकार से भिक्षु को धम्म की शिक्षा देता है, ठीक उसी प्रकार भिक्षु को धम्म के अर्थ और धम्म में प्रेरणा का अनुभव होता है। 990 ऐसा करने पर, उसमें आनंद उत्पन्न होता है। जब वह आनंदित होता है, तो उसे परमानंद (पीति) प्राप्त होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि (समाधि/समाहित) हो जाता है। 991 यही मुक्ति का पहला आधार है, जिसके माध्यम से यदि कोई भिक्षु सजग, उत्साही और दृढ़ रहता है, तो उसका अमुक्त मन मुक्त हो जाता है, उसके अविभाजित दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं, और वह बंधन से अब तक प्राप्त न हुई अतुलनीय सुरक्षा को प्राप्त कर लेता है।"

(2) "फिर, न तो गुरु और न ही गुरु के पद पर आसीन कोई साथी भिक्षु किसी भिक्षु को धम्म की शिक्षा देता है, बल्कि वह स्वयं दूसरों को उसी प्रकार विस्तार से धम्म की शिक्षा देता है जैसा उसने सुना और सीखा है; जिस भी प्रकार से भिक्षु [22] दूसरों को उसी प्रकार विस्तार से धम्म की शिक्षा देता है जैसा उसने सुना और सीखा है, ठीक उसी प्रकार, उस धम्म के संबंध में, वह धम्म के अर्थ में प्रेरणा और धम्म में प्रेरणा का अनुभव करता है। ऐसा करने पर, उसमें आनंद उत्पन्न होता है: जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन आत्म-मग्न (समाधि/समाहित) हो जाता है। यह मुक्ति का दूसरा आधार है, जिसके माध्यम से, यदि कोई भिक्षु सचेत, उत्साही और दृढ़ रहता है, तो उसका अमुक्त मन मुक्त हो जाता है, उसके अविघटित दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं, और वह मुक्ति की अवस्था में पहुँच जाता है। गुलामी से अब तक अप्रतिम, अद्वितीय सुरक्षा।

(3) "फिर, न तो गुरु और न ही गुरु के पद पर आसीन कोई साथी भिक्षु किसी भिक्षु को धम्म का उपदेश देता है, और न ही वह स्वयं दूसरों को धम्म (मार्ग) का विस्तृत उपदेश देता है जैसा उसने सुना और सीखा है, बल्कि वह धम्म का विस्तृत पाठ करता है जैसा उसने सुना और सीखा है। भिक्षु जिस भी प्रकार से धम्म का विस्तृत पाठ करता है जैसा उसने सुना और सीखा है, ठीक उसी प्रकार, उस धम्म के संबंध में, वह धम्म के अर्थ में प्रेरणा और धम्म में प्रेरणा का अनुभव करता है। ऐसा करने पर, उसमें आनंद उत्पन्न होता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि (समाधि) में लीन हो जाता है। यह मुक्ति का तीसरा आधार है, जिसके माध्यम से, यदि कोई भिक्षु सचेत, उत्साही और दृढ़ रहता है, तो उसका अमुक्त मन मुक्त हो जाता है, उसका अविनाशी मन..." सभी कलंक पूरी तरह से नष्ट हो जाते हैं, और वह अब तक अछूती, अद्वितीय बंधन से मुक्ति की सुरक्षा प्राप्त कर लेता है।

(4) "फिर, न तो गुरु और न ही गुरु के पद पर आसीन कोई साथी भिक्षु किसी भिक्षु को धम्म की शिक्षा देता है, न ही वह दूसरों को धम्म की विस्तृत शिक्षा देता है जैसा उसने सुना और सीखा है, न ही वह धम्म का विस्तृत पाठ करता है जैसा उसने सुना और सीखा है, बल्कि वह धम्म पर मनन करता है, {23] उसकी परीक्षा लेता है और मानसिक रूप से उसका निरीक्षण करता है जैसा उसने सुना और सीखा है। भिक्षु जिस भी प्रकार से धम्म पर मनन करता है, उसकी परीक्षा लेता है और मानसिक रूप से उसका निरीक्षण करता है जैसा उसने सुना और सीखा है, ठीक उसी प्रकार, उस धम्म के संबंध में, वह धम्म के अर्थ में प्रेरणा और धम्म में प्रेरणा का अनुभव करता है। ऐसा करने पर, उसमें आनंद उत्पन्न होता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि (समाधि) में लीन हो जाता है। यह मुक्ति का चौथा आधार है, जिसके माध्यम से, यदि कोई भिक्षु जब वह सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी हो जाता है, तो उसका अमुक्त मन मुक्त हो जाता है, उसके अनसुलझे दोष पूरी तरह नष्ट हो जाते हैं, और वह बंधन से अब तक अछूती, अतुलनीय सुरक्षा प्राप्त कर लेता है।

(5) "फिर, न तो गुरु और न ही गुरु के पद पर आसीन कोई साथी भिक्षु किसी भिक्षु को धम्म (मार्ग) सिखाता है, न ही वह दूसरों को धम्म का विस्तृत पाठ करता है जैसा उसने सुना और सीखा है, न ही वह धम्म का विस्तृत पाठ करता है जैसा उसने सुना और सीखा है, न ही वह धम्म पर मनन, परीक्षण और मानसिक निरीक्षण करता है जैसा उसने सुना और सीखा है, बल्कि उसने समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) के किसी विशेष विषय को भली-भांति ग्रहण किया है, उस पर भली-भांति ध्यान दिया है, उसे भली-भांति बनाए रखा है और उसमें पन्ना (दिव्य ज्ञान) से भली-भांति प्रवेश किया है। जिस भी प्रकार से भिक्षु ने समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) के किसी विशेष विषय को भली-भांति ग्रहण किया है, उस पर भली-भांति ध्यान दिया है, उसे भली-भांति बनाए रखा है और उसमें पन्ना (दिव्य ज्ञान) से भली-भांति प्रवेश किया है, ठीक उसी प्रकार, उस धम्म के संबंध में, वह अर्थ में प्रेरणा और धम्म में प्रेरणा का अनुभव करता है। ऐसा करने पर, उसमें आनंद उत्पन्न होता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होती है। परमानंदित व्यक्ति के लिए मन शांत हो जाता है, शरीर शांत हो जाता है। शरीर शांत होने पर सुख का अनुभव होता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि में लीन हो जाता है। यह मुक्ति का पाँचवाँ आधार है, जिसके द्वारा यदि कोई भिक्षु सजग, उत्साही और दृढ़ रहता है, [24] तो उसका अमुक्त मन मुक्त हो जाता है, उसके अविभाजित दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं, और वह बंधन से अब तक अप्राप्त अतुलनीय सुरक्षा प्राप्त कर लेता है।

"हे भिक्षुओं, ये मुक्ति के पाँच आधार हैं, जिनके माध्यम से यदि कोई भिक्षु सजग, उत्साही और दृढ़ संकल्पित होकर रहता है, तो उसका अमुक्त मन मुक्त हो जाता है, उसके अविभाजित दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं, और वह बंधन से अब तक अप्राप्त अतुलनीय सुरक्षा प्राप्त कर लेता है।"

---

27 समाधि (स्वयं में लीन होना/सम्मोहन अवस्था)

"भिक्षु (सन्यासी), सजग और सचेत रहकर (ध्यान/सती अवस्था में) असीम समाधि (स्व-लीन/सता) प्राप्त करते हैं। 992 जब आप सजग और सचेत रहकर (ध्यान/सती अवस्था में) असीम एकाग्रता प्राप्त करते हैं, तो पाँच प्रकार के ज्ञान उत्पन्न होते हैं जो व्यक्तिगत रूप से आपके होते हैं। वे पाँच कौन से हैं? (1) व्यक्तिगत रूप से उत्पन्न होने वाला ज्ञान: 'यह समाधि (स्व-लीन/सता) वर्तमान में सुखद है और भविष्य में इसका परिणाम सुखद होगा' (2) व्यक्तिगत रूप से उत्पन्न होने वाला ज्ञान: 'यह समाधि (स्व-लीन/सता) श्रेष्ठ और आध्यात्मिक है' (3) व्यक्तिगत रूप से उत्पन्न होने वाला ज्ञान: 'यह समाधि (स्व-लीन/सता) नीच व्यक्तियों द्वारा अभ्यास नहीं की जाती है' (4) व्यक्तिगत रूप से उत्पन्न होने वाला ज्ञान: 'यह समाधि (स्व-लीन/सता) शांत और उदात्त है, पूर्ण शांति से प्राप्त होती है, और एकीकरण तक पहुँचती है; इसे बलपूर्वक [अपवित्रताओं] को दबाकर नियंत्रित या रोका नहीं जाता है।" 3 (5) वह ज्ञान उत्पन्न होता है जो व्यक्तिगत रूप से आपका है: 'मैं इस समाधि (स्व-लीन/सत्त्व) में सचेत रूप से प्रवेश करता हूँ और सचेत रूप से इससे बाहर निकलता हूँ।' भिक्षुओं, सजग और निरंतर सचेत (ध्यान/सती) रहते हुए, असीम समाधि (स्व-लीन/सत्त्व) विकसित करते हैं। जब आप सजग और सचेत (ध्यान/सती) रहते हुए असीम समाधि (स्व-लीन/सत्त्व) विकसित करते हैं, तो ये पाँच प्रकार के ज्ञान उत्पन्न होते हैं जो व्यक्तिगत रूप से आपके हैं।" [25]

---

28 पंचगुणित (पंचांगिका)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें पंचगुणित सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के विकास का शिक्षण दूंगा। 995 ध्यान से सुनो और उपस्थित रहो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और भिक्षुओं, पांच कारकों वाली सही समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) का विकास क्या है?"

(1) "यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, भिक्षु प्रथम ध्यान में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त होता है, जिसमें चिंतन और आत्मनिरीक्षण शामिल होता है। वह एकांत से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख को अपने शरीर में इस प्रकार समाहित करता है कि उसके पूरे शरीर का कोई भी भाग ऐसा न रहे जो एकांत से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख से अछूता रहे। जैसे एक कुशल स्नान कराने वाला या उसका प्रशिक्षु धातु के पात्र में स्नान पाउडर का ढेर लगाता है और धीरे-धीरे पानी छिड़कते हुए उसे तब तक गूंथता है जब तक कि नमी उसके पाउडर के गोले को गीला न कर दे, उसे पूरी तरह से भिगो न दे और अंदर-बाहर तक समाहित न कर दे, फिर भी गोला रिसता नहीं है; उसी प्रकार, भिक्षु एकांत से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख को अपने शरीर में इस प्रकार समाहित करता है कि उनके पूरे शरीर का कोई भी अंग ऐसा नहीं है जो एकांतवास से उत्पन्न परमानंद और सुख से अछूता हो। यही उत्तम पंचगुणित समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) का प्रथम विकास है।

(2) "फिर, विचार और परीक्षा के शांत होने पर, भिक्षु दूसरी ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और जो समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की जलन से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त होती है, बिना विचार और परीक्षा के। वह समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख को अपने शरीर में इस प्रकार समाहित कर लेता है कि उसके पूरे शरीर का कोई भी भाग ऐसा नहीं रह जाता जो समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख से अछूता हो। जैसे मान लीजिए कोई झील है जिसका जल नीचे से ऊपर की ओर आता है और पूर्व, पश्चिम, उत्तर, [26] या दक्षिण से कोई प्रवाह नहीं होता, और झील समय-समय पर वर्षा से भरती नहीं है, तो झील में

ऊपर से फूटने वाला ठंडा जल झील को इस प्रकार समाहित कर लेता है कि झील में पानी भर जाता है। संपूर्ण झील का कोई भी भाग शीतल जल से अछूता न रहे; उसी प्रकार भिक्षु समाधि से उत्पन्न परमानंद और सुख को अपने शरीर में व्याप्त कर लेता है, जिससे उसके संपूर्ण शरीर का कोई भी भाग समाधि से उत्पन्न परमानंद और सुख से अछूता न रह जाए। यही उत्तम पंचगुणित समाधि का दूसरा विकास है।

(3) "फिर, जब पीति (आनंद) भी लुप्त हो जाती है, तो भिक्षु समभाव में रहता है और सती (ध्यान करते हुए) और पूर्णतः बोध रखते हुए, वह शरीर के साथ सुख (सुख) का अनुभव करता है; वह तीसरे ध्यान (सता) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसके बारे में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव में रहने वाला, सती (ध्यान करते हुए) और सुखी है।' वह निर्धन आनंद (पीति) को इस शरीर में इस प्रकार समाहित कर देता है कि उसके पूरे शरीर का कोई भी भाग निर्धन आनंद (पीति) से अछूता नहीं रह जाता। जैसे नीले, लाल या सफेद कमलों से भरे तालाब में, कुछ कमल जो पानी में ही जन्म लेते हैं और बढ़ते हैं, पानी में डूबे रहते हैं और उससे बाहर नहीं निकलते, और ठंडा पानी उन्हें जड़ से लेकर सिरे तक भिगोकर रख देता है, जिससे उन कमलों का कोई भी भाग ठंडा पानी से अछूता नहीं रह जाता; ठीक उसी प्रकार, भिक्षु निर्धन आनंद (पीति) को इस शरीर में इस प्रकार समाहित कर देता है कि उसके पूरे शरीर का कोई भी भाग निर्धन आनंद (पीति) से अछूता नहीं रह जाता। यह पांच गुणों वाली सही समाधि (स्व-लीनता/समाधि) का तीसरा विकास है।

(4) "फिर, सुख [27] और दुख के त्याग के साथ, और पहले से ही आनंद और निराशा के बीत जाने के साथ, एक भिक्षु चौथे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जो न तो कष्टदायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) द्वारा ध्यान (सती/ध्यान) का शुद्धिकरण होता है।"

वह शुद्ध प्रकाशमान मन से इस शरीर में व्याप्त होकर बैठता है, जिससे उसके पूरे शरीर का कोई भी भाग शुद्ध प्रकाशमान मन से अछूता नहीं रहता। जैसे कोई व्यक्ति सिर से नीचे तक सफेद कपड़े से ढका बैठा हो, जिससे उसके पूरे शरीर का कोई भी भाग सफेद कपड़े से अछूता न रहे; ठीक उसी प्रकार, भिक्षु शुद्ध प्रकाशमान मन से इस शरीर में व्याप्त होकर बैठता है, जिससे उसके पूरे शरीर का कोई भी भाग शुद्ध प्रकाशमान मन से अछूता नहीं रहता। यह उत्तम पंचगुणित समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) का चौथा विकास है।

(5) "एक भिक्षु ने पुनरावलोकन के विषय को भली-भांति ग्रहण कर लिया है, उस पर भली-भांति ध्यान दिया है, उसे भली-भांति बनाए रखा है और उसमें पन्ना (दिव्य ज्ञान) का भली-भांति प्रवेश किया है। जैसे एक व्यक्ति दूसरे को देखता है—जैसे खड़ा व्यक्ति बैठे हुए व्यक्ति को देखता है, या बैठा हुआ व्यक्ति लेटे हुए व्यक्ति को देखता है—वैसे ही, एक भिक्षु ने पुनरावलोकन के विषय को भली-भांति ग्रहण कर लिया है, उस पर भली-भांति ध्यान दिया है, उसे भली-भांति बनाए रखा है और उसमें पन्ना (दिव्य ज्ञान) का भली-भांति प्रवेश किया है। यह पांच कारकों वाली उत्तम समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) का पांचवा विकास है।"

जब भिक्षुओं ने इस प्रकार से उत्तम पंचगुणित समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का विकास और अभ्यास कर लिया हो, तब उपयुक्त आधार होने पर वे प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा प्राप्त किसी भी अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम होते हैं, जिस ओर वे अपना मन लगाते हैं। 997

मान लीजिए कि एक स्टैंड पर पानी से भरा एक जग रखा है, जो पानी से लबालब भरा है ताकि कौवे उसमें से पानी पी सकें। यदि कोई बलवान व्यक्ति उसे किसी भी दिशा में झुकाए, तो क्या पानी बाहर आएगा?

"हां, भंते।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, जब श्रेष्ठ पंचगुणित सही समाधि (आत्म-लीनता/तल्लीनता) इस प्रकार विकसित और पोषित हो जाती है, तो उपयुक्त आधार होने पर, वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा प्राप्त की जा सकने वाली किसी भी अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम होता है, जिसकी ओर वह अपना मन झुकाता है।"

"मान लीजिए समतल जमीन पर एक चार-तरफा तालाब है, जो एक तटबंध से घिरा हुआ है और पानी से लबालब भरा हुआ है, जिससे कौवे भी पानी पी सकते हैं। यदि कोई बलवान व्यक्ति किसी भी तरफ से तटबंध हटा दे, तो क्या पानी बाहर आएगा?"

"हां, भंते।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, जब इस प्रकार से उत्तम पंचगुणित सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) विकसित और पोषित हो जाती है, तब उपयुक्त आधार होने पर, वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा प्राप्त की जा सकने वाली किसी भी अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम होता है, जिसकी ओर वह अपना मन झुकाए।"

मान लीजिए कि एक समतल चौराहे पर, उत्तम नस्ल के घोड़ों से जुता हुआ एक रथ खड़ा है, जिसके हाथ में अंकुश तैयार है, ताकि एक कुशल प्रशिक्षक, सारथी, उस पर सवार होकर, अपने बाएं हाथ में लगाम और दाएं हाथ में अंकुश लेकर, जब चाहे और जहां चाहे जा सके और लौट सके। इसी प्रकार, भिक्षुओं, जब इस प्रकार से श्रेष्ठ पंचगुणित सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) विकसित और पोषित हो जाती है, तो उपयुक्त आधार होने पर, वह प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा प्राप्त की जा सकने वाली किसी भी अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम होता है, जिसकी ओर वह अपना मन लगाता है।

"यदि वह चाहे: 'मैं अनेक प्रकार की मानसिक शक्तियों का प्रयोग कर सकूँ: [29] [जैसा कि 5:23 में है] एक होकर अनेक हो जाऊँ; अनेक होकर एक हो जाऊँ; प्रकट और लुप्त हो जाऊँ; बिना किसी बाधा के दीवार, प्राचीर, पर्वत से होकर अंतरिक्ष में जा सकूँ; पृथ्वी में ऐसे गोता लगा सकूँ जैसे वह जल हो; जल पर बिना डूबे ऐसे चल सकूँ जैसे वह पृथ्वी हो; पालथी मारकर पक्षी की तरह अंतरिक्ष में यात्रा कर सकूँ; अपने हाथों से शक्तिशाली और बलिष्ठ चंद्रमा और सूर्य को स्पर्श और सहला सकूँ; ब्रह्म जगत तक शरीर पर भगवानत्व स्थापित कर सकूँ।' तो उपयुक्त आधार होने पर व्यक्ति इसे साकार करने में सक्षम है।"

यदि कोई चाहे तो: 'मैं अन्य प्राणियों और व्यक्तियों के मन को अपने मन से ग्रहण करके समझ सकूँ। मैं कामवासना से ग्रस्त मन को कामवासना से ग्रस्त मन के रूप में और निर्जन मन को निर्जन मन के रूप में समझ सकूँ; [18] घृणा से ग्रस्त मन को घृणा से ग्रस्त मन के रूप में और निर्जन मन को निर्जन मन के रूप में समझ सकूँ; मोह से ग्रस्त मन को मोह से ग्रस्त मन के रूप में और निर्जन मन को निर्जन मन के रूप में समझ सकूँ; संकुचित मन को संकुचित और विचलित मन को विचलित समझ सकूँ; उदात्त मन को उदात्त और अधोमुखी मन को अधोमुखी समझ सकूँ; श्रेष्ठ मन को श्रेष्ठ और अपोमुखी मन को अपोमुखी समझ सकूँ; आत्ममग्न मन को आत्ममग्न और असामंजस्यपूर्ण मन को असामहिता; मुक्त मन मुक्त ही रहता है और अमुक्त मन अमुक्त ही रहता है; उपयुक्त आधार होने पर व्यक्ति इसे अनुभव करने में सक्षम होता है।

यदि कोई चाहे तो: 'क्या मैं अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) को याद कर सकता हूँ, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म, चार जन्म, पाँच जन्म, दस जन्म, बीस जन्म, तीस जन्म, चालीस जन्म, पचास जन्म, सौ जन्म, हज़ार जन्म, एक लाख जन्म, संसार के विघटन के अनेक युग, संसार के विकास के अनेक युग, संसार के विघटन और संसार के विकास के अनेक युग इस प्रकार: 'वहाँ मेरा ऐसा नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु होती थी; वहाँ से निकलकर, मेरा कहीं और पुनर्जन्म हुआ, और वहाँ भी मेरा ऐसा ही नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु होती थी; वहाँ से गुजरकर, मेरा यहाँ पुनर्जन्म हुआ है" - क्या मैं इस प्रकार अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके पहलुओं और विवरणों सहित याद कर सकता हूँ, उपयुक्त आधार होने पर इसे अनुभव किया जा सकता है।

यदि कोई चाहे तो: 'क्या मैं, अपनी दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मानवीय दृष्टि से परे है, प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देख सकता हूँ, निम्न और उच्च, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, और यह समझ सकता हूँ कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है: 'ये प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से दुराचार किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा की, गलत मत रखा और गलत मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं;' परन्तु वे प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण का पालन किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा नहीं की, जिन्होंने सही दृष्टि रखी और सही दृष्टि पर आधारित कर्म किए, शरीर के विखंडन के बाद मृत्यु के समय एक अच्छे स्थान, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं'' — इस प्रकार, दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मनुष्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है, मैं प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देख सकूँ, निम्न और उच्च, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, और यह समझ सकूँ कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं, उपयुक्त आधार होने पर इसे अनुभव किया जा सकता है।

यदि कोई चाहे: "मैं दोषों के नाश के साथ, इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कर सकूँ, और उसमें प्रवेश करने के बाद, उसमें निवास कर सकूँ, तो उपयुक्त आधार होने पर वह इसे अनुभव करने में सक्षम है।"

---

29. चलते हुए ध्यान (चंकमा संस्कृत: चंकरामना)

भिक्षुओं, चलने-फिरने वाली ध्यान साधना के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच क्या हैं? [30] व्यक्ति यात्रा करने में सक्षम हो जाता है; वह प्रयास करने में सक्षम हो जाता है; वह स्वस्थ हो जाता है; जो कुछ खाया, पिया, ग्रहण किया और चखा है, वह ठीक से पच जाता है; चलने-फिरने वाली ध्यान साधना से प्राप्त समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) दीर्घकालिक होती है। 998 ये चलने-फिरने वाली ध्यान साधना के पाँच लाभ हैं।

---

30 नागिता

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक विशाल संघ के साथ कोसलवासियों के बीच भ्रमण कर रहे थे, जब वे इच्छानंगला नामक कोसल के ब्राह्मण गाँव में पहुँचे। वहाँ भगवान (बुद्ध) इच्छानंगला के घने वन में निवास कर रहे थे। इच्छानंगला के ब्राह्मण गृहस्थों ने सुना: "ऐसा कहा जाता है कि शाक्य वंश से निकले तपस्वी गौतम इच्छानंगला पहुँच गए हैं और अब इच्छानंगला के घने वन में निवास कर रहे हैं। अब उस गुरु गौतम के बारे में यह शुभ सूचना फैली है कि 'वह भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, संसार के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय नेता हैं, देवताओं और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं। उन्होंने अपने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इस संसार को, इसके देवताओं, मार और ब्रह्मा सहित, इस जनसंख्या को, इसके तपस्वियों और ब्राह्मणों सहित, इसके देवताओं और मनुष्यों सहित, जान लिया है और इसे दूसरों को भी ज्ञात कराते हैं। वे ऐसे धम्म का उपदेश देते हैं जो आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम है, सही अर्थ और शब्दों के साथ; वे एक पूर्णतः परिपूर्ण और पवित्र ब्रह्मचर्य जीवन का प्रकटीकरण करते हैं। ऐसे अरहंतों को देखना सौभाग्य की बात है।

फिर, जब रात बीत गई, तो इच्चानंगला के ब्राह्मण गृहस्थों ने तरह-तरह का भोजन लेकर इच्चानंगला के घने जंगल में चले गए। वे प्रवेश द्वार के बाहर शोर मचाते हुए खड़े हो गए। [31] उस समय पूज्य नागिता भगवान (बुद्ध) के सेवक थे। भगवान (बुद्ध) ने पूज्य नागिता से कहा, "नागीता, इतना शोर कौन मचा रहा है? ऐसा लगता है जैसे मछुआरे मछली पकड़ने आए हों।"

"भंते, ये इच्छानंगल के ब्राह्मण गृहस्थ हैं जो अनेक प्रकार का प्रचुर भोजन लेकर आए हैं। वे प्रवेश द्वार के बाहर खड़े हैं, [इसे] भगवान (बुद्ध) और भिक्षुओं के संघ को अर्पित करने की इच्छा से।"

"हे नागिता, मुझे कभी प्रसिद्धि न मिले और प्रसिद्धि कभी मेरा पीछा न करे। जो व्यक्ति इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, त्याग का यह आनंद, एकांत का आनंद, शांति का आनंद, ज्ञान का यह आनंद प्राप्त नहीं करता, वह उस नीच सुख, उस आलसी सुख, लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा के सुख को स्वीकार करे।"

हे भंते, अब भगवान (बुद्ध) की सहमति हो, हे सौभाग्यशाली, अब भगवान (बुद्ध) की सहमति का समय आ गया है। अब भगवान (बुद्ध) जहाँ भी जाएँगे, नगर और गाँव के ब्राह्मण गृहस्थ उसी दिशा में झुकेंगे। जैसे जब भारी बारिश की बूँदें बरसती हैं, तो पानी ढलान से नीचे बहता है, वैसे ही अब भगवान (बुद्ध) जहाँ भी जाएँगे, नगर और गाँव के ब्राह्मण गृहस्थ उसी दिशा में झुकेंगे। इसका कारण क्या है? क्योंकि भगवान (बुद्ध) का आचरण सदाचारी है और उन्हें दिव्य ज्ञान प्राप्त है।

"हे नागिता, मुझे कभी प्रसिद्धि न मिले, और प्रसिद्धि कभी मेरा पीछा न करे। जो व्यक्ति इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, त्याग के इस आनंद को प्राप्त नहीं करता... वह उस नीच सुख, उस आलसी सुख, लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा के सुख को स्वीकार कर सकता है। [32]

(1) नागिता, जो कुछ खाया, पिया, ग्रहण किया और चखा जाता है, अंततः मल-मूत्र के रूप में निकल जाता है: यही उसका परिणाम है। (2) प्रिय वस्तुओं के परिवर्तन और रूपांतरण से दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा उत्पन्न होती है: यही उसका परिणाम है। (3) जो व्यक्ति अनाकर्षकता के चिह्न पर ध्यान लगाता है, उसमें सुंदरता के चिह्न के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है: यही उसका परिणाम है। (4) जो व्यक्ति छह इंद्रियों के संपर्क के लिए अनित्यता (अनित्यता) को ध्यान से देखता है, उसमें संपर्क के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है: यही उसका परिणाम है। (5) जो व्यक्ति आसक्ति के अधीन पांच स्कंधों में उत्पन्न होने और लुप्त होने को ध्यान से देखता है, उसमें आसक्ति के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है: यही उसका परिणाम है।

IV. सुमना-वग्गो

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

31 सुमाना

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब राजकुमारी सुमना, दस सौ सैनिकों, पाँच सौ रथों और पाँच सौ दरबारी कन्याओं के साथ भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचीं, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गईं। फिर राजकुमारी सुमना ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"हे भंते, यहाँ भगवान (बुद्ध) के दो शिष्य आस्था, सद्गुण और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में समान हो सकते हैं, लेकिन एक उदार है जबकि दूसरा नहीं। मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन [33] के साथ, वे दोनों एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेंगे। जब वे देव (देवदूत/भगवान) बन जाएंगे, तो क्या उनमें कोई भेद या अंतर रह जाएगा?"

"सुमन, ऐसा होगा," भगवान (बुद्ध) ने कहा। "उदार पुरुष, देव (देवदूत/भगवान) बनकर, पाँच प्रकार से अन्य पुरुषों से श्रेष्ठ होगा: दिव्य आयु, दिव्य सौंदर्य, दिव्य सुख, दिव्य महिमा और दिव्य अधिकार। उदार पुरुष, देव (देवदूत/भगवान) बनकर, इन पाँचों प्रकार से अन्य पुरुषों से श्रेष्ठ होगा।"

"लेकिन, भंते, अगर ये दोनों वहां से चले जाएं और फिर से मनुष्य बन जाएं, तो क्या उनमें अभी भी कोई भेद या अंतर रह जाएगा?"

"सुमन, ऐसा होगा," भगवान (बुद्ध) ने कहा। "जब वे पुनः मनुष्य बनेंगे, तो उदार व्यक्ति पाँच प्रकार से दूसरे से श्रेष्ठ होगा: मानव आयु, मानव सौंदर्य, मानव सुख, मानव विनम्रता और मानव अधिकार। जब वे पुनः मनुष्य बनेंगे, तो उदार व्यक्ति इन पाँच प्रकार से दूसरे से श्रेष्ठ होगा।"

लेकिन, भंते, यदि ये दोनों गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में चले जाएं, तो क्या उनमें अभी भी कोई भेद या अंतर रह जाएगा?

"ऐसा होगा, सुमना," भगवान (बुद्ध) ने कहा। उदार व्यक्ति, संन्यासी जीवन में जाने के बाद, पाँच प्रकार से दूसरों से श्रेष्ठ होगा। 1001 (1) वह सामान्यतः वही वस्त्र धारण करेगा जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, और शायद ही कभी ऐसा वस्त्र धारण करेगा जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो। (2) वह सामान्यतः वही भिक्षा भोजन ग्रहण करेगा जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, और शायद ही कभी ऐसा भिक्षा भोजन ग्रहण करेगा जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो। (3) वह सामान्यतः वही आवास धारण करेगा जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, और शायद ही कभी ऐसा आवास धारण करेगा जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो। (4) वह सामान्यतः वही औषधियाँ और बीमारों के लिए वही भोजन सामग्री धारण करेगा जो उसे विशेष रूप से भेंट की गई हो, और शायद ही कभी ऐसी औषधियाँ और भोजन सामग्री धारण करेगा जो उसे विशेष रूप से भेंट न की गई हो। (5) उसके साथी संन्यासी, जिनके साथ वह रहता है, सामान्यतः शारीरिक, मौखिक और मानसिक क्रियाओं द्वारा उसके साथ सुखद व्यवहार करेंगे, शायद ही कभी

अप्रिय व्यवहार करेंगे। वे सामान्यतः उसे वही भेंट करेंगे जो उसे पसंद हो, शायद ही कभी अप्रिय भेंट करेंगे। उदार व्यक्ति, संन्यासी जीवन में जाने के बाद जो व्यक्ति [सन्यासी जीवन में] प्रवेश करेगा, वह इन पांच तरीकों से दूसरों से श्रेष्ठ होगा।

लेकिन, भंते, यदि दोनों अरहंत पद प्राप्त कर लें, तो क्या अरहंत पद प्राप्त करने के बाद भी उनमें कोई भेद या अंतर रह जाएगा?

"इस मामले में, सुमना, मैं घोषणा करता हूँ, एक की मुक्ति और दूसरे की मुक्ति में कोई अंतर नहीं होगा।"

"यह आश्चर्यजनक और अद्‌भुत है, भंते! सचमुच, दान देने और पुण्य कर्म करने का अच्छा कारण है, क्योंकि ये कर्म तब सहायक होंगे जब कोई देव (देवदूत/भगवान) बनेगा, [पुनः] मनुष्य बनेगा, या प्राण त्याग देगा।"

"ऐसा ही है, सुमना! ऐसा ही है, सुमना! सचमुच, दान देने और पुण्य कर्म करने का अच्छा कारण है, क्योंकि ये कर्म तब सहायक होंगे जब कोई देव (देवदूत/भगवान) बनेगा, [पुनः] मनुष्य बनेगा, या प्राण त्याग देगा।"

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह कहने के बाद, गुरु सुगत (भगवान बुद्ध) ने आगे यह कहा:

"जैसे अंतरिक्ष के गोले में गतिमान निर्मल चंद्रमा

अपनी चमक से

दुनिया के सभी तारों को फीका कर देता है,"

अत: सदाचारी आचरण में निपुण,

आस्थावान व्यक्ति,

उदारता के मामले में

संसार के सभी कंजूसों से कहीं अधिक श्रेष्ठ होता है।

"जैसे सौ चोटियों वाला वर्षा बादल,

गरजता हुआ, बिजली से घिरा हुआ,

धरती पर वर्षा बरसाता है,

मैदानों और निचले इलाकों को जलमग्न कर देता है,

वैसे ही पूर्ण रूप से प्रबुद्ध व्यक्ति का शिष्य,

दूरदृष्टि से परिपूर्ण बुद्धिमान व्यक्ति, पांच विशिष्ट मामलों में

कंजूस व्यक्ति से श्रेष्ठ होता है : दीर्घायु और यश, सौंदर्य और सुख। [1002] धनवान होकर, मृत्यु के बाद वह स्वर्ग में आनंदित होता है।"

---

32 कुंडी [1003]

एक बार भगवान (बुद्ध) राजगृह में बांस के जंगल में, गिलहरियों के अभयारण्य में निवास कर रहे थे। तब राजकुमारी चुंडी, पाँच सौ रथों और पाँच सौ दरबारी महिलाओं के साथ, भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचीं, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गईं। फिर राजकुमारी चुंडी ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, मेरे भाई राजकुमार चुंडा हैं। वे कहते हैं: 'जब भी कोई पुरुष या स्त्री बुद्ध, धम्म और संघ की शरण लेता है और जीवन-विनाश, अनधिकृत वस्तुओं के सेवन, यौन दुराचार, झूठी वाणी और आलस्य के मूल कारण मदिरा, शराब और मादक पदार्थों के सेवन से दूर रहता है, तो मृत्यु के बाद शरीर के टूटने पर उसका पुनर्जन्म केवल अच्छे स्थान पर होता है, बुरे स्थान पर नहीं। मैं भगवान (बुद्ध) से पूछता हूँ: 'हे भंते, किस प्रकार के गुरु पर विश्वास करना चाहिए, ताकि मृत्यु के बाद शरीर के टूटने पर उसका पुनर्जन्म केवल अच्छे स्थान पर हो, बुरे स्थान पर नहीं? किस प्रकार के धम्म पर विश्वास करना चाहिए, ताकि मृत्यु के बाद शरीर के टूटने पर उसका पुनर्जन्म केवल अच्छे स्थान पर हो, बुरे स्थान पर नहीं? किस प्रकार के संघ पर विश्वास करना चाहिए, ताकि मृत्यु के बाद शरीर के टूटने पर उसका पुनर्जन्म केवल अच्छे स्थान पर हो, बुरे स्थान पर नहीं। क्या बुरा गंतव्य? किस प्रकार का पुण्य कर्म करना चाहिए ताकि शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, व्यक्ति का पुनर्जन्म केवल अच्छे गंतव्य में हो, न कि बुरे गंतव्य में?

(1) "चुंडी, चाहे कितने भी प्राणी हों, चाहे वे बिना पैरों वाले हों या दो पैरों वाले, चार पैरों वाले या अनेक पैरों वाले, चाहे वे सजीव हों या निराकार, चाहे वे बोधगम्य हों या अबोधगम्य हों या न बोधगम्य हों, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, उन सब में श्रेष्ठ घोषित किए जाते हैं। जो बुद्ध पर विश्वास रखते हैं, वे श्रेष्ठ पर विश्वास रखते हैं, और जो श्रेष्ठ पर विश्वास रखते हैं, उनका परिणाम श्रेष्ठ ही होता है।"

(2) "हे चुंडी, जहाँ तक धर्म (धर्म) की परिबद्धता है, वहाँ तक श्रेष्ठ अष्टमार्ग सर्वोपरि है। जो श्रेष्ठ अष्टमार्ग में विश्वास रखते हैं, वे सर्वोपरि धर्म में विश्वास रखते हैं, और जो सर्वोपरि धर्म में विश्वास रखते हैं, उनका परिणाम भी सर्वोपरि होता है।"

(3) "हे चुंडी, चाहे धम्म किसी भी प्रकार की घटना हो, चाहे वह सशर्त हो या निर्शर्त, उनमें वैराग्य सर्वथा सर्वथा सर्वथा सर्वथा सर्वथा सर्वथा सर्वथा सर्वथा सर्वथा सर्वथा सर्वनाश, प्यास का नाश, आसक्ति का उखाड़ना, चक्र का अंत, तृष्णा का नाश, वैराग्य, निब्बान, निर्वाण। जो [36] धम्म में, वैराग्य में विश्वास रखते हैं, वे सर्वथा सर्वथा में विश्वास रखते हैं, और जो सर्वथा सर्वथा में विश्वास रखते हैं, उनका परिणाम सर्वथा सर्वथा होता है।"

(4) हे चुंडी, जितने भी संघ या समूह हैं, तथागत (बुद्ध) के शिष्यों का संघ उनमें सबसे श्रेष्ठ घोषित किया गया है, अर्थात् चारों युग्मों, आठ प्रकार के व्यक्तियों में—भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का यह संघ दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है। जो संघ में विश्वास रखते हैं, वे श्रेष्ठ संघ में विश्वास रखते हैं, और जो श्रेष्ठ संघ में विश्वास रखते हैं, उनका परिणाम श्रेष्ठ होता है।

(5) "हे चुंडी, जहाँ तक सद्गुण का भाव है, श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा प्रिय सद्गुण ही उनमें श्रेष्ठ घोषित किया गया है, अर्थात् वह सद्गुण अटूट, दोषरहित, निष्कलंक, निर्मल, मुक्तिदायक, बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, अगोचर और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाला हो। जो लोग श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा प्रिय सद्गुण का पालन करते हैं, वे श्रेष्ठ सद्गुण का पालन करते हैं, और जो लोग श्रेष्ठ सद्गुण का पालन करते हैं, उनका परिणाम भी श्रेष्ठ होता है।"

जो लोग सर्वोत्कृष्ट

धम्म को जानने में विश्वास रखते हैं, जो सर्वोत्कृष्ट

बुद्ध में विश्वास रखते हैं, जो

अतुलनीय हैं और भेंट के योग्य हैं;

जो लोग सर्वोत्कृष्ट धम्म में विश्वास रखते हैं,

वैराग्य की आनंदमय शांति में;

जो लोग सर्वोत्कृष्ट संघ में विश्वास रखते हैं,

पुण्य के अतुलनीय क्षेत्र में;

जो लोग श्रेष्ठ व्यक्तियों को उपहार देते हैं, उनके लिए

श्रेष्ठ प्रकार के पुण्य में वृद्धि होती है:

श्रेष्ठ आयु, सौंदर्य और यश,

अच्छी प्रतिष्ठा, सुख और शक्ति।

जो ज्ञानी व्यक्ति सर्वोच्च धर्म का पालन करता है,

सर्वोच्च धर्म पर एकाग्र (समाधि/समाहित) होकर,

देव (देवदूत/भगवान) या मनुष्य बनकर,

सर्वोच्चता प्राप्त करने पर प्रसन्न होता है।

---

33 उगाहा

एक बार भगवान (बुद्ध) भद्दिया में जातीय वन में निवास कर रहे थे। तब मेंदक के पोते उगाह ने भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, भगवान (बुद्ध) और तीन अन्य भिक्षु 1008 कल का भोजन मुझसे स्वीकार करने के लिए सहमत हों।" [37]

भगवान (बुद्ध) ने मौन रहकर सहमति दी। तब उगाहा ने यह समझकर कि भगवान (बुद्ध) ने सहमति दे दी है, अपने आसन से उठकर भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और प्रस्थान किया।

फिर, जब रात बीत गई, तो सुबह भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, अपना कुंड और वस्त्र धारण किया और उगाह के निवास पर गए, जहाँ वे निर्धारित आसन पर बैठ गए। तब, मेंडक के पोते उगाह ने अपने हाथों से भगवान (बुद्ध) को विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसे और उन्हें तृप्त किया।

जब भगवान (बुद्ध) ने भोजन समाप्त कर लिया और अपना कटोरा रख दिया, तो उगाहा एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, मेरी ये बेटियाँ अपने पतियों के परिवारों में जा रही हैं। भगवान (बुद्ध) उन्हें उपदेश दें और मार्गदर्शन करें।"

उन्हें इस तरह से सहायता प्रदान करें जिससे उन्हें लंबे समय तक कल्याण और खुशी प्राप्त हो सके।"

तब भगवान (बुद्ध) ने उन लड़कियों से कहा:

(1) "तो फिर, लड़कियों, तुम्हें अपने आप को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हमारे माता-पिता हमें जिस भी पति से मिलाएँ—जो हमारी भलाई की इच्छा से, हमारा कल्याण चाहते हुए, हम पर दया करते हुए, हमारे प्रति करुणा से कार्य करते हुए—हम उसके सामने उठेंगी और उसके पीछे लौटेंगी, जो भी करना आवश्यक हो, उसे करेंगी, हमारा आचरण सुखद और हमारी वाणी मधुर होगी।' तुम्हें अपने आप को इसी प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए।"

(2) "और तुम्हें इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम उन लोगों का आदर, सम्मान, आदर और आदर करेंगे जिनका हमारे पति आदर करते हैं— उनके माता-पिता, तपस्वियों और ब्राह्मणों का— और जब वे आएँ तो हम उन्हें आसन और जल प्रदान करेंगे।' तुम्हें इसी प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।"

(3) "और तुम्हें अपने आप को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम अपने पति के घरेलू कामों में, चाहे बुनाई हो या सिलाई, कुशल और मेहनती होंगे; हम उन्हें ठीक से करने और व्यवस्थित करने के लिए उनके बारे में सही निर्णय लेंगे।' तुम्हें अपने आप को इसी प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए।"

(4) "और तुम्हें अपने आप को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम पता लगाएंगे कि हमारे पति के घरेलू सहायकों - चाहे वे दास हों, संदेशवाहक हों या [38] मजदूर हों - ने क्या किया है और क्या नहीं किया है; हम बीमारों की स्थिति का पता लगाएंगे; और हम प्रत्येक को भोजन का उचित हिस्सा वितरित करेंगे।' तुम्हें अपने आप को इसी प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए।"

(5) "और तुम्हें अपने आप को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम अपने पति द्वारा घर लाई गई हर आय की रक्षा करेंगे—चाहे वह धन हो या अनाज, चाँदी हो या सोना—और हम फिजूलखर्ची नहीं करेंगे; चोर, अपव्ययी या उसकी कमाई को बर्बाद करने वाले नहीं होंगे।' तुम्हें अपने आप को इसी प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए।"

"हे कन्या, जब किसी स्त्री में ये पाँच गुण होते हैं, तो शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, वह सौम्य शरीर वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेती है।" 1009

वह अपने पति से घृणा नहीं करती,

उस व्यक्ति से जो लगातार उसका साथ देता है,

जो हमेशा उत्साह और उत्सुकता से

उसकी हर इच्छा पूरी करता है।

और न ही अच्छी स्त्री

ईर्ष्या से प्रेरित होकर अपने पति को डांटती है; 1010

बुद्धिमान स्त्री

उन सभी का आदर करती है जिनका उसका पति आदर करता है।

वह सुबह जल्दी उठती है, लगन से काम करती है,

घरेलू नौकरों का प्रबंधन करती है;

वह अपने पति के साथ सौहार्दपूर्ण व्यवहार करती है

और उसकी कमाई की संपत्ति की रक्षा करती है।

जो स्त्री

अपने पति की इच्छाओं और आकांक्षाओं का पालन करते हुए अपने कर्तव्यों का निर्वाह करती है, वह "मनभावन" कहलाने वाले

देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के बीच पुनर्जन्म लेती है ।

---

34 सिहा (सिहा सेनापति सं. सिंघा/शेर)

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। तब सेनापति सिहा {39] भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: 1011

"भंते, क्या दान देने का कोई प्रत्यक्ष फल बता सकते हैं?"

"यही है, सिहा," भगवान (बुद्ध) ने कहा।

(1) "दानदाता, सिहा, उदार दाता, बहुत से लोगों को प्रिय और प्रसन्न करने वाला होता है। यह दान का प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाला फल है।"

(2) "फिर, अच्छे लोग एक दाता, एक उदार दाता का सहारा लेते हैं। यह भी दान का प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाला फल है।"

(3) "फिर, एक दाता, एक उदार दाता, अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। यह भी दान का प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाला फल है।"

(4) "फिर, कोई दानदाता, कोई उदार दाता, चाहे वह क्षत्रिय हो, ब्राह्मण हो, गृहस्थ हो या तपस्वी हो, जिस भी सभा में उपस्थित होता है, वह आत्मविश्वास और संयम के साथ उपस्थित होता है। 1013 यह भी दान का प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाला फल है।"

(5) "फिर, मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, एक दाता, एक उदार दाता, एक अच्छे गंतव्य में, एक स्वर्गीय लोक में पुनर्जन्म लेता है। यह भविष्य के जन्मों से संबंधित दान का फल है।" 1014

जब यह कहा गया, तो सेनापति सिहा ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, मैं भगवान (बुद्ध) द्वारा घोषित दान के उन चार प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाले फलों के विषय में उन पर विश्वास नहीं करता। मैं उन्हें भी जानता हूँ। क्योंकि मैं एक दानदाता हूँ, एक उदार दाता हूँ, और मैं बहुतों का प्रिय और प्रशंसनीय हूँ। मैं एक दानदाता हूँ, एक उदार दाता हूँ, और बहुत से अच्छे लोग मेरी शरण में आते हैं। मैं एक दानदाता हूँ, एक उदार दाता हूँ, और मैंने संघ के दानदाता, प्रायोजक और समर्थक के रूप में अच्छी प्रतिष्ठा अर्जित की है। मैं [40] एक दानदाता हूँ, एक उदार दाता हूँ, और मैं जिस भी सभा में जाता हूँ—चाहे वह क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहस्थों या तपस्वियों की हो—मैं आत्मविश्वास और संयम के साथ जाता हूँ। मैं भगवान (बुद्ध) द्वारा घोषित दान के उन चार प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाले फलों के विषय में उन पर विश्वास नहीं करता। मैं उन्हें भी जानता हूँ। लेकिन जब भगवान (बुद्ध) मुझसे कहते हैं: 'सिहा, शरीर के विखंडन के

बाद, मृत्यु के बाद, एक दाता, एक उदार दाता, एक अच्छे गंतव्य में, एक स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेता है,' मुझे यह नहीं पता, और मैं भगवान (बुद्ध) में आस्था के साथ आगे बढ़ता हूँ।

"ऐसा ही है, सिहा, ऐसा ही है! शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, एक दाता, एक उदार दाता, एक अच्छे गंतव्य में, एक स्वर्गीय लोक में पुनर्जन्म लेता है।"

दान देने से वह प्रिय हो जाता है और अनेक लोग उसकी शरण में आते हैं।

उसे अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त होती है और उसकी प्रसिद्धि बढ़ती है।

उदार व्यक्ति शांत

और आत्मविश्वास से सभा में प्रवेश करता है।

अत: सुख की प्राप्ति के लिए, ज्ञानी व्यक्ति कंजूसी के कलंक को मिटाकर

दान करते हैं । जब वे त्रिस्वर्ग में विराजमान हो जाते हैं, तो वे लंबे समय तक देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) की संगति में आनंदित रहते हैं।

लाभकारी (कुशल) कर्म करने का अवसर पाकर,

वे यहाँ से स्वयंप्रकाशित होकर

नंदन (स्वर्ग के उद्यान) में विचरण करते हैं, [1015] जहाँ वे पाँच इंद्रिय सुखों से परिपूर्ण होकर

आनंदित, प्रसन्न और मग्न होते हैं । अनासक्त स्थिर बुद्ध के वचन को पूरा करके, सुगत (भगवान बुद्ध) के शिष्य स्वर्ग में आनंदित होते हैं।

---

35 दान के लाभ (दाननिसंसा)

भिक्षुओं, दान देने के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच क्या हैं? (1) व्यक्ति अनेक लोगों का प्रिय और प्रिय होता है। (2) अच्छे लोग उसकी शरण में आते हैं। (3) व्यक्ति को अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। (4) व्यक्ति गृहस्थों के कर्तव्यों में अपूर्ण नहीं होता। (5) शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, व्यक्ति स्वर्गलोक में, एक अच्छे स्थान पर पुनर्जन्म लेता है। ये दान देने के पाँच लाभ हैं।

दान देने से व्यक्ति प्रिय हो जाता है,

वह अच्छे कर्तव्य का पालन करता है;

अच्छे आत्मसंयमित भिक्षु

हमेशा दान करते हैं।

वे उस धम्म (मार्ग) का उपदेश देते हैं

जो समस्त दुखों का निवारण करता है, और

जिसे समझकर

निष्कलंक व्यक्ति निर्वाण प्राप्त करता है।

---

36 समय पर दान (कलादान)

भिक्षुओं, ये पाँच सामयिक दान हैं। वे पाँच कौन से हैं? (1) आगंतुक को दान देना। (2) यात्रा पर निकलने वाले व्यक्ति को दान देना। (3) रोगी को दान देना। (4) अकाल के समय दान देना। (5) नई फसल और फल सबसे पहले पुण्यजनों को भेंट करना। ये पाँच सामयिक दान हैं।

उचित समय पर, वे बुद्धिमान,

परोपकारी और उदार लोग स्थिर और ईमानदार

, नेक लोगों को समयोचित दान देते हैं ; स्पष्ट मन से दिया गया दान विशाल होता है।

जो लोग ऐसे कार्यों में आनंदित होते हैं

या अन्य सेवाएँ प्रदान करते हैं , वे भी

पुण्य से वंचित नहीं रहते;

वे भी पुण्य के भागीदार होते हैं।

इसलिए, प्रतिगामी मन से नहीं, बल्कि निर्धन मन से, ऐसा

दान देना चाहिए जिससे भरपूर फल प्राप्त हो। पुण्य ही परलोक में

जीवों का आधार होते हैं (जब वे उत्पन्न होते हैं)। [42]

---

37 भोजन का दान (भोजन)

भिक्षुओं, भोजन दान करने वाला व्यक्ति प्राप्तकर्ताओं को पाँच वस्तुएँ देता है। वे पाँच वस्तुएँ क्या हैं? जीवन, सौंदर्य, सुख, शक्ति और विवेक। 1016 (1) जीवन देने वाला व्यक्ति, चाहे दिव्य हो या मनुष्य, जीवन का भागीदार होता है। (2) सौंदर्य देने वाला व्यक्ति, चाहे दिव्य हो या मनुष्य, सौंदर्य का भागीदार होता है। (3) सुख देने वाला व्यक्ति, चाहे दिव्य हो या मनुष्य, सुख का भागीदार होता है। (4) शक्ति देने वाला व्यक्ति, चाहे दिव्य हो या मनुष्य, शक्ति का भागीदार होता है। (5) विवेक देने वाला व्यक्ति, चाहे दिव्य हो या मनुष्य, विवेक का भागीदार होता है। भोजन दान करने वाला व्यक्ति प्राप्तकर्ताओं को ये पाँच वस्तुएँ देता है।

बुद्धिमान व्यक्ति जीवन,

शक्ति, सौंदर्य और विवेक का दाता होता है।

बुद्धिमान व्यक्ति सुख का दाता होता है

और बदले में सुख प्राप्त करता है।

जीवन, शक्ति, सौंदर्य, सुख और विवेक प्रदान करने वाला व्यक्ति जहां भी पुनर्जन्म लेता है, वहां

दीर्घायु और प्रसिद्ध होता है ।

---

38 आस्था (सद्ध बिना श्रद्धा)

भिक्षुओं, आस्थावान कुल के अनुयायी को ये पाँच लाभ प्राप्त होते हैं। वे पाँच क्या हैं? (1) जब संसार में भले लोग करुणा दिखाते हैं, तो वे सर्वप्रथम आस्थावान व्यक्ति पर करुणा दिखाते हैं, अनास्थावान व्यक्ति पर नहीं। (2) जब वे किसी के पास जाते हैं, तो सर्वप्रथम आस्थावान व्यक्ति के पास जाते हैं, अनास्थावान व्यक्ति के पास नहीं। (3) जब वे भिक्षा ग्रहण करते हैं, तो सर्वप्रथम आस्थावान व्यक्ति से भिक्षा ग्रहण करते हैं, अनास्थावान व्यक्ति से नहीं। (4) जब वे धर्म का उपदेश देते हैं, तो सर्वप्रथम आस्थावान व्यक्ति को धर्म का उपदेश देते हैं, अनास्थावान व्यक्ति को नहीं। (5) शरीर के क्षोभ के बाद, मृत्यु के समय, आस्थावान व्यक्ति का पुनर्जन्म एक अच्छे स्थान, स्वर्गलोक में होता है। ये पाँच लाभ आस्थावान कुल के अनुयायी को प्राप्त होते हैं।

"जैसे समतल भूमि पर चौराहे पर एक विशाल बरगद का पेड़ चारों ओर के पक्षियों के लिए आश्रय स्थल बन जाता है, वैसे ही [43] आस्था से संपन्न कुल पुरुष कई लोगों के लिए आश्रय स्थल बन जाता है: भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष गृहस्थ अनुयायियों और महिला गृहस्थ अनुयायियों के लिए।"

एक विशाल वृक्ष, जिसका तना,

शाखाएँ, पत्ते और फल विशाल हों,

जड़ें मजबूत हों और जो फल से लदा हो,

अनेक पक्षियों का आश्रय होता है।

आकाश में उड़ने के बाद,

पक्षी इस रमणीय स्थान पर आकर ठहरते हैं:

जिन्हें छाया की आवश्यकता होती है वे इसकी छाया में विश्राम करते हैं; जिन्हें फल की आवश्यकता होती है वे इसके फल का आनंद लेते हैं।

ठीक इसी प्रकार, जब कोई व्यक्ति गुणी, आस्थावान, विनम्र, आज्ञाकारी, सौम्य, स्वागतशील और कोमल होता है

, तो संसार में पुण्य के क्षेत्र माने

जाने

वाले

लोग—जो

कामवासना (राग) और घृणा से रहित,

मोह (मोह) से रहित और निष्कलंक होते हैं—

ऐसे व्यक्ति की शरण लेते हैं।

वे उसे वह धम्म सिखाते हैं

जो समस्त दुखों का निवारण करता है,

जिसे समझकर

निष्कलंक व्यक्ति निर्वाण प्राप्त करता है।

---

39 Son (Putta sans. Putra)

"भिक्षुओं (सन्यासियों) ने पाँच संभावनाओं पर विचार करते हुए माता-पिता अपने परिवार में पुत्र की प्राप्ति की कामना की। वे पाँच संभावनाएँ क्या हैं? (1) 'हमारे द्वारा पोषित होने के कारण, वह हमारा भरण-पोषण करेगा। (2) या वह हमारे लिए काम करेगा। (3) हमारे वंश का विस्तार होगा। (4) वह उत्तराधिकार का प्रबंधन करेगा, (5) या फिर, हमारे देहांत के बाद, वह हमारी ओर से दान देगा।' इन पाँच संभावनाओं पर विचार करते हुए माता-पिता अपने परिवार में पुत्र की प्राप्ति की कामना करते हैं।"

पांच संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए,

बुद्धिमान लोग पुत्र की कामना करते हैं।

"वह हमारा सहारा बनेगा

या हमारे लिए काम करेगा।

वंश का विस्तार होगा,

वह विरासत का प्रबंधन करेगा,

या फिर हमारे देहांत के बाद

वह हमारी ओर से भेंट चढ़ाएगा।"

इन संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए,

बुद्धिमान लोग पुत्र की कामना करते हैं।

इसलिए अच्छे लोग,

कृतज्ञ और आभारी होकर,

अपने माता-पिता का समर्थन करते हैं,

यह याद करते हुए कि उन्होंने अतीत में उनकी कैसे मदद की थी; [44]

वे उनके लिए वही करते हैं जो आवश्यक है,

जैसा कि उन्होंने अतीत में स्वयं के लिए किया था।

उनकी सलाह का पालन करते हुए,

अपने पालन-पोषण करने वालों का सम्मान करते हुए,

पारिवारिक वंश को आगे बढ़ाते हुए,

आस्थावान और गुणी:

यह पुत्र प्रशंसा के योग्य है।

---

40 साल के पेड़ [1018]

"भिक्षुओं (साधुओं) के अनुसार, हिमालय, जो पर्वतों का राजा है, पर आधारित विशाल साल के वृक्ष पाँच प्रकार से उगते हैं। वे पाँच प्रकार क्या हैं? (1) वे शाखाओं, पत्तियों और पत्तों में उगते हैं; (2) वे छाल में उगते हैं; (3) वे टहनियों में उगते हैं; (4) वे कोमल लकड़ी में

उगते हैं; और (5) वे भीतरी लकड़ी में उगते हैं। हिमालय, जो पर्वतों का राजा है, पर आधारित विशाल साल के वृक्ष इन पाँच प्रकार से उगते हैं।"

इसी प्रकार, जब परिवार का मुखिया [1019] आस्था से परिपूर्ण होता है, तो परिवार के वे लोग जो उस पर निर्भर हैं, पाँच प्रकार से उन्नति करते हैं। वे पाँच प्रकार क्या हैं? (1) वे आस्था में उन्नति करते हैं; (2) वे सदाचारी व्यवहार में उन्नति करते हैं; (3) वे ज्ञान में उन्नति करते हैं; (4) वे उदारता में उन्नति करते हैं; और (5) वे ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में उन्नति करते हैं। जब परिवार का मुखिया आस्था से परिपूर्ण होता है, तो परिवार के वे लोग जो उस पर निर्भर हैं, इन पाँच प्रकार से उन्नति करते हैं।

जिस प्रकार किसी विशाल वन क्षेत्र में

पथरीले पहाड़ पर उगने वाले वृक्ष महान वन स्वामी बन सकते हैं, उसी प्रकार जब किसी परिवार के मुखिया में आस्था और सद्‌गुण होते हैं, तो उसकी पत्नी, बच्चे और रिश्तेदार सभी उस पर निर्भर हो जाते हैं; उसी प्रकार उसके साथी, उसका परिवार और उस पर आश्रित लोग भी।

विवेकशील लोग

उस गुणी व्यक्ति के अच्छे आचरण,

उदारता और अच्छे कर्मों को देखकर

उसके अनुकरण का मार्ग अपनाते हैं।

धम्म के अनुसार यहाँ रहने से,

अच्छे गंतव्य की ओर ले जाने वाले मार्ग पर,

जो लोग इंद्रिय सुखों की इच्छा रखते हैं, वे

देव (देवदूत/भगवान) लोक में आनंदित होते हैं; [45]

वी. मुंडा राजा अनुभाग (मुंडा-राजा-वाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

41 उपयोग (आदिया)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका के उद्यान में निवास कर रहे थे। तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

गृहस्वामी, धन के ये पाँच उपयोग हैं। वे पाँच कौन से हैं? 1020

(1) "यहाँ, हे गृहस्थ, परिश्रमपूर्वक अर्जित धन से, अपनी भुजाओं के बल से संचित धन से, अपने माथे के पसीने से कमाए गए धन से, जो धार्मिक रूप से अर्जित किया गया हो, वह श्रेष्ठ शिष्य स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में अपना भरण-पोषण उचित रूप से करता है; वह अपने माता-पिता को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में उनका भरण-पोषण उचित रूप से करता है; वह अपनी पत्नी और बच्चों, अपने दासों, श्रमिकों और सेवकों को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में उनका भरण-पोषण उचित रूप से करता है। धन का यह पहला उपयोग है।"

(2) "फिर, परिश्रमपूर्वक और न्यायपूर्वक अर्जित धन से, श्रेष्ठ शिष्य अपने मित्रों और साथियों को प्रसन्न और संतुष्ट करता है तथा उन्हें सुखमय बनाए रखता है। यह धन का दूसरा उपयोग है।"

(3) "फिर, परिश्रमपूर्वक और धार्मिक रूप से अर्जित धन से, श्रेष्ठ शिष्य आग या बाढ़, राजाओं या डाकुओं या अवांछित उत्तराधिकारियों के कारण होने वाली हानियों से बचाव के लिए अपने धन का प्रबंध करता है; वह स्वयं को उनसे सुरक्षित रखता है। यह धन का तीसरा उपयोग है।"

(4) "फिर, परिश्रमपूर्वक किए गए परिश्रम से प्राप्त धन से... धार्मिक रूप से अर्जित धन से, श्रेष्ठ शिष्य पाँच आहुति देता है: रिश्तेदारों, अतिथियों, पूर्वजों, राजा और देवताओं (देवदूतों) को। यह धन का चौथा उपयोग है।"

(5) "फिर, ऊर्जावान परिश्रम से अर्जित धन से... [46]... धार्मिक रूप से अर्जित धन से, श्रेष्ठ शिष्य उन तपस्वियों और ब्राह्मणों को भिक्षा का एक उत्थानकारी अर्पण स्थापित करता है - एक स्वर्गीय भिक्षा, जो सुख का परिणाम है, स्वर्ग की ओर ले जाती है - जो नशा और आलस्य से दूर रहते हैं, जो धैर्य और नम्रता में स्थिर रहते हैं, जो स्वयं को वश में रखते हैं, शांत करते हैं और निर्वाण के लिए स्वयं को प्रशिक्षित करते हैं। यह धन का पाँचवाँ उपयोग है।"

"हे गृहस्थ, ये धन के पाँच उपयोग हैं। हे गृहस्थ, यदि किसी श्रेष्ठ शिष्य का धन इन पाँचों तरीकों से उपयोग करने पर समाप्त हो जाए, तो वह सोचता है: मैंने इन पाँचों तरीकों से धन का उपयोग किया और मेरा धन समाप्त हो गया। अतः उसे कोई खेद नहीं है। परन्तु यदि किसी श्रेष्ठ शिष्य का धन इन पाँचों तरीकों से उपयोग करने पर बढ़ जाए, तो वह सोचता है: मैंने इन पाँचों तरीकों से धन का उपयोग किया और मेरा धन बढ़ गया। अतः, दोनों ही स्थिति में उसे कोई खेद नहीं है।"

मैंने धन का आनंद लिया है,

अपने आश्रितों का भरण-पोषण किया है

और विपत्तियों पर विजय प्राप्त की है।

मैंने उत्थानकारी दान दिया है

और पाँचों आहुतियाँ संपन्न की हैं।

मैंने गुणी भिक्षुओं और

आत्म-संयमित ब्रह्मचारियों की सेवा की है।

"मैंने धन की कामना करने वाले

एक बुद्धिमान व्यक्ति के सभी उद्देश्यों को पूरा कर लिया है; मैंने जो किया है, उसका मुझे कोई पछतावा नहीं है।" यह याद करके मनुष्य धर्म के मार्ग पर दृढ़ रहता है। इस जीवन में लोग उसकी प्रशंसा करते हैं और मृत्यु के बाद वह स्वर्ग में आनंदित होता है।

42. अच्छा व्यक्ति (सप्पुरिशा संस्कृत: सद्पुरुष)

भिक्षुओं, जब किसी परिवार में कोई अच्छा व्यक्ति जन्म लेता है, तो यह अनेकों के कल्याण, सुख और प्रसन्नता के लिए होता है। यह (1) उसके माता-पिता, (2) उसकी पत्नी और बच्चों, (3) उसके दासों, श्रमिकों और सेवकों, (4) उसके मित्रों और साथियों, और (5) तपस्वियों और ब्राह्मणों के कल्याण, सुख और प्रसन्नता के लिए होता है। जिस प्रकार एक विशाल वर्षा बादल, सभी फसलों का पोषण करते हुए, अनेकों के कल्याण, सुख और प्रसन्नता के लिए प्रकट होता है, उसी प्रकार, [47] जब किसी परिवार में कोई अच्छा व्यक्ति जन्म लेता है, तो यह अनेकों के कल्याण, सुख और प्रसन्नता के लिए होता है। यह उसके माता-पिता ... तपस्वियों और ब्राह्मणों के कल्याण, सुख और प्रसन्नता के लिए होता है।

धर्म के मार्ग पर चलने वाले, अनेकों के कल्याण हेतु अपने धन का प्रबंधन करने वाले व्यक्ति की रक्षा देवता (देवदूत) करते हैं। धर्म में दृढ़, विद्वान और सदाचारी आचरण एवं नियमों का पालन करने वाले व्यक्ति का यश कभी नहीं त्यागता।

धर्म में स्थिर,

सदाचारी आचरण में निपुण,

सत्य के वक्ता,

लज्जाभाव से युक्त,

शुद्ध सोने के सिक्के के समान पवित्र , भला कौन उन्हें दोष देने के योग्य है ?

देव भी उनकी प्रशंसा करते हैं;

ब्रह्मा भी उनकी प्रशंसा करते हैं।

---

43 इच्छा की गई (इत्था)

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

गृहस्थ, संसार में ये पाँच चीजें हैं जिनकी कामना की जाती है, जो मनभावन होती हैं, और जो दुर्लभ रूप से प्राप्त होती हैं। वे पाँच चीजें कौन सी हैं? गृहस्थ, लंबी आयु की कामना की जाती है, जो मनभावन होती है, और जो दुर्लभ रूप से प्राप्त होती है। सौंदर्य... सुख... यश... स्वर्ग की कामना की जाती है, जो मनभावन होती है, और जो दुर्लभ रूप से प्राप्त होती है। ये पाँच चीजें हैं जिनकी कामना की जाती है, जो मनभावन होती हैं, और जो दुर्लभ रूप से प्राप्त होती हैं।

"हे गृहस्थ, ये पाँच चीज़ें, जिनकी कामना की जाती है, जो मनभावन हैं और संसार में दुर्लभ रूप से प्राप्त होती हैं, मैं कहता हूँ, प्रार्थनाओं या आकांक्षाओं के माध्यम से प्राप्त नहीं होतीं। यदि ये पाँच चीज़ें, जिनकी कामना की जाती है, जो मनभावन हैं और संसार में दुर्लभ रूप से प्राप्त होती हैं, प्रार्थनाओं [48] या आकांक्षाओं के माध्यम से प्राप्त की जा सकतीं, तो यहाँ किसे किसी चीज़ की कमी होती?"

(1) "हे गृहस्थ, जो श्रेष्ठ शिष्य दीर्घायु की कामना करता है, उसे दीर्घायु के लिए प्रार्थना नहीं करनी चाहिए, न ही उसमें प्रसन्न होना चाहिए और न ही निष्क्रिय रूप से उसकी लालसा करनी चाहिए। 1023 जो श्रेष्ठ शिष्य दीर्घायु की कामना करता है, उसे दीर्घायु के लिए सहायक मार्ग का अभ्यास करना चाहिए। 1024 क्योंकि जब वह दीर्घायु के लिए सहायक मार्ग का अभ्यास करता है, तो उसे दीर्घायु प्राप्त होती है, और वह स्वर्गीय या सांसारिक दीर्घायु प्राप्त करता है।"

(2) "गृहस्थ, वह श्रेष्ठ शिष्य जो सौंदर्य की कामना करता है... (3) ...जो सुख की कामना करता है... (4) ...जो यश की कामना करता है, उसे यश के लिए प्रार्थना नहीं करनी चाहिए, न ही उसमें आनंद लेना चाहिए और न ही निष्क्रिय रूप से उसकी लालसा करनी चाहिए। यश की कामना करने वाले श्रेष्ठ शिष्य को यश प्राप्ति के मार्ग का अभ्यास करना चाहिए। क्योंकि जब वह यश प्राप्ति के मार्ग का अभ्यास करता है, तो उसे यश प्राप्त होता है, और वह दिव्य या सांसारिक यश प्राप्त करता है।"

(5) "हे गृहस्थ, स्वर्ग की कामना करने वाले श्रेष्ठ शिष्य को स्वर्ग के लिए प्रार्थना नहीं करनी चाहिए, न ही उसमें प्रसन्न होना चाहिए और न ही निष्क्रिय रूप से उसकी लालसा करनी चाहिए। स्वर्ग की कामना करने वाले श्रेष्ठ शिष्य को स्वर्ग की ओर ले जाने वाले मार्ग का अभ्यास करना चाहिए। क्योंकि जब वह स्वर्ग की ओर ले जाने वाले मार्ग का अभ्यास करता है, तो वह स्वर्ग की प्राप्ति की ओर अग्रसर होता है, और वह स्वर्ग को प्राप्त कर लेता है।" 1025

जो व्यक्ति दीर्घायु, सौंदर्य, प्रसिद्धि, [1026]

ख्याति, स्वर्ग, उच्च परिवार और निरंतर मिलने वाले

उच्च सुखों की कामना करता है, उसके लिए बुद्धिमान लोग पुण्य कर्म करने में सतर्कता की प्रशंसा करते हैं।

सजग रहकर, ज्ञानी व्यक्ति

दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त करता है:

इस जीवन का लाभ

और भविष्य के जीवन का लाभ।

लाभ प्राप्त करने पर, दृढ़ निश्चयी व्यक्ति को

पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने वाला कहा जाता है।

---

44 मनभावनता प्रदान करने वाला (मनपदायी)

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले महल में निवास कर रहे थे। सुबह के समय, भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, अपना कुंड और वस्त्र धारण किया और वैशाली के गृहस्थ उगा के निवास पर गए, जहाँ वे नियत आसन पर बैठ गए। तब वैशाली के गृहस्थ उगा भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, मैंने भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में यह सुना और सीखा: जो प्रसन्नतादायक वस्तु देता है, उसे प्रसन्नतादायक वस्तु ही प्राप्त होती है। भंते, मेरी साल के फूलों की दलिया प्रसन्नतादायक है। 1028 कृपा करके भगवान (बुद्ध) इसे मुझसे स्वीकार करें।" कृपा करके भगवान (बुद्ध) ने इसे स्वीकार कर लिया।

"भंते, मैंने भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में यह सुना और सीखा: 'जो प्रसन्नतादायक वस्तु देता है, उसे प्रसन्नतादायक वस्तु ही प्राप्त होती है। भंते, बेर से सजा हुआ मेरा सूअर का मांस प्रसन्नतादायक है। 1029 कृपा करके भगवान (बुद्ध) इसे मुझसे स्वीकार करें।" कृपा करके भगवान (बुद्ध) ने इसे स्वीकार कर लिया।

"भंते, मैंने भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में यह सुना और सीखा: 'जो प्रसन्नतादायक वस्तु देता है, उसे प्रसन्नतादायक वस्तु ही प्राप्त होती है। भंते, मेरी भुनी हुई सब्जी की डंठलें प्रसन्नतादायक हैं। भगवान (बुद्ध) दयावश इन्हें मुझसे स्वीकार करें।" भगवान (बुद्ध) ने दयावश इन्हें स्वीकार किया।

"भंते, भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में मैंने यह सुना और सीखा: 'जो प्रसन्नतादायक देता है, उसे प्रसन्नतादायक ही प्राप्त होती है। भंते, मेरे उबले हुए पहाड़ी चावल, जिनमें से काले दाने निकाल दिए गए हैं, विभिन्न चटनी और मसालों के साथ, प्रसन्नतादायक हैं। भगवान (बुद्ध) दयापूर्वक इसे मुझसे स्वीकार करें।" भगवान (बुद्ध) ने दयापूर्वक स्वीकार कर लिया। [50]

"भंते, मैंने भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में यह सुना और सीखा: 'जो प्रसन्नतादायक वस्तु देता है, उसे प्रसन्नतादायक वस्तु ही प्राप्त होती है।' भंते, काशी से लाए मेरे वस्त्र प्रसन्नतादायक हैं। कृपा करके भगवान (बुद्ध) इन्हें मुझसे स्वीकार कर लें।" कृपा करके भगवान (बुद्ध) ने इन्हें स्वीकार कर लिया।

"भंते, भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में मैंने यह सुना और सीखा: 'जो प्रसन्नतादायक वस्तु देता है, उसे प्रसन्नतादायक वस्तु ही प्राप्त होती है। भंते, मेरा पलंग, जो गलीचों, कंबलों और आवरणों से ढका है, हिरण की खाल के उत्तम आवरण से, ऊपर चंदवा और दोनों सिरों पर लाल तकियों से सुशोभित है, प्रसन्नतादायक है। यद्यपि मैं जानता हूँ कि यह भगवान (बुद्ध) के लिए उचित नहीं है, फिर भी चंदन का यह तख्ता एक हजार से अधिक का है। 1031 दया करके भगवान (बुद्ध) इसे मुझसे स्वीकार करें।" भगवान (बुद्ध) ने दया करके इसे स्वीकार कर लिया।

तब भगवान (बुद्ध) ने वैशाली के गृहस्थ उगा के प्रति अपनी कृतज्ञता इस प्रकार व्यक्त की:

"जो व्यक्ति प्रसन्नता का दाता है, वह भी प्रसन्नता का भागी होता है,

जब वह धर्मी लोगों को स्वेच्छा से

वस्त्र, बिस्तर, भोजन, पेय पदार्थ

और विभिन्न प्रकार की आवश्यक वस्तुएँ देता है।"

"अरहंतों को त्यागे और अर्पित किए गए धन के लिए खेत के समान जानकर

; जो रोका नहीं जाता, 1032

अच्छा व्यक्ति वह देता है जो देना कठिन होता है:

सुखद वस्तुओं का दाता सुखद वस्तु प्राप्त करता है।"

फिर, वैशाली के गृहस्थ उगा के प्रति आभार व्यक्त करने के बाद, भगवान (बुद्ध) अपने आसन से उठे और चले गए। कुछ समय बाद, वैशाली के गृहस्थ उगा का देहांत हो गया। उनकी मृत्यु के बाद, वैशाली के गृहस्थ उगा का पुनर्जन्म मन से निर्मित [देवताओं (देवदूतों)] के एक विशेष समूह में हुआ। 1033 उस अवसर पर भगवान (बुद्ध) अनाथपिंडिका उद्यान, जेतवन में सावत्थी में निवास कर रहे थे। फिर, जब रात हो गई, तो अत्यंत सुंदर युवा देव (देवदूत/भगवान) उगा, जो पूरे [51] जेतवन को प्रकाशित कर रहे थे, भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ खड़े हो गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: "उग्गा, मुझे आशा है कि यह वैसा ही है जैसा तुम चाहते थे।"

"हाँ, भंते, यह बिल्कुल वैसा ही है जैसा मैंने चाहा था।"

तब भगवान (बुद्ध) ने युवा देव (देवदूत/भगवान) उगा को इन श्लोकों से संबोधित किया:

"मनभावन देने वाला मनभावन ही पाता है;

श्रेष्ठ देने वाला फिर श्रेष्ठ ही पाता है;

उत्कृष्ट देने वाला उत्कृष्ट ही पाता है;

सर्वश्रेष्ठ देने वाला सर्वश्रेष्ठ अवस्था तक पहुँचता है।"

"सर्वश्रेष्ठ देने

वाला, सबसे आगे रहने वाला,

उत्कृष्ट देने वाला व्यक्ति

दीर्घायु होता है और

जहाँ कहीं भी पुनर्जन्म लेता है, वहाँ प्रसिद्ध होता है।" 1034

---

45 योग्यता की धाराएँ 1035 (पुन्नभिसन्द)

भिक्षुओं, पुण्य की ये पाँच धाराएँ हैं, लाभकारी (कुशल) धाराएँ हैं, सुख के पोषक तत्व हैं—स्वर्गीय, सुख में परिपक्व होने वाले, स्वर्ग की ओर ले जाने वाले—जो वांछित, वांछनीय और सुखद, व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाते हैं। वे पाँच धाराएँ कौन सी हैं?

(1) जब कोई भिक्षु दिए गए वस्त्र का उपयोग करते हुए असीम समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में लीन हो जाता है, तो उसे असीम पुण्य, लाभकारी (कुशल) तत्वों की धारा और सुख का पोषण प्राप्त होता है, जो उसके कल्याण और सुख की ओर ले जाता है। (2) जब कोई भिक्षु दिए गए भिक्षा भोजन का उपयोग करते हुए असीम समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में लीन हो जाता है, तो उसे असीम पुण्य, लाभकारी (कुशल) तत्वों की धारा और सुख का पोषण प्राप्त होता है, जो उसके कल्याण और सुख की ओर ले जाता है। (3) जब कोई भिक्षु दिए गए आवास का उपयोग करते हुए असीम समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में लीन हो जाता है, तो उसे असीम पुण्य, लाभकारी (कुशल) तत्वों की धारा और सुख का पोषण प्राप्त होता है, जो उसके कल्याण और सुख की ओर ले जाता है। किसी के कल्याण और सुख के लिए। (4) जब कोई भिक्षु दिए गए पलंग और कुर्सी का उपयोग करते हुए असीम समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें लीन रहता है, तो उसे असीम पुण्य, लाभकारी (कुशल) का प्रवाह, सुख का पोषण प्राप्त होता है... जो उसके कल्याण और सुख की ओर ले जाता है। (5) जब कोई भिक्षु दिए गए बीमारों के लिए औषधियों और भोजन सामग्री का उपयोग करते हुए असीम समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें लीन रहता है, [52] तो उसे असीम पुण्य, लाभकारी (कुशल) का प्रवाह, सुख का पोषण प्राप्त होता है... जो उसके कल्याण और सुख की ओर ले जाता है।

"ये पुण्य की पाँच धाराएँ हैं, लाभकारी (कुसल) तत्वों की धाराएँ हैं, सुख के पोषक तत्व हैं - स्वर्गीय, सुख में परिपक्व होने वाले, स्वर्ग के लिए सहायक - जो वांछित, अभिलाषा और सुखद, व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाते हैं।"

भिक्षुओं, जब किसी श्रेष्ठ शिष्य में पुण्य की ये पाँच धाराएँ, लाभकारी (कुशल) धाराएँ होती हैं, तो उसके पुण्य को इस प्रकार मापना आसान नहीं है: 'केवल इतना ही उसका पुण्य प्रवाह, लाभकारी (कुशल) प्रवाह, सुख का पोषण - स्वर्गीय... है जो... व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाता है'; बल्कि, इसे सीधे तौर पर पुण्य के एक अगणनीय, असीम, विशाल समूह के रूप में गिना जाता है।

भिक्षुओं, जिस प्रकार विशाल सागर में पानी को मापना आसान नहीं है, जैसे कि 'इतने गैलन पानी है', या 'इतने सौ गैलन पानी है', या 'इतने हज़ार गैलन पानी है', या 'इतने लाखों गैलन पानी है', बल्कि इसे केवल पानी के एक अथाह, असीम, विशाल भंडार के रूप में माना जाता है; उसी प्रकार, जब एक श्रेष्ठ शिष्य इन पाँच पुण्य धाराओं से युक्त होता है... तो इसे केवल पुण्य के एक अथाह, असीम, विशाल भंडार के रूप में माना जाता है।

जैसे लोगों द्वारा उपयोग की जाने वाली अनेक नदियाँ,

नीचे की ओर बहते हुए, महासागर में पहुँचती हैं,

जो जल का विशाल भंडार है, असीम सागर है,

रत्नों के ढेर का भयानक भंडार है; [53]

वैसे ही पुण्य की धाराएँ उस बुद्धिमान व्यक्ति तक पहुँचती हैं

जो भोजन, पेय और वस्त्र दाता है;

वे पलंगों, कुर्सियों और आवरणों के दाता तक उसी प्रकार पहुँचते हैं

जैसे नदियाँ अपना जल समुद्र तक ले जाती हैं।

---

46 उपलब्धियाँ (संपदा)

भिक्षुओं, ये पाँच सिद्धियाँ (संपदाएँ) हैं। ये पाँच कौन सी हैं? आस्था में सिद्धि (संपदा), सद्गुणपूर्ण व्यवहार में सिद्धि (संपदा), विद्या में सिद्धि (संपदा), उदारता में सिद्धि (संपदा), और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में सिद्धि (संपदा)। ये पाँच सिद्धियाँ (संपदाएँ) हैं।

---

47 धन (धन)

भिक्षुओं, धन के पाँच प्रकार होते हैं। वे पाँच कौन से हैं? आस्था का धन, सद्गुणों का धन, ज्ञान का धन, उदारता का धन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का धन।

(1) "हे भिक्षुओं, आस्था का धन क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य आस्था से परिपूर्ण है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' इसे ही आस्था का धन कहा जाता है।"

(2) "और सद्गुणों का धन क्या है? यहाँ, एक नेक शिष्य जीवन के विनाश से दूर रहता है, जो कुछ दिया नहीं गया है उसे लेने से दूर रहता है, यौन दुराचार से दूर रहता है, झूठी बातों से दूर रहता है, शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से दूर रहता है, जो आलस्य का आधार हैं। इसे ही सद्गुणों का धन कहा जाता है।"

(3) "और ज्ञान का खजाना क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य ने बहुत कुछ सीखा है, जो कुछ सीखा है उसे याद रखता है और उसे संजोता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में अच्छी हों, मध्य में अच्छी हों और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों - ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से उनका अध्ययन किया है और दृष्टि से अच्छी तरह समझा है। 1037

(4) "और उदारता का धन क्या है? यहाँ, एक नेक शिष्य अपने घर में कंजूसी के दाग से रहित हृदय से रहता है, वह उदार, खुले हाथों वाला, त्याग में आनंदित, दान में समर्पित, देने और साझा करने में प्रसन्न होता है। इसे उदारता का धन कहा जाता है।"

(5) "पन्न (दिव्य ज्ञान) का धन क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य बुद्धिमान होता है; वह उस पन्न (दिव्य ज्ञान) से युक्त होता है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। इसे पन्न (दिव्य ज्ञान) का धन कहा जाता है।"

"ये, भिक्षुओं, पाँच प्रकार के धन हैं।" [54]

जब किसी व्यक्ति की आस्था तथागत (बुद्ध) में

अटूट और दृढ़ होती है,

और उसका आचरण अच्छा और सदाचारी होता है, जो

श्रेष्ठ लोगों द्वारा प्रिय और प्रशंसित होता है;

जब किसी व्यक्ति का संघ में विश्वास होता है

और उसका दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है, तब

वे कहते हैं कि वह व्यक्ति निर्धन नहीं है,

उसका जीवन व्यर्थ नहीं गया है।

इसलिए एक बुद्धिमान व्यक्ति को

बुद्धों की शिक्षाओं को याद रखते हुए,

आस्था और सदाचारी आचरण,

विश्वास और धम्म के दर्शन पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

---

48 अप्राप्य परिस्थितियाँ (अलब्बनियाथाना)

भिक्षुओं, ये पाँच स्थितियाँ ऐसी हैं जो किसी तपस्वी, ब्राह्मण, देव, मार, ब्रह्मा या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य हैं। वे पाँच स्थितियाँ कौन सी हैं? (1) 'वृद्धावस्था के अधीन प्राणी वृद्ध न हो!': यह ऐसी स्थिति है जो किसी तपस्वी, ब्राह्मण, देव, मार या ब्रह्मा या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य है। (2) 'रोग के अधीन प्राणी रोगग्रस्त न हो!': यह ऐसी स्थिति है जो किसी तपस्वी या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य है। (3) 'मृत्यु के अधीन प्राणी की मृत्यु न हो!': यह ऐसी स्थिति है जो किसी तपस्वी या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य है। (4) 'नष्ट होने के अधीन प्राणी का विनाश न हो!': यह ऐसी स्थिति है जो किसी तपस्वी या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य है। (5) 'जो वृद्ध हो!' 'नुकसान के अधीन है, खोया नहीं जा सकता!': यह एक ऐसी स्थिति है जो किसी तपस्वी या ब्राह्मण, किसी देव (देवदूत/भगवान), मारा या ब्रह्मा, या संसार में किसी के लिए भी अप्राप्य है।

(1) “भिक्षुओं, अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति के लिए, जो बुढ़ापे के अधीन है, वह बूढ़ा हो जाता है। जब ऐसा होता है, तो वह इस प्रकार चिंतन नहीं करता: 'मैं अकेला नहीं हूँ जिसके लिए बुढ़ापे के अधीन है। सभी प्राणियों के लिए जो आते-जाते हैं, जो मरते हैं और पुनर्जन्म लेते हैं, बुढ़ापे के अधीन है, वह बूढ़ा हो जाता है। यदि मैं बुढ़ापे के अधीन होने पर शोक करूँ, व्याकुल होऊँ, विलाप करूँ, सीना पीट कर रोऊँ और भ्रमित हो जाऊँ, तो मेरी भूख मर जाएगी और मेरा चेहरा बदसूरत हो जाएगा। मैं अपना काम नहीं कर पाऊँगा, मेरे शत्रु प्रसन्न होंगे और मेरे मित्र दुखी हो जाएँगे।' इस प्रकार, जब वृद्धावस्था के अधीन प्राणी वृद्ध हो जाता है, तो वह शोक करता है, क्षीण होता है, विलाप करता है, सीना पीटते हुए रोता है और भ्रमित हो जाता है। इसे अशिक्षित सांसारिक कहा जाता है जो दुःख के विषैले बाण से ग्रस्त

होकर केवल स्वयं को ही पीड़ा देता है। "फिर, अशिक्षित सांसारिक प्राणी के लिए, [551 जो रोग के अधीन है वह बीमार पड़ जाता है... (3) ... जो मृत्यु के अधीन है वह मर जाता है... (4) ... जो विनाश के अधीन है वह नष्ट हो जाता है... (5) ... जो हानि के अधीन है वह खो जाता है। जब ऐसा होता है, तो वह इस प्रकार चिंतन नहीं करता: 'मैं अकेला नहीं हूँ जिसके लिए हानि के अधीन प्राणी खो जाता है। सभी प्राणियों के लिए जो आते-जाते हैं, जो मरते हैं और पुनर्जन्म लेते हैं, हानि के अधीन प्राणी खो जाता है। यदि मैं शोक करूं, व्याकुल हो जाऊं, विलाप करूं, सीना पीटते हुए रोऊं और जो खो सकता है उसे खोने पर भ्रमित हो जाऊं, तो मेरी भूख मर जाएगी और मेरा चेहरा बदसूरत हो जाएगा। मैं अपना काम नहीं कर पाऊंगा, मेरे शत्रु प्रसन्न होंगे और मेरे मित्र दुखी हो जाएंगे। इस प्रकार, जो खो सकता है उसे खोने पर, वह शोक करता है, व्याकुल हो जाता है, विलाप करता है, सीना पीटते हुए रोता है और भ्रमित हो जाता है। इसे अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति कहा जाता है जो दुःख के विषैले तीर से घायल होकर केवल स्वयं को ही पीड़ा देता है।

(1) "भिक्षुओं, ज्ञानी शिष्य के लिए, जो बुढ़ापे के अधीन है, वह बूढ़ा हो जाता है। जब ऐसा होता है, तो वह इस प्रकार चिंतन करता है: मैं अकेला नहीं हूँ जिसके लिए बुढ़ापे के अधीन है। सभी प्राणियों के लिए जो आते-जाते हैं, जो मरते हैं और पुनर्जन्म लेते हैं, बुढ़ापे के अधीन है, वह बूढ़ा हो जाता है। यदि मैं बुढ़ापे के अधीन होने पर शोक करूँ, व्याकुल होऊँ, विलाप करूँ, छाती पीट कर रोऊँ और भ्रमित हो जाऊँ, तो मेरी भूख मर जाएगी और मेरा चेहरा बदसूरत हो जाएगा। मैं अपना काम नहीं कर पाऊँगा, मेरे शत्रु प्रसन्न होंगे और मेरे मित्र दुखी हो जाएँगे।" अत: जब वृद्धावस्था के अधीन प्राणी वृद्ध हो जाता है, तो वह शोक नहीं करता, क्षीण नहीं होता, विलाप नहीं करता, सीना पीटकर रोता नहीं और भ्रमित नहीं होता। इसे ही ज्ञानवान श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है, जिसने दुःख के विषैले बाण को निकाल दिया है, जिससे अनपढ़ सांसारिक व्यक्ति केवल स्वयं को पीड़ा देता है। दुःख रहित, बाणों से मुक्त, श्रेष्ठ शिष्य निर्वाण प्राप्त करता है। 1039

(2) "फिर, शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य के लिए, जो रोग के अधीन है वह बीमार हो जाता है... (3) ... जो मृत्यु के अधीन है वह मर जाता है... (4) ... जो विनाश के अधीन है वह नष्ट हो जाता है... (5) ... जो हानि के अधीन है वह खो जाता है। जब ऐसा होता है, तो वह इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अकेला नहीं हूँ जिसके लिए हानि के अधीन कुछ खो जाता है। सभी प्राणियों के लिए जो आते-जाते हैं, जो मरते हैं और पुनर्जन्म लेते हैं, हानि के अधीन [56] कुछ खो जाता है। यदि मैं हानि के अधीन कुछ खो जाने पर शोक करूँ, व्याकुल हो जाऊँ, विलाप करूँ, सीना पीट कर रोऊँ और भ्रमित हो जाऊँ, तो मेरी भूख मर जाएगी और मेरा चेहरा बदसूरत हो जाएगा। मैं अपना काम नहीं कर पाऊँगा, मेरे शत्रु प्रसन्न होंगे और मेरे मित्र उदास हो जाएँगे।' अत: जब हानि योग्य वस्तु खो जाती है, तो वह शोक नहीं करता, व्याकुल नहीं होता, विलाप नहीं करता, सीना पीटकर रोता नहीं और भ्रमित नहीं होता। यही वह ज्ञानवान श्रेष्ठ शिष्य कहलाता है जिसने दुःख के विषैले तीर को निकाल दिया है, जिससे अनपढ़ सांसारिक व्यक्ति केवल स्वयं को पीड़ा देता है। दुःख रहित, तीरों से मुक्त, श्रेष्ठ शिष्य निर्वाण प्राप्त करता है।

"भिक्षुओं, ये पाँच स्थितियाँ हैं जो किसी तपस्वी या ब्राह्मण, किसी देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार में किसी के लिए भी अप्राप्य हैं।"

"दुःख और विलाप करने से यहाँ थोड़ी सी भी भलाई प्राप्त नहीं हो सकती। 1040

यह जानकर कि कोई दुखी और उदास है,

उसके शत्रु प्रसन्न होते हैं।"

"जब बुद्धिमान व्यक्ति विपत्तियों में विचलित नहीं होता,

और यह जानता है कि क्या अच्छा है, तो

उसके शत्रु यह देखकर दुखी हो जाते हैं

कि उसके चेहरे के भाव नहीं बदलते।"

"जहाँ कहीं भी कोई अपना भला पा सकता है,

चाहे किसी भी तरीके से हो - जप, मंत्र,

कहावत, दान या परंपरा 1041 के द्वारा - वहाँ

उसे ठीक उसी तरह से प्रयास करना चाहिए।"

लेकिन अगर किसी को यह समझ आ जाए कि 'यह अच्छाई

मुझे या किसी और को नहीं मिल सकती,

तो उसे शोक किए बिना स्थिति को स्वीकार कर लेना चाहिए,

यह सोचते हुए कि 'कर्म बहुत प्रबल है; अब मैं क्या कर सकता हूँ?'" [57]

---

49 कोसला

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब कोसल के राजा पसेनादि भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। [उस समय रानी मल्लिका का निधन हो चुका था।] 1042 तभी एक व्यक्ति राजा पसेनादि के पास आया और उनके कान में फुसफुसाया, "महाराज, रानी मल्लिका का अभी-अभी निधन हो गया है।" यह सुनकर राजा पसेनादि व्यथित और दुखी हो गए, और वे कंधे झुकाकर, नीचे की ओर मुख करके, उदास और मौन बैठे रहे।

तब भगवान (बुद्ध) ने राजा की दशा जानकर उससे कहा:

"हे महाराज, ये पाँच ऐसी स्थितियाँ हैं जो किसी तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य हैं।"

[इस सूतसी का शेष भाग 5:48 के समान है, जिसमें आयतें भी शामिल हैं।]

---

50 नारदा

एक बार पूज्य नारद पाटलिपुत्त में मुर्गे के उद्यान में निवास कर रहे थे। उस समय राजा मुंडा की पत्नी, रानी भद्दा, जो उन्हें बहुत प्रिय थीं, का निधन हो गया था। उनकी मृत्यु के बाद से, उन्होंने स्नान नहीं किया, अभिषेक नहीं किया, भोजन नहीं किया और न ही कोई काम किया। वे दिन-रात रानी भद्दा के पार्थिव शरीर पर ध्यान लगाते रहे। तब राजा मुंडा ने अपने कोषाध्यक्ष पियाका से कहा: "तो फिर, मित्र पियाका, [58] रानी भद्दा के पार्थिव शरीर को तेल से भरे लोहे के पात्र में विसर्जित करो और उसे दूसरे लोहे के पात्र में बंद कर दो ताकि हम रानी भद्दा के पार्थिव शरीर को और अधिक समय तक देख सकें।"

"जी महाराज," कोषाध्यक्ष पियाका ने उत्तर दिया। फिर उसने रानी भद्दा के शरीर को तेल से भरे एक लोहे के पात्र में डुबो दिया और उसे एक और लोहे के पात्र में बंद कर दिया।

तब कोषाध्यक्ष पियाका के मन में यह विचार आया: "राजा मुंडा की पत्नी, रानी भद्दा का देहांत हो गया है, और वह उन्हें बहुत प्रिय थीं। उनके निधन के बाद से, वे न स्नान करते हैं, न अभिषेक करते हैं, न भोजन करते हैं और न ही कोई काम करते हैं। दिन-रात वे रानी के पार्थिव शरीर पर ही चिंतन करते रहते हैं। राजा मुंडा किस तपस्वी या ब्राह्मण के पास जाएँ, ताकि उनका धर्मोपदेश सुनकर वे दुःख के बाण से मुक्त हो जाएँ?"

तब पियाका के मन में यह विचार आया: "पूज्य नारद पाटलिपुत्त में, मुर्गे के उद्यान में निवास कर रहे हैं। अब इस पूज्य नारद के बारे में यह सुप्रसिद्धि फैली हुई है कि 'वे बुद्धिमान, सक्षम, समझदार, विद्वान, कुशल वक्ता, वाक्पटु, परिपक्व और अरहंत हैं।' मान लीजिए कि राजा मुंडा पूज्य नारद के दर्शन करने जाएँ: शायद यदि वे पूज्य नारद का धम्म सुनें, तो वे दुःख के बाण को त्याग दें।"

तब कोषाध्यक्ष पियाका राजा मुंडा के पास गए और उनसे कहा, "महाराज, पूज्य नारद पाटलिपुत्त में मुर्गे के उद्यान में निवास कर रहे हैं। अब इस पूज्य नारद के बारे में यह अच्छी खबर फैली है कि 'वे बुद्धिमान हैं... और एक अरहंत हैं।' महाराज, आपको पूज्य नारद से मिलना चाहिए। शायद, जब आप पूज्य नारद का धर्म सुनेंगे, तो आप दुःख के बाण को त्याग देंगे।" [राजा ने कहा:] "तो फिर, मित्र पियाका, [59] पूज्य नारद को सूचित करो। भला मुझ जैसा व्यक्ति उनके राज्य में रहने वाले किसी तपस्वी या ब्राह्मण के पास बिना उन्हें सूचित किए कैसे जा सकता है?"

"जी, महाराज," पियाका ने उत्तर दिया। फिर वह पूज्य नारद के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "भंते, राजा मुंडा की पत्नी, रानी भद्दा, जो उन्हें प्रियतम थीं, का देहांत हो गया है। रानी के देहांत के बाद से वे न स्नान करते हैं, न अभिषेक करते हैं, न भोजन करते हैं और न ही कोई कार्य करते हैं। दिन-रात वे रानी के पार्थिव शरीर पर विलीन रहते हैं। हे भंते, यदि पूज्य नारद राजा मुंडा को इस प्रकार धर्म का उपदेश दें कि वे दुःख के बाण से मुक्त हो सकें, तो यह अच्छा होगा।"

"तो फिर राजा मुंडा अपनी सुविधानुसार आ सकते हैं।"

तब कोषाध्यक्ष पियाका अपने आसन से उठे, पूज्य नारद को प्रणाम किया, उनके दाहिनी ओर मुख करके उनकी परिक्रमा की और राजा मुंडा के पास गए। उन्होंने राजा से कहा, "महाराज, पूज्य नारद ने अपनी सहमति दे दी है। आप अपनी सुविधानुसार जा सकते हैं।"

"तो फिर, मेरे मित्र पियाका, सबसे बेहतरीन रथ तैयार करवाओ!"

"जी महाराज," पियाका ने उत्तर दिया, और बेहतरीन रथों को तैयार करवाने के बाद उसने राजा मुंडा से कहा: "महाराज, सबसे उत्तम रथ तैयार हो चुके हैं। आप अपनी सुविधानुसार जा सकते हैं।"

तब राजा मुंडा एक सुंदर रथ पर सवार हुए और अन्य रथों के साथ पूरे राजसी वैभव के साथ नारद के दर्शन के लिए मुर्गे के उद्यान की ओर चल पड़े। वे रथ से उतनी दूर तक गए जहाँ तक रथ ले जाने योग्य था, फिर वे रथ से उतरकर पैदल उद्यान में प्रवेश कर गए। वे नारद के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। [60] तब नारद ने उनसे कहा:

"हे महाराज, ये पाँच स्थितियाँ ऐसी हैं जो किसी तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य हैं। वे पाँच कौन सी हैं? (1) 'वृद्धावस्था के अधीन प्राणी वृद्ध न हो!': यह ऐसी स्थिति है जो किसी तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य है। (2) 'रोग के अधीन प्राणी रोगग्रस्त न हो!': यह ऐसी स्थिति है जो किसी तपस्वी या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य है। (3) 'मृत्यु के अधीन प्राणी की मृत्यु न हो!': यह ऐसी स्थिति है जो किसी तपस्वी या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य है। (4) 'नष्ट होने के अधीन प्राणी का विनाश न हो!': यह ऐसी स्थिति है जो किसी तपस्वी या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य है। (5) 'हानि के अधीन प्राणी की हानि न हो!': यह एक ऐसी स्थिति है जो किसी तपस्वी या ब्राह्मण, किसी देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार के किसी भी व्यक्ति के लिए अप्राप्य है।

[इसका अगला भाग 5:48 के समान है, जिसमें छंद भी शामिल हैं।] [61—62]

यह सुनकर राजा मुंडा ने पूज्य नारद से पूछा, "भंते, धम्म की इस व्याख्या का नाम क्या है?"

"हे महाराज, धम्म की इस व्याख्या को दुःख के बाण को निकालना कहा जाता है।" 1043

"हे भंते, निश्चय ही यह दुःख के बाण का निष्कासन है! निश्चय ही यह दुःख के बाण का निष्कासन है! क्योंकि धम्म की यह व्याख्या सुनकर मैंने दुःख के बाण का त्याग कर दिया है।"

तब राजा मुंडा ने कोषाध्यक्ष पियाका से कहा: "ठीक है, मित्र पियाका, रानी भद्दा के शरीर का दाह संस्कार करवाओ और उनके लिए एक स्मारक बनवाओ। आज से मैं स्नान करूँगा, तेल लगाऊँगा, भोजन करूँगा और अपना काम करूँगा।" [63]

दूसरा पचास

I. बाधा अनुभाग (निवारणावग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

51 आवरण/बाधाएं (अवराना)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, मन के ये पाँच आवरण/अवरोध, बाधाएँ, बोझ हैं, जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करते हैं। वे पाँच कौन से हैं? (1) कामुक इच्छा मन का एक अवरोध, बाधा, बोझ है, जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करती है। (2) द्वेष... (3) सुस्ती और उनींदापन... (4) बेचैनी और पश्चाताप... (5) संदेह मन का एक अवरोध, बाधा, बोझ है, जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करती है। ये मन के पाँच आवरण/अवरोध, बाधाएँ, बोझ हैं, जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करते हैं।

भिक्षुओं, मन के इन पाँच आवरणों/अवरोधों, बाधाओं, बोझों का त्याग किए बिना, जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करते हैं, यह असंभव है कि कोई भिक्षु अपने शक्तिहीन और कमजोर पन्ना (दिव्य ज्ञान) के साथ अपना भला, दूसरों का भला, [64] या दोनों का भला जान सके, या श्रेष्ठों के योग्य ज्ञान और दृष्टि में अलौकिक विशिष्टता प्राप्त कर सके। मान लीजिए कि एक नदी पहाड़ से नीचे बह रही है, लंबी दूरी तय कर रही है, तेज धारा के साथ, अपने साथ बहुत सारा कचरा बहाकर। फिर, उसके दोनों किनारों पर, एक आदमी सिंचाई नहरें खोलता है। 1044 ऐसी स्थिति में, नदी के मध्य में धारा बिखर जाएगी, फैल जाएगी और विभाजित हो जाएगी, जिससे नदी अब लंबी दूरी तक तेज धारा के साथ, बहुत सारा कचरा बहाकर नहीं बह पाएगी। उसी प्रकार, इन पाँच बाधाओं का त्याग किए बिना... यह असंभव है कि कोई भिक्षु... ज्ञान में अलौकिक विशिष्टता प्राप्त कर सके। और महान लोगों के योग्य दूरदृष्टि।

लेकिन, भिक्षुओं, मन के इन पाँच आवरणों/अवरोधों, बाधाओं, बोझों, जो बुद्धि को कमजोर करते हैं, का त्याग करके, एक भिक्षु अपने प्रबल पन्ना (दिव्य ज्ञान) से अपना भला, दूसरों का भला और दोनों का भला जान सकता है, और श्रेष्ठ जनों के योग्य ज्ञान और दृष्टि में एक अलौकिक विशिष्टता प्राप्त कर सकता है। मान लीजिए कि एक नदी पहाड़ से नीचे बह रही है, लंबी दूरी तक तीव्र धारा के साथ बह रही है, और अपने साथ बहुत सारा कचरा बहाकर ला रही है। फिर एक व्यक्ति उसके दोनों किनारों पर सिंचाई नहरों को बंद कर देता है। ऐसी स्थिति में, नदी के मध्य में धारा विक्षेपित, फैली और विभाजित नहीं होगी, जिससे नदी लंबी दूरी तक तीव्र धारा के साथ बह सके और अपने साथ बहुत सारा कचरा बहाकर ला सके। उसी प्रकार, इन पाँच अवरोधों का त्याग करके... एक भिक्षु... श्रेष्ठ जनों के योग्य ज्ञान और दृष्टि में एक अलौकिक विशिष्टता प्राप्त कर सकता है। [65]

52 हानिकारक ढेर (अकुशलरासी सं. अकुशल-राशि)

भिक्षुओं, 'हानिकारक (अकुशल) अवरोधों का ढेर' कहने का अर्थ है कि ये पाँच अवरोध पूर्णतः हानिकारक (अकुशल) अवरोध हैं। 1045 क्योंकि ये पाँच अवरोध पूर्णतः हानिकारक (अकुशल) अवरोध हैं। कौन से पाँच? कामुक (यौन) इच्छा का अवरोध, द्वेष का अवरोध, सुस्ती और उन्मत्तता का अवरोध, बेचैनी और पश्चाताप का अवरोध, और संदेह का अवरोध। भिक्षुओं, 'हानिकारक (अकुशल) अवरोधों का ढेर' कहने का अर्थ है कि ये पाँच अवरोध पूर्णतः हानिकारक (अकुशल) अवरोध हैं।

---

53 कारक (पधानियंगा)

"भिक्षुओं, प्रयास में सहायता करने वाले ये पाँच कारक हैं। वे पाँच कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, संसार के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।"

(2) "वह शायद ही कभी बीमार या पीड़ित होता है, उसका पाचन तंत्र संतुलित होता है, न तो बहुत ठंडा और न ही बहुत गर्म, बल्कि मध्यम और प्रयास के लिए उपयुक्त होता है।

(3) "वह ईमानदार और खुला है, वह व्यक्ति जो शिक्षक और अपने बुद्धिमान साथी भिक्षुओं के सामने खुद को वैसे ही प्रकट करता है जैसा वह वास्तव में है।

(4) "उसने हानिकारक (अकुशल) गुणों को त्यागने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है।"

(5) "वह बुद्धिमान है; उसके पास वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) है जो उत्पत्ति और क्षय को पहचानता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी है और दुख के पूर्ण विनाश की ओर ले जाता है।

"भिक्षुओं, ये पाँच कारक हैं जो प्रयास में सहायक होते हैं।"

---

54 अवसर (समय)

"भिक्षुओं (मठवासियों), प्रयास करने के लिए ये पाँच प्रतिकूल अवसर हैं। वे पाँच कौन से हैं? [66]

(1) "यहाँ एक भिक्षु वृद्ध है, वृद्धावस्था से ग्रस्त है। यह प्रयास करने का पहला प्रतिकूल अवसर है।

(2) "फिर, एक भिक्षु बीमार है, बीमारी से ग्रस्त है। यह प्रयास करने का दूसरा प्रतिकूल अवसर है।

(3) "फिर अकाल है, फसल खराब है, ऐसा समय है जब भिक्षा भोजन प्राप्त करना कठिन है और अनाज बीनकर जीवन यापन करना आसान नहीं है। 1046 यह प्रयास करने का तीसरा प्रतिकूल अवसर है।

(4) "फिर, जंगल में खतरा और अशांति है, और ग्रामीण इलाकों के लोग अपने वाहनों पर सवार होकर चारों ओर भाग रहे हैं। यह संघर्ष करने का चौथा प्रतिकूल अवसर है।

(5) "फिर संघ में फूट पड़ जाती है, और संघ में फूट पड़ने पर आपसी अपमान, निंदा, तिरस्कार और अस्वीकृति होती है। 1047 तब अविश्वासी लोग आत्मविश्वास प्राप्त नहीं कर पाते, जबकि कुछ आत्मविश्वासी लोग अपना मन बदल लेते हैं। यह प्रयास करने का पाँचवाँ प्रतिकूल अवसर है।"

"ये प्रयास करने के लिए पांच प्रतिकूल परिस्थितियाँ हैं।"

भिक्षुओं, परिश्रम करने के लिए ये पाँच अनुकूल अवसर हैं। वे पाँच कौन से हैं?

(1) "यहाँ एक भिक्षु युवा है, काले बालों वाला एक युवक है जो यौवन के आशीर्वाद से संपन्न है, जीवन के चरम पर है। यह प्रयास करने का पहला अनुकूल अवसर है।

(2) "भिक्षु शायद ही कभी बीमार या पीड़ित होता है, उसका पाचन संतुलित होता है, न तो बहुत ठंडा और न ही बहुत गर्म, बल्कि मध्यम और साधना के लिए उपयुक्त होता है। यह साधना के लिए दूसरा अनुकूल अवसर है।"

(3) "फिर, भोजन प्रचुर मात्रा में है; अच्छी फसल हुई है [67] और भिक्षा भोजन प्रचुर मात्रा में है, जिससे कोई भी आसानी से अपना भरण-पोषण कर सकता है। यह प्रयास करने का तीसरा अनुकूल अवसर है।

(4) "फिर, लोग सद्भाव से, बिना किसी विवाद के, दूध और पानी की तरह घुलमिलकर, एक-दूसरे को स्नेह भरी निगाहों से देखते हुए रह रहे हैं। यह प्रयास करने का चौथा अनुकूल अवसर है।"

(5) "फिर, संघ शांति से निवास कर रहा है—सद्भाव से, सामंजस्यपूर्ण ढंग से, बिना किसी विवाद के, एक ही पाठ के साथ। जब संघ में सामंजस्य होता है, तब कोई परस्पर अपमान, कोई परस्पर निंदा, कोई परस्पर तिरस्कार और कोई परस्पर अस्वीकृति नहीं होती। तब अविश्वासियों का आत्मविश्वास बढ़ता है और आत्मविश्वासियों का आत्मविश्वास और भी बढ़ जाता है। 1048 यह प्रयास करने का पाँचवाँ अनुकूल अवसर है।"

"प्रयास करने के लिए ये पाँच अनुकूल अवसर हैं।"

---

55 माता और पुत्र (मातापुत्त)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस समय एक माता और पुत्र, जो क्रमशः एक भिक्षुणी और एक भिक्षु थे, सावत्थी के वर्षावास में आए थे। वे अक्सर एक-दूसरे को देखना चाहते थे, माता अपने पुत्र को और पुत्र अपनी माता को। क्योंकि वे अक्सर एक-दूसरे को देखते थे, उनके बीच एक बंधन बन गया; बंधन बनने से अंतरंगता उत्पन्न हुई; अंतरंगता के कारण कामवासना (राग) को अवसर मिल गया। 1049 कामवासना (राग) के वश में होकर, अपने प्रशिक्षण को छोड़े बिना और अपनी कमजोरी को स्वीकार किए बिना, उन्होंने यौन संबंध बनाए! 1050

तब कई भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और जो कुछ हुआ था उसका वर्णन किया। [68] [भगवान (बुद्ध) ने कहा:]

भिक्षुओं, क्या उस मूर्ख ने सोचा था: 'माँ अपने पुत्र से प्रेम नहीं करती, न ही पुत्र अपनी माँ से?' (1) भिक्षुओं, मुझे स्त्री के रूप के समान कोई दूसरा रूप इतना मोहक, कामुक, मादक, आकर्षक, मोहक और बंधन से पूर्ण मुक्ति प्राप्त करने में इतना बड़ा बाधक नहीं दिखता। जो प्राणी स्त्री के रूप के प्रति राग से ग्रस्त हैं— लालची, उससे बंधे हुए, मोह में डूबे हुए और उसमें अंधाधुंध लीन— स्त्री के रूप के वश में रहकर दीर्घकाल तक व्यथित रहते हैं। (2) मुझे कोई दूसरी ध्वनि... (3) ... कोई दूसरी गंध... (4) ... कोई दूसरा स्वाद... (5) ... कोई दूसरा स्पर्श इतना मोहक, कामुक, मादक नहीं दिखता। स्त्री का स्पर्श मोहक, मोहक और बंधन से पूर्ण सुरक्षा प्राप्त करने में उतना ही बड़ा बाधक है जितना कि किसी स्त्री का स्पर्श। जो प्राणी स्त्री के स्पर्श के लिए तरसते हैं—लालची, उस पर बंधे हुए, मोहित और उसमें अंधाधुंध लीन—वे स्त्री के स्पर्श के वश में रहकर लंबे समय तक व्यथा भोगते हैं।

भिक्षुओं, चलते समय स्त्री पुरुष के मन को मोह लेती है; खड़े होने पर... बैठे होने पर... लेटने पर... हंसने पर... बोलने पर... गाने पर... रोने पर स्त्री पुरुष के मन को मोह लेती है। सूजी हुई अवस्था में भी स्त्री पुरुष के मन को मोह लेती है। यहां तक कि मृत अवस्था में भी स्त्री

पुरुष के मन को मोह लेती है। हे भिक्षुओं, यदि किसी बात के बारे में सही कहा जा सकता है: 'पूरी तरह से मार का जाल', तो यह बात स्त्री के बारे में ही कही जा सकती है।

कोई व्यक्ति किसी खूंखार दुश्मन से बात कर सकता है,

कोई व्यक्ति किसी बुरी आत्मा से बात कर सकता है,

कोई व्यक्ति उस सांप के पास भी जा सकता है

जिसका डंक निश्चित मृत्यु का कारण बनता है;

लेकिन किसी महिला से, अकेले में,

कभी बात नहीं करनी चाहिए।

वे एक नज़र और मुस्कान से,

अस्त-व्यस्त पोशाक से

और मधुर वाणी से उस व्यक्ति को बांध लेते हैं जिसका मन भ्रमित हो ।

[1054] ऐसे व्यक्ति के पास जाना सुरक्षित नहीं है,

भले ही वह सूजी हुई और मृत हो।

स्त्री के शरीर में इंद्रिय सुख के ये पाँच तत्व देखे जाते हैं:

रूप, ध्वनि, स्वाद और गंध,

और साथ ही सुखद स्पर्श।

जो लोग इंद्रिय सुखों की बाढ़ में बह जाते हैं

और उन्हें पूरी तरह समझ नहीं आती, वे संसार, जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्म के चक्र

में धंसते चले जाते हैं।

लेकिन जिन लोगों ने इंद्रिय सुखों को पूरी तरह से समझ लिया है, वे

किसी भी तरफ से भय के बिना जीवन जीते हैं।

संसार में रहते हुए उन्होंने सभी दोषों का नाश कर लिया है और वे संसार से परे चले गए हैं।

---

56 उपदेशक (उपज्झाय सं. उपाध्याय)

तब एक भिक्षु अपने गुरु के पास गया और उनसे कहा, “भंते, मेरा शरीर अब ऐसा प्रतीत होता है जैसे उसे नशा दिया गया हो, मैं भ्रमित हो गया हूँ, और शिक्षाएँ अब मेरे लिए स्पष्ट नहीं हैं। सुस्ती और उनींदापन मेरे मन पर हावी हैं। मैं ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) असंतुष्ट होकर जी रहा हूँ और शिक्षाओं के बारे में संदेह है।” 1056

तब गुरु अपने शिष्य को भगवान (बुद्ध) के पास ले गए। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) को अपने शिष्य की कही हुई बातें बताईं। [70] [भगवान (बुद्ध) ने कहा:]

"ऐसा ही है, भिक्षु! (1) जब कोई इंद्रियों के द्वार पर लापरवाह रहता है, (2) खाने में अति करता है, (3) और जागृत रहने का ध्यान नहीं रखता; (4) जब लाभकारी गुणों में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का अभाव होता है (5) और रात्रि के आरंभिक और पश्चात चरणों में ज्ञान प्राप्ति के साधनों को विकसित करने के प्रयास में तल्लीन नहीं रहता, तो शरीर ऐसा प्रतीत होता है मानो उसे नशा कराया गया हो, व्यक्ति दिशाहीन हो जाता है, और शिक्षाएँ उसके लिए स्पष्ट नहीं रह जातीं। मन सुस्त और उनींदा रहता है। व्यक्ति ब्रह्मचर्य जीवन असंतुष्ट होकर जीता है और शिक्षाओं के प्रति संशय में रहता है।"

अतः, भिक्षु, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: (1) 'मैं अपनी इंद्रियों के द्वारों में सतर्क रहूंगा, (2) भोजन में संयमी रहूंगा, (3) और जागृत रहने का प्रयास करूंगा; (4) मैं लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) रखूंगा (5) और रात्रि के आरंभिक और पश्चात दोनों चरणों में ज्ञान प्राप्ति के साधनों को विकसित करने के प्रयास में एकाग्र रहूंगा।' भिक्षु, इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

तब, भगवान (बुद्ध) से ऐसा उपदेश पाकर, वह भिक्षु अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर मुख करके उनकी परिक्रमा की और प्रस्थान किया। फिर, एकांतवास में, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर, थोड़े ही समय में उस भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इस जीवन में ही ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) की उस अतुलनीय सिद्धि को स्वयं अनुभव कर लिया, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करते हैं, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करने लगे। उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान से जाना: "पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।" और वह भिक्षु अरहंतों में से एक बन गए।

फिर, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उस भिक्षु ने अपने गुरु के पास जाकर उनसे कहा, "भंते, अब मेरा शरीर ऐसा प्रतीत नहीं होता जैसे उस पर नशा किया गया हो, मैं भली-भांति सचेत हो गया हूँ और शिक्षाएँ मुझे स्पष्ट रूप से समझ आ रही हैं। सुस्ती और आलस्य मेरे मन पर हावी नहीं होते। मैं आनंदपूर्वक ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करता हूँ और शिक्षाओं के बारे में मुझे कोई संदेह नहीं है।"

तब गुरु अपने शिष्य को भगवान (बुद्ध) के पास ले गए। [71] उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) को अपने शिष्य की कही हुई बातें बताईं। [भगवान (बुद्ध) ने कहा:]

"ऐसा ही है, भिक्षु! जब कोई इंद्रियों के द्वारों में सतर्क रहता है, खान-पान में संयमी होता है और जागृत रहने का ध्यान रखता है; जब किसी को लाभकारी गुणों (धम्म) का ज्ञान (विपश्यना) होता है और वह रात्रि के आरंभिक और पश्चात चरणों में ज्ञान प्राप्ति के साधनों को विकसित करने के प्रयास में तल्लीन रहता है, तो उसका शरीर ऐसा प्रतीत नहीं होता मानो उसे नशा कराया गया हो, वह भली-भांति सचेत हो जाता है और शिक्षाएं उसे स्पष्ट रूप से समझ आती हैं। मन में सुस्ती और आलस्य नहीं छाते। वह ब्रह्मचर्य जीवन आनंदपूर्वक व्यतीत करता है और शिक्षाओं के प्रति उसका कोई संदेह नहीं रहता।"

अतः, भिक्षुओं, 1057 आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: (1) 'हम इंद्रियों के द्वारों में सतर्क रहेंगे, (2) भोजन में संयम बरतेंगे, और (3) जागृत रहने का प्रयास करेंगे; (4) हम लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) प्राप्त करेंगे (5) और रात्रि के आरंभिक और पश्चात चरणों में ज्ञान प्राप्ति के साधनों को विकसित करने के प्रयास में एकाग्र रहेंगे।' भिक्षुओं, इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।'

---

57 विषय-वस्तु

भिक्षुओं, ये पाँच विषय हैं जिन पर स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी, सभी को अक्सर चिंतन करना चाहिए। 1058 वे पाँच विषय क्या हैं? (1) स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी, सभी को अक्सर इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मैं वृद्धावस्था के अधीन हूँ; मैं वृद्धावस्था से मुक्त नहीं हूँ।' (2) स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी, सभी को अक्सर इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मैं रोग के अधीन हूँ; मैं रोग से मुक्त नहीं हूँ।' (3) स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी, सभी को अक्सर इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मैं मृत्यु के अधीन हूँ; मैं मृत्यु से मुक्त नहीं हूँ।' (4) स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी, सभी को अक्सर इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मुझे अपने प्रिय और प्रिय सभी लोगों और वस्तुओं से विमुख होना पड़ेगा।' 105 '(5) स्त्री हो या पुरुष, गृहस्थ हो या संन्यासी, उसे अक्सर इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मैं अपने कर्मों का स्वामी हूँ, अपने कर्मों का उत्तराधिकारी हूँ; कर्म ही मेरा मूल हैं, कर्म ही मेरे संबंधी हैं, कर्म ही मेरा सहारा हैं; मैं अपने अच्छे या बुरे कर्मों का उत्तराधिकारी हूँगा।'

(1) "किसलिए किसी स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी को बार-बार यह चिंतन करना चाहिए: 'मैं वृद्धावस्था के अधीन हूँ; मैं वृद्धावस्था से मुक्त नहीं हूँ"? युवावस्था में मनुष्य अपनी युवावस्था के नशे में चूर रहते हैं, और जब वे अपनी युवावस्था के नशे में चूर होते हैं तो वे शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त होते हैं। परन्तु जब कोई इस विषय पर बार-बार चिंतन करता है, तो युवावस्था का नशा या तो पूरी तरह से त्याग जाता है या कम हो जाता है। इसी लाभ के लिए किसी स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी को बार-बार यह चिंतन करना चाहिए: 'मैं वृद्धावस्था के अधीन हूँ; मैं वृद्धावस्था से मुक्त नहीं हूँ।'"

(2) "और किस लाभ के लिए किसी स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी को बार-बार इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मैं रोग के अधीन हूँ; मैं रोग से मुक्त नहीं हूँ"? स्वस्थ अवस्था में प्राणी अपने स्वास्थ्य के नशे में चूर रहते हैं, और जब वे अपने स्वास्थ्य के नशे में चूर होते हैं तो वे शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त होते हैं। परन्तु जब कोई इस विषय पर बार-बार चिंतन करता है, तो स्वास्थ्य का नशा या तो पूरी तरह से त्याग दिया जाता है या कम हो जाता है। इसी लाभ के लिए किसी स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी को बार-बार इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मैं रोग के अधीन हूँ; मैं रोग से मुक्त नहीं हूँ।'"

(3) "और किस लाभ के लिए किसी स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी को बार-बार इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मैं मृत्यु के अधीन हूँ; मैं मृत्यु से मुक्त नहीं हूँ"? अपने जीवनकाल में प्राणी जीवन के नशे में चूर रहते हैं, और जब वे जीवन के नशे में चूर होते हैं तो वे शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त होते हैं। (73) परन्तु जब कोई इस विषय पर बार-बार चिंतन करता है, तो जीवन का नशा या तो पूरी तरह से त्याग दिया जाता है या कम हो जाता है। इसी लाभ के लिए किसी स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी को बार-बार इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मैं मृत्यु के अधीन हूँ; मैं मृत्यु से मुक्त नहीं हूँ।'

(4) "और किस लाभ के लिए किसी स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी को बार-बार इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मुझे अपने प्रिय और मनभावन सभी लोगों और वस्तुओं से विमुख और पृथक होना पड़ेगा'? प्राणियों में अपने प्रिय और मनभावन लोगों और वस्तुओं के प्रति इच्छा और राग उत्पन्न होते हैं, और इस राग से उत्तेजित होकर वे शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त होते हैं। परन्तु जब कोई इस विषय पर बार-बार चिंतन करता है, तो प्रिय और मनभावन सभी लोगों और वस्तुओं के प्रति इच्छा और राग या तो पूरी तरह से त्याग दिए जाते हैं या कम हो जाते हैं। इसी लाभ के लिए किसी स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी को बार-बार इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मुझे अपने प्रिय और मनभावन सभी लोगों और वस्तुओं से विमुख और पृथक होना पड़ेगा।'

(5) "और किस लाभ के लिए स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी को बार-बार इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मैं अपने कर्मों का स्वामी हूँ, अपने कर्मों का उत्तराधिकारी हूँ; कर्म ही मेरा मूल हैं, कर्म ही मेरे सगे हैं, कर्म ही मेरा सहारा हैं; मैं जो भी कर्म करूँ, चाहे अच्छे हों या बुरे,

मैं उनका उत्तराधिकारी हूँगा'? लोग शरीर, वाणी और मन से दुराचार करते हैं। परन्तु जब कोई इस विषय पर बार-बार चिंतन करता है, तो ऐसा दुराचार या तो पूरी तरह त्याग दिया जाता है या कम हो जाता है। इसी लाभ के लिए स्त्री या पुरुष, गृहस्थ या संन्यासी को बार-बार इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'मैं अपने कर्मों का स्वामी हूँ, अपने कर्मों का उत्तराधिकारी हूँ; मेरे पास कर्म ही मेरा मूल है, कर्म ही मेरा रिश्तेदार है, कर्म ही मेरा सहारा है; मैं अपने अच्छे या बुरे कर्मों का उत्तराधिकारी स्वयं ही बनूंगा।

(1) "यह महान शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: [74] 'मैं अकेला नहीं हूँ जो वृद्धावस्था के अधीन हूँ, वृद्धावस्था से मुक्त नहीं हूँ। सभी प्राणी जो आते-जाते हैं, जो मरते हैं और पुनर्जन्म लेते हैं, वृद्धावस्था के अधीन हैं; कोई भी वृद्धावस्था से मुक्त नहीं है।' जैसे-जैसे वह इस विषय पर बार-बार चिंतन करता है, मार्ग उत्पन्न होता है। वह इस मार्ग का अनुसरण करता है, इसे विकसित करता है और इसका पोषण करता है। ऐसा करने से, बंधन पूरी तरह से त्याग दिए जाते हैं और अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं। 5060 .

(2) "यह महान शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अकेला नहीं हूँ जो रोग के अधीन हूँ, रोग से मुक्त नहीं हूँ। सभी प्राणी जो आते-जाते हैं, जो मरते हैं और पुनर्जन्म लेते हैं, रोग के अधीन हैं; कोई भी रोग से मुक्त नहीं है।' जैसे-जैसे वह इस विषय पर बार-बार चिंतन करता है, मार्ग उत्पन्न होता है। वह इस मार्ग का अनुसरण करता है, इसे विकसित करता है और इसका पोषण करता है। ऐसा करने से, बंधन पूरी तरह से त्याग दिए जाते हैं और अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं।"

(3) "यह महान शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अकेला ही मृत्यु के अधीन नहीं हूँ, मृत्यु से मुक्त नहीं हूँ। सभी प्राणी जो आते-जाते हैं, जो मरते हैं और पुनर्जन्म लेते हैं, मृत्यु के अधीन हैं; कोई भी मृत्यु से मुक्त नहीं है।' जब वह इस विषय पर बार-बार चिंतन करता है, तो मार्ग उत्पन्न होता है। वह इस मार्ग का अनुसरण करता है, इसे विकसित करता है और इसका पोषण करता है। ऐसा करने से, बंधन पूरी तरह से त्याग दिए जाते हैं और अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं।"

(4) "यह महान शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: मैं अकेला नहीं हूँ जिसे सभी प्रिय और मनभावन वस्तुओं से विमुख होना पड़ता है। सभी प्राणी जो आते-जाते हैं, जो मरते हैं और पुनर्जन्म लेते हैं, उन्हें सभी प्रिय और मनभावन वस्तुओं से विमुख होना पड़ता है।" जैसे-जैसे वह इस विषय पर बार-बार चिंतन करता है, मार्ग उत्पन्न होता है। वह इस मार्ग का अनुसरण करता है, इसे विकसित करता है और इसका पोषण करता है। ऐसा करने से बंधन पूरी तरह से त्याग दिए जाते हैं और अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं।

(5) "यह श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अकेला नहीं हूँ जो अपने कर्मों का स्वामी हूँ, अपने कर्मों का उत्तराधिकारी हूँ; जिसका मूल, संबंध और आश्रय कर्मों से ही है; जो अपने अच्छे या बुरे कर्मों का उत्तराधिकारी होगा। सभी प्राणी जो आते-जाते हैं, जो मरते हैं और पुनर्जन्म लेते हैं, अपने कर्मों के स्वामी हैं, अपने कर्मों के उत्तराधिकारी हैं; सभी का मूल, संबंध और आश्रय कर्मों से ही है; सभी अपने अच्छे या बुरे कर्मों के उत्तराधिकारी होंगे, कि वे करते हैं' [75] जैसे-जैसे वह अक्सर इस विषय पर चिंतन करता है, मार्ग उत्पन्न होता है। वह इस मार्ग का अनुसरण करता है, इसे विकसित करता है और इसे पोषित करता है। ऐसा करते हुए, बेड़ियाँ पूरी तरह से त्याग दी जाती हैं और अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखाड़ दी जाती हैं।

"संसार के लोग जो बीमारी, [1061]

बुढ़ापा और मृत्यु के अधीन हैं

, वे उन लोगों से घृणा करते हैं जो अपनी प्रकृति के अनुसार अस्तित्व में हैं।

"यदि मैं ऐसे स्वभाव वाले प्राणियों से घृणा करने लगूँ ,

तो यह मेरे लिए उचित नहीं होगा

क्योंकि मेरा स्वभाव भी वैसा ही है।"

इस प्रकार निवास करते हुए, मैंने

बिना किसी प्राप्ति के अवस्था को जान लिया था, और इस प्रकार

मैंने सभी व्यसनों पर विजय प्राप्त कर ली थी—

स्वास्थ्य,

यौवन और जीवन के व्यसन पर—

क्योंकि मैंने त्याग में ही सुरक्षा देखी थी। [1062]

"तब मुझमें उत्साह उत्पन्न हुआ

क्योंकि मैंने निर्वाण को स्पष्ट रूप से देख लिया था।

अब मैं

इंद्रिय सुखों में लिप्त होने में असमर्थ हूँ।

ब्रह्मचर्य (पवित्र जीवन) पर भरोसा करते हुए,

मैं कभी पीछे नहीं हटूंगा।"

---

58 लिच्छवी युवक

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले महल में निवास कर रहे थे। सुबह, भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किए और भिक्षा मांगने के लिए वैशाली में प्रवेश किया। वैशाली में भिक्षा मांगने के बाद, भोजन करने पर, जब वे भिक्षा मांगने के बाद लौटे, तो वे विशाल वन में प्रवेश कर गए और दिनभर विश्राम करने के लिए एक वृक्ष के नीचे बैठ गए।

उस अवसर पर कई लिच्छवी युवक अपने धनुषों को लेकर कुत्तों के झुंड के साथ विशाल वन में टहल रहे थे, तभी उन्होंने भगवान (बुद्ध) को एक वृक्ष के नीचे दिनभर विश्राम करते हुए देखा। उन्हें देखकर उन्होंने अपने धनुष नीचे रख दिए, कुत्तों को एक तरफ हटा दिया और उनके पास गए। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया [76] और श्रद्धापूर्वक हाथ जोड़कर चुपचाप उनकी सेवा में खड़े रहे।

उस समय लिच्छवी युवक महानामा बड़े वन में टहलते हुए व्यायाम कर रहे थे, तभी उन्होंने देखा कि कुछ लिच्छवी युवक भगवान (बुद्ध) के समक्ष हाथ जोड़कर श्रद्धापूर्वक प्रणाम करते हुए चुपचाप खड़े हैं। तब वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और प्रेरणा से यह शब्द कहा: "ये वज्जी बनेंगे! ये वज्जी बनेंगे!"

(भगवान (बुद्ध) ने कहा;) "पर हे महानामा, तुम ऐसा क्यों कहते हो: 'वे वज्जी होंगे! वे वज्जी होंगे!'?"

"हे भंते, ये लिच्छवी युवक हिंसक, उबड़-खाबड़ और उद्दंड हैं। ये परिवारों में उपहार के रूप में छोड़ी गई किसी भी मिठाई को, चाहे वह गन्ने की हो, बेर की हो, केक हो, पाई हो या चीनी की गोलियां हों, लूट लेते हैं और फिर उन्हें खा जाते हैं। ये प्रतिष्ठित परिवारों की महिलाओं और लड़कियों की पीठ पर लात मारते हैं। 1063 अब ये भगवान (बुद्ध) के समक्ष हाथ जोड़कर श्रद्धापूर्वक प्रणाम करते हुए चुपचाप खड़े हैं।"

"महानामा, जिस भी कुल के व्यक्ति में पाँच गुण पाए जाते हैं—चाहे वह एक प्रतिष्ठित क्षत्रिय राजा हो, एक ग्रामीण सज्जन हो, सेनापति हो, ग्राम प्रधान हो, संघ प्रमुख हो, या विभिन्न कुलों पर निजी शासन करने वाला कोई व्यक्ति हो—उसमें केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं। वे पाँच गुण कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, महानामा, ऊर्जावान परिश्रम से अर्जित धन से, अपनी भुजाओं के बल से संचित धन से, अपने माथे के पसीने से कमाए गए धन से, धार्मिक रूप से अर्जित धन से, एक कुल का व्यक्ति अपने माता-पिता का आदर, सम्मान, आदर और आदर करता है। [77] उसके माता-पिता, आदरणीय, सम्मानित और पूजनीय होने के कारण, उस पर दया भाव रखते हैं और सोचते हैं: 'तुम दीर्घायु हो और तुम्हारी आयु लंबी हो।' जब किसी कुल के व्यक्ति के माता-पिता उस पर दया भाव रखते हैं, तो उससे केवल वृद्धि की अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(2) "फिर, महानामा, जो अपने परिश्रम से अर्जित धन, अपनी भुजाओं के बल से संचित धन, अपने माथे के पसीने से कमाए गए धन, जो धार्मिक रूप से अर्जित किया गया हो, वह अपने कुल का पुरुष अपनी पत्नी और बच्चों, अपने दासों, श्रमिकों और सेवकों का आदर, सम्मान, आदर और आदर करता है। आदर, सम्मान और आदर पाकर, वे उस पर दया भाव रखते हैं और सोचते हैं, 'आप दीर्घायु हों!' जब किसी कुल के पुरुष की पत्नी और बच्चे, दास, श्रमिक और सेवक उस पर दया भाव रखते हैं, तो उससे केवल उन्नति की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(3) "फिर, महानामा, जो अपने परिश्रम से अर्जित धन, अपनी भुजाओं के बल से संचित धन, अपने माथे के पसीने से कमाए गए धन, सही ढंग से अर्जित धन से संपन्न है, वह अपने कुल का पुरुष अपने पड़ोसी खेतों के मालिकों और जिनके साथ वह व्यापार करता है, उनका आदर, सम्मान और आदर करता है। 1064 आदर, सम्मान और आदर पाकर, वे उस पर दया भाव रखते हैं और सोचते हैं, 'आपकी आयु दीर्घायु हो!' जब पड़ोसी खेतों के मालिक और जिनके साथ वह व्यापार करता है, किसी कुल के पुरुष पर दया भाव रखते हैं, तो उससे केवल वृद्धि की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(4) "फिर, महानामा, ऊर्जावान परिश्रम से अर्जित धन से, भुजाओं के बल से संचित धन से, माथे के पसीने से कमाए गए धन से, धार्मिक रूप से अर्जित धन से, एक कुलवासी आहुति देने वाले देवताओं का आदर, सम्मान और पूजा करता है। 1065 आदर, सम्मान और पूजा पाकर, वे उस पर दया भाव रखते हैं और सोचते हैं: 'आप दीर्घायु हों!' जब आहुति देने वाले देवता (देवदूत) किसी कुलवासी पर दया करते हैं, तो उससे केवल वृद्धि की ही अपेक्षा की जाती है, पतन की नहीं।"

(5) "फिर, महानामा, अपने परिश्रम से अर्जित धन से, अपनी भुजाओं के बल से संचित धन से, अपने माथे के पसीने से कमाए धन से, धार्मिक रूप से अर्जित धन से, एक कुलवासी तपस्वियों और ब्राह्मणों का आदर, सम्मान, आदर और पूजा करता है। आदर, सम्मान, आदर और पूजा पाकर, वे उस पर दया भाव रखते हैं और सोचते हैं: 'आप दीर्घायु हों!' जब तपस्वियों और ब्राह्मणों को किसी कुलवासी पर दया आती है, तो उससे केवल उन्नति की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

"महानामा, ये पाँच गुण जिस भी कुल के व्यक्ति में पाए जाते हैं - चाहे वह एक प्रतिष्ठित क्षत्रिय राजा हो, एक ग्रामीण सज्जन हो, सेना का सेनापति हो, ग्राम प्रधान हो, संघ प्रमुख हो, या विभिन्न कुलों पर निजी शासन करने वाला कोई व्यक्ति हो - केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

वह अपने माता-पिता के प्रति हमेशा अपने कर्तव्य का पालन करता है;

वह अपनी पत्नी और बच्चों के कल्याण को बढ़ावा देता है।

वह अपने घर के लोगों

और अपने आश्रितों की देखभाल करता है।

बुद्धिमान, परोपकारी और गुणी व्यक्ति

अपने दोनों प्रकार के रिश्तेदारों के भले के लिए कार्य करता है, चाहे वे इस दुनिया से

चले गए हों या अभी जीवित हों।

वह तपस्वियों और ब्राह्मणों,

और देवताओं (देवदूतों) को लाभ पहुंचाता है; वह घर पर धार्मिक जीवन जीते हुए

आनंद उत्पन्न करने वाला है ।

अच्छे कर्म करने के कारण

वह आदर और प्रशंसा के योग्य है।

लोग इस संसार में उसकी स्तुति करते हैं

और मृत्यु के बाद वह स्वर्ग में आनंदित होता है।

---

59 वृद्धावस्था में साधु जीवन में चले गए (1) (वुड्ढपब्बजिता सं. वृद्ध प्रवरजिता)

भिक्षुओं, वृद्धावस्था में संन्यासी बनने वाले ऐसे व्यक्ति का मिलना दुर्लभ है जिनमें पाँच गुण हों। वे पाँच गुण कौन से हैं? वृद्धावस्था में संन्यासी बनने वाले ऐसे व्यक्ति का मिलना दुर्लभ है जो (1) बुद्धिमान हो; (2) उचित आचरण वाला हो; (3) विद्वान हो; (4) धर्म पर प्रवचन दे सके; और (5) अनुशासन का ज्ञाता हो। वृद्धावस्था में संन्यासी बनने वाले ऐसे व्यक्ति का मिलना दुर्लभ है जिनमें ये पाँच गुण हों।

---

60 वृद्धावस्था में साधु जीवन में चले गए (2) (वुड्ढपब्बजिता सं. वृद्ध प्रवरजिता)

भिक्षुओं, वृद्धावस्था में संन्यासी बनने वाले ऐसे व्यक्ति को पाना दुर्लभ है जिनमें पाँच गुण हों। वे पाँच गुण कौन से हैं? वृद्धावस्था में संन्यासी बनने वाले ऐसे व्यक्ति को पाना दुर्लभ है जो आसानी से सुधर जाता हो; [79] (2) जो अपने ज्ञान को दृढ़ता से धारण करता हो; (3) जो शिक्षा को आदरपूर्वक ग्रहण करता हो; (4) जो धम्म पर प्रवचन दे सकता हो; और (5) जो अनुशासन का ज्ञाता हो। वृद्धावस्था में संन्यासी बनने वाले ऐसे व्यक्ति को पाना दुर्लभ है जिनमें ये पाँच गुण हों।

द्वितीय. संज्ञान (सन्ना सं. संज्ञा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

61 धारणाएँ (1)(सन्ना1 सं. संज्ञा)

भिक्षुओं, ये पाँच ज्ञान/समझ/धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो अत्यंत फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अमत/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं। वे पाँच कौन सी हैं? अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा), मृत्यु की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा), खतरे की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा), भोजन की अरुचि की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा), और समस्त

संसार में आनंदहीनता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा)। ये पाँच अनुभूतियाँ (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो अत्यंत फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अमत/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं।

---

62 धारणाएँ (2) (सन्न2 सं. संज्ञा)

भिक्षुओं, ये पाँचों धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो अत्यंत फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अमत/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की ओर ले जाती हैं। वे पाँच कौन सी हैं? अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) की धारणा, अनात्म की धारणा, मृत्यु की धारणा, भोजन की अरुचि की धारणा और समस्त संसार में आनंदहीनता की धारणा। 1067 [80] ये पाँचों धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो अत्यंत फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अमत/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की ओर ले जाती हैं।

---

63 वृद्धि (1) (वधि1 सं. वृद्धि)

भिक्षु (सन्यासी), पाँच मार्गों से विकास करते हुए, एक श्रेष्ठ पुरुष शिष्य श्रेष्ठ विकास से उन्नति करता है और इस जीवन के सार और सर्वोत्तम गुणों को आत्मसात करता है। वे पाँच मार्ग कौन से हैं? वह आस्था, सदाचार, ज्ञान, उदारता और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में उन्नति करता है। इन पाँच मार्गों से उन्नति करते हुए, एक श्रेष्ठ पुरुष शिष्य श्रेष्ठ विकास से उन्नति करता है और इस जीवन के सार और सर्वोत्तम गुणों को आत्मसात करता है।

जो व्यक्ति आस्था और सदाचारी आचरण में,

पन्ना (दिव्य ज्ञान) में, उदारता में और विद्या में वृद्धि करता है—

ऐसा विवेकशील श्रेष्ठ व्यक्ति

स्वयं ही इस जीवन का सार आत्मसात कर लेता है।

---

64 विकास (2) (वद्धि2 सं. वृद्धि)

भिक्षुओं (सन्यासियों) की तरह, एक श्रेष्ठ स्त्री शिष्या भी पाँच प्रकार से उन्नति करती है और इस जीवन के सार और सर्वोत्तम गुणों को आत्मसात करती है। वे पाँच कौन से गुण हैं? वह आस्था, सदाचार, ज्ञान, उदारता और दिव्य ज्ञान में उन्नति करती है। इन पाँच गुणों में उन्नति करते हुए, एक श्रेष्ठ स्त्री शिष्या श्रेष्ठ गुण से उन्नति करती है और इस जीवन के सार और सर्वोत्तम गुणों को आत्मसात करती है।

जो आस्था और सदाचारी आचरण में,

पन्ना (दिव्य ज्ञान) में, उदारता में और विद्या में बढ़ती है—

ऐसी सदाचारी गृहस्थ अनुयायी

अपने लिए इस जीवन का सार आत्मसात कर लेती है।

= 65 चर्चा (सकच्छा)

भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु में पाँच गुण होते हैं, तो उसके साथी भिक्षुओं के लिए उससे चर्चा करना उचित होता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु स्वयं सद्गुणों में निपुण है, और वह सद्गुणों में संपदा (सिद्धि) पर चर्चा में उठने वाले प्रश्नों का उत्तर देता है। (2) वह स्वयं समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में निपुण है, और वह समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) पर चर्चा में उठने वाले प्रश्नों का उत्तर देता है। (3) वह स्वयं ज्ञान (पन्न) में निपुण है, और वह ज्ञान (पन्न) में संपदा (सिद्धि) पर चर्चा में उठने वाले प्रश्नों का उत्तर देता है।

(4) वह स्वयं मोक्ष में सिद्ध है, और मोक्ष में सिद्धि (संपदा) पर चर्चा के दौरान उठने वाले प्रश्नों का उत्तर देता है। (5) वह स्वयं मोक्ष के ज्ञान और दृष्टि में सिद्ध है, और मोक्ष के ज्ञान और दृष्टि में सिद्धि (संपदा) पर चर्चा के दौरान उठने वाले प्रश्नों का उत्तर देता है। जब किसी भिक्षु में ये पाँच गुण होते हैं, तो उसके साथी भिक्षुओं के लिए उससे चर्चा करना उचित होता है।

---

66 जीवन शैली (सजीव)

भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु में पाँच गुण होते हैं, तो उसके साथी भिक्षुओं के लिए उसके साथ रहना उचित होता है। 1068 वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु स्वयं सद्गुणों में निपुण है, और वह सद्गुणों में निपुणता पर चर्चा के दौरान पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देता है। (2) वह स्वयं समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में निपुण है, और वह समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में निपुणता (संपदा) पर चर्चा के दौरान पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देता है। (3) वह स्वयं ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में निपुण है, और वह ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में निपुणता (संपदा) पर चर्चा के दौरान पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देता है। (4) वह स्वयं मुक्ति (मुक्ति) में निपुण है, और वह मुक्ति (संपदा) में निपुणता (संपदा) पर चर्चा के दौरान पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देता है। (5) वह स्वयं मुक्ति के ज्ञान और दृष्टि में निपुण है, और वह मुक्ति के ज्ञान और दृष्टि में निपुणता (संपदा) पर चर्चा के दौरान पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देता है। (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन)। जब किसी भिक्षु में ये पाँच गुण होते हैं, तो उसके साथी भिक्षुओं के लिए उसके साथ रहना उचित होता है।

---

67 मानसिक शक्ति (जादू) के आधार (1) (इद्धिपाद1)

"भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु या भिक्षुणी पाँच चीजों का विकास और अभ्यास करता है, तो दो फलों में से एक की अपेक्षा की जा सकती है: [82] या तो इसी जीवन में अंतिम ज्ञान या, यदि कोई अवशेष शेष रहता है, तो अनागामी अवस्था (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं)। वे पाँच क्या हैं?

(1) यहाँ, एक भिक्षु इच्छा और परिश्रम के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से युक्त मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है। (2) वह ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और परिश्रम के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से युक्त मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है। (3) वह मन और परिश्रम के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से युक्त मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है। (4) वह खोज और परिश्रम के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से युक्त मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है। 1069 (5) उत्साह स्वयं पाँचवाँ है। 1070

"हे भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु या भिक्षुणी इन पांच चीजों का विकास और अभ्यास करता है, तो दो फलों में से एक की अपेक्षा की जा सकती है: या तो इसी जीवन में अंतिम ज्ञान प्राप्त करना, या यदि कोई शेष रह जाता है, तो पुनर्जन्म न लेने की अवस्था (अनगामी) प्राप्त करना।"

---

68 मानसिक शक्ति (जादू) के आधार (2) (इद्धिपाद 2)

"भिक्षुओं, मुझे ज्ञान प्राप्त होने से पहले, जब मैं मात्र एक बोधिसत्व था, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं हुआ था, तब मैंने पाँच चीजों का विकास और अभ्यास किया। वे पाँच चीजें कौन सी थीं?"

(1) मैंने इच्छा और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित किया। (2) मैंने ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित किया। (3) मैंने मन और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित किया। (4) मैंने अन्वेषण और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति का आधार विकसित किया। (5) उत्साह स्वयं पाँचवाँ था।

"चूंकि मैंने इन चीजों को पांचवें तत्व के रूप में उत्साहपूर्वक विकसित और पोषित किया था, इसलिए उपयुक्त आधार होने के कारण, मैं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) द्वारा प्राप्त की जा सकने वाली किसी भी अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम था, जिसकी ओर मैंने अपना मन लगाया।"

"यदि मैं चाहूँ: 'मैं अनेक प्रकार की मानसिक शक्तियों (जादू/इद्धि) का प्रयोग कर सकूँ: एक होकर अनेक बन सकूँ... [जैसा कि 5:23 में है]... मैं ब्रह्म जगत तक शरीर पर भगवानत्व प्राप्त कर सकूँ।' मैं इसे साकार करने में सक्षम था, क्योंकि इसके लिए एक उपयुक्त आधार था... [जैसा कि 5:23 में है]...."

"यदि मैं चाहूँ: [83] 'मैं दोषों के नाश के साथ, इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करूँ, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करूँ, तो मैं उसे अनुभव करने में सक्षम था, क्योंकि वहाँ एक उपयुक्त आधार था।"

---

69 मोहभंग (निब्बिडा)

भिक्षुओं, इन पाँचों चीजों का विकास और अभ्यास करने से केवल निब्बिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण प्राप्त होता है। वे पाँच कौन सी हैं? यहाँ, एक भिक्षु शरीर की अनाकर्षकता का अवलोकन करते हुए, भोजन की अरुचि का अनुभव करते हुए, समस्त संसार में आनंदहीनता का अनुभव करते हुए, सभी बद्ध घटनाओं में अनित्यता का अवलोकन करते हुए ध्यान में लीन रहता है; और उसे मृत्यु का ज्ञान आंतरिक रूप से अच्छी तरह स्थापित होता है। इन पाँचों चीजों का विकास और अभ्यास करने से केवल निब्बिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय प्राप्त होता है। निर्वाण।"

---

70 दशों का नाश (असवक्खय सं. आश्रव-क्षय)

भिक्षुओं, इन पाँचों चीजों को विकसित और अभ्यास करने से दोषों का नाश होता है। वे पाँच कौन सी हैं? यहाँ, एक भिक्षु शरीर की अनाकर्षकता का अवलोकन (अनुपसी में) करता है, भोजन की अरुचि का अनुभव करता है, समस्त संसार में अनाकर्षकता का अनुभव करता है, सभी बद्ध घटनाओं में अनित्यता का अवलोकन (अनुपसी में) करता है; और उसे मृत्यु का ज्ञान आंतरिक रूप से अच्छी तरह स्थापित होता है। इन पाँचों चीजों को विकसित और अभ्यास करने से दोषों का नाश होता है। [84]

III. योद्धा (योद्धाजीव)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

71 मन की मुक्ति (1) (सीटोविमुट्टीफला1 सं. सेटो-विमुक्ति-फला)

भिक्षुओं, जब इन पाँचों चीजों का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो मन की मुक्ति इनका फल और लाभ होती है; इन्हें पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति इनका फल और लाभ होती है। 1071 वे पाँच क्या हैं?

यहां, एक भिक्षु शरीर की अनाकर्षकता का अवलोकन (अनुपसी में) करते हुए, भोजन की अरुचि का अनुभव करते हुए, समस्त संसार में आनंदहीनता का अवलोकन करते हुए, सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता का अवलोकन (अनुपसी में) करते हुए, मृत्यु की अनुभूति (संज्ञा) को आंतरिक रूप से स्थापित करते हैं। इन पांचों चीजों को विकसित और पोषित करने पर मन की मुक्ति प्राप्त होती है, मन की मुक्ति ही इनका फल और लाभ है; इनसे ज्ञान (पन्न) द्वारा मुक्ति प्राप्त होती है, और यही ज्ञान (पन्न) द्वारा मुक्ति का फल है।

जब कोई भिक्षु मन से मुक्त हो जाता है और पन्ना (दिव्य ज्ञान) से मुक्त हो जाता है, तो उसे खाई में भरी हुई चौखट को हटाने वाला, स्तंभ को उखाड़ फेंकने वाला, बिना बोल्ट वाला, ध्वज झुका हुआ, बोझ उतारकर अलग हुआ भिक्षु कहा जाता है। 1072

और भिक्षु ने उस बाधा को कैसे हटाया है? यहाँ, भिक्षु ने अज्ञान का त्याग कर उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के पेड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो सके। इसी प्रकार भिक्षु ने उस बाधा को हटाया है।

"और भिक्षु खाई को कैसे भरता है? यहाँ, भिक्षु पुनर्जन्म के चक्र में भटकने का त्याग कर देता है, जो नए जीवन का कारण बनता है; वह इसे जड़ से काट देता है, इसे ताड़ के ठूंठ की तरह बना देता है, इसे मिटा देता है ताकि यह भविष्य में फिर से उत्पन्न न हो। इस प्रकार भिक्षु खाई को भरता है।"

"और भिक्षु ने स्तंभ को कैसे उखाड़ा? [85] यहाँ, भिक्षु ने तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) का त्याग कर उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो। इसी प्रकार भिक्षु ने स्तंभ को उखाड़ा है।"

और भिक्षु किस प्रकार बंधनमुक्त होता है? यहाँ, भिक्षु ने पाँच निम्न बंधनों का त्याग कर उन्हें जड़ से काट दिया है, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उन्हें मिटा दिया है ताकि वे भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हों। इसी प्रकार भिक्षु बंधनमुक्त होता है।

और ध्वज झुकाए, बोझ उतारे और अनासक्त भिक्षु कैसे श्रेष्ठ होता है? यहाँ, भिक्षु ने 'मैं हूँ' के अहंकार को जड़ से उखाड़ फेंका है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो। इसी प्रकार, ध्वज झुकाए, बोझ उतारे और अनासक्त भिक्षु श्रेष्ठ होता है।

---

72 मन की मुक्ति (2) (सीटोविमुट्टीफला2 सं. सेटो-विमुक्ति-फला)

भिक्षुओं, जब इन पाँच चीजों का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो मन की मुक्ति इनका फल और लाभ दोनों है; इनसे पारस ज्ञान द्वारा मुक्ति प्राप्त होती है। ये पाँच चीजें क्या हैं? अनित्यता की अनुभूति, अनित्य में दुख की अनुभूति, दुख में अनात्म की अनुभूति, त्याग की अनुभूति और वैराग्य की अनुभूति। 1073 जब इन पाँच चीजों का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो मन की मुक्ति इनका फल और लाभ दोनों है; इनसे पारस ज्ञान द्वारा मुक्ति प्राप्त होती है।

जब कोई भिक्षु मन से मुक्त हो जाता है और ज्ञान से मुक्त हो जाता है, तो उसे वह भिक्षु कहा जाता है जिसने चौखट हटा दी हो, खाई भर दी हो, स्तंभ उखाड़ दिया हो, एक निहाई हुआ भिक्षु, एक महान भिक्षु जिसका ध्वज नीचे झुका हुआ हो, जिसका बोझ उतर गया हो, जो अनासक्त हो।

"और वह भिक्षु कैसा होता है जिसने क्रॉस बार हटा दिया हो? ... [सभी 5:71 के अनुसार, नीचे:] [86] ... इसी तरह एक भिक्षु ध्वज झुकाकर, बोझ उतारकर, अनासक्त होकर महान होता है।"

---

73 वह जो धम्म में निवास करता है (1) (धम्मविहारी1 सं. धर्म-विहारी)

फिर एक भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और बोला:

"कहा जाता है, भंते, 'जो धम्म में निवास करता है, जो धम्म में निवास करता है' 1074 भिक्षु किस प्रकार धम्म में निवास करने वाला होता है?"

(1) "हे भिक्षु, यहाँ एक भिक्षु धम्म (मार्ग) का अध्ययन करता है: प्रवचन (सूत्र), मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, श्लोक (गाथाएँ), प्रेरित कथन (उदन), उद्धरण (इतिवुत्तक), पुनर्जन्म कथाएँ (जातक), आश्चर्यजनक वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर। वह दिन भर धम्म का अध्ययन करता है, परन्तु एकांतवास की उपेक्षा करता है और मन की आंतरिक समता (समथा) में स्वयं को सम‍र्पित नहीं करता। इसे अध्ययन में लीन भिक्षु कहा जाता है, न कि धम्म में निवास करने वाला भिक्षु। [87]

(2) "एक भिक्षु दूसरों को धम्म का विस्तारपूर्वक उपदेश देता है, जैसा उसने सुना और सीखा है। वह दिनभर धम्म का प्रचार करता रहता है, परन्तु एकांतवास की उपेक्षा करता है और मन की आंतरिक समता (समथा) में स्वयं को समर्पित नहीं करता। ऐसे भिक्षु को प्रचार में लीन रहने वाला भिक्षु कहा जाता है, न कि धम्म में निवास करने वाला भिक्षु।"

(3) "एक भिक्षु धम्म का विस्तृत पाठ करता है जैसा उसने सुना और सीखा है। वह दिन भर पाठ में व्यतीत करता है, परन्तु एकांतवास की उपेक्षा करता है और मन की आंतरिक समता (समथा) में स्वयं को समर्पित नहीं करता। ऐसे भिक्षु को पाठ में लीन रहने वाला भिक्षु कहा जाता है, न कि धम्म में निवास करने वाला।"

(4) "एक भिक्षु (भिक्षु) धम्म का चिंतन, परीक्षण और मानसिक निरीक्षण करता है जैसा उसने सुना और सीखा है। वह दिन भर धम्म के चिंतन में व्यतीत करता है, परन्तु एकांतवास की उपेक्षा करता है और मन की आंतरिक समता (समथा) में स्वयं को समर्पित नहीं करता। ऐसे भिक्षु को चिंतन में लीन भिक्षु कहा जाता है, न कि धम्म में निवास करने वाला भिक्षु।"

(5) "यहाँ भिक्षु धम्म का अध्ययन करता है— प्रवचन (सूत्र), मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, श्लोक (गाथाएँ), प्रेरित कथन (उदन), उद्धरण (इतिवुत्तक), पुनर्जन्म कथाएँ (जातक), आश्चर्यजनक वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर—परन्तु वह दिन भर केवल धम्म का अध्ययन नहीं करता। वह एकांतवास की उपेक्षा नहीं करता, परन्तु मन की आंतरिक समता (समथा) में लगा रहता है। 1076 इसी प्रकार भिक्षु धम्म में निवास करता है।"

"इस प्रकार, हे भिक्षु, मैंने सीखने में लीन, संवाद में लीन, पाठ में लीन, चिंतन में लीन और धम्म में निवास करने वाले को शिक्षा दी है। जो कुछ एक करुणामय शिक्षक को अपने शिष्यों के कल्याण के लिए करुणा से करना चाहिए, वह मैंने तुम्हारे लिए किया है। ये वृक्षों की शाखाएँ हैं, ये खाली कुटियाएँ हैं। ध्यान करो, हे भिक्षु, आलसी मत बनो। बाद में पछताने का कोई कारण न हो। यही हमारा तुम्हें उपदेश है।" [88]

---

74 वह जो धम्म में निवास करता है (2) (धम्मविहारी2 सं. धर्म विहारी)

फिर एक भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और बोला:

"भंते, ऐसा कहा जाता है, 'जो धम्म में निवास करता है, वही धम्म में निवास करता है।' भिक्षु किस प्रकार धम्म में निवास करता है?"

(1) “हे भिक्षु, यहाँ एक भिक्षु धम्म (मार्ग) का अध्ययन करता है—सूत्र, गद्य-पद, व्याख्याएँ, गाथाएँ, प्रेरित कथन, इतिवुत्तक, जातक कथाएँ, अद्भुत वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर—परन्तु वह इससे आगे बढ़कर इसके अर्थ को दैवीय ज्ञान से नहीं समझता। 1077 इसे विद्या में लीन भिक्षु कहा जाता है, न कि धम्म में निवास करने वाला भिक्षु।”

(2) “एक भिक्षु दूसरों को धम्म का विस्तृत उपदेश देता है जैसा उसने सुना और सीखा है, परन्तु वह आगे बढ़कर पन्ना (दिव्य ज्ञान) से उसका अर्थ नहीं समझता। ऐसे भिक्षु को उपदेश में लीन रहने वाला भिक्षु कहा जाता है, न कि धम्म में निवास करने वाला।

(3) "एक भिक्षु धम्म का विस्तृत पाठ करता है जैसा उसने सुना और सीखा है, लेकिन वह आगे बढ़कर पन्ना (दिव्य ज्ञान) से उसका अर्थ नहीं समझता। इसे पाठ में लीन भिक्षु कहा जाता है, न कि धम्म में निवास करने वाला भिक्षु।"

(4) “एक भिक्षु धम्म पर मनन करता है, उसका परीक्षण करता है और मानसिक रूप से उसका निरीक्षण करता है जैसा उसने सुना और सीखा है, लेकिन वह आगे बढ़कर पन्ना (दिव्य ज्ञान) से उसका अर्थ नहीं समझता। इसे विचार में लीन भिक्षु कहा जाता है, न कि धम्म में निवास करने वाला भिक्षु।”

(5) "यहाँ भिक्षु धम्म का अध्ययन करता है— प्रवचन (सूत्र), मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, श्लोक (गाथाएँ), प्रेरित कथन (उदन), उद्धरण (इतिवुत्तक), पुनर्जन्म कथाएँ (जातक), अद्भुत वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर—पर वह इससे आगे बढ़कर पन्ना (दिव्य ज्ञान) से इसका अर्थ समझता है। इसी प्रकार भिक्षु धम्म में निवास करता है।"

"इस प्रकार, भिक्षु, मैंने सीखने में लीन, संवाद में लीन, पाठ में लीन, चिंतन में लीन और धम्म में निवास करने वाले को शिक्षा दी है। एक करुणामय शिक्षक को अपने शिष्यों के कल्याण के लिए जो कुछ करना चाहिए, वह मैंने तुम्हारे लिए किया है। ये वृक्षों की शाखाएँ हैं, ये खाली कुटियाएँ हैं। ध्यान करो, भिक्षु, आलसी मत बनो। बाद में पछताने का कोई कारण न हो। यही हमारा तुम्हें उपदेश है।"

---

75 योद्धा (1) (योद्धाजीव1)

"भिक्षुओं, संसार में पाँच प्रकार के योद्धा पाए जाते हैं। वे पाँच कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, कोई योद्धा धूल का बादल देखकर 1078 डूब जाता है, लड़खड़ा जाता है, खुद को संभाल नहीं पाता और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाता। भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक योद्धा है। संसार में पाया जाने वाला यह पहला प्रकार का योद्धा है।"

(2) "फिर, कुछ योद्धा धूल के बादल को सहन कर सकते हैं, लेकिन जब वे झंडों के शिखर देखते हैं, तो वे डूब जाते हैं, लड़खड़ा जाते हैं, स्वयं को संभाल नहीं पाते और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाते। भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक योद्धा है। यह संसार में पाया जाने वाला दूसरे प्रकार का योद्धा है।"

(3) "फिर, कुछ योद्धा धूल के बादल और झंडों की लपटों को सहन कर सकते हैं, लेकिन जब वे शोर सुनते हैं, तो वे डूब जाते हैं, लड़खड़ा जाते हैं, खुद को संभाल नहीं पाते और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाते। भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक योद्धा है। यह संसार में पाया जाने वाला तीसरे प्रकार का योद्धा है।"

(4) "फिर, कुछ योद्धा धूल के बादल, झंडों की लपटों और शोर को सहन कर सकते हैं, लेकिन वे प्रहारों से घायल हो जाते हैं। भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक योद्धा है। यह संसार में पाया जाने वाला चौथा प्रकार का योद्धा है।"

(5) "फिर, कुछ योद्धा धूल के बादल, झंडों की लपटें, शोरगुल और प्रहार सहन कर सकते हैं। उस युद्ध में विजय प्राप्त करके, वे विजयी होकर युद्धक्षेत्र के शीर्ष पर विराजमान होते हैं। भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक योद्धा है। यह संसार में पाया जाने वाला पाँचवाँ प्रकार का योद्धा है।"

"ये दुनिया में पाए जाने वाले पांच प्रकार के योद्धा हैं।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं में भी योद्धाओं के समान पाँच प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे पाँच कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, कोई भिक्षु जब धूल का बादल देखता है, तो वह निराश हो जाता है, टूट जाता है, स्वयं को संभाल नहीं पाता और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का पालन नहीं कर पाता। वह प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट करता है, प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है। 1079 उसके मामले में धूल का बादल क्या है? भिक्षु सुनता है: 'अमुक गाँव या कस्बे में स्त्रियाँ या लड़कियाँ सुंदर, आकर्षक, सुशोभित और अत्यंत सुंदर हैं।' यह सुनकर वह निराश हो जाता है, डगमगा जाता है, खुद को संभाल नहीं पाता और ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर पाता। वह प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट कर देता है, प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है। यही उसके मामले में धूल का बादल है। मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस योद्धा के समान है जो धूल का बादल देखकर डगमगा जाता है, खुद को संभाल नहीं पाता और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाता। हे भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक व्यक्ति है। भिक्षुओं में पाया जाने वाला योद्धा के समान यह पहला व्यक्ति है।

(2) "फिर, कुछ भिक्षु धूल के बादल को सहन कर सकते हैं, परन्तु जब वे झंडों के शिखर देखते हैं, तो वे डूब जाते हैं, लड़खड़ा जाते हैं, स्वयं को संभाल नहीं पाते और ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का पालन नहीं कर पाते। वे प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट करते हैं, प्रशिक्षण छोड़ देते हैं और निम्न जीवन में लौट जाते हैं। उनके मामले में झंडों के शिखर क्या हैं? भिक्षु यह नहीं सुनते कि 'अमुक गाँव या कस्बे में स्त्रियाँ या लड़कियाँ सुंदर, आकर्षक, सुशोभित और अत्यंत सुंदर हैं,' बल्कि वे स्वयं एक स्त्री या कन्या को देखते हैं जो सुंदर, आकर्षक, सुशोभित और अत्यंत सुंदर है। उसे देखकर वे डूब जाते हैं, लड़खड़ा जाते हैं, स्वयं को संभाल नहीं पाते और [91] ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का पालन नहीं कर पाते। वे प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट करते हैं, प्रशिक्षण छोड़ देते हैं और निम्न जीवन में लौट जाते हैं। उनके मामले में ये झंडों के शिखर हैं। मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति ठीक उसी प्रकार, जैसे कोई योद्धा धूल के बादल को सहन कर सकता है, परन्तु झंडों के शिखर देखकर भयभीत हो जाता है, डगमगा जाता है, हिम्मत नहीं जुटा पाता और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाता। भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक व्यक्ति है। भिक्षुओं में पाया जाने वाला योद्धा के समान यह दूसरा प्रकार का व्यक्ति है।

(3) "फिर, कुछ भिक्षु धूल के बादल और झंडों की लपटों को सहन कर सकते हैं, परन्तु जब वे शोर सुनते हैं, तो वे डूब जाते हैं, लड़खड़ा जाते हैं, स्वयं को संभाल नहीं पाते और ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का पालन नहीं कर पाते। वे प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट कर देते हैं, प्रशिक्षण छोड़ देते हैं और निम्न जीवन में लौट जाते हैं। उनके मामले में शोर क्या है? जब भिक्षु जंगल में, किसी वृक्ष की तलहटी में या किसी खाली कुटिया में जाते हैं, तो एक स्त्री उनके पास आती है, उन पर मुस्कुराती है, उनसे बातें करती है, उन पर हंसती है और उन्हें चिढ़ाती है। जब स्त्री उन पर मुस्कुरा रही होती है, उनसे बातें कर रही होती है, उन पर हंस रही होती है और उन्हें चिढ़ा रही होती है, तो वे डूब जाते हैं, लड़खड़ा जाते हैं, स्वयं को संभाल नहीं पाते और ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का पालन नहीं कर पाते। वे प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट कर देते हैं, प्रशिक्षण छोड़ देते हैं और निम्न जीवन में लौट जाते हैं। यही उनके मामले में शोर है। मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस योद्धा के समान है जो धूल के बादल को सहन कर सकता है। धूल और झंडों के शिखरों के बीच, वह शोर सुनकर धंस जाता है, खुद को संभाल नहीं पाता और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाता। हे भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक व्यक्ति है। भिक्षुओं में पाया जाने वाला योद्धा के समान यह तीसरा प्रकार का व्यक्ति है।

(4) "फिर, कुछ भिक्षु धूल के बादल, झंडों की लपटों और शोरगुल को सहन कर सकते हैं, लेकिन वे एक प्रहार से घायल हो जाते हैं। उनके मामले में प्रहार क्या है? जब भिक्षु जंगल में, किसी वृक्ष की तलहटी में, [92] या किसी खाली कुटिया में जाते हैं, तो एक स्त्री उनके पास आती है, उनके बगल में बैठ जाती है या लेट जाती है और उन्हें आलिंगन करती है। ऐसा करने पर, वह प्रशिक्षण छोड़े बिना और अपनी कमजोरी प्रकट किए बिना उसके साथ यौन संबंध बनाते हैं। यही उनके मामले में प्रहार है। मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस योद्धा के समान है जो धूल के बादल, झंडों की लपटों और शोरगुल को सहन कर सकता है, लेकिन जो एक प्रहार से घायल हो जाता है। हे भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक व्यक्ति है। भिक्षुओं में पाया जाने वाला योद्धा के समान यह चौथा प्रकार का व्यक्ति है।"

(5) "फिर, कुछ भिक्षु धूल के बादल, झंडों की फूँक, शोरगुल और प्रहार सहन कर लेते हैं। उस युद्ध में विजय प्राप्त करके वे विजयी होकर युद्धक्षेत्र के अग्रणी बन जाते हैं। उनके मामले में विजय क्या है? जब भिक्षु जंगल में, किसी वृक्ष की तलहटी में या किसी खाली कुटिया में जाते हैं, तो एक स्त्री उनके पास आती है, उनके बगल में बैठ जाती है या लेट जाती है और उन्हें आलिंगन करती है। परन्तु वे अपने आप को छुड़ा लेते हैं, मुक्त हो जाते हैं और जहाँ चाहें वहाँ चले जाते हैं।"

वह एकांत स्थान पर शरण लेता है: जंगल, वृक्ष की तलहटी, पर्वत, घाटी, पहाड़ी गुफा, श्मशान भूमि, वन पर्वतमाला, खुला आकाश, भूसे का ढेर। जंगल में, वृक्ष की तलहटी में, या किसी खाली झोपड़ी में जाकर, वह बैठ जाता है, अपने पैरों को क्रॉस करके, शरीर को सीधा करके, और अपने सामने सती (ध्यान) स्थापित करता है। संसार के प्रति लालसा का त्याग करके, वह लालसा से मुक्त मन से रहता है; वह अपने मन को लालसा से शुद्ध करता है। द्वेष और घृणा का त्याग करके, वह द्वेष से मुक्त मन से, सभी प्राणियों के प्रति करुणा से भरा रहता है; वह अपने मन को द्वेष और घृणा से शुद्ध करता है। सुस्ती और आलस्य का त्याग करके, वह सुस्ती और आलस्य से मुक्त, प्रकाश के प्रति सजग, सचेत (ध्यान) और पूर्णतः बोधगम्य रहता है; वह अपने मन को सुस्ती और आलस्य से शुद्ध करता है। बेचैनी और पश्चाताप का त्याग करके, वह बिना किसी व्याकुलता के, आंतरिक रूप से शांत मन से रहता है; वह अपने मन को बेचैनी और पश्चाताप से शुद्ध करता है। संदेह का त्याग करके, वह संदेह से परे जाकर, [93] लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के बारे में अविचलित रहता है; वह अपने मन को संदेह से शुद्ध करता है।

"मन की उन पाँच बाधाओं, विकारों का त्याग करके, जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करते हैं, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, वह प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था), जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर में विलीन होना/उपेक्खा) द्वारा सती ध्यान (ध्यान) की शुद्धि होती है।"

जब उसका मन इस प्रकार आत्म-मग्न (समाहित/समाधि में) होता है, शुद्ध, निर्मल, दोषरहित, कोमल, स्थिर और अविचलित होता है, तब वह उसे दोषों के नाश के ज्ञान की ओर निर्देशित करता है। 1080 वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का मूल है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख का निवारण है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' वह यथार्थ को समझता है: 'ये दोष हैं।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दोषों का मूल है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दोषों का निवारण है।' वह यथार्थ को समझता है: 'यह दोषों के निवारण का मार्ग है।' जब वह इस प्रकार ज्ञान प्राप्त करता है और देखता है, तो उसका मन कामुक इच्छाओं, अस्तित्व के भावों और अज्ञान के दाग से मुक्त हो जाता है। मुक्त होने पर उसे यह ज्ञान प्राप्त होता है: 'यह मुक्त हो गया है।' वह समझता है: 'पुनर्जन्म का नाश हो गया है, आध्यात्मिक जीवन जी लिया गया है, जो करना था वह हो गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आने का कोई अधिकार नहीं है।' यही उसकी विजय है।

भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस योद्धा के समान है जो धूल के बादल, झंडों की लपटों, शोरगुल और प्रहार को सहन कर सकता है, और जो उस युद्ध में विजयी होकर युद्धक्षेत्र के अग्रणी स्थान पर विराजमान होता है। भिक्षुओं, ऐसा ही एक व्यक्ति यहाँ है। भिक्षुओं में पाया जाने वाला यह पाँचवाँ योद्धा के समान व्यक्ति है।

"भिक्षुओं में पाए जाने वाले योद्धाओं के समान पांच प्रकार के व्यक्ति ये हैं।"

---

76 योद्धा (2) (योद्धाजीव2)

"भिक्षुओं, संसार में पाँच प्रकार के योद्धा पाए जाते हैं। वे पाँच कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, कोई योद्धा तलवार और ढाल लेकर, [94] धनुष और तरकश से सुसज्जित होकर युद्ध के मैदान में उतरता है। वह युद्ध में संघर्ष करता है और अपना बल लगाता है, परन्तु उसके शत्रु उसे मार डालते हैं और उसका वध कर देते हैं। हे भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक योद्धा है। संसार में पाया जाने वाला यह प्रथम प्रकार का योद्धा है।"

(2) "फिर, कोई योद्धा तलवार और ढाल लेकर, धनुष और तरकश से सुसज्जित होकर युद्ध के मैदान में उतरता है। वह युद्ध में पूरी ताकत लगाता है, पर उसके शत्रु उसे घायल कर देते हैं। उसके साथी उसे उठाकर उसके रिश्तेदारों के पास ले जाते हैं। रिश्तेदारों के पास ले जाते समय ही रास्ते में उसकी मृत्यु हो जाती है, पहुँचने से पहले ही। हे भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक योद्धा है। यह संसार में पाया जाने वाला दूसरे प्रकार का योद्धा है।"

(3) "फिर, कोई योद्धा तलवार और ढाल लेकर, धनुष और तरकश से सुसज्जित होकर युद्ध के मैदान में उतरता है। वह युद्ध में पूरी ताकत लगाता है, परन्तु उसके शत्रु उसे घायल कर देते हैं। उसके साथी उसे उठाकर उसके रिश्तेदारों के पास ले जाते हैं। उसके रिश्तेदार उसकी देखभाल करते हैं, परन्तु इसी दौरान वह उस चोट से मर जाता है। हे भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक योद्धा है। यह संसार में पाया जाने वाला तीसरे प्रकार का योद्धा है।"

(4) “फिर, कोई योद्धा तलवार और ढाल लेकर, धनुष और तरकश से सुसज्जित होकर युद्ध के मैदान में उतरता है। वह युद्ध में पूरी ताकत लगाता है, पर उसके शत्रु उसे घायल कर देते हैं। उसके साथी उसे उठाकर उसके रिश्तेदारों के पास ले जाते हैं। उसके रिश्तेदार उसकी देखभाल करते हैं और उसकी सेवा करते हैं, और परिणामस्वरूप वह उस चोट से उबर जाता है। हे भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक योद्धा है। यह संसार में पाया जाने वाला चौथा प्रकार का योद्धा है।”

(5) "फिर, कोई योद्धा तलवार और ढाल उठाता है, धनुष और तरकश से सुसज्जित होकर युद्ध के मैदान में प्रवेश करता है। उस युद्ध में विजय प्राप्त करके वह विजयी होकर निकलता है [95] और युद्धक्षेत्र के अग्रणी स्थान पर आसीन होता है। हे भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक योद्धा है। यह संसार में पाया जाने वाला पाँचवाँ प्रकार का योद्धा है;

"ये दुनिया में पाए जाने वाले पांच प्रकार के योद्धा हैं।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं में भी योद्धाओं के समान पाँच प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे पाँच कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, कोई भिक्षु किसी गाँव या कस्बे पर आश्रित होकर रहता है। सुबह वह वस्त्र धारण करता है, अपना वस्त्र और भिक्षापात्र लेकर उस गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने जाता है, शरीर, वाणी और मन असंयमित रहते हुए, बिना सजगता स्थापित किए, अपनी इंद्रियों को अनियंत्रित रखते हुए। वहाँ वह स्त्रियों को अस्त-व्यस्त और ढीले वस्त्रों में देखता है। उन्हें देखकर उसके मन में कामवासना (राग) उत्पन्न होती है। कामवासना (राग) से ग्रस्त होकर वह अपनी कमजोरी को प्रकट किए बिना और साधना का त्याग किए बिना यौन संबंध बनाता है। मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस योद्धा के समान है जो तलवार और ढाल लेकर, धनुष और तरकश से सुसज्जित होकर युद्ध के मैदान में उतरता है, और जिसके शत्रु उसे युद्ध में संघर्ष करते हुए मार डालते हैं। हे भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक व्यक्ति है। भिक्षुओं में पाया जाने वाला योद्धा के समान यह पहला व्यक्ति है।"

(2) "फिर, कोई भिक्षु किसी गाँव या कस्बे पर निर्भर होकर रहता है। सुबह वह वस्त्र धारण करता है, अपना वस्त्र और भिक्षापात्र लेकर उस गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने जाता है, शरीर, वाणी और मन असंयमित रहते हुए, बिना सचेतनता स्थापित किए, अपनी इंद्रियों को अनियंत्रित रखते हुए। वहाँ वह स्त्रियों को अस्त-व्यस्त और ढीले वस्त्रों में देखता है। उन्हें देखकर उसके मन में कामवासना (राग) उमड़ पड़ती है। कामवासना (राग) से ग्रस्त होकर वह शारीरिक और मानसिक रूप से (कामवासना (राग) के बुखार से) जलता है। वह सोचता है: 'मैं मठ [96] लौट जाऊँ और भिक्षुओं को बताऊँ: "मित्रों, मैं कामवासना (राग) से ग्रस्त हूँ, कामवासना (राग) से पीड़ित हूँ। मैं ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का पालन नहीं कर सकता।" प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट कर देने के कारण, मैं प्रशिक्षण छोड़ दूंगा और निम्न जीवन में लौट जाऊंगा। मठ लौटते समय, पहुँचने से पहले ही, वह प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट कर देता है, प्रशिक्षण छोड़ देता है और रास्ते में ही निम्न जीवन में लौट जाता है। मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस योद्धा के समान है जो तलवार और ढाल लेकर, धनुष और तरकश से सुसज्जित होकर युद्ध के मैदान में उतरता है, युद्ध में संघर्ष करते हुए अपने शत्रुओं द्वारा घायल हो जाता है, और फिर उसे उसके रिश्तेदारों के पास ले जाया जाता है, लेकिन पहुँचने से पहले ही रास्ते में उसकी मृत्यु हो जाती है। हे भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक व्यक्ति है। भिक्षुओं में पाया जाने वाला योद्धा के समान यह दूसरा प्रकार का व्यक्ति है।

(3) "फिर, कोई भिक्षु किसी गाँव या कस्बे पर निर्भर होकर रहता है। सुबह वह वस्त्र धारण करता है, अपना वस्त्र और भिक्षापात्र लेकर उस गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने जाता है, शरीर, वाणी और मन असंयमित होते हैं, ध्यान स्थापित नहीं किया होता, उसकी इंद्रियाँ अनियंत्रित होती हैं। वहाँ वह स्त्रियों को अस्त-व्यस्त और ढीले वस्त्रों में देखता है। उन्हें देखकर उसके मन में कामवासना (राग) उमड़ पड़ती है। कामवासना (राग) से ग्रस्त होकर वह शारीरिक और मानसिक रूप से कामवासना (राग) के बुखार से जल उठता है। वह सोचता है: 'मैं मठ लौटकर भिक्षुओं को बताऊँ: "मित्रों, मैं कामवासना (राग) से ग्रस्त हूँ, कामवासना (राग) से पीड़ित हूँ।" मैं ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का पालन नहीं कर सकता। प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट होने के कारण, मैं प्रशिक्षण छोड़ दूंगा और निम्न जीवन में लौट जाऊंगा। वह मठ लौटकर भिक्षुओं को सूचित करता है: 'मित्रों, मैं कामवासना (राग) से ग्रस्त हूं, कामवासना (राग) से पीड़ित हूं।

मैं ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का पालन नहीं कर सकता। प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट होने के कारण, मैं प्रशिक्षण छोड़ दूंगा और निम्न जीवन में लौट जाऊंगा।' तब उनके साथी भिक्षु उन्हें उपदेश और निर्देश देते हैं: [97] 'मित्र, भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि इंद्रिय सुख कम संतुष्टि, अधिक पीड़ा और कष्ट प्रदान करते हैं, और उनमें खतरा अधिक है। 108' कंकाल के उपमा से भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि इंद्रिय सुख कम संतुष्टि, अधिक पीड़ा और कष्ट प्रदान करते हैं, और उनमें खतरा अधिक है। मांस के टुकड़े के उपमा से... घास की मशाल के उपमा से... कोयले के गड्ढे के उपमा से... सपने के उपमा से... उधार ली गई वस्तुओं के उपमा से... पेड़ पर फलों के उपमा से... कसाई के चाकू और ब्लॉक के उपमा से... तलवार के खंभे के उपमा से... सांप के सिर के उपमा से, भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि इंद्रिय सुख थोड़े से संतोष देते हैं, बहुत दुख और पीड़ा देते हैं, और उनमें खतरा कहीं अधिक है। ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का आनंद लो। यह मत सोचो कि तुम प्रशिक्षण का पालन करने में असमर्थ हो, इसे छोड़ दो और निम्न जीवन में लौट जाओ। जब उनके साथी भिक्षु उन्हें इस प्रकार उपदेश और निर्देश दे रहे थे, तब उन्होंने विरोध किया: 'मित्रों, यद्यपि भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि इंद्रिय सुख थोड़े से संतोष देते हैं, बहुत दुख और पीड़ा देते हैं, और उनमें खतरा कहीं अधिक है, फिर भी मैं ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का पालन करने में असमर्थ हूँ। प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी प्रकट करते हुए, मैं प्रशिक्षण छोड़ दूंगा और निम्न जीवन में लौट जाऊंगा।' प्रशिक्षण में अपनी कमजोरी उजागर होने पर, वह प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है। मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति ठीक उस योद्धा के समान है जो तलवार और ढाल उठाता है, धनुष और तरकश से सुसज्जित होकर युद्ध के मैदान में उतरता है, युद्ध में संघर्ष और परिश्रम करते हुए अपने शत्रुओं द्वारा घायल हो जाता है, और फिर उसे [98] ले जाकर उसके रिश्तेदारों के पास लाया जाता है।जो उसकी देखभाल करते हैं और उसकी सेवा करते हैं, लेकिन जो उस चोट से मर जाता है। ऐसा एक व्यक्ति यहाँ है, भिक्षुओं। यह भिक्षुओं में पाया जाने वाला योद्धा के समान तीसरा प्रकार का व्यक्ति है।

(4) “फिर, कुछ भिक्षु किसी निश्चित गाँव या शहर पर निर्भर होकर रहते हैं। सुबह होने पर, वे कपड़े पहनते हैं, अपना चोगा और कटोरा लेते हैं, और शरीर, वाणी और मन को बेपरवाह, बिना होश में आए, अपनी इंद्रियों को अनियंत्रित किए बिना, भिक्षा के लिए उस गाँव या शहर में प्रवेश करते हैं। वहाँ वे अस्त-व्यस्त और ढीले-ढाले कपड़ों में महिलाओं को देखते हैं। जब वह उन्हें देखते हैं, तो उनके मन में कामवासना व्याप्त हो जाती है। कामवासना से भरे उनके मन में, [कामवासना के बुखार से] शारीरिक और मानसिक रूप से जलन होती है। वह सोचते हैं: 'मुझे मठ में वापस जाना चाहिए और भिक्षुओं को बताना चाहिए: 'दोस्तों, मैं कामवासना से ग्रस्त हूँ, कामवासना से पीड़ित हूँ। मैं ब्रह्मचर्य (पवित्र ब्रह्मचर्य जीवन) को बनाए नहीं रख सकता। ट्रेनिंग में अपनी कमज़ोरी बताने के बाद, मैं ट्रेनिंग छोड़ दूँगा और निचले जीवन में लौट जाऊँगा।' वह मठ में लौटता है और भिक्षुओं को बताता है: 'दोस्तों, मैं कामवासना (राग) से ग्रस्त हूँ, कामवासना (राग) से दबा हुआ हूँ। मैं ब्रह्मचर्य (पवित्र जीवन) नहीं रख सकता। ट्रेनिंग में अपनी कमज़ोरी बताने के बाद, मैं ट्रेनिंग छोड़ दूँगा और निचले जीवन में लौट जाऊँगा।' तब उसके साथी भिक्षुओं ने उसे प्रोत्साहित करते हुए निर्देश दिया: 'मित्र, भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि कामुक सुख कम संतुष्टि, अधिक दुख और पीड़ा प्रदान करते हैं, और उनमें खतरा अधिक है। कंकाल की उपमा के साथ ... [99] ... साँप के सिर की उपमा के साथ, भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि कामुक सुख कम संतुष्टि, अधिक दुख और पीड़ा प्रदान करते हैं, और उनमें खतरा अधिक है। ब्रह्मचर्य (ब्रह्मचर्यपूर्ण पवित्र जीवन) का आनंद लो। यह मत सोचो कि तुम प्रशिक्षण का पालन करने में असमर्थ हो, इसे त्याग दो, और निम्न जीवन में लौट जाओ।' जब उसके साथी साधु उसे इस तरह समझा रहे थे और सिखा रहे थे, तो वह कहता है: 'मैं कोशिश करूँगा, दोस्तों, मैं करता रहूँगा, मुझे मज़ा आएगा। मैं यह नहीं सोचूँगा कि मैं ट्रेनिंग को फॉलो नहीं कर पाऊँगा' इसे छोड़ दो, और नीचे की ज़िंदगी में लौट जाओ। मैं कहता हूँ, यह इंसान उस योद्धा जैसा है जो तलवार और ढाल उठाता है, धनुष और तरकश से लैस होकर लड़ाई में उतरता है, जो लड़ाई में कोशिश करते और मेहनत करते हुए अपने दुश्मनों से घायल हो जाता है, और फिर उसे उठाकर उसके रिश्तेदारों के पास लाया जाता है, जो उसकी देखभाल करते हैं और उसकी देखभाल करते हैं, और फिर वह उस चोट से ठीक हो जाता है। भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक इंसान है। यह भिक्षुओं में पाया जाने वाला योद्धा जैसा चौथा तरह का इंसान है। (5) "फिर, कोई भिक्षु किसी गाँव या कस्बे पर निर्भर होकर रहता है। सुबह वह वस्त्र धारण करता है, अपना वस्त्र और भिक्षापात्र लेता है, और शरीर, वाणी और मन को संयमित रखते हुए, सती ध्यान स्थापित करके और इंद्रियों को नियंत्रित करते हुए भिक्षा के लिए उस गाँव या कस्बे में प्रवेश करता है। किसी आकृति को आँख से देखकर, वह उसके लक्षणों और विशेषताओं को नहीं समझता। क्योंकि यदि वह आँख की इंद्रिय को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम का अभ्यास करता है; वह आँख की इंद्रिय की रक्षा करता है, वह आँख की इंद्रिय को नियंत्रित करता है। कान से कोई ध्वनि सुनकर... नाक से कोई गंध सूंघकर... जीभ से कोई स्वाद चखकर... [100]... शरीर से किसी वस्तु को स्पर्श करके... मन से किसी मानसिक घटना को जानकर, वह उसके लक्षणों और विशेषताओं को नहीं समझता। क्योंकि यदि वह मन की इंद्रिय को अनियंत्रित छोड़

दे, तो वह उसके लक्षणों और विशेषताओं को नहीं समझता। अनियंत्रित, हानिकारक (अकुशल) लालसा और निराशा की अवस्थाएँ उसे घेर सकती हैं, इसलिए वह उन पर संयम बरतता है; वह मन की शक्ति की रक्षा करता है, वह मन की शक्ति को नियंत्रित करने का प्रयास करता है। भोजन के बाद, भिक्षा मांगने से लौटने पर, वह किसी एकांत स्थान पर जाता है: जंगल, वृक्ष की तलहटी, पर्वत, घाटी, पहाड़ी गुफा, श्मशान भूमि, जंगल का ऊँचा इलाका, खुला आकाश, पुआल का ढेर। जंगल में, वृक्ष की तलहटी में, या किसी खाली झोपड़ी में जाकर, वह बैठ जाता है, अपने पैरों को क्रॉस करके, शरीर को सीधा करके, और अपने सामने ध्यान (सती) स्थापित करता है। संसार की लालसा को त्यागकर... [जैसा कि 5:75 में है]... वह अपने मन को संदेह से शुद्ध करता है।

"मन के इन पाँच अवरोधों, उन विकारों का त्याग करके जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करते हैं, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, वह प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... चतुर्थ ध्यान में, जो न तो कष्टदायी है और न ही सुखदायी, जिसमें उदासीनता (भीतर में विलीन होना/उपेक्खा) द्वारा सती ध्यान (ध्यान) की शुद्धि होती है।"

जब उसका मन इस प्रकार आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) होता है, शुद्ध, निर्मल, दोषरहित, लचीला, स्थिर और अविचलित होता है, तब वह उसे दोषों के नाश के ज्ञान की ओर निर्देशित करता है। वह यथार्थ को समझता है: 'यही दुख है'... 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत हो चुका है, जो करना था वह हो चुका है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।' मैं कहता हूँ, यह व्यक्ति उस योद्धा के समान है जो तलवार और ढाल लेकर, धनुष और तरकश से सुसज्जित होकर युद्ध के मैदान में प्रवेश करता है और उस युद्ध में विजय प्राप्त करके विजयी होकर युद्धक्षेत्र के अग्रणी स्थान पर विराजमान होता है। भिक्षुओं, यहाँ ऐसा ही एक व्यक्ति है। भिक्षुओं में पाया जाने वाला यह योद्धा के समान पाँचवाँ प्रकार का व्यक्ति है।

"भिक्षुओं में पाए जाने वाले योद्धाओं के समान पांच प्रकार के व्यक्ति ये हैं।"

---

77 भविष्य के संकट (1) (अनागत-भय1)

"भिक्षुओं, जब एक वनवासी भिक्षु पाँच भावी संकटों पर विचार करता है, तो उसके लिए यह पर्याप्त है कि वह सतर्क, उत्साही, [101] और दृढ़ संकल्पित होकर उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए तत्पर रहे जो अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है, उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है, उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है, उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है, उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है, और उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है। वे पाँच कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक वनवासी भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अब वन में एकाकी निवास कर रहा हूँ। परन्तु यहाँ रहते हुए मुझे साँप काट सकता है, बिच्छू डंक मार सकता है, या कनखजूरा डंक मार सकता है। इससे मेरी मृत्यु हो सकती है, जो मेरे लिए एक बाधा होगी। अब मुझे उस प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, ...

(2) "फिर, एक वनवासी भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अब वन में एकाकी निवास कर रहा हूँ। परन्तु यहाँ रहते हुए, मैं ठोकर खाकर गिर सकता हूँ, या जो भोजन मैंने खाया है वह मुझे हानि पहुँचा सकता है, या मेरा पित्त, कफ या वातस्फीति मेरे भीतर उग्र हो सकती है। इसके कारण मेरी मृत्यु हो सकती है, जो मेरे लिए एक बाधा होगी। अब मुझे अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्त को सिद्ध करने के लिए, अभी तक अप्राप्त को सिद्ध करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए।' यह दूसरा भावी संकट है, जिसके विचार में वनवासी भिक्षु के लिए सतर्क, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ निवास करना ही पर्याप्त है... अभी तक अप्राप्त को सिद्ध करने के लिए।"

(3) "फिर, एक वनवासी भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अब वन में एकाकी निवास कर रहा हूँ। परन्तु यहाँ रहते हुए मेरा सामना शेर, बाघ, तेंदुआ, भालू या लकड़बग्घा जैसे जंगली जानवरों से हो सकता है, और वे मेरी जान ले सकते हैं। इसके कारण मेरी मृत्यु हो जाएगी, [102] जो मेरे लिए एक बाधा होगी। अब मुझे अभी तक अप्राप्त, अभी तक न प्राप्त, अभी तक अप्राप्त की गई प्राप्ति के लिए

ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए। यह तीसरा भविष्य का खतरा है, जिसके विचार में वनवासी भिक्षु के लिए सतर्क, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ निवास करना ही पर्याप्त है... अभी तक अप्राप्त की गई प्राप्ति के लिए।

(4) "फिर, एक वनवासी भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अब वन में एकाकी निवास कर रहा हूँ। परन्तु यहाँ रहते हुए मेरा सामना किसी अपराध से भाग रहे या उसकी योजना बना रहे बदमाशों से हो सकता है और वे मेरी जान ले सकते हैं। इसके कारण मेरी मृत्यु हो जाएगी, जो मेरे लिए एक बाधा होगी। अब मुझे उस प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगानी चाहिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, उस उपलब्धि के लिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, उस अनुभूति के लिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है।' यह चौथा भावी खतरा है, जिसके विचार में वनवासी भिक्षु के लिए सतर्क, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ निवास करना ही पर्याप्त है... उस अनुभूति के लिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है।"

(5) "फिर, एक वनवासी भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अब वन में एकाकी निवास कर रहा हूँ। परन्तु वन में जंगली आत्माएँ हैं, 1082 और वे मेरा प्राण छीन सकती हैं। इससे मेरी मृत्यु हो जाएगी, जो मेरे लिए एक बाधा होगी। अब मुझे उस प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, ...

"हे भिक्षुओं, ये पाँच भावी संकट हैं, जिनके विचार में वनवासी भिक्षु के लिए सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर, अभी तक अप्राप्त की प्राप्ति, अभी तक अप्राप्त की सिद्धि और अभी तक अप्राप्त की सिद्धि के लिए निवास करना ही पर्याप्त है।" [103]

---

78 भविष्य के संकट (2) (अनागत-भाया2)

"भिक्षुओं, जब एक वनवासी भिक्षु पाँच भावी संकटों पर विचार करता है, तो उसके लिए अप्राप्त लक्ष्यों की प्राप्ति, अप्राप्त उपलब्धियों की उपलब्धि और अप्राप्त अनुभवों की प्राप्ति के लिए सतर्क, उत्साही और दृढ़ संकल्पित रहना ही पर्याप्त है। वे पाँच संकट कौन से हैं?"

(1) "यहाँ एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अभी युवा हूँ, काले बालों वाला एक युवक हूँ, जिसे यौवन का आशीर्वाद प्राप्त है, जीवन के सर्वोपरि अवस्था में हूँ। परन्तु एक समय आएगा जब बुढ़ापा इस शरीर को घेर लेगा। अब जब कोई वृद्ध हो जाता है, बुढ़ापे से ग्रस्त हो जाता है, तो बुद्धों की शिक्षाओं पर ध्यान देना आसान नहीं होता; जंगलों और वनों में एकांतवास में जाना आसान नहीं होता। उस अवांछित, अवांछनीय, अप्रिय स्थिति के आने से पहले, मुझे पहले से ही उस प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, उसके लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए। इस प्रकार जब मैं उस अवस्था में होऊँगा, तो मैं वृद्ध होने पर भी आराम से रहूँगा।' यह पहला भावी संकट है जिसके मद्देनजर भिक्षु के लिए सतर्क, उत्साही और दृढ़ संकल्पित रहना ही पर्याप्त है... उस अनुभूति की प्राप्ति के लिए जो अभी तक अप्राप्त है;

(2) "एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अब शायद ही कभी बीमार या पीड़ित होता हूँ; मेरा पाचन संतुलित है, न तो बहुत ठंडा और न ही बहुत गर्म, बल्कि मध्यम और साधना के लिए उपयुक्त है। परन्तु एक समय आएगा जब रोग इस शरीर को घेर लेगा। अब जब कोई बीमार होता है, रोग से ग्रस्त होता है, तो बुद्धों की शिक्षाओं पर ध्यान देना आसान नहीं होता; जंगलों और वनों में एकांतवास में जाना आसान नहीं होता। उस अवांछित, अवांछनीय, अप्रिय स्थिति के आने से पहले, मुझे पहले से ही उस प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, उसके लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए। [104] इस प्रकार जब मैं उस स्थिति में होऊँगा, तो बीमार होने पर भी मैं आराम से रहूँगा।' यह दूसरा भावी खतरा है, जिसके मद्देनजर भिक्षु के लिए सतर्क, उत्साही और दृढ़ संकल्पित रहना ही पर्याप्त है... उस अनुभूति की प्राप्ति के लिए जो अभी तक अप्राप्त है।

(3) "फिर एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'अभी भोजन प्रचुर मात्रा में है; अच्छी फसल हुई है और भिक्षा भोजन भी प्रचुर है, जिससे आसानी से अनाज बीनकर जीवन यापन किया जा सकता है। परन्तु एक समय अकाल का आएगा, फसल खराब होगी, जब भिक्षा भोजन प्राप्त करना कठिन होगा और अनाज बीनकर जीवन यापन करना आसान नहीं होगा। अकाल के समय लोग उन स्थानों पर

पलायन करते हैं जहाँ भोजन प्रचुर मात्रा में होता है तथा वहाँ रहने की परिस्थितियाँ तंग और भीड़भाड़ वाली होती हैं। अब जब रहने की परिस्थितियाँ तंग और भीड़भाड़ वाली हैं, तो बुद्धों की शिक्षाओं पर ध्यान देना आसान नहीं है; जंगलों और वनों में दूर-दराज के आवासों में शरण लेना आसान नहीं है। इससे पहले कि वह अवांछित, अवांछनीय, अप्रिय स्थिति मुझ पर आ पड़े, मुझे पहले से ही उस प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, उसके लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए। इस प्रकार जब मैं उस अवस्था में होऊंगा, तो अकाल में भी निश्चिंत रहूंगा।' यह तीसरा भावी संकट है, जिसके मद्देनजर भिक्षु के लिए सतर्क, उत्साही और दृढ़ रहना ही पर्याप्त है... उस अनुभूति की प्राप्ति के लिए जो अभी तक अप्राप्त है।

(4) "फिर एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'लोग अब सद्भाव और सामंजस्य में, बिना किसी विवाद के, दूध और पानी की तरह एक-दूसरे में घुलमिलकर, स्नेह भरी दृष्टि से एक-दूसरे को देखते हुए रह रहे हैं। परन्तु एक समय आएगा जब संकट का, जंगल में उथल-पुथल का, जब ग्रामीण लोग अपने वाहनों पर सवार होकर चारों ओर भागेंगे। संकट के समय लोग उन स्थानों पर पलायन करते हैं जहाँ सुरक्षा हो, और वहाँ रहने की परिस्थितियाँ तंग और भीड़भाड़ वाली होती हैं। [105] अब जब रहने की परिस्थितियाँ तंग और भीड़भाड़ वाली हैं, तो बुद्धों की शिक्षाओं पर ध्यान देना आसान नहीं है; जंगलों और वनों में दूर-दराज के आवासों में शरण लेना आसान नहीं है। इससे पहले कि वह अवांछित, अवांछनीय, अप्रिय स्थिति मुझ पर आ पड़े, मुझे पहले से ही उस प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, उस उपलब्धि के लिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, उस अनुभूति के लिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है। अभी तक अप्राप्त। अतः जब मैं उस अवस्था में होऊंगा, तो संकट के समय में भी निश्चिंत रहूंगा।' यह चौथा भावी संकट है, जिसके मद्देनजर भिक्षु के लिए अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए सतर्क, उत्साही और दृढ़ रहना ही पर्याप्त है।

(5) "एक भिक्षु फिर इस प्रकार चिंतन करता है: 'संघ अभी सहजता से, सामंजस्य में, बिना किसी विवाद के, एक ही पाठ के साथ निवास कर रहा है। परन्तु एक समय आएगा जब संघ में विभाजन होगा। अब जब संघ में विभाजन हो, तो बुद्धों की शिक्षाओं पर ध्यान देना आसान नहीं है; जंगलों और वनों में एकांतवास में जाना आसान नहीं है। उस अवांछित, अवांछनीय, अप्रिय स्थिति के आने से पहले, मुझे पहले से ही उस प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, उसके लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए। इस प्रकार जब मैं उस स्थिति में होऊंगा, तो संघ में विभाजन होने पर भी मैं सहजता से निवास करूंगा।' यह पाँचवाँ भावी संकट है, जिसके मद्देनजर भिक्षु के लिए सतर्क, उत्साही और दृढ़ निश्चयी रहना ही पर्याप्त है... उस अनुभूति की प्राप्ति के लिए जो अभी तक अप्राप्त है।

"हे भिक्षुओं, ये पाँच भावी संकट हैं, जिनके विचार में भिक्षु के लिए सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर वर्तमान प्राप्ति के लिए, अप्राप्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए, वर्तमान में अप्राप्त लक्ष्यों की उपलब्धि के लिए, वर्तमान में अप्राप्त लक्ष्यों की अनुभूति के लिए रहना ही पर्याप्त है।"

---

79 भविष्य के संकट (3) (अनागत-भय3)

"भिक्षुओं, ये पाँच भविष्य के खतरे अभी तक उत्पन्न नहीं हुए हैं, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होंगे। आपको इन्हें पहचानना चाहिए [106] और इनसे बचने का प्रयास करना चाहिए। वे पाँच कौन से हैं?"

(1) भविष्य में ऐसे भिक्षु होंगे जो शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होंगे। 1053 वे दूसरों को पूर्ण दीक्षा तो देंगे, लेकिन उन्हें उच्चतर सद्गुण, उच्चतर मन और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अनुशासित नहीं कर पाएंगे। ये [शिष्य] भी शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होंगे। वे बदले में दूसरों को पूर्ण दीक्षा तो देंगे, लेकिन उन्हें उच्चतर सद्गुण, उच्चतर मन और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अनुशासित नहीं कर पाएंगे। ये [शिष्य] भी शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होंगे। इस प्रकार, भिक्षुओं, धम्म के भ्रष्ट होने से अनुशासन भ्रष्ट होता है, और अनुशासन के भ्रष्ट होने से धम्म भ्रष्ट होता है। 1084 यह पहला

भविष्य का संकट है जो अभी तक उत्पन्न नहीं हुआ है, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होगा। आपको इसे पहचानें और इसे छोड़ने का प्रयास करें।

(2) "भविष्य में फिर ऐसे भिक्षु होंगे जो शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होंगे। वे दूसरों को आश्रित रखेंगे, परन्तु उन्हें उच्चतर सद्गुण, उच्चतर मन और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अनुशासित नहीं कर सकेंगे। ये [शिष्य] भी शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होंगे। वे बदले में दूसरों को आश्रित रखेंगे, परन्तु उन्हें उच्चतर सद्गुण, उच्चतर मन और उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अनुशासित नहीं कर सकेंगे। ये [शिष्य] भी शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होंगे। इस प्रकार, भिक्षुओं, धम्म के भ्रष्ट होने से अनुशासन भ्रष्ट होता है, और अनुशासन के भ्रष्ट होने से धम्म भ्रष्ट होता है। यह दूसरा भविष्य का संकट है जो अभी तक उत्पन्न नहीं हुआ है, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होगा। आपको इसे पहचानना चाहिए और इसे त्यागने का प्रयास करें। [107]

(3) "भविष्य में फिर ऐसे भिक्षु होंगे जो शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होंगे। धम्म से संबंधित चर्चाओं और प्रश्नोत्तरों में लगे रहने के कारण वे अंधकारमय धम्म में विलीन हो जाएँगे, परन्तु इसे पहचान नहीं पाएँगे। इस प्रकार, हे भिक्षुओं, धम्म के भ्रष्ट होने से अनुशासन भ्रष्ट होता है, और अनुशासन के भ्रष्ट होने से धम्म भ्रष्ट होता है। यह भविष्य में उत्पन्न होने वाला तीसरा संकट है। आपको इसे पहचानना चाहिए और इससे बचने का प्रयास करना चाहिए।"

(4) "भविष्य में फिर ऐसे भिक्षु होंगे जो शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होंगे। जब तथागत (बुद्ध) द्वारा दिए गए वे प्रवचन, जो गहन, अर्थपूर्ण, संसार से परे और शून्यता से जुड़े होंगे, पढ़े जाएँगे, तो वे उन्हें सुनना नहीं चाहेंगे, उन पर ध्यान नहीं देंगे और न ही उन्हें समझने का प्रयास करेंगे; वे यह नहीं सोचेंगे कि उन शिक्षाओं का अध्ययन और ज्ञान करना चाहिए। 1087 परन्तु जब वे प्रवचन, जो केवल कवियों द्वारा रचित कविताएँ हैं, शब्दों और वाक्यांशों में सुंदर हैं, बाहरी लोगों द्वारा रचित हैं और शिष्यों द्वारा बोले गए हैं, पढ़े जाएँगे, तो वे उन्हें सुनना चाहेंगे, उन पर ध्यान देंगे और उन्हें समझने का प्रयास करेंगे; वे यह सोचेंगे कि उन शिक्षाओं का अध्ययन और ज्ञान करना चाहिए। इस प्रकार, भिक्षुओं, धम्म के भ्रष्ट होने से अनुशासन भ्रष्ट होता है, और अनुशासन के भ्रष्ट होने से धम्म भ्रष्ट होता है। यह अब तक का चौथा भविष्य का संकट है। जो अभी उत्पन्न नहीं हुआ है, वह भविष्य में उत्पन्न होगा। आपको इसे पहचानना चाहिए और इसे त्यागने का प्रयास करना चाहिए।

(5) "भविष्य में फिर ऐसे भिक्षु होंगे जो शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होंगे। वरिष्ठ भिक्षु - शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में अविकसित होने के कारण - विलासी और शिथिल होंगे, पतन में अग्रणी होंगे, एकांतवास के कर्तव्य का त्याग करेंगे; वे अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाएंगे। अगली पीढ़ी के लोग उनके उदाहरण का अनुसरण करेंगे। वे भी विलासी और शिथिल होंगे, पतन में अग्रणी होंगे, एकांतवास के कर्तव्य का त्याग करेंगे; वे भी अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्य को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाएंगे। अभी तक जो हासिल नहीं हुआ है, उसे हासिल करने के लिए, अभी तक जो हासिल नहीं हुआ है, उसे हासिल करना होगा। इस प्रकार, भिक्षुओं, धम्म के भ्रष्ट होने से साधना में भ्रष्टता आती है, और साधना में भ्रष्टता से धम्म में भ्रष्टता आती है। यह पाँचवाँ भविष्य का संकट है जो अभी तक उत्पन्न नहीं हुआ है, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होगा। आपको इसे पहचानना चाहिए और इससे बचने का प्रयास करना चाहिए।

"भिक्षुओं, ये पाँच भविष्य के संकट हैं जो अभी तक प्रकट नहीं हुए हैं, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होंगे। आपको इन्हें पहचानना चाहिए और इनसे बचने का प्रयास करना चाहिए।"

---

80 भविष्य के संकट (4) (अनागत-भाया4)

भिक्षुओं, भविष्य में उत्पन्न होने वाले ये पाँच संकट अभी तक प्रकट नहीं हुए हैं। आपको इन्हें पहचानना चाहिए और इनसे बचने का प्रयास करना चाहिए। वे पाँच संकट कौन से हैं?

(1) "भविष्य में ऐसे भिक्षु होंगे जो उत्तम वस्त्रों की लालसा रखेंगे। वे फटे-पुराने वस्त्रों का प्रयोग त्याग देंगे, जंगलों और वनों में स्थित एकांतवास छोड़ देंगे, और गाँवों, कस्बों और राजधानियों में एकत्रित होकर वहीं निवास करेंगे; और वे वस्त्र की प्राप्ति के लिए अनेक प्रकार के अनुचित और कुटिल कार्यों में संलग्न होंगे। यह भविष्य का पहला अप्रतिम है जो अभी तक उत्पन्न नहीं हुआ है, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होगा। आपको इसे पहचानना चाहिए और इसे त्यागने का प्रयास करना चाहिए। [109]

(2) "भविष्य में फिर ऐसे भिक्षु होंगे जो उत्तम भिक्षाभोजन की इच्छा रखेंगे। वे भिक्षा मांगने का काम छोड़ देंगे, जंगलों और वनों में एकांतवास त्याग देंगे, और गांवों, कस्बों और राजधानियों में आकर वहीं निवास करेंगे, अपनी जीभ से उत्तम भोजन की खोज करेंगे; और वे भिक्षाभोजन के लिए अनेक प्रकार के अनुचित और कुटिल कार्यों में संलग्न होंगे। यह भविष्य का दूसरा संकट है जो अभी तक उत्पन्न नहीं हुआ है, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होगा। आपको इसे पहचानना चाहिए और इससे बचने का प्रयास करना चाहिए।"

(3) "भविष्य में फिर ऐसे भिक्षु होंगे जो उत्तम आवास की कामना करेंगे। वे वृक्ष की तलहटी में निवास करना छोड़ देंगे, जंगलों और वनों में एकांत आवासों को त्याग देंगे, और गांवों, कस्बों और राजधानियों में एकत्रित होकर वहीं निवास करेंगे; और आवास की प्राप्ति के लिए वे अनेक प्रकार के अनुचित और कुकर्मों में लिप्त होंगे। यह भविष्य का तीसरा संकट है जो अभी तक उत्पन्न नहीं हुआ है, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होगा। आपको इसे पहचानना चाहिए और इससे बचने का प्रयास करना चाहिए।"

(4) "भविष्य में फिर ऐसे भिक्षु होंगे जो भिक्षुणियों (भिक्षुणियों), महिला प्रशिक्षुओं और नौसिखियों के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित करेंगे।1088 जब वे ऐसे घनिष्ठ संबंध स्थापित करेंगे, तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) से असंतुष्ट होकर जीवन व्यतीत करेंगे, कोई अपवित्र अपराध करेंगे, 1089 या प्रशिक्षण त्यागकर निम्न जीवन में लौट जाएंगे। यह चौथा भविष्य का संकट है जो अभी तक उत्पन्न नहीं हुआ है, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होगा। आपको इसे पहचानना चाहिए और इससे बचने का प्रयास करना चाहिए।"

(5) "भविष्य में फिर ऐसे भिक्षु होंगे जो मठ के कार्यकर्ताओं और नौसिखियों के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित करेंगे। जब वे ऐसे घनिष्ठ संबंध स्थापित करेंगे, तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे विभिन्न प्रकार के संचित सामानों का उपयोग करेंगे [110] और भूमि और वनस्पति के संबंध में स्थूल संकेत देंगे। 1090 यह पाँचवाँ भविष्य का संकट है जो अभी तक उत्पन्न नहीं हुआ है, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होगा। आपको इसे पहचानना चाहिए और इससे बचने का प्रयास करना चाहिए।"

"भिक्षुओं, ये पाँच भविष्य के संकट हैं जो अभी तक प्रकट नहीं हुए हैं, लेकिन भविष्य में उत्पन्न होंगे। आपको इन्हें पहचानना चाहिए और इनसे बचने का प्रयास करना चाहिए।"

IV. वरिष्ठ भिक्षु (थेरा संस्कृत: स्थिवरा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

81 उत्तेजक राग

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होता है और न तो उनका आदर करता है और न ही उन्हें सम्मान देता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह कामवासना (राग) से भरा रहता है जो कामवासना (राग) को उत्तेजित करती है; (2) वह घृणा (घृणा) से भरा रहता है जो घृणा (घृणा) को उत्तेजित करती है; (3) वह भ्रम पैदा करने वाली चीजों से भ्रमित रहता है; (4) वह भ्रम पैदा करने वाली चीजों से विचलित रहता है; (5) और वह नशा पैदा करने वाली चीजों से मदहोश रहता है। इन पाँच गुणों से

युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होता है और न तो उनका आदर करता है और न ही उन्हें सम्मान देता है।"

भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रिय और सम्माननीय लगता है और वे उसका आदर और सम्मान करते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह कामवासना उत्पन्न करने वाली वस्तु के प्रति राग से ग्रस्त नहीं होता; (2) वह घृणा उत्पन्न करने वाली वस्तु के प्रति घृणा से ग्रस्त नहीं होता; (3) वह भ्रम उत्पन्न करने वाली वस्तु से भ्रमित नहीं होता; (4) वह भ्रम उत्पन्न करने वाली वस्तु से विचलित नहीं होता; (5) और वह नशा उत्पन्न करने वाली वस्तु से मदहोश नहीं होता। इन पाँच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रिय और सम्माननीय लगता है और वे उसका आदर और सम्मान करते हैं।

82 अभाव रहित (वितराग)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होता है और न तो उनका आदर करता है और न ही उन्हें सम्मान देता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह कामवासना (राग) से रहित नहीं है; वह घृणा (मोह) से रहित नहीं है; वह निंदा करने वाला है; और वह अभिमानी है। इन पाँच गुणों से युक्त होने के बावजूद, वह साथी भिक्षुओं द्वारा सम्मानित नहीं होता है।"

भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रिय लगता है और उनका आदर और सम्मान पाता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह कामवासना (राग) से रहित होता है; वह घृणा (मोह) से रहित होता है; वह निंदा नहीं करता; और वह अभिमानी नहीं होता। इन पाँच गुणों से युक्त होने के कारण... वह उनका आदर पाता है।

---

83 एक षड्यंत्रकारी (कुहाका)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होता है और न तो उनका आदर करता है और न ही उन्हें सम्मान देता है। वे पाँच गुण क्या हैं? वह षड्यंत्रकारी, चापलूस, चुगलखोर, नीचा दिखाने वाला और लाभ के बदले लाभ कमाने वाला होता है। 1091 इन पाँच गुणों से युक्त ... न ही उनका आदर करता है। [112]

भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रसन्न करता है तथा उनका आदर और सम्मान करता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह षड्यंत्रकारी, चापलूस, धूर्त, नीचा दिखाने वाला या लाभ के लिए लाभ कमाने वाला नहीं होता। इन पाँच गुणों से युक्त होने के कारण... वह उनका आदर करता है।

---

84 विश्वासहीन (असद्ध बिना अश्रद्ध)

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होता है और न तो उनका आदर करता है और न ही उन्हें सम्मान देता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह आस्थाहीन, नैतिक रूप से निर्लज्ज, नैतिक रूप से लापरवाह, आलसी और मूर्ख होता है। इन पाँच गुणों से युक्त होने के कारण... न ही उन्हें सम्मान मिलता है।

भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रिय लगता है और उनका आदर और सम्मान पाता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह आस्थावान होता है, नैतिक लज्जा का भाव रखता है, नैतिक भय रखता है और ऊर्जावान एवं बुद्धिमान होता है। इन पाँच गुणों से युक्त होने के कारण... वह उनका आदर पाता है।

---

85. धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता (अक्खमा)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होता है और न तो उनका आदर करता है और न ही उन्हें सम्मान देता है। वे पाँच गुण क्या हैं? वह रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों और स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता। [113] इन पाँच गुणों से युक्त होने के कारण... न ही उन्हें सम्मान मिलता है।"

भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रिय लगता है और उनका आदर और सम्मान पाता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों और स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन कर सकता है। इन पाँच गुणों से युक्त होने के कारण... वह उनका आदर पाता है।

---

86 विश्लेषणात्मक ज्ञान (पतिसंभिदपट्टा)

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रसन्न करता है तथा उनका आदर और सम्मान करता है। वे पाँच गुण क्या हैं? उन्होंने अर्थ का विश्लेषणात्मक ज्ञान, धम्म का विश्लेषणात्मक ज्ञान, भाषा का विश्लेषणात्मक ज्ञान और विवेक का विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त कर लिया है। 1092 वे अपने साथी भिक्षुओं के लिए किए जाने वाले विभिन्न कार्यों को कुशलतापूर्वक और लगन से करते हैं; उन्हें उचित ढंग से पूरा करने और व्यवस्थित करने के लिए उनमें उचित विवेक होता है। इन पाँच गुणों से युक्त... और उनके द्वारा सम्मानित।

---

87 सदाचारी (सिलवंता सं. शीलवंता)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रिय लगता है और उनका आदर और सम्मान करता है। वे पाँच गुण कौन से हैं?"

(1) "वह गुणी है; वह पतिमोक्खा द्वारा संयमित रहता है, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त है, सूक्ष्म दोषों में खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके, वह उनमें अभ्यास करता है।"

(2) "उसने बहुत कुछ सीखा है, सीखी हुई बातों को याद रखता है और उन्हें संजोता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में अच्छी हों, मध्य में अच्छी हों, [114] और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, 1093 जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों — ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से जांचा है और दृष्टि से भली-भांति समझा है।

(3) "वह अच्छी प्रस्तुति वाला एक अच्छा वक्ता है; वह ऐसे भाषण से संपन्न है जो परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थ को अभिव्यक्त करने वाला है।

(4) वह इच्छा से, बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, उन चार ध्यानों को प्राप्त करता है जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं।

(5) "दोषों के नाश होने से उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।"

"इन पांच गुणों से युक्त, भिक्षुओं, एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रसन्न करता है और उनके द्वारा आदरणीय और सम्मानित होता है।"

---

88 वरिष्ठ भिक्षु (थेरा संस्कृत: स्थिवरा)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अनेक लोगों के हितैष, अनेक लोगों के दुःख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और पीड़ा, देवताओं और मनुष्यों के लिए कार्य कर रहा है। वे पाँच गुण कौन से हैं?"

(1) एक बुजुर्ग व्यक्ति लंबे समय से संन्यासी जीवन व्यतीत कर रहा है। (2) वह सुप्रसिद्ध और प्रसिद्ध है तथा उसके साथ कई लोग हैं, जिनमें गृहस्थ और संन्यासी शामिल हैं। (3) वह वस्त्र, भिक्षा, आवास, बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन प्राप्त करता है। (4) उसने बहुत कुछ सीखा है, जो सीखा है उसे याद रखता है और उसे संचित करता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संन्यासी पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों - ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, शब्दशः सुनाया है, मानसिक रूप से उनका अध्ययन किया है और दृष्टि से अच्छी तरह समझा है। (5) वह गलत दृष्टिकोण रखता है और उसका परिप्रेक्ष्य विकृत है।

वह बहुत से लोगों को अच्छे धम्म (मार्ग) से दूर ले जाता है और उन्हें बुरे धम्म में स्थापित करता है। यह सोचकर कि 'वरिष्ठ भिक्षु वृहत्तर वर्ष के हैं और वृहत्तर संन्यासी जीवन व्यतीत कर चुके हैं' [115] वे उनके उदाहरण का अनुसरण करते हैं। यह सोचकर कि 'वरिष्ठ भिक्षु सुप्रसिद्ध और प्रसिद्ध हैं तथा उनके साथ गृहस्थों और संन्यासियों सहित अनेक लोगों का समूह है' वे उनके उदाहरण का अनुसरण करते हैं। यह सोचकर कि 'वरिष्ठ भिक्षु वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ एवं भोजन प्राप्त करते हैं' वे उनके उदाहरण का अनुसरण करते हैं। यह सोचकर कि 'वरिष्ठ भिक्षु ने बहुत कुछ सीखा है, जो कुछ सीखा है उसे याद रखते हैं और जो कुछ सीखा है उसे संचित करते हैं' वे उनके उदाहरण का अनुसरण करते हैं।

"इन पांच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अनेक लोगों के हितैष, अनेक लोगों के दुःख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और पीड़ा, देवताओं और मनुष्यों के हितैषी होने के लिए कार्य कर रहा होता है।"

"भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, कल्याण और सुख, देवताओं और मनुष्यों के लिए कार्य कर रहा है। वे पाँच गुण कौन से हैं?"

(1) एक बुजुर्ग व्यक्ति लंबे समय से संन्यासी जीवन व्यतीत कर रहा है। (2) वह सुप्रसिद्ध और प्रसिद्ध है तथा उसके साथ कई लोग आते हैं, जिनमें गृहस्थ और संन्यासी शामिल हैं। (3) वह वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ एवं भोजन सामग्री प्राप्त करता है। (4) उसने बहुत कुछ सीखा है, जो सीखा है उसे याद रखता है और ज्ञान का भंडार रखता है। आरंभ में जो शिक्षाएँ अच्छी होती हैं... उन्हें उसने अच्छी तरह से समझ लिया है। (5) उसका दृष्टिकोण सही है और उसकी दृष्टि उचित है।

वे अनेक लोगों को बुरे धर्म से दूर करके अच्छे धर्म में स्थापित करते हैं। यह सोचकर कि 'वरिष्ठ भिक्षु वृहत्तर वर्ष के हैं और वृहत्तर संन्यासी जीवन व्यतीत कर चुके हैं,' लोग उनका अनुसरण करते हैं। यह सोचकर कि 'वरिष्ठ भिक्षु सुप्रसिद्ध और प्रसिद्ध हैं तथा उनके साथ गृहस्थों और संन्यासियों सहित अनेक लोग जुड़े हुए हैं,' लोग उनका अनुसरण करते हैं। यह सोचकर कि 'वरिष्ठ भिक्षु वस्त्र, भिक्षा, भोजन, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ एवं भोजन सामग्री प्राप्त करते हैं,' लोग उनका अनुसरण करते हैं। यह सोचकर कि 'वरिष्ठ भिक्षु ने बहुत कुछ सीखा है, जो कुछ सीखा है उसे याद रखते हैं और उसका संचय करते हैं,' लोग उनका अनुसरण करते हैं।

"इन पाँच गुणों से युक्त एक वरिष्ठ भिक्षु अनेक लोगों के कल्याण के लिए, अनेक लोगों की खुशी के लिए, [116] अनेक लोगों, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के भले, कल्याण और खुशी के लिए कार्य कर रहा है।"

---

89 एक प्रशिक्षु (1) (सेखा1 सं. शिष्य)

भिक्षुओं, ये पाँच गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं। वे पाँच कौन से गुण हैं? काम में आनंद, बातचीत में आनंद, नींद में आनंद और संगति में आनंद; और वह अपने मन की मुक्ति की सीमा का पुनरावलोकन नहीं करता। 1095 ये पाँच गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं।

भिक्षुओं, ये पाँच गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे पाँच गुण कौन से हैं? काम में आनंद न लेना, बातचीत में आनंद न लेना, नींद में आनंद न लेना, संगति में आनंद न लेना; और वह अपने मन की मुक्ति की सीमा का आत्मनिरीक्षण करता है। ये पाँच गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकते हैं।

---

90 एक प्रशिक्षु (2) (सेखा2 सं. शिष्य)

भिक्षुओं, ये पाँच बातें प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं?

(1) "यहाँ, एक प्रशिक्षु भिक्षु के पास अनेक कार्य और कर्तव्य होते हैं और वह विभिन्न कार्यों में सक्षम होता है, इसलिए वह एकांतवास की उपेक्षा करता है और मन की आंतरिक समता (समथा) में स्वयं को समर्पित नहीं करता। यही वह पहली बात है जो प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनती है।"

(2) "फिर, एक प्रशिक्षु भिक्षु दिन भर किसी तुच्छ काम में लगा रहता है, इसलिए वह एकांतवास की उपेक्षा करता है और मन की आंतरिक समता (समथा) में स्वयं को समर्पित नहीं करता। यही दूसरी बात है जो प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनती है।"

(3) "फिर, एक प्रशिक्षु भिक्षु गृहस्थों और भिक्षुओं के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित करता है, गृहस्थों के लिए अनुपयुक्त तरीके से सामाजिक मेलजोल करता है, 1097 इसलिए वह एकांतवास की उपेक्षा करता है और मन की आंतरिक समता (समथा) के लिए स्वयं को समर्पित नहीं करता है। यह तीसरी बात है जो प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनती है।"

(4) "फिर, एक प्रशिक्षु भिक्षु गाँव में बहुत जल्दी प्रवेश करता है और दिन में बहुत देर से लौटता है, इसलिए वह एकांतवास की उपेक्षा करता है और मन की आंतरिक समता (समथा) के लिए स्वयं को समर्पित नहीं करता है। यह चौथा दोष है जो प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनता है।"

(5) "फिर, एक प्रशिक्षु भिक्षु को हृदय को खोलने में सहायक तपस्वी जीवन से संबंधित प्रवचन, अर्थात् इच्छाओं की कमी, संतोष, एकांत, दूसरों से बंध न जाने, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाने, सदाचारी व्यवहार, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), पन्ना (दिव्य ज्ञान), मुक्ति, मुक्ति के ज्ञान और दर्शन (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) पर प्रवचन, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से सुनने का अवसर नहीं मिलता; अतः वह एकांतवास की उपेक्षा करता है और मन की आंतरिक समता (समथा) में स्वयं को समर्पित नहीं करता। यह पाँचवाँ कारण है जो प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनता है।"

"ये पांच चीजें प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनती हैं।"

भिक्षुओं, ये पाँच बातें प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं?

(1) "यहाँ, प्रशिक्षु भिक्षु के पास बहुत से कार्य और कर्तव्य नहीं होते; यद्यपि वह किए जाने वाले विभिन्न कार्यों में सक्षम होता है, फिर भी वह एकांतवास की उपेक्षा नहीं करता बल्कि मन की आंतरिक समता (समथा) में संलग्न रहता है। यही वह पहली बात है जो प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकती है।"

(2) "फिर, एक प्रशिक्षु भिक्षु अपना दिन किसी तुच्छ काम में नहीं व्यतीत करता, इसलिए वह एकांतवास की उपेक्षा नहीं करता, बल्कि मन की आंतरिक समता (समथा) में स्वयं को समर्पित करता है। यही दूसरी बात है जो प्रशिक्षु भिक्षु के पतन न होने का कारण बनती है।"

(3) "फिर, एक प्रशिक्षु भिक्षु गृहस्थों और भिक्षुओं के साथ घनिष्ठ संबंध नहीं बनाता, गृहस्थों के लिए अनुपयुक्त तरीके से सामाजिक मेलजोल नहीं करता, इसलिए वह एकांत की उपेक्षा नहीं करता बल्कि मन की आंतरिक समता (समथा) के लिए स्वयं को समर्पित करता है। [118] यह तीसरी बात है जो प्रशिक्षु भिक्षु के पतन न होने की ओर ले जाती है।

(4) "फिर, एक प्रशिक्षु भिक्षु किसी गाँव में बहुत जल्दी प्रवेश नहीं करता और न ही दिन में बहुत देर से लौटता है, इसलिए वह एकांतवास की उपेक्षा नहीं करता बल्कि मन की आंतरिक समता (समथा) में स्वयं को समर्पित करता है। यह चौथी बात है जो प्रशिक्षु भिक्षु के पतन न होने का कारण बनती है।"

(5) "फिर, एक प्रशिक्षु भिक्षु को बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, हृदय को खोलने वाले तपस्वी जीवन से संबंधित प्रवचन सुनने को मिलते हैं, अर्थात् इच्छाओं की कमी पर प्रवचन... मुक्ति के ज्ञान और दर्शन पर प्रवचन (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन); इसलिए वह एकांतवास की उपेक्षा नहीं करता बल्कि मन की आंतरिक समता (समथा) में संलग्न रहता है। यह पाँचवाँ कारण है जो प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकता है।"

"ये पांच चीजें प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनती हैं।"

वी. काकुधवग्गा

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

91 धन (1) (संपदा1)

"भिक्षुओं, ये पाँच धन हैं। कौन से पाँच? आस्था का धन, सद्गुणों का धन, ज्ञान का धन, उदारता का धन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का धन। ये पाँच धन हैं।" [119]

---

92 धन (2) (संपदा2)

भिक्षुओं, ये पाँच धन हैं। कौन से पाँच? सद्गुणों का धन, समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का धन, पन्ना (दिव्य ज्ञान) का धन, मुक्ति का धन और मुक्ति के ज्ञान और दृष्टि का धन। ये पाँच धन हैं।

---

93 घोषणाएँ (व्याकरण सं. व्यक्त-करण)

भिक्षुओं, अंतिम ज्ञान की ये पाँच घोषणाएँ हैं। 1098 वे पाँच क्या हैं? (1) व्यक्ति अपनी मंदबुद्धि और मूर्खता के कारण अंतिम ज्ञान की घोषणा करता है; (2) व्यक्ति बुरी इच्छाओं से प्रेरित होकर अंतिम ज्ञान की घोषणा करता है; (3) व्यक्ति पागल और मानसिक रूप से विक्षिप्त होने के कारण अंतिम ज्ञान की घोषणा करता है; (4) व्यक्ति स्वयं को अधिक महत्व देने के कारण अंतिम ज्ञान की घोषणा करता है; और (5) व्यक्ति सही ढंग से अंतिम ज्ञान की घोषणा करता है। ये अंतिम ज्ञान की पाँच घोषणाएँ हैं।

---

94 आराम से रहना (फासुविहार)

भिक्षुओं, आरामदेह निवास के पाँच प्रकार हैं। वे पाँच कौन से हैं? (1) यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है... (2) ... द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था)

में... (3) ... तृतीय ध्यान में... (4) ... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में। (5) दोषों के नाश के साथ, उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। ये पाँच प्रकार के आरामदेह निवास हैं।

---

95 अविचल (अकुप्पा)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त होकर, एक भिक्षु थोड़े ही समय में अविचल अवस्था को प्राप्त कर लेता है। 1099 वे पाँच गुण क्या हैं? [120] यहाँ, एक भिक्षु ने अर्थ का विश्लेषणात्मक ज्ञान, धम्म का विश्लेषणात्मक ज्ञान, भाषा का विश्लेषणात्मक ज्ञान और विवेक का विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त कर लिया है; और वह अपने मन की मुक्ति की सीमा का पुनरावलोकन करता है। इन पाँच गुणों से युक्त होकर, एक भिक्षु थोड़े ही समय में अविचल अवस्था को प्राप्त कर लेता है।"

---

96 जो कुछ सीखा है (सुताधारा)

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, जो भिक्षु सती ध्यान और अनापान का अभ्यास करते हैं, वे अल्पकाल में ही अविचल अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु के कम कार्य होते हैं, कम कार्यभार होते हैं, उनका भरण-पोषण आसान होता है, और वे जीवन की आवश्यकताओं से सहज रूप से संतुष्ट रहते हैं। (2) वे कम खाते हैं और भोजन के प्रति संयमी रहते हैं। (3) वे कम ही ऊंघते हैं और सतर्कता पर ध्यान केंद्रित करते हैं। (4) उन्होंने बहुत कुछ सीखा है, जो सीखा है उसे याद रखते हैं और उसे संचित करते हैं। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन की घोषणा करती हों - ऐसी शिक्षाओं को उन्होंने बहुत सीखा है, मन में संजोकर रखा है, मौखिक रूप से सुनाया है, लोगों ने उनका गहन अध्ययन किया है और दृष्टि से भलीभांति समझा है। (5) वे समीक्षा करते हैं... जिस हद तक उसका मन मुक्त हो जाता है। इन पांच चीजों से युक्त, श्वास की सती साधना (ध्यान) करने वाला भिक्षु थोड़े ही समय में अविचल अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

---

97 वार्ता (कथा)

"भिक्षुओं में पाँच गुण होते हैं, श्वास की जागरूकता विकसित करने वाला भिक्षु थोड़े ही समय में अविचल अवस्था को प्राप्त कर लेता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु के कार्य कम होते हैं... (2) वह कम खाता है... (3) उसे कम ही ऊंघ आती है... [121] (4) वह बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, हृदय को खोलने वाले तपस्वी जीवन से संबंधित प्रवचन, अर्थात् इच्छाओं की कमी, संतोष, एकांत, दूसरों से बंधे न रहने, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाने, सद्गुणी आचरण, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), पन्ना (दिव्य ज्ञान), मुक्ति, और मुक्ति के ज्ञान और दर्शन (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) पर प्रवचन सुनता है। (5) वह सीमा का पुनरावलोकन करता है जिससे उसका मन मुक्त हो जाता है। इन पाँचों चीजों से युक्त भिक्षु श्वास की सती साधना (अनपान) विकसित करते हुए अल्पकाल में ही अविचल अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

---

98 एक वनवासी (अरन्नक)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, श्वास की एकाग्रता (अनपान) का अभ्यास करने वाला भिक्षु अल्पकाल में अविचल अवस्था को प्राप्त कर लेता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु के कार्य अल्प होते हैं... (2) वह कम खाता है... (3) उसे कम ही ऊंघ आती है... (4) वह वनवासी होता है और एकांतवास में रहता है। (5) वह अपने मन की मुक्ति की सीमा का आत्मनिरीक्षण करता है। इन पाँच गुणों से युक्त, श्वास की एकाग्रता (सती) का अभ्यास करने वाला भिक्षु अल्पकाल में अविचल अवस्था को प्राप्त कर लेता है।"

---

99 सिंह (सिहा बिना सिंघा)

भिक्षुओं, संध्याकाल में पशुओं का राजा सिंह अपनी मांद से निकलता है, शरीर फैलाता है, चारों दिशाओं का अवलोकन करता है और तीन बार सिंह गर्जना करता है। फिर वह शिकार की तलाश में निकल पड़ता है।

(1) "यदि वह हाथी को लात मारता है, तो वह हमेशा गंभीरता से लात मारता है, लापरवाही से नहीं। 1100 (2) यदि वह भैंस को लात मारता है... (3) ...गाय को... (4) ...तेंदुए को... (5) यदि वह किसी छोटे जानवर को, यहाँ तक कि खरगोश या बिल्ली को भी लात मारता है, तो वह गंभीरता से लात मारता है, लापरवाही से नहीं। किस कारण से? [सोचते हुए:] 'मेरी ट्रेनिंग व्यर्थ न जाए।'

भिक्षुओं, सिंह तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का प्रतीक है। जब तथागत (बुद्ध) किसी सभा को धम्म का उपदेश देते हैं, तो यह उनकी सिंह गर्जना होती है। (1) यदि तथागत (बुद्ध) भिक्षुओं को धम्म का उपदेश देते हैं, तो वे गंभीरता से उपदेश देते हैं, न कि लापरवाही से। (2) यदि तथागत (बुद्ध) भिक्षुणियों को धम्म का उपदेश देते हैं... (3) ... पुरुष गृहस्थ अनुयायियों को... (4) ... स्त्री गृहस्थ अनुयायियों को, तो वे गंभीरता से उपदेश देते हैं, न कि लापरवाही से। (5) यदि तथागत (बुद्ध) सांसारिक लोगों को, यहाँ तक कि अन्नवाहकों और शिकारियों को भी धम्म का उपदेश देते हैं, तो वे गंभीरता से उपदेश देते हैं, न कि लापरवाही से। इसका कारण क्या है? क्योंकि तथागत (बुद्ध) सभी का आदर करते हैं। धम्म, धम्म के प्रति श्रद्धा:

---

100 ककुधा थेरा

मैंने ऐसा सुना है। 1102 एक बार भगवान (बुद्ध) घोसीता उद्यान में कोसंबी में निवास कर रहे थे। उस समय, पूज्य महामोग्गलाना के सेवक, कोलियन पुत्र ककुधा का हाल ही में निधन हो गया था और वे मन से निर्मित देवताओं के एक समूह में पुनर्जन्म लेकर आए थे। 11031 उनका शरीर मगध के एक गाँव के खेतों से दो या तीन गुना बड़ा था, लेकिन उन्होंने अपने शरीर से न तो स्वयं को और न ही दूसरों को अवरुद्ध किया। 1104

तब युवा देव (देवदूत/भगवान) काकुधा पूज्य महामोग्गलाना के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हो गए और [123] उनसे कहा: "भंते, देवदत्त के मन में ऐसी इच्छा उत्पन्न हुई: 'मैं भिक्षुओं के संघ का नेतृत्व करूँगा।' और इस विचार के उत्पन्न होते ही देवदत्त ने अपनी वह मानसिक शक्ति खो दी।" 1103 युवा देव (देवदूत/भगवान) काकुधा ने यही कहा। फिर उन्होंने पूज्य महामोग्गलाना को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।

तब पूज्य महामोग्गलाना भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और सारी घटना का वर्णन किया। [भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "परन्तु, मोग्गलाना, क्या तुमने अपने मन से उनके मन को भलीभांति समझा है और युवा देव (देवदूत/भगवान) काकुधा के इस कथन को समझा है कि 'युवा देव (देवदूत/भगवान) काकुधा जो कुछ भी कहते हैं वह सब सत्य है, अन्यथा नहीं'?"

"हां, भंते।"

"इस कथन पर ध्यान दो, मोग्गलाना! अब वह मूर्ख व्यक्ति स्वयं ही अपने आप को खतरे में डाल देगा।"

मोग्गलाना, दुनिया में पाँच प्रकार के शिक्षक पाए जाते हैं। वे पाँच कौन से हैं? [124]

(1) "यहाँ, एक ऐसा शिक्षक है जिसका आचरण अपवित्र है, वह दावा करता है: 'मैं शुद्ध आचरण वाला हूँ। मेरा आचरण शुद्ध, पवित्र और निष्कलंक है।' उसके शिष्य उसे इस प्रकार जानते हैं: 'यह आदरणीय शिक्षक, यद्यपि अपवित्र आचरण वाला है, दावा करता है: 'मैं शुद्ध आचरण वाला हूँ। मेरा आचरण शुद्ध, पवित्र और निष्कलंक है।' अब यदि हम यह बात आम लोगों को बताएँ तो उसे अच्छा नहीं लगेगा। हम उसके साथ ऐसा व्यवहार कैसे कर सकते हैं जो उसे पसंद न आए? इसके अलावा, उसे वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के

लिए औषधियाँ और भोजन सामग्री से सम्मानित किया जाता है। व्यक्ति की पहचान उसके कर्मों से होती है।' 1106 उसके शिष्य ऐसे शिक्षक के आचरण को छिपाते हैं, और ऐसा शिक्षक अपने शिष्यों से अपने आचरण को छिपाए रखने की अपेक्षा करता है।

(2) "फिर, एक शिक्षक जिसकी आजीविका अपवित्र है, दावा करता है: 'मैं वह हूँ जिसकी आजीविका पवित्र है। मेरी आजीविका पवित्र, शुद्ध और निर्मल है।' उसके शिष्य उसे इस प्रकार जानते हैं: 'यह आदरणीय शिक्षक, यद्यपि अपवित्र आजीविका वाला है, दावा करता है: 'मैं वह हूँ जिसकी आजीविका पवित्र है। मेरी आजीविका पवित्र, शुद्ध और निर्मल है।' अब यदि हम यह बात आम लोगों को बताएँ तो उसे अच्छा नहीं लगेगा। हम उसके साथ ऐसा व्यवहार कैसे कर सकते हैं जो उसे पसंद न आए? इसके अलावा, उसे वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए दवाइयाँ और भोजन सामग्री देकर सम्मानित किया जाता है। व्यक्ति की पहचान उसके कर्मों से होती है।' उसके शिष्य उसकी आजीविका के संबंध में उसका संरक्षण करते हैं, और ऐसा शिक्षक अपने शिष्यों से अपनी आजीविका के संबंध में संरक्षण की अपेक्षा करता है।

(3) "फिर, कोई ऐसा शिक्षक जिसका धम्म (मार्ग) अपवित्र है, दावा करता है: 'मैं वह हूँ जिसका धम्म शिक्षण पवित्र है। मेरा धम्म शिक्षण पवित्र, शुद्ध और निष्कलंक है।' उसके शिष्य उसे इस प्रकार जानते हैं: 'यह आदरणीय शिक्षक, यद्यपि अपवित्र धम्म शिक्षण वाला है, [125] दावा करता है: "मैं वह हूँ जिसका धम्म शिक्षण पवित्र है। मेरा धम्म शिक्षण पवित्र, शुद्ध और निष्कलंक है।" अब यदि हम यह बात आम लोगों को बताएँ तो उसे अच्छा नहीं लगेगा। हम उसके साथ ऐसा व्यवहार कैसे कर सकते हैं जो उसे पसंद न आए? इसके अलावा, उसे वस्त्र, भिक्षा, भोजन, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन सामग्री से सम्मानित किया जाता है। किसी व्यक्ति की पहचान उसके कर्मों से होती है।' उसके शिष्य ऐसे शिक्षक को उसके धम्म शिक्षण के संबंध में संरक्षण देते हैं, और ऐसा शिक्षक अपने शिष्यों से अपने धम्म शिक्षण के संबंध में संरक्षण की अपेक्षा करता है।

(4) "फिर, एक शिक्षक जिसकी व्याख्याएँ अपवित्र हैं, दावा करता है: 'मैं वह हूँ जिसकी व्याख्याएँ पवित्र हैं। मेरी व्याख्याएँ पवित्र, शुद्ध और निष्कलंक हैं।' उसके शिष्य उसे इस प्रकार जानते हैं: 'यह आदरणीय शिक्षक, यद्यपि अपवित्र व्याख्याएँ देता है, दावा करता है: "मैं वह हूँ जिसकी व्याख्याएँ पवित्र हैं। मेरी व्याख्याएँ पवित्र, शुद्ध और निष्कलंक हैं।" अब यदि हम यह बात आम लोगों को बताएँ तो उसे अच्छा नहीं लगेगा। हम उसके साथ ऐसा व्यवहार कैसे कर सकते हैं जो उसे पसंद न आए? इसके अलावा, उसे वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए दवाएँ और भोजन सामग्री से सम्मानित किया जाता है। व्यक्ति की पहचान उसके कर्मों से होती है।' उसके शिष्य उसकी व्याख्याओं के संबंध में उसका संरक्षण करते हैं, और ऐसा शिक्षक अपने शिष्यों से अपनी व्याख्याओं के संबंध में संरक्षण की अपेक्षा करता है।

(5) "फिर, एक ऐसा शिक्षक जिसका ज्ञान और दृष्टि अपवित्र है, दावा करता है: 'मैं वह हूँ जिसका ज्ञान और दृष्टि पवित्र है। मेरा ज्ञान और दृष्टि पवित्र, शुद्ध और निर्मल है।' उसके शिष्य उसे इस प्रकार जानते हैं: 'यह आदरणीय शिक्षक, यद्यपि अपवित्र ज्ञान और दृष्टि वाला है, दावा करता है: 'मैं वह हूँ जिसका ज्ञान और दृष्टि पवित्र है। मेरा ज्ञान और दृष्टि पवित्र, शुद्ध और निर्मल है।' अब यदि हम यह बात आम लोगों को बताएँ तो उसे अच्छा नहीं लगेगा। हम उसके साथ ऐसा व्यवहार कैसे कर सकते हैं जो उसे पसंद न आए? [126] इसके अलावा, उसे वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए दवाइयाँ और भोजन सामग्री देकर सम्मानित किया जाता है। व्यक्ति की पहचान उसके कर्मों से होती है।' उसके शिष्य ऐसे शिक्षक को उसके ज्ञान और दृष्टि के संबंध में सुरक्षित रखते हैं, और ऐसा शिक्षक अपने शिष्यों से अपने ज्ञान और दृष्टि के संबंध में सुरक्षित रहने की अपेक्षा करता है।

"विश्व में पांच प्रकार के शिक्षक पाए जाते हैं।"

(1) "परन्तु, मोग्गलाना, मैं वह हूँ जिसका आचरण शुद्ध है और मैं दावा करता हूँ: 'मैं वह हूँ जिसका आचरण शुद्ध है। मेरा आचरण शुद्ध, पवित्र और निष्कलंक है।' मेरे शिष्य मेरे आचरण के संबंध में मुझे नहीं ढकते, और न ही मैं अपने शिष्यों से अपने आचरण के संबंध में ढके जाने की अपेक्षा करता हूँ। (2) मैं वह हूँ जिसकी आजीविका शुद्ध है और मैं दावा करता हूँ: 'मैं वह हूँ जिसकी आजीविका शुद्ध है। मेरी आजीविका शुद्ध, पवित्र और निष्कलंक है।' मेरे शिष्य मेरी आजीविका के संबंध में मुझे नहीं ढकते, और न ही मैं अपने शिष्यों से अपनी आजीविका के संबंध में ढके जाने की अपेक्षा करता हूँ। (3) मैं वह हूँ जिसका धम्म (मार्ग) उपदेश शुद्ध है और मैं दावा करता हूँ: 'मैं वह हूँ जिसका धम्म उपदेश शुद्ध है। मेरा धम्म उपदेश शुद्ध, पवित्र और निष्कलंक है।' मेरे शिष्य मेरे धम्म उपदेशों के संबंध में मुझे छिपाते नहीं हैं, और मैं अपने शिष्यों से अपने धम्म उपदेशों के संबंध में छिपाए जाने की अपेक्षा नहीं करता/करती। (4) मैं वह हूँ जिसकी

व्याख्याएँ शुद्ध हैं और मैं दावा करता/करती हूँ: 'मैं वह हूँ जिसकी व्याख्याएँ शुद्ध हैं। मेरी व्याख्याएँ शुद्ध, पवित्र और निष्कलंक हैं।' मेरे शिष्य मेरी व्याख्याओं के संबंध में मुझे छिपाते नहीं हैं, और मैं अपने शिष्यों से अपने व्याख्याओं के संबंध में छिपाए जाने की अपेक्षा नहीं करता/करती। (5) मैं वह हूँ जिसका ज्ञान और दृष्टि शुद्ध है और मैं दावा करता/करती हूँ: 'मैं वह हूँ जिसका ज्ञान और दृष्टि शुद्ध है। मेरा ज्ञान और दृष्टि शुद्ध, पवित्र और निष्कलंक है।' मेरे शिष्य मेरे ज्ञान और दृष्टि के संबंध में मुझे छिपाते नहीं हैं, और मैं अपने शिष्यों से अपने ज्ञान और दृष्टि के संबंध में छिपाए जाने की अपेक्षा नहीं करता/करती। [127]

तीसरा पचास

I. आराम से रहना (फासुविहार)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

101 डरपोकपन (सरज्जा)

भिक्षुओं, प्रशिक्षु में आत्मविश्वास पैदा करने वाले ये पाँच गुण हैं। 1108 वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण और गुणी, विद्वान, ऊर्जावान और बुद्धिमान है। (1) आस्थाहीन व्यक्ति में जो भी भय होता है, वह आस्था से परिपूर्ण व्यक्ति में नहीं होता; अतः यह गुण प्रशिक्षु में आत्मविश्वास पैदा करता है। (2) अनैतिक व्यक्ति में जो भी भय होता है, वह गुणी व्यक्ति में नहीं होता; अतः यह गुण प्रशिक्षु में आत्मविश्वास पैदा करता है। (3) अज्ञानी व्यक्ति में जो भी भय होता है, वह विद्वान व्यक्ति में नहीं होता; अतः यह गुण प्रशिक्षु में आत्मविश्वास पैदा करता है। (4) आलसी व्यक्ति में जो भी भय होता है, वह ऊर्जावान व्यक्ति में नहीं होता; अतः यह गुण प्रशिक्षु में आत्मविश्वास पैदा करता है। (5) नासमझ व्यक्ति में जो भी भय होता है, वह बुद्धिमान व्यक्ति में नहीं होता। बुद्धिमान; इसलिए यह गुण प्रशिक्षु में आत्मविश्वास पैदा करता है। ये पाँच गुण हैं जो प्रशिक्षु में आत्मविश्वास पैदा करते हैं।" [128]

---

102 संदिग्ध (उसंकिता सं. शंकित)

"भिक्षुओं (मठवासियों) पर पाँच आधारों पर संदेह किया जाता है और उन्हें 'दुष्ट भिक्षु' माना जाता है, भले ही उनका चरित्र अटल हो। [1110 वे पाँच आधार क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु अक्सर वेश्याओं, विधवाओं, अविवाहित महिलाओं, हिजड़ों या भिक्षुणियों (नन) के पास जाता है। [1111] इन्हीं पाँच आधारों पर एक भिक्षु पर संदेह किया जाता है और उन्हें 'दुष्ट भिक्षु' माना जाता है, भले ही उनका चरित्र अटल हो।"

---

103 एक महान चोर (महा-कोरा)

"भिक्षुओं (साधुओं) में पाँच गुण होते हैं, एक कुशल चोर घरों में सेंध लगाता है, धन लूटता है, डकैती करता है और राजमार्गों पर घात लगाता है। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, एक कुशल चोर (1) विषम परिस्थितियों पर, (2) घने जंगलों पर, और (3) शक्तिशाली लोगों पर निर्भर करता है; (4) वह रिश्वत देता है, और (5) वह अकेला चलता है।"

(1) "और एक माहिर चोर किस प्रकार विषम परिस्थितियों पर निर्भर करता है? यहाँ, एक माहिर चोर उन नदियों पर निर्भर करता है जिन्हें पार करना कठिन होता है और ऊबड़-खाबड़ पहाड़ों पर। इस प्रकार एक माहिर चोर विषम परिस्थितियों पर निर्भर करता है।"

(2) "और एक माहिर चोर झाड़ियों पर कैसे निर्भर करता है? यहाँ, एक माहिर चोर बेंत की झाड़ी, पेड़ों की झाड़ी, एक छोटा जंगल या एक बड़े घने जंगल पर निर्भर करता है। इस तरह एक माहिर चोर झाड़ियों पर निर्भर करता है।"

(3) "और एक माहिर चोर शक्तिशाली लोगों पर कैसे निर्भर करता है? यहाँ, एक माहिर चोर राजाओं या राजमंत्रियों पर निर्भर करता है। वह सोचता है: 'यदि कोई [129] मुझ पर किसी बात का आरोप लगाता है, तो ये राजा या राजमंत्री मामले को खारिज कर देंगे।' यदि कोई उस पर किसी बात का आरोप लगाता है, तो वे राजा या राजमंत्री मामले को खारिज कर देते हैं। इसी तरह एक माहिर चोर शक्तिशाली लोगों पर निर्भर करता है।"

(4) "एक माहिर चोर रिश्वत कैसे देता है? यहाँ, एक माहिर चोर धनी होता है, जिसके पास बहुत धन और संपत्ति होती है। वह सोचता है: 'यदि कोई मुझ पर किसी बात का आरोप लगाए, तो मैं उसे रिश्वत दे दूँगा।' यदि कोई उस पर किसी बात का आरोप लगाता है, तो वह उसे रिश्वत दे देता है। इसी तरह एक माहिर चोर रिश्वत देता है।"

(5) "और एक माहिर चोर अकेले कैसे चलता है? यहाँ, एक माहिर चोर अपने छापे 1113 पूरी तरह अकेले ही अंजाम देता है। किस कारण से? [इस सोच के साथ:] 'मेरी गुप्त योजनाएँ 1114 दूसरों तक नहीं फैलनी चाहिए!' इसी तरह एक माहिर चोर अकेले चलता है।

"इन पांच कारकों के होने से ही एक माहिर चोर घरों में सेंध लगाता है, धन लूटता है, डकैती करता है और राजमार्गों पर घात लगाकर हमला करता है।"

इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त दुष्ट भिक्षु स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है, निंदनीय होता है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र होता है, तथा बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, दुष्ट भिक्षु (1) विषमता पर निर्भर रहता है, (2) झाड़ियों पर निर्भर रहता है, और (3) शक्तिशाली लोगों पर निर्भर रहता है; (4) वह रिश्वत देता है और (5) अकेला चलता है।

(1) "और एक दुष्ट भिक्षु विषमता पर कैसे निर्भर करता है? यहाँ, एक दुष्ट भिक्षु अधार्मिक शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्मों में संलग्न होता है। इसी प्रकार एक दुष्ट भिक्षु विषमता पर निर्भर करता है।"

(2) "और एक दुष्ट भिक्षु झाड़ियों पर कैसे निर्भर करता है? [130] यहाँ, एक दुष्ट भिक्षु गलत दृष्टिकोण रखता है; उसने एक चरमपंथी दृष्टिकोण अपनाया है। 1115 इसी प्रकार एक दुष्ट भिक्षु झाड़ियों पर निर्भर करता है।

(3) "और एक दुष्ट भिक्षु शक्तिशाली लोगों पर कैसे निर्भर रहता है? यहाँ, एक दुष्ट भिक्षु राजाओं या राजमंत्रियों पर निर्भर रहता है। वह सोचता है: 'यदि कोई मुझ पर किसी बात का आरोप लगाएगा, तो ये राजा या राजमंत्री मामले को खारिज कर देंगे।' यदि कोई उस पर किसी बात का आरोप लगाता है, तो वे राजा या राजमंत्री मामले को खारिज कर देते हैं। इसी प्रकार एक दुष्ट भिक्षु शक्तिशाली लोगों पर निर्भर रहता है।"

(4) "दुष्ट भिक्षु रिश्वत कैसे देता है? यहाँ, एक दुष्ट भिक्षु वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन प्राप्त करता है। वह सोचता है: 'यदि कोई मुझ पर किसी बात का आरोप लगाए, तो मैं उसे इनमें से किसी एक लाभ से शांत कर दूँगा।' यदि कोई उस पर किसी बात का आरोप लगाता है, तो वह उसे अपने किसी लाभ से शांत कर देता है। इस प्रकार एक दुष्ट भिक्षु रिश्वत देता है।"

(5) "एक दुष्ट भिक्षु अकेले कैसे चलता है? यहाँ, एक दुष्ट भिक्षु सीमावर्ती क्षेत्रों में अपने लिए एकांत निवास स्थापित करता है। वहाँ के परिवारों के पास जाकर वह लाभ प्राप्त करता है। इस प्रकार एक दुष्ट भिक्षु अकेले चलता है।"

"इन पांच गुणों के कारण ही एक दुष्ट भिक्षु स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है, निंदनीय होता है और बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र होता है, और बहुत से पुण्य उत्पन्न करता है।"

---

104 एक प्रसन्न तपस्वी [1116] (समानसुखुमाला)

"भिक्षु (मठवासी), पाँच गुणों से युक्त, एक भिक्षु तपस्वियों में सुखी तपस्वी होता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह सामान्यतः वही वस्त्र धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, शायद ही कभी वह वस्त्र धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो; वह सामान्यतः वही भिक्षाभोजन ग्रहण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, शायद ही कभी वह भिक्षाभोजन ग्रहण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो; वह सामान्यतः वही आवास धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट किया गया हो, शायद ही कभी वह आवास धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट न किया गया हो; वह सामान्यतः वही औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन सामग्री धारण करता है जो उसे विशेष रूप से भेंट की गई हों, शायद ही कभी वह जो उसे विशेष रूप से भेंट न की गई हों। [131] (2) उसके साथी भिक्षु, जिनके साथ वह निवास करता है, सामान्यतः उसके प्रति देह, वाणी और मन से सुखद व्यवहार करते हैं, शायद ही कभी अप्रिय व्यवहार करते हैं। वे सामान्यतः उसे वही भेंट करते हैं जो उसे प्रसन्न करती है, शायद ही कभी अप्रिय भेंट करते हैं। (3) पित्त, कफ, वायु या इनके संयोजन से उत्पन्न असुविधा; असुविधा जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न असुविधा; लापरवाहीपूर्ण व्यवहार से उत्पन्न असुविधा; हमले से उत्पन्न असुविधा; या कर्मों के फलस्वरूप उत्पन्न असुविधाएँ—ये सब उसे अक्सर नहीं होतीं। वह शायद ही कभी बीमार पड़ता है। (4) वह बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इसी जीवन में चार ध्यान अवस्थाओं को सहजता से प्राप्त कर लेता है, जो उच्च मन का निर्माण करती हैं और सुखद निवास स्थान हैं। (5) दोषों के नाश के साथ, उसने इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इन्हीं पाँच गुणों के कारण भिक्षु तपस्वियों में सुखी तपस्वी होता है।

"यदि किसी के बारे में सही कहा जा सकता है कि वह तपस्वियों में सबसे सुखी तपस्वी है, तो यह बात मेरे बारे में ही कही जा सकती है। (1) क्योंकि मैं आमतौर पर वही वस्त्र धारण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट किया गया है, शायद ही कभी ऐसा वस्त्र धारण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट नहीं किया गया हो; मैं आमतौर पर वही भिक्षाभोजन ग्रहण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट किया गया है, शायद ही कभी ऐसा भिक्षाभोजन ग्रहण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट नहीं किया गया हो; मैं आमतौर पर वही आवास धारण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट किया गया है, शायद ही कभी ऐसा आवास धारण करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट नहीं किया गया हो; मैं आमतौर पर वही औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन सामग्री का उपयोग करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट की गई हैं, शायद ही कभी ऐसी औषधियों और भोजन सामग्री का उपयोग करता हूँ जो मुझे विशेष रूप से भेंट नहीं की गई हों। (2) जिन भिक्षुओं के साथ मैं रहता हूँ, वे आमतौर पर मेरे साथ शरीर, वाणी और मन से सुखद व्यवहार करते हैं, शायद ही कभी अप्रिय व्यवहार करते हैं। वे आमतौर पर मुझे वही भेंट करते हैं जो मुझे पसंद है, शायद ही कभी अप्रिय भेंट करते हैं। (3) पित्त, कफ, वात या इनके संयोजन से उत्पन्न होने वाली बेचैनी; जलवायु परिवर्तन; लापरवाहीपूर्ण व्यवहार से उत्पन्न असुविधा; हमले से उत्पन्न असुविधा; या कर्मों के फलस्वरूप उत्पन्न असुविधा — ये [132] मुझमें अक्सर उत्पन्न नहीं होतीं। मैं शायद ही कभी बीमार पड़ता हूँ। (4) मैं इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) प्राप्त करता हूँ जो उच्च मन का निर्माण करती हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं। (5) दोषों के नाश के साथ, मैंने इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके, मैं उसमें निवास करता हूँ। यदि, भिक्षुओं, किसी के बारे में सही कहा जा सकता है: 'वह तपस्वियों में एक सुखी तपस्वी है,' तो यह ठीक मेरे बारे में ही कहा जा सकता है।

---

105 आराम (फासुविहार)

भिक्षुओं, सुखमय रहने के ये पाँच साधन हैं। 1117 वे पाँच क्या हैं? (1) यहाँ, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के प्रति शारीरिक रूप से प्रेमपूर्ण दया का भाव रखता है, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों तरह से। (2) वह अपने साथी भिक्षुओं के प्रति मौखिक रूप से प्रेमपूर्ण दया (मेट्टा) का भाव रखता है, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों तरह से। (3) वह अपने साथी भिक्षुओं के प्रति मानसिक रूप से प्रेमपूर्ण दया (मेट्टा) का भाव रखता है, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों तरह से। (4) वह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों तरह से अपने साथी भिक्षुओं के साथ अटूट, दोषरहित, निर्मल, बेदाग, मुक्तिदायक, ज्ञानियों द्वारा प्रशंसित, अछूता और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाले सद्गुणों का पालन करते हुए सुखमय रहता है। (5) वह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों तरह से अपने साथी भिक्षुओं के साथ उस महान और मुक्तिदायक दृष्टिकोण का पालन करते हुए सुखमय रहता है, जो उस पर अमल करने वाले को दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। हे भिक्षुओं, ये सुखमय रहने के पाँच साधन हैं। आराम से रहना।"

---

106 आनंद

एक बार भगवान (बुद्ध) कोसंबी में घोषिता उद्यान में निवास कर रहे थे। तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले:

"(1) भंते, संघ में रहते हुए भिक्षु किस प्रकार निश्चिंत रह सकता है?"

"जब, आनंद, [133] एक भिक्षु स्वयं सद्गुणी आचरण में निपुण हो, लेकिन दूसरों को सद्गुणी आचरण के संबंध में उपदेश न दे, 1118 इस हद तक वह संघ में रहते हुए आराम से रह सकता है।"

(2) "पर, भंते, क्या कोई और तरीका हो सकता है जिससे भिक्षु संघ में रहते हुए आराम से रह सके?"

"हाँ, आनंद। जब कोई भिक्षु स्वयं सद्गुणों में निपुण हो, लेकिन दूसरों को सद्गुणों के लिए उपदेश न दे, और स्वयं का आत्मनिरीक्षण करे, लेकिन दूसरों का नहीं, तो इस हद तक वह संघ में रहते हुए निश्चिंत रह सकता है।"

(3) "पर, भंते, क्या कोई और तरीका हो सकता है जिससे भिक्षु संघ में रहते हुए आराम से रह सके?"

"आनंद, ऐसा संभव है। जब कोई भिक्षु स्वयं सद्गुणों में निपुण हो, लेकिन दूसरों को सद्गुणों का उपदेश न दे, और स्वयं का आत्मनिरीक्षण करे, लेकिन दूसरों का नहीं, और वह प्रसिद्ध न हो, लेकिन प्रसिद्धि की कमी से विचलित न हो, तो इस हद तक वह संघ में रहते हुए सहज महसूस कर सकता है।"

(4) "पर, भंते, क्या कोई और तरीका हो सकता है जिससे भिक्षु संघ में रहते हुए आराम से रह सके?"

"आनंद, ऐसा संभव है। जब कोई भिक्षु स्वयं सद्गुणों में निपुण हो, परन्तु दूसरों को सद्गुणों का उपदेश न दे; वह स्वयं का आत्मनिरीक्षण करे, परन्तु दूसरों का नहीं; वह प्रसिद्ध न हो, परन्तु प्रसिद्धि की कमी से विचलित न हो; और वह इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इस जीवन में ही उच्च मन की चार अवस्थाओं (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त कर ले, जो सुखद निवास स्थान हैं, तो इस हद तक वह संघ में रहते हुए सहजता से रह सकता है।"

(5) "पर, भंते, क्या कोई और तरीका हो सकता है जिससे भिक्षु संघ में रहते हुए आराम से रह सके?"

"आनंद, ऐसा संभव है। जब कोई भिक्षु स्वयं सद्गुणों में निपुण हो, परन्तु दूसरों को सद्गुणों के लिए उपदेश न दे; और वह स्वयं का आत्मनिरीक्षण करे, परन्तु दूसरों का नहीं; [134] और वह प्रसिद्ध न हो, परन्तु प्रसिद्धि के अभाव से विचलित न हो; और वह इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इस जीवन में ही उच्च मन के चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त कर ले; और दोषों के नाश के साथ, उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा, इसी जीवन में, स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कर लिया हो, और उसमें प्रवेश करके, वह उसमें निवास करता हो, इस हद तक वह संघ में रहते हुए सहजता से रह सकता है और, आनंद, मैं कहता हूँ कि सहजता से रहने का इससे अधिक उत्कृष्ट या उदात्त कोई दूसरा तरीका नहीं है।"

---

107 सदाचारी आचरण (शीला सान. शील)

"भिक्षु, पाँच गुणों से युक्त, दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु सद्गुणों में निपुण, समाधि में निपुण, ज्ञान में निपुण, मुक्ति में निपुण और मुक्ति के ज्ञान एवं दृष्टि में निपुण है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है।"

---

108 वन बियॉन्ड ट्रेनिंग (असेखा सं. आशीष्य)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य होते हैं... संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु में प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के सद्‌गुणों का समूह, प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का समूह, प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के पन्ना (दिव्य ज्ञान) का समूह, प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की मुक्ति का समूह, और प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के मुक्ति के ज्ञान और दृष्टि (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) का समूह होता है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य होते हैं... संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र।" [135]

---

109 चारों दिशाओं में घर पर (Catuddisa sans. Caturdisha)

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) में पाँच गुण होते हैं, एक भिक्षु चारों दिशाओं में सहज महसूस करता है। 1119 वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, एक भिक्षु गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। (2) उसने बहुत कुछ सीखा है, जो सीखा है उसे याद रखता है और उसे संचित करता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संन्यासी पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों - ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से जांचा है और दृष्टि से भलीभांति समझा है। (3) वह किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियों और भोजन से संतुष्ट रहता है। (4) वह इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, चारों दिशाओं को प्राप्त करता है। ध्यान (सम्मोहन की अवस्थाएँ) जो उच्चतर मन का निर्माण करती हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं। (5) दोषों के नाश के साथ, उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु चारों दिशाओं में सहज महसूस करता है।

---

110 वन (अरन्ना सं. अरण्य)

पाँच गुणों से युक्त भिक्षु, वनों और झाड़ियों में स्थित एकांतवास में रहने के योग्य होते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु गुणी होते हैं... वे उनमें साधना करते हैं। (2) उन्होंने बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से अच्छी तरह से पारंगत हैं। (3) उन्होंने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न की है; वे बलवान हैं, प्रयास में दृढ़ हैं, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) की साधना के कर्तव्य का त्याग नहीं करते। (4) वे इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) प्राप्त करते हैं जो उच्च मन का निर्माण करती हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं। (5) दोषों के नाश के साथ, उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा, इसी जीवन में, स्वयं के लिए मन की दोषरहित मुक्ति का अनुभव किया है। [136] मुक्ति वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा ज्ञान प्राप्त कर उसमें प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। इन पांच गुणों से युक्त भिक्षु जंगलों और वनों में दूरस्थ आवासों में रहने के योग्य होता है।

द्वितीय. अंधकविन्द [1120]

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

111 परिवारों का एक आगंतुक (कुलुपाका)

"भिक्षुओं, जिनमें जीवित गुण होते हैं, परिवारों में अतिथि के रूप में जाने वाला भिक्षु उन्हें अप्रिय और नापसंद होता है, और न तो वे उसका सम्मान करते हैं और न ही उसे महत्व देते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह मात्र परिचय के आधार पर घनिष्ठता का अनुमान लगाता है; (2) वह ऐसी वस्तुएँ बाँटता है जो उसकी नहीं हैं; (3) वह विभाजित लोगों के साथ संगति करता है; (4) वह कान में फुसफुसाता है; और (5) वह अत्यधिक अनुरोध करता है। इन पाँच गुणों से युक्त, परिवारों में अतिथि के रूप में जाने वाला भिक्षु उन्हें अप्रिय और नापसंद होता है, और न तो वे उसका सम्मान करते हैं और न ही उसे महत्व देते हैं।"

"भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त, जो भिक्षु परिवारों में अतिथि के रूप में जाते हैं, वे परिवारों को प्रसन्न करते हैं और उनका आदर करते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वे मात्र परिचय के आधार पर घनिष्ठता नहीं जताते; (2) वे ऐसी वस्तुएँ नहीं बाँटते जो उनकी नहीं हैं; (3) वे विभाजित लोगों के साथ संगति नहीं करते; (4) वे कान में फुसफुसाते नहीं; और (5) वे अत्यधिक अनुरोध नहीं करते। [137] इन पाँच गुणों से युक्त, जो भिक्षु परिवारों में अतिथि के रूप में जाते हैं, वे परिवारों को प्रसन्न करते हैं और उनका आदर करते हैं।"

---

112 एक परिचारक भिक्षु (पच्चसमाना)

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को अपने साथ भिक्षु के रूप में नहीं ले जाना चाहिए। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह बहुत पीछे या बहुत पास चलता है; (2) वह आपका कटोरा भर जाने पर नहीं लेता; (3) जब आपकी बात आपत्तिजनक हो तो वह आपको नहीं रोकता; (4) वह बोलते समय आपको बार-बार टोकता है; और (5) वह मूर्ख, नासमझ और मंदबुद्धि है। इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को भिक्षु के रूप में अपने साथ नहीं ले जाना चाहिए।

"भिक्षुओं, जिनमें पाँच अन्य गुण हों, उन्हें सेवक भिक्षु के रूप में साथ ले जाया जा सकता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह न तो बहुत पीछे चलता है और न ही बहुत पास; (2) वह आपका कटोरा भर जाने पर उसे उठा लेता है; (3) जब आपकी वाणी आपत्तिजनक हो, तो वह आपको रोकता है; (4) वह आपके बोलते समय आपको बार-बार नहीं टोकता; और (5) वह बुद्धिमान, समझदार और चतुर होता है। इन पाँच गुणों वाले व्यक्ति को सेवक भिक्षु के रूप में साथ ले जाया जा सकता है।"

---

113 सम्यक समाधि (सम्मा-समाधि सं. सम्यक-समाधि)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ होते हैं। वे पाँच गुण कौन से हैं? यहाँ, भिक्षु रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों और स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकते। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ होते हैं।"

"भिक्षुओं (मठवासियों), जिनमें पाँच अन्य गुण होते हैं, वे सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में प्रवेश करने और उसमें रहने में सक्षम होते हैं। वे पाँच गुण कौन से हैं? [138] यहाँ, एक भिक्षु धैर्यपूर्वक रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों और स्पर्शनीय वस्तुओं को सहन कर सकता है। इन पाँच गुणों से युक्त एक भिक्षु सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में प्रवेश करने और उसमें रहने में सक्षम होता है।"

---

114 अंधकविंदा

एक बार भगवान (बुद्ध) अंधकविन्द में मगधियों के बीच निवास कर रहे थे। तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"आनंद, वे भिक्षु जो नवदीक्षित हैं, जो हाल ही में संन्यासी जीवन में आए हैं, जो अभी-अभी इस धम्म और अनुशासन में शामिल हुए हैं, उन्हें आप पाँच बातों में प्रोत्साहित, स्थिर और स्थापित करें। वे पाँच बातें क्या हैं?"

(1) उन्हें पतिमोक्खा के संयम में इस प्रकार प्रोत्साहित, स्थिर और स्थापित किया जाना चाहिए: 'आओ, मित्रों, सदाचारी बनो; पतिमोक्खा द्वारा संयमित रहो, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त रहो, छोटी-छोटी गलतियों में भी खतरा देखो। प्रशिक्षण नियमों को अपनाकर, उनमें अभ्यास करो।'

(2) उन्हें इस प्रकार इंद्रिय-सम्मोहन में प्रोत्साहित, स्थिर और स्थापित किया जाना चाहिए: 'आओ, मित्रों, इंद्रिय-सम्मोहन के द्वारों की रक्षा करो; सती ध्यान को अपना रक्षक बनाओ; सती ध्यान में रहते हुए सचेत और सतर्क रहो, एक संरक्षित मन धारण करो, एक ऐसा मन जो सती ध्यान की सुरक्षा में हो।'

(3) "उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, उन्हें शांत किया जाना चाहिए और इस प्रकार अपनी वाणी को सीमित करने में उन्हें स्थापित किया जाना चाहिए: 'आओ, मित्रों, ज्यादा बात मत करो। अपनी वाणी पर सीमा लगाओ।'

(4) "उन्हें शारीरिक एकांत में इस प्रकार प्रोत्साहित, व्यवस्थित और स्थापित किया जाना चाहिए: 'आओ, मित्रों, वनवासी बनो। जंगलों और वन उपवनों में दूरस्थ आवासों में शरण लो।'

(5) "उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, स्थिर किया जाना चाहिए और सही परिप्रेक्ष्य में स्थापित किया जाना चाहिए, इस प्रकार: 'आओ, मित्रों, सही दृष्टिकोण रखो और सही परिप्रेक्ष्य रखो।' 1122 [139]

"आनंद, वे भिक्षु जो नवदीक्षित हैं, जो हाल ही में संन्यासी जीवन में प्रवेश कर चुके हैं, जो अभी-अभी इस धम्म और अनुशासन में आए हैं, उन्हें इन पांच बातों में आपके द्वारा प्रोत्साहित, स्थिर और स्थापित किया जाना चाहिए।"

---

115 कंजूस नन (मच्चरिनी)

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) में पाँच गुण होते हैं, तो भिक्षुणी (भिक्षुणियों) को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वह आवास, परिवार, लाभ, स्तुति और धर्म के प्रति कंजूस होती है। 1123 इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं, जिनमें पाँच अन्य गुण होते हैं, भिक्षुणी को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वह आवास, परिवार, लाभ, स्तुति और धर्म के प्रति कंजूस नहीं होती। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

---

116 स्तुति (वन्नना सं. वंदना)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) बिना जाँच-पड़ताल किए वह निंदा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करती है। (2) बिना जाँच-पड़ताल किए वह प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की निंदा करती है। (3) बिना जाँच-पड़ताल किए वह संदेह के योग्य बात पर विश्वास करती है। (4) बिना जाँच-पड़ताल किए वह विश्वास के योग्य बात पर संदेह करती है। (5) वह आस्था से दिए गए दान को व्यर्थ कर देती है। 1124 इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) में पाँच अन्य गुण होते हैं, और भिक्षुणी को स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचाया जाता है जैसे कि उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) जाँच-परख करने के बाद, वह निंदा के योग्य व्यक्ति की निंदा करती है। (2) जाँच-परख करने के बाद, वह प्रशंसा के योग्य व्यक्ति की प्रशंसा करती है। [140] (3) जाँच-परख करने के बाद, वह संदेह के योग्य मामले पर संदेह करती है। (4) जाँच-परख करने के बाद, वह विश्वास के योग्य मामले पर विश्वास करती है। (5) वह आस्था से दिए गए दान को व्यर्थ नहीं करती। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी को स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचाया जाता है जैसे कि उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

---

117 ईर्ष्यालु (इस्सुकिनी)

पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) बिना जाँच-पड़ताल किए वह निंदा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करती है। (2) बिना जाँच-पड़ताल किए वह प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की निंदा करती है। (3) वह ईर्ष्यालु (4) और कंजूस (5) होती है। (5) वह श्रद्धा से दिए गए दान को व्यर्थ कर देती है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) में पाँच अन्य गुण होते हैं, और इसी गुण के कारण भिक्षुणी स्वर्ग में ऐसे पहुँचती है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। (1) गहन जाँच-पड़ताल करने के बाद, वह निंदा के योग्य व्यक्ति की निंदा करती है। (2) गहन जाँच-पड़ताल करने के बाद, वह प्रशंसा के योग्य व्यक्ति की प्रशंसा करती है। (3) वह ईर्ष्या (4) और कंजूसी (5) से मुक्त होती है। वह आस्था से दिए गए दान को व्यर्थ नहीं करती। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी स्वर्ग में ऐसे पहुँचती है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

---

118 गलत दृश्य (मिचदिट्ठिका सं. मिथ्या-दृष्टि)

"भिक्षुओं (सम्मोहनों), पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी (भिक्षुणियों) को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) बिना जाँच-पड़ताल किए वह निंदा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करती है। (2) बिना जाँच-पड़ताल किए वह प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की निंदा करती है। (3) उसका दृष्टिकोण गलत है (4) और उसके इरादे गलत हैं। (5) वह आस्था से दिए गए दान को व्यर्थ कर देती है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी (भिक्षुणियों) को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो, [141]

"भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त भिक्षुणी को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) जाँच-परख करने के बाद, वह निंदा के योग्य व्यक्ति की निंदा करती है। (2) जाँच-परख करने के बाद, वह प्रशंसा के योग्य व्यक्ति की प्रशंसा करती है। (3) उसका दृष्टिकोण सही होता है (4) और उसके इरादे सही होते हैं। (5) वह आस्था से दिए गए दान को व्यर्थ नहीं करती। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षुणी को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

---

119 गलत भाषण (मिचावाका सं. मिथ्या-वाका)

[जैसा कि 5:118 में है, लेकिन नरक और स्वर्ग की ओर ले जाने वाले तीसरे और चौथे गुणों को क्रमशः निम्नलिखित से बदल दें:

. . . (3) वह गलत वाणी और (4) गलत कर्म करती है. . . .

(3) वह सही वाणी और (4) सही कर्म वाली है।

---

120 गलत प्रयास (मिचावयामा)

[जैसा कि 5:118 में है, लेकिन नरक और स्वर्ग की ओर ले जाने वाले तीसरे और चौथे गुणों को क्रमशः निम्नलिखित से बदल दें:]

"... (3) वह गलत प्रयास और (4) गलत ध्यान (ध्यान/सती) की है। [142]

(3) वह सही प्रयास और (4) सही ध्यान (सती/सचेतनता) की अनुयायी है..."

III. बीमार (गिलाना)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

121. बीमार (गिलाना सैंस. ग्लानी)

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। फिर, शाम के समय, भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और आश्रम की ओर गए, जहाँ उन्होंने एक दुर्बल और बीमार भिक्षु को देखा। तब वे तैयार आसन पर बैठ गए और भिक्षुओं को संबोधित किया:

भिक्षुओं, यदि पाँच बातें किसी दुर्बल और बीमार भिक्षु से विमुख न हों, तो उससे यह अपेक्षा की जा सकती है: कुछ ही समय में, दोषों के नाश होने पर, वह इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान से मन की निष्कलंक मुक्ति, प्रभात (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को स्वयं अनुभव करेगा, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करेगा। वे पाँच बातें क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु शरीर की अनाकर्षकता को निहारते हुए, भोजन की अरुचि को अनुभव करते हुए, समस्त संसार में अनाकर्ष का अनुभव करते हुए, [143] सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) का चिंतन करते हुए (ध्यान/अनुपसी में) निवास करता है; और उसे मृत्यु का बोध (सन्न/संज्ञा) आंतरिक रूप से सुस्थापित है। यदि ये पाँच बातें किसी दुर्बल और बीमार भिक्षु से विमुख न हों, तो उससे यह अपेक्षा की जा सकती है: 'कुछ ही समय में, उसके सभी दोषों के नाश होने पर, वह स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान से मन की निष्कलंक मुक्ति, प्रभात (दिव्य ज्ञान) को प्राप्त कर लेगा, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करेगा। वे पाँच बातें क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु ध्यान (अनुपसी) में शरीर की अनाकर्षकता को निहारते हुए, भोजन की अरुचि को अनुभव करते हुए, समस्त संसार में अनाकर्ष का अनुभव करते हुए ([143]) निवास करता है; और उसे मृत्यु का बोध (सन्न/संज्ञा) आंतरिक रूप से सुस्थापित है। समय के साथ, दोषों के नाश होने पर, वह स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करेगा, और उसमें प्रवेश करने के बाद, वह उसमें निवास करेगा।

---

122 माइंडफुलनेस (ध्यान) की स्थापना (सतिसुपत्थिता सं. स्मृति-सु-प्रतिष्ठिता)

भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु या भिक्षुणी पाँच चीजों का विकास और अभ्यास करता है, तो दो फलों में से एक की अपेक्षा की जा सकती है: या तो इसी जीवन में अंतिम ज्ञान, या यदि कोई अवशेष शेष रहता है, तो अनागामी अवस्था (पृथ्वी पर पुनर्जन्म नहीं)। वे पाँच क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु ने घटनाओं के उद्भव और क्षय को समझने वाले प्रभात (दिव्य ज्ञान) को प्राप्त करने के लिए आंतरिक रूप से सती (ध्यान) स्थापित कर रखी है; 112 वह शरीर की अनाकर्षकता को निहारते हुए, भोजन की अरुचि को समझते हुए, संपूर्ण संसार में आनंदहीनता को निहारते हुए, और सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता को निहारते हुए (ध्यान/अनुपसी) ध्यान में लीन रहता है। यदि कोई भिक्षु या भिक्षुणी इन पांच गुणों का विकास और अभ्यास करता है, तो उसे दो में से एक फल प्राप्त होने की उम्मीद होती है: या तो इसी जीवन में अंतिम ज्ञान प्राप्त हो जाए, या यदि कुछ शेष रह जाए तो पुनर्जन्म न होने की अवस्था (अनगामी) प्राप्त हो जाए।

---

123 एक परिचारक (1) (उपत्थक1 सं. उपष्टक)

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में पाँच गुणों के कारण रोगी की देखभाल करना कठिन होता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह हानिकारक कार्य करता है। (2) वह लाभकारी कार्यों में संयम नहीं बरतता। (3) वह अपनी दवा नहीं लेता। (4) वह अपने दयालु सेवक को अपने लक्षणों का सही-सही वर्णन नहीं करता; वह स्थिति के अनुसार यह नहीं बताता कि उसकी स्थिति बिगड़ रही है, सुधर रही है या वैसी ही बनी हुई है। (5) वह उत्पन्न शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर पाता जो पीड़ादायक, कष्टदायक, तीक्ष्ण, चुभने वाली, कष्टदायक, अप्रिय और जीवन शक्ति को क्षीण करने वाली होती हैं। [144] इन पाँच गुणों के कारण रोगी की देखभाल करना कठिन होता है।"

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में पाँच अन्य गुण होने से रोगी की देखभाल करना आसान होता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वे लाभकारी कार्य करते हैं। (2) वे लाभकारी कार्यों में संयम बरतते हैं। (3) वे नियमित रूप से दवा लेते हैं। (4) वे अपने दयालु सेवक को अपने लक्षणों का सटीक वर्णन करते हैं; वे आवश्यकतानुसार बताते हैं कि उनकी स्थिति बिगड़ रही है, सुधर रही है या वैसी ही बनी हुई है। (5) वे पीड़ादायक, कष्टदायी, तीक्ष्ण, चुभने वाली, कष्टदायक, अप्रिय और जीवन शक्ति को क्षीण करने वाली शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) को धैर्यपूर्वक सहन कर सकते हैं। इन पाँच गुणों से युक्त रोगी की देखभाल करना आसान होता है।"

---

124 एक परिचारक (2) (उपत्थक2 सं. उपष्टक)

"भिक्षुओं (साधुओं) में पाँच गुण होते हैं, फिर भी एक सेवक रोगी की देखभाल करने के योग्य नहीं होता। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह औषधि तैयार करने में असमर्थ होता है। (2) वह लाभकारी और हानिकारक का ज्ञान नहीं रखता, इसलिए वह हानिकारक वस्तुएँ देता है और लाभकारी वस्तुएँ नहीं देता। (3) वह भौतिक लाभों के लिए रोगी की देखभाल करता है, न कि प्रेम और करुणा (मेट्टा) की भावना से। (4) उसे मल, मूत्र, उल्टी या थूक साफ करने में घृणा होती है। (5)

वह समय-समय पर रोगी को धर्म प्रवचन से उपदेश देने, प्रोत्साहित करने, प्रेरित करने और प्रसन्न करने में असमर्थ रहता है। इन पाँच गुणों से रहित परिचारक रोगी की देखभाल करने के योग्य नहीं है।

"भिक्षुओं (मठवासियों), जिनमें पाँच अन्य गुण होते हैं, वे रोगी की देखभाल करने के योग्य होते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह औषधि तैयार करने में सक्षम होता है। (2) वह जानता है कि क्या लाभकारी है और क्या हानिकारक, इसलिए वह हानिकारक को रोककर लाभकारी प्रदान करता है। (3) वह भौतिक पुरस्कारों के लिए नहीं, बल्कि प्रेमपूर्ण करुणा के भाव से रोगी की देखभाल करता है। (4) उसे मल, मूत्र, उल्टी या थूक को साफ करने में कोई घृणा नहीं होती। (5) वह समय-समय पर धम्म प्रवचन द्वारा रोगी को उपदेश देने, प्रोत्साहित करने, प्रेरित करने और प्रसन्न करने में सक्षम होता है। [145] इन पाँच गुणों से युक्त, एक सेवक रोगी की देखभाल करने के योग्य होता है।"

---

125 जीवन शक्ति (1) (अनयुस्स1)

भिक्षुओं, ये पाँच बातें हैं जो जीवन शक्ति को कम करती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं? हानिकारक कर्म करना; लाभकारी कर्मों में संयम न बरतना; पाचन क्रिया खराब होना; भिक्षा के लिए अनुचित समय पर चलना; ब्रह्मचर्य का पालन न करना। ये पाँच बातें जीवन शक्ति को कम करती हैं।

भिक्षुओं, ये पाँच बातें हैं जो जीवन शक्ति बढ़ाती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं? लाभकारी कर्म करना; लाभकारी कर्मों में संयम बरतना; पाचन क्रिया अच्छी होना; उचित समय पर भिक्षा मांगने जाना; ब्रह्मचर्य का पालन करना। ये पाँच बातें ही जीवन शक्ति बढ़ाती हैं।

---

126 जीवन शक्ति (2) (अनयुस्स2)

भिक्षुओं, ये पाँच बातें हैं जो प्राण शक्ति को कम करती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं? हानिकारक कर्म करना; लाभकारी कर्मों में संयम न बरतना; पाचन शक्ति में कमी; अनैतिक आचरण; बुरे मित्र होना। ये पाँच बातें प्राण शक्ति को कम करती हैं।

भिक्षुओं, ये पाँच बातें हैं जो जीवन शक्ति बढ़ाती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं? लाभकारी कर्म करना; लाभकारी कर्मों में संयम बरतना; पाचन शक्ति अच्छी होना; गुणी होना; अच्छे मित्र होना। ये पाँच बातें ही जीवन शक्ति बढ़ाती हैं।

---

127 अलग रहना (वापाका)

"भिक्षुओं, जिनमें पाँच गुण होते हैं, वे संघ से अलग रहने के योग्य नहीं होते। वे पाँच गुण क्या हैं? वे किसी भी प्रकार के वस्त्र से संतुष्ट नहीं होते; वे किसी भी प्रकार के भिक्षा भोजन से संतुष्ट नहीं होते; वे किसी भी प्रकार के आवास से संतुष्ट नहीं होते; वे बीमारों के लिए किसी भी प्रकार की औषधियों और भोजन से संतुष्ट नहीं होते; और वे कामुक विचारों में लीन रहते हैं। इन पाँच गुणों के कारण, भिक्षु संघ से अलग रहने के योग्य नहीं होते।"

"भिक्षुओं, पाँच अन्य गुणों से युक्त भिक्षु संघ से अलग रहने के योग्य होते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? [146] वे किसी भी प्रकार के वस्त्र से संतुष्ट रहते हैं; वे किसी भी प्रकार के भिक्षा भोजन से संतुष्ट रहते हैं; वे किसी भी प्रकार के आवास से संतुष्ट रहते हैं; वे बीमारों के लिए किसी भी प्रकार की औषधियों और भोजन से संतुष्ट रहते हैं; 1127 और वे त्याग के विचारों में लीन रहते हैं। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु संघ से अलग रहने के योग्य होते हैं।"

---

128 एक तपस्वी का सुख (समानसुख सं. श्रमणसुखा)

भिक्षुओं, तपस्वी के लिए पाँच प्रकार के कष्ट होते हैं। वे पाँच कौन से हैं? यहाँ, भिक्षु किसी भी प्रकार के वस्त्र से संतुष्ट नहीं होता; वह किसी भी प्रकार के भिक्षाभोजन से संतुष्ट नहीं होता; वह किसी भी प्रकार के आवास से संतुष्ट नहीं होता; वह किसी भी प्रकार की औषधियों और बीमारों के लिए भोजन से संतुष्ट नहीं होता; और वह असंतुष्ट रहकर ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करता है। ये तपस्वी के लिए पाँच प्रकार के कष्ट हैं।

भिक्षुओं, तपस्वी के लिए पाँच प्रकार के सुख होते हैं। वे पाँच कौन से हैं? यहाँ, भिक्षु किसी भी प्रकार के वस्त्र से संतुष्ट रहता है; वह किसी भी प्रकार के भिक्षा भोजन से संतुष्ट रहता है; वह किसी भी प्रकार के आवास से संतुष्ट रहता है; वह बीमारों के लिए किसी भी प्रकार की औषधियों और भोजन से संतुष्ट रहता है; और वह ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का निर्वाह करते हुए संतोषपूर्वक जीवन व्यतीत करता है। तपस्वी के लिए ये पाँच प्रकार के सुख हैं।

---

129 घाव (परिकुप्पा)

"भिक्षुओं, ये पाँच असाध्य दोष हैं जो दुख के लोक की ओर ले जाते हैं, जो नरक की ओर ले जाते हैं। वे पाँच कौन से हैं? कोई अपनी माता का प्राण छीन लेता है; कोई अपने पिता का प्राण छीन लेता है; कोई अरहंत का प्राण छीन लेता है; घृणा के भाव से कोई तथागत (बुद्ध) का रक्त बहाता है; कोई संघ में फूट डालता है। ये पाँच असाध्य दोष हैं जो दुख के लोक की ओर ले जाते हैं, जो नरक की ओर ले जाते हैं।" [147]

---

130 आपदाएँ (ब्यासन)

भिक्षुओं, ये पाँच विपत्तियाँ हैं। कौन सी पाँच? सगे-संबंधियों की मृत्यु से विपत्ति, धन की हानि से विपत्ति, रोग से विपत्ति, पुण्य कर्म से संबंधित विपत्ति और दृष्टि से संबंधित विपत्ति। 1129 शरीर के क्षोभ के साथ मृत्यु के बाद प्राणी दुःख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म नहीं लेते हैं, बल्कि पुण्य कर्म से संबंधित विपत्ति और दृष्टि से संबंधित विपत्ति के कारण मृत्यु के बाद प्राणी दुःख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं। ये पाँच विपत्तियाँ हैं।

भिक्षुओं, ये पाँच सिद्धियाँ (संपदाएँ) हैं। ये पाँच क्या हैं? संबंधियों के प्रति सिद्धि, धन के प्रति सिद्धि, स्वास्थ्य के प्रति सिद्धि, सद्गुणों के प्रति सिद्धि और दृष्टि के प्रति सिद्धि। शरीर के क्षोभ के बाद मृत्यु के समय प्राणी शुभ स्थान, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म इसलिए नहीं लेते कि वे संबंधियों के प्रति सिद्धि, धन के प्रति सिद्धि या स्वास्थ्य के प्रति सिद्धि के कारण जन्म लेते हैं। सद्गुणों के प्रति सिद्धि और दृष्टि के प्रति सिद्धि के कारण ही शरीर के क्षोभ के बाद मृत्यु के समय प्राणी शुभ स्थान, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं। ये पाँच सिद्धियाँ (संपदाएँ) हैं।

IV. राजा

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

131 पहिया घुमाना (1) (चक्कनुवत्तन1 सं. चक्रानुवर्तन)

"भिक्षुओं (साधुओं), पाँच गुणों से युक्त, एक चक्र-घुमाने वाला सम्राट केवल धम्म के माध्यम से ही चक्र को गतिमान करता है, 1130 एक ऐसा चक्र जिसे [148] मानव रूप में कोई शत्रु प्राणी नहीं मोड़ सकता। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, चक्र-घुमाने वाला सम्राट वह है जो जानता है कि क्या अच्छा है, जो धम्म को जानता है, जो उचित माप को जानता है, जो उचित समय को जानता है और जो सभा को जानता है। इन पाँच गुणों से युक्त, एक चक्र-घुमाने वाला सम्राट केवल धम्म के माध्यम से ही चक्र को गतिमान करता है, एक ऐसा चक्र जिसे मानव रूप में कोई शत्रु प्राणी नहीं मोड़ सकता।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध पुरुष, केवल धम्म के माध्यम से धम्म के अद्वितीय चक्र को गतिमान करते हैं, एक ऐसा चक्र जिसे किसी तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार के किसी भी व्यक्ति द्वारा वापस नहीं मोड़ा जा सकता। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध पुरुष, वह हैं जो अच्छाई को जानते हैं, जो धम्म को जानते हैं, जो उचित माप को जानते हैं, जो उचित समय को जानते हैं और जो सभा को जानते हैं। 1131 इन पाँच गुणों से युक्त तथागत (बुद्ध)... केवल धम्म के माध्यम से धम्म के अद्वितीय चक्र को गतिमान करते हैं, एक ऐसा चक्र जिसे संसार के किसी भी व्यक्ति द्वारा वापस नहीं मोड़ा जा सकता।"

---

132 पहिया घुमाना (2) (चक्कनुवत्तन2 सं. चक्रानुवर्तन)

"भिक्षुओं (मठवासियों), पाँच गुणों से युक्त, चक्र चलाने वाले सम्राट का सबसे बड़ा पुत्र, केवल धम्म के माध्यम से, अपने पिता द्वारा स्थापित चक्र को निरंतर चलाता रहता है, एक ऐसा चक्र जिसे मानव रूप में कोई शत्रु प्राणी नहीं मोड़ सकता। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, चक्र चलाने वाले सम्राट का सबसे बड़ा पुत्र वह है जो अच्छाई को जानता है, जो धम्म को जानता है, जो उचित माप को जानता है, जो उचित समय को जानता है और जो सभा को जानता है। इन पाँच गुणों से युक्त, चक्र चलाने वाले सम्राट का सबसे बड़ा पुत्र, केवल धम्म के माध्यम से, अपने पिता द्वारा स्थापित चक्र को निरंतर चलाता रहता है, एक ऐसा चक्र जिसे मानव रूप में कोई शत्रु प्राणी नहीं मोड़ सकता। [149]

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त सारिपुत्त, केवल धम्म के माध्यम से, तथागत (बुद्ध) द्वारा स्थापित धम्म के उस अद्वितीय चक्र को निरंतर घुमाते रहते हैं, जिसे किसी तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार के किसी भी व्यक्ति द्वारा वापस नहीं घुमाया जा सकता। 1132 वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, सारिपुत्त वह हैं जो अच्छाई को जानते हैं, जो धम्म को जानते हैं, जो उचित माप को जानते हैं, जो उचित समय को जानते हैं और जो सभा को जानते हैं। इन पाँच गुणों से युक्त सारिपुत्त, केवल धम्म के माध्यम से, तथागत (बुद्ध) द्वारा स्थापित धम्म के उस अद्वितीय चक्र को निरंतर घुमाते रहते हैं, जिसे किसी तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार के किसी भी व्यक्ति द्वारा वापस नहीं घुमाया जा सकता।"

---

133 धर्मी राजा 1133 (धम्मराज सं. धर्मराज)

"भिक्षुओं (साधुओं), यहां तक कि एक चक्र चलाने वाला सम्राट, एक धर्मात्मा राजा जो धम्म के अनुसार शासन करता है, वह भी अपने ऊपर एक राजा के बिना चक्र नहीं चलाता।"

जब यह कहा गया, तो एक भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "परन्तु, हे भंते, चक्र घुमाने वाले राजा से भी श्रेष्ठ राजा कौन हो सकता है, एक ऐसा धर्मात्मा राजा जो धम्म के अनुसार शासन करता हो?"

“यह धम्म (धर्म) है, भिक्षु,” भगवान (बुद्ध) ने कहा। “यहाँ, एक चक्र-घुमाने वाला सम्राट, एक धर्मात्मा राजा जो धम्म के अनुसार शासन करता है, केवल धम्म पर भरोसा करता है, धम्म का आदर, सम्मान और पूजा करता है, धम्म को अपना मानक, ध्वज और अधिकार मानता है, और अपने दरबार में लोगों को धार्मिक सुरक्षा, आश्रय और रक्षा प्रदान करता है। फिर, एक चक्र-घुमाने वाला सम्राट, एक धर्मात्मा राजा जो धम्म के अनुसार शासन करता है... अपने क्षत्रिय सामंतों; अपनी सेना; ब्राह्मणों और गृहस्थों; नगर और ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों; तपस्वियों और ब्राह्मणों; पशुओं और पक्षियों को धार्मिक सुरक्षा, आश्रय और रक्षा प्रदान करता है। [150] ऐसी धार्मिक सुरक्षा, आश्रय और रक्षा प्रदान करने के बाद, वह चक्र-घुमाने वाला सम्राट, एक धर्मात्मा राजा जो धम्म के अनुसार शासन करता है, केवल धम्म के माध्यम से ही चक्र को घुमाता है, एक ऐसा चक्र जिसे मानव रूप में कोई भी शत्रु प्राणी वापस नहीं घुमा सकता।”

"इसी प्रकार, हे भिक्षु, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, धर्म के धर्मी राजा, केवल धर्म पर निर्भर रहते हुए, धर्म का आदर, सम्मान और पूजा करते हुए, धर्म को अपना मानक, ध्वज और अधिकार मानते हुए, भिक्षुओं को धार्मिक संरक्षण, आश्रय और सुरक्षा प्रदान करते हुए कहते हैं: (1) 'ऐसे शारीरिक कर्मों का अभ्यास करना चाहिए; ऐसे शारीरिक कर्मों का अभ्यास नहीं करना चाहिए। (2) ऐसे वाक् कर्मों का अभ्यास करना चाहिए; ऐसे वाक् कर्मों का अभ्यास नहीं करना चाहिए। (3) ऐसे मानसिक कर्मों का अभ्यास करना चाहिए; ऐसे मानसिक कर्मों का अभ्यास नहीं करना चाहिए। (4) ऐसी आजीविका का अभ्यास करना चाहिए; ऐसी आजीविका का अभ्यास नहीं करना चाहिए। (5) ऐसे गाँव या नगर में शरण लेनी चाहिए; ऐसे गाँव या नगर में शरण नहीं लेनी चाहिए।'

फिर से, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, धम्म के धर्मात्मा राजा, केवल धम्म पर भरोसा करते हुए, धम्म का आदर, सम्मान और पूजा करते हुए, धम्म को अपना मानक, ध्वज और अधिकार मानते हुए, भिक्षुणियों (नन) को धार्मिक संरक्षण, आश्रय और सुरक्षा प्रदान करते हैं... पुरुष गृहस्थ अनुयायियों को... स्त्री गृहस्थ अनुयायियों को, यह कहते हुए: 'ऐसे शारीरिक कर्मों का अभ्यास करना चाहिए... ऐसे वाणी कर्मों का अभ्यास करना चाहिए... ऐसे मानसिक कर्मों का अभ्यास करना चाहिए... ऐसी आजीविका का अभ्यास करना चाहिए; ऐसी आजीविका का अभ्यास नहीं करना चाहिए। ऐसे गाँव या नगर में शरण लेनी चाहिए; ऐसे गाँव या नगर में शरण नहीं लेनी चाहिए।'

"इस प्रकार की धार्मिक सुरक्षा, आश्रय और रक्षा प्रदान करके, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, [151] धम्म के धर्मी राजा, केवल धम्म के माध्यम से धम्म के अतुलनीय चक्र को गतिमान करते हैं, एक ऐसा चक्र जिसे किसी तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, या ब्रह्मा, या संसार में किसी के द्वारा भी वापस नहीं मोड़ा जा सकता है।"

---

134 किसी भी दिशा में (यस्सामदिसम सं. यथादिशा)

"भिक्षुओं (साधुओं), चाहे वह किसी भी क्षेत्र में निवास करे, एक अभिषिक्त क्षत्रिय राजा, जिसके पास पाँच गुणधर्म होते हैं, अपने राज्य में निवास करता है। वे पाँच कौन से हैं?"

"(1) यहाँ, एक प्रधान-अभिषिक्त खत्तीय राजा अपने माता-पिता दोनों की ओर से उच्च कुल का है, शुद्ध वंश का है, और सातवीं पीढ़ी तक जन्म के संबंध में निर्विवाद और निष्कलंक है। 1134 (2) वह धनी है, अपार संपत्ति और संपदा से युक्त है, उसके खजाने और भंडारगृह भरे हुए हैं। (3) वह शक्तिशाली है, उसके पास चार भागों की सेना है जो उसकी आज्ञा का पालन करती है। (4) उसका सलाहकार बुद्धिमान, सक्षम और समझदार है, जो अतीत, भविष्य और वर्तमान से संबंधित लाभों पर विचार करने में सक्षम है। 135 (5) उसके ये चार गुण उसकी प्रसिद्धि को बढ़ाते हैं। प्रसिद्धि सहित इन पाँचों गुणों से युक्त होकर, वह अपने राज्य में, चाहे वह किसी भी क्षेत्र में निवास करे, उसी में रहता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि विजयी लोगों के लिए ऐसा ही होता है।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, चाहे वह किसी भी क्षेत्र में निवास करे, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु मन से मुक्त रहता है। वे पाँच गुण कौन से हैं?"

"(1) यहाँ, एक भिक्षु (भिक्षु) गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनमें अभ्यास करता है। [152] यह प्रधान अभिषिक्त क्षत्रिय राजा के उच्च कुल में होने के समान है। (2) उसने बहुत कुछ सीखा है, जो सीखा है उसे याद रखता है, और जो सीखा है उसे संचित करता है।

वे शिक्षाएँ जो आरंभ में अच्छी हों, मध्य में अच्छी हों और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध आध्यात्मिक जीवन की घोषणा करती हों— ऐसी शिक्षाओं का उन्होंने बहुत अध्ययन किया है, उन्हें मन में संजोकर रखा है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से उनका विश्लेषण किया है और दृष्टि से अच्छी तरह से समझा है। यह प्रधान अभिषिक्त क्षत्रिय राजा के धनवान होने, अपार धन-संपत्ति से संपन्न होने, भरे हुए खजानों और भंडारगृहों के समान है। (3) उन्होंने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न की है; वे बलवान हैं, प्रयास में दृढ़ हैं, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करते। यह प्रधान अभिषिक्त क्षत्रिय राजा के शक्तिशाली होने के समान है। (4) वे बुद्धिमान हैं; उसके पास वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति जानता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। यह उस प्रकार है जैसे प्रधान क्षत्रिय राजा के पास एक अच्छा सलाहकार हो।(5) उसके ये चार गुण उसकी मुक्ति में सहायक होते हैं। मुक्ति सहित इन पाँचों गुणों से युक्त होने के कारण, वह चाहे जिस भी क्षेत्र में निवास करे, वह मन से मुक्त रहता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि मन से मुक्त लोगों के लिए ऐसा ही होता है।

---

135 तड़प (पत्थाना1)

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में पाँच गुण होते हैं, एक प्रधान राज्याभिषेकित क्षत्रिय राजा का सबसे बड़ा पुत्र राजत्व की लालसा रखता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, प्रधान राज्याभिषेकित क्षत्रिय राजा का सबसे बड़ा पुत्र अपने माता और पिता दोनों ओर से उत्तम कुल का है, शुद्ध वंश का है, और सातवीं पीढ़ी तक जन्म के संबंध में निर्दोष और बेदाग है। (2) वह सुंदर, आकर्षक, सुशोभित और अत्यंत सुंदर रंग का है। (3) वह अपने माता-पिता को प्रसन्न और प्रिय है। (4) वह नगरों और ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को प्रसन्न और प्रिय है। (5) वह प्रधान राज्याभिषेकित क्षत्रिय राजाओं की कलाओं में प्रशिक्षित और निपुण है, चाहे वह हाथी की सवारी हो, घुड़सवारी हो, रथ चलाना हो, तीरंदाजी हो या तलवारबाजी हो। [153]

उसके मन में यह विचार आता है: (1) 'मैं दोनों ओर से उत्तम कुल का हूँ... जन्म से निर्दोष हूँ, तो मुझे राजत्व की इच्छा क्यों नहीं होनी चाहिए? (2) मैं सुंदर, आकर्षक, सुशोभित और अत्यंत सुंदर रंग का हूँ, तो मुझे राजत्व की इच्छा क्यों नहीं होनी चाहिए? (3) मैं अपने माता-पिता को प्रिय और आज्ञाकारी हूँ, तो मुझे राजत्व की इच्छा क्यों नहीं होनी चाहिए? (4) मैं नगरों और ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को प्रिय और आज्ञाकारी हूँ, तो मुझे राजत्व की इच्छा क्यों नहीं होनी चाहिए? (5) मैं प्रधान राज्याभिषेकित क्षत्रिय राजाओं की कलाओं में प्रशिक्षित और निपुण हूँ, चाहे वह हाथी की सवारी हो, घुड़सवारी हो, रथ चलाना हो, तीरंदाजी हो या तलवारबाजी हो, तो मुझे राजत्व की इच्छा क्यों नहीं होनी चाहिए?' इन पाँचों गुणों से युक्त, प्रधान राज्याभिषेकित क्षत्रिय राजा का सबसे बड़ा पुत्र राजत्व की इच्छा रखता है।

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु दोषों के नाश की कामना करता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? (1) यहाँ, भिक्षु आस्था से परिपूर्ण है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं... देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु, प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध)।'" (2) वह शायद ही कभी बीमार या पीड़ित होते हैं, उनका पाचन तंत्र संतुलित होता है, न तो बहुत ठंडा और न ही बहुत गर्म, बल्कि मध्यम और साधना के लिए उपयुक्त होता है। (3) वे ईमानदार और खुले दिल के होते हैं, जो गुरु और अपने बुद्धिमान साथी भिक्षुओं के सामने अपने वास्तविक स्वरूप को प्रकट करते हैं। (4) उन्होंने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जागृत की है; वे बलवान और दृढ़ हैं, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) की साधना के कर्तव्य का त्याग नहीं करते। (5) वे बुद्धिमान हैं; उनके पास उत्पत्ति और क्षय को समझने वाला दिव्य ज्ञान है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है।

"उसे यह बात सूझती है: (1) 'मैं आस्था से परिपूर्ण हूँ; मैं तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता हूँ: "भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं... देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु, प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध)," तो मुझे [154] दोषों के नाश की कामना क्यों नहीं करनी चाहिए? (2) मैं शायद ही कभी बीमार या पीड़ित होता हूँ, मेरा पाचन संतुलित है, न तो बहुत ठंडा और न ही बहुत गर्म, बल्कि मध्यम और साधना के लिए उपयुक्त है, तो मुझे दोषों के नाश की कामना क्यों नहीं करनी चाहिए? (3) मैं ईमानदार और खुला हूँ; मैं गुरु और अपने बुद्धिमान साथी भिक्षुओं के सामने स्वयं को वैसे ही प्रकट करता हूँ जैसा मैं वास्तव में हूँ, तो मुझे दोषों के नाश की कामना क्यों नहीं करनी चाहिए? (4) मैंने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) के त्याग के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है... लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं किया है, तो मुझे दोषों के नाश की कामना क्यों नहीं करनी चाहिए? (5) मैं बुद्धिमान हूँ; मेरे पास पन्ना (दिव्य) है (ज्ञान)... [जो] दुख के पूर्ण विनाश की ओर ले जाता है, तो मुझे दोषों के विनाश की कामना क्यों नहीं करनी चाहिए?'

"इन पांच गुणों से युक्त भिक्षु दोषों के नाश की कामना करता है।"

---

136 तड़प (2) (पत्थाना2)

"एक प्रधान क्षत्रिय राजा का सबसे बड़ा पुत्र, जो पाँच गुणों से युक्त है, वायसराय बनने की इच्छा रखता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, प्रधान क्षत्रिय राजा का सबसे बड़ा पुत्र सातवीं पीढ़ी तक उच्च कुल का है। (2) वह सुंदर, आकर्षक, सुशोभित और अत्यंत सुंदर रंगत वाला है। (3) वह अपने माता-पिता को प्रसन्न और संतुष्ट करता है। (4) वह सशस्त्र बलों को प्रसन्न और संतुष्ट करता है। (5) वह बुद्धिमान, सक्षम और समझदार है, जो भूतकाल, भविष्यकाल और वर्तमान के लाभों पर विचार करने में सक्षम है।"

उसके मन में यह विचार आता है: (1) मैं उच्च कुल का हूँ... सातवीं पीढ़ी तक, तो मैं वायसराय बनने की इच्छा क्यों न रखूँ? (2) मैं सुंदर हूँ; आकर्षक, सुशोभित, अत्यंत सुंदर रंग का, तो मैं वायसराय बनने की इच्छा क्यों न रखूँ? (3) मैं अपने माता-पिता को प्रिय और स्वीकार्य हूँ, तो मैं वायसराय बनने की इच्छा क्यों न रखूँ? [155] (4) मैं सशस्त्र बलों को प्रिय और स्वीकार्य हूँ, तो मैं वायसराय बनने की इच्छा क्यों न रखूँ? (5) मैं बुद्धिमान, सक्षम और समझदार हूँ, अतीत, भविष्य और वर्तमान से संबंधित लाभों पर विचार करने में सक्षम हूँ, तो मैं वायसराय बनने की इच्छा क्यों न रखूँ?' इन पाँचों गुणों से युक्त, एक प्रमुख खत्तीय राजा का सबसे बड़ा पुत्र वायसराय बनने की इच्छा रखता है।

इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु दोषों के नाश की कामना करता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु गुणी है... वह उनमें साधना करता है। (2) उसने बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से भलीभांति ज्ञान प्राप्त किया है। (3) वह ऐसा व्यक्ति है जिसका मन सती ध्यान की चार अवस्थाओं में सुस्थापित है। (4) उसने ऊर्जा (वीर्य) जागृत की है... लाभकारी (कुशल) गुणों को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं किया है। (5) वह बुद्धिमान है; उसके पास वह ज्ञान है... जो दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है।

उसे यह विचार आता है: (1) 'मैं गुणी हूँ... मैं उनका अभ्यास करता हूँ, तो मुझे दोषों के नाश की कामना क्यों नहीं करनी चाहिए? (2) मैंने बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से अच्छी तरह से पारंगत हूँ, तो मुझे दोषों के नाश की कामना क्यों नहीं करनी चाहिए? (3) मैं वह हूँ जिसका मन चारों प्रकार की चेतना में सुस्थापित है, तो मुझे दोषों के नाश की कामना क्यों नहीं करनी चाहिए? (4) मैंने हानिकारक

(अकुशल) गुणों (धम्म) के त्याग के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाई है... लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के पालन-पोषण के कर्तव्य का त्याग नहीं किया है, तो मुझे दोषों के नाश की कामना क्यों नहीं करनी चाहिए? (5) मैं बुद्धिमान हूँ; मेरे पास वह (दिव्य ज्ञान) है... [156] जो दुख के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है, तो मुझे नाश की कामना क्यों नहीं करनी चाहिए? दाग?'

"इन पांच गुणों से युक्त भिक्षु दोषों के नाश की कामना करता है।"

---

137 छोटी नींद (अप्पमसुपति सं. अल्पा-सुशुप्ति)

भिक्षुओं, ये पाँच रात में कम सोते हैं, लेकिन अधिकतर जागते रहते हैं। कौन से पाँच? एक स्त्री जो पुरुष पर मोहित है, एक पुरुष जो स्त्री पर मोहित है, एक चोर जो चोरी करने पर मोहित है, एक राजा जो अपने राजकाय कर्तव्यों में लीन है, और एक भिक्षु जो बंधनों को तोड़ने पर मोहित है। ये पाँच रात में कम सोते हैं, लेकिन अधिकतर जागते रहते हैं।

---

138 भोजन का उपभोक्ता (भट्टदक)

"भिक्षुओं (साधुओं), जिनमें पाँच गुण होते हैं, एक राजा का हाथी भोजन ग्रहण करता है, स्थान घेरता है, गोबर त्यागता है, और टिकट लेता है, 1136 फिर भी उसे राजा का हाथी ही माना जाता है। वे पाँच गुण क्या हैं? वह रूपों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता, ध्वनियों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता, गंधों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता, स्वादों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता, और स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता। इन पाँच गुणों से युक्त, एक राजा का हाथी भोजन ग्रहण करता है... फिर भी उसे राजा का हाथी ही माना जाता है।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, एक भिक्षु भोजन का सेवन करता है, स्थान का उपयोग करता है, कुर्सियों को कुचल देता है, 1137 टिकट लेता है, 1138 और फिर भी उसे भिक्षु ही माना जाता है। वे पाँच गुण क्या हैं? [157] यहाँ, एक भिक्षु धैर्यपूर्वक रूपों को सहन नहीं कर सकता, धैर्यपूर्वक ध्वनियों को सहन नहीं कर सकता, धैर्यपूर्वक गंधों को सहन नहीं कर सकता, धैर्यपूर्वक स्वादों को सहन नहीं कर सकता और धैर्यपूर्वक स्पर्शनीय वस्तुओं को सहन नहीं कर सकता। इन पाँच कारकों से युक्त, एक भिक्षु भोजन का सेवन करता है, स्थान का उपयोग करता है... फिर भी उसे भिक्षु ही माना जाता है।"

---

139 धैर्यपूर्वक खड़ा नहीं रह सकता (अक्खामा बिना अक्षमा)

"भिक्षुओं (संतों) में पाँच गुण होते हैं, इसलिए राजा का हाथी राजा के योग्य नहीं है, राजा का सहायक नहीं है और राजत्व का कारक नहीं माना जाता। वे पाँच गुण क्या हैं? यह रूपों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता, ध्वनियों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता, गंधों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता, स्वादों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता और स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता।"

(1) "और ऐसा कैसे हो सकता है कि राजा का हाथी सामंती रूप-रंग को धैर्यपूर्वक सहन न कर सके? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में जाता है, तो हाथियों की सेना, घुड़सवार सेना, रथ चालकों या पैदल सेना को देखकर वह धंस जाता है, लड़खड़ा जाता है, खुद को संभाल नहीं पाता और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाता। इसी प्रकार राजा का हाथी सामंती रूप-रंग को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता।"

(2) "और ऐसा कैसे हो सकता है कि राजा का हाथी आवाज़ों को धैर्यपूर्वक सहन न कर सके? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में जाता है, तो हाथियों, घोड़ों, रथों या पैदल सैनिकों की आवाज़ें, या ढोल, नगाड़े, शंख और तुरही की आवाज़ें सुनकर वह धंस जाता है, लड़खड़ा जाता है, खुद को संभाल नहीं पाता और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाता। इसी प्रकार राजा का हाथी आवाज़ों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता।"

(3) "और ऐसा कैसे हो सकता है कि राजा का हाथी गंध को धैर्यपूर्वक सहन न कर सके? [158] यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में जाता है, तो उच्च नस्ल के और युद्ध के आदी शाही हाथियों के मूत्र और मल की गंध सूंघकर वह लड़खड़ा जाता है, डगमगा जाता है, खुद को संभाल नहीं पाता और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाता। इसी कारण राजा का हाथी गंध को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर पाता।"

(4) "और ऐसा कैसे हो सकता है कि राजा का हाथी धैर्यपूर्वक स्वाद सहन न कर सके? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में जाता है, यदि उसे घास और पानी का एक भाग, या दो, तीन, चार या पाँच भाग न दिया जाए, तो वह कमजोर पड़ जाता है, लड़खड़ा जाता है, खुद को संभाल नहीं पाता और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाता। इसी प्रकार राजा का हाथी धैर्यपूर्वक स्वाद सहन नहीं कर सकता।"

(5) "और ऐसा कैसे हो सकता है कि राजा का हाथी स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन न कर सके? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में जाता है, यदि उस पर तीरों की एक बौछार हो, या दो, तीन, चार या पाँच बौछारें हों, तो वह धंस जाता है, लड़खड़ा जाता है, खुद को संभाल नहीं पाता और युद्ध में प्रवेश नहीं कर पाता। इसी प्रकार राजा का हाथी स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता।"

"इन पांच कारकों के कारण, राजा का हाथी राजा के योग्य नहीं है, राजा का सहायक नहीं है, और राजत्व के कारक के रूप में नहीं गिना जाता है।"

"इसी प्रकार, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु, 1139 दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है। वे पाँच गुण क्या हैं? वे रूपों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकते, ध्वनियों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकते, गंधों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकते, स्वादों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकते और स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकते।"

(1) "और ऐसा कैसे होता है कि भिक्षु रूपों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर पाता? यहाँ, जब भिक्षु किसी रूप को आँखों से देखता है, तो वह उस मोहक रूप से मोहित हो जाता है और अपना मन एकाग्र नहीं कर पाता। इसी कारण भिक्षु रूपों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर पाता।"

(2) "और ऐसा कैसे होता है कि भिक्षु ध्वनियों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर पाता? [159] यहाँ, जब भिक्षु कान से कोई ध्वनि सुनता है, तो वह उस मोहक ध्वनि से मोहित हो जाता है और अपना मन एकाग्र नहीं कर पाता। इसी कारण भिक्षु ध्वनियों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर पाता। ..."

(3) "और ऐसा क्यों है कि भिक्षु गंधों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता? यहाँ, जब भिक्षु नाक से किसी गंध को सूंघता है, तो वह उस मोहक गंध से मोहित हो जाता है और अपना ध्यान केंद्रित नहीं कर पाता। इसी कारण भिक्षु गंधों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता।"

(4) "और ऐसा क्यों है कि एक भिक्षु (साधु) स्वादों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता? यहाँ, जब एक भिक्षु जीभ से किसी स्वाद का अनुभव करता है, तो वह उस ललचाने वाले स्वाद से मोहित हो जाता है और अपना मन एकाग्र नहीं कर पाता। इसी कारण एक भिक्षु स्वादों को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता।"

(5) "और ऐसा क्यों है कि भिक्षु स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता? यहाँ, जब भिक्षु शरीर से किसी स्पर्शनीय वस्तु का अनुभव करता है, तो वह उस मोहक स्पर्शनीय वस्तु के प्रति आसक्त हो जाता है और अपना मन एकाग्र नहीं कर पाता। इसी कारण भिक्षु स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन नहीं कर सकता।"

"इन पांच गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है।"

"भिक्षुओं (संतों) में पाँच गुण होते हैं, राजा का हाथी राजा के योग्य होता है, राजा का सहायक होता है और राजत्व का एक कारक माना जाता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? यह धैर्यपूर्वक रूपों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक ध्वनियों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक गंधों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक स्वादों को सहन करता है और धैर्यपूर्वक स्पर्शित वस्तुओं को सहन करता है।"

(1) "और यह कैसे संभव है कि राजा का हाथी धैर्यपूर्वक औपचारिकताओं को सहन करता है? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में जाता है, तो हाथियों की सेना, घुड़सवार सेना, रथ चालकों या पैदल सेना को देखकर वह धंसता या लड़खड़ाता नहीं है, बल्कि स्वयं को मजबूत करता है और युद्ध में प्रवेश कर जाता है। इस प्रकार राजा का हाथी धैर्यपूर्वक औपचारिकताओं को सहन करता है।"

(2) "और यह कैसे संभव है कि राजा का हाथी धैर्यपूर्वक ध्वनियों को सहन करता है? [160j यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में जाता है, तो हाथियों, घोड़ों, रथों या पैदल सैनिकों की आवाज़ें, या ढोल, नगाड़े, शंख और टॉम-टॉम की आवाज़ें सुनकर वह घबराता नहीं है, बल्कि खुद को मजबूत करता है और युद्ध में प्रवेश कर सकता है। इस प्रकार राजा का हाथी धैर्यपूर्वक ध्वनियों को सहन करता है।

(3) "और राजा का हाथी इतनी दुर्गंध को धैर्यपूर्वक कैसे सहन करता है? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में जाता है, तो वह कुलीन नस्ल के और युद्ध के अभ्यस्त शाही हाथियों के मूत्र और मल की दुर्गंध सूंघकर भी विचलित नहीं होता, बल्कि स्वयं को मजबूत करता है और युद्ध में प्रवेश करता है। इसी प्रकार राजा का हाथी दुर्गंध को धैर्यपूर्वक सहन करता है।"

(4) "और यह कैसे संभव है कि राजा का हाथी धैर्यपूर्वक स्वाद सहन करता है? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में जाता है, तो भले ही उसे घास और पानी का एक भाग, या दो, तीन, चार या पाँच भाग न दिए जाएँ, वह न तो कमजोर पड़ता है और न ही लड़खड़ाता है, बल्कि स्वयं को मजबूत करता है और युद्ध में प्रवेश कर सकता है। इस प्रकार राजा का हाथी धैर्यपूर्वक स्वाद सहन करता है।"

(5) "और यह कैसे संभव है कि राजा का हाथी स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन कर लेता है? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में जाता है, तो चाहे उस पर तीरों की एक बौछार हो या दो, तीन, चार या पाँच बौछारें, वह धंसता नहीं बल्कि खुद को संभालता है और युद्ध में फिर से शामिल हो जाता है। इसी प्रकार राजा का हाथी स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन करता है।"

"इन पांचों गुणों से युक्त होने के कारण, राजा का हाथी राजा के योग्य होता है, राजा का सहायक होता है और राजत्व के एक कारक के रूप में गिना जाता है।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है। वे पाँच गुण क्या हैं? वह रूपों को धैर्यपूर्वक सहन करता है, ध्वनियों को धैर्यपूर्वक सहन करता है, गंधों को धैर्यपूर्वक सहन करता है, स्वादों को धैर्यपूर्वक सहन करता है, और स्पर्शनीय वस्तुओं को धैर्यपूर्वक सहन करता है।" [161]

(1) "भिक्षु धैर्यपूर्वक रूपों को कैसे सहन करता है? यहाँ, जब भिक्षु किसी रूप को आँखों से देखता है, तो वह उस मोहक रूप से मोहित नहीं होता और अपने मन को एकाग्र कर सकता है। इसी प्रकार भिक्षु धैर्यपूर्वक रूपों को सहन करता है।"

(2) "भिक्षु धैर्यपूर्वक ध्वनियों को कैसे सहन करता है? यहाँ, जब भिक्षु कान से कोई ध्वनि सुनता है, तो वह उस मोहक ध्वनि से मोहित नहीं होता और अपने मन को एकाग्र कर सकता है। इसी प्रकार भिक्षु धैर्यपूर्वक ध्वनियों को सहन करता है।"

(3) "भिक्षु गंधों को धैर्यपूर्वक कैसे सहन करता है? यहाँ, जब भिक्षु नाक से किसी गंध को सूंघता है, तो वह उस मोहक गंध से मोहित नहीं होता और अपने मन को एकाग्र कर सकता है। इसी प्रकार भिक्षु धैर्यपूर्वक गंधों को सहन करता है।"

(4) "भिक्षु धैर्यपूर्वक स्वादों को कैसे सहन करता है? यहाँ, जब भिक्षु जीभ से किसी स्वाद का अनुभव करता है, तो वह उस ललचाने वाले स्वाद से मोहित नहीं होता और अपने मन को एकाग्र कर सकता है। इसी प्रकार भिक्षु धैर्यपूर्वक स्वादों को सहन करता है।"

(5) "भिक्षु धैर्यपूर्वक स्पर्शनीय वस्तुओं को कैसे सहन करता है? यहाँ, जब भिक्षु शरीर से किसी स्पर्शनीय वस्तु का अनुभव करता है, तो वह उस आकर्षक स्पर्शनीय वस्तु के प्रति आसक्त नहीं होता और अपने मन को एकाग्र कर सकता है। इसी प्रकार भिक्षु धैर्यपूर्वक स्पर्शनीय वस्तुओं को सहन करता है।"

"इन पांच गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होता है और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र होता है।"

140 जो सुनता है (सोता संस. श्रोता)

"भिक्षुओं (संतों), पाँच गुणों से युक्त, राजा का हाथी राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का एक कारक माना जाता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? यहाँ, राजा का हाथी वह है जो सुनता है, जो विनाश करता है, जो रक्षा करता है, जो धैर्यपूर्वक सहन करता है और जो चलता है।"

(1) "और राजा का नर हाथी सुनने वाला कैसे होता है? यहाँ, हाथी प्रशिक्षक उसे जो भी कार्य सौंपता है, चाहे उसने वह कार्य पहले किया हो या नहीं, राजा का नर हाथी उस पर ध्यान देता है, उस पर गौर करता है, अपना पूरा ध्यान उस पर लगाता है और उत्सुकता से सुनता है। इसी प्रकार राजा का नर हाथी सुनने वाला होता है।"

(2) "और राजा का हाथी किस प्रकार विनाशक होता है? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में प्रवेश करता है, तो वह हाथियों और हाथी सवारों, घोड़ों और घुड़सवारों, रथों और रथ चालकों तथा पैदल सेना को नष्ट कर देता है। इस प्रकार राजा का हाथी विनाशक होता है।"

(3) "और राजा का हाथी किस प्रकार रक्षा करता है? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में प्रवेश करता है, तो वह अपने अगले भाग, अपने पिछले भाग, अपने अगले पैर, अपने पिछले पैर, अपने सिर, अपने कान, अपने दांत, अपनी सूंड, अपनी पूंछ और अपने सवार की रक्षा करता है। इस प्रकार राजा का हाथी रक्षा करता है।"

(4) "और राजा का हाथी धैर्यपूर्वक सहन करने वाला कैसे होता है? यहाँ, जब राजा का हाथी युद्ध में प्रवेश करता है, तो वह धैर्यपूर्वक भाले, तलवार, तीर और कुल्हाड़ियों से होने वाले प्रहारों को सहन करता है; वह ढोल, नगाड़े, शंख और ढोल की आवाज़ों को सहन करता है। इसी प्रकार राजा का हाथी धैर्यपूर्वक सहन करने वाला होता है। ..."

(5) "और राजा का नर हाथी कैसे चलता है? यहाँ, राजा का नर हाथी तुरंत उस क्षेत्र में चला जाता है जहाँ हाथी प्रशिक्षक उसे भेजता है, चाहे वह पहले कभी वहाँ गया हो या नहीं। इस प्रकार राजा का नर हाथी चलता है।"

"इन पांच गुणों से युक्त होने के कारण, राजा का हाथी राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का प्रतीक माना जाता है।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य, विश्व के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु वह है जो सुनता है, जो नष्ट करता है, [163] जो रक्षा करता है, जो धैर्यपूर्वक सहन करता है, और जो जाता है।"

(1) "भिक्षु सुनने वाला कैसे होता है? यहाँ, जब तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म और अनुशासन का उपदेश दिया जा रहा होता है, तो भिक्षु उस पर ध्यान देता है, उस पर एकाग्रता से विचार करता है, अपना पूरा मन उसमें लगाता है और उत्सुकतापूर्वक धम्म को सुनता है। इसी प्रकार भिक्षु सुनने वाला होता है।"

(2) "और भिक्षु विनाशक कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु उत्पन्न कामुक विचार को सहन नहीं करता, बल्कि उसका त्याग करता है, उसे दूर करता है, उसे समाप्त करता है और उसे मिटा देता है। वह द्वेष के विचार को सहन नहीं करता... हानि पहुँचाने के विचार को सहन नहीं करता... समय-समय पर उत्पन्न होने वाली किसी भी अन्य बुरी (अकुशल) अवस्था को सहन नहीं करता, बल्कि उनका त्याग करता है, उन्हें दूर करता है, उन्हें समाप्त करता है और उन्हें मिटा देता है। इसी प्रकार भिक्षु विनाशक होता है।"

(3) "और भिक्षु किस प्रकार रक्षक होता है? यहाँ, किसी आकृति को आँख से देखकर, भिक्षु उसके चिह्नों और विशेषताओं को नहीं पकड़ता। क्योंकि यदि वह आँख की इंद्रिय को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम का अभ्यास करता है; वह आँख की इंद्रिय की रक्षा करता है, वह आँख की इंद्रिय के संयम का पालन करता है। कान से ध्वनि सुनकर... नाक से गंध सूंघकर... जीभ से स्वाद चखकर... शरीर से स्पर्शित वस्तु का अनुभव करके... मन से किसी मानसिक घटना को जानकर... वह मन की इंद्रिय की रक्षा करता है, वह मन की इंद्रिय के संयम का पालन करता है। इसी प्रकार भिक्षु रक्षक होता है।"

(4) "भिक्षु वह कैसे होता है जो धैर्यपूर्वक सहन करता है? यहाँ, भिक्षु धैर्यपूर्वक सर्दी और गर्मी; भूख और प्यास; मक्खियों, मच्छरों, हवा, जलते सूरज और सर्पों के संपर्क; अभद्र और अपमानजनक वाणी को सहन करता है; वह उत्पन्न शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) को सहन करने में सक्षम होता है जो पीड़ादायक, कष्टदायक, तीखी, चुभने वाली, कष्टदायी, अप्रिय और जीवन शक्ति को क्षीण करने वाली होती हैं। इसी प्रकार भिक्षु वह होता है जो धैर्यपूर्वक सहन करता है..."

(5) "और भिक्षु वह कैसे है जो जाता है? [164] यहाँ, भिक्षु वह है जो उस क्षेत्र में शीघ्रता से जाता है जहाँ वह इतने लंबे समय में पहले कभी नहीं गया है, अर्थात् सभी गतिविधियों के शांत होने, सभी प्राप्तियों के त्याग, तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के नाश, वैराग्य (विराग), निब्बान (निर्वाण) की ओर। इस प्रकार भिक्षु वह है जो जाता है।"

"इन पांच गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होता है और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र होता है।"

वी. टी.एल.के.एन.ए ...

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

141 देने के बाद, व्यक्ति अवजानति का तिरस्कार करता है।

भिक्षुओं, संसार में पाँच प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से पाँच प्रकार हैं? एक जो देता है और फिर तिरस्कार करता है; एक जो साथ रहने के कारण तिरस्कार करता है; एक जो गपशप में आसानी से बहक जाता है; एक चंचल स्वभाव का व्यक्ति; और एक जो सुस्त और मूर्ख है।

(1) "और वह व्यक्ति कैसे है जो देता है और फिर तिरस्कार करता है? यहाँ, एक व्यक्ति दूसरे को वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए दवाइयाँ और भोजन सामग्री देता है। उसके मन में आता है: 'मैं देता हूँ; वह लेता है।' उसे देने के बाद, वह उसका तिरस्कार करता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति देने वाला और फिर तिरस्कार करने वाला होता है।"

(2) "और कोई व्यक्ति साथ रहने के परिणामस्वरूप कैसे घृणा करता है? [165] यहाँ, एक व्यक्ति दूसरे के साथ दो या तीन साल तक रहता है। फिर वह दूसरे से घृणा करता है क्योंकि वे साथ रहे हैं। इस प्रकार एक व्यक्ति साथ रहने के परिणामस्वरूप घृणा करता है।

(3) "और कोई व्यक्ति गपशप के प्रति भोला कैसे होता है? यहाँ, जब किसी दूसरे व्यक्ति के बारे में प्रशंसा या निंदा की जा रही होती है, तो वह आसानी से उस पर विश्वास कर लेता है। इसी तरह कोई व्यक्ति गपशप के प्रति भोला होता है।"

(4) "और कोई व्यक्ति किस प्रकार चंचल होता है? यहाँ, व्यक्ति का विश्वास, भक्ति, स्नेह और भरोसा अस्थिर होते हैं। इसी प्रकार व्यक्ति चंचल होता है।"

(5) और मनुष्य कैसे मंदबुद्धि और मूर्ख होता है? यहाँ, मनुष्य यह नहीं जानता कि कौन से गुण लाभकारी (कुशल) हैं और कौन से हानिकारक (अकुशल), कौन से गुण निंदनीय हैं और कौन से निर्दोष, कौन से गुण निम्न हैं और कौन से श्रेष्ठ; वह अंधकारमय और प्रकाशमय गुणों तथा उनके विपरीत गुणों को नहीं जानता। इसी कारण मनुष्य मंदबुद्धि और मूर्ख होता है।

"भिक्षुओं, ये संसार में पाए जाने वाले पाँच प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

142 उल्लंघन करता है (अरभाति)

"भिक्षुओं, संसार में पाँच प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे पाँच कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक व्यक्ति उल्लंघन करता है और फिर पश्चाताप करता है, और यह नहीं समझता कि वास्तव में यह मन की मुक्ति है, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति है, जहाँ उसकी ये उत्पन्न बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाती हैं। 1140

(2) "यहाँ, एक व्यक्ति उल्लंघन करता है और पश्चाताप नहीं करता, 1141 और यह नहीं समझता कि वास्तव में यह मन की मुक्ति है, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति है, जहाँ उसकी ये उत्पन्न बुरी हानिकारक (अकुसला) अवस्थाएँ बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाती हैं।

(3) "यहाँ, एक व्यक्ति उल्लंघन नहीं करता [166] और फिर भी पश्चाताप करता है, 1142 और यह नहीं समझता कि वास्तव में यह मन की मुक्ति है, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति, जहाँ उसकी ये उत्पन्न बुरी हानिकारक (अकुसला) अवस्थाएँ बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाती हैं।

(4) "यहाँ, एक व्यक्ति उल्लंघन नहीं करता, पश्चाताप नहीं करता, और न ही वह वास्तव में मन की मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को समझता है, जहाँ उसकी ये उत्पन्न बुरी हानिकारक (अकुशल) अवस्थाएँ बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाती हैं।

(5) "यहाँ, एक व्यक्ति उल्लंघन नहीं करता और पश्चाताप नहीं करता, और वास्तव में मन की मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को समझता है, जहाँ उसकी ये उत्पन्न बुरी हानिकारक (अकुशल) अवस्थाएँ बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाती हैं।

(1) "भिक्षुओं, इनमें से जो व्यक्ति उल्लंघन करता है और फिर पश्चाताप करता है, और यह नहीं समझता कि वास्तव में यह मन की मुक्ति है, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति है, जहाँ उसकी उत्पन्न हुई अकुशल अवस्थाएँ पूरी तरह समाप्त हो जाती हैं, उसे कहा जाना चाहिए: 'आपमें उल्लंघन से उत्पन्न दोष हैं, और पश्चाताप से उत्पन्न दोष बढ़ रहे हैं। कृपया उल्लंघन से उत्पन्न दोषों का त्याग करें और पश्चाताप से उत्पन्न दोषों को दूर करें; फिर अपने मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का विकास करें।' 1143 इस प्रकार आप ठीक पाँचवें प्रकार के व्यक्ति के समान हो जाएँगे।

(2) "इनमें से जो व्यक्ति उल्लंघन करता है और पश्चाताप नहीं करता, और मन की मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को उसके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता, जहाँ उसकी उत्पन्न हुई अकुशल अवस्थाएँ पूर्णतः समाप्त हो जाती हैं, उसे कहा जाना चाहिए, 'तुममें उल्लंघन से उत्पन्न दोष पाए जाते हैं, परन्तु पश्चाताप से उत्पन्न दोष नहीं बढ़ते। कृपया उल्लंघन से उत्पन्न दोषों का त्याग करो, और फिर अपने मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का विकास करो। इस प्रकार तुम ठीक पाँचवें प्रकार के व्यक्ति के समान हो जाओगे।'

(3) "इनमें से जो व्यक्ति उल्लंघन नहीं करता, फिर भी पश्चाताप करता है, और मन की मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को सही ढंग से नहीं समझता, जहाँ उसकी उत्पन्न हुई ये बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाती हैं, उसे कहा जाना चाहिए: [167] 'आपमें उल्लंघन से उत्पन्न दोष नहीं हैं, फिर भी पश्चाताप से उत्पन्न दोष बढ़ रहे हैं। कृपया पश्चाताप से उत्पन्न दोषों को दूर करें, और फिर अपने मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का विकास करें। इस प्रकार आप ठीक पाँचवें प्रकार के व्यक्ति के समान होंगे।'

(4) "इनमें से जो व्यक्ति उल्लंघन नहीं करता, पश्चाताप नहीं करता, और मन की मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को उसके वास्तविक अर्थ में नहीं समझता, जहाँ उसकी उत्पन्न हुई अकुशल अवस्थाएँ पूर्णतः समाप्त हो जाती हैं, उसे कहा जाना चाहिए: 'तुममें उल्लंघन से उत्पन्न दोष नहीं हैं, और पश्चाताप से उत्पन्न दोष नहीं बढ़ते। कृपया अपने मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का विकास करो। इस प्रकार तुम ठीक पाँचवें प्रकार के व्यक्ति के समान हो जाओगे।'

(5) "इस प्रकार, भिक्षुओं, जब इन चार प्रकार के व्यक्तियों को पाँचवें प्रकार के व्यक्ति के उदाहरण द्वारा उपदेश और शिक्षा दी जाती है, तो वे धीरे-धीरे दोषों के नाश को प्राप्त कर लेते हैं।"

---

143 सरंददा

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। सुबह, भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किया और भिक्षा मांगने के लिए वैशाली में प्रवेश किया। उस समय सरंददा मंदिर में पाँच सौ लिच्छवी एकत्रित थे और एक साथ बैठे थे, तभी यह वार्तालाप हुआ: "पाँच रत्नों का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है। वे पाँच कौन से हैं? हाथी रत्न, अश्व रत्न, रत्न रत्न, स्त्री रत्न और प्रबंधक रत्न। इन पाँच रत्नों का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है।" [168]

तब लिच्छवियों ने मार्ग पर एक व्यक्ति को नियुक्त किया और उससे कहा, "हे जन, जब तुम भगवान (बुद्ध) को आते हुए देखो, तो हमें सूचित करना।" उस व्यक्ति ने दूर से भगवान (बुद्ध) को आते हुए देखा, लिच्छवियों के पास गया और उनसे कहा, "महोदय, यह भगवान (बुद्ध), अरहत, पूर्णतः प्रबुद्ध, आ रहे हैं। आप अपनी सुविधानुसार जा सकते हैं।"

तब लिच्छवी भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ खड़े हो गए। वहाँ खड़े होकर उन्होंने उनसे कहा, "हे भंते, कृपा करके भगवान (बुद्ध) को सरंददा मंदिर जाने दीजिए।" भगवान (बुद्ध) ने चुपचाप सहमति दे दी। वे सरंददा मंदिर गए, वहाँ तैयार किए गए आसन पर बैठ गए और लिच्छवियों से कहा:

"अभी आप लोग यहां साथ बैठे हुए किस चर्चा में लगे हुए थे? बातचीत किस बारे में चल रही थी?"

"यहाँ, भंते, जब हम सब इकट्ठा होकर साथ बैठे थे, तब यह बातचीत शुरू हुई... [यहाँ वह ऊपर की पूरी बातचीत दोहराता है।] ... 'इन पाँच रत्नों का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है।'"

"इंद्रिय सुखों में लीन, लिच्छवी इंद्रिय सुखों के विषय में चर्चा कर रहे थे! लिच्छवी, पांच रत्नों का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है। वे पांच कौन से हैं? (1) तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है। (2) तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म (मार्ग) और अनुशासन का उपदेश देने वाला व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। (3) तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म (मार्ग) और अनुशासन का उपदेश दिए जाने पर, उसे समझने वाला व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। (4) तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन का उपदेश दिए जाने और उसे समझे जाने पर, धम्म के अनुसार अभ्यास करने वाला व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। (5) कृतज्ञ और आभारी व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। लिच्छवी, इन पांच रत्नों का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है।"

---

144 टिकंदकी

एक बार भगवान (बुद्ध) साकेत में तिकंदकी वन में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय,” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

(1) भिक्षुओं, समय-समय पर भिक्षु के लिए यह अच्छा है कि वह निर्जीव में निर्जीव का अवलोकन करे। (2) समय-समय पर भिक्षु के लिए यह अच्छा है कि वह निर्जीव में निर्जीव का अवलोकन करे। (3) समय-समय पर भिक्षु के लिए यह अच्छा है कि वह निर्जीव और निर्जीव दोनों में निर्जीव का अवलोकन करे। (4) समय-समय पर भिक्षु के लिए यह अच्छा है कि वह निर्जीव और निर्जीव दोनों में निर्जीव का अवलोकन करे। (5) समय-समय पर भिक्षु के लिए यह अच्छा है कि वह समभाव, सती भाव से ध्यान करे और पूर्णतः बोध रखते हुए, निर्जीव और निर्जीव दोनों से विमुख होकर ध्यान करे।

(1) "भिक्षु को किस लाभ के लिए निर्मल में निर्मल को भलीभावना करना चाहिए? 'मुझमें कामवासना उत्पन्न न हो, जो कामवासना उत्पन्न करती हो!': इसी लाभ के लिए भिक्षु को निर्मल में निर्मल को भलीभावना करते हुए निवास करना चाहिए।"

(2) "भिक्षु को घृणास्पद में अरुचिकर का अनुभव करते हुए निवास करने से क्या लाभ होगा? 'घृणा उत्पन्न करने वाली वस्तुओं के प्रति मेरे मन में कोई घृणा उत्पन्न न हो!': इसी लाभ के लिए भिक्षु को घृणास्पद में अरुचिकर का अनुभव करते हुए निवास करना चाहिए।"

(3) "और किस लाभ के लिए भिक्षु को निर्जीव और निर्जीव दोनों में निर्जीव देखते हुए निवास करना चाहिए? 'मेरे भीतर कामवासना (राग) उत्पन्न न हो, और घृणा उत्पन्न करने वाली वस्तुओं के प्रति घृणा न हो!': इसी लाभ के लिए भिक्षु को निर्जीव और निर्जीव दोनों में निर्जीव देखते हुए निवास करना चाहिए।"

(4) "और भिक्षु को किस लाभ के लिए घृणास्पद और अनाकर्षक दोनों में अनाकर्षक का अनुभव करते हुए निवास करना चाहिए? 'घृणा उत्पन्न करने वाली वस्तुओं के प्रति मुझमें घृणा उत्पन्न न हो, और वासना उत्पन्न करने वाली वस्तुओं के प्रति वासना (राग) न हो!': इसी लाभ के लिए भिक्षु को घृणास्पद और अनाकर्षक दोनों में अनाकर्षक का अनुभव करते हुए निवास करना चाहिए।"

(5) "इस लाभ के लिए भिक्षु को समभाव, सजग और पूर्ण ज्ञान के साथ, घृणित और अघृणित दोनों से विमुख होकर निवास करना चाहिए? 'मेरे भीतर किसी भी प्रकार से किसी भी काम (राग) का भाव उत्पन्न न हो, उन चीजों के प्रति जो काम (राग) को उत्तेजित करती हैं! मेरे भीतर किसी भी प्रकार से किसी भी काम (राग) का भाव उत्पन्न न हो, उन चीजों के प्रति जो घृणा उत्पन्न करती हैं! मेरे भीतर किसी भी प्रकार से किसी भी काम (मोह) का भाव उत्पन्न न हो, उन चीजों के प्रति जो मोह (मोह) उत्पन्न करती हैं!': 1145 इस लाभ के लिए भिक्षु को समभाव, सजग और पूर्ण ज्ञान के साथ निवास करना चाहिए, घृणित और अघृणित दोनों से विमुख होकर।"

---

145 नरक (निरया)

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण कौन से हैं? जो जीवन का नाश करता है, जो नहीं दिया गया है उसे लेता है, यौन दुराचार में लिप्त होता है, झूठ बोलता है और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं। इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। [171]

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण कौन से हैं? जो जीवन के विनाश से दूर रहता है, जो बिना दी हुई वस्तुएँ लेने से दूर रहता है, यौन दुराचार से दूर रहता है, झूठी वाणी से दूर रहता है, और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से दूर रहता है, जो आलस्य का आधार हैं। इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

146 मित्र (मित्ता सं. मित्रा)

भिक्षुओं, ऐसे भिक्षु को मित्र न बनाओ जिसमें पाँच गुण हों। वे पाँच गुण क्या हैं? वह कार्य परियोजनाओं को उकसाता है; वह अनुशासन संबंधी मुद्दों को उठाता है; वह प्रतिष्ठित भिक्षुओं के प्रति शत्रुतापूर्ण रवैया रखता है; वह लंबे और अस्थिर भ्रमण पर तुला रहता है; वह समय-समय पर धर्म प्रवचन द्वारा उपदेश देने, प्रोत्साहित करने, प्रेरित करने और प्रसन्न करने में असमर्थ होता है। ऐसे भिक्षु को मित्र न बनाओ जिसमें ये पाँच गुण हों।

भिक्षुओं, हमें ऐसे भिक्षु को मित्र बनाना चाहिए जिसमें पाँच गुण हों। वे पाँच गुण क्या हैं? वह कार्य परियोजनाओं को उकसाता नहीं है; वह अनुशासन संबंधी मुद्दों में नहीं पड़ता; वह प्रख्यात भिक्षुओं के प्रति शत्रुतापूर्ण नहीं है; वह दीर्घकालीन और अस्थिर भ्रमण में लिप्त नहीं रहता; वह समय-समय पर धर्म प्रवचन द्वारा उपदेश देने, प्रोत्साहित करने, प्रेरित करने और प्रसन्न करने में सक्षम है। हमें ऐसे भिक्षु को मित्र बनाना चाहिए जिसमें ये पाँच गुण हों।

---

147 बुरे व्यक्ति का दान (असप्पुरिसादना संस्कृत: असदपुरुषदाना)

भिक्षुओं, बुरे व्यक्ति के ये पाँच गुण हैं। वे पाँच कौन से हैं? वह लापरवाही से दान करता है; वह श्रद्धाहीनता से दान करता है; वह अपने हाथों से दान नहीं करता; वह ऐसी वस्तुएँ दान करता है जिन्हें त्याग दिया जाता है; वह दान के प्रतिफल की अपेक्षा किए बिना दान करता है। [172]

भिक्षुओं, अच्छे व्यक्ति के ये पाँच गुण होते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? वह आदरपूर्वक दान करता है; वह श्रद्धापूर्वक दान करता है; वह अपने हाथों से दान करता है; वह ऐसी वस्तु दान करता है जिसे त्यागा न जा सके; वह दान के प्रतिफल की दृष्टि से दान करता है। 1147 ये अच्छे व्यक्ति के पाँच गुण हैं।

---

148 अच्छे व्यक्ति का दान (सप्पुरिसादना संस्कृत: सद्पुरुषदाना)

"भिक्षुओं, अच्छे व्यक्ति के ये पाँच गुण होते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? वह श्रद्धा से दान देता है; वह आदरपूर्वक दान देता है; वह समय पर दान देता है; वह निःसंकोच दान देता है; वह स्वयं को या दूसरों को हानि पहुँचाए बिना दान देता है।"

"(1) क्योंकि उसने विश्वास से दान दिया है, जहाँ कहीं भी उस दान का फल मिलता है, वह धनवान और संपत्ति से संपन्न हो जाता है, और वह सुंदर, आकर्षक, सुशोभित और अत्यंत सुंदर रंगत वाला होता है। (2) क्योंकि उसने आदरपूर्वक दान दिया है, जहाँ कहीं भी उस दान का फल मिलता है, वह धनवान और संपत्ति से संपन्न हो जाता है, और उसके पुत्र और पत्नियाँ, दास, सेवक और श्रमिक आज्ञाकारी होते हैं, ध्यान से सुनते हैं और समझने का प्रयास करते हैं। (3) क्योंकि उसने समय पर दान दिया है, जहाँ कहीं भी उस दान का फल मिलता है, वह धनवान और संपत्ति से संपन्न हो जाता है, और उसे समय पर भरपूर लाभ प्राप्त होते हैं। (4) क्योंकि उसने निःसंकोच दान दिया है, जहाँ कहीं भी उस दान का फल मिलता है, वह धनवान और संपत्ति से संपन्न हो जाता है, और उसका मन पाँच प्रकार के उत्तम इंद्रिय सुखों के भोग में लीन हो जाता है। [173] (5) क्योंकि उसने स्वयं को या दूसरों को हानि पहुँचाए बिना दान दिया है, जहाँ कहीं भी उस दान का फल मिलता है, वह धनवान और संपत्ति से संपन्न हो जाता है। और उसकी संपत्ति को किसी भी स्रोत से कोई नुकसान नहीं पहुंचता, चाहे वह आग हो, बाढ़ हो, राजा हो, चोर हो या अप्रिय उत्तराधिकारी हो। ये एक अच्छे व्यक्ति के पांच गुण हैं।

---

149 अस्थायी रूप से मुक्त (1) (समयविमुत्त1 सं. समय-विमुक्ति)

भिक्षुओं, ये पाँच बातें क्षणिक रूप से मुक्त भिक्षु के पतन का कारण बनती हैं। 1148 वे पाँच बातें क्या हैं? काम में आनंद, बातचीत में आनंद, नींद में आनंद, संगति में आनंद; और वह इस बात की समीक्षा नहीं करता कि उसका मन किस हद तक मुक्त हो चुका है। ये पाँच बातें क्षणिक रूप से मुक्त भिक्षु के पतन का कारण बनती हैं।

भिक्षुओं, ये पाँच बातें अस्थायी रूप से मुक्त भिक्षु के पतन को रोकती हैं। वे पाँच बातें क्या हैं? काम में आनंद नहीं, बातचीत में आनंद नहीं, नींद में आनंद नहीं, संगति में आनंद नहीं; और वह अपने मन की मुक्ति की सीमा का आत्मविश्लेषण करता है। ये पाँच बातें अस्थायी रूप से मुक्त भिक्षु के पतन को रोकती हैं।

---

150 (10) अस्थायी रूप से मुक्त (2) (समयविमुत्त2 सं. समय-विमुक्ति)

भिक्षुओं, ये पाँच बातें अल्पकालिक रूप से मुक्त भिक्षु के पतन का कारण बनती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं? काम में आनंद, बातों में आनंद, नींद में आनंद, इंद्रियों पर नियंत्रण न रखना और भोजन में संयम का अभाव। ये पाँच बातें अल्पकालिक रूप से मुक्त भिक्षु के पतन का कारण बनती हैं।

भिक्षुओं, ये पाँच बातें अस्थायी रूप से मुक्त भिक्षु के पतन को रोकती हैं। वे पाँच बातें क्या हैं? काम में आनंद न लेना, बात में आनंद न लेना, नींद में आनंद न लेना, इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करना और भोजन में संयम बरतना। [174] ये पाँच बातें अस्थायी रूप से मुक्त भिक्षु के पतन को रोकती हैं।

चौथा पचास

I. अच्छा धम्म (सद्धम्म)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

151 धार्मिकता का निश्चित मार्ग1 [1149] (सममत्तनीयमा1)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त होकर भी, अच्छे धर्म को सुनते हुए भी, लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं। 1150 वे पाँच गुण क्या हैं? कोई प्रवचन की निंदा करता है; कोई वक्ता की निंदा करता है; कोई स्वयं की निंदा करता है; कोई विचलित और बिखरे हुए मन से धर्म सुनता है; कोई लापरवाही से उस पर ध्यान देता है। इन पाँच गुणों से युक्त होकर, अच्छे धर्म को सुनते हुए भी, लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं।"

"भिक्षुओं (साधुओं), जिनमें पाँच गुण होते हैं, अच्छे धम्म को सुनते समय [175] लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलने में सक्षम होते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? कोई प्रवचन की निंदा नहीं करता; कोई वक्ता की निंदा नहीं करता; कोई स्वयं की निंदा नहीं करता; कोई अविचलित और एकाग्र मन से धम्म (मार्ग) सुनता है; कोई उस पर ध्यानपूर्वक विचार करता है। इन पाँच गुणों से युक्त होकर, अच्छे धम्म को सुनते समय कोई लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलने में सक्षम होता है।"

---

152 धर्म का निश्चित मार्ग (2) (सममत्तनीयमा2)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त होकर भी, अच्छे धम्म को सुनते हुए भी, वे लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? वे प्रवचन की निंदा करते हैं; वे वक्ता की निंदा करते हैं; वे स्वयं की निंदा करते हैं; वे नासमझ, मूर्ख और मंदबुद्धि होते हैं; वे यह कल्पना करते हैं कि उन्होंने वह समझ लिया है जो उन्होंने नहीं समझा है। इन पाँच गुणों से युक्त होकर, अच्छे धम्म को सुनते हुए भी, वे लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं।"

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त होकर, उत्तम धम्म का श्रवण करते समय, वे लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के मार्ग पर चल सकते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? वे प्रवचन की निंदा नहीं करते; वे वक्ता की निंदा नहीं करते; वे स्वयं की निंदा नहीं करते; वे बुद्धिमान, समझदार और चतुर होते हैं; वे यह नहीं सोचते कि उन्होंने वह समझ लिया है जो उन्होंने नहीं समझा है। इन पाँच गुणों से युक्त होकर, उत्तम धम्म का श्रवण करते समय, वे लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के मार्ग पर चल सकते हैं।"

---

153 धर्म का निश्चित मार्ग (3) (सम्मत्तनीयम2)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त होकर भी, अच्छे धम्म को सुनते हुए भी, लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) कोई निंदा करने के इरादे से धम्म को सुनता है; (2) कोई आलोचना करने और दोष ढूँढ़ने के इरादे से धम्म को सुनता है; [176] (3) कोई गुरु के प्रति द्वेषपूर्ण भाव रखता है और उन पर आक्रमण करने का इरादा रखता है; (4) कोई नासमझ, मूर्ख और मंदबुद्धि होता है; (5) कोई यह कल्पना करता है कि उसने वह समझ लिया है जो उसने वास्तव में नहीं समझा है। इन पाँच गुणों से युक्त होकर, अच्छे धम्म को सुनते हुए भी, लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं।"

पाँच गुणों से युक्त भिक्षु, उत्तम धम्म का श्रवण करते समय, लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के मार्ग पर चलने में सक्षम होते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वे धम्म का श्रवण निंदा करने वाले व्यथ के रूप में नहीं करते; (2) वे धम्म का श्रवण आलोचना करने के इरादे से नहीं करते, न ही दोष ढूंढ़ने वाले व्यथ के रूप में; (3) वे गुरु के प्रति द्वेषपूर्ण भाव नहीं रखते और उन पर आक्रमण करने का इरादा नहीं रखते; (4) वे बुद्धिमान, समझदार और चतुर होते हैं; (5) वे उस बात को समझने का भ्रम नहीं पालते जिसे उन्होंने वास्तव में नहीं समझा है। इन पाँच गुणों से युक्त होकर, उत्तम धम्म का श्रवण करते समय, वे लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के मार्ग पर चलने में सक्षम होते हैं।

---

154 अच्छे धम्म का पतन (1) (सद्धम्मसम्मोसा1 सं. सद्-धर्मस्य..)

भिक्षुओं, ये पाँच बातें हैं जो उत्तम धम्म (मार्ग) के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हैं। वे पाँच बातें क्या हैं? (1) यहाँ भिक्षु धम्म को आदरपूर्वक नहीं सुनते; (2) वे धम्म को आदरपूर्वक नहीं सीखते; (3) वे धम्म को पूर्ण आदरपूर्वक मन में नहीं रखते; (4) वे मन में रखे गए उपदेशों के अर्थ का आदरपूर्वक विश्लेषण नहीं करते; (5) वे धम्म के अर्थ को आदरपूर्वक नहीं समझते और फिर धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं करते। ये पाँच बातें उत्तम धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हैं।

भिक्षुओं, ये पाँच अन्य बातें हैं जो उत्तम धम्म की निरंतरता, अवनति और अपव्यय न होने की ओर ले जाती हैं। वे पाँच बातें क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु आदरपूर्वक धम्म सुनते हैं; (2) वे आदरपूर्वक धम्म सीखते हैं; (3) वे आदरपूर्वक धम्म को मन में धारण करते हैं; (4) वे आदरपूर्वक उन शिक्षाओं के अर्थ का पूर्णतः परीक्षण करते हैं जिन्हें उन्होंने मन में धारण किया है; (5) वे आदरपूर्वक अर्थ और धम्म को समझते हैं और फिर धम्म के अनुसार अभ्यास करते हैं। [177] ये पाँच बातें उत्तम धम्म की निरंतरता, अवनति न होने और अपव्यय न होने की ओर ले जाती हैं।

---

155 अच्छे धम्म का पतन (2) (सद्धम्मसम्मोसा2 सं. सद्-धर्मस्य..)

भिक्षुओं, ये पाँच बातें हैं जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं?

(1) "यहाँ भिक्षु धम्म का अध्ययन नहीं करते: प्रवचन (सूत्र), मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, श्लोक (गाथाएँ), प्रेरित कथन (उदान), उद्धरण (इतिवुत्तक), पुनर्जन्म कथाएँ (जातक), आश्चर्यजनक वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर। यही वह पहली बात है जो अच्छे धम्म (मार्ग) के पतन और लुप्त होने का कारण बनती है।"

(2) "फिर, भिक्षु दूसरों को धम्म का विस्तारपूर्वक उपदेश नहीं देते, जैसा कि उन्होंने सुना और सीखा है। यही दूसरी बात है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती है।"

(3) "भिक्षु फिर भी, दूसरों से धम्म को विस्तार से दोहराने के लिए नहीं कहते, जैसा कि उन्होंने सुना और सीखा है। यह तीसरी बात है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती है।"

(4) "फिर, भिक्षु धम्म का पाठ विस्तार से नहीं करते जैसा उन्होंने सुना और सीखा है। यह चौथा कारण है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनता है।"

(5) "फिर, भिक्षु धम्म पर मनन और परीक्षण नहीं करते, और मनुष्य धम्म का मिलान और निरीक्षण नहीं करते जैसा कि उन्होंने सुना और सीखा है। यह पाँचवाँ कारण है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनता है।"

"ये पाँच बातें हैं जो उत्तम धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हैं।"

"भिक्षुओं, ये पाँच अन्य बातें हैं जो अच्छे धम्म की निरंतरता, उसके पतन न होने और उसके लुप्त न होने का कारण बनती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं?"

(1) "यहाँ भिक्षु धम्म सीखते हैं: प्रवचन... और प्रश्न-उत्तर। यही [178] पहली बात है जो अच्छे धम्म की निरंतरता, गैर-पतन और गैर-लुप्त होने की ओर ले जाती है।

(2) "भिक्षु फिर से, धम्म को दूसरों को विस्तार से सिखाते हैं जैसा उन्होंने सुना और सीखा है। यह दूसरी परिश्रम है जो अच्छे धम्म की निरंतरता, गैर-पतन और गैर-लुप्त होने की ओर ले जाती है।"

(3) "भिक्षु फिर दूसरों से धम्म को विस्तार से दोहराने को कहते हैं, जैसा उन्होंने सुना और सीखा है। यही तीसरी बात है जो अच्छे धम्म के निरंतरता, अवनति और अपापण न होने की ओर ले जाती है।"

(4) "भिक्षु फिर से धम्म का विस्तारपूर्वक पाठ करते हैं जैसा उन्होंने सुना और सीखा है। यह चौथी बात है जो अच्छे धम्म की निरंतरता, अवनति और अपव्यय न होने की ओर ले जाती है।"

(5) "भिक्षु फिर से धम्म पर मनन करते हैं, उसकी जांच करते हैं और मानसिक रूप से उसका निरीक्षण करते हैं जैसा कि उन्होंने सुना और सीखा है। यह पाँचवाँ तत्व है जो अच्छे धम्म की निरंतरता, अवनति और अपव्यय की अनुपस्थिति की ओर ले जाता है।"

"ये पाँच बातें हैं जो उत्तम धम्म की निरंतरता, उसके पतन न होने और उसके लुप्त न होने की ओर ले जाती हैं।"

---

156 अच्छे धम्म का पतन (3) (सद्धम्मसम्मोसा3 सं. सद्-धर्मस्य..)

भिक्षुओं, ये पाँच बातें हैं जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं? 1151

(1) "यहाँ भिक्षु ऐसे प्रवचन सीखते हैं जो गलत तरीके से सीखे गए हैं, जिनमें शब्द और वाक्यांश गलत ढंग से लिखे गए हैं। जब शब्द और वाक्यांश गलत ढंग से लिखे जाते हैं, तो अर्थ की गलत व्याख्या होती है। यही पहली बात है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती है।"

(2) "भिक्षुओं को सुधारना कठिन है और उनमें ऐसे गुण होते हैं जो उन्हें सुधारना कठिन बनाते हैं। वे अधीर होते हैं और आदरपूर्वक उपदेश स्वीकार नहीं करते। यही दूसरी बात है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती है, [179]

(3) "फिर, वे भिक्षु जो विद्वान हैं, विरासत के उत्तराधिकारी हैं, धम्म के विशेषज्ञ हैं, अनुशासन के विशेषज्ञ हैं, रूपरेखाओं के विशेषज्ञ हैं, वे आदरपूर्वक दूसरों को प्रवचन नहीं देते। उनके देहांत हो जाने पर, प्रवचन जड़ से ही कट जाते हैं, और उन्हें संरक्षित करने वाला कोई नहीं बचता। यही तीसरा कारण है जो उत्तम धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनता है।"

(4) "फिर, वरिष्ठ भिक्षु विलासी और लापरवाह हैं, पतन के अग्रदूत हैं, एकांतवास के कर्तव्य का त्याग करते हैं; वे अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाते हैं। अगली पीढ़ी उनके उदाहरण का अनुसरण करती है। वे भी विलासी और लापरवाह हो जाते हैं, पतन के अग्रदूत हैं, एकांतवास के कर्तव्य का त्याग करते हैं; वे भी अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए, अभी तक अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाते हैं। यह चौथा कारण है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनता है।"

(5) "फिर संघ में फूट पड़ जाती है, और संघ में फूट पड़ने पर आपसी अपमान, निंदा, तिरस्कार और अस्वीकृति होती है। तब अविश्वासी लोग आत्मविश्वास प्राप्त नहीं कर पाते, जबकि कुछ विश्वासी अपना मन बदल लेते हैं। 1152 यह पाँचवाँ कारण है जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनता है।"

"ये पाँच बातें हैं जो उत्तम धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हैं।"

भिक्षुओं, ये पाँच अन्य बातें हैं जो उत्तम धम्म की निरंतरता, उसके पतन न होने और उसके लुप्त न होने की ओर ले जाती हैं। वे पाँच बातें कौन सी हैं?

(1) "यहाँ भिक्षु सुस्थापित, सुव्यवस्थित शब्दों और वाक्यांशों वाले प्रवचनों का अध्ययन करते हैं। जब शब्द और वाक्यांश सुव्यवस्थित होते हैं, तो अर्थ की व्याख्या भी सुव्यवस्थित होती है। यही वह पहली बात है जो उत्तम धम्म की निरंतरता, उसके पतन न होने और उसके लुप्त न होने की ओर ले जाती है। [180]

(2) "भिक्षुओं को सुधारना आसान होता है और उनमें ऐसे गुण होते हैं जो उन्हें सुधारना आसान बनाते हैं। वे धैर्यवान होते हैं और आदरपूर्वक उपदेश ग्रहण करते हैं। यही वह दूसरी बात है जो अच्छे धम्म की निरंतरता, उसके पतन न होने और उसके लुप्त न होने का कारण बनती है।"

(3) "फिर, वे भिक्षु जो विद्वान हैं, धम्म के ज्ञाता हैं, अनुशासन के ज्ञाता हैं, रूपरेखाओं के ज्ञाता हैं, आदरपूर्वक दूसरों को प्रवचन देते हैं। उनके देहांत होने पर भी प्रवचन जड़ से नष्ट नहीं होते, क्योंकि उन्हें संरक्षित करने वाले होते हैं। यही वह तीसरा कारण है जो उत्तम धम्म की निरंतरता, अवनति और विलोपन न होने का कारण बनता है।"

(4) "वरिष्ठ भिक्षु विलासी और आलसी नहीं होते, बल्कि पतन का त्याग करके एकांतवास में नेतृत्व करते हैं; वे अभी तक अप्राप्त, अभी तक अप्राप्य और अभी तक अप्राप्त ज्ञान की प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाते हैं। अगली पीढ़ी उनके उदाहरण का अनुसरण करती है। वे भी विलासी और आलसी नहीं होते, बल्कि पतन का त्याग करके एकांतवास में नेतृत्व करते हैं; वे भी अभी तक अप्राप्त, अभी तक अप्राप्य और अभी तक अप्राप्त ज्ञान की प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाते हैं। यही वह चौथा तत्व है जो उत्तम धम्म की निरंतरता, अवनति और विलोपन न होने की ओर ले जाता है।"

(5) "फिर, संघ शांति से निवास करता है—सद्भाव में, सामंजस्यपूर्ण ढंग से, बिना किसी विवाद के, एक ही पाठ के साथ। जब संघ में सामंजस्य होता है, तब कोई परस्पर अपमान, कोई परस्पर निंदा, कोई परस्पर तिरस्कार और कोई परस्पर अस्वीकृति नहीं होती। तब अविश्वासियों का आत्मविश्वास बढ़ता है और आत्मविश्वासियों का आत्मविश्वास और भी बढ़ता है। यही पाँचवाँ कारण है जो अच्छे धम्म की निरंतरता, उसके पतन न होने और उसके लुप्त न होने की ओर ले जाता है।"

"हे भिक्षुओं, ये पाँच बातें हैं जो अच्छे धम्म की निरंतरता, अवनति और अपापण की अनुपस्थिति की ओर ले जाती हैं।" [181]

---

157 गलत तरीके से संबोधित वार्ता (दुक्कथा संस्कृत: दुश-कथा)

भिक्षुओं, जब एक प्रकार के व्यक्ति की तुलना दूसरे प्रकार के व्यक्ति से करने के बाद, प्रवचन इन पाँच [अनुचित] प्रकार के व्यक्तियों को संबोधित किया जाता है, तो प्रवचन अनुचित होता है। वे पाँच कौन से हैं? आस्था पर प्रवचन उस व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित है जिसमें आस्था का अभाव हो; सदाचार पर प्रवचन उस व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित है जो अनैतिक हो; ज्ञान पर प्रवचन उस व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित है जो अल्पज्ञानी हो; उदारता पर प्रवचन उस व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित है जो कंजूस हो; और पन्ना (दिव्य ज्ञान) पर प्रवचन उस व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित है जो अज्ञानी हो।

(1) "हे भिक्षुओं, आस्था पर प्रवचन देना आस्थाहीन व्यक्ति के लिए अनुचित क्यों है? आस्था पर प्रवचन देते समय, आस्थाहीन व्यक्ति क्रोधित हो जाता है और चिड़चिड़ा, शत्रुतापूर्ण और हठी हो जाता है; वह क्रोध, घृणा और कटुता प्रदर्शित करता है। इसका कारण क्या है?

क्योंकि वह अपने भीतर आस्था को नहीं पहचानता और उस पर आधारित आनंद (पीति) और प्रसन्नता प्राप्त नहीं करता। इसलिए आस्था पर प्रवचन देना आस्थाहीन व्यक्ति के लिए अनुचित है।"

(2) "और सदाचार पर प्रवचन किसी अनैतिक व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित क्यों है? सदाचार पर प्रवचन देते समय अनैतिक व्यक्ति अपना आपा खो बैठता है और चिड़चिड़ा, शत्रुतापूर्ण और हठी हो जाता है; वह क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह अपने भीतर सदाचार को नहीं पहचान पाता और उससे प्राप्त होने वाले आनंद (पीति) को नहीं समझ पाता। अतः सदाचार पर प्रवचन किसी अनैतिक व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित है।"

(3) "और ज्ञान पर प्रवचन अल्पज्ञानी व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित क्यों है? जब ज्ञान पर प्रवचन दिया जा रहा होता है, तो अल्पज्ञानी व्यक्ति अपना आपा खो बैठता है और चिड़चिड़ा, शत्रुतापूर्ण और हठी हो जाता है; वह क्रोध, घृणा और कटुता प्रदर्शित करता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह अपने भीतर ज्ञान को नहीं पहचान पाता और उससे प्राप्त होने वाले आनंद (पीति) को नहीं समझ पाता। अतः ज्ञान पर प्रवचन अल्पज्ञानी व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित है।"

(4) "और कंजूस को उदारता का प्रवचन देना गलत क्यों है? जब उदारता का प्रवचन दिया जा रहा होता है, तो कंजूस अपना आपा खो बैठता है और चिड़चिड़ा, शत्रुतापूर्ण और हठी हो जाता है; वह क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करता है: इसका क्या कारण है? क्योंकि वह अपने भीतर उदारता को नहीं पहचानता और [182] उस पर आधारित आनंद और प्रसन्नता प्राप्त नहीं करता। इसलिए उदारता का प्रवचन कंजूस को देना गलत है।

(5) "और पन्ना (दिव्य ज्ञान) पर प्रवचन किसी मूर्ख व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित क्यों है? जब पन्ना (दिव्य ज्ञान) पर प्रवचन दिया जा रहा होता है, तो मूर्ख व्यक्ति अपना आपा खो बैठता है और चिड़चिड़ा, शत्रुतापूर्ण और हठी हो जाता है; वह क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित करता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह अपने भीतर उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) को नहीं देख पाता और उससे प्राप्त होने वाले आनंद (पीति) और प्रसन्नता को नहीं समझ पाता। इसलिए पन्ना (दिव्य ज्ञान) पर प्रवचन किसी मूर्ख व्यक्ति को संबोधित करना अनुचित है।"

"जब एक प्रकार के व्यक्ति की तुलना दूसरे प्रकार के व्यक्ति से करने के बाद, वह भाषण इन पांच [अनुचित] प्रकार के व्यक्तियों को संबोधित किया जाता है, तो वह भाषण गलत तरीके से संबोधित किया गया माना जाता है।"

"भिक्षुओं, किसी प्रवचन को उचित रूप से तभी संबोधित किया जाता है जब एक प्रकार के व्यक्ति की दूसरे प्रकार के व्यक्ति से तुलना करने के बाद उसे इन पाँच [उपयुक्त] प्रकार के व्यक्तियों को संबोधित किया जाए। कौन से पाँच? आस्था पर प्रवचन उचित रूप से आस्थावान व्यक्ति को संबोधित किया जाता है; सद्गुणी आचरण पर प्रवचन उचित रूप से सद्गुणी व्यक्ति को संबोधित किया जाता है; विद्या पर प्रवचन उचित रूप से विद्वान व्यक्ति को संबोधित किया जाता है; उदारता पर प्रवचन उचित रूप से उदार व्यक्ति को संबोधित किया जाता है; पन्ना (दिव्य ज्ञान) पर प्रवचन उचित रूप से बुद्धिमान व्यक्ति को संबोधित किया जाता है।"

(1) "हे भिक्षुओं, आस्था पर प्रवचन आस्थावान व्यक्ति को ही क्यों उचित है? आस्था पर प्रवचन देते समय आस्थावान व्यक्ति क्रोधित नहीं होता, चिढ़ता, शत्रुता और हठ नहीं दिखाता; वह क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित नहीं करता। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह अपने भीतर आस्था का अनुभव करता है और उसी के आधार पर आनंद और प्रसन्नता प्राप्त करता है। अतः आस्था पर प्रवचन आस्थावान व्यक्ति को ही उचित है।"

(2) "और सदाचार पर प्रवचन सदाचारी व्यक्ति को ही क्यों संबोधित किया जाता है? सदाचार पर प्रवचन देते समय सदाचारी व्यक्ति क्रोधित नहीं होता, चिढ़ता, शत्रुता और हठ नहीं दिखाता; वह क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित नहीं करता। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह अपने भीतर सदाचार का अनुभव करता है और उससे आनंद और प्रसन्नता प्राप्त करता है। अतः सदाचार पर प्रवचन सदाचारी व्यक्ति को ही संबोधित किया जाता है।"

(3) "और ज्ञान पर प्रवचन किसी विद्वान व्यक्ति को ही क्यों संबोधित किया जाता है? जब कोई विद्वान व्यक्ति प्रवचन दे रहा होता है, तो वह अपना आपा नहीं खोता, चिढ़ता नहीं, शत्रुतापूर्ण व्यवहार नहीं करता और हठधर्मी नहीं बनता; वह क्रोध, घृणा और कड़वाहट

प्रदर्शित नहीं करता। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह अपने भीतर ज्ञान को अनुभव करता है और उससे आनंद और प्रसन्नता प्राप्त करता है। अतः ज्ञान पर प्रवचन किसी विद्वान व्यक्ति को ही संबोधित किया जाता है।"

(4) "और उदारता पर प्रवचन उदार व्यक्ति को ही क्यों संबोधित किया जाना उचित है? उदारता पर प्रवचन देते समय उदार व्यक्ति अपना आपा नहीं खोता, चिढ़ता नहीं, शत्रुतापूर्ण व्यवहार नहीं करता और हठधर्मी नहीं बनता; वह क्रोध, घृणा और कटुता प्रदर्शित नहीं करता। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह अपने भीतर उदारता को अनुभव करता है और उसी के आधार पर आनंद और प्रसन्नता प्राप्त करता है। अतः उदारता पर प्रवचन उदार व्यक्ति को ही संबोधित किया जाना उचित है।"

(5) "और पन्ना (दिव्य ज्ञान) पर प्रवचन किसी बुद्धिमान व्यक्ति को ही क्यों संबोधित किया जाता है? जब पन्ना (दिव्य ज्ञान) पर प्रवचन दिया जा रहा होता है, तो बुद्धिमान व्यक्ति अपना आपा नहीं खोता और चिढ़कर, शत्रुतापूर्ण और हठी नहीं हो जाता; वह क्रोध, घृणा और कड़वाहट प्रदर्शित नहीं करता। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह अपने भीतर उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) को अनुभव करता है और उसी के आधार पर आनंद और प्रसन्नता प्राप्त करता है। अतः पन्ना (दिव्य ज्ञान) पर प्रवचन किसी बुद्धिमान व्यक्ति को ही संबोधित किया जाता है।"

"भिक्षुओं (मठवासियों), किसी प्रवचन को उचित रूप से तभी संबोधित किया जाता है जब एक प्रकार के व्यक्ति की तुलना दूसरे प्रकार के व्यक्ति से करने के बाद, वह प्रवचन इन पांच [उपयुक्त] प्रकार के व्यक्तियों को संबोधित किया जाए।"

---

158 डरपोकपन [1153] (सरज्जा)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु भय से ग्रस्त होता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? यहाँ, भिक्षु आस्थाहीन, अनैतिक, अज्ञानी, आलसी और मूर्ख होता है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु भय से ग्रस्त होता है।"

"भिक्षुओं में पाँच अन्य गुण होते हैं, जिससे वे आत्मविश्वासी बनते हैं। वे पाँच गुण कौन से हैं? यहाँ, भिक्षु आस्थावान, गुणी, विद्वान, ऊर्जावान और बुद्धिमान होता है। [184] इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु आत्मविश्वासी होता है।"

---

159 उदयि

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) घोसीता उद्यान में कोसंबी में निवास कर रहे थे। उस समय पूज्य उदयि, बड़ी संख्या में गृहस्थों से घिरे हुए, धम्म का उपदेश दे रहे थे। 1154 पूज्य आनंद ने यह देखा और भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और कहा: "भंते, पूज्य उदयि, बड़ी संख्या में गृहस्थों से घिरे हुए, धम्म का उपदेश दे रहे हैं।"

हे आनंद, दूसरों को धम्म (मार्ग) सिखाना आसान नहीं है। जो दूसरों को धम्म सिखाता है, उसे पहले अपने भीतर पाँच गुण स्थापित करने चाहिए। वे पाँच गुण कौन से हैं? (1) [यह निश्चय करके:] 'मैं प्रगतिशील प्रवचन दूंगा,' उसे दूसरों को धम्म सिखाना चाहिए। (2) [यह निश्चय करके:] 'मैं तर्कसंगत प्रवचन दूंगा,' उसे दूसरों को धम्म सिखाना चाहिए। (3) [यह निश्चय करके:] 'मैं सहानुभूतिपूर्ण प्रवचन दूंगा,' उसे दूसरों को धम्म सिखाना चाहिए। (4) [यह निश्चय करके:] 'मैं भौतिक लाभ की लालसा में प्रवचन नहीं दूंगा,' उसे दूसरों को धम्म सिखाना चाहिए। (5) [यह निश्चय करके:] 'मैं स्वयं को या दूसरों को हानि पहुँचाए बिना प्रवचन दूंगा,' उसे दूसरों को धम्म सिखाना चाहिए। हे आनंद, दूसरों को धम्म सिखाना आसान नहीं है। जो दूसरों को धम्म सिखाता है, उसे पहले अपने भीतर ये पाँच गुण स्थापित करने चाहिए।

---

160 दूर करना कठिन (दुप्पतिविनोदय)

भिक्षुओं, ये पाँच बातें एक बार उत्पन्न हो जाने पर दूर करना कठिन है। कौन सी पाँच बातें? [185] कामवासना (राग), एक बार उत्पन्न हो जाने पर दूर करना कठिन है। घृणा... मोह (मोह)... विवेक... यात्रा की इच्छा, एक बार उत्पन्न हो जाने पर दूर करना कठिन है। ये पाँच बातें एक बार उत्पन्न हो जाने पर दूर करना कठिन है।

II. आक्रोश (अघट)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

161 आक्रोश दूर करना (1) (अघाट पतिविनय1)

भिक्षुओं, किसी के प्रति द्वेष उत्पन्न होने पर उसे पूर्णतः दूर करने के पाँच तरीके हैं। 1157 वे पाँच तरीके क्या हैं? (1) जिस व्यक्ति से द्वेष हो, उसके प्रति प्रेम और करुणा विकसित करनी चाहिए; इस प्रकार उस व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर हो जाता है। (2) जिस व्यक्ति से द्वेष हो, उसके प्रति करुणा विकसित करनी चाहिए; इस प्रकार उस व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर हो जाता है। (3) जिस व्यक्ति से द्वेष हो, उसके प्रति उदासीनता (उपेक्खा) विकसित करनी चाहिए; इस प्रकार उस व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर हो जाता है। [186] (4) जिस व्यक्ति से द्वेष हो, उसकी उपेक्षा करनी चाहिए और उस पर ध्यान नहीं देना चाहिए; इस प्रकार उस व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर हो जाता है। (5) जिस व्यक्ति से द्वेष हो, उस पर कर्म के स्वामित्व का विचार लागू करना चाहिए, इस प्रकार: 'यह पूजनीय व्यक्ति अपने कर्मों का स्वामी है, अपने कर्मों का उत्तराधिकारी है।' कर्म; कर्म ही उसका मूल है, कर्म ही उसका संबंध है, कर्म ही उसका सहारा है; वह अपने अच्छे या बुरे किसी भी कर्म का उत्तराधिकारी होगा। इस प्रकार उस व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर करना चाहिए। ये पाँच तरीके हैं जिनसे भिक्षु किसी के प्रति उत्पन्न द्वेष को पूरी तरह से दूर कर सकता है।

---

162 आक्रोश दूर करना (2) (अघाट पतिविनय1)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र,” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

मित्रों, किसी के प्रति द्वेष उत्पन्न होने पर भिक्षु को उसे पूर्णतः दूर करने के पाँच तरीके हैं। वे पाँच तरीके क्या हैं? (1) यदि किसी व्यक्ति का शारीरिक व्यवहार अशुद्ध है, परन्तु उसका वाणी व्यवहार शुद्ध है, तो ऐसे व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर करना चाहिए। (2) यदि किसी व्यक्ति का वाणी व्यवहार अशुद्ध है, परन्तु उसका शारीरिक व्यवहार शुद्ध है, तो ऐसे व्यक्ति के प्रति भी द्वेष दूर करना चाहिए। (3) यदि किसी व्यक्ति का शारीरिक और वाणी व्यवहार दोनों अशुद्ध हैं, परन्तु समय-समय पर उसे मन की शांति और स्पष्टता प्राप्त होती है, तो ऐसे व्यक्ति के प्रति भी द्वेष दूर करना चाहिए। (4) यदि किसी व्यक्ति का शारीरिक और वाणी व्यवहार दोनों अशुद्ध हैं, और उसे समय-समय पर मन की शांति और स्पष्टता प्राप्त नहीं होती, तो ऐसे व्यक्ति के प्रति भी द्वेष दूर करना चाहिए। (5) यदि किसी व्यक्ति का शारीरिक और वाणी व्यवहार दोनों शुद्ध हैं, और समय-समय पर उसे मन की शांति और स्पष्टता प्राप्त होती है, तो ऐसे व्यक्ति के प्रति भी द्वेष दूर करना चाहिए। ऐसे व्यक्ति के प्रति द्वेष।

(1) "हे मित्रों, उस व्यक्ति के प्रति द्वेष कैसे दूर किया जाए जिसका शारीरिक आचरण अशुद्ध हो परन्तु वाणी शुद्ध हो? मान लीजिए कि एक वस्त्रधारी भिक्षु को सड़क के किनारे एक वस्त्र पड़ा हुआ दिखाई देता है। वह उसे अपने बाएँ पैर से दबाएगा, अपने दाएँ पैर से फैलाएगा, उसमें से एक साबुत टुकड़ा फाड़कर अपने साथ ले जाएगा; ठीक उसी प्रकार, जब किसी व्यक्ति का शारीरिक आचरण अशुद्ध

हो परन्तु वाणी शुद्ध हो, तो उस समय उसके शारीरिक आचरण की अशुद्धता पर ध्यान न देकर उसकी वाणी की शुद्धता पर ध्यान देना चाहिए। इस प्रकार उस व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर किया जा सकता है।"

(2) "हे मित्रों, उस व्यक्ति के प्रति द्वेष कैसे दूर किया जाए जिसका वाणी व्यवहार अशुद्ध हो परन्तु दैत्य शुद्ध हो? मान लीजिए एक तालाब शैवाल और जलीय पौधों से ढका हुआ है। एक व्यक्ति गर्मी से व्याकुल, थका हुआ, प्यासा और प्यासा होकर वहाँ पहुँचता है। वह तालाब में डुबकी लगाता है, अपने हाथों से शैवाल और जलीय पौधों को हटाता है, अपने हाथों से पानी पीता है और फिर चला जाता है; ठीक उसी प्रकार, [188] जब किसी व्यक्ति का वाणी व्यवहार अशुद्ध हो परन्तु उसका दैत्य शुद्ध हो, तो उस समय हमें उसके वाणी व्यवहार की अशुद्धता पर ध्यान नहीं देना चाहिए, बल्कि उसके दैत्य की शुद्धता पर ध्यान देना चाहिए। इस प्रकार उस व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर किया जा सकता है।"

(3) "हे मित्रों, उस व्यक्ति के प्रति द्वेष कैसे दूर किया जाए जिसका शारीरिक और वाणी दोनों ही अपवित्र हैं, परन्तु जो समय-समय पर मन की शांति और खुलेपन का अनुभव करता है? मान लीजिए एक पोखर में थोड़ा सा पानी है। फिर एक व्यक्ति गर्मी से व्याकुल, थका हुआ, प्यासा और प्यासा होकर वहाँ पहुँचता है। वह सोचेगा: 'यह थोड़ा सा पानी पोखर में है। यदि मैं इसे अपने हाथों से या किसी बर्तन से पीने का प्रयास करूँ, तो मैं इसे हिला दूँगा, इसे असंतुलित कर दूँगा और इसे पीने योग्य नहीं रहने दूँगा। मुझे चारों हाथों-पैरों के बल बैठकर इसे गाय की तरह चूस लेना चाहिए और चले जाना चाहिए।'" फिर वह चारों हाथों-पैरों के बल नीचे झुकता है, गाय की तरह पानी पीता है और चला जाता है। इसी प्रकार, जब किसी व्यक्ति का शारीरिक और मौखिक व्यवहार अशुद्ध हो, परन्तु समय-समय पर उसका मन शांत हो जाए, तो उस समय हमें उसके शारीरिक और मौखिक व्यवहार की अशुद्धता पर ध्यान नहीं देना चाहिए, बल्कि उसके मन की शांति और समय-समय पर प्राप्त होने वाली शांति पर ध्यान देना चाहिए। इस प्रकार उस व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर हो जाना चाहिए।

(4) "हे मित्रों, उस व्यक्ति के प्रति द्वेष कैसे दूर किया जाए जिसका शारीरिक और वाणी का व्यवहार अशुद्ध है और जो समय-समय पर मन की शांति और स्पष्टता प्राप्त नहीं करता? मान लीजिए कि एक बीमार, पीड़ित, गंभीर रूप से बीमार व्यक्ति राजमार्ग पर यात्रा कर रहा है, और उसके पीछे का अंतिम गाँव और उसके आगे का अगला गाँव दोनों बहुत दूर हैं। उसे उचित भोजन और दवा या योग्य परिचारक नहीं मिलेगा; वह ग्राम क्षेत्र के मुखिया से नहीं मिल पाएगा। राजमार्ग पर यात्रा कर रहा कोई दूसरा व्यक्ति उसे देख सकता है और उसके प्रति अपार करुणा, सहानुभूति और कोमल चिंता उत्पन्न कर सकता है, यह सोचते हुए: 'हे भगवान, इस व्यक्ति को उचित भोजन, उचित दवा और योग्य परिचारक मिल जाए! वह ग्राम क्षेत्र के मुखिया से मिल पाए! क्यों? ताकि इस व्यक्ति को यहीं विपत्ति और विपत्ति का सामना न करना पड़े।' इसी प्रकार, जब किसी व्यक्ति का शारीरिक और वाणी दोनों ही अपवित्र हों और उसे समय-समय पर मन की शांति और स्पष्टता प्राप्त न हो, तो उस समय उसके प्रति अपार करुणा, सहानुभूति और कोमल चिंता उत्पन्न करनी चाहिए, यह सोचते हुए कि, 'हे पूज्य, यह आदरणीय व्यक्ति शारीरिक दुराचार त्याग कर सुव्यवहार करे; वाणी दुराचार त्याग कर सुव्यवहार करे; मानसिक दुराचार त्याग कर सुव्यवहार करे! किसलिए? ताकि शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म न ले।' इस प्रकार उस व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर हो जाना चाहिए। [190]

(5) "हे मित्रों, उस व्यक्ति के प्रति द्वेष कैसे दूर किया जाए जिसका शारीरिक और वाणी शुद्ध हो और जो समय-समय पर मन की शांति और खुलेपन का अनुभव करता हो? मान लीजिए एक तालाब है जिसका पानी साफ, मीठा और ठंडा है, उसके किनारे चिकने हैं, और वह अनेक वृक्षों से छायादार एक रमणीय स्थान है। फिर एक व्यक्ति गर्मी से व्याकुल, थका हुआ, प्यासा और प्यासा होकर वहाँ पहुँचे। तालाब में डुबकी लगाकर वह स्नान करे और पानी पिए, और फिर बाहर आकर वहीं किसी वृक्ष की छाया में बैठ जाए या लेट जाए। ठीक इसी प्रकार, जब किसी व्यक्ति का शारीरिक और वाणी शुद्ध हो और वह समय-समय पर मन की शांति और खुलेपन का अनुभव करता हो, तो उस समय हमें उसके शुद्ध शारीरिक व्यवहार और शुद्ध वाणी पर ध्यान देना चाहिए; और समय-समय पर प्राप्त होने वाले मन की शांति और खुलेपन पर भी ध्यान देना चाहिए। इस प्रकार उस व्यक्ति के प्रति द्वेष दूर किया जा सकता है। मित्रों, जो व्यक्ति हर तरह से विश्वास जगाता है, उसके माध्यम से मन में विश्वास उत्पन्न होता है।" 1159

"मित्रों, ये पाँच तरीके हैं जिनसे भिक्षु किसी के भी प्रति उत्पन्न हुई द्वेष भावना को पूरी तरह से दूर कर सकता है।"

---

163 चर्चाएँ (सकच्छा)

[यह सूत्र 5:65 के समान है, सिवाय इसके कि यह सारिपुत्त द्वारा भिक्षुओं से कहा गया है-जे [191]

---

164 जीवन शैली (सजीव)

[यह सूत्र 5:66 के समान है, सिवाय इसके कि यह सारिपुत्त द्वारा भिक्षुओं को सुनाया गया है।]

---

165 प्रश्न पूछना (पन्हा पुच्चा सं. प्रश्न-पुच्चा)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"मित्रों, जो कोई भी दूसरे व्यक्ति से प्रश्न पूछता है, वह पाँच कारणों से या उनमें से किसी एक विशेष कारण से ऐसा करता है। वे पाँच कारण क्या हैं? (1) कोई व्यक्ति अपनी मंदबुद्धि और मूर्खता के कारण दूसरे व्यक्ति से प्रश्न पूछता है; (2) बुरी इच्छाओं से प्रेरित कोई व्यक्ति, वासना से प्रेरित होकर, दूसरे व्यक्ति से प्रश्न पूछता है; [192] (3) कोई व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अपमानित करने के तरीके के रूप में प्रश्न पूछता है; (4) कोई व्यक्ति सीखने की इच्छा से दूसरे व्यक्ति से प्रश्न पूछता है; (5) या कोई व्यक्ति इस विचार से दूसरे व्यक्ति से प्रश्न पूछता है: 'यदि मेरे द्वारा पूछे गए प्रश्न का वह सही उत्तर देता है, तो यह अच्छा है; लेकिन यदि वह सही उत्तर नहीं देता है, तो मैं उसे सही व्याख्या दूंगा'। मित्रों, जो कोई भी दूसरे व्यक्ति से प्रश्न पूछता है, वह इन पाँच कारणों से या उनमें से किसी एक विशेष कारण से ऐसा करता है। मित्रों, मैं इस विचार से दूसरे व्यक्ति से प्रश्न पूछता हूँ: 'यदि मेरे द्वारा पूछे गए प्रश्न का वह सही उत्तर देता है, तो यह अच्छा है; लेकिन यदि वह सही उत्तर नहीं देता है, तो मैं उसे सही व्याख्या दूंगा।"

---

166 निरोध (Cessation)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"यद्यपि, एक भिक्षु जो सद्गुणों, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में निपुण है, वह बोध (संज्ञा/वेदना) और संवेदना (वेदना) के अंत में प्रवेश कर सकता है और उससे बाहर आ सकता है। यह संभावना है। लेकिन यदि वह इसी जीवन में अंतिम ज्ञान प्राप्त नहीं करता है, और भोजन पर निर्भर रहने वाले देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) के समूह से परे, मन से निर्मित देवताओं (देवदूतों) के एक विशेष समूह में पुनर्जन्म लेता है, तो वह [पुनः] बोध (संज्ञा/वेदना) और संवेदना (वेदना) के अंत में प्रवेश कर सकता है और उससे बाहर आ सकता है। 1160 यह संभावना है।"

यह सुनकर पूज्य उदय ने पूज्य सारिपुत्त से कहा, "यह असंभव है, मित्र सारिपुत्त। ऐसा संभव ही नहीं है कि कोई भिक्षु, जो भोजन पर निर्भर रहने वाले देवताओं से परे, मन से निर्मित देवताओं के एक विशेष समूह में पुनर्जन्म लेकर, बोध और वेदना की अवस्था में पुनः प्रवेश करे और उससे बाहर निकले। ऐसी कोई संभावना ही नहीं है।"

दूसरी बार... तीसरी बार, [193] पूज्य सारिपुत्त ने कहा: "यहाँ, मित्रों, यह संभव है कि एक भिक्षु जो सद्गुणों में निपुण हो... किसी विशेष समूह के मन से जन्मे देवताओं के बीच पुनर्जन्म लेकर... फिर से चेतना और वेदना की अवस्था में प्रवेश कर सके और उससे बाहर आ सके। यह संभावना है।" तीसरी बार, पूज्य उदय ने पूज्य सारिपुत्त से कहा: "यह असंभव है, मित्र सारिपुत्त, ऐसा नहीं हो सकता कि एक भिक्षु, मन से जन्मे देवताओं के किसी विशेष समूह के बीच पुनर्जन्म लेकर... फिर से चेतना और वेदना की अवस्था में प्रवेश कर सके और उससे बाहर आ सके। ऐसी कोई संभावना नहीं है।"

तब पूज्य सारिपुत्त के मन में यह विचार आया: "पूज्य उदय ने मुझे तीसरी बार तक अस्वीकार कर दिया है, और एक भी भिक्षु मुझसे सहमत नहीं है। मुझे भगवान (बुद्ध) से प्रार्थना करनी चाहिए।" तब पूज्य सारिपुत्त भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और भिक्षुओं को संबोधित करते हुए बोले, "हे मित्रों, एक भिक्षु जो सद्गुणों, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और पन्ना

(दिव्य ज्ञान) में निपुण है, वह [पुनः] संज्ञान (संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के अंत से प्रवेश कर सकता है और बाहर आ सकता है। यह संभव है। यदि वह इसी जीवन में अंतिम ज्ञान प्राप्त नहीं करता है, तो देवताओं (देवदूतों) के एक विशेष समूह में पुनर्जन्म लेकर, जो भोजन पर निर्भर रहने वाले देवताओं (देवदूतों) की संगति से परे हैं, वह [पुनः] संज्ञान (संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के अंत से प्रवेश कर सकता है और बाहर आ सकता है। यह संभव है।"

यह सुनकर पूज्य उदय ने पूज्य सारिपुत्त से कहा, "यह असंभव है, मित्र सारिपुत्त। ऐसा संभव ही नहीं है कि कोई भिक्षु, जो भोजन पर निर्भर रहने वाले देवताओं के समूह से परे, मन से निर्मित देवताओं के एक विशेष समूह में पुनर्जन्म लेकर, बोध और वेदना की अवस्था में पुनः प्रवेश करे और उससे बाहर निकले। ऐसी कोई संभावना ही नहीं है।"

दूसरी बार... तीसरी बार, पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "हे मित्रों, एक भिक्षु जो सद्गुणों में निपुण है... [194]... किसी विशेष समूह के मन से उत्पन्न देवताओं के बीच पुनर्जन्म लेकर... फिर से चेतना और वेदना की अवस्था में प्रवेश कर सकता है और उससे बाहर आ सकता है। यह संभव है।" तीसरी बार, पूज्य उदय ने पूज्य सारिपुत्त से कहा: "यह असंभव है, मित्र सारिपुत्त, ऐसा नहीं हो सकता कि एक भिक्षु... किसी विशेष समूह के मन से उत्पन्न देवताओं के बीच पुनर्जन्म लेकर... फिर से चेतना और वेदना की अवस्था में प्रवेश कर सकता है और उससे बाहर आ सकता है। ऐसी कोई संभावना नहीं है।"

तब पूज्य सारिपुत्त के मन में यह विचार आया: "भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में भी, पूज्य उदयि तीसरी बार तक मुझे अस्वीकार करते हैं, और एक भी भिक्षु मुझसे सहमत नहीं होता। मुझे चुप ही रहना चाहिए।" फिर पूज्य सारिपुत्त मौन हो गए।

तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य उदयि से कहा, "उदयि, तुम मन द्वारा निर्मित समूह से वास्तव में क्या समझते हो?"

"भंते, वे ही निराकार देव (देवदूत/भगवान) हैं, जो चेतना (सन्ना/संज्ञा) से बने हैं।" 61

"उदयी, तुम क्या कह रहे हो, तुम नासमझ और नासमझ हो? फिर भी तुम्हें बोलने की ज़रूरत है!"

तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य आनंद से कहा, "आनंद, क्या तुम एक वरिष्ठ भिक्षु को प्रताड़ित होते हुए चुपचाप देखते रहते हो? क्या तुम्हें किसी वरिष्ठ भिक्षु के उत्पीड़न के प्रति कोई दया नहीं आती?"

तब भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "हे भिक्षुओं, सद्गुणों, समाधि (आत्म-लीनता/तल्लीनता) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में निपुण भिक्षु, सन्ना/संज्ञा और वेदना के अंत में प्रवेश कर सकता है और उससे बाहर आ सकता है। यदि वह इसी जीवन में अंतिम ज्ञान प्राप्त नहीं कर पाता है, तो भोजन पर निर्भर रहने वाले देवताओं से परे, मन से निर्मित देवताओं के एक विशेष समूह में पुनर्जन्म लेकर, वह सन्ना/संज्ञा और वेदना के अंत में फिर से प्रवेश कर सकता है और उससे बाहर आ सकता है। यह संभावना है।" भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह कहकर सुगत (भगवान बुद्ध) अपने आसन से उठे और अपने निवास में प्रवेश कर गए। [195]

फिर, भगवान (बुद्ध) के जाने के कुछ ही समय बाद, पूज्य आनंद पूज्य उपवन के पास आए और उनसे कहा: "हे मित्र उपवन, वे अन्य वरिष्ठ भिक्षुओं को परेशान कर रहे थे, लेकिन हमने उनसे कोई प्रश्न नहीं किया।" 262 यह आश्चर्य की बात नहीं होगी यदि आज शाम, जब भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आएँ, तो वे इस मामले के बारे में कोई घोषणा करें, और वे स्वयं पूज्य उपवन को [हिसाब देने के लिए] बुलाएँ। 1163 अभी मुझे डर लग रहा है।"

फिर, शाम को, भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और सभा भवन में गए। वे निर्धारित स्थान पर बैठ गए और पूज्य उपवन से बोले:

"उपवन, एक वरिष्ठ भिक्षु में कितने गुण होने चाहिए ताकि वह अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और संतुष्ट कर सके और उनका सम्मान और आदर प्राप्त कर सके?"

पाँच गुणों से युक्त, वरिष्ठ भिक्षु भंते अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रिय होते हैं तथा उनके द्वारा आदरणीय और प्रतिष्ठित माने जाते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वे गुणी हैं; वे पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहते हैं... [जैसा कि 5:134 में है]... वे उनमें अभ्यास करते हैं। (2) उन्होंने बहुत कुछ सीखा है... [जैसा कि 5:134 में है]... उन्होंने दृष्टि से अच्छी तरह से ज्ञान प्राप्त किया है। (3) वे एक अच्छे वक्ता हैं

और उनकी वाणी सुस्पष्ट, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थपूर्ण है। (4) वे बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) प्राप्त करते हैं जो उच्च मन का निर्माण करती हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं। (5) दोषों के नाश के साथ, उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा, इसी जीवन में, स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति का अनुभव किया है। पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति प्राप्त करने और उसमें प्रवेश करने के बाद, वह उसमें निवास करता है। इन पाँच गुणों से युक्त, एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रिय होता है और उनके द्वारा आदरणीय और सम्मानित होता है।" [196]

"वाह, वाह, उपवन! इन पाँच गुणों से युक्त होने के कारण, एक वरिष्ठ भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रसन्न करता है और उनका आदर और सम्मान करता है। लेकिन यदि ये पाँच गुण किसी वरिष्ठ भिक्षु में न हों, तो उसके साथी भिक्षु उसका आदर, सम्मान और आदर क्यों करें? 1164 क्या उसके टूटे हुए दाँतों, सफ़ेद बालों और झुर्रीदार त्वचा के कारण? बल्कि इन पाँच गुणों के कारण ही एक वरिष्ठ भिक्षु का आदर, सम्मान, आदर और आदर किया जाता है।"

---

167 निंदा करना (कोडाना)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को इस प्रकार संबोधित किया: ...

"मित्रों, जो भिक्षु किसी दूसरे भिक्षु को फटकारना चाहता है, उसे पहले अपने भीतर पाँच बातें स्थापित करनी चाहिए। वे पाँच बातें क्या हैं? (1) [उसे विचार करना चाहिए:] 'मैं उचित समय पर बोलूंगा, अनुचित समय पर नहीं; (2) मैं सत्य बोलूंगा, असत्य नहीं; (3) मैं सौम्यता से बोलूंगा, कठोरता से नहीं; (4) मैं लाभकारी ढंग से बोलूंगा, हानिकारक ढंग से नहीं; (5) मैं प्रेम और करुणा के भाव से बोलूंगा, घृणा से नहीं।' जो भिक्षु किसी दूसरे भिक्षु को फटकारना चाहता है, उसे पहले अपने भीतर ये पाँच बातें स्थापित करनी चाहिए।"

"यहाँ, मित्रों, मैं देखता हूँ कि किसी व्यक्ति को अनुचित समय पर फटकारा जा रहा है, उचित समय पर उसे विचलित नहीं किया जा रहा; उसे असत्य के बारे में फटकारा जा रहा है, सत्य के बारे में उसे विचलित नहीं किया जा रहा; उसे कठोरता से फटकारा जा रहा है, सौम्यता से उसे विचलित नहीं किया जा रहा; उसे हानिकारक तरीके से फटकारा जा रहा है, लाभकारी तरीके से उसे विचलित नहीं किया जा रहा; उसे घृणा से ग्रसित व्यक्ति द्वारा फटकारा जा रहा है, प्रेम और करुणा (मेट्टा) से ग्रसित व्यक्ति द्वारा उसे विचलित नहीं किया जा रहा है।"

"मित्रों, जब किसी भिक्षु को धम्म के विपरीत तरीके से फटकारा जाता है, तो उसमें पाँच तरीकों से पश्चातापहीनता उत्पन्न करनी चाहिए: (1) 'मित्र, तुम्हें अनुचित समय पर फटकारा गया, उचित समय पर नहीं; यही तुम्हारे पश्चातापहीन होने के लिए पर्याप्त है। (2) तुम्हें झूठा फटकारा गया, सत्य नहीं; यही तुम्हारे पश्चातापहीन होने के लिए पर्याप्त है। (3) तुम्हें कठोरता से फटकारा गया, कोमलता से नहीं; यही तुम्हारे पश्चातापहीन होने के लिए पर्याप्त है। (4) तुम्हें हानिकारक तरीके से फटकारा गया, लाभकारी तरीके से नहीं; यही तुम्हारे पश्चातापहीन होने के लिए पर्याप्त है। (5) तुम्हें घृणा रखने वाले व्यक्ति द्वारा फटकारा गया, प्रेम और करुणा (मेट्टा) वाले व्यक्ति द्वारा नहीं; यही तुम्हारे पश्चातापहीन होने के लिए पर्याप्त है।' जब किसी भिक्षु (सन्यासी) को धम्म के विपरीत तरीके से फटकारा जाता है, तो उसमें इन पांच तरीकों से पश्चातापहीनता उत्पन्न की जानी चाहिए।

"मित्रों, जब कोई भिक्षु धम्म के विपरीत तरीके से डांटता है, तो उसे पाँच तरीकों से पश्चाताप होना चाहिए: (1) 'मित्र, तुमने उसे अनुचित समय पर डांटा, उचित समय पर नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप के लिए पर्याप्त है। (2) तुमने उसे झूठा डांटा, सत्य नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप के लिए पर्याप्त है। (3) तुमने उसे कठोरता से डांटा, कोमलता से नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप के लिए पर्याप्त है। (4) तुमने उसे हानि पहुँचाने वाले तरीके से डांटा, लाभ पहुँचाने वाले तरीके से नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप के लिए पर्याप्त है। (5) तुमने उसे घृणा से डांटा, प्रेम और करुणा (मेत्ता) से नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप के लिए पर्याप्त है।' जब कोई भिक्षु धम्म के विपरीत तरीके से डांटता है, तो उसे इन पाँच तरीकों से पश्चाताप होना चाहिए। इसका कारण क्या है? ताकि कोई दूसरा भिक्षु झूठा डांटने के बारे में न सोचे।"

"यहाँ, मित्रों, मैं देखता हूँ कि किसी व्यक्ति को उचित समय पर फटकारा जा रहा है, अनुचित समय पर परेशान नहीं किया जा रहा है; उसे सच्चाई से फटकारा जा रहा है, झूठ से परेशान नहीं किया जा रहा है; उसे कोमलता से फटकारा जा रहा है, कठोरता से परेशान नहीं किया जा रहा है; उसे लाभकारी तरीके से फटकारा जा रहा है, हानिकारक तरीके से परेशान नहीं किया जा रहा है; उसे प्रेम और करुणा (मेट्टा) वाले व्यक्ति द्वारा फटकारा जा रहा है, न कि घृणा रखने वाले व्यक्ति द्वारा परेशान किया जा रहा है।"

“मित्रों, जब किसी भिक्षु को धम्म के अनुसार फटकारा जाता है, तो उसमें पाँच प्रकार से पश्चाताप उत्पन्न किया जाना चाहिए: (1) ‘मित्र, तुम्हें उचित समय पर फटकारा गया, अनुचित समय पर नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप के लिए पर्याप्त है। (2) तुम्हें सत्यपूर्वक फटकारा गया, असत्यपूर्वक नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप के लिए पर्याप्त है। (3) तुम्हें कोमल भाव से फटकारा गया, कठोर भाव से नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप के लिए पर्याप्त है। (4) तुम्हें लाभकारी तरीके से फटकारा गया, हानिकारक तरीके से नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप के लिए पर्याप्त है। (5) तुम्हें प्रेम और करुणा से भरे व्यक्ति द्वारा फटकारा गया, घृणा से भरे व्यक्ति द्वारा नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप के लिए पर्याप्त है।’ [198] जब किसी भिक्षु को धम्म के अनुसार फटकारा जाता है, तो उसमें इन पाँच प्रकार से पश्चाताप उत्पन्न किया जाना चाहिए।

“मित्रों, जब कोई भिक्षु धम्म के अनुसार डांटता है, तो उसमें पाँच प्रकार से पश्चाताप रहित भावना उत्पन्न होनी चाहिए: (1) ‘मित्र, तुमने उसे उचित समय पर डांटा, अनुचित समय पर नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप रहित होने के लिए पर्याप्त है। (2) तुमने उसे सत्यपूर्वक डांटा, असत्यपूर्वक नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप रहित होने के लिए पर्याप्त है। (3) तुमने उसे कोमल भाव से डांटा, कठोरता से नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप रहित होने के लिए पर्याप्त है। (4) तुमने उसे लाभकारी तरीके से डांटा, हानिकारक तरीके से नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप रहित होने के लिए पर्याप्त है। (5) तुमने उसे प्रेम और करुणा के भाव से डांटा, घृणा के भाव से नहीं; यही तुम्हारे पश्चाताप रहित होने के लिए पर्याप्त है।’ जब कोई भिक्षु धम्म के अनुसार डांटता है, तो उसमें इन पाँच प्रकार से पश्चाताप रहित भावना उत्पन्न होनी चाहिए। इसका कारण क्या है? ताकि कोई दूसरा भिक्षु डांटने के बारे में न सोचे? सच क्या है, इसके बारे में।

“मित्रों, जिसे फटकार लगाई जाए उसे दो बातों में दृढ़ रहना चाहिए: सत्य और क्रोधहीनता। चाहे दूसरे मुझे फटकारें—चाहे उचित समय पर या अनुचित समय पर; चाहे सत्य के बारे में या असत्य के बारे में; चाहे नरमी से या कठोरता से; चाहे लाभप्रद तरीके से या हानिप्रद तरीके से; चाहे प्रेमपूर्ण भाव से या घृणा से—फिर भी मुझे दो बातों में दृढ़ रहना चाहिए: सत्य और क्रोधहीनता।”

"अगर मुझे पता है कि 'मुझमें ऐसा गुण है', तो मैं उससे कहता हूँ: 'यह गुण मुझमें मौजूद है। यह गुण मुझमें पाया जाता है।' अगर मुझे पता है कि 'मुझमें ऐसा गुण नहीं है', तो मैं उससे कहता हूँ: 'यह गुण मुझमें मौजूद नहीं है। यह गुण मुझमें नहीं पाया जाता।'"

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "सारिपुत्त, जब तुम उनसे इस प्रकार बात करते हो, तब भी यहाँ कुछ अज्ञानी लोग तुम्हारी बातों का पूरी तरह से सम्मानपूर्वक स्वागत नहीं करते।"

"हे भंते, कुछ ऐसे लोग हैं जो आस्थाहीन हैं और गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी बन गए हैं, आस्था के कारण नहीं, बल्कि जीविका कमाने के उद्देश्य से; वे धूर्त, पाखंडी, धोखेबाज, बेचैन, अहंकारी, अभिमानी, बातूनी, अपनी बातों में बेपरवाह, इंद्रियों के द्वारों पर लापरवाह, अत्यधिक खाने वाले, जागृति के प्रति उदासीन, तपस्वी जीवन के प्रति उदासीन, प्रशिक्षण का सम्मान न करने वाले, विलासी और लापरवाह, पतन में अग्रणी, एकांतवास के कर्तव्य का त्याग करने वाले, आलसी, ऊर्जाहीन, भ्रमित, पूर्ण समझ से रहित, असामहिताग्रस्त, भटकते मन वाले, नासमझ और मूर्ख हैं। जब मैं उनसे इस प्रकार बात करता हूँ, तो वे मेरी बात को आदरपूर्वक स्वीकार नहीं करते।"

"परन्तु, भंते, ऐसे कुलवासी भी हैं जिन्होंने आस्था के कारण गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन व्यतीत किया है; वे धूर्त, पाखंडी, कपटी, बेचैन, अहंकारी, अभिमानी, बातूनी और निरर्थक नहीं हैं; वे इंद्रियों के द्वारों पर पहरा देते हैं; वे संयमी, सजग, तपस्वी जीवन के प्रति सजग और प्रशिक्षण का अत्यंत आदर करने वाले हैं; वे विलासी और आलसी नहीं हैं; वे पतन का त्याग करके एकांत में नेतृत्व करते हैं; वे ऊर्जावान, दृढ़, सजग, पूर्णतः बोधशील, समाधि में लीन, एकाग्रचित्त, बुद्धिमान और समझदार हैं। जब मैं उनसे इस प्रकार बात करता हूँ, तो वे आदरपूर्वक मेरी बात स्वीकार करते हैं।"

"सारिपुत्त, उन लोगों को छोड़ दो जो आस्थाहीन हैं और गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी बन गए हैं, आस्था के कारण नहीं बल्कि जीविका कमाने के उद्देश्य से; जो धूर्त हैं... नासमझ हैं, मूर्ख हैं। परन्तु, सारिपुत्त, तुम्हें उन कुलवासियों से बात करनी चाहिए जो आस्था के कारण गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी बन गए हैं, जो धूर्त नहीं हैं... जो बुद्धिमान हैं, समझदार हैं। [200] अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश दो, सारिपुत्त! अपने साथी भिक्षुओं को शिक्षा दो, सारिपुत्त, [यह सोचकर:] 'मैं अपने साथी भिक्षुओं को अच्छे धम्म (मार्ग) के विपरीत मार्ग से निकालूँगा और उन्हें अच्छे धम्म में स्थापित करूँगा।' इस प्रकार, सारिपुत्त, तुम्हें स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।"

---

168 सदाचारी आचरण (शीला सान. शील)

[यह सूत्र 5:24 के समान है, सिवाय इसके कि यह सारिपुत्त द्वारा भिक्षुओं से कहा गया है।] [201]

---

169 शीघ्र बोध (खिप्पानिसन्ती)

तब पूज्य आनंद, पूज्य सारिपुत्त के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर, वे एक तरफ बैठ गए और बोले: "हे मित्र सारिपुत्त, एक भिक्षु किस प्रकार लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं को शीघ्रता से समझने वाला, जो सीखी हुई बातों को अच्छी तरह आत्मसात करता है, भरपूर ज्ञान प्राप्त करता है और सीखी हुई बातों को नहीं भूलता है?"

"आदरणीय आनंद विद्वान हैं, इसलिए उन्हें स्वयं ही इस मामले को स्पष्ट कर देना चाहिए।"

"तो सुनो, मित्र सारिपुत्त, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी हां, मित्र," पूज्य सारिपुत्त ने उत्तर दिया। पूज्य आनंद ने यह कहा:

"हे मित्र सारिपुत्त, यहाँ एक भिक्षु अर्थ में निपुण, धम्म में निपुण, भाषा में निपुण, वाक्यांशों में निपुण और क्रम में निपुण होता है। 1166 इस प्रकार, हे मित्र सारिपुत्त, एक भिक्षु लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं को शीघ्रता से समझने वाला, जो कुछ सीखता है उसे अच्छी तरह ग्रहण करता है, भरपूर सीखता है और जो कुछ सीखता है उसे भूलता नहीं है।"

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है, मित्र, कि पूज्य आनंद ने इसे कितनी अच्छी तरह से व्यक्त किया है! हम पूज्य आनंद को इन पाँच गुणों से युक्त मानते हैं: 'पूज्य आनंद अर्थ में निपुण हैं, धम्म में निपुण हैं, भाषा में निपुण हैं, वाक्यांशों में निपुण हैं और क्रम में निपुण हैं।' [202]

---

170 भद्दाजी

एक बार पूज्य आनंद कोसंबी में घोषिता उद्यान में रह रहे थे। तभी पूज्य भद्दाजी उनके पास आए और उनका अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर भद्दाजी एक तरफ बैठ गए। तब पूज्य आनंद ने उनसे कहा:

"मित्र भद्दाजी, दर्शन में सर्वोत्कृष्ट क्या है? श्रवण का सर्वोत्कृष्ट प्रकार क्या है? परम सुख क्या है? अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में सर्वोत्कृष्ट क्या है? अस्तित्व की अवस्थाओं में सर्वोत्कृष्ट क्या है?"

(1) हे मित्र, ब्रह्मा हैं, जो विजय प्राप्त करने वाले, अजेय, सर्वव्यापी द्रष्टा, शक्ति के स्वामी हैं। ब्रह्मा के दर्शन करना ही सर्वोत्कृष्ट दर्शन है। (2) वहाँ प्रकाश की धारा से परिपूर्ण देव (देवदूत/देवता) हैं जो आनंद से सराबोर हैं। वे कभी-कभी प्रेरणा से कहते हैं: 'ओह, कितना आनंद! ओह, कितना आनंद!' उस ध्वनि को सुनना ही सर्वोत्कृष्ट श्रवण है। (3) वे तेजस्वी देव (देवदूत/देवता) हैं। प्रसन्न होकर वे अत्यंत शांतिपूर्ण आनंद का अनुभव करते हैं: यही सर्वोत्कृष्ट आनंद है। (4) वे शून्यता के क्षेत्र (आयतन) के देव (देवदूत/देवता) हैं: यही सर्वोत्कृष्ट अनुभूति (सन्न/संज्ञा) है। (5) वे न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) के देव (देवदूत/देवता) हैं: यही सर्वोत्कृष्ट अस्तित्व की अवस्था है।

तो क्या पूज्य भद्दाजी इस विषय पर आम लोगों से सहमत हैं? 1168

"आदरणीय आनंद विद्वान हैं, इसलिए उन्हें स्वयं ही इस मामले को स्पष्ट कर देना चाहिए।"

"तो सुनिए, मित्र भद्दाजी, और ध्यान से सुनिए। मैं बोलूंगा।"

"जी हां, मित्र," पूज्य भद्दाजी ने उत्तर दिया। पूज्य आनंद ने यह कहा:

"(1) हे मित्र, जिस भी प्रकार से कोई देखता है जिससे तुरंत बाद दोषों का नाश हो जाता है: यही सर्वोत्कृष्ट दृष्टि है। (2) जिस भी प्रकार से कोई सुनता है जिससे तुरंत बाद दोषों का नाश हो जाता है: यही सर्वोत्कृष्ट श्रवण है। (3) जिस भी प्रकार से कोई प्रसन्न होता है जिससे तुरंत बाद दोषों का नाश हो जाता है: यही सर्वोत्कृष्ट प्रसन्नता है। (4) जिस भी प्रकार से कोई बोध करता है जिससे तुरंत बाद दोषों का नाश हो जाता है: यही सर्वोत्कृष्ट बोध (सन्न/संज्ञा) है। (5) जिस भी प्रकार से कोई विद्यमान होता है जिससे तुरंत बाद दोषों का नाश हो जाता है: यही सर्वोत्कृष्ट अस्तित्व अवस्था (भाव/पुनर्जन्म का कारण) है।" [203]

तृतीय. द ले फॉलोअर (उपासका)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

171 कायरता (सरज्जा)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं (साधुओं) में पाँच गुण होते हैं, फिर भी गृहस्थ अनुयायी कायर हो जाता है। वे पाँच गुण क्या हैं? वह जीवन का नाश करता है, बिना माँगे वस्तुएँ ग्रहण करता है, यौन दुराचार में लिप्त रहता है, झूठ बोलता है और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं। इन पाँच गुणों के कारण गृहस्थ अनुयायी कायर हो जाता है।"

"भिक्षुओं में पाँच गुण होते हैं; गृहस्थ अनुयायी आत्मविश्वासी होता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह जीवन-नष्ट करने से बचता है, बिना माँगी वस्तुएँ लेने से बचता है, यौन दुराचार से बचता है, झूठी वाणी से बचता है, और आलस्य के मूल कारण मदिरा, शराब और मादक पदार्थों से दूर रहता है। इन पाँच गुणों से युक्त गृहस्थ अनुयायी आत्मविश्वासी होता है।"

---

172 आत्म-विश्वास (विसारदा)

"भिक्षुओं (साधुओं) में पाँच गुण होते हैं, फिर भी एक गृहस्थ अनुयायी घर में आत्मविश्वासहीन रहता है। वे पाँच गुण क्या हैं? [204] वह जीवन का नाश करता है, बिना माँगे चीज़ें लेता है, यौन दुराचार में लिप्त रहता है, झूठ बोलता है और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं। इन पाँच गुणों के साथ, एक गृहस्थ अनुयायी घर में आत्मविश्वासहीन रहता है।"

"भिक्षु (साधु), पाँच गुणों से युक्त होकर, गृहस्थ अनुयायी आत्मविश्वास से घर में निवास करता है। वे पाँच गुण क्या हैं? वह जीवन के विनाश से दूर रहता है, बिना माँगी वस्तुएँ लेने से दूर रहता है, यौन दुराचार से दूर रहता है, झूठी वाणी से दूर रहता है, और आलस्य के मूल कारण मदिरा, शराब और मादक पदार्थों से दूर रहता है। इन पाँच गुणों से युक्त होकर, गृहस्थ अनुयायी आत्मविश्वास से घर में निवास करता है।"

---

173 नरक (निरया)

"भिक्षुओं (साधुओं) में पाँच गुण होने के कारण, एक गृहस्थ अनुयायी को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वह जीवन का नाश करता है, बिना माँगे वस्तुएँ ग्रहण करता है, यौन दुराचार में लिप्त रहता है, झूठ बोलता है और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं। इन पाँच गुणों के कारण, एक गृहस्थ अनुयायी को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में पाँच गुण होते हैं, जिनके द्वारा एक गृहस्थ अनुयायी को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वह जीवन-नष्ट करने से बचता है, बिना माँगी वस्तुएँ लेने से बचता है, यौन दुराचार से बचता है, झूठी वाणी से बचता है, और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से बचता है, जो आलस्य का आधार हैं। इन पाँच गुणों के कारण, एक गृहस्थ अनुयायी को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

---

174 शत्रु (वेरा सं. वैर)

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"गृहस्थ, पाँच खतरों और शत्रुताओं का त्याग किए बिना, व्यक्ति अनैतिक कहलाता है और नरक में पुनर्जन्म लेता है। वे पाँच क्या हैं? जीवन का विनाश, बिना माँगे लेना, यौन दुराचार, झूठी वाणी, और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन, जो आलस्य का आधार हैं। [205] इन पाँच खतरों और शत्रुताओं का त्याग किए बिना, व्यक्ति अनैतिक कहलाता है और नरक में पुनर्जन्म लेता है।"

"गृहस्थ, पाँच प्रकार के संकटों और शत्रुताओं का त्याग करने पर पुण्य कहलाता है और स्वर्ग में पुनर्जन्म पाता है। वे पाँच कौन से संकट हैं? जीवन का विनाश... और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन, जो आलस्य का आधार हैं। इन पाँच प्रकार के संकटों और शत्रुताओं का त्याग करने पर पुण्य कहलाता है और स्वर्ग में पुनर्जन्म पाता है।"

(1) "हे गृहस्थ, जो जीव-जंतुओं का संहार करता है, वह वर्तमान और भविष्य दोनों जीवन में संकट और शत्रुता उत्पन्न करता है, और मानसिक पीड़ा और निराशा का भी अनुभव करता है। जो जीव-जंतुओं का संहार नहीं करता, वह वर्तमान और भविष्य दोनों जीवन में संकट और शत्रुता उत्पन्न नहीं करता, और न ही उसे मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव होता है। जीव-जंतुओं का संहार न करने वाले के लिए वह संकट और शत्रुता निःसंतान हो जाती है।"

(2) "गृहस्थ, वह व्यक्ति जो बिना दिए हुए सामान लेता है..."

(3) . . . यौन दुराचार में लिप्त होता है . . . (4) झूठ बोलता है . . .

(5) ... जो आलस्य के आधार, शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, वह वर्तमान और भविष्य के जीवन में खतरे और शत्रुता को जन्म देता है, और मानसिक पीड़ा और निराशा का भी अनुभव करता है। जो आलस्य के आधार, शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से परहेज करता है, वह वर्तमान और भविष्य के जीवन में खतरे और शत्रुता को जन्म नहीं देता, न ही वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। जो आलस्य के आधार, शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से परहेज करता है, उसके लिए वह खतरा और शत्रुता इस प्रकार समाप्त हो जाती है।

दुनिया में एक ऐसा आदमी है जो जीवन को नष्ट करता है,

झूठ बोलता है, और बिना दिए हुए चीजें लेता है,

जो दूसरों की पत्नियों के पास जाता है,

और शराब और मदिरा में लिप्त रहता है।

पांच शत्रुओं को धारण करने वाला

व्यक्ति अनैतिक कहलाता है।

शरीर के क्षोभ के साथ ही

वह मूर्ख व्यक्ति नरक में पुनर्जन्म लेता है।

लेकिन दुनिया में एक ऐसा आदमी है

जो जीवन को नष्ट नहीं करता,

झूठ नहीं बोलता, जो नहीं दिया गया है उसे नहीं लेता,

दूसरों की पत्नियों के पास नहीं जाता, [206]

या शराब और मदिरा में लिप्त नहीं होता।

पांच शत्रुओं का त्याग करने वाला

व्यक्ति गुणी कहलाता है।

शरीर के नष्ट होने पर

वह ज्ञानी व्यक्ति स्वर्ग में पुनर्जन्म लेता है।

---

175 कैंडला

"भिक्षुओं (साधुओं) में पाँच गुण होते हैं, जबकि गृहस्थ अनुयायी गृहस्थ अनुयायियों का चांडाल, गृहस्थ अनुयायियों का कलंक और गृहस्थ अनुयायियों में सबसे अंतिम होता है। 1170 वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह आस्थाहीन होता है; (2) वह अनैतिक होता है; (3) वह अंधविश्वासी होता है और कर्मों की नहीं, शुभ संकेतों में विश्वास करता है; (4) वह यहाँ से बाहर ऐसे व्यक्ति की खोज करता है जो भेंट के योग्य हो; 1171 और (5) वह पहले वहाँ पुण्य कर्म करता है। इन पाँच गुणों से युक्त गृहस्थ अनुयायी गृहस्थ अनुयायियों का चांडाल, गृहस्थ अनुयायियों का कलंक और गृहस्थ अनुयायियों में सबसे अंतिम होता है।"

"भिक्षुओं (साधुओं), जिनमें पाँच गुण होते हैं, वे गृहस्थ अनुयायी के लिए रत्न, लाल कमल और श्वेत कमल के समान होते हैं। 1172 वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वे आस्थावान होते हैं; (2) वे गुणी होते हैं; (3) वे अंधविश्वासी नहीं होते और कर्मों में विश्वास रखते हैं, शुभ संकेतों में नहीं; (4) वे भेंट के योग्य व्यक्ति की खोज में यहाँ से बाहर नहीं जाते; वे सर्वप्रथम यहाँ पुण्य कर्म करते हैं। इन पाँच गुणों से युक्त गृहस्थ अनुयायी के लिए रत्न, लाल कमल और श्वेत कमल के समान होते हैं।"

---

176 आनंद (पिति सान. प्रीति)

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका अपने पाँच सौ अनुयायियों के साथ भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने गृहस्थ अनाथपिंडिका [और उनके अनुयायियों] से कहा:

"गृहस्थों, आपने भिक्षु संघ को वस्त्र, भिक्षा, आवास, औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन सामग्री भेंट की है। केवल इतना ही सोचकर संतुष्ट न हों: 'हमने भिक्षु संघ को वस्त्र, भिक्षा, आवास, औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन सामग्री भेंट की है।' अतः, गृहस्थों, आपको इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: [207] 'हम समय-समय पर एकांत के आनंद (पीति) में कैसे प्रवेश कर सकते हैं और निवास कर सकते हैं?' 1173 इसी प्रकार आपको अभ्यास करना चाहिए।"

यह सुनकर पूज्य सारिपुत्त ने भगवान (बुद्ध) से कहा, "हे भंते, यह कितना अद्भुत और आश्चर्यजनक है कि भगवान (बुद्ध) ने कितना सही कहा है। भंते, जब भी कोई श्रेष्ठ शिष्य एकांतवास के आनंद (पीति) में प्रवेश करता है और निवास करता है, उस समय उसमें पाँच बातें नहीं होतीं: (1) उसे कामुकता से संबंधित पीड़ा और उदासी नहीं होती। (2) उसे कामुकता से संबंधित सुख और आनंद नहीं होता। (3) उसे अकुशल कर्मों से संबंधित पीड़ा और उदासी नहीं होती। (4) उसे अकुशल कर्मों से संबंधित सुख और आनंद नहीं होता। (5) उसे कुशल कर्मों से संबंधित पीड़ा और उदासी नहीं होती। भंते, जब भी कोई श्रेष्ठ शिष्य एकांतवास के आनंद (पीति) में प्रवेश करता है और निवास करता है, उस समय उसमें ये पाँच बातें नहीं होतीं।"

"अच्छा, अच्छा, सारिपुत्त! सारिपुत्त, जब भी [208] कोई श्रेष्ठ शिष्य एकांत के आनंद (पीति) में प्रवेश करता है और निवास करता है... [बुद्ध पूज्य सारिपुत्त के पूरे कथन को दोहराते हैं, यहाँ तक कि:] ... उस अवसर पर ये पाँच बातें उसमें नहीं घटित होतीं।"

---

177 व्यापार (वनिज्जा)

भिक्षुओं, एक गृहस्थ अनुयायी को इन पाँच व्यवसायों में संलग्न नहीं होना चाहिए। वे पाँच कौन से हैं? शस्त्रों का व्यापार, प्राणियों का व्यापार, मांस का व्यापार, मादक पदार्थों का व्यापार और विषों का व्यापार। एक गृहस्थ अनुयायी को इन पाँच व्यवसायों में संलग्न नहीं होना चाहिए।

---

178 राजा

(1) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? क्या आपने कभी देखा या सुना है कि जब कोई व्यक्ति जीवन के विनाश का त्याग करता है और उससे दूर रहता है, तो राजा उसे इस प्रकार दूर रहने के आरोप में गिरफ्तार करवाते हैं और फिर उसे मार डालते हैं, कैद करते हैं, देश निकाला देते हैं, या उसके साथ जैसा भी अवसर की मांग हो वैसा करते हैं?"

"बिल्कुल नहीं, भंते।"

"हे भिक्षुओं! मैंने भी ऐसी कोई बात न तो देखी है और न ही सुनी है। बल्कि [209] जब वे राजा को उसके बुरे कर्म की सूचना देते हुए कहते हैं, 'इस व्यक्ति ने किसी स्त्री या पुरुष का जीवन ले लिया है,' तब राजा उसे हत्या के आरोप में गिरफ्तार करवाते हैं और फिर उसे मृत्युदंड देते हैं, कैद करते हैं, देश निकाला देते हैं या उसके साथ जैसा भी व्यवहार करें, जैसा भी उस समय आवश्यक हो। क्या आपने कभी ऐसा कोई मामला देखा या सुना है?"

"हमने यह देखा है, भंते, हमने इसके बारे में सुना है, और हम इसके बारे में [आने वाले समय में] सुनेंगे।"

(2) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? क्या आपने कभी देखा या सुना है कि जब कोई व्यक्ति बिना दी गई वस्तु का त्याग कर उससे परहेज करता है, तो राजा उसे इस प्रकार परहेज करने के आरोप में गिरफ्तार करवाते हैं और फिर उसे मृत्युदंड देते हैं, कारावास में डालते हैं, देश निकाला देते हैं या उसके साथ आवश्यकतानुसार व्यवहार करते हैं?"

"बिल्कुल नहीं, भंते।"

"अच्छे भिक्षुओं! मैंने भी ऐसी कोई बात न तो देखी है और न ही सुनी है। बल्कि जब वे राजा को उसके बुरे कर्म की सूचना देते हुए कहते हैं, 'इस व्यक्ति ने गाँव या जंगल से कुछ चुराया है,' तो राजा उसे चोरी के आरोप में गिरफ्तार करवा देते हैं और फिर उसे फाँसी दे देते हैं, कैद कर देते हैं, देश निकाला दे देते हैं या उसके साथ जैसा भी उचित हो, वैसा करते हैं। क्या आपने कभी ऐसा कोई मामला देखा या सुना है?"

"हमने यह देखा है, भंते, हमने इसके बारे में सुना है, और हम इसके बारे में [आने वाले समय में] सुनेंगे।"

(3) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? क्या आपने कभी देखा या सुना है कि जब कोई व्यक्ति यौन दुराचार का त्याग करता है और उससे दूर रहता है, तो राजा उसे इस प्रकार के दुराचार से दूर रहने के आरोप में गिरफ्तार करवाते हैं और फिर उसे मृत्युदंड देते हैं, कैद करते हैं, देश निकाला देते हैं या उसके साथ जैसा भी अवसर की मांग हो वैसा करते हैं?"

"बिल्कुल नहीं, भंते।"

"हे भिक्षुओं! मैंने भी ऐसी कोई बात न तो देखी है और न ही सुनी है। [210] बल्कि जब वे राजाओं को उसके बुरे कर्मों की सूचना देते हुए कहते हैं, 'इस व्यक्ति ने किसी और की स्त्रियों और कन्याओं के साथ दुराचार किया है,' तब राजा उसे यौन दुराचार के आरोप में गिरफ्तार करवाते हैं और फिर उसे मृत्युदंड देते हैं, कारावास में डालते हैं, देश निकाला देते हैं, या उसके साथ जैसा भी उचित हो, वैसा करते हैं। क्या आपने कभी ऐसा कोई मामला देखा या सुना है?"

"हमने यह देखा है, भंते, हमने इसके बारे में सुना है, और हम इसके बारे में [आने वाले समय में] सुनेंगे।"

(4) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? क्या आपने कभी देखा या सुना है कि जब कोई व्यक्ति झूठे वचन का त्याग करता है और उससे दूर रहता है, तो राजा उसे झूठे वचन से दूर रहने के आरोप में गिरफ्तार करवाते हैं और फिर उसे मार डालते हैं, कैद कर लेते हैं, देश निकाला दे देते हैं या उसके साथ जैसा भी अवसर की मांग हो वैसा करते हैं?"

"बिल्कुल नहीं, भंते।"

"हे भिक्षुओं! मैंने भी ऐसी कोई बात न तो देखी है और न ही सुनी है। बल्कि, जब वे राजा को उसके बुरे कर्मों की सूचना देते हुए कहते हैं, 'इस व्यक्ति ने झूठे वचनों से किसी गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र का विनाश किया है,' तब राजा उसे झूठे वचनों के आरोप में गिरफ्तार करवाते हैं और फिर उसे मृत्युदंड देते हैं, कारावास में डालते हैं, देश निकाला देते हैं या उसके साथ जैसा भी व्यवहार करना उचित समझते हैं, वैसा करते हैं। क्या आपने कभी ऐसा कोई मामला देखा या सुना है?"

"हमने यह देखा है, भंते, हमने इसके बारे में सुना है, और हम इसके बारे में [आने वाले समय में] सुनेंगे।"

(5) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? क्या आपने कभी देखा या सुना है कि जब कोई व्यक्ति आलस्य के आधार, शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का त्याग कर उनसे परहेज करता है, तो राजा उसे इस प्रकार परहेज करने के आरोप में गिरफ्तार करवाते हैं और फिर उसे मृत्युदंड देते हैं, कैद करते हैं, देश निकाला देते हैं या उसके साथ आवश्यकतानुसार व्यवहार करते हैं?"

"बिल्कुल नहीं, भंते।"

"हे भिक्षुओं! मैंने भी ऐसी कोई बात न तो देखी है और न ही सुनी है। [211] बल्कि जब वे राजाओं को उसके बुरे कर्मों की सूचना देते हुए कहते हैं, 'इस व्यक्ति ने शराब, मदिरा और मादक पदार्थों के प्रभाव में आकर किसी स्त्री या पुरुष की जान ले ली है; या उसने किसी गाँव या जंगल से कुछ चुराया है; या उसने किसी दूसरे की स्त्री या कन्या के साथ दुराचार किया है; या उसने किसी गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र को झूठे वचनों से बर्बाद कर दिया है,' तब राजा उसे आलस्य का कारण बनने वाले शराब, मदिरा और मादक पदार्थों के सेवन के आरोप में गिरफ्तार करवाते हैं और फिर उसे मार डालते हैं, कैद कर देते हैं, देश निकाला दे देते हैं या उसके साथ जैसा भी उचित हो वैसा करते हैं। क्या आपने कभी ऐसा कोई मामला देखा या सुना है?"

"हमने यह देखा है, भंते, हमने इसके बारे में सुना है, और हम इसके बारे में [आने वाले समय में] सुनेंगे।"

---

179 ए लेमैन (गिही सं. गृही)

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका अपने पाँच सौ अनुयायियों के साथ भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य सारिपुत्त को संबोधित करते हुए कहा, "हे सारिपुत्त, तुम्हें यह जानना चाहिए कि कोई भी श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ, जिसके कर्म पाँच प्रशिक्षण नियमों द्वारा नियंत्रित हों और जो बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, उच्चतर मन से संबंधित चार सुखद प्रत्यक्ष निवास प्राप्त कर ले, यदि चाहे तो अपने बारे में यह कह सकता है: 'मैंने नरक, पशु लोक और व्यथित आत्माओं के लोक से मुक्ति पा ली है; मैंने दुख के लोक, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्ति पा ली है; मैं सात जन्मों का पथ-प्रदर्शक (सोतपत्ति) हूँ, अब निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं हूँ, नियति में स्थिर हूँ, ज्ञान की ओर अग्रसर हूँ।'"

(1) "वे पाँच प्रशिक्षण नियम क्या हैं जिनके द्वारा उसके कार्यों को नियंत्रित किया जाता है? [212] यहाँ, सारिपुत्त, एक श्रेष्ठ शिष्य, जीवन के विनाश से, बिना दी हुई वस्तुएँ लेने से, यौन दुराचार से, झूठी वाणी से और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से, जो आलस्य का आधार हैं, परहेज़ करता है। उसके कार्यों को इन पाँच प्रशिक्षण नियमों द्वारा नियंत्रित किया जाता है।

"वे चार सुखद प्रत्यक्ष निवास कौन से हैं जो उच्चतर मन से संबंधित हैं, जिन्हें वह बिना किसी परेशानी या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त कर लेता है?..."

(2) "यहाँ, श्रेष्ठ शिष्य बुद्ध में अटूट विश्वास रखता है, इस प्रकार: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, संसार के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' यह उच्च मन से संबंधित पहला सुखद प्रत्यक्ष निवास है, जिसे उसने अशुद्ध मन की शुद्धि, अपवित्र मन के शुद्धिकरण के लिए प्राप्त किया है।"

(3) "फिर, श्रेष्ठ शिष्य धम्म में अटूट विश्वास रखता है, इस प्रकार: 'भगवान (बुद्ध) द्वारा धम्म की अच्छी तरह व्याख्या की गई है, यह प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान है, तात्कालिक है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, लागू करने योग्य है, बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाना है।' यह दूसरा सुखद दृश्यमान निवास है जो उच्च मन से संबंधित है, जिसे उसने अशुद्ध मन की शुद्धि, अपवित्र मन के शुद्धिकरण के लिए प्राप्त किया है।"

(4) "फिर, श्रेष्ठ शिष्य संघ में इस प्रकार अटूट विश्वास रखता है: 'भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का संघ अच्छे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, सीधे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, सच्चे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, उचित मार्ग का अभ्यास कर रहा है; अर्थात्, चार युग्मों के व्यक्ति, आठ प्रकार के व्यक्ति - भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का यह संघ दान के योग्य है, आतिथ्य के योग्य है, भेंट के योग्य है, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।' यह उच्च मन से संबंधित तीसरा सुखद दृश्य निवास है, जिसे उसने अशुद्ध मन की शुद्धि के लिए, अपवित्र मन की सफाई के लिए प्राप्त किया है। [213]

(5) "पुनः, श्रेष्ठ शिष्य में श्रेष्ठों द्वारा प्रिय, अटूट, दोषरहित, निर्मल, बेदाग, मुक्तिदायक, बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, अछूता और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाला सद्‌गुणी आचरण होता है। यह उच्च मन से संबंधित चौथा सुखद दृश्य निवास है, जिसे उसने अशुद्ध मन की शुद्धि और अपवित्र मन के शुद्धिकरण के लिए प्राप्त किया है।"

"ये चार सुखद प्रत्यक्ष निवास हैं जो उच्च मन से संबंधित हैं, जिन्हें वह बिना किसी परेशानी या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त करता है।"

"हे सारिपुत्त, तुम्हें यह जानना चाहिए कि कोई भी श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ, जिसके कर्म इन पाँच प्रशिक्षण नियमों द्वारा नियंत्रित हों और जो बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से उच्च मन से संबंधित इन चार सुखद प्रत्यक्ष निवासों को प्राप्त कर ले, यदि चाहे तो अपने बारे में यह घोषणा कर सकता है: 'मैंने नरक, पशु लोक और पीड़ित आत्माओं के लोक से मुक्ति पा ली है; मैंने दुख के लोक, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्ति पा ली है; मैं सात जन्मों का मार्ग प्रशस्त करने वाला (सोतपत्ति) हूँ, अब निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं हूँ, नियति में स्थिर हूँ, ज्ञानोदय की ओर अग्रसर हूँ।'"

नरकों के खतरे को देखकर,

व्यक्ति को बुरे कर्मों से बचना चाहिए; और

जिसने श्रेष्ठ धम्म का मार्ग अपनाया है,

बुद्धिमान व्यक्ति को उनसे बचना चाहिए।

अपनी पूरी क्षमता से,

किसी को भी जीवित प्राणी को चोट नहीं पहुंचानी चाहिए;

जानबूझकर झूठ नहीं बोलना चाहिए;

जो चीज नहीं दी गई है उसे नहीं लेना चाहिए।

व्यक्ति को अपनी पत्नियों से संतुष्ट रहना चाहिए, [1174]

और दूसरों की पत्नियों से दूर रहना चाहिए। [1175]

व्यक्ति को शराब और मादक पेय नहीं पीना चाहिए,

जो मानसिक भ्रम पैदा करते हैं।

हमें बुद्ध का स्मरण करना चाहिए

और धम्म पर चिंतन करना चाहिए।

हमें एक परोपकारी मन विकसित करना चाहिए,

जो हमें देवलोक की ओर ले जाता है।

जब दान देने योग्य वस्तुएँ उपलब्ध हों, तो

ज़रूरतमंद और पुण्य चाहने वाले व्यक्ति के लिए 1176

भेंट बहुत बड़ी हो जाती है

यदि पहले पवित्र लोगों को दी जाए।

मैं पवित्र जनों का वर्णन करूँगा,

सारिपुत्त, ध्यान से सुनो। [1177]

किसी भी प्रकार के पशुओं में,

चाहे वे काले, सफेद, लाल, सुनहरे,

चित्तीदार, एकसमान या कबूतर के रंग के हों,

पालतू बैल जन्म लेता है,

जो भार वहन कर सकता है,

बलवान होता है और अच्छी गति से आगे बढ़ता है।

वे बोझ केवल उसी पर डालते हैं;

उन्हें उसके रंग की चिंता नहीं होती।

इसी प्रकार, मनुष्यों में भी,

किसी भी प्रकार के पुनर्जन्म में—

क्षति, ब्राह्मण, वेस,

शुद्ध, चांडल या सफाईकर्मियों में

—किसी भी प्रकार के लोगों में,

अच्छे व्यवहार वाला पालतू पुरुष जन्म लेता है:

जो धम्म में दृढ़, आचरण में गुणी,

वाणी में सत्यवादी, नैतिक लज्जा से युक्त;

जिसने पुनर्जन्म और मृत्यु का त्याग कर दिया है,

ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) में परिपूर्ण है,

बोझ

से मुक्त, अनासक्त, जिसने अपना कार्य पूरा कर लिया है, दोषरहित है;

जो संसार की सभी चीजों से परे जाकर

अनासक्ति के द्वारा निर्वाण प्राप्त कर चुका है: उस निर्मल खेत में बोया गया

अर्पण वास्तव में विशाल होता है ।

अज्ञानी, बुद्धिहीन

, मंदबुद्धि, अज्ञानी लोग

संतों की सेवा नहीं करते

, बल्कि अपना दान बाहर के लोगों को दे देते हैं।

परन्तु जो संत,

ऋषि माने जाने वाले बुद्धिमानों की सेवा करते हैं,

और जिनकी सुगत (भगवान बुद्ध) में आस्था

दृढ़ और दृढ़ है,

वे देवलोक जाते हैं

या अच्छे परिवार में जन्म लेते हैं।

क्रमिक रूप से प्रगति करते हुए,

वे बुद्धिमान लोग निर्वाण प्राप्त करते हैं।

---

180 गावेसी

एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक विशाल संघ के साथ कोसल पर्वतमाला में भ्रमण कर रहे थे। तभी राजमार्ग पर चलते हुए उन्हें एक स्थान पर साल के पेड़ों का एक विशाल वन दिखाई दिया। उन्होंने राजमार्ग छोड़कर वन में प्रवेश किया और एक निश्चित स्थान पर पहुँचकर मुस्कुराए।

तब पूज्य आनंद के मन में यह विचार आया: "भगवान (बुद्ध) क्यों मुस्कुराए? तथागत (बुद्ध) बिना किसी कारण के नहीं मुस्कुराते।" तब पूज्य आनंद [215] ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "हे भंते, भगवान (बुद्ध) क्यों मुस्कुराए? तथागत (बुद्ध) बिना किसी कारण के नहीं मुस्कुराते।"

"आनंद, अतीत में इस स्थान पर एक समृद्ध, खुशहाल और घनी आबादी वाला नगर था, जो लोगों से भरा रहता था। अब भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध कश्यप, उस नगर पर निर्भर रहते थे। भगवान (बुद्ध) कश्यप का एक गृहस्थ शिष्य था जिसका नाम गवेशी था, जिसने सद्‌गुणों का पालन नहीं किया था। और गवेशी ने पाँच सौ गृहस्थ शिष्यों को शिक्षा और मार्गदर्शन दिया था, जिन्होंने भी सद्‌गुणों का पालन नहीं किया था।"

(1) "तब, हे आनंद, गवेशी के मन में यह विचार आया: 'मैं इन पाँच सौ गृहस्थ अनुयायियों का उपकारक, नेता और मार्गदर्शक हूँ, फिर भी न तो मैंने स्वयं और न ही इन पाँच सौ गृहस्थ अनुयायियों ने सद्‌गुणों का पालन किया है। इस प्रकार हम सब एक ही स्तर पर हैं, और मैं उनसे ज़रा भी बेहतर नहीं हूँ। मुझे उनसे आगे निकलना चाहिए।'

फिर गवेसी पाँच सौ अनुयायियों के पास गए और उनसे कहा, 'आज से तुम मुझे सदाचारी आचरण का पालन करने वाला समझो।' तब उन पाँच सौ अनुयायियों के मन में यह विचार आया: 'गुरु गवेसी हमारे उपकारक, नेता और मार्गदर्शक हैं। अब गुरु गवेसी सदाचारी आचरण का पालन करेंगे। तो हम भी ऐसा क्यों न करें?'

तब उन पांच सौ अनुयायियों ने गवेसी के पास जाकर उनसे कहा: 'आज से गुरु गवेसी हमें सदाचारी आचरण का पालन करने वाला समझें।'

(2) "तब, आनंद, गृहस्थ अनुयायी गवेशी के मन में यह विचार आया: 'मैं इन पाँच सौ गृहस्थ अनुयायियों का उपकारक, नेता और मार्गदर्शक हूँ। अब मैं सद्गुणों का पालन कर रहा हूँ, और ये पाँच सौ गृहस्थ अनुयायी भी ऐसा ही कर रहे हैं। [-216] इस प्रकार हम सब एक ही स्तर पर हैं, और मैं उनसे ज़रा भी बेहतर नहीं हूँ। मुझे उनसे आगे निकल जाना चाहिए।'

तब गवेसी पाँच सौ अनुयायियों के पास गए और उनसे कहा: 'आज से तुम मुझे ब्रह्मचारी समझो, अलग रहो, यौन संबंध से परहेज करो, जो आम आदमी का नियम है।' तब उन पाँच सौ अनुयायियों के मन में यह विचार आया: 'गुरु गवेसी हमारे उपकारक, नेता और मार्गदर्शक हैं। अब गुरु गवेसी ब्रह्मचारी रहेंगे, अलग रहेंगे, यौन संबंध से परहेज करेंगे, जो आम आदमी का नियम है। तो हम भी ऐसा क्यों न करें?'

"तब वे पाँच सौ अनुयायी गवेसी के पास पहुँचे और उनसे कहा: 'आज से गुरु गवेसी हमें ब्रह्मचारी, अलग रहने वाले, यौन संबंध से परहेज करने वाले, आम आदमी के अभ्यास के अनुसार मानें।'

(3) "तब, आनंद, गृहस्थ अनुयायी गवेशी के मन में यह विचार आया: 'मैं इन पाँच सौ गृहस्थ अनुयायियों का उपकारक, नेता और मार्गदर्शक हूँ। मैं स्वयं सद्गुणों का पालन कर रहा हूँ, और ये पाँच सौ गृहस्थ अनुयायी भी ऐसा ही कर रहे हैं। मैं ब्रह्मचारी हूँ, एकांत में रहता हूँ, यौन संबंध से परहेज करता हूँ, जो आम आदमी का आचरण है, और ये पाँच सौ गृहस्थ अनुयायी भी ऐसा ही कर रहे हैं। इस प्रकार हम सब एक ही स्तर पर हैं, और मैं उनसे जरा भी बेहतर नहीं हूँ। मुझे उनसे श्रेष्ठ बनना चाहिए।'

फिर गवेसी पाँच सौ अनुयायियों के पास गए और उनसे कहा, 'आज से तुम मुझे दिन में एक बार भोजन करने वाला, रात का भोजन न करने वाला और उचित समय के बाहर भोजन न करने वाला समझो।' तब उन पाँच सौ अनुयायियों के मन में यह विचार आया: 'गुरु गवेसी हमारे उपकारक, नेता और मार्गदर्शक हैं। अब गुरु गवेसी दिन में एक बार भोजन करते हैं, रात का भोजन नहीं करते और उचित समय के बाहर भोजन नहीं करते। तो हम भी ऐसा क्यों न करें?'

"तब वे पाँच सौ अनुयायी गवेसी के पास पहुँचे और [217] उनसे कहा: 'आज से गुरु गवेसी हमें दिन में एक बार भोजन करने वाला, रात के भोजन से परहेज करने वाला और उचित समय के बाहर भोजन न करने वाला समझें।'

(4) "तब, आनंद, गृहस्थ अनुयायी गवेशी के मन में यह विचार आया: 'मैं इन पाँच सौ गृहस्थ अनुयायियों का उपकारक, नेता और मार्गदर्शक हूँ। मैं सदाचारी आचरण का पालन कर रहा हूँ, और ये पाँच सौ गृहस्थ अनुयायी भी ऐसा ही कर रहे हैं। मैं ब्रह्मचारी हूँ, एकांत में रहता हूँ, यौन संबंध से परहेज़ करता हूँ, जो आम आदमी का आचरण है, और ये पाँच सौ गृहस्थ अनुयायी भी ऐसा ही कर रहे हैं। मैं दिन में एक बार भोजन करता हूँ, रात्रि भोजन नहीं करता, उचित समय के बाहर भोजन नहीं करता, और ये पाँच सौ गृहस्थ भी ऐसा ही करते हैं। इस प्रकार हम सब एक ही स्तर पर हैं, और मैं उनसे ज़रा भी बेहतर नहीं हूँ। मुझे उनसे श्रेष्ठ बनना चाहिए।'

तब गवेशी भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध कश्यप के पास गए और उनसे कहा: 'भंते, क्या मुझे भगवान (बुद्ध) के अधीन संन्यास लेने और पूर्ण दीक्षा प्राप्त करने की अनुमति मिल सकती है?' गृहस्थ अनुयायी गवेशी ने भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध कश्यप के मार्गदर्शन में भिक्षु दीक्षा और पूर्ण दीक्षा प्राप्त की। पूर्ण दीक्षा के शीघ्र ही, एकांतवास में, एकांत में, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर, भिक्षु गवेशी ने इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) के उस श्रेष्ठ लक्ष्य को स्वयं अनुभव किया, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन अपनाते हैं, और इस जीवन में प्रवेश करके वे इसमें निवास करने लगे। उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान से जाना: 'पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी जन्म-मृत्यु का कोई आरोहण नहीं है।' और भिक्षु गवेशी अरहंतों में से एक बन गए।

"तब, आनंद, उन पाँच सौ गृहस्थ अनुयायियों के मन में यह विचार आया: 'गुरु गवेशी हमारे उपकारक, नेता और मार्गदर्शक हैं। अब गुरु गवेशी ने अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर और गेरुए वस्त्र धारण करके गृहस्थ जीवन त्याग कर संन्यासी जीवन में प्रवेश कर लिया है। तो हम भी ऐसा क्यों न करें?'"

तब वे पाँच सौ गृहस्थ अनुयायी भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध कश्यप के पास पहुँचे और उनसे कहा: 'भंते, क्या हम भगवान (बुद्ध) के अधीन संन्यास ग्रहण और पूर्ण दीक्षा प्राप्त कर सकते हैं?' तब वे पाँच सौ गृहस्थ अनुयायी भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध कश्यप के अधीन संन्यास ग्रहण और पूर्ण दीक्षा प्राप्त कर चुके थे।

(5) "तब, हे आनंद, भिक्षु गवेशी के मन में यह विचार आया: 'मैं इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, मुक्ति के अतुलनीय आनंद को प्राप्त कर लेता हूँ। काश, ये पाँच सौ भिक्षु भी इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, मुक्ति के अतुलनीय आनंद को प्राप्त कर पाते!' तब, हे आनंद, प्रत्येक भिक्षु एकांत में रहकर, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर, थोड़े ही समय में उन पाँच सौ भिक्षुओं ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से, इसी जीवन में, ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) के उस अतुलनीय लक्ष्य को स्वयं अनुभव कर लिया, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करते हैं, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करने लगे। उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से जाना: 'पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।'

"इस प्रकार, आनंद, गवेशी के नेतृत्व में उन पाँच सौ भिक्षुओं ने उत्तरोत्तर उच्चतर और अधिक उत्कृष्ट मार्गों का अनुसरण करते हुए मुक्ति के अतुलनीय आनंद को प्राप्त किया। 178 अतः, आनंद, तुम्हें इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: उत्तरोत्तर उच्चतर और अधिक उत्कृष्ट मार्गों का अनुसरण करते हुए, हम मुक्ति के अतुलनीय आनंद को प्राप्त करेंगे। इस प्रकार, आनंद, तुम्हें स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।" [219]

चतुर्थ. वनवासी (अरन्नवग्गो सं. अरण्य-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

181 वनवासी (अरन्निका)

भिक्षुओं, वनवास में रहने वाले पाँच प्रकार के होते हैं। वे पाँच कौन से हैं? (1) वह जो अपनी सुस्ती और मूर्खता के कारण वनवास में जाता है; (2) वह जो बुरी इच्छाओं के कारण, कामवासना से प्रेरित होकर वनवास में जाता है; (3) वह जो पागल और मानसिक रूप से विक्षिप्त होने के कारण वनवास में जाता है; (4) वह जो यह सोचकर वनवास में जाता है: 'बुद्धों और बुद्धों के शिष्यों ने इसकी प्रशंसा की है'; (5) और वह जो इच्छाओं की कमी, संतोष, विकारों के निवारण, एकांत और सादगी के लिए वनवास में जाता है। ये पाँच प्रकार के वनवास में रहने वाले हैं। जो इच्छाओं की कमी, संतोष, विकारों के निवारण, एकांत और सादगी के लिए वनवास में जाता है, वही सबसे श्रेष्ठ, सबसे अच्छा और सबसे उत्कृष्ट है। इन पांच प्रकार के वनवासियों में सर्वोच्च और सर्वश्रेष्ठ।

"हे भिक्षुओं, जिस प्रकार गाय से दूध, दही, मक्खन, घी और मलाई बनती है, जो इन सब में श्रेष्ठ मानी जाती है, उसी प्रकार जो व्यक्ति साधारण इच्छाओं के लिए वनवास करता है, वह इन पाँचों प्रकार के वनवासियों में सबसे श्रेष्ठ, सबसे अच्छा, सबसे उत्कृष्ट और सबसे उत्तम है।"

182-190 चिथड़े-मटके वस्त्र आदि धारण करने वाले (सिवारा)

भिक्षुओं, ये पाँच प्रकार के वस्त्रधारी हैं 1180 . . . ये पाँच जो वृक्ष की तलहटी में निवास करते हैं . . . [220] — ये पाँच जो श्मशान भूमि में निवास करते हैं . . . ये पाँच जो खुले आकाश में निवास करते हैं . . , ये पाँच जो ध्यानमग्न रहने का अभ्यास करते हैं . . . ये पाँच जो किसी भी पलंग का उपयोग करने का अभ्यास करते हैं . . . ये पाँच जो एक सत्र का अभ्यास करते हैं . . . ये पाँच जो बाद में भोजन न करने का अभ्यास करते हैं . . . ये पाँच जो केवल भिक्षापात्र में भोजन करने का अभ्यास करते हैं। वे पाँच कौन से हैं? (1) वह जो अपनी सुस्ती और मूर्खता के कारण केवल भिक्षापात्र में भोजन करने का अभ्यास करता है; (2) वह जो बुरी इच्छाओं के कारण, कामवासना से

प्रेरित होकर केवल भिक्षापात्र में भोजन करने का अभ्यास करता है; (3) वह जो (4) जो पागल और मानसिक रूप से विक्षिप्त होने के कारण केवल भिक्षापात्र में रखा भोजन ग्रहण करता है; (4) जो यह सोचकर केवल भिक्षापात्र में रखा भोजन ग्रहण करता है: 'बुद्धों और बुद्धों के शिष्यों ने इसकी प्रशंसा की है'; (5) और जो इच्छाओं की कमी, संतोष, विकारों के निवारण, एकांत और सादगी के लिए केवल भिक्षापात्र में रखा भोजन ग्रहण करता है। ये पाँचों भिक्षापात्र में रखा भोजन ग्रहण करने का अभ्यास करते हैं। जो इच्छाओं की कमी और सादगी के लिए केवल भिक्षापात्र में रखा भोजन ग्रहण करता है, वह इन पाँचों में सबसे श्रेष्ठ, सर्वोत्कृष्ट, सर्वोच्च और उत्तम है।

"जिस प्रकार, भिक्षुओं, गाय से दूध, दूध से दही, दही से मक्खन, मक्खन से घी और घी से मलाई बनती है, जो इन सब में श्रेष्ठ मानी जाती है, उसी प्रकार जो व्यक्ति केवल भिक्षापात्र में रखा भोजन ग्रहण करने का अभ्यास करता है, इच्छाओं की कमी के लिए... सादगी के लिए, वह इन पाँचों में सबसे श्रेष्ठ, सबसे उत्तम, सबसे श्रेष्ठ और सबसे उत्तम है जो केवल भिक्षापात्र में रखा भोजन ग्रहण करने का अभ्यास करते हैं।"

वी. ब्राह्मण

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

191 सोना

"भिक्षुओं, ये पाँच प्राचीन ब्राह्मण प्रथाएँ हैं जो अब कुत्तों में तो देखी जाती हैं लेकिन ब्राह्मणों में नहीं। वे पाँच कौन सी हैं?"

(1) "पूर्वकाल में, ब्राह्मण केवल ब्राह्मण स्त्रियों के साथ ही संभोग करते थे, गैर-ब्राह्मण स्त्रियों के साथ नहीं। परन्तु अब ब्राह्मण, ब्राह्मण और गैर-ब्राह्मण दोनों स्त्रियों के साथ संभोग करते हैं। यद्यपि कुत्ते अब भी केवल मादा कुत्तों के साथ ही संभोग करते हैं, अन्य मादा पशुओं के साथ नहीं। यह पहली प्राचीन ब्राह्मण प्रथा है जो अब कुत्तों में तो देखी जाती है, लेकिन ब्राह्मणों में नहीं।"

(2) "पहले ब्राह्मण केवल माहवारी के समय ही ब्राह्मण स्त्रियों के साथ संभोग करते थे, अमावस्या के समय नहीं। परन्तु अब [222] ब्राह्मण माहवारी और अमावस्या दोनों में ही ब्राह्मण स्त्रियों के साथ संभोग करते हैं। कुत्ते अब भी मादा कुत्तों के साथ केवल माहवारी के समय ही संभोग करते हैं, अमावस्या के समय नहीं। यह दूसरी प्राचीन ब्राह्मण प्रथा है जो अब कुत्तों में तो देखी जाती है, लेकिन ब्राह्मणों में नहीं।"

(3) "पहले ब्राह्मण, ब्राह्मण स्त्रियों का व्यापार नहीं करते थे, और वे केवल आपसी स्नेह के कारण ही सहवास करते थे, ऐसा वे परिवार की निरंतरता के लिए करते थे। 1181 परन्तु अब ब्राह्मण, ब्राह्मण स्त्रियों का व्यापार करते हैं, और वे आपसी स्नेह के साथ-साथ बिना स्नेह के भी सहवास करते हैं, ऐसा वे परिवार की निरंतरता के लिए करते हैं। 1182 कुत्ते, अब भी मादा कुत्तों का व्यापार नहीं करते, और वे केवल आपसी स्नेह के कारण ही सहवास करते हैं, ऐसा वे परिवार की निरंतरता के लिए करते हैं। यह तीसरी प्राचीन ब्राह्मण प्रथा है जो अब कुत्तों में तो देखी जाती है, लेकिन ब्राह्मणों में नहीं।"

(4) "पहले ब्राह्मण धन, अनाज, चांदी और सोना जमा नहीं करते थे। लेकिन अब ब्राह्मण धन, अनाज, चांदी और सोना जमा करते हैं। कुत्ते अब भी धन, अनाज, चांदी और सोना जमा नहीं करते। यह चौथी प्राचीन ब्राह्मण प्रथा है जो अब कुत्तों में तो देखी जाती है लेकिन ब्राह्मणों में नहीं।"

(5) "पहले ब्राह्मण शाम को अपने रात्रि भोज के लिए और सुबह अपने रात्रि भोज के लिए भिक्षा मांगने जाते थे। लेकिन अब ब्राह्मण पेट भरकर जितना चाहें उतना खाते हैं और फिर बचा हुआ भोजन अपने साथ ले जाते हैं। कुत्ते अब भी शाम को अपने रात्रि भोज के लिए

और सुबह अपने रात्रि भोज के लिए भोजन मांगने जाते हैं। यह पाँचवीं प्राचीन ब्राह्मण प्रथा है जो अब कुत्तों में तो देखी जाती है लेकिन ब्राह्मणों में नहीं।"

"ये, भिक्षुओं, पाँच प्राचीन ब्राह्मण प्रथाएँ हैं जो अब कुत्तों में तो देखी जाती हैं लेकिन ब्राह्मणों में नहीं।" [223]

192 डोना ब्राह्मण

तब ब्राह्मण दोना भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त करने के बाद, वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से बोले: "मैंने सुना है गुरु गौतम: 'तपस्वी गौतम वृद्ध, उम्रदराज, वृद्धावस्था से पीड़ित, जीवन के अंतिम चरण में पहुँच चुके ब्राह्मणों को प्रणाम नहीं करते; न ही उनके लिए खड़े होते हैं और न ही उन्हें बैठने के लिए आमंत्रित करते हैं।' 1183 यह सत्य है, क्योंकि गुरु गौतम वृद्ध, उम्रदराज, वृद्धावस्था से पीड़ित, जीवन के अंतिम चरण में पहुँच चुके ब्राह्मणों को प्रणाम नहीं करते; न ही उनके लिए खड़े होते हैं और न ही उन्हें बैठने के लिए आमंत्रित करते हैं। यह उचित नहीं है। गुरु गौतम।"

"डोना, क्या तुम भी खुद को ब्राह्मण होने का दावा करती हो?"

हे गुरु गौतम, यदि किसी के बारे में सही कहा जा सके: 'वह अपने माता-पिता दोनों ओर से श्रेष्ठ ब्राह्मण है, शुद्ध वंश का है, सातवीं पीढ़ी तक जन्म के लिहाज से निर्दोष और निष्कलंक है; वह भजनों का पाठ करने वाला और उनका संरक्षक है, तीनों वेदों का ज्ञाता है, उनके शब्दकोशों, अनुष्ठानों, ध्वनिविज्ञान और व्युत्पत्ति के साथ-साथ इतिहास का भी ज्ञाता है; भाषा विज्ञान और व्याकरण में निपुण है, प्राकृतिक दर्शन और महान पुरुष के लक्षणों में पूर्ण रूप से पारंगत है' - तो यह बात ठीक मेरे बारे में ही कही जा सकती है। क्योंकि मैं, गुरु गौतम, अपने माता-पिता दोनों ओर से श्रेष्ठ ब्राह्मण हूँ, शुद्ध वंश का हूँ, सातवीं पीढ़ी तक जन्म के लिहाज से निर्दोष और निष्कलंक हूँ। मैं भजनों का पाठ करने वाला और उनका संरक्षक हूँ, तीनों वेदों का ज्ञाता है, उनके शब्दकोशों, अनुष्ठानों, ध्वनिविज्ञान और व्युत्पत्ति के साथ-साथ इतिहास का भी ज्ञाता हूँ; भाषा विज्ञान और व्याकरण में निपुण हूँ। भाषाविज्ञान और व्याकरण में मुझे पूर्ण ज्ञान है, प्राकृतिक दर्शन में भी मुझे महारत हासिल है और एक महान व्यक्ति के लक्षण भी मुझे ज्ञात हैं।"

"डोना, ब्राह्मणों में प्राचीन [224] ऋषि - अर्थात् अठक, वामक, वामदेव (देवदूत/भगवान), वेसमित्त, यमतग्गी, अंगिरस, भारद्वाज, वसेत्था, कस्सपा और भागु - भजनों के रचयिता और रचनाकार थे, और उन्हीं के प्राचीन भजन, जिनका पूर्व में गायन, प्रचार और संकलन किया गया था, आज भी ब्राह्मण गाते और दोहराते हैं, बोले गए शब्दों को दोहराते हैं, पढ़े गए शब्दों का पाठ करते हैं और सिखाए गए शब्दों का उपदेश देते हैं। उन प्राचीन ऋषियों ने ब्राह्मणों के पाँच प्रकारों का वर्णन किया है: ब्रह्मा के समान, देव (देवदूत/भगवान) के समान, सीमा के भीतर रहने वाला, सीमा पार करने वाला, और पाँचवाँ प्रकार ब्राह्मण का चांडल है। डोना, आप इनमें से कौन से हैं?"

"हम इन पांच प्रकार के ब्राह्मणों को नहीं जानते। हे गुरु गौतम, हम केवल 'ब्राह्मण' शब्द को ही जानते हैं। कृपया गुरु गौतम मुझे धम्म इस प्रकार सिखाएं कि मैं इन पांच प्रकार के ब्राह्मणों को जान सकूं।"

"तो सुनो, ब्राह्मण, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी जी," ब्राह्मण डोना ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

(1) "और हे डोना, ब्राह्मण ब्रह्मा के समान कैसे है? यहाँ, ब्राह्मण अपने माता-पिता दोनों ओर से उत्तम कुल का है, शुद्ध वंश का है, और सातवीं पीढ़ी तक जन्म के संबंध में निर्दोष और दोषरहित है। वह अड़तालीस वर्षों तक ब्रह्मचर्य का आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करता है, भजनों का अध्ययन करता है। फिर वह अपने गुरु के लिए केवल धम्म के अनुसार ही, न कि धम्म के विरुद्ध, गुरु का शुल्क मांगता है। और हे डोना, उस स्थिति में धम्म क्या है? [225] न तो कृषि से, न व्यापार से, न पशुपालन से, न धनुर्विद्या से, न राजा की सेवा से, न किसी विशेष शिल्प से, बल्कि केवल भिक्षापात्र का अनादर किए बिना भिक्षा मांगने से। अपने गुरु को गुरु का शुल्क अर्पित करने के बाद, वह अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाता है, गेरुए वस्त्र धारण करता है, और गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में चला जाता है। 1185 जब वह चला जाता है संन्यासी जीवन में प्रवेश करने के बाद, वह प्रेममय करुणा से परिपूर्ण मन से एक दिशा में व्याप्त रहते हैं, इसी प्रकार दूसरी, तीसरी और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह प्रेममय करुणा (मेट्टा) से परिपूर्ण, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, दुर्भावना रहित मन से संपूर्ण विश्व में व्याप्त रहते हैं। वह करुणा

से परिपूर्ण मन से एक दिशा में व्याप्त रहते हैं... परोपकारी आनंद से परिपूर्ण मन से... समभाव से परिपूर्ण मन से, इसी प्रकार दूसरी, तीसरी और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) से परिपूर्ण, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, दुर्भावना रहित मन से संपूर्ण विश्व में व्याप्त रहते हैं। इन चार दिव्य निवासों को विकसित करने के बाद, 1186 शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वह एक शुभ स्थान, ब्रह्मलोक में पुनर्जन्म लेता है। इस प्रकार ब्राह्मण ब्रह्मा के समान है।

(2) "और हे डोना, ब्राह्मण किस प्रकार देवता के समान है? यहाँ ब्राह्मण अपने माता-पिता दोनों ओर से उत्तम कुल का होता है, शुद्ध वंश का होता है, और सातवीं पीढ़ी तक पुनर्जन्म के संबंध में निर्दोष और दोषरहित होता है। वह अड़तालीस वर्षों तक ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करता है और भजनों का अध्ययन करता है। फिर वह अपने गुरु के लिए केवल धम्म के अनुसार ही गुरु-दावा मांगता है, न कि धम्म के विरुद्ध। और हे डोना, उस स्थिति में धम्म क्या है? न कृषि द्वारा, न व्यापार द्वारा, न पशुपालन द्वारा, न धनुर्विद्या द्वारा, न राजा की सेवा द्वारा, न किसी विशेष शिल्प द्वारा, बल्कि केवल भिक्षापात्र का अनादर किए बिना भिक्षा मांगने द्वारा। [226] अपने गुरु को गुरु-दावा देने के बाद, वह केवल धम्म के अनुसार ही पत्नी की तलाश करता है, न कि धम्म के विरुद्ध। और हे डोना, उस स्थिति में धम्म क्या है? खरीद-फरोख्त में, वह केवल जल छिड़कने से प्राप्त ब्राह्मण स्त्री से ही संबंध बनाता है। वह केवल ब्राह्मण स्त्री से ही संबंध बनाता है, क्षत्रिय, वेस, शुद्ध या चांडाल स्त्री से नहीं, न ही शिकारी, बांस का काम करने वाले, रथ बनाने वाले या फूल बीनने वाले परिवार की स्त्री से। वह गर्भवती स्त्री से, स्तनपान कराने वाली स्त्री से या असमय स्त्री से संबंध नहीं बनाता।

और क्यों? डोना, क्या ब्राह्मण गर्भवती स्त्री के साथ संभोग नहीं करता? क्योंकि, यदि वह गर्भवती स्त्री के साथ संभोग करे, तो बालक या कन्या अत्यधिक गंदगी में जन्म लेगा; इसलिए वह गर्भवती स्त्री के साथ संभोग नहीं करता। और वह स्तनपान कराने वाली स्त्री के साथ संभोग क्यों नहीं करता? क्योंकि, यदि वह स्तनपान कराने वाली स्त्री के साथ संभोग करे, तो बालक या कन्या उस अशुद्ध पदार्थ को पी लेगा; 1187 इसलिए वह स्तनपान कराने वाली स्त्री के साथ संभोग नहीं करता। वह असमय स्त्री के साथ संभोग क्यों नहीं करता? क्योंकि उसकी ब्राह्मण पत्नी कामुक सुख, मनोरंजन और कामुक आनंद के लिए नहीं, बल्कि केवल संतानोत्पत्ति के लिए होती है। 1188 जब वह यौन क्रिया में संलग्न हो जाता है, तो वह अपने बाल और दाढ़ी मुंडवा लेता है, गेरुए वस्त्र पहन लेता है और गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में चला जाता है। जब वह संन्यासी जीवन में चला जाता है, कामुक सुखों से विरक्त होकर, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर... वह प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... [जैसा कि 5:14 में है]... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था)। इन चारों ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को विकसित करने के बाद, [227] शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेता है। इस प्रकार एक ब्राह्मण एक देव (देवदूत/भगवान) के समान है।

(3) "और हे डोना, सीमा के भीतर रहने वाला ब्राह्मण कौन है? यहाँ, ब्राह्मण अपने माता-पिता दोनों ओर से उत्तम कुल का, शुद्ध वंश का, सातवीं पीढ़ी तक जन्म से निर्दोष और बेदाग होता है। वह अड़तालीस वर्षों तक ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करता है। ... [उपरोक्त से नीचे तक] ... क्योंकि उसकी ब्राह्मण पत्नी कामुक सुख, मनोरंजन या कामुक आनंद के लिए नहीं, बल्कि केवल संतानोत्पत्ति के लिए सेवा करती है। जब वह यौन क्रिया में संलग्न होता है, तो अपने पुत्रों के प्रति आसक्ति के कारण वह अपनी संपत्ति पर ही स्थिर रहता है और गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में नहीं जाता। वह प्राचीन ब्राह्मणों की सीमा पर ही रहता है, परन्तु उसका उल्लंघन नहीं करता। क्योंकि वह प्राचीन ब्राह्मणों की सीमा पर ही रहता है, परन्तु उसका उल्लंघन नहीं करता, इसलिए उसे सीमा के भीतर रहने वाला ब्राह्मण कहा जाता है। इस प्रकार ब्राह्मण वह है जो सीमा के भीतर रहता है। सीमा के भीतर।

(4) "और हे डोना, सीमा पार करने वाला ब्राह्मण कैसा होता है? [228] यहाँ, ब्राह्मण अपने माता-पिता दोनों की ओर से उत्तम कुल का होता है, शुद्ध वंश का होता है, और सातवीं पीढ़ी तक जन्म से निर्दोष और दोषरहित होता है। वह अड़तालीस वर्षों तक ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करता है और भजनों का अध्ययन करता है। फिर वह अपने गुरु के लिए केवल धम्म के अनुसार ही, न कि धम्म के विरुद्ध, गुरु का शुल्क मांगता है। और हे डोना, उस स्थिति में धम्म क्या है? न कृषि से, न व्यापार से, न पशुपालन से, न धनुर्विद्या से, न राजा की सेवा से, न किसी विशेष शिल्प से, बल्कि केवल भिक्षापात्र का अनादर किए बिना भिक्षा मांगने से। अपने गुरु को गुरु का शुल्क अर्पित करने के बाद, वह धम्म के अनुसार और धम्म के विरुद्ध दोनों ही तरह से पत्नी की तलाश करता है। [वह पत्नी प्राप्त करता है] खरीद-फरोख्त के साथ-साथ जल चढ़ाने से प्राप्त ब्राह्मण स्त्री से वह संबंध बनाता है। वह ब्राह्मण स्त्री, क्षत्रिय स्त्री, वेस स्त्री, शुद्ध स्त्री, चांडला स्त्री और शिकारी, बांस श्रमिक, रथ निर्माता या फूल संग्राहक परिवार की स्त्री से संबंध बनाता है। वह गर्भवती स्त्री, स्तनपान

कराने वाली स्त्री, माहवारी में आई स्त्री और माहवारी से बाहर आई स्त्री से भी संबंध बनाता है। उसकी ब्राह्मण पत्नियाँ कामुक सुख, मनोरंजन और कामुक आनंद के साथ-साथ संतानोत्पत्ति के लिए भी उसकी सेवा करती हैं। 1189 वह प्राचीन ब्राह्मणों की सीमा पर नहीं रुकता बल्कि उसका उल्लंघन करता है। चूंकि वह प्राचीन ब्राह्मणों की सीमा पर नहीं रुकता बल्कि उसका उल्लंघन करता है, इसलिए उसे सीमा पार करने वाला ब्राह्मण कहा जाता है। इस प्रकार सीमा पार करने वाला ब्राह्मण कहलाता है।

(5) "और हे डोना, क्या ब्राह्मण किसी ब्राह्मण का चांडाल होता है? यहाँ, ब्राह्मण अपने माता-पिता दोनों ओर से उत्तम कुल का होता है, शुद्ध वंश का होता है, और सातवीं पीढ़ी तक जन्म के लिहाज से निर्दोष और दोषरहित होता है। वह [229] अड़तालीस वर्षों तक ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करता है, और भजनों का अध्ययन करता है। फिर वह अपने गुरु के लिए धर्म (मार्ग) के अनुसार और धर्म के विपरीत दोनों तरीकों से गुरु का शुल्क वसूलता है—कृषि द्वारा, व्यापार द्वारा, पशुपालन द्वारा, धनुर्विद्या द्वारा, राजा की सेवा द्वारा, किसी विशेष शिल्प द्वारा, और केवल भिक्षापात्र का अनादर किए बिना भिक्षा मांगने से ही नहीं। अपने गुरु को गुरु का शुल्क अर्पित करने के बाद, वह धर्म के अनुसार और धर्म के विपरीत दोनों तरीकों से पत्नी की तलाश करता है। [वह पत्नी प्राप्त करता है] खरीद-फरोख्त द्वारा भी और जल डालकर प्राप्त ब्राह्मण स्त्री से भी। वह ब्राह्मण स्त्री, क्षत्रिय स्त्री, वेस स्त्री, शुद्ध स्त्री, चांडाल स्त्री और शिकारी, बांस का काम करने वाली, रथ बनाने वाली या फूल बीनने वाली स्त्री के साथ संबंध बनाता है। वह गर्भवती स्त्री, स्तनपान कराने वाली स्त्री, माहवारी वाली स्त्री और माहवारी के बाद वाली स्त्री के साथ भी संबंध बनाता है। उसकी ब्राह्मण पत्नी कामुक सुख, मनोरंजन और कामुक आनंद के साथ-साथ संतानोत्पत्ति के लिए भी उसकी सेवा करती है। वह हर तरह के काम करके अपना जीवन यापन करता है। ब्राह्मण उससे कहते हैं, 'हे महोदय, ब्राह्मण होने का दावा करते हुए आप हर तरह के काम करके अपना जीवन यापन क्यों करते हैं?' वह उन्हें उत्तर देता है, 'जैसे अग्नि शुद्ध और अशुद्ध दोनों वस्तुओं को जलाकर अपवित्र नहीं होती, वैसे ही, महोदय, यदि कोई ब्राह्मण हर तरह के काम करके अपना जीवन यापन करता है, तो वह अपवित्र नहीं होता।' क्योंकि वह हर तरह के काम करके जीविका कमाता है, इसलिए इस ब्राह्मण को एक ब्राह्मण का चांडाल कहा जाता है। इसी प्रकार एक ब्राह्मण दूसरे ब्राह्मण का चांडाल होता है।

"डोना, ब्राह्मणों में प्राचीन ऋषि—अर्थात् अत्तक, वामक, वामदेव (देवदूत/देवता), वेसमित्त, यमतग्गी, अंगिरस, भारद्वाज, [230] वसेत्थ, कस्सपा और भगु— इन भजनों के रचयिता और रचनाकार थे, और उन्हीं के प्राचीन भजन, जिनका पूर्व में गायन, प्रचार और संकलन किया गया था, आज भी ब्राह्मण गाते और दोहराते हैं, बोले गए शब्दों को दोहराते हैं, पढ़े गए शब्दों का पाठ करते हैं और सिखाए गए शब्दों का उपदेश देते हैं। उन प्राचीन ऋषियों ने ब्राह्मणों के पाँच प्रकारों का वर्णन किया है: ब्रह्मा के समान, देव (देवदूत/देवता) के समान, सीमा के भीतर रहने वाला, सीमा पार करने वाला, और पाँचवाँ ब्राह्मण चांडाल। डोना, आप इनमें से कौन से हैं?"

"ऐसा होने पर, हे गुरु गौतम, हम तो ब्राह्मण के चांडाल के भी योग्य नहीं हैं। हे गुरु गौतम, उत्कृष्ट! हे गुरु गौतम, उत्कृष्ट! गुरु गौतम ने अनेक तरीकों से धम्म को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग आकृतियाँ देख सकें। मैं अब गुरु गौतम, धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। गुरु गौतम मुझे आज से जीवन भर के लिए शरण लेने वाला गृहस्थ अनुयायी समझें।"

---

193 संगरवा [1191]

तब ब्राह्मण संगरव भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से बोले:

"गुरु गौतम, ऐसा क्यों होता है कि कभी-कभी लंबे समय तक जपे गए भजन भी याद नहीं आते, उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जिन्हें कभी नहीं जपा गया? ऐसा क्यों होता है कि कभी-कभी लंबे समय तक नहीं जपे गए भजन भी याद आ जाते हैं, उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जिन्हें कभी जपा गया है?"

(भजन क्यों याद नहीं रहते?)

(1) "ब्राह्मण, जब कोई व्यक्ति कामवासना (राग) से ग्रस्त और पीड़ित मन से रहता है, और वह उत्पन्न कामवासना (राग) से मुक्ति के वास्तविक मार्ग को नहीं समझता, 1192 उस समय वह अपने, दूसरों और दोनों के हित को वास्तविक रूप से नहीं जान पाता। 1193 तब

तो वे भजन भी, जिनका लंबे समय तक पाठ किया गया है, मन में पुनरावृति नहीं करते, उन भजनों की तो बात ही क्या जो इतने लंबे समय तक नहीं पढ़े गए हैं। मान लीजिए कि एक कटोरे में लाख, हल्दी, नीला या लाल रंग मिला हुआ पानी है। यदि कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति [231] उसमें अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे, तो वह उसे उसके वास्तविक रूप में नहीं जान पाएगा। ठीक उसी प्रकार, जब कोई व्यक्ति कामवासना (राग) से ग्रस्त और पीड़ित मन से रहता है... उन भजनों की तो बात ही क्या जो इतने लंबे समय तक नहीं पढ़े गए हैं।"

(2) "फिर, जब कोई व्यक्ति द्वेष से ग्रस्त और पीड़ित मन से रहता है, और वह उत्पन्न द्वेष से मुक्ति के वास्तविक मार्ग को नहीं समझता, तो उस समय वह अपने स्वयं के हित, दूसरों के हित और दोनों के हित को सही ढंग से नहीं जान पाता। तब तो वे भजन भी, जिनका लंबे समय तक पाठ किया गया हो, मन में पुनरावृति नहीं करते, उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जिनका पाठ नहीं किया गया हो। मान लीजिए कि आग पर पानी का एक कटोरा उबल रहा है। यदि कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे, तो वह उसे उसके वास्तविक स्वरूप में नहीं जान पाएगा। ठीक उसी प्रकार, जब कोई व्यक्ति द्वेष से ग्रस्त और पीड़ित मन से रहता है... उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जिनका पाठ नहीं किया गया हो।"

(3) "फिर, जब कोई व्यक्ति सुस्ती और आलस्य से ग्रस्त मन से रहता है, और उसे यह समझ नहीं आता कि वास्तव में उत्पन्न सुस्ती और आलस्य से मुक्ति का मार्ग क्या है, तो उस समय वह अपने स्वयं के भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को नहीं जान पाता। [232] तब तो वे भजन भी, जिनका लंबे समय तक पाठ किया गया है, मन में पुनरावर्तित नहीं होते, उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जिनका पाठ नहीं किया गया है। मान लीजिए कि शैवाल और जलीय पौधों से ढका हुआ पानी का एक कटोरा है। यदि कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे, तो वह उसे उसके वास्तविक स्वरूप में नहीं जान पाएगा। ठीक उसी प्रकार, जब कोई व्यक्ति सुस्ती और आलस्य से ग्रस्त मन से रहता है... उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जिनका पाठ नहीं किया गया है।"

(4) "फिर, जब कोई व्यक्ति बेचैनी और पश्चाताप से ग्रस्त और पीड़ित मन से रहता है, और वह यह नहीं समझता कि वास्तव में उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप से मुक्ति क्या है, तो उस समय वह अपने स्वयं के भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को नहीं जान पाता और न ही देख पाता है। तब तो वे भजन भी जो लंबे समय से गाए जा रहे हैं, मन में पुनरावर्तित नहीं होते, उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जो नहीं गाए गए हैं। मान लीजिए कि हवा से हिलता हुआ पानी का एक कटोरा है, जिसमें लहरें उठ रही हैं, घूम रही हैं, छोटी-छोटी तरंगें बन रही हैं। यदि कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे, तो वह उसे वैसे नहीं जान पाएगा जैसा वह वास्तव में है। ठीक वैसे ही, जब कोई व्यक्ति बेचैनी और चिंता से ग्रस्त और पीड़ित मन से रहता है... [233] ...उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जो नहीं गाए गए हैं।"

(5) "फिर, जब कोई व्यक्ति संदेह से ग्रस्त और पीड़ित मन से रहता है, और उसे उत्पन्न संदेह से मुक्ति का सही अर्थ समझ में नहीं आता, तो उस समय वह अपने स्वयं के भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को सही ढंग से नहीं जान पाता। तब तो वे भजन भी जो लंबे समय से गाए जा रहे हैं, मन में नहीं आते, उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जो इतने लंबे समय से नहीं गाए गए हैं। मान लीजिए कि अंधेरे में एक गंदा, मैला और कीचड़ से भरा पानी का कटोरा रखा है। यदि कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे, तो वह उसे उसके वास्तविक स्वरूप में नहीं जान पाएगा। ठीक उसी प्रकार, जब कोई व्यक्ति संदेह से ग्रस्त और पीड़ित मन से रहता है, और उसे उत्पन्न संदेह से मुक्ति का सही अर्थ समझ में नहीं आता, तो उस समय वह अपने स्वयं के भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को सही ढंग से नहीं जान पाता। तब तो वे भजन भी जो लंबे समय से गाए जा रहे हैं, मन में नहीं आते।" वे बातें तो मन में बार-बार आती ही हैं, जबकि वे बातें तो पहले कभी सुनाई ही नहीं गई हैं।

[भजनों को क्यों याद रखा जाता है]

(1) "ब्राह्मण, जब कोई ऐसे मन से रहता है जो कामुक रागों से ग्रस्त और पीड़ित नहीं है, और जो उत्पन्न कामुक रागों से मुक्ति को उसके वास्तविक स्वरूप में समझता है, तब वह अपने स्वयं के हित, दूसरों के हित और दोनों के हित को उसके वास्तविक स्वरूप में जानता और देखता है। तब तो वे भजन भी, जिनका लंबे समय से पाठ नहीं किया गया है, मन में आ जाते हैं, उन भजनों की तो बात ही क्या जो पहले ही पढ़े जा चुके हैं। मान लीजिए कि एक कटोरा जल है जिसमें लाख, हल्दी, नीला रंग या लाल रंग नहीं मिला है। यदि कोई अच्छी

दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे, तो वह उसे उसके वास्तविक स्वरूप में जान और देख लेगा। ठीक उसी प्रकार, जब कोई ऐसे मन से रहता है जो कामुक रागों से ग्रस्त और पीड़ित नहीं है... उन भजनों की तो बात ही क्या जो पहले ही पढ़े जा चुके हैं।"

(2) "फिर, जब कोई व्यक्ति द्वेष से ग्रस्त और पीड़ित न होकर मन से रहता है, और वह उत्पन्न द्वेष से मुक्ति को उसके वास्तविक स्वरूप में समझता है, तब वह अपने भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को उसके वास्तविक स्वरूप में जानता और देखता है। तब तो वे भजन भी, जिनका लंबे समय से पाठ नहीं किया गया है, मन में आ जाते हैं, उन भजनों की तो बात ही क्या जो पहले ही पढ़े जा चुके हैं। मान लीजिए कि एक कटोरा पानी है जिसे आग पर गर्म नहीं किया गया है, जो उबल नहीं रहा है। यदि कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे, तो वह उसे उसके वास्तविक स्वरूप में जान और देख लेगा। ठीक उसी प्रकार, जब कोई व्यक्ति द्वेष से ग्रस्त और पीड़ित न होकर मन से रहता है... उन भजनों की तो बात ही क्या जो पहले ही पढ़े जा चुके हैं।"

(3) "फिर, जब कोई ऐसे मन से रहता है जो सुस्ती और आलस्य से ग्रस्त और दबा हुआ नहीं है, और वह उत्पन्न सुस्ती और आलस्य से मुक्ति को उसके वास्तविक स्वरूप में समझता है, तब वह अपने भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को उसके वास्तविक स्वरूप में जानता और देखता है। तब तो वे भजन भी, जिनका लंबे समय से पाठ नहीं किया गया है, मन में आ जाते हैं, [235] उन भजनों की तो बात ही क्या, जिनका पाठ किया जा चुका है। मान लीजिए कि पानी का एक कटोरा है जो शैवाल और जलीय पौधों से ढका नहीं है। यदि कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे, तो वह उसे उसके वास्तविक स्वरूप में जान और देख लेगा। ठीक उसी प्रकार, जब कोई ऐसे मन से रहता है जो सुस्ती और आलस्य से ग्रस्त और दबा हुआ नहीं है... उन भजनों की तो बात ही क्या, जिनका पाठ किया जा चुका है।"

(4) "फिर, जब कोई ऐसे मन से रहता है जो बेचैनी और पश्चाताप से ग्रस्त और पीड़ित नहीं है, और वह उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप से मुक्ति को उसके वास्तविक स्वरूप में समझता है, तब वह अपने भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को उसके वास्तविक स्वरूप में जान और देख पाता है। तब तो वे भजन भी मन में आ जाते हैं जिनका लंबे समय से पाठ नहीं किया गया है, उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जिनका पाठ किया जा चुका है। मान लीजिए कि पानी का एक कटोरा है जो हवा से नहीं हिलता, जिसमें लहरें नहीं उठतीं, भंवर नहीं बनते, छोटी-छोटी तरंगें नहीं बनतीं। यदि कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे, तो वह उसे उसके वास्तविक स्वरूप में जान और देख पाएगा। ठीक वैसे ही, जब कोई ऐसे मन से रहता है जो बेचैनी और पश्चाताप से ग्रस्त और पीड़ित नहीं है... उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जिनका पाठ किया जा चुका है।"

(5) "फिर, जब कोई ऐसे मन से रहता है जो संदेह से ग्रस्त और पीड़ित नहीं है, और वह उत्पन्न संदेह से मुक्ति को उसके वास्तविक स्वरूप में समझता है, [236] तब वह अपने भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को उसके वास्तविक स्वरूप में जानता और देखता है। तब वे भजन भी जो लंबे समय से नहीं पढ़े गए हैं, मन में आ जाते हैं, उन भजनों की तो बात ही छोड़िए जो पढ़े जा चुके हैं। मान लीजिए कि प्रकाश में एक साफ, शांत और निर्मल जल का कटोरा रखा है। यदि कोई अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे, तो वह उसे उसके वास्तविक स्वरूप में जान और देख लेगा। उसी प्रकार, जब कोई ऐसे मन से रहता है जो संदेह से ग्रस्त और पीड़ित नहीं है, और वह उत्पन्न संदेह से मुक्ति को उसके वास्तविक स्वरूप में समझता है, तब वह अपने भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को उसके वास्तविक स्वरूप में जानता और देखता है। तब वे भजन भी जो लंबे समय से नहीं पढ़े गए हैं, मन में आ जाते हैं। उन वाक्यों का बार-बार मन में आना तो और भी मुश्किल है, खासकर उन वाक्यों का जिनका पाठ किया जा चुका है।

"हे ब्राह्मण, यही कारण है कि कभी-कभी लंबे समय तक जपे गए भजन भी मन में नहीं आते, उन भजनों की तो बात ही क्या जो इतने लंबे समय तक नहीं जपे गए हों। यही कारण है कि कभी-कभी लंबे समय तक नहीं जपे गए भजन भी मन में आ जाते हैं, उन भजनों की तो बात ही क्या जो इतने लंबे समय तक जपे गए हों।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

---

194 करणपाली

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। उस समय ब्राह्मण करणपाली लिच्छवियों के लिए कुछ काम करवा रहे थे। 1194 ब्राह्मण करणपाली ने दूर से ब्राह्मण पिंगियानी [237] को आते देखा और उनसे कहा:

"मास्टर पिंगियानी दिन के मध्य में कहाँ से आ रहे हैं?"

"मैं तपस्वी गौतम के दर्शन से आ रहा हूँ, महोदय।" 1195

"आप तपस्वी गौतम की पन्ना (दिव्य ज्ञान) में दक्षता के बारे में क्या सोचते हैं? क्या आप उन्हें बुद्धिमान मानते हैं?"

"हे महोदय, मैं कौन हूँ जो तपस्वी गौतम की ज्ञान प्राप्ति की क्षमता को जान सकूँ? निश्चय ही, केवल उन्हीं के समान व्यक्ति उनकी ज्ञान प्राप्ति की क्षमता को जान सकता है!"

"आप तपस्वी गौतम की बहुत ही उच्च कोटि की प्रशंसा करते हैं, वास्तव में।"

"हे भगवान, मैं कौन हूँ जो तपस्वी गौतम की प्रशंसा कर सकूँ? जिनकी प्रशंसा उनके द्वारा की जाती है। गुरु गौतम देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ हैं!"

"हे गुरु पिंगियानी, आपको तपस्वी गौतम पर इतना पूर्ण विश्वास रखने का क्या आधार दिखाई देता है?"

(1) "जिस प्रकार उत्तम स्वाद में संतुष्टि प्राप्त कर लेने वाला व्यक्ति निम्न स्तर के स्वादों की इच्छा नहीं रखता; उसी प्रकार, महोदय, गुरु गौतम के धम्म के बारे में जो कुछ भी सुना जाए—चाहे वह प्रवचन हो, गद्य-पद का मिश्रण हो, व्याख्या हो या आश्चर्यजनक वृत्तांत—वह साधारण तपस्वियों और ब्राह्मणों के सिद्धांतों के लिए तरसता नहीं रहेगा। 1196

(2) "जिस प्रकार भूख और कमजोरी से पीड़ित व्यक्ति को शहद की रोटी मिलने पर जहाँ कहीं भी वह उसे खाएगा, उसे मीठा और स्वादिष्ट स्वाद मिलेगा; उसी प्रकार, हे महोदय, गुरु गौतम के धम्म के बारे में जो कुछ भी सुना जाए— प्रवचन, गद्य और पद्य का मिश्रण, व्याख्याएँ, या आश्चर्यजनक वृत्तांत—उसे मन की संतुष्टि और शांति प्राप्त होगी।

(3) "जैसे कोई व्यक्ति चंदन के टुकड़े पर आता है, चाहे वह पीला चंदन हो या लाल चंदन, उसे जहाँ भी वह सूंघता है, चाहे वह नीचे हो, बीच में हो या ऊपर, उसे शुद्ध, सुगंधित खुशबू मिलती है [238]; उसी प्रकार, महोदय, गुरु गौतम के धम्म के बारे में जो कुछ भी सुना जाए— प्रवचन, मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, या आश्चर्यजनक वृत्तांत—उसे उल्लास और आनंद प्राप्त होगा।

(4) "जिस प्रकार एक कुशल चिकित्सक किसी पीड़ित, बीमार और गंभीर रूप से अस्वस्थ व्यक्ति को तुरंत ठीक कर सकता है; उसी प्रकार, महोदय, गुरु गौतम के धम्म के बारे में जो कुछ भी सुना जाए— प्रवचन, मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, या आश्चर्यजनक वृत्तांत— उसका दुःख, मैं की भावना, पीड़ा, निराशा और व्यथा दूर हो जाएगी।"

(5) "जैसे किसी सुंदर किनारे वाला, निर्मल, स्वच्छ और निर्मल जल से भरा हुआ एक रमणीय तालाब हो, और कोई व्यक्ति गर्मी से व्याकुल, प्यासा, प्यासा और बेहाल होकर आए, तो वह तालाब में प्रवेश करे, स्नान करे और पानी पिए; इस प्रकार उसकी सारी पीड़ा, थकान और बुखार की जलन शांत हो जाए। ठीक उसी प्रकार, हे महोदय, गुरु गौतम के धम्म के बारे में जो कुछ भी सुना जाए— प्रवचन, गद्य और पद्य का मिश्रण, व्याख्याएँ या अद्भुत वृत्तांत—उसकी सारी पीड़ा, थकान और बुखार की जलन शांत हो जाए।"

यह सुनकर ब्राह्मण करणपाली अपने आसन से उठे, अपना ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर डाला और अपना दाहिना घुटना जमीन पर रखकर भगवान (बुद्ध) को आदरपूर्वक प्रणाम किया और तीन बार ये प्रेरणादायक शब्द कहे:

भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध को प्रणाम! भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध को प्रणाम! भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध को प्रणाम!

"उत्कृष्ट, गुरु पिंगियानी! उत्कृष्ट, गुरु पिंगियानी! गुरु पिंगियानी ने अनेक तरीकों से धम्म को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, [239] या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी

दृष्टि वाले लोग रूपों को देख सकें। गुरु पिंगियानी, मैं अब गुरु गौतम, धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। गुरु पिंगियानी मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जो आज से जीवन भर के लिए शरण में गया है।"

---

195 पिंगियानी

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले महल में निवास कर रहे थे। उस समय पाँच सौ लिच्छवी भगवान (बुद्ध) से मिलने आए थे। कुछ लिच्छवी नीले रंग के थे, नीले रंग के वस्त्र और आभूषण पहने हुए थे। कुछ लिच्छवी पीले रंग के थे, पीले रंग के वस्त्र और आभूषण पहने हुए थे। कुछ लिच्छवी लाल रंग के थे, लाल रंग के वस्त्र और आभूषण पहने हुए थे। कुछ लिच्छवी सफेद रंग के थे, सफेद रंग के वस्त्र और आभूषण पहने हुए थे। फिर भी भगवान (बुद्ध) अपनी सुंदरता और महिमा से उन सभी को मात दे रहे थे।

तब ब्राह्मण पिंगियानी अपने आसन से उठे, अपना ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर डाला और भगवान (बुद्ध) को आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए बोले, "मुझे प्रेरणा मिली है, हे भगवान! मुझे प्रेरणा मिली है, हे सुगत (भगवान बुद्ध)!"

"तो फिर अपनी प्रेरणा व्यक्त करो, पिंगियानी," भगवान (बुद्ध) ने कहा। 1197 तब, भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में, ब्राह्मण पिंगियानी ने एक उपयुक्त श्लोक के साथ उनकी प्रशंसा की: [1198]

"जैसे सुबह के समय सुगंधित लाल कोकनाड़ा कमल खिलता है, जिसकी सुगंध अभी भी बरकरार है,

वैसे ही अंगिरासा

आकाश में सूर्य की तरह चमकते हैं।"

तब उन लिच्छवियों ने ब्राह्मण पिंघियानल को पाँच सौ वस्त्र भेंट किए। ब्राह्मण पिंघियानल ने वे पाँच सौ वस्त्र भगवान (बुद्ध) को अर्पित किए। [240] तब भगवान (बुद्ध) ने उन लिच्छवियों से कहा:

लिच्छवी, इन पाँच रत्नों का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है। 1199 वे पाँच कौन से हैं? (1) तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है। (2) तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म (मार्ग) और अनुशासन का शिक्षण करने वाला व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। (3) तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन का शिक्षण हो जाने के बाद, उसे समझने वाला व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। (4) तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन का शिक्षण हो जाने के बाद, उसे समझने और धम्म के अनुसार अभ्यास करने वाला व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। (5) कृतज्ञ और आभारी व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। लिच्छवी, इन पाँच रत्नों का प्रकटीकरण संसार में दुर्लभ है।

---

196 महान स्वप्न (महा सुपिना सं. महा स्वप्न)

"भिक्षुओं, अपने ज्ञानोदय से पहले, जब वे मात्र बोधि सत्ता थे, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं थे, तब तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति को पाँच महान स्वप्न दिखाई दिए। वे पाँच कौन से थे?"

(1) "अपने ज्ञानोदय से पहले, जब वे मात्र बोधिसत्व थे, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं थे, तब तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध ने स्वप्न देखा कि यह विशाल पृथ्वी उनका पलंग है; पर्वतों का राजा हिमालय उनका तकिया है; उनका बायां हाथ पूर्वी सागर पर, दायां हाथ पश्चिमी सागर

पर और दोनों पैर दक्षिणी सागर पर टिके हैं। यह पहला महान स्वप्न था जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध को उनके ज्ञानोदय से पहले, जब वे मात्र बोधिसत्व थे, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं थे, दिखाई दिया।"

(2) "फिर, अपने ज्ञानोदय से पहले... तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति ने स्वप्न देखा कि तिरिया नामक एक प्रकार की घास उनकी नाभि से उठी और आकाश को छू रही थी। [241] यह दूसरा महान स्वप्न था जो तथागत (बुद्ध) को दिखाई दिया... जब वे केवल एक बोधिसत्व थे, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं थे।

(3) "फिर, अपने ज्ञानोदय से पहले... तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति ने स्वप्न देखा कि काले सिर वाले सफेद कीड़े उनके पैरों से उनके घुटनों तक रेंगते हुए आए और उन्हें ढक लिया। यह तीसरा महान स्वप्न था जो तथागत (बुद्ध) को दिखाई दिया... जब वे केवल एक बोधिसत्व थे, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं थे।"

(4) "फिर, अपने ज्ञानोदय से पहले... तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति ने स्वप्न देखा कि चार अलग-अलग रंगों के पक्षी चारों दिशाओं से आए, उनके चरणों में गिरे और पूरी तरह सफेद हो गए। यह चौथा महान स्वप्न था जो तथागत (बुद्ध) को दिखाई दिया... जब वे केवल एक बोधिसत्व थे, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं थे।"

(5) "फिर, अपने ज्ञानोदय से पहले... तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध (ने स्वप्न देखा) कि वे गोबर के एक विशाल पर्वत पर चढ़ गए और उससे अपवित्र नहीं हुए। यह पाँचवाँ महान स्वप्न था जो तथागत (बुद्ध) को दिखाई दिया... जब वे केवल एक बोधिसत्व थे, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं थे।"

(1) "अब, भिक्षुओं, जब तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध—अपने ज्ञानोदय से पहले, जब वे मात्र एक बोधिसत्व थे, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं थे—[स्वप्न में देखा] कि यह विशाल पृथ्वी उनका पलंग है और हिमालय, पर्वतों का राजा, उनका तकिया है; कि उनका बायाँ हाथ पूर्वी सागर पर, दायाँ हाथ पश्चिमी सागर पर और दोनों पैर दक्षिणी सागर पर टिके हैं, [यह एक पूर्वसूचक था] कि वे अतुलनीय, पूर्ण ज्ञानोदय को प्राप्त करेंगे। 1200 यह पहला महान स्वप्न उन्हें [एक संकेत के रूप में] दिखाई दिया कि उनका जागरण [निकटतम] था। 1201 [242]

(2) "जब तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति... ने स्वप्न में देखा कि उनकी नाभि से तिरिया घास उगी और आकाश को छू रही थी, तो यह एक पूर्वसूचना थी कि वे श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग को ग्रहण करेंगे और देवताओं और मनुष्यों के बीच उसका प्रचार करेंगे। यह दूसरा महान स्वप्न उन्हें इस बात का संकेत था कि उनका ज्ञानोदय निकट है।"

(3) "जब तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति... ने स्वप्न में देखा कि काले सिर वाले सफेद कृमि उनके पैरों से उनके घुटनों तक रेंगते हुए आए और उन्हें ढक लिया, तो यह एक पूर्वसूचना थी कि बहुत से श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ जीवन भर के लिए तथागत (बुद्ध) की शरण में जाएंगे। यह तीसरा महान स्वप्न उन्हें इस बात का संकेत था कि उनका ज्ञानोदय निकट है।"

(4) "जब तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति... ने स्वप्न में देखा कि चार अलग-अलग रंगों के पक्षी चारों दिशाओं से आए, उनके चरणों में गिरे और सफेद हो गए, [यह एक पूर्वसूचना थी] कि चार वर्गों के सदस्य—क्षति, ब्राह्मण, वेस और शुद्ध—गृहस्थ जीवन छोड़कर तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म और अनुशासन में संन्यासी जीवन व्यतीत करेंगे और अतुलनीय मुक्ति प्राप्त करेंगे। यह चौथा महान स्वप्न उन्हें [एक संकेत के रूप में] दिखाई दिया कि उनका ज्ञानोदय [निकट] था।"

(5) "जब तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति... ने स्वप्न में देखा कि वे गोबर के एक विशाल पहाड़ पर चढ़ गए और उससे अपवित्र नहीं हुए, [यह एक पूर्वसूचना थी] कि उन्हें वस्त्र, भिक्षा, आवास, औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन प्राप्त होगा, और वे इन सबका उपयोग इनके प्रति आसक्त हुए बिना, इनके मोह में लीन हुए बिना, और इनमें अंधाधुंध लीन हुए बिना करेंगे, खतरे को देखते हुए और बचाव का मार्ग जानते हुए। यह पाँचवाँ महान स्वप्न उन्हें [एक संकेत के रूप में] दिखाई दिया कि उनका ज्ञानोदय [निकट] था।"

"ये, भिक्षुओं, वे पाँच महान स्वप्न थे जो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति को उनके ज्ञानोदय से पहले, जब वे मात्र एक बोधिसत्व थे, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं थे, दिखाई दिए।" [243]

---

197 Rain (Vassa sans. Varsha)

"भिक्षुओं (संतों), वर्षा में ये पाँच बाधाएँ हैं जिनके बारे में मौसम पूर्वानुमानकर्ताओं को जानकारी नहीं है, जहाँ उनकी नज़र नहीं जाती। 1202 वे पाँच कौन सी हैं?"

(1) "भिक्षुओं (मठवासियों), आकाश के ऊपरी क्षेत्रों में ऊष्मा तत्व अशांत हो जाता है। इसके कारण, जो बादल बने होते हैं वे बिखर जाते हैं। यह वर्षा में पहली बाधा है जिसके बारे में मौसम विज्ञानियों को जानकारी नहीं होती, जहाँ उनकी नज़र नहीं पड़ती।"

(2) "फिर, आकाश के ऊपरी क्षेत्रों में वायु तत्व अशांत हो जाता है। इसके कारण, जो बादल उठे हैं वे बिखर जाते हैं। यह वर्षा में दूसरी बाधा है। . . ."

(3) "फिर, असुरों का राजा राहु अपने हाथ से जल ग्रहण करता है और उसे समुद्र में फेंक देता है। यह वर्षा में तीसरी बाधा है। ..."

(4) "फिर, वर्षा-बादल देव (देवदूत/देवता) आलसी हो जाते हैं। यह वर्षा में चौथी बाधा है।

(5) "फिर, मनुष्य अधर्मी हो जाते हैं। यह वर्षा में पाँचवीं बाधा है। ..."

"बारिश में बाधा डालने वाली ये पांच चीजें हैं जिनके बारे में मौसम पूर्वानुमानकर्ताओं को जानकारी नहीं होती, जहां उनकी नजर नहीं पड़ती।"

---

198 भाषण (वाका सं. वचना)

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में पाँच गुण होते हैं, जिनकी वाणी उत्तम होती है, उत्तम नहीं; वह निष्कलंक होती है और ज्ञानियों द्वारा निंदा से परे होती है। वे पाँच गुण क्या हैं? [244] यह उचित समय पर बोली जाती है; जो कहा जाता है वह सत्य होता है; यह सौम्यता से बोली जाती है; जो कहा जाता है वह लाभकारी होता है; यह प्रेम और करुणा (मेट्टा) के भाव से बोली जाती है। इन पाँच गुणों से युक्त वाणी उत्तम होती है, उत्तम नहीं; वह निष्कलंक होती है और ज्ञानियों द्वारा निंदा से परे होती है।"

---

199 परिवार/कुल (कुला)

"भिक्षुओं (मठवासियों), जब भी कोई गुणी भिक्षु 1203 किसी घर में आते हैं, तो वहां के लोग पांच आधारों पर बहुत पुण्य कमाते हैं, वे पांच कौन से हैं?

(1) जब लोग अपने घर में सद्गुणी संन्यासियों को आते हुए देखते हैं और उनके मन में उनके प्रति विश्वास जागृत होता है, तो उस अवसर पर वह परिवार स्वर्ग की ओर ले जाने वाले मार्ग का अभ्यास कर रहा होता है।

(2) जब लोग अपने घर आने वाले सद्गुणी भिक्षुओं के सम्मान में उठ खड़े होते हैं, प्रणाम करते हैं और उन्हें आसन प्रदान करते हैं, तो उस अवसर पर वह परिवार उच्च कुलों में पुनर्जन्म के लिए अनुकूल मार्ग का अभ्यास कर रहा होता है। (3) जब लोग अपने घर आने वाले सद्गुणी भिक्षुओं के प्रति कंजूसी का कलंक मिटाते हैं, तो उस अवसर पर वह परिवार महान प्रभाव के लिए अनुकूल मार्ग का अभ्यास कर रहा होता है। (4) जब लोग अपनी सामर्थ्य के अनुसार अपने घर आने वाले सद्गुणी भिक्षुओं के साथ अपना धन साझा करते हैं, तो उस अवसर पर वह परिवार महान धन के लिए अनुकूल मार्ग का अभ्यास कर रहा होता है। (5) जब लोग अपने घर आने वाले सद्गुणी भिक्षुओं से प्रश्न करते हैं, उनकी शिक्षाओं के बारे में पूछताछ करते हैं और धम्म सुनते हैं, तो उस अवसर पर वह परिवार महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) के लिए अनुकूल मार्ग का अभ्यास कर रहा होता है। [245] भिक्षुओं, जब भी सद्गुणी भिक्षु किसी घर में आते हैं, तो वहां के लोग इन पांच आधारों पर बहुत पुण्य अर्जित करते हैं।

---

200 पलायन (निसारनिया सं. निस्साराना)

"भिक्षुओं (मठवासियों), पलायन के ये पाँच तत्व हैं। 1204 वे पाँच कौन से हैं?

(1) "यहाँ, जब कोई भिक्षु इंद्रिय सुखों में लीन होता है, 1205 तो उसका मन उन पर नहीं उतरता, बल्कि शांत, स्थिर और उन पर केंद्रित हो जाता है। 1206 परन्तु जब वह त्याग में लीन होता है, तो उसका मन उस पर उतरता है और शांत, स्थिर और उस पर केंद्रित हो जाता है। उसका मन अच्छी तरह से विरक्त, 1207 अच्छी तरह से विकसित, अच्छी तरह से प्रकट, अच्छी तरह से मुक्त और इंद्रिय सुखों से अच्छी तरह से विरक्त होता है। और वह उन कष्टदायी और ज्वरकारी दोषों से मुक्त हो जाता है जो इंद्रिय सुखों के साथ उत्पन्न होते हैं। उसे उस प्रकार की संवेदना (वेदना) का अनुभव नहीं होता। 1206 इसे ही इंद्रिय सुखों से मुक्ति कहा गया है।"

(2) "फिर, जब कोई भिक्षु द्वेष का ध्यान करता है, तो उसका मन द्वेष की ओर नहीं बढ़ता, बल्कि शांत, स्थिर और एकाग्र हो जाता है। परन्तु जब वह सद्भावना का ध्यान करता है, तो उसका मन द्वेष की ओर बढ़ता है और शांत, स्थिर और एकाग्र हो जाता है। उसका मन द्वेष से भली-भांति विरक्त, भली-भांति विकसित, भली-भांति मुक्त और भली-भांति विरक्त होता है। और वह उन कष्टदायी और ज्वरकारी दोषों से मुक्त हो जाता है जो द्वेष के कारण उत्पन्न होते हैं। उसे उस प्रकार की वेदना का अनुभव नहीं होता। यही द्वेष से मुक्ति है।"

(3) "फिर, जब कोई भिक्षु हानि करने में लगा रहता है, तो उसका मन हानि की ओर नहीं बढ़ता और शांत, स्थिर और उस पर केंद्रित हो जाता है। परन्तु जब वह हानि न करने में लगा रहता है, तो उसका मन हानि की ओर बढ़ता है और शांत, स्थिर और उस पर केंद्रित हो जाता है। उसका मन हानि से भली-भांति विरक्त, भली-भांति विकसित, भली-भांति मुक्त और भली-भांति विरक्त होता है। और वह उन कष्टदायी और ज्वरकारी दोषों से मुक्त हो जाता है जो हानि करने की स्थिति से उत्पन्न होते हैं। उसे उस प्रकार की वेदना का अनुभव नहीं होता। इसे हानि से मुक्ति कहा गया है। [246]

(4) "फिर, जब कोई भिक्षु रूप पर ध्यान लगाता है, तो उसका मन उस पर नहीं लगता और वह शांत, स्थिर और एकाग्र हो जाता है। परन्तु जब वह निराकार पर ध्यान लगाता है, तो उसका मन उस पर लगता है और शांत, स्थिर और एकाग्र हो जाता है। उसका मन रूप से पूर्णतः विरक्त, पूर्णतः विकसित, पूर्णतः प्रकट, पूर्णतः मुक्त और पूर्णतः अनासक्त होता है। और वह उन कष्टदायी और ज्वरकारी दोषों से मुक्त हो जाता है जो रूप की स्थिति से उत्पन्न होते हैं। उसे उस प्रकार की वेदना का अनुभव नहीं होता। इसे ही रूप से मुक्ति कहा जाता है।"

(5) "फिर, जब कोई भिक्षु व्यक्तिगत अस्तित्व पर ध्यान देता है, तो उसका मन उस पर नहीं भटकता और शांत, स्थिर और एकाग्र हो जाता है। परन्तु जब वह व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के निवारण पर ध्यान देता है, तो उसका मन उस पर भटकता है और शांत, स्थिर और एकाग्र हो जाता है। उसका मन पूर्णतः मुक्त, पूर्णतः विकसित, पूर्णतः विकसित, पूर्णतः विलीन और व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) से पूर्णतः विरक्त होता है। और वह उन कष्टदायी और ज्वरकारी दोषों से मुक्त हो जाता है जो व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की स्थिति से उत्पन्न होते हैं। वह उस संवेदना (वेदना) का अनुभव नहीं करता। इसे व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) से मुक्ति कहा जाता है।"

"उसमें इंद्रिय सुखों में आनंद नहीं होता; उसमें द्वेष में आनंद नहीं होता; उसमें हानि पहुँचाने में आनंद नहीं होता; उसमें रूप में आनंद नहीं होता; उसमें व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) में आनंद नहीं होता। क्योंकि वह इंद्रिय सुखों में आनंद, द्वेष में आनंद, हानि पहुँचाने में आनंद, रूप में आनंद और व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) में आनंद की अंतर्निहित प्रवृत्तियों से रहित है, इसलिए उसे अंतर्निहित प्रवृत्तियों से रहित भिक्षु कहा जाता है। उसने तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) को काट डाला है, बंधन को तोड़ दिया है और अहंकार को पूरी तरह से तोड़कर दुख का अंत कर दिया है। हे भिक्षुओं, ये पाँच तत्व हैं जिनसे मुक्ति मिलती है।" [247] . .

पांचवां पचास

आई. किमिला

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

201 किमिला

एक बार भगवान (बुद्ध) किंबिला के यहाँ एक निकुल उपवन में निवास कर रहे थे। 1209 तब पूज्य किंबिला भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले:

"हे भंते, इसका कारण क्या है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद भी उत्तम धम्म का अस्तित्व लंबे समय तक नहीं बना रहता?" 1210

(1) हे किम्बिला, यहाँ तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद, भिक्षु, भिक्षुणी (भिक्षुणियाँ), पुरुष गृहस्थ अनुयायी और स्त्री गृहस्थ अनुयायी गुरु के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (2) वे धम्म के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (3) वे संघ के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (4) वे प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (5) वे एक दूसरे के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। यही कारण है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद उत्तम धम्म अधिक समय तक कायम नहीं रहता।

"हे भंते, इसका कारण और तर्क क्या है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद भी अच्छा धम्म लंबे समय तक बना रहता है?"

"(1) हे किम्बिला, यहाँ तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद, भिक्षु, भिक्षुणियाँ, पुरुष गृहस्थ अनुयायी और स्त्री गृहस्थ अनुयायी गुरु के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (2) वे धम्म के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (3) वे संघ के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (4) वे प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (5) वे एक दूसरे के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। यही कारण है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद भी अच्छा धम्म लंबे समय तक बना रहता है।" [248]

---

202 धम्म सुनना (धम्म स्सवना सं. धर्म श्रवण)

भिक्षुओं, धम्म सुनने के ये पाँच लाभ हैं। ये पाँच क्या हैं? व्यक्ति अनसुनी बातों को सुनता है; सुनी हुई बातों को स्पष्ट करता है; उलझन से बाहर निकलता है; दृष्टिकोण स्पष्ट होता है; मन शांत होता है। धम्म सुनने के ये पाँच लाभ हैं।

---

203 थोरब्रेड [1211] (अस्साजानिया सं. अश्व..)

भिक्षुओं (सन्यासियों) में पाँच गुण होते हैं, और राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का प्रतीक माना जाता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? सत्यनिष्ठा, गति, सौम्यता, धैर्य और नम्रता। इन पाँच गुणों से युक्त राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा... राजत्व का प्रतीक माना जाता है।

इसी प्रकार, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु दान, आतिथ्य, भेंट और आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होता है, और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का स्रोत होता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? सत्यनिष्ठा, शीघ्रता, कोमलता, धैर्य और सौम्यता। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु दान, आतिथ्य, भेंट और आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होता है, और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का स्रोत होता है।

---

204 शक्तियां (बाल)

भिक्षुओं, ये पाँच शक्तियाँ हैं। कौन सी पाँच? आस्था की शक्ति, नैतिक लज्जा की शक्ति, नैतिक भय की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति और पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। ये पाँच शक्तियाँ हैं।

---

205 मानसिक बांझपन 1212 (चेतोखिला)

"भिक्षुओं, मानसिक बंजरपन के ये पाँच प्रकार हैं। 1213 वे पाँच कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु गुरु के बारे में भ्रमित है, उन पर संदेह करता है, [249] उनके बारे में आश्वस्त नहीं है, और उन पर भरोसा नहीं करता है। जब एक भिक्षु गुरु के बारे में भ्रमित होता है, उन पर संदेह करता है, उनके बारे में आश्वस्त नहीं होता है, और उन पर भरोसा नहीं करता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता है। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर नहीं झुकता है, इसलिए यह मानसिक बंजरपन का पहला प्रकार है।

(2) "फिर, एक भिक्षु धम्म के विषय में भ्रमित होता है, उस पर संदेह करता है, उस पर आश्वस्त नहीं होता और उस पर विश्वास नहीं रखता। जब एक भिक्षु धम्म के विषय में भ्रमित होता है, उस पर संदेह करता है, उस पर आश्वस्त नहीं होता और उस पर विश्वास नहीं रखता, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर नहीं झुकता, यह दूसरे प्रकार का मानसिक बंजरपन है।"

(3) "फिर, एक भिक्षु संघ के बारे में भ्रमित है, उस पर संदेह करता है, उसके बारे में आश्वस्त नहीं है और उस पर भरोसा नहीं करता है। जब एक भिक्षु संघ के बारे में भ्रमित होता है, उस पर संदेह करता है, उसके बारे में आश्वस्त नहीं होता है और उस पर भरोसा नहीं करता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता है। चूंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर नहीं झुकता है, इसलिए यह तीसरे प्रकार का मानसिक बंजरपन है।"

(4) "फिर, एक भिक्षु प्रशिक्षण के बारे में उलझन में है, उस पर संदेह करता है, उस पर आश्वस्त नहीं है और उस पर भरोसा नहीं करता है। जब एक भिक्षु प्रशिक्षण के बारे में उलझन में होता है, उस पर संदेह करता है, उस पर आश्वस्त नहीं होता है और उस पर भरोसा नहीं करता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता है। चूंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर नहीं झुकता है, इसलिए यह चौथे प्रकार का मानसिक बंजरपन है।"

(5) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं से चिढ़ जाता है, उनसे नाराज़ हो जाता है, उनसे द्वेष रखता है, उनके प्रति दुर्भावना रखता है। जब कोई भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं से चिढ़ जाता है, उनसे नाराज़ हो जाता है, उनसे द्वेष रखता है, उनके प्रति दुर्भावना रखता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता। चूंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर नहीं झुकता, इसलिए यह पाँचवाँ प्रकार का मानसिक बंजरपन है।"

"भिक्षुओं, ये पाँच प्रकार की मानसिक बंजरता हैं।"

---

206 बंधन [1214] (विनीबंध)

भिक्षुओं, मन के ये पाँच बंधन हैं। 1215 वे पाँच कौन से हैं?

(1) "यहाँ, भिक्षु इंद्रिय सुखों के प्रति राग से रहित नहीं होता, न ही उनके लिए इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा से रहित होता है। जब भिक्षु इंद्रिय सुखों के प्रति राग से रहित नहीं होता, न ही उनके लिए इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा से रहित होता है, तो उसका मन

उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता, यही मन का पहला बंधन है।"

(2) "फिर, भिक्षु शरीर के प्रति कामवासना (राग) से रहित नहीं होता, न ही उसमें इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) होती है। जब भिक्षु शरीर के प्रति कामवासना (राग) से रहित नहीं होता, न ही उसमें इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) होती है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता, यही मन का दूसरा बंधन है।"

(3) "फिर, भिक्षु रूप के प्रति राग से रहित नहीं होता, न ही वह रूप के प्रति इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा से रहित होता है। जब भिक्षु रूप के प्रति राग से रहित नहीं होता, न ही वह रूप के प्रति इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा से रहित होता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता। चूंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता, यही मन का तीसरा बंधन है।"

(4) "फिर, जब भिक्षु अपनी इच्छा अनुसार पेट भरकर खा लेता है, तो वह विश्राम, आलस्य और नींद के सुख में लिप्त हो जाता है। जब भिक्षु विश्राम, आलस्य और नींद के सुख में लिप्त हो जाता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर नहीं झुकता, यही मन का चौथा बंधन है।"

(5) "फिर, एक भिक्षु किसी विशेष देवों (देवदूतों/देवताओं) के क्रम में पुनर्जन्म की आकांक्षा रखते हुए ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत करता है, [250] यह सोचते हुए: 'इस पुण्य आचरण, पालन, तपस्या या ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) से मैं देव या देवों (देवदूतों/देवताओं) के अनुचरों में से एक बनूँगा।' जब वह किसी विशेष देवों (देवदूतों/देवताओं) के क्रम में पुनर्जन्म की आकांक्षा रखते हुए आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करता है... तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता। क्योंकि उसका मन उत्साह... और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता, यह मन का पाँचवाँ बंधन है।"

"भिक्षुओं, ये मन के पाँच बंधन हैं।"

---

207 चावल का दलिया (यागू बिना खीर)

भिक्षुओं, चावल की दलिया के ये पाँच लाभ हैं। कौन से पाँच? यह भूख मिटाती है, प्यास दूर करती है, गैस को शांत करती है, मूत्राशय को साफ करती है और अपचित भोजन के अवशेषों के पाचन में सहायता करती है। चावल की दलिया के ये पाँच लाभ हैं।

---

208 ब्रश करना (दंतकत्था)

भिक्षुओं, दाँत न साफ़ करने से ये पाँच खतरे हैं। 1216 वे पाँच खतरे क्या हैं? यह रूप-रंग के लिए हानिकारक है; मुँह से दुर्गंध आती है; स्वाद कलिकाएँ शुद्ध नहीं होतीं; पित्त और कफ भोजन को घेर लेते हैं; और भोजन पचता नहीं है। ये पाँच खतरे हैं दाँत न साफ़ करने से।

"भिक्षुओं, दाँत साफ़ करने के ये पाँच लाभ हैं। ये पाँच क्या हैं? इससे रूप-रंग अच्छा होता है; मुँह से दुर्गंध नहीं आती; स्वाद कलिकाएँ शुद्ध होती हैं; पित्त और कफ भोजन को नहीं घेरते; और भोजन शरीर को भाता है। ये दाँत साफ़ करने के पाँच लाभ हैं।" [251]

---

209 स्वर-संयोजन (गीतासर)

भिक्षुओं, धम्म (मार्ग) का पाठ करते समय गीत जैसी लय में बोलने में ये पाँच खतरे हैं। 1217 वे पाँच खतरे क्या हैं? (1) व्यक्ति अपनी लय से मोहित हो जाता है। (2) दूसरे लोग भी उसकी लय से मोहित हो जाते हैं। (3) गृहस्थ शिकायत करते हैं: 'जैसे हम गाते हैं, वैसे ही

शाक्यों पुत्र का अनुसरण करने वाले ये तपस्वी भी गाते हैं।' (4) लय को परिष्कृत करने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति की एकाग्रता भंग हो जाती है। (5) अगली पीढ़ी के लोग उसका अनुसरण करते हैं। ये पाँच खतरे हैं धम्म का पाठ करते समय गीत जैसी लय में बोलने में।

---

210 भ्रमित मन के साथ (मुत्थसती)

भिक्षुओं, जो व्यक्ति भ्रमित मन से, पूर्ण बोध (संपजन्न) के अभाव में सो जाता है, उसे ये पाँच खतरे होते हैं। 1218 वे पाँच खतरे क्या हैं? उसे नींद ठीक से नहीं आती; वह कष्ट से जागता है; उसे बुरे सपने आते हैं; देवता उसकी रक्षा नहीं करते; और अशुद्धता का उत्सर्जन होता है। ये पाँच खतरे हैं जो व्यक्ति भ्रमित मन से, पूर्ण बोध (संपजन्न) के अभाव में सो जाता है।

"भिक्षुओं, जो व्यक्ति सजग होकर और पूर्ण ज्ञान के साथ सोता है, उसे ये पाँच लाभ प्राप्त होते हैं। वे पाँच क्या हैं? वह अच्छी नींद सोता है; वह प्रसन्नता से जागता है; उसे बुरे सपने नहीं आते; देवता उसकी रक्षा करते हैं; और अशुद्धता का उत्सर्जन नहीं होता। ये पाँच लाभ उस व्यक्ति को प्राप्त होते हैं जो सजग होकर और पूर्ण ज्ञान के साथ सोता है।" [252]

II. अपमान करने वाला (अक्कोसाका)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

211 अपमान करने वाला (अक्कोसाका)

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं का अपमान और निंदा करता है, श्रेष्ठ भिक्षुओं की निंदा करता है, तो उसके लिए पाँच खतरे हो सकते हैं। वे पाँच खतरे क्या हैं? (1) वह या तो पराजिका करता है और मार्ग अवरुद्ध कर देता है, 1219 या (2) कोई अपवित्र अपराध करता है, 1220 या (3) गंभीर बीमारी से ग्रसित हो जाता है। (4) वह भ्रमित अवस्था में मर जाता है। (5) शरीर के क्षोभ के साथ, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। जब कोई भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं का अपमान और निंदा करता है, श्रेष्ठ भिक्षुओं की निंदा करता है, तो उसके लिए ये पाँच खतरे हो सकते हैं।

---

212 तर्कों का खंडन (भंडानकारक)

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु संघ में बुद्ध की शिक्षाओं का खंडन करने वाले तर्क, झगड़े, विवाद, कलह और अनुशासन संबंधी समस्याएं उत्पन्न करता है, तो उसके लिए पांच खतरे संभावित हैं। वे पांच खतरे क्या हैं? (1) वह वह प्राप्त नहीं कर पाता जो उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है; (2) वह अपनी प्राप्त की हुई उपलब्धि से विमुख हो जाता है; (3) उसके बारे में बदनामी फैलती है; (4) वह भ्रमित अवस्था में मर जाता है; और (5) शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निचले लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। जब कोई भिक्षु संघ में खंडन करने वाले तर्क, झगड़े, विवाद, कलह और अनुशासन संबंधी समस्याएं उत्पन्न करता है, तो उसके लिए ये पांच खतरे संभावित हैं।

---

213 सदाचारी आचरण (शीला सान. शील)

"भिक्षुओं, सदाचार की कमी के कारण अनैतिक व्यक्ति के लिए ये पाँच खतरे हैं। वे पाँच खतरे कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, सदाचारी आचरण में कमी वाला अनैतिक व्यक्ति आलस्य के कारण बहुत धन खो देता है। सदाचारी आचरण में कमी के कारण अनैतिक व्यक्ति के लिए यह पहला खतरा है।"

(2) "फिर, एक अनैतिक व्यक्ति के बारे में बुरी रिपोर्ट फैलती है जो सदाचारी व्यवहार में कमी रखता है। यह दूसरा खतरा है। ... [253]

(3) "फिर, कोई अनैतिक व्यक्ति, जो सद्गुणों से रहित है, जिस भी सभा में जाता है—चाहे वह क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहस्थों या तपस्वियों की सभा हो—वह भयभीत और विचलित होकर जाता है। यही तीसरा खतरा है। . . ."

(4) "फिर, सदाचारी आचरण से रहित एक अनैतिक व्यक्ति भ्रमित अवस्था में मरता है। यह चौथा खतरा है। . . ."

(5) "फिर, मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, सदाचारी आचरण से रहित अनैतिक व्यक्ति दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। यह पाँचवाँ खतरा है।"

"नैतिक आचरण की कमी के कारण एक अनैतिक व्यक्ति के लिए ये पाँच खतरे हैं।"

भिक्षुओं, सद्गुणी आचरण में संपदा प्राप्त करने के कारण एक सद्गुणी व्यक्ति को ये पाँच लाभ प्राप्त होते हैं। वे पाँच लाभ कौन से हैं?

(1) "यहाँ, सद्गुणी आचरण में निपुण एक सद्गुणी व्यक्ति सतर्कता के कारण बहुत धन अर्जित करता है। सद्गुणी आचरण में निपुणता के कारण सद्गुणी व्यक्ति को यह पहला लाभ प्राप्त होता है।"

(2) "पुनः, सदाचारी आचरण में निपुण एक गुणी व्यक्ति अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। यह दूसरा लाभ है। . . ."

(3) "फिर, सदाचार में निपुण कोई भी गुणी व्यक्ति जिस भी सभा में उपस्थित होता है—चाहे वह क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहस्थों या तपस्वियों की सभा हो—वह आत्मविश्वास और संयम के साथ उसमें प्रवेश करता है। यह तीसरा लाभ है..."

(4) "पुनः, सदाचार में निपुण एक गुणी व्यक्ति बिना भ्रमित हुए मरता है। यह चौथा लाभ है। ..."

(5) "फिर, शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, सद्गुणी आचरण में निपुण एक गुणी व्यक्ति एक अच्छे गंतव्य, एक स्वर्गीय लोक में पुनर्जन्म लेता है। यह पाँचवाँ लाभ है। . . . [254]

"सद्गुणी व्यक्ति को उसके सद्गुणी आचरण में संपदा के कारण ये पाँच लाभ प्राप्त होते हैं।"

---

224 बोलना' बहुत (बहुभानी सं. बहु-वाणी)

भिक्षुओं, जो व्यक्ति अधिक बोलता है, उसके लिए ये पाँच खतरे हैं। वे पाँच खतरे क्या हैं? वह झूठ बोलता है; वह फूट डालने वाली बातें बोलता है; वह कठोर बातें बोलता है; वह व्यर्थ की बातें करता है; शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। ये पाँच खतरे अधिक बोलने वाले व्यक्ति के लिए हैं।

भिक्षुओं, विवेकपूर्ण वाणी वाले व्यक्ति को ये पाँच लाभ प्राप्त होते हैं। ये पाँच क्या हैं? वह झूठ नहीं बोलता; वह फूट डालने वाली बातें नहीं करता; वह कठोर बातें नहीं करता; वह व्यर्थ की बातें नहीं करता; शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वह एक अच्छे स्थान, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेता है। विवेकपूर्ण वाणी वाले व्यक्ति को ये पाँच लाभ प्राप्त होते हैं।

---

215 अधीरता (1) (अक्खन्ति सं. अशांति)

भिक्षुओं, अधीरता में ये पाँच खतरे हैं। ये पाँच क्या हैं? एक तो यह अनेक लोगों को अप्रिय और नापसंद होता है; एक में बहुत शत्रुता होती है; एक में बहुत दोष होते हैं; एक भ्रमित अवस्था में मरता है; शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, व्यक्ति दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। अधीरता में ये पाँच खतरे हैं।

भिक्षुओं, धीरज रखने के ये पाँच लाभ हैं। ये पाँच क्या हैं? व्यक्ति अनेक लोगों को प्रसन्न और संतुष्ट करता है; उसका कोई शत्रु नहीं होता; उसके पाप नहीं होते; वह निर्विरोध मृत्यु को प्राप्त होता है; शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, वह एक अच्छे स्थान, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेता है। धीरज रखने के ये पाँच लाभ हैं। [255]

---

226 अधीरता (2) (अक्खन्ति2 सं. अशांति)

भिक्षुओं, अधीरता में ये पाँच खतरे हैं। ये पाँच क्या हैं? पहला, अनेक लोगों को अप्रिय और नापसंद होना; दूसरा, हिंसक होना; तीसरा, पश्चाताप करना; तीसरा, भ्रमित होकर मरना; शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेना। अधीरता में ये पाँच खतरे हैं।

भिक्षुओं, धीरज रखने के पाँच लाभ हैं। ये पाँच क्या हैं? व्यक्ति अनेक लोगों को प्रसन्न और संतुष्ट करता है; वह हिंसक नहीं होता; वह पश्चाताप रहित होता है; वह शांत मन से मरता है; शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वह स्वर्गलोक में, एक अच्छे स्थान पर पुनर्जन्म लेता है। धीरज रखने के ये पाँच लाभ हैं।

---

227 विश्वास जगाने में असमर्थ (1) (अपसादिका1)

भिक्षुओं, आचरण में ये पाँच खतरे हैं जो विश्वास उत्पन्न नहीं करते। वे पाँच क्या हैं? स्वयं को दोष देना; ज्ञानी लोगों द्वारा जाँच-पड़ताल के बाद निंदा करना; बदनामी कमाना; भ्रमित अवस्था में मरना; शरीर के टूटने के बाद मृत्यु के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेना। ये पाँच खतरे आचरण में विश्वास उत्पन्न नहीं करते।

भिक्षुओं, विश्वास जगाने वाले आचरण के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच क्या हैं? व्यक्ति स्वयं को दोष नहीं देता; ज्ञानी लोग जाँच-पड़ताल करके उसकी प्रशंसा करते हैं; व्यक्ति को अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त होती है; व्यक्ति विचलित हुए बिना मरता है; शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, व्यक्ति स्वर्गलोक में एक अच्छे स्थान पर पुनर्जन्म लेता है। ये विश्वास जगाने वाले आचरण के पाँच लाभ हैं।

---

218 विश्वास जगाने में असमर्थ (2) (अपसादिका2)

भिक्षुओं, आचरण में ये पाँच खतरे हैं जो विश्वास उत्पन्न नहीं करते। वे पाँच क्या हैं? [256] जो विश्वासहीन हैं, वे विश्वास प्राप्त नहीं कर पाते; विश्वास रखने वालों में से कुछ अपना मन बदल लेते हैं; गुरु की शिक्षा का पालन नहीं किया जाता; अगली पीढ़ी उनके उदाहरण का अनुसरण नहीं करती; और स्वयं का मन शांत नहीं होता। 1222 ये पाँच खतरे हैं जो आचरण में विश्वास उत्पन्न नहीं करते।

भिक्षुओं, विश्वास जगाने वाले आचरण के ये पाँच लाभ हैं। ये पाँच क्या हैं? जो आत्मविश्वासहीन हैं, उनमें आत्मविश्वास बढ़ता है; जो आत्मविश्वासी हैं, उनका आत्मविश्वास और भी बढ़ता है; गुरु की शिक्षा का पालन होता है; आने वाली पीढ़ियाँ अनुकरण करती हैं; और मन शांत हो जाता है। विश्वास जगाने वाले आचरण के ये पाँच लाभ हैं।

---

219 अग्नि (अग्गी संस्कृत अग्नि)

भिक्षुओं, अग्नि में ये पाँच खतरे हैं। कौन से पाँच? यह आँखों के लिए अशुभ है; इससे रंगत बिगड़ती है; यह कमजोरी लाती है; यह संगति के प्रति आसक्ति को बढ़ावा देती है; और यह व्यर्थ की बातों को प्रेरित करती है। अग्नि में ये पाँच खतरे हैं।

---

220 मधुरा (मथुरा शहर)

"भिक्षुओं, मथुरा (मथुरा नगर) में ये पाँच खतरे हैं। 1223 वे पाँच क्या हैं? यह ऊबड़-खाबड़ है; यह धूल भरा है; इसके कुत्ते हिंसक हैं; इसमें जंगली आत्माएँ हैं; और वहाँ भिक्षा प्राप्त करना कठिन है। ये मथुरा के पाँच खतरे हैं।" [257]

III. लंबी यात्रा (दिघाचारिका)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

221 लंबी भटकन (1) (दिघाकारिका1)

भिक्षुओं, जो व्यक्ति दीर्घकालीन और अस्थिर भ्रमण में संलग्न रहता है, उसे ये पाँच खतरे होते हैं। 1224 वे पाँच खतरे क्या हैं? जो सुना नहीं होता, उसे न सुनना; जो सुना होता है, उसे स्पष्ट न करना; जो सुना होता है, उस पर विश्वास न होना; गंभीर बीमारी का शिकार होना; और मित्र न होना। दीर्घकालीन और अस्थिर भ्रमण में संलग्न रहने वाले व्यक्ति के लिए ये पाँच खतरे हैं।

भिक्षुओं, आवधिक भ्रमण के ये पाँच लाभ हैं। ये पाँच क्या हैं? व्यक्ति को ऐसी बातें सुनने को मिलती हैं जो उसने पहले नहीं सुनी हों; उसे सुनी हुई बातों का स्पष्टीकरण मिलता है; उसे सुनी हुई कुछ बातों पर विश्वास होता है; वह किसी गंभीर बीमारी से बच जाता है; और उसे मित्र मिलते हैं। आवधिक भ्रमण के ये पाँच लाभ हैं।

---

222 लंबी भटकन (2) (दिघाकारिका2)

भिक्षुओं, दीर्घकालीन और अस्थिर भ्रमण में संलग्न रहने वाले व्यक्ति के लिए ये पाँच खतरे हैं। वे पाँच खतरे क्या हैं? व्यक्ति वह प्राप्त नहीं कर पाता जो उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है; वह अपनी प्राप्त की हुई उपलब्धियों से विमुख हो जाता है; वह किसी गंभीर बीमारी का शिकार हो जाता है; और उसका कोई मित्र नहीं होता। दीर्घकालीन और अस्थिर भ्रमण में संलग्न रहने वाले व्यक्ति के लिए ये पाँच खतरे हैं।

"भिक्षुओं, आवधिक भ्रमण के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच क्या हैं? व्यक्ति वह प्राप्त कर लेता है जो उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है; व्यक्ति अपनी प्राप्त की हुई उपलब्धि से विचलित नहीं होता; व्यक्ति अपनी प्राप्त की हुई उपलब्धि के प्रति आश्वस्त रहता है; व्यक्ति किसी गंभीर बीमारी से ग्रसित नहीं होता; और व्यक्ति के मित्र होते हैं। ये आवधिक भ्रमण के पाँच लाभ हैं।" [258]

---

223 (3) बहुत लंबे समय तक निवास करना (अतिनिवासा)

भिक्षुओं, एक ही स्थान पर लंबे समय तक रहने से ये पाँच खतरे होते हैं। वे पाँच खतरे क्या हैं? (1) व्यक्ति बहुत सी वस्तुओं का संग्रह करने लगता है; (2) व्यक्ति बहुत सी औषधियों का संग्रह करने लगता है; (3) व्यक्ति बहुत से कार्यों और कर्तव्यों को अपने ऊपर ले लेता है और उनमें निपुण हो जाता है; (4) व्यक्ति गृहस्थों और संन्यासियों के साथ ऐसे संबंध बनाता है जो गृहस्थों के लिए अनुचित होते हैं; और (5) जब व्यक्ति उस मठ से विदा होता है, तो वह चिंता से भरा हुआ विदा होता है। ये पाँच खतरे एक ही स्थान पर लंबे समय तक रहने से होते हैं।

भिक्षुओं, संतुलित अवधि तक एक ही स्थान पर रहने के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच क्या हैं? (1) व्यक्ति बहुत सी वस्तुओं का संग्रह नहीं करता; (2) व्यक्ति बहुत सी औषधियों का संग्रह नहीं करता; (3) व्यक्ति बहुत से कार्यों और कर्तव्यों को नहीं ग्रहण करता और विभिन्न कार्यों में निपुण नहीं होता; (4) व्यक्ति गृहस्थों और संन्यासियों के साथ गृहस्थों के समान अनुचित संबंध नहीं बनाता; और (5) जब व्यक्ति उस मठ से विदा होता है, तो वह चिंतामुक्त होकर विदा होता है। संतुलित अवधि तक एक ही स्थान पर रहने के ये पाँच लाभ हैं।

---

224 कंजूस (मच्छरी)

भिक्षुओं, एक ही स्थान पर बहुत अधिक समय तक रहने से ये पाँच खतरे होते हैं। वे पाँच खतरे क्या हैं? व्यक्ति रहने की जगह में कंजूसी करने लगता है, परिवार में कंजूसी करने लगता है, लाभ में कंजूसी करने लगता है, प्रशंसा में कंजूसी करने लगता है और धर्म में कंजूसी करने लगता है। एक ही स्थान पर बहुत अधिक समय तक रहने से ये पाँच खतरे होते हैं।

भिक्षुओं, संतुलित अवधि तक एक ही स्थान पर रहने के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच क्या हैं? व्यक्ति निवास स्थान, परिवार, लाभ, प्रशंसा और धर्म के प्रति कंजूसी नहीं करता। संतुलित अवधि तक एक ही स्थान पर रहने के ये पाँच लाभ हैं।

---

225 वह व्यक्ति जो परिवारों से मिलने जाता है (1) (कुलुपाका1)

भिक्षुओं, परिवारों के दर्शन करने वाले के लिए ये पाँच खतरे हैं। वे पाँच क्या हैं? [259] (1) बिना किसी भिक्षु से अनुमति लिए परिवारों के दर्शन करने जाना अपराध है, (2) किसी स्त्री के साथ एकांत में बैठना अपराध है, (3) किसी स्त्री के साथ गुप्त आसन पर बैठना अपराध है, (4) किसी स्त्री को पाँच या छह वाक्यों से अधिक में धम्म का उपदेश देना अपराध है। (5) कामुक विचारों से ग्रस्त होना। परिवारों के दर्शन करने वाले के लिए ये पाँच खतरे हैं।

---

226 जो परिवारों से मिलने जाता है (2) (कुलुपाका2)

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु परिवारों के बीच जाकर उनसे अत्यधिक घनिष्ठ संबंध बनाता है, तो ये पाँच खतरे उत्पन्न होते हैं। वे पाँच खतरे क्या हैं? (1) उसे अक्सर स्त्रियों से मिलने का अवसर मिलता है। (2) जब वह अक्सर उनसे मिलता है, तो वह उनसे घनिष्ठ संबंध बना लेता है। (3) जब वह उनसे घनिष्ठ संबंध बनाता है, तो वे अंतरंग हो जाते हैं। (4) जब वे अंतरंग हो जाते हैं, तो कामवासना (राग) को पनपने का खुला अवसर मिल जाता है। (5) जब उसका मन कामवासना (राग) के वश में होता है, तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वह ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) असंतुष्ट होकर व्यतीत करेगा, कोई पाप करेगा, या साधना छोड़कर निम्न जीवन में लौट जाएगा। 1226 ये पाँच खतरे हैं जब कोई भिक्षु परिवारों के बीच जाकर उनसे अत्यधिक घनिष्ठ संबंध बनाता है।

227 धन (भोग)

भिक्षुओं, धन में ये पाँच खतरे हैं। कौन से पाँच? अग्नि, जल, राजा, चोर और अप्रिय उत्तराधिकारी, ये पाँच ही धन के खतरे हैं।

भिक्षुओं, धन के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच क्या हैं? धन के माध्यम से, (1) व्यक्ति स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में अपना भरण-पोषण ठीक से करता है; (2) व्यक्ति अपने माता-पिता को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में उनका भरण-पोषण ठीक से

करता है; (3) व्यक्ति अपनी पत्नी और बच्चों, दासों, श्रमिकों और सेवकों को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में उनका भरण-पोषण ठीक से करता है; (4) व्यक्ति अपने मित्रों और साथियों को सुखी और प्रसन्न रखता है तथा सुख में उनका भरण-पोषण ठीक से करता है; (5) व्यक्ति तपस्वियों और ब्राह्मणों के लिए एक उत्थानकारी दान की व्यवस्था करता है जो स्वर्गिक है, सुख प्रदान करती है और स्वर्ग की ओर ले जाती है। ये धन के पाँच लाभ हैं। [260]

---

228 देर रात का भोजन (उस्सुरभट्ट)

भिक्षुओं, जो परिवार दिन में देर से भोजन तैयार करते हैं, उनके लिए ये पाँच खतरे हैं। 1227 वे पाँच खतरे क्या हैं? (1) आने वाले मेहमानों को समय पर भोजन नहीं परोसा जाता। (2) आहुति ग्रहण करने वाले देवताओं को समय पर भोजन नहीं परोसा जाता। (3) जो तपस्वी और ब्राह्मण दिन में एक बार भोजन करते हैं और रात में भोजन नहीं करते, यानी उचित समय के बाद भोजन नहीं करते, उन्हें समय पर भोजन नहीं परोसा जाता। (4) दास, मजदूर और नौकर काम करते समय मुँह बनाते हैं। (5) समय से देर से तैयार किया गया भोजन पौष्टिक नहीं होता। ये पाँच खतरे हैं जो परिवार को दिन में देर से भोजन तैयार करने से हो सकते हैं।

भिक्षुओं, जो परिवार समय पर भोजन करते हैं, उन्हें ये पाँच लाभ प्राप्त होते हैं। 1228 वे पाँच लाभ क्या हैं? (1) आने वाले मेहमानों को समय पर भोजन परोसा जाता है। (2) आहुति ग्रहण करने वाले देवताओं को समय पर भोजन परोसा जाता है। (3) जो तपस्वी और ब्राह्मण दिन में एक बार भोजन करते हैं और रात में भोजन नहीं करते, यानी समय के बाहर भोजन नहीं करते, उन्हें समय पर भोजन परोसा जाता है। (4) दास, मजदूर और नौकर बिना मुँह बनाए अपना काम करते हैं। (5) समय पर किया गया भोजन पौष्टिक होता है। ये पाँच लाभ हैं जो परिवार को समय पर भोजन करने से प्राप्त होते हैं।

229 काला साँप (1) (कान्हासप्पा1 सं. कृष्ण-सर्प)

भिक्षुओं, काले साँप में ये पाँच खतरे होते हैं। वे पाँच क्या हैं? यह अशुद्ध, दुर्गंधयुक्त, डरावना, खतरनाक होता है और मित्रों को धोखा देता है। ये काले साँप के पाँच खतरे हैं। इसी प्रकार, स्त्रियों में ये पाँच खतरे होते हैं। वे पाँच क्या हैं? वे अशुद्ध, दुर्गंधयुक्त, डरावनी, खतरनाक होती हैं और मित्रों को धोखा देती हैं। ये स्त्रियों के पाँच खतरे हैं। 1225

230 काला साँप (2) (कान्हा सप्पा सं. कृष्णा सर्प)

भिक्षुओं, काले साँप में ये पाँच खतरे होते हैं। वे पाँच क्या हैं? वह क्रोधी, शत्रुतापूर्ण, घातक विष वाला, दोमुँहा होता है और मित्रों को धोखा देता है। [261] ये काले साँप में पाँच खतरे हैं। इसी प्रकार, स्त्रियों में भी ये पाँच खतरे होते हैं। वे क्रोधी, शत्रुतापूर्ण, घातक विष वाली, दोमुँही होती हैं और मित्रों को धोखा देती हैं।

भिक्षुओं, स्त्रियाँ इस प्रकार घातक विष की होती हैं: उनमें अधिकतर कामवासना (राग) प्रबल होती है। स्त्रियाँ इस प्रकार दोहरी वाणी बोलती हैं: अधिकतर विभाजनकारी बातें करती हैं। स्त्रियाँ मित्रों को धोखा देती हैं: अधिकतर व्यभिचारी होती हैं। स्त्रियों में ये पाँच प्रकार के खतरे हैं।

IV. निवासी (आवासिका)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

231 निवासी (आवासिका)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से रहित निवासी भिक्षु सम्माननीय नहीं है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह शिष्टाचार और कर्तव्यों में निपुण नहीं है; (2) वह विद्वान या विद्या में निपुण नहीं है; (3) वह एकांतप्रिय नहीं है और न ही एकांत में आनंद लेता है; (4) वह अच्छा वक्ता नहीं है और उसकी बोलने की शैली अच्छी नहीं है; (5) वह नासमझ, मूर्ख और मंदबुद्धि है। इन पाँच गुणों से युक्त निवासी भिक्षु सम्माननीय नहीं है।"

"भिक्षुओं (साधुओं) में पाँच गुण होने पर, एक निवासी भिक्षु आदरणीय होता है। वे पाँच गुण क्या हैं? [262] (1) वह शिष्टाचार और कर्तव्यों में निपुण होता है; (2) वह विद्वान और विद्या में निपुण होता है; (3) वह एकांतप्रिय होता है और एकांत में आनंद लेता है; (4) वह एक अच्छा वक्ता होता है और उसकी प्रस्तुति अच्छी होती है; (5) वह बुद्धिमान, समझदार और चतुर होता है। इन पाँच गुणों से युक्त निवासी भिक्षु आदरणीय होता है।"

---

232 मनभावन (पिया सं. प्रिया)

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, एक निवासी भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रिय लगता है और उनका आदर और सम्मान पाता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, सुचारु आचरण और आश्रय से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी भय देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। (2) उसने बहुत कुछ सीखा है, जो सीखा है उसे याद रखता है और उसे संचित करता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संन्यासी पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों - ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से उनका अध्ययन किया है और दृष्टि से उनका गहन अध्ययन किया है। (3) वह एक अच्छा वक्ता है और उसकी प्रस्तुति अच्छी है; उसे परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थपूर्ण वाणी का वरदान प्राप्त है। (4) वह बिना किसी कष्ट या कठिनाई के अपनी इच्छा से लाभ प्राप्त करता है। वे चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) जो उच्चतर मन का निर्माण करती हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं। (5) दोषों के नाश के साथ, उसने इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान से मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इन पाँच गुणों से युक्त, एक निवासी भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और प्रिय होता है और उनके द्वारा आदरणीय और सम्मानित होता है।

---

233 सौंदर्यीकरण (शोभना)

"पाँच गुणों से युक्त भिक्षु मठ की शोभा बढ़ाते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? [263] (1) वे गुणी होते हैं; वे पतिमोक्खों से संयमित रहते हैं... वे उनका अभ्यास करते हैं। (2) उन्होंने बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से अच्छी तरह पारंगत हैं। (3) वे एक अच्छे वक्ता हैं और उनकी वाणी परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थपूर्ण होती है। (4) वे अपने पास आने वालों को धर्म प्रवचन से शिक्षा, प्रोत्साहन, प्रेरणा और प्रसन्नता प्रदान करने में सक्षम होते हैं। (5) वे बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) प्राप्त करते हैं जो उच्च मन का निर्माण करती हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु मठ की शोभा बढ़ाते हैं।"

---

234 बहुत मददगार (बहुपकारा)

"पाँच गुणों से युक्त भिक्षु मठ के लिए अत्यंत सहायक होता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह गुणी होता है; वह पतिमोक्खों द्वारा संयमित रहता है... वह उनका अभ्यास करता है। (2) उसने बहुत कुछ सीखा होता है... और दृष्टि से भलीभूत होता है। (3) वह टूटी-फूटी चीजों की मरम्मत करता है। (4) जब विभिन्न राज्यों के भिक्षुओं सहित भिक्षुओं का एक बड़ा संघ आता है, तो वह गृहस्थों के पास जाकर उन्हें सूचित करता है: 'मित्रों, विभिन्न राज्यों के भिक्षुओं सहित भिक्षुओं का एक बड़ा संघ आया है। पुण्य कर्म करो। यह पुण्य कर्म करने का

अवसर है।' (5) वह बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) प्राप्त करता है जो उच्च मन का निर्माण करती हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु मठ के लिए अत्यंत सहायक होता है।"

---

235 दयालु (अनुकम्पा)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, एक निवासी भिक्षु गृहस्थों के प्रति करुणा दिखाता है। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह उन्हें सदाचारी आचरण के लिए प्रोत्साहित करता है। (2) वह उन्हें धम्म के दर्शन में स्थिर करता है। 1231 (3) जब वे बीमार होते हैं, तो वह उनके पास जाता है और उनमें सती ध्यान (ध्यान/सती) जागृत करते हुए कहता है: [264] 'आदरणीय जनों को योग्य विषय पर सती ध्यान स्थापित करना चाहिए।' 1232 (4) जब विभिन्न राज्यों के भिक्षुओं सहित भिक्षुओं का एक बड़ा संघ आता है, तो वह गृहस्थों के पास जाकर उन्हें सूचित करता है: 'मित्रों, विभिन्न राज्यों के भिक्षुओं सहित भिक्षुओं का एक बड़ा संघ आया है। पुण्य करो। यह पुण्य करने का अवसर है।'" (5) वह स्वयं जो भी भोजन दिया जाता है, चाहे वह साधारण हो या उत्तम, उसे ग्रहण करता है; वह श्रद्धापूर्वक दिए गए भोजन को व्यर्थ नहीं करता। इन पाँच गुणों से युक्त, एक निवासी भिक्षु गृहस्थों के प्रति करुणा दिखाता है।

---

236 वह जो तिरस्कार का पात्र हो (1) (अवन्नारहा1)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक निवासी भिक्षु को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) बिना जाँच-पड़ताल किए वह निंदा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करता है। (2) बिना जाँच-पड़ताल किए वह प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की निंदा करता है। (3) बिना जाँच-पड़ताल किए वह संदेह के योग्य बात पर विश्वास करता है। (4) बिना जाँच-पड़ताल किए वह विश्वास के योग्य बात पर संदेह करता है। (5) वह आस्था से प्राप्त धन को व्यर्थ कर देता है। इन पाँच गुणों से युक्त एक निवासी भिक्षु को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, एक निवासी भिक्षु स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) जाँच-पड़ताल करने के बाद, वह निंदा के योग्य व्यक्ति की निंदा करता है। (2) जाँच-पड़ताल करने के बाद, वह प्रशंसा के योग्य व्यक्ति की प्रशंसा करता है। (3) जाँच-पड़ताल करने के बाद, वह संदेह के योग्य मामले पर संदेह करता है। (4) जाँच-पड़ताल करने के बाद, वह विश्वास के योग्य मामले पर विश्वास करता है। (5) वह आस्था से प्राप्त धन को व्यर्थ नहीं करता। इन पाँच गुणों से युक्त, एक निवासी भिक्षु स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।" [265]

---

237 निंदा के योग्य व्यक्ति (2) (अवन्नारहा2)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक निवासी भिक्षु को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो! वे पाँच गुण क्या हैं? (1) बिना जाँच-पड़ताल किए वह निंदा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करता है। (2) बिना जाँच-पड़ताल किए वह प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की निंदा करता है। (3) वह आवास के मामले में कंजूस और लालची होता है। (4) वह परिवार के मामले में कंजूस और लालची होता है। (5) वह आस्था से प्राप्त धन को व्यर्थ कर देता है। इन पाँच गुणों से युक्त एक निवासी भिक्षु को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह गहन जाँच-पड़ताल करके निंदा के योग्य व्यक्ति की निंदा करता है। (2) वह गहन जाँच-पड़ताल करके प्रशंसा के योग्य व्यक्ति की प्रशंसा करता है। (3) वह आवास के मामले में कंजूस और लालची नहीं होता। (4) वह परिवार के मामले में कंजूस और लालची नहीं होता। (5) वह आस्था से प्राप्त धन को व्यर्थ नहीं करता। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

---

238 वह जो तिरस्कार का पात्र हो (3) (अवन्नाराहा3)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक निवासी भिक्षु को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) बिना जाँच-पड़ताल किए वह निंदा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करता है। (2) बिना जाँच-पड़ताल किए वह प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की निंदा करता है। (3) वह आवास के मामले में कंजूस होता है। (4) वह परिवार के मामले में कंजूस होता है। (5) वह लाभ के मामले में कंजूस होता है। इन पाँच गुणों से युक्त एक निवासी भिक्षु को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त, एक निवासी भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) जाँच-पड़ताल करने के बाद, वह निंदा के योग्य व्यक्ति की निंदा करता है। (2) जाँच-पड़ताल करने के बाद, वह प्रशंसा के योग्य व्यक्ति की प्रशंसा करता है। [266] (3) वह आवास के मामले में कंजूस नहीं होता। (4) वह परिवार के मामले में कंजूस नहीं होता। (5) वह लाभ के मामले में कंजूस नहीं होता। इन पाँच गुणों से युक्त, एक निवासी भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

---

239 कृपणता (1) (मैकचरिया1)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक निवासी भिक्षु को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह आवास के मामले में कंजूस होता है। (2) वह परिवार के मामले में कंजूस होता है। (3) वह लाभ के मामले में कंजूस होता है। (4) वह प्रशंसा के मामले में कंजूस होता है। (5) वह श्रद्धा से प्राप्त धन को लुटा देता है। इन पाँच गुणों से युक्त एक निवासी भिक्षु को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह आवास के मामले में कंजूस नहीं होता। (2) वह परिवार के मामले में कंजूस नहीं होता। (3) वह लाभ के मामले में कंजूस नहीं होता। (4) वह प्रशंसा के मामले में कंजूस नहीं होता। (5) वह श्रद्धा से प्राप्त धन को व्यर्थ नहीं करता। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

---

240 कृपणता (2) (मैकचरिया2)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त एक निवासी भिक्षु को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वह आवास के मामले में कंजूस होता है। (2) वह परिवार के मामले में कंजूस होता है। (3) वह लाभ के मामले में कंजूस होता है। (4) वह प्रशंसा के मामले में कंजूस होता है। (5) वह धर्म के मामले में कंजूस होता है। इन पाँच गुणों से युक्त एक निवासी भिक्षु को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं (मठवासियों), जिनमें पाँच गुण होते हैं, उन्हें स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? (1) वे आवास के मामले में कंजूस नहीं होते। (2) वे परिवार के मामले में कंजूस नहीं होते। (3) वे लाभ के मामले में कंजूस नहीं होते। (4) वे प्रशंसा के मामले में कंजूस नहीं होते। (5) वे धर्म के मामले में कंजूस नहीं होते। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

वी. कदाचार (दुकारिता सं. दुष्चरित्र)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

241 कदाचार (दुकारिता सं. दुष्चरित्र)

भिक्षुओं, दुराचार में ये पाँच खतरे हैं। ये पाँच क्या हैं? (1) व्यक्ति स्वयं को दोष देता है। (2) ज्ञानी लोग जाँच-पड़ताल करके उसकी निंदा करते हैं। (3) व्यक्ति की बदनामी होती है। (4) व्यक्ति भ्रमित अवस्था में मरता है। (5) शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, व्यक्ति दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। ये दुराचार के पाँच खतरे हैं।

भिक्षुओं, अच्छे आचरण के ये पाँच लाभ हैं। ये पाँच क्या हैं? (1) व्यक्ति स्वयं की निंदा नहीं करता। (2) ज्ञानी लोग जाँच-पड़ताल करके उसकी प्रशंसा करते हैं। (3) व्यक्ति को अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। (4) व्यक्ति विचलित हुए बिना मरता है। (5) शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, व्यक्ति स्वर्गलोक में, एक अच्छे स्थान पर पुनर्जन्म लेता है। अच्छे आचरण के ये पाँच लाभ हैं।

---

242 शारीरिक दुराचार (कायदुच्चरिता सं. काया दुष्चरित्र)

"भिक्षुओं (मठवासियों), शारीरिक दुराचार में ये पाँच खतरे हैं। कौन से पाँच? . . . [जैसा कि 5:241 में है] . . . ये शारीरिक दुराचार में पाँच खतरे हैं।"

"भिक्षुओं (मठवासियों), शारीरिक रूप से अच्छे आचरण के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच कौन से हैं? ... [जैसा कि 5:241 में है] ... ये शारीरिक रूप से अच्छे आचरण के पाँच लाभ हैं।"

---

243 मौखिक कदाचार

"भिक्षुओं (मठवासियों), मौखिक दुराचार में ये पाँच खतरे हैं। कौन से पाँच? . . . [जैसा कि 5:241 में है] . . . मौखिक दुराचार में ये पाँच खतरे हैं।"

"भिक्षुओं (मठवासियों), मौखिक रूप से अच्छे आचरण के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच कौन से हैं? . . . [जैसा कि 5:241 में है] . . . मौखिक रूप से अच्छे आचरण के ये पाँच लाभ हैं।"

---

244 मानसिक दुराचार (मनोदुच्चरिता सं. मनो दुष्चरित्र)

भिक्षुओं, मानसिक दुराचार में ये पाँच खतरे हैं। कौन से पाँच? . . . [जैसा कि 5:241 में है] . . . ये मानसिक दुराचार में पाँच खतरे हैं।

"भिक्षुओं (मठवासियों), अच्छे मानसिक आचरण के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच कौन से हैं? [268] . . . [जैसा कि 5:241 में है] . . . ये अच्छे मानसिक आचरण के पाँच लाभ हैं।"

245 दुराचार पर एक और (दुश्चरित्रा2 सं. दुश्चरित्रा)

भिक्षुओं, दुराचार में ये पाँच खतरे हैं। वे पाँच क्या हैं? (1) व्यक्ति स्वयं को दोष देता है। (2) ज्ञानी लोग जाँच-पड़ताल करके उसकी निंदा करते हैं। (3) व्यक्ति की प्रतिष्ठा धूमिल हो जाती है। (4) व्यक्ति अच्छे धर्म से विमुख हो जाता है। (5) व्यक्ति बुरे धर्म में स्थापित हो जाता है। ये दुराचार के पाँच खतरे हैं।

भिक्षुओं, अच्छे आचरण के ये पाँच लाभ हैं। ये पाँच क्या हैं? (1) व्यक्ति स्वयं को दोष नहीं देता। (2) ज्ञानी लोग जाँच-पड़ताल करके उसकी प्रशंसा करते हैं। (3) व्यक्ति को अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। (4) व्यक्ति बुरे धर्म से विमुख हो जाता है। (5) व्यक्ति अच्छे धर्म में स्थापित हो जाता है। अच्छे आचरण के ये पाँच लाभ हैं।

---

246 शारीरिक दुराचार पर एक और (कायादुकारिता2 सं. काया दुष्चरित्र)

"भिक्षुओं (मठवासियों), शारीरिक दुराचार में ये पाँच खतरे हैं। कौन से पाँच? . . . [जैसा कि 5:245 में है] . . . ये शारीरिक दुराचार में पाँच खतरे हैं। ."

"भिक्षुओं (मठवासियों), शारीरिक रूप से अच्छे आचरण के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच कौन से हैं? ... [जैसा कि 5:245 में है] ... ये शारीरिक रूप से अच्छे आचरण के पाँच लाभ हैं।"

---

247 मौखिक कदाचार पर एक और (वासीदुक्कारिता2 सं. वाका दुष्चरित्र)

"भिक्षुओं (सन्यासियों), मौखिक दुराचार में ये पाँच खतरे हैं। वे पाँच कौन से हैं? . . . [जैसा कि 5:245 में है] . . . मौखिक दुराचार में ये पाँच खतरे हैं।"

"भिक्षुओं (मठवासियों), मौखिक रूप से अच्छे आचरण के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच कौन से हैं? . . . [जैसा कि 5:245 में है] . . . मौखिक रूप से अच्छे आचरण के ये पाँच लाभ हैं।"

---

248 मानसिक दुराचार पर एक और (मनोदुकारिता2 सं. मनो दुष्चरित्र)

भिक्षुओं, मानसिक दुराचार में ये पाँच खतरे हैं। कौन से पाँच? . . . [जैसा कि 5:245 में है] . . . ये मानसिक दुराचार में पाँच खतरे हैं।

"भिक्षुओं (सन्यासियों), अच्छे मानसिक आचरण के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच कौन से हैं? . . . [जैसा कि 5:245 में है] . . . ये अच्छे मानसिक आचरण के पाँच लाभ हैं।"

---

249 ए चार्नेल ग्राउंड (शिवथिका)

भिक्षुओं, श्मशान भूमि में ये पाँच खतरे हैं। वे पाँच क्या हैं? यह अपवित्र, दुर्गंधयुक्त, खतरनाक, अमानवीय (आत्माओं) का निवास स्थान है, [एक ऐसा स्थान जहाँ] बहुत से लोग रोते हैं। ये श्मशान भूमि के पाँच खतरे हैं। इसी प्रकार, श्मशान भूमि के समान व्यक्ति में भी ये पाँच खतरे हैं। वे पाँच क्या हैं? [269]

(1) "यहाँ, कोई व्यक्ति अशुद्ध शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्मों में संलग्न है। मैं कहता हूँ, इसी प्रकार वह अशुद्ध है। जिस प्रकार वह श्मशान भूमि अशुद्ध है, मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति भी उसी प्रकार अशुद्ध है।"

(2) "चूंकि वह अशुद्ध शारीरिक, मौखिक और मानसिक कार्यों में संलग्न रहता है, इसलिए उसकी बदनामी होती है। मैं कहता हूँ, इसी प्रकार वह दुर्गंधयुक्त है। जिस प्रकार वह श्मशान भूमि दुर्गंधयुक्त होती है, मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति भी उसी प्रकार दुर्गंधयुक्त है।"

(3) "चूंकि वह अशुद्ध शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्मों में लिप्त रहता है, इसलिए उसके सुसंस्कृत साथी भिक्षु उससे दूर से ही बचते हैं। मैं कहता हूँ कि इसी कारण वह खतरनाक माना जाता है। जिस प्रकार वह श्मशान भूमि खतरनाक मानी जाती है, मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति भी उसी प्रकार खतरनाक है।"

(4) "अशुद्ध शारीरिक, मौखिक और मानसिक कर्मों में लिप्त होकर वह अपने जैसे लोगों के साथ रहता है। मैं कहता हूँ, इस प्रकार वह जंगली [व्यक्तियों] का निवास स्थान है। जिस प्रकार वह श्मशान भूमि अमानवीय (आत्माओं) का निवास स्थान है, मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति भी उसी प्रकार का है।"

(5) "उसे अशुद्ध शारीरिक, मौखिक और मानसिक कार्यों में लिप्त देखकर, उसके सुसंस्कृत साथी भिक्षु उसके बारे में शिकायत करते हुए कहते हैं: 'अरे, ऐसे लोगों के साथ रहना हमारे लिए कितना कष्टदायी है!' मैं कहता हूँ, इसी कारण उसके लिए शोक मनाया जाता है। जिस प्रकार वह श्मशान भूमि [एक ऐसा स्थान है जहाँ] बहुत से लोग रोते हैं, मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति भी वैसा ही है।"

"हे भिक्षुओं, ये पाँच खतरे उस व्यक्ति में होते हैं जो श्मशान भूमि के समान होता है।" [270]

---

250 किसी व्यक्ति पर विश्वास (पुग्गलप्पसाद)

"भिक्षुओं, किसी व्यक्ति पर भरोसा करने में ये पाँच खतरे हैं। क्या, पाँच?"

(1) जिस व्यक्ति पर दूसरे को पूर्ण विश्वास हो, वह कोई अपराध कर सकता है जिसके कारण संघ उसे निलंबित कर देता है। उस व्यक्ति को [जिसने उस पर ऐसा विश्वास किया था] यह आशय होता है: 'जो व्यक्ति मुझे प्रिय और प्रसन्न करता था, उसे संघ ने निलंबित कर दिया है।' तब उसका भिक्षुओं पर विश्वास काफी कम हो जाता है। चूंकि उसका विश्वास कम हो गया है, इसलिए वह अन्य भिक्षुओं के साथ संगति नहीं करता। चूंकि वह अन्य भिक्षुओं के साथ संगति नहीं करता, इसलिए उसे उत्तम धर्म का ज्ञान नहीं मिलता। चूंकि उसे उत्तम धर्म का ज्ञान नहीं मिलता, इसलिए वह उत्तम धर्म से विमुख हो जाता है। किसी व्यक्ति पर विश्वास करने का यह पहला खतरा है।

(2) "फिर, जिस व्यक्ति पर दूसरे को पूर्ण विश्वास होता है, वह कोई अपराध कर सकता है जिसके कारण संघ उसे अंत में बैठा देता है। 1233 उस व्यक्ति के मन में यह विचार आता है [जिसने उस पर ऐसा विश्वास किया था]: 'संघ ने उस व्यक्ति को, जो मुझे प्रिय और अच्छा लगता है, अंत में बैठा दिया है।' तब भिक्षुओं पर उसका विश्वास काफी कम हो जाता है। ... क्योंकि उसे अच्छा धर्म सुनने को नहीं मिलता, इसलिए वह अच्छे धर्म से विमुख हो जाता है। किसी व्यक्ति पर विश्वास करने का यह दूसरा खतरा है।"

(3) "फिर, जिस व्यक्ति पर दूसरे को पूरा भरोसा है, वह किसी दूसरे स्थान पर जा सकता है... (4) ... वस्त्र त्याग सकता है... (5) ... उसका निधन हो सकता है। उस व्यक्ति को [जिसने उस पर ऐसा भरोसा किया था] यह विचार आता है: 'जो व्यक्ति मुझे प्रिय और अच्छा लगता था [वह किसी दूसरे स्थान पर चला गया है... वस्त्र त्याग दिया है...] उसका निधन हो गया है।' 1234 वह अन्य भिक्षुओं के साथ संगति नहीं करता। क्योंकि वह अन्य भिक्षुओं के साथ संगति नहीं करता, इसलिए उसे अच्छे धर्म का ज्ञान नहीं मिलता। क्योंकि उसे अच्छे धर्म का ज्ञान नहीं मिलता, इसलिए वह अच्छे धर्म से विमुख हो जाता है। किसी व्यक्ति पर भरोसा करने का यह पाँचवाँ खतरा है।"

"भिक्षुओं, किसी व्यक्ति पर भरोसा करने में ये पाँच खतरे हैं।" [271]

छठा पचास

I. पूर्ण समन्वय [1235] (उपसम्पदा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

252 पूर्ण दीक्षा कौन दे सकता है (उपसंपदेतब्बा)

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु पूर्ण दीक्षा दे सकते हैं। 1236 वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु में प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के सद्‌गुणों का समूह होता है; उसमें प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का समूह होता है; उसमें प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के पन्ना (दिव्य ज्ञान) का समूह होता है; उसमें प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की मुक्ति का समूह होता है; उसमें प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के मुक्ति के ज्ञान और दृष्टि का समूह होता है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु पूर्ण दीक्षा दे सकते हैं।"

---

252 निर्भरता (निस्सया)

"भिक्षुओं में पाँच गुण होते हैं, जिससे वे आश्रित हो सकते हैं। 1237 वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु में सद्‌गुणों का समूह होता है... समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का समूह... पन्ना (दिव्य ज्ञान) का समूह... मुक्ति का समूह... और प्रशिक्षण से परे मुक्ति के ज्ञान और दर्शन (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) का समूह। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु आश्रित हो सकते हैं।"

---

253 नौसिखिया (सामनेरा)

"भिक्षुओं (साधुओं) में पाँच गुण होते हैं, और एक भिक्षु की सेवा एक नौसिखिए द्वारा की जा सकती है। वे पाँच गुण क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु में सद्‌गुणों का समूह होता है... समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का समूह... पन्ना (दिव्य ज्ञान) का समूह... मुक्ति का समूह... और प्रशिक्षण से परे मुक्ति के ज्ञान और दृष्टि का समूह। इन पाँच गुणों से युक्त एक भिक्षु की सेवा एक नौसिखिए द्वारा की जा सकती है।" [272]

---

254 कंजूसी (मच्छरिया)

भिक्षुओं, कंजूसी पाँच प्रकार की होती है। ये पाँच कौन सी हैं? आवास के प्रति कंजूसी, परिवार के प्रति कंजूसी, लाभ के प्रति कंजूसी, प्रशंसा के प्रति कंजूसी और धर्म के प्रति कंजूसी। ये पाँच प्रकार की कंजूसी हैं। इन पाँच प्रकार की कंजूसी में सबसे नीच कंजूसी धर्म के प्रति कंजूसी है।

---

255 कृपणता का परित्याग (मैकचरियाप्पहाना)

भिक्षुओं, ब्रह्मचर्य (संन्यासी) जीवन पाँच प्रकार की कंजूसी के त्याग और उन्मूलन के लिए व्यतीत किया जाता है। वे पाँच कौन सी हैं? आवास के संबंध में कंजूसी, परिवार के संबंध में कंजूसी, लाभ के संबंध में कंजूसी, प्रशंसा के संबंध में कंजूसी और धर्म के संबंध में कंजूसी। आध्यात्मिक जीवन (संन्यास) इन्हीं पाँच प्रकार की कंजूसी के त्याग और उन्मूलन के लिए व्यतीत किया जाता है।

---

256 प्रथम झाना (ट्रान्स अवस्था) (पथमा झा सं. प्रथम ध्यान)

भिक्षुओं, इन पाँच चीजों का त्याग किए बिना कोई भी प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ है। वे पाँच चीजें क्या हैं? आवास के प्रति कंजूसी, परिवार के प्रति कंजूसी, लाभ के प्रति कंजूसी, प्रशंसा के प्रति कंजूसी और धर्म के प्रति कंजूसी। इन पाँच चीजों का त्याग किए बिना कोई भी प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ है।

भिक्षुओं, इन पाँच चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में सक्षम हो जाता है। वे पाँच चीजें क्या हैं? आवास के संबंध में कंजूसी... धर्म के संबंध में कंजूसी। इन पाँच चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति सक्षम हो जाता है।

प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें निवास करने के बारे में।"

257-263 दूसरा झाना (ट्रान्स अवस्था), आदि [1239] (दुतियाझाना..)

भिक्षुओं, इन पाँच चीजों का त्याग किए बिना कोई द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें निवास करने में असमर्थ है... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... कोई धारा-प्रवेश (सात पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के फल को प्राप्त करने में असमर्थ है... एक बार जन्म लेने (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) के फल को... अनागामी (पृथ्वी में पुनर्जन्म नहीं) के फल को... अरहंतत्व के फल को। वे पाँच क्या हैं? [273] आवास के संबंध में कंजूसी... धम्म के संबंध में कंजूसी। इन पाँच चीजों का त्याग किए बिना कोई अरहंतत्व के फल को प्राप्त करने में असमर्थ है।

भिक्षुओं, इन पाँच चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश कर उसमें निवास कर सकता है... तृतीय ध्यान में... चतुर्थ ध्यान में... वह धारा-प्रवेश (सात पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के फल को प्राप्त कर सकता है... एक बार जन्म लेने (सकदागामी) के फल को... अनागामी (पृथ्वी में पुनर्जन्म नहीं) के फल को... अरहंतत्व के फल को। वे पाँच चीजें क्या हैं? आवास के संबंध में कंजूसी... धम्म के संबंध में कंजूसी। इन पाँच चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति अरहंतत्व के फल को प्राप्त कर सकता है।

---

264 प्रथम झाना (ट्रान्स अवस्था) पर एक और (अपरापथमाझाना)

भिक्षुओं, इन पाँच चीजों का त्याग किए बिना कोई भी प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ है। वे पाँच चीजें क्या हैं? आवास के संबंध में कंजूसी, परिवार के संबंध में कंजूसी, लाभ के संबंध में कंजूसी, प्रशंसा के संबंध में कंजूसी और कृतघ्नता। इन पाँच चीजों का त्याग किए बिना कोई भी प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ है।

भिक्षुओं, इन पाँच चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश कर उसमें लीन हो सकता है। वे पाँच चीजें क्या हैं? आवास के प्रति कंजूसी, परिवार के प्रति कंजूसी, लाभ के प्रति कंजूसी, प्रशंसा के प्रति कंजूसी और कृतघ्नता। इन पाँच चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश कर उसमें लीन हो सकता है।

265—271 दूसरे झाना पर (ट्रान्स अवस्था), आदि (अपरादुतियाझाना)

भिक्षुओं, इन पाँच चीजों का त्याग किए बिना कोई द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ है... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... सात जन्मों के ऋतुओं ...

भिक्षुओं, इन पाँच चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश कर उसमें निवास कर सकता है... तृतीय ध्यान में... चतुर्थ ध्यान में... वह धारा-प्रवेश (सात पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के फल को प्राप्त कर सकता है... एक बार जन्म लेने (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) के फल को... अनागामी (पृथ्वी में पुनर्जन्म नहीं) के फल को... अरहंतत्व के फल को। वे पाँच चीजें क्या हैं? आवास के संबंध में कंजूसी... कृतघ्नता या कृतज्ञताहीनता। इन पाँच चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति अरहंतत्व के फल को प्राप्त कर सकता है। [274]

अध्याय के अतिरिक्त प्रवचन [1240]

I. सहमत पुनरावृत्ति श्रृंखला (सम्मुतिपेय्यालम)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

272 भोजन का एक निर्दिष्टी (भट्टुद्देसका)

(1) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को भोजन आवंटित करने का कार्य नहीं सौंपा जाना चाहिए। 1241 वे पाँच गुण क्या हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चलता है; वह घृणा के कारण गलत मार्ग पर चलता है; वह मोह (मोह) के कारण गलत मार्ग पर चलता है; वह भय के कारण गलत मार्ग पर चलता है; उसे यह नहीं पता होता कि कौन सा भोजन आवंटित किया गया है और कौन सा नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को भोजन आवंटित करने का कार्य नहीं सौंपा जाना चाहिए।

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को भोजन का प्रबंधकर्ता नियुक्त किया जा सकता है। वे पाँच गुण क्या हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता; वह घृणा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता; वह मोह (मोह) के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता; वह भय के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता; वह जानता है कि कौन सा भोजन निर्धारित है और कौन सा नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को भोजन का प्रबंधकर्ता नियुक्त किया जा सकता है।

(2) "भिक्षुओं, यदि पाँच गुणों से युक्त किसी व्यक्ति को भोजन परोसने का कार्य सौंपा जाए, तो उसे नहीं भेजा जाना चाहिए। 1242 वे पाँच गुण क्या हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चल पड़ता है... उसे यह नहीं पता होता कि कौन सा भोजन निर्धारित किया गया है और कौन सा नहीं। यदि इन पाँच गुणों से युक्त किसी व्यक्ति को भोजन परोसने का कार्य सौंपा जाए, तो उसे नहीं भेजा जाना चाहिए।"

भिक्षुओं, यदि पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को भोजन वितरणकर्ता नियुक्त किया जाए, तो उसे भेजा जाना चाहिए। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता... वह जानता है कि कौन सा भोजन निर्धारित है और कौन सा नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को ही भोजन वितरणकर्ता नियुक्त किया जाए, तो उसे भेजा जाना चाहिए।

(3) "भिक्षुओं, भोजन निर्धारित करने वाले जिस व्यक्ति में पाँच गुण हों, उसे मूर्ख समझा जाना चाहिए। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चल पड़ता है... उसे यह नहीं पता होता कि कौन सा भोजन निर्धारित है और कौन सा नहीं। भोजन निर्धारित करने वाले जिस व्यक्ति में ये पाँच गुण हों, उसे मूर्ख समझा जाना चाहिए।"

भिक्षुओं, भोजन निर्धारित करने वाले जिस व्यक्ति में पाँच गुण हों, उसे बुद्धिमान समझा जाना चाहिए। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता! उसे पता होता है कि कौन सा भोजन निर्धारित है और कौन सा नहीं। भोजन निर्धारित करने वाले जिस व्यक्ति में ये पाँच गुण हों, उसे बुद्धिमान समझा जाना चाहिए।

(4) "भिक्षुओं, भोजन परोसने वाला जो पाँच गुणों से युक्त होता है, वह स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है। वे पाँच गुण क्या हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चल पड़ता है... उसे यह नहीं पता होता कि कौन सा भोजन निर्धारित है और कौन सा नहीं। भोजन परोसने वाला जो इन पाँच गुणों से युक्त होता है, वह स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है।"

भिक्षुओं, भोजन परोसने वाला वह व्यक्ति जिसमें पाँच गुण होते हैं, स्वयं को अक्षुण्ण और सुरक्षित रखता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता... वह जानता है कि कौन सा भोजन निर्धारित है और कौन सा नहीं। भोजन परोसने वाला वह व्यक्ति जिसमें ये पाँच गुण होते हैं, स्वयं को अक्षुण्ण और सुरक्षित रखता है।

(5) “भिक्षुओं, भोजन निर्धारित करने वाला जो पाँच गुणों से युक्त होता है, उसे नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चल पड़ता है... उसे यह नहीं पता होता कि कौन सा भोजन निर्धारित किया गया है और कौन सा नहीं। भोजन निर्धारित करने वाला जो इन पाँच गुणों से युक्त होता है, उसे नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो...”

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में, भोजन निर्धारित करने वाला पाँच गुणों से युक्त भिक्षु स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता... वह जानता है कि कौन सा भोजन निर्धारित है और कौन सा नहीं... इन पाँच गुणों से युक्त भोजन निर्धारित करने वाला भिक्षु स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

273-285 आवास आदि नियुक्त करने वाला (सेनसनपन्नपका)

(273) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को आवास नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए। 1243 वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चल पड़ता है... उसे यह नहीं पता होता कि कौन सा आवास नियुक्त किया गया है और कौन सा नहीं। ... भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को आवास नियुक्त किया जा सकता है। वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता... उसे पता होता है कि कौन सा आवास नियुक्त किया गया है और कौन सा नहीं।

(274) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को आवास आवंटनकर्ता नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए 1244 . . . उसे यह नहीं पता होता कि कौन सा आवास आवंटित किया गया है और कौन सा नहीं। . . . भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को आवास आवंटनकर्ता नियुक्त किया जा सकता है . . . उसे पता होता है कि कौन सा आवास आवंटित किया गया है और कौन सा नहीं। ..."

(275) “भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को भंडारगृह का संरक्षक नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए... क्योंकि उसे यह ज्ञात नहीं होता कि किन वस्तुओं की रक्षा की जा रही है और किनकी नहीं। ... भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को भंडारगृह का संरक्षक नियुक्त किया जा सकता है... क्योंकि उसे ज्ञात होता है कि किन वस्तुओं की रक्षा की जा रही है और किनकी नहीं।

(276) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को वस्त्र सामग्री का प्राप्तकर्ता नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए... उसे यह ज्ञात नहीं होता कि कौन सी वस्त्र सामग्री प्राप्त हुई है और कौन सी नहीं। ... भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को वस्त्र सामग्री का प्राप्तकर्ता नियुक्त किया जा सकता है [275]... उसे ज्ञात होता है कि कौन सी वस्त्र सामग्री प्राप्त हुई है और कौन सी नहीं।

(277) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को वस्त्र सामग्री का वितरक नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए... क्योंकि उसे यह ज्ञात नहीं होता कि कौन सी वस्त्र सामग्री वितरित की गई है और कौन सी नहीं। ... भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को वस्त्र सामग्री का वितरक नियुक्त किया जा सकता है... क्योंकि उसे ज्ञात होता है कि कौन सी वस्त्र सामग्री वितरित की गई है और कौन सी नहीं।

(278) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को चावल की दलिया वितरित करने का कार्य नहीं सौंपा जाना चाहिए... क्योंकि उसे यह नहीं पता होता कि कौन सी दलिया वितरित की गई है और कौन सी नहीं... भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को चावल की दलिया वितरित करने का कार्य सौंपा जा सकता है... क्योंकि उसे यह पता होता है कि कौन सी दलिया वितरित की गई है और कौन सी नहीं..."

(279) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को फल वितरक नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए... क्योंकि उसे यह नहीं पता होता कि कौन सा फल वितरित किया गया है और कौन सा नहीं। ... भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को फल वितरक नियुक्त किया जा सकता है... क्योंकि उसे यह पता होता है कि कौन सा फल वितरित किया गया है और कौन सा नहीं।"

(280) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को केक वितरित करने का कार्य नहीं सौंपा जाना चाहिए... क्योंकि उसे यह नहीं पता होता कि कौन से केक वितरित किए गए हैं और कौन से नहीं। भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को केक वितरित करने का कार्य सौंपा जा सकता है... क्योंकि उसे यह पता होता है कि कौन से केक वितरित किए गए हैं और कौन से नहीं।"

(281) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को लघु सामग्री वितरित करने वाला नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए: ... उसे यह नहीं पता होता कि कौन सी [लघु सामग्री] वितरित की गई है और कौन सी नहीं। ... भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को लघु सामग्री वितरित करने वाला नियुक्त किया जा सकता है ... उसे पता होता है कि कौन सी [लघु सामग्री] वितरित की गई है और कौन सी नहीं। ..."

(282) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को वर्षा वस्त्रों का आवंटनकर्ता नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए... क्योंकि उसे यह ज्ञात नहीं होता कि कौन से वर्षा वस्त्र आवंटित किए गए हैं और कौन से नहीं। ... भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को वर्षा वस्त्रों का आवंटनकर्ता नियुक्त किया जा सकता है... क्योंकि उसे ज्ञात होता है कि कौन से वर्षा वस्त्र आवंटित किए गए हैं और कौन से नहीं। ..."

(283) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को पान-पात्रों का आवंटनकर्ता नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए... क्योंकि उसे यह ज्ञात नहीं होता कि किन पान-पात्रों का आवंटन किया गया है और किनका नहीं... भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को पान-पात्रों का आवंटनकर्ता नियुक्त किया जा सकता है... क्योंकि उसे यह ज्ञात होता है कि किन पान-पात्रों का आवंटन किया गया है और किनका नहीं।"

(284) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को मठ के सेवकों का पर्यवेक्षक नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए... उसे यह नहीं पता होता कि किस [मठ के सेवक] का पर्यवेक्षण किया गया है और किसका नहीं। ... भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को मठ के सेवकों का पर्यवेक्षक नियुक्त किया जा सकता है... उसे यह पता होता है कि किस [मठ के सेवक] का पर्यवेक्षण किया गया है और किसका नहीं। ..."

(285) नौसिखियों का पर्यवेक्षक

(1) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को नौसिखियों का मार्गदर्शक नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए। वे पाँच गुण क्या हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चल पड़ता है... उसे यह ज्ञान नहीं होता कि किन नौसिखियों का मार्गदर्शन किया गया है और किन्हें नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को नौसिखियों का मार्गदर्शक नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए।"

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को नौसिखियों का मार्गदर्शक नियुक्त किया जा सकता है। वे पाँच गुण क्या हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता... वह जानता है कि किन नौसिखियों का मार्गदर्शन किया गया है और किन्हें नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को नौसिखियों का मार्गदर्शक नियुक्त किया जा सकता है।

(2) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को यदि नौसिखियों का मार्गदर्शक नियुक्त किया जाए, तो उसे नहीं भेजा जाना चाहिए। वे पाँच गुण क्या हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चल पड़ता है... उसे यह ज्ञान नहीं होता कि किन नौसिखियों का मार्गदर्शन किया गया है और किन्हें नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को यदि नौसिखियों का मार्गदर्शक नियुक्त किया जाए, तो उसे नहीं भेजा जाना चाहिए।"

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को यदि नौसिखियों का मार्गदर्शक नियुक्त किया जाए, तो उसे भेजा जाना चाहिए। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता... वह जानता है कि किन नौसिखियों का मार्गदर्शन किया गया है और किन्हें नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को यदि नौसिखियों का मार्गदर्शक नियुक्त किया जाए, तो उसे भेजा जाना चाहिए।

(3) "भिक्षुओं, नौसिखियों के उस मार्गदर्शक को मूर्ख समझा जाना चाहिए जिसमें पाँच गुण हों। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चलता है... उसे यह नहीं पता होता कि किन नौसिखियों का मार्गदर्शन किया गया है और किन्हें नहीं। नौसिखियों के उस मार्गदर्शक को मूर्ख समझा जाना चाहिए जिसमें ये पाँच गुण हों।"

भिक्षुओं, नौसिखियों के मार्गदर्शक के रूप में पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को बुद्धिमान समझा जाना चाहिए। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता... वह जानता है कि किन नौसिखियों का मार्गदर्शन किया गया है और किन्हें नहीं: नौसिखियों के मार्गदर्शक के रूप में इन पाँच गुणों से युक्त व्यक्ति को बुद्धिमान समझा जाना चाहिए।

(4) "भिक्षुओं (साधुओं) में पाँच गुणों से युक्त नौसिखियों का मार्गदर्शक स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है। वे पाँच गुण क्या हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चल पड़ता है... उसे यह नहीं पता होता कि किन नौसिखियों का मार्गदर्शन हुआ है और किन्हें नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त नौसिखियों का मार्गदर्शक स्वयं को अपंग और घायल अवस्था में रखता है।"

भिक्षुओं, नौसिखियों का मार्गदर्शन करने वाला वह व्यक्ति जिसमें पाँच गुण होते हैं, स्वयं को अक्षुण्ण और सुरक्षित रखता है। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता... वह जानता है कि किन नौसिखियों का मार्गदर्शन किया गया है और किन्हें नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त नौसिखियों का मार्गदर्शन करने वाला व्यक्ति स्वयं को अक्षुण्ण और सुरक्षित रखता है।

(5) "भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त नौसिखियों के मार्गदर्शक को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर चल पड़ता है... उसे यह नहीं पता होता कि किन नौसिखियों का मार्गदर्शन किया गया है और किन्हें नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त नौसिखियों के मार्गदर्शक को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त नौसिखियों के मार्गदर्शक को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण कौन से हैं? वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चलता... उसे पता होता है कि किन नौसिखियों का मार्गदर्शन किया गया है और किन्हें नहीं। इन पाँच गुणों से युक्त नौसिखियों के मार्गदर्शक को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

द्वितीय. प्रशिक्षण नियम दोहराव श्रृंखला (सिक्खपदपेय्यलम)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

286 एक भिक्षु (मठवासी)

"भिक्षुओं (मठवासियों), पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वह जीवन का नाश करता है, जो नहीं दिया गया उसे लेता है, ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करता, झूठ बोलता है और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं। [276] इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं, पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वह जो जीवन के विनाश से, अनधिकृत वस्तुओं को ग्रहण करने से, यौन क्रियाओं से, झूठी वाणी से और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से, जो आलस्य का आधार हैं, दूर रहता है। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

287-292 भिक्षुणी (भिक्षुणी) आदि

"भिक्षुओं (भिक्षुओं) में पाँच गुण होते हैं, एक भिक्षुणी (भिक्षुणी)... एक प्रशिक्षु महिला... एक नवोदित पुरुष... एक नवोदित महिला को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वह जीवन का नाश करती है... और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करती है... इन पाँच गुणों वाली भिक्षुणी (भिक्षुणी)... एक प्रशिक्षु महिला... एक नवोदित पुरुष... एक नवोदित महिला को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षु, पाँच गुणों से युक्त, एक भिक्षुणी... एक प्रशिक्षु महिला... एक नवोदित पुरुष... एक नवोदित महिला स्वर्ग में ऐसे प्रवेश करती है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वह जीवन के विनाश से दूर रहती है... शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से परहेज करती है... इन पाँच गुणों से युक्त, एक भिक्षुणी... एक प्रशिक्षु महिला... एक नवोदित पुरुष... एक नवोदित महिला स्वर्ग में ऐसे प्रवेश करती है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षु (मठवासी), पाँच गुणों से युक्त, एक पुरुष गृहस्थ अनुयायी ...

एक महिला गृहस्थ अनुयायी को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वह जीवन का नाश करती है, बिना माँगे वस्तुएँ लेती है, यौन दुराचार में लिप्त होती है, झूठ बोलती है और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करती है, जो आलस्य का आधार हैं। इन पाँच गुणों से युक्त एक पुरुष गृहस्थ अनुयायी... एक महिला गृहस्थ अनुयायी को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

"पाँच गुणों से युक्त भिक्षुओं को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे पाँच गुण क्या हैं? वे जीव-जंतुओं को नष्ट करने से बचते हैं, बिना माँगे कुछ लेने से बचते हैं, यौन दुराचार से बचते हैं, झूठी वाणी से बचते हैं, और आलस्य के मूल कारण मदिरा, शराब और मादक पदार्थों से दूर रहते हैं। इन पाँच गुणों से युक्त भिक्षुओं को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

---

293 एक आजीवका

"भिक्षुओं (सन्यासियों), पाँच गुणों से युक्त अजीवक को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। 1248 वे पाँच गुण क्या हैं? वह जीवन का नाश करता है, बिना माँगे वस्तुएँ ग्रहण करता है, ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करता, झूठ बोलता है और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं। इन पाँच गुणों से युक्त अजीवक को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

---

294 — 302 ए निगांथा, इत्यादि।

"भिक्षु (मठवासी), पाँच गुणों से युक्त, एक निगंथ ... एक मुंडा हुआ शिष्य ... एक जटाधारी तपस्वी ... एक तपस्वी ... एक मगंदिक ... एक तेंदिक ... एक अरुद्धक ... एक गौतमक [277] ... एक देवधम्मिक को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। 1249 वे पाँच गुण क्या हैं? वह जीवन का नाश करता है, जो नहीं दिया गया है उसे लेता है, ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करता, झूठ बोलता है और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं। इन पाँच गुणों से युक्त एक देवधम्मिक को नरक में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

III वासना (राग) और आगे की पुनरावृत्ति श्रृंखला (रागपेय्यलम)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

303

भिक्षुओं, राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे पाँच चीजें क्या हैं? अनाकर्षकता की अनुभूति, मृत्यु की अनुभूति, खतरे की अनुभूति, भोजन की अरुचि की अनुभूति और संसार में आनंदहीनता की अनुभूति। राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है।

304

भिक्षुओं, राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे पाँच चीजें कौन सी हैं? अनित्यता की अनुभूति, अनात्म की अनुभूति, मृत्यु की अनुभूति, भोजन के प्रति अरुचि की अनुभूति और समस्त संसार में आनंदहीनता की अनुभूति। राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है।

305

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे पाँच चीजें क्या हैं? अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) की अनुभूति, अनित्य में दुख की अनुभूति, दुख में अनात्म की अनुभूति, त्याग की अनुभूति और वैराग्य की अनुभूति। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है।

306

"भिक्षुओं, राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे पाँच चीजें क्या हैं? विश्वास की शक्ति, ऊर्जा की शक्ति, सती ध्यान की शक्ति, समाधि की शक्ति और दिव्य ज्ञान की शक्ति। राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है।" [278]

307

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे पाँच चीजें क्या हैं? विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (वीर्य), ध्यान (सती) की शक्ति, समाधि (स्व-लीनता) की शक्ति और ज्ञान (दिव्य ज्ञान)। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन पाँचों चीजों का विकास करना आवश्यक है।

308 - 1151

भिक्षुओं, कामवासना (राग) की पूर्ण समझ के लिए... उसके पूर्ण विनाश के लिए... उसके त्याग के लिए... उसके विनाश के लिए... उसके लुप्त होने के लिए... उसके मिट जाने के लिए... उसके निवारण के लिए... उसके त्याग के लिए... उसके त्याग के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए, पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे पाँच चीजें क्या हैं? अनाकर्षण की अनुभूति (सन्ना/संग्या)... [ऊपर बताए गए सभी पाँचों समूह, नीचे तक]... विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, ध्यान (ध्यान/सती) की शक्ति, समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) की शक्ति और पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति। कामवासना (राग) के त्याग के लिए, इन पाँच चीजों का विकास करना आवश्यक है।

भिक्षुओं, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के लिए... पूर्ण समझ के लिए... पूर्ण विनाश के लिए... त्याग के लिए... विनाश के लिए... लुप्त होने के लिए... मिट जाने के लिए... समाप्ति के लिए... त्याग के लिए... घृणा के लिए... मोह के लिए... क्रोध के लिए... शत्रुता के लिए... निंदा के लिए... उद्दंडता के लिए... ईर्ष्या के लिए... कंजूसी के लिए... छल के लिए... धूर्तता के लिए... हठ के लिए... उग्रता के लिए... अहंकार के लिए... अभिमान के लिए... नशे के लिए... आलस्य के लिए, पाँच चीजों का विकास करना है। वे पाँच क्या हैं? अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्न/संज्ञा)... [ऊपर बताए गए पाँचों के पाँचों समूह, नीचे तक] ... विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, ध्यान की शक्ति, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की शक्ति और ज्ञान की शक्ति। आलस्य से मुक्ति पाने के लिए इन पाँचों चीजों को विकसित करना आवश्यक है।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा... भिक्षु भगवान (बुद्ध) के इस कथन से प्रसन्न हुए।

द बुक ऑफ द फाइव्स पूरी हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय >> 6. छक्कों की पुस्तक

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का छठा भाग है। यह भिक्खु बोधि का संशोधित संस्करण है।

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN5) अगला (AN7) >>>>

अंतर्वस्तु

1छक्कनिपाता की पुस्तक

1.1पहले पचास

1.1.1I. उपहार के योग्य (अहुनेय्या)

1.1.1.11 उपहारों के योग्य (1) (अहुनेय्या1)

1.1.1.22 उपहारों के योग्य (2) (अहुनेय्या2)

1.1.1.33 इंद्रियां (इंद्रिय)

1.1.1.44 शक्तियाँ (बाला)

1.1.1.55 शुद्ध नस्ल (1) (अजानिया1)

1.1.1.66 थोरब्रेड (2) (अजानिया2)

1.1.1.77 थोरब्रेड (3) (अजानिया3)

1.1.1.88 अतुलनीय वस्तुएँ (अनुत्तरिया)

1.1.1.99 स्मरण के विषय (अनुसत्तित्थना)

1.1.1.1010 महानामा

1.1.2II. सौहार्द (सरनिया)

1.1.2.111 सौहार्द (1) (सरानिया1)

1.1.2.222 सौहार्द (2) (सरानिया1)

1.1.2.313 पलायन (निस्सारनिया)

1.1.2.414. एक अच्छी मृत्यु (भद्दका)

1.1.2.515. पछतावा (अनुतप्पिया)

1.1.2.616 नकुला पितु

1.1.2.717 लाभकारी (कुसला) (सोप्पा)

1.1.2.818 मछली विक्रेता (मच्छबंधा)

1.1.2.919 मृत्यु पर ध्यान (1) (मरणस्सि1 संस्कृत: मरण स्मृति)

1.1.2.1020 मृत्यु पर ध्यान (2) (मरनास्सि2 संस्कृत मरण स्मृति)

1.1.3III. अतुलनीय (अनुत्तरिया संस्कृत: अनुत्तरा)

1.1.3.121 समाका

1.1.3.222 अपरिहानिया (गैर-पतन)

1.1.3.323 खतरा (भया)

1.1.3.424 हिमालय (हिमावंता)

1.1.3.525. स्मरण (अनुसत्तित्थना)

1.1.3.626 महाकच्चना

1.1.3.727 अवसर (1) (समय1)

1.1.3.828 अवसर (2) (समय2)

1.1.3.929 उदय

1.1.3.1030 (10) अतुलनीय वस्तुएँ (अनुत्तरिया)

1.1.4IV. देवता (देवदूत)

1.1.4.131 प्रशिक्षु (सेखा)

1.1.4.232 गैर-अस्वीकार (1) (परिहाना1)

1.1.4.333 गैर-अस्वीकार (2) (परिहाना2)

1.1.4.434 मोग्गलाना

1.1.4.535. सच्चे ज्ञान (विज्भगीय) से संबंधित

1.1.4.636 विवाद (विवादमूल)

1.1.4.737 दान देना

1.1.4.838 स्व-पहल (अत्ताकारी बिना आत्मा कारी)

1.1.4.939. निदान के कारण

1.1.4.1040 किम्बिला 1311 (किमिला)

1.1.4.1141 लकड़ी का एक टुकड़ा (दारुखंड)

1.1.4.1242 नागिता 1312

1.1.5वी. धम्मिका

1.1.5.143 नागा

1.1.5.244 मिगासाला

1.1.5.345 ऋण (इना, रीना के बिना)

1.1.5.446 महाकुंडा

1.1.5.547 प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान (1) (संदित्थिका1)

1.1.5.648 प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान (2) (संदित्थिका2)

1.1.5.749 खेमा

1.1.5.850 (8) इन्द्रियसंयम 1354 (इन्द्रियसंवर)

1.1.5.951 आनंद

1.1.5.1052 क्षत्रिय (संस्कृत क्षत्रिय)

1.1.5.1153 सतर्कता (अप्पमादा)

1.1.5.1254 धम्मिका

1.2दूसरा पचास

1.2.1VI. महान अध्याय (महावग्गो सं. महा वर्ग)

1.2.1.155 सोना

1.2.1.256 फाग्गुना

1.2.1.357 छह वर्ग (चलभिजाति)

1.2.1.458 दाग (असव सं. आश्रव)

1.2.1.559 दारुकम्मिका

1.2.1.660 हत्थी

1.2.1.761 मध्य (मज्जे सं. मध्य)

1.2.1.862 ज्ञान 1402 (पुरीसिन्द्रियाना सं. पुरुष इन्द्रिय ज्ञान)

1.2.1.963 भेदक (निब्बेधिका)

1.2.1.1064 शेर की दहाड़

1.2.2VII. देवदूत अनुभाग (देवता)

1.2.2.165 नॉन-रिटर्नर (अनागामीफला)

1.2.2.266. मुक्त व्यक्ति (अरहंत)

1.2.2.367 मित्र (Mitta sans. Mitra)

1.2.2.468 संगति में आनंद (संगनिकराम)

1.2.2.569 एक देवता (देवदूत)

1.2.2.670 समाधि (स्वयं में लीन होना/सम्मोहन)

1.2.2.771 साकार करने में सक्षम (सक्खीभब्बा)

1.2.2.872 शक्ति (बाला)

1.2.2.973 प्रथम झना (ट्रान्स अवस्था) (1) (पथमाताज्झा1)

1.2.2.1074 प्रथम झना (ट्रान्स अवस्था) (2) (पथमाताज्झाना2)

1.2.3आठवीं. अरिहंतशिप अनुभाग (अराहतवग्गो सं. अरिहंत-वर्ग)

1.2.3.175 दुख में

1.2.3.276 अरहंत पद (अरहत्ता)

1.2.3.377 सुपीरियर (उत्तरीमनुस्साधम्म)

1.2.3.478 सुख (सुखसोमनस्स)

1.2.3.579 उपलब्धि (अधिगामा)

1.2.3.680 महानता (महानता)

1.2.3.781 नरक (1) (निरया1)

1.2.3.882 नरक (2) (निरया2)

1.2.3.983 सर्वोपरि अवस्था (अग्गधम्म संस्कृत: आगरा धम्म)

1.2.3.1084 रातें (रत्तीदिवस सं. रात्रि दिवस)

1.2.4IX. शीतलता (Siti sans. Sheet)

1.2.4.185 शीतलता (सीतिभाव बिना शीत भाव)

1.2.4.286 अवरोध (अवरोधन)

1.2.4.387 एक हत्यारा (वोरोपिटा)

1.2.4.488 सुनने की इच्छा रखने वाला (सुस्सुसती)

1.2.4.589. बिना त्यागे (अप्पाहया)

1.2.4.690 परित्यक्त (पाहाना सं. प्राहन)

1.2.4.791 अक्षम (अभब्बा)

1.2.4.892 मामले (1) (अभब्बत्तना1)

1.2.4.993 मामले (2) (अभब्बत्तना2)

1.2.4.1094 मामले (3) (अभब्बत्तना3)

1.2.4.1195 मामले (4) (अभब्बत्तना4)

1.2.5X. लाभ (अनिसामसा)

1.2.5.196 अभिव्यक्ति (पतुभाव)

1.2.5.297 लाभ (अनिसामसा)

1.2.5.398 अनित्य (अनिका सास. अनित्य)

1.2.5.499 दुख (दुक्खा)

1.2.5.5100 अनात्मा (अनत्ता सं. अनात्मा)

1.2.5.6101 निब्बाना (संस्कृत: निर्वाण)

1.2.5.7102 अनात्य (अनावत्थिता)

1.2.5.8103 उक्खित्तसिका (उख्खित्तसिका)

1.2.5.9104 बिना पहचान के (अतममया)

1.2.5.10105 अस्तित्व (कारण) (भाव)

1.2.5.11106 तृष्णा (तन्हा सं. तृष्णा)

1.3पचास अध्यायों के सेट के अतिरिक्त अध्याय [1451]

1.3.1XI. त्रिक

1.3.1.1107 कामवासना (राग)

1.3.1.2108 कदाचार (दुकारिता सं. दुष्चरित्र))

1.3.1.3109 विचार (विटक्कका सं. वितर्क)

1.3.1.4110 धारणाएँ (सन्ना सं. संज्ञा)

1.3.1.5111 तत्व (धातु)

1.3.1.6112 संतुष्टि (असदा सं. असवद)

1.3.1.7113 असंतोष (आरती)

1.3.1.8115 सुधारना कठिन (डोवाकासाटा)

1.3.1.9116 बेचैनी (उद्धच्च)

1.3.2बारहवीं. तपस्या (समन्ना सं. श्रमण)

1.3.2.1117 शरीर को (ध्यान में) देखना 1452 (कायनुपासि सं. काया अनुपश्ययी)

1.3.2.2118 धम्मानुपसी (ध्यान में) का अवलोकन करना

1.3.2.3119 तपस्सा

1.3.2.4120 — 139 भल्लिका, इत्यादि।

1.3.3XIII. वासना (राग) और आगे दोहराव श्रृंखला

छक्कनिपाता की पुस्तक

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

उस भगवान को नमन, शत्रुओं का नाश करने वाले, सही मायने में पूर्णतः प्रबुद्ध (जागृत) भगवान।

00:00

41:20

पहले पचास

I. उपहार के योग्य (अहुनेय्या)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

1 उपहारों के योग्य (1) (अहुनेय्या1)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं में छह गुण होते हैं, वे दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र हैं। वे छह गुण क्या हैं? (1) किसी रूप को आँख से देखकर भिक्षु न तो प्रसन्न होते हैं और न ही दुखी, बल्कि समभाव, ध्यानमग्न और पूर्णतः बोध में रहते हैं। (2) किसी ध्वनि को कान से सुनकर भिक्षु न तो प्रसन्न होते हैं और न ही दुखी, बल्कि समभाव, ध्यानमग्न और पूर्णतः बोध में रहते हैं। (3) किसी गंध को नाक से सूंघकर भिक्षु न तो प्रसन्न होते हैं और न ही दुखी, बल्कि समभाव, ध्यानमग्न और पूर्णतः बोध में रहते हैं। (4) किसी स्वाद का अनुभव करके भिक्षु न तो प्रसन्न होते हैं और न ही दुखी, बल्कि... (5) शरीर से किसी वस्तु का स्पर्श अनुभव करने पर भिक्षु न तो प्रसन्न होता है और न ही दुखी, बल्कि समभाव, सजग और पूर्णतः ज्ञान प्राप्त करता है। (6) मन से किसी मानसिक घटना का अनुभव करने पर भिक्षु न तो प्रसन्न होता है और न ही दुखी, बल्कि समभाव, सजग

और पूर्णतः ज्ञान प्राप्त करता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का पात्र होता है।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। प्रसन्न होकर वे भिक्षु भगवान (बुद्ध) के कथन से प्रसन्न हुए। [280]

2 उपहारों के योग्य (2) (अहुनेय्या2)

"भिक्षुओं में छह गुण होते हैं; वे दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य होते हैं; वे संसार के लिए अतुलनीय पुण्य कर्मक्षेत्र हैं। वे छह गुण क्या हैं? 1252"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु अनेक प्रकार की मानसिक शक्तियों का प्रयोग करता है: एक होकर वह अनेक हो जाता है; अनेक होकर वह एक हो जाता है; वह प्रकट होता है और लुप्त हो जाता है; वह बिना किसी बाधा के दीवार, प्राचीर, पर्वत से होकर ऐसे गुजरता है मानो अंतरिक्ष में; वह पृथ्वी में ऐसे गोता लगाता है मानो वह जल हो; वह जल पर बिना डूबे ऐसे चलता है मानो वह पृथ्वी हो; पालथी मारकर वह पक्षी की तरह अंतरिक्ष में यात्रा करता है; अपने हाथ से वह इतने शक्तिशाली और बलिष्ठ चंद्रमा और सूर्य को स्पर्श करता है और सहलाता है; वह ब्रह्म जगत तक शरीर पर महारत हासिल करता है।

(2) "ईश्वरीय श्रवण शक्ति से, जो शुद्ध है और मानवीय श्रवण शक्ति से श्रेष्ठ है, वह दोनों प्रकार की ध्वनियों को सुनता है, ईश्वरीय और मानवीय, दूर की और पास की भी।

(3) वह अन्य प्राणियों और व्यक्तियों के मन को समझता है, क्योंकि उसने उन्हें अपने मन से समाहित कर लिया है। वह कामवासना से ग्रस्त मन को कामवासना से ग्रस्त मन के रूप में और कामवासना रहित मन को कामवासना रहित मन के रूप में समझता है; घृणा से ग्रस्त मन को घृणा से ग्रस्त मन के रूप में और घृणा रहित मन को घृणा रहित मन के रूप में समझता है; मोह से ग्रस्त मन को मोह से ग्रस्त मन के रूप में और मोह रहित मन को मोह रहित मन के रूप में समझता है; संकुचित मन को संकुचित मन के रूप में और विचलित मन को विचलित मन के रूप में समझता है; उच्च मन को उच्च मन के रूप में और निम्न मन को निम्न मन के रूप में समझता है; श्रेष्ठ मन को श्रेष्ठ मन के रूप में और अतुलनीय मन को अतुलनीय मन के रूप में समझता है; आत्ममग्न मन को आत्ममग्न मन के रूप में और असामंजस्यपूर्ण मन को आत्ममग्न मन के रूप में समझता है। असामहिता (असंलग्न); मुक्त मन मुक्त ही रहता है और अमुक्त मन अमुक्त ही रहता है।

(4) "वह अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) को याद करता है, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म, चार जन्म, पाँच जन्म, दस जन्म, बीस जन्म, तीस जन्म, चालीस जन्म, पचास [281] जन्म, सौ जन्म, एक हजार जन्म, एक लाख जन्म, विश्व-विनाश के अनेक युग, विश्व-विकास के अनेक युग, विश्व-विनाश और विश्व-विकास के अनेक युगों को इस प्रकार याद करता है: 'वहाँ मेरा ऐसा नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु थी; वहाँ से निकलकर, मेरा कहीं और पुनर्जन्म हुआ, और वहाँ भी मेरा ऐसा ही नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु थी; वहाँ से निकलकर, मेरा यहाँ पुनर्जन्म हुआ।' इस प्रकार वह अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके विभिन्न पहलुओं और विवरणों सहित याद करता है।

(5) "ईश्वरीय दृष्टि से, जो शुद्ध और मनुष्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है, वह प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देखता है, निम्न और उच्च, सुंदर और कुरूप, सौभाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, और वह समझता है कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है: 'वे प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से दुराचार किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा की, गलत मत रखा और गलत मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं; परन्तु वे प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण किए, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा नहीं की, जिन्होंने सही मत रखा और सही मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेते हैं।' इस प्रकार, दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध है और मनुष्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है, वह प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए, हीन और श्रेष्ठ, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली देखता है, और वह समझता है कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हश्र होता है।

(6) "दोषों के नाश होने से उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।"

"इन छह गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होता है और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र होता है।"

---

3 इंद्रियां (इंद्रिय)

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, वे दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र के पात्र होते हैं। वे छह गुण कौन से हैं? [282] विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, सती (ध्यान) की शक्ति, समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) की शक्ति, और ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की शक्ति; और दोषों के नाश के साथ, उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, ज्ञान (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करते हैं। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र के पात्र होते हैं।"

---

4 शक्तियाँ (बाला)

भिक्षुओं में छह गुण होते हैं, वे दान, आतिथ्य, भेंट और आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होते हैं, और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र होते हैं। वे छह गुण क्या हैं? विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (वीर्य), सती ध्यान, समाधि और ज्ञान की शक्ति; और दोषों के नाश के साथ, उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की निष्कलंक मुक्ति, दैवीय ज्ञान द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करते हैं। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु दान, आतिथ्य, भेंट और आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होते हैं, और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र होते हैं।

---

5 शुद्ध नस्ल (1) (अजानिया1)

भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) में छह गुण होते हैं, और राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का एक कारक माना जाता है। वे छह गुण क्या हैं? यहाँ, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा धैर्यपूर्वक रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों और स्पर्शनीय वस्तुओं को सहन करता है, और सौंदर्य से परिपूर्ण है। इन छह गुणों के कारण, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का एक कारक माना जाता है। 1253

इसी प्रकार, छह गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है। वे छह गुण क्या हैं? [283] यहाँ, भिक्षु (भिक्षु) धैर्यपूर्वक रूपों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक ध्वनियों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक गंधों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक स्वादों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक स्पर्शनीय वस्तुओं को सहन करता है और धैर्यपूर्वक मानसिक घटनाओं (धम्म) को सहन करता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य और आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है।

---

6 थोरब्रेड (2) (अजानिया2)

भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का एक कारक माना जाता है। वे छह गुण क्या हैं? यहाँ, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा धैर्यपूर्वक रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों और स्पर्शनीय वस्तुओं को सहन करता है और बलवान होता है। इन छह गुणों से युक्त, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का एक कारक माना जाता है।

इसी प्रकार, छह गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है। वे छह गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु धैर्यपूर्वक रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों, स्पर्शनीय वस्तुओं और मानसिक घटनाओं (धर्म) को सहन करता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य और आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है।

---

7 थोरब्रेड (3) (अजानिया3)

"भिक्षुओं (साधुओं), जिनमें छह गुण होते हैं, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का एक कारक माना जाता है। वे छह गुण क्या हैं? यहाँ, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा धैर्यपूर्वक रूपों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक ध्वनियों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक गंधों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक स्वादों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक स्पर्शनीय वस्तुओं को सहन करता है, और वह गति से संपन्न होता है। [284] इन छह गुणों से युक्त, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का एक कारक माना जाता है।"

इसी प्रकार, छह गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है। वे छह गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु धैर्यपूर्वक रूपों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक ध्वनियों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक गंधों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक स्वादों को सहन करता है, धैर्यपूर्वक स्पर्शित वस्तुओं को सहन करता है और धैर्यपूर्वक मानसिक घटनाओं (धम्म) को सहन करता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य और आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है।

---

8 अतुलनीय वस्तुएँ (अनुत्तरिया)

"भिक्षुओं, ये छह अद्वितीय गुण हैं। वे छह कौन से हैं? अद्वितीय दृष्टि, अद्वितीय श्रवण शक्ति, अद्वितीय लाभ, अद्वितीय प्रशिक्षण, अद्वितीय सेवा और अद्वितीय स्मरण। ये छह अद्वितीय गुण हैं।" 1254

---

9 स्मरण के विषय (अनुसत्तित्थना)

भिक्षुओं, ध्यान के ये छह विषय हैं। वे छह विषय कौन से हैं? बुद्ध का स्मरण, धम्म का स्मरण, संघ का स्मरण, सद्गुणों का स्मरण, उदारता का स्मरण और देवताओं का स्मरण। ये छह विषय ध्यान के हैं।

---

10 महानामा

एक बार भगवान (बुद्ध) कपिलवस्तु के बरगद उद्यान में शाक्यों के बीच निवास कर रहे थे। तब महानमा नामक शाक्यों भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से कहा, "भंते, जो शिष्य ज्ञान के फल को प्राप्त कर चुका है और शिक्षा को समझ चुका है, वह अक्सर कैसे निवास करता है?" 1256

"महानमा, एक श्रेष्ठ शिष्य [285] जो फल प्राप्त कर चुका है और शिक्षा को समझ चुका है, अक्सर इस प्रकार चिंतन करता है: 1257 (1) "यहाँ, महानमा, एक श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का इस प्रकार स्मरण करता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' जब एक श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन केवल तथागत (बुद्ध) पर आधारित होकर स्थिर होता है। जिस श्रेष्ठ शिष्य का मन स्थिर होता है, वह अर्थ में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म से संबंधित आनंद प्राप्त करता है।" जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। वेदना से सुख प्राप्त करने पर मन समाधि में लीन हो जाता है। इसे वह श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जो असंतुलित जनसंख्या के बीच संतुलन में रहता है, 1256 जो पीड़ित जनसंख्या के बीच निर्मल रहता है। धम्म की धारा में प्रवेश करने वाले व्यक्ति के रूप में, 1259 वह बुद्ध की स्मृति का विकास करता है।

(2) “फिर, महानामा, एक श्रेष्ठ शिष्य, धम्म का स्मरण इस प्रकार करते हैं: ‘भगवान (बुद्ध) द्वारा धम्म की अच्छी व्याख्या की गई है, यह प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, तात्कालिक है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक है, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाना है।’ जब कोई श्रेष्ठ शिष्य धम्म का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन केवल धम्म पर आधारित, एकाग्र होता है। एक श्रेष्ठ शिष्य जिसका मन एकाग्र होता है, उसे अर्थ में प्रेरणा मिलती है, धम्म में प्रेरणा मिलती है, और धम्म से जुड़ा आनंद प्राप्त होता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि (समाधि) में लीन हो जाता है।” इसे वह श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जो असंतुलित आबादी के बीच संतुलन में रहता है, जो पीड़ित आबादी के बीच अप्रभावित रहता है। [286] धम्म की धारा में प्रवेश करने वाले के रूप में, वह धम्म की स्मृति विकसित करता है।

(3) "फिर, महानामा, एक श्रेष्ठ शिष्य, संघ का स्मरण इस प्रकार करते हैं: 'भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का संघ अच्छे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, सीधे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, सच्चे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, उचित मार्ग का अभ्यास कर रहा है; अर्थात्, चार युग्मों के व्यक्ति, आठ प्रकार के व्यक्ति - भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का यह संघ दान के योग्य है, आतिथ्य के योग्य है, भेंट के योग्य है, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।' जब कोई श्रेष्ठ शिष्य संघ का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन संघ पर आधारित होकर एकदम स्थिर होता है। स्थिर मन वाला श्रेष्ठ शिष्य धर्म के अर्थ में प्रेरणा प्राप्त करता है, धर्म में प्रेरणा प्राप्त करता है और धर्म से जुड़ा आनंद प्राप्त करता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख की अनुभूति करने वाले का मन समाधि (समाहित) में लीन हो जाता है। ऐसे शिष्य को कहा जाता है जो असंतुलित लोगों के बीच संतुलित रहता है, जो व्यथित लोगों के बीच निर्मल रहता है। धर्म की धारा में प्रवेश करने के कारण, वह संघ का स्मरण विकसित करता है।

(4) “फिर, महानमा, एक श्रेष्ठ शिष्य अपने सदाचारी आचरण को अटूट, दोषरहित, बेदाग, निर्मल, मुक्तिदायक, बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, अछूता और समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाला याद करता है। जब एक श्रेष्ठ शिष्य अपने सदाचारी आचरण को याद करता है, उस समय उसका मन काम (राग), घृणा या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन सदाचार पर आधारित, बिल्कुल सीधा होता है। जिस श्रेष्ठ शिष्य का मन सीधा होता है, उसे अर्थ में प्रेरणा मिलती है, धम्म में प्रेरणा मिलती है, धम्म से जुड़ा आनंद प्राप्त होता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन आत्म-लीन (सम्मोहन/सम्मोहन) हो जाता है।

[287] इसे वह श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जो असंतुलित जनसंख्या के बीच संतुलन में रहता है, जो अविचलित रहता है। पीड़ित आबादी के बीच। धम्म की धारा में प्रवेश करने वाले व्यक्ति के रूप में, वह सदाचारी आचरण की स्मृति विकसित करता है।

(5) "फिर, महानमा, एक महान शिष्य, अपनी उदारता को इस प्रकार याद करते हैं: 'यह वास्तव में मेरा सौभाग्य और लाभ है कि कंजूसी के कलंक से ग्रस्त आबादी में, मैं अपने घर में कंजूसी के कलंक से मुक्त, उदार, खुले हाथों वाला, त्याग में आनंदित, दान के प्रति समर्पित, देने और साझा करने में आनंदित होकर निवास करता हूँ।' जब कोई श्रेष्ठ शिष्य अपनी उदारता का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/मोह) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन निःसंकोच, निःसंकोच, निःसंकोच होता है। निःसंकोच मन वाले श्रेष्ठ शिष्य को धम्म के अर्थ में प्रेरणा मिलती है, धम्म में प्रेरणा मिलती है, धम्म से जुड़ा आनंद प्राप्त होता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि (समाहित) हो जाता है। ऐसे शिष्य को कहा जाता है जो असंतुलित लोगों के बीच संतुलित रहता है, जो व्यथित लोगों के बीच निर्मल रहता है। धम्म की धारा में प्रवेश करने के कारण, उसमें निःसंकोच का स्मरण विकसित होता है।

(6) "फिर, महानामा, एक श्रेष्ठ शिष्य, देवताओं (देवदूतों) का स्मरण इस प्रकार करते हैं: 'चार महान राजाओं द्वारा शासित देवता हैं, तावतिंसा देवता, यम देवता, तुषिता देवता, सृष्टि में आनंदित होने वाले देवता, दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले देवता, ब्रह्मा के साथ रहने वाले देवता, और इनसे भी उच्चतर देवता। 1260 मुझमें भी उन देवताओं (देवदूतों) के समान ही आस्था है, जिसके कारण जब वे यहाँ से चले गए, तो वहाँ उनका पुनर्जन्म हुआ; मुझमें भी उनके समान ही सद्गुणपूर्ण आचरण... वैसी ही विद्या... वैसी ही उदारता... वैसी ही ज्ञान (दिव्य ज्ञान) है। देवताओं (देवदूतों) में यह शक्ति समाहित थी, जिसके कारण जब वे यहाँ मर गए, तो उनका वहाँ पुनर्जन्म हुआ। जब [288] कोई श्रेष्ठ शिष्य अपने भीतर और उन देवताओं (देवदूतों) में निहित आस्था, सदाचार, ज्ञान, उदारता और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का स्मरण करता है, उस समय उसका मन काम (राग), द्वेष या मोह से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन देवताओं (देवदूतों) पर आधारित होकर बिल्कुल स्थिर होता है। स्थिर मन वाला श्रेष्ठ शिष्य अर्थ में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म से जुड़ा आनंद प्राप्त करता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख की अनुभूति (वेदना) वाले व्यक्ति का मन समाधि में लीन हो जाता है। इसे वह श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जो असंतुलित जनसंख्या के बीच संतुलित रहता है, जो पीड़ित जनसंख्या के बीच निर्मल रहता है। धम्म की धारा में प्रवेश करने के कारण, वह स्मरण विकसित करता है। देवता (देवदूत)।

"महानामा, एक श्रेष्ठ शिष्य जो फल प्राप्त कर चुका है और शिक्षा को समझ चुका है, अक्सर इसी तरह निवास करता है।"

II. सौहार्द (सरनिया)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

11 सौहार्द (1) (सरानिया1)

"भिक्षुओं (मठवासियों), सौहार्द के ये छह सिद्धांत हैं। 1261 वे छह सिद्धांत कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के प्रति खुले तौर पर और निजी तौर पर प्रेम-कृपा (मेट्टा) के शारीरिक कार्यों को बनाए रखता है। यह सौहार्द का सिद्धांत है।

(2) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के प्रति खुले तौर पर और निजी तौर पर प्रेमपूर्ण दयालुता (मेट्टा) के मौखिक कार्य करता है। यह भी सौहार्द का एक सिद्धांत है।"

(3) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के प्रति खुले तौर पर और निजी तौर पर प्रेमपूर्ण दयालुता के मानसिक कार्य करता है। यह भी सौहार्द का एक सिद्धांत है। [289]

(4) "फिर, एक भिक्षु बिना किसी संकोच के धार्मिक रूप से प्राप्त सभी धार्मिक लाभों को, यहाँ तक कि अपने भिक्षापात्र की सामग्री को भी, साझा करता है और ऐसी चीजों का उपयोग अपने गुणी साथी भिक्षुओं के साथ साझा करता है। यह भी सौहार्द का एक सिद्धांत है।"

(5) "फिर, एक भिक्षु खुलेआम और एकांत में अपने साथी भिक्षुओं के साथ अटूट, दोषरहित, बेदाग, निर्मल, मुक्तिदायक, बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, अछूता और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाले सदाचारी आचरण का पालन करते हुए निवास करता है। यह भी सौहार्द का एक सिद्धांत है।"

(6) "फिर, एक भिक्षु खुलेआम और निजी तौर पर अपने साथी भिक्षुओं के साथ एक ऐसे दृष्टिकोण को साझा करते हुए रहता है जो महान और मुक्तिदायक है, जो उस पर अमल करने वाले को दुख के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। यह भी सौहार्द का एक सिद्धांत है।"

"भिक्षुओं, ये सौहार्द के छह सिद्धांत हैं।"

---

22 सौहार्द (2) (सरानिया1)

"भिक्षुओं, सौहार्द के ये छह सिद्धांत हैं जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करते हैं और सामंजस्य, विवादहीनता, सद्भाव और एकता को बढ़ावा देते हैं। वे छह सिद्धांत कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के प्रति खुले तौर पर और निजी तौर पर प्रेम-कृपा (मेट्टा) के शारीरिक कार्य करता है। यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है और सामंजस्य, विवादहीनता, सद्भाव और एकता को बढ़ावा देता है।"

(2) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के प्रति खुले तौर पर और निजी तौर पर प्रेम और करुणा (मेट्टा) के मौखिक कार्य करता है। यह भी सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है। . . ."

(3) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के प्रति खुले तौर पर और निजी तौर पर भी प्रेम और दया का भाव रखता है। यह भी सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है।"

(4) "फिर, एक भिक्षु धार्मिक रूप से प्राप्त सभी धार्मिक लाभों को, यहाँ तक कि अपने भिक्षापात्र की सामग्री को भी, बिना किसी संकोच के साझा करता है और ऐसी वस्तुओं का उपयोग अपने गुणी साथी भिक्षुओं के साथ साझा करता है। [290] यह भी सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है।

(5) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के साथ खुलेआम और एकांत में रहते हुए भी अटूट, दोषरहित, बेदाग, निर्मल, मुक्त, बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, अछूते और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाले सदाचारी आचरण का पालन करता है। यह भी सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है। ..."

(6) "फिर, एक भिक्षु खुलेआम और निजी तौर पर अपने साथी भिक्षुओं के साथ एक ऐसे दृष्टिकोण को साझा करते हुए रहता है जो महान और मुक्तिदायक है, जो उस पर अमल करने वाले को दुख के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। यह भी सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है। ..."

"भिक्षुओं, ये सौहार्द के छह सिद्धांत हैं जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करते हैं और सामंजस्य, विवादहीनता, सद्भाव और एकता की ओर अग्रसर करते हैं।"

---

13 पलायन (निस्सारनिया)

"भिक्षुओं, मुक्ति के ये छह तत्व हैं। 1263 वे छह तत्व कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु इस प्रकार कह सकता है: मैंने प्रेम-कृपा (मेत्ता) द्वारा मन की मुक्ति का विकास और अभ्यास किया है, इसे अपना आधार और साधन बनाया है, इसका पालन किया है, इसे सुदृढ़ किया है और इसे विधिवत ग्रहण किया है, फिर भी द्वेष मेरे मन पर हावी है। उसे कहा जाना चाहिए: 'ऐसा नहीं! ऐसा मत बोलो। भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन मत करो; क्योंकि भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन करना अच्छा नहीं है। भगवान (बुद्ध) निश्चित रूप से इस प्रकार नहीं बोलेंगे। यह असंभव और अकल्पनीय है, मित्र, कि कोई प्रेम-कृपा (मेत्ता) द्वारा मन की मुक्ति का विकास और अभ्यास करे, इसे अपना आधार और साधन बनाए, इसका पालन करे, इसे सुदृढ़ करे और इसे विधिवत ग्रहण करे, फिर भी [291] द्वेष उसके मन पर हावी रहे। ऐसी कोई संभावना नहीं है। क्योंकि यही, मित्र, द्वेष से मुक्ति है, अर्थात् प्रेम-कृपा (मेत्ता) द्वारा मन की मुक्ति।'

(2) "तब, एक भिक्षु इस प्रकार कह सकता है: 'मैंने करुणा द्वारा मन की मुक्ति का विकास और अभ्यास किया है, इसे अपना आधार और साधन बनाया है, इसका पालन किया है, इसे सुदृढ़ किया है और इसे विधिवत ग्रहण किया है, फिर भी हानि का विचार मेरे मन में व्याप्त है।' उसे कहा जाना चाहिए: 'ऐसा नहीं! ऐसा मत कहो। भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन मत करो; क्योंकि भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन करना अच्छा नहीं है। भगवान (बुद्ध) निश्चित रूप से इस प्रकार नहीं बोलेंगे। यह असंभव और अकल्पनीय है, मित्र, कि कोई करुणा द्वारा मन की मुक्ति का विकास और अभ्यास करे, इसे अपना आधार और साधन बनाए, इसका पालन करे, इसे सुदृढ़ करे और इसे विधिवत ग्रहण करे, फिर भी हानि का विचार उसके मन में व्याप्त रहे। ऐसी कोई संभावना नहीं है। क्योंकि यही, मित्र, हानि के विचार से मुक्ति है, अर्थात् करुणा द्वारा मन की मुक्ति।'

(3) "तब, एक भिक्षु इस प्रकार कह सकता है: 'मैंने परोपकारी आनंद द्वारा मन की मुक्ति का विकास और अभ्यास किया है, इसे अपना आधार और साधन बनाया है, इसका पालन किया है, इसे सुदृढ़ किया है और इसे विधिवत ग्रहण किया है, फिर भी असंतोष मेरे मन को ग्रस्त रखता है।' 1264 उसे कहा जाना चाहिए: "ऐसा नहीं! ऐसा मत बोलो। भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन मत करो; क्योंकि भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन करना अच्छा नहीं है। भगवान (बुद्ध) निश्चित रूप से इस प्रकार नहीं बोलेंगे। यह असंभव और अकल्पनीय है, मित्र, कि कोई परोपकारी आनंद द्वारा मन की मुक्ति का विकास और अभ्यास करे, इसे अपना आधार और साधन बनाए, इसका पालन करे, इसे सुदृढ़ करे और इसे विधिवत ग्रहण करे, फिर भी असंतोष उसके मन को ग्रस्त रखे। ऐसी कोई संभावना नहीं है। क्योंकि यही, मित्र, असंतोष से मुक्ति का मार्ग है, अर्थात् परोपकारी आनंद द्वारा मन की मुक्ति।"

(4) "तब, एक भिक्षु इस प्रकार कह सकता है: 'मैंने उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) द्वारा मन की मुक्ति का विकास और पोषण किया है, इसे अपना वाहन और आधार बनाया है, इसे आगे बढ़ाया है, इसे सुदृढ़ किया है, और इसे ठीक से ग्रहण किया है, फिर भी कामवासना (राग) अभी भी मेरे मन को जकड़े हुए है।' उन्हें कहा जाना चाहिए: 'ऐसा नहीं! ऐसा मत बोलो। भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन मत करो; क्योंकि भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन करना अच्छा नहीं है। भगवान (बुद्ध) निश्चित रूप से इस तरह नहीं बोलेंगे। यह असंभव और अकल्पनीय है, मित्र, कि कोई व्यक्ति उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) द्वारा मन की मुक्ति को विकसित और पोषित करे, उसे अपना आधार और साधन बनाए, उसका पालन करे, उसे सुदृढ़ करे और ठीक से उसका अनुसरण करे, [292] फिर भी कामवासना (राग) उसके मन पर हावी रहे। ऐसी कोई संभावना नहीं है। क्योंकि यही, मित्र, कामवासना (राग) से मुक्ति है, अर्थात् उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) द्वारा मन की मुक्ति।' 1265

(5) "तब, एक भिक्षु इस प्रकार कह सकता है: 'मैंने मन की चिह्नरहित मुक्ति का विकास और अभ्यास किया है, 1266 इसे अपना वाहन और आधार बनाया है, इसका पालन किया है, इसे सुदृढ़ किया है और इसे विधिपूर्वक ग्रहण किया है, फिर भी मेरी चेतना चिह्नों के पीछे-पीछे चलती है।' 1267 उसे कहा जाना चाहिए: 'ऐसा नहीं! ऐसा मत बोलो। भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन मत करो; क्योंकि भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन करना अच्छा नहीं है। भगवान (बुद्ध) निश्चित रूप से इस प्रकार नहीं बोलेंगे। यह असंभव और अकल्पनीय है, मित्र, कि कोई मन की चिह्नरहित मुक्ति का विकास और अभ्यास करे, इसे अपना वाहन और आधार बनाए, इसका पालन करे, इसे सुदृढ़ करे और इसे विधिपूर्वक ग्रहण करे, फिर भी उसकी चेतना चिह्नों के पीछे-पीछे चलती रहे। ऐसी कोई संभावना नहीं है। क्योंकि यही, मित्र, सभी चिह्नों से मुक्ति है, अर्थात् मन की चिह्नरहित मुक्ति।'

(6) "तब, एक भिक्षु कह सकता है: 'मैंने 'मैं हूँ' की धारणा का त्याग कर दिया है, और मैं किसी भी चीज़ को 'यह मैं हूँ' नहीं मानता, फिर भी संदेह और भ्रम का तीर मेरे मन को जकड़े रहता है।' उसे कहा जाना चाहिए: 'ऐसा नहीं! ऐसा मत बोलो। भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन मत करो; क्योंकि भगवान (बुद्ध) का गलत वर्णन करना अच्छा नहीं है। भगवान (बुद्ध) निश्चित रूप से इस तरह नहीं बोलेंगे। यह असंभव और अकल्पनीय है, मित्र, कि जब 'मैं हूँ' की धारणा का त्याग कर दिया गया हो, और कोई किसी भी चीज़ को 'यह मैं हूँ' नहीं मानता हो, तब भी संदेह और भ्रम का तीर उसके मन को जकड़े रह सकता है। ऐसी कोई संभावना नहीं है। क्योंकि यही, मित्र, संदेह और भ्रम के तीर से मुक्ति है, अर्थात् 'मैं हूँ' के अहंकार को जड़ से उखाड़ फेंकना।'

"भिक्षुओं, ये पलायन के छह तत्व हैं।"

---

14. एक अच्छी मृत्यु (भद्दका)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र!” उन भिक्षुओं [293] ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"मित्रों, एक भिक्षु अपना समय 3269 इस प्रकार व्यतीत करता है कि उसकी मृत्यु सुखद नहीं होती। 270 और एक भिक्षु अपना समय इस प्रकार कैसे व्यतीत करता है कि उसकी मृत्यु सुखद नहीं होती?"

यहां, (1) एक भिक्षु काम में आनंद लेता है, काम में प्रसन्न होता है, काम में प्रसन्नता के लिए समर्पित है; (2) वह बातचीत में आनंद लेता है, बातचीत में प्रसन्नता के लिए समर्पित है; (3) वह नींद में आनंद लेता है, नींद में प्रसन्नता के लिए समर्पित है; (4) वह संगति में आनंद लेता है, संगति में प्रसन्नता के लिए समर्पित है; (5) वह बंधुआपन में आनंद लेता है, बंधुआपन में प्रसन्नता के लिए समर्पित है; (6) वह इंद्रिय-भगवानत्व में आनंद लेता है, इंद्रिय-भगवानत्व में प्रसन्न होता है, इंद्रिय-भगवानत्व में प्रसन्नता के लिए समर्पित है। जब कोई भिक्षु अपना समय इस प्रकार व्यतीत करता है तो उसकी मृत्यु शुभ नहीं होती। इसे व्यक्तिगत अस्तित्व में प्रसन्न होने वाला भिक्षु कहा जाता है (भाव/कारण)। पुनर्जन्म), 1273 जिसने दुख को पूरी तरह से समाप्त करने के लिए व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का त्याग नहीं किया है।

"मित्रों, एक भिक्षु अपना समय इस प्रकार व्यतीत करता है कि उसकी मृत्यु सुखद हो। और एक भिक्षु अपना समय इस प्रकार कैसे व्यतीत करता है कि उसकी मृत्यु सुखद हो?"

यहां, (1) एक भिक्षु काम में आनंद नहीं लेता, काम में आनंद नहीं लेता, काम में आनंद के लिए समर्पित नहीं होता; (2) वह बात में आनंद नहीं लेता, बात में आनंद नहीं लेता, बात में आनंद के लिए समर्पित नहीं होता; (3) वह नींद में आनंद नहीं लेता, नींद में आनंद नहीं लेता, नींद में आनंद के लिए समर्पित नहीं होता; (4) वह संगति में आनंद नहीं लेता, संगति में आनंद नहीं लेता, संगति में आनंद के लिए समर्पित नहीं होता; (5) वह बंधन में आनंद नहीं लेता, बंधन में आनंद नहीं लेता, बंधन में आनंद के लिए समर्पित नहीं होता; (6) वह इंद्रिय-प्रवंच (प्रपंच संस्कृत) में आनंद नहीं लेता, इंद्रिय-प्रवंच (प्रपंच संस्कृत) में आनंद नहीं लेता, वृहद संतानोत्पत्ति में आनंद के लिए समर्पित नहीं होता। जब एक भिक्षु [294] अपना समय इस प्रकार व्यतीत करता है तो उसे सुखी मृत्यु प्राप्त होती है। इसे निर्वाण में आनंद लेने वाला, व्यक्तिगत कर्मों का त्याग करने वाला भिक्षु कहा जाता है। "अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) दुखों का पूर्णतः अंत करना।"

वह प्राणी [1274] जो इंद्रिय-प्रवंचन (पापंच संस्कृत प्रपंच) में लीन है,

जो इंद्रिय-प्रवंचन (पापंच संस्कृत प्रपंच) से प्रसन्न है,

वह निर्वाण (निब्बान) प्राप्त करने में विफल रहा है,

जो बंधन से पूर्णतम सुरक्षा है।

लेकिन जिसने इंद्रिय-प्रवंच (पापंच संस्कृत: प्रपंच) का त्याग कर दिया है,

जो निपंच (निषप्रपंच) में आनंद पाता है,

उसने निर्वाण प्राप्त कर लिया है,

जो बंधन से पूर्णतम सुरक्षा है।

---

15. पछतावा (अनुतप्पिया)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित किया।

"मित्रों, एक भिक्षु अपना समय इस प्रकार व्यतीत करता है कि वह पश्चाताप के साथ मरता है। और एक भिक्षु अपना समय इस प्रकार कैसे व्यतीत करता है कि वह पश्चाताप के साथ मरता है?"

"यहाँ, (1) एक भिक्षु कर्म में आनंद लेता है, कर्म में प्रसन्न होता है, कर्म में प्रसन्नता के लिए समर्पित है... [जैसा कि 6:14 में है] (6) वह पापंच (सांसारिक छल/प्रपंच रहित) में आनंद लेता है, इंद्रिय-धोखे (प्रपंच रहित पापंच) में आनंद लेता है, इंद्रिय-धोखे में आनंद के लिए समर्पित है। जब एक भिक्षु इस प्रकार अपना समय व्यतीत करता है तो वह पश्चाताप के साथ मरता है। इसे वह भिक्षु कहा जाता है जो व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) में आनंद लेता है, जिसने दुख को पूर्णतः समाप्त करने के लिए व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का त्याग नहीं किया है।"

मित्रों, एक भिक्षु अपना समय इस प्रकार व्यतीत करता है कि उसे कोई पछतावा न हो। और एक भिक्षु अपना समय इस प्रकार कैसे व्यतीत करता है कि उसे कोई पछतावा न हो?

"यहाँ, (1) एक भिक्षु कर्म में आनंद नहीं लेता, कर्म में प्रसन्नता नहीं लेता, कर्म में प्रसन्नता के लिए समर्पित नहीं होता... [295] ... (6) इंद्रिय-प्रवंच (पापंच संस्कृत: प्रपंच) में आनंद नहीं लेता, प्रजनन में आनंद नहीं लेता, इंद्रिय-प्रवंच में प्रसन्नता के लिए समर्पित नहीं होता। जब एक भिक्षु इस प्रकार अपना समय व्यतीत करता है तो वह बिना किसी पछतावे के मर जाता है। इसे निर्वाण में प्रसन्न भिक्षु कहा जाता है, जिसने व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का त्याग कर दुखों का पूर्णतः अंत कर दिया है।"

[ये आयतें 6:14 की आयतों के समान हैं।]

---

16 नकुला पितु

एक बार भगवान (बुद्ध) भेषकला वन के हिरण उद्यान में, सुमसुमारागिरा में भगों के बीच निवास कर रहे थे। उस समय गृहस्थ नकुलपिता बीमार थे, अत्यंत विक्षिप्त थे। तब गृहस्थ नकुलमाता ने उनसे कहा, “हे गृहस्थ, चिंता में लीन होकर मत मरिए। चिंता में लीन होकर मरना कष्टदायी है। भगवान (बुद्ध) ने चिंता में लीन होकर मरने की निंदा की है।”

(1) "हे गृहस्थ, हो सकता है कि आप ऐसा सोचते हों: 'मेरे जाने के बाद नकुलमाता हमारे बच्चों का पालन-पोषण और घर-गृहस्थी नहीं संभाल पाएंगी।' लेकिन आपको इस बात को इस तरह नहीं देखना चाहिए। मैं सूती बुनाई और ऊनी बुनाई में कुशल हूँ। आपके जाने के

बाद मैं बच्चों का पालन-पोषण और घर-गृहस्थी संभाल लूँगी। इसलिए, हे गृहस्थ, चिंता में लीन होकर मत मरो। चिंता में लीन होकर मरना कष्टदायी है। चिंता में लीन होकर मरने की भगवान (बुद्ध) ने निंदा की है।"

(2) "हे गृहस्थ, हो सकता है कि आप ऐसा सोचते हों: 'मेरे जाने के बाद नकुलमाता दूसरा पति चुन लेंगी।' 1277 परन्तु आपको इस विषय को इस प्रकार नहीं देखना चाहिए। हे गृहस्थ, आप जानते हैं और मैं भी जानता हूँ कि पिछले सोलह वर्षों से हम गृहस्थों का ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत कर रहे हैं। 1278 अतः हे गृहस्थ, चिंता से ग्रस्त होकर मत मरिए। चिंता से ग्रस्त होकर मरना कष्टदायी है। चिंता से ग्रस्त होकर मरने की भगवान (बुद्ध) ने निंदा की है।"

(3) "हे गृहस्थ, हो सकता है कि तुम ऐसा सोचो: 'मेरे जाने के बाद नकुलमाता भगवान (बुद्ध) और भिक्षु संघ के दर्शन नहीं करना चाहेंगे।' परन्तु इस विषय को इस प्रकार मत देखो। हे गृहस्थ, तुम्हारे जाने के बाद मैं भगवान (बुद्ध) और भिक्षु संघ के दर्शन के लिए और भी अधिक उत्सुक हो जाऊँगी। अतः हे गृहस्थ, चिंता में लीन होकर मत मरो। चिंता में लीन होकर मरना कष्टदायी है। चिंता में लीन होकर मरने की भगवान (बुद्ध) ने निंदा की है।"

(4) "हे गृहस्थ, हो सकता है कि आप ऐसा सोचते हों: 'नकुलमाता सद्गुणों का पालन नहीं करती।' 1279 परन्तु आपको इस विषय को इस प्रकार नहीं देखना चाहिए। मैं भगवान (बुद्ध) की श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ शिष्याओं में से एक हूँ जो सद्गुणों का पालन करती हैं। यदि किसी को इस बारे में कोई संदेह या अनिश्चितता हो, तो भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, भेषकला वन के हिरण उद्यान में, सुमसुमरगिरा में भगों के बीच निवास कर रहे हैं। वे जाकर उनसे पूछ सकते हैं। अतः, हे गृहस्थ, चिंता से ग्रस्त होकर मत मरो। [297] चिंता से ग्रस्त होकर मरना कष्टदायी है। चिंता से ग्रस्त होकर मरने की भगवान (बुद्ध) ने निंदा की है।"

(5) "हे गृहस्थ, हो सकता है कि आप ऐसा सोचते हों: 'नकुलमाता को मन की आंतरिक समता प्राप्त नहीं होती।' परन्तु आपको इस विषय को इस प्रकार नहीं देखना चाहिए। मैं भगवान (बुद्ध) की श्वेत वस्त्रधारी स्त्री शिष्याओं में से एक हूँ, जिन्हें मन की आंतरिक समता प्राप्त होती है। यदि किसी को इस विषय में कोई संदेह या अनिश्चितता हो, तो भगवान (बुद्ध), जो अरहंत और पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, भेषकला वन के हिरण उद्यान में, सुमसुमारागिरा में भगों के बीच निवास कर रहे हैं। वे जाकर उनसे पूछ सकते हैं। अतः, हे गृहस्थ, चिंता से ग्रस्त होकर मत मरो। चिंता से ग्रस्त होकर मरना कष्टदायी है। चिंता से ग्रस्त होकर मरने की भगवान (बुद्ध) ने निंदा की है।"

(6) "हे गृहस्थ, हो सकता है कि आप ऐसा सोचते हों: 'नकुलमाता ने इस धम्म और अनुशासन में दृढ़ता, दृढ़ संकल्प और विश्वास प्राप्त नहीं किया है; 1280 उसने संशय को पार नहीं किया है, भ्रम से छुटकारा नहीं पाया है, आत्मविश्वास प्राप्त नहीं किया है और गुरु की शिक्षा में दूसरों से स्वतंत्र नहीं हुई है।' लेकिन आपको इस मामले को इस तरह नहीं देखना चाहिए। मैं भगवान (बुद्ध) की श्वेत वस्त्रधारी महिला गृहस्थ शिष्याओं में से एक हूँ, जिन्होंने इस धम्म और अनुशासन में दृढ़ विश्वास और दृढ़ता प्राप्त कर ली है; मैं उन लोगों में से हूँ जिन्होंने संशय को पार कर लिया है, भ्रम से मुक्ति पा ली है, आत्मविश्वास प्राप्त कर लिया है और गुरु के उपदेश में दूसरों से स्वतंत्र हो गई हैं। यदि किसी को इस बारे में कोई संदेह या अनिश्चितता है, तो भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, सुमसुमरगिरा में भेषकला वन के हिरण उद्यान में भगों के बीच निवास कर रहे हैं। वे जाकर उनसे पूछ सकते हैं। इसलिए, गृहस्थ, चिंता से ग्रस्त होकर मत मरो। चिंता से ग्रस्त होकर मरना कष्टदायी है। चिंता से ग्रस्त होकर मरने की भगवान (बुद्ध) ने निंदा की है।

फिर, जब गृहस्थ नकुलपिता [298] को गृहिणी नकुलमाता द्वारा इस प्रकार समझाया जा रहा था, तो उनकी बीमारी वहीं ठीक हो गई। नकुलपिता उस बीमारी से ठीक हो गए, और इस तरह उनकी बीमारी दूर हो गई।

फिर, ठीक होने के कुछ ही समय बाद, गृहस्थ नकुलपिता, एक लाठी के सहारे, भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"हे गृहस्थ, यह वास्तव में आपका सौभाग्य और लाभ है कि गृहिणी नकुलमाता आप पर दया करती हैं, आपका भला चाहती हैं और आपको उपदेश और शिक्षा देती हैं। नकुलमाता मेरी श्वेत वस्त्रधारी शिष्याओं में से एक हैं जो सदाचारी आचरण का पालन करती हैं। वह मेरी श्वेत वस्त्रधारी शिष्याओं में से एक हैं जिन्होंने मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त की है। वह मेरी श्वेत वस्त्रधारी शिष्याओं में से एक हैं जिन्होंने इस धम्म और अनुशासन में दृढ़ता, दृढ़ संकल्प और विश्वास प्राप्त किया है, जिन्होंने संशय को पार किया है, भ्रम से

मुक्ति पाई है, आत्मविश्वास प्राप्त किया है और गुरु के उपदेश में दूसरों से स्वतंत्र हो गई हैं। हे गृहस्थ, यह वास्तव में आपका सौभाग्य और लाभ है कि गृहिणी नकुलमाता आप पर दया करती हैं, आपका भला चाहती हैं और आपको उपदेश और शिक्षा देती हैं।"

---

17 लाभकारी (कुसला) (सोप्पा)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। फिर, शाम को, भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और सभा भवन में गए, जहाँ वे तैयार आसन पर बैठ गए। शाम को, पूज्य सारिपुत्त भी एकांतवास से बाहर आए और सभा भवन में गए, जहाँ [299] उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। पूज्य महामोग्गलाना... पूज्य महाकस्सपा... पूज्य महाकच्चयन... पूज्य महाकोत्थिता... पूज्य महाचुंडा... पूज्य महाकप्पिना... पूज्य अनुरुद्ध... पूज्य रेवता... आदरणीय आनंद भी एकांतवास से बाहर आए और सभा भवन में गए, जहाँ उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए।

फिर, लगभग पूरी रात बैठे रहने के बाद, भगवान (बुद्ध) अपने आसन से उठे और अपने निवास स्थान में प्रवेश किया। भगवान (बुद्ध) के जाने के तुरंत बाद, वे पूजनीय भिक्षु भी अपने आसनों से उठे और अपने-अपने निवास स्थानों पर चले गए। लेकिन वे भिक्षु जो नवदीक्षित थे, जिन्होंने अभी-अभी संन्यास लिया था और हाल ही में इस धम्म (मार्ग) और अनुशासन में आए थे, सूर्योदय तक खर्राटे लेते हुए सोते रहे। भगवान (बुद्ध) ने अपनी दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध है और मानवीय दृष्टि से परे है, उन भिक्षुओं को सूर्योदय तक खर्राटे लेते हुए सोते हुए देखा। फिर वे सभा भवन में गए, अपने लिए तैयार किए गए आसन पर बैठ गए और उन भिक्षुओं को संबोधित किया:

"भिक्षुओं, सारिपुत्त कहाँ हैं? महामोग्गलाना कहाँ हैं? महाकस्सपा कहाँ हैं? महाकच्चयन कहाँ हैं? महाकोत्थिता कहाँ हैं? महाचुंडा कहाँ हैं? महाकप्पिना कहाँ हैं? अनुराधा कहाँ हैं? रेवता कहाँ हैं? आनंद कहाँ हैं? वे वरिष्ठ शिष्य कहाँ चले गए?"

"भंते, भगवान (बुद्ध) के जाने के कुछ ही समय बाद, वे पूजनीय लोग भी अपने-अपने स्थानों से उठकर अपने-अपने निवासों की ओर चले गए।"

"भिक्षुओं, जब वरिष्ठ भिक्षु चले गए, तो तुम नवदीक्षित भिक्षु सूर्योदय तक खर्राटे लेते हुए क्यों सोते रहे?"

(1) "भिक्षुओं, आपका क्या विचार है? क्या आपने कभी देखा या सुना है कि कोई प्रधान क्षत्रिय राजा, अपने पूरे जीवन शासन करते हुए, देश को प्रसन्न और संतुष्ट करता है [300] यदि वह जितना चाहे उतना समय विश्राम, आलस्य और नींद के सुख में व्यतीत करता है?" 1281

"नहीं, भंते।"

"अच्छा, भिक्षुओं। मैंने भी ऐसी कोई चीज न तो कभी देखी है और न ही सुनी है।"

(2) "भिक्षुओं, आपका क्या विचार है? क्या आपने कभी देखा या सुना है कि कोई राजाधिकारी... (3) ... कोई प्रिय पुत्र... (4) ... कोई सेनापति... (5) ... कोई ग्राम प्रधान... (6) ... कोई संघ प्रमुख, जीवन भर संघ का नेतृत्व करते हुए, संघ को प्रसन्न और संतुष्ट करता है यदि वह जितना चाहे उतना समय विश्राम, आलस्य और नींद के सुख में व्यतीत करता है?"

"नहीं, भंते।"

"अच्छा है भिक्षुओं। मैंने भी ऐसी कोई चीज न तो कभी देखी है और न ही सुनी है।"

भिक्षुओं, आपका क्या विचार है? मान लीजिए कोई तपस्वी या ब्राह्मण है जो जितना चाहे उतना समय विश्राम, आलस्य और नींद के सुख में व्यतीत करता है; जो अपनी इंद्रियों को वश में नहीं रखता, जो अत्यधिक भोजन करता है और जागृत रहने का प्रयास नहीं करता; जिसमें लाभकारी गुणों (धम्म) का ज्ञान (विपश्यना) नहीं है; जो रात्रि के आरंभिक और पश्चात चरणों में ज्ञान प्राप्ति के साधनों को

विकसित करने के प्रयास में लीन नहीं रहता। क्या आपने कभी ऐसा व्यक्ति देखा या सुना है जिसने अपने सभी दोषों का नाश करके, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की निर्मल मुक्ति, दैवीय ज्ञान द्वारा मुक्ति को प्राप्त कर लिया हो और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता हो?

"नहीं, भंते।"

"अच्छा, भिक्षुओं। मैंने भी ऐसी कोई चीज़ न तो कभी देखी है और न ही [301] सुनी है।

अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करेंगे, भोजन में संयम बरतेंगे और जागृति पर ध्यान केंद्रित करेंगे; हम लाभकारी गुणों (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) प्राप्त करेंगे और रात्रि के पूर्वार्ध और पश्चात् चरणों में ज्ञानोदय के सहायक तत्वों को विकसित करने के प्रयास में एकाग्र रहेंगे।' 1582 इस प्रकार, भिक्षुओं, आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

---

18 मछली विक्रेता (मच्छबंधा)

एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक विशाल संघ के साथ कोसल पर्वतमाला में भ्रमण कर रहे थे। तभी राजमार्ग पर चलते हुए एक स्थान पर उन्होंने एक मछली विक्रेता को मछली मारकर बेचते हुए देखा। वे राजमार्ग छोड़कर एक वृक्ष के नीचे बने आसन पर बैठ गए और भिक्षुओं से कहा, "भिक्षुओं, क्या आप उस मछली विक्रेता को मछली मारकर बेचते हुए देख रहे हैं?"

"हां, भंते:"

(1) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? क्या आपने कभी देखा या सुना है कि कोई मछली विक्रेता, मछली मारकर [302] और बेचकर, इस काम और आजीविका के माध्यम से हाथी या घोड़े, रथ या वाहन से यात्रा कर सकता है, या धन का आनंद ले सकता है या धन का बड़ा संचय कर सकता है?"

नहीं, भंते।

"अच्छा, भिक्षुओं। मैंने भी ऐसी कोई बात न तो देखी है और न ही सुनी है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह वध के लिए लाई जा रही बंदी मछलियों को क्रूरता से देखता है। इसलिए वह हाथी या घोड़े पर, रथ या वाहन पर यात्रा नहीं करता, न ही धन का आनंद लेता है और न ही धन का बड़ा संचय करता है।"

(2) "भिक्षुओं, आपका क्या विचार है? क्या आपने कभी देखा या सुना है कि कोई पशु कसाई, गायों को मारकर बेचता है... [303] (3) ... भेड़ों का कसाई... (4) ... सूअरों का कसाई... (5) ... मुर्गियों का कसाई... (6) ... हिरणों का कसाई, हिरणों को मारकर बेचता है, और उस काम और आजीविका के माध्यम से हाथी या घोड़े, रथ या वाहन से यात्रा करता है, या धन का आनंद लेता है या धन का बड़ा संचय करता है?"

"नहीं, भंते।"

"अच्छा, भिक्षुओं। मैंने भी ऐसी कोई बात न तो देखी है और न ही सुनी है। इसका क्या कारण है? क्योंकि वह वध के लिए लाए जा रहे बंदी हिरणों को क्रूरता से देखता है, इसलिए वह हाथी या घोड़े पर, रथ या वाहन पर यात्रा नहीं करता, न ही धन का आनंद लेता है और न ही धन का बड़ा संचय करता है।"

भिक्षुओं, जो व्यक्ति वध के लिए लाए जा रहे बंदी पशुओं को क्रूरतापूर्वक देखता है, वह न तो हाथी, न घोड़े, न रथ, न वाहन पर यात्रा करेगा, न ही धन-संपत्ति का आनंद लेगा और न ही धन का संचय करेगा। तो फिर उस व्यक्ति के बारे में क्या कहा जा सकता है जो वध

के लिए लाए जा रहे किसी दोषी मनुष्य को क्रूरतापूर्वक देखता है? इससे उसे लंबे समय तक हानि और कष्ट भोगना पड़ेगा। मृत्यु के बाद शरीर के क्षत-विक्षत होने पर वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेगा।

19 मृत्यु पर ध्यान (1) (मरणस्सि1 संस्कृत: मरण स्मृति)

एक बार भगवान (बुद्ध) नादिका में ईंटों से बने हॉल में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: [304] "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं, मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित और पोषित होने पर अत्यंत फलदायी और लाभकारी होता है, जो अमरता को लक्ष्य बनाकर मृत्युहीनता की ओर ले जाता है। 1283. परन्तु क्या आप, भिक्षुओं, मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करते हैं?"

(1) जब यह कहा गया, तो एक भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, मैं मृत्यु की सती/ध्यान विकसित करता/करती हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"हे भंते, मैं इस प्रकार सोचता हूँ: 'काश मैं केवल एक रात और एक दिन जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं पर ध्यान दे सकूँ। 1284 तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' 1285 इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सजगता विकसित करता हूँ।"

(2) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"हे भंते, मैं यहाँ सोचता हूँ: 'काश मैं एक दिन के लिए ही जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं का पालन कर सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता हूँ।"

(3) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"यहाँ, भंते, मैं सोचता हूँ: 'काश मैं केवल एक भिक्षा भोजन ग्रहण करने में लगने वाले समय तक ही जीवित रहूँ, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं का पालन कर सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

(4) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"यहाँ, भंते, मैं सोचता हूँ: 'काश मैं केवल चार-पाँच कौर भोजन चबाने और निगलने में लगने वाले समय तक ही जीवित रहूँ, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं पर ध्यान दे सकूँ। [305] तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

(5) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"हे भंते, मैं यहाँ सोचता हूँ: 'काश मैं केवल उतना ही समय जी सकूँ जितना एक निवाला भोजन चबाने और निगलने में लगता है, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ हासिल कर सकता हूँ!' इसी तरह मैं मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता हूँ।"

(6) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"हे भंते, मैं यहाँ सोचता हूँ: 'काश मैं केवल साँस लेने के बाद साँस छोड़ने या साँस छोड़ने के बाद साँस लेने में लगने वाले समय तक ही जीवित रहूँ, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता हूँ।"

जब यह कहा गया, तो भगवान (बुद्ध) ने उन भिक्षुओं से कहा:

भिक्षुओं, (1) वह भिक्षु जो मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता है, इस प्रकार: 'मैं केवल एक रात और एक दिन जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों का पालन कर सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकूँगा!'; और (2) वह जो मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता है, इस प्रकार: 'मैं केवल एक दिन जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों का पालन कर सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकूँगा!'; और (3) वह जो मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता है, इस प्रकार: 'मैं केवल उतने ही समय तक जीवित रहूँ जितना समय एक भिक्षा भोजन करने में लगता है ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों का पालन कर सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकूँगा!'; और (4) वह जो मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता है, इस प्रकार: 'मैं केवल उतने ही समय तक जीवित रहूँ जितना समय चार या पाँच निवाले भोजन चबाने और निगलने में लगता है ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों का पालन कर सकूँ।' भगवान (बुद्ध) की शिक्षा। तब मैं बहुत कुछ हासिल कर सकता हूँ!': [306] इन्हें आलसी भिक्षु कहा जाता है। वे दोषों के नाश के लिए मृत्यु के प्रति आलस्यपूर्वक ध्यान (सती) विकसित करते हैं।

लेकिन (5) वह भिक्षु जो मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता है, इस प्रकार: 'मैं केवल उतने ही समय तक जीवित रहूँ जितना एक निवाला भोजन चबाने और निगलने में लगता है, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!'; और (6) वह जो मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता है, इस प्रकार: 'मैं केवल उतने ही समय तक जीवित रहूँ जितना साँस लेने के बाद साँस छोड़ने में या साँस छोड़ने के बाद साँस लेने में लगता है, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!': इन्हें सजग रहने वाले भिक्षु कहा जाता है। वे दोषों के नाश के लिए मृत्यु के प्रति सती ध्यान को गंभीरता से विकसित करते हैं।

अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम सजग रहेंगे। हम दोषों के नाश के लिए मृत्यु के प्रति गहन ध्यान (सती) विकसित करेंगे।' इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।'

---

20 मृत्यु पर ध्यान (2) (मरनास्सि2 संस्कृत मरण स्मृति)

एक बार भगवान (बुद्ध) नादिका में ईंटों से बने एक भवन में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया:

भिक्षुओं, मृत्यु के प्रति सती ध्यान (ध्यान/सती साधना) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो यह महान फलदायी और लाभकारी होती है, जो अंततः अमरता (अमरत/अमृत) की प्राप्ति की ओर ले जाती है। और यह कैसे संभव है?

"यहाँ, भिक्षुओं, जब दिन ढल जाता है और रात आ जाती है, 1267 एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अनेक कारणों से मर सकता हूँ, (1) मुझे साँप काट सकता है, या बिच्छू या कनखजूरा डंक मार सकता है, और मैं मर सकता हूँ; यह मेरे लिए एक बाधा होगी। (2) मैं

ठोकर खाकर गिर सकता हूँ, या (3) मेरा भोजन मुझे रास नहीं आ सकता है, या (4) मेरा पित्त [307] उत्तेजित हो सकता है, या (5) मेरा कफ उत्तेजित हो सकता है, या (6) मेरे भीतर तेज हवाएँ उत्तेजित हो सकती हैं, और मैं मर सकता हूँ; यह मेरे लिए एक बाधा होगी।'

"इस भिक्षु को इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'क्या मुझमें कोई ऐसे अकुशल गुण हैं जिनका मैंने त्याग नहीं किया है, जो आज रात मेरी मृत्यु होने पर मेरे लिए बाधा बन सकते हैं?' यदि आत्मचिंतन करने पर भिक्षु को यह ज्ञान हो: 'मुझमें ऐसे अकुशल गुण हैं जिनका मैंने त्याग नहीं किया है, जो आज रात मेरी मृत्यु होने पर मेरे लिए बाधा बन सकते हैं।'" तब भिक्षु को उन बुरे और हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयोग करना चाहिए। जिस प्रकार किसी के वस्त्र या सिर में आग लग जाए तो वह अपने वस्त्र या सिर की आग बुझाने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयोग करता है, उसी प्रकार भिक्षु को उन बुरे और हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयोग करना चाहिए।

लेकिन यदि समीक्षा करने पर भिक्षु को यह ज्ञान हो कि 'मुझमें कोई भी अकुशल गुण नहीं है जिसका मैंने त्याग नहीं किया है, जो आज रात मेरी मृत्यु होने पर मेरे लिए बाधा बन सकता है,' तो उसे उसी पीति और आनंद में रहना चाहिए और दिन-रात लाभकारी गुणों का अभ्यास करना चाहिए।

लेकिन जब रात ढल जाती है और दिन निकल आता है, तो भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अनेक कारणों से मर सकता हूँ। कोई साँप मुझे काट सकता है... या तेज़ हवाएँ मेरे शरीर में हलचल मचा सकती हैं, और मैं मर सकता हूँ; यह मेरे लिए एक बाधा होगी।'

"इस भिक्षु को इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: [308] 'क्या मुझमें कोई बुरे हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) हैं जिनका मैंने त्याग नहीं किया है और जो आज मेरी मृत्यु होने पर मेरे लिए बाधा बन सकते हैं?' यदि आत्मनिरीक्षण करने पर भिक्षु को यह ज्ञान हो कि 'मुझमें कुछ अकुशल गुण हैं जिन्हें मैंने अभी तक नहीं त्यागा है, और यदि आज मेरी मृत्यु हो जाए तो वे मेरे लिए बाधा बन सकते हैं', तो उसे उन अकुशल गुणों (धम्म) को त्यागने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, सती ध्यान और पूर्ण विवेक का प्रयोग करना चाहिए। जिस प्रकार किसी व्यक्ति के वस्त्र या सिर में आग लग जाए तो वह अपने वस्त्र या सिर की आग बुझाने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, सती ध्यान और पूर्ण विवेक का प्रयोग करता है, उसी प्रकार भिक्षु को उन अकुशल गुणों (धम्म) को त्यागने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, सती ध्यान और पूर्ण विवेक का प्रयोग करना चाहिए।

लेकिन यदि समीक्षा करने पर भिक्षु को यह पता चलता है कि 'मुझमें कोई भी अकुशल गुण नहीं है जिसे मैंने अभी तक त्यागा नहीं है, जो आज मेरी मृत्यु होने पर मेरे लिए बाधा बन सकता है', तो उसे उसी आनंद और प्रसन्नता में रहना चाहिए और दिन-रात लाभकारी गुणों का अभ्यास करना चाहिए।

"भिक्षुओं, जब मृत्यु के प्रति सती ध्यान को इस प्रकार विकसित और पोषित किया जाता है, तभी यह महान फलदायी और लाभदायक होता है, जो अमरता (अमृत) की प्राप्ति की ओर ले जाता है, और अमरता ही इसकी अंतिम परिणति होती है।"

III. अतुलनीय (अनुत्तरिया संस्कृत: अनुत्तरा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

21 समाका

एक बार भगवान (बुद्ध) कमल सरोवर के पास समागमक में शाक्यों के बीच निवास कर रहे थे। तब, जब रात हो गई, तो एक अत्यंत सुंदर देवदूत, जिसने पूरे कमल सरोवर को प्रकाशित कर दिया, भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़ा हुआ और भगवान (बुद्ध) से कहा...

"भंते, भिक्षु के पतन का कारण बनने वाले ये तीन गुण हैं। वे तीन क्या हैं? (1) काम में आनंद, (2) बातचीत में आनंद और (3) नींद में आनंद। ये तीन गुण भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं।"

यही उस देवता (देवदूत) ने कहा। गुरुजी सहमत हो गए। तब उस देवता (देवदूत) ने यह सोचकर कि "गुरुजी मुझसे सहमत हैं," भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।

फिर, जब रात बीत गई, तो भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "पिछली रात, भिक्षुओं, जब रात आगे बढ़ रही थी, तो एक अत्यंत सुंदर देवता (देवदूत) मेरे पास आए, उन्होंने मुझे प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हो गए और मुझसे कहा: भंते, ये तीन गुण हैं जो भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं। वे तीन क्या हैं? काम में आनंद, बात में आनंद और नींद में आनंद। ये तीन गुण भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं।" उस देवता (देवदूत) ने यही कहा। यह कहकर, उस देवता (देवदूत) ने मुझे प्रणाम किया, मेरी ओर दाहिनी ओर रखते हुए मेरी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।

"हे भिक्षुओं, यह उन लोगों के लिए दुर्भाग्य और हानि है जिनके बारे में देवता (देवदूत) भी जानते हैं कि वे लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में क्षीण हो रहे हैं। 1288

"भिक्षुओं, मैं आपको पतन की ओर ले जाने वाले तीन अन्य गुणों के बारे में सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और उपस्थित रहो। मैं बोलूंगा।"

"जी हां, भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया।

भगवान (बुद्ध) ने यह कहा: [310] "और हे भिक्षुओं, वे तीन [अन्य] गुण क्या हैं जो पतन की ओर ले जाते हैं? (4) संगति में आनंद लेना, (5) सुधारना कठिन होना, और (6) बुरी मित्रता। ये तीन [अन्य] गुण हैं जो पतन की ओर ले जाते हैं।"

भिक्षुओं, अतीत में वे सभी जो लाभकारी (कुशल) गुणों में पतित हुए, वे इन्हीं छह गुणों के कारण पतित हुए। भविष्य में वे सभी जो लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में पतित होंगे, वे भी इन्हीं छह गुणों के कारण पतित होंगे। और वर्तमान में वे सभी जो लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में पतित हो रहे हैं, वे भी इन्हीं छह गुणों के कारण पतित हो रहे हैं।

---

22 अपरिहानिया (गैर-पतन)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें वे छह गुण सिखाऊंगा जो पतन से मुक्ति दिलाते हैं। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, वे कौन से छह गुण हैं जो पतन से मुक्ति दिलाते हैं? काम में आनंद न लेना, बातों में आनंद न लेना, नींद में आनंद न लेना, संगति में आनंद न लेना, आसानी से गलतियों को स्वीकार करना और अच्छी मित्रता। यही छह गुण पतन से मुक्ति दिलाते हैं।

भिक्षुओं, अतीत में वे सभी भिक्षु जो लाभकारी (कुशल) गुणों में पतित नहीं हुए, वे इन छह गुणों के कारण पतित नहीं हुए। भविष्य में वे सभी भिक्षु जो लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में पतित नहीं होंगे, वे इन छह गुणों के कारण पतित नहीं होंगे। और वर्तमान में वे सभी भिक्षु जो लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में पतित नहीं हो रहे हैं, वे इन छह गुणों के कारण पतित नहीं हो रहे हैं।

---

23 खतरा (भया)

(1) "भिक्षुओं (मठवासियों) के लिए 'खतरा' कामुक सुखों का पदनाम है।

(2) 'पीड़ा' कामुक सुखों का एक पदनाम है। (3) 'रोग' कामुक सुखों का एक पदनाम है। (4) 'उभार' [311] कामुक सुखों का एक पदनाम है। (5) 'बांधना' कामुक सुखों का एक पदनाम है। (6) 'दलदल' कामुक सुखों का एक पदनाम है।

और हे भिक्षुओं, 'खतरा' इंद्रिय सुखों का नाम क्यों है? जो व्यक्ति इंद्रिय-संबंधी रागों से उत्तेजित होता है, वह न तो वर्तमान जीवन के खतरों से मुक्त होता है और न ही भविष्य के जन्मों के खतरों से; इसलिए 'खतरा' इंद्रिय सुखों का नाम है।

और 'पीड़ा', 'रोग', 'फोड़ा', 'बंधन', 'दलदल' जैसी शब्द इंद्रिय सुखों के लिए क्यों इस्तेमाल किए जाते हैं? जो व्यक्ति इंद्रिय-राग से उत्तेजित होता है, इच्छा और वासना से बंधा होता है, वह वर्तमान जीवन के दलदलों से या भविष्य के जीवन के दलदलों से मुक्त नहीं हो पाता; इसलिए 'दलदल' इंद्रिय सुखों का प्रतीक है।

खतरा, पीड़ा और बीमारी,

फोड़ा, बंधन और दलदल:

ये उन इंद्रिय सुखों का वर्णन करते हैं

जिनसे सांसारिक व्यक्ति जुड़ा रहता है।

आसक्ति के खतरे को देखकर,

जो जन्म और मृत्यु का कारण है, और

अनासक्ति से

जन्म और मृत्यु के अंत से मुक्त होकर,

वे सुखी लोग सुरक्षा प्राप्त कर लेते हैं;

वे इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं।

उन्होंने सभी शत्रुताओं और खतरों पर विजय प्राप्त कर ली है और

सभी प्रकार के कष्टों से मुक्ति पा ली है।

---

24 हिमालय (हिमावंता)

"भिक्षुओं, छह गुणों से युक्त एक भिक्षु हिमालय, पर्वतों के राजा को भी विभाजक कर सकता है, 1290 तो घोर अज्ञान से कितना अधिक शक्तिशाली होगा! वे छह गुण क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु (1) समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) प्राप्त करने में कुशल है; (2) एकाग्रता की अवधि में कुशल है; (3) समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) से बाहर निकलने में कुशल है; (4) समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) के लिए उपयुक्तता में कुशल है; (5) समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) के क्षेत्र में कुशल है; और (6) समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) के संबंध में संकल्प में कुशल है। 1291 [312] इन छह गुणों से युक्त एक भिक्षु हिमालय, पर्वतों के राजा को भी विभाजक कर सकता है, तो घोर अज्ञान से कितना अधिक शक्तिशाली होगा!"

---

25. स्मरण (अनुसत्तित्थना)

"भिक्षुओं, ध्यान के ये छह विषय हैं। 1292 वे छह विषय कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, भिक्षुओं, एक श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का इस प्रकार स्मरण करता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, मनुष्यों को वश में करने में अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' जब एक श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन बिल्कुल शांत होता है। वह लोभ से विमुख हो जाता है, उससे मुक्त हो जाता है, उससे बाहर निकल आता है। 'लोभ, भिक्षुओं, इंद्रिय सुख के पाँच विषयों का नाम है। इसे आधार बनाकर, 1293 कुछ प्राणी यहाँ इस प्रकार शुद्ध हो जाते हैं।

(2) "फिर, एक श्रेष्ठ शिष्य धम्म का स्मरण इस प्रकार करता है: 'भगवान (बुद्ध) द्वारा धम्म की अच्छी व्याख्या की गई है, यह प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान है, तात्कालिक है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक है, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाना है।' जब एक श्रेष्ठ शिष्य धम्म का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन बिल्कुल शांत होता है। वह लोभ से मुक्त हो चुका होता है... यहाँ कुछ प्राणी इसी प्रकार शुद्ध हो जाते हैं।"

(3) "फिर, एक श्रेष्ठ शिष्य संघ का स्मरण इस प्रकार करता है: 'भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का संघ अच्छे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, सीधे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, सच्चे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, उचित मार्ग का अभ्यास कर रहा है; अर्थात्, चार युग्मों के व्यक्ति, आठ प्रकार के व्यक्ति - भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का यह संघ दान के योग्य है, आतिथ्य के योग्य है, भेंट के योग्य है, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।' जब [313] एक श्रेष्ठ शिष्य संघ का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष), या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन बिल्कुल सीधा होता है। वह लोभ से मुक्त हो चुका है... यहाँ कुछ प्राणी इसी प्रकार शुद्ध होते हैं।"

(4) "फिर, एक श्रेष्ठ शिष्य अपने सदाचारी आचरण को अटूट, दोषरहित, निर्मल, बेदाग, मुक्तिदायक, बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, अछूता और समाधि (आत्म-मग्नता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाला याद करता है। जब एक श्रेष्ठ शिष्य अपने सदाचारी आचरण को याद करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन बिल्कुल शांत होता है। वह लोभ से मुक्त हो चुका होता है। ... यहाँ कुछ प्राणी इसी प्रकार शुद्ध हो जाते हैं।"

(5) "फिर एक महान शिष्य अपनी उदारता को इस प्रकार याद करते हुए कहता है: 'यह सचमुच मेरा सौभाग्य और लाभ है कि कंजूसी के कलंक से ग्रस्त जनसंख्या में, मैं कंजूसी के कलंक से मुक्त, उदार, खुले हाथों वाला, त्याग में आनंदित, दान के प्रति समर्पित, देने और बांटने में आनंदित मन के साथ निवास करता हूँ।' जब एक महान शिष्य अपनी उदारता को याद करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन बिल्कुल शांत होता है। वह लोभ से मुक्त हो चुका होता है... यहाँ कुछ प्राणी इसी प्रकार शुद्ध हो जाते हैं।"

(6) "फिर एक श्रेष्ठ शिष्य देवताओं (देवदूतों) का स्मरण इस प्रकार करता है: 'चार महान राजाओं द्वारा शासित देवता हैं, तावतिंसा देवता, यम देवता, तुषिता देवता, सृष्टि में आनंदित होने वाले देवता, दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले देवता, ब्रह्मा के

साथ रहने वाले देवता, और इनसे भी उच्चतर देवता हैं। मुझमें भी उन देवताओं के समान ही आस्था है, जिसके कारण जब वे यहाँ से चले गए, तो वहाँ उनका पुनर्जन्म हुआ; मुझमें भी उन देवताओं के समान ही सद्‌गुणी आचरण... ज्ञान... उदारता... दिव्य ज्ञान है, क्योंकि जब वे यहाँ पर परलोक त्याग कर वहाँ पुनर्जन्म लेते हैं, तब कोई श्रेष्ठ शिष्य अपने और उन देवताओं (देवदूतों) में विद्यमान आस्था, सदाचार, ज्ञान, उदारता और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का स्मरण करता है, तब उसका मन कामवासना (राग), द्वेष या मोह से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन एकदम शांत होता है। वह लोभ से मुक्त हो जाता है, उससे छुटकारा पा लेता है, उससे बाहर निकल आता है। 'भिक्षुओं, लोभ पाँच इंद्रिय सुखों का नाम है। इसे आधार बनाकर भी, यहाँ कुछ प्राणी इस प्रकार शुद्ध हो जाते हैं।'

"भिक्षुओं, ये स्मरण के छह विषय हैं।"

---

26 महाकच्चना

वहाँ पूज्य महाकच्चना ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

"मित्र!" उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया।

आदरणीय महाकच्चना ने यह कहा:

"यह आश्चर्यजनक और अद्‌भुत है, मित्रों, कि भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, जो जानते और देखते हैं, उन्होंने प्राणियों के शुद्धिकरण, दुःख और विलाप पर विजय, पीड़ा और निराशा के निवारण, विधि की प्राप्ति, निर्वाण की प्राप्ति, अर्थात् स्मरण के छह विषयों के लिए कारावास के बीच में ही मार्ग खोज निकाला है। 1294 वे छह विषय क्या हैं?"

(1) "यहाँ, मित्रों, एक श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का इस प्रकार स्मरण करता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं... प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध)।' जब कोई श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) [315] या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन बिल्कुल शांत होता है। वह लोभ से मुक्त हो गया है, उससे बाहर निकल आया है। 'मित्रों, लोभ पाँच इंद्रिय सुखों का नाम है।' यह श्रेष्ठ शिष्य पूर्णतः आकाश के समान मन से निवास करता है: विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता और दुर्भावना से रहित। इसे आधार बनाकर, यहाँ कुछ प्राणी इस प्रकार शुद्ध हो जाते हैं। 1293

(2) "एक श्रेष्ठ शिष्य धम्म का स्मरण इस प्रकार करता है: 'भगवान (बुद्ध) द्वारा धम्म की अच्छी व्याख्या की गई है... जिसे बुद्धिमानों को स्वयं अनुभव करना चाहिए। जब कोई श्रेष्ठ शिष्य धम्म का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), घृणा या मोह से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन बिल्कुल शांत होता है। वह लोभ से मुक्त हो जाता है; कुछ प्राणी यहाँ इसी प्रकार शुद्ध हो जाते हैं।"

(3) "फिर, एक श्रेष्ठ शिष्य संघ का स्मरण इस प्रकार करता है: 'भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का सफ़ीघा उत्तम मार्ग का अभ्यास कर रहा है... संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र।' जब एक श्रेष्ठ शिष्य संघ का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन बिल्कुल सीधा होता है। वह लोभ से मुक्त हो चुका है... [316] ... कुछ प्राणी यहाँ इस प्रकार शुद्ध हो जाते हैं।"

(4) "फिर, एक श्रेष्ठ शिष्य अपने सदाचारी आचरण को याद करता है जो अटूट, दोषरहित, बेदाग, निर्मल, मुक्तिदायक, बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, अछूता और समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाता है। जब एक श्रेष्ठ शिष्य अपने सदाचारी आचरण को याद करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन बिल्कुल शांत होता है। वह लोभ से मुक्त हो चुका होता है... कुछ प्राणी इस प्रकार शुद्ध हो जाते हैं।"

(5) "फिर, एक नेक शिष्य अपनी उदारता को इस प्रकार याद करता है: 'यह सचमुच मेरा सौभाग्य है... कि कंजूसी के कलंक से ग्रस्त जनसंख्या में, मैं कंजूसी के कलंक से मुक्त मन से निवास करता हूँ... दान देने और बाँटने में आनंदित होता हूँ।' जब एक नेक शिष्य अपनी उदारता को याद करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन बिल्कुल शांत होता है। वह लोभ से मुक्त हो चुका होता है... इस प्रकार प्राणी यहाँ शुद्ध हो जाते हैं।"

(6) "फिर, एक महान शिष्य देवताओं (देवदूतों) को इस प्रकार याद करता है: 'चार महान राजाओं द्वारा शासित देव (देवदूत/देवता) हैं... [31 7] ... मुझमें भी ऐसा ही विश्वास... ऐसा ही सदाचारी व्यवहार... ऐसा ही ज्ञान... ऐसी ही उदारता... ऐसा ही ज्ञान (दिव्य ज्ञान) है जैसा उन देवताओं (देवदूतों) के पास था, जिसके कारण जब वे यहाँ से चले गए, तो वहाँ उनका पुनर्जन्म हुआ।' जब कोई श्रेष्ठ शिष्य अपने और उन देवताओं में विद्यमान आस्था, सदाचार, ज्ञान, उदारता और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का स्मरण करता है, तब उसका मन कामवासना (राग), द्वेष या मोह से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन एकदम शांत होता है। वह लोभ से मुक्त हो जाता है, उससे छुटकारा पा लेता है, उससे बाहर निकल आता है। हे मित्रों, लोभ पाँच प्रकार के इंद्रिय सुखों का नाम है। यह श्रेष्ठ शिष्य ऐसे मन से निवास करता है जो पूर्णतः आकाश के समान है: विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता और द्वेष से रहित। इसे आधार बनाकर भी, कुछ प्राणी यहाँ इसी प्रकार शुद्ध हो जाते हैं।

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है, मित्रों, कि भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, जो सब कुछ जानते और देखते हैं, उन्होंने प्राणियों के शुद्धिकरण, दुःख और विलाप पर विजय पाने, पीड़ा और निराशा को दूर करने, विधि की प्राप्ति, निर्वाण की प्राप्ति, अर्थात् स्मरण के छह विषयों की प्राप्ति के लिए कारावास के बीच में ही मार्ग खोज निकाला है।"

---

27 अवसर (1) (समय1)

तब एक भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और बोला: "भंते, किसी आदरणीय भिक्षु से मिलने जाने के कितने उचित अवसर होते हैं?" 1296

"हे भिक्षु, किसी आदरणीय भिक्षु से मिलने के लिए ये छह उचित अवसर हैं। वे छह अवसर कौन से हैं?"

(1) "हे भिक्षु, जब किसी भिक्षु का मन कामुक राग से ग्रस्त और पीड़ित हो, और वह यह न समझ पाए कि वास्तव में उत्पन्न कामुक राग से मुक्ति का मार्ग क्या है, तो उस समय उसे किसी आदरणीय भिक्षु के पास जाकर उनसे कहना चाहिए: 'मित्र, मेरा मन कामुक राग से ग्रस्त और पीड़ित है, [318] और मैं यह नहीं समझ पा रहा हूँ कि वास्तव में उत्पन्न कामुक राग से मुक्ति का मार्ग क्या है। कृपया मुझे कामुक राग का त्याग करने का धर्म सिखाएँ।' आदरणीय भिक्षु तब उसे कामुक राग का त्याग करने का धर्म सिखाते हैं। यही किसी आदरणीय भिक्षु से मिलने का पहला उचित अवसर है।"

(2) "फिर, जब किसी भिक्षु का मन द्वेष से ग्रस्त और पीड़ित हो जाता है, और वह वास्तव में उत्पन्न द्वेष से मुक्ति का मार्ग नहीं समझ पाता, तो उस समय उसे किसी आदरणीय भिक्षु के पास जाकर उनसे कहना चाहिए: 'मित्र, मेरा मन द्वेष से ग्रस्त और पीड़ित है।' आदरणीय भिक्षु तब उन्हें द्वेष त्यागने का धर्म सिखाते हैं। आदरणीय भिक्षु से मिलने का यह दूसरा उचित अवसर है।"

(3) "फिर, जब किसी भिक्षु का मन सुस्ती और आलस्य से ग्रस्त और पीड़ित हो जाता है, और वह वास्तव में उत्पन्न सुस्ती और आलस्य से मुक्ति का मार्ग नहीं समझ पाता, तो उस समय उसे किसी आदरणीय भिक्षु के पास जाकर उनसे कहना चाहिए: 'मित्र, मेरा मन सुस्ती और आलस्य से ग्रस्त और पीड़ित है...' तब आदरणीय भिक्षु उसे सुस्ती और आलस्य से मुक्ति पाने का धर्म सिखाते हैं। आदरणीय भिक्षु से मिलने का यह तीसरा उचित अवसर है।"

(4) "फिर, जब किसी भिक्षु का मन बेचैनी और पश्चाताप से ग्रस्त और पीड़ित हो जाता है, और वह वास्तव में उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप से मुक्ति का मार्ग नहीं समझ पाता, तो उस समय उसे किसी आदरणीय भिक्षु के पास जाकर उनसे कहना चाहिए: 'मित्र, मेरा

मन बेचैनी और पश्चाताप से ग्रस्त और पीड़ित है... [319] ... तब आदरणीय भिक्षु उसे बेचैनी और पश्चाताप से मुक्ति का धम्म (मार्ग) सिखाते हैं। आदरणीय भिक्षु से मिलने जाने का यह चौथा उचित अवसर है।"

(5) "फिर, जब किसी भिक्षु का मन संदेह से ग्रस्त और पीड़ित हो जाता है, और वह वास्तव में उत्पन्न संदेह से मुक्ति का मार्ग नहीं समझ पाता, तो उस समय उसे किसी आदरणीय भिक्षु के पास जाकर उनसे कहना चाहिए: 'मित्र, मेरा मन संदेह से ग्रस्त और पीड़ित है, और मैं वास्तव में उत्पन्न संदेह से मुक्ति का मार्ग नहीं समझ पा रहा हूँ। कृपया मुझे संदेह त्यागने का धर्म सिखाएँ।' आदरणीय भिक्षु तब उसे संदेह त्यागने का धर्म सिखाते हैं। यह आदरणीय भिक्षु से मिलने का पाँचवाँ उचित अवसर है।"

(6) "फिर, जब कोई भिक्षु यह न जान पाए और न देख पाए कि दोषों के तत्काल नाश के लिए किस वस्तु पर भरोसा करना चाहिए और किस पर ध्यान देना चाहिए, 1297 तो उस समय उसे किसी आदरणीय भिक्षु के पास जाकर उनसे कहना चाहिए: 'मित्र, मैं यह न जान पा रहा हूँ और न देख पा रहा हूँ कि दोषों के तत्काल नाश के लिए किस वस्तु पर भरोसा करना चाहिए और किस पर ध्यान देना चाहिए। कृपया मुझे दोषों के नाश के लिए धर्म सिखाएँ।' आदरणीय भिक्षु तब उसे दोषों के नाश के लिए धर्म सिखाते हैं। यह किसी आदरणीय भिक्षु से मिलने का छठा उचित अवसर है।"

"हे भिक्षु, ये छह उचित अवसर हैं जब किसी आदरणीय भिक्षु से मिलने जाना चाहिए।"

---

28 अवसर (2) (समय2)

एक बार कई वरिष्ठ भिक्षु इसिपताना के हिरण पार्क में बनारस में रह रहे थे; फिर, भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, वे वरिष्ठ भिक्षु मंडप कक्ष में एकत्रित हुए और एक साथ बैठे थे, तभी उनके बीच यह बातचीत शुरू हुई: "मित्रों, किसी आदरणीय भिक्षु से मिलने जाने का उचित अवसर क्या है?"

यह सुनकर एक भिक्षु ने उन वरिष्ठों से कहा: "मित्रों, भोजन के बाद, जब कोई आदरणीय भिक्षु भिक्षा मांगने के बाद लौटकर अपने पैर धो लेता है और सीधा शरीर धारण करके, पैरों को मोड़कर बैठा होता है, और अपने सामने एकाग्र मन स्थापित कर लेता है, तब उससे मिलने जाना उचित होता है।"

जब उन्होंने अपनी बात पूरी कर ली, तो एक अन्य भिक्षु ने उनसे कहा: "मित्र, किसी आदरणीय भिक्षु से मिलने का यह उचित अवसर नहीं है। भोजन के बाद, जब कोई आदरणीय भिक्षु भिक्षा मांगने के बाद लौटकर अपने पैर धोकर, सीधे बैठकर, ध्यान (सती) में मग्न हो जाता है, तब तक भिक्षा मांगने और भोजन के कारण उसकी थकान दूर नहीं हुई होती है। इसलिए, उस समय उनसे मिलने जाना उचित नहीं है। परन्तु संध्या में, जब कोई आदरणीय भिक्षु एकांतवास से बाहर आकर अपने निवास स्थान की छाया में सीधे बैठकर, पैर बांधकर, ध्यान (सती) में मग्न हो जाता है, तब उनसे मिलने जाना उचित है।"

जब उन्होंने अपनी बात पूरी कर ली, तो एक अन्य भिक्षु ने उनसे कहा: "मित्र, किसी आदरणीय भिक्षु से मिलने जाने का यह उचित अवसर नहीं है। [321] संध्याकाल में, जब कोई आदरणीय भिक्षु एकांतवास से बाहर आकर अपने निवास स्थान की छाया में पैर मोड़कर, शरीर को सीधा रखते हुए, सती ध्यान में लीन होते हैं, तब भी दिनभर जिस समाधि (स्व-लीनता/सत्त्व) में वे तल्लीन रहते हैं, वह उनके समक्ष विद्यमान रहती है। 1298 अतः यह उनसे मिलने जाने का उचित अवसर नहीं है। परन्तु जब कोई आदरणीय भिक्षु संध्या के ढलने पर उठकर, पैर मोड़कर, शरीर को सीधा रखते हुए, सती ध्यान में लीन होते हैं, तब उनसे मिलने जाना उचित अवसर है।"

जब उन्होंने अपनी बात समाप्त की, तो एक अन्य भिक्षु ने उनसे कहा: "मित्र, आदरणीय भिक्षु से मिलने का यह उचित अवसर नहीं है। जब आदरणीय भिक्षु संध्या ढलने के समय उठते हैं और पाँव जोड़कर सीधे बैठे होते हैं, और सती ध्यान में तल्लीन होते हैं, उस समय उनका शरीर तरोताजा होता है; उनके लिए बुद्धों की शिक्षाओं पर ध्यान देना सहज होता है। अतः उनसे मिलने का यह उचित अवसर नहीं है।"

यह सुनकर पूज्य महाकच्चना ने उन वरिष्ठ भिक्षुओं से कहा, "मित्रों, मैंने भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में यह सुना और सीखा है:

"'हे भिक्षु, आदरणीय भिक्षु से मिलने के ये छह उचित अवसर हैं। वे छह क्या हैं? (1) हे भिक्षु, जब किसी भिक्षु का मन कामुक वासना (राग) से ग्रस्त और पीड़ित हो... [जैसा कि 6:27 में है] [322]... (2) ... द्वेष से ग्रस्त और पीड़ित हो... (3) ... सुस्ती और उनींदापन से ग्रस्त और पीड़ित हो... (4) ... बेचैनी और पश्चाताप से ग्रस्त और पीड़ित हो... (5) ... संदेह से ग्रस्त और पीड़ित हो... (6) जब किसी भिक्षु को यह ज्ञात और दिखाई न दे कि दोषों के तत्काल नाश के लिए किस वस्तु पर भरोसा करना और ध्यान देना चाहिए। ...फिर आदरणीय भिक्षु उन्हें दोषों के नाश के लिए धम्म का उपदेश देते हैं। आदरणीय भिक्षु से मिलने का यह छठा उचित अवसर है।'

"मित्रों, भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में मैंने यह सुना और सीखा: 'भिक्षु, ये छह उचित अवसर हैं जब किसी आदरणीय भिक्षु से मिलने जाना चाहिए।'"

---

29 उदय

तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य उदयि से पूछा, "उदयि, स्मरण के कितने विषय हैं?"

यह सुनकर पूज्य उदयि मौन रहे। दूसरी बार... तीसरी बार भगवान (बुद्ध) ने पूज्य उदयि से पूछा, "उदयि, स्मरण के कितने विषय हैं?" और तीसरी बार भी पूज्य उदयि मौन रहे।

तब पूज्य आनंद ने पूज्य उदयि से कहा: "गुरुजी आपसे बात कर रहे हैं, मित्र उदयि।"

मैंने उसे सुना, मित्र आनंद। [323]

"यहाँ, भंते, एक भिक्षु अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) का स्मरण करता है, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म... [जैसा कि 6:2 में है]। इस प्रकार वह अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) के स्वरूपों और विवरणों का स्मरण करता है। भंते, यही स्मरण का विषय है।"

तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य आनंद को संबोधित करते हुए कहा, "हे आनंद, मैं जानता था कि यह खोखला मनुष्य उदयि उच्चतर मन में स्वयं को समर्पित नहीं करता। 1299 हे आनंद, स्मरण के कितने विषय हैं?"

"भंते, स्मरण के पाँच विषय हैं। वे पाँच कौन से हैं?"

(1) हे भंते, इंद्रिय सुखों से विरक्त, अकुशल अवस्थाओं से विरक्त भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल होते हैं। विचार और चिंतन के शांत होने पर, वह द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और जो समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन नहीं होते। परमानंद (पीति) के भी लुप्त होने पर, वह समभाव और सती भाव से पूर्णतः बोध करते हुए शरीर सहित सुख (सुख) का अनुभव करता है; वह तृतीय ध्यान (सतीभाव) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसके विषय में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव और सती भाव से निवास करने वाला है...' खुशी से। इस प्रकार विकसित और पोषित स्मरण का यह विषय, इसी जीवन में सुखमय निवास की ओर ले जाता है। 1300

(2) "फिर, भंते, एक भिक्षु प्रकाश की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान देता है; वह दिन की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) पर इस प्रकार ध्यान केंद्रित करता है: 'जैसा दिन, वैसा रात; जैसा रात, वैसा दिन।' इस प्रकार, खुले और निर्मल मन से, वह प्रकाश से परिपूर्ण मन विकसित करता है। 1301 इस प्रकार विकसित और पोषित स्मरण का यह विषय ज्ञान और दृष्टि की प्राप्ति की ओर ले जाता है।"

(3) "हे भंते, एक भिक्षु इस शरीर का पैरों के तलवों से ऊपर की ओर, बालों के सिरों से नीचे की ओर, त्वचा में लिपटे हुए, अनेक प्रकार की अशुद्धियों से परिपूर्ण मानकर अवलोकन करता है: 'इस शरीर में सिर के बाल, शरीर के बाल, नाखून, दांत, त्वचा, मांस, नसें, हड्डियां, अस्थि मज्जा, गुर्दे, हृदय, यकृत, फुफ्फुस, तिल्ली, फेफड़े, आंतें, मेसेंटरी, पेट, मल, पित्त, कफ, मवाद, रक्त, पसीना, वसा, आंसू,

चिकनाई, लार, नाक का पानी, जोड़ों का द्रव, मूत्र हैं।' इस प्रकार विकसित और पोषित स्मरण का यह विषय, इंद्रिय सुख (राग) के त्याग की ओर ले जाता है।"

(4) "फिर, भंते, मान लीजिए कि एक भिक्षु श्मशान भूमि में एक, दो, [324] या तीन दिन पहले मृत पड़े, फूले हुए, पीले पड़े और सड़ते हुए शव को देखता है। वह अपने शरीर की तुलना उससे इस प्रकार करता है: 'यह शरीर भी उसी प्रकृति का है; यह वैसा ही होगा; यह उससे आगे नहीं है।' 1302 या मान लीजिए कि वह श्मशान भूमि में एक शव को कौवे, बाज, गिद्ध, कुत्ते, सियार या विभिन्न प्रकार के जीवों द्वारा कुतरते हुए देखता है। वह अपने शरीर की तुलना उससे इस प्रकार करता है: 'यह शरीर भी उसी प्रकृति का है; यह वैसा ही होगा; यह उससे आगे नहीं है।' मान लीजिए कि वह किसी श्मशान में फेंका हुआ एक शव देखे, एक कंकाल जिसमें मांस और रक्त हो, जो नसों से जुड़ा हो... एक मांसहीन कंकाल जो रक्त से सना हो, नसों से जुड़ा हो... एक कंकाल जिसमें मांस और रक्त न हो, नसों से जुड़ा हो... अलग-अलग हड्डियाँ चारों ओर बिखरी हों: यहाँ हाथ की हड्डी, वहाँ पैर की हड्डी, यहाँ पिंडली की हड्डी, वहाँ जांघ की हड्डी, यहाँ कूल्हे की हड्डी, वहाँ रीढ़ की हड्डी और वहाँ खोपड़ी। वह अपने शरीर की तुलना इससे इस प्रकार करता है: 'यह शरीर भी उसी प्रकृति का है; यह वैसा ही होगा; इससे आगे कुछ नहीं है।' या मान लीजिए कि वह किसी श्मशान भूमि में फेंके गए शव को देखे, जिसकी हड्डियाँ सफ़ेद पड़ चुकी हों, सीपियों के रंग की... हड्डियाँ ढेर लगी हों, एक वर्ष से अधिक पुरानी... हड्डियाँ सड़कर धूल में मिल गई हों। वह अपने शरीर की तुलना उससे इस प्रकार करता है: [325] 'यह शरीर भी उसी प्रकृति का है; यह वैसा ही होगा; यह उससे परे नहीं है।' इस प्रकार विकसित और पोषित स्मरण का यह विषय 'मैं हूँ' की धारणा को जड़ से उखाड़ फेंकता है।

(5) "हे भंते, सुख और दुख का त्याग करने और पहले ही आनंद और उदासी के दूर हो जाने के बाद, भिक्षु चौथे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो कष्टदायी है और न ही सुखदायी, जिसमें समभाव द्वारा सती ध्यान का शुद्धिकरण होता है। इस प्रकार विकसित और पोषित स्मरण का यह विषय अनेक तत्वों के भेदन की ओर ले जाता है। 1303

"भंते, ये स्मरण के पाँच विषय हैं।"

"शाबाश, शाबाश, आनंद! इसलिए, आनंद, स्मरण के इस छठे विषय को भी याद रखो।"

(6) "यहाँ, एक भिक्षु सदा सचेत (ध्यान/सती) होकर आगे बढ़ता है, सदा सचेत होकर लौटता है, सदा सचेत (ध्यान/सती) होकर खड़ा होता है, सदा सचेत (ध्यान/सती) होकर बैठता है, सदा सचेत (ध्यान/सती) होकर सोने के लिए लेटता है, सदा सचेत (ध्यान/सती) होकर कार्य करता है। इस प्रकार विकसित और पोषित स्मरण का यह विषय सती (ध्यान) और पूर्ण बोध (संपजन्न) की ओर ले जाता है।"

---

30 (10) अतुलनीय वस्तुएँ (अनुत्तरिया)

भिक्षुओं, ये छह अद्वितीय गुण हैं। वे कौन से छह गुण हैं? (1) अद्वितीय दृष्टि, (2) अद्वितीय श्रवण शक्ति, (3) अद्वितीय लाभ, (4) अद्वितीय प्रशिक्षण, (5) अद्वितीय सेवा और (6) अद्वितीय स्मरण शक्ति।

(1) "हे भिक्षुओं, वह अतुलनीय दर्शन क्या है? यहाँ, कोई हाथी-रत्न, अश्व-रत्न, रत्न-रत्न या विभिन्न दर्शनों को देखने जाता है; या फिर वे गलत विचारों या गलत अभ्यास वाले किसी तपस्वी या ब्राह्मण के दर्शन करने जाते हैं। यह दर्शन है; मैं इससे इनकार नहीं करता। परन्तु यह दर्शन नीच, सामान्य, सांसारिक, तुच्छ और लाभहीन है; यह निर्वाण (निब्बिद), वैराग्य (विरग), शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और [326] निर्वाण की ओर नहीं ले जाता। परन्तु जब दृढ़ विश्वास, दृढ़ भक्ति, दृढ़ निश्चय और पूर्ण विश्वास वाला व्यक्ति तथागत (बुद्ध) या तथागत (बुद्ध) के शिष्य के दर्शन करने जाता है: तो यह अतुलनीय दर्शन प्राणियों के शुद्धिकरण के लिए, दुःख और विलाप पर विजय पाने के लिए, पीड़ा और निराशा को दूर करने के लिए, विधि की प्राप्ति के लिए, निर्वाण की प्राप्ति। इसे ही अतुलनीय दृष्टि कहा जाता है। ऐसी है अतुलनीय दृष्टि।

(2) "अति उत्कृष्ट श्रवण कैसे होता है? यहाँ, कोई ढोल की आवाज़, वीणा की आवाज़, गायन की आवाज़, या विभिन्न प्रकार की आवाज़ें सुनने जाता है; या फिर वे गलत मतों, गलत अभ्यास वाले किसी तपस्वी या ब्राह्मण का धम्म सुनने जाते हैं। यह श्रवण होता है; मैं इससे इनकार नहीं करता। परन्तु यह श्रवण नीच, सामान्य, सांसारिक, तुच्छ और लाभहीन होता है; यह निर्वाण (निब्बिद), वैराग्य

(विराग), शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न), ज्ञानोदय और निर्वाण (निब्बान) की ओर नहीं ले जाता। परन्तु जब दृढ़ विश्वास, दृढ़ भक्ति, दृढ़ निश्चय और पूर्ण विश्वास वाला व्यक्ति तथागत (बुद्ध) या तथागत (बुद्ध) के शिष्य को सुनने जाता है: तो यह अतुलनीय श्रवण प्राणियों के शुद्धिकरण के लिए, दु:ख और विलाप पर विजय पाने के लिए, पीड़ा और निराशा को दूर करने के लिए, विधि की प्राप्ति के लिए, और ज्ञान की प्राप्ति के लिए होता है।" निर्वाण। इसे ही अतुलनीय श्रवण शक्ति कहा जाता है। इसी प्रकार अतुलनीय दृष्टि और अतुलनीय श्रवण शक्ति है।

(3) "अतिरिक्त लाभ कैसे है? यहाँ, किसी को पुत्र, पत्नी या धन प्राप्त होता है; या उन्हें विभिन्न [327] वस्तुएँ प्राप्त होती हैं; या वे गलत विचारों, गलत प्रथाओं वाले किसी तपस्वी या ब्राह्मण में आस्था प्राप्त करते हैं। यह लाभ है; मैं इससे इनकार नहीं करता। परन्तु यह लाभ नीच, सामान्य, सांसारिक, तुच्छ और लाभहीन है; यह निब्बिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, प्रबुद्धता और निर्वाण की ओर नहीं ले जाता। परन्तु जब दृढ़ आस्था, दृढ़ भक्ति, दृढ़ निश्चय और पूर्ण विश्वास वाला व्यक्ति तथागत (बुद्ध) या तथागत (बुद्ध) के शिष्य में आस्था प्राप्त करता है: तो यह अतुलनीय लाभ प्राणियों के शुद्धिकरण, दु:ख और विलाप पर विजय, पीड़ा और निराशा के निवारण, विधि की प्राप्ति और निर्वाण की प्राप्ति के लिए है। यह है इसे अतुलनीय लाभ कहा जाता है। ऐसा है अतुलनीय दृष्टि, अतुलनीय श्रवण और अतुलनीय लाभ।

(4) "और, अतुलनीय प्रशिक्षण कैसे है? यहाँ, कोई हाथी-चाल, घुड़सवारी, रथ-चाल, तीरंदाजी, तलवारबाजी का प्रशिक्षण लेता है; या वे विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण लेते हैं; या वे गलत विचारों, गलत प्रथाओं वाले किसी तपस्वी या ब्राह्मण के अधीन प्रशिक्षण लेते हैं। यह प्रशिक्षण है; मैं इससे इनकार नहीं करता। लेकिन यह प्रशिक्षण निम्न, सामान्य, सांसारिक, नीच और लाभहीन है; यह निब्बिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण की ओर नहीं ले जाता। परन्तु जब कोई दृढ़ विश्वास, दृढ़ भक्ति, दृढ़ निश्चय और आत्मविश्वास से परिपूर्ण व्यक्ति तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म (मार्ग) और अनुशासन में उच्च सद्गुणी आचरण, उच्च मन और उच्च पन्ना (दिव्य ज्ञान) का प्रशिक्षण लेता है: तो यह अतुलनीय प्रशिक्षण प्राणियों के शुद्धिकरण, दु:ख और विलाप पर विजय पाने और मृत्यु के निवारण के लिए है। विधि की प्राप्ति के लिए, निर्वाण की प्राप्ति के लिए पीड़ा और निराशा। इसे ही अतुलनीय प्रशिक्षण कहा जाता है। यही अतुलनीय दृष्टि, अतुलनीय श्रवण, अतुलनीय लाभ और अतुलनीय प्रशिक्षण है।

(5) "अति श्रेष्ठ सेवा क्या है? यहाँ, कोई व्यक्ति किसी क्षत्रिय, ब्राह्मण, गृहस्थ की सेवा करता है; या वे अनेक अन्य लोगों की सेवा करते हैं; या वे किसी कुटिल, कुप्रथाग्रस्त तपस्वी या ब्राह्मण की सेवा करते हैं। इस प्रकार की सेवा भी है; मैं इससे इनकार नहीं करता। परन्तु इस प्रकार की सेवा नीच, सामान्य, सांसारिक, तुच्छ और लाभहीन है; यह निर्वाण (निब्बिद), वैराग्य (विराग), शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न), ज्ञानोदय और निर्वाण (निब्बान) की ओर नहीं ले जाती। परन्तु जब दृढ़ विश्वास, दृढ़ भक्ति, दृढ़ निश्चय और पूर्ण विश्वास से युक्त व्यक्ति तथागत (बुद्ध) या तथागत (बुद्ध) के शिष्य की सेवा करता है: तो यह अतुलनीय सेवा प्राणियों के शुद्धिकरण के लिए, दु:ख और विलाप पर विजय पाने के लिए, पीड़ा और निराशा को दूर करने के लिए, विधि की प्राप्ति के लिए, और मोक्ष की प्राप्ति के लिए है।" निर्वाण (निब्बाना)। इसे ही अतुलनीय सेवा कहा जाता है। इसी प्रकार अतुलनीय दृष्टि, अतुलनीय श्रवण शक्ति, अतुलनीय लाभ, अतुलनीय प्रशिक्षण और अतुलनीय सेवा है।

(6) "और वह अतुलनीय स्मरण कैसे होता है? यहाँ, कोई पुत्र, पत्नी या धन की प्राप्ति का स्मरण करता है; या फिर वे विभिन्न प्रकार के लाभों का स्मरण करते हैं; या फिर वे गलत विचारों, गलत प्रथाओं वाले किसी तपस्वी या ब्राह्मण का स्मरण करते हैं। इस प्रकार का स्मरण होता है; मैं इससे इनकार नहीं करता... लेकिन इस प्रकार का स्मरण निम्न, सामान्य, सांसारिक, नीच और लाभहीन होता है; यह निब्बिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण की ओर नहीं ले जाता। परन्तु जब कोई दृढ़ विश्वास, दृढ़ भक्ति, दृढ़ निश्चय और पूर्ण विश्वास से भरा व्यक्ति तथागत (बुद्ध) या तथागत (बुद्ध) के शिष्य का स्मरण करता है: तो यह अतुलनीय स्मरण प्राणियों के शुद्धिकरण, दु:ख और विलाप पर विजय, पीड़ा और निराशा के निवारण और... के लिए होता है। निर्वाण की प्राप्ति के लिए विधि की उपलब्धि। इसे ही अतुलनीय स्मरण कहा जाता है।

"भिक्षुओं, ये छह अतुलनीय वस्तुएँ हैं।"

सर्वश्रेष्ठ दृष्टि

और अतुलनीय श्रवण शक्ति प्राप्त करके,

अतुलनीय लाभ अर्जित करके,

अतुलनीय प्रशिक्षण में आनंदित होकर,

सेवा में तल्लीन होकर, वे एकांत से जुड़ी

स्मृति विकसित करते हैं , सुरक्षित होकर, जो अमरता (अमरत/अमृत) की ओर ले जाती है।

सतर्कता में आनंदित,

विवेकपूर्ण, सद्गुणों से संयमित,

समय आने पर वे जान जाते हैं

कि दुख कहाँ समाप्त होता है।

IV. देवता (देवदूत)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

31 प्रशिक्षु (सेखा)

भिक्षुओं, ये छह गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं। वे छह गुण कौन से हैं? [330] काम में आनंद, बातचीत में आनंद, नींद में आनंद, संगति में आनंद, इंद्रियों पर नियंत्रण न रखना और भोजन में संयम का अभाव। ये छह गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं।

भिक्षुओं, ये छह गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे छह गुण कौन से हैं? काम में आनंद न लेना, बातचीत में आनंद न लेना, नींद में आनंद न लेना, संगति में आनंद न लेना, इंद्रियों को वश में रखना और भोजन में संयम बरतना। ये छह गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकते हैं।

---

32 गैर-अस्वीकार (1) (परिहाना1)

फिर, जब रात आगे बढ़ गई, तो अत्यंत सुंदर एक देवदूत (परी), जिसने पूरे जेतवन को प्रकाशित कर दिया, भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़ा हुआ और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, भिक्षु के पतन को रोकने वाले ये छह गुण हैं। वे छह गुण कौन से हैं? गुरु के प्रति श्रद्धा, धम्म के प्रति श्रद्धा, संघ के प्रति श्रद्धा, प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा, जागरूकता के प्रति श्रद्धा और आतिथ्य सत्कार के प्रति श्रद्धा। 1305 ये छह गुण भिक्षु के पतन को रोकते हैं।"

यही उस देवता (देवदूत) ने कहा। गुरुजी सहमत हो गए। तब उस देवता (देवदूत) ने यह सोचकर कि "गुरुजी मुझसे सहमत हैं," भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।

फिर, जब रात बीत गई, तो भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "पिछली रात, भिक्षुओं, जब रात आगे बढ़ रही थी, तो एक अत्यंत सुंदर देवता (देवदूत), जो पूरे जेतवन को प्रकाशित कर रहा था, मेरे पास आया, मुझे प्रणाम किया, एक तरफ खड़ा हुआ और मुझसे कहा: 'भंते, ये छह गुण हैं जो भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे छह क्या हैं? गुरु के प्रति श्रद्धा, धम्म के प्रति श्रद्धा, संघ के प्रति श्रद्धा, प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा, जागरूकता के प्रति श्रद्धा और आतिथ्य के प्रति श्रद्धा। [331] ये छह गुण भिक्षु के पतन को रोकते हैं।' यही उस देवता (देवदूत) ने कहा। फिर उस देवता (देवदूत) ने मुझे प्रणाम किया, मेरी ओर दाहिनी ओर रखते हुए मेरी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गया।"

गुरु के प्रति आदरपूर्ण,

धम्म के प्रति आदरपूर्ण,

संघ के प्रति गहरी श्रद्धा रखने वाला,

सजगता के प्रति आदरपूर्ण,

आतिथ्य सजग: यह भिक्षु

भटक नहीं सकता, बल्कि निर्वाण के निकट है।

---

33 गैर-अस्वीकार (2) (परिहाना2)

"कल रात, भिक्षुओं, जब रात ढल रही थी, तो एक अत्यंत सुंदर देवता, जिसने पूरे जेतवन को प्रकाशित कर दिया, मेरे पास आया, मुझे प्रणाम किया, एक तरफ खड़ा हुआ और मुझसे कहा: 'भंते, ये छह गुण हैं जो भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे छह क्या हैं? गुरु के प्रति श्रद्धा, धम्म के प्रति श्रद्धा, संघ के प्रति श्रद्धा, प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा, नैतिक लज्जा के प्रति श्रद्धा और नैतिक भय के प्रति श्रद्धा। ये छह गुण भिक्षु के पतन को रोकते हैं।' यही उस देवता ने कहा। फिर उस देवता ने मुझे प्रणाम किया, मेरी ओर दाहिनी ओर रखते हुए मेरी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गया।"

गुरु के प्रति आदरपूर्ण,

धम्म के प्रति आदरपूर्ण,

संघ के प्रति गहरी श्रद्धा रखने वाला,

नैतिक लज्जा और नैतिक भय से परिपूर्ण:

जो व्यक्ति आदरपूर्ण और श्रद्धापूर्ण होता है , वह

भटक नहीं सकता, बल्कि निर्वाण के निकट होता है।

---

34 मोग्गलाना

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब, जब पूज्य महामोग्गलाना एकांत में अकेले थे, उनके मन में निम्नलिखित विचार उत्पन्न हुए: "कौन से देव (देवदूत/ईश्वर) जानते हैं: 'मैं धारा में प्रवेश करने वाला (सात जन्मों का अनुयायी, सोतपत्ति) हूँ, अब निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं हूँ, नियति में स्थिर हूँ, ज्ञान की ओर अग्रसर हूँ'?" [332]

उस समय, तिस्सा नामक एक भिक्षु का हाल ही में निधन हुआ था और उनका पुनर्जन्म एक ब्रह्मलोक में हुआ था। वहाँ भी वे उन्हें "ब्रह्म तिस्सा, शक्तिशाली और बलवान" के नाम से जानते थे। फिर, जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को अंदर खींच लेता है, उसी प्रकार पूज्य महामोग्गलाना जेतवन से लुप्त होकर उस ब्रह्मलोक में पुनः प्रकट हुए। जब उन्होंने दूर से पूज्य महामोग्गलाना को आते देखा, तो ब्रह्म तिस्सा ने उनसे कहा:

"आदरणीय मोग्गलाना, आइए! आपका स्वागत है, आदरणीय मोग्गलाना! बहुत समय बाद आपको यहाँ आने का अवसर मिला। बैठिए, आदरणीय मोग्गलाना। यह आसन आपके लिए तैयार किया गया है।" पूज्य महामोग्गलाना तैयार आसन पर बैठ गए। ब्रह्मा तिस्सा ने उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब पूज्य महामोग्गलाना ने उनसे कहा:

"हे तिस्सा, कौन से देव (देवदूत/भगवान) जानते हैं: 'मैं एक धारा-प्रवेशक (7 पुनर्जन्मों का वाहक, सोतपत्ति) हूँ, अब निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं हूँ, नियति में स्थिर हूँ, ज्ञानोदय की ओर अग्रसर हूँ'?"

(1) "चार महान राजाओं द्वारा शासित देवों (देवदूतों/देवताओं) के पास ऐसा ज्ञान है, आदरणीय मोग्गलाना।"

"क्या चारों महान राजाओं के शासन में रहने वाले सभी देवों (देवदूतों/देवताओं) के पास ऐसा ज्ञान है, तिस्सा?"

"हे आदरणीय मोग्गलाना, सभी नहीं। जो बुद्ध, धम्म और संघ में अटूट विश्वास नहीं रखते और जिनमें श्रेष्ठों द्वारा प्रिय सद्गुणी आचरण का अभाव है, उन्हें ऐसा ज्ञान प्राप्त नहीं होता। परन्तु जो बुद्ध, धम्म और संघ में अटूट विश्वास रखते हैं और जिनमें श्रेष्ठों द्वारा प्रिय सद्गुणी आचरण होता है, वे जानते हैं: 'मैं एक धारा-प्रवेशक (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) हूँ, अब निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं, नियति में स्थिर, ज्ञानोदय की ओर अग्रसर।"

(2) क्या केवल चार महान राजाओं के अधीन रहने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) को ही ऐसा ज्ञान प्राप्त है, या तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) को भी... (3) ... यम देवों (देवदूतों/देवताओं) को... (4) ... तुषिता देवों (देवदूतों/देवताओं) को... (5) ... सृष्टि में आनंद लेने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) को... (6) ... दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) को भी यह ज्ञान प्राप्त है?

"दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) के पास भी ऐसा ज्ञान होता है, आदरणीय मोग्गलाना।"

"क्या उन सभी देवताओं (देवदूतों/भगवानों) के पास ऐसा ज्ञान है जो दूसरों द्वारा बनाई गई चीजों को नियंत्रित करते हैं, तिस्सा?"

"हे आदरणीय मोग्गलाना, सभी नहीं। जो बुद्ध, धम्म और संघ में अटूट विश्वास नहीं रखते और जिनमें श्रेष्ठ जनों द्वारा सराहे जाने वाले सद्गुणों का अभाव है, उन्हें ऐसा ज्ञान प्राप्त नहीं होता। परन्तु जो बुद्ध, धम्म और संघ में अटूट विश्वास रखते हैं और जिनमें श्रेष्ठ जनों द्वारा सराहे जाने वाले सद्गुण होते हैं, वे जानते हैं: 'मैं सात जन्मों का पथ-प्रवेश करने वाला (सोतपत्ति) हूँ, निम्न लोकों में पुनर्जन्म के अधीन नहीं, नियति में स्थिर, ज्ञानोदय की ओर अग्रसर हूँ।'"

फिर, ब्रह्म तिस्सा के कथन से प्रसन्न और आनंदित होकर, जैसे [334] एक बलवान व्यक्ति अपनी अंदर की ओर खींची हुई भुजा को फैलाता है या अपनी फैली हुई भुजा को अंदर खींचता है, पूज्य महामोग्गलाना ब्रह्म जगत से विलीन हो गए और जेतवन में पुनः प्रकट हुए।

---

35. सच्चे ज्ञान (विज्भगीय) से संबंधित

भिक्षुओं, ये छह बातें सच्चे ज्ञान से संबंधित हैं। वे छह बातें क्या हैं? अनित्यता का बोध, अनित्य में दुख का बोध, दुख में अनात्म का बोध, त्याग का बोध, वैराग्य का बोध और समाप्ति का बोध। 1306 ये छह बातें सच्चे ज्ञान से संबंधित हैं।

---

36 विवाद (विवादमूल)

"भिक्षुओं, विवादों के ये छह मूल हैं। वे छह कौन से हैं?"

(1) "यहाँ एक भिक्षु क्रोधित और शत्रुतापूर्ण है। जब कोई भिक्षु क्रोधित और शत्रुतापूर्ण होता है, तो वह गुरु, धर्म और संघ के प्रति आदर और सम्मान का अभाव रखता है, और वह प्रशिक्षण का पालन नहीं करता। ऐसा भिक्षु संघ में विवाद उत्पन्न करता है जिससे अनेक लोगों को हानि होती है, अनेक लोग दुखी होते हैं, और देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों का विनाश, हानि और कष्ट होता है। हे भिक्षुओं, यदि आप अपने आप में या दूसरों में विवाद का ऐसा कोई मूल कारण देखते हैं, तो आपको विवाद के इस बुरे मूल कारण को त्यागने का प्रयास करना चाहिए। और यदि आप अपने आप में या दूसरों में विवाद का ऐसा कोई मूल कारण नहीं देखते हैं, तो आपको ऐसा अभ्यास करना चाहिए जिससे विवाद का यह बुरा मूल कारण भविष्य में उत्पन्न न हो। [335] इस प्रकार विवाद का यह बुरा मूल कारण त्याग दिया जाता है और भविष्य में उत्पन्न नहीं होता।"

(2) "एक भिक्षु निंदा करने वाला और अभिमानी होता है... (3) ... ईर्ष्यालु और कंजूस... (4) ... धूर्त और पाखंडी... (5) ... बुरी इच्छाओं और गलत दृष्टिकोण वाला... (6) ... अपने ही विचारों पर अड़ा रहता है, उन्हें दृढ़ता से थामे रहता है और उन्हें मुश्किल से छोड़ता है। जब कोई भिक्षु अपने ही विचारों पर अड़ा रहता है, उन्हें दृढ़ता से थामे रहता है और उन्हें मुश्किल से छोड़ता है, तो वह गुरु, धर्म और संघ के प्रति अनादर और सम्मान के बिना रहता है, और वह प्रशिक्षण पूरा नहीं करता। ऐसा भिक्षु संघ में विवाद उत्पन्न करता है जिससे अनेक लोगों को हानि होती है, अनेक लोग दुखी होते हैं, और देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों का विनाश, हानि और कष्ट होता है।" भिक्षुओं, यदि आप अपने भीतर या दूसरों में विवाद का कोई भी कारण देखते हैं, तो आपको उस बुरे कारण को त्यागने का प्रयास करना चाहिए। और यदि आप अपने भीतर या दूसरों में विवाद का कोई भी कारण नहीं देखते हैं, तो आपको ऐसा अभ्यास करना चाहिए जिससे भविष्य में विवाद का वह बुरा कारण उत्पन्न न हो। इस प्रकार विवाद का वह बुरा कारण त्याग दिया जाता है और भविष्य में उत्पन्न नहीं होता।

"भिक्षुओं, ये विवाद के छह मूल कारण हैं।"

---

37 दान देना

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस समय, उनकी एक अनुयायी महिला वेलुकांतकी नंदमाता ने सारिपुत्त और मोग्गलाना के नेतृत्व में भिक्षुओं के संघ के लिए छह तत्वों से युक्त एक भेंट तैयार की थी। भगवान (बुद्ध) ने अपनी दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मानवीय दृष्टि से परे है, वेलुकांतकी नंदमाता को यह भेंट तैयार करते हुए देखा और फिर भिक्षुओं को संबोधित किया:

"भिक्षुओं, महिला गृहस्थ अनुयायी वेलुकांतकी नंदमाता, सारिपुत्त और मोग्गलाना के नेतृत्व वाले भिक्षु संघ के लिए छह गुणों से युक्त एक भेंट तैयार कर रही हैं। और छह गुणों से युक्त भेंट कैसे होती है? यहाँ, दाता के तीन गुण हैं और प्राप्तकर्ता के तीन गुण हैं।"

दाता के तीन कारक क्या हैं? (1) दाता दान देने से पहले प्रसन्न होती है; (2) दान देते समय उसका मन शांत और आत्मविश्वास से भरा होता है; और (3) दान देने के बाद वह प्रफुल्लित होती है। ये दाता के तीन कारक हैं।

"प्राप्तकर्ताओं के तीन कारक क्या हैं? यहाँ, (4) प्राप्तकर्ता कामवासना (राग) से रहित हैं या कामवासना (राग) को दूर करने का अभ्यास कर रहे हैं; (5) वे घृणा (हृदय) से रहित हैं या घृणा (हृदय) को दूर करने का अभ्यास कर रहे हैं; (6) वे मोह (मोह) से रहित हैं या मोह (मोह) को दूर करने का अभ्यास कर रहे हैं। ये प्राप्तकर्ताओं के तीन कारक हैं।"

इस प्रकार दानकर्ता के तीन गुण होते हैं और प्राप्तकर्ता के भी तीन गुण होते हैं। इस तरह से दान में छह गुण होते हैं। ऐसे दान के गुण को इस प्रकार मापना आसान नहीं है: 'केवल इतना ही गुण है, इतना ही लाभकारी (कुशल) गुण है, इतना ही सुख का पोषण है - इतना ही स्वर्गीय है, इतना ही सुख में परिपक्व होता है, इतना ही स्वर्गिक है - इतना ही जो वांछित, वांछित और सुखद, अपने कल्याण और सुख की ओर ले जाता है'; बल्कि, इसे केवल गुणों के एक अगणनीय, विशाल भंडार के रूप में गिना जाता है। भिक्षुओं, जिस प्रकार विशाल सागर में जल को इस प्रकार मापना आसान नहीं है: 'इतने गैलन जल है' या 'इतने सैकड़ों गैलन जल है' या 'इतने हजार गैलन जल है' या 'इतने लाखों गैलन जल है', बल्कि इसे केवल जल के एक अगणनीय, विशाल भंडार के रूप में गिना जाता है; उसी प्रकार, ऐसे दान के गुण को मापना आसान नहीं है। ... बल्कि, इसे मात्र गुणों के एक अथाह, असीम, विशाल भंडार के रूप में माना जाता है। 77

दान देने से पहले व्यक्ति प्रसन्न होता है;

दान देते समय मन में विश्वास की भावना जागृत होती है;

दान देने के बाद व्यक्ति प्रफुल्लित होता है:

यही दान देने के कार्य में सफलता है।

जब वे कामवासना (राग) और घृणा से रहित हों,

मोह (मोह) से मुक्त हों, दोषरहित हों,

आत्मसंयमी हों, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी रहे हों, तब

अर्पण का क्षेत्र पूर्ण हो जाता है।

स्वयं को शुद्ध करके [1307]

और अपने हाथों से दान देकर,

दान का कार्य

स्वयं के लिए और दूसरों के संबंध में बहुत फलदायी होता है।

कंजूसी से मुक्त मन से ऐसा परोपकारी कार्य करने वाला

ज्ञानी व्यक्ति, आस्था से भरपूर होकर,

एक सुखी और कष्टरहित संसार में पुनर्जन्म लेता है।

---

38 स्व-पहल (अत्ताकारी बिना आत्मा कारी)

फिर एक ब्राह्मण भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत के बाद, वह एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"मास्टर गौतम, मैं इस प्रकार का सिद्धांत और दृष्टिकोण रखता हूँ: 'कोई स्व-पहल नहीं है; दूसरों द्वारा कोई पहल नहीं की गई है' [1306]

"ब्राह्मण, मैंने कभी किसी को इस तरह का सिद्धांत और दृष्टिकोण रखते हुए न देखा है और न सुना है। भला जो स्वयं आता है और स्वयं लौटता है, वह कैसे कह सकता है: 'कोई स्वयं की पहल नहीं है; दूसरों द्वारा कोई पहल नहीं की गई है'?"

(1) "ब्राह्मण, तुम क्या सोचते हो? क्या उकसाने का तत्व मौजूद है?" [1309]

"जी श्रीमान।"

"जब उकसाने का तत्व मौजूद होता है, तो क्या प्राणियों को गतिविधि को उकसाते हुए देखा जाता है?"

"जी श्रीमान।"

जब प्राणियों को किसी गतिविधि को प्रेरित करते हुए देखा जाता है क्योंकि उसमें प्रेरणा का तत्व मौजूद होता है, तो यह प्राणियों की स्व-पहल होती है; यह दूसरों द्वारा की गई पहल होती है।

(2) "ब्राह्मण, तुम क्या सोचते हो? क्या दृढ़ता का तत्व मौजूद है?"

"जी श्रीमान।"

"जब दृढ़ता का तत्व मौजूद होता है, तो क्या प्राणियों को गतिविधि में निरंतर बने रहने के रूप में देखा जाता है?"

"जी श्रीमान।"

जब प्राणियों को गतिविधि में निरंतर बने रहने के कारण ऐसा करते हुए देखा जाता है, तो यह प्राणियों की स्व-पहल है; यह दूसरों द्वारा की गई पहल है।

(3) "हे ब्राह्मण, तुम क्या सोचते हो? क्या इसमें परिश्रम का तत्व मौजूद है?"

"जी श्रीमान।"

"जब परिश्रम का तत्व मौजूद होता है, तो क्या प्राणियों को गतिविधि में स्वयं को परिश्रम करते हुए देखा जाता है?"

"जी श्रीमान।"

जब प्राणियों को गतिविधि में स्वयं को प्रयास करते हुए देखा जाता है क्योंकि प्रयास का तत्व मौजूद होता है, तो यह प्राणियों की स्वयं की पहल है; यह दूसरों द्वारा की गई पहल है।

(4) "हे ब्राह्मण, तुम्हारा क्या विचार है? क्या बल का तत्व विद्यमान है?" 1310

"जी श्रीमान।"

"जब शक्ति का तत्व विद्यमान होता है, तो क्या प्राणियों को शक्ति से युक्त माना जाता है?"

"जी श्रीमान।"

जब प्राणियों में शक्ति का तत्व विद्यमान होने के कारण शक्ति का आभास होता है, तो यह प्राणियों की स्वयं की पहल होती है; यह दूसरों द्वारा की गई पहल होती है।

(5) "ब्राह्मण, तुम क्या सोचते हो? क्या निरंतरता का तत्व मौजूद है?"

"जी श्रीमान।"

"जब निरंतरता का तत्व मौजूद होता है, तो क्या प्राणियों को [किसी क्रिया में] निरंतर होते हुए देखा जाता है?"

"जी श्रीमान।" । ..

जब प्राणियों को किसी क्रिया में निरंतरता बनाए रखते हुए देखा जाता है क्योंकि निरंतरता का तत्व मौजूद होता है, तो यह प्राणियों की स्व-पहल होती है; यह दूसरों द्वारा की गई पहल होती है।

(6) "ब्राह्मण, तुम क्या सोचते हो? क्या बल का तत्व मौजूद है?"

"जी श्रीमान।" । ।

"जब बल का तत्व मौजूद होता है, तो क्या प्राणी बल के साथ कार्य करते हुए दिखाई देते हैं?"

"जी श्रीमान।"

जब प्राणियों को बल के तत्व की उपस्थिति के कारण बल के साथ कार्य करते हुए देखा जाता है, तो यह प्राणियों की स्व-पहल होती है; यह दूसरों द्वारा की गई पहल होती है।

"ब्राह्मण, मैंने आपके जैसी विचारधारा और दृष्टिकोण रखने वाले किसी को न तो देखा है और न ही सुना है। भला जो स्वयं आता है और स्वयं लौटता है, वह कैसे कह सकता है: 'इसमें स्वयं का कोई प्रयास नहीं है; दूसरों का भी कोई प्रयास नहीं है'?"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! उत्कृष्ट, गुरु गौतम! गुरु गौतम ने अनेक तरीकों से धम्म को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग आकृतियाँ देख सकें। मैं अब गुरु गौतम, धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। गुरु गौतम मुझे आज से जीवन भर के लिए शरण लेने वाला गृहस्थ अनुयायी समझें।"

---

39. निदान के कारण

भिक्षुओं, कर्म की उत्पत्ति के ये तीन कारण हैं। वे तीन क्या हैं? (1) लोभ कर्म की उत्पत्ति का एक कारण है; (2) घृणा कर्म की उत्पत्ति का एक कारण है; और (3) मोह कर्म की उत्पत्ति का एक कारण है।

"लालच से लोभ का अभाव उत्पन्न नहीं होता; बल्कि लोभ से लोभ ही उत्पन्न होता है। घृणा से घृणा का अभाव उत्पन्न नहीं होता; बल्कि घृणा से घृणा ही उत्पन्न होती है। मोह से मोह का अभाव उत्पन्न नहीं होता; बल्कि मोह से मोह ही उत्पन्न होता है।"

"देवताओं और मनुष्यों के लोक—या किसी अन्य शुभ स्थान—लोभ, घृणा और मोह से उत्पन्न कर्मों के कारण नहीं दिखाई देते; बल्कि नरक, पशुलोक और पीड़ित आत्माओं का लोक—साथ ही अन्य बुरे स्थान—लोभ, घृणा और मोह से उत्पन्न कर्मों के कारण दिखाई देते हैं। ये कर्मों की उत्पत्ति के तीन कारण हैं।"

भिक्षुओं, कर्मों की उत्पत्ति के ये तीन अन्य कारण हैं। वे तीन क्या हैं? (4) लोभ रहित होना कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है; (5) घृणा रहित होना कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है; और (6) मोह रहित होना कर्मों की उत्पत्ति का एक कारण है।

"लालच की उत्पत्ति लोभ से नहीं होती; बल्कि लोभहीनता की उत्पत्ति लोभहीनता से ही होती है। घृणा की उत्पत्ति घृणाहीनता से नहीं होती; बल्कि घृणाहीनता की उत्पत्ति घृणाहीनता से ही होती है। मोह की उत्पत्ति मोहहीनता से नहीं होती; बल्कि मोहहीनता मोहहीनता से ही उत्पन्न होती है।"

"यह न तो नरक है, न पशुलोक, न ही पीड़ित आत्माओं का लोक—और न ही कोई अन्य बुरे स्थान जो लोभ, घृणा और मोह से रहित कर्मों के कारण दिखाई देते हैं; बल्कि, यह देवों और मनुष्यों के लोक—साथ ही अन्य अच्छे स्थान—हैं जो लोभ, घृणा और मोह से रहित कर्मों के कारण दिखाई देते हैं। ये कर्मों की उत्पत्ति के तीन अन्य कारण हैं।"

---

40 किम्बिला 1311 (किमिला)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) किंबिला में एक निकुला उपवन में निवास कर रहे थे। तब पूज्य किंबिला भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और कहा: [340]

"हे भंते, इसका कारण क्या है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद भी उत्तम धर्म का निरंतर अस्तित्व नहीं बना रहता?"

"हे किम्बिला, जब कोई तथागत (बुद्ध) अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं, तो (1) भिक्षु, भिक्षुणियाँ, पुरुष गृहस्थ अनुयायी और स्त्री गृहस्थ अनुयायी गुरु के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (2) वे धम्म (मार्ग) के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (3) वे संघ के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (4) वे प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (5) वे सजगता के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (6) वे आतिथ्य सत्कार के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। यही कारण है कि किसी तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद उत्तम धम्म अधिक समय तक कायम नहीं रहता।"

"हे भंते, इसका कारण और तर्क क्या है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद भी अच्छा धम्म लंबे समय तक बना रहता है?"

"हे किम्बिला, जब कोई तथागत (बुद्ध) अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं, तो (1) भिक्षु, भिक्षुणियाँ, पुरुष गृहस्थ अनुयायी और स्त्री गृहस्थ अनुयायी गुरु के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (2) वे धम्म के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (3) वे संघ के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (4) वे प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (5) वे सजगता के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (6) वे आतिथ्य सत्कार के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। यही कारण है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद भी सुधर्म लंबे समय तक बना रहता है।"

---

41 लकड़ी का एक टुकड़ा (दारुखंड)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार पूज्य सारिपुत्त गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। सुबह, पूज्य सारिपुत्त ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किया और कई भिक्षुओं के साथ गिद्ध शिखर पर्वत से नीचे उतरे। एक स्थान पर उन्होंने लकड़ी का एक बड़ा टुकड़ा देखा और भिक्षुओं से कहा, "मित्रों, क्या तुम लकड़ी का वह बड़ा टुकड़ा देख रहे हो?"

"हाँ दोस्त।"

(1) "हे मित्रों, यदि वह चाहे तो मन पर महारत प्राप्त कर चुका कोई भिक्षु, जो मानसिक शक्ति से युक्त हो, उस लकड़ी के टुकड़े को पृथ्वी मानकर उस पर ध्यान केंद्रित कर सकता है। इसका आधार क्या है? क्योंकि उस लकड़ी के टुकड़े में पृथ्वी तत्व विद्यमान है। इसी आधार पर मन पर महारत प्राप्त कर चुका कोई भिक्षु, जो मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) से युक्त हो, उस पर पृथ्वी मानकर ध्यान केंद्रित कर सकता है।"

(2)-(4) "हे मित्रों, यदि वह चाहे तो मन पर महारत प्राप्त कर चुका कोई भिक्षु उस लकड़ी के टुकड़े पर जल...अग्नि...वायु के रूप में ध्यान केंद्रित कर सकता है। इसका आधार क्या है? क्योंकि उस लकड़ी के टुकड़े में जल...अग्नि...वायु तत्व विद्यमान हैं। इसी आधार पर मन पर महारत प्राप्त कर चुका कोई भिक्षु उस पर वायु के रूप में ध्यान केंद्रित कर सकता है।"

(5)— (6) "हे मित्रों, यदि वह चाहे तो मन पर महारत प्राप्त कर चुका कोई भिक्षु, जो मानसिक शक्ति से युक्त हो, उस लकड़ी के टुकड़े को सुंदर और अनाकर्षक दोनों रूप में देख सकता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उस लकड़ी के टुकड़े में सुंदरता और अनाकर्षकता दोनों ही तत्व विद्यमान हैं। इसी आधार पर मन पर महारत प्राप्त कर चुका कोई भिक्षु, जो मानसिक शक्ति (इद्धि) से युक्त हो, उस लकड़ी के टुकड़े को अनाकर्षक रूप में देख सकता है।"

---

42 नागिता 1312

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक विशाल संघ के साथ कोसल पर्वतमाला में भ्रमण कर रहे थे, जब वे इच्छानंगला नामक कोसल के ब्राह्मण गाँव पहुँचे। वहाँ भगवान (बुद्ध) इच्छानंगला के घने वन में निवास करने लगे। इच्छानंगला के ब्राह्मण गृहस्थों ने सुना: "कहा जाता है कि शाक्य वंश से निकले शाक्य पुत्र तपस्वी गौतम इच्छानंगला पहुँच गए हैं और अब इच्छानंगला के घने वन में निवास कर रहे हैं। अब उस गुरु गौतम के बारे में यह शुभ सूचना फैली है कि 'वह भगवान (बुद्ध) एक आरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, संसार के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय गुरु हैं, देवताओं और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं। उन्होंने अपने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से संसार को उसके देवताओं, मार और ब्रह्मा सहित, इस जनसंख्या को उसके तपस्वियों और ब्राह्मणों सहित, उसके देवताओं और मनुष्यों सहित, जान लिया है और इसे दूसरों को ज्ञात कराते हैं। वे एक ऐसे धर्म का उपदेश देते हैं जो आरंभ में अच्छा है, मध्य में अच्छा है और अंत में अच्छा है। सही अर्थ और शब्दों के साथ, वे एक पूर्णतः परिपूर्ण और पवित्र ब्रह्मचर्य जीवन का प्रकटीकरण करते हैं। ऐसे अरहंतों को देखना सौभाग्य की बात है।

फिर, जब रात बीत गई, तो इच्छानंगला के ब्राह्मण गृहस्थों ने तरह-तरह का भोजन लेकर इच्छानंगला के घने जंगल में चले गए। वे प्रवेश द्वार के बाहर शोर मचाते हुए खड़े हो गए। उस समय पूज्य नागिता भगवान (बुद्ध) के सेवक थे। तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य नागिता से कहा: [342] "नागीता, इतना शोर कौन मचा रहा है? ऐसा लगता है जैसे मछुआरे मछली पकड़ने आए हों।"

"भंते, ये इच्छानंगल के ब्राह्मण गृहस्थ हैं जो अनेक प्रकार का प्रचुर भोजन लेकर आए हैं। वे प्रवेश द्वार के बाहर खड़े हैं, [इसे] भगवान (बुद्ध) और भिक्षुओं के संघ को अर्पित करने की इच्छा से।"

"हे नागिता, मुझे कभी प्रसिद्धि न मिले और प्रसिद्धि कभी मेरा पीछा न करे। जो व्यक्ति इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, त्याग का यह आनंद, एकांत का आनंद, शांति का आनंद, ज्ञान का यह आनंद प्राप्त नहीं करता, वह उस नीच सुख, उस आलसी सुख, लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा के सुख को स्वीकार कर ले।"

हे भंते, अब भगवान (बुद्ध) की सहमति हो, हे सौभाग्यशाली, अब भगवान (बुद्ध) की सहमति का समय आ गया है। अब भगवान (बुद्ध) जहाँ भी जाएँगे, नगर और गाँव के ब्राह्मण गृहस्थ उसी दिशा में झुकेंगे। जैसे जब भारी बारिश की बूँदें बरसती हैं, तो पानी ढलान से नीचे बहता है, वैसे ही अब भगवान (बुद्ध) जहाँ भी जाएँगे, नगर और गाँव के ब्राह्मण गृहस्थ उसी दिशा में झुकेंगे। इसका कारण क्या है? क्योंकि भगवान (बुद्ध) का आचरण सदाचारी है और उन्हें दिव्य ज्ञान प्राप्त है।

"हे नागिता, मुझे कभी प्रसिद्धि न मिले, और प्रसिद्धि कभी मेरा पीछा न करे। जो व्यक्ति इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, त्याग के इस सुख को प्राप्त नहीं करता... वह उस नीच सुख, उस आलसी सुख, लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा के सुख को स्वीकार कर सकता है।"

(1) "हे नागिता, यहाँ मैं एक भिक्षु को गाँव के बाहरी इलाके में [343] समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) की अवस्था में बैठा देखता हूँ। तब मुझे यह विचार आता है: 'अब कोई मठवासी या कोई नौसिखिया या कोई सहधर्मी उस पूजनीय भिक्षु को उस समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) से विमुख कर देगा।' 1313 इसी कारण मैं इस भिक्षु के गाँव के बाहरी इलाके में निवास करने से प्रसन्न नहीं हूँ।

(2) "हे नागिता, मैं देखता हूँ कि वन में रहने वाला एक भिक्षु वन में बैठा ऊंघ रहा है। तब मेरे मन में यह विचार आता है: 'अब यह पूजनीय भिक्षु अपनी इस ऊंघ और थकान को दूर करेगा और केवल वन की अनुभूति (सन्ना/संग्या), एकात्मता की अवस्था में ध्यान केंद्रित करेगा।' 1314 इसी कारण मैं इस भिक्षु के वन में निवास करने से प्रसन्न हूँ।"

(3) "हे नागिता, मैं देखता हूँ कि वन में रहने वाला एक भिक्षु वन में असंयमित अवस्था में बैठा है। तब मुझे यह विचार आता है: 'अब यह पूजनीय भिक्षु अपने असंयमित मन को एकाग्र करेगा या अपने आत्ममग्न मन को रोकेगा।' इसी कारण मैं इस भिक्षु के वन में निवास करने से प्रसन्न हूँ।"

(4) "हे नागिता, मैं वन में रहने वाले एक भिक्षु को समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) की अवस्था में बैठा देखता हूँ। तब मेरे मन में यह विचार आता है: 'अब यह पूजनीय भिक्षु अपने अमुक्त मन को मुक्त करेगा या अपने मुक्त मन की रक्षा करेगा।' इसी कारण मैं इस भिक्षु के वन में निवास करने से प्रसन्न हूँ।"

(5) "देखो, नागिता, एक भिक्षु जो गाँव के बाहरी इलाके में रहता है, वह वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन प्राप्त करता है। लाभ, मान-सम्मान और यश की इच्छा में वह एकांतवास की उपेक्षा करता है; वह जंगलों और वनों में एकांतवास की उपेक्षा करता है। [344] गाँवों, कस्बों और राजधानियों में प्रवेश करके वह अपना निवास स्थान बना लेता है। इसी कारण मैं इस भिक्षु के गाँव के बाहरी इलाके में निवास करने से प्रसन्न नहीं हूँ।

(6) "मैं नागिता को देखता हूँ, जो वन में रहने वाला एक भिक्षु है, जिसे वस्त्र, भिक्षा, आवास, औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन प्राप्त होता है। उस लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा को त्यागकर भी वह एकांतवास का उपकार नहीं करता; वह वनों और घने जंगलों में एकांतवास का उपकार नहीं करता। इसी कारण मैं इस भिक्षु के वनवास से प्रसन्न हूँ।"

"हे नागिता, जब मैं राजमार्ग पर यात्रा कर रहा होता हूँ और मेरे आगे या पीछे कोई नहीं होता, चाहे वह शौच या पेशाब करने के उद्देश्य से ही क्यों न हो, उस समय मैं निश्चिंत रहता हूँ।" 1315

वी. धम्मिका

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

43 नागा

एक बार भगवान (बुद्ध) अनाथपिंडिका उद्यान में स्थित जेतवन के सावत्थी में निवास कर रहे थे। सुबह, भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किया और भिक्षा मांगने के लिए सावत्थी में प्रवेश किया। सावत्थी में भिक्षा मांगने के बाद, भोजन करने और भिक्षा मांगने के बाद लौटते समय, उन्होंने पूज्य आनंद से कहा: "आओ, आनंद, चलो पूर्वी उद्यान [345] में स्थित मिगारमाता के महल में दिन बिताने चलें।"

"जी हां, भंते," पूज्य आनंद ने उत्तर दिया।

फिर भगवान (बुद्ध), पूज्य आनंद के साथ, पूर्वी उद्यान में स्थित मिगारमाता के महल में गए।

फिर शाम को भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और पूज्य आनंद को संबोधित करते हुए बोले: "'आओ, आनंद, हम पूर्वी द्वार पर स्नान करने चलें।'"

"जी हां, भंते," पूज्य आनंद ने उत्तर दिया।

फिर भगवान (बुद्ध), पूज्य आनंद के साथ, पूर्वी द्वार पर स्नान करने गए। पूर्वी द्वार पर स्नान करने के बाद, वे एक ही वस्त्र में खड़े होकर खुद को सुखा रहे थे। उसी समय, कोसल के राजा पसेनादि का "सेता" नामक हाथी पूर्वी द्वार से वाद्य संगीत और ढोल की थाप के साथ बाहर आ रहा था। लोगों ने उसे देखकर कहा, "राजा का हाथी कितना सुंदर है! राजा का हाथी कितना आकर्षक है! राजा का हाथी कितना भव्य है! राजा का हाथी कितना विशाल है! वह सचमुच एक नाग है।"

यह सुनकर पूज्य उदय ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, क्या ऐसा तभी होता है जब लोग किसी हाथी को प्रेतबाधित देखते हैं?"

क्या लोग किसी विशालकाय शरीर को देखकर कहते हैं: 'सचमुच एक नाग!' या फिर अन्य विशालकाय शरीर वाली चीजों को देखकर भी ऐसा ही कहते हैं?

"(1) उदयि, जब लोग किसी विशाल शरीर वाले हाथी को देखते हैं, तो वे कहते हैं: 'सचमुच एक नाग!' (2) जब लोग किसी विशाल शरीर वाले घोड़े को देखते हैं, तो वे कहते हैं: 'सचमुच एक नाग!' (3) जब लोग किसी विशाल शरीर वाले बैल को देखते हैं, तो वे कहते हैं: 'सचमुच एक नाग!' (4) जब लोग किसी विशाल शरीर वाले सर्प को देखते हैं, तो वे कहते हैं: 'सचमुच एक नाग!' (5) जब लोग किसी विशाल शरीर वाले वृक्ष [346] को देखते हैं, तो वे कहते हैं: 'सचमुच एक नाग!' (6) जब लोग किसी विशाल शरीर वाले मनुष्य को देखते हैं, तो वे कहते हैं: 'सचमुच एक नाग!' लेकिन, उदयि, इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/देवता), मारा और ब्रह्मा विराजमान हैं, इस जनसंख्या में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण, देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य हैं, मैं उसे नाग कहता हूँ जो शरीर, वाणी और मन से कोई बुराई नहीं करता।

"हे भंते, यह कितना आश्चर्यजनक और अद्भुत है कि भगवान (बुद्ध) ने इसे कितनी अच्छी तरह से कहा है: 'परन्तु, हे उदयी, इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/भगवान), मार और ब्रह्मा हैं, इस जनसंख्या में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण हैं, इसके देव (देवदूत/भगवान) और मनुष्य हैं, मैं उसे नाग कहता हूँ जो शरीर, वाणी और मन से कोई बुराई नहीं करता।' हे भंते, मैं भगवान (बुद्ध) के इस उत्तम कथन से प्रसन्न हूँ, इन श्लोकों के साथ: [1318]

"पूर्णतः प्रबुद्ध, आत्म-संयमित और आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) मनुष्य ,

ब्रह्म के मार्ग पर चलते हुए,

मन की शांति में आनंदित होता है।"

मैंने अरहंत से सुना है

कि देव (देवदूत/भगवान) भी उन्हें प्रणाम करते हैं,

उसी को जिसकी मनुष्य पूजा करते हैं,

जो हर चीज से परे है।

"वह सभी बंधनों को पार कर गया है

और जंगल से निकलकर खुले मैदान में आ गया है; [1319]

इंद्रिय सुखों के त्याग में आनंदित होकर,

वह अयस्क से मुक्त शुद्ध सोने के समान है।

"वह नाग है जो सभी को पीछे छोड़ देता है,

जैसे हिमालय अन्य पर्वतों के बीच।

नाग कहलाने वाली सभी चीजों में,

वह अद्वितीय है, जिसका सही अर्थ यही है: [1320]

मैं तुम्हारे लिए नाग की प्रशंसा करूंगा:

वास्तव में, वह कोई बुराई नहीं करता।

नम्रता और अहिंसा

नाग के दो चरण हैं।

"तपस्या और ब्रह्मचर्य

नाग के अन्य दो पैर हैं। [1321]

आस्था महान नाग की सूंड है,

और उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) उसके हाथीदांत हैं।"

"सती (ध्यान) उनकी गर्दन है, उनका सिर (दिव्य ज्ञान),

अन्वेषण और घटनाओं पर चिंतन (धम्म) है। [1322]

धम्म (मार्ग) उनके पेट की संतुलित गर्मी है,

और एकांत उनकी पूंछ है। [1323]

"यह ध्यान करने वाला, सांत्वना में आनंदित होकर, [1324]

भीतरी तौर पर अच्छी तरह से आत्म-मग्न (समाधि/समाहित) है।

चलते समय नाग आत्म-मग्न (समाधि/समाहित) होता है;

खड़े होने पर नाग आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) होता है।"

लेटते समय नाग आत्म-मग्न (समाहित/समाधि) रहता है;

बैठते समय भी नाग आत्म-मग्न (समाधि/समाधि) रहता है।

हर जगह नाग संयमित रहता है:

यही नाग की संपदा है।

वह निर्दोष भोजन खाता है,

लेकिन निंदनीय भोजन नहीं खाता।

जब उसे भोजन और वस्त्र प्राप्त होते हैं, तो

वह उन्हें जमा करने से बचता है।

"सभी बंधनों और बेड़ियों को काटकर,

चाहे वे स्थूल हों या सूक्ष्म,

वह जिस भी दिशा में जाता है,

चिंतामुक्त होकर जाता है।"

"कमल का फूल

पानी में जन्म लेता है और बढ़ता है,

फिर भी पानी से मैला नहीं होता

बल्कि सुगंधित और मनमोहक बना रहता है।"

"इसी प्रकार बुद्ध, जो संसार में अच्छे कुल में जन्मे हैं,

संसार में निवास करते हैं, [1325]

फिर भी

कमल की तरह पानी से अछूते रहते हैं।"

"तेज जलती हुई आग

ईंधन न मिलने पर शांत हो जाती है,

और जब सारे कोयले बुझ जाते हैं,

तो उसे बुझा हुआ कहा जाता है। [1326]

"यह उपमा, जो अर्थ को व्यक्त करती है,

बुद्धिमानों द्वारा सिखाई गई थी।

महान नाग उस नाग को जानेंगे

जिसे नाग ने सिखाया था। [1327]

"काम (राग) से रहित, घृणा (दोष/द्वेष) से रहित,

मोह (मोह) से रहित, दोषरहित,

नाग अपने शरीर का त्याग करके,

दोषरहित होकर पूर्णतः तृप्त हो जाता है

और अंतिम निर्वाण प्राप्त करता है;" [1328]

---

44 मिगासाला

फिर सुबह, पूज्य आनंद ने वस्त्र धारण किए, अपना कुंड और वस्त्र लिया और अपनी महिला अनुयायी मिगासला के घर गए, जहाँ वे उनके लिए तैयार किए गए आसन पर बैठ गए। तब महिला अनुयायी मिगासला पूज्य आनंद के पास आईं, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गईं और बोलीं:

"भंते आनंद, भगवान (बुद्ध) की इस शिक्षा को कैसे समझा जाए, जहाँ ब्रह्मचारी और अविवाहित दोनों का भविष्य में एक ही गंतव्य है? [348] मेरे पिता पुराण ब्रह्मचारी थे, एकांत में रहते थे और सामान्य व्यक्ति की तरह यौन संबंध से परहेज करते थे। जब उनका निधन हुआ, तो भगवान (बुद्ध) ने घोषणा की: 'उन्होंने एक बार जन्म लेने वाले (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) की अवस्था प्राप्त की और तुषिता समूह [देवताओं के समूह] में पुनर्जन्म लिया है।' मेरे चाचा 1330 इसिदत्त ब्रह्मचारी नहीं थे, बल्कि उन्होंने सुखी वैवाहिक जीवन व्यतीत किया। जब उनका निधन हुआ, तो भगवान (बुद्ध) ने भी घोषणा की: 'उन्होंने एक बार जन्म लेने वाले (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) की अवस्था प्राप्त की और तुषिता समूह [देवताओं के समूह] में पुनर्जन्म लिया है।' भंते आनंद, भगवान (बुद्ध) की इस शिक्षा को कैसे समझा जाए, जिसमें ब्रह्मचारी और अविवाहित दोनों का भविष्य में एक ही गंतव्य है?

"बहन, भगवान (बुद्ध) ने ठीक इसी प्रकार इसकी घोषणा की थी।" 1331

फिर, जब पूज्य आनंद ने मिगासला के घर पर भिक्षा ग्रहण कर लिया, तो वे अपने आसन से उठे और चले गए। भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "हे भंते, सुबह मैंने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र लिया और गृहस्थ अनुयायी मिगासला के घर गया... [349] [ऊपर जैसा ही]... जब उसने मुझसे यह पूछा, तो मैंने उत्तर दिया: 'बहन, ठीक इसी तरह भगवान (बुद्ध) ने यह बात कही थी।'"

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] “अत्यंत, वह स्त्री-दीक्षित अनुयायी मिगासला कौन है, जो एक नासमझ, अयोग्य स्त्री है, जिसकी बुद्धि स्त्री जैसी है? 1332 और वे कौन हैं जो दूसरों को श्रेष्ठ और हीन मानते हैं? 1333

"आनंद, संसार में छह प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से छह प्रकार हैं?"

(1) "हे आनंद, यहाँ एक ऐसा व्यक्ति है जो सौम्य है, एक सुखद साथी है, जिसके साथ उसके साथी भिक्षु प्रसन्नतापूर्वक रहते हैं। परन्तु उसने [शिक्षाओं को] नहीं सुना है, [उनमें] विद्वत्ता प्राप्त नहीं की है, और [उनमें] दृष्टि से [उनका] अंतर्मन नहीं किया है, और वह क्षणिक मुक्ति प्राप्त नहीं करता है। 1334 शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह क्षीणता की ओर बढ़ता है, न कि ख्याति की ओर; वह क्षीणता की ओर जाने वाला है, न कि ख्याति की ओर।"

(2) "तो, हे आनंद, एक ऐसा व्यक्ति है जो सौम्य है, एक सुखद साथी है, जिसके साथ उसके साथी भिक्षु प्रसन्नतापूर्वक रहते हैं। उसने [शिक्षाओं को] सुना है, [उनमें] विद्वता प्राप्त की है, और [उनमें] दृष्टि से [उनका] अंतर्मन किया है, और वह अस्थायी मुक्ति प्राप्त करता है। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह भेद की ओर नहीं, बल्कि भेद की ओर अग्रसर होता है; वह भेद की ओर नहीं, बल्कि भेद की ओर अग्रसर होता है।"

"आनंद, जो लोग पक्षपाती हैं, वे उन पर ऐसा निर्णय सुनाएंगे: 'इसमें और दूसरे में समान गुण हैं। एक हीन और दूसरा श्रेष्ठ क्यों होना चाहिए?' उनका यह निर्णय 1335 वास्तव में उनके लिए लंबे समय तक हानि और पीड़ा का कारण बनेगा।"

"उनमें से, आनंद, जो सौम्य, सुखद साथी, जिनके साथ उनके साथी भिक्षु प्रसन्नतापूर्वक रहते हैं, जिन्होंने [शिक्षाओं को] सुना है, [उनमें] विद्वता प्राप्त की है, और [उनमें] अंतर्दृष्टि प्राप्त की है, और जिन्होंने अस्थायी मुक्ति प्राप्त की है, [350] दूसरे व्यक्ति से श्रेष्ठ और उपयुक्त हैं। इसका क्या कारण है? क्योंकि धम्म-धारा उन्हें अपने साथ ले जाती है। 1336 परन्तु तथागत (बुद्ध) के सिवा कौन इस अंतर को जान सकता है?"

इसलिए, आनंद, लोगों के बारे में निर्णय मत लो। लोगों पर फैसला मत सुनाओ। जो लोग लोगों पर फैसला सुनाते हैं, वे स्वयं को ही हानि पहुंचाते हैं। केवल मैं ही, या मेरे जैसा कोई और, लोगों पर फैसला सुना सकता है।

(3) "तो, आनंद, एक ही व्यक्ति में क्रोध और अहंकार पाए जाते हैं, और समय-समय पर उसमें लोभ की अवस्थाएँ उत्पन्न होती हैं। उसने [शिक्षाओं को] सुना नहीं है, [उनमें] विद्वता प्राप्त नहीं की है, और [उनमें] दृष्टि से [उनका] अंतर्मन नहीं किया है, और वह क्षणिक मुक्ति प्राप्त नहीं करता है। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह क्षीणता की ओर बढ़ता है, न कि ख्याति की ओर; वह क्षीणता की ओर जाने वाला है, न कि ख्याति की ओर।"

(4) "तो, आनंद, एक ही व्यक्ति में क्रोध और अहंकार पाए जाते हैं, और समय-समय पर उसमें लोभ की अवस्थाएँ उत्पन्न होती हैं। परन्तु उसने [शिक्षाओं को] सुना है, [उनमें] विद्वता प्राप्त की है, और [उनमें] दृष्टि से [अंतर्दृष्टि से] उनका विश्लेषण किया है, और वह अस्थायी मुक्ति प्राप्त करता है। मृत्यु के बाद, शरीर के टूटने के साथ, वह भेद की ओर नहीं, बल्कि भेद की ओर अग्रसर होता है; वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि भेद की ओर।"

"आनंद, जो निर्णय लेने वाले हैं वे उन पर ऐसा निर्णय सुनाएंगे। केवल मैं ही, या मेरे जैसा कोई, लोगों पर निर्णय सुना सकता है।" 1338

(5) "फिर, आनंद, एक ही व्यक्ति में क्रोध और अहंकार पाए जाते हैं, और वह समय-समय पर वाद-विवाद में संलग्न रहता है। 1339 और उसने [शिक्षाओं को] नहीं सुना है, [उनमें] विद्वत्ता नहीं प्राप्त की है, और [उनमें] दृष्टि से [उनका] अंतर्मन नहीं किया है, और वह क्षणिक मुक्ति प्राप्त नहीं करता है। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह क्षीणता की ओर बढ़ता है, न कि ख्याति की ओर; वह क्षीणता की ओर जाने वाला है, न कि ख्याति की ओर।"

(6) "फिर, आनंद, एक ही व्यक्ति में क्रोध और अहंकार पाए जाते हैं, और वह समय-समय पर शब्दों के आदान-प्रदान में संलग्न होता है। लेकिन उसने [शिक्षाओं को] सुना है, [उनमें] विद्वता प्राप्त की है, और दृष्टि से [उनमें] अंतर्विदारक हुआ है, और वह अस्थायी मुक्ति प्राप्त करता है। शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, [351] वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर; वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर।"

"आनंद, जो लोग पक्षपाती होते हैं, वे उन पर ऐसा निर्णय सुनाएंगे: 'इसमें और दूसरे में समान गुण हैं। एक को हीन और दूसरे को श्रेष्ठ क्यों माना जाए?' उनका यह निर्णय वास्तव में उनके लिए लंबे समय तक हानि और पीड़ा का कारण बनेगा।"

"उन दोनों में, आनंद, वह व्यक्ति जिसमें क्रोध और अहंकार पाया जाता है, और जो समय-समय पर वाद-विवाद में संलग्न होता है, परन्तु जिसने शिक्षाओं को सुना है, उनमें पारंगत हुआ है, दृष्टि से उनका गहन अध्ययन किया है, और जिसने क्षणिक मुक्ति प्राप्त की है, वह दूसरे व्यक्ति से श्रेष्ठ और उपयुक्त है। इसका कारण क्या है? क्योंकि धम्म-धारा उसे अपने साथ बहा ले जाती है। परन्तु तथागत (बुद्ध) के सिवा इस अंतर को कौन जान सकता है?"

इसलिए, आनंद, लोगों के बारे में निर्णय मत लो। लोगों पर फैसला मत सुनाओ। जो लोग लोगों पर फैसला सुनाते हैं, वे स्वयं को ही हानि पहुंचाते हैं। केवल मैं ही, या मेरे जैसा कोई और, लोगों पर फैसला सुना सकता है।

"अत्यंत, वह महिला गृहस्थ अनुयायी मिगासाला कौन है, जो एक स्त्री की बुद्धि वाली नासमझ, अयोग्य स्त्री है? और वे कौन हैं जो दूसरों को श्रेष्ठ और हीन मानते हैं?"

"ये दुनिया में पाए जाने वाले छह प्रकार के व्यक्ति हैं।"

"आनंद, यदि इसिदत्त में पुराण के समान सद्गुण होते, तो पुराण अपने गंतव्य को जान भी नहीं पाता। और यदि पुराण में इसिदत्त के समान ज्ञान होता, तो इसिदत्त अपने गंतव्य को जान भी नहीं पाता। 1340 इस प्रकार, आनंद, ये दोनों व्यक्ति किसी न किसी रूप में अपूर्ण थे।"

---

45 ऋण (इना, रीना के बिना)

(1) "भिक्षुओं, क्या संसार में अभाव, इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले व्यक्ति के लिए कष्टदायक नहीं है?"

"हां, भंते।"

(2) "यदि कोई गरीब, [352] निर्धन, निर्धन व्यक्ति ऋण में डूब जाता है, तो क्या उसका ऋण भी संसार में उस व्यक्ति के लिए कष्ट भोगना नहीं है जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है?"

"हां, भंते।"

(3) "यदि कोई गरीब, निर्धन, निर्धन व्यक्ति जो ऋण में डूब गया है, ब्याज चुकाने का वादा करता है, तो क्या वह ब्याज भी संसार में उस व्यक्ति के लिए कष्ट नहीं है जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है?"

"हां, भंते।"

(4) "यदि कोई गरीब, निर्धन, निर्धन व्यक्ति जिसने ब्याज चुकाने का वादा किया है, नियत समय पर ब्याज नहीं चुका पाता, तो वे उसे फटकारते हैं। क्या वह भी उस व्यक्ति के लिए फटकार का पात्र नहीं है जो सांसारिक सुखों का आनंद लेता है?"

"हां, भंते।"

(5) "यदि कोई गरीब, निर्धन, निर्धन व्यक्ति जिसे फटकार लगाई जाती है, भुगतान नहीं करता, तो वे उस पर मुकदमा चलाते हैं। क्या सांसारिक सुखों का आनंद लेने वाले व्यक्ति के लिए मुकदमा भी संसार में कष्ट भोगना नहीं है?"

"हां, भंते।"

(6) "यदि कोई गरीब, निर्धन, निर्धन व्यक्ति जिस पर मुकदमा चलाया जाता है, भुगतान नहीं करता है, तो उसे कारावास में डाल दिया जाता है। क्या कारावास भी सांसारिक कष्टों का आनंद लेने वाले व्यक्ति के लिए एक प्रकार का कष्ट नहीं है?"

"हां, भंते।"

इसलिए, भिक्षुओं, जो व्यक्ति इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, उसके लिए संसार में दरिद्रता कष्ट है; ऋण लेना संसार में कष्ट है; ब्याज चुकाना संसार में कष्ट है; निंदा सहना संसार में कष्ट है; मुकदमा झेलना संसार में कष्ट है; और कारावास संसार में कष्ट है।

(1) "इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, जब किसी को लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के अभ्यास में विश्वास नहीं होता, जब किसी को लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के अभ्यास में नैतिक लज्जा नहीं होती, जब किसी को लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के अभ्यास में नैतिक भय नहीं होता, जब किसी को लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के अभ्यास में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं होती, जब किसी को लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के अभ्यास में पन्ना (दिव्य ज्ञान) नहीं होता, तो वह भगवान के अनुशासन में गरीब, दरिद्र, निर्धन व्यक्ति कहलाता है।"

(2) "विश्वास न होने, नैतिक लज्जा का बोध न होने, नैतिक भय न होने, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) न होने, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने में पन्ना (दिव्य ज्ञान) न होने के कारण, वह निर्धन, दरिद्र, निर्धन व्यक्ति शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त होता है। मैं कहता हूँ, यही उसका ऋण में डूबना है।"

(3) "अपने शारीरिक दुराचार को छिपाने के लिए, वह एक बुरी इच्छा पालता है। वह चाहता है: 'कोई मुझे न जाने'; वह इरादा रखता है [इस उद्देश्य से]: 'कोई मुझे न जाने'; [353] वह कथन करता है [इस उद्देश्य से]: 'कोई मुझे न जाने'; वह शारीरिक प्रयास करता है [इस उद्देश्य से]: 'कोई मुझे न जाने'।"

"अपने शाब्दिक दुराचार को छिपाने के लिए... अपने मानसिक दुराचार को छिपाने के लिए, वह एक बुरी इच्छा पालता है। वह चाहता है: 'कोई मुझे न जाने'; उसका इरादा होता है: 'कोई मुझे न जाने'; वह ऐसे कथन बोलता है: 'कोई मुझे न जाने'; वह शारीरिक प्रयास करता है: 'कोई मुझे न जाने'। मैं कहता हूँ, यही वह कीमत है जो उसे चुकानी होगी।"

(4) "अच्छे व्यवहार वाले साथी भिक्षु उनके बारे में इस प्रकार कहते हैं: 'यह आदरणीय व्यक्ति इस प्रकार कार्य करता है, इस प्रकार व्यवहार करता है।' मैं कहता हूँ, यही उसकी निंदा है।"

(5) "जब वह जंगल में, किसी वृक्ष की तलहटी में, या किसी सुनसान घर में जाता है, तो पश्चाताप के साथ बुरे (अकुसला) विचार उसे सताते हैं। मैं कहता हूँ, यही उसका अभियोग है।"

(6) "फिर, मृत्यु के बाद शरीर के क्षुद्र होने पर, वह निर्धन, दरिद्र, निर्धन व्यक्ति जिसने शरीर, वाणी और मन से दुराचार किया हो, नरक के कारागार या पशुलोक के कारागार में बंध जाता है। हे भिक्षुओं, मुझे नरक के कारागार या पशुलोक के कारागार के समान कोई अन्य कारागार इतना भयानक और कठोर तथा बंधन से पूर्ण मुक्ति प्राप्त करने में इतनी बड़ी बाधा नहीं दिखाई देती।"

दुनिया में गरीबी को दुख कहा जाता है;

कर्ज में डूबना भी दुख का कारण है।

कर्ज में डूबा गरीब व्यक्ति सुख-सुविधाओं

में डूबे रहने के बावजूद परेशान रहता है।

फिर वे उस पर मुकदमा चलाते हैं

और उसे कारावास भुगतना पड़ता है। लाभ और इंद्रिय सुखों की लालसा रखने वाले व्यक्ति के लिए

यह कारावास वास्तव में कष्टदायी होता है ।

ठीक वैसे ही, नोबल के अनुशासन में,

जिसमें विश्वास की कमी होती है, [354]

जो निर्लज्ज और उद्दंड होता है, वह

बुरे कर्मों का ढेर लगाता है।

शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त होने के बाद ,

वह यह इच्छा करता है:

"काश मेरे बारे में किसी को पता न चले।"

वह अपने शरीर को घुमाता है,

(अपनी वाणी या मन से) घुमाता है; वह किसी न किसी रूप में बार-बार

अपने बुरे कर्मों का ढेर लगाता है ।

यह नासमझ दुष्ट,

अपने कुकर्मों को जानते हुए भी, एक गरीब व्यक्ति है

जो कर्ज में डूब जाता है, और

मौज-मस्ती करते हुए भी परेशान रहता है।

फिर उसके विचार ही उसे सताने लगते हैं;

पश्चाताप से उत्पन्न पीड़ादायक मानसिक अवस्थाएँ

(उसका पीछा करती रहती हैं,

चाहे वह गाँव में हो या जंगल में)।

यह मूर्ख दुष्ट,

अपने कुकर्मों को जानते हुए,

किसी [पशु] लोक में जाता है

या नरक में भी जा सकता है।

यह वास्तव में बंधन की पीड़ा है 1341

जिससे बुद्धिमान व्यक्ति मुक्त हो जाता है,

धार्मिक रूप से अर्जित धन से [दान] देकर,

अपने मन को विश्वास में स्थिर करके।

आस्थावान गृहस्थ ने

दोनों ही स्थितियों में सौभाग्यशाली दांव खेला है:

इस जीवन में अपने कल्याण

और भविष्य के जन्मों में सुख के लिए।

इस प्रकार गृहस्थों के लिए

यह पुण्य उदारता के माध्यम से बढ़ता है। 1342

ठीक इसी प्रकार, संत के अनुशासन में,

जिसका विश्वास दृढ़ हो,

जो लज्जा से युक्त हो, जो अन्याय से भयभीत हो,

बुद्धिमान हो और सदाचारी आचरण से संयमित हो, उसे संत के अनुशासन में

सुखी जीवन जीने वाला कहा जाता है ।

आध्यात्मिक सुख प्राप्त करने के बाद,

व्यक्ति उदासीनता (भीतर में लीन होना/उपेक्खा) का संकल्प लेता है।

पाँच बाधाओं का त्याग करके, जो

सदा ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को प्रेरित करती रहती हैं,

वह ध्यान (सतीत्व) की अवस्था में प्रवेश करता है,

एकाग्र, सचेत और सजग होता है।

चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानने के बाद,

पूर्ण अनासक्ति के माध्यम से

मन

सभी बंधनों के नाश होने से सही मायने में मुक्त हो जाता है।

अस्तित्व के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म के कारण) के टूटने के साथ,

स्थिर और सही मायने में मुक्त व्यक्ति को

यह ज्ञान प्राप्त होता है:

"मेरी मुक्ति अविचल है।"

यही सर्वोच्च ज्ञान है;

यही अतुलनीय सुख है।

दुःख रहित, निर्मल और सुरक्षित,

यही ऋण से मुक्ति की सर्वोच्च अवस्था है। [355]

---

46 महाकुंडा

मैंने ऐसा सुना है। एक बार पूज्य महाकुंडा सहजाति में चैतियों के बीच निवास कर रहे थे। वहाँ उन्होंने भिक्षुओं को संबोधित किया:

"मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य महाकुंड ने यह कहा:

(1) "यहाँ, हे मित्रों, धम्म योगी भिक्षु 1343 उन भिक्षुओं की निंदा करते हैं जो ध्यान करते हैं, यह कहते हुए: 'वे ध्यान और चिंतन करते हैं, [यह दावा करते हुए]: "हम ध्यान करने वाले हैं, हम ध्यान करने वाले हैं!" 1344 वे ध्यान क्यों करते हैं? वे किस प्रकार ध्यान करते हैं? वे कैसे ध्यान करते हैं?' इस स्थिति में, धम्म योगी भिक्षु प्रसन्न नहीं होते, और ध्यान करने वाले भिक्षु भी प्रसन्न नहीं होते, और वे अनेक लोगों

के कल्याण के लिए, अनेक लोगों की खुशी के लिए, अनेक लोगों के भले, कल्याण और खुशी के लिए, देवताओं (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के लिए अभ्यास नहीं कर रहे हैं।

(2) परन्तु ध्यानमग्न भिक्षु धम्म योगी भिक्षुओं की निंदा करते हुए कहते हैं: 'वे बेचैन, अहंकारी, अभिमानी, बातूनी, अपनी बातों में बेतरतीब, भ्रमित, पूर्ण बोधहीन (संपजन्न), असामहित (असंध्या) वाले, भटकते मन वाले, शिथिल इंद्रियों वाले हैं, [दावा करते हैं]: "हम धम्म योगी हैं, हम धम्म योगी हैं!" वे धम्म योगी क्यों हैं? वे किस प्रकार धम्म योगी हैं? वे कैसे धम्म योगी हैं?' इस स्थिति में, ध्यानमग्न भिक्षु प्रसन्न नहीं होते, न ही धम्म योगी प्रसन्न होते हैं, और वे अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की प्रसन्नता, अनेक लोगों के भले, कल्याण और सुख के लिए, देवताओं और मनुष्यों के लिए अभ्यास नहीं कर रहे हैं।

(3) "मित्रों, जो भिक्षु धम्म योगी हैं, वे केवल धम्म योगी भिक्षुओं की ही प्रशंसा करते हैं, ध्यान करने वालों की नहीं। इस स्थिति में, जो भिक्षु धम्म विशेषज्ञ हैं [356], वे प्रसन्न नहीं होते, और जो ध्यान करने वाले हैं, वे भी प्रसन्न नहीं होते, और वे अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, देवताओं और मनुष्यों के कल्याण और खुशी के लिए अभ्यास नहीं कर रहे हैं।"

(4) "परन्तु जो भिक्षु ध्यान करते हैं, वे केवल उन्हीं भिक्षुओं की प्रशंसा करते हैं जो ध्यान करते हैं, न कि उन भिक्षुओं की जो धम्म (मार्ग) के विशेषज्ञ हैं। इस स्थिति में, जो भिक्षु ध्यान करते हैं, वे प्रसन्न नहीं होते, और जो धम्म योगी हैं, वे भी प्रसन्न नहीं होते, और वे अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, देवताओं और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए अभ्यास नहीं कर रहे हैं।"

(5) "अतः, मित्रों, आपको स्वयं को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हममें से जो धम्म योगी हैं, वे उन भिक्षुओं की प्रशंसा करेंगे जो ध्यान करते हैं।' आपको स्वयं को इसी प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए। इसका कारण क्या है? क्योंकि, मित्रों, ये व्यक्ति संसार में अद्भुत और दुर्लभ हैं, जिन्होंने शरीर धारण करके अमर तत्व को स्पर्श किया है। 1345

(6) "अतः मित्रों, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हममें से जो ध्यान करते हैं, वे उन भिक्षुओं की प्रशंसा करेंगे जो धम्म योगी हैं।' आपको इसी प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए। इसका कारण क्या है? क्योंकि मित्रों, वे व्यक्ति संसार में अद्भुत और दुर्लभ हैं जो किसी विषय को भेदकर (दिव्य ज्ञान से) गहन और सारगर्भित देख पाते हैं।" 1346

---

47 प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान (1) (संदित्थिका1)

तब तपस्वी मोलियाशिवका भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। 1347 अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, ऐसा कहा जाता है: 'प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान धम्म; प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान धम्म।' भंते, धम्म किस प्रकार प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक, देखने के लिए आमंत्रित करने वाला, लागू करने योग्य, और ज्ञानियों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किए जाने योग्य है?" 1348 [357]

"तो फिर, शिवक, मैं बारी-बारी से तुमसे इस विषय पर प्रश्न पूछूंगा। तुम अपनी इच्छानुसार उत्तर देना। शिवक, तुम्हारा क्या विचार है? (1) जब तुम्हारे भीतर लोभ होता है, तो क्या तुम जानते हो: 'मेरे भीतर लोभ है,' और जब तुम्हारे भीतर लोभ नहीं होता है, तो क्या तुम जानते हो: 'मेरे भीतर लोभ नहीं है'?"

"हां, भंते।"

"हे शिवक, जब तुम्हारे भीतर लोभ होता है, तो तुम जानते हो: 'मेरे भीतर लोभ है' और जब तुम्हारे भीतर लोभ नहीं होता, तो तुम जानते हो: 'मेरे भीतर लोभ नहीं है,' इस प्रकार धम्म प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक, देखने के लिए आमंत्रित करने वाला, लागू करने योग्य और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाने वाला है।"

"शिवका, तुम क्या सोचते हो? (2) जब तुम्हारे भीतर घृणा हो... (3) ... तुम्हारे भीतर मोह हो... (4) ... तुम्हारे भीतर लोभ से जुड़ी अवस्था हो... (5) ... तुम्हारे भीतर घृणा से जुड़ी अवस्था हो... (6) ... तुम्हारे भीतर मोह से जुड़ी अवस्था हो, तो क्या तुम जानते हो: 'मेरे भीतर मोह से जुड़ी अवस्था है,' और जब तुम्हारे भीतर मोह से जुड़ी कोई अवस्था न हो, तो क्या तुम जानते हो: 'मेरे भीतर मोह से जुड़ी कोई अवस्था नहीं है'?"

"हां, भंते।"

"हे शिवक, जब तुम्हारे भीतर मोह से संबंधित कोई अवस्था होती है, तो तुम जानते हो: 'मेरे भीतर मोह से संबंधित एक अवस्था है' और जब तुम्हारे भीतर मोह से संबंधित कोई अवस्था नहीं होती है, तो तुम जानते हो: 'मेरे भीतर मोह से संबंधित कोई अवस्था नहीं है'। इस प्रकार धम्म प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक, दर्शन के लिए आमंत्रित करने वाला, व्यावहारिक और ज्ञानियों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाने वाला है।"

"उत्कृष्ट, भंते! ... [6:38 पर] ... भगवान (बुद्ध) मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें, जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

---

48 प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान (2) (संदित्थिका2)

फिर एक ब्राह्मण भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वह एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से बोला:

"गुरु गौतम, ऐसा कहा जाता है: 'प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान धम्म, प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान धम्म।' किस अर्थ में? गुरु गौतम, [358] क्या धम्म प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक, देखने के लिए आमंत्रित करने वाला, लागू करने योग्य, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाने वाला है?"

"तो फिर, हे ब्राह्मण, मैं बारी-बारी से तुमसे इस विषय पर प्रश्न पूछूंगा। तुम अपनी इच्छानुसार उत्तर दो। हे ब्राह्मण, तुम्हारा क्या विचार है? (1) जब तुम्हारे भीतर कामवासना (राग) होती है, तो क्या तुम जानते हो: 'मेरे भीतर कामवासना (राग) है,' और जब तुम्हारे भीतर कामवासना (राग) नहीं होती है, तो क्या तुम जानते हो: 'मेरे भीतर कामवासना (राग) नहीं है'?"

"जी श्रीमान।"

"हे ब्राह्मण, जब तुम्हारे भीतर कामवासना (राग) होती है, तो तुम जानते हो: 'मेरे भीतर कामवासना (राग) है' और जब तुम्हारे भीतर कामवासना (राग) नहीं होती है, तो तुम जानते हो: 'मेरे भीतर कामवासना (राग) नहीं है', इस प्रकार धम्म प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक, देखने के लिए आमंत्रित करने वाला, लागू करने योग्य और ज्ञानी व्यक्तियों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किए जाने योग्य है।"

"हे ब्राह्मण, तुम क्या सोचते हो? (2) जब तुम्हारे भीतर घृणा हो... (3) ... तुम्हारे भीतर मोह हो... (4) ... तुम्हारे भीतर शारीरिक दोष हो... (5) ... तुम्हारे भीतर मौखिक दोष हो... (6) ... तुम्हारे भीतर मानसिक दोष हो, तो क्या तुम जानते हो: 'मेरे भीतर मानसिक दोष है,' और जब तुम्हारे भीतर कोई मानसिक दोष न हो, तो क्या तुम जानते हो: 'मेरे भीतर कोई मानसिक दोष नहीं है'?"

"जी श्रीमान।"

"हे ब्राह्मण, जब तुम्हारे भीतर कोई मानसिक दोष होता है, तो तुम जान जाते हो: 'मेरे भीतर एक मानसिक दोष है,' और जब तुम्हारे भीतर कोई मानसिक दोष नहीं होता, तो तुम जान जाते हो: 'मेरे भीतर कोई मानसिक दोष नहीं है,' इस प्रकार धम्म (मार्ग) प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान, तात्कालिक, देखने के लिए आमंत्रित करने वाला, व्यावहारिक और ज्ञानी लोगों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाने वाला है।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! . . . [जैसा कि 6:38 में है] . . . गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन के लिए शरण ली है।"

---

49 खेमा

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस समय पूज्य खेमा और पूज्य सुमना भी सावत्थी [359] में अंधों के वन में निवास कर रहे थे। तब वे भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। पूज्य खेमा ने तब भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, जब कोई भिक्षु अरहंत होता है, जिसके सारे दोष नष्ट हो जाते हैं, जिसने ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत किया हो, जो करना आवश्यक था वह कर चुका हो, बोझ उतार चुका हो, अपने लक्ष्य तक पहुँच चुका हो, जन्म के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म के कारण) को पूरी तरह नष्ट कर चुका हो, और अंतिम ज्ञान से पूर्णतः मुक्त हो चुका हो, तब उसके मन में यह विचार नहीं आता: (1) 'मुझसे श्रेष्ठ कोई है,' या (2) 'मेरे बराबर कोई है,' या (3) 'मुझसे हीन कोई है।'"

यह बात पूज्य खेमा ने कही। गुरुजी सहमत हो गए। तब पूज्य खेमा ने यह सोचकर कि 'गुरुजी मुझसे सहमत हैं,' अपने आसन से उठकर भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और उनके दाहिनी ओर से उनकी ओर मुड़कर बाईं ओर परिक्रमा की।

फिर, पूज्य खेमा के चले जाने के तुरंत बाद, पूज्य सुमना ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, जब कोई भिक्षु अरहंत होता है, जिसके सारे दोष नष्ट हो जाते हैं, जिसने ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत किया हो, जो करना आवश्यक था वह कर चुका हो, बोझ उतार चुका हो, अपने लक्ष्य तक पहुँच चुका हो, जन्म के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म के कारण) को पूरी तरह से नष्ट कर चुका हो, और अंतिम ज्ञान से पूर्णतः मुक्त हो चुका हो, तो उसके मन में यह विचार नहीं आता: (4) 'मुझसे श्रेष्ठ कोई नहीं है,' या (5) 'मेरे समतुल्य कोई नहीं है' या (6) 'मुझसे हीन कोई नहीं है।'"

यह बात पूज्य सुमना ने कही। गुरुजी सहमत हो गए। तब पूज्य सुमना ने यह सोचकर कि 'गुरुजी मुझसे सहमत हैं' अपने आसन से उठकर भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और चले गए। 1351

फिर, दोनों भिक्षुओं के चले जाने के तुरंत बाद, भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं, कुल के लोग अंतिम ज्ञान की घोषणा इस प्रकार करते हैं। वे अर्थ तो बताते हैं, लेकिन स्वयं को उसमें शामिल नहीं करते। 1352 परन्तु यहाँ कुछ अज्ञानी लोग हैं जो मानो मजाक में अंतिम ज्ञान की घोषणा कर रहे हैं। उन्हें बाद में कष्ट भोगना पड़ेगा।"

वे स्वयं को श्रेष्ठ या हीन नहीं मानते, न ही वे स्वयं को समान मानते हैं। 1353 पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी लिया गया है; वे बंधनों से मुक्त होकर आगे बढ़ते हैं। [360]

---

50 (8) इन्द्रियसंयम 1354 (इन्द्रियसंवर)

भिक्षुओं, (1) जब इंद्रियों पर संयम न हो, तो इंद्रियों पर संयम की कमी वाले व्यक्ति के लिए, (2) सद्गुणों का निकटवर्ती कारण नहीं रह जाता। जब सद्गुणों का अभाव हो, तो सद्गुणों की कमी वाले व्यक्ति के लिए, (3) सही एकाग्रता का निकटवर्ती कारण नहीं रह जाता। जब सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) न हो, तो सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की कमी वाले व्यक्ति के लिए, (4) यथार्थ-भूत-ज्ञान-दर्शन (यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन) का निकटवर्ती कारण नहीं रह जाता। जब यथार्थ-भूत-ज्ञान और दर्शन की कमी वाले व्यक्ति के लिए, (5) निब्बिदा और वैराग्य का निकटवर्ती कारण नहीं रह जाता। जब निब्बिदा और वैराग्य का अभाव हो, तो विरग्य और वैराग्य (विराग) की कमी के कारण, (6) मुक्ति का ज्ञान और दृष्टि (विमुक्ति-नाना-दस्सना संस्कृत विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) अपने निकटवर्ती कारण से वंचित है।

मान लीजिए एक पेड़ में शाखाएँ और पत्तियाँ कम हैं। तो उसकी शाखाएँ पूरी तरह से विकसित नहीं होतीं; न ही उसकी छाल, कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी पूरी तरह से विकसित होती हैं। ठीक इसी प्रकार, जब इंद्रियों पर नियंत्रण नहीं होता, तो इंद्रियों पर नियंत्रण न होने पर सद्गुणों का प्रत्यक्ष कारण नहीं मिलता। जब सद्गुण नहीं होते... तो मुक्ति का ज्ञान और दर्शन भी अपने प्रत्यक्ष कारण से वंचित हो जाते हैं।

भिक्षुओं, (1) जब इंद्रियों पर संयम हो, तो इंद्रियों पर संयम रखने वाले व्यक्ति के लिए, (2) सद्गुणी आचरण उसका निकटतम कारण है। जब सद्गुणी आचरण हो, तो सद्गुणी आचरण वाले व्यक्ति के लिए, (3) सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) उसका निकटतम कारण है। जब सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) हो, तो सही समाधि प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए, (4) यथार्थ-भूत-ज्ञान-दर्शन (यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन) उसका निकटतम कारण है। जब यथार्थ-भूत-ज्ञान और दर्शन प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए, (5) निब्बिदा और वैराग्य उनका निकटतम कारण है। जब निब्बिदा और वैराग्य हो, तो (6) विरंजना और वैराग्य, (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) मुक्ति का ज्ञान और दृष्टि, इसके निकटवर्ती कारण को धारण करती है।

मान लीजिए एक वृक्ष है जिसमें शाखाएँ और पत्तियाँ हैं। फिर उसकी शाखाएँ पूर्ण रूप से बढ़ती हैं; उसकी छाल, कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी भी पूर्ण रूप से बढ़ती हैं। ठीक इसी प्रकार, जब इंद्रियों पर संयम रखा जाता है, तो जो व्यक्ति इंद्रियों पर संयम रखता है, उसे सद्गुणों का प्रत्यक्ष कारण प्राप्त होता है। जब सद्गुण होते हैं... तो मुक्ति का ज्ञान और दर्शन उसका प्रत्यक्ष कारण प्राप्त होता है। [361 j]

---

51 आनंद

तब पूज्य आनंद, पूज्य सारिपुत्त के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर, वे एक तरफ बैठ गए और पूज्य सारिपुत्त से बोले:

"मित्र सारिपुत्त, एक भिक्षु (साधु) उस शिक्षा को कैसे सुन सकता है जिसे उसने पहले नहीं सुना है, उन शिक्षाओं को कैसे नहीं भूल सकता जिन्हें वह पहले ही सुन चुका है, उन शिक्षाओं को कैसे याद कर सकता है जिनसे वह पहले से परिचित है, 355 और उस बात को कैसे समझ सकता है जिसे वह नहीं समझ पाया है?"

"आदरणीय आनंद विद्वान हैं। कृपया इस मामले को स्वयं स्पष्ट करें।"

"तो सुनो, मित्र सारिपुत्त, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी हां, मित्र," पूज्य सारिपुत्त ने उत्तर दिया। पूज्य आनंद ने यह कहा:

"हे मित्र सारिपुत्त, यहाँ एक भिक्षु धम्म का अध्ययन करता है: प्रवचन (सूत्र), मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, श्लोक (गाथाएँ), प्रेरित कथन (उदन), उद्धरण (इतिवुत्तक), पुनर्जन्म कथाएँ (जातक), अद्भुत वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर। (2) वह दूसरों को धम्म का विस्तारपूर्वक शिक्षण करता है जैसा उसने सुना और सीखा है। (3) वह दूसरों से धम्म को विस्तारपूर्वक दोहराने के लिए कहता है जैसा उन्होंने सुना और सीखा है। (4) वह धम्म का विस्तारपूर्वक पाठ करता है जैसा उसने सुना और सीखा है। (5) वह धम्म पर मनन करता है, उसका परीक्षण करता है और मानसिक रूप से उसका निरीक्षण करता है जैसा उसने सुना और सीखा है। (6) वह वर्षा ऋतु में ऐसे निवास में प्रवेश करता है जहाँ विद्वान, विरासत के उत्तराधिकारी, धम्म के विशेषज्ञ, अनुशासन के विशेषज्ञ और रूपरेखाओं के विशेषज्ञ वरिष्ठ भिक्षु रहते हैं। समय-समय पर वह उनके पास जाता है और पूछता है: 'यह कैसे है, भंते? इसका क्या अर्थ है?' तब वे पूज्यवर उसे वह सब कुछ प्रकट करते हैं जो प्रकट नहीं हुआ था, अस्पष्ट बातों को स्पष्ट करते हैं और उसके अनेक उलझन भरे बिंदुओं को दूर करते हैं। [362] मित्र सारिपुत्त, इसी प्रकार एक भिक्षु को वह शिक्षा सुनने को मिलती है जो उसने पहले नहीं सुनी होती, वह उन शिक्षाओं को नहीं भूलता जो वह पहले सुन चुका होता है, उन शिक्षाओं को याद करता है जिनसे वह पहले से परिचित होता है, और वह समझ जाता है जो वह नहीं समझ पाया होता।

"यह आश्चर्यजनक और अद्‌भुत है, मित्र, कि पूज्य आनंद ने इसे कितनी अच्छी तरह से व्यक्त किया है। और हम पूज्य आनंद को इन छह गुणों से युक्त मानते हैं: (1) पूज्य आनंद ने धम्म का ज्ञान प्राप्त किया है: प्रवचन (सूत्र), मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, श्लोक (गाथाएँ), प्रेरित कथन (उदन), उद्धरण (इतिवुत्तक), पुनर्जन्म कथाएँ (जातक), अद्‌भुत वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर। (2) वे दूसरों को धम्म का विस्तारपूर्वक उपदेश देते हैं, जैसा कि उन्होंने सुना और सीखा है। (3) वे दूसरों से धम्म को विस्तारपूर्वक दोहराने के लिए कहते हैं, जैसा कि उन्होंने उनसे सुना और सीखा है... (4) वे धम्म का विस्तारपूर्वक पाठ करते हैं, जैसा कि उन्होंने सुना और सीखा है।"

(5) वह धम्म का चिंतन, परीक्षण और मानसिक रूप से निरीक्षण करता है जैसा उसने सुना और सीखा है। (6) वह वर्षा ऋतु में ऐसे निवास में प्रवेश करता है जहाँ उच्च कोटि के विद्वान, विरासत के उत्तराधिकारी, धम्म के विशेषज्ञ, अनुशासन के विशेषज्ञ और रूपरेखाओं के विशेषज्ञ वरिष्ठ भिक्षु रहते हैं। समय-समय पर वह उनके पास जाकर पूछता है: 'यह क्या है, भंते? इसका क्या अर्थ है?' तब वे पूजनीय भिक्षु उसे वह प्रकट करते हैं जो प्रकट नहीं हुआ है, अस्पष्ट बातों को स्पष्ट करते हैं और अनेक उलझनों के बारे में उसकी शंकाओं को दूर करते हैं।

---

52 क्षत्रिय (संस्कृत क्षत्रिय)

तब ब्राह्मण जनुसोनी भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा: [363]

(1) "हे गौतम गुरु, क्षत्रियों का उद्देश्य क्या है? उनकी खोज क्या है? उनका आधार क्या है? वे किस पर केंद्रित हैं? उनका अंतिम लक्ष्य क्या है?" 1356

"हे ब्राह्मण, क्षत्रियों का उद्देश्य धन है; उनकी खोज पन्ना (दिव्य ज्ञान) की है; उनका सहारा शक्ति है; वे क्षेत्र पर कब्जा करने के लिए उत्सुक रहते हैं; और उनका अंतिम लक्ष्य संभगवानता है।"

(2) "परन्तु, हे गौतम गुरु, ब्राह्मणों का उद्देश्य क्या है? उनकी खोज क्या है? उनका सहारा क्या है? वे किस ओर उन्मुख हैं? उनका अंतिम लक्ष्य क्या है?"

"हे ब्राह्मण, धन ही ब्राह्मणों का लक्ष्य है; उनकी खोज पन्ना (दिव्य ज्ञान) की है; वैदिक मंत्र उनका सहारा हैं; वे यज्ञ में लीन रहते हैं; और उनका अंतिम लक्ष्य ब्रह्मलोक है।"

(3) "परन्तु, हे गौतम स्वामी, गृहस्थों का उद्देश्य क्या है? उनकी खोज क्या है? उनका सहारा क्या है? वे किस पर केंद्रित हैं? उनका अंतिम लक्ष्य क्या है?"

"हे ब्राह्मण, गृहस्थों का लक्ष्य धन कमाना होता है; उनकी खोज पन्ना (दिव्य ज्ञान) की होती है; उनका शिल्प ही उनका सहारा होता है; वे काम में लीन रहते हैं; और उनका अंतिम लक्ष्य अपने काम को पूरा करना होता है।"

(4) "परन्तु, हे गौतम गुरु, स्त्रियों का उद्देश्य क्या है? उनकी खोज क्या है? उनका सहारा क्या है? वे किस ओर उन्मुख हैं? उनका अंतिम लक्ष्य क्या है?"

"स्त्रियों का लक्ष्य ब्राह्मण पुरुष होता है; उनकी खोज आभूषणों की होती है; पुत्र उनके सहारा होते हैं; वे प्रतिद्वंद्वी रहित होने के लिए दृढ़ संकल्पित होती हैं; और उनका अंतिम लक्ष्य सत्ता प्राप्त करना होता है।"

(5) "परन्तु, हे गौतम गुरु, चोरों का उद्देश्य क्या है? उनकी खोज क्या है? उनका समर्थन क्या है? वे किस पर आमादा हैं? उनका अंतिम लक्ष्य क्या है?"

"हे ब्राह्मण, लूटपाट चोरों का उद्देश्य है; उनकी खोज घने जंगलों में होती है; धूर्तता उनका सहारा है; 1357 वे अंधेरी जगहों पर घात लगाए बैठे रहते हैं; और उनका अंतिम लक्ष्य अदृश्य रहना है।"

(6) "परन्तु, हे गौतम गुरु, तपस्वियों का उद्देश्य क्या है? उनकी खोज क्या है? उनका सहारा क्या है? वे किस पर केंद्रित हैं? उनका अंतिम लक्ष्य क्या है?"

"हे ब्राह्मण, धैर्य और नम्रता तपस्वियों का लक्ष्य है; उनकी खोज पन्ना (दिव्य ज्ञान) की होती है; सदाचारी आचरण उनका सहारा है; वे शून्यता पर केंद्रित होते हैं; और उनका अंतिम लक्ष्य निर्वाण है।"

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है। गुरु गौतम! गुरु गौतम क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहस्थों, महिलाओं, चोरों, [364] और तपस्वियों के उद्देश्य, खोज, समर्थन, इरादे और अंतिम लक्ष्य को जानते हैं।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! . . . [जैसा कि 6:38 में है] . . . गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन के लिए शरण ली है।"

---

53 सतर्कता (अप्पमादा)

फिर एक ब्राह्मण भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वह एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से बोला:

"गुरु गौतम, क्या कोई ऐसी चीज है जिसे विकसित और पोषित करने से वर्तमान जीवन से संबंधित और भविष्य के जीवन से संबंधित दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त हो सकते हैं?"

"हाँ, ऐसा होता है, ब्राह्मण।"

और यह क्या है?

"यह सतर्कता है।"

(1) "हे ब्राह्मण, जिस प्रकार चलने वाले सभी पशुओं के पदचिह्न हाथी के पदचिह्न में समाहित हो जाते हैं, और आकार के संदर्भ में हाथी का पदचिह्न उनमें सबसे श्रेष्ठ घोषित किया जाता है, उसी प्रकार सतर्कता ही वह एक चीज है, जिसे विकसित और पोषित करने पर वर्तमान जीवन से संबंधित और भविष्य के जीवन से संबंधित दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त हो सकते हैं।"

(2) "जैसे किसी शिखर वाले घर के सभी शहतीर छत के शिखर की ओर झुकते हैं, छत के शिखर की ओर ढलान बनाते हैं, छत के शिखर पर अभिसरित होते हैं, और छत के शिखर को उनमें सबसे आगे घोषित किया जाता है, वैसे ही [365] सतर्कता ही एकमात्र ऐसी चीज है जो... दोनों प्रकार के अच्छे कार्य कर सकती है...।"

(3) "जिस प्रकार एक सरकंडा काटने वाला सरकंडों का गुच्छा काटने के बाद उन्हें ऊपर से पकड़ता है, नीचे से हिलाता है, दोनों किनारों से हिलाता है और पीटता है, उसी प्रकार सतर्कता ही वह एक चीज है जो... दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त करा सकती है। ..."

(4) "जैसे आमों के गुच्छे की डंडी काटने पर उससे जुड़े सारे आम भी उसके साथ गिर जाते हैं, वैसे ही सतर्कता ही एक ऐसी चीज है जो... दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त करा सकती है..."

(5) "जिस प्रकार सभी छोटे राजकुमार चक्र घुमाने वाले सम्राट के अधीन होते हैं, और चक्र घुमाने वाले सम्राट को उनमें सबसे आगे घोषित किया जाता है, उसी प्रकार सतर्कता ही एकमात्र ऐसी चीज है जो... दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त कर सकती है। ..."

(6) "जिस प्रकार सभी तारों की चमक चंद्रमा की चमक के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं होती, और चंद्रमा की चमक को उनमें सर्वोपरि माना जाता है, उसी प्रकार सतर्कता ही एकमात्र ऐसी चीज है जो... दोनों प्रकार के अच्छे कार्यों को पूरा कर सकती है..."

"हे ब्राह्मण, यही वह एक चीज है, जिसे विकसित और पोषित करने पर दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त हो सकते हैं, वर्तमान जीवन से संबंधित लाभ और भविष्य के जीवन से संबंधित लाभ।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम... गुरु गौतम मुझे गृहस्थ अनुयायी समझें जो आज से जीवन भर के लिए शरण लेने गया है।" [366]

---

54 धम्मिका

एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। उस समय पूज्य धम्मिका अपने गृह जिले के सभी सात मठों में निवास कर रहे थे। 359 वहाँ पूज्य धम्मिका ने आने वाले भिक्षुओं का अपमान किया, उन्हें गालियाँ दीं, उन्हें हानि पहुँचाई, उन पर हमला किया और उन्हें डाँटा, जिसके बाद वे भिक्षु वहाँ से चले गए। वे वहाँ बसे नहीं बल्कि मठ छोड़कर चले गए।

तब अपने क्षेत्र के गृहस्थ अनुयायियों के मन में यह विचार आया: "हम भिक्षुओं के संघ को वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ एवं भोजन उपलब्ध कराते हैं, लेकिन आने वाले भिक्षु चले जाते हैं। वे यहाँ ठहरते नहीं बल्कि मठ खाली कर देते हैं। ऐसा क्यों होता है?"

तब उनके मन में यह विचार आया: "यह पूज्य धम्मिका भिक्षुओं का अपमान करता है, उन्हें गाली देता है, उन्हें हानि पहुँचाता है, उन पर हमला करता है और उन्हें डांटता है, जिसके बाद वे भिक्षु मठ छोड़कर चले जाते हैं। वे वहाँ ठहरते नहीं बल्कि मठ खाली कर देते हैं। चलो, इस पूज्य धम्मिका को निष्कासित कर देते हैं।"

तब अनुयायी पूज्य धम्मिका के पास गए और उनसे कहा: "भंते, इस मठ को छोड़ दीजिए। आप यहां काफी समय तक रह चुके हैं।"

इसके बाद पूज्य धम्मिका उस मठ से दूसरे मठ में गए, जहाँ उन्होंने फिर से आने वाले भिक्षुओं का अपमान किया, उन्हें गालियाँ दीं, उन्हें हानि पहुँचाई, उन पर हमला किया और उन्हें डाँटा। और फिर वे आने वाले भिक्षु चले गए। वे वहाँ बसे नहीं [367] बल्कि मठ खाली कर दिया।

तब अनुयायियों के मन में यह विचार आया... [जैसा कि ऊपर बताया गया है]... और उन्होंने उससे कहा: "भंते, इस मठ को छोड़ दो। तुम यहाँ बहुत समय बिता चुके हो।"

फिर पूज्य धम्मिका उस मठ से एक और मठ में चले गए, जहाँ उन्होंने फिर से आने वाले भिक्षुओं का अपमान किया। . . . वे वहाँ बसे नहीं बल्कि मठ छोड़कर चले गए।

तब गृहस्थ अनुयायियों के मन में यह विचार आया: "हम भिक्षुओं के संघ की सेवा वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ एवं भोजन सामग्री से करते हैं, लेकिन आने वाले भिक्षु चले जाते हैं। वे यहाँ ठहरते नहीं बल्कि मठ खाली कर देते हैं। ऐसा क्यों होता है?"

तब अनुयायियों के मन में यह विचार आया: "यह पूज्य धम्मिका आगंतुक भिक्षुओं का अपमान करते हैं... वे यहाँ ठहरते नहीं हैं, बल्कि मठ खाली कर देते हैं। चलो, पूज्य धम्मिका को उनके गृह जिले के सभी सात मठों से निष्कासित कर देते हैं।"

तब उस जिले के अनुयायी पूज्य धम्मिका के पास गए और उनसे कहा: "भंते, अपने जिले के सभी सात मठों से विदा ले लीजिए।"

तब पूज्य धम्मिका ने सोचा: "मुझे यहाँ के सभी सात मठों से गृहस्थ अनुयायियों ने निकाल दिया है। मैं कहाँ जाऊँ?"

तब उनके मन में यह विचार आया: "मुझे भगवान (बुद्ध) के पास जाना चाहिए।"

तब पूज्य धम्मिका ने अपना कुंड और वस्त्र लिया और राजगृह के लिए प्रस्थान किया। धीरे-धीरे वे राजगृह पहुँचे और फिर गिद्ध शिखर पर्वत पर गए, जहाँ उन्होंने भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे पूछा: "ब्राह्मण धम्मिका, आप कहाँ से आ रहे हैं?" 1360

"भंते, मेरे गृह जिले के गृहस्थ अनुयायियों ने मुझे वहां के सभी सात मठों से निष्कासित कर दिया है।"

"बस करो, ब्राह्मण धम्मिका! अब जब तुम मेरे पास आ ही गए हो, तो उन स्थानों से निकाले जाने की चिंता क्यों करते हो? हे ब्राह्मण धम्मिका, अतीत में कुछ समुद्री व्यापारी एक जहाज में समुद्र में निकले और अपने साथ एक भूमि-दर्शन पक्षी ले गए। जब जहाज को अभी तक कोई भूमि दिखाई नहीं दी, तो उन्होंने पक्षी को छोड़ दिया। वह पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊपर और बीच की सभी दिशाओं में गया। यदि उसे कहीं भी भूमि दिखाई देती, तो वह सीधे उसकी ओर उड़ जाता। लेकिन यदि उसे भूमि दिखाई नहीं देती, तो वह जहाज पर लौट आता। उसी प्रकार, जब तुम्हें उन स्थानों से निकाल दिया गया है, तो तुम मेरे पास आए हो।" [369]

हे ब्राह्मण धम्मिका, अतीत में राजा कोरव्य के पास 'सुगंधित' नाम का एक शाही बरगद का वृक्ष था, जिसकी पाँच शाखाएँ थीं। वह शीतल छाया प्रदान करता था और आनंद देता था। उसकी छतरी बारह योजन तक फैली हुई थी; उसकी जड़ें पाँच योजन तक। उसके फल खाना पकाने के बर्तन जितने बड़े और शुद्ध शहद जितने मीठे थे। राजा और उसकी हरम वृक्ष के एक भाग का उपयोग करते थे, सेना दूसरे भाग का, नगरवासी और गाँववासी तीसरे भाग का, तपस्वी और ब्राह्मण चौथे भाग का, और पशु और पक्षी चौथे भाग का उपयोग करते थे। वृक्ष के फलों की कोई रखवाली नहीं करता था, फिर भी कोई दूसरे के फल नहीं चुराता था।

"फिर, ब्राह्मण धम्मिका, एक व्यक्ति ने वृक्ष के फल अपनी इच्छानुसार खाए, एक शाखा तोड़ी और चला गया। वृक्ष में निवास करने वाले देवता (देवदूत) को यह विचार आया: 'यह व्यक्ति कितना दुष्ट है, यह देखकर आश्चर्य और आश्चर्य होता है! इसने वृक्ष के फल अपनी इच्छानुसार खाए, एक शाखा तोड़ी और चला गया! मैं यह सुनिश्चित करूँ कि भविष्य में राज बरगद का वृक्ष फल न दे।' तब भविष्य में राज बरगद के वृक्ष ने फल नहीं दिए। इसके बाद [370] राजा कोरव्य ने देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के शासक सक्का (इंद्र) के पास जाकर उनसे कहा: 'सुनिए, आदरणीय महोदय, आपको यह जानना चाहिए कि राज बरगद का वृक्ष फल नहीं देता है।'"

"तब देवों (देवदूतों/देवताओं) के शासक सक्का (इंद्र) ने ऐसी मानसिक शक्ति का प्रदर्शन किया कि एक भयंकर तूफान आया और उसने शाही बरगद के पेड़ को मरोड़ दिया और जड़ से उखाड़ दिया।"

तब, वृक्ष में निवास करने वाले देवता ब्राह्मण धम्मिका एक तरफ उदास और दुखी होकर, आँसू भरी आँखों से रोते हुए खड़े थे। इंद्र उनके पास पहुँचे और बोले, 'हे देवता, आप एक तरफ उदास और दुखी होकर, आँसू भरी आँखों से क्यों रो रहे हैं?' - 'हे महोदय, क्योंकि भयंकर वर्षा हुई और उसने मेरे निवास को तहस-नहस कर दिया।' - 'परन्तु, हे देवता, जब भयंकर वर्षा हुई और उसने आपके निवास को तहस-नहस कर दिया, तब क्या आप वृक्ष के कर्तव्य का पालन कर रहे थे?' - 'परन्तु, हे महोदय, वृक्ष अपने कर्तव्य का पालन कैसे करता है?' — 'हे देवता, जिन्हें जड़ों की आवश्यकता होती है, वे इसकी जड़ें लेते हैं; जिन्हें छाल की आवश्यकता होती है, वे इसकी छाल लेते हैं; जिन्हें पत्तियों की आवश्यकता होती है, वे इसकी पत्तियां लेते हैं; जिन्हें फूलों की आवश्यकता होती है, वे इसके फूल लेते हैं; और जिन्हें फलों की आवश्यकता होती है, वे इसके फल लेते हैं। फिर भी, इससे देवता अप्रसन्न या असंतुष्ट नहीं होते। इसी प्रकार एक वृक्ष अपने कर्तव्य का पालन करता है।' — 'हे महोदय, जब भयंकर बारिश आई और मेरे घर को उखाड़ फेंका, तब मैं वृक्ष के कर्तव्य का पालन नहीं कर रहा था।' — 'हे देवता, यदि आप वृक्ष के कर्तव्य का पालन करेंगे, तो आपका घर अपनी पूर्वस्थिति में लौट आएगा।' — 'हे महोदय, मैं वृक्ष के कर्तव्य का पालन करूंगा। मेरे घर को पहले जैसा होने दीजिए।'

"फिर, ब्राह्मण धम्मिका, देवों के स्वामी सक्का (इंद्र) ने ऐसी अलौकिक शक्ति (जादू/इद्धि) का प्रदर्शन किया कि भयंकर वर्षा हुई और राजसी बरगद का वृक्ष सीधा खड़ा हो गया और उसकी जड़ें छाल से ढक गईं। ठीक वैसे ही, ब्राह्मण धम्मिका, क्या आप उस समय एक तपस्वी के कर्तव्य का पालन कर रहे थे जब आपके गृह जिले के अनुयायियों ने आपको सभी सात मठों से निष्कासित कर दिया था?"

"पर हे भंते, एक तपस्वी अपने कर्तव्य का पालन कैसे करता है?"

"हे ब्राह्मण धम्मिका; एक तपस्वी अपमान करने वाले का अपमान नहीं करता, निंदा करने वाले को फटकारता नहीं है, और तर्क करने वाले से बहस नहीं करता। यही तपस्वी के कर्तव्य का पालन है।"

"भंते, जब मेरे अनुयायियों ने मुझे सातों मठों से निकाल दिया, तब मैं एक तपस्वी के कर्तव्य का पालन नहीं कर रहा था।"

(1) "पूर्वकाल में, ब्राह्मण धम्मिका में, सुनेत्ता नामक एक शिक्षक थे, जो एक आध्यात्मिक संप्रदाय के संस्थापक थे, जो इंद्रिय सुखों के प्रति वासना (राग) से रहित थे। सुनेत्ता के सैकड़ों शिष्य थे। उन्होंने अपने शिष्यों को ब्रह्म जगत के साथ संगति के लिए एक धर्म का उपदेश दिया। 1362 जब वे ऐसा धर्म सिखा रहे थे, तो जिन लोगों ने उन पर विश्वास नहीं किया, वे शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते थे; परन्तु जिन्होंने उन पर विश्वास किया, वे अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेते थे।

(2) "पहले मुगपक्खा नाम का एक शिक्षक था..."

(3) ... अरनेमी नाम के एक शिक्षक... (4) ... कुद्दलक नाम के एक शिक्षक... (5) ... हत्थिपाला नाम के एक शिक्षक... (6) ... [372] ज्योतिपाल नाम के एक शिक्षक, जो एक आध्यात्मिक संप्रदाय के संस्थापक थे, जो इंद्रिय सुखों के प्रति वासना (राग) से रहित थे... जब वे ऐसे धम्म का उपदेश दे रहे थे, तो जिन लोगों ने उन पर विश्वास नहीं किया, वे शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते थे; परन्तु जिन्होंने उन पर विश्वास किया, वे अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेते थे।

"आप क्या सोचते हैं? ब्राह्मण धम्मिका? ये छह गुरु आध्यात्मिक संप्रदायों के संस्थापक थे, ऐसे पुरुष थे जो सांसारिक सुखों के प्रति वासना (राग) से रहित थे और जिनके सैकड़ों शिष्य थे। यदि कोई घृणा की भावना से उनका और उनके शिष्यों के समुदाय का अपमान और निंदा करता, तो क्या वह बहुत बड़ा पाप नहीं करता?"

"हां, भंते।"

"यदि कोई घृणा के भाव से इन छह गुरुओं और उनके शिष्यों के समुदायों का अपमान और निंदा करता, तो वह बहुत पुण्य उत्पन्न करता। परन्तु यदि कोई घृणा के भाव से किसी एक सिद्ध पुरुष का अपमान और निंदा करता, तो वह और भी अधिक पुण्य उत्पन्न करता। इसका क्या कारण है? मैं कहता हूँ, हे ब्राह्मण धम्मिका, परदेसियों के विरुद्ध वैसी हानि नहीं होती जैसी अपने साथी भिक्षुओं के विरुद्ध होती है। अतः, हे ब्राह्मण धम्मिका, तुम्हें इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम अपने साथी भिक्षुओं के प्रति अपने मन में घृणा उत्पन्न नहीं होने देंगे।' इस प्रकार, हे ब्राह्मण धम्मिका, तुम्हें स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।" [373]

सुनेत्ता, मुगापक्खा,

ब्राह्मण अरनेमी,

कुड्डालका, और हत्थिपाला,

ब्राह्मण युवा, शिक्षक थे।

और जोतिपाला [जिन्हें] गोविंदा के नाम से जाना जाता था, जो

सात [राजाओं] के पुरोहित थे:

ये अतीत में निर्दोष थे,

छह ख्यातिप्राप्त शिक्षक थे।

निर्मल और करुणा से मुक्त होकर,

इन पुरुषों ने कामुकता के बंधन को पार कर लिया था।

राग से विरक्त होकर,

उन्होंने ब्रह्मलोक में पुनर्जन्म लिया।

उनके

सैकड़ों शिष्य भी

निर्मल थे, करुणा से मुक्त थे,

और कामुकता के बंधन से मुक्त थे। उन्होंने

कामवासना (राग) को मिटाकर

ब्रह्मलोक में पुनर्जन्म लिया।

जो व्यक्ति घृणा के विचारों से

उन बाहरी संतों की निंदा करता है जो कामवासना (राग) से रहित हैं

(जिनका मन आत्म-मग्न (समाधि/समाहिता) है), वह

प्रचुर मात्रा में पुण्य उत्पन्न करता है।

लेकिन जो व्यक्ति घृणा के भाव से

बुद्ध के शिष्य,

एक सिद्ध भिक्षु का अपमान करता है, वह

और भी अधिक पुण्य उत्पन्न करता है।

किसी पवित्र व्यक्ति पर , जिसने दृष्टिकोणों का त्याग कर दिया हो, आक्रमण नहीं करना चाहिए । ऐसे व्यक्ति को संघ का

सातवाँ श्रेष्ठ व्यक्ति कहा जाता है , जो इंद्रिय सुखों के प्रति राग से रहित नहीं होता, जिसकी पाँचों इंद्रियाँ दुर्बल होती हैं: विश्वास, सती ध्यान, वीरय क्रिया, समभाव और विपश्यना।

यदि कोई ऐसे भिक्षु पर हमला करता है,

तो वह पहले स्वयं को हानि पहुंचाता है;

फिर, स्वयं को हानि पहुंचाने

के बाद, वह दूसरे को हानि पहुंचाता है।

जब कोई व्यक्ति अपनी रक्षा करता है,

तो दूसरा व्यक्ति भी सुरक्षित रहता है।

इसलिए व्यक्ति को अपनी रक्षा करनी चाहिए;

बुद्धिमान व्यक्ति हमेशा सुरक्षित रहता है।

दूसरा पचास

VI. महान अध्याय (महावग्गो सं. महा वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

55 सोना

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। उस समय पूज्य सोना शीतल वन में स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। 1367

फिर, जब पूज्य सोना एकांतवास में थे, उनके मन में यह विचार आया: "मैं भगवान (बुद्ध) के सबसे ऊर्जावान शिष्यों में से एक हूँ, फिर भी अनासक्ति से मेरा मन दोषों से मुक्त नहीं हुआ है। अब मेरे परिवार में धन है, और मेरे लिए अपने धन का आनंद लेना और पुण्य कर्म करना संभव है। तो मुझे साधना छोड़ देनी चाहिए और निम्न लोक में लौट जाना चाहिए, ताकि मैं अपने धन का आनंद ले सकूँ और पुण्य कर्म कर सकूँ।"

फिर, पूज्य सोना के मन में चल रहे विचारों को स्वयं जानकर, जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को अंदर खींचता है, भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर विलीन हो गए और पूज्य सोना की उपस्थिति में शीतल वन में प्रकट

हुए। भगवान (बुद्ध) उनके लिए तैयार आसन पर बैठ गए। पूज्य सोना ने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: [375]

"सोना, जब तुम एकांतवास में थे, क्या तुम्हारे मन में यह विचार नहीं आया था: 'मैं भगवान (बुद्ध) के सबसे ऊर्जावान शिष्यों में से एक हूँ, फिर भी अनासक्ति से मेरा मन दोषों से मुक्त नहीं हुआ है। अब मेरे परिवार में धन है, और मेरे लिए अपने धन का आनंद लेना और पुण्य कर्म करना संभव है। तो क्या मुझे साधना छोड़ देनी चाहिए और निम्न लोक में लौट जाना चाहिए, ताकि मैं अपने धन का आनंद ले सकूँ और पुण्य कर्म कर सकूँ?'"

"हां, भंते,"

"बताओ, सोना, पहले जब तुम घर पर रहती थी, तो क्या तुम वीणा बजाने में कुशल नहीं थी?"

"हां, भंते।"

"सोना, तुम्हारा क्या ख्याल है? जब तुम्हारे वीणा के तार बहुत कसे हुए थे, तब क्या वह ठीक से ट्यून किया हुआ था और बजाने में आसान था?"

"नहीं, भंते।"

"जब उसके तार बहुत ढीले थे, तो क्या आपका ल्यूट अच्छी तरह से ट्यून किया हुआ था और बजाने में आसान था?"

नहीं, भंते।

"लेकिन, सोना, जब इसके तार न तो बहुत कसे हुए थे और न ही बहुत ढीले थे, बल्कि एक संतुलित स्वर पर समायोजित थे, तो क्या तुम्हारा ल्यूट अच्छी तरह से ट्यून किया हुआ था और बजाने में आसान था?"

"हां, भंते।"

"इसी प्रकार, सोना, यदि ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) अत्यधिक बलपूर्वक जागृत हो जाए तो बेचैनी उत्पन्न होती है, और यदि ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) अत्यधिक शिथिल हो तो आलस्य उत्पन्न होता है। अतः, सोना, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) में संतुलन स्थापित करने का संकल्प लो, आध्यात्मिक शक्तियों में समता प्राप्त करो, और वहीं लक्ष्य को ग्रहण करो।" 1368

"जी हां, भंते," पूज्य सोना ने उत्तर दिया।

जब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य सोना को यह उपदेश देना समाप्त कर दिया, तो जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी अंदर की ओर खींची हुई भुजा को फैलाता है या अपनी फैली हुई भुजा को अंदर खींचता है, वैसे ही वह शीतल वन में विलीन हो गया और गिद्ध शिखर पर्वत पर पुनः प्रकट हुआ। [376]

कुछ समय बाद, पूज्य सोना ने ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) का संतुलन स्थापित किया, आध्यात्मिक शक्तियों में समता प्राप्त की और उस लक्ष्य को ग्रहण किया। फिर, एकांतवास में, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ, पूज्य सोना ने इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) के उस श्रेष्ठ लक्ष्य को जान लिया, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करते हैं, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करने लगे। उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान से जाना: "पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।" और पूज्य सोना अरहंतों में से एक बन गए।

अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, पूज्य सोना ने सोचा: "मैं भगवान (बुद्ध) के पास जाऊं और उनके समक्ष अंतिम ज्ञान की घोषणा करूं।" फिर वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले:

"भंते, जब कोई भिक्षु अरहंत होता है, जिसके सारे दोष नष्ट हो जाते हैं, जिसने ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत किया हो, जो करना आवश्यक था वह कर चुका हो, बोझ उतार चुका हो, अपने लक्ष्य तक पहुँच चुका हो, जन्म के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म का कारण) को पूरी तरह नष्ट कर चुका हो और अंतिम ज्ञान के माध्यम से पूर्णतः मुक्त हो चुका हो, तब वह छह बातों पर एकाग्र रहता है: त्याग पर, एकांत पर, कष्ट रहित होने पर, तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के नाश पर, आसक्ति के नाश पर और भ्रम रहित होने पर।" 369

(1) "हे भंते, हो सकता है कि यहाँ कोई आदरणीय व्यक्ति यह सोचे: 'क्या यह संभव है कि यह आदरणीय व्यक्ति केवल आस्था के कारण ही वैराग्य का निश्चय कर रहा हो?' परन्तु इसे इस प्रकार नहीं देखना चाहिए। दोषों से मुक्त, ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत कर और अपना कर्तव्य पूरा कर चुका भिक्षु अपने भीतर आगे कुछ भी करने की या किए गए कार्य को बढ़ाने की कोई आवश्यकता नहीं देखता। 1370 वह वैराग्य का निश्चय इसलिए करता है क्योंकि वह काम (राग) के नाश से काम (राग) से मुक्त है; क्योंकि वह घृणा के नाश से घृणा (घृणा) से मुक्त है; क्योंकि वह मोह (मोह) के नाश से मोह (मोह) से मुक्त है। [377]

(2) हो सकता है कि यहाँ कोई आदरणीय व्यक्ति यह सोचे: 'क्या यह आदरणीय व्यक्ति लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा की लालसा के कारण एकांतवास में तल्लीन है?' परन्तु इसे इस प्रकार नहीं देखना चाहिए। जिस भिक्षु के सारे दोष नष्ट हो चुके हैं, जिसने ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत किया है और अपना कर्तव्य पूरा किया है, वह अपने भीतर कुछ और करने की या किए गए कार्य को बढ़ाने की कोई आवश्यकता नहीं देखता। वह एकांतवास में तल्लीन इसलिए है क्योंकि उसने कामवासना (राग) का नाश कर लिया है; क्योंकि उसने घृणा (घृणा) का नाश कर लिया है; क्योंकि उसने मोह (मोह) का नाश कर लिया है।

(3) "हो सकता है कि यहाँ कोई आदरणीय व्यक्ति यह सोचे: 'क्या यह आदरणीय व्यक्ति दुःखमुक्ति का निश्चय इसलिए कर रहा है क्योंकि उसने आचरण और अनुष्ठानों को सार मानकर गलत धारणा अपना ली है?' 1371 परन्तु इसे इस प्रकार नहीं देखना चाहिए। जिस भिक्षु के सारे दोष नष्ट हो चुके हैं, जिसने आध्यात्मिक जीवन जीकर अपना कर्तव्य पूरा कर लिया है, वह अपने आप में आगे कुछ करने की या किए गए कार्य को बढ़ाने की कोई आवश्यकता नहीं देखता। वह दुःखमुक्ति का निश्चय इसलिए करता है क्योंकि उसने कामवासना (राग) का नाश कर लिया है; क्योंकि उसने घृणा (घृणा) का नाश कर लिया है; क्योंकि उसने मोह (मोह) का नाश कर लिया है।"

(4) "...वह तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के नाश पर केंद्रित है क्योंकि वह राग के नाश से राग से मुक्त है; क्योंकि वह घृणा के नाश से घृणा से मुक्त है; क्योंकि वह मोह के नाश से मोह से मुक्त है।" 1372

(5) "...वह आसक्ति के नाश पर केंद्रित है क्योंकि वह कामवासना (राग) के नाश के द्वारा कामवासना (राग) से मुक्त है; क्योंकि वह घृणा के नाश के द्वारा घृणा (घृणा) से मुक्त है; क्योंकि वह मोह (मोह) के नाश के द्वारा मोह (मोह) से मुक्त है।"

(6) . . वह भ्रमहीनता पर केंद्रित है क्योंकि वह कामवासना (राग) के नाश के कारण कामवासना (राग) से रहित है; क्योंकि वह घृणा के नाश के कारण घृणा (घृणा) से रहित है; क्योंकि वह मोह (मोह) के नाश के कारण मोह (मोह) से रहित है।

"भंते, जब कोई भिक्षु इस प्रकार पूर्णतः मन से मुक्त हो जाता है, तो भले ही आँखों से दिखाई देने वाले शक्तिशाली रूप उसकी दृष्टि में आ जाएँ, वे उसके मन को ग्रस्त नहीं करते; उसका मन बिल्कुल भी प्रभावित नहीं होता। वह स्थिर रहता है, अविचलित रहता है, और वह उनके लुप्त होने का अवलोकन करता है। 1373 [378] भले ही कानों से सुनाई देने वाली शक्तिशाली ध्वनियाँ कानों की दृष्टि में आ जाएँ... भले ही नाक से सुनाई देने वाली शक्तिशाली गंधें नाक की दृष्टि में आ जाएँ... भले ही जीभ से सुनाई देने वाले शक्तिशाली स्वाद जीभ की दृष्टि में आ जाएँ... भले ही शरीर द्वारा अनुभव किए जाने वाले शक्तिशाली स्पर्शनीय पदार्थ शरीर की दृष्टि में आ जाएँ... भले ही मन द्वारा अनुभव किए जाने वाले शक्तिशाली घटनाक्रम (धर्म) मन की दृष्टि में आ जाएँ, वे उसके मन को ग्रस्त नहीं करते; उसका मन बिल्कुल भी प्रभावित नहीं होता। वह स्थिर रहता है, अविचलित रहता है, और वह उसके लुप्त होने का अवलोकन करता है।" लुप्त हो रहा है।

"मान लो, भंते, एक पत्थर का पहाड़ हो, जिसमें कोई दरार या छिद्र न हो, एक ठोस पिंड हो। यदि पूर्व से भयंकर वर्षा हो, तो भी वह उसे हिला न सके, डगमगा न सके और कांप न सके; चाहे पश्चिम से, उत्तर से, दक्षिण से, भयंकर वर्षा हो, तब भी वह उसे हिला न सके, डगमगा न सके और कांप न सके। ठीक इसी प्रकार, जब कोई भिक्षु मन से पूर्णतः मुक्त हो जाता है, तो चाहे दृष्टि से प्रत्यक्ष रूप से

दिखाई देने वाले शक्तिशाली दृश्य भी दृष्टि के दायरे में आ जाएं, वे उसके मन को विचलित नहीं करते; उसका मन बिल्कुल भी प्रभावित नहीं होता। वह स्थिर रहता है, अविचलित अवस्था में पहुँच जाता है, और वह उसके लुप्त होने का अवलोकन करता है।"

यदि कोई त्याग

और मन की एकांतता के लिए तल्लीन हो;

यदि कोई दुःख से मुक्ति

और आसक्ति के नाश के लिए तल्लीन हो;

यदि कोई तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के नाश

और मन की अव्यवस्था से मुक्ति के लिए तल्लीन हो:

जब कोई इंद्रिय आधारों को उत्पन्न होते हुए देखता है, तो

उसका मन पूर्णतः मुक्त हो जाता है।

शांत मन वाले भिक्षु के लिए,

जो पूर्णतः मुक्त हो चुका है,

आगे कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है,

जो किया जा चुका है उसे बढ़ाने की कोई आवश्यकता नहीं है। [379]

जैसे एक पत्थर का पहाड़, एक ठोस पिंड,

हवा से नहीं हिलता,

उसी प्रकार कोई भी रूप, स्वाद, ध्वनि,

गंध, स्पर्शनीय वस्तुएं

और वांछनीय या अवांछनीय घटनाएँ (धर्म)

स्थिर मन को विचलित नहीं करतीं।

उसका मन स्थिर और मुक्त है,

और वह इसके लुप्त होने का अवलोकन करता है।

---

56 फाग्गुना

एक बार पूज्य फाग्गुना बहुत बीमार थे। तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले, "भंते, पूज्य फाग्गुना बहुत बीमार हैं, बहुत पीड़ित हैं, बहुत बीमार हैं। कृपया दया करके भगवान (बुद्ध) उनसे मिलने आएं।" भगवान (बुद्ध) मौन रहकर सहमत हो गए।

फिर, शाम को, भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और पूज्य फाग्गुना के पास गए। पूज्य फाग्गुना ने दूर से भगवान (बुद्ध) को आते देखा और अपने पलंग पर करवट बदल ली। भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा, "बस करो, फाग्गुना, अपने पलंग पर मत करवट बदलो। ये आसन तैयार किए गए हैं। मैं वहीं बैठूंगा।"

भगवान (बुद्ध) बैठ गए और पूज्य फाग्गुना से बोले: "मुझे आशा है कि आप ठीक हैं, फाग्गुना। मुझे आशा है कि आप स्वस्थ हो रहे हैं। मुझे आशा है कि आपकी पीड़ादायक अनुभूतियाँ (वेदना) कम हो रही हैं, बढ़ नहीं रही हैं, और यह कम होना ही स्पष्ट है, न कि बढ़ना।"

"भंते, मैं सहन नहीं कर पा रहा हूँ, मैं ठीक नहीं हो रहा हूँ। तीव्र पीड़ादायक संवेदनाएँ (वेदना) मुझमें बढ़ रही हैं, कम नहीं हो रही हैं, और उनका बढ़ना ही स्पष्ट है, कम होना नहीं। 1374 जैसे कोई बलवान व्यक्ति तेज तलवार की नोक से मेरा सिर पीस दे, वैसे ही तेज हवाएँ [380] मेरे सिर को चीर रही हैं। मैं असहनीय पीड़ा सहन कर रहा हूँ। ...जैसे कोई बलवान व्यक्ति मेरे सिर पर चमड़े का सख्त पट्टा कसकर बाँध दे, वैसे ही मेरे सिर में तेज दर्द हो रहा है। मैं सहन नहीं कर पा रहा हूँ। ...जैसे कोई कुशल कसाई या उसका शागिर्द तेज चाकू से बैल का पेट चीर दे, वैसे ही तेज हवाएँ मेरे पेट को चीर रही हैं। मैं सहन नहीं कर पा रहा हूँ। ...जैसे दो बलवान व्यक्ति किसी कमजोर व्यक्ति को दोनों भुजाओं से पकड़कर गर्म कोयलों के गड्ढे पर भून रहे हों, वैसे ही मेरे शरीर में तेज जलन हो रही है। मैं भंते, मैं सहन नहीं कर पा रहा हूँ, मेरी हालत में सुधार नहीं हो रहा है। तीव्र पीड़ादायक संवेदनाएँ (वेदना) मुझमें कम होने के बजाय बढ़ती जा रही हैं, और उनकी वृद्धि ही दिखाई दे रही है, न कि उनकी कमी।

तब भगवान (बुद्ध) ने आदरणीय फाग्गुना को धर्म प्रवचन देकर उपदेश दिया, प्रोत्साहित किया, प्रेरित किया और प्रसन्न किया, जिसके बाद वे अपने आसन से उठकर चले गए। भगवान (बुद्ध) के जाने के कुछ ही समय बाद आदरणीय फाग्गुना का निधन हो गया। उनकी मृत्यु के समय उनकी इंद्रियां शांत थीं।

तब पूज्य आनंद [381] भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "भंते, भगवान (बुद्ध) के जाने के कुछ ही समय बाद पूज्य फाग्गुना का निधन हो गया। उनकी मृत्यु के समय उनकी इंद्रियाँ शांत थीं।"

"आनंद, भिक्षु फाग्गुना की इंद्रियां शांत क्यों नहीं होनी चाहिए थीं? यद्यपि उनका मन अभी तक पांच निम्न बंधनों से मुक्त नहीं हुआ था, फिर भी जब उन्होंने धम्म पर वह प्रवचन सुना, तो उनका मन उनसे मुक्त हो गया।" 1375

"आनंद, उचित समय पर धम्म सुनने और उचित समय पर उसके अर्थ का विश्लेषण करने के ये छह लाभ हैं। 1376 वे छह लाभ क्या हैं?"

(1) "हे आनंद, यहाँ एक भिक्षु का मन अभी तक पाँच निम्न बंधनों से मुक्त नहीं हुआ है, परन्तु अपनी मृत्यु के समय वह तथागत (बुद्ध) के दर्शन पाता है। तथागत (बुद्ध) उसे उचित अर्थ और शब्दों में वह धम्म (मार्ग) सिखाते हैं जो आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम है; वे एक पूर्णतः परिपूर्ण और पवित्र ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) प्रकट करते हैं। जब भिक्षु धम्म पर वह प्रवचन सुनता है, तो उसका मन पाँच निम्न बंधनों से मुक्त हो जाता है। उचित समय पर धम्म सुनने का यह पहला लाभ है।"

(2) “फिर, भिक्षु का मन अभी तक पाँच निम्न बंधनों से मुक्त नहीं हुआ है। अपनी मृत्यु के समय वह तथागत (बुद्ध) के दर्शन नहीं कर पाता, परन्तु तथागत (बुद्ध) के शिष्य के दर्शन कर पाता है। तथागत (बुद्ध) का शिष्य उसे धम्म का उपदेश देता है... एक पूर्णतः परिपूर्ण और शुद्ध आध्यात्मिक जीवन का ज्ञान कराता है। जब भिक्षु धम्म पर वह प्रवचन सुनता है, तो उसका मन पाँच निम्न बंधनों से मुक्त हो जाता है। उचित समय पर धम्म सुनने का यह दूसरा लाभ है।”

(3) "फिर भी, भिक्षु का मन अभी तक पाँच [382] निम्न बंधनों से मुक्त नहीं हुआ है। अपनी मृत्यु के समय वह तथागत (बुद्ध) या तथागत (बुद्ध) के किसी शिष्य को नहीं देख पाता, परन्तु वह धम्म का चिंतन, परीक्षण और मानसिक रूप से निरीक्षण करता है जैसा

उसने सुना और सीखा है। ऐसा करने से उसका मन पाँच निम्न बंधनों से मुक्त हो जाता है। उचित समय पर अर्थ का परीक्षण करने का यह तीसरा लाभ है।"

(4) "हे आनंद, यहाँ भिक्षु का मन पाँच निम्न बंधनों से मुक्त हो गया है, परन्तु अभी तक उसने अपने कर्मों के पूर्णतम निर्वाह की अवस्था प्राप्त नहीं की है। 1377 अपनी मृत्यु के समय उसे तथागत (बुद्ध) के दर्शन होते हैं। तथागत (बुद्ध) उसे धम्म का उपदेश देते हैं... वे उसे पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन का दर्शन कराते हैं। जब भिक्षु धम्म पर वह प्रवचन सुनता है, तो उसका मन अपने कर्मों के पूर्णतम निर्वाह की अवस्था में मुक्त हो जाता है। उचित समय पर धम्म सुनने का यह चौथा लाभ है।"

(5) "फिर, भिक्षु का मन पाँच निम्न बंधनों से मुक्त हो जाता है, परन्तु अभी तक उसकी उपलब्धियों के पूर्णतम निर्वाह से मुक्त नहीं होता। मृत्यु के समय वह तथागत (बुद्ध) के दर्शन नहीं कर पाता, परन्तु तथागत (बुद्ध) के शिष्य के दर्शन कर पाता है। तथागत (बुद्ध) का शिष्य उसे धम्म का उपदेश देता है... एक पूर्णतः परिपूर्ण और शुद्ध आध्यात्मिक जीवन का ज्ञान कराता है। जब भिक्षु धम्म (मार्ग) पर वह प्रवचन सुनता है, तो उसकी उपलब्धियों के पूर्णतम निर्वाह से उसका मन मुक्त हो जाता है। उचित समय पर धम्म सुनने का यह पाँचवाँ लाभ है।"

(6) "फिर भी, भिक्षु का मन पाँच निम्न बंधनों से मुक्त हो जाता है [383J, परन्तु अभी तक प्राप्तियों के पूर्णतम निर्वाह में मुक्त नहीं होता। अपनी मृत्यु के समय वह तथागत (बुद्ध) या तथागत (बुद्ध) के किसी शिष्य को नहीं देख पाता, परन्तु वह अपने द्वारा सुने और सीखे गए धम्म पर मनन, परीक्षण और चिंतन करता है। ऐसा करने से उसका मन प्राप्तियों के पूर्णतम निर्वाह में मुक्त हो जाता है। उचित समय पर अर्थ का परीक्षण करने का यह छठा लाभ है।"

"आनंद, ये धम्म को उचित समय पर सुनने और उचित समय पर उसके अर्थ का विश्लेषण करने के छह लाभ हैं।"

---

57 छह वर्ग (चलभिजाति)

एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले:

"भंते, पुराण कस्सपा ने छह वर्गों का वर्णन किया है: 1378 एक काला वर्ग, एक नीला वर्ग, एक लाल वर्ग, एक पीला वर्ग, एक सफेद वर्ग और एक सर्वोच्च सफेद वर्ग।"

उन्होंने अश्वेत वर्ग को भेड़, सूअर, मुर्गी और हिरण के कसाई; शिकारी और मछुआरे; चोर, जल्लाद और जेल वार्डन; या ऐसे ही किसी अन्य क्रूर व्यवसाय को करने वाले लोगों के रूप में वर्णित किया है।

उन्होंने नीले वर्ग को कांटों पर रहने वाले भिक्षुओं (1379) या कर्म (कर्म/कार्यों) के सिद्धांत का पालन करने वाले अन्य लोगों के रूप में वर्णित किया है, जो कर्मों की प्रभावकारिता का सिद्धांत है।

उन्होंने लाल वर्ग को निगांथा [384] के रूप में वर्णित किया है जो एक ही वस्त्र पहने हुए हैं।

उन्होंने पीले वर्ग को नग्न तपस्वियों के सफेद वस्त्रधारी गृहस्थ शिष्यों के रूप में वर्णित किया है।

उन्होंने श्वेत वर्ग को पुरुष और महिला आजीवकों के रूप में वर्णित किया है।

"उन्होंने सर्वोच्च श्वेत वर्ग का वर्णन नंदा वाचा, किसा संकिक्का और मक्खलि गोसाला के रूप में किया है।

"पुराण कस्सपा, भंते ने इन छह वर्गों का वर्णन किया है।"

लेकिन, आनंद, क्या पूरी दुनिया ने पुराण कस्सप को इन छह वर्गों का वर्णन करने के लिए अधिकृत किया है?

"बिल्कुल नहीं, भंते।"

"मान लो, आनंद, कोई गरीब, निर्धन, निर्धन व्यक्ति हो। वे उसकी इच्छा के विरुद्ध उसे मांस का एक टुकड़ा जबरदस्ती खिला सकते हैं और कह सकते हैं: 'हे जन, तुम्हें यह टुकड़ा खाना होगा और इसके लिए कीमत चुकानी होगी।' ठीक उसी प्रकार, उन तपस्वियों और ब्राह्मणों की सहमति के बिना, पुराण कस्सप ने इन छह वर्गों का वर्णन अविवेकी, अयोग्य, अनुभवहीन और अकुशल तरीके से किया है। परन्तु मैं, आनंद, छह [विभिन्न] वर्गों का वर्णन करता हूँ। ध्यान से सुनो। मैं आगे बोलूँगा।"

"जी भंते," पूज्य आनंद ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और हे आनंद, ये छह वर्ग क्या हैं? (1) यहाँ, काले वर्ग का कोई व्यक्ति काले राज्य की उत्पत्ति करता है। (2) काले वर्ग का कोई व्यक्ति सफेद राज्य की उत्पत्ति करता है। (3) काले वर्ग का कोई व्यक्ति निर्वाण की उत्पत्ति करता है, जो न तो काला है और न ही सफेद। (4) फिर, सफेद वर्ग का कोई व्यक्ति काले राज्य की उत्पत्ति करता है। (5) सफेद वर्ग का कोई व्यक्ति सफेद राज्य की उत्पत्ति करता है। (6) और सफेद वर्ग का कोई व्यक्ति निर्वाण की उत्पत्ति करता है, जो न तो काला है और न ही सफेद।"

(1) "आनंद, यह कैसे संभव है कि काले वर्ग का कोई व्यक्ति काले राज्य की उत्पत्ति करे? यहाँ, कोई व्यक्ति निम्न परिवार में पुनर्जन्म लेता है—चांडलाओं, शिकारियों, बाँस श्रमिकों, गाड़ी बनाने वालों या फूल बीनने वालों के परिवार में—एक गरीब परिवार, जिसके पास भोजन और पेय कम है, जिसका जीवन यापन कठिन है, जहाँ भोजन और वस्त्र बड़ी मुश्किल से प्राप्त होते हैं; और वह बदसूरत, कुरूप, बौना, और बहुत सी बीमारियों से ग्रस्त है—अंधा, अपंग, लंगड़ा या लकवाग्रस्त है। 1381 उसे भोजन, पेय, वस्त्र और वाहन प्राप्त नहीं होते; मालाएँ, सुगंध और लेप; बिस्तर, आवास और प्रकाश। वह शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त रहता है। फलस्वरूप, मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। इसी प्रकार काले वर्ग का कोई व्यक्ति काले राज्य की उत्पत्ति करता है।"

(2) "और हे आनंद, यह कैसे संभव है कि काले वर्ग का कोई व्यक्ति श्वेत राज्य की उत्पत्ति करे? यहाँ, कोई व्यक्ति निम्न परिवार में पुनर्जन्म लेता है। उसे भोजन और प्रकाश नहीं मिलता। वह शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण में लगा रहता है। फलस्वरूप, मृत्यु के बाद शरीर के नष्ट होने पर, उसका पुनर्जन्म एक अच्छे स्थान, स्वर्गलोक में होता है। इसी प्रकार काले वर्ग का कोई व्यक्ति श्वेत राज्य की उत्पत्ति करता है।"

(3) "और हे आनंद, यह कैसे संभव है कि काले वर्ग का कोई व्यक्ति निर्वाण प्राप्त करता है, जो न काला है और न सफेद? यहाँ, कोई व्यक्ति निम्न परिवार में पुनर्जन्म लेता है [386]... वह भोजन और प्रकाश प्राप्त नहीं करता... अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, गेरुए वस्त्र धारण करता है और गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में चला जाता है। जब वह इस प्रकार संन्यासी जीवन में चला जाता है, तो वह मन की पाँच बाधाओं, विकारों, उन चीजों का त्याग करता है जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करती हैं; और फिर, ध्यान (सती) की चार अवस्थाओं में अपने मन को अच्छी तरह से स्थापित करके, वह ज्ञान के सात कारकों को सही ढंग से विकसित करता है और निर्वाण प्राप्त करता है, जो न काला है और न सफेद। इसी प्रकार काले वर्ग का कोई व्यक्ति निर्वाण प्राप्त करता है, जो न काला है और न सफेद..."

(4) "और हे आनंद, यह कैसे संभव है कि श्वेत वर्ग का कोई व्यक्ति अश्वेत राज्य की उत्पत्ति करे? यहाँ, कोई व्यक्ति उच्च कुल में पुनर्जन्म लेता है—एक समृद्ध क्षत्रिय कुल में, एक समृद्ध ब्राह्मण कुल में, या एक समृद्ध गृहस्थ कुल में—एक ऐसा कुल जो धनवान है, अपार संपत्ति और जायदाद से युक्त है, प्रचुर मात्रा में सोना-चांदी, प्रचुर खजाने और वस्तुएँ, प्रचुर धन और अनाज से संपन्न है; और वह सुंदर, आकर्षक, सुशोभित, अत्यंत सुंदर रंग का है। उसे भोजन, पेय, वस्त्र और वाहन प्राप्त होते हैं; मालाएँ, सुगंध और लेप; बिस्तर, आवास और प्रकाश। वह शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त रहता है। फलस्वरूप, मृत्यु के बाद शरीर के क्षोभ के साथ, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। इसी प्रकार श्वेत वर्ग का कोई व्यक्ति अश्वेत राज्य की उत्पत्ति करता है।"

(5) "और हे आनंद, यह कैसे संभव है कि श्वेत वर्ग का कोई व्यक्ति श्वेत राज्य की उत्पत्ति करे? यहाँ, कोई व्यक्ति उच्च परिवार में पुनर्जन्म लेता है... उसे भोजन... और प्रकाश प्राप्त होता है। वह शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण में लगा रहता है। फलस्वरूप,

मृत्यु के बाद शरीर के नष्ट होने पर, उसका पुनर्जन्म एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में होता है। इसी प्रकार श्वेत वर्ग का कोई व्यक्ति श्वेत राज्य की उत्पत्ति करता है।"

(6) "और हे आनंद, यह कैसे संभव है कि श्वेत वर्ग का कोई व्यक्ति निर्वाण प्राप्त करता है, जो न काला है और न सफेद? [387] यहाँ, किसी व्यक्ति का पुनर्जन्म उच्च कुल में हुआ है। ... वह भोजन ... और प्रकाश प्राप्त करता है। अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, वह गेरुए वस्त्र धारण करता है और गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करता है। इस प्रकार संन्यासी जीवन में प्रवेश करने पर, वह पाँच बाधाओं, मन के दोषों, उन चीजों का त्याग करता है जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करती हैं; और फिर, ध्यान (सती) की चार अवस्थाओं में अच्छी तरह से स्थापित होकर, वह ज्ञान के सात कारकों को सही ढंग से विकसित करता है और निर्वाण प्राप्त करता है, जो न काला है और न सफेद। इसी प्रकार श्वेत वर्ग का कोई व्यक्ति निर्वाण प्राप्त करता है, जो न काला है और न सफेद।"

"आनंद, ये छह श्रेणियां हैं।"

58 दाग (असव सं. आश्रव)

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, वे दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य होते हैं और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र होते हैं। वे छह गुण क्या हैं? यहाँ, संयम द्वारा भिक्षु उन दोषों का त्याग करता है जिनका त्याग संयम द्वारा किया जाना चाहिए; उपयोग द्वारा वह उन दोषों का त्याग करता है जिनका त्याग उपयोग द्वारा किया जाना चाहिए; धैर्यपूर्वक सहन करने द्वारा वह उन दोषों का त्याग करता है जिनका त्याग धैर्यपूर्वक सहन करने द्वारा किया जाना चाहिए; परहेज द्वारा वह उन दोषों का त्याग करता है जिनका त्याग परहेज द्वारा किया जाना चाहिए; निवारण द्वारा वह उन दोषों का त्याग करता है जिनका निवारण द्वारा किया जाना चाहिए; और विकास द्वारा वह उन दोषों का त्याग करता है जिनका त्याग विकास द्वारा किया जाना चाहिए।"

(1) "हे भिक्षुओं, संयम द्वारा त्यागे जाने वाले वे कौन से दोष हैं जो संयम द्वारा त्याग दिए गए हैं? यहाँ, ध्यानपूर्वक चिंतन करने के बाद, एक भिक्षु नेत्र इंद्रिय पर संयमित होकर ध्यान लगाता है: वे [388] दोष, कष्टदायी और ज्वरकारी, जो नेत्र इंद्रिय पर असंयमित रहने वाले में उत्पन्न हो सकते हैं, नेत्र इंद्रिय पर संयमित रहने वाले में उत्पन्न नहीं होते हैं। ध्यानपूर्वक चिंतन करने के बाद, एक भिक्षु कान इंद्रिय... नाक इंद्रिय... जीभ इंद्रिय... शरीर इंद्रिय... मन इंद्रिय पर संयमित रहता है। वे दोष, कष्टदायी और ज्वरकारी, जो मन इंद्रिय पर असंयमित रहने वाले में उत्पन्न हो सकते हैं, मन इंद्रिय पर संयमित रहने वाले में उत्पन्न नहीं होते हैं। वे दोष, कष्टदायी और ज्वरकारी, जो [इन चीजों पर] असंयमित रहने वाले में उत्पन्न हो सकते हैं, संयमित रहने वाले में उत्पन्न नहीं होते हैं। 1383 ये हैं संयम द्वारा त्यागे जाने वाले कलंक कहलाते हैं, जिन्हें संयम द्वारा त्याग दिया गया है।

(2) "और वे कौन से दोष हैं जिन्हें उपयोग करने से त्याग दिया गया है? यहाँ, ध्यानपूर्वक विचार करने पर, एक भिक्षु वस्त्र का उपयोग केवल सर्दी से बचने के लिए, गर्मी से बचने के लिए, मक्खियों, मच्छरों, हवा, धूप और सर्पों के संपर्क से बचने के लिए और केवल गुप्तांगों को ढकने के लिए करता है। ध्यानपूर्वक विचार करने पर, वह भिक्षा भोजन का उपयोग न तो मनोरंजन के लिए, न ही नशे के लिए, न ही शारीरिक सौंदर्य और आकर्षण के लिए करता है, बल्कि केवल अपने शरीर के भरण-पोषण, हानि से बचने और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) में सहायता करने के लिए करता है, यह सोचते हुए कि, 'इस प्रकार मैं पुरानी वेदना को समाप्त करूँगा और नई वेदना को जागृत नहीं करूँगा, और मैं स्वस्थ और दोषरहित रहूँगा और आराम से रहूँगा।' ध्यानपूर्वक विचार करने पर, वह आवास का उपयोग केवल सर्दी से बचने के लिए, गर्मी से बचने के लिए, मक्खियों, मच्छरों, हवा, धूप और सर्पों के संपर्क से बचने के लिए और केवल खराब मौसम से सुरक्षा और एकांत का आनंद लेने के लिए करता है। ध्यानपूर्वक विचार करने पर वह बीमारों के लिए बनी दवाइयों और खाद्य पदार्थों का उपयोग केवल उत्पन्न कष्टदायक संवेदनाओं (वेदना) को दूर करने और अपने स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए करता है। [389] जो दोष, कष्टदायक और बुखार जैसे, इन चीजों का उपयोग न करने वाले व्यक्ति में उत्पन्न हो सकते हैं, वे इनका उपयोग करने वाले व्यक्ति में उत्पन्न नहीं होते। इन्हें उपयोग करने से त्यागे जाने वाले दोष कहा जाता है, जो उपयोग करने से त्याग दिए गए हैं।

(3) "और वे कौन से दोष हैं जिन्हें धैर्यपूर्वक सहन करने से त्याग दिया जाता है? यहाँ, ध्यानपूर्वक विचार करने पर, एक भिक्षु धैर्यपूर्वक सर्दी और गर्मी, भूख और प्यास; मक्खियों, मच्छरों, हवा, जलते सूरज और सर्पों के संपर्क; अभद्र और अपमानजनक वाणी को सहन करता है; वह उत्पन्न शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) को सहन करता है जो पीड़ादायक, कष्टदायक, तीक्ष्ण, चुभने वाली, कष्टदायी, अप्रिय

और जीवन शक्ति को क्षीण करने वाली होती हैं। वे दोष, कष्टदायक और ज्वरकारी, जो धैर्यपूर्वक सहन न करने वाले में उत्पन्न हो सकते हैं, धैर्यपूर्वक सहन करने वाले में उत्पन्न नहीं होते। इन्हें ही वे दोष कहा जाता है जिन्हें धैर्यपूर्वक सहन करने से त्याग दिया जाता है।"

(4) "और वे कौन से दोष हैं जिनका त्याग करने से पहले ही त्याग दिया गया है? यहाँ, ध्यानपूर्वक विचार करते हुए एक भिक्षु जंगली हाथी, जंगली घोड़े, जंगली बैल और जंगली कुत्ते से दूर रहता है; वह साँप, पेड़ का ठूंठ, काँटों का गुच्छा, गड्ढा, खाई, कूड़े का ढेर और गटर से दूर रहता है। ध्यानपूर्वक विचार करते हुए, वह अनुपयुक्त आसनों पर बैठने, अनुपयुक्त भिक्षागृहों में घूमने और बुरे मित्रों की संगति करने से बचता है, जिससे उसके बुद्धिमान साथी भिक्षुओं को उस पर बुरे कर्मों का संदेह न हो। जो दोष कष्टदायी और कष्टदायक होते हैं और जो इन चीजों से दूर न रहने वाले में उत्पन्न हो सकते हैं, वे इनसे दूर रहने वाले में उत्पन्न नहीं होते। [390] इन्हें वे दोष कहा जाता है जिनका त्याग करने से पहले ही त्याग दिया गया है।"

(5) "और वे कौन से दोष हैं जिन्हें निवारण द्वारा त्यागना चाहिए और जिन्हें निवारण द्वारा त्याग दिया गया है? यहाँ, ध्यानपूर्वक चिंतन करते हुए एक भिक्षु (साधु) उत्पन्न कामुक विचार को सहन नहीं करता; वह उसे त्याग देता है, उसका निवारण करता है, उसे समाप्त करता है और उसे मिटा देता है। ध्यानपूर्वक चिंतन करते हुए, वह द्वेष के विचार को सहन नहीं करता... हानि पहुँचाने के विचार को... बुरे हानिकारक (अकुशल) विचारों को जब भी वे उत्पन्न होते हैं; वह उन्हें त्याग देता है, उनका निवारण करता है, उन्हें समाप्त करता है और उन्हें मिटा देता है। वे दोष, कष्टदायी और ज्वरकारी, जो उन लोगों में उत्पन्न हो सकते हैं जो [इन चीजों को] दूर नहीं करते, वे उन लोगों में उत्पन्न नहीं होते जो उन्हें दूर करते हैं। इन्हें निवारण द्वारा त्यागे जाने वाले दोष कहा जाता है जिन्हें निवारण द्वारा त्याग दिया गया है।"

(6) "और वे कौन से दोष हैं जिन्हें विकास के द्वारा त्याग दिया जाना चाहिए, जो विकास के द्वारा त्याग दिए गए हैं? यहाँ, ध्यानपूर्वक चिंतन करते हुए एक भिक्षु सजगता के ज्ञान तत्व का विकास करता है, जो एकांत, वैराग्य (वीरग) और समाप्ति पर आधारित है, और मुक्ति में परिपक्व होता है। ध्यानपूर्वक चिंतन करते हुए, वह घटनाओं के विवेक (धम्म) के ज्ञान तत्व का विकास करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) के ज्ञान तत्व का... आनंद (पीति) के ज्ञान तत्व का... शांति (पासद्धि) के ज्ञान तत्व का... समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) के ज्ञान तत्व का... उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) के ज्ञान तत्व का, जो एकांत, वैराग्य (वीरग) और समाप्ति पर आधारित है, और मुक्ति में परिपक्व होता है। वे दोष, कष्टदायी और ज्वरकारी, जो उस व्यक्ति में उत्पन्न हो सकते हैं जो [इन चीजों] का विकास नहीं करता है, उनमें उत्पन्न नहीं होते हैं।" जो इन्हें विकसित करता है। इन्हें विकास द्वारा त्यागे जाने वाले कलंक कहा जाता है, जिन्हें विकास द्वारा त्याग दिया गया है।

"हे भिक्षुओं, इन छह गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।" [391]

---

59 दारुकम्मिका

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) नादिका में ईंटों से बने भवन में निवास कर रहे थे। तब गृहस्थ दारुकम्मिका 1384 भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: "क्या तुम्हारा परिवार दान देता है, गृहस्थ?"

"हे भंते, मेरा परिवार दान देता है। और ये दान उन भिक्षुओं को दिए जाते हैं जो अरहंत हैं या अरहंत बनने की राह पर हैं, जो वनवासी हैं, भिक्षा मांगने वाले हैं और जो चिथड़े-चिथड़े पहनते हैं।" 1385

"हे गृहस्थ, आप एक गृहस्थ हैं जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हैं, बच्चों से भरे घर में रहते हैं, काशी की चंदन का उपयोग करते हैं, माला, सुगंध और लेप लगाते हैं, और सोना-चांदी प्राप्त करते हैं, इसलिए आपके लिए यह जानना कठिन है कि 'ये अरहंत हैं या अरहंतत्व के मार्ग पर हैं।'"

(1) हे गृहस्थ, यदि कोई भिक्षु जो वनवासी है, बेचैन, अहंकारी, घमंडी, बातूनी, अस्पष्ट, भ्रमित, पूर्ण बोधहीन (संपजन्न), असामंजस्यपूर्ण (असमहित), भटकते मन वाला और इंद्रियों पर नियंत्रण रखने में असमर्थ है, तो इस दृष्टि से वह निंदनीय है। परन्तु यदि कोई भिक्षु जो वनवासी है, बेचैन, अहंकारी और घमंडी नहीं है, बातूनी और अस्पष्ट नहीं है, बल्कि सती ध्यान में स्थापित है, पूर्ण बोध रखता है, समाधि में है, एकाग्रचित्त (एकगचित्त) है और इंद्रियों पर संयम रखता है, तो इस दृष्टि से वह प्रशंसनीय है।

(2) "यदि कोई भिक्षु जो गाँव के बाहरी इलाके में रहता है, अपनी इंद्रियों को अनियंत्रित रखते हुए बेचैन है, तो इस मामले में वह निंदनीय है। परन्तु यदि कोई भिक्षु जो गाँव के बाहरी इलाके में रहता है, अपनी इंद्रियों को नियंत्रित रखते हुए बेचैन नहीं है, तो इस मामले में वह प्रशंसनीय है।"

(3) "यदि कोई भिक्षु जो भिक्षा एकत्र करता है, अपनी इंद्रियों को शिथिल करके बेचैन हो जाता है, तो इस दृष्टि से वह निंदनीय है। परन्तु यदि कोई भिक्षु जो भिक्षा एकत्र करता है, अपनी इंद्रियों को संयमित करके बेचैन नहीं होता है, तो इस दृष्टि से वह प्रशंसनीय है।"

(4) "यदि कोई भिक्षु भोजन के निमंत्रण स्वीकार करते समय बेचैन रहता है और उसकी इंद्रियाँ शिथिल रहती हैं, तो इस मामले में वह निंदनीय है। परन्तु यदि कोई भिक्षु भोजन के निमंत्रण स्वीकार करते समय बेचैन नहीं रहता और उसकी इंद्रियाँ संयमित रहती हैं, तो इस मामले में वह प्रशंसनीय है।"

(5) "यदि कोई भिक्षु जो चिथड़े के वस्त्र पहनता है, अपनी इंद्रियों को अनियंत्रित रखते हुए बेचैन हो, तो इस दृष्टि से वह निंदनीय है। परन्तु यदि कोई भिक्षु जो चिथड़े के वस्त्र पहनता है, अपनी इंद्रियों को नियंत्रित रखते हुए बेचैन न हो, तो इस दृष्टि से वह प्रशंसनीय है।"

(6) "यदि कोई भिक्षु जो गृहस्थों द्वारा दिए गए वस्त्र धारण करता है, अपनी इंद्रियों को अनियंत्रित रखते हुए बेचैन हो, तो इस दृष्टि से वह निंदनीय है। परन्तु यदि कोई भिक्षु जो गृहस्थों द्वारा दिए गए वस्त्र धारण करता है, अपनी इंद्रियों को नियंत्रित रखते हुए बेचैन न हो, तो इस दृष्टि से वह प्रशंसनीय है।"

"हे गृहस्थ, अब संघ को दान दो। संघ को दान देने से तुम्हारा मन दृढ़ विश्वास से भर जाएगा। जब तुम्हारा मन दृढ़ विश्वास से भर जाएगा, तो शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, तुम एक शुभ स्थान पर, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लोगे।"

"भंते, आज से मैं संघ को दान दूंगा:" 1386

---

60 हत्थी

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) इसिपताना के हिरण उद्यान में बरनासी में निवास कर रहे थे। उस अवसर पर, भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, कई वरिष्ठ भिक्षु मंडप कक्ष में एकत्रित हुए और धम्म से संबंधित चर्चा में लगे हुए थे। 1367 जब वे चर्चा में लगे हुए थे, तब पूज्य चित्त हत्थिसारिपुत्त ने बार-बार उनकी बातचीत में बाधा डाली। 1388 तब पूज्य महाकोत्थिता ने पूज्य चित्त हत्थिसारिपुत्त से कहा:

"जब वरिष्ठ भिक्षु धम्म से संबंधित चर्चा में लगे हों, तो बार-बार [393] उनकी बात में दखल न दें, बल्कि उनकी चर्चा समाप्त होने तक प्रतीक्षा करें।"

जब यह कहा गया, तो पूज्य चित्त हत्थिसारिपुत्त के भिक्षु मित्रों ने पूज्य महाकोत्थिता से कहा: "पूज्य चित्त हत्थिसारिपुत्त का अपमान न करें। पूज्य चित्त हत्थिसारिपुत्त बुद्धिमान हैं और धम्म से संबंधित चर्चा में वरिष्ठ भिक्षुओं के साथ भाग लेने में सक्षम हैं।"

[आदरणीय महाकोत्थिता ने कहा:] "मित्रों, जो लोग दूसरे के मन के शव को नहीं जानते, उनके लिए यह जानना कठिन है।"

(1) "यहाँ, मित्रों, कोई व्यक्ति गुरु या गुरु के पद पर आसीन साथी भिक्षु के निकट रहने के दौरान अत्यंत सौम्य, विनम्र और शांत प्रतीत होता है। परन्तु जब वह गुरु और गुरु के पद पर आसीन साथी भिक्षुओं को छोड़कर अन्य भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष एवं स्त्री गृहस्थ अनुयायियों, राजाओं और राजमंत्रियों, संप्रदायिक गुरुओं और संप्रदायिक गुरुओं के शिष्यों से संबंध स्थापित करता है। जैसे-जैसे वह

उनसे संबंध स्थापित करता है और उनके साथ घनिष्ठ संबंध बनाता है, जैसे-जैसे वह उनके साथ खुलकर बातचीत करता है, उसके मन में कामवासना (राग) घर कर जाती है। कामवासना (राग) से ग्रस्त होकर वह साधना त्याग देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।"

मान लीजिए कि फसलों को खाने वाले एक बैल को रस्सी से बांध दिया जाए या बाड़े में बंद कर दिया जाए। क्या कोई सही कह सकता है: 'अब यह फसल खाने वाला बैल फिर कभी फसलों के बीच प्रवेश नहीं करेगा'?

"बिल्कुल नहीं, दोस्त। क्योंकि यह संभव है कि फसल खाने वाला यह बैल रस्सी तोड़ दे या बाड़े से बाहर निकल जाए और फिर से फसलों के बीच घुस जाए।"

"इसी प्रकार, यहाँ कुछ [394] व्यक्ति अत्यंत सौम्य हैं। . . . लेकिन जब वह शिक्षक और साथी भिक्षुओं को शिक्षक के पद पर छोड़ देता है, तो वह [अन्य] भिक्षुओं के साथ संबंध स्थापित करता है ... वह प्रशिक्षण त्याग देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।

(2) "फिर, हे मित्रों, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... कोई व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। [यह सोचकर,] 'मैं वह हूँ जिसने प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) प्राप्त की है', वह अन्य भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष और स्त्री गृहस्थ अनुयायियों, राजाओं और राजमंत्रियों, संप्रदायिक शिक्षकों और उनके शिष्यों से संबंध स्थापित करता है। जैसे-जैसे वह उनसे संबंध स्थापित करता है और उनके साथ घनिष्ठ संबंध बनाता है, जैसे-जैसे वह उनके साथ खुलकर बातचीत करता है, कामवासना (राग) उसके मन पर हावी हो जाती है। कामवासना (राग) से ग्रस्त होकर वह प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।"

मान लीजिए कि चौराहे पर बारिश की मोटी बूँदें धूल को गायब कर दें और कीचड़ पैदा कर दें। क्या कोई सही कह सकता है: 'अब इस चौराहे पर धूल कभी दोबारा नहीं आएगी'?

"बिल्कुल नहीं, दोस्त। क्योंकि यह संभव है कि लोग इस चौराहे से गुजरेंगे, या मवेशी और बकरियां 1369 गुजरेंगी, या हवा और सूरज की गर्मी नमी को सुखा देगी, और फिर धूल दोबारा दिखाई देगी।"

"इसी प्रकार, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... कोई व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। [यह सोचकर,] 'मैं वह हूँ जिसने प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) प्राप्त की है,' वह [अन्य] भिक्षुओं से जुड़ जाता है... वह प्रशिक्षण त्याग देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है। [395]

(3) "फिर, मित्रों, विचार और परीक्षण के शांत होने पर, कोई व्यक्ति द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है।"

यह सोचते हुए कि 'मैं द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) प्राप्त करने वाला हूँ,' वह अन्य भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष और स्त्री गृहस्थ अनुयायियों, राजाओं और राजमंत्रियों, संप्रदायिक शिक्षकों और उनके शिष्यों से संबंध स्थापित करता है। जैसे-जैसे वह उनसे संबंध स्थापित करता है और उनके साथ घनिष्ठ संबंध बनाता है, जैसे-जैसे वह सहज होकर उनसे बातचीत करता है, उसके मन में कामवासना (राग) घर कर जाती है। कामवासना (राग) से ग्रस्त होकर वह साधना त्याग देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।

मान लीजिए कि किसी गाँव या कस्बे से कुछ ही दूरी पर एक बड़ा तालाब है। घनी बूंदों के रूप में गिरने वाली बारिश से विभिन्न प्रकार के शंख, बजरी और कंकड़ गायब हो जाते हैं। क्या कोई सही कह सकता है: 'अब इस तालाब में विभिन्न प्रकार के शंख, बजरी और कंकड़ कभी दोबारा प्रकट नहीं होंगे'?

"बिल्कुल नहीं, मित्र। क्योंकि यह संभव है कि लोग इस तालाब से पानी पिएं, या मवेशी और बकरियां इससे पानी पिएं, या हवा और सूरज की गर्मी से नमी सूख जाए। तब विभिन्न प्रकार के शंख, बजरी और कंकड़ फिर से प्रकट हो जाएंगे।"

"इसी प्रकार, विचार और चिंतन के शांत होने पर, कोई व्यक्ति द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... [यह सोचते हुए,] 'मैं वह हूँ जिसने द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) प्राप्त की है,' वह [अन्य] भिक्षुओं के साथ बंध बनाता है ... वह प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।"

(4) "फिर, हे मित्रों, जब पीति (आनंद) भी लुप्त हो जाती है, तो कोई व्यक्ति... तीसरे ध्यान (सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... [यह सोचते हुए,] 'मैं वह हूँ जिसने तीसरा ध्यान (सम्मोहन) प्राप्त किया है', वह अन्य भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष और स्त्री गृहस्थ अनुयायियों, राजाओं और राजमंत्रियों, संप्रदायिक शिक्षकों और उनके शिष्यों से जुड़ जाता है। जैसे-जैसे वह उनसे जुड़ता है और उनके साथ घनिष्ठ संबंध बनाता है, जैसे-जैसे वह उनके साथ बातचीत में मग्न होता है, काम (राग) उसके मन पर हावी हो जाता है। काम (राग) से ग्रस्त होकर वह प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।"

"मान लीजिए कि पिछली शाम का बचा हुआ खाना [396] उस आदमी को पसंद नहीं आएगा जिसने स्वादिष्ट भोजन किया हो। क्या कोई सही कह सकता है: 'अब इस आदमी को खाना कभी पसंद नहीं आएगा'?"

"बिल्कुल नहीं, मित्र। क्योंकि जब तक उसके शरीर में पोषक तत्व मौजूद हैं, तब तक उसे अधिक भोजन आकर्षित नहीं करेगा, लेकिन जब पोषक तत्व समाप्त हो जाएंगे, तो संभव है कि उसे फिर से ऐसा भोजन आकर्षित करने लगे।"

इसी प्रकार, जब आनंद (पीति) लुप्त हो जाता है, तो कुछ व्यक्ति... तीसरे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश कर उसमें निवास करते हैं... [यह सोचकर,] 'मैं वह हूँ जिसने तीसरा ध्यान (सम्मोहन अवस्था) प्राप्त किया है,' वह [अन्य] भिक्षुओं के साथ बंध जाते हैं... वह प्रशिक्षण छोड़ देते हैं और निम्न जीवन में लौट जाते हैं।

(5) "फिर, हे मित्रों, सुख और दुख का त्याग करके... कोई व्यक्ति चौथे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। [यह सोचते हुए,] 'मैं वह हूँ जिसने चौथा ध्यान (सम्मोहन अवस्था) प्राप्त किया है', वह अन्य भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष और स्त्री गृहस्थ अनुयायियों, राजाओं और राजमंत्रियों, संप्रदायिक शिक्षकों और उनके शिष्यों से जुड़ता है। जैसे-जैसे वह उनसे जुड़ता है और उनके साथ घनिष्ठ संबंध बनाता है, जैसे-जैसे वह उनके साथ खुलकर बातचीत करता है, कामवासना (राग) उसके मन पर हावी हो जाती है। कामवासना (राग) से ग्रस्त होकर वह प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।"

मान लीजिए कि एक पहाड़ी घाटी में एक झील है जो हवा से सुरक्षित है और उसमें लहरें नहीं हैं। क्या कोई सही कह सकता है: "अब इस झील पर लहरें कभी दोबारा नहीं आएंगी?"

"बिल्कुल नहीं, दोस्त। क्योंकि यह संभव है कि पूर्व, [397] पश्चिम, उत्तर या दक्षिण से एक भयंकर बारिश का तूफान आ सकता है और झील पर लहरें उठा सकता है।"

इसी प्रकार, सुख और दुख का त्याग करने पर... कोई व्यक्ति यहाँ चौथी ध्यान अवस्था (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... [यह सोचते हुए,] 'मैं वह हूँ जिसने चौथी ध्यान अवस्था (सम्मोहन अवस्था) प्राप्त की है', वह [अन्य] भिक्षुओं के साथ बंध बनाता है... वह प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।

(6) "फिर, हे मित्रों, सभी लक्षणों पर ध्यान न देने के कारण, कोई व्यक्ति लक्षणहीन मानसिक समाधि (आत्म-मग्नता/सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। 1391 [यह सोचकर,] 'मैं वह हूँ जिसने लक्षणहीन मानसिक समाधि (आत्म-मग्नता/सम्मोहन) प्राप्त की है,' वह अन्य भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष और स्त्री गृहस्थ अनुयायियों, राजाओं और राजमंत्रियों, संप्रदायिक शिक्षकों और उनके शिष्यों के साथ संबंध स्थापित करता है। जैसे-जैसे वह उनके साथ संबंध स्थापित करता है और उनसे घनिष्ठ होता है, जैसे-जैसे वह उनके साथ खुलकर बातचीत करता है, कामवासना (राग) उसके मन पर हावी हो जाती है। कामवासना (राग) से ग्रस्त होकर वह प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।"

मान लीजिए कि कोई राजा या राजमंत्री चार भागों वाली सेना के साथ किसी राजमार्ग पर यात्रा कर रहा था और उसने रात बिताने के लिए किसी घने जंगल में डेरा डाला। हाथियों, घोड़ों, रथ चालकों और पैदल सेना की आवाज़ों और ढोल, नगाड़े, शंख और तुरही की आवाज़ और शोर के कारण झींगुरों की आवाज़ गायब हो गई। क्या कोई सही कह सकता है: 'अब इस घने जंगल में झींगुरों की आवाज़ कभी दोबारा नहीं सुनाई देगी'? [398]

"बिल्कुल नहीं, मित्र। क्योंकि ऐसा संभव है कि राजा या राजमंत्री उस घने जंगल को छोड़ दें, और तब झींगुरों की आवाज फिर से सुनाई देने लगेगी।"

"इसी प्रकार, सभी चिह्नों पर ध्यान न देने के कारण, यहाँ कोई व्यक्ति चिह्नरहित मानसिक समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है।"

यह सोचकर कि 'मैं वह हूं जिसने चिह्नरहित मानसिक समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त की है', वह अन्य भिक्षुओं से जुड़ जाता है... वह प्रशिक्षण छोड़ देता है और निम्न जीवन में लौट जाता है।

कुछ समय बाद पूज्य चित्त हत्थिसारिपुत्त ने साधना त्याग कर परलोक में लौट गए। उनके भिक्षु मित्रों ने पूज्य महाकोत्थिता से संपर्क किया और उनसे कहा: "क्या पूज्य महाकोत्थिता ने चित्त हत्थिसारिपुत्त के मन को अपने मन से ग्रहण कर लिया और यह समझ लिया कि 'चित्त हत्थिसारिपुत्त अमुक ध्यान अवस्था और सिद्धियाँ प्राप्त कर लेते हैं, फिर भी साधना त्याग कर परलोक में लौट जाते हैं'? या क्या देवताओं ने उन्हें यह बात बताई?"

"मित्रों, मैंने चित्त हत्थिसरिपुत्त के मन को अपने मन से समाहित किया और समझा: 'चित्त हत्थिसरिपुत्त अमुक ध्यान अवस्थाओं और उपलब्धियों को प्राप्त करते हैं, फिर भी वे प्रशिक्षण छोड़कर निम्न जीवन में लौट जाते हैं। और देवताओं (देवदूतों) ने भी मुझे इस विषय की सूचना दी।"

तब चित्त हत्थिसारिपुत्त के वे भिक्षु मित्र भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, [399] एक तरफ बैठ गए और बोले: "भंते, चित्त हत्थिसारिपुत्त ने अमुक ध्यान निवास और उपलब्धियाँ प्राप्त कीं, फिर भी उन्होंने प्रशिक्षण त्याग दिया और निम्न जीवन में लौट आए।"

"भिक्षुओं, शीघ्र ही चित्त त्याग करने का विचार करेगा।" 1392

इसके कुछ समय बाद ही चित्त हत्थिसारिपुत्त ने अपने बाल और दाढ़ी मुंडवा ली, गेरुए वस्त्र धारण किए और गृहस्थ जीवन त्यागकर संन्यासी जीवन में प्रवेश कर लिया। फिर एकांतवास में, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ, पूज्य चित्त हत्थिसारिपुत्त ने इसी जीवन में ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) के उस श्रेष्ठ लक्ष्य को प्रत्यक्ष ज्ञान से जान लिया, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन त्यागकर संन्यासी जीवन में प्रवेश करते हैं, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करने लगे। 1393 उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान से जाना: "पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।" और पूज्य चित्त हत्थिसारिपुत्त अरहंतों में से एक बन गए।

---

61 मध्य (मज्जे सं. मध्य)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) बरनासी में इसिपताना के हिरण पार्क में निवास कर रहे थे। उस अवसर पर, भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, कई वरिष्ठ भिक्षु मंडप कक्ष में एकत्रित होकर बैठे थे, तभी यह बातचीत हुई: "मित्रों, भगवान (बुद्ध) ने परायण में, 'मत्तेय के प्रश्न' 394 में कहा है।"

दोनों छोरों को समझकर, बुद्धिमान व्यक्ति मध्य मार्ग में नहीं अटकता। 1395 मैं उसे महान पुरुष कहता हूँ: उसने यहाँ दर्जी से भी बढ़कर उपलब्धि हासिल की है।

"मित्रों, पहला सिरा क्या है? दूसरा सिरा क्या है? बीच में क्या है? और दर्जी क्या है?"

(1) जब यह कहा गया, तो एक भिक्षु ने अन्य भिक्षुओं से कहा: "हे मित्रों, संपर्क एक लक्ष्य है; संपर्क का उत्पन्न होना दूसरा लक्ष्य है; संपर्क का समाप्त होना मध्य में है; और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) उसे बांधती है। क्योंकि तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) व्यक्ति को किसी न किसी अवस्था के उत्पन्न होने से जोड़ देती है। 1396 इसी प्रकार भिक्षु प्रत्यक्ष रूप से उस ज्ञान को प्राप्त करता है जिसे प्रत्यक्ष रूप से जानना चाहिए; पूर्ण रूप से उस ज्ञान को समझता है जिसे पूर्ण रूप से समझना चाहिए; और ऐसा करके वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है।" 1397

(2) जब यह कहा गया, तो एक अन्य भिक्षु ने वरिष्ठ भिक्षुओं से कहा, “हे मित्रों, अतीत एक लक्ष्य है; भविष्य दूसरा लक्ष्य है; वर्तमान मध्य में है; और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) वह सूत्र है। क्योंकि तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) व्यक्ति को किसी न किसी जन्म-मृत्यु के कारण से जोड़ देती है। इसी प्रकार एक भिक्षु प्रत्यक्ष रूप से वह जान पाता है जो प्रत्यक्ष रूप से जानना चाहिए... इसी जीवन में वह दुखों का अंत कर देता है।”

(3) जब यह कहा गया, तो एक अन्य भिक्षु ने वरिष्ठ भिक्षुओं से कहा: "हे मित्रों, सुखदायक अनुभूति (वेदना) एक लक्ष्य है; कष्टदायक अनुभूति (वेदना) दूसरा लक्ष्य है; न कष्टदायक न सुखदायक अनुभूति (वेदना) मध्य में है; और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) वह सूत्र है। क्योंकि तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) व्यक्ति को किसी न किसी अवस्था के सृजन से जोड़ देती है। इसी प्रकार भिक्षु प्रत्यक्ष रूप से उस बात को जान पाता है जिसे प्रत्यक्ष रूप से जानना चाहिए... इसी जीवन में वह दुखों का अंत कर देता है।"

(4) जब यह कहा गया, तो एक अन्य भिक्षु ने वरिष्ठ भिक्षुओं से कहा: "हे मित्रों, मन (नाम) एक लक्ष्य है; रूप दूसरा लक्ष्य है; चेतना मध्य में है; और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) उसे जोड़ने वाली है। 398 क्योंकि तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) व्यक्ति को किसी न किसी अवस्था (भावो/पुनर्जन्म का कारण) से जोड़ देती है। इसी प्रकार भिक्षु प्रत्यक्ष रूप से वह जान पाता है जो प्रत्यक्ष रूप से जानना चाहिए... इसी जीवन में वह दुखों का अंत कर देता है।"

(5) जब यह कहा गया, तो एक अन्य भिक्षु ने वरिष्ठ भिक्षुओं से कहा: "हे मित्रों, छह आंतरिक आधार एक लक्ष्य हैं; छह बाह्य आधार दूसरा लक्ष्य हैं; चेतना मध्य में है; और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) उसे बुनने वाली है। 1399 क्योंकि तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) व्यक्ति को किसी न किसी अवस्था के निर्माण से जोड़ती है। इसी प्रकार एक भिक्षु [401] प्रत्यक्ष रूप से वह जान पाता है जो प्रत्यक्ष रूप से जाना जाना चाहिए... इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है।"

(6) जब यह कहा गया, तो एक अन्य भिक्षु ने वरिष्ठ भिक्षुओं से कहा: "हे मित्रों, व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) एक लक्ष्य है; व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का उद्गम दूसरा लक्ष्य है; व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का अंत मध्य में है; और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) इसे बुनती है। 1400 क्योंकि तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) व्यक्ति को किसी न किसी अवस्था (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के निर्माण से जोड़ देती है। इसी प्रकार एक भिक्षु प्रत्यक्ष रूप से उस ज्ञान को प्राप्त करता है जिसे प्रत्यक्ष रूप से जानना चाहिए; उस ज्ञान को पूर्ण रूप से समझता है जिसे पूर्ण रूप से समझना चाहिए; और ऐसा करके, वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है।"

यह सुनकर एक भिक्षु ने अन्य वरिष्ठ भिक्षुओं से कहा, “मित्रों, हम सबने अपनी-अपनी प्रेरणा के अनुसार व्याख्या कर दी है। आइए, हम भगवान (बुद्ध) के पास चलें और उन्हें इस विषय की जानकारी दें। जिस प्रकार भगवान (बुद्ध) हमें इसका अर्थ समझाएंगे, उसी प्रकार हमें इसे अपने मन में रखना चाहिए।”

“जी, मित्र,” उन वरिष्ठ भिक्षुओं ने उत्तर दिया। तब वरिष्ठ भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उन्हें सारी बातचीत बताई, [पूछते हुए] “भंते, हम में से किसने अच्छा बोला?”

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "भिक्षुओं, एक तरह से आप सभी ने अच्छा कहा है, लेकिन ध्यान से सुनो और गौर करो क्योंकि मैं तुम्हें बताता हूँ कि परायण में, 'मत्तेय के प्रश्न' में मैंने जो कहा था उसका मेरा क्या तात्पर्य था:

"दोनों छोरों को समझ लेने के बाद, बुद्धिमान व्यक्ति मध्य मार्ग में नहीं अटकता। मैं उसे महान व्यक्ति कहता हूँ: उसने यहाँ दर्जी से भी बढ़कर उपलब्धि हासिल की है।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, संपर्क एक लक्ष्य है; संपर्क की उत्पत्ति दूसरा लक्ष्य है; संपर्क का अंत मध्य में है; और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) वह सूत्र है। क्योंकि तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) व्यक्ति को किसी न किसी अवस्था के सृजन से जोड़ देती है। इसी प्रकार भिक्षु प्रत्यक्ष रूप से उस ज्ञान को प्राप्त करता है जिसे प्रत्यक्ष रूप से जानना चाहिए; उस ज्ञान को पूर्णतः समझता है जिसे पूर्णतः समझना चाहिए; और ऐसा करके वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है।

---

62 ज्ञान 1402 (पुरीसिन्द्रियाना सं. पुरुष इन्द्रिय ज्ञान)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक बड़े संघ के साथ कोसल पर्वतमाला में भ्रमण कर रहे थे, जब वे दंडकप्पक नामक एक नगर में पहुँचे। तब भगवान (बुद्ध) ने मुख्य मार्ग छोड़कर एक वृक्ष के नीचे उनके लिए तैयार किए गए आसन पर बैठ गए, और वे भिक्षु विश्राम गृह की तलाश में दंडकप्पक में प्रवेश कर गए।

तब पूज्य आनंद अपने कुछ भिक्षुओं के साथ अचिरवती नदी में स्नान करने गए। स्नान करके वापस आने पर वे एक ही वस्त्र में अपने शरीर को सुखा रहे थे। तभी एक भिक्षु पूज्य आनंद के पास आया और उनसे बोला, "मित्र आनंद, क्या भगवान (बुद्ध) ने देवदत्त के विषय में यह बात पूरी तरह विचार करने के बाद कही थी कि 'देवदत्त दुख के लोक में जाने वाला है, नरक में जाएगा और युगों तक वहीं रहेगा, उसका उद्धार संभव नहीं है' या उन्होंने यह बात केवल लाक्षणिक अर्थ में कही थी?"

"मित्र, भगवान (बुद्ध) ने ठीक इसी प्रकार इसकी घोषणा की थी।" 1403

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और [जो कुछ हुआ था उसका वर्णन करते हुए]: [403] "जब यह कहा गया, भंते, मैंने उस भिक्षु से कहा: 'मित्र, भगवान (बुद्ध) ने ठीक इसी तरह यह बात कही थी।"

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "आनंद, वह भिक्षु या तो नवदीक्षित है, संन्यासी जीवन में गए हुए उसे ज्यादा समय नहीं हुआ है, या फिर वह एक नासमझ और अयोग्य बुजुर्ग है। क्योंकि जब मैंने यह बात स्पष्ट रूप से कह दी है, तो उसे इसमें कोई संदेह कैसे हो सकता है? 1404 हे आनंद, मुझे देवदत्त के अलावा कोई और ऐसा व्यक्ति नहीं दिखता जिसके बारे में मैंने इतना गहन विचार-विमर्श करने के बाद कोई घोषणा की हो। जब तक मुझे देवदत्त में एक बाल के सिरे के बराबर भी उज्ज्वल गुण दिखाई दिया, तब तक मैंने उसके बारे में यह घोषणा नहीं की: 'देवदत्त दुख के लोक में जाने वाला है, नरक में जाने वाला है, और वह युगों तक वहीं रहेगा, उद्धार नहीं पा सकेगा।' हे आनंद, मैंने यह घोषणा तभी की जब मुझे देवदत्त में एक बाल के सिरे के बराबर भी उज्ज्वल गुण नहीं दिखाई दिया। 1405

"मान लीजिए कि एक गटर मनुष्य की ऊँचाई से भी गहरा है और ऊपर तक मल से भरा हुआ है, और एक आदमी उसमें इस तरह डूबा हुआ है कि उसका सिर डूबा हुआ है। तब एक आदमी उसकी भलाई, कल्याण और सुरक्षा की कामना करते हुए, उसे गटर से बाहर निकालने की इच्छा से प्रकट होगा। वह गटर के चारों ओर चक्कर लगाएगा, लेकिन उसे उस आदमी का एक बाल के सिरे जितना छोटा हिस्सा भी मल से सना हुआ नहीं दिखाई देगा [404] जहाँ वह उसे पकड़कर बाहर निकाल सके। ठीक इसी प्रकार, आनंद, जब मैंने देवदत्त में एक बाल के सिरे जितना छोटा सा भी उज्ज्वल गुण नहीं देखा, तभी मैंने उसके बारे में कहा: 'देवदत्त दुख के लोक में जाने वाला है, नरक में जाने वाला है, और वह वहाँ युगों तक अप्रतिरोध्य रहेगा।'"

"हे आनंद, यदि तुम तथागत (बुद्ध) के व्यक्ति की इंद्रियों के ज्ञान को सुनोगे, तो मैं उसका विश्लेषण करूँगा।" 1406

"यही समय है, हे भगवान (बुद्ध)! यही समय है, हे सुगत (भगवान बुद्ध)! भगवान (बुद्ध) को व्यक्ति की इंद्रियों के ज्ञान का विश्लेषण करना चाहिए। भगवान (बुद्ध) से यह सुनकर भिक्षु इसे अपने मन में धारण करेंगे।"

"तो फिर, आनंद, ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," पूज्य आनंद ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

(1) "हे आनंद, मैंने अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करते हुए उसे इस प्रकार समझा: 'इस व्यक्ति में लाभकारी (कुशल) गुण और हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) पाए जाते हैं।' बाद में, मैंने अपने मन से उसके मन को समाहित करते हुए उसे इस प्रकार समझा: 'इस व्यक्ति के लाभकारी (कुशल) गुण लुप्त हो गए हैं, हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) प्रकट हो गए हैं, परन्तु उसका लाभकारी (कुशल) मूल अभी तक नष्ट नहीं हुआ है। उसके उस लाभकारी (कुशल) मूल से लाभकारी (कुशल) गुण प्रकट होंगे। अतः यह व्यक्ति भविष्य में पतन के अधीन नहीं होगा।' मान लीजिए कि अक्षुण्ण, अक्षुण्ण, वायु और सूर्य की गर्मी से अप्रभावित, उपजाऊ,

अच्छी तरह से संरक्षित बीज एक अच्छे खेत में अच्छी तरह से तैयार मिट्टी में बो दिए गए। क्या आप नहीं जानते: 'ये बीज उगेंगे, बढ़ेंगे और परिपक्व होंगे'?"

"हां, भंते।"

"इसी प्रकार, आनंद, अपने मन से उनके मन को समाहित करके... [405] ... मैं उन्हें इस प्रकार समझता हूँ: 'इस व्यक्ति के लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) लुप्त हो गए हैं, हानिकारक (अकुशल) गुण प्रकट हो गए हैं, परन्तु उनका एक लाभकारी (कुशल) मूल है जो नष्ट नहीं हुआ है। उनके उस लाभकारी (कुशल) मूल से लाभकारी (कुशल) गुण प्रकट होंगे। अतः यह व्यक्ति भविष्य में पतन के अधीन नहीं होगा। इस प्रकार, आनंद, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करके उसका ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करके उसकी क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी दूसरे व्यक्ति के मन को समाहित करके गुणों की भविष्य में उत्पत्ति का ज्ञान प्राप्त करते हैं।"

(2) "फिर, हे आनंद, मैंने अपने मन से उस व्यक्ति का अध्ययन करते हुए समझा कि: 'इस व्यक्ति में लाभकारी (कुशल) गुण और हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) पाए जाते हैं। बाद में, मैंने अपने मन से उस व्यक्ति का अध्ययन करते हुए समझा कि: 'इस व्यक्ति के हानिकारक (अकुशल) गुण समाप्त हो गए हैं, लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) प्रकट हैं, लेकिन इसमें एक हानिकारक (अकुशल) जड़ है जिसका उन्मूलन नहीं हुआ है। इसकी उस हानिकारक (अकुशल) जड़ से हानिकारक (अकुशल) गुण उत्पन्न होंगे। इस प्रकार यह व्यक्ति भविष्य में पतन के अधीन होगा। मान लीजिए, हे आनंद, साबुत, अक्षुण्ण, हवा और सूर्य की गर्मी से अप्रभावित, उपजाऊ, अच्छी तरह से संरक्षित बीज एक चौड़ी चट्टान पर रखे गए। क्या आप नहीं जानते: 'ये बीज उगेंगे नहीं, बढ़ेंगे नहीं और परिपक्व नहीं होंगे'?"

"हां, भंते।"

"इसी प्रकार, आनंद, अपने मन से उनके मन को समाहित करके... मैं उन्हें इस प्रकार समझता हूँ: 'इस व्यक्ति के हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) समाप्त हो गए हैं, लाभकारी (कुशल) गुण प्रकट हो गए हैं, परन्तु उनमें एक हानिकारक (अकुशल) मूल है जिसका उन्मूलन नहीं हुआ है। उनके उस हानिकारक (अकुशल) मूल से हानिकारक (अकुशल) गुण उत्पन्न होंगे। अतः यह व्यक्ति [406] भविष्य में पतन के अधीन होगा।' इस प्रकार, आनंद, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करके उसका ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करके उसकी क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी दूसरे व्यक्ति के मन को समाहित करके गुणों की भविष्य में उत्पत्ति का ज्ञान प्राप्त करते हैं।"

(3) "फिर, हे आनंद, मैंने अपने मन से किसी व्यक्ति का अध्ययन करते हुए उसे इस प्रकार समझा: 'इस व्यक्ति में लाभकारी (कुशल) गुण और हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) दोनों पाए जाते हैं। बाद में, मैंने अपने मन से उसका अध्ययन करते हुए उसे इस प्रकार समझा: 'इस व्यक्ति में एक बाल के सिरे के बराबर भी उज्ज्वल गुण नहीं है। इस व्यक्ति में केवल काले, हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) ही हैं। शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेगा।' मान लीजिए, हे आनंद, हवा और सूर्य की गर्मी से टूटे, खराब हुए, क्षतिग्रस्त बीजों को अच्छी तरह से तैयार की गई मिट्टी में अच्छे खेत में बो दिया जाए। क्या आप नहीं जानते: 'ये बीज उगेंगे नहीं, बढ़ेंगे नहीं और पकेंगे नहीं'?"

"हां, भंते।"

"इसी प्रकार, आनंद, अपने मन से उनके मन को समाहित करके... मैं उन्हें इस प्रकार समझता हूँ: 'इस व्यक्ति में एक बाल के अंश के बराबर भी उज्ज्वल गुण नहीं है। इस व्यक्ति में केवल काले, हानिकारक (अकुशल) गुण ही हैं। शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, यह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेगा।' इस प्रकार, आनंद, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करके उसे जान लेते हैं। इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करके उसकी क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) गुणों की भविष्य की उत्पत्ति को जान लेते हैं - दूसरे के मन को अपने मन से समाहित करके।"

यह सुनकर पूज्य आनंद ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

[407] "भंते, क्या तीन अन्य व्यक्तियों का वर्णन करना संभव है?"

उन तीनों के समकक्ष के रूप में?

"यह संभव है, आनंद," भगवान (बुद्ध) ने कहा।

(4) "हे आनंद, यहाँ मैंने अपने मन से किसी व्यक्ति का अध्ययन किया और उसे इस प्रकार समझा: 'इस व्यक्ति में लाभकारी (कुशल) गुण और हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) दोनों पाए जाते हैं।' बाद में, मैंने अपने मन से उसका अध्ययन किया और उसे इस प्रकार समझा: 'इस व्यक्ति के लाभकारी (कुशल) गुण लुप्त हो गए हैं, हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) प्रकट हो गए हैं, परन्तु इसका लाभकारी (कुशल) मूल अभी तक नष्ट नहीं हुआ है। वह भी पूर्णतः नष्ट होने वाला है। अतः यह व्यक्ति भविष्य में पतन का पात्र होगा।' मान लीजिए, हे आनंद, जलते, धधकते और चमकते अंगारे एक विशाल चट्टान पर रखे हों। क्या आप यह नहीं जानते होंगे: 'ये अंगारे बढ़ेंगे, फैलेंगे और फैलेंगे नहीं'?"

"हां, भंते।"

"या मान लो, आनंद, शाम हो रही है और सूरज डूब रहा है। क्या तुम नहीं जानते: 'प्रकाश गायब हो जाएगा और अंधेरा छा जाएगा'?"

"हां, भंते।"

या मान लीजिए, आनंद, आधी रात होने वाली है, भोजन का समय है। 1408 क्या आप नहीं जानते: 'प्रकाश गायब हो गया है और अंधेरा छा गया है'?

"हां, भंते।"

"इसी प्रकार, आनंद, अपने मन से उनके मन को समाहित करके... मैं उन्हें इस प्रकार समझता हूँ: 'इस व्यक्ति के लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) लुप्त हो गए हैं, हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) प्रकट हैं, परन्तु उनका एक लाभकारी (कुशल) मूल है जो अभी तक नष्ट नहीं हुआ है। वह भी पूर्णतः नष्ट होने वाला है। अतः यह व्यक्ति भविष्य में पतन के अधीन होगा।' इस प्रकार, आनंद, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करके उसका ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, [408] तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करके उसकी क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी दूसरे व्यक्ति के मन को समाहित करके गुणों की भविष्य में उत्पत्ति का ज्ञान प्राप्त करते हैं।"

(5) "फिर, हे आनंद, मैंने अपने मन से उस व्यक्ति को ग्रहण किया और उसे इस प्रकार समझा: 'इस व्यक्ति में लाभकारी (कुशल) गुण और हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) पाए जाते हैं।' एक बार फिर, मैंने अपने मन से उस व्यक्ति को ग्रहण किया और उसे इस प्रकार समझा: 'इस व्यक्ति के हानिकारक (अकुशल) गुण समाप्त हो गए हैं, लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) प्रकट हैं, परन्तु इसमें एक हानिकारक (अकुशल) जड़ है जिसका उन्मूलन नहीं हुआ है। वह भी पूर्णतः नष्ट होने वाली है। अतः यह व्यक्ति भविष्य में पतन के अधीन नहीं होगा।' मान लीजिए, हे आनंद, जलते हुए, धधकते और चमकते हुए अंगारे सूखी घास या लकड़ी के ढेर पर रखे हों। क्या आप नहीं जानते: 'ये अंगारे बढ़ेंगे और फैलेंगे'?"

"हां, भंते।"

"या मान लो, आनंद, यह वह समय है जब रात ढल रही है और सूर्योदय हो रहा है। क्या तुम नहीं जानते: 'अंधकार छंटेगा और प्रकाश प्रकट होगा'?"

"हां, भंते।"

या मान लीजिए, आनंद, दोपहर होने वाली है, भोजन का समय है। क्या आपको पता नहीं चलेगा: 'अंधेरा छंट गया है और उजाला हो गया है'?

"हां, भंते।"

"इसी प्रकार, आनंद, अपने मन से उनके मन को समाहित करके... मैं उन्हें इस प्रकार समझता हूँ: 'इस व्यक्ति के हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) समाप्त हो गए हैं, लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) प्रकट हैं, परन्तु उनमें एक हानिकारक (अकुशल) मूल है जिसका उन्मूलन नहीं हुआ है। वह भी पूर्णतः नष्ट होने वाला है। अतः यह व्यक्ति भविष्य में पतन के अधीन नहीं होगा।' इस प्रकार, आनंद, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करके उसका ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी व्यक्ति के मन को समाहित करके उसकी क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं। [409] इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) अपने मन से किसी दूसरे व्यक्ति के मन को समाहित करके गुणों की भविष्य की उत्पत्ति को जानते हैं।"

(6) "फिर, हे आनंद, मैंने अपने मन से उस व्यक्ति का अध्ययन किया और उसे इस प्रकार समझा: 'इस व्यक्ति में लाभकारी (कुशल) गुण और हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) पाए जाते हैं।' एक बार फिर, मैंने अपने मन से उस व्यक्ति का अध्ययन किया और उसे इस प्रकार समझा: 'इस व्यक्ति में एक बाल के अंश के बराबर भी हानिकारक (अकुशल) गुण नहीं है। यह व्यक्ति विशुद्ध रूप से उज्ज्वल और निष्कलंक गुणों से युक्त है। वह इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त करेगा।' मान लीजिए, हे आनंद, ठंडी और बुझी हुई अंगारों को सूखी घास या लकड़ी के ढेर पर रख दिया जाए। क्या आप नहीं जानते: 'ये अंगारे बढ़ेंगे नहीं, फैलेंगे नहीं'?"

"हां, भंते।"

"इसी प्रकार, आनंद, किसी के मन को अपने मन से समाहित करके... मैं उसे इस प्रकार समझता हूँ: 'इस व्यक्ति में एक बाल के अंश के बराबर भी अकुशल गुण नहीं है। यह व्यक्ति विशुद्ध रूप से उज्ज्वल और निष्कलंक गुणों से परिपूर्ण है। वह इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त करेगा।' इस प्रकार, आनंद, तथागत (बुद्ध) किसी व्यक्ति के मन को अपने मन से समाहित करके उसे जान लेते हैं। इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) किसी व्यक्ति की क्षमताओं का ज्ञान उसके मन को अपने मन से समाहित करके प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, तथागत (बुद्ध) गुणों की भविष्य में उत्पत्ति को अपने मन से दूसरे के मन को समाहित करके जान लेते हैं।"

"आनंद, पहले तीन व्यक्तियों में से एक पतन के अधीन नहीं है, एक पतन के अधीन है, और एक दुख के लोक की ओर, नरक की ओर जाने वाला है। बाद के तीन व्यक्तियों में से एक पतन के अधीन नहीं है, एक पतन के अधीन है, और एक निर्वाण प्राप्त करने के लिए बाध्य है।" [410]

---

63 भेदक (निब्बेधिका)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें धम्म की गहन व्याख्या सिखाऊंगा। 1409 ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और हे भिक्षुओं, धम्म की वह गहन व्याख्या क्या है?"

(1) "इंद्रिय सुखों को समझना चाहिए; इंद्रिय सुखों के स्रोत और उत्पत्ति को समझना चाहिए; इंद्रिय सुखों की विविधता को समझना चाहिए; इंद्रिय सुखों के परिणाम को समझना चाहिए; इंद्रिय सुखों की समाप्ति को समझना चाहिए; इंद्रिय सुखों की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझना चाहिए।

(2) "संवेदनाओं को समझना चाहिए; संवेदनाओं के स्रोत और उत्पत्ति को समझना चाहिए; संवेदनाओं की विविधता को समझना चाहिए; संवेदनाओं के परिणाम को समझना चाहिए; संवेदनाओं के निवारण को समझना चाहिए; संवेदनाओं के निवारण की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझना चाहिए।"

(3) "धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) को समझना चाहिए; धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के स्रोत और उत्पत्ति को समझना चाहिए; धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) की विविधता को समझना चाहिए; धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के परिणाम को समझना चाहिए; धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के समापन को समझना चाहिए; धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के समापन की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझना चाहिए।

(4) "कलंकों को समझा जाना चाहिए; कलंकों के स्रोत और उत्पत्ति को समझा जाना चाहिए; कलंकों की विविधता को समझा जाना चाहिए; कलंकों के परिणाम को समझा जाना चाहिए; कलंकों की समाप्ति को समझा जाना चाहिए; कलंकों की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझा जाना चाहिए।

(5) कर्म को समझना चाहिए; कर्म के स्रोत और उत्पत्ति को समझना चाहिए; कर्म की विविधता को समझना चाहिए; कर्म के परिणाम को समझना चाहिए; कर्म के निवारण को समझना चाहिए; कर्म के निवारण की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझना चाहिए। 1410

(6) "दुख को समझना चाहिए; दुख के स्रोत और उत्पत्ति को समझना चाहिए; दुख की विविधता को समझना चाहिए; दुख के परिणाम को समझना चाहिए; दुख की समाप्ति को समझना चाहिए; दुख की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझना चाहिए।

(1) "जब यह कहा गया: 'इंद्रिय सुखों को समझना चाहिए; इंद्रिय सुखों के स्रोत और उत्पत्ति को समझना चाहिए; इंद्रिय सुखों की विविधता को समझना चाहिए; इंद्रिय सुखों के परिणाम [411] को समझना चाहिए; इंद्रिय सुखों की समाप्ति को समझना चाहिए; इंद्रिय सुखों की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझना चाहिए,' तो यह किस कारण से कहा गया था?"

भिक्षुओं, इंद्रिय सुख के ये पाँच विषय हैं: आँखों से दिखाई देने वाले रूप जो वांछित, मनभावन, सुखद, आकर्षक, इंद्रिय सुख से जुड़े और उत्तेजक होते हैं; कानों से सुनाई देने वाली ध्वनियाँ... नाक से सुनाई देने वाली गंध... जीभ से महसूस होने वाले स्वाद... शरीर द्वारा स्पर्शित होने वाले विषय जो वांछित, मनभावन, सुखद, आकर्षक, इंद्रिय सुख से जुड़े और उत्तेजक होते हैं। परन्तु ये इंद्रिय सुख नहीं हैं; भगवान की साधना में इन्हें 'इंद्रिय सुख के विषय' कहा जाता है। किसी व्यक्ति का इंद्रिय सुख कामवासना (राग) से प्रेरित इरादा है।

"ये संसार की सुंदर वस्तुएँ इंद्रिय सुख नहीं हैं:

किसी व्यक्ति का इंद्रिय सुख कामुक इच्छा है; सुंदर वस्तुएँ संसार में जैसी हैं वैसी ही बनी रहती हैं, परन्तु बुद्धिमान लोग उनके प्रति लालसा को त्याग देते हैं।

और हे भिक्षुओं, इंद्रिय सुखों का स्रोत और उद्गम क्या है? संपर्क ही उनका स्रोत और उद्गम है। 1412

"इंद्रिय सुखों की विविधता क्या है? रूपों के प्रति कामुक इच्छा एक बात है, ध्वनियों के प्रति कामुक इच्छा दूसरी, गंधों के प्रति कामुक इच्छा तीसरी, स्वादों के प्रति कामुक इच्छा चौथी और स्पर्शनीय वस्तुओं के प्रति कामुक इच्छा चौथी। इसे ही इंद्रिय सुखों की विविधता कहते हैं।"

"इंद्रिय सुखों का परिणाम क्या होता है? व्यक्ति अपनी इच्छाओं के अनुरूप एक व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) उत्पन्न करता है, जो पुण्य या पाप दोनों का परिणाम हो सकता है। 1413 इसे ही इंद्रिय सुखों का परिणाम कहा जाता है।"

और इंद्रिय सुखों का अंत क्या है? संपर्क समाप्त होने पर ही इंद्रिय सुखों का अंत हो जाता है।

"यह श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग इंद्रिय सुखों की समाप्ति की ओर ले जाने वाला मार्ग है, अर्थात्, सही दृष्टि, सही इरादा, सही वाणी, सही [412] कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही जागरूकता और सही समाधि (आत्म-अवशोषण/तल्लीनता)।"

"जब, भिक्षुओं, एक श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार इंद्रिय सुखों, उनके स्रोत और उत्पत्ति, उनकी विविधता, उनके परिणाम, उनकी समाप्ति और उनकी समाप्ति के मार्ग को समझ लेता है, तो वह इस गहन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को ही इंद्रिय सुखों की समाप्ति समझता है।"

"जब यह कहा गया था: 'इंद्रिय सुखों को समझा जाना चाहिए... इंद्रिय सुखों के निवारण की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझा जाना चाहिए', तो इसी कारण से यह कहा गया था।"

(2) "जब यह कहा गया: 'संवेदनाओं (वेदनाओं) को समझना चाहिए...संवेदनाओं (वेदनाओं) की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझना चाहिए' तो यह किस कारण से कहा गया था?

भिक्षुओं, तीन प्रकार की संवेदनाएँ (वेदनाएँ) होती हैं: सुखद संवेदना (वेदना), दुखद संवेदना (वेदना), और न दुखद और न सुखद संवेदना (वेदना)।

और संवेदनाओं (वेदना) का स्रोत और उत्पत्ति क्या है? संपर्क ही उनका स्रोत और उत्पत्ति है।

और संवेदनाओं की विविधता (वेदना) क्या है? सांसारिक सुखदायक संवेदना (वेदना) है, आध्यात्मिक सुखदायक संवेदना (वेदना) है; सांसारिक पीड़ादायक संवेदना (वेदना) है; आध्यात्मिक पीड़ादायक संवेदना (वेदना) है; सांसारिक न पीड़ादायक और न सुखदायक संवेदना (वेदना) है, और आध्यात्मिक न पीड़ादायक और न सुखदायक संवेदना (वेदना) है। इसे ही संवेदनाओं की विविधता (वेदना) कहते हैं।

और वेदनाओं का परिणाम क्या है? व्यक्ति अपने अनुभव की गई किसी भी वेदना के अनुरूप एक व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) उत्पन्न करता है, जो पुण्य या पाप दोनों का परिणाम हो सकता है। इसे ही वेदनाओं का परिणाम कहा जाता है।

और वेदना का अंत क्या है? संपर्क समाप्त होने पर ही वेदना का अंत हो जाता है।

"यह श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग ही संवेदनाओं (वेदना) के निवारण की ओर ले जाता है, अर्थात् सही दृष्टि... सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर।"

"जब, भिक्षुओं, एक श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार संवेदना (वेदना), संवेदनाओं के स्रोत और उत्पत्ति (वेदना), [413] संवेदनाओं की विविधता (वेदना), संवेदनाओं के परिणाम (वेदना), संवेदनाओं की समाप्ति (वेदना), और संवेदनाओं की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग (वेदना) को समझता है, तो वह इस गहन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को संवेदनाओं की समाप्ति (वेदना) समझता है।"

जब यह कहा गया कि: "संवेदनाओं (वेदना) को समझना चाहिए, ...संवेदनाओं (वेदना) की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझना चाहिए" तो इसी कारण से यह कहा गया था।

(3) "जब यह कहा गया: "धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) को समझा जाना चाहिए... धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के समापन की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझा जाना चाहिए," तो यह किस कारण से कहा गया था?

"भिक्खुओ, ये छह धारणाएं (सन्ना/सन्या) हैं: रूपों की धारणा (सन्ना/सन्या), ध्वनियों की धारणा (सन्न/सन्या), गंधों की धारणा (सन्न/सन्या), स्वाद की धारणा (सन्न/सन्या), स्पर्श वस्तुओं की धारणा (सन्न/सन्या), मानसिक घटनाओं की धारणा (धम्म)।

और धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) का स्रोत और उत्पत्ति क्या है? संपर्क ही उनका स्रोत और उत्पत्ति है।

और धारणाओं की विविधता क्या है? रूपों की धारणा एक है, ध्वनियों की धारणा दूसरी, गंधों की धारणा तीसरी, स्वादों की धारणा चौथी, स्पर्शनीय वस्तुओं की धारणा चौथी और मानसिक घटनाओं (धम्म) की धारणा चौथी। इसे ही धारणाओं की विविधता कहते हैं।

और - अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) का परिणाम क्या है? मैं कहता हूँ कि अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) से अभिव्यक्ति होती है। 1416 जिस भी तरीके से कोई किसी चीज को अनुभव करता है, ठीक उसी तरह वह स्वयं को व्यक्त करता है, [यह कहते हुए:] 'मैंने अमुक बात को अनुभव किया।' इसे अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) का परिणाम कहा जाता है।

और अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) का अंत क्या है? संपर्क के अंत के साथ अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) का अंत हो जाता है।

"यह श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग धारणाओं (सन्ना/संग्या) की समाप्ति की ओर ले जाने वाला मार्ग है, अर्थात् सही दृष्टि... सही समाधि (आत्म-लीनता/तल्लीनता)।"

"जब, भिक्षुओं, एक श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार धारणाओं (सन्ना/संग्य), धारणाओं (सन्ना/संग्य) के स्रोत और उत्पत्ति, [4141 धारणाओं (सन्ना/संग्य) की विविधता, धारणाओं (सन्ना/संग्य) के परिणाम, धारणाओं (सन्ना/संग्य) की समाप्ति और धारणाओं (सन्ना/संग्य) की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझता है, तो वह इस गहन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को धारणाओं (सन्ना/संग्य) की समाप्ति समझता है।"

"जब यह कहा गया कि 'धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) को समझा जाना चाहिए... धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के निवारण की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझा जाना चाहिए,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।"

(4) "जब यह कहा गया: 'कलंक को इस प्रकार समझा जाना चाहिए

'कलंकों के निवारण की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझा जाना चाहिए,' यह बात किस कारण से कही गई थी?

भिक्षुओं, तीन प्रकार के दोष हैं: कामुकता का दोष, अस्तित्व का दोष (भाव/पुनर्जन्म का कारण), और अज्ञान का दोष।

और इन कलंकों का स्रोत और उत्पत्ति क्या है? अज्ञानता ही इनका स्रोत और उत्पत्ति है।

और दोषों की विविधता क्या है? कुछ दोष नरक की ओर ले जाते हैं; कुछ दोष पशु जगत की ओर ले जाते हैं; कुछ दोष पीड़ित आत्माओं के लोक की ओर ले जाते हैं; कुछ दोष मानव जगत की ओर ले जाते हैं; कुछ दोष देवलोक की ओर ले जाते हैं। इसे ही दोषों की विविधता कहते हैं।

और इन दोषों का परिणाम क्या है? अज्ञान में डूबा हुआ व्यक्ति एक समान व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) उत्पन्न करता है, जो पुण्य या पाप का परिणाम हो सकता है। इसे ही दोषों का परिणाम कहा जाता है।

और दोषों का निवारण क्या है? अज्ञान के निवारण से दोषों का निवारण हो जाता है।

"यह श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग दोषों के निवारण की ओर ले जाता है, अर्थात् सही दृष्टि... सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन)।"

"जब, भिक्षुओं, एक श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार दोषों, दोषों के स्रोत और उत्पत्ति, दोषों की विविधता, दोषों के परिणाम, दोषों की निवारण और दोषों की निवारण की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझ लेता है, तो वह इस गहन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को दोषों की निवारण समझता है। [415]

"जब यह कहा गया था: 'कलंकों को समझा जाना चाहिए... कलंकों की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझा जाना चाहिए' तो इसका कारण यही था।"

(5) "जब यह कहा गया कि 'तैरण को समझना चाहिए... कर्मों के निवारण की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझना चाहिए', तो ऐसा क्यों कहा गया?"

"भिक्षुओं, मैं इसे ही सजग कर्म कहता हूँ। 1417 क्योंकि इच्छा करने पर ही व्यक्ति शरीर, वाणी या मन से कर्म करता है।"

और कर्म का स्रोत और उत्पत्ति क्या है? संपर्क ही इसका स्रोत और उत्पत्ति है।

और कर्मों की विविधता क्या है? नरक में कर्मों का भोग करना पड़ता है; पशु जगत में कर्मों का भोग करना पड़ता है; व्यथित आत्माओं के लोक में कर्मों का भोग करना पड़ता है; मनुष्य जगत में कर्मों का भोग करना पड़ता है; और देवलोक में कर्मों का भोग करना पड़ता है। 1418 इसे ही कर्मों की विविधता कहते हैं।

और कर्म का फल क्या है? कर्म का फल, मैं कहता हूँ, तीन प्रकार का होता है: इसी जीवन में, या अगले जन्म में, या किसी अन्य अवसर पर। इसे ही कर्म का फल कहते हैं।

और हे भिक्षुओं, कर्मों का निवारण क्या है? संपर्क समाप्त होने पर कर्मों का निवारण हो जाता है। 1420

"यह श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग कर्मों के निवारण की ओर ले जाता है, अर्थात् सही दृष्टिकोण... सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर।"

"जब, भिक्षुओं, एक श्रेष्ठ शिष्य कर्म, कर्म के स्रोत और उत्पत्ति, कर्म की विविधता, कर्म के परिणाम, कर्म की समाप्ति और कर्म की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को इस प्रकार समझ लेता है, तो वह इस गहन ब्रह्मचर्य जीवन को कर्म की समाप्ति समझता है।"

"जब यह कहा गया: 'कर्म (कर्म/कर्मों) को समझा जाना चाहिए... [416] कर्म (कर्म/कर्मों) की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझा जाना चाहिए' तो इसी कारण से यह कहा गया था।

(6) "जब यह कहा गया: 'दुख को समझना चाहिए; दुख के स्रोत और उत्पत्ति को समझना चाहिए; दुख की विविधता को समझना चाहिए; दुख के परिणाम को समझना चाहिए; दुख की समाप्ति को समझना चाहिए; दुख की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझना चाहिए' तो यह किस कारण से कहा गया था?"

पुनर्जन्म दुख है; बुढ़ापा दुख है; बीमारी दुख है; मृत्यु दुख है; शोक, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा दुख है; इच्छा पूरी न होना दुख है; संक्षेप में, आसक्ति से ग्रस्त पाँचों स्कंध दुख हैं।

और दुख का स्रोत और उत्पत्ति क्या है? तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) ही इसका स्रोत और उत्पत्ति है।

और दुखों की विविधता क्या है? अत्यधिक दुख होता है; हल्का दुख होता है; धीरे-धीरे दूर होने वाला दुख होता है; शीघ्र ही दूर होने वाला दुख होता है। इसे ही दुखों की विविधता कहते हैं।

और दुःख का परिणाम क्या होता है? यहाँ, दुःख से ग्रस्त कोई व्यक्ति, दुःख से व्याकुल होकर, शोक करता है, व्याकुल होता है और विलाप करता है; वह सीना पीटते हुए रोता है और भ्रमित हो जाता है। या फिर, दुःख से व्याकुल होकर, दुःख से व्याकुल होकर, वह बाहर किसी की खोज में निकल पड़ता है, यह कहते हुए: 'कौन जानता है कि इस दुःख को समाप्त करने के लिए एक या दो शब्द कौन जानता है?' 1421 मैं कहता हूँ, दुःख का परिणाम या तो भ्रम होता है या खोज। इसे दुःख का परिणाम कहा जाता है।

और दुखों का निवारण क्या है? तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के निवारण से ही दुखों का निवारण होता है।

"यह श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग दुखों के निवारण की ओर ले जाने वाला मार्ग है, अर्थात् सही दृष्टिकोण... सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन)।"

"जब, भिक्षुओं, एक श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार दुख को समझता है, [417] दुख का स्रोत और उत्पत्ति, दुख की विविधता, दुख का परिणाम, दुख का निवारण, और दुख के निवारण की ओर ले जाने वाला मार्ग, तो वह इस गहन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को दुख का निवारण समझता है।

"जब यह कहा गया था: 'दुख को समझा जाना चाहिए...दुख की समाप्ति की ओर ले जाने वाले मार्ग को समझा जाना चाहिए', तो इसी कारण से यह बात कही गई थी।"

"भिक्षुओं, यह धम्म की गहन व्याख्या है।"

---

64 शेर की दहाड़

"भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) की ये छह शक्तियाँ हैं, जिनके द्वारा वे प्रधान बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं।1422 वे छह शक्तियाँ कौन सी हैं?"

(1) "यहाँ, भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) यथार्थ को यथार्थ और असंभव को असंभव समझते हैं। 1423 क्योंकि तथागत (बुद्ध) यथार्थ को यथार्थ और असंभव को असंभव समझते हैं, यह तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके द्वारा वे प्रधान बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं।

(2) "तथागत (बुद्ध) कर्मों के अतीत, भविष्य और वर्तमान के वास्तविक परिणाम को संभावनाओं और कारणों के संदर्भ में समझते हैं। 3424 चूंकि तथागत (बुद्ध) कर्मों के वास्तविक परिणाम को समझते हैं... यह भी तथागत (बुद्ध) की शक्ति है, जिसके द्वारा वे... ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।"

(3) "तथागत (बुद्ध) [418] ध्यान, मुक्ति, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और ध्यान संबंधी उपलब्धियों के संबंध में अशुद्धता, शुद्धि और उद्भव को यथार्थ रूप में समझते हैं। 1425 चूंकि तथागत (बुद्ध) ध्यान के संबंध में अशुद्धता, शुद्धि और उद्भव को यथार्थ रूप में समझते हैं... यह भी तथागत (बुद्ध) की शक्ति है जो तथागत (बुद्ध) के पास है, जिसके द्वारा वे... ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।"

(4) "तथागत (बुद्ध) अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) का स्मरण करते हैं, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म... [जैसा कि 6:2 §4 में है]... इस प्रकार वे अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) के स्वरूपों और विवरणों का स्मरण करते हैं। चूँकि तथागत (बुद्ध) अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) के स्वरूपों और विवरणों का स्मरण करते हैं, यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जो तथागत (बुद्ध) के पास है, जिसके द्वारा वे... ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।"

(5) "पुनः, दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मनुष्य की दृष्टि से परे है, तथागत (बुद्ध) प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देखते हैं... [जैसा कि 6:2 §5 में है]... और वे समझते हैं कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हश्र होता है। चूंकि तथागत (बुद्ध)... समझते हैं कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हश्र होता है, यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जो तथागत (बुद्ध) के पास है, जिसके द्वारा वे... ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।"

(6) "फिर, दोषों के नाश के साथ, तथागत (बुद्ध) ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करते हैं। चूंकि तथागत (बुद्ध) ने स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है... यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जो तथागत (बुद्ध) के पास है, जिसके द्वारा वे... ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं। [419]

"ये तथागत (बुद्ध) की छह शक्तियाँ हैं जो तथागत (बुद्ध) के पास हैं, जिनके द्वारा वे प्रधान बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।"

(1) "यदि हे भिक्षुओं, अन्य लोग तथागत (बुद्ध) के पास आकर उनसे उनके ज्ञान से संबंधित कोई प्रश्न पूछें, जैसा कि वह वास्तव में संभव को संभव और असंभव को असंभव के रूप में समझते हैं, तो तथागत (बुद्ध) इस प्रकार पूछे जाने पर उन्हें ठीक उसी प्रकार उत्तर देते हैं जैसा उन्होंने इस ज्ञान को समझा है।

(2) "यदि अन्य लोग तथागत (बुद्ध) के पास आकर उनसे कर्म (भूतकाल, भविष्यकाल और वर्तमान काल के कर्मों) के परिणाम के बारे में उनके ज्ञान से संबंधित कोई प्रश्न पूछें, तो तथागत (बुद्ध) इस प्रकार पूछे जाने पर उन्हें ठीक उसी प्रकार उत्तर देते हैं जैसा उन्होंने इस ज्ञान को समझा है।"

(3) "यदि अन्य लोग तथागत (बुद्ध) के पास आकर उनसे उनके ज्ञान से संबंधित कोई प्रश्न पूछें, जो वास्तव में मलिनता, शुद्धि और ध्यान (सम्मोहन अवस्था), मुक्ति, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और ध्यान संबंधी उपलब्धियों के संदर्भ में हो, तो तथागत (बुद्ध) इस प्रकार पूछे जाने पर उन्हें ठीक उसी प्रकार उत्तर देते हैं जैसा उन्होंने इस ज्ञान को समझा है।"

(4) "यदि अन्य लोग तथागत (बुद्ध) के पास आकर उनसे उनके ज्ञान से संबंधित कोई प्रश्न पूछें, जैसा कि वास्तव में उनके पिछले जन्मों (पूर्व जन्मों) की स्मृति से संबंधित है, तो [420] तथागत (बुद्ध), इस प्रकार पूछे जाने पर, उन्हें ठीक उसी प्रकार उत्तर देते हैं जैसा कि उन्होंने इस ज्ञान को समझा है। 1426

(5) "यदि अन्य लोग तथागत (बुद्ध) के पास आकर उनसे प्राणियों के नश्वर्य और पुनर्जन्म के बारे में उनके ज्ञान से संबंधित कोई प्रश्न पूछें, तो तथागत (बुद्ध), जिनसे इस प्रकार प्रश्न पूछा गया है, उन्हें ठीक उसी प्रकार उत्तर देते हैं जैसा उन्होंने इस ज्ञान को समझा है।"

(6) "यदि अन्य लोग तथागत (बुद्ध) के पास आकर उनसे मन की निष्कलंक मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति के उनके वास्तविक ज्ञान से संबंधित कोई प्रश्न पूछें, तो तथागत (बुद्ध) इस प्रकार पूछे जाने पर उन्हें ठीक उसी प्रकार उत्तर देते हैं जैसा उन्होंने इस ज्ञान को समझा है। ..."

(1) "मैं कहता हूँ, भिक्षुओं, कि संभव को संभव और असंभव को असंभव के रूप में जानने का ज्ञान, जैसा कि वास्तव में है, स्वयं में लीन (समाधि में/समाधि) व्यक्ति के लिए है, न कि समाधि (स्व-लीनता/समाधि) से रहित व्यक्ति के लिए।"

(2) मैं कहता हूँ कि कर्म (कर्म/कर्मों) के भूतकाल, भविष्य और वर्तमान के परिणामों का ज्ञान, संभावनाओं और कारणों के संदर्भ में, उस व्यक्ति के लिए है जो स्वयं में लीन (समाधि में लीन) है, न कि उस व्यक्ति के लिए जिसमें समाधि (स्व-लीनता/समाधि) का अभाव है।

(3) मैं कहता हूँ कि ध्यान (सम्मोहन अवस्था), मुक्ति, समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) और ध्यान संबंधी उपलब्धियों के संबंध में अशुद्धता, शुद्धि और उद्भव का ज्ञान, जैसा कि वास्तव में है, उस व्यक्ति के लिए है जो स्वयं में लीन (सम्मोहन/सम्मोहन में) है, न कि उस व्यक्ति के लिए जिसमें समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का अभाव है।

(4) मैं कहता हूँ कि अतीत के निवासों (पूर्व पुनर्जन्मों) की स्मृति का ज्ञान, जैसा कि वास्तव में है, स्वयं में लीन (समाधि/समाधि में) व्यक्ति के लिए है, न कि समाधि (स्व-लीन/समाधि) से रहित व्यक्ति के लिए।

(5) मैं कहता हूँ कि प्राणियों के मृत्यु और पुनर्जन्म का ज्ञान, जैसा कि वास्तव में है, स्वयं में लीन (समाधि में) व्यक्ति के लिए है, न कि समाधि (स्वयं में लीन/समाधि) से रहित व्यक्ति के लिए।

(6) मैं कहता हूँ कि मन की निष्कलंक मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का वास्तविक ज्ञान, एकाग्रचित्त व्यक्ति के लिए है, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से रहित व्यक्ति के लिए नहीं।

"इस प्रकार, भिक्षुओं, समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) ही मार्ग है; समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का अभाव गलत मार्ग है।" [421]

VII. देवदूत अनुभाग (देवता)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

65 नॉन-रिटर्नर (अनागामीफला)

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग किए बिना, अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म न होना) के फल को प्राप्त करना संभव नहीं है। वे छह चीजें क्या हैं? विश्वास का अभाव, नैतिक लज्जा का अभाव, नैतिक लापरवाही, आलस्य, दुविधा और ज्ञान का अभाव। इन छह चीजों का त्याग किए बिना, अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म न होना) के फल को प्राप्त करना संभव नहीं है।

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग करने पर, अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म न होना) का फल प्राप्त होता है। वे छह चीजें क्या हैं? आस्था का अभाव... पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभाव। इन छह चीजों का त्याग करने पर, अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म न होना) का फल प्राप्त होता है।

---

66. मुक्त व्यक्ति (अरहंत)

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग किए बिना अरहंतत्व प्राप्त करना संभव नहीं है। वे छह चीजें क्या हैं? सुस्ती, आलस्य, बेचैनी, पश्चाताप, अविश्वास और आलस्य। इन छह चीजों का त्याग किए बिना अरहंतत्व प्राप्त करना संभव नहीं है। [422]

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग करने पर, अरहंतत्व प्राप्त होता है। वे छह चीजें क्या हैं? सुस्ती... आलस्य। इन छह चीजों का त्याग करने पर, अरहंतत्व प्राप्त होता है।

---

67 मित्र (Mitta sans. Mitra)

भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु के बुरे मित्र, बुरे साथी और बुरे सहपाठी हों, जब वह बुरे मित्रों का अनुसरण करे, उनकी शरण ले और उनकी सेवा करे और उनके उदाहरण का पालन करे, (1) तो उसके लिए उचित आचरण का कर्तव्य निभाना असंभव है। उचित आचरण का कर्तव्य निभाए बिना, (2) उसके लिए प्रशिक्षु का कर्तव्य निभाना असंभव है। प्रशिक्षु का कर्तव्य निभाए बिना, (3) उसके लिए सद्गुणों का पालन करना असंभव है। सद्गुणों का पालन किए बिना, (4) उसके लिए इंद्रिय-संबंधी कामवासना (राग), (5) सरूप के प्रति कामवासना (राग), या (6) निराकार के प्रति कामवासना (राग) का त्याग करना असंभव है। 1427

भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी और अच्छे सहपाठी हों, जब वह अच्छे मित्रों का अनुसरण करे, उनकी शरण ले और उनकी सेवा करे तथा उनके उदाहरण का पालन करे, (1) तो संभव है कि वह उचित आचरण के कर्तव्य का पालन करे। उचित आचरण के कर्तव्य का पालन करने के बाद, (2) संभव है कि वह प्रशिक्षु के कर्तव्य का पालन करे। प्रशिक्षु के कर्तव्य का पालन करने के बाद, (3) संभव है कि वह सद्गुणों का पालन करे। सद्गुणों का पालन करने के बाद, (4) संभव है कि वह इंद्रिय-संबंधी कामवासना (राग), (5) सरूप के प्रति कामवासना (राग), और (6) निराकार के प्रति कामवासना (राग) का त्याग करे।

---

68 संगति में आनंद (संगनिकराम)

भिक्षुओं, (1) यह असंभव है कि जो भिक्षु संगति में आनंदित होता है, संगति में आनंद लेने के लिए समर्पित है; समूह में आनंदित होता है, समूह में आनंद लेने के लिए समर्पित है, वह एकांत में आनंद प्राप्त करे। (2) यह असंभव है कि जो एकांत में आनंदित नहीं होता [423] वह मन के विषय को प्राप्त कर सके। (3) यह असंभव है कि जो मन के विषय को प्राप्त नहीं करता वह सही दृष्टि को पूरा कर सके। (4) यह असंभव है कि जो सही दृष्टि को पूरा नहीं करता वह सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) को पूरा कर सके। (5) यह असंभव है कि जो सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) को पूरा नहीं करता वह बंधनों का त्याग कर सके। (6) बंधनों का त्याग किए बिना, यह असंभव है कि कोई निर्वाण प्राप्त कर सके।

भिक्षुओं, (1) यह संभव है कि जो भिक्षु संगति में आनंद नहीं लेता, संगति से प्रसन्न नहीं होता, संगति में आनंद के प्रति समर्पित नहीं होता; समूह में आनंद नहीं लेता, समूह से प्रसन्न नहीं होता, समूह में आनंद के प्रति समर्पित नहीं होता, वह एकांत में आनंद प्राप्त करे। (2) यह संभव है कि जो एकांत में आनंद लेता है, वह मन के विषय को प्राप्त कर ले। (3) यह संभव है कि जो मन के विषय को प्राप्त कर ले, वह सही दृष्टि को पूर्ण करे। (4) यह संभव है कि जो सही दृष्टि को पूर्ण करे, वह सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) को पूर्ण करे। (5) यह संभव है कि जो सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) को पूर्ण करे, वह बंधनों का त्याग कर दे। (6) बंधनों का त्याग करने के बाद, यह संभव है कि वह निर्वाण को प्राप्त कर ले।

---

69 एक देवता (देवदूत)

फिर, जब रात आगे बढ़ गई, तो अत्यंत सुंदर एक देवदूत (परी), जिसने पूरे जेतवन को प्रकाशित कर दिया, भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़ा हुआ और बोला:

"भंते, ये छह गुण भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे छह गुण कौन से हैं? गुरु के प्रति श्रद्धा, धम्म के प्रति श्रद्धा, संघ के प्रति श्रद्धा, प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा, सुधार के प्रति सहजता और अच्छी मित्रता। ये छह गुण भिक्षु के पतन को रोकते हैं।"

यही उस देवता (देवदूत) ने कहा। गुरुजी सहमत हो गए। तब उस देवता (देवदूत) ने यह सोचकर कि "गुरुजी मुझसे सहमत हैं," भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए। [424 j]

फिर, जब रात बीत गई, तो भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "पिछली रात, भिक्षुओं, जब रात आगे बढ़ रही थी, तो एक अत्यंत सुंदर देवता (देवदूत) मेरे पास आए, उन्होंने मुझे प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हो गए और कहा: 'भंते, ये छह गुण हैं जो भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे छह क्या हैं? गुरु के प्रति श्रद्धा... और अच्छी मित्रता। ये छह बातें भिक्षु के पतन को रोकती हैं।' यही उस देवता (देवदूत) ने कहा। यह कहकर, उस देवता (देवदूत) ने मुझे प्रणाम किया, मेरे दाहिनी ओर मुख करके मेरी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।"

यह सुनकर पूज्य सारिपुत्त ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, मैं इस कथन का विस्तृत अर्थ समझता हूँ जिसे भगवान (बुद्ध) ने संक्षेप में इस प्रकार कहा है। भंते, यहाँ (1) एक भिक्षु स्वयं गुरु का आदर करता है और गुरु के प्रति आदर की प्रशंसा करता है; वह अन्य भिक्षुओं को, जो गुरु का आदर नहीं करते, गुरु के प्रति आदर विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करता है और उचित समय पर, सच्चे और ईमानदारी से, उन भिक्षुओं की प्रशंसा करता है जो गुरु का आदर करते हैं। (2) वह स्वयं धम्म (मार्ग) का आदर करता है। (3) ... संघ का आदर करता है ... (4) ... प्रशिक्षण का आदर करता है ... (5) ... सुधारना आसान है ... (6) ... उसके अच्छे मित्र होते हैं और वह अच्छी मित्रता की प्रशंसा करता है; वह अन्य भिक्षुओं को, जिनके अच्छे मित्र नहीं हैं, अच्छी मित्रता स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित करता है और उचित समय पर, सच्चे और ईमानदारी से, उन भिक्षुओं की प्रशंसा करता है जिनके अच्छे मित्र हैं। भिक्षु जिनके अच्छे मित्र हों। हे भंते, इसी प्रकार मैं भगवान (बुद्ध) द्वारा संक्षेप में कहे गए इस कथन का विस्तृत अर्थ समझ पाता हूँ।

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "अच्छा, अच्छा, सारिपुत्त! यह अच्छा है कि तुम मेरे द्वारा संक्षेप में कही गई इस बात का अर्थ विस्तार से समझ गए हो।"

"यहाँ, सारिपुत्त, स्वयं एक भिक्षु गुरु [425] का आदर करते हैं... [जैसा कि ऊपर पूर्ण रूप से वर्णित है]... वे उन भिक्षुओं की प्रशंसा करते हैं जिनके अच्छे मित्र हैं। इस प्रकार, संक्षेप में कही गई मेरी इस बात का अर्थ विस्तार से समझा जाना चाहिए।"

---

70 समाधि (स्वयं में लीन होना/सम्मोहन)

भिक्षुओं, (1) यह असंभव है कि कोई भिक्षु, शांत, उदात्त समाधि के बिना, जो शांति प्राप्ति से प्राप्त होती है और एकत्व को प्राप्त कर लेता है, विभिन्न प्रकार की मानसिक शक्तियों (जादू/इद्धि) का प्रयोग कर सके: एक होकर वह अनेक हो सकता है... [यहाँ सभी अंश 6:2 के समान संक्षिप्त हैं]... वह ब्रह्म जगत तक शरीर पर अधिकार कर सकता है। (2) यह असंभव है कि वह दिव्य श्रवण शक्ति से, जो शुद्ध और मानवीय से परे है, दोनों प्रकार की ध्वनियों, दिव्य और मानवीय, दूर और पास की ध्वनियों को सुन सके। (3) यह असंभव है कि वह अन्य प्राणियों और व्यक्तियों के मन को, उन्हें अपने मन से समाहित करके, समझ सके; कि वह कामवासना से ग्रस्त मन को कामवासना से ग्रस्त मन के रूप में समझ सके... एक अमुक्त मन को अमुक्त के रूप में समझ सके। (4) यह असंभव है कि वह अपने अनेक अतीत को याद कर सके। (पूर्व जन्मों के) निवास स्थान... [426] उनके पहलुओं और विवरणों सहित। (5) यह असंभव है कि दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मनुष्य से परे है, वह प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देख सके... और समझ सके कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं। (6) यह असंभव है कि दोषों के नाश से, वह इस जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कर सके, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास कर सके।

भिक्षुओं, (1) यदि संभव हो कि एक भिक्षु, शांत, उदात्त समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में, जो शांति से प्राप्त होती है और एकत्व को प्राप्त कर लेता है, तो वह विभिन्न प्रकार की मानसिक शक्तियों का प्रयोग कर सकता है... (2) दिव्य और मानवीय, दूर और निकट दोनों प्रकार की ध्वनियों को सुन सकता है... (3) अन्य प्राणियों और व्यक्तियों के मन को अपने मन से समाहित करके समझ सकता है... (4) अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके पहलुओं और विवरणों सहित याद कर सकता है... (5) शुद्ध और मानवीय दृष्टि से परे दिव्य दृष्टि से प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देख सकता है... और समझ सकता है कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं... (6) दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान से स्वयं को अनुभव कर सकता है। यही जीवन, मन की निष्कलंक मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति, और इसमें प्रवेश करने के बाद, इसमें निवास कर सकता था।"

---

71 साकार करने में सक्षम (सक्खीभब्बा)

"भिक्षुओं, छह गुणों से युक्त होने पर भी, उपयुक्त आधार होने पर भी, एक भिक्षु किसी विशेष अवस्था को प्राप्त करने में असमर्थ होता है। 1429 वे छह गुण क्या हैं? [427] (1) यहाँ, एक भिक्षु वास्तव में यह नहीं समझ पाता है: 'ये वे गुण हैं जो पतन से संबंधित हैं' और: (2) 'ये वे गुण हैं जो स्थिरता से संबंधित हैं' और: (3) 'ये वे गुण हैं जो विशिष्टता से संबंधित हैं,' और: (4) 'ये वे गुण हैं जो भेद से संबंधित हैं' (5) वह सावधानीपूर्वक अभ्यास नहीं करता है, और (6) वह उचित कार्य नहीं करता है। इन छह गुणों से युक्त होने पर भी, एक भिक्षु किसी विशेष अवस्था को प्राप्त करने में असमर्थ होता है, [यद्यपि] उपयुक्त आधार होने पर भी।"

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, उपयुक्त आधार होने पर एक भिक्षु किसी विशेष अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम होता है। वे छह गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु इन गुणों को यथार्थ रूप में समझता है: 'ये वे गुण हैं जो क्षय से संबंधित हैं,' और: (2) 'ये वे गुण हैं जो स्थिरता से संबंधित हैं' और: (3) 'ये वे गुण हैं जो विशिष्टता से संबंधित हैं' और: (4) 'ये वे गुण हैं जो अंतर्मन से संबंधित हैं' (5) वह सावधानीपूर्वक अभ्यास करता है, और (6) वह उचित कार्य करता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु उपयुक्त आधार होने पर किसी विशेष अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम होता है।"

---

72 शक्ति (बाला)

भिक्षुओं में छह गुण होने पर वे समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में प्रबलता प्राप्त करने में असमर्थ होते हैं। वे छह गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) प्राप्त करने में कुशल नहीं होते; (2) वे समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) की अवधि में कुशल नहीं होते; (3) वे समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) से बाहर आने में कुशल नहीं होते; (4) वे सावधानीपूर्वक अभ्यास नहीं करते; (5) वे निरंतर अभ्यास नहीं करते; और (6) वे उचित कार्य नहीं करते। इन छह गुणों के कारण, भिक्षु समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में प्रबलता प्राप्त करने में असमर्थ होते हैं।

"भिक्षुओं (मठवासियों) में छह गुण होने पर वे समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में प्रबलता प्राप्त कर सकते हैं। वे छह गुण कौन से हैं? [428] (1) यहाँ, भिक्षु समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त करने में कुशल है; (2) वह समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की अवधि में कुशल है; (3) वह समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से बाहर आने में कुशल है; (4) वह सावधानीपूर्वक अभ्यास करता है; (5) वह निरंतर अभ्यास करता है; और (6) वह उचित कार्य करता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में प्रबलता प्राप्त कर सकता है।"

---

73 प्रथम झना (ट्रान्स अवस्था) (1) (पथमाताज्झा1)

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ है। वे छह चीजें क्या हैं? कामुक इच्छा, द्वेष, सुस्ती और उनींदापन, बेचैनी और पश्चाताप, संदेह; और सही ज्ञान से इंद्रिय सुखों में निहित खतरे को

स्पष्ट रूप से न देख पाना। इन छह चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ है।

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश कर उसमें लीन हो सकता है। वे छह चीजें क्या हैं? इंद्रिय सुख... सही ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से, व्यक्ति इंद्रिय सुखों के खतरे को स्पष्ट रूप से देख लेता है। इन छह चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश कर उसमें लीन हो सकता है।

---

74 प्रथम झना (ट्रान्स अवस्था) (2) (पथमाताज्झाना2)

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग किए बिना कोई भी प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ है। वे छह चीजें क्या हैं? कामुक विचार, द्वेष का विचार, हानि पहुंचाने का विचार, कामुक बोध (सन्ना/संग्य), द्वेष का बोध (सन्ना/संग्य) और हानि पहुंचाने का बोध (सन्ना/संग्य)। इन छह चीजों का त्याग किए बिना कोई भी प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में असमर्थ है।

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) को छह चीजों का त्याग करने पर, वे प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में सक्षम होते हैं। वे छह चीजें क्या हैं? कामुक विचार... हानि पहुँचाने की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा)। [429] इन छह चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करने और उसमें रहने में सक्षम होता है।"

आठवीं. अरिहंतशिप अनुभाग (अराहतवग्गो सं. अरिहंत-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

75 दुख में

भिक्षुओं, जिनमें छह चीजें होती हैं, वे इसी जीवन में कष्ट, पीड़ा और बुखार से ग्रस्त रहते हैं, और शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय उनका बुरा अंजाम होता है। वे छह चीजें क्या हैं? कामुक विचार, द्वेष का विचार, हानि पहुंचाने का विचार, कामुक बोध (सन्ना/संग्य), द्वेष का बोध (सन्ना/संग्य), और हानि पहुंचाने का बोध (सन्ना/संग्य)। इन छह चीजों से ग्रस्त भिक्षु इसी जीवन में कष्ट, पीड़ा और बुखार से ग्रस्त रहते हैं, और शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय उनका बुरा अंजाम होता है।

"भिक्षुओं, जिनके पास छह चीजें होती हैं, वे इसी जीवन में सुखपूर्वक निवास करते हैं—बिना किसी कष्ट, पीड़ा या बुखार के—और शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय, उनके लिए एक अच्छे गंतव्य की अपेक्षा की जा सकती है। वे छह चीजें क्या हैं? त्याग का विचार, सद्भावना का विचार, अहिंसा का विचार, त्याग की अनुभूति (सन्न/सन्न्य), सद्भावना की अनुभूति (सन्न/सन्न्य), और अहिंसा की अनुभूति (सन्न/सन्न्य)। इन छह चीजों के युक्त भिक्षु इसी जीवन में सुखपूर्वक निवास करते हैं—बिना किसी कष्ट, पीड़ा या बुखार के—और शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय, उनके लिए एक अच्छे गंतव्य की अपेक्षा की जा सकती है।" [430]

---

76 अरहंत पद (अरहत्ता)

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग किए बिना अरहंतत्व प्राप्त करना संभव नहीं है। वे छह चीजें क्या हैं? अहंकार, हीन भावना, घमंड, आत्म-महत्व, हठधर्मिता और आत्म-अपमान। इन छह चीजों का त्याग किए बिना अरहंतत्व प्राप्त करना संभव नहीं है।

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग करने पर, अरहंतत्व प्राप्त होता है। वे छह चीजें क्या हैं? अहंकार... आत्महीनता। इन छह चीजों का त्याग करने पर, अरहंतत्व प्राप्त होता है।

---

77 सुपीरियर (उत्तरीमनुस्साधम्म)

भिक्षुओं, छह बातों का त्याग किए बिना कोई भी व्यक्ति श्रेष्ठ ज्ञान और दृष्टि की प्राप्ति नहीं कर सकता। वे छह बातें क्या हैं? भ्रम, पूर्ण बोध का अभाव (संपजन्न), इंद्रियों पर नियंत्रण न रखना, खान-पान में संयम का अभाव, कपट और चापलूसी। इन छह बातों का त्याग किए बिना कोई भी व्यक्ति श्रेष्ठ ज्ञान और दृष्टि की प्राप्ति नहीं कर सकता।

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) को छह चीजों का त्याग करने से ज्ञान और दृष्टि में एक अलौकिक विशिष्टता प्राप्त होती है जो श्रेष्ठों के योग्य है। वे छह चीजें क्या हैं? व्यथा . . . चापलूसी। इन छह चीजों का त्याग करने से ज्ञान और दृष्टि में एक अलौकिक विशिष्टता प्राप्त होती है जो श्रेष्ठों के योग्य है।" [431]

---

78 सुख (सुखसोमनस्स)

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, वे इसी जीवन में सुख और आनंद से परिपूर्ण होते हैं और वे दोषों के नाश की नींव रखते हैं। वे छह गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु धम्म में आनंदित होते हैं, मानसिक विकास में आनंदित होते हैं, त्याग में आनंदित होते हैं, एकांत में आनंदित होते हैं, कष्टों से मुक्त रहने में आनंदित होते हैं और इंद्रियों के भ्रम से मुक्त रहने में आनंदित होते हैं। इन छह गुणों से परिपूर्ण भिक्षु इसी जीवन में सुख और आनंद से परिपूर्ण होते हैं और वे दोषों के नाश की नींव रखते हैं।"

---

79 उपलब्धि (अधिगामा)

छह गुणों से युक्त भिक्षु न तो उस लाभकारी (कुशल) गुण को प्राप्त कर सकता है जिसे उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है और न ही उस लाभकारी (कुशल) गुण को सुदृढ़ कर सकता है जिसे उसने पहले ही प्राप्त कर लिया है। वे छह गुण क्या हैं? (1) यहाँ भिक्षु लाभ में कुशल नहीं है, (2) हानि में कुशल नहीं है, (3) साधनों में कुशल नहीं है; (4) वह उन लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) की प्राप्ति के लिए इच्छा उत्पन्न नहीं करता है जिन्हें उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है; (5) वह पहले से प्राप्त लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) की रक्षा नहीं करता है; (6) वह निरंतर प्रयास से अपने कार्यों को पूरा नहीं करता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु न तो उस लाभकारी (कुशल) गुण को प्राप्त कर सकता है जिसे उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है और न ही उस लाभकारी (कुशल) गुण को सुदृढ़ कर सकता है जिसे उसने पहले ही प्राप्त कर लिया है।

छह गुणों से युक्त भिक्षु, उस लाभकारी (कुशल) गुण को प्राप्त करने में सक्षम होता है जिसे उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है और उस लाभकारी (कुशल) गुण को सुदृढ़ करने में भी सक्षम होता है जिसे उसने पहले ही प्राप्त कर लिया है। वे छह गुण कौन से हैं? (1) यहाँ, भिक्षु लाभ में कुशल होता है, (2) हानि में कुशल होता है, (3) साधनों में कुशल होता है; (4) वह उन लाभकारी (कुशल) गुणों की प्राप्ति की इच्छा उत्पन्न करता है जिन्हें उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है; (5) वह पहले से प्राप्त लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) की रक्षा करता है; (6) वह निरंतर प्रयास से अपने कार्यों को पूरा करता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु, उस लाभकारी (कुशल) गुण को प्राप्त करने में सक्षम होता है जिसे उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है और उस लाभकारी (कुशल) गुण को सुदृढ़ करने में भी सक्षम होता है जिसे उसने पहले ही प्राप्त कर लिया है।

---

80 महानता (महानता)

"भिक्षुओं, छह गुणों से युक्त भिक्षु अल्पकाल में ही लाभकारी गुणों में महानता और विशालता प्राप्त कर लेता है। वे छह गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु प्रकाश से परिपूर्ण होता है, प्रयास से परिपूर्ण होता है, प्रेरणा से परिपूर्ण होता है; वह आत्मसंतुष्ट नहीं होता; वह लाभकारी गुणों (धम्म) के संबंध में अपने कर्तव्य की उपेक्षा नहीं करता; और वह स्वयं को और अधिक विस्तारित करता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु अल्पकाल में ही लाभकारी गुणों में महानता और विशालता प्राप्त कर लेता है।"

---

81 नरक (1) (निरया1)

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, उन्हें नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे छह गुण कौन से हैं? वे जीवन का नाश करते हैं, बिना माँगे वस्तुएँ लेते हैं, यौन दुराचार में लिप्त होते हैं, झूठ बोलते हैं, बुरी इच्छाएँ रखते हैं और गलत मत रखते हैं। इन छह गुणों के कारण, उन्हें नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) को, जो छह गुणों से युक्त होते हैं, स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे छह गुण क्या हैं? वे जीवन-नष्ट करने से बचते हैं, बिना माँगी वस्तुएँ लेने से बचते हैं, यौन दुराचार से बचते हैं, झूठी वाणी से बचते हैं; उनकी इच्छाएँ कम होती हैं और वे सही दृष्टिकोण रखते हैं। इन छह गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।" [433]

---

82 नरक (2) (निरया2)

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, उन्हें नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे छह गुण कौन से हैं? वे जीवन का नाश करते हैं, बिना माँगे वस्तुएँ लेते हैं, यौन दुराचार में लिप्त होते हैं और झूठ बोलते हैं; वे लालची और निर्भीक होते हैं। इन छह गुणों के कारण, उन्हें नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, उन्हें स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे छह गुण कौन से हैं? वे जीव-जंतुओं को नष्ट करने से बचते हैं, बिना माँगे कुछ लेने से बचते हैं, यौन दुराचार से बचते हैं, झूठी वाणी से बचते हैं; वे लोभ और धृष्टता से रहित होते हैं। इन छह गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

---

83 सर्वोपरि अवस्था (अग्गधम्म संस्कृत: आगरा धम्म)

भिक्षुओं, छह गुणों से युक्त भिक्षु अरहंतत्व, जो सर्वोच्च अवस्था है, को प्राप्त करने में असमर्थ होता है। वे छह गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु में आस्था का अभाव होता है, वह नैतिक रूप से निर्लज्ज, नैतिक रूप से लापरवाह, आलसी, अज्ञानी और अपने शरीर एवं जीवन के प्रति चिंतित होता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु अरहंतत्व, जो सर्वोच्च अवस्था है, को प्राप्त करने में असमर्थ होता है।

"भिक्षुओं (मठवासियों) में छह गुण होने पर वे अरहंतत्व, जो सर्वोच्च अवस्था है, को प्राप्त कर सकते हैं। वे छह गुण कौन से हैं? [434] यहाँ, भिक्षु में आस्था, नैतिक लज्जा और नैतिक भय की भावना होती है; वह ऊर्जावान और बुद्धिमान होता है; और वह अपने शरीर और जीवन के प्रति उदासीन होता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु अरहंतत्व, जो सर्वोच्च अवस्था है, को प्राप्त कर सकता है।"

---

84 रातें (रत्तीदिवस सं. रात्रि दिवस)

भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु में छह गुण होते हैं, चाहे दिन हो या रात, उसके लिए लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि नहीं, बल्कि केवल गिरावट ही अपेक्षित होती है। वे छह गुण कौन से हैं? यहाँ, (1) भिक्षु में प्रबल इच्छाएँ होती हैं, वह व्याकुल रहता है, और किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास, औषधि और बीमारों के लिए भोजन से असंतुष्ट रहता है; वह (2) आस्थाहीन, (3) अनैतिक, (4) आलसी, (5) भ्रमित मन वाला और (6) मूर्ख होता है। जब किसी भिक्षु में ये छह गुण होते हैं, चाहे दिन हो या रात, उसके लिए लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि नहीं, बल्कि केवल गिरावट ही अपेक्षित होती है।

भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु में छह गुण होते हैं, चाहे दिन हो या रात, उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि की ही अपेक्षा की जाती है, न कि गिरावट की। यहाँ, (1) भिक्षु में तीव्र इच्छाएँ नहीं होतीं, वह व्यथित नहीं होता, और किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास, और बीमारों के लिए औषधियों और भोजन से संतुष्ट रहता है; वह (2) आस्थावान, (3) गुणी, (4) ऊर्जावान, (5) सती (ध्यानशील) और (6) बुद्धिमान होता है। जब किसी भिक्षु में ये छह गुण होते हैं, चाहे दिन हो या रात, उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि की ही अपेक्षा की जाती है, न कि गिरावट की। [435]

IX. शीतलता (Siti sans. Sheet)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

85 शीतलता (सीतिभाव बिना शीत भाव)

"भिक्षुओं, छह गुणों से युक्त भिक्षु भी अतुलनीय शीतलता का अनुभव नहीं कर सकते। वे छह गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु उस समय मन को नहीं दबाते जब उसे दबाना चाहिए; (2) वह उस समय मन को नहीं लगाते जब उसे लगाना चाहिए; (3) वह उस समय मन को नहीं प्रोत्साहित करते जब उसे प्रोत्साहित करना चाहिए; और (4) वह उस समय मन को उदासीनता से नहीं देखते जब उसे उदासीनता से देखना चाहिए। (5) उनका स्वभाव निम्न होता है और (6) वे अपने जन्म के भाव में आनंद लेते हैं। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु अतुलनीय शीतलता का अनुभव नहीं कर सकते।"

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, वे अतुलनीय शीतलता का अनुभव कर सकते हैं। वे छह गुण क्या हैं? (1) जब मन को वश में करना चाहिए, तब वह उसे वश में करता है; (2) जब मन को वश में करना चाहिए, तब वह मन को वश में करता है; (3) जब मन को वश में करना चाहिए, तब वह मन को वश में करता है; और (4) जब मन को वश में करना चाहिए, तब वह वश में रहकर (अंदर की ओर लीन होकर/उपेक्षा लेकर) उसका अवलोकन करता है। (5) उसका स्वभाव श्रेष्ठ होता है और (6) वह निर्वाण में आनंदित होता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु अतुलनीय शीतलता का अनुभव कर सकता है।"

---

86 अवरोध (अवरोधन)

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, वे उत्तम धम्म सुनते हुए भी लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं। 1433 वे छह गुण क्या हैं? [436] कर्मों से विवश होते हैं; अशुद्धता से विवश होते हैं; कर्मों के फल से विवश होते हैं; विश्वासहीन होते हैं; इच्छाहीन होते हैं; और अज्ञानी होते हैं। 1434 इन छह गुणों से युक्त होकर, वे उत्तम धम्म सुनते हुए भी लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं।"

"भिक्षुओं (सम्हारों), जिनमें छह गुण होते हैं, जब वे उत्तम धम्म का श्रवण करते हैं, तो वे लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्यता के निश्चित मार्ग पर चलने में सक्षम होते हैं। वे छह गुण क्या हैं? कर्मों से विवश नहीं होते; अशुद्धियों से विवश नहीं होते; कर्मों के फल से विवश नहीं होते; आस्था से परिपूर्ण होते हैं; इच्छा से युक्त होते हैं; और ज्ञानवान होते हैं। इन छह गुणों से युक्त होकर, जब वे उत्तम धम्म का श्रवण करते हैं, तो वे लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्यता के निश्चित मार्ग पर चलने में सक्षम होते हैं।"

---

87 एक हत्यारा (वोरोपिटा)

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, वे भले ही अच्छे धर्म का श्रवण कर रहे हों, तब भी लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं। वे छह गुण क्या हैं? (1) जिसने अपनी माता का प्राण त्यागा हो; (2) जिसने अपने पिता का प्राण त्यागा हो; (3) जिसने किसी अरहंत का प्राण त्यागा हो; (4) जिसने घृणा भाव से तथागत (बुद्ध) का रक्त बहाया हो; (5) जिसने संघ में फूट डाली हो; (6) जो मूर्ख, नासमझ और मंदबुद्धि हो। इन छह गुणों से युक्त होने पर, वे भले ही अच्छे धर्म का श्रवण कर रहे हों, तब भी लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं।"

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, वे उत्तम धम्म का श्रवण करते हुए धर्म के निश्चित मार्ग पर चल सकते हैं। वे छह गुण कौन से हैं? [437] (1) उन्होंने अपनी माता का प्राण नहीं छीना; (2) न ही अपने पिता का प्राण छीना; (3) न ही किसी अरहंत का प्राण छीना; (4) उन्होंने घृणा भाव से तथागत (बुद्ध) का रक्त नहीं बहाया; (5) उन्होंने संघ में फूट नहीं डाली; (6) वे बुद्धिमान, समझदार और चतुर हैं। इन छह गुणों से युक्त होकर, वे उत्तम धम्म का श्रवण करते हुए धर्म के निश्चित मार्ग पर चल सकते हैं।"

---

88 सुनने की इच्छा रखने वाला (सुस्सुसती)

"भिक्षुओं, जिनमें छह गुण होते हैं, वे उत्तम धम्म को सुनते हुए भी लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं। वे छह गुण क्या हैं? तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन का उपदेश देते समय, (1) सुनने की इच्छा नहीं होती; (2) ध्यान नहीं देते; (3) समझने पर ध्यान नहीं देते; (4) अर्थ को गलत समझते हैं; (5) अर्थ को नकार देते हैं; 1436 और (6) ऐसी धारणा अपना लेते हैं जो उपदेश के अनुरूप नहीं होती। 1437 इन छह गुणों से युक्त होने पर, उत्तम धम्म को सुनते हुए भी लाभकारी (कुशल) गुणों में निहित सत्य के निश्चित मार्ग पर चलने में असमर्थ होते हैं।"

"भिक्षुओं (सम्भावों) में छह गुण होते हैं, जो उत्तम धम्म का श्रवण करते समय उचित मार्ग पर चलने में सक्षम होते हैं। वे छह गुण क्या हैं? तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन का उपदेश देते समय, (1) श्रवण की इच्छा होती है; (2) ध्यानपूर्वक सुनते हैं; (3) मन को समझने में लगाते हैं; (4) अर्थ को ग्रहण करते हैं; (5) अर्थहीन बातों का त्याग करते हैं; और (6) उपदेश के अनुरूप दृढ़ विश्वास धारण करते हैं। इन छह गुणों से युक्त होकर, उत्तम धम्म का श्रवण करते समय उचित मार्ग पर चलने में सक्षम होते हैं।" [438]

---

89. बिना त्यागे (अप्पाहया)

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग किए बिना संपदा प्राप्त करना संभव नहीं है। 1438 वे छह चीजें क्या हैं? व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का दृष्टिकोण, संदेह, व्यवहार और अनुष्ठानों की गलत समझ, दुख के तल की ओर ले जाने वाला राग (काम), दुख के तल की ओर ले जाने वाला घृणा, और दुख के तल की ओर ले जाने वाला मोह (मोह)। इन छह चीजों का त्याग किए बिना संपदा प्राप्त करना संभव नहीं है।

भिक्षुओं को छह चीजों का त्याग करने से संपदा प्राप्त होती है। वे छह चीजें क्या हैं? व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का विचार... मोह (मोह) जो दुख के तल की ओर ले जाता है। इन छह चीजों का त्याग करने से संपदा प्राप्त होती है।

---

90 परित्यक्त (पाहाना सं. प्राहन)

भिक्षुओं, दृष्टि में सिद्ध पुरुष इन छह चीजों का त्याग कर देता है। वे छह चीजें क्या हैं? व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का दृष्टिकोण, संदेह, व्यवहार और अनुष्ठानों की गलत समझ, दुख के तल की ओर ले जाने वाला राग (काम), दुख के तल की ओर ले जाने वाला घृणा, और दुख के तल की ओर ले जाने वाला मोह (मोह)। दृष्टि में सिद्ध पुरुष इन छह चीजों का त्याग कर देता है।

---

91 अक्षम (अभब्बा)

भिक्षुओं, दृष्टि में सिद्ध पुरुष इन छह चीजों को उत्पन्न करने में असमर्थ होता है। वे छह चीजें कौन सी हैं? व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का दृष्टिकोण, संदेह, व्यवहार और अनुष्ठानों की गलत समझ, दुख के तल की ओर ले जाने वाला राग (काम), दुख के तल की ओर ले जाने वाला राग (विरोध), और दुख के तल की ओर ले जाने वाला राग (मोह)। दृष्टि में सिद्ध पुरुष इन छह चीजों को उत्पन्न करने में असमर्थ होता है।

---

92 मामले (1) (अभब्बत्तना1)

भिक्षुओं, ये छह प्रकार की अक्षमताएँ हैं। वे छह कौन सी हैं? [439] दृष्टि में सिद्ध पुरुष (1) गुरु के प्रति श्रद्धा और आदर के बिना निवास करने में असमर्थ है; (2) धम्म के प्रति श्रद्धा और आदर के बिना निवास करने में असमर्थ है; (3) संघ के प्रति श्रद्धा और आदर के बिना निवास करने में असमर्थ है; (4) प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा और आदर के बिना निवास करने में असमर्थ है; (5) किसी भी ऐसी चीज का सहारा लेने में असमर्थ है जिस पर भरोसा नहीं किया जाना चाहिए; 1439 (6) आठवें जन्म (भाव/पुनर्जन्म का कारण) से गुजरने में असमर्थ है। 1440 ये अक्षमता के छह प्रकार हैं।

---

93 मामले (2) (अभब्बत्तना2)

भिक्षुओं, अक्षमता के ये छह कारण हैं। वे छह क्या हैं? दृष्टि से सिद्ध व्यक्ति (1) किसी भी परिस्थितिजन्य घटना (संहार/भावना) को स्थायी मानने में असमर्थ होता है; (2) किसी भी परिस्थितिजन्य घटना (संहार/भावना) को सुखद मानने में असमर्थ होता है; (3) किसी भी घटना को आत्मा मानने में असमर्थ होता है; (4) तत्काल फल देने वाले किसी गंभीर कार्य को करने में असमर्थ होता है; (5) इस विश्वास का सहारा लेने में असमर्थ होता है कि पवित्रता अंधविश्वासपूर्ण और शुभ कार्यों से प्राप्त होती है; (6) इस दुनिया से बाहर किसी ऐसे व्यक्ति की तलाश करने में असमर्थ होता है जो भेंट के योग्य हो। ये अक्षमता के छह कारण हैं।

---

94 मामले (3) (अभब्बत्तना3)

भिक्षुओं, अक्षमता के ये छह कारण हैं। वे छह क्या हैं? दृष्टि में सिद्ध पुरुष (1) अपनी माता का प्राण छीनने में असमर्थ है; (2) अपने पिता का प्राण छीनने में असमर्थ है; (3) किसी अरहंत का प्राण छीनने में असमर्थ है; (3) घृणा भाव से तथागत (बुद्ध) का रक्त बहाने में असमर्थ है; (5) संघ में फूट डालने में असमर्थ है; (6) किसी अन्य गुरु को स्वीकार करने में असमर्थ है। 1443 ये अक्षमता के छह कारण हैं। [440]

---

95 मामले (4) (अभब्बत्तना4)

भिक्षुओं, अक्षमता के ये छह प्रकार हैं। ये छह कौन से हैं? दृष्टि में सिद्ध पुरुष (1) स्वयं द्वारा उत्पन्न सुख और दुख के विचार को स्वीकार करने में असमर्थ होता है; (2) दूसरों द्वारा उत्पन्न सुख और दुख के विचार को स्वीकार करने में असमर्थ होता है; (3) स्वयं और दूसरों दोनों द्वारा उत्पन्न सुख और दुख के विचार को स्वीकार करने में असमर्थ होता है; (4) स्वयं द्वारा उत्पन्न न होकर संयोगवश उत्पन्न सुख और दुख के विचार को स्वीकार करने में असमर्थ होता है; (5) दूसरों द्वारा उत्पन्न न होकर संयोगवश उत्पन्न सुख और दुख के विचार को स्वीकार करने में असमर्थ होता है; (6) स्वयं और दूसरों दोनों द्वारा उत्पन्न न होकर संयोगवश उत्पन्न सुख और दुख के विचार को स्वीकार करने में असमर्थ होता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि दृष्टि में सिद्ध पुरुष ने कारण और कारण से उत्पन्न होने वाली घटनाओं (धर्म) को स्पष्ट रूप से देखा है। ये अक्षमता के छह प्रकार हैं। [441]

X. लाभ (अनिसामसा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

96 अभिव्यक्ति (पतुभाव)

भिक्षुओं, संसार में छह चीजों का प्रकट होना दुर्लभ है। वे छह चीजें क्या हैं? (1) तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का प्रकट होना संसार में दुर्लभ है। (2) तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन का उपदेश देने वाला व्यक्ति संसार में दुर्लभ है। (3) श्रेष्ठ जनों के लोक में पुनर्जन्म होना संसार में दुर्लभ है। (4) अक्षुण्ण इंद्रियों का होना संसार में दुर्लभ है। (5) बुद्धिमान और चतुर होना संसार में दुर्लभ है। (6) लाभकारी (कुशल) धम्म की इच्छा होना संसार में दुर्लभ है। इन छह चीजों का प्रकट होना संसार में दुर्लभ है।

---

97 लाभ (अनिसामसा)

भिक्षुओं, सोतपत्ति (सात जन्मों का चक्र) के फल को प्राप्त करने से ये छह लाभ होते हैं। वे छह लाभ क्या हैं? (1) व्यक्ति अच्छे धम्म में स्थिर हो जाता है; (2) व्यक्ति पतन से अछूता रहता है; (3) उसका दुख सीमित हो जाता है; (4) उसे ऐसा ज्ञान प्राप्त होता है जो दूसरों को प्राप्त नहीं होता; (5) उसे कारण-कार्य संबंध स्पष्ट रूप से दिखाई देता है; (6) उसे कारण-कार्य से उत्पन्न होने वाली घटनाओं (धम्म) का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है। ये सोतपत्ति (सात जन्मों का चक्र) के फल को प्राप्त करने के छह लाभ हैं।

---

98 अनित्य (अनिका सास. अनित्य)

भिक्षुओं, (1) यह असंभव है कि कोई भिक्षु जो किसी भी बद्ध घटना (संहार/भावना) को स्थायी मानता है, वह शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास रखेगा। (2) यह असंभव है कि जो शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास नहीं रखता, वह सही मार्ग पर चलेगा। 1444

(3) यह असंभव है कि जो व्यक्ति सही मार्ग पर न चले, वह धारा-प्रवेश (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) का फल, (4) एक बार लौटने का फल, (5) न लौटने का फल (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी) का फल, (6) या अरहंतत्व प्राप्त कर सके। [442]

भिक्षुओं, (1) यह संभव है कि जो भिक्षु सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) को अनित्य मानता है, उसमें शिक्षा के अनुरूपता का दृढ़ विश्वास हो। (2) यह संभव है कि जो व्यक्ति शिक्षा के अनुरूपता का दृढ़ विश्वास रखता है, वह सही मार्ग पर चल पड़े। (3) यह

संभव है कि जो व्यक्ति सही मार्ग पर चलता है, उसे सात जन्मों का फल (सोतपत्ति), (4) एक जन्म का फल (सकदागामी), (5) अनागमन का फल (अनगामी), (6) या अरहंतत्व प्राप्त हो।

---

99 दुख (दुक्खा)

भिक्षुओं, सचमुच, (1) यह असंभव है कि कोई भिक्षु जो किसी भी बद्ध घटना (संहार/भावना) को सुखद मानता है, शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास रखेगा। (2) यह असंभव है कि जो शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास नहीं रखता, वह सही मार्ग पर चल पड़ेगा। (3) यह असंभव है कि जो सही मार्ग पर नहीं चलता, वह सात जन्मों के फल (सोतपत्ति) को प्राप्त करेगा।

(4) एक बार लौटने का फल (1 पुनर्जन्म, सकदागामी), (5) न लौटने का फल (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी), (6) या अरहंत पद।

भिक्षुओं, (1) यह संभव है कि जो भिक्षु सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) को दुखदायी मानता है, उसमें शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास हो। (2) यह संभव है कि जो व्यक्ति शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास रखता है, वह सही मार्ग पर चल पड़े। (3) यह संभव है कि जो व्यक्ति सही मार्ग पर चलता है, उसे सात जन्मों का फल (सोतपत्ति), (4) एक बार जन्म लेने का फल (सकदागामी), (5) और न जन्म लेने का फल (अनगामी) प्राप्त हो— (6)—या अरहंतत्व प्राप्त हो।

---

100 अनात्मा (अनत्ता सं. अनात्मा)

भिक्षुओं, (1) यह असंभव है कि कोई भिक्षु जो किसी भी घटना को आत्मा मानता है, शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास रखेगा। (2) यह असंभव है कि जो शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास नहीं रखता, वह सही मार्ग पर चलेगा। (3) यह असंभव है कि जो सही मार्ग पर नहीं चलता, वह सात जन्मों के पुनर्जन्म (सोतपत्ति), (4) एक बार जन्म लेने के पुनर्जन्म (सकदागामी), (5) न लौटने के पुनर्जन्म (अनगामी), (6) या अरहंतत्व का फल प्राप्त करेगा।

भिक्षुओं, (1) यह संभव है कि जो भिक्षु सभी घटनाओं (धम्म) को अनात्म मानता है, उसमें शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास हो, (2) यह संभव है कि जो व्यक्ति शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास रखता है, वह सही मार्ग पर चल पड़े। (3) यह संभव है कि जो व्यक्ति सही मार्ग पर चलता है, उसे सात जन्मों का फल (सोतपत्ति), (4) एक बार जन्म लेने का फल (सकदागामी), (5) न लौटने का फल (अनगामी), (6) या अरहंतत्व प्राप्त हो।

---

101 निब्बाना (संस्कृत: निर्वाण)

भिक्षुओं, (1) यह असंभव है कि जो भिक्षु निर्वाण को कष्टदायी मानता है, वह शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास रखेगा। (2) यह असंभव है कि जो शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास नहीं रखता, वह धर्म के निश्चित मार्ग पर चलेगा। (3) यह असंभव है कि जो धर्म के निश्चित मार्ग पर नहीं चलता, वह सात जन्मों के पुनर्जन्म (सोतपत्ति), एक जन्म के पुनर्जन्म (सकदागामी), (5) एक जन्म के पुनर्जन्म (अनगामी) (6) या अरहंतत्व का फल प्राप्त करेगा।

भिक्षुओं, (1) यह संभव है कि जो भिक्षु निर्वाण को सुख मानता है, उसमें शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास हो। [443] (2) यह संभव है कि जो व्यक्ति शिक्षा के अनुरूप दृढ़ विश्वास रखता है, वह सही मार्ग पर चल पड़े। (3) यह संभव है कि जो व्यक्ति सही मार्ग पर चलता है, उसे सात जन्मों का फल (सोतपत्ति), (4) एक बार जन्म लेने का फल (सकदागामी), (5) न लौटने का फल (अनगामी), (6) या अरहंतत्व प्राप्त हो।

---

102 अनात्य (अनावत्थिता)

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु छह लाभों पर विचार करता है, तो उसके लिए सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) की असीम अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) स्थापित करना पर्याप्त होता है। 1445 वे छह लाभ क्या हैं? (1) सभी बद्ध घटनाएँ (धम्म) मुझे नश्वर प्रतीत होंगी। (2) मेरा मन संसार की किसी भी चीज़ में आनंद नहीं लेगा। (3) मेरा मन संसार से ऊपर उठ जाएगा। (4) मेरा मन निर्वाण की ओर प्रवृत्त होगा। (5) मेरे बंधन मुक्त हो जाएँगे। 1446 और (6) मैं परम वैराग्य प्राप्त कर लूँगा। 1447

"भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु इन छह लाभों पर विचार करता है, तो उसके लिए सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता की असीम अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) स्थापित करना पर्याप्त होता है।" 7

---

103 उक्खित्तसिका (उखित्तसिका)

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु छह लाभों पर विचार करता है, तो उसके लिए सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में दुख की असीम अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) स्थापित करना ही पर्याप्त है। वे छह लाभ क्या हैं? (1) 'सभी बद्ध घटनाओं के प्रति मुझमें वैराग्य (निब्बिद) की अनुभूति स्थापित हो जाएगी, जैसे किसी हत्यारे के प्रति उठी हुई कटार के प्रति। (2) मेरा मन समस्त संसार से ऊपर उठ जाएगा। (3) मैं निर्वाण को शांत देखूंगा। (4) मेरी अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाएंगी। (5) मैं वह व्यक्ति होऊंगा जिसने अपना कार्य पूरा कर लिया है। और (6) मैंने गुरु की प्रेमपूर्ण करुणा (मेत्ता) से सेवा की होगी। [444]

"भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु इन छह लाभों पर विचार करता है, तो उसके लिए सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में दुख की असीम अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) स्थापित करना पर्याप्त होता है।"

---

104 बिना पहचान के (अतममया)

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु छह लाभों पर विचार करता है, तो उसके लिए समस्त घटनाओं (धम्म) में अनात्म की असीम अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) स्थापित करना पर्याप्त होता है। वे छह लाभ क्या हैं? (1) मैं समस्त संसार में पहचान रहित हो जाऊँगा। (2) मेरे लिए 'मैं' की भावनाएँ समाप्त हो जाएँगी। (3) मेरे लिए 'मेरा' की भावनाएँ समाप्त हो जाएँगी। (4) मुझे ऐसा ज्ञान प्राप्त होगा जो सांसारिक लोगों के साथ साझा नहीं किया जाता। (5) मुझे कारण-कार्य संबंध स्पष्ट रूप से दिखाई देगा। और (6) मुझे कारण-कार्य से उत्पन्न घटनाओं (धम्म) का स्पष्ट ज्ञान होगा।

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु इन छह लाभों पर विचार करता है, तो उसके लिए सभी घटनाओं (धम्म) में अनात्म की असीम अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) स्थापित करना पर्याप्त होता है।

---

105 अस्तित्व (कारण) (भाव)

भिक्षुओं, तीन प्रकार के अस्तित्व हैं जिनका त्याग करना है; और इन तीन प्रकार के प्रशिक्षणों में साधना करनी है। 1449 वे तीन प्रकार के अस्तित्व कौन से हैं जिनका त्याग करना है? (1) इंद्रिय-मंडल का अस्तित्व, (2) रूप-मंडल का अस्तित्व, और (3) निराकार-मंडल का अस्तित्व: ये तीन प्रकार के अस्तित्व हैं जिनका त्याग करना है। किन तीन प्रकार के प्रशिक्षणों में साधना करनी है? (4) उच्चतर सद्गुणों में, (5) उच्चतर मन में, और (6) उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) में। इन तीन प्रकार के प्रशिक्षणों में साधना करनी है।

"जब कोई भिक्षु इन तीनों प्रकार के अस्तित्वों का त्याग कर इन तीनों प्रशिक्षणों को पूरा कर लेता है, तो उसे तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) का त्याग करने वाला, बंधनों से मुक्त और अहंकार को पूरी तरह से तोड़कर दुखों का अंत करने वाला भिक्षु कहा जाता है।" [445]

---

106 तृष्णा (तन्हा सं. तृष्णा)

भिक्षुओं, तीन प्रकार की तृष्णाएँ और तीन प्रकार के अहंकार हैं जिनका त्याग करना चाहिए। 1430 वे तीन प्रकार की तृष्णाएँ कौन सी हैं जिनका त्याग करना चाहिए? (1) इंद्रिय तृष्णा, (2) जन्म का कारण (भाव) और (3) मृत्यु की तृष्णा: ये तीन प्रकार की तृष्णाएँ हैं जिनका त्याग करना चाहिए। और वे तीन प्रकार के अहंकार कौन से हैं जिनका त्याग करना चाहिए? (4) अहंकार, (5) हीन भावना और (6) घमंड: ये तीन प्रकार के अहंकार हैं जिनका त्याग करना चाहिए।

जब कोई भिक्षु इन तीन प्रकार की तृष्णाओं और इन तीन प्रकार के अहंकार का त्याग कर देता है, तो उसे वह भिक्षु कहा जाता है जिसने तृष्णाओं को काट डाला है, बंधनों को तोड़ दिया है और अहंकार को पूरी तरह से तोड़कर दुखों का अंत कर दिया है।

पचास अध्यायों के सेट के अतिरिक्त अध्याय [1451]

XI. त्रिक

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

107 कामवासना (राग)

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं। वे तीन क्या हैं? (1) कामवासना (राग), (2) घृणा और (3) मोह। ये तीन बातें हैं। इन तीन बातों को त्यागने के लिए तीन अन्य बातों का विकास करना होगा। वे तीन क्या हैं? [446] (4) कामवासना (राग) को त्यागने के लिए अप्रियता का विकास करना होगा। (5) घृणा को त्यागने के लिए प्रेम और करुणा का विकास करना होगा। (6) मोह को त्यागने के लिए ज्ञान (दिव्य ज्ञान) का विकास करना होगा। इन तीन बातों का विकास पूर्व तीन बातों को त्यागने के लिए करना होगा।

---

108 कदाचार (दुकारिता सं. दुष्चरित्र))

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं। वे तीन बातें क्या हैं? (1) शारीरिक दुराचार, (2) मौखिक दुराचार, और (3) मानसिक दुराचार।

ये तीन बातें हैं। इन तीन बातों को त्यागने के लिए तीन अन्य बातें विकसित करनी होंगी। वे तीन बातें क्या हैं? (4) शारीरिक दुराचार को त्यागने के लिए शारीरिक सुवाह्य व्यवहार विकसित करना होगा। (5) मौखिक दुराचार को त्यागने के लिए मौखिक सुवाह्य व्यवहार विकसित करना होगा। (6) मानसिक दुराचार को त्यागने के लिए मानसिक सुवाह्य व्यवहार विकसित करना होगा। इन तीन बातों को पहले वाली तीन बातों को त्यागने के लिए विकसित करना होगा।

---

109 विचार (विटक्कका सं. वितर्क)

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं। वे तीन क्या हैं? (1) कामुक विचार, (2) द्वेष का विचार, और (3) हानि पहुँचाने का विचार। ये तीन बातें हैं। इन तीन बातों को त्यागने के लिए तीन अन्य बातों का विकास करना आवश्यक है। वे तीन क्या हैं? (4) कामुक विचारों को त्यागने के लिए

त्याग का विचार विकसित करना आवश्यक है। (5) द्वेष का विचार त्यागने के लिए सद्भावना का विचार विकसित करना आवश्यक है। (6) हानि पहुँचाने का विचार त्यागने के लिए अहिंसा का विचार विकसित करना आवश्यक है। इन तीन बातों को पहले तीन बातों को त्यागने के लिए विकसित करना आवश्यक है।

---

110 धारणाएँ (सन्ना सं. संज्ञा)

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं। वे तीन क्या हैं? (1) इंद्रिय-बोध (सन्ना/संज्ञा), (2) द्वेष-बोध (सन्ना/संज्ञा), और (3) हानि-बोध (सन्ना/संज्ञा)। [447] ये तीन बातें हैं। इन तीन बातों को त्यागने के लिए तीन अन्य बातें विकसित करनी होंगी। वे तीन क्या हैं? (4) इंद्रिय-बोध (सन्ना/संज्ञा) को त्यागने के लिए त्याग का बोध विकसित करना होगा। (5) द्वेष-बोध (सन्ना/संज्ञा) को त्यागने के लिए सद्भावना का बोध विकसित करना होगा। (6) हानि-बोध (सन्ना/संज्ञा) को त्यागने के लिए अहिंसा का बोध विकसित करना होगा। इन तीन बातों को विकसित करना पूर्व तीन बातों को त्यागने के लिए आवश्यक है।

---

111 तत्व (धातु)

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं। वे तीन क्या हैं? (1) इंद्रिय सुख, (2) द्वेष भाव और (3) हानि पहुँचाने का भाव। ये तीन बातें हैं। इन तीनों को त्यागने के लिए तीन अन्य बातों का विकास करना आवश्यक है। वे तीन क्या हैं? (4) इंद्रिय सुख को त्यागने के लिए त्याग का भाव विकसित करना आवश्यक है। (5) द्वेष भाव को त्यागने के लिए सद्भावना का भाव विकसित करना आवश्यक है। (6) हानि पहुँचाने का भाव त्यागने के लिए अहिंसा का भाव विकसित करना आवश्यक है। इन तीनों बातों का विकास पूर्व तीन बातों को त्यागने के लिए करना आवश्यक है।

---

112 संतुष्टि (असदा सं. असवद)

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं। वे तीन क्या हैं? (1) तृप्ति का दृष्टिकोण, (2) आत्म-दृष्टिकोण, और (3) गलत दृष्टिकोण। ये तीन बातें हैं। इन तीन बातों को त्यागने के लिए तीन अन्य बातें विकसित करनी होंगी। वे तीन क्या हैं? (4) तृप्ति के दृष्टिकोण को त्यागने के लिए अनित्यता की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) विकसित करनी होगी। (5) आत्म-दृष्टिकोण को त्यागने के लिए अनात्म की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) विकसित करनी होगी। (6) गलत दृष्टिकोण को त्यागने के लिए सही दृष्टिकोण विकसित करना होगा। इन तीन बातों को विकसित करना पूर्व तीन बातों को त्यागने के लिए आवश्यक है। [448]

---

113 असंतोष (आरती)

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं। वे तीन बातें क्या हैं? (1) असंतोष, (2) हानि पहुँचाना, और (3) धम्म के विरुद्ध आचरण। ये तीन बातें हैं। इन तीन बातों को त्यागने के लिए तीन अन्य बातों का विकास करना आवश्यक है। वे तीन बातें क्या हैं? (4) असंतोष को त्यागने के लिए परोपकारी आनंद का विकास करना आवश्यक है। (5) हानि पहुँचाने को त्यागने के लिए अहिंसा का विकास करना आवश्यक है। (6) धम्म के विरुद्ध आचरण को त्यागने के लिए धम्म के अनुसार आचरण का विकास करना आवश्यक है। इन तीन बातों का विकास पूर्व तीन बातों को त्यागने के लिए करना आवश्यक है।

==== 114 संतोष (संतुत्थिता सं. संतुष्टि)

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं। वे तीन बातें क्या हैं? (1) असंतोष, (2) पूर्ण बोध का अभाव (संपजन्न), और (3) प्रबल इच्छाएँ। ये तीन बातें हैं। इन तीन बातों को त्यागने के लिए तीन अन्य बातों का विकास करना आवश्यक है। वे तीन बातें क्या हैं? (4) असंतोष को त्यागने के लिए संतोष का विकास करना आवश्यक है। (5) पूर्ण बोध के अभाव को त्यागने के लिए संपजन्न का विकास करना आवश्यक है। (6) प्रबल इच्छाओं को त्यागने के लिए इच्छाओं की अल्पता का विकास करना आवश्यक है। इन तीन बातों का विकास पूर्व तीन बातों को त्यागने के लिए करना आवश्यक है।

---

115 सुधारना कठिन (डोवाकासाटा)

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं। वे तीन बातें क्या हैं? (1) सुधारना कठिन होना, (2) बुरी मित्रता, और (3) मानसिक भटकाव। ये तीन बातें हैं। इन तीन बातों को त्यागने के लिए तीन अन्य बातें विकसित करनी होंगी। वे तीन बातें क्या हैं? [449] (4) सुधारना कठिन होने को त्यागने के लिए सुधारना आसान होना विकसित करना होगा। (5) बुरी मित्रता को त्यागने के लिए अच्छी मित्रता विकसित करनी होगी। (6) मानसिक भटकाव को त्यागने के लिए श्वास पर ध्यान (सामंजस्य/सती) विकसित करना होगा। इन तीन बातों को विकसित करना पूर्व तीन बातों को त्यागने के लिए है।

---

116 बेचैनी (उद्धच्च)

भिक्षुओं, ये तीन बातें हैं। वे तीन क्या हैं? (1) बेचैनी, (2) संयम न रखना, और (3) आलस्य। ये तीन बातें हैं। इन तीन बातों को त्यागने के लिए तीन और बातें विकसित करनी होंगी। वे तीन क्या हैं? (4) बेचैनी को त्यागने के लिए समभाव विकसित करना होगा। (5) संयम न रखने के लिए संयम विकसित करना होगा। (6) आलस्य को त्यागने के लिए सतर्कता विकसित करनी होगी। इन तीन बातों को पहले वाली तीन बातों को त्यागने के लिए विकसित करना होगा;

बारहवीं. तपस्या (समन्ना सं. श्रमण)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

117 शरीर को (ध्यान में) देखना 1452 (कायनुपासि सं. काया अनुपश्ययी)

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग किए बिना, शरीर में शरीर का ध्यान (अनुपसी) करना संभव नहीं है। वे छह चीजें क्या हैं? काम में आनंद, बातचीत में आनंद, नींद में आनंद, संगति में आनंद, इंद्रियों के द्वारों को न रोकना और भोजन में अति करना। इन छह चीजों का त्याग किए बिना, शरीर में शरीर का ध्यान (अनुपसी) करना संभव नहीं है। [450]

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग करने पर, शरीर में शरीर का अवलोकन (अनुपसी) संभव हो जाता है। वे छह चीजें क्या हैं? काम में आनंद लेना... अत्यधिक भोजन करना। इन छह चीजों का त्याग करने पर, शरीर में शरीर का अवलोकन (अनुपसी) संभव हो जाता है।

---

118 धम्मानुपसी (ध्यान में) का अवलोकन करना

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग किए बिना, कोई भी शरीर को शरीर में आंतरिक रूप से... बाह्य रूप से... आंतरिक और बाह्य दोनों रूप से... संवेदनाओं (वेदना) को संवेदनाओं में आंतरिक रूप से... बाह्य रूप से... आंतरिक और बाह्य दोनों रूप से... मन को मन में आंतरिक रूप से... बाह्य रूप से... आंतरिक और बाह्य दोनों रूप से... घटनाओं को घटनाओं में धम्म में आंतरिक रूप से... बाह्य रूप से... आंतरिक और बाह्य दोनों रूप से... ध्यान में नहीं देख सकता। वे छह चीजें क्या हैं? काम में आनंद, बातचीत में आनंद, नींद में आनंद, संगति में आनंद, इंद्रियों के द्वारों की रक्षा न करना और... अतिभोग करना। इन छह चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति आंतरिक और बाह्य दोनों प्रकार की घटनाओं (धर्म) का अवलोकन (अनुपसी में) करने में असमर्थ है।

भिक्षुओं, छह चीजों का त्याग करने से व्यक्ति आंतरिक और बाह्य दोनों प्रकार की घटनाओं (धर्मों के भीतर की घटनाओं) का ध्यानपूर्वक अवलोकन करने में सक्षम हो जाता है। वे छह चीजें कौन सी हैं? काम में आनंद लेना... अत्यधिक भोजन करना। इन छह चीजों का त्याग करने से व्यक्ति आंतरिक और बाह्य दोनों प्रकार की घटनाओं (धर्मों के भीतर की घटनाओं) का ध्यानपूर्वक अवलोकन करने में सक्षम हो जाता है।

---

119 तपस्सा

"भिक्षुओं (सम्मोहनों), छह गुणों से युक्त गृहस्थ तपस्सा तथागत (बुद्ध) के प्रति निश्चितता प्राप्त कर लेता है और अमरत्व (अमत/अमृत) का द्रष्टा बन जाता है, जो अमरत्व (अमत/अमृत) का अनुभव करके जीवन व्यतीत करता है। वे छह गुण क्या हैं? [451] बुद्ध में अटूट विश्वास, धम्म में अटूट विश्वास, संघ में अटूट विश्वास, उत्तम सद्गुण, उत्तम ज्ञान और उत्तम मुक्ति। इन छह गुणों से युक्त गृहस्थ तपस्सा तथागत (बुद्ध) के प्रति निश्चितता प्राप्त कर लेता है और अमरत्व (अमत/अमृत) का द्रष्टा बन जाता है, जो अमरत्व (अमत/अमृत) का अनुभव करके जीवन व्यतीत करता है।" 1453

---

120 — 139 भल्लिका, इत्यादि।

"छह गुणों से युक्त भिक्षु, गृहस्थ भल्लिका... गृहस्थ सुदत्त अनाथपिंडिका... गृहस्थ चित्त मच्चिकासन्द... गृहस्थ हत्थक अलावल... गृहस्थ महानामा शाक्य... गृहस्थ उगा वैशाली... गृहस्थ उगात... गृहस्थ सुर अंबत्था... गृहस्थ जीवक कोमरभच्च... गृहस्थ नकुलपिता... गृहस्थ तवकन्निका... गृहस्थ पुराण... गृहस्थ इसिदत्त... गृहस्थ संधान... गृहस्थ विजय... गृहस्थ वज्जीयमहित... गृहस्थ मेंदका... गृहस्थ अनुयायी वसेत्था... गृहस्थ अनुयायी अरित्था... गृहस्थ अनुयायी सरग्गा तथागत (बुद्ध) के बारे में निश्चितता प्राप्त कर चुके हैं और अमरता के द्रष्टा बन गए हैं, जो अमरता (अम्रता/अमृत) को जानकर जीवित रहते हैं। ये छह कौन हैं?

बुद्ध में अटूट विश्वास, धम्म में अटूट विश्वास, संघ में अटूट विश्वास, नेक आचरण, श्रेष्ठ ज्ञान और श्रेष्ठ मुक्ति। इन छह गुणों से युक्त गृहस्थ सरग्ग ने तथागत (बुद्ध) के प्रति निश्चितता प्राप्त कर ली है और अमरता के द्रष्टा बन गए हैं, जो अमरता (अम्रता/अमृत) को जानकर जीवन व्यतीत करते हैं।

XIII. वासना (राग) और आगे दोहराव श्रृंखला

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

140

भिक्षुओं, राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए छह चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे छह चीजें क्या हैं? [452] अद्वितीय दृष्टि, अद्वितीय श्रवण शक्ति, अद्वितीय लाभ, अद्वितीय प्रशिक्षण, अद्वितीय सेवा और अद्वितीय स्मरण। राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन छह चीजों का विकास करना आवश्यक है।

141

भिक्षुओं, राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए छह चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे छह चीजें क्या हैं? बुद्ध का स्मरण, धम्म का स्मरण, संघ का स्मरण, सद्गुणों का स्मरण, उदारता का स्मरण और देवताओं का स्मरण। राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन छह चीजों का विकास करना आवश्यक है।

142

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए छह चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे छह चीजें क्या हैं? अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) की अनुभूति, अनित्य में दुख की अनुभूति, दुख में अनात्म की अनुभूति, त्याग की अनुभूति, वैराग्य की अनुभूति और समाप्ति की अनुभूति। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन छह चीजों का विकास करना आवश्यक है।

143 — 169

भिक्षुओं, कामवासना (राग) की पूर्ण समझ के लिए... उसके पूर्ण विनाश के लिए... उसके त्याग के लिए... उसके लुप्त होने के लिए... उसके मिट जाने के लिए... उसके निवारण के लिए... उसके त्याग के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए... इन छह चीजों का विकास करना चाहिए।

170 — 649

भिक्षुओं, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के लिए... पूर्ण समझ के लिए... पूर्ण विनाश के लिए... त्याग के लिए... विनाश के लिए... लुप्त होने के लिए... मिट जाने के लिए... समाप्ति के लिए... त्याग के लिए... घृणा के लिए... मोह के लिए... क्रोध के लिए... शत्रुता के लिए... निंदा के लिए... उद्दंडता के लिए... ईर्ष्या के लिए... कंजूसी के लिए... छल के लिए... धूर्तता के लिए... हठ के लिए... उग्रता के लिए... अहंकार के लिए... घमंड के लिए... नशे के लिए... आलस्य के लिए... इन छह चीजों का विकास करना चाहिए।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह सुनकर भिक्षु प्रसन्न हुए और भगवान (बुद्ध) के इस कथन से उन्हें बहुत आनंद हुआ।

द बुक ऑफ द सिक्स का काम पूरा हो गया है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय >> 7.बुक ऑफ सेवन्स

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का सातवाँ खंड है। यह भिक्खु बोधि का संशोधित संस्करण है।

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN6) अगला (AN8) >>>>

अंतर्वस्तु

1सातों की पुस्तक (सत्तकनिपात)

1.1पहले पचास

1.1.1I. धन (धन)

1.1.1.11 मनभावन (1) (पिया1 सं. प्रिया)

1.1.1.22 प्रसन्न (2) (पिया2 सं. प्रिया)

1.1.1.3संक्षेप में 3 शक्तियाँ (संखिटबाला सं. संक्षिप्त बाला)

1.1.1.4विस्तार में 4 शक्तियाँ (विट्ठताबाला सं. विस्तार बाला)

1.1.1.55 संक्षेप में धन (समखित्त धन सं. संक्षिप्त धन)

1.1.1.66 विस्तार से धन (विट्ठताधन सं. विस्तार धन)

1.1.1.77 उगा

1.1.1.88 बंधन (संयोजन)

1.1.1.99 परित्याग (पहाना सं. प्रहाना)

1.1.1.1010. कंजूसी (मच्छरिया)

1.1.2II. अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ (अनुसय)

1.1.2.111 अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ (1) (अनुसया1)

1.1.2.212. अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ (2) (अनुसया2)

1.1.2.313 परिवार (कुला)

1.1.2.414 व्यक्ति (पुग्गला)

1.1.2.515 जल में रहने वालों के समान (उदकुपमा)

1.1.2.616 अनित्यता ध्यानी (अनिकानुपासि सं. अनित्य अनुपश्ययी)

1.1.2.717 पीड़ित ध्यानी (दुक्खनुपासि सं. दुक्ख अनुपश्ययी)

1.1.2.818 गैर-स्व ध्यानी (अनत्तनुपासि सं. अनित्य अनुपश्ययी)

1.1.2.919. निब्बाना (निर्वाण का सान्निध्य)

1.1.2.10निद्धसवत्थु (निष्कलंक होने के 20 आधार)

1.1.3तृतीय. वज्जि सात (वज्जिसत्तक सं. वज्जि सप्तक)

1.1.3.121 सारंददा

1.1.3.222 वासाकारा [1477]

1.1.3.323 गैर-अस्वीकार (1) (पथमासट्टक)

1.1.3.424 गैर-पतन (2) (दुतियासत्तक)

1.1.3.525 गैर-अस्वीकार (3) (तातियासट्टक)

1.1.3.626 नॉन-डिक्लाइन (4) (बोज्झांगा संस. बोधयांग)

1.1.3.727 गैर-गिरावट (5)

1.1.3.828 प्रशिक्षु का पतन (परिहानी1)

1.1.3.929 गिरावट (परिहानी2)

1.1.3.1030 पेरिल 1485 (विपत्ति)

1.1.3.1131. विनाश (परभाव)

1.1.4IV. देवता (देवदूत)

1.1.4.132 सतर्कता 1486 (अप्पमदागरव)

1.1.4.233 नैतिक शर्म 1487 (हिरिगरवा)

1.1.4.334 सुधारना आसान (1) (Sovacassata1)

1.1.4.435 सुधारना आसान (2) 1488 (Sovacassata2)

1.1.4.536 एक मित्र (1) 1489 (मित्त1 संस्कृत मित्र)

1.1.4.637 एक मित्र (2) (मित्त1 संस्कृत मित्र)

1.1.4.738 विश्लेषणात्मक ज्ञान (1) (पतिसंभिदा1)

1.1.4.839 विश्लेषणात्मक ज्ञान (2) 1497 (पतिसंभिदा2)

1.1.4.940 महारत (1) (वासा1)

1.1.4.1041 महारत (2) 1500 (वासा2)

1.1.4.1142 बड़े होने के आधार (1) (निद्दासा1)

1.1.4.1243 "दोषरहित" होने के आधार (2) (निद्दासा2)

1.1.5V. महायन्न बलिदान खंड (महायन्न वग्गो)

1.1.5.144 सात स्टेशन (सत्तविन्नानत्थिति सं. सप्त-विज्ञान-स्थिति)

1.1.5.245 समाधि सहायक उपकरण (समाधिपरिक्खरा)

1.1.5.346 अग्नि (अग्गी संस्कृत अग्नि)

1.1.5.447 अग्नि यज्ञ (अग्गी2 संस्कृत अग्नि)

1.1.5.548 संज्ञान/धारणाएं (1) (सन्ना1 सं. संज्ञा)

1.1.5.649 धारणाएँ (2) (सन्न2 सं. संज्ञा)

1.1.5.750 यौन संबंध (मेथुना)

1.1.5.851 संघ (साम्ययोग)

1.1.5.952 दान देने के लाभ (दानमहप्पला)

1.1.5.1053 नन्दमाता

1.2दूसरा पचास

1.2.1VI. अघोषित धारा (अव्यक्त वाग्गो)

1.2.1.154 अघोषित (अव्यक्त सं. अव्यक्त)

1.2.1.255 व्यक्तियों के गंतव्य (पुरिसगति)

1.2.1.356 टिस्सा

1.2.1.457 सिहा [1543] (संश्लेषित सिंघा)

1.2.1.558 छिपने की कोई जरूरत नहीं

1.2.1.659 किम्बिला [1547]

1.2.1.760 सात गुण (सत्तधम्म)

1.2.1.861 ऊंघना (पा-कलयामाना)

1.2.1.962 मेट्टा [1550]

1.2.1.1063 पत्नियां (भारिया)

1.2.1.1164 क्रोध [1560] (कोडना सं. क्रोध)

1.2.2VII. महावग्गो (महान अध्याय)

1.2.2.165 नैतिक शर्म [1571] (हिरियट्टप्पा)

1.2.2.266 सात सूर्य (सत्तसूर्य सं. सप्त-सूर्य)

1.2.2.367 किले की उपमा (नगरोपमा सं. नगर-उपमा)

1.2.2.468 धम्म को जानने वाला (धम्मन्नु)

1.2.2.569 परिच्छत्तक

1.2.2.670 सम्मान (सक्काका)

1.2.2.771 समझ का विकास [1595] (भावना)

1.2.2.872 अग्नि उपमा (अग्गिकखंडोपमा सं. अग्नि-खंड-उपमा)

1.2.2.973 सुनेट्टा

1.2.2.1074 अराका

1.2.3VIII. अनुशासन अनुभाग (विनयवग्गो)

1.2.3.175. अनुशासन में विशेषज्ञ (1) (विनयधारा1)

1.2.3.276 अनुशासन में विशेषज्ञ (2) (विनयधारा2)

1.2.3.377 अनुशासन में विशेषज्ञ (3) (विनयधारा3)

1.2.3.478 अनुशासन में विशेषज्ञ (4) (विनयधारा4)

1.2.3.579 अनुशासन में निपुण व्यक्ति तेजस्वी होता है (1) (विनयधरसोभना1)

1.2.3.680 अनुशासन में निपुण व्यक्ति तेजस्वी होता है (2) (विनयधरसोभना2)

1.2.3.781 अनुशासन में निपुण व्यक्ति तेजस्वी होता है (3) (विनयधरसोभना3)

1.2.3.882 अनुशासन में निपुण व्यक्ति तेजस्वी होता है (4) (विनयधरसोभना4)

1.2.3.983 शिक्षक का अनुशासन (सत्थुसाना)

1.2.3.1084 निपटान (अधिकरणसमथ)

1.2.4नौवीं. एक तपस्वी धारा 1606 (समानवाग्गो)

1.2.4.185 एक भिक्षु (भिक्खु)

1.2.4.286 एक तपस्वी (समना)

1.2.4.387 एक ब्राह्मण (ब्राह्मण)

1.2.4.488 एक विद्वान (सोत्तिया)

1.2.4.589 धुला हुआ (न्हाटाका)

1.2.4.690 वैदिक ज्ञान का स्वामी (वेदगु संस्कृत: वेदग्य)

1.2.4.791 एक महान व्यक्ति (आरिया)

1.2.4.892 एक अरहंत

1.2.4.993 बुरा चरित्र (1) (असद्धम्म)

1.2.4.1094 अच्छा चरित्र (2) (सद्धम्म)

1.2.5X. उपहारों के योग्य (अहुनेय्यावग्गो)

1.2.5.195 अनित्यता को दृष्टि में देखना (ध्यान में अनिच्छ/अनित्य) 1613

1.2.5.296 — 622 दुख आदि को देखना (उस पर ध्यान करना)।

1.2.6XI. कामवासना (राग) और इसी प्रकार की पुनरावृत्ति श्रृंखला [1614]

1.2.6.1623

1.2.6.2624

1.2.6.3625

1.2.6.4626-652

1.2.6.5653-1132

सातों की पुस्तक (सत्तकनिपात)

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

उस भगवान को नमन, शत्रुओं का नाश करने वाले, सही मायने में पूर्णतः प्रबुद्ध (जागृत) भगवान।

पहले पचास

I. धन (धन)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

1 मनभावन (1) (पिया1 सं. प्रिया)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं में सात गुण होने पर, वे अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होते हैं, और न तो उनका आदर करते हैं और न ही उन्हें सम्मान देते हैं। वे सात गुण क्या हैं? यहाँ, (1) भिक्षु लाभ, (2) मान-सम्मान और (3) प्रतिष्ठा की इच्छा रखता है; (4) वह नैतिक रूप से निर्लज्ज और (5) नैतिक रूप से लापरवाह होता है; (6) उसकी बुरी इच्छाएँ होती हैं और (7) वह गलत मत रखता है। इन सात गुणों के कारण, भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होते हैं, और न तो उनका आदर करते हैं और न ही उन्हें सम्मान देते हैं।"

"भिक्षुओं में सात गुण होते हैं, जिससे वे अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और सम्माननीय लगते हैं और उनका आदर करते हैं। वे सात गुण क्या हैं? [2] यहाँ, (1) भिक्षु लाभ, (2) मान-सम्मान, (3) प्रतिष्ठा की इच्छा नहीं रखते; (4) उनमें नैतिक लज्जा और (5) नैतिक भय की भावना होती है; (6) उनकी इच्छाएँ कम होती हैं और (7) वे सही दृष्टिकोण रखते हैं। इन सात गुणों से युक्त भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और सम्माननीय लगते हैं और उनका आदर करते हैं।"

---

2 प्रसन्न (2) (पिया2 सं. प्रिया)

"भिक्षुओं में सात गुण होने के कारण, वे अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होते हैं और न तो उनका आदर करते हैं और न ही उन्हें सम्मान देते हैं। वे सात गुण क्या हैं? यहाँ, (1) भिक्षु लाभ, (2) मान-सम्मान और (3) प्रतिष्ठा की लालसा रखता है; (4) वह नैतिक रूप से निर्लज्ज और (5) लापरवाह होता है; (6) वह ईर्ष्यालु और (7) कंजूस होता है। इन सात गुणों के कारण, भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होते हैं और न तो उनका आदर करते हैं और न ही उन्हें सम्मान देते हैं।"

"भिक्षुओं में सात गुण होते हैं, जिससे वे अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और सम्माननीय लगते हैं और उनका आदर और सम्मान पाते हैं। वे सात गुण क्या हैं? यहाँ, (1) भिक्षु लाभ, (2) मान-सम्मान, (3) प्रतिष्ठा और (4) नैतिक लज्जा और (5) नैतिक भय की इच्छा नहीं रखते; (6) वे ईर्ष्यालु नहीं होते और (7) कंजूस नहीं होते। इन सात गुणों से युक्त भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और सम्माननीय लगते हैं और उनका आदर और सम्मान पाते हैं।" [3]

संक्षेप में 3 शक्तियाँ (संखिटबाला सं. संक्षिप्त बाला)

भिक्षुओं, ये सात शक्तियाँ हैं। कौन सी सात? श्रद्धा (विश्वास की शक्ति), बल (ऊर्जा/वीर्य), हिरी (नैतिक लज्जा), ओटप्पा (नैतिक भय), सती (ध्यान), समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) और प्रत्यक्ष ज्ञान (दिव्य ज्ञान)। ये सात शक्तियाँ हैं।

विश्वास की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति,

नैतिक लज्जा और नैतिक भय की शक्तियाँ;

सती (ध्यान/सती) और समाधि (स्व-लीन/तल्लीनता) की शक्तियाँ,

और सातवीं शक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान);

इन शक्तियों से युक्त एक शक्तिशाली भिक्षु

बुद्धिमान होता है और सुखी जीवन जीता है।

उसे धम्म (मार्ग) का ध्यानपूर्वक अध्ययन करना चाहिए

और पन्ना (दिव्य ज्ञान) से उसके अर्थ को गहराई से समझना चाहिए।

जैसे दीपक का बुझना

मन की मुक्ति है।

विस्तार में 4 शक्तियाँ (विट्ठताबाला सं. विस्तार बाला)

भिक्षुओं, ये सात शक्तियाँ हैं। कौन सी सात? श्रद्धा की शक्ति (सद्धा), ऊर्जा की शक्ति (प्रयास/वीर्य), नैतिक लज्जा की शक्ति (हिरी), नैतिक भय की शक्ति (ओटप्पा), सती ध्यान की शक्ति, समाधि की शक्ति (स्व-लीनता/तल्लीनता), और प्रत्यक्ष ज्ञान की शक्ति (दिव्य ज्ञान)।"

(1) "और हे भिक्षुओं, आस्था की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य आस्था से परिपूर्ण है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, संसारों के ज्ञाता हैं, मनुष्यों को वश में करने में अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' इसे ही आस्था की शक्ति कहते हैं।"

(2) "और ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति क्या है?: यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को प्रेरित किया है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है। इसे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति कहा जाता है।"

(3) "नैतिक लज्जा की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य को नैतिक लज्जा का बोध होता है; वह शारीरिक, मौखिक और मानसिक दुराचार से लज्जित होता है; वह बुरे, हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने से लज्जित होता है। इसे नैतिक लज्जा की शक्ति कहा जाता है।"

(4) "नैतिक भय की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य कुकर्म से भयभीत होता है; वह शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार से भयभीत होता है; वह बुरे, हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने से भयभीत होता है। इसे नैतिक भय की शक्ति कहा जाता है।"

(5) "और सती ध्यान की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य सती ध्यान में है, सर्वोच्च सती ध्यान और सतर्कता से परिपूर्ण है, वह जो बहुत पहले किए और कहे गए कार्यों को याद रखता है और उनका स्मरण करता है। इसे ही सती ध्यान की शक्ति कहते हैं।"

(6) "और समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) की शक्ति क्या है? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, एक श्रेष्ठ शिष्य प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... [जैसा कि 5:14 §4 में है]... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था)। इसे समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) की शक्ति कहा जाता है।"

(7) "पन्न (दिव्य ज्ञान) की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य बुद्धिमान होता है; वह उस पन्न (दिव्य ज्ञान) से युक्त होता है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। इसे पन्न (दिव्य ज्ञान) की शक्ति कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये सात शक्तियाँ हैं।"

[ये आयतें 7:3 की आयतों के समान हैं]

---

5 संक्षेप में धन (समखित्त धन सं. संक्षिप्त धन)

"भिक्षुओं, धन के ये सात प्रकार हैं। कौन से सात? आस्था का धन, सद्गुणों का धन, नैतिक लज्जा का धन, नैतिक भय का धन, ज्ञान का धन, उदारता का धन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का धन। [5] ये सात प्रकार के धन हैं।"

आस्था का धन, सदाचार का धन,

नैतिक लज्जा और नैतिक भय का धन,

विद्या और उदारता का धन,

और पन्ना (दिव्य ज्ञान), सातवें प्रकार का धन:

जब किसी व्यक्ति के पास ये सात प्रकार के धन होते हैं,

चाहे वह स्त्री हो या पुरुष,

तो कहते हैं कि वह गरीब नहीं है,

उसका जीवन व्यर्थ नहीं गया है।

इसलिए एक बुद्धिमान व्यक्ति को

बुद्धों की शिक्षाओं को याद रखते हुए,

आस्था और सदाचारी व्यवहार,

विश्वास और धम्म के दर्शन पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

---

6 विस्तार से धन (विट्ठताधन सं. विस्तार धन)

भिक्षुओं, धन के ये सात प्रकार हैं। वे कौन से सात प्रकार हैं? आस्था का धन, सद्गुणों का धन, नैतिक लज्जा का धन, नैतिक भय का धन, ज्ञान का धन, उदारता का धन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का धन।

(1) "हे भिक्षुओं, आस्था का धन क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य आस्था से परिपूर्ण है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं... प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध)।' इसे ही आस्था का धन कहा जाता है।"

(2) "और सद्गुणों का धन क्या है? यहाँ, एक नेक शिष्य जीवन के विनाश से दूर रहता है, जो कुछ दिया नहीं गया है उसे लेने से दूर रहता है, यौन दुराचार से दूर रहता है, झूठी बातों से दूर रहता है, शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से दूर रहता है, जो आलस्य का आधार हैं। इसे ही सद्गुणों का धन कहा जाता है।"

(3) "नैतिक लज्जा का धन क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य को नैतिक लज्जा का बोध होता है; वह शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार से लज्जित होता है; वह बुरे, अपात् (कुशल) गुणों (धम्म) को ग्रहण करने से लज्जित होता है। इसे नैतिक लज्जा का धन कहा जाता है।"

(4) "नैतिक भय का धन क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य कुकर्म से भयभीत होता है; वह शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार से भयभीत होता है; वह बुरे, हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने से भयभीत होता है। इसे नैतिक भय का धन कहा जाता है।"

(5) "और ज्ञान का खजाना क्या है? [6] यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य ने बहुत कुछ सीखा है, जो कुछ सीखा है उसे याद रखता है और उसे संजोता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों - ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से उनका अध्ययन किया है और दृष्टि से अच्छी तरह समझा है। इसे ही ज्ञान का खजाना कहा जाता है।"

(6) "और उदारता का धन क्या है? यहाँ, एक नेक शिष्य अपने घर में कंजूसी के दाग से रहित हृदय से रहता है, जो उदार, खुले हाथों वाला, त्याग में आनंदित, दान के प्रति समर्पित, देने और बाँटने में प्रसन्न होता है। इसे उदारता का धन कहा जाता है।"

(7) "और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का धन क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य बुद्धिमान होता है; वह उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) से युक्त होता है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। इसे ही पन्ना (दिव्य ज्ञान) का धन कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये सात प्रकार के धन हैं।"

[ये आयतें 7:5 की आयतों के समान हैं]

---

7 उगा

तब राजा के प्रधान मंत्री उगा ने भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और कहा:

"भंते, यह आश्चर्यजनक और अद्‌भुत है कि रोहाना का मिगारा इतना धनी है, उसके पास इतनी अपार संपत्ति है।"

"लेकिन रोहाना का मिगारा कितना [7] अमीर है? उसके पास कितनी दौलत और संपत्ति है?"

"उसके पास एक लाख यूनिट सोने की ढली हुई धातु है, 1456 यूनिट चांदी की तो बात ही छोड़िए।"

"उग्गा, उस तरह का धन होता है; मैं इससे इनकार नहीं करता। लेकिन उस तरह का धन आग, पानी, राजाओं, चोरों और अप्रिय वारिसों द्वारा छीना जा सकता है। हालांकि, उग्गा, ये सात प्रकार के धन आग, पानी, राजाओं, चोरों और अप्रिय वारिसों द्वारा नहीं छीने जा सकते। वे सात कौन से हैं? विश्वास का धन, सदाचार का धन, नैतिक लज्जा का धन, नैतिक भय का धन, विद्या का धन, उदारता का धन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का धन। ये सात प्रकार के धन आग, पानी, राजाओं, चोरों और अप्रिय वारिसों द्वारा नहीं छीने जा सकते।"

[ये आयतें 7:5 की आयतों के समान हैं]

---

8 बंधन (संयोजन)

भिक्षुओं, ये सात बंधन हैं। 1457 कौन से सात? आज्ञापालन का बंधन, 1458 घृणा का बंधन, विचारों का बंधन, संदेह का बंधन, अहंकार का बंधन, अस्तित्व के लिए राग का बंधन और अज्ञान का बंधन। ये सात बंधन हैं।

---

9 परित्याग (पहाना सं. प्रहाना)

भिक्षुओं, ब्रह्मचर्य (संन्यासी पवित्र जीवन) सात बंधनों को त्यागने और मिटाने के लिए जिया जाता है। वे सात कौन से हैं? [8] आज्ञापालन का बंधन, घृणा का बंधन, विचारों का बंधन, संदेह का बंधन, अहंकार का बंधन, अस्तित्व के लिए कामवासना (राग) का बंधन (भाव/पुनर्जन्म का कारण) और अज्ञान का बंधन। ब्रह्मचर्य (संन्यासी पवित्र जीवन) इन सात बंधनों को त्यागने और मिटाने के लिए जिया जाता है।

जब कोई भिक्षु आज्ञापालन के बंधन को जड़ से त्याग देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान मिटा देता है, ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो; जब वह घृणा के बंधन को... विचारों के बंधन को... संदेह के बंधन को... अहंकार के बंधन को... अस्तित्व के लिए राग के बंधन को... अज्ञान के बंधन को जड़ से त्याग देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान मिटा देता है, ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो, तब उसे तृष्णा का बंधन तोड़ने वाला, बंधन से मुक्त और अहंकार को पूरी तरह से तोड़कर दुखों का अंत करने वाला भिक्षु कहा जाता है।

---

10. कंजूसी (मच्छरिया)

"भिक्षुओं, ये सात बंधन हैं। कौन से सात? आज्ञापालन का बंधन, घृणा का बंधन, विचारों का बंधन, संदेह का बंधन, अहंकार का बंधन, ईर्ष्या का बंधन और कंजूसी का बंधन। 1459 ये सात बंधन हैं।" [9]

II. अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ (अनुसय)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

11 अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ (1) (अनुसया1)

भिक्षुओं, ये सात मूल प्रवृत्तियाँ हैं। कौन सी सात? कामवासना (राग) की मूल प्रवृत्ति, घृणा की मूल प्रवृत्ति, मत की मूल प्रवृत्ति, संदेह की मूल प्रवृत्ति, अहंकार की मूल प्रवृत्ति, अस्तित्व की चाह (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की मूल प्रवृत्ति और अज्ञान की मूल प्रवृत्ति। ये सात मूल प्रवृत्तियाँ हैं।

---

12. अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ (2) (अनुसया2)

भिक्षुओं, ब्रह्मचर्य जीवन का उद्देश्य सात मूल प्रवृत्तियों का त्याग और उन्मूलन करना है। वे सात प्रवृत्तियाँ कौन सी हैं? राग (इंद्रिय सुख), घृणा, मत, संशय, अहंकार, जीवन के प्रति भाव और अज्ञान। ब्रह्मचर्य जीवन का उद्देश्य इन सात मूल प्रवृत्तियों का त्याग और उन्मूलन करना है।

जब कोई भिक्षु इंद्रिय-संबंधी प्रवृत्ति (राग) का त्याग कर उसे जड़ से काट देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान मिटा देता है, ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो; जब वह घृणा की प्रवृत्ति... दृष्टिकोण की प्रवृत्ति... संदेह की प्रवृत्ति... अहंकार की प्रवृत्ति... अस्तित्व के लिए वासना (राग) (भाव/पुनर्जन्म का कारण)... अज्ञान की प्रवृत्ति का त्याग कर उसे जड़ से काट देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान मिटा देता है, ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो, तब उसे अंतर्निहित प्रवृत्तियों से रहित भिक्षु कहा जाता है, 1460 वह जिसने तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) को काट डाला है, बंधन तोड़ दिया है, और अहंकार को पूरी तरह से तोड़कर दुख का अंत कर दिया है। [10]

---

13 परिवार (कुला)

"जिन भिक्षुओं में सात गुण होते हैं, उनके लिए ऐसा परिवार जिसके पास अभी तक न जाया गया हो, उसके पास जाना उचित नहीं है, और जिनके पास जाया जा चुका हो, उनके साथ बैठना उचित नहीं है। 1461 वे सात गुण क्या हैं? (1) वे उचित ढंग से उठते नहीं हैं। 1462 (2) वे उचित ढंग से प्रणाम नहीं करते। (3) वे उचित ढंग से बैठने की व्यवस्था नहीं करते। (4) वे अपने पास जो कुछ है, उसे छिपाते हैं। (5) उनके पास बहुत कुछ होते हुए भी, वे कम देते हैं। (6) उनके पास उत्तम वस्तुएँ होते हुए भी, वे साधारण वस्तुएँ देते हैं। (7) वे आदरहीनता से देते हैं, आदरपूर्वक नहीं। इन सात गुणों वाले भिक्षुओं के लिए ऐसा परिवार जिसके पास अभी तक न जाया गया हो, उसके पास जाना उचित नहीं है, और जिनके पास जाया जा चुका हो, उनके साथ बैठना उचित नहीं है।"

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) में सात गुण होते हैं: जिस परिवार से अभी तक संपर्क नहीं किया गया है, उससे संपर्क करना उचित है, और जिस परिवार से संपर्क किया जा चुका है, उसके साथ बैठना उचित है। वे सात गुण क्या हैं? (1) वे सौम्य ढंग से उठते हैं। (2) वे सौम्य ढंग से प्रणाम करते हैं। (3) वे सौम्य ढंग से आसन प्रदान करते हैं। (4) वे अपने पास जो कुछ है, उसे छिपाते नहीं हैं। (5) जब उनके पास प्रचुरता होती है, तो वे प्रचुरता से दान करते हैं। (6) जब उनके पास उत्तम वस्तुएँ होती हैं, तो वे उत्तम वस्तुएँ दान करते हैं। (7) वे आदरपूर्वक दान करते हैं, अनादर का भाव नहीं दिखाते। इन सात गुणों से युक्त, जिस परिवार से अभी तक संपर्क नहीं किया गया है, उससे संपर्क करना उचित है, और जिस परिवार से संपर्क किया जा चुका है, उसके साथ बैठना उचित है।"

---

14 व्यक्ति (पुग्गला)

"भिक्षुओं, ये सात व्यक्ति दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र हैं। वे कौन से सात हैं? दोनों प्रकार से मुक्त, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्त, देह-साक्षी, दृष्टि प्राप्त, आस्था द्वारा मुक्त, धम्म का अनुयायी, और आस्था का अनुयायी। [11] ये सात व्यक्ति दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र हैं।" 1463

---

15 जल में रहने वालों के समान (उदकुपमा)

भिक्षुओं, संसार में जल में रहने वाले लोगों के समान सात प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे सात कौन से हैं? (1) कोई व्यक्ति एक बार जल में डूब चुका है और वहीं रहता है। (2) कोई व्यक्ति जल से ऊपर उठकर फिर जल में डूब जाता है। (3) कोई व्यक्ति जल से ऊपर उठकर वहीं रहता है। (4) कोई व्यक्ति जल से ऊपर उठकर स्पष्ट दृष्टि से चारों ओर देखता है। (5) कोई व्यक्ति जल से ऊपर उठकर पार चला जाता है। (6) कोई व्यक्ति जल से ऊपर उठकर दृढ़ता से स्थिर हो जाता है। (7) कोई व्यक्ति जल से ऊपर उठकर पार चला जाता है और उससे भी आगे बढ़ जाता है, वह एक ब्राह्मण है जो उच्च भूमि पर खड़ा है।

(3) हे भिक्षुओं, जो व्यक्ति एक बार अधोलोक में चला गया हो और अधोलोक में ही रहता हो, वह कैसे कहलाता है? यहाँ, कुछ व्यक्ति में केवल काले, हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) होते हैं। इस प्रकार, एक व्यक्ति वह है जो एक बार अधोलोक में चला गया हो और अधोलोक में ही रहता हो।

(2) और वह व्यक्ति कैसा होता है जो उठकर फिर गिर जाता है? यहाँ, कोई व्यक्ति उठ खड़ा हुआ है, यह सोचते हुए: 'धर्म के लाभकारी गुणों में विश्वास अच्छा है; धर्म के लाभकारी गुणों में नैतिक लज्जा अच्छी है; धर्म के लाभकारी गुणों में नैतिक भय अच्छा है; धर्म के लाभकारी गुणों में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) अच्छी है; धर्म के लाभकारी गुणों में पन्ना (दिव्य ज्ञान) अच्छा है।' परन्तु उसका विश्वास स्थिर नहीं होता और न ही बढ़ता है, बल्कि क्षीण हो जाता है। उसकी नैतिक लज्जा... नैतिक भय... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य)... पन्ना (दिव्य ज्ञान) स्थिर नहीं होता और न ही बढ़ता है, बल्कि क्षीण हो जाता है। इस प्रकार वह व्यक्ति उठ खड़ा होता है और फिर गिर जाता है।

(3) "और वह व्यक्ति कैसा है जो उठ खड़ा होकर स्थिर रहता है? [12] यहाँ, कोई व्यक्ति उठ खड़ा हुआ है, [यह सोचकर]: 'लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के [विकास] में विश्वास अच्छा है... लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के [विकास] में पन्ना (दिव्य ज्ञान) अच्छा है।' उसका विश्वास न घटता है और न बढ़ता है; वह स्थिर रहता है। उसकी नैतिक लज्जा... उसका नैतिक भय... उसकी ऊर्जा (प्रयास/वीर्य)... उसका पन्ना (दिव्य ज्ञान) न घटता है और न बढ़ता है; वह स्थिर रहता है। इस प्रकार एक व्यक्ति वह है जो उठ खड़ा होकर स्थिर रहता है।"

(4) और वह व्यक्ति कैसे है जो ऊपर उठकर, स्पष्ट दृष्टि से देखता है और चारों ओर देखता है? यहाँ, कोई व्यक्ति ऊपर उठकर यह सोचता है: 'धर्म के लाभकारी गुणों को विकसित करने में विश्वास अच्छा है... धर्म के लाभकारी गुणों को विकसित करने में दिव्य ज्ञान अच्छा है।' तीनों बंधनों के पूर्ण नाश से, यह व्यक्ति सात जन्मों का पथ-प्रदर्शक (सोतपत्ति) बन जाता है, निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं रहता, नियति में स्थिर होकर ज्ञानोदय की ओर अग्रसर होता है। इसी प्रकार वह व्यक्ति ऊपर उठकर, स्पष्ट दृष्टि से देखता है और चारों ओर देखता है।

(5) और वह व्यक्ति कैसे है जो उठ खड़ा हुआ है और पार जा रहा है? यहाँ, कोई व्यक्ति उठ खड़ा हुआ है, [यह सोचकर]: 'लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के [विकास] में विश्वास अच्छा है... लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के [विकास] में पन्ना (दिव्य ज्ञान) अच्छा है।' तीनों बंधनों के पूर्ण नाश और लोभ, घृणा और मोह (मोह) के कम होने के साथ, यह व्यक्ति एक बार जन्म लेने वाला (एक बार पुनर्जन्म लेने वाला, सकदागामी) है, जो इस संसार में केवल एक बार फिर आकर दुखों का अंत करेगा। इस प्रकार एक व्यक्ति उठ खड़ा हुआ है और पार जा रहा है।

(6) "और वह व्यक्ति कैसे है जो उठ खड़ा हुआ है और दृढ़ स्थान प्राप्त कर चुका है? यहाँ, कोई व्यक्ति उठ खड़ा हुआ है, [यह सोचकर]:

'धर्म के लाभकारी गुणों को विकसित करने में आस्था रखना अच्छा है... धर्म के लाभकारी गुणों को विकसित करने में ज्ञान प्राप्त करना अच्छा है।' पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश होने पर, व्यक्ति स्वतः पुनर्जन्म लेता है और उस लोक से वापस लौटे बिना ही अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है। इसी प्रकार व्यक्ति उत्थान प्राप्त करता है और दृढ़ स्थिति प्राप्त करता है।

(7) "और जो व्यक्ति ऊपर उठकर पार चला गया है, वह उच्च स्थान पर स्थित ब्राह्मण कैसे हो सकता है? [13] यहाँ, कोई व्यक्ति उठ खड़ा हुआ है, [यह सोचकर]: 'धर्म के लाभकारी (कुशल) गुणों में विश्वास अच्छा है; धर्म के लाभकारी (कुशल) गुणों में नैतिक लज्जा अच्छी है; धर्म के लाभकारी (कुशल) गुणों में नैतिक भय अच्छा है; धर्म के लाभकारी (कुशल) गुणों में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) अच्छी है; धर्म के लाभकारी (कुशल) गुणों में पन्ना (दिव्य ज्ञान) अच्छा है।' दोषों के नाश होने पर, उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इस प्रकार वह व्यक्ति उत्थान प्राप्त कर, पार कर और परे जा चुका है, एक ऐसा ब्राह्मण है जो उच्च स्थान पर स्थित है।

"हे भिक्षुओं, ये सात प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में जल में रहने वालों के समान विद्यमान पाए जाते हैं।"

---

16 अनित्यता ध्यानी (अनिकानुपासि सं. अनित्य अनुपश्ययी)

"भिक्षुओं, ये सात प्रकार के व्यक्ति हैं जो दान के योग्य हैं, आतिथ्य सत्कार के योग्य हैं, भेंट के योग्य हैं, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, जो संसार के लिए अद्वितीय पुण्य का क्षेत्र हैं। वे सात कौन से हैं?"

(1) हे भिक्षुओं, यहाँ एक व्यक्ति सभी प्रकार की परिस्थितियों में अनित्यता का अवलोकन (अनुपसी) करते हुए, अनित्यता को निरंतर अनुभव करते हुए, निरंतर और निर्बाध रूप से उस पर ध्यान केंद्रित करते हुए, दिव्य ज्ञान से उसका गहन अध्ययन करते हुए निवास करता है। दोषों के नाश होने से उसने इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान से मन की निर्मल मुक्ति, दिव्य ज्ञान द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है। यह व्यक्ति दान, आतिथ्य, भेंट और आदर के योग्य प्रथम प्रकार का है, और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का पात्र है।

(2) "फिर, कोई व्यक्ति सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता को देखते हुए (अनुपसी में) ध्यान लगाता है, अनित्यता को अनुभव करता है, अनिच्छा का अनुभव करता है, निरंतर, सतत और निर्बाध रूप से मन से उस पर ध्यान केंद्रित करता है, और उसे ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से समझता है। उसके लिए दोषों का नाश और जीवन का नाश एक साथ होता है। 1465 यह दूसरे प्रकार का व्यक्ति है जो वरदानों के योग्य है। . ."

(3) "फिर, भिक्षुओं, कोई व्यक्ति सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता (अनिच्छ/अनित्य) को ध्यान में रखते हुए (अनुपसी में) रहता है, अनित्यता (अनिच्छ/अनित्य) को अनुभव करता है, निरंतर, सतत और निर्बाध रूप से मन से उस पर ध्यान केंद्रित करता है, और उसे ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से समझता है। [14] पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ, वह इस अंतराल में निर्वाण (निब्बान) प्राप्त कर लेता है। 1466 यह तीसरे प्रकार का व्यक्ति है जो वरदानों के योग्य है। . . ."

(4) "...पांच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ, वह उतरते ही निर्वाण प्राप्त कर लेता है। 1467 यह दान के योग्य चौथे प्रकार का व्यक्ति है। ..."

(5) "...पांच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ, वह बिना किसी प्रयास के निर्वाण प्राप्त कर लेता है। 1468 यह पांचवा प्रकार का व्यक्ति है जो दान के योग्य है। ..."

(6) "... निम्न पाँच बंधनों के पूर्ण नाश से वह परिश्रम द्वारा निर्वाण प्राप्त कर लेता है। यह छठे प्रकार का दानयोग्य व्यक्ति है। ..."

(7) "फिर, भिक्षुओं, कोई व्यक्ति सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता (अनिच्छ/अनित्य) को ध्यान में रखते हुए (अनुपसी में) रहता है, अनित्यता को अनुभव करते हुए, निरंतर, निरंतर और निर्बाध रूप से उस पर ध्यान केंद्रित करते हुए, उसे ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से समझता है: पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, वह धारा के विपरीत दिशा में बहने लगता है, अकनित्थ लोक की ओर अग्रसर होता है। 1469 यह सातवें प्रकार का व्यक्ति है जो वरदानों के योग्य है।

"हे भिक्षुओं, ये सात प्रकार के व्यक्ति हैं जो दान के योग्य हैं, आतिथ्य सत्कार के योग्य हैं, भेंट के योग्य हैं, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, और संसार के लिए पुण्य का एक अतुलनीय क्षेत्र हैं।"

---

17 पीड़ित ध्यानी (दुक्खनुपासि सं. दुक्ख अनुपश्ययी)

"भिक्षुओं, ये सात प्रकार के व्यक्ति हैं जो दान के योग्य हैं, आतिथ्य सत्कार के योग्य हैं, भेंट के योग्य हैं, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, जो संसार के लिए अद्वितीय पुण्य का क्षेत्र हैं। वे सात कौन से हैं?"

(1) हे भिक्षुओं, यहाँ एक व्यक्ति समस्त संभाव्यताओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में दुख को ध्यानपूर्वक देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है, दुख को अनुभव करते हुए, निरंतर, सतत और निर्बाध रूप से उस पर मन केंद्रित करते हुए, उसे ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से गहराई से समझता है। दोषों के नाश होने पर, उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, ज्ञान (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। यह दान, आतिथ्य, भेंट और आदर के योग्य प्रथम प्रकार का व्यक्ति है, जो संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।

[बाकी 7:16 के अनुसार है, लेकिन सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में पीड़ा को देखने (ध्यान/अनुपसी में) पर आधारित है।]

---

18 गैर-स्व ध्यानी (अनत्तनुपासि सं. अनित्य अनुपश्ययी)

"भिक्षुओं, ये सात प्रकार के व्यक्ति हैं जो दान के योग्य हैं, आतिथ्य सत्कार के योग्य हैं, भेंट के योग्य हैं, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, जो संसार के लिए अद्वितीय पुण्य का क्षेत्र हैं: वे सात कौन से हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, यहाँ एक व्यक्ति समस्त घटनाओं में अनात्म को निहारते हुए (ध्यान/अनुपसी में) निवास करता है, अनात्म को अनुभव करते हुए, निरंतर, सतत और निर्बाध रूप से मन से उस पर ध्यान केंद्रित करते हुए, उसे प्रभात (दिव्य ज्ञान) से गहराई से समझता है। दोषों के नाश के साथ, उसने इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान से मन की निष्कलंक मुक्ति, प्रभात (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। यह दान, आतिथ्य, भेंट और आदर के योग्य प्रथम प्रकार का व्यक्ति है, जो संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।"

[बाकी 7:16 के अनुसार है, लेकिन सभी घटनाओं (धम्म) में अनात्म को देखने (ध्यान/अनुपसी में) पर आधारित है।]

---

19. निब्बाना (निर्वाण का सान्निध्य)

"भिक्षुओं, ये सात प्रकार के व्यक्ति हैं जो दान के योग्य हैं, आतिथ्य सत्कार के योग्य हैं, भेंट के योग्य हैं, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, जो संसार के लिए अद्वितीय पुण्य का क्षेत्र हैं। वे सात कौन से हैं?"

"यहाँ, भिक्षुओं, एक व्यक्ति ध्यान में लीन होकर निर्वाण के सुख को निहारता है, उस सुख को अनुभव करता है, निरंतर, निरंतर और निर्बाध रूप से उस पर मन केंद्रित करता है, और उसे दिव्य ज्ञान से समझता है। दोषों के नाश होने पर, उसने इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान से मन की निर्मल मुक्ति, दिव्य ज्ञान द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। यह प्रथम प्रकार का व्यक्ति है जो दान, आतिथ्य, भेंट और आदर के योग्य है, और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है।"

[बाकी 7:16 के अनुसार, लेकिन निर्वाण में सुख देखने पर आधारित।] [15]

निद्धसवत्थु (निष्कलंक होने के 20 आधार)

"भिक्षुओं (मठवासियों), निष्कलंक होने के ये सात आधार हैं 1472 वे सात कौन से हैं?"

यहां, (1) एक भिक्षु को प्रशिक्षण लेने की तीव्र इच्छा होती है और भविष्य में भी प्रशिक्षण लेने के प्रति उसका लगाव बना रहता है। (2) उसे धम्म का अध्ययन करने की प्रबल इच्छा होती है और भविष्य में भी धम्म का अध्ययन करने के प्रति उसका लगाव बना रहता है। (3) उसे व्यर्थ इच्छाओं को दूर करने की प्रबल इच्छा होती है और भविष्य में भी व्यर्थ इच्छाओं को दूर करने के प्रति उसका लगाव बना रहता है। (4) उसे एकांतवास की प्रबल इच्छा होती है और भविष्य में भी एकांतवास के प्रति उसका लगाव बना रहता है। (5) उसे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करने की प्रबल इच्छा होती है और भविष्य में भी ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करने के प्रति उसका लगाव बना रहता है। (6) उसे सती ध्यान और सतर्कता की प्रबल इच्छा होती है और भविष्य में भी सती ध्यान और सतर्कता के प्रति उसका लगाव बना रहता है। (7) उसे दृष्टि द्वारा भेदने की प्रबल इच्छा होती है और भविष्य में भी दृष्टि द्वारा भेदने के प्रति उसका लगाव बना रहता है। भविष्य। ये सात आधार हैं निष्कलंक होने के।

तृतीय. वज्जि सात (वज्जिसत्तक सं. वज्जि सप्तक)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

21 सारंददा

[16] मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में सरंददा मंदिर में निवास कर रहे थे। तब कई लिच्छवी भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा, "हे लिच्छवियों, मैं तुम्हें अवनति के सात सिद्धांत सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।" 1474

"जी भंते," उन लिच्छवियों ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और लिच्छवी, पतन से बचने के सात सिद्धांत क्या हैं?"

(1) "लिच्छवी, जब तक वज्जी अक्सर इकट्ठा होते हैं और बार-बार सभाएँ आयोजित करते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, गिरावट की नहीं।

(2) "जब तक वज्जी सद्भाव में एकत्रित होते हैं, सद्भाव में स्थगित होते हैं और वज्जियों के मामलों का संचालन सद्भाव में करते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(3) "जब तक वज्जी किसी ऐसी बात का फरमान नहीं सुनाते जो पहले से तय नहीं है या किसी ऐसी बात को खत्म नहीं करते जो पहले से तय है, बल्कि प्राचीन वज्जी सिद्धांतों को उसी रूप में अपनाते और उनका पालन करते हैं जैसा कि तय किया गया है, तब तक उनसे केवल विकास की उम्मीद की जा सकती है, गिरावट की नहीं।"

(4) "जब तक वज्जी लोग वज्जी बुजुर्गों का आदर, सम्मान, आदर और आदर करते हैं और सोचते हैं कि उनकी बात सुनी जानी चाहिए, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(5) "जब तक वज्जी लोग महिलाओं और लड़कियों को उनके परिवारों से अगवा करके अपने साथ रहने के लिए मजबूर नहीं करते, तब तक उनके लिए केवल विकास की ही उम्मीद की जा सकती है, गिरावट की नहीं।"

(6) "जब तक वज्जी अपने पारंपरिक तीर्थस्थलों का सम्मान, आदर, आदर और पूजा करते हैं, चाहे वे [शहर] 1475 के भीतर हों या बाहर, [17] और अतीत में उन्हें दिए गए और किए गए धार्मिक अर्पण की उपेक्षा नहीं करते, 1476 तब तक उनके लिए केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, गिरावट की नहीं।

(7) "जब तक वज्जी अरहंतों को धार्मिक संरक्षण, आश्रय और सुरक्षा प्रदान करते हैं, [इस इरादे से]: 'जो अरहंत अभी तक यहाँ नहीं आए हैं वे हमारे राज्य में कैसे आ सकते हैं, और जो अरहंत पहले ही आ चुके हैं वे यहाँ कैसे आराम से रह सकते हैं?' तब तक उनके लिए केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

"लिच्छवी, जब तक वज्जियों के बीच अवनति के ये सात सिद्धांत बने रहते हैं, और वज्जी उनमें स्थापित दिखाई देते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, न कि अवनति की।"

---

22 वासाकारा [1477]

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित कजगाह में निवास कर रहे थे। उस समय मगध के राजा अजातसत्तु वेदेहिपुत्त ने वज्जियों के विरुद्ध युद्ध छेड़ने की इच्छा व्यक्त की। उन्होंने कहा, "ये वज्जी जितने शक्तिशाली और बलवान हैं, मैं उनका नाश करूँगा, उन्हें नष्ट करूँगा, उन पर विपत्ति और विपत्ति लाऊँगा।"

तब राजा अजातसत्तु ने मगध के प्रधान मंत्री, ब्राह्मण वस्सकारा को संबोधित करते हुए कहा, "हे ब्राह्मण, आओ, भगवान (बुद्ध) के पास जाओ और मेरे नाम से उनके चरणों में सिर रखकर प्रणाम करो। उनसे पूछो कि क्या वे स्वस्थ, चुस्त और बलवान हैं और शांत हैं। कहो: 'भंते, मगध के राजा अजातसत्तु वेदेहिपुत्त भगवान (बुद्ध) को आपके चरणों में सिर रखकर प्रणाम करते हैं। वे पूछते हैं कि क्या आप

स्वस्थ, चुस्त और बलवान हैं और शांत हैं।' फिर इस प्रकार कहो: 'भंते, राजा अजातसत्तु वज्जियों के विरुद्ध युद्ध करना चाहते हैं। वे कहते हैं: 'ये वज्जी जितने शक्तिशाली और बलवान हैं, मैं उनका संहार करूँगा, उन्हें नष्ट करूँगा, उन पर विपत्ति और आपदा लाऊँगा।' [18] भगवान (बुद्ध) तुम्हें क्या उत्तर देते हैं, यह भली-भांति जान लो और मुझे बता, क्योंकि तथागत (बुद्ध) झूठ नहीं बोलते।"

“जी, महाराज,” ब्राह्मण वासकारा ने उत्तर दिया। फिर वह अपने आसन से उठकर भगवान (बुद्ध) के पास गए। उन्होंने भगवान (बुद्ध) से अभिवादन किया, और अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत के बाद, वह एक तरफ बैठ गए और बोले:

हे गुरु गौतम, मगध के राजा अजातसत्तु वेदेहिपुत्त आपके चरणों में सिर रखकर भगवान (बुद्ध) को प्रणाम करते हैं। वे आपसे पूछते हैं कि क्या आप स्वस्थ, चुस्त और बलवान हैं और सहज महसूस कर रहे हैं। हे गुरु गौतम, राजा अजातसत्तु वज्जियों के विरुद्ध युद्ध करना चाहते हैं। वे कहते हैं: 'ये वज्जी जितने शक्तिशाली और बलवान हैं, मैं उनका संहार करूँगा, उन्हें नष्ट करूँगा, उन पर विपत्ति और विपत्ति लाऊँगा।'

उस समय पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पीछे खड़े होकर उन्हें पंखा कर रहे थे। तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य आनंद को संबोधित किया:

(1) "आनंद, क्या तुमने सुना है कि वज्जी लोग अक्सर इकट्ठा होते हैं और बार-बार सभाएँ आयोजित करते हैं?"

"मैंने सुना है, भंते, कि वे ऐसा करते हैं।"

"आनंद, जब तक वज्जी लोग अक्सर एकत्रित होते रहेंगे और नियमित सभाएँ आयोजित करते रहेंगे, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(2) "क्या तुमने सुना है, आनंद, कि वज्जी लोग सद्भाव से एकत्रित हो रहे हैं, सद्भाव से अपनी सभाएँ स्थगित कर रहे हैं और सद्भाव से वज्जियों के मामलों का संचालन कर रहे हैं?"

"मैंने सुना है, भंते, कि वे ऐसा करते हैं।"

"आनंद, जब तक वज्जी सद्भाव में एकत्रित होते हैं, [19] सद्भाव में स्थगित होते हैं, और वज्जियों के मामलों का सद्भाव में संचालन करते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की अपेक्षा की जा सकती है, गिरावट की नहीं।

(3) "क्या तुमने सुना है, आनंद, कि वज्जी किसी ऐसी बात का फरमान नहीं बनाते जो पहले से तय न हो और किसी ऐसी बात को रद्द नहीं करते जो पहले से तय हो चुकी हो, बल्कि प्राचीन वज्जी सिद्धांतों को उसी रूप में अपनाते और उनका पालन करते हैं जैसा कि तय किया गया है?"

"मैंने सुना है, भंते, कि वे ऐसा करते हैं।"

"आनंद, जब तक वज्जी किसी ऐसी बात का फरमान जारी नहीं करते जो पहले से तय नहीं है या किसी ऐसी बात को रद्द नहीं करते जो पहले से तय है, बल्कि प्राचीन वज्जी सिद्धांतों को उसी रूप में अपनाते और उनका पालन करते हैं जैसा कि निर्धारित किया गया है, तब तक उनसे केवल विकास की ही उम्मीद की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(4) "क्या तुमने सुना है, आनंद, कि वज्जी लोग वज्जी बुजुर्गों का आदर, सम्मान, आदर और पूजा करते हैं और सोचते हैं कि उनकी बात मानी जानी चाहिए?"

"मैंने सुना है, भंते, कि वे ऐसा करते हैं।"

"आनंद, जब तक वज्जी लोग वज्जी बुजुर्गों का आदर, सम्मान और आदर करते रहेंगे और यह मानते रहेंगे कि उनकी बात सुनी जानी चाहिए, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(5) "क्या तुमने सुना है, आनंद, कि वज्जी लोग महिलाओं और लड़कियों को उनके परिवारों से अगवा नहीं करते और उन्हें अपने साथ रहने के लिए मजबूर नहीं करते?"

"मैंने सुना है, भंते, कि वे ऐसा नहीं करते।"

"आनंद, जब तक वज्जी लोग महिलाओं और लड़कियों को उनके परिवारों से अगवा करके अपने साथ रहने के लिए मजबूर नहीं करते, तब तक उनसे केवल विकास की ही उम्मीद की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(6) "क्या तुमने सुना है, आनंद, कि वज्जी लोग अपने पारंपरिक तीर्थस्थलों का आदर, सम्मान, आदर और पूजा करते हैं, चाहे वे शहर के भीतर हों या बाहर, और क्या वे अतीत में उन्हें दी गई और की गई धार्मिक आहुतियों की उपेक्षा नहीं करते?"

"मैंने सुना है, भंते, कि वे ऐसा करते हैं।"

"आनंद, जब तक वज्जी [20] अपने पारंपरिक मंदिरों का सम्मान/आदर, आदर और पूजा करते हैं, चाहे वे शहर के भीतर हों या बाहर, और अतीत में उन्हें दी गई और की गई धार्मिक आहुतियों की उपेक्षा नहीं करते, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।

(7) "क्या तुमने सुना है, आनंद, कि वज्जी अरहंतों को धार्मिक संरक्षण, आश्रय और सुरक्षा प्रदान करते हैं, [इस इरादे से]: 'जो अरहंत अभी तक यहाँ नहीं आए हैं वे हमारे लोक में कैसे आ सकते हैं, और जो अरहंत पहले ही आ चुके हैं वे यहाँ कैसे चैन से रह सकते हैं?'"

"मैंने सुना है, भंते, कि वे ऐसा करते हैं।"

"आनंद, जब तक वज्जी अरहंतों को धार्मिक संरक्षण, आश्रय और सुरक्षा प्रदान करते रहेंगे, [इस इरादे से]: 'जो अरहंत अभी तक यहाँ नहीं आए हैं वे हमारे लोक में कैसे आ सकते हैं और जो अरहंत पहले ही आ चुके हैं वे यहाँ कैसे चैन से रह सकते हैं?' तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

तब भगवान (बुद्ध) ने मगध के प्रधान मंत्री ब्राह्मण वासकारा को संबोधित करते हुए कहा, "हे ब्राह्मण, एक बार मैं वैशाली में सरंददा मंदिर में निवास कर रहा था। वहाँ मैंने वज्जियों को अवनति के ये सात सिद्धांत सिखाए। जब तक वज्जियों में अवनति के ये सात सिद्धांत बने रहेंगे और वज्जी उनमें दृढ़ रहेंगे, तब तक उनसे केवल उन्नति ही अपेक्षित है, अवनति नहीं।"

यह सुनकर ब्राह्मण वासकारा ने भगवान (बुद्ध) से कहा, "हे गौतम गुरु, यदि वज्जी इन अवनति सिद्धांतों में से एक का भी पालन करें, तो उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, अवनति की नहीं। यदि वे सभी सात सिद्धांतों का पालन करें तो क्या होगा? हे गौतम गुरु, मगध के राजा अजातसत्तु वेदेहिपुत्त, वज्जियों को युद्ध द्वारा नहीं जीत सकते, सिवाय [21] छल या आंतरिक कलह के। और अब, हे गौतम गुरु, हमें जाना होगा। हम व्यस्त हैं और हमारे पास बहुत काम है।"

"हे ब्राह्मण, आप अपनी सुविधानुसार जा सकते हैं।"

तब मगध के प्रधान ब्राह्मण वस्साकरा, भगवान (बुद्ध) के वचनों से प्रसन्न और आनंदित होकर अपने आसन से उठे और चले गए।

---

23 गैर-अस्वीकार (1) (पथमासट्टक)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया:

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें अवनति के सात सिद्धांत सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और उपस्थित रहो। मैं बोलूंगा।" 1478

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और भिक्षुओं, अवनति से मुक्ति के सात सिद्धांत क्या हैं?"

(1) "जब तक भिक्षु अक्सर एकत्रित होते हैं और बार-बार सभाएँ आयोजित करते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, गिरावट की नहीं।"

(2) "जब तक भिक्षु सद्भाव से एकत्रित होते हैं, सद्भाव से विलीन होते हैं और संघ के कार्यों का संचालन सद्भाव से करते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(3) "जब तक भिक्षु किसी ऐसी बात का फरमान नहीं सुनाते जो फरमान नहीं सुनाया गया हो या किसी ऐसी बात को रद्द नहीं करते जो पहले से फरमान सुनाया गया हो, बल्कि प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हैं जैसा कि फरमान सुनाया गया है, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(4) "जब तक भिक्षु उन भिक्षुओं का आदर, सम्मान, आदर और आदर करते हैं जो वरिष्ठ हैं, लंबे समय से संन्यासी जीवन में जा चुके हैं, संघ के पिता और मार्गदर्शक हैं, और यह समझते हैं कि उनकी बात माननी चाहिए, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(5) "जब तक भिक्षु उत्पन्न हुई तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के वश में नहीं आते, जो पुनर्जन्म की ओर ले जाती है, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

(6) "जब तक भिक्षु वन में निवास करने के लिए तत्पर हैं, [22] उनके लिए केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, गिरावट की नहीं।

(7) "जब तक भिक्षु व्यक्तिगत रूप से सती (ध्यान) स्थापित करते हैं [इस इरादे से]: 'यहाँ अभी तक नहीं आए सुसंस्कृत साथी भिक्षु कैसे आ सकते हैं, और यहाँ पहले से मौजूद सुसंस्कृत साथी भिक्षु कैसे आराम से रह सकते हैं?' तब तक उनसे केवल विकास की अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।"

"भिक्षुओं, जब तक भिक्षुओं के बीच अवनति के ये सात सिद्धांत बने रहते हैं, और भिक्षु उनमें स्थापित दिखाई देते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, अवनति की नहीं।"

---

24 गैर-पतन (2) (दुतियासत्तक)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें अवनति के सात सिद्धांत सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और उपस्थित रहो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और भिक्षुओं, अवनति से मुक्ति के सात सिद्धांत क्या हैं?"

(1) जब तक भिक्षु काम में आनंद नहीं लेते, काम में प्रसन्नता नहीं पाते, काम में प्रसन्नता के प्रति समर्पित नहीं होते, तब तक उनसे केवल उन्नति की अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं। (2) जब तक भिक्षु बातों में प्रसन्नता नहीं पाते... (3) ... नींद में प्रसन्नता नहीं पाते... (4) ... संगति में प्रसन्नता नहीं पाते... (5) ... बुरी इच्छाएँ नहीं रखते और बुरी इच्छाओं के वश में नहीं आते... (6) ... बुरे मित्रों, बुरे साथियों, बुरे सहपाठियों के साथ संगति नहीं करते... (7) ... किसी छोटी-मोटी उपलब्धि या विशिष्टता के कारण अपने विकास में बीच में ही नहीं रुकते, तब तक उनसे केवल उन्नति की अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।

"भिक्षुओं, जब तक भिक्षुओं के बीच ये सात सिद्धांत बने रहते हैं और भिक्षु उनमें दृढ़ रूप से स्थापित दिखाई देते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।" 7

---

25 गैर-अस्वीकार (3) (तातियासट्टक)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें अवनति के सात सिद्धांत सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और गौर करो; मैं बोलूंगा।"

"जी हाँ, भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा: [23]

"और भिक्षुओं, अवनति से मुक्ति के सात सिद्धांत क्या हैं?"

(1) जब तक भिक्षुओं में आस्था बनी रहती है, तब तक उनसे केवल उन्नति की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं। (2) जब तक उनमें नैतिक लज्जा का भाव रहता है... (3) ...नैतिक भय रहता है... (4) ...विद्वान रहते हैं... (5) ...ऊर्जावान रहते हैं... (6) ...सती ध्यान में रहते हैं... (7) ...बुद्धिमान रहते हैं, तब तक उनसे केवल उन्नति की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।

"भिक्षुओं, जब तक भिक्षुओं के बीच अवनति के ये सात सिद्धांत बने रहते हैं, और भिक्षु उनमें स्थापित दिखाई देते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, अवनति की नहीं।"

---

26 नॉन-डिक्लाइन (4) (बोज्झांगा संस. बोधयांग)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें अवनति के सात सिद्धांत सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और उपस्थित रहो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, अवनति से मुक्ति के सात सिद्धांत क्या हैं? (1) जब तक भिक्षु सती (ध्यान) के ज्ञान तत्व का विकास करते हैं, तब तक उनसे केवल वृद्धि की अपेक्षा की जा सकती है, अवनति की नहीं। (2) जब तक वे धम्म (विवेचन) के ज्ञान तत्व का विकास करते हैं... (3) ...वीर्य (प्रयास) के ज्ञान तत्व का विकास करते हैं... (4) ...पीति (आनंद) के ज्ञान तत्व का विकास करते हैं... (5) ...शांति (पश्चात्धि) के ज्ञान तत्व का विकास करते हैं... (6) ...समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के ज्ञान तत्व का विकास करते हैं... (7) ...उदासीनता (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) के ज्ञान तत्व का विकास करते हैं, तब तक उनसे केवल वृद्धि की अपेक्षा की जा सकती है, अवनति की नहीं।

"भिक्षुओं (मठवासियों), जब तक भिक्षुओं के बीच ये सात सिद्धांत बने रहते हैं और भिक्षु उनमें स्थापित दिखाई देते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, पतन की नहीं।" 7 [24]

---

27 गैर-गिरावट (5)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें अवनति के सात सिद्धांत सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और उपस्थित रहो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, अवनति के सात सिद्धांत क्या हैं? (1) जब तक भिक्षु अनित्यता की अनुभूति विकसित करते हैं, तब तक उनसे केवल वृद्धि की अपेक्षा की जा सकती है, अवनति की नहीं। (2) जब तक वे अनात्म की अनुभूति विकसित करते हैं... (3) ... अनाकर्षण की अनुभूति... (4) ... खतरे की अनुभूति... (5) ... त्याग की अनुभूति... (6) ... वैराग्य की अनुभूति... (7) ... निश्चिंतता की अनुभूति... 1480

"भिक्षुओं, जब तक भिक्षुओं के बीच अवनति के ये सात सिद्धांत बने रहते हैं, और भिक्षु उनमें स्थापित दिखाई देते हैं, तब तक उनसे केवल विकास की ही अपेक्षा की जा सकती है, अवनति की नहीं।"

---

28 प्रशिक्षु का पतन (परिहानी1)

भिक्षुओं, ये सात गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं। वे कौन से सात गुण हैं? काम में आनंद, बातचीत में आनंद, नींद में आनंद, संगति में आनंद, इंद्रियों पर नियंत्रण न रखना, भोजन में संयम का अभाव; और जब संघ से संबंधित ऐसे मामले होते हैं जिनका निपटारा संघ में किया जाना चाहिए, तो प्रशिक्षु भिक्षु इस प्रकार चिंतन नहीं करता: 1481 'संघ में दीर्घकालीन वरिष्ठ भिक्षु हैं, जो दीर्घकालीन संन्यासी जीवन व्यतीत कर चुके हैं, और जिम्मेदार हैं, जो उस कार्य की जिम्मेदारी लेंगे।' वह स्वयं उन कार्यों को अपने ऊपर ले लेता है। 1482 ये सात गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं।

भिक्षुओं, ये सात गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे सात गुण कौन से हैं? [25] काम में आनंद न लेना, बातचीत में आनंद न लेना, नींद में आनंद न लेना, संगति में आनंद न लेना, इंद्रियों को वश में रखना, भोजन में संयम बरतना; और जब संघ से संबंधित कोई मामला संघ में निपटाना हो, तो प्रशिक्षु भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'संघ में दीर्घकालीन वरिष्ठ भिक्षु हैं, जो दीर्घकालीन संन्यासी जीवन व्यतीत कर चुके हैं, वे जिम्मेदार हैं, वे उस कार्य की जिम्मेदारी लेंगे।' वह स्वयं उन कार्यों को नहीं करता। ये सात गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकते हैं।

---

29 गिरावट (परिहानी2)

भिक्षुओं, ये सात बातें गृहस्थ अनुयायी के पतन का कारण बनती हैं। वे सात बातें क्या हैं? (1) वह भिक्षुओं से मिलना बंद कर देता है; (2) वह अच्छे धम्म को सुनना छोड़ देता है; (3) वह उच्च सद्‌गुणों का अभ्यास नहीं करता; (4) वह भिक्षुओं के प्रति संशय रखता है, चाहे वे वरिष्ठ हों, नवदीक्षित हों या मध्यम स्तर के हों; (5) वह धम्म को आलोचनात्मक मन से सुनता है, उसमें दोष ढूंढने का प्रयास करता है; (6) वह परदेसियों में से किसी योग्य व्यक्ति को भेंट चढ़ाने की तलाश करता है; (7) वह पहले वहाँ पुण्य कर्म करता है। 1483 ये सात बातें गृहस्थ अनुयायी के पतन का कारण बनती हैं।

भिक्षुओं, ये सात बातें गृहस्थ अनुयायी के पतन को रोकती हैं। वे सात बातें क्या हैं? (1) वह भिक्षुओं से मिलना नहीं छोड़ता; (2) वह अच्छे धम्म को सुनना नहीं छोड़ता; (3) वह उच्च सद्‌गुणों का अभ्यास करता है; (4) वह भिक्षुओं पर पूर्ण विश्वास रखता है, चाहे वे वरिष्ठ हों, नवदीक्षित हों या मध्यम स्तर के हों; (5) वह धम्म को आलोचनात्मक मन से नहीं सुनता, उसमें दोष ढूंढने की कोशिश नहीं करता; (6) वह बाहरी लोगों में भेंट के योग्य व्यक्ति की तलाश नहीं करता; (7) वह पहले यहाँ [पुण्य] कर्म करता है। ये सात बातें गृहस्थ अनुयायी के पतन को रोकती हैं। 1484 [26]

जो गृहस्थ अनुयायी

आत्म-विकास प्राप्त भिक्षुओं का दर्शन करना छोड़ देता है,

जो श्रेष्ठ भिक्षुओं की शिक्षाओं को सुनना बंद कर देता है

और उच्च सद्‌गुणों का अभ्यास नहीं करता;

जिसका भिक्षुओं के प्रति संदेह

निरंतर बढ़ता रहता है; जो आलोचनात्मक मन से

धर्म का उपदेश सुनना चाहता है ; जो गृहस्थ अनुयायी परदेसियों में से किसी योग्य व्यक्ति को दान देने के लिए चुनता है और पहले उसके प्रति पुण्य कर्म करता है: ये सात सुस्थापित सिद्धांत पतन के कारणों का वर्णन करते हैं। जो गृहस्थ अनुयायी इन सिद्धांतों का अनुसरण करता है, वह धर्म से विमुख हो जाता है।

वह गृहस्थ अनुयायी जो आत्म-विकास प्राप्त भिक्षुओं के दर्शन निरंतर करता है ,

जो श्रेष्ठ भिक्षुओं की शिक्षाओं को सुनता है

और उच्चतर सद्‌गुणों का अभ्यास करता है;

जिसका भिक्षुओं पर विश्वास

निरंतर बढ़ता रहता है; जो आलोचनात्मक मन से

धर्म का पाठ नहीं सुनना चाहता ; वह गृहस्थ अनुयायी जो पराक्रम के योग्य किसी को नहीं चुनता, बल्कि सर्वप्रथम पुण्य कर्म करने का संकल्प लेता है: ये सात सुस्थापित सिद्धांत धर्म के पतन से मुक्ति का मार्ग बताते हैं। इन सिद्धांतों का पालन करने वाला गृहस्थ अनुयायी धर्म से विमुख नहीं होता।

---

30 पेरिल 1485 (विपत्ति)

भिक्षुओं, गृहस्थ अनुयायी के ये सात खतरे हैं। वे सात क्या हैं? ... [जैसा कि 7:29 में है] ... भिक्षुओं, गृहस्थ अनुयायी के ये सात धन हैं। वे सात क्या हैं? ... [जैसा कि 7:29 में है] ... ये गृहस्थ अनुयायी के सात धन हैं।

---

31. विनाश (परभाव)

"भिक्षुओं (मठवासियों), गृहस्थ अनुयायी के लिए ये सात विजय हैं। कौन सी सात? . . . [जैसा कि 7:29 में है] . . . भिक्षुओं, गृहस्थ अनुयायी के लिए ये सात विजय हैं। कौन सी सात? . . . [जैसा कि 7:29 में है] . . . गृहस्थ अनुयायी के लिए ये सात विजय हैं।" [27]

[ये आयतें 7:29 में दी गई आयतों के समान हैं]

IV. देवता (देवदूत)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

32 सतर्कता 1486 (अप्पमदागरव)

फिर, जब रात आगे बढ़ गई, तो एक अत्यंत सुंदर देवता (देवदूत), जिसने पूरे जेतवन को प्रकाशित कर दिया, [28] भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़ा हुआ और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, भिक्षु के पतन को रोकने वाले ये सात गुण हैं। वे कौन से सात गुण हैं? गुरु के प्रति श्रद्धा, धम्म के प्रति श्रद्धा, संघ के प्रति श्रद्धा, प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के प्रति श्रद्धा, जागरूकता के प्रति श्रद्धा और आतिथ्य सत्कार के प्रति श्रद्धा। ये सात गुण भिक्षु के पतन को रोकते हैं।"

यही उस देवता (देवदूत) ने कहा। गुरुजी सहमत हो गए। तब उस देवता (देवदूत) ने मन ही मन सोचा, "गुरुजी मुझसे सहमत हैं," और भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।

फिर, जब रात बीत गई, तो भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "पिछली रात, भिक्षुओं, जब रात आगे बढ़ रही थी, तो एक अत्यंत सुंदर देवता (देवदूत), जिसने पूरे जेतवन को प्रकाशित कर दिया, मेरे पास आया, मुझे प्रणाम किया, एक तरफ खड़ा हुआ और मुझसे कहा: 'भंते, ये सात गुण हैं जो भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे सात क्या हैं? गुरु के प्रति आदर... और आतिथ्य सत्कार के प्रति आदर। ये सात गुण भिक्षु के पतन को रोकते हैं।' यही उस देवता (देवदूत) ने कहा। फिर उस देवता (देवदूत) ने मुझे प्रणाम किया, मेरी ओर दाहिनी ओर रखते हुए मेरी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गया।"

गुरु के प्रति आदरपूर्ण,

धम्म के प्रति आदरपूर्ण,

संघ के प्रति गहरी श्रद्धा रखने वाला,

समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) के प्रति आदरपूर्ण,

प्रशिक्षण के प्रति उत्साही और गहरी श्रद्धा रखने वाला;

सतर्कता के प्रति आदरपूर्ण,

आतिथ्य सत्कार का सम्मान करने वाला:

यह भिक्षु भटक नहीं सकता,

बल्कि निर्वाण के निकट है।

---

33 नैतिक शर्म 1487 (हिरिगरवा)

"पिछली रात, भिक्षुओं, जब रात आगे बढ़ रही थी, एक अत्यंत सुंदर देवता (देवदूत), जो संपूर्ण जेतवन को प्रकाशित कर रहा था, [29] मेरे पास आया, मुझे प्रणाम किया, एक तरफ खड़ा हुआ और मुझसे कहा: 'भंते, ये सात गुण हैं जो भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे सात क्या हैं? गुरु के प्रति श्रद्धा, धम्म के प्रति श्रद्धा, संघ के प्रति श्रद्धा, प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के प्रति श्रद्धा,

नैतिक लज्जा के प्रति श्रद्धा और नैतिक भय के प्रति श्रद्धा। ये सात गुण भिक्षु के पतन को रोकते हैं।' यही उस देवता (देवदूत) ने कहा। फिर उस देवता (देवदूत) ने मुझे प्रणाम किया, मेरी ओर दाहिनी ओर रखते हुए मेरी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गया।"

गुरु के प्रति आदरपूर्ण,

धम्म के प्रति आदरपूर्ण,

संघ के प्रति गहरी श्रद्धा रखने वाला,

समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के प्रति आदरपूर्ण,

प्रशिक्षण के प्रति उत्साही और गहरी श्रद्धा रखने वाला;

नैतिक लज्जा और नैतिक भय से परिपूर्ण,

विनम्र और श्रद्धापूर्ण:

ऐसा व्यक्ति कभी भटक नहीं सकता

, बल्कि निर्वाण के निकट होता है।

---

34 सुधारना आसान (1) (Sovacassata1)

"पिछली रात, भिक्षुओं, जब रात ढल रही थी, तो एक अत्यंत सुंदर देवता (देवदूत) मेरे पास आए, मुझे प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हुए और मुझसे कहा: 'भंते, ये सात गुण हैं जो भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे सात गुण कौन से हैं? गुरु के प्रति श्रद्धा, धम्म के प्रति श्रद्धा, संघ के प्रति श्रद्धा, प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के प्रति श्रद्धा, आसानी से सुधारे जाने की क्षमता और अच्छी मित्रता। ये सात गुण भिक्षु के पतन को रोकते हैं।' यही उस देवता (देवदूत) ने कहा। फिर उस देवता (देवदूत) ने मुझे प्रणाम किया, मेरी ओर दाहिनी ओर रखते हुए मेरी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।"

गुरु के प्रति आदरपूर्ण,

धम्म के प्रति आदरपूर्ण,

संघ के प्रति गहरी श्रद्धा रखने वाला,

समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के प्रति आदरपूर्ण,

प्रशिक्षण के प्रति उत्साही और गहरी श्रद्धा रखने वाला;

अच्छे मित्र बनाने वाला,

सुधार के लिए तैयार रहने वाला,

विनम्र और आदरपूर्ण।

ऐसा व्यक्ति कभी भटकता नहीं

बल्कि निर्वाण के निकट होता है।

---

35 सुधारना आसान (2) 1488 (Sovacassata2)

"पिछली रात, भिक्षुओं, जब रात ढल रही थी, तो एक अत्यंत सुंदर देवता (देवदूत) मेरे पास आए, मुझे प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हुए और मुझसे कहा: 'भंते, ये सात गुण हैं जो भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे सात गुण कौन से हैं? गुरु के प्रति श्रद्धा, धम्म के प्रति श्रद्धा, संघ के प्रति श्रद्धा, प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के प्रति श्रद्धा, आसानी से सुधारे जाने की क्षमता और अच्छी मित्रता। ये सात गुण भिक्षु के पतन को रोकते हैं।' यही उस देवता (देवदूत) ने कहा। फिर उस देवता (देवदूत) ने मुझे प्रणाम किया, मेरी ओर दाहिनी ओर रखते हुए मेरी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।"

यह सुनकर पूज्य सारिपुत्त ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, भगवान (बुद्ध) ने संक्षेप में जो कहा है, उसका अर्थ मैं विस्तार से समझ गया हूँ। यहाँ, एक भिक्षु स्वयं गुरु का आदर करता है और गुरु के प्रति आदर की प्रशंसा करता है; वह अन्य भिक्षुओं को, जो गुरु का आदर नहीं करते, गुरु के प्रति आदर विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करता है और उचित समय पर, सच्चे और ईमानदारी से, उन भिक्षुओं की प्रशंसा करता है जो गुरु का आदर करते हैं। वह स्वयं धम्म का आदर करता है... संघ का आदर करता है... प्रशिक्षण का आदर करता है... समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का आदर करता है... आसानी से सुधर जाता है... उसके अच्छे मित्र होते हैं और वह अच्छी मित्रता की प्रशंसा करता है; वह अन्य भिक्षुओं को, जिनके अच्छे मित्र नहीं हैं, अच्छे मित्र खोजने के लिए प्रोत्साहित करता है और उचित समय पर, सच्चे और ईमानदारी से, उन भिक्षुओं की प्रशंसा करता है जिनके अच्छे मित्र हैं। इसी प्रकार, भंते, मैं भगवान (बुद्ध) ने संक्षेप में जो कहा है, उसके अर्थ को विस्तार से समझें।

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "अच्छा, अच्छा, सारिपुत्त! यह अच्छा है कि तुमने मेरे द्वारा संक्षेप में कही गई इस बात का अर्थ विस्तार से समझ लिया है।"

[बुद्ध यहाँ सारिपुत्त के पूरे कथन को दोहराते हैं, अंत में:] [31]

"सारिपुत्त, मैंने संक्षेप में जो कहा है, उसका अर्थ विस्तार से इसी तरह समझा जाना चाहिए।"

---

36 एक मित्र (1) 1489 (मित्त1 संस्कृत मित्र)

भिक्षुओं, ऐसे मित्र की संगति करनी चाहिए जिसमें सात गुण हों। वे कौन से सात गुण हैं? (1) वह कठिन कार्य भी देता है। (2) वह कठिन कार्य भी करता है। (3) वह कठिन सहनशीलता से सहता है। (4) वह अपने रहस्य आपसे प्रकट करता है। (5) वह आपके रहस्यों को सुरक्षित रखता है। (6) संकट में होने पर वह आपका साथ नहीं छोड़ता। (7) वह आपका अपमान नहीं करता। 1490 ऐसे मित्र की संगति करनी चाहिए जिसमें ये सात गुण हों।

एक सच्चा मित्र वह देता है जो देना कठिन होता है,

और वह वह करता है जो करना कठिन होता है।

वह आपके कठोर शब्दों को क्षमा करता है

और वह सहन करता है जो सहन करना कठिन होता है।

वह अपने रहस्य आपसे साझा करता है,

फिर भी आपके रहस्यों को सुरक्षित रखता है।

वह मुश्किलों में आपका साथ नहीं छोड़ता,

न ही आपके प्रति कठोर रवैया अपनाता है।

जिस व्यक्ति में

ये गुण पाए जाते हैं, वही मित्र है।

मित्र की इच्छा रखने वाले व्यक्ति

को ऐसे ही व्यक्ति की शरण लेनी चाहिए।

---

37 एक मित्र (2) (मित्त1 संस्कृत मित्र)

भिक्षुओं, सात गुणों वाले भिक्षु मित्र की संगति करनी चाहिए; चाहे वह आपको अस्वीकार भी कर दे, आपको उसकी शरण में जाना चाहिए और उसकी सेवा करनी चाहिए। वे सात गुण क्या हैं? (1) वह प्रसन्न और सौम्य है; (2) वह आदरणीय और (3) प्रतिष्ठित है; (4) वह एक अच्छा वक्ता है; (5) वह धैर्यपूर्वक बातें सुनता है; (6) वह गहन प्रवचन देता है; और (7) वह आपको गलत काम करने का आदेश नहीं देता।

वह प्रिय, आदरणीय और प्रतिष्ठित हैं,

एक वक्ता हैं और भाषण सुनने वाले भी हैं; वे गहन प्रवचन देते हैं और किसी को गलत काम करने की

सलाह नहीं देते ।

यहां जिस व्यक्ति में

ये गुण पाए जाते हैं, वह मित्रवत,

परोपकारी और करुणामय होता है।

भले ही वह व्यक्ति किसी को ठुकरा दे,

मित्र की चाह रखने वाले को

ऐसे व्यक्ति की शरण लेनी चाहिए।

---

38 विश्लेषणात्मक ज्ञान (1) (पतिसंभिदा1)

"भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु में सात गुण होते हैं, तो वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा चार विश्लेषणात्मक ज्ञानों को शीघ्र ही स्वयं जान सकता है और उन पर महारत हासिल कर सकता है। 1492 वे सात गुण कौन से हैं?"

"यहाँ, (1) एक भिक्षु यथार्थ को समझता है: 'यह मुझमें मानसिक सुस्ती है।' 1493 (2) या जब मन आंतरिक रूप से संकुचित होता है, तो वह यथार्थ को समझता है: 'मेरा मन आंतरिक रूप से संकुचित है।' (3) या जब उसका मन बाह्य रूप से विचलित होता है, तो वह यथार्थ को समझता है: 'मेरा मन बाह्य रूप से विचलित है।' 1494 (4) वह वेदनाओं (संवेदनाओं) को उनके उत्पन्न होने, उनके बने रहने और उनके लुप्त होने के समय जानता है; (5) वह संज्ञा/संज्ञाओं (बोधों/संज्ञाओं) को उनके उत्पन्न होने, उनके बने रहने और उनके लुप्त होने के समय जानता है; (6) वह विचारों को उनके उत्पन्न होने, उनके बने रहने और उनके लुप्त होने के समय जानता है। 1495 (7) तब, उपयुक्त और अनुपयुक्त, निम्न और उच्च, अंधकारमय और प्रकाशमय गुणों और उनके प्रतिरूपों के बीच, उसने लक्ष्य को भली-भांति समझा है, उस पर भली-भांति ध्यान दिया है, उस पर भली-भांति चिंतन किया है और उसमें भली-भांति पारंगत हो गया है। 1496 जब वह इन सात गुणों से युक्त होता है, तो एक भिक्षु प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) द्वारा शीघ्र ही चार विश्लेषणात्मक ज्ञानों को स्वयं अनुभव कर सकता है और उन पर महारत हासिल कर सकता है।

---

39 विश्लेषणात्मक ज्ञान (2) 1497 (पतिसंभिदा2)

भिक्षुओं, जब सारिपुत्त में सात गुण थे, तब उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा चारों विश्लेषणात्मक ज्ञानों को स्वयं अनुभव किया और उन पर महारत हासिल की। वे सात कौन से थे?

"यहाँ, (1) सारिपुत्त ने यथार्थ को समझा: 'यह मुझमें मानसिक सुस्ती है।' 1498 (2) या जब मन आंतरिक रूप से संकुचित था, तो उसने यथार्थ को समझा: 'मेरा मन आंतरिक रूप से संकुचित है।' (3) या जब उसका मन बाह्य रूप से विचलित था, तो उसने यथार्थ को समझा: 'मेरा मन बाह्य रूप से विचलित है।' (4) उनके लिए, संवेदनाएँ (वेदना) उत्पन्न होते ही, विद्यमान रहते ही और लुप्त होते ही ज्ञात थीं; (5) धारणाएँ (संज्ञा/संज्ञा) उत्पन्न होते ही, विद्यमान रहते ही और लुप्त होते ही ज्ञात थीं; (6) विचार उत्पन्न होते ही, विद्यमान रहते ही और लुप्त होते ही ज्ञात थे। (7) फिर, उपयुक्त और अनुपयुक्त, निम्न और उच्च, अंधकारमय और प्रकाशमय गुणों और उनके प्रतिरूपों के बीच, उन्होंने लक्ष्य को भली-भांति ग्रहण किया, उस पर भली-भांति ध्यान दिया, उस पर भली-भांति चिंतन किया और उसमें भली-भांति पारंगत हो गए। जब सारिपुत्त ने इन सात गुणों को प्राप्त कर लिया, तो उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से चार विश्लेषणात्मक ज्ञान स्वयं अनुभव किए और उन पर महारत हासिल कर ली।" [34]

---

40 महारत (1) (वासा1)

"भिक्षु (सात गुण संपन्न भिक्षु) अपने मन पर नियंत्रण रखते हैं और अपने मन के दास नहीं होते। वे सात गुण क्या हैं? यहाँ, (1) भिक्षु समाधि में निपुण होते हैं, (2) समाधि प्राप्त करने में निपुण होते हैं, (3) समाधि की अवधि में निपुण होते हैं, (4) समाधि से बाहर आने में निपुण होते हैं, (5) समाधि के लिए उपयुक्तता में निपुण होते हैं, (6) समाधि के क्षेत्र में निपुण होते हैं, और (7) समाधि के संबंध में संकल्प लेने में निपुण होते हैं। इन सात गुणों से युक्त भिक्षु अपने मन पर नियंत्रण रखते हैं और अपने मन के दास नहीं होते।"

---

41 महारत (2) 1500 (वासा2)

"सात गुणों से युक्त भिक्षुओं में, सारिपुत्त अपने मन पर पूर्ण नियंत्रण रखते हैं और अपने मन के दास नहीं हैं। वे सात गुण क्या हैं? यहाँ, (1) सारिपुत्त समाधि में निपुण हैं, (2) समाधि प्राप्त करने में निपुण हैं, (3) समाधि की अवधि में निपुण हैं, (4) समाधि से बाहर आने में

निपुण हैं, (5) समाधि के लिए उपयुक्तता में निपुण हैं, (6) समाधि के क्षेत्र में निपुण हैं, और (7) समाधि के संबंध में संकल्प लेने में निपुण हैं। इन सात गुणों से युक्त, सारिपुत्त अपने मन पर पूर्ण नियंत्रण रखते हैं और अपने मन के दास नहीं हैं।"

---

42 बड़े होने के आधार (1) (निद्दासा1)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब, सुबह के समय, पूज्य सारिपुत्त ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र लिया और भिक्षा मांगने के लिए सावत्थी में प्रवेश किया। तब उनके मन में यह विचार आया: [35] "सावत्थी में भिक्षा मांगने के लिए अभी बहुत जल्दी है। मुझे अन्य संप्रदायों के तपस्वियों के उद्यान में जाना चाहिए।"

फिर पूज्य सारिपुत्त अन्य संप्रदायों के भिक्षुओं के उद्यान में गए। उन्होंने उन तपस्वियों से अभिवादन किया और जब उनका अभिवादन और सौहार्दपूर्ण वार्तालाप समाप्त हो गया, तो वे एक तरफ बैठ गए। उस अवसर पर वे तपस्वी एकत्रित होकर एक साथ बैठे थे, तभी उनके बीच यह चर्चा हुई: "मित्रों, जो कोई भी बारह वर्षों तक पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत करता है, वह निष्कलंक भिक्षु कहलाने के योग्य है।"

तब पूज्य सारिपुत्त ने उन तपस्वियों के कथन से न तो प्रसन्नता व्यक्त की और न ही उसे अस्वीकार किया, बल्कि वे अपने आसन से उठकर चले गए, [यह सोचते हुए]: "मैं पता लगाऊंगा कि भगवान (बुद्ध) इस कथन के बारे में क्या कहते हैं।"

फिर, जब पूज्य सारिपुत्त सावत्थी में भिक्षा मांगने गए, तो भोजन करने के बाद, भिक्षा मांगने के बाद लौटकर वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। [यहाँ वे घटनाओं का पूरा क्रम शब्दशः बताते हैं और पूछते हैं:] [36] "हे भंते, क्या इस धर्म और अनुशासन में केवल वर्षों की गणना से किसी भिक्षु को दोषरहित कहना संभव है?"

"इस धम्म (मार्ग) और अनुशासन में, सारिपुत्त, केवल वर्षों की गणना से किसी भिक्षु को दोषरहित कहना संभव नहीं है। सारिपुत्त, दोषरहित होने के ये सात आधार हैं जिन्हें मैंने स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव से जानने के बाद घोषित किया है। 1501 वे सात क्या हैं? यहाँ, (1) एक भिक्षु को प्रशिक्षण लेने की तीव्र इच्छा होती है और भविष्य में प्रशिक्षण लेने के प्रति उसका लगाव कम नहीं होता। (2) उसे धम्म पर ध्यान देने की प्रबल इच्छा होती है और भविष्य में धम्म पर ध्यान देने के प्रति उसका लगाव कम नहीं होता। (3) उसे व्यर्थ इच्छाओं को दूर करने की प्रबल इच्छा होती है और भविष्य में व्यर्थ इच्छाओं को दूर करने के प्रति उसका लगाव कम नहीं होता। (4) उसे एकांतवास की प्रबल इच्छा होती है और भविष्य में एकांतवास के प्रति उसका लगाव कम नहीं होता। (5) उसे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाने की प्रबल इच्छा होती है और ऊर्जा जगाने के प्रति उसका लगाव कम नहीं होता।" भविष्य में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की कमी नहीं होगी। (6) उसे सती और सजग रहने की प्रबल इच्छा है और भविष्य में भी वह सती और सजग रहने की इस इच्छा को नहीं खोएगा। (7) उसे दृष्टि द्वारा भेदने की प्रबल इच्छा है और भविष्य में भी वह दृष्टि द्वारा भेदने की इस इच्छा को नहीं खोएगा। ये सात आधार हैं जो मैंने स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव (अभिन) से निर्मल होने के लिए घोषित किए हैं।

"सारिपुत्त, यदि किसी भिक्षु में 'निष्कलंक' होने के ये सात आधार हों, तो यदि वह बारह वर्षों तक पूर्ण और शुद्ध आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करे, तो वह 'निष्कलंक' कहलाने के योग्य है। यदि वह चौबीस वर्षों तक पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत करे, तो वह [37] 'निष्कलंक' कहलाने के योग्य है। यदि वह छत्तीस वर्षों तक पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत करे, तो वह 'निष्कलंक' कहलाने के योग्य है। यदि वह अड़तालीस वर्षों तक पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत करे, तो वह 'निष्कलंक' कहलाने के योग्य है।"

---

43 "दोषरहित" होने के आधार (2) (निद्दासा2)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) घोसीता उद्यान में कोसंबी में निवास कर रहे थे। तब, सुबह के समय, पूज्य आनंद ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र ग्रहण किया और भिक्षा मांगने के लिए कोसंबी में प्रवेश किया। तब उनके मन में यह विचार आया: "कोसंबी में भिक्षा मांगने के लिए अभी बहुत जल्दी है। मुझे अन्य संप्रदायों के तपस्वियों के उद्यान में जाना चाहिए।"

तब पूज्य आनंद अन्य संप्रदायों के तपस्वियों के उद्यान में गए: . . . [जैसा कि 7:42 में है, सारिपुत्त के स्थान पर आनंद और सावत्थी के स्थान पर कोसंबी रखकर] [38] . . . "क्या यह संभव है, भंते, इस धम्म और अनुशासन में केवल वर्षों की गिनती से किसी भिक्षु को 'कलंक रहित' बताया जा सकता है?" .

"इस धम्म और अनुशासन में, आनंद, केवल वर्षों की गणना से किसी भिक्षु को 'दोषरहित' कहना संभव नहीं है। आनंद, 'दोषरहित' होने के ये सात आधार हैं, जिन्हें मैंने स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव से जानने के बाद घोषित किया है। वे सात क्या हैं? यहाँ, एक भिक्षु में (1) आस्था, (2) नैतिक लज्जा, (3) नैतिक भय; (4) वह विद्वान, (5) ऊर्जावान, (6) सती (ध्यानशील) और (7) बुद्धिमान होता है। ये 'दोषरहित' होने के सात आधार हैं जिन्हें मैंने स्वयं प्रत्यक्ष अनुभव से जानने के बाद घोषित किया है। [39]

आनंद, यदि किसी भिक्षु में 'निष्कलंक' होने के ये सात आधार मौजूद हों, तो यदि वह बारह वर्षों तक पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करे, तो वह 'निष्कलंक' कहलाने के योग्य है। यदि वह चौबीस वर्षों तक पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करे, तो वह 'निष्कलंक' कहलाने के योग्य है। यदि वह छत्तीस वर्षों तक पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करे, तो वह 'निष्कलंक' कहलाने के योग्य है। यदि वह अड़तालीस वर्षों तक पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करे, तो वह 'निष्कलंक' कहलाने के योग्य है।

V. महायन्न बलिदान खंड (महायन्न वग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

44 सात स्टेशन (सत्तविन्नानत्थिति सं. सप्त-विज्ञान-स्थिति)

"भिक्षुओं (मठवासियों), चेतना की ये सात अवस्थाएँ हैं। 1502 कौन सी सात?

(1) "भिक्षुओं, ऐसे प्राणी हैं जो शरीर और चेतना (सन्ना/संग्या) में भिन्न हैं, जैसे मनुष्य, कुछ देव (देवदूत/भगवान), और कुछ निम्न लोक में। यह चेतना का पहला पड़ाव है। 1503 [40]

(2) "ऐसे प्राणी हैं जो शरीर में भिन्न होते हैं लेकिन चेतना (सन्ना/संज्ञा) में एक समान होते हैं, जैसे ब्रह्मा की मंडली के देव (देवदूत/भगवान) जो प्रथम [ध्यान] के माध्यम से पुनर्जन्म लेते हैं। यह चेतना का दूसरा पड़ाव है। 1504

(3) "ऐसे प्राणी हैं जो शरीर से एकसमान हैं लेकिन चेतना (सन्ना/संज्ञा) में भिन्न हैं, जैसे कि धाराप्रवाह प्रकाश वाले देव (देवदूत/भगवान)। यह चेतना का तीसरा स्तर है। 1505

(4) "ऐसे प्राणी हैं जो शरीर और चेतना (सन्ना/संज्ञा) में एकसमान हैं, जैसे तेजस्वी देव (देवदूत/भगवान)। यह चेतना का चौथा स्तर है।" 1506

(5) "ऐसे प्राणी हैं जो रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के लुप्त होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का अनुभव करते हुए, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) से संबंधित होते हैं। यह चेतना का पाँचवाँ स्थान है।"

(6) "ऐसे प्राणी हैं जो अंतरिक्ष की अनंतता के आधार को पूर्णतः पार करके, 'चेतना अनंत है' को अनुभव करते हुए, चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) से संबंधित हैं। यह चेतना का छठा स्टेशन है।"

(7) "ऐसे प्राणी हैं जो चेतना की अनंतता के आधार को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए शून्यता के क्षेत्र (आयतन) से संबंधित होते हैं। यह चेतना की सातवीं अवस्था है।"

"भिक्षुओं, ये चेतना की सात अवस्थाएँ हैं।" 1507

---

45 समाधि सहायक उपकरण (समाधिपरिक्खरा)

"भिक्षुओं, समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) के ये सात सहायक तत्व हैं। ये सात कौन से हैं? सही दृष्टि, सही आशय, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास और सही ध्यान (सती/सजगता)। इन सात कारकों से युक्त एकाग्रचित्त (एकगचित्त, संस्कृत: एकगचित्त) को श्रेष्ठ सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) कहा जाता है, 'इसके आधारों सहित' और 'इसके सहायक तत्वों सहित'।" 1508 [41]

---

46 अग्नि (अग्गी संस्कृत अग्नि)

"भिक्षुओं, ये सात अग्नियां हैं। कौन सी सात? काम की अग्नि (राग), घृणा की अग्नि, मोह की अग्नि (मोह), दान के योग्य लोगों की अग्नि, गृहस्थ की अग्नि, भेंट के योग्य लोगों की अग्नि और लकड़ी की अग्नि। ये सात अग्नियां हैं।" 1509

---

47 अग्नि यज्ञ (अग्गी2 संस्कृत अग्नि)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस अवसर पर ब्राह्मण उग्गतशरीर ने एक महान यज्ञ की व्यवस्था की थी। यज्ञ के लिए पाँच सौ बैल लाए गए थे। पाँच सौ बछड़े... पाँच सौ बछियाएँ... पाँच सौ बकरियाँ... पाँच सौ मेढ़े भी लाए गए थे।

तब ब्राह्मण उग्तसरिर भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से बोले:

"हे गौतम जी, मैंने सुना है कि यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करना और यज्ञ स्तंभ स्थापित करना अत्यंत फलदायी और लाभदायक होता है।"

"मैंने भी, ब्राह्मण, यह सुना है।"

दूसरी बार... तीसरी बार ब्राह्मण उग्गतसरिर ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "हे गुरु गौतम, मैंने सुना है कि यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करना और यज्ञ स्तंभ स्थापित करना अत्यंत फलदायी और लाभकारी है।"

"मैंने भी, ब्राह्मण, यह सुना है।"

"तब [42] मास्टर गौतम और मैं पूरी तरह से सहमत हैं।"

यह सुनकर पूज्य आनंद ने ब्राह्मण उग्गतशरीर से कहा, "ब्राह्मण, तथागतों (बुद्धों) से इस प्रकार नहीं पूछना चाहिए: 'हे गौतम जी, मैंने सुना है कि यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करना और यज्ञ स्तंभ स्थापित करना अत्यंत फलदायी और लाभकारी है।' तथागतों (बुद्धों) से इस प्रकार पूछना चाहिए: 'भंते, मैं यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करना और यज्ञ स्तंभ स्थापित करना चाहता/चाहती हूँ। हे भगवान (बुद्ध) मुझे उपदेश दें और मुझे ऐसा मार्ग दिखाएँ जिससे मेरा कल्याण और सुख दीर्घकालिक रूप से प्राप्त हो।"

तब ब्राह्मण उग्गतशरीर ने भगवान (बुद्ध) से कहा, "हे गौतम गुरु, मैं यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करना और यज्ञ स्तंभ स्थापित करना चाहता/चाहती हूँ। हे गौतम गुरु, कृपया मुझे उपदेश दें और ऐसा मार्गदर्शन करें जिससे मेरा कल्याण और सुख दीर्घकालिक रूप से प्राप्त हो।"

"हे ब्राह्मण, यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करने और यज्ञ स्तंभ स्थापित करने वाला, यज्ञ से पहले ही तीन ऐसे कुदाल उठाता है जो हानिकारक (अकुशल) हैं और जिनका परिणाम और प्रभाव दुखदायी होता है। वे तीन कौन से हैं? शारीरिक कुदाल, वाणी की कुदाल और मानसिक कुदाल।"

"हे ब्राह्मण, जो यज्ञ से पहले ही यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करता है और यज्ञ स्तंभ खड़ा करता है, उसके मन में यह विचार आता है: 'इतने सांडों का यज्ञ में वध किया जाए! इतने बछड़ों... इतनी बछियों... इतनी बकरियों... इतने मेढ़ों का यज्ञ में वध किया जाए!' यद्यपि वह सोचता है, 'पुण्य कर्म करूं', फिर भी वह अपकृत्य कर्म करता है। यद्यपि वह सोचता है, 'कुशल कर्म करूं', फिर भी वह अपकृत्य कर्म करता है। यद्यपि वह सोचता है, 'अच्छे मार्ग की खोज करूं', फिर भी वह अपकृत्य मार्ग की खोज करता है। यज्ञ से पहले ही यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करने वाला और यज्ञ स्तंभ खड़ा करने वाला व्यक्ति इस प्रथम छुरी, यानी मानसिक छुरी को उठाता है, जो अपकृत्यपूर्ण है और जिसका परिणाम दुख है।"

हे ब्राह्मण, यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करने और यज्ञ स्तंभ स्थापित करने वाला व्यक्ति यज्ञ से पहले ही इस प्रकार की वाणी बोलता है: 'इतने सांडों का यज्ञ में वध हो! इतने बछड़ों... इतनी बछियों... इतनी बकरियों... इतने मेढ़ों का यज्ञ में वध हो!' यद्यपि वह सोचता है, 'पुण्य कर्म करूं', परन्तु अपरा कर्म करता है। यद्यपि वह सोचता है, 'कुशल कर्म करूं', परन्तु अपरा कर्म करता है। यद्यपि वह सोचता है, 'अच्छे मार्ग की खोज करूं', परन्तु बुरे मार्ग की खोज करता है। यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करने और यज्ञ स्तंभ स्थापित करने वाला व्यक्ति यज्ञ से पहले ही इस दूसरे छुरे, वाणी के छुरे को उठाता है, जो अपरादायी है और जिसका परिणाम दुख ही है।

हे ब्राह्मण, यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करने और यज्ञ स्तंभ स्थापित करने वाला व्यक्ति यज्ञ से पहले ही सबसे पहले यज्ञ में बैलों का वध करने की तैयारी करता है। वह सबसे पहले यज्ञ में बछड़ों का वध करने की तैयारी करता है... यज्ञ में बछियों का वध करने की तैयारी करता है... यज्ञ में बकरियों का वध करने की तैयारी करता है... यज्ञ में मेढ़ों का वध करने की तैयारी करता है। यद्यपि वह सोचता है, 'मुझे पुण्य कर्म करना चाहिए', फिर भी वह पाप कर्म करता है। यद्यपि वह सोचता है, 'मुझे कुछ लाभकारी (कुशल) कर्म करना चाहिए', फिर भी वह अपभ्रष्ट (अकुशल) कर्म करता है। यद्यपि वह सोचता है, 'मुझे अच्छे मार्ग की खोज करनी चाहिए', फिर भी वह अपभ्रष्ट (बुरे मार्ग की खोज) करता है। यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करने और यज्ञ स्तंभ स्थापित करने वाला व्यक्ति यज्ञ से पहले ही इस तीसरे, शारीरिक, अपभ्रष्ट (अपभ्रष्ट) छुरे को उठाता है, जिसका परिणाम दुखदायी होता है।

"हे ब्राह्मण, जो यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित करता है और यज्ञ स्तंभ खड़ा करता है, यज्ञ से पहले ही वह इन तीन कुण्डों को उठाता है जो हानिकारक (अकुशल) हैं और जिनका परिणाम और प्रभाव दुखदायी होता है।"

(1)— (3) "हे ब्राह्मण, ये तीन अग्नियाँ हैं जिनका त्याग करना चाहिए, इनसे बचना चाहिए और इनका पोषण नहीं करना चाहिए। वे तीन कौन सी हैं? [44] काम की अग्नि (राग), घृणा की अग्नि और मोह की अग्नि (मोह)।

(1) "और काम (राग) की अग्नि का त्याग और उससे परहेज क्यों किया जाना चाहिए, उसका संवर्धन क्यों नहीं किया जाना चाहिए? काम (राग) से उत्तेजित, काम (राग) में डूबा हुआ, मन से उसमें लीन होकर, शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त होता है। फलस्वरूप, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। इसलिए काम (राग) की इस अग्नि का त्याग और उससे परहेज करना चाहिए, उसका संवर्धन नहीं करना चाहिए।"

(2) — (3) "और घृणा की अग्नि... मोह की अग्नि को क्यों त्याग देना चाहिए, उससे बचना चाहिए और उसे क्यों नहीं बढ़ाना चाहिए? जो व्यक्ति मोह से ग्रस्त है, जिसका मन मोह में डूबा हुआ है, वह शरीर, वाणी और मन से दुराचार करता है। फलस्वरूप, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निचले लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। इसलिए मोह की इस अग्नि को त्याग देना चाहिए, उससे बचना चाहिए और उसे नहीं बढ़ाना चाहिए।"

"ये तीन प्रकार की आग हैं जिन्हें त्याग देना चाहिए, इनसे बचना चाहिए और इन्हें बढ़ावा नहीं देना चाहिए।"

(4)— (6) "हे ब्राह्मण, ये तीन अग्नियाँ हैं जिनका आदर, सम्मान, आदर और पूजा करके उचित और सुखी ढंग से सँभाल करना चाहिए। वे तीन कौन सी हैं? [45] दान के योग्य लोगों की अग्नि, गृहस्थ की अग्नि और भेंट के योग्य लोगों की अग्नि।

(4) "और वरदानों के योग्य लोगों की अग्नि क्या है? माता-पिता को वरदानों के योग्य लोगों की अग्नि कहा जाता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उन्हीं से व्यक्ति का जन्म हुआ है और वह अस्तित्व में आया है। 3511 अतः, वरदानों के योग्य लोगों की इस अग्नि का उचित और सुखद रूप से पालन-पोषण करना चाहिए, इसका आदर, सम्मान और श्रद्धा करते हुए।"

(5) "गृहस्थ की अग्नि क्या है? उसके बच्चे, पत्नी, दास, सेवक और कामगार गृहस्थ की अग्नि कहलाते हैं। अतः इस गृहस्थ की अग्नि का आदर, सम्मान और आदर करते हुए उचित और सुखमय ढंग से पालन-पोषण करना चाहिए।"

(6) “और अर्पण योग्य लोगों की अग्नि क्या है? वे तपस्वी और ब्राह्मण जो नशा और आलस्य से दूर रहते हैं, जो धैर्य और सौम्यता में स्थिर रहते हैं, जो स्वयं को वश में रखते हैं, शांत करते हैं और निर्वाण के लिए स्वयं को प्रशिक्षित करते हैं, उन्हें अर्पण योग्य लोगों की अग्नि कहा जाता है। अतः, अर्पण योग्य लोगों की इस अग्नि का उचित और सुखद ढंग से पालन-पोषण करना चाहिए, आदर, सम्मान और श्रद्धा करते हुए।”

"हे ब्राह्मण, ये तीन अग्नियां हैं जिनका उचित और सुखमय तरीके से पालन-पोषण करना चाहिए, इनका आदर, सम्मान और पूजा करनी चाहिए।"

(7) "परन्तु, हे ब्राह्मण, इस लकड़ी की आग को कभी-कभी जलाना चाहिए, कभी-कभी इसे उदासीनता से देखना चाहिए (भीतर ध्यान लगाकर/उपेक्खा), कभी-कभी बुझा देना चाहिए और कभी-कभी अलग रख देना चाहिए।"

यह सुनकर ब्राह्मण उग्गतसार ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "उत्कृष्ट, गुरु गौतम! उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... [जैसा कि 6:38 में है] ... गुरु गौतम मुझे गृहस्थ अनुयायी समझें जो आज से [46] जीवन भर के लिए शरण में गया है। गुरु गौतम, मैं पाँच सौ बैलों को मुक्त करता हूँ और उन्हें जीने देता हूँ। मैं पाँच सौ बछड़ों को मुक्त करता हूँ और उन्हें जीने देता हूँ। मैं पाँच सौ बछियों को मुक्त करता हूँ और उन्हें जीने देता हूँ। मैं पाँच सौ बकरियों को मुक्त करता हूँ और उन्हें जीने देता हूँ। मैं पाँच सौ मेढ़ों को मुक्त करता हूँ और उन्हें जीने देता हूँ। उन्हें हरी घास चरने दें, ठंडा पानी पीने दें और ठंडी हवा का आनंद लेने दें।"

---

48 संज्ञान/धारणाएं (1) (सन्ना1 सं. संज्ञा)

भिक्षुओं, ये सात अनुभूतियाँ (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो अत्यंत फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अमत/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं। वे सात अनुभूतियाँ कौन सी हैं? अनाकर्षकता की अनुभूति, मृत्यु की अनुभूति, भोजन की अरुचि की अनुभूति, समस्त संसार में आनंदहीनता की अनुभूति, अनित्यता की अनुभूति, अनित्य में दुख की अनुभूति और दुख में अनात्म की अनुभूति। ये सात अनुभूतियाँ (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो अत्यंत फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अमत/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं। लक्ष्य।"

---

49 धारणाएँ (2) (सन्न2 सं. संज्ञा)

भिक्षुओं, ये सात धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो महान फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अमत/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं। वे सात कौन सी हैं? अनाकर्षकता की धारणा, मृत्यु की धारणा, भोजन की अरुचि की धारणा, संपूर्ण संसार में आनंदहीनता की धारणा, अनित्यता की धारणा, अनित्य में दुख की धारणा और दुख में अनात्म की धारणा। ये सात धारणाएँ, जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो महान फलदायी होती हैं और अमरता (अमत/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं।

(1) "कहा गया: 'भिक्षुओं, अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फलदायी और लाभदायक होती है, जो अमरता (अमता/अमृत) की प्राप्ति की ओर ले जाती है, जिसका लक्ष्य अमरता (अमता/अमृत) है।' ऐसा क्यों कहा गया?

जब कोई भिक्षु अक्सर अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से रहता है, तो उसका मन यौन संबंध से विरक्ति करता है, [47] उससे पीछे हट जाता है, उससे दूर लुढ़क जाता है और उसकी ओर आकर्षित नहीं होता, और या तो उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) या घृणा उसमें बस जाती है। जैसे मुर्गे का पंख या नस की पट्टी, आग में फेंके जाने पर, उससे विरक्ति करती है, उससे पीछे हट जाती है, उससे दूर लुढ़क जाती है और उसकी ओर आकर्षित नहीं होती, वैसे ही यौन संबंध के संबंध में भी होता है जब कोई भिक्षु अक्सर अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से रहता है।

यदि कोई भिक्षु अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से बार-बार निवास करता है और उसका मन यौन संबंध की ओर आकर्षित होता है, या यदि वह इससे विमुख नहीं होता है, 1512 तो उसे समझना चाहिए: 'मैंने अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) विकसित नहीं की है; मेरी पूर्व स्थिति और वर्तमान स्थिति में कोई अंतर नहीं है; 1513 मैंने विकास का फल प्राप्त नहीं किया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है। परन्तु यदि वह अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से बार-बार निवास करता है और उसका मन यौन संबंध से विमुख हो जाता है... और उसमें या तो उदासीनता (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) या घृणा उत्पन्न हो जाती है, तो उसे समझना चाहिए: 'मैंने अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) विकसित कर ली है; मेरी पूर्व स्थिति और वर्तमान स्थिति में अंतर है; मैंने विकास का फल प्राप्त कर लिया है।' इसलिए वह इसे पूरी तरह से समझता है।

"जब यह कहा गया था: 'भिक्षुओं, अनाकर्षकता की धारणा (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फल और लाभ प्रदान करती है, जो अमरता (अमता/अमृत) में परिणत होती है, जिसका लक्ष्य अमरता (अमता/अमृत) है', तो इसी कारण से यह कहा गया था।"

(2) "कहा गया: 'भिक्षुओं, मृत्यु की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान [48] फल और लाभ प्रदान करती है, जो अमरता (अमता/अमृत) में परिणत होती है, और अमरता (अमता/अमृत) ही उसकी पराकाष्ठा होती है।' ऐसा क्यों कहा गया?

जब कोई भिक्षु अक्सर मृत्यु की अनुभूति (सन्ना/संग्य) से युक्त मन से रहता है, तो उसका मन जीवन के प्रति आसक्ति से विरक्ति करता है, उससे दूर हट जाता है, उससे लुढ़क जाता है और उसकी ओर आकर्षित नहीं होता, और उसमें या तो उदासीनता (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) या घृणा उत्पन्न हो जाती है। जैसे मुर्गे का पंख या नस का टुकड़ा आग में फेंके जाने पर उससे विरक्ति करता है, उससे दूर हट जाता है, उससे लुढ़क जाता है और उसकी ओर आकर्षित नहीं होता, ठीक वैसे ही जीवन के प्रति आसक्ति के संबंध में होता है जब कोई भिक्षु अक्सर मृत्यु की अनुभूति (सन्ना/संग्य) से युक्त मन से रहता है।

यदि कोई भिक्षु मृत्यु के प्रति सजग मन से बार-बार ध्यान लगाता है और उसका मन जीवन के प्रति आसक्ति की ओर झुकता है, या यदि वह उससे विमुख नहीं होता है, तो उसे यह समझना चाहिए: 'मैंने मृत्यु के प्रति सजग मन विकसित नहीं किया है; मेरी पूर्व और वर्तमान स्थिति में कोई भेद नहीं है; मैंने विकास का फल प्राप्त नहीं किया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है। परन्तु यदि वह मृत्यु के प्रति सजग मन से बार-बार ध्यान लगाता है और उसका मन जीवन के प्रति आसक्ति से विमुख हो जाता है... और उसमें उदासीनता (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) या घृणा उत्पन्न हो जाती है, तो उसे यह समझना चाहिए: 'मैंने मृत्यु के प्रति सजग मन विकसित कर लिया है; मेरी पूर्व और वर्तमान स्थिति में भेद है; मैंने विकास का फल प्राप्त कर लिया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है।

"जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, मृत्यु की धारणा (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान [49] फल और लाभ की होती है, जो अमरता (अमता/अमृत) में परिणत होती है, अमरता (अमता/अमृत) को अपनी परिणति के रूप में धारण करती है,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।

(3) "कहा गया: 'भिक्षुओं, भोजन की अरुचि की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फलदायी और लाभकारी होती है, जो अमरता (अम्रता/अमृत) की प्राप्ति में परिणत होती है, जिसका लक्ष्य अमरता (अम्रता/अमृत) है।' ऐसा किस कारण से कहा गया?

जब कोई भिक्षु भोजन की अरुचिकरता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से बार-बार ध्यान लगाता है, तो उसका मन स्वाद की लालसा (तन्हा/तृष्णा) से विरकित हो जाता है, उससे दूर हट जाता है, उससे लुढ़क जाता है और उसकी ओर आकर्षित नहीं होता, और उसमें या तो उदासीनता (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) या घृणा उत्पन्न हो जाती है। जैसे मुर्गे का पंख या नस का टुकड़ा आग में फेंके जाने पर उससे विरकित हो जाता है, उससे दूर हट जाता है, उससे लुढ़क जाता है और उसकी ओर आकर्षित नहीं होता, ठीक वैसे ही स्वाद की लालसा (तन्हा/तृष्णा) के संबंध में होता है जब कोई भिक्षु भोजन की अरुचिकरता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से बार-बार ध्यान लगाता है।

"यदि कोई भिक्षु भोजन की अरुचि की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से बार-बार ध्यान लगाता है, और उसका मन स्वादों की लालसा (तन्हा/तृष्णा) की ओर झुकता है, या यदि वह उनसे विमुख नहीं होता है, तो उसे समझना चाहिए: 'मैंने भोजन की अरुचि की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) विकसित नहीं की है; मेरी पूर्व स्थिति और वर्तमान स्थिति में कोई अंतर नहीं है; मैंने विकास का फल प्राप्त नहीं किया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है। परन्तु यदि वह भोजन की अरुचि की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) से अभ्यस्त मन से बार-बार लीन रहता है, तो उसका मन स्वाद की लालसा (तन्हा/तृष्णा) से विमुख हो जाता है... और उसमें या तो उदासीनता (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) या घृणा उत्पन्न हो जाती है, तो उसे समझना चाहिए: 'मैंने भोजन की अरुचि की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) विकसित कर ली है; मेरी पूर्व स्थिति और वर्तमान स्थिति में अंतर है; मैंने विकास का फल प्राप्त कर लिया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है। [50]

"जब यह कहा गया था: 'भिक्षुओं, भोजन की अरुचि की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फल और लाभ प्रदान करती है, जो अमरता (अमता/अमृत) में परिणत होती है, जिसका लक्ष्य अमरता (अमता/अमृत) है,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।"

(4) "कहा गया: 'हे भिक्षुओं, समस्त संसार में अनासक्ति की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फलदायी और लाभकारी होती है, जो अमरता (अम्रता/अमृत) में परिणत होती है, जिसका लक्ष्य अमरता ही है।' ऐसा क्यों कहा गया?

जब कोई भिक्षु समस्त संसार में अनासक्ति की अनुभूति (सन्ना/संग्य) के अभ्यस्त मन से निरंतर चिंतन करता है, तो उसका मन संसार की सुंदर वस्तुओं से विरक्ति करता है, उनसे मुंह मोड़ लेता है, उनसे दूर लुढ़क जाता है और उनकी ओर आकर्षित नहीं होता, और उसमें या तो उदासीनता (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) या घृणा उत्पन्न हो जाती है। जैसे मुर्गे का पंख या नस का टुकड़ा आग में फेंके जाने पर उससे विरक्ति करता है, उससे मुंह मोड़ लेता है, उससे दूर लुढ़क जाता है और उसकी ओर आकर्षित नहीं होता, ठीक वैसे ही संसार की सुंदर वस्तुओं के संबंध में होता है जब कोई भिक्षु समस्त संसार में अनासक्ति की अनुभूति (सन्ना/संग्य) के अभ्यस्त मन से निरंतर चिंतन करता है।

यदि कोई भिक्षु (सन्यासी) अक्सर संसार में अनासक्ति की अनुभूति (सन्ना/संग्य) के अभ्यस्त मन से रहता है और उसका मन संसार की सुंदर वस्तुओं की ओर आकर्षित होता है, या यदि वह उनसे विमुख नहीं होता है, तो उसे यह समझना चाहिए: 'मैंने संसार में अनासक्ति की अनुभूति (सन्ना/संग्य) विकसित नहीं की है; मेरी पूर्व स्थिति और वर्तमान स्थिति में कोई अंतर नहीं है; मैंने विकास का फल प्राप्त नहीं किया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है। परन्तु यदि, [51] जब वह समस्त संसार में अनासक्ति की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) से अभ्यस्त मन से अक्सर रहता है, तो उसका मन संसार की सुंदर वस्तुओं से विमुख हो जाता है... और उसमें या तो उदासीनता (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) या घृणा उत्पन्न हो जाती है, तो उसे समझना चाहिए: 'मैंने समस्त संसार में अनासक्ति की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) विकसित कर ली है; मेरी पूर्व स्थिति और वर्तमान स्थिति में अंतर है; मैंने विकास का फल प्राप्त कर लिया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है।

"जब यह कहा गया था: 'भिक्षुओं, समस्त संसार में अनासक्ति की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फल और लाभ प्रदान करती है, जो अमरता (अमता/अमृत) में परिणत होती है, जिसका लक्ष्य अमरता (अमता/अमृत) है,' तो इसी

कारण से यह कहा गया था।"

(5) "कहा गया: 'भिक्षुओं, अनित्यता की अनुभूति (सन्न/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फलदायी और लाभकारी होती है, जो अमरता (अम्रता/अमृत) में परिणत होती है, और अमरता ही उसका अंतिम लक्ष्य है।' ऐसा क्यों कहा गया?

जब कोई भिक्षु अनित्यता की धारणा (सन्ना/संज्ञा) में अभ्यस्त मन से निरंतर निवास करता है, तो उसका मन लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा से विमुख हो जाता है, उनसे मुंह मोड़ लेता है, उनसे दूर लुढ़क जाता है और उनकी ओर आकर्षित नहीं होता, और उसमें या तो उदासीनता (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) या घृणा घर कर जाती है। जैसे मुर्गे का पंख या नस का टुकड़ा आग में फेंके जाने पर उससे विमुख हो जाता है, उससे मुंह मोड़ लेता है, उससे दूर लुढ़क जाता है और उसकी ओर आकर्षित नहीं होता, ठीक वैसे ही लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा के संबंध में होता है जब कोई भिक्षु अनित्यता की धारणा (सन्ना/संज्ञा) में निरंतर निवास करता है।

यदि कोई भिक्षु अनित्यता की धारणा (सन्न/संग्य) के अभ्यस्त मन से अक्सर ध्यान लगाता है, और उसका मन लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा की ओर प्रवृत्त होता है, या यदि वह उनसे विमुख नहीं होता है, तो उसे यह समझना चाहिए: 'मैंने अनित्यता की धारणा (सन्न/संग्य) विकसित नहीं की है; मेरी पूर्व स्थिति और वर्तमान स्थिति में कोई अंतर नहीं है; मैंने विकास का फल प्राप्त नहीं किया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है। परन्तु यदि वह अनित्यता की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) से अभ्यस्त मन से बार-बार लीन रहता है, तो उसका मन लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा से विमुख हो जाता है [52] . . . और उसमें या तो उदासीनता (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) या घृणा उत्पन्न हो जाती है, तो उसे समझना चाहिए: 'मैंने अनित्यता की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) विकसित कर ली है; मेरी पूर्व स्थिति और वर्तमान स्थिति में अंतर है; मैंने विकास का फल प्राप्त कर लिया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है।

"जब यह कहा गया था: 'भिक्षुओं, अनित्यता की अनुभूति (सन्न/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती है, तो यह महान फलदायी और लाभकारी होती है, जो अमरता (अम्रता/अमृत) में परिणत होती है, जिसका लक्ष्य अमरता (अम्रता/अमृत) है।' तो इसी कारण से यह कहा गया था।"

(6) "कहा गया है: 'भिक्षुओं, अनित्य में दुख की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फलदायी और लाभकारी होती है, जो अमरता (अमता/अमृत) में परिणत होती है, जिसका लक्ष्य अमरता (अमता/अमृत) है।' ऐसा किस कारण से कहा गया है?"

जब कोई भिक्षु अनित्य में दुख की अनुभूति (सन्ना/संग्य) के अभ्यस्त मन से अक्सर ध्यान लगाता है, तो उसमें आलस्य, सुस्ती, शिथिलता, परिश्रम की कमी और चिंतनहीनता के प्रति खतरे की तीव्र अनुभूति (सन्ना/संग्य) उत्पन्न हो जाती है, ठीक वैसे ही जैसे खींची हुई तलवार लिए किसी हत्यारे के प्रति होती है।

यदि कोई भिक्षु अनित्य में दुख की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से बार-बार ध्यान लगाता है, और उसके मन में आलस्य, सुस्ती, शिथिलता, परिश्रमहीनता और चिंतनहीनता के प्रति खतरे की तीव्र अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) उत्पन्न नहीं होती, ठीक उसी प्रकार जैसे तलवार लिए हत्यारे के प्रति होती है, तो उसे समझना चाहिए: मैंने अनित्य में दुख की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) विकसित नहीं की है; मेरी पूर्व स्थिति और वर्तमान स्थिति में कोई अंतर नहीं है; मैंने विकास का फल प्राप्त नहीं किया है। इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है। परन्तु यदि वह अनित्य में दुख की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से बार-बार चिंतन करता है, और उसके मन में आलस्य, शिथिलता, सुस्ती, परिश्रमहीनता और चिंतनहीनता के प्रति तीव्र भय उत्पन्न हो जाता है, ठीक उसी प्रकार जैसे तलवार लिए हत्यारे के प्रति, तो उसे समझना चाहिए: 'मैंने अनित्य में दुख की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) विकसित कर ली है; मेरी पूर्व और वर्तमान स्थिति में अंतर है; मैंने विकास का फल प्राप्त कर लिया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है।

"जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, अनित्य में दुख की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फल [53] और लाभ की होती है, जो अमरता (अमता/अमृत) में परिणत होती है, अमरता (अमता/अमृत) को अपना लक्ष्य बनाकर, इसी कारण यह कहा गया था।

(7) "कहा गया है: 'भिक्षुओं, दुःख में अनात्म की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फलदायी और लाभकारी होती है, जो अमरता (अम्रता/अमृत) में परिणत होती है, जिसका लक्ष्य अमरता (अम्रता/अमृत) है।' ऐसा किस कारण से कहा गया है?"

जब कोई भिक्षु दुख में अनात्म की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से निरंतर ध्यान लगाता है, तो उसका मन इस चेतन शरीर और सभी बाह्य वस्तुओं के प्रति 'मैं', 'मेरा' और अहंकार से मुक्त हो जाता है; वह भेदभाव से परे हो जाता है और शांत एवं पूर्णतः मुक्त हो जाता है।' 514

यदि कोई भिक्षु दुख में अनात्म की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से बार-बार ध्यान लगाता है, और उसका मन इस चेतन शरीर और सभी बाह्य वस्तुओं के प्रति 'मैं', 'मेरा' और अहंकार से रहित नहीं है, और यदि वह भेदभाव से परे होकर शांत और पूर्णतः मुक्त नहीं हो जाता, तो उसे समझना चाहिए: 'मैंने दुख में अनात्म की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) विकसित नहीं की है; मेरी पूर्व और वर्तमान स्थिति में कोई भेद नहीं है; मैंने विकास का फल प्राप्त नहीं किया है।' इस प्रकार वह इसे पूर्णतः समझ लेता है! परन्तु यदि वह दुख में अनात्म की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के अभ्यस्त मन से बार-बार ध्यान लगाता है, और उसका मन इस चेतन शरीर और सभी बाह्य वस्तुओं के प्रति 'मैं', 'मेरा' और अहंकार से रहित नहीं है, और यदि वह भेदभाव से परे होकर शांत और पूर्णतः मुक्त हो गया है, तो उसे समझना चाहिए: 'मैंने दुख में अनात्म की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) विकसित कर ली है; 'मेरी पिछली स्थिति और मेरी वर्तमान स्थिति में अंतर है; मैंने विकास का फल प्राप्त कर लिया है।' इस प्रकार वह इसे पूरी तरह समझ लेता है।

"जब यह कहा गया था: 'भिक्षुओं, दुख में अनात्म की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो वह महान फल और लाभ प्रदान करती है, जो अमरता (अमता/अमृत) में परिणत होती है, जिसका लक्ष्य अमरता (अमता/अमृत) है,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।"

"भिक्षुओं, ये सात धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा) जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो महान फल और लाभ देती हैं, जो अमरता (अमता/अमृत) में परिणत होती हैं, जिनका लक्ष्य अमरता (अमता/अमृत) होता है।" [54]

---

50 यौन संबंध (मेथुना)

तब ब्राह्मण जनुस्सो ने भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया और उनसे कहा:

"क्या गुरु गौतम भी ब्रह्मचर्य का पालन करने का दावा करते हैं?" 1515

"हे ब्राह्मण, यदि किसी के बारे में सही कहा जा सकता है कि 'वह पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन जीता है - अटूट, दोषरहित, निष्कलंक, बेदाग', तो यह बात ठीक मेरे बारे में ही कही जा सकती है। क्योंकि मैं पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन जीता हूँ - अटूट, दोषरहित, निष्कलंक, निष्कलंक।"

"पर हे गौतम गुरु, ब्रह्मचर्य जीवन में उल्लंघन, दोष, दाग और धब्बा क्या है?"

(1) "हे ब्राह्मण, यहाँ कोई तपस्वी या ब्राह्मण, जो पूर्णतः ब्रह्मचर्य का दावा करता है, वास्तव में स्त्रियों के साथ संभोग नहीं करता। परन्तु वह उनके द्वारा मालिश, स्नान और गूंथने के लिए सहमत होता है। वह इसमें आनंद लेता है, इसकी इच्छा करता है और इसमें तृप्ति पाता है। यह ब्रह्मचर्य जीवन का उल्लंघन, दोष, कलंक और धब्बा है। उसे अपवित्र ब्रह्मचर्य जीवन जीने वाला, कामुकता के बंधन में जकड़ा हुआ कहा जाता है। वह पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त नहीं होता; मैं कहता हूँ कि वह पीड़ा से मुक्त नहीं होता।"

(2) "फिर, कोई तपस्वी या ब्राह्मण, जो पूर्णतः ब्रह्मचारी होने का दावा करता है, वास्तव में स्त्रियों के साथ संभोग नहीं करता; न ही वह उनके द्वारा रगड़े जाने, मालिश किए जाने, स्नान कराए जाने और गूंथे जाने के लिए सहमति देता है। परन्तु वह स्त्रियों के साथ मजाक करता है, उनके साथ खेलता है और उनका मनोरंजन करता है। ..."

(3) "...वह स्त्रियों से मजाक नहीं करता, उनके साथ खेलता नहीं, न ही उनका मनोरंजन करता है... बल्कि वह उनकी आँखों में सीधे देखता और घूरता है...

(4) "...वह महिलाओं की आँखों में सीधे नहीं देखता... बल्कि वह दीवार के पीछे या प्राचीर के पार से उनकी आवाज़ें सुनता है जब वे हँसती हैं, बात करती हैं, गाती हैं या रोती हैं। ..."

(5) "...वह दीवार के पीछे या प्राचीर के पार से हंसती, बोलती, गाती या रोती महिलाओं की आवाज़ें नहीं सुनता... बल्कि वह अतीत में उनके साथ हंसने, बात करने और खेलने को याद करता है..."

(6) "...उसे अतीत में महिलाओं के साथ हंसने, बात करने और खेलने की याद नहीं है... लेकिन वह एक गृहस्थ या गृहस्थ के बेटे को पांचों इंद्रिय सुखों से परिपूर्ण होकर आनंद लेते हुए देखता है।

(7) "...वह किसी गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र को पाँचों इंद्रिय सुखों से परिपूर्ण होकर आनंद लेते हुए नहीं देखता, बल्कि वह किसी विशेष देवों (देवदूतों/देवताओं) में पुनर्जन्म की आकांक्षा रखते हुए ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत करता है, और सोचता है: 'इस सद्‌गुणी आचरण, पालन, तपस्या या ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) से मैं देव (देवदूत/देवता) या देवों (देवदूतों/देवताओं) के अनुचरों में से एक बनूँगा।' वह इसमें आनंद लेता है, इसकी इच्छा रखता है और इसमें संतुष्टि पाता है। यह भी ब्रह्मचर्य जीवन का उल्लंघन, दोष, धब्बा और कलंक है। उसे [56] अशुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन जीने वाला, कामुकता के बंधन में जकड़ा हुआ कहा जाता है। वह पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त नहीं है; मैं कहता हूँ कि वह पीड़ा से मुक्त नहीं है।

"हे ब्राह्मण, जब तक मैंने देखा कि मैंने इन सात कामुक बंधनों में से किसी एक का भी त्याग नहीं किया है, तब तक मैंने इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/देवता), मार और ब्रह्मा विराजमान हैं, इस जनसंख्या में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण, देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य हैं, अतुलनीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दावा नहीं किया। परन्तु जब मैंने इन सात कामुक बंधनों में से एक भी ऐसा बंधन नहीं देखा जिसका मैंने त्याग नहीं किया था, तब मैंने इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य हैं, अतुलनीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दावा किया।"

"मुझे यह ज्ञान और दृष्टि प्राप्त हुई: 'मेरे मन की मुक्ति अविचल है; यह मेरा अंतिम पुनर्जन्म है; अब और कोई नवजन्म अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) नहीं है।'"

यह सुनकर ब्राह्मण जनुसोनी ने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... गुरु गौतम मुझे आज से शरण लेने वाला गृहस्थ अनुयायी समझें।"

जीवन भर के लिए।" [57]

---

51 संघ (साम्ययोग)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें मिलन और विरक्ति पर धम्म (मार्ग) की व्याख्या सिखाऊंगा। 1516 सुनो...।"

और मिलन और वियोग पर धम्म की वह व्याख्या क्या है?

भिक्षुओं, एक स्त्री अपने स्त्रीत्व गुणों, अपने व्यवहार, अपने रूप, अपने इच्छा, अपनी आवाज और अपने अलंकरण पर आंतरिक रूप से ध्यान देती है। 1517 वह इनसे उत्तेजित होती है और इनमें आनंद लेती है। इनसे उत्तेजित होकर और इनमें आनंद लेते हुए, वह पुरुष के पुरुषत्व गुणों, उसके व्यवहार, उसके रूप, उसके इच्छा, उसकी आवाज और उसके अलंकरण पर बाह्य रूप से ध्यान देती है। वह इनसे उत्तेजित होती है और इनमें आनंद लेती है। इनसे उत्तेजित होकर और आनंद का दिखावा करते हुए, वह बाह्य रूप से मिलन की इच्छा रखती है, और ऐसे मिलन से उत्पन्न होने वाले सुख और आनंद की भी इच्छा रखती है। जो प्राणी अपने स्त्रीत्व से प्रसन्न होते हैं, वे पुरुषों के साथ मिलन में प्रवेश करते हैं। इसी प्रकार एक स्त्री अपने स्त्रीत्व से ऊपर नहीं उठती।

भिक्षुओं, पुरुष अपने पुरुषत्व, अपने व्यवहार, अपने रूप, अपने इच्छाशक्ति, अपनी आवाज और अपने आभूषणों पर आंतरिक रूप से ध्यान देता है। वह इनसे उत्तेजित होता है और इनमें आनंद लेता है। इनसे उत्तेजित होकर और इनमें आनंद लेते हुए, वह स्त्री के स्त्रीत्व, उसके व्यवहार, उसके रूप, उसके इच्छाशक्ति, उसकी आवाज और उसके आभूषणों पर बाह्य रूप से ध्यान देता है। वह इनसे उत्तेजित होता है और इनमें आनंद लेता है। इनसे उत्तेजित होकर और इनमें आनंद लेते हुए, वह बाह्य रूप से मिलन की इच्छा रखता है और ऐसे मिलन से उत्पन्न होने वाले सुख और आनंद की भी इच्छा रखता है। जो प्राणी अपने पुरुषत्व से प्रसन्न होते हैं, वे स्त्रियों के साथ मिलन करते हैं। [58] इसी प्रकार पुरुष अपने पुरुषत्व से ऊपर नहीं उठता।

"इस तरह से संघ बनता है। और अलगाव कैसे होता है?"

भिक्षुओं, एक स्त्री अपने स्त्रीत्व गुणों पर आंतरिक रूप से ध्यान नहीं देती... अपने स्त्रीत्व अलंकरणों पर ध्यान नहीं देती। वह इनसे उत्तेजित नहीं होती और न ही इनमें आनंद लेती है। न तो उत्तेजित होती है और न ही इनमें आनंद लेती है, इसलिए वह पुरुष के पुरुषत्व गुणों पर बाहरी रूप से ध्यान नहीं देती... उसके पुरुषत्व अलंकरणों पर ध्यान नहीं देती। वह इनसे उत्तेजित नहीं होती और न ही इनमें आनंद लेती है। न तो उत्तेजित होती है और न ही इनमें आनंद लेती है, इसलिए वह बाहरी रूप से मिलन की इच्छा नहीं रखती और न ही ऐसे मिलन से उत्पन्न होने वाले सुख और आनंद की इच्छा रखती है। जो प्राणी अपने स्त्रीत्व से प्रसन्न नहीं होते, वे पुरुषों से विरक्त हो जाते हैं। इसी प्रकार एक स्त्री अपने स्त्रीत्व से ऊपर उठती है।

भिक्षुओं, पुरुष अपने पुरुषत्व गुणों पर आंतरिक रूप से ध्यान नहीं देता... अपने पुरुषत्व अलंकरणों पर। वह इनसे उत्तेजित नहीं होता और न ही इनमें आनंद लेता है। इनसे उत्तेजित न होकर, इनमें आनंद न लेकर, वह स्त्री के स्त्रीत्व गुणों पर बाहरी रूप से ध्यान नहीं देता... उसके स्त्रीत्व अलंकरणों पर। वह इनसे उत्तेजित नहीं होता और न ही इनमें आनंद लेता है। इनसे उत्तेजित न होकर, इनमें आनंद न लेकर, वह बाहरी रूप से मिलन की इच्छा नहीं रखता और न ही ऐसे मिलन से उत्पन्न होने वाले सुख और आनंद की इच्छा रखता है। जो प्राणी अपने पुरुषत्व से प्रसन्न नहीं होते, वे स्त्रियों से विरक्त हो जाते हैं। इसी प्रकार [59] पुरुष अपने पुरुषत्व से ऊपर उठता है।

"इसी तरह अलगाव की स्थिति उत्पन्न होती है।"

"भिक्षुओं, यह मिलन और विरक्ति पर धम्म की व्याख्या है।"

---

52 दान देने के लाभ (दानमहप्पला)

एक बार भगवान (बुद्ध) चंपा में गग्गरा कमल तालाब के किनारे निवास कर रहे थे। तब चंपा से कई गृहस्थ अनुयायी पूज्य सारिपुत्त के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते सारिपुत्त, भगवान (बुद्ध) से धर्म प्रवचन सुने हुए बहुत समय हो गया है। भंते, यदि हमें उनसे धर्म प्रवचन सुनने का अवसर मिल जाए तो अच्छा होगा।"

"तो मित्रों, आपको उपोसथा दिवस पर आना चाहिए। शायद तब आपको भगवान (बुद्ध) से धम्म प्रवचन सुनने का अवसर मिल जाए।"

"जी भंते," उन अनुयायियों ने उत्तर दिया। फिर, अपनी सीटों से उठकर, उन्होंने पूज्य सारिपुत्त को प्रणाम किया, उनके दाहिनी ओर मुख करके उनकी परिक्रमा की और चले गए।

फिर, उपोसथ दिवस पर, चंपा के वे गृहस्थ अनुयायी पूज्य सारिपुत्त के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ खड़े हो गए। फिर पूज्य सारिपुत्त, उन गृहस्थ अनुयायियों के साथ, भगवान (बुद्ध) के पास गए। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए, और पूज्य सारिपुत्त ने उनसे कहा: [60]

"क्या ऐसा हो सकता है, भंते, कि यहाँ किसी द्वारा दिया गया दान बहुत फलदायी और लाभदायक न हो? और क्या ऐसा हो सकता है कि यहाँ किसी द्वारा दिया गया दान बहुत फलदायी और लाभदायक हो?"

"सारिपुत्त, ऐसा हो सकता है कि यहाँ किसी के द्वारा दिया गया दान बहुत फलदायी और लाभदायक न हो। और ऐसा भी हो सकता है कि यहाँ किसी के द्वारा दिया गया दान बहुत फलदायी और लाभदायक हो।"

"भंते, ऐसा क्यों है कि एक दान से उतना फल और लाभ नहीं मिलता जबकि दूसरे से मिलता है?"

(1) "हे सारिपुत्त, यहाँ कोई व्यक्ति बद्ध मन से, प्रतिफल की आशा में दान देता है; वह यह सोचकर दान देता है: 'मृत्यु के बाद मैं इसका उपयोग करूँगा।' वह यह दान किसी तपस्वी या ब्राह्मण को देता है: भोजन और पेय; वस्त्र और वाहन; मालाएँ, सुगंध और लेप; बिस्तर, आवास और प्रकाश। हे सारिपुत्त, तुम क्या सोचते हो? क्या कोई ऐसा दान दे सकता है?"

"हां, भंते।"

"उस स्थिति में, सारिपुत्त, वह अपेक्षाओं के साथ, बंधित मन से, प्रतिफल की आशा में दान देता है; वह यह सोचकर दान देता है: 'मृत्यु के बाद, मैं इसका उपयोग करूँगा।' ऐसा दान देने के बाद, शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह चार महान राजाओं द्वारा शासित देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। [61] उस कर्म, मानसिक शक्ति, यश और अधिकार को समाप्त करने के बाद, वह वापस आता है और इस अवस्था में लौट आता है।"

(2) "परन्तु, सारिपुत्त, कोई व्यक्ति किसी अपेक्षा से, किसी बंधित मन से, किसी प्रतिफल की आशा में दान नहीं देता; वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'मरने के बाद मैं इसका उपयोग करूँगा', बल्कि वह यह सोचकर दान देता है कि 'दान देना अच्छा है'।"

(3) "वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'दान देना अच्छा है', बल्कि वह यह सोचकर दान देता है कि 'दान देने का अभ्यास मेरे पिता और पूर्वजों द्वारा पहले किया जाता था; मुझे इस प्राचीन पारिवारिक प्रथा को नहीं छोड़ना चाहिए।'

(4) "वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'दान देने की प्रथा पहले से चली आ रही है... मुझे इस प्राचीन पारिवारिक परंपरा को नहीं छोड़ना चाहिए।' बल्कि वह यह सोचकर दान देता है कि 'मेरे पास भोजन है; इन लोगों के पास भोजन नहीं है। यह उचित नहीं है कि जिसके पास भोजन है वह उन्हें न दे जिनके पास भोजन नहीं है।'"

(5) "वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'मेरे पास भोजन है... उन लोगों को जिनके पास भोजन नहीं है', बल्कि वह यह सोचकर दान देता है कि 'जिस प्रकार प्राचीन ऋषियों - अर्थात् अत्थक, वामक, वामदेव (देवदूत/देवता), वेसमित्त, यमतग्गी, अंगिरस, भारद्वाज, वसेत्थ, कस्सपा और भगु - ने वे महान यज्ञ किए, उसी प्रकार मैं भी दान दूंगा।'... 1518

(6) "वह यह सोचकर दान नहीं देता कि: 'जैसे प्राचीन ऋषियों ने वे महान बलिदान किए, वैसे ही मैं भी दान दूंगा,' बल्कि वह यह सोचकर दान देता है कि: 'दान देते समय मेरा मन शांत हो जाता है और उत्साह और आनंद उत्पन्न होता है।'..."

(7) "वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'दान देने से मेरा मन शांत होता है और आनंद और प्रसन्नता उत्पन्न होती है', बल्कि वह यह सोचकर दान देता है कि 'यह मन का आभूषण है, मन का सहायक है।' 1519 वह किसी तपस्वी या ब्राह्मण को यह दान देता है: भोजन और पेय; वस्त्र और वाहन; मालाएँ, सुगंध और लेप; बिस्तर, आवास और प्रकाश। सारिपुत्त, आप क्या सोचते हैं? क्या कोई ऐसा दान दे सकता है?"

"हां, भंते।"

"ऐसे में, सारिपुत्त, वह अपेक्षा लेकर, बंधुआ मन से, प्रतिफल की आशा में दान नहीं देता; वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'मृत्यु के बाद मैं इसका सदुपयोग करूँगा।' वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'दान देना अच्छा है।' वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'मेरे पिता और पूर्वजों ने दान देने का अभ्यास किया था; मुझे इस प्राचीन पारिवारिक परंपरा को नहीं छोड़ना चाहिए।' वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'मैं खाना बनाता हूँ; ये लोग खाना नहीं बनाते। यह उचित नहीं है कि मैं, जो खाना बनाता हूँ, खाना न बनाने वालों को दान न दूँ।' वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'जिस प्रकार प्राचीन ऋषियों ने वे महान यज्ञ किए, उसी प्रकार मैं भी दान दूँगा।' वह यह सोचकर दान नहीं देता कि 'दान देते समय मेरा मन शांत हो जाता है और उत्साह और आनंद उत्पन्न होता है।'" बल्कि, वह यह सोचकर उपहार देता है: 'यह मन का आभूषण है, मन का सहायक है।' ऐसा उपहार देने के बाद, मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, वह ब्रह्मा की संगति में देवों

(देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। [63] उस कर्म, मानसिक शक्ति, यश और अधिकार के समाप्त हो जाने के बाद, वह वापस इस अवस्था में नहीं लौटता।

"हे सारिपुत्त, यही कारण है कि यहाँ किसी के द्वारा दिया गया दान अधिक फलदायी और लाभदायक नहीं होता। और यही कारण है कि यहाँ किसी के द्वारा दिया गया दान अधिक फलदायी और लाभदायक होता है।"

---

53 नन्दमाता

मैंने ऐसा सुना है। एक बार पूज्य सारिपुत्त और पूज्य महामोग्गलाना भिक्षुओं के एक बड़े संघ के साथ दक्षिणागिरि में भ्रमण कर रहे थे। उस अवसर पर, रात ढलने के समय, महिला गृहस्थ अनुयायी वेलुकांतकी नंदमाता (1520) ने उठकर परायण का पाठ किया।

उस समय महान देव राजा वेसवना किसी कार्य से उत्तर से दक्षिण की यात्रा कर रहे थे। उन्होंने नन्दमाता नामक एक गृहस्थ साध्वी को परायण का पाठ करते सुना और उनके पाठ के अंत तक प्रतीक्षा करते रहे। जब नन्दमाता ने पाठ समाप्त किया, तो वे चुप हो गईं। नन्दमाता के पाठ समाप्त होने पर महान देव राजा वेसवना ने प्रशंसा करते हुए कहा, "शाबाश बहन! शाबाश बहन!"

"वो कौन है, मेरी प्यारी?"

"मैं तुम्हारा भाई, महान [देव] राजा वेसवना हूँ, बहन।"

"बहुत खूब, प्रिय! तो फिर जो धम्म व्याख्या मैंने अभी सुनाई है, वही मेरे अतिथि की ओर से तुम्हें उपहार हो।" 1521

"शाबाश, बहन! और यह भी [64] आपके अतिथि की ओर से मुझे भेंट हो: कल, नाश्ता करने से पहले, सारिपुत्त और मोग्गलाना के नेतृत्व में भिक्षुओं का संघ वेलुकांतक आएगा। आपको उनकी सेवा करनी चाहिए और भेंट मुझे अर्पित करनी चाहिए। यह आपके अतिथि की ओर से मुझे भेंट होगी।"

रात बीत जाने पर नन्दमाता नामक महिला अनुयायी ने अपने निवास पर विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन तैयार करवाए। फिर, नाश्ता करने से पहले ही, सारिपुत्त और मोग्गलाना के नेतृत्व में भिक्षुओं का संघ वेलुकांतक पहुँच गया।

तब नन्दमाता नामक महिला अनुयायी ने एक पुरुष से कहा, “हे सज्जन, आ। मठ जाइए और भिक्षु संघ को समय बताइए, ‘हे भंते, भोजन तैयार है, नन्दमाता के निवास पर।’” पुरुष ने उत्तर दिया, “जी महोदया,” और वह मठ जाकर अपना संदेश दे गया। तब सारिपुत्त और मोग्गलाना के नेतृत्व में भिक्षु संघ ने वस्त्र धारण किए, अपने कुंड और वस्त्र लिए और नन्दमाता के निवास पर गए, जहाँ वे तैयार की गई सीटों पर बैठ गए।

फिर, नन्दमाता नामक महिला गृहस्थ अनुयायी ने अपने हाथों से सारिपुत्त और मोग्गलाना के नेतृत्व में भिक्षुओं के संघ को विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसकर उन्हें तृप्त किया। जब पूज्य सारिपुत्त ने भोजन समाप्त कर लिया और अपना कटोरा रख दिया, तो वह एक तरफ बैठ गईं और पूज्य सारिपुत्त ने उनसे पूछा:

"पर, नन्दमाता, आपको किसने बताया था कि भिक्षुओं का संघ आ रहा होगा?"

(1) "हे भंते, रात ढलने पर उठकर मैंने परायण का पाठ किया। . . . [65] [यहाँ वह प्रथम पुरुष में ऊपर वर्णित पूरी घटना का वर्णन करती है, जिसका अंत वेसवना के शब्दों से होता है: "और यह आपके अतिथि का मुझे दिया हुआ उपहार होगा।"] . . . भंते, इस दान (दान) से मुझे जो भी पुण्य प्राप्त हुआ हो, वह महान [देव] राजा वेसवना के सुख के लिए समर्पित हो।"

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है, 1522 नंदमाता, कि आप 1523 महान [देव] राजा वेसवना जैसे शक्तिशाली और प्रभावशाली युवा देव के साथ सीधे बातचीत कर सकते हैं।"

(2) "भंते, यह मेरी एकमात्र आश्चर्यजनक और अद्भुत विशेषता नहीं है। एक और भी है। मेरा एक ही पुत्र था, नंदा नाम का एक प्रिय और प्यारा बालक। शासकों ने किसी बहाने से उसे अगवा कर लिया और उसकी हत्या कर दी। भंते, जब उस बालक को गिरफ्तार किया गया या गिरफ्तार किया जा रहा था, जब वह जेल में था या जेल में डाला जा रहा था, 1524 जब उसकी मृत्यु हो गई या उसे मारा जा रहा था, मुझे अपने मन में कोई परिवर्तन याद नहीं है।" 1523

"नंदमाता, यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है कि आप विचार के उद्भव को भी शुद्ध कर सकती हैं।" 1326

(3) "भंते, यह मेरी एकमात्र आश्चर्यजनक और अद्भुत विशेषता नहीं है। एक और भी है। जब मेरे पति की मृत्यु हुई, तो उनका यक्षलोक में पुनर्जन्म हुआ। 1527 वे मुझे अपने पूर्व शारीरिक रूप में दिखाई दिए, लेकिन मुझे अपने मन में कोई परिवर्तन याद नहीं है।"

"नंदमाता, यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है कि आप विचार के उद्भव को भी शुद्ध कर सकती हैं।"

(4) "भंते, यह मेरी एकमात्र आश्चर्यजनक और अद्भुत विशेषता नहीं है। एक और भी है। मेरी शादी मेरे युवा पति से कम उम्र में ही हो गई थी; लेकिन मुझे याद नहीं कि मैंने कभी विचार में भी उसके विरुद्ध कोई अपराध किया हो, कर्म से तो दूर की बात है।"

"नंदमाता, यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है कि आप विचार के उद्भव को भी शुद्ध कर सकती हैं।"

(5) "भंते, यह मेरी एकमात्र आश्चर्यजनक और अद्भुत विशेषता नहीं है। एक और भी है। जब से मैंने स्वयं को गृहस्थ अनुयायी घोषित किया है, मुझे याद नहीं है कि मैंने कभी जानबूझकर किसी प्रशिक्षण नियम का उल्लंघन किया हो।"

"यह तो अद्भुत और आश्चर्यजनक है, नंदमाता!"

(6) "भंते, यह मेरा एकमात्र आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण नहीं है। एक और भी है। मैं जितना चाहूँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता हूँ और उसमें निवास करता हूँ, जो एकांत से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल हैं। विचार और चिंतन के शांत होने पर, मैं द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता हूँ और उसमें निवास करता हूँ, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और जो समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, बिना विचार और चिंतन के। आनंद (पीति) के भी लुप्त होने पर, मैं समभाव से, सचेत (ध्यान/सती) होकर और पूर्णतः बोध करते हुए, शरीर के साथ सुख का अनुभव करता हूँ; मैं तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता हूँ और उसमें निवास करता हूँ, जिसके विषय में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव से युक्त है, सती (ध्यानमग्न), जो आनंद में रहता है। सुख और दुख का त्याग करके, और पहले ही आनंद और उदासी के चले जाने के बाद, मैं चौथे ध्यान (सती अवस्था) में प्रवेश करता हूँ और उसमें निवास करता हूँ, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर में विलीन होना/उपेक्खा) द्वारा सती (ध्यानमग्नता) की शुद्धि होती है।

"यह तो अद्भुत और आश्चर्यजनक है, नंदमाता!"

(7) "भंते, यह मेरी एकमात्र अद्भुत और विस्मयकारी विशेषता नहीं है। एक और भी है। भगवान (बुद्ध) द्वारा सिखाई गई पाँच निम्न बंधनों में से, मुझे कोई भी ऐसा बंधन नहीं दिखता जिसे मैंने त्यागा न हो।" 1528

"यह तो अद्भुत और आश्चर्यजनक है, नंदमाता!"

तब पूज्य सारिपुत्त ने नंदमाता को धम्म (मार्ग) पर प्रवचन देकर उपदेश दिया, प्रोत्साहित किया, प्रेरित किया और प्रसन्न किया, जिसके बाद वे अपने आसन से उठे और चले गए।

दूसरा पचास

VI. अघोषित धारा (अव्यक्त वाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

54 अघोषित (अव्यक्त सं. अव्यक्त)

तब एक भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, [68] एक तरफ बैठ गया और बोला: "भंते, ऐसा क्यों है कि ज्ञानी श्रेष्ठ शिष्य के मन में अघोषित बातों के बारे में संदेह नहीं उठता?" 1529

"भिक्षु, जब विचारों का निश्चिंतन हो जाता है, तो शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य के मन में अघोषित विषयों के बारे में कोई संदेह उत्पन्न नहीं होता।"

(1) "'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान हैं': यह विचारों से संबंधित है; 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान नहीं हैं': यह विचारों से संबंधित है; 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी हैं और विद्यमान नहीं भी हैं': यह विचारों से संबंधित है; 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान हैं और न ही विद्यमान नहीं हैं': यह विचारों से संबंधित है।

"भिक्षु (सन्यासी), अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति विचारों, उनके उद्‌गम, उनके निवारण और निवारण के मार्ग को नहीं समझता। उसके लिए, वह विचार और भी बढ़ जाता है। वह पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त नहीं होता; वह दुख से मुक्त नहीं होता, मैं कहता हूँ।"

लेकिन शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य विचारों को, उनके उद्‌गम, उनके निवारण और निवारण के मार्ग को समझता है। उसके लिए वह विचार समाप्त हो जाता है। वह पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त हो जाता है; मैं कहता हूँ, वह पीड़ा से मुक्त हो जाता है।

“इस प्रकार जानकर और देखकर, ज्ञानी शिष्य यह घोषणा नहीं करता कि ‘तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान हैं’; या ‘तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी हैं’; या ‘तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी हैं और विद्यमान भी नहीं हैं’; या ‘तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान हैं और न ही विद्यमान नहीं हैं’। इस प्रकार जानकर और देखकर, ज्ञानी शिष्य अघोषित विषयों के विषय में कोई घोषणा नहीं करता।”

“इस प्रकार जानकर, हे भिक्षु, इस प्रकार देखकर, शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य न तो कांपता है, न डगमगाता है, न ही अघोषित बातों के विषय में भयभीत होता है।”

(2) "'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान हैं': यह तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से जुड़ाव है। (3) ... यह [69] बोध (सन्ना/संज्ञा) से जुड़ाव है। ... (4) ... कुछ कल्पना की गई ... (5) ... एक प्रसार ... (6) ... आसक्ति से जुड़ाव ... (7) ... पश्चाताप का एक आधार; 'तथागत मृत्यु के बाद विद्यमान नहीं हैं': यह पश्चाताप का एक आधार है; 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी हैं और विद्यमान नहीं भी हैं': यह पश्चाताप का एक आधार है; 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान हैं और न ही विद्यमान हैं': यह पश्चाताप का एक आधार है।

“हे भिक्षु, अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति पश्चाताप को, उसके उद्‌गम को, उसके निवारण को और उसके निवारण के मार्ग को नहीं समझता। उसके लिए, पश्चाताप बढ़ता ही जाता है। वह पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त नहीं होता; वह दुख से मुक्त नहीं होता, मैं कहता हूँ।”

लेकिन ज्ञानवान और श्रेष्ठ शिष्य पश्चाताप को समझता है, उसके कारण को, उसके निवारण को और उसके निवारण के मार्ग को भी। उसके लिए पश्चाताप का निवारण हो जाता है। वह पुनर्जन्म से, वृद्धावस्था और मृत्यु से, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त हो जाता है; मैं कहता हूँ, वह पीड़ा से मुक्त हो जाता है।

इस प्रकार जानकर और देखकर, ज्ञानी शिष्य यह घोषणा नहीं करता कि 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान हैं'; या 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान नहीं हैं'; या 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी हैं और विद्यमान नहीं भी हैं'; या 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान हैं और न ही विद्यमान नहीं हैं।' इस प्रकार जानकर और देखकर, ज्ञानी शिष्य अघोषित विषयों के विषय में कोई घोषणा नहीं करता।

"इस प्रकार जानकर, इस प्रकार देखकर, शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य अघोषित बिंदुओं के बारे में न तो कांपता है, न डगमगाता है, न ही विचलित होता है और न ही भयभीत होता है। [70]

"भिक्षु (सन्यासी), इसीलिए दीक्षित श्रेष्ठ शिष्य के मन में अघोषित बातों के बारे में संदेह उत्पन्न नहीं होता।"

---

55 व्यक्तियों के गंतव्य (पुरिसगति)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें सात प्रकार के देह-स्थानों और अनासक्ति के द्वारा निर्वाण की प्राप्ति का उपदेश दूंगा। ध्यान से सुनो और उपस्थित रहो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और हे भिक्षुओं, मनुष्यों के सात गंतव्य क्या हैं? 1531"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु इस प्रकार अभ्यास कर रहा है: 'यह न भी हो, और यह मेरा भी न हो। यह नहीं होगा; यह मेरा नहीं होगा। 1532 मैं विद्यमान, जो अस्तित्व में आया है, उसका त्याग कर रहा हूँ।' वह उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) प्राप्त करता है। वह अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) से आसक्त नहीं है; वह उत्पत्ति से आसक्त नहीं है। वह सही ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से देखता है: 'एक उच्चतर अवस्था है जो शांतिपूर्ण है' 1533 फिर भी उसने उस अवस्था को पूरी तरह से नहीं जाना है। उसने अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति का पूरी तरह से त्याग नहीं किया है; उसने अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के प्रति कामवासना (राग) की अंतर्निहित प्रवृत्ति का पूरी तरह से त्याग नहीं किया है; उसने अज्ञान का पूरी तरह से त्याग नहीं किया है। 1534 पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ वह इस अंतराल में निर्वाण प्राप्त कर लेता है। 1535

उदाहरण के लिए, जब लोहे के कटोरे को दिन भर गर्म किया जाता है और उस पर प्रहार किया जाता है, तो एक टुकड़ा उड़कर बुझ सकता है। ठीक इसी प्रकार, एक भिक्षु अभ्यास कर रहा है... [71]... उसने अज्ञान का पूर्णतः त्याग नहीं किया है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ ही वह इस अंतराल में निर्वाण प्राप्त कर लेता है। 1536

(2) "तब भिक्षु इस प्रकार अभ्यास करता है: 'यह न भी हो, और यह मेरा भी न हो। यह नहीं होगा; यह मेरा नहीं होगा। मैं विद्यमान, जो अस्तित्व में है, उसका त्याग कर रहा हूँ।' वह समभाव प्राप्त करता है। वह अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) से आसक्त नहीं होता; वह उत्पत्ति से आसक्त नहीं होता। वह सही ज्ञान से देखता है: 'एक उच्चतर अवस्था है जो शांत है,' फिर भी उसने उस अवस्था को पूर्णतः अनुभव नहीं किया है। उसने अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति का पूर्णतः त्याग नहीं किया है; उसने अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के प्रति राग की अंतर्निहित प्रवृत्ति का पूर्णतः त्याग नहीं किया है; उसने अज्ञान का पूर्णतः त्याग नहीं किया है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ वह इस अंतराल में निर्वाण प्राप्त कर लेता है।"

उदाहरण के लिए, जब लोहे के कटोरे को दिन भर गर्म किया जाता है और उस पर चोट की जाती है, तो एक टुकड़ा उड़कर ऊपर उठ सकता है और बुझ सकता है। ठीक इसी प्रकार, एक भिक्षु अभ्यास कर रहा होता है... पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ वह इस अंतराल में निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

(3) "तब भिक्षु इस प्रकार अभ्यास करता है: यह न भी हो, और यह मेरा न भी हो। यह नहीं होगा; यह मेरा नहीं होगा। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ वह अंतराल में निर्वाण प्राप्त कर लेता है।"

उदाहरण के लिए, जब लोहे के कटोरे को दिन भर गर्म किया जाता है और उस पर प्रहार किया जाता है, तो एक टुकड़ा उड़कर ऊपर उठ सकता है और जमीन पर गिरने से ठीक पहले बुझ सकता है। ठीक इसी प्रकार, एक भिक्षु अभ्यास कर रहा है। . . . [72]. . . पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ वह अंतराल में निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

(4) "तब भिक्षु इस प्रकार अभ्यास कर रहा है: यह मेरा न भी हो सकता है, और यह मेरा न भी हो सकता है। यह मेरा नहीं होगा; यह मेरा नहीं होगा।"

पांच निम्न बंधनों के पूर्णतः नष्ट होने पर, वह उतरते ही निर्वाण प्राप्त कर लेता है। 1537

उदाहरण के लिए, जब किसी लोहे के कटोरे को दिन भर गर्म किया जाता है और उस पर प्रहार किया जाता है, तो एक टुकड़ा निकलकर हवा में उड़ सकता है, और जमीन पर गिरते ही बुझ जाता है। ठीक इसी प्रकार, एक भिक्षु अभ्यास कर रहा होता है... पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ ही वह जमीन पर उतरते ही निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

(5) "तब भिक्षु इस प्रकार अभ्यास करता है: यह न भी हो, और यह मेरा न भी हो। यह नहीं होगा; यह मेरा नहीं होगा। ... पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ वह बिना किसी प्रयास के निर्वाण प्राप्त कर लेता है।"

उदाहरण के लिए, जब लोहे के कटोरे को दिन भर गर्म किया जाता है और उस पर प्रहार किया जाता है, तो एक टुकड़ा उड़कर ऊपर उठ सकता है और भूसे या लकड़ियों के छोटे ढेर पर गिर सकता है। वहाँ वह आग और धुआँ उत्पन्न करेगा, लेकिन जब वह भूसे या लकड़ियों के उस छोटे ढेर को जलाकर राख कर देगा, और यदि उसे और ईंधन न मिले, तो वह बुझ जाएगा। ठीक इसी प्रकार, एक भिक्षु अभ्यास करता है। . . . पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ वह बिना किसी प्रयास के निर्वाण प्राप्त कर लेता है। 1538 [73]

(6) "तब भिक्षु इस प्रकार अभ्यास करता है: यह न भी हो सकता है; और यह मेरा न भी हो सकता है। यह नहीं होगा; यह मेरा नहीं होगा।" पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ वह परिश्रम द्वारा निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

उदाहरण के लिए, जब लोहे के कटोरे को दिन भर गर्म किया जाता है और उस पर चोट मारी जाती है, तो एक टुकड़ा उड़कर ऊपर उठ सकता है और फिर भूसे या लकड़ियों के ढेर पर गिर सकता है। वहाँ वह आग और धुआँ उत्पन्न करेगा। लेकिन जब भूसे या लकड़ियों का वह ढेर जलकर खत्म हो जाता है और उसे और ईंधन नहीं मिलता, तो आग बुझ जाएगी। ठीक इसी प्रकार, एक भिक्षु अभ्यास करता है... पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश से वह परिश्रम द्वारा निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

(7) "तब भिक्षु इस प्रकार अभ्यास करता है: 'यह न भी हो, और यह मेरा भी न हो। यह नहीं होगा; यह मेरा नहीं होगा। मैं विद्यमान, जो अस्तित्व में है, उसका त्याग कर रहा हूँ।' वह समभाव प्राप्त करता है। वह अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) से आसक्त नहीं है; वह उत्पत्ति से आसक्त नहीं है। वह सही ज्ञान से देखता है: 'एक उच्चतर अवस्था है जो शांतिपूर्ण है' फिर भी उसने उस अवस्था को पूरी तरह से अनुभव नहीं किया है। उसने अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति का पूरी तरह से त्याग नहीं किया है; उसने अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के प्रति कामवासना (राग) की अंतर्निहित प्रवृत्ति का पूरी तरह से त्याग नहीं किया है; उसने अज्ञान का पूरी तरह से त्याग नहीं किया है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ वह एक होकर धारा के विपरीत दिशा में, अकनित्थ लोक की ओर अग्रसर हो जाता है। 1539

उदाहरण के लिए, जब लोहे के कटोरे को दिन भर गर्म किया जाता है और उस पर प्रहार किया जाता है, तो एक टुकड़ा उड़कर ऊपर उठ सकता है और फिर भूसे या लकड़ियों के बड़े ढेर पर गिर सकता है। वहाँ वह आग और धुआँ उत्पन्न करेगा, और जब वह भूसे या लकड़ियों के उस बड़े ढेर को जलाकर राख कर देगा, तो वह जंगल या उपवन को तब तक जलाता रहेगा जब तक कि वह किसी खेत के किनारे, सड़क के किनारे, पत्थर के पहाड़ के किनारे, पानी के किनारे या किसी रमणीय भूमि तक न पहुँच जाए, और फिर, यदि उसे और ईंधन न मिले, तो वह बुझ जाएगा। इसी प्रकार, एक भिक्षु अभ्यास कर रहा है। . . . पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ वह एक हो जाता है जो धारा के विपरीत दिशा में बहता हुआ अकनित्थ लोक की ओर अग्रसर होता है।

"हे भिक्षुओं, ये सात गंतव्य हैं जहाँ मनुष्य पहुँच सकते हैं।"

और हे भिक्षुओं, अनासक्ति के द्वारा निर्वाण की प्राप्ति क्या है? यहाँ एक भिक्षु इस प्रकार अभ्यास कर रहा है: 'यह हो भी सकता है और नहीं भी। यह होगा नहीं; यह मेरा नहीं होगा। मैं जो विद्यमान है, जो अस्तित्व में आया है, उसका त्याग कर रहा हूँ।' वह उदासीनता (भीतर अंतर्मुखता/उपेक्खा) प्राप्त करता है। वह अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) से आसक्त नहीं होता; वह उत्पत्ति से भी आसक्त नहीं होता। वह सही ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से देखता है: 'एक उच्चतर अवस्था है जो शांतिपूर्ण है' और वह उस अवस्था को पूर्णतः अनुभव कर लेता है। वह अहंकार की अंतर्निहित प्रवृत्ति को पूर्णतः त्याग देता है; वह अस्तित्व के प्रति राग (कामना) की अंतर्निहित प्रवृत्ति को पूर्णतः त्याग देता है; वह अज्ञान को पूर्णतः त्याग देता है। दोषों के नाश के साथ, वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, ज्ञान (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को स्वयं अनुभव कर लेता है और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है। इसे अनासक्ति के माध्यम से निर्वाण की प्राप्ति कहते हैं।

"भिक्षुओं, ये व्यक्तियों के सात गंतव्य हैं और अनासक्ति के माध्यम से निर्वाण की प्राप्ति है।"

---

56 टिस्सा

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। तब, जब रात हो गई, तो अत्यंत सुंदर दो देवता (देवदूत), जो पूरे गिद्ध शिखर को प्रकाशित कर रहे थे, भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ खड़े हो गए। तब एक देवता (देवदूत) ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, ये भिक्षुणियां मुक्त हो चुकी हैं।"

दूसरे ने कहा: "भंते, ये भिक्षुणियां पूर्णतः मुक्त हो चुकी हैं, इनमें कोई अवशेष शेष नहीं है।" 1540

देवताओं ने यही कहा। गुरुजी सहमत हो गए। फिर, यह सोचकर कि "गुरुजी सहमत हो गए हैं," उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।

फिर, जब रात बीत गई, तो भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "पिछली रात, भिक्षुओं, जब रात आगे बढ़ रही थी, तो दो अत्यंत सुंदर देवता, जिन्होंने पूरे गिद्ध शिखर को प्रकाशित कर दिया, मेरे पास आए, मुझे प्रणाम किया और एक तरफ खड़े हो गए। फिर एक देवता ने मुझसे कहा: 'भंते, ये भिक्षुणियां मुक्त हो चुकी हैं।' और दूसरे ने कहा: 'भंते, ये भिक्षुणियां पूर्णतः मुक्त हो चुकी हैं, इनमें कोई अवशेष नहीं बचा है।' देवताओं ने यही कहा, जिसके बाद उन्होंने मुझे प्रणाम किया, मेरे दाहिनी ओर मुख करके मेरी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।"

उस समय पूज्य महामोग्गलाना भगवान (बुद्ध) से कुछ ही दूरी पर बैठे थे। तभी पूज्य महामोग्गलाना के मन में यह विचार आया: "कौन से देव (देवदूत/देवता) ऐसे व्यक्ति को जानते हैं जिसका कुछ अंश शेष रहता है, उसे 'शेष शेष वाला' और जिसका कोई अंश शेष नहीं रहता, उसे 'अशेष शेष वाला' कहते हैं?"

उस समय तिस्सा नामक एक भिक्षु का हाल ही में निधन हुआ था और उनका पुनर्जन्म एक ब्रह्मलोक में हुआ था। वहाँ भी वे उन्हें "ब्रह्म तिस्सा, शक्तिशाली और बलवान" के नाम से जानते थे। फिर, जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को अंदर खींच लेता है, उसी प्रकार पूज्य महामोग्गलाना गिद्ध शिखर पर्वत से लुप्त होकर उस ब्रह्मलोक में पुनः प्रकट हुए। दूर से पूज्य महामोग्गलाना को आते देख ब्रह्म तिस्सा [76] ने उनसे कहा:

"आदरणीय मोग्गलाना, आइए! आपका स्वागत है, आदरणीय मोग्गलाना! बहुत समय बाद आपको यहाँ आने का अवसर मिला। बैठिए, आदरणीय मोग्गलाना। यह आसन आपके लिए तैयार किया गया है।" पूज्य महामोग्गलाना तैयार आसन पर बैठ गए। तब ब्रह्मा तिस्सा ने पूज्य महामोग्गलाना को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब पूज्य महामोग्गलाना ने उनसे कहा:

"हे तिस्सा, कौन से देव (देवदूत/भगवान) ऐसे व्यक्ति को जानते हैं जिसका अवशेष शेष रहता है, उसे 'अवशेष शेष वाला' और जिसका अवशेष शेष नहीं रहता, उसे 'अवशेष रहित' कहते हैं?"

"आदरणीय मोग्गलाना, ब्रह्मा की संगति में रहने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) को ऐसा ज्ञान प्राप्त है।"

"क्या ब्रह्मा की संगति में रहने वाले सभी देवताओं (देवदूतों/देवताओं) को ऐसा ज्ञान है, तिस्सा?"

"हे आदरणीय मोग्गलाना, सभी नहीं। ब्रह्मा की संगति में रहने वाले वे देव (देवदूत/देवता) जो ब्रह्मा के जीवनकाल, ब्रह्मा के सौंदर्य, ब्रह्मा के सुख, ब्रह्मा की महिमा, ब्रह्मा के अधिकार से संतुष्ट हैं और जो यह नहीं समझते कि वास्तव में इससे भी उच्चतर मुक्ति है, उन्हें ऐसा ज्ञान नहीं होता।"

लेकिन ब्रह्मा के साथ रहने वाले वे देव (देवदूत/देवता) जो ब्रह्मा के जीवनकाल, ब्रह्मा के सौंदर्य, ब्रह्मा के सुख, ब्रह्मा की महिमा, ब्रह्मा के अधिकार से संतुष्ट नहीं हैं, और जो [77] वास्तव में इससे भी उच्चतर मुक्ति को समझते हैं, वे शेष बचे हुए व्यक्ति को 'शेष शेष वाला' और शेष न बचे हुए व्यक्ति को 'शेष रहित' कहते हैं। 1541

(1) "हे आदरणीय मोग्गलाना, जब कोई भिक्षु दोनों प्रकार से मुक्त हो जाता है, तो वे देव (देवदूत/भगवान) उसे इस प्रकार पहचानते हैं: 'यह पूजनीय दोनों प्रकार से मुक्त है। जब तक उसका शरीर रहता है, देव (देवदूत/भगवान) और मनुष्य उसे देखेंगे, परन्तु शरीर के नष्ट होते ही, देव (देवदूत/भगवान) और मनुष्य उसे नहीं देखेंगे।' इसी प्रकार वे देव (देवदूत/भगवान) शेष बचे हुए व्यक्ति को 'शेष युक्त' और शेष रहित व्यक्ति को 'शेष रहित' के रूप में पहचानते हैं।"

(2) "फिर, जब कोई भिक्षु पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्त हो जाता है, तो वे देव (देवदूत/भगवान) उसे इस प्रकार जानते हैं: 'यह पूजनीय व्यक्ति ज्ञान द्वारा मुक्त हो गया है। जब तक उसका शरीर रहता है, देव (देवदूत/भगवान) और मनुष्य उसे देखेंगे, परन्तु शरीर के क्षोभ के साथ ही देव (देवदूत/भगवान) और मनुष्य उसे नहीं देखेंगे।' इसी प्रकार, वे देव (देवदूत/भगवान) उस व्यक्ति को भी जानते हैं जिसका कुछ अंश शेष रह जाता है। . . ."

(3) "तब, जब कोई भिक्षु देह-साक्षी होता है, तो वे देव (देवदूत/भगवान) उसे इस प्रकार जानते हैं: 'यह पूजनीय देह-साक्षी है। यदि यह पूजनीय अनुकूल आवास में रहे, अच्छे मित्रों पर भरोसा करे और आध्यात्मिक शक्तियों में सामंजस्य स्थापित करे, तो शायद वह इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के उस अतुलनीय लक्ष्य को स्वयं जान लेगा, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करते हैं और उसमें निवास करते हैं। इसी प्रकार, वे देव (देवदूत/भगवान) उस व्यक्ति को जानते हैं जिसमें कुछ शेष रह जाता है। ..."

(4) "तब, जब कोई भिक्षु दर्शन प्राप्त कर लेता है... (5) आस्था से मुक्त हो जाता है... (6) धर्म का अनुयायी बन जाता है, तो वे देव (देवदूत/देवता) उसे इस प्रकार जानते हैं: 'यह पूजनीय [78] धर्म का अनुयायी है। यदि यह पूजनीय अनुकूल आवास में रहे, अच्छे मित्रों पर भरोसा करे और आध्यात्मिक शक्तियों में सामंजस्य स्थापित करे, तो शायद वह इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के उस अतुलनीय लक्ष्य को स्वयं ही जान लेगा, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करते हैं और उसमें निवास करते हैं।' इसी प्रकार, वे देव (देवदूत/देवता) शेष रहने वाले को 'शेष युक्त' और शेष न रहने वाले को 'शेष रहित' के रूप में जानते हैं।"

फिर, ब्रह्मा तिस्सा के वचनों से प्रसन्न और आनंदित होकर, जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को अंदर खींचता है, पूज्य महामोग्गलाना ब्रह्मालोक से प्रकट हुए और गिद्ध शिखर पर पुनः प्रकट हुए। वे भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) को ब्रह्मा तिस्सा के साथ हुई अपनी पूरी बातचीत सुनाई।

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "परन्तु, मोग्गलाना, क्या ब्रह्मा तिस्सा ने तुम्हें सातवें स्वरूप, उस स्वरूप के बारे में नहीं सिखाया जो निराकार में निवास करता है?" 1542

"यही समय है, हे भगवान (बुद्ध)! यही समय है, हे सुगत (भगवान बुद्ध)! भगवान (बुद्ध) को सातवें स्वरूप, उस स्वरूप के बारे में उपदेश देना चाहिए जो निराकार में निवास करता है। भगवान (बुद्ध) से यह सुनकर भिक्षु इसे अपने मन में धारण करेंगे।"

"तो सुनो, मोग्गलाना, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"हाँ, भंते," आदरणीय महामोग्गल्लाना ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

(7) "हे मोग्गलाना, यहाँ सभी लक्षणों पर ध्यान न देने के कारण एक भिक्षु लक्षणहीन मानसिक समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वे देव (देवदूत/देवता) उसे इस प्रकार जानते हैं: 'सभी लक्षणों पर ध्यान न देने के कारण, यह पूजनीय व्यक्ति लक्षणहीन मानसिक समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। यदि यह पूजनीय व्यक्ति अनुकूल आवास में रहे, अच्छे मित्रों पर भरोसा करे और आध्यात्मिक शक्तियों में सामंजस्य स्थापित करे, तो शायद वह स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान से, इसी जीवन में, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के उस अतुलनीय लक्ष्य को जान लेगा, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करते हैं, [79] और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करते हैं।' इसी प्रकार, वे देव (देवदूत/भगवान) शेष अवशेष वाले व्यक्ति को 'शेष अवशेष वाला व्यक्ति' और शेष अवशेष रहित व्यक्ति को 'शेष अवशेष रहित व्यक्ति' के रूप में पहचानते हैं।

---

57 सिहा [1543] (संश्लेषित सिंघा)

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली के विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले महल में निवास कर रहे थे। तब सेनापति सिहा भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले:

"भंते, क्या दान देने का कोई प्रत्यक्ष फल बता सकते हैं?"

"तो फिर, सिहा, मैं तुमसे इस मामले में पूछताछ करूंगा। तुम अपनी इच्छानुसार उत्तर दे सकती हो।"

(1) "सिहा, तुम क्या सोचती हो? दो व्यक्ति हो सकते हैं, एक जो विश्वासहीन, कंजूस, नीच और दुर्व्यवहार करने वाला हो, और दूसरा जो विश्वासवान, उदार दाता और दान में आनंद लेने वाला हो। सिहा, तुम क्या सोचती हो? अरहंत सबसे पहले किस पर दया दिखाएंगे: उस विश्वासहीन, कंजूस, नीच और दुर्व्यवहार करने वाले पर, या उस विश्वासवान, उदार दाता और दान में आनंद लेने वाले पर?" 1544

"हे भंते, अरहंत पहले उस व्यक्ति पर दया क्यों दिखाएंगे जो आस्थाहीन, कंजूस, नीच और दुर्व्यवहार करने वाला है? वे पहले उस व्यक्ति पर दया दिखाएंगे जो आस्थावान है, उदार दाता है और दान में आनंद लेता है।"

(2) "सिहा, तुम क्या सोचते हो? अरहंत सबसे पहले किसके पास जाएँगे: उस विहीन व्यक्ति के पास जो कंजूस, नीच और गाली देने वाला है, या [80] उस व्यक्ति के पास जो आस्थावान है, उदार दाता है और दान में आनंद लेता है?"

"हे भंते, अरहंत सबसे पहले उस अविश्वासी, कंजूस, नीच और गाली देने वाले व्यक्ति के पास क्यों जाएंगे? वे सबसे पहले उस विश्वासी, उदार दाता के पास जाएंगे जो दान-पुण्य में आनंदित होता है।"

(3) "सिहा, तुम क्या सोचते हो? अरा हंत सबसे पहले किससे भीख प्राप्त करेंगे: उस अविश्वासी से जो कंजूस, नीच और दुर्व्यवहार करने वाला है, या उस विश्वासी से जो उदार दाता है और दान में आनंद लेता है?"

"हे भंते, अरहंत पहले उस अविश्वासी, कंजूस, नीच और गाली देने वाले व्यक्ति से भिक्षा क्यों ग्रहण करेंगे? वे पहले उस विश्वासवान, उदार दाता से भिक्षा ग्रहण करेंगे जो दान में आनंदित होता है।"

(4) "सिहा, तुम क्या सोचते हो? अरहंत सबसे पहले किसे धम्म की शिक्षा देंगे: उस अविश्वासी को जो कंजूस, नीच और गाली देने वाला है, या उस विश्वासी को जो उदार दाता है और दान में आनंद लेता है?"

"हे भंते, अरहंत पहले धर्म का उपदेश उस व्यक्ति को क्यों देंगे जो आस्थाहीन, कंजूस, नीच और गाली देने वाला हो? वे पहले धर्म का उपदेश उस व्यक्ति को देंगे जो आस्थावान हो, उदार दाता हो और दान में आनंद लेता हो।"

(5) "सिहा, तुम क्या सोचती हो? किस व्यक्ति को अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त होगी: वह व्यक्ति जो विश्वासहीन, कंजूस, नीच और गाली देने वाला हो, या वह व्यक्ति जो विश्वास से परिपूर्ण, उदार दाता हो और दान में आनंद लेता हो?"

"हे भंते, जो व्यक्ति आस्थाहीन, कंजूस, नीच और गाली-गलौज करने वाला हो, वह भला कैसे नाम कमा सकता है? भला तो आस्थावान, उदार दाता और दान-पुण्य में आनंद लेने वाला व्यक्ति ही नाम कमा सकता है।"

(6) "सिहा, तुम क्या सोचते हो? कौन सा व्यक्ति किसी भी सभा में - चाहे वह क्षत्रिय हों, ब्राह्मण हों, गृहस्थ हों या तपस्वी हों - [81] आत्मविश्वास और संयम के साथ उपस्थित होगा: वह व्यक्ति जो विश्वासहीन, कंजूस, नीच और गाली देने वाला हो, या वह व्यक्ति जो विश्वास से परिपूर्ण, उदार दाता हो और दान में आनंद लेता हो?"

"हे भंते, विश्वासहीन, कंजूस, नीच और गाली-गलौज करने वाला व्यक्ति किसी भी सभा में - चाहे वह क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहस्थों या तपस्वियों की हो - आत्मविश्वास और संयम के साथ कैसे उपस्थित हो सकता है? यह तो विश्वास से परिपूर्ण, उदार दाता और दान में आनंद लेने वाला व्यक्ति ही है जो किसी भी सभा में आत्मविश्वास और संयम के साथ उपस्थित हो सकता है।"

(7) "सिहा, तुम क्या सोचती हो? शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, कौन सा व्यक्ति अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेगा: वह जो विश्वासहीन, कंजूस, नीच और दुर्व्यवहार करने वाला है, या वह जो विश्वास से परिपूर्ण, उदार दाता है और दान में आनंद लेता है?"

"हे भंते, वह व्यक्ति जो आस्थाहीन, कंजूस, नीच और गाली देने वाला है, मृत्यु के बाद शरीर के क्षत-विक्षत होने पर स्वर्गलोक में कैसे पुनर्जन्म ले सकता है? आस्थावान, उदार दाता और दान में आनंद लेने वाला व्यक्ति ही मृत्यु के बाद शरीर के क्षत-विक्षत होने पर स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेगा।"

"भंते, मैं भगवान (बुद्ध) द्वारा घोषित दान के उन छह प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाले फलों के विषय में उन पर विश्वास नहीं करता। मैं उन्हें जानता भी हूँ। क्योंकि मैं एक दाता हूँ, एक उदार दाता हूँ, और अरहंत सबसे पहले मुझ पर दया दिखाते हैं। मैं एक दाता हूँ, एक उदार दाता हूँ, और अरहंत सबसे पहले मेरे पास आते हैं। मैं एक दाता हूँ, एक उदार दाता हूँ, और अरहंत सबसे पहले मुझसे भिक्षा ग्रहण करते हैं। मैं एक दाता हूँ, एक उदार दाता हूँ, और अरहंत सबसे पहले मुझे धम्म सिखाते हैं। मैं एक दाता हूँ, एक उदार दाता हूँ, और मैंने अच्छी प्रतिष्ठा अर्जित की है: 'सेनापति सिंह एक दाता, एक प्रायोजक, संघ का एक समर्थक है/ [82] मैं एक दाता हूँ, एक उदार दाता हूँ, और मैं जिस भी सभा में जाता हूँ - चाहे वह क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहस्थों या तपस्वियों की हो - मैं आत्मविश्वास और संयम के साथ जाता हूँ। मैं उन पर विश्वास नहीं करता..." भगवान (बुद्ध) ने दान के इन छह प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाले फलों के बारे में बताया है। मैं भी इन्हें जानता हूँ। लेकिन जब भगवान (बुद्ध) मुझसे कहते हैं: 'सिहा, शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, एक दाता, एक उदार दाता, एक अच्छे गंतव्य में, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेता है।' तो मैं यह नहीं जानता, और यहाँ मैं भगवान (बुद्ध) में आस्था के साथ आगे बढ़ता हूँ।

"ऐसा ही है, सिहा, ऐसा ही है! शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, एक दाता, एक उदार दाता, एक अच्छे गंतव्य में, एक स्वर्गीय लोक में पुनर्जन्म लेता है।"

---

58 छिपने की कोई जरूरत नहीं

भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) को चार बातें छिपाने की आवश्यकता नहीं है और तीन बातें ऐसी हैं जिनके बारे में वे निर्दोष हैं। 1545

"वे चार बातें कौन सी हैं जिन्हें तथागत (बुद्ध) को छिपाने की आवश्यकता नहीं है?"

(1) "भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) वह हैं जिनका शारीरिक आचरण शुद्ध है। तथागत (बुद्ध) की ओर से ऐसा कोई शारीरिक दुराचार नहीं है जिसे उन्हें छिपाने की आवश्यकता हो, [यह सोचकर]: 'यह बात दूसरों को मेरे बारे में पता न चले।

(2) तथागत (बुद्ध) वह हैं जिनका वाणी व्यवहार शुद्ध है। तथागत (बुद्ध) की ओर से ऐसा कोई वाणी दुराचार नहीं है जिसे उन्हें छिपाने की आवश्यकता हो, [यह सोचकर]: 'दूसरों को मेरे बारे में यह पता न चले।'

(3) तथागत (बुद्ध) वह हैं जिनका मानसिक आचरण शुद्ध है। तथागत (बुद्ध) के मन में ऐसा कोई दुराचार नहीं है जिसे उन्हें छिपाने की आवश्यकता हो, [यह सोचकर]: "यह बात दूसरों को मेरे बारे में पता न चले।"

(4) तथागत (बुद्ध) वह हैं जिनकी आजीविका शुद्ध है। तथागत (बुद्ध) की ओर से कोई कुकर्मपूर्ण आजीविका नहीं है जिसे उन्हें छिपाने की आवश्यकता हो, [यह सोचकर]: 'दूसरों को मेरे बारे में यह पता न चले।'

"ये वे चार बातें हैं जिन्हें तथागत (बुद्ध) को छिपाने की आवश्यकता नहीं है। और वे तीन बातें क्या हैं जिनके बारे में वे निर्दोष हैं? [83]

(5) "हे भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) वह हैं जिनका धम्म सुस्पष्ट है। इस संबंध में, मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता जिसके आधार पर कोई तपस्वी, ब्राह्मण, देव, मार, ब्रह्मा या संसार का कोई भी व्यक्ति मुझे यह कहकर फटकार सके: 'ऐसे-ऐसे कारणों से आपका धम्म सुस्पष्ट नहीं है।' क्योंकि मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता, इसलिए मैं निश्चिंत, निर्भय और आत्मविश्वासी होकर निवास करता हूँ।"

(6) मैंने अपने शिष्यों को निर्वाण की ओर ले जाने वाले अभ्यास का अच्छी तरह से प्रचार किया है, ताकि उसका पालन करते हुए और दोषों के नाश को प्राप्त करते हुए, वे स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, दीप्तिमान (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करें और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करें। इस संबंध में, मुझे कोई ऐसा आधार नहीं दिखता जिसके आधार पर कोई तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा या संसार का कोई भी व्यक्ति मुझे यह कहकर फटकार सके: 'ऐसे-ऐसे कारणों से, आपने अपने शिष्यों को निर्वाण की ओर ले जाने वाले अभ्यास का अच्छी तरह से प्रचार नहीं किया है, ताकि उसका पालन करते हुए और दोषों के नाश को प्राप्त करते हुए, वे स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, दीप्तिमान (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करें और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करें।' 'इसमें प्रवेश करो, इसमें निवास करो।' चूंकि मुझे ऐसा कोई आधार दिखाई नहीं देता, इसलिए मैं सुरक्षित, निर्भीक और आत्मविश्वासी होकर निवास करता हूं।

(7) "हे भिक्षुओं, मेरी सभा में सैकड़ों शिष्य हैं जिन्होंने दोषों का नाश करके, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करते हैं। इस संबंध में, मुझे कोई ऐसा आधार नहीं दिखता जिसके आधार पर संसार में कोई तपस्वी, ब्राह्मण, देव (देवदूत/भगवान), मार, ब्रह्मा, आदि मुझे यह कहकर फटकार सकें: 'ऐसे-ऐसे कारणों से यह बात सही नहीं है कि आपकी सभा में सैकड़ों शिष्य हैं जिन्होंने दोषों का नाश करके, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करते हैं।' [84] चूंकि मुझे ऐसा कोई आधार नहीं दिखता, इसलिए मैं निडर, सुरक्षित और आत्मविश्वासी होकर निवास करता हूँ।"

"ये तीन बातें हैं जिनके बारे में तथागत (बुद्ध) निर्दोष हैं।"

"भिक्षुओं, ये वे चार बातें हैं जिन्हें तथागत (बुद्ध) को छिपाने की आवश्यकता नहीं है और वे तीन बातें हैं जिनके बारे में वे निर्दोष हैं।"

---

59 किम्बिला [1547]

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) किंबिला के यहाँ एक निकुल वन में निवास कर रहे थे। तब पूज्य किंबिला भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले:

"हे भंते, इसका कारण क्या है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद भी उत्तम धर्म का निरंतर अस्तित्व क्यों नहीं बना रहता?"

"हे किम्बिला, तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद, (1) भिक्षु, भिक्षुणियाँ, पुरुष गृहस्थ अनुयायी और स्त्री गृहस्थ अनुयायी गुरु के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (2) वे धम्म के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (3) वे संघ के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (4) वे प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (5) वे समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (6) वे सजगता के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। (7) वे आतिथ्य सत्कार के प्रति श्रद्धा और आदर का अभाव रखते हैं। यही कारण है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद उत्तम धम्म (मार्ग) अधिक समय तक नहीं चलता।"

"हे भंते, इसका कारण और तर्क क्या है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद भी अच्छा धम्म लंबे समय तक बना रहता है?"

"यहाँ, किम्बिला, तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद, (1) भिक्षु, भिक्षुणियाँ, पुरुष गृहस्थ अनुयायी और स्त्री गृहस्थ अनुयायी गुरु के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (2) वे धम्म के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (3) वे संघ के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (4) वे प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (5) वे समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (6) वे जागरूकता के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। (7) वे आतिथ्य सत्कार के प्रति श्रद्धा और आदर के साथ निवास करते हैं। यही कारण है कि तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के बाद भी अच्छा धम्म लंबे समय तक बना रहता है।" [85]

---

60 सात गुण (सत्तधम्म)

"सात गुणों से युक्त भिक्षु, दोषों के नाश होने पर शीघ्र ही, इस जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कर सकते हैं, और उसमें प्रवेश करने के बाद उसमें निवास कर सकते हैं। वे सात गुण कौन से हैं?"

यहां, भिक्षु आस्थावान, गुणी, विद्वान, एकांतप्रिय, ऊर्जावान, सती (ध्यानशील) और बुद्धिमान होता है। इन सात गुणों से युक्त भिक्षु शीघ्र ही, दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कर सकता है, और उसमें प्रवेश करने के बाद उसमें निवास कर सकता है।

---

61 ऊंघना (पा-कलयामाना)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) भेषकला वन के हिरण उद्यान में, सुमसुमारागिरा में, भगों के बीच निवास कर रहे थे। उस समय पूज्य महामोग्गलाना मगधों के बीच, कल्लावलमुत्तगम में बैठे-बैठे ऊंघ रहे थे। भगवान (बुद्ध) ने अपनी दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मानवीय दृष्टि से परे है, पूज्य महामोग्गलाना को बैठे-बैठे ऊंघते हुए देखा। तब, जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को अंदर खींच लेता है, वैसे ही भगवान (बुद्ध) भेषकला वन के हिरण उद्यान से लुप्त हो गए और पूज्य महामोग्गलाना के सामने पुनः प्रकट हुए। भगवान (बुद्ध) अपने लिए तैयार आसन पर बैठ गए और बोले:

"क्या तुम ऊंघ रहे हो, मोग्गलाना? क्या तुम ऊंघ रहे हो, मोग्गलाना?"

"हां, भंते।"

(1) "इसलिए, मोग्गलाना, आपको उस वस्तु पर ध्यान नहीं देना चाहिए या उसकी खेती नहीं करनी चाहिए जिस पर आप उनींदा होने से पहले ध्यान दे रहे थे। [86] इस तरह से, संभव है कि आपका उनींदापन दूर हो जाएगा।

(2) "परन्तु यदि तुम इस प्रकार अपनी उन्मत्तता को त्याग न सको, तो तुम्हें धम्म पर मनन करना चाहिए, उसका परीक्षण करना चाहिए और मानसिक रूप से उसका निरीक्षण करना चाहिए जैसा तुमने सुना और सीखा है। इस प्रकार संभव है कि तुम्हारी उन्मत्तता दूर हो जाए।"

(3) "परन्तु यदि तुम इस प्रकार अपनी उन्मत्तता को त्याग न सको, तो तुम्हें धम्म का विस्तृत पाठ करना चाहिए जैसा तुमने सुना और सीखा है। इस प्रकार, संभव है कि तुम्हारी उन्मत्तता दूर हो जाए।"

(4) "परन्तु यदि तुम इस प्रकार अपनी उनींदापन दूर न कर सको, तो अपने दोनों कान खींचो और अपने हाथों से अपने अंगों को रगड़ो। ऐसा करने से संभवतः तुम्हारा उनींदापन दूर हो जाएगा।"

(5) "परन्तु यदि तुम इस प्रकार अपनी उनींदापन दूर नहीं कर सकते, तो तुम्हें अपनी सीट से उठकर, अपनी आँखों को पानी से मलकर, चारों ओर का अवलोकन करना चाहिए और नक्षत्रों और तारों को देखना चाहिए। इस प्रकार संभव है कि तुम्हारा उनींदापन दूर हो जाए।"

(6) "परन्तु यदि तुम इस प्रकार अपनी उन्मत्तता को त्याग न सको, तो प्रकाश के अनुभव (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान दो; दिन के अनुभव (सन्ना/संज्ञा) का इस प्रकार अभ्यास करो: 'जैसे दिन, वैसे रात; जैसे रात, वैसे दिन।' इस प्रकार, खुले और निर्मल मन से, प्रकाश से परिपूर्ण मन का विकास करो। इस प्रकार, संभव है कि तुम्हारी उन्मत्तता दूर हो जाए। [87]

(7) "परन्तु यदि तुम इस प्रकार अपनी उन्मत्तता को दूर नहीं कर सकते, तो तुम्हें आगे-पीछे चलने का अभ्यास करना चाहिए, अपने पीछे और आगे के दृश्य को निहारते हुए, अपनी सभी इंद्रियों को समेटकर और मन को एकाग्र रखते हुए। इस प्रकार, संभव है कि तुम्हारी उन्मत्तता दूर हो जाए।"

लेकिन यदि आप इस प्रकार अपनी उन्मत्तता को त्याग नहीं सकते, तो आपको सिंह मुद्रा में दाहिनी ओर लेटना चाहिए, एक पैर दूसरे के ऊपर रखते हुए, सचेत (ध्यान/सती) और पूर्णतः बोध करते हुए, मन में उठने का विचार धारण करना चाहिए। जब आप जागें, तो आपको जल्दी से उठना चाहिए, [यह सोचते हुए]: 'मैं विश्राम के सुख, आलस्य के सुख, नींद के सुख पर ध्यान केंद्रित नहीं करूंगा।' मोग्गलाना, इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

इसलिए, मोग्गलाना, आपको स्वयं को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: "हम परिवारों के पास भिक्षा मांगने के लिए अहंकार से भरे सिर के साथ नहीं जाएंगे।" मोग्गलाना, आपको इसी प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए। मोग्गलाना, ऐसा हो सकता है कि कोई भिक्षु अहंकार से भरे सिर के साथ परिवारों के पास जाए। अब परिवारों में करने के लिए बहुत से काम होते हैं, और इसी कारण जब कोई भिक्षु आता है, तो लोग उस पर ध्यान नहीं देते। ऐसे में भिक्षु सोच सकता है: 'किसने इस परिवार को मेरे विरुद्ध कर दिया है? लगता है ये लोग अब मेरे प्रति उदासीन हो गए हैं।' इस प्रकार, लाभ न मिलने के कारण व्यक्ति अपमानित महसूस करता है; जब वेदना अपमानित होती है, तो व्यक्ति बेचैन हो जाता है; जब व्यक्ति बेचैन होता है, तो वह अपना संयम खो देता है। संयमहीन व्यक्ति का मन समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) से बहुत दूर होता है।

इसलिए, मोग्गलाना, तुम्हें स्वयं को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम विवादपूर्ण चर्चा में शामिल नहीं होंगे।' तुम्हें इसी प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए। विवादपूर्ण चर्चा होने पर शब्दों की अधिकता होने की संभावना रहती है। शब्दों की अधिकता होने पर व्यक्ति बेचैन हो जाता है; बेचैन होने पर वह अपना संयम खो देता है। संयमहीन व्यक्ति का मन समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) से बहुत दूर होता है।

मोग्गलाना, मैं हर किसी से संबंध बनाने की प्रशंसा नहीं करता, न ही [88] मैं किसी से भी संबंध न बनाने की प्रशंसा करता हूँ। मैं गृहस्थों और भिक्षुओं से संबंध बनाने की प्रशंसा नहीं करता, लेकिन मैं लोगों की भीड़-भाड़ से दूर, मानव बस्ती से अलग और एकांत के लिए उपयुक्त शांत और शोर-रहित आवासों से संबंध बनाने की प्रशंसा करता हूँ।

जब यह कहा गया, तो पूज्य महामोग्गलाना ने भगवान (बुद्ध) से कहा: 1549 "संक्षेप में, भंते, तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) के निवारण में मुक्त भिक्षु, जो देवताओं और मनुष्यों में श्रेष्ठ है, वह कौन है जो परम निष्कर्ष पर पहुँच गया है, बंधन से परम सुरक्षा प्राप्त कर चुका है, परम ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी चुका है, और परम लक्ष्य प्राप्त कर चुका है?"

"यहाँ, मोग्गलाना, एक भिक्षु ने सुना है: 'कुछ भी पकड़ने लायक नहीं है।'" जब कोई भिक्षु यह सुनता है: 'कुछ भी पकड़ने लायक नहीं है", तो वह प्रत्यक्ष रूप से सभी चीजों को जान लेता है। प्रत्यक्ष रूप से सभी चीजों को जानने के बाद, वह सभी चीजों को पूरी तरह से समझ लेता है। सभी चीजों को पूरी तरह से समझने के बाद, उसे जो भी संवेदना (वेदना) महसूस होती है—चाहे वह सुखद हो, दुखदायी हो, या न दुखदायी हो और न ही सुखद—वह उन संवेदनाओं (वेदनाओं) में अनित्यता (अनित्यता) का चिंतन करता है, उन संवेदनाओं (वेदनाओं) के लुप्त होने (विलय) को देखता है, उन संवेदनाओं (वेदनाओं) के अंत (निरस्त होने) को देखता है, और उन संवेदनाओं (वेदनाओं) के त्याग (त्याग) को देखता है। जब वह अनित्यता (अनित्यता)... लुप्त होने... अंत... त्याग (निरस्त होने) को देखता है, तो वह संसार में किसी भी चीज से आसक्त नहीं रहता। आसक्त न होने के कारण वह विचलित नहीं होता। विचलित न होने के कारण, वह स्वयं निर्वाण प्राप्त करता है। वह समझता है: 'पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य जीवन जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया

गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आने का कोई आसार नहीं है।'

"संक्षेप में, मोग्गलाना, भिक्षु देवताओं और मनुष्यों में इस प्रकार श्रेष्ठ है: वह जिसने परम निष्कर्ष प्राप्त कर लिया है, बंधन से परम सुरक्षा प्राप्त कर ली है, परम ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी लिया है और परम लक्ष्य प्राप्त कर लिया है।"

---

62 मेट्टा [1550]

"भिक्षुओं, पुण्य से मत डरो। यह सुख का पदनाम है, [89] अर्थात् पुण्य।

मुझे याद है कि मैंने लंबे समय तक पुण्य कर्मों के वांछनीय, सुंदर और सुखद फल का अनुभव किया। सात वर्षों तक मैंने प्रेम और करुणा (मेट्टा) का भाव विकसित किया। फलस्वरूप, संसार के विघटन और विकास के सात युगों तक मैं इस संसार में वापस नहीं आया। जब संसार का विघटन हो रहा था, तब मैं प्रकाश के प्रवाह के लोक में चला गया। जब संसार का विकास हो रहा था, तब मेरा ब्रह्मा के एक खाली महल में पुनर्जन्म हुआ। 1551 वहाँ मैं ब्रह्मा था, 1552 महान ब्रह्मा, विजेता, अजेय, सर्वव्यापी द्रष्टा, भगवानत्व का स्वामी। मैं छत्तीस बार देवताओं का शासक सक्का (इंद्र) था। सैकड़ों बार मैं चक्र चलाने वाला सम्राट, धर्म द्वारा शासित धर्मात्मा राजा, चारों सीमाओं तक शासन करने वाला विजेता, अपने देश में स्थिरता प्राप्त करने वाला, सात रत्नों से युक्त था। मेरे पास ये सात रत्न थे, अर्थात्: मेरे पास चक्र-रत्न, हाथी-रत्न, अश्व-रत्न, रत्न-रत्न, स्त्री-रत्न, कोषाध्यक्ष-रत्न और सातवें के रूप में सलाहकार-रत्न थे। मेरे एक हजार से अधिक पुत्र थे जो वीर, बलवान और शत्रुओं की सेनाओं को कुचलने में सक्षम थे। मैंने इस पृथ्वी को समुद्र की सीमाओं तक जीतकर शासन किया, बल और हथियारों से नहीं बल्कि धम्म के द्वारा। 1553

"यदि कोई सुख की तलाश में है, तो उसे

पुण्य कर्मों के फल, लाभकारी (कुशल) कर्मों के फल को देखना चाहिए।

सात वर्षों तक मैंने करुणामय मन विकसित किया।"

हे भिक्षुओं, सात युगों

के प्रलय और विकास के दौरान,

मैं इस संसार में पुनः नहीं आया।

"जब दुनिया का विघटन हो रहा था, तब

मैं प्रकाश की धारा के क्षेत्र में चला गया।

जब दुनिया का विकास हो रहा था, तब

मैं एक खाली ब्रह्मा (महल) में चला गया।"

"सात बार मैं महान ब्रह्मा बना,

जो भगवानत्व का स्वामी है;

छत्तीस बार मैं देवों (देवदूतों/देवताओं) का शासक बना, और

देवों (देवदूतों/देवताओं) पर शासन करता रहा।"

"मैं एक चक्र-घुमाने वाला सम्राट था,

जंबुद्वीप (भारत) का स्वामी, [1554]

एक प्रमुख अभिषिक्त खत्तिया,

मनुष्यों में संभगवान।"

"बिना बल प्रयोग के, बिना हथियारों के,

मैंने इस पृथ्वी पर विजय प्राप्त की।

मैंने इस पर धर्म द्वारा,

बिना हिंसा के, धम्म द्वारा शासन किया, [1555] इस पृथ्वी के क्षेत्र पर

धम्म द्वारा शासन का प्रयोग किया ।"

"मेरा जन्म एक समृद्ध परिवार में हुआ था,

जो अपार धन-संपत्ति

से संपन्न था ,

और सात रत्नों से परिपूर्ण था। यह बात जगत के उपकारक

बुद्धों द्वारा भली-भांति सिखाई गई है : यही महानता का कारण है जिसके कारण व्यक्ति को पृथ्वी का स्वामी कहा जाता है। [1556]"

"मैं [1557] वैभवशाली, धन-संपत्ति से परिपूर्ण राजा था ।

मैं जंबूद्वीप (भारत) का स्वामी,

शक्तिशाली और गौरवशाली था।

निम्न कुल का व्यक्ति भी

यह सुनकर विश्वास क्यों नहीं करेगा?"

अत: जो व्यक्ति कल्याण की कामना करता है और

महानता की आकांक्षा रखता है, उसे बुद्धों की शिक्षाओं का स्मरण करते हुए

उत्तम धम्म का गहन आदर करना चाहिए । [1558]

---

63 पत्नियां (भारिया)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन में, अनाथपिंडिका के उद्यान में निवास कर रहे थे। फिर सुबह, भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, अपना कुंड और वस्त्र लिया और गृहस्थ अनाथपिंडिका के निवास पर गए, जहाँ वे उनके लिए तैयार किए गए आसन पर बैठ गए।

उस समय अनाथपिंडिका के निवास में लोग शोर-शराबा कर रहे थे। तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"गृहस्वामी, आपके घर में लोग इतना शोर-शराबा क्यों कर रहे हैं? ऐसा लग रहा है जैसे मछुआरे मछली पकड़ने आए हों।"

"हे भंते, यह मेरी बहू सुजाता है, जो धनी है और एक धनी परिवार से यहाँ लाई गई है। वह अपने ससुर, अपनी सास और अपने पति की आज्ञा नहीं मानती। वह भगवान (बुद्ध) का आदर, सम्मान और पूजा भी नहीं करती।"

तब भगवान (बुद्ध) ने सुजाता से कहा, "सुजाता, इधर आओ।"

"जी, भंते," उसने उत्तर दिया। वह भगवान (बुद्ध) के पास गई, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गई। तब भगवान (बुद्ध) ने उससे कहा: [92]

"सुजाता, एक पुरुष की सात प्रकार की पत्नियाँ हो सकती हैं। कौन सी सात? एक हत्यारी जैसी, एक चोर जैसी, एक अत्याचारी जैसी, एक माँ जैसी, एक बहन जैसी, एक सहेली जैसी और एक दासी जैसी। एक पुरुष की ये सात प्रकार की पत्नियाँ हो सकती हैं। तुम इनमें से कौन सी हो?"

"भंते, भगवान (बुद्ध) ने संक्षेप में जो कहा है, उसका अर्थ मुझे विस्तार से समझ नहीं आया। कृपया भगवान (बुद्ध) मुझे धम्म इस प्रकार सिखाएं कि मैं संक्षेप में कहे गए इस कथन का अर्थ विस्तार से समझ सकूं।"

"तो सुनो और ध्यान से सुनो, सुजाता। मैं बोलूंगी।"

"जी हां, भंते," उसने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"घृणा से भरी मानसिकता वाली, सहानुभूति से रहित,

दूसरों के प्रति वासना से ग्रस्त, अपने पति से घृणा करने वाली

वह महिला, धन से खरीदी गई महिला को ही मारना चाहती है:

ऐसी पत्नी को ही पत्नी और हत्यारा कहा जाता है।"

"जब किसी महिला का पति

शिल्प, व्यापार या खेती में मेहनत करके धन अर्जित करता है, तो

वह उसे चुराने की कोशिश करती है, भले ही वह थोड़ा ही कमाता हो:

ऐसी पत्नी को पत्नी और चोर कहा जाता है।"

"आलसी, पेटू, काम करने की अनिच्छुक,

कठोर, क्रूर, वाणी में कर्कश,

अपने समर्थकों पर हावी रहने वाली स्त्री:

ऐसी पत्नी को पत्नी और अत्याचारी कहा जाता है। [93j

"जो हमेशा दयालु और सहानुभूतिपूर्ण हो,

जो अपने पति की रक्षा वैसे ही करे जैसे एक माँ अपने बेटे की,

जो उसकी कमाई हुई संपत्ति की रक्षा करे:

ऐसी पत्नी को ही पत्नी और माँ कहा जाता है।"

"जो स्त्री अपने पति को छोटी बहन और बड़े भाई के समान सम्मान देती है ,

कर्तव्यनिष्ठ होती है और अपने पति की इच्छा का पालन करती है,

ऐसी स्त्री को ही पत्नी और बहन कहा जाता है।"

जो अपने पति को देखकर ऐसे प्रसन्न होती है

मानो लंबे समय बाद किसी मित्र से मिल रही हो;

सुसंस्कृत, गुणी, अपने पति के प्रति समर्पित:

ऐसी पत्नी को ही पत्नी और मित्र कहा जाता है।

"जो

छड़ी से हिंसा की धमकी दिए जाने पर भी धैर्यवान और शांत रहती है,

जो अपने पति को घृणा से मुक्त मन से सहन करती है,

धैर्यवान रहती है, अपने पति की इच्छा के प्रति विनम्र रहती है:

ऐसी पत्नी को पत्नी और दासी कहा जाता है।"

"यहाँ जिन पत्नियों को

हत्यारा, चोर, अत्याचारी,

अनैतिक, कठोर, अनादर करने वाली कहा जाता है,

वे शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके नरक में जाती हैं।"

लेकिन यहाँ जिन पत्नियों को

माँ, बहन, सहेली और दासी कहा जाता है,

जो सद्‌गुणों में दृढ़ होती हैं, लंबे समय तक संयमित रहती हैं,

शरीर के विखंडन के साथ स्वर्ग जाती हैं।

“सुजाता, एक पुरुष की सात प्रकार की पत्नियाँ हो सकती हैं। अब तुम इनमें से कौन सी हो?”

“हे भंते, आज से भगवान (बुद्ध) मुझे एक दासी के समान पत्नी समझें।”

---

64 क्रोध [1560] (कोडना सं. क्रोध)

“भिक्षुओं, क्रोधित पुरुष या स्त्री पर आ पड़ने वाली ये सात बातें शत्रु को प्रसन्न करती हैं और उनके लिए लाभकारी होती हैं। वे सात बातें कौन सी हैं?”

(1) “हे भिक्षुओं, देखिए, शत्रु अपने शत्रु की कामना करता है: ‘काश वह बदसूरत हो जाए!’ क्यों? शत्रु अपने शत्रु की सुंदरता से प्रसन्न नहीं होता। जब कोई क्रोधित व्यक्ति क्रोध से व्याकुल हो जाता है, चाहे वह अच्छी तरह स्नान किया हो, तेल लगाया हो, बाल और दाढ़ी संवारे हों, सफेद वस्त्र पहने हो, फिर भी वह बदसूरत ही लगता है। क्रोधित पुरुष या स्त्री पर आने वाली पहली चीज जो शत्रु को प्रसन्न और लाभान्वित करती है, वह यही है।”

(2) “एक शत्रु दूसरे शत्रु की कामना करता है: ‘काश उसकी नींद खराब हो!’ क्यों? शत्रु को अपने शत्रु की अच्छी नींद से प्रसन्नता नहीं होती। जब कोई क्रोधित व्यक्ति क्रोध से व्याकुल हो जाता है, तो चाहे वह गद्दों, कंबलों और आवरणों से ढके पलंग पर सोए, हिरण की खाल के उत्कृष्ट आवरण पर, चंदवा और दोनों सिरों पर लाल तकियों के साथ, फिर भी उसकी नींद खराब होती है। यह दूसरी बात है जो शत्रु को किसी क्रोधित पुरुष या स्त्री पर आने पर प्रसन्न और लाभान्वित करती है।”

(3) “फिर, एक शत्रु दूसरे शत्रु की कामना करता है: 'काश वह सफल न हो!' क्यों? शत्रु अपने शत्रु की सफलता से प्रसन्न नहीं होता। [95] जब कोई क्रोधित व्यक्ति क्रोध से व्याकुल हो जाता है, यदि उसे कुछ हानिकारक मिलता है, तो वह सोचता है: 'मुझे कुछ लाभकारी मिला है,' और यदि उसे कुछ लाभकारी मिलता है, तो वह सोचता है: 'मुझे कुछ हानिकारक मिला है।' जब क्रोध से व्याकुल होकर उसे ये एक-दूसरे के बिल्कुल विपरीत चीजें मिलती हैं, तो वे उसे लंबे समय तक हानि और पीड़ा पहुँचाती हैं। यही तीसरी बात है जो किसी क्रोधित पुरुष या स्त्री पर आने वाले शत्रु को प्रसन्न और लाभ पहुँचाती है।

(4) “फिर, एक शत्रु दूसरे शत्रु की कामना करता है? 'काश वह धनवान न हो!' क्यों? शत्रु अपने शत्रु के धन से प्रसन्न नहीं होता। जब कोई क्रोधित व्यक्ति क्रोध से व्याकुल हो जाता है, तो राजा उसके द्वारा परिश्रमपूर्वक अर्जित, बलि से एकत्रित, पसीने से कमाए गए, न्यायसंगत रूप से अर्जित धन को राजकोष में जमा कर लेते हैं। यही चौथी बात है जो किसी क्रोधित पुरुष या स्त्री पर विजय प्राप्त करने पर शत्रु को प्रसन्न और लाभान्वित करती है।”

(5) "फिर, एक शत्रु दूसरे शत्रु की कामना करता है: 'काश वह प्रसिद्ध न हो!' क्यों? शत्रु अपने शत्रु की प्रसिद्धि से प्रसन्न नहीं होता। जब कोई क्रोधित व्यक्ति क्रोध से अभिभूत और पीड़ित हो जाता है, तो वह सतर्कता के कारण अर्जित की गई अपनी सारी प्रसिद्धि खो देता है। यह पाँचवीं बात है जो शत्रु को प्रसन्न करती है और लाभ पहुँचाती है जब वह किसी क्रोधित पुरुष या स्त्री पर घटित होती है।"

(6) "फिर, एक शत्रु, दूसरे शत्रु के लिए यही कामना करता है: 'काश उसके कोई मित्र न हों!' क्यों? शत्रु को अपने मित्र देखकर प्रसन्नता नहीं होती। जब कोई क्रोधित व्यक्ति क्रोध से व्याकुल हो जाता है, तो उसके मित्र, साथी, रिश्तेदार और परिवार के सदस्य उससे दूर से ही बचते हैं। यह छठी बात है जो किसी क्रोधित पुरुष या स्त्री पर आने पर शत्रु को प्रसन्न और लाभ पहुँचाती है। [96]

(7) "फिर, शत्रु दूसरे शत्रु के लिए यही कामना करता है: 'शरीर के क्षत्रप होने के बाद, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म ले!' क्यों? शत्रु अपने शत्रु के अच्छे गंतव्य पर जाने से प्रसन्न नहीं होता। जब कोई क्रोधित व्यक्ति क्रोध से ग्रस्त और पीड़ित होता है, तो वह शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लिप्त हो जाता है। परिणामस्वरूप, क्रोध से ग्रस्त रहते हुए, शरीर के क्षत्रप होने के बाद, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। यह सातवीं बात है जो शत्रु को प्रसन्न करती है और लाभ पहुँचाती है जब वह किसी क्रोधित पुरुष या स्त्री पर आती है।"

"ये सात ऐसी बातें हैं जो क्रोधित पुरुष या स्त्री पर आ गिरती हैं और शत्रु को प्रसन्न करती हैं और उनके लिए लाभदायक होती हैं।"

क्रोधित व्यक्ति बदसूरत होता है;

उसे नींद भी ठीक से नहीं आती;

कुछ लाभ प्राप्त करने के बाद भी

वह उसे हानिकारक समझता है। [1561]

क्रोधित व्यक्ति,

क्रोध से अभिभूत होकर,

शरीर और वाणी से वध करके, [1562]

धन की हानि उठाता है।

क्रोध से पागल होकर

वह बदनामी कमा लेता है।

उसके रिश्तेदार, दोस्त और प्रियजन

उस गुस्सैल व्यक्ति से दूर रहने लगते हैं।

क्रोध हानि का कारण है;

क्रोध मानसिक अशांति उत्पन्न करता है। लोग अपने भीतर से उत्पन्न

खतरे को पहचान नहीं पाते ।

क्रोधित व्यक्ति को अच्छाई का ज्ञान नहीं होता;

क्रोधित व्यक्ति को धर्म का दर्शन नहीं होता। क्रोध के आघूर्ण में

केवल अंधापन और घोर अंधकार छा जाता है ।

जब कोई क्रोधित व्यक्ति किसी को नुकसान पहुंचाता है,

चाहे आसानी से या कठिनाई से,

तो बाद में, जब क्रोध शांत हो जाता है, तो

वह आग से जलने की तरह पीड़ा झेलता है।

वह उसी तरह हठ दिखाता है
जैसे आग धुएं की लपटें फैलाती है।
जब उसका क्रोध बाहर फैलता है, तो
लोग भी उसके कारण क्रोधित हो जाते हैं।

उसे न तो शर्म है और न ही गलत काम का डर,
उसकी वाणी सम्मानजनक नहीं है;
क्रोध से ग्रस्त व्यक्ति के
पास सुरक्षा का कोई ठिकाना नहीं होता।

मैं तुम्हें उन कर्मों के बारे में बताऊंगा
जो पीड़ा उत्पन्न करते हैं।
इन्हें ध्यानपूर्वक सुनो,
धर्मी लोगों से दूर रहकर।
एक क्रोधित व्यक्ति अपने पिता की हत्या करता है;
एक क्रोधित व्यक्ति अपनी ही माता की हत्या करता है;
एक क्रोधित व्यक्ति ब्राह्मण की हत्या करता है;
एक क्रोधित व्यक्ति सांसारिक व्यक्ति की हत्या करता है।

क्रोधित सांसारिक व्यक्ति अपनी माँ की हत्या कर देता है,
उस नेक महिला की जिसने उसे जीवन दिया,
जिसने उसका पालन-पोषण किया
और जिसने उसे इस दुनिया से परिचित कराया।
वे प्राणी, स्वयं की ही तरह,
अपने आप को सबसे प्रिय मानते हैं;
फिर भी जो लोग क्रोधित होते हैं,

वे विभिन्न मामलों से व्याकुल होने पर अलग-अलग तरीकों से आत्महत्या कर लेते हैं।

कुछ लोग तलवार से आत्महत्या कर लेते हैं;

कुछ व्याकुल होकर विष पी लेते हैं;

कुछ रस्सी से फांसी लगा लेते हैं;

कुछ पहाड़ की खाई में कूद जाते हैं।

ऐसे कर्म जिनमें विकास को नष्ट करना शामिल है [1567]

और ऐसे कर्म जो उनकी अपनी मृत्यु का कारण बनते हैं:

ऐसे कर्म करते समय वे नहीं जानते

कि हार क्रोध से पैदा होती है।

इस प्रकार हृदय में छिपा मृत्यु का फंदा

क्रोध का रूप धारण कर चुका है।

इसे आत्मसंयम,

ज्ञान (दिव्य ज्ञान), ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और सही दृष्टि से काट देना चाहिए।

बुद्धिमान व्यक्ति को

इस हानिकारक (अकुसला) गुण का नाश करना चाहिए।

धम्म का अभ्यास इसी प्रकार करना चाहिए:

हठधर्मिता के आगे न झुकना चाहिए।

क्रोध से मुक्त, उनके दुख दूर,

मोह से मुक्त, 1569 अब लालची नहीं,

शांत, क्रोध त्यागकर,

निष्कलंक लोग निर्वाण प्राप्त करते हैं। [1570]

VII. महावग्गो (महान अध्याय)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

65 नैतिक शर्म [1571] (हिरियट्टप्पा)

भिक्षुओं, (1) जब नैतिक लज्जा और नैतिक भय की भावना न हो, तो नैतिक लज्जा और नैतिक भय की भावना से रहित व्यक्ति के लिए, (2) इंद्रियों के संयम का निकटवर्ती कारण नहीं रह जाता। जब इंद्रियों के संयम का अभाव हो, तो इंद्रियों के संयम से रहित व्यक्ति के लिए, (3) सद्गुणी आचरण का निकटवर्ती कारण नहीं रह जाता। जब सद्गुणी आचरण न हो, तो सद्गुणी आचरण से रहित व्यक्ति के लिए, (4) सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का निकटवर्ती कारण नहीं रह जाता। जब सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) न हो, तो सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से रहित व्यक्ति के लिए, (5) चीजों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन का निकटवर्ती कारण नहीं रह जाता। जब चीजों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन न हो, तो चीजों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन से रहित व्यक्ति के लिए, (6) निब्बिदा (मोहभंग) और वैराग (विरग) अपने निकटवर्ती कारण से वंचित है। जब वैराग्य और वैराग्य नहीं होता, तो वैराग्य और वैराग्य से रहित व्यक्ति के लिए, (7) मुक्ति का ज्ञान और दर्शन (विमुक्ति-नाना-दस्सना संस्कृत: विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) अपने निकटवर्ती कारण से वंचित है।

मान लीजिए एक पेड़ में शाखाएँ और पत्तियाँ कम हैं। तो उसकी शाखाएँ पूरी तरह से विकसित नहीं होतीं; न ही उसकी छाल, कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी पूरी तरह से विकसित होती हैं। ठीक उसी प्रकार, जब नैतिक लज्जा और नैतिक भय का अभाव होता है, तो नैतिक लज्जा और नैतिक भय से रहित व्यक्ति के लिए इंद्रियों पर नियंत्रण का तात्कालिक कारण नहीं रह जाता। जब इंद्रियों पर नियंत्रण नहीं होता... तब मुक्ति का ज्ञान और दर्शन (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) का तात्कालिक कारण नहीं रह जाता।

भिक्षुओं, (1) जब नैतिक लज्जा और नैतिक भय की भावना हो, तो नैतिक लज्जा और नैतिक भय से ग्रसित व्यक्ति के लिए, (2) इंद्रियों का संयम इसका निकटतम कारण है। जब इंद्रियों का संयम हो, तो इंद्रियों का संयम रखने वाले व्यक्ति के लिए, (3) सद्गुणी आचरण इसका निकटतम कारण है। जब सद्गुणी आचरण हो, तो सद्गुणी आचरण वाले व्यक्ति के लिए, (4) सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) इसका निकटतम कारण है। जब सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) हो, तो सही समाधि से ग्रसित व्यक्ति के लिए, (5) यथार्थ-भूत-ज्ञान-दर्शन (यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन) इसका निकटतम कारण है। जब यथार्थ-भूत-ज्ञान-दर्शन हो, तो सही अर्थों में चीजों का ज्ञान और दर्शन प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए, (6) निबिद्दा और वैराग्य का निकटवर्ती कारण होता है। जब विरक्तता और वैराग्य होता है, तो विरक्तता और वैराग्य से युक्त व्यक्ति के लिए, (7) मुक्ति का ज्ञान और दर्शन (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) का निकटवर्ती कारण होता है।

“मान लीजिए एक वृक्ष है जिसमें शाखाएँ और पत्तियाँ हैं। फिर उसकी शाखाएँ पूर्ण रूप से बढ़ती हैं; उसकी छाल, कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी भी पूर्ण रूप से बढ़ती हैं। ठीक उसी प्रकार, जब नैतिक लज्जा और नैतिक भय की भावना होती है, तो ऐसे व्यक्ति के लिए इंद्रियों पर नियंत्रण ही इसका मूल कारण होता है। जब इंद्रियों पर नियंत्रण होता है... तो मुक्ति का ज्ञान और दर्शन (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) इसका मूल कारण होता है।” [100]

---

66 सात सूर्य (सत्तसूर्य सं. सप्त-सूर्य)

सन् 1572 में एक बार भगवान (बुद्ध) वेशाली में अंबपाल के उपवन में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, सताए गए भाव (संहार/संस्कार/भावनाएँ) क्षणभंगुर हैं; सताए गए भाव (धर्म) अस्थिर हैं; सताए गए भाव (संहार/संस्कार/भावनाएँ) अविश्वसनीय हैं। सभी सताए गए भावों से विरक्त होना ही पर्याप्त है, उनके प्रति उदासीन होना ही पर्याप्त है, उनसे मुक्ति पाने के लिए।

भिक्षुओं, पर्वतों के राजा सिनेरु की लंबाई 84,000 योजन और चौड़ाई 84,000 योजन है; यह विशाल सागर में 84,000 योजन तक डूबा हुआ है और विशाल सागर से 84,000 योजन ऊपर उठता है। 1573

(1) "भिक्षुओं, एक समय ऐसा आता है जब कई वर्षों तक, सैकड़ों वर्षों तक, हजारों वर्षों तक, लाखों वर्षों तक वर्षा नहीं होती। जब वर्षा नहीं होती, तो बीज, वनस्पति, औषधीय पौधे, घास और जंगल के विशाल वृक्ष सूखकर नष्ट हो जाते हैं। बद्ध घटनाएँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ) इतनी क्षणभंगुर, इतनी अस्थिर और इतनी अविश्वसनीय हैं। सभी बद्ध घटनाओं से विरक्त होना, उनके प्रति उदासीन होना ही पर्याप्त है, उनसे मुक्ति पाने के लिए पर्याप्त है।"

(2) "एक समय ऐसा आता है जब, लंबे समय के बाद, दूसरा सूर्य प्रकट होता है। दूसरे सूर्य के प्रकट होने के साथ ही छोटी नदियाँ और झीलें सूखकर वाष्पित हो जाती हैं और उनका अस्तित्व समाप्त हो जाता है। [101] इसी प्रकार, परिस्थितिजन्य घटनाएँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ) क्षणभंगुर हैं। ... उनसे मुक्त होना ही पर्याप्त है।"

(3) एक समय ऐसा आता है जब लंबे समय के बाद तीसरा सूर्य प्रकट होता है। तीसरे सूर्य के प्रकट होते ही गंगा, यमुना, अचिरावती, सरभू और माही जैसी महान नदियाँ सूखकर वाष्पित हो जाती हैं और उनका अस्तित्व समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार, बद्ध घटनाएँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ) क्षणभंगुर होती हैं। ... उनसे मुक्ति पाना ही पर्याप्त है।

(4) एक समय ऐसा आता है, जब लंबे समय के बाद चौथा सूर्य प्रकट होता है। चौथे सूर्य के प्रकट होने के साथ ही वे महान झीलें जिनसे वे महान नदियाँ निकलती हैं—अनोत्तत्त, सिहापपाता, रथकारा, कन्नामुंडा, कुणाला, छद्दन्त और मंदाकिनी—सूख जाती हैं, वाष्पित हो जाती हैं और उनका अस्तित्व समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार, बद्ध घटनाएँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ) क्षणभंगुर हैं। ... उनसे मुक्ति पाना ही पर्याप्त है।

(5) "वहाँ; एक समय आता है जब, बहुत समय बाद, पाँचवाँ सूर्य प्रकट होता है। पाँचवें सूर्य के प्रकट होने के साथ ही, विशाल सागर का जल सौ योजन, दो सौ योजन... तीन सौ योजन... सात सौ योजन तक नीचे चला जाता है। विशाल सागर में बचा हुआ जल सात ताड़ के वृक्षों की ऊँचाई तक, छह ताड़ के वृक्षों की ऊँचाई तक... पाँच ताड़ के वृक्षों की ऊँचाई तक... चार ताड़ के वृक्षों की ऊँचाई तक... तीन ताड़ के वृक्षों की ऊँचाई तक... दो ताड़ के वृक्षों की ऊँचाई तक [102]... केवल एक ताड़ के वृक्ष की ऊँचाई तक होता है। विशाल सागर में बचा हुआ जल सात फ़ैदम... छह फ़ैदम... पाँच फ़ैदम... चार फ़ैदम... तीन फ़ैदम... दो फ़ैदम... एक फ़ैदम... आधा फ़ैदम... कमर तक... घुटनों तक... की ऊँचाई तक होता है।" टखनों तक। जैसे शरद ऋतु में जब भारी बारिश की बूँदें बरसती हैं, तो जगह-जगह पशुओं के खुरों के निशानों में पानी जमा हो जाता है, उसी प्रकार विशाल सागर में बचा हुआ पानी जगह-जगह पशुओं के खुरों के निशानों के आकार के तालाबों में जमा हो जाता है। पाँचवें सूर्य के प्रकट होने पर, विशाल सागर में बचा हुआ पानी उंगलियों के जोड़ों तक भी नहीं पहुँच पाता। इसी प्रकार, संभाव्यताएँ (संहार/संवेदनाएँ) क्षणभंगुर हैं। ... उनसे मुक्ति पाना ही पर्याप्त है।

(6) एक समय ऐसा आता है जब लंबे समय के बाद छठा सूर्य प्रकट होता है। छठे सूर्य के प्रकट होने पर यह महान पृथ्वी और पर्वतों के राजा सिनेरु धुंआ छोड़ते हैं, और सुलगते हैं। जैसे कुम्हार की आग जलाने पर पहले धुंआ छोड़ती है, और सुलगती है, वैसे ही छठे सूर्य के प्रकट होने पर यह महान पृथ्वी और पर्वतों के राजा सिनेरु धुंआ छोड़ते हैं, और सुलगते हैं। इसी प्रकार, बद्ध घटनाएँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ) क्षणभंगुर हैं। ... उनसे मुक्ति पाना ही पर्याप्त है।

(7) "एक समय ऐसा आता है जब, बहुत समय बाद, सातवाँ सूर्य प्रकट होता है[103] सातवें सूर्य के प्रकट होने के साथ ही, यह महान पृथ्वी और पर्वतों के राजा सिनेरु ज्वालाओं में घिर जाते हैं, प्रज्वलित होकर एक ज्वाला-समूह बन जाते हैं। जैसे ही महान पृथ्वी और सिनेरु दहकते और जलते हैं, हवा द्वारा उठाई गई ज्वाला ब्रह्मलोक तक पहुँच जाती है। जैसे ही सिनेरु दहकते और जलते हैं, जैसे ही वह विनाश की ओर अग्रसर होते हैं और अत्यधिक ऊष्मा से अभिभूत हो जाते हैं, सौ योजन के पर्वत शिखर विघटित हो जाते हैं; दो सौ योजन... तीन सौ योजन... चार सौ योजन... पाँच सौ योजन के पर्वत शिखर विघटित हो जाते हैं।

जब यह विशाल पृथ्वी और पर्वतों के राजा शिनेरु धधकते हैं, तब न तो राख दिखाई देती है और न ही कालिख। जैसे घी या तेल धधकते हैं, तब न तो राख दिखाई देती है और न ही कालिख, ठीक वैसे ही जब यह विशाल पृथ्वी और पर्वतों के राजा शिनेरु धधकते हैं। इसी प्रकार, सभी परिस्थितियाँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ) क्षणभंगुर, अस्थिर और अविश्वसनीय हैं। सभी परिस्थितियों (संहार/संस्कार/भावनाओं) से विरक्त होना ही पर्याप्त है, उनके प्रति उदासीन होना ही पर्याप्त है, उनसे मुक्ति पाने के लिए।

"भिक्षुओं (मठवासियों), सत्य को देखने वालों के अलावा कौन सोचेगा या विश्वास करेगा: 1574 'यह महान पृथ्वी और पर्वतों के राजा सिनेरु जलकर नष्ट हो जाएंगे और उनका अस्तित्व समाप्त हो जाएगा'?"

भिक्षुओं, अतीत में सुनेत्ता नामक एक गुरु थे, जो एक आध्यात्मिक संप्रदाय के संस्थापक थे, जो इंद्रिय सुखों के प्रति वासना (राग) से रहित थे। 1576 गुरु सुनेत्ता [104] के सैकड़ों शिष्य थे, जिन्हें उन्होंने ब्रह्म जगत के साथ संगति का मार्ग सिखाया। जब वे शिक्षा दे रहे थे, तो जो लोग उनकी शिक्षा को पूर्णतः समझ लेते थे, वे शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, एक अच्छे गंतव्य, ब्रह्म जगत में पुनर्जन्म लेते थे। परन्तु जो लोग उनकी शिक्षा को पूर्णतः नहीं समझ पाते थे, उनमें से कुछ अन्य सृष्टि को नियंत्रित करने वाले देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ, 1577 सृष्टि में आनंद लेने वाले देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ, कुछ तुषिता देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ, कुछ यम देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ, कुछ तावतिंसा देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ, और कुछ अन्य देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेते थे। देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ, जिन पर चार महान राजाओं का शासन था। कुछ का पुनर्जन्म धनी क्षत्रियों के साथ हुआ; कुछ का धनी ब्राह्मणों के साथ; कुछ का धनी गृहस्थों के साथ।

"तब, भिक्षुओं, गुरु सुनेत्ता के मन में यह विचार आया: 'यह उचित नहीं है कि मेरा भविष्य ठीक वही हो जो मेरे शिष्यों का है। मुझे प्रेम और करुणा (मेट्टा) को और विकसित करना चाहिए।' तब गुरु सुनेत्ता ने सात वर्षों तक प्रेम और करुणा का भाव विकसित किया। फलस्वरूप, सात युगों तक, जब संसार का विघटन और विकास हुआ, वे इस संसार में वापस नहीं आए। जब संसार का विघटन हो रहा था [105], वे प्रकाश के प्रवाह के लोक में चले गए। जब संसार का विकास हो रहा था, तब उनका ब्रह्मा के एक खाली महल में पुनर्जन्म हुआ। 1578

वहाँ ब्रह्मा विराजमान थे, महान ब्रह्मा, विजेता, अजेय, सर्वज्ञानी, सर्वशक्तिशाली। वे छत्तीस बार सक्का (इंद्र) थे, देवताओं के शासक। सैकड़ों बार वे चक्र चलाने वाले सम्राट, धर्म के मार्ग पर चलने वाले धर्मात्मा राजा, चारों सीमाओं तक शासन करने वाले विजेता, अपने देश में स्थिरता प्राप्त करने वाले और सात रत्नों से परिपूर्ण थे। उनके एक हजार से अधिक पुत्र थे जो वीर, बलवान और शत्रुओं की सेनाओं को कुचलने में सक्षम थे। उन्होंने इस पृथ्वी को समुद्र की सीमाओं तक जीतने के बाद शासन किया, बल और शस्त्रों से नहीं बल्कि धर्म के मार्ग से।

"भिक्षुओं, यद्यपि सुनेत्ता का जीवनकाल इतना लंबा था और वे इतने लंबे समय तक साधना करते रहे, फिर भी वे पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त नहीं हो सके। वे कष्टों से मुक्त नहीं हुए, मैं कहता हूँ। इसका कारण क्या है? क्योंकि वे चार बातों को समझ नहीं पाए और उनमें पारंगत नहीं हो सके। वे चार बातें क्या हैं? श्रेष्ठ सद्गुणी आचरण, श्रेष्ठ समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), श्रेष्ठ पन्ना (दिव्य ज्ञान) और श्रेष्ठ मुक्ति।"

"हे भिक्षुओं, श्रेष्ठ सद्गुणी आचरण को समझ लिया गया है और उसमें पारंगत हो चुका है। श्रेष्ठ समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) को समझ लिया गया है और उसमें पारंगत हो चुका है। श्रेष्ठ पन्ना (दिव्य ज्ञान) को समझ लिया गया है और उसमें पारंगत हो चुका है। श्रेष्ठ मुक्ति को समझ लिया गया है और उसमें पारंगत हो चुका है। अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की लालसा (तन्हा/तृष्णा) का नाश हो चुका है; अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का मार्ग नष्ट हो चुका है; अब कोई नया अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) नहीं है।" 1579 [106] यही भगवान (बुद्ध) ने कहा। यह कहकर, सुगत (भगवान बुद्ध), गुरु ने आगे यह कहा:

"पुण्य आचरण, समाधि (आत्म-लीनता/तल्लीनता), पन्ना (दिव्य ज्ञान), और अतुलनीय मुक्ति: इन चीजों को महान गौतम ने स्वयं समझा था।"

इन बातों को प्रत्यक्ष रूप से जानने के बाद, बुद्ध ने भिक्षुओं को धम्म का उपदेश दिया। गुरु, दुखों का अंत करने वाले, दूरदर्शी, ने निर्वाण प्राप्त कर लिया है।

---

67 किले की उपमा (नगरोपमा सं. नगर-उपमा)

भिक्षुओं, जब किसी राजा का सीमावर्ती किला किले की सात सहायक सामग्रियों से सुसज्जित हो और बिना किसी परेशानी या कठिनाई के चार प्रकार के भोजन आसानी से प्राप्त कर ले, तो उसे राजा का ऐसा सीमावर्ती किला कहा जा सकता है जिस पर बाहरी शत्रुओं और दुश्मनों द्वारा हमला नहीं किया जा सकता है।

"एक किले में मौजूद सात प्रकार की सहायक सामग्रियां कौन-कौन सी हैं जिनसे वह अच्छी तरह सुसज्जित होता है?"

(1) "हे भिक्षुओं, यहाँ राजा के सीमावर्ती किले में स्तंभ का आधार गहरा है और वह मजबूती से स्थापित है, अचल और अविचल है। राजा का सीमावर्ती किला अपने निवासियों की रक्षा करने और बाहरी लोगों को दूर रखने के लिए इस प्रथम सहायक उपकरण से अच्छी तरह सुसज्जित है।"

(2) "फिर, राजा के सीमावर्ती किले में खाई गहरी और चौड़ी खोदी जाती है। राजा का सीमावर्ती किला अपने निवासियों की रक्षा करने और बाहरी लोगों को रोकने के लिए इस दूसरे सहायक उपकरण से अच्छी तरह सुसज्जित होता है। [107]

(3) "फिर, राजा के सीमावर्ती किले में गश्ती मार्ग ऊंचा और चौड़ा होता है। राजा का सीमावर्ती किला अपने निवासियों की रक्षा करने और बाहरी लोगों को दूर रखने के लिए इस तीसरे सहायक उपकरण से अच्छी तरह सुसज्जित होता है।

(4) "फिर, राजा के सीमावर्ती किले में कई हथियार रखे जाते हैं, जिनमें मिसाइलें और हाथ के हथियार दोनों शामिल हैं। 1580 राजा का सीमावर्ती किला अपने निवासियों की रक्षा करने और बाहरी लोगों को रोकने के लिए इस चौथे सहायक उपकरण से अच्छी तरह सुसज्जित है।

(5) "फिर, राजा के सीमावर्ती किले में अनेक प्रकार की सेनाएँ निवास करती हैं, अर्थात् हाथी सेना, घुड़सवार सेना, रथ चालक, तीरंदाज, ध्वजवाहक, शिविर सेनापति, भोजन परोसने वाले, उग्ग जाति के योद्धा, अग्रिम पंक्ति के कमांडो, बैल योद्धा, आक्रमणकारी सैनिक, ढालधारी सैनिक, घरेलू दास सैनिक। 1581 राजा का सीमावर्ती किला अपने निवासियों की रक्षा और बाहरी लोगों को रोकने के लिए इस पाँचवें सहायक उपकरण से अच्छी तरह सुसज्जित है।

(6) "फिर, राजा के सीमावर्ती किले में द्वारपाल बुद्धिमान, सक्षम और समझदार होता है, जो अजनबियों को बाहर रखता है और परिचितों को अंदर आने देता है। राजा का सीमावर्ती किला अपने निवासियों की रक्षा करने और बाहरी लोगों को रोकने के लिए इस छठे सहायक उपकरण से अच्छी तरह सुसज्जित होता है।"

(7) "फिर, राजा के सीमावर्ती किले में प्राचीर ऊँची और चौड़ी होती है, जिस पर प्लास्टर की परत चढ़ी होती है। राजा का सीमावर्ती किला अपने निवासियों की रक्षा करने और बाहरी लोगों को रोकने के लिए इस सातवें सहायक उपकरण से अच्छी तरह सुसज्जित होता है। [108]

"यह इन सात प्रकार के सहायक अंगों से अच्छी तरह सुसज्जित है। और वे चार प्रकार के भोजन कौन से हैं जिन्हें यह बिना किसी परेशानी या कठिनाई के आसानी से प्राप्त कर लेता है?"

(1) "यहाँ, भिक्षुओं, राजा के सीमावर्ती किले में बहुत घास, जलाऊ लकड़ी और पानी जमा किया जाता है, ताकि वहाँ के निवासियों को आनंद, राहत और आराम मिले और बाहरी लोगों को दूर रखा जा सके।

(2) "फिर, राजा के सीमावर्ती किले में निवासियों के आनंद, राहत और आराम के लिए तथा बाहरी लोगों को दूर रखने के लिए बहुत सारा चावल और जौ जमा किया जाता है।

(3) "फिर, राजा के सीमावर्ती किले में कई खाद्य पदार्थ - तिल, हरी मूंग और सेम 1583 - इसके निवासियों के आनंद, राहत और आराम के लिए और बाहरी लोगों को दूर रखने के लिए जमा किए जाते हैं।

(4) "फिर, राजा के सीमावर्ती किले में कई औषधियाँ - घी, मक्खन, तेल, शहद, गुड़ और नमक - उसके निवासियों के आनंद, राहत और आराम के लिए और बाहरी लोगों को दूर रखने के लिए जमा की जाती हैं।

"ये चार ऐसे खाद्य पदार्थ हैं जिन्हें यह बिना किसी परेशानी या कठिनाई के आसानी से प्राप्त कर लेता है।"

"जब, भिक्षुओं, किसी राजा का सीमावर्ती किला किले के इन सात सहायक उपकरणों से अच्छी तरह सुसज्जित हो, और जब वह बिना किसी परेशानी या कठिनाई के आसानी से इन चार प्रकार के भोजन को प्राप्त कर ले, तो यह कहा जा सकता है कि राजा के सीमावर्ती किले पर बाहरी शत्रुओं और दुश्मनों द्वारा हमला नहीं किया जा सकता है।"

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, जब एक श्रेष्ठ शिष्य सात अच्छे गुणों से युक्त होता है, और [109] जब वह इच्छा से, बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) प्राप्त करता है जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं, तब उसे एक श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जिस पर मारा का आक्रमण नहीं हो सकता, जिस पर दुष्ट का आक्रमण नहीं हो सकता।"

"उसमें कौन-कौन से सात अच्छे गुण हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, जिस प्रकार राजा के सीमावर्ती किले में स्तंभ का आधार गहरा और दृढ़ होता है, वह अचल और अविचल होता है, ताकि उसके निवासियों की रक्षा हो सके और बाहरी लोगों को रोका जा सके, उसी प्रकार श्रेष्ठ शिष्य आस्था से परिपूर्ण होता है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, मनुष्यों को वश में करने में अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' आस्था को अपना आधार बनाकर, श्रेष्ठ शिष्य हानिकारक (अकुशल) का त्याग करता है और लाभकारी (कुशल) का विकास करता है, निंदनीय का त्याग करता है और निष्कलंक का विकास करता है, और स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। वह इस प्रथम अच्छे गुण से युक्त होता है।"

(2) "जिस प्रकार राजा के सीमावर्ती किले में खाई उसके निवासियों की रक्षा और बाहरी लोगों को रोकने के उद्देश्य से गहरी और चौड़ी खोदी जाती है, उसी प्रकार एक श्रेष्ठ शिष्य में नैतिक लज्जा होती है; वह शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार से लज्जित होता है; वह बुरे (अकुशल) गुणों को ग्रहण करने से लज्जित होता है। नैतिक लज्जा को खाई के समान मानते हुए, श्रेष्ठ शिष्य हानिकारक (अकुशल) गुणों का त्याग करके लाभकारी (कुशल) गुणों को विकसित करता है, निंदनीय गुणों का त्याग करके निर्दोष गुणों को विकसित करता है और स्वयं को पवित्र बनाए रखता है। वह इस दूसरे अच्छे गुण से युक्त होता है।"

(3) "जिस प्रकार राजा के सीमावर्ती किले में गश्ती मार्ग ऊँचा और चौड़ा होता है, ताकि वहाँ के निवासियों की रक्षा हो सके और बाहरी लोगों को रोका जा सके, उसी प्रकार एक श्रेष्ठ शिष्य भी कुकर्म से भयभीत रहता है; वह शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार से भयभीत रहता है; वह अकुशल गुणों (धम्म) को ग्रहण करने से भयभीत रहता है। नैतिक भय को गश्ती मार्ग बनाकर, श्रेष्ठ शिष्य अकुशल गुणों का त्याग करता है और कुशल गुणों का विकास करता है, निंदनीय गुणों का त्याग करता है और निर्दोष गुणों का विकास करता है, तथा स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। वह इस तीसरे अच्छे गुण से युक्त होता है।"

(4) "जिस प्रकार राजा के सीमावर्ती किले में निवासियों की रक्षा और बाहरी लोगों को रोकने के उद्देश्य से कई हथियार, चाहे वे मिसाइल हों या हाथ के हथियार, रखे जाते हैं, उसी प्रकार एक श्रेष्ठ शिष्य ने भी बहुत कुछ सीखा है, उसे याद रखता है और उसका ज्ञान संचित करता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों—ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से उनका अध्ययन किया है और दृष्टि से उनका गहन अध्ययन किया है। ज्ञान को अपने हथियार के रूप में उपयोग करके, श्रेष्ठ शिष्य हानिकारक (अकुशल) का त्याग करता है और लाभकारी (कुशल) का विकास करता है, निंदनीय का त्याग करता है और निष्कलंक का विकास करता है, और स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। वह इस चौथे गुण से युक्त होता है।"

(5) "जिस प्रकार राजा के सीमावर्ती किले में अनेक प्रकार की सेनाएँ निवास करती हैं, अर्थात् हाथी सेनाएँ... घरेलू दास सैनिक, जो वहाँ के निवासियों की रक्षा और बाहरी लोगों को रोकने के लिए होते हैं, उसी प्रकार एक श्रेष्ठ शिष्य हानिकारक (अकुशल) गुणों का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करता है; वह बलवान, दृढ़ और लाभकारी

(कुशल) गुणों को विकसित करने के कर्तव्य का पालन करता है; ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को अपनी सेना बनाकर, श्रेष्ठ शिष्य हानिकारक (अकुशल) का त्याग करता है और लाभकारी (कुशल) का विकास करता है, निंदनीय का त्याग करता है और निष्कलंक का विकास करता है, और स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। वह इस पाँचवें अच्छे गुण से युक्त होता है।"

(6) "जिस प्रकार राजा के सीमावर्ती किले का द्वारपाल बुद्धिमान, सक्षम और समझदार होता है, जो अजनबियों को बाहर रखता है और परिचितों को प्रवेश देता है, अपने निवासियों की रक्षा करने और बाहरी लोगों को दूर रखने के लिए, [111] उसी प्रकार एक श्रेष्ठ शिष्य सचेत होता है, सर्वोच्च सती ध्यान और सतर्कता से परिपूर्ण होता है, जो बहुत पहले किए और कहे गए कार्यों को याद रखता है। सती ध्यान को अपना रक्षक बनाकर, श्रेष्ठ शिष्य अकुशल कर्मों का त्याग करता है और कुशल कर्मों का विकास करता है, निंदनीय कर्मों का त्याग करता है और निर्दोष कर्मों का विकास करता है, और स्वयं को पवित्रता में बनाए रखता है। वह इस छठे अच्छे गुण से युक्त होता है।"

(7) "जिस प्रकार राजा के सीमावर्ती किले की प्राचीर ऊँची और चौड़ी होती है, और उस पर प्लास्टर चढ़ा होता है, ताकि वह अपने निवासियों की रक्षा करे और बाहरी लोगों को रोके, उसी प्रकार एक श्रेष्ठ शिष्य बुद्धिमान होता है; वह उस ज्ञान (पन्न) से युक्त होता है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति जानता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों का पूर्ण नाश करता है। उस ज्ञान (पन्न) को अपने कवच के रूप में धारण करके, श्रेष्ठ शिष्य अकुशल (हानिकारक) का त्याग करता है और कुशल (सुविधाजनक) का विकास करता है, निंदनीय (दोषपूर्ण) का त्याग करता है और निर्दोष (दोषरहित) का विकास करता है, और अपने आप को पवित्रता में बनाए रखता है। वह इस सातवें गुण से युक्त होता है।"

"उसमें ये सात अच्छे गुण हैं। 1564 "और वे चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) क्या हैं जो उच्च मन का निर्माण करती हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं, जिन्हें वह बिना किसी परेशानी या कठिनाई के अपनी इच्छा से प्राप्त करता है?"

(1) "जिस प्रकार, हे भिक्षुओं, राजा के सीमावर्ती किले में निवासियों के आनंद, राहत और आराम के लिए तथा बाहरी लोगों को दूर रखने के लिए बहुत सारा घास, जलाऊ लकड़ी और पानी जमा किया जाता है, उसी प्रकार, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, एक श्रेष्ठ शिष्य प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त होता है, जिसमें विचार और परीक्षा शामिल होती है— अपने स्वयं के आनंद, राहत और आराम के लिए तथा निर्वाण (निब्बान) में प्रवेश करने के लिए।"

(2) "जिस प्रकार [112] राजा के सीमावर्ती किले में उसके निवासियों के आनंद, राहत और आराम के लिए तथा बाहरी लोगों को दूर रखने के लिए बहुत सारा चावल और जौ जमा किया जाता है, उसी प्रकार विचार और परीक्षा के शांत होने पर एक श्रेष्ठ शिष्य द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है तथा समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) होता है, बिना विचार और परीक्षा के—अपने स्वयं के आनंद, राहत और आराम के लिए तथा निर्वाण (निब्बान) में प्रवेश करने के लिए।"

(3) "जिस प्रकार राजा के सीमावर्ती किले में निवासियों के आनंद, राहत और आराम के लिए तथा बाहरी लोगों को दूर रखने के लिए तिल, हरी मूंग और सेम जैसी अनेक खाद्य सामग्री संचित की जाती है, उसी प्रकार, जब आनंद (पीति) भी लुप्त हो जाता है, तो एक श्रेष्ठ शिष्य समभाव में रहता है और सचेत (सती) होकर, पूर्णतः बोध करते हुए, वह शरीर के साथ सुख (सुख) का अनुभव करता है; वह तीसरे ध्यान (सती अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जिसके बारे में श्रेष्ठ कहते हैं: 'वह समभाव में, सचेत (सती) होकर, सुख से निवास करता है' - अपने स्वयं के आनंद, राहत और आराम के लिए तथा निर्वाण (निब्बान) में प्रवेश करने के लिए।"

(4) "जिस प्रकार राजा के सीमावर्ती किले में निवासियों के आनंद, राहत और आराम के लिए तथा बाहरी लोगों को दूर रखने के लिए अनेक औषधियाँ— घी, मक्खन, तेल, शहद, गुड़ और नमक— संचित की जाती हैं, उसी प्रकार सुख और दुख का त्याग करके तथा प्रसन्नता और निराशा के पूर्वार्ध होने पर एक श्रेष्ठ शिष्य चौथे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) द्वारा सती ध्यान (ध्यान/सती) का शुद्धिकरण होता है— अपने स्वयं के आनंद, राहत और आराम के लिए तथा निर्वाण (निब्बान) में प्रवेश करने के लिए।"

"ये चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) हैं जो उच्च मन का निर्माण करती हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं, जिन्हें वह इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के प्राप्त करता है। (113)

"हे भिक्षुओं, जब एक श्रेष्ठ शिष्य इन सात अच्छे गुणों से युक्त होता है, और जब वह बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, इन चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त कर लेता है जो उच्च मन का निर्माण करती हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं, तब वह एक श्रेष्ठ शिष्य कहलाता है जिस पर मारा का आक्रमण नहीं हो सकता, जिस पर शैतान का आक्रमण नहीं हो सकता।"

---

68 धम्म को जानने वाला (धम्मन्नु)

"भिक्षुओं में सात गुण होते हैं; वे दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य होते हैं; वे संसार के लिए अतुलनीय पुण्य के क्षेत्र हैं। वे सात गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु वह है जो धम्म को जानता है, जो अर्थ को जानता है, जो स्वयं को जानता है, जो संयम जानता है, जो उचित समय को जानता है, जो सभा को जानता है, और जो श्रेष्ठ और निम्न प्रकार के व्यक्तियों को जानता है।"

(1) "भिक्षु वह कैसे होता है जो धम्म को जानता है? यहाँ, भिक्षु धम्म को जानता है: प्रवचन (सूत्र), मिश्रित गद्य और पद्य, व्याख्याएँ, श्लोक (गाथाएँ), प्रेरित कथन (उदान), उद्धरण (इतिवुत्तक), पुनर्जन्म कथाएँ (जातक), चमत्कारिक वृत्तांत और प्रश्न-उत्तर। यदि कोई भिक्षु धम्म को नहीं जानता— प्रवचनों को... प्रश्न-उत्तरों को— तो उसे 'धम्म को जानने वाला' नहीं कहा जाएगा। परन्तु क्योंकि वह धम्म को जानता है— प्रवचनों को... प्रश्न-उत्तरों को— इसलिए उसे 'धम्म को जानने वाला' कहा जाता है। अतः वह धम्म को जानने वाला है।"

(2) "और भिक्षु अर्थ जानने वाला कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु इस कथन का अर्थ इस प्रकार जानता है: 'इस कथन का अर्थ यह है; उस कथन का अर्थ यह है।' यदि कोई भिक्षु इस प्रकार इस कथन का अर्थ नहीं जानता... तो उसे 'अर्थ जानने वाला' नहीं कहा जाएगा। परन्तु क्योंकि वह इस कथन का अर्थ इस प्रकार जानता है: 'इस कथन का अर्थ यह है; [114] उस कथन का अर्थ यह है,' इसलिए उसे 'अर्थ जानने वाला' कहा जाता है। इस प्रकार वह धम्म को जानने वाला और अर्थ को जानने वाला होता है।"

(3) "और भिक्षु स्वयं को जानने वाला कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु स्वयं को इस प्रकार जानता है: 'मुझमें इतना विश्वास, सदाचार, ज्ञान, उदारता, पन्ना (दिव्य ज्ञान) और विवेक है।' यदि कोई भिक्षु स्वयं को इस प्रकार न जानता हो: 'मुझमें इतना विश्वास... और विवेक है,' तो उसे 'स्वयं को जानने वाला' नहीं कहा जाएगा। परन्तु क्योंकि वह स्वयं को इस प्रकार जानता है: 'मुझमें इतना विश्वास... और विवेक है,' इसलिए उसे 'स्वयं को जानने वाला' कहा जाता है। इस प्रकार वह धम्म को जानने वाला, अर्थ को जानने वाला और स्वयं को जानने वाला होता है।"

(4) "भिक्षु संयम जानने वाला कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु वस्त्र, भिक्षा, भोजन, आवास और बीमारों के लिए औषधि एवं भोजन ग्रहण करने में संयम जानता है। यदि कोई भिक्षु वस्त्र और बीमारों के लिए भोजन ग्रहण करने में संयम न जानता हो, तो उसे 'संयम जानने वाला' नहीं कहा जाएगा। परन्तु क्योंकि वह वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधि एवं भोजन ग्रहण करने में संयम जानता है, इसलिए उसे 'संयम जानने वाला' कहा जाता है। इस प्रकार वह धम्म को जानने वाला, अर्थ को जानने वाला, स्वयं को जानने वाला और संयम जानने वाला होता है।"

(5) "और भिक्षु वह कैसे होता है जो उचित समय जानता है? यहाँ, भिक्षु उचित समय इस प्रकार जानता है: 'यह सीखने का समय है, यह प्रश्न करने का समय है, यह परिश्रम करने का समय है, यह एकांतवास का समय है।' यदि कोई भिक्षु उचित समय नहीं जानता हो— 'यह सीखने का समय है... यह एकांतवास का समय है'— तो उसे 'उचित समय जानने वाला' नहीं कहा जाएगा। परन्तु क्योंकि वह उचित समय जानता है— 'यह सीखने का समय है... यह एकांतवास का समय है'— इसलिए उसे 'उचित समय जानने वाला' कहा जाता है। इस प्रकार वह धम्म को जानने वाला, अर्थ को जानने वाला, स्वयं को जानने वाला, संयम को जानने वाला और उचित समय को जानने वाला होता है।"

(6) "और भिक्षु सभा को जानने वाला कैसे कहलाता है? यहाँ, भिक्षु सभा को इस प्रकार जानता है: 'यह क्षत्रियों की सभा है, यह ब्राह्मणों की सभा है, यह गृहस्थों की सभा है, यह तपस्वियों की सभा है। इनमें से, किसी को इस प्रकार [इस सभा] में प्रवेश करना चाहिए; [115] इस प्रकार रुकना चाहिए; इस प्रकार कार्य करना चाहिए; इस प्रकार बैठना चाहिए; इस प्रकार बोलना चाहिए; इस प्रकार मौन रहना चाहिए।' यदि कोई भिक्षु सभा को इस प्रकार नहीं जानता: 'यह क्षत्रियों की सभा है... तपस्वियों की सभा है। इनमें से, किसी को इस प्रकार [इस सभा] में प्रवेश करना चाहिए... इस प्रकार मौन रहना चाहिए' - तो उसे 'सभा को जानने वाला' नहीं कहा जाएगा।" लेकिन क्योंकि वह सभा को जानता है—'यह क्षुद्रों की सभा है... तपस्वियों की सभा है। इनमें से किसी को इस प्रकार उपस्थित होना चाहिए... इस प्रकार मौन रहना चाहिए'—इसलिए उसे 'सभा का ज्ञाता' कहा जाता है। इस प्रकार वह धम्म का ज्ञाता है, अर्थ का ज्ञाता है, स्वयं का ज्ञाता है, संयम का ज्ञाता है, उचित समय का ज्ञाता है और सभा का ज्ञाता है।

(7) "भिक्षु (साधु) वह कैसे होता है जो श्रेष्ठ और निम्न प्रकार के व्यक्तियों को जानता है? यहाँ, भिक्षु व्यक्तियों को जोड़ों के रूप में समझता है। 1585

(i) "दो व्यक्ति: एक व्यक्ति नेक लोगों को देखना चाहता है; दूसरा व्यक्ति नेक लोगों को नहीं देखना चाहता। जो व्यक्ति नेक लोगों को नहीं देखना चाहता वह इस मामले में निंदनीय है; जो व्यक्ति नेक लोगों को देखना चाहता है वह इस मामले में प्रशंसनीय है।"

(ii) "दो व्यक्ति जो श्रेष्ठ व्यक्तियों को देखना चाहते हैं: एक व्यक्ति अच्छे धर्म को सुनना चाहता है; दूसरा व्यक्ति अच्छे धर्म को नहीं सुनना चाहता। जो व्यक्ति अच्छे धर्म को नहीं सुनना चाहता वह इस दृष्टि से निंदनीय है; जो व्यक्ति अच्छे धर्म को सुनना चाहता है वह इस दृष्टि से प्रशंसनीय है।"

(iii) "दो व्यक्ति जो अच्छे धम्म को सुनना चाहते हैं: एक उत्सुकतापूर्वक धम्म (मार्ग) सुनता है; दूसरा उत्सुकतापूर्वक धम्म नहीं सुनता। जो व्यक्ति उत्सुकतापूर्वक धम्म नहीं सुनता वह इस दृष्टि से निंदनीय है; जो व्यक्ति [116] उत्सुकतापूर्वक धम्म सुनता है वह इस दृष्टि से प्रशंसनीय है।

(iv) "दो व्यक्ति जो उत्सुकतापूर्वक धम्म सुनते हैं: एक धम्म सुनकर उसे मन में रखता है; दूसरा धम्म सुनकर उसे मन में नहीं रखता। जो व्यक्ति धम्म सुनकर उसे मन में नहीं रखता, वह इस दृष्टि से निंदनीय है; जो व्यक्ति धम्म सुनकर उसे मन में रखता है, वह इस दृष्टि से प्रशंसनीय है।"

(v) "दो व्यक्ति जिन्होंने धम्म को सुना और उसे मन में धारण किया: एक व्यक्ति उन शिक्षाओं के अर्थ की जांच करता है जिन्हें उसने मन में धारण किया है; दूसरा व्यक्ति उन शिक्षाओं के अर्थ की जांच नहीं करता है जिन्हें उसने मन में धारण किया है। जो व्यक्ति उन शिक्षाओं के अर्थ की जांच नहीं करता है वह इस दृष्टि से निंदनीय है; जो व्यक्ति उन शिक्षाओं के अर्थ की जांच करता है वह इस दृष्टि से प्रशंसनीय है।"

(vi) दो व्यक्ति जो मन में संजोए गए उपदेशों के अर्थ का परीक्षण करते हैं: एक ने अर्थ और धम्म को समझ लिया है और फिर धम्म के अनुसार अभ्यास करता है; दूसरे ने अर्थ और धम्म को नहीं समझा है और धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं करता है। जो व्यक्ति अर्थ और धम्म को नहीं समझ पाया है और धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं करता है, वह इस दृष्टि से निंदनीय है; जो व्यक्ति अर्थ और धम्म को समझ गया है और फिर धम्म के अनुसार अभ्यास करता है, वह इस दृष्टि से निंदनीय है।

(vii) "दो व्यक्ति जिन्होंने धम्म का अर्थ और उसे समझ लिया है और फिर धम्म के अनुसार अभ्यास करते हैं: एक व्यक्ति अपने कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, लेकिन दूसरों के कल्याण के लिए नहीं; दूसरा व्यक्ति अपने कल्याण और दूसरों के कल्याण दोनों के लिए अभ्यास कर रहा है। जो व्यक्ति अपने कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, लेकिन दूसरों के कल्याण के लिए नहीं, वह इस दृष्टि से निंदनीय है; जो व्यक्ति अपने कल्याण और दूसरों के कल्याण दोनों के लिए अभ्यास कर रहा है, वह इस दृष्टि से प्रशंसनीय है।"

"इसी तरह एक भिक्षु व्यक्तियों को जोड़ों के रूप में समझता है। इसी तरह एक भिक्षु श्रेष्ठ और निम्न प्रकार के व्यक्तियों को जानता है। [117]

"इन सात गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है।"

---

69 परिच्छत्तक

(1) "भिक्षुओं (मठवासियों), जब तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष के पत्ते पीले पड़ जाते हैं, 1586 तो तावतिंसा देव (देवदूत/देवता) प्रसन्न होकर सोचते हैं: 'परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष के पत्ते अब पीले पड़ गए हैं। अब जल्द ही इसके पत्ते झड़ जाएंगे।'

(2) "जब तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष के पत्ते झड़ जाते हैं, तो तावतिंसा देव (देवदूत/देवता) प्रसन्न होकर सोचते हैं: 'परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष के पत्ते झड़ गए हैं, अब जल्द ही इसमें पुष्पन का आरंभ हो जाएगा।' 1587

(3) "जब तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष में पुष्पन की शुरुआत हो जाती है, तो तावतिंसा देव (देवदूत/देवता) प्रसन्न होकर सोचते हैं: 'परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष में पुष्पन की शुरुआत हो चुकी है। अब इसके पुष्पन का विकास होने में अधिक समय नहीं लगेगा।' 1588

(4) "जब तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष में पुष्पीय विभेदन हो जाता है, तो तावतिंसा देव (देवदूत/देवता) प्रसन्न होकर सोचते हैं: 'परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष में पुष्पीय विभेदन हो चुका है। अब जल्द ही इसमें कलियाँ खिल जाएँगी।' 1589 .

(5) "जब तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष में कली निकल आती है, तो तावतिंसा देव (देवदूत/देवता) प्रसन्न होकर सोचते हैं: 'परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष में अब कली निकल आई है। अब जल्द ही [118] इसकी कली फूट जाएगी।' 1590

(6) "जब तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के परिच्छत्ततज़ा मूंगा वृक्ष की कली फूट जाती है, तो तावतिंसा देव (देवदूत/देवता) प्रसन्न होकर सोचते हैं; 'परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष की कली फूट गई है। अब जल्द ही यह पूरी तरह खिल जाएगा।' 1591

(7) "जब तावतिंसा देव (देवदूत/देवता) परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष पर पूर्णतः खिल उठते हैं, तो वे प्रसन्न हो उठते हैं और परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष की चरणों में चार दिव्य माह व्यतीत करते हुए पांचों इंद्रिय सुखों से परिपूर्ण होकर आनंद लेते हैं। परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष के पूर्णतः खिलने पर पचास योजन के क्षेत्र में चारों ओर एक तेजाभा फैल जाती है और सौ योजन तक वायु के साथ सुगंध प्रवाहित होती है। यही परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष की महिमा है।"

(1) "इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, जब कोई श्रेष्ठ शिष्य गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में जाने का निश्चय करता है, तो उस समय वह तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष के समान पीले पत्तों वाला हो जाता है। 1592

(2) "जब कोई श्रेष्ठ शिष्य अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, गेरुए वस्त्र धारण करके गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में चला जाता है, तो वह अवसर ऐसा होता है जैसे उसके पत्ते झड़ गए हों, जैसे तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) का परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष।"

(3) "जब कोई श्रेष्ठ शिष्य इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... उस अवसर पर उसका पुष्प दीक्षा संस्कार हुआ है, जैसे तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) का परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष।"

(4) "जब विचार और परीक्षा के शांत होने पर कोई श्रेष्ठ शिष्य द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... उस अवसर पर उसका पुष्पीय विभेदन तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष के समान होता है।"

(5) "जब, [119] आनंद (पीति) के लुप्त होने के साथ, एक श्रेष्ठ शिष्य . . . तीसरे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है . . . उस अवसर पर उसका कली निर्माण हुआ है, जैसे तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) का परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष।

(6) "जब सुख और दुख का त्याग करके, और पहले ही आनंद और निराशा के बीत जाने के बाद, एक श्रेष्ठ शिष्य चौथे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... उस अवसर पर उसकी कलियाँ खिल उठती हैं, जैसे तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) का परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष।"

(7) "जब, दोषों के नाश के साथ, एक श्रेष्ठ शिष्य प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा, इसी जीवन में, स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कर लेता है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है, उस अवसर पर वह तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के परिच्छत्तक मूंगा वृक्ष के समान पूर्णतः खिल उठता है।"

उस अवसर पर, भिक्षुओं, पृथ्वी पर निवास करने वाले देव (देवदूत/भगवान) यह उद्घोष करते हैं: 'आदरणीय फलां व्यक्ति, उस पूज्य पुरुष के शिष्य, फलां गांव या कस्बे से गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में चले गए, और अब, दोषों के नाश के साथ, उन्होंने इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान से मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करते हैं।' पृथ्वी पर निवास करने वाले देवताओं (देवदूतों/देवताओं) की पुकार सुनकर, चार महान राजाओं के अधीन देवताओं (देवदूतों/देवताओं) ने पुकार लगाई... चार महान राजाओं के अधीन देवताओं (देवदूतों/देवताओं) की पुकार सुनकर, तावतिंसा देवताओं (देवदूतों/देवताओं), यम देवताओं (देवदूतों/देवताओं), तुषिता देवताओं (देवदूतों/देवताओं), सृष्टि में आनंदित होने वाले देवताओं (देवदूतों/देवताओं), दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले देवताओं (देवदूतों/देवताओं), ब्रह्मा के साथ रहने वाले देवताओं (देवदूतों/देवताओं) ने पुकार लगाई: इस पूजनीय अमुक ने... इसी जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान से मन की निष्कलंक मुक्ति, ब्रह्मा के द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है। पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करके, उसमें प्रवेश कर उसमें निवास करता है। इस प्रकार [120] उस क्षण, उस पल, उस सेकंड में, यह पुकार ब्रह्म जगत तक फैल जाती है। 593 यह उस भिक्षु की आध्यात्मिक महिमा है जिसके दोष नष्ट हो गए हैं।

---

70 सम्मान (सक्काका)

फिर, जब पूज्य सारिपुत्त एकांतवास में थे, तो उनके मन में निम्नलिखित विचार उत्पन्न हुआ: "एक भिक्षु को किसका आदर, सम्मान और समर्थन करना चाहिए ताकि वह हानिकारक (अकुशल) का त्याग कर लाभकारी (कुशल) का विकास कर सके?"

तब उन्हें यह विचार आया: "(1) एक भिक्षु को गुरु का आदर, सम्मान और उन पर निर्भर रहना चाहिए ताकि वह हानिकारक (अकुशल) का त्याग कर लाभकारी (कुशल) का विकास कर सके। (2) उसे धम्म का आदर, सम्मान और उन पर निर्भर रहना चाहिए... (3) ... संघ का... (4) ... प्रशिक्षण का... (5) एकाग्रता का... (6) ... सतर्कता का... (7) ... आतिथ्य सत्कार का ताकि वह हानिकारक (अकुशल) का त्याग कर लाभकारी (कुशल) का विकास कर सके।"

तब पूज्य सारिपुत्त के मन में यह विचार आया: "ये गुण मुझमें शुद्ध और पवित्र हो गए हैं। मुझे भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें इनके बारे में बताना चाहिए। इस प्रकार ये गुण मुझमें शुद्ध हो जाएंगे और शुद्ध गुणों के रूप में अधिक व्यापक रूप से जाने जाएंगे।"

मान लीजिए किसी व्यक्ति को शुद्ध और पवित्र किया हुआ सोने का टुकड़ा मिलता है। उसके मन में यह विचार आ सकता है: 'मेरा यह सोने का टुकड़ा शुद्ध और पवित्र है। चलो इसे सुनारों को दिखाऊं। सुनारों को दिखाने के बाद यह शुद्ध हो जाएगा और शुद्ध होने के कारण सर्वत्र प्रसिद्ध हो जाएगा।' इसी प्रकार ये गुण मुझमें भी शुद्ध और पवित्र हो गए हैं। चलो भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें इनके बारे में बताऊं। इस प्रकार ये गुण मुझमें भी शुद्ध हो जाएंगे और शुद्ध होने के कारण सर्वत्र प्रसिद्ध हो जाएंगे।

फिर, [121] शाम को, पूज्य सारिपुत्त एकांतवास से बाहर आए और भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और कहा:

"यहाँ, भंते, जब मैं एकांत में अकेला था, तो मेरे मन में निम्नलिखित विचार उत्पन्न हुए... [यहाँ वह ऊपर बताए गए संपूर्ण विचार क्रम का वर्णन करते हैं:] ... इस प्रकार ये गुण मुझमें शुद्ध हो जाएँगे [122] और शुद्ध के रूप में अधिक व्यापक रूप से जाने जाएँगे।"

"शाबाश, शाबाश, सारिपुत्त! एक भिक्षु को गुरु का आदर, सम्मान और उन पर निर्भर रहना चाहिए ताकि वह हानिकारक (अकुशल) का त्याग करके लाभकारी (कुशल) का विकास कर सके। उसे धम्म, संघ, प्रशिक्षण, समाधि, जागरूकता और आतिथ्य सत्कार का आदर, सम्मान और उन पर निर्भर रहना चाहिए ताकि वह हानिकारक (अकुशल) का त्याग करके लाभकारी (कुशल) का विकास कर सके।"

यह सुनकर पूज्य सारिपुत्त ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, भगवान (बुद्ध) ने संक्षेप में जो कहा है, उसका अर्थ मैं अब विस्तार से समझ गया हूँ।"

"हे भंते, यह असंभव है कि जो भिक्षु गुरु के प्रति श्रद्धा नहीं रखता, वह धम्म (मार्ग) के प्रति श्रद्धा रख सके। जो भिक्षु (1) गुरु के प्रति श्रद्धा नहीं रखता (2) वह धम्म के प्रति भी श्रद्धा नहीं रखता।"

"हे भंते, यह असंभव है कि कोई भिक्षु, जिसमें गुरु और धम्म के प्रति श्रद्धा का अभाव हो, संघ के प्रति श्रद्धा रख सके। जो भिक्षु गुरु और धम्म के प्रति श्रद्धा नहीं रखता (3), उसमें संघ के प्रति भी श्रद्धा नहीं होती।"

"हे भंते, यह असंभव है कि जिस भिक्षु में गुरु, धम्म और संघ के प्रति श्रद्धा का अभाव हो, उसमें प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा हो। जिस भिक्षु में गुरु, धम्म और संघ के प्रति श्रद्धा का अभाव हो (4), उसमें प्रशिक्षण के प्रति भी श्रद्धा का अभाव होता है।"

"हे भंते, यह असंभव है कि जिस भिक्षु में गुरु, धर्म, संघ और प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा का अभाव हो, उसमें समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) के प्रति श्रद्धा हो। जिस भिक्षु में गुरु, धर्म, संघ और प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा का अभाव हो (5), उसमें समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) के प्रति भी श्रद्धा का अभाव हो।"

"हे भंते, यह असंभव है कि जिस भिक्षु में गुरु, धम्म, संघ, प्रशिक्षण और समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) के प्रति श्रद्धा का अभाव हो, उसमें सजगता के प्रति श्रद्धा हो। जिस भिक्षु में गुरु, धम्म, संघ, प्रशिक्षण और समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) [123] (6) के प्रति श्रद्धा का अभाव हो, उसमें सजगता के प्रति श्रद्धा का भी अभाव हो।"

"हे भंते, यह असंभव है कि जिस भिक्षु में गुरु, धम्म, संघ, प्रशिक्षण, समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) और जागरूकता के प्रति श्रद्धा का अभाव हो, उसमें आतिथ्य सत्कार के प्रति श्रद्धा हो। जिस भिक्षु में गुरु, धम्म, संघ, प्रशिक्षण, समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) और आवश्यकता (7) के प्रति श्रद्धा का अभाव हो, उसमें आतिथ्य सत्कार के प्रति भी श्रद्धा का अभाव हो।"

"हे भंते, यह असंभव है कि गुरु के प्रति श्रद्धा रखने वाला भिक्षु धम्म के प्रति श्रद्धा न रखे। गुरु के प्रति श्रद्धा रखने वाला भिक्षु (2) धम्म के प्रति भी श्रद्धा रखता है।"

"हे भंते, यह असंभव है कि गुरु और धम्म के प्रति श्रद्धा रखने वाला भिक्षु संघ के प्रति श्रद्धा न रखे। गुरु और धम्म के प्रति श्रद्धा रखने वाला भिक्षु (3) संघ के प्रति भी श्रद्धा रखता है।"

"हे भंते, यह असंभव है कि जो भिक्षु गुरु, धम्म और संघ के प्रति श्रद्धा रखता हो, वह प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा न रखे। जो भिक्षु गुरु, धम्म और संघ के प्रति श्रद्धा रखता है (4), वह प्रशिक्षण के प्रति भी श्रद्धा रखता है।"

"हे भंते, यह असंभव है कि कोई भिक्षु (भिक्षु) जो गुरु, धम्म, संघ और प्रशिक्षण के प्रति श्रद्धा रखता हो, समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) के प्रति श्रद्धा न रखे। जो भिक्षु गुरु, धम्म, संघ और प्रशिक्षण (5) के प्रति श्रद्धा रखता है, वह समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) के प्रति भी श्रद्धा रखता है।"

"यह असंभव है, भंते, [124] कि एक भिक्षु जो गुरु, धम्म, संघ, प्रशिक्षण और समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) के प्रति श्रद्धा रखता है, वह सजगता के प्रति श्रद्धा का अभाव रख सकता है। वह भिक्षु जो गुरु, धम्म, संघ, प्रशिक्षण और समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) (6) के प्रति श्रद्धा रखता है, वह सजगता के प्रति भी श्रद्धा रखता है।"

"हे भंते, यह असंभव है कि कोई भिक्षु जो गुरु, धम्म, संघ, प्रशिक्षण, समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) और जागरूकता के प्रति श्रद्धा रखता हो, आतिथ्य सत्कार के प्रति श्रद्धा न रखे। जो भिक्षु गुरु, धम्म, संघ, प्रशिक्षण, समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) और जागरूकता (7) के प्रति श्रद्धा रखता है, वह आतिथ्य सत्कार के प्रति भी श्रद्धा रखता है।"

"हे भंते, इसी तरह से मैं भगवान (बुद्ध) द्वारा संक्षेप में कहे गए इस कथन का विस्तृत अर्थ समझ पाता हूँ।"

"शाबाश, शाबाश, सारिपुत्त! यह अच्छा है कि आपने मेरे द्वारा संक्षेप में कही गई इस बात का अर्थ विस्तार से समझ लिया है। वास्तव में, सारिपुत्त, यह असंभव है कि जिस भिक्षु में गुरु के प्रति श्रद्धा का अभाव हो, उसमें धम्म के प्रति श्रद्धा हो। ... [बुद्ध यहाँ सारिपुत्त द्वारा दिए गए संपूर्ण स्पष्टीकरण को दोहराते हैं।] [125] ... जिस भिक्षु में गुरु, धम्म और संघ के प्रति श्रद्धा होती है, प्रशिक्षण, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और जागरूकता के प्रति भी श्रद्धा होती है, उसमें आतिथ्य सत्कार के प्रति भी श्रद्धा होती है।"

"सारिपुत्त, मैंने संक्षेप में जो कथन कहा है, उसका अर्थ विस्तार से इसी प्रकार समझा जाना चाहिए।"

---

71 समझ का विकास [1595] (भावना)

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु विकास के प्रति सजग नहीं होता, भले ही वह यह कामना करे: 'अप्रासंग से मेरा मन दोषों से मुक्त हो जाए!' फिर भी उसका मन अनासक्ति से दोषों से मुक्त नहीं होता। इसका क्या कारण है? क्योंकि उसमें विकास का अभाव है। किस चीज़ का विकास नहीं? (1) ध्यान के चार आधार (सती ध्यान), (2) चार सही प्रयास, (3) मानसिक शक्ति के चार आधार (इद्धि), (4) पाँच आध्यात्मिक शक्तियाँ, (5) पाँच शक्तियाँ, (6) ज्ञान के सात कारक, और (7) आर्य अष्टांगिक मार्ग।

"मान लीजिए कि एक मुर्गी के पास आठ, दस या बारह अंडे थे जिन्हें उसने ठीक से ढका, सेया और पाला-पोसा नहीं था। [126] भले ही वह यह कामना करे: 'काश मेरे चूजे अपने पंजों या चोंच की नोक से अंडों के छिलके को छेदकर सुरक्षित रूप से बाहर आ जाएं!' फिर भी चूजे ऐसा करने में असमर्थ हैं। इसका क्या कारण है? क्योंकि मुर्गी ने अपने अंडों को ठीक से ढका, सेया और पाला-पोसा नहीं था।

"इसी प्रकार, जब कोई भिक्षु विकास के प्रति सजग नहीं होता, तो भले ही वह यह कामना करे: 'अप्रासंगिता से मेरा मन दोषों से मुक्त हो जाए!' फिर भी उसका मन अनासक्ति से दोषों से मुक्त नहीं होता। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसमें विकास का अभाव है। किस चीज़ का विकास नहीं? ध्यान (सती) के चार सिद्धांतों का... आर्य अष्टांगिक मार्ग का।"

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु विकास के लिए तल्लीन होता है, भले ही वह यह कामना न करे: 'मेरा मन अनासक्ति के द्वारा दोषों से मुक्त हो जाए!' फिर भी उसका मन अनासक्ति के द्वारा दोषों से मुक्त हो जाता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका विकास होता है। किसका विकास? (1) सती ध्यान के चार आधारों का, (2) चार सही प्रयासों का, (3) मानसिक शक्ति के चार आधारों का, (4) पांच आध्यात्मिक शक्तियों का, (5) पांच शक्तियों का, (6) ज्ञान के सात कारकों का, और (7) आर्य अष्टांगिक मार्ग का।

मान लीजिए एक मुर्गी के पास आठ, दस या बारह अंडे हैं जिन्हें उसने ठीक से ढककर, सेते हुए और उनकी देखभाल की है। भले ही वह यह कामना न करे: 'काश मेरे चूजे अपने पंजों या चोंच से अंडों के छिलके तोड़कर सुरक्षित रूप से बाहर आ जाएं!' फिर भी चूजे ऐसा करने में सक्षम हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि मुर्गी ने अपने अंडों को ठीक से ढककर, सेते हुए और उनकी देखभाल की है।

"इसी प्रकार, जब कोई भिक्षु विकास के लिए तल्लीन होता है, भले ही वह यह कामना न करे: [127] 'अप्रासंगिता से मेरा मन दोषों से मुक्त हो जाए!' फिर भी उसका मन अनासक्ति से दोषों से मुक्त हो जाता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका विकास होता है। किसका विकास? ध्यान (सती) के चार सिद्धांतों का... आर्य अष्टांगिक मार्ग का।"

भिक्षुओं, जब कोई बढ़ई या बढ़ई का प्रशिक्षु अपनी कुल्हाड़ी के हैंडल पर अपनी उंगलियों और अंगूठे के निशान देखता है, तो उसे यह नहीं पता होता कि 'मैंने आज, कल और पहले कुल्हाड़ी का इतना हिस्सा घिस दिया है'; परन्तु जब वह घिस जाता है, तो उसे पता चल जाता है कि वह घिस गया है। ठीक इसी प्रकार, जब कोई भिक्षु साधना में लीन होता है, तो भले ही उसे यह न पता हो कि 'मैंने आज, कल और पहले अपने दोषों को इतना घिस दिया है', परन्तु जब वे घिस जाते हैं, तो उसे पता चल जाता है कि वे घिस गए हैं।

"मान लीजिए, भिक्षुओं, एक समुद्री पट्टी है जो रस्सियों से बंधी हुई है और छह महीने तक पानी में रहने के कारण घिस गई है। इसे शीत ऋतु में सूखी ज़मीन पर खींचा जाता है और हवा और धूप से इसकी रस्सियाँ और भी खराब हो जाती हैं। बारिश के बादल से भीगने पर, रस्सियाँ जल्दी ही कमजोर होकर सड़ जाती हैं। ठीक उसी प्रकार, जब कोई भिक्षु विकास के लिए तल्लीन होता है, तो उसकी बेड़ियाँ जल्दी ही टूटकर सड़ जाती हैं।" [128]

---

72 अग्नि उपमा (अग्गिकखंडोपमा सं. अग्नि-खंड-उपमा)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक विशाल संघ के साथ कोसल पर्वतमाला में भ्रमण कर रहे थे। तभी राजमार्ग पर चलते हुए एक स्थान पर भगवान (बुद्ध) ने एक विशाल अग्नि-भड़कती हुई देखी। वे राजमार्ग छोड़कर एक वृक्ष के नीचे बने आसन पर बैठ गए और भिक्षुओं से कहा, "भिक्षुओं, क्या आप उस विशाल अग्नि-भड़कती हुई देखी है?"

"हां, भंते।"

(1) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? उस जलते, धधकते और दीप्तिमान विशाल अग्नि-कोश को आलिंगन देना और उसके पास बैठना या लेटना, या कोमल हाथों और पैरों वाली किसी कन्या को आलिंगन देना - चाहे वह क्षत्रिय, ब्राह्मण या गृहस्थ वंश की हो - और उसके पास बैठना या लेटना, इनमें से कौन बेहतर है?"

"हे भंते, कोमल हाथों और पैरों वाली किसी कन्या को गले लगाना कहीं बेहतर होगा— चाहे वह क्षत्रिय, ब्राह्मण या गृहस्थ वंश की हो— और उसके पास बैठना या लेटना। उस धधकती, दमकती और चमकती आग के विशाल पिंड को गले लगाना और उसके पास बैठना या लेटना कष्टदायक होगा।"

"मैं आप भिक्षुओं को सूचित करता हूँ, मैं आपसे घोषणा करता हूँ कि एक अनैतिक, बुरे चरित्र वाले व्यक्ति के लिए—जो अशुद्ध और संदिग्ध आचरण वाला हो, अपने कार्यों में गुप्त हो, तपस्वी होने का दावा करते हुए भी तपस्वी न हो, ब्रह्मचारी होने का दावा करते हुए भी ब्रह्मचारी न हो—उस जलती हुई, धधकती और दीप्तिमान अग्नि के विशाल पिंड को आलिंगन में लेना और उसके पास बैठना या लेटना कहीं बेहतर होगा। इसका कारण क्या है? क्योंकि इस कारण [129] उसे मृत्यु या जानलेवा पीड़ा सहनी पड़ सकती है, परन्तु इस कारण वह शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म नहीं लेगा। परन्तु जब वह अनैतिक व्यक्ति... कोमल हाथों और पैरों वाली किसी कन्या को—चाहे वह क्षत्रिय, ब्राह्मण या गृहस्थ वंश की हो—आलिंगन में लेता है और उसके पास बैठता या लेटता है, तो इससे उसे लंबे समय तक हानि और पीड़ा होती है। शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, वह वह दुख के लोक में, एक बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है।

(2) "भिक्षुओं, आपका क्या विचार है? बलवान पुरुष के लिए अपने दोनों पैरों के तलवों पर घोड़े के बालों से बनी एक मजबूत रस्सी लपेटकर उसे इतना कसना बेहतर है कि वह बाहरी त्वचा, भीतरी त्वचा, मांस, स्नायु और हड्डी को चीरते हुए मज्जा तक पहुँच जाए, या धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों की पूजा स्वीकार करना बेहतर है?"

"हे भंते, धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों की श्रद्धा स्वीकार करना कहीं बेहतर होगा। यह कष्टदायी होगा यदि कोई बलवान व्यक्ति घोड़े के बालों से बनी मोटी रस्सी को दोनों पिंडलियों पर लपेटकर इतना कस दे कि वह बाहरी त्वचा, भीतरी त्वचा, मांस, नसों और हड्डियों को चीरते हुए मज्जा तक पहुँच जाए।"

"मैं आपको सूचित करता हूँ, भिक्षुओं, मैं आपसे कहता हूँ कि एक अनैतिक व्यक्ति के लिए... यह कहीं बेहतर होगा कि एक बलवान व्यक्ति अपने दोनों पैरों के तलवों पर घोड़े के बालों की एक मजबूत रस्सी लपेटकर उसे इतना कस दे कि वह उसकी बाहरी त्वचा, भीतरी त्वचा, मांस, नसों और हड्डियों को चीरते हुए मज्जा तक पहुँच जाए। इसका कारण क्या है? क्योंकि इससे उसे मृत्यु या असहनीय पीड़ा हो सकती है, परन्तु इसी कारण वह शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म नहीं लेगा। [130] परन्तु जब वह अनैतिक व्यक्ति... धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों की पूजा करता है, तो इससे उसे लंबे समय तक हानि और कष्ट होता है। शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेता है।"

(3) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? बलवान पुरुष द्वारा तेल से सने तेज भाले से सीने पर प्रहार करना बेहतर है या धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों से आदरपूर्वक अभिवादन स्वीकार करना बेहतर है?"

"हे भंते, धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों से आदरपूर्वक अभिवादन स्वीकार करना कहीं बेहतर होगा। बलवान व्यक्ति द्वारा तेल से सने तेज भाले से सीने पर प्रहार करना कष्टदायी होगा।"

भिक्षुओं, मैं आपको सूचित करता हूँ, मैं आपसे कहता हूँ कि एक अनैतिक पुरुष के लिए यह कहीं बेहतर होगा कि एक बलवान पुरुष तेल से सने तेज भाले से उसकी छाती पर प्रहार करे। इसका कारण क्या है? क्योंकि इससे उसकी मृत्यु हो सकती है या उसे असहनीय पीड़ा हो सकती है, परन्तु इस कारण वह शरीर के क्षोभ के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म नहीं लेगा। परन्तु जब वह अनैतिक पुरुष धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों से आदरपूर्वक अभिवादन ग्रहण करता है, तो इससे उसे हानि होती है और वह दीर्घकाल तक कष्ट भोगता है। शरीर के क्षोभ के बाद, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेता है।

(4) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? बलवान पुरुष के लिए जलती हुई, धधकती और चमकती हुई गर्म लोहे की चादर को अपने शरीर पर लपेटना बेहतर है, या धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा आस्थापूर्वक दिए गए वस्त्र का उपयोग करना बेहतर है?"

"हे भंते, धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिए गए वस्त्र का प्रयोग करना कहीं बेहतर होगा। किसी बलवान व्यक्ति के लिए जलती, धधकती और दमकती हुई लोहे की चादर को शरीर पर लपेटना कष्टदायक होगा।"

भिक्षुओं, मैं आपको सूचित करता हूँ, मैं आपसे कहता हूँ कि एक अनैतिक व्यक्ति के लिए यह कहीं बेहतर होगा कि एक बलवान व्यक्ति उसके शरीर पर जलती हुई, धधकती हुई और चमकती हुई लोहे की चादर लपेट ले। इसका कारण क्या है? क्योंकि इस कारण उसे मृत्यु या असहनीय पीड़ा हो सकती है, परन्तु इस कारण वह मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म नहीं लेगा। परन्तु जब वह अनैतिक व्यक्ति धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा विश्वास के कारण दिए गए वस्त्र का उपयोग करता है, तो इससे उसे लंबे समय तक हानि और कष्ट होता है। मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेता है।

(5) "भिक्षुओं, आपका क्या विचार है? इनमें से कौन सा बेहतर है, कि एक बलवान व्यक्ति किसी के मुंह को जलते, धधकते और चमकते हुए गर्म लोहे के कील से जबरदस्ती खोल दे और उसमें जलती, धधकती और चमकती हुई गर्म तांबे की गेंद डाल दे, जो उसके उप्स, मुंह, जीभ, गला और पेट को जला दे, 1596 [132] और नीचे से उसकी आंतों को साथ लेकर बाहर निकल जाए, या फिर कोई धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा आस्थापूर्वक दिए गए भिक्षाभोजन का सेवन करे?"

"हे भंते, धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिए गए भिक्षाभोजन का सेवन करना कहीं बेहतर होगा। यह कष्टदायी होगा यदि कोई बलवान व्यक्ति जलते, धधकते और चमकते हुए गर्म लोहे के नुकीले टुकड़े से किसी का मुंह जबरदस्ती खोल दे और उसमें गर्म तांबे का गोला डाल दे... जो होंठ जला दे... और नीचे से आंतें साथ लेकर बाहर निकल जाए।"

भिक्षुओं, मैं आपको सूचित करता हूँ, मैं आपसे कहता हूँ कि एक अनैतिक पुरुष के लिए... यह कहीं बेहतर होगा कि एक बलवान व्यक्ति उसके मुँह को जलते, धधकते और चमकते हुए गर्म लोहे के नुकीले टुकड़े से खोल दे और उसमें गर्म तांबे का गोला डाल दे... जो उसके होंठों को जला दे... और नीचे से उसकी आँतों को साथ लेकर बाहर निकल जाए। इसका कारण क्या है? क्योंकि इससे उसे मृत्यु या असहनीय पीड़ा हो सकती है, परन्तु इस कारण वह मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म नहीं लेगा। परन्तु जब वह अनैतिक पुरुष... धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिए गए भिक्षाभोजन का सेवन करता है, तो इससे उसे लंबे समय तक हानि और कष्ट होता है। मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेता है।

(6) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? बेहतर क्या है, किसी बलवान व्यक्ति द्वारा किसी को सिर या कंधों से पकड़कर [133] किसी जलते, धधकते और चमकते हुए लोहे के पलंग या कुर्सी पर जबरदस्ती बिठाना या लेटाना—या धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा आस्थापूर्वक दिए गए पलंग और कुर्सी का उपयोग करना?"

"भंते, धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिए गए पलंग और कुर्सी का उपयोग करना कहीं बेहतर होगा। यह कष्टदायी होगा यदि कोई बलवान व्यक्ति किसी को सिर या कंधों से पकड़कर जलते, धधकते और चमकते हुए गर्म लोहे के पलंग या कुर्सी पर बैठने या लेटने के लिए मजबूर करे।"

भिक्षुओं, मैं आपको सूचित करता हूँ, मैं आपसे कहता हूँ कि एक अनैतिक व्यक्ति के लिए यह कहीं बेहतर होगा कि कोई बलवान व्यक्ति उसे सिर या कंधों से पकड़कर जलते, धधकते और चमकते हुए गर्म लोहे के पलंग या कुर्सी पर जबरदस्ती बिठा दे या लिटा दे। इसका कारण क्या है? क्योंकि इससे उसकी मृत्यु हो सकती है या उसे असहनीय पीड़ा हो सकती है, परन्तु इस कारण वह शरीर के क्षोभ के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म नहीं लेगा। परन्तु जब वह अनैतिक व्यक्ति... धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा विश्वासपूर्वक दिए गए पलंग और कुर्सी का उपयोग करता है, तो इससे उसे लंबे समय तक हानि और पीड़ा होती है। शरीर के क्षोभ के बाद, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेता है।

(7) "भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? इनमें से कौन सा बेहतर है, कि एक बलवान व्यक्ति किसी को पकड़कर उल्टा कर दे और उसे जलते, धधकते और चमकते हुए गर्म तांबे के कड़ाहे में फेंक दे, और जब वह झाग के भंवर में उबल रहा हो, तो कभी ऊपर उठे, कभी नीचे डूबे और कभी बह जाए, या फिर धनी क्षत्रियों, [134] ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा आस्थापूर्वक दिए गए आवास का उपयोग करना?"

"भंते, धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा आस्थापूर्वक दिए गए आवास में रहना कहीं बेहतर होगा। यह कष्टदायी होगा यदि कोई बलवान व्यक्ति किसी को पकड़कर उल्टा कर दे और जलते-बुझते गर्म तांबे के कड़ाहे में फेंक दे, जिससे वह झाग के भंवर में उबलता रहे, कभी ऊपर उठे, कभी नीचे डूबे और कभी बह जाए।"

"मैं आप भिक्षुओं को सूचित करता हूँ, मैं आपसे घोषणा करता हूँ कि एक अनैतिक, बुरे चरित्र वाले व्यक्ति के लिए—जो अशुद्ध और संदिग्ध आचरण वाला हो, अपने कार्यों में गुप्त हो, तपस्वी होने का दावा करते हुए भी तपस्वी न हो, ब्रह्मचारी होने का दावा करते हुए भी ब्रह्मचारी न हो, जो भीतर से सड़ा हुआ, भ्रष्ट और पतित हो—यह कहीं बेहतर होगा कि एक बलवान व्यक्ति उसे पकड़कर उल्टा कर दे और उसे जलते, धधकते और चमकते हुए गर्म तांबे के कड़ाहे में फेंक दे—ताकि वह वहाँ झाग के भंवर में उबलता रहे, कभी ऊपर उठे, कभी नीचे जाए और कभी बह जाए: इसका क्या कारण है? क्योंकि इस कारण उसे मृत्यु या जानलेवा पीड़ा सहनी पड़ सकती है, परन्तु इस कारण वह शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म न ले। परन्तु जब वह अनैतिक व्यक्ति... धनी क्षत्रियों, ब्राह्मणों या गृहस्थों द्वारा विश्वासपूर्वक दिए गए आवास का उपयोग करता है, इससे उसे लंबे समय तक हानि और पीड़ा सहनी पड़ती है। शरीर के नष्ट होने के बाद, मृत्यु के बाद, उसका पुनर्जन्म दुख के लोक में, एक बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में होता है।

अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'जब हम वस्त्र, भिक्षा, भोजन, आवास, औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन की व्यवस्था करते हैं, तो ये सेवाएँ जो [दूसरों द्वारा] हमारे लिए प्रदान की जाती हैं, उनके लिए बहुत फलदायी और लाभकारी होंगी, और हमारा यह [भिक्षुत्व में प्रवेश] व्यर्थ नहीं, बल्कि फलदायी और उपजाऊ होगा।' आपको इसी प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए। हे भिक्षुओं, अपने स्वयं के हित को ध्यान में रखते हुए, सतर्कता के साथ लक्ष्य के लिए प्रयास करना पर्याप्त है; दूसरों के हित को ध्यान में रखते हुए, सतर्कता के साथ लक्ष्य के लिए प्रयास करना पर्याप्त है; दोनों के हित को ध्यान में रखते हुए, सतर्कता के साथ लक्ष्य के लिए प्रयास करना पर्याप्त है।' 1597

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। जब यह प्रवचन दिया जा रहा था, तभी साठ भिक्षुओं ने गर्म रक्त की उल्टी की। साठ भिक्षुओं ने साधना त्याग दी और यह कहते हुए परलोक में लौट गए: "यह करना कठिन है, भगवान (बुद्ध), यह करना बहुत कठिन है।"

और साठ भिक्षुओं के मन अनासक्ति के कारण दोषों से मुक्त हो गए। 1598

---

73 सुनेट्टा

(1) “भिक्षुओं, अतीत में सुनेत्ता नामक एक गुरु थे, जो एक आध्यात्मिक संप्रदाय के संस्थापक थे, जो इंद्रिय सुखों के प्रति राग रहित थे। 1597 गुरु सुनेत्ता के सैकड़ों शिष्य थे, जिन्हें वे ब्रह्म जगत के साथ संगति का धर्म सिखाते थे। जब वे ऐसा धर्म सिखा रहे थे, तो जिन लोगों ने उन पर विश्वास नहीं किया, वे शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेते थे; परन्तु जिन्होंने उन पर विश्वास किया, वे अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेते थे।

"अतीत में, भिक्षुओं, (2) मुगपक्खा नाम के एक गुरु थे... (3) अरनेमी नाम के एक गुरु थे... (4) कुद्दला नाम के एक गुरु थे... (5) हत्थिपाला नाम के एक गुरु थे... (6) ज्योतिपाला नाम के एक गुरु थे... (7) अरक नाम के एक गुरु थे, जो एक आध्यात्मिक संप्रदाय के संस्थापक थे, जो इंद्रिय सुखों के प्रति राग रहित थे। गुरु अरक के सैकड़ों शिष्य थे, जिन्हें उन्होंने ब्रह्म जगत के साथ संगति का धर्म सिखाया। जब वे [136] ऐसा धर्म सिखा रहे थे, तो जिन लोगों ने उन पर विश्वास नहीं किया, वे शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते थे; परन्तु जिन्होंने उन पर विश्वास किया, वे अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेते थे।

"भिक्षुओं, आप क्या सोचते हैं? ये सात गुरु आध्यात्मिक संप्रदायों के संस्थापक थे, वे ऐसे पुरुष थे जो सांसारिक सुखों के प्रति वासना (राग) से रहित थे और उनके सैकड़ों शिष्य थे। यदि कोई घृणा के भाव से उनका और उनके शिष्यों के समुदाय का अपमान और निंदा करता, तो क्या वह बहुत बड़ा पाप नहीं करता?"

"हां, भंते।"

"यदि कोई घृणा के भाव से इन छह गुरुओं और उनके शिष्यों के समुदायों का अपमान और निंदा करे, तो वह बहुत पुण्य कमाएगा। परन्तु यदि कोई घृणा के भाव से किसी एक सिद्ध पुरुष का अपमान और निंदा करे, तो वह और भी अधिक पुण्य कमाएगा। इसका कारण क्या है? मैं कहता हूँ, भिक्षुओं, परदेसियों के विरुद्ध वैसा कोई अपराध नहीं जैसा अपने साथी भिक्षुओं के विरुद्ध। 1600 अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: 'हम अपने साथी भिक्षुओं के प्रति घृणा उत्पन्न नहीं होने देंगे।' इस प्रकार, भिक्षुओं, आपको अभ्यास करना चाहिए।"

---

74 अराका

भिक्षुओं, अतीत में अरका नामक एक शिक्षक थे, जो एक आध्यात्मिक संप्रदाय के संस्थापक थे, जो इंद्रिय सुखों के प्रति वासना (राग) से रहित थे। शिक्षक अरका के सैकड़ों शिष्य थे, जिन्हें उन्होंने इस प्रकार का धर्म सिखाया: 'ब्राह्मणों, मनुष्य का जीवन अल्प, सीमित और क्षणभंगुर है; इसमें बहुत दुख और पीड़ा है। इसे बुद्धिमानी से समझना चाहिए। [137] लाभकारी (कुशल) कर्म करना चाहिए और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीना चाहिए; क्योंकि जन्म लेने वाला कोई भी मृत्यु से नहीं बच सकता।

(1) “जैसे घास की पत्ती के सिरे पर ओस की एक बूंद सूर्योदय के समय तुरंत गायब हो जाती है और ज्यादा देर तक नहीं टिकती, वैसे ही, हे ब्राह्मणों, मनुष्य जीवन ओस की एक बूंद के समान है। यह सीमित और क्षणभंगुर है; इसमें बहुत दुख और पीड़ा है। इसे बुद्धिमानी से समझना चाहिए। लाभकारी (कुशल) कर्म करना चाहिए और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीना चाहिए; क्योंकि जन्म लेने वाला कोई भी मृत्यु से बच नहीं सकता।”

(2) “जैसे, जब बारिश की मोटी बूँदें बरसती हैं, तो पानी का बुलबुला जल्दी ही गायब हो जाता है और ज़्यादा देर तक नहीं टिकता, वैसे ही, हे ब्राह्मणों, मनुष्य जीवन पानी के बुलबुले के समान है। यह सीमित है... क्योंकि जो जन्म लेता है, वह मृत्यु से बच नहीं सकता।”

(3) “जैसे पानी पर छड़ी से खींची गई रेखा शीघ्र ही लुप्त हो जाती है और लंबे समय तक नहीं टिकती, वैसे ही, हे ब्राह्मणों, मनुष्य जीवन पानी पर छड़ी से खींची गई रेखा के समान है। यह सीमित है... क्योंकि जन्म लेने वाला कोई भी मृत्यु से नहीं बच सकता।”

(4) “जिस प्रकार कोई नदी पहाड़ से नीचे बहती हुई, लंबी दूरी तक तीव्र धारा के साथ बहती है, अपने साथ बहुत सारा कचरा बहाकर ले जाती है, वह एक पल, एक क्षण, एक सेकंड के लिए भी स्थिर नहीं रहती, बल्कि तेजी से बहती है, घूमती है और आगे बढ़ती रहती है,

ठीक उसी प्रकार, हे ब्राह्मणों, मनुष्य जीवन एक पहाड़ी धारा के समान है। यह सीमित है... क्योंकि जो जन्म लेता है वह मृत्यु से बच नहीं सकता।"

(5) "जिस प्रकार एक बलवान व्यक्ति अपनी जीभ की नोक पर थूक का एक गोला बना सकता है और उसे बिना किसी कठिनाई के थूक सकता है, उसी प्रकार, हे ब्राह्मणों, मनुष्य का जीवन थूक के गोले के समान है। यह सीमित है... क्योंकि जन्म लेने वाला कोई भी मृत्यु से बच नहीं सकता।"

(6) "जैसे [138] दिन भर गर्म किए गए लोहे के तवे में डाला गया मांस का टुकड़ा जल्दी ही गायब हो जाता है और लंबे समय तक नहीं टिकता, वैसे ही, हे ब्राह्मणों, मनुष्य जीवन भी इस मांस के टुकड़े के समान है। यह सीमित है... क्योंकि जन्म लेने वाला कोई भी मृत्यु से नहीं बच सकता।"

(7) "जैसे वध के लिए ले जाई जा रही गाय जब वधशाला ले जाई जाती है, तो वह जिस भी पैर को उठाती है, वह वध के करीब, मृत्यु के करीब पहुँच जाती है, ठीक वैसे ही, हे ब्राह्मणों, मनुष्य जीवन वध के लिए अभिशप्त गाय के समान है। यह सीमित और क्षणभंगुर है; इसमें बहुत दुख और पीड़ा है। इसे बुद्धिमानी से समझना चाहिए। लाभकारी (कुशल) कर्म करना चाहिए और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीना चाहिए; क्योंकि जन्म लेने वाला कोई भी मृत्यु से बच नहीं सकता।"

लेकिन उस समय, भिक्षुओं, मनुष्य का जीवनकाल 60,000 वर्ष था, और कन्याओं का विवाह 500 वर्ष की आयु में होता था। उस समय, लोगों को केवल छह कष्ट होते थे: सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास, मल-मूत्र और मूत्र। यद्यपि लोगों का जीवनकाल इतना लंबा था और वे इतने लंबे समय तक जीवित रहते थे, और यद्यपि उनके कष्ट इतने कम थे, फिर भी गुरु अरक ने अपने शिष्यों को यह शिक्षा दी: हे ब्राह्मणों, मनुष्य का जीवन अल्प है... क्योंकि जो जन्म लेता है वह मृत्यु से बच नहीं सकता।

लेकिन आजकल, भिक्षुओं, यह कहना उचित ही है: 'मनुष्यों का जीवन अल्प, सीमित और क्षणभंगुर है; इसमें बहुत दुख और पीड़ा है। इसे बुद्धिमानी से समझना चाहिए। लाभकारी (कुशल) कर्म करना चाहिए और ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करना चाहिए; क्योंकि जन्म लेने वाला कोई भी मृत्यु से बच नहीं सकता।' आज जो व्यक्ति दीर्घ जीवन जीता है, वह सौ वर्ष या उससे कुछ अधिक समय तक जीवित रहता है। और सौ वर्ष जीने पर वह केवल तीन सौ ऋतुओं के लिए जीवित रहता है: सौ शीत ऋतुएँ, सौ ग्रीष्म ऋतुएँ और सौ वर्षा ऋतुएँ। तीन सौ ऋतुओं के लिए जीवित रहने पर वह केवल बारह सौ महीनों के लिए जीवित रहता है: चार सौ शीत ऋतुएँ, चार सौ ग्रीष्म ऋतुएँ और चार सौ वर्षा ऋतुएँ। बारह सौ महीनों के लिए जीवित रहने पर वह केवल चौबीस सौ पखवाड़ों के लिए जीवित रहता है; आठ सौ शीत ऋतुएँ, आठ सौ ग्रीष्म ऋतुएँ और आठ सौ वर्षा ऋतुएँ।

"और चौबीस सौ पखवाड़ों तक जीवित रहने पर, व्यक्ति केवल 36,000 रातें जीता है: 12,000 शीत ऋतु की रातें, 12,000 ग्रीष्म ऋतु की रातें और 12,000 वर्षा ऋतु की रातें। 1601 और 36,000 रातों तक जीवित रहने पर, व्यक्ति केवल 72,000 भोजन करता है: 24,000 शीत ऋतु में, 24,000 ग्रीष्म ऋतु में और 24,000 वर्षा ऋतु में। इसमें माँ का दूध पीना और भोजन में बाधाएँ आना भी शामिल है। भोजन में बाधाएँ ये हैं: क्रोधित व्यक्ति भोजन नहीं करता, पीड़ा में व्यक्ति भोजन नहीं करता, बीमार व्यक्ति भोजन नहीं करता, उपोसथा का पालन करने वाला व्यक्ति भोजन नहीं करता, और भोजन न मिलने पर व्यक्ति भोजन नहीं करता।"

"इस प्रकार, भिक्षुओं, सौ वर्ष के जीवनकाल वाले मनुष्य के लिए, मैंने उसके जीवनकाल, उसके जीवनकाल की सीमा, ऋतुओं, वर्षों, महीनों और पखवाड़ों की संख्या; उसकी रातों, दिनों और भोजन की संख्या, तथा भोजन में आने वाली बाधाओं की गणना की है। भिक्षुओं, जो कुछ भी एक दयालु गुरु को अपने शिष्यों के कल्याण के लिए करुणा से करना चाहिए, वह मैंने तुम्हारे लिए किया है। ये वृक्षों की शाखाएँ हैं, ये खाली कुटियाएँ हैं। भिक्षुओं, ध्यान करो, आलसी मत बनो। बाद में पछताने का कोई कारण न हो। यही हमारा तुम्हें उपदेश है।" [140]

VIII. अनुशासन अनुभाग (विनयवग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

75. अनुशासन में विशेषज्ञ (1) (विनयधारा1)

"भिक्षुओं में सात गुण होते हैं, एक भिक्षु उस अनुशासन में निपुण होता है। वे सात गुण कौन से हैं?"

(1) वह जानता है कि अपराध क्या है। (2) वह जानता है कि अपराध क्या नहीं है। (3) वह जानता है कि हल्का अपराध क्या है। (4) वह जानता है कि गंभीर अपराध क्या है। (5) वह गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। (6) वह वह है जो इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इस जीवन में ही उच्च मन के चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त करता है, जो सुखद निवास स्थान हैं। (7) दोषों के नाश के साथ, उसने इस जीवन में ही प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं ही मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।

"इन सात गुणों से युक्त भिक्षु अपने अनुशासन में निपुण होता है।"

---

76 अनुशासन में विशेषज्ञ (2) (विनयधारा2)

"भिक्षुओं में सात गुण होते हैं, एक भिक्षु उस अनुशासन में निपुण होता है। वे सात गुण कौन से हैं?"

"(1) वह जानता है कि अपराध क्या है। (2) वह जानता है कि अपराध क्या नहीं है। (3) वह जानता है कि हल्का अपराध क्या है। (4) वह जानता है कि गंभीर अपराध क्या है। (5) दोनों पतिमोक्खों का उसे विस्तार से, अच्छी तरह से विश्लेषण किया गया है, अच्छी तरह से महारत हासिल की गई है, नियमों और उनकी विस्तृत व्याख्या के संदर्भ में अच्छी तरह से निर्धारित किया गया है। 1604 (6) वह [141] वह है जो इच्छा से . . . चारों ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त करता है।"

(7) दोषों के नाश होने से उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं अनुभव किया है... मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति... वह उसमें निवास करता है।

"इन सात गुणों से युक्त भिक्षु ही इस विद्या में निपुण होता है।"

---

77 अनुशासन में विशेषज्ञ (3) (विनयधारा3)

"भिक्षुओं में सात गुण होते हैं, एक भिक्षु उस अनुशासन में निपुण होता है। वे सात गुण कौन से हैं?"

(1) वह जानता है कि अपराध क्या है। (2) वह जानता है कि अपराध क्या नहीं है। (3) वह जानता है कि हल्का अपराध क्या है। (4) वह जानता है कि गंभीर अपराध क्या है। (5) वह अनुशासन में दृढ़, अविचल है। (6) वह इच्छा से प्राप्त करने वाला है... चारों ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ)... (7) दोषों के नाश के साथ, उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से स्वयं को अनुभव किया है... मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति... वह उसमें निवास करता है।

"इन सात गुणों से युक्त, एक भिक्षु (साधु) उस विद्या में निपुण होता है।"

---

78 अनुशासन में विशेषज्ञ (4) (विनयधारा4)

"भिक्षुओं में सात गुण होते हैं, एक भिक्षु उस अनुशासन में निपुण होता है। वे सात गुण कौन से हैं?"

"(1) वह जानता है कि अपराध क्या है। (2) वह जानता है कि अपराध क्या नहीं है। (3) वह जानता है कि हल्का अपराध क्या है। (4) वह जानता है कि गंभीर अपराध क्या है। (5) वह अपने अनेक पूर्व जन्मों (पुनर्जन्मों) को याद करता है, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म ... [जैसा कि 6:2 §4 में है] ... वह अपने अनेक पूर्व जन्मों (पुनर्जन्मों) को उनके स्वरूपों और विवरणों सहित याद करता है। (6) दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध है और मनुष्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है ... [जैसा कि 6:2 §5 में है] ... वह समझता है कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं। (7) दोषों के नाश के साथ, उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से स्वयं को ... मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति ... का अनुभव कराया है। यह।

"इन सात गुणों से युक्त भिक्षु अनुशासन में निपुण होता है।" [142]

---

79 अनुशासन में निपुण व्यक्ति तेजस्वी होता है (1) (विनयधरसोभना1)

"भिक्षुओं (सात गुणों से युक्त भिक्षु) अनुशासन में निपुण होकर तेजस्वी होते हैं। वे कौन से सात गुण हैं? . . . [जैसा कि 7:75 में है।] . . . इन सात गुणों से युक्त होकर अनुशासन में निपुण होकर तेजस्वी होते हैं।" 1605

---

80 अनुशासन में निपुण व्यक्ति तेजस्वी होता है (2) (विनयधरसोभना2)

"भिक्षुओं (सात गुणों से युक्त भिक्षु) अनुशासन में निपुण होकर तेजस्वी होते हैं। वे सात गुण कौन से हैं? . . . [जैसा कि 7:76 में है।] . . . इन सात गुणों से युक्त होकर अनुशासन में निपुण होकर तेजस्वी होते हैं।"

---

81 अनुशासन में निपुण व्यक्ति तेजस्वी होता है (3) (विनयधरसोभना3)

"भिक्षुओं (सात गुणों से युक्त भिक्षुओं) में, अनुशासन का विशेषज्ञ तेजस्वी होता है। वे सात गुण कौन से हैं? . . . [जैसा कि 7:77 में है।] . . . [143] इन सात गुणों से युक्त, अनुशासन का विशेषज्ञ तेजस्वी होता है।"

---

82 अनुशासन में निपुण व्यक्ति तेजस्वी होता है (4) (विनयधरसोभना4)

"भिक्षुओं (सात गुणों से युक्त भिक्षु) अनुशासन में निपुण होकर तेजस्वी होते हैं। वे सात गुण कौन से हैं? . . . [जैसा कि 7:78 में है।] . . . इन सात गुणों से युक्त होकर अनुशासन में निपुण होकर तेजस्वी होते हैं।"

---

83 शिक्षक का अनुशासन (सत्थुसाना)

तब पूज्य उपली भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "भंते, यह अच्छा होगा यदि भगवान (बुद्ध) मुझे संक्षेप में धम्म का उपदेश दें, ताकि भगवान (बुद्ध) से धम्म (मार्ग) सुनकर मैं एकांत में, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ रह सकूँ।"

"उपली, जिन बातों को तुम इस प्रकार जान लो: 'ये बातें केवल निब्बिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण की ओर नहीं ले जातीं,' तो तुम्हें निश्चित रूप से यह पहचान लेना चाहिए: 'यह धम्म नहीं है; यह अनुशासन नहीं है; यह गुरु का उपदेश नहीं है।' परन्तु जिन बातों को तुम इस प्रकार जान लो: 'ये बातें केवल निब्बिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण की ओर ले जाती हैं,' तो तुम्हें निश्चित रूप से यह पहचान लेना चाहिए: 'यही धम्म है; यही अनुशासन है; यही गुरु का उपदेश है।" [144]

---

84 निपटान (अधिकरणसमथ)

"भिक्षुओं, अनुशासन संबंधी मुद्दों के निपटारे और किसी भी अनुशासन संबंधी समस्या के समाधान के लिए ये सात सिद्धांत हैं। वे कौन से सात सिद्धांत हैं?"

(1) उपस्थिति के आधार पर निष्कासन लागू किया जा सकता है; (2) स्मृति के आधार पर निष्कासन लागू किया जा सकता है; (3) अतीत के पागलपन के कारण निष्कासन लागू किया जा सकता है; (4) अपराध की स्वीकृति लागू की जा सकती है; (5) बहुमत की राय लागू की जा सकती है; (6) गंभीर दुराचार का आरोप लागू किया जा सकता है; और (7) घास से ढकना लागू किया जा सकता है।

"भिक्षुओं, अनुशासन संबंधी मुद्दों के निपटारे के लिए, और उत्पन्न होने वाले किसी भी अनुशासन संबंधी मुद्दे को सुलझाने और शांत करने के लिए ये सात सिद्धांत हैं।"

नौवीं. एक तपस्वी धारा 1606 (समानवाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

85 एक भिक्षु (भिक्खु)

भिक्षुओं, सात चीजों को तोड़ने से ही भिक्षु बनते हैं। 1609 वे सात चीजें क्या हैं? व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का दृष्टिकोण टूटता है; संदेह टूटता है; व्यवहार और अनुष्ठानों की गलत समझ टूटती है; काम (राग) टूटता है; घृणा टूटती है; मोह (मोह) टूटता है; अहंकार टूटता है। इन्हीं सात चीजों को तोड़ने से भिक्षु बनते हैं।

---

86 एक तपस्वी (समना)

"भिक्षुओं (साधुओं), सात चीजों को शांत करने से ही व्यक्ति तपस्वी बनता है। ..."

---

87 एक ब्राह्मण (ब्राह्मण)

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं), सात चीजों का त्याग करने से ही ब्राह्मण की उपाधि प्राप्त होती है। ..."

---

88 एक विद्वान (सोत्तिया)

"भिक्षुओं, सात चीजों के प्रवाह के कारण ही व्यक्ति विद्वान होता है।"

---

89 धुला हुआ (न्हाटाका)

"भिक्षुओं (मठवासियों), सात चीजों के धुल जाने के कारण ही व्यक्ति शुद्ध होता है" [145]

---

90 वैदिक ज्ञान का स्वामी (वेदगु संस्कृत: वेदग्य)

"भिक्षुओं (सम्मोहनवासियों), सात चीजों का ज्ञान होने के कारण ही कोई वैदिक ज्ञान का स्वामी होता है..."

---

91 एक महान व्यक्ति (आरिया)

"भिक्षुओं (सात व्यक्तियों) के शत्रुओं का वध करने से ही व्यक्ति श्रेष्ठ बनता है।" 1611

---

92 एक अरहंत

भिक्षुओं, सात चीजों की दूरी के कारण ही अरहंत बनते हैं। 16.2 वे सात चीजें कौन सी हैं? व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का दृष्टिकोण दूर है; संदेह दूर है; व्यवहार और अनुष्ठानों की गलत समझ दूर है; कामवासना (राग) दूर है; घृणा दूर है; मोह (मोह) दूर है; अहंकार दूर है। इन्हीं सात चीजों की दूरी के कारण ही अरहंत बनते हैं।

---

93 बुरा चरित्र (1) (असद्धम्म)

भिक्षुओं, ये सात ऐसे हैं जिनका चरित्र अच्छा नहीं है। कौन से सात? एक में आस्था नहीं है, एक में नैतिक लज्जा का अभाव है, एक में नैतिक भय नहीं है, एक अल्पज्ञानी है, एक आलसी है, एक भ्रमित मन वाला है और एक नासमझ है। ये सात ही अच्छे चरित्र वाले नहीं हैं।

---

94 अच्छा चरित्र (2) (सद्धम्म)

भिक्षुओं, ये सात लोग अच्छे चरित्र वाले हैं। वे कौन से सात हैं? एक आस्थावान, एक नैतिक लज्जा से युक्त, एक नैतिक भय से युक्त, एक विद्वान, एक ऊर्जावान, एक सजग और एक बुद्धिमान। ये सात लोग अच्छे चरित्र वाले हैं।

X. उपहारों के योग्य (अहुनेय्यावग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

95 अनित्यता को दृष्टि में देखना (ध्यान में अनिच्छ/अनित्य) 1613

"भिक्षुओं, ये सात प्रकार के व्यक्ति हैं जो दान के योग्य हैं, आतिथ्य सत्कार के योग्य हैं, भेंट के योग्य हैं, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, जो संसार के लिए अद्वितीय पुण्य का क्षेत्र हैं। वे सात कौन से हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, यहाँ एक व्यक्ति अनित्यता को आँख से देखते हुए (अनुपसी में) ध्यान लगाता है, अनित्यता को अनुभव करता है, निरंतर, निरंतर और निर्बाध रूप से उस पर ध्यान केंद्रित करता है, और उसे दिव्य ज्ञान से समझता है। दोषों के नाश के साथ, उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में मन की निष्कलंक मुक्ति, दिव्य ज्ञान द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, [146] और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। यह दान, आतिथ्य, भेंट और आदर के योग्य प्रथम प्रकार का व्यक्ति है, जो संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।"

(2) "फिर, कोई व्यक्ति अनित्यता को ध्यानपूर्वक देखते हुए (अनुपसी में) दृष्टि धारण करता है, अनित्यता का अनुभव करता है, निरंतर, निरंतर और निर्बाध रूप से मन से उस पर ध्यान केंद्रित करता है, और दिव्य ज्ञान से उसका गहन अध्ययन करता है। उसके लिए दोषों का नाश और जीवन का अंत एक साथ होता है। यह दूसरे प्रकार का व्यक्ति है जो वरदानों के योग्य है।"

(3) "फिर, कोई व्यक्ति अनित्यता को आँख से देखते हुए (अनुपसी में) ध्यान लगाता है, अनित्यता को अनुभव करता है, निरंतर, निरंतर और निर्बाध रूप से उस पर मन केंद्रित करता है, और उसे ज्ञान से समझता है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, वह इस अंतराल में निर्वाण प्राप्त कर लेता है। यह तीसरे प्रकार का व्यक्ति है जो वरदानों के योग्य है। ..."

(4) "फिर, कोई व्यक्ति अनित्यता को आँख से देखते हुए (अनुपसी में) ध्यान लगाता है, अनित्यता को अनुभव करता है, निरंतर, निरंतर और निर्बाध रूप से उस पर मन केंद्रित करता है, और उसे ज्ञान से समझता है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, वह निर्वाण प्राप्त कर लेता है। यह वरदानों के योग्य चौथे प्रकार का व्यक्ति है। ..."

(5) "फिर, कोई व्यक्ति अनित्यता को ध्यानपूर्वक देखते हुए (अनुपसी में) दृष्टि धारण करता है, अनित्यता का अनुभव करता है, निरंतर, निरंतर और निर्बाध रूप से मन से उस पर ध्यान केंद्रित करता है, और दिव्य ज्ञान से उसका गहन अध्ययन करता है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश से वह बिना किसी प्रयास के निर्वाण प्राप्त कर लेता है। यह पाँचवाँ प्रकार का व्यक्ति है जो वरदानों के योग्य है।"

(6) "फिर, कोई व्यक्ति अनित्यता को ध्यानपूर्वक देखते हुए (अनुपसी में) दृष्टि धारण करता है, अनित्यता का अनुभव करता है, निरंतर, निरंतर और निर्बाध रूप से मन से उस पर ध्यान केंद्रित करता है, और उसे दिव्य ज्ञान से समझता है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश से वह परिश्रम द्वारा निर्वाण प्राप्त करता है। यह छठे प्रकार का वरदानों के योग्य व्यक्ति है। ..."

(7) "फिर, कोई व्यक्ति अनित्यता को ध्यानपूर्वक देखते हुए (अनुपसी में) दृष्टि धारण करता है, अनित्यता का अनुभव करता है, निरंतर, सतत और निर्बाध रूप से मन से उस पर ध्यान केंद्रित करता है, और दिव्य ज्ञान से उसका गहन अध्ययन करता है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, वह धारा के विपरीत दिशा में प्रवाहित होकर अकनित्थ लोक की ओर अग्रसर होता है। यह सातवें प्रकार का वरदानों के योग्य व्यक्ति है। ..."

"हे भिक्षुओं, ये सात प्रकार के व्यक्ति हैं जो दान के योग्य हैं, आतिथ्य सत्कार के योग्य हैं, भेंट के योग्य हैं, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, और संसार के लिए पुण्य का एक अतुलनीय क्षेत्र हैं।"

---

96 — 622 दुख आदि को देखना (उस पर ध्यान करना)।

"भिक्षुओं, ये सात प्रकार के व्यक्ति हैं जो दान के योग्य हैं, आतिथ्य सत्कार के योग्य हैं, भेंट के योग्य हैं, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, जो संसार के लिए अद्वितीय पुण्य का क्षेत्र हैं। वे सात कौन से हैं?"

"यहाँ, भिक्षुओं, कोई व्यक्ति ध्यान में बैठकर पीड़ा को आँख में देखता है... ध्यान में बैठकर अनात्म को आँख में देखता है... ध्यान में बैठकर विनाश को आँख में देखता है... ध्यान में बैठकर लुप्त होते हुए आँख में देखता है..."

...आँखों के बीच से ओझल होते हुए ध्यान में लीन होकर देखता रहता है...

...आँखों में विश्राम को निहारते हुए (ध्यान/अनुपसी में) लीन रहता है ...आँखों में त्याग को निहारते हुए (ध्यान/अनुपसी में) लीन रहता है ...

यहाँ कोई व्यक्ति ध्यान (अनुपसी) में बैठकर कान, नाक, जीभ, शरीर, मन, रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों, स्पर्शनीय वस्तुओं और मानसिक घटनाओं (धम्म) में मौजूद अनित्यता को देखता है।

"... नेत्र-चेतना में... कान-चेतना में... नाक-चेतना में... जीभ-चेतना में... शरीर-चेतना में... मन-चेतना में..."

"...आँखों से संपर्क... कानों से संपर्क...नाक से संपर्क

संपर्क... जीभ का संपर्क... शरीर का संपर्क... मन का संपर्क

"...आँखों के संपर्क से उत्पन्न वेदना (संवेदना) में... उत्पन्न वेदना (संवेदना) में"

कान के संपर्क से उत्पन्न वेदना... नाक के संपर्क से उत्पन्न वेदना... जीभ के संपर्क से उत्पन्न वेदना... शरीर के संपर्क से उत्पन्न वेदना... मन के संपर्क से उत्पन्न वेदना...

"... रूपों की धारणा (सन्ना/सन्या) में... ध्वनियों की धारणा (सन्ना/संग्या)... गंधों की धारणा (सन्ना/सन्या)... स्वादों की धारणा (सन्ना/सन्या)... स्पर्श वस्तुओं की धारणा (सन्ना/सन्या)... मानसिक घटनाओं (धम्म) की धारणा (सन्ना/सन्या)। .

"...रूपों के प्रति जागरूकता...ध्वनियों के प्रति जागरूकता...गंधों के प्रति जागरूकता...स्वादों के प्रति जागरूकता...स्पर्शी वस्तुओं के प्रति जागरूकता...मानसिक घटनाओं (धम्म) के प्रति जागरूकता..."

"रूपों के प्रति लालसा (तन्हा/तृष्णा) में... ध्वनियों के प्रति लालसा... गंधों के प्रति लालसा... स्वादों के प्रति लालसा... स्पर्शनीय वस्तुओं के प्रति लालसा (तन्हा/तृष्णा)... मानसिक घटनाओं (धम्म) के प्रति लालसा..."

"...रूपों के बारे में चिंतन...ध्वनियों के बारे में चिंतन...गंधों के बारे में चिंतन...स्वादों के बारे में चिंतन...स्पर्शी वस्तुओं के बारे में चिंतन...मानसिक घटनाओं (धम्म) के बारे में चिंतन..."

"...रूपों की परीक्षा में...ध्वनियों की परीक्षा में...गंधों की परीक्षा में...स्वादों की परीक्षा में...स्पर्श वस्तुओं की परीक्षा में...मानसिक घटनाओं (धम्म) की परीक्षा में..."

"...यहाँ कोई व्यक्ति ध्यान में लीन होकर अनित्यता (अनित्यता) का अवलोकन करता है, जो कि वेदना, संज्ञा, और अपने स्वभाव/व्यवहार के समूह में व्याप्त है... चेतना के समूह में व्याप्त है... दुख का चिंतन करता है; अनात्म का अवलोकन करता है... विनाश का अवलोकन करता है... लुप्त होने का अवलोकन करता है... समाप्ति का चिंतन करता है... त्याग का अवलोकन करता है।"

XI. कामवासना (राग) और इसी प्रकार की पुनरावृत्ति श्रृंखला [1614]

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

623

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए सात चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे सात चीजें क्या हैं? सती ध्यान, घटनाओं के विवेक, वीरता, पीति, शांति, समाधि और उपेक्षा। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन सात चीजों का विकास करना आवश्यक है।

624

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए सात चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे सात चीजें कौन सी हैं? अनित्यता (अनिच्छा/अनित्यता) की अनुभूति, अनात्म की अनुभूति, अनाकर्षकता की अनुभूति, खतरे की अनुभूति, त्याग की अनुभूति, वैराग्य की अनुभूति और समाप्ति की अनुभूति। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन सात चीजों का विकास करना आवश्यक है।

625

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए सात चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे सात चीजें क्या हैं? अनाकर्षकता की अनुभूति, मृत्यु की अनुभूति, भोजन की अरुचि की अनुभूति, समस्त संसार में आनंदहीनता की अनुभूति, अनित्यता की अनुभूति, अनित्य में पीड़ा की अनुभूति और पीड़ा में अनात्म की अनुभूति। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन सात चीजों का विकास करना आवश्यक है।

626-652

भिक्षुओं, कामवासना (राग) की पूर्ण समझ के लिए... उसके पूर्ण विनाश के लिए... उसके त्याग के लिए... उसके विनाश के लिए... उसके लुप्त होने के लिए... उसके मिट जाने के लिए... उसके निवारण के लिए... उसके त्याग के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए... इन सात चीजों का विकास करना है।

653-1132

भिक्षुओं, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के लिए... पूर्ण समझ के लिए... पूर्ण विनाश के लिए... त्याग के लिए... विनाश के लिए... लुप्त होने के लिए... मिट जाने के लिए... समाप्ति के लिए... त्याग के लिए... घृणा (मोह) के लिए... क्रोध (क्रोध) के लिए... शत्रुता के लिए... निंदा के लिए... उद्दंडता के लिए... ईर्ष्या के लिए... कंजूसी के लिए... छल के लिए... धूर्तता के लिए... हठ के लिए... उग्रता के लिए... अहंकार के लिए... अभिमान के लिए... नशे के लिए... आलस्य के लिए... इन सात गुणों का विकास करना चाहिए।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह सुनकर भिक्षु प्रसन्न हुए और भगवान (बुद्ध) के इस कथन से उन्हें बहुत आनंद हुआ।

द बुक ऑफ द सेवन्स पूरी हो चुकी है।

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का आठवाँ खंड है। यह भिक्खु बोधि का संशोधित संस्करण है।

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN7) अगला (AN9) >>>>

अंतर्वस्तु

1अठकनिपात की पुस्तक (अठकनिपात)

1.1पहले पचास

1.1.1I. प्रेमपूर्ण दयालुता (मेटावाग्गो संस. मैत्री-वर्गा)

1.1.1.1(1) प्रेमपूर्ण दयालुता (मेटा संस मैत्री)

1.1.1.22 दिव्य ज्ञान (पन्ना सं. प्रत्यक्ष-ज्ञान)

1.1.1.33 अप्रसन्नता (एल) 1624 (अप्पिया1 सं. अप्रिया)

1.1.1.44 अप्रसन्न (2) (अप्पिया2 सं. अप्रिया)

1.1.1.5(5) सांसारिक धम्म (लोकधम्म 1 बिना लोक-धर्म)

1.1.1.66 सांसारिक धम्म (2) (लोकधम्म बिना लोक-धर्म)

1.1.1.77 देवदत्त का दुख (देवदत्तविपत्ति)

1.1.1.88 असफल होने पर उत्तर (उत्तरविपत्ति)

1.1.1.99 नंदा

1.1.1.1010 कचरा (करंडा)

1.1.2II. महावग्गो (महान अध्याय)

1.1.2.111 वेरांजा

1.1.2.212 सिहा (संस्कृत: सिंह/शेर)

1.1.2.313. शुद्ध नस्ल (अस्सजानिया)

1.1.2.414 जंगली घोड़े (अस्साखालुंका)

1.1.2.515 दाग (माला)

1.1.2.616 मिशन (दुतेय्या)

1.1.2.717 बंधन (1) (बंधन1)

1.1.2.818 बंधन (2) (बंधन2)

1.1.2.919 पहारदा (संस्कृत: प्रहलाद)

1.1.2.1020 उपोसथा 167एस

1.1.3तृतीय. गृहस्थ (गहपतिवग्गो सं. गृहपति-वर्ग)

1.1.3.121 उगा (1)

1.1.3.222 उगा (2)

1.1.3.323 हत्थका (1)

1.1.3.424 हत्थका (2)

1.1.3.525 महानामा

1.1.3.626 जीवक

1.1.3.727 शक्तियाँ (1) (बाला1)

1.1.3.828 शक्तियाँ (2) (बाला2)

1.1.3.929 अनुचित क्षण (अक्खाना)

1.1.3.1030 अनुरुद्ध (अनुरुद्धमहावितक्का सं. अनुरुद्ध-महा-वितर्क)

1.1.4चतुर्थ. दान अनुभाग (दानवग्गो संस. दान-वर्ग)

1.1.4.131 दान (दान) (1) (दाना1)

1.1.4.232 दान (दान) (2) 1699 (दाना2)

1.1.4.333 आधार (दानवत्थु)

1.1.4.434 मैदान (खेत्ता सं. क्षेत्र)

1.1.4.535 दान देने के कारण पुनर्जन्म (दानुपपत्ति)

1.1.4.636 गतिविधि (पुन्नकिरियावत्थु सं. पुण्य-क्रिया-वस्तु)

1.1.4.737 अच्छे व्यक्ति के दान (सप्पुरिसादना संस्कृत: सत-पुरुष-दान)

1.1.4.838 अच्छा व्यक्ति 1707 (सप्पुरिशा संसं. सतपुरुष)

1.1.4.939 धाराएँ (अभिसंदा)

1.1.4.1040. बुरे चरित्र का परिणाम (दुच्चरितविपाक)

1.1.5वी. उपोसाथा

1.1.5.141 संक्षेप में उपवास

1.1.5.242 उपवास विस्तार से (वित्थतुपोसथ सं. विस्तार उपोसथ)

1.1.5.343 विशाखा (1)

1.1.5.444 वसेत्था

1.1.5.545 बोज्जा

1.1.5.646 अनुरुद्ध

1.1.5.747 विशाखा (2)

1.1.5.848 नकुला

1.1.5.949 वर्तमान विश्व (1) 1723

1.1.5.1050 वर्तमान विश्व (2)

1.2दूसरा पचास

1.2.1I. गौतमी अनुभाग (बुद्ध की पालक माता और मौसी)

1.2.1.151 गौतमी [1727]

1.2.1.252 (2) उपदेश

1.2.1.353 संक्षिप्त [799]

1.2.1.454 (4) दिघजानु

1.2.1.555 उज्जया

1.2.1.656 संकट [1754] (भया)

1.2.1.757 भेंट के योग्य (1) (अहुनेय्या1)

1.2.1.858 भेंट के योग्य (2) (अहुनेय्या2)

1.2.1.959 आठ व्यक्ति (1) (पुग्गला1 सं. पुरुष-युगल)

1.2.1.1060 आठ व्यक्ति (2) (पुग्गला1 सं. पुरुष-युगल)

1.2.2II. भूकंप (भूमिकला)

1.2.2.161 इच्छा (इच्छा)

1.2.2.262 सक्षम (आलम)

1.2.2.363 संक्षेप में (संखित्त सं. संक्षिप्त)

1.2.2.464 गया (गयासिसा)

1.2.2.565 अभिभयताना (विजय प्राप्त करना)

1.2.2.666 मुक्ति (विमोक्ख बिना विमोक्ष)

1.2.2.767 तुच्छ घोषणाएँ (अन्यावोहारा सं. अनार्य-विहार)

1.2.2.868 महान घोषणाएँ (अरियावोहारा सं. आर्य-विहार)

1.2.2.969 विधानसभाएं 1783 (पेरिसा बिना परिषद)

1.2.2.1070 भूकंप [1785] (भूमिकला)

1.2.3III. जोड़े (यामाकावाग्गो)

1.2.3.171 आस्था (1) (सद्ध 1 बिना श्रद्धा)

1.2.3.272 आस्था (2) (सद्ध 2 बिना श्रद्धा)

1.2.3.373 मृत्यु पर ध्यान (l) 1793 (मरणस्मृति संस्कृत: मरणस्मृति)

1.2.3.474 मृत्यु पर ध्यान (2) 1794 (मरणस्मृति)

1.2.3.575 उपलब्धियाँ(1) (सम्पदा1)

1.2.3.676 उपलब्धियाँ (2) (सम्पदा2)

1.2.3.777 इच्छा (इच्छा)

1.2.3.878 सक्षम (आलम)

1.2.3.979 पतन 1796 (परिहाना सं. परी-हानी)

1.2.3.10आलस्य और ऊर्जा जागृत करने के 80 कारण (कुसितारम्भवत्थु)

1.2.4IV. ध्यान (सतिवाग्गो संस्कृत स्मृतिवाग्गो)

1.2.4.181 सती ध्यान (ध्यान/सती) [1797]

1.2.4.282 पुन्निया

1.2.4.383 जड़युक्त (मुलका)

1.2.4.484 एक चोर (कोरा)

1.2.4.585 तपस्वी (समान सं. श्रमण)

1.2.4.686 प्रसिद्धि (यासा, यश के बिना)

1.2.4.787 अलम्सबोल पलटना (पट्टनिकुज्जना सं. पात्रा...)

1.2.4.888 आत्मविश्वास की कमी (अप्पसादपवेदनिया)

1.2.4.989 सुलह (पतिसारनिया)

1.2.4.1090 व्यवहार (सम्मवत्तना)

1.2.5वी. तपस्वी 1816 (समन्ना)

1.2.6VI. लस्ट (राग) एंड सो फोर्थ रिपीटिशन सीरीज [1820] (रागपेय्यलम)

1.2.6.1117

1.2.6.2118

1.2.6.3119

1.2.6.4120 - 146

1.2.6.5147 - 626

अठकनिपात की पुस्तक (अठकनिपात)

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

उस भगवान को नमन, शत्रुओं का नाश करने वाले, सही मायने में पूर्णतः प्रबुद्ध (जागृत) भगवान।

पहले पचास

I. प्रेमपूर्ण दयालुता (मेटावाग्गो संस. मैत्री-वर्गा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

(1) प्रेमपूर्ण दयालुता (मेटा संस मैत्री)

मैंने ऐसा सुना है कि एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय,” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं, जब प्रेम और करुणा द्वारा मन की मुक्ति का अनुसरण, विकास और पोषण किया जाता है, उसे आधार और साधन बनाया जाता है, उसका क्रियान्वयन, सुदृढ़ीकरण और विधिवत पालन किया जाता है, तो आठ लाभों की अपेक्षा की जा सकती है। वे आठ लाभ कौन से हैं?"

(1) अच्छी नींद आती है; (2) खुशी से जागते हैं; (3) बुरे सपने नहीं आते; (4) मनुष्यो को भाते हैं; (5) आत्माओं को भाते हैं; (6) देवता रक्षा करते हैं; (7) आग, जहर और हथियार उन्हें चोट नहीं पहुंचाते; और (8) यदि आगे प्रवेश नहीं करते, तो ब्रह्मलोक में चले जाते हैं।

"जब, भिक्षुओं, प्रेम और करुणा द्वारा मन की मुक्ति का अनुसरण, विकास और पोषण किया जाता है, उसे एक माध्यम और आधार बनाया जाता है, उसे क्रियान्वित किया जाता है, सुदृढ़ किया जाता है और विधिवत रूप से संपन्न किया जाता है, तो इन आठ लाभों की अपेक्षा की जा सकती है।"

जो सदा सचेत (ध्यान/सती) रहता है और

असीम प्रेम-कृपा (मेट्टा) विकसित करता है, उसके लिए

बंधन शिथिल हो जाते हैं क्योंकि वह

अपने संचय का विनाश देखता है। [151]

यदि कोई व्यक्ति घृणा रहित मन से

केवल एक प्राणी के प्रति प्रेम उत्पन्न करे, तो

वह सद्गुणी बन जाता है।

सभी प्राणियों के प्रति करुणामय मन रखने वाला, 1616

श्रेष्ठ व्यक्ति प्रचुर पुण्य अर्जित करता है।

वे राजसी ऋषि जिन्होंने पृथ्वी पर

असंख्य प्राणियों सहित विजय प्राप्त की

, उन्होंने विभिन्न यज्ञों का आयोजन करते हुए यात्रा की:

अश्वमेध यज्ञ, मानव यज्ञ,

सम्मपासा, वजपेय्य, निरग्गला।

ये सब एक सुविकसित प्रेममय मन के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं हैं ,

ठीक वैसे ही जैसे तारों का समूह 1619

चंद्रमा की चमक के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं हो सकता।

जो न तो हत्या करता है और न ही हत्या का आदेश देता है,

जो न तो विजय प्राप्त करता है और न ही विजय का आदेश देता है,

जो सभी प्राणियों के प्रति प्रेम (मेट्टा) रखता है, वह

किसी के प्रति शत्रुता नहीं रखता।

---

2 दिव्य ज्ञान (पन्ना सं. प्रत्यक्ष-ज्ञान)

"भिक्षुओं, ब्रह्मचर्य (संन्यासी पवित्र जीवन) के लिए मूलभूत पन्ना (दिव्य ज्ञान) की प्राप्ति के लिए ये आठ कारण और परिस्थितियाँ हैं, जब यह प्राप्त नहीं हुआ हो, और इसके प्राप्त होने के बाद विकास द्वारा इसकी वृद्धि, परिपक्वता और पूर्णता के लिए। वे आठ क्या हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु गुरु या किसी ऐसे साथी भिक्षु पर निर्भर रहता है जो गुरु के पद पर है, जिसके प्रति उसने नैतिक लज्जा और नैतिक भय, स्नेह और श्रद्धा की तीव्र भावना स्थापित की है। यह पहला कारण और शर्त है जो ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के लिए मूलभूत पन्ना (दिव्य ज्ञान) की प्राप्ति की ओर ले जाता है जब यह प्राप्त नहीं हुआ होता है और इसके प्राप्त होने के बाद विकास द्वारा इसकी वृद्धि, परिपक्वता और पूर्णता की ओर ले जाता है। [152]

(2) "चूंकि वह गुरु या किसी ऐसे साथी भिक्षु पर निर्भर रहता है जो गुरु के पद पर है, जिसके प्रति उसके मन में नैतिक लज्जा, भय, स्नेह और आदर की तीव्र भावना है, इसलिए वह समय-समय पर उनके पास जाकर पूछता है: 'यह कैसे है, भंते? इसका क्या अर्थ है?' तब वे आदरणीय भिक्षु उसे वह सब कुछ प्रकट करते हैं जो प्रकट नहीं हुआ है, अस्पष्ट बातों को स्पष्ट करते हैं और अनेक उलझनों को दूर करते हैं। यह दूसरा कारण और शर्त है जो ब्रह्मचर्य (संन्यासी पवित्र जीवन) के लिए मूलभूत पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने की ओर ले जाता है। ..."

(3) "उस धम्म को सुनकर वह दो प्रकार के वैराग्य का सहारा लेता है: शरीर का वैराग्य और मन का वैराग्य। यही तीसरा कारण और शर्त है जो ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के लिए मूलभूत ज्ञान की प्राप्ति की ओर ले जाता है।"

(4) वह गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त है, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। यह चौथा कारण और शर्त है जो ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के लिए मूलभूत पन्ना (दिव्य ज्ञान) की प्राप्ति की ओर ले जाता है। ...

(5) "उसने बहुत कुछ सीखा है, सीखी हुई बातों को याद रखता है और उन्हें संजोता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों— उसने ऐसी शिक्षाओं को बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से उनका अध्ययन किया है और दृष्टि से अच्छी तरह समझा है। यह पाँचवाँ कारण और शर्त है जो ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के लिए मूलभूत पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने की ओर ले जाती है। [153]

(6) "उसने हानिकारक (अकुशल) गुणों का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता। यह छठा कारण और शर्त है जो ब्रह्मचर्य (संन्यासी पवित्र जीवन) के लिए मूलभूत पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने की ओर ले जाती है: . . ."

(7) संघ के बीच में वह निरर्थक और व्यर्थ की बातों में संलग्न नहीं होता। या तो वह स्वयं धम्म पर बोलता है, या किसी और से ऐसा करने का अनुरोध करता है, या वह मौन धारण करता है। 1622 यह सातवाँ कारण और शर्त है जो ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के लिए मूलभूत पन्ना (दिव्य ज्ञान) की प्राप्ति की ओर ले जाता है। . . .

(8) "वह आसक्ति के अधीन पाँचों स्कंधों में उत्पन्न और विलीन होते हुए (अनुपसी में) ध्यानपूर्वक देखता है: 'ऐसा रूप है, ऐसा उसका उद्गम है, ऐसा उसका क्षय है; ऐसी संवेदना (वेदना) है... ऐसी अनुभूति (संज्ञा) है... ऐसे व्यक्ति के लक्षण (संस्कार) हैं... ऐसी चेतना है, ऐसा उसका उद्गम है, ऐसा उसका क्षय है।' यह आठवाँ कारण और शर्त है जो ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के लिए मूलभूत पन्ना (दिव्य ज्ञान) की प्राप्ति की ओर ले जाता है जब वह प्राप्त नहीं हुआ हो और प्राप्ति के बाद विकास द्वारा उसकी वृद्धि, परिपक्वता और पूर्णता की ओर ले जाता है।"

(1) उनके साथी भिक्षु उनका इस प्रकार आदर करते हैं: 'यह पूजनीय भिक्षु गुरु या किसी ऐसे साथी भिक्षु पर निर्भर रहते हैं जो गुरु के पद पर है, जिनके प्रति उन्होंने नैतिक लज्जा, नैतिक भय, स्नेह और आदर की तीव्र भावना स्थापित की है। यह पूजनीय भिक्षु निश्चित रूप से जानते और देखते हैं।' यह गुण स्नेह, आदर, सम्मान, सामंजस्य और एकता की ओर ले जाता है। 1623

(2) "चूंकि यह पूज्य व्यक्ति गुरु या किसी साथी भिक्षु पर, जो गुरु के पद पर है, निर्भर रहते हैं... [154] ... वे पूज्य व्यक्ति ... अनेक पेचीदा बिंदुओं के बारे में उनकी उलझन दूर करते हैं। यह पूज्य व्यक्ति निश्चित रूप से जानता और देखता है। यह गुण भी स्नेह, आदर, सम्मान, सामंजस्य और एकता की ओर ले जाता है।"

(3) "हे पूज्यवर, उस धम्म को सुनकर, व्यक्ति दो प्रकार के वैराग्य का सहारा लेता है: शरीर से वैराग्य और मन से वैराग्य। हे पूज्यवर, यह गुण भी स्नेह, आदर, सम्मान, सद्भाव और एकता की ओर ले जाता है।"

(4) "यह पूजनीय व्यक्ति गुणी है; वह पतिमोक्खा द्वारा संयमित रहता है... वह उनमें अभ्यास करता है। यह पूजनीय व्यक्ति निश्चित रूप से जानता और देखता है। यह गुण भी स्नेह, आदर, सम्मान, सद्भाव और एकता की ओर ले जाता है।"

(5) "इस आदरणीय ने बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से अच्छी तरह से पारंगत हैं। यह आदरणीय निश्चित रूप से जानते और देखते हैं। यह गुण भी स्नेह, आदर, सम्मान, सामंजस्य और एकता की ओर ले जाता है।"

(6) "इस पूज्यवर ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है... लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं किया है। यह पूज्यवर निश्चित रूप से जानता और देखता है।" यह गुण भी स्नेह, आदर, सम्मान, सद्भाव और एकता की ओर ले जाता है। [155]

(7) "संघ के बीच में, यह पूज्य व्यक्ति निरर्थक और व्यर्थ की बातों में संलग्न नहीं होता... या वह मौन धारण करता है। यह पूज्य व्यक्ति निश्चित रूप से जानता और देखता है।" यह गुण भी स्नेह, आदर, सम्मान, सामंजस्य और एकता की ओर ले जाता है।

(8) "यह पूजनीय व्यक्ति आसक्ति के अधीन पाँचों स्कंधों में उत्पन्न और विलीन होते हुए (ध्यान/अनुपसी में) निवास करते हैं। ... यह पूजनीय व्यक्ति निश्चित रूप से जानते और देखते हैं।" यह गुण भी स्नेह, आदर, सम्मान, सामंजस्य और एकता की ओर ले जाता है।

"भिक्षुओं, ये वे आठ कारण और परिस्थितियाँ हैं जो ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के लिए मूलभूत पन्ना (दिव्य ज्ञान) की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं, जब यह प्राप्त नहीं हुआ हो, और इसके प्राप्त होने के बाद विकास द्वारा इसकी वृद्धि, परिपक्वता और पूर्णता की ओर ले जाती हैं।"

---

3 अप्रसन्नता (एल) 1624 (अप्पिया1 सं. अप्रिया)

"आठ गुणों से युक्त भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होता है, और न तो वे उसका सम्मान करते हैं और न ही उसे महत्व देते हैं। वे आठ गुण क्या हैं? यहाँ, (1) भिक्षु अप्रिय लोगों की प्रशंसा करता है और (2) सुखद लोगों की आलोचना करता है; (3) वह लाभ और (4) मान-सम्मान का लालची होता है; (5) वह नैतिक रूप से निर्लज्ज और (6) नैतिक रूप से लापरवाह होता है; (7) उसकी बुरी इच्छाएँ होती हैं और (8) वह गलत मत रखता है। इन आठ गुणों से युक्त भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होता है, और न तो वे उसका सम्मान करते हैं और न ही उसे महत्व देते हैं।"

"भिक्षुओं में आठ गुण होते हैं, जिससे वे अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और सम्माननीय लगते हैं और उनका आदर करते हैं। वे आठ गुण क्या हैं? [156] यहाँ, (1) भिक्षु अप्रिय लोगों की प्रशंसा नहीं करते और (2) प्रसन्न लोगों की आलोचना नहीं करते; (3) वे लाभ या (4) मान-सम्मान की इच्छा नहीं रखते; (5) उनमें नैतिक लज्जा और (6) नैतिक भय की भावना होती है; (7) उनकी इच्छाएँ कम होती हैं और (8) वे सही दृष्टिकोण रखते हैं। इन आठ गुणों से युक्त भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और सम्माननीय लगते हैं और उनका आदर करते हैं।"

---

4 अप्रसन्न (2) (अप्पिया2 सं. अप्रिया)

"भिक्षुओं में आठ गुण होते हैं, और वे अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होते हैं, तथा न तो उनका आदर करते हैं और न ही उन्हें सम्मान देते हैं। वे आठ गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु (1) लाभ, (2) मान-सम्मान और (3) प्रतिष्ठा की इच्छा रखता है; (4) उसे उचित समय का ज्ञान नहीं होता और (5) वह संयम नहीं जानता; (6) वह अपवित्र होता है; (7) वह बहुत बोलता है; और (8) वह अपने साथी भिक्षुओं का अपमान और निंदा करता है। इन आठ गुणों के कारण, भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को अप्रिय और नापसंद होता है, तथा न तो उनका आदर करता है और न ही उन्हें सम्मान देता है।"

"भिक्षुओं में आठ गुण होते हैं, जिससे वे अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और सम्माननीय लगते हैं और उनका आदर करते हैं। वे आठ गुण क्या हैं? यहाँ, भिक्षु (1) लाभ, (2) मान-सम्मान और (3) प्रतिष्ठा की इच्छा नहीं रखता; (4) वह उचित समय का ज्ञाता होता है और (5) संयमी होता है; (6) वह पवित्र होता है; (7) वह कम बोलता है; और (8) वह अपने साथी भिक्षुओं का अपमान या अपशब्द नहीं कहता। इन आठ गुणों से युक्त भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और सम्माननीय लगता है और उनका आदर करते हैं।"

---

(5) सांसारिक धम्म (लोकधम्म 1 बिना लोक-धर्म)

भिक्षुओं, ये आठ सांसारिक धर्म संसार के चारों ओर घूमते हैं, और संसार इन आठ सांसारिक स्थितियों के चारों ओर घूमता है। वे आठ कौन से हैं? [157] लाभ और हानि, बदनामी और प्रसिद्धि, निंदा और प्रशंसा, और सुख और दुख। ये आठ सांसारिक स्थितियाँ संसार के चारों ओर घूमती हैं, और संसार इन आठ सांसारिक स्थितियों के चारों ओर घूमता है।

लाभ और हानि, बदनामी और प्रसिद्धि,

निंदा और प्रशंसा, सुख और दुख:

ये सभी परिस्थितियाँ जो लोगों के जीवन में आती हैं

, अस्थाई, क्षणिक और परिवर्तनशील होती हैं।

एक बुद्धिमान और सजग व्यक्ति इन बातों को जानता है

और समझता है कि ये परिवर्तनशील हैं।

वांछनीय परिस्थितियाँ उसके मन को आकर्षित नहीं करतीं

और अवांछनीय परिस्थितियाँ उसे विचलित नहीं करतीं।

उन्होंने आकर्षण और विकर्षण को दूर कर दिया है;

वे अब मौजूद नहीं हैं।

धूल रहित, दुःख रहित अवस्था को जानकर,

वे सही ढंग से समझते हैं और अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) से परे चले गए हैं।

---

6 सांसारिक धम्म (2) (लोकधम्म बिना लोक-धर्म)

भिक्षुओं, ये आठ सांसारिक परिस्थितियाँ संसार के चारों ओर घूमती हैं, और संसार इन आठ सांसारिक परिस्थितियों के चारों ओर घूमता है। कौन सी आठ परिस्थितियाँ? लाभ और हानि, यश और यश, निंदा और प्रशंसा, और सुख और दुःख। ये आठ सांसारिक परिस्थितियाँ संसार के चारों ओर घूमती हैं, और संसार इन आठ सांसारिक परिस्थितियों के चारों ओर घूमता है।

भिक्षुओं, एक अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति लाभ और हानि, बदनामी और प्रसिद्धि, निंदा और प्रशंसा, और सुख और दुख का सामना करता है। एक शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य भी लाभ और हानि, बदनामी और प्रसिद्धि, निंदा और प्रशंसा, और सुख और दुख का सामना करता है। इस संबंध में एक शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य और एक अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति के बीच क्या अंतर, क्या असमानता, क्या फर्क है?

"भंते, हमारी शिक्षाएं भगवान (बुद्ध) में निहित हैं, भगवान (बुद्ध) द्वारा निर्देशित हैं, भगवान (बुद्ध) की शरण लो। यदि भगवान (बुद्ध) इस कथन का अर्थ स्पष्ट कर दें तो अच्छा होगा। उनसे सुनकर भिक्षु इसे याद रखेंगे।"

"तो सुनो, भिक्षुओं, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।" "जी, भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

(1) भिक्षुओं, जब कोई अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति लाभ प्राप्त करता है, तो वह इस प्रकार चिंतन नहीं करता: 'यह लाभ जो मुझे प्राप्त हुआ है, क्षणभंगुर, कष्टदायक और परिवर्तनशील है।' वह इसे इसके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता। (2) जब उसे हानि होती है... (3) ... यश... (4) ... बदनामी... (5) ... निंदा... (6) ... प्रशंसा... (7) ... सुख... (8) ... दुःख, तो वह इस प्रकार चिंतन नहीं करता: 'यह दुःख जो मुझे प्राप्त हुआ है, क्षणभंगुर, कष्टदायक और परिवर्तनशील है।' वह इसे इसके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता।

लाभ और हानि, दोनों ही उसके मन में व्याप्त हैं। यश और बदनामी, दोनों ही उसके मन में व्याप्त हैं। निंदा और प्रशंसा, दोनों ही उसके मन में व्याप्त हैं। सुख और दुःख, दोनों ही उसके मन में व्याप्त हैं। वह लाभ की ओर आकर्षित होता है और हानि से विमुख होता है। वह यश की ओर आकर्षित होता है और बदनामी से विमुख होता है। वह प्रशंसा की ओर आकर्षित होता है और निंदा से विमुख होता है। वह सुख की ओर आकर्षित होता है और दुःख से विमुख होता है। इस प्रकार आकर्षण और विकर्षण में उलझा रहने के कारण वह पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त नहीं हो पाता; मैं कहता हूँ, वह कष्टों से मुक्त नहीं हो पाता।

लेकिन, भिक्षुओं, (1) जब एक शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य को लाभ प्राप्त होता है, तो वह इस प्रकार विचार करता है: 'यह लाभ जो मुझे प्राप्त हुआ है, वह क्षणभंगुर, कष्टदायी और परिवर्तनशील है।' इस प्रकार वह इसे यथार्थ रूप में समझता है। (2) जब उसे हानि प्राप्त होती है... (3) ... प्रसिद्धि... (4)

. . . [159] बदनामी . . . (5) . . . दोष . . . (6) . . . प्रशंसा . . . (7) 7 . . आनंद . . (8) . . . दर्द, वह इस प्रकार विचार करता है: "यह दर्द जिसका मैंने सामना किया है, क्षणभंगुर, पीड़ादायक और परिवर्तनशील है।" इस प्रकार वह इसे वास्तव में समझता है।

लाभ और हानि दोनों ही उसके मन को परेशान नहीं करते। प्रसिद्धि और बदनामी दोनों ही उसके मन को परेशान नहीं करते। निंदा और प्रशंसा दोनों ही उसके मन को परेशान नहीं करते। सुख और दुख दोनों ही उसके मन को परेशान नहीं करते। वह लाभ की ओर आकर्षित नहीं होता और हानि से विमुख नहीं होता। प्रसिद्धि और बदनामी दोनों ही उसके मन को परेशान नहीं करते। प्रशंसा और निंदा दोनों ही उसके मन को परेशान नहीं करते।

वह सुख के प्रति आकर्षित नहीं होता और न ही दुःख से विमुख होता है। इस प्रकार आकर्षण और विकर्षण को त्यागकर वह पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त हो जाता है; मैं कहता हूँ, वह पीड़ा से मुक्त हो जाता है।

"भिक्षुओं, यही एक ज्ञानी, एक श्रेष्ठ शिष्य और एक अज्ञानी सांसारिक व्यक्ति के बीच का अंतर है।"

[ये आयतें 8:5 की आयतों के समान हैं।] [160]

---

7 देवदत्त का दुख (देवदत्तविपत्ति)

एक बार देवदत्त के चले जाने के कुछ समय बाद भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। 1626 में भगवान (बुद्ध) ने वहाँ भिक्षुओं को देवदत्त के संदर्भ में संबोधित किया:

भिक्षुओं, समय-समय पर भिक्षु के लिए अपनी कमियों का मूल्यांकन करना अच्छा होता है। दूसरों की कमियों का मूल्यांकन करना भी अच्छा होता है। अपनी उपलब्धियों का मूल्यांकन करना भी अच्छा होता है। दूसरों की उपलब्धियों का मूल्यांकन करना भी अच्छा होता है। क्योंकि देवदत्त आठ बुरी स्थितियों से ग्रस्त और ग्रस्त था, इसलिए वह दुख के लोक में, नरक में जाने के लिए बाध्य है, और वह युगों तक वहीं रहेगा, उद्धार का कोई अवसर नहीं। वे आठ बुरी स्थितियाँ क्या हैं?

(1) क्योंकि वह लाभ के लालच में डूबा हुआ था, देवदत्त दुख के लोक में, नरक में जाने के लिए बाध्य है, और वह वहाँ युगों तक अप्रतिष्ठित रहेगा। (2) क्योंकि वह हानि के लालच में डूबा हुआ था... (3) ... यश के लालच में... (4) ... बदनामी के लालच में... (5) ... सम्मान के लालच में... (6) ... सम्मानहीनता के लालच में... (7) ... बुरी इच्छाओं के लालच में... (8) ... बुरी मित्रता के लालच में, देवदत्त दुख के लोक में, नरक में जाने के लिए बाध्य है, और वह वहाँ युगों तक अप्रतिष्ठित रहेगा। क्योंकि वह इन आठ बुरी स्थितियों के लालच में डूबा हुआ था, देवदत्त दुख के लोक में, नरक में जाने के लिए बाध्य है, और वह वहाँ युगों तक अप्रतिष्ठित रहेगा। युग, जिसे सुधारा नहीं जा सकता।

भिक्षु के लिए लाभ पर विजय प्राप्त करना अच्छा है, चाहे वह कभी भी उत्पन्न हो। उसके लिए हानि पर विजय प्राप्त करना अच्छा है, चाहे वह कभी भी उत्पन्न हो... प्रसिद्धि पर विजय प्राप्त करना... बदनामी पर विजय प्राप्त करना... सम्मान [161]... सम्मान की कमी पर विजय प्राप्त करना... बुरी इच्छाओं पर विजय प्राप्त करना... बुरी मित्रता पर विजय प्राप्त करना, चाहे वह कभी भी उत्पन्न हो।

...और भिक्षु को लाभ उत्पन्न होने पर उस पर विजय क्यों प्राप्त करनी चाहिए? उसे इप्स... यश... बदनामी... सम्मान... अपमान... बुरी इच्छाओं... बुरी मित्रता पर विजय क्यों प्राप्त करनी चाहिए? जो व्यक्ति लाभ पर विजय प्राप्त नहीं कर पाता, उसमें उत्पन्न होने वाले वे कष्टदायी और कष्टदायक दोष, लाभ पर विजय प्राप्त कर लेने वाले में नहीं होते। जो व्यक्ति हानि... यश... बदनामी... सम्मान... अपमान... बुरी इच्छाओं... बुरी मित्रता पर विजय प्राप्त कर लेता है, उसमें उत्पन्न होने वाले वे कष्टदायी और कष्टदायी दोष नहीं होते। इसलिए भिक्षु को लाभ उत्पन्न होने पर उस पर विजय क्यों प्राप्त करनी चाहिए? उसे हानि... यश... बदनामी पर विजय प्राप्त करनी चाहिए। ... सम्मान ... सम्मान का अभाव ... बुरी इच्छाएँ ... जब भी कोई बुरी दोस्ती उत्पन्न हो।

अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'लाभ चाहे जब भी उत्पन्न हो, हम उस पर विजय प्राप्त करेंगे। हानि... यश... अपयश... मान... मानहानि... बुरी इच्छाएँ... बुरी मित्रता, चाहे जब भी उत्पन्न हो, हम उस पर विजय प्राप्त करेंगे। इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।' [162]

---

8 असफल होने पर उत्तर (उत्तरविपत्ति)

एक बार पूज्य उत्तरा सांखेय्या पर्वत पर स्थित धवजलिका में महिषा वस्तु में निवास कर रहे थे। वहाँ पूज्य उत्तरा ने भिक्षुओं को संबोधित किया।

"मित्रों, भिक्षु के लिए समय-समय पर अपनी कमियों की समीक्षा करना अच्छा होता है। भिक्षु के लिए समय-समय पर दूसरों की कमियों की समीक्षा करना अच्छा होता है। भिक्षु के लिए समय-समय पर अपनी उपलब्धियों की समीक्षा करना अच्छा होता है। भिक्षु के लिए समय-समय पर दूसरों की उपलब्धियों की समीक्षा करना अच्छा होता है।"

उस समय महान देव राजा वेसवना किसी कार्य से उत्तर से दक्षिण की यात्रा कर रहे थे। उन्होंने महिसावत्थु में, धवजलिका पर्वत पर स्थित सरिकेय्य पर्वत पर, पूज्य उत्तरा को भिक्षुओं को धम्म का उपदेश देते हुए सुना: 'मित्रों, भिक्षु के लिए समय-समय पर अपनी कमियों, दूसरों की कमियों, अपनी उपलब्धियों और दूसरों की उपलब्धियों की समीक्षा करना अच्छा होता है।' फिर, जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को वापस समेट लेता है, वैसे ही वेसवना संखेय्या पर्वत से लुप्त हो गए और तावतिंसा देवों के बीच पुनः प्रकट हुए।

वह देवों (देवदूतों/देवताओं) के शासक सक्का (इंद्र) के पास गए और उनसे कहा: "आदरणीय महोदय, आपको यह जानना चाहिए कि महिसावत्थु [163] में धवजलिका पर्वत पर स्थित पूज्य उत्तरा भिक्षुओं को इस प्रकार धम्म की शिक्षा देते रहे हैं: 'मित्रों, भिक्षु के लिए समय-समय पर अपनी कमियों... दूसरों की कमियों... अपनी उपलब्धियों... दूसरों की उपलब्धियों की समीक्षा करना अच्छा होता है।'"

फिर, जैसे कोई बलवान पुरुष अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को अंदर खींच लेता है, उसी प्रकार सक्का (इंद्र) तावतिंसा देवताओं के बीच से विलीन हो गए और महिसावत्थु में, सांखेय्या पर्वत पर स्थित धवजलिका में, पूज्य उत्तरा के समक्ष पुनः प्रकट हुए। वे पूज्य उत्तरा के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हुए और उनसे कहा:

"हे भंते, क्या यह सच है कि जैसा कहा जाता है, आप भिक्षुओं को धम्म की शिक्षा इस प्रकार देते रहे हैं: 'मित्रों, भिक्षु के लिए समय-समय पर अपनी कमियों... दूसरों की कमियों... अपनी उपलब्धियों... दूसरों की उपलब्धियों की समीक्षा करना अच्छा होता है'?"

"जी हां, देवों (देवदूतों/देवताओं) के स्वामी।"

"पर, भंते, क्या यह तुम्हारा स्वयं का विवेक था, या यह भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन था?" . . .

"तो फिर, हे देवों (देवदूतों/देवताओं) के स्वामी, मैं आपको एक उपमा देता हूँ; उपमा के माध्यम से भी कुछ बुद्धिमान लोग कही गई बात का अर्थ समझ जाते हैं। मान लीजिए कि किसी गाँव या कस्बे से कुछ ही दूरी पर अनाज का एक बड़ा ढेर है, और लोगों की एक बड़ी भीड़ डंडियों, टोकरियों, कमरबंदों [164] और अपने हाथों से अनाज ढोने के लिए जा रही है। यदि कोई उस बड़ी भीड़ के पास जाकर उनसे पूछे: 'आपको यह अनाज कहाँ से मिला?' तो वे क्या कहेंगे?"

"भंते, उन लोगों को कहना चाहिए: 'हमने इसे अनाज के उस विशाल ढेर से प्राप्त किया है।'"

"इसी प्रकार, हे देवों (देवदूतों/देवताओं) के स्वामी, जो कुछ भी अच्छा कहा जाता है, वह सब भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन है। मैं स्वयं और अन्य लोग भी अपने अच्छे वचन उन्हीं से प्राप्त करते हैं।" 1627

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है, भंते, आपने इसे कितनी खूबसूरती से व्यक्त किया है: 'जो कुछ भी अच्छा बोला जाता है, वह सब भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का वचन है। मैं स्वयं और अन्य लोग अपने अच्छे शब्द उनसे ही प्राप्त करते हैं।'

"एक बार, देवदत्त के चले जाने के कुछ समय बाद, भगवान (बुद्ध) भंते उत्तरा, गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को देवदत्त के संदर्भ में संबोधित करते हुए कहा: 'भिक्षुओं, समय-समय पर भिक्षु के लिए अपनी कमियों की समीक्षा करना अच्छा है [यहाँ सक्का (इंद्र) बुद्ध के 8:7 के संपूर्ण प्रवचन का उद्धरण देते हैं, यहाँ तक:] [165-66] ... इसी प्रकार, भिक्षुओं, आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।' 1628

"भंते उत्तरा, धम्म की यह व्याख्या चारों मानव समुदायों में कहीं भी प्रचारित नहीं हुई है: अर्थात् भिक्षुओं, भिक्षुणियों (साधुओं), पुरुष गृहस्थ अनुयायियों और स्त्री गृहस्थ अनुयायियों में। 1629 भंते, धम्म (मार्ग) की इस व्याख्या को सीखो, इस व्याख्या में पारंगत हो जाओ और इसे अपने मन में संजो कर रखो। धम्म की यह व्याख्या लाभकारी है; यह ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) के मूल सिद्धांतों से संबंधित है।"

---

9 नंदा

भिक्षुओं, (1) सही ढंग से बोलने वाला नंदा के बारे में कहेगा कि वह कुल का अनुयायी है, (2) वह बलवान है, (3) वह सुंदर है, और (4) वह राग के प्रति प्रबल प्रवृत्त है। 1630 अन्यथा नंदा पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन कैसे जी सकता था जब तक कि (5) वह इंद्रियों के द्वारों की रक्षा न करता, (6) भोजन में संयम न बरतता, (7) सचेतन न रहता, और (8) सती ध्यान और संपजन्नता न रखता?

भिक्षुओं, नंदा इस प्रकार इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करते हैं: [167] यदि उन्हें पूर्व दिशा की ओर देखना हो, तो वे ऐसा विषय पर पूर्ण विचार करने और उसे पूरी तरह समझने के बाद ही करते हैं, इस प्रकार: 'जब मैं पूर्व दिशा की ओर देखता हूँ, तो लालसा और निराशा की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ मुझ पर हावी नहीं होंगी।' यदि उन्हें पश्चिम की ओर... उत्तर की ओर... दक्षिण की ओर... ऊपर की ओर... नीचे की ओर... मध्यवर्ती दिशाओं का अवलोकन करने की आवश्यकता हो, तो वे ऐसा विषय पर पूर्ण विचार करने और उसे पूरी तरह समझने के बाद ही करते हैं, इस प्रकार: 'जब मैं मध्यवर्ती दिशाओं की ओर देखता हूँ, तो लालसा और निराशा की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ मुझ पर हावी नहीं होंगी।' इस प्रकार नंदा इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करते हैं।

"नंदा इस प्रकार भोजन में संयम बरतते हैं: यहाँ, ध्यानपूर्वक चिंतन करते हुए, नंदा न तो मनोरंजन के लिए, न ही नशे के लिए, न ही शारीरिक सौंदर्य और आकर्षण के लिए भोजन ग्रहण करते हैं, बल्कि केवल अपने शरीर के भरण-पोषण, हानि से बचाव और ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) में सहायता के लिए भोजन करते हैं, यह सोचते हुए कि: 'इस प्रकार मैं पुरानी वेदना को समाप्त करूँगा और नई वेदना को जागृत नहीं होने दूँगा, और मैं स्वस्थ और निर्दोष रहूँगा और शांति से निवास करूँगा।' इस प्रकार नंदा भोजन में संयम बरतते हैं।"

"नंदा इस प्रकार जागृति पर ध्यान केंद्रित करते हैं: [168] दिन के दौरान, इधर-उधर चलते और बैठते हुए, नंदा अपने मन को बाधक गुणों से शुद्ध करते हैं। रात्रि के पहले पहर में, इधर-उधर चलते और बैठते हुए, वे अपने मन को बाधक गुणों से शुद्ध करते हैं। रात्रि के मध्य पहर में, वे उठने का विचार मन में रखकर, एक पैर दूसरे पर रखकर, सिंह मुद्रा में दाहिनी ओर लेट जाते हैं, सती भाव से ध्यान लगाते हैं और पूर्णतः बोध करते हैं। उठने के बाद, रात्रि के अंतिम पहर में, इधर-उधर चलते और बैठते हुए, वे अपने मन को बाधक गुणों से शुद्ध करते हैं। इस प्रकार नंदा जागृति पर ध्यान केंद्रित करते हैं।"

"यह नंदा की सती (ध्यान) और संपजन्न की पूर्ण समझ है: नंदा वेदनाओं को उनके उत्पन्न होने, बने रहने और लुप्त होने के रूप में जानते हैं; वे संज्ञाओं को उनके उत्पन्न होने, बने रहने और लुप्त होने के रूप में जानते हैं; वे विचारों को उनके उत्पन्न होने, बने रहने और लुप्त होने के रूप में जानते हैं। 1631 यही नंदा की सती (ध्यान) और संपजन्न की पूर्ण समझ है।"

"भिक्षुओं, नंदा पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन कैसे जी सकते थे, जब तक कि वे अपनी इंद्रियों को वश में न रखते, खान-पान में संयम न बरतें, सती ध्यान में न रहें और सजगता तथा संपजन्न को प्राप्त न कर लें?"

---

10 कचरा (करंडा)

एक बार भगवान (बुद्ध) चंपा में गग्गर कमल तालाब के किनारे निवास कर रहे थे। उस समय भिक्षु एक भिक्षु को उसके अपराध के लिए फटकार रहे थे। फटकार सुनने पर उस भिक्षु ने टालमटोल भरा उत्तर दिया, चर्चा को एक अप्रासंगिक विषय की ओर मोड़ दिया और क्रोध, घृणा और आक्रोश प्रदर्शित किया। 1632 तब भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: [169] "भिक्षुओं, इस व्यक्ति को निकाल दो! भिक्षुओं, इस व्यक्ति को निकाल दो! 1633 इस व्यक्ति को निर्वासित कर देना चाहिए। दूसरे के पुत्र से तुम्हें क्यों परेशानी हो? 1634

"हे भिक्षुओं, जब तक भिक्षु उसका अपराध नहीं देखते, तब तक एक व्यक्ति का आचरण (1) आगे जाने और (2) लौटने का, (3) आगे देखने और (4) बगल में देखने का, (5) झुकने और (6) अपने अंगों को फैलाने का, और (7) अपने वस्त्र पहनने और (8) अपने बाहरी वस्त्र और कुंड को धारण करने का, अच्छे भिक्षुओं के समान होता है। 1635 परन्तु जब वे उसका अपराध देखते हैं, तो वे उसे तपस्वियों के बीच भ्रष्टाचार, तपस्वियों के बीच केवल भूसा और कूड़ा समझते हैं। तब वे उसे निष्कासित कर देते हैं। इसका कारण क्या है? ताकि वह अच्छे भिक्षुओं को भ्रष्ट न करे।"

मान लीजिए कि जब जौ का खेत उग रहा हो, तो कुछ रोगग्रस्त जौ दिखाई दे जो जौ के बीच में भूसी और कचरा मात्र हो। जब तक उसका सिरा नहीं निकलता, उसकी जड़ें अन्य फसलों, यानी अच्छे जौ की जड़ों जैसी ही होती हैं; उसका तना भी अन्य फसलों, यानी अच्छे जौ के तने जैसा ही होता है; उसके पत्ते भी अन्य फसलों, यानी अच्छे जौ के पत्तों जैसे ही होते हैं। लेकिन जब उसका सिरा निकल आता है, तो वे उसे रोगग्रस्त जौ, यानी जौ के बीच में भूसी और कचरा समझ लेते हैं। फिर वे उसे जड़ से उखाड़कर जौ के खेत से बाहर फेंक देते हैं। इसका कारण क्या है? ताकि वह अच्छे जौ को खराब न कर दे।

"इसी प्रकार, जब तक भिक्षुओं को उसका अपराध दिखाई नहीं देता, यहाँ एक व्यक्ति भी अच्छे भिक्षुओं की तरह ही आगे बढ़ता है और अपना बाहरी वस्त्र और भिक्षापात्र धारण करता है। परन्तु जब उन्हें उसका अपराध दिखाई देता है, तो वे उसे तपस्वियों के बीच एक भ्रष्ट तत्व, तपस्वियों के बीच केवल एक तुच्छ वस्तु और कूड़ा समझते हैं। तब वे उसे निष्कासित कर देते हैं। इसका कारण क्या है? ताकि वह अच्छे भिक्षुओं को भ्रष्ट न करे।"

मान लीजिए कि जब अनाज के एक बड़े ढेर को फटककर साफ किया जा रहा होता है, तो जो अनाज सख्त और गूदेदार होते हैं, वे एक तरफ जमा हो जाते हैं, और हवा खराब अनाज और भूसे को दूसरी तरफ उड़ा ले जाती है। तब मालिक झाड़ू लेकर उन्हें और दूर धकेल देते हैं। इसका कारण क्या है? ताकि अच्छे अनाज खराब न हों।

"इसी प्रकार, जब तक भिक्षुओं को उसका अपराध दिखाई नहीं देता, तब तक यहाँ एक व्यक्ति अन्य भले भिक्षुओं की तरह ही आगे बढ़ता है... और अपना बाहरी वस्त्र और भिक्षापात्र धारण करता है। परन्तु जब भिक्षुओं को उसका अपराध दिखाई देता है, तो वे उसे तपस्वियों के बीच भ्रष्टाचार, तपस्वियों के बीच तुच्छ और बेकार समझते हैं। तब वे उसे निष्कासित कर देते हैं। इसका कारण क्या है? ताकि वह भले भिक्षुओं को भ्रष्ट न करे।"

मान लीजिए किसी व्यक्ति को कुएँ के लिए नाली की आवश्यकता है। वह एक तेज कुल्हाड़ी लेकर जंगल में जाएगा। वह अपनी कुल्हाड़ी के ब्लेड से कई पेड़ों पर प्रहार करेगा। 1636 इस प्रकार प्रहार करने पर, मजबूत और गूदेदार पेड़ धीमी आवाज निकालेंगे, लेकिन जो पेड़ अंदर से सड़े हुए, भ्रष्ट और क्षीण हो चुके हैं, वे खोखली आवाज निकालेंगे। वह व्यक्ति इस पेड़ को जड़ से काट देगा, उसका ऊपरी भाग काट देगा, उसे अच्छी तरह से साफ करेगा और उसे कुएँ के लिए नाली के रूप में उपयोग करेगा।

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, जब तक भिक्षु उसका अपराध नहीं देखते, तब तक यहाँ मौजूद एक व्यक्ति का आने-जाने का तरीका, आगे-पीछे देखने का तरीका, अपने अंगों को मोड़ने-सीधा करने का तरीका, अपने वस्त्र पहनने और अपना बाहरी वस्त्र और भिक्षापात्र धारण करने का तरीका, अच्छे भिक्षुओं के समान ही होता है। परन्तु जब भिक्षु उसका अपराध देख लेते हैं, तो वे उसे तपस्वियों के बीच भ्रष्टाचार, तपस्वियों के बीच केवल भूसा और कूड़ा समझते हैं। तब वे उसे निष्कासित कर देते हैं। इसका कारण क्या है? ताकि वह अच्छे भिक्षुओं को भ्रष्ट न करे।" [172]

उसके साथ रहने से यह जान लो कि वह

एक क्रोधी, बुरी इच्छाओं वाला व्यक्ति है;

निंदा करने वाला, हठी, उद्दंड, ईर्ष्यालु

, कंजूस और धोखेबाज है।

वह लोगों से एक तपस्वी की तरह

शांत स्वर में बात करता है,

लेकिन गुप्त रूप से वह बुरे कर्म करता है,

हानिकारक विचार रखता है और सम्मान का अभाव रखता है।

यद्यपि वह कपटी और झूठ बोलने वाला है, फिर भी

आपको उसे उसके वास्तविक स्वरूप में जानना चाहिए;

उसके बाद आप सभी को सद्भाव से मिलकर

उसे दृढ़तापूर्वक भगा देना चाहिए।

कचरे को हटाओ!

भ्रष्ट लोगों को बाहर निकालो?

उन निकम्मों को दूर भगाओ,

जो खुद को तपस्वी समझते हैं?

बुरी इच्छाओं,

बुरे आचरण और बुरे आचरण से विमुख होकर,

सदा सती भाव से

पवित्रों के साथ संगति में रहो;

तब, सामंजस्य में, सजग होकर,

तुम दुखों का अंत कर दोगे।

II. महावग्गो (महान अध्याय)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

11 वेरांजा

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) वेरंजा में नलरू के नीम के वृक्ष की तलहटी में निवास कर रहे थे। 1637 तब वेरंजा का एक ब्राह्मण [173] भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त करने के बाद, वह एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से कहा:

मैंने सुना है गुरु गौतम कहते हैं: 'तपस्वी गौतम वृद्ध, उम्रदराज, उम्र के बोझ से दबे हुए, जीवन के अंतिम पड़ाव पर पहुँच चुके ब्राह्मणों को प्रणाम नहीं करते; न ही उनके लिए खड़े होते हैं और न ही उन्हें आसन देते हैं।' यह सत्य है, क्योंकि गुरु गौतम वृद्ध, उम्रदराज, उम्र के बोझ से दबे हुए, जीवन के अंतिम पड़ाव पर पहुँच चुके ब्राह्मणों को प्रणाम नहीं करते; न ही उनके लिए खड़े होते हैं और न ही उन्हें आसन देते हैं। यह उचित नहीं है। गुरु गौतम।' 1638

"हे ब्राह्मण, इस संसार में, जहाँ देव (देवता), मार और ब्रह्मा विराजमान हैं, इस जनसंख्या में, जहाँ तपस्वी और ब्राह्मण, देव (देवता) और मनुष्य हैं, मुझे कोई ऐसा व्यक्ति नहीं दिखता जिसे मैं प्रणाम करूँ, जिसके लिए खड़ा होऊँ या जिसे आसन दूँ। क्योंकि यदि तथागत (बुद्ध) किसी को प्रणाम करें, उसके लिए खड़े हों या उसे आसन दें, तो उस व्यक्ति का सिर भी फट जाएगा।"

(1) "गुरु गौतम में स्वाद की कमी है।" 1639

"हे ब्राह्मण, एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम स्वादहीन हैं।' तथागत (बुद्ध) ने रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों और स्पर्शनीय वस्तुओं के प्रति अपनी रुचि का त्याग कर दिया है; उन्होंने इसे जड़ से काट दिया है, इसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, इसे मिटा दिया है ताकि यह भविष्य में उत्पन्न न हो सके। इसी प्रकार मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम स्वादहीन हैं।' लेकिन आपने इस संदर्भ में बात नहीं की।" [174]

(2) "गुरु गौतम मिलनसार नहीं हैं।" 1640

"हे ब्राह्मण, एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम मिलनसार नहीं हैं।' तथागत (बुद्ध) ने रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों और स्पर्शनीय वस्तुओं के साथ मिलनसारिता का त्याग कर दिया है; उन्होंने इसे जड़ से काट दिया है, इसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, इसे इस प्रकार मिटा दिया है कि यह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो। इसी तरह से मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम मिलनसार नहीं हैं।' लेकिन आपने इस संदर्भ में बात नहीं की।"

(3) "गुरु गौतम अकर्म के समर्थक हैं।" 1641 "हे ब्राह्मण, एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'संन्यासी गौतम अकर्म के समर्थक हैं।' क्योंकि मैं शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार के अकर्म का प्रतिपादन करता हूँ; मैं अनेक प्रकार के अकुशल कर्मों के अकर्म का प्रतिपादन करता हूँ। इसी प्रकार मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'संन्यासी गौतम अकर्म के समर्थक हैं।' परन्तु आपने इस संदर्भ में कुछ नहीं कहा।"

(4) "गुरु गौतम एक विनाशवादी हैं।" 1642

"हे ब्राह्मण, एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: तपस्वी गौतम विनाशवादी हैं। क्योंकि मैं कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) के विनाश का दावा करता हूँ; मैं अनेक प्रकार के अकुशल गुणों (धम्म) के विनाश का दावा करता हूँ। इसी प्रकार मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: तपस्वी गौतम विनाशवादी हैं। परन्तु आपने इस संदर्भ में बात नहीं की।"

(5) "गुरु गौतम एक प्रतिकारक हैं।" 1643

"हे ब्राह्मण, एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: तपस्वी गौतम विदारक हैं। क्योंकि मैं शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार से विरक्त हूँ; मैं अनेक प्रकार के अकुशल गुणों के संचय से विरक्त हूँ। इसी प्रकार मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम विदारक हैं।' परन्तु आपने इस संदर्भ में बात नहीं की।"

(6) "मास्टर गौतम दास प्रथा विरोधी हैं।" 1644

"हे ब्राह्मण, एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: तपस्वी गौतम एक संहारक हैं। क्योंकि मैं काम (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) के निवारण के लिए धम्म का उपदेश देता हूँ; मैं अनेक प्रकार के अकुशल गुणों (धम्म) के निवारण के लिए धम्म का उपदेश देता हूँ। इसी प्रकार मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: तपस्वी गौतम एक संहारक हैं। परन्तु आपने इस संदर्भ में बात नहीं की।"

(7) "गुरु गौतम एक उत्पीड़क हैं।" 1645

"हे ब्राह्मण, एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: तपस्वी गौतम एक यातनादाता हैं। क्योंकि मैं यह कहता हूँ कि बुरे (अकुशल) गुण (धम्म)—शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार—जलकर नष्ट हो जाने चाहिए। मैं कहता हूँ कि कोई व्यक्ति यातनादाता तब होता है जब वह उन बुरे (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग कर देता है जिन्हें जलाकर नष्ट किया जाना चाहिए; जब वह उन्हें जड़ से काट देता है, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान बना देता है, उन्हें इस प्रकार मिटा देता है कि वे भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हों। तथागत (बुद्ध) ने उन बुरे (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग कर दिया है जिन्हें जलाकर नष्ट किया जाना चाहिए; उन्होंने उन्हें जड़ से काट दिया है, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उन्हें इस प्रकार मिटा दिया है कि वे भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हों। इसी प्रकार मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम एक यातनादाता हैं।' लेकिन आपने इस संदर्भ में बात नहीं की।"

(8) "गुरु गौतम सेवानिवृत्त हो रहे हैं।" 1646

"हे ब्राह्मण, एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम संन्यास ले रहे हैं।' क्योंकि मैं कहता हूँ कि कोई व्यक्ति तब संन्यास लेता है जब वह पुनर्जन्म के कारण (भावो/पुनर्जन्म का कारण), गर्भ के भावी बिस्तर का त्याग कर देता है; जब वह उसे जड़ से काट देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना देता है, उसे मिटा देता है [176] ताकि वह भविष्य में उत्पन्न होने के अधीन न रहे। तथागत (बुद्ध) ने पुनर्जन्म के कारण (भावो/पुनर्जन्म का कारण), गर्भ के भावी बिस्तर का त्याग कर दिया है; उन्होंने उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में उत्पन्न होने के अधीन न रहे। इसी प्रकार से मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम संन्यास ले रहे हैं।' लेकिन आपने इस संदर्भ में बात नहीं की।"

"मान लो, ब्राह्मण, एक मुर्गी के आठ, दस या बारह अंडे हैं जिन्हें उसने ठीक से ढककर, सेते हुए और पाला-पोसा है। क्या उन चूजों में से जो सबसे पहले अपने पंजों या चोंच से अंडे का छिलका भेदकर सुरक्षित रूप से बाहर निकलेगा, उसे सबसे बड़ा कहा जाएगा या सबसे छोटा?"

"इसे सबसे बड़ा कहा जाना चाहिए। गुरु गौतम। इसलिए यह उनमें सबसे बड़ा है।"

"इसी प्रकार, हे ब्राह्मण, अज्ञान में डूबी हुई जनसंख्या में, अंडे के समान पूर्णतः आवरण में लिपटे हुए, मैंने अज्ञान के अंडे के छिलके को भेद दिया है। मैं संसार में एकमात्र ऐसा व्यक्ति हूँ जिसने अद्वितीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया है। अतः मैं संसार में सबसे बड़ा और सर्वश्रेष्ठ हूँ।"

"हे ब्राह्मण, मेरी ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) निरंतर जागृत रही; मेरा ध्यान (सती) बिना किसी भ्रम के स्थापित रहा; मेरा शरीर शांत और अशांत रहा; मेरा मन समाधि में लीन और एकाग्र था। इंद्रिय सुखों से विरक्त और हानिकारक अवस्थाओं से विरक्त होकर, मैं प्रथम ध्यान में प्रवेश कर गया, जो एकांत से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल हैं। विचार और चिंतन के शांत होने पर, मैं द्वितीय ध्यान (समाधि अवस्था) में प्रवेश कर गया, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और जो समाधि से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन नहीं होते। [177] आनंद (पीति) के भी लुप्त होने पर, मैं समभाव से, सचेत और पूर्ण रूप से एकाग्र होकर ध्यान में रहा।" समझकर, मैंने शरीर के साथ सुख का अनुभव किया; मैं तीसरे ध्यान (सतीत्विक अवस्था) में प्रवेश कर गया और उसमें निवास किया, जिसके बारे में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव वाला, सती (ध्यान करने वाला), सुखी है।' सुख और दुख का त्याग करके, और पहले ही प्रसन्नता और निराशा के दूर हो जाने के बाद, मैं चौथे ध्यान (सतीत्विक अवस्था) में प्रवेश कर गया और उसमें निवास किया, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर में विलीन होना/उपेक्खा) द्वारा सती (ध्यान) की शुद्धि होती है।

जब मेरा मन इस प्रकार आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) था, शुद्ध, निर्मल, दोषरहित, लचीला, स्थिर और अविचलित था, तब मैंने इसे अपने पूर्व जन्मों के स्मरण के ज्ञान की ओर निर्देशित किया। 1648 मैंने अपने अनेक पूर्व जन्मों का स्मरण किया, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म, चार जन्म, पाँच जन्म, दस जन्म, बीस जन्म, तीस जन्म, चालीस जन्म, पचास जन्म, सौ जन्म, हजार जन्म, एक लाख जन्म, कई युगों का विश्व-विनाश, कई युगों का विश्व-विकास, कई युगों का विश्व-विनाश और विश्व-विकास, इस प्रकार: 'वहाँ मेरा ऐसा नाम था, मैं ऐसे कुल का था, ऐसा रूप, ऐसा भोजन, ऐसा सुख-दुख का अनुभव, ऐसी आयु; वहाँ से निकलकर मेरा पुनर्जन्म कहीं और हुआ, और वहाँ भी मेरा नाम ऐसा ही रखा गया, मैं ऐसे कुल का था, मेरा रूप ऐसा ही था, ऐसा भोजन, ऐसा सुख-दुख का अनुभव, ऐसी आयु; वहाँ से निकलकर मेरा पुनर्जन्म यहाँ हुआ। इस प्रकार मैंने अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके स्वरूपों और विवरणों सहित याद किया।

"हे ब्राह्मण, रात्रि के पहले पहर में मुझे यही पहला सच्चा ज्ञान प्राप्त हुआ। अज्ञान का नाश हुआ, सच्चे ज्ञान का उदय हुआ; अंधकार का नाश हुआ, प्रकाश का उदय हुआ, जैसा कि सचेत, उत्साही और दृढ़ रहने पर होता है। हे ब्राह्मण, यही मेरा पहला विस्फोट था, जैसे चूजा अंडे के छिलके से बाहर निकलता है। [178]

जब मेरा मन इस प्रकार आत्म-मग्न (समाहित/समाधि) अवस्था में था, शुद्ध, निर्मल, दोषरहित, लचीला, स्थिर और अविचलित था, तब मैंने उसे प्राणियों के मृत्यु और पुनर्जन्म के ज्ञान की ओर निर्देशित किया। दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मानवीय दृष्टि से परे है, मैंने प्राणियों को मृत्यु और पुनर्जन्म लेते देखा, निम्न और उच्च, सुंदर और कुरूप, सौभाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, और मैंने समझा कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फल पाते हैं: 'वे प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से दुराचार किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा की, गलत मत रखा और गलत मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं; परन्तु वे प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण किए, जिन्होंने...' उन श्रेष्ठ व्यक्तियों की निंदा न करो, जिन्होंने सही दृष्टि रखी और सही दृष्टि पर आधारित कर्म किए, और शरीर के नष्ट होने के बाद, मृत्यु के बाद, स्वर्गलोक में एक अच्छे गंतव्य में पुनर्जन्म लिया। इस प्रकार, मैंने अपनी दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मनुष्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है, प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते देखा, निम्न और उच्च, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, और मैंने समझा कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं।

"हे ब्राह्मण, यह द्वितीय सच्चा ज्ञान था जो मुझे मध्यरात्रि के पहर में प्राप्त हुआ। अज्ञान का नाश हुआ, सच्चे ज्ञान का उदय हुआ; अंधकार का नाश हुआ, प्रकाश का उदय हुआ, जैसा कि सचेत, उत्साही और दृढ़ रहने पर होता है। हे ब्राह्मण, यह मेरा द्वितीय उद्भव था, जैसे चूजा अंडे के छिलके से बाहर निकलता है।"

जब मेरा मन इस प्रकार आत्म-मग्न (समाधि/समाहित) था, शुद्ध, निर्मल, दोषरहित, कोमल, सुगम, स्थिर और अविचलित था, तब मैंने इसे दोषों के नाश के ज्ञान की ओर निर्देशित किया। मैंने इसे यथार्थ समझा: 'यह दुख है'; मैंने यथार्थ समझा: 'यह दुख का मूल है'; मैंने यथार्थ समझा: 'यह दुख का निवारण है'; मैंने यथार्थ समझा: 'यह दुख के निवारण का मार्ग है'; मैंने यथार्थ समझा: 'ये दोष हैं'; [179] मैंने यथार्थ समझा: 'यह दोषों का मूल है'; मैंने यथार्थ समझा: 'यह दोषों का निवारण है'; मैंने यथार्थ समझा: 'यह दोषों के निवारण का मार्ग है'

जब मैंने इस प्रकार जाना और देखा, तो मेरा मन कामुकता के दोष से, अस्तित्व के दोष से (पुनर्जन्म का कारण) और अज्ञान के दोष से मुक्त हो गया। 1649 जब यह मुक्त हुआ, तब यह ज्ञान प्राप्त हुआ: 'यह मुक्त हो गया है।' मुझे प्रत्यक्ष रूप से पता चला: 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य जीवन जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आने का कोई अधिकार नहीं है।'

"हे ब्राह्मण, रात्रि के अंतिम पहर में मुझे यह तीसरा सच्चा ज्ञान प्राप्त हुआ। अज्ञान का नाश हुआ, सच्चे ज्ञान का उदय हुआ; अंधकार का नाश हुआ, प्रकाश का उदय हुआ, जैसा कि सचेत, उत्साही और दृढ़ रहने पर होता है। हे ब्राह्मण, यह मेरा तीसरा उद्भव था, जैसे चूजा अंडे के छिलके से बाहर निकलता है।"

यह सुनकर वेरंजा के ब्राह्मण ने भगवान (बुद्ध) से कहा, "गुरु गौतम सबसे बड़े हैं! गुरु गौतम सर्वश्रेष्ठ हैं! हे गुरु गौतम, बहुत बढ़िया! हे गुरु गौतम, बहुत बढ़िया! गुरु गौतम ने अनेक तरीकों से धम्म को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग आकृतियाँ देख सकें। मैं अब गुरु गौतम, धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जो आज से जीवन भर के लिए शरण में गया है।"

---

12 सिहा (संस्कृत: सिंह/शेर)

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। उस समय, कई प्रसिद्ध लिच्छवी सभा कक्ष में एकत्रित हुए थे और बुद्ध, धम्म और संघ की स्तुति में अनेक प्रकार से प्रवचन दे रहे थे। [180] उस समय निगंथों के शिष्य सेनापति सिहा भी उस सभा में उपस्थित थे। तभी उनके मन में यह विचार आया: "निस्संदेह, वे एक भगवान (बुद्ध), एक अरहंत, एक पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति होंगे। क्योंकि इतने सारे प्रसिद्ध लिच्छवी सभा कक्ष में एकत्रित हुए हैं और बुद्ध, धम्म और संघ की स्तुति में अनेक प्रकार से प्रवचन दे रहे हैं। मुझे उस भगवान (बुद्ध), उस अरहंत, उस पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के दर्शन करने जाना चाहिए।"

तब सिहा निगंथ नटपुत्त के पास गया और उससे कहा: "भंते, मैं तपस्वी गौतम से मिलने जाना चाहता हूँ।"

"हे सिहा, तुम कर्मों के समर्थक हो, तो फिर अकर्म के समर्थक तपस्वी गौतम के दर्शन के लिए क्यों जाते हो? क्योंकि तपस्वी गौतम तो अकर्म के समर्थक हैं, जो अकर्म के लिए ही अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।" (1650)

तब भगवान (बुद्ध) के दर्शन करने की सिहा की इच्छा कम हो गई।

दूसरे अवसर पर, कई प्रसिद्ध लिच्छवी सभा भवन में एकत्रित हुए थे और बुद्ध, धम्म और संघ की प्रशंसा में अनेक प्रकार से एक साथ बैठे हुए थे। . . . [ऊपर जैसा ही, सिवाय इसके कि अब इसे "दूसरे अवसर पर" घटित होने वाला कहा गया है।] [181] . . . दूसरे अवसर पर, भगवान (बुद्ध) के दर्शन करने का सिहा का दृढ़ संकल्प कम हो गया।

एक तीसरे अवसर पर, अनेक प्रसिद्ध लिच्छवी सभा भवन में एकत्रित हुए थे और बुद्ध, धम्म और संघ की स्तुति में अनेक प्रकार से प्रवचन दे रहे थे। तब श्ल्हा के मन में यह विचार आया: "निस्संदेह, वह एक भगवान (बुद्ध), एक अरहंत, एक पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति होंगे। क्योंकि अनेक प्रसिद्ध लिच्छवी सभा भवन में एकत्रित हुए हैं और बुद्ध, धम्म और संघ की स्तुति में अनेक प्रकार से प्रवचन दे रहे हैं। निगंथों की अनुमति मिले या न मिले, वे मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं? निगंथों की अनुमति लिए बिना ही, मैं उस भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के दर्शन के लिए जाऊं।" (1651)

फिर, सेनापति सिहा दिन के मध्य में वैशाली से पाँच सौ रथों के साथ भगवान (बुद्ध) के दर्शन के लिए निकले। वे रथ से वहाँ तक गए जहाँ तक रथ ले जाना उचित था, फिर रथ से उतरकर पैदल ही मठ परिसर में प्रवेश किया। वे भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

“मैंने यह सुना है, भंते: ‘संन्यासी गौतम अकर्म के समर्थक हैं [182] जो अकर्म के लिए ही अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।’ क्या जो लोग ऐसा कहते हैं वे भगवान (बुद्ध) के कहे हुए वचन को ही प्रकट करते हैं और उन्हें तथ्यों के विपरीत किसी बात से विकृत नहीं करते? क्या वे धम्म के अनुसार व्याख्या करते हैं ताकि उन पर कोई उचित आलोचना या निंदा का आधार न बने? 1652 क्योंकि हम भगवान (बुद्ध) को विकृत नहीं करना चाहते।”

(1) "हे सिहा, एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम अकर्म के समर्थक हैं जो अकर्म के लिए अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।' 1653

(2) "एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम कर्मों के समर्थक हैं जो कर्मों के लिए अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'

(3) "एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम एक विनाशवादी हैं जो अपने धम्म (मार्ग) का उपदेश विनाश के लिए देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'

(4) "एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम एक प्रतिकारक हैं जो प्रतिकर्षण के उद्देश्य से अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'

(5) "एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम एक उन्मूलनवादी हैं जो उन्मूलन के लिए अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों को सुगम बनाते हैं।'

(6) "एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम एक यातना देने वाला है जो यातना के लिए अपने धम्म का उपदेश देता है और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करता है।'

(7) "एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम संन्यासी हैं, जो संन्यासी बनने के लिए अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'

(8) "एक ऐसा तरीका है जिससे मेरे बारे में सही कहा जा सकता है: 'तपस्वी गौतम एक सांत्वनादाता हैं जो अपने धम्म का उपदेश सांत्वना के लिए देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'

(1) "हे सिहा, मेरे विषय में यह कैसे उचित कहा जा सकता है कि 'संन्यासी गौतम अकर्म के समर्थक हैं [183] जो अकर्म के लिए अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं'? क्योंकि मैं शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार के अकर्म का प्रतिपादन करता हूँ; मैं अनेक प्रकार के अकुशल कर्मों के अकर्म का प्रतिपादन करता हूँ। इसी प्रकार मेरे विषय में यह कहना उचित होगा कि 'संन्यासी गौतम अकर्म के समर्थक हैं जो अकर्म के लिए अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं/

(2) और किस प्रकार कोई मेरे विषय में सही कह सकता है: 'संन्यासी गौतम कर्मों के समर्थक हैं जो कर्मों के लिए अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं'? क्योंकि मैं अच्छे शारीरिक, वाणी और मानसिक आचरण का समर्थन करता हूँ; मैं अनेक प्रकार के लाभकारी (कुशल) कर्मों के करने का समर्थन करता हूँ। इसी कारण कोई मेरे विषय में सही कह सकता है: 'संन्यासी गौतम कर्मों के समर्थक हैं जो कर्मों के लिए अपने धम्म (मार्ग) का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'

(3) और किस प्रकार कोई मेरे विषय में सही कह सकता है: 'तपस्वी गौतम एक विनाशवादी हैं जो विनाश के उद्देश्य से अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं'? क्योंकि मैं काम (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) के विनाश का दावा करता हूँ; मैं अनेक प्रकार के अकुशल (हानिकारक) गुणों के विनाश का दावा करता हूँ। इसी प्रकार कोई मेरे विषय में सही कह सकता है: 'तपस्वी गौतम एक विनाशवादी हैं जो विनाश के उद्देश्य से अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'

(4) और किस प्रकार कोई मेरे विषय में यह सही कह सकता है कि 'तपस्वी गौतम एक निवारक हैं जो अपने धम्म का उपदेश घृणा उत्पन्न करने के उद्देश्य से देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं'? क्योंकि मैं शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार से घृणा करता हूँ; मैं अनेक प्रकार के अकुशल गुणों के संचय से घृणा करता हूँ। इसी प्रकार कोई मेरे विषय में यह सही कह सकता है कि 'तपस्वी गौतम एक निवारक हैं जो अपने धम्म का उपदेश घृणा उत्पन्न करने के उद्देश्य से देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'

(5) "और किस प्रकार कोई मेरे विषय में सही कह सकता है: 'संन्यासी गौतम एक उन्मूलनवादी हैं जो उन्मूलन के उद्देश्य से अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं'? क्योंकि मैं काम (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) के उन्मूलन के लिए धम्म का उपदेश देता हूँ; [184] मैं अनेक प्रकार के अकुशल गुणों (धम्म) के उन्मूलन के लिए धम्म का उपदेश देता हूँ। इसी प्रकार कोई मेरे विषय में सही कह सकता है: 'संन्यासी गौतम एक उन्मूलनवादी हैं जो उन्मूलन के उद्देश्य से अपने धम्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'

(6) और किस प्रकार कोई मेरे विषय में यह सही कह सकता है कि 'तपस्वी गौतम एक उत्पीड़क हैं जो अपने धम्म का उपदेश उत्पीड़क के रूप में देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं'? क्योंकि मैं यह कहता हूँ कि बुरे (अकुशल) गुण (धम्म)—शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार—जलकर नष्ट हो जाने चाहिए। मैं कहता हूँ कि कोई उत्पीड़क तब होता है जब वह उन बुरे (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग कर देता है जिन्हें जलाकर नष्ट किया जाना है; जब वह उन्हें जड़ से काट देता है, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान बना देता है, उन्हें मिटा देता है ताकि वे भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हों। तथागत (बुद्ध) ने उन बुरे (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग कर दिया है जिन्हें जलाकर नष्ट किया जाना है; उन्होंने उन्हें जड़ से काट दिया है, उन्हें ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उन्हें मिटा दिया है ताकि वे भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हों। इसी प्रकार कोई मेरे विषय में यह सही कह सकता है कि 'तपस्वी गौतम एक उत्पीड़क हैं जो अपने धम्म (मार्ग) का उपदेश देते हैं' वह अपने शिष्यों को सताने के उद्देश्य से उनका मार्गदर्शन करता है।

(7) और किस प्रकार कोई मेरे विषय में यह सही कह सकता है: 'तपस्वी गौतम संन्यासी बन रहे हैं, जो संन्यासी बनने के उद्देश्य से अपने धर्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं'? क्योंकि मैं कहता हूँ कि कोई तब संन्यासी बनता है जब वह पुनर्जन्म के कारण (भावो/पुनर्जन्म का कारण), गर्भ के भावी शय्या का त्याग कर देता है; जब वह उसे जड़ से काट देता है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना देता है, उसे मिटा देता है ताकि वह भविष्य में उत्पन्न न हो। तथागत (बुद्ध) ने पुनर्जन्म के कारण (भावो/पुनर्जन्म का कारण), गर्भ के भावी शय्या का त्याग कर दिया है; उन्होंने उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में उत्पन्न न हो। इसी प्रकार कोई मेरे विषय में यह सही कह सकता है: 'तपस्वी गौतम संन्यासी बन रहे हैं, जो संन्यासी बनने के उद्देश्य से अपने धर्म का उपदेश देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'

(8) "और किस प्रकार कोई मेरे बारे में सही कह सकता है: 'तपस्वी गौतम एक सांत्वनादाता हैं, जो अपने धम्म का उपदेश सांत्वना के लिए देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं'? क्योंकि मैं [185] परम सांत्वना देने वाला सांत्वनादाता हूँ; मैं धम्म का उपदेश सांत्वना के लिए देता हूँ और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करता हूँ। इसी प्रकार कोई मेरे बारे में सही कह सकता है: 'तपस्वी गौतम एक सांत्वनादाता हैं, जो अपने धम्म का उपदेश सांत्वना के लिए देते हैं और इस प्रकार अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते हैं।'" 1655

यह सुनकर सेनापति सिहा ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "उत्कृष्ट, भंते! उत्कृष्ट, भंते! ...भगवान (बुद्ध) मुझे गृहस्थ अनुयायी के रूप में स्वीकार करें, जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

"सिहा, छानबीन करो! तुम्हारे जैसे प्रसिद्ध व्यक्ति के लिए छानबीन करना अच्छा है।" 1656

"भंते, मैं भगवान (बुद्ध) से और भी अधिक संतुष्ट और प्रसन्न हूँ कि उन्होंने मुझसे कहा: 'हे सिहा, छानबीन करो! तुम्हारे जैसे प्रसिद्ध व्यक्ति के लिए छानबीन करना अच्छा है।' क्योंकि यदि अन्य संप्रदायों के सदस्य मुझे अपना शिष्य बना लेते, तो वे वैशाली में हर जगह यह घोषणा करते: 'सेनापति सिहा हमारा शिष्य बन गया है।' परन्तु भगवान (बुद्ध) ने मुझसे कहा: 'हे सिहा, छानबीन करो! तुम्हारे जैसे प्रसिद्ध व्यक्ति के लिए छानबीन करना अच्छा है।' अतः हे भंते, मैं दूसरी बार भगवान (बुद्ध) की शरण में, धम्म की शरण में और भिक्षुओं

के संघ की शरण में जाता हूँ। भगवान (बुद्ध) मुझे गृहस्थ अनुयायी के रूप में स्वीकार करें, जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

"सिहा, तुम्हारा परिवार लंबे समय से निगंथों के लिए समर्थन का स्रोत रहा है; इसलिए जब वे तुमसे संपर्क करें तो तुम्हें उन्हें दान देना जारी रखने पर विचार करना चाहिए।"

"भंते, मैं भगवान (बुद्ध) से और भी अधिक संतुष्ट और प्रसन्न हूँ क्योंकि उन्होंने मुझसे कहा: 'सिहा, तुम्हारा परिवार निगंथों के लिए लंबे समय से सहारा रहा है; इसलिए जब वे तुम्हारे पास आएं तो तुम्हें उन्हें दान देना जारी रखना चाहिए।' क्योंकि मैंने सुना है: 'संन्यासी गौतम कहते हैं: [186] "दान केवल मुझे ही देना चाहिए, दूसरों को नहीं; दान केवल मेरे शिष्यों को ही देना चाहिए, दूसरों के शिष्यों को नहीं। केवल मुझे दिया गया दान ही बहुत फलदायी होता है, दूसरों को दिया गया दान नहीं; केवल वही फलदायी है जो मेरे शिष्यों को दिया जाता है, न कि वह जो दूसरों के शिष्यों को दिया जाता है। 1657 फिर भी भगवान (बुद्ध) मुझे निगंथों को भी दान देने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। इसके लिए सही समय हमें पता चल जाएगा। अत:, हे भंते, मैं तीसरी बार भगवान (बुद्ध) की शरण में, धम्म की शरण में और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। भगवान (बुद्ध) मुझे गृहस्थ अनुयायी के रूप में स्वीकार करें, जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।

तब भगवान (बुद्ध) ने सेनापति सिहा को क्रमिक प्रवचन दिया, अर्थात् दान, सदाचार और स्वर्ग के विषय पर प्रवचन दिया; उन्होंने इंद्रिय सुखों के खतरे, पतन और अपवित्रता तथा त्याग के लाभ का वर्णन किया। जब भगवान (बुद्ध) को पता चला कि सिहा का मन कोमल, सौम्य, अवरोधों से मुक्त, उन्नत और आत्मविश्वासी हो गया है, तो उन्होंने बुद्धों के विशेष धम्म (मार्ग) उपदेशों का प्रकटीकरण किया: दुख, उसका उद्‌गम, उसका निवारण और मार्ग। तब, जैसे एक साफ, दाग रहित कपड़ा आसानी से रंग सोख लेता है, वैसे ही जब सेनापति सिहा उसी आसन पर बैठे, तो उनके भीतर निर्मल, निष्कलंक धम्म-दृष्टि जागृत हुई: 'जो कुछ भी उत्पन्न होता है, वह सब निवारण के अधीन है।' सेनापति सिहा ने धर्म को देखा, धर्म को प्राप्त किया, धर्म को समझा, धर्म की गहराई में उतरा, संदेह से पार पाया, भ्रम से छुटकारा पाया, आत्मविश्वास प्राप्त किया और गुरु के उपदेशों में दूसरों से स्वतंत्र हो गया। तब उसने भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, कृपया भगवान (बुद्ध) [187] को भिक्षुओं के संघ के साथ मुझसे कल का भोजन स्वीकार करने दें।"

भगवान (बुद्ध) ने मौन रहकर सहमति दी। यह जानकर कि भगवान (बुद्ध) ने सहमति दे दी है, सिहा अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और चले गए। फिर सिहा ने एक व्यक्ति से कहा, "हे भले व्यक्ति, जाओ, बिक्री के लिए तैयार कुछ मांस ढूंढो।"

फिर, जब रात बीत गई, तो सेनापति सिहा ने अपने निवास पर कई प्रकार के उत्तम भोजन तैयार करवाए, जिसके बाद उन्होंने भगवान (बुद्ध) को समय की सूचना दी: "हे भंते, समय हो गया है, भोजन तैयार है।"

फिर सुबह, भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, अपना कुंड और वस्त्र धारण किया, भिक्षुओं के संघ के साथ सिहा के निवास पर गए और अपने लिए तैयार किए गए आसन पर बैठ गए। उस अवसर पर कई निगंथ वैशाली में गली-गली और चौराहे-चौक घूमकर अपने हाथ पटकते हुए चिल्ला रहे थे: "आज सेनापति सिहा ने तपस्वी गौतम के लिए भोजन तैयार करने हेतु एक मोटा-ताज़ा पशु मारा है! तपस्वी गौतम जानबूझकर उनके लिए मारे गए पशु का मांस खाते हैं, यह कार्य उनके लिए ही किया गया है।"

फिर एक आदमी सेनापति सिहा के पास आया और उसके कान में फुसफुसाया: "महोदय, आपको पता होना चाहिए कि वैशाली में कई निगंथ गली-गली और चौराहे-चौक घूम रहे हैं, अपने हाथ पटकते हुए चिल्ला रहे हैं: 'आज सेनापति सिहा ने तपस्वी गौतम के लिए भोजन तैयार करने के लिए एक मोटा-ताज़ा जानवर मारा है! तपस्वी गौतम जानबूझकर उस मांस का उपयोग करते हैं जो विशेष रूप से उनके लिए मारा गया है, [188] यह कार्य उनके लिए किया गया है।"

"बस करो, भले आदमी। बहुत समय से वे पूजनीय लोग बुद्ध, धम्म और संघ को बदनाम करने की कोशिश कर रहे हैं। वे असत्य, निराधार, झूठे और तथ्यों के विपरीत बातों से भगवान (बुद्ध) का गलत अर्थ निकालना कभी बंद नहीं करेंगे, और हम कभी भी जानबूझकर किसी जीव को जीवन से वंचित नहीं करेंगे, चाहे इसके लिए हमें अपना जीवन ही क्यों न देना पड़े।" (1659)

फिर सेनापति सिहा ने अपने हाथों से बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षुओं के संघ को विभिन्न प्रकार के उत्तम भोजन परोसकर उन्हें तृप्त किया। जब भगवान (बुद्ध) ने भोजन समाप्त कर लिया और अपना कटोरा रख दिया, तो सिहा एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने धर्म प्रवचन देकर सिहा को उपदेश दिया, प्रोत्साहित किया, प्रेरित किया और प्रसन्न किया, जिसके बाद वे अपने आसन से उठे और चले गए।

---

13. शुद्ध नस्ल (अस्सजानिया)

"भिक्षुओं (साधुओं), जिनके पास आठ गुण होते हैं, उनके लिए राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का एक कारक माना जाता है। वे आठ गुण कौन से हैं?"

"यहाँ, (1) राजा का उत्कृष्ट नस्ल का घोड़ा दोनों तरफ से, माता और पिता दोनों की ओर से, अच्छे कुल का है; वह उसी क्षेत्र में पैदा होता है जहाँ अन्य उत्कृष्ट नस्ल के घोड़े पैदा होते हैं। (2) वह सम्मानपूर्वक वह सारा भोजन खाता है जो उसे दिया जाता है, चाहे वह गीला हो या सूखा, उसे बिखेरता नहीं है। (3) वह मल या मूत्र के पास बैठने या लेटने से घृणा करता है। (4) वह सौम्य है और उसके साथ रहना सुखद है, और वह अन्य घोड़ों को परेशान नहीं करता है। (5) वह अपनी चालें, हथकंडे, दांव-पेच और छल-कपट अपने प्रशिक्षक को वैसे ही बताता है जैसे वे वास्तव में हैं ताकि उसका प्रशिक्षक उन्हें उससे दूर करने का प्रयास कर सके। (6) वह दृढ़ निश्चय के साथ भार ढोता है: 'चाहे दूसरे घोड़े भार ढोएँ या न ढोएँ, मैं स्वयं ढोऊँगा।'" (7) चलते समय वह केवल सीधे मार्ग पर ही चलता है। (8) वह बलवान है, और अपने जीवन के अंत तक अपनी शक्ति का प्रदर्शन करता है। इन आठ गुणों से युक्त, राजा का उत्तम नस्ल का घोड़ा राजा के योग्य, राजा का सहायक और राजत्व का प्रतीक माना जाता है।

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, आठ गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य होता है... संसार के लिए पुण्य का एक अतुलनीय क्षेत्र। वे आठ गुण कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। (2) वह बिना किसी आपत्ति के, चाहे जो भी भोजन उसे दिया जाए, चाहे वह साधारण हो या उत्तम, आदरपूर्वक ग्रहण करता है। (3) वह शारीरिक, वाणी और मानसिक दुराचार से विमुख रहता है; वह अनेक प्रकार के अकुशल गुणों (धम्म) के संचय से विमुख रहता है। (4) वह सौम्य और मिलनसार होता है, और वह अन्य भिक्षुओं को परेशान नहीं करता। (5) वह अपनी चालों, युक्तियों, छल-कपटों और कपटों को गुरु या अपने बुद्धिमान साथी भिक्षुओं के सामने प्रकट करता है ताकि वे उन्हें उससे दूर करने का प्रयास कर सकें। (6) वह दृढ़ निश्चय के साथ प्रशिक्षण ग्रहण करता है: 'अन्य भिक्षु प्रशिक्षण लें या न लें, मैं प्रशिक्षण लूँगा।' (7) चलते समय, वह केवल सीधे मार्ग पर ही चलता है। इस संदर्भ में, यही सीधा मार्ग है: सही दृष्टि... सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन)। (8) उसने इस प्रकार ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न की है: 'इच्छा से, केवल मेरी त्वचा, नसें और हड्डियाँ ही रहें, और मेरे शरीर में मांस और रक्त सूख जाए, परन्तु मैं अपनी ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को तब तक शिथिल नहीं करूँगा जब तक कि मैं वह प्राप्त न कर लूँ जो पुरुष शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और परिश्रम से प्राप्त किया जा सकता है।' 1661 इन आठ गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य है... संसार के लिए पुण्य का एक अतुलनीय क्षेत्र।

---

14 जंगली घोड़े (अस्साखालुंका)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें आठ प्रकार के जंगली घोड़ों और घोड़े के आठ दोषों के बारे में सिखाऊंगा, और मैं तुम्हें जंगली घोड़ों के समान आठ प्रकार के व्यक्तियों और एक व्यक्ति के आठ दोषों के बारे में सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और हे भिक्षुओं, जंगली घोड़ों के आठ प्रकार क्या हैं और घोड़े के आठ दोष क्या हैं?"

(1) "यहाँ, जब एक जंगली बछड़े को कहा जाता है: 'आगे बढ़ो!' और उसके प्रशिक्षक द्वारा उसे उकसाया और प्रेरित किया जाता है, तो वह पीछे हट जाता है [191] और रथ को अपने पीछे घुमा देता है। 1662 यहाँ इसी प्रकार का एक जंगली बछड़ा है। यह घोड़े का पहला दोष है।

(2) "फिर, जब किसी जंगली घोड़े को 'आगे बढ़ो!' कहा जाता है और उसका प्रशिक्षक उसे उकसाता है, तो वह पीछे की ओर उछलता है और रेलिंग को नुकसान पहुँचाता है तथा तिहरी छड़ तोड़ देता है। 1663 यहाँ इसी प्रकार का एक जंगली घोड़ा है। यह घोड़े का दूसरा दोष है।"

(3) "फिर, जब एक जंगली घोड़े को 'आगे बढ़ो!' कहा जाता है और उसके प्रशिक्षक द्वारा उसे उकसाया और लट्टू मारा जाता है, तो वह रथ के डंडे से अपनी जांघ छुड़ा लेता है और डंडे को कुचल देता है। 1664 यहाँ इसी प्रकार का एक जंगली घोड़ा है। यह घोड़े का तीसरा दोष है।"

(4) "फिर, जब किसी जंगली घोड़े को 'आगे बढ़ो!' कहा जाता है और उसका प्रशिक्षक उसे उकसाता है, तो वह गलत रास्ते पर चला जाता है और रथ को पटरी से उतार देता है। यहाँ इसी प्रकार का एक जंगली घोड़ा है। यह घोड़े का चौथा दोष है।"

(5) "फिर, जब किसी जंगली घोड़े के बच्चे को 'आगे बढ़ो!' कहा जाता है और उसके प्रशिक्षक द्वारा उसे उकसाया और प्रेरित किया जाता है, तो वह अपने शरीर के अगले हिस्से से उछलता है और अपने अगले पैरों से हवा में मथता है; यहाँ इसी प्रकार का एक जंगली घोड़ा का बच्चा है। यह घोड़े का पाँचवाँ दोष है।"

(6) "फिर, जब एक जंगली घोड़े के बच्चे को कहा जाता है: 'आगे बढ़ो!' और उसके प्रशिक्षक द्वारा उसे उकसाया और लट्टू मारा जाता है, तो वह अपने प्रशिक्षक या लट्टू की बात नहीं मानता [192] बल्कि अपने दांतों से मुंह की लगाम तोड़ देता है और जहाँ चाहे वहाँ निकल जाता है। यहाँ इसी प्रकार का एक जंगली घोड़ा का बच्चा है। यह घोड़े का छठा दोष है।"

(7) "फिर, जब किसी जंगली घोड़े के बच्चे को 'आगे बढ़ो!' कहा जाता है और उसका प्रशिक्षक उसे उकसाता है, तो वह न तो आगे बढ़ता है और न ही पीछे मुड़ता है, बल्कि एक खंभे की तरह वहीं स्थिर खड़ा रहता है। यहाँ इसी प्रकार का एक जंगली घोड़ा का बच्चा है। यह घोड़े का सातवाँ दोष है।"

(8) "फिर, जब एक जंगली घोड़े के बच्चे को 'आगे बढ़ो!' कहा जाता है और उसके प्रशिक्षक द्वारा उसे उकसाया और प्रेरित किया जाता है, तो वह अपने आगे और पीछे के पैरों को अंदर की ओर मोड़ लेता है और वहीं चारों पैरों पर बैठ जाता है। यहाँ इसी प्रकार का एक जंगली घोड़ा का बच्चा है। यह घोड़े का आठवाँ दोष है।"

"ये जंगली घोड़ों के आठ प्रकार हैं और घोड़े के आठ दोष हैं।"

"और हे भिक्षुओं, जंगली घोड़ों के समान आठ प्रकार के व्यक्ति कौन से हैं और एक व्यक्ति के आठ दोष क्या हैं?"

(1) "यहाँ, जब भिक्षु किसी भिक्षु को किसी अपराध के लिए फटकार रहे होते हैं, तो वह स्मृतिहीनता का बहाना बनाकर स्वयं को दोषमुक्त करता है, यह कहते हुए: 'मुझे [ऐसा अपराध करने की] याद नहीं है।' मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस जंगली घोड़े के समान है जो 'आगे बढ़ो!' कहे जाने पर, अपने प्रशिक्षक द्वारा उकसाए जाने पर, पीछे हट जाता है और रथ को अपने पीछे घुमा देता है। यहाँ एक ऐसा ही जंगली घोड़े के समान व्यक्ति है। यह व्यक्ति का पहला दोष है।"

(2) "फिर, जब भिक्षु किसी भिक्षु को किसी अपराध के लिए फटकार रहे होते हैं, [193] तो वह फटकार लगाने वाले को ही फटकारता है: 'तुम जैसे अयोग्य और मूर्ख को बोलने का क्या अधिकार है? क्या तुम्हें सचमुच लगता है कि तुम्हें कुछ कहना है?' मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस जंगली घोड़े के समान है जो 'आगे बढ़ो!' कहे जाने पर, अपने प्रशिक्षक द्वारा उकसाए जाने पर, पीछे की ओर उछलता है और [इस प्रकार] रेलिंग को नुकसान पहुँचाता है और तिहरे खंभे को तोड़ देता है। यहाँ एक ऐसा ही जंगली घोड़े जैसा व्यक्ति है। यह व्यक्ति का दूसरा दोष है।"

(3) "फिर, जब भिक्षु किसी भिक्षु को किसी अपराध के लिए फटकारते हैं, तो वह स्वयं फटकारने वाले पर ही अपराध का आरोप लगाते हुए कहता है: 'तुमने ऐसा-ऐसा अपराध किया है। पहले उसका प्रायश्चित करो।' मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस जंगली घोड़े के समान है जो 'आगे बढ़ो!' कहे जाने पर, अपने प्रशिक्षक द्वारा उकसाए जाने पर, रथ के डंडे से अपनी जांघ छुड़ाकर उसे कुचल देता है। यहाँ एक ऐसा ही जंगली घोड़े के समान व्यक्ति है। यह व्यक्ति का तीसरा दोष है।"

(4) "फिर, जब भिक्षु किसी भिक्षु को किसी अपराध के लिए फटकारते हैं, तो वह टालमटोल करता है, चर्चा को अप्रासंगिक विषय की ओर मोड़ देता है, और क्रोध, घृणा और कटुता प्रदर्शित करता है। मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस जंगली घोड़े के समान है जो 'आगे बढ़ो!' कहे जाने पर, अपने प्रशिक्षक द्वारा उकसाए जाने पर, गलत रास्ते पर चल पड़ता है और रथ को पटरी से उतार देता है। यहाँ एक ऐसा ही जंगली घोड़े के समान व्यक्ति है। यह व्यक्ति का चौथा दोष है।"

(5) "फिर, जब भिक्षु किसी भिक्षु को किसी अपराध के लिए फटकार रहे होते हैं, तो वह संघ के बीच में अपनी भुजाएँ लहराते हुए बोलता है। मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस जंगली घोड़े के समान है जो 'आगे बढ़ो!' कहे जाने पर और अपने प्रशिक्षक द्वारा उकसाए जाने पर अपने शरीर के अगले हिस्से से उछलता है और अपने अगले पैरों से हवा में हलचल मचाता है। यहाँ एक ऐसा ही जंगली घोड़े के समान व्यक्ति है। यह व्यक्ति का पाँचवाँ दोष है।"

(6) "फिर, जब भिक्षु किसी भिक्षु को उसके अपराध के लिए फटकारते हैं, तो वह संघ या अपने फटकारकर्ता की बात नहीं मानता, बल्कि अपने अपराध को लिए हुए ही अपनी इच्छा से निकल जाता है। मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस जंगली घोड़े के समान है, जिसे 'आगे बढ़ो!' कहने पर, और प्रशिक्षक द्वारा उकसाए जाने पर भी, वह अपने प्रशिक्षक या अंकुश की बात नहीं मानता, बल्कि अपने दाँतों से लगाम तोड़ देता है और अपनी इच्छा से निकल जाता है। यहाँ एक ऐसा ही जंगली घोड़े के समान व्यक्ति है। यह व्यक्ति का छठा दोष है।"

(7) "फिर, जब भिक्षु किसी भिक्षु को उसके अपराध के लिए फटकारते हैं, तो वह न तो कहता है, 'मैंने अपराध किया है,' और न ही कहता है, 'मैंने अपराध नहीं किया है,' बल्कि चुप रहकर संघ को परेशान करता है। मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस जंगली घोड़े के समान है जो 'आगे बढ़ो!' कहे जाने पर, अपने प्रशिक्षक द्वारा उकसाए जाने पर भी, न आगे बढ़ता है और न पीछे मुड़ता है, बल्कि वहीं खंभे की तरह स्थिर खड़ा रहता है। यहाँ एक ऐसा ही जंगली घोड़े के समान व्यक्ति है। यह व्यक्ति का सातवाँ दोष है।"

(8) "फिर, जब भिक्षु किसी भिक्षु को किसी अपराध के लिए फटकार रहे होते हैं, तो वह कहता है: [195] 'तुम मेरे बारे में इतना हंगामा क्यों कर रहे हो? अब मैं प्रशिक्षण त्यागकर निम्न लोक में लौट जाऊंगा।' फिर वह प्रशिक्षण त्याग देता है, निम्न लोक में लौट जाता है और घोषणा करता है: 'अब तुम संतुष्ट हो सकते हो!' मैं कहता हूँ कि यह व्यक्ति उस जंगली घोड़े के समान है जो, जब उसे कहा जाता है: 'आगे बढ़ो!' और जब उसके प्रशिक्षक द्वारा उसे उकसाया और प्रेरित किया जाता है, तो वह अपने आगे और पीछे के पैरों को अंदर की ओर मोड़ लेता है और वहीं चारों पैरों पर बैठ जाता है। यहाँ एक ऐसा ही व्यक्ति है जो जंगली घोड़े के समान है। यह व्यक्ति का आठवाँ दोष है।"

"हे भिक्षुओं, ये आठ प्रकार के व्यक्ति हैं जो जंगली घोड़ों के समान हैं और एक व्यक्ति के आठ दोष हैं।"

---

15 दाग (माला)

भिक्षुओं, ये आठ दोष हैं। ये आठ क्या हैं? (1) भजनों का पाठ न करना दोष है। (2) घरों का दोष रखरखाव की कमी है। (3) सौंदर्य का दोष आलस्य है। (4) रक्षक का दोष सुस्ती है। (5) स्त्री का दोष दुराचार है। (6) कंजूसी दानदाता का दोष है। (7) अकुशल गुण इस लोक और परलोक में दोष हैं। (8) इससे भी गंभीर दोष अज्ञान है, जो सबसे बुरा दोष है। भिक्षुओं, ये आठ दोष हैं।

भजनों का पाठ न करना भजनों पर कलंक है; 1667

घरों पर कलंक रखरखाव की कमी है;

सुंदरता पर कलंक आलस्य है,

सुस्ती पहरेदार पर कलंक है।

स्त्री का कलंक दुराचार है,

कंजूसी दानदाता का कलंक है;

अकुशल (बुरे) गुण (धम्म)

इस लोक और परलोक में कलंक हैं।

इन सबसे भी गंभीर कलंक

अज्ञान है, जो सबसे बुरा कलंक है। [196]

———————————————————

16 मिशन (दुतेय्या)

"आठ गुणों से युक्त भिक्षु मिशन पर जाने के योग्य होते हैं। वे आठ गुण कौन से हैं?"

यहां, (1)— (2) भिक्षु वह है जो सुनता है और दूसरों को भी सुनाता है; (3)— (4) वह वह है जो अच्छी तरह सीखता है और दूसरों को भी सिखाता है; (5)— (6) वह वह है जो अच्छी तरह समझता है और अच्छी तरह संवाद करता है; (7) वह प्रासंगिक और अप्रासंगिक बातों को जानने में कुशल है; और (8) वह झगड़े नहीं भड़काता। इन आठ गुणों से युक्त भिक्षु (भिक्षु) मिशन पर जाने के योग्य है।

"भिक्षुओं, आठ गुणों से युक्त सारिपुत्त मिशन पर जाने के योग्य हैं; वे आठ गुण कौन से हैं?"

"यहाँ, सारिपुत्त वह है जो सुनता है और दूसरों को भी सुनने के लिए प्रेरित करता है... वह झगड़े नहीं भड़काता। इन आठ गुणों से युक्त, सारिपुत्त मिशन पर जाने के योग्य है।"

जो भिक्षु उग्र वाद-विवाद करने वालों की सभा में पहुँचकर भयभीत नहीं होता ;

जो शब्दों को नहीं छोड़ता

और न ही अपने संदेश को छुपाता है;

जो बिना झिझक के बोलता है

और प्रश्न पूछे जाने पर विचलित नहीं होता;

ऐसा भिक्षु ही

मिशन पर जाने के योग्य है।

---

17 बंधन (1) (बंधन1)

भिक्षुओं, एक स्त्री आठ तरीकों से पुरुष को बांधती है। वे आठ तरीके कौन से हैं? एक स्त्री अपने रूप से... अपनी मुस्कान से... अपनी वाणी से... अपने गायन से... अपने आँसुओं से... अपने दर्शन से... एक भेंट से... अपने स्पर्श से... एक स्त्री इन आठ तरीकों से पुरुष को बांधती है। वे प्राणी पूर्णतः बंधे होते हैं जो स्पर्श से बंधे होते हैं।

---

18 बंधन (2) (बंधन2)

भिक्षुओं, एक पुरुष स्त्री को आठ तरीकों से बांधता है। वे आठ तरीके कौन से हैं? एक पुरुष स्त्री को अपने रूप से... अपनी मुस्कान से... अपनी वाणी से... अपने गायन से... अपने आँसुओं से... अपने दर्शन से... एक उपहार से... अपने स्पर्श से बांधता है। एक पुरुष स्त्री को इन आठ तरीकों से बांधता है। वे प्राणी पूर्णतः बंध जाते हैं जो स्पर्श से बंध जाते हैं।

---

19 पहारदा (संस्कृत: प्रहलाद)

एक बार भगवान (बुद्ध) वेरांजा में नलरू के नीम के वृक्ष की तलहटी में निवास कर रहे थे। तब असुरों के शासक पहारदा भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ खड़े हो गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: [198]

"पहारदा, क्या असुर विशाल सागर में आनंद लेते हैं?"

"भंते, असुर विशाल सागर में आनंदित होते हैं।"

लेकिन, पहाड़ादा, असुर उस विशाल सागर में कितने आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण देखते हैं, जिसके कारण वे उसमें आनंद लेते हैं?

"असुर विशाल सागर में आठ आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण देखते हैं, जिसके कारण वे उसमें आनंदित होते हैं। वे आठ गुण कौन से हैं?"

(1) "हे भंते, विशाल सागर धीरे-धीरे ढलानदार, झुकता और ऊपर उठता है, अचानक नीचे नहीं गिरता। 1671 यह पहला आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो असुर विशाल सागर में देखते हैं, जिसके कारण वे इसमें आनंद लेते हैं।

(2) "फिर, विशाल सागर स्थिर है और अपनी सीमाओं से बाहर नहीं बहता। यह दूसरा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो असुर विशाल सागर में देखते हैं। ..."

(3) "फिर, विशाल सागर किसी शव से संबंध नहीं रखता, बल्कि उसे शीघ्र ही तट पर ले जाकर बहा देता है। यह तीसरा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो असुर विशाल सागर में देखते हैं।

(4) "फिर, जब महान नदियाँ—गंगा, यमुना, अचिरावत, सरभू और माही—महासागर में पहुँचती हैं, तो वे अपने पूर्व नाम और पदनाम [199] त्याग देती हैं और उन्हें केवल महासागर कहा जाता है। यह चौथा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो असुर महासागर में देखते हैं। . . ."

(5) "फिर, संसार में चाहे कितनी ही धाराएँ विशाल सागर में गिरें और आकाश से चाहे कितनी ही वर्षा हो, विशाल सागर में न तो कोई कमी होती है और न ही कोई वृद्धि। यह पाँचवाँ आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो असुर विशाल सागर में देखते हैं। ..."

(6) "फिर, विशाल सागर का केवल एक ही स्वाद है, नमक का स्वाद। यह छठा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो असुर विशाल सागर में देखते हैं।

(7) "फिर, विशाल सागर में अनेक बहुमूल्य पदार्थ हैं, अनेक बहुमूल्य पदार्थ जैसे मोती, रत्न, लापिस लाजुली, शंख, क्वार्ट्ज, मूंगा, चांदी, सोना, माणिक और कैट्स आई। यह [200] सातवां आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो असुर विशाल सागर में देखते हैं। . . ."

(8) "फिर, महान सागर तिमी, तिमीलाल, तिमीरापिंगला, असुर, नाग और गंधब जैसे महान प्राणियों का निवास स्थान है। महान सागर में सौ योजन, दो सौ, तीन सौ, चार सौ और पांच सौ योजन लंबे शरीर वाले प्राणी हैं। यह आठवां आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जिसे असुर महान सागर में देखते हैं, जिसके कारण वे उसमें आनंद लेते हैं।"

"हे भंते, ये वे आठ अद्भुत और विस्मयकारी गुण हैं जिन्हें असुर विशाल सागर में देखते हैं और इसी कारण वे उसमें आनंदित होते हैं। परन्तु क्या भिक्षु इस धम्म (मार्ग) और अनुशासन में आनंदित होते हैं?"

"पहारदा, भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में आनंदित होते हैं।"

लेकिन, भंते, भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में कितने आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण देखते हैं, जिसके कारण वे इसमें आनंदित होते हैं?

"भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में आठ आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण देखते हैं, जिसके कारण वे इसमें आनंदित होते हैं। वे आठ गुण कौन से हैं?"

(1) "जिस प्रकार, हे पहाड़ा, विशाल सागर धीरे-धीरे ढलानदार और ऊपर की ओर बढ़ता है, अचानक नीचे नहीं गिरता, [201] उसी प्रकार, इस धम्म और अनुशासन में अंतिम ज्ञान की प्राप्ति क्रमिक प्रशिक्षण, क्रमिक गतिविधि और क्रमिक अभ्यास से होती है, अचानक नहीं। 1673 यह पहला आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में देखते हैं, जिसके कारण वे इसमें आनंदित होते हैं।

(2) "जिस प्रकार विशाल सागर स्थिर रहता है और अपनी सीमाओं से बाहर नहीं बहता, उसी प्रकार जब मैंने अपने शिष्यों के लिए कोई प्रशिक्षण नियम निर्धारित किया है, तो वे जीवन के लिए भी उसका उल्लंघन नहीं करेंगे। यह दूसरा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो भिक्षु इस धम्म (मार्ग) और अनुशासन में देखते हैं। . . ."

(3) "जिस प्रकार विशाल सागर किसी शव से संगति नहीं करता, बल्कि उसे शीघ्र ही तट पर ले जाकर बहा देता है, उसी प्रकार संघ भी अनैतिक, बुरे चरित्र वाले, अपवित्र, संदिग्ध आचरण वाले, गुप्त कार्यों वाले, तपस्वी होते हुए भी संन्यासी न होने वाले, ब्रह्मचारी होने का दावा करने वाले, भीतर से सड़े हुए, भ्रष्ट और पतित व्यक्ति से संगति नहीं करता; बल्कि संघ उसे शीघ्र ही एकत्रित करके निष्कासित कर देता है। यद्यपि वह भिक्षुओं के संघ के बीच में बैठा हो, फिर भी वह संघ से दूर है और संघ उससे दूर है। [202] यह तीसरा विस्मयकारी और अद्भुत गुण है जो भिक्षु इस धानिमा और अनुशासन में देखते हैं। ....

(4) "जैसे, जब बड़ी नदियाँ... बड़े सागर में पहुँचती हैं, तो वे अपने पुराने नाम और पदनाम त्याग देती हैं और उन्हें केवल बड़ा सागर कहा जाता है, उसी प्रकार, जब चार सामाजिक वर्गों - क्षत्रिय, ब्राह्मण, वेस और शुद्ध - के सदस्य गृहस्थ जीवन छोड़कर तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म और अनुशासन में संन्यासी जीवन में प्रवेश करते हैं, तो वे अपने पुराने नाम और कुल त्याग देते हैं और उन्हें केवल शाक्य पुत्र का अनुसरण करने वाले तपस्वी कहा जाता है। यह चौथा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में देखते हैं। ..."

(5) "जिस प्रकार संसार में चाहे कितनी भी धाराएँ विशाल सागर में गिरें और आकाश से चाहे कितनी भी वर्षा हो, विशाल सागर में न तो कोई कमी होती है और न ही कोई वृद्धि होती है, उसी प्रकार, चाहे कितने ही भिक्षु निर्वाण तत्व के माध्यम से बिना किसी अवशेष के अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लें, निर्वाण तत्व में न तो कोई कमी होती है और न ही कोई वृद्धि होती है। 1674 [203] यह पाँचवाँ आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है जो भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में देखते हैं। ..."

(6) "जिस प्रकार विशाल सागर का केवल एक ही स्वाद होता है, नमक का स्वाद, उसी प्रकार इस धम्म और अनुशासन का भी केवल एक ही स्वाद होता है, मुक्ति का स्वाद। यह छठा विस्मयकारी और अद्भुत गुण है जो भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में देखते हैं।

(7) “जिस प्रकार विशाल सागर में अनेक बहुमूल्य पदार्थ होते हैं, जैसे मोती... कैट्स आई, उसी प्रकार इस धम्म और अनुशासन में भी अनेक बहुमूल्य पदार्थ होते हैं: ध्यान (सती) के चार आधार, चार उचित प्रयास, मानसिक शक्ति (इद्धि) के चार आधार, पाँच आध्यात्मिक शक्तियाँ, पाँच सामर्थ्य, ज्ञान के सात कारक और अष्टांगिक मार्ग। यह सातवाँ अद्‌भुत और विस्मयकारी गुण है जो भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में देखते हैं।

(8) "जैसे विशाल सागर तिमी जैसे महान प्राणियों का निवास स्थान है... [204] ... गंधब्बा; और जैसे विशाल सागर में सौ योजन लंबे... पाँच सौ योजन लंबे शरीर वाले प्राणी हैं, वैसे ही यह धम्म और अनुशासन महान प्राणियों का निवास स्थान है: धारा-प्रवेश करने वाला (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति), धारा-प्रवेश के फल की प्राप्ति के लिए अभ्यास करने वाला (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति); एक बार लौटने वाला (1 पुनर्जन्म, सकदागामी), एक बार लौटने के फल की प्राप्ति के लिए अभ्यास करने वाला (1 पुनर्जन्म, सकदागामी); न लौटने वाला (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी), न लौटने के फल की प्राप्ति के लिए अभ्यास करने वाला (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी); अरहंत, अरहंत पद के लिए अभ्यास करने वाला। यह है यह आठवां आश्चर्यजनक और अद्‌भुत गुण है जिसे भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में देखते हैं, जिसके कारण वे इसमें आनंदित होते हैं।

"हे पहारदा, ये वे आठ अद्‌भुत और विस्मयकारी गुण हैं जो भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में देखते हैं, जिसके कारण वे इसमें आनंदित होते हैं।"

---

20 उपोसथा 167एस

एक बार भगवान (बुद्ध) पूर्वी उद्यान में स्थित मिगारमाता के महल में सावत्थी में निवास कर रहे थे। उस अवसर पर, उपोसथ के दिन, भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के संघ से घिरे बैठे थे। फिर, जैसे-जैसे रात बढ़ती गई, जब पहला पहर बीत गया, तो पूज्य आनंद अपने आसन से उठे, अपना ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर डाला, भगवान (बुद्ध) को आदरपूर्वक प्रणाम किया और उनसे कहा: "भंते, रात बढ़ गई है; पहला पहर बीत गया है; भिक्षुओं का संघ बहुत देर से बैठा है। भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं को पतिमोक्खा सुनाएँ।" यह सुनकर भगवान (बुद्ध) मौन रहे। [205]

जैसे-जैसे रात बढ़ती गई और मध्य पहर बीत गया, पूज्य आनंद दूसरी बार अपने आसन से उठे, अपना ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर डाला, भगवान (बुद्ध) को आदरपूर्वक प्रणाम किया और उनसे कहा, "भंते, रात और बढ़ गई है; मध्य पहर बीत गया है; भिक्षुओं का संघ काफी देर से बैठा है। भंते, भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं को पतिमोक्खा सुनाएँ।" दूसरी बार भगवान (बुद्ध) मौन रहे।

जैसे-जैसे रात और आगे बढ़ती गई, जब अंतिम पहर बीत गया, जब भोर हुई और क्षितिज पर गुलाबी रंगत छा गई, तब पूज्य आनंद तीसरी बार अपने आसन से उठे, अपना ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर डाला, भगवान (बुद्ध) को आदरपूर्वक प्रणाम किया और उनसे कहा: "भंते, रात और आगे बढ़ गई है; अंतिम पहर बीत गया है; भोर हो गई है और क्षितिज पर गुलाबी रंगत छा गई है; भिक्षुओं का संघ बहुत देर से बैठा है। भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं को पतिमोक्खा सुनाएँ।"

"आनंद, यह सभा अपवित्र है।"

तब पूज्य महामोग्गलाना के मन में यह विचार आया: “भगवान (बुद्ध) ने जब कहा, ‘आनंद, यह सभा अपवित्र है’, तो उनका तात्पर्य किस व्यक्ति से था?” तब पूज्य महामोग्गलाना ने अपना ध्यान भिक्षुओं के संपूर्ण संघ पर केंद्रित किया और उनके मन को अपने भीतर समाहित कर लिया। तब उन्होंने भिक्षुओं के संघ के बीच में बैठे उस व्यक्ति को देखा: जो अनैतिक, बुरे चरित्र का, अपवित्र, संदिग्ध आचरण वाला, गुप्त स्वभाव का, तपस्वी होने का दावा करते हुए भी न तपस्वी, ब्रह्मचारी होने का दावा करते हुए भी न तपस्वी, भीतर से सड़ा हुआ, भ्रष्ट और पतित था। उसे देखकर वे अपने आसन से उठे, उस व्यक्ति के पास गए और उससे कहा: “उठो, मित्र। भगवान (बुद्ध) ने तुम्हें देख लिया है। तुम भिक्षुओं के साथ संगति में नहीं रह सकते।” यह सुनकर वह व्यक्ति मौन रहा।

दूसरी बार... तीसरी बार पूज्य महामोग्गलाना ने उस व्यक्ति से कहा: [206] "उठो, मित्र। भगवान (बुद्ध) ने तुम्हें देख लिया है। तुम भिक्षुओं के साथ संगति में नहीं रह सकते।" तीसरी बार वह व्यक्ति चुप रहा।

तब पूज्य महामोग्गलाना ने उस व्यक्ति को बांह से पकड़कर बाहरी द्वार से बाहर निकाल दिया और दरवाजा बंद कर दिया। फिर वे भगवान (बुद्ध) के पास लौटकर उनसे बोले, "मैंने उस व्यक्ति को निकाल दिया है, भंते। सभा पवित्र है। भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं को पतिमोक्खा का पाठ करें।"

"यह आश्चर्यजनक और विस्मयकारी है, मोग्गलाना, कि वह खोखला व्यक्ति 1676 तक तब तक प्रतीक्षा करता रहा जब तक उसे बांह से पकड़ नहीं लिया गया।" तब भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "अब, भिक्षुओं, आप स्वयं उपोसथ का संचालन करें और पतिमोक्ख का पाठ करें। आज से मैं ऐसा नहीं करूंगा। यह असंभव और अकल्पनीय है कि तथागत (बुद्ध) अपवित्र सभा में उपोसथ का संचालन करें और पतिमोक्ख का पाठ करें।"

"असुर, भिक्षुओं, विशाल सागर में ये आठ आश्चर्यजनक और अद्‌भुत गुण देखते हैं, जिसके कारण वे उसमें आनंदित होते हैं। वे कौन से आठ गुण हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, विशाल सागर धीरे-धीरे ढलानदार और ऊपर-नीचे होता है, अचानक नीचे नहीं गिरता। यही वह पहला आश्चर्यजनक और अद्‌भुत गुण है जो असुर विशाल सागर में देखते हैं, जिसके कारण वे उसमें आनंदित होते हैं।"

[सभी बातें 8:19 के समान हैं, लेकिन भिक्षुओं को संबोधित हैं।]

(8) "फिर, महान सागर महान प्राणियों का निवास स्थान है... [207] ... पाँच सौ योजन लंबा। यह आठवाँ आश्चर्यजनक और अद्‌भुत गुण है जो असुर महान सागर में देखते हैं जिसके कारण वे उसमें आनंद लेते हैं।

"हे भिक्षुओं, ये वे आठ अद्‌भुत और विस्मयकारी गुण हैं जिन्हें असुर विशाल सागर में देखते हैं और उसी के कारण उसमें आनंदित होते हैं। उसी प्रकार, भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में आठ अद्‌भुत और विस्मयकारी गुण देखते हैं और उसी के कारण उसमें आनंदित होते हैं। वे आठ गुण कौन से हैं?"

(1) "हे भिक्षुओं, जिस प्रकार विशाल सागर धीरे-धीरे ढलानदार होता है, अचानक नीचे नहीं गिरता, उसी प्रकार इस धम्म और अनुशासन में भी अंतिम ज्ञान की प्राप्ति क्रमिक प्रशिक्षण, क्रमिक गतिविधि और क्रमिक अभ्यास से होती है, अचानक नहीं। यही वह पहला आश्चर्यजनक और अद्‌भुत गुण है जो भिक्षुओं को इस धम्म और अनुशासन में दिखाई देता है, जिसके कारण वे इसमें आनंदित होते हैं। ..."

[सभी बातें 8:19 के समान हैं, लेकिन भिक्षुओं को संबोधित हैं।]

(8) "जिस प्रकार विशाल सागर महान प्राणियों का निवास स्थान है... पाँच सौ योजन [208] लंबा, उसी प्रकार यह धम्म और अनुशासन भी महान प्राणियों का निवास स्थान है: सोतपत्ति (सात जन्मों का सप्तपदी), जो सोतपत्ति के फल की प्राप्ति के लिए साधना करता है... अरहंत, जो अरहंतत्व के लिए साधना करता है। यह आठवाँ विस्मयकारी और अद्‌भुत गुण है जो भिक्षु इस धम्म (मार्ग) और अनुशासन में देखते हैं, जिसके कारण वे इसमें आनंदित होते हैं।"

"हे भिक्षुओं, ये वे आठ अद्‌भुत और विस्मयकारी गुण हैं जो भिक्षुओं को इस धम्म और अनुशासन में दिखाई देते हैं, जिसके कारण वे इसमें आनंदित होते हैं।"

तृतीय. गृहस्थ (गहपतिवग्गो सं. गृहपति-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

21 उगा (1)

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं, वैशाली के गृहस्थ उगा को याद रखना चाहिए, जो आठ आश्चर्यजनक और अद्भुत गुणों से परिपूर्ण थे।" 1677 [209] भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह कहकर सुगत (भगवान बुद्ध) अपने आसन से उठे और अपने निवास में प्रवेश कर गए।

फिर सुबह एक भिक्षु ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किया और वैशाली के गृहस्थ उगा के निवास पर गया। वहाँ पहुँचकर वह अपने लिए तैयार आसन पर बैठ गया। तब वैशाली के गृहस्थ उगा उस भिक्षु के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भिक्षु ने उनसे कहा:

"गृहस्थ, भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि आप आठ अद्भुत और आश्चर्यजनक गुणों से परिपूर्ण हैं। वे क्या हैं?"

"भंते, मुझे नहीं पता कि भगवान (बुद्ध) ने मेरे बारे में कौन से आठ अद्भुत और आश्चर्यजनक गुण बताए हैं। लेकिन मुझमें आठ अद्भुत और आश्चर्यजनक गुण मौजूद हैं। ध्यान से सुनो, मैं बोलूंगा।"

"जी, गृहस्थ," भिक्षु ने उत्तर दिया। वैशाली के गृहस्थ उगा ने यह कहा:

(1) "हे भंते, जब मैंने पहली बार दूर से भगवान (बुद्ध) को देखा, तो उन्हें देखते ही मेरे मन में उनके प्रति विश्वास उत्पन्न हो गया। यह मुझमें पाया जाने वाला पहला आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है।"

(2) "विश्वास से भरे मन से मैंने भगवान (बुद्ध) की सेवा की। तब भगवान (बुद्ध) ने मुझे एक क्रमिक प्रवचन दिया, अर्थात् दान, सदाचार और स्वर्ग पर प्रवचन; उन्होंने इंद्रिय सुखों के खतरे, पतन और अपवित्रता तथा त्याग के लाभ को प्रकट किया। जब भगवान (बुद्ध) को पता चला कि मेरा मन कोमल, सौम्य, अवरोधों से मुक्त, उन्नत और आत्मविश्वास से भरा है, तो उन्होंने [2101 बुद्धों के लिए विशेष धम्म शिक्षा प्रकट की: दुख, उसका उद्गम, उसका निवारण और मार्ग। तब, जैसे एक साफ, दाग रहित कपड़ा आसानी से रंग सोख लेता है, वैसे ही, जब मैं उसी आसन पर बैठा था, तो मेरे भीतर धूल रहित, निष्कलंक धम्म-दृष्टि जागृत हुई: 'जो कुछ भी उत्पन्न होता है, वह सब निवारण के अधीन है।' मैंने धम्म को देखा, धम्म को प्राप्त किया, धम्म को समझा, धम्म की गहराई में उतरा, संदेह से पार पाया, भ्रम से छुटकारा पाया, आत्मविश्वास प्राप्त किया और गुरु के उपदेश में दूसरों से स्वतंत्र हो गया। वहीं मैंने बुद्ध, धम्म और संघ की शरण ली और ब्रह्मचर्य को पाँचवें नियम के रूप में अपनाकर प्रशिक्षण के नियमों का पालन किया। 1678 यह मुझमें पाया जाने वाला दूसरा अद्भुत और आश्चर्यजनक गुण है।

(3) "मेरी चार जवान पत्नियाँ थीं। तब मैं उनके पास गया और कहा: 'बहनो, मैंने पाँचवें नियम के रूप में ब्रह्मचर्य के साथ प्रशिक्षण नियमों का पालन किया है। अगर तुम चाहो, तो यहीं धन का आनंद ले सकती हो और पुण्य कर्म कर सकती हो, या अपने परिवार में वापस जा सकती हो, या अगर तुम चाहती हो कि मैं तुम्हें किसी दूसरे पुरुष को सौंप दूँ, तो मुझे बता दो।' तब मेरी सबसे बड़ी पत्नी ने मुझसे कहा: 'युवक, मुझे फलाँ पुरुष को सौंप दो।' मैंने उस पुरुष को बुलवाया, और अपने बाएँ हाथ से अपनी पत्नी को लिया, अपने दाएँ हाथ से मैंने अनुष्ठानिक कलश लिया, और मैंने उसे उस पुरुष को सौंप दिया। लेकिन अपनी जवान पत्नी को सौंपते समय भी, मुझे याद नहीं आता कि मेरे मन में कोई परिवर्तन हुआ हो। यह मुझमें पाया जाने वाला तीसरा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है। [21 1]

(4) "मेरा परिवार धनी है, लेकिन धन को बिना किसी शर्त के अच्छे चरित्र वाले गुणी लोगों के साथ साझा किया जाता है। यह मुझमें पाया जाने वाला चौथा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है।"

(5) "जब भी मैं किसी भिक्षु की सेवा करता हूँ, मैं उसकी सेवा पूर्ण आदर के साथ करता हूँ, अनादर के बिना नहीं। यह मुझमें पाया जाने वाला पाँचवाँ आश्चर्यजनक और अद्‌भुत गुण है।"

(6) "यदि वह पूज्य गुरु मुझे धम्म का उपदेश देते हैं, तो मैं आदरपूर्वक सुनता हूँ, अनादरपूर्वक नहीं। यदि वे मुझे धम्म का उपदेश नहीं देते, तो मैं उन्हें धम्म (मार्ग) का उपदेश देता हूँ। यह मुझमें पाया जाने वाला छठा आश्चर्यजनक और अद्‌भुत गुण है।"

(7) "देवताओं (देवदूतों) का मेरे पास आकर यह कहना कोई असामान्य बात नहीं है: 'गृहस्थ, भगवान (बुद्ध) ने धम्म की अच्छी व्याख्या की है।' तब मैं उन देवताओं (देवदूतों) से कहता हूँ: 'चाहे आप ऐसा कहें या न कहें, भगवान (बुद्ध) ने धम्म की अच्छी व्याख्या की है।' फिर भी, मुझे देवताओं (देवदूतों) के मेरे पास आने या उनसे बातचीत करने के कारण उत्पन्न होने वाला कोई मानसिक उल्लास याद नहीं है। यह मुझमें पाया जाने वाला सातवाँ आश्चर्यजनक और अद्‌भुत गुण है।"

(8) "भगवान (बुद्ध) द्वारा सिखाए गए पाँच निम्न बंधनों में से, मुझे कोई ऐसा बंधन नहीं दिखता जिसे मैंने त्यागा न हो। 1679 यह मुझमें पाया जाने वाला आठवाँ आश्चर्यजनक और अद्‌भुत गुण है। [212]

"हे भंते, ये आठ अद्‌भुत और विस्मयकारी गुण मुझमें पाए जाते हैं। लेकिन मुझे नहीं पता कि भगवान (बुद्ध) ने मेरे बारे में कौन से आठ अद्‌भुत और विस्मयकारी गुण बताए हैं।"

तब उस भिक्षु ने वैशाली के गृहस्थ उगा के निवास पर भिक्षा ग्रहण की और अपने आसन से उठकर चले गए। भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और वैशाली के गृहस्थ उगा के साथ हुई अपनी सारी बातचीत उन्हें सुनाई।

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "अच्छा, अच्छा, भिक्षु! मैंने कहा था कि वैशाली के गृहस्थ उगा में वही आठ अद्‌भुत और आश्चर्यजनक गुण हैं जिनका उसने तुम्हें सही वर्णन किया है। तुम्हें वैशाली के गृहस्थ उगा को इन आठ अद्‌भुत और आश्चर्यजनक गुणों से युक्त व्यक्ति के रूप में याद रखना चाहिए।"

---

22 उगा (2)

एक बार भगवान (बुद्ध) हत्थिगमा में वज्जियों के बीच निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया।

"भिक्षुओं, आप हत्तिगामा के गृहस्थ उगा को याद रखें, जो आठ अद्‌भुत और आश्चर्यजनक गुणों से परिपूर्ण थे।" भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। इतना कहकर सुगत (भगवान बुद्ध) अपने आसन से उठे और अपने निवास स्थान में प्रवेश कर गए।

फिर सुबह, एक भिक्षु ने वस्त्र धारण किया, अपना कुंड और वस्त्र लिया और हत्थिगमा के गृहस्थ उगा के निवास पर गया। वहाँ पहुँचकर वह अपने लिए तैयार आसन पर बैठ गया। तब हत्थिगमा के गृहस्थ उगा उस भिक्षु के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भिक्षु ने उनसे कहा: [213]

"गृहस्थ, भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि आपमें आठ अद्‌भुत और आश्चर्यजनक गुण हैं। वे क्या हैं?"

"मुझे नहीं पता, भंते, भगवान (बुद्ध) ने मेरे बारे में कौन से आठ अद्‌भुत और आश्चर्यजनक गुण बताए हैं। फिर भी, मुझमें आठ अद्‌भुत और आश्चर्यजनक गुण मौजूद हैं। ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी, गृहस्थ," भिक्षु ने उत्तर दिया। हत्थिगमा के गृहस्थ उगा ने यह कहा:

(1) "भंते, मैं नाग वन में मौज-मस्ती कर रहा था जब मैंने पहली बार दूर से भगवान (बुद्ध) को देखा। जैसे ही मैंने उन्हें देखा, मेरे मन में उनके प्रति विश्वास जागृत हो गया और मेरा नशा उतर गया। यह मुझमें पाया जाने वाला पहला आश्चर्यजनक और अद्‌भुत गुण है।"

(2) "विश्वास से भरे मन से, मैंने भगवान (बुद्ध) की सेवा की। तब भगवान (बुद्ध) ने मुझे एक प्रगतिशील प्रवचन दिया। . . . [जैसा कि 8:21 में है] . . . वहीं [214] मैंने बुद्ध, धम्म और सहग की शरण ली और ब्रह्मचर्य को पाँचवें नियम के रूप में अपनाकर प्रशिक्षण नियमों का पालन किया। यह मुझमें पाया जाने वाला दूसरा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है।"

(3) "मेरी चार जवान पत्नियाँ थीं। फिर मैं उनके पास गया... [जैसा कि 8:21 में है]... लेकिन अपनी जवान पत्नी को विदा करते समय भी मुझे याद नहीं आता कि मेरे मन में कोई परिवर्तन हुआ हो। यह मुझमें पाया जाने वाला तीसरा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है।"

(4) "मेरा परिवार धनी है, लेकिन धन को बिना किसी संकोच के अच्छे चरित्र वाले गुणी लोगों के साथ साझा किया जाता है। यह मुझमें पाया जाने वाला चौथा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है। [215]

(5) "जब भी मैं किसी भिक्षु की सेवा करता हूँ, तो मैं पूरी श्रद्धा से उनकी सेवा करता हूँ, अनादर से नहीं। यदि वह आदरणीय भिक्षु मुझे धम्म का उपदेश देते हैं, तो मैं श्रद्धापूर्वक सुनता हूँ, अनादर से नहीं। यदि वे मुझे धम्म का उपदेश नहीं देते, तो मैं उन्हें धम्म का उपदेश देता हूँ। यह मुझमें पाया जाने वाला पाँचवाँ अद्भुत और आश्चर्यजनक गुण है।"

(6) "यह कोई असामान्य बात नहीं है कि जब मैं संघ को भोजन के लिए आमंत्रित करता हूँ, तो देवता (देवदूत) आकर मुझे बताते हैं: 'वह भिक्षु, गृहस्थ, दोनों ही दृष्टियों से मुक्त है। वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) से मुक्त है। वह शरीर साक्षी है। वह दृष्टि प्राप्त कर चुका है। वह आस्था से मुक्त है। वह धर्म का अनुयायी है। वह आस्था का अनुयायी है। वह गुणी, अच्छे चरित्र का है। वह अनैतिक, बुरे चरित्र का है।' फिर भी, जब मैं संघ की सेवा कर रहा होता हूँ, तो मुझे यह विचार याद नहीं आता: 'मैं इसे थोड़ा दूँ, मैं उसे बहुत दूँ।' बल्कि, मैं समान भाव से देता हूँ। यह मुझमें पाया जाने वाला छठा आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है।"

(7) "देवताओं (देवदूतों) का आकर मुझे यह बताना कोई असामान्य बात नहीं है: 'गृहस्थ, भगवान (बुद्ध) ने धम्म की अच्छी व्याख्या की है।' तब मैं उन देवताओं (देवदूतों) से कहता हूँ: 'चाहे आप देवता (देवदूत) ऐसा कहें या न कहें, भगवान (बुद्ध) ने धम्म की अच्छी व्याख्या की है।' फिर भी, मुझे देवताओं (देवदूतों) के मेरे पास आने या उनसे बातचीत करने के कारण कोई मानसिक उल्लास याद नहीं आता। यह मुझमें पाया जाने वाला सातवाँ आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है। [216]

(8) "यदि मैं भगवान (बुद्ध) के समक्ष इस दुनिया से चला जाऊं, तो यह आश्चर्य की बात नहीं होगी यदि भगवान (बुद्ध) मेरे बारे में यह कहें: 'ऐसा कोई बंधन नहीं है जिससे हत्थिगमा के गृहस्थ उगा इस दुनिया में लौट सकें।' 1680 यह मुझमें पाया जाने वाला आठवां आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण है।"

"हे भंते, ये आठ अद्भुत और विस्मयकारी गुण मुझमें पाए जाते हैं। परन्तु मुझे नहीं पता कि भगवान (बुद्ध) ने मेरे बारे में कौन से आठ अद्भुत और विस्मयकारी गुणों की घोषणा की है।"

तब उस भिक्षु ने हत्थिगमा के गृहस्थ उगा के निवास पर भिक्षा ग्रहण की और अपने आसन से उठकर चले गए। भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और हत्थिगमा के गृहस्थ उगा के साथ हुई अपनी सारी बातचीत उन्हें सुनाई।

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "अच्छा, अच्छा, भिक्षु! मैंने कहा था कि हत्थिगमा के गृहस्थ उगा में वही आठ अद्भुत और आश्चर्यजनक गुण हैं जिनका उसने तुम्हें सही वर्णन किया है। तुम्हें हत्थिगमा के गृहस्थ उगा को इन आठ अद्भुत और आश्चर्यजनक गुणों से युक्त व्यक्ति के रूप में याद रखना चाहिए।"

---

23 हत्थका (1)

एक बार भगवान (बुद्ध) अलावी में अग्गलावा मंदिर में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया। . . . [217]

"भिक्षुओं, आप अलावी के हत्थक को सात अद्भुत और विस्मयकारी गुणों से युक्त व्यक्ति के रूप में याद रखें। वे सात गुण क्या हैं? (1) अलावी के हत्थक में आस्था है। (2) वे गुणी हैं, (3) उनमें नैतिक लज्जा और (4) नैतिक भय की भावना है। (5) वे विद्वान हैं, (6) उदार हैं, और (7) बुद्धिमान हैं। आप अलावी के हत्थक को इन सात अद्भुत और विस्मयकारी गुणों से युक्त व्यक्ति के रूप में याद रखें।" भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह कहकर सुगत (भगवान बुद्ध) अपने आसन से उठे और अपने निवास स्थान में प्रवेश कर गए।

फिर सुबह एक भिक्षु ने वस्त्र धारण किया, अपना कुंड और वस्त्र लिया और अलवी के हत्थक के निवास पर गया। वहाँ पहुँचकर वह अपने लिए तैयार आसन पर बैठ गया। तब अलवी के हत्थक भिक्षु के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भिक्षु ने उनसे कहा:

"मित्र, 1683 में भगवान (बुद्ध) ने घोषणा की कि आप सात अद्भुत और विस्मयकारी गुणों से परिपूर्ण हैं। वे सात गुण कौन से हैं? 'भिक्षुओं, अलवी के हत्थक में आस्था है। वह गुणी है और उसमें नैतिक लज्जा और नैतिक भय की भावना है। वह विद्वान, उदार और बुद्धिमान है।' भगवान (बुद्ध) ने घोषणा की कि आप इन सात अद्भुत और विस्मयकारी गुणों से परिपूर्ण हैं।"

"मुझे उम्मीद है, भंते, कि वहां कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ उपस्थित नहीं था?"

"नहीं, दोस्त। कोई भी श्वेत वस्त्रधारी आम आदमी उपस्थित नहीं था।"

"यह अच्छा है, भंते।"

तब उस भिक्षु ने अलाव्ल के हत्थक के निवास पर भिक्षा ग्रहण करके अपने आसन से उठकर प्रस्थान किया। भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, वह भगवान (बुद्ध) के पास गया, [218] उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया, [और उन्हें सारी घटना का वर्णन किया]। 1682

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "अच्छा, अच्छा, भिक्षु! उस कुल के मनुष्य की इच्छाएँ कम होती हैं, क्योंकि वह अपने भीतर के लाभकारी (कुशल) गुणों को दूसरों को प्रकट नहीं करना चाहता। इसलिए, भिक्षु, आपको अलावल के हत्थक को याद रखना चाहिए, जो इस आठवें, आश्चर्यजनक और अद्भुत गुण, अर्थात् (8) इच्छाओं की कमी से युक्त है।"

---

24 हत्थका (2)

एक बार भगवान (बुद्ध) अलावी में अग्गलावा मंदिर में निवास कर रहे थे। तब अलावी के हत्थका, अपने पाँच सौ अनुयायियों के साथ, [219] भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"हत्थका, तुम्हारा दल बहुत बड़ा है। तुम इतने बड़े दल का भरण-पोषण कैसे करते हो?"

"हे भंते, मैं भगवान (बुद्ध) द्वारा सिखाए गए अनुकूल संबंध बनाए रखने के चार साधनों से ऐसा करता हूँ। 1583 जब मुझे पता चलता है: 'इसका भरण-पोषण दान से करना है,' तो मैं उसका भरण-पोषण दान से करता हूँ। जब मुझे पता चलता है: 'इसका भरण-पोषण मधुर वाणी से करना है,' तो मैं उसका भरण-पोषण मधुर वाणी से करता हूँ। जब मुझे पता चलता है: 'इसका भरण-पोषण परोपकारी आचरण से करना है,' तो मैं उसका भरण-पोषण परोपकारी आचरण से करता हूँ। जब मुझे पता चलता है: 'इसका भरण-पोषण निष्पक्षता से करना है,' तो मैं उसका भरण-पोषण निष्पक्षता से करता हूं। हे भंते, मेरे परिवार में धन है। वे यह नहीं सोचते कि उन्हें मेरी बात ऐसे सुननी चाहिए जैसे मैं गरीब हूँ।" 1684

"शाबाश, शाबाश, हत्थका! यही वह तरीका है जिससे तुम एक बड़े दल का भरण-पोषण कर सकते हो। अतीत में जिन्होंने भी बड़ा दल का भरण-पोषण किया, उन्होंने इन्हीं चार तरीकों से अनुकूल संबंध बनाए रखे। भविष्य में जो भी बड़ा दल का भरण-पोषण करेंगे, वे भी इन्हीं चार तरीकों से अनुकूल संबंध बनाए रखेंगे। और वर्तमान में जो भी बड़ा दल का भरण-पोषण करते हैं, वे भी इन्हीं चार तरीकों से अनुकूल संबंध बनाए रखते हैं।"

फिर, भगवान (बुद्ध) द्वारा अलाव्ल के हत्थक को धम्म प्रवचन से उपदेश, प्रोत्साहन, प्रेरणा और प्रसन्न करने के बाद, हत्थक अपनी सीट से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिना हाथ रखते हुए उनकी परिक्रमा की, [220] और चले गए।

फिर, अलवी के हत्थक के चले जाने के कुछ ही समय बाद, भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं, आपको अलवी के हत्थक को आठ अद्भुत और विस्मयकारी गुणों से युक्त व्यक्ति के रूप में याद रखना चाहिए। वे आठ गुण क्या हैं? (1) वे आस्थावान हैं। (2) वे गुणी हैं, और (3) उनमें नैतिक लज्जा और (4) नैतिक भय की भावना है। (5) वे विद्वान हैं, (6) उदार हैं, और (7) बुद्धिमान हैं। (8) उनकी इच्छाएँ कम हैं। आपको अलवी के हत्थक को इन आठ अद्भुत और विस्मयकारी गुणों से युक्त व्यक्ति के रूप में याद रखना चाहिए।"

---

25 महानामा

एक बार भगवान (बुद्ध) कपिलवस्तु के बरगद उद्यान में शाक्यों के बीच निवास कर रहे थे। तब शाक्य महानामा भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, किस अर्थ में कोई गृहस्थ अनुयायी होता है?"

"जब, महानामा, कोई बुद्ध, धम्म और संघ की शरण लेता है, तो उस तरह से वह एक गृहस्थ अनुयायी होता है।"

"भंते, एक गृहस्थ अनुयायी किस प्रकार गुणी होता है?"

"जब, महानामा, एक गृहस्थ अनुयायी जीवन के विनाश से, बिना दी गई वस्तुएँ लेने से, यौन दुराचार से, झूठी वाणी से और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से, जो आलस्य का आधार हैं, परहेज करता है, तो उस प्रकार वह गृहस्थ अनुयायी गुणी होता है।"

"भंते, किस तरह से एक गृहस्थ अनुयायी अपने स्वयं के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, लेकिन दूसरों के कल्याण के लिए नहीं?" [221]

(1) हे महानामा, जब कोई गृहस्थ अनुयायी स्वयं धर्म में सिद्ध हो, परन्तु दूसरों को धर्म में सिद्ध होने के लिए प्रोत्साहित न करे; (2) जब वह स्वयं सद्गुणों में सिद्ध हो, परन्तु दूसरों को सद्गुणों में सिद्ध होने के लिए प्रोत्साहित न करे; (3) जब वह स्वयं उदारता में सिद्ध हो, परन्तु दूसरों को उदारता में सिद्ध होने के लिए प्रोत्साहित न करे; (4) जब वह स्वयं भिक्षुओं से मिलना चाहे, परन्तु दूसरों को भिक्षुओं से मिलने के लिए प्रोत्साहित न करे; (5) जब वह स्वयं अच्छे धर्म को सुनना चाहे, परन्तु दूसरों को अच्छे धर्म को सुनने के लिए प्रोत्साहित न करे; (6) जब वह स्वयं सुनी हुई शिक्षाओं को मन में रखे, परन्तु दूसरों को शिक्षाओं को मन में रखने के लिए प्रोत्साहित न करे; (7) जब वह स्वयं मन में रखी हुई शिक्षाओं के अर्थ की जांच करे, परन्तु दूसरों को उनके अर्थ की जांच करने के लिए प्रोत्साहित न करे; (8) जब वह स्वयं धर्म के अर्थ और उसके अनुसार अभ्यास करे, परन्तु दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित न करे: हे महानामा, इसी प्रकार एक गृहस्थ अनुयायी अपने स्वयं के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है, परन्तु दूसरों के कल्याण के लिए नहीं।

"हे भंते, एक गृहस्थ अनुयायी किस प्रकार अपने और दूसरों के कल्याण के लिए अभ्यास कर रहा है?"

(1) हे महानामा, जब कोई गृहस्थ अनुयायी स्वयं धर्म में सिद्ध हो और दूसरों को भी धर्म में सिद्ध होने के लिए प्रेरित करे; (2) जब वह स्वयं सद्गुणों में सिद्ध हो और दूसरों को भी सद्गुणों में सिद्ध होने के लिए प्रेरित करे; (3) जब वह स्वयं उदारता में सिद्ध हो और दूसरों को भी उदारता में सिद्ध होने के लिए प्रेरित करे; (4) जब वह स्वयं भिक्षुओं से मिलना चाहे और दूसरों को भी भिक्षुओं से मिलने के लिए प्रेरित करे; (5) जब वह स्वयं अच्छे धर्म को सुनना चाहे और दूसरों को भी अच्छे धर्म को सुनने के लिए प्रेरित करे; (6) जब वह स्वयं सुनी हुई शिक्षाओं को मन में रखे और दूसरों को भी उन्हें मन में रखने के लिए प्रेरित करे; (7) जब वह स्वयं मन में रखी हुई शिक्षाओं के अर्थ का विश्लेषण करे और दूसरों को भी उनके अर्थ का विश्लेषण करने के लिए प्रेरित करे; (8) जब वह स्वयं अर्थ और धर्म को समझ ले और धर्म के अनुसार अभ्यास करे, और दूसरों को भी धर्म के अनुसार अभ्यास करने के लिए प्रेरित करे: हे महानामा, इसी प्रकार एक गृहस्थ अनुयायी अपने लिए अभ्यास कर रहा होता है। स्वयं के कल्याण के लिए और दूसरों के कल्याण के लिए भी।"

---

26 जीवक

एक बार भगवान (बुद्ध) राजगृह में जीवक के आम के बाग में निवास कर रहे थे। तब जीवक कोमरभच्च भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा: 1683

"भंते, किस अर्थ में कोई गृहस्थ अनुयायी होता है?"

[शेष 8:25.3 [223] के अनुसार]

---

27 शक्तियाँ (1) (बाला1)

भिक्षुओं, ये आठ शक्तियाँ हैं। कौन सी आठ शक्तियाँ? (1) बच्चों की शक्ति रोना है; (2) स्त्रियों की शक्ति क्रोध है; (3) चोरों की शक्ति हथियार चलाना है; (4) राजाओं की शक्ति भगवानत्व है; (5) मूर्खों की शक्ति शिकायत करना है; (6) बुद्धिमानों की शक्ति विचार-विमर्श करना है; (7) विद्वानों की शक्ति चिंतन है; (8) तपस्वियों और ब्राह्मणों की शक्ति धैर्य है। ये आठ शक्तियाँ हैं।

---

28 शक्तियाँ (2) (बाला2)

तब पूज्य सारिपुत्त भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे। . . . तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: [224]

सारिपुत्त, जब किसी भिक्षु के दोष नष्ट हो जाते हैं, तो उसके पास कितनी शक्तियाँ रह जाती हैं जिनके आधार पर वह दावा कर सकता है: 'मेरे दोष नष्ट हो गए हैं'?

"भंते, जब किसी भिक्षु के दोष नष्ट हो जाते हैं, तो उसे आठ शक्तियां प्राप्त हो जाती हैं, जिनके कारण वह कह सकता है: 'मेरे दोष नष्ट हो गए हैं।' वे आठ शक्तियां कौन सी हैं?"

(1) "हे भंते, यहाँ एक भिक्षु ने, जिसके सारे दोष नष्ट हो चुके हैं, सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) को उनके वास्तविक स्वरूप में, सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) के साथ, अनित्य रूप में स्पष्ट रूप से देखा है। यही दोष नष्ट हो चुके भिक्षु की वह शक्ति है जिसके आधार पर वह दावा कर सकता है: 'मेरे दोष नष्ट हो गए हैं।'"

(2) "फिर, दोषों से मुक्त भिक्षु ने सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) के साथ इंद्रिय सुखों को उनके वास्तविक स्वरूप में स्पष्ट रूप से देखा है, जो कोयले की भट्टी के समान हैं। यह दोषों से मुक्त भिक्षु की शक्ति है। ..."

(3) "फिर, दोषों से मुक्त भिक्षु का मन एकांत की ओर झुकता है; वह त्याग में आनंदित होकर एकांत में चला जाता है और दोषों के आधार बनने वाली सभी चीजों से पूरी तरह मुक्त हो जाता है। यही दोषों से मुक्त भिक्षु की शक्ति है। ..."

(4) "पुनः, दोष मिट चुके भिक्षु ने ध्यान (सती/ध्यान) की चारों अवस्थाओं को विकसित और अच्छी तरह से सिद्ध कर लिया है। [225] ऐसा होने के कारण, यह दोष मिट चुके भिक्षु की शक्ति है।"

(5) — (8) "पुनः, दोष मिट चुके भिक्षु ने मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) के चार आधारों को विकसित और अच्छी तरह से विकसित कर लिया है... पाँच आध्यात्मिक शक्तियों को... ज्ञान के सात कारकों को... आर्य अष्टांगिक मार्ग को। दोष मिट चुके भिक्षु की यही शक्ति है जिसके आधार पर वह दावा कर सकता है: 'मेरे दोष मिट गए हैं।'"

"भंते, जब किसी भिक्षु के दोष नष्ट हो जाते हैं, तो उसे ये आठ शक्तियां प्राप्त होती हैं जिनके आधार पर वह दावा कर सकता है: 'मेरे दोष नष्ट हो गए हैं।'"

---

29 अनुचित क्षण (अक्खाना)

"भिक्षुओं, अज्ञानी सांसारिक कहता है: 'संसार को अवसर मिल गया है! संसार को अवसर मिल गया है!' 1688 परन्तु वह नहीं जानता कि अवसर क्या है और क्या नहीं है। भिक्षुओं, ये आठ अनुपयुक्त क्षण हैं जो ब्रह्मचर्य (बुद्ध का मार्ग) जीने के लिए उपयुक्त अवसर नहीं हैं। वे आठ कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, तथागत (बुद्ध) संसार में अवतरित हुए हैं, एक अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण, सौभाग्यशाली, संसार के ज्ञाता, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु, एक प्रबुद्ध, एक भगवान (बुद्ध), और शांति, निर्वाण और ज्ञान की ओर ले जाने वाले धम्म का उपदेश एक सौभाग्यशाली द्वारा दिया गया है। परन्तु एक व्यक्ति का पुनर्जन्म नरक में हुआ है। यह पहला अनुपयुक्त क्षण है जो इस ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीने का उचित अवसर नहीं है। (बुद्ध का मार्ग) [226]

(2) "फिर, एक तथागत (बुद्ध) संसार में प्रकट हुए हैं... और शांति, निर्वाण और ज्ञान की ओर ले जाने वाले धर्म का उपदेश सुगत (भगवान बुद्ध) द्वारा दिया गया है। परन्तु एक व्यक्ति पशुलोक में पुनर्जन्म ले चुका है। यह दूसरा अनुपयुक्त क्षण है जो ब्रह्मचर्य (बुद्ध का मार्ग) जीने के लिए उपयुक्त अवसर नहीं है।"

(3) "फिर, तथागत (बुद्ध) संसार में प्रकट हुए हैं... और शांति, निर्वाण और ज्ञान की ओर ले जाने वाले धम्म का उपदेश सुगत (भगवान बुद्ध) द्वारा दिया गया है। परन्तु एक व्यक्ति व्यथित आत्माओं के लोक में पुनर्जन्म ले चुका है। यह तीसरा अनुपयुक्त क्षण है जो ब्रह्मचर्य (बुद्ध का मार्ग) जीने के लिए उपयुक्त अवसर नहीं है।"

(4) "फिर, संसार में एक तथागत (बुद्ध) प्रकट हुए हैं... और शांति, निर्वाण और ज्ञान की ओर ले जाने वाले धम्म का उपदेश सुगत (भगवान बुद्ध) द्वारा दिया गया है। परन्तु एक व्यक्ति का पुनर्जन्म दीर्घायु देवों (देवदूतों/देवताओं) के एक विशेष क्रम में हुआ है। 1689 यह चौथा अनुपयुक्त क्षण है जो इस ब्रह्मचर्य (बुद्ध के मार्ग) को जीने का उचित अवसर नहीं है।"

(5) "फिर, संसार में एक तथागत (बुद्ध) प्रकट हुए हैं... और शांति, निर्वाण और ज्ञान की ओर ले जाने वाले धम्म (मार्ग) का उपदेश सुगत (भगवान बुद्ध) द्वारा दिया गया है। परन्तु एक व्यक्ति का पुनर्जन्म सुदूर प्रांतों में असभ्य विदेशियों के बीच हुआ है, [एक ऐसी जगह] जहाँ भिक्षु, भिक्षुणियाँ, पुरुष गृहस्थ अनुयायी और स्त्री गृहस्थ अनुयायी नहीं जाते। यह पाँचवाँ अनुपयुक्त क्षण है जो ब्रह्मचर्य (बुद्ध का मार्ग) जीने के लिए उपयुक्त अवसर नहीं है।"

(6) "फिर, एक तथागत (बुद्ध) संसार में प्रकट हुए हैं... और शांति, निर्वाण और ज्ञान की ओर ले जाने वाले धम्म का उपदेश सुगत (भगवान बुद्ध) द्वारा दिया गया है। मध्य प्रांतों में एक व्यक्ति का पुनर्जन्म हुआ है, लेकिन उसका दृष्टिकोण गलत है और वह विकृत है: 'कुछ भी दिया नहीं जाता, कुछ भी बलिदान नहीं किया जाता, कुछ भी अर्पित नहीं किया जाता; अच्छे और बुरे कर्मों का कोई फल या परिणाम नहीं है; न यह संसार है, न दूसरा संसार; न माता है, न पिता; कोई भी प्राणी स्वतः पुनर्जन्म नहीं लेता; संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले कोई तपस्वी और ब्राह्मण नहीं हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इस संसार और दूसरे संसार का अनुभव किया हो और उन्हें दूसरों को ज्ञात कराया हो।' यह छठा अनुपयुक्त क्षण है जो इस ब्रह्मचर्य (बुद्ध का मार्ग) जीने का उचित अवसर नहीं है।

(7) "फिर से, एक तथागत (बुद्ध) संसार में प्रकट हुए हैं... और शांति, निर्वाण और ज्ञान की ओर ले जाने वाले धम्म का उपदेश सुगत (भगवान बुद्ध) द्वारा दिया गया है। मध्य प्रांतों में एक व्यक्ति का पुनर्जन्म हुआ है, परन्तु वह अज्ञानी, मूर्ख, मंदबुद्धि है, और अच्छी और बुरी दोनों ही बातों का अर्थ समझने में असमर्थ है। यह सातवाँ अनुपयुक्त क्षण है जो ब्रह्मचर्य (बुद्ध का मार्ग) जीने के लिए उपयुक्त अवसर नहीं है।"

(8) "फिर, संसार में तथागत (बुद्ध) का जन्म नहीं हुआ है... और शांति, निर्वाण और ज्ञान की ओर ले जाने वाला धम्म [227] सुगत (भगवान बुद्ध) द्वारा घोषित रूप में नहीं सिखाया जाता है। परन्तु मध्य प्रांतों में एक व्यक्ति का पुनर्जन्म हुआ है, और वह बुद्धिमान,

समझदार, चतुर है, जो अच्छी और बुरी दोनों बातों का अर्थ समझ सकता है। यह आठवां अनुपयुक्त क्षण है जो ब्रह्मचर्य (बुद्ध का मार्ग) जीने के लिए उपयुक्त अवसर नहीं है।"

"ये आठ अनुपयुक्त क्षण हैं जो ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीने के लिए उपयुक्त अवसर नहीं हैं।"

भिक्षुओं, ब्रह्मचर्य जीवन जीने का एक अनूठा और उपयुक्त अवसर है। वह क्या है? यहाँ, तथागत (बुद्ध) संसार में अवतरित हुए हैं, एक अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण, सौभाग्यशाली, संसार के ज्ञाता, मनुष्यों को वश में करने में अद्वितीय प्रशिक्षक, देवों और मनुष्यों के गुरु, एक प्रबुद्ध, एक भगवान (बुद्ध), और शांति, निर्वाण और ज्ञान की ओर ले जाने वाले धम्म (मार्ग) का उपदेश सुगत (भगवान बुद्ध) द्वारा दिया गया है। और मध्य प्रांतों में एक व्यक्ति का पुनर्जन्म हुआ है, जो बुद्धिमान, समझदार और चतुर है, जो अच्छी और बुरी दोनों बातों का अर्थ समझने में सक्षम है। भिक्षुओं, यही वह अनूठा और उपयुक्त अवसर है जो ब्रह्मचर्य जीवन जीने का उपयुक्त अवसर है (बुद्ध का मार्ग)।

जब धर्म का भली-भांति प्रचार हो चुका हो और मनुष्य का दर्जा प्राप्त हो गया हो , तब

जो लोग इस अवसर को नहीं पकड़ते, वे

सही समय को हाथ से फिसलने देते हैं।

कई बार ऐसे प्रतिकूल समयों की बात की जाती है,

जो मार्ग में बाधक होते हैं; क्योंकि तथागत (बुद्ध) संसार में

कभी-कभार ही प्रकट होते हैं।

यदि किसी ने उनसे प्रत्यक्ष रूप से मुलाकात की हो, तो

संसार में (भाग्य) शायद ही कभी प्राप्त होता है;

यदि किसी ने मानव अवस्था प्राप्त कर ली हो,

और अच्छे धम्म का शिक्षण हो रहा हो, तो

अपने भले की इच्छा रखने वाले व्यक्ति के लिए

यह प्रयास करने के लिए पर्याप्त प्रोत्साहन है। [228]

अच्छे धम्म को कैसे समझा जाए,

ताकि वह क्षण व्यर्थ न चला जाए?

क्योंकि जो लोग उस क्षण को चूक जाते हैं,

वे नरक में पुनर्जन्म लेकर शोक भोगते हैं।

जो यहाँ

अच्छे धम्म के निश्चित मार्ग को प्राप्त करने में असफल रहा है, 1690

उसे लंबे समय तक इसका पछतावा होगा,

जैसे कोई व्यापारी लाभ खो देता है।

अज्ञान से विवश होकर, जो व्यक्ति

अच्छे धम्म में विफल हो गया है, वह जन्म और मृत्यु के चक्र में

लंबे समय तक भटकता रहेगा ।

लेकिन जो लोग अच्छे धम्म के सुचारु प्रचार के समय मनुष्य अवस्था प्राप्त करते हैं ,

उन्होंने गुरु के वचन का पालन किया है,

या करेंगे, या अभी कर रहे हैं।

तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित मार्ग का अभ्यास करने वालों ने

संसार में सही समय पर

अतुलनीय ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्राप्त कर लिया है।

आपको बिना किसी रिसाव के, सतर्क रहते हुए, सूर्य के साक्षी , दृष्टिवान व्यक्ति द्वारा सिखाए गए

संयमों में सदा सचेत (ध्यान/सती) रहना चाहिए।

मारा के क्षेत्र में भटकने वाले व्यक्ति के साथ आने वाली सभी अंतर्निहित प्रवृत्तियों को काट देने के बाद , 1691

जो लोग दोषों के विनाश को प्राप्त करते हैं,

हालांकि दुनिया में, वे उससे परे चले गए हैं।

---

30 अनुरुद्ध (अनुरुद्धमहावितक्का सं. अनुरुद्ध-महा-वितर्क)

एक बार भगवान (बुद्ध) भेषकला वन के हिरण उद्यान में स्थित सुमसुमारागिरा में भगों के बीच निवास कर रहे थे। उसी समय पूज्य अनुराधा पूर्वी बाँस उद्यान में स्थित चेतियों के बीच निवास कर रहे थे। जब पूज्य अनुराधा एकांत में अकेले थे, तब उनके मन में एक विचार आया: 1692

(1) यह धम्म (मार्ग) कम इच्छाओं वाले व्यक्ति के लिए है, न कि प्रबल इच्छाओं वाले व्यक्ति के लिए। (2) यह धम्म [229] संतुष्ट व्यक्ति के लिए है, न कि असंतुष्ट व्यक्ति के लिए। (3) यह धम्म एकांतवास का सहारा लेने वाले व्यक्ति के लिए है, न कि संगति में आनंद लेने वाले व्यक्ति के लिए। (4) यह धम्म ऊर्जावान व्यक्ति के लिए है, न कि आलसी व्यक्ति के लिए। (5) यह धम्म सती ध्यान में स्थापित व्यक्ति के लिए है, न कि भ्रमित मन वाले व्यक्ति के लिए। (6) यह धम्म आत्म-मग्न व्यक्ति के लिए है, न कि असामहिता वाले व्यक्ति के लिए। (7) यह धम्म बुद्धिमान व्यक्ति के लिए है, न कि मूर्ख व्यक्ति के लिए।

भगवान (बुद्ध) ने अपने मन से पूज्य अनुराधा के मन में चल रहे विचारों को जान लिया। फिर, जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को अंदर खींच लेता है, वैसे ही भगवान (बुद्ध) सुमसुमारागिरा में भेषकला वन के हिरण उद्यान में भगों के बीच से लुप्त हो गए और पूर्वी बाँस उद्यान में चेतियों के बीच पूज्य अनुराधा के सामने पुनः प्रकट हुए। भगवान (बुद्ध) अपने लिए तैयार आसन पर बैठ गए। पूज्य अनुराधा ने उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए, और भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: "अच्छा, अच्छा, अनुराधा! यह अच्छा है कि आपने एक महान व्यक्ति के इन विचारों पर चिंतन किया है, अर्थात्: 'यह धर्म कम इच्छाओं वाले व्यक्ति के लिए है, प्रबल इच्छाओं वाले व्यक्ति के लिए नहीं... यह धर्म बुद्धिमान व्यक्ति के लिए है, मूर्ख व्यक्ति के लिए नहीं।'" अत: अनुरुद्ध, महान व्यक्ति के इस आठवें विचार पर भी चिंतन कीजिए: (8) 'यह धम्म उन लोगों के लिए है जो इंद्रिय-भगवानत्व से मुक्त रहने में आनंद लेते हैं, न कि उन लोगों के लिए जो इंद्रिय-भगवानत्व में आनंद लेते हैं।' 1693

"जब, अनुरुद्ध, तुम किसी महान व्यक्ति के इन आठ विचारों पर चिंतन करोगे, तब, जितना तुम चाहो, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, [230] तुम प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करोगे और निवास करोगे, जिसमें एकांत से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) शामिल हैं, जो विचार और परीक्षा के साथ होता है।

जब आप किसी महान व्यक्ति के इन आठ विचारों पर चिंतन करते हैं, तो आप अपनी इच्छा अनुसार, विचारों और मंथन के शांत होने के साथ, दूसरे ध्यान (सम्मोहन) में प्रवेश करेंगे और उसमें अच्छी तरह से लीन हो जाएंगे, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और यह समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त होता है, बिना किसी विचार और मंथन के।

जब आप किसी महान व्यक्ति के इन आठ विचारों पर चिंतन करते हैं, तो अपनी इच्छा अनुसार, पीति के लुप्त होते ही, आप समभाव से, सजग (ध्यानमग्न/सती) होकर, पूर्णतः बोध करते हुए, शरीर के साथ सुख का अनुभव करेंगे; आप उस तृतीय ध्यान (सतीत्व अवस्था) में प्रवेश करेंगे और निवास करेंगे जिसके बारे में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह समभाव से, सजग (ध्यानमग्न/सती) होकर, सुख में निवास करता है।'

जब आप किसी महान व्यक्ति के इन आठ विचारों पर चिंतन करते हैं, तो आप अपनी इच्छा अनुसार, सुख और दुख का त्याग करके, और पहले से ही सुख और उदासी के बीत जाने के साथ, चौथे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करेंगे और उसमें निवास करेंगे, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर में विलीन होना/उपेक्खा) द्वारा ध्यान (सती) की शुद्धि होती है।

"जब, अनुरुद्ध, तुम किसी महान व्यक्ति के इन आठ विचारों पर चिंतन करोगे और बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इच्छापूर्वक, इन चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त कर लोगे जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं, तब, जब तुम संतुष्ट भाव से निवास करोगे, तुम्हारा फटा हुआ वस्त्र तुम्हें ऐसा प्रतीत होगा जैसे किसी गृहस्थ या गृहस्थ पुत्र को विभिन्न रंगों के वस्त्रों से भरा संदूक प्रतीत होता है; और यह तुम्हारे आनंद, राहत और सहजता का स्रोत बनेगा तथा तुम्हें निर्वाण प्राप्त करने में सहायक होगा। [231]

जब आप किसी महान व्यक्ति के इन आठ विचारों पर मनन करते हैं और अपनी इच्छा अनुसार इन चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त करते हैं... तब, जब आप संतुष्ट भाव से रहते हैं, तो आपके भिक्षा के बचे हुए टुकड़े आपको वैसे ही प्रतीत होंगे जैसे किसी गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र को काले दानों से साफ किया हुआ और कई ग्रेवी और करी के साथ परोसा गया चावल का व्यंजन प्रतीत होता है; और वे आपके आनंद, राहत और आराम के लिए तथा निर्वाण प्राप्त करने के लिए सहायक होंगे।

जब आप किसी महान व्यक्ति के इन आठ विचारों पर मनन करते हैं और अपनी इच्छा अनुसार इन चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त करते हैं... तब, जब आप संतुष्ट होकर निवास करते हैं, तो वृक्ष की तलहटी में स्थित आपका निवास स्थान आपको एक ऐसे घर के समान प्रतीत होगा जिसकी छत नुकीली हो, अंदर और बाहर से प्लास्टर की हुई हो, हवा का झोंका न आता हो, कुंडी लगी हो और खिड़कियाँ बंद हों, जैसा कि किसी गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र को प्रतीत होता है; और यह आपके आनंद, राहत और आराम का स्रोत बनेगा और आपको निर्वाण प्राप्त करने में सहायक होगा।

"जब आप किसी महान व्यक्ति के उन आठ विचारों पर चिंतन करते हैं और इच्छा अनुसार लाभ प्राप्त करते हैं... ये चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ)... तब, जब आप संतुष्ट होकर निवास करते हैं, तो आपका पुआल से बना पलंग और आसन आपको किसी गृहस्थ या गृहस्वामी के पुत्र को कालीनों, कंबलों और आवरणों से ढके हुए, हिरण की खाल के उत्कृष्ट आवरण से ढके हुए, ऊपर चंदवा और दोनों सिरों पर लाल तकियों वाले पलंग की तरह प्रतीत होगा; और यह आपके आनंद, राहत और आराम के लिए तथा निर्वाण में प्रवेश करने के लिए सहायक होगा। [232]

जब आप किसी महान व्यक्ति के इन आठ विचारों पर मनन करते हैं और अपनी इच्छा अनुसार इन चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त करते हैं... तब, जब आप संतुष्ट भाव से रहते हैं, तो किण्वित गाय के मूत्र की औषधि आपको वैसी ही प्रतीत होगी जैसे घी, मक्खन, तेल, शहद और गुड़ की विभिन्न औषधियाँ किसी गृहस्थ या गृहस्थ के पुत्र को प्रतीत होती हैं; और यह आपके आनंद, राहत और सहजता के लिए तथा निर्वाण प्राप्त करने के लिए सहायक होगी।

"इसलिए, अनुराधा, तुम्हें भी अगली वर्षा ऋतु में पूर्वी बांस उद्यान में स्थित चेती जनजाति के बीच ही निवास करना चाहिए।"

"हाँ, भंते," आदरणीय अनुरुद्ध ने उत्तर दिया।

फिर, पूज्य अनुराधा को उपदेश देने के बाद, जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी सिकुड़ी हुई भुजा को फैलाता है या फैलाई हुई भुजा को अंदर खींचता है, वैसे ही भगवान (बुद्ध) पूज्य अनुराधा के सामने पूर्वी बाँस उद्यान में चेति समुदाय के बीच अंतर्धान हो गए और सुमसुमरगिरा में भेषकला वन के हिरण उद्यान में भग समुदाय के बीच पुनः प्रकट हुए। फिर वे अपने लिए तैयार आसन पर बैठ गए और भिक्षुओं को संबोधित करते हुए बोले, "मैं तुम्हें, भिक्षुओं, एक महान व्यक्ति के आठ विचार सिखाऊँगा। ध्यान से सुनो और उपस्थित रहो। मैं बोलूँगा।"

"जी हां, भंते," भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, महान व्यक्ति के आठ विचार क्या हैं? (1) यह धर्म कम इच्छाओं वाले व्यक्ति के लिए है, न कि प्रबल इच्छाओं वाले व्यक्ति के लिए। (2) यह धर्म संतुष्ट व्यक्ति के लिए है, न कि असंतुष्ट व्यक्ति के लिए। (3) यह धर्म एकांतवास करने वाले व्यक्ति के लिए है, न कि संगति में आनंद लेने वाले व्यक्ति के लिए। (4) यह धर्म ऊर्जावान व्यक्ति के लिए है, न कि आलसी व्यक्ति के लिए। (5) यह धर्म सती ध्यान स्थापित करने वाले व्यक्ति के लिए है, न कि भ्रमित मन वाले व्यक्ति के लिए। (6) यह धर्म समाधि में लीन व्यक्ति के लिए है, न कि असामहिता वाले व्यक्ति के लिए। (7) यह धर्म बुद्धिमान व्यक्ति के लिए है, न कि मूर्ख व्यक्ति के लिए। (8) यह धम्म (मार्ग) उसके लिए है जो इंद्रिय-प्रभ्रम से मुक्त रहने में आनंद लेता है, न कि उसके लिए जो इंद्रिय-प्रभ्रम में आनंद लेता है:

(1) जब यह कहा गया कि 'यह धम्म कम इच्छाओं वाले के लिए है, अधिक इच्छाओं वाले के लिए नहीं', तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? यहाँ, जब एक भिक्षु कम इच्छाओं वाला होता है, तो वह यह इच्छा नहीं करता: 'लोग मुझे कम इच्छाओं वाला जानें।' जब वह संतुष्ट होता है, तो वह यह इच्छा नहीं करता: 'लोग मुझे संतुष्ट जानें।' जब वह एकांतवास करता है, तो वह यह इच्छा नहीं करता: 'लोग मुझे एकांतवास करने वाला जानें।' जब वह ऊर्जावान होता है, तो वह यह इच्छा नहीं करता: 'लोग मुझे ऊर्जावान जानें।' जब वह सती (ध्यान) करता है, तो वह यह इच्छा नहीं करता: 'लोग मुझे सती (ध्यान) करते हुए जानें।' जब वह समाधि (समाधि) में होता है, तो वह यह इच्छा नहीं करता: 'लोग मुझे समाधि (समाधि) में जानें।' जब वह बुद्धिमान होता है, तो वह यह नहीं चाहता: 'लोग मुझे बुद्धिमान जानें।' जब वह छल-रहित (निपापंच) में प्रसन्न होता है, तो वह यह नहीं चाहता: 'लोग मुझे छल-रहित (निपापंच) में प्रसन्न होने वाला व्यक्ति जानें।' जब यह कहा गया कि 'यह धर्म कम इच्छाओं वाले व्यक्ति के लिए है, न कि प्रबल इच्छाओं वाले व्यक्ति के लिए,' तो इसी संदर्भ में यह कहा गया था।

(2) जब यह कहा गया कि 'यह धम्म (मार्ग) संतुष्ट व्यक्ति के लिए है, असंतुष्ट व्यक्ति के लिए नहीं,' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? यहाँ, एक भिक्षु किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास, और बीमारों के लिए औषधि और भोजन से संतुष्ट रहता है। जब यह कहा गया कि 'यह धम्म संतुष्ट व्यक्ति के लिए है, असंतुष्ट व्यक्ति के लिए नहीं,' तो इसी संदर्भ में यह कहा गया था।

(3) "जब यह कहा गया: 'यह धम्म एकांतवास करने वाले के लिए है, संगति में आनंद लेने वाले के लिए नहीं', तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? यहाँ, जब कोई भिक्षु एकांतवास करता है, तो भिक्षु, भिक्षुणियाँ (नन), पुरुष गृहस्थ अनुयायी, महिला गृहस्थ अनुयायी,

राजा, राजमंत्री, अन्य संप्रदायों के प्रमुख और अन्य संप्रदायों के शिष्य उसके पास आते हैं। प्रत्येक मामले में, एकांत की ओर झुकाव, ढलान और झुकाव वाले मन से, एकांत में रहकर, त्याग में आनंद लेते हुए, वह उन्हें एक ऐसा प्रवचन देता है जो हमेशा उन्हें विदा करने से संबंधित होता है। [234] जब यह कहा गया: 'यह धम्म एकांतवास करने वाले के लिए है, संगति में आनंद लेने वाले के लिए नहीं', तो यह इसी संदर्भ में कहा गया था।

(4) जब यह कहा गया कि 'यह धम्म ऊर्जावान व्यक्ति के लिए है, आलसी व्यक्ति के लिए नहीं', तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? यहाँ, एक भिक्षु ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न की है; वह बलवान है; परिश्रम में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं कर रहा है। जब यह कहा गया कि 'यह धम्म ऊर्जावान व्यक्ति के लिए है, आलसी व्यक्ति के लिए नहीं', तो इसी संदर्भ में यह कहा गया था।

(5) जब यह कहा गया कि 'यह धम्म (मार्ग) एकाग्रचित्त व्यक्ति के लिए है, न कि व्याकुल मन वाले व्यक्ति के लिए।' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? यहाँ, एक भिक्षु सचेत है, सर्वोच्च सती ध्यान और सतर्कता से परिपूर्ण है, वह जो बहुत पहले किए और कहे गए कार्यों को याद रखता है। जब यह कहा गया कि 'यह धम्म एकाग्रचित्त व्यक्ति के लिए है, न कि व्याकुल मन वाले व्यक्ति के लिए।' तो इसी संदर्भ में यह कहा गया था।

(6) जब यह कहा गया कि 'यह धर्म एकाग्रचित्त व्यक्ति के लिए है, असामहित्त व्यक्ति के लिए नहीं,' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु चौथी ध्यान अवस्था में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। जब यह कहा गया कि 'यह धर्म आत्म-मग्न (समाधि में लीन/समहित्त) व्यक्ति के लिए है, असामहित्त व्यक्ति के लिए नहीं,' तो इसी संदर्भ में यह कहा गया था।

(7) "जब यह कहा गया कि 'यह धम्म बुद्धिमान के लिए है, मूर्ख के लिए नहीं,' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? यहाँ, एक भिक्षु बुद्धिमान है; उसके पास वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी है और दुख के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। जब यह कहा गया कि 'यह धम्म बुद्धिमान के लिए है, मूर्ख के लिए नहीं,' तो इसी संदर्भ में यह कहा गया था। [235]

(8) जब यह कहा गया कि 'यह धम्म उस व्यक्ति के लिए है जो इंद्रिय-प्रवंच के धोखे से मुक्त रहने में आनंद लेता है, जो निपंच के धोखे से मुक्त रहने में आनंद लेता है, न कि उस व्यक्ति के लिए जो इंद्रिय-प्रवंच में आनंद लेता है, जो वृद्धि में आनंद लेता है,' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? यहाँ, एक भिक्षु का मन इंद्रिय-प्रवंच के निवारण की ओर अग्रसर होता है, शांत हो जाता है, स्थिर हो जाता है और उसमें मुक्त हो जाता है। जब यह कहा गया कि 'यह धम्म उस व्यक्ति के लिए है जो इंद्रिय-प्रवंच के धोखे से मुक्त रहने में आनंद लेता है, जो इंद्रिय-प्रवंच के धोखे से मुक्त रहने में आनंद लेता है, न कि उस व्यक्ति के लिए जो इंद्रिय-प्रवंच में आनंद लेता है, जो इंद्रिय-प्रवंच में आनंद लेता है,' तो यह इसी संदर्भ में कहा गया था। कि ऐसा कहा गया था।

फिर पूज्य अनुराधा ने अगली वर्षा ऋतु पूर्वी बांस उद्यान में चैति जनजाति के बीच ही व्यतीत की। एकांतवास में, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ, पूज्य अनुराधा ने अल्पकाल में ही इस जीवन में ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) के उस श्रेष्ठ लक्ष्य को प्रत्यक्ष ज्ञान से जान लिया, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन अपनाते हैं, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करने लगे। उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान से जाना: "पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी जन्म-मृत्यु का कोई आरोहण नहीं है।" और पूज्य अनुराधा अरहंतों में से एक बन गए।

उस अवसर पर, जब उन्होंने अरहंत पद प्राप्त कर लिया था, पूज्य अनुरुद्ध ने ये श्लोक कहे: 1695

"मेरे विचारों को समझकर,

विश्व के अद्वितीय शिक्षक ने मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) के माध्यम से एक कृत्रिम शरीर धारण करके

मेरे पास आगमन किया ।"

"उन्होंने मुझे

मेरे विचारों से कहीं अधिक सिखाया:

बुद्ध, इंद्रिय जगत के धोखे से मुक्त होकर,

मुझे भी धोखे से मुक्त होने का उपदेश देते हैं।"

"उनके धम्म का ज्ञान प्राप्त करने के बाद,

मुझे उनकी शिक्षा में आनंद आया।

मैंने तीन सच्चे ज्ञान प्राप्त कर लिए हैं;

बुद्ध की शिक्षा पूरी हो गई है।" [236]

चतुर्थ. दान अनुभाग (दानवग्गो संस. दान-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

31 दान (दान) (1) (दाना1)

भिक्षुओं, ये आठ वरदान हैं। 1696 ये आठ क्या हैं? (1) [प्राप्तकर्ता का] अपमान करके कोई दान देता है। 3697 (2) भयवश दान देता है। (3) यह सोचकर दान देता है: 'उसने मुझे दिया' (4) यह सोचकर दान देता है: 'वह मुझे देगा' (5) यह सोचकर दान देता है: 'जीवन अच्छा है' (6) यह सोचकर दान देता है: 'मुझे भोजन मिलता है; इन लोगों को भोजन नहीं मिलता। यह उचित नहीं है कि मेरे पास भोजन है और मैं उन लोगों को न दूं जिन्हें भोजन नहीं मिलता' (7) यह सोचकर दान देता है: 'क्योंकि मैंने यह दान दिया है, मुझे प्रतिष्ठा मिलेगी' (8) मन को सुशोभित करने और उसे सुसज्जित करने के उद्देश्य से दान देता है।' 1598

---

32 दान (दान) (2) 1699 (दाना2)

आस्था, नैतिक लज्जा और लाभकारी (कुशल) दान (दान)

अच्छे व्यक्ति द्वारा अपनाए जाने वाले गुण हैं;

क्योंकि वे कहते हैं कि यही वह दिव्य मार्ग है

जिसके द्वारा व्यक्ति देवों (देवदूतों/देवताओं) के लोक में जाता है।

---

33 आधार (दानवत्थु)

भिक्षुओं, दान देने के ये आठ आधार हैं। (1) इच्छा से दान देना। (2) घृणा से दान देना। (3) मोह से दान देना। (4) भय से दान देना। (5) यह सोचकर दान देना कि 'मेरे पिता और पूर्वजों ने पहले दान दिया था; मुझे इस प्राचीन पारिवारिक परंपरा को नहीं छोड़ना चाहिए।' (6) यह सोचकर दान देना कि 'यह दान देने के बाद, शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, मैं एक अच्छे स्थान पर, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लूंगा।' (7) यह सोचकर दान देना कि 'यह दान देते समय मेरा मन शांत हो जाता है, और उल्लास और आनंद उत्पन्न होता है।' (8) मन को सुशोभित करने और उसे सुसज्जित करने के उद्देश्य से दान देना। ये दान देने के आठ आधार हैं।

---

34 मैदान (खेत्ता सं. क्षेत्र)

"भिक्षुओं, आठ कारकों से युक्त खेत में बोया गया बीज प्रचुर मात्रा में फल नहीं देता, न ही उसके फल स्वादिष्ट होते हैं और न ही उससे कोई लाभ होता है। वे आठ कारक क्या हैं?"

"यहाँ, (1) खेत में टीले और खाइयाँ हैं; (2) इसमें पत्थर और बजरी है; (3) यह खारा है; (4) इसमें गहरी क्यारियाँ नहीं हैं; (5) इसमें पानी के प्रवेश के लिए कोई प्रवेश द्वार नहीं है; (6) इसमें अतिरिक्त पानी के निकलने के लिए कोई निकास द्वार नहीं है; (7) इसमें सिंचाई नहरें नहीं हैं; और (8) इसकी कोई सीमा नहीं है। इन आठ कारकों वाले खेत में बोया गया बीज भरपूर फल नहीं देता, उसके फल स्वादिष्ट नहीं होते और उससे कोई लाभ नहीं होता।"

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, आठ गुणों से युक्त तपस्वियों और ब्राह्मणों को दिया गया वरदान महान फलदायी और लाभकारी नहीं होता, और न ही वह अत्यंत तेजस्वी या सर्वव्यापी होता है। वे आठ गुण क्या हैं? यहाँ, तपस्वियों और ब्राह्मणों का दृष्टिकोण, इरादा, वाणी, कर्म, आजीविका, प्रयास, ध्यान और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) गलत हैं। इन आठ गुणों से युक्त तपस्वियों और ब्राह्मणों को दिया गया वरदान महान फलदायी और लाभकारी नहीं होता, और न ही वह अत्यंत तेजस्वी या सर्वव्यापी होता है।"

"भिक्षुओं, आठ गुणों से युक्त खेत में बोया गया बीज प्रचुर मात्रा में फल देता है, उसके फल स्वादिष्ट होते हैं और उससे लाभ होता है। वे आठ गुण क्या हैं?"

"यहाँ, (1) खेत में टीले और खाइयाँ नहीं हैं; (2) इसमें पत्थर और बजरी नहीं है; (3) यह खारा नहीं है; (4) इसमें गहरी [238] क्यारियाँ हैं; (5) इसमें पानी के प्रवेश के लिए इनलेट हैं; (6) इसमें अतिरिक्त पानी के निकलने के लिए आउटलेट हैं; (7) इसमें सिंचाई नहरें हैं; और (8) इसकी सीमाएँ हैं। इन आठ कारकों से युक्त खेत में बोया गया बीज भरपूर फल देता है, इसके [फल] स्वादिष्ट होते हैं, और इससे लाभ होता है।"

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, आठ गुणों से युक्त तपस्वियों और ब्राह्मणों को दिया गया वरदान अत्यंत फलदायी और लाभदायक होता है, और यह असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है। वे आठ गुण क्या हैं? यहाँ, तपस्वी और ब्राह्मण सही दृष्टि, सही अभिकल्पना, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही चेतना और सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से युक्त होते हैं। इन आठ गुणों से युक्त तपस्वियों और ब्राह्मणों को दिया गया वरदान अत्यंत फलदायी और लाभदायक होता है, और यह असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है।"

जब खेत उपजाऊ हो,

बोया गया बीज उत्तम हो,

और बारिश भी पर्याप्त मात्रा में हो, तो

अनाज की पैदावार उत्तम होती है। 1702

इसका स्वास्थ्य उत्कृष्ट है;

इसकी वृद्धि भी उत्कृष्ट है;

इसका पकना उत्कृष्ट है;

इसका फल वास्तव में उत्कृष्ट है।

इसी प्रकार, जब कोई व्यक्ति

सदाचारी आचरण में निपुण लोगों को उत्कृष्ट भोजन प्रदान करता है,

तो इससे अनेक प्रकार की उत्कृष्टता प्राप्त होती है,

क्योंकि किया गया कार्य स्वयं उत्कृष्ट होता है।

इसलिए यदि कोई उत्कृष्टता की कामना करता है

, तो उसे इस क्षेत्र में निपुण होना चाहिए;

उसे पन्ना (दिव्य ज्ञान) में निपुण लोगों का सहारा लेना चाहिए;

इस प्रकार स्वयं की संपदा (संपदा) फलती-फूलती है।

सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण,

मन की संपदा प्राप्त कर लेने वाला व्यक्ति,

निपुण कर्म करता है

और अच्छे कार्य को सिद्ध करता है।

संसार को उसके वास्तविक स्वरूप में जानकर,

व्यक्ति को दृष्टि में संपदा प्राप्त करनी चाहिए।

मन से सिद्ध व्यक्ति

मार्ग में संपदा पर निर्भर रहकर प्रगति करता है। [239]

सभी दोषों को मिटाकर,

निर्वाण प्राप्त करके,

व्यक्ति सभी दुखों से मुक्त हो जाता है:

यही संपदा है।

---

35 दान देने के कारण पुनर्जन्म (दानुपपत्ति)

भिक्षुओं, दान देने के कारण आठ प्रकार के पुनर्जन्म होते हैं। वे आठ प्रकार कौन से हैं?

(1) "यहाँ कोई व्यक्ति किसी तपस्वी या ब्राह्मण को दान देता है: भोजन और पेय; वस्त्र और वाहन; मालाएँ, सुगंध और लेप; पलंग, आवास और प्रकाश। वह जो कुछ भी देता है, बदले में कुछ अपेक्षा रखता है। वह धनी क्षत्रियों, धनी ब्राह्मणों या धनी गृहस्थों को पाँच इंद्रिय सुखों से सुसज्जित और संपन्न होकर आनंद लेते हुए देखता है। उसके मन में यह विचार आता है: 'हे शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, मैं धनी क्षत्रियों, धनी ब्राह्मणों या धनी गृहस्थों के साथ पुनर्जन्म लूँ!'" वह इस पर अपना मन लगाता है, इस पर दृढ़ संकल्पित होता है और इस मानसिक अवस्था को विकसित करता है। उसकी वह आकांक्षा, जो निम्नतर पर केंद्रित है, उच्चतर स्तर तक विकसित नहीं हुई है, उसे वहीं पुनर्जन्म की ओर ले जाती है। शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह धनी क्षत्रियों, धनी ब्राह्मणों या धनी गृहस्थों के साथ पुनर्जन्म लेता है - और यह गुणी व्यक्ति के लिए है, मैं कहता हूँ, अनैतिक व्यक्ति के लिए नहीं। गुणी व्यक्ति की हृदय की इच्छा उसकी पवित्रता के कारण पूरी होती है।

(2) कोई व्यक्ति किसी तपस्वी या ब्राह्मण को दान देता है: भोजन, पेय और प्रकाश। वह जो कुछ भी देता है, बदले में कुछ अपेक्षा रखता है। उसने सुना है: “चार महान राजाओं [240] द्वारा शासित देव (देवदूत/देवता) दीर्घायु, सुंदर और सुखमय हैं।” उसके मन में विचार आता है: “हे शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के समय, मैं चार महान राजाओं द्वारा शासित देव (देवदूत/देवता) के साथ पुनर्जन्म लूँ!” वह इस पर अपना मन लगाता है, इस पर दृढ़ संकल्पित होता है और इस मनःस्थिति को विकसित करता है। उसकी यह आकांक्षा, जो निम्न स्तर पर केंद्रित है और उच्च स्तर पर विकसित नहीं हुई है, उसे वहीं पुनर्जन्म की ओर ले जाती है।” मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, वह चार महान राजाओं के शासन में देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है - और यह गुणी व्यक्ति के लिए है, न कि अनैतिक व्यक्ति के लिए। गुणी व्यक्ति की हृदय की इच्छा उसकी पवित्रता के कारण पूरी होती है।

(3)— (7) "कोई व्यक्ति किसी तपस्वी या ब्राह्मण को उपहार देता है: भोजन और पेय... और प्रकाश। वह जो कुछ भी देता है, बदले में कुछ अपेक्षा रखता है: उसने सुना है: 'तवतिंसा देव... यम देव... तुषिता देव... सृष्टि में आनंदित होने वाले देव... दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले देव दीर्घायु, सुंदर और आनंद से परिपूर्ण हैं।' उसके मन में यह विचार आता है: 'हे शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, काश मैं दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले देवों के साथ पुनर्जन्म ले सकूँ!' वह इस पर अपना मन लगाता है, इस पर दृढ़ संकल्पित होता है और इस मानसिक अवस्था को विकसित करता है। उसकी वह आकांक्षा, जो निम्नतर चीज़ों पर केंद्रित है, उच्चतर स्तर पर विकसित नहीं होती, उसे वहीं पुनर्जन्म की ओर ले जाती है। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह उन देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है जो दूसरों द्वारा सृजित चीज़ों को नियंत्रित करते हैं - और यह गुणी व्यक्ति के लिए है, न कि अनैतिक व्यक्ति के लिए। गुणी व्यक्ति की हृदय की इच्छा उसकी पवित्रता के कारण ही पूरी होती है।

(8) "कोई व्यक्ति किसी तपस्वी या ब्राह्मण को दान देता है: भोजन और पेय... और प्रकाश। वह जो कुछ भी देता है, बदले में कुछ अपेक्षा रखता है। उसने सुना है: 'ब्रह्मा की संगति के देव (देवदूत/देवता) [241] दीर्घायु, सुंदर और सुखमय हैं।' उसके मन में विचार आता है: 'हे शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, मैं ब्रह्मा की संगति के देव (देवदूत/देवता) के साथ पुनर्जन्म लूँ!'" वह इस पर अपना मन लगाता है, इस पर दृढ़ संकल्पित होता है और इस मन की अवस्था को विकसित करता है। उसकी वह आकांक्षा, जो निम्न स्तर पर केंद्रित है, उच्च स्तर पर विकसित नहीं हुई है, उसे वहीं पुनर्जन्म की ओर ले जाती है। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह ब्रह्मा की संगति में देवताओं के साथ पुनर्जन्म लेता है - और यह गुणी व्यक्ति के लिए है, मैं कहता हूँ, अनैतिक व्यक्ति के लिए नहीं; कामवासना रहित व्यक्ति के लिए है, कामवासना युक्त व्यक्ति के लिए नहीं। 1705 गुणी व्यक्ति की हृदय की इच्छा उसकी पवित्रता के कारण सफल होती है।

"भिक्षुओं, दान देने के कारण ये आठ प्रकार के पुनर्जन्म होते हैं।"

---

36 गतिविधि (पुन्नकिरियावत्थु सं. पुण्य-क्रिया-वस्तु)

भिक्षुओं, पुण्य कर्म के ये तीन आधार हैं। वे तीन क्या हैं? पहला आधार दान देना है; तीसरा आधार सदाचारी आचरण है; और तीसरा आधार ध्यान का विकास है।

(1) हे भिक्षुओं, यहाँ किसी ने दान देने के पुण्य कर्मों का सीमित अभ्यास किया है; उसने सद्‌गुणों के आचरण का सीमित अभ्यास किया है; परन्तु उसने ध्यान साधना का अभ्यास नहीं किया है। शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वह मनुष्यों के बीच प्रतिकूल परिस्थितियों में पुनर्जन्म लेता है।

(2) किसी अन्य व्यक्ति ने दान देने के पुण्य कर्म के आधार का मध्यम स्तर तक अभ्यास किया है; उसने सदाचार के पुण्य कर्म के आधार का मध्यम स्तर तक अभ्यास किया है; परन्तु उसने ध्यान के विकास के पुण्य कर्म के आधार का अभ्यास नहीं किया है। शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वह अनुकूल परिस्थितियों में मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेता है।

(3) "किसी अन्य व्यक्ति ने दान देने के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; उसने सद्‌गुणपूर्ण आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है [242]; परन्तु उसने ध्यान विकास के पुण्य कर्म के आधार का अभ्यास नहीं किया है। शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह चार महान राजाओं द्वारा शासित देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। वहाँ चार महान राजा, जिन्होंने दान देने के पुण्य कर्म के आधार और सद्‌गुणपूर्ण आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है, दस मामलों में चार महान राजाओं द्वारा शासित देवताओं (देवदूतों/देवताओं) से श्रेष्ठ हैं; दिव्य जीवनकाल, दिव्य सौंदर्य, दिव्य सुख, दिव्य महिमा और दिव्य अधिकार में; और दिव्य रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों और स्पर्शनीय वस्तुओं में।"

(4) "किसी अन्य व्यक्ति ने दान देने के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; उसने सद्‌गुणपूर्ण आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; परन्तु उसने ध्यान विकास के पुण्य कर्म के आधार का अभ्यास नहीं किया है। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह तावतिंसा देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। वहाँ देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के स्वामी सक्का (इंद्र), जिन्होंने दान देने के पुण्य कर्म के आधार और सद्‌गुणपूर्ण आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया था, दस मामलों में तावतिंसा देवताओं (देवदूतों/देवताओं) से श्रेष्ठ हैं: दिव्य जीवनकाल में... और स्पर्शनीय वस्तुओं में।"

(5) "किसी अन्य व्यक्ति ने दान देने के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; उसने सद्‌गुणपूर्ण आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; परन्तु उसने ध्यान विकास के पुण्य कर्म के आधार का अभ्यास नहीं किया है। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, उसका यमदेवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म होता है। वहाँ युवा देव (देवदूत/देवता) सुयामा, जिसने दान देने के पुण्य कर्म के आधार और सद्‌गुणपूर्ण आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया था, दस मामलों में यमदेवों (देवदूतों/देवताओं) से श्रेष्ठ है: दिव्य जीवनकाल में... और स्पर्शनीय वस्तुओं में।"

(6) "किसी अन्य व्यक्ति ने दान देने के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; उसने सद्‌गुणपूर्ण आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; परन्तु उसने ध्यान विकास के पुण्य कर्म के आधार का अभ्यास नहीं किया है। शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह तुषिता देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। [243] वहाँ युवा देव (देवदूत/देवता) संतूसीता, जिसने दान देने के पुण्य कर्म के आधार और सद्‌गुणपूर्ण आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया था, दस मामलों में तुषिता देवों (देवदूतों/देवताओं) से श्रेष्ठ है: दिव्य जीवनकाल और स्पर्शनीय वस्तुओं में।

(7) "किसी अन्य व्यक्ति ने दान देने के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; उसने सद्‌गुणपूर्ण आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; परन्तु उसने ध्यान विकास के पुण्य कर्म के आधार का अभ्यास नहीं किया है। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह सृष्टि में आनंदित होने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। वहाँ युवा देव सुनीमिता, जिन्होंने दान देने के पुण्य कर्म के आधार और सद्‌गुणपूर्ण आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया था, सृष्टि में आनंदित होने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) को दस मामलों में श्रेष्ठता प्रदान करते हैं: दिव्य जीवनकाल और स्पर्शनीय वस्तुओं में।"

(8) "किसी अन्य व्यक्ति ने दान देने के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; उसने सद्‌गुणी आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया है; परन्तु उसने ध्यान विकास के पुण्य कर्म के आधार का अभ्यास नहीं किया है। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह उन देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) के साथ पुनर्जन्म लेता है जो अन्य सृष्टियों के स्वामी हैं। वहाँ युवा देवता वासवत्ती, जिन्होंने दान देने के पुण्य कर्म के आधार और सद्‌गुणी आचरण के पुण्य कर्म के आधार का अत्यधिक अभ्यास किया था, अन्य सृष्टियों के स्वामी देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) से दस प्रकार से श्रेष्ठ हैं: दिव्य दीर्घायु, दिव्य सौंदर्य, दिव्य सुख, दिव्य महिमा और दिव्य अधिकार में; और दिव्य रूपों, ध्वनियों, गंधों, स्वादों और स्पर्शनीय वस्तुओं में।"

"भिक्षुओं, ये पुण्य कर्म के तीन आधार हैं।"

---

37 अच्छे व्यक्ति के दान (सप्पूरिसादना संस्कृत: सत-पुरुष-दान)

भिक्षुओं, अच्छे व्यक्ति के ये आठ गुण हैं। [244] (1) वह शुद्ध वस्तु दान करता है; (2) वह उत्कृष्ट वस्तु दान करता है; (3) वह समय पर दान करता है; (4) वह उचित वस्तु दान करता है; (5) वह जांच-परख के बाद दान करता है; (6) वह बार-बार दान करता है; (7) दान करते समय वह विश्वास में स्थिर रहता है; और (8) दान करने के बाद वह प्रसन्न होता है। ये अच्छे व्यक्ति के आठ गुण हैं।

वह उचित समय पर शुद्ध और उत्तम, अनुमेय पेय और भोजन प्रदान करता है ; वह अक्सर पुण्य के उपजाऊ क्षेत्रों में, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीने वालों को

दान देता है ।

उन्होंने कई भौतिक वस्तुएँ दान कर दीं , फिर भी उन्हें कोई पछतावा नहीं है ।

गहन अंतर्दृष्टि (विपश्यना) वाले लोग

इस प्रकार दिए गए दान की सराहना करते हैं।

इस प्रकार उदार मन से दान-पुण्य करने वाला ,

बुद्धिमान और ज्ञानी, आस्था से परिपूर्ण व्यक्ति

एक सुखद, दोषरहित संसार में पुनर्जन्म लेता है।

38 अच्छा व्यक्ति 1707 (सप्पुरिशा संसं. सतपुरुष)

भिक्षुओं, जब किसी परिवार में कोई अच्छा व्यक्ति जन्म लेता है, तो यह अनेकों लोगों के कल्याण, सुख और प्रसन्नता के लिए होता है। यह (1) उसके माता-पिता, (2) उसकी पत्नी और बच्चों, (3) उसके दासों, श्रमिकों और सेवकों, (4) उसके मित्रों और साथियों, (5) उसके दिवंगत पूर्वजों, (6) राजा, (7) देवताओं (देवदूतों), और (8) तपस्वियों और ब्राह्मणों के कल्याण, सुख और प्रसन्नता के लिए होता है। जिस प्रकार एक विशाल वर्षा बादल, सभी फसलों का पोषण करते हुए, अनेकों लोगों के कल्याण, सुख और प्रसन्नता के लिए प्रकट होता है, उसी प्रकार, जब किसी परिवार में कोई अच्छा व्यक्ति जन्म लेता है, तो यह अनेकों लोगों के कल्याण, सुख और प्रसन्नता के लिए होता है। यह उसके माता-पिता... [245]... तपस्वियों और ब्राह्मणों के कल्याण, सुख और प्रसन्नता के लिए होता है।

घर में रहने वाला ज्ञानी व्यक्ति

वास्तव में अनेकों के कल्याण के लिए जीता है।

दिन-रात

अपने माता-पिता और पूर्वजों के प्रति सजग रहकर

, वह धम्म के अनुसार उनका आदर करता है और

अतीत में उनके द्वारा किए गए कार्यों को याद करता है।

दृढ़ आस्था वाला धर्मात्मा व्यक्ति,

उनके अच्छे गुणों को जानकर, 1710 ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीने वाले

तपस्वियों, संन्यासियों और भिक्षुओं का आदर करता है । 1711

राजा और देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के लिए लाभकारी,

अपने रिश्तेदारों और दोस्तों के लिए लाभकारी,

वास्तव में, सभी के लिए लाभकारी,

अच्छे धर्म में सुस्थापित,

उन्होंने कंजूसी के कलंक को दूर कर दिया है

और एक शुभ संसार की ओर अग्रसर हैं।

---

39 धाराएँ (अभिसंदा)

भिक्षुओं, पुण्य की ये आठ धाराएँ हैं, लाभकारी (कुशल) धाराएँ हैं, सुख के पोषक तत्व हैं - स्वर्गीय, सुख में परिपक्व होने वाले, स्वर्ग की ओर ले जाने वाले - जो वांछित, अभिलाषायुक्त और सुखद, व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाते हैं। 1712 वे आठ धाराएँ कौन सी हैं?

(1) "यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य बुद्ध की शरण में गया है। यह पुण्य की पहली धारा है, लाभकारी (कुशल) की धारा है, सुख का पोषण है - स्वर्गीय, सुख में परिपक्व, स्वर्ग की ओर ले जाने वाला - जो वांछित, अभिलाषा और सुखद, व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाता है।"

(2) "फिर, एक श्रेष्ठ शिष्य ने धम्म की शरण ली है। यह पुण्य का दूसरा मार्ग है... जो वांछित, अभिलाषायुक्त और सुखद, व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाता है।"

(3) "फिर, एक महान शिष्य संघ की शरण में गया है। यह पुण्य का तीसरा मार्ग है... जो वांछित, अभिलाषायुक्त और सुखद, व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाता है। [246]

भिक्षुओं, ये पाँच वरदान हैं, महान वरदान, आदिम वरदान, लंबे समय से चले आ रहे, पारंपरिक, प्राचीन, शुद्ध और कभी भी अदूषित नहीं हुए, जो न तो अदूषित हो रहे हैं और न ही भविष्य में अदूषित होंगे, और जिन्हें बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा अस्वीकार नहीं किया गया है। वे पाँच वरदान कौन से हैं?

(4) "यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य, जीवन-विनाश का त्याग करके, जीवन-विनाश से दूर रहता है। जीवन-विनाश से दूर रहकर, वह असंख्य प्राणियों को भय, द्वेष और पीड़ा से मुक्ति दिलाता है। वह स्वयं भी भय, द्वेष और पीड़ा से असीम रूप से मुक्त होता है। यह प्रथम वरदान है, एक महान वरदान है, आदिम, प्राचीन, पारंपरिक, प्राचीन, शुद्ध और कभी भी मिलावट रहित नहीं, जो न तो मिलावट योग्य है और न ही कभी मिलावट योग्य होगा, जिसे बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों ने अस्वीकार नहीं किया है। यह पुण्य का चौथा स्रोत है... जो वांछित, अभिलाषायुक्त और सुखद, अपने कल्याण और सुख की ओर ले जाता है।"

(5) -(8) "फिर, एक श्रेष्ठ शिष्य, जो अनचाही चीज़ों को लेने का त्याग कर देता है, अनचाही चीज़ों को लेने से परहेज़ करता है... यौन दुराचार से परहेज़ करता है... झूठी वाणी से परहेज़ करता है... मदिरा, शराब और मादक पदार्थों से परहेज़ करता है, जो आलस्य का आधार हैं। मदिरा, शराब और मादक पदार्थों से परहेज़ करके, जो आलस्य का आधार हैं, श्रेष्ठ शिष्य असंख्य प्राणियों को भय, शत्रुता

और कष्ट से मुक्ति दिलाता है। वह स्वयं भी भय, शत्रुता और कष्ट से असंख्य मुक्ति का आनंद लेता है। यह पाँचवाँ वरदान है, एक महान वरदान, आदिम, प्राचीन, पारंपरिक, प्राचीन, शुद्ध और कभी न मिलावट वाला, जो मिलावट रहित है और न कभी मिलावट रहित होगा, जिसे बुद्धिमान तपस्वियों और ब्राह्मणों ने अस्वीकार नहीं किया है। यह पुण्य की आठवीं धारा है [247]... जो ले जाती है जो वांछित, वांछनीय और सुखद हो, जो किसी के कल्याण और सुख के लिए हो।

"ये भिक्षुओं, पुण्य की आठ धाराएँ हैं, लाभकारी (कुशल) धाराएँ हैं, सुख के पोषक तत्व हैं - स्वर्गीय, सुख में परिपक्व होने वाली, स्वर्ग के अनुकूल जो वांछित, अभिलाषायुक्त और सुखद, व्यक्ति के कल्याण और सुख की ओर ले जाती हैं।"

---

40. बुरे चरित्र का परिणाम (दुच्चरितविपाक)

(1) "भिक्षुओं (मठवासियों), जीवन का विनाश, बार-बार किया गया, विकसित किया गया और विकसित किया गया, नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र की ओर ले जाता है; क्योंकि मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेने वाले के लिए जीवन का विनाश कम से कम अल्प जीवन काल की ओर ले जाता है।

(2) "जो कुछ दिया नहीं गया है, उसे बार-बार प्राप्त करना, विकसित करना और खेती करना नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र की ओर ले जाता है; क्योंकि मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेने वाला व्यक्ति जो कुछ दिया नहीं गया है, उसे प्राप्त करने से कम से कम धन की हानि होती है।"

(3) बार-बार किया जाने वाला, विकसित किया जाने वाला और पोषित किया जाने वाला यौन दुराचार नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र की ओर ले जाता है; क्योंकि मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेने वाले व्यक्ति के लिए यौन दुराचार कम से कम शत्रुता और प्रतिद्वंद्विता को बढ़ावा देता है।

(4) बार-बार दोहराया जाने वाला, विकसित किया जाने वाला और पोषित किया जाने वाला झूठा भाषण नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र की ओर ले जाता है; क्योंकि मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेने वाला व्यक्ति कम से कम झूठे आरोपों को बढ़ावा देता है।

(5) "बार-बार की जाने वाली, विकसित की जाने वाली और पोषित की जाने वाली विभाजनकारी वाणी नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र की ओर ले जाती है; क्योंकि मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेने वाले व्यक्ति के लिए विभाजनकारी वाणी कम से कम उसके मित्रों से अलग होने की ओर ले जाती है। [248]

(6) "बार-बार की जाने वाली कठोर वाणी, जिसे विकसित और पोषित किया जाता है, नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र की ओर ले जाती है; क्योंकि मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेने वाले व्यक्ति के लिए कठोर वाणी कम से कम अप्रिय ध्वनियों को जन्म देती है।"

(7) "लगातार की जाने वाली व्यर्थ की बातें, जिन्हें बार-बार दोहराया, विकसित और पोषित किया जाता है, नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र की ओर ले जाती हैं; क्योंकि मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेने वाले व्यक्ति की व्यर्थ की बातें कम से कम दूसरों को उसके शब्दों पर अविश्वास करने के लिए प्रेरित करती हैं।"

(8) बार-बार शराब और मदिरा का सेवन करना, उसे बढ़ावा देना और उसकी आदत डालना, नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र की ओर ले जाता है; क्योंकि मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेने वाला व्यक्ति कम से कम शराब और मदिरा का सेवन करके पागलपन की ओर अग्रसर होता है।

वी. उपोसाथा

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

41 संक्षेप में उपवास

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं (मठवासियों), आठों गुणों में पूर्ण रूप से पालन किए जाने पर उपोसथ अत्यंत फलदायी और लाभकारी होता है, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है। और उपोसथ आठों गुणों में पूर्ण रूप से कैसे पालन किया जाता है, जिससे वह अत्यंत फलदायी और लाभकारी, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है? 1 ™ [249]

(1) "हे भिक्षुओं, यहाँ एक श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'अरहंत जीवन भर जीवन-हत्या का त्याग करते हैं; दंड (हिंसा) और शस्त्र त्यागकर, सजग और दयालु होकर वे समस्त प्राणियों के प्रति करुणामयी निवास करते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी जीवन-हत्या का त्याग करूँगा; दंड और शस्त्र त्यागकर, सजग और दयालु होकर मैं भी समस्त प्राणियों के प्रति करुणामयी निवास करूँगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथ का पालन करूँगा।' यह इसका पहला गुण है।"

(2) “जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे अनचाही चीज़ों को लेने से परहेज़ करते हैं; वे केवल दी गई चीज़ों को ही ग्रहण करते हैं, केवल दी गई चीज़ों की ही अपेक्षा रखते हैं और चोरी के विचार किए बिना ईमानदारी से रहते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी अनचाही चीज़ों को लेने से परहेज़ करूँगा; मैं केवल दी गई चीज़ों को ही ग्रहण करूँगा, केवल दी गई चीज़ों की ही अपेक्षा रखूँगा और चोरी के विचार किए बिना ईमानदारी से रहूँगा। मैं इस मामले में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथ का पालन करूँगा। यह इसका दूसरा गुण है।”

(3) "अरहंत जब तक जीवित रहते हैं, वे यौन क्रिया का त्याग करते हैं और ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, एकांत में रहते हैं और यौन संबंध से परहेज करते हैं, जो आम आदमी का आचरण है। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी यौन क्रिया का त्याग करूँगा और ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा, एकांत में रहूँगा और यौन संबंध से परहेज करूँगा, जो आम आदमी का आचरण है। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा। यह इसका तीसरा गुण है।"

(4) “जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे झूठे वचनों का त्याग करते हैं और उनसे दूर रहते हैं; वे सत्य बोलते हैं, सत्य का पालन करते हैं; वे विश्वसनीय और भरोसेमंद होते हैं, संसार को धोखा नहीं देते। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी झूठे वचनों का त्याग करूँगा और उनसे दूर रहूँगा; [250] मैं सत्य बोलूँगा, सत्य का पालन करूँगा; मैं विश्वसनीय और भरोसेमंद रहूँगा, संसार को धोखा नहीं दूँगा। मैं इस मामले में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथ का पालन करूँगा।” यह इसका चौथा गुण है।

(5) "अरहंत अपने जीवन भर आलस्य के आधार माने जाने वाले मदिरा, शराब और मादक पदार्थों का त्याग करते हैं और उनसे दूर रहते हैं। आज रात और दिन भर मैं भी आलस्य के आधार माने जाने वाले मदिरा, शराब और मादक पदार्थों का त्याग करूँगा और उनसे दूर रहूँगा। मैं इस मामले में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।" यह इसका पाँचवाँ गुण है।

(6) "अरहंत जीवन भर दिन में एक बार भोजन करते हैं, रात में और उचित समय के बाहर भोजन करने से परहेज़ करते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी दिन में एक बार भोजन करूँगा, रात में और उचित समय के बाहर भोजन करने से परहेज़ करूँगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।" यह इसका छठा गुण है।

(7) "अरहंत जब तक जीवित रहते हैं, वे नृत्य, गायन, वाद्य संगीत और अनुचित प्रदर्शनों से परहेज करते हैं, और माला धारण करके तथा इत्र और मलहम लगाकर स्वयं को अलंकृत करने से भी परहेज करते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी नृत्य, गायन, वाद्य संगीत और अनुचित प्रदर्शनों से परहेज करूँगा, और माला धारण करके तथा इत्र और मलहम लगाकर स्वयं को अलंकृत करने से भी परहेज करूँगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।" यह इसका सातवाँ गुण है।

(8) "जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे ऊँचे और आलीशान पलंगों का उपयोग त्याग देते हैं और उनसे परहेज़ करते हैं; वे एक छोटे पलंग या पुआल की चटाई पर लेटते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी ऊँचे और आलीशान पलंगों का उपयोग त्याग दूँगा और उनसे परहेज़ करूँगा; मैं एक छोटे पलंग या पुआल की चटाई पर लेटूँगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा [251] और उपोसथा का पालन करूँगा।" यह इसका आठवाँ गुण है।

"भिक्षुओं, इसी प्रकार उपोसथ का आठों तत्वों में पूर्ण रूप से पालन किया जाता है, जिससे यह महान फलदायी और लाभदायक, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है।"

---

42 उपवास विस्तार से (वित्थतुपोसथ सं. विस्तार उपोसथ)

"भिक्षुओं, आठों गुणों में पूर्ण रूप से पालन किए जाने पर उपोसथ अत्यंत फलदायी और लाभदायक होता है, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है। और उपोसथ का आठों गुणों में पूर्ण रूप से पालन कैसे किया जाता है, जिससे वह अत्यंत फलदायी और लाभदायक, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है?"

(1) "हे भिक्षुओं, यहाँ एक श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे जीवन-हत्या का त्याग करते हैं और उससे दूर रहते हैं; दंड (हिंसा) और शस्त्र त्यागकर, वे सजग और दयालु होकर सभी प्राणियों के प्रति करुणामयी निवास करते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी जीवन-हत्या का त्याग करूँगा और उससे दूर रहूँगा; दंड (हिंसा) और शस्त्र त्यागकर, सजग और दयालु होकर, मैं भी सभी प्राणियों के प्रति करुणामयी निवास करूँगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथ का पालन करूँगा।' यह इसका पहला गुण है..."

[जैसे कि 8:41 से नीचे तक:] ...

(8) "अरहंत अपने जीवन भर ऊँचे और आलीशान पलंगों का उपयोग नहीं करते; वे एक साधारण पलंग या चटाई पर लेटते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी ऊँचे और आलीशान पलंगों का उपयोग नहीं करूँगा; मैं एक साधारण पलंग या चटाई पर लेटूँगा। मैं इस मामले में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।" यह इसका आठवाँ गुण है।

"इस प्रकार, भिक्षुओं, उपोसथ को आठों कारकों में पूर्ण रूप से देखा जाता है, जिससे यह महान फल और लाभ का होता है, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है। [252]

"यह किस हद तक महान फलदायी और लाभदायक है? यह किस हद तक असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी है? मान लीजिए कि कोई इन सोलह महान देशों पर संभगवानता और राजत्व का प्रयोग करे, जो सात अनमोल तत्वों से भरपूर हैं, अर्थात् अंगन, मगध, काशी, कोसल, वज्जी, मल्ल, चेति, वंग, कुरु, पाचल, मच्छ, सूरसेन, अस्सक, अवंती, गांधार और कंबोजन: तो यह उन आठ तत्वों में पूर्ण उपोसथ अनुष्ठान के सोलहवें भाग के भी बराबर नहीं होगा। इसका कारण क्या है? क्योंकि मानवीय राजत्व दिव्य सुख की तुलना में तुच्छ है।"

चार महान राजाओं द्वारा शासित देवताओं के लिए एक रात और एक दिन पचास मानव वर्षों के बराबर होता है; ऐसे तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और ऐसे बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। उन देवताओं का जीवनकाल पाँच सौ दिव्य वर्ष होता है। हे भिक्षुओं, जो पुरुष या स्त्री इन आठों गुणों से परिपूर्ण उपोसथा का पालन करते हैं, उनके लिए मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ चार महान राजाओं द्वारा शासित देवताओं के साथ पुनर्जन्म लेना संभव है। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि दिव्य सुख की तुलना में मानव राजत्व तुच्छ है।

तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के लिए एक रात और एक दिन सौ मानव वर्षों के बराबर होता है; ऐसे तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और ऐसे बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। उन देवों (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल एक हजार दिव्य वर्ष होता है। [253] हे भिक्षुओं, जो पुरुष या स्त्री इन आठों कारकों में पूर्ण उपोसथा का पालन करते हैं, उनके लिए मृत्यु के बाद तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेना संभव है। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि दिव्य सुख की तुलना में मानव राजत्व तुच्छ है।

यम देवों के लिए एक रात और एक दिन दो सौ मानव वर्षों के बराबर होता है; ऐसे तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और ऐसे बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। उन देवों का जीवनकाल दो हजार दिव्य वर्ष होता है। हे भिक्षुओं, जो पुरुष या स्त्री इन आठों गुणों से परिपूर्ण उपोसथा का पालन करते हैं, उनके लिए मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ यम देवों के साथ पुनर्जन्म संभव है। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि मनुष्य का राजत्व दिव्य सुख के तुल्य तुच्छ है।

तुषिता देवों के लिए एक रात और एक दिन चार सौ मानव वर्षों के बराबर होता है; ऐसे तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और ऐसे बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। उन देवों का जीवनकाल चार हजार दिव्य वर्ष होता है। हे भिक्षुओं, जो पुरुष या स्त्री इन आठों गुणों में पूर्ण उपोसथा का पालन करते हैं, उनके लिए मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ तुषिता देवों के साथ पुनर्जन्म संभव है। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि मनुष्य का राजत्व दिव्य सुख के तुल्य तुच्छ है।

सृष्टि में आनंद लेने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) के लिए एक रात और एक दिन आठ सौ मानव वर्षों के बराबर होता है; ऐसे तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और ऐसे बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। उन देवों (देवदूतों/देवताओं) का जीवनकाल आठ हजार दिव्य वर्ष होता है। हे भिक्षुओं, जो स्त्री या पुरुष [254] इन आठों कारकों में पूर्ण उपोसथ का पालन करते हैं, उनके लिए मृत्यु के बाद, सृष्टि में आनंद लेने वाले देवों (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेना संभव है। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि दिव्य सुख की तुलना में मानव राजत्व तुच्छ है।

"दूसरों द्वारा सृजित वस्तुओं को नियंत्रित करने वाले देवताओं के लिए एक रात और एक दिन सोलह सौ मानव वर्षों के बराबर होता है; ऐसे तीस दिन मिलकर एक महीना बनाते हैं, और ऐसे बारह महीने मिलकर एक वर्ष बनाते हैं। उन देवताओं का जीवनकाल सोलह हजार दिव्य वर्ष होता है। हे भिक्षुओं, जो पुरुष या स्त्री इन आठों तत्वों में पूर्ण उपोसथा का पालन करते हैं, उनके लिए मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, दूसरों द्वारा सृजित वस्तुओं को नियंत्रित करने वाले देवताओं के साथ पुनर्जन्म लेना संभव है। इसी संदर्भ में मैंने कहा था कि मनुष्य का राजत्व दिव्य सुख के तुल्य तुच्छ है।"

किसी को जीवित प्राणियों को नहीं मारना चाहिए या जो नहीं दिया गया है उसे नहीं लेना चाहिए; [1714]

किसी को झूठ नहीं बोलना चाहिए या नशीले पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए;

किसी को यौन गतिविधि से, व्यभिचार से बचना चाहिए;

किसी को रात में या अनुचित समय पर भोजन नहीं करना चाहिए।

किसी को भी माला नहीं पहननी चाहिए और न ही इत्र लगाना चाहिए;

उसे जमीन पर बिछी हुई चटाई या नीची पलंग पर सोना चाहिए; कहते हैं कि यही बुद्ध द्वारा घोषित

अष्टम उपोसथा है , जिन्होंने दुखों का अंत प्राप्त किया था।

सूर्य और चंद्रमा जहाँ तक घूमते हैं,

प्रकाश बिखेरते हैं, देखने में इतने सुंदर,

अंधकार को दूर करने वाले, आकाश में विचरण करते हुए,

वे आकाश में चमकते हैं, दिशाओं को रोशन करते हैं। [255]

इस ब्रह्मांड में जो भी धन-संपत्ति विद्यमान है -

मोती, रत्न, उत्तम बेरिल,

सींग का सोना, पर्वतीय सोना

और हतक नामक प्राकृतिक सोना - वे आठों गुणों से परिपूर्ण उपोसथा के

सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं हैं , ठीक वैसे ही जैसे तारों के सभी समूह चंद्रमा की चमक के बराबर नहीं होते। इसलिए एक गुणी स्त्री या पुरुष,

आठों कारकों में उपोसथा का पूर्ण अवलोकन करने

और पुण्य को सुख में परिणत करने के बाद,

निष्कलंक व्यक्ति स्वर्गिक अवस्था में प्रवेश करता है।

---

43 विशाखा (1)

एक बार भगवान (बुद्ध) पूर्वी उद्यान में स्थित मिगारमाता के महल में सावत्थी में निवास कर रहे थे। तब विशाखा मिगारमाता भगवान (बुद्ध) के पास आईं, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गईं। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा, "विशाखा, आठों गुणों से परिपूर्ण उपोसथ का पालन करने से महान फल और लाभ मिलता है, वह असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी है। और आठों गुणों से परिपूर्ण उपोसथ का पालन कैसे किया जाता है, जिससे वह महान फल और लाभ देता है, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी है?"

[सभी 8:42 के अनुसार, आयतों सहित।] [256-258]

---

44 वसेत्था

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। तभी उनके एक अनुयायी वसेत्था भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"आठों के पूर्ण स्वरूप में पालन किया जाने वाला उपोसथा, अत्यंत फलदायी और लाभदायक होता है, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है। और आठों तत्वों के पूर्ण स्वरूप में पालन किया जाने वाला उपोसथा किस प्रकार है, जिससे वह अत्यंत फलदायी और लाभदायक, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है?"

[सभी आयतें 8:42 के अनुसार हैं।]

जब यह कहा गया, तो पुरुष गृहस्थ अनुयायी वसेत्था ने भगवान (बुद्ध) से कहा: [259] "भंते, यदि मेरे प्रिय संबंधी और परिवार के सदस्य आठों कारकों में पूर्ण उपोसथ का पालन करें, तो इससे उन्हें दीर्घकालिक कल्याण और सुख प्राप्त होगा। यदि सभी क्षत्रिय आठों कारकों में पूर्ण उपोसथ का पालन करें, तो इससे उन्हें दीर्घकालिक कल्याण और सुख प्राप्त होगा। यदि सभी ब्राह्मण... वेस... शुद्ध आठों कारकों में पूर्ण उपोसथ का पालन करें, तो इससे उन्हें दीर्घकालिक कल्याण और सुख प्राप्त होगा।"

"ऐसा ही है, वसेत्था, ऐसा ही है! यदि सभी क्षत्रिय आठों गुणों से परिपूर्ण उपोसथ का पालन करें, तो इससे उन्हें लंबे समय तक कल्याण और सुख प्राप्त होगा। यदि सभी ब्राह्मण... वेस्स... शुद्ध आठों गुणों से परिपूर्ण उपोसथ का पालन करें, तो इससे उन्हें लंबे समय तक

कल्याण और सुख प्राप्त होगा। यदि यह संसार अपने देवताओं, मार और ब्रह्मा सहित, यह जनसंख्या अपने तपस्वियों और ब्राह्मणों सहित, अपने देवताओं और मनुष्यों सहित, आठों गुणों से परिपूर्ण उपोसथ का पालन करें, तो इससे संसार को लंबे समय तक कल्याण और सुख प्राप्त होगा। यदि ये विशाल साल के वृक्ष आठों गुणों से परिपूर्ण उपोसथ का पालन करें, तो इन विशाल साल के वृक्षों को लंबे समय तक कल्याण और सुख प्राप्त होगा, [यदि वे चुन सकें]। 1715 तो फिर मनुष्य के लिए कितना अधिक होगा!"

---

45 बोज्जा

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब उनकी एक अनुयायी, बोज्झा, भगवान (बुद्ध) के पास आईं, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गईं। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: "बोज्झा, आठों गुणों में परिपूर्ण, उपोसथ महान फलदायी और लाभकारी है, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी है। ..." [260]

[सभी 8:42 के अनुसार, आयतों सहित।] [261-62]

---

46 अनुरुद्ध

एक बार भगवान (बुद्ध) कोसंबी में घोषिता उद्यान में निवास कर रहे थे। उस समय पूज्य अनुराधा दिन बिताने के लिए एकांत में गए हुए थे, तभी कई सुंदर शरीर वाले देवता उनके पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हो गए और उनसे कहा: 1716

"भन्ते अनुरुद्ध, हम [263] सुखद शरीर वाले देवता (देवदूत) तीन चीजों पर भगवानत्व और नियंत्रण रखते हैं। हम जो चाहें वह रंग तुरंत प्राप्त कर लेते हैं। हम जो चाहें वह सुख तुरंत प्राप्त कर लेते हैं। और हम जो चाहें वह आवाज तुरंत प्राप्त कर लेते हैं। हम सुखद शरीर वाले देवता (देवदूत) इन तीनों चीजों पर भगवानत्व और नियंत्रण रखते हैं।"

तब पूज्य अनुराधा ने सोचा, "ये सभी देवता नीले रंग के हो जाएं, नीले रंग के वस्त्र और नीले आभूषण धारण करें।" पूज्य अनुराधा के इस विचार को जानकर वे सभी देवता नीले रंग के हो गए, नीले रंग के वस्त्र और नीले आभूषण धारण कर लिए। तब पूज्य अनुराधा ने सोचा, "ये सभी देवता पीले... लाल... सफेद रंग के हो जाएं, सफेद रंग के वस्त्र और सफेद आभूषण धारण कर लें।" पूज्य अनुराधा के इस विचार को जानकर वे सभी देवता सफेद रंग के हो गए, सफेद रंग के वस्त्र और सफेद आभूषण धारण कर लिए।

फिर उन देवताओं में से एक ने गाया, एक ने नृत्य किया और एक ने उंगलियां चटकाईं। जैसे, जब कोई संगीत पंचक अच्छी तरह से प्रशिक्षित होता है और उसकी लय अच्छी तरह से समन्वित होती है, 1717 और उसमें कुशल संगीतकार होते हैं, तो उसका संगीत उत्कृष्ट, मोहक, प्यारा, आकर्षक और मदहोश करने वाला होता है, [264] ठीक उसी तरह उन देवताओं का प्रदर्शन उत्कृष्ट, मोहक, प्यारा, आकर्षक और मदहोश करने वाला था। तब पूज्य अनुराधा ने अपनी इंद्रियों को समेट लिया। तब वे देवता, [यह सोचकर:] "गुरु अनुराधा इसका आनंद नहीं ले रहे हैं," (देवता) वहीं से गायब हो गए। 1718

फिर, शाम को, पूज्य अनुराधा एकांतवास से बाहर आए और भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा: "हे भंते, मैं दिन बिताने के लिए एकांतवास में गया था... [उन्होंने जो कुछ भी हुआ, उसका वर्णन इस प्रकार किया:] [265] ...तब वे देवता (देवदूत), [यह सोचकर:] 'गुरु अनुराधा इसका आनंद नहीं ले रहे हैं', वहीं गायब हो गए।"

"भंते, एक स्त्री में कितने गुण होने चाहिए ताकि शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वह मनभावन शरीर वाले देवताओं (देवदूतों) के साथ पुनर्जन्म ले सके?"

"यदि अनुरुद्ध में आठ गुण हैं, तो शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, वह स्त्री अनुरुद्ध, सौम्य शरीर वाले देवताओं (देवदूतों) के साथ पुनर्जन्म लेती है। वे आठ गुण कौन से हैं? 1719"

(1) "यहाँ, अनुरुद्ध, उसके माता-पिता उसे जिस भी पति को देते हैं - ऐसा वे उसकी भलाई की इच्छा से, उसके कल्याण की तलाश में, उस पर दया करके, उसके प्रति करुणा से कार्य करके करते हैं - वह स्त्री उसके सामने उठती है और उसके बाद लौटती है, जो कुछ भी करने की आवश्यकता होती है, वह करती है, उसका आचरण सुखद होता है और उसकी वाणी मनभावन होती है।

(2) वह अपने पति द्वारा आदर किए जाने वाले लोगों— अपने माता-पिता, तपस्वियों और ब्राह्मणों— का आदर, सम्मान और आदर करती है, और जब वे आते हैं तो उन्हें बैठने के लिए आसन और जल प्रदान करती है।

(3) "वह अपने पति के घरेलू कामों में कुशल और मेहनती है, चाहे वह बुनाई हो या सिलाई; वह उन्हें ठीक से करने और व्यवस्थित करने के लिए उनके बारे में सही निर्णय रखती है।

(4) "वह पता लगाती है कि उसके पति के घरेलू सहायकों [266] - चाहे वे दास हों, संदेशवाहक हों या मजदूर हों - ने क्या किया है और क्या नहीं किया है; वह बीमारों की स्थिति का पता लगाती है; और वह प्रत्येक को भोजन का उचित हिस्सा वितरित करती है।

(5) "वह अपने पति द्वारा घर लाई गई किसी भी आय की रक्षा और संरक्षण करती है - चाहे वह पैसा हो, अनाज हो, चांदी हो या सोना 1720 - और वह फिजूलखर्ची करने वाली, चोर, अपव्ययी या उसकी कमाई को बर्बाद करने वाली नहीं है।

(6) "वह एक गृहस्थ महिला अनुयायी है जिसने बुद्ध, धम्म और संघ की शरण ली है।

(7) "वह सदाचारी है, जीवन के विनाश से दूर रहती है, जो कुछ दिया नहीं गया है उसे लेने से, यौन दुराचार से, झूठी वाणी से, और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से, जो आलस्य का आधार हैं।

(8) "वह उदार है, जो कंजूसी के दाग से रहित हृदय से घर में रहती है, खुलकर उदार है, खुले हाथों से देने वाली है, त्याग में आनंदित है, दान के प्रति समर्पित है, देने और साझा करने में आनंदित है।

"इन आठ गुणों से युक्त, अनुराधा नामक स्त्री, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, सौम्य शरीर वाले देवताओं (देवदूतों) के साथ पुनर्जन्म लेती है।"

वह अपने पति से घृणा नहीं करती,

वह व्यक्ति जो निरंतर उसका सहारा बनता है,

जो हमेशा उत्साह और लगन से

उसकी हर इच्छा पूरी करता है। 1721

न ही एक अच्छी स्त्री

ईर्ष्या से प्रेरित होकर अपने पति को डांटती है; 1722

बुद्धिमान स्त्री

उन सभी लोगों का आदर करती है जिनका उसका पति आदर करता है।

वह सुबह जल्दी उठती है, लगन से काम करती है,

घरेलू नौकरों का प्रबंधन करती है;

वह अपने पति के साथ सौहार्दपूर्ण व्यवहार करती है

और उसकी कमाई की संपत्ति की रक्षा करती है।

जो स्त्री

अपने पति की इच्छा और कामनाओं का पालन करते हुए अपने कर्तव्यों को पूरा करती है, वह "मनभावन

देवों" (मनप देवों) के बीच पुनर्जन्म लेती है । [267]

---

47 विशाखा (2)

एक बार भगवान (बुद्ध) पूर्वी उद्यान में स्थित मिगारमाता के महल में सावत्थी में निवास कर रहे थे। तब विशाखा मिगारमाता भगवान (बुद्ध) के पास आईं। . . . तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"विशाखा, आठ गुणों से युक्त एक स्त्री, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, सौम्य शरीर वाले देवताओं (देवदूतों) के साथ पुनर्जन्म लेती है। वे आठ गुण कौन से हैं?"

[जैसा कि 8:46 में है, जिसमें ये आयतें भी शामिल हैं।] [268]

---

48 नकुला

एक बार भगवान (बुद्ध) भेषकला वन के हिरण उद्यान में स्थित सुमसुमारागिरा में भगों के बीच निवास कर रहे थे। तब गृहिणी नकुलमाता भगवान (बुद्ध) के पास आईं... तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"नकुलमाता, आठ गुणों से युक्त एक स्त्री, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, सौम्य शरीर वाले देवताओं (देवदूतों) के साथ पुनर्जन्म लेती है। वे आठ गुण कौन से हैं?"

[जैसा कि 8:46 में है, जिसमें ये आयतें भी शामिल हैं।] [269]

---

49 वर्तमान विश्व (1) 1723

एक बार भगवान (बुद्ध) पूर्वी उद्यान में स्थित मिगारमाता के महल में सावत्थी में निवास कर रहे थे। तब विशाखा मिगारमाता भगवान (बुद्ध) के पास आईं। . . . तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"विशाखा, चार गुणों से युक्त एक स्त्री, वर्तमान संसार में विजय की ओर अग्रसर है और इस संसार में उसका जीवन सफल होता है। 1724 वे चार गुण क्या हैं? यहाँ, एक स्त्री अपने काम में सक्षम है; वह घरेलू नौकरों का प्रबंधन करती है; वह अपने पति के साथ सौहार्दपूर्ण व्यवहार करती है; और वह उसकी कमाई की रक्षा करती है।"

(1) "और विशाखा, एक स्त्री अपने काम में किस प्रकार सक्षम होती है? यहाँ, एक स्त्री अपने पति के घरेलू कामों में, चाहे वह बुनाई हो या सिलाई, कुशल और मेहनती होती है; वह उन्हें ठीक से करने और व्यवस्थित करने के लिए उनके बारे में सही निर्णय लेती है। इसी प्रकार एक स्त्री [270] अपने काम में सक्षम होती है।"

(2) "और एक स्त्री घरेलू नौकरों का प्रबंधन कैसे करती है? यहाँ, एक स्त्री यह पता लगाती है कि उसके पति के घरेलू सहायकों—चाहे वे दास हों, संदेशवाहक हों या श्रमिक—ने क्या किया है और क्या नहीं किया है; वह बीमारों की स्थिति का पता लगाती है; और वह प्रत्येक को भोजन का उचित हिस्सा वितरित करती है। इस प्रकार एक स्त्री घरेलू नौकरों का प्रबंधन करती है।"

(3) "और एक स्त्री अपने पति के प्रति कैसे प्रसन्नतापूर्वक व्यवहार करती है? यहाँ, एक स्त्री ऐसा कोई दुराचार नहीं करेगी जिसे उसका पति अप्रिय समझे, चाहे इसके लिए उसे अपने जीवन का भी बलिदान देना पड़े। इसी प्रकार एक स्त्री अपने पति के प्रति प्रसन्नतापूर्वक व्यवहार करती है।"

(4) "और एक स्त्री अपने पति की कमाई की रक्षा कैसे करती है? यहाँ, एक स्त्री अपने पति द्वारा घर लाई गई हर आय की रक्षा करती है—चाहे वह धन हो या अनाज, चाँदी हो या सोना—और वह उसकी कमाई को फिजूलखर्ची, चोरी, बर्बादी या लुटाने वाली नहीं होती। इस प्रकार एक स्त्री अपने पति की कमाई की रक्षा करती है।"

"इन चार गुणों से युक्त महिला वर्तमान संसार में विजय की ओर अग्रसर होती है और इस संसार में उसका जीवन सफल होता है।"

"विशाखा, चार अन्य गुणों से युक्त स्त्री परलोक में विजय की ओर अग्रसर होती है और परलोक में उसका जीवन सफल होता है। वे चार गुण कौन से हैं? यहाँ, स्त्री आस्था में निपुण, सदाचारी व्यवहार में निपुण, उदारता में निपुण और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में निपुण है।"

(5) "और हे विशाखा, एक स्त्री आस्था में कैसे सिद्ध होती है? यहाँ, एक स्त्री आस्था से परिपूर्ण होती है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखती है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में सिद्ध हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' इसी प्रकार एक स्त्री आस्था में सिद्ध होती है।"

(6) "और एक स्त्री सद्गुणी आचरण में कैसे निपुण होती है? [271] यहाँ, एक स्त्री जीवन के विनाश से दूर रहती है... शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से, जो आलस्य का आधार हैं। इसी प्रकार एक स्त्री सद्गुणी आचरण में निपुण होती है।

(7) "और एक स्त्री उदारता में कैसे निपुण होती है? यहाँ, एक स्त्री घर में कंजूसी के दाग से रहित हृदय से रहती है, खुलकर उदार, खुले हाथों वाली, त्याग में आनंदित, दान के प्रति समर्पित, देने और साझा करने में प्रसन्न होती है। इसी प्रकार एक स्त्री उदारता में निपुण होती है।"

(8) "और स्त्री किस प्रकार पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्ध होती है? यहाँ, स्त्री बुद्धिमान होती है; वह उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) से युक्त होती है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति जानती है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी है तथा दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाती है। 1725 इसी प्रकार स्त्री पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्ध होती है।"

"इन चार गुणों से युक्त, विशाखा नामक स्त्री परलोक में विजय की ओर अग्रसर है और परलोक में उसका जीवन सफल होता है।"

वह अपने काम को कुशलतापूर्वक संभालने और

घरेलू नौकरों का प्रबंधन करने में सक्षम है,

अपने पति के साथ सौहार्दपूर्ण व्यवहार करती है

और उसकी कमाई की संपत्ति की रक्षा करती है।

आस्था से परिपूर्ण, सद्गुणों से युक्त,

दानशील और कंजूसी से रहित,

वह निरंतर उस मार्ग को शुद्ध करती है

जो भविष्य के जीवन में सुरक्षा की ओर ले जाता है।

वे

इन आठ गुणों से युक्त किसी भी स्त्री को

गुणी, धम्म में दृढ़ और

सत्य की वक्ता कहते हैं।

सोलह पहलुओं में निपुण, [1726]

आठ कारकों में पूर्ण,

ऐसी गुणी स्त्री गृहस्थ अनुयायी

एक सुखद देव (देवदूत/ईश्वर) लोक में पुनर्जन्म लेती है।

---

50 वर्तमान विश्व (2)

"भिक्षुओं (साधुओं), चार गुणों से युक्त स्त्री वर्तमान संसार में विजय की ओर अग्रसर होती है और इस संसार में उसका जीवन सफल होता है। वे चार गुण क्या हैं? [272]

[इसके बाद जो लिखा है वह 8:49 के समान है, जिसमें श्लोक भी शामिल हैं, लेकिन भिक्षुओं को संबोधित है।] [273—274]

दूसरा पचास

I. गौतमी अनुभाग (बुद्ध की पालक माता और मौसी)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

51 गौतमी [1727]

एक बार भगवान (बुद्ध) कपिलवस्तु के बरगद उद्यान में शाक्यों के बीच निवास कर रहे थे। 1728 में महाप्रजापति गौतमी भगवान (बुद्ध) के पास गईं, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़ी हुईं और उनसे कहा:

"भंते, यह अच्छा होगा यदि स्त्रियाँ तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में गृहस्थ जीवन से निकलकर संन्यासी जीवन में प्रवेश कर सकें।" 1729

"बस करो, गौतमी! तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में स्त्रियों के गृहस्थ जीवन से निकलकर संन्यासी जीवन में जाने का समर्थन मत करो।"

दूसरी बार...। तीसरी बार महाप्रजापति गौतमी ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, यह अच्छा होगा यदि स्त्रियाँ गृहस्थ जीवन से निकलकर तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म (मार्ग) और अनुशासन में चलकर संन्यासी जीवन में प्रवेश कर सकें।"

"बस करो, गौतमी! तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में स्त्रियों के गृहस्थ जीवन से विमुख होकर संन्यासी जीवन में जाने का समर्थन मत करो।" 1730

तब महाप्रजापति गौतमी ने यह सोचकर कि "भगवान (बुद्ध) स्त्री को गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में जाने की अनुमति नहीं देते," दुखी और व्याकुल होकर रो पड़ीं। फिर उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर मुख करके परिक्रमा की और प्रस्थान किया।

कपिलवस्तु में अपनी इच्छा अनुसार कुछ समय बिताने के बाद, भगवान (बुद्ध) वैशाली की यात्रा पर निकल पड़े। यात्रा करते-करते वे अंततः वैशाली पहुँचे, जहाँ उन्होंने विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले महल में निवास किया।

तब महाप्रजापति गौतमी ने अपने बाल कटवाए, गेरुए वस्त्र धारण किए और कई शाक्य स्त्रियों के साथ वैशाली की ओर चल पड़ीं। 1731 [275] अंततः वेशाली पहुँचीं और विशाल वन में नुकीली छत वाले हॉल में गईं। फिर, सूजे हुए पैरों और धूल से सने शरीर के साथ, दुखी और उदास, आँसू भरी आँखों से रोते हुए, वे प्रवेश द्वार के बाहर खड़ी हो गईं। पूज्य आनंद ने उन्हें इस हालत में वहाँ खड़े देखा और उनसे कहा:

"गोतामी, तुम सूजे हुए पैरों और धूल से सने शरीर के साथ, दुखी और उदास होकर, आँसू भरी आँखों से रोते हुए प्रवेश द्वार के बाहर क्यों खड़ी हो?"

"मैं ऐसा इसलिए करता हूँ, भंते आनंद, क्योंकि भगवान (बुद्ध) महिलाओं को गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में जाने की अनुमति नहीं देते हैं।"

"तो फिर, गौतमी, तुम यहीं रुको [एक पल के लिए] 1732 जब तक मैं भगवान (बुद्ध) से महिलाओं को भिक्षुणी बनने की अनुमति देने की प्रार्थना करता हूँ।"

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा, "भंते, महाप्रजापति गौतमी सूजे हुए पैरों और धूल से सने शरीर के साथ द्वार के बाहर खड़ी हैं, दुखी और व्याकुल हैं, आँसू भरी आँखों से रो रही हैं, क्योंकि भगवान (बुद्ध) महिलाओं को संन्यासिनी बनने की अनुमति नहीं देते। भंते, यह अच्छा होगा यदि महिलाएं गृहस्थ जीवन छोड़कर तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म (मार्ग) और अनुशासन के मार्ग पर चलकर संन्यासी जीवन में प्रवेश कर सकें।"

"बस करो, आनंद! तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में स्त्रियों के गृहस्थ जीवन से निकलकर संन्यासी जीवन में जाने का समर्थन मत करो।"

दूसरी बार... तीसरी बार पूज्य आनंद ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, यह अच्छा होगा यदि स्त्रियाँ गृहस्थ जीवन से निकलकर तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में संन्यासी जीवन व्यतीत कर सकें।"

"बस करो, आनंद! तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में गृहस्थ जीवन में स्त्रियों के जाने का पक्ष मत लो।" [276]

तब पूज्य आनंद के मन में यह विचार आया, "भगवान (बुद्ध) महिलाओं को गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में जाने की अनुमति नहीं देते। मुझे भगवान (बुद्ध) से महिलाओं के संन्यासी जीवन में जाने का कोई और तरीका माँगना चाहिए।"

तब पूज्य आनंद ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, यदि कोई स्त्री गृहस्थ जीवन छोड़कर तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में संन्यासी जीवन व्यतीत करे, तो क्या उसके लिए सात जन्मों के ऋतुओं (सोतपत्ति), एक जन्म के ऋतु (सकदागामी), अनागामी और अरहंतत्व के ऋतुओं को प्राप्त करना संभव होगा?"

"हाँ, ऐसा ही होगा, आनंदा।"

"हे भंते, यदि किसी स्त्री के लिए सात जन्मों (सोतपत्ति) के फल, एक बार जन्म लेने के फल, अनागामी (पृथ्वी में पुनर्जन्म न लेने) के फल और अरहंतत्व के फल को प्राप्त करना संभव हो, और यह देखते हुए कि महाप्रजापति गौतमी ने भगवान (बुद्ध) की बहुत सहायता की थी - उनकी मौसी, धाय और पालक माता बनकर, जिन्होंने उनकी माता के निधन के बाद उन्हें अपने स्तन से पाला-पोसा - तो यह अच्छा होगा यदि स्त्रियाँ गृहस्थ जीवन से निकलकर तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में संन्यासी जीवन की ओर अग्रसर हो सकें।"

"आनंद, यदि महाप्रजापति गौतमी आदर के आठ सिद्धांतों को स्वीकार करती हैं, तो यही उनकी पूर्ण दीक्षा होगी।"

(1) "सौ वर्षों से दीक्षा प्राप्त भिक्षुणी को उसी दिन दीक्षा प्राप्त भिक्षु को प्रणाम करना चाहिए, उनके लिए उठना चाहिए, आदरपूर्वक उन्हें प्रणाम करना चाहिए और उनके प्रति विनम्रतापूर्वक व्यवहार करना चाहिए। इस सिद्धांत का जीवन भर सम्मान, आदर, सम्मान और आदर किया जाना चाहिए और इसका उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।" 1735

(2) "भिक्षुणी को ऐसे स्थान पर वर्षा ऋतु में प्रवेश नहीं करना चाहिए जहाँ भिक्षु न हों। 1736 इस सिद्धांत का भी जीवन भर सम्मान, आदर, आदर और पूजा की जानी चाहिए और इसका उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।

(3) "प्रत्येक आधे महीने में एक भिक्षुणी (भिक्षुणी) को भिक्षुओं के संघ से दो बातों के बारे में पूछना चाहिए: उपोसथ के [दिन] के बारे में, और उपदेश के लिए आने के बारे में। 1737 [277] इस सिद्धांत का भी आदर, सम्मान, आदर और पूजा की जानी चाहिए, और जीवन भर इसका उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।

(4) "जब कोई भिक्षुणी वर्षा ऋतु का पालन करती है, तो उसे दोनों संघों के समक्ष तीन बातों के संबंध में सुधार के लिए आमंत्रित करना चाहिए: देखी, सुनी या संदेह की गई किसी भी बात के संबंध में। 1738 इस सिद्धांत का भी आदर, सम्मान और आदर किया जाना चाहिए और जीवन भर इसका उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।

(5) "एक भिक्षुणी (भिक्षुणी) जिसने गंभीर अपराध किया है, उसे दोनों संघों के समक्ष आधे महीने की दंड अवधि का पालन करना चाहिए। 1739 इस सिद्धांत का भी आदर, सम्मान, आदर और पूजा की जानी चाहिए और जीवन भर इसका उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।

(6) "एक परिवीक्षाधीन जिसने छह सिद्धांतों में दो वर्ष का प्रशिक्षण पूरा कर लिया है, उसे दोनों संघों से पूर्ण दीक्षा प्राप्त करनी चाहिए। 1740 इस सिद्धांत का भी आदर, सम्मान, आदर और पूजा की जानी चाहिए और जीवन भर इसका उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।

(7) "भिक्षुणी को किसी भी प्रकार से भिक्षु का अपमान या अपशब्द नहीं कहना चाहिए। इस सिद्धांत का भी आदर, सम्मान और आदर किया जाना चाहिए और जीवन भर इसका उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।"

(8) "आज से, आनंद, भिक्षुणियों को भिक्षुओं को उपदेश देने से मना किया गया है, परन्तु भिक्षुओं को भिक्षुणियों को उपदेश देने से मना नहीं किया गया है। इस सिद्धांत का भी जीवन भर आदर, सम्मान और आदर किया जाना चाहिए और इसका उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।"

"आनंद, यदि महाप्रजापति गौतमी आदर के इन आठ सिद्धांतों को स्वीकार कर लें, तो यही उनकी पूर्ण दीक्षा होगी।" 1741

तब पूज्य आनंद ने भगवान (बुद्ध) से आदर के इन आठ सिद्धांतों को सीखकर महाप्रजापति गौतमी के पास जाकर उनसे कहा: "हे गौतमी, यदि आप आदर के इन आठ सिद्धांतों को स्वीकार कर लें, तो यही आपकी पूर्ण दीक्षा होगी।"

(1) "सौ वर्षों से दीक्षा प्राप्त भिक्षुणी को उसी दिन दीक्षा प्राप्त भिक्षु को प्रणाम करना चाहिए, उसके लिए उठना चाहिए, आदरपूर्वक उसे प्रणाम करना चाहिए और उसके प्रति उचित व्यवहार करना चाहिए। इस सिद्धांत का जीवन भर सम्मान, आदर, आदर और पूजा की जानी चाहिए और इसका उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए। ..."

(8) "आज से भिक्षुणियों को भिक्षुओं को उपदेश देने से मना किया गया है, [278] परन्तु भिक्षुओं को भिक्षुणियों को उपदेश देने से मना नहीं किया गया है। इस सिद्धांत का भी आदर, सम्मान, आदर और पूजा की जानी चाहिए, और जीवन भर इसका उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।"

"हे गौतमी, यदि तुम सम्मान के इन आठ सिद्धांतों को स्वीकार कर लेते हो, तो यही तुम्हारा पूर्ण दीक्षा संस्कार होगा।"

"भंते आनंद, यदि कोई स्त्री या पुरुष - युवा, यौवनवान और आभूषणों का शौकीन, स्नान किया हुआ - नीले कमल, चमेली या लिली के फूलों की माला प्राप्त करता है, तो वह उसे दोनों हाथों से ग्रहण करके अपने सिर पर धारण करेगा। उसी प्रकार, मैं भी जीवन भर इन आठ आदर के सिद्धांतों का उल्लंघन न करने के लिए स्वीकार करता/करती हूँ।"

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "भंते, महाप्रजापति गौतमी ने आदर के आठ सिद्धांतों को जीवन भर उल्लंघन न करने योग्य माना है।"

हे आनंद, यदि स्त्रियाँ गृहस्थ जीवन छोड़कर तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धर्म एवं अनुशासन के मार्ग पर संन्यासी जीवन न अपनातीं, तो ब्रह्मचर्य काल दीर्घकालीन होता; उत्तम धर्म (मार्ग) एक हजार वर्षों तक भी स्थिर रहता। परन्तु हे आनंद, क्योंकि स्त्रियाँ गृहस्थ जीवन छोड़कर तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धर्म एवं अनुशासन के मार्ग पर संन्यासी जीवन अपना चुकी हैं, इसलिए अब ब्रह्मचर्य काल दीर्घकालीन नहीं रहेगा; उत्तम धर्म केवल पाँच सौ वर्षों तक ही चलेगा।

"जिस प्रकार, आनंद, 1744 में छुपकर चोरी करने वाले चोर आसानी से उन परिवारों पर हमला कर देते हैं जिनमें बहुत सी महिलाएं और कम पुरुष होते हैं, उसी प्रकार जिस भी धम्म (मार्ग) और अनुशासन में महिलाएं गृहस्थ जीवन से संन्यासी जीवन में प्रवेश प्राप्त करती हैं, वह ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) अधिक समय तक नहीं टिकता।"

"जैसे, आनंद, जब पहाड़ी चावल का खेत पक जाता है, [279] यदि उस पर विरंजन रोग का हमला होता है, 1745 तो वह पहाड़ी चावल का खेत लंबे समय तक नहीं टिकता, वैसे ही जिस भी धम्म और अनुशासन में महिलाएं गृहस्थ जीवन से संन्यासी जीवन में प्रवेश करती हैं, वह ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) लंबे समय तक नहीं टिकता।

"हे आनंद, जिस प्रकार गन्ने का खेत पक जाने पर यदि उसमें जंग लगने की बीमारी लग जाए, तो वह गन्ने का खेत अधिक समय तक नहीं टिकता, उसी प्रकार स्त्रीयाँ जिस भी धम्म और अनुशासन में गृहस्थ जीवन से संन्यासी जीवन में प्रवेश करती हैं, वह ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) अधिक समय तक नहीं टिकता।"

"हे आनंद, जिस प्रकार कोई व्यक्ति बड़े जलाशय के चारों ओर बांध बनाता है ताकि पानी बह न जाए, उसी प्रकार मैंने भिक्षुणियों के लिए आठ आदर के सिद्धांत निर्धारित किए हैं, जिनका जीवन भर उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।" (1747)

---

52 (2) उपदेश

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, भिक्षुणियों के उपदेशक के रूप में स्वीकृत होने के लिए एक भिक्षु में कितने गुण होने चाहिए?" 1748

"आनंद, एक भिक्षु में भिक्षुणियों के उपदेशक के रूप में स्वीकृत आठ गुण होने चाहिए। वे आठ गुण कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, आनंद, एक भिक्षु गुणी है। . . . [जैसा कि 8:2 §4 में है] प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके, वह उनमें प्रशिक्षण लेता है।

(2) "उसने बहुत कुछ सीखा है... [जैसा कि 8:2 §5 में है]... और दृष्टि से अच्छी तरह से समझ लिया है।"

(3) "दोनों पतिमोक्खाओं को उन्हें विस्तार से अच्छी तरह से संप्रेषित किया गया है, अच्छी तरह से विश्लेषण किया गया है, अच्छी तरह से महारत हासिल की गई है, नियमों और उनकी विस्तृत व्याख्या के संदर्भ में अच्छी तरह से निर्धारित किया गया है।

(4) "वह अच्छी प्रस्तुति वाला एक अच्छा वक्ता है; वह ऐसे भाषण से संपन्न है जो परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थ को अभिव्यक्त करने वाला है।

(5) "वह धम्म प्रवचन द्वारा भिक्षुणियों (नन) के संघ को निर्देश देने, प्रोत्साहित करने, प्रेरित करने और प्रसन्न करने में सक्षम है।

(6) "वह अधिकांश भिक्षुणियों (नवजातियों) को प्रसन्न और प्रिय है।"

(7) "उसने पहले कभी भी गेरुए वस्त्र धारण करने वाली किसी स्त्री के विरुद्ध गंभीर अपराध नहीं किया है जो भगवान (बुद्ध) के अधीन [सन्यासी जीवन में] चली गई हो।"

(8) "उसे बीस वर्ष या उससे अधिक की वरिष्ठता प्राप्त है।

"भिक्षुणियों के उपदेशक के रूप में स्वीकृत होने के लिए एक भिक्षु में ये आठ गुण होने चाहिए।"

---

53 संक्षिप्त [799]

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। तब महाप्रजापति गौतमी भगवान (बुद्ध) के पास आईं, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़ी हुईं और उनसे कहा: "भंते, यदि भगवान (बुद्ध) मुझे संक्षेप में धम्म का उपदेश दें तो अच्छा होगा, ताकि भगवान (बुद्ध) से धम्म सुनकर मैं एकांत में, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ निवास कर सकूँ।"

"गौतमी, जिन बातों के बारे में तुम जानते हो, वे ये हैं: 'ये बातें (1) वासना की ओर ले जाती हैं, वैराग्य की ओर नहीं; (2) बंधन की ओर ले जाती हैं, वैराग्य की ओर नहीं; (3) निर्माण की ओर ले जाती हैं, विध्वंस की ओर नहीं; (4) प्रबल इच्छाओं की ओर ले जाती हैं, इच्छाओं की कमी की ओर नहीं; (5) असंतोष की ओर ले जाती हैं, संतोष की ओर नहीं; (6) संगति की ओर ले जाती हैं, एकांत की ओर नहीं; (7) आलस्य की ओर ले जाती हैं, ऊर्जा के सृजन की ओर नहीं; (8) पालन-पोषण में कठिनाई की ओर ले जाती हैं, पालन-पोषण में आसानी की ओर नहीं'। तुम्हें निश्चित रूप से यह पहचानना चाहिए: 'यह धम्म नहीं है; यह अनुशासन नहीं है; यह गुरु की शिक्षा नहीं है।'" लेकिन, गौतमी, जिन बातों को तुम जानती हो: 'ये बातें (1) वैराग्य की ओर ले जाती हैं, न कि वासना की ओर; (2) अनासक्ति की ओर ले जाती हैं, न कि बंधन की ओर; (3) विघटन की ओर ले जाती हैं, न कि निर्माण की ओर; (4) इच्छाओं की अल्पता की ओर ले जाती हैं, न कि प्रबल इच्छाओं की ओर; (5) संतोष की ओर ले जाती हैं, न कि असंतोष की ओर; (6) एकांत की ओर ले जाती हैं, न कि संगति की ओर; (7) ऊर्जा के संचार की ओर ले जाती हैं, न कि आलस्य की ओर; (8) पालन-पोषण में आसानी की ओर ले जाती हैं, न कि पालन-पोषण में कठिनाई की ओर', तुम्हें निश्चित रूप से यह पहचानना चाहिए: 'यही धम्म है; यही अनुशासन है; यही गुरु की शिक्षा है।'

---

54 (4) दिघजानु

एक बार भगवान (बुद्ध) कक्करपट्टा नामक कोलियन नगर के पास कोलियनों के बीच निवास कर रहे थे। वहाँ युवा कोलियन दिघजानु भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और उनसे कहा:

"भंते, हम गृहस्थ हैं, इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हैं, बच्चों से भरे घर में रहते हैं। हम काशी का चंदन इस्तेमाल करते हैं; हम माला, सुगंध और लेप लगाते हैं; हमें सोना और चांदी मिलता है। हे भगवान (बुद्ध) हमें धम्म का ऐसा उपदेश दें जिससे इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में हमारा कल्याण और सुख प्राप्त हो।"

"हे ब्याग्घपज्जा, 1750, ये चार चीजें हैं जो इस वर्तमान जीवन में कुलवासी के कल्याण और सुख की ओर ले जाती हैं। वे चार चीजें क्या हैं? पहल में संपदा, रक्षा में संपदा, अच्छी मित्रता और संतुलित जीवन।"

(1) "और पहल में संपदा क्या है? यहाँ, चाहे कोई भी व्यक्ति अपने जीविका का साधन चाहे खेती, व्यापार, पशुपालन, तीरंदाजी, सरकारी सेवा या किसी अन्य शिल्प के माध्यम से कमाता हो, वह कुशल और मेहनती होता है; वह उसे ठीक से चलाने और व्यवस्थित करने के लिए उसके बारे में सही निर्णय लेता है। इसे पहल में संपदा कहा जाता है।"

(2) "और संरक्षण में संपदा क्या है? यहाँ, एक कुलवासी अपने द्वारा पहल और ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) से अर्जित धन की रक्षा और पहरा देता है, जो उसने अपनी भुजाओं के बल से, अपने माथे के पसीने से, धार्मिक रूप से अर्जित किया है, और सोचता है: 'मैं राजाओं और चोरों को इसे लेने से, आग को इसे जलाने से, बाढ़ को इसे बहा ले जाने से, और अप्रसन्न उत्तराधिकारियों को इसे लेने से कैसे रोक सकता हूँ?' इसे संरक्षण में संपदा कहा जाता है।"

(3) और सच्ची मित्रता क्या है? यहाँ, जिस भी गाँव या कस्बे में कोई कुलवासी रहता है, वह गृहस्थों या उनके पुत्रों के साथ संगति करता है—चाहे वे युवा हों लेकिन सद्गुणों से परिपूर्ण हों, या वृद्ध हों लेकिन सद्गुणों से परिपूर्ण हों—जो आस्था, सदाचार, उदारता और ज्ञान (पन्न) में निपुण हों; वह उनसे वार्तालाप करता है और उनके साथ चर्चा करता है। जहाँ तक वे आस्था में निपुण हैं, वह आस्था में उनकी निपुणता का अनुकरण करता है; जहाँ तक वे सदाचार में निपुण हैं, वह सद्गुणों में उनकी निपुणता का अनुकरण करता है; जहाँ तक वे उदारता में निपुण हैं, वह उदारता में उनकी निपुणता का अनुकरण करता है; जहाँ तक वे ज्ञान में निपुण हैं, वह ज्ञान (पन्न) में उनकी निपुणता (संपदा) का अनुकरण करता है। इसे सच्ची मित्रता कहते हैं।

(4) "संतुलित जीवन क्या है? यहाँ, एक कबीले का सदस्य अपनी आय और व्यय को जानता है और संतुलित जीवन जीता है, न तो बहुत खर्चीला और न ही बहुत मितव्ययी, [जागरूक] 'इस तरह मेरी आय मेरे व्यय से अधिक होगी, न कि इसके विपरीत।' जिस प्रकार एक मूल्यांकक या उसका प्रशिक्षु तराजू को उठाकर जानता है: 'यह इतना नीचे गया है, इतना ऊपर गया है, उसी प्रकार एक कबीले का सदस्य अपनी आय और व्यय को जानता है और संतुलित जीवन जीता है, न तो बहुत खर्चीला और न ही बहुत मितव्ययी, [जागरूक]: 'इस तरह मेरी आय मेरे व्यय से अधिक होगी [283] न कि इसके विपरीत।'

"यदि इस कुलवासी की आमदनी कम है लेकिन वह विलासितापूर्ण जीवन जीता है, तो दूसरे उसके बारे में कहेंगे: 'यह कुलवासी अपनी संपत्ति को अंजीर खाने वाले की तरह उड़ाता है।' 175 ' लेकिन यदि उसकी आमदनी अधिक है लेकिन वह मितव्ययी जीवन जीता है, तो दूसरे उसके बारे में कहेंगे: 'यह कुलवासी तो स्वयं को भूखा भी रख सकता है।' 1752 लेकिन संतुलित जीवन तब कहलाता है जब कोई कुलवासी अपनी आमदनी और व्यय को जानता है और संतुलित जीवन जीता है, न तो बहुत अधिक खर्चीला और न ही बहुत कम खर्चीला, [जागरूक]: 'इस तरह मेरी आमदनी मेरे व्यय से अधिक होगी, न कि इसके विपरीत।'"

इस प्रकार अर्जित धन के अपव्यय के चार स्रोत हैं: व्यभिचार, शराबखोरी, जुआ और बुरी दोस्ती, बुरे साथी, बुरे सहयोग। जैसे मान लीजिए एक बड़ा जलाशय है जिसमें चार प्रवेश द्वार और चार निकास द्वार हैं, और एक व्यक्ति प्रवेश द्वारों को बंद कर दे और निकास द्वारों को खोल दे, और पर्याप्त बारिश न हो, तो जलाशय में पानी बढ़ने के बजाय घटने की उम्मीद की जा सकती है; उसी प्रकार इस प्रकार अर्जित धन के अपव्यय के चार स्रोत हैं: व्यभिचार... बुरे साथी।

इस प्रकार अर्जित धन के संचय के चार स्रोत हैं: व्यक्ति स्त्री-व्यंग, शराबखोरी और [284] जुए से बचता है, और अच्छी मित्रता, अच्छा साथ और अच्छी सहेलियाँ विकसित करता है। जैसे कि एक बड़ा जलाशय हो जिसमें चार प्रवेश द्वार और चार निकास द्वार हों, और एक व्यक्ति प्रवेश द्वारों को खोलता और निकास द्वारों को बंद करता हो, और पर्याप्त वर्षा होती हो; तो जलाशय में पानी घटने के बजाय बढ़ने की उम्मीद की जा सकती है, उसी प्रकार अर्जित धन के संचय के चार स्रोत हैं: व्यक्ति स्त्री-व्यंग से बचता है... और अच्छी मित्रता

विकसित करता है।

"ये चार चीजें हैं जो इसी जीवन में कुलवासी के कल्याण और सुख की ओर ले जाती हैं।"

"हे ब्याग्घपज्जा, ये चार अन्य बातें हैं जो कुल के सदस्य के भविष्य के जन्मों में कल्याण और सुख की ओर ले जाती हैं। वे चार क्या हैं? आस्था में सिद्धि (संपदा), सदाचार में सिद्धि (संपदा), उदारता में सिद्धि (संपदा), और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्धि (संपदा)।"

(5) "और आस्था में संपदा क्या है? यहाँ, एक कुलवासी आस्था से संपन्न है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं... देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु, प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध)।' इसे आस्था में संपदा कहा जाता है।"

(6) "और सद्गुणों में संपदा क्या है? यहाँ, कुल का व्यक्ति जीव-जंतुओं की हत्या से, बिना माँगी वस्तुएँ लेने से, यौन दुराचार से, झूठी वाणी से और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से, जो आलस्य का आधार हैं, परहेज़ करता है। इसे सद्गुणों में संपदा कहा जाता है।"

(7) "और उदारता में संपदा क्या है? यहाँ, एक कुलवासी अपने घर में कंजूसी के दाग से रहित हृदय से रहता है, उदार, खुले हाथों वाला, त्याग में आनंदित, दान के प्रति समर्पित, देने और साझा करने में आनंदित। इसे उदारता में संपदा कहा जाता है।"

(8) "और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में संपदा क्या है? [285] यहाँ, कुल का व्यक्ति बुद्धिमान है; वह उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) से युक्त है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। इसे पन्ना (दिव्य ज्ञान) में संपदा कहा जाता है।"

"ये चार अन्य चीजें हैं जो वंश के सदस्य के भविष्य के जन्मों में कल्याण और सुख की ओर ले जाती हैं।"

अपने कामों में उद्यमशील,

अपनी योजनाओं में सतर्क,

अपने जीवन जीने के तरीके में संतुलित,

वह अपनी कमाई हुई संपत्ति की रक्षा करता है।

आस्था से परिपूर्ण, सद्गुणों में निपुण,

दानशील और कंजूसी से रहित,

वह निरंतर उस मार्ग को शुद्ध करता है

जो भविष्य के जन्मों में सुरक्षा की ओर ले जाता है।

इस प्रकार गृहस्थ जीवन के सच्चे साधक के ये आठ गुण,

जिन्हें 1753 में सही नाम दिया गया है,

दोनों अवस्थाओं में सुख की ओर ले जाते हैं:

इस जीवन में भलाई और कल्याण

तथा भविष्य के जन्मों में सुख।

इस प्रकार गृहस्थ जीवन जीने वालों

की उदारता और पुण्य में वृद्धि होती है।

---

55 उज्जया

तब ब्राह्मण उज्जैन भगवान (बुद्ध) के पास पहुंचा और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर, वह एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"गुरु गौतम, मैं विदेश जाना चाहता/चाहती हूँ। गुरु गौतम मुझे उन बातों का धम्म सिखाएँ जो इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में मेरे कल्याण और सुख की ओर ले जाएँगी।" [इसके बाद का भाग 8:54 के समान है, जिसमें चारों श्लोक शामिल हैं, लेकिन यह ब्राह्मण को संबोधित है।] [286-89]

---

56 संकट [1754] (भया)

भिक्षुओं (मठवासियों), (1) 'खतरा' कामुक सुखों का पर्याय है। (2) 'पीड़ा' कामुक सुखों का पर्याय है। (3) 'रोग' कामुक सुखों का पर्याय है। (4) 'फोड़ा' कामुक सुखों का पर्याय है। (5) 'तीर' कामुक सुखों का पर्याय है। (6) 'बंधन' कामुक सुखों का पर्याय है। (7) 'दलदल' कामुक सुखों का पर्याय है। (8) 'गर्भ' कामुक सुखों का पर्याय है।

और हे भिक्षुओं, 'खतरा' कामुक सुखों का नाम क्यों है? जो व्यक्ति कामुक राग से उत्तेजित होकर, इच्छा और वासना से बंधा हुआ है, वह न तो इस वर्तमान जीवन के खतरे से मुक्त होता है [290] और न ही भविष्य के जन्मों के खतरे से; इसलिए 'खतरा' कामुक सुखों का नाम है।

और 'पीड़ा'... 'रोग'... 'फोड़ा'... 'तीर'... 'बंधन'... 'दलदल'... 'गर्भाशय' इंद्रिय सुखों के लिए एक पदनाम क्यों है? जो व्यक्ति इंद्रिय-राग से उत्तेजित होता है, इच्छा और वासना से बंधा होता है, वह न तो इस जीवन से संबंधित गर्भ से मुक्त होता है और न ही भविष्य के जन्मों से संबंधित गर्भ से; 1755 इसलिए 'गर्भाशय' इंद्रिय सुखों के लिए एक पदनाम है।

खतरा, पीड़ा और बीमारी,

फोड़ा, तीर का वार और बंधन,

दलदल और गर्भ:

ये सांसारिक सुखों का वर्णन करते हैं

जिनसे मनुष्य जुड़ा रहता है।

सुखदायक चीजों में लीन होकर

वह फिर से गर्भ में चला जाता है।

लेकिन जब कोई भिक्षु उत्साही होता है

और पूर्ण ज्ञान (संपजन्न) की उपेक्षा नहीं करता,

तो वह

इस दयनीय दलदल से ऊपर उठ जाता है; वह पुनर्जन्म और वृद्धावस्था में गिर चुकी

इस कांपती हुई आबादी का अवलोकन करता है ।

---

57 भेंट के योग्य (1) (अहुनेय्या1)

"भिक्षुओं में आठ गुण होते हैं; वे दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होते हैं; वे संसार के लिए अतुलनीय पुण्य के क्षेत्र हैं। वे आठ गुण कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु गुणी है। . . प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करने के बाद, वह उनमें प्रशिक्षण लेता है।

(2) "उसने बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से अच्छी तरह से समझ लिया है।"

(3) "उसके अच्छे दोस्त हैं, अच्छे साथी हैं, अच्छे सहपाठी हैं।

(4) "वह सही दृष्टिकोण वाला है, [291] सही परिप्रेक्ष्य रखता है।

(5) वह इच्छा से, बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, चार ध्यान प्राप्त कर लेता है जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुख के निवास स्थान हैं।

(6) "वह अपने अनेक पिछले जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) के निवासों को याद करता है, अर्थात् एक पुनर्जन्म, दो पुनर्जन्म... [जैसा कि 8:11 में है]... इस प्रकार वह अपने अनेक पिछले जन्मों के निवासों को उनके पहलुओं और विवरणों के साथ याद करता है।"

(7) "ईश्वरीय दृष्टि से, जो शुद्ध है और मनुष्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है... [जैसा कि 8:11 में है]... वह समझता है कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं।"

(8) "दोषों के नाश होने से उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।"

"इन आठ गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होता है और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र होता है।"

---

58 भेंट के योग्य (2) (अहुनेय्या2)

"भिक्षुओं में आठ गुण होते हैं; वे दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट चढ़ाने के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य होते हैं; वे संसार के लिए अतुलनीय पुण्य के क्षेत्र हैं। वे आठ गुण कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु गुणी है। . . . प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके, वह उनमें प्रशिक्षण लेता है।

(2) "उसने बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से अच्छी तरह से समझ लिया है।"

(3) "उसने ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है; 1756 वह प्रयास में मजबूत/दृढ़ है, और लाभकारी (कुशल) गुणों को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं किया है।

(4) "वह वनवासी है, जो एकांत आवासों का सहारा लेता है।

(5) "उसने असंतोष और प्रसन्नता पर विजय प्राप्त कर ली है; उसने असंतोष को जब भी उत्पन्न हुआ, उस पर विजय प्राप्त कर ली।"

(6) "उसने भय और आतंक को पराजित किया है; जब भी भय और आतंक उत्पन्न हुए, उसने उन पर विजय प्राप्त की। [292]

(7) वह इच्छा से, बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, चार ध्यान प्राप्त कर लेता है जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुख के निवास स्थान हैं।

(8) "दोषों के नाश होने से उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।"

"इन आठ गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होता है और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र होता है।"

59 आठ व्यक्ति (1) (पुग्गला1 सं. पुरुष-युगल)

भिक्षुओं, ये आठ व्यक्ति दान, आतिथ्य, भेंट और आदर के योग्य हैं; ये संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र हैं। कौन से आठ? सोतपत्ति (सात जन्मों का पुनर्जन्म) जो सोतपत्ति के फल की प्राप्ति के लिए साधना करते हैं; सकदागामी (एक जन्म का पुनर्जन्म) जो एक जन्म के फल की प्राप्ति के लिए साधना करते हैं; अनागामी (एक जन्म का पुनर्जन्म) जो अनागामी (एक जन्म का पुनर्जन्म) के फल की प्राप्ति के लिए साधना करते हैं; अरहंत (अरहंत पद के फल की प्राप्ति के लिए साधना करते हैं। ये आठ व्यक्ति, भिक्षुओं, दान, आतिथ्य, भेंट और आदर के योग्य हैं; ये संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र हैं।

मार्ग का अभ्यास करने वाले चार (1758)

और फल में स्थापित चार:

यही वह सही संघ है

जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) और सदाचार में रचित है। [1759]

जो लोग त्याग के लिए तत्पर हैं,

जो जीव पुण्य की तलाश में हैं,

जो पुण्य अर्जित करने में परिपक्व होता है ,

संघ को जो दिया जाता है वह बहुत फलदायी होता है।

---

60 आठ व्यक्ति (2) (पुग्गला1 सं. पुरुष-युगल)

"भिक्षुओं, ये आठ व्यक्ति दान के योग्य हैं... संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र। कौन से आठ? [293] सोतपत्ति (सात जन्मों का पुनर्जन्म) का प्रवाह-प्रवेश करने वाला... सोतपत्ति (सात जन्मों का पुनर्जन्म) का फल प्राप्त करने के लिए साधना करने वाला... अरहंत, अरहंतत्व का फल प्राप्त करने के लिए साधना करने वाला। ये आठ व्यक्ति, भिक्षुओं, दान के योग्य हैं... संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र।"

मार्ग का अभ्यास करने वाले चार

और फल में स्थापित चार:

प्राणियों में आठ व्यक्ति -

यही श्रेष्ठ संघ है।

जो लोग त्याग करने के लिए तत्पर हैं,

जो जीव पुण्य की तलाश में हैं,

जो अर्जित कर्मों में फलदायी होते हैं, उनके लिए

यहाँ जो कुछ दिया गया है वह बहुत फलदायी है।

II. भूकंप (भूमिकला)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

61 इच्छा (इच्छा)

"भिक्षुओं, संसार में आठ प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से आठ प्रकार हैं?"

(1) "यहाँ, जब कोई भिक्षु एकांतवास में स्वतंत्र रूप से रहता है, तो उसके मन में लाभ की इच्छा उत्पन्न होती है। वह स्वयं को प्रेरित करता है, प्रयास करता है और लाभ प्राप्त करने का प्रयास करता है। 1761 फिर भी, वह लाभ प्राप्त करने में असफल रहता है। लाभ की कमी के कारण वह दुखी होता है, व्याकुल होता है और विलाप करता है; वह अपनी छाती पीटते हुए रोता है और भ्रमित हो जाता है। इसे लाभ का इच्छुक भिक्षु कहा जाता है [294] जो लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित करता है, प्रयास करता है और प्रयास करता है, लेकिन उसे प्राप्त न कर दुखी और विलाप करता है: वह अच्छे धम्म से विमुख हो गया है।"

(2) परन्तु जब कोई भिक्षु एकांतवास में स्वतंत्र रूप से रहता है, तो उसमें लाभ की इच्छा उत्पन्न होती है। वह लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित करता है, प्रयास करता है और परिश्रम करता है। वह लाभ प्राप्त कर लेता है। उस लाभ के कारण वह मदमस्त हो जाता

है, आलसी हो जाता है और आलस्य में लीन हो जाता है। इसे लाभ की इच्छा रखने वाला भिक्षु कहा जाता है जो लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित करता है, प्रयास करता है और परिश्रम करता है, और उसे प्राप्त करके मदमस्त और आलसी हो जाता है: वह उत्तम धम्म से विमुख हो गया है।

(3) परन्तु जब कोई भिक्षु एकांतवास में स्वतंत्र रूप से रहता है, तो उसमें लाभ की इच्छा उत्पन्न होती है। वह लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित, प्रयास और परिश्रम नहीं करता। उसे लाभ प्राप्त नहीं होता। लाभ न होने के कारण वह दुखी, व्याकुल और विलाप करता है; वह सीना पीटते हुए रोता है और भ्रमित हो जाता है। इसे लाभ का इच्छुक भिक्षु कहा जाता है जो लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित, प्रयास और परिश्रम नहीं करता, और उसे प्राप्त न होने पर दुखी और विलाप करता है: वह उत्तम धम्म से विमुख हो गया है।

(4) परन्तु जब कोई भिक्षु एकांतवास में स्वतंत्र रूप से रहता है, तो उसमें लाभ की इच्छा उत्पन्न होती है। वह लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित नहीं करता, प्रयास नहीं करता और न ही परिश्रम करता है। फिर भी, वह लाभ प्राप्त कर लेता है। उस लाभ के कारण वह मदमस्त हो जाता है, आलसी हो जाता है और आलस्य में लीन हो जाता है। इसे लाभ का इच्छुक भिक्षु कहा जाता है जो लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित नहीं करता, प्रयास नहीं करता और न ही परिश्रम करता है, और लाभ प्राप्त करने पर मदमस्त और आलसी हो जाता है: वह उत्तम धम्म से विमुख हो गया है।

(5) "परन्तु जब कोई भिक्षु एकांतवास में स्वतंत्र रूप से रहता है, तो उसमें लाभ की इच्छा उत्पन्न होती है। वह स्वयं को प्रेरित करता है, प्रयास करता है और लाभ प्राप्त करने का परिश्रम करता है। फिर भी, [295] वह लाभ प्राप्त करने में असफल रहता है। वह उस लाभ की कमी के कारण शोक, पीड़ा और विलाप नहीं करता; वह छाती पीट-पीटकर रोता नहीं और भ्रमित नहीं होता। इसे लाभ की इच्छा रखने वाला भिक्षु कहा जाता है जो स्वयं को प्रेरित करता है/प्रयास करता है और लाभ प्राप्त करने का परिश्रम करता है, और उसे प्राप्त न करने पर शोक और विलाप नहीं करता: वह अच्छे धम्म से विमुख नहीं हुआ है।"

(6) परन्तु जब कोई भिक्षु एकांतवास में स्वतंत्र रूप से रहता है, तो उसमें लाभ की इच्छा उत्पन्न होती है। वह स्वयं को प्रेरित करता है, प्रयास करता है और लाभ प्राप्त करने का परिश्रम करता है। वह लाभ प्राप्त करता है। वह न तो मदहोश होता है, न आलसी होता है और न ही उस लाभ के कारण आलस्य में लिप्त होता है। इसे लाभ का इच्छुक भिक्षु कहा जाता है जो स्वयं को प्रेरित करता है, प्रयास करता है और लाभ प्राप्त करने का परिश्रम करता है, और उसे प्राप्त करने के बाद भी मदहोश या आलसी नहीं होता; वह उत्तम धम्म से विमुख नहीं हुआ है।

(7) परन्तु जब कोई भिक्षु एकांतवास में स्वतंत्र रूप से रहता है, तो उसमें लाभ की इच्छा उत्पन्न होती है। वह लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित नहीं करता, प्रयास नहीं करता, और न ही कोई परिश्रम करता है। उसे लाभ प्राप्त नहीं होता। वह लाभ न होने के कारण शोक नहीं करता, व्याकुल नहीं होता, और विलाप नहीं करता; वह छाती पीट-पीटकर रोता नहीं और भ्रमित नहीं होता। इसे लाभ का इच्छुक भिक्षु कहा जाता है जो लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित नहीं करता, प्रयास नहीं करता, और न ही कोई परिश्रम करता है, और लाभ न मिलने पर शोक और विलाप नहीं करता: वह उत्तम धम्म से विमुख नहीं हुआ है।

(8) "परन्तु जब कोई भिक्षु एकांतवास में स्वतंत्र रूप से रहता है, तो उसमें लाभ की इच्छा उत्पन्न होती है: वह लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित नहीं करता, प्रयास नहीं करता और न ही परिश्रम करता है। फिर भी, वह लाभ प्राप्त कर लेता है। वह उस लाभ के कारण मदमस्त नहीं होता, आलसी नहीं होता और न ही आलस्य में डूबता है। इसे लाभ का इच्छुक भिक्षु कहा जाता है जो लाभ प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित नहीं करता, प्रयास नहीं करता और न ही परिश्रम करता है, और लाभ प्राप्त करने के बाद भी मदमस्त और आलसी नहीं होता: वह उत्तम धम्म से विमुख नहीं हुआ है।"

"ये दुनिया में विद्यमान पाए जाने वाले आठ प्रकार के व्यक्ति हैं।" [296]

---

62 सक्षम (आलम)

(1) "भिक्षुओं (मठवासियों), छह गुणों से युक्त, एक भिक्षु स्वयं और दूसरों दोनों को लाभ पहुँचाने में सक्षम होता है। 15,62 वे छह गुण क्या हैं?

यहां, (i) भिक्षु लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं को शीघ्रता से समझने वाला होता है; (ii) वह सीखी हुई शिक्षाओं को मन में धारण करने में सक्षम होता है; (iii) वह मन में धारण की गई शिक्षाओं के अर्थ की खोज करता है; (iv) उसने धम्म का अर्थ और उसे समझ लिया है और वह धम्म के अनुसार अभ्यास करता है; (v) वह एक अच्छा वक्ता होता है, जिसकी वाणी परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थपूर्ण होती है; (vi) वह अपने साथी भिक्षुओं को शिक्षा देता है, प्रोत्साहित करता है, प्रेरित करता है और प्रसन्न करता है। इन छह गुणों से युक्त भिक्षु स्वयं और दूसरों दोनों को लाभ पहुँचाने में सक्षम होता है।

(2) "पाँच गुणों से युक्त भिक्षु स्वयं और दूसरों दोनों को लाभ पहुँचाने में सक्षम होता है। वे पाँच गुण कौन से हैं?"

यहां, भिक्षु लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं को शीघ्रता से समझने वाला नहीं होता। हालांकि, (i) वह सीखी हुई शिक्षाओं को मन में धारण करने में सक्षम होता है; (ii) वह मन में धारण की गई शिक्षाओं के अर्थ की खोज करता है; (iii) उसने धम्म का अर्थ और उसे समझ लिया होता है और वह धम्म के अनुसार अभ्यास करता है; (iv) वह एक अच्छा वक्ता होता है और अर्थ को अभिव्यक्त करने में कुशल होता है; (v) वह अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश देता है, प्रोत्साहित करता है, प्रेरित करता है और प्रसन्न करता है। इन पांच गुणों से युक्त भिक्षु स्वयं और दूसरों दोनों को लाभ पहुंचा सकता है।

(3) "चार गुणों से युक्त भिक्षु स्वयं को लाभ पहुँचा सकता है, परन्तु दूसरों को नहीं। वे चार गुण कौन से हैं?"

"यहाँ, (i) एक भिक्षु लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं को शीघ्रता से समझ लेता है; (ii) वह सीखी हुई शिक्षाओं को मन में धारण करने में सक्षम होता है; [297] (iii) वह मन में धारण की गई शिक्षाओं के अर्थ की खोज करता है; (iv) उसने धम्म का अर्थ और उसे समझ लिया है और धम्म के अनुसार अभ्यास करता है। यद्यपि, वह एक अच्छा वक्ता नहीं होता जिसकी बोलने की शैली अच्छी हो/न ही वह परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थपूर्ण वाणी से संपन्न होता है; और वह अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश देने, प्रोत्साहित करने, प्रेरित करने और प्रसन्न करने वाला नहीं होता। उपरोक्त चार गुणों से युक्त एक भिक्षु स्वयं को लाभ पहुँचा सकता है, लेकिन दूसरों को नहीं।"

(4) "चार गुणों से युक्त भिक्षु दूसरों को लाभ पहुँचा सकता है, लेकिन स्वयं को नहीं। वे चार गुण कौन से हैं?"

यहां, (i) एक भिक्षु लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं को शीघ्रता से समझ लेता है; (ii) वह सीखी हुई शिक्षाओं को याद रखने में सक्षम होता है। हालांकि, वह याद रखी हुई शिक्षाओं के अर्थ की जांच नहीं करता, और न ही उसने अर्थ और धम्म को समझा है तथा न ही वह धम्म के अनुसार अभ्यास करता है। (iii) फिर भी, वह एक अच्छा वक्ता होता है जिसकी प्रस्तुति अच्छी होती है... अर्थ को अभिव्यक्त करता है; और (iv) वह अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश देता है, प्रोत्साहित करता है, प्रेरित करता है और प्रसन्न करता है। उपरोक्त चार गुणों से युक्त एक भिक्षु दूसरों को लाभ पहुंचा सकता है, लेकिन स्वयं को नहीं।

(5) "तीन गुणों से युक्त भिक्षु स्वयं को लाभ पहुंचा सकता है, लेकिन दूसरों को नहीं। वे तीन गुण क्या हैं?"

"यहाँ, भिक्षु लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं को शीघ्रता से समझने वाला नहीं होता। यद्यपि, (i) वह सीखी हुई शिक्षाओं को मन में धारण करने में सक्षम होता है, (ii) वह मन में धारण की गई शिक्षाओं के अर्थ की खोज करता है, और (iii) उसने धम्म का अर्थ और उसे समझ लिया होता है तथा धम्म के अनुसार अभ्यास करता है। परन्तु वह अच्छे वक्ता और प्रभावशाली वक्ता नहीं होता... [298] ... अर्थ को अभिव्यक्त करने वाला; और वह ऐसा व्यक्ति नहीं होता जो अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश दे, प्रोत्साहित करे, प्रेरित करे और प्रसन्न करे। उपरोक्त तीन गुणों से युक्त भिक्षु स्वयं को लाभ पहुँचा सकता है, परन्तु दूसरों को नहीं।"

(6) "तीन गुणों से युक्त भिक्षु दूसरों को लाभ पहुँचा सकता है, लेकिन स्वयं को नहीं। वे तीन गुण क्या हैं?"

यहां, भिक्षु लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं को शीघ्रता से समझने वाला नहीं होता, परन्तु (i) वह सीखी हुई शिक्षाओं को मन में धारण करने में सक्षम होता है। यद्यपि वह मन में धारण की गई शिक्षाओं के अर्थ की खोज नहीं करता, और न ही वह अर्थ और धम्म को समझता है, और न ही धम्म के अनुसार अभ्यास करता है। (ii) फिर भी, वह एक अच्छा वक्ता होता है और अर्थ को अच्छी तरह से अभिव्यक्त

करता है; और (iii) वह अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश देता है, प्रोत्साहित करता है, प्रेरित करता है और प्रसन्न करता है। उपरोक्त तीन गुणों से युक्त भिक्षु दूसरों को लाभ पहुंचा सकता है, परन्तु स्वयं को नहीं।

(7) "दो गुणों से युक्त भिक्षु स्वयं को लाभ पहुँचा सकता है, लेकिन दूसरों को नहीं। वे दो गुण क्या हैं?"

यहां, भिक्षु लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं को शीघ्रता से नहीं समझ पाता और न ही वह सीखी हुई शिक्षाओं को याद रख पाता है। हालांकि, (i) वह अपने द्वारा याद रखी गई शिक्षाओं के अर्थ की खोज करता है, और (ii) वह अर्थ और धम्म को समझ लेता है और धम्म के अनुसार अभ्यास करता है। लेकिन वह अच्छे वक्ता के रूप में अर्थ को अभिव्यक्त करने में सक्षम नहीं होता; और न ही वह अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश देने, प्रोत्साहित करने, प्रेरित करने और प्रसन्न करने वाला होता है। उपरोक्त दो गुणों से युक्त भिक्षु स्वयं को लाभ पहुंचा सकता है, लेकिन दूसरों को नहीं।

(8) "दो गुणों से युक्त भिक्षु दूसरों को लाभ पहुँचा सकता है, लेकिन स्वयं को नहीं। वे दो गुण क्या हैं?"

"यहाँ, भिक्षु लाभकारी (कुशल) शिक्षाओं को शीघ्रता से ग्रहण करने वाला नहीं होता; वह सीखी हुई शिक्षाओं को मन में धारण करने में सक्षम नहीं होता; वह मन में रखी हुई शिक्षाओं के अर्थ की खोज नहीं करता; [299] और वह धम्म के अर्थ और उसके अनुसार अभ्यास नहीं करता। परन्तु (i) वह अच्छे वक्ता और प्रभावशाली वक्ता होता है... अर्थ को अभिव्यक्त करता है; और (ii) वह अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश देता है, प्रोत्साहित करता है, प्रेरित करता है और प्रसन्न करता है। उपरोक्त दो गुणों से युक्त भिक्षु दूसरों को लाभ पहुँचाने में सक्षम होता है, परन्तु स्वयं को नहीं।"

---

63 संक्षेप में (संखित्त सं. संक्षिप्त)

फिर एक भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और उनसे कहा:

"भंते, यह अच्छा होगा यदि भगवान (बुद्ध) मुझे संक्षेप में धम्म (मार्ग) सिखा दें, ताकि भगवान (बुद्ध) से धम्म सुनकर मैं एकांत में, एकांतप्रिय, सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ रह सकूँ।"

"यहाँ कुछ खोखले लोग इसी प्रकार मुझसे विनती करते हैं, परन्तु जब धम्म की व्याख्या हो जाती है, तो वे केवल मेरे पीछे-पीछे चलने के बारे में सोचते हैं।" 1764

"भंते, हे भगवान (बुद्ध) मुझे संक्षेप में धम्म (मार्ग) सिखाएं। हे सुगत (भगवान बुद्ध) मुझे संक्षेप में धम्म सिखाएं। शायद मैं भगवान (बुद्ध) के कथन का अर्थ समझ सकूं; शायद मैं भगवान (बुद्ध) के कथन का उत्तराधिकारी बन सकूं।"

"तो फिर, भिक्षु, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'मेरा मन दृढ़ और आंतरिक रूप से स्थिर रहेगा। उत्पन्न होने वाली अकुशल अवस्थाएँ मेरे मन को वश में नहीं करेंगी।' इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।"

(1) "हे भिक्षु, जब तुम्हारा मन दृढ़ और आंतरिक रूप से स्थिर हो, और उत्पन्न हुई अकुशल अवस्थाएँ तुम्हारे मन को वश में न करें, तब तुम्हें इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: [300] 'मैं प्रेम और करुणा द्वारा मन की मुक्ति का विकास और पोषण करूँगा, इसे अपना साधन और आधार बनाऊँगा, इसे पूरा करूँगा, इसे सुदृढ़ करूँगा और इसे ठीक से ग्रहण करूँगा।' तुम्हें इसी प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।"

जब आप इस प्रकार समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का विकास और अभ्यास कर लें, तो आपको इस समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का विचार और परीक्षण सहित विकास करना चाहिए; आपको इसका बिना विचार के, केवल परीक्षण सहित विकास करना चाहिए; आपको इसका बिना विचार और परीक्षण के विकास करना चाहिए। आपको इसका आनंद (पीति) के साथ विकास करना चाहिए; आपको इसका आनंद (पीति) के बिना विकास करना चाहिए; आपको इसका आराम के साथ विकास करना चाहिए; और आपको इसका उदासीनता (भीतर में समा जाना/उपेक्खा) के साथ विकास करना चाहिए। 1765

(2) — (4) "हे भिक्षु, जब आप इस प्रकार समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) विकसित कर लें और इसे अच्छी तरह से विकसित कर लें, तो आपको स्वयं को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए: 'मैं करुणा द्वारा मन की मुक्ति, परोपकारी आनंद द्वारा मन की मुक्ति, उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) द्वारा मन की मुक्ति को विकसित और पोषित करूँगा, इसे अपना साधन और आधार बनाऊँगा, इसे आगे बढ़ाऊँगा, इसे सुदृढ़ करूँगा और इसे ठीक से ग्रहण करूँगा।' इस प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।"

जब आप इस प्रकार समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) विकसित और पोषित कर लें, तो आपको इस एकाग्रता को विचार और परीक्षण के साथ विकसित करना चाहिए; आपको इसे बिना विचार के, केवल परीक्षण के साथ विकसित करना चाहिए; आपको इसे बिना विचार और परीक्षण के विकसित करना चाहिए। आपको इसे आनंद (पीति) के साथ विकसित करना चाहिए; आपको इसे आनंद (पीति) के बिना विकसित करना चाहिए; आपको इसे सुख के साथ विकसित करना चाहिए; और आपको इसे उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) के साथ विकसित करना चाहिए।

(5) "हे भिक्षु, जब आप इस प्रकार समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) को अच्छी तरह से विकसित कर लें, तो आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'मैं शरीर में शरीर को देखते हुए (अनुपसी में) तल्लीन रहूंगा, पूरी तरह से बोध करते हुए, सती होते हुए, संसार के प्रति लालसा और निराशा को दूर करते हुए।' आपको इसी प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।"

जब आप इस प्रकार समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) विकसित और पोषित कर लें, तो आपको इस समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) को विचार और परीक्षण के साथ विकसित करना चाहिए; आपको इसे बिना विचार के, केवल परीक्षण के साथ विकसित करना चाहिए; आपको इसे बिना विचार और परीक्षण के विकसित करना चाहिए। आपको इसे आनंद (पीति) के साथ विकसित करना चाहिए; आपको इसे आनंद (पीति) के बिना विकसित करना चाहिए; आपको इसे सुख के साथ विकसित करना चाहिए; और आपको इसे उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) के साथ विकसित करना चाहिए।

(6)— (8) "हे भिक्षु, जब आप इस प्रकार समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) विकसित कर लें और इसे भली-भांति विकसित कर लें, तो आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'मैं संवेदनाओं (वेदना) को संवेदनाओं (वेदना) में देखते हुए (अनुपसी में) ध्यान में रहूँगा... मन को मन में... घटनाओं (धर्म) को घटनाओं में, उत्साही, पूर्णतः बोध करते हुए, सचेत (ध्यान/सती) रहते हुए, संसार के प्रति लालसा और निराशा को दूर करते हुए।' इस प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।"

जब आप इस प्रकार समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का विकास और अभ्यास कर लें, तो आपको इस समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का विचार और परीक्षण सहित विकास करना चाहिए; आपको इसका विचार रहित, केवल परीक्षण सहित विकास करना चाहिए; आपको इसका विचार और परीक्षण रहित विकास करना चाहिए। आपको इसका आनंद (पीति) सहित विकास करना चाहिए; आपको इसका आनंद (पीति) रहित विकास करना चाहिए; आपको इसका आराम सहित विकास करना चाहिए; और आपको इसका उदासीनता (भीतर में विलीनता/उपेक्खा) सहित विकास करना चाहिए।

"हे भिक्षु, जब आप इस प्रकार समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) को अच्छी तरह से विकसित कर लेते हैं, तब आप जहाँ भी चलेंगे, सहजता से चलेंगे; जहाँ भी खड़े होंगे, सहजता से खड़े रहेंगे; जहाँ भी बैठेंगे, सहजता से बैठेंगे; जहाँ भी लेटेंगे, सहजता से लेटेंगे।"

भगवान (बुद्ध) से ऐसा उपदेश पाकर, वह भिक्षु अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर मुख करके उनकी परिक्रमा की और प्रस्थान किया। 767 फिर, एकांतवास में, एकांतप्रिय, सजग और दृढ़ निश्चय के साथ, थोड़े ही समय में उस भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से इसी जीवन में ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) की उस अतुलनीय पूर्णता को स्वयं अनुभव कर लिया, जिसके लिए कुलवासी गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करते हैं, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करने लगे। [302] उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से जाना: "पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।" और वह भिक्षु अरहंतों में से एक बन गए।

---

64 गया (गयासिसा)

एक बार भगवान (बुद्ध) गयासिस के दिन गया में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

(1) "भिक्षुओं (मठवासियों), मेरे ज्ञानोदय से पहले, जब मैं अभी भी बोधिसत्व था, पूरी तरह से प्रबुद्ध नहीं था, तब मैंने केवल एक (दिव्य) प्रकाश (भीतर) देखा।"

लेकिन मैंने (दिव्य) रूपों को नहीं देखा' 768

(2) "मेरे मन में यह विचार आया, हे भिक्षुओं: 'यदि मैं (दिव्य) प्रकाश को देख सकूँ और (दिव्य) रूपों को भी देख सकूँ, तो मेरी यह ज्ञान और दृष्टि और भी अधिक शुद्ध हो जाएगी।' 1769 अतः बाद में, जब मैं सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ निवास कर रहा था, तब मैंने (दिव्य) प्रकाश को देखा और (दिव्य) रूपों को भी देखा।

फिर भी मैंने उन देवताओं (देवदूतों) के साथ मेलजोल नहीं रखा, उनसे बातचीत नहीं की और न ही उनके साथ किसी चर्चा में भाग लिया।

(3) "हे भिक्षुओं, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं (दिव्य) प्रकाश का अनुभव करूँ और (दिव्य) रूपों को देखूँ, और उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति करूँ, उनसे संवाद करूँ और उनके साथ चर्चा में संलग्न होऊँ, तो ऐसी स्थिति में मेरा यह ज्ञान और दृष्टि और भी अधिक शुद्ध हो जाएगी।' अतः बाद में, जब मैं सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर निवास कर रहा था, तब मैंने (दिव्य) प्रकाश का अनुभव किया और (दिव्य) रूपों को देखा, और मैंने उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति की, उनसे संवाद किया और उनके साथ चर्चा में संलग्न हुआ।"

फिर भी मुझे उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में पता नहीं था: 'ये देवता (देवदूत) देवों (देवदूतों/ईश्वरों) के इस या उस क्रम से हैं।' [303]

(4) "हे भिक्षुओं, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं (दिव्य) प्रकाश को अनुभव करूँ और (दिव्य) रूपों को देखूँ, और उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति करूँ, उनसे संवाद करूँ और उनके साथ चर्चा में संलग्न होऊँ, और उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में यह भी जानूँ: 'ये देवता (देवदूत) इस या उस देवक्रम से हैं', तो ऐसी स्थिति में मेरा यह ज्ञान और दृष्टि और भी अधिक शुद्ध हो जाएगी।' अतः एक बार, जब मैं सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर निवास कर रहा था, तब मैंने (दिव्य) प्रकाश को अनुभव किया और (दिव्य) रूपों को देखा, और उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति की, उनसे संवाद किया और उनके साथ चर्चा में संलग्न हुआ, और मैं उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में यह भी जान गया: 'ये देवता (देवदूत) इस या उस देवक्रम से हैं।'"

फिर भी मुझे उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में पता नहीं था: 'यहाँ से मृत्यु के बाद, ये देवता (देवदूत) इस कर्म के फलस्वरूप वहाँ पुनर्जन्म लेकर आए।'

(5) "हे भिक्षुओं, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं (दिव्य) प्रकाश को अनुभव करूँ और (दिव्य) रूपों को देखूँ, और उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति करूँ, उनसे संवाद करूँ और उनके साथ चर्चा में संलग्न होऊँ, और उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में यह भी जानूँ कि 'ये देवता (देवदूत) इस या उस देवक्रम से हैं', तो ऐसी स्थिति में मेरा यह ज्ञान और दृष्टि और भी अधिक शुद्ध हो जाएगी।' अतः बाद में, जब मैं सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर निवास कर रहा था, तब मैंने (दिव्य) प्रकाश को अनुभव किया और (दिव्य) रूपों को देखा, और उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति की, उनसे संवाद किया और उनके साथ चर्चा में संलग्न हुआ, और मैं उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में यह भी जान गया कि 'ये देवता (देवदूत) इस या उस देवक्रम से हैं।'" मुझे उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में भी पता था: 'यहाँ मरने के बाद, इस कर्म के फलस्वरूप ये देवता (देवदूत) वहाँ पुनर्जन्म लेकर आए।'

फिर भी मुझे उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में पता नहीं था: 'इस कर्म के फलस्वरूप, ये देवता (देवदूत) ऐसे भोजन पर जीवित रहते हैं और ऐसे सुख-दुख का अनुभव करते हैं।'

(6) "हे भिक्षुओं, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं (दिव्य) प्रकाश को अनुभव करूँ और (दिव्य) रूपों को देखूँ, और उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति करूँ, उनसे संवाद करूँ और उनके साथ चर्चा में संलग्न होऊँ, और उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में यह भी जानूँ कि 'ये देवता (देवदूत) इस या उस देवक्रम से हैं', तो ऐसी स्थिति में मेरा यह ज्ञान और दृष्टि और भी अधिक शुद्ध हो जाएगी।' अतः बाद में, जब मैं सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर निवास कर रहा था, तब मैंने (दिव्य) प्रकाश को अनुभव किया और (दिव्य) रूपों को देखा, और उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति की, उनसे संवाद किया और उनके साथ चर्चा में संलग्न हुआ, और मैं उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में यह भी जान गया कि 'ये देवता (देवदूत) इस या उस देवक्रम से हैं।'" मुझे उन देवताओं के बारे में भी पता था: 'यहाँ से मृत्यु के बाद, इस कर्म के फलस्वरूप ये देवता वहाँ पुनर्जन्म लेते हैं।' और मुझे उन देवताओं के बारे में भी पता था: 'इस कर्म के फलस्वरूप, ये देवता ऐसे भोजन पर निर्भर रहते हैं और ऐसे सुख-दुख का अनुभव करते हैं।' और मुझे उन देवताओं के बारे में भी पता था: 'इस कर्म के फलस्वरूप, ये देवता ऐसे भोजन पर निर्भर रहते हैं और ऐसे सुख-दुख का अनुभव करते हैं।'

फिर भी मुझे उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में पता नहीं था: 'इस कर्म के फलस्वरूप, इन देवताओं (देवदूतों) का जीवनकाल इतना लंबा होता है।'

(7) "हे भिक्षुओं, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं (दिव्य) प्रकाश को अनुभव करूँ और (दिव्य) रूपों को देखूँ, और उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति करूँ, उनसे संवाद करूँ और उनके साथ चर्चा में संलग्न होऊँ, और उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में यह भी जानूँ कि 'ये देवता (देवदूत) इस या उस देवक्रम से हैं', तो ऐसी स्थिति में मेरा यह ज्ञान और दृष्टि और भी अधिक शुद्ध हो जाएगी।' अतः एक बार, जब मैं सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर निवास कर रहा था, तब मैंने (दिव्य) प्रकाश को अनुभव किया और (दिव्य) रूपों को देखा, और उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति की, उनसे संवाद किया और उनके साथ चर्चा में संलग्न हुआ, और मैं उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में यह भी जान गया कि 'ये देवता (देवदूत) इस या उस देवक्रम से हैं।'" मुझे उन देवताओं के बारे में भी पता था: 'यहाँ से मृत्यु के बाद, इस कर्म के फलस्वरूप ये देवता वहाँ पुनर्जन्म लेते हैं।' मुझे उन देवताओं के बारे में भी पता था: 'इस कर्म के फलस्वरूप, ये देवता ऐसे भोजन पर निर्भर रहते हैं और ऐसे सुख-दुख का अनुभव करते हैं।' और मुझे उन देवताओं के बारे में भी पता था: 'इस कर्म के फलस्वरूप, ये देवता ऐसे भोजन पर निर्भर रहते हैं और ऐसे सुख-दुख का अनुभव करते हैं।' और मुझे उन देवताओं के बारे में भी पता था: 'इस कर्म के फलस्वरूप, इन देवताओं का जीवनकाल इतना लंबा होता है।'

लेकिन मुझे यह नहीं पता था कि मैं पहले उन देवताओं (देवदूतों) के साथ रह चुका था या नहीं।

(8) "मेरे मन में यह विचार आया, हे भिक्षुओं: 'यदि (i) मैं एक (दिव्य) प्रकाश को अनुभव करूँ और (ii) (दिव्य) रूपों को देखूँ; और (iii) मैं उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति करूँ, उनसे वार्तालाप करूँ और उनके साथ चर्चा में संलग्न होऊँ [304]; और (iv) उन देवताओं (देवदूतों) के बारे में जानूँ: 'ये देवता (देवदूत) इस या उस प्रकार के देवताओं (देवदूतों/देवताओं) से हैं'; और (v) 'यहाँ से मृत्यु के बाद, ये देवता (देवदूत) इस कर्म (कर्म/कार्यों) के फलस्वरूप वहाँ पुनर्जन्म लेते हैं'; और (vi) 'इस कर्म (कर्म/कार्यों) के फलस्वरूप, ये देवता (देवदूत) ऐसे भोजन पर निर्भर रहते हैं और ऐसे सुख-दुख का अनुभव करते हैं'; और (vii) 'इस कर्म (कर्म/कार्यों) के फलस्वरूप, इन देवताओं (देवदूतों) का जीवनकाल इतनी लंबाई का होता है'; और (viii) यह भी जान लें कि क्या मैं पहले उन देवताओं (देवदूतों) के साथ रहा था या नहीं, ऐसी स्थिति में मेरा यह ज्ञान और दृष्टि और भी अधिक शुद्ध हो जाएगी।'

"तो बाद में एक अवसर पर, जब मैं सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चय के साथ निवास कर रहा था: (i) मैंने एक (दिव्य) प्रकाश देखा और (ii) (दिव्य) रूप देखे; और (iii) मैंने उन देवताओं (देवदूतों) के साथ संगति की, उनसे बातचीत की और उनके साथ चर्चा में संलग्न हुआ; और (iv) मुझे उन देवताओं के बारे में यह भी पता चला: 'ये देवता (देवदूत) इस या उस प्रकार के देवों (देवदूतों/ईश्वरों) से हैं'; और (v) 'यहाँ से मृत्यु के बाद, ये देवता (देवदूत) इस कर्म (कर्म/कार्य) के फलस्वरूप वहाँ पुनर्जन्म हुए'; और (vi) 'इस कर्म (कर्म/कार्य) के फलस्वरूप, ये देवता (देवदूत) ऐसे भोजन पर निर्भर रहते हैं और ऐसे सुख-दुख का अनुभव करते हैं'; और (vii) 'इस कर्म (कर्म/कार्य) के फलस्वरूप, इन देवताओं (देवदूतों) का जीवनकाल इतनी लंबाई का है'; और (viii) मुझे यह भी पता चला कि क्या या नहीं, मैं पहले उन देवताओं (देवदूतों) के साथ रह चुका था। 1770

भिक्षुओं, जब तक देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के आठ पहलुओं के बारे में मेरा ज्ञान और दृष्टि पूर्णतः शुद्ध नहीं हुई थी, तब तक मैंने इस संसार में, जिसमें देवता (देवदूत/देवता), मार और ब्रह्मा विद हैं, तथा इस संसार में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण विद हैं, और मनुष्य

विद हैं, अद्वितीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दावा नहीं किया। परन्तु जब देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के आठ पहलुओं के बारे में मेरा ज्ञान और दृष्टि पूर्णतः शुद्ध हो गई, तब मैंने [305] इस संसार में, जिसमें देवता (देवदूत/देवता) विद हैं, अद्वितीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दावा किया। मेरे भीतर यह ज्ञान और दृष्टि उत्पन्न हुई: 'मेरी मन की मुक्ति अविचल है; यह मेरा अंतिम पुनर्जन्म है; अब कोई नया अस्तित्व (पुनर्जन्म का कारण) नहीं है।'

---

65 अभिभयताना (विजय प्राप्त करना)

"भिक्षुओं (संतों), संसार पर विजय पाने के ये आठ आधार हैं। 1771 वे आठ कौन से हैं?"

(1) "जो व्यक्ति आंतरिक रूप से (दिव्य) रूपों को जानता है, वह बाह्य रूप से (दिव्य) रूपों को सीमित, सुंदर या कुरूप देखता है। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार जानता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' यही विजय प्राप्त करने का पहला आधार है।" 1772

(2) "जो व्यक्ति आंतरिक रूप से (दिव्य) रूपों को जानता है, वह बाह्य रूप से भी (दिव्य) रूपों को देखता है, जो असीम, सुंदर या कुरूप हो सकते हैं। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार जानता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' यही विजय प्राप्त करने का दूसरा आधार है।" 1773

(3) "जो व्यक्ति आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से ही रूपों को देखता है, चाहे वे सीमित हों, सुंदर हों या बदसूरत। इन रूपों पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देख पाता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' यही विजय प्राप्त करने का तीसरा आधार है।" 1774

(4) "जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से, असीम, सुंदर या बदसूरत रूपों को देखता है। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देख पाता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' यह विजय प्राप्त करने का चौथा आधार है।"

(5) "जो व्यक्ति आंतरिक रूप से (दिव्य) रूपों को नहीं देख पाता, वह बाह्य रूप से (दिव्य) रूपों को देखता है, नीले रंग के, नीले रंग से आभास वाले, नीले रंग की आभा वाले। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देख पाता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' यह विजय प्राप्त करने का पाँचवाँ आधार है।" L775

(6) "जो आंतरिक रूप से (दिव्य) रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से (दिव्य) रूपों को देखता है, पीले रंग के, पीले रंग से युक्त, पीले रंग की आभा वाले। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देख पाता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' यह विजय प्राप्त करने का छठा आधार है। [306]

(7) "जो आंतरिक रूप से (दिव्य) रूपों को नहीं देख पाता, वह बाह्य रूप से (दिव्य) रूपों को देखता है, लाल रंग के, लाल आभा वाले, लाल रंगत वाले। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देख पाता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' यह विजय प्राप्त करने का सातवाँ आधार है।"

(8) "जो आंतरिक रूप से (दिव्य) रूपों को नहीं देख पाता, वह बाह्य रूप से (दिव्य) रूपों को देखता है, जो श्वेत हैं, श्वेत रंग के हैं, श्वेत आभा वाले हैं, श्वेत रंगत वाले हैं। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देख पाता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' यह विजय प्राप्त करने का आठवाँ आधार है।"

"भिक्षुओं, ये विजय प्राप्त करने के आठ आधार हैं।"

---

66 मुक्ति (विमोक्ख बिना विमोक्ष)

"भिक्षुओं, ये आठ मुक्ति हैं। 1776 कौन सी आठ?

(1) "रूप को धारण करने वाला व्यक्ति (आंतरिक रूप से) (दिव्य) रूपों को देखता है। यही पहली मुक्ति है। 1777

(2) "जो आंतरिक रूप से (दिव्य) रूपों को नहीं देख पाता, वह बाह्य रूप से (दिव्य) रूपों को देखता है। यही दूसरी मुक्ति है।" 1778

(3) "व्यक्ति का ध्यान (आंतरिक रूप से) केवल 'पवित्र (सुभा)' पर केंद्रित होता है। यही तीसरी मुक्ति है। 1779

(4) "दिव्य रूपों (अर्थात् देवताओं (देवदूतों)) की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने पर, विविधता की (दिव्य) धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के प्रति उदासीन होकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का अनुभव करते हुए, व्यक्ति अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। यही चौथी मुक्ति है। (अर्थात् देवताओं (देवदूतों) की धारणा (सन्ना/संज्ञा) से ऊपर उठना और दूर जाना)"

(5) "अंतरिक्ष की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'चेतना अनंत है' का बोध करते हुए, व्यक्ति चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। यही पाँचवीं मुक्ति है।"

(6) चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, व्यक्ति शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। यही छठी मुक्ति है।

(7) "शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, व्यक्ति न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। यही सातवीं मुक्ति है।"

(8) न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अनुभूति (वेदना) के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, व्यक्ति अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। 1780 यही आठवीं मुक्ति है। (अंतिम विमोक्ष/निब्बान/निर्वाण)

"ये, भिक्षुओं, आठ मुक्ति हैं।" [307]

---

67 तुच्छ घोषणाएँ (अन्यावोहारा सं. अनार्य-विहार)

भिक्षुओं, ये आठ नीच घोषणाएँ हैं। 1781 वे आठ कौन सी हैं? (1) वह कहना जो देखा नहीं है, उसे देखना; (2) वह सुनना जो सुना नहीं है, उसे सुनना; (3) वह महसूस करना जो महसूस नहीं किया है, उसे महसूस करना; (4) वह जानना जो जाना नहीं है, उसे जानना; (5) वह न देखना जो वास्तव में देखा है; (6) वह न सुनना जो वास्तव में सुना है; (7) वह न महसूस करना जो वास्तव में महसूस किया है; (8) वह न जानना जो वास्तव में जाना है। ये आठ नीच घोषणाएँ हैं।

---

68 महान घोषणाएँ (अरियावोहारा सं. आर्य-विहार)

भिक्षुओं, ये आठ श्रेष्ठ घोषणाएँ हैं। 1782 वे आठ कौन सी हैं? (1) यह कहना कि आपने वह नहीं देखा जो आपने नहीं देखा; (2) यह कहना कि आपने वह नहीं सुना जो आपने नहीं सुना; (3) यह कहना कि आपने वह नहीं महसूस किया जो आपने नहीं महसूस किया; (4) यह कहना कि आपने वह नहीं जाना जो आपने नहीं जाना; (5) यह कहना कि आपने वह देखा जो आपने वास्तव में देखा है; (6) यह कहना कि आपने वह सुना जो आपने वास्तव में सुना है; (7) यह कहना कि आपने वह महसूस किया जो आपने वास्तव में महसूस किया है; (8) यह कहना कि आपने वह जान लिया जो आपने वास्तव में जान लिया है। ये आठ श्रेष्ठ घोषणाएँ हैं।

---

69 विधानसभाएं 1783 (पेरिसा बिना परिषद)

भिक्षुओं, ये आठ सभाएँ हैं। कौन सी आठ? क्षत्रियों की सभा, ब्राह्मणों की सभा, गृहस्थों की सभा, तपस्वियों की सभा, चार महान राजाओं द्वारा शासित देवताओं की सभा, तावतिंसा देवताओं की सभा, मार की सभा और ब्रह्मा की सभा।

(1) "अब मुझे याद आता है, भिक्षुओं, मैं सैकड़ों क्षत्रियों की एक सभा में गया। मैं पहले वहाँ बैठा, बातचीत की और चर्चाएँ कीं। मैं उन्हीं की तरह प्रकट हुआ और मेरी आवाज़ भी उन्हीं की तरह हो गई। मैंने उन्हें धम्म प्रवचन से उपदेश दिया, प्रोत्साहित किया, प्रेरित किया और प्रसन्न किया, और जब मैं बोल रहा था तो वे मुझे पहचान नहीं पाए, बल्कि सोचने लगे: 'कौन बोल रहा है, कोई देव (देवदूत/भगवान) या कोई मनुष्य?' उन्हें धम्म प्रवचन से उपदेश देने, प्रोत्साहित करने, प्रेरित करने और प्रसन्न करने के बाद, मैं अंतर्धान हो गया, और जब मैं अंतर्धान हो गया तो वे मुझे पहचान नहीं पाए, बल्कि सोचने लगे: 'कौन अंतर्धान हो गया, कोई देव या कोई मनुष्य?' 1784 . [308]

(2) -(8) "फिर मुझे याद आता है, भिक्षुओं, मैं सैकड़ों ब्राह्मणों की सभा में गया... सैकड़ों गृहस्थों की सभा में... सैकड़ों तपस्वियों की सभा में... चार महान राजाओं के अधीन सैकड़ों देवताओं की सभा में... सैकड़ों तावतिंसा देवताओं की सभा में... मार के अधीन सैकड़ों की सभा में... ब्रह्मा के अधीन सैकड़ों की सभा में। मैं पहले वहाँ बैठा, बातचीत की और चर्चाएँ कीं। मैं उन्हीं की तरह प्रकट हुआ और मेरी वाणी भी उन्हीं की वाणी जैसी हो गई। मैंने उन्हें धम्म प्रवचन से उपदेश दिया, प्रोत्साहित किया, प्रेरित किया और प्रसन्न किया, और जब मैं बोल रहा था तो वे मुझे पहचान नहीं पाए बल्कि सोचने लगे: 'कौन बोल रहा है, कोई देवता या मनुष्य?'" उन्हें धम्म प्रवचन देकर उपदेश देने, प्रोत्साहित करने, प्रेरित करने और प्रसन्न करने के बाद, मैं अंतर्धान हो गया, और मेरे अंतर्धान होने पर वे मुझे पहचान नहीं पाए बल्कि सोचने लगे: 'अंततः कौन अंतर्धान हुआ है, कोई देव (देवदूत/भगवान) या कोई मनुष्य?'

"भिक्षुओं, ये आठ सभाएँ हैं।"

---

70 भूकंप [1785] (भूमिकला)

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। सुबह, भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किए और भिक्षा मांगने के लिए वैशाली में प्रवेश किया। वैशाली में भिक्षा मांगने के बाद, भोजन करने और भिक्षा मांगने के बाद लौटते समय उन्होंने पूज्य आनंद से कहा, "आनंद, बैठने के लिए एक कपड़ा ले लो। चलो आज के लिए चपाल मंदिर चलते हैं।"

"जी, भंते," पूज्य आनंद ने उत्तर दिया और बैठने का कपड़ा लेकर भगवान (बुद्ध) के पीछे-पीछे चलने लगे। फिर भगवान (बुद्ध) चपाल मंदिर गए, उनके लिए तैयार आसन पर बैठ गए और पूज्य आनंद से कहा: [309]

"हे आनंद, वैशाली मंदिर कितना आनंदमय है! उदेना मंदिर कितना आनंदमय है! गौतमका मंदिर कितना आनंदमय है! सत्तम्बा मंदिर कितना आनंदमय है! बहुपुत्त मंदिर कितना आनंदमय है! सारंददा मंदिर कितना आनंदमय है! चपाल मंदिर कितना आनंदमय है! हे आनंद, जिसने भी मानसिक शक्ति के चार आधारों (जादू/इद्धि) को विकसित और पोषित किया है, उन्हें आधार बनाया है, उनका पालन किया है, उन्हें सुदृढ़ किया है और उचित रूप से उनका अनुसरण किया है, वह चाहे तो एक युग या उसके शेष भाग तक जीवित रह सकता है। हे आनंद, तथागत (बुद्ध) ने भी मानसिक शक्ति के चार आधारों को विकसित और पोषित किया है, उन्हें आधार बनाया है, उनका पालन किया है, उन्हें सुदृढ़ किया है और उचित रूप से उनका अनुसरण किया है। यदि वे चाहें तो तथागत (बुद्ध) एक युग या उसके शेष भाग तक जीवित रह सकते हैं।" 1786

लेकिन भगवान (बुद्ध) द्वारा इतना स्पष्ट संकेत दिए जाने के बावजूद, पूज्य आनंद उस संकेत को समझ नहीं पाए। उन्होंने भगवान (बुद्ध) से यह निवेदन नहीं किया: "भंते, भगवान (बुद्ध) युगों तक जीवित रहें! सुगत (भगवान बुद्ध) युगों तक जीवित रहें, अनेकों लोगों के कल्याण के लिए, अनेकों लोगों के सुख के लिए, संसार के प्रति करुणा से, देवताओं और मनुष्यों के भले, कल्याण और सुख के लिए।" क्योंकि उनका मन मार के वश में था। 1787

दूसरी बार... तीसरी बार भगवान (बुद्ध) ने पूज्य आनंद को संबोधित करते हुए कहा: "वैशाली रमणीय है... उदेना मंदिर रमणीय है... चपाला मंदिर रमणीय है। हे आनंद, जिसने भी मानसिक शक्ति के चार आधारों (जादू/इद्धि) का विकास और संवर्धन किया है... और उन्हें विधिपूर्वक अपनाया है, वह चाहे तो एक युग या उसके शेष भाग तक जीवित रह सकता है। हे आनंद, तथागत (बुद्ध) ने मानसिक शक्ति के चार आधारों का विकास और संवर्धन किया है, उन्हें एक माध्यम और आधार बनाया है, उनका पालन किया है, उन्हें सुदृढ़ किया है और उन्हें विधिपूर्वक अपनाया है। यदि वे चाहें तो तथागत (बुद्ध) एक युग या उसके शेष भाग तक जीवित रह सकते हैं।"

लेकिन फिर भी, यद्यपि पूज्य आनंद [310] को भगवान (बुद्ध) द्वारा इतना स्पष्ट संकेत दिया गया था, यद्यपि उन्हें इतना स्पष्ट संकेत दिया गया था, वे संकेत को समझ नहीं पाए... क्योंकि उनका मन मार से ग्रस्त था।

तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य आनंद को संबोधित करते हुए कहा, "आनंद, आप अपनी सुविधानुसार जा सकते हैं।"

"जी, भंते," पूज्य आनंद ने उत्तर दिया, और वे अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की, और भगवान (बुद्ध) से कुछ ही दूरी पर एक वृक्ष के चरणों में बैठ गए।

फिर, पूज्य आनंद के जाने के कुछ ही समय बाद, दुष्ट मारा ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, अब भगवान (बुद्ध) को अंतिम निर्वाण प्राप्त हो! अब सुगत (भगवान बुद्ध) को अंतिम निर्वाण प्राप्त हो! अब समय आ गया है, भंते, भगवान (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण का! ये शब्द भगवान (बुद्ध) ने कहे थे, भंते।"

1788 'मैं अंतिम निर्वाण प्राप्त नहीं करूँगा। हे दुष्ट, जब तक ऐसा नहीं होता'

मेरे भिक्षु शिष्य जो योग्य, अनुशासित, आत्मविश्वासी, बंधन से मुक्त, विद्वान, धम्म के समर्थक, धम्म के अनुसार अभ्यास करने वाले, उचित मार्ग पर अभ्यास करने वाले, उचित आचरण करने वाले; जिन्होंने अपने गुरु की शिक्षा को सीखा है और उसकी व्याख्या कर सकते हैं, उसे सिखा सकते हैं, उसका प्रचार कर सकते हैं, उसे स्थापित कर सकते हैं, उसे प्रकट कर सकते हैं, उसका विश्लेषण कर सकते हैं और उसे स्पष्ट कर सकते हैं; जो दूसरों के प्रचलित सिद्धांतों का तर्कपूर्ण ढंग से खंडन कर सकते हैं और प्रतिकारक धम्म का उपदेश दे सकते हैं। 1789 (मारा:) 'अब इस समय भगवान (बुद्ध) के पास योग्य भिक्षु शिष्य हैं... और जो प्रतिकारक धम्म का उपदेश दे सकते हैं। भंते, अब भगवान (बुद्ध) को अंतिम निर्वाण प्राप्त हो! अब सुगत (भगवान बुद्ध) को अंतिम निर्वाण प्राप्त हो! अब भगवान (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण का समय है! '

और ये शब्द, हे भंते, भगवान (बुद्ध) द्वारा कहे गए थे।

मैं अंतिम निर्वाण प्राप्त नहीं करूँगा। हे दुष्ट, जब तक ऐसा नहीं होता

मेरी भिक्षुणी (भिक्षुणियाँ) शिष्याएँ जो योग्य हैं... जब तक कि मेरे पुरुष गृहस्थ शिष्य [311] जो योग्य हैं... जब तक कि मेरी स्त्री गृहस्थ शिष्याएँ जो योग्य हैं... और प्रतिकारक धम्म का शिक्षण करती हैं। (मारा:) 'अब वर्तमान में भगवान (बुद्ध) के पास भिक्षुणी (भिक्षुणियाँ) शिष्याएँ हैं... पुरुष गृहस्थ शिष्य... स्त्री गृहस्थ शिष्याएँ जो योग्य, अनुशासित, आत्मविश्वासी, बंधन से मुक्त, विद्वान, धम्म के समर्थक, धम्म के अनुसार अभ्यास करने वाले, उचित मार्ग से अभ्यास करने वाले, तदनुसार आचरण करने वाले; जिन्होंने अपने गुरु के सिद्धांत को सीखा है और उसकी व्याख्या कर सकते हैं, उसे सिखा सकते हैं, उसका प्रचार कर सकते हैं, उसे स्थापित कर सकते हैं, उसे प्रकट कर सकते हैं, उसका विश्लेषण कर सकते हैं और उसे स्पष्ट कर सकते हैं; जो दूसरों के प्रचलित सिद्धांतों का तर्कपूर्ण ढंग से खंडन कर सकते हैं और प्रतिकारक धम्म का शिक्षण कर सकते हैं। भंते, भगवान (बुद्ध) अब अंतिम निर्वाण प्राप्त करें! सौभाग्यशाली अब अंतिम निर्वाण प्राप्त करें! अब भगवान (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण का समय आ गया है!

"और हे भंते, भगवान (बुद्ध) ने ये शब्द कहे: 'हे दुष्ट, मैं तब तक अंतिम निर्वाण प्राप्त नहीं करूँगा जब तक मेरा यह ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) सफल, समृद्ध, विस्तृत, लोकप्रिय, व्यापक और देवताओं एवं मनुष्यों के बीच सुप्रसिद्ध न हो जाए।' (मारा:) 'भगवान (बुद्ध) का वह ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) सफल, समृद्ध, विस्तृत, लोकप्रिय, व्यापक और देवताओं एवं मनुष्यों के बीच सुप्रसिद्ध हो गया है। भंते, अब भगवान (बुद्ध) को अंतिम निर्वाण प्राप्त होने दो! अब सुगत (भगवान बुद्ध) को अंतिम निर्वाण प्राप्त होने दो! हे भंते, अब भगवान (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण का समय आ गया है!'

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "चिंता मत करो, हे दुष्ट। तथागत (बुद्ध) के अंतिम निर्वाण में अब अधिक समय नहीं लगेगा। तीन महीने बाद तथागत (बुद्ध) अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेंगे।"

तब भगवान (बुद्ध) ने चपाला मंदिर में सती (ध्यान/सती) और पूर्णतः बोध करते हुए अपनी प्राण शक्ति त्याग दी; 1790 और जब भगवान (बुद्ध) ने अपनी प्राण शक्ति त्याग दी, तो एक भयंकर भूकंप आया, जो भयावह और डरावना था, और गरज की आवाजों से आकाश कांप उठा।

तब, इसका अर्थ समझकर, भगवान (बुद्ध) ने उस अवसर पर यह प्रेरित वाणी कही: [312]

"अतुलनीय और निरंतर अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की तुलना करते हुए, ऋषि ने अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की शक्ति को त्याग दिया। आंतरिक रूप से आनंदित होकर, आत्म-मग्न (समाहित/समाधि) में लीन होकर, उन्होंने अपने ही अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) को कवच की तरह तोड़ दिया।" 1791

तब पूज्य आनंद के मन में यह विचार आया: "यह भूकंप सचमुच बहुत शक्तिशाली था! यह भूकंप सचमुच बहुत शक्तिशाली, भयावह और डरावना था, और बिजली की गड़गड़ाहट से आकाश कांप उठा! इतने शक्तिशाली भूकंप का कारण और परिस्थिति क्या होती है?"

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा, "भंते, यह भूकंप सचमुच बहुत शक्तिशाली था! यह भूकंप सचमुच बहुत शक्तिशाली, भयावह और डरावना था, और बिजली की गड़गड़ाहट से आकाश कांप उठा! भंते, इतने शक्तिशाली भूकंप का कारण और परिस्थिति क्या है?"

"आनंदा, शक्तिशाली भूकंप के आठ कारण और परिस्थितियाँ होती हैं। वे आठ क्या हैं?"

(1) "आनंद, यह विशाल पृथ्वी जल (संभवतः द्रव लावा) पर टिकी है; जल वायु (संभवतः सौर वायु) पर टिका है; वायु अंतरिक्ष में बहती है। आनंद, एक समय ऐसा आता है जब तेज हवाएँ चलती हैं और जल को हिला देती हैं। जल के हिलने से पृथ्वी भी हिल जाती है। यही शक्तिशाली भूकंप का पहला कारण और शर्त है।"

(2) "फिर, एक तपस्वी या ब्राह्मण है जो मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) से युक्त है और जिसने मन पर महारत हासिल कर ली है, या एक देवता (देवदूत) है जो अत्यंत शक्तिशाली और बलवान है। उसने पृथ्वी की सीमित (सन्ना/संज्ञा) और जल की असीम (सन्ना/संज्ञा) धारणा विकसित कर ली है। वह इस पृथ्वी को हिलाता, थरथराता और कांपता है। 1792 यह एक शक्तिशाली भूकंप का दूसरा कारण और शर्त है।"

(3) "फिर, जब बोधिसत्व तुषिता संप्रदाय से विदा होकर, सजग (ध्यान/सती) और पूर्णतः बोध करते हुए, अपनी माता के गर्भ में प्रवेश करते हैं, तो यह [313] पृथ्वी कांपती, सिहरती और थरथराती है। यह एक शक्तिशाली भूकंप का तीसरा कारण और शर्त है।

(4) "फिर, जब बोधिसत्व, सचेत (ध्यान/सती) और पूर्णतः ज्ञानी होकर, अपनी माता के गर्भ से प्रकट होता है, तो यह पृथ्वी कांप उठती है, हिल जाती है और थरथरा उठती है। यह शक्तिशाली भूकंप का चौथा कारण और शर्त है।"

(5) "फिर, जब तथागत (बुद्ध) अतुलनीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करते हैं, तो यह पृथ्वी कांपती है, हिलती है और थरथराती है। यह शक्तिशाली भूकंप का पाँचवाँ कारण और शर्त है।"

(6) "फिर, जब तथागत (बुद्ध) धम्म के अतुलनीय चक्र को गतिमान करते हैं, तो यह पृथ्वी कांपती है, हिलती है और थरथराती है। यह शक्तिशाली भूकंप का छठा कारण और शर्त है।"

(7) "फिर, जब तथागत (बुद्ध), सती (ध्यान में लीन) और पूर्णतः बोध करते हुए, अपनी प्राण शक्ति छोड़ देते हैं, तो यह पृथ्वी कांप उठती है, हिल जाती है और थरथरा उठती है। यह शक्तिशाली भूकंप का सातवां कारण और शर्त है।"

(8) "फिर, जब तथागत (बुद्ध) अंतिम निर्वाण प्राप्त करते हैं, तो निर्वाण तत्व के कारण, जिसमें कोई अवशेष शेष नहीं रहता, यह पृथ्वी कांपती है, हिलती है और थरथराती है। यह शक्तिशाली भूकंप का आठवां कारण और शर्त है।"

"ये शक्तिशाली भूकंप के आठ कारण और स्थितियाँ हैं।" [314]

III. जोड़े (यामाकावाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

71 आस्था (1) (सद्ध 1 बिना श्रद्धा)

(1) “भिक्षुओं, एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण हो सकता है, परन्तु वह सद्‌गुणी न हो; अतः वह इस मामले में अपूर्ण है। उसे इस मामले को पूरा करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: 'मैं आस्था से परिपूर्ण होकर सद्‌गुणी कैसे हो सकता हूँ?' परन्तु जब एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण हो और सद्‌गुणी भी हो, तब वह इस मामले में पूर्ण होता है।”

(2) "एक भिक्षु आस्थावान और सद्‌गुणी हो सकता है, लेकिन वह विद्वान नहीं है; इस प्रकार वह उस गुण के संबंध में अपूर्ण है। उसे उस गुण को पूरा करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: 'मैं आस्थावान, सद्‌गुणी और विद्वान कैसे हो सकता हूँ?' लेकिन जब एक भिक्षु आस्थावान, सद्‌गुणी और विद्वान होता है, तब वह उस गुण के संबंध में पूर्ण होता है।"

(3) एक भिक्षु आस्थावान, गुणी और विद्वान हो सकता है, परन्तु वह धम्म का वक्ता नहीं होता... (4) ... धम्म का वक्ता तो हो सकता है, परन्तु सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित होने वाला नहीं... (5) ... सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित होने वाला तो हो सकता है, परन्तु सभा में आत्मविश्वासपूर्वक धम्म का उपदेश देने वाला नहीं... (6) ... सभा में आत्मविश्वासपूर्वक धम्म का उपदेश देने वाला तो हो सकता है, परन्तु इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इस जीवन में ही उच्च मन का निर्माण करने वाले और सुखद निवास स्थान माने जाने वाले चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त करने वाला नहीं... (7) ... इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इस जीवन में ही उच्च मन का निर्माण करने वाले और सुखद निवास स्थान माने जाने वाले चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त करने वाला तो हो सकता है, परन्तु दोषों के नाश के साथ, इस जीवन में ही प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं को अनुभव करने वाला नहीं। जीवन, मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करना। इस प्रकार वह उस कारक के संबंध में अपूर्ण है। उसे उस कारक को पूर्ण करना चाहिए, [315] [यह सोचते हुए]: 'मैं कैसे विश्वास से संपन्न हो सकता हूँ... और साथ ही वह व्यक्ति भी हो सकता हूँ जिसने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान से, इसी जीवन में, मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास किया है?'

(8) "परन्तु जब कोई भिक्षु (i) आस्था से युक्त हो, (ii) गुणी हो, और (iii) विद्वान हो; (iv) धम्म का वक्ता हो; (v) सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित होता हो; (vi) सभा में आत्मविश्वासपूर्वक धम्म का उपदेश देता हो; (vii) इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) प्राप्त करता हो जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं; और (viii) वह ऐसा भी हो जिसने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा, इसी जीवन में, स्वयं के लिए मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया हो, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता हो, तो वह उस कारक के संबंध में पूर्ण हो जाता है।"

"जो भिक्षु इन आठ गुणों से युक्त होता है, वह हर तरह से विश्वास जगाने वाला और हर पहलू में परिपूर्ण होता है।"

---

72 आस्था (2) (सद्ध 2 बिना श्रद्धा)

(1) “भिक्षुओं, एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण हो सकता है, परन्तु यदि वह सद्गुणी न हो; अतः वह इस मामले में अपूर्ण है। उसे इस मामले को पूर्ण करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: 'मैं आस्था से परिपूर्ण होकर सद्गुणी कैसे हो सकता हूँ?' परन्तु जब एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण हो और सद्गुणी भी हो, तो वह इस मामले में पूर्ण हो जाता है।”

(2) "एक भिक्षु आस्थावान और सद्गुणी हो सकता है, लेकिन यदि वह विद्वान न हो; तो वह इस मामले में अपूर्ण है। उसे यह सोचकर इस गुण को पूर्ण करना चाहिए: "मैं आस्थावान, सद्गुणी और विद्वान कैसे हो सकता हूँ?" परन्तु जब कोई भिक्षु आस्थावान, सद्गुणी और विद्वान हो, तो वह इस मामले में पूर्ण हो जाता है।"

(3) "एक भिक्षु आस्थावान, गुणी और विद्वान हो सकता है, परन्तु वह धम्म का वक्ता नहीं होता... (4) ... धम्म का वक्ता तो हो सकता है, परन्तु सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित होने वाला नहीं... (5) ... सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित होने वाला तो हो सकता है, परन्तु सभा में आत्मविश्वासपूर्वक धम्म का उपदेश देने वाला नहीं [316]... (6) ... सभा में आत्मविश्वासपूर्वक धम्म का उपदेश देने वाला तो हो सकता है, परन्तु वह शरीर से संपर्क रखने वाला और उन शांतिपूर्ण मुक्ति में निवास करने वाला नहीं होता जो रूपों से परे, निराकार होती हैं... (7) ... शरीर से संपर्क रखने वाला और उन शांतिपूर्ण मुक्ति में निवास करने वाला, जो रूपों से परे, निराकार होती हैं, परन्तु वह नहीं होता जिसने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा, इसी जीवन में, मन की दोषरहित मुक्ति का अनुभव किया हो। वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त ज्ञान में प्रवेश करके उसमें निवास करता है। इस प्रकार वह उस पहलू में अपूर्ण है। उसे उस पहलू को पूर्ण करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: "मैं कैसे विश्वास से परिपूर्ण हो सकता हूँ... और साथ ही वह व्यक्ति भी हो सकता हूँ जिसने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं को मन की दोषरहित मुक्ति का अनुभव कराया हो, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति प्राप्त की हो, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास किया हो?"

(8) "परन्तु जब कोई भिक्षु (i) आस्था से युक्त हो, (ii) गुणी हो, और (iii) विद्वान हो; (iv) धम्म का वक्ता हो; (v) सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित होता हो; (vi) सभा को आत्मविश्वासपूर्वक धम्म का उपदेश देता हो; (vii) शरीर से संपर्क रखता हो और उन शांतिपूर्ण मुक्ति में निवास करता हो, जो रूपों से परे हैं और निराकार हैं; और (viii) वह ऐसा भी हो जिसने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान से, इसी जीवन में, स्वयं को मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कराया हो, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता हो, तो वह उस कारक के संबंध में पूर्ण हो जाता है।"

"जो भिक्षु इन आठ गुणों से युक्त होता है, वह हर तरह से विश्वास जगाने वाला और हर पहलू में परिपूर्ण होता है।"

---

73 मृत्यु पर ध्यान (l) 1793 (मरणस्मृति संस्कृत: मरणस्मृति)

एक बार भगवान (बुद्ध) नादिका में ईंटों से बने हॉल में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: [317] "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित और अभ्यासित करने पर महान फल और लाभ प्राप्त होता है, जो अमरता की प्राप्ति की ओर ले जाता है, जिसका लक्ष्य अमरता ही है। परन्तु क्या आप, भिक्षुओं, मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करते हैं?

(1) जब यह कहा गया, तो एक भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, मैं मृत्यु की सती/ध्यान विकसित करता/करती हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"हे भंते, मैं इस प्रकार सोचता हूँ: 'काश मैं केवल एक रात और एक दिन जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं का ध्यान कर सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता हूँ।"

(2) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"हे भंते, मैं यहाँ सोचता हूँ: 'काश मैं एक दिन के लिए ही जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं का पालन कर सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता हूँ।"

(3) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"हे भंते, मैं यहाँ सोचता हूँ: 'काश मैं आधा दिन ही जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता हूँ।"

(4) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"यहाँ, भंते, मैं सोचता हूँ: 'काश मैं केवल एक भिक्षा भोजन ग्रहण करने जितना ही समय जी सकूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं का पालन कर सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता हूँ।"

(5) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"यहाँ, [318] भंते, मैं सोचता हूँ: 'काश मैं केवल आधा भिक्षा भोजन करने में लगने वाले समय तक ही जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

(6) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"यहाँ, भंते, मैं सोचता हूँ: 'काश मैं केवल चार-पाँच कौर भोजन चबाने और निगलने में लगने वाले समय तक ही जीवित रहूँ, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

(7) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"हे भंते, मैं यहाँ सोचता हूँ: 'काश मैं केवल उतना ही समय जी सकूँ जितना एक निवाला भोजन चबाने और निगलने में लगता है, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ हासिल कर सकता हूँ!' इसी तरह मैं मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

(8) एक अन्य भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "मैं भी, भंते, मृत्यु के प्रति सती (ध्यान) विकसित करता हूँ।"

"पर हे भिक्षु, मृत्यु के प्रति सती/ध्यान कैसे विकसित किया जाता है?"

"हे भंते, मैं यहाँ सोचता हूँ: 'काश मैं केवल साँस लेने के बाद साँस छोड़ने या साँस छोड़ने के बाद साँस लेने में लगने वाले समय तक ही जीवित रहूँ, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!' इसी प्रकार मैं मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता हूँ।"

जब यह कहा गया, तो भगवान (बुद्ध) ने उन भिक्षुओं से कहा: "भिक्षुओं, (1) वह भिक्षु जो मृत्यु के प्रति इस प्रकार सती ध्यान विकसित करता है: 'मैं केवल एक रात और एक दिन जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों का पालन कर सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!'; और (2) वह जो मृत्यु के प्रति इस प्रकार सती ध्यान विकसित करता है: [319] 'मैं केवल एक दिन जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों का पालन कर सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!'; और (3) वह जो मृत्यु के प्रति इस प्रकार सती ध्यान विकसित करता है: 'मैं केवल आधा दिन जीवित रहूँ ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों का पालन कर सकूँ, तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!'; और (4) वह जो मृत्यु के प्रति इस प्रकार सती ध्यान विकसित करता है: 'मैं केवल उतने ही समय तक जीवित रहूँ जितना एक भिक्षा भोजन करने में लगता है ताकि मैं (5) जो व्यक्ति मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता है, वह इस प्रकार है: 'मैं केवल आधा भिक्षा भोजन ग्रहण करने में लगने वाले समय तक ही जीवित रहूँ, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों का पालन कर सकूँ। मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकूँ!'; और (6) जो व्यक्ति मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता है, वह इस प्रकार है: 'मैं केवल चार-पाँच कौर भोजन चबाकर निगलने में लगने वाले समय तक ही जीवित रहूँ, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों का पालन कर सकूँ। मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकूँ!': इन्हें आलसी भिक्षु कहा जाता है। वे दोषों के नाश के लिए आलस्यपूर्वक मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करते हैं।

लेकिन (7) वह भिक्षु जो मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता है, इस प्रकार: 'मैं केवल उतने ही समय तक जीवित रहूँ जितना एक निवाला भोजन चबाने और निगलने में लगता है, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!'; और (8) वह जो मृत्यु के प्रति सती ध्यान विकसित करता है, इस प्रकार: 'मैं केवल उतने ही समय तक जीवित रहूँ जितना साँस लेने के बाद साँस छोड़ने में या साँस छोड़ने के बाद साँस लेने में लगता है, ताकि मैं भगवान (बुद्ध) के उपदेशों पर ध्यान दे सकूँ। तब मैं बहुत कुछ प्राप्त कर सकता हूँ!': इन्हें सजग रहने वाले भिक्षु कहा जाता है। वे दोषों के नाश के लिए मृत्यु के प्रति सती ध्यान को गंभीरता से विकसित करते हैं।

अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम सजग रहेंगे। हम दोषों के नाश के लिए मृत्यु के प्रति गहन ध्यान (सती) विकसित करेंगे।' इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।' [320]

---

74 मृत्यु पर ध्यान (2) 1794 (मरणस्मृति)

एक बार भगवान (बुद्ध) नादिका में ईंटों से बने एक भवन में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

"आदरणीय महोदय!" उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, मृत्यु के प्रति सती ध्यान (ध्यान/सती साधना) जब विकसित और पोषित की जाती है, तो यह महान फलदायी और लाभकारी होती है, जो अंततः अमरता (अमरत/अमृत) की प्राप्ति की ओर ले जाती है। और यह कैसे संभव है?

"यहाँ, भिक्षुओं, जब दिन ढल जाता है और रात हो जाती है, तो एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अनेक कारणों से मर सकता हूँ। (1) कोई साँप मुझे काट सकता है, या बिच्छू या कनखजूरा मुझे डंक मार सकता है, और इससे मेरी मृत्यु हो सकती है; यह मेरे लिए एक बाधा होगी। (2) मैं ठोकर खाकर गिर सकता हूँ, या (3) मेरा भोजन मुझे रास नहीं आ सकता है, या (4) मेरा पित्त असंतुलित हो सकता है, या (5) मेरा कफ असंतुलित हो सकता है, या (6) मेरे भीतर तेज हवाएँ चल सकती हैं, या (7) लोग मुझ पर हमला कर सकते हैं, या (8) जंगली आत्माएँ मुझ पर हमला कर सकती हैं, और मेरी मृत्यु हो सकती है; यह मेरे लिए एक बाधा होगी।"

"इस भिक्षु को इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'क्या मुझमें कोई ऐसे हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) हैं जिनका मैंने त्याग नहीं किया है, जो आज रात मेरी मृत्यु होने पर मेरे लिए बाधा बन सकते हैं?'" यदि आत्मनिरीक्षण करने पर भिक्षु को यह ज्ञान हो कि 'मुझमें कुछ अकुशल गुण हैं जिनका मैंने त्याग नहीं किया है, और यदि आज रात मेरी मृत्यु हो जाए तो वे मेरे लिए बाधा बन सकते हैं,' तो उसे उन अकुशल गुणों (धम्म) का त्याग करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयास करना चाहिए। जैसे किसी व्यक्ति के वस्त्र या सिर में आग लग जाए तो वह अपने वस्त्र या सिर की आग बुझाने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयास करता है, उसी प्रकार भिक्षु [321] को भी उन अकुशल गुणों का त्याग करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयास करना चाहिए।

लेकिन यदि समीक्षा करने पर भिक्षु को यह पता चलता है कि 'मुझमें कोई भी अकुशल गुण नहीं है जिसका मैंने त्याग नहीं किया है, जो आज रात मेरी मृत्यु होने पर मेरे लिए बाधा बन सकता है', तो उसे उसी आनंद और प्रसन्नता में रहना चाहिए और दिन-रात लाभकारी गुणों का अभ्यास करना चाहिए।

लेकिन जब रात ढल जाती है और दिन निकल आता है, तो भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'मैं अनेक कारणों से मर सकता हूँ। कोई साँप मुझे काट सकता है... या जंगली आत्माएँ मुझ पर हमला कर सकती हैं, और मैं मर सकता हूँ; यह मेरे लिए एक बाधा होगी।'

"इस भिक्षु को इस प्रकार चिंतन करना चाहिए: 'क्या मुझमें कोई ऐसे अकुशल गुण हैं जिनका मैंने अभी तक त्याग नहीं किया है और जो आज मेरी मृत्यु होने पर मेरे लिए बाधा बन सकते हैं?' यदि आत्मचिंतन करने पर भिक्षु को यह ज्ञान हो कि 'मुझमें ऐसे अकुशल गुण हैं जिनका मैंने अभी तक त्याग नहीं किया है और जो आज मेरी मृत्यु होने पर मेरे लिए बाधा बन सकते हैं,' तो उसे उन अकुशल गुणों का त्याग करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयोग करना चाहिए।" जिस प्रकार किसी व्यक्ति के वस्त्र या सिर में आग लग जाए तो वह अपने वस्त्र या सिर की आग बुझाने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रदर्शन करता है, उसी प्रकार भिक्षु को भी उन बुरे (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रदर्शन करना चाहिए।

लेकिन यदि समीक्षा करने पर भिक्षु को यह ज्ञात हो जाए कि 'मुझमें कोई भी अकुशल गुण (धम्म) [322] नहीं है जिसे मैंने अभी तक त्यागा न हो, जो आज मेरी मृत्यु होने पर मेरे लिए बाधा बन सकता है', तो उसे उसी पीति और आनंद में लीन रहना चाहिए और दिन-रात लाभकारी गुणों (धम्म) का अभ्यास करना चाहिए।

"भिक्षुओं, जब मृत्यु के प्रति सती ध्यान को इस प्रकार विकसित और पोषित किया जाता है, तभी यह महान फलदायी और लाभदायक होता है, जो अमरता (अमृत) की प्राप्ति की ओर ले जाता है, और अमरता (अमृत) को ही अपना लक्ष्य बनाता है।"

---

75 उपलब्धियाँ(1) (सम्पदा1)

भिक्षुओं, ये आठ सिद्धियाँ (संपदाएँ) हैं। ये आठ क्या हैं? पहल करने में सिद्धि (संपदा), रक्षा करने में सिद्धि (संपदा), अच्छी मित्रता, संतुलित जीवन, आस्था में सिद्धि (संपदा), सदाचार में सिद्धि (संपदा), उदारता में सिद्धि (संपदा), और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्धि (संपदा)। ये आठ सिद्धियाँ (संपदाएँ) हैं।

[चार आयतें संलग्न हैं, जो 8:54 की आयतों के समान हैं।]

---

76 उपलब्धियाँ (2) (सम्पदा2)

भिक्षुओं, ये आठ सिद्धियाँ (संपदाएँ) हैं। कौन सी आठ सिद्धियाँ? पहल करने में सिद्धि (संपदा), रक्षा करने में सिद्धि (संपदा), अच्छी मित्रता, संतुलित जीवन, आस्था में सिद्धि (संपदा), सदाचार में सिद्धि (संपदा), उदारता में सिद्धि (संपदा), और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्धि (संपदा) हैं।

(1) "और पहल में संपदा क्या है? यहाँ, चाहे कोई भी साधन हो जिससे कुलवासी अपनी जीविका कमाता हो—चाहे खेती, व्यापार, पशुपालन, तीरंदाजी, सरकारी सेवा या किसी अन्य शिल्प [323] द्वारा—वह कुशल और परिश्रमी है; वह इसे ठीक से करने और व्यवस्थित करने के लिए इसके बारे में सही निर्णय लेता है। इसे पहल में संपदा कहा जाता है।"

(2) "और संरक्षण में संपदा क्या है? यहाँ, एक कुलवासी अपने द्वारा पहल और ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) से अर्जित धन की रक्षा और पहरा देता है, जो उसने अपनी भुजाओं के बल पर, अपने माथे के पसीने से अर्जित किया है, जो धार्मिक रूप से प्राप्त धन है, यह सोचते हुए: 'मैं राजाओं और चोरों को इसे लेने से, आग को इसे जलाने से, बाढ़ को इसे बहा ले जाने से और अप्रिय उत्तराधिकारियों को इसे लेने से कैसे रोक सकता हूँ?' इसे संरक्षण में संपदा कहा जाता है।"

(3) और सच्ची मित्रता क्या है? यहाँ, चाहे कोई व्यक्ति किसी गाँव या कस्बे में रहता हो, वह गृहस्थों या उनके पुत्रों से मेलजोल रखता है—चाहे वे युवा हों लेकिन सद्गुणों से परिपूर्ण हों, या वृद्ध हों लेकिन सद्गुणों से परिपूर्ण हों—जो आस्था, सदाचार, उदारता और ज्ञान (पन्न) में निपुण हों; वह उनसे बातचीत करता है और उनके साथ चर्चा करता है। जहाँ तक वे आस्था में निपुण हैं, वह आस्था में उनकी निपुणता का अनुकरण करता है; जहाँ तक वे सदाचार में निपुण हैं, वह सदाचार में उनकी निपुणता का अनुकरण करता है; जहाँ तक वे उदारता में निपुण हैं, वह उदारता में उनकी निपुणता का अनुकरण करता है; जहाँ तक वे ज्ञान में निपुण हैं, वह ज्ञान (पन्न) में उनकी निपुणता (संपदा) का अनुकरण करता है। इसे सच्ची मित्रता कहते हैं।

(4) "संतुलित जीवन क्या है? यहाँ, एक कबीले का सदस्य अपनी आय और व्यय को जानता है और संतुलित जीवन जीता है, न तो बहुत खर्चीला और न ही बहुत मितव्ययी, [जागरूक]: 'इस तरह मेरी आय मेरे व्यय से अधिक होगी, न कि इसके विपरीत।' जैसे एक मूल्यांकक या उसका प्रशिक्षु तराजू को उठाकर जानता है: 'यह इतना नीचे गया है, [324] इतना ऊपर गया है, उसी प्रकार एक कबीले का सदस्य अपनी आय और व्यय को जानता है और संतुलित जीवन जीता है, न तो बहुत खर्चीला और न ही बहुत मितव्ययी, [जागरूक]:

'इस तरह मेरी आय मेरे व्यय से अधिक होगी, न कि इसके विपरीत।'

यदि इस कुलवासी की आमदनी कम है लेकिन वह विलासितापूर्ण जीवन जीता है, तो दूसरे उसके बारे में कहेंगे: 'यह कुलवासी अपनी दौलत को अंजीर खाने वाले की तरह उड़ा रहा है।' लेकिन यदि उसकी आमदनी अधिक है लेकिन वह मितव्ययी जीवन जीता है, तो दूसरे उसके बारे में कहेंगे: 'यह कुलवासी तो शायद खुद को भूखा ही मार डालेगा।' लेकिन संतुलित जीवन तब कहलाता है जब कोई कुलवासी अपनी आमदनी और व्यय को जानता है और संतुलित जीवन जीता है, न तो अत्यधिक खर्चीला और न ही अत्यधिक मितव्ययी, [इस बात से अवगत]: 'इस प्रकार मेरी आमदनी मेरे व्यय से अधिक होगी, न कि इसके विपरीत।'

(5) "और आस्था में संपदा क्या है? यहाँ, एक कुलवासी आस्था से संपन्न है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं... देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु, प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध)।' इसे आस्था में संपदा कहा जाता है।"

(6) "और सद्गुणों में संपदा क्या है? यहाँ, कुल का व्यक्ति जीव-जंतुओं की हत्या से, बिना माँगी वस्तुएँ लेने से, यौन दुराचार से, झूठी वाणी से और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से, जो आलस्य का आधार हैं, परहेज़ करता है। इसे सद्गुणों में संपदा कहा जाता है।"

(7) "और उदारता में संपदा क्या है? यहाँ, एक कुलवासी अपने घर में कंजूसी के दाग से रहित हृदय से रहता है, उदार, खुले हाथों वाला, त्याग में आनंदित, दान के प्रति समर्पित, देने और साझा करने में आनंदित। इसे उदारता में संपदा कहा जाता है।"

(8) "और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में संपदा क्या है? [325] यहाँ, कुल का व्यक्ति बुद्धिमान है; वह उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) से युक्त है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। इसे पन्ना (दिव्य ज्ञान) में संपदा कहा जाता है।"

"भिक्षुओं, ये आठ सिद्धियाँ (संपदा) हैं।"

[ये चारों आयतें 8:54 में दी गई आयतों के समान हैं।]

---

77 इच्छा (इच्छा)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र,” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"मित्रों, दुनिया में आठ प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे आठ कौन से हैं?"

[इसके बाद जो लिखा है वह 8:61 के समान है, लेकिन सारिपुत्त द्वारा बोला गया है।] . . . [326—28]

"ये दुनिया में पाए जाने वाले आठ प्रकार के व्यक्ति हैं।"

---

78 सक्षम (आलम)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

(1) "मित्रों, छह गुणों से युक्त भिक्षु स्वयं और दूसरों दोनों को लाभ पहुँचाने में सक्षम होता है। वे छह गुण कौन से हैं? . . ."

[इसके बाद जो लिखा है वह 8:62 के समान है, लेकिन सारिपुत्त द्वारा बोला गया है।] . . . [329— 31]

"इन दो गुणों से युक्त भिक्षु दूसरों को लाभ पहुंचा सकता है, लेकिन स्वयं को नहीं।"

---

79 पतन 1796 (परिहाना सं. परी-हानी)

भिक्षुओं, ये आठ गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं। वे आठ गुण कौन से हैं? काम में आनंद, बातचीत में आनंद, नींद में आनंद, संगति में आनंद, इंद्रियों पर नियंत्रण न रखना, भोजन में संयम का अभाव, संगति में आनंद और इंद्रिय-भ्रम में आनंद (प्रपंच)। ये आठ गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन का कारण बनते हैं।

भिक्षुओं, ये आठ गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकते हैं। वे आठ गुण कौन से हैं? काम में आनंद न लेना, बातचीत में आनंद न लेना, नींद में आनंद न लेना, संगति में आनंद न लेना, इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करना, भोजन में संयम बरतना, संगति में आनंद न लेना और इंद्रिय-भ्रम (प्रपंच) में आनंद न लेना। ये आठ गुण प्रशिक्षु भिक्षु के पतन को रोकते हैं। [332]

आलस्य और ऊर्जा जागृत करने के 80 कारण (कुसितारम्भवत्थु)

"भिक्षुओं, आलस्य के ये आठ कारण हैं। वे आठ कारण क्या हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु को कुछ काम करना है। उसके मन में यह विचार आता है: 'मुझे कुछ काम करना है। काम करते-करते मेरा शरीर थक जाएगा। मुझे लेट जाना चाहिए।' वह लेट जाता है। वह अभी तक अप्राप्त, अभी तक न प्राप्त, अभी तक अप्राप्त, अभी तक अप्राप्त की प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाता। यही आलस्य का पहला कारण है।"

(2) "एक भिक्षु ने कुछ काम किया। उसके मन में विचार आया: 'मैंने कुछ काम किया है। काम के कारण मेरा शरीर थक गया है। मुझे लेट जाना चाहिए।' वह लेट जाता है। वह अभी तक अप्राप्त ज्ञान की प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाता। यही आलस्य का

दूसरा कारण है।"

(3) "फिर, एक भिक्षु को यात्रा करनी पड़ती है। उसके मन में आता है: 'मुझे यात्रा करनी है। यात्रा के दौरान मेरा शरीर थक जाएगा। मुझे लेट जाना चाहिए।' वह लेट जाता है। वह अभी तक अप्राप्त ज्ञान की प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाता। यही आलस्य का तीसरा कारण है।"

(4) "एक भिक्षु ने यात्रा की। उसके मन में विचार आया: 'मैंने यात्रा की है। यात्रा करते-करते मेरा शरीर थक गया है। मुझे लेट जाना चाहिए।' वह लेट गया। उसने अभी तक अप्राप्त ज्ञान के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाई। यही आलस्य का चौथा कारण है।"

(5) "फिर, एक भिक्षु किसी गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने के लिए पैदल चला, लेकिन उसे अपनी आवश्यकता के अनुसार भोजन नहीं मिला, चाहे वह मोटा हो या उत्तम। उसके मन में यह विचार आता है: [333] 'मैं गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने के लिए पैदल चला, लेकिन मुझे अपनी आवश्यकता के अनुसार भोजन नहीं मिला, चाहे वह मोटा हो या उत्तम। मेरा शरीर थक गया है और बोझिल हो गया है। मुझे लेट जाना चाहिए।' वह लेट जाता है। वह अभी तक अप्राप्त को जानने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाता। यह आलस्य का पाँचवाँ कारण है।"

(6) "फिर, एक भिक्षु किसी गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने के लिए पैदल चला और उसे अपनी आवश्यकता के अनुसार, चाहे वह मोटा हो या उत्तम, भोजन मिल गया। उसके मन में यह विचार आया: 'मैं गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने के लिए पैदल चला और मुझे अपनी आवश्यकता के अनुसार, चाहे वह मोटा हो या उत्तम, भोजन मिल गया। मेरा शरीर गीली फलियों के ढेर की तरह भारी और बोझिल हो गया है। मुझे लेट जाना चाहिए।' वह लेट जाता है। वह अभी तक अप्राप्त ज्ञान की प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाता। यही आलस्य का छठा कारण है।"

(7) "एक भिक्षु थोड़ा बीमार है। उसे यह ख्याल आता है: 'मैं थोड़ा बीमार हूँ। मुझे लेट जाना चाहिए। मुझे लेट जाना चाहिए।' वह लेट जाता है। वह अभी तक अप्राप्त को जानने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाता। यही आलस्य का सातवाँ कारण है।"

(8) "एक भिक्षु रोग से ठीक हो गया है। ठीक होने के तुरंत बाद, उसके मन में यह विचार आता है: 'मैं रोग से ठीक हो गया हूँ; मैं अभी-अभी रोग से ठीक हुआ हूँ। मेरा शरीर अभी भी कमजोर और सुस्त है। मुझे लेट जाना चाहिए।' वह लेट जाता है। वह अभी तक अप्राप्त, अभी तक न प्राप्त, अभी तक अप्राप्त, अभी तक अप्राप्त की प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं लगाता है। यह आलस्य का आठवाँ कारण है।"

"ये आलस्य के आठ आधार हैं। [334]

भिक्षुओं, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत करने के ये आठ आधार हैं। वे आठ कौन से हैं?

(1) "यहाँ, एक भिक्षु को कुछ काम करना है। उसके मन में यह विचार आता है: 'मुझे कुछ काम करना है। काम करते समय मेरे लिए बुद्धों की शिक्षाओं पर ध्यान देना आसान नहीं होगा। मुझे पहले से ही अप्राप्त लक्ष्यों की प्राप्ति, अप्राप्त उपलब्धियों और अप्राप्त अनुभवों के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए।' वह अप्राप्त लक्ष्यों की प्राप्ति, अप्राप्त उपलब्धियों और अप्राप्त अनुभवों के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करता है। ऊर्जा उत्पन्न करने का यह पहला आधार है।"

(2) "फिर, एक भिक्षु ने कुछ काम किया। उसके मन में यह विचार आया: 'मैंने कुछ काम किया है। काम करते समय मेरे लिए बुद्धों की शिक्षाओं पर ध्यान देना संभव नहीं था। मुझे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए...'। यह ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करने का दूसरा आधार है।"

(3) "फिर, एक भिक्षु को यात्रा करनी पड़ती है। उसके मन में यह विचार आता है: 'मुझे यात्रा करनी है। यात्रा के दौरान मेरे लिए बुद्धों की शिक्षाओं पर ध्यान देना आसान नहीं होगा। मुझे पहले से ही ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए।' यह ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करने का तीसरा आधार है।"

(4) "फिर, एक भिक्षु ने यात्रा की। उसे यह विचार आया: 'मैंने यात्रा की है। यात्रा के दौरान मेरे लिए बुद्धों की शिक्षाओं पर ध्यान देना संभव नहीं था। मुझे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए।...' यह ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करने का चौथा आधार है। [335]

(5) "फिर, एक भिक्षु किसी गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने गया, लेकिन उसे अपनी आवश्यकता के अनुसार भोजन नहीं मिला, चाहे वह मोटा हो या उत्तम। उसके मन में यह विचार आया: 'मैं किसी गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने गया, लेकिन मुझे अपनी आवश्यकता के अनुसार भोजन नहीं मिला, चाहे वह मोटा हो या उत्तम। मेरा शरीर हल्का और फुर्तीला है। मुझे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए...' यह ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करने का पाँचवाँ आधार है।"

(6) "फिर, एक भिक्षु ने किसी गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने के लिए यात्रा की और उसे अपनी आवश्यकता के अनुसार, चाहे वह मोटा हो या उत्तम, भोजन प्राप्त हुआ। उसके मन में यह विचार आया: 'मैंने गाँव या कस्बे में भिक्षा मांगने के लिए यात्रा की और मुझे अपनी आवश्यकता के अनुसार, चाहे वह मोटा हो या उत्तम, भोजन प्राप्त हुआ। मेरा शरीर बलवान और चुस्त है। मुझे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए...' यह ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करने का छठा आधार है।"

(7) "फिर, एक भिक्षु थोड़ा बीमार है। उसे यह ख्याल आता है: 'मैं थोड़ा बीमार हूँ। संभव है कि मेरी बीमारी और बढ़ जाए। मुझे पहले से ही ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए...' यह ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करने का सातवाँ आधार है।"

(8) "एक भिक्षु रोग से ठीक हो गया है। ठीक होने के तुरंत बाद, उसके मन में यह विचार आता है: 'मैं रोग से ठीक हो गया हूँ, अभी-अभी रोग से ठीक हुआ हूँ। संभव है कि मेरा रोग फिर से लौट आए। मुझे अभी से ही उस प्राप्ति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करनी चाहिए जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, ... हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त हुई है, जो अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, जो अभी तक प्राप्त हुई है,'। यह ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करने का आठवाँ आधार है।"

"ये ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जगाने के आठ आधार हैं।" [336]

IV. ध्यान (सतिवाग्गो संस्कृत स्मृतिवाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

81 सती ध्यान (ध्यान/सती) [1797]

भिक्षुओं, (1) जब सती ध्यान और पूर्ण बोध (आंतरिक एवं बाह्य) का अभ्यास न हो, तो सती ध्यान और पूर्ण बोध से रहित व्यक्ति के लिए, (2) नैतिक लज्जा और नैतिक भय की भावना का कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता। जब सती लज्जा और नैतिक भय की भावना न हो, तो इंद्रियों पर नियंत्रण का कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता। जब इंद्रियों पर नियंत्रण न हो, तो इंद्रियों पर नियंत्रण न होने के कारण, (4) सद्गुणों का कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता। जब सद्गुणों का अभ्यास न हो, तो सद्गुणों से रहित व्यक्ति के लिए, (5) सही समाधि का कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता। जब सही समाधि न हो, तो सही समाधि से रहित व्यक्ति के लिए, (6) जब किसी व्यक्ति को चीजों का वास्तविक ज्ञान और दर्शन नहीं होता, तो (7) निबिद्दा और वैराग्य का कोई कारण नहीं रह जाता। (8) जब किसी व्यक्ति को विमुक्ति और वैराग्य नहीं होता, तो उसे मुक्ति का ज्ञान और दर्शन नहीं मिल पाता।

मान लीजिए एक पेड़ में शाखाएँ और पत्तियाँ कम हैं। तो उसकी शाखाएँ पूरी तरह से विकसित नहीं होतीं; न ही उसकी छाल, कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी पूरी तरह से विकसित होती हैं। ठीक उसी प्रकार, जब सती ध्यान और पूर्ण बोध (आंतरिक और बाह्य) नहीं होता, तो सती ध्यान और पूर्ण बोध से रहित व्यक्ति के लिए नैतिक लज्जा और नैतिक भय का कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता। जब नैतिक लज्जा और नैतिक भय का अभाव होता है... तब मुक्ति का ज्ञान और दर्शन भी अपने प्रत्यक्ष कारण से रहित हो जाता है।

भिक्षुओं, (1) जब सती ध्यान और पूर्ण ज्ञान (आंतरिक एवं बाह्य) प्राप्त होता है, तो सती ध्यान और पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए, (2) नैतिक लज्जा और नैतिक भय का निकटवर्ती कारण निःसंकोच होता है। जब नैतिक लज्जा और नैतिक भय का निःसंकोच होता है, तो इंद्रियों पर नियंत्रण का निकटवर्ती कारण निःसंकोच होता है। जब इंद्रियों पर नियंत्रण होता है, तो इंद्रियों पर नियंत्रण रखने वाले व्यक्ति के लिए, (4) सद्गुणी आचरण का निकटवर्ती कारण निःसंकोच होता है। जब सद्गुणी आचरण होता है, तो सद्गुणी आचरण का निकटवर्ती कारण निःसंकोच होता है। जब सही समाधि प्राप्त होती है, तो सही समाधि प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए, (6) वस्तुओं का उनके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन होता है। जब किसी को चीजों का वास्तविक स्वरूप (यथा-भूत-नाना-दस्सना संस्कृत: यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन) का ज्ञान और दृष्टि प्राप्त होती है, तो (7) निब्दिदा और वैराग का ज्ञान और दृष्टि उसके निकटवर्ती कारण को प्राप्त कर लेते हैं। [337] जब किसी को निब्दिदा और वैराग प्राप्त होता है, तो (8) मुक्ति का ज्ञान और दृष्टि उसके निकटवर्ती कारण को प्राप्त कर लेते हैं।

मान लीजिए एक पेड़ है जिसमें शाखाएँ और पत्ते हैं। फिर उसकी शाखाएँ पूर्ण रूप से बढ़ती हैं; उसकी छाल, कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी भी पूर्ण रूप से बढ़ती हैं। ठीक उसी प्रकार, जब सती ध्यान और पूर्ण बोध (आंतरिक और बाह्य) होता है, तो सती ध्यान और पूर्ण बोध वाले व्यक्ति के लिए नैतिक लज्जा और नैतिक भय का मूल कारण प्रकट होता है। जब नैतिक लज्जा और नैतिक भय उत्पन्न होता है, तो मुक्ति का ज्ञान और दर्शन उसका मूल कारण प्रकट होता है।

---

82 पुन्निया

तब पूज्य पुन्निया भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, ऐसा क्यों है कि तथागत (बुद्ध) कभी धम्म का उपदेश देने के लिए इच्छुक होते हैं और कभी नहीं होते?" 5798

(1) हे पुण्य, जब कोई भिक्षु आस्था से परिपूर्ण होकर भी तथागत (बुद्ध) के पास न आता है, तो तथागत (बुद्ध) धर्म का उपदेश देने के लिए प्रवृत्त नहीं होते। (2) परन्तु जब कोई भिक्षु आस्था से परिपूर्ण होकर उनके पास आता है, तो तथागत (बुद्ध) उपदेश देने के लिए प्रवृत्त होते हैं। (3) जब कोई भिक्षु आस्था से परिपूर्ण होकर उनके पास आता है, परन्तु उनकी सेवा न करता है... (4) जब वह उनकी सेवा करता है, परन्तु प्रश्न न पूछता है... (5) जब वह प्रश्न पूछता है, परन्तु धर्म (मार्ग) को उत्सुकता से न सुनता है... (6) जब वह धर्म को उत्सुकता से सुनता है, परन्तु सुनकर उसे मन में न रखता है... (7) जब वह इसे सुनकर मन में तो रखता है, परन्तु मन में रखी शिक्षाओं के अर्थ की जाँच नहीं करता... (8) जब वह मन में रखी शिक्षाओं के अर्थ की जाँच तो करता है, परन्तु अर्थ और धम्म को समझकर धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं करता, तब तथागत (बुद्ध) धम्म सिखाने के लिए इच्छुक नहीं होते।

लेकिन, पुण्य, (1) जब कोई भिक्षु आस्था से परिपूर्ण हो, [338] (2) तथागत (बुद्ध) के पास जाए, (3) तथागत (बुद्ध) की सेवा करे, (4) प्रश्न पूछे, और (5) उत्सुकतापूर्वक धम्म (मार्ग) सुने; और (6) धम्म को सुनकर उसे मन में रखे, (7) मन में रखे उपदेशों के अर्थ की जांच करे, और (8) अर्थ और धम्म को समझकर धम्म के अनुसार अभ्यास करे, तो तथागत (बुद्ध) धम्म का उपदेश देने के लिए तत्पर हो जाते हैं। जब, पुण्य, व्यक्ति में ये आठ गुण होते हैं, तो तथागत (बुद्ध) पूर्णतया धम्म का उपदेश देने के लिए तत्पर हो जाते हैं। 1799

---

83 जड़युक्त (मुलका)

भिक्षु (सन्यासी), अन्य संप्रदायों के तपस्वी आपसे पूछ सकते हैं: (1) 'हे मित्रों, समस्त वस्तुएँ किसमें निहित हैं? (2) वे किसके द्वारा अस्तित्व में आती हैं? (3) उनकी उत्पत्ति किससे होती है? (4) वे किस पर केंद्रित होती हैं? (5) वे किस ओर अग्रसर होती हैं? (6) उन पर

किसका अधिकार है? (7) उनका स्वामी कौन है? (8) उनका मूल क्या है?' यदि आपसे इस प्रकार पूछा जाए, तो आप उन्हें क्या उत्तर देंगे?'

"भंते, हमारी शिक्षाएं भगवान (बुद्ध) में निहित हैं, भगवान (बुद्ध) द्वारा निर्देशित हैं, भगवान (बुद्ध) की शरण लो। यदि भगवान (बुद्ध) इस कथन का अर्थ स्पष्ट कर दें तो अच्छा होगा। उनसे सुनकर भिक्षु इसे याद रखेंगे।"

"तो सुनो, भिक्षुओं, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं (मठवासियों), यदि अन्य संप्रदायों के तपस्वी आपसे पूछें: 'हे मित्रों, सभी चीजों की जड़ क्या है? . . . [339] . . . उनका सार क्या है?' तो आपको उन्हें इस प्रकार उत्तर देना चाहिए।

"मित्रों, (1) सभी वस्तुएँ इच्छा में निहित हैं। (2) वे ध्यान के माध्यम से अस्तित्व में आती हैं। (3) वे संपर्क से उत्पन्न होती हैं। (4) वे संवेदना (वेदना) में अभिसरित होती हैं। (5) उनका नेतृत्व समाधि (आत्म-लीनता/सता) करती है। (6) सती ध्यान (ध्यान) उन पर अधिकार रखता है। (7) दिव्य ज्ञान (पन्न ज्ञान) उनका पर्यवेक्षक है। (8) मुक्ति उनका मूल है।" 1801

"यदि आपसे ये प्रश्न पूछे जाएं, तो आपको उन्हें इस प्रकार उत्तर देना चाहिए जैसे आप अन्य संप्रदायों के उन तपस्वियों को उत्तर देते हैं।"

---

84 एक चोर (कोरा)

"भिक्षुओं (साधुओं) में आठ गुण होने के कारण, एक कुशल चोर जल्दी ही मुसीबत में पड़ जाता है और उसका जीवन काल बीत जाता है। वे आठ गुण क्या हैं? (1) वह उस पर हमला करता है जो उस पर हमला नहीं करता। (2) वह बिना कुछ छोड़े चोरी करता है। (3) वह एक स्त्री की हत्या करता है। (4) वह एक युवती का बलात्कार करता है। (5) वह एक भिक्षु को लूटता है। (6) वह राजकोष को लूटता है। (7) वह अपना काम अपने पड़ोस में करता है। और (8) वह [अपनी लूटी हुई वस्तु को] छिपाने में कुशल नहीं है।" 802 इन आठ गुणों के कारण, एक कुशल चोर जल्दी ही मुसीबत में पड़ जाता है और उसका जीवन काल बीत जाता है।

"भिक्षुओं (साधुओं) में आठ गुण होते हैं, जिससे एक कुशल चोर जल्दी मुसीबत में नहीं पड़ता और लंबे समय तक टिकता है। वे आठ गुण क्या हैं? (1) वह उस पर हमला नहीं करता जो उस पर हमला न करे। (2) वह बिना कुछ छोड़े चोरी नहीं करता। (3) वह किसी स्त्री की हत्या नहीं करता। (4) वह किसी युवती का बलात्कार नहीं करता। (5) वह किसी भिक्षु को नहीं लूटता। (6) वह राजकोष को नहीं लूटता। (7) वह अपना काम अपने मोहल्ले में नहीं करता। और (8) वह लूटे गए माल को छिपाने में कुशल होता है। इन आठ गुणों से युक्त एक कुशल चोर जल्दी मुसीबत में नहीं पड़ता और लंबे समय तक टिकता है।" [340]

---

85 तपस्वी (समान सं. श्रमण)

भिक्षु (मठवासी), (1) 'तपस्वी' तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के लिए एक पदनाम है। (2) 'ब्राह्मण' तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के लिए एक पदनाम है। (3) 'चिकित्सक' . . . (4) 'ज्ञान का स्वामी' 1803 . . . (5) 'निर्मल व्यक्ति' . . . (6) 'निर्मल व्यक्ति' . . . (7) 'ज्ञाता' . . . (8) 'मुक्त व्यक्ति' तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के लिए एक पदनाम है।

वह सर्वोच्च अवस्था जो एक तपस्वी द्वारा प्राप्त की जा सकती है, 1804 वह ब्राह्मण जो ब्रह्मचर्य (पवित्र जीवन) जी चुका है, वह अवस्था जो ज्ञान के स्वामी और चिकित्सक द्वारा प्राप्त की जा सकती है — वह सर्वोच्च अवस्था जो निष्कलंक, शुद्ध, ज्ञानी, मुक्त व्यक्ति द्वारा प्राप्त की जा सकती है — [उस पर] मैं युद्ध में विजयी हूँ; मुक्त होकर, मैं दूसरों को बंधन से मुक्त करता हूँ। मैं एक नाग हूँ, परम वश में, 1805 प्रशिक्षण से परे, निर्वाण प्राप्त।

86 प्रसिद्धि (यासा, यश के बिना)

एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक विशाल संघ के साथ कोसलों में भ्रमण कर रहे थे, जब वे इच्छानगला नामक कोसल के ब्राह्मण गाँव पहुँचे। वहाँ भगवान (बुद्ध) इच्छानगला के घने वन में रहने लगे। इच्छानगला के ब्राह्मण गृहस्थों ने सुना: "कहा जाता है कि शाक्य वंश से निकले तपस्वी गौतम इच्छानगला पहुँचे हैं और अब इच्छानगला के घने वन में निवास कर रहे हैं। अब उस गुरु गौतम के बारे में यह शुभ सूचना फैली है कि 'वह भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं; पूर्णतः प्रबुद्ध हैं... [जैसा कि 6:42 में है]... वे एक पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन का दर्शन कराते हैं।' ऐसे अरहंतों को देखना सौभाग्य की बात है।"

फिर, जब रात बीत गई, तो इच्छानागला के ब्राह्मण गृहस्थों ने तरह-तरह का भोजन लेकर इच्छानागला के घने जंगल में चले गए। वे प्रवेश द्वार के बाहर शोर मचाते हुए खड़े हो गए। उस समय पूज्य नागिता भगवान (बुद्ध) के सेवक थे। तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य नागिता से कहा, "नागीता, इतना शोर कौन मचा रहा है? ऐसा लगता है जैसे मछुआरे मछलियाँ पकड़ने आए हों।"

"भंते, ये इच्छानागला के ब्राह्मण गृहस्थ हैं जो अनेक प्रकार का प्रचुर भोजन लेकर आए हैं। वे प्रवेश द्वार के बाहर खड़े हैं, [इसे] भगवान (बुद्ध) और भिक्षुओं के संघ को अर्पित करने की इच्छा से।"

"हे नागिता, मुझे कभी प्रसिद्धि न मिले और प्रसिद्धि कभी मेरा पीछा न करे। जो व्यक्ति इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, त्याग का यह आनंद, एकांत का आनंद, शांति का आनंद, ज्ञान का यह आनंद प्राप्त नहीं करता, वह उस नीच सुख, उस आलसी सुख, लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा के सुख को स्वीकार कर ले।"

"हे भंते, अब भगवान (बुद्ध) की सहमति हो, सुगत (भगवान बुद्ध) की सहमति हो। अब भगवान (बुद्ध) की सहमति का समय आ गया है। अब भगवान (बुद्ध) जहाँ भी जाएँगे, नगर और गाँव के ब्राह्मण गृहस्थ उसी दिशा में झुकेंगे। जैसे [342] जब भारी बारिश की बूँदें बरसती हैं, तो पानी ढलान से नीचे बहता है, वैसे ही अब भगवान (बुद्ध) जहाँ भी जाएँगे, नगर और गाँव के ब्राह्मण गृहस्थ उसी दिशा में झुकेंगे। इसका कारण क्या है? क्योंकि भगवान (बुद्ध) का सद्गुणी आचरण और पन्ना (दिव्य ज्ञान) है।"

"हे नागिता, मुझे कभी प्रसिद्धि न मिले, और प्रसिद्धि कभी मेरा पीछा न करे। जो व्यक्ति इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, त्याग के इस सुख को प्राप्त नहीं करता... वह उस नीच सुख, उस आलसी सुख, लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा के सुख को स्वीकार कर सकता है।"

नागिता, कुछ देवता भी बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, निःसंयम के आनंद, एकांत के आनंद, शांति के आनंद और ज्ञान के इस आनंद को प्राप्त नहीं कर पाते, जो मुझे बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से प्राप्त होता है।

(1) "जब, 1807 नागिता, तुम सब एक साथ आते हो और मिलते हो, ; संगति के इरादे से, तो मुझे यह विचार आता है: 'निश्चित रूप से, ये पूजनीय लोग इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, त्याग का यह आनंद, एकांत का आनंद, शांति का आनंद, ज्ञान का आनंद प्राप्त नहीं करते हैं जो मैं इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के प्राप्त करता हूँ; क्योंकि जब वे [343] एक साथ आते हैं और मिलते हैं, तो वे संगति के इरादे से आते हैं।

(2) "हे नागिता, मैं भिक्षुओं को एक-दूसरे को उंगलियों से गुदगुदाते हुए हंसते और खेलते हुए देखता हूँ। तब मेरे मन में यह विचार आता है: 'निश्चित रूप से, ये पूजनीय भिक्षु बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इच्छा से इस वैराग्य के आनंद को प्राप्त नहीं करते... जो मैं बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इच्छा से प्राप्त करता हूँ; क्योंकि ये पूजनीय भिक्षु एक-दूसरे को उंगलियों से गुदगुदाते हुए हंसते और खेलते हैं।'

(3) "हे नागिता, मैं ऐसे भिक्षुओं को देखता हूँ जो तृप्ति तक भरपेट भोजन करने के बाद विश्राम, आलस्य और नींद के सुख में लिप्त हो जाते हैं। तब मुझे यह विचार आता है: 'निश्चित रूप से, ये पूजनीय भिक्षु इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, वैराग्य का यह आनंद प्राप्त नहीं करते... जो मैं इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के प्राप्त करता हूँ। क्योंकि तृप्ति तक भरपेट भोजन करने के बाद, वे विश्राम, आलस्य और नींद के सुख में लिप्त हो जाते हैं।'"

(4) "मैं देखता हूँ, नागिता, एक भिक्षु गाँव के बाहरी इलाके में समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) की अवस्था में बैठा है। तब मुझे यह विचार आता है: 'अब कोई मठ का सेवक या कोई नौसिखिया इस पूजनीय भिक्षु के पास लौटकर उसे उस समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) से विमुख कर देगा।' 1803 [344] इसी कारण मैं इस भिक्षु के गाँव के बाहरी इलाके में निवास करने से प्रसन्न नहीं हूँ।

(5) "हे नागिता, मैं देखता हूँ कि वन में रहने वाला एक भिक्षु वन में ऊंघ रहा है। तब मेरे मन में यह विचार आता है: 'अब यह पूजनीय भिक्षु अपनी इस ऊंघ और थकान को दूर करेगा और केवल वन की अनुभूति (सन्ना/संग्या), एकात्मता की अवस्था में लीन रहेगा।' इसी कारण मैं इस भिक्षु के वन में निवास करने से प्रसन्न हूँ।"

(6) "हे नागिता, मैं देखता हूँ कि वन में रहने वाला एक भिक्षु वन में असंयमित अवस्था में बैठा है। तब मुझे यह विचार आता है: 'अब यह पूजनीय भिक्षु अपने असंयमित मन को एकाग्र करेगा या अपने आत्ममग्न मन को रोकेगा।' इसी कारण मैं इस भिक्षु के वन में निवास करने से प्रसन्न हूँ।"

(7) "हे नागिता, मैं देखता हूँ कि वन में रहने वाला एक भिक्षु समाधि की अवस्था में बैठा है। तब मेरे मन में यह विचार आता है: 'अब यह पूजनीय भिक्षु अपने अमुक्त मन को मुक्त करेगा या अपने मुक्त मन की रक्षा करेगा।' इसी कारण मैं इस भिक्षु के वन में निवास करने से प्रसन्न हूँ।"

(8) "हे नागिता, जब मैं किसी राजमार्ग पर यात्रा कर रहा होता हूँ और मुझे अपने आगे या पीछे कोई दिखाई नहीं देता, भले ही वह केवल शौच और पेशाब करने के उद्देश्य से ही क्यों न हो, उस समय मैं निश्चिंत रहता हूँ।"

---

87 अलम्सबोल पलटना (पट्टनिकुज्जना सं. पात्रा...)

भिक्षुओं, जब किसी गृहस्थ अनुयायी में आठ गुण हों, तो संघ चाहे तो उस पर भिक्षापात्र उलट सकता है। 1809 वे आठ गुण क्या हैं? [345] (1) वह भिक्षुओं को लाभ प्राप्त करने से रोकने का प्रयास करता है; (2) वह भिक्षुओं को हानि पहुँचाने का प्रयास करता है; (3) वह भिक्षुओं को किसी विशेष स्थान पर निवास करने से रोकने का प्रयास करता है; (4) वह भिक्षुओं का अपमान और निंदा करता है; (5) वह भिक्षुओं को आपस में विभाजित करता है; (6) वह बुद्ध की निंदा करता है; (7) वह धम्म की निंदा करता है; (8) वह संघ की निंदा करता है। जब किसी गृहस्थ अनुयायी में ये आठ गुण हों, तो संघ चाहे तो उस पर भिक्षापात्र उलट सकता है।

भिक्षुओं, जब किसी गृहस्थ अनुयायी में आठ गुण होते हैं, तो संघ चाहे तो उस पर भिक्षापात्र सीधा कर सकता है। वे आठ गुण क्या हैं? (1) वह भिक्षुओं को लाभ प्राप्त करने से नहीं रोकता; (2) वह भिक्षुओं को हानि पहुंचाने का प्रयास नहीं करता; (3) वह भिक्षुओं को आस-पास रहने से नहीं रोकता; (4) वह भिक्षुओं का अपमान और अपशब्द नहीं करता; (5) वह भिक्षुओं को आपस में नहीं बांटता; (6) वह बुद्ध की स्तुति करता है; (7) वह धम्म की स्तुति करता है; (8) वह संघ की स्तुति करता है। जब किसी गृहस्थ अनुयायी में ये आठ गुण होते हैं, तो संघ चाहे तो उस पर भिक्षापात्र सीधा कर सकता है।

---

88 आत्मविश्वास की कमी (अप्पसादपवेदनिया)

भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु में आठ गुण होते हैं, तो उसके अनुयायी, यदि चाहें, तो उस पर अपना अविश्वास व्यक्त कर सकते हैं। [346]

भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु में आठ गुण होते हैं, तो उसके अनुयायी, यदि चाहें, तो उस पर अपना विश्वास प्रकट कर सकते हैं; वे आठ गुण क्या हैं? (1) वह गृहस्थों को लाभ प्राप्त करने से नहीं रोकता; (2) वह गृहस्थों को हानि पहुंचाने का प्रयास नहीं करता; (3) वह गृहस्थों का अपमान और अपशब्द नहीं करता; (4) वह गृहस्थों को आपस में नहीं बांटता; (5) वह बुद्ध की स्तुति करता है; (6) वह धम्म की स्तुति करता है; (7) वह संघ की स्तुति करता है; (8) लोग उसे उचित स्थान पर देखते हैं। जब किसी भिक्षु में ये आठ गुण होते हैं, तो उसके अनुयायी, यदि चाहें, तो उस पर अपना विश्वास प्रकट कर सकते हैं।

---

89 सुलह (पतिसारनिया)

भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु में आठ गुण होते हैं, तो संघ, यदि चाहे, तो उस पर मेल-मिलाप का कार्य करने का आदेश दे सकता है। 1812 वे आठ गुण क्या हैं? (1) वह गृहस्थों को लाभ प्राप्त करने से रोकने का प्रयास करता है; (2) वह गृहस्थों को हानि पहुँचाने का प्रयास करता है; (3) वह गृहस्थों का अपमान और निंदा करता है; (4) वह गृहस्थों को आपस में विभाजित करता है; (5) वह बुद्ध की निंदा करता है; (6) वह धम्म की निंदा करता है; (7) वह संघ की निंदा करता है; (8) वह गृहस्थों से किए गए किसी वैध वादे को पूरा नहीं करता है। जब किसी भिक्षु में ये आठ गुण होते हैं, तो संघ, यदि चाहे, तो उस पर मेल-मिलाप का कार्य करने का आदेश दे सकता है।

भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु में आठ गुण होते हैं, तो संघ चाहे तो उस पर पूर्व में लगाए गए किसी भी सुलह के कार्य को रद्द कर सकता है। वे आठ गुण क्या हैं? (1) वह गृहस्थों को लाभ प्राप्त करने से रोकने का प्रयास नहीं करता; (2) वह गृहस्थों को हानि पहुँचाने का प्रयास नहीं करता; (3) वह गृहस्थों का अपमान और अपशब्द नहीं करता; (4) वह गृहस्थों को आपस में विभाजित नहीं करता; (5) वह बुद्ध की स्तुति करता है; [347] (6) वह धम्म की स्तुति करता है; (7) वह संघ की स्तुति करता है; (8) वह गृहस्थों से किए गए किसी वैध वचन का पालन करता है। जब किसी भिक्षु में ये आठ गुण होते हैं, तो संघ चाहे तो उस पर पूर्व में लगाए गए किसी भी सुलह के कार्य को रद्द कर सकता है।

---

90 व्यवहार (सम्मवत्तना)

भिक्षुओं, गंभीर दुराचार के आरोप में फंसे भिक्षु को आठ सिद्धांतों के अनुसार उचित आचरण करना चाहिए। (1) उसे पूर्ण दीक्षा नहीं देनी चाहिए; (2) उसे आश्रित नहीं रखना चाहिए; (3) उसे किसी नौसिखिए की सेवा नहीं करनी चाहिए; (4) उसे भिक्षुणियों के उपदेशक के रूप में सेवा करने का समझौता स्वीकार नहीं करना चाहिए; (5) यदि वह सहमत भी हो जाए, तो भी उसे भिक्षुणियों को उपदेश नहीं देना चाहिए; (6) उसे संघ में किसी भी प्रकार का अधिकारी बनने का समझौता स्वीकार नहीं करना चाहिए; (7) उसे किसी भी प्रमुख पद पर नहीं रखा जाना चाहिए; (8) उसे उस मूल के मामले में पुनर्वास नहीं देना चाहिए। गंभीर दुराचार के आरोप में फंसे भिक्षु को इन आठ सिद्धांतों के अनुसार उचित आचरण करना चाहिए।

वी. तपस्वी 1816 (समन्ना)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

91 —116 [1617]

तब मादा ले अनुयायी बोज्झा। . . सिरिमा. . . पदुमा . . . सुताना. . . मनुजा। . . उत्तर . . . मुत्ता . . . खेमा . . . सोमा [1818] . . . रुचि। . . राजकुमारी कुंडी. . . महिला अनुयायी बिम्बी। . . राजकुमारी सुमना. . . रानी मल्लिका. . . महिला अनुयायी टिसा। . . तिस्सा की माँ सोना। . . सोना की माँ. . . काना . . . काना की माँ. . .उत्तरा नंदमाता [1819] . . . विशाखा मिगरामाता. . . महिला अनुयायी खुज्जुत्तारा। . . महिला गृहिणी समावती... सुप्पवास, कोलियन पुत्री... महिला गृहिणी सुप्पिया... गृहिणी नकुलमाता...

VI. लस्ट (राग) एंड सो फोर्थ रिपीटिशन सीरीज [1820] (रागपेय्यलम)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

117

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए आठ चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे आठ चीजें क्या हैं? सही दृष्टि, सही अभिलाषा, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही जागरूकता और सही समाधि। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन आठ चीजों का विकास करना आवश्यक है।

118

भिक्षुओं, काम (राग) के प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के लिए आठ चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे आठ चीजें क्या हैं? (1) जो आंतरिक रूप से रूपों को जानता है, वह बाहरी रूप से सीमित, सुंदर या कुरूप रूपों को देखता है। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देखता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' (2) जो आंतरिक रूप से रूपों को जानता है, वह बाहरी रूप से असीम, सुंदर या कुरूप रूपों को देखता है। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देखता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' (3) जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं जानता है, वह बाहरी रूप से सीमित, सुंदर या कुरूप रूपों को देखता है। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देखता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' (4) जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं जानता है, वह बाहरी रूप से असीम, सुंदर या कुरूप रूपों को देखता है। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देखता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' [349] (5) जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाह्य रूप से नीले, नीले रंग के, नीले आभा वाले, नीले रंग के . . . (6) . . . पीले, पीले रंग के, पीले आभा वाले, पीले रंग के . . (7) . . . लाल, लाल रंग के, लाल आभा वाले, लाल रंग के . . . (8) . . . सफेद, सफेद रंग के, सफेद आभा वाले, सफेद रंग के . . . इन पर विजय प्राप्त करके, वह इस प्रकार देख पाता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' काम (राग) के प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के लिए, इन आठ चीजों का विकास करना आवश्यक है।

119

भिक्षुओं, राग (काम) के प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के लिए आठ चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे आठ चीजें क्या हैं? (1) रूप धारण करने वाला रूप देखता है। (2) आंतरिक रूप से रूप का बोध न करने वाला बाहरी रूप देखता है। (3) केवल 'सुंदर' पर ध्यान केंद्रित करने वाला। (4) रूप की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने पर, विविधता की धारणाओं पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का बोध करते हुए, व्यक्ति अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। (5) अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, 'चेतना अनंत है' का बोध करते हुए, व्यक्ति अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। (6) अनंत चेतना के आधार पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, 'कुछ नहीं है' का बोध करके व्यक्ति शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। (7) शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके व्यक्ति न तो सबोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (अआयतन) के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। (8) न तो सबोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (अबोध) के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके व्यक्ति सबोध (सन्न/संज्ञा) और वेदना (संवेदना) की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है। काम (राग) के प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के लिए इन आठ चीजों का विकास करना आवश्यक है।

---

120 - 146

भिक्षुओं, कामवासना (राग) की पूर्ण समझ के लिए... उसके पूर्ण विनाश के लिए... उसके त्याग के लिए... उसके विनाश के लिए... उसके लुप्त होने के लिए... उसके मिट जाने के लिए... उसके निवारण के लिए... उसके त्याग के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए... इन आठ चीजों का विकास करना चाहिए।

---

147 - 626

भिक्षुओं (सन्यासियों), प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के लिए: ...पूर्ण समझ के लिए ...पूर्ण विनाश के लिए ...त्याग के लिए ...विलुप्त होने के लिए ...लुप्त होने के लिए ...निरस्त होने के लिए ...निरस्त होने के लिए ...त्याग के लिए ...मोह के लिए ...क्रोध के लिए ...शत्रुता के लिए ...अपमान के लिए ...अभिमान के लिए ...ईर्ष्या के लिए ...कंजूसी के लिए [350] ...छल-कपट के लिए ...धूर्तता के लिए ...हठ के लिए ...उत्साह के लिए ...अभिमान के लिए ...अहंकार के लिए ...नशे के लिए ...आलस्य के लिए ...इन आठ चीजों का विकास किया जाना चाहिए।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा, यह सुनकर वे भिक्षु प्रसन्न हुए।

अष्टम अध्याय की पुस्तक पूरी हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय >> 9.नौ की पुस्तक

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का नौवां खंड है। यह भिक्खु बोधि का संशोधित संस्करण है।

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN8)   अगला (AN10) >>>>

अंतर्वस्तु

1नौ की पुस्तक (नवकनिपात)

1.1पहले पचास

1.1.1I. आत्मज्ञान खंड (संबोधिवाग्ग सं. संबोधि-वर्ग)

1.1.1.11 आत्मज्ञान [1821] (संबोधि)

1.1.1.22 समर्थन [1824] (निस्सया सं. निस्साराना)

1.1.1.33 मेघिया [1829]

1.1.1.44 नंदका [1833]

1.1.1.55 शक्तियाँ [1842] (बाला)

1.1.1.66. संघ (सेवना)

1.1.1.77 सुतवा

1.1.1.88 सज्जा

1.1.1.99 व्यक्ति (पुग्गल सं. पुरुष-युगल)

1.1.1.1010 उपहार के योग्य (अहुनेय्या)

1.1.2द्वितीय. शेर की दहाड़ (सिहानाडा वाग्गो सं. सिंघा-नाडा)

1.1.2.111 शेर की दहाड़ (सिहानाडा सं. सिंघा-नाडा)

1.1.2.212 शेष बचे हुए अवशेष (सौपदिशेष) के साथ

1.1.2.313 कोत्थिता

1.1.2.414 समिद्धि

1.1.2.515 उबालना (गंडा)

1.1.2.616 संज्ञान/धारणाएं (सन्ना सं. संज्ञा)

1.1.2.717 परिवार/कुल (कुला)

1.1.2.818 नौ कारकों के साथ उपवास (नवंग-उपोसथा)

1.1.2.919 देवता (देवदूत)

1.1.2.1020 वेलामा

1.1.3तृतीय. शुद्ध प्राणियों का निवास (सत्तवसा वैगो)

1.1.3.121 सम्मान (तिथाना)

1.1.3.222 जंगली बछड़े

1.1.3.323 लालसा (तन्हा बिना तृष्णा)

1.1.3.424 प्राणियों के निवास स्थान (सत्तवास)

1.1.3.525 पन्ना (दिव्य ज्ञान)

1.1.3.626 (6) पत्थर का स्तंभ (सिलयुपा)

1.1.3.727 शत्रुता (1) (वेरा1)

1.1.3.828 शत्रुता (2) (वेरा2)

1.1.3.929 आक्रोश की व्याख्या (1) (अघतवत्थु1)

1.1.3.1030 आक्रोश निवारण (2) (अघतवत्थु2)

1.1.3.1131. क्रमिक समाप्ति (अनुपुब्बनिरोध)

1.1.4चतुर्थ. महान अध्याय (महावग्गो सं. महा-वर्ग)

1.1.4.132 नौ ट्रान्स (समाधि) अवस्थाएँ (संक्षेप में) (1) (अनूपुब्बाविहार 1 सं. अनु-पूर्व-विहार)

1.1.4.233 नौ ट्रान्स (समाधि) अवस्थाएँ विस्तार से (अनूपुब्बविहारसमापत्ति2 सं. अनु-पूर्व-विहार...)

1.1.4.334 निब्बान आनंद है (निब्बानसुखा सं. निर्वाण-सुखा)

1.1.4.435 गाय की उपमा (गविउपमा, संस्कृत: गौ-उपमा)

1.1.4.536 नौ झाना (ट्रान्स अवस्था) (सं. ध्यान)

1.1.4.637 आनंद

1.1.4.738 लोकायतिका

1.1.4.839 देव (देवदूत/भगवान) असुर युद्ध (देवअसुरसंगम सं. देव-असुर-संग्राम)

1.1.4.940 एक नर हाथी

1.1.4.1041 तपस्सा

1.1.5वी. समानता 1949 (समाननवग्गो)

1.1.5.142 कारावास (संबधा)

1.1.5.243 शारीरिक साक्षी (काया-साक्षी सं. काया-साक्षी)

1.1.5.344 दिव्य ज्ञान द्वारा मुक्ति (पन्नविमुत्त सं. प्रज्ञा-विमुक्त)

1.1.5.445 दोनों दृष्टियों से मुक्त (उभतोभागविमुत्त)

1.1.5.546 प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाला धम्म(1) (संदित्तिकधम्म)

1.1.5.647 प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान मुक्ति (2) (संदित्थिकनिब्बाना)

1.1.5.748 निब्बाना (निर्वाण के बिना)

1.1.5.849 अंतिम निर्वाण

1.1.5.950 उस विशेष संदर्भ में निर्वाण (तदंगनिब्बान)

1.1.5.1051 इसी जीवन में

1.2दूसरा पचास

1.2.1I. सुरक्षा अनुभाग (खेमावग्गो सं. क्षेमा-वर्ग)

1.2.1.152 सुरक्षा (1) (खेमा सं. क्षेमा)

1.2.1.253 सुरक्षा प्राप्तकर्ता (2) (खेमापट्ट सं. क्षेमा..)

1.2.1.354 अमर (1) (अमता सान. अमृता)

1.2.1.455 अमर अवस्था प्राप्तकर्ता (2) (अमतप्पत्ता सान. अमृत..)

1.2.1.556 निडर (1) (अभय)

1.2.1.657 निर्भय अवस्था प्राप्तकर्ता (2) (अभयपट्ट)

1.2.1.758 शांति (1) (पासद्धि)

1.2.1.859 प्रगतिशील शांति (2) (अनुपुब्बपसद्धि संस. अनुपुर्वा..)

1.2.1.960 निरोध (Cessation)

1.2.1.1061. क्रमिक समाप्ति (अनुपुब्बनिरोध)

1.2.1.1162 संभव और असंभव (अभब्बा)

1.2.2द्वितीय. ध्यान अनुभाग की स्थापना (सतिपत्थानवग्गो सं. स्मृति-प्रस्थान-वर्ग)

1.2.2.163 प्रशिक्षण में कमजोरी (सिक्खदुब्बल्य सं. सैक्ष्य-दौर्बल्य)

1.2.2.264 अवरोध (निवारण)

1.2.2.365 कामुक आनंद (कामागुना)

1.2.2.466 क्लिंगिंग एग्रीगेट्स (उपदानकखंड)

1.2.2.567 निम्न बेड़ियाँ (ओरंभागिया)

1.2.2.668 गंतव्य (गति)

1.2.2.769 कंजूसी (मच्छरिया)

1.2.2.870 उच्चतर बंधन (उद्धम्भागीय)

1.2.2.971 मानसिक बंजरपन (चेतोखिला)

1.2.2.1072 बंधन (सेतोविनीबंध)

1.2.3(III) सही प्रयास (समप्पधनवग्गो)

1.2.3.173 प्रशिक्षण (सिक्ख बिना शिष्य)

1.2.3.274 82 बाधाएँ, आदि।

1.2.4चतुर्थ. मानसिक शक्ति (जादू) के लिए आधार (इद्धिपदावग्गो सं. रिद्धि-पाद-वर्ग)

1.2.4.183 प्रशिक्षण (सिक्ख बिना शिष्य)

1.2.4.284-92 बाधाएँ, इत्यादि।

1.2.5वी. वासना (राग) और इसी प्रकार पुनरावृति श्रृंखला [1960]

1.2.5.193 [1961]

1.2.5.294

1.2.5.395— 112 [1962]

1.2.5.4113-432

नौ की पुस्तक (नवकनिपात)

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

उस भगवान को नमन, शत्रुओं का नाश करने वाले, सही मायने में पूर्णतः प्रबुद्ध (जागृत) भगवान।

पहले पचास

I. आत्मज्ञान खंड (संबोधिवाग्ग सं. संबोधि-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

1 आत्मज्ञान [1821] (संबोधि)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं (सन्यासियों), अन्य संप्रदायों के तपस्वियों को आपसे यह पूछना पड़ सकता है: 'मित्रों, ज्ञान प्राप्ति में सहायक तत्वों के विकास का तात्कालिक कारण क्या है?' यदि आपसे ऐसा पूछा जाए, तो आप उन्हें क्या उत्तर देंगे?"

"भंते, हमारी शिक्षाएं भगवान (बुद्ध) में निहित हैं, भगवान (बुद्ध) द्वारा निर्देशित हैं, भगवान (बुद्ध) की शरण लो। यदि भगवान (बुद्ध) इस कथन का अर्थ स्पष्ट कर दें तो अच्छा होगा। उनसे सुनकर भिक्षु इसे याद रखेंगे।"

"तो सुनो, भिक्षुओं, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं (सन्यासियों), यदि अन्य संप्रदायों के तपस्वी आपसे पूछें: 'मित्रों, ज्ञान प्राप्ति में सहायक तत्वों के विकास का तात्कालिक कारण क्या है?' तो आपको उन्हें इस प्रकार उत्तर देना चाहिए:

(1) "यहाँ, मित्रों, एक भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी, [352] अच्छे सहपाठी होते हैं। यही ज्ञान प्राप्ति में सहायक तत्वों के विकास का पहला निकटतम कारण है।

(2) "हे मित्रों, भिक्षु गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है, अच्छे आचरण और आश्रय का पालन करता है, छोटी-छोटी गलतियों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। यही दूसरा निकटतम कारण है।"

(3) "हे मित्रों, भिक्षु को बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, हृदय को खोलने में सहायक तपस्वी जीवन से संबंधित प्रवचन सुनने को प्राप्त होता है, अर्थात् इच्छाओं की कमी, संतोष, एकांत, दूसरों से बंध न जाने, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाने, सद्गुणी आचरण, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), पन्ना (दिव्य ज्ञान), मुक्ति, और मुक्ति के ज्ञान और दर्शन पर प्रवचन। यह तीसरा निकटतम कारण है। . . ."

(4) "हे मित्रों, एक भिक्षु ने अकुशल गुणों का त्याग करने और कुशल गुणों को ग्रहण करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न की है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, और कुशल गुणों को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता। यह चौथा निकटवर्ती कारण है।"

(5) "हे मित्रों, भिक्षु ही ज्ञानवान होता है; वह उस ज्ञान से युक्त होता है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है तथा दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। यह ज्ञान प्राप्ति के सहायक साधनों के विकास का पाँचवाँ निकटतम कारण है।"

"जब किसी भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी और अच्छे सहपाठी होते हैं, तो उससे यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह गुणी होगा, जो पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है... वह उनमें प्रशिक्षण प्राप्त करेगा।"

जब किसी भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी और अच्छे सहपाठी होते हैं, तो उससे यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, अपनी इच्छा अनुसार, हृदय को खोलने वाले तपस्वी जीवन से संबंधित बातें सुन सकेगा, अर्थात् इच्छाओं की कमी पर चर्चा... मुक्ति के ज्ञान और दर्शन पर चर्चा।

जब किसी भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी, अच्छे सहपाठी होते हैं, तो उससे यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) को त्यागने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) [353] उत्पन्न करेगा... लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करेगा।

जब किसी भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी और अच्छे सहपाठी होते हैं, तो उससे यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह बुद्धिमान होगा, और उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) से युक्त होगा जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है।

इन पाँच बातों पर आधारित होकर भिक्षु को आगे चार और बातों का विकास करना चाहिए। (6) कामवासना (राग) का त्याग करने के लिए अनाकर्षकता (सन्न/संज्ञा) का विकास करना चाहिए। (7) द्वेष का त्याग करने के लिए प्रेम (दयालुता) का विकास करना चाहिए। (8) विचारों को रोकने के लिए श्वास (अनपान) की सती (ध्यान) का विकास करना चाहिए। (9) 'मैं हूँ' के अहंकार को दूर करने के लिए अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) की धारणा (सन्न/संज्ञा) का विकास करना चाहिए। 1822 जब व्यक्ति अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) को समझता है, तो अनात्म की धारणा (सन्न/संज्ञा) स्थिर हो जाती है। 1823 जो अनात्म को समझता है, वह 'मैं हूँ' के अहंकार को दूर कर लेता है, जो इसी जीवन में निर्वाण है।

---

2 समर्थन [1824] (निस्सया सं. निस्साराना)

तब एक भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और उनसे कहा, "हे भंते, कहा जाता है: 'सहारों से सुसज्जित, सहारे से सुसज्जित' भिक्षु किस प्रकार सहारे से सुसज्जित होता है?" 1825

(1) हे भिक्षु, यदि कोई भिक्षु विश्वास से प्रेरित होकर हानिकारक (अकुशल) का त्याग कर लाभकारी (कुशल) का विकास करे, तो वास्तव में उसने हानिकारक (अकुशल) का त्याग कर दिया है। (2) यदि नैतिक लज्जा की भावना से प्रेरित होकर... (3) नैतिक भय से प्रेरित होकर... (4) ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) से प्रेरित होकर... (5) पन्ना (दिव्य ज्ञान) से प्रेरित होकर, कोई भिक्षु हानिकारक (अकुशल) का

त्याग कर लाभकारी (कुशल) का विकास करे, तो वास्तव में उसने हानिकारक (अकुशल) का त्याग कर दिया है। 1826 [354] एक भिक्षु ने हानिकारक (अकुशल) का त्याग कर दिया है और उसे अच्छी तरह से त्याग दिया है जब उसने उसे श्रेष्ठ पन्ना (दिव्य ज्ञान) से देखकर त्याग दिया है। 1822

"इन पाँच बातों पर आधारित होकर, उस भिक्षु को चार बातों पर भरोसा करना चाहिए। 1828 वे चार बातें क्या हैं? यहाँ, (6) चिंतन करने के बाद, भिक्षु कुछ चीजों का उपयोग करता है; (7) चिंतन करने के बाद, वह धैर्यपूर्वक कुछ चीजों को सहन करता है; (8) चिंतन करने के बाद, वह कुछ चीजों से बचता है; और (9) चिंतन करने के बाद, वह कुछ चीजों का निवारण करता है।

"भिक्षु, इसी प्रकार से भिक्षु को सहायता प्राप्त होती है।"

---

3 मेघिया [1829]

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) कालीका पर्वत पर कालीका में निवास कर रहे थे। 1830 उस समय पूज्य मेघिया भगवान (बुद्ध) के सेवक थे। तब पूज्य मेघिया भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हुए और उनसे कहा: "भंते, मैं भिक्षा मांगने के लिए जंतुगम में प्रवेश करना चाहता/चाहती हूँ।"

"मेघिया, तुम अपनी सुविधानुसार ऐसा कर सकती हो।"

फिर सुबह, पूज्य मेघिया ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र लिया और भिक्षा मांगने के लिए जंतुगामा में प्रवेश किया। जंतुगामा में भिक्षा मांगने के बाद, भोजन करने पर, भिक्षा मांगने के बाद वे किमिकाला नदी के किनारे गए। किमिकाला नदी के किनारे टहलते और घूमते हुए, पूज्य मेघिया ने [355] एक सुंदर और मनमोहक आमों का बाग देखा। उनके मन में यह विचार आया: "यह आमों का बाग वास्तव में सुंदर और मनमोहक है, जो परिश्रम करने वाले कुल के व्यक्ति के लिए उपयुक्त है। यदि भगवान (बुद्ध) मुझे अनुमति दें, तो मैं इस आमों के बाग में परिश्रम करने के लिए वापस आऊंगा।"

तब पूज्य मेघिया भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "हे भंते, आज सुबह मैंने वस्त्र धारण किए, भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किए और भिक्षा मांगने के लिए जंतुगामा में प्रवेश किया। ... [ऊपर जैसा ही, लेकिन प्रथम पुरुष में।] ... मैंने सोचा: 'यह आमों का बाग सचमुच सुंदर और रमणीय है, जो साधना में लगे कुल के व्यक्ति के लिए उपयुक्त है। यदि भगवान (बुद्ध) मुझे अनुमति दें, तो मैं उस आमों के बाग में जाकर साधना करूंगा।' अतः यदि भगवान (बुद्ध) मुझे अनुमति दें, तो मैं उस आमों के बाग में जाकर साधना करूंगा।"

"चूंकि हम अकेले हैं, मेघिया, तब तक प्रतीक्षा करो जब तक कोई दूसरा भिक्षु न आ जाए।" 1831

दूसरी बार पूज्य मेघिया ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, भगवान (बुद्ध) के लिए अब और कुछ करने की आवश्यकता नहीं है और जो किया जा चुका है उसे बढ़ाने की भी कोई आवश्यकता नहीं है। 1832 परन्तु भंते, मुझे अभी और कुछ करना है और जो किया जा चुका है उसे बढ़ाने की आवश्यकता है। यदि भगवान (बुद्ध) मुझे अनुमति दें, तो मैं उस आम के बाग में जाकर प्रयास करूंगा।"

"चूंकि हम अकेले हैं, मेघिया, तब तक प्रतीक्षा करो जब तक कोई दूसरा भिक्षु न आ जाए।" [356 J]

तीसरी बार पूज्य मेघिया ने भगवान (बुद्ध) से कहा, "भंते, भगवान (बुद्ध) के लिए अब और कुछ करने की आवश्यकता नहीं है और जो किया जा चुका है उसे बढ़ाने की भी कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु भंते, मुझे कुछ और करना है और जो किया जा चुका है उसे बढ़ाने की आवश्यकता है। यदि भगवान (बुद्ध) मुझे अनुमति दें, तो मैं उस आम के बाग में जाकर परिश्रम करूंगा।"

"चूंकि तुम प्रयास की बात कर रही हो, मेघिया, मैं तुमसे क्या कहूँ? तुम अपनी सुविधानुसार जा सकती हो।"

तब पूज्य मेघिया अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर मुख करके परिक्रमा की और आम के बाग में चले गए। वे अंदर गए और दिन बिताने के लिए एक पेड़ की तलहटी में बैठ गए। फिर, जब पूज्य मेघिया उस आम के बाग में थे,

तो उनके मन में तीन प्रकार के बुरे (अकुशल) विचार बार-बार आते रहे: कामुक विचार, द्वेषपूर्ण विचार और हानि पहुँचाने के विचार। तब उन्हें यह बात समझ में आई: "यह सचमुच आश्चर्यजनक और अद्भुत है! मैं आस्था के कारण गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में आ गया हूँ, फिर भी मुझे ये तीन प्रकार के बुरे (अकुशल) विचार सताते रहते हैं: कामुक विचार, द्वेषपूर्ण विचार और हानि पहुँचाने के विचार।" 1833

तब पूज्य मेघिया भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "हे भंते, जब मैं उस आम के बाग में रह रहा था, तब मेरे मन में तीन प्रकार के बुरे (अकुशल) विचार बार-बार आते थे: कामुक विचार, द्वेषपूर्ण विचार और हानि पहुँचाने के विचार। तब मुझे यह बात सूझी: 'यह सचमुच आश्चर्यजनक और अद्भुत है! मैं आस्था के कारण गृहस्थ जीवन छोड़कर बेघर हो गया हूँ, फिर भी [357] मैं अभी भी इन तीन प्रकार के बुरे (अकुशल) विचारों से घिरा हुआ हूँ: कामुक विचार, द्वेषपूर्ण विचार और हानि पहुँचाने के विचार" ;

मेघिया, जब मन की मुक्ति परिपक्व नहीं हुई होती है, तो पाँच चीजें इसकी परिपक्वता की ओर ले जाती हैं। 1834 वे पाँच चीजें क्या हैं?

(1) "हे मेघिया, यहाँ एक भिक्षु (साधु) के अच्छे मित्र, अच्छे साथी और अच्छे सहपाठी हैं। जब मन की मुक्ति परिपक्व नहीं हुई होती है, तो यही वह पहली चीज है जो इसकी परिपक्वता की ओर ले जाती है।"

(2) "भिक्षु गुणी होता है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है, अच्छे आचरण और आश्रय का पालन करता है, छोटी-छोटी गलतियों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। जब मन की मुक्ति परिपक्व नहीं हुई होती है, तो यही वह दूसरी चीज है जो इसकी परिपक्वता की ओर ले जाती है।"

(3) "फिर, भिक्षु को बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, हृदय को खोलने वाले तपस्वी जीवन से संबंधित प्रवचन सुनने को मिलते हैं, अर्थात् इच्छाओं की कमी, संतोष, एकांत, दूसरों से बंधे न रहने, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाने, सद्गुणी व्यवहार, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), पन्ना (दिव्य ज्ञान), मुक्ति और मुक्ति के ज्ञान और दर्शन पर प्रवचन। जब मन की मुक्ति परिपक्व नहीं हुई होती है, तो यह तीसरी चीज है जो इसकी परिपक्वता की ओर ले जाती है।"

(4) "फिर, एक भिक्षु ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जागृत की है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) की खेती के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है। जब मन की मुक्ति परिपक्व नहीं हुई है, तो यह चौथी चीज है जो इसकी परिपक्वता की ओर ले जाती है।"

(5) "फिर, एक भिक्षु बुद्धिमान होता है; उसके पास वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) होता है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुख के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। जब मन की मुक्ति परिपक्व नहीं हुई होती है, तो यह पाँचवाँ तत्व है जो इसकी परिपक्वता की ओर ले जाता है।"

"जब, मेघिया, किसी भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी, अच्छे सहपाठी होते हैं, तो उससे यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह गुणी होगा, जो पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है... [358] उनमें प्रशिक्षण लेगा।

जब किसी भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी और अच्छे सहपाठी होते हैं, तो उससे यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, अपनी इच्छा अनुसार, हृदय को खोलने वाले तपस्वी जीवन से संबंधित बातें सुन सकेगा, अर्थात् इच्छाओं की कमी पर चर्चा... मुक्ति के ज्ञान और दर्शन पर चर्चा।

जब किसी भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी और अच्छे सहपाठी होते हैं, तो उससे यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाएगा... न कि लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग करेगा।

जब किसी भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी और अच्छे सहपाठी होते हैं, तो उससे यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह बुद्धिमान होगा, और उसके पास वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) होगा जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है।

इन पाँच बातों पर आधारित होकर भिक्षु को आगे चार और बातों का विकास करना चाहिए। (6) कामवासना (राग) का त्याग करने के लिए अनाकर्षकता (सन्न/संज्ञा) का विकास करना चाहिए। (7) द्वेष का त्याग करने के लिए प्रेम (दयालुता) का विकास करना चाहिए। (8) विचारों को रोकने के लिए श्वास (अनपान) की सती (ध्यान) का विकास करना चाहिए। (9) 'मैं हूँ' के अहंकार को दूर करने के लिए अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) की धारणा (सन्न/संज्ञा) का विकास करना चाहिए। जब व्यक्ति अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) को जान लेता है, तो अनात्म की धारणा स्थिर हो जाती है। अनात्म को जानने वाला व्यक्ति 'मैं हूँ' के अहंकार को दूर कर लेता है, जो इसी जीवन में निर्वाण है।

---

4 नंदका [1833]

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस समय पूज्य नंदका सभा भवन में भिक्षुओं को धर्मोपदेश दे रहे थे, उनका उत्साहवर्धन कर रहे थे, उन्हें प्रेरित कर रहे थे और उन्हें प्रसन्न कर रहे थे। फिर शाम को भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और सभा भवन में गए। वे प्रवचन समाप्त होने की प्रतीक्षा में द्वार के बाहर खड़े रहे। जब उन्हें पता चला कि प्रवचन समाप्त हो गया है, तो उन्होंने अपना गला साफ किया [359] और कुंडी पर दस्तक दी। भिक्षुओं ने उनके लिए द्वार खोल दिया। तब भगवान (बुद्ध) सभा भवन में प्रवेश कर गए, अपने लिए तैयार आसन पर बैठ गए और पूज्य नंदका से कहा, "आपने भिक्षुओं को धर्म का लंबा प्रवचन दिया। प्रवचन समाप्त होने की प्रतीक्षा में द्वार के बाहर खड़े रहने से मेरी कमर में दर्द हो रहा था।"

यह सुनकर पूज्य नंदका, वेदना से लज्जित होकर, भगवान (बुद्ध) से बोले: "भंते, मुझे पता नहीं था कि भगवान (बुद्ध) द्वार के बाहर खड़े हैं। यदि मुझे पता होता, तो मैं इतनी देर तक नहीं बोलता।"

तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य नंदक की घबराहट को समझते हुए उनसे कहा, "अच्छा, अच्छा, नंदक! तुम्हारे जैसे कुल के जातकों के लिए, जिन्होंने गृहस्थ जीवन छोड़कर श्रद्धापूर्वक संन्यासी जीवन में प्रवेश किया है, धर्म के मार्ग पर प्रवचन के लिए एक साथ बैठना उचित है। नंदक, जब तुम एकत्रित हो जाओ, तो तुम्हें दो में से एक कार्य करना चाहिए: या तो धर्म पर प्रवचन देना चाहिए या मौन धारण करना चाहिए।"

(1) "नंदक, एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण हो सकता है, पर वह सद्गुणी नहीं होता; अतः वह उस कारक के संबंध में अपूर्ण है। 1836 उसे उस कारक को पूरा करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: 'मैं आस्था से परिपूर्ण होकर सद्गुणी कैसे हो सकता हूँ?' परन्तु जब कोई भिक्षु आस्था से परिपूर्ण हो और सद्गुणी भी हो, तब वह उस कारक के संबंध में पूर्ण होता है।"

(2) "एक भिक्षु आस्थावान और सद्गुणी हो सकता है, परन्तु वह मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त नहीं करता; 1837 अतः वह उस कारक के संबंध में अपूर्ण है। उसे उस कारक को पूरा करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: 'मैं आस्थावान और सद्गुणी कैसे हो सकता हूँ, और मन की आंतरिक समता (समथा) भी कैसे प्राप्त कर सकता हूँ?' परन्तु जब एक भिक्षु आस्थावान और सद्गुणी हो, और मन की आंतरिक समता (समथा) भी प्राप्त कर ले, तब वह उस कारक के संबंध में पूर्ण हो जाता है।"

(3) "एक भिक्षु आस्थावान और सद्गुणी हो सकता है, और वह मन की आंतरिक समता (समाथा) प्राप्त कर सकता है, लेकिन यदि वह घटनाओं के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त नहीं करता है; 1838 इस प्रकार वह उस कारक के संबंध में अपूर्ण है। जिस प्रकार एक लंगड़ा या दोषपूर्ण पैर वाला चार पैरों वाला जानवर उस अंग के संबंध में अपूर्ण होगा; उसी प्रकार, जब एक भिक्षु आस्थावान और सद्गुणी हो, और मन की आंतरिक समता (समाथा) प्राप्त कर ले, लेकिन वह घटनाओं के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त नहीं करता है, तो वह उस कारक के संबंध में अपूर्ण है। उसे उस कारक को पूरा करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: 'मैं आस्थावान और सद्गुणी कैसे हो सकता हूँ, मन की आंतरिक समता (समाथा) कैसे प्राप्त कर सकता हूँ, और घटनाओं के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) कैसे प्राप्त कर सकता हूँ?'"

(4) परन्तु जब कोई भिक्षु (i) आस्था से परिपूर्ण हो, (ii) गुणी हो, (iii) मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त कर ले, और (iv) घटनाओं के प्रति अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर ज्ञान (दिव्य ज्ञान) प्राप्त कर ले, तो वह उस कारक के संबंध में पूर्ण हो जाता है।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह कहकर सुगत (भगवान बुद्ध) अपने आसन से उठे और अपने निवास स्थान में प्रवेश कर गए। भगवान (बुद्ध) के जाने के कुछ ही समय बाद, पूज्य नंदक ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "हे मित्रों, अभी-अभी अपने आसन से उठकर अपने निवास स्थान में प्रवेश करने से पहले, भगवान (बुद्ध) ने पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को चार शब्दों में प्रकट किया: [361 'नंदक, एक भिक्षु आस्था से संपन्न हो सकता है, पर सद्गुणी नहीं। ... [नंदक यहाँ बुद्ध के प्रवचन को दोहराते हैं:] ... परन्तु जब एक भिक्षु आस्था से संपन्न और सद्गुणी होता है, और वह मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त करता है और घटनाओं में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) भी प्राप्त करता है, तब वह उस कारक के संबंध में पूर्ण होता है।'

"मित्रों, समय पर धम्म सुनने और समय पर धम्म पर चर्चा करने के ये पाँच लाभ हैं। वे पाँच क्या हैं?"

(5) "यहाँ, मित्रों, एक भिक्षु भिक्षुओं को उस धम्म का उपदेश देता है जो आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम है, सही अर्थ और शब्दों के साथ; वह पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्रकट करता है। जिस भी ढंग से भिक्षु भिक्षुओं को आरंभ में उत्तम धम्म का उपदेश देता है... [और] पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्रकट करता है, ठीक उसी तरह गुरु भिक्षु को प्रिय और आदरणीय हो जाता है, और भिक्षु उसका आदर और सम्मान करता है। 1839 धम्म को समय पर सुनने और धम्म पर समय पर चर्चा करने का यह पहला लाभ है।"

(6) "एक भिक्षु, भिक्षुओं को उस धम्म का उपदेश देता है जो आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम है, सही अर्थ और शब्दों के साथ; वह उस आध्यात्मिक जीवन को प्रकट करता है जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध है। जिस भी ढंग से भिक्षु भिक्षुओं को उस धम्म का उपदेश देता है जो आरंभ में उत्तम है... [और] उस पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्रकट करता है, ठीक उसी तरह, उस धम्म के संबंध में, वह अर्थ में प्रेरणा और धम्म में प्रेरणा का अनुभव करता है। 1840 धम्म को समय पर सुनने और धम्म पर समय पर चर्चा करने का यह दूसरा लाभ है।"

(7) "एक भिक्षु, भिक्षुओं को उस धम्म (मार्ग) का उपदेश देता है जो आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम है, सही अर्थ और शब्दों के साथ; वह पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्रकट करता है। जिस भी तरीके से भिक्षु भिक्षुओं को आरंभ में उत्तम धम्म का उपदेश देता है... [और] पूर्णतः पूर्ण और [362] शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्रकट करता है, ठीक उसी तरह वह उस धम्म में पन्ना (दिव्य ज्ञान) से भेदने के बाद एक गहन और सारगर्भित विषय देखता है। 1841 यह धम्म को समय पर सुनने और धम्म पर समय पर चर्चा करने का तीसरा लाभ है।"

(8) "एक भिक्षु, जब अन्य भिक्षुओं को उचित अर्थ और शब्दों के साथ, आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम धम्म का उपदेश देता है, तो वह पूर्णतः परिपूर्ण और शुद्ध आध्यात्मिक जीवन को प्रकट करता है। जिस भी प्रकार से भिक्षु अन्य भिक्षुओं को आरंभ में उत्तम धम्म का उपदेश देता है... और पूर्णतः परिपूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्रकट करता है, ठीक उसी प्रकार उसके साथी भिक्षु उसका अधिक आदर करते हैं, यह सोचकर: 'निश्चित रूप से, इस पूजनीय भिक्षु ने सिद्धि प्राप्त कर ली है या प्राप्त करेंगे।' धम्म को समय पर सुनने और धम्म पर समय पर चर्चा करने का यह चौथा लाभ है।"

(9) "फिर, एक भिक्षु भिक्षुओं को उस धम्म का उपदेश देता है जो आरंभ में, मध्य में और अंत में उत्तम है, सही अर्थ और शब्दों के साथ; वह उस आध्यात्मिक जीवन को प्रकट करता है जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध है। जिस भी प्रकार से भिक्षु भिक्षुओं को उस धम्म का उपदेश देता है जो आरंभ में उत्तम है... [और] उस ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्रकट करता है जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध है, उस धम्म को सुनकर वहाँ के वे भिक्षु जो प्रशिक्षु हैं, जिन्होंने अपने हृदय के आदर्श को प्राप्त नहीं किया है, जो बंधन से अतुलनीय सुरक्षा की आकांक्षा रखते हुए निवास करते हैं, अभी तक अप्राप्य की प्राप्ति के लिए, अभी तक अप्राप्त की गई उपलब्धि के लिए, अभी तक अप्राप्त की गई अनुभूति के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जागृत करते हैं। परन्तु उस धम्म को सुनकर, वे भिक्षु जो अरहंत हैं जिनके दोष नष्ट हो गए हैं, जिन्होंने ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत करने वाले, जो करना आवश्यक था वह करने वाले, बोझ उतारने वाले, अपने लक्ष्य तक पहुँचने वाले, अस्तित्व के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म के कारण) को पूर्णतः नष्ट करने वाले और अंतिम ज्ञान के माध्यम से पूर्णतः मुक्त होने वाले, [363] इस जीवन में सुखमय निवास के लिए समर्पित हैं। यह धम्म को समय पर सुनने और धम्म पर समय पर चर्चा करने का पाँचवाँ लाभ है।

समय पर धम्म सुनने और समय पर धम्म पर चर्चा करने के पाँच लाभ ये हैं।

5 शक्तियाँ [1842] (बाला)

भिक्षुओं, ये चार शक्तियाँ हैं। कौन सी चार? पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, निष्कलंकता की शक्ति और अनुकूल संबंध बनाए रखने की शक्ति।

(1) हे भिक्षुओं, पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति क्या है? व्यक्ति ने पन्ना (दिव्य ज्ञान) से उन गुणों को स्पष्ट रूप से देखा और समझा है जो हानिकारक (अकुशल) हैं और हानिकारक माने जाते हैं; जो लाभकारी (कुशल) हैं और लाभकारी माने जाते हैं; जो निंदनीय हैं और निंदनीय माने जाते हैं; जो निष्कलंक हैं और निष्कलंक माने जाते हैं; जो अंधकारमय हैं और अंधकारमय माने जाते हैं; जो प्रकाशमय हैं और प्रकाशमय माने जाते हैं; जिनका पालन नहीं किया जाना चाहिए और जिनका पालन नहीं किया जाना चाहिए; जिनका पालन किया जाना चाहिए और जिनका पालन किया जाना चाहिए; जो श्रेष्ठों के अयोग्य हैं और श्रेष्ठ माने जाते हैं; जो श्रेष्ठों के योग्य हैं और श्रेष्ठ माने जाते हैं। इसे ही पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति कहते हैं।

(2) "और ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति क्या है? व्यक्ति उन गुणों को त्यागने की इच्छा उत्पन्न करता है जो हानिकारक (अकुशल) हैं और हानिकारक माने जाते हैं; जो निंदनीय हैं और निंदनीय माने जाते हैं; जो अंधकारमय हैं और अंधकारमय माने जाते हैं; जिनका पालन नहीं किया जाना चाहिए और जिनका पालन नहीं किया जाना चाहिए; जो श्रेष्ठ लोगों के अयोग्य हैं और जिनका अयोग्य माना जाता है। व्यक्ति प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करता है, मन लगाता है और इसके लिए प्रयासरत रहता है। व्यक्ति उन सभी गुणों को प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न करता है जो लाभकारी (कुशल) हैं और लाभकारी माने जाते हैं; जो निष्कलंक हैं और निष्कलंक माने जाते हैं; जो उज्ज्वल हैं और उज्ज्वल माने जाते हैं; जिनका पालन किया जाना चाहिए और जिनका पालन किया जाना चाहिए; [364] जो श्रेष्ठ लोगों के योग्य हैं और जिनका योग्य माना जाता है। व्यक्ति प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत करता है, मन को लगाता है और इसके लिए प्रयास करता है। इसे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति कहा जाता है।

(3) "और निर्दोषता की शक्ति क्या है? यहाँ, एक श्रेष्ठ शिष्य निर्दोष शारीरिक, वाणी और मानसिक क्रिया में संलग्न होता है। इसे निर्दोषता की शक्ति कहा जाता है।"

(4) "और अनुकूल संबंध बनाए रखने की शक्ति क्या है? अनुकूल संबंध बनाए रखने के ये चार साधन हैं: दान, मधुर वाणी, परोपकारी आचरण और निष्पक्षता। दान में सर्वश्रेष्ठ धम्म का दान है। मधुर वाणी में सर्वश्रेष्ठ है, जो धम्म में रुचि रखता हो और उत्सुकता से सुनता हो, उसे बार-बार धम्म का उपदेश देना। परोपकारी आचरण में सर्वश्रेष्ठ है, जब कोई व्यक्ति किसी अविश्वासी व्यक्ति को आस्था की संपदा में, किसी अनैतिक व्यक्ति को सद्गुणों की संपदा में, किसी कंजूस व्यक्ति को उदारता की संपदा में और किसी मूर्ख व्यक्ति को ज्ञान (दिव्य ज्ञान) की संपदा में प्रोत्साहित, स्थापित और स्थिर करता है। निष्पक्षता में सर्वश्रेष्ठ है कि एक जन्म-प्रवेशक (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) दूसरे जन्म-प्रवेशक (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के समान हो, एक जन्म-प्रवेशक (1 एक पुनर्जन्म (सकदागामी) एक बार जन्म लेने वाले (1 पुनर्जन्म, सकदागामी) के बराबर है, एक सांसारिक पुनर्जन्म न लेने वाले (अनगामी) एक सांसारिक पुनर्जन्म न लेने वाले (अनगामी) के बराबर है, और एक अरहंत एक अरहंत के बराबर है। 1843 इसे अनुकूल संबंध बनाए रखने की शक्ति कहा जाता है।

भिक्षुओं, ये चार शक्तियाँ हैं। जब किसी श्रेष्ठ शिष्य में ये चार शक्तियाँ होती हैं, तो वह पाँच भयों से पार पा लेता है। वे पाँच कौन से भय हैं? (5) जीविका खोने का भय, (6) बदनामी का भय, (7) सभाओं में संकोच का भय, [365] (8) मृत्यु का भय, और (9) बुरे भाग्य का भय। श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: मैं अपनी जीविका के कारण भयभीत नहीं हूँ। मुझे अपनी जीविका के कारण क्यों भयभीत होना चाहिए? मेरे पास चार शक्तियाँ हैं: पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, निष्कलंकता की शक्ति, और अनुकूल संबंध बनाए रखने की शक्ति। एक मूर्ख व्यक्ति अपनी जीविका के कारण भयभीत हो सकता है; एक आलसी व्यक्ति अपनी जीविका के कारण भयभीत हो सकता है; एक व्यक्ति जो निंदनीय शारीरिक, वाणी और मानसिक कर्मों में संलग्न रहता है, वह अपनी जीविका के कारण भयभीत हो सकता है; एक व्यक्ति जो अनुकूल संबंध नहीं बनाए रखता है, वह अपनी जीविका के कारण भयभीत हो सकता है।

मुझे बदनामी का डर नहीं है... मुझे सभाओं में संकोच का डर नहीं है... मुझे मृत्यु का डर नहीं है, मुझे बुरे अंजाम का डर नहीं है। मुझे बुरे अंजाम से क्यों डरना चाहिए? मेरे पास चार शक्तियां हैं: पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति, निष्कलंकता की शक्ति और अनुकूल संबंध बनाए रखने की शक्ति। एक नासमझ व्यक्ति बुरे अंजाम से डर सकता है; एक आलसी व्यक्ति बुरे अंजाम से डर सकता है; वह व्यक्ति जो निंदनीय शारीरिक, वाणी और मानसिक कर्मों में लिप्त रहता है, बुरे अंजाम से डर सकता है; वह व्यक्ति जो अनुकूल संबंध नहीं बनाए रखता, बुरे अंजाम से डर सकता है।

"जब किसी श्रेष्ठ शिष्य में ये चार शक्तियां आ जाती हैं, तो वह इन पांचों भयों से पार पा लेता है।"

---

6. संघ (सेवना)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"मित्रों/व्यक्तियों को दो प्रकार से समझा जाना चाहिए: वे जिनके साथ संबंध रखना चाहिए और वे जिनके साथ संबंध नहीं रखना चाहिए। वस्त्रों को भी दो प्रकार से समझा जाना चाहिए: वे जिनका उपयोग करना चाहिए और वे जिनका उपयोग नहीं करना चाहिए। भिक्षा भोजन... आवासों को भी दो प्रकार से समझा जाना चाहिए: वे जिनका उपयोग करना चाहिए और वे जिनका उपयोग नहीं करना चाहिए। गांवों या कस्बों को भी दो प्रकार से समझा जाना चाहिए: वे जिनका सहारा लेना चाहिए और [366] वे जिनका सहारा नहीं लेना चाहिए। देशों या क्षेत्रों को दो प्रकार से समझा जाना चाहिए: वे जिनका सहारा लेना चाहिए और वे जिनका सहारा नहीं लेना चाहिए।"

(1) जब यह कहा गया: 'मित्रों, व्यक्तियों को दो प्रकार का समझना चाहिए: वे जिनके साथ संगति करनी चाहिए और वे जिनके साथ संगति नहीं करनी चाहिए,' तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि कोई किसी व्यक्ति के बारे में जानता है: 'जब मैं इस व्यक्ति के साथ संगति करता हूँ, तो मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण बढ़ जाते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) कम हो जाते हैं; और जीवन की वे आवश्यकताएँ जो संन्यासी जीवन में जाने वाले व्यक्ति को प्राप्त होनी चाहिएं - वस्त्र, भिक्षा, आवास, और बीमारों के लिए दवाइयाँ और भोजन - कठिनाई से प्राप्त होती हैं; और जिस तपस्वी जीवन के लिए मैंने गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश किया है, वह मेरे लिए विकास द्वारा पूर्ण नहीं होता', तो उस स्थिति में व्यक्ति को उस व्यक्ति से किसी भी समय, रात या दिन, विदा लिए बिना भी, विदा ले लेनी चाहिए। उसका अनुसरण जारी नहीं रखना चाहिए। 846

(2) यदि किसी को किसी व्यक्ति के बारे में पता चले: 'जब मैं इस व्यक्ति के साथ संगति करता हूँ, तो मुझमें अकुशल गुण बढ़ जाते हैं और कुशल गुण घट जाते हैं; परन्तु जीवन की वे आवश्यक वस्तुएँ जो संन्यासी को प्राप्त होनी चाहिएं— वस्त्र, भिक्षा, आवास, और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन—बिना किसी कठिनाई के प्राप्त हो जाती हैं; परन्तु फिर भी, जिस संन्यासी जीवन के लिए मैंने गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन अपनाया है, उसका लक्ष्य मुझे पूर्ण नहीं हो पाता,' तो ऐसी स्थिति में, विचार करने के बाद, उस व्यक्ति से विदा लेकर उससे विदा ले लेनी चाहिए। 1847 उसका अनुसरण जारी नहीं रखना चाहिए।

(3) यदि किसी को किसी व्यक्ति के बारे में पता चले: 'जब मैं इस व्यक्ति के साथ संगति करता हूँ, तो मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण बढ़ जाते हैं; परन्तु जीवन की वे आवश्यक वस्तुएँ जो संन्यासी जीवन में जाने वाले व्यक्ति को प्राप्त होनी चाहिए, जैसे वस्त्र, भिक्षा, आवास, और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन, मुझे मुश्किल से प्राप्त होती हैं; फिर भी, जिस संन्यासी जीवन के लिए मैंने गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन अपनाया है, वह मेरे लिए विकास द्वारा पूर्ण हो जाता है।' ऐसे में, चिंतन करने के बाद, उस व्यक्ति का अनुसरण करते रहना चाहिए, उससे विमुख नहीं होना चाहिए।

(4) यदि किसी को किसी व्यक्ति के बारे में पता हो: 'जब मैं इस व्यक्ति के साथ रहता हूँ, तो मुझमें अकुशल गुण कम हो जाते हैं और कुशल गुण बढ़ जाते हैं; और जीवन की वे सभी आवश्यक वस्तुएँ जो संन्यासी जीवन में जाने वाले व्यक्ति को प्राप्त होनी चाहिएं— वस्त्र, भिक्षा, आवास, और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन— नितांत प्राप्त हो जाती हैं; और जिस संन्यासी जीवन के लिए मैंने गृहस्थ

जीवन छोड़कर संन्यास लिया है, उसका लक्ष्य मेरे लिए विकास द्वारा पूर्ण हो जाता है,' तो ऐसे में व्यक्ति को जीवन भर उस व्यक्ति का अनुसरण करते रहना चाहिए। उसे उससे विमुख नहीं होना चाहिए, भले ही उसे त्याग दिया जाए।

"जब यह कहा गया था: 'मित्रों, व्यक्तियों को दो प्रकार से समझा जाना चाहिए: वे जिनके साथ संबंध रखना चाहिए और वे जिनके साथ संबंध नहीं रखना चाहिए', तो इसका कारण यही था।"

(5) "जब यह कहा गया: 'हे मित्रों, वस्त्रों को दो प्रकार का समझना चाहिए: वे जिनका उपयोग किया जाना चाहिए और वे जिनका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए', तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी वस्त्र के बारे में पता हो: 'इस वस्त्र का उपयोग करने से मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) बढ़ते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण घटते हैं', तो उसे ऐसे वस्त्र का उपयोग नहीं करना चाहिए। परन्तु यदि किसी को किसी वस्त्र के बारे में पता हो: 'इस वस्त्र का उपयोग करने से मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण घटते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) बढ़ते हैं', तो उसे ऐसे वस्त्र का उपयोग करना चाहिए। [368] जब यह कहा गया: 'हे मित्रों, वस्त्रों को दो प्रकार का समझना चाहिए: वे जिनका उपयोग किया जाना चाहिए और वे जिनका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए', तो इसी कारण से ऐसा कहा गया।

(6) जब यह कहा गया: 'हे मित्रों, भिक्षा को दो प्रकार का समझना चाहिए: एक वह जिसका उपयोग किया जाना चाहिए और दूसरा वह जिसका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए', तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी भिक्षा के बारे में पता हो कि 'इस भिक्षा का उपयोग करने से मुझमें अकुशल गुण बढ़ जाते हैं और लाभकारी गुण कम हो जाते हैं', तो उसे ऐसी भिक्षा का उपयोग नहीं करना चाहिए। परन्तु यदि किसी को किसी भिक्षा के बारे में पता हो कि 'इस भिक्षा का उपयोग करने से मुझमें अकुशल गुण कम हो जाते हैं और लाभकारी गुण बढ़ जाते हैं', तो उसे ऐसी भिक्षा का उपयोग करना चाहिए। जब यह कहा गया: 'हे मित्रों, भिक्षा को दो प्रकार का समझना चाहिए: एक वह जिसका उपयोग किया जाना चाहिए और दूसरा वह जिसका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए', तो इसी कारण से ऐसा कहा गया।

(7) जब यह कहा गया: 'हे मित्रों, आवास को दो प्रकार का समझना चाहिए: वे जिनका उपयोग किया जाना चाहिए और वे जिनका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए', तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी आवास के बारे में पता हो: 'जब मैं इस आवास का उपयोग करता हूँ, तो मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) बढ़ जाते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) घट जाते हैं,' तो उसे ऐसे आवास का उपयोग नहीं करना चाहिए। लेकिन यदि किसी को किसी आवास के बारे में पता हो: 'जब मैं इस आवास का उपयोग करता हूँ, तो मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) घट जाते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) बढ़ जाते हैं,' तो उसे ऐसे आवास का उपयोग करना चाहिए। जब यह कहा गया: 'हे मित्रों, आवास को दो प्रकार का समझना चाहिए: वे जिनका उपयोग किया जाना चाहिए और वे जिनका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए', तो इसी कारण से ऐसा कहा गया।

(8) जब यह कहा गया कि 'मित्रों, गाँवों या नगरों को दो प्रकार का समझना चाहिए: वे जहाँ जाना चाहिए और वे जहाँ नहीं जाना चाहिए,' तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी गाँव या नगर के बारे में पता हो कि 'जब मैं इस गाँव या नगर में जाता हूँ, तो मुझमें अकुशल गुण बढ़ जाते हैं और लाभकारी गुण घट जाते हैं,' तो उसे ऐसे गाँव या नगर में नहीं जाना चाहिए। परन्तु यदि किसी को किसी गाँव या नगर के बारे में पता हो कि 'जब मैं इस गाँव या नगर में जाता हूँ, तो मुझमें अकुशल गुण घट जाते हैं और लाभकारी गुण बढ़ जाते हैं,' तो उसे ऐसे गाँव या नगर में जाना चाहिए। जब यह कहा गया कि 'मित्रों, गाँवों या नगरों को दो प्रकार का समझना चाहिए: वे जहाँ जाना चाहिए और वे जहाँ नहीं जाना चाहिए,' तो इसी कारण ऐसा कहा गया।

(9) "जब यह कहा गया कि 'मित्रों, देशों या क्षेत्रों को दो प्रकार से समझा जाना चाहिए: वे जिनका सहारा लिया जा सकता है और वे जिनका सहारा नहीं लिया जा सकता,' तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी देश या क्षेत्र के बारे में पता हो कि 'जब मैं इस देश या क्षेत्र का सहारा लेता हूँ, तो मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) बढ़ जाते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण घट जाते हैं,' तो उसे ऐसे देश या क्षेत्र का सहारा नहीं लेना चाहिए। लेकिन यदि किसी को किसी देश या क्षेत्र के बारे में पता हो कि 'जब मैं इस देश या क्षेत्र का सहारा लेता हूँ, तो मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) घट जाते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) बढ़ जाते हैं, तो उसे ऐसे देश या क्षेत्र का सहारा लेना चाहिए। जब यह कहा गया कि 'मित्रों, देशों या क्षेत्रों को दो प्रकार से समझा जाना चाहिए: वे जिनका सहारा लिया जा सकता है और वे जिनका सहारा नहीं लिया जा सकता,' तो इसी कारण से ऐसा कहा गया।"

7 सुतवा

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। तब एक तपस्वी सुतवा भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"भंते, एक बार भगवान (बुद्ध) यहीं राजगृह, पर्वतीय किले में निवास कर रहे थे। 1848 उस समय, भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में, मैंने यह सुना और सीखा: 'सुतव, एक भिक्षु जो अरहंत है - जिसके सारे दोष नष्ट हो गए हैं, जिसने ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जिया है, जो करना आवश्यक था वह किया है, बोझ उतार दिया है, अपने लक्ष्य तक पहुँच गया है, अस्तित्व के बंधनों (भाव/पुनर्जन्म के कारण) को पूरी तरह से नष्ट कर दिया है, जो अंतिम ज्ञान से पूर्णतः मुक्त हो गया है - वह पाँच मामलों में उल्लंघन करने में असमर्थ है। वह जानबूझकर किसी जीव को जीवन से वंचित करने में असमर्थ है; वह चोरी करके वह नहीं ले सकता जो उसे नहीं दिया गया है; वह यौन संबंध बनाने में असमर्थ है; वह जानबूझकर झूठ बोलने में असमर्थ है; वह इंद्रिय सुखों का आनंद लेने के लिए वस्तुओं का संचय करने में असमर्थ है जैसा कि उसने अतीत में एक गृहस्थ के रूप में किया था।' भंते, क्या मैंने भगवान (बुद्ध) से जो सुना वह सही था, क्या मैंने उसे सही ढंग से समझा, क्या मैंने उस पर सही ढंग से ध्यान दिया, क्या मैंने उसे सही ढंग से याद रखा?

"जी, सुतावा, आपने इसे सही सुना, सही समझा, सही ध्यान दिया और सही याद रखा। सुतावा, अतीत में भी और अब भी मैं यही कहता हूँ: 'एक भिक्षु जो अरहंत है—जिसके सारे दोष नष्ट हो गए हैं...जो अंतिम ज्ञान से पूर्णतः मुक्त हो गया है—वह नौ मामलों में पाप करने में असमर्थ है। (1) वह जानबूझकर किसी जीव को जीवन से वंचित नहीं कर सकता; (2) वह चोरी करके वह नहीं ले सकता जो उसे नहीं दिया गया है; (3) वह यौन संबंध बनाने में असमर्थ है; (4) वह जानबूझकर झूठ नहीं बोल सकता; (5) वह गृहस्थ रहते हुए इंद्रिय सुखों का आनंद लेने के लिए वस्तुओं का संचय नहीं कर सकता; (6) वह बुद्ध का त्याग नहीं कर सकता; (7) वह धम्म का त्याग नहीं कर सकता; (8) वह संघ का त्याग नहीं कर सकता; (9) वह प्रशिक्षण का त्याग नहीं कर सकता।" 1849 [371] हे सुतवा, अतीत में भी और अब भी मैं यही कहता हूँ: 'वह भिक्षु जो अरहंत है - जिसके दोष नष्ट हो गए हैं... जो अंतिम ज्ञान के माध्यम से पूर्णतः मुक्त हो गया है - वह इन नौ मामलों में उल्लंघन करने में असमर्थ है।'

8 सज्जा

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) गिद्ध शिखर पर्वत पर स्थित राजगृह में निवास कर रहे थे। तब तपस्वी सज्जा भगवान (बुद्ध) के पास आए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, एक बार भगवान (बुद्ध) यहीं राजगृह में निवास कर रहे थे। . . . [जैसा कि 9:7 में है] . . . भंते, क्या मैंने भगवान (बुद्ध) से यह सही सुना, सही समझा, सही ध्यान दिया, सही याद रखा?" [372]

"हाँ, सज्जा, तुमने इसे सही सुना, सही समझा, सही ध्यान दिया, सही याद रखा। सज्जा, पहले भी और अब भी मैं यही कहता हूँ: 'एक भिक्षु जो अरहंत है—जिसके सारे दोष नष्ट हो गए हैं...जो अंतिम ज्ञान से पूर्णतः मुक्त हो गया है—वह नौ मामलों में पाप करने में असमर्थ है। (1) वह जानबूझकर किसी जीव को जीवन से वंचित नहीं कर सकता; (2) वह चोरी करके वह चीज़ नहीं पा सकता जो उसे नहीं दी गई है; (3) वह यौन संबंध बनाने में असमर्थ है; (4) वह जानबूझकर झूठ नहीं बोल सकता; (5) वह पहले की तरह गृहस्थ रहते हुए इंद्रिय सुखों का आनंद लेने के लिए वस्तुओं का संचय नहीं कर सकता; (6) वह इच्छा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चल सकता; (7) वह घृणा के कारण गलत मार्ग पर नहीं चल सकता; (8) वह किसी और कारण से गलत मार्ग पर नहीं चल सकता। (9) वह भय के कारण गलत मार्ग पर चलने में असमर्थ है। हे सज्जा, अतीत में भी और अब भी मैं यही कहता हूँ: 'एक भिक्षु जो अरहंत है—जिसके दोष नष्ट हो चुके हैं...जो अंतिम ज्ञान द्वारा पूर्णतः मुक्त हो चुका है—वह इन नौ मामलों में उल्लंघन करने में असमर्थ है।'

9 व्यक्ति (पुग्गल सं. पुरुष-युगल)

भिक्षुओं, संसार में नौ प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे नौ कौन से हैं? अरहंत, जो अरहंतत्व के लिए साधना करते हैं; अनागामी, जो अनागामी के फल की प्राप्ति के लिए साधना करते हैं; सकदागामी, जो एक बार जन्म लेते हैं; सोतपत्ति, जो सात जन्म लेते हैं; और सांसारिक। ये नौ प्रकार के व्यक्ति संसार में पाए जाते हैं। [373]

---

10 उपहार के योग्य (अहुनेय्या)

भिक्षुओं, ये नौ व्यक्ति दान के योग्य हैं, आतिथ्य सत्कार के योग्य हैं, भेंट के योग्य हैं, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य हैं, और संसार के लिए अद्वितीय पुण्य क्षेत्र हैं। ये नौ कौन हैं? अरहंत, जो अरहंतत्व के लिए साधना करते हैं; अनागामी, जो अनागामी हैं, और जो अनागामी होने के फल की प्राप्ति के लिए साधना करते हैं; सकदागामी, जो एक बार जन्म लेते हैं, और जो एक बार जन्म लेने के फल की प्राप्ति के लिए साधना करते हैं; सोतपत्ति, जो सात जन्मों के लिए जन्म लेते हैं, और कुल के सदस्य। ये नौ व्यक्ति दान के योग्य हैं... संसार के लिए अद्वितीय पुण्य क्षेत्र हैं।

द्वितीय. शेर की दहाड़ (सिहानाडा वाग्गो सं. सिंघा-नाडा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

11 शेर की दहाड़ (सिहानाडा सं. सिंघा-नाडा)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब पूज्य सारिपुत्त भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, मैंने सावत्थी में वर्षाकालीन निवास का निर्माण पूरा कर लिया है। मैं ग्रामीण इलाकों की यात्रा पर निकलना चाहता हूँ।"

"आप जा सकते हैं, सारिपुत्त, जब आपको सुविधा हो।"

तब पूज्य सारिपुत्त अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और चले गए। [374] फिर, पूज्य सारिपुत्त के जाने के कुछ ही समय बाद, एक भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से कहा...

"भंते, पूज्य सारिपुत्त ने मुझे प्रहार किया और फिर मुझे स्थापित किया।"

बिना माफी मांगे दौरे पर निकल पड़े।" 1851

तब भगवान (बुद्ध) ने एक भिक्षु को संबोधित करते हुए कहा: "हे भिक्षु, मेरे नाम से सारिपुत्त को पुकारो, [उससे कहते हुए]: 'गुरुजी तुम्हें बुला रहे हैं, मित्र सारिपुत्त।" 1882

“जी हां, भंते,” उस भिक्षु ने उत्तर दिया। फिर वह पूज्य सारिपुत्त के पास गया और बोला: “गुरुजी आपको बुला रहे हैं, मित्र सारिपुत्त।”

"जी हां, मित्र," पूज्य सारिपुत्त ने उत्तर दिया।

उस अवसर पर पूज्य महामोग्गलाना और पूज्य आनंद ने एक चाबी ली और घर-घर जाकर पुकारते हुए कहा: "आदरणीय देवों, बाहर आओ! आदरणीय देवों, बाहर आओ! अब पूज्य सारिपुत्त भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में सिंह की गर्जना करेंगे!"

तब पूज्य सारिपुत्त भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा, "सारिपुत्त, तुम्हारे एक साथी भिक्षु ने तुम्हारे बारे में शिकायत की है, [कहते हुए]: 'भंते, पूज्य सारिपुत्त ने मुझे मारा और फिर बिना क्षमा मांगे भ्रमण पर चले गए।'"

(1) "भंते, जिसने अपने शरीर के प्रति सती (ध्यान) स्थापित नहीं की है, वह किसी साथी भिक्षु को मार सकता है और फिर बिना क्षमा मांगे भ्रमण पर निकल सकता है। जिस प्रकार वे पृथ्वी पर शुद्ध और अशुद्ध वस्तुएँ - मल, मूत्र, थूक, मवाद और रक्त - फेंकते हैं, फिर भी पृथ्वी इससे विचलित, अपमानित या घृणाग्रस्त नहीं होती; उसी प्रकार [375] हे भंते, मैं पृथ्वी के समान विशाल, उदात्त और असीम मन से, शत्रुता और दुर्भावना से रहित होकर निवास करता हूँ।"

(2) "भंते, जिसने अपने शरीर के प्रति सती ध्यान स्थापित नहीं किया है, वह किसी साथी भिक्षु को मार सकता है और फिर बिना क्षमा मांगे भ्रमण पर निकल सकता है। जैसे वे शुद्ध और अशुद्ध वस्तुओं को पानी में धोते हैं - मल, मूत्र, थूक, मवाद और रक्त - फिर भी पानी इससे विचलित, अपमानित या घृणाग्रस्त नहीं होता; उसी प्रकार, हे भंते, मैं जल के समान विशाल, उदात्त और असीम मन से, शत्रुता और दुर्भावना से रहित होकर निवास करता हूँ।"

(3) "भंते, जिसने अपने शरीर के प्रति सती ध्यान स्थापित नहीं किया है, वह किसी साथी भिक्षु को मार सकता है और फिर बिना क्षमा मांगे भ्रमण पर निकल सकता है। जिस प्रकार अग्नि शुद्ध और अशुद्ध वस्तुओं—मल, मूत्र, थूक, मवाद और रक्त—को जला देती है, फिर भी अग्नि इनसे विचलित, अपमानित या घृणाग्रस्त नहीं होती; उसी प्रकार, हे भंते, मैं अग्नि के समान विशाल, उदात्त और असीम मन से, शत्रुता और दुर्भावना से रहित होकर निवास करता हूँ।"

(4) "भंते, जिसने अपने शरीर के प्रति सती (ध्यान) स्थापित नहीं की है, वह किसी साथी भिक्षु को मार सकता है और फिर बिना क्षमा मांगे भ्रमण पर निकल सकता है। जैसे वायु शुद्ध और अशुद्ध वस्तुओं— मल, मूत्र, थूक, मवाद और रक्त— पर बहती है, फिर भी वायु इससे विचलित, अपमानित या घृणाग्रस्त नहीं होती; उसी प्रकार, हे भंते, मैं वायु के समान विशाल, उदात्त और असीम मन से, शत्रुता और दुर्भावना से रहित होकर निवास करता हूँ।"

(5) "भंते, जिसने अपने शरीर के संबंध में शरीर-केंद्रित सती (ध्यान) स्थापित नहीं की है, वह किसी साथी भिक्षु को मार सकता है और फिर बिना क्षमा मांगे भ्रमण पर निकल सकता है। [376] जिस प्रकार एक झाड़ू शुद्ध और अशुद्ध चीजों— मल, मूत्र, थूक, मवाद और रक्त— को पोंछता है, फिर भी झाड़ू इससे विचलित, अपमानित या घृणाग्रस्त नहीं होता; उसी प्रकार, भंते, मैं झाड़ू के समान विशाल, उदात्त और असीम मन से, शत्रुता और दुर्भावना से रहित होकर निवास करता हूँ।"

(6) "भंते, जिसने अपने शरीर के प्रति सती (ध्यान) स्थापित नहीं की है, वह किसी साथी भिक्षु को मार सकता है और फिर बिना क्षमा मांगे भ्रमण पर निकल सकता है! जैसे कोई बहिष्कृत लड़का या लड़की, फटे-पुराने वस्त्र पहने और बर्तन लिए, विनम्र मन से किसी गाँव या कस्बे में प्रवेश करता है; वैसे ही, भंते, मैं भी एक बहिष्कृत लड़के के समान विशाल, उदात्त और असीम मन से, बिना किसी द्वेष और दुर्भावना के निवास करता हूँ।"

(7) "भंते, जिसने अपने शरीर के प्रति सती ध्यान स्थापित नहीं किया है, वह किसी साथी भिक्षु को मार सकता है और फिर बिना क्षमा मांगे भ्रमण पर निकल सकता है। जैसे सींग कटा हुआ बैल, जो शांत, अच्छी तरह से प्रशिक्षित और सधी हुई प्रकृति का होता है, गली-गली और चौक-चौक पर बिना किसी को अपने पैरों या सींगों से चोट पहुँचाए विचरण करता है; उसी प्रकार, भंते, मैं भी सींग कटे हुए बैल के समान विशाल, उदात्त और असीम मन से, बिना किसी द्वेष और दुर्भावना के निवास करता हूँ।"

(8) "भंते, जिसने अपने शरीर के प्रति सती (ध्यान) स्थापित नहीं की है, वह किसी साथी भिक्षु को मार सकता है और फिर बिना क्षमा मांगे भ्रमण पर निकल सकता है। जैसे कोई स्त्री या पुरुष—युवा, युवा, आभूषणों का शौकीन, सिर धोए हुए—अगर किसी साँप, कुत्ते या मनुष्य का शव उसके गले में लटका दिया जाए तो [377] घृणा, अपमान और तिरस्कार का अनुभव करेगा; उसी प्रकार, भंते, मैं भी इस घिनौने शरीर से घृणा, अपमान और तिरस्कार का अनुभव करता हूँ।"

(9) "भंते, जिसने अपने शरीर के प्रति सती (ध्यान) स्थापित नहीं की है, वह किसी साथी भिक्षु को मार सकता है और फिर बिना क्षमा मांगे यात्रा पर निकल सकता है। जैसे कोई व्यक्ति फटे और छिद्रित वसा से भरे कटोरे को अपने साथ रखता है जिससे तरल पदार्थ रिसता और टपकता रहता है; वैसे ही, भंते, मैं भी इस फटे और छिद्रित शरीर को अपने साथ लिए फिरता हूँ जिससे तरल पदार्थ रिसता और टपकता रहता है।"

"भंते, जिसने अपने शरीर के संबंध में शरीर की ओर निर्देशित सती (ध्यान) स्थापित नहीं की है, वह यहां किसी साथी भिक्षु पर प्रहार कर सकता है और फिर बिना माफी मांगे यात्रा पर निकल सकता है।"

तब वह [आरोप लगाने वाला] भिक्षु अपने आसन से उठा, अपना ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर डाला, भगवान (बुद्ध) के चरणों में सिर झुकाकर प्रणाम किया और भगवान (बुद्ध) से कहा, "भंते, मैंने एक अपराध किया है कि मैंने असत्य, निराधार और झूठे आधारों पर पूज्य सारिपुत्त की इतनी नासमझी, मूर्खता और अकुशलता से निंदा की। भंते, भगवान (बुद्ध) मेरे इस अपराध को भविष्य में संयम के लिए एक अपराध मानकर स्वीकार करें।"

"हे भिक्षु, आपने निश्चित रूप से पाप किया है क्योंकि आपने असत्य, निराधार और झूठे आधारों पर पूज्य सारिपुत्त की इतनी नासमझी, मूर्खता और अकुशलता से निंदा की है। लेकिन चूंकि आप अपने पाप को पाप मानते हैं और धर्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करते हैं, इसलिए हम इसे स्वीकार करते हैं। क्योंकि गुरु के अनुशासन में वृद्धि इसी में है कि व्यक्ति अपने पाप को पाप माने, धर्म के अनुसार उसका प्रायश्चित करे और भविष्य में संयम बरते।" [378]

तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य सारिपुत्त को संबोधित करते हुए कहा, "सारिपुत्त, इस खोखले आदमी को क्षमा कर दो, इससे पहले कि इसका सिर यहीं सात टुकड़ों में फट जाए।"

"मैं इस पूज्य भंते को क्षमा कर दूंगा, यदि यह पूज्य मुझसे कहे: 'और कृपया मुझे क्षमा कर दें'" 1853

---

12 शेष बचे हुए अवशेष (सौपदिशेष) के साथ

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब, सुबह के समय, पूज्य सारिपुत्त ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किया और भिक्षा मांगने के लिए सावत्थी में प्रवेश किया। तब उन्हें यह विचार आया: "सावत्थी में भिक्षा मांगने के लिए अभी बहुत जल्दी है। मुझे अन्य संप्रदायों के तपस्वियों के उद्यान में जाना चाहिए।" (1854)

फिर पूज्य सारिपुत्त अन्य संप्रदायों के संन्यासियों के उद्यान में गए। उन्होंने उन संन्यासियों से अभिवादन किया और जब उनका अभिवादन और सौहार्दपूर्ण वार्तालाप समाप्त हो गया, तो वे एक तरफ बैठ गए। उस अवसर पर वे संन्यासी एकत्रित होकर एक साथ बैठे थे, तभी उनके बीच यह चर्चा हुई: "मित्रों, जो कोई भी अवशेष के साथ मर जाता है, वह नरक, पशुलोक या व्यथित आत्माओं के लोक से मुक्त नहीं होता; वह दुख के लोक, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्त नहीं होता।"

तब पूज्य सारिपुत्त ने उन तपस्वियों के कथन से न तो प्रसन्नता व्यक्त की और न ही उसे अस्वीकार किया, बल्कि वे अपने आसन से उठकर चले गए, [यह सोचते हुए]: "मैं पता लगाऊंगा कि भगवान (बुद्ध) इस कथन के बारे में क्या कहते हैं।"

फिर, जब पूज्य सारिपुत्त सावत्थी में भिक्षा मांगने गए, [379] भोजन करने के बाद, भिक्षा मांगने के बाद लौटकर वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। [यहाँ वे पूरी घटना का शब्दशः वर्णन करते हैं और कहते हैं:] "मैं अपनी सीट से उठा और चला गया, [यह सोचते हुए]: मैं पता लगाऊंगा कि भगवान (बुद्ध) इस कथन के बारे में क्या कहते हैं।"

"हे सारिपुत्त, 1855 में वर्णित अन्य संप्रदायों के वे मूर्ख और अयोग्य भटकने वाले कौन हैं, और वे कौन हैं जो शेष बचे हुए व्यक्ति को 'शेष बचे हुए व्यक्ति' और शेष न बचे हुए व्यक्ति को 'शेष न बचे हुए व्यक्ति' के रूप में जानते हैं? 1856"

"सारिपुत्त, ये नौ व्यक्ति, कुछ अवशेष छोड़कर चले जाने पर, नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र से मुक्त हो जाते हैं; दुख के तल, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्त हो जाते हैं। वे कौन से नौ हैं? [380]

(1) "हे सारिपुत्त, यहाँ कोई व्यक्ति सद्गुणों का पालन करता है और समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) में लीन रहता है, परन्तु पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास केवल सीमित मात्रा में ही करता है। 1857 पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, यह व्यक्ति इस अंतराल में निर्वाण प्राप्त करता है। यह पहला व्यक्ति है, जो अवशेष छोड़कर इसलोक में विलीन हो जाता है, जो नरक, पशु लोक और व्यथित आत्माओं के लोक से मुक्त हो जाता है; दुख के लोक, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्त हो जाता है।"

(2) — (5) "फिर, कोई व्यक्ति सद्गुणों और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का पालन तो करता है, लेकिन पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास केवल सीमित मात्रा में ही करता है। पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, यह व्यक्ति उतरते ही निर्वाण प्राप्त कर लेता है... बिना प्रयास के निर्वाण प्राप्त कर लेता है... प्रयास से निर्वाण प्राप्त कर लेता है... जो नदी के विपरीत दिशा में उछलते हुए अकनित्थ लोक की ओर अग्रसर होता है। यह पाँचवाँ व्यक्ति है, जो कुछ अवशेष छोड़कर इस लोक से विलीन हो जाता है, और नरक... निम्न लोक से मुक्त हो जाता है।"

(6) "फिर, कुछ व्यक्ति सद्गुणों का पालन तो करते हैं, लेकिन समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास सीमित मात्रा में ही करते हैं। तीनों बंधनों के पूर्ण नाश और लोभ, घृणा और मोह (मोह) के कम होने से, यह व्यक्ति एक बार जन्म लेने वाला (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) होता है, जो इस संसार में एक बार फिर आकर दुखों का अंत करता है। यह छठा व्यक्ति है, जो कुछ अवशेष छोड़कर इस संसार से विलीन हो जाता है और नरक... निम्न लोक से मुक्त हो जाता है।"

(7) "फिर, कुछ व्यक्ति सद्गुणों का पालन करते हैं, लेकिन समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास केवल सीमित मात्रा में करते हैं। तीनों बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, यह व्यक्ति एक बीज प्राप्त करने वाला है, जो मनुष्य के रूप में एक बार फिर पुनर्जन्म लेकर [381] दुखों का अंत करता है। यह सातवां व्यक्ति है, जो अवशेष छोड़कर इस दुनिया से विलीन हो जाता है, और नरक... निम्न लोक से मुक्त हो जाता है।

(8) "फिर, कोई व्यक्ति सद्गुणों का पालन तो करता है, पर समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास सीमित मात्रा में ही करता है। तीनों बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, यह व्यक्ति कुल-कुल में ज्ञान प्राप्त करने वाला होता है, जो अच्छे परिवारों में दो-तीन बार विचरण करने के बाद दुखों का अंत करता है। यह आठवां व्यक्ति है, जो कुछ अवशेष छोड़कर इसलोक में विलीन हो जाता है और नरक... निम्न लोक से मुक्त हो जाता है।"

(9) "फिर, कुछ व्यक्ति सद्गुणों का पालन तो करते हैं, लेकिन समाधि (आत्म-लीनता/तल्लीनता) और पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभ्यास सीमित मात्रा में ही करते हैं। तीनों बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, यह व्यक्ति अधिकतम सात बार मोक्ष प्राप्त करने वाला होता है, जो देवताओं और मनुष्यों के बीच अधिकतम सात बार विचरण करने के बाद दुखों का अंत करता है। यह नौवां व्यक्ति है, जो कुछ अवशेष छोड़कर परलोक विलीन हो जाता है; जो नरक, पशुलोक और पीड़ित आत्माओं के लोक से मुक्त हो जाता है; दुख के लोक, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्त हो जाता है।"

"हे सारिपुत्त, वे अन्य संप्रदायों के मूर्ख और अयोग्य भटकने वाले कौन हैं, और वे कौन हैं जो शेष बचे हुए व्यक्ति को 'शेष बचे हुए व्यक्ति' और शेष न बचे हुए व्यक्ति को 'शेष न बचे हुए व्यक्ति' के रूप में जानते हैं?"

"ये नौ व्यक्ति, अपने अवशेष के साथ इस दुनिया से विदा होकर, नरक, पशुलोक और व्यथित आत्माओं के लोक से मुक्त हो जाते हैं; दुख के लोक, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्त हो जाते हैं। सारिपुत्त, मैं भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष गृहस्थ अनुयायियों और स्त्री गृहस्थ अनुयायियों को यह धम्म व्याख्या देने के लिए इच्छुक नहीं था। इसका क्या कारण था? मुझे डर था कि इस धम्म व्याख्या को सुनकर वे आलस्य के मार्ग पर चल पड़ेंगे। [382] परन्तु मैंने यह धम्म व्याख्या आपके प्रश्न का उत्तर देने के उद्देश्य से दी है।" 1858

---

13 कोत्थिता

तब पूज्य महाकोत्थिता पूज्य सारिपुत्त के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और पूज्य सारिपुत्त से कहा:

"अब, मित्र सारिपुत्त, क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का यही उद्देश्य है: 'इस जीवन में जिन कर्मों का फल भोगना है, वे ही भविष्य के जीवन में मुझे भोगने को मिलें'?" 1859

"बिल्कुल नहीं, दोस्त।"

तो क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का यही उद्देश्य है: 'जिस कर्म का फल भविष्य में भोगना है, वही कर्म इस जीवन में भोग लूँ'?

"बिल्कुल नहीं, दोस्त।"

"अब, मित्र सारिपुत्त, क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का यही उद्देश्य है: 'क्या कर्म (जिसका परिणाम सुखद अनुभव करना है) मेरे लिए कष्टदायी बन जाए?'" 1860

"बिल्कुल नहीं, दोस्त।"

तो क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का यही उद्देश्य है: 'जिन कर्मों का परिणाम कष्टदायी होता है, वे मेरे लिए सुखदायी कर्म बन जाएँ'?

"बिल्कुल नहीं, दोस्त।"

"अब, मित्र सारिपुत्त, क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का यही उद्देश्य है: 'मेरे कर्म (जिनका फल मुझे परिपक्व होने पर अनुभव करना है) ऐसे कर्म (जिनका फल मुझे अपरिपक्व होने पर अनुभव करना है) बन जाएं?'" 1861

"बिल्कुल नहीं, दोस्त।"

तो क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का यही उद्देश्य है: 'अपरिपक्व कर्मों का फल मुझे परिपक्व होने पर भुगतना है'?

"बिल्कुल नहीं, दोस्त।"

"अब, मेरे मित्र सारिपुत्त, क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का यही उद्देश्य है: 'जिन कर्मों का फल प्रचुर मात्रा में अनुभव किया जाना है, वे अब केवल थोड़े से कर्मों में परिवर्तित हो जाएं'?"

"बिल्कुल नहीं, दोस्त।"

"तब [383] भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का उद्देश्य यह है: 'कर्म (जिसका परिणाम थोड़ा-थोड़ा अनुभव किया जाना है) को कर्म (जिसका परिणाम मुझे प्रचुर मात्रा में अनुभव करना है) में बदल दिया जाए'?"

"बिल्कुल नहीं, दोस्त।"

"अब, मित्र सारिपुत्त, क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का यही उद्देश्य है: 'जिन कर्मों का फल भोगना है, वे ऐसे कर्म बन जाएँ जिनका फल मुझे भोगना न पड़े'?" 1862

"बिल्कुल नहीं, दोस्त।"

तो क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का यही उद्देश्य है: 'जिन कर्मों का फल अनुभव नहीं किया जा सकता, वे ही कर्म बन जाएं जिनका फल मुझे अनुभव करना है'?

"बिल्कुल नहीं, मित्र।" 1868

"मित्र सारिपुत्त, जब आपसे पूछा जाए: 'हे मित्र सारिपुत्त, क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का उद्देश्य यह है कि "इस जीवन में जिन कर्मों का फल भोगना है, वे ही भविष्य के जीवन में भोगने के लिए हों"?' तो आप कहेंगे: 'बिल्कुल नहीं, मित्र।' और जब आपसे पूछा जाए: 'तो क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का उद्देश्य यह है कि "भविष्य के जीवन में जिन कर्मों का फल भोगना है, वे ही इस जीवन में भोगने के लिए हों"?' तो आप कहेंगे: 'बिल्कुल नहीं, मित्र।' ... [384] ... जब आपसे पूछा जाए: 'हे मित्र सारिपुत्त, क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का पालन इस उद्देश्य से किया जाता है कि "कर्म (जिसका परिणाम अनुभव किया जाना है) को कर्म (जिसका परिणाम मुझे अनुभव नहीं करना है) में बदल दिया जाए?" तो आप कहते हैं: 'बिल्कुल नहीं, मित्र।' और जब आपसे पूछा जाए: 'तो क्या भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का पालन इस उद्देश्य से किया जाता है कि "कर्म (जिसका परिणाम मुझे अनुभव नहीं करना है) को कर्म (जिसका परिणाम मुझे अनुभव करना है) में बदल दिया जाए?" तो आप कहते हैं: 'बिल्कुल नहीं, मित्र।' तो फिर भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) का पालन किस उद्देश्य से किया जाता है?

"मित्र, मनुष्य भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) व्यतीत करता है, ताकि वह उस सब को जान सके, देख सके, प्राप्त कर सके, अनुभव कर सके और उसमें प्रवेश कर सके जिसे वह पहले नहीं जानता, नहीं देखता, नहीं प्राप्त करता, नहीं अनुभव करता और नहीं अनुभव करता।"

लेकिन, मित्र, ऐसा क्या है जिसे किसी ने जाना, देखा, प्राप्त किया, अनुभव किया और समझा नहीं है?

"'यह दुख है, हे मित्र, वह है जिसे मनुष्य ने न जाना है, न देखा है, न प्राप्त किया है, न अनुभव किया है और न ही उसमें प्रवेश किया है, और इसी को जानने, देखने, प्राप्त करने, अनुभव करने और उसमें प्रवेश करने के उद्देश्य से मनुष्य भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) व्यतीत करता है। [385] 'यह दुख का मूल है'... 'यह दुख का निवारण है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है' वह है जिसे मनुष्य ने न जाना है, न देखा है, न प्राप्त किया है, न अनुभव किया है और न ही उसमें प्रवेश किया है, और इसी को जानने, देखने, प्राप्त करने, अनुभव करने और उसमें प्रवेश करने के उद्देश्य से मनुष्य भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) व्यतीत करता है। हे मित्र, यह वह है जिसे मनुष्य ने न जाना है, न देखा है, न प्राप्त किया है, न अनुभव किया है और न ही उसमें प्रवेश किया है, और इसी को जानने, देखने, प्राप्त करने, अनुभव करने और उसमें प्रवेश करने के उद्देश्य से मनुष्य भगवान (बुद्ध) के अधीन ब्रह्मचर्य (संयमित जीवन) व्यतीत करता है। भगवान (बुद्ध)

---

14 समिद्धि

तब पूज्य समिद्धि पूज्य सारिपुत्त के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। पूज्य सारिपुत्त ने उनसे कहा: 1864

(1) "संधि, किस आधार पर किसी व्यक्ति में इरादे और विचार उत्पन्न होते हैं?"

"मन (नाम) और रूप (शरीर) के आधार पर, भंते।" 1SSS

(2) "वे कहाँ विविध हो जाते हैं?"

"तत्वों के संबंध में।"

(3) "वे किससे उत्पन्न होते हैं?"

"इनकी उत्पत्ति संपर्क से होती है।"

(4) "वे किस पर अभिसरित होते हैं?"

वे संवेदना (वेदना) पर केंद्रित होते हैं। 1367

(5) "वे किस ओर जा रहे हैं?"

"वे समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से प्रेरित होते हैं।"

(6) "उन पर अधिकार कौन रखता है?"

"सती ध्यान उन पर अधिकार स्थापित करता है।"

(7) "उनका पर्यवेक्षक कौन है?"

"पन्ना (दिव्य ज्ञान) उनका पर्यवेक्षक है।"

(8) "उनका मूल क्या है?"

"मुक्ति ही उनका मूलमंत्र है।" 1868

(9) "वे किसमें परिणत होते हैं?"

"वे अमरता (अमाता/अमृत) में परिणत होते हैं।" 1869

जब आपसे पूछा गया: 'समिद्धि, किसी व्यक्ति में इरादे और विचार किस आधार पर उत्पन्न होते हैं?' तो आपने कहा: 'इस आधार पर'

मन (नाम) और रूप (शरीर) के विषय में, भंते... [386]... जब आपसे पूछा गया: 'वे किसमें परिणत होते हैं?' तो आपने कहा: 'वे अमरता (अमृत) में परिणत होते हैं।' शाबाश, शाबाश, समिद्धि! जब आपसे ऐसे प्रश्न पूछे गए, तो आपने अच्छा उत्तर दिया, लेकिन इस कारण अहंकारी मत बनो।"

---

15 उबालना (गंडा)

भिक्षुओं, मान लीजिए कि एक फोड़ा कई वर्षों पुराना है। उसमें नौ घाव के छिद्र होंगे, नौ प्राकृतिक छिद्र। 870 उनमें से जो कुछ भी बहेगा वह अशुद्ध, दुर्गंधयुक्त और घृणित होगा। उनमें से जो कुछ भी रिसकर निकलेगा वह अशुद्ध, दुर्गंधयुक्त और घृणित होगा।

भिक्षुओं, यह शरीर चार प्रमुख तत्वों से मिलकर बना है, जो माता-पिता से उत्पन्न हुआ है, चावल और दलिया से निर्मित है, अनित्यता (अनिच्छा/अनित्यता) के अधीन है, गूंधने और रगड़ने के अधीन है, और टूटने और बिखरने के अधीन है। इसमें नौ घाव छिद्र हैं, नौ प्राकृतिक छिद्र। इनसे जो कुछ भी निकलता है वह अशुद्ध, दुर्गंधयुक्त और घृणित है। [387] इनसे जो कुछ भी रिसता है वह अशुद्ध, दुर्गंधयुक्त और घृणित है। इसलिए, भिक्षुओं, इस शरीर से विरक्त हो जाओ।

---

16 संज्ञान/धारणाएं (सन्ना सं. संज्ञा)

भिक्षुओं, ये नौ ज्ञान/समझ/धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो महान फल और लाभ प्रदान करती हैं, जो अमरता (अम्रता/अमृत) को अपना लक्ष्य बनाकर अमरता की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं। 871 वे नौ कौन से हैं? अनाकर्षकता की अनुभूति, मृत्यु की अनुभूति, भोजन की अरुचि की अनुभूति, समस्त संसार में आनंदहीनता की अनुभूति, अनित्यता की अनुभूति, अनित्य में दुख की अनुभूति, दुख में अनात्म की अनुभूति, त्याग की अनुभूति और वैराग्य की अनुभूति। ये नौ अनुभूतियाँ, जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो महान फल और लाभ प्रदान करती हैं, जो अमरता की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं, जिनका लक्ष्य अमरता ही होता है।

---

17 परिवार/कुल (कुला)

"भिक्षुओं (साधुओं), नौ गुणों से युक्त, जिस परिवार से अभी तक संपर्क नहीं किया गया है, उससे संपर्क करने योग्य नहीं है, या जिससे संपर्क किया जा चुका है, उसके साथ बैठने योग्य नहीं है।" 872 वे नौ गुण क्या हैं? (1)

वे उचित ढंग से उठते नहीं हैं। (2) वे उचित ढंग से प्रणाम नहीं करते। (3) वे उचित ढंग से बैठने की व्यवस्था नहीं करते। (4) वे अपने पास जो कुछ है उसे छिपाते हैं। (5) उनके पास बहुत कुछ होते हुए भी वे कम देते हैं। (6) उनके पास उत्तम वस्तुएँ होते हुए भी वे साधारण वस्तुएँ देते हैं। (7) वे आदर के बिना देते हैं, आदरपूर्वक नहीं। (8) वे धर्म को सुनने के लिए पास नहीं बैठते। (9) वे किसी के शब्दों का आनंद नहीं लेते। इन नौ कारकों से युक्त, जिस परिवार से अभी तक संपर्क नहीं किया गया है, उससे संपर्क करने योग्य नहीं है, और जिससे संपर्क किया जा चुका है, उसके साथ बैठने योग्य नहीं है।

"भिक्षुओं (मठवासियों), जिनमें नौ गुण होते हैं, उनके पास अभी तक न पहुँचा गया परिवार भी पहुँचने योग्य है और जिनके पास पहुँचा जा चुका है, उनके साथ बैठना भी उचित है। वे नौ गुण क्या हैं? (1) वे सौम्य ढंग से उठते हैं। (2) वे सौम्य ढंग से प्रणाम करते हैं। (3) वे सौम्य ढंग से बैठने की व्यवस्था करते हैं। (4) वे अपने पास जो कुछ है उसे छिपाते नहीं हैं। (5) जब उनके पास बहुत कुछ होता है, [388] तो वे बहुत कुछ देते हैं। (6) जब उनके पास उत्तम वस्तुएँ होती हैं, तो वे उत्तम वस्तुएँ देते हैं। (7) वे आदरपूर्वक देते हैं, अनादर नहीं करते। (8) वे धर्म को सुनने के लिए पास बैठते हैं। (9) वे शब्दों का आनंद लेते हैं। इन नौ गुणों से युक्त, एक ऐसा परिवार जिसके पास अभी तक न पहुँचा गया हो, वह भी पहुँचने योग्य है और जिनके पास पहुँचा जा चुका है, उनके साथ बैठना भी उचित है।"

---

18 नौ कारकों के साथ उपवास (नवंग-उपोसथा)

"भिक्षुओं, जब उपोसथ का नौ तत्वों में पूर्ण रूप से पालन किया जाता है, तो यह अत्यंत फलदायी और लाभदायक होता है; अत्यंत तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है। 1875 और उपोसथ का नौ तत्वों में पूर्ण रूप से पालन कैसे किया जाता है, जिससे यह अत्यंत फलदायी और लाभदायक, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी हो जाता है?"

(1) "हे भिक्षुओं, यहाँ एक श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे जीवन-संहार का त्याग करते हैं और उससे दूर रहते हैं; दंड (हिंसा) और शस्त्र त्यागकर, वे सजग और दयालु होकर सभी प्राणियों के प्रति करुणामयी भाव से निवास करते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी जीवन-संहार का त्याग करूँगा और उससे दूर रहूँगा; दंड (हिंसा) और शस्त्र त्यागकर, सजग और दयालु होकर, मैं भी सभी प्राणियों के प्रति करुणामयी भाव से निवास करूँगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथ का पालन करूँगा।' यह इसका पहला गुण है।"

(2) "जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे अनचाही चीज़ों को लेने से परहेज़ करते हैं; वे केवल दी गई चीज़ों को ही लेते हैं, केवल दी गई चीज़ों की ही अपेक्षा करते हैं, और चोरी के विचार किए बिना ईमानदारी से रहते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी अनचाही चीज़ों को लेने से परहेज़ करूँगा; मैं केवल दी गई चीज़ों को ही स्वीकार करूँगा, केवल दी गई चीज़ों की ही अपेक्षा करूँगा, और चोरी के विचार किए बिना ईमानदारी से रहूँगा, मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथ का पालन करूँगा।" यह इसका दूसरा कारक है। [389]

(3) "जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे यौन क्रिया का त्याग करते हैं और ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, अलग रहते हैं और यौन संबंध से परहेज करते हैं, जो आम आदमी का अभ्यास है। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी यौन क्रिया का त्याग करूँगा और ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा, अलग रहूँगा और यौन संबंध से परहेज करूँगा, जो आम आदमी का अभ्यास है। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।" यह इसका तीसरा कारक है।

(4) "जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे झूठे वचनों का त्याग करते हैं और उनसे दूर रहते हैं; वे सत्य बोलते हैं, सत्य का पालन करते हैं; वे विश्वसनीय और भरोसेमंद होते हैं, संसार को धोखा नहीं देते। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी झूठे वचनों का त्याग करूँगा

और उनसे दूर रहूँगा; मैं सत्य का वक्ता, सत्य का अनुयायी, विश्वसनीय और भरोसेमंद बनूँगा, संसार को धोखा नहीं दूँगा। मैं इस मामले में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथ का पालन करूँगा।" यह इसका चौथा गुण है।

(5) "अरहंत अपने जीवन भर आलस्य के आधार माने जाने वाले मदिरा, शराब और मादक पदार्थों का त्याग करते हैं और उनसे दूर रहते हैं। आज रात और दिन भर मैं भी आलस्य के आधार माने जाने वाले मदिरा, शराब और मादक पदार्थों का त्याग करूँगा और उनसे दूर रहूँगा। मैं इस मामले में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।" यह इसका पाँचवाँ गुण है।

(6) "अरहंत जीवन भर दिन में एक बार भोजन करते हैं, रात में और उचित समय के बाहर भोजन करने से परहेज़ करते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी दिन में एक बार भोजन करूँगा, रात में और उचित समय के बाहर भोजन करने से परहेज़ करूँगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।" यह इसका छठा गुण है।

(7) "अरहंत जब तक जीवित रहते हैं, वे नृत्य, गायन, वाद्य संगीत और अनुचित प्रदर्शनों से परहेज करते हैं, और माला धारण करके तथा सुगंध और मलहम लगाकर स्वयं को अलंकृत करने से भी परहेज करते हैं। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी नृत्य, गायन, वाद्य संगीत और अनुचित प्रदर्शनों से परहेज करूँगा, और माला धारण करके तथा सुगंध और मलहम लगाकर स्वयं को अलंकृत करने से भी परहेज करूँगा। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।" यह इसका सातवाँ गुण है।

(8) "जब तक अरहंत जीवित रहते हैं, वे ऊँचे और आलीशान पलंगों का उपयोग त्याग देते हैं और उनसे परहेज़ करते हैं; वे एक नीची विश्रामस्थल पर लेटते हैं, [390] चाहे वह छोटा पलंग हो या पुआल की चटाई। आज, इस रात और दिन के लिए, मैं भी ऊँचे और आलीशान पलंगों का उपयोग त्याग दूँगा और उनसे परहेज़ करूँगा; मैं एक नीची विश्रामस्थल पर लेटूँगा, चाहे वह छोटा पलंग हो या पुआल की चटाई। मैं इस संबंध में अरहंतों का अनुकरण करूँगा और उपोसथा का पालन करूँगा।" यह इसका आठवाँ कारक है:

(9.) "यहाँ, एक महान शिष्य प्रेम और करुणा (मेट्टा) से परिपूर्ण मन के साथ एक दिशा में व्याप्त रहता है, उसी प्रकार दूसरी दिशा, तीसरी दिशा और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए, वह अपने समान ही प्रेम और करुणा से परिपूर्ण, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित मन के साथ संपूर्ण संसार में व्याप्त रहता है। यह उसका नौवाँ गुण है।"

"भिक्षुओं, इसी प्रकार उपोसथ का नौ तत्वों में पूर्ण रूप से पालन किया जाता है, जिससे यह महान फलदायी और लाभदायक, असाधारण रूप से तेजस्वी और सर्वव्यापी होता है।"

---

19 देवता (देवदूत)

"भिक्षुओं, कल रात जब रात आगे बढ़ रही थी, तो अत्यंत सुंदर अनेक देवता (देवदूत), जिन्होंने पूरे जेतवन को प्रकाशित कर दिया, मेरे पास आए, मुझे प्रणाम किया और एक तरफ खड़े हो गए।"

(1) "तब उन देवताओं (देवदूतों) ने कहा: 'हे भंते, अतीत में जब हम मनुष्य थे, तब भिक्षु हमारे घरों में आए। हम उनके लिए उठे, लेकिन उन्हें प्रणाम नहीं किया। अपने कर्तव्य का पालन न करने के कारण, पश्चाताप और पश्चाताप से भरे हुए, हम देवताओं (देवदूतों) के निम्न वर्ग में पुनर्जन्म हुए।' [391]

(2) "कुछ अन्य देवता (देवदूत) मेरे पास आए और बोले: 'हे भंते, अतीत में जब हम मनुष्य थे, तब भिक्षु हमारे घरों में आते थे। हम उनके लिए उठते थे और उन्हें प्रणाम करते थे, परन्तु हमने उन्हें आसन नहीं दिया। अपने कर्तव्य का पालन न करने के कारण, पश्चाताप और पश्चाताप से भर कर, हम देवताओं (देवदूतों) की निम्न श्रेणी में पुनर्जन्म हुए।'"

(3) "कुछ अन्य देवता (देवदूत) मेरे पास आए और बोले: 'हे भंते, अतीत में, जब हम मनुष्य थे, भिक्षु हमारे घरों में आते थे। हम उनके लिए उठते थे, उन्हें प्रणाम करते थे और उन्हें आसन देते थे, लेकिन हमने अपनी क्षमता और सामर्थ्य के अनुसार उनके साथ कुछ साझा नहीं किया... (4) ... हमने अपनी क्षमता और सामर्थ्य के अनुसार उनके साथ कुछ साझा किया, लेकिन हम धम्म (मार्ग) सुनने के लिए पास नहीं बैठे... (5) ... हम धम्म सुनने के लिए पास बैठे, लेकिन हमने उत्सुकता से नहीं सुना... (6) ... हमने उत्सुकता से सुना, लेकिन

सुनकर हमने धम्म को मन में नहीं रखा... (7) ... सुनकर हमने धम्म को मन में रखा, लेकिन हमने मन में रखे गए उपदेशों के अर्थ की जांच नहीं की... (8) . हमने उन शिक्षाओं के अर्थ का अध्ययन किया जो हमारे मन में समाहित थीं, लेकिन हम उनका अर्थ और धम्म नहीं समझ पाए और फिर धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं कर पाए। अपने कर्तव्य का पालन न करने के कारण, पश्चाताप और पश्चाताप से भरे हुए, हम देवताओं (देवदूतों) की निम्न श्रेणी में पुनर्जन्म हुए।

(9) कुछ अन्य देवता (देवदूत) मेरे पास आए और बोले: 'हे भंते, अतीत में जब हम मनुष्य थे, तब भिक्षु हमारे घरों में आते थे, (i) हम उनके लिए उठते थे, (ii) उन्हें प्रणाम करते थे, (iii) उन्हें आसन देते थे, और [392] (iv) अपनी सामर्थ्य और क्षमता के अनुसार उनके साथ वस्तुएँ साझा करते थे, (v) हम पास बैठकर धम्म सुनते थे और (vi) उत्सुकता से सुनते थे; (vii) सुनकर हमने धम्म को मन में धारण किया; (viii) हमने मन में धारण की गई शिक्षाओं के अर्थ की जाँच की; और (ix) हमने अर्थ और धम्म को समझा और फिर धम्म के अनुसार अभ्यास किया। अपने कर्तव्य का निर्वाह करके, पश्चाताप और पश्चाताप से मुक्त होकर, हम देवताओं (देवदूतों) के एक श्रेष्ठ वर्ग में पुनर्जन्म लेते हैं।'

"ये वृक्षों की शाखाएँ हैं, भिक्षुओं, ये खाली कुटियाएँ हैं। ध्यान करो, भिक्षुओं, आलसी मत बनो। बाद में पछताने का कारण न हो, जैसे उन पूर्व देवताओं (देवदूतों) को हुआ था।"

---

20 वेलामा

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका के उद्यान में निवास कर रहे थे। तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। भगवान (बुद्ध) ने उनसे पूछा:

"क्या आपके परिवार में दान दिया जाता है, गृहस्थ?"

"मेरे परिवार में दान दिया जाता है, भंते, लेकिन उसमें टूटे हुए चावल और चावल की दलिया होती है।" (1876)

"हे गृहस्थ, यदि कोई दान देता है, चाहे वह साधारण हो या उत्तम, और अनादरपूर्वक, बिना सोचे-समझे, अपने हाथों से दिए बिना, त्यागी जाने वाली वस्तुएँ देकर, भविष्य के परिणामों की चिंता किए बिना देता है, तो उस दान का फल चाहे जहाँ कहीं भी मिले, उसका मन उत्तम भोजन, उत्तम वस्त्र, उत्तम वाहन और पाँचों इंद्रिय सुखों में से उत्तम वस्तुओं के आनंद की ओर नहीं झुकता। साथ ही, उसके बच्चे और पत्नियाँ, और उसके दास, सेवक और श्रमिक उसकी बात सुनना नहीं चाहते, ध्यान नहीं देते और समझने का प्रयास नहीं करते। इसका कारण क्या है? अनादरपूर्वक किए गए कार्यों का यही परिणाम होता है।"

हे गृहस्थ, यदि कोई दान देता है, चाहे वह साधारण हो या उत्तम, और आदरपूर्वक, विचारशीलता से, अपने हाथों से, ऐसी वस्तुएँ जो त्यागी न जाएँ, और भविष्य के परिणामों को ध्यान में रखते हुए दान देता है, तो जहाँ कहीं भी उस दान का फल मिलता है, वहाँ उसका मन उत्तम भोजन, उत्तम वस्त्र, उत्तम वाहन और पाँचों इंद्रिय सुखों में जो उत्तम है, उसके भोग की ओर प्रवृत्त होता है। साथ ही, उसके बच्चे, पत्नियाँ, दास, सेवक और श्रमिक उसकी बात सुनने, ध्यान से सुनने और समझने का प्रयास करते हैं। इसका कारण क्या है? आदरपूर्वक किए गए कर्मों का यही फल होता है।

"हे गृहस्थ, अतीत में वेलमा नामक एक ब्राह्मण था। उसने इतना बड़ा दान दिया: 1878 (1) चांदी से भरे चौरासी हजार सोने के कटोरे; (2) सोने से भरे चौरासी हजार चांदी के कटोरे; (3) सोने से भरे चौरासी हजार पीतल के कटोरे; (4) सोने के आभूषणों और सोने के झंडों से सजे चौरासी हजार हाथी; (5) शेर की खाल, बाघ की खाल, तेंदुए की खाल और केसरिया रंग के कंबलों से सजे चौरासी हजार रथ, सोने के आभूषणों और सोने के झंडों से सजे, सोने के धागे के जालों से ढके; (6) जूट की रस्सियों और पीतल के कफ़नों से बंधी चौरासी हजार गायें; 1879 (7) रत्नजड़ित बालियों से सजी चौरासी हजार कन्याएँ; (8) उत्कृष्ट आवरणों से ढके चौरासी हजार पलंग [394] मृग की खाल, दोनों सिरों पर चंदवा और लाल तकिये के साथ; (9) चौरासी हजार कोटि 1881 कपड़े जो बढ़िया लिनन, बढ़िया रेशम, बढ़िया ऊन और बढ़िया कपास से बने हैं।

खाने-पीने की कितनी और मात्रा, नाश्ते, भोजन, जलपान और पेय पदार्थ? 1882 में ऐसा लग रहा था मानो ये नदियों की तरह बह रहे हों।

"हे गृहस्थ, तुम सोच सकते होगे: 'वह कोई और था, ब्राह्मण वेलमा जिसने उस अवसर पर इतना बड़ा दान दिया था।' लेकिन तुम्हें इसे इस तरह नहीं देखना चाहिए। मैं स्वयं वह ब्राह्मण वेलमा था जिसने उस अवसर पर इतना बड़ा दान दिया था।"

"हे गृहस्थ, उस भिक्षादान में कोई भी भिक्षा के योग्य नहीं था, न ही कोई ऐसा था जो भिक्षा को शुद्ध कर सके। ब्राह्मण वेलमा द्वारा दिए गए महान भिक्षादान से भी अधिक फलदायी होगा एक सिद्ध पुरुष को भोजन कराना। ब्राह्मण वेलमा द्वारा दिए गए महान भिक्षादान से भी अधिक फलदायी होगा, और सौ सिद्ध पुरुषों को भोजन कराने से भी अधिक फलदायी होगा, एक जन्म लेने वाले (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) को भोजन कराना। ब्राह्मण वेलमा द्वारा दिए गए महान भिक्षादान से भी अधिक फलदायी होगा, और सौ जन्म लेने वाले (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) को भोजन कराने से भी अधिक फलदायी होगा, एक जन्म न लेने वाले (अनगमी) को भोजन कराना। सौ जन्म न लेने वाले (अनगमी) को भोजन कराने से भी अधिक फलदायी होगा, एक अरहंत को भोजन कराना। सौ अरहंतों को भोजन कराने से भी अधिक फलदायी होगा, एक अरहंत को भोजन कराना। पच्चेकबुद्ध। [395] सौ पच्चेकबुद्धों को भोजन कराने से भी अधिक फलदायी होगा तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति को भोजन कराना... बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षुओं के संघ को भोजन कराना... चारों दिशाओं के संघ को समर्पित एक निवास स्थान का निर्माण करना... विश्वास से परिपूर्ण मन वाले व्यक्ति का बुद्ध, धम्म और संघ की शरण लेना... विश्वास से परिपूर्ण मन वाले व्यक्ति का पाँच प्रशिक्षण नियमों का पालन करना: जीवन के विनाश से बचना, बिना दी हुई वस्तुएँ लेने से बचना, यौन दुराचार से बचना, झूठी वाणी से बचना, शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से बचना, जो आलस्य का आधार हैं। इससे भी अधिक फलदायी होगा... प्रेम और करुणा (मेट्टा) का मन विकसित करना। गाय के थन को खींचने में लगने वाले समय के लिए।

"हे गृहस्थ, ब्राह्मण वेलामा द्वारा दिए गए महान दान से भी अधिक फलदायी है, एक सिद्ध पुरुष को भोजन कराना, सौ सिद्ध पुरुषों को भोजन कराना; एक पुनर्जन्म लेने वाले (सकदागामी) को भोजन कराना, सौ पुनर्जन्म लेने वाले (सकदागामी) को भोजन कराना; एक पुनर्जन्म न लेने वाले (अनगामी) को भोजन कराना, सौ पुनर्जन्म न लेने वाले (अनगामी) को भोजन कराना; एक अरहंत को भोजन कराना, सौ अरहंतों को भोजन कराना; एक पच्चेकबुद्ध को भोजन कराना, सौ पच्चेकबुद्धों को भोजन कराना; तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति को भोजन कराना; बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षुओं के संघ को भोजन कराना; चारों दिशाओं के संघ को समर्पित एक निवास स्थान का निर्माण करना; और विश्वास से परिपूर्ण मन वाले व्यक्ति के लिए बुद्ध, धम्म और संघ की शरण लेना; और विश्वास से परिपूर्ण मन वाले व्यक्ति के लिए यह कार्य करना..." पांच प्रशिक्षण नियम: जीवन के विनाश से बचना... शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से बचना, जो आलस्य का आधार हैं; और गाय के थन को खींचने में लगने वाले समय के लिए भी प्रेम और करुणा (मेट्टा) का भाव विकसित करना, [3961 क्या उंगली चटकाने के समय के लिए अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) की धारणा (सन्ना/संग्या) विकसित करना होगा?] 1883

तृतीय. शुद्ध प्राणियों का निवास (सत्तवसा वैगो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

21 सम्मान (तिथाना)

"भिक्षुओं (सन्यासियों), उत्तरकुरु के लोग तीन मामलों में तावतिंसा देवताओं और जंबूद्वीप (भारत) के लोगों से श्रेष्ठ हैं। वे तीन मामले क्या हैं? (1) वे स्वार्थ और अभिरंजकता से रहित हैं; (2) उनकी आयु निश्चित है; और (3) उनकी जीवन परिस्थितियाँ असाधारण हैं। 1885 इन तीन मामलों में उत्तरकुरु के लोग तावतिंसा देवताओं और जंबूद्वीप के लोगों से श्रेष्ठ हैं।"

तावतिंसा देव (देवदूत/देवता) तीन मामलों में उत्तरकुरु और जंबूद्वीप के लोगों से श्रेष्ठ हैं। वे तीन मामले कौन से हैं? (4) दिव्य जीवनकाल में, (5) दिव्य सौंदर्य में, और (5) दिव्य सुख में। इन तीनों मामलों में तावतिंसा देव (देवदूत/देवता) उत्तरकुरु और जंबूद्वीप के लोगों से श्रेष्ठ हैं।

"जंबूद्वीप के लोग तीन मामलों में उत्तरकुरु के लोगों और तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) से श्रेष्ठ हैं। वे तीन मामले क्या हैं? (7) वे वीर हैं; (8) वे सती (ध्यानमग्न) हैं; और (9) यहाँ ब्रह्मचर्य (पवित्र जीवन) का पालन किया जाता है। इन तीन मामलों में जंबूद्वीप (भारत) के लोग उत्तरकुरु के लोगों और तावतिंसा देवों (देवदूतों/देवताओं) से श्रेष्ठ हैं।" [397]

---

22 जंगली बछड़े

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें तीन प्रकार के जंगली घोड़ों और जंगली घोड़ों के समान तीन प्रकार के व्यक्तियों के बारे में सिखाऊंगा; तीन प्रकार के अच्छे घोड़ों और अच्छे घोड़ों के समान तीन प्रकार के व्यक्तियों के बारे में; तीन प्रकार के उत्कृष्ट नस्ल के घोड़ों और तीन प्रकार के उत्कृष्ट नस्ल के व्यक्तियों के बारे में। 1886 ध्यान से सुनो और सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी हां, भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, जंगली घोड़ों के तीन प्रकार क्या हैं? (1) यहाँ, एक प्रकार का जंगली घोड़ा गति तो रखता है, लेकिन उसमें सुंदरता और सुडौलपन नहीं होता। (2) दूसरे प्रकार का जंगली घोड़ा गति और सुंदरता दोनों रखता है, लेकिन उसमें सुडौलपन नहीं होता। (3) और एक अन्य प्रकार का जंगली घोड़ा गति, सुंदरता और सुडौलपन तीनों रखता है। ये जंगली घोड़ों के तीन प्रकार हैं।

और हे भिक्षुओं, जंगली घोड़े के समान तीन प्रकार के व्यक्ति कौन से हैं? (1) यहाँ, एक प्रकार का व्यक्ति जो जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति तो है, लेकिन सुंदरता या सुडौल शरीर नहीं। (2) दूसरे प्रकार का व्यक्ति जो जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति और सुंदरता तो है, लेकिन सुडौल शरीर नहीं। (3) और एक तीसरे प्रकार का व्यक्ति जो जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति, सुंदरता और सुडौल शरीर तीनों ही हैं।

(1) "हे भिक्षुओं, जंगली घोड़े के समान व्यक्ति में गति तो होती है, पर सौंदर्य और सुडौलपन नहीं होता? यहाँ भिक्षु सत्य को समझते हैं: 'यह दुख है', 'यह दुख का कारण है', 'यह दुख का निवारण है' और 'यह दुख निवारण का मार्ग है'। [398] मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। परन्तु जब उससे धम्म या अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह हिचकिचाता है और उत्तर नहीं देता। मैं कहता हूँ, यही उसकी सौंदर्यहीनता है। और उसे वस्त्र, भिक्षा, आवास, औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन प्राप्त नहीं होता। मैं कहता हूँ, यही उसके सुडौलपन का अभाव है। इस प्रकार जंगली घोड़े के समान व्यक्ति में गति तो होती है, पर सौंदर्य और सुडौलपन नहीं होता।"

(2) "और जो व्यक्ति जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति और सुंदरता तो है, पर सही अनुपात नहीं? यहाँ, भिक्षु इसे यथार्थ रूप में समझता है: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है'। मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। और जब उससे धम्म या अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह उत्तर देता है और संकोच नहीं करता। मैं कहता हूँ, यही उसकी सुंदरता है। परन्तु उसे वस्त्र और बीमारों के लिए भोजन नहीं मिलता। मैं कहता हूँ, यही उसके सही अनुपात का अभाव है। इस प्रकार, जो व्यक्ति जंगली घोड़े के समान है, उसमें गति और सुंदरता तो है, पर सही अनुपात नहीं।"

(3) "और जंगली घोड़े के समान व्यक्ति में गति, सौंदर्य और उचित अनुपात कैसे होते हैं? यहाँ, भिक्षु इसे यथार्थ रूप में समझते हैं: 'यह दुख है'... 'यह दुख के निवारण का मार्ग है।' मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। और जब उससे धम्म या अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह उत्तर देता है और अविचलित रहता है। मैं कहता हूँ, यही उसका सौंदर्य है। [399] और वह वस्त्र प्राप्त करता है... और बीमारों के लिए भोजन प्राप्त करता है। मैं कहता हूँ, यही उसका उचित अनुपात है। इस प्रकार जंगली घोड़े के समान व्यक्ति में गति, सौंदर्य और उचित अनुपात होते हैं। ये तीन प्रकार के व्यक्ति हैं जो जंगली घोड़े के समान होते हैं।"

और हे भिक्षुओं, तीन प्रकार के अच्छे घोड़े कौन से हैं? (4)-(6) यहाँ, एक प्रकार का अच्छा घोड़ा... [जैसा कि ऊपर जंगली घोड़ों के लिए बताया गया है]... गति, सुंदरता और उचित अनुपात से युक्त होता है। ये तीन प्रकार के अच्छे घोड़े हैं। 1887

"और हे भिक्षुओं, अच्छे घोड़ों के समान तीन प्रकार के व्यक्ति कौन से हैं? (4)— (6) यहाँ, एक व्यक्ति जो अच्छे घोड़े के समान है... [जैसा कि ऊपर जंगली घोड़ों के समान व्यक्तियों के लिए है]... उसमें गति, सुंदरता और सही अनुपात होते हैं।

(4)— (6) "और हे भिक्षुओं, एक अच्छे घोड़े के समान व्यक्ति में गति, सौंदर्य और उचित अनुपात कैसे होते हैं? यहाँ, पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण विनाश के साथ, भिक्षु स्वतः पुनर्जन्म लेने वाला होता है, और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए, वहाँ अंतिम निर्वाण प्राप्त करने के लिए प्रवृत्त होता है। मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। और जब उससे धम्म और अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह उत्तर देता है और विचलित नहीं होता। मैं कहता हूँ, यही उसका सौंदर्य है। और वह वस्त्र प्राप्त करता है... और बीमारों के लिए भोजन प्राप्त करता है। मैं कहता हूँ, यही उसका उचित अनुपात है। इस प्रकार एक अच्छे घोड़े के समान व्यक्ति में गति, सौंदर्य और उचित अनुपात होते हैं। ये तीन प्रकार के व्यक्ति हैं जो अच्छे घोड़ों के समान होते हैं।"

"और हे भिक्षुओं, तीन प्रकार के उत्तम नस्ल के घोड़े कौन से हैं? (7)— (9) यहाँ, एक प्रकार का उत्तम नस्ल का घोड़ा... [जैसा कि ऊपर जंगली घोड़ों के लिए]... गति, सुंदरता और सही अनुपात रखता है। [400] ये तीन प्रकार के उत्तम नस्ल के घोड़े हैं।

"और हे भिक्षुओं, तीन प्रकार के उत्तम शुद्ध नस्ल के व्यक्ति कौन से हैं? (7)— (9) यहाँ, एक प्रकार का उत्तम शुद्ध नस्ल का व्यक्ति... [जैसा कि ऊपर जंगली घोड़ों के समान व्यक्तियों के लिए है]... गति, सुंदरता और सही अनुपात रखता है।

(7)— (9) "हे भिक्षुओं, एक श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष में गति, सौंदर्य और उचित अनुपात कैसे होते हैं? यहाँ, दोषों के नाश के साथ, एक भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। मैं कहता हूँ, यही उसकी गति है। और जब उससे धम्म और अनुशासन से संबंधित कोई प्रश्न पूछा जाता है, तो वह उत्तर देता है और विचलित नहीं होता। मैं कहता हूँ, यही उसका सौंदर्य है। और वह वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन प्राप्त करता है। मैं कहता हूँ, यही उसका उचित अनुपात है। इस प्रकार एक श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष में गति, सौंदर्य और उचित अनुपात होते हैं। हे भिक्षुओं, ये तीन प्रकार के श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष हैं।"

---

23 लालसा (तन्हा बिना तृष्णा)

"मैं तुम्हें, भिक्षुओं, तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) से उत्पन्न नौ बातें सिखाऊंगा। 1888 ध्यान से सुनो और उपस्थित रहो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और वे नौ बातें क्या हैं जो तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) में निहित हैं? (1) तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) पर निर्भर होकर खोज होती है। (2) खोज पर निर्भर होकर लाभ होता है। (3) लाभ पर निर्भर होकर विवेक होता है। (4) विवेक पर निर्भर होकर इच्छा और राग (काम) होते हैं। (5) इच्छा और राग (काम) पर निर्भर होकर आसक्ति होती है। (6) आसक्ति पर निर्भर होकर अधिकार की भावना होती है। (7) अधिकार की भावना से मुक्त होकर कंजूसी होती है। (8) कंजूसी पर निर्भर होकर रक्षा करना होता है। (9) रक्षा करने की भावना से ही लाठी और शस्त्र उठाना, झगड़े, विवाद, आरोप लगाना, फूट डालने वाली बातें और झूठी बातें, और अनेक अन्य हानिकारक चीजें उत्पन्न होती हैं। ये नौ बातें तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) में निहित हैं।" 1889

---

24 प्राणियों के निवास स्थान (सत्तवास)

भिक्षुओं, प्राणियों के ये नौ निवास स्थान हैं। वे नौ कौन से हैं? 1890

(1) "हे भिक्षुओं, ऐसे प्राणी हैं जो शरीर और चेतना (सन्न/संज्ञा) में भिन्न हैं, जैसे मनुष्य, कुछ देव (देवदूत/भगवान), और कुछ निम्न लोक में। यह प्राणियों का पहला निवास स्थान है।"

(2) "ऐसे प्राणी हैं जो शरीर में भिन्न हैं लेकिन धारणा (सन्ना/संज्ञा) में एक समान हैं, जैसे ब्रह्मा की संगति के देव (देवदूत/भगवान) जो प्रथम [ध्यान] के माध्यम से पुनर्जन्म लेते हैं। यह प्राणियों का दूसरा निवास स्थान है।"

(3) "ऐसे प्राणी हैं जो शरीर में एक समान हैं लेकिन धारणा (सन्ना/संग्या) में भिन्न हैं, जैसे कि प्रवाहमय प्रकाश वाले देव (देवदूत/देवता) (अभस्सर सन् अभस्वर)। यह प्राणियों का तीसरा निवास है।"

(4) "ऐसे प्राणी हैं जो शरीर और चेतना (सन्ना/संज्ञा) में एक समान हैं, जैसे तेजस्वी देव (देवदूत/देवता) (सुभकिन्ह संस्कृत: शुभ-किरण)। यह प्राणियों का चौथा निवास है।"

(5) "ऐसे प्राणी हैं जो अनुभवहीन हैं, जैसे कि देव (देवदूत/भगवान) जो अनुभवहीन हैं। यह प्राणियों का पाँचवाँ निवास है।"

(6) "ऐसे प्राणी हैं जो रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का बोध करते हुए, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में विराजमान होते हैं। यही प्राणियों का छठा निवास स्थान है।"

(7) "ऐसे प्राणी हैं जो अंतरिक्ष की अनंतता के आधार को पूर्णतः पार करके, 'चेतना अनंत है' को अनुभव करते हुए, चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) से संबंधित हैं। यह प्राणियों का सातवाँ निवास है।"

(8) "ऐसे प्राणी हैं जो चेतना की अनंतता के आधार को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए शून्यता के क्षेत्र (आयतन) से संबंधित हैं। यह प्राणियों का आठवां निवास है।"

(9) "कुछ ऐसे प्राणी हैं जो शून्यता के आधार को पूर्णतः पार करके, न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में आते हैं। यही प्राणियों का नौवां निवास है।"

"ये प्राणियों के नौ निवास स्थान हैं।" [402]

---

25 पन्ना (दिव्य ज्ञान)

"भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु का मन पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा अच्छी तरह से स्थिर हो जाता है, तो वह यह कहने में सक्षम होता है: 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आने का कोई अधिकार नहीं है।'

और भिक्षु का मन पन्न (दिव्य ज्ञान) द्वारा कैसे सुदृढ़ होता है? (1) उसका मन पन्न (दिव्य ज्ञान) द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन कामवासना (राग) से रहित है।' (2) उसका मन पन्न (दिव्य ज्ञान) द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन घृणा (विरोध) से रहित है।' (3) उसका मन पन्न (दिव्य ज्ञान) द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन मोह (मोह) से रहित है।' (4) उसका मन पन्न (दिव्य ज्ञान) द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन आसक्ति (मोह) के अधीन नहीं है।' (5) जब वह जानता है कि उसका मन पन्न (दिव्य ज्ञान) से पूर्णतः स्थिर है: 'मेरा मन द्वेष के अधीन नहीं है।' (6) जब वह जानता है कि उसका मन पन्न (दिव्य ज्ञान) से पूर्णतः स्थिर है: 'मेरा मन भ्रम के अधीन नहीं है।' (7) जब वह जानता है कि उसका मन पन्न (दिव्य ज्ञान) से पूर्णतः स्थिर है: 'मेरा मन इंद्रिय-क्षेत्र में वापसी के अधीन नहीं है।' (8) जब वह जानता है कि उसका मन पन्न (दिव्य ज्ञान) से पूर्णतः स्थिर है: 'मेरा मन रूप-क्षेत्र में वापसी के अधीन नहीं है।' (9) जब वह जानता है कि उसका मन पन्न (दिव्य ज्ञान) से पूर्णतः स्थिर है: 'मेरा मन निराकार-क्षेत्र में वापसी के अधीन नहीं है।'

"हे भिक्षुओं, जब किसी भिक्षु का मन पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा पूर्णतः स्थिर हो जाता है, तो वह यह कहने में सक्षम होता है: 'पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आने का कोई आसार नहीं है।"

---

26 (6) पत्थर का स्तंभ (सिलयुपा)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार पूज्य सारिपुत्त और पूज्य चंदीकापुत्त राजगृह में बांस के जंगल में, गिलहरियों के अभयारण्य में निवास कर रहे थे। वहाँ पूज्य चंदीकापुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

"मित्र!" उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य चंदिका पुत्त ने यह कहा: "मित्रों, देवदत्त भिक्षुओं को धम्म की शिक्षा इस प्रकार देते हैं: 'मित्रों, जब किसी भिक्षु का मन मन से स्थिर हो जाता है, 1891 तो उसके लिए यह कहना उचित है: [403] "मैं समझता हूँ: पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।"

तब पूज्य सारिपुत्त ने पूज्य चंदिकपुत्त से कहा, "मित्र चंदिकपुत्त, देवदत्त भिक्षुओं को धम्म की शिक्षा इस प्रकार नहीं देते। बल्कि, देवदत्त भिक्षुओं को धम्म की शिक्षा इस प्रकार देते हैं: 'मित्रों, जब किसी भिक्षु का मन पूर्णतः स्थिर हो जाए, तब उसके लिए यह कहना उचित है: "मैं समझ गया हूँ: पुनर्जन्म का नाश हो गया है, ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत कर लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।"

दूसरी बार...तीसरी बार पूज्य चंदिकपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, देवदत्त भिक्षुओं को धम्म की शिक्षा इस प्रकार देते हैं: 'मित्रों, जब किसी भिक्षु का मन एकाग्र हो जाता है, तो उसके लिए यह कहना उचित है: 'मैं समझ गया हूँ: पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।'"

तीसरी बार पूज्य सारिपुत्त ने पूज्य चंदिकपुत्त से कहा: "मित्र चंदिकपुत्त, देवदत्त भिक्षुओं को धम्म (मार्ग) इस प्रकार नहीं सिखाते। बल्कि, देवदत्त भिक्षुओं को धम्म इस प्रकार सिखाते हैं: 'मित्रों, जब किसी भिक्षु का मन पूर्णतः स्थिर हो जाए, तब उसके लिए यह कहना उचित है: 'मैं समझ गया हूँ: पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।'"

"और हे मित्र, भिक्षु का मन मन द्वारा कैसे सुदृढ़ होता है? [404] (1) उसका मन मन द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन कामवासना रहित है (राग)' (2) उसका मन मन द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन घृणा रहित है' (3) उसका मन मन द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन मोह रहित है' (4) उसका मन मन द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन कामवासना के अधीन नहीं है (राग) (5) उसका मन मन द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन घृणा के अधीन नहीं है' (6) उसका मन मन द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन मोह के अधीन नहीं है' (7) उसका मन मन द्वारा सुदृढ़ होता है [जब वह जानता है]: 'मेरा मन इंद्रिय-क्षेत्र में जन्म लेने के लिए बाध्य नहीं है (भाव/पुनर्जन्म का कारण)' (8) जब उसे यह ज्ञान होता है कि: 'मेरा मन रूप-मंडल में वापसी के अधीन नहीं है (भाव/पुनर्जन्म का कारण)' (9) तब उसका मन अच्छी तरह से स्थिर हो जाता है जब उसे यह ज्ञान होता है कि: 'मेरा मन निराकार-मंडल में वापसी के अधीन नहीं है (भाव/पुनर्जन्म का कारण)। 1893

हे मित्र, जब कोई भिक्षु इस प्रकार पूर्णतः मन से मुक्त हो जाता है, तो भले ही आँखों से दिखाई देने वाले शक्तिशाली रूप उसकी दृष्टि में आ जाएँ, वे उसके मन को विचलित नहीं करते; उसका मन बिल्कुल भी प्रभावित नहीं होता। 1894 वह स्थिर रहता है, अविचलित अवस्था में पहुँच जाता है, और वह उसके लुप्त होने का अवलोकन करता है। भले ही कानों से सुनाई देने वाली शक्तिशाली ध्वनियाँ कानों में आ जाएँ... भले ही नाक से सुनाई देने वाली शक्तिशाली गंधें नाक में आ जाएँ... भले ही जीभ से सुनाई देने वाले शक्तिशाली स्वाद जीभ में आ जाएँ... भले ही शरीर द्वारा अनुभव किए जाने वाले शक्तिशाली स्पर्श अनुभव शरीर में आ जाएँ... भले ही मन द्वारा अनुभव किए जाने वाले शक्तिशाली घटनाक्रम मन में आ जाएँ, वे उसके मन को विचलित नहीं करते; उसका मन बिल्कुल भी प्रभावित नहीं होता। वह स्थिर रहता है, अविचलित अवस्था में पहुँच जाता है, और वह उसके लुप्त होने का अवलोकन करता है।

"मान लो, मित्र, एक आठ मीटर लंबा पत्थर का खंभा है। 1893 चार मीटर जमीन के नीचे और चार मीटर जमीन के ऊपर होगा। यदि पूर्व से भयंकर वर्षा हो, तो भी वह उसे हिला नहीं पाएगी, न ही उसमें कोई कंपन होगा; 1596 यदि पश्चिम से, उत्तर से, दक्षिण से भयंकर

वर्षा हो, तो भी वह उसे हिला नहीं पाएगी, न ही उसमें कोई कंपन होगा, न ही उसमें कोई कंपन होगा। इसका कारण क्या है? क्योंकि पत्थर का खंभा जमीन में गहराई तक गड़ा हुआ है और मजबूती से स्थापित है। इसी प्रकार, मित्र, जब कोई भिक्षु मन से पूर्णतः मुक्त हो जाता है, तो भले ही दृष्टि से प्रत्यक्ष रूप दिखाई दें... भले ही मन से प्रत्यक्ष रूप दिखाई दें, वे उसके मन को विचलित नहीं करते; उसका मन बिल्कुल भी प्रभावित नहीं होता। वह स्थिर रहता है, अविचलित रहता है, और वह उसके लुप्त होने का अवलोकन करता है।"

---

27 शत्रुता (1) (वेरा1)

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"गृहस्थ, जब एक श्रेष्ठ शिष्य पाँचों विपत्तियों और शत्रुताओं को दूर कर लेता है और सात जन्मों के चार गुण (सोतपत्ति) प्राप्त कर लेता है, तो वह चाहे तो अपने बारे में यह कह सकता है: 'मैं नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र से मुक्त हो चुका हूँ; दुख के तल, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्त हो चुका हूँ; मैं सात जन्मों का अनुयायी (सोतपत्ति) हूँ, अब निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं हूँ, नियति में स्थिर हूँ, ज्ञान की ओर अग्रसर हूँ।' 1897 [4063]

"वे पाँच खतरे और शत्रुताएँ क्या हैं जिनका निवारण हो गया है? (1) गृहस्थ, जो जीवन का विनाश करता है, जीवन के विनाश को शर्त बनाकर वर्तमान जीवन और भविष्य के जीवन से संबंधित खतरे और शत्रुता उत्पन्न करता है, और उसे मानसिक पीड़ा और निराशा भी होती है। जो जीवन के विनाश से परहेज करता है, वह न तो वर्तमान जीवन से संबंधित ऐसे खतरे और शत्रुता उत्पन्न करता है और न ही भविष्य के जीवन से संबंधित ऐसे खतरे और शत्रुता उत्पन्न करता है, और न ही उसे मानसिक पीड़ा और निराशा होती है। क्योंकि जो जीवन के विनाश से परहेज करता है, उसके लिए वह खतरा और शत्रुता इस प्रकार समाप्त हो जाती है।"

(2) जो व्यक्ति बिना दी हुई वस्तुएँ लेता है... (3) जो यौन दुराचार में लिप्त होता है... (4) जो झूठ बोलता है... (5) जो शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं, और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन एक शर्त है, वह वर्तमान जीवन और भविष्य के जीवन में भी खतरे और शत्रुता उत्पन्न करता है और उसे मानसिक पीड़ा और निराशा का भी अनुभव होता है। जो व्यक्ति शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से, जो आलस्य का आधार हैं, परहेज करता है, वह न तो वर्तमान जीवन में और न ही भविष्य के जीवन में ऐसे खतरे और शत्रुता उत्पन्न करता है और न ही उसे मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव होता है। जो व्यक्ति शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से, जो आलस्य का आधार हैं, परहेज करता है, उसके लिए वह खतरा और शत्रुता इस प्रकार समाप्त हो जाती है।

"ये वे पांच खतरे और शत्रुताएं हैं जिन्हें समाप्त कर दिया गया है।"

और वे कौन से चार कारक हैं जो उनके पास हैं (सात पुनर्जन्म, सोतपत्ति)? (6) यहाँ, गृहस्थ, एक श्रेष्ठ शिष्य बुद्ध में अटूट विश्वास रखता है, इस प्रकार: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, भाग्यशाली हैं, संसार के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' (7) वह धम्म में अटूट विश्वास रखता है, इस प्रकार: 'धम्म की व्याख्या भगवान (बुद्ध) द्वारा अच्छी तरह से की गई है, प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, तात्कालिक है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, लागू करने योग्य है, बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाना है।' (8) संघ में उनका अटूट विश्वास इस प्रकार है: 'भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का संघ अच्छे मार्ग का अनुसरण कर रहा है, सीधे मार्ग का अनुसरण कर रहा है, [407] सच्चे मार्ग का अनुसरण कर रहा है, उचित मार्ग का अनुसरण कर रहा है; अर्थात्, चार युग्मों के व्यक्ति, आठ प्रकार के व्यक्ति - भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का यह संघ दान के योग्य है, आतिथ्य के योग्य है, भेंट के योग्य है, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।' (9) उनमें श्रेष्ठों द्वारा प्रिय, अटूट, दोषरहित, निष्कलंक, निर्मल, मुक्तिदायक, बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, अगोचर, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाला सद्गुणी आचरण है। ये वे चार कारक हैं जो उनमें समाहित हैं (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति)।

"गृहस्थ, जब एक श्रेष्ठ शिष्य इन पांच खतरों और शत्रुताओं को दूर कर लेता है और धारा-प्रवेश के इन चार कारकों को प्राप्त कर लेता है, तो वह चाहे तो अपने बारे में यह घोषणा कर सकता है: 'मैं नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र से मुक्त हो चुका हूँ; दुख

के तल, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्त हो चुका हूँ; मैं धारा-प्रवेश करने वाला हूँ, अब निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं हूँ, नियति में स्थिर हूँ, ज्ञानोदय की ओर अग्रसर हूँ।"

---

28 शत्रुता (2) (वेरा2)

[9:27 के समान, लेकिन बुद्ध द्वारा भिक्षुओं को संबोधित। 1]

---

29 आक्रोश की व्याख्या (1) (अघतवत्थु1)

भिक्षुओं, आक्रोश के ये नौ कारण हैं। वे नौ कारण क्या हैं? (1) [यह सोचकर] 'उसने मेरे नुकसान के लिए काम किया' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (2) [यह सोचकर] 'वह मेरे नुकसान के लिए काम कर रहा है' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (3) [यह सोचकर] 'वह मेरे नुकसान के लिए काम करेगा' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (4) [यह सोचकर] 'उसने मुझे प्रसन्न करने वाले और मेरे लिए सुखद व्यक्ति को हानि पहुँचाने के लिए काम किया' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (5) [यह सोचकर] 'वह मुझे प्रसन्न करने वाले और मेरे लिए सुखद व्यक्ति को हानि पहुँचाने के लिए काम कर रहा है' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (6) [यह सोचकर] 'वह मुझे प्रसन्न करने वाले और मेरे लिए सुखद व्यक्ति को हानि पहुँचाने के लिए काम करेगा' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (7) [यह सोचकर] 'उसने मुझे अप्रिय करने वाले और मेरे लिए अप्रिय व्यक्ति के लाभ के लिए काम किया' - आक्रोश उत्पन्न होता है; (8) [यह सोचकर] 'वह मुझे अप्रिय करने वाले और मेरे लिए अप्रिय व्यक्ति के लाभ के लिए काम कर रहा है' - आक्रोश उत्पन्न होता है। मुझे द्वेष है। (9) [सोचते हुए:] 'वह मेरे लिए अप्रिय और नापसंद व्यक्ति के लाभ के लिए कार्य करेगा' मुझे द्वेष है। भिक्षुओं, ये द्वेष के नौ कारण हैं।

---

30 आक्रोश निवारण (2) (अघतवत्थु2)

भिक्षुओं, आक्रोश दूर करने के ये नौ तरीके हैं। वे नौ तरीके क्या हैं? (1) [सोचते हुए:] 'उसने मेरे नुकसान के लिए काम किया, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' 1899 इससे आक्रोश दूर होता है। (2) [सोचते हुए:] 'वह मेरे नुकसान के लिए काम कर रहा है, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इससे आक्रोश दूर होता है। (3) [सोचते हुए:] 'वह मेरे नुकसान के लिए काम करेगा, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इससे आक्रोश दूर होता है। (4) [सोचते हुए:] 'उसने मेरे प्रिय और प्रिय व्यक्ति के नुकसान के लिए काम किया, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इससे आक्रोश दूर होता है। (5) [सोचते हुए:] 'वह मेरे प्रिय और प्रिय व्यक्ति के नुकसान के लिए काम कर रहा है, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इससे आक्रोश दूर होता है। [409] (6) [सोचते हुए:] 'वह मेरे प्रिय और प्रिय व्यक्ति के नुकसान के लिए काम करेगा, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' (7) [सोचते हुए:] 'उसने मेरे लिए अप्रिय और नापसंद व्यक्ति के हित में कार्य किया, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इस प्रकार आक्रोश दूर किया जाता है। (8) [सोचते हुए:] 'वह मेरे लिए अप्रिय और नापसंद व्यक्ति के हित में कार्य कर रहा है, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इस प्रकार आक्रोश दूर किया जाता है। (9) [सोचते हुए:] 'वह मेरे लिए अप्रिय और नापसंद व्यक्ति के हित में कार्य करेगा, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इस प्रकार आक्रोश दूर किया जाता है। हे भिक्षुओं, ये आक्रोश दूर करने के नौ तरीके हैं।

---

31. क्रमिक समाप्ति (अनुपुब्बनिरोध)

भिक्षुओं, ये नौ क्रमिक समाप्ति हैं। 1900 कौन सी नौ? (1) जिसने प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) प्राप्त कर ली है, उसकी इंद्रिय-बोध समाप्त हो जाती है। (2) जिसने द्वितीय ध्यान प्राप्त कर ली है, उसके विचार और परीक्षा समाप्त हो जाते हैं। (3) जिसने तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) प्राप्त कर ली है, उसके परमानंद (पीति) का अंत हो जाता है। (4) जिसने चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) प्राप्त कर

ली है, उसके श्वास लेना और श्वास छोड़ना समाप्त हो जाता है। (5) जिसने अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को प्राप्त कर लिया है, उसके रूप की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त हो जाती है। 1901 (6) जिसने अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) को प्राप्त कर लिया है, उसके अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) से संबंधित अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त हो जाती है। (7) जिसने प्राप्त कर ली है... (8) जिसने न तो चेतना के क्षेत्र (आयतन) को प्राप्त कर लिया है, उसके लिए शून्यता के क्षेत्र (आयतन) से संबंधित बोध (सन्ना/संज्ञा) समाप्त हो गया है। (9) जिसने बोध (सन्ना/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के अंत को प्राप्त कर लिया है, उसके लिए बोध (सन्ना/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) दोनों समाप्त हो गए हैं। हे भिक्षुओं, ये नौ क्रमिक अंत हैं। [410]

चतुर्थ. महान अध्याय (महावग्गो सं. महा-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

32 नौ ट्रान्स (समाधि) अवस्थाएँ (संक्षेप में) (1) (अनूपुब्बाविहार 1 सं. अनु-पूर्व-विहार)

भिक्षुओं, ये नौ क्रमिक निवास स्थान हैं। 1902 कौन से नौ? (1) यहाँ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, एक भिक्षु प्रथम ध्यान में प्रवेश करता है और निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल हैं। (2) विचार और चिंतन के शांत होने पर, वह द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जिसमें आंतरिक शांति और मन का एकीकरण होता है और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन नहीं होते हैं। (3) परमानंद (पीति) के भी लुप्त होने पर, वह समभाव में निवास करता है और सचेत (सती) और पूर्णतः बोध करते हुए, वह शरीर सहित सुख (सुख) का अनुभव करता है; वह तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जिसके विषय में श्रेष्ठ जन कहते हैं: 'वह है समभाव, सती (ध्यान/सती), जो आनंद से निवास करता है (4) सुख और दुख का त्याग करके, और पहले से ही आनंद और निराशा के बीत जाने के साथ, वह चौथे ध्यान (सतीव्र अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखद, जिसमें उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) द्वारा सती (ध्यान) की शुद्धि होती है।

(5) रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। (6) अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, 'चेतना अनंत है' का अनुभव करते हुए, वह अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। (7) अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, वह शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। (8) शून्यता के आधार पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, वह अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति। (9) अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, वह अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है। भिक्षुओं, ये नौ प्रगतिशील निवास हैं।

---

33 नौ ट्रान्स (समाधि) अवस्थाएँ विस्तार से (अनूपुब्बविहारसमापत्ति2 सं. अनु-पूर्व-विहार...)

"भिक्षुओं, मैं आपको इन नौ प्रगतिशील निवासों की प्राप्ति का उपदेश दूंगा।" 903 सुनो... और भिक्षुओं, नौ प्रगतिशील निवासों की प्राप्ति क्या है?

(1) "मैं उस अवस्था के विषय में कहता हूँ जहाँ इंद्रिय सुख समाप्त हो जाते हैं और उन लोगों के विषय में जो इंद्रिय सुखों को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं: 'निःसंदेह, वे पूजनीय लोग भूख रहित और तृप्त हैं; [411] वे 1904 को पार कर चुके हैं और उस विशेष संदर्भ में आगे बढ़ चुके हैं।' 1905 यदि कोई कहे: 'इंद्रिय सुख कहाँ समाप्त होते हैं? और वे कौन हैं जिन्होंने इंद्रिय सुखों का पूर्णतः त्याग कर निवास किया है? मैं यह नहीं जानता, मैं यह नहीं देखता' तो उसे कहा जाना चाहिए: 'यहाँ, मित्र, इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त, एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है। ...वहीं इंद्रिय सुख समाप्त होते हैं, और वे ही हैं जिन्होंने इंद्रिय सुखों का पूर्णतः त्याग कर निवास किया है।' निश्चय ही, भिक्षुओं, जो धूर्त या पाखंडी नहीं है, उसे इस अवस्था में प्रसन्न और आनंदित होना चाहिए, और कहना चाहिए: 'अच्छा!' ऐसा करने के बाद, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उसे उनकी सेवा करनी चाहिए।

(2) "मैं उस अवस्था के विषय में कहता हूँ जहाँ विचार और परीक्षा समाप्त हो जाती है और उन लोगों के विषय में जो विचार और परीक्षा को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं: शुद्ध रूप से, वे पूजनीय लोग भूख रहित और तृप्त हैं, उस विशेष अर्थ में पार हो चुके हैं और उससे आगे बढ़ चुके हैं।" यदि कोई कहे: 'विचार और परीक्षा कहाँ समाप्त होती है? और वे कौन हैं जो विचार और परीक्षा को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं? मैं यह नहीं जानता, मैं यह नहीं देखता' तो उसे कहा जाना चाहिए: 'यहाँ, मित्र, विचार और परीक्षा के शांत होने पर, एक भिक्षु द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है। . . . यही वह स्थान है जहाँ विचार और परीक्षा समाप्त हो जाती है, और वे ही हैं जो विचार और परीक्षा को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं।' निश्चय ही, भिक्षुओं, जो धूर्त या पाखंडी नहीं है, उसे इस अवस्था में प्रसन्न और आनंदित होना चाहिए, यह कहते हुए: 'अच्छा!' ऐसा करने के बाद, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उसे उनकी सेवा करनी चाहिए।

(3) मैं उस अवस्था के विषय में कहता हूँ जहाँ आनंद (पीति) समाप्त हो जाता है और उन लोगों के विषय में जो पूर्णतः आनंद (पीति) समाप्त करके निवास करते हैं: 'निःसंदेह, वे पूजनीय लोग भूख रहित और तृप्त हैं, उस विशेष अर्थ में पार हो चुके हैं।' यदि कोई कहे: 'आनंद (पीति) कहाँ समाप्त होता है? और वे कौन हैं जो पूर्णतः आनंद (पीति) समाप्त करके निवास करते हैं? मैं यह नहीं जानता, मैं यह नहीं देखता,' तो उसे कहा जाना चाहिए: 'यहाँ, मित्र, आनंद (पीति) के लुप्त होने के साथ ही... वह तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है। ...वहीं आनंद (पीति) समाप्त होता है और वे ही [412] हैं जो पूर्णतः आनंद (पीति) समाप्त करके निवास करते हैं।' निश्चय ही, भिक्षुओं, जो धूर्त या पाखंडी नहीं है, उसे इस कथन में प्रसन्न और आनंदित होना चाहिए, और कहना चाहिए: 'अच्छा!' ऐसा करने के बाद, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उसे उनकी सेवा करनी चाहिए।

(4) "मैं उस अवस्था के विषय में कहता हूँ जहाँ उदासीनता (भीतर समाधि) से जुड़ा आनंद समाप्त हो जाता है और उन लोगों के विषय में जो उदासीनता (भीतर समाधि) से जुड़े आनंद को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं।" 906 "निश्चित रूप से, हे पूज्यवर, वे भूख रहित और तृप्त हो चुके हैं, उस विशेष संदर्भ में पार हो चुके हैं। यदि कोई कहे: 'उदासीनता (भीतर समाधि) से जुड़ा आनंद कहाँ समाप्त होता है? और वे कौन हैं जो उदासीनता (भीतर समाधि) से जुड़े आनंद को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं? मैं यह नहीं जानता, मैं यह नहीं देखता' तो उसे कहा जाना चाहिए: 'यहाँ, मित्र, आनंद और दुख के त्याग के साथ... एक भिक्षु चौथी ध्यान (समाधि अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है। ... यहीं पर उदासीनता (भीतर समाधि) से जुड़ा आनंद समाप्त हो जाता है।" और वे ही हैं जो उदासीनता (भीतर में विलीन होना/उपेक्खा) से जुड़े आनंद को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं। हे भिक्षुओं, जो धूर्त या पाखंडी नहीं है, उसे इस कथन पर प्रसन्नता और आनंद होगा, और वह कहेगा: 'अच्छा!' ऐसा करने के बाद, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उसे उनकी सेवा करनी चाहिए।

(5) "मैं उस अवस्था के विषय में कहता हूँ जहाँ रूपों के प्रति आकर्षण की अनुभूतियाँ (सन्ना/संज्ञा) समाप्त हो जाती हैं और उन लोगों के विषय में जो रूपों की अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं: 1907 'निश्चित रूप से, वे पूजनीय लोग भूख रहित और तृप्त हैं, उस विशेष संदर्भ में पार हो चुके हैं और आगे बढ़ चुके हैं।' यदि कोई कहे: 'रूपों की अनुभूतियाँ (सन्ना/संज्ञा) कहाँ समाप्त होती हैं? और वे कौन हैं जो रूपों की अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं? मैं यह नहीं जानता, मैं यह नहीं देखता' तो उसे कहा जाना चाहिए: 'यहाँ, मित्र, रूपों की अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रिय-प्रभाव की अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने के साथ, विविधता की अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, [यह अनुभव करते हुए] कि "अंतरिक्ष अनंत है," एक भिक्षु प्रवेश करता है और निवास करता है। अंतरिक्ष की अनंतता का क्षेत्र (आयतन)। वहीं पर रूपों की

अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त हो जाती है और वे ही हैं जिन्होंने रूपों की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) को पूर्णतः समाप्त कर दिया है। हे भिक्षुओं, जो धूर्त या पाखंडी नहीं है, उसे इस कथन पर प्रसन्नता और आनंदित होना चाहिए और कहना चाहिए: 'अच्छा!' ऐसा करने के बाद, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उसे उनकी सेवा करनी चाहिए। [413]

(6) "मैं उस अवस्था के विषय में कहता हूँ जहाँ अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त हो जाती है और उन लोगों के विषय में जो अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं: 'निःसंदेह, वे पूजनीय लोग भूख रहित और तृप्त हैं, उस विशेष संदर्भ में पार कर चुके हैं और उससे आगे बढ़ चुके हैं।' यदि कोई कहे: 'अनंत अंतरिक्ष के आधार की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) कहाँ समाप्त होती है? और वे कौन हैं जो अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं? मैं यह नहीं जानता, मैं यह नहीं देखता,' तो उसे कहा जाना चाहिए: 'यहाँ, मित्र, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, "चेतना अनंत है" का अनुभव करते हुए, एक भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है।' चेतना की अनंतता। यहीं पर अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त हो जाती है और वे ही पूर्णतः अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त करके निवास करते हैं। हे भिक्षुओं, जो धूर्त या पाखंडी नहीं है, उसे इस कथन पर प्रसन्नता और आनंदित होकर कहना चाहिए: 'अच्छा!' ऐसा करने के बाद, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उसे उनकी सेवा करनी चाहिए।

(7) मैं उस अवस्था के विषय में कहता हूँ जहाँ चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त हो जाती है और उन लोगों के विषय में जो चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं: 'निःसंदेह, वे पूजनीय लोग भूख रहित और तृप्त हो चुके हैं, उस विशेष संदर्भ में पार कर चुके हैं और उससे आगे बढ़ चुके हैं।' यदि कोई कहे, 'चेतना के अनंत क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) कहाँ समाप्त होती है? और वे कौन हैं जो चेतना के अनंत क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं? मैं यह नहीं जानता, मैं इसे नहीं देखता।' तो उसे कहा जाना चाहिए, 'यहाँ, मित्र, चेतना के अनंत क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, "कुछ नहीं है" का अनुभव करते हुए, भिक्षु शून्यता के आधार में प्रवेश करता है और निवास करता है। वहीं चेतना के अनंत क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त होती है और वे ही हैं जो चेतना के अनंत क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं।' हे भिक्षुओं, जो धूर्त या पाखंडी नहीं है, उसे इस अवस्था में प्रसन्नता और आनंद मनाना चाहिए और कहना चाहिए, 'अच्छा!' ऐसा करने के बाद, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उसे उनकी सेवा करनी चाहिए।

(8) "मैं उस अवस्था के विषय में कहता हूँ जहाँ शून्यता के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) समाप्त हो जाती है और उन लोगों के विषय में जो शून्यता के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं: 'निःसंदेह, वे पूजनीय लोग भूख रहित और तृप्त हैं, उस विशेष संदर्भ में पार कर चुके हैं और उससे आगे बढ़ चुके हैं।' यदि कोई कहे: 'शून्यता के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) कहाँ समाप्त होती है? और वे कौन हैं जो शून्यता के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं? [414] 'मैं यह नहीं जानता, मैं यह नहीं देखता' तो उसे कहा जाना चाहिए: 'यहाँ, मित्र, शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, भिक्षु न तो अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और न ही अअनुभूति के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। वहीं शून्यता के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त होती है और वे ही हैं जो शून्यता के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं।' हे भिक्षुओं, जो धूर्त या पाखंडी नहीं है, उसे इस कथन पर प्रसन्नता और आनंद होगा, और वह कहेगा: 'अच्छा!' ऐसा करने के बाद, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उसे उनकी सेवा करनी चाहिए।

(9) "मैं उस अवस्था के विषय में कहता हूँ जहाँ न तो बोध और न ही अबोध के आधार का बोध समाप्त हो जाता है, और उन लोगों के विषय में जो न तो बोध और न ही अबोध के आधार के बोध को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं: 'निःसंदेह, वे पूजनीय हैं, भूख रहित और तृप्त हैं, उस विशेष संदर्भ में पार हो चुके हैं और उससे आगे बढ़ चुके हैं।' यदि कोई कहे: 'न तो बोध और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) का बोध कहाँ समाप्त होता है? और वे कौन हैं जो न तो बोध और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) के बोध को पूर्णतः समाप्त करके निवास करते हैं? मैं यह नहीं जानता, मैं यह नहीं देखता,' तो उसे कहा जाना चाहिए: 'यहाँ, मित्र, पूर्णतः पार करके...' न तो संज्ञान और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करके भिक्षु संज्ञान और वेदना के अंत में निवास करता है। वहीं पर न तो संज्ञान और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) का संज्ञान समाप्त हो जाता है और वे ही लोग हैं जिन्होंने न तो संज्ञान और न ही अज्ञान के आधार के संज्ञान

को पूरी तरह समाप्त कर दिया है। हे भिक्षुओं, जो धूर्त या पाखंडी नहीं है, उसे इस कथन पर प्रसन्नता और आनंदित होकर कहना चाहिए: 'अच्छा!' ऐसा करने के बाद, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उसे उनकी सेवा करनी चाहिए।

"भिक्षुओं, यही नौ क्रमिक अवस्थाओं (समाधि/सम्मोहन अवस्थाओं) की प्राप्ति है।"

---

34 निब्बान आनंद है (निब्बानसुखा सं. निर्वाण-सुखा)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार पूज्य सारिपुत्त राजगृह में बांस के वन में, गिलहरियों के अभयारण्य में निवास कर रहे थे। वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"सम्मोहन, मित्रों, यही निर्वाण है। यही निर्वाण है।"

जब यह कहा गया, तो पूज्य उदयि 1908 ने पूज्य सारिपुत्त से कहा: [415] "लेकिन, मित्र सारिपुत्त, यहाँ क्या सुख हो सकता है जब यहाँ कुछ भी महसूस नहीं होता?"

"बस यही, दोस्त, यहाँ की खुशी है कि यहाँ कुछ भी महसूस नहीं होता।"

मित्रों, इंद्रिय सुख के ये पाँच स्रोत हैं। ये पाँच कौन से हैं? आँखों से दिखाई देने वाले वे रूप जो वांछित, मनभावन, सुखद, कामुक सुख से जुड़े और उत्तेजक होते हैं; कानों से सुनाई देने वाली ध्वनियाँ... नाक से सुनाई देने वाली गंध... जीभ से महसूस होने वाले स्वाद... शरीर द्वारा स्पर्शित वे वस्तुएँ जो वांछित, मनभावन, सुखद, कामुक सुख से जुड़ी और उत्तेजक होती हैं। ये पाँच स्रोत इंद्रिय सुख के हैं। इन पाँच स्रोतों पर निर्भर कोई भी सुख या आनंद इंद्रिय सुख कहलाता है।

(1) "हे मित्रों, इंद्रिय सुखों से विरक्त और अकुशल अवस्थाओं से विरक्त होकर भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद और सुख से युक्त होता है, साथ ही चिंतन और आत्मनिरीक्षण भी इसमें शामिल होता है। यदि इस प्रकार निवास करते समय भिक्षु में इंद्रिय सुख से युक्त अनुभूति और ध्यान उत्पन्न हो जाए, तो वह इसे कष्ट के रूप में अनुभव करता है। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, उसी प्रकार यदि उसमें इंद्रिय सुख से युक्त अनुभूति और ध्यान उत्पन्न हो जाए, तो वह इसे कष्ट के रूप में अनुभव करता है। परन्तु भगवान (बुद्ध) ने कष्ट को पीड़ा कहा है। इस प्रकार यह समझा जा सकता है कि निर्वाण ही सुख है।" (1909)

(2) "फिर, विचार और चिंतन के शांत होने पर, भिक्षु द्वितीय ध्यान (सम्मोहन) अवस्था में प्रवेश करता है और उसमें लीन हो जाता है। यदि उस भिक्षु के इस अवस्था में रहते हुए, विचार सहित अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान [416] उत्पन्न हो, तो वह इसे कष्ट के रूप में अनुभव करता है। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, उसी प्रकार यदि अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और विचार सहित ध्यान उत्पन्न हो, तो वह इसे कष्ट के रूप में अनुभव करता है। परन्तु भगवान (बुद्ध) ने कष्ट को पीड़ा कहा है। इस प्रकार भी यह समझा जा सकता है कि निर्वाण ही सुख है।"

(3) "फिर, जब पीति (आनंद) भी लुप्त हो जाती है, तो वह तीसरे ध्यान (सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... यदि उस भिक्षु के इस प्रकार निवास करते समय, पीति (आनंद) के साथ-साथ अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान उत्पन्न होता है, तो वह इसे कष्ट के रूप में अनुभव करता है। ... इस प्रकार भी, यह समझा जा सकता है कि निर्वाण (निब्बान) ही सुख है।"

(4) "फिर, सुख और दुख का त्याग करने पर भिक्षु चौथे ध्यान (सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... यदि उस भिक्षु के इस प्रकार निवास करते समय, उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) से जुड़े सुख के साथ-साथ अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान उत्पन्न होता है, तो वह इसे पीड़ा के रूप में अनुभव करता है। इस प्रकार भी, यह समझा जा सकता है कि निर्वाण ही सुख है।"

(5) "फिर, रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करने के साथ, इंद्रिय-प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने के साथ, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देने के साथ, 'अंतरिक्ष अनंत है' का बोध करते हुए, एक भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। यदि, इस प्रकार निवास करते समय, उसमें रूपों से संबंधित धारणा (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान उत्पन्न होता है, तो वह इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव करता है। . . . [417] ... इस प्रकार भी, यह समझा जा सकता है कि निर्वाण (निब्बान) कैसे सुख है।"

(6) "फिर, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'चेतना अनंत है' का अनुभव करते हुए, एक भिक्षु अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। यदि उस भिक्षु के इस प्रकार निवास करते समय अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के साथ-साथ अनुभूति (सन्ना/संग्य) और ध्यान उत्पन्न होता है, तो वह इसे एक कष्ट के रूप में अनुभव करता है। ... इस प्रकार भी, यह समझा जा सकता है कि निर्वाण ही सुख है।"

(7) "फिर, चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। यदि उस भिक्षु के इस प्रकार निवास करते समय, चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) के साथ-साथ अनुभूति (सन्ना/संग्या) और ध्यान उत्पन्न होता है, तो वह इसे कष्ट के रूप में अनुभव करता है। ... इस प्रकार भी, यह समझा जा सकता है कि निर्वाण ही सुख है।"

(8) "फिर, शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, भिक्षु न तो संज्ञा और न ही संज्ञा के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। यदि उस भिक्षु के इस प्रकार निवास करते समय, शून्यता के क्षेत्र (आयतन) से युक्त संज्ञा और ध्यान उसमें उत्पन्न हो, तो वह इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव करता है। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, उसी प्रकार यदि शून्यता के आधार से युक्त संज्ञा और ध्यान उसमें उत्पन्न हो, तो वह इसे पीड़ा के रूप में अनुभव करता है। परन्तु भगवान (बुद्ध) ने पीड़ा को कष्ट कहा है। इस प्रकार भी यह समझा जा सकता है कि निर्वाण ही सुख है। [418]

(9) "फिर, न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अनुभूति (वेदना) के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, भिक्षु अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और पन्न (दिव्य ज्ञान) से देखकर उसके सभी दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार भी, यह समझा जा सकता है कि निर्वाण ही सुख है।"

---

35 गाय की उपमा (गविउपमा, संस्कृत: गौ-उपमा)

भिक्षुओं, मान लीजिए कि एक पहाड़ी पर रहने वाली गाय नासमझ, अनुभवहीन और ऊबड़-खाबड़ पहाड़ों पर चलने में अकुशल है। 1911 उसके मन में यह विचार आ सकता है: 'मुझे ऐसे क्षेत्र में जाना चाहिए जहाँ मैं पहले कभी नहीं गई, ऐसी घास खानी चाहिए जो मैंने पहले कभी नहीं खाई, ऐसा पानी पीना चाहिए जो मैंने पहले कभी नहीं पिया।' वह अपना अगला पैर नीचे रखेगी, और जब तक वह ठीक से जमेगा भी नहीं, अपना पिछला पैर उठा लेगी। वह ऐसे क्षेत्र में नहीं जाएगी जहाँ वह पहले कभी नहीं गई, ऐसी घास नहीं खाएगी जो उसने पहले कभी नहीं खाई, ऐसा पानी नहीं पिएगी जो उसने पहले कभी नहीं पिया; और वह उस क्षेत्र में सुरक्षित वापस भी नहीं लौटेगी जहाँ वह तब ठहरी थी जब उसके मन में यह विचार आया था: 'मुझे ऐसे क्षेत्र में जाना चाहिए जहाँ मैं पहले कभी नहीं गई, ऐसी घास खानी चाहिए जो मैंने पहले कभी नहीं खाई, ऐसा पानी पीना चाहिए जो मैंने पहले कभी नहीं पिया।' इसका कारण क्या है? क्योंकि वह पहाड़ी पर रहने वाली गाय नासमझ, अनुभवहीन और ऊबड़-खाबड़ पहाड़ों पर चलने में अकुशल है।

इसी प्रकार, यहाँ कोई भिक्षु अज्ञानी, अयोग्य, अनुभवहीन और अकुशल है, जब वह इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न परमानंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त है, जिसमें विचार और परीक्षा शामिल होती है। वह उस उद्देश्य का अनुसरण नहीं करता, उसका विकास और संवर्धन नहीं करता, उस पर ठीक से ध्यान केंद्रित नहीं करता।

उसके मन में यह विचार आता है: 'विचार और परीक्षा के शांत होने पर, मुझे दूसरी ध्यान अवस्था में प्रवेश करना चाहिए और उसमें निवास करना चाहिए [419], ... लेकिन वह दूसरी ध्यान अवस्था में प्रवेश नहीं कर पाता है। ... फिर उसके मन में यह विचार आता है:

'इंद्रिय सुखों से विरक्त, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, मुझे पहली ध्यान अवस्था में प्रवेश करना चाहिए और उसमें निवास करना चाहिए। ... लेकिन वह पहली ध्यान अवस्था में प्रवेश नहीं कर पाता है। ... इसे वह भिक्षु कहा जाता है जो दोनों से विमुख हो गया है, 1913 दोनों से विमुख हो गया है। वह उस पर्वत पर रहने वाली गाय के समान है जो नासमझ, अयोग्य, अनुभवहीन और ऊबड़-खाबड़ पहाड़ों पर चलने में अकुशल थी।

भिक्षुओं, मान लीजिए कि एक पर्वतीय गाय है जो बुद्धिमान, सक्षम, अनुभवी और ऊबड़-खाबड़ पहाड़ों पर चलने में कुशल है। उसके मन में यह विचार आ सकता है: 'मुझे किसी ऐसे क्षेत्र में जाना चाहिए जहाँ मैं पहले कभी नहीं गई, ऐसी घास खानी चाहिए जो मैंने पहले कभी नहीं खाई, ऐसा पानी पीना चाहिए जो मैंने पहले कभी नहीं पिया।' अपना अगला पैर रखते समय वह उसे मजबूती से जमाएगी और फिर ही पिछला पैर उठाएगी। वह किसी ऐसे क्षेत्र में जाएगी जहाँ वह पहले कभी नहीं गई, ऐसी घास खाएगी जो उसने पहले कभी नहीं खाई, ऐसा पानी पिएगी जो उसने पहले कभी नहीं पिया; और वह सुरक्षित रूप से उस क्षेत्र में लौट आएगी जहाँ वह ठहरी हुई थी, तभी उसके मन में यह विचार आता है: 'मुझे किसी ऐसे क्षेत्र में जाना चाहिए जहाँ मैं पहले कभी नहीं गई, ऐसी घास खानी चाहिए जो मैंने पहले कभी नहीं खाई, ऐसा पानी पीना चाहिए जो मैंने पहले कभी नहीं पिया।' इसका कारण क्या है? क्योंकि वह पर्वतीय गाय बुद्धिमान, सक्षम, अनुभवी और ऊबड़-खाबड़ पहाड़ों पर चलने में कुशल थी।

(1) "इसी प्रकार, यहाँ कोई भिक्षु बुद्धिमान, सक्षम, अनुभवी और कुशल है, जब वह इंद्रिय सुखों से एकांत में, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से एकांत में रहकर प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह उस वस्तु का अनुसरण करता है, उसे विकसित और पोषित करता है, और उस पर अच्छी तरह ध्यान केंद्रित करता है।

(2) "उसके मन में यह विचार आता है: 'विचार और विश्लेषण के शांत होने पर, मुझे द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करना चाहिए और उसमें रहना चाहिए...' द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) को हानि न पहुँचाते हुए, विचार और विश्लेषण के शांत होने पर वह द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें रहता है। वह उस उद्देश्य का अनुसरण करता है, उसे विकसित और पोषित करता है, और उस पर अच्छी तरह ध्यान केंद्रित करता है।

(3) "तब उसे यह विचार आता है: 'पीति (आनंद) के लुप्त हो जाने पर [420]... मुझे तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करना चाहिए और उसमें निवास करना चाहिए,...' तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) को हानि न पहुँचाते हुए, पीति के लुप्त हो जाने पर वह तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... वह उस विषय का अनुसरण करता है, उसका विकास और संवर्धन करता है, और उस पर अच्छी तरह ध्यान केंद्रित करता है।"

(4) "तब उसे यह विचार आता है: 'सुख और दुख का त्याग करके... मुझे चौथे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करना चाहिए और उसमें रहना चाहिए...' चौथे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) को हानि न पहुँचाते हुए, सुख और दुख का त्याग करके... वह चौथे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें रहता है... वह उस लक्ष्य का अनुसरण करता है, उसे विकसित और पोषित करता है, और उस पर अच्छी तरह ध्यान केंद्रित करता है।

(5) "तब उसे यह विचार आता है: 'रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' को समझते हुए, मुझे अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करना चाहिए और उसमें निवास करना चाहिए।' अनंत अंतरिक्ष के आधार को चोट न पहुँचाते हुए, रूपों की धारणाओं पर पूर्ण विजय प्राप्त करके... वह अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह उस विषय का अनुसरण करता है, उसका विकास और संवर्धन करता है, और उस पर अच्छी तरह ध्यान केंद्रित करता है।"

(6) "तब उसे यह विचार आता है: 'अंतरिक्ष की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, [यह अनुभव करते हुए] कि "चेतना अनंत है," मुझे चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करना चाहिए और उसमें निवास करना चाहिए।' चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को हानि न पहुँचाते हुए, अंतरिक्ष की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके... वह चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह उस विषय का अनुसरण करता है, उसका विकास और संवर्धन करता है, और उस पर अच्छी तरह से ध्यान केंद्रित करता है।"

(7) "तब उसे यह विचार आता है: 'चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, [यह अनुभव करते हुए] कि "कुछ भी नहीं है," मुझे शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करना चाहिए और उसमें निवास करना चाहिए।' शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को हानि न पहुँचाते हुए, चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके... वह शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह उस विषय का अनुसरण करता है, उसका विकास और संवर्धन करता है, और उस पर अच्छी तरह से ध्यान केंद्रित करता है।"

(8) "तब उसे यह विचार आता है: 'शून्यता के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, मुझे न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करना चाहिए और उसमें निवास करना चाहिए।' न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के आधार को चोट न पहुँचाते हुए, शून्यता के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, वह न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह उस विषय का अनुसरण करता है, उसका विकास और संवर्धन करता है, [421] और उस पर अच्छी तरह ध्यान केंद्रित करता है।

(9) "तब उसे यह विचार आता है: 'न तो अनुभूति (सन्न/संग्य) और न ही अनुभूति (अदृश्यता) के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, मुझे अनुभूति (सन्न/संग्य) और संवेदना (वेदन) की समाप्ति में प्रवेश करना चाहिए और निवास करना चाहिए।' अनुभूति (सन्न/संग्य) और संवेदना (वेदन) की समाप्ति को चोट न पहुँचाते हुए, न तो अनुभूति (सन्न/संग्य) और न ही अनुभूति (अदृश्यता) के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, वह अनुभूति (सन्न/संग्य) और संवेदना (वेदन) की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है।"

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु इन ध्यान अवस्थाओं में प्रवेश करता है और इनसे बाहर आता है, तो उसका मन लचीला और सहज हो जाता है। मन के लचीला और सहज होने से उसकी समाधि असीम और विकसित हो जाती है। असीम और विकसित समाधि के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा प्राप्त की जा सकने वाली जिस भी अवस्था की ओर वह अपना मन लगाता है, उपयुक्त आधार होने पर वह उसे प्राप्त करने में सक्षम होता है।

"यदि वह यह इच्छा करे: 'मैं विभिन्न प्रकार की मानसिक शक्तियों का प्रयोग कर सकूँ: एक होकर, मैं अनेक बन सकूँ... [यहाँ और नीचे पूर्ण रूप से 6:2 के अनुसार]... मैं ब्रह्म जगत तक शरीर पर भगवानत्व स्थापित कर सकूँ,' तो वह इसे साकार करने में सक्षम है, बशर्ते इसके लिए एक उपयुक्त आधार हो।"

"यदि वह चाहे: 'क्या मैं, दिव्य श्रवण शक्ति के साथ, जो शुद्ध है और मानवीय श्रवण शक्ति से परे है, दोनों प्रकार की ध्वनियों को सुन सकता हूँ, दिव्य और मानवीय, दूर और पास की ध्वनियों को भी', तो वह इसे साकार करने में सक्षम है, बशर्ते कि इसके लिए एक उपयुक्त आधार हो।"

"यदि वह चाहे: 'क्या मैं अन्य प्राणियों और व्यक्तियों के मन को समझ सकता हूँ, उन्हें अपने मन से घेरकर। क्या मैं एक अमुक्त मन को अमुक्त के रूप में समझ सकता हूँ...' तो वह इसे साकार करने में सक्षम है, बशर्ते कि इसके लिए एक उपयुक्त आधार हो।"

यदि वह चाहे: "क्या मैं अपने अनेक भूतपूर्व निवासों (पूर्व पुनर्जन्मों) को उनके पहलुओं और विवरणों के साथ याद कर सकता हूँ?" वह इसे साकार करने में सक्षम है, बशर्ते कि एक उपयुक्त आधार हो। [422]

यदि वह चाहे तो: ‘मैं, उस दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध है और मानवीय दृष्टि से परे है, प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देख सकूँ... और समझ सकूँ कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं’, वह इसे प्राप्त करने में सक्षम है, बशर्ते कि इसके लिए एक उपयुक्त आधार हो।

यदि वह यह इच्छा करे: 'क्या मैं, दोषों के नाश के साथ, इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति में प्रवेश कर सकता हूँ और निवास कर सकता हूँ, जिसे मैंने प्रत्यक्ष ज्ञान से स्वयं अनुभव किया है', तो वह इसे प्राप्त करने में सक्षम है, बशर्ते कि इसके लिए एक उपयुक्त आधार हो।

---

36 नौ झाना (ट्रान्स अवस्था) (सं. ध्यान)

भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) पर निर्भर करता है। (2) मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) पर भी निर्भर करता है। (3) मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) पर भी निर्भर करता है। (4) मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) पर भी निर्भर करता है। (5) मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश अनंत आकाश के आधार पर भी निर्भर करता है। (6) मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) पर भी निर्भर करता है। (7) मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश शून्यता के क्षेत्र (आयतन) पर भी निर्भर करता है। (8) मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश अनंत आकाश के आधार पर भी निर्भर करता है। न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा)-न ही अ-अनुभूति। (9) मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश भी अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के रुकने पर निर्भर करता है।

(1) "जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) पर निर्भर करता है' तो यह किस कारण से कहा गया था? यहाँ, इंद्रिय सुखों से एकांत में... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है...; वह वहाँ विद्यमान सभी घटनाओं (धम्म) को, जो रूप, संवेदना (वेदना), बोध (संज्ञा/संज्ञा), अपने चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार), और चेतना से संबंधित हैं, अनित्य, दुख, रोग, फोड़ा, तीर, दुःख, पीड़ा, पराया, विघटनशील, [423] शून्य और अनात्म मानता है। 1915 वह अपना मन उन घटनाओं (धम्म) से हटाकर उसे अमर तत्व की ओर इस प्रकार निर्देशित करता है: "यह शांतिपूर्ण है, यह उदात्त है, अर्थात् सभी गतिविधियों का शांत होना, सभी प्राप्तियों का त्याग करना, तृष्णा (तन्हा/तृष्णा), वैराग्य (विराग), निश्चिंतता (निर्वाण) का नाश। 1916 यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, तो वह दोषों का नाश प्राप्त करता है। परन्तु यदि वह धम्म के प्रति राग (कामना) के कारण, धम्म में आनंद के कारण दोषों का नाश प्राप्त नहीं करता, 917 तो पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, वह स्वतः पुनर्जन्म लेता है, और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए, वहीं अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

"जैसे कोई धनुर्धर या धनुर्धर का प्रशिक्षु पुआल के पुतले या मिट्टी के ढेर पर प्रशिक्षण लेता है और फिर बाद में लंबी दूरी का निशानेबाज, तीक्ष्ण निशानेबाज, किसी विशालकाय शरीर को चीरने वाला बन जाता है, 1918 उसी प्रकार, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है: वह वहां विद्यमान सभी घटनाओं (धम्म) को, जो रूप, संवेदना (वेदना), बोध (संज्ञा/संज्ञा), अपने गुणों/व्यवहार (संस्कार/संस्कार), और चेतना से संबंधित हैं, क्षणभंगुर मानता है... वह स्वतः पुनर्जन्म लेने वाला बन जाता है, और उस लोक से कभी वापस आए बिना ही वहां अंतिम निर्वाण (निर्वाण) प्राप्त कर लेता है। [424]

"जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, मैं कहता हूं कि दोषों का नाश भी प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) पर निर्भर करता है,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।"

(2)— (4) "जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश द्वितीय ध्यान... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था)... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) पर भी निर्भर करता है..."

[425] "जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश भी चौथे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) पर निर्भर करता है,' तो इसी कारण यह कहा गया था।

(5) जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश भी अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भर करता है,' तो ऐसा क्यों कहा गया? यहाँ, रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रिय-प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का बोध करते हुए, एक भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह वहाँ विद्यमान सभी घटनाओं (धम्म) को, जो संवेदना (वेदना), बोध (सन्ना/संज्ञा), अपने चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) और चेतना से संबंधित हैं, अनित्य, दुख, रोग, फोड़ा, तीर, दुःख, पीड़ा, पराया, विघटनशील, खाली मानता है। और अनात्म। वह अपना मन इन घटनाओं (धम्म) से हटाकर अमर (अमत/अमृत) तत्व की ओर इस प्रकार लगाता है: "यह शांतिदायक है, यह उदात्त है, अर्थात् समस्त कर्मों का शांत होना, समस्त प्राप्तियों का त्याग, तृष्णा का नाश, वैराग्य, निब्बान, निर्वाण।" यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, तो वह दोषों का नाश प्राप्त करता है। परन्तु यदि वह धम्म के प्रति राग की वासना, धम्म में आनंद के कारण दोषों का नाश प्राप्त नहीं करता, तो पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, वह स्वतः पुनर्जन्म लेता है, और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए, वहीं अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

"जैसे कोई धनुर्धर या उसका प्रशिक्षु पुआल के पुतले या मिट्टी के ढेर पर प्रशिक्षण लेता है और बाद में दूरगामी निशानेबाज, कुशल निशानेबाज, विशालकाय पिंड को चीरने वाला बन जाता है, उसी प्रकार, रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करने के साथ... एक भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के आधार में प्रवेश करता है और निवास करता है। वह वहां विद्यमान सभी घटनाओं (धम्म) को, जो संवेदना (वेदना), बोध (सन्ना/संज्ञा), अपने चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) और चेतना से संबंधित हैं, क्षणभंगुर मानता है। लेकिन यदि वह दोषों का नाश प्राप्त नहीं करता है... तो वह स्वतः पुनर्जन्म लेने वाला बन जाता है, और उस लोक से कभी वापस नहीं लौटता, वहीं पर अंतिम निर्वाण (निर्वाण) प्राप्त कर लेता है।"

"जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश भी अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भर करता है,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।"

(6)— (7) "जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश भी चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भर करता है... शून्यता के क्षेत्र (आयतन) पर', तो ऐसा क्यों कहा गया? [426] यहाँ, चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, एक भिक्षु शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। वह वहाँ विद्यमान सभी घटनाओं (धम्म) को, जो संवेदना (वेदना), अनुभूति (संज्ञा/संज्ञा), अपने चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार), और चेतना से संबंधित हैं, अनित्य मानता है। परन्तु यदि वह दोषों का नाश प्राप्त नहीं करता... तो वह स्वतः पुनर्जन्म लेने वाला बन जाता है, और उस लोक से कभी वापस लौटे बिना वहाँ अंतिम निर्वाण (निर्वाण) प्राप्त कर लेता है।

"जैसे कोई धनुर्धर या उसका प्रशिक्षु पुआल के पुतले या मिट्टी के ढेर पर प्रशिक्षण लेता है और बाद में दीर्घ दूरी का निशानेबाज, कुशल निशानेबाज, किसी विशालकाय पिंड को भेदने वाला बन जाता है, उसी प्रकार चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करने के साथ ही एक भिक्षु शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वह वहां विद्यमान सभी घटनाओं (धम्म) को, जो संवेदना (वेदना), अनुभूति (संज्ञा/संज्ञा), सचेतन क्रियाओं और चेतना से संबंधित हैं, क्षणभंगुर मानता है। ... लेकिन यदि वह दोषों का नाश प्राप्त नहीं करता है... तो वह स्वतः पुनर्जन्म लेने वाला बन जाता है, और उस लोक से कभी वापस नहीं आता है, वहीं पर अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है।"

"जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि दोषों का नाश भी शून्यता के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भर करता है', तो इसी कारण से यह कहा गया था।" (1920)

(8)— (9) "इस प्रकार, भिक्षुओं, अंतिम ज्ञान की प्राप्ति वहीं तक संभव है जहाँ तक सन्ना/संज्ञा सहित ध्यान की उपलब्धियाँ पहुँचती हैं। परन्तु ये दो आधार—न सन्ना/संज्ञा और न असंज्ञा का क्षेत्र (आयतन) और सन्ना/संज्ञा तथा वेदना का अंत—ये दोनों ही उन ध्यानमग्न भिक्षुओं द्वारा वर्णित किए जाने हैं जो उपलब्धियों में निपुण हों और उपलब्धियों को प्राप्त करने और उनसे निकलने के बाद उनसे बाहर निकलने में निपुण हों।" 1921

---

37 आनंद

एक बार पूज्य आनंद कोसंबी में घोषिता उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ पूज्य आनंद ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य आनंद ने यह कहा:

"यह विस्मयकारी और आश्चर्यजनक है, मित्रों, कि भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, जो जानते और देखते हैं, ने बंधन के बीच में एक मार्ग की खोज की है: 1922 प्राणियों के शुद्धिकरण के लिए, दु:ख और विलाप पर विजय पाने के लिए, पीड़ा और निराशा के दूर होने के लिए, विधि की प्राप्ति के लिए, निर्वाण की प्राप्ति के लिए। 1923 (1) आँख और वे रूप वास्तव में उपस्थित होंगे, [427] और फिर भी उस आधार का अनुभव नहीं होगा। 1924 (2) कान और वे ध्वनियाँ वास्तव में उपस्थित होंगी, और फिर भी उस आधार का अनुभव नहीं होगा। (3) नाक और वे गंध वास्तव में उपस्थित होंगी, और फिर भी उस आधार का अनुभव नहीं होगा। (4) जीभ और वे

स्वाद वास्तव में उपस्थित होंगे, और फिर भी उस आधार का अनुभव नहीं होगा। (5) शरीर और वे स्पर्शनीय वस्तुएँ वास्तव में उपस्थित होंगी..." मौजूद होते हुए भी, व्यक्ति उस आधार का अनुभव नहीं कर पाएगा।"

यह सुनकर पूज्य उदय ने पूज्य आनंद से कहा: "मित्र आनंद, क्या वास्तव में बोध होने पर या बोधहीन होने पर ही व्यक्ति उस आधार का अनुभव नहीं करता?"

"मित्र, असल में जब कोई व्यक्ति वास्तव में सचेत होता है तभी उसे उस आधार का अनुभव नहीं होता, न कि जब वह अचेत होता है।"

"लेकिन, मित्र, जब व्यक्ति उस आधार का अनुभव ही न करे तो वह किस बात को समझ सकता है?"

(6) "यहाँ, मित्र, रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रिय-प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का बोध करते हुए भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। जब कोई इस प्रकार बोधशील होता है तो वह उस आधार का अनुभव नहीं करता।"

(7) "हे मित्र, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'चेतना अनंत है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। जब कोई इस प्रकार बोध रखता है, तो उसे उस आधार का अनुभव नहीं होता।"

(8) "हे मित्र, चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। जब कोई इस प्रकार बोधशील होता है, तो वह उस आधार का अनुभव नहीं करता है।" 1925

"एक बार, मित्र, मैं साकेता में अंजना वन के हिरण उद्यान में निवास कर रहा था, तब भिक्षुणी (नन) जतिलगहिया 1926 [428] मेरे पास आई, मुझे प्रणाम किया, एक तरफ खड़ी हुई और बोलीं: 'भंते आनंद, वह समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) जो आगे की ओर नहीं झुकती और पीछे की ओर नहीं मुड़ती, 1927 और जिसे बलपूर्वक (अपवित्रताओं को) दबाकर नियंत्रित नहीं किया जाता 1928 — मुक्त होकर वह स्थिर रहती है; स्थिर रहकर वह संतुष्ट रहती है; संतुष्ट रहकर व्यक्ति विचलित नहीं होता। 1929 भंते आनंद, भगवान (बुद्ध) ने इस समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का क्या फल बताया है?' 1930

(9) "जब उसने मुझसे यह पूछा, तो मैंने उत्तर दिया: 'बहन, वह समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) जो आगे की ओर नहीं झुकती और पीछे की ओर नहीं मुड़ती, और जिसे [अपवित्रताओं को] बलपूर्वक दबाकर नियंत्रित नहीं किया जाता—मुक्त होकर वह स्थिर होती है; स्थिर होकर वह संतुष्ट होती है; संतुष्ट होकर व्यक्ति विचलित नहीं होता। भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि इस समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) का फल अंतिम ज्ञान है।' 1931 जब कोई इस प्रकार भी बोधगम्य होता है, मित्र, तो वह उस आधार का अनुभव नहीं करता।"

---

38 लोकायतिका

फिर दो ब्राह्मण ब्रह्मांडविज्ञानी (1932) भगवान (बुद्ध) के पास आए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त करने के बाद, वे एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

पुराण कस्सपा, जो गुरु गौतम हैं, सर्वज्ञ और सर्वदर्शी होने का दावा करते हैं, कहते हैं: 'चाहे मैं चल रहा हूँ, खड़ा हूँ, सो रहा हूँ या जाग रहा हूँ, ज्ञान और दृष्टि निरंतर और लगातार मेरे साथ रहती है।' वे कहते हैं: 'असीम ज्ञान के साथ, मैं संसार को असीम जानते और देखते हुए निवास करता हूँ।' [429] परन्तु निगंथ नटपुत्त भी सर्वज्ञ और सर्वदर्शी होने का दावा करते हैं, कहते हैं: 'चाहे मैं चल रहा हूँ, खड़ा हूँ, सो रहा हूँ या जाग रहा हूँ, ज्ञान और दृष्टि निरंतर और लगातार मेरे साथ रहती है।' वे कहते हैं: 'असीम ज्ञान के साथ, मैं संसार को सीमित जानते और देखते हुए निवास करता हूँ।' [429] जब ज्ञान के ये दो दावेदार परस्पर विरोधी दावे करते हैं, तो कौन सत्य बोलता है और कौन असत्य?

"बस करो, ब्राह्मणों, अब बस यही है: 'जब ज्ञान के ये दो दावेदार परस्पर विरोधी दावे करते हैं, तो कौन सत्य बोलता है और कौन असत्य?' मैं तुम्हें धम्म सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।"

“जी जी,” उन ब्राह्मणों ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"मान लीजिए, ब्राह्मणों, चारों दिशाओं में चार पुरुष खड़े हैं, जिनमें सर्वोच्च गति, तेज चाल और असाधारण कदम हैं। उनकी गति ताड़ के पेड़ की छाया में दृढ़ धनुष वाले प्रशिक्षित, कुशल और अनुभवी धनुर्धर द्वारा आसानी से चलाए गए हल्के तीर के समान है। उनके कदम इतने तेज हैं कि वे पूर्वी सागर से पश्चिमी सागर तक पहुँच सकते हैं। तब पूर्वी दिशा में खड़ा व्यक्ति इस प्रकार कहेगा: 'मैं यात्रा करके संसार के अंत तक पहुँचूँगा।' सौ वर्ष का जीवनकाल होने के कारण, वह सौ वर्ष तक बिना रुके यात्रा कर सकता है, सिवाय खाने, पीने, चबाने, स्वाद लेने, शौच और मूत्र त्यागने और नींद से थकान दूर करने के लिए; फिर भी वह संसार के अंत तक पहुँचे बिना रास्ते में ही मर जाएगा। [430] तब पश्चिमी दिशा में खड़ा व्यक्ति इस प्रकार कहेगा... उत्तरी दिशा में खड़ा व्यक्ति इस प्रकार कहेगा... दक्षिणी दिशा में खड़ा व्यक्ति इस प्रकार कहेगा... इस प्रकार: 'मैं यात्रा करके संसार के अंत तक पहुँचूँगा।' सौ वर्ष का जीवनकाल पाकर, यदि वह सौ वर्ष तक जीवित रहे, तो वह बिना रुके सौ वर्ष तक यात्रा कर सकता है, सिवाय खाने, पीने, चबाने, स्वाद लेने, शौच और मूत्र त्यागने तथा नींद से थकान दूर करने के लिए। फिर भी वह संसार के अंत तक पहुँचे बिना ही रास्ते में मर जाएगा। इसका क्या कारण है? मैं कहता हूँ, ब्राह्मणों, कि इस प्रकार की दौड़ से संसार के अंत को न तो जाना जा सकता है, न देखा जा सकता है और न ही पहुँचा जा सकता है। और फिर भी मैं कहता हूँ कि संसार के अंत तक पहुँचे बिना दुखों का अंत नहीं हो सकता।

"हे ब्राह्मणों, इंद्रिय सुख के इन पाँचों विषयों को भगवान बुद्ध की साधना में 'संसार' कहा जाता है। ये पाँच कौन से विषय हैं? वे रूप जो आँखों से दिखाई देते हैं, जिनकी कामना की जाती है, जो मनभावन होते हैं, जो सुखद होते हैं, जो इंद्रिय सुख से जुड़े होते हैं, जो उत्तेजक होते हैं; वे ध्वनियाँ जो कानों से सुनाई देती हैं... वे गंधें जो नाक से सुनाई देती हैं... वे स्वाद जो जीभ से महसूस किए जा सकते हैं... वे स्पर्शनीय वस्तुएँ जिनकी कामना की जाती है, जो मनभावन होती हैं, जो सुखद होती हैं, जो इंद्रिय सुख से जुड़ी होती हैं, जो उत्तेजक होती हैं। इंद्रिय सुख के इन पाँचों विषयों को भगवान बुद्ध की साधना में 'संसार' कहा जाता है।"

(1) "यहाँ, ब्राह्मणों, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... इसे वह भिक्षु कहा जाता है जो संसार के अंत तक पहुँचकर संसार के अंत में निवास करता है। अन्य लोग उसके बारे में इस प्रकार कहते हैं: 'वह भी संसार में समाहित है; वह भी अभी संसार से मुक्त नहीं हुआ है।' मैं भी यही कहता हूँ: 'वह भी संसार में समाहित है; वह भी अभी संसार से मुक्त नहीं हुआ है' [431]

(2) -(4) "फिर, विचार और चिंतन के शांत होने पर, एक भिक्षु द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में...। इसे वह भिक्षु कहा जाता है जो संसार के अंत तक पहुँचकर संसार के अंत में निवास करता है। अन्य लोग उसके बारे में इस प्रकार कहते हैं: 'वह भी संसार में समाहित है; वह भी अभी संसार से मुक्त नहीं हुआ है।' मैं भी यही कहता हूँ: 'वह भी संसार में समाहित है; वह भी अभी संसार से मुक्त नहीं हुआ है।'

(5) "फिर, रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर हो जाने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का अनुभव करते हुए, एक भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। इसे वह भिक्षु कहा जाता है जो संसार के अंत तक पहुँचकर संसार के अंत में निवास करता है। अन्य लोग उसके बारे में इस प्रकार कहते हैं: 'वह भी संसार में समाहित है; वह भी अभी संसार से मुक्त नहीं हुआ है।' मैं भी यही कहता हूँ: 'वह भी संसार में समाहित है; वह भी अभी संसार से मुक्त नहीं हुआ है।'"

(6)— (8) "फिर, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, चेतना को अनंत मानते हुए, एक भिक्षु अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, एक भिक्षु शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। ... शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, एक भिक्षु न तो-बोध (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। इसे वह भिक्षु कहा जाता है जो संसार के अंत तक पहुँचकर संसार के अंत में निवास करता है। अन्य लोग उसके बारे में इस प्रकार कहते हैं: 'वह भी संसार में समाहित है; वह भी अभी संसार से मुक्त नहीं हुआ है।'" मैं यह भी कहता हूँ: 'वह भी संसार में समाहित है; वह भी अभी संसार से मुक्त नहीं हुआ है।'

(9) "फिर, न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अनुभूति (वेदना) के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, भिक्षु अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और पन्न (दिव्य ज्ञान) से देखकर, उसके सभी दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। इसे वह भिक्षु कहा जाता है जो संसार के अंत तक पहुँचकर, संसार के अंत में निवास करता है, जिसने संसार से आसक्ति को पार कर लिया है।"

---

39 देव (देवदूत/भगवान) असुर युद्ध (देवअसुरसंगम सं. देव-असुर-संग्राम)

भिक्षुओं, अतीत में देवताओं और असुरों के बीच एक युद्ध हुआ था: उस युद्ध में असुर विजयी हुए और देवता पराजित हुए। पराजित होकर देवता उत्तर की ओर भाग गए, जिनका असुरों ने पीछा किया। तब देवताओं के मन में यह विचार आया: 'असुर अभी भी हमारा पीछा कर रहे हैं। चलो उनसे एक बार फिर युद्ध करें।' दूसरी बार देवताओं ने असुरों से युद्ध किया, और दूसरी बार भी असुर विजयी हुए और देवता पराजित हुए। पराजित होकर देवता उत्तर की ओर भागे, असुर उनका पीछा कर रहे थे। तब देवताओं को यह विचार आया: 'असुर अभी भी हमारा पीछा कर रहे हैं। चलो उनसे तीसरी बार युद्ध करते हैं।' तीसरी बार देवताओं ने असुरों से युद्ध किया, और तीसरी बार भी असुर विजयी हुए और देवता पराजित हुए। पराजित और भयभीत होकर देवता अपने नगर में प्रवेश कर गए।

"देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के अपने नगर में प्रवेश करने के बाद, उन्हें यह विचार आया: 'अब हम [433] खतरे से सुरक्षित हैं और असुर हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते।' असुरों को भी यही विचार आया: 'अब देवतांत्रिक (देवदूत/देवता) खतरे से सुरक्षित हैं और हम उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकते।'

भिक्षुओं, अतीत में, देवताओं और असुरों के बीच एक युद्ध हुआ था। उस युद्ध में, देवता विजयी हुए और असुर पराजित हुए। पराजित होकर, असुर दक्षिण की ओर भाग गए, जिनका पीछा देवताओं ने किया। तब असुरों के मन में विचार आया: 'देव अभी भी हमारा पीछा कर रहे हैं। चलो उनसे दोबारा युद्ध करें।' दूसरी बार असुरों ने देवताओं से युद्ध किया, और दूसरी बार भी देवता विजयी हुए और असुर पराजित हुए। पराजित होकर, असुर दक्षिण की ओर भाग गए, जिनका पीछा देवताओं ने किया। तब असुरों के मन में विचार आया: 'देव अभी भी हमारा पीछा कर रहे हैं। चलो उनसे तीसरी बार युद्ध करें।' तीसरी बार असुरों ने देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ युद्ध किया, और तीसरी बार भी देवता (देवदूत/देवता) विजयी हुए और असुर पराजित हुए: पराजित और भयभीत होकर असुर अपने नगर में प्रवेश कर गए।

"जब असुर उनके नगर में प्रवेश कर गए, तो उन्हें यह विचार आया: 'अब हम खतरे से सुरक्षित हैं और देव (देवदूत/भगवान) हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते।' देव (देवदूत/भगवान) को भी यही विचार आया: 'अब असुर खतरे से सुरक्षित हैं और हम उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकते।'"

(1) "इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, जब इंद्रिय सुखों से एकांत में रहकर कोई भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... उस समय भिक्षु के मन में यह विचार आता है: 'अब मैं खतरे से सुरक्षित हूँ और मारा मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।' और यही बात राक्षस मारा के मन में भी आती है: 'अब भिक्षु खतरे से सुरक्षित है और मैं उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।'"

(2) — (4) "जब विचार और चिंतन शांत हो जाते हैं और भिक्षु द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें लीन हो जाता है... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... उस समय भिक्षु को यह आभास होता है: 'अब मैं खतरे से सुरक्षित हूँ और मारा मेरा कुछ नहीं कर सकता।' और यही बात राक्षस मारा को भी आभास होती है: 'अब भिक्षु खतरे से सुरक्षित है और मैं उसका कुछ नहीं कर सकता।' 1

(5) "जब रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रिय-प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर हो जाने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' को समझते हुए, एक भिक्षु अंतरिक्ष की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है, उस अवसर पर उसे वह भिक्षु कहा जाता है जिसने मारा को अंधा कर दिया है, 1939 जिसने मारा की आँखों को बिना किसी निशान के निकाल दिया है, 1940 और जो दुष्ट की दृष्टि से परे चला गया है।"

(6) — (9) "हे भिक्षुओं, जब अनंत अंतरिक्ष के आधार को पूर्णतः पार करके, चेतना को अनंत मानते हुए, भिक्षु अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। ... जब अनंत चेतना के आधार को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। ... जब शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, भिक्षु न तो सबोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। ... जब न तो सबोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, भिक्षु प्रवेश करता है और जो व्यक्ति बोध (सन्ना/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के अंत में निवास करता है, और पन्ना (दिव्य ज्ञान) से देखा जाता है, उसके दोष पूरी तरह से नष्ट हो जाते हैं, उस अवसर पर उसे वह भिक्षु कहा जाता है जिसने मारा को अंधा कर दिया है, मारा की आँखें निकाल दी हैं, दुष्ट की दृष्टि से परे चला गया है, और संसार से आसक्ति को पार कर लिया है।" [435]

---

40 एक नर हाथी

भिक्षुओं, जब कोई वनवासी हाथी अपने चारागाह की ओर जा रहा होता है और अन्य हाथी—नर, मादा, बच्चे और शिशु—उससे आगे निकलकर घास की ऊपरी शाखाओं को तोड़ देते हैं, तो हाथी को इससे घृणा, अपमान और घृणा होती है। जब कोई वनवासी हाथी अपने चारागाह की ओर जा रहा होता है और अन्य हाथी—नर, मादा, बच्चे और शिशु—मुड़ी हुई और मुड़ी हुई शाखाओं के गट्ठे को खा जाते हैं, तो हाथी को इससे घृणा, अपमान और घृणा होती है। जब कोई वनवासी हाथी तालाब में प्रवेश कर चुका होता है और अन्य हाथी—नर, मादा, बच्चे और शिशु—उससे आगे निकलकर अपनी सूंड से पानी को हिला देते हैं, तो हाथी को इससे घृणा, अपमान और घृणा होती है। जब कोई वनवासी हाथी तालाब से बाहर निकल आता है और मादा हाथी उसके शरीर को छूते हुए निकल जाती हैं, तो हाथी को इससे घृणा, अपमान और घृणा होती है। यह।

उस समय वन में रहने वाले नर हाथी के मन में यह विचार आया: 'मैं इस समय अन्य हाथियों से घिरा हुआ हूँ: नर, मादा, बच्चे और शिशु। मैं टूटी हुई पत्तियों वाली घास खाता हूँ, और वे मेरी झुकी और मुड़ी हुई शाखाओं की गठरी खा जाते हैं। मैं गंदा पानी पीता हूँ, और जब मैं तालाब से बाहर आता हूँ, तो मादा हाथी मेरे शरीर को छूते हुए गुजरती हैं। मुझे झुंड से अलग, अकेले रहने दो।'

कुछ समय बाद वह झुंड से अलग होकर अकेला रहने लगता है। वह बिना ऊपरी भाग तोड़े घास खाता है; हाथी उसकी झुकी और मुड़ी हुई शाखाओं की गठरी नहीं खाते; वह साफ पानी पीता है; और जब वह तालाब से बाहर आता है, तो मादा हाथी उसके शरीर से रगड़ते हुए नहीं गुजरतीं। उस समय जंगल में रहने वाले नर हाथी के मन में यह विचार आता है: 'पहले मैं दूसरे हाथियों से घिरा रहता था... और जब मैं तालाब से बाहर आता था, तो मादा हाथी मेरे शरीर से रगड़ते हुए गुजरती थीं। लेकिन अब मैं झुंड से अलग होकर अकेला रहता हूँ। मैं बिना ऊपरी भाग तोड़े घास खाता हूँ; हाथी मेरी झुकी और मुड़ी हुई शाखाओं की गठरी नहीं खाते; मैं साफ पानी पीता हूँ; और जब मैं तालाब से बाहर आता हूँ, तो मादा हाथी मेरे शरीर से रगड़ते हुए नहीं गुजरतीं। अपनी सूंड से शाखाओं की एक गठरी तोड़कर, उसे अपने शरीर पर रगड़कर वह अपनी खुजली से राहत पाता है।'

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष और स्त्री गृहस्थ अनुयायियों, राजाओं और राजमंत्रियों, संप्रदायिक शिक्षकों और उनके शिष्यों से घिरा रहता है, तो उस समय उसके मन में यह विचार आता है: 'मैं इस समय भिक्षुओं, भिक्षुणियों, पुरुष और स्त्री गृहस्थ अनुयायियों, राजाओं और राजमंत्रियों, संप्रदायिक शिक्षकों और उनके शिष्यों से घिरा हुआ हूँ। मुझे अकेले रहना चाहिए, संगति से दूर।"

वह एकांत स्थान पर शरण लेता है: जंगल, [437] किसी वृक्ष की तलहटी, पर्वत, घाटी, पहाड़ी गुफा, श्मशान भूमि, घनी झाड़ियाँ, खुला स्थान, पुआल का ढेर। जंगल में, किसी वृक्ष की तलहटी में, या किसी खाली झोपड़ी में जाकर, वह बैठ जाता है, अपने पैरों को क्रॉस करके, शरीर को सीधा करके, और अपने सामने सती (ध्यान) स्थापित करता है। संसार के प्रति लालसा का त्याग करके, वह लालसा से मुक्त मन से रहता है; वह अपने मन को लालसा से शुद्ध करता है। द्वेष और घृणा का त्याग करके, वह द्वेष से मुक्त मन से, सभी जीवित प्राणियों के कल्याण के प्रति करुणा से भरा रहता है; वह अपने मन को द्वेष और घृणा से शुद्ध करता है। सुस्ती और आलस्य का त्याग करके, वह सुस्ती और आलस्य से मुक्त, प्रकाश के प्रति सजग, सचेत (ध्यान/सती) और पूर्णतः बोधगम्य रहता है; वह अपने मन को सुस्ती और आलस्य से शुद्ध करता है। बेचैनी और पश्चाताप का त्याग करके, वह बिना किसी हलचल के, एक मन को आंतरिक रूप से

शांत करते हुए, वह अपने मन को बेचैनी और पश्चाताप से मुक्त करता है। संदेह का त्याग करके, वह संदेह से परे जाकर, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के बारे में अविचलित होकर अपने मन को संदेह से मुक्त करता है।

(1) "इस प्रकार इन पाँच बाधाओं, मन के दोषों, पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करने वाली चीजों का त्याग करके, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, वह प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... प्रसन्न होकर, वह अपनी खुजली से राहत पाता है।"

(2) — (4) "विचार और परीक्षण के शांत होने के साथ, वह

वह दूसरी ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें लीन हो जाता है... तीसरी ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... चौथी ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में। प्रसन्न होकर वह अपनी खुजली मिटाता है।

(5) "रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। प्रसन्न होकर, वह अपनी खुजली से राहत पाता है।"

(6) — (9) "अंतरिक्ष की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'चेतना अनंत है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। ... चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। ... शून्यता के आधार को पूर्णतः पार करके, भिक्षु न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, [438] भिक्षु निश्चिंतता में प्रवेश करता है और निवास करता है।" ज्ञान और वेदना से प्राप्त ज्ञान से उसके सारे दोष मिट जाते हैं। प्रसन्न होकर वह अपनी खुजली मिटा लेता है।

---

41 तपस्सा

ऐसा मैंने सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) उरुवेलकप्पा नामक मल्ल नगर के पास मल्लों के बीच निवास कर रहे थे। 1942 में, सुबह भगवान (बुद्ध) ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किया और भिक्षा मांगने के लिए उरुवेलकप्पा में प्रवेश किया। उरुवेलकप्पा में भिक्षा मांगने के बाद, भोजन करने और भिक्षा मांगने के बाद लौटते समय उन्होंने पूज्य आनंद से कहा, "आनंद, आप यहीं ठहरिए, मैं दिन बिताने के लिए महान वन में जाता हूँ।"

"जी भंते," पूज्य आनंद ने उत्तर दिया। तब भगवान (बुद्ध) विशाल वन में प्रवेश कर एक वृक्ष की तलहटी में बैठ गए और दिन व्यतीत करने लगे।

तब गृहस्थ तपस्सा पूज्य आनंद के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

“भंते आनंद, हम गृहस्थ लोग इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हैं, उनमें मग्न रहते हैं, उनमें प्रसन्न होते हैं और उनमें आनंदित होते हैं। त्याग हमें एक खाई के समान लगता है। मैंने सुना है कि इस धर्म और अनुशासन में बहुत कम उम्र के भिक्षु हैं, जिनका मन त्याग की राह पर चल पड़ता है और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो जाता है, 1943 इसे शांतिपूर्ण मानते हुए 1944। हे भंते, त्याग इस धर्म और अनुशासन में भीड़ और भिक्षुओं के बीच विभाजक रेखा है।” 1945 [439]

“हे गृहस्थ, यह ऐसा विषय है जिसके बारे में हमें भगवान (बुद्ध) से परामर्श लेना चाहिए। आइए, हम भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उन्हें इस मामले की जानकारी दें। हमें भगवान (बुद्ध) की व्याख्या को याद रखना चाहिए।”

“जी हां, भंते,” गृहस्थ तपस्सा ने उत्तर दिया।

तब पूज्य आनंद, गृहस्थ तपस्सा के साथ भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "भंते, यह गृहस्थ तपस्सा कहता है: 'भंते आनंद, हम गृहस्थ इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हैं... और त्याग हमें खाई के समान लगता है... लेकिन ऐसे बहुत से युवा भिक्षु हैं जिनका मन... इसमें मुक्त हो जाता है, क्योंकि वे इसे शांतिपूर्ण मानते हैं। भंते, इस धर्म और अनुशासन में त्याग ही आम लोगों और भिक्षुओं के बीच विभाजक रेखा है।"

“तो ऐसा ही है, आनंदा! तो ऐसा ही है, आनंदा!” 1946

(1) “मेरे ज्ञानोदय से पहले, जब मैं मात्र एक बोधिसत्व था, पूर्णतः प्रबुद्ध नहीं हुआ था, तब मेरे मन में भी यह विचार आया: 'त्याग अच्छा है, एकांत अच्छा है।' फिर भी मेरा मन त्याग की राह पर नहीं चला और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मुझे वह शांतिपूर्ण प्रतीत होता था। मेरे मन में यह विचार आया: 'ऐसा क्यों है कि मेरा मन त्याग की राह पर नहीं चला और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मुझे वह शांतिपूर्ण प्रतीत होता था?' तब मेरे मन में यह विचार आया: 'मैंने इंद्रिय सुखों में छिपे खतरे को नहीं देखा है और उस (विपश्यना) का अभ्यास नहीं किया है; मैंने त्याग का लाभ प्राप्त नहीं किया है और उसका अनुसरण नहीं किया है। इसलिए मेरा मन त्याग की राह पर नहीं चला और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मुझे वह शांतिपूर्ण प्रतीत होता था।'

"तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं इंद्रिय सुखों के खतरे को देखकर उस [विपश्यना] का अभ्यास करूँ, और त्याग का लाभ प्राप्त करके उसका अनुसरण करूँ, तो संभव है कि मेरा मन त्याग की ओर अग्रसर हो और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो जाए, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।' कुछ समय बाद, इंद्रिय सुखों के खतरे को देखकर, मैंने उस [विपश्यना] का अभ्यास किया, और त्याग का लाभ प्राप्त करके उसका अनुसरण किया। तब मेरा मन त्याग की ओर अग्रसर हुआ और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो गया, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।"

कुछ समय बाद, आनंद, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... मैंने प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश किया और उसमें लीन हो गया। जब मैं इस अवस्था में था, तब मुझमें इंद्रिय-बोध और ध्यान के साथ-साथ कामुकता भी उत्पन्न हुई और मैंने इसे कष्ट के रूप में अनुभव किया। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, ठीक वैसे ही, जब मुझमें इंद्रिय-बोध और ध्यान के साथ-साथ कामुकता उत्पन्न हुई, तो मैंने इसे कष्ट के रूप में अनुभव किया।

(2) "तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'विचार और परीक्षा के शांत होने पर, मुझे दूसरे ध्यान में प्रवेश करना चाहिए और उसमें रहना चाहिए।' ... फिर भी मेरा मन विचारहीनता की ओर अग्रसर नहीं हुआ और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा। मेरे मन में यह विचार आया: 'ऐसा क्यों है कि मेरा मन विचारहीनता की ओर अग्रसर नहीं हुआ और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा?' तब मेरे मन में यह विचार आया: 'मैंने विचारों में खतरे को नहीं देखा है और उस (विपश्यना) का अभ्यास नहीं किया है; मैंने विचारहीनता का लाभ प्राप्त नहीं किया है और न ही उसका अनुसरण किया है। इसलिए मेरा मन विचारहीनता की ओर अग्रसर नहीं हुआ और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा।"

"तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं विचारों में निहित खतरे को देखकर उस [विपश्यना] का अभ्यास करूँ, और यदि विचारहीनता में उसका लाभ प्राप्त कर लूँ, तो संभव है कि मेरा मन विचारहीनता की ओर अग्रसर हो और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो जाए, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।' फिर, कुछ समय बाद, विचारों में निहित खतरे को देखकर, मैंने उस [विपश्यना] का अभ्यास किया, और विचारहीनता में उसका लाभ प्राप्त करके, मैंने उसका अभ्यास किया। तब मेरा मन विचारहीनता की ओर अग्रसर हो गया और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो गया, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।"

कुछ समय बाद, 1947 में, आनंद, जब विचार और परीक्षा शांत हो गई... मैं दूसरी ध्यान अवस्था में प्रवेश कर गया और उसमें लीन हो गया। ... जब मैं इस अवस्था में था, तो मुझे विचार के साथ अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान उत्पन्न हुआ और मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव किया। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, वैसे ही जब मुझे विचार के साथ अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान उत्पन्न हुआ, तो मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव किया। (3) "तब, आनंद, मुझे यह विचार आया: 'पीति के लुप्त होने के साथ... मुझे तीसरी ध्यान अवस्था में प्रवेश कर उसमें लीन हो जाना चाहिए। ... फिर भी मेरा मन पीति की अनुपस्थिति पर ध्यान केंद्रित नहीं कर सका और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो सका, हालांकि मैंने उसे शांत देखा।" मुझे यह विचार आया: 'ऐसा क्यों है कि मेरा मन आनंद (पीति) के अभाव में प्रवृत्त होकर उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो जाता, यद्यपि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ?' फिर मुझे यह विचार आया: 'मैंने

आनंद (पीति) में निहित खतरे को नहीं देखा है और न ही उस (विपश्यना) का अभ्यास किया है; मैंने आनंद (पीति) के अभाव में मिलने वाले लाभ को प्राप्त नहीं किया है और न ही उसका अनुसरण किया है। इसलिए मेरा मन आनंद (पीति) के अभाव में प्रवृत्त होकर उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो जाता, यद्यपि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।'

"तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं परमानंद (पीति) में निहित खतरे को देखकर उस (विपश्यना) का अभ्यास करूँ, और परमानंद (पीति) के अभाव में प्राप्त लाभ को प्राप्त करके उसका अनुसरण करूँ, तो संभव है कि मेरा मन परमानंद (पीति) के अभाव की ओर अग्रसर हो और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो जाए, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।' फिर, कुछ समय बाद, परमानंद (पीति) में निहित खतरे को देखकर, मैंने उस (विपश्यना) का अभ्यास किया, और परमानंद (पीति) के अभाव में प्राप्त लाभ को प्राप्त करके उसका अनुसरण किया। तब मेरा मन परमानंद (पीति) के अभाव की ओर अग्रसर हो गया और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो गया, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।"

कुछ समय बाद, आनंद, जब परमानंद (पीति) भी लुप्त हो गया... मैं तीसरी ध्यान अवस्था में प्रवेश कर गया और उसमें लीन हो गया। ...जब मैं इस अवस्था में था, तब मुझे परमानंद (पीति) के साथ अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान का अनुभव हुआ और मैंने इसे कष्ट के रूप में महसूस किया। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, वैसे ही जब मुझे परमानंद (पीति) के साथ अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान का अनुभव हुआ, तो मैंने इसे कष्ट के रूप में महसूस किया।

(4) "तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'सुख और दुख का त्याग करके... मैं चौथे ध्यान में प्रवेश करूँ और उसमें निवास करूँ...' फिर भी मेरा मन सुख और दुख के अभाव की ओर अग्रसर नहीं हुआ और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा। मेरे मन में यह विचार आया: 'ऐसा क्यों है कि मेरा मन सुख और दुख के अभाव की ओर अग्रसर नहीं हुआ और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा?' तब मेरे मन में यह विचार आया: 'मैंने उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्खा) से जुड़े सुख में निहित खतरे को नहीं देखा है और उस (विपश्यना) का अभ्यास नहीं किया है; मैंने सुख और दुख के अभाव का लाभ प्राप्त नहीं किया है और न ही उसका अनुसरण किया है। इसलिए मेरा मन सुख और दुख के अभाव की ओर अग्रसर नहीं हुआ और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा।'

"तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं उदासीनता (भीतर में समाहित होना/उपेक्खा) से जुड़े आनंद में निहित खतरे को देखकर, उस (विपश्यना) का अभ्यास करूँ, और यदि सुख-दुख के अभाव में उसका लाभ प्राप्त कर लूँ, तो संभव है कि मेरा मन सुख-दुख के अभाव की ओर अग्रसर हो और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो जाए, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ। फिर, कुछ समय बाद, उदासीनता (भीतर में समाहित होना/उपेक्खा) से जुड़े आनंद में निहित खतरे को देखकर, मैंने उस (विपश्यना) का अभ्यास किया, और सुख-दुख के अभाव में उसका लाभ प्राप्त कर लिया, और उसका अभ्यास किया। तब मेरा मन सुख-दुख के अभाव की ओर अग्रसर हो गया और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो गया, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।

कुछ समय बाद, आनंद, सुख और दुख का त्याग करके... मैंने चौथी ध्यान अवस्था में प्रवेश किया और उसमें निवास किया। ...जब मैं इस अवस्था में था, तब मुझे अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान के साथ-साथ उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) का अनुभव हुआ और मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में महसूस किया। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, ठीक वैसे ही, जब मुझे अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान के साथ-साथ उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) का अनुभव हुआ, तो मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में महसूस किया।

(5) "तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, [यह जानते हुए कि] "अंतरिक्ष अनंत है," मैं अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करूँ और उसमें निवास करूँ।' फिर भी मेरा मन अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश नहीं कर सका और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो सका, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा। मेरे मन में यह विचार आया: 'ऐसा क्यों है कि मेरा मन अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश नहीं कर सका और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो सका, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा?' तब मुझे यह बात सूझी: 'मैंने रूपों में छिपे खतरे को नहीं देखा है और न ही उस [अंतर्दृष्टि (विपश्यना)] का विकास किया है; मैंने अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में लाभ प्राप्त नहीं किया है और न ही उसका अनुसरण किया है। इसलिए मेरा मन अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में विलीन नहीं होता और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो पाता, [444] यद्यपि मैं उसे शांत देखता हूँ।'

"तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं रूपों में निहित खतरे को देखकर उस [विपश्यना] का अभ्यास करूँ, और अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में लाभ प्राप्त करके उसका अनुसरण करूँ, तो संभव है कि मेरा मन अनंत अंतरिक्ष के आधार पर विलीन हो जाए और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो जाए, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।' फिर, कुछ समय बाद, रूपों में निहित खतरे को देखकर, मैंने उस [विपश्यना] का अभ्यास किया, और अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में लाभ प्राप्त करके उसका अनुसरण किया। तब मेरा मन अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) पर विलीन हो गया और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो गया, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।"

कुछ समय बाद, आनंद ने रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के लुप्त होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का अनुभव करते हुए, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश किया और उसमें निवास किया। जब मैं इस अवस्था में निवास कर रहा था, तब मुझमें रूपों से संबंधित धारणा (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान उत्पन्न हुआ और मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव किया। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, ठीक वैसे ही, जब मुझमें रूपों से संबंधित वह धारणा (सन्ना/संज्ञा) उत्पन्न हुई, तो मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव किया।

(6) "तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'अंतरिक्ष की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, [यह जानते हुए कि] 'चेतना अनंत है,' मैं चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश कर उसमें निवास करूं।' फिर भी मेरा मन चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करके उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा। मेरे मन में यह विचार आया: 'ऐसा क्यों है कि मेरा मन चेतना की अनंतता के आधार पर प्रवेश करके उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो जाता, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा?'" तब मुझे यह बात समझ में आई: 'मैंने अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में निहित खतरे को नहीं देखा है और न ही उस अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का विकास किया है; मैंने अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्राप्त लाभ को हासिल नहीं किया है और न ही उसका अनुसरण किया है। इसलिए मेरा मन अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में विचरण नहीं करता और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो पाता, यद्यपि मैं उसे शांत देखता हूँ।'

"तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में खतरे को देखकर, उस [विपश्यना] का अभ्यास करूँ, और यदि मैं अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में लाभ प्राप्त करके उसका अनुसरण करूँ, तो संभव है कि मेरा मन अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रक्षेपित हो जाए और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो जाए, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।' फिर, कुछ समय बाद, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में खतरे को देखकर, मैंने उस [विपश्यना] का अभ्यास किया, और अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में लाभ प्राप्त करके उसका अनुसरण किया। तब मेरा मन अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रक्षेपित हो गया और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो गया, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।"

कुछ समय बाद, आनंद, अनंत अंतरिक्ष के आधार को पूर्णतः पार करते हुए, चेतना को अनंत मानते हुए, मैंने अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश किया और उसमें निवास किया। जब मैं इस अवस्था में था, तब अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के साथ-साथ मेरी अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान उत्पन्न हुआ और मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव किया। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, ठीक उसी प्रकार, जब अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के साथ-साथ मेरी अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान उत्पन्न हुआ, तो मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव किया।

(7) "तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, मैं शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करूँ और उसमें निवास करूँ।' फिर भी मेरा मन शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश नहीं कर पाता और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो पाता, यद्यपि मैं उसे शांत देखता हूँ। मेरे मन में यह विचार आया: 'ऐसा क्यों है कि मेरा मन शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश नहीं कर पाता और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो पाता, यद्यपि मैं उसे शांत देखता हूँ?'" तब मुझे यह बात समझ में आई: 'मैंने चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) में निहित खतरे को नहीं देखा है और न ही उस अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का विकास किया है; मैंने शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में लाभ प्राप्त नहीं किया है और न ही उसका अनुसरण किया है। इसलिए मेरा मन शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश नहीं करता और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो पाता, यद्यपि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।'

"तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) में खतरे को देखकर उस [विपश्यना] का अभ्यास करूँ, और यदि शून्यता के आधार में लाभ प्राप्त करके उसका अनुसरण करूँ, तो संभव है कि मेरा [446] मन शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रक्षेपित हो जाए और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो जाए, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।' फिर, कुछ समय बाद, चेतना की अनंतता के आधार में खतरे को देखकर, मैंने उस [विपश्यना] का अभ्यास किया, और शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में लाभ प्राप्त करके उसका अनुसरण किया। तब मेरा मन शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रक्षेपित हो गया और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो गया, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।"

कुछ समय बाद, आनंद, चेतना की अनंतता के आधार को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, मैंने शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश किया और उसमें निवास किया। जब मैं इस अवस्था में निवास कर रहा था, तब चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) के साथ-साथ मेरी अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान उत्पन्न हुआ और मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव किया। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, ठीक वैसे ही, जब चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) के साथ-साथ मेरी अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और ध्यान उत्पन्न हुआ, तो मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव किया।

(8) "तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, मैं न तो सन्न/संज्ञा और न ही अज्ञान के आधार में प्रवेश करूँ और उसमें निवास करूँ।' फिर भी मेरा मन न तो सन्न/संज्ञा और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) में प्रवृत्त होकर उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो सका, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा। मेरे मन में यह विचार आया: 'ऐसा क्यों है कि मेरा मन न तो सन्न/संज्ञा और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) में प्रवृत्त होकर उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हो सका, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा?' तब मुझे यह बात समझ में आई: 'मैंने शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में निहित खतरे को नहीं देखा है और न ही उस अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का विकास किया है; मैंने न तो सन्न-संज्ञा-अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) में लाभ प्राप्त किया है और न ही उसका अनुसरण किया है। इसलिए मेरा मन न तो सन्न-संज्ञा-अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) में विचरण नहीं करता और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं होता, यद्यपि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।'

"तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में खतरे को देखकर उस [अंतर्दृष्टि (विपस्सना)] का अभ्यास करूँ, और यदि मैं न तो सबोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में लाभ प्राप्त करके उसका अनुसरण करूँ, तो संभव है कि मेरा मन न तो सबोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में प्रक्षेपित हो जाए और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो जाए, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।' [447] फिर, कुछ समय बाद, शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में खतरे को देखकर, मैंने उस [विपश्यना] का अभ्यास किया, और न तो सबोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में लाभ प्राप्त करके, मैंने उसका अनुसरण किया। तब मेरा मन न तो सबोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में विलीन हो गया और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो गया, क्योंकि मैंने उसे शांतिपूर्ण पाया।

कुछ समय बाद, आनंद, शून्यता के आधार को पूर्णतः पार करके, मैं न तो चेतना (सन्न/संज्ञा) और न ही अचेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश कर गया और उसमें निवास करने लगा। जब मैं इस अवस्था में था, तब मेरे भीतर चेतना (सन्न/संज्ञा) और ध्यान के साथ-साथ शून्यता का आधार भी उत्पन्न हुआ और मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव किया। जैसे सुख में भी पीड़ा उत्पन्न हो सकती है, ठीक उसी प्रकार, जब मेरे भीतर चेतना (सन्न/संज्ञा) और ध्यान के साथ-साथ शून्यता का आधार उत्पन्न हुआ, तो मैंने इसे एक पीड़ा के रूप में अनुभव किया।

(9) "तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अनुभूति (अदृश्यता) के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, मैं अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (भावना) की समाप्ति में प्रवेश करूँ और उसमें निवास करूँ।' फिर भी मेरा मन अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति की ओर अग्रसर नहीं हुआ और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा। मेरे मन में यह विचार आया: 'ऐसा क्यों है कि मेरा मन अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति की ओर अग्रसर नहीं हुआ और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं हुआ, यद्यपि मैंने उसे शांत देखा?'" तब मुझे यह बात समझ में आई: 'मैंने न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) में खतरे को नहीं देखा है और न ही उस (विपश्यना) का अभ्यास किया है; मैंने अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के निवारण का लाभ प्राप्त नहीं किया है और न ही उसका अनुसरण

किया है। इसलिए मेरा मन अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के निवारण की ओर अग्रसर नहीं होता और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त नहीं होता, यद्यपि मैं उसे शांत देखता हूँ।'

"तब, आनंद, मेरे मन में यह विचार आया: 'यदि मैं न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अनुभूति (अदृश्यता) के क्षेत्र (आयतन) में खतरे को देखकर उस (विपश्यना) का अभ्यास करूँ, और यदि अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के निवारण में लाभ प्राप्त करके उसका अनुसरण करूँ, तो संभव है कि मेरा मन अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के निवारण की ओर अग्रसर हो और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो जाए, क्योंकि मैं उसे शांतिपूर्ण देखता हूँ।' फिर, कुछ समय बाद, न तो अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और न ही अनुभूति (अज्ञान) के क्षेत्र (आयतन) में खतरे को देखकर, मैंने उस [विपश्यना] का अभ्यास किया; [448] और अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के निवारण में लाभ प्राप्त करके, मैंने उसका अनुसरण किया। तब मेरा मन अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) के निवारण की ओर अग्रसर हुआ और उसमें शांत, स्थिर और मुक्त हो गया, क्योंकि मैंने उसे शांतिपूर्ण पाया।

कुछ समय बाद, आनंद ने न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति के आधार को पूर्णतः पार करके, अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति में प्रवेश किया और निवास किया, और पन्ना (दिव्य ज्ञान) से देखकर, मेरे सारे दोष पूर्णतः नष्ट हो गए।

"हे आनंद, जब तक मैंने प्रत्यक्ष और विपरीत क्रम में इन नौ क्रमिक निवासों की उपलब्धियों को प्राप्त नहीं किया और उनसे मुक्त नहीं हुआ, तब तक मैंने इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/देवता), मार और ब्रह्मा विराजमान हैं, इस संसार में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण, देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य हैं, अतुलनीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दावा नहीं किया। परन्तु जब मैंने प्रत्यक्ष और विपरीत क्रम में इन नौ क्रमिक निवासों की उपलब्धियों को प्राप्त किया और उनसे मुक्त हुआ, तब मैंने इस संसार में, जिसमें देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य हैं, अतुलनीय पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दावा किया। मुझमें यह ज्ञान और दृष्टि उत्पन्न हुई: "मेरी मन की मुक्ति अविचल है; यह मेरा अंतिम पुनर्जन्म है; अब कोई नया अस्तित्व (पुनर्जन्म का कारण) नहीं है।" [449]

वी. समानता 1949 (समाननवग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

42 कारावास (संबधा)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार पूज्य आनंद कोसंबी में घोषिता उद्यान में रह रहे थे। तब पूज्य उदय ने पूज्य आनंद के पास जाकर उनका अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर उदय एक तरफ बैठ गए और पूज्य आनंद से कहा:

"यह बात युवा देव (देवदूत/भगवान) पंचलाचंदा ने कही थी, हे मित्र:

"ऋषि, एकांतप्रिय प्रधान बैल, ध्यान (सम्मोहन अवस्था) को प्राप्त बुद्ध, व्यापक पन्ना (दिव्य ज्ञान) के स्वामी ने कारावास के बीच मार्ग खोज लिया है।" (1950)

"हे मित्र, भगवान (बुद्ध) ने कारावास किसे कहा है और कारावास के बीच में मुक्ति की प्राप्ति किसे कहा है?" 1951

हे मित्र, भगवान (बुद्ध) ने इन पाँच इंद्रिय सुखों को बंधन बताया है। वे पाँच कौन सी हैं? आँखों से दिखाई देने वाले वे रूप जो वांछित, मनभावन, सुखद, कामुक सुख से जुड़े और उत्तेजक होते हैं; कानों से सुनाई देने वाली ध्वनियाँ... नाक से सुनाई देने वाली गंध... जीभ से

महसूस होने वाले स्वाद... शरीर द्वारा स्पर्शित वे वस्तुएँ जो वांछित, मनभावन, सुखद, कामुक सुख से जुड़ी और उत्तेजक होती हैं। भगवान (बुद्ध) ने इन पाँच इंद्रिय सुखों को बंधन बताया है।

(1) "यहाँ, मित्र, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... इस हद तक भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में कारावास के बीच एक द्वार खुलने की उपलब्धि का उल्लेख किया है। 1952 वहाँ भी कारावास है। और वहाँ कारावास क्या है? [450] जो भी विचार और परीक्षा वहाँ नहीं रुके हैं, वही इस मामले में कारावास है।

(2) "हे मित्र, विचार और चिंतन के शांत होने पर भिक्षु द्वितीय ध्यान (सम्मोहन) अवस्था में प्रवेश करता है और उसमें लीन हो जाता है। इस संदर्भ में भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में बंधन के बीच एक द्वार खुलने की प्राप्ति का उल्लेख किया है। वहाँ भी बंधन है। और वहाँ बंधन क्या है? जो भी आनंद (पीति) वहाँ समाप्त नहीं हुआ है, वही इस स्थिति में बंधन है।"

(3) "हे मित्र, जब पीति (आनंद) लुप्त हो जाती है, तो भिक्षु तीसरे ध्यान (सम्मोहन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में बंधन के बीच एक द्वार खुलने की उपलब्धि का उल्लेख किया है। वहाँ भी बंधन है। और वहाँ बंधन क्या है? जो भी आनंद (अंदर की ओर लौटना/उपेक्खा) वहाँ नहीं रुका है, वही इस स्थिति में बंधन है।"

(4) "हे मित्र, सुख और दुख के त्याग से ही भिक्षु चौथे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में बंधन के बीच एक द्वार खुलने की प्राप्ति की बात कही है। वहाँ भी बंधन है। और वहाँ बंधन क्या है? रूप 1953 की जो भी अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) वहाँ समाप्त नहीं हुई है, वही इस स्थिति में बंधन है।"

(5) "हे मित्र, रूपों की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करने से, इंद्रियों के प्रभाव की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) के समाप्त होने से, विविधता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देने से, 'अंतरिक्ष अनंत है' का बोध करते हुए, भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में बंधन के बीच एक द्वार खुलने की उपलब्धि का उल्लेख किया है। वहाँ भी बंधन है। और वहाँ बंधन क्या है? अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) की जो भी अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) वहाँ समाप्त नहीं हुई है, वही इस स्थिति में बंधन है।"

(6) "हे मित्र, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'चेतना अनंत है' का अनुभव करते हुए, एक भिक्षु [451] अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने परिवीक्षात्मक अर्थ में बंधन के बीच एक द्वार खुलने की उपलब्धि की बात कही है। वहाँ भी बंधन है। और वहाँ बंधन क्या है? अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) की जो भी अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) वहाँ समाप्त नहीं हुई है, वही इस स्थिति में बंधन है। . ."

(7) "हे मित्र, चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में बंधन के बीच एक द्वार खुलने की उपलब्धि का उल्लेख किया है। वहाँ भी बंधन है। और वहाँ बंधन क्या है? शून्यता के क्षेत्र (आयतन) की जो भी अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) वहाँ समाप्त नहीं हुई है, वही इस स्थिति में बंधन है।"

(8) "हे मित्र, शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके भिक्षु न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में बंधन के बीच एक द्वार खुलने की उपलब्धि का उल्लेख किया है। वहाँ भी बंधन है। और वहाँ बंधन क्या है? न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति के आधार की जो भी अनुभूति (सन्न/संज्ञा) वहाँ समाप्त नहीं हुई है, वही इस स्थिति में बंधन है।"

(9) "फिर, न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अनुभूति (वेदना) के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, भिक्षु अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और पन्ना (दिव्य ज्ञान) से देखकर उसके सभी दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार, मित्र, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में बंधन के बीच एक द्वार खुलने की प्राप्ति का वर्णन किया है।" 1954

---

43 शारीरिक साक्षी (काया-साक्षी सं. काया-साक्षी)

"कहा जाता है, मित्र, 'एक देह साक्षी, एक देह साक्षी।' 3955 भगवान (बुद्ध) ने देह साक्षी के बारे में किस प्रकार कहा है?"

(1) "यहाँ, मित्र, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... वह शरीर के साथ उस आधार से संपर्क स्थापित करके निवास करता है, चाहे वह किसी भी रूप में प्राप्त हो। 1956 इस हद तक भगवान (बुद्ध) ने शरीर साक्षी की बात अस्थायी अर्थ में की है। [452]

(2)— (4) "फिर, मित्र, विचार और परीक्षा के शांत होने पर, भिक्षु द्वितीय ध्यान में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... वह शरीर के साथ उस आधार से संपर्क स्थापित करके निवास करता है, चाहे वह किसी भी रूप में प्राप्त हो। इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में शरीर साक्षी की बात की है।"

(5)"(8) "हे मित्र, रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर हो जाने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, यह जानते हुए कि 'अंतरिक्ष अनंत है,' भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है... चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) में... शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में... न तो बोध (सन्ना/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में। वह शरीर के साथ उस आधार से किसी भी रूप में संपर्क स्थापित करके निवास करता है [चाहे वह किसी भी रूप में प्राप्त हो]। इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में शरीर साक्षी की बात की है।

(9) "हे मित्र, फिर से, न तो संज्ञान (सन्न/संज्ञा) और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, वह संज्ञान (सन्न/संज्ञा) और वेदना (संवेदना) की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और पन्ना (दिव्य ज्ञान) से देखकर, उसके सारे दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। वह शरीर के साथ उस आधार से किसी भी रूप में संपर्क स्थापित करके निवास करता है। इस हद तक, मित्र, भगवान (बुद्ध) ने शरीर साक्षी के बारे में अस्थायी अर्थ में नहीं कहा है।" 1957

---

44 दिव्य ज्ञान द्वारा मुक्ति (पन्नविमुत्त सं. प्रज्ञा-विमुक्त)

"कहा जाता है, मित्र, 'पन्न (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्त, पन्न (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्त।' भगवान (बुद्ध) ने पन्न (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्त व्यक्ति के बारे में किस प्रकार कहा है?" 1958

(1) "यहाँ, मित्र, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... और वह इसे पन्ना (दिव्य ज्ञान) से समझता है। इस हद तक भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्त व्यक्ति की बात की है।"

(2) — (4) "हे मित्र, विचार और परीक्षा के शांत होने पर, भिक्षु द्वितीय ध्यान में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... और वह इसे पन्न (दिव्य ज्ञान) से समझता है। इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने पन्न (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्त व्यक्ति के बारे में अस्थायी अर्थ में बात की है।"

(5)— (8) "हे मित्र, रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करने पर, इंद्रिय-प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के लुप्त होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देने पर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है... अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में... शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में... न-धारणा (सन्ना/संज्ञा) और न-अवधारणा के आधार में; और वह इसे पन्न (दिव्य ज्ञान) से समझता है। इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में पन्न (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्त व्यक्ति की बात की है। [453]

(9) "हे मित्र, न तो संज्ञान और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके भिक्षु संज्ञान और वेदना की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और दिव्य ज्ञान से देखकर उसके सारे दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं; और वह इसे दिव्य ज्ञान से समझता है। इस प्रकार, हे मित्र, भगवान (बुद्ध) ने दिव्य ज्ञान से मुक्त व्यक्ति के बारे में अस्थायी अर्थ में नहीं कहा है।"

---

45 दोनों दृष्टियों से मुक्त (उभतोभागविमुत्त)

"कहा जाता है, मित्र, 'दोनों प्रकार से मुक्त, दोनों प्रकार से मुक्त।' भगवान (बुद्ध) ने दोनों प्रकार से मुक्त व्यक्ति के बारे में किस प्रकार कहा है?"

(1) "यहाँ, हे मित्र, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... वह शरीर के साथ उस आधार से किसी भी रूप में संपर्क स्थापित करके निवास करता है, और वह उसे प्रभात (दिव्य ज्ञान) से समझता है। इस हद तक भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में दोनों दृष्टियों से मुक्त व्यक्ति की बात की है।"

(2) — (4) "हे मित्र, विचार और परीक्षा के शांत होने पर भिक्षु द्वितीय ध्यान में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... वह शरीर के साथ उस आधार से किसी भी रूप में संपर्क स्थापित करके निवास करता है, और वह उसे पन्ना (दिव्य ज्ञान) से समझता है। इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने दोनों दृष्टियों से मुक्त व्यक्ति के बारे में अस्थायी अर्थ में बात की है।"

(5)— (8) "हे मित्र, रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर हो जाने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का अनुभव करते हुए, भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है... अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में... शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में... न तो धारणा (सन्ना/संज्ञा) और न ही अ-धारणा के क्षेत्र (आयतन) में। वह शरीर के साथ उस आधार से किसी भी रूप में संपर्क स्थापित करके निवास करता है, और वह इसे पन्न (दिव्य ज्ञान) से समझता है। इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने दोनों दृष्टियों से मुक्त व्यक्ति से अस्थायी रूप से बात की है। समझ।

(9) "हे मित्र, न तो संज्ञान और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके भिक्षु संज्ञान और वेदना की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और दिव्य ज्ञान से देखकर उसके सारे दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। वह शरीर के साथ उस आधार से किसी भी रूप में संपर्क स्थापित करके निवास करता है, और उसे दिव्य ज्ञान से समझता है। हे मित्र, इस हद तक भगवान (बुद्ध) ने दोनों दृष्टियों से मुक्त व्यक्ति के बारे में अस्थायी अर्थ में नहीं कहा है।"

---

46 प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाला धम्म(1) (संदित्तिकधम्म)

"कहा जाता है, मित्र, प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाला धम्म, प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाला धम्म।" भगवान (बुद्ध) ने प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाले धम्म के बारे में किस प्रकार कहा है?

(1)— (8) 7 हे मित्र, यहाँ इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाले धम्म के बारे में अस्थायी अर्थ में बात की है। ...

(9) "हे मित्र, न तो संज्ञान और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके भिक्षु संज्ञान और वेदना की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और दिव्य ज्ञान से देखकर उसके सभी दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। हे मित्र, इस प्रकार भगवान (बुद्ध) ने प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाले धम्म के बारे में अस्थायी अर्थ में नहीं कहा है।"

---

47 प्रत्यक्ष रूप से दृश्यमान मुक्ति (2) (संदित्थिकनिब्बाना)

"हे मित्र, कहा जाता है, 'प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होने वाला निर्वाण, प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होने वाला निर्वाण।' भगवान (बुद्ध) ने प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होने वाले निर्वाण के बारे में किस प्रकार कहा है?"

(1)— (8) "यहाँ, मित्र, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है, इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाले निर्वाण (निब्बान) का अस्थायी अर्थ में उल्लेख किया है। . . ."

(9) "हे मित्र, न तो संज्ञान और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके भिक्षु संज्ञान और वेदना की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और दिव्य ज्ञान से देखकर उसके सभी दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार, हे मित्र, भगवान (बुद्ध) ने प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाले निर्वाण का उल्लेख अस्थायी अर्थ में नहीं किया है।" [454]

---

48 निब्बाना (निर्वाण के बिना)

"कहा जाता है, मित्र, 'निर्वाण, निर्वाण'..."

[विस्तार से बताया गया है जैसा कि 9:47 में है]

---

49 अंतिम निर्वाण

"कहा जाता है, मित्र, 'अंतिम निर्वाण, अंतिम निर्वाण...'"

[विस्तार से बताया गया है जैसा कि 9:47 में है]

---

50 उस विशेष संदर्भ में निर्वाण (तदंगनिब्बान)

"कहा जाता है, मित्र, 'निर्वाण एक विशेष अर्थ में, निर्वाण एक विशेष अर्थ में'।"

[विस्तार से बताया गया है जैसा कि 9:47 में है]

---

51 इसी जीवन में

"कहा जाता है, मित्र, 'इसी जीवन में निर्वाण, इसी जीवन में निर्वाण'। मित्र, भगवान (बुद्ध) ने इसी जीवन में निर्वाण की बात किस प्रकार कही है?"

(1)— (8) "यहाँ, मित्र, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और निवास करता है... 'इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में इसी जीवन में निर्वाण (निर्वाण) की बात कही है...'

(9) "हे मित्र, न तो संज्ञान और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके भिक्षु संज्ञान और वेदना की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और दिव्य ज्ञान से देखकर उसके सारे दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। हे मित्र, इस हद तक भगवान (बुद्ध) ने इसी जीवन में निर्वाण की बात अस्थायी अर्थ में नहीं कही है।" [455]

दूसरा पचास

I. सुरक्षा अनुभाग (खेमावग्गो सं. क्षेमा-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

52 सुरक्षा (1) (खेमा सं. क्षेमा)

"कहा जाता है, मित्र, 'सुरक्षा, सुरक्षा'। मित्र, भगवान (बुद्ध) ने किस प्रकार सुरक्षा की बात की है?"

(1)— (8) "यहाँ, मित्र, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में सुरक्षा की बात कही है

(9) "हे मित्र, न तो संज्ञान और न ही अज्ञान के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके भिक्षु संज्ञान और वेदना की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और दिव्य ज्ञान से देखकर उसके सारे दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार, हे मित्र, भगवान (बुद्ध) ने सुरक्षा की बात अस्थायी अर्थ में नहीं कही है।"

---

53 सुरक्षा प्राप्तकर्ता (2) (खेमापट्ट सं. क्षेमा..)

"कहा जाता है, मित्र, 'जिसने सुरक्षा प्राप्त कर ली है, जिसने सुरक्षा प्राप्त कर ली है...'..."

[इसका विस्तृत विवरण 9:52 में दिया गया है]

---

54 अमर (1) (अमता सान. अमृता)

"कहा जाता है, मित्र, 'अमरता, अमरता...'।"

[इसका विस्तृत विवरण 9:52 में दिया गया है]

---

55 अमर अवस्था प्राप्तकर्ता (2) (अमतप्पत्ता सान. अमृत..)

"कहा जाता है, मित्र, जिसने अमरता (अमता/अमृत) प्राप्त कर ली है, जिसने अमरता (अमता/अमृत) प्राप्त कर ली है..."

[इसका विस्तृत विवरण 9:52 में दिया गया है।]

---

56 निडर (1) (अभय)

"कहा जाता है, मित्र, 'निडर, निडर...'"

[इसका विस्तृत विवरण 9:52 में दिया गया है।]

---

57 निर्भय अवस्था प्राप्तकर्ता (2) (अभयपट्ट)

"कहा जाता है, मित्र, 'जिसने निर्भीकता प्राप्त कर ली है, जिसने निर्भीकता प्राप्त कर ली है...'"

[इसका विस्तृत विवरण 9:52 में दिया गया है।]

---

58 शांति (1) (पासद्धि)

"कहा जाता है, मित्र, 'शांति (पासद्धि), शांति...'"

[9:52 के अनुसार विस्तृत किया जाएगा।] [456]

---

59 प्रगतिशील शांति (2) (अनुपुब्बपसद्धि संस. अनुपुर्वा..)

"कहा जाता है, मित्र, 'प्रगतिशील शांति, प्रगतिशील शांति।'"

[विस्तार से बताया गया है जैसा कि 9:52 में है।]

---

60 निरोध (Cessation)

"कहा जाता है, मित्र, समाप्ति, समाप्ति..."

[इसका विस्तृत विवरण 9:52 में दिया गया है।]

---

61. क्रमिक समाप्ति (अनुपुब्बनिरोध)

"कहा जाता है, मित्र, 'प्रगतिशील समाप्ति, प्रगतिशील समाप्ति'। मित्र, भगवान (बुद्ध) ने किस प्रकार प्रगतिशील समाप्ति की बात की है?"

(1)— (8) "यहाँ, मित्र, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर... एक भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। ... इस हद तक भी, भगवान (बुद्ध) ने अस्थायी अर्थ में प्रगतिशील समाप्ति की बात कही है। ..."

(9) "हे मित्र, न तो सबोध और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके भिक्षु सबोध और वेदना की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है, और दिव्य ज्ञान से देखकर उसके सारे दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं।

हे मित्र, भगवान (बुद्ध) ने क्रमिक समाप्ति की बात अस्थायी अर्थ में नहीं की है।

---

62 संभव और असंभव (अभब्बा)

भिक्षुओं, नौ चीजों का त्याग किए बिना अरहंतत्व प्राप्त नहीं किया जा सकता। वे नौ चीजें कौन सी हैं? कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष), मोह (मोह), क्रोध, शत्रुता, निंदा, उद्दंडता, ईर्ष्या और कंजूसी। इन नौ चीजों का त्याग किए बिना अरहंतत्व प्राप्त नहीं किया जा सकता।

"भिक्षुओं, नौ चीजों का त्याग करने पर, अरहंतत्व प्राप्त होता है। वे नौ चीजें कौन सी हैं? कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष), मोह (मोह), क्रोध, शत्रुता, निंदा, उद्दंडता, ईर्ष्या और कंजूसी। इन नौ चीजों का त्याग करने पर, अरहंतत्व प्राप्त होता है।" [457]

द्वितीय. ध्यान अनुभाग की स्थापना (सतिपत्थानवग्गो सं. स्मृति-प्रस्थान-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

63 प्रशिक्षण में कमजोरी (सिक्खदुब्बल्य सं. सैक्ष्य-दौर्बल्य)

भिक्षुओं, प्रशिक्षण में ये पाँच बाधाएँ हैं। 1959 वे पाँच क्या हैं? (1) जीवन का विनाश, (2) बिना दी हुई वस्तुएँ लेना, (3) यौन दुराचार, (4) झूठी वाणी, और (5) शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन, जो आलस्य का आधार हैं। ये प्रशिक्षण में पाँच बाधाएँ हैं। प्रशिक्षण में इन पाँच बाधाओं को दूर करने के लिए सती ध्यान की चार अवस्थाओं का विकास करना आवश्यक है। वे चार क्या हैं? यहाँ, (6) एक भिक्षु शरीर में शरीर को देखते हुए, उत्साही, पूर्ण बोध करते हुए, सती ध्यान में रहते हुए, संसार के प्रति लालसा और निराशा को दूर करते हुए, ध्यान में लीन रहता है। (7) वह वेदनाओं में वेदनाओं को देखते हुए ध्यान में लीन रहता है... (8) ... मन में मन... (9) ... घटनाओं में धम्म, उत्साही, पूर्णतः बोधशील, सती भाव से ध्यानमग्न, संसार के प्रति लालसा और निराशा से मुक्त। ध्यान की इन चार अवस्थाओं को विकसित करना प्रशिक्षण में आने वाली इन पाँच बाधाओं को दूर करने के लिए आवश्यक है।

---

64 अवरोध (निवारण)

भिक्षुओं, ये पाँच बाधाएँ हैं। कौन सी पाँच? कामुक इच्छा की बाधा, द्वेष की बाधा, सुस्ती और उनींदापन की बाधा, बेचैनी और पश्चाताप की बाधा, और संदेह की बाधा। ये पाँच बाधाएँ हैं: ... इन पाँच बाधाओं को दूर करने के लिए ध्यान (सती) की इन चार अवस्थाओं का विकास करना चाहिए।

---

65 कामुक आनंद (कामागुना)

भिक्षुओं, ये पाँच इंद्रिय सुख के विषय हैं। ये पाँच कौन से हैं? आँखों से दिखाई देने वाले रूप जो वांछित, आकर्षक, सुखद, कामुक सुख से जुड़े और उत्तेजक होते हैं; कानों से सुनाई देने वाली ध्वनियाँ, नाक से सुनाई देने वाली गंध, जीभ से महसूस होने वाले स्वाद और शरीर द्वारा स्पर्शित होने वाली वस्तुएँ जो वांछित, आकर्षक, सुखद, कामुक सुख से जुड़ी और उत्तेजक होती हैं। ये पाँच इंद्रिय सुख के विषय हैं। इन पाँच इंद्रिय सुख के विषयों को त्यागने के लिए सती ध्यान की इन चार अवस्थाओं का विकास करना आवश्यक है।

---

66 क्लिंगिंग एग्रीगेट्स (उपदानकखंड)

भिक्षुओं, ये पाँच समुच्चय हैं जो आसक्ति के अधीन हैं। ये पाँच कौन से हैं? समुच्चय जो आसक्ति के अधीन है, संवेदना (वेदना) जो आसक्ति के अधीन है, बोध (संज्ञा) जो आसक्ति के अधीन है, अपने गुण (संस्कार) जो आसक्ति के अधीन हैं, और चेतना जो आसक्ति

के अधीन है। [459] ये पाँच समुच्चय हैं जो आसक्ति के अधीन हैं। ... इन पाँच समुच्चयों का त्याग करने के लिए सती ध्यान की इन चार अवस्थाओं का विकास करना आवश्यक है।

---

67 निम्न बेड़ियाँ (ओरंभागिया)

भिक्षुओं, ये पाँच निम्न बंधन हैं। ये पाँच कौन से हैं? व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का दृष्टिकोण, संदेह, व्यवहार और अनुष्ठानों की गलत समझ, कामुक इच्छा और द्वेष। ये पाँच निम्न बंधन हैं। ... इन पाँच निम्न बंधनों को त्यागने के लिए सती ध्यान की इन चार अवस्थाओं का विकास करना आवश्यक है।

---

68 गंतव्य (गति)

भिक्षुओं, ये पाँच गंतव्य हैं। कौन से पाँच? नरक, पशुलोक, पीड़ित आत्माओं का लोक, मनुष्य और देव (देवदूत/भगवान)। ये पाँच गंतव्य हैं... इन पाँच गंतव्यों को त्यागने के लिए ध्यान की इन चार अवस्थाओं (सती साधना) का विकास करना आवश्यक है।

---

69 कंजूसी (मच्छरिया)

भिक्षुओं, कंजूसी पाँच प्रकार की होती है। ये पाँच कौन सी हैं? आवास के प्रति कंजूसी, परिवार के प्रति कंजूसी, लाभ के प्रति कंजूसी, प्रशंसा के प्रति कंजूसी और धर्म के प्रति कंजूसी। ये पाँच प्रकार की कंजूसी हैं। ... इन पाँच प्रकार की कंजूसी को त्यागने के लिए सती ध्यान की इन चार अवस्थाओं का विकास करना आवश्यक है। [460]

---

70 उच्चतर बंधन (उद्धम्भागीय)

भिक्षुओं, ये पाँच उच्च कोटि के बंधन हैं। ये पाँच कौन से हैं? रूप के प्रति वासना (राग), निराकार के प्रति वासना (राग), अहंकार, बेचैनी और अज्ञान। ये पाँच उच्च कोटि के बंधन हैं: ... इन पाँचों बंधनों को त्यागने के लिए सती ध्यान की इन चार अवस्थाओं का विकास करना आवश्यक है।

---

71 मानसिक बंजरपन (चेतोखिला)

"भिक्षुओं, मानसिक बंजरपन के ये पाँच प्रकार हैं। वे पाँच कौन से हैं?"

(1) "यहाँ भिक्षु गुरु के बारे में असमंजस में है, उन पर संदेह करता है, उनके प्रति आश्वस्त नहीं है और उन पर भरोसा नहीं करता। जब भिक्षु गुरु के बारे में असमंजस में होता है, उन पर संदेह करता है, उनके प्रति आश्वस्त नहीं होता और उन पर भरोसा नहीं करता, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर नहीं झुकता, इसलिए यह मानसिक बंजरपन का पहला प्रकार है।"

(2)— (5) "फिर, एक भिक्षु धम्म (मार्ग) के बारे में भ्रमित है... संघ के बारे में भ्रमित है... प्रशिक्षण के बारे में भ्रमित है... अपने साथी भिक्षुओं से चिढ़ता है, उनसे नाराज़ है, उनके प्रति आक्रामक है, उनके प्रति दुर्भावना रखता है। जब एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं से चिढ़ता है, उनसे नाराज़ होता है, उनके प्रति आक्रामक होता है, उनके प्रति दुर्भावना रखता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और

परिश्रम की ओर नहीं झुकता। चूंकि उसका मन उत्साह... और परिश्रम की ओर नहीं झुकता, इसलिए यह पाँचवाँ प्रकार का मानसिक बंजरपन है।"

"ये पाँच प्रकार की मानसिक बंजरता हैं। . . . इन पाँच प्रकार की मानसिक बंजरता को दूर करने के लिए ध्यान (सती/ध्यान) की इन चार अवस्थाओं का विकास करना आवश्यक है।" [461]

---

72 बंधन (सेतोविनीबंध)

भिक्षुओं, मन के ये पाँच बंधन हैं। वे पाँच कौन से हैं?

(1) "यहाँ, भिक्षु इंद्रिय सुखों के प्रति राग से रहित नहीं होता, न ही उनके लिए इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा से रहित होता है। जब भिक्षु इंद्रिय सुखों के प्रति राग से रहित नहीं होता, न ही उनके लिए इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा से रहित होता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता, यही मन का पहला बंधन है।"

(2) — (5) "फिर, एक भिक्षु शरीर के प्रति कामवासना (राग) से रहित नहीं होता, न ही उसमें इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) होती है। ... उसमें रूप के प्रति कामवासना (राग) नहीं होती, न ही उसमें इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) होती है। ... अपनी इच्छा अनुसार पेट भरकर भोजन करने के बाद, वह विश्राम, आलस्य और नींद के सुख में लीन रहता है। वह किसी विशेष देवक्रम में पुनर्जन्म की आकांक्षा रखते हुए ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करता है, यह सोचते हुए: 'इस पुण्य आचरण, पालन, तपस्या या ब्रह्मचर्य जीवन से मैं देव बनूंगा या उनके अनुयायियों में से एक बनूंगा।' जब कोई व्यक्ति किसी विशेष देवक्रम में पुनर्जन्म की आकांक्षा रखते हुए ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर नहीं झुकता, यही मन का पाँचवाँ बंधन है।

"हे भिक्षुओं, ये मन के पाँच बंधन हैं। . . . इन पाँचों मन के बंधनों को त्यागने के लिए ध्यान (सती/ध्यान) की इन चार अवस्थाओं का विकास करना आवश्यक है।" [462]

(III) सही प्रयास (समप्पधनवग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

73 प्रशिक्षण (सिक्ख बिना शिष्य)

भिक्षुओं, प्रशिक्षण में ये पाँच बाधाएँ हैं। वे पाँच क्या हैं? (1) जीवन का विनाश, (2) बिना दी हुई वस्तुएँ लेना, (3) यौन दुराचार, (4) झूठी वाणी, और (5) शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन, जो आलस्य का आधार हैं। ये प्रशिक्षण में पाँच बाधाएँ हैं। प्रशिक्षण में इन पाँच बाधाओं को दूर करने के लिए चार उचित प्रयास विकसित किए जाने हैं। वे चार क्या हैं? यहाँ, (6) एक भिक्षु अजन्मे बुरे हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) के अजन्मे होने की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। (7) वह उत्पन्न बुरे हानिकारक (अकुशल) गुणों के त्याग की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, अपना मन लगाता है और प्रयास करता है। (8) वह अजन्मे बुरे हानिकारक (अकुशल) गुणों के उत्पन्न होने की

इच्छा उत्पन्न करता है। (9) वह उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के रखरखाव, उनकी अवक्षिप्तता, वृद्धि, विस्तार और विकास द्वारा पूर्णता की इच्छा उत्पन्न करता है; वह प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/विरिया) उत्पन्न करता है, मन लगाता है और प्रयास करता है। प्रशिक्षण में इन पाँच बाधाओं को दूर करने के लिए इन चार उचित प्रयासों को विकसित करना आवश्यक है।

---

74 82 बाधाएँ, आदि।

[9:64—9:72 के समानांतर, लेकिन चार सही प्रयासों के माध्यम से तैयार किया गया।] [463]

चतुर्थ. मानसिक शक्ति (जादू) के लिए आधार (इद्धिपदावग्गो सं. रिद्धि-पाद-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

83 प्रशिक्षण (सिक्ख बिना शिष्य)

भिक्षुओं, प्रशिक्षण में ये पाँच बाधाएँ हैं। वे पाँच क्या हैं? (1) जीवन का विनाश, (2) बिना दी हुई वस्तु लेना, (3) यौन दुराचार, (4) झूठी वाणी, और (5) शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन, जो आलस्य का आधार है। ये प्रशिक्षण में पाँच बाधाएँ हैं। प्रशिक्षण में इन पाँच बाधाओं को दूर करने के लिए मानसिक शक्ति के चार आधार विकसित किए जाने हैं। वे चार क्या हैं? [464] (6) यहाँ, एक भिक्षु इच्छा और कर्मों के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) धारण करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है। (7) वह ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और कर्मों के कारण समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) धारण करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है। (8) वह मानसिक शक्ति का आधार विकसित करता है जो धारण करता है... (9) वह मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है जो खोज और प्रयास के कारण समाधि (जादू/इद्धि) प्राप्त करती है। प्रशिक्षण में इन पाँच बाधाओं को दूर करने के लिए मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) के इन चार आधारों को विकसित किया जाना चाहिए।

84-92 बाधाएँ, इत्यादि।

[9:64-9:72 के समानांतर, लेकिन मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) के चार आधारों के माध्यम से तैयार किया गया,] [465]

वी. वासना (राग) और इसी प्रकार पुनरावृति श्रृंखला [1960]

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

93 [1961]

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए नौ चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे नौ चीजें क्या हैं? अनाकर्षण की अनुभूति, मृत्यु की अनुभूति, भोजन के प्रति अरुचि की अनुभूति, समस्त संसार में आनंदहीनता की अनुभूति, अनित्यता की अनुभूति, अनित्य में दुख की अनुभूति, दुख में अनात्म की अनुभूति, त्याग की अनुभूति और वैराग्य की अनुभूति। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन नौ चीजों का विकास करना आवश्यक है।

94

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए नौ चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे नौ चीजें क्या हैं? प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था), द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था), तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था), चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था), अनंत अंतरिक्ष का क्षेत्र (आयतन), अनंत चेतना का आधार, शून्यता का क्षेत्र (आयतन), न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अनुभूति (अदृश्यता) का क्षेत्र (आयतन), और अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) का अंत। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन नौ चीजों का विकास करना आवश्यक है।

95— 112 [1962]

भिक्षुओं, कामवासना (राग) की पूर्ण समझ के लिए... उसके पूर्ण विनाश के लिए... उसके त्याग के लिए... उसके विनाश के लिए... उसके लुप्त होने के लिए... उसके मिट जाने के लिए... उसके निवारण के लिए... उसके त्याग के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए... इन नौ चीजों का विकास करना चाहिए।

113-432

"भिक्षुओं (संतों), प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के लिए... पूर्ण समझ के लिए... पूर्ण विनाश के लिए... त्याग के लिए... विनाश के लिए... लुप्त होने के लिए... लुप्त हो जाने के लिए... [466] निवारण के लिए... त्याग के लिए... घृणा... मोह... क्रोध... शत्रुता... निंदा... उद्दंडता... ईर्ष्या... कंजूसी... छल... चालाकी... हठ... उग्रता... अहंकार... घमंड... नशा... आलस्य... इन नौ चीजों का विकास करना चाहिए।"
1963

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह सुनकर भिक्षु प्रसन्न हुए और भगवान (बुद्ध) के इस कथन से उन्हें बहुत आनंद हुआ।

द बुक ऑफ द नाइन्स पूरी हो चुकी है।

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का दसवाँ खंड है। यह भिक्खु बोधि का संशोधित संस्करण है।

महत्वपूर्ण सुत्त: 21. शेर की दहाड़ (बुद्ध की दस शक्तियाँ)

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN9)   अगला (AN11) >>>>

अंतर्वस्तु

1दस की किताब (दशकनिपात)

1.1पहले

1.1.1I. लाभ

1.1.1.11. उद्देश्य क्या है?

1.1.1.22.चेतनकरणीय क्रिया

1.1.1.33. सद्गुणपूर्ण व्यवहार 1967 (उपनिषद 1)

1.1.1.44. जिज्ञासा कारण (उपनिषद 2)

1.1.1.55 आनंद (उपनिषद 3)

1.1.1.66. समाधि (स्वयं में लीन होना/सम्मोहन)

1.1.1.77 सारिपुत्त

1.1.1.88 ध्यान [1971] (झांस। ध्यान)

1.1.1.99 सागर लिबरेशन [1972] (संत विमोक्ष सं. शांति-विमोक्ष)

1.1.1.1010 विद्या सात्विक ज्ञान (विज्जा संस्कृत)

1.1.2द्वितीय. भगवान खंड (नाथवाग्गो)

1.1.2.111 लॉजिंग [1973] (सेनासन बिना शयन-आसन)

1.1.2.212 पाँच कारक [1974] (पंचंगा)

1.1.2.313 बंधन (संयोजन)

1.1.2.414 मानसिक बंजारपन [1975] (चेतोखिला)

1.1.2.515. अप्पमाडा

1.1.2.616 उपहारों के योग्य [1978] (अहुनेया)

1.1.2.717 रक्षक (1) (नाथ1)

1.1.2.818 रक्षक (2) (नाथ2)

1.1.2.919 महान लोगों के निवास स्थान (1) (अरियावास1)

1.1.2.10कुलीन लोगों के 20 निवास (2) (अरियावास2)

1.1.3तृतीय. महान अध्याय (महावग्गो संस्कृत: महा-वर्ग)

1.1.3.121 शेर की दहाड़ (सिन्हाडा सं. सिंघा-नाडा)

1.1.3.222 पुरातन सिद्धांत (अधिवुत्तिपदा)

1.1.3.323 शरीर (काया)

1.1.3.424 महाकुंडा

1.1.3.525 कसीना

1.1.3.626 काली

1.1.3.727 महान प्रश्न (1) (महाप्रश्न1 सं. महा-प्रश्न)

1.1.3.828 महान प्रश्न (2) (महाप्रश्न2 सं. महा-प्रश्न)

1.1.3.929 कोसला (1)

1.1.3.1030 कोसला (2)

1.1.4IV. उपाली

1.1.4.131 उपाली

1.1.4.232 सस्पेक्ट [2031] (पतिमोकथापना)

1.1.4.333 न्यायनिर्णय (उब्बाहिका)

1.1.4.434 पूर्ण सहयोग (उपसम्पदा)

1.1.4.535 मार्च (निस्साय)

1.1.4.636 नौसिखिया [2038](सामने)

1.1.4.737विभाजन (1) (संघभेद1)

1.1.4.838विभाजन (2) (संघभेद1)

1.1.4.939 आनंद (1)

1.1.4.1040 आनंद (2)

1.1.5वी. अपमान (अकोसा संस. अक्रोश)

1.1.5.141 विवाद (विवाद)

1.1.5.242 मस्जिद की जड़ें (1) (विवादमुला1)

1.1.5.343 बिवादुला2

1.1.5.444 कु फिल्टर

1.1.5.545 राजा के महल में प्रवेश (अन्तेपुरप्पावेसना)

1.1.5.646 शाक्य

1.1.5.747 महली

1.1.5.848 चीजें

1.1.5.949 शरीर के माध्यम से जीवन निर्वाह

1.1.5.1050 लेख

1.2दूसरा पचास

1.2.1I. अपने मन का ध्यान रखना (सचित्तवग्गो सान. सद-चित्त-वर्ग)

1.2.1.151. अपने मन का ध्यान रखना (सचित्त)

1.2.1.252 सारिपुत्त

1.2.1.353 ठहराव (थिति)

1.2.1.454 समभाव (समथा)

1.2.1.555 परित्याग (परिहाना)

1.2.1.656 (6) धारणाएँ (1) (सन्ना1 सं. संज्ञा)

1.2.1.757 धारणाएँ (2) (सन्न2 सं. संज्ञा)

1.2.1.858 मूल (मुलका)

1.2.1.959 त्याग की ओर जाना (पबज्जा सं. प्रवर्ज्या)

1.2.1.1060 गिरिमानंद

1.2.2द्वितीय. जोड़े अनुभाग (यमकवग्गा)

1.2.2.161 अज्ञान (अविज्जा सं. अविद्या)

1.2.2.262 लालसा (तन्हा बिना तृष्णा)

1.2.2.363 निश्चितता (नित्थंगता)

1.2.2.464 अविचलित (Aveccappasanna)

1.2.2.565 सुख (1) (सुख1)

1.2.2.666 सुख (2) (सुख2)

1.2.2.767 नलकपना (1)

1.2.2.868 नलकपना (2)

1.2.2.9चर्चा के 69 विषय (1) (कथावत्थु1 सं. कथावस्तु)

1.2.2.10चर्चा के 70 विषय (2) (कथावत्थु2 सं. कथावस्तु)

1.2.3तृतीय. इच्छा अनुभाग (अकांखवग्गो सं. आकांक्षावर्ग)

1.2.3.171 विश [2039] (आकांक्षा सं. आकांक्षा)

1.2.3.272 कांटे (कंटका)

1.2.3.373 वांछित (इत्थधम्म सं. इच्छा-धर्म)

1.2.3.474 विकास 2090 (वद्धि सं. वृद्धि)

1.2.3.575 मिगासाला 2091

1.2.3.676 ट्रिपल धम्म (तयोधम्म बिना त्रयो-धम्म)

1.2.3.777 कौआ (काका)

1.2.3.878 निगंथ (जैन)

1.2.3.9नाराजगी के लिए 79 आधार (एल) [2097] (अघटवत्थु)

1.2.3.1080 आक्रोश दूर करना (2) 2099 (अघटपतिविनय)

1.2.4IV. बुजुर्ग (थेरावग्गो संस्कृत: स्थिवरा-वर्ग)

1.2.4.181 बहुना

1.2.4.282 आनंदा

1.2.4.383 पुन्निया [2101]

1.2.4.484 घोषणा (व्याकरण सं. व्यक्त-करण)

1.2.4.585 शेखीबाज़ (कत्थी)

1.2.4.686 अंतिम ज्ञान (अधिमान)

1.2.4.787 अनुशासनात्मक मुद्दे (नप्पिया)

1.2.4.888 अपमान करने वाला 2107 (अक्कोसाका)

1.2.4.989 कोकालिका [2109]

1.2.4.10इच्छाहीनता की 90 शक्तियाँ 2118 (खिनासवबाला)

1.2.5वी. उपाली [2119]

1.2.5.191 जो कामुक सुखों का आनंद लेता है 2120 (कामभोगी)

1.2.5.292 खतरे [2122] (भया)

1.2.5.393 क्या दृष्टिकोण (किमदिट्थिका)

1.2.5.494 वज्जीयमहाता

1.2.5.596 कोकानुडा 2330

1.2.5.697 उपहार के योग्य (अहुनेय्या)

1.2.5.798 एक बुजुर्ग (थेरा संस्कृत स्थिवरा)

1.2.5.899 उपाली

1.2.5.9100 अक्षम (अभब्बा)

1.3तीसरा पचास

1.3.1I. भिक्षु की धारणाएं (समनसन्नवग्गो सं. श्रमण-संज्ञ-वर्ग)

1.3.1.1101 भिक्षु की धारणाएं (समानसन्ना सं. श्रमण-संज्ञ)

1.3.1.2आत्मज्ञान के 102 कारक (बोज्झांगा सं. बोध्यांगा)

1.3.1.3103 गलत कोर्स (मिकचाटा संस. मिथ्याटा)

1.3.1.4104 एक बीज [2142] (बीजा)

1.3.1.5105 सच्चा ज्ञान (विज्जा संस्कृत विद्या)

1.3.1.6106 घिसना (निजरा सं. निर्जरा)

1.3.1.7107 धुलाई (धोवना)

1.3.1.8108 चिकित्सक (टिकिचका सं. सिकितसाका)

1.3.1.9109 वमनकारी (वामन)

1.3.1.10110 निष्कासित (निद्धमानिया)

1.3.1.11111 वन बियॉन्ड ट्रेनिंग (1) (असेखा1 सं. अशाइख्य)

1.3.1.12112 वन बियॉन्ड ट्रेनिंग (2) (असेखा2 सं. अशाइख्य)

1.3.2II. पैकोरोहनिवाग्गो

1.3.2.1113 गैर-धम्म (1) (अधम्म1 बिना अधर्म)

1.3.2.2114 गैर-धम्म (2) (अधम्म बिना अधर्म)

1.3.2.3115 गैर-धम्म (3) (अधम्म3 बिना अधर्म)

1.3.2.4116 अजिता [2150]

1.3.2.5117 संगरवा

1.3.2.6118 तट के निकट (ओरिमातिर)

1.3.2.7119 पैकोरोहानी (1)

1.3.2.8120 पैकोरोहानी (2)

1.3.2.9121 अग्रदूत (पुब्बनगामा सं. पूर्व-गमन)

1.3.2.10122 कलंकों का नाश (असवक्खय सं. आश्रव-क्षय)

1.3.3तृतीय. शुद्ध खंड (परिशुद्धवग्गो सं. परिशुद्ध-वर्ग)

1.3.3.1123 प्रथम

1.3.3.2124 सेकंड

1.3.3.3125 तीसरा

1.3.3.4126 चौथा

1.3.3.5127 पाँचवाँ

1.3.3.6128 छठा

1.3.3.7129 सातवां

1.3.3.8130 आठवां

1.3.3.9131 नौवां

1.3.3.10132 दसवां

1.3.3.11133 ग्यारहवां

1.3.4IV. अच्छा वर्ग (साधुवग्गो)

1.3.4.1134 अच्छा (साधु)

1.3.4.2135 - 144 नोबल धम्म, इत्यादि।

1.3.5वी. नोबल

1.3.5.1145 महान मार्ग

1.3.5.2146-154 अंधकारमय पथ, इत्यादि।

1.4चौथा पचास

1.4.1I. व्यक्ति अनुभाग (पुग्गलवग्गो सं. पुरुष-युगल-वर्ग)

1.4.1.1155 से संबद्ध (सेवितब्बा)

1.4.1.2156-166 रिज़ॉर्ट, आदि (भजीताब्बा)

1.4.2II. जानूसोनी खंड

1.4.2.1167 ब्राह्मणपकोरोहानी (एल) [2162]

1.4.2.2168 अरियापकोरोहानी (2)

1.4.2.3169 संगरवा [2163]

1.4.2.4170 निकटवर्ती तट (ओरिमा)

1.4.2.5171 गैर-धम्म (1) (अधम्म बिना अधर्म)

1.4.2.6172 गैर-धम्म (2) (अधम्म2 बिना अधर्म)

1.4.2.7173 गैर-धम्म (गलत मार्ग) (3) (अधम्म 3 बिना अधर्म)

1.4.2.8174 कम्मा (कर्म) के कारण (कम्मानिदान सं. कर्म-निदान)

1.4.2.9175 परिहार (परिकमना)

1.4.2.10176 कुंडा

1.4.2.11177 जानूसोनी

1.4.3तृतीय. अच्छा [2173] (साधुवग्गो सं. साधुवर्ग)

1.4.3.1178 अच्छा (साधु)

1.4.3.2179-188 महान धम्म आदि (अरियाधम्म, कुसल, अत्थ, धम्म, असव, वज्जा, तपनिया)

1.4.4चतुर्थ. महान पथ (अरियामग्गवग्गा सं. आर्यमार्ग-वर्ग)

1.4.4.1189 महान पथ (अरियामग्गा)

1.4.4.2190-198 अंधकारमय पथ, इत्यादि।

1.4.5V. व्यक्तियों पर एक और अध्याय [2174]

1.4.5.1199 के साथ जुड़ें

1.4.5.2200 - 210 रिज़ॉर्ट, आदि [2175]

1.5अतिरिक्त पचास

1.5.1I. कर्म से उत्पन्न शरीर (करजकया-वग्गो)

1.5.1.1211 नरक-स्वर्ग (1) (निरायसग्गा1 सं. नरक-स्वर्ग)

1.5.1.2212 नरक-स्वर्ग (2) (निरायसग्गा2 सं. नरक-स्वर्ग)

1.5.1.3213 महिलाएं (मातुगामा)

1.5.1.4214 महिला ले अनुयायी (उपासिका)

1.5.1.5215 आत्म-विश्वास (विसारदा)

1.5.1.6216 रेंगना (संसप्पनिया)

1.5.1.7227 सचेत क्रिया (1) (संचेतनिका1)

1.5.1.8218 सचेत क्रिया (2) 2184 (संसातनिका2)

1.5.1.9219 कर्म से उत्पन्न शरीर (करजाकाया)

1.5.1.10220 धम्म के विपरीत आचरण (अधम्मकारिया सं. अधर्म-क्रिया)

1.5.2द्वितीय. समानता (समन्ना-वाग्गो)

1.5.2.1221

1.5.2.2222

1.5.2.3223

1.5.2.4224

1.5.2.5225-228

1.5.2.6229 - 232

1.5.2.7233 - 236

1.5.3III. कामवासना (राग) और इसी प्रकार की पुनरावृत्ति श्रृंखला [2195]

1.5.3.1237 [2196]

1.5.3.2238

1.5.3.3239

1.5.3.4240 — 266

1.5.3.5267-746

दस की पुस्तक (दशकनिपात)

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

उस भगवान को नमन, शत्रुओं का नाश करने वाले, सही मायने में पूर्णतः प्रबुद्ध (जागृत) भगवान।

पहले पचास

I. लाभ

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

1. उद्देश्य क्या है?

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

(1) "भंते, लाभकारी (कुशल) सद्गुणी आचरण का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

(2) "आनंद, लाभकारी (कुशल) सद्गुणी आचरण का उद्देश्य और लाभ पश्चाताप न करना (अविप्पति-सरना) है।"

(3) "और हे भंते, पश्चाताप न करने का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"अतिशयता न करने का उद्देश्य और लाभ आनंद है।"

(4) "और हे भंते, आनंद का उद्देश्य और लाभ क्या है?" "आनंद का उद्देश्य और लाभ परमानंद (पीति) है।"

(5) "और हे भंते, आनंद (पीति) का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"पीति (आनंद) का उद्देश्य और लाभ शांति (पसाद्धि) है।"

(6) "और हे भंते, शांति का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"शांति (पासद्धि) का उद्देश्य और लाभ सुख (सुख) है।"

(7) "और हे भंते, सुख का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"सुख (आनंद) [2] का उद्देश्य और लाभ समाधि (स्व-लीनता/समाधि) है।"

(8) "और हे भंते, समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) का उद्देश्य और लाभ चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानना और देखना है।

(9) "और हे भंते, यथार्थ-भूत-ज्ञान-दर्शन (यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन) के ज्ञान और दर्शन का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"चीजों के वास्तविक स्वरूप के ज्ञान और दृष्टि का उद्देश्य और लाभ निब्बिदा (विरक्ति) और वैराग्य (विराग) है।"

(10) "और हे भंते, वैराग्य और वैराग्य का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"विरक्ति और वैराग्य का उद्देश्य और लाभ मुक्ति का ज्ञान और दर्शन है (विमुक्ति-नाना-दस्सना संस्कृत: विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन)।"

इस प्रकार, आनंद, (1)— (2) लाभकारी (कुशल) सद्गुणी आचरण का उद्देश्य और लाभ पश्चाताप रहित होना है; (3) पश्चाताप रहित होने का उद्देश्य और लाभ आनंद है; (4) आनंद का उद्देश्य और लाभ परमानंद है; (5) परमानंद का उद्देश्य और लाभ शांति है; (6) शांति का उद्देश्य और लाभ सुख है; (7) सुख का उद्देश्य और लाभ समाधि है; (8) समाधि का उद्देश्य और लाभ चीजों का उनके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन है; (9) चीजों के उनके वास्तविक स्वरूप के ज्ञान और दर्शन का उद्देश्य और लाभ निब्बिदा और वैराग्य है; और (10) विघ्न और वैराग्य का उद्देश्य और लाभ मुक्ति का ज्ञान और दर्शन है। विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन)। इस प्रकार, आनंद, लाभकारी (कुशल) सदाचार व्यवहार उत्तरोत्तर अग्रणी की ओर ले जाता है। "1961

---

2. सचेतन क्रिया (चेतनकारणीय)

(नोट: यह सूत्र समाधि/सम्मोहन अवस्थाओं के लिए है)

(1)— (2) "भिक्षुओं (साधुओं), एक गुणी व्यक्ति (विशेषकर यौन संयम रखने वाले) के लिए, जिसका आचरण गुणी हो, किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं है: 'मुझमें पश्चाताप न हो (अविप्पति-सरना)।' यह स्वाभाविक है कि एक गुणी व्यक्ति में पश्चाताप न हो, जिसका आचरण गुणी हो।

(3) "जिसके पास पछतावा नहीं है, उसके लिए किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं है (जैसे): 'मुझमें आनंद उत्पन्न हो' यह स्वाभाविक है कि बिना पछतावे वाले व्यक्ति में आनंद उत्पन्न होता है।

(4) "आनंदित व्यक्ति के लिए किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती (जैसे): 'मुझमें आनंद (पीति) उत्पन्न हो।' यह स्वाभाविक है कि आनंदित व्यक्ति में आनंद (पीति) उत्पन्न हो। [3]

(5) "आनंदित मन वाले व्यक्ति को किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती (जैसे): 'मेरा शरीर शांत रहे।' यह स्वाभाविक है कि आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत होता है।"

(6) "शरीर से शांत व्यक्ति के लिए किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती (जैसे): 'मुझे सुख का अनुभव करने दो।' यह स्वाभाविक है कि शरीर से शांत व्यक्ति सुख का अनुभव करता है।"

(7) "सुख में डूबे व्यक्ति को किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती (जैसे): 'मेरा मन स्वयं में लीन हो जाए (समाधि में)।' सुख में डूबे व्यक्ति का मन स्वाभाविक रूप से स्वयं में लीन होता है।"

(8) "स्वयं में लीन (समाहित) व्यक्ति के लिए किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती है, जैसे: 'मुझे चीजों को वैसे ही जानने और देखने दो जैसी वे वास्तव में हैं।' यह स्वाभाविक है कि स्वयं में लीन (समाहित) व्यक्ति चीजों को वैसे ही जानता और देखता है जैसी वे वास्तव में हैं।"

(9) "जो व्यक्ति चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानता और देखता है, उसे किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती (जैसे): 'मुझे विरक्त और उदासीन होना चाहिए'। यह स्वाभाविक है कि जो व्यक्ति चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानता और देखता है, वह विरक्त और उदासीन (वीरग) होता है।"

(10) "जो व्यक्ति विरक्त और उदासीन है, उसे किसी इच्छाशक्ति की आवश्यकता नहीं होती: 'मुझे मुक्ति का ज्ञान और दर्शन प्राप्त हो।' यह स्वाभाविक है कि जो व्यक्ति विरक्त और उदासीन है, वह मुक्ति का ज्ञान और दर्शन प्राप्त कर लेता है (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन)।"

इस प्रकार, भिक्षुओं, (9)— (10) मुक्ति का ज्ञान और दर्शन, निब्बिदा और वैराग्य का उद्देश्य और लाभ है; (8) वैराग्य और वैराग्य, यथार्थ-भूत-ज्ञानदर्शन (वास्तविकता) के ज्ञान और दर्शन का उद्देश्य और लाभ है; (7) यथार्थ-भूत-ज्ञानदर्शन (वास्तविकता) के ज्ञान और दर्शन का उद्देश्य और लाभ है; (6) समाधि सुख का उद्देश्य और लाभ है; (5) सुख शांति का उद्देश्य और लाभ है; (4) शांति परमानंद का उद्देश्य और लाभ है; (3) परमानंद आनंद का उद्देश्य और लाभ है; (2) (1) अविप्पति-सरना (अप्रत्याश) का उद्देश्य और लाभ है; और (1) अप्रत्याश सद्गुणी आचरण का उद्देश्य और लाभ है।

"इस प्रकार, भिक्षुओं, एक अवस्था [4] अगली अवस्था में प्रवाहित होती है, एक अवस्था अगली अवस्था को भर देती है, क्योंकि निकट तट से दूर तट की ओर जाना होता है।" 1966

---

3. सद्गुणपूर्ण व्यवहार 1967 (उपनिषद 1)

भिक्षुओं (सन्यासियों), (1) अनैतिक व्यक्ति के लिए, सद्गुणों से रहित व्यक्ति के लिए, (2) अविपत्ति-सरना (अविपत्ति-सरना) का कोई निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब अविपत्ति न हो, तो अविपत्ति से रहित व्यक्ति के लिए, (3) आनंद का कोई निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब आनंद न हो, तो आनंद से रहित व्यक्ति के लिए, (4) पीति (आनंद) का कोई निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब पीति न हो, तो पीति से रहित व्यक्ति के लिए, (5) शांति (पश्चात्य) का कोई निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब शांति न हो, तो शांति (पश्चात्य) से रहित व्यक्ति के लिए, (6) सुख (सुख) का कोई निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब सुख (सुख) न हो, तो सुख (सुख) से रहित व्यक्ति के लिए, (7) सही एकाग्रता का कोई निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब सही समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) न हो, तो सही समाधि (स्व-लीनता/समाधि) से रहित, (8) यथार्थ-भूत-नाना-दस्सना (संस्कृत: यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन) का ज्ञान और दृष्टि उसके निकटवर्ती कारण से रहित होती है। जब यथार्थ-भूत-नाना-दस्सना का ज्ञान और दृष्टि नहीं होती, तो यथार्थ-भूत-ज्ञान-दर्शन से रहित व्यक्ति के लिए, (9) निब्बिदा और वैराग का ज्ञान और दृष्टि उसके निकटवर्ती कारण से रहित होती है। जब निब्बिदा और वैराग का ज्ञान और दृष्टि नहीं होती, तो विभ्रम और वैराग से रहित व्यक्ति के लिए, (10) मुक्ति का ज्ञान और दृष्टि उसके निकटवर्ती कारण से रहित होती है।

मान लीजिए एक पेड़ में शाखाएँ और पत्तियाँ कम हैं। तो उसकी शाखाएँ पूरी तरह से विकसित नहीं होतीं; न ही उसकी छाल, कोमल लकड़ी और कठोर लकड़ी पूरी तरह से विकसित होती हैं। ठीक उसी प्रकार, एक अनैतिक व्यक्ति के लिए, जो सद्गुणों से रहित है, पश्चाताप न करने की भावना (अविप्पति-सरना) का कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता। जब पश्चाताप न हो... तब मुक्ति के ज्ञान और दर्शन का भी कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता।

भिक्षुओं (सन्यासियों), (1) एक गुणी व्यक्ति के लिए, जिसका आचरण गुणी हो, (2) अविपत्ति-सरना (अविपत्ति-सरना) इसका निकटतम कारण है। जब अविपत्ति होती है, तो अविपत्ति-सरना वाले व्यक्ति के लिए, (3) आनंद इसका निकटतम कारण है। जब आनंद होता है, तो आनंदित व्यक्ति के लिए, (4) परमानंद (पीति) इसका निकटतम कारण है। जब परमानंद (पीति) होता है, तो परमानंद (पीति) वाले व्यक्ति के लिए, (5) शांति (पसद्धि) इसका निकटतम कारण है। जब शांति होती है, तो शांति (पसद्धि) वाले व्यक्ति के लिए, (6) सुख (सुख) इसका निकटतम कारण है। जब सुख (सुख) होता है, तो सुख (सुख) वाले व्यक्ति के लिए, (7) सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) इसका निकटतम कारण है। [5] जब सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) होती है, तो सही समाधि वाले व्यक्ति के

लिए, समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), (8) यथार्थ-भूत-नाना-दस्सना संस्कृत यथार्थ-भूत-ज्ञान-दर्शन का ज्ञान और दर्शन, इसका निकटतम कारण है। जब यथार्थ-भूत-नाना-दस्सना का ज्ञान और दर्शन होता है, तो (9) निब्बिदा और वैराग का ज्ञान और दर्शन, इसका निकटतम कारण है। जब निब्बिदा और वैराग का ज्ञान होता है, तो (10) विमुक्ति-नाना-दस्सना संस्कृत विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन का ज्ञान और दर्शन, इसका निकटतम कारण है।

मान लीजिए एक वृक्ष है जिसमें शाखाएँ और पत्तियाँ हैं। उसकी शाखाएँ पूर्ण रूप से बढ़ती हैं; उसकी छाल, कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी भी पूर्ण रूप से बढ़ती हैं। ठीक इसी प्रकार, एक गुणी व्यक्ति के लिए, जिसका आचरण गुणी है, पश्चाताप रहित भाव (अविप्पति-सरना) उसका मूल कारण है। पश्चाताप रहित भाव होने पर... मुक्ति का ज्ञान और दर्शन उसका मूल कारण है।

---

4. निकटवर्ती कारण (उपनिषद 2)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित किया: [10:3 के समान, लेकिन सारिपुत्त द्वारा बोले गए।] [6]

---

5 आनंद (उपनिषद 3)

वहाँ पूज्य आनंद ने भिक्षुओं को संबोधित किया: [10:3 के समान, लेकिन आनंद द्वारा बोले गए।] [7]

---

6. समाधि (स्वयं में लीन होना/सम्मोहन)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, क्या कोई भिक्षु समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि (1) वह पृथ्वी को पृथ्वी के संबंध में न देखे; (2) जल को जल के संबंध में न देखे; (3) अग्नि को अग्नि के संबंध में न देखे; (4) वायु को वायु के संबंध में न देखे; (5) अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में न देखे; (6) अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) को अनंत चेतना के आधार के संबंध में न देखे; (7) शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को शून्यता के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में न देखे; (8) न-बोध (सन्न/संज्ञा)-और-अबोध (अज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) को न-बोध (सन्न/संज्ञा)-और-अज्ञेय (अज्ञात) के आधार के संबंध में न देखे; (9) इस संसार को इस संसार के संबंध में न देखे।" दुनिया; (10) दूसरी दुनिया के संबंध में दूसरी दुनिया का, लेकिन क्या वह फिर भी समझदार होगा?

"वह कर सकता है, आनंदा।"

"पर हे भंते, वह समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था कैसे प्राप्त कर सकता था?" [8]

"यहाँ, आनंद, एक भिक्षु इस प्रकार अंतर्दृष्टि प्राप्त करता है: 'यह शांतिदायक है, यह उदात्त है, अर्थात् सभी गतिविधियों का शांत होना, सभी प्राप्तियों का त्याग, तृष्णा का नाश, वैराग्य, निब्बान, निर्वाण।' 1969 हे आनंद, इसी प्रकार एक भिक्षु समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि वह पृथ्वी को पृथ्वी के संबंध में, जल को जल के संबंध में, अग्नि को अग्नि के संबंध में, वायु को वायु के संबंध में, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में, अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) को अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में, शून्यता के आधार को शून्यता के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में, न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (सन्न/संज्ञा) के आधार को न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (सन्न/संज्ञा) के आधार के संबंध में, इस संसार को इस संसार के संबंध में, परलोक को परलोक के संबंध में, नहीं तो भी वह बोधगम्य रहेगा।

---

7 सारिपुत्त

तब पूज्य आनंद, पूज्य सारिपुत्त के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर, वे एक तरफ बैठ गए और पूज्य सारिपुत्त से बोले:

"मित्र सारिपुत्त, क्या कोई भिक्षु समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि (1) वह पृथ्वी को पृथ्वी के संबंध में न देखे; (2) जल को जल के संबंध में न देखे; (3) अग्नि को अग्नि के संबंध में न देखे; (4) वायु को वायु के संबंध में न देखे; (5) अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में न देखे; (6) अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) को अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में न देखे; (7) शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को शून्यता के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में न देखे; (8) न-बोध (सन्ना/संज्ञा)-न-अवधारणा (सन्न/संज्ञा)-न-अवधारणा (सन्न/संज्ञा)-न-अवधारणा (अज्ञात) के संबंध में न देखे; (9) इस संसार को इस दुनिया के लिए; (10) दूसरी दुनिया के संबंध में दूसरी दुनिया का, लेकिन क्या वह फिर भी समझदार होगा?

"हाँ, मेरे दोस्त आनंद, वो कर सकता है।"

"पर हे मित्र सारिपुत्त, वह समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था कैसे प्राप्त कर सकता था?"

"एक बार, मेरे मित्र आनंद, मैं यहीं सावत्थी में अंधों के आश्रम में था। वहाँ मैंने समाधि की ऐसी अवस्था प्राप्त की कि मुझे पृथ्वी का पृथ्वी से, जल का जल से, अग्नि का अग्नि से, वायु का वायु से, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र का अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र से, अनंत चेतना के क्षेत्र का अनंत चेतना के क्षेत्र से, शून्यता के क्षेत्र का शून्यता के आधार से, न सबोध (सन्ना/संज्ञा) का न अबोध (सन्ना/संज्ञा) का न अबोध (सन्ना/संज्ञा) का क्षेत्र से, इस संसार का इस संसार से, परलोक का परलोक से कोई संबंध नहीं था, बल्कि मैं... अभी भी समझदार हैं।

"लेकिन उस अवसर पर पूज्य सारिपुत्त को किस बात का अहसास हुआ?"

"मुझमें एक अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) उत्पन्न हुई और दूसरी अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त हो गई: 'अस्तित्व का अंत (भावो/पुनर्जन्म का कारण) निर्वाण है; अस्तित्व का अंत (भावो/पुनर्जन्म का कारण) निर्वाण है।' 1970 जिस प्रकार, जब टहनियों की आग जल रही होती है, तो एक लौ उठती है और दूसरी बुझ जाती है, उसी प्रकार मुझमें एक अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) [10] उत्पन्न हुई और दूसरी अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) समाप्त हो गई: 'अस्तित्व का अंत निर्वाण है; अस्तित्व का अंत (भावो/पुनर्जन्म का कारण) निर्वाण है।' उस अवसर पर, मित्र, मुझे यह अनुभूति हुई: 'अस्तित्व का अंत (भावो/पुनर्जन्म का कारण) निर्वाण है।'"

---

8 ध्यान [1971] (झांसंस. ध्यान)

(1) "भिक्षुओं, एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण हो सकता है, परन्तु वह सद्गुणी न हो; अतः वह इस मामले में अपूर्ण है। उसे इस मामले को पूरा करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: 'मैं आस्था से परिपूर्ण होकर सद्गुणी कैसे हो सकता हूँ?' परन्तु जब एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण हो और सद्गुणी भी हो, तब वह इस मामले में परिपूर्ण होता है।"

(2) "एक भिक्षु आस्थावान और सद्गुणी हो सकता है, परन्तु वह विद्वान नहीं है... (3) ... विद्वान, परन्तु धम्म पर वक्ता नहीं... (4) ... धम्म पर वक्ता, परन्तु सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित होने वाला नहीं... (5) सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित होने वाला, परन्तु सभा में आत्मविश्वास से धम्म का उपदेश देने वाला नहीं... (6) ... सभा में आत्मविश्वास से धम्म का उपदेश देने वाला, परन्तु अनुशासन का विशेषज्ञ नहीं... (7) ... अनुशासन का विशेषज्ञ, परन्तु वनवासी जो एकांतवास में रहता है... (8) ... वनवासी जो एकांतवास में रहता है, परन्तु वह नहीं जो इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त करता है जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं।" . . (9) . . . वह व्यक्ति जो इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इस जीवन में ही उच्च मन के चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त कर लेता है, जो सुखद निवास स्थान हैं, परन्तु वह नहीं जिसने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इस जीवन में ही, मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को स्वयं अनुभव कर लिया है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है।

"इस प्रकार वह उस कारक के संबंध में अपूर्ण है। उसे उस कारक को पूरा करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: 'मैं कैसे विश्वास से संपन्न हो सकता हूँ... [11] ... और साथ ही वह व्यक्ति भी हो सकता हूँ जिसने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया हो, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता हो?'

(10) "परन्तु जब कोई भिक्षु (i) आस्था से युक्त हो, (ii) गुणी हो, और (iii) विद्वान हो; (i) धम्म पर वक्ता हो; (v) सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित होता हो; (vi) सभा को आत्मविश्वासपूर्वक धम्म का उपदेश देता हो; (vii) अनुशासन का विशेषज्ञ हो; (viii) वनवासी हो जो एकांतवास में रहता हो; (ix) जो इच्छा से, बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त करता हो जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं; और (x) जो दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा, इसी जीवन में, स्वयं के लिए मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कर चुका हो, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता हो, तो वह उस कारक के संबंध में पूर्ण हो जाता है।"

"इन दस गुणों से युक्त भिक्षु हर तरह से विश्वास जगाने वाला और हर पहलू में परिपूर्ण होता है।"

---

9 शांतिपूर्ण मुक्ति [1972] (संतविमोक्ख सं. शांति-विमोक्ष)

(1) "भिक्षु (मठवासी), एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण हो सकता है, पर वह गुणी नहीं होता... (2) ... आस्था और गुणी तो हो सकता है, पर वह विद्वान नहीं होता... (3) ... विद्वान तो होता है, पर धम्म का वक्ता नहीं होता... (4) ... धम्म का वक्ता तो होता है, पर सभाओं में नियमित रूप से जाने वाला नहीं होता... (5) ... सभाओं में नियमित रूप से जाने वाला तो होता है, पर सभा में आत्मविश्वास से धम्म का उपदेश देने वाला नहीं होता... (6) ... सभा में आत्मविश्वास से धम्म का उपदेश देने वाला तो होता है, पर अनुशासन का विशेषज्ञ नहीं होता... (7) ... अनुशासन का विशेषज्ञ तो होता है, पर वनवासी नहीं होता जो एकांतवासों में रहता हो... (8) ... वनवासी जो एकांतवास में शरण लेता है, परन्तु वह नहीं जो शरीर से संपर्क करता है और उन शांतिपूर्ण मुक्ति में निवास करता है, जो रूपों से परे हैं, जो निराकार हैं... (9) ... वह जो शरीर से संपर्क करता है और उन शांतिपूर्ण मुक्ति में निवास करता है, जो रूपों से परे हैं, [12] जो निराकार हैं, परन्तु वह नहीं जिसने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से, इसी जीवन में, स्वयं के लिए मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता है।

इस प्रकार वह उस पहलू के संबंध में अपूर्ण है। उसे उस पहलू को पूरा करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: "मैं कैसे विश्वास से परिपूर्ण हो सकता हूँ... और साथ ही साथ दोषों के नाश के साथ एक ऐसा व्यक्ति भी बन सकता हूँ।"

क्या उन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की निर्मल मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करते हैं?

(10) "परन्तु जब कोई भिक्षु (i) आस्था से युक्त हो, (ii) गुणी हो, और (iii) विद्वान हो; (iv) धम्म (मार्ग) पर वक्ता हो; (v) सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित रहता हो; (vi) सभा को आत्मविश्वासपूर्वक धम्म का उपदेश देता हो; (vii) अनुशासन का विशेषज्ञ हो; (viii) वनवासी हो जो एकांतवास में रहता हो; (ix) शरीर से संपर्क स्थापित करके उन शांतिपूर्ण मुक्ति का अनुभव करता हो, जो रूपों से परे हैं, निराकार हैं; और (x) दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में स्वयं को मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव करा चुका हो, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता हो, तो वह उस कारक के संबंध में पूर्ण हो जाता है।"

"जो भिक्षु इन दस गुणों से युक्त होता है, वह हर तरह से विश्वास जगाने वाला और हर पहलू में परिपूर्ण होता है।"

---

10 सच्चे ज्ञान (विज्जा संस्कृत विद्या)

(1) "भिक्षुओं (मठवासियों), एक भिक्षु आस्था से संपन्न हो सकता है, लेकिन वह गुणी नहीं होता... [13] ... (2) ... आस्था और गुणी तो होता है, लेकिन वह विद्वान नहीं होता... (3) ... विद्वान तो होता है, लेकिन धम्म पर वक्ता नहीं होता... (4) ... धम्म पर वक्ता तो होता है, लेकिन सभाओं में नियमित रूप से उपदेश देने वाला नहीं होता... (5) ... सभाओं में नियमित रूप से उपदेश देने वाला तो होता है, लेकिन सभा में आत्मविश्वास से धम्म का उपदेश देने वाला नहीं होता... (6) ... सभा में आत्मविश्वास से धम्म का उपदेश देने वाला तो होता है, लेकिन अनुशासन का विशेषज्ञ नहीं होता... (7) ... अनुशासन का विशेषज्ञ तो होता है, लेकिन अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) को याद करने वाला नहीं होता, अर्थात् एक पुनर्जन्म, दो पुनर्जन्म... [जैसा कि 6:2 §4 में है]... इस प्रकार वह अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके स्वरूपों और विवरणों सहित याद नहीं करता... (8)... वह जो अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को याद करता है... परन्तु वह नहीं जो दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मानवीय दृष्टि से श्रेष्ठ है... [जैसा कि 6:2 §5 में है]... यह समझता है कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं... (9)... वह जो दिव्य दृष्टि से... यह समझता है कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं, परन्तु वह नहीं जिसने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) से स्वयं को इसी क्षण में अनुभव किया है। जीवन, मन की निष्कलंक मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति, और उसमें प्रवेश करने के बाद, उसमें निवास करना।

"इस प्रकार वह उस कारक के संबंध में अपूर्ण है। उसे उस कारक को पूरा करना चाहिए, [यह सोचते हुए]: 'मैं कैसे विश्वास से संपन्न हो सकता हूँ... [14] ... और साथ ही वह व्यक्ति भी हो सकता हूँ जिसने दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया हो, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता हो?'

(10) "परन्तु जब कोई भिक्षु (i) आस्था से युक्त हो, (ii) गुणी हो, और (iii) विद्वान हो; (iv) धम्म का वक्ता हो; (v) सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित रहता हो; (vi) सभा में आत्मविश्वासपूर्वक धम्म का उपदेश देता हो; (vii) अनुशासन का विशेषज्ञ हो; (viii) अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके स्वरूपों और विवरणों सहित स्मरण करता हो; (ix) दिव्य दृष्टि से यह समझता हो कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे फलते-फूलते हैं; और (x) दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में स्वयं को मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव हो, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करता हो, तब वह उस विषय में पूर्ण हो जाता है।"

"जो भिक्षु इन दस गुणों से युक्त होता है, वह हर तरह से विश्वास जगाने वाला और हर पहलू में परिपूर्ण होता है।" [15]

द्वितीय. लॉर्ड सेक्शन (नाथवाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

11 लॉजिंग [1973] (सेनासन बिना शयन-आसन)

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु जो पांच गुणों से युक्त है, पांच गुणों से युक्त आश्रम में जाता है और उसका उपयोग करता है, तो अल्पकाल में, दोषों के नाश के साथ, वह प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव कर सकता है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास कर सकता है।

और हे भिक्षुओं, एक भिक्षु में पाँच गुण कैसे होते हैं?

(1) "यहाँ, एक भिक्षु आस्था से परिपूर्ण है। वह तथागत (बुद्ध) के ज्ञान में इस प्रकार आस्था रखता है: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।"

(2) "वह शायद ही कभी बीमार या पीड़ित होता है, उसका पाचन तंत्र संतुलित होता है, न तो बहुत ठंडा और न ही बहुत गर्म, बल्कि मध्यम और प्रयास के लिए उपयुक्त होता है।

(3) "वह ईमानदार और खुला है, वह व्यक्ति जो शिक्षक और अपने बुद्धिमान साथी भिक्षुओं के सामने खुद को वैसे ही प्रकट करता है जैसा वह वास्तव में है।

(4) "उसने हानिकारक (अकुशल) गुणों का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों की खेती के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है।"

(5) "वह बुद्धिमान है; उसके पास वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) है जो उत्पत्ति और क्षय को पहचानता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी है और दुख के पूर्ण विनाश की ओर ले जाता है।

"इस प्रकार एक भिक्षु में पाँच गुण होते हैं।"

और किसी आवास में पाँच कारक कैसे होते हैं?

(6) "यहाँ, आवास न तो बहुत दूर है [भिक्षा के स्थान से] और न ही बहुत पास है, और इसमें आने-जाने का साधन है।

(7) "दिन के समय यह लोगों द्वारा परेशान नहीं होता है और रात में यह शांत और स्थिर रहता है।

(8) मक्खियों, मच्छरों, हवा, जलते सूरज और साँपों से बहुत कम संपर्क होता है।

(9) "उस आवास में रहने वाला व्यक्ति आसानी से वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए दवाइयाँ और भोजन प्राप्त कर सकता है।

(10) "उस आश्रम में विद्वान, विरासत के उत्तराधिकारी, धम्म के विशेषज्ञ, अनुशासन के विशेषज्ञ, रूपरेखाओं के विशेषज्ञ, वरिष्ठ भिक्षु निवास करते हैं। वह समय-समय पर उनके पास जाकर पूछता है: 'यह कैसे है, भंते? इसका क्या अर्थ है?' तब वे पूजनीय भिक्षु उसे वह प्रकट करते हैं जो प्रकट नहीं हुआ है, अस्पष्ट बातों को स्पष्ट करते हैं और अनेक पेचीदा बिंदुओं के बारे में उसकी उलझन को दूर करते हैं।

"इस प्रकार एक आवास में पांच कारक होते हैं।"

जब कोई भिक्षु, जिसमें ये पाँच गुण मौजूद हों, ऐसे आवास में जाता है और उसका उपयोग करता है जिसमें ये पाँच गुण हों, तो अल्पकाल में, दोषों के नाश के साथ, वह स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा, इसी जीवन में, मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव कर सकता है, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास कर सकता है।

---

12 पाँच कारक [1974] (पंचंगा)

"भिक्षुओं, वह भिक्षु जिसने पांच गुणों का त्याग कर पांच गुणों को धारण किया है, इस धम्म और अनुशासन में, पूर्णतम और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) का पूर्णतः पालन करने वाला भिक्षु कहलाता है।"

"एक भिक्षु ने पाँच गुणों का त्याग कैसे किया है? यहाँ, एक भिक्षु ने कामुक इच्छा, द्वेष, सुस्ती और आलस्य, बेचैनी और पश्चाताप, और संदेह का त्याग किया है। इस प्रकार एक भिक्षु ने पाँच गुणों का त्याग किया है।"

और एक भिक्षु में पाँच गुण कैसे होते हैं? यहाँ, एक भिक्षु में प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के सद्गुणों का समूह, प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) का समूह, प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के पन्ना (दिव्य ज्ञान) का समूह, प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की मुक्ति का समूह और प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के मुक्ति के ज्ञान और दर्शन (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) का समूह होता है। इस प्रकार एक भिक्षु में पाँच गुण होते हैं।

"जब कोई भिक्षु इन पांच गुणों का त्याग कर इन पांच गुणों को धारण कर लेता है, तो इस धम्म और अनुशासन में उसे एक सर्वोच्च व्यक्ति कहा जाता है जो ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीने में पूर्ण और सिद्ध होता है।"

जब किसी भिक्षु में कामुक इच्छा और द्वेष,

सुस्ती और उन्मत्तता,

बेचैनी और संदेह पूरी तरह से अनुपस्थित हों ; [17] जब ऐसा व्यक्ति प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के गुण और समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) तथा [समान] मुक्ति और ज्ञान से युक्त हो; पाँचों गुणों से युक्त और पाँचों गुणों को दूर करने वाला, वह वास्तव में इस धम्म (मार्ग) और अनुशासन में पूर्णतः सिद्ध कहा जाता है ।

---

13 बंधन (संयोजन)

भिक्षुओं, ये दस बंधन हैं। कौन से दस? पाँच निम्न बंधन और पाँच उच्च बंधन। और ये पाँच निम्न बंधन क्या हैं? व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का दृष्टिकोण, संदेह, व्यवहार और नियमों की गलत समझ, कामुक इच्छा और द्वेष। ये पाँच निम्न बंधन हैं। और ये पाँच उच्च बंधन क्या हैं? रूप के प्रति राग, निराकार के प्रति राग, अहंकार, बेचैनी और अज्ञान। ये पाँच उच्च बंधन हैं। भिक्षुओं, ये दस बंधन हैं।

---

14 मानसिक बंजरपन [1975] (चेतोखिला)

भिक्षुओं, यदि किसी भिक्षु या भिक्षुणी ने पांच प्रकार की मानसिक बंजरता का त्याग नहीं किया है और मन के पांच बंधनों को नष्ट नहीं किया है, तो चाहे दिन हो या रात, उस व्यक्ति के लिए लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि नहीं बल्कि केवल गिरावट ही अपेक्षित है।

"वे पाँच प्रकार की मानसिक बंजरता कौन सी हैं जिन्हें उसने अभी तक नहीं त्यागा है?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु गुरु के बारे में भ्रमित है, उन पर संदेह करता है, उनके प्रति आश्वस्त नहीं है और उन पर भरोसा नहीं करता है। जब एक भिक्षु गुरु के बारे में भ्रमित होता है, उन पर संदेह करता है, उनके प्रति आश्वस्त नहीं होता है और उन पर भरोसा नहीं करता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता है। क्योंकि उसका मन उत्साह . . . [18] . . . और परिश्रम की ओर नहीं झुकता है, यह उस प्रकार का पहला मानसिक बंजरपन है जिसे उसने नहीं छोड़ा है।

(2) — (5) "फिर, एक भिक्षु धम्म के बारे में उलझन में है... संघ के बारे में उलझन में है... प्रशिक्षण के बारे में उलझन में है... अपने साथी भिक्षुओं से चिढ़ता है, उनसे नाराज़ है, उनके प्रति आक्रामक है, उनके प्रति दुर्भावना रखता है। जब एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं से चिढ़ता है, उनसे नाराज़ होता है, उनके प्रति आक्रामक होता है, उनके प्रति दुर्भावना रखता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता। चूंकि उसका मन उत्साह... और परिश्रम की ओर नहीं झुकता, यह पाँचवाँ प्रकार का मानसिक बंजरपन है जिसे उसने नहीं त्यागा है।"

"ये पांच प्रकार की मानसिक बंजरता है जिन्हें उसने नहीं त्यागा है।"

"मन के वे पाँच बंधन कौन से हैं जिन्हें उसने अभी तक दूर नहीं किया है?"

(6) "यहाँ, भिक्षु इंद्रिय सुखों के प्रति राग से रहित नहीं है, न ही उनके लिए इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा से रहित है। जब भिक्षु इंद्रिय सुखों के प्रति राग से रहित नहीं होता, न ही उनके लिए इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा से रहित होता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर प्रवृत्त नहीं होता, इसलिए यह मन का पहला बंधन है जिसे उसने अभी तक दूर नहीं किया है।"

(7) — (10) "फिर भी, भिक्षु शरीर के प्रति कामवासना (राग) से रहित नहीं होता, न ही उसमें इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) होती है। ... वह रूप के प्रति कामवासना (राग) से रहित नहीं होता, न ही उसमें इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) होती है। ... अपनी इच्छा अनुसार पेट भरकर भोजन करने के बाद, वह विश्राम, आलस्य और नींद के सुख में लीन रहता है। ... वह किसी विशेष देवक्रम में पुनर्जन्म की आकांक्षा रखते हुए ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करता है, यह सोचते हुए: 'इस पुण्य आचरण, पालन, तपस्या या ब्रह्मचर्य जीवन से मैं देव बनूंगा या देवक्रम के अनुयायियों में से एक बनूंगा।' देवों (देवदूतों/देवताओं) के बारे में। जब वह किसी विशेष देवों (देवदूतों/देवताओं) के क्रम में पुनर्जन्म की आकांक्षा रखते हुए ब्रह्मचर्य (पवित्र जीवन) व्यतीत करता है... तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर नहीं झुकता। [19] क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर नहीं झुकता, इसलिए यह मन का पाँचवाँ बंधन है जिसे उसने अभी तक दूर नहीं किया है।

"ये मन के वे पाँच बंधन हैं जिन्हें उसने अभी तक दूर नहीं किया है।"

यदि कोई भिक्षु या भिक्षुणी इन पाँच प्रकार के मानसिक बंजरपन का त्याग नहीं करता और मन के इन पाँच बंधनों को नष्ट नहीं करता, तो चाहे दिन हो या रात, उस व्यक्ति के लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि नहीं, बल्कि केवल गिरावट ही अपेक्षित है। जैसे कृष्ण पक्ष में, चाहे दिन हो या रात, चंद्रमा की सुंदरता, गोलाई, चमक, व्यास और परिधि में गिरावट ही होती है, उसी प्रकार, यदि कोई भिक्षु या भिक्षुणी इन पाँच प्रकार के मानसिक बंजरपन का त्याग नहीं करता, तो उस व्यक्ति के लिए केवल गिरावट ही अपेक्षित है।

"भिक्षुओं, यदि किसी भिक्षु या भिक्षुणी ने पांच प्रकार की मानसिक बंजरता का त्याग कर मन के पांच बंधनों को नष्ट कर दिया है, तो चाहे दिन हो या रात, उस व्यक्ति के लिए केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि ही अपेक्षित है, न कि गिरावट।"

और वे पाँच प्रकार की मानसिक बंजरता कौन सी हैं जिनका उसने त्याग कर दिया है?

(1) "यहाँ, भिक्षु गुरु के बारे में विचलित नहीं होता, उन पर संदेह नहीं करता, उनके प्रति आश्वस्त रहता है और उन पर भरोसा रखता है। जब भिक्षु गुरु के बारे में विचलित नहीं होता, उन पर संदेह नहीं करता, उनके प्रति आश्वस्त रहता है और उन पर भरोसा रखता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर प्रवृत्त होता है। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर प्रवृत्त होता है, इसलिए यह उस प्रकार की मानसिक बंजरता है जिसका उसने त्याग किया है।"

(2) — (5) "फिर, एक भिक्षु धम्म के बारे में परेशान नहीं होता... संघ के बारे में परेशान नहीं होता... प्रशिक्षण के बारे में परेशान नहीं होता [20] ... अपने साथी भिक्षुओं से चिढ़ता नहीं है, उनसे प्रसन्न रहता है, उनके प्रति आक्रामक नहीं होता, उनके प्रति अच्छा भाव रखता है। जब एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं से चिढ़ता नहीं है... उनके प्रति अच्छा भाव रखता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर झुकता है। चूंकि उसका मन उत्साह... और परिश्रम की ओर झुकता है, इसलिए यह पाँचवाँ प्रकार का मानसिक बंजरपन है जिसे उसने त्याग दिया है।

"ये पांच प्रकार की मानसिक बंजरता है जिनका उसने त्याग कर दिया है।"

"मन के वे पाँच बंधन कौन से हैं जिन्हें उन्होंने भलीभांति दूर कर दिया है?"

(6) "यहाँ भिक्षु इंद्रिय सुखों के प्रति राग से रहित है, और उनके लिए इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा से मुक्त है। जब भिक्षु इंद्रिय सुखों के प्रति राग से रहित होता है, और उनके लिए इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा से मुक्त होता है, तो उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और परिश्रम की ओर प्रवृत्त होता है। क्योंकि उसका मन उत्साह और परिश्रम की ओर प्रवृत्त होता है, इसलिए उसने मन के इस पहले बंधन को भलीभांति दूर कर दिया है।"

(7) -(10) "भिक्षु शरीर के प्रति कामवासना (राग) से रहित होता है, उसमें इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) नहीं होती; ... वह रूप के प्रति कामवासना (राग) से रहित होता है, उसमें इच्छा, स्नेह, प्यास, जुनून और तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) नहीं होती। ... वह अपनी इच्छा अनुसार पेट भरकर भोजन नहीं करता, न ही वह विश्राम, आलस्य या नींद के सुख में लीन रहता है। ... वह किसी विशेष देव-वंश में पुनर्जन्म की आकांक्षा रखते हुए ब्रह्मचर्य जीवन नहीं जीता, यह सोचकर: 'इस पुण्य आचरण, पालन, तपस्या या ब्रह्मचर्य जीवन से मैं देव या उनके अनुयायी बन जाऊँगा।'" देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के। चूंकि वह किसी विशेष देवक्रम में पुनर्जन्म की आकांक्षा रखते हुए ब्रह्मचर्य (पवित्र जीवन) नहीं जीता है... इसलिए उसका मन उत्साह, प्रयास, दृढ़ता और संघर्ष की ओर झुकता है। चूंकि उसका मन उत्साह और संघर्ष की ओर झुका हुआ है, इसलिए उसने मन के इस पाँचवें बंधन को भलीभांति दूर कर लिया है।

"ये मन के पाँच बंधन हैं जिन्हें उन्होंने भलीभांति उखाड़ फेंका है।"

यदि कोई भिक्षु या भिक्षुणी इन पाँच प्रकार की मानसिक बंजरता का त्याग कर मन के इन पाँच बंधनों को भली-भांति समाप्त कर दे, [21] तो चाहे रात हो या दिन, उस व्यक्ति में केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि ही अपेक्षित है, अवनति नहीं। जैसे शुक्ल पक्ष में, चाहे रात हो या दिन, चंद्रमा की सुंदरता, गोलाई और चमक, व्यास और परिधि में वृद्धि ही होती है, उसी प्रकार यदि कोई भिक्षु या भिक्षुणी इन पाँच प्रकार की मानसिक बंजरता का त्याग कर मन के इन पाँच बंधनों को भली-भांति समाप्त कर दे, तो चाहे रात हो या दिन, उस व्यक्ति में केवल लाभकारी (कुशल) गुणों में वृद्धि ही अपेक्षित है, अवनति नहीं।

15. सतर्कता (अप्पमादा)

(1) "भिक्षुओं, चाहे कितने भी प्राणी हों, चाहे वे निराकार हों या दो पैर वाले, चार पैर वाले या अनेक पैर वाले, चाहे सजीव हों या निराकार, चाहे बोधगम्य हों या अबोधगम्य, या न तो बोधगम्य हों और न ही अबोधगम्य, तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध पुरुष, उनमें सर्वोपरि घोषित किए जाते हैं। 1977 इसी प्रकार, सभी लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) जागरूकता में निहित हैं और जागरूकता में ही केंद्रित होते हैं, और जागरूकता उनमें सर्वोपरि घोषित की जाती है।

(2) "जिस प्रकार भूमि पर विचरण करने वाले सभी पशुओं के पदचिह्न हाथी के पदचिह्न में समाहित हो जाते हैं, और हाथी का पदचिह्न उनमें सबसे श्रेष्ठ घोषित किया जाता है, अर्थात् आकार के संबंध में, उसी प्रकार सभी लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) सतर्कता में निहित होते हैं और सतर्कता पर अभिसरित होते हैं, और सतर्कता उनमें सबसे श्रेष्ठ घोषित की जाती है।"

(3) "जिस प्रकार किसी शिखर वाले घर की सभी शहतीरें छत के शिखर की ओर झुकती हैं, छत के शिखर की ओर ढलान बनाती हैं, छत के शिखर पर अभिसरित होती हैं, और छत का शिखर उनमें सर्वोपरि घोषित किया जाता है, उसी प्रकार सभी लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) जागरूकता में निहित होते हैं और जागरूकता पर अभिसरित होते हैं, और जागरूकता उनमें सर्वोपरि घोषित की जाती है। [22]

(4) "जिस प्रकार सभी सुगंधित जड़ों में काली ओरिस को सबसे श्रेष्ठ माना जाता है, उसी प्रकार ...

(5) "जिस प्रकार सभी सुगंधित लकड़ियों में लाल चंदन को सर्वोपरि माना जाता है, उसी प्रकार..."

(6) "जिस प्रकार सभी सुगंधित फूलों में चमेली को सर्वोपरि माना जाता है, उसी प्रकार..."

(7) "जिस प्रकार सभी छोटे राजकुमार चक्र चलाने वाले सम्राट के अधीन होते हैं, और चक्र चलाने वाले सम्राट को उनमें सबसे श्रेष्ठ घोषित किया जाता है, उसी प्रकार..."

(8) "जिस प्रकार सभी तारों की चमक चंद्रमा की चमक के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं होती, और चंद्रमा की चमक को उनमें सर्वोपरि घोषित किया जाता है, उसी प्रकार..."

(9) "जैसे शरद ऋतु में, जब आकाश साफ और बादलों से रहित होता है, तो सूर्य आकाश में चढ़ते हुए अपनी चमक, किरणों और विकिरण से अंतरिक्ष से सभी अंधकार को दूर कर देता है, वैसे ही..."

(10) "जिस प्रकार सभी महान नदियाँ—अर्थात गंगा, यमुना, अचिरावती, सरभु और माही—समुद्र की ओर बहती हैं, समुद्र की ओर झुकती हैं, ढलान बनाती हैं और समुद्र को उनमें सर्वोपरि घोषित किया गया है, उसी प्रकार सभी लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) जागरूकता में निहित हैं और जागरूकता की ओर अभिसरित होते हैं, और जागरूकता को उनमें सर्वोपरि घोषित किया गया है।" [23]

---

16 उपहारों के योग्य [1978] (अहुनेय्या)

भिक्षुओं, ये दस व्यक्ति दान, आतिथ्य, भेंट और आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य हैं; ये संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र हैं। ये दस कौन हैं? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध; पच्चेकबुद्ध; दोनों रूपों में मुक्त; पन्ना (दिव्य ज्ञान) से मुक्त; देहधारी साक्षी; दृष्टि प्राप्त; आस्था से मुक्त; धम्म का अनुयायी; आस्था का अनुयायी; और कुल का सदस्य। ये दस व्यक्ति दान, आतिथ्य, भेंट और आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य हैं; ये संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र हैं।

---

17 रक्षक (1) (नाथा1)

"भिक्षु (साधु), संरक्षक के संरक्षण में रहते हैं, संरक्षक के बिना नहीं। संरक्षक के बिना रहने वाला दुख में लीन रहता है। ये दस गुण संरक्षक का कार्य करते हैं। 1975 वे दस गुण कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, एक भिक्षु गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। चूंकि एक भिक्षु गुणी है... उनका अभ्यास करता है, यह एक ऐसा गुण है जो रक्षक के रूप में कार्य करता है।"

(2) "फिर, एक भिक्षु ने बहुत कुछ सीखा है, वह सीखी हुई बातों को याद रखता है और उन्हें संजोता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों - ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से उनका अध्ययन किया है और दृष्टि से अच्छी तरह समझा है। चूंकि एक भिक्षु ने बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से अच्छी तरह समझा है, इसलिए यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

(3) "फिर, एक भिक्षु के अच्छे मित्र होते हैं, [24] अच्छे साथी होते हैं, अच्छे सहचर होते हैं। चूंकि एक भिक्षु के अच्छे मित्र होते हैं, अच्छे साथी होते हैं, अच्छे सहचर होते हैं, इसलिए यह एक ऐसा गुण है जो रक्षक के रूप में कार्य करता है।

(4) "फिर, भिक्षु को सुधारना आसान होता है और उसमें ऐसे गुण होते हैं जो उसे सुधारना आसान बनाते हैं; वह धैर्यवान होता है और आदरपूर्वक उपदेश ग्रहण करता है। चूंकि भिक्षु को सुधारना आसान होता है... और वह आदरपूर्वक उपदेश ग्रहण करता है, इसलिए यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

(5) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के लिए किए जाने वाले विभिन्न कार्यों को करने में कुशल और मेहनती होता है; वह उन्हें ठीक से करने और व्यवस्थित करने के लिए उनके बारे में सही निर्णय लेता है। चूंकि एक भिक्षु कुशल और मेहनती होता है... यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक के रूप में कार्य करता है।"

(6) "फिर, एक भिक्षु धम्म से प्रेम करता है और धम्म और अनुशासन से संबंधित उच्च आनंद से परिपूर्ण होकर, इरिस कथनों में प्रसन्नता प्रदान करता है।" 980 चूंकि एक भिक्षु (भिक्षु) धम्म से प्रेम करता है... यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक के रूप में कार्य करता है।

(7) "फिर, एक भिक्षु ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत किया है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) की खेती के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है। चूंकि एक भिक्षु ने ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत किया है... लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) की खेती के कर्तव्य का त्याग नहीं किया है, यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक के रूप में कार्य करता है। [25]

(8) "फिर, एक भिक्षु किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियों और भोजन सामग्री से संतुष्ट रहता है। चूंकि एक भिक्षु बीमारों के लिए किसी भी प्रकार की भोजन सामग्री से संतुष्ट रहता है, इसलिए यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

(9) "फिर, एक भिक्षु सचेत (ध्यान/सती) होता है, जो परम सजगता और सतर्कता से परिपूर्ण होता है, जो बहुत पहले किए और कहे गए कार्यों को याद रखता है और उनका स्मरण करता है। चूंकि एक भिक्षु सचेत (ध्यान/सती) होता है... और बहुत पहले किए और कहे गए कार्यों का स्मरण करता है, इसलिए यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

(10) "फिर, भिक्षु बुद्धिमान होता है; उसके पास वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) होता है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। चूंकि भिक्षु बुद्धिमान होता है... यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

"भिक्षुओं को संरक्षक के संरक्षण में रहना चाहिए, संरक्षक के बिना नहीं। संरक्षक के बिना रहने वाला दुख में लीन रहता है। ये दस गुण संरक्षक का कार्य करते हैं।"

---

18 रक्षक (2) (नाथा2)

भिक्षु (सन्यासी), संरक्षक के संरक्षण में रहते हैं, संरक्षक के बिना नहीं। संरक्षक के बिना रहने वाला दुख में लीन रहता है। ये दस गुण संरक्षक का कार्य करते हैं। वे दस गुण कौन से हैं?

(1) "यहाँ, एक भिक्षु गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, सुचारु आचरण और अच्छे आचरण से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। [विचार करने पर:] 'यह भिक्षु वास्तव में गुणी है... प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है,' वरिष्ठ भिक्षु, [26] मध्यम स्तर के भिक्षु और कनिष्ठ भिक्षु सोचते हैं कि उसे सुधारा और उपदेश दिया जाना चाहिए। चूंकि उन सभी को उस पर दया है, इसलिए उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि की अपेक्षा की जा सकती है, न कि गिरावट की। यह एक ऐसा गुण है जो रक्षक के रूप में कार्य करता है।"

(2) "एक भिक्षु ने बहुत कुछ सीखा है, उसे याद रखता है और अपने ज्ञान को संजोता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में अच्छी होती हैं... सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हैं—ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से अध्ययन किया है और दृष्टि से भलीभांति समझा है। [यह

देखकर:] 'इस भिक्षु ने वास्तव में बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से भलीभांति समझा है,' वरिष्ठ भिक्षु, मध्यम स्तर के भिक्षु और कनिष्ठ भिक्षु सोचते हैं कि उसे सुधारा और उपदेश दिया जाना चाहिए। चूंकि उन सभी को उस पर दया आती है, इसलिए उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि की अपेक्षा की जानी चाहिए, न कि पतन की। यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

(3) "एक भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी और अच्छे सहपाठी होते हैं। [यह देखकर कि] 'इस भिक्षु के वास्तव में अच्छे मित्र, अच्छे साथी और अच्छे सहपाठी हैं,' वरिष्ठ भिक्षु, मध्यम स्तर के भिक्षु और कनिष्ठ भिक्षु सोचते हैं कि उसे सुधारा और उपदेश दिया जाना चाहिए। चूंकि उन सभी को उस पर दया आती है, इसलिए उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि की अपेक्षा की जानी चाहिए, न कि गिरावट की। यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

(4) "एक भिक्षु को सुधारना आसान होता है और उसमें ऐसे गुण होते हैं जो उसे सुधारना आसान बनाते हैं; वह धैर्यवान होता है और आदरपूर्वक उपदेश ग्रहण करता है। [यह सोचकर कि:] 'यह भिक्षु वास्तव में सुधारना आसान है और उसमें ऐसे गुण हैं जो उसे सुधारना आसान बनाते हैं; वह धैर्यवान होता है और आदरपूर्वक उपदेश ग्रहण करता है,' वरिष्ठ भिक्षु, [27] मध्यम स्तर के भिक्षु और कनिष्ठ भिक्षु सोचते हैं कि उसे सुधारा और उपदेश दिया जाना चाहिए। चूंकि उन सभी को उस पर दया आती है, इसलिए उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों में वृद्धि की अपेक्षा की जानी चाहिए, न कि गिरावट की। यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

(5) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के लिए किए जाने वाले विभिन्न कार्यों को कुशलतापूर्वक और लगन से करता है; वह उन्हें ठीक से करने और व्यवस्थित करने के लिए उनमें उचित विवेक रखता है। [यह विचार करने पर:] 'यह भिक्षु वास्तव में कुशल और लगनशील है... ताकि वह उन्हें ठीक से कर सके और व्यवस्थित कर सके,' वरिष्ठ भिक्षु, मध्यम स्तर के भिक्षु और कनिष्ठ भिक्षु सोचते हैं कि उसे सुधारा और निर्देश दिया जाना चाहिए। चूंकि उन सभी को उस पर दया आती है, इसलिए उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि की अपेक्षा की जानी चाहिए, न कि गिरावट की। यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक के रूप में कार्य करता है।"

(6) "एक भिक्षु धम्म से प्रेम करता है और अपने कथनों में प्रसन्नता का भाव रखता है, वह धम्म और अनुशासन से संबंधित उच्च आनंद से परिपूर्ण होता है। [यह देखकर कि] 'यह भिक्षु वास्तव में धम्म से प्रेम करता है और अपने कथनों में प्रसन्नता का भाव रखता है, वह धम्म और अनुशासन से संबंधित उच्च आनंद से परिपूर्ण है,' वरिष्ठ भिक्षु, मध्यम स्तर के भिक्षु और कनिष्ठ भिक्षु सोचते हैं कि उसे सुधारा और उपदेश दिया जाना चाहिए। चूंकि उन सभी को उस पर दया आती है, इसलिए उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि की अपेक्षा की जानी चाहिए, न कि पतन की। यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

(7) "फिर, एक भिक्षु ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) की खेती के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है। [यह विचार करते हुए:] 'इस भिक्षु ने वास्तव में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है... [28]... लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) की खेती के कर्तव्य का त्याग नहीं किया है,' वरिष्ठ भिक्षु, मध्यम स्तर के भिक्षु और कनिष्ठ भिक्षु सोचते हैं कि उसे सुधारा और उपदेश दिया जाना चाहिए। चूंकि उन सभी को उस पर दया है, इसलिए उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि की अपेक्षा की जानी चाहिए, न कि गिरावट की। यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक के रूप में कार्य करता है।"

(8) "फिर, एक भिक्षु किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा भोजन, आवास और बीमारों के लिए औषधियों और भोजन से संतुष्ट रहता है। [यह देखकर कि यह भिक्षु वास्तव में किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा भोजन, आवास और बीमारों के लिए औषधियों और भोजन से संतुष्ट है, वरिष्ठ भिक्षु, मध्यम श्रेणी के भिक्षु और कनिष्ठ भिक्षु सोचते हैं कि उसे सुधारा और उपदेश दिया जाना चाहिए। चूंकि उन सभी को उस पर दया आती है, इसलिए उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों में वृद्धि की अपेक्षा की जानी चाहिए, न कि गिरावट की। यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

(9) "फिर, एक भिक्षु सचेत (ध्यान/सती) है, जो परम सजगता और जागरूकता से परिपूर्ण है, जो बहुत पहले किए और कहे गए कार्यों को याद रखता है। [विचार करने पर:] "यह भिक्षु वास्तव में सचेत (ध्यान/सती) है, परम सजगता और जागरूकता से परिपूर्ण है, जो बहुत पहले किए और कहे गए कार्यों को याद रखता है, इसलिए वरिष्ठ भिक्षु, मध्यम स्तर के भिक्षु और कनिष्ठ भिक्षु सोचते हैं कि उसे सुधारा और उपदेश दिया जाना चाहिए। चूंकि उन सभी को उस पर दया आती है, इसलिए उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि की अपेक्षा की जानी चाहिए, न कि गिरावट की। यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

(10) "एक भिक्षु बुद्धिमान होता है; उसके पास उत्पत्ति और क्षय को समझने वाला वह ज्ञान होता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। [यह सोचकर कि] 'यह भिक्षु वास्तव में बुद्धिमान है; उसके पास उत्पत्ति और क्षय को समझने वाला वह ज्ञान है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है,' वरिष्ठ भिक्षु, मध्यम स्तर के भिक्षु और कनिष्ठ भिक्षु सोचते हैं कि उसे सुधारा जाना चाहिए [29] और उपदेश दिया जाना चाहिए। चूंकि उन सभी को उस पर दया आती है, इसलिए उससे केवल लाभकारी (कुशल) गुणों में वृद्धि और ऋत्व में कमी की ही अपेक्षा की जा सकती है। यह भी एक ऐसा गुण है जो रक्षक का काम करता है।"

"भिक्षुओं को संरक्षक के संरक्षण में रहना चाहिए, संरक्षक के बिना नहीं। संरक्षक के बिना रहने वाला दुख में लीन रहता है। ये दस गुण संरक्षक का कार्य करते हैं।"

---

19 महान लोगों के निवास स्थान (1) (अरियावासा1)

"भिक्षुओं (साधुओं), ये दस निवास स्थान हैं जिनमें अतीत, वर्तमान और भविष्य के श्रेष्ठ जन निवास करते हैं। 1981 कौन से दस?"

"यहाँ, एक भिक्षु (1) पाँच कारकों का त्याग कर चुका है; (2) छह कारकों का स्वामी है; (3) उसका एक रक्षक (4) और चार आधार हैं; (5) उसने व्यक्तिगत सत्यों का निराकरण कर दिया है, (6) उसने खोज का पूर्णतः त्याग कर दिया है, (7) उसने अपने इरादों को शुद्ध कर लिया है, (8) उसने शारीरिक क्रियाओं को शांत कर लिया है, और (9) वह मन से पूर्णतः मुक्त हो गया है और (10) वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) से पूर्णतः मुक्त हो गया है। ये दस श्रेष्ठ लोक हैं जिनमें भूतकाल, वर्तमान काल या भविष्यकाल के श्रेष्ठ लोक निवास करते हैं।"

कुलीन लोगों के 20 निवास (2) (अरियावासा2)

एक बार भगवान (बुद्ध) कुरु नगर कम्मसदम्मा के पास कुरुओं के बीच निवास कर रहे थे। [30] वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया। . . . भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं, ये दस निवास स्थान हैं जिनमें श्रेष्ठ जन भूतकाल, वर्तमान काल या भविष्य काल में निवास करते हैं। वे दस कौन से हैं?"

"यहाँ, एक भिक्षु (1) ने पाँच कारकों का त्याग कर दिया है; (2) छह कारकों का स्वामी है; (3) उसका एक रक्षक (4) और चार आधार हैं; (5) उसने व्यक्तिगत सत्यों का निवारण कर दिया है, (6) उसने खोज का पूर्णतः त्याग कर दिया है, (7) उसने अपने इरादों को शुद्ध कर लिया है, (8) उसने शारीरिक गतिविधि को शांत कर दिया है, और (9) वह मन से पूर्णतः मुक्त हो गया है और (10) वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) से पूर्णतः मुक्त हो गया है।"

(1) "एक भिक्षु ने पाँच कारकों का त्याग कैसे किया है? यहाँ, एक भिक्षु ने कामुक इच्छा, द्वेष, सुस्ती और उन्मत्तता, बेचैनी और पश्चाताप, और संदेह का त्याग किया है। इस प्रकार एक भिक्षु ने पाँच कारकों का त्याग किया है।"

(2) "एक भिक्षु में छह गुण कैसे होते हैं? यहाँ, किसी रूप को आँख से देखकर, भिक्षु न तो प्रसन्न होता है और न ही दुखी, बल्कि समभाव, सती भाव और पूर्ण ज्ञान में लीन रहता है। किसी ध्वनि को कान से सुनकर... किसी गंध को नाक से सूंघकर... किसी स्वाद का अनुभव जीभ से करके... किसी वस्तु को स्पर्श करके... किसी मानसिक घटना को मन से जानकर, भिक्षु न तो प्रसन्न होता है और न ही दुखी, बल्कि समभाव, सती भाव और पूर्ण ज्ञान में लीन रहता है। 1982 इसी प्रकार एक भिक्षु में छह गुण होते हैं।"

(3) "और भिक्षु का एकमात्र रक्षक कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु का मन सती ध्यान द्वारा संरक्षित होता है। इसी प्रकार भिक्षु का एकमात्र रक्षक होता है।"

(4) "और भिक्षु के चार आधार कैसे होते हैं? यहाँ, चिंतन करने के बाद, भिक्षु कुछ चीजों का उपयोग करता है, अन्य चीजों को धैर्यपूर्वक सहन करता है, कुछ अन्य चीजों से बचता है और कुछ अन्य चीजों का निवारण करता है। इसी प्रकार भिक्षु के चार आधार होते हैं। [31]

(5) "एक भिक्षु व्यक्तिगत सत्यों का खंडन कैसे करता है? यहाँ, साधारण तपस्वियों और ब्राह्मणों द्वारा माने जाने वाले सामान्य व्यक्तिगत सत्य चाहे जो भी हों—अर्थात्, 'संसार शाश्वत है' या 'संसार शाश्वत नहीं है'; 'संसार सीमित है' या 'संसार अनंत है'; 'आत्मा और शरीर एक ही हैं' या 'आत्मा एक है और शरीर दूसरी'; 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान हैं' या 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी हैं' या 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी हैं और नहीं भी हैं' या 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान हैं और न ही नहीं हैं'—एक भिक्षु इन सभी का त्याग कर खंडन करता है, इन्हें छोड़ देता है, अस्वीकार कर देता है, त्याग देता है और त्याग देता है। इसी प्रकार एक भिक्षु व्यक्तिगत सत्यों का खंडन करता है।"

(6) "एक भिक्षु (साधु) ने खोज का पूर्ण त्याग कैसे किया है? यहाँ, एक भिक्षु ने इंद्रिय सुखों की खोज और अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की खोज को त्याग दिया है और ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की खोज को शांत कर दिया है। इस प्रकार एक भिक्षु ने खोज का पूर्ण त्याग किया है।"

(7) "एक भिक्षु ने अपने इरादों को कैसे शुद्ध किया है? यहाँ, एक भिक्षु ने कामुक इरादे, द्वेषपूर्ण इरादे और हानि पहुँचाने के इरादे का त्याग किया है। इसी प्रकार एक भिक्षु ने अपने इरादों को शुद्ध किया है।"

(8) "एक भिक्षु ने शारीरिक क्रियाओं को कैसे शांत किया है? यहाँ, सुख और दुख का त्याग करके, और पहले से ही आनंद और उदासी के दूर हो जाने के साथ, एक भिक्षु चौथे ध्यान (सतीत्व) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो न तो पीड़ादायक है और न ही सुखदायक, जिसमें उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्खा) द्वारा सती ध्यान का शुद्धिकरण होता है। इस प्रकार एक भिक्षु ने शारीरिक क्रियाओं को शांत किया है।"

(9) "एक भिक्षु मन से पूर्णतः मुक्त कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु का मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) से मुक्त होता है। इसी प्रकार एक भिक्षु मन से पूर्णतः मुक्त होता है।"

(10) "और भिक्षु को पन्ना (दिव्य ज्ञान) से पूर्णतः मुक्ति कैसे प्राप्त होती है? [32] यहाँ, भिक्षु समझता है: 'मैंने काम (राग) का त्याग कर दिया है, उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो; मैंने घृणा का त्याग कर दिया है... मोह (मोह) का त्याग कर दिया है, उसे जड़ से काट दिया है, उसे ताड़ के ठूंठ के समान बना दिया है, उसे मिटा दिया है ताकि वह भविष्य में फिर कभी उत्पन्न न हो।' इसी प्रकार भिक्षु को पन्ना (दिव्य ज्ञान) से पूर्णतः मुक्ति प्राप्त होती है।"

भिक्षुओं, अतीत में जितने भी श्रेष्ठ जन श्रेष्ठ निवासों में रहे, वे सभी इन्हीं दस श्रेष्ठ निवासों में रहे। भविष्य में जितने भी श्रेष्ठ जन श्रेष्ठ निवासों में रहेंगे, वे सभी इन्हीं दस श्रेष्ठ निवासों में रहेंगे। वर्तमान में जितने भी श्रेष्ठ जन श्रेष्ठ निवासों में रहते हैं, वे सभी इन्हीं दस श्रेष्ठ निवासों में रहते हैं।

"ये दस ऐसे निवास स्थान हैं जिनमें महान जन अतीत, वर्तमान या भविष्य में निवास करते हैं।"

III. महान अध्याय (महावग्गो संस्कृत: महा-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

21 शेर की दहाड़ (सिहानादा सं. सिंघा-नाडा)

भिक्षुओं, संध्याकाल में पशुओं का राजा सिंह अपनी मांद से निकलता है, शरीर फैलाता है, चारों दिशाओं का अवलोकन करता है, [33] और तीन बार सिंह की गर्जना करता है। फिर वह शिकार की तलाश में निकल पड़ता है। इसका क्या कारण है? [यह सोचकर:] 'मैं अपने रास्ते में आने वाले छोटे जीवों को हानि न पहुँचाऊँ।'

भिक्षुओं, सिंह तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति का प्रतीक है। जब तथागत (बुद्ध) किसी सभा को धम्म का उपदेश देते हैं, तो यह उनकी सिंह गर्जना होती है।

भिक्षुओं, तथागत बुद्ध की ये दस शक्तियाँ हैं, जिनके द्वारा वे प्रधान बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं। 1983 वे दस शक्तियाँ क्या हैं?

(1) "यहाँ तथागत (बुद्ध) यथार्थ को यथार्थ और असंभव को असंभव समझते हैं। चूँकि तथागत (बुद्ध) यथार्थ को यथार्थ और असंभव को असंभव समझते हैं, यही तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके कारण वे प्रधान बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं।"

(2) "तथागत (बुद्ध) कर्मों के फल को भूतकाल, भविष्यकाल और वर्तमान काल में संभावनाओं और कारणों के संदर्भ में यथार्थ रूप में समझते हैं। चूंकि तथागत (बुद्ध) कर्मों के फल को यथार्थ रूप में समझते हैं... यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके कारण वे ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं।"

(3) "तथागत (बुद्ध) वास्तव में सभी दिशाओं में ले जाने वाले मार्गों को समझते हैं। 1984 चूंकि तथागत (बुद्ध) वास्तव में सभी दिशाओं में ले जाने वाले मार्गों को समझते हैं, इसलिए यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके कारण वे... ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।"

(4) "फिर, तथागत (बुद्ध) [34] संसार को उसके अनेक और विविध तत्वों सहित जैसा वह वास्तव में है, समझते हैं। 1985 चूंकि तथागत (बुद्ध) संसार को उसके अनेक और विविध तत्वों सहित जैसा वह वास्तव में है, समझते हैं, यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके कारण... वे ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।

(5) "तथागत (बुद्ध) प्राणियों के स्वभाव में विविधता को यथावत समझते हैं। 1986 चूंकि तथागत (बुद्ध) प्राणियों के स्वभाव में विविधता को यथावत समझते हैं, इसलिए यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके कारण... वे ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।"

(6) "तथागत (बुद्ध) अन्य प्राणियों और व्यक्तियों की शक्तियों की श्रेष्ठ या निम्न स्थिति को यथावत समझते हैं। 1987 चूंकि तथागत (बुद्ध) अन्य प्राणियों और व्यक्तियों की शक्तियों की श्रेष्ठ या निम्न स्थिति को यथावत समझते हैं, यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके कारण... वे ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।"

(7) "तथागत (बुद्ध) ध्यान (सम्मोहन अवस्था), मुक्ति, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) और ध्यान संबंधी उपलब्धियों के संबंध में अशुद्धता, शुद्धि और उद्भव को यथार्थ रूप में समझते हैं। चूंकि तथागत (बुद्ध) ध्यान (सम्मोहन अवस्था) के संबंध में अशुद्धता, शुद्धि और उद्भव को यथार्थ रूप में समझते हैं... यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके कारण... वे ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।"

(8) "तथागत (बुद्ध) अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व जन्मों) का स्मरण करते हैं, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म, चार जन्म, पाँच जन्म, दस जन्म, बीस जन्म, तीस जन्म, चालीस [35] जन्म, पचास जन्म, सौ जन्म, हजार जन्म, एक लाख जन्म, विश्व-विनाश के अनेक युग, विश्व-विनाश और विश्व-विनाश के अनेक युग, इस प्रकार: 'वहाँ मेरा ऐसा नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरा ऐसा जीवनकाल था; वहाँ से निकलकर, मेरा कहीं और पुनर्जन्म हुआ, और वहाँ भी मेरा ऐसा ही नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरा ऐसा जीवनकाल था; वहाँ से निकलकर, मेरा कहीं और पुनर्जन्म हुआ, और वहाँ भी मेरा ऐसा ही नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरा ऐसा जीवनकाल था; वहाँ से निकलकर, मेरा कहीं और पुनर्जन्म हुआ वहाँ मेरा पुनर्जन्म हुआ।' इस प्रकार वे अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके स्वरूपों और विवरणों

सहित याद करते हैं। चूँकि तथागत (बुद्ध) अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके स्वरूपों और विवरणों सहित याद करते हैं, यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके कारण वे ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं।

(9) "फिर, शुद्ध और मनुष्य की दृष्टि से परे दिव्य दृष्टि से तथागत (बुद्ध) प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए, हीन और श्रेष्ठ, सुंदर और कुरूप, सौभाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, देखते हैं और वे समझते हैं कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है: 'जो प्राणी शरीर, वाणी और मन से दुराचार में लगे रहे, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा की, गलत मत रखा और गलत मत पर आधारित कर्म किए, वे शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं; परन्तु जो प्राणी शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण में लगे रहे, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा नहीं की, जिन्होंने सही मत रखा और सही मत पर आधारित कर्म किए, वे शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेते हैं।' इस प्रकार, शुद्ध और मनुष्य से परे दिव्य दृष्टि से, वे प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए, हीन और श्रेष्ठ, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली सभी को देखते हैं, और वे समझते हैं कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है। [36] चूंकि तथागत (बुद्ध) . . . समझते हैं कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है, यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके कारण ... वे ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।

(10) "फिर, दोषों के नाश के साथ, तथागत (बुद्ध) ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करते हैं। चूंकि तथागत (बुद्ध) ने स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है... यह भी तथागत (बुद्ध) की वह शक्ति है जिसके कारण तथागत (बुद्ध) प्रधान बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।"

"हे भिक्षुओं, ये तथागत (बुद्ध) की दस शक्तियाँ हैं, जिनके द्वारा वे प्रधान बैल का स्थान धारण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं।"

---

22 सैद्धांतिक सिद्धांत (अधिवुत्तिपदा)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"आनंद, मैं उन चीजों के बारे में आश्वस्त होने का दावा करता हूँ जो विभिन्न सैद्धांतिक सिद्धांतों के प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा अहसास की ओर ले जाती हैं, 1988 [और इस प्रकार मैं सक्षम हूँ] विभिन्न लोगों को विभिन्न तरीकों से धम्म सिखाने में ताकि जो तदनुसार अभ्यास करता है वह यह जान सके कि जो विद्यमान है वह विद्यमान है और जो विद्यमान नहीं है वह विद्यमान नहीं है; ताकि वह निम्न को निम्न और उच्च को उच्च के रूप में जान सके; ताकि वह यह जान सके कि जो श्रेष्ठ है वह श्रेष्ठ है और जो श्रेष्ठ नहीं है वह श्रेष्ठ नहीं है; ताकि [37] यह संभव है कि व्यक्ति इसे उसी प्रकार जाने, देखे और अहसास करे जैसे इसे जाना, देखा और अहसास किया जाना है।

लेकिन हे आनंद, ज्ञान में यह ज्ञान अद्वितीय है, अर्थात् इन चीजों और उन चीजों का उनके वास्तविक स्वरूप में ज्ञान। 1989 और मैं कहता हूँ, इससे उच्चतर या श्रेष्ठ कोई अन्य ज्ञान नहीं है।

"आनंद, तथागत (बुद्ध) की ये दस शक्तियाँ हैं, जिनके द्वारा वे प्रधान बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, सभाओं में सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्मचक्र को गतिमान करते हैं। वे दस शक्तियाँ कौन सी हैं? ..."

[जैसा कि 10:21 में है] [38]...

"ये, आनंद, तथागत (बुद्ध) की दस शक्तियाँ हैं जो तथागत (बुद्ध) के पास हैं, जिनके द्वारा वे प्रमुख बैल का स्थान ग्रहण करते हैं, सभाओं में अपने सिंह की गर्जना करते हैं और ब्रह्म चक्र को गतिमान करते हैं।" [39]

---

23 शरीर (काया)

भिक्षुओं, कुछ चीजों का त्याग शरीर से करना चाहिए, वाणी से नहीं। कुछ चीजों का त्याग वाणी से करना चाहिए, शरीर से नहीं। कुछ चीजों का त्याग न तो शरीर से करना चाहिए और न ही वाणी से, बल्कि बार-बार दर्शन (दिव्य ज्ञान) से करना चाहिए। 1990

हे भिक्षुओं, वे कौन से कर्म हैं जिनका त्याग शरीर से करना चाहिए, वाणी से नहीं? यहाँ, एक भिक्षु ने शरीर से कोई विशेष अकुशल कर्म किया है। उसके ज्ञानी साथी भिक्षु उससे पूछताछ करते हैं और कहते हैं: 'तुमने शरीर से कोई विशेष अकुशल कर्म किया है। यह वास्तव में अच्छा होगा यदि तुम शारीरिक दुराचार का त्याग कर सको और शारीरिक सुवाह्य आचरण अपना सको।' जब उसके ज्ञानी साथी भिक्षु उससे पूछताछ करते हैं और उससे बात करते हैं, तो वह शारीरिक दुराचार का त्याग कर सकूँ और शारीरिक सुवाह्य आचरण अपना सकूँ। इन्हें ही शरीर से त्यागने योग्य कर्म कहा जाता है, वाणी से नहीं।

और वे कौन सी बातें हैं जिनका त्याग वाणी से करना चाहिए, शरीर से नहीं? यहाँ, एक भिक्षु ने वाणी से एक विशेष अकुशल कर्म किया है। उसके ज्ञानी साथी भिक्षु उससे पूछताछ करते हैं और कहते हैं: 'तुमने वाणी से एक विशेष अकुशल कर्म किया है। यह वास्तव में अच्छा होगा यदि तुम वाणी के दुराचार का त्याग कर सको और वाणी के सुचार का अभ्यास कर सको।' जब उसके ज्ञानी साथी भिक्षु उससे पूछताछ करते हैं और उससे बात करते हैं, तो वह वाणी के दुराचार का त्याग कर वाणी के सुचार का अभ्यास कर लेता है। इन्हें वाणी से त्यागने योग्य बातें कहा जाता है, शरीर से नहीं।

और वे कौन सी चीजें हैं जिनका त्याग न तो शरीर से और न ही वाणी से करना चाहिए, बल्कि बार-बार पन्ना (दिव्य ज्ञान) से देखकर करना चाहिए? लोभ का त्याग न तो शरीर से और न ही वाणी से करना चाहिए, बल्कि बार-बार पन्ना (दिव्य ज्ञान) से देखकर करना चाहिए; घृणा... मोह... क्रोध... शत्रुता... निंदा... उद्दंडता [40]... कंजूसी का त्याग न तो शरीर से और न ही वाणी से करना चाहिए, बल्कि बार-बार पन्ना (दिव्य ज्ञान) से देखकर करना चाहिए।

भिक्षुओं, 1991 में वर्णित है कि बुरी ईर्ष्या का त्याग न तो शरीर से और न ही वाणी से करना चाहिए, बल्कि बार-बार दर्शन (दिव्य ज्ञान) से ही इसका त्याग करना चाहिए। और बुरी ईर्ष्या क्या है? उदाहरण के लिए, एक गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्र धन, अनाज, चांदी या सोने में समृद्ध हो रहा है। एक दास या आश्रित उसके बारे में सोच सकता है: 'हे भगवान, यह गृहस्थ या गृहस्थ का पुत्र धन, अनाज, चांदी या सोने में समृद्ध न हो!' या फिर एक तपस्वी या ब्राह्मण वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन प्राप्त करता है। दूसरा तपस्वी या ब्राह्मण उसके बारे में सोच सकता है: 'हे भगवान, यह पूजनीय व्यक्ति वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन प्राप्त न कर सके!' इसे बुरी ईर्ष्या कहते हैं। बुरी ईर्ष्या का त्याग न तो शरीर से और न ही वाणी से करना चाहिए, बल्कि बार-बार दर्शन (दिव्य ज्ञान) से ही इसका त्याग करना चाहिए।

भिक्षुओं, बुरी इच्छा का त्याग न तो शरीर से और न ही वाणी से किया जा सकता है, बल्कि बार-बार दर्शन (दिव्य ज्ञान) से किया जा सकता है। और बुरी इच्छा क्या है? यहाँ, एक अधर्मी व्यक्ति चाहता है: 'वे मुझे धर्मी के रूप में जानें।' एक अनैतिक व्यक्ति चाहता है: 'वे मुझे गुणी के रूप में जानें।' कम ज्ञान वाला व्यक्ति चाहता है: 'वे मुझे विद्वान के रूप में जानें।' संगति में आनंद लेने वाला व्यक्ति चाहता है: 'वे मुझे एकांतवासी के रूप में जानें।' एक आलसी व्यक्ति चाहता है: 'वे मुझे ऊर्जावान के रूप में जानें।' एक भ्रमित मन वाला व्यक्ति चाहता है: 'वे मुझे सती (ध्यान करने वाला) के रूप में जानें। एक असामंजस्यपूर्ण व्यक्ति चाहता है: 'वे मुझे एकाग्र (ध्यान करने वाला) के रूप में जानें। एक अज्ञानी व्यक्ति चाहता है: 'वे मुझे बुद्धिमान के रूप में जानें।' जिसके दोष नष्ट नहीं हुए हैं, वह चाहता है: 'वे मुझे दोष नष्ट हुए व्यक्ति के रूप में जानें।' [41] इसे बुरी इच्छा कहते हैं। बुरी इच्छा का त्याग न तो शरीर से और न ही वाणी से करना चाहिए, बल्कि बार-बार पन्ना (दिव्य ज्ञान) से देखकर करना चाहिए।

हे भिक्षुओं, यदि लोभ उस भिक्षु पर हावी हो जाए और बना रहे; यदि घृणा... मोह... क्रोध... शत्रुता... निंदा... उद्दंडता... कंजूसी... बुरी ईर्ष्या... बुरी इच्छा उस भिक्षु पर हावी हो जाए और बना रहे, तो उसे इस प्रकार समझा जाना चाहिए: 'यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार नहीं समझता कि उसमें लोभ न हो; इस प्रकार लोभ उस पर हावी हो जाता है और बना रहता है। यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार नहीं समझता कि उसमें घृणा... मोह... क्रोध... शत्रुता... निंदा... उद्दंडता... कंजूसी... बुरी ईर्ष्या... बुरी इच्छा न हो। इच्छा; इस प्रकार बुरी इच्छा उस पर हावी हो जाती है और बनी रहती है...

हे भिक्षुओं, यदि लोभ उस भिक्षु पर हावी न हो और वह बना न रहे; यदि घृणा, मोह, क्रोध, शत्रुता, निंदा, अभिमान, कंजूसी, ईर्ष्या, बुरी इच्छा उस भिक्षु पर हावी न हो और वह बना न रहे, तो उसे इस प्रकार समझा जाना चाहिए: 'यह पूजनीय भिक्षु इस प्रकार समझता है कि उसमें लोभ नहीं है; इस प्रकार लोभ उस पर हावी नहीं होता और वह बना नहीं रहता। यह पूजनीय भिक्षु इस प्रकार समझता है कि उसमें घृणा, मोह, क्रोध, शत्रुता, निंदा, अभिमान, कंजूसी, ईर्ष्या, बुरी इच्छा नहीं है; इस प्रकार बुरी इच्छा उस पर हावी नहीं होती और वह आगे नहीं बढ़ पाता।

---

24 महाकुंडा

एक बार पूज्य महाचुंडा सहजाति में चैतियों के बीच निवास कर रहे थे। वहाँ पूज्य महाचुंडा ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र!” उन [42] भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य महाकुंड ने यह कहा:

मित्रों, ज्ञान की घोषणा करते हुए, एक भिक्षु कहता है: 'मैं इस धम्म को जानता हूँ, मैं इस धम्म को देखता हूँ।' यदि लोभ उस भिक्षु पर हावी हो जाता है और बना रहता है; यदि घृणा... मोह... क्रोध... शत्रुता... निंदा... उद्दंडता... कंजूसी... बुरी ईर्ष्या... बुरी इच्छा उस भिक्षु पर हावी हो जाती है और बनी रहती है, तो उसे इस प्रकार समझा जाना चाहिए: 'यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार नहीं समझता कि उसमें लोभ न हो; इस प्रकार लोभ उस पर हावी हो जाता है और बना रहता है। यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार नहीं समझता कि उसमें घृणा... मोह... क्रोध... शत्रुता... निंदा... उद्दंडता न हो।' ... कंजूसी नहीं... बुरी ईर्ष्या नहीं... बुरी इच्छा नहीं; इस प्रकार बुरी इच्छा उस पर हावी हो जाती है और बनी रहती है।

मित्रों, विकास की घोषणा करते हुए एक भिक्षु कहता है: 'मैं शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में विकसित हूँ।' परन्तु यदि लोभ उस भिक्षु पर हावी हो जाए और बना रहे; यदि घृणा... बुरी इच्छा उस भिक्षु पर हावी हो जाए और बनी रहे, तो उसे इस प्रकार समझना चाहिए: 'यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार नहीं समझता कि उसमें लोभ न हो; अतः लोभ उस पर हावी हो जाता है और बना रहता है। यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार नहीं समझता कि उसमें घृणा... बुरी इच्छा न हो; अतः बुरी इच्छा उस पर हावी हो जाती है और बनी रहती है।'

"मित्रों, ज्ञान और विकास की घोषणा करते हुए, एक भिक्षु कहता है: 'मैं इस धम्म को जानता हूँ, मैं इस धम्म को देखता हूँ। मैं शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में विकसित हूँ।' यदि, फिर भी, लोभ उस भिक्षु पर हावी हो जाता है और बना रहता है; यदि घृणा... बुरी इच्छा [43] उस भिक्षु पर हावी हो जाती है और बनी रहती है, तो उसे इस प्रकार समझा जाना चाहिए: 'यह पूज्यवर इस प्रकार नहीं समझता कि उसमें लोभ न हो; इस प्रकार लोभ उस पर हावी हो जाता है और बना रहता है। यह पूज्यवर इस प्रकार नहीं समझता कि उसमें घृणा... बुरी इच्छा न हो; इस प्रकार बुरी इच्छा उस पर हावी हो जाती है और बनी रहती है।'"

मान लीजिए कि एक गरीब, निर्धन और जरूरतमंद व्यक्ति खुद को अमीर, धनी और समृद्ध होने का दावा करता है। यदि वह कुछ खरीदना चाहता है और उसके पास पैसे, अनाज, चांदी या सोने के पैसे नहीं हैं, तो लोग उसे एक गरीब, निर्धन और जरूरतमंद व्यक्ति के रूप में जानेंगे जो खुद को अमीर, धनी और समृद्ध होने का दावा कर रहा है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह कुछ खरीदना चाहता है और उसके पास पैसे, अनाज, चांदी या सोने के पैसे नहीं हैं।

"इसी प्रकार, मित्रों, ज्ञान और विकास की घोषणा करते हुए, एक भिक्षु कहता है: 'मैं इस धम्म को जानता हूँ, मैं इस धम्म को देखता हूँ। मैं शरीर, सद्गुणी आचरण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में विकसित हूँ।' यदि, फिर भी, लोभ उस भिक्षु पर हावी हो जाता है और बना रहता है... बुरी इच्छा उस भिक्षु पर हावी हो जाती है और बनी रहती है, तो उसे इस प्रकार समझा जाना चाहिए: 'यह पूज्यवर इस प्रकार नहीं समझता कि उसमें लोभ न हो; इस प्रकार लोभ उस पर हावी हो जाता है और बना रहता है। यह पूज्यवर इस प्रकार नहीं समझता कि उसमें घृणा न हो... [44]... कोई बुरी इच्छा न हो; इस प्रकार बुरी इच्छा उस पर हावी हो जाती है और बनी रहती है।"

मित्रों, ज्ञान की घोषणा करते हुए, एक भिक्षु कहता है: 'मैं इस धम्म को जानता हूँ, मैं इस धम्म को देखता हूँ।' यदि लोभ उस भिक्षु पर हावी नहीं होता और बना नहीं रहता; यदि घृणा... मोह... क्रोध... शत्रुता... निंदा... उद्दंडता... कंजूसी... बुरी ईर्ष्या... बुरी इच्छा उस भिक्षु पर हावी

नहीं होती और बनी नहीं रहती, तो उसे इस प्रकार समझा जाना चाहिए: 'यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार समझता है कि उसमें लोभ नहीं है; अतः लोभ उस पर हावी नहीं होता और बना नहीं रहता। यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार समझता है कि उसमें घृणा... बुरी इच्छा नहीं है; अतः बुरी इच्छा उस पर हावी नहीं होती और बनी नहीं रहती।'

मित्रों, विकास की घोषणा करते हुए एक भिक्षु कहता है: 'मैं शरीर, सद्गुण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में विकसित हूँ।' यदि लोभ उस भिक्षु पर हावी नहीं होता और बना नहीं रहता; यदि घृणा... बुरी इच्छा उस भिक्षु पर हावी नहीं होती और बनी नहीं रहती, तो उसे इस प्रकार समझा जाना चाहिए: 'यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार समझता है कि उसमें लोभ नहीं है; अतः लोभ उस पर हावी नहीं होता और बना नहीं रहता। यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार समझता है कि उसमें घृणा... बुरी इच्छा नहीं है; अतः बुरी इच्छा उस पर हावी नहीं होती और बनी नहीं रहती।'

"मित्रों, ज्ञान और विकास की घोषणा करते हुए, एक भिक्षु कहता है: 'मैं इस धम्म को जानता हूँ, मैं इस धम्म को देखता हूँ। मैं शरीर, सद्गुणी आचरण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में विकसित हूँ।' यदि लोभ उस भिक्षु पर हावी नहीं होता और बना नहीं रहता; यदि घृणा... बुरी इच्छा उस भिक्षु पर हावी नहीं होती और बनी नहीं रहती, तो उसे इस प्रकार समझा जाना चाहिए: 'यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार समझता है कि उसमें लोभ नहीं है; [45] इस प्रकार लोभ उस पर हावी नहीं होता और बना नहीं रहता। यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार समझता है कि उसमें घृणा... बुरी इच्छा नहीं है; इस प्रकार बुरी इच्छा उस पर हावी नहीं होती और बनी नहीं रहती।'

मान लीजिए कि एक धनी, संपन्न और धनवान व्यक्ति स्वयं को धनी, संपन्न और धनवान होने का दावा करता है। यदि वह कुछ खरीदना चाहता है और उसके पास पैसे, अनाज, चांदी या सोने के विकल्प उपलब्ध हैं, तो लोग उसे एक ऐसा धनी, संपन्न और धनवान व्यक्ति कहेंगे जो स्वयं को धनी, संपन्न और धनवान होने का दावा करता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह कुछ खरीदना चाहता है और उसके पास पैसे, अनाज, चांदी या सोने के विकल्प उपलब्ध हैं।

"इसी प्रकार, मित्रों, ज्ञान और विकास की घोषणा करते हुए, एक भिक्षु कहता है: 'मैं इस धम्म को जानता हूँ, मैं इस धम्म को देखता हूँ। मैं शरीर, सद्गुणी आचरण, मन और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में विकसित हूँ।' यदि लोभ उस भिक्षु पर हावी न हो और बना न रहे; यदि घृणा... मोह... क्रोध... शत्रुता... निंदा... उद्दंडता... कंजूसी... बुरी ईर्ष्या... बुरी इच्छा उस भिक्षु पर हावी न हो और बनी न रहे, तो उसे इस प्रकार समझा जाना चाहिए: 'यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार समझता है कि उसमें लोभ नहीं है; अतः लोभ उस पर हावी नहीं होता और बना नहीं रहता। यह आदरणीय भिक्षु इस प्रकार समझता है कि उसमें घृणा... बुरी इच्छा नहीं है; अतः बुरी इच्छा उस पर हावी नहीं होती और बनी नहीं रहती।" [46]

---

25 कसीना

भिक्षुओं, ये दस कसीना आधार हैं। 995 कौन से दस? एक व्यक्ति पृथ्वी कसीना को ऊपर, नीचे, आर-पार, अद्वैत, असीम रूप से अनुभव करता है। 1996 एक व्यक्ति जल कसीना... अग्नि कसीना... वायु कसीना... नीला कसीना... पीला कसीना... लाल कसीना... सफेद कसीना... आकाश कसीना... चेतना कसीना को ऊपर, नीचे, आर-पार, अद्वैत, असीम रूप से अनुभव करता है। ये दस कसीना आधार हैं।

---

26 काली

एक बार पूज्य महाकच्चना कुराघरा में पावट्टा पर्वत पर अवंती के लोगों के बीच निवास कर रहे थे। तब कुराघरा की महिला अनुयायी काली उनके पास आईं, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गईं और उनसे कहा: [1997]

"भंते, यह बात भगवान (बुद्ध) ने 'कन्याओं के प्रश्न' में कही थी: [1998]"

"सुखद और सुखद की सेना पर विजय प्राप्त करके, अकेले ध्यान करते हुए, मैंने परमानंद, लक्ष्य की प्राप्ति, हृदय की शांति का अनुभव किया। इसलिए मैं लोगों के साथ घनिष्ठ संबंध नहीं बनाता, न ही किसी के साथ घनिष्ठता को मेरे साथ मौका मिलता है" [47]

"हे भंते, भगवान (बुद्ध) द्वारा संक्षेप में कहे गए इस कथन का विस्तृत अर्थ कैसे समझा जा सकता है?"

"कुछ तपस्वियों और ब्राह्मणों ने, बहन, जिनके लिए पृथ्वी कसीना की प्राप्ति सर्वोच्च है, इसे अपना लक्ष्य बनाया। [1999] भगवान (बुद्ध) प्रत्यक्ष रूप से जानते थे कि पृथ्वी कसीना की प्राप्ति किस हद तक सर्वोच्च है। इसे प्रत्यक्ष रूप से जानकर, उन्होंने आरंभ, [2000] संकट और उससे मुक्ति देखी, और उन्होंने मार्ग और अपमार्ग का ज्ञान और दृष्टि देखी। आरंभ, संकट और उससे मुक्ति देखकर, और मार्ग और अपमार्ग का ज्ञान और दृष्टि देखकर, उन्होंने लक्ष्य की प्राप्ति, हृदय की शांति को जाना।"

"हे बहन, कुछ तपस्वियों और ब्राह्मणों के लिए, जिनके लिए जल कसीना, अग्नि कसीना, वायु कसीना, नीला कसीना, पीला कसीना, लाल कसीना, सफेद कसीना, आकाश कसीना... चेतना कसीना की प्राप्ति सर्वोच्च है, उन्होंने इसे अपना लक्ष्य बनाया। भगवान (बुद्ध) प्रत्यक्ष रूप से जानते थे कि चेतना कसीना की प्राप्ति किस हद तक सर्वोच्च है। इसे प्रत्यक्ष रूप से जानकर, उन्होंने आरंभ, खतरे और बचाव को देखा, और उन्होंने मार्ग और अपमार्ग के ज्ञान और दर्शन को देखा। आरंभ, खतरे और बचाव को देखकर, और मार्ग और अपमार्ग के ज्ञान और दर्शन को देखकर, उन्होंने लक्ष्य की प्राप्ति, हृदय की शांति को जाना।"

"इस प्रकार, बहन, भगवान (बुद्ध) ने 'कन्याओं के प्रश्न' में संक्षेप में जो कहा है, उसके अर्थ को विस्तार से समझने के लिए यही तरीका अपनाना चाहिए।"

"'सुखद और सुखद की सेना पर विजय प्राप्त करके, एकांत ध्यान करते हुए, मैंने परमानंद, लक्ष्य की प्राप्ति, हृदय की शांति का अनुभव किया। [48] इसलिए मैं लोगों के साथ घनिष्ठ संबंध नहीं बनाता, और न ही किसी के साथ घनिष्ठता मेरे लिए सफल होती है।'"

---

27 महान प्रश्न (1) (महापन्हा1 सं. महा-प्रश्न)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब सुबह, कई भिक्षुओं ने वस्त्र धारण किए, अपने भिक्षापात्र और वस्त्र लिए और भिक्षा मांगने के लिए सावत्थी में प्रवेश किया। तब उन भिक्षुओं के मन में यह विचार आया: "सावत्थी में भिक्षा मांगने के लिए अभी बहुत जल्दी है। चलो दूसरे संप्रदायों के तपस्वियों के उद्यान में चलते हैं।"

फिर वे भिक्षु दूसरे संप्रदायों के तपस्वियों के उद्यान में गए। उन्होंने उन तपस्वियों से अभिवादन किया और अभिवादन एवं सौहार्दपूर्ण वार्तालाप समाप्त होने पर एक तरफ बैठ गए। तब उन तपस्वियों ने उनसे कहा:

"मित्रों, तपस्वी गौतम अपने शिष्यों को धम्म की शिक्षा इस प्रकार देते हैं: 'आओ, भिक्षुओं, सभी घटनाओं (धम्म) को प्रत्यक्ष रूप से जानो। 2001 सभी घटनाओं (धम्म) को प्रत्यक्ष रूप से जानकर निवास करो।' 2002 हम भी अपने शिष्यों को धम्म की शिक्षा इस प्रकार देते हैं: 'आओ, मित्रों, सभी घटनाओं (धम्म) को प्रत्यक्ष रूप से जानो। सभी घटनाओं (धम्म) को प्रत्यक्ष रूप से जानकर निवास करो।' अब तपस्वी गौतम की धम्म शिक्षा और हमारी शिक्षा में, उनके निर्देश और हमारे निर्देश में क्या अंतर, क्या भिन्नता, क्या फर्क है?"

तब उन भिक्षुओं ने न तो उन तपस्वियों के कथन की सराहना की और न ही उसका खंडन किया। सराहना किए बिना, खंडन किए बिना, वे अपने स्थानों से उठे और यह सोचते हुए चले गए: "हम पता लगाएंगे कि भगवान (बुद्ध) इस कथन के बारे में क्या कहते हैं।"

फिर, जब वे भिक्षु सावत्थी में भिक्षा मांगने के लिए पैदल चले, तो भोजन करने के बाद, भिक्षा मांगने के बाद लौटकर वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "हे भंते, सुबह हमने वस्त्र धारण किए, अपने भिक्षापात्र और वस्त्र लिए और सावत्थी में भिक्षा मांगने के लिए प्रवेश किया... [वे यहाँ तक पूरी घटनाक्रम का वर्णन करते हैं:] [50] हम अपनी सीटों से उठे और चले गए, [यह सोचते हुए]: 'हम पता लगाएंगे कि भगवान (बुद्ध) इस कथन के बारे में क्या कहते हैं।"

भिक्षुओं, जब अन्य संप्रदायों के तपस्वी इस प्रकार बोलते हैं, तो उन्हें इस प्रकार उत्तर देना चाहिए: 'एक प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या। दो प्रश्न, उनका संक्षिप्त कथन, उनकी व्याख्या। तीन प्रश्न, उनका संक्षिप्त कथन, उनकी व्याख्या। चार प्रश्न, उनका संक्षिप्त कथन, उनकी व्याख्या। पाँच प्रश्न, उनका संक्षिप्त कथन, उनकी व्याख्या। छह प्रश्न, उनका संक्षिप्त कथन, उनकी व्याख्या। सात प्रश्न, उनका संक्षिप्त कथन, उनकी व्याख्या। आठ प्रश्न, उनका संक्षिप्त कथन, उनकी व्याख्या। नौ प्रश्न, उनका संक्षिप्त कथन, उनकी व्याख्या। दस प्रश्न, उनका संक्षिप्त कथन, उनकी व्याख्या। यदि अन्य संप्रदायों के तपस्वियों से इस प्रकार प्रश्न पूछे जाएँ, तो वे उत्तर देने में असमर्थ होंगे और आगे चलकर वे... दुःख का सामना करना पड़ेगा। किस कारण से? क्योंकि यह उनके अधिकार क्षेत्र में नहीं होगा। हे भिक्षुओं, इस संसार में, जिसमें देव (देवता), मार और ब्रह्मा हैं, इस जनसंख्या में, जिसमें तपस्वी और ब्राह्मण हैं, देव (देवता) और मनुष्य हैं, मुझे कोई ऐसा व्यक्ति नहीं दिखता जो तथागत (बुद्ध) या तथागत (बुद्ध) के शिष्य या उनसे सुनने वाले के अलावा इन प्रश्नों का उत्तर देकर मन को संतुष्ट कर सके।

(1) "जब यह कहा गया: 'एक के बारे में एक प्रश्न, एक के बारे में एक संक्षिप्त कथन, एक की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? 2004 जब एक भिक्षु किसी एक वस्तु से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उसके प्रति पूर्णतः वैरागी (विराग) हो जाता है, उससे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उसकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है, और उसके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है। वह एक वस्तु क्या है? सभी प्राणी पोषण (भोजन) के माध्यम से विद्यमान हैं। 2005 [51] जब एक भिक्षु इस एक वस्तु से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उसके प्रति पूर्णतः वैरागी (विराग) हो जाता है, उससे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उसकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है, और उसके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है।

"जब यह कहा गया: 'किसी एक के बारे में एक प्रश्न, किसी एक के बारे में एक संक्षिप्त कथन, किसी एक की व्याख्या' तो इसी के संदर्भ में यह कहा गया था।"

(2) जब यह कहा गया: 'दो के बारे में एक प्रश्न, दो के बारे में एक संक्षिप्त कथन; दो की व्याख्या,' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु दो चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः वैरागी हो जाता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो वह इसी जीवन में दुख का अंत कर देता है। वे दो चीजें क्या हैं? मन (नाम) और रूप (शरीर)। जब कोई भिक्षु इन दो चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है... तो वह इसी जीवन में दुख का अंत कर देता है।

"जब यह कहा गया था: 'दो के बारे में एक प्रश्न, दो के बारे में एक संक्षिप्त कथन, दो की व्याख्या' तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।"

(3) "जब यह कहा गया: 'तीन के बारे में एक प्रश्न, तीन के बारे में एक संक्षिप्त कथन, तीन की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु तीन चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः उदासीन (विराग) हो जाता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है। वे तीन चीजें क्या हैं? तीन प्रकार की संवेदनाएँ (वेदना, अर्थात् सुखद, दुखदायी, उदासीन)। 2006 जब कोई भिक्षु इन तीन चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है... तो इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है।"

"जब यह कहा गया था: 'तीन के बारे में एक प्रश्न, तीन के बारे में एक संक्षिप्त कथन, तीन की व्याख्या' तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।"

(4) "जब यह कहा गया: 'चार के बारे में एक प्रश्न, चार के बारे में एक संक्षिप्त कथन, चार की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? [52] जब कोई भिक्षु चार चीजों से पूर्णतः विरक्त (निबिद्दा) हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः उदासीन (विराग) हो जाता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है। वे चार चीजें क्या हैं? चार प्रकार के आहार। 2007 जब कोई भिक्षु इन चार चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है; ... इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है।

"जब यह कहा गया था: 'चार के बारे में एक प्रश्न, चार के बारे में एक संक्षिप्त कथन, चार की व्याख्या' तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।"

(5) जब यह कहा गया: 'पाँच के बारे में एक प्रश्न, पाँच के बारे में एक संक्षिप्त कथन, पाँच की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु पाँच चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः उदासीन (विराग) हो जाता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है। वे पाँच चीजें कौन सी हैं? वे पाँच स्कंध जो आसक्ति के अधीन हैं (उपदान खंड)। जब कोई भिक्षु इन पाँच चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है... तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है।

"जब यह कहा गया: 'पांच के बारे में एक प्रश्न, पांच के बारे में एक संक्षिप्त कथन, पांच की व्याख्या,' तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।"

(6) "जब यह कहा गया: 'छह के बारे में एक प्रश्न, छह के बारे में एक संक्षिप्त कथन, छह की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु छह चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः उदासीन (विराग) हो जाता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है। वे छह चीजें क्या हैं? छह आंतरिक इंद्रिय आधार (आयतन, अर्थात् आंखें, कान, नाक, स्वाद, स्पर्श और मन)। जब कोई भिक्षु इन छह चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है... तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है।"

"जब यह कहा गया: 'छह के बारे में एक प्रश्न, छह के बारे में एक संक्षिप्त कथन, छह की व्याख्या,' तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।"

(7) "जब यह कहा गया: 'सात के बारे में एक प्रश्न, सात के बारे में एक संक्षिप्त कथन, सात की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु सात चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः वैरागी हो जाता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है। वे सात चीजें क्या हैं? चेतना की सात अवस्थाएँ (विन्नान)। 2003 जब कोई भिक्षु इन सात चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है... तो इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है।"

"जब यह कहा गया था: 'सात के बारे में एक प्रश्न, सात के बारे में एक संक्षिप्त कथन, सात की व्याख्या' तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।"

(8) "जब यह कहा गया: 'आठ के बारे में एक प्रश्न, आठ के बारे में एक संक्षिप्त कथन, आठ की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु आठ चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः उदासीन (विराग) हो जाता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो इसी जीवन में वह दुखों का अंत कर देता है। वे आठ चीजें क्या हैं? आठ सांसारिक अवस्थाएँ (लोकधम्म)। 2009 जब कोई भिक्षु इन आठ चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है... तो इसी जीवन में वह दुखों का अंत कर देता है।"

"जब यह कहा गया: 'आठ के बारे में एक प्रश्न, आठ के बारे में एक संक्षिप्त कथन, आठ की व्याख्या,' तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।"

(9) "जब यह कहा गया: 'नौ के बारे में एक प्रश्न, नौ के बारे में एक संक्षिप्त कथन, नौ की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु नौ चीजों से पूरी तरह विरक्त हो जाता है, उनके प्रति पूरी तरह से उदासीन हो जाता है, उनसे पूरी तरह से मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूरी तरह से देख लेता है, और उनके अर्थ को पूरी तरह से तोड़ देता है, तो इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है। वे नौ चीजें क्या हैं? प्राणियों के नौ निवास (सत्तवास)। 2010 [54] जब कोई भिक्षु इन नौ चीजों से पूरी तरह विरक्त हो जाता है... इसी जीवन में वह दुख का अंत कर देता है।

"जब यह कहा गया: 'नौ के बारे में एक प्रश्न, नौ के बारे में एक संक्षिप्त कथन, नौ की व्याख्या,' तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।"

(10) जब यह कहा गया: "दस के बारे में एक प्रश्न, दस के बारे में एक संक्षिप्त कथन, दस की व्याख्या" तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु दस चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः वैरागी (वीरग) हो जाता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो

जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो इसी जीवन में वह दुखों का अंत कर देता है। वे दस चीजें कौन सी हैं? कर्मों के दस हानिकारक (अकुशल) मार्ग। 2011 जब कोई भिक्षु इन दस चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः वैरागी (वीरग) हो जाता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो इसी जीवन में वह दुखों का अंत कर देता है।

"जब यह कहा गया: 'दस के बारे में एक प्रश्न, दस के बारे में एक संक्षिप्त कथन, दस की व्याख्या' तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।"

---

28 महान प्रश्न (2) (महापन्हा2 सं. महा-प्रश्न)

एक बार भगवान (बुद्ध) काजहगला में बांस के वन में निवास कर रहे थे। तब काजहगला के कई अनुयायी काजहगला की भिक्षुणी के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"हे पूज्य महिला, भगवान (बुद्ध) ने 'महान प्रश्न' में यह कहा है: 'एक प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या। दो प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या। तीन प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या। [55] चार प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या। पाँच प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या। छह प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या। सात प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या। आठ प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या। नौ प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या। दस प्रश्न, उसका संक्षिप्त कथन, उसकी व्याख्या।' हे पूज्य महिला, भगवान (बुद्ध) द्वारा संक्षेप में कहे गए इस कथन का अर्थ विस्तार से कैसे समझा जा सकता है?"

"मित्रों, मैंने यह बात न तो भगवान (बुद्ध) की उपस्थिति में सुनी है और न ही आदरणीय भिक्षुओं की उपस्थिति में सुनी है। फिर भी, ध्यान से सुनें और समझें कि मैं इसका क्या अर्थ समझता हूँ।"

"जी, हे परम पूज्य देवी," काजहगला के उन अनुयायियों ने उत्तर दिया। काजहगला की भिक्षुणी ने यह कहा:

(1) जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'एक के बारे में एक प्रश्न, एक के बारे में एक संक्षिप्त कथन, एक की व्याख्या', तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु किसी एक वस्तु से पूर्णतः विरंजित हो जाता है, उसके प्रति पूर्णतः उदासीन (विरग) हो जाता है, उससे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उसकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उसके अर्थ को पूर्णतः समझ लेता है, तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है। वह एक वस्तु क्या है? सभी प्राणी पोषण (भोजन/स्वाद) से अस्तित्व में हैं। जब कोई भिक्षु इस एक वस्तु से पूर्णतः विरंजित हो जाता है, उसके प्रति पूर्णतः उदासीन हो जाता है, उससे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उसकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उसके अर्थ को पूर्णतः समझ लेता है, तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है।

जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'किसी एक के बारे में एक प्रश्न, किसी एक के बारे में एक संक्षिप्त कथन, किसी एक की व्याख्या', तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था;

(2) “जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'दो के बारे में एक प्रश्न, दो के बारे में एक संक्षिप्त कथन, दो की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु दो चीजों से पूर्णतः विरक्त हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः वैराग्य रखता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः भेद देता है, तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है। वे दो चीजें क्या हैं? मन (नाम) और रूप (शरीर)। . . .”

(3) ... "वे तीन चीजें क्या हैं? तीन प्रकार की संवेदनाएँ (वेदना)। जब कोई भिक्षु इन तीनों चीजों से पूरी तरह विरक्त हो जाता है... इसी जीवन में वह दुखों का अंत कर देता है।

जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'तीन के बारे में एक प्रश्न, तीन के बारे में एक संक्षिप्त कथन, तीन की व्याख्या', तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।

(4) "जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'चार के बारे में एक प्रश्न; चार के बारे में एक संक्षिप्त कथन, चार की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब किसी भिक्षु का मन इन चार चीजों में पूर्णतः विकसित हो जाता है, वह उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः समझ लेता है, तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर लेता है। 2013 वे चार चीजें क्या हैं? ध्यान (सती) की चार अवस्थाएँ। जब किसी भिक्षु का मन इन चार चीजों में पूर्णतः विकसित हो जाता है... तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर लेता है।"

जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: "चार के बारे में एक प्रश्न, चार के बारे में एक संक्षिप्त कथन, चार की व्याख्या", तो इसी के संदर्भ में यह कहा गया था।

(5) — (8) "जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'पाँच के बारे में एक प्रश्न, पाँच के बारे में एक संक्षिप्त कथन, पाँच की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब किसी भिक्षु का मन पाँच चीजों में पूर्णतः विकसित हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है, और उनके अर्थ को पूर्णतः समझ लेता है, तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर लेता है। वे पाँच चीजें क्या हैं? पाँच इंद्रियाँ (इंद्रियाँ)। 2014 . . . वे छह चीजें क्या हैं? [57] मुक्ति के छह तत्व। 2015 . . . वे सात चीजें क्या हैं? ज्ञान के सात कारक। . . .. वे आठ चीजें क्या हैं? आर्य अष्टांगिक मार्ग। जब किसी भिक्षु का मन इन आठ चीजों में पूर्णतः विकसित हो जाता है ... तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर लेता है। .

"जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'आठ के बारे में एक प्रश्न, आठ के बारे में एक संक्षिप्त कथन, आठ की व्याख्या' तो इसी के संदर्भ में यह कहा गया था।"

(9) जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'नौ के बारे में एक प्रश्न, नौ के बारे में एक संक्षिप्त कथन, नौ की व्याख्या,' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब कोई भिक्षु नौ चीजों से पूर्णतः विरंजित हो जाता है, उनके प्रति पूर्णतः उदासीन (विरग) हो जाता है, उनसे पूर्णतः मुक्त हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः समझ लेता है, तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है। वे नौ चीजें कौन सी हैं? प्राणियों के नौ धाम। जब कोई भिक्षु इन नौ चीजों से पूर्णतः विरंजित हो जाता है... तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर देता है।

जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'नौ के बारे में एक प्रश्न, नौ के बारे में एक संक्षिप्त कथन, नौ की व्याख्या', तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।

(10) "जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'दस के बारे में एक प्रश्न, दस के बारे में एक संक्षिप्त कथन, दस की व्याख्या' तो यह किसके संदर्भ में कहा गया था? जब किसी भिक्षु का मन दस चीजों में पूर्णतः विकसित हो जाता है, उनकी सीमाओं को पूर्णतः देख लेता है और उनके अर्थ को पूर्णतः समझ लेता है, तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर लेता है। वे दस चीजें क्या हैं? कर्मों के दस लाभकारी (कुशल) क्रम। [58] जब किसी भिक्षु का मन इन दस चीजों में पूर्णतः विकसित हो जाता है... तो वह इसी जीवन में दुखों का अंत कर लेता है।

"जब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'दस के बारे में एक प्रश्न, दस के बारे में एक संक्षिप्त कथन, दस की व्याख्या', तो यह इसी के संदर्भ में कहा गया था।"

अतः मित्रों, जब भगवान (बुद्ध) ने 'महान प्रश्न' में कहा: 'एक प्रश्न, उसका संक्षिप्त उत्तर, उसकी व्याख्या... दस प्रश्न, दस का संक्षिप्त उत्तर, दस की व्याख्या', तो इस प्रकार से मैं भगवान (बुद्ध) के इस संक्षिप्त कथन का अर्थ विस्तार से समझ पाता हूँ। परन्तु यदि आप चाहें, तो भगवान (बुद्ध) के पास जाकर इस विषय पर उनसे प्रश्न करें। भगवान (बुद्ध) जैसा उत्तर दें, वैसा ही आप भी उसे याद रखें।

"जी, परम पूज्य देवी," कहते हुए, काजहगला के वे अनुयायी काजहगला की भिक्षुणी के कथन से प्रसन्न और आनंदित हुए। फिर वे अपने स्थानों से उठे, उन्हें प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और भगवान (बुद्ध) के पास गए। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और काजहगला की भिक्षुणी के साथ हुई अपनी सारी चर्चा भगवान (बुद्ध) को बताई। [भगवान (बुद्ध) ने कहा:]

"अच्छे गृहस्थों, अच्छे! काजहगला की भिक्षुणी बुद्धिमान और महान ज्ञान से परिपूर्ण हैं। यदि आप मुझसे इस विषय पर पूछते, तो मैं [59] ठीक वही उत्तर देता जो काजहगला की भिक्षुणी ने दिया है। यही इसका अर्थ है, और इसी प्रकार आपको इसे ध्यान में रखना चाहिए।"

---

29 कोसला (1)

(1) "भिक्षुओं, काशी और कोसल की सीमा तक, कोसल के राजा पसेनदी के राज्य की सीमा तक, कोसल के राजा पसेनदी सर्वोपरि हैं। परन्तु राजा पसेनदी के राज्य में भी परिवर्तन होता है; बदलाव होता रहता है। यह देखकर, शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य इससे विरक्त हो जाता है; विरक्त होकर वह सर्वोपरि के प्रति भी उदासीन (विरग) हो जाता है, निम्न के प्रति तो वह निःसंकोच ही होता है।"

(2) "भिक्षुओं, जिस प्रकार सूर्य और चंद्रमा परिक्रमा करते हुए अपनी चमक से दिशाओं को प्रकाशित करते हैं, उसी प्रकार यह हजार प्रकार की विश्व व्यवस्था फैली हुई है। उस हजार प्रकार की विश्व व्यवस्था में हजार चंद्रमा, हजार सूर्य, हजार शिनेरु पर्वतों के राजा, हजार जंबूद्वीप (भारत), हजार अपरागोयन, हजार उत्तरकुर, हजार पुब्बाविदेह और हजार चार महामहासागर हैं; हजार चार महामहाराज, हजार महामहाराजों द्वारा शासित स्वर्ग, हजार तावतिंसा, हजार यम, हजार तुषिता, सृष्टि में आनंदित होने वाले हजार देवों के स्वर्ग, दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले हजार देवों के स्वर्ग और हजार ब्रह्म लोक हैं। हे भिक्षुओं, जिस प्रकार यह हजार प्रकार की विश्व व्यवस्था फैली हुई है, उसी प्रकार महाब्रह्मा वह सर्वोपरि है। परन्तु महाब्रह्मा के लिए भी परिवर्तन होता है; बदलाव होता है। यह देखकर, ज्ञानी शिष्य उससे विरक्त हो जाता है; विरक्त होकर वह सर्वोपरि के प्रति भी उदासीन हो जाता है, निम्नतर के प्रति तो वह निःसंवेदी ही होता है।

(3) "भिक्षुओं, एक समय ऐसा आता है जब यह संसार विलीन हो जाता है। जब संसार विलीन होने लगता है, तब अधिकांश प्राणी प्रकाशमान देवों (देवदूतों/देवताओं) के पास चले जाते हैं। 2017 वहाँ वे मन से विलीन होते हैं, आनंद (पीति) का उपभोग करते हैं, स्वयंप्रकाशित होते हैं, आकाश में विचरण करते हैं, महिमा में निवास करते हैं, और वे बहुत लंबे समय तक इसी अवस्था में रहते हैं। जब संसार विलीन होने लगता है, तब प्रकाशमान देव (देवदूत/देवता) सर्वोच्च स्थान पर होते हैं। परन्तु इन देवों (देवदूतों/देवताओं) में भी परिवर्तन होता है; परिवर्तन होता है। इसे देखकर, ज्ञानी शिष्य इससे विरक्त हो जाता है; विरक्त होकर वह सर्वोच्च के प्रति भी उदासीन (विरग) हो जाता है, निम्नतर के प्रति तो वह निःसंकोच ही होता है।"

(4) "भिक्षुओं, ये दस कसिणा आधार हैं। [2018] कौन से दस? एक व्यक्ति पृथ्वी कसिणा को ऊपर, नीचे, आर-पार, अविभाजित, असीम रूप से अनुभव करता है। एक व्यक्ति जल कसिणा... अग्नि कसिणा... वायु कसिणा... नीला कसिणा... पीला कसिणा... लाल कसिणा... सफेद कसिणा... आकाश कसिणा... चेतना कसिणा को ऊपर, नीचे, आर-पार, अविभाजित, असीम रूप से अनुभव करता है। ये दस कसिणा आधार हैं। इन दस कसिणा आधारों में से, यह सबसे प्रमुख है, अर्थात्, जब कोई चेतना कसिणा को ऊपर, नीचे, आर-पार, अविभाजित, असीम रूप से अनुभव करता है। ऐसे प्राणी हैं जो इस प्रकार से बोधगम्य हैं। लेकिन ऐसे प्राणियों के लिए भी परिवर्तन; बदलाव है। इसे देखकर, [61] भिक्षुओं, शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य इससे विरक्त हो जाता है; विरक्त होकर वह श्रेष्ठतम के प्रति भी उदासीन (विराग) हो जाता है, निम्नतम की तो बात ही क्या।

(5) "भिक्षुओं (मठवासियों), विजय प्राप्त करने के ये आठ आधार हैं। 2019 कौन से आठ?

(i) "रूपों को आंतरिक रूप से समझने वाला व्यक्ति बाहरी रूप भी देखता है। सीमित, सुंदर या बदसूरत। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'। यही विजय प्राप्त करने का पहला आधार है।"

(ii) "रूपों को आंतरिक रूप से समझने वाला व्यक्ति बाहरी रूप से, असीम, सुंदर या कुरूप रूप देखता है। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'।" यह विजय प्राप्त करने का दूसरा आधार है।

(iii) "जो व्यक्ति आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से ही रूपों को देखता है, चाहे वे सीमित हों, सुंदर हों या बदसूरत। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देख पाता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'। यह विजय प्राप्त करने का तीसरा आधार है।"

(iv) "जो व्यक्ति आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से, असीम, सुंदर या कुरूप रूप देखता है। उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देख पाता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'। यह विजय प्राप्त करने का चौथा आधार है।"

(v) "जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से नीले रंग के रूप देखता है, नीले रंग की, नीले रंगत वाली, नीले रंग से आभास वाली। जैसे अलसी का फूल नीला होता है, नीले रंग का होता है, नीले रंगत वाला होता है, नीले रंग से आभास वाला होता है, या जैसे दोनों तरफ से चिकना किया हुआ बरनासी कपड़ा नीला होता है, नीले रंग का होता है, नीले रंगत वाला होता है, नीले रंग से आभास वाला होता है, वैसे ही जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से नीले रंग के रूप देखता है। ... उन पर विजय प्राप्त करके, वह इस प्रकार देख पाता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'। यह विजय प्राप्त करने का पाँचवाँ आधार है।"

(vi) "जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से पीले रंग के, पीले रंग से आभास देने वाले रूप देखता है। जैसे कनिकारा का फूल पीला होता है, पीले रंग का, पीले रंग से आभास देने वाला, पीले रंग से आभास देने वाला, या जैसे दोनों ओर से चिकना किया हुआ बरनासी का कपड़ा [62] पीला होता है, पीले रंग का, पीले रंग से आभास देने वाला, पीले रंग से आभास देने वाला, उसी प्रकार, जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से पीले रंग के रूप देखता है। ... उन पर विजय प्राप्त करके, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'। यह विजय प्राप्त करने का छठा आधार है।"

(vii) "जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाह्य रूप से लाल रंग के रूप देखता है, जिनमें लाल रंग की आभा होती है। जैसे बंधुजीवका का फूल लाल रंग का होता है, या जैसे दोनों ओर से चिकना किया हुआ बरनासी का कपड़ा लाल रंग का होता है, उसी प्रकार जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाह्य रूप से लाल रंग के रूप देखता है। ... उन पर विजय प्राप्त करके, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'। यह विजय प्राप्त करने का सातवाँ आधार है।"

(viii) "जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से श्वेत रूप देखता है, जो श्वेत रंग के होते हैं, श्वेत आभा वाले होते हैं, श्वेत रंग के होते हैं। जैसे भोर का तारा श्वेत होता है, श्वेत रंग का होता है, श्वेत आभा वाला होता है, श्वेत रंग का होता है, या जैसे दोनों ओर से चिकना किया हुआ बरनासी कपड़ा श्वेत होता है, श्वेत रंग का होता है, श्वेत आभा वाला होता है, उसी प्रकार, जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाहरी रूप से श्वेत रूप देखता है। इन रूपों पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार देखता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'। यह विजय प्राप्त करने का आठवाँ आधार है।"

ये विजय प्राप्त करने के आठ आधार हैं। इन आठ आधारों में से सर्वोपरि यह है कि जो आंतरिक रूप से रूपों को नहीं देख पाता, वह बाह्य रूप से श्वेत रूप देखता है, जो रंग में श्वेत और आभास में श्वेत होते हैं, और उन पर विजय प्राप्त करके वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ।' ऐसे प्राणी हैं जो इस प्रकार बोध करते हैं। परन्तु जो प्राणी इस प्रकार बोध करते हैं, उनमें भी परिवर्तन होता है। इसे देखकर, शिक्षित श्रेष्ठ शिष्य इससे विरक्त हो जाता है; विरक्त होकर वह सर्वोपरि के प्रति उदासीन हो जाता है, निम्न के प्रति तो वह निःसंकोच ही होता है।

(6) "भिक्षुओं, अभ्यास के ये चार तरीके हैं। 2020 वे चार क्या हैं? सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से पीड़ादायक अभ्यास; त्वरित प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से पीड़ादायक अभ्यास; सुस्त प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से सुखद अभ्यास; और त्वरित प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से सुखद अभ्यास। ये अभ्यास के चार तरीके हैं। इन चारों तरीकों में से, यह सबसे प्रमुख है, अर्थात् त्वरित प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से सुखद अभ्यास। ऐसे प्राणी हैं जो इस प्रकार अभ्यास करते हैं। लेकिन इस प्रकार अभ्यास करने वाले प्राणियों में भी परिवर्तन होता है; बदलाव होता है। इसे देखकर, प्रबुद्ध शिष्य इससे विरक्त हो जाता है; विरक्त होकर, वह सबसे प्रमुख के प्रति उदासीन हो जाता है, निम्नतर के प्रति तो निःसंकोच।

(7) "भिक्षुओं, ये चार प्रकार की अनुभूतियाँ (सन्ना/संज्ञा) हैं। कौन से चार प्रकार? एक व्यक्ति सीमित को देखता है; दूसरा उच्चतर को देखता है; तीसरा असीम को देखता है; और तीसरा, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, शून्यता के क्षेत्र (आयतन) का अनुभव करता है।

2021 ये चार प्रकार की अनुभूतियाँ (सन्ना/संज्ञा) हैं। इन चार प्रकार की अनुभूतियों में से, यह प्रमुख है, अर्थात्, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, शून्यता के क्षेत्र (आयतन) का अनुभव होता है। ऐसे प्राणी हैं जो इस प्रकार अनुभव करते हैं। परन्तु इस प्रकार अनुभव करने वाले प्राणियों में भी परिवर्तन होता है; परिवर्तन होता है। इसे देखकर, ज्ञानी श्रेष्ठ शिष्य इससे विरक्त हो जाता है; विरक्त होकर, वह प्रमुख के प्रति उदासीन हो जाता है, निम्नतर के प्रति तो निःसंकोच।

(8) "भिक्षुओं, बाहरी लोगों द्वारा रखे गए चिंतनशील विचारों में, यह सबसे प्रमुख है, अर्थात्: 'मैं न भी होऊं और यह मेरा न हो; मैं न तो होऊंगा और न ही मेरा होगा।' 2022 क्योंकि यह अपेक्षित है कि ऐसा विचार रखने वाला व्यक्ति न तो अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) [64] से विमुख होगा और न ही अस्तित्व के समाप्त होने (भावो/पुनर्जन्म का कारण) से विमुख होगा। 2023 ऐसे प्राणी हैं जो ऐसा विचार रखते हैं। परन्तु ऐसे विचार रखने वाले प्राणियों में भी परिवर्तन होता है; परिवर्तन होता है। इसे देखकर, दीक्षित श्रेष्ठ शिष्य इससे विरक्त हो जाता है; विरक्त होकर वह सर्वोपरि के प्रति उदासीन हो जाता है, और निम्नतर के विषय में वाक्पटु हो जाता है।

(9) "भिक्षुओं, कुछ तपस्वी और ब्राह्मण हैं जो परम शुद्धि का प्रचार करते हैं। 2024 परम शुद्धि का प्रचार करने वालों में सबसे प्रमुख यह है कि शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, व्यक्ति न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। वे इस ज्ञान (अभिन) और अनुभूति के प्रत्यक्ष अनुभव के लिए अपने धर्म का उपदेश देते हैं। ऐसे प्राणी हैं जो ऐसा दावा करते हैं। परन्तु जो ऐसा दावा करते हैं, उनमें भी परिवर्तन होता है; परिवर्तन होता है। इसे देखकर, प्रबुद्ध शिष्य इससे विरक्त हो जाता है; विरक्त होकर वह सर्वोत्कृष्ट के प्रति भी उदासीन (विरग) हो जाता है, निम्नतर के प्रति तो वह निःसंकोच ही होता है।

(10) "भिक्षुओं, कुछ तपस्वी और ब्राह्मण ऐसे हैं जो इसी जीवन में परम निर्वाण की घोषणा करते हैं। 2025 जो इसी जीवन में परम निर्वाण की घोषणा करते हैं, उनमें सबसे प्रमुख यह है कि उत्पत्ति और मृत्यु, छह इंद्रियों के संपर्क में आने से होने वाली संतुष्टि, खतरे और उससे मुक्ति को वास्तविक रूप में देखने के बाद आसक्ति रहित होकर मुक्ति प्राप्त करना।"

"भिक्षुओं, यद्यपि मैं अपने उपदेशों का इस प्रकार अभिकथन और घोषणा करता हूँ, फिर भी कुछ तपस्वी और ब्राह्मण असत्य, निराधार, झूठे और गलत तरीके से मेरा गलत अर्थ निकालते हैं, [यह कहकर]: 'तपस्वी गौतम इंद्रिय सुखों की पूर्ण समझ, रूपों की पूर्ण समझ या वेदना की पूर्ण समझ का प्रचार नहीं करते।' [65] परन्तु, भिक्षुओं, मैं इंद्रिय सुखों की पूर्ण समझ, रूपों की पूर्ण समझ और वेदना की पूर्ण समझ का प्रचार करता हूँ। इसी जीवन में, भूख रहित, तृप्त और शीतल होकर, मैं अनासक्ति के द्वारा परम निर्वाण की घोषणा करता हूँ।" 2026

---

30 कोसला (2)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस समय कोसल के राजा पसेनादि युद्ध के मोर्चे से विजयी होकर लौटे थे, उनका उद्देश्य पूरा हो चुका था। 2027 तब कोसल के राजा पसेनादि उद्यान के लिए निकल पड़े। वे रथ से उतनी दूर तक गए जहाँ तक रथ ले जाने योग्य था, फिर वे रथ से उतरकर पैदल उद्यान में प्रवेश कर गए। उस समय कई भिक्षु खुले में टहल रहे थे। तब कोसल के राजा पसेनादि उन भिक्षुओं के पास गए और उनसे पूछा:

"भंते, भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, अब कहाँ निवास कर रहे हैं? क्योंकि मैं भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, के दर्शन करना चाहता हूँ।"

"हे महाराज, वह उनका निवास स्थान है जिसका दरवाजा बंद है। चुपचाप उसके पास जाइए। जल्दबाजी न करते हुए, बरामदे में प्रवेश कीजिए, गला साफ कीजिए और कुंडी पर थपथपाइए। भगवान (बुद्ध) आपके लिए दरवाजा खोल देंगे।"

तब कोसल के राजा पसेनादि चुपचाप बंद दरवाजे वाले घर की ओर गए। बिना जल्दबाजी किए, वे बरामदे में दाखिल हुए, गला साफ किया और कुंडी पर दस्तक दी। भगवान (बुद्ध) ने दरवाजा खोल दिया।

तब कोसल के राजा पसेनादि ने निवास में प्रवेश किया, भगवान (बुद्ध) के चरणों में सिर झुकाकर प्रणाम किया, और भगवान (बुद्ध) के चरणों को चूमकर और हाथों से सहलाते हुए उनका नाम पुकारा: "भंते, मैं कोसल का राजा पसेनादि हूँ! भंते, मैं कोसल का राजा पसेनादि हूँ!" [66] 2028

लेकिन, हे महाराज, इस शरीर को इतना सर्वोच्च सम्मान देने और प्रेम (मेट्टा) का ऐसा अर्पण प्रदर्शित करने के आपके क्या कारण हैं?

"भंते, यह मेरी कृतज्ञता और धन्यवाद की भावना से ही है कि मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति ऐसा सर्वोच्च सम्मान प्रदर्शित करता हूँ और उनके प्रति ऐसी प्रेममयी भावना (मेट्टा) प्रकट करता हूँ।"

(1) "हे भंते, भगवान (बुद्ध) अनेक लोगों के कल्याण और सुख के लिए साधना कर रहे हैं; उन्होंने अनेक लोगों को श्रेष्ठ मार्ग पर, अर्थात् उत्तम धर्म के मार्ग पर, लाभकारी (कुशल) धर्म के मार्ग पर स्थापित किया है। 2029 यही एक कारण है कि मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति इतना आदर प्रकट करता हूँ और उनके प्रति प्रेम और दया का ऐसा अर्पण करता हूँ।"

(2) "हे भंते, भगवान (बुद्ध) गुणी, परिपक्व व्यवहार वाले, श्रेष्ठ व्यवहार वाले, लाभकारी (कुशल) व्यवहार वाले और लाभकारी (कुशल) गुणों से युक्त हैं। यही एक और कारण है कि मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति इतना आदर प्रकट करता हूँ। ..."

(3) "हे भंते, भगवान (बुद्ध) लंबे समय से वनवासी हैं जो जंगलों और वन-शाखाओं में दूरस्थ आवासों में निवास करते हैं। चूंकि ऐसा है, इसलिए मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति इतना सर्वोच्च सम्मान दिखाता हूँ। ..."

(4) "हे भंते, भगवान (बुद्ध) किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास, औषधि और बीमारों के लिए भोजन से संतुष्ट रहते हैं। यही एक और कारण है कि मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति इतना आदर दिखाता हूँ। ..."

(5) "हे भंते, भगवान (बुद्ध) दान के योग्य हैं, आतिथ्य सत्कार के योग्य हैं, भेंटों के योग्य हैं, आदरपूर्वक प्रणाम करने के योग्य हैं, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र हैं। यही एक और कारण है कि मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति इतना सर्वोच्च सम्मान प्रकट करता हूँ। ..."

(6) "हे भंते, भगवान (बुद्ध) को बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, इच्छानुसार, उस तपस्वी जीवन के विषय में प्रवचन सुनने को मिलते हैं जो दोषों के निवारण की ओर ले जाता है, जो हृदय को खोलने में सहायक होता है, अर्थात् इच्छाओं की कमी, संतोष, एकांत, दूसरों से बंधे न रहने, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाने, सद्‌गुणी आचरण, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), पन्ना (दिव्य ज्ञान), मुक्ति, और मुक्ति के ज्ञान और दर्शन पर प्रवचन। यही एक और कारण है कि मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति इतना आदर प्रकट करता हूँ। ..."

(7) "हे भंते, भगवान (बुद्ध) बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, इस जीवन में ही उच्च मन की चार ध्यान अवस्थाओं (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त कर लेते हैं, जो सुखद निवास स्थान हैं। [68] यही एक और कारण है कि मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति इतना आदर दिखाता हूँ..."

(8) "फिर, हे भंते, भगवान (बुद्ध) अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व जन्मों) का स्मरण करते हैं, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म, चार जन्म, पाँच जन्म, दस जन्म, बीस जन्म, तीस जन्म, चालीस जन्म, पचास जन्म, सौ जन्म, हजार जन्म, एक लाख जन्म, कई युगों तक संसार-विनाश, कई युगों तक संसार-उत्पत्ति, कई युगों तक संसार-विनाश और संसार-उत्पत्ति, इस प्रकार: "वहाँ मेरा ऐसा नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु थी; वहाँ से निकलकर, मेरा कहीं और पुनर्जन्म हुआ, और वहाँ भी मेरा ऐसा ही नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु थी; वहाँ से निकलकर, मेरा यहाँ पुनर्जन्म हुआ।' इस प्रकार वह अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों और उनके विभिन्न पहलुओं व विवरणों को याद करता है। यही कारण है कि मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति इतना आदर प्रकट करता हूँ।

(9) "फिर, भंते, शुद्ध और मनुष्य से परे दिव्य दृष्टि से, भगवान (बुद्ध) प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए, हीन और श्रेष्ठ, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, देखते हैं और वे समझते हैं कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है: 'ये प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से दुराचार किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा की, [69] गलत मत रखा और गलत मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं; परन्तु ये प्राणी

जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण किए, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा नहीं की, जिन्होंने सही मत रखा और सही मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, अच्छे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं। 'स्वर्गिक जगत'। इस प्रकार, दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध और मानवीय दृष्टि से परे है, वह प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए, हीन और श्रेष्ठ, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली देखता है, और वह समझता है कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है। यही कारण है कि मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति इतना आदर प्रकट करता हूँ।

(10) "हे भंते, दोषों के नाश के साथ, भगवान (बुद्ध) ने स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, ज्ञान द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वे उसमें निवास करते हैं। यही कारण है कि मैं भगवान (बुद्ध) के प्रति इतना आदर प्रकट करता हूँ और उनके प्रति प्रेम और करुणा का ऐसा अर्पण करता हूँ।"

"और अब, भंते, हमें जाना होगा। हम व्यस्त हैं और हमें बहुत कुछ करना है।"

"हे महान राजा, आप अपनी सुविधानुसार जा सकते हैं।"

तब कोसल के राजा पसेनादि अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और चले गए। [70]

IV. उपाली

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

31 उपाली

तब पूज्य उपली भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, तथागत (बुद्ध) ने अपने शिष्यों के लिए प्रशिक्षण नियम 2030 किन-किन आधारों पर निर्धारित किए हैं और पतिमोक्खा का पाठ किया है?"

"हे उपाली, तथागत (बुद्ध) ने अपने शिष्यों के लिए प्रशिक्षण नियम दस आधारों पर निर्धारित किए हैं और पतिमोक्खा का पाठ किया है। वे दस आधार क्या हैं? (1) संघ के कल्याण के लिए; (2) संघ की सहजता के लिए; (3) अनुशासनहीन व्यक्तियों को नियंत्रण में रखने के लिए; (4) ताकि सुसंस्कृत भिक्षु आराम से रह सकें; (5) इस जीवन से संबंधित दोषों के निवारण के लिए; (6) भविष्य के जन्मों से संबंधित दोषों के निवारण के लिए; (7) ताकि अविश्वासियों को आत्मविश्वास प्राप्त हो सके; और (8) विश्वासियों के आत्मविश्वास को बढ़ाने के लिए; (9) अच्छे धर्म की निरंतरता के लिए; और (10) अनुशासन को बढ़ावा देने के लिए।"

"इन्हीं दस आधारों पर तथागत (बुद्ध) ने अपने शिष्यों के लिए प्रशिक्षण नियम निर्धारित किए हैं और पतिमोक्खा का पाठ किया है।"

---

32 निलंबित [2031] (पतिमोक्खथापना)

"भंते, पतिमोक्खा को निलंबित करने के कितने कारण हैं?"

उपली, पतिमोक्खा को स्थगित करने के दस कारण हैं। वे दस क्या हैं? (1) उस सभा में कोई ऐसा व्यक्ति बैठा है जिसने पराजिका अपराध किया है; (2) किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में चर्चा चल रही है जिसने पराजिका अपराध किया है; (3) उस सभा में कोई ऐसा व्यक्ति बैठा है जिसने पूर्ण दीक्षा नहीं ली है; (4) किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में चर्चा चल रही है जिसने पूर्ण दीक्षा नहीं ली है; (5) उस सभा में कोई ऐसा व्यक्ति बैठा है जिसने प्रशिक्षण छोड़ दिया है; (6) किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में चर्चा चल रही है जिसने प्रशिक्षण छोड़ दिया है; (7) उस सभा में कोई नपुंसक बैठा है; (8) किसी नपुंसक के बारे में चर्चा चल रही है; (9) उस सभा में किसी भिक्षुणी (भिक्षुणी) को बहकाने वाला बैठा है; (10) किसी भिक्षुणी (भिक्षुणी) को बहकाने वाले के बारे में चर्चा चल रही है। ये पतिमोक्खा को स्थगित करने के दस कारण हैं।

---

33 न्यायनिर्णय (उब्बाहिका)

"भंते, किसी अनुशासनात्मक मामले में निर्णय देने के लिए एक भिक्षु में कितने गुण होने चाहिए?" 2035

"उपली, दस गुणों से युक्त भिक्षु को [अनुशासनात्मक मामले में] निर्णय देने के लिए चुना जा सकता है। वे दस गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है, अच्छे आचरण और अच्छे आचरण का पालन करता है, छोटी-छोटी गलतियों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। (2) उसने बहुत कुछ सीखा है, जो सीखा है उसे याद रखता है और उसे संचित करता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हैं, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हैं - ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से जांचा है और दृष्टि से अच्छी तरह समझा है। (3) दोनों पतिमोक्खों को उसे विस्तार से अच्छी तरह से समझाया गया है, अच्छी तरह से विश्लेषण किया गया है, अच्छी तरह से महारत हासिल की गई है, नियमों और उनकी विस्तृत व्याख्या के संदर्भ में अच्छी तरह से निर्धारित किया गया है। (4) वह अनुशासन में दृढ़ है।" अविचल। (5) वह मुद्दे के दोनों पक्षों को समझाने, उन्हें मामले का वर्णन करने, उन्हें राजी करने, उन्हें उदाहरण देकर समझाने और उन्हें शांत करने में सक्षम है। (6) वह अनुशासनात्मक मुद्दों की उत्पत्ति और [72] निपटारे में कुशल है। (7) वह जानता है कि अनुशासनात्मक मुद्दा क्या है। 2036 (8) वह अनुशासनात्मक मुद्दे की उत्पत्ति जानता है। (9) वह अनुशासनात्मक मुद्दे की समाप्ति जानता है। (10) वह अनुशासनात्मक मुद्दे की समाप्ति का मार्ग जानता है। 2037 इन दस गुणों से युक्त भिक्षु को [अनुशासनात्मक मुद्दे में] निर्णय देने के लिए चुना जा सकता है।

---

34 पूर्ण समन्वय (उपसम्पदा)

"भंते, पूर्ण दीक्षा देने के लिए एक भिक्षु में कितने गुण होने चाहिए?"

उपली, दस गुणों से युक्त भिक्षु पूर्ण दीक्षा दे सकता है। वे दस गुण क्या हैं? (1) यहाँ, भिक्षु गुणी है... वह उनमें अभ्यास करता है। (2) उसने बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से अच्छी तरह पारंगत है। (3) दोनों पतिमोक्खों का उसे विस्तार से ज्ञान प्राप्त हुआ है, उनका अच्छी तरह विश्लेषण किया गया है, उनमें महारत हासिल है, नियमों और उनकी विस्तृत व्याख्या के संदर्भ में अच्छी तरह निर्धारित किया गया है। (4) वह किसी रोगी की देखभाल करने में सक्षम है या किसी और से उसकी देखभाल करवा सकता है। (5) वह किसी की असंतुष्टि को दूर करने में सक्षम है या किसी और से उसे दूर करवा सकता है। (6) वह अपने शिष्यों में उत्पन्न होने वाले पश्चाताप को दूर करने के लिए धम्म (मार्ग) का उपयोग करने में सक्षम है। (7) वह धम्म के माध्यम से उन्हें उत्पन्न हुए गलत विचारों से विमुख करने में सक्षम है। (8) वह उन्हें उच्चतर सद्गुणी आचरण के लिए प्रोत्साहित करने में सक्षम है। (9) वह उन्हें उच्चतर मन के लिए प्रोत्साहित करने में सक्षम है। (10) वह उन्हें उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) में प्रोत्साहित करने में सक्षम है। इन दस गुणों से युक्त भिक्षु पूर्ण दीक्षा दे सकता है।" [73]

---

35 निर्भरता (निस्सया)

"भंते, आश्रितता प्रदान करने के लिए एक भिक्षु में कितने गुण होने चाहिए?"

"उपली, दस गुणों से युक्त भिक्षु आश्रितता प्रदान कर सकता है। वे दस गुण कौन से हैं?"

[पिछली सूत्र में वर्णित दस गुणों के समान ही।]

"इन दस गुणों से युक्त भिक्षु आश्रितता प्रदान कर सकता है।"

---

36 नौसिखिया [2038](सामनेरा)

"भंते, एक भिक्षु में कितने गुण होने चाहिए ताकि एक नौसिखिए उसकी सेवा करे?"

"उपली, दस गुणों से युक्त भिक्षु की सेवा एक नौसिखिए द्वारा की जा सकती है। वे दस गुण कौन से हैं?"

[वही दस गुण जो 10:34 में हैं।]

"इन दस गुणों से युक्त भिक्षु की सेवा कोई नौसिखिया कर सकता है।"

---

37 विभाजन (1) (संघभेद1)

"भंते, ऐसा कहा जाता है: 'संघ में फूट, संघ में फूट' भंते, संघ में फूट कैसे हो सकती है?"

"यहाँ, उपाली, (1) भिक्षु अधर्म (गलत मार्ग) को धर्म के रूप में, (2) और धर्म (मार्ग) को अधर्म (गलत मार्ग) के रूप में समझाते हैं। (3) वे अनुशासनहीनता को अनुशासन के रूप में, [74] और (4) अनुशासन को अनुशासनहीनता के रूप में समझाते हैं। (5) वे तथागत (बुद्ध) द्वारा न कही गई बातों को उनके द्वारा कही गई और (6) तथागत (बुद्ध) द्वारा कही गई बातों को उनके द्वारा न कही गई और (7) तथागत (बुद्ध) द्वारा न किए गए कार्यों को उनके द्वारा किए गए कार्यों के रूप में समझाते हैं, और (8) तथागत (बुद्ध) द्वारा किए गए कार्यों को उनके द्वारा न किए गए कार्यों के रूप में समझाते हैं। (9) तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित न की गई बातों को उनके द्वारा निर्धारित की गई बातों के रूप में समझाते हैं, और (10) तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित की गई बातों को उनके द्वारा निर्धारित की गई बातों के रूप में समझाते हैं। तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित न होने के कारण वे संघ से विमुख हो जाते हैं। इन्हीं दस आधारों पर वे संघ से अलग हो जाते हैं। वे विधि-विधान अलग-अलग करते हैं और पतिमोक्खा का पाठ भी अलग-अलग करते हैं। उपाली, इसी प्रकार संघ में विभाजन होता है।

---

38 विभाजन (2) (संघभेद1)

"भंते, ऐसा कहा जाता है: 'संघ में सामंजस्य, संघ में सामंजस्य।' संघ में सामंजस्य कैसे हो सकता है?"

उपली, यहाँ (1) भिक्षु अधर्म (गलत मार्ग) को अधर्म के रूप में और (2) धर्म को धर्म के रूप में समझाते हैं। (3) वे अनुशासनहीनता को अनुशासनहीनता के रूप में और (4) अनुशासन को अनुशासन के रूप में समझाते हैं। (5) वे तथागत (बुद्ध) द्वारा न कही गई बातों को उनके द्वारा न कही गई और (6) तथागत (बुद्ध) द्वारा कही गई बातों को उनके द्वारा कही गई और (7) कही गई बातों को उनके द्वारा न किए गए और (8) तथागत (बुद्ध) द्वारा किए गए कार्यों को उनके द्वारा किए गए और (9) तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित न की गई बातों को उनके द्वारा निर्धारित न किए गए और (10) तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित बातों को निर्धारित के रूप में समझाते हैं। उनके द्वारा। इन दस आधारों पर वे अलग नहीं होते और न ही पृथक होते हैं। वे न तो अलग से विधिक कार्य करते हैं और न ही अलग से पतिमोक्खा का पाठ करते हैं। उपली, इसी प्रकार संघ में एकता बनी रहती है।" [75]

---

39 आनंद (1)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, ऐसा कहा जाता है: 'संघ में फूट, संघ में फूट' संघ में फूट कैसे हो सकती है?"

"यहाँ, आनंद, (1) भिक्षु अधर्म (गलत मार्ग) को धर्म के रूप में समझाते हैं... [जैसा कि 10:37 में है]... और (10) तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित को उनके द्वारा निर्धारित नहीं मानते। इन्हीं दस आधारों पर वे संघ से विमुख हो जाते हैं। वे विधि कर्म अलग-अलग करते हैं और पतिमोक्ख का पाठ अलग-अलग करते हैं। आनंद, इसी प्रकार संघ में विभाजन होता है।" 2039

"लेकिन, भंते, जब कोई सामंजस्यपूर्ण संघ में फूट डालता है, तो वह क्या उत्पन्न करता है?"

"आनंद, एक व्यक्ति युगों तक रहने वाली बुराई उत्पन्न करता है।" 2040 "पर, भंते, वह युगों तक रहने वाली बुराई क्या है?"

"आनंद, एक युग तक नरक में यातना भोगता है।" [76] संघ में फूट डालने वाला दुख भोगता है, नरक में जाता है, और वहाँ एक युग तक रहता है।

गुटों में आनंद लेने से, जो अधार्मिक (गलत मार्ग) पर स्थापित हैं, वह बंधन से मुक्ति और सुरक्षा से विमुख हो जाता है।

एक सामंजस्यपूर्ण संघ में फूट डालने के कारण, उसे युगों तक नरक में यातना भोगनी पड़ती है।

---

40 आनंद (2)

"भंते, कहा जाता है: 'संघ में एकता, संघ में एकता'। संघ में एकता कैसे हो सकती है?"

"यहाँ, आनंद, (1) भिक्षु अधर्म (गलत मार्ग) को अधर्म के रूप में समझाते हैं... [जैसा कि 10:38 में है]... और (10) तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित नियमों को उन्हीं के द्वारा निर्धारित नियमों के रूप में समझाते हैं। इन दस आधारों पर वे संघ से विमुख होकर नहीं जाते। वे विधि कर्मों का अलग से निष्पादन नहीं करते और न ही पतिमोक्ख का अलग से पाठ करते हैं। आनंद, इसी प्रकार संघ में एकता बनी रहती है।" 2041

"परन्तु, भंते, जब कोई विभाजित संघ का मेल कराता है, तो वह क्या उत्पन्न करता है?" "परन्तु उत्पन्न करता है, आनंद।" "परन्तु, भंते, परन्तु क्या है?" "परन्तु एक युग तक स्वर्ग में आनंदित होता है, आनंद।" [77] संघ में सामंजस्य सुखद है, और सामंजस्य में रहने वालों की परस्पर सहायता भी सुखद है। धम्म में स्थापित सामंजस्य में आनंदित होकर, व्यक्ति बंधन से मुक्त होकर सुरक्षित रहता है। संघ में सामंजस्य स्थापित करके, व्यक्ति एक युग तक स्वर्ग में आनंदित होता है।

वी. अपमान (अकोसा संस. अक्रोश)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

41 विवाद (विवाद)

तब पूज्य उपली भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, संघ में तर्क-वितर्क, झगड़े, विवाद और मतभेद क्यों उत्पन्न होते हैं और भिक्षु चैन से क्यों नहीं रह पाते?"

"यहाँ, उपाली, (1) भिक्षु अधर्म (गलत मार्ग) को धर्म के रूप में समझाते हैं... [जैसा कि 10:37 में है]... [78]... और (10) तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित को उनके द्वारा निर्धारित नहीं मानते। उपाली, यही कारण है कि संघ में तर्क-वितर्क, झगड़े, विवाद और मतभेद उत्पन्न होते हैं और भिक्षु चैन से नहीं रह पाते।"

---

42 विवादों की जड़ें (1) (विवादमुला1)

"भंते, विवादों की कितनी जड़ें हैं?"

"हे उपली, विवाद के दस मूल हैं। वे दस कौन से हैं? यहाँ, (1) भिक्षु अधर्म (गलत मार्ग) को धर्म के रूप में समझाते हैं... [जैसा कि 10:37 में है] — और (10) तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित को उनके द्वारा निर्धारित नहीं बताते। हे उपली, ये विवाद के दस मूल हैं।"

---

43 विवादों की जड़ें (2) (विवादमुला2)

"भंते, विवादों की कितनी जड़ें हैं?"

"हे उपाली, विवादों के दस मूल हैं। वे दस कौन से हैं? यहाँ, (1) भिक्षु जो अपराध नहीं है उसे अपराध बताते हैं, और (2) जो अपराध है उसे अपराध नहीं बताते। (3) वे हल्के अपराध को गंभीर अपराध बताते हैं, और (4) गंभीर अपराध को हल्का अपराध बताते हैं। (5) वे घोर अपराध को घोर अपराध नहीं बताते, और (6) जो घोर नहीं है उसे घोर अपराध बताते हैं। (7) वे निवारण योग्य अपराध को असाध्य अपराध बताते हैं, और (8) असाध्य अपराध को निवारण योग्य अपराध बताते हैं। [79] (9) वे निवारण योग्य अपराध को निवारण रहित अपराध बताते हैं, और (10) निवारण रहित अपराध को निवारण योग्य अपराध बताते हैं। 2043 हे उपाली, ये विवादों के दस मूल हैं।"

---

44 कुसिनारा

एक बार भगवान (बुद्ध) कुसिनारा में, आहुति के घने वन में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं (मठवासियों), जो भिक्षु किसी दूसरे व्यक्ति को फटकारना चाहता है, उसे फटकार लगाने से पहले स्वयं को पाँच बातों के संदर्भ में परखना चाहिए और अपने भीतर पाँच बातें स्थापित करनी चाहिए। 2044 उसे किन पाँच बातों के संदर्भ में स्वयं को परखना चाहिए?"

(1) "भिक्षुओं, जो भिक्षु किसी दूसरे भिक्षु को फटकारना चाहता है, उसे स्वयं की इस प्रकार जांच करनी चाहिए: 'क्या मेरा शारीरिक आचरण शुद्ध है? क्या मेरा शारीरिक आचरण शुद्ध, दोषरहित और निंदनीय है? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं?' यदि भिक्षु का शारीरिक आचरण शुद्ध नहीं है, और उसका शारीरिक आचरण शुद्ध, दोषरहित और निंदनीय नहीं है, तो कुछ लोग उससे कहेंगे: 'कृपया पहले अपने शरीर को प्रशिक्षित करें।'

(2) "फिर, जो भिक्षु किसी दूसरे को फटकारना चाहता है, उसे स्वयं की इस प्रकार जाँच करनी चाहिए: 'क्या मेरा वाणी व्यवहार शुद्ध है? क्या मेरा वाणी व्यवहार शुद्ध, दोषरहित और निंदनीय है? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं?' यदि भिक्षु का वाणी व्यवहार शुद्ध नहीं

है, और उसका वाणी व्यवहार शुद्ध, दोषरहित और निंदनीय नहीं है, तो कुछ लोग उससे कहेंगे: 'कृपया पहले स्वयं को वाणी के अनुसार प्रशिक्षित करो।' कुछ लोग उससे ऐसा कहेंगे। [80]

(3) "फिर, जो भिक्षु दूसरे भिक्षु को फटकारना चाहता है, उसे स्वयं की इस प्रकार जांच करनी चाहिए: "क्या मैंने अपने साथी भिक्षुओं के प्रति द्वेष रहित प्रेम और करुणा का भाव स्थापित किया है? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं?" यदि भिक्षु ने अपने साथी भिक्षुओं के प्रति द्वेष रहित प्रेम और करुणा (मेट्टा) का भाव स्थापित नहीं किया है, तो कुछ लोग उससे कहेंगे: "कृपया पहले अपने साथी भिक्षुओं के प्रति प्रेम और करुणा (मेट्टा) का भाव स्थापित करें।"

(4) "'फिर, जो भिक्षु दूसरे को फटकारना चाहता है, उसे स्वयं की इस प्रकार परीक्षा करनी चाहिए: "क्या मैं विद्वान हूँ, और क्या मैं अपने ज्ञान को बनाए रखता हूँ और संरक्षित करता हूँ? क्या मैंने उन शिक्षाओं का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया है जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हैं, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हैं? क्या मैंने उन्हें मन में रखा है, उनका मौखिक पाठ किया है, मानसिक रूप से उनका अध्ययन किया है, और दृष्टि से उन्हें भली-भांति समझा है? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं?" यदि भिक्षु विद्वान नहीं है... और उसने दृष्टि से उन्हें भली-भांति नहीं समझा है, तो कुछ लोग उससे कहेंगे: "कृपया पहले विरासत को सीखो।"

(5) "फिर, जो भिक्षु दूसरे भिक्षु को फटकारना चाहता है, उसे स्वयं की इस प्रकार जांच करनी चाहिए: "क्या मुझे दोनों पतिमोक्खों का विस्तृत ज्ञान, विश्लेषण, निपुणता और नियमों एवं उनकी विस्तृत व्याख्या के संदर्भ में अच्छी तरह से ज्ञान प्राप्त हुआ है? क्या मुझमें यह गुण है या नहीं?" यदि दोनों पतिमोक्खों [81] का उसे नियमों एवं उनकी विस्तृत व्याख्या के संदर्भ में विस्तृत ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है, और यदि पूछे जाने पर: "भगवान (बुद्ध) ने यह कहाँ कहा है?" वह उत्तर देने में असमर्थ है, तो कुछ लोग उससे कहेंगे: 'कृपया पहले अनुशासन सीखें'। कुछ लोग उससे यह कहेंगे।

"उसे इन्हीं पांच बातों के संदर्भ में स्वयं का मूल्यांकन करना चाहिए।"

और वे पाँच बातें कौन सी हैं जिन्हें उसे अपने भीतर स्थापित करना चाहिए? [उसे विचार करना चाहिए:] (6) मैं उचित समय पर बोलूंगा, अनुचित समय पर नहीं; (7) मैं सत्य बोलूंगा, असत्य नहीं; (8) मैं विनम्रता से बोलूंगा, कठोरता से नहीं; (9) मैं लाभकारी तरीके से बोलूंगा, हानिकारक तरीके से नहीं; (10) मैं प्रेम और करुणा के भाव से बोलूंगा, घृणा से नहीं। ये पाँच बातें हैं जिन्हें उसे अपने भीतर स्थापित करना चाहिए।

"भिक्षुओं, जो भिक्षु किसी दूसरे व्यक्ति को फटकारना चाहते हैं, उन्हें फटकार लगाने से पहले स्वयं इन पांच बातों की जांच करनी चाहिए और स्वयं में इन पांच बातों को स्थापित करना चाहिए।"

---

45 राजा के भीतरी महल में प्रवेश (राजंतेपुरप्पावेसना)

"भिक्षुओं, राजा के महल में प्रवेश करने में ये दस खतरे हैं। वे दस खतरे कौन से हैं?"

(1) "यहाँ राजा अपनी रानी के साथ बैठे हैं। भिक्षु प्रवेश करता है, और या तो रानी भिक्षु को देखकर मुस्कुराती है या भिक्षु रानी को देखकर मुस्कुराता है। राजा सोचता है: 'निश्चित रूप से उनके बीच कुछ हुआ है, या कुछ होने वाला है'। राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने का यह पहला खतरा है।"

(2) "फिर, जब राजा बहुत काम में व्यस्त था, तो उसने किसी स्त्री के साथ यौन संबंध बनाया, लेकिन उसे याद नहीं रहा, और उनके संबंध के कारण वह गर्भवती हो गई। राजा सोचता है: 'भिक्षु के अलावा कोई और [82] यहाँ नहीं आया है। क्या यह भिक्षु का काम हो सकता है?' राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने का यह दूसरा खतरा है।

(3) "फिर, राजा के भीतरी महल में एक रत्न खो गया है। राजा सोचता है: 'भिक्षु के अलावा यहाँ कोई और नहीं आया है। क्या यह भिक्षु का काम हो सकता है?' राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने का यह तीसरा खतरा है।"

(4) "फिर, राजा के भीतरी महल की गुप्त चर्चाएँ दूसरों तक फैल गईं। 2045 राजा सोचता है: 'भिक्षु के अलावा कोई और यहाँ नहीं आया है। क्या यह भिक्षु का काम हो सकता है?' राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने का यह चौथा खतरा है।"

(5) "फिर, राजा के भीतरी महल में एक पिता अपने बेटे के लिए तरसता है, या एक बेटा अपने पिता के लिए तरसता है। 2046 वे सोचते हैं: 'यद्यपि यहाँ भिक्षु के अलावा कोई और नहीं आया है। क्या यह भिक्षु का काम हो सकता है?' राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने का यह पाँचवाँ खतरा है।"

(6) "फिर, राजा किसी को पदोन्नत करता है। जो लोग इससे परेशान होते हैं, वे सोचते हैं: 'राजा के भिक्षु के साथ घनिष्ठ संबंध हैं। क्या यह भिक्षु का काम हो सकता है?' राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने का यह छठा खतरा है।"

(7) "फिर, राजा किसी को पदावनत कर देता है। इससे परेशान लोग सोचते हैं: 'राजा के भिक्षु के साथ घनिष्ठ संबंध हैं। क्या यह भिक्षु का काम हो सकता है?' राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने का यह सातवाँ खतरा है।"

(8) "फिर, राजा अनुचित समय पर अपनी सेना भेजता है। इससे परेशान लोग सोचते हैं: 'राजा के भिक्षु के साथ घनिष्ठ संबंध हैं। क्या यह भिक्षु का काम हो सकता है?' राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने का यह आठवां खतरा है।"

(9) "फिर, उचित समय पर अपनी सेना भेजने के बाद, राजा उसे रास्ते में ही वापस लौटने का आदेश देता है। जो लोग इससे परेशान हैं वे सोचते हैं: [83] 'राजा के भिक्षु के साथ घनिष्ठ संबंध हैं। क्या यह भिक्षु का काम हो सकता है?' राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने का यह नौवां खतरा है।

(10) "फिर, राजा के भीतरी महल में हाथियों, घोड़ों और रथों के चलने की आवाज़ें आती हैं, साथ ही मोहक रूप, ध्वनियाँ, गंध, स्वाद और स्पर्शनीय वस्तुएँ भी होती हैं जो भिक्षु के लिए उपयुक्त नहीं हैं। राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने का यह दसवाँ खतरा है।"

"भिक्षुओं, राजा के भीतरी महल में प्रवेश करने के ये दस खतरे हैं।"

---

46 शाक्य

एक बार भगवान (बुद्ध) कपिलवस्तु के बरगद उद्यान में शाक्यों के बीच निवास कर रहे थे। उपोसथ पर्व के दिन, कई शाक्यों अनुयायी भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"शाक्यों, क्या आप उपोसथ को आठ कारकों में पूर्ण रूप से देखते हैं?" 2048

"भंते, कभी-कभी हम ऐसा करते हैं, और कभी-कभी नहीं करते।"

"यह तुम्हारा दुर्भाग्य और हानि है, शाक्यों! जब जीवन दुःख और मृत्यु से संकट में होता है, तो तुम आठों कारकों में पूर्ण उपोसथा का पालन कभी-कभी ही करते हो, और कभी-कभी नहीं। शाक्यों, तुम क्या सोचते हो? मान लो यहाँ कोई ऐसा व्यक्ति है जो बिना किसी हानि (अकुशल) कार्य के प्रतिदिन आधा कहपना कमाता है। [84] क्या यह उसे चतुर और उद्यमशील व्यक्ति कहने के लिए पर्याप्त होगा?"

"हां, भंते।"

"शाक्यों, आपका क्या विचार है? मान लीजिए कि यहाँ कोई ऐसा व्यक्ति है जो बिना कोई हानि पहुँचाए (अकुसला) प्रतिदिन अपने काम से एक कहपना कमाता है... क्या यह उसे चतुर और उद्यमशील व्यक्ति कहने के लिए पर्याप्त होगा?"

"हां, भंते।"

"शाक्यों, आपका क्या विचार है? मान लीजिए कि यहाँ एक ऐसा व्यक्ति है जो बिना किसी हानि (अकुशल) कार्य के प्रतिदिन दो कहपन, तीन कहपन, चार कहपन, पाँच कहपन, छह कहपन, सात कहपन, आठ कहपन, नौ कहपन, बीस कहपन, तीस कहपन, चालीस कहपन कमाता है। क्या यह उसे चतुर और उद्यमशील व्यक्ति कहने के लिए पर्याप्त होगा?"

"हां, भंते।"

"शाक्यों, आपका क्या विचार है? यदि कोई व्यक्ति प्रतिदिन सौ या हजार कहपना कमाता है, अपनी सारी कमाई जमा करता है, और सौ वर्ष का जीवनकाल जीता है, तो क्या वह बहुत अधिक धन अर्जित कर पाएगा?"

"हां, भंते।"

"शाक्यों, तुम क्या सोचते हो? क्या वह व्यक्ति अपने धन के कारण, अपने धन की वजह से, अपने धन की वजह से एक रात या एक दिन के लिए, या आधी रात या आधे दिन के लिए भी पूरी तरह से सुखी हो सकता है?"

"नहीं, भंते। क्यों नहीं? क्योंकि इंद्रिय सुख क्षणभंगुर, खोखले, झूठे और भ्रामक होते हैं।"

"यद्यपि, शाक्यों, मेरा शिष्य जो दस वर्षों तक सचेत, उत्साही और दृढ़ संकल्पित होकर, मेरे निर्देशानुसार अभ्यास करता है, वह सौ वर्ष, दस हजार वर्ष, 2050 [85] एक लाख वर्ष और दस करोड़ वर्ष तक अनन्य सुख का अनुभव कर सकता है। 2051 और वह एक बार जन्म लेने वाला (1 पुनर्जन्म, सकदागामी), एक बार जन्म न लेने वाला (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी), या निश्चित रूप से एक बार जन्म लेने वाला (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) हो सकता है।"

"शाक्यों, दस वर्ष तो छोड़ ही दीजिए। मेरा शिष्य जो नौ वर्ष... आठ वर्ष... सात वर्ष... छह वर्ष... पाँच वर्ष... चार वर्ष... तीन वर्ष... दो वर्ष... एक वर्ष तक सचेत, उत्साही और दृढ़ संकल्प के साथ मेरे निर्देशों का पालन करते हुए रहता है, वह सौ वर्ष, दस हजार वर्ष, एक लाख वर्ष और दस करोड़ वर्ष तक अनन्य सुख का अनुभव कर सकता है। और वह एक बार जन्म लेने वाला (1 पुनर्जन्म, सकदागामी), एक बार जन्म न लेने वाला (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी), या निश्चित रूप से सात बार जन्म लेने वाला (सोतपत्ति) हो सकता है।"

"एक वर्ष की तो बात ही छोड़ो, शाक्यों। मेरा शिष्य जो दस महीने तक सचेत, उत्साही और दृढ़ संकल्प के साथ मेरे निर्देशों का पालन करते हुए निवास करता है, वह सौ वर्ष, दस हजार वर्ष, एक लाख वर्ष और दस करोड़ वर्ष तक अनन्य सुख का अनुभव कर सकता है। और वह एक बार जन्म लेने वाला (एक पुनर्जन्म, सकदागामी), एक बार जन्म न लेने वाला (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी), या निश्चित रूप से सात बार जन्म लेने वाला (सोतपत्ति) हो सकता है।"

"शाक्यों, दस महीने तो छोड़ ही दीजिए। मेरा शिष्य जो नौ महीने...आठ महीने...सात महीने...छह महीने...पांच महीने...चार महीने...तीन महीने...दो महीने...एक महीना...आधा महीना तक सचेत, उत्साही और दृढ़ संकल्पित होकर, मेरे निर्देशानुसार अभ्यास करता है, वह सौ वर्ष, दस हजार वर्ष, एक लाख वर्ष और दस करोड़ वर्ष तक अनन्य सुख का अनुभव कर सकता है। और वह एक बार जन्म लेने वाला (1 पुनर्जन्म, सकदागामी), एक बार जन्म न लेने वाला (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी), या निश्चित रूप से सात बार जन्म लेने वाला (सोतपत्ति) हो सकता है।"

"आधे महीने की तो बात ही छोड़ो, शाक्यों। मेरा शिष्य जो दस रातों और दस दिनों तक सचेत, उत्साही और दृढ़ संकल्प से मेरे निर्देशों का पालन करते हुए निवास करता है, वह सौ वर्ष, दस हजार वर्ष, एक लाख वर्ष और दस करोड़ वर्ष तक अनन्य सुख का अनुभव कर सकता है। और वह एक बार जन्म लेने वाला (1 पुनर्जन्म, सकदागामी), एक बार जन्म न लेने वाला (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी), या निश्चित रूप से सात बार जन्म लेने वाला (सोतपत्ति) हो सकता है।"

"शाक्यों, दस रातों और दिनों की तो बात ही छोड़ो। मेरा शिष्य जो नौ रातों और दिनों तक सजग, उत्साही और दृढ़ निश्चयी होकर... आठ रातों और दिनों तक... सात रातों और दिनों तक... [86] छह रातों और दिनों तक... पाँच रातों और दिनों तक... चार रातों और दिनों तक... तीन रातों और दिनों तक... दो रातों और दिनों तक... एक रात और दिन भी, मेरे निर्देशानुसार अभ्यास करते हुए, सौ वर्ष, दस हजार वर्ष, एक लाख वर्ष और दस करोड़ वर्ष तक अनन्य सुख का अनुभव कर सकता है। और वह एक बार जन्म लेने वाला (1

पुनर्जन्म, सकदागामी), जन्म न लेने वाला (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी), या निश्चित रूप से सात जन्मों का अंत करने वाला (सोतपत्ति) हो सकता है।"

"यह तुम्हारा दुर्भाग्य और हानि है, शाक्यों! जब जीवन दु:ख और मृत्यु से संकट में होता है, तो तुम आठों कारकों में पूर्ण उपोसथा का पालन कभी-कभी ही करते हो, और कभी-कभी नहीं करते।"

"आज से, भंते, हम उपोसथा का पूर्ण रूप से आठ कारकों के साथ पालन करेंगे।"

---

47 महली

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में निवास कर रहे थे। तब लिच्छवी महाली भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, बुरे कर्म करने का कारण और शर्त क्या है, बुरे कर्मों के घटित होने का कारण क्या है?" 2052

"महाली, (1) लोभ बुरे कर्मों के होने का कारण और शर्त है। (2) घृणा एक कारण और शर्त है... (3) मोह एक कारण और शर्त है... (4) लापरवाही एक कारण और शर्त है... (5) गलत दिशा में निर्देशित मन बुरे कर्मों के होने का कारण और शर्त है। यही बुरे कर्मों के होने का कारण और शर्त है।"

"भंते, अच्छे कर्म करने का कारण और शर्त क्या है, अच्छे कर्म होने की शर्त क्या है?"

महाली, (6) लोभ रहित होना अच्छे कर्म करने और उनके फलने-फूलने का कारण और शर्त है। (7) घृणा रहित होना कारण और शर्त है... (8) मोह रहित होना कारण और शर्त है... (9) ध्यानपूर्वक रहना कारण और शर्त है... (10) सही दिशा में निर्देशित मन अच्छे कर्म करने और उनके फलने-फूलने का कारण और शर्त है।

"हे महाली, यदि ये दस गुण संसार में विद्यमान न होते, तो अधार्मिक आचरण, धर्म के विरुद्ध आचरण और धर्म के अनुरूप आचरण, दोनों ही दृष्टिहीन होते। परन्तु संसार में इन दस गुणों के विद्यमान होने के कारण अधार्मिक आचरण, धर्म के विरुद्ध आचरण और धर्म के अनुरूप आचरण, दोनों ही दृष्टिहीन होते हैं।"

---

48 चीजें

"भिक्षुओं, संन्यास लेने वाले को इन दस बातों पर अक्सर चिंतन करना चाहिए। वे दस बातें कौन सी हैं?"

(1) "जो व्यक्ति [सन्यासी जीवन में] चला गया है, उसे अक्सर चिंतन करना चाहिए: 'मैंने वर्गहीन अवस्था में प्रवेश कर लिया है।' 2053

(2) "जो व्यक्ति [सन्यासी जीवन में] चला गया है, उसे अक्सर चिंतन करना चाहिए: 'मेरी जीविका दूसरों पर निर्भर है।' 2054 [88]

(3) "जो व्यक्ति [सन्यासी जीवन में] चला गया है, उसे अक्सर यह सोचना चाहिए: 'मेरा आचरण अलग होना चाहिए।' 2055

(4) "जो व्यक्ति [सन्यासी जीवन में] चला गया है, उसे अक्सर यह सोचना चाहिए: 'क्या मैं सदाचारी आचरण के संबंध में स्वयं को दोषी ठहराता हूँ?' 2056

(5) "जो व्यक्ति [सन्यासी जीवन में] चला गया है, उसे अक्सर यह सोचना चाहिए: 'क्या मेरे बुद्धिमान साथी भिक्षुओं ने जाँच-पड़ताल करने के बाद मेरे सद्‌गुणी आचरण के संबंध में मेरी निंदा की है?'"

(6) "जो व्यक्ति [सन्यासी जीवन में] चला गया है, उसे अक्सर यह सोचना चाहिए: 'मुझे अपने प्रिय और सुखद सभी लोगों और चीजों से अलग होना पड़ेगा।' 2857

(7) "जो व्यक्ति संन्यासी जीवन में चला गया है, उसे अक्सर यह चिंतन करना चाहिए: 'मैं अपने कर्मों का स्वामी हूँ, अपने कर्मों का उत्तराधिकारी हूँ; मेरे कर्म ही मेरी उत्पत्ति हैं, मेरे ही रिश्तेदार हैं, मेरे ही आश्रय हैं; मैं जो भी कर्म करूँ, चाहे अच्छा हो या बुरा, मैं उसका उत्तराधिकारी हूँगा।'

(8) "जो व्यक्ति [सन्यासी जीवन में] चला गया है, उसे अक्सर चिंतन करना चाहिए: 'मैं अपनी रातें और दिन कैसे बिता रहा हूँ?'"

(9) "जो व्यक्ति [सन्यासी जीवन में] चला गया है, उसे अक्सर सोचना चाहिए: 'क्या मुझे खाली झोपड़ियों में आनंद आता है?'"

(10) "जो व्यक्ति [सन्यासी जीवन में] चला गया है, उसे अक्सर यह चिंतन करना चाहिए: 'क्या मैंने ज्ञान और दृष्टि में कोई ऐसी अलौकिक विशिष्टता प्राप्त की है जो श्रेष्ठों के योग्य हो, ताकि अपने अंतिम दिनों में, जब मेरे साथी भिक्षुओं द्वारा मुझसे प्रश्न किया जाए, तो मैं लज्जित न होऊं?'

"हे भिक्षुओं, ये वे दस बातें हैं जिन पर संन्यासी को अक्सर चिंतन करना चाहिए।"

---

49 शरीर के माध्यम से जीवन निर्वाह करना

भिक्षुओं, ये दस चीजें शरीर के माध्यम से विद्यमान होती हैं। वे दस चीजें कौन सी हैं? सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास, मल-मूत्र त्याग, शारीरिक संयम, वाणी संयम, आजीविका में संयम और पुनर्जन्म का कारण बनने वाली उत्पत्ति की क्रिया। ये दस चीजें शरीर के माध्यम से विद्यमान होती हैं।

---

50 तर्क

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे: उस समय, भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, कई भिक्षु सभा भवन में एकत्रित हुए और एक साथ बैठे थे कि वे बहस और झगड़े में पड़ गए और एक दूसरे पर तीखे शब्दों से प्रहार करने लगे।

फिर, शाम को, भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और सभा भवन में जाकर तैयार आसन पर बैठ गए। फिर भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया:

"भिक्षुओं, आप लोग अभी यहाँ एक साथ बैठे हुए किस चर्चा में लगे हुए थे? आपके बीच क्या बातचीत चल रही थी?"

"यहाँ, भंते, भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, हम सभा भवन में एकत्रित हुए और एक साथ बैठे थे कि हम बहस और झगड़े में पड़ गए और एक दूसरे पर तीखे शब्दों से प्रहार करने लगे।"

"भिक्षुओं (सन्यासियों), हे कुल के लोगों, जिन्होंने गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश किया है, उनके लिए यह उचित नहीं है कि वे वाद-विवाद और झगड़े में पड़ें और एक-दूसरे को तीखे शब्दों से घायल करें।"

"भिक्षुओं, सौहार्द के ये दस सिद्धांत हैं जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करते हैं और सामंजस्य, विवादहीनता, सद्भाव और एकता की ओर अग्रसर करते हैं... 2059 वे दस क्या हैं?"

(1) "यहाँ, भिक्षु गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, सुचारु आचरण और आश्रय से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। चूंकि भिक्षु गुणी है... यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है और सामंजस्य, विवादहीनता, सद्भाव और एकता को बढ़ावा देता है।"

(2) "फिर, एक भिक्षु ने बहुत कुछ सीखा है, वह जो कुछ सीखा है उसे याद रखता है और उसे संजोता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में अच्छी हों, मध्य में अच्छी हों और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों - ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, [90] मानसिक रूप से जांचा है और दृष्टि से अच्छी तरह समझा है। चूंकि एक भिक्षु ने बहुत कुछ सीखा है... यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है और एकता की ओर अग्रसर होता है।"

(3) "फिर, एक भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी, अच्छे सहपाठी होते हैं। चूंकि एक भिक्षु के अच्छे मित्र होते हैं... यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान पैदा करता है और एकता की ओर अग्रसर होता है।"

(4) "फिर, भिक्षु को सुधारना आसान होता है और उसमें ऐसे गुण होते हैं जो उसे सुधारना आसान बनाते हैं; वह धैर्यवान होता है और आदरपूर्वक उपदेश ग्रहण करता है। चूंकि भिक्षु को सुधारना आसान होता है... यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है और एकता की ओर अग्रसर होता है।"

(5) "एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के लिए किए जाने वाले विभिन्न कार्यों को कुशलतापूर्वक और लगन से करता है; वह उनमें उचित ज्ञान रखता है, और वह सब कुछ ठीक से करने और व्यवस्थित करने में सक्षम होता है। चूंकि एक भिक्षु कुशल और लगनशील होता है... यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है और एकता की ओर अग्रसर होता है।"

(6) "फिर, एक भिक्षु धम्म (मार्ग) से प्रेम करता है और अपने कथनों में प्रसन्नतापूर्ण होता है, धम्म और अनुशासन से संबंधित उच्च आनंद से परिपूर्ण होता है। चूंकि एक भिक्षु धम्म से प्रेम करता है... यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है और एकता की ओर अग्रसर होता है।"

(7) "फिर, एक भिक्षु ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है। चूंकि एक भिक्षु ने ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है... [91]... यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है और एकता की ओर अग्रसर होता है।"

(8) "फिर, एक भिक्षु किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा भोजन, आवास और बीमारों के लिए औषधियों और प्रावधानों से संतुष्ट रहता है। चूंकि एक भिक्षु किसी भी प्रकार के वस्त्र से संतुष्ट रहता है... यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है और एकता को बढ़ावा देता है।"

(9) "फिर, एक भिक्षु सचेत (ध्यान/सती) होता है, जो परम सजगता और सतर्कता से परिपूर्ण होता है, जो बहुत पहले किए और कहे गए कार्यों को याद रखता है और उनका स्मरण करता है। चूंकि एक भिक्षु सचेत (ध्यान/सती) होता है... यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है और एकता की ओर अग्रसर होता है।"

(10) "फिर, भिक्षु बुद्धिमान होता है; वह उस ज्ञान (दिव्य ज्ञान) से युक्त होता है जो उत्पत्ति और क्षय को भलीभांति समझता है, जो श्रेष्ठ और मर्मस्पर्शी होता है और दुखों के पूर्ण नाश की ओर ले जाता है। चूंकि भिक्षु बुद्धिमान होता है... यह सौहार्द का एक सिद्धांत है जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करता है और एकता की ओर अग्रसर करता है।"

"ये, भिक्षुओं, सौहार्द के दस सिद्धांत हैं जो स्नेह और सम्मान उत्पन्न करते हैं और सामंजस्य, विवादहीनता, सद्भाव और एकता की ओर अग्रसर होते हैं।" [92]

दूसरा पचास

I. अपने मन का ध्यान रखना (सचित्तवग्गो सान. सद-चित्त-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

51. अपने मन का ध्यान रखना (सचित्त)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, जो भिक्षु दूसरों के मन के तरीकों में कुशल नहीं है, उसे प्रशिक्षण लेना चाहिए: मैं अपने मन के तरीकों में कुशल बनूंगा। इसी तरह तुम्हें स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

"और एक भिक्षु अपने मन के मार्गों में कैसे निपुण होता है? यह ठीक वैसा ही है जैसे कोई स्त्री या पुरुष—युवा, जवान और आभूषणों का शौकीन—एक साफ, चमकदार दर्पण में या साफ पानी के कटोरे में अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे। यदि उन्हें उसमें कोई धूल या दाग दिखाई दे, तो वे उसे हटाने का प्रयास करेंगे। लेकिन यदि उन्हें वहां कोई धूल या दाग दिखाई न दे, तो वे इससे प्रसन्न होंगे; और अपनी इच्छा पूरी होने पर वे सोचेंगे, 'कितना सौभाग्यशाली हूँ कि मैं निर्मल हूँ!' 2060 इसी प्रकार, आत्म-परीक्षण भिक्षु के लिए लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि करने में बहुत सहायक होता है।"

"[स्वयं से पूछना चाहिए:] (1) 'क्या मैं अक्सर लालसा में डूबा रहता हूँ या लालसा से रहित हूँ? (2) क्या मैं अक्सर द्वेष में डूबा रहता हूँ या द्वेष रहित हूँ? (3) क्या मैं अक्सर सुस्ती और उनींदापन से ग्रस्त रहता हूँ या सुस्ती और उनींदापन से मुक्त हूँ? (4) क्या मैं अक्सर बेचैन रहता हूँ या शांत रहता हूँ? (5) क्या मैं अक्सर संदेह से ग्रस्त रहता हूँ या संदेह से मुक्त हूँ? (6) क्या मैं अक्सर क्रोधित रहता हूँ या क्रोध रहित हूँ? (7) क्या मेरा मन अक्सर दूषित रहता है या निर्दूषित? (8) क्या मेरा शरीर अक्सर उत्तेजित रहता है या अनुत्तेजित? (9) क्या मैं अक्सर आलसी रहता हूँ या ऊर्जावान? (10) क्या मैं अक्सर असामंजस्य में रहता हूँ या आत्म-मग्न रहता हूँ?' 2061

यदि आत्मनिरीक्षण के द्वारा कोई भिक्षु यह जान ले कि ‘मैं अक्सर लालसा में लीन रहता हूँ, द्वेष में लिप्त रहता हूँ, सुस्ती और आलस्य से ग्रस्त रहता हूँ, बेचैन रहता हूँ, संदेह से ग्रस्त रहता हूँ, क्रोधित रहता हूँ, मन से दूषित रहता हूँ, शरीर से उत्तेजित रहता हूँ, आलसी और असामंजस्यपूर्ण रहता हूँ’, तो उसे इन बुरे और हानिकारक गुणों (धम्म) को त्यागने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, सजगता और पूर्ण बोध (संपजन्न) का प्रयोग करना चाहिए। जिस प्रकार किसी व्यक्ति के वस्त्र या सिर में आग लग जाए तो वह अपने वस्त्र या सिर की आग बुझाने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, सजगता और पूर्ण बोध का प्रयोग करता है, उसी प्रकार भिक्षु को भी इन बुरे और हानिकारक गुणों (धम्म) को त्यागने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, लगन, लगन, सजगता और पूर्ण बोध का प्रयोग करना चाहिए।’ गुण (धम्म)।

लेकिन यदि ऐसे आत्मपरीक्षण से कोई भिक्षु यह जान ले कि 'मैं अक्सर लालसा रहित, द्वेष रहित, सुस्ती और उन्मत्तता से मुक्त, शांत, संशय रहित, क्रोध रहित, मन से निर्मल, शरीर से अविचलित, ऊर्जावान और समाधि में लीन रहता हूँ', तो उसे इन्हीं लाभकारी गुणों (धम्म) पर आधारित होकर दोषों के नाश की ओर अग्रसर होना चाहिए।

---

52 सारिपुत्त

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

[10:51 के समान, लेकिन सारिपुत्त द्वारा बोला गया।] [95— 96]

---

53 ठहराव (थिति)

भिक्षुओं, मैं लाभकारी (कुशल) गुणों में ठहराव की भी प्रशंसा नहीं करता, गिरावट तो दूर की बात है। मैं केवल लाभकारी (कुशल) गुणों में वृद्धि की प्रशंसा करता हूँ, ठहराव या गिरावट की नहीं। 2062

और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में गिरावट कैसे होती है - स्थिरता या वृद्धि क्यों नहीं? केवल एक भिक्षु में एक निश्चित मात्रा में आस्था, सदाचार, ज्ञान, वैराग्य, पन्ना (दिव्य ज्ञान) और विवेक होता है। उसके ये गुण स्थिर नहीं रहते या बढ़ते नहीं हैं। मैं कहता हूँ कि यह लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में गिरावट है, स्थिरता या वृद्धि नहीं। अतः लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में गिरावट होती है - स्थिरता या वृद्धि नहीं।

और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में ठहराव कैसे है — गिरावट या वृद्धि नहीं? केवल एक भिक्षु में एक निश्चित मात्रा में आस्था, सदाचार, ज्ञान, वैराग्य, पन्ना (दिव्य ज्ञान) और विवेक होता है। उसके ये गुण न तो घटते हैं और न ही बढ़ते हैं। मैं कहता हूँ कि लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में गिरावट या वृद्धि नहीं, बल्कि ठहराव है। इस प्रकार लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में ठहराव है — गिरावट या वृद्धि नहीं।

और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि कैसे होती है—स्थिरता या गिरावट नहीं? यहाँ, एक भिक्षु में एक निश्चित मात्रा में आस्था, सदाचारी आचरण, ज्ञान, वैराग्य, पन्ना (दिव्य ज्ञान) और विवेक होता है। उसके ये गुण अपरिवर्तित नहीं रहते या उनमें गिरावट नहीं आती। मैं कहता हूँ कि यही लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि है, न कि स्थिरता या गिरावट। इस प्रकार लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि होती है—स्थिरता या गिरावट नहीं।

"भिक्षुओं, जो भिक्षु दूसरों के मन के तरीकों में कुशल नहीं हैं, उन्हें यह अभ्यास करना चाहिए: 'मैं अपने मन के तरीकों में कुशल बनूंगा।' . . . [97-98] . . . [जैसा कि 10:51 से आगे है:] . . . लेकिन यदि ऐसे आत्म-परीक्षण से कोई भिक्षु यह जान ले: 'मैं अक्सर लालसा रहित रहता हूँ, . . और आत्म-मग्न (समाहित/समाहित) रहता हूँ,' तो उसे उन्हीं लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) पर आधारित होकर दोषों के नाश की ओर अग्रसर होना चाहिए।"

---

54 समभाव (समथा)

भिक्षुओं, जो भिक्षु दूसरों के मन के तरीकों में कुशल नहीं है, उसे यह अभ्यास करना चाहिए: 'मैं अपने मन के तरीकों में कुशल बनूंगा।' इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

और एक भिक्षु अपने मन के मार्गों में कैसे निपुण होता है? यह ठीक वैसा ही है जैसे कोई स्त्री या पुरुष—युवा, जवान और आभूषणों का शौकीन—एक साफ चमकदार दर्पण में या साफ पानी के कटोरे में अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे। यदि उन्हें वहाँ कोई धूल या दाग दिखाई दे, तो वे उसे हटाने का प्रयास करेंगे। लेकिन यदि उन्हें वहाँ कोई धूल या दाग दिखाई न दे, तो वे इससे प्रसन्न होंगे, [99] और अपनी इच्छा पूरी होने पर वे सोचेंगे, 'मेरे लिए कितना सौभाग्य की बात है कि मैं स्वच्छ हूँ!'

"इसी प्रकार, भिक्षुओं, आत्म-परीक्षण भिक्षु के लिए लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि के लिए बहुत सहायक होता है: 2063 'क्या मुझे मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त होती है या नहीं? क्या मुझे घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त होता है या नहीं?'

(1) यदि कोई भिक्षु आत्म-परीक्षण द्वारा यह जान ले कि 'मुझे मन की आंतरिक समता (समथा) तो प्राप्त होती है, परन्तु घटनाओं के प्रति अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त नहीं होता,' तो उसे मन की आंतरिक शांति को आधार बनाकर घटनाओं (धम्म) के प्रति अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। तब कुछ समय बाद उसे मन की आंतरिक समता (समथा) और घटनाओं (धम्म) के प्रति अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) दोनों प्राप्त हो जाते हैं।

(2) "परन्तु यदि ऐसे आत्म-परीक्षण से उसे यह ज्ञान हो जाए कि 'मुझे घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) तो प्राप्त होता है, परन्तु मन की आंतरिक समता (समथा) नहीं,' तो उसे घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) के उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) पर आधारित होकर मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। तब कुछ समय बाद उसे घटनाओं (धम्म) के बारे में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) और मन की आंतरिक समता (समथा) दोनों प्राप्त हो जाते हैं।"

(3) "परन्तु यदि ऐसे आत्म-परीक्षण से वह यह जान ले कि 'मुझे न तो मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त होती है और न ही घटनाओं के प्रति अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त होता है, तो उसे इन दोनों लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयोग करना चाहिए। जैसे किसी व्यक्ति के वस्त्र या सिर में आग लग जाए तो वह अपने वस्त्र या सिर की आग बुझाने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयोग करता है, उसी प्रकार भिक्षु को इन दोनों लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयोग करना चाहिए।" फिर, कुछ समय बाद, वह मन की आंतरिक समता (समथा) और घटनाओं (धम्म) में अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) दोनों प्राप्त कर लेता है।

(4) "परन्तु यदि ऐसे आत्म-परीक्षण से वह जान ले: 'मैं मन की आंतरिक समता (समथा) और घटनाओं में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) दोनों प्राप्त करता हूँ,' तो उसे उन्हीं लाभकारी (कुशल) गुणों पर आधारित होकर दोषों के नाश तक पहुँचने का और प्रयास करना चाहिए।

मैं कहता हूँ, वस्त्र दो प्रकार के होते हैं: एक जिनका उपयोग किया जाना है और दूसरे जिनका उपयोग नहीं किया जाना है। भिक्षा भोजन भी दो प्रकार का होता है: एक जिसका उपयोग किया जाना है और दूसरा जिसका उपयोग नहीं किया जाना है। आवास भी दो प्रकार के होते हैं: एक जिनका उपयोग किया जाना है और दूसरा जिनका उपयोग नहीं किया जाना है। गाँव या कस्बे भी दो प्रकार के होते हैं: एक जिनका सहारा लिया जाना है और एक जिनका सहारा नहीं लिया जाना है। देश या क्षेत्र भी दो प्रकार के होते हैं: एक जिनका सहारा लिया जाना है और एक जिनका सहारा नहीं लिया जाना है। व्यक्ति भी दो प्रकार के होते हैं: एक जिनके साथ संबंध रखना है और जिनके साथ संबंध नहीं रखना है।

(5) जब यह कहा गया कि 'वस्त्र दो प्रकार के होते हैं: एक वे जिनका उपयोग किया जाना चाहिए और दूसरे वे जिनका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए' तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी वस्त्र के बारे में पता हो कि 'इस वस्त्र का उपयोग करने से मुझमें अकुशल गुण बढ़ते हैं और धम्म गुण घटते हैं' तो उसे ऐसे वस्त्र का उपयोग नहीं करना चाहिए। परन्तु यदि किसी को किसी वस्त्र के बारे में पता हो कि 'इस वस्त्र का उपयोग करने से मुझमें अकुशल गुण घटते हैं और धम्म गुण बढ़ते हैं' तो उसे ऐसे वस्त्र का उपयोग करना चाहिए। जब यह कहा गया कि 'वस्त्र दो प्रकार के होते हैं: एक वे जिनका उपयोग किया जाना चाहिए और दूसरा वे जिनका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए' तो इसी कारण ऐसा कहा गया।

(6) जब यह कहा गया कि 'भिक्षा भी दो प्रकार की होती है: एक जिसका उपयोग किया जाना चाहिए और दूसरी जिसका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए', तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी भिक्षा के बारे में पता हो कि 'इस भिक्षा का उपयोग करने से मुझमें अकुशल गुण बढ़ जाते हैं और लाभकारी गुण घट जाते हैं', तो उसे ऐसी भिक्षा का उपयोग नहीं करना चाहिए। परन्तु यदि किसी को

किसी भिक्षा के बारे में पता हो कि 'इस भिक्षा का उपयोग करने से मुझमें अकुशल गुण घट जाते हैं और लाभकारी गुण बढ़ जाते हैं', तो उसे ऐसी भिक्षा का उपयोग करना चाहिए। जब यह कहा गया कि 'भिक्षा भी दो प्रकार की होती है: एक जिसका उपयोग किया जाना चाहिए और दूसरी जिसका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए', तो इसी कारण ऐसा कहा गया।

(7) जब यह कहा गया कि 'आवास भी दो प्रकार के होते हैं: जिनका उपयोग किया जाना चाहिए और जिनका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए', तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी आवास के बारे में पता हो कि 'इस आवास का उपयोग करने से मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) बढ़ते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) घटते हैं', तो उसे ऐसे आवास का उपयोग नहीं करना चाहिए। लेकिन यदि किसी को किसी आवास के बारे में पता हो कि 'इस आवास का उपयोग करने से मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) घटते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) बढ़ते हैं', तो उसे ऐसे आवास का उपयोग करना चाहिए। जब यह कहा गया कि 'आवास भी दो प्रकार के होते हैं: जिनका उपयोग किया जाना चाहिए और जिनका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए', तो इसी कारण से ऐसा कहा गया।

(8) जब यह कहा गया कि 'गाँव या कस्बे भी दो प्रकार के होते हैं: एक वे जहाँ जाना चाहिए और दूसरे वे जहाँ नहीं जाना चाहिए,' तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी गाँव या कस्बे के बारे में पता हो कि 'जब मैं इस गाँव या कस्बे में जाता हूँ, तो मुझमें अकुशल गुण बढ़ जाते हैं और लाभकारी गुण घट जाते हैं', तो उसे ऐसे गाँव या कस्बे में नहीं जाना चाहिए। लेकिन यदि किसी को किसी गाँव या कस्बे के बारे में पता हो कि 'जब मैं इस गाँव या कस्बे में जाता हूँ, तो मुझमें अकुशल गुण घट जाते हैं और लाभकारी गुण बढ़ जाते हैं', तो उसे ऐसे गाँव या कस्बे में जाना चाहिए। जब यह कहा गया कि 'गाँव या कस्बे भी दो प्रकार के होते हैं: एक वे जहाँ जाना चाहिए और दूसरे वे जहाँ नहीं जाना चाहिए,' तो ऐसा इसी कारण से कहा गया।

(9) जब यह कहा गया कि 'देश या क्षेत्र भी दो प्रकार के होते हैं: जिनका सहारा लिया जा सकता है और जिनका सहारा नहीं लिया जा सकता,' तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी देश या क्षेत्र के बारे में पता हो कि 'जब मैं इस देश या क्षेत्र का सहारा लेता हूँ, तो मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण बढ़ जाते हैं [102] और लाभकारी (कुशल) गुण कम हो जाते हैं', तो उसे ऐसे देश या क्षेत्र का सहारा नहीं लेना चाहिए। लेकिन यदि किसी को किसी देश या क्षेत्र के बारे में पता हो कि 'जब मैं इस देश या क्षेत्र का सहारा लेता हूँ, तो मुझमें हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं और लाभकारी (कुशल) गुण बढ़ जाते हैं', तो उसे ऐसे देश या क्षेत्र का सहारा लेना चाहिए। जब यह कहा गया कि 'देश या क्षेत्र भी दो प्रकार के होते हैं: जिनका सहारा लिया जा सकता है और जिनका सहारा नहीं लिया जा सकता,' तो इसी कारण से ऐसा कहा गया।

(10) जब यह कहा गया कि, 'मनुष्य भी दो प्रकार के होते हैं: जिनसे संगति करनी चाहिए और जिनसे संगति नहीं करनी चाहिए,' तो ऐसा क्यों कहा गया? यदि किसी को किसी व्यक्ति के बारे में पता हो कि 'इस व्यक्ति के साथ संगति करने से मुझमें अकुशल गुण बढ़ जाते हैं और लाभकारी गुण घट जाते हैं,' तो ऐसे व्यक्ति के साथ संगति नहीं करनी चाहिए। परन्तु यदि किसी को किसी व्यक्ति के बारे में पता हो कि 'इस व्यक्ति के साथ संगति करने से मुझमें अकुशल गुण घट जाते हैं और लाभकारी गुण बढ़ जाते हैं,' तो ऐसे व्यक्ति के साथ संगति करनी चाहिए। जब यह कहा गया कि, 'मनुष्य भी दो प्रकार के होते हैं: जिनसे संगति करनी चाहिए और जिनसे संगति नहीं करनी चाहिए,' तो इसी कारण ऐसा कहा गया।

---

55 परित्याग (परिहाना)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"मित्रों, कहा जाता है: 'एक व्यक्ति पतन के अधीन है, एक व्यक्ति पतन के अधीन है।' भगवान (बुद्ध) ने किस प्रकार कहा है कि एक व्यक्ति पतन के अधीन है, और किस प्रकार कहा है कि एक व्यक्ति पतन के अधीन नहीं है?"

"हे मित्र, हम दूर-दूर से पूज्य सारिपुत्त से इस कथन का अर्थ जानने आए हैं। अच्छा होगा यदि वे इस कथन का अर्थ स्पष्ट कर दें। [103] उनसे सुनकर भिक्षु इसे याद रखेंगे।"

"तो फिर, मित्रों, ध्यान से सुनिए और गौर कीजिए। मैं बोलूंगा।"

"जी हां, मित्र," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

"हे मित्रों, भगवान (बुद्ध) ने किस प्रकार कहा है कि मनुष्य पतन के अधीन है? यहाँ, एक भिक्षु को वह शिक्षा सुनने को नहीं मिलती जो उसने पहले न सुनी हो, वह उन शिक्षाओं को भूल जाता है जो वह पहले सुन चुका है, वह उन शिक्षाओं को याद नहीं करता जिनसे वह पहले से परिचित है, और वह उस बात को नहीं समझता जो उसने पहले नहीं समझी है। इसी प्रकार भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि मनुष्य पतन के अधीन है।" 2065

हे मित्रों, भगवान (बुद्ध) ने किस प्रकार कहा है कि मनुष्य पतन के अधीन नहीं है? यहाँ, एक भिक्षु को एक ऐसा उपदेश सुनने को मिलता है जो उसने पहले नहीं सुना होता, वह उन उपदेशों को नहीं भूलता जो वह पहले सुन चुका होता है, वह उन उपदेशों को याद करता है जिनसे वह पहले परिचित होता है, और जो वह नहीं समझ पाया होता उसे समझ लेता है। इसी प्रकार भगवान (बुद्ध) ने कहा है कि मनुष्य पतन के अधीन नहीं है।

"मित्रों, जो भिक्षु दूसरों के मन के तरीकों में कुशल नहीं है, उसे यह अभ्यास करना चाहिए: 'मैं अपने मन के तरीकों में कुशल बनूंगा।' इसी प्रकार तुम्हें स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।"

"और हे मित्रों, भिक्षु अपने मन के मार्ग में कैसे निपुण होता है? यह ठीक वैसा ही है जैसे कोई स्त्री या पुरुष—युवा, जवान और आभूषणों का शौकीन—स्वच्छ और चमकदार दर्पण में या स्वच्छ जल से भरे कटोरे में अपने चेहरे का प्रतिबिंब देखे: यदि उसे कोई धूल या दाग दिखाई दे, तो वह उसे हटाने का प्रयास करेगा। परन्तु यदि उसे कोई धूल या दाग दिखाई न दे, तो वह प्रसन्न होगा; [104] और अपनी इच्छा पूरी होने पर वह सोचेगा, 'कितना सौभाग्यशाली मैं हूँ कि मैं निर्मल हूँ!' इसी प्रकार आत्म-परीक्षण भिक्षु के लिए लाभकारी (कुशल) गुणों में वृद्धि करने में बहुत सहायक होता है।"

"[स्वयं से पूछना चाहिए:] (1) क्या मैं अक्सर लालसा से मुक्त रहता हूँ? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं? (2) क्या मैं अक्सर द्वेष से मुक्त रहता हूँ? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं? (3) क्या मैं अक्सर सुस्ती और आलस्य से मुक्त रहता हूँ? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं? (4) क्या मैं अक्सर शांत रहता हूँ? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं? (5) क्या मैं अक्सर संदेह से मुक्त रहता हूँ? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं? (6) क्या मैं अक्सर क्रोध से मुक्त रहता हूँ? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं? (7) क्या मेरा मन अक्सर निर्मल रहता है? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं? (8) क्या मुझे धम्म का आंतरिक आनंद प्राप्त होता है? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं? (9) क्या मुझे मन की आंतरिक समता (समथा) प्राप्त होती है? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं? (10) क्या मुझे घटनाओं में अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का उच्चतर पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त होता है? क्या यह गुण मुझमें विद्यमान है या नहीं?"

यदि आत्मनिरीक्षण के द्वारा किसी भिक्षु को अपने भीतर कोई भी लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उपस्थित न दिखाई दे, तो उसे उन लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, अटूट लगन, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयास करना चाहिए। जिस प्रकार किसी व्यक्ति के वस्त्र या सिर में आग लग जाए तो वह अपने वस्त्र या सिर की आग बुझाने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, अटूट लगन, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयास करता है, उसी प्रकार भिक्षु को भी उन लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, अटूट लगन, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयास करना चाहिए।

लेकिन यदि कोई भिक्षु आत्म-परीक्षण द्वारा अपने भीतर कुछ लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विद्यमान पाता है, परन्तु अन्य नहीं, [105] तो उसे अपने भीतर देखे गए लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) पर आधारित होकर उन लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए असाधारण इच्छा, प्रयास, उत्साह, उमंग, अथक परिश्रम, सती ध्यान और पूर्ण बोध का प्रयोग करना चाहिए जो वह अपने भीतर नहीं देखता। जैसे किसी के वस्त्र या सिर में आग लग जाए तो वह अपने वस्त्र या सिर की आग बुझाने के लिए असाधारण इच्छा का प्रयोग

करता है, उसी प्रकार भिक्षु को अपने भीतर देखे गए लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) पर आधारित होकर उन लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए असाधारण इच्छा का प्रयोग करना चाहिए जो वह अपने भीतर नहीं देखता।

लेकिन यदि कोई भिक्षु आत्म-परीक्षण के माध्यम से अपने भीतर इन सभी लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विद्यमान देखता है, तो उसे उन्हीं लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) पर आधारित होकर दोषों के नाश की ओर अग्रसर होने का प्रयास करना चाहिए।

---

56 (6) धारणाएँ (1) (सन्ना1 सं. संज्ञा)

भिक्षुओं, ये दस धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो अत्यंत फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अमत/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं। 2066 वे दस कौन सी हैं? (1) अनाकर्षकता की अनुभूति, (2) मृत्यु की अनुभूति, (3) भोजन की अरुचि की अनुभूति, (4) संपूर्ण संसार में आनंदहीनता की अनुभूति, (5) अनित्यता की अनुभूति, (6) अनित्य में पीड़ा की अनुभूति, (7) पीड़ा में अनात्म की अनुभूति, (8) त्याग की अनुभूति, (9) वैराग्य की अनुभूति, और (10) समाप्ति की अनुभूति। ये दस धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो अत्यंत फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अमत/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं। [106]

---

57 धारणाएँ (2) (सन्न2 सं. संज्ञा)

भिक्षुओं, ये दस धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो अत्यंत फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अम्रता/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं। वे दस कौन सी हैं? (1) अनित्यता (अनिच्छा/अनित्यता) की धारणा, (2) अनात्म की धारणा, (3) मृत्यु की धारणा, (4) भोजन की अरुचि की धारणा, (5) संपूर्ण संसार में आनंदहीनता की धारणा, (6) कंकाल की धारणा, (7) कृमिग्रस्त शव की धारणा, (8) पीले पड़े शव की धारणा, (9) फटे हुए शव की धारणा, और (10) फूले हुए शव की धारणा। 2067 ये दस धारणाएँ (सन्ना/संज्ञा), जब विकसित और पोषित की जाती हैं, तो अत्यंत फलदायी और लाभकारी होती हैं, जो अमरता (अम्रता/अमृत) को लक्ष्य बनाकर अमरत्व की प्राप्ति की ओर ले जाती हैं।

---

58 मूल (मुलका)

भिक्षु (सन्यासी), अन्य संप्रदायों के तपस्वी आपसे पूछ सकते हैं: (1) 'हे मित्रों, समस्त वस्तुएँ किसमें निहित हैं? (2) वे किसके द्वारा अस्तित्व में आती हैं? (3) उनकी उत्पत्ति किससे होती है? (4) वे किस पर केंद्रित होती हैं? (5) वे किस ओर अग्रसर होती हैं? (6) उन पर किसका अधिकार है? (7) उनका पर्यवेक्षक कौन है? (8) उनका मूल क्या है? (9) वे किसमें समाहित होती हैं? (10) उनका लक्ष्य क्या है?' यदि आपसे इस प्रकार पूछा जाए, तो आप उन्हें क्या उत्तर देंगे?' 2068

"भंते, हमारी शिक्षाएं भगवान (बुद्ध) में निहित हैं, भगवान (बुद्ध) द्वारा निर्देशित हैं, भगवान (बुद्ध) की शरण लो। यदि भगवान (बुद्ध) इस कथन का अर्थ स्पष्ट कर दें तो अच्छा होगा। उनसे सुनकर भिक्षु इसे याद रखेंगे।"

"तो सुनो, भिक्षुओं, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं (मठवासियों), यदि अन्य संप्रदायों के तपस्वी आपसे पूछें: 'मित्रों, सभी चीजों की जड़ क्या है? ... [107] ... उनका लक्ष्य क्या है?' तो आपको उन्हें इस प्रकार उत्तर देना चाहिए।

"मित्रों, (1) सभी वस्तुएँ इच्छा में निहित हैं। (2) वे ध्यान के माध्यम से अस्तित्व में आती हैं। (3) वे संपर्क से उत्पन्न होती हैं। (4) वे संवेदना (वेदना) में अभिसरित होती हैं। (5) वे समाधि (स्व-लीनता) द्वारा निर्देशित होती हैं। (6) सती (ध्यान) उन पर अधिकार रखती है। (7) दिव्य ज्ञान (पन्न) उनका मार्गदर्शक है। (8) मुक्ति उनका मूल है। (9) वे अमरता (अमृत) की अवस्था में परिणत होती हैं। (10) उनका लक्ष्य निर्वाण है।" 2069

"यदि आपसे इस प्रकार पूछा जाए, हे भिक्षुओं, तो आपको अन्य संप्रदायों के उन तपस्वियों को इसी प्रकार उत्तर देना चाहिए।"

---

59 त्याग की ओर जाना (पबज्जा सं. प्रवर्ज्या)

अतः, भिक्षुओं, आप स्वयं को इस प्रकार प्रशिक्षित करें: 'हमारे मन को हमारे संन्यास में प्रवेश करने की भावना के अनुरूप सुदृढ़ किया जाएगा और उत्पन्न होने वाले अकुशल गुण हमारे मन पर हावी नहीं होंगे। 2070 (1) हमारे मन को अनित्यता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में सुदृढ़ किया जाएगा। (2) हमारे मन को अनात्म की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में सुदृढ़ किया जाएगा। (3) हमारे मन को अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में सुदृढ़ किया जाएगा। (4) हमारे मन को खतरे की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में सुदृढ़ किया जाएगा। (5) हम संसार के सम और विषम मार्गों को जानेंगे, 2071 और हमारे मन को इस अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में सुदृढ़ किया जाएगा। (6) हम संसार के उद्भव और विनाश को जानेंगे, 2072 और हमारा इस धारणा (सन्ना/संज्ञा) में मन मजबूत होंगे। (7) हम संसार की उत्पत्ति और उसके अंत को जानेंगे, और इस धारणा (सन्ना/संज्ञा) में हमारा मन मजबूत होगा। (8) त्याग की धारणा (सन्ना/संज्ञा) में हमारा मन मजबूत होगा। (9) वैराग्य की धारणा (सन्ना/संज्ञा) में हमारा मन मजबूत होगा। (10) निश्चिंतता की धारणा (सन्ना/संज्ञा) में हमारा मन मजबूत होगा। 2073 [108] इसी प्रकार आपको स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए।

जब किसी भिक्षु का मन उसके संन्यास लेने की भावना के अनुरूप मजबूत हो जाता है, और उत्पन्न हुए बुरे (अकुशल) गुण उसके मन पर हावी नहीं होते — जब उसका मन अनित्यता की धारणा (सन्न/संज्ञा) में मजबूत हो जाता है... जब उसका मन निर्गमन की धारणा (सन्न/संज्ञा) में मजबूत हो जाता है, तो उसे दो में से एक फल प्राप्त होने की अपेक्षा की जा सकती है: या तो इसी जीवन में अंतिम ज्ञान, या यदि कोई अवशेष शेष रहता है, तो पुनर्जन्म न होने की अवस्था (अनगामी)।

---

60 गिरिमानंद

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस समय पूज्य गिरिमनंद बीमार और अत्यंत दुर्बल थे। 2074 तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

“भंते, पूज्य गिरिमनंद बीमार, पीड़ित और गंभीर रूप से अस्वस्थ हैं। यदि भगवान (बुद्ध) करुणावश उनसे मिलने आएं तो अच्छा होगा।”

“हे आनंद, यदि तुम भिक्षु गिरिमनंद के पास जाकर उनसे दस धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के बारे में बात करो, तो क्या यह संभव है कि उनके बारे में सुनकर उनका कष्ट तुरंत दूर हो जाए? वे दस कौन सी हैं? [109]

“[दस सही धारणाएं (सन्ना/संज्ञा) यानी] (1) अनित्यता की धारणा (सन्ना/सन्या), (2) गैर-स्वयं (अनात्ता) की धारणा (सन्ना/सन्या), (3) अनाकर्षकपन (अशुभ) की धारणा (सन्ना/सन्या), (4) खतरे की धारणा (आदिनव), (5) द परित्याग की धारणा(सन्ना/सन्या), (6) वैराग्य की धारणा(सन्ना/सन्या), (7) निरोध की धारणा(निरोध), (8) संपूर्ण संसार में गैर-खुशी की धारणा(सन्ना/सन्या), (9) सभी में अनित्यता की धारणा(सन्ना/सन्या), (अनिच्छा/अनित्य) वातानुकूलित घटनाएँ (संहार/संस्कार/भावनाएँ), और (10) श्वास (अनापान) की जागरूकता (ध्यान/सती)।

(1) "हे आनंद, अनित्यता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) क्या है? यहाँ, वन में, वृक्ष की तलहटी में, या किसी खाली कुटिया में जाकर, एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'रूप अनित्य है, वेदना अनित्य है, अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) अनित्य है, अपने गुण (संस्कार/संस्कार)

अनित्य हैं, चेतना अनित्य है।' इस प्रकार वह आसक्ति के अधीन इन पाँचों स्कंधों में अनित्यता (अनिच्छ/अनित्य) को निहारते हुए ध्यान लगाता है। इसे अनित्यता की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) कहते हैं।"

(2) "हे आनंद, अनात्म की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) क्या है? यहाँ, वन में, वृक्ष की तलहटी में, या किसी खाली कुटिया में जाकर, एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'आँख अनात्म है, रूप अनात्म हैं; कान अनात्म हैं, ध्वनियाँ अनात्म हैं; नाक अनात्म है, गंध अनात्म हैं; जीभ अनात्म है, स्वाद अनात्म हैं; शरीर अनात्म है, स्पर्शनीय वस्तुएँ अनात्म हैं; मन अनात्म है, मानसिक घटनाएँ (धम्म) अनात्म हैं।' इस प्रकार वह इन छह आंतरिक और बाह्य इंद्रिय आधारों में अनात्म को निहारते हुए ध्यान करता है। इसे अनात्म की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) कहते हैं।"

(3) "और हे आनंद, अनाकर्षकता (असुभ) की अनुभूति (सन्ना/संग्य) क्या है? यहाँ, एक भिक्षु (साधु) इस शरीर का, पैरों के तलवों से ऊपर और बालों के सिरों से नीचे की ओर, त्वचा से घिरे हुए, अनेक प्रकार की अशुद्धियों से परिपूर्ण रूप में अवलोकन करता है: 'इस शरीर में सिर के बाल, शरीर के बाल, नाखून, दांत, त्वचा, मांस, नसें, हड्डियाँ, अस्थि मज्जा, गुर्दे, हृदय, यकृत, फुफ्फुस, तिल्ली, फेफड़े, आंतें, मध्यमाला, पेट, मल, पित्त, कफ, मवाद, रक्त, पसीना, वसा, आँसू, चिकनाई, लार, नाक का पानी, जोड़ों का द्रव और मूत्र हैं।' इस प्रकार वह इस शरीर में अनाकर्षकता को ध्यानपूर्वक देखता है। इसे अनाकर्षकता की अनुभूति (सन्ना/संग्य) कहते हैं।"

(4) "और हे आनंद, खतरे (आदिनाव) की अनुभूति (सन्ना/संग्य) क्या है? यहाँ, जंगल में, किसी वृक्ष की तलहटी में, या किसी खाली कुटिया में जाकर, एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'यह शरीर बहुत पीड़ा [110] और खतरे का स्रोत है; क्योंकि इस शरीर में सभी प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं, अर्थात् आँख का रोग, भीतरी कान का रोग, नाक का रोग, जीभ का रोग, शरीर का रोग, सिर का रोग, बाहरी कान का रोग, मुँह का रोग, दाँत का रोग, 2075 खाँसी, अस्थमा, मोतियाबिंद, ज्वर, बुखार, पेट दर्द, बेहोशी, पेचिश, पेट दर्द, हैजा, कुष्ठ रोग, फोड़े, एक्जिमा, तपेदिक, मिर्गी, दाद, खुजली, पपड़ी, चेचक, खुजली, रक्तस्राव, मधुमेह, बवासीर, कैंसर, फिस्टुला; पित्त, कफ, वात से उत्पन्न होने वाले रोग, या इनका संयोजन; जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न रोग; लापरवाही से उत्पन्न रोग; हमले से उत्पन्न रोग; या कर्मों के फलस्वरूप उत्पन्न रोग; तथा सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास, शौच और पेशाब। इस प्रकार वह इस शरीर में खतरे को देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है। इसे खतरे की अनुभूति (संज्ञा) कहा जाता है।

(5) "और हे आनंद, त्याग की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) क्या है? यहाँ, भिक्षु उत्पन्न कामुक विचार को सहन नहीं करता; वह उसका त्याग करता है, उसे दूर करता है, उसे समाप्त करता है और उसे मिटा देता है। वह द्वेष के विचार को सहन नहीं करता... हानि पहुँचाने के विचार को... बुरे हानिकारक (अकुशल) विचारों को जब भी वे उत्पन्न होते हैं; वह उनका त्याग करता है, उन्हें दूर करता है, उन्हें समाप्त करता है और उन्हें मिटा देता है। इसे ही त्याग की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) कहते हैं।"

(6) "और हे आनंद, वैराग्य की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) क्या है? यहाँ, वन में, वृक्ष की जड़ में, या किसी खाली कुटिया में जाकर, एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'यह शांतिदायक है, यह उदात्त है, अर्थात् सभी कर्मों का शांत होना, सभी प्राप्तियों का त्याग, तृष्णा का नाश, वैराग्य, निर्वाण।' इसे ही वैराग्य की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) कहते हैं। 2076

(7) "और हे आनंद, निरोध की अनुभूति (सन्न/संग्य) क्या है? यहाँ, वन में, किसी वृक्ष की जड़ में, या किसी खाली कुटिया में जाकर, एक भिक्षु इस प्रकार चिंतन करता है: 'यह शांतिदायक है, यह उदात्त है, अर्थात् सभी कर्मों का शांत होना, सभी प्राप्तियों का त्याग, तृष्णा का नाश, निश्चिंतता, निर्वाण।' इसे निश्चिंतता की अनुभूति (सन्न/संग्य) कहते हैं।"

(8) "और हे आनंद, समस्त संसार में अनासक्ति (सन्ना/संग्य) क्या है? यहाँ, एक भिक्षु संसार के संबंध में किसी भी प्रकार की आसक्ति, मानसिक दृष्टिकोण, निष्ठा और अंतर्निहित प्रवृत्तियों से दूर रहता है, उनसे आसक्त हुए बिना उनका त्याग करता है। इसे समस्त संसार में अनासक्ति (सन्ना/संग्य) कहा जाता है।"

(9) "और हे आनंद, समस्त बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) में अनित्यता (अनिच्छ/अनित्य) की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) क्या है? यहाँ, भिक्षु समस्त बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) से विमुख, अपमानित और घृणा करता है। इसे समस्त बद्ध घटनाओं (धम्म) में अनित्यता (अनिच्छ/अनित्य) की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) कहते हैं।" 2078

(10) "और हे आनंद, श्वास (अनपान) की सती (ध्यान) क्या है? यहाँ, एक भिक्षु जंगल में, किसी वृक्ष के चरणों में, या किसी खाली कुटिया में जाकर बैठ जाता है। अपने पैरों को क्रॉस करके, शरीर को सीधा करके, और अपने सामने सती (ध्यान) स्थापित करके, वह सती (ध्यान) श्वास लेता है, सती (ध्यान) श्वास छोड़ता है।"

लंबी सांस लेते हुए, वह जानता है: 'मैं लंबी सांस लेता हूँ'; या लंबी सांस छोड़ते हुए, वह जानता है: 'मैं लंबी सांस छोड़ता हूँ।' छोटी सांस लेते हुए, वह जानता है: 'मैं छोटी सांस लेता हूँ'; या छोटी सांस छोड़ते हुए, वह जानता है: 'मैं छोटी सांस छोड़ता हूँ।' वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'पूरे शरीर का अनुभव करते हुए, मैं सांस लूंगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'पूरे शरीर का अनुभव करते हुए, मैं सांस छोड़ूंगा।' वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'शारीरिक गतिविधि को शांत करते हुए, मैं सांस लूंगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'शारीरिक गतिविधि को शांत करते हुए, मैं सांस छोड़ूंगा।'

वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'पीति का अनुभव करते हुए, मैं श्वास ग्रहण करूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'पीति का अनुभव करते हुए, मैं श्वास त्यागूँगा'। वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'सुख का अनुभव करते हुए, मैं श्वास ग्रहण करूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'सुख का अनुभव करते हुए, मैं श्वास त्यागूँगा'। वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मानसिक गतिविधि का अनुभव करते हुए, मैं श्वास ग्रहण करूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मानसिक गतिविधि का अनुभव करते हुए, मैं श्वास त्यागूँगा'। वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मानसिक गतिविधि को शांत करते हुए, मैं श्वास ग्रहण करूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मानसिक गतिविधि को शांत करते हुए, मैं श्वास त्यागूँगा'। 2079

वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मन का अनुभव करते हुए, मैं श्वास लूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मन का अनुभव करते हुए, मैं श्वास छोड़ूँगा।' [112] वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मन को प्रसन्न करते हुए, मैं श्वास लूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मन को प्रसन्न करते हुए, मैं श्वास छोड़ूँगा।' वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मन को एकाग्र करते हुए, मैं श्वास लूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मन को एकाग्र करते हुए, मैं श्वास छोड़ूँगा।' वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मन को मुक्त करते हुए, मैं श्वास लूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'मन को मुक्त करते हुए, मैं श्वास छोड़ूँगा।' 2080

वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'अनित्यता को ध्यान में रखते हुए, मैं श्वास ग्रहण करूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'अनित्यता को ध्यान में रखते हुए, मैं श्वास त्यागूँगा'। वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'लुप्त होते हुए, मैं श्वास ग्रहण करूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'लुप्त होते हुए, मैं श्वास त्यागूँगा'। वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'समाप्ति को ध्यान में रखते हुए, मैं श्वास ग्रहण करूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'समाप्ति को ध्यान में रखते हुए, मैं श्वास त्यागूँगा'। वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'त्याग को ध्यान में रखते हुए, मैं श्वास ग्रहण करूँगा'; वह इस प्रकार अभ्यास करता है: 'त्याग को ध्यान में रखते हुए, मैं श्वास त्यागूँगा'।

इसे श्वास की सती (अनपान) कहा जाता है।

"हे आनंद, यदि तुम भिक्षु गिरिमनंद के पास जाकर उनसे इन दस धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के बारे में बात करो, तो संभव है कि उनके बारे में सुनकर वे तुरंत अपने कष्ट से उबर जाएं।"

फिर, जब पूज्य आनंद ने भगवान (बुद्ध) से इन दस अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) का ज्ञान प्राप्त किया, तो वे पूज्य गिरिमानंद के पास गए और उनसे इनके बारे में बात की। जब पूज्य गिरिमानंद ने इन दस अनुभूतियों (सन्ना/संज्ञा) के बारे में सुना, तो उनका कष्ट तुरंत दूर हो गया। पूज्य गिरिमानंद उस कष्ट से मुक्त हो गए, और इस प्रकार वे अपने कष्ट से ठीक हो गए। [113]

द्वितीय. जोड़े अनुभाग (यमकवग्गा)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

61 अज्ञान (अविज्जा सं. अविद्या)

"भिक्षुओं, यह कहा गया है: 'भिक्षुओं, अज्ञान का पहला बिंदु ऐसा नहीं देखा जाता कि इससे पहले कोई अज्ञान नहीं था और बाद में यह अस्तित्व में आया।' 2081 फिर भी, अज्ञान की एक विशिष्ट स्थिति देखी जाती है।"

भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि अज्ञान का भी पोषण होता है; 2082 यह पोषण रहित नहीं है। और अज्ञान का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: पाँच अवरोध। मैं कहता हूँ, पाँच अवरोधों का भी पोषण होता है; वे पोषण रहित नहीं हैं। और पाँच अवरोधों का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: तीन प्रकार के दुराचार। मैं कहता हूँ, तीन प्रकार के दुराचारों का भी पोषण होता है; वे पोषण रहित नहीं हैं। और तीन प्रकार के दुराचारों का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: इंद्रियों का संयम न रखना। मैं कहता हूँ, इंद्रियों का संयम न रखना भी पोषण का स्रोत है; यह पोषण रहित नहीं है। और इंद्रियों के संयम न रखने का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: सचेतनता और पूर्ण बोध (संपजन्न) का अभाव। सचेतनता (सती) और पूर्ण बोध का अभाव। मैं कहता हूँ, बोध का भी पोषण होता है; यह पोषण रहित नहीं होता। और सती ध्यान और पूर्ण बोध की कमी का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: लापरवाही से ध्यान देना। मैं कहता हूँ, लापरवाही से ध्यान देना भी पोषक तत्वों से भरपूर होता है; यह पोषक तत्वों से रहित नहीं होता। और लापरवाही से ध्यान देने का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: विश्वास की कमी। मैं कहता हूँ, विश्वास की कमी भी पोषक तत्वों से भरपूर होती है; यह पोषक तत्वों से रहित नहीं होता। और विश्वास की कमी का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: अच्छे धर्म का न सुनना। मैं कहता हूँ, अच्छे धर्म का न सुनना भी पोषक तत्वों से भरपूर होता है; यह पोषक तत्वों से रहित नहीं होता। और अच्छे धर्म का न सुनने का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: अच्छे व्यक्तियों के साथ संगति न करना। 2083

इस प्रकार, अच्छे व्यक्तियों के साथ संगति न करने से, जो परिपूर्ण हो जाता है, अच्छे धम्म को न सुनने की कमी पूरी हो जाती है। अच्छे धम्म को न सुनने से, जो परिपूर्ण हो जाता है, विश्वास की कमी पूरी हो जाती है। विश्वास की कमी से, जो परिपूर्ण हो जाती है, ध्यानहीनता पूरी हो जाती है। ध्यानहीनता पूरी हो जाने से, सती ध्यान और पूर्ण बोध की कमी पूरी हो जाती है। सती ध्यान और पूर्ण बोध (संपजन्न) की कमी पूरी हो जाने से, [114] इंद्रियों के असंयम की कमी पूरी हो जाती है। इंद्रियों के असंयम से, जो परिपूर्ण हो जाता है, तीन प्रकार के दुराचारों की पूर्ति हो जाती है। तीन प्रकार के दुराचारों से, जो परिपूर्ण हो जाते हैं, पाँच अवरोधों की पूर्ति हो जाती है। पाँच अवरोधों से, जो परिपूर्ण हो जाते हैं, अज्ञान की पूर्ति हो जाती है। इस प्रकार अज्ञान के लिए पोषण होता है, और इस प्रकार वह परिपूर्ण हो जाता है।

जैसे, जब वर्षा होती है और पहाड़ की चोटी पर मोटी-मोटी बूँदें बरसती हैं, तो पानी ढलान से नीचे बहता हुआ दरारों, नालों और छोटी धाराओं को भर देता है; ये भरकर तालाबों को भर देते हैं; ये भरकर झीलों को भर देते हैं; ये भरकर नदियों को भर देते हैं; ये भरकर विशाल सागर को भर देते हैं; इस प्रकार विशाल सागर को पोषण मिलता है और इस तरह वह भर जाता है। ठीक उसी प्रकार, अच्छे व्यक्तियों की संगति न करना, अच्छे धर्म को न सुनने की कमी को पूरा करता है। . . . पाँच बाधाएँ, अज्ञान को पूरा करती हैं। इस प्रकार अज्ञान को पोषण मिलता है और इस तरह वह भर जाता है।

भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि (1) सच्चे ज्ञान और मुक्ति का पोषण होता है; वे पोषण रहित नहीं होते। और सच्चे ज्ञान और मुक्ति का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (2) ज्ञान के सात कारक। मैं कहता हूँ कि ज्ञान के सात कारकों का भी पोषण होता है; वे पोषण रहित नहीं होते। और ज्ञान के सात कारकों का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (3) ध्यान की चार अवस्थाएँ (सती)। मैं कहता हूँ कि ध्यान की चार अवस्थाओं (सती) का भी पोषण होता है; वे पोषण रहित नहीं होते। और ध्यान की चार अवस्थाओं (सती) का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (4) तीन प्रकार के अच्छे आचरण। मैं कहता हूँ कि तीन प्रकार के अच्छे आचरण का भी पोषण होता है; वे पोषण रहित नहीं होते। और तीन प्रकार के अच्छे आचरण का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (5) संयम। इंद्रिय-सम्पत्तियों पर नियंत्रण। मैं कहता हूँ, इंद्रिय-सम्पत्तियों पर नियंत्रण का भी पोषण होता है; यह पोषण रहित नहीं है। और इंद्रिय-सम्पत्तियों पर नियंत्रण का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (6) सती ध्यान और पूर्ण बोध। मैं कहता हूँ, सती ध्यान और पूर्ण बोध का भी पोषण होता है; यह पोषण रहित नहीं है। और सती ध्यान और पूर्ण बोध का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (7) सजग ध्यान। मैं कहता हूँ, सजग ध्यान का भी पोषण होता है; यह पोषण रहित नहीं है। और सजग ध्यान का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (8) विश्वास। मैं कहता हूँ,

विश्वास का भी पोषण होता है; यह पोषण रहित नहीं है। और विश्वास का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (9) श्रवण। अच्छा धम्म। मैं कहता हूँ कि अच्छे धम्म को सुनने से भी पोषण मिलता है; यह पोषण रहित नहीं है। और अच्छे धम्म को सुनने का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (10.) अच्छे व्यक्तियों के साथ संगति करना।

इस प्रकार, अच्छे व्यक्तियों के साथ संगति करने से, परिपूर्णता प्राप्त होती है, जिससे अच्छे धम्म का श्रवण परिपूर्ण होता है। अच्छे धम्म का श्रवण करने से, परिपूर्णता प्राप्त होती है, जिससे विश्वास परिपूर्ण होता है। विश्वास परिपूर्ण होने से, ध्यानमग्नता (सती) और पूर्ण बोध (संपजन्न) परिपूर्ण होता है। ध्यानमग्नता (सती) और पूर्ण बोध (संपजन्न) परिपूर्ण होने से, इंद्रियों के संयम को परिपूर्ण करते हैं। इंद्रियों के संयम से परिपूर्ण होने से, तीन प्रकार के अच्छे आचरण परिपूर्ण होते हैं। तीन प्रकार के अच्छे आचरण परिपूर्ण होने से, ध्यानमग्नता (सती) के चार आधार परिपूर्ण होते हैं। ध्यानमग्नता (सती) के चार आधार परिपूर्ण होने से, ज्ञान के सात कारक परिपूर्ण होते हैं। ज्ञान के सात कारक परिपूर्ण होने से, सच्चे ज्ञान और मुक्ति को परिपूर्ण करते हैं। इस प्रकार सच्चे ज्ञान और मुक्ति के लिए पोषण प्राप्त होता है, और इस प्रकार वे परिपूर्ण होते हैं।

जैसे, जब वर्षा होती है और पहाड़ की चोटी पर मोटी बूंदों के रूप में पानी बरसता है, तो वह ढलान से नीचे बहता हुआ दरारों, नालों और छोटी नदियों को भर देता है; ये भरकर तालाबों को भर देते हैं; ये भरकर झीलों को भर देते हैं; ये भरकर धाराओं को भर देते हैं; ये भरकर नदियों को भर देते हैं; और ये भरकर [116] विशाल सागर को भर देते हैं; इस प्रकार विशाल सागर को पोषण मिलता है और इस तरह वह भर जाता है। उसी प्रकार, अच्छे व्यक्तियों के साथ संगति करने से, अच्छे धम्म को सुनने से पोषण मिलता है। . . .ज्ञान के सात कारक, पूर्ण होकर, सच्चे ज्ञान और मुक्ति को भर देते हैं। इस प्रकार सच्चे ज्ञान और मुक्ति को पोषण मिलता है और इस तरह वे पूर्ण हो जाते हैं।

---

62 लालसा (तन्हा बिना तृष्णा)

भिक्षुओं, ऐसा कहा जाता है: 'हे भिक्षुओं, अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) के लिए तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) का पहला बिंदु ऐसा नहीं देखा जाता है कि इससे पहले अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) के लिए कोई तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) नहीं थी और बाद में यह अस्तित्व में आई।' फिर भी, अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) के लिए तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) एक विशिष्ट स्थिति से जुड़ी हुई देखी जाती है।

भिक्षुओं, मैं कहता हूँ कि अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) के लिए तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) का पोषण होता है; यह पोषण रहित नहीं है। और अस्तित्व (भावो/पुनर्जन्म का कारण) के लिए तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: अज्ञान। मैं कहता हूँ कि अज्ञान का भी पोषण होता है; यह पोषण रहित नहीं है। और अज्ञान का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: पाँच बाधाएँ [जैसा कि 10:61 में है] [117]। और अच्छे धम्म को न सुनने का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: अच्छे व्यक्तियों के साथ संगति न करना...

इस प्रकार, अच्छे व्यक्तियों के साथ संगति न करने से, परिपूर्णता प्राप्त होती है, जो अच्छे धर्म को न सुनने की कमी को पूरा करती है। . . . पाँच अवरोधों से परिपूर्णता प्राप्त करने से अज्ञान भर जाता है। अज्ञान से परिपूर्णता प्राप्त करने से अस्तित्व की लालसा (तन्हा/तृष्णा) (भावो/पुनर्जन्म का कारण) भर जाती है। इस प्रकार अस्तित्व की लालसा (तन्हा/तृष्णा) (भावो/पुनर्जन्म का कारण) के लिए पोषण प्राप्त होता है, और इस प्रकार यह परिपूर्ण हो जाती है।

जैसे, जब वर्षा होती है और पहाड़ की चोटी पर मोटी बूँदों के रूप में पानी बरसता है, तो वह ढलान से नीचे बहता है... [118]... और नदियाँ भरकर विशाल सागर को भर देती हैं; इस प्रकार विशाल सागर को पोषण मिलता है और वह भर जाता है। उसी प्रकार, अच्छे व्यक्तियों के साथ संगति न करना, अच्छे धर्म को न सुनने की कमी को पूरा करता है... और अज्ञान, अस्तित्व की लालसा (तन्हा/तृष्णा) को पूरा करता है। इस प्रकार अस्तित्व की लालसा (तन्हा/तृष्णा) को पोषण मिलता है और वह भर जाती है।

मैं कहता हूँ, भिक्षुओं, कि (1) सच्चे ज्ञान और मुक्ति का पोषण होता है; वे पोषण रहित नहीं होते। और सच्चे ज्ञान और मुक्ति का पोषण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (2) ज्ञानोदय के सात कारक। . . . मैं कहता हूँ, अच्छे धर्म का श्रवण भी पोषण रखता है; वह पोषण रहित नहीं होता। और अच्छे धर्म का श्रवण क्या है? यह कहा जाना चाहिए: (10) अच्छे व्यक्तियों की संगति।

"इस प्रकार अच्छे व्यक्तियों के साथ संगति करने से, परिपूर्णता प्राप्त होती है, और अच्छे धम्म को सुनने से परिपूर्णता प्राप्त होती है — [119] ज्ञान के सात कारक, परिपूर्णता प्राप्त करने से, सच्चे ज्ञान और मुक्ति को परिपूर्ण करते हैं। इस प्रकार सच्चे ज्ञान और मुक्ति के लिए पोषण प्राप्त होता है, और इस प्रकार वे परिपूर्ण हो जाते हैं।"

जैसे, जब वर्षा होती है और पहाड़ की चोटी पर मोटी-मोटी बूँदें बरसती हैं, तो पानी ढलान से नीचे बहता है... और नदियाँ भरकर विशाल सागर को भर देती हैं; इस प्रकार विशाल सागर को पोषण मिलता है और वह भर जाता है। ठीक उसी प्रकार, अच्छे व्यक्तियों की संगति करने से, अच्छे धर्म का श्रवण परिपूर्ण हो जाता है... ज्ञान के सात कारक परिपूर्ण होकर सच्चे ज्ञान और मुक्ति को परिपूर्ण कर देते हैं। इस प्रकार सच्चे ज्ञान और मुक्ति को पोषण मिलता है और वे परिपूर्ण हो जाते हैं।

---

63 निश्चितता (नित्थंगता)

भिक्षुओं, वे सभी जिन्होंने मेरे बारे में निश्चितता प्राप्त कर ली है, दृष्टि में सिद्ध हो चुके हैं। दृष्टि में सिद्ध हो चुके लोगों में से पाँच इस संसार में ही लक्ष्य प्राप्त करते हैं; 2084 पाँच इस संसार को छोड़कर लक्ष्य प्राप्त करते हैं।

"इस संसार में ही लक्ष्य प्राप्त करने वाले पाँच कौन हैं? [120] अधिकतम सात बार प्राप्त करने वाला, कुल-कुल प्राप्त करने वाला, एक बीज प्राप्त करने वाला, एक बार जन्म लेने वाला (1 पुनर्जन्म, सकदागामी), और जो इसी जीवन में अरहंत हो। ये पाँच इस संसार में ही लक्ष्य प्राप्त करते हैं।"

"वे पाँच कौन हैं जो इस संसार को छोड़कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करते हैं? अंतराल में निर्वाण प्राप्त करने वाला, उतरते ही निर्वाण प्राप्त करने वाला, बिना प्रयास के निर्वाण प्राप्त करने वाला, प्रयास से निर्वाण प्राप्त करने वाला, और अंत में नदी के विपरीत दिशा में छलांग लगाकर अकनित्थ लोक की ओर जाने वाला। 2086 ये पाँचों इस संसार को छोड़कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करते हैं।"

"हे भिक्षुओं, जिन्होंने मेरे बारे में निश्चितता प्राप्त कर ली है, वे सिद्ध दृष्टि वाले हैं। सिद्ध दृष्टि वालों में से पहले पाँच को इसी संसार में लक्ष्य प्राप्त होता है; शेष पाँच को इस संसार को छोड़कर लक्ष्य प्राप्त होता है।"

---

64 अविचलित (Aveccappasanna)

भिक्षुओं, जो मुझमें अटूट विश्वास रखते हैं, वे सभी सात जन्मों में जन्म लेने वाले (सोतपत्ति) हैं। उन सात जन्मों में जन्म लेने वालों में से पाँच इसी संसार में अपने लक्ष्य को प्राप्त करते हैं; पाँच इस संसार को छोड़कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करते हैं।

"इस संसार में ही लक्ष्य को प्राप्त करने वाले पाँच कौन हैं? अधिकतम सात बार प्राप्ति करने वाला, कुल-कुल प्राप्ति करने वाला, एक बीज प्राप्ति करने वाला, एक बार जन्म लेने वाला (एक पुनर्जन्म, सकदागामी), और जो इसी जीवन में अरहंत हो। ये पाँचों ही इस संसार में लक्ष्य को प्राप्त करते हैं।"

"वे पाँच कौन हैं जो इस संसार को छोड़कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करते हैं? अंतराल में निर्वाण प्राप्त करने वाला, उतरते ही निर्वाण प्राप्त करने वाला, बिना प्रयास के निर्वाण प्राप्त करने वाला, प्रयास से निर्वाण प्राप्त करने वाला, और एक जो नदी के विपरीत दिशा में छलांग लगाकर अकनित्थ लोक की ओर जाता है। ये पाँचों इस संसार को छोड़कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करते हैं।"

"हे भिक्षुओं, जो मुझ पर अटूट विश्वास रखते हैं, वे सात जन्मों में जन्म लेने वाले (सोतपत्ति) हैं। इन सात जन्मों में से पहले पाँच को इसी संसार में अपना लक्ष्य प्राप्त होता है; और अंतिम पाँच को इस संसार को छोड़कर अपना लक्ष्य प्राप्त होता है।"

---

65 सुख (1) (सुख1)

एक बार पूज्य सारिपुत्त नलकगमक में मगधियों के बीच निवास कर रहे थे। तब तपस्वी समंदकनी [121] पूज्य सारिपुत्त के पास आए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और पूज्य सारिपुत्त से कहा:

"मित्र सारिपुत्त, सुख क्या है? दुख क्या है?"

"मित्र, पुनर्जन्म दुखदायी है। पुनर्जन्म सुखदायी नहीं होता। जब पुनर्जन्म होता है, तो ये दुख अपेक्षित होते हैं: ठंड, गर्मी, भूख, प्यास, शौच और पेशाब की तकलीफ; आग, लाठी या चाकू से पीड़ा; और रिश्तेदार और दोस्त मिलकर डांटते हैं। जब पुनर्जन्म होता है, तो ये दुख अपेक्षित होते हैं।"

जब पुनर्जन्म नहीं होता, तब इस सुख की अपेक्षा की जा सकती है: न सर्दी, न गर्मी, न भूख, न प्यास, न शौच, न पेशाब; न आग, लाठी या चाकू से पीड़ा; और रिश्तेदार और दोस्त मिलकर डांटते नहीं। जब पुनर्जन्म नहीं होता, तब इस सुख की अपेक्षा की जा सकती है।

---

66 सुख (2) (सुख2)

एक बार पूज्य सारिपुत्त नलकगमक में मगधियों के बीच निवास कर रहे थे। तब तपस्वी समंदकनी पूज्य सारिपुत्त के पास आए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए [122] और पूज्य सारिपुत्त से कहा:

"मित्र सारिपुत्त, इस धम्म और अनुशासन में सुख क्या है और दुख क्या है?"

"मित्र, इस धम्म और अनुशासन में असंतोष ही दुख है। आनंद ही सुख है। असंतोष होने पर यह दुख स्वाभाविक है। (1) चलते समय सुख या आराम नहीं मिलता। (2) स्थिर खड़े रहने पर... (3) बैठे रहने पर... (4) लेटे रहने पर... (5) गाँव में... (6) जंगल में... (7) वृक्ष की तलहटी में... (8) खाली कुटिया में... (9) खुले आकाश में... (10) भिक्षुओं के बीच रहने पर सुख या आराम नहीं मिलता। असंतोष होने पर यह दुख स्वाभाविक है।"

जब आनंद होता है, तो यह खुशी अपेक्षित होती है। (1) चलते समय, सुख और आराम मिलता है। (2) स्थिर खड़े रहने पर... (3) बैठे रहने पर... (4) लेटे रहने पर... (5) गाँव में... (6) जंगल में... (7) पेड़ की तलहटी में... (8) खाली कुटिया में... (9) खुली हवा में... (10) भिक्षुओं के बीच रहने पर, सुख या आराम मिलता है। जब आनंद होता है, तो यह खुशी अपेक्षित होती है।

---

67 नलकपना (1)

एक बार भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के एक विशाल संघ के साथ कोसल पर्वतमाला में भ्रमण कर रहे थे, जब वे नलकपना नामक कोसल नगर पहुँचे। नलकपना में भगवान (बुद्ध) एक पलाश के वन में निवास करने लगे। उस दिन, उपोसथ के दिन, भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं के संघ से घिरे बैठे थे। उन्होंने रात भर भिक्षुओं के संघ को धर्मोपदेश देकर, प्रोत्साहित करके, प्रेरित करके और प्रसन्न करके, और पूर्णतया मौन भिक्षुओं के संघ का अवलोकन करने के बाद, भगवान (बुद्ध) ने पूज्य सारिपुत्त को संबोधित किया: "सारिपुत्त, भिक्षुओं का संघ सुस्ती और आलस्य से मुक्त है। भिक्षुओं को धर्मोपदेश दीजिए। मेरी कमर में दर्द हो रहा है, इसलिए मैं थोड़ा खिंचाव करूँगा।"

"हाँ, भंते," आदरणीय सारिपुत्त ने उत्तर दिया।

तब भगवान (बुद्ध) ने अपने बाहरी वस्त्र को चार भागों में मोड़ा और सिंह मुद्रा में दाहिनी ओर लेट गए, एक पैर दूसरे के ऊपर रखते हुए, ध्यानमग्न और पूर्णतः बोध में लीन होकर, उठने के विचार को मन में धारण किया। तब पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

मित्रों, जो व्यक्ति लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में विश्वास नहीं रखता, जिसमें नैतिक लज्जा का भाव नहीं है... जिसमें नैतिक भय नहीं है... जिसमें ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं है... जिसमें लाभकारी (कुशल) गुणों के विकास का पन्ना (दिव्य ज्ञान) नहीं है, चाहे रात हो या दिन, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि नहीं बल्कि केवल गिरावट ही अपेक्षित है। जैसे कृष्ण पक्ष के दौरान, चाहे रात हो या दिन, चंद्रमा की सुंदरता, गोलाई और चमक, व्यास और परिधि में केवल गिरावट ही होती है, उसी प्रकार, जो व्यक्ति लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में विश्वास... पन्ना (दिव्य ज्ञान) नहीं रखता, चाहे रात हो या दिन, लाभकारी (कुशल) गुणों में वृद्धि नहीं बल्कि केवल गिरावट ही अपेक्षित है।

(1) "विश्वासहीन व्यक्ति", मित्रों: यह पतन का मामला है। (2) "नैतिक रूप से निर्लज्ज व्यक्ति"... (3) "नैतिक रूप से लापरवाह व्यक्ति"... (4) "आलसी व्यक्ति"... (5) "नासमझ व्यक्ति"... (6) "क्रोधित व्यक्ति"... (7) "शत्रुतापूर्ण व्यक्ति"... (8) "बुरी इच्छाओं वाला व्यक्ति"... (9) "बुरे मित्रों वाला व्यक्ति"... (10) "गलत विचार रखने वाला व्यक्ति": यह पतन का मामला है।

"मित्रों, जो लाभकारी (कुशल) गुणों के विकास में विश्वास रखता है, जो नैतिक लज्जा रखता है... जो नैतिक भय रखता है... जो ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) रखता है... [124] जो लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में पन्ना (दिव्य ज्ञान) रखता है, चाहे रात हो या दिन, लाभकारी (कुशल) गुणों में केवल वृद्धि ही अपेक्षित है, गिरावट नहीं। जैसे शुक्ल पक्ष में, चाहे रात हो या दिन, चंद्रमा की सुंदरता, गोलाई और चमक, व्यास और परिधि में वृद्धि ही होती है, उसी प्रकार, जो लाभकारी (कुशल) गुणों के विकास में विश्वास (दिव्य ज्ञान) रखता है, चाहे रात हो या दिन, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में केवल वृद्धि ही अपेक्षित है, गिरावट नहीं।"

(1) "'आस्थावान व्यक्ति,' मित्रों: यह पतन न होने का उदाहरण है। (2) 'नैतिक लज्जा का भाव रखने वाला व्यक्ति'... (3) 'नैतिक भय से ग्रस्त व्यक्ति'... (4) 'ऊर्जावान व्यक्ति'... (5) 'बुद्धिमान व्यक्ति'... (6) 'क्रोधहीन व्यक्ति'... (7) 'शत्रुताहीन व्यक्ति'... (8) 'बुरी इच्छाओं से रहित व्यक्ति'... (9) 'अच्छे मित्रों वाला व्यक्ति'... (10) 'सही दृष्टिकोण रखने वाला व्यक्ति': यह पतन न होने का उदाहरण है।"

तब भगवान (बुद्ध) उठे और पूज्य सारिपुत्त को संबोधित करते हुए बोले, "अच्छा, अच्छा, सारिपुत्त! सारिपुत्त, जो लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के प्रति आस्था नहीं रखता... [बुद्ध यहाँ सारिपुत्त के पूरे प्रवचन को दोहराते हैं:] [125] ... (10) 'सही दृष्टिकोण रखने वाला व्यक्ति': यह पतन न होने का मामला है।"

---

68 नलकपना (2)

[10:67 से शुरू होकर नीचे तक:] [126]

तब पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

"मित्र!" उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

मित्रों, जो (1) लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में विश्वास नहीं रखता, (2) नैतिक लज्जा का बोध नहीं रखता... (3) नैतिक भय नहीं रखता... (4) ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) नहीं रखता... (5) दिव्य ज्ञान नहीं रखता... (6) ध्यान से नहीं सुनता... (7) धम्म को मन में नहीं रखता... (8) अर्थ की जांच नहीं करता... (9) धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं करता... (10) लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में सचेत नहीं रहता, चाहे रात हो या दिन, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि नहीं बल्कि केवल गिरावट ही अपेक्षित है। ठीक वैसे ही, कृष्ण पक्ष के दौरान, चाहे रात हो या दिन बीतता है, चंद्रमा की सुंदरता, गोलाई और चमक, व्यास और परिधि में केवल कमी आती है, ठीक वैसे ही, जो व्यक्ति लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में विश्वास नहीं रखता... जो व्यक्ति लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में सचेत नहीं रहता, उसके लिए चाहे रात हो या दिन, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में वृद्धि नहीं बल्कि केवल कमी ही अपेक्षित है।

"मित्रों, जो (1) लाभकारी (कुशल) गुणों के विकास में विश्वास रखता है, (2) नैतिक लज्जा रखता है... (3) नैतिक भय रखता है... (4) ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) रखता है... (5) दिव्य ज्ञान रखता है... (6) ध्यान से सुनता है... (7) धम्म को मन में रखता है... (8) अर्थ की जांच करता है... (9) धम्म के अनुसार अभ्यास करता है... (10) लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में सचेत रहता है, चाहे रात हो या

दिन, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में केवल वृद्धि ही अपेक्षित है, गिरावट नहीं। जैसे, [127] शुक्ल पक्ष के दौरान, चाहे रात हो या दिन, चंद्रमा की सुंदरता, गोलाई और चमक में केवल वृद्धि ही होती है, व्यास और परिधि, ठीक वैसे ही, जो व्यक्ति लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में विश्वास रखता है... लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में सतर्कता बरतने से, चाहे रात हो या दिन, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में केवल वृद्धि ही अपेक्षित है, गिरावट नहीं।

तब भगवान (बुद्ध) उठे और पूज्य सारिपुत्त को संबोधित करते हुए बोले, "शाबाश, शाबाश, सारिपुत्त! सारिपुत्त, जो लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) के विकास में विश्वास नहीं रखता... [बुद्ध यहाँ सारिपुत्त के पूरे प्रवचन को दोहराते हैं:] [128] ... चाहे रात हो या दिन, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में केवल वृद्धि ही अपेक्षित है, गिरावट नहीं।"

चर्चा के 69 विषय (1) (कथावत्थु1 सं. कथावस्तु)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस अवसर पर, भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, कई भिक्षु सभा भवन में एकत्रित हुए और एक साथ बैठकर तरह-तरह की निरर्थक बातें कर रहे थे, जैसे: राजाओं, चोरों और राज्य मंत्रियों के बारे में बातें; सेनाओं, खतरों और युद्धों के बारे में बातें; भोजन, पेय, वस्त्र और बिस्तरों के बारे में बातें; मालाओं और सुगंधों के बारे में बातें; रिश्तेदारों, वाहनों, गांवों, कस्बों, शहरों और देशों के बारे में बातें; स्त्रियों और वीरों के बारे में बातें; गली-मोहल्ले की बातें और कुएँ के पास की बातें; दिवंगत आत्माओं के बारे में बातें; विविध विषय; संसार और समुद्र के बारे में अटकलें; यह या वह बनने के बारे में बातें।

फिर, शाम को, भगवान (बुद्ध) एकांतवास से बाहर आए और सभा भवन में जाकर तैयार आसन पर बैठ गए। फिर भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित किया:

"भिक्षुओं, आप लोग अभी यहाँ एक साथ बैठे हुए किस चर्चा में लगे हुए थे? आपके बीच क्या बातचीत चल रही थी?"

"भंते, यहाँ भोजन करने के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, हम सभा भवन में एकत्रित हुए और एक साथ बैठकर तरह-तरह की निरर्थक बातें कर रहे थे, अर्थात्: राजाओं, चोरों और राज्य मंत्रियों के बारे में बातें... यह या वह बनने के बारे में बातें।"

"भिक्षुओं (मठवासियों), हे कुल के लोगों, जो आस्था के कारण गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में चले गए हैं, तुम्हारे लिए विभिन्न प्रकार की व्यर्थ बातों में संलग्न होना उचित नहीं है, अर्थात् राजाओं, चोरों और राज्य मंत्रियों के बारे में बातें करना... यह या वह बनने के बारे में बातें करना।"

भिक्षुओं, चर्चा के ये दस विषय हैं। कौन से दस? इच्छाओं की कमी, संतोष, एकांत, दूसरों से बंधे न रहना, ऊर्जा का संचार (प्रयास/वीर्य), सद्गुणी आचरण, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), पन्ना (दिव्य ज्ञान), मुक्ति, और मुक्ति के ज्ञान एवं दर्शन (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) पर चर्चा। ये चर्चा के दस विषय हैं।

"हे भिक्षुओं, यदि आप इन दस विषयों में से किसी पर भी चर्चा करें, तो आपकी महिमा सूर्य और चंद्रमा की महिमा से भी अधिक हो सकती है, चाहे वे कितने भी शक्तिशाली और बलिष्ठ क्यों न हों, अन्य संप्रदायों के तपस्वियों की महिमा से तो कहीं अधिक होगी!"

चर्चा के 70 विषय (2) (कथावत्थु2 सं. कथावस्तु)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। उस अवसर पर, भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, कई भिक्षु सभा भवन में एकत्रित हुए और एक साथ बैठकर तरह-तरह की निरर्थक बातें कर रहे थे, अर्थात्: राजाओं, चोरों और राज्य मंत्रियों के बारे में बातें... यह या वह बनने के बारे में बातें। 2088

"भिक्षुओं (मठवासियों), प्रशंसा के ये दस आधार हैं। वे दस कौन से हैं? [130]

(1) "यहाँ, एक भिक्षु स्वयं कम इच्छाओं वाला है और भिक्षुओं को कम इच्छाओं के विषय पर उपदेश देता है। यह प्रशंसा का विषय है: 'भिक्षु स्वयं कम इच्छाओं वाला है और भिक्षुओं को कम इच्छाओं के विषय पर उपदेश देता है।'"

(2) "वह स्वयं संतुष्ट है और भिक्षुओं को भी संतोष के विषय में उपदेश देता है। यह प्रशंसा का एक आधार है: 'भिक्षु स्वयं संतुष्ट है।'"

(3) "वह स्वयं एकांतवास में लीन रहता है और भिक्षुओं को एकांतवास के विषय में उपदेश देता है। यह प्रशंसा का विषय है: 'भिक्षु स्वयं एकांतवास में लीन रहता है...'।"

(4) "वह स्वयं दूसरों से बंधा हुआ नहीं है और भिक्षुओं को भी दूसरों से बंधा हुआ न होने के बारे में उपदेश देता है। यह प्रशंसा का विषय है: 'भिक्षु स्वयं दूसरों से बंधा हुआ नहीं है...'"

(5) "वह स्वयं ऊर्जावान है और भिक्षुओं को ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाने के लिए प्रेरित करता है। यह प्रशंसा का आधार है: 'भिक्षु स्वयं ऊर्जावान है। . . .'"

(6) "वह स्वयं सदाचार में निपुण है और भिक्षुओं को सदाचार में निपुणता (संपदा) के विषय में उपदेश देता है। यह प्रशंसा का विषय है: 'भिक्षु स्वयं सदाचार में निपुण है।...'"

(7) "वह स्वयं समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में सिद्ध हैं और समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में सिद्धि (संपदा) पर भिक्षुओं से बात करते हैं। यह प्रशंसा का आधार है: 'भिक्षु स्वयं समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) में सिद्ध हैं।...'"

(8) "वह स्वयं पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्ध है और भिक्षुओं को पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्धि (संपदा) के विषय में उपदेश देता है। यह प्रशंसा का विषय है: 'भिक्षु स्वयं पन्ना (दिव्य ज्ञान) में सिद्ध है।'"

(9) "वह स्वयं मोक्ष में सिद्ध हो चुका है और भिक्षुओं को मोक्ष में संपदा (सिद्धि) के विषय में उपदेश देता है। यह प्रशंसा का विषय है: 'भिक्षु स्वयं मोक्ष में सिद्ध हो चुका है। . . .'"

(10) "वह स्वयं मुक्ति के ज्ञान और दृष्टि में सिद्ध है और भिक्षुओं को मुक्ति के ज्ञान और दृष्टि में सिद्धि (संपदा) के विषय में उपदेश देता है (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन)। यह प्रशंसा का विषय है: 'भिक्षु स्वयं मुक्ति के ज्ञान और दृष्टि में सिद्ध है और भिक्षुओं को मुक्ति के ज्ञान और दृष्टि में सिद्धि के विषय में उपदेश देता है (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन)।'"

"भिक्षुओं, ये प्रशंसा के दस आधार हैं।"

तृतीय. इच्छा अनुभाग (अकांखवग्गो सं. आकांक्षावर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

71 विश [2039] (आकांक्षा सं. आकांक्षा)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय,” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, सदाचारी आचरण का पालन करो और पतिमोक्ख का ध्यान रखो। पतिमोक्ख से संयमित रहो, अच्छे आचरण और आश्रय का पालन करो, छोटी-छोटी गलतियों में भी खतरा देखो। उन्हें स्वीकार करने के बाद, प्रशिक्षण नियमों का पालन करो।

(1) "यदि कोई भिक्षु यह चाहे: 'मैं अपने साथी भिक्षुओं को प्रसन्न और सहमत कर सकूँ, उनका आदरणीय और सम्मानित बनूँ, तो उसे सद्‌गुणी आचरण का पालन करना चाहिए, मन की आंतरिक समता (समाथा) के प्रति समर्पित रहना चाहिए, ध्यान (तल्लीनता) की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, अंतर्दृष्टि (विपश्यना) से युक्त होना चाहिए और एकांत कुटियाओं का सहारा लेना चाहिए।

(2) "यदि कोई भिक्षु यह इच्छा करे: 'मुझे वस्त्र, भिक्षा, भोजन, आवास, औषधियाँ और बीमारों के लिए भोजन सामग्री प्राप्त हो, तो उसे सद्‌गुणपूर्ण आचरण का पालन करना चाहिए... और खाली झोपड़ियों में शरण लेनी चाहिए।

(3) "यदि कोई भिक्षु यह चाहे: 'जिनके वस्त्र, भिक्षा, आवास, और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन मैं उपयोग करता हूँ, उनकी सेवाएँ उनके लिए बहुत फलदायी और लाभकारी हों,' तो उसे सद्‌गुणपूर्ण आचरण का पालन करना चाहिए... और खाली कुटियाओं में शरण लेनी चाहिए।

(4) "यदि कोई भिक्षु यह इच्छा करे: [132] 'जब मेरे दिवंगत रिश्तेदार और परिवार के सदस्य, मृत्यु के बाद, मुझे अपने मन में विश्वास के साथ याद करें, तो यह उनके लिए बहुत फलदायी और लाभकारी हो,' तो उसे सद्‌गुणपूर्ण आचरण का पालन करना चाहिए... और खाली कुटियाओं में शरण लेनी चाहिए।

(5) "यदि कोई भिक्षु चाहे: 'मुझे किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास, और बीमारों के लिए दवाइयाँ और भोजन सामग्री से संतुष्ट रहना चाहिए,' तो उसे सद्‌गुणपूर्ण आचरण का पालन करना चाहिए... और खाली झोपड़ियों में शरण लेनी चाहिए।"

(6) यदि कोई भिक्षु यह कामना करे: 'मैं धीरजपूर्वक सर्दी और गर्मी; भूख और प्यास; मक्खियों, मच्छरों, हवा, जलते सूरज और सर्पों के संपर्क; और अभद्र और अपमानजनक वाणी को सहन कर सकूँ। मैं उत्पन्न शारीरिक संवेदनाओं (वेदना) को सहन कर सकूँ जो पीड़ादायक, कष्टदायक, तीक्ष्ण, चुभने वाली, कष्टदायी, अप्रिय और जीवन शक्ति को क्षीण करने वाली हों,' तो उसे सद्‌गुणपूर्ण आचरण का पालन करना चाहिए ... और एकांत कुटियाओं में शरण लेनी चाहिए।

(7) "यदि कोई भिक्षु यह कामना करे: 'मैं असंतोष और प्रसन्नता पर विजय प्राप्त करने वाला बनूँ, और असंतोष और प्रसन्नता मुझे पराजित न कर सकें। जब भी असंतोष और प्रसन्नता उत्पन्न हों, मैं उन पर विजय प्राप्त कर सकूँ,' तो उसे सद्‌गुणपूर्ण आचरण का पालन करना चाहिए... और एकांत कुटियाओं में शरण लेनी चाहिए।"

(8) "यदि कोई भिक्षु यह कामना करे: 'मैं भय और आतंक को पराजित करने वाला बनूँ, और भय और आतंक मुझे पराजित न कर सकें। जब भी भय और आतंक उत्पन्न हों, मैं उन पर विजय प्राप्त कर सकूँ,' तो उसे सद्‌गुणपूर्ण आचरण का पालन करना चाहिए... और एकांत कुटियाओं में शरण लेनी चाहिए।"

(9) "यदि कोई भिक्षु यह इच्छा करे: 'मैं इस जीवन में ही उच्च मन के चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाओं) को बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से प्राप्त कर सकूँ,' तो उसे सद्‌गुणपूर्ण आचरण का पालन करना चाहिए... और खाली कुटियाओं में शरण लेनी चाहिए।"

(10) "यदि कोई भिक्षु यह कामना करे: 'मैं दोषों के नाश के साथ, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा, इसी जीवन में, स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति [133] का अनुभव करूँ, और उसमें प्रवेश करके उसमें निवास करूँ', तो उसे सद्‌गुणपूर्ण आचरण का पालन करना चाहिए, मन की आंतरिक समता (समथा) के प्रति समर्पित रहना चाहिए, ध्यान (तंद्रा) की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, अंतर्दृष्टि (विपश्यना) से युक्त होना चाहिए, और खाली कुटियाओं का सहारा लेना चाहिए।

"जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, सदाचारी आचरण का पालन करो और पतिमोक्ख का पालन करो; पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहो, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त रहो, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखो; उन्हें स्वीकार करने के बाद, प्रशिक्षण नियमों का पालन करो,' तो इसी कारण से यह कहा गया था।"

---

72 कांटे (कंटका)

एक बार भगवान (बुद्ध) वैशाली में विशाल वन में स्थित नुकीली छत वाले हॉल में कई प्रसिद्ध वरिष्ठ शिष्यों के साथ निवास कर रहे थे: पूज्य चाला, पूज्य उपकला, पूज्य कक्कटा, पूज्य कटिम्भा, पूज्य काटा, पूज्य कटिस्संग और अन्य बहुत प्रसिद्ध वरिष्ठ शिष्य।

उस अवसर पर कई प्रसिद्ध लिच्छवी भगवान (बुद्ध) के दर्शन करने के लिए महान वन में प्रवेश कर चुके थे, और वे अपने उत्तम रथों में एक-दूसरे के पीछे चलते हुए शोर मचा रहे थे। तब उन पूजनीयों को यह विचार आया: "कई प्रसिद्ध लिच्छवी भगवान (बुद्ध) के दर्शन करने के लिए महान वन में प्रवेश कर चुके हैं, और वे अपने उत्तम रथों में एक-दूसरे के पीछे चलते हुए शोर मचा रहे हैं। भगवान (बुद्ध) ने शोर को ध्यान (सम्मोहन अवस्था) का कांटा कहा है। चलो हम गोसिंगा साल के वन में चलें। [134] वहाँ हम बिना शोर और भीड़भाड़ के शांति से रह सकते हैं।" तब वे पूजनीय गोसिंगा साल के वन में चले गए, जहाँ वे बिना शोर और भीड़भाड़ के शांति से रहे।

तब भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, "भिक्षुओं, चाला कहाँ है? उपाकला कहाँ है? कक्कटा कहाँ है? कटिम्भ कहाँ है? काटा कहाँ है? कटिस्संग कहाँ है? वे वरिष्ठ शिष्य कहाँ चले गए हैं?"

"भंते, उन पूजनीय लोगों के मन में यह विचार आया: 'कई प्रसिद्ध लिच्छवी... शोर-शराबा कर रहे हैं... चलो हम गोसिंगा साल के जंगलों में चलते हैं, जहाँ हम बिना शोर और भीड़भाड़ के शांति से रह सकते हैं।' इसलिए वे गोसिंगा साल के जंगलों में चले गए, जहाँ वे बिना शोर और भीड़भाड़ के शांति से रहते हैं।"

"अच्छे, अच्छे, भिक्षुओं! उन महान शिष्यों ने बिल्कुल सही कहा था जब मैंने शोर को ध्यान (सम्मोहन अवस्था) का कांटा कहा था। भिक्षुओं, ये दस कांटे हैं। कौन से दस? (1) संगति में आनंद लेना एकांत में आनंद लेने वाले के लिए कांटा है। (2) आकर्षक वस्तु की खोज करना अनाकर्षक के चिह्न पर ध्यान करने वाले के लिए कांटा है। (3) अनुपयुक्त प्रदर्शन इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करने वाले के लिए कांटा है। (4) स्त्रियों की संगति ब्रह्मचर्य जीवन का कांटा है। (5) शोर प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) का कांटा है। (6) विचार और परीक्षण द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) का कांटा हैं। (7) परमानंद (पीति) तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) का कांटा है। (8) श्वास लेना और छोड़ना चतुर्थ ध्यान का कांटा है। (9) अनुभूति (सन्ना/संग्य) और वेदना (संवेदना) अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) और वेदना (संवेदना) के निवारण की प्राप्ति में कांटा है। (10) राग (काम) कांटा है, घृणा (विरोध) कांटा है, और मोह (मोह) कांटा है। भिक्षुओं, कांटों से मुक्त रहो! कांटों से मुक्त रहो! अरहंत कांटों से मुक्त हैं। अरहंत कांटों से रहित हैं। अरहंत कांटों से मुक्त और कांटों से रहित हैं।

---

73 वांछित (इत्थधम्म सं. इच्छा-धर्म)

भिक्षुओं, ये दस ऐसी वस्तुएँ हैं जिनकी कामना की जाती है, जो मनभावन हैं, और जो संसार में दुर्लभ रूप से प्राप्त होती हैं। वे दस वस्तुएँ कौन सी हैं? (1) धन की कामना की जाती है, जो मनभावन है, और जो संसार में दुर्लभ रूप से प्राप्त होती है। (2) सौंदर्य... (3) स्वास्थ्य... (4) सदाचार... (5) ब्रह्मचर्य... (6) मित्र... (7) विद्या... (8) पन्ना (दिव्य ज्ञान)... (9) अच्छे गुण... (10) स्वर्ग की कामना की जाती है, जो मनभावन है, और जो संसार में दुर्लभ रूप से प्राप्त होती है। [136] ये दस वस्तुएँ हैं जिनकी कामना की जाती है, जो मनभावन हैं, और जो संसार में दुर्लभ रूप से प्राप्त होती हैं।

भिक्षुओं, दस अन्य बातें हैं जो संसार में अत्यंत वांछनीय, मनभावन और दुर्लभ रूप से प्राप्त होने वाली इन दस चीजों के मार्ग में बाधक हैं। (1) आलस्य और पहल की कमी धन प्राप्ति में बाधक हैं। (2) स्वयं को अलंकृत और संवारना न करना सौंदर्य में बाधक है। (3) अपंग कर्म करना स्वास्थ्य में बाधक है। (4) बुरी मित्रता सद्गुणों में बाधक है। (5) इंद्रियों पर संयम न रखना ब्रह्मचर्य में बाधक है। (6) कपटपूर्ण व्यवहार मित्रता में बाधक है। (7) पाठ न करना विद्या में बाधक है। (8) सुनने की अनिच्छा और प्रश्न न पूछना ज्ञान (दिव्य ज्ञान) में बाधक हैं। (9) स्वयं को न लगाना और चिंतन का अभाव अच्छे गुणों में बाधक हैं। (10) कुकर्म स्वर्ग प्राप्ति में बाधक है। ये दस अन्य बातें हैं जो संसार में वांछनीय, मनभावन इन दस चीजों के मार्ग में बाधक हैं। सुखद, और दुनिया में दुर्लभ रूप से प्राप्त होने वाला।

भिक्षुओं, दस अन्य बातें हैं जो संसार में वांछनीय, वांछित, सुखद और दुर्लभ रूप से प्राप्त होने वाली इन दस चीजों के लिए पोषण प्रदान करती हैं। (1) परिश्रम और पहल धन प्राप्ति के लिए पोषण प्रदान करते हैं। (2) स्वयं को संवारना और सुंदर बनाना सौंदर्य के लिए पोषण प्रदान करता है। (3) लाभकारी कार्य करना स्वास्थ्य के लिए पोषण प्रदान करता है। (4) अच्छी मित्रता सद्गुणी आचरण के लिए पोषण प्रदान करती है। (5) इंद्रियों पर संयम रखना ब्रह्मचर्य के लिए पोषण प्रदान करता है। (6) ईमानदारी मित्रता के लिए पोषण प्रदान करती है। (7) पाठ करना विद्या के लिए पोषण प्रदान करता है। (8) सुनने की तत्परता और प्रश्न पूछना पन्ना (दिव्य ज्ञान) के लिए पोषण प्रदान करते हैं। (9) स्वयं को समर्पित करना और चिंतन करना अच्छे गुणों के लिए पोषण प्रदान करते हैं। (10) सही अभ्यास स्वर्ग प्राप्ति के लिए पोषण प्रदान करता है। ये दस अन्य बातें हैं जो उन दस चीजों के लिए पोषण प्रदान करती हैं जिनकी कामना की जाती है, जिन्हें वांछित किया जाता है। सुखद, और दुनिया में शायद ही कभी प्राप्त होता है।" [137]

---

74 विकास 2090 (वद्धि सं. वृद्धि)

भिक्षुओं, दस प्रकार से वृद्धि करते हुए, एक श्रेष्ठ शिष्य श्रेष्ठ विकास से बढ़ता है और इस जीवन के सार और सर्वोत्तम गुणों को आत्मसात करता है। वे दस प्रकार क्या हैं? (1) वह खेतों और भूमि में बढ़ता है; (2) धन और अनाज में; (3) पत्नियों और बच्चों में; (4) दासों, श्रमिकों और सेवकों में; (5) पशुधन में; (6)— (10) विश्वास, सदाचार, विद्या, उदारता और पन्ना (दिव्य ज्ञान) में। इन दस प्रकार से वृद्धि करते हुए, एक श्रेष्ठ शिष्य श्रेष्ठ विकास से बढ़ता है और इस जीवन के सार और सर्वोत्तम गुणों को आत्मसात करता है।

जो व्यक्ति यहाँ धन-दौलत, अनाज,

संतान, पत्नियों और पशुधन में समृद्ध होता है,

वह धनी और प्रसिद्ध होता है, और

रिश्तेदारों, मित्रों और राजपरिवार द्वारा सम्मानित होता है।

ऐसा विवेकशील और नेक इंसान,

जो यहाँ आस्था और सदाचार में,

पन्ना (दिव्य ज्ञान), उदारता और विद्या में बढ़ता है

, इस जीवन में दोनों ही तरह से बढ़ता है।

---

75 मिगासाला 2091

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब, सुबह के समय, पूज्य आनंद ने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किया और अपनी महिला अनुयायी मिगासला के घर गए, जहाँ वे उनके लिए तैयार किए गए आसन पर बैठ गए। तब महिला अनुयायी मिगासला पूज्य आनंद के पास आईं, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गईं और बोलीं:

"भंते आनंद, भगवान (बुद्ध) की इस शिक्षा को कैसे समझा जाए, जहाँ ब्रह्मचारी और अविवाहित दोनों का भविष्य में एक ही गंतव्य है? मेरे पिता पुराण ब्रह्मचारी थे, एकांत में रहते थे और सामान्य व्यक्ति की तरह यौन संबंध से परहेज करते थे। जब उनका निधन हुआ, तो भगवान (बुद्ध) ने घोषणा की: 'उन्होंने एक बार जन्म लेने वाले (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) की अवस्था प्राप्त की और तुषिता समूह

[देवताओं के] में पुनर्जन्म लिया।' मेरे चाचा इसिदत्त 2092 ब्रह्मचारी नहीं थे, बल्कि उन्होंने सुखी वैवाहिक जीवन व्यतीत किया। जब उनका निधन हुआ, तो भगवान (बुद्ध) ने भी घोषणा की: 'उन्होंने एक बार जन्म लेने वाले (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) की अवस्था प्राप्त की और तुषिता समूह [देवताओं के] में पुनर्जन्म लिया।' भंते आनंद, भगवान (बुद्ध) की इस शिक्षा को किस प्रकार समझा जाना चाहिए, जिसमें ब्रह्मचारी और अविवाहित दोनों का भविष्य में एक ही गंतव्य होता है?

"बहन, भगवान (बुद्ध) ने ठीक इसी तरह इसकी घोषणा की थी।"

फिर, जब पूज्य आनंद ने मिगासला के घर पर भिक्षा ग्रहण कर लिया, तो वे अपने आसन से उठे और चले गए। भोजन के बाद, भिक्षा मांगने के बाद, वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और बोले: "हे भंते, सुबह मैंने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र लिया और मिगासला नामक महिला अनुयायी के घर गया। ... [139] [ऊपर जैसा ही] ... जब उसने मुझसे यह पूछा, तो मैंने उत्तर दिया: 'बहन, भगवान (बुद्ध) ने ठीक इसी तरह इसका उल्लेख किया था।'"

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "अत्यंत, वह स्त्री-दीक्षित अनुयायी मिगासला कौन है, जो एक नासमझ, अयोग्य स्त्री है, जिसकी बुद्धि स्त्री जैसी है? और वे कौन हैं जो दूसरों को श्रेष्ठ और हीन के रूप में जानते हैं?" 2093

"आनंद, संसार में दस प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। वे कौन से दस प्रकार हैं?"

(1) "हे आनंद, यहाँ एक व्यक्ति ऐसा है जो अनैतिक है और मन की उस मुक्ति को, उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को, उसके वास्तविक स्वरूप को नहीं समझता, जहाँ उसकी अनैतिकता का कोई अंश शेष नहीं रहता। 2094 और उसने [शिक्षाओं को] नहीं सुना, [उनमें] विद्वत्ता प्राप्त नहीं की, [उनमें] अंतर्दृष्टि से [उनका] अध्ययन नहीं किया, और वह क्षणिक मुक्ति प्राप्त नहीं करता। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह क्षीणता की ओर बढ़ता है, विशिष्टता की ओर नहीं; वह क्षीणता की ओर जाने वाला है, विशिष्टता की ओर नहीं।"

(2) "तो, आनंद, एक ऐसा व्यक्ति है जो अनैतिक होते हुए भी मन की उस मुक्ति को, उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को, यथार्थ रूप में समझता है, [140] जहाँ उसकी अनैतिकता का कोई अंश शेष नहीं रहता। और उसने [शिक्षाओं को] सुना है, [उनमें] विद्वता प्राप्त की है, [उनमें] अंतर्दृष्टि से प्रवेश किया है, और वह अस्थायी मुक्ति प्राप्त करता है। शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर; वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर।"

"आनंद, जो लोग पक्षपाती होते हैं, वे उन पर ऐसा निर्णय सुनाएंगे: 'इसमें और दूसरे में समान गुण हैं। एक को हीन और दूसरे को श्रेष्ठ क्यों माना जाए?' उनका यह निर्णय वास्तव में उनके लिए लंबे समय तक हानि और पीड़ा का कारण बनेगा।"

"उनमें से, आनंद, जो अनैतिक है, और जो मन की उस मुक्ति को, उस पावन (दिव्य ज्ञान) की मुक्ति को, जहाँ उसकी अनैतिकता पूरी तरह समाप्त हो जाती है, समझता है; जिसने शिक्षाओं को सुना है, उनमें पारंगत हुआ है, दृष्टि से उनमें मर्मभेद किया है, और जो क्षणिक मुक्ति प्राप्त करता है, वह दूसरे व्यक्ति से श्रेष्ठ है। इसका कारण क्या है? क्योंकि धम्म-धारा उसे अपने साथ बहा ले जाती है। लेकिन तथागत (बुद्ध) के सिवा इस अंतर को कौन जान सकता है?"

इसलिए, आनंद, लोगों के बारे में निर्णय मत लो। लोगों पर फैसला मत सुनाओ। जो लोग लोगों पर फैसला सुनाते हैं, वे खुद को नुकसान पहुंचाते हैं। केवल मैं, या मेरे जैसा कोई, ही लोगों पर फैसला सुना सकता है। [141]

(3) "तो, आनंद, एक ऐसा व्यक्ति है जो गुणी होते हुए भी मन की उस मुक्ति को, उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त मुक्ति को, उसके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता, जहाँ उसका वह गुणी आचरण बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाता है। और उसने [शिक्षाओं को] नहीं सुना है... उसे क्षणिक मुक्ति प्राप्त नहीं होती। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह क्षीणता की ओर बढ़ता है, विशिष्टता की ओर नहीं; वह क्षीणता की ओर जाने वाला है, विशिष्टता की ओर नहीं।"

(4) "तो, आनंद, एक ऐसा व्यक्ति है जो गुणी है और मन की उस मुक्ति को, जो कि वास्तव में पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त मुक्ति है, समझता है, जहाँ उसका वह गुणी आचरण बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाता है। और उसने [शिक्षाओं को] सुना है... और वह

अस्थायी मुक्ति प्राप्त करता है। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर; वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर।"

"आनंद, जो लोग निर्णय लेने वाले होते हैं, वे उन पर वैसा ही निर्णय सुनाएंगे... केवल मैं ही, या मेरे जैसा कोई और, लोगों पर निर्णय सुना सकता है।"

(5) "तो, आनंद, एक ऐसा व्यक्ति है जो कामवासना (राग) के प्रति अत्यधिक प्रवृत्त है और मन की उस मुक्ति को, जो कि वास्तव में मन की मुक्ति है, यानी पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त मुक्ति को, नहीं समझता, जहाँ उसकी कामवासना (राग) पूरी तरह समाप्त हो जाती है। और उसने [शिक्षाओं को] नहीं सुना है... उसे क्षणिक मुक्ति प्राप्त नहीं होती। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह क्षीणता की ओर नहीं, बल्कि क्षय की ओर जाता है; वह क्षय की ओर जाने वाला है, क्षीणता की ओर नहीं।"

(6) "तो, आनंद, एक ऐसा व्यक्ति है जो कामवासना (राग) के प्रति प्रबल प्रवृत्त है, फिर भी वह मन की उस मुक्ति को, उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को, यथार्थ रूप में समझता है, जहाँ उसकी वह कामवासना (राग) पूरी तरह समाप्त हो जाती है। और उसने [शिक्षाओं को] सुना है... और वह अस्थायी मुक्ति प्राप्त करता है। [142] शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर; वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर;

"आनंद, जो लोग निर्णय लेने वाले होते हैं, वे उन पर वैसा ही निर्णय सुनाएंगे जैसा मैं, या मेरे जैसा कोई व्यक्ति, लोगों पर निर्णय सुना सकता है।"

(7) "तो, आनंद, एक ऐसा व्यक्ति है जो क्रोधी स्वभाव का है और मन की उस मुक्ति को, उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त मुक्ति को, जिसके द्वारा उसका क्रोध पूरी तरह समाप्त हो जाता है, नहीं समझता। और उसने [शिक्षाओं को] नहीं सुना है... उसे क्षणिक मुक्ति प्राप्त नहीं होती। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह क्षीणता की ओर बढ़ता है, विशिष्टता की ओर नहीं; वह क्षीणता की ओर जाने वाला है, विशिष्टता की ओर नहीं।"

(8) "तो, आनंद, एक ऐसा व्यक्ति है जो क्रोधशील है, फिर भी वह मन की उस मुक्ति को, उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त मुक्ति को, यथार्थ रूप में समझता है, जहाँ उसका क्रोध पूर्णतः समाप्त हो जाता है। और उसने [शिक्षाओं को] सुना है... उसे अस्थायी मुक्ति प्राप्त होती है। शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर; वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर।"

"आनंद, जो लोग दूसरों पर निर्णय लेने में सक्षम हैं, वे उन पर वैसा ही निर्णय सुनाएंगे। ... केवल मैं ही, या मेरे जैसा कोई और, लोगों पर निर्णय सुना सकता है।"

(9) "तो, आनंद, एक ऐसा व्यक्ति है जो बेचैन है और मन की उस मुक्ति को नहीं समझता जो वास्तव में पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा प्राप्त होती है, जहाँ उसकी बेचैनी पूरी तरह से समाप्त हो जाती है। और उसने [शिक्षाओं को] नहीं सुना है... उसे अस्थायी मुक्ति प्राप्त नहीं होती। शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह क्षीणता की ओर बढ़ता है, न कि विशिष्टता की ओर; वह क्षीणता की ओर जाने वाला है, विशिष्टता की ओर नहीं।"

(10) "तो, आनंद, एक ऐसा व्यक्ति है जो बेचैन है फिर भी मन की उस मुक्ति को, उस पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को, यथार्थ रूप में समझता है, जहाँ उसकी बेचैनी बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाती है। और उसने [शिक्षाओं को] सुना है, [उनमें] विद्वता प्राप्त की है, [143] उन्हें दृष्टि से आत्मसात किया है, और वह अस्थायी मुक्ति प्राप्त करता है। शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर; वह भेद की ओर अग्रसर होता है, न कि पतन की ओर।"

"आनंद, जो लोग पक्षपाती हैं, वे उन पर ऐसा निर्णय सुनाएंगे: 'इसमें और दूसरे में समान गुण हैं। एक को हीन और दूसरे को श्रेष्ठ क्यों माना जाए?' 7 उनका यह [निर्णय] निश्चय ही उन्हें लंबे समय तक हानि और कष्ट पहुँचाएगा।"

"उनमें से, आनंद, जो बेचैन है और जो मन की मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति को उसके वास्तविक स्वरूप में समझता है, जहाँ उसकी बेचैनी बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाती है; जिसने [शिक्षाओं को] सुना है, [उनमें] पारंगत हुआ है, [उनमें] अंतर्दृष्टि प्राप्त

की है, और जिसने क्षणिक मुक्ति प्राप्त की है, वह दूसरे व्यक्ति से श्रेष्ठ है। इसका कारण क्या है? क्योंकि धम्म-धारा उसे अपने साथ ले जाती है। लेकिन तथागत (बुद्ध) के सिवा कौन इस अंतर को जान सकता है?"

इसलिए, आनंद, लोगों के बारे में निर्णय मत लो। लोगों पर फैसला मत सुनाओ। जो लोग लोगों पर फैसला सुनाते हैं, वे स्वयं को ही हानि पहुंचाते हैं। केवल मैं ही, या मेरे जैसा कोई और, लोगों पर फैसला सुना सकता है।

"अत्यंत, वह महिला गृहस्थ अनुयायी मिगासाला कौन है, जो एक स्त्री की बुद्धि वाली नासमझ, अयोग्य स्त्री है? और वे कौन हैं जो दूसरों को श्रेष्ठ और हीन मानते हैं?"

"ये दस प्रकार के व्यक्ति हैं जो दुनिया में पाए जाते हैं।"

"आनंद, यदि इसिदत्त में पुराण के समान सद्गुण होते, तो पुराण अपने गंतव्य को भी नहीं जान पाते। [144] और यदि पुराण में इसिदत्त के समान ज्ञान होता, तो इसिदत्त अपने गंतव्य को भी नहीं जान पाते। इस प्रकार, आनंद, ये दोनों व्यक्ति किसी न किसी रूप में अपूर्ण थे।"

---

76 ट्रिपल धम्म (तयोधम्म बिना त्रयो-धम्म)

(1) "भिक्षुओं, यदि ये तीन बातें संसार में न होतीं, तो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, संसार में प्रकट न होते, और उनके द्वारा प्रतिपादित धर्म (मार्ग) और अनुशासन संसार में प्रकाशमान न होते। वे तीन बातें क्या हैं? पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु। यदि ये तीन बातें संसार में न होतीं, तो तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, संसार में प्रकट न होते, और उनके द्वारा प्रतिपादित धर्म (मार्ग) और अनुशासन संसार में प्रकाशमान न होते। परन्तु क्योंकि ये तीन बातें संसार में हैं, इसलिए तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, संसार में प्रकट होते हैं, और उनके द्वारा प्रतिपादित धर्म (मार्ग) और अनुशासन संसार में प्रकाशमान होते हैं।"

(2) "इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु का त्याग नहीं कर सकता। वे तीन चीजें क्या हैं? कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह। इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु का त्याग नहीं कर सकता।"

(3) "इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग करने में असमर्थ है। वे तीन क्या हैं? व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का दृष्टिकोण, संदेह और व्यवहार एवं अनुष्ठानों की गलत समझ। इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग करने में असमर्थ है। [145]

(4) इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति अपने अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के दृष्टिकोण, संदेह और व्यवहार एवं अनुष्ठानों की गलत समझ का त्याग करने में असमर्थ है। वे तीन चीजें क्या हैं? लापरवाही, गलत मार्ग का अनुसरण और मानसिक सुस्ती। इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति अपने अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के दृष्टिकोण, संदेह और व्यवहार एवं अनुष्ठानों की गलत समझ का त्याग करने में असमर्थ है।

(5) "इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति लापरवाह ध्यान, गलत मार्ग का अनुसरण और मानसिक सुस्ती का त्याग करने में असमर्थ है। वे तीन चीजें क्या हैं? उलझन, पूर्ण समझ का अभाव (संपजन्ना) और मानसिक भटकाव। इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति लापरवाह ध्यान, गलत मार्ग का अनुसरण और मानसिक सुस्ती का त्याग करने में असमर्थ है।"

(6) इन तीन बातों का त्याग किए बिना, व्यक्ति असमंजस, अपूर्ण बोध और मानसिक भटकाव का त्याग नहीं कर सकता। वे तीन बातें क्या हैं? श्रेष्ठ पुरुषों को देखने की इच्छा का अभाव, श्रेष्ठ धर्म को सुनने की इच्छा का अभाव और आलोचना में लीन मन। इन तीन बातों का त्याग किए बिना, व्यक्ति असमंजस, अपूर्ण बोध (संपजन्न) और मानसिक भटकाव का त्याग नहीं कर सकता।

(7) "इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति श्रेष्ठ पुरुषों के दर्शन की इच्छा का अभाव, श्रेष्ठ धर्म को सुनने की इच्छा का अभाव और आलोचना में लीन मन का त्याग करने में असमर्थ है। वे तीन चीजें क्या हैं? बेचैनी, असंयम और अनैतिकता। इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति श्रेष्ठ पुरुषों के दर्शन की इच्छा का अभाव, श्रेष्ठ धर्म को सुनने की इच्छा का अभाव और आलोचना में लीन मन का त्याग करने में असमर्थ है। [146]

(8) "इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति बेचैनी, असंयम और अनैतिकता का त्याग करने में असमर्थ है। वे तीन चीजें क्या हैं? अविश्वास, अनुदारता और आलस्य। इन तीन चीजों का त्याग किए बिना, व्यक्ति बेचैनी, असंयम और अनैतिकता का त्याग करने में असमर्थ है।"

(9) "इन तीन बातों को छोड़े बिना, व्यक्ति अविश्वास, अनुदारता और आलस्य को नहीं छोड़ सकता। वे तीन बातें क्या हैं? अनादर, आसानी से न सुधरने वाला स्वभाव और बुरी मित्रता। इन तीन बातों को छोड़े बिना, व्यक्ति अविश्वास, अनुदारता और आलस्य को नहीं छोड़ सकता।"

(10) "इन तीन बातों को छोड़े बिना, कोई व्यक्ति अनादर, आसानी से न सुधरने वाला स्वभाव और बुरी मित्रता को नहीं छोड़ सकता। वे तीन बातें क्या हैं? नैतिक निर्लज्जता, नैतिक लापरवाही और आलस्य। इन तीन बातों को छोड़े बिना, कोई व्यक्ति अनादर, आसानी से न सुधरने वाला स्वभाव और बुरी मित्रता को नहीं छोड़ सकता।"

भिक्षुओं, जो नैतिक रूप से निर्लज्ज और लापरवाह है, वह आलसी है। आलसी व्यक्ति अनादर, आसानी से न सुधरने की प्रवृत्ति और बुरी मित्रता को त्यागने में असमर्थ है। बुरे मित्र रखने वाला व्यक्ति अविश्वास, अनुदारता और आलस्य को त्यागने में असमर्थ है। आलसी व्यक्ति बेचैनी, असंयम और अनैतिकता को त्यागने में असमर्थ है। अनैतिक व्यक्ति श्रेष्ठ पुरुषों के दर्शन की इच्छा का अभाव, श्रेष्ठ धर्म को सुनने की इच्छा का अभाव और आलोचना में लीन मन को त्यागने में असमर्थ है। आलोचना में लीन मन वाला व्यक्ति उलझन, पूर्ण बोध की कमी और मानसिक व्याकुलता को त्यागने में असमर्थ है। मानसिक रूप से विचलित व्यक्ति लापरवाह ध्यान, गलत मार्ग का अनुसरण और मानसिक सुस्ती को त्यागने में असमर्थ है। मानसिक रूप से सुस्त व्यक्ति व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/कारण) को त्यागने में असमर्थ है। पुनर्जन्म के प्रति संदेह, गलत धारणा और व्यवहार एवं रीति-रिवाजों की गलत समझ। संदेह करने वाला व्यक्ति कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग करने में असमर्थ होता है। कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग किए बिना व्यक्ति पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्त नहीं हो सकता।

(1) "भिक्षुओं, इन तीन चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु का त्याग करने में सक्षम हो जाता है। वे तीन चीजें क्या हैं? काम (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह)। इन तीन चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु का त्याग करने में सक्षम हो जाता है।"

(2) इन तीनों चीजों का त्याग करने पर व्यक्ति कामवासना (राग), द्वेष (दोष/मोह) और मोह (मोह) का त्याग करने में सक्षम हो जाता है। वे तीन चीजें क्या हैं? व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का दृष्टिकोण, संदेह और व्यवहार एवं अनुष्ठानों की गलत समझ। इन तीनों चीजों का त्याग करने पर व्यक्ति कामवासना (राग), द्वेष (दोष/मोह) और मोह (मोह) का त्याग करने में सक्षम हो जाता है।

(3) इन तीन चीजों का त्याग करने पर व्यक्ति अपने अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के दृष्टिकोण, संदेह और व्यवहार एवं अनुष्ठानों की गलत समझ का त्याग करने में सक्षम हो जाता है। वे तीन चीजें क्या हैं? लापरवाही, गलत मार्ग का अनुसरण और मानसिक सुस्ती। इन तीन चीजों का त्याग करने पर व्यक्ति अपने अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) के दृष्टिकोण, संदेह और व्यवहार एवं अनुष्ठानों की गलत समझ का त्याग करने में सक्षम हो जाता है।

(4) "इन तीन चीजों को त्यागने से व्यक्ति लापरवाह ध्यान, गलत मार्ग का अनुसरण और मानसिक सुस्ती को त्यागने में सक्षम हो जाता है। वे तीन चीजें क्या हैं? उलझन, पूर्ण समझ का अभाव (संपजन्ना) और मानसिक व्याकुलता। इन तीन चीजों को त्यागने से व्यक्ति लापरवाह ध्यान, गलत मार्ग का अनुसरण और मानसिक सुस्ती को त्यागने में सक्षम हो जाता है। [148]

(5) इन तीन बातों का त्याग करने से व्यक्ति असमंजस, अपूर्ण बोध (संपजन्न) और मानसिक भटकाव का त्याग करने में सक्षम हो जाता है। वे तीन बातें क्या हैं? श्रेष्ठ पुरुषों को देखने की इच्छा का अभाव, श्रेष्ठ धम्म को सुनने की इच्छा का अभाव और आलोचना में लीन मन। इन तीन बातों का त्याग करने से व्यक्ति असमंजस, अपूर्ण बोध और मानसिक भटकाव का त्याग करने में सक्षम हो जाता है।

(6) "इन तीन चीजों का त्याग करने से व्यक्ति श्रेष्ठ पुरुषों के दर्शन की इच्छा का अभाव, श्रेष्ठ धर्म का श्रवण करने की इच्छा का अभाव और आलोचना में लीन मन का त्याग करने में सक्षम हो जाता है। वे तीन चीजें क्या हैं? बेचैनी, असंयम और अनैतिकता। इन तीन चीजों का त्याग करने से व्यक्ति श्रेष्ठ पुरुषों के दर्शन की इच्छा का अभाव, श्रेष्ठ धर्म का श्रवण करने की इच्छा का अभाव और आलोचना में लीन मन का त्याग करने में सक्षम हो जाता है।"

(7) "इन तीन चीजों को त्यागने से व्यक्ति बेचैनी, असंयम और अनैतिकता को त्यागने में सक्षम हो जाता है। वे तीन चीजें क्या हैं? अविश्वास, अनुदारता और आलस्य। इन तीन चीजों को त्यागने से व्यक्ति बेचैनी, असंयम और अनैतिकता को त्यागने में सक्षम हो जाता है।"

(8) "इन तीन बातों को त्यागने से व्यक्ति अविश्वास, अनुदारता और आलस्य को त्यागने में सक्षम हो जाता है। वे तीन बातें क्या हैं? अनादर, आसानी से न सुधरने वाला स्वभाव और बुरी मित्रता। इन तीन बातों को त्यागने से व्यक्ति अविश्वास, अनुदारता और आलस्य को त्यागने में सक्षम हो जाता है।"

(9) "इन तीन चीजों को त्यागने से व्यक्ति अनादर, आसानी से न सुधरने की प्रवृत्ति और बुरी मित्रता को त्यागने में सक्षम हो जाता है। वे तीन चीजें क्या हैं? नैतिक निर्लज्जता, नैतिक लापरवाही और आलस्य। इन तीन चीजों को त्यागने से व्यक्ति अनादर, आसानी से न सुधरने की प्रवृत्ति और बुरी मित्रता को त्यागने में सक्षम हो जाता है।"

(10) भिक्षुओं, जो नैतिक लज्जा और नैतिक भय से ग्रस्त है, वह सजग रहता है। जो सजग है, वह अनादर, अप्रिय व्यवहार और बुरी मित्रता का त्याग करने में सक्षम है। जिसके अच्छे मित्र हैं [149], वह अविश्वास, अनुदारता और आलस्य का त्याग करने में सक्षम है। जो ऊर्जावान है, वह बेचैनी, असंयम और अनैतिकता का त्याग करने में सक्षम है। जो गुणी है, वह श्रेष्ठ लोगों के दर्शन की इच्छा का अभाव, श्रेष्ठ धर्म को सुनने की इच्छा का अभाव और आलोचना में लीन मन का त्याग करने में सक्षम है। जिसका मन आलोचना में लीन नहीं है, वह उलझन, पूर्ण बोध की कमी (संपजन्न) और मानसिक भटकाव का त्याग करने में सक्षम है। जिसका मन विचलित नहीं है, वह लापरवाह ध्यान, गलत मार्ग का अनुसरण और मानसिक सुस्ती का त्याग करने में सक्षम है। जिसका मन सुस्त नहीं है, वह व्यक्तिगत अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) का त्याग करने में सक्षम है। गलत धारणा, संदेह और व्यवहार एवं रीति-रिवाजों की गलत समझ से मुक्त होकर, व्यक्ति कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग करने में सक्षम होता है। कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) और मोह (मोह) का त्याग करने के बाद, व्यक्ति पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु से भी मुक्त हो जाता है।

---

77 कौआ (काका)

भिक्षुओं, एक कौवे में दस बुरे गुण होते हैं। वे दस क्या हैं? वह विनाशकारी और उद्दंड, लालची और लोभी, क्रूर और निर्दयी, दुर्बल और कर्कश, भ्रमित और लोभी होता है। कौवे में ये दस बुरे गुण होते हैं। उसी प्रकार, एक दुष्ट भिक्षु में भी दस बुरे गुण होते हैं। वे दस क्या हैं? वह विनाशकारी और उद्दंड, लालची और लोभी, क्रूर और निर्दयी, दुर्बल और कर्कश, भ्रमित और लोभी होता है। एक दुष्ट भिक्षु में ये दस बुरे गुण होते हैं। [150]

---

78 निगंथ (जैन)

भिक्षुओं (सन्यासियों) और निगंथों (जैनों) में दस दोष होते हैं। वे दस दोष क्या हैं? (1) निगंथ आस्थाहीन होते हैं, (2) अनैतिक होते हैं, (3) नैतिक रूप से निर्लज्ज होते हैं, (4) नैतिक रूप से लापरवाह होते हैं, (5) और बुरे व्यक्तियों के प्रति समर्पित होते हैं। (6) वे स्वयं की

प्रशंसा करते हैं और दूसरों को नीचा दिखाते हैं। (7) वे अपने विचारों को दृढ़ता से पकड़ते हैं और उन्हें बड़ी कठिनाई से छोड़ते हैं। (8) वे छलकारी होते हैं, (9) उनकी बुरी इच्छाएँ होती हैं, और (10) वे गलत विचार रखते हैं। 2096 निगंथों में ये दस दोष होते हैं।

नाराजगी के लिए 79 आधार (एल) [2097] (अघटवत्थु)

भिक्षुओं, आक्रोश के ये दस कारण हैं। वे दस क्या हैं? (1) [यह सोचकर:] 'उन्होंने मेरे नुकसान के लिए काम किया' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (2) [यह सोचकर:] 'वे मेरे नुकसान के लिए काम कर रहे हैं' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (3) [यह सोचकर:] 'वे मेरे नुकसान के लिए काम करेंगे' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (4) [यह सोचकर:] 'उन्होंने मुझे प्रसन्न करने वाले और मेरे लिए सुखद व्यक्ति के नुकसान के लिए काम किया' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (5) [यह सोचकर:] 'वे मुझे प्रसन्न करने वाले और मेरे लिए सुखद व्यक्ति के नुकसान के लिए काम कर रहे हैं' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (6) [यह सोचकर:] 'वे मुझे प्रसन्न करने वाले और मेरे लिए सुखद व्यक्ति के नुकसान के लिए काम करेंगे' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (7) [यह सोचकर:] 'उन्होंने मुझे अप्रिय करने वाले और मेरे लिए अप्रिय व्यक्ति के लाभ के लिए काम किया' - आक्रोश उत्पन्न होता है। (8) [यह सोचकर:] 'वे मेरे लाभ के लिए काम कर रहे हैं' - जो मुझे अप्रिय और नापसंद है, उससे द्वेष उत्पन्न होता है। (9) [यह सोचकर:] 'वे मेरे लिए अप्रिय और नापसंद व्यक्ति के लाभ के लिए कार्य करेंगे,' तो द्वेष उत्पन्न होता है। (10) और व्यक्ति बिना किसी कारण के क्रोधित हो जाता है। 2098 हे भिक्षुओं, ये दस कारण हैं जिनसे द्वेष उत्पन्न होता है।

---

80 आक्रोश दूर करना (2) 2099 (अघटपतिविनय)

भिक्षुओं, आक्रोश दूर करने के ये दस तरीके हैं। वे दस तरीके क्या हैं? (1) [सोचते हुए:] 'उन्होंने मेरा नुकसान करने के लिए काम किया, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इससे आक्रोश दूर होता है। [151] (2) [सोचते हुए:] 'वे मेरा नुकसान करने के लिए काम कर रहे हैं, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इससे आक्रोश दूर होता है। (3) [सोचते हुए:] 'वे मेरा नुकसान करने के लिए काम करेंगे, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इससे आक्रोश दूर होता है। (4) [सोचते हुए:] 'उन्होंने काम किया...' (5) ... 'वे काम कर रहे हैं...' (6) ... 'वे मेरे प्रिय और प्रिय व्यक्ति का नुकसान करने के लिए काम करेंगे, लेकिन इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' इससे आक्रोश दूर होता है। (7) [सोचते हुए:] 'उन्होंने काम किया...' (8) ... 'वे काम कर रहे हैं...' (9) ... 'वे मेरे लिए अप्रिय और अप्रिय व्यक्ति के हित में कार्य करेंगे, परन्तु इसके बारे में क्या किया जा सकता है?' (10) और बिना कारण क्रोधित नहीं होना चाहिए। भिक्षुओं, ये दस तरीके हैं जिनसे आक्रोश दूर किया जा सकता है।

IV. बुजुर्ग (थेरावग्गो संस्कृत: स्थिवरा-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

81 बहुना

एक बार भगवान (बुद्ध) चंपा में गग्गरा कमल तालाब के किनारे निवास कर रहे थे। तब पूज्य बहुना भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, तथागत (बुद्ध) कितनी चीजों से मुक्त, विरक्त और निर्धन हैं कि वे सीमाओं से मुक्त मन से निवास करते हैं?" [152]

"बहुना, तथागत (बुद्ध) दस चीजों से मुक्त, विरक्त और निर्मल हैं, इसीलिए वे सीमाओं से परे मन से निवास करते हैं। वे दस कौन सी हैं? (1) तथागत (बुद्ध) रूप से मुक्त, विरक्त और निर्मल हैं, इसीलिए वे सीमाओं से परे मन से निवास करते हैं। (2)-(5) तथागत (बुद्ध) वेदना, संज्ञान, अपने गुणों, संस्कार और चेतना से मुक्त, विरक्त और निर्मल हैं, इसीलिए वे सीमाओं से परे मन से निवास करते हैं। (6)-(10) तथागत (बुद्ध) पुनर्जन्म, वृद्धावस्था, मृत्यु, दुख और दोषों से मुक्त, विरक्त और निर्मल हैं, इसीलिए वे निवास करते हैं।" सीमाओं से मुक्त मन के साथ।

"जिस प्रकार नीला, लाल या सफेद कमल का फूल, यद्यपि जल में जन्म लेता है और जल में ही बढ़ता है, फिर भी जल से ऊपर उठकर अछूता रहता है, ठीक उसी प्रकार, हे बहुना, तथागत (बुद्ध) इन दस चीजों से मुक्त, विरक्त और निर्धन होने के कारण ही सीमाओं से परे मन से निवास करते हैं।"

---

82 आनंदा

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

(1) "हे आनंद, यह असंभव है कि आस्थाहीन भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त कर सके। (2) यह असंभव है कि अनैतिक भिक्षु... (3) ... अल्पज्ञानी भिक्षु... (4) ...सुधारना कठिन भिक्षु... [153] (5) ... बुरे मित्रों वाला भिक्षु... (6) ... आलसी भिक्षु... (7) ... भ्रमित मन वाला भिक्षु... (8) ... असंतुष्ट भिक्षु... (9) ... बुरी इच्छाओं वाला भिक्षु... (10) ... गलत मत रखने वाला भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त कर सके। यह असंभव है कि इन दस गुणों से युक्त भिक्षु वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त कर सके।" और इस धम्म और अनुशासन में परिपक्वता।

(1) हे आनंद, यह संभव है कि आस्थावान भिक्षु इस धर्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करे। (2) यह संभव है कि एक गुणी भिक्षु... (3) ... एक विद्वान भिक्षु... (4) ... एक ऐसा भिक्षु जिसे सुधारना आसान हो... (5) ... एक ऐसा भिक्षु जिसके अच्छे मित्र हों... (6) ... एक ऊर्जावान भिक्षु... (7) एक सचेत (ध्यानमग्न/सती) भिक्षु... (8) ... एक संतुष्ट भिक्षु... (9) ... एक कम इच्छाओं वाला भिक्षु... (10) ... एक सही दृष्टिकोण रखने वाला भिक्षु इस धर्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करे। यह संभव है। जो भिक्षु इन दस गुणों से युक्त होता है, वह इस धम्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करेगा।

---

83 पुन्निया [2101]

तब पूज्य पुन्निया भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, ऐसा क्यों है कि तथागत (बुद्ध) कभी-कभी धम्म का उपदेश देने के लिए इच्छुक होते हैं और कभी-कभी नहीं होते?"

(1) हे पुण्य, जब कोई भिक्षु आस्था से परिपूर्ण होकर भी तथागत (बुद्ध) के पास नहीं आता, तो तथागत (बुद्ध) धर्म का उपदेश देने के लिए प्रवृत्त नहीं होते। (2) परन्तु जब कोई भिक्षु आस्था से परिपूर्ण होकर उनके पास आता है, तो तथागत (बुद्ध) उपदेश देने के लिए प्रवृत्त होते हैं। (3) हे पुण्य, जब कोई भिक्षु आस्था से परिपूर्ण होकर उनके पास आता है, परन्तु उनकी सेवा नहीं करता... (4) जब वह उनकी सेवा तो करता है, परन्तु प्रश्न नहीं पूछता... (5) जब वह प्रश्न पूछता है, परन्तु धर्म को ध्यानपूर्वक नहीं सुनता... (6) जब वह धर्म को ध्यानपूर्वक सुनता है, परन्तु सुनकर उसे मन में नहीं रखता... (7) जब सुनकर उसे मन में रख लेता है, परन्तु मन में रखे गए उपदेशों के अर्थ की जांच नहीं करता... (8) जब वह मन में रखे गए उपदेशों के अर्थ की जाँच करता है, परन्तु [155] अर्थ और धम्म को नहीं समझता और फिर धम्म के अनुसार अभ्यास नहीं करता... (9) जब वह अर्थ और धम्म को समझता है और फिर धम्म के अनुसार अभ्यास करता है, परन्तु वह एक अच्छा वक्ता नहीं है, जिसकी वाणी परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थ को अभिव्यक्त करने में निपुण हो... (10) जब वह एक अच्छा वक्ता है, जिसकी वाणी परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थ को अभिव्यक्त करने में निपुण है, परन्तु वह अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश, प्रोत्साहन, प्रेरणा और प्रसन्नता नहीं देता, तो तथागत (बुद्ध) धम्म सिखाने के लिए प्रवृत्त नहीं होते।

लेकिन, पुण्य, (1) जब कोई भिक्षु आस्था से परिपूर्ण होकर (2) तथागत (बुद्ध) के पास जाता है, (3) तथागत (बुद्ध) की सेवा करता है, (4) प्रश्न पूछता है, और (5) उत्सुकतापूर्वक धम्म सुनता है; और (6) धम्म सुनकर उसे मन में रखता है, (7) मन में रखे उपदेशों के अर्थ की जांच करता है, और (8) अर्थ और धम्म को समझकर धम्म के अनुसार अभ्यास करता है; और (9) वह एक अच्छा वक्ता होता है, जिसकी वाणी परिष्कृत, स्पष्ट, सुस्पष्ट और अर्थपूर्ण होती है; और (10) वह अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश देता है, प्रोत्साहित करता है, प्रेरित करता है और प्रसन्न करता है, तब तथागत (बुद्ध) धम्म सिखाने के लिए प्रेरित होते हैं। जब, पुण्य, किसी में ये दस गुण होते हैं, तब तथागत (बुद्ध) वह धम्म का शिक्षण करने के लिए पूरी तरह से तत्पर है।

---

84 घोषणा (व्याकरण सं. व्यक्त-करण)

वहाँ पूज्य महामोग्गलाना ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

"मित्र," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य महामोग्गलाना ने यह कहा:

"यहाँ, मित्रों, एक भिक्षु अंतिम ज्ञान की घोषणा इस प्रकार करता है: 'मैं समझता हूँ: पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।' तथागत (बुद्ध) [156] या उनका शिष्य, जो ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में निपुण है—प्राप्ति में कुशल, दूसरों के मन को समझने में निपुण, दूसरों के मन के तरीकों को समझने में निपुण—उनसे प्रश्न पूछता है, उनसे पूछताछ करता है और उनकी जिद लेता है। जब तथागत (बुद्ध) या उनका शिष्य उनसे प्रश्न पूछता है, उनसे पूछताछ करता है और उनकी जिद लेता है, तो वे असमंजस में पड़ जाते हैं और घबरा जाते हैं। उन पर विपत्ति आती है, विपत्ति आती है, विपत्ति और विपत्ति दोनों आती हैं।"

तथागत (बुद्ध) या उनके शिष्य, जो ध्यान (सम्मोहन) अवस्था प्राप्त कर चुके हैं... अपने मन को अपने ही मन से समाहित कर लेते हैं और विचार करते हैं: 'यह पूज्यवर इस प्रकार अंतिम ज्ञान की घोषणा क्यों करते हैं: "मैं समझता हूँ: 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।'" तथागत (बुद्ध) या उनके शिष्य, अपने मन को अपने ही मन से समाहित करके, समझते हैं:

(1) "यह आदरणीय व्यक्ति क्रोध के प्रति प्रवृत्त है और उसका मन अक्सर क्रोध से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में क्रोध से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(2) "यह आदरणीय व्यक्ति शत्रुतापूर्ण है और उसका मन अक्सर शत्रुता से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में शत्रुता से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(3) "यह आदरणीय व्यक्ति निंदा करने के लिए प्रवृत्त है और उसका मन अक्सर निंदा से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में निंदा का ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(4) "यह आदरणीय व्यक्ति अभिमानी है और उसका मन अक्सर अभिमान से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म (मार्ग) और अनुशासन में अभिमान से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(5) "यह आदरणीय व्यक्ति ईर्ष्यालु है और उसका मन अक्सर ईर्ष्या से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में ईर्ष्या से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(6) "यह आदरणीय व्यक्ति कंजूस है और उसका मन अक्सर कंजूसी से ग्रस्त रहता है। [157] परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, कंजूसी की ग्रस्तता पतन का एक कारण है।"

(7) "यह पूज्य व्यक्ति धूर्त है और उसका मन अक्सर धूर्तता में लीन रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, धूर्तता में लीन रहना पतन का कारण है।"

(8) "यह पूज्य व्यक्ति कपटी है और उसका मन अक्सर कपट से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म (मार्ग) और अनुशासन में, कपट से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(9) "इस पूज्यवर के मन में बुरी इच्छाएँ हैं और उनका मन अक्सर इच्छाओं से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, इच्छाओं से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(10) "जब आगे कुछ करना बाकी होता है, तो यह पूज्य व्यक्ति किसी निम्न स्तर की उपलब्धि के कारण मार्ग में ही रुक जाता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, मार्ग में रुक जाना पतन का कारण है।"

"सचमुच, मित्रों, इन दस चीजों का त्याग न करने वाले भिक्षु के लिए इस धम्म (मार्ग) और अनुशासन में उन्नति, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करना असंभव है। परन्तु इन दस चीजों का त्याग करने वाले भिक्षु के लिए इस धम्म और अनुशासन में उन्नति, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करना संभव है।"

---

85 शेखीबाज़ (कत्थी)

एक बार पूज्य महाचुंडा सहजाति में चैतियों के बीच निवास कर रहे थे। वहाँ पूज्य महाचुंडा ने भिक्षुओं को संबोधित किया:

"मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य महाकुंड ने यह कहा:

"यहाँ, मित्रों, एक भिक्षु एक अभिमानी होता है, वह जो अपनी उपलब्धियों का बखान करता है: 'मैं प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) को प्राप्त करता हूँ और उससे बाहर निकलता हूँ। मैं द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) को प्राप्त करता हूँ और उससे बाहर निकलता हूँ... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) को... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) को... {158] ... अंतरिक्ष की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को... चेतना की अनंतता के आधार को... शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को... न-बोध (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) को। मैं संवेदना (वेदना) और बोध (सन्न/संज्ञा) के अंत को प्राप्त करता हूँ और उससे बाहर निकलता हूँ।' तथागत (बुद्ध) या उनका शिष्य, जो ध्यान (सम्मोहन) अवस्था में निपुण हो—सृष्टि में कुशल हो, दूसरों के मन को समझने में निपुण हो, और दूसरों के मन के तरीकों को जानने में निपुण हो—उससे प्रश्न पूछता है, उससे पूछताछ करता है और उससे जिरह करता है। जब तथागत (बुद्ध) या उनका शिष्य उससे प्रश्न पूछता है, उससे पूछताछ करता है और उससे जिरह करता है, तो वह असमंजस में पड़ जाता है और घबरा जाता है। उस पर विपत्ति आती है, विपत्ति आती है, विपत्ति और विपत्ति दोनों आती हैं।

"तथागत (बुद्ध) या उनके शिष्य, जो ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में निपुण हैं... अपने मन को अपने ही मन से समाहित कर लेते हैं और विचार करते हैं: 'यह पूजनीय व्यक्ति घमंडी क्यों है, अपनी उपलब्धियों का बखान क्यों करता है: "मैं प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) को प्राप्त करता हूँ और उससे बाहर निकलता हूँ... मैं संवेदना (वेदना) और अनुभूति (संज्ञा/संज्ञा) के अंत को प्राप्त करता हूँ और उससे बाहर निकलता हूँ"? 'तथागत (बुद्ध) या उनके शिष्य, अपने मन को अपने ही मन से समाहित करके, समझते हैं:

(1) "इस पूज्यवर का आचरण लंबे समय से टूटा-फूटा, दोषपूर्ण, कलंकित और दागदार रहा है, और वे निरंतर सदाचारी आचरण का पालन नहीं करते। यह पूज्यवर अनैतिक हैं। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में अनैतिकता पतन का एक कारण है।"

(2) "यह आदरणीय व्यक्ति आस्थाहीन है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में आस्थाहीनता पतन का कारण है।"

(3) "यह आदरणीय व्यक्ति अल्प ज्ञान और अनुचित आचरण वाला है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में अल्प ज्ञान पतन का कारण है।" [159]

(4) "इस आदरणीय व्यक्ति को सुधारना कठिन है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, सुधारना कठिन होना पतन का संकेत है।"

(5) "इस पूज्यवर के कुछ मित्र बुरे हैं। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, बुरी मित्रता पतन का कारण होती है।"

(6) "यह आदरणीय व्यक्ति आलसी है। लेकिन तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, आलस्य पतन का एक कारण है।"

(7) "यह आदरणीय व्यक्ति भ्रमित मन वाला है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में भ्रमित मन होना पतन का कारण है।"

(8) "यह पूज्यवर छलकारी है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में छल करना पतन का कारण है।"

(9) "इस आदरणीय व्यक्ति का भरण-पोषण करना कठिन है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, भरण-पोषण में कठिनाई होना पतन का संकेत है।"

(10) "यह आदरणीय व्यक्ति मूर्ख है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभाव पतन का कारण है।"

मान लीजिए, मित्रों, कि एक व्यक्ति अपने साथी से कहे: 'जब भी तुम्हें किसी भी चीज़ के लिए पैसे की ज़रूरत हो, मेरे मित्र, बस मुझसे मांग लेना और मैं तुम्हें दे दूंगा।' जब साथी को पैसे की ज़रूरत होती है, तो वह अपने मित्र से कहता है: 'मुझे पैसे चाहिए, मित्र। मुझे कुछ दे दो।' दूसरा कहता है: 'तो फिर, मित्र, यहाँ खोदो।' वह वहाँ खोदता है लेकिन उसे कुछ नहीं मिलता। फिर वह कहता है: 'तुमने मुझसे झूठ बोला, मित्र, तुमने झूठ बोला जब तुमने मुझे यहाँ खोदने के लिए कहा।' दूसरा कहता है: 'मैंने तुमसे झूठ नहीं बोला, मित्र, मैंने झूठ नहीं बोला। बल्कि, वहाँ खोदो।' वह वहाँ भी खोदता है लेकिन उसे कुछ नहीं मिलता। फिर से, वह कहता है: 'तुमने मुझसे झूठ बोला, मित्र, तुमने झूठ बोला जब तुमने मुझे वहाँ खोदने के लिए कहा।' दूसरा कहता है: 'मैंने तुमसे झूठ नहीं बोला, मित्र, मैंने झूठ नहीं बोला। [160] बल्कि, वहाँ खोदो।' वह वहाँ भी खोदता है, लेकिन उसे कुछ नहीं मिलता। फिर वह कहता है: 'तुमने मुझसे झूठ बोला, दोस्त, तुमने मुझे वहाँ खोदने के लिए कहकर झूठ बोला था।' 2103 दूसरा कहता है: 'मैंने तुमसे झूठ नहीं बोला, दोस्त, मैंने झूठ नहीं बोला। मैं पागल हो गया था, मेरा दिमाग खराब हो गया था।'

"इसी प्रकार, मित्रों, एक भिक्षु भी अभिमानी होता है, वह अपनी उपलब्धियों का बखान करता है: 'मैं प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) को प्राप्त करता हूँ और उससे बाहर निकलता हूँ'... [ऊपर दिए गए सभी कथनों के अनुसार:] [161] ... (10) 'यह आदरणीय व्यक्ति मूर्ख है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म और अनुशासन में, पन्ना (दिव्य ज्ञान) का अभाव पतन का कारण है।'

"सचमुच, मित्रों, इन दस चीजों का त्याग न करने वाले भिक्षु के लिए इस धर्म और अनुशासन में उन्नति, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करना असंभव है। परन्तु इन दस चीजों का त्याग करने वाले भिक्षु के लिए इस धर्म और अनुशासन में उन्नति, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करना संभव है।"

---

86 अंतिम ज्ञान (अधिमान)

एक बार पूज्य महाकस्सपा राजगाह में बांस के जंगल में, गिलहरी अभयारण्य में निवास कर रहे थे। वहाँ पूज्य [162] महाकस्सपा ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "मित्रों, भिक्षुओं!"

“मित्र,” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य महाकस्सपा ने यह कहा:

"यहाँ, मित्रों, एक भिक्षु अंतिम ज्ञान की घोषणा इस प्रकार करता है: 'मैं समझता हूँ: 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है, ब्रह्मचर्य जीवन जी लिया गया है, जो करना था वह कर लिया गया है, अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है।' तथागत (बुद्ध) या उनका शिष्य, जो ध्यान (सम्मोहन) अवस्था में निपुण है—प्राप्ति में कुशल, दूसरों के मन को समझने में निपुण, दूसरों के मन के तरीकों को समझने में निपुण—उनसे प्रश्न पूछता है, उनसे पूछताछ करता है और उनका प्रतिवाद करता है। जब तथागत (बुद्ध) या उनका शिष्य उनसे प्रश्न पूछता है, उनसे पूछताछ करता है और उनका प्रतिवाद करता है, तो वे गतिरोध में पड़ जाते हैं और घबरा जाते हैं, उन पर विपत्ति आती है, उन पर विपत्ति और विपत्ति दोनों आती हैं।"

तथागत (बुद्ध) या उनके शिष्य, जो ध्यान (सम्मोहन) अवस्था में हैं, अपने मन को अपने ही मन से समाहित कर लेते हैं और विचार करते हैं: 'यह पूज्यवर इस प्रकार अंतिम ज्ञान की घोषणा क्यों करते हैं: "मैं समझता हूँ: 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है... अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है'?' तथागत (बुद्ध) या उनके शिष्य, अपने मन को अपने ही मन से समाहित करके समझते हैं: 'यह पूज्यवर स्वयं को अतिरंजित करते हैं, यह कल्पना करते हैं कि उनका स्वयं का आकलन सही है, सोचते हैं कि उन्होंने वह प्राप्त कर लिया है जो उन्होंने प्राप्त नहीं किया है, वह पूरा कर लिया है जो उन्होंने पूरा नहीं किया है, और वह हासिल कर लिया है जो उन्होंने हासिल नहीं किया है, और स्वयं को अतिरंजित करके वे इस प्रकार अंतिम ज्ञान की घोषणा करते हैं: "मैं समझता हूँ: 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है... अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है'।"

तथागत (बुद्ध) या उनका शिष्य जो ध्यान (सम्मोहन) अवस्था प्राप्त कर चुका है... अपने मन को अपने ही मन से घेर लेता है और विचार करता है: 'यह पूजनीय व्यक्ति स्वयं को इतना अधिक क्यों आंकता है और यह क्यों समझता है कि उसका यह आकलन सही है; वह क्यों सोचता है कि उसने वह प्राप्त कर लिया है जो उसने प्राप्त नहीं किया है, वह पूरा कर लिया है जो उसने पूरा नहीं किया है, और वह हासिल कर लिया है जो उसने हासिल नहीं किया है; और स्वयं को इतना अधिक आंककर वह अंतिम ज्ञान की घोषणा इस प्रकार क्यों करता है: "मैं समझता हूँ: 'पुनर्जन्म नष्ट हो गया है... अब किसी भी अवस्था में वापस आना संभव नहीं है'?'

तथागत (बुद्ध) या उनके शिष्य, जो ध्यान (सम्मोहन) अवस्था में हैं... अपने मन को अपने ही मन में समाहित करके समझते हैं: 'इस पूज्यवर ने बहुत कुछ सीखा है, जो सीखा है उसे याद रखा है और उसे संजोया है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में अच्छी हों, मध्य में अच्छी हों और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हैं - ऐसी शिक्षाओं को उन्होंने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से अध्ययन किया है और दृष्टि से भलीभांति समझा है। इसलिए यह पूज्यवर स्वयं को अतिरंजित समझते हैं और सोचते हैं कि उनका स्वयं का आकलन सही है; वे सोचते हैं कि उन्होंने वह प्राप्त कर लिया है जो उन्होंने प्राप्त नहीं किया है, वह पूरा कर लिया है जो उन्होंने पूरा नहीं किया है और वह हासिल कर लिया है जो उन्होंने हासिल नहीं किया है; और स्वयं को अतिरंजित समझकर वे अंतिम ज्ञान की घोषणा इस प्रकार करते हैं: "मैं समझता हूँ: "पुनर्जन्म नष्ट हो गया है... अब कोई वापसी नहीं है किसी भी अवस्था में होना

"तथागत (बुद्ध) या उनका शिष्य जो ध्यान (सम्मोहन) अवस्था प्राप्त कर चुका है... अपने मन को अपने ही मन से समाहित करके समझता है:

(1) "यह आदरणीय व्यक्ति लालसा से भरा हुआ है और उसका मन अक्सर लालसा से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, लालसा से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(2) "यह पूज्य व्यक्ति द्वेष से भरा हुआ है और उसका मन अक्सर द्वेष से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म (मार्ग) और अनुशासन में, द्वेष से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(3) "यह पूज्यवर सुस्ती और आलस्य से ग्रस्त है और उसका मन अक्सर सुस्ती और आलस्य से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, सुस्ती और आलस्य से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(4) "यह पूज्यवर बेचैन हैं और उनका मन अक्सर बेचैनी से ग्रस्त रहता है। लेकिन तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, बेचैनी से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(5) "यह आदरणीय व्यक्ति संशय में लीन रहता है और उसका मन अक्सर संशय से ग्रस्त रहता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में संशय से ग्रस्त होना पतन का कारण है।"

(6) "यह पूजनीय व्यक्ति काम में आनंद लेता है, काम में प्रसन्न होता है, काम में आनंद लेने के लिए सर्मपित है। [164] लेकिन तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म और अनुशासन में, काम में आनंद लेना पतन का कारण है।"

(7) "यह पूज्यवर वार्ता में आनंद लेते हैं, वार्ता में प्रसन्न होते हैं, वार्ता में आनंद लेने के लिए सर्मपित हैं। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में वार्ता में आनंद लेना पतन का कारण है।"

(8) "यह पूज्यवर नींद में आनंदित होते हैं, नींद में मग्न रहते हैं, नींद में आनंद लेने के लिए सर्मपित हैं। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में, नींद में आनंद लेना पतन का कारण है।"

(9) "यह पूजनीय व्यक्ति संगति में आनंद लेता है, संगति में प्रसन्न होता है, संगति में आनंद लेने के लिए सर्मपित है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन में संगति में आनंद लेना पतन का कारण है।"

(10) "जब आगे कुछ करना बाकी होता है, तो यह पूज्य व्यक्ति किसी निम्न स्तर की उपलब्धि के कारण मार्ग में ही रुक जाता है। परन्तु तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म (मार्ग) और अनुशासन में, मार्ग में रुक जाना पतन का कारण है।"

"सचमुच, मित्रों, इन दस चीजों का त्याग न करने वाले भिक्षु के लिए इस धर्म और अनुशासन में उन्नति, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करना असंभव है। परन्तु इन दस चीजों का त्याग करने वाले भिक्षु के लिए इस धर्म और अनुशासन में उन्नति, प्रगति और परिपक्वता प्राप्त करना संभव है।"

---

87 अनुशासनात्मक मुद्दे (नप्पिया)

वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षु कालंदक के संदर्भ में भिक्षुओं को संबोधित किया: 2105 "भिक्षुओं!"

"आदरणीय महोदय!" उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया।

भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

(1) "यहाँ, एक भिक्षु अनुशासन संबंधी मुद्दों का निर्माता है और वह अनुशासन संबंधी मुद्दों के निपटारे की प्रशंसा नहीं करता। जब एक भिक्षु अनुशासन संबंधी मुद्दों का निर्माता होता है और अनुशासन संबंधी मुद्दों के निपटारे की प्रशंसा नहीं करता, तो यह एक ऐसा गुण है जो स्नेह, आदर, सम्मान, सामंजस्य या एकता की ओर नहीं ले जाता। 2106 [165]

(2) "फिर, एक भिक्षु प्रशिक्षण की इच्छा नहीं रखता और वह प्रशिक्षण लेने की प्रशंसा में बात नहीं करता। जब एक भिक्षु प्रशिक्षण की इच्छा नहीं रखता... तो यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर नहीं ले जाता।"

(3) "फिर, एक भिक्षु में बुरी इच्छाएँ होती हैं और वह इच्छाओं के निवारण की प्रशंसा नहीं करता। जब एक भिक्षु में बुरी इच्छाएँ होती हैं... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर नहीं ले जाता।"

(4) "फिर, एक भिक्षु क्रोध के प्रति प्रवृत्त होता है और वह क्रोध के निवारण की प्रशंसा नहीं करता। जब एक भिक्षु क्रोध के प्रति प्रवृत्त होता है... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर नहीं ले जाता।"

(5) "फिर, एक भिक्षु वह है जो दूसरों की निंदा करता है और निंदा को दूर करने की प्रशंसा नहीं करता। जब एक भिक्षु निंदा करता है... तो यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर नहीं ले जाता।"

(6) "फिर, एक भिक्षु धूर्त होता है और वह धूर्तता के निवारण की प्रशंसा नहीं करता। जब एक भिक्षु धूर्त होता है... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर नहीं ले जाता।"

(7) "फिर, एक भिक्षु कपटी होता है और वह कपट के निवारण की प्रशंसा नहीं करता। जब एक भिक्षु कपटी होता है... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर नहीं ले जाता। [166]

(8) "फिर, एक भिक्षु शिक्षाओं पर ध्यान देने के लिए इच्छुक नहीं होता और वह शिक्षाओं पर ध्यान देने की प्रशंसा में नहीं बोलता। जब एक भिक्षु शिक्षाओं पर ध्यान देने के लिए इच्छुक नहीं होता... तो यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर नहीं ले जाता।"

(9) "फिर, एक भिक्षु एकांतवास की ओर प्रवृत्त नहीं होता और वह एकांतवास की प्रशंसा में नहीं बोलता। जब एक भिक्षु एकांतवास की ओर प्रवृत्त नहीं होता... तो यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर नहीं ले जाता।"

(10) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं का आतिथ्य सत्कार नहीं करता और आतिथ्य सत्कार करने वाले की प्रशंसा नहीं करता। जब एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं का आतिथ्य सत्कार नहीं करता और आतिथ्य सत्कार करने वाले की प्रशंसा नहीं करता, तो यह भी एक ऐसा गुण है जो स्नेह, आदर, सम्मान, सद्भाव या एकता की ओर नहीं ले जाता।"

यद्यपि ऐसा भिक्षु यह कामना करे: 'काश, मेरे साथी भिक्षु मेरा आदर, सम्मान और आदर करें!' फिर भी उसके साथी भिक्षु उसका आदर, सम्मान, आदर और आदर नहीं करते। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसके बुद्धिमान साथी भिक्षु देखते हैं कि उसने उन बुरे (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग नहीं किया है।

"मान लीजिए एक जंगली घोड़े का बच्चा यह इच्छा करे: 'काश, लोग मुझे एक शुद्ध नस्ल के घोड़े का स्थान दें, मुझे शुद्ध नस्ल के घोड़े का भोजन दें और मेरी देखभाल करें!' फिर भी लोग उसे शुद्ध नस्ल के घोड़े का स्थान नहीं देते, उसे शुद्ध नस्ल के घोड़े का भोजन नहीं देते और उसकी देखभाल नहीं करते। [167] इसका क्या कारण है? क्योंकि बुद्धिमान लोग देखते हैं कि उसने अपनी चालबाज़ी, छल-कपट और कपट नहीं छोड़े हैं। इसी प्रकार, यद्यपि ऐसा भिक्षु यह इच्छा करे: 'काश, मेरे साथी भिक्षु मेरा आदर, सम्मान और आदर करें!' फिर भी उसके साथी भिक्षु उसका आदर, सम्मान, आदर और आदर नहीं करते। इसका क्या कारण है? क्योंकि उसके बुद्धिमान साथी भिक्षु देखते हैं कि उसने उन बुरे (अकुशल) गुणों (धम्म) को नहीं छोड़ा है।"

(1) "परन्तु भिक्षु अनुशासन संबंधी समस्याओं का निर्माता नहीं होता और वह अनुशासन संबंधी समस्याओं के समाधान की प्रशंसा करता है। जब भिक्षु अनुशासन संबंधी समस्याओं का निर्माता नहीं होता और अनुशासन संबंधी समस्याओं के समाधान की प्रशंसा करता है, तो यह एक ऐसा गुण है जो स्नेह, आदर, सम्मान, सामंजस्य और एकता की ओर ले जाता है।"

(2) "फिर, एक भिक्षु प्रशिक्षण की इच्छा रखता है और वह प्रशिक्षण लेने की प्रशंसा करता है। जब एक भिक्षु प्रशिक्षण की इच्छा रखता है... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर ले जाता है।"

(3) "फिर, एक भिक्षु की इच्छाएँ कम होती हैं और वह इच्छाओं के निवारण की प्रशंसा करता है। जब एक भिक्षु की इच्छाएँ कम होती हैं... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर ले जाता है।"

(4) "फिर, एक भिक्षु क्रोध के प्रति प्रवृत्त नहीं होता और वह क्रोध के निवारण की प्रशंसा करता है। जब एक भिक्षु क्रोध के प्रति प्रवृत्त नहीं होता... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर ले जाता है।"

(5) "फिर, भिक्षु वह नहीं है जो [दूसरों का] अपमान करता है और वह अपमान के निवारण की प्रशंसा करता है। जब भिक्षु [दूसरों का] अपमान नहीं करता... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर ले जाता है। [168]

(6) "फिर, एक भिक्षु (भिक्षु) धूर्त नहीं होता और वह धूर्तता के निवारण की प्रशंसा करता है। जब एक भिक्षु धूर्त नहीं होता... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर ले जाता है।"

(7) "फिर, एक भिक्षु कपटी नहीं होता और वह कपट के निवारण की प्रशंसा करता है। जब एक भिक्षु कपटी नहीं होता... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर ले जाता है।"

(8) "फिर, एक भिक्षु शिक्षाओं पर ध्यान देने के लिए तत्पर रहता है और वह शिक्षाओं पर ध्यान देने की प्रशंसा करता है। जब एक भिक्षु शिक्षाओं पर ध्यान देने के लिए तत्पर रहता है... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर ले जाता है।"

(9) "फिर, एक भिक्षु एकांतवास की ओर प्रवृत्त होता है और वह एकांतवास की प्रशंसा करता है। जब एक भिक्षु एकांतवास की ओर प्रवृत्त होता है... यह भी एक ऐसा गुण है जो... एकता की ओर ले जाता है।"

(10) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं का आतिथ्य सत्कार करता है और आतिथ्य सत्कार करने वाले की प्रशंसा करता है। जब एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं का आतिथ्य सत्कार करता है और आतिथ्य सत्कार करने वाले की प्रशंसा करता है, तो यह भी एक ऐसा गुण है जो स्नेह, आदर, सम्मान, सद्भाव और एकता की ओर ले जाता है।"

यद्यपि ऐसा भिक्षु यह इच्छा न करे कि 'काश मेरे साथी भिक्षु मेरा आदर, सम्मान और आदर करें!' फिर भी उसके साथी भिक्षु उसका आदर, सम्मान और आदर करते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसके बुद्धिमान साथी भिक्षु देखते हैं कि उसने उन बुरे (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग कर दिया है।

"मान लीजिए कि एक उत्कृष्ट नस्ल का घोड़ा यह न चाहे: 'काश लोग मुझे एक उत्कृष्ट नस्ल के घोड़े का स्थान दें, मुझे एक उत्कृष्ट नस्ल का भोजन दें और मेरी देखभाल करें!' फिर भी लोग उसे एक उत्कृष्ट नस्ल का स्थान देते हैं, उसे एक उत्कृष्ट नस्ल का भोजन देते हैं, [169] और उसकी देखभाल करते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि बुद्धिमान लोग देखते हैं कि उसने अपनी चालबाज़ी, छल-कपट और कपट छोड़ दिए हैं। इसी प्रकार, यद्यपि ऐसा भिक्षु यह न चाहे: 'काश मेरे साथी भिक्षु मेरा आदर, सम्मान और आदर करें!' फिर भी उसके साथी भिक्षु उसका आदर, सम्मान और आदर करते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसके बुद्धिमान साथी भिक्षु देखते हैं कि उसने उन बुरे (अकुशल) गुणों (धम्म) को त्याग दिया है।"

---

88 अपमान करने वाला 2107 (अक्कोसाका)

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं का अपमान और निंदा करता है, श्रेष्ठ भिक्षुओं की निंदा करता है, तो यह असंभव और अकल्पनीय है कि वह इन दस विपत्तियों में से कम से कम एक का शिकार न हो। वे दस विपत्तियाँ क्या हैं? (1) वह वह प्राप्त नहीं कर पाता जो उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है। (2) वह अपनी प्राप्त की हुई उपलब्धि से विमुख हो जाता है। (3) उसके अच्छे गुण निखरे नहीं रहते। (4) वह अपने अच्छे गुणों को बढ़ा-चढ़ाकर बताता है, या (5) ब्रह्मचर्य जीवन से असंतुष्ट रहता है, या (6) कोई अपवित्र अपराध करता है, या (7) किसी गंभीर बीमारी से ग्रसित हो जाता है, या (8) पागल हो जाता है और मानसिक रूप से विक्षिप्त हो जाता है। (9) वह भ्रमित अवस्था में मर जाता है। (10) शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। जब कोई भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं का अपमान और निंदा करता है, तो वह महान लोगों में से, यह असंभव और अकल्पनीय है कि वह इन दस आपदाओं में से कम से कम एक का शिकार न हो।" [170]

---

89 कोकालिका [2109]

तब भिक्षु कोकालिका भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और कहा: "भंते, सारिपुत्त और मोग्गलाना पापी इच्छाओं से ग्रसित हैं और पापी इच्छाओं के वश में आ गए हैं।"

[भगवान (बुद्ध) ने उत्तर दिया:] "ऐसा मत कहो, कोकालिका! ऐसा मत कहो, कोकालिका! 2110 सारिपुत्त और मोग्गलाना, कोकालिका पर विश्वास रखो। सारिपुत्त और मोग्गलाना अच्छा व्यवहार करते हैं।"

दूसरी बार भिक्षु कोकालिका ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, यद्यपि मैं भगवान (बुद्ध) को आस्था और विश्वास के योग्य मानता हूँ, फिर भी मैं कहता हूँ कि सारिपुत्त और मोग्गलाना में बुरी इच्छाएँ हैं और वे बुरी इच्छाओं के वश में आ गए हैं।"

"ऐसा मत कहो, कोकालिका! ... सारिपुत्त और मोग्गलाना अच्छे व्यवहार वाले हैं।"

तीसरी बार भिक्षु कोकालिका ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, यद्यपि मैं भगवान (बुद्ध) को आस्था और विश्वास के योग्य मानता हूँ, फिर भी मैं कहता हूँ कि सारिपुत्त और मोग्गलाना में बुरी इच्छाएँ हैं और वे बुरी इच्छाओं के वश में आ गए हैं।"

"ऐसा मत कहो, कोकालिका! ऐसा मत कहो, कोकालिका! सारिपुत्त और मोग्गल्लाना पर विश्वास रखो, कोकालिका, सारिपुत्त और मोग्गलाना अच्छा व्यवहार करते हैं।"

तब भिक्षु कोकालिका अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, भगवान (बुद्ध) की ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और चले गए। भिक्षु कोकालिका के जाने के कुछ ही समय बाद, उनका पूरा शरीर सरसों के दाने के आकार के फोड़ों से भर गया। ये फोड़े बढ़कर मूंग के आकार के हो गए; फिर चने के आकार के; फिर बेर की गुठलियों के आकार के; फिर बेर के फलों के आकार के; फिर कुरुबल के आकार के; फिर कच्चे बेली के आकार के; 2111 फिर पके बेली के आकार के हो गए। जब ये पके बेली के आकार के हो गए, तो ये फट गए, [171] और इनमें से मवाद और खून निकलने लगा। तब वे केले के पत्तों पर ऐसे पड़े रहे जैसे कोई मछली जहर निगल गई हो।

तब स्वतंत्र ब्रह्मा तुदु ने भिक्षु कोकालिका के पास जाकर, जो हवा में खड़े थे, उनसे कहा: "कोकालिका, सारिपुत्त और मोग्गलाना पर भरोसा रखो। सारिपुत्त और मोग्गलाना अच्छे व्यवहार वाले हैं।"

"तुम कौन हो, दोस्त?"

"मैं स्वतंत्र ब्रह्मा तुडु हूँ।"

"क्या भगवान (बुद्ध) ने तुम्हें पुनर्जन्म न लेने वाला (अनगामी) घोषित नहीं किया था, मित्र? तो फिर तुम यहाँ वापस क्यों आए हो? देखो तुमने कितना बड़ा पाप किया है।" 2113

तब स्वतंत्र ब्रह्मा तुडु ने भिक्षु कोकालिका को पद्य में संबोधित किया:

"जब कोई व्यक्ति पुनर्जन्म लेता है तो उसके मुंह में एक कुल्हाड़ी जन्म लेती है जिससे मूर्ख व्यक्ति गलत बातें बोलकर खुद को काट लेता है।"

जो निंदा के योग्य व्यक्ति की प्रशंसा करता है

या प्रशंसा के योग्य व्यक्ति की निंदा करता है,

वह अपने मुख से एक अशुभ फेंकता है

जिससे उसे कोई सुख नहीं मिलता।

"पासे में दुर्भाग्यपूर्ण चाल चलकर

अपनी सारी संपत्ति खो देना,

स्वयं सहित सब कुछ खो देना मामूली बात है; लेकिन पवित्र लोगों के प्रति घृणा पालना

कहीं अधिक दुर्भाग्यपूर्ण चाल है ।"

"एक लाख

छत्तीस निरब्बुदों और पाँच अब्बुदों के लिए, 2115

नेक लोगों की निंदा करने वाला नरक में जाता है,

क्योंकि उसने उन्हें बुरी वाणी और मन से बदनाम किया है।" [172]

फिर भिक्षु कोकालिका उस बीमारी के कारण मर गए, और सारिपुत्त और मोग्गल्लना के प्रति अपने द्वेष के कारण, मृत्यु के बाद उनका पुनर्जन्म लाल कमल नरक में हुआ। 2116

फिर, जब रात आगे बढ़ गई, तो अत्यंत सुंदर ब्रह्मा सहमपति, जिन्होंने पूरे जेतवन को प्रकाशित कर दिया, भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़े हुए और उनसे कहा: "भंते, भिक्षु कोकालिका का निधन हो गया है, और सारिपुत्त और मोग्गलाना के प्रति उनके द्वेष के कारण, मृत्यु के बाद उनका पुनर्जन्म लाल कमल के नरक में हुआ है।" ब्रह्मा सहमपति ने यही कहा। फिर उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।

फिर, जब रात बीत गई, तो भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं, पिछली रात, जब रात आगे बढ़ गई, तो ब्रह्मा सहमपति मेरे पास आए और मुझसे कहा... [जैसा कि ऊपर बताया गया है]... फिर उन्होंने मुझे प्रणाम किया, मेरी ओर दाहिनी ओर रखते हुए मेरी परिक्रमा की और वहीं अंतर्धान हो गए।"

जब यह कहा गया, तो एक भिक्षु ने भगवान (बुद्ध) से पूछा, "हे भंते, लाल कमल के नरक में जीवन काल कितना लंबा होता है?" 2117

"लाल कमल के नरक में जीवन काल लंबा होता है, भिक्षु। इसे गिनना और यह कहना आसान नहीं है कि यह इतने [173] वर्ष है, या इतने सौ वर्ष है, या इतने हजार वर्ष है, या इतने लाख वर्ष है।"

"तो क्या भंते, उपमा देना संभव है?"

“हे भिक्षु,” भगवान (बुद्ध) ने कहा: “मान लीजिए कि तिल के बीजों से भरी एक कोसला की गाड़ी में बीस माप तिल हैं। हर सौ साल के अंत में एक व्यक्ति उसमें से एक बीज निकालता है। इस प्रकार तिल के बीजों से भरी कोसला की गाड़ी इतनी जल्दी समाप्त हो सकती है जितनी जल्दी (1) एक निरब्बुद नरक में एक जीवन व्यतीत होगा। (2) निरब्बुद नरक में एक जीवन निरब्बुद नरक में बीस जीवन के बराबर है; (3) अबबा नरक में एक जीवन निरब्बुद नरक में बीस जीवन के बराबर है; (4) अहहा नरक में एक जीवन अबबा नरक में बीस जीवन के बराबर है; (5) अतता नरक में एक जीवन अहहा नरक में बीस जीवन के बराबर है; (6) कमल नरक में एक जीवन अबबा नरक में बीस जीवन के बराबर है; (7) सुगंधित नरक में एक जीवन बीस जीवन के बराबर है।” (8) कमल के नरक में एक जन्म मीठे-सुगंधित नरक में बीस जन्मों के बराबर है; (9) श्वेत कमल के नरक में एक जन्म नीले कमल के नरक में बीस जन्मों के बराबर है; और (10) लाल कमल के नरक में एक जन्म श्वेत कमल के नरक में बीस जन्मों के बराबर है। अब, सारिपुत्त और मोग्गलाना के प्रति द्वेष रखने के कारण, भिक्षु कोकालिका का पुनर्जन्म लाल कमल के नरक में हुआ है।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह कहने के बाद, सुगत (भगवान बुद्ध), गुरु ने आगे यह कहा: [174]

[यहाँ बुद्ध ब्रह्मा तुरु द्वारा ऊपर कहे गए शब्दों को दोहराते हैं:]

"जब कोई व्यक्ति पुनर्जन्म लेता है तो

उसके मुंह में एक कुल्हाड़ी जन्म लेती है

जिससे मूर्ख व्यक्ति

गलत बातें बोलकर खुद को काट लेता है।"

जो व्यक्ति निंदा के पात्र व्यक्ति की प्रशंसा करता है

या प्रशंसा के पात्र व्यक्ति की निंदा करता है, वह

अपने मुख से एक अशुभ फेंकता है

जिससे उसे कोई सुख नहीं मिलता।

"पासे में दुर्भाग्यपूर्ण चाल चलकर

अपनी सारी संपत्ति खो देना,

स्वयं सहित सब कुछ खो देना मामूली बात है; लेकिन पवित्र लोगों के प्रति घृणा पालना

कहीं अधिक दुर्भाग्यपूर्ण चाल है ।"

"एक लाख

छत्तीस निरब्बुदों और पाँच अब्बुदों के लिए,

नेक लोगों की निंदा करने वाला नरक में जाता है,

क्योंकि उसने उन्हें बुरी वाणी और मन से बदनाम किया है।"

इच्छाहीनता की 90 शक्तियाँ 2118 (खिनासवबाला)

तब पूज्य सारिपुत्त भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

सारिपुत्त, जब किसी भिक्षु के दोष नष्ट हो जाते हैं, तो उसके पास कितनी शक्तियाँ होती हैं जिनके कारण वह दोषों के नाश होने का दावा कर सकता है: 'मेरे दोष नष्ट हो गए हैं'?

"भंते, जब किसी भिक्षु के दोष नष्ट हो जाते हैं, तो उसे दस शक्तियाँ प्राप्त होती हैं जिनके कारण वह दोषों के नाश होने का दावा कर सकता है: 'मेरे दोष नष्ट हो गए हैं। वे दस शक्तियाँ कौन सी हैं?'"

(1) "हे भंते, यहाँ, दोषों से मुक्त भिक्षु ने सभी बद्ध घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) को उनके वास्तविक स्वरूप में सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) के साथ स्पष्ट रूप से देखा है, जो अनित्य हैं। [175] यह दोषों से मुक्त भिक्षु की वह शक्ति है जिसके आधार पर वह दोषों के नाश होने का दावा करता है: 'मेरे दोष नष्ट हो गए हैं।'"

(2) "फिर, दोषों से मुक्त भिक्षु ने सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) के साथ इंद्रिय सुखों को उनके वास्तविक स्वरूप में स्पष्ट रूप से देखा है, जो कोयले की भट्टी के समान हैं। यह दोषों से मुक्त भिक्षु की शक्ति है..."

(3) "फिर, दोषों से मुक्त भिक्षु का मन एकांत की ओर झुकता है; वह एकांत में रहता है, त्याग में आनंदित होता है, और दोषों के आधार बनने वाली सभी चीजों से पूरी तरह मुक्त हो जाता है। यही दोषों से मुक्त भिक्षु की शक्ति है..."

(4) "पुनः, दोषों से मुक्त भिक्षु ने ध्यान (सती/ध्यान) की चारों अवस्थाओं को विकसित और अच्छी तरह से सिद्ध कर लिया है; यह दोषों से मुक्त भिक्षु की शक्ति है..."

(5) — (10) "पुनः, दोषों से मुक्त भिक्षु ने चार सही प्रयासों को विकसित और अच्छी तरह से विकसित किया है... मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) के चार आधार... पाँच आध्यात्मिक शक्तियाँ... पाँच शक्तियाँ [176]... ज्ञान के सात कारक... श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग। यह दोषों से मुक्त भिक्षु की वह शक्ति है जिसके आधार पर वह दोषों के नाश का दावा करता है: 'मेरे दोष नष्ट हो गए हैं।'"

"भंते, जब किसी भिक्षु के दोष नष्ट हो जाते हैं, तो उसे ये दस शक्तियाँ प्राप्त होती हैं, जिनके कारण वह दोषों के नाश होने का दावा कर सकता है: 'मेरे दोष नष्ट हो गए हैं।'"

वी. उपाली [2119]

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

91 जो कामुक सुखों का आनंद लेता है 2120 (कामभोगी)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका के उद्यान में निवास कर रहे थे। तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा: [177]

गृहस्थ, संसार में दस प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हैं। वे दस कौन से हैं? 2121

[I. व्याख्या]

[ए. जो लोग अधार्मिक तरीके से धन की प्राप्ति करते हैं]

(1) "हे गृहस्थ, यहाँ जो व्यक्ति इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, वह अन्यायपूर्वक, हिंसा द्वारा धन की प्राप्ति करता है। ऐसा करने के बाद, वह स्वयं को प्रसन्न और संतुष्ट नहीं करता, न ही वह धन का बंटवारा करता है और न ही पुण्य कर्म करता है।"

(2) "कोई दूसरा व्यक्ति जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, वह हिंसा द्वारा अधर्मी ढंग से धन की प्राप्ति करता है। ऐसा करने के बाद, वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न करता है, परन्तु वह धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता।"

(3) "और फिर एक और व्यक्ति जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, वह हिंसा द्वारा अधर्मी ढंग से धन की खोज करता है। ऐसा करने के बाद, वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न करता है, और वह धन का बंटवारा करता है और पुण्य कर्म करता है।"

[ख. वे लोग जो धार्मिक और अधार्मिक दोनों तरीकों से धन की प्राप्ति करते हैं]

(4) "इसके बाद, हे गृहस्थ, जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, वह धार्मिक और अधार्मिक दोनों तरीकों से, हिंसा से और बिना हिंसा के धन की खोज करता है। ऐसा करने के बाद, वह स्वयं को प्रसन्न और संतुष्ट नहीं करता; न ही वह धन का बंटवारा करता है और न ही पुण्य कर्म करता है।"

(5) "कोई दूसरा व्यक्ति जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, वह धार्मिक और अधार्मिक दोनों तरीकों से, हिंसा से और बिना हिंसा के धन की खोज करता है। ऐसा करने के बाद, वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न करता है, परन्तु वह धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता।"

(6) "और फिर भी कोई दूसरा व्यक्ति जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, वह धार्मिक और अधार्मिक दोनों तरीकों से, हिंसा से और बिना हिंसा के धन की खोज करता है। ऐसा करने के बाद, वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न करता है, और वह धन का बंटवारा करता है और पुण्य कर्म करता है।"

[सी. वे लोग जो धार्मिक रूप से धन की प्राप्ति करते हैं]

(7) "इसके बाद, हे गृहस्थ, जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, वह बिना हिंसा के धार्मिक रूप से धन की खोज करता है। ऐसा करने के बाद, वह स्वयं को प्रसन्न और संतुष्ट नहीं करता, न ही वह धन का बंटवारा करता है और न ही पुण्य कर्म करता है।"

(8) "कोई दूसरा व्यक्ति जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, वह हिंसा रहित, उचित तरीके से धन की खोज करता है। ऐसा करने के बाद, [178] वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न करता है, परन्तु वह धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता।

(9) "फिर भी एक और व्यक्ति जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, वह उचित तरीके से, बिना हिंसा के धन की खोज करता है। ऐसा करने के बाद, वह स्वयं को प्रसन्न और संतुष्ट करता है, और वह धन का बंटवारा करता है और पुण्य कर्म करता है। लेकिन वह अपने धन का उपयोग उससे बंधे हुए, उसके प्रति आसक्त और उसमें अंधाधुंध लीन रहते हुए करता है, उसमें निहित खतरे को नहीं देखता और उससे बचने के मार्ग को नहीं समझता।"

(10) "और फिर भी एक और व्यक्ति जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, वह उचित तरीके से, बिना हिंसा के धन की खोज करता है। ऐसा करके वह स्वयं को प्रसन्न और संतुष्ट करता है, और वह धन का बंटवारा करता है और पुण्य कर्म करता है। और वह अपने धन का उपयोग उससे बंधे बिना, उसके प्रति आसक्त हुए बिना, और उसमें अंधाधुंध लीन हुए बिना करता है, उसमें निहित खतरे को देखते हुए और उससे बचने का रास्ता समझते हुए..."

[II. मूल्यांकन]

[ए. जो लोग अधार्मिक तरीके से धन की प्राप्ति करते हैं]

(1) जो व्यक्ति इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, अन्यायपूर्वक, हिंसा द्वारा धन अर्जित करता है, अपने आप को सुखी और प्रसन्न नहीं रखता, धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता, उसकी तीन आधारों पर आलोचना की जा सकती है। पहला आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह अन्यायपूर्वक, हिंसा द्वारा धन अर्जित करता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह अपने आप को सुखी और प्रसन्न नहीं रखता। तीसरा आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता। इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले इस व्यक्ति की इन तीन आधारों पर आलोचना की जा सकती है।

(2) जो व्यक्ति इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हुए अन्यायपूर्वक, हिंसा द्वारा धन अर्जित करता है और स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है, परन्तु धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता, उसकी दो आधारों पर आलोचना की जा सकती है और एक आधार पर प्रशंसा की जा सकती है। पहला आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह अन्यायपूर्वक, हिंसा द्वारा धन अर्जित करता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है, वह यह है कि वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता। इस इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले व्यक्ति की इन दो आधारों पर आलोचना की जा सकती है और इस एक आधार पर प्रशंसा की जा सकती है।

(3) जो व्यक्ति इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हुए अन्यायपूर्वक, हिंसा द्वारा धन अर्जित करता है, और स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है, और धन का बंटवारा करता है तथा पुण्य कर्म करता है, उसकी एक आधार पर आलोचना की जा सकती है और दो आधारों पर प्रशंसा की जा सकती है। जिस आधार पर उसकी आलोचना की जा सकती है वह यह है कि वह अन्यायपूर्वक, हिंसा द्वारा धन अर्जित करता है। जिस आधार पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है। जिस आधार पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह धन का बंटवारा करता है और पुण्य कर्म करता है। इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले इस व्यक्ति की इस एक आधार पर आलोचना की जा सकती है और इन दो आधारों पर प्रशंसा की जा सकती है।

[ख. वे लोग जो धार्मिक और अधार्मिक दोनों प्रकार से धन की प्राप्ति करते हैं]

(4) "फिर, गृहस्थ, जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है और धार्मिक और अधार्मिक दोनों तरीकों से, हिंसा और बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है, और स्वयं को सुखी और संतुष्ट नहीं रखता, और धन का बंटवारा नहीं करता तथा पुण्य कर्म नहीं करता, उसकी एक आधार पर प्रशंसा की जा सकती है और तीन आधारों पर आलोचना की जा सकती है। केवल एक आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है, वह यह है कि वह धार्मिक और बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है। पहला आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह अधार्मिक और हिंसा के द्वारा धन की प्राप्ति करता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह स्वयं को सुखी और संतुष्ट नहीं रखता। तीसरा आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता। इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले इस व्यक्ति की इस एक आधार पर प्रशंसा की जा सकती है और इन तीन आधारों पर आलोचना की जा सकती है।"

(5) "इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाला व्यक्ति, जो धार्मिक और अधार्मिक दोनों तरीकों से, हिंसा से और बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है, और स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है, परन्तु धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता, उसकी दो आधारों पर प्रशंसा और दो आधारों पर आलोचना की जा सकती है। पहला आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है, वह यह है कि वह धार्मिक रूप से, बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है। पहला आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह अधार्मिक रूप से, हिंसा द्वारा धन की प्राप्ति करता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है, वह यह है कि वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता। [180] इस इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले व्यक्ति की इन दो आधारों पर प्रशंसा और इन दो आधारों पर आलोचना की जा सकती है।

(6) "इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाला व्यक्ति, जो धार्मिक और अधार्मिक दोनों तरीकों से, हिंसा और बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है, और स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है, धन का बंटवारा करता है और पुण्य कर्म करता है, उसकी तीन आधारों पर प्रशंसा की जा सकती है और एक आधार पर आलोचना की जा सकती है। पहला आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है, वह यह है कि वह धार्मिक और बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है, वह यह है कि वह अधार्मिक और हिंसा के द्वारा धन की प्राप्ति करता है। तीसरा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है, वह यह है कि वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है। तीसरा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है, वह यह है कि वह धन का बंटवारा करता है और पुण्य कर्म करता है। इस इंद्रिय सुख का आनंद लेने वाले व्यक्ति की इन तीनों आधारों पर प्रशंसा की जा सकती है और इस एक आधार पर आलोचना की जा सकती है।"

[सी. वे लोग जो धार्मिक रूप से धन की प्राप्ति करते हैं]

(7) "फिर, गृहस्थ, जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेता है, धार्मिक रूप से, बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है, अपने आप को सुख-सुविधाओं से वंचित रखता है, धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता, उसकी एक आधार पर प्रशंसा की जा सकती है और दो आधारों पर आलोचना की जा सकती है। पहला आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है, वह यह है कि वह धार्मिक रूप से, बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है। पहला आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह अपने आप को सुख-सुविधाओं से वंचित रखता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है, वह यह है कि वह धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता। इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले इस व्यक्ति की इस एक आधार पर प्रशंसा की जा सकती है और इन दो आधारों पर आलोचना की जा सकती है।"

(8) "इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाला वह व्यक्ति जो धार्मिक रूप से, बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है और स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है, परन्तु धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता, उसकी दो आधारों पर प्रशंसा की जा सकती है और एक आधार पर आलोचना की जा सकती है। पहला आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह धार्मिक रूप से, बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है। एक आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है वह यह है कि वह धन का बंटवारा नहीं करता और पुण्य कर्म नहीं करता। इस इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले व्यक्ति की इन दो आधारों पर प्रशंसा की जा सकती है और इस एक आधार पर आलोचना की जा सकती है।"

(9) "इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाला वह व्यक्ति जो धार्मिक रूप से, बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है, स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है, धन का बंटवारा करता है और पुण्य कर्म करता है, परन्तु यदि वह धन का उपयोग उससे बंधे हुए, उसके मोह में डूबे हुए और उसमें अंधाधुंध लीन होकर करता है, उसमें निहित खतरे को नहीं देखता और उससे बचने का मार्ग नहीं समझता— उसकी तीन आधारों पर प्रशंसा की जा सकती है और एक आधार पर आलोचना की जा सकती है। पहला आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह धार्मिक रूप से, बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है। तीसरा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह धन का बंटवारा करता है और पुण्य कर्म करता है। एकमात्र आधार जिस पर उसकी आलोचना की जा सकती है वह यह है कि वह धन का उपयोग उससे बंधे हुए, उसके मोह में डूबे हुए और उसमें अंधाधुंध लीन होकर करता है, उसमें निहित खतरे को नहीं देखता और उससे बचने का मार्ग नहीं समझता। इस इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले व्यक्ति की इन तीन आधारों पर प्रशंसा की जा सकती है और इस एक आधार पर आलोचना की जा सकती है।"

(10) "इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाला वह व्यक्ति जो धार्मिक रूप से, बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है, और स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है, और धन का बंटवारा करता है, और पुण्य कर्म करता है, और धन का उपयोग उससे बंधे बिना, उसके प्रति आसक्ति में न होकर, और उसमें अंधाधुंध लीन हुए बिना करता है, उसमें निहित खतरे को देखकर और उससे बचने का मार्ग समझकर — उसकी चार आधारों पर प्रशंसा की जा सकती है। पहला आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह धार्मिक रूप से, बिना हिंसा के धन की प्राप्ति करता है। दूसरा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है। तीसरा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह धन का बंटवारा करता है और पुण्य कर्म करता है। चौथा आधार जिस पर उसकी प्रशंसा की जा सकती है वह यह है कि वह धन का उपयोग उससे बंधे बिना, उसके प्रति आसक्ति में न होकर, और उसमें अंधाधुंध लीन हुए बिना करता है, उसमें निहित खतरे को देखकर और उससे बचने का मार्ग समझकर। इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले इस व्यक्ति की इन चारों आधारों पर प्रशंसा की जा सकती है।"

[निष्कर्ष}

"हे गृहस्थ, ये दस प्रकार के व्यक्ति हैं जो संसार में विद्यमान इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हैं। इन दस में से, [182] सबसे श्रेष्ठ, सबसे अच्छा, सबसे प्रमुख, सबसे श्रेष्ठ और सबसे उत्तम वह है जो इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हुए, बिना हिंसा के, धार्मिक रूप से धन की प्राप्ति करता है और उसे प्राप्त करके स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है; और धन का बंटवारा करता है तथा पुण्य कर्म करता है; और

उस धन का उपयोग उससे बंधे बिना, उसके प्रति आसक्त हुए बिना, और उसमें अंधाधुंध लीन हुए बिना करता है, क्योंकि वह उसमें निहित खतरे को जानता है और उससे बचने का मार्ग समझता है। जैसे गाय से दूध निकलता है, दूध से दही, दही से मक्खन, मक्खन से घी और घी से मलाई निकलती है, जो इन सब में श्रेष्ठ मानी जाती है, उसी प्रकार, इन दस प्रकार के इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले व्यक्तियों में सबसे श्रेष्ठ, सबसे अच्छा, सबसे प्रमुख, सबसे श्रेष्ठ और सबसे उत्तम वह है जो धार्मिक रूप से, बिना हिंसा के, धन की प्राप्ति करता है और उसे प्राप्त करके स्वयं को सुखी और प्रसन्न रखता है; और धन का बंटवारा करता है तथा पुण्य कर्म करता है; और वह उस धन का उपयोग उससे बंधे बिना, उसके प्रति आसक्त हुए बिना और उसमें अंधाधुंध लीन हुए बिना करता है, उसमें निहित खतरे को देखते हुए और उससे बचने का रास्ता समझते हुए करता है।"

---

92 खतरे [2122] (भया)

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"गृहस्थ, जब एक श्रेष्ठ शिष्य पाँचों विपत्तियों और शत्रुताओं का निवारण कर लेता है, सात जन्मों के चार गुण प्राप्त कर लेता है, और श्रेष्ठ विधि को स्पष्ट रूप से देख और उसमें पूर्णतः पारंगत कर लेता है, तो वह चाहे तो अपने बारे में यह घोषणा कर सकता है: 'मैं नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के क्षेत्र से मुक्त हो चुका हूँ; दुख के लोक, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्त हो चुका हूँ; मैं सात जन्मों के बाद जीवन में प्रवेश करने वाला (सोतपत्ति) हूँ, अब निम्न लोक में पुनर्जन्म के अधीन नहीं हूँ, नियति में स्थिर हूँ, ज्ञानोदय की ओर अग्रसर हूँ।'"

"वे पाँच विपत्तियाँ और शत्रुताएँ क्या हैं जिनका निवारण हो गया है? [183] (1) गृहस्थ, जो जीवन का विनाश करता है, जीवन के विनाश को शर्त बनाकर वर्तमान जीवन और भविष्य के जीवन से संबंधित विपत्तियाँ और शत्रुताएँ उत्पन्न करता है, और वह मानसिक पीड़ा और निराशा का भी अनुभव करता है। जो जीवन के विनाश से परहेज करता है, वह न तो वर्तमान जीवन से संबंधित ऐसी विपत्तियाँ और शत्रुताएँ उत्पन्न करता है और न ही भविष्य के जीवन से संबंधित ऐसी विपत्तियाँ और शत्रुताएँ उत्पन्न करता है, और न ही वह मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव करता है। इस प्रकार, जो जीवन के विनाश से परहेज करता है, उसके लिए वह विपत्ति और शत्रुता समाप्त हो जाती है।"

(2) जो बिना दी हुई वस्तु लेता है... (3) जो यौन दुराचार में लिप्त होता है... (4) जो झूठ बोलता है... (5) जो शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन करता है, जो आलस्य का आधार हैं, और शराब, मदिरा और मादक पदार्थों का सेवन एक शर्त के रूप में करता है, वह वर्तमान जीवन और भविष्य के जीवन में भी खतरे और शत्रुता उत्पन्न करता है, और उसे मानसिक पीड़ा और निराशा का भी अनुभव होता है। जो शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से परहेज करता है, जो आलस्य का आधार हैं, वह वर्तमान जीवन या भविष्य के जीवन में ऐसे खतरे और शत्रुता उत्पन्न नहीं करता है, और न ही उसे मानसिक पीड़ा और निराशा का अनुभव होता है। जो शराब, मदिरा और मादक पदार्थों से परहेज करता है, जो आलस्य का आधार हैं, उसके लिए वह खतरा और शत्रुता इस प्रकार समाप्त हो जाती है। "ये पाँच खतरे और शत्रुताएँ हैं जो समाप्त हो गई हैं।"

और वे कौन से चार कारक हैं जो उन्हें धारा-प्रवेश (सात पुनर्जन्म, सोतपत्ति) प्रदान करते हैं? (6) यहाँ, गृहस्थ, एक श्रेष्ठ शिष्य बुद्ध में इस प्रकार अटूट विश्वास रखता है: "भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, भाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।" (7) वह धम्म में इस प्रकार अटूट विश्वास रखता है: "धम्म की व्याख्या भगवान (बुद्ध) द्वारा अच्छी तरह से की गई है, प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देती है, तात्कालिक है, देखने के लिए आमंत्रित करती है, लागू करने योग्य है, बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव की जानी है।" (8) वह संघ में इस प्रकार अटूट विश्वास रखता है: "भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का संघ अच्छे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, सीधे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, सच्चे मार्ग का अभ्यास कर रहा है, उचित मार्ग का अभ्यास कर रहा है; अर्थात्, चार युग्मों के व्यक्ति, आठ प्रकार के व्यक्ति—भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का यह संघ दान के योग्य, आतिथ्य के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है। (9) वह श्रेष्ठ लोगों द्वारा प्रिय सद्गुणी आचरण से युक्त है, [184] अटूट,

दोषरहित, बेदाग, निर्मल, मुक्तिदायक, बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, अगोचर, समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाला। ये वे चार कारक हैं जो धारा-प्रवेश (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के रूप में उसमें विद्यमान हैं।

और वह श्रेष्ठ विधि क्या है जिसे उसने स्पष्ट रूप से देखा है और पन्ना (दिव्य ज्ञान) से पूर्णतः भेद लिया है? 2123 (10) हे गृहस्थ, श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'जब यह विद्यमान होता है, तब वह विद्यमान होता है; इसके उत्पन्न होने पर वह विद्यमान होता है। जब यह विद्यमान नहीं होता, तब वह विद्यमान नहीं होता; इसके समाप्त होने पर वह समाप्त हो जाता है। अर्थात्, अज्ञान को शर्त मानकर व्यक्ति का चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) उत्पन्न होता है; अपने गुणों (संस्कार/संस्कार) को शर्त मानकर चेतना उत्पन्न होती है; चेतना को शर्त मानकर मन (नाम) और रूप (शरीर) उत्पन्न होते हैं; मन (नाम) और रूप (शरीर) को शर्त मानकर छह इंद्रिय क्षेत्र उत्पन्न होते हैं; छह इंद्रिय क्षेत्रों को शर्त मानकर स्पर्श उत्पन्न होता है; स्पर्श को शर्त मानकर संवेदना (वेदना) उत्पन्न होती है; संवेदना (वेदना) को शर्त मानकर तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) उत्पन्न होती है; तृष्णा (तन्हा/तृष्णा) को शर्त मानकर आसक्ति उत्पन्न होती है; आसक्ति को शर्त मानकर, अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण); अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की स्थिति में पुनर्जन्म; पुनर्जन्म की स्थिति में वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा उत्पन्न होती है। यही इस समस्त दुःख का मूल है।

लेकिन शेष बचे हुए अंशों के क्षीण होने और अज्ञान के समाप्त होने के साथ ही व्यक्ति के संस्कारों का भी अंत हो जाता है; संस्कारों के समाप्त होने से चेतना का अंत हो जाता है; चेतना के समाप्त होने से नाम और शरीर का अंत हो जाता है; नाम और शरीर के समाप्त होने से छह इंद्रियों का अंत हो जाता है; छह इंद्रियों के समाप्त होने से संपर्क का अंत हो जाता है; संपर्क के समाप्त होने से वेदना का अंत हो जाता है; वेदना के समाप्त होने से तृष्णा का अंत हो जाता है; तृष्णा के समाप्त होने से आसक्ति का अंत हो जाता है; आसक्ति के समाप्त होने से अस्तित्व का अंत हो जाता है (पुनर्जन्म का कारण); अस्तित्व के समाप्त होने से पुनर्जन्म का अंत हो जाता है; पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा का अंत हो जाता है। इस प्रकार दुखों के इस संपूर्ण समूह का अंत हो जाता है।

"यह वह श्रेष्ठ विधि है जिसे उन्होंने स्पष्ट रूप से देखा है और पन्ना (दिव्य ज्ञान) से पूरी तरह से भेद दिया है।"

"हे गृहस्थ, जब एक श्रेष्ठ शिष्य इन पाँचों विपत्तियों और शत्रुताओं को दूर कर लेता है, और उसमें सात जन्मों के चार गुण (सोतपत्ति) होते हैं, और वह इस श्रेष्ठ विधि को स्पष्ट रूप से देख लेता है और इसमें पूर्णतः पारंगत हो जाता है (पन्न ज्ञान), तो वह चाहे तो अपने बारे में यह कह सकता है: 'मैं नरक, पशु जगत और पीड़ित आत्माओं के लोक से मुक्त हो चुका हूँ; दुख के लोक, बुरे गंतव्य, निम्न लोक से मुक्त हो चुका हूँ; मैं सात जन्मों का स्वामी (सोतपत्ति) हूँ, अब निम्न लोक में पुनर्जन्म का पात्र नहीं हूँ, नियति में स्थिर हूँ, ज्ञान की ओर अग्रसर हूँ।"

---

93 क्या दृष्टिकोण (किमदित्थिका)

एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन में, अनाथपिंडिका के उद्यान में निवास कर रहे थे। तब गृहस्थ अनाथपिंडिका भगवान (बुद्ध) के दर्शन के लिए दोपहर में ही सावत्थी से निकल पड़े। तब उनके मन में यह विचार आया: "यह भगवान (बुद्ध) के दर्शन का उचित समय नहीं है, जो एकांत में हैं, न ही आदरणीय भिक्षुओं के दर्शन का, जो स्वयं भी एकांत में हैं। मुझे अन्य संप्रदायों के तपस्वियों के उद्यान में चलना चाहिए।"

फिर गृहस्थ अनाथपिंडिका अन्य संप्रदायों के तपस्वियों के उद्यान में गए। उस समय अन्य संप्रदायों के तपस्वी एकत्रित थे और शोर मचा रहे थे, वे जोर-जोर से निरर्थक विषयों पर चर्चा कर रहे थे। तपस्वियों ने दूर से गृहस्थ अनाथपिंडिका को आते देखा और एक-दूसरे को चुप कराया: "महोदय, शांत हो जाइए। महोदय, शोर न कीजिए। गृहस्थ अनाथपिंडिका आ रहे हैं, जो तपस्वी गौतम के शिष्य हैं, और उनके श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ शिष्यों में से एक हैं, जो सावत्थी में निवास करते हैं। ये पूजनीय साधु शांतिप्रिय हैं, शांति में अनुशासित हैं और शांति की प्रशंसा करते हैं। शायद यदि वे हमारी सभा को शांत पाएंगे, तो वे हमारे पास आने का विचार करेंगे।" तब अन्य संप्रदायों के तपस्वी शांत हो गए।

तब गृहस्थ अनाथपिंडिका उन तपस्वियों के पास गए और उनसे अभिवादन किया। जब उन्होंने अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त कर ली, तो वे एक तरफ बैठ गए। तब तपस्वियों ने उनसे कहा:

"हे गृहस्थ, हमें बताइए कि तपस्वी गौतम का क्या मत है?"

"भंते, मुझे भगवान (बुद्ध) का संपूर्ण दृष्टिकोण नहीं पता।"

"तो, गृहस्थ, आप कहते हैं कि आप तपस्वी गौतम के दृष्टिकोण को पूरी तरह से नहीं जानते। तो हमें बताइए, भिक्षुओं का दृष्टिकोण क्या है?"

"भंते, मुझे भी भिक्षुओं का पूरा दृष्टिकोण नहीं पता है।"

"तो, गृहस्थ, आप कहते हैं कि आप तपस्वी गौतम के दृष्टिकोण को पूरी तरह से नहीं जानते और न ही भिक्षुओं के दृष्टिकोण को पूरी तरह से जानते हैं। तो हमें बताइए, आपका दृष्टिकोण क्या है?"

"भंते, मेरे लिए अपना दृष्टिकोण समझाना मुश्किल नहीं है। लेकिन पहले आप अपना दृष्टिकोण समझाइए। उसके बाद मेरे लिए अपना दृष्टिकोण समझाना आसान हो जाएगा।"

जब यह कहा गया, तो एक तपस्वी ने गृहस्थ अनाथपिंडिका से कहा: (1) "'संसार शाश्वत है; यही सत्य है, इसके अतिरिक्त सब कुछ असत्य है': यही मेरा मत है, गृहस्थ।" (2) दूसरे तपस्वी ने कहा: "'संसार शाश्वत नहीं है; यही सत्य है, इसके अतिरिक्त सब कुछ असत्य है': यही मेरा मत है, गृहस्थ।" (3)— (4) एक और ने कहा: "'संसार सीमित है'... 'संसार अनंत है'... (5)— (6) 'आत्मा और शरीर एक ही हैं'... 'आत्मा एक है, शरीर दूसरी'... (7)— (10) 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान रहते हैं'... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान नहीं रहते'... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी रहते हैं और विद्यमान नहीं भी रहते'... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान रहते हैं और न ही विद्यमान नहीं रहते'; केवल यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी गलत है: यही मेरा मत है, गृहस्थ।" 2124

यह सुनकर गृहस्थ अनाथपिंडिका ने उन तपस्वियों से कहा, "भंते, इस पूज्यवर ने ऐसा कहा है: संसार शाश्वत है; यही सत्य है, इसके अतिरिक्त कुछ भी असत्य है": यही मेरा मत है, [187] गृहस्थ।" उनका यह मत उनकी स्वयं की लापरवाही से उत्पन्न हुआ है या उन्होंने इसे किसी और के कथन से सीखा है। अब यह मत अस्तित्व में आया है और सीखा है, आत्म-जागरूकता का परिणाम है, आश्रितता से उत्पन्न हुआ है। परन्तु जो कुछ भी अस्तित्व में आया है और सीखा है, आत्म-जागरूकता का परिणाम है, आश्रितता से उत्पन्न हुआ है, वह क्षणभंगुर है। जो कुछ भी क्षणभंगुर है, वह दुख है। वह केवल दुख से ही आसक्त है और उसे ही थामे हुए है।

"भंते, उस [दूसरे] पूज्यवर ने ऐसा कहा: 'संसार नश्वर है; यही सत्य है, इसके अतिरिक्त कुछ भी असत्य है: यही मेरा मत है, हे गृहस्थ।' उनका यह मत भी उनकी अपनी लापरवाही से उत्पन्न हुआ है या उन्होंने किसी और के कथन से सीखा है (संक्षिप्त)। अब यह मत अस्तित्व में आ गया है और यह सीखा हुआ व्यवहार (संक्षिप्त) है, जो आत्म-जागरूकता का परिणाम है, और आश्रितता से उत्पन्न हुआ है। परन्तु जो कुछ भी अस्तित्व में आया है और सीखा हुआ (संक्षिप्त) है, जो आत्म-जागरूकता का परिणाम है, आश्रितता से उत्पन्न हुआ है, वह क्षणभंगुर है। जो कुछ भी क्षणभंगुर है, वह दुख है। वह केवल दुख से ही आसक्त है और उसी से जुड़ा हुआ है।"

"भंते, इस पूज्यवर ने ऐसा कहा: 'संसार सीमित है'... 'संसार अनंत है'... 'आत्मा और शरीर एक ही हैं'... 'आत्मा एक है, शरीर दूसरी'... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान रहते हैं'... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान नहीं रहते'... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी रहते हैं और विद्यमान नहीं भी रहते'... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान रहते हैं और न ही विद्यमान नहीं रहते'; केवल यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी गलत है: यही मेरा मत है, गृहस्थ।" उसका यह विचार भी उसकी अपनी लापरवाही या किसी और के कथन से सीखा हुआ है। अब यह विचार अस्तित्व में आ गया है और यह एक सीखा हुआ व्यवहार (संक्षिप्तम) है, जो आत्म-जागरूकता का परिणाम है और आश्रित रूप से उत्पन्न हुआ है। लेकिन जो कुछ भी अस्तित्व में आया है और सीखा हुआ व्यवहार (संक्षिप्तम) है, जो आत्म-जागरूकता का परिणाम है और आश्रित रूप से उत्पन्न हुआ है, वह क्षणभंगुर है। जो कुछ भी क्षणभंगुर है, वह दुख है। वह केवल दुख से ही आसक्त है और उसे ही थामे हुए है। [188]

यह सुनकर उन तपस्वियों ने गृहस्थ अनाथपिंडिका से कहा, "हे गृहस्थ, हम सबने अपने-अपने विचार स्पष्ट कर दिए हैं। अब आप भी अपना विचार बताइए।"

"भंते, जो कुछ भी अस्तित्व में आया है और सीखा हुआ व्यवहार (संखत्तम) है, जो आत्म-जागरूकता का परिणाम है, आश्रित रूप से उत्पन्न है, वह क्षणभंगुर है। जो कुछ भी क्षणभंगुर है, वह दुख है। जो कुछ भी दुख है, वह मेरा नहीं है; मैं यह नहीं हूँ; यह मेरा स्व नहीं है। यही मेरा दृष्टिकोण है।"

"हे गृहस्थ, जो कुछ भी अस्तित्व में आया है और जो कुछ सीखा हुआ व्यवहार (संखट्टम) है, जो आत्म-जागरूकता का परिणाम है, आश्रितता से उत्पन्न हुआ है, वह क्षणभंगुर है। जो कुछ भी क्षणभंगुर है, वह दुख है। तुम केवल उसी दुख से आसक्त हो और उसे थामे हुए हो।"

"भंते, जो कुछ भी अस्तित्व में आया है और जो सीखा हुआ व्यवहार (संखत्तम) है, जो आत्म-जागरूकता का परिणाम है, आश्रित रूप से उत्पन्न है, वह क्षणभंगुर है। जो कुछ भी क्षणभंगुर है, वह दुख है। सही पन्ना (दिव्य ज्ञान) से दुख को उसके वास्तविक स्वरूप में स्पष्ट रूप से देखकर, मैं समझता हूँ: 'यह मेरा नहीं है; मैं यह नहीं हूँ; यह मेरा स्वरूप नहीं है।' मैं इसे उसके वास्तविक स्वरूप में ही समझता हूँ और इससे बचने का श्रेष्ठ उपाय समझता हूँ।"

यह सुनकर वे तपस्वी चुपचाप, व्याकुल, झुके हुए, उदास और मौन बैठे रहे। तब गृहस्थ अनाथपिंडिका ने यह समझकर कि वे तपस्वी मौन और मौन बैठे हैं, अपने आसन से उठकर भगवान (बुद्ध) के पास गए। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उन तपस्वियों के साथ हुई अपनी सारी बातचीत भगवान (बुद्ध) को बताई।

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "अच्छा, अच्छा, गृहस्थ! इसी प्रकार उन खोखले लोगों को समय-समय पर तर्कपूर्ण तर्कों से पूर्णतः खंडित किया जाना चाहिए।" 2125 तब भगवान (बुद्ध) ने गृहस्थ अनाथपिंडिका को धर्मोपदेश दिया, प्रोत्साहित किया, प्रेरित किया और प्रसन्न किया। फिर, जब गृहस्थ अनाथपिंडिका को भगवान (बुद्ध) द्वारा धर्मोपदेश दिया गया, प्रोत्साहित किया गया, प्रेरित किया गया और प्रसन्न किया गया, [189] तो वह अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और प्रस्थान किया।

फिर, गृहस्थ अनाथपिंडिका के चले जाने के कुछ ही समय बाद, भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु, यहाँ तक कि वह भी जिसने इस धम्म और अनुशासन में सौ वर्षों तक दीक्षा ली हो, अन्य संप्रदायों के तपस्वियों का तर्कपूर्ण ढंग से खंडन करना चाहे, तो वह उनका खंडन उसी प्रकार करेगा जैसे गृहस्थ अनाथपिंडिका ने किया है।"

---

94 वज्जीयमहाता

एक बार भगवान (बुद्ध) चंपा में गग्गर कमल तालाब के किनारे निवास कर रहे थे। तब गृहस्थ वज्जीयामहित दोपहर में भगवान (बुद्ध) के दर्शन के लिए चंपा से निकले। तब उनके मन में यह विचार आया: "यह भगवान (बुद्ध) के दर्शन का उचित समय नहीं है, जो एकांतवास में हैं, न ही आदरणीय भिक्षुओं के दर्शन का, जो स्वयं भी एकांतवास में हैं। मुझे अन्य संप्रदायों के तपस्वियों के उद्यान में जाना चाहिए।"

तब गृहस्थ वज्जीयामहित अन्य संप्रदायों के तपस्वियों के उद्यान में गया . . . [सभी 10:93 के अनुसार] [190] .

तब गृहस्थ वज्जीयामहित उन संन्यासियों के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए। तब संन्यासियों ने उनसे कहा:

"हे गृहस्थ, क्या यह सच है कि जैसा कहा जाता है, तपस्वी गौतम सभी तपस्याओं की आलोचना करते हैं और कठोर एवं तपस्वी जीवन जीने वाले सभी लोगों की निर्विरोध निंदा और आलोचना करते हैं?"

नहीं, भंते, भगवान (बुद्ध) सभी तपस्याओं की आलोचना नहीं करते और न ही वे कठोर एवं तपस्वी जीवन जीने वाले सभी लोगों की बिना शर्त निंदा और निंदा करते हैं। भगवान (बुद्ध) आलोचना के योग्य बातों की आलोचना करते हैं और प्रशंसा के योग्य बातों की

प्रशंसा करते हैं। आलोचना के योग्य बातों की आलोचना और प्रशंसा के योग्य बातों की प्रशंसा करके, भगवान (बुद्ध) भेदों के आधार पर बोलते हैं; वे ऐसे मामलों पर एकतरफा बात नहीं करते। 2126

जब यह कहा गया, तो एक तपस्वी ने गृहस्थ वज्जीयामहित से कहा: "एक क्षण रुकिए, गृहस्थ! जिस तपस्वी गौतम की आप प्रशंसा कर रहे हैं, वह एक उन्मूलनवादी हैं जो निश्चित घोषणाएँ करने से परहेज करते हैं।"

"मैं उस मुद्दे पर भी विचार करूँगा, भंते। भगवान (बुद्ध) ने सही कहा है: 'यह लाभकारी (कुशल) है' और 'यह हानिकारक (अकुशल) है।' अतः, जब वे लाभकारी (कुशल) और हानिकारक (अकुशल) का वर्णन करते हैं, तो वे निश्चित कथन करते हैं। वे कोई ऐसे सिद्धांतवादी नहीं हैं जो निश्चित कथन करने से बचते हैं।"

यह सुनकर वे तपस्वी [191] मौन, व्याकुल, झुके हुए, उदास, स्तब्ध और चुप बैठे रहे। तब गृहस्थ वज्जीयामहित ने यह समझकर कि वे तपस्वी मौन और चुप बैठे हैं, अपने आसन से उठकर भगवान (बुद्ध) के पास गए। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और अन्य संप्रदायों के उन तपस्वियों के साथ हुई अपनी सारी बातचीत भगवान (बुद्ध) को बताई।

[भगवान (बुद्ध) ने कहा:] "अच्छा, अच्छा, गृहस्थ! इसी तरह समय-समय पर उन खोखले लोगों का तर्कपूर्ण ढंग से खंडन किया जाना चाहिए।"

(1)—(2) हे गृहस्थ, मैं यह नहीं कहता कि हर प्रकार की तपस्या का अभ्यास किया जाए; न ही मैं यह कहता हूँ कि हर प्रकार की तपस्या का अभ्यास न किया जाए। (3)—(4) मैं यह नहीं कहता कि हर अनुष्ठान का पालन किया जाए; न ही मैं यह कहता हूँ कि हर अनुष्ठान का पालन न किया जाए। (5)—(6) मैं यह नहीं कहता कि हर तरह से प्रयास किया जाए; न ही मैं यह कहता हूँ कि किसी भी तरह से प्रयास न किया जाए। (7)—(8) मैं यह नहीं कहता कि हर प्रकार का त्याग किया जाए; न ही मैं यह कहता हूँ कि किसी भी प्रकार का त्याग न किया जाए। (9)—(10) मैं यह नहीं कहता कि हर प्रकार की मुक्ति प्राप्त की जाए; न ही मैं यह कहता हूँ कि किसी भी प्रकार की मुक्ति प्राप्त न की जाए।

(1)— (2) "हे गृहस्थ, यदि किसी विशेष तपस्या का अभ्यास करने पर अकुशल गुण (धम्म) बढ़ जाते हैं और कुशल गुण घट जाते हैं, तो मैं कहता हूँ कि ऐसी तपस्या का अभ्यास नहीं करना चाहिए। परन्तु यदि किसी विशेष तपस्या का अभ्यास करने पर अकुशल गुण घट जाते हैं और कुशल गुण बढ़ जाते हैं, तो मैं कहता हूँ कि ऐसी तपस्या का अभ्यास करना चाहिए।"

(3)— (4) "हे गृहस्थ, यदि किसी विशेष अनुष्ठान का पालन करने पर अकुशल गुण बढ़ जाते हैं और कुशल गुण घट जाते हैं, तो मैं कहता हूँ कि ऐसे अनुष्ठान का पालन नहीं करना चाहिए। परन्तु यदि किसी विशेष अनुष्ठान का पालन करने पर अकुशल गुण घट जाते हैं और कुशल गुण बढ़ जाते हैं, तो मैं कहता हूँ कि ऐसे अनुष्ठान का पालन करना चाहिए।"

(5)— (6) "हे गृहस्थ, यदि किसी विशेष मार्ग से प्रयास करने पर अकुशल गुण (धम्म) बढ़ते हैं और कुशल गुण (कुशल) घटते हैं, तो मैं कहता हूँ कि ऐसे प्रयास नहीं करने चाहिए। परन्तु यदि किसी विशेष मार्ग से प्रयास करने पर अकुशल गुण (हानिकारक) घटते हैं और कुशल गुण (धम्म) बढ़ते हैं, तो मैं कहता हूँ कि ऐसे प्रयास करने चाहिए।"

(7)—(8) "हे गृहस्थ, यदि किसी वस्तु का त्याग करने पर अकुशल गुण बढ़ जाते हैं और लाभकारी गुण घट जाते हैं, तो मैं कहता हूँ कि ऐसा त्याग नहीं करना चाहिए। परन्तु यदि किसी वस्तु का त्याग करने पर अकुशल गुण घट जाते हैं और लाभकारी गुण बढ़ जाते हैं, तो मैं कहता हूँ कि ऐसा त्याग करना चाहिए।"

(9)— (10) "हे गृहस्थ, यदि किसी विशेष मोक्ष की प्राप्ति पर अकुशल गुण बढ़ जाते हैं और लाभकारी गुण घट जाते हैं, तो मैं कहता हूँ कि ऐसे मोक्ष की प्राप्ति नहीं करनी चाहिए। परन्तु यदि किसी विशेष मोक्ष की प्राप्ति पर अकुशल गुण घट जाते हैं और लाभकारी गुण बढ़ जाते हैं, तो मैं कहता हूँ कि ऐसे मोक्ष की प्राप्ति करनी चाहिए।"

फिर, जब गृहस्थ वज्जीयामहित को भगवान (बुद्ध) द्वारा धर्म प्रवचन से उपदेश, प्रोत्साहन, प्रेरणा और प्रसन्नता प्राप्त हुई, तो वे अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की और चले गए।

फिर, गृहस्थ वज्जीयामहित के चले जाने के कुछ ही समय बाद, भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु, यहाँ तक कि वह भी जिसकी आँखों में इस धम्म और अनुशासन के प्रति लंबे समय से थोड़ी सी भी धूल न हो, अन्य संप्रदायों के तपस्वियों का तर्कपूर्ण खंडन करे, तो वह उनका खंडन ठीक उसी प्रकार करेगा जैसे गृहस्थ वज्जीयामहित ने किया है।" [193]

———————————————————————————

==== 95 उत्तिया

तब तपस्वी उत्तिया भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा:

(1) "यह कैसे है? गुरु गौतम, क्या संसार शाश्वत है? क्या केवल यही सत्य है और बाकी सब कुछ गलत है?"

"उत्तिया, मैंने यह घोषणा नहीं की है: 'संसार शाश्वत है; यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी गलत है।'"

(2) "तो, हे गौतम गुरु, क्या संसार शाश्वत नहीं है? क्या केवल यही सत्य है और बाकी सब कुछ गलत है?"

"उत्तिया, मैंने यह भी घोषित नहीं किया है: 'संसार शाश्वत नहीं है; केवल यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी गलत है।"

(3) — (4) "तो फिर क्या है, हे गौतम जी, क्या संसार सीमित है? ... क्या संसार अनंत है? ... (5)— (6) क्या आत्मा और शरीर एक ही हैं? ... क्या आत्मा एक है और शरीर दूसरी? ... (7)— (10) क्या तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान रहते हैं? ... क्या तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान नहीं रहते? ... क्या तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी हैं और विद्यमान नहीं भी? ... क्या तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान हैं और न ही विद्यमान? क्या केवल यही सत्य है और बाकी सब असत्य है?"

"उत्तिया, मैंने यह भी घोषित नहीं किया है: 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान होते हैं और न ही विद्यमान; यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी असत्य है।'" 2127

जब मैंने आपसे पूछा: 'हे गौतम जी, क्या संसार शाश्वत है? क्या केवल यही सत्य है और बाकी सब असत्य है?' तो आपने कहा: 'उत्तिया, मैंने यह नहीं कहा है कि "संसार शाश्वत है; केवल यही सत्य है, बाकी सब असत्य है।" लेकिन जब मैंने आपसे पूछा: 'तो हे गौतम जी, क्या संसार शाश्वत नहीं है? क्या केवल यही सत्य है और बाकी सब असत्य है?' तो आपने कहा: 'उत्तिया, मैंने यह भी नहीं कहा है कि "संसार शाश्वत नहीं है; केवल यही सत्य है, बाकी सब असत्य है।" जब मैंने आपसे पूछा: 'हे गौतम जी, क्या संसार सीमित है? ... क्या तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान होते हैं और न ही नस्त होते हैं? क्या केवल यही सत्य है और बाकी सब असत्य है?' [194] तो आपने कहा: 'उत्तिया, मैंने यह भी नहीं कहा है कि "तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान होते हैं और न ही नस्त होते हैं; केवल यही सत्य है, बाकी सब असत्य है।" तो फिर, गौतम जी ने क्या कहा है?'

"प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के माध्यम से, हे उत्तिया, मैं अपने शिष्यों को धम्म का उपदेश देता हूँ ताकि प्राणियों का शुद्धिकरण हो, दुःख और विलाप पर विजय प्राप्त हो, पीड़ा और निराशा दूर हो, विधि का ज्ञान हो और निर्वाण की प्राप्ति हो।"

लेकिन जब गुरु गौतम प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) के माध्यम से अपने शिष्यों को प्राणियों के शुद्धिकरण, दुःख और विलाप पर विजय, पीड़ा और निराशा के निवारण, विधि की प्राप्ति और निर्वाण की प्राप्ति के लिए धम्म का उपदेश देते हैं, तो क्या इससे संपूर्ण विश्व मुक्त हो जाएगा, या आधा विश्व, या एक तिहाई विश्व?

जब यह प्रश्न पूछा गया, तो भगवान (बुद्ध) मौन रहे। तब पूज्य आनंद के मन में यह विचार आया: "तपस्वी उत्तिया को यह गलत धारणा नहीं अपनानी चाहिए कि 'जब मैं तपस्वी गौतम से सबसे ऊँचा प्रश्न पूछता हूँ, तो वे हिचकिचाते हैं और उत्तर नहीं देते।' 128 अवश्य ही वे ऐसा करने में असमर्थ हैं।" इससे तपस्वी उत्तिया को लंबे समय तक हानि और कष्ट भोगना पड़ेगा।

तब पूज्य आनंद ने तपस्वी उत्तिया से कहा, "तो फिर, मित्र उत्तिया, मैं तुम्हें एक उपमा देता हूँ। यहाँ कुछ बुद्धिमान लोग उपमा के माध्यम से कही गई बात का अर्थ समझ जाते हैं। मान लो कि एक राजा का एक सीमावर्ती शहर है जिसमें मजबूत प्राचीरें, दीवारें और मेहराब हैं

और केवल एक ही द्वार है। वहाँ तैनात द्वारपाल बुद्धिमान, सक्षम और समझदार होगा; वह अजनबियों को बाहर रखेगा [195] और परिचितों को अंदर आने देगा। जब वह शहर के चारों ओर बने मार्ग पर चल रहा होगा, तो उसे दीवारों में एक भी दरार या छेद दिखाई नहीं देगा, जो इतना छोटा भी न हो कि एक बिल्ली उसमें से निकल सके। उसे यह तो नहीं पता होगा कि कितने जीव शहर में प्रवेश करते हैं या बाहर जाते हैं, लेकिन वह निश्चित रूप से कह सकता है कि जितने भी बड़े जीव शहर में प्रवेश करते हैं या बाहर जाते हैं, वे सभी उसी द्वार से आते-जाते हैं। ठीक उसी प्रकार, मित्र उत्तिया, तथागत (बुद्ध) को इस बात की चिंता नहीं है कि पूरा विश्व मुक्त होगा, या आधा विश्व, या एक तिहाई। लेकिन वह निश्चित रूप से कह सकता है कि वे सभी जो जो लोग संसार से मुक्त हो चुके हैं, या मुक्त हो रहे हैं, या मुक्त होंगे, वे सर्वप्रथम पांच अवरोधों, मन की उन विकृतियों का त्याग करें जो पन्ना (दिव्य ज्ञान) को दुर्बल करती हैं, और फिर, ध्यान (सती) की चार अवस्थाओं में सुस्थापित होकर, ज्ञानोदय के सात कारकों का सही ढंग से विकास करें। इसी प्रकार वे संसार से मुक्त हो चुके हैं, या मुक्त हो रहे हैं, या मुक्त होंगे।

"मित्र उत्तिया, तुमने भगवान (बुद्ध) से वही प्रश्न एक अलग दृष्टिकोण से पूछा जो तुमने पहले ही उनसे पूछा था... 2129 इसलिए भगवान (बुद्ध) ने तुम्हें उत्तर नहीं दिया।" [496]

---

96 कोकानुडा 2330

एक बार पूज्य आनंद राजगृह में गर्म झरनों के उद्यान में निवास कर रहे थे। रात ढलने लगी तो पूज्य आनंद उठे और स्नान करने के लिए गर्म झरनों की ओर चल दिए। स्नान करने के बाद वापस आकर वे एक वस्त्र धारण किए अपने अंगों को सुखा रहे थे। तपस्वी कोकनादा भी रात ढलने लगी तो उठे और स्नान करने के लिए गर्म झरनों की ओर चल दिए। उन्होंने दूर से पूज्य आनंद को देखा और उनसे कहा:

"यहाँ कौन है, दोस्त?"

"मैं एक भिक्षु हूँ, मित्र।"

"मित्र, तुम भिक्षुओं के किस समूह से हो?"

"शाक्य पुत्र का अनुसरण करने वाले तपस्वियों से।"

"यदि आप मेरे प्रश्न का उत्तर देने के लिए समय निकाल सकें, तो मैं आपसे एक विशेष बिंदु के बारे में पूछना चाहूंगा।"

"आप पूछ सकते हैं, मित्र। जब मैं आपका प्रश्न सुनूंगा, तो मुझे पता चल जाएगा कि मैं इसका उत्तर दे सकता हूं या नहीं।"

"महोदय, आप यह कैसे मानते हैं: (1) 'संसार शाश्वत है; केवल यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी गलत है'?"

"मैं ऐसा विचार नहीं रखता, मित्र।"

"तो क्या आप यह विचार रखते हैं: (2) 'संसार शाश्वत नहीं है; केवल यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी गलत है'?"

"मैं ऐसा विचार नहीं रखता, मित्र।"

क्या आप यह विचार रखते हैं: (3)— (4) 'संसार सीमित है' . . . 'संसार अनंत है' . . . (5) -(6) 'आत्मा और शरीर एक ही हैं'

... 'आत्मा एक चीज है, शरीर दूसरी' ... (7)-(10) 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान रहते हैं' ... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान नहीं रहते' ... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी रहते हैं और [197] विद्यमान नहीं भी रहते' ... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान रहते हैं और न ही विद्यमान रहते हैं; केवल यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी गलत है'?

"मैं ऐसा विचार नहीं रखता, मित्र।"

तो क्या ऐसा हो सकता है कि आप न जानते हों और न देखते हों?

"ऐसा नहीं है, मित्र, कि मैं नहीं जानता और नहीं देखता। मैं जानता और देखता हूँ।"

जब मैंने आपसे पूछा: 'महोदय, आप यह कैसे मानते हैं कि "संसार शाश्वत है; यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी असत्य है"?' तो आपने कहा: 'मैं ऐसा नहीं मानता, मित्र।' लेकिन जब मैंने आपसे पूछा: 'तो क्या आप यह मानते हैं कि "संसार शाश्वत नहीं है; यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी असत्य है"?' तो आपने कहा: 'मैं ऐसा नहीं मानता, मित्र।' जब मैंने आपसे पूछा: 'क्या आप यह मानते हैं कि "संसार सीमित है"... "तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान होते हैं और न ही नश्वर; यही सत्य है, इसके अलावा कुछ भी असत्य है"?' तो आपने कहा: 'मैं ऐसा नहीं मानता, मित्र।' फिर जब मैंने आपसे पूछा: 'तो क्या ऐसा हो सकता है कि आप न जानते हों और न देखते हों?' तो आपने कहा: 'ऐसा नहीं है, मित्र, कि मैं न जानता हो और न देखता हो। मैं जानता हूँ और देखता हूँ।' मित्र, इस कथन का अर्थ कैसे समझा जाए?'

"मित्र, 'संसार शाश्वत है; यही सत्य है, इसके अतिरिक्त सब कुछ असत्य है': यह एक काल्पनिक दृष्टिकोण है। 'संसार शाश्वत नहीं है; यही सत्य है, इसके अतिरिक्त सब कुछ असत्य है': यह एक काल्पनिक दृष्टिकोण है। 'संसार सीमित है'... 'संसार अनंत है'... 'आत्मा और शरीर एक ही हैं'... 'आत्मा एक है, शरीर दूसरी'... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान रहते हैं'... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद विद्यमान भी रहते हैं और नहीं भी रहते हैं'... 'तथागत (बुद्ध) मृत्यु के बाद न तो विद्यमान रहते हैं और न ही अस्य रहते हैं; यही सत्य है, इसके अतिरिक्त सब कुछ असत्य है': यह एक काल्पनिक दृष्टिकोण है।"

"मित्र, जहाँ तक काल्पनिक दृष्टिकोण, विचारों का आधार, विचारों की नींव, विचारों के प्रति आसक्ति, विचारों की उत्पत्ति और विचारों के उन्मूलन की बात है, मैं इसे जानता और देखता हूँ। जब मैं इसे जानता और देखता हूँ, तो मुझे यह क्यों कहना चाहिए: 'मैं नहीं जानता और नहीं देखता।' मैं जानता हूँ, मित्र, मैं देखता हूँ।"

"आपका नाम क्या है? और आपके साथी भिक्षु आपको किस नाम से जानते हैं?"

"मेरा नाम आनंद है, और मेरे साथी भिक्षु मुझे आनंद के नाम से जानते हैं।"

"सचमुच, मुझे यह एहसास ही नहीं था कि मैं महान गुरु, पूज्य आनंद से परामर्श कर रहा हूँ! यदि मुझे पता होता कि ये पूज्य आनंद हैं, तो मैं इतना अधिक नहीं बोलता। पूज्य आनंद कृपया मुझे क्षमा करें।"

---

97 उपहार के योग्य (अहुनेय्या)

"दस गुणों से युक्त भिक्षु, दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंट के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य होते हैं; वे संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र हैं।"

कितने दस?

(1) "यहाँ, भिक्षु गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित रहता है, अच्छे आचरण और आश्रय से युक्त रहता है, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों को ग्रहण करके, वह उनमें अभ्यास करता है।"

(2) "उसने बहुत कुछ सीखा है, सीखी हुई बातों को याद रखता है और उन्हें संजोता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में अच्छी हों, मध्य में अच्छी हों और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ [199] और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों — ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से जांचा है और दृष्टि से भली-भांति समझा है।

(3) "उसके अच्छे दोस्त हैं, अच्छे साथी हैं, अच्छे सहपाठी हैं।

(4) "वह सही दृष्टिकोण रखता है और सही परिप्रेक्ष्य रखता है।

(5) "वह अनेक प्रकार की मानसिक शक्तियों (जादू/इद्धि) का प्रयोग करता है: एक होकर वह अनेक हो जाता है; अनेक होकर वह एक हो जाता है; वह प्रकट होता है और लुप्त हो जाता है; वह बिना किसी बाधा के दीवार, प्राचीर, पर्वत से होकर ऐसे गुजरता है मानो अंतरिक्ष में; वह पृथ्वी में ऐसे गोता लगाता है मानो वह जल हो; वह जल पर बिना डूबे ऐसे चलता है मानो वह पृथ्वी हो; पालथी मारकर वह पक्षी की तरह अंतरिक्ष में यात्रा करता है; अपने हाथ से वह इतने शक्तिशाली और बलिष्ठ चंद्रमा और सूर्य को स्पर्श करता है और सहलाता है; वह ब्रह्म जगत तक शरीर पर महारत रखता है।"

(6) "शुद्ध और मानवीय से श्रेष्ठ दिव्य श्रवण तत्व के साथ, वह दोनों प्रकार की ध्वनियों को सुनता है, दिव्य और मानवीय, दूर की ध्वनियों को भी सुनता है।

(7) वह अन्य प्राणियों और व्यक्तियों के मन को समझता है, क्योंकि उसने उन्हें अपने मन से समाहित कर लिया है। वह राग से ग्रस्त मन को राग से ग्रस्त मन के रूप में और राग रहित मन को राग रहित मन के रूप में समझता है; घृणा से ग्रस्त मन को घृणा से ग्रस्त मन के रूप में और घृणा रहित मन को घृणा रहित मन के रूप में समझता है; मोह से ग्रस्त मन को मोह से ग्रस्त मन के रूप में और मोह रहित मन को मोह रहित मन के रूप में समझता है; संकुचित मन को संकुचित और विचलित मन को विचलित मन के रूप में समझता है; उच्च मन को उच्च और निम्न मन को निम्न मन के रूप में समझता है; श्रेष्ठ मन को श्रेष्ठ और श्रेष्ठ न होने योग्य मन को श्रेष्ठ होने योग्य समझता है; समाधि में लीन मन को समाधि में लीन मन के रूप में और एकाग्रताहीन मन को समाधि में लीन मन के रूप में समझता है। असामहिता; मुक्त मन मुक्त ही रहता है और अमुक्त मन अमुक्त ही रहता है। 2137

(8) "वह अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) को याद करता है, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म, तीन जन्म, चार जन्म, [200] पाँच जन्म, दस जन्म, बीस जन्म, तीस जन्म, चालीस जन्म, पचास जन्म, सौ जन्म, हज़ार जन्म, एक लाख जन्म, विश्व-विनाश के अनेक युग, विश्व-विकास के अनेक युग, विश्व-विनाश और विश्व-विकास के अनेक युग, इस प्रकार: 'वहाँ मेरा ऐसा नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु थी; वहाँ से निकलकर, मेरा कहीं और पुनर्जन्म हुआ, और वहाँ भी मेरा ऐसा ही नाम था, मैं ऐसे कुल का था, मेरा ऐसा रूप था, मेरा ऐसा भोजन था, मुझे सुख-दुख का ऐसा अनुभव होता था, मेरी ऐसी आयु थी; वहाँ से निकलकर, मेरा यहाँ पुनर्जन्म हुआ।' इस प्रकार वह अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों को उनके विभिन्न पहलुओं और विवरणों सहित याद करता है।

(9) "ईश्वरीय दृष्टि से, जो शुद्ध और मनुष्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है, वह प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए देखता है, निम्न और उच्च, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली, और वह समझता है कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है: "वे प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से दुराचार किया, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा की, गलत मत रखा और गलत मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं; परन्तु वे प्राणी जिन्होंने शरीर, वाणी और मन से अच्छे आचरण किए, जिन्होंने श्रेष्ठों की निंदा नहीं की, जिन्होंने सही मत रखा और सही मत पर आधारित कर्म किए, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेते हैं।" इस प्रकार, दिव्य दृष्टि से, जो शुद्ध है और मनुष्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है, वह प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए, हीन और श्रेष्ठ, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली देखता है, और वह समझता है कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हश्र होता है।

(10) "दोषों के नाश होने से उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।"

"इन दस गुणों से युक्त भिक्षु दान के योग्य, आतिथ्य सत्कार के योग्य, भेंटों के योग्य, आदरपूर्ण अभिवादन के योग्य और संसार के लिए अतुलनीय पुण्य का क्षेत्र है।"

---

98 एक बुजुर्ग (थेरा संस्कृत स्थिवरा)

दस गुणों से युक्त भिक्षु, एक वरिष्ठ भिक्षु जहाँ कहीं भी निवास करे, सहजता से रहता है। वे दस गुण क्या हैं? (1) वरिष्ठ भिक्षु लंबे समय से संन्यासी हैं। (2) वे गुणी हैं। . . . प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वे उनका अभ्यास करते हैं। (3) उन्होंने बहुत कुछ सीखा है . . . और दृष्टि से अच्छी तरह से पारंगत हैं। (4) दोनों पतिमोक्खों का उन्हें विस्तार से ज्ञान प्राप्त हुआ है, उनका अच्छी तरह से विश्लेषण किया गया है, उन पर अच्छी तरह से महारत हासिल है, नियमों और उनकी विस्तृत व्याख्या के संदर्भ में अच्छी तरह से निर्धारित हैं। (5) वे अनुशासन संबंधी मुद्दों के उद्भव और समाधान में कुशल हैं। (6) वे धम्म (मार्ग) से प्रेम करते हैं और अपने कथनों में मनभावन हैं, धम्म और अनुशासन से संबंधित उच्च आनंद से परिपूर्ण हैं। (7) वे किसी भी प्रकार के वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए दवाओं और भोजन से संतुष्ट हैं। (8) वे आगे बढ़ते और लौटते समय शालीन हैं, और संयमित भी हैं। घरों के बीच बैठे हुए। (9) वह बिना किसी कष्ट या कठिनाई के, अपनी इच्छा से, इस जीवन में ही उच्च मन की चार ध्यान अवस्थाओं (सम्मोहन अवस्थाओं) को प्राप्त कर लेता है, जो सुखद निवास स्थान हैं। (10) दोषों के नाश के साथ, उसने इस जीवन में ही प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। इन दस गुणों से युक्त, एक वरिष्ठ भिक्षु जिस भी स्थान पर रहता है, वहाँ सहजता से रहता है।

---

99 उपाली

तब पूज्य उपली भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए, [202] और कहा: "भंते, मैं जंगलों और वन उपवनों में एकांतवास में जाना चाहता हूँ।"

उपाली, जंगलों और वनों में एकांतवास में रहना कठिन है। एकांत को स्वीकार करना और उसमें आनंद लेना मुश्किल है। जब कोई भिक्षु अकेला होता है, तो जंगल उसके मन को मोह लेते हैं, क्योंकि वह समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त नहीं करता। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि जो कहता है, 'मैं समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त नहीं करता, फिर भी जंगलों और वनों में एकांतवास में रहूँगा,' वह या तो डूब जाएगा या बह जाएगा। 2133

"मान लो, उपाली, एक बड़ी झील है, और सात-आठ हाथियों का एक नर हाथी आता है। वह सोच सकता है: 'चलो इस झील में उतरता हूँ और मजे से अपने कान और पीठ धोता हूँ। मैं नहाऊँगा और पानी पीऊँगा, बाहर आऊँगा और जहाँ चाहूँ वहाँ चला जाऊँगा।' फिर वह झील में उतरता है और मजे से अपने कान और पीठ धोता है। वह नहाता है और पानी पीता है, बाहर आता है और जहाँ चाहूँ वहाँ चला जाता है। ऐसा कैसे? क्योंकि उसका विशाल शरीर गहराई में पैर जमा लेता है।"

फिर एक खरगोश या बिल्ली आती है। वह सोच सकती है: 'एक नर हाथी मुझसे कैसे अलग है? मैं इस झील में उतरूंगा और खूब खेलूंगा, अपने कान और पीठ धोऊंगा। [203] मैं स्नान करूंगा और पानी पीऊंगा, बाहर आऊंगा और जहां चाहूं वहां चला जाऊंगा।' फिर, बिना सोचे-समझे, वह जल्दबाजी में गहरी झील में उतर जाता है। यह उम्मीद की जा सकती है कि वह या तो डूब जाएगा या बह जाएगा। ऐसा क्यों? क्योंकि उसका छोटा शरीर गहराई में पैर नहीं जमा पाता। इसी तरह, यह उम्मीद की जा सकती है कि जो व्यक्ति कहेगा: 'मैं समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त नहीं करता, फिर भी मैं जंगलों और वनों में एकांतवास करूंगा,' वह या तो डूब जाएगा या बह जाएगा।

"मान लीजिए, उपाली नाम का एक छोटा बच्चा पीठ के बल लेटा हुआ अपने ही मूत्र और मल से खेल रहा है। आपको क्या लगता है, क्या यह मनोरंजन का बिल्कुल ही मूर्खतापूर्ण तरीका नहीं है?"

"हां, भंते।"

कुछ समय बाद, जब वह लड़का बड़ा हो जाएगा और उसकी बुद्धि विकसित हो जाएगी, तो वह लड़कों के लिए आम खेल खेलेगा - खिलौने वाले हल, छड़ी वाले खेल, कलाबाजियां, फिरकी वाले खेल, पत्तों से बने नापने वाले खेल, खिलौने वाले रथ, खिलौने वाले धनुष। आपको क्या लगता है, क्या यह मनोरंजन पहले वाले मनोरंजन से कहीं अधिक उत्कृष्ट और श्रेष्ठ नहीं है?

"हां, भंते।"

कुछ समय बाद, जैसे-जैसे वह लड़का बड़ा होता जाता है और उसकी इंद्रियाँ और अधिक परिपक्व होती जाती हैं, वह पाँच प्रकार के इंद्रिय सुखों से परिपूर्ण होकर आनंदित होता है: आँखों से दिखाई देने वाले रूप जो वांछित, मनभावन, सुखद, कामुक सुख से जुड़े और उत्तेजक होते हैं; कानों से सुनाई देने वाली ध्वनियाँ... नाक से सुनाई देने वाली गंध... जीभ से सुनाई देने वाले स्वाद... शरीर द्वारा स्पर्शित होने वाली वस्तुएँ [204] जो वांछित, मनभावन, सुखद, कामुक सुख से जुड़ी और उत्तेजक होती हैं। आपका क्या विचार है, क्या यह मनोरंजन पहले वाले प्रकार से कहीं अधिक उत्कृष्ट और उदात्त नहीं है?

"हां, भंते।"

"हे उपली, यहाँ तथागत (बुद्ध) संसार में प्रकट होते हैं, 2134 एक अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण, सौभाग्यशाली, संसार के ज्ञाता, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु, प्रबुद्ध, भगवान (बुद्ध)। अपने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) से इस संसार को इसके देवों (देवदूतों/देवताओं), मार और ब्रह्मा सहित, इस जनसंख्या को इसके तपस्वियों और ब्राह्मणों सहित, इसके देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों सहित, अनुभव करके, वे इसे दूसरों को ज्ञात कराते हैं। वे उस धम्म का उपदेश देते हैं जो आरंभ में अच्छा, मध्य में अच्छा और अंत में अच्छा है, सही अर्थ और शब्दों के साथ; वे पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) को प्रकट करते हैं।"

"एक गृहस्थ, गृहस्थ का पुत्र, या किसी अन्य कुल में जन्मा व्यक्ति इस धम्म को सुनता है। तब वह तथागत (बुद्ध) में आस्था रखता है और इस प्रकार विचार करता है: 'गृहस्थ जीवन भीड़भाड़ वाला और धूल भरा है; संन्यासी जीवन में प्रवेश करना खुला और विशाल है। घर में रहते हुए ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) जीना आसान नहीं है, जो पूर्णतः परिपूर्ण और शुद्ध शंख के समान है। मान लीजिए कि मैं अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, गेरुए वस्त्र धारण करके गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करता हूँ।' बाद में, छोटी या बड़ी संपत्ति, छोटे या बड़े रिश्तेदारों के समूह को त्यागकर, वह अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, गेरुए वस्त्र धारण करके गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश करता है।"

इस प्रकार संन्यासी जीवन में प्रवेश करके और भिक्षुओं के प्रशिक्षण और जीवन शैली को अपनाकर, जीवन-विनाश का त्याग करके, वह जीवन-विनाश से दूर रहता है; दंड (हिंसा) और शस्त्र त्यागकर, वह विवेकशील और दयालु होकर सभी प्राणियों के प्रति करुणामयी रहता है। अनचाही वस्तुएँ लेने का त्याग करके, वह केवल वही लेता है जो दिया गया है, केवल वही चाहता है जो दिया गया है, और चोरी के विचारों के बिना ईमानदारी से रहता है। यौन क्रिया का त्याग करके, वह ब्रह्मचर्य का पालन करता है, एकांत में रहता है, और सामान्य व्यक्ति के अभ्यास के अनुसार यौन संबंध से दूर रहता है।

"झूठे वचनों का त्याग करके, वह झूठे वचनों से दूर रहता है; वह सत्य बोलता है, सत्य का पालन करता है; वह विश्वसनीय और भरोसेमंद है, संसार को धोखा नहीं देता। फूट डालने वाले वचनों का त्याग करके, वह फूट डालने वाले वचनों से दूर रहता है; वह यहाँ सुनी हुई बातों को कहीं और दोहराता नहीं है ताकि [उन लोगों को] इन लोगों से अलग कर सके, न ही वह कहीं और सुनी हुई बातों को इन लोगों को दोहराता है ताकि [इन लोगों को] उनसे अलग कर सके; इस प्रकार वह विभाजित लोगों को एकजुट करने वाला, एकता का समर्थक, सद्भाव का आनंद लेने वाला, सद्भाव में प्रसन्न होने वाला, सद्भाव को बढ़ावा देने वाले वचन बोलने वाला है। कठोर वचनों का त्याग करके, वह कठोर वचनों से दूर रहता है; वह कोमल, कानों को भाने वाले, मनभावन, हृदय को छूने वाले, शिष्ट वचन बोलता है जो बहुतों को वांछित और प्रिय होते हैं। व्यर्थ की बातों का त्याग करके, वह व्यर्थ की बातों से दूर रहता है; वह उचित समय पर बोलता है; वह तथ्य की बात करता है, लाभप्रद बातों पर बोलता है, धम्म और अनुशासन पर बोलता है।" वह उचित समय पर ऐसे शब्द बोलता है जो रिकॉर्ड करने योग्य, तर्कसंगत, संक्षिप्त और लाभकारी होते हैं।

वह बीजों और पौधों को नुकसान पहुंचाने से परहेज करता है। वह दिन में एक बार भोजन करता है, रात में और उचित समय के बाहर भोजन करने से परहेज करता है। वह नृत्य, गायन, वाद्य संगीत और अनुचित प्रदर्शनों से परहेज करता है। वह माला पहनने और सुगंध और मलहम लगाने से खुद को सजाने-संवारने से परहेज करता है। वह ऊंचे और बड़े पलंगों से परहेज करता है। वह सोना और चांदी, कच्चा अनाज, कच्चा मांस, स्त्रियां और लड़कियां, पुरुष और महिला दास, बकरियां और भेड़ें, मुर्गे और सूअर, हाथी, मवेशी, घोड़े और घोड़ियां, खेत और जमीन लेने से परहेज करता है। वह संदेशवाहक बनने और सामान पहुंचाने से परहेज करता है; खरीद-फरोख्त से;

बाट, धातु और माप में धोखाधड़ी से; [206] रिश्वत लेने, छल करने, कपट करने और कपट से परहेज करता है। वह चोट पहुंचाने, हत्या करने, बांधने, डकैती, लूटपाट और हिंसा से परहेज करता है।

वह अपने शरीर की रक्षा के लिए वस्त्रों और पेट भरने के लिए भिक्षा भोजन से संतुष्ट रहता है, और जहाँ कहीं भी जाता है, केवल इन्हीं को अपने साथ ले जाता है। जैसे एक पक्षी जहाँ कहीं भी जाता है, अपने पंखों को ही अपना बोझ बनाकर उड़ता है, वैसे ही एक भिक्षु अपने शरीर की रक्षा के लिए वस्त्रों और पेट भरने के लिए भिक्षा भोजन से संतुष्ट रहता है, और जहाँ कहीं भी जाता है, केवल इन्हीं को अपने साथ ले जाता है। इन सभी उत्तम सद्गुणों से युक्त होकर, वह अपने भीतर निष्कलंक आनंद का अनुभव करता है।

किसी आकृति को आँखों से देखकर भी वह उसके लक्षणों और विशेषताओं को पकड़ नहीं पाता। क्योंकि यदि वह अपनी दृष्टि को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी जैसी बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम बरतता है; वह अपनी दृष्टि की रक्षा करता है, वह दृष्टि को नियंत्रित करता है। कानों से ध्वनि सुनकर... नाक से गंध सूंघकर... जीभ से स्वाद चखकर... शरीर से किसी वस्तु को स्पर्श करके... मन से किसी मानसिक घटना को जानकर भी वह उसके लक्षणों और विशेषताओं को पकड़ नहीं पाता। क्योंकि यदि वह अपने मन को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी जैसी बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम बरतता है; वह अपनी मन की रक्षा करता है, वह मन को नियंत्रित करता है। इंद्रियों पर इस श्रेष्ठ संयम के कारण वह अपने भीतर निर्मल आनंद का अनुभव करता है।

वह आगे बढ़ने और लौटने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह आगे देखने और पीछे देखने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह अपने अंगों को मोड़ने और फैलाने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह अपने वस्त्र पहनने और अपने बाहरी वस्त्र और कटोरे को ले जाने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह खाने, पीने, भोजन ग्रहण करने और स्वाद लेने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह शौच और मूत्र त्यागने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है; वह चलने, खड़े होने, बैठने, सोने, जागने, बात करने और चुप रहने में पूर्ण विवेक (संपजन्ना) से कार्य करता है।

"उत्कृष्ट सद्गुणी आचरण के इस समूह, और इंद्रियों के इस [207] उत्कृष्ट संयम, और इस उत्कृष्ट सती ध्यान और संपजन्न पूर्ण बोध से युक्त होकर, वह एकांत स्थान पर शरण लेता है; जंगल, वृक्ष की जड़, पर्वत, घाटी, पहाड़ी गुफा, श्मशान भूमि, जंगल की झाड़ियाँ, खुला स्थान, पुआल का ढेर।"

जंगल में जाकर, किसी वृक्ष की छाया में या किसी खाली झोपड़ी में, वह बैठकर, अपने पैरों को क्रॉस करके, शरीर को सीधा करके, ध्यान (सती) स्थापित करता है। संसार के प्रति लालसा का त्याग करके, वह लालसा से मुक्त मन से रहता है; वह अपने मन को लालसा से शुद्ध करता है। द्वेष और घृणा का त्याग करके, वह द्वेष से मुक्त, सभी प्राणियों के कल्याण के प्रति करुणामय मन से रहता है; वह अपने मन को द्वेष और घृणा से शुद्ध करता है। सुस्ती और आलस्य का त्याग करके, वह सुस्ती और आलस्य से मुक्त, प्रकाश के प्रति सजग, ध्यानमग्न और पूर्णतः बोधगम्य रहता है; वह अपने मन को सुस्ती और आलस्य से शुद्ध करता है। बेचैनी और पश्चाताप का त्याग करके, वह शांत, अंतर्मन से शांत मन से रहता है; वह अपने मन को बेचैनी और पश्चाताप से शुद्ध करता है। संदेह का त्याग करके, वह संदेह से परे, लाभकारी गुणों के बारे में अविचलित रहता है; वह अपने मन को संदेह से शुद्ध करता है।

(1) "इस प्रकार इन पाँच बाधाओं, मन के दोषों, पन्ना (दिव्य ज्ञान) को कमजोर करने वाले गुणों का त्याग करके, इंद्रिय सुखों से विरक्त होकर, और हानिकारक (अकुशल) अवस्थाओं से विरक्त होकर, वह प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न आनंद (पीति) और सुख (सुख) से युक्त होता है, और चिंतन एवं आत्मनिरीक्षण के साथ होता है। आपका क्या विचार है, क्या यह अवस्था इससे पूर्व की अवस्थाओं से अधिक उत्कृष्ट और श्रेष्ठ नहीं है?"

"हां, भंते।"

"जब मेरे शिष्य अपने भीतर इस गुण को देखते हैं, तभी वे जंगलों और वनों में एकांत स्थानों पर शरण लेते हैं। लेकिन फिर भी वे अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाते हैं।" 2135

(2) "फिर, उपाली, विचार और चिंतन के शांत होने पर भिक्षु दूसरी ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें लीन हो जाता है। ... तुम्हारा क्या विचार है, क्या यह अवस्था पिछली अवस्थाओं से अधिक उत्कृष्ट और उदात्त नहीं है?"

"हां, भंते।"

"जब मेरे शिष्य अपने भीतर भी यह गुण देखते हैं, तभी वे जंगलों और वनों में एकांत स्थानों पर शरण लेते हैं। लेकिन फिर भी वे अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाते हैं।"

(3) "फिर, उपाली, जब आनंद (पीति) भी लुप्त हो जाती है... वह तीसरे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... तुम्हारा क्या विचार है, क्या यह निवास इससे पहले के निवासों से अधिक उत्कृष्ट और उदात्त नहीं है?"

"हां, भंते।"

"जब मेरे शिष्य अपने भीतर भी यह गुण देखते हैं, तभी वे जंगलों और वनों में एकांत स्थानों पर शरण लेते हैं। लेकिन फिर भी वे अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाते।"

(4) "फिर, उपाली, सुख और दुख का त्याग करके... वह चौथे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... क्या आप सोचते हैं, क्या यह निवास इससे पहले के निवासों से अधिक उत्कृष्ट और उदात्त नहीं है?"

"हां, भंते।"

"जब मेरे शिष्य अपने भीतर भी यह गुण देखते हैं, तभी वे जंगलों और वनों में एकांत स्थानों पर शरण लेते हैं। लेकिन फिर भी वे अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाते हैं।"

(5) "हे उपाली, रूपों की धारणा (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं के लुप्त होने पर, विविधता की धारणाओं पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का बोध करते हुए भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। क्या आप सोचते हैं, क्या यह निवास इससे पहले के निवासों से अधिक उत्कृष्ट और उदात्त नहीं है?"

"हां, भंते।"

"जब मेरे शिष्य अपने भीतर भी यह गुण देखते हैं, तभी वे जंगलों और वनों में एकांत स्थानों पर शरण लेते हैं। लेकिन फिर भी वे अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाते हैं।"

(6) "फिर, उपाली, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'चेतना अनंत है' को अनुभव करते हुए, चेतना के अनंत क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। आपका क्या विचार है, क्या यह निवास इससे पहले के निवासों से अधिक उत्कृष्ट और उदात्त नहीं है?"

"हां, भंते।"

"जब मेरे शिष्य अपने भीतर भी यह गुण देखते हैं, तभी वे जंगलों और वनों में एकांत स्थानों पर शरण लेते हैं। लेकिन फिर भी वे अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाते हैं।"

(7) "फिर, उपाली, चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का अनुभव करते हुए, वह शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है। उपाली, क्या तुम सोचते हो कि यह निवास स्थान इससे पहले के निवास स्थानों से अधिक उत्कृष्ट और उदात्त नहीं है?"

"हां, भंते।"

"जब मेरे शिष्य अपने भीतर भी यह गुण देखते हैं, तभी वे जंगलों और वनों में एकांत स्थानों पर शरण लेते हैं। लेकिन फिर भी वे अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाते हैं।"

(8) "फिर, उपाली; शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'यह शांत है, यह उदात्त है' का अनुभव करते हुए, वह न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। आपका क्या विचार है, क्या यह निवास इससे पहले के निवासों से अधिक उत्कृष्ट और उदात्त नहीं है?"

"हां, भंते।"

"जब मेरे शिष्य अपने भीतर भी यह गुण देखते हैं, तभी वे जंगलों और वनों में एकांत स्थानों पर शरण लेते हैं। लेकिन फिर भी वे अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाते हैं।"

(9) "फिर, उपाली, न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अनुभूति (वेदना) के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है। (10) और पन्न (दिव्य ज्ञान) से देखकर, उसके सारे दोष पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। क्या तुम यह सोचते हो, क्या यह निवास स्थान इससे पहले के निवास स्थानों से अधिक उत्कृष्ट और श्रेष्ठ नहीं है?"

"हां, भंते।"

"जब मेरे शिष्य अपने भीतर भी इस गुण को देख लेते हैं, तभी वे जंगलों और वनों में स्थित एकांत स्थानों में शरण लेते हैं। और वे अपने लक्ष्य को प्राप्त करके वहीं निवास करते हैं।"

"आओ, उपाली, संघ में निवास करो। संघ में निवास करने से तुम्हें शांति मिलेगी।"

---

100 अक्षम (अभब्बा)

भिक्षुओं, इन दस चीजों का त्याग किए बिना अरहंतत्व प्राप्त करना संभव नहीं है। वे दस चीजें कौन सी हैं? कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष), मोह (मोह), क्रोध, शत्रुता, निंदा, उद्दंडता, ईर्ष्या, कंजूसी और अहंकार। इन दस चीजों का त्याग किए बिना अरहंतत्व प्राप्त करना संभव नहीं है।

"भिक्षुओं, इन दस चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति अरहंतत्व प्राप्त कर सकता है। वे दस चीजें क्या हैं? कामवासना (राग)... अहंकार। इन दस चीजों का त्याग करने पर, व्यक्ति अरहंतत्व प्राप्त कर सकता है।" [210]

तीसरा पचास

I. भिक्षु की धारणाएं (समनसन्नवग्गो सं. श्रमण-संज्ञ-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

101 भिक्षु की धारणाएं (समानसन्ना सं. श्रमण-संज्ञ)

"भिक्षुओं (मठवासियों), जब ये तीन तपस्वी धारणाएँ (सन्ना/संग्य) 2138 विकसित और पोषित हो जाती हैं, तो वे सात चीजों को पूरा करते हैं। वे तीन चीजें क्या हैं?"

(1) "मैंने वर्गहीन अवस्था में प्रवेश कर लिया है; (2) मेरी आजीविका दूसरों पर निर्भर है; (3) मेरा आचरण भिन्न होना चाहिए।" जब किसी तपस्वी की ये तीन धारणाएँ (सन्न/संज्ञा) विकसित और पोषित हो जाती हैं, तो वे सात चीजों को पूरा करती हैं। वे सात चीजें क्या हैं?

(1) व्यक्ति निरंतर सद्गुणपूर्ण आचरण के अनुरूप कार्य करता है और व्यवहार करता है। (2) वह लालसा रहित होता है, (3) द्वेष रहित होता है, (4) और अहंकार रहित होता है। (5) वह प्रशिक्षण की इच्छा रखता है। [211] (6) वह अपने जीवन को बनाए रखने के लिए आवश्यक वस्तुओं का उपयोग उनके उद्देश्य के प्रति सजग रहते हुए करता है। (7) वह ऊर्जावान होता है। हे भिक्षुओं, जब एक तपस्वी की ये तीन धारणाएँ (सन्ना/संग्य) विकसित और पोषित हो जाती हैं, तो वे इन सात बातों को पूरा करते हैं।

आत्मज्ञान के 102 कारक (बोज्झांगा सं. बोध्यांगा)

"भिक्षुओं (सन्यासियों), जब ज्ञानोदय के इन सात कारकों का विकास और अभ्यास हो जाता है, तो वे तीन सच्चे ज्ञानों को प्राप्त कर लेते हैं। वे कौन से सात कारक हैं?"

(1) सती (ध्यान) का ज्ञानोदय कारक, (2) धम्म विख्या (विवेचना) का ज्ञानोदय कारक, (3) बल (प्रयास) का ज्ञानोदय कारक, (4) पीति (आनंद) का ज्ञानोदय कारक, (5) शांति (पसाद्धि) का ज्ञानोदय कारक, (6) समाधि (स्व-लीनता) का ज्ञानोदय कारक, और (7) समभाव (उपेक्खा) का ज्ञानोदय कारक। जब ज्ञानोदय के इन सात कारकों का विकास और संवर्धन होता है, तो वे तीन सच्चे ज्ञानों को पूर्ण करते हैं। वे तीन कौन से हैं?

(8) "यहाँ, एक भिक्षु अपने अनेक पूर्व जन्मों (पूर्व पुनर्जन्मों) का स्मरण करता है, अर्थात् एक जन्म, दो जन्म... इस प्रकार वह अपने अनेक पूर्व जन्मों को उनके स्वरूपों और विवरणों सहित स्मरण करता है। 2139

(9) "पवित्र और मनुष्य से परे दिव्य दृष्टि से... वह समझता है कि प्राणी अपने कर्मों के अनुसार कैसे व्यवहार करते हैं।"

(10) "दोषों के नाश होने से उसने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।"

"जब, भिक्षुओं, ज्ञानोदय के इन सात कारकों का विकास और संवर्धन किया जाता है, तो वे इन तीन सच्चे ज्ञानों को पूर्ण करते हैं।"

---

103 गलत कोर्स (मिकचाटा संस. मिथ्याटा)

भिक्षुओं, गलत मार्ग पर चलने से असफलता (विपत्ति) मिलती है, सफलता नहीं। और यह कैसे संभव है कि गलत मार्ग पर चलने से असफलता (विपत्ति) मिलती है, सफलता नहीं?

(1) गलत दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए, (2) गलत इरादा उत्पन्न होता है। गलत इरादे वाले व्यक्ति के लिए, (3) गलत वाणी उत्पन्न होती है। गलत वाणी वाले व्यक्ति के लिए, [212] (4) गलत कर्म उत्पन्न होता है। गलत कर्म करने वाले व्यक्ति के लिए, (5) गलत आजीविका उत्पन्न होती है। गलत आजीविका करने वाले व्यक्ति के लिए, (6) गलत प्रयास उत्पन्न होता है। गलत प्रयास करने वाले व्यक्ति के लिए, (7) गलत ध्यान (सती/ध्यान) उत्पन्न होता है। गलत ध्यान (सती/ध्यान) वाले व्यक्ति के लिए, (8) गलत समाधि (स्व-लीनता/सता) उत्पन्न होती है। गलत एकाग्रता वाले व्यक्ति के लिए, (9) गलत ज्ञान उत्पन्न होता है। गलत ज्ञान वाले व्यक्ति के लिए, (10) गलत मुक्ति उत्पन्न होती है। 2140 इस प्रकार, गलत मार्ग पर निर्भरता से विफलता (विपत्ति) होती है, सफलता नहीं।

"सही मार्ग पर चलने से सफलता मिलती है, असफलता नहीं (विपत्ति)। और ऐसा कैसे होता है कि सही मार्ग पर चलने से सफलता मिलती है, असफलता नहीं (विपत्ति)?"

(1) सही दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए, (2) सही इरादा उत्पन्न होता है। सही इरादे वाले व्यक्ति के लिए, (3) सही वाणी उत्पन्न होती है। सही वाणी वाले व्यक्ति के लिए, (4) सही कर्म उत्पन्न होते हैं। सही कर्म वाले व्यक्ति के लिए, (5) सही आजीविका उत्पन्न होती है। सही आजीविका वाले व्यक्ति के लिए, (6) सही प्रयास उत्पन्न होते हैं। सही प्रयास वाले व्यक्ति के लिए, (7) सही जागरूकता उत्पन्न होती है। सही ध्यान (सती/जागरूकता) वाले व्यक्ति के लिए, (8) सही समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) उत्पन्न होती है। सही समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) वाले व्यक्ति के लिए, (9) सही ज्ञान उत्पन्न होता है। सही ज्ञान वाले व्यक्ति के लिए, (10) सही मुक्ति उत्पन्न होती है। 2141 इस प्रकार, सही मार्ग पर चलने से सफलता मिलती है, असफलता नहीं (विपत्ति)।"

---

104 एक बीज [2142] (बीजा)

भिक्षुओं, गलत दृष्टिकोण, गलत इरादे, गलत वाणी, गलत कर्म, गलत आजीविका, गलत प्रयास, गलत जागरूकता, गलत समाधि, गलत ज्ञान और गलत मुक्ति वाले व्यक्ति के लिए, वह उस दृष्टिकोण के अनुसार जो भी शारीरिक कर्म, वाणी और मानसिक कर्म करता है, और उसकी जो भी आत्म-जागरूकता, लालसा, झुकाव और व्यवहार होता है, वह सब अवांछित, अनचाही और अप्रिय बातों की ओर ले जाता है, जिससे हानि और पीड़ा होती है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका दृष्टिकोण गलत है।

भिक्षुओं, मान लीजिए कि नीम, खीरा या करेला का बीज नम मिट्टी में बोया गया। [213] मिट्टी और पानी से वह जो भी पोषक तत्व ग्रहण करेगा, उन सभी के कारण उसका स्वाद कड़वा, तीखा और अप्रिय हो जाएगा। इसका कारण क्या है? क्योंकि बीज खराब है। इसी प्रकार, गलत दृष्टिकोण और गलत मुक्ति वाले व्यक्ति के लिए, उसके द्वारा उस दृष्टिकोण के अनुसार किए गए सभी शारीरिक कर्म, वाणी कर्म और मानसिक कर्म, और उसकी आत्म-जागरूकता, लालसा, झुकाव और उसका चरित्र/व्यवहार, सब कुछ अवांछित, अप्रिय और हानि और पीड़ा की ओर ले जाता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका दृष्टिकोण खराब है।

भिक्षुओं, सही दृष्टि, सही इरादे, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही सती ध्यान, सही समाधि, सही ज्ञान और सही मुक्ति वाले व्यक्ति के लिए, वह उस दृष्टि के अनुसार जो भी शारीरिक कर्म, वाणी कर्म और मानसिक कर्म करता है, और उसकी जो भी आत्म-जागरूकता, लालसा, झुकाव और चरित्र/व्यवहार होता है, वह सब वांछित, सुखद और सुखदायी परिणाम की ओर ले जाता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसकी दृष्टि अच्छी है।

भिक्षुओं, मान लीजिए कि गन्ने, पहाड़ी चावल या अंगूर का एक बीज नम मिट्टी में बोया गया। मिट्टी और पानी से वह जो भी पोषक तत्व ग्रहण करेगा, उन सभी से उसका स्वाद मधुर, मीठा और स्वादिष्ट बनेगा। इसका कारण क्या है? क्योंकि बीज अच्छा है। ठीक उसी प्रकार, सही दृष्टि और सही मुक्ति प्राप्त व्यक्ति के लिए, वह उस दृष्टि के अनुसार जो भी शारीरिक कर्म, वाणी कर्म और मानसिक कर्म करता है, और उसकी जो भी आत्म-जागरूकता, लालसा, झुकाव और चरित्र (संस्कार) होते हैं, वे सभी वांछित, वांछनीय और सुखद, कल्याण और सुख की ओर ले जाते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि दृष्टि अच्छी है।

---

105 सच्चा ज्ञान (विज्जा संस्कृत विद्या)

भिक्षुओं, अज्ञान—नैतिक निर्लज्जता और नैतिक लापरवाही के साथ—हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) में प्रवेश करने का अग्रदूत है। 2143 (1) अज्ञान में डूबे हुए मूर्ख व्यक्ति के लिए, गलत दृष्टिकोण उत्पन्न होता है। (2) गलत दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए, गलत इरादे उत्पन्न होते हैं। (3) गलत इरादे वाले व्यक्ति के लिए, गलत वाणी उत्पन्न होती है। (4) गलत वाणी वाले व्यक्ति के लिए, गलत कर्म उत्पन्न होते हैं। (5) गलत कर्म वाले व्यक्ति के लिए, गलत आजीविका उत्पन्न होती है। (6) गलत आजीविका वाले व्यक्ति के लिए, गलत प्रयास उत्पन्न होते हैं। (7) गलत प्रयास वाले व्यक्ति के लिए, गलत ध्यान (सती) उत्पन्न होता है। (8) गलत ध्यान (सती) वाले व्यक्ति के लिए, गलत समाधि (स्व-लीनता/सता) उत्पन्न होती है। (9) गलत समाधि (स्व-लीनता/सता) वाले व्यक्ति के लिए, गलत ज्ञान उत्पन्न होता है। (10) गलत ज्ञान वाले व्यक्ति के लिए, गलत मुक्ति उत्पन्न होती है।

भिक्षुओं, नैतिक लज्जा और नैतिक भय की भावना से युक्त सच्चा ज्ञान, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) में प्रवेश करने का अग्रदूत है। (1) सच्चे ज्ञान प्राप्त कर चुके बुद्धिमान व्यक्ति के लिए सही दृष्टि उत्पन्न होती है। (2) सही दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए सही संकल्प उत्पन्न होता है। (3) सही संकल्प वाले व्यक्ति के लिए सही वाणी उत्पन्न होती है। (4) सही वाणी वाले व्यक्ति के लिए सही कर्म उत्पन्न होते हैं। (5) सही कर्म वाले व्यक्ति के लिए सही आजीविका उत्पन्न होती है। (6) सही आजीविका वाले व्यक्ति के लिए सही प्रयास उत्पन्न होते हैं। (7) सही प्रयास वाले व्यक्ति के लिए सही ध्यान (सती/सजगता) उत्पन्न होता है। (8) सही ध्यान (सती/सजगता) वाले व्यक्ति के लिए सही समाधि (स्व-लीन/सन्दर्य) उत्पन्न होती है। (9) सही समाधि (स्व-लीन/सन्दर्य) वाले व्यक्ति के लिए सही ज्ञान उत्पन्न होता है। (10) सही ज्ञान वाले व्यक्ति के लिए सही मुक्ति उत्पन्न होती है। 2144

---

106 घिसना (निजरा सं. निर्जरा)

"भिक्षुओं, ये दस प्रकार के क्षय हैं। 2145 वे दस कौन से हैं?"

(1) "सही दृष्टि वाले व्यक्ति की गलत दृष्टि दूर हो जाती है, और गलत दृष्टि से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक गुण (धम्म) भी दूर हो जाते हैं, तथा सही दृष्टि से अनेक लाभकारी गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

(2) "सही इरादे वाले व्यक्ति का गलत इरादा मिट जाता है, और गलत इरादे से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक गुण (धम्म) भी मिट जाते हैं, तथा सही इरादे से उत्पन्न होने वाले अनेक लाभकारी गुण (कुशल) विकास द्वारा पूर्ण हो जाते हैं।"

(3) सही वाणी वाले व्यक्ति की अधार्मिक वाणी धरी रह जाती है, और अधार्मिक वाणी से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक गुण (अकुशल गुण) भी धरी रह जाते हैं, तथा सही वाणी से अनेक लाभकारी गुण (कुशल गुण) विकसित होकर पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।

(4) "सही कर्म करने वाले व्यक्ति का गलत कर्म मिट जाता है, और गलत कर्म से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक गुण (धम्म) भी मिट जाते हैं, तथा सही कर्म करने वाले व्यक्ति के अनेक लाभकारी गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

(5) "सही आजीविका वाले व्यक्ति के लिए, गलत आजीविका क्षीण हो जाती है, और गलत आजीविका की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) भी क्षीण हो जाते हैं, तथा सही आजीविका की स्थिति में अनेक लाभकारी (कुशल) गुण विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

(6) "सही प्रयास करने वाले व्यक्ति के लिए, गलत प्रयास क्षीण हो जाते हैं, और गलत प्रयास से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक गुण (धम्म) भी क्षीण हो जाते हैं, तथा सही प्रयास से अनेक लाभकारी गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

(7) "सही ध्यान (सती/सजगता) से पीड़ित व्यक्ति का गलत ध्यान (सती/सती) दूर हो जाता है, और गलत ध्यान (सती/सती) से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) भी दूर हो जाते हैं, तथा सही ध्यान (सती/सजगता) से पीड़ित व्यक्ति के अनेक लाभकारी (कुशल) गुण विकास द्वारा परिपूर्ण हो जाते हैं।"

(8) "सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) में रहने वाले व्यक्ति की गलत समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) दूर हो जाती है, और गलत समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) भी दूर हो जाते हैं, और सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की स्थिति में अनेक [216] लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।

(9) "सही ज्ञान वाले व्यक्ति का गलत ज्ञान मिट जाता है, और गलत ज्ञान से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक गुण (धम्म) भी मिट जाते हैं, तथा सही ज्ञान से अनेक लाभकारी गुण (कुशल) विकास द्वारा पूर्ण हो जाते हैं।"

(10) "सही मुक्ति प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए, गलत मुक्ति क्षीण हो जाती है, और गलत मुक्ति की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) भी क्षीण हो जाते हैं, तथा सही मुक्ति की स्थिति से अनेक लाभकारी (कुशल) गुण विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

"ये घिसाव के दस मामले हैं।"

---

107 धुलाई (धोवना)

भिक्षुओं, दक्षिण में धोवन 2146 ['स्नान'] नामक एक देश है, जहाँ भोजन, पेय, खाद्य पदार्थ, खाने-पीने की वस्तुएँ, जलपान, औषधियाँ, नृत्य, गायन और संगीत उपलब्ध हैं। भिक्षुओं, यह 'स्नान' है; मैं इससे इनकार नहीं करता। फिर भी यह 'स्नान' निम्न, सामान्य, सांसारिक लोगों के लिए, नीच और लाभहीन है; यह निब्बिदा (विरक्ति), वैराग्य (वैराग), शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न), ज्ञानोदय और निर्वाण की ओर नहीं ले जाता।

लेकिन मैं भिक्षुओं को एक ऐसा उत्तम स्नान सिखाऊंगा जो केवल वैराग्य, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न), ज्ञानोदय और निर्वाण की ओर ले जाता है। इस स्नान के द्वारा, पुनर्जन्म के अधीन प्राणी पुनर्जन्म से मुक्त हो जाते हैं; वृद्धावस्था के अधीन प्राणी वृद्धावस्था से मुक्त हो जाते हैं; मृत्यु के अधीन प्राणी मृत्यु से मुक्त हो जाते हैं; शोक, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा के अधीन प्राणी शोक, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा के अधीन प्राणी मुक्त हो जाते हैं। ध्यान से सुनो और सुनो। मैं बोलूंगा।

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और हे भिक्षुओं, वह श्रेष्ठ स्नान क्या है? [217]

(1) "सही दृष्टि वाले व्यक्ति की गलत दृष्टि धुल जाती है, और गलत दृष्टि से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक गुण (धम्म) भी धुल जाते हैं, तथा सही दृष्टि से अनेक लाभकारी गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

(2) — (9) "सही इरादे वाले व्यक्ति का गलत इरादा धुल जाता है... सही वाणी वाले व्यक्ति का गलत वाणी धुल जाती है... सही कर्म करने वाले व्यक्ति का गलत कर्म धुल जाता है... सही आजीविका वाले व्यक्ति का गलत आजीविका धुल जाती है... सही प्रयास करने वाले व्यक्ति का गलत प्रयास धुल जाता है... सही ध्यान (सती/सजगता) वाले व्यक्ति का गलत सजगता (सती/सजगता) धुल जाती है... सही समाधि (स्व-लीन/सन्यास) वाले व्यक्ति का गलत समाधि (स्व-लीन/सन्यास) धुल जाती है... सही ज्ञान वाले व्यक्ति का गलत ज्ञान धुल जाता है..."

(10) "सही मुक्ति प्राप्त करने वाले व्यक्ति की गलत मुक्ति धुल जाती है, और गलत मुक्ति की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक गुण (धम्म) भी धुल जाते हैं, तथा सही मुक्ति की स्थिति से अनेक लाभकारी गुण (कुशल) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

"यह, भिक्षुओं, वह श्रेष्ठ स्नान है जो केवल निब्बिदा (वैराग्य), वैराग्य (विराग), शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, आत्मज्ञान और निर्वाण की ओर ले जाता है। इस स्नान के द्वारा पुनर्जन्म के अधीन प्राणी पुनर्जन्म से मुक्त होते हैं; वृद्धावस्था के अधीन प्राणी वृद्धावस्था से मुक्त होते हैं; मृत्यु के अधीन प्राणी मृत्यु से मुक्त होते हैं; शोक, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा के अधीन प्राणी शोक, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा के अधीन प्राणी मुक्त होते हैं।" [218]

---

108 चिकित्सक (टिकिचका सं. सिकितसाका)

भिक्षुओं और चिकित्सकों द्वारा पित्त, कफ और वायु से उत्पन्न रोगों को दूर करने के लिए विरेचक औषधि दी जाती है। भिक्षुओं, यह विरेचक औषधि मौजूद है; मैं इससे इनकार नहीं करता। फिर भी यह विरेचक औषधि कभी सफल होती है और कभी असफल।

"परन्तु मैं भिक्षुओं को एक ऐसा उत्तम औषधि सिखाऊंगा जो सदा सफल होती है और कभी असफल नहीं होती। इस औषधि के प्रभाव से पुनर्जन्म के बंधन में बंधे प्राणी पुनर्जन्म से मुक्त हो जाते हैं; वृद्धावस्था के बंधन में बंधे प्राणी वृद्धावस्था से मुक्त हो जाते हैं; मृत्यु के

बंधन में बंधे प्राणी मृत्यु से मुक्त हो जाते हैं; दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा के बंधन में बंधे प्राणी दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त हो जाते हैं। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और हे भिक्षुओं, वह कौन सा श्रेष्ठ शुद्धि उपाय है जो हमेशा सफल होता है और कभी असफल नहीं होता?"

(1) "सही दृष्टि वाले व्यक्ति की गलत दृष्टि दूर हो जाती है, और गलत दृष्टि से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) भी दूर हो जाते हैं, और सही दृष्टि से अनेक लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

(2) — (9) "सही इरादे वाले व्यक्ति का गलत इरादा दूर हो जाता है... सही वाणी वाले व्यक्ति का गलत वाणी दूर हो जाती है... सही कर्म करने वाले व्यक्ति का गलत कर्म दूर हो जाता है... सही आजीविका वाले व्यक्ति का गलत आजीविका दूर हो जाती है... सही प्रयास करने वाले व्यक्ति का गलत प्रयास दूर हो जाता है... सही ध्यान (सती/सजगता) वाले व्यक्ति का गलत सजगता (ध्यान/सती) दूर हो जाती है... [219] सही समाधि (स्व-लीन/सन्यास) वाले व्यक्ति का गलत समाधि (स्व-लीन/सन्यास) दूर हो जाती है... सही ज्ञान वाले व्यक्ति का गलत ज्ञान दूर हो जाता है...

(10) "सही मुक्ति प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए, गलत मुक्ति का निवारण होता है, और गलत मुक्ति की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) भी निवारण होते हैं, तथा सही मुक्ति की स्थिति से अनेक लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त करते हैं।"

"यह, भिक्षुओं, वह श्रेष्ठ शुद्धि है जो हमेशा सफल होती है और कभी असफल नहीं होती, और जिसके प्रभाव से पुनर्जन्म के अधीन प्राणी पुनर्जन्म से मुक्त होते हैं; वृद्धावस्था के अधीन प्राणी वृद्धावस्था से मुक्त होते हैं; मृत्यु के अधीन प्राणी मृत्यु से मुक्त होते हैं; शोक, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा के अधीन प्राणी शोक, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा के अधीन प्राणी मुक्त होते हैं।"

---

109 वमनकारी (वामन)

भिक्षुओं, चिकित्सक पित्त, कफ और वायु से उत्पन्न रोगों को दूर करने के लिए उल्टी लाने वाली दवा लिखते हैं। भिक्षुओं, यह उल्टी लाने वाली दवा मौजूद है; मैं इससे इनकार नहीं करता। फिर भी यह दवा कभी सफल होती है और कभी असफल।

"परन्तु मैं भिक्षुओं को एक ऐसा उत्तम औषधि सिखाऊँगा जो सदा कारगर है और कभी विफल नहीं होती। इस औषधि के प्रभाव से पुनर्जन्म के बंधन में बंधे प्राणी पुनर्जन्म से मुक्त हो जाते हैं; वृद्धावस्था के बंधन में बंधे प्राणी वृद्धावस्था से मुक्त हो जाते हैं; मृत्यु के बंधन में बंधे प्राणी मृत्यु से मुक्त हो जाते हैं; दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा के बंधन में बंधे प्राणी दुःख, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा से मुक्त हो जाते हैं। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूँगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"और हे भिक्षुओं, वह कौन सी श्रेष्ठ उल्टी लाने वाली औषधि है जो हमेशा सफल होती है और कभी असफल नहीं होती? [220]

(1j "सही दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए, गलत दृष्टिकोण का उच्छ्रदय हो जाता है, और गलत दृष्टिकोण की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) भी उच्छ्रदय हो जाते हैं, तथा सही दृष्टिकोण की स्थिति में अनेक लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

(2)— (9) "सही इरादे वाले व्यक्ति के लिए, गलत इरादे का उच्छ्रदय हो जाता है... सही वाणी वाले व्यक्ति के लिए, गलत वाणी का उच्छ्रदय हो जाता है... सही कर्म वाले व्यक्ति के लिए, गलत कर्म का उच्छ्रदय हो जाता है... सही आजीविका वाले व्यक्ति के लिए, गलत आजीविका का उच्छ्रदय हो जाता है... सही प्रयास वाले व्यक्ति के लिए, गलत प्रयास का उच्छ्रदय हो जाता है... सही जागरूकता वाले

व्यक्ति के लिए, गलत जागरूकता (ध्यान/सती) का उच्छ्रदय हो जाता है... सही समाधि (स्व-लीन/सन्यास) वाले व्यक्ति के लिए, गलत समाधि (स्व-लीन/सन्यास) का उच्छ्रदय हो जाता है... सही ज्ञान वाले व्यक्ति के लिए, गलत ज्ञान का उच्छ्रदय हो जाता है..."

(10) "सही मुक्ति प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए, गलत मुक्ति का उबारा निकल जाता है, और गलत मुक्ति की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक बुरे हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) भी उबारे में आ जाते हैं, और सही मुक्ति की स्थिति से अनेक लाभकारी (कुशल) गुण विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

"यह, भिक्षुओं, वह श्रेष्ठ औषधि है जो सदा सफल होती है और कभी असफल नहीं होती, और जिसके प्रभाव से पुनर्जन्म के अधीन प्राणी पुनर्जन्म से मुक्त होते हैं; वृद्धावस्था के अधीन प्राणी वृद्धावस्था से मुक्त होते हैं; मृत्यु के अधीन प्राणी मृत्यु से मुक्त होते हैं; शोक, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा के अधीन प्राणी शोक, विलाप, पीड़ा, निराशा और व्यथा के अधीन प्राणी मुक्त होते हैं।"

---

110 निष्कासित (निद्धमानिया)

"भिक्षुओं, ये दस चीजें हैं जिन्हें त्यागना है। वे दस चीजें कौन सी हैं?"

(1) "सही दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए, गलत दृष्टिकोण का निष्कासन होता है, और गलत दृष्टिकोण से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) भी निष्कासित होते हैं, और सही दृष्टिकोण से अनेक लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त करते हैं। [221]

(2) — (9) "सही इरादे वाले व्यक्ति के लिए गलत इरादे का निष्कासन होता है... सही वाणी वाले व्यक्ति के लिए गलत वाणी का निष्कासन होता है... सही कर्म वाले व्यक्ति के लिए गलत कर्म का निष्कासन होता है... सही आजीविका वाले व्यक्ति के लिए गलत आजीविका का निष्कासन होता है... सही प्रयास वाले व्यक्ति के लिए गलत प्रयास का निष्कासन होता है... सही ध्यान (सती/सजगता) वाले व्यक्ति के लिए गलत सजगता (ध्यान/सती) का निष्कासन होता है... सही समाधि (स्व-लीन/सता) वाले व्यक्ति के लिए गलत समाधि (स्व-लीन/सता) का निष्कासन होता है... सही ज्ञान वाले व्यक्ति के लिए गलत ज्ञान का निष्कासन होता है।"

(10) "सही मुक्ति प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए, गलत मुक्ति का निष्कासन हो जाता है, और गलत मुक्ति की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) भी निष्कासित हो जाते हैं, तथा सही मुक्ति की स्थिति से अनेक लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

"ये दस चीजें हैं जिन्हें बाहर निकाला जाना है।"

---

111 वन बियॉन्ड ट्रेनिंग (1) (असेखा1 सं. अशाइख्य)

तब एक भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और बोला;

"कहा जाता है, भंते, 'प्रशिक्षण से परे, प्रशिक्षण से परे' भंते, भिक्षु किस अर्थ में प्रशिक्षण से परे होता है?" 2147

"यहाँ, भिक्षु, एक भिक्षु के पास (1) प्रशिक्षण से परे व्यक्ति का सही दृष्टिकोण होता है। उसके पास (2) सही इरादा . . . (3) सही वाणी . . . (4) सही कर्म . . . (5) सही आजीविका . . . (6) सही प्रयास . . . (7) सही ध्यान (सती/सजगता) . . . (8) सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) . . . (9) सही ज्ञान . . . (10) प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की सही मुक्ति होती है। इस प्रकार एक भिक्षु प्रशिक्षण से परे व्यक्ति होता है।" [222]

---

112 वन बियॉन्ड ट्रेनिंग (2) (असेखा2 सं. अशाइख्य)

भिक्षुओं, प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के ये दस गुण हैं। वे दस गुण कौन से हैं? प्रशिक्षण से परे व्यक्ति का सही दृष्टिकोण; सही इरादा... सही वाणी... सही कर्म... सही आजीविका; सही प्रयास... सही ध्यान... सही समाधि... सही ज्ञान... प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की सही मुक्ति। ये प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के दस गुण हैं।

II. पैकोरोहनिवाग्गो

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

113 गैर-धम्म (1) (अधम्म1 बिना अधर्म)

भिक्षुओं, जो धम्म रहित और हानिकारक है, उसे समझना चाहिए, और जो धम्म युक्त और लाभकारी है, उसे भी समझना चाहिए। 2148 जो धम्म रहित और हानिकारक है, उसे समझ लेने के बाद, तथा जो धम्म युक्त और लाभकारी है, उसे समझ लेने के बाद, धम्म के अनुसार और लाभकारी मार्ग का अभ्यास करना चाहिए।

"और हे भिक्षुओं, अधार्म (गलत मार्ग) और हानिकारक क्या है? गलत दृष्टिकोण, गलत इरादा, गलत वाणी, गलत कर्म, गलत आजीविका, गलत प्रयास, गलत ध्यान (ध्यान/सती), गलत समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), गलत ज्ञान और गलत मुक्ति। [223] यही अधार्म (गलत मार्ग) और हानिकारक कहलाता है।"

भिक्षुओं, धम्म और लाभकारी तत्व क्या हैं? सही दृष्टिकोण, सही इरादा, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता), सही समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता), सही ज्ञान और सही मुक्ति। यही धम्म और लाभकारी तत्व कहलाता है।

"जब यह कहा गया था: 'भिक्षुओं, जो अधार्मिक (गलत मार्ग) और हानिकारक है, उसे समझना चाहिए, और जो धम्मिक और लाभकारी है, उसे भी समझना चाहिए। अधार्मिक (गलत मार्ग) और हानिकारक, तथा धम्मिक और लाभकारी को समझने के बाद, धम्मिक और लाभकारी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए,' तो यह बात उन्हीं के संदर्भ में कही गई थी।"

---

114 गैर-धम्म (2) (अधम्म बिना अधर्म)

भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि कौन सा मार्ग गलत है और कौन सा मार्ग उचित है, और कौन सा हानिकारक है और कौन सा लाभकारी है। गलत मार्ग और उचित मार्ग को समझने के बाद, और यह भी समझ लें कि कौन सा हानिकारक है और कौन सा लाभकारी है, तो धर्म और लाभकारी मार्ग के अनुसार अभ्यास करें।

भिक्षुओं, क्या है अधर्म (गलत मार्ग) और क्या है धर्म? क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है?

(1) "गलत दृष्टिकोण अधर्म (गलत मार्ग) है; सही दृष्टिकोण धर्म है। गलत दृष्टिकोण से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही दृष्टिकोण से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

(2) "गलत इरादा अधर्म (गलत मार्ग) है; सही इरादा धर्म है। गलत इरादे से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही इरादे से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

(3) "गलत वाणी अधर्म (गलत मार्ग) है; सही वाणी धर्म है। गलत वाणी से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही वाणी से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

(4) "गलत कर्म अधर्म (गलत मार्ग) है; सही कर्म धर्म है। गलत कर्म से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म): [224] ये हानिकारक हैं। सही कर्म से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म): ये लाभकारी हैं।"

(5) "गलत आजीविका अधर्म (गलत मार्ग) है; सही आजीविका धर्म है। गलत आजीविका की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही आजीविका की स्थिति से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

(6) "गलत प्रयास अधर्म (गलत मार्ग) है; सही प्रयास धर्म है। गलत प्रयास से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही प्रयास से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

(7) "गलत ध्यान (सती) अधर्म (गलत मार्ग) है; सही ध्यान (सती) धर्म है। गलत ध्यान (सती) से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही ध्यान (सती) से विकसित होने वाले अनेक लाभकारी गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

(8) "गलत समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) अधर्म (गलत मार्ग) है; सही समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) धर्म है। गलत समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही समाधि (स्व-लीन/सम्मोहन) की स्थिति से विकास द्वारा सिद्ध होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

(9) "गलत ज्ञान अधर्म (गलत मार्ग) है; सही ज्ञान धर्म है। गलत ज्ञान से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही ज्ञान से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

(10) "गलत मुक्ति अधर्म (गलत मार्ग) है; सही मुक्ति धर्म है। गलत मुक्ति की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही मुक्ति की स्थिति से विकास द्वारा सिद्ध होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

“जब यह कहा गया: ‘भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि क्या गलत है और क्या सही है, और क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है। गलत और क्या गलत है, यह समझने के बाद, और यह भी समझने के बाद कि क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है, धर्म और लाभकारी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए,’ तो इसी संदर्भ में यह कहा गया था।”

---

115 गैर-धम्म (3) (अधम्म3 बिना अधर्म)

भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि कौन सा मार्ग गलत है और कौन सा मार्ग उचित है, और कौन सा हानिकारक है और कौन सा लाभकारी है। गलत मार्ग और सही मार्ग को समझने के बाद, और यह भी समझ लेने के बाद कि कौन सा हानिकारक है और कौन सा लाभकारी है, धर्म और लाभकारी मार्ग के अनुसार अभ्यास करना चाहिए।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह कहकर सुगत (भगवान बुद्ध) अपने आसन से उठे और अपने निवास स्थान में प्रवेश कर गए। 2149 फिर, भगवान (बुद्ध) के जाने के तुरंत बाद, भिक्षुओं ने विचार किया: "हे मित्रों, भगवान (बुद्ध) ने यह संक्षिप्त सारांश दिया: 'भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि कौन सा मार्ग गलत है और कौन सा सही मार्ग है... हमें धर्म के अनुसार और जो लाभकारी है, उसका अभ्यास करना चाहिए।' फिर वे अपने आसन से उठे और बिना इसका विस्तृत अर्थ बताए अपने निवास स्थान में प्रवेश कर गए। अब इसका विस्तृत अर्थ कौन समझाएगा?' तब उन्हें यह विचार आया: "आदरणीय आनंद की गुरु द्वारा प्रशंसा की जाती है और उनके बुद्धिमान साथी भिक्षुओं द्वारा उनका आदर किया जाता है; वे इस संक्षिप्त सारांश का विस्तृत अर्थ समझाने में सक्षम हैं। आइए हम आदरणीय आनंद के पास जाकर उनसे इसका अर्थ पूछें। जब वे हमें समझाएंगे तो हम इसे याद रखेंगे।"

तब वे भिक्षु पूज्य आनंद के पास गए और उनसे अभिवादन किया, जिसके बाद वे एक तरफ बैठ गए और बोले: "मित्र आनंद, भगवान (बुद्ध) ने यह संक्षिप्त सारांश दिया है... फिर वे अपने आसन से उठे और अर्थ का विस्तार से वर्णन किए बिना अपने निवास स्थान में चले

गए। उनके जाने के तुरंत बाद, हमने सोचा: 'मित्रों, भगवान (बुद्ध) ने यह संक्षिप्त सारांश दिया है [ऊपर दिए गए सभी अंशों से लेकर:]... आइए हम पूज्य आनंद के पास जाकर इसका अर्थ पूछें। जब वे इसका अर्थ समझाएंगे, तो हम इसे याद रखेंगे। पूज्य आनंद हमें इसका अर्थ समझाएं।'"

[आदरणीय आनंद ने उत्तर दिया:] "मित्रों, यह ऐसा है मानो कोई व्यक्ति जिसे सार तत्व की आवश्यकता हो, सार तत्व की खोज में भटक रहा हो, और वह सार तत्व से युक्त एक विशाल वृक्ष की जड़ और तने को अनदेखा कर दे, यह सोचकर कि सार तत्व शाखाओं और पत्तियों में खोजना चाहिए। ठीक यही आपके साथ भी है। जब आप गुरु के सामने थे, तब आप भगवान (बुद्ध) के पास से यह सोचकर गुजरे कि आप मुझसे इसका अर्थ पूछेंगे। क्योंकि, मित्रों, जानने से भगवान (बुद्ध) जानते हैं; देखने से वे देखते हैं; वे दृष्टि बन गए हैं, वे ज्ञान बन गए हैं, वे धम्म बन गए हैं, वे ब्रह्म बन गए हैं; वे व्याख्याकार, उद्घोषक, अर्थ के स्पष्टीकरणकर्ता, अमर (अमृत) दाता, धम्म के स्वामी, तथागत (बुद्ध) हैं। यही वह समय था जब आपको भगवान (बुद्ध) [227] के पास जाकर उनसे इसका अर्थ पूछना चाहिए था। आपको इसे अपने मन में रखना चाहिए था क्योंकि वे आपको इसका अर्थ समझाते।"

"निश्चित रूप से, हे मित्र आनंद, जानने पर भगवान (बुद्ध) जानते हैं; देखने पर वे देखते हैं; वे स्वयं दृष्टि बन गए हैं... तथागत (बुद्ध)। वह समय था जब हमें भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उनसे अर्थ पूछना चाहिए था और उनके द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को हमें अपने मन में रखना चाहिए था। फिर भी, पूज्य आनंद की गुरु द्वारा प्रशंसा की जाती है और उनके बुद्धिमान साथी भिक्षुओं द्वारा उनका सम्मान किया जाता है। वे इस सारांश के विस्तृत अर्थ की व्याख्या करने में सक्षम हैं। पूज्य आनंद बिना किसी कठिनाई के इसकी व्याख्या करें।"

"तो सुनो, मित्रों, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी हां, मित्र," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य आनंद ने यह कहा:

"मित्रों, भगवान (बुद्ध) ने विस्तृत अर्थ बताए बिना संक्षेप में यह उपदेश दिया: 'भिक्षुओं, अधर्म और धर्म को समझना चाहिए, और यह भी समझना चाहिए कि क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है। अधर्म और धर्म को, और हानिकारक और लाभकारी को समझने के बाद, धर्म और लाभकारी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए। अब मित्रों, अधर्म और धर्म क्या है? और हानिकारक और लाभकारी क्या है?"

(1) "हे मित्रों, गलत दृष्टिकोण अधर्म (गलत मार्ग) है; सही दृष्टिकोण ही धर्म है। गलत दृष्टिकोण से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही दृष्टिकोण से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

(2) — (9) "गलत इरादा गैर-धम्म (गलत मार्ग) है; सही इरादा धम्म (सही मार्ग) है, ... गलत वाणी गैर-धम्म (गलत मार्ग) है; सही वाणी [228] धम्म है — गलत कर्म गैर-धम्म (गलत मार्ग) है; सही कर्म धम्म है ... गलत आजीविका गैर-धम्म (गलत मार्ग) है; सही आजीविका धम्म है ... गलत प्रयास गैर-धम्म (गलत मार्ग) है; सही प्रयास धम्म है ... गलत सती ध्यान गैर-धम्म (गलत मार्ग) है; सही सती ध्यान धम्म है ... गलत समाधि गैर-धम्म (गलत मार्ग) है; सही समाधि धम्म है ... गलत ज्ञान यह अधर्म (गलत मार्ग) है; सही ज्ञान ही धर्म है...

(10) "गलत मुक्ति अधर्म (गलत मार्ग) है; सही मुक्ति धर्म है। गलत मुक्ति की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही मुक्ति की स्थिति से विकास द्वारा सिद्ध होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

"मित्रों, इस प्रकार मैं भगवान (बुद्ध) के संक्षिप्त वर्णन का विस्तृत अर्थ समझता हूँ। अब, यदि आप चाहें, तो आप स्वयं भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उनसे इसका अर्थ पूछ सकते हैं। भगवान (बुद्ध) द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को आपको याद रखना चाहिए।"

"जी, मित्र," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया, और पूज्य आनंद के कथन से प्रसन्न होकर वे अपने स्थानों से उठे और भगवान (बुद्ध) के पास गए। उन्हें प्रणाम करने के बाद वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से कहा...

"भंते, भगवान (बुद्ध) ने इस सारांश की शिक्षा दी...[वे यहाँ]

जो कुछ घटित हुआ था, उसका वर्णन करते हुए आगे कहा:] [229] , . .फिर, भंते, हम पूज्य आनंद के पास गए और उनसे अर्थ पूछा। पूज्य आनंद ने हमें इन तरीकों से, इन शब्दों और वाक्यांशों में अर्थ समझाया।

"अच्छे, अच्छे भिक्षुओं! आनंद बुद्धिमान हैं। आनंद को अपार ज्ञान प्राप्त है। यदि आप मेरे पास आकर इसका अर्थ पूछते, तो मैं भी आपको आनंद की ही तरह समझा देता। इसका यही अर्थ है, और इसलिए इसे अपने मन में संजो कर रखें।"

---

116 अजिता [2150]

तब तपस्वी अजिता भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए [230] और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"गुरु गौतम, मेरे साथ पंडित नाम का एक तपस्वी है। 2151 उसने पाँच सौ तर्क तैयार किए हैं 2152 जिनके द्वारा अन्य संप्रदायों के लोग, जब उनका खंडन किया जाता है, तो जान जाते हैं: 'हमारा खंडन हो गया है'।"

तब भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, "क्या तुम्हें पंडितों के मामले याद हैं, भिक्षुओं?"

"यही समय है, हे भगवान (बुद्ध)! यही समय है, हे सुगत (भगवान बुद्ध)! भगवान (बुद्ध) से यह सुनकर भिक्षु भगवान (बुद्ध) की कही हुई हर बात को ध्यान में रखेंगे।"

"तो भिक्षुओं, ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"यहाँ, कोई व्यक्ति धम्म के विपरीत एक सिद्धांत का खंडन और उसे गलत साबित करने के लिए धम्म के विपरीत एक सिद्धांत का उपयोग करता है। इस प्रकार, वह धम्म के विपरीत सभा को प्रसन्न करता है। इसी कारण, धम्म के विपरीत सभा शोर मचाने लगती है और चिल्लाने लगती है: 'हे भगवान, वह सचमुच बुद्धिमान हैं! हे भगवान, वह सचमुच बुद्धिमान हैं!' 2153

कोई व्यक्ति धम्म के अनुरूप किसी सिद्धांत का खंडन और उसे गलत साबित करने के लिए धम्म के विपरीत सिद्धांत का प्रयोग करता है। इस प्रकार वह धम्म के विपरीत सभा को प्रसन्न करता है। इसी कारण धम्म के विपरीत सभा शोर मचाने लगती है और चिल्लाने लगती है: 'हे भगवान, वह सचमुच बुद्धिमान हैं! हे भगवान, वह सचमुच बुद्धिमान हैं!'

कोई व्यक्ति धम्म के विपरीत सिद्धांत का उपयोग करके धम्म के अनुरूप और धम्म के विपरीत दोनों सिद्धांतों का खंडन और खंडन करता है। इस प्रकार वह धम्म के विपरीत सभा को प्रसन्न करता है: इसी कारण धम्म के विपरीत सभा शोर मचाने लगती है और चिल्लाने लगती है: 'हे भगवान, वह सचमुच बुद्धिमान हैं! हे भगवान, वह सचमुच बुद्धिमान हैं!' 2154

कोई व्यक्ति धम्म के अनुरूप सिद्धांत का खंडन और उसे गलत साबित करने के लिए धम्म के अनुरूप सिद्धांत का उपयोग करता है। इस प्रकार, वह धम्म के विरुद्ध सभा को प्रसन्न करता है। इसी कारण धम्म के विरुद्ध सभा शोर मचाने लगती है और चिल्लाने लगती है: 'हे भगवान, वह सचमुच बुद्धिमान हैं! हे भगवान, वह सचमुच बुद्धिमान हैं!'

कोई व्यक्ति धम्म के अनुरूप एक सिद्धांत का खंडन और उसे गलत साबित करने के लिए धम्म के अनुरूप ही एक सिद्धांत का प्रयोग करता है। इस प्रकार वह धम्म के अनुरूप सभा को प्रसन्न करता है। इसी कारण धम्म के अनुरूप सभा उत्साहपूर्वक चिल्लाने लगती है: 'हे भगवान, वह सचमुच बुद्धिमान हैं! हे भगवान, वह सचमुच बुद्धिमान हैं!'

भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि क्या गलत है और क्या गलत मार्ग है, और क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है। यह समझ लेने के बाद कि क्या गलत है और क्या गलत है, और क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है, आपको धर्म और लाभकारी मार्ग के अनुसार अभ्यास करना चाहिए।

(सूत्र ठीक उसी प्रकार जारी रहता है जैसे 10:114 में है, और अंत में:)

"जब यह कहा गया था: 'भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि क्या गलत है और क्या सही है, और क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है। गलत और क्या गलत है, यह समझ लेने के बाद, धर्म और लाभकारी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए।' इसी संदर्भ में यह कहा गया था।"

---

117 संगरवा

तब ब्राह्मण संगरव भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से बोले:

"गुरु गौतम, निकटवर्ती तट कौन सा है? दूरवर्ती तट कौन सा है?"

ब्राह्मण, (1) गलत दृष्टि निकटवर्ती तट है, सही दृष्टि दूरवर्ती तट है। (2) गलत इरादा निकटवर्ती तट है, सही इरादा दूरवर्ती तट है। (3) गलत वाणी निकटवर्ती तट है, सही वाणी दूरवर्ती तट है। (4) गलत कर्म निकटवर्ती तट है, सही कर्म दूरवर्ती तट है। (5) गलत आजीविका निकटवर्ती तट है, सही आजीविका दूरवर्ती तट है। (6) गलत प्रयास निकटवर्ती तट है, सही प्रयास दूरवर्ती तट है। (7) गलत ध्यान (सती) निकटवर्ती तट है, सही ध्यान (सती) दूरवर्ती तट है। (8) गलत समाधि (स्व-लीन) निकटवर्ती तट है, सही समाधि (स्व-लीन) दूरवर्ती तट है। (9) गलत ज्ञान निकटवर्ती तट है, सही ज्ञान दूरवर्ती तट है। (10) गलत मुक्ति निकटवर्ती तट है, सही मुक्ति दूरवर्ती तट है। एक, ब्राह्मण, निकटवर्ती तट है, दूसरा दूरवर्ती तट है।

बहुत कम लोग ही

इससे आगे बढ़ते हैं।

बाकी लोग तो बस

किनारे-किनारे ही चलते रहते हैं।

जब धम्म की सही व्याख्या की जाती है,

तो जो लोग उसके अनुसार अभ्यास करते हैं,

वे ही

मृत्यु के उस क्षेत्र से परे जा सकते हैं जिसे पार करना इतना कठिन है।

अंधकारमय गुणों को त्यागकर,

एक बुद्धिमान व्यक्ति को उज्ज्वल गुणों को विकसित करना चाहिए।

घर छोड़कर एकांत जीवन में आने पर,

जहाँ आनंद लेना कठिन होता है, उसे अपने जीवन में सकारात्मक गुणों को विकसित करना चाहिए।

वहाँ एकांत में रहकर

इंद्रिय सुखों का त्याग करके आनंद की खोज करनी चाहिए।

कुछ भी न धारण करके, ज्ञानी व्यक्ति को

मानसिक विकारों से स्वयं को शुद्ध करना चाहिए।

जिनके मन

ज्ञान के तत्वों से सही ढंग से विकसित हो चुके हैं,

जो अनासक्ति के माध्यम से

आसक्ति के त्याग में आनंद पाते हैं: वे

प्रकाशमान, दोषों से रहित,

संसार में तृप्त होने वाले हैं। 2157

———————————————————

118 तट के निकट (ओरिमातिर)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें निकटवर्ती तट और दूरवर्ती तट का ज्ञान दूंगा: ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, निकटवर्ती किनारा क्या है और दूरवर्ती किनारा क्या है? (1) भिक्षुओं, गलत दृष्टिकोण निकटवर्ती किनारा है, सही दृष्टिकोण दूरवर्ती किनारा है... (10) गलत मुक्ति निकटवर्ती किनारा है, सही मुक्ति दूरवर्ती किनारा है। भिक्षुओं, एक निकटवर्ती किनारा है, दूसरा दूरवर्ती किनारा है।

[संलग्न श्लोक पूर्ववर्ती सूत्र के श्लोकों के समान हैं।]

———————————————————

119 पैकोरोहानी (1)

उस अवसर पर, उपोसथ दिवस पर, ब्राह्मण जनुस्सोनी भगवान (बुद्ध) से कुछ दूरी पर एक तरफ खड़े थे, उनका सिर धुला हुआ था, उन्होंने नए सूती वस्त्र पहने हुए थे और उनके हाथ में गीली कुश घास की एक मुट्ठी थी। भगवान (बुद्ध) ने उन्हें वहाँ खड़े देखा और उनसे कहा:

"हे ब्राह्मण, उपोसथ दिवस पर तुम सिर धोकर, नए सूती वस्त्र पहनकर, मुट्ठी भर गीली कुश घास लेकर एक तरफ क्यों खड़े रहते हो? आज ब्राह्मण वंश में क्या हो रहा है?"

"हे गौतम जी, आज ब्राह्मण वंश का पच्चोरोहणी पर्व है।" 2158

लेकिन ब्राह्मण पच्चोरोहणी उत्सव कैसे मनाते हैं?

"हे गौतम जी, उपोसथ पर्व के दिन ब्राह्मण सिर धोकर नए सूती वस्त्र पहनते हैं। फिर वे गीले गोबर से जमीन को लेपते हैं, उसे हरी कुश घास से ढकते हैं और अग्निगृह और उसकी सीमा के बीच लेट जाते हैं। रात भर में वे तीन बार उठते हैं और आदरपूर्वक अग्नि को प्रणाम करते हुए कहते हैं, 'हम पूज्य देवता के सम्मान में अवतरित होते हैं। हम पूज्य देवता के सम्मान में अवतरित होते हैं।' 2159 वे अग्नि को भरपूर घी, तेल और मक्खन अर्पित करते हैं। रात बीत जाने पर वे ब्राह्मणों को विभिन्न प्रकार के उत्तम भोजन का अर्पण करते हैं। हे गौतम जी, इसी प्रकार ब्राह्मण पच्चोरोहणी पर्व मनाते हैं।"

"ब्राह्मणों के संप्रदाय में मनाया जाने वाला पच्चोरोहणी उत्सव, ब्राह्मणों के पच्चोरोहणी उत्सव से बिल्कुल भिन्न होता है।"

"पर कैसे? गुरु गौतम, क्या पुरोहित के अनुशासन में पच्चोरोहणी पर्व मनाया जाता है? यदि गुरु गौतम मुझे यह समझाकर धम्म का पाठ पढ़ाएँ कि पुरोहित के अनुशासन में पच्चोरोहणी पर्व कैसे मनाया जाता है तो अच्छा होगा।"

"तो फिर, ब्राह्मण, ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी हाँ," ब्राह्मण जानूसोनी ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा: [235]

(1) "हे ब्राह्मण, यहाँ श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'गलत दृष्टिकोण का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' ऐसा चिंतन करके वह गलत दृष्टिकोण को त्याग देता है; वह गलत दृष्टिकोण से नीचे उतर जाता है।"

(2) "... 'गलत इरादे का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जीवन में भी बुरा होता है।' ऐसा विचार करने के बाद, वह गलत इरादे को त्याग देता है; वह गलत इरादे से नीचे उतर जाता है।"

(3) "... 'गलत वाणी का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' ऐसा विचार करने पर वह गलत वाणी का त्याग कर देता है; वह गलत वाणी से विलीन हो जाता है।

(4) "... 'गलत कर्म का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जीवन में भी बुरा होता है।' ऐसा विचार करने पर वह गलत कर्म छोड़ देता है; वह गलत कर्म से उतर जाता है।

(5) . . 'गलत आजीविका का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' ऐसा विचार करने पर वह गलत आजीविका छोड़ देता है; वह गलत आजीविका से विलीन हो जाता है।

(6) "... 'गलत प्रयास का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जीवन में भी बुरा होता है।' ऐसा विचार करने के बाद, वह गलत प्रयास को त्याग देता है; वह गलत प्रयास से नीचे उतर जाता है।"

(7) "... 'गलत ध्यान (सती/ध्यान) का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' ऐसा चिंतन करने के बाद, वह गलत ध्यान (सती/ध्यान) का त्याग कर देता है; वह गलत ध्यान से उतर जाता है।"

(एस) ... 'गलत समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' ऐसा चिंतन करने के बाद, वह गलत समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का त्याग कर देता है; वह गलत समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) से उतर जाता है।

(9) . . 'गलत ज्ञान का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' ऐसा चिंतन करने पर वह गलत ज्ञान का त्याग कर देता है; वह गलत ज्ञान से विलीन हो जाता है।

(10) . . 'गलत मुक्ति का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' ऐसा चिंतन करने पर वह गलत मुक्ति का त्याग कर देता है; वह गलत मुक्ति से उतर जाता है।

"हे ब्राह्मण, इसी प्रकार से भगवान की विद्या में पच्चोरोहणी पर्व मनाया जाता है।"

"गुरु गौतम की शिष्या में होने वाला पचोरोहणी उत्सव ब्राह्मणों के पचोरोहणी उत्सव से बिल्कुल भिन्न है। और ब्राह्मणों का पचोरोहणी उत्सव गुरु गौतम की शिष्या में होने वाले पचोरोहणी उत्सव के सोलहवें भाग के भी बराबर नहीं है। [236]

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! उत्कृष्ट, गुरु गौतम! गुरु गौतम ने अनेक तरीकों से धम्म (मार्ग) को स्पष्ट किया है, मानो वे गिरी हुई चीज़ को सीधा कर रहे हों, छिपे हुए को प्रकट कर रहे हों, भटके हुए को रास्ता दिखा रहे हों, या अंधकार में दीपक जला रहे हों ताकि अच्छी दृष्टि वाले लोग आकृतियाँ देख सकें। मैं अब गुरु गौतम, धम्म और भिक्षुओं के संघ की शरण में जाता हूँ। गुरु गौतम मुझे आज से जीवन भर के लिए शरण लेने वाला गृहस्थ अनुयायी समझें।"

---

120 पैकोरोहानी (2)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें उत्तम पच्चोरोहणी पर्व सिखाऊंगा। सुनो..."

"और हे भिक्षुओं, यह श्रेष्ठ पच्चोरोहणी पर्व क्या है? (1) यहाँ; श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'गलत दृष्टिकोण का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' इस प्रकार चिंतन करने पर वह गलत दृष्टिकोण का त्याग करता है; वह गलत दृष्टिकोण से विमुख हो जाता है। (2) 'गलत इरादे का परिणाम'... (3) ...गलत वाणी... (4) ...गलत कर्म... (5) ...गलत आजीविका... (6) ...गलत प्रयास... (7) ...गलत ध्यान (ध्यान/सती)... (8) ...गलत समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन)... (9) ...गलत ज्ञान... (10) ...गलत मुक्ति इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरी है। इस प्रकार चिंतन करने पर वह गलत मुक्ति का त्याग करता है; वह गलत मुक्ति से विमुख हो जाता है। इसे ही श्रेष्ठ पच्चोरोहणी उत्सव कहा जाता है।

---

121 अग्रदूत (पुब्बनगामा सं. पूर्व-गमन)

भिक्षुओं, जिस प्रकार भोर सूर्योदय का अग्रदूत होता है, उसी प्रकार सही दृष्टि लाभकारी गुणों (धम्म) का अग्रदूत होती है। सही दृष्टि वाले व्यक्ति में सही संकल्प उत्पन्न होता है। सही संकल्प वाले व्यक्ति में सही वाणी उत्पन्न होती है। सही वाणी वाले व्यक्ति में सही कर्म उत्पन्न होते हैं। सही कर्म वाले व्यक्ति में सही आजीविका उत्पन्न होती है। सही आजीविका वाले व्यक्ति में सही प्रयास उत्पन्न होते हैं। सही प्रयास वाले व्यक्ति में सही ध्यान (सती/सजगता) उत्पन्न होता है। सही ध्यान (सती/सजगता) वाले व्यक्ति में सही समाधि (स्व-लीन/सन्दूक) [237] उत्पन्न होती है। सही समाधि (स्व-लीन/सन्दूक) वाले व्यक्ति में सही ज्ञान उत्पन्न होता है। सही ज्ञान वाले व्यक्ति में सही मुक्ति उत्पन्न होती है।

---

122 कलंकों का नाश (असवक्खय सं. आश्रव-क्षय)

भिक्षुओं, इन दस चीजों को विकसित और अभ्यास करने से दोषों का नाश होता है। वे दस चीजें कौन सी हैं? सही दृष्टि, सही इरादा, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता), सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), सही ज्ञान और सही मुक्ति। इन दस चीजों को विकसित और अभ्यास करने से दोषों का नाश होता है।

तृतीय. शुद्ध खंड (परिशुद्धवग्गो सं. परिशुद्ध-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

123 प्रथम

भिक्षुओं, ये दस बातें सुगत (भगवान बुद्ध) की साधना के अलावा कहीं और शुद्ध और पवित्र नहीं होतीं। वे दस बातें कौन सी हैं? सही दृष्टिकोण... और सही मुक्ति। ये दस बातें सुगत (भगवान बुद्ध) की साधना के अलावा कहीं और शुद्ध और पवित्र नहीं होतीं।

---

124 सेकंड

भिक्षुओं, ये दस बातें जब अजन्मी होती हैं तो सुगत (भगवान बुद्ध) की साधना के अलावा कहीं और प्रकट नहीं होतीं। वे दस बातें कौन सी हैं? [238] सही दृष्टिकोण और सही मुक्ति। ये दस बातें...

---

125 तीसरा

भिक्षुओं, ये दस बातें केवल सुगत (भगवान बुद्ध) की साधना में ही अत्यंत फलदायी और लाभकारी हैं। वे दस बातें कौन सी हैं? सही दृष्टिकोण... और सही मुक्ति। ये दस बातें...

---

126 चौथा

भिक्षुओं, ये दस बातें कामवासना (राग), घृणा और मोह (मोह) के निवारण का एकमात्र स्रोत हैं, और कहीं नहीं, केवल सुगत (भगवान बुद्ध) की साधना में। वे दस बातें कौन सी हैं? सही दृष्टि... और सही मुक्ति। ये दस बातें।

---

127 पाँचवाँ

भिक्षुओं, ये दस बातें केवल निर्विरता, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण की ओर ले जाती हैं, और कहीं नहीं, केवल सुगत बुद्ध की साधना में ही। वे दस बातें कौन सी हैं? सही दृष्टिकोण और सही मुक्ति। ये दस बातें...

---

128 छठा

"भिक्षुओं, ये दस बातें, विकसित और पोषित होने पर, जब अजन्मी होती हैं तो सुगत (भगवान बुद्ध) के अनुशासन के अलावा कहीं और प्रकट नहीं होतीं। वे दस बातें क्या हैं? [239] सही दृष्टिकोण... और सही मुक्ति। ये दस बातें।"

---

129 सातवां

भिक्षुओं, इन दस बातों का विकास और अभ्यास करने से केवल भगवान की साधना में ही महान फल और लाभ मिलता है। वे दस बातें कौन सी हैं? सही दृष्टिकोण... और सही मुक्ति। ये दस बातें...

---

130 आठवां

भिक्षुओं, इन दस बातों को विकसित और अभ्यास करने से कामवासना (राग), द्वेष (दोष/मोह) और मोह का निवारण होता है, और यह निवारण केवल सुगत (भगवान बुद्ध) के अनुशासन में ही संभव है। वे दस बातें कौन सी हैं? सही दृष्टि... और सही मुक्ति। ये दस बातें।

---

131 नौवां

भिक्षुओं, इन दस बातों का विकास और अभ्यास करने से केवल निर्विरोध, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण ही प्राप्त होते हैं, और कहीं नहीं, केवल सुगत बुद्ध की साधना में ही। वे दस बातें क्या हैं? सही दृष्टिकोण... और सही मुक्ति। ये दस बातें...

---

132 दसवां

भिक्षुओं, ये दस गलत मार्ग हैं। कौन से दस? गलत दृष्टिकोण, गलत इरादा, गलत वाणी, गलत कर्म, गलत आजीविका, गलत प्रयास, गलत ध्यान (सती/ध्यान), गलत समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), गलत ज्ञान और गलत मुक्ति। ये दस गलत मार्ग हैं।

---

133 ग्यारहवां

भिक्षुओं, ये दस सही मार्ग हैं। कौन से दस? सही दृष्टिकोण, सही इरादा, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता), सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), सही ज्ञान और सही मुक्ति। ये दस सही मार्ग हैं।

IV. अच्छा वर्ग (साधुवग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

134 अच्छा (साधु)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें अच्छे और बुरे का ज्ञान दूंगा। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

और हे भिक्षुओं, बुरा क्या है? गलत दृष्टिकोण, गलत इरादा, गलत वाणी, गलत कर्म, गलत आजीविका, गलत प्रयास, गलत ध्यान (सती/ध्यान), गलत समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), गलत ज्ञान और गलत मुक्ति। यही बुरा कहलाता है।

"और हे भिक्षुओं, अच्छा क्या है? [241] सही दृष्टिकोण, सही इरादा, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता), सही समाधि (आत्म-लीनता/तल्लीनता), सही ज्ञान और सही मुक्ति। यही अच्छा कहलाता है।"

---

135 - 144 नोबल धम्म, इत्यादि।

(135) "भिक्षुओं, मैं तुम्हें श्रेष्ठ धम्म और नीच धम्म सिखाऊँगा... (136) ... लाभकारी (कुशल) और हानिकारक (अकुशल)... (137) ... लाभकारी और हानिकारक... [242] ... (138) ... धम्म और अधार्मिक (गलत मार्ग)... (139) ... दूषित धम्म और निष्कलंक धम्म... (140) ... निंदनीय धम्म और निष्कलंक धम्म... [243] (141) ... कष्टदायी धम्म और कष्टरहित धम्म... (142) वह धम्म जो निर्माण की ओर ले जाता है और वह जो विनाश की ओर ले जाता है।" ... (143) ... दुख का परिणाम देने वाला धम्म और सुख का परिणाम देने वाला धम्म ... (214) (144) ... दुख का परिणाम देने वाला धम्म और सुख का परिणाम देने वाला धम्म...

भिक्षुओं, वह कौन सा मार्ग है जो दुख का कारण बनता है? गलत दृष्टिकोण... और गलत मुक्ति। इसे ही दुख का कारण बनने वाला धम्म कहते हैं।

और हे भिक्षुओं, सुख का स्रोत क्या है? सही दृष्टिकोण... और सही मुक्ति। यही सुख का स्रोत कहलाता है।

वी. नोबल

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

145 महान मार्ग

भिक्षुओं, मैं तुम्हें श्रेष्ठ मार्ग और नीच मार्ग सिखाऊंगा। 2160 ध्यान से सुनो और गौर करो। . . . और हे भिक्षुओं, नीच मार्ग क्या है? गलत दृष्टिकोण . . . और गलत मुक्ति। इसे नीच मार्ग कहते हैं।

और हे भिक्षुओं, श्रेष्ठ मार्ग क्या है? सही दृष्टिकोण... और सही मुक्ति। यही श्रेष्ठ मार्ग कहलाता है।

146-154 अंधकारमय पथ, इत्यादि।

(146) "भिक्षुओं, मैं तुम्हें अंधकारमय मार्ग और प्रकाशमय मार्ग सिखाऊंगा 2161 . . . [245] . . .. (147) ... . अच्छा धम्म (मार्ग) और बुरा धम्म . . . (148) . . . अच्छे व्यक्ति का धम्म और बुरे व्यक्ति का धम्म . . . (149) . . . जागृत होने वाला धम्म और जागृत न होने वाला धम्म . . . (150) . . . अनुसरण करने वाला धम्म और अनुसरण न करने वाला धम्म . . . (151) . . . विकसित होने वाला धम्म और विकसित न होने वाला धम्म . . . (152) . . . विकसित होने वाला धम्म और विकसित न होने वाला धम्म . . . (153) . . . स्मरण करने योग्य धम्म और स्मरण न करने योग्य धम्म... (154)... अनुभव करने योग्य धम्म और अनुभव न करने योग्य धम्म

भिक्षुओं, वह धम्म क्या है जिसे अनुभव नहीं किया जा सकता? यह गलत दृष्टिकोण है... और गलत मुक्ति है। इसे ही वह धम्म कहते हैं जिसे अनुभव नहीं किया जा सकता।

भिक्षुओं, वह धम्म क्या है जिसे प्राप्त करना है? सही दृष्टिकोण... और सही मुक्ति। यही प्राप्त करने योग्य धम्म कहलाता है।

चौथा पचास

I. व्यक्ति अनुभाग (पुग्गलवग्गो सं. पुरुष-युगल-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

155 से संबद्ध (सेवितब्बा)

भिक्षुओं, दस गुणों वाले व्यक्ति से संगति नहीं रखनी चाहिए। वे दस गुण कौन से हैं? गलत दृष्टिकोण, गलत इरादा, गलत वाणी, गलत कर्म, गलत आजीविका, गलत प्रयास, गलत ध्यान (सती/ध्यान), गलत समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), गलत ज्ञान और गलत मुक्ति। इन दस गुणों वाले व्यक्ति से संगति नहीं रखनी चाहिए।

भिक्षुओं, दस गुणों से युक्त व्यक्ति का साथ रखना चाहिए। वे दस गुण कौन से हैं? सही दृष्टि, सही इरादा, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही जागरूकता, सही समाधि, सही ज्ञान और सही मुक्ति। इन दस गुणों से युक्त व्यक्ति का साथ रखना चाहिए।

156-166 रिज़ॉर्ट, आदि (भजीताब्बा)

(156) "भिक्षुओं, दस गुणों वाले व्यक्ति की शरण नहीं लेनी चाहिए... शरण लेनी चाहिए... (157) ... सेवा नहीं करनी चाहिए... सेवा करनी चाहिए... (158) ...

आदर नहीं करना चाहिए... आदर करना चाहिए (159)... नहीं करना चाहिए

प्रशंसा... प्रशंसा करनी चाहिए... (160) ... आदर नहीं करना चाहिए... आदर करना चाहिए... (161) ... सम्मान नहीं दिखाना चाहिए... दस गुणों वाले व्यक्ति का सम्मान करना चाहिए... (162) ... दस गुणों वाला व्यक्ति सफल नहीं होता... सफल होता है... (163) ... शुद्ध नहीं होता... शुद्ध होता है... (164) ... अहंकार पर विजय नहीं पाता... अहंकार पर विजय पाता है... (165) ... पन्ना (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि नहीं होती... पन्ना (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि होती है... (166) ... बहुत दोष उत्पन्न करता है... बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे दस क्या हैं? सही दृष्टि, सही इरादा, सही वाणी, सही कर्म, सही आजीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता), सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), सही ज्ञान और सही मुक्ति। इन दस गुणों से युक्त व्यक्ति बहुत पुण्य अर्जित करता है।

II. जानूसोनी खंड

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

167 ब्राह्मणपकोरोहानी (एल) [2162]

उस अवसर पर, उपोसथ दिवस पर, ब्राह्मण जनुस्सोनी भगवान (बुद्ध) से कुछ दूरी पर एक तरफ खड़े थे, उनका सिर धुला हुआ था, उन्होंने नए सूती वस्त्र पहने हुए थे और उनके हाथ में गीली कुश घास की एक मुट्ठी थी। भगवान (बुद्ध) ने उन्हें वहाँ खड़े देखा और उनसे कहा:

"हे ब्राह्मण, उपोसथ दिवस पर तुम सिर धोकर, नए सूती वस्त्र पहनकर, मुट्ठी भर गीली कुश घास लेकर एक तरफ क्यों खड़े रहते हो? आज ब्राह्मण वंश में क्या हो रहा है?"

"आज, हे गुरु गौतम, ब्राह्मण वंश का पच्चोरोहणी उत्सव है।" [250]

"पर हे ब्राह्मण, ब्राह्मण पच्चोरोहणी पर्व कैसे मनाते हैं?"

"हे गौतम जी, उपोसथ पर्व के दिन ब्राह्मण सिर धोकर नए सूती वस्त्र पहनते हैं। फिर वे गीले गोबर से जमीन को लेपते हैं, उसे हरी कुश घास से ढकते हैं और प्रांगण और अग्निगृह के बीच लेट जाते हैं। रात भर में वे तीन बार उठते हैं और आदरपूर्वक अग्नि को प्रणाम करते हुए कहते हैं, 'हम पूज्य के सम्मान में अवतरित होते हैं। हम पूज्य के सम्मान में अवतरित होते हैं।' वे अग्नि को भरपूर घी, तेल और मक्खन अर्पित करते हैं। रात बीत जाने पर वे ब्राह्मणों को विभिन्न प्रकार के उत्तम भोजन का भोज देते हैं। हे गौतम जी, ब्राह्मण इसी प्रकार पच्चोरोहणी पर्व मनाते हैं।"

"ब्राह्मणों के संप्रदाय में मनाया जाने वाला पच्चोरोहणी उत्सव, ब्राह्मणों के पच्चोरोहणी उत्सव से बिल्कुल भिन्न होता है।"

"पर कैसे? गुरु गौतम, क्या पुरोहित के अनुशासन में पच्चोरोहणी पर्व मनाया जाता है? यदि गुरु गौतम मुझे यह समझाकर धम्म का पाठ पढ़ाएँ कि पुरोहित के अनुशासन में पच्चोरोहणी पर्व कैसे मनाया जाता है तो अच्छा होगा।"

"तो फिर, ब्राह्मण, ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

“जी हां,” ब्राह्मण जानूसोनी ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

(1) "हे ब्राह्मण, यहाँ श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'जीवन के विनाश का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा है।' ऐसा चिंतन करके वह जीवन के विनाश का त्याग कर देता है; वह जीवन के विनाश से नीचे उतर जाता है।"

(2) "... 'जो कुछ नहीं दिया गया है उसे लेने का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जीवन में भी बुरा होता है।' ऐसा विचार करने के बाद, वह जो कुछ नहीं दिया गया है उसे लेने का त्याग कर देता है; वह जो कुछ नहीं दिया गया है उसे लेने से नीचे उतर जाता है।"

(3) "... 'यौन दुराचार का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जीवन में भी बुरा होता है।' ऐसा विचार करने पर वह यौन दुराचार का त्याग कर देता है; वह यौन दुराचार से मुक्त हो जाता है।

(4) . 'झूठे वचन का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जीवन में भी बुरा होता है।' [251] ऐसा चिंतन करने पर वह झूठे वचन का त्याग करता है; वह झूठे वचन से उतर जाता है।

(5) . . 'विभाजनकारी वाणी का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' ऐसा चिंतन करने के बाद, वह विभाजनकारी वाणी का त्याग कर देता है; वह विभाजनकारी वाणी से विमुख हो जाता है।

(6) ... 'कठोर वाणी का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' ऐसा विचार करने पर वह कठोर वाणी का त्याग कर देता है; वह कठोर वाणी से विमुख हो जाता है।

(7) 'व्यर्थ की बातों का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा होता है।' ऐसा विचार करने के बाद, वह व्यर्थ की बातों को त्याग देता है; वह व्यर्थ की बातों से विमुख हो जाता है।

(8) "... "लालसा का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जीवन में भी बुरा होता है।" ऐसा चिंतन करने के बाद, वह लालसा का त्याग कर देता है; वह लालसा से नीचे उतर जाता है।

(9) "... 'द्वेष का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जीवन में भी बुरा होता है।' ऐसा विचार करने पर वह द्वेष का त्याग कर देता है; वह द्वेष से मुक्त हो जाता है।"

(10) "...गलत दृष्टिकोण का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जीवन में भी बुरा होता है। ऐसा चिंतन करने पर वह गलत दृष्टिकोण को त्याग देता है; वह गलत दृष्टिकोण से नीचे उतर जाता है।"

"हे ब्राह्मण, इसी प्रकार से भगवान की विद्या में पच्चोरोहनल पर्व मनाया जाता है।"

"गुरु गौतम की शिष्या में मनाया जाने वाला पच्चोरोहण उत्सव ब्राह्मणों के पच्चोरोहण उत्सव से बिल्कुल भिन्न है। और ब्राह्मणों का पच्चोरोहण उत्सव गुरु गौतम की शिष्या में मनाए जाने वाले पच्चोरोहण उत्सव के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं है।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! . . . [जैसा कि 10:119 में है] . . . गुरु गौतम मुझे एक गृहस्थ अनुयायी समझें जिसने आज से जीवन के लिए शरण ली है।"

---

168 अरियापकोरोहानी (2)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें पवित्र पचोरोहनल उत्सव के बारे में सिखाऊंगा। सुनो..."

"और हे भिक्षुओं, यह श्रेष्ठ पच्चोरोहण पर्व क्या है? [252] (1) यहाँ, श्रेष्ठ शिष्य इस प्रकार चिंतन करता है: 'जीवन के विनाश का परिणाम इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा है।' ऐसा चिंतन करने के बाद, वह जीवन के विनाश का त्याग कर देता है; वह जीवन के विनाश से अवतरित होता है। (2) 'जो नहीं दिया गया है उसे लेने का परिणाम... (3) ... यौन दुराचार... (4) ... झूठा वाणी... (5) ... विभाजनकारी वाणी... (6) ... कठोर वाणी... (7) ... व्यर्थ की बातें... (8) ... लालसा... (9) ... दुर्भावना... (10) ... गलत दृष्टिकोण इस जीवन में और भविष्य के जन्मों में भी बुरा है।' इस प्रकार चिंतन करने के बाद, वह गलत दृष्टिकोण को त्याग देता है; वह गलत दृष्टिकोण से नीचे उतरता है। इसे ही श्रेष्ठ पच्चोरोहणी उत्सव कहा जाता है।

---

169 संगरवा [2163]

तब ब्राह्मण संगरव भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से बोले:

"मास्टर गोटांटा, निकटवर्ती तट कौन सा है? दूरवर्ती तट कौन सा है?"

"ब्राह्मण, (1) जीवन का विनाश निकट तट है, जीवन के विनाश से परहेज दूर तट है। (2) जो नहीं दिया गया है उसे लेना निकट तट है, जो नहीं दिया गया है उसे लेने से परहेज दूर तट है। (3) यौन दुराचार निकट तट है, यौन दुराचार से परहेज दूर तट है। (4) झूठ बोलना निकट तट है, झूठ बोलने से परहेज दूर तट है। (5) विभाजनकारी बोलना निकट तट है, विभाजनकारी बोलने से परहेज दूर तट है। (6) कठोर बोलना निकट तट है, कठोर बोलने से परहेज दूर तट है। (7) व्यर्थ की बातें करना निकट तट है, व्यर्थ की बातों से परहेज दूर तट है। (8) लालसा निकट तट है, लालसा का अभाव दूर तट है। (9) द्वेष निकट तट है, सद्भावना दूर तट है। (10) गलत दृष्टिकोण निकट तट है, सही दृष्टिकोण दूर तट है। हे ब्राह्मण, एक निकट तट है, दूसरा दूर तट है।" [253]

बहुत कम लोग ही

इससे आगे बढ़ते हैं।

बाकी लोग तो बस

किनारे-किनारे ही चलते रहते हैं।

जब धम्म की सही व्याख्या की जाती है,

तो जो लोग उसके अनुसार अभ्यास करते हैं,

वे ही

मृत्यु के उस क्षेत्र से परे जा सकते हैं जिसे पार करना इतना कठिन है।

अंधकारमय गुणों को त्यागकर,

एक बुद्धिमान व्यक्ति को उज्ज्वल गुणों को विकसित करना चाहिए।

घर छोड़कर एकांत जीवन में आने पर,

जहाँ आनंद लेना कठिन होता है—

वहाँ एकांत में रहकर

इंद्रिय सुखों का त्याग करके आनंद की खोज करनी चाहिए।

कुछ भी न धारण करके, ज्ञानी व्यक्ति को

मानसिक विकारों से स्वयं को शुद्ध करना चाहिए।

जिनके मन

ज्ञान के कारकों में सही ढंग से विकसित हो चुके हैं,

जो अनासक्ति के माध्यम से

आसक्ति के त्याग में आनंद पाते हैं:

वे प्रकाशमान होते हैं, उनके सारे दोष नष्ट हो जाते हैं,

वे संसार में तृप्त हो जाते हैं।

---

170 निकटवर्ती तट (ओरिमा)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें निकटवर्ती और दूरवर्ती दोनों के बारे में सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और गौर करो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, निकटवर्ती किनारा क्या है और दूरवर्ती किनारा क्या है? (1) हे भिक्षुओं, जीवन का विनाश निकटवर्ती किनारा है, जीवन के विनाश से बचना दूरवर्ती किनारा है। (2) जो नहीं दिया गया है उसे लेना निकटवर्ती किनारा है, जो नहीं दिया गया है उसे लेने से बचना दूरवर्ती किनारा है। (3) यौन दुराचार निकटवर्ती किनारा है, यौन दुराचार से बचना दूरवर्ती किनारा है। (4) झूठ बोलना निकटवर्ती किनारा है, झूठ बोलने से बचना दूरवर्ती किनारा है। (5) फूट डालने वाला बोलना निकटवर्ती किनारा है, फूट डालने वाले बोलने से बचना दूरवर्ती किनारा है। (6) कठोर बोलना निकटवर्ती किनारा है, कठोर बोलने से बचना दूरवर्ती किनारा है। (7) व्यर्थ की बातें करना निकटवर्ती किनारा है, व्यर्थ की बातों से बचना दूरवर्ती किनारा है। (8) लालसा निकटवर्ती किनारा है, लालसा का अभाव दूरवर्ती किनारा है। (9) द्वेष निकटवर्ती किनारा है, सद्भावना दूरवर्ती किनारा है। (10) गलत दृष्टिकोण निकटवर्ती किनारा है, सही दृष्टिकोण दूरवर्ती किनारा है। एक ही है, भिक्षुओं, एक निकटवर्ती किनारा है, दूसरा दूरवर्ती किनारा है।

[संलग्न श्लोक पूर्ववर्ती सूत्र के श्लोकों के समान हैं।]

बहुत कम लोग ही

इससे आगे बढ़ते हैं।

बाकी लोग तो बस

किनारे-किनारे ही चलते रहते हैं।

जब धम्म (मार्ग) की सही व्याख्या की जाती है,

तो जो लोग उसके अनुसार अभ्यास करते हैं,

वे ही

मृत्यु के उस क्षेत्र से परे जा सकेंगे जिसे पार करना इतना कठिन है।

अंधकारमय गुणों को त्यागकर,

एक बुद्धिमान व्यक्ति को उज्ज्वल गुणों को विकसित करना चाहिए।

घर छोड़कर एकांत जीवन में आने पर,

जहाँ आनंद लेना कठिन होता है—

वहाँ एकांत में रहकर

इंद्रिय सुखों का त्याग करके आनंद की खोज करनी चाहिए।

कुछ भी न धारण करके, ज्ञानी व्यक्ति को

मानसिक विकारों से स्वयं को शुद्ध करना चाहिए।

जिनके मन

ज्ञान के तत्वों में सही ढंग से विकसित हो चुके हैं, जो अनासक्ति के माध्यम से आसक्ति के त्याग में

आनंद पाते हैं : वे प्रकाशमान होते हैं, उनके सारे दोष नष्ट हो जाते हैं, वे संसार में तृप्त हो जाते हैं।

---

171 गैर-धम्म (1) (अधम्म बिना अधर्म)

भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि कौन सा मार्ग धर्म के विरुद्ध है और कौन सा मार्ग हानिकारक है, तथा कौन सा मार्ग धर्म के अनुसार लाभकारी है। धर्म के विरुद्ध और लाभकारी मार्ग को समझ लेने के बाद, धर्म के अनुसार और लाभकारी मार्ग का अभ्यास करना चाहिए।

भिक्षुओं, अधार्मिक (गलत मार्ग) और हानिकारक क्या है? जीवन का विनाश, बिना माँगे वस्तुएँ लेना, यौन दुराचार, झूठी वाणी, फूट डालने वाली वाणी, कठोर वाणी, व्यर्थ की बातें, लालसा, द्वेष और गलत दृष्टिकोण। यही अधार्मिक (गलत मार्ग) और हानिकारक कहलाता है।

भिक्षुओं, धम्म क्या है और इससे क्या लाभ होता है? जीव-जंतुओं को नष्ट करने से बचना, बिना माँगे कुछ लेने से बचना, यौन दुराचार से बचना, झूठी वाणी से बचना, फूट डालने वाली वाणी से बचना, कठोर वाणी से बचना, व्यर्थ की बातों से बचना, लालसा न करना, सद्भावना रखना और सही दृष्टिकोण रखना। यही धम्म है और इससे लाभ होता है।

"जब यह कहा गया: 'भिक्षुओं, जो अधार्मिक (गलत मार्ग) और हानिकारक है, उसे समझना चाहिए, और जो धम्म और लाभकारी है, उसे भी समझना चाहिए। अधार्मिक (गलत मार्ग) और हानिकारक, तथा धम्म और लाभकारी को समझने के बाद, धम्म और लाभकारी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए,' तो इसी संदर्भ में यह कहा गया था।" [255]

---

172 गैर-धम्म (2) (अधम्म2 बिना अधर्म)

भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि कौन सा धम्म (गलत मार्ग) है और कौन सा धम्म (सही मार्ग) है, और कौन सा हानिकारक है और कौन सा लाभकारी है। जब आप यह समझ लें कि कौन सा धम्म (गलत मार्ग) है और कौन सा धम्म है, और कौन सा हानिकारक है और कौन सा लाभकारी है, तो आपको धम्म (मार्ग) और लाभकारी मार्ग के अनुसार अभ्यास करना चाहिए।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह कहकर सुगत (भगवान बुद्ध) अपने आसन से उठे और अपने निवास स्थान में प्रवेश कर गए। भगवान (बुद्ध) के जाने के तुरंत बाद भिक्षुओं ने विचार किया, "हे मित्रों, भगवान (बुद्ध) ने इस संक्षिप्त सारांश का उपदेश दिया: 'भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि क्या धर्म नहीं है (गलत मार्ग) और क्या धर्म है... हमें धर्म के अनुसार और जो लाभकारी है, उसका अभ्यास करना चाहिए।' फिर वे अपने आसन से उठे और बिना इसका विस्तृत अर्थ बताए अपने निवास स्थान में प्रवेश कर गए। अब इसका विस्तृत अर्थ कौन समझाएगा?" तब उन्हें यह विचार आया, "पूजनीय महाकच्चना की गुरु द्वारा प्रशंसा की जाती है और उनके ज्ञानी साथी भिक्षुओं द्वारा उनका आदर किया जाता है; वे इस संक्षिप्त सारांश का विस्तृत अर्थ समझाने में सक्षम हैं। आइए हम पूज्य महाकच्चना के पास जाकर उनसे इसका अर्थ पूछें। जब वे हमें समझाएंगे तो हम इसे याद रखेंगे।"

तब वे भिक्षु पूज्य महाकच्चना के पास पहुँचे और उनसे अभिवादन किया, जिसके बाद वे एक तरफ बैठ गए और बोले: "मित्र महाकच्चना, भगवान (बुद्ध) ने यह संक्षिप्त सारांश [256] दिया..." फिर वे अपने आसन से उठे।

और उन्होंने अर्थ का विस्तार से वर्णन किए बिना ही अपने निवास में प्रवेश कर लिया। उनके जाने के तुरंत बाद, हमने सोचा: 'मित्रों, भगवान (बुद्ध) ने यह संक्षिप्त सारांश दिया है... (ऊपर दिए गए सभी कथनों के अनुसार, आगे:) ...आइए हम पूज्य महाकच्चना के पास जाकर इसका अर्थ पूछें। जब वे हमें इसका अर्थ समझाएंगे, तो हम इसे याद रखेंगे। पूज्य महाकच्चना हमें इसका अर्थ समझाएं।'

[आदरणीय महाकच्चना ने उत्तर दिया:] "मित्रों, यह ऐसा है मानो कोई व्यक्ति जिसे सार तत्व की आवश्यकता हो, उसे खोजता हुआ, सार तत्व की तलाश में भटकता हुआ, सार तत्व से युक्त एक विशाल वृक्ष की जड़ और तने को अनदेखा कर दे, यह सोचकर कि सार तत्व शाखाओं और पत्तियों में खोजना चाहिए। ठीक यही आपके साथ भी है। जब आप गुरु के सामने थे, तब आप भगवान (बुद्ध) के पास से यह सोचकर गुजरे कि आप मुझसे इसका अर्थ पूछेंगे। क्योंकि, मित्रों, जानने से भगवान (बुद्ध) जानते हैं; देखने से वे देखते हैं; वे दृष्टि बन गए हैं, वे ज्ञान बन गए हैं, वे धम्म बन गए हैं, वे ब्रह्म बन गए हैं; वे व्याख्याकार, उद्घोषक, अर्थ के स्पष्टीकरणकर्ता, अमरता के दाता, धम्म के स्वामी, तथागत (बुद्ध) हैं। यही वह समय था जब आपको भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उनसे इसका अर्थ पूछना चाहिए था। आपको इसे अपने मन में रखना चाहिए था क्योंकि वे आपको इसका अर्थ समझाते।"

"निश्चित रूप से, हे मित्र कच्चना, जानते हुए भगवान (बुद्ध) जानते हैं; देखते हुए वे देखते हैं; वे स्वयं दृष्टि बन गए हैं... तथागत (बुद्ध)। वह समय था जब हमें भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उनसे अर्थ पूछना चाहिए था और उनके द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को हमें अपने मन में रखना चाहिए था। फिर भी, पूज्य महाकच्चना की गुरु द्वारा प्रशंसा की जाती है और उनके बुद्धिमान साथी भिक्षुओं द्वारा उनका सम्मान किया जाता है। वे इस सारांश के विस्तृत अर्थ की व्याख्या करने में सक्षम हैं। पूज्य महाकच्चना को बिना किसी कठिनाई के इसकी व्याख्या करनी चाहिए।"

"तो सुनो, मित्रों, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी हां, मित्र," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य महाकच्चना ने यह कहा:

"मित्रों, भगवान (बुद्ध) ने विस्तृत अर्थ बताए बिना संक्षेप में यह उपदेश दिया: 'भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि क्या अधर्म (गलत मार्ग) है और क्या धर्म है, और क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है। अधर्म (गलत मार्ग) और धर्म को समझने के बाद, और यह भी समझने के बाद कि क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है, धर्म और लाभकारी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए।' तो मित्रों, अधर्म (गलत मार्ग) क्या है और धर्म क्या है? और क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है?"

(1) "हे मित्रों, जीवन का विनाश करना अधर्म (गलत मार्ग) है; जीवन के विनाश से बचना ही धर्म है। जीवन के विनाश से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण हानिकारक हैं। जीवन के विनाश से बचने की स्थिति में विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण लाभकारी हैं।"

(2) "जो कुछ दिया नहीं गया है उसे लेना अधर्म (गलत मार्ग) है; जो कुछ दिया नहीं गया है उसे न लेना धर्म है। [258] जो कुछ दिया नहीं गया है उसे लेने की शर्त से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। जो कुछ दिया नहीं गया है उसे न लेने की शर्त से विकास द्वारा सिद्ध होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

(3) यौन दुराचार अधर्म (गलत मार्ग) है; यौन दुराचार से परहेज़ करना धर्म है। यौन दुराचार से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण हानिकारक हैं। यौन दुराचार से परहेज़ करने पर जो अनेक कुशल गुण विकसित होते हैं, वे लाभकारी हैं।

(4) "झूठा भाषण अधर्म (गलत मार्ग) है; झूठे भाषण से परहेज़ करना धर्म है। झूठे भाषण से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण हानिकारक हैं। झूठे भाषण से परहेज़ करने पर प्राप्त होने वाले अनेक कुशल गुण लाभकारी हैं।

(5) "विभाजनकारी वाणी अधर्म (गलत मार्ग) है; विभाजनकारी वाणी से परहेज़ करना धर्म है। विभाजनकारी वाणी से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण हानिकारक हैं। विभाजनकारी वाणी से परहेज़ करने पर जो अनेक लाभकारी गुण (धर्म) सिद्ध होते हैं, वे लाभकारी हैं।"

(6) कठोर वाणी अधर्म (गलत मार्ग) है; कठोर वाणी से परहेज़ करना धर्म है। कठोर वाणी से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण हानिकारक हैं। कठोर वाणी से परहेज़ करने पर जो अनेक कुशल गुण विकसित होते हैं, वे लाभकारी हैं।

(7) "व्यर्थ की बातें करना अधर्म है; व्यर्थ की बातों से बचना ही धर्म है। व्यर्थ की बातों से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण हानिकारक हैं। व्यर्थ की बातों से बचने पर जो अनेक लाभकारी गुण सिद्ध होते हैं, वे लाभकारी हैं।"

(8) "लालसा अधर्म (गलत मार्ग) है; अनाच्छादन धर्म है। लालसा की स्थिति से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण हानिकारक हैं। लालसा की स्थिति से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण लाभकारी हैं।"

(9) "द्वेष भावना धम्म नहीं है; सद्भाव भावना ही धम्म है। वे अनेक अकुशल गुण जो द्वेष की स्थिति से उत्पन्न होते हैं, हानिकारक हैं। वे अनेक कुशल गुण जो सद्भाव भावना की स्थिति से विकसित होकर पूर्ण होते हैं, लाभकारी हैं।"

(10) "गलत दृष्टिकोण अधर्म (गलत मार्ग) है; सही दृष्टिकोण धर्म है। गलत दृष्टिकोण से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही दृष्टिकोण से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

"मित्रों, [259] इस प्रकार मैं भगवान (बुद्ध) के संक्षिप्त सारांश का विस्तृत अर्थ समझता हूँ। अब, यदि आप चाहें, तो आप स्वयं भगवान (बुद्ध) के पास जाकर उनसे इसका अर्थ पूछ सकते हैं। भगवान (बुद्ध) द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को आपको याद रखना चाहिए।"

“जी हां, मित्र,” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया, और पूज्य महाकच्चना के कथन से प्रसन्न होकर वे अपने स्थान से उठे और भगवान (बुद्ध) के पास गए। उन्हें प्रणाम करने के बाद वे एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा...

भगवान (बुद्ध): "भंते, भगवान (बुद्ध) ने यह सारांश बताया [यहाँ वे सभी घटित घटनाओं का वर्णन करते हुए आगे कहते हैं:] ... फिर, भंते, हम पूज्य महाकच्चना के पास गए और उनसे इसका अर्थ पूछा। पूज्य महाकच्चना ने हमें इसका अर्थ इन शब्दों और वाक्यांशों में समझाया।"

"अच्छे, अच्छे भिक्षुओं! महाकच्चन ज्ञानी हैं। महाकच्चन को अपार ज्ञान प्राप्त है। यदि आप मेरे पास आकर इसका अर्थ पूछते, तो मैं भी आपको महाकच्चन की ही तरह समझाता। इसका यही अर्थ है, और इसलिए इसे याद रखें।"

---

173 गैर-धम्म (गलत मार्ग) (3) (अधम्म 3 बिना अधर्म)

भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि क्या गलत है और क्या गलत मार्ग है, और क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है। गलत मार्ग और धर्म को समझने के बाद, और यह भी समझ लें कि क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है, तो धर्म और लाभकारी के अनुसार अभ्यास करें।

भिक्षुओं, क्या है अधर्म (गलत मार्ग) और क्या है धर्म? क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है?

(1) जीवन का विनाश अधर्म (गलत मार्ग) है; जीवन के विनाश से बचना ही धर्म है। जीवन के विनाश से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण हानिकारक हैं। जीवन के विनाश से बचने की स्थिति में विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण लाभकारी हैं।

(2) जो नहीं दिया गया है उसे लेना अधर्म (गलत मार्ग) है; जो नहीं दिया गया है उसे लेने से बचना धर्म (सही मार्ग) है। . . . (3) यौन दुराचार [261] अधर्म (गलत मार्ग) है; यौन दुराचार से बचना धर्म है। . . . (4) झूठा वाणी अधर्म (गलत मार्ग) है; झूठा वाणी से बचना धर्म है। . . (5) विभाजनकारी वाणी अधर्म (गलत मार्ग) है; विभाजनकारी वाणी से बचना धर्म है। . . . (6) कठोर वाणी अधर्म (गलत मार्ग) है; कठोर वाणी से बचना धर्म है। . . . (7) व्यर्थ की बातें अधर्म (गलत मार्ग) हैं; व्यर्थ की बातों से बचना धर्म है। . . . (8) लालसा अधर्म (गलत मार्ग) है; लालसा न करना ही धम्म है (9) द्वेष धम्म नहीं है; सद्भावना ही धम्म है।

(10) "गलत दृष्टिकोण अधर्म (गलत मार्ग) है; सही दृष्टिकोण धर्म है। गलत दृष्टिकोण से उत्पन्न होने वाले अनेक अकुशल गुण (धर्म) हानिकारक हैं। सही दृष्टिकोण से विकसित होने वाले अनेक कुशल गुण (धर्म) लाभकारी हैं।"

"जब यह कहा गया कि 'भिक्षुओं, यह समझना चाहिए कि क्या अधर्म (गलत मार्ग) है और क्या धर्म है, और क्या हानिकारक है और क्या लाभकारी है। अधर्म (गलत मार्ग) और धर्म, तथा हानिकारक और लाभकारी को समझने के बाद, धर्म और लाभकारी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए,' तो इसी संदर्भ में यह कहा गया था।"

---

174 कम्मा (कर्म) के कारण (कम्मानिदान सं. कर्म-निदान)

भिक्षुओं, मैं कहता हूँ, जीवन का विनाश तीन प्रकार से होता है: लोभ से, घृणा से और मोह से। जो नहीं दिया गया है उसे लेना भी तीन प्रकार से होता है: लोभ से, घृणा से और मोह से। यौन दुराचार भी तीन प्रकार से होता है: लोभ से, घृणा से और मोह से! झूठ बोलना भी तीन प्रकार से होता है: लोभ से, घृणा से और मोह से। फूट डालने वाली बातें भी तीन प्रकार से होती हैं: लोभ से, घृणा से और मोह से। कठोर बातें भी तीन प्रकार से होती हैं: लोभ से, घृणा से और मोह से। व्यर्थ की बातें भी तीन प्रकार से होती हैं: लोभ से, घृणा से और मोह से। लालसा भी तीन प्रकार से होती है: लोभ से, मैं कहता हूँ, द्वेष भी तीन प्रकार का होता है: लोभ से उत्पन्न, घृणा से उत्पन्न और मोह से उत्पन्न। मैं कहता हूँ, गलत मत भी तीन प्रकार का होता है: लोभ से उत्पन्न, घृणा से उत्पन्न और मोह से उत्पन्न।

इस प्रकार, भिक्षुओं, लोभ कर्म का स्रोत है; घृणा कर्म का स्रोत है; मोह कर्म का स्रोत है। लोभ के नाश से कर्म का एक स्रोत नष्ट हो जाता है। घृणा के नाश से कर्म का एक स्रोत नष्ट हो जाता है। मोह के नाश से कर्म का एक स्रोत नष्ट हो जाता है।

---

175 परिहार (परिकमना)

भिक्षुओं, यह धम्म बचाव का एक साधन प्रदान करता है। इसमें बचाव के साधन का अभाव नहीं है। और यह धम्म बचाव का साधन प्रदान करता है, फिर भी इसमें बचाव के साधन का अभाव क्यों नहीं है?

(1) जीवन का संहार करने वाले को जीवन के संहार से बचना चाहिए। (2) जो बिना दिए वस्तुएँ लेता है, उसे बिना दिए वस्तुएँ लेने से बचना चाहिए। (3) यौन दुराचार में लिप्त होने वाले को यौन दुराचार से बचना चाहिए। (4) झूठ बोलने वाले को झूठ बोलने से बचना चाहिए। (5) फूट डालने वाली बातें करने वाले को फूट डालने वाली बातों से बचना चाहिए। (6) कठोर बातें करने वाले को कठोर बातों से बचना चाहिए। (7) व्यर्थ की बातों में लिप्त होने वाले को व्यर्थ की बातों से बचना चाहिए। (8) लालसा से भरे व्यक्ति को लालसा से दूर रहना चाहिए। (9) द्वेष से भरे व्यक्ति को सद्भावना रखनी चाहिए। (10) गलत मत रखने वाले व्यक्ति को सही मत रखना चाहिए।

"इस प्रकार, भिक्षुओं, यह धम्म बचाव का एक साधन प्रदान करता है और बचाव के साधन से वंचित नहीं है।" [263]

---

176 कुंडा

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) पावा में चुंडा नामक लोहार के पुत्र के आम के बाग में निवास कर रहे थे। 2165 तब चुंडा, जो लोहार का पुत्र था, भगवान (बुद्ध) के पास आया, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गया। तब भगवान (बुद्ध) ने उससे कहा:

"कुंडा, तुम किसके पवित्रिकरण अनुष्ठान 2166 को पसंद करते हो?"

"भंते, मुझे पश्चिम के ब्राह्मणों द्वारा निर्धारित पवित्रता के अनुष्ठान अधिक पसंद हैं, जो जलपात्र लेकर घूमते हैं, जलीय पौधों की माला पहनते हैं, पवित्र अग्नि की देखभाल करते हैं और स्वयं को जल में विसर्जित करते हैं।"

"और हे चुंडा, पश्चिम के ब्राह्मण अपने शुद्धिकरण अनुष्ठानों का निर्धारण कैसे करते हैं?"

"हे भंते, पश्चिम के ब्राह्मण अपने शिष्य को इस प्रकार आज्ञा देते हैं: 'हे भले मनुष्य, सुबह जल्दी उठकर पलते ही जमीन को थपथपाओ। यदि जमीन को न थपथपाओ, तो गीले गोबर को थपथपाओ। यदि गीले गोबर को न थपथपाओ, तो हरी घास को थपथपाओ। यदि हरी घास को न थपथपाओ, तो पवित्र अग्नि की देखभाल करो। यदि पवित्र अग्नि की देखभाल न करो, तो सूर्य को आदरपूर्वक प्रणाम करो। यदि सूर्य को आदरपूर्वक प्रणाम न करो, तो संध्या सहित तीन बार जल में स्नान करो।' पश्चिम के ब्राह्मण इसी प्रकार अपने शुद्धिकरण के अनुष्ठानों का विधान करते हैं। मुझे उनके ही शुद्धिकरण के अनुष्ठान प्रिय हैं।"

"चुंडा, जो कि भगवान के अनुशासन में शुद्धि है, पश्चिम के ब्राह्मणों द्वारा निर्धारित शुद्धता के अनुष्ठानों से बिल्कुल अलग है, जो जलपात्र लेकर घूमते हैं, जलीय पौधों की माला पहनते हैं, पवित्र अग्नि की देखभाल करते हैं और खुद को पानी में डुबोते हैं।" [264]

"पर हे भंते, भगवान बुद्ध की साधना में शुद्धि कैसे होती है? अच्छा होगा यदि भगवान (बुद्ध) मुझे धम्म (मार्ग) इस प्रकार समझाएँ कि भगवान बुद्ध की साधना में शुद्धि कैसे होती है।"

"तो फिर, कुंडा, ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," लोहार के पुत्र चुंडा ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"शरीर से अशुद्धि, चुंड, तीन प्रकार की होती है। वाणी से अशुद्धि चार प्रकार की होती है। मन से अशुद्धि तीन प्रकार की होती है।"

"और हे चुंडा, शरीर से होने वाली अशुद्धता तीन गुना कैसे होती है?"

(1) "यहाँ, कोई जीवन नष्ट करता है। वह हत्यारा है, उसके हाथ खून से सने हैं, वह मारपीट और हिंसा का आदी है, जीवित प्राणियों के प्रति निर्दयी है।

(2) "वह वह लेता है जो उसे नहीं दिया गया है। वह गाँव या जंगल में दूसरों की संपत्ति और माल चुराता है।

(3) वह यौन दुराचार में लिप्त होता है। वह उन महिलाओं के साथ यौन संबंध रखता है जो अपनी माता, पिता, माता-पिता, भाई, बहन या रिश्तेदारों द्वारा संरक्षित हैं; जो अपने धर्म द्वारा संरक्षित हैं; जिनका पति है; जिनका उल्लंघन दंडनीय है; या यहाँ तक कि पहले से ही किसी के साथ यौन संबंध में है। 2167

"इस प्रकार शरीर द्वारा होने वाली अशुद्धता तीन प्रकार की होती है।"

"और हे कुंडा, वाणी द्वारा अशुद्धता चार गुना कैसे होती है?"

(4) "यहाँ, कोई व्यक्ति झूठ बोलता है। यदि उसे किसी परिषद, सभा, अपने रिश्तेदारों की उपस्थिति, अपने संघ या न्यायालय में बुलाया जाता है और एक गवाह के रूप में इस प्रकार प्रश्न किया जाता है: 'तो, भले आदमी, बताओ कि तुम क्या जानते हो,' तो, न जानते हुए, वह कहता है, 'मैं जानता हूँ,' या जानते हुए, वह कहता है, 'मैं नहीं जानता'; न देखते हुए, वह कहता है, 'मैं देखता हूँ,' या देखते हुए, वह कहता है, 'मैं नहीं देखता।' इस प्रकार [265] वह जानबूझकर अपने स्वार्थ के लिए, या किसी दूसरे के स्वार्थ के लिए, या किसी तुच्छ सांसारिक उद्देश्य के लिए झूठ बोलता है।

(5) वह फूट डालने वाली बातें करता है। यहाँ कुछ सुनकर, वह उसे कहीं और दोहराता है ताकि [उन लोगों को] इन लोगों से अलग कर सके; या कहीं और कुछ सुनकर, वह उसे इन लोगों से दोहराता है ताकि [उन्हें] उनसे अलग कर सके। इस प्रकार वह एकता को तोड़ने वाला, फूट पैदा करने वाला, गुटों में आनंद लेने वाला, गुटों से प्रसन्न होने वाला, गुटों में मग्न रहने वाला और गुटों को पैदा करने वाले शब्द बोलने वाला है।

(6) "वह कठोर स्वर में बोलता है। वह ऐसे शब्द बोलता है जो कठोर, दूसरों को दुख पहुँचाने वाले, दूसरों के लिए अपमानजनक, क्रोध से भरे और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के लिए अनुपयुक्त होते हैं।"

(7) वह व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है। वह अनुचित समय पर बोलता है, झूठ बोलता है, अनुत्पादक बातें बोलता है, धम्म और अनुशासन के विपरीत बोलता है; अनुचित समय पर वह ऐसे शब्द बोलता है जो व्यर्थ, तर्कहीन, बेतुके और अनुत्पादक होते हैं।

"इस प्रकार वाणी द्वारा अशुद्धता चार प्रकार की होती है।"

"और हे कुंडा, मन से होने वाली अशुद्धता तीन गुना कैसे होती है?"

(8) "यहाँ कोई व्यक्ति अत्यधिक लालसा से भरा हुआ है। वह दूसरों के धन और संपत्ति के लिए इस प्रकार तरसता है; 'काश, जो दूसरे का है वह मेरा हो जाए!'

(9) "उसके मन में दुर्भावना और घृणा के भाव हैं, इस प्रकार: 'क्या इन प्राणियों को मार डाला जाए, वध किया जाए, काट डाला जाए, नष्ट कर दिया जाए या मिटा दिया जाए?'

(10) "उसका मत और दृष्टिकोण गलत है, इस प्रकार: 'कुछ भी दिया नहीं जाता, कुछ भी बलिदान नहीं किया जाता, कुछ भी अर्पित नहीं किया जाता; अच्छे और बुरे कर्मों का कोई फल या परिणाम नहीं होता; न यह संसार है, न दूसरा संसार; न माता है, न पिता; कोई भी प्राणी स्वतः पुनर्जन्म नहीं लेता; संसार में ऐसे कोई तपस्वी और ब्राह्मण नहीं हैं जो सही आचरण और सही अभ्यास करते हों और स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इस संसार और दूसरे संसार का अनुभव कर लें और दूसरों को भी इसके बारे में बताएं।'

"इस प्रकार मन की अशुद्धता तीन प्रकार की होती है।"

"ये, कुण्ड, दस हानिकारक (अकुशल) कर्म हैं। अगर कोई इन दस हानिकारक (अकुशल) कर्म करता है, तो अगर वह सुबह जल्दी उठकर बिस्तर से ज़मीन पर हाथ फेरता है, तो वह अशुद्ध है, और अगर वह ज़मीन पर हाथ नहीं फेरता है, तो वह अशुद्ध है। अगर कोई गीली गाय का गोबर फेरता है, तो वह अशुद्ध है, और अगर कोई गीली गाय का गोबर नहीं फेरता है, तो वह अशुद्ध है। अगर कोई हरी घास पर हाथ फेरता है, तो वह अशुद्ध है, और अगर कोई हरी घास पर हाथ नहीं फेरता है, तो वह अशुद्ध है। अगर कोई पवित्र अग्नि की सेवा करता है, तो वह अशुद्ध है, और अगर कोई पवित्र अग्नि की सेवा नहीं करता है, तो वह अशुद्ध है; अगर कोई सूर्य को श्रद्धा से नमस्कार करता है, तो वह अशुद्ध है, और अगर कोई सूर्य को श्रद्धा से नमस्कार नहीं करता है, तो वह अशुद्ध है। अगर कोई तीन बार पानी में डुबकी लगाता है, जिसमें शामिल हैं शाम को, इंसान अशुद्ध होता है, और अगर कोई शाम को मिलाकर तीन बार पानी में डुबकी नहीं लगाता, तो वह अशुद्ध होता है। किस वजह से? क्योंकि ये दस तरह के नुकसानदायक (अकुशल) कर्म खुद ही अशुद्ध और गंदा करने वाले हैं। क्योंकि लोग इन दस तरह के नुकसानदायक (अकुशल) कर्म करते हैं, इसलिए नरक, जानवरों की योनि, पीड़ित आत्माओं का इलाका और दूसरी बुरी जगहें देखी जाती हैं।

"शरीर से पवित्रता, कुंद, तीन गुना होती है। वाणी से पवित्रता चार गुना होती है। मन से पवित्रता तीन गुना होती है।

"और, कुंद, शरीर से पवित्रता तीन गुना कैसे होती है?

(1) "यहाँ, कोई, जीवन के विनाश को छोड़कर, जीवन के विनाश से दूर रहता है। छड़ी (हिंसा) और हथियार को एक तरफ रखकर, ईमानदार और दयालु होकर, वह सभी जीवों के प्रति दयालु रहता है।

" (2) "जो नहीं दिया गया है उसे लेना छोड़कर, वह जो नहीं दिया गया है उसे लेने से बचता है। वह गाँव या जंगल में दूसरों का धन और संपत्ति नहीं चुराता है।

(3) "यौन दुराचार छोड़कर, वह यौन दुराचार से बचता है। वह उन महिलाओं के साथ यौन संबंध नहीं बनाता जो अपनी माँ, पिता, माँ और पिता, भाई, बहन, या रिश्तेदारों द्वारा सुरक्षित हैं; जो अपने धम्म द्वारा सुरक्षित हैं; जिनके पति हैं; जिनके उल्लंघन के लिए सज़ा मिलती है; या यहाँ तक कि पहले से सगाईशुदा व्यक्ति के साथ भी।

"इस तरह शरीर से पवित्रता तीन गुना होती है।

"और, कुंडा, वाणी से पवित्रता चार गुना कैसे हो सकती है? (4) "यहाँ, कोई झूठ बोलना छोड़ देता है, झूठ बोलने से बचता है। अगर उसे किसी काउंसिल में, किसी असेंबली में, उसके रिश्तेदारों के सामने, उसके गिल्ड में, या कोर्ट में बुलाया जाता है, और गवाह के तौर पर उससे इस तरह पूछा जाता है: 'तो, अच्छे आदमी, जो तुम जानते हो, बताओ' तो, न जानते हुए भी वह कहता है, 'मुझे नहीं पता' या जानते हुए भी वह कहता है, 'मुझे पता है'; न देखते हुए वह कहता है, 'मुझे नहीं दिखता' या देखते हुए वह कहता है, "मैं देखता हूँ" इस तरह वह जानबूझकर अपने मकसद के लिए, या किसी और के मकसद के लिए, या किसी छोटी-मोटी दुनियावी मकसद के लिए झूठ नहीं बोलता।

(5) "विभाजनकारी वाणी का त्याग करके, वह विभाजनकारी वाणी से दूर रहता है। यहाँ कुछ सुनकर वह उसे कहीं और दोहराता नहीं है ताकि [उन लोगों को] इन लोगों से अलग कर दे; या कहीं और कुछ सुनकर वह उसे इन लोगों के सामने दोहराता नहीं है ताकि [उन्हें] उन लोगों से अलग कर दे। इस प्रकार वह विभाजित लोगों को एकजुट करने वाला, एकता का समर्थक, सामंजस्य का आनंद लेने वाला, सामंजस्य में प्रसन्न होने वाला, सामंजस्य से प्रसन्न होने वाला और सामंजस्य को बढ़ावा देने वाले शब्दों का वक्ता है।"

(6) कठोर भाषा का त्याग करके, वह कठोर भाषा से परहेज करता है। वह ऐसे शब्द बोलता है जो कोमल, कानों को भाने वाले और प्यारे हों, जो हृदय को छू जाएं, शिष्ट हों, बहुतों द्वारा वांछित हों और बहुतों को भाने वाले हों।

(7) "व्यर्थ की बातों का त्याग करके, वह व्यर्थ की बातों से दूर रहता है। वह उचित समय पर बोलता है, सत्य बोलता है, लाभकारी बातें बोलता है, धम्म और अनुशासन पर बोलता है; उचित समय पर वह ऐसे शब्द बोलता है जो दर्ज करने योग्य हों, तर्कसंगत हों, संक्षिप्त हों और लाभकारी हों।"

"इस प्रकार वाणी द्वारा पवित्रता चार प्रकार की होती है।"

"और, कुंडा, मन की पवित्रता तीन गुना कैसे होती है?"

(8) "यहाँ, कोई व्यक्ति लालसा रहित है। वह दूसरों के धन और संपत्ति के लिए इस प्रकार लालसा नहीं करता: 'ओह, जो दूसरे का है वह मेरा हो!'"

(9) "वह सद्भावपूर्ण है और उसके इरादे घृणा से मुक्त हैं, इस प्रकार: 'ये प्राणी खुशी से रहें, शत्रुता, पीड़ा और चिंता से मुक्त रहें!'"

(10) "वह सही दृष्टिकोण रखता है [268] और उसका परिप्रेक्ष्य इस प्रकार है: 'जो दिया जाता है, बलिदान किया जाता है और अर्पित किया जाता है; अच्छे और बुरे कर्मों का फल और परिणाम होता है; यह संसार और परलोक है; माता और पिता हैं; स्वतः पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी हैं; संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले तपस्वी और ब्राह्मण हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा स्वयं इस संसार और परलोक का अनुभव किया है और उन्हें दूसरों को भी ज्ञात कराते हैं।'

"इस प्रकार मन की पवित्रता तीन प्रकार की होती है।"

"हे चुंडा, ये दस प्रकार के लाभकारी (कुशल) कर्म हैं। यदि कोई इन दस प्रकार के लाभकारी (कुशल) कर्मों का पालन करता है, तो यदि वह सुबह जल्दी उठकर पलंग से जमीन को थपथपाता है, तो वह शुद्ध है, और यदि वह जमीन को नहीं थपथपाता है, तो भी वह शुद्ध है। यदि कोई गीले गोबर को थपथपाता है, तो वह शुद्ध है, और यदि वह गीले गोबर को नहीं थपथपाता है, तो भी वह शुद्ध है। यदि कोई हरी घास को थपथपाता है, तो वह शुद्ध है, और यदि वह हरी घास को नहीं थपथपाता है, तो भी वह शुद्ध है। यदि कोई पवित्र अग्नि की देखभाल करता है, तो वह शुद्ध है, और यदि वह पवित्र अग्नि की देखभाल नहीं करता है, तो भी वह शुद्ध है। यदि कोई सूर्य को आदरपूर्वक प्रणाम करता है, तो वह शुद्ध है, और यदि वह सूर्य को आदरपूर्वक प्रणाम नहीं करता है, तो भी वह शुद्ध है। यदि कोई संध्या

सहित तीन बार जल में स्नान करता है, तो वह शुद्ध है, और यदि..." जो व्यक्ति संध्या सहित तीन बार जल में स्नान नहीं करता, वह शुद्ध हो जाता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि ये दस प्रकार के लाभकारी कर्म स्वयं शुद्ध और पवित्र करने वाले हैं। इन्हीं दस प्रकार के लाभकारी कर्मों के कारण ही देवदूत, मनुष्य और अन्य शुभ स्थान दर्शन के लिए प्रकट होते हैं।

जब यह कहा गया, तो लोहार के पुत्र चुंडा ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "उत्कृष्ट, भंते! ... भगवान (बुद्ध) मुझे गृहस्थ अनुयायी के रूप में स्वीकार करें, जो आज से जीवन भर के लिए शरण लेने गया हूँ।" [269]

---

177 जानूसोनी

तब ब्राह्मण जनुस्सोनी भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) से बोले:

"हे गुरु गौतम, हम ब्राह्मण मृतकों के लिए दान देते हैं और उनकी स्मृति में अनुष्ठान करते हैं, इस विचार के साथ कि 'हमारा दान हमारे दिवंगत रिश्तेदारों और परिवार के सदस्यों के लिए लाभकारी हो। हमारे दिवंगत रिश्तेदार और परिवार के सदस्य हमारे दान का लाभ उठा सकें।' क्या हे गुरु गौतम, हमारा दान वास्तव में हमारे दिवंगत रिश्तेदारों और परिवार के सदस्यों के लिए लाभकारी हो सकता है? क्या हमारे दिवंगत रिश्तेदार और परिवार के सदस्य वास्तव में हमारे दान का लाभ उठा सकते हैं?"

"हे ब्राह्मण, उचित अवसर पर यह लाभकारी हो सकता है, अनुचित अवसर पर नहीं।"

लेकिन, गुरु गौतम, उचित अवसर क्या है और अनुचित अवसर क्या है?

हे ब्राह्मण, यहाँ कोई जीवन का नाश करता है, जो दिया नहीं गया उसे लेता है, यौन दुराचार में लिप्त रहता है, झूठ बोलता है, फूट डालता है, कठोर भाषा बोलता है, व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है; वह लालसा से भरा है, द्वेषपूर्ण मन रखता है और गलत विचार रखता है। शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, वह नरक में पुनर्जन्म लेता है। 2170 वह वहाँ नरकवासियों के भोजन से अपना जीवन यापन करता है। यह एक अनुचित अवसर है, जब दान वहाँ रहने वाले के लिए लाभकारी नहीं है।

"कोई और जीवन का नाश करता है... और गलत दृष्टिकोण रखता है। शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह पशु जगत में पुनर्जन्म लेता है। वह वहाँ पशुओं के भोजन पर अपना जीवन यापन करता है। यह भी एक गलत अवसर है, जब दान वहाँ रहने वाले के लिए लाभकारी नहीं होता।"

एक अन्य व्यक्ति जीवन के विनाश से, अनधिकृत वस्तु लेने से, यौन दुराचार से, झूठी वाणी से, फूट डालने वाली [270] वाणी से, कठोर वाणी से, व्यर्थ की बातों से दूर रहता है; वह लालसा रहित, सद्भावपूर्ण और सही दृष्टिकोण वाला होता है। मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, वह मनुष्यों के साथ पुनर्जन्म लेता है। वह वहाँ मनुष्यों के भोजन से अपना भरण-पोषण करता है। यह भी एक अनुचित अवसर है, जब दान वहाँ रहने वाले के लिए लाभकारी न हो।

एक अन्य व्यक्ति जीवन के विनाश से परहेज करता है... और सही दृष्टिकोण रखता है। मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, वह देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के साथ पुनर्जन्म लेता है। वह वहां देवताओं (देवदूतों/देवताओं) के भोजन से अपना जीवन यापन करता है। यह भी एक अनुचित अवसर है, क्योंकि दान वहां रहने वाले के लिए लाभकारी नहीं होता।

एक अन्य व्यक्ति जीवन का नाश करता है... और गलत दृष्टिकोण रखता है। शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वह दुखी आत्माओं के लोक में पुनर्जन्म लेता है। वह वहाँ दुखी आत्माओं के भोजन से अपना जीवन यापन करता है, या फिर इस लोक में अपने मित्रों, साथियों, रिश्तेदारों या परिवार के सदस्यों द्वारा दिए गए दान से अपना जीवन यापन करता है। यह एक उचित अवसर है, जब दिया गया दान वहाँ रहने वाले व्यक्ति के लिए लाभकारी हो।

"लेकिन, गुरु गौतम, यदि वह मृत संबंधी या परिवार का सदस्य उस स्थान पर पुनर्जन्म नहीं लेता है, तो उस उपहार का भागीदार कौन होगा?"

"अन्य दिवंगत रिश्तेदार या परिवार के सदस्य जो उस स्थान पर 2171 में पुनर्जन्म ले चुके हैं, वे भी इस उपहार में भागीदार होते हैं।"

"परन्तु, हे गौतम गुरु, यदि न तो वह मृत संबंधी या परिवार का सदस्य और न ही कोई अन्य व्यक्ति उस स्थान पर पुनर्जन्म लेता है, तो उस दान का कौन भागीदार होगा?"

"इस लंबे समय के दौरान [संसार में], हे ब्राह्मण, यह असंभव और अकल्पनीय है कि वह स्थान अपने दिवंगत रिश्तेदारों और परिवार के सदस्यों से रहित हो। इसके अलावा, दानकर्ता के लिए भी यह व्यर्थ नहीं है।"

"क्या गुरु गौतम अनुचित परिस्थितियों में भी [दान देने के महत्व] पर विचार करते हैं?" 2172

"ब्राह्मण, मैं अनुचित परिस्थितियों में भी [दान देने के महत्व] पर विचार करता हूँ।"

हे ब्राह्मण, यहाँ कोई जीवन का नाश करता है, जो नहीं दिया गया उसे लेता है, यौन दुराचार में लिप्त रहता है, झूठ बोलता है, फूट डालता है, कठोर भाषा बोलता है, व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है; वह लालसा से भरा है, द्वेषपूर्ण मन रखता है और गलत विचार रखता है। वह किसी तपस्वी या ब्राह्मण को भोजन और पेय, वस्त्र और वाहन, मालाएँ, सुगंध और लेप, बिस्तर, आवास और प्रकाश प्रदान करता है। शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वह हाथियों के साथ पुनर्जन्म लेता है। वहाँ उसे भोजन और पेय, मालाएँ और विभिन्न आभूषण प्राप्त होते हैं।

"चूंकि उसने यहां जीवन का नाश किया... और गलत मत रखा, इसलिए शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह हाथियों के साथ पुनर्जन्म लेता है। लेकिन चूंकि उसने किसी तपस्वी या ब्राह्मण को भोजन और पेय दिया... इसलिए उसे वहां भोजन और पेय, मालाएं और विभिन्न आभूषण प्राप्त होते हैं।"

"कोई और जीवन का नाश करता है... और गलत दृष्टिकोण रखता है। वह किसी तपस्वी या ब्राह्मण को भोजन, पेय और प्रकाश प्रदान करता है। शरीर के नष्ट होने पर, मृत्यु के बाद, वह घोड़ों... मवेशियों... कुत्तों के साथ पुनर्जन्म लेता है। वहाँ उसे भोजन, पेय, मालाएँ और विभिन्न आभूषण प्राप्त होते हैं।"

"चूंकि उसने यहां जीवन नष्ट कर दिया . . . [272] . . . और गलत मत रखा, इसलिए शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह घोड़ों . . . मवेशियों . . . कुत्तों के साथ पुनर्जन्म लेता है। लेकिन चूंकि उसने किसी तपस्वी या ब्राह्मण को भोजन और पेय दिया . . . इसलिए उसे वहां भोजन और पेय, मालाएं और विभिन्न आभूषण प्राप्त होते हैं।"

एक अन्य व्यक्ति जीव-जंतुओं को नष्ट करने, बिना माँगे वस्तुएँ लेने, यौन दुराचार, झूठी वाणी, फूट डालने वाली वाणी, कठोर वाणी और व्यर्थ की बातों से दूर रहता है; वह लालसा रहित, सद्भावपूर्ण और सही दृष्टि वाला होता है। वह तपस्वी या ब्राह्मण को भोजन, पेय, वस्त्र और वाहन, मालाएँ, सुगंध और लेप, बिस्तर, आवास और प्रकाश प्रदान करता है। मृत्यु के बाद शरीर के नष्ट होने पर वह मनुष्यों के साथ पुनर्जन्म लेता है। वहाँ वह पाँचों प्रकार के इंद्रिय सुखों का अनुभव करता है।

"चूंकि उसने यहां जीवन के विनाश से परहेज किया... और सही दृष्टिकोण रखा, इसलिए शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह मनुष्यों के साथ पुनर्जन्म लेता है। और चूंकि उसने किसी तपस्वी या ब्राह्मण को भोजन और पेय दिया... इसलिए उसे वहां मनुष्य की पांच इंद्रिय सुखों की प्राप्ति होती है।"

एक अन्य व्यक्ति जीवन के विनाश से परहेज करता है... और सही दृष्टिकोण रखता है। वह किसी तपस्वी या ब्राह्मण को भोजन, पेय और प्रकाश प्रदान करता है। मृत्यु के बाद शरीर के विखंडन के साथ, वह देवों के साथ पुनर्जन्म लेता है... वहाँ उसे पाँच प्रकार के दिव्य इंद्रिय सुख प्राप्त होते हैं।

"चूंकि उसने यहाँ जीवन के विनाश से परहेज किया... और सही दृष्टिकोण रखा, इसलिए शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) के साथ पुनर्जन्म लेता है। और चूंकि उसने किसी तपस्वी या ब्राह्मण को भोजन और पेय दिया... इसलिए उसे वहाँ पाँच प्रकार के दिव्य इंद्रिय सुख प्राप्त होते हैं। [इसीलिए मैंने कहा:] 'इसके अलावा, दानकर्ता के लिए भी यह व्यर्थ नहीं है।"

"यह आश्चर्यजनक और अद्‌भुत है। गुरु गौतम, यह जानकर आश्चर्य होता है कि दान देना और मृतकों के लिए स्मृति अनुष्ठान करना उचित है, क्योंकि दानकर्ता के लिए भी यह व्यर्थ नहीं जाता।"

"ऐसा ही है, ब्राह्मण! ऐसा ही है, ब्राह्मण! दान करने वाले के लिए भी यह व्यर्थ नहीं है।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... गुरु गौतम मुझे गृहस्थ अनुयायी के रूप में स्वीकार करें, जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

तृतीय. अच्छा [2173] (साधुवग्गो सं. साधुवर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

178 अच्छा (साधु)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें अच्छे और बुरे का ज्ञान दूंगा। ध्यान से सुनो और मेरी बात पर गौर करो।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा: •

"और हे भिक्षुओं, बुरा क्या है? जीवन का विनाश, बिना माँगे वस्तुएँ लेना, यौन दुराचार, झूठी बातें, फूट डालने वाली बातें, कठोर बातें, व्यर्थ की बातें, लालसा, द्वेष और गलत विचार। यही बुरा कहलाता है।"

और हे भिक्षुओं, अच्छा क्या है? जीवन का विनाश न करना, बिना दी हुई वस्तुएँ न लेना, यौन दुराचार से बचना, झूठी वाणी से बचना, फूट डालने वाली वाणी से बचना, कठोर वाणी से बचना, व्यर्थ की बातों से बचना, लालसा न करना, सद्‌भावना और सही दृष्टिकोण रखना। यही अच्छा है।

179-188 महान धम्म आदि (अरियाधम्म, कुसल, अत्थ, धम्म, असव, वज्जा, तपनिया)

(179) "भिक्षुओं, मैं तुम्हें श्रेष्ठ धम्म और नीच धम्म सिखाऊँगा। और हे भिक्षुओं, नीच क्या है? जीव-जंतुओं का संहार, बिना माँगे वस्तुएँ लेना, यौन दुराचार, झूठी वाणी, फूट डालने वाली वाणी, कठोर वाणी, व्यर्थ की बातें, लालसा, द्वेष और गलत मत। यही नीच कहलाता है। और हे भिक्षुओं, श्रेष्ठ क्या है? जीव-जंतुओं के संहार से बचना, बिना माँगे वस्तुएँ लेने से बचना, यौन दुराचार से बचना, झूठी वाणी से बचना, फूट डालने वाली वाणी से बचना, कठोर वाणी से बचना, व्यर्थ की बातों से बचना, लालसा न करना, सद्‌भावना और सही मत। यही श्रेष्ठ कहलाता है।"

[इसी प्रकार] (180) . . . लाभकारी (कुशल) और हानिकारक (अकुशल) ... . . . (181) . . . लाभकारी क्या है और हानिकारक क्या है . . . (182) . . . धम्म और अधर्म (गलत मार्ग) . . . (183) . . . दूषित धम्म और निष्कलंक धम्म . . [276] . . . (184) . . . निंदनीय धम्म और निष्कलंक धम्म . . . (185) . . . कष्टदायी धम्म और कष्टरहित धम्म . . . (186) . . . सृजन की ओर ले जाने वाला धम्म और

विघटन की ओर ले जाने वाला धम्म . . . (187) वह धम्म जिसका परिणाम दुख होता है और वह धम्म जिसका परिणाम सुख होता है... (188) ... वह धम्म जिसका परिणाम दुख होता है और वह धम्म जिसका परिणाम सुख होता है

भिक्षुओं, वह कौन सा धर्म है जो दुख का कारण बनता है? जीवन का विनाश... और गलत दृष्टिकोण। यही दुख का कारण बनने वाला धर्म कहलाता है।

"और हे भिक्षुओं, सुख का स्रोत क्या है? जीवन के विनाश से बचना... और सही दृष्टिकोण रखना। यही सुख का स्रोत कहलाता है।"

चतुर्थ. महान पथ (अरियामग्गवग्गा सं. आर्यमार्ग-वर्ग)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

189 महान पथ (अरियामग्गा)

भिक्षुओं, मैं तुम्हें श्रेष्ठ मार्ग और नीच मार्ग सिखाऊंगा। ध्यान से सुनो और ग्रहण करो। हे भिक्षुओं, नीच मार्ग क्या है? और हे भिक्षुओं, नीच क्या है? जीव-जंतुओं का संहार, बिना माँगे वस्तुएँ लेना, यौन दुराचार, झूठी वाणी, फूट डालने वाली वाणी, कठोर वाणी, व्यर्थ की बातें, लालसा, द्वेष और गलत दृष्टि। यही नीच कहलाता है। हे भिक्षुओं, श्रेष्ठ मार्ग क्या है? जीव-जंतुओं के संहार से बचना, बिना माँगे वस्तुएँ लेने से बचना, यौन दुराचार से बचना, झूठी वाणी से बचना, फूट डालने वाली वाणी से बचना, कठोर वाणी से बचना, व्यर्थ की बातों से बचना, लालसा न करना, सद्भावना और सही दृष्टि। यही श्रेष्ठ कहलाता है। यही श्रेष्ठ मार्ग कहलाता है।

190-198 अंधकारमय पथ, इत्यादि।

(190) “भिक्षुओं, मैं तुम्हें अंधकारमय मार्ग और प्रकाशमय मार्ग सिखाऊंगा। और हे भिक्षुओं, अंधकारमय मार्ग क्या है? जीवन का विनाश, बिना माँगी वस्तुएँ लेना, यौन दुराचार, झूठी वाणी, फूट डालने वाली वाणी, कठोर वाणी, व्यर्थ की बातें, लालसा, द्वेष और गलत दृष्टिकोण। यही अंधकारमय मार्ग कहलाता है। और हे भिक्षुओं, प्रकाशमय मार्ग क्या है? जीवन के विनाश से बचना, बिना माँगी वस्तुएँ लेने से बचना, यौन दुराचार से बचना, झूठी वाणी से बचना, फूट डालने वाली वाणी से बचना, कठोर वाणी से बचना, व्यर्थ की बातों से बचना, लालसा न करना, सद्भावना और सही दृष्टिकोण। यही अच्छा मार्ग कहलाता है। यही प्रकाशमय मार्ग कहलाता है।”

[इसी प्रकार] (191) ... अच्छा धम्म (सही मार्ग) और बुरा धम्म ... [279] (192) ... अच्छे व्यक्ति का धम्म और बुरे व्यक्ति का धम्म ... (193) ... जागृत होने वाला धम्म और जागृत न होने वाला धम्म ... (194) ... अनुसरण किया जाने वाला धम्म और अनुसरण न किया जाने वाला धम्म ... [280] (195) ... विकसित होने वाला धम्म और विकसित न होने वाला धम्म ... (196) ... विकसित होने वाला धम्म और विकसित न होने वाला धम्म ... (197) ... स्मरण किया जाने वाला धम्म और स्मरण न किया जाने वाला धम्म ... [281] (198) ... धम्म का अनुभव किया जाना चाहिए और उस धम्म का अनुभव नहीं किया जाना चाहिए।

भिक्षुओं, वह धम्म क्या है जिसे साकार नहीं किया जा सकता? जीवन का विनाश... और गलत दृष्टिकोण। इसे ही वह धम्म कहते हैं जिसे साकार नहीं किया जा सकता।

"और हे भिक्षुओं, वह धर्म क्या है जिसे साकार करना है? जीवन के विनाश से बचना... और सही दृष्टिकोण रखना। यही वह धर्म है जिसे साकार करना है।"

V. व्यक्तियों पर एक और अध्याय [2174]

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

199 के साथ जुड़ें

भिक्षुओं, दस गुणों वाले व्यक्ति से संगति न रखनी चाहिए। वे कौन से दस गुण हैं? वह जीवन का नाश करता है, बिना माँगे वस्तुएँ ले लेता है, यौन दुराचार में लिप्त रहता है, झूठ बोलता है, फूट डालता है, कठोर भाषा का प्रयोग करता है, व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है; वह लालसा से भरा होता है, द्वेषपूर्ण मन रखता है और गलत मत रखता है। इन दस गुणों वाले व्यक्ति से संगति न रखनी चाहिए।

भिक्षुओं, दस गुणों से युक्त व्यक्ति की संगति करनी चाहिए। वे दस गुण कौन से हैं? वह जीव-जंतुओं को नष्ट करने, दूसरों से कुछ न लेने, यौन दुराचार, झूठी वाणी, फूट डालने वाली वाणी, कठोर वाणी और व्यर्थ की बातों से दूर रहता है; वह लालसा रहित, सद्भावपूर्ण और सही दृष्टिकोण वाला होता है। ऐसे दस गुणों से युक्त व्यक्ति की संगति करनी चाहिए।

200 - 210 रिज़ॉर्ट, आदि [2175]

(200) "भिक्षुओं, दस गुणों वाले व्यक्ति की शरण नहीं लेनी चाहिए। वे दस गुण क्या हैं? वह जीव-जंतुओं का नाश करता है, बिना माँगे वस्तुएँ लेता है, यौन दुराचार में लिप्त रहता है, झूठ बोलता है, फूट डालता है, कठोर वाणी बोलता है, व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है; वह लालसा से भरा होता है, द्वेषपूर्ण मन रखता है और गलत मत रखता है। ऐसे दस गुणों वाले व्यक्ति से संगति नहीं करनी चाहिए। "भिक्षुओं, दस गुणों वाले व्यक्ति की शरण लेनी चाहिए। वे दस गुण क्या हैं? वह जीव-जंतुओं के नाश से, बिना माँगे वस्तुएँ लेने से, यौन दुराचार से, झूठे वाणी से, फूट डालने वाले वाणी से, कठोर वाणी से और व्यर्थ की बातों से दूर रहता है; वह लालसा रहित, सद्भावपूर्ण और सही मत रखता है। ऐसे दस गुणों वाले व्यक्ति की शरण लेनी चाहिए।

[इसी प्रकार] (201) ... किसी की सेवा नहीं करनी चाहिए ... किसी की सेवा करनी चाहिए ... (202) ... किसी का आदर नहीं करना चाहिए ... किसी का आदर करना चाहिए ... (203) ... किसी की प्रशंसा नहीं करनी चाहिए ... किसी की प्रशंसा करनी चाहिए ... (204) ... किसी का आदर नहीं करना चाहिए ... किसी का आदर करना चाहिए ... (205) ... किसी को सम्मान नहीं दिखाना चाहिए ... दस गुणों वाले व्यक्ति को सम्मान दिखाना चाहिए ... (206) दस गुणों वाला व्यक्ति सफल नहीं होता ... सफल होता है ... (207) ... शुद्ध नहीं होता ... शुद्ध होता है ... (208) ... अहंकार पर विजय प्राप्त नहीं करता ... अहंकार पर विजय प्राप्त करता है ... (209) ...पन्न (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि नहीं करता ...पन्न (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि करता है ... (210) ...बहुत पाप उत्पन्न करता है ...बहुत पुण्य उत्पन्न करता है। वे दस गुण क्या हैं? वह जीव-जंतुओं को नष्ट करने से, बिना माँगे वस्तुएँ लेने से, यौन दुराचार से, झूठी वाणी से, फूट डालने वाली वाणी से, कठोर वाणी से, व्यर्थ की बातों से दूर रहता है; वह लालसा रहित, सद्भावपूर्ण और सही दृष्टिकोण वाला होता है। इन दस गुणों से युक्त व्यक्ति बहुत पुण्य उत्पन्न करता है।

अतिरिक्त पचास

I. कर्म से उत्पन्न शरीर (करजकया-वग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

211 नरक-स्वर्ग (1) (निरायसग्गा1 सं. नरक-स्वर्ग)

"दस गुणों से युक्त भिक्षुओं को नरक में इस प्रकार रखा जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे दस गुण कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, कोई जीवन नष्ट करता है; वह हत्यारा है, खूनी हाथों वाला है, मार-पीट और हिंसा करने वाला है, जीवित प्राणियों के प्रति निर्दयी है।

(2) "वह वह लेता है जो उसे नहीं दिया गया है; वह गाँव या जंगल में दूसरों की संपत्ति और माल चुराता है।

(3) वह यौन दुराचार में लिप्त होता है; वह उन महिलाओं के साथ यौन संबंध रखता है जो अपनी माँ, पिता, माता-पिता, भाई, बहन या रिश्तेदारों द्वारा संरक्षित हैं; जो अपने धम्म द्वारा संरक्षित हैं; जिनका पति है; जिनका उल्लंघन दंडनीय है; या यहाँ तक कि पहले से ही किसी के साथ यौन संबंध रखता है।

(4) वह झूठ बोलता है। यदि उसे किसी परिषद, सभा, अपने रिश्तेदारों की उपस्थिति, अपने संघ या न्यायालय में बुलाया जाए और उससे गवाह के रूप में इस प्रकार प्रश्न किया जाए: 'हे सज्जन, जो कुछ तुम जानते हो, वह बताओ', तो न जानते हुए वह कहता है, 'मैं जानता हूँ' या जानते हुए कहता है, 'मैं नहीं जानता'; न देखते हुए वह कहता है, 'मैं देखता हूँ' या देखते हुए कहता है, 'मैं नहीं देखता।' इस प्रकार वह जानबूझकर अपने स्वार्थ के लिए, या किसी अन्य के स्वार्थ के लिए, या किसी तुच्छ सांसारिक उद्देश्य के लिए झूठ बोलता है।

(5) वह फूट डालने वाली बातें करता है। यहाँ कुछ सुनकर, वह उसे कहीं और दोहराता है ताकि [उन लोगों को] इन लोगों से अलग कर सके; या कहीं और कुछ सुनकर, वह उसे इन लोगों से दोहराता है ताकि [उन्हें] उनसे अलग कर सके। इस प्रकार वह एकता को तोड़ने वाला, फूट पैदा करने वाला, गुटों में आनंद लेने वाला, गुटों से प्रसन्न होने वाला, गुटों में मग्न रहने वाला और गुटों को पैदा करने वाले शब्द बोलने वाला है।

(6) "वह कठोर स्वर में बोलता है। वह ऐसे शब्द बोलता है जो कठोर, दूसरों को दुख पहुँचाने वाले, दूसरों के लिए अपमानजनक, क्रोध से भरे और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के लिए अनुपयुक्त होते हैं।"

(7) "वह व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है। वह अनुचित समय पर बोलता है, झूठ बोलता है, अनुत्पादक बातें बोलता है, धम्म (मार्ग) और अनुशासन के विपरीत बोलता है; अनुचित समय पर वह ऐसे शब्द बोलता है जो व्यर्थ, तर्कहीन, बेतुके और अनुत्पादक होते हैं। [284]

(8) "वह लालसा से भरा हुआ है। वह दूसरों के धन और संपत्ति के लिए इस प्रकार तरसता है: 'ओह, जो दूसरे का है वह मेरा हो!'"

(9) "उसके मन में दुर्भावना और घृणा के भाव हैं, इस प्रकार: 'इन प्राणियों का वध हो, इन्हें काट डाला जाए, नष्ट कर दिया जाए या पूरी तरह से मिटा दिया जाए!'"

(10) "उसका मत और दृष्टिकोण गलत है, इस प्रकार: 'कुछ भी दिया (दान) नहीं जाता, कुछ भी बलिदान नहीं किया जाता, कुछ भी अर्पित नहीं किया जाता; अच्छे और बुरे कर्मों का कोई फल या परिणाम नहीं होता; न यह संसार है, न दूसरा संसार; न माता है, न पिता; कोई भी प्राणी स्वतः पुनर्जन्म नहीं लेता; संसार में ऐसे कोई तपस्वी और ब्राह्मण नहीं हैं जो सही आचरण और सही अभ्यास करते हों और स्वयं प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इस संसार और दूसरे संसार का अनुभव कर लें और दूसरों को भी इसके बारे में बताएं।'

"इन दस गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में इस प्रकार डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं, दस गुणों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे दस गुण कौन से हैं?"

(1) "यहाँ, कोई व्यक्ति जीवन के विनाश का त्याग करके, जीवन के विनाश से दूर रहता है। लाठी (हिंसा) और हथियार को त्यागकर, वह विवेकशील और दयालु होकर सभी जीवित प्राणियों के प्रति करुणामयी भाव से रहता है।"

(2) "जो कुछ नहीं दिया गया है, उसे लेने का त्याग करके, वह जो कुछ नहीं दिया गया है, उसे लेने से परहेज करता है। वह गाँव या जंगल में दूसरों के धन और संपत्ति की चोरी नहीं करता है।

(3) यौन दुराचार का त्याग करके, वह यौन दुराचार से परहेज करता है। वह उन महिलाओं के साथ यौन संबंध नहीं रखता जो अपनी माता, पिता, माता-पिता, भाई, बहन या रिश्तेदारों द्वारा संरक्षित हैं; जो अपने धम्म द्वारा संरक्षित हैं; जिनका पति है; जिनका उल्लंघन दंडनीय है; या यहाँ तक कि पहले से ही किसी के साथ यौन संबंध में हैं।

(4) "झूठे वचन का त्याग करके, वह झूठे वचन से दूर रहता है। यदि उसे किसी परिषद, सभा, अपने रिश्तेदारों की उपस्थिति में, अपने संघ या न्यायालय में बुलाया जाए और उससे गवाह के रूप में इस प्रकार प्रश्न किया जाए: 'तो, भले मनुष्य, जो तुम जानते हो, बताओ,' तो न जानते हुए वह कहता है, 'मैं नहीं जानता,' या जानते हुए वह कहता है, 'मैं जानता हूँ'; न देखते हुए वह कहता है, 'मैं नहीं देखता,' या देखते हुए वह कहता है, 'मैं देखता हूँ।' इस प्रकार वह जानबूझकर अपने स्वार्थ के लिए, या किसी दूसरे के स्वार्थ के लिए, या किसी तुच्छ सांसारिक उद्देश्य के लिए झूठ नहीं बोलता। [285]

(5) "विभाजनकारी वाणी का त्याग करके, वह विभाजनकारी वाणी से दूर रहता है। यहाँ कुछ सुनकर वह उसे कहीं और दोहराता नहीं है ताकि [उन लोगों को] इन लोगों से अलग कर दे; या कहीं और कुछ सुनकर वह उसे इन लोगों के सामने दोहराता नहीं है ताकि [उन्हें] उन लोगों से अलग कर दे। इस प्रकार वह विभाजित लोगों को एकजुट करने वाला, एकता का समर्थक, सामंजस्य का आनंद लेने वाला, सामंजस्य में प्रसन्न होने वाला, सामंजस्य से प्रसन्न होने वाला और सामंजस्य को बढ़ावा देने वाले शब्दों का वक्ता है।"

(6) कठोर भाषा का त्याग करके, वह कठोर भाषा से परहेज करता है। वह ऐसे शब्द बोलता है जो कोमल, कानों को भाने वाले और प्यारे हों, जो हृदय को छू जाएं, शिष्ट हों, बहुतों द्वारा वांछित हों और बहुतों को भाने वाले हों।

(7) "व्यर्थ की बातों का त्याग करके, वह व्यर्थ की बातों से दूर रहता है। वह उचित समय पर बोलता है, सत्य बोलता है, लाभकारी बातें बोलता है, धम्म और अनुशासन पर बोलता है; उचित समय पर वह ऐसे शब्द बोलता है जो दर्ज करने योग्य हों, तर्कसंगत हों, संक्षिप्त हों और लाभकारी हों।"

(8) "वह लालसा रहित है। वह दूसरों के धन और संपत्ति के लिए इस प्रकार लालसा नहीं करता: 'काश, जो दूसरे का है वह मेरा हो जाए!'"

(9) "वह सद्भावपूर्ण है और उसके इरादे घृणा से मुक्त हैं, इस प्रकार: 'ये प्राणी खुशी से रहें, शत्रुता, पीड़ा और चिंता से मुक्त रहें!'"

(10) "उसका सही दृष्टिकोण और परिप्रेक्ष्य इस प्रकार है: 'जो दिया जाता है, जो बलिदान किया जाता है, जो अर्पित किया जाता है; अच्छे और बुरे कर्मों का फल और परिणाम; यह संसार और परलोक; माता और पिता; स्वतः पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी; संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले तपस्वी और ब्राह्मण हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इस संसार और परलोक का अनुभव किया है और उन्हें दूसरों को भी ज्ञात कराते हैं।

"इन दस गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

---

212 नरक-स्वर्ग (2) (निरायसग्गा2 सं. नरक-स्वर्ग)

"दस गुणों से युक्त भिक्षुओं को नरक में इस प्रकार रखा जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे दस गुण कौन से हैं? 2176"

(t) "यहाँ, कोई जीवन का नाश करता है; वह हत्यारा है, उसके हाथ खून से सने हैं, वह मारपीट और हिंसा का आदी है, जीवित प्राणियों के प्रति निर्दयी है। (2) वह वह लेता है जो उसे नहीं दिया गया है... (3) वह यौन दुराचार में लिप्त है... (4) वह झूठ बोलता है... (5) वह फूट डालने वाली बातें करता है... (6) वह कठोर बातें करता है [286]... (7) वह व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है... (8) वह लालसा से भरा है... (9) उसके मन में दुर्भावना और घृणा के भाव हैं... (10) वह गलत विचार रखता है और उसका दृष्टिकोण गलत है, जैसे: 'कुछ भी दिया नहीं गया है... संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले कोई तपस्वी और ब्राह्मण नहीं हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इस संसार और परलोक का अनुभव किया हो और उन्हें दूसरों को ज्ञात कराया हो।'" इन दस गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाल दिया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

"भिक्षुओं, दस गुणों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे दस गुण कौन से हैं?"

(1) यहाँ, वह व्यक्ति जीवन के विनाश का त्याग करके, जीवन के विनाश से दूर रहता है; हिंसा और हथियार त्यागकर, वह विवेकशील और दयालु होकर सभी जीवित प्राणियों के प्रति करुणामयी भाव से निवास करता है। (2) जो नहीं दिया गया है उसे लेने का त्याग करके, वह जो नहीं दिया गया है उसे लेने से दूर रहता है... (3) यौन दुराचार का त्याग करके, वह यौन दुराचार से दूर रहता है... (4) झूठी वाणी का त्याग करके, वह झूठी वाणी से दूर रहता है... (5) विभाजनकारी वाणी का त्याग करके, वह विभाजनकारी वाणी से दूर रहता है... (6) कठोर वाणी का त्याग करके, वह कठोर वाणी से दूर रहता है... (7) व्यर्थ की बातों का त्याग करके, वह व्यर्थ की बातों से दूर रहता है। (8) वह लालसा रहित है... (9) वह सद्भावपूर्ण है... (10) वह सही दृष्टिकोण रखता है और उसका परिप्रेक्ष्य इस प्रकार है: 'यहाँ जो दिया गया है... संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले तपस्वी और ब्राह्मण हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इस संसार और परलोक का अनुभव किया है और दूसरों को भी इसका ज्ञान कराते हैं। इन दस गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

---

213 महिलाएं (मातुगामा)

"दस गुणों से युक्त भिक्षुओं (भिक्षुओं) के कारण स्त्रियों को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे दस गुण कौन से हैं? [287] (1) वे जीवन का नाश करती हैं . . . [जैसा कि ऊपर बताया गया है] . . . और (10) गलत मत रखती हैं। इन दस गुणों से युक्त स्त्रियों को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

"भिक्षुओं (सन्यासियों) में दस गुण होते हैं, और स्त्रियाँ स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचती हैं जैसे उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे दस गुण कौन से हैं? (1) वे जीवन-नष्ट करने से परहेज़ करते हैं... [जैसा कि ऊपर बताया गया है]... और (10) सही दृष्टिकोण रखते हैं। इन दस गुणों से युक्त होने के कारण, स्त्रियाँ स्वर्ग में ऐसे पहुँचती हैं जैसे उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

---

214 महिला ले अनुयायी (उपासिका)

"भिक्षुओं (सम्मोहनकर्ताओं) में दस गुणों से युक्त एक स्त्री-शैतान को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे दस गुण क्या हैं? (1) वह जीवन का नाश करती है... और (10) गलत मत रखती है। इन दस गुणों से युक्त एक स्त्री-शैतान को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

"दस गुणों से युक्त भिक्षुओं के साथ, एक गृहस्थ महिला अनुयायी को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे दस गुण कौन से हैं? (1) वह जीवन-नष्ट करने से परहेज करती है... और (10) सही दृष्टिकोण रखती है। इन दस गुणों से युक्त एक गृहस्थ महिला अनुयायी को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।"

---

215 आत्म-विश्वास (विसारदा)

"दस गुणों से युक्त भिक्षुओं के लिए, एक गृहस्थ महिला घर में आत्मविश्वासहीन रहती है। वे दस गुण क्या हैं? (1) वह जीवन का नाश करती है... और (10) गलत मत रखती है। इन दस गुणों से युक्त एक गृहस्थ महिला घर में आत्मविश्वासहीन रहती है।"

"दस गुणों से युक्त भिक्षुओं के साथ, एक गृहस्थ महिला आत्मविश्वास से घर में रहती है। वे दस गुण कौन से हैं? (1) वह जीवन के विनाश से दूर रहती है... और (10) सही दृष्टिकोण रखती है। इन दस गुणों से युक्त एक गृहस्थ महिला आत्मविश्वास से घर में रहती है।"

---

216 रेंगना (संसप्पनिया)

"भिक्षुओं, मैं तुम्हें रेंगने के विषय पर धम्म की व्याख्या सिखाऊंगा। [2177] ध्यान से सुनो और उपस्थित रहो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं, रेंगने के विषय में धम्म की वह व्याख्या क्या है? भिक्षुओं, प्राणी अपने कर्मों के स्वामी हैं, अपने कर्मों के उत्तराधिकारी हैं; कर्म ही उनका मूल है, कर्म ही उनका संबंध है, कर्म ही उनका सहारा है; वे चाहे जो भी कर्म करें, अच्छे हों या बुरे, वे उसके उत्तराधिकारी हैं।

(1) "यहाँ, कोई जीवन का नाश करता है; वह हत्यारा है, उसके हाथ खून से सने हैं, वह मार-पीट और हिंसा में लिप्त है, जीवित प्राणियों के प्रति निर्दयी है। वह शरीर, वाणी और मन से रेंगता है। 2178 उसका शारीरिक कर्म कुटिल है; उसका वाणी कर्म कुटिल है; उसका मानसिक कर्म कुटिल है। उसका गंतव्य कुटिल है; उसका पुनर्जन्म कुटिल है। परन्तु कुटिल गंतव्य और पुनर्जन्म वाले के लिए, मैं कहता हूँ, दो गंतव्य हैं: या तो अत्यंत कष्टदायी नरक या रेंगने वाले पशुओं की कोई प्रजाति। और रेंगने वाले पशुओं की प्रजातियाँ क्या हैं? साँप, बिच्छू, कनखजूरा, नेवला, बिल्ली, चूहा और उल्लू, 2179 या कोई अन्य जानवर जो मनुष्यों को देखकर रेंग कर भाग जाते हैं। इस प्रकार एक प्राणी दूसरे प्राणी से पुनर्जन्म लेता है; व्यक्ति अपने कर्मों के फलस्वरूप पुनर्जन्म लेता है। पुनर्जन्म लेने के बाद, संपर्क प्रभावित करते हैं एक। मैं कहता हूँ कि इसी तरह प्राणी अपने कर्मों के उत्तराधिकारी होते हैं।

(2) "कोई वह लेता है जो दिया नहीं गया है... (3) ... यौन दुराचार में लिप्त होता है... (4) ... झूठ बोलता है... (5) ... विभाजनकारी बातें करता है... (6) ... कठोर बातें करता है... (7) ... व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है... (8) ... लालसा से भरा रहता है... (9) ... द्वेषपूर्ण मन और घृणा की भावना रखता है। (10) ... गलत मत रखता है और गलत दृष्टिकोण रखता है, जैसे: 'कुछ भी दिया नहीं गया है... संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले कोई तपस्वी और ब्राह्मण नहीं हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इस संसार और परलोक का अनुभव किया हो और दूसरों को उनका ज्ञान कराते हों। वह शरीर, वाणी और मन से रेंगता है। उसका शारीरिक कर्म टेढ़ा है... उसका गंतव्य टेढ़ा है; [290] उसका पुनर्जन्म टेढ़ा है... इस प्रकार एक प्राणी दूसरे प्राणी से पुनर्जन्म लेता है; व्यक्ति अपने कर्मों के फलस्वरूप पुनर्जन्म लेता है। पुनर्जन्म लेने के बाद, संपर्क उसे प्रभावित करते हैं। मैं कहता हूँ कि इसी प्रकार प्राणी अपने कर्मों के उत्तराधिकारी होते हैं।

भिक्षुओं, प्राणी अपने कर्मों के स्वामी हैं, अपने कर्मों के उत्तराधिकारी हैं; कर्म ही उनका मूल है, कर्म ही उनका संबंध है, कर्म ही उनका सहारा है; वे चाहे जो भी कर्म करें, अच्छे हों या बुरे, वे उसके उत्तराधिकारी हैं।

(1) "यहाँ, जीवन के विनाश का त्याग करके, कोई व्यक्ति जीवन के विनाश से दूर रहता है; हिंसा और शस्त्र त्यागकर, विवेकशील और दयालु होकर, वह सभी प्राणियों के प्रति करुणा भाव रखता है। वह शरीर, वाणी और मन से रेंगता नहीं है। उसका शारीरिक कर्म सीधा है; उसका वाणी कर्म सीधा है; उसका मानसिक कर्म सीधा है। उसका गंतव्य सीधा है; उसका पुनर्जन्म सीधा है। परन्तु जिसका गंतव्य और पुनर्जन्म सीधा हो, उसके लिए मैं कहता हूँ, दो गंतव्य हैं: या तो अनन्य सुखदायक स्वर्ग या प्रतिष्ठित परिवार, जैसे धनी क्षत्रिय, धनी ब्राह्मण या धनी गृहस्थ, [वे परिवार जो] धनवान हैं, अपार संपत्ति और धन-संपत्ति से संपन्न हैं, प्रचुर मात्रा में सोना-चांदी, प्रचुर खजाने और सामान से युक्त हैं, प्रचुर धन और अनाज से युक्त हैं। इस प्रकार एक प्राणी दूसरे प्राणी से पुनर्जन्म लेता है; एक प्राणी दूसरे प्राणी के माध्यम से पुनर्जन्म लेता है। अपने कर्मों के फलस्वरूप। पुनर्जन्म के बाद, संपर्कों का प्रभाव पड़ता है। मैं कहता हूँ कि इसी प्रकार प्राणी अपने कर्मों के उत्तराधिकारी होते हैं।

(2) "अनावश्यक वस्तुओं को लेने का त्याग करके, कोई व्यक्ति अनावश्यक वस्तुओं को लेने से परहेज़ करता है... (3) ... यौन दुराचार से परहेज़ करता है... [291] (4) ... झूठे भाषण से परहेज़ करता है... (5) ... विभाजनकारी भाषण से परहेज़ करता है... (6) ... कठोर भाषण से परहेज़ करता है... (7) ... व्यर्थ की बातों से परहेज़ करता है... (8) ... लालसा रहित है... (9) ... सद्भावनावान है... (10) ... सही दृष्टिकोण रखता है और सही परिप्रेक्ष्य रखता है, इस प्रकार: 'जो दिया गया है वह है... संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले तपस्वी और ब्राह्मण हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इस संसार और परलोक का अनुभव किया है और उन्हें दूसरों को भी ज्ञात कराते हैं। अन्य। वह शरीर, वाणी और मन से रेंगता नहीं है। उसका शारीरिक कर्म सीधा है... उसका गंतव्य सीधा है; उसका पुनर्जन्म सीधा है... इस प्रकार एक प्राणी दूसरे प्राणी से पुनर्जन्म लेता है; व्यक्ति अपने कर्मों के फलस्वरूप पुनर्जन्म लेता है। जब कोई पुनर्जन्म लेता है, तो संपर्क उसे प्रभावित करते हैं। मैं कहता हूँ कि इसी प्रकार प्राणी अपने कर्मों के उत्तराधिकारी होते हैं।

भिक्षुओं, प्राणी अपने कर्मों के स्वामी हैं, अपने कर्मों के उत्तराधिकारी हैं; कर्म ही उनका मूल है, कर्म ही उनका संबंध है, कर्म ही उनका सहारा है; वे चाहे जो भी कर्म करें, अच्छे हों या बुरे, वे उसके उत्तराधिकारी हैं।

"यह, भिक्षुओं, रेंगने पर धम्म की व्याख्या है।" [292]

---

227 सचेत क्रिया (1) (संचेतनिका1)

भिक्षुओं, मैं यह नहीं कहता कि सचेत कर्मों का अंत हो जाता है, जब तक कि उनके परिणाम अनुभव न हो जाएं, चाहे वह इसी जीवन में हो, अगले जन्म में हो या किसी अन्य अवसर पर। लेकिन मैं यह भी नहीं कहता कि दुख का अंत हो जाता है, जब तक कि सचेत कर्मों के परिणाम अनुभव न हो जाएं।

"इस विषय में, भिक्षुओं, शारीरिक कर्मों का तीन प्रकार का भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) है, जो हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न होता है, जिसका परिणाम कष्टदायी होता है; मौखिक कर्मों का चार प्रकार का भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) है, जो हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न होता है, जिसका परिणाम कष्टदायी होता है; और मानसिक कर्मों का तीन प्रकार का भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) है, जो हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न होता है, जिसका परिणाम कष्टदायी होता है।"

"और हे भिक्षुओं, हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न शारीरिक कर्मों की त्रिविध विकृति और विफलता (विपत्ति) कैसे होती है, जिसका परिणाम कष्टदायी होता है?"

(1) "यहाँ, कोई जीवन नष्ट करता है। वह हत्यारा है, उसके हाथ खून से सने हैं, वह मारपीट और हिंसा का आदी है, जीवित प्राणियों के प्रति निर्दयी है।

(2) "वह वह लेता है जो उसे नहीं दिया गया है। वह गाँव या जंगल में दूसरों की संपत्ति और माल चुराता है।

(3) वह यौन दुराचार में लिप्त होता है। वह उन महिलाओं के साथ यौन संबंध रखता है जो अपनी माँ, पिता, माता-पिता, भाई, बहन या रिश्तेदारों द्वारा संरक्षित हैं; जो अपने धर्म द्वारा संरक्षित हैं; जिनका पति है; जिनका उल्लंघन दंडनीय है; या यहाँ तक कि पहले से ही किसी के साथ यौन संबंध रखता है।

"इसी प्रकार हानिकारक (अकुशल) (स्वयं) जागरूकता से उत्पन्न शारीरिक कर्मों का त्रिगुणात्मक भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) होती है, जिसका परिणाम और प्रभाव कष्टदायी होता है।"

और हे भिक्षुओं, हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न मौखिक कर्म (कर्म/कर्मों) का चौगुना भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) कैसे होती है, जिसका परिणाम और परिणाम कष्टदायी होता है? [293]

(4) "यहाँ कोई व्यक्ति झूठ बोलता है। यदि उसे किसी परिषद, सभा, अपने रिश्तेदारों की उपस्थिति में, अपने संघ में, या न्यायालय में बुलाया जाता है और उससे गवाह के रूप में इस प्रकार प्रश्न किया जाता है: 'तो, भले व्यक्ति, बताइए कि आप क्या जानते हैं', तो न जानते हुए वह कहता है, 'मैं जानता हूँ' या जानते हुए कहता है, 'मैं नहीं जानता'; न देखते हुए वह कहता है, 'मैं देखता हूँ' या देखते हुए कहता है, 'मैं नहीं देखता'। इस प्रकार वह जानबूझकर अपने स्वार्थ के लिए, या किसी अन्य के स्वार्थ के लिए, या किसी तुच्छ सांसारिक उद्देश्य के लिए झूठ बोलता है।"

(5) वह फूट डालने वाली बातें करता है। यहाँ कुछ सुनकर, वह उसे कहीं और दोहराता है ताकि [उन लोगों को] इन लोगों से अलग कर सके; कहीं और कुछ सुनकर, वह उसे इन लोगों के सामने दोहराता है ताकि [उन्हें] उनसे अलग कर सके। इस प्रकार वह एकता को भंग करने वाला, फूट पैदा करने वाला, गुटों में आनंद लेने वाला, गुटों से प्रसन्न होने वाला, गुटों में मग्न रहने वाला, गुटों को जन्म देने वाले शब्दों का वक्ता है।

(6) "वह कठोर स्वर में बोलता है। वह ऐसे शब्द बोलता है जो कठोर, दूसरों को दुख पहुँचाने वाले, दूसरों के लिए अपमानजनक, क्रोध से भरे और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) के लिए अनुपयुक्त होते हैं।"

(7) वह व्यर्थ की बातों में लिप्त रहता है। वह अनुचित समय पर बोलता है, झूठ बोलता है, अनुत्पादक बातें बोलता है, धम्म और अनुशासन के विपरीत बातें बोलता है; अनुचित समय पर वह ऐसे शब्द बोलता है जो व्यर्थ, तर्कहीन, बेतुके और अनुत्पादक होते हैं।

"इस प्रकार हानिकारक (अकुशल) (स्वयं) जागरूकता से उत्पन्न मौखिक कर्म (कर्म/कार्यों) का चौगुना भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) होती है, जिसका परिणाम और परिणाम कष्टदायी होता है।"

"और हे भिक्षुओं, हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्म (कर्म/कार्यों) का त्रिगुणात्मक भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) कैसे होती है, जिसका परिणाम और परिणाम कष्टदायी होता है?"

(8) "यहाँ कोई लालसा से भरा हुआ है। वह दूसरों के धन और संपत्ति के लिए इस प्रकार तरसता है: 'ओह, जो दूसरे का है वह मेरा हो!'

(9) "उसके मन में दुर्भावना और घृणा के भाव हैं, इस प्रकार: 'इन प्राणियों का वध हो, इन्हें काट डाला जाए, नष्ट कर दिया जाए या पूरी तरह से मिटा दिया जाए!'"

(10) "उसका मत और दृष्टिकोण गलत है, इस प्रकार: 'कुछ भी दिया नहीं जाता, कुछ भी बलिदान नहीं किया जाता, कुछ भी अर्पित नहीं किया जाता; अच्छे और बुरे कर्मों का कोई फल या परिणाम नहीं होता; न यह संसार है, न दूसरा संसार; न माता है, न पिता; कोई भी प्राणी स्वतः पुनर्जन्म नहीं लेता; [294] इस संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले कोई तपस्वी और ब्राह्मण नहीं हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इस संसार और दूसरे संसार को जान लिया हो और दूसरों को उनका ज्ञान कराते हों।'

"इसी प्रकार हानिकारक (अकुशल) (स्वयं) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्म (कर्म/कार्यों) का त्रिगुणात्मक भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) होती है, जिसका परिणाम और परिणाम कष्टदायी होता है।"

भिक्षुओं, हानिकारक अकुशल (स्व) जागरूकता से उत्पन्न शारीरिक कर्मों के त्रिगुणात्मक भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) के कारण, मृत्यु के बाद शरीर के टूटने पर प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं; या हानिकारक अकुशल (स्व) जागरूकता से उत्पन्न मौखिक कर्मों के चारगुणात्मक भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) के कारण, मृत्यु के बाद शरीर के टूटने पर प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं; या हानिकारक अकुशल (स्व) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्मों के त्रिगुणात्मक भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) के कारण, मृत्यु के बाद शरीर के टूटने पर प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं। निम्न लोक, नरक में। जैसे पासा ऊपर उछालने पर जहाँ गिरता है वहीं स्थिर हो जाता है, ठीक उसी प्रकार, शारीरिक कर्मों के तीन प्रकार के भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) के कारण... या मौखिक कर्मों के चार प्रकार के भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) के कारण... या हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्मों के तीन प्रकार के भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) के कारण, मृत्यु के बाद शरीर के टूटने के साथ, प्राणी दुख के लोक में, एक बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।

भिक्षुओं, मैं यह नहीं कहता कि सजग कर्मों का फल भोगने से पहले ही उनका अंत हो जाता है, चाहे यह फल इसी जीवन में हो, अगले जन्म में हो या किसी अन्य अवसर पर। लेकिन मैं यह भी नहीं कहता कि सजग कर्मों का फल भोगने से पहले ही दुख समाप्त हो जाता है।

"इस विषय में, भिक्षुओं, लाभकारी (कुशल) (स्वयं) जागरूकता से उत्पन्न शारीरिक कर्म की तीन गुना सफलता है, जिसका सुखद रूपरेखा और परिणाम होता है; लाभकारी (कुशल) (स्वयं) जागरूकता से उत्पन्न मौखिक कर्म (कर्म/कार्य) की चार गुना सफलता है, जिसका सुखद परिणाम होता है; और लाभकारी (कुशल) (स्वयं) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्म (कर्म/कार्य) की तीन गुना सफलता है, जिसका सुखद परिणाम होता है।"

और हे भिक्षुओं, लाभकारी (कुशल) (आत्म) जागरूकता से उत्पन्न शारीरिक कर्म की त्रिविध सफलता कैसे प्राप्त की जा सकती है, जिसका परिणाम सुखद हो?

(1) "यहाँ, कोई व्यक्ति जीवन के विनाश का त्याग करके, जीवन के विनाश से दूर रहता है। लाठी (हिंसा) और हथियार को त्यागकर, वह विवेकशील और दयालु होकर सभी जीवित प्राणियों के प्रति करुणामयी भाव से रहता है।"

(2) "जो कुछ नहीं दिया गया है, उसे लेने का त्याग करके, वह जो कुछ नहीं दिया गया है, उसे लेने से परहेज करता है। वह गाँव या जंगल में दूसरों के धन और संपत्ति की चोरी नहीं करता है।

(3) यौन दुराचार का त्याग करके, वह यौन दुराचार से परहेज करता है। वह उन महिलाओं के साथ यौन संबंध नहीं रखता जो अपनी माता, पिता, माता-पिता, भाई, बहन या रिश्तेदारों द्वारा संरक्षित हैं; जो अपने धम्म द्वारा संरक्षित हैं; जिनका पति है; जिनका उल्लंघन दंडनीय है; या यहाँ तक कि पहले से ही किसी के साथ यौन संबंध में हैं।

"इस प्रकार लाभकारी (कुशल) (स्वयं) जागरूकता से उत्पन्न शारीरिक कर्म की त्रिविध सफलता प्राप्त होती है, जिसका परिणाम सुखद होता है।"

"और हे भिक्षुओं, लाभकारी (कुशल) (आत्म) जागरूकता से उत्पन्न मौखिक कर्म की चौगुनी सफलता कैसे प्राप्त होती है, जिसका परिणाम सुखद होता है?"

(4) "यहाँ, झूठ बोलने का त्याग करके, कोई व्यक्ति झूठ बोलने से परहेज़ करता है। यदि उसे किसी परिषद, सभा, अपने रिश्तेदारों की उपस्थिति में, अपने संघ में, या न्यायालय में बुलाया जाता है, और उससे एक गवाह के रूप में इस प्रकार प्रश्न किया जाता है: 'तो, भले व्यक्ति, जो तुम जानते हो, बताओ,' तो, न जानते हुए, वह कहता है, 'मैं नहीं जानता' या जानते हुए, वह कहता है, 'मैं जानता हूँ'; न देखते हुए, वह कहता है, 'मैं नहीं देखता' या देखते हुए, वह कहता है, 'मैं देखता हूँ।' इस प्रकार वह जानबूझकर अपने स्वार्थ के लिए, या किसी दूसरे के स्वार्थ के लिए, या किसी तुच्छ सांसारिक स्वार्थ के लिए झूठ नहीं बोलता।"

(5) "विभाजनकारी भाषण का त्याग करके, वह विभाजनकारी भाषण से परहेज करता है। यहाँ कुछ सुनकर, वह उसे कहीं और दोहराता नहीं है ताकि [उन लोगों को] इन लोगों से अलग कर सके; या कहीं और कुछ सुनकर, वह उसे इन लोगों के सामने दोहराता नहीं है ताकि [उन्हें] उनसे अलग कर सके। इस प्रकार वह विभाजित लोगों को एकजुट करने वाला है, [296] एकता का समर्थक है, जो सामंजस्य का आनंद लेता है, सामंजस्य में प्रसन्न होता है, सामंजस्य में प्रसन्न होता है, सामंजस्य को बढ़ावा देने वाले शब्दों का वक्ता है।

(6) कठोर भाषा का त्याग करके, वह कठोर भाषा से परहेज करता है। वह ऐसे शब्द बोलता है जो कोमल, कानों को भाने वाले और प्यारे हों, जो हृदय को छू जाएं, शिष्ट हों, बहुतों द्वारा वांछित हों और बहुतों को भाने वाले हों।

(7) "व्यर्थ की बातों का त्याग करके, वह व्यर्थ की बातों से दूर रहता है। वह उचित समय पर बोलता है, सत्य बोलता है, लाभकारी बातें बोलता है, धम्म और अनुशासन पर बोलता है; उचित समय पर वह ऐसे शब्द बोलता है जो दर्ज करने योग्य हों, तर्कसंगत हों, संक्षिप्त हों और लाभकारी हों।"

"इस प्रकार लाभकारी (कुशल) (स्वयं) जागरूकता से उत्पन्न मौखिक कर्म की चौगुनी सफलता प्राप्त होती है, जिसका परिणाम सुखद होता है।"

और हे भिक्षुओं, लाभकारी (कुशल) (आत्म) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्म की त्रिविध सफलता कैसे प्राप्त की जा सकती है, जिसका परिणाम सुखद हो?

(8) "यहाँ, कोई व्यक्ति लालसा रहित है। वह दूसरों के धन और संपत्ति के लिए इस प्रकार लालसा नहीं करता: 'ओह, जो दूसरे का है वह मेरा हो!'"

(9) "वह सद्भावपूर्ण है और उसके इरादे घृणा से मुक्त हैं, इस प्रकार: 'ये प्राणी खुशी से रहें, शत्रुता, पीड़ा और चिंता से मुक्त रहें!'"

(10) 'उसका सही दृष्टिकोण और परिप्रेक्ष्य इस प्रकार है: 'जो दिया जाता है, जो बलिदान किया जाता है, जो अर्पित किया जाता है; अच्छे और बुरे कर्मों का फल और परिणाम; यह संसार और परलोक; माता और पिता; स्वतः पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी; संसार में सही आचरण और सही अभ्यास वाले तपस्वी और ब्राह्मण हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा स्वयं इस संसार और परलोक का अनुभव किया है और उन्हें दूसरों को ज्ञात कराते हैं।'

"इसी तरह लाभकारी (कुशल) (स्वयं) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्म की तीन गुना सफलता प्राप्त होती है, जिसका सुखद परिणाम और परिणाम होता है।"

भिक्षुओं, ऐसा इसलिए है क्योंकि लाभकारी (कुशल) (आत्म) जागरूकता से उत्पन्न शारीरिक कर्मों की त्रिगुणी सफलता के कारण, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद प्राणी एक अच्छे स्थान पर, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं; या लाभकारी (कुशल) (आत्म) जागरूकता से उत्पन्न मौखिक कर्मों की चौगुणी सफलता के कारण, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद प्राणी एक अच्छे स्थान पर, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं; या लाभकारी (कुशल) (आत्म) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्मों की त्रिगुणी सफलता के कारण, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद प्राणी एक अच्छे स्थान पर, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं। जैसे पासा ऊपर उछालने पर जहाँ गिरता है वहीं स्थिर हो जाता है, वैसे ही यह शारीरिक कर्मों की त्रिगुणी सफलता के कारण है... [297] ... या तो यह कर्म (कार्य/कर्म) की चौगुनी सफलता के कारण है ... या यह लाभकारी (कुशल) (स्वयं) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्म (कर्म/कर्म) की तिगुनी सफलता के कारण है कि शरीर के टूटने के साथ, मृत्यु के बाद, प्राणी एक अच्छे गंतव्य में, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।

भिक्षुओं, मैं यह नहीं कहता कि सजग कर्मों का अंत तब तक हो जाता है जब तक कि उनके परिणाम न भुगत लिए जाएं, चाहे वह इसी जीवन में हो, अगले जन्म में हो या किसी और अवसर पर। लेकिन मैं यह भी नहीं कहता कि दुख का अंत तब तक हो जाता है जब तक कि सजग कर्मों के परिणाम न भुगत लिए जाएं।

---

218 सचेत क्रिया (2) 2184 (संसातनिका2)

भिक्षुओं, मैं यह नहीं कहता कि सजग कर्मों का फल भोगने से पहले ही उनका अंत हो जाता है; चाहे यह फल इसी जन्म में हो, अगले जन्म में हो या किसी अन्य अवसर पर। परन्तु मैं यह भी नहीं कहता कि सजग कर्मों का फल भोगने से पहले ही दुःख समाप्त हो जाता है।

"इस विषय में, भिक्षुओं, हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न शारीरिक कर्मों का तीन प्रकार का भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) होती है, जिसका परिणाम कष्टदायी होता है; हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न मौखिक कर्मों का चार प्रकार का भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) होती है, जिसका परिणाम कष्टदायी होता है; और हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्मों का तीन प्रकार का भ्रष्टाचार और विफलता (विपत्ति) होती है, जिसका परिणाम कष्टदायी होता है।"

(1)— (10) "और हे भिक्षुओं, शारीरिक कर्मों की तीन प्रकार की विकृति और विफलता (विपत्ति) कैसे होती है... मौखिक कर्मों की चार प्रकार की विकृति और विफलता (विपत्ति) कैसे होती है... [298] ... मानसिक कर्मों की तीन प्रकार की विकृति और विफलता (विपत्ति) कैसे होती है?... [सभी 10:217 के अनुसार] ... जिसका परिणाम और प्रभाव कष्टदायी होता है।"

भिक्षुओं, हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न शारीरिक कर्मों के तीन प्रकार के भ्रष्टाचार और विफलता के कारण... या हानिकारक (अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न मौखिक कर्मों के चार प्रकार के भ्रष्टाचार और विफलता के कारण... या हानिकारक

(अकुशल) (स्व) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्मों के तीन प्रकार के भ्रष्टाचार और विफलता के कारण, मृत्यु के बाद, शरीर के टूटने के साथ, प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।

भिक्षुओं, मैं यह नहीं कहता कि सजग कर्मों का फल भोगने से पहले ही उनका अंत हो जाता है, चाहे यह फल इसी जीवन में हो, अगले जन्म में हो या किसी अन्य अवसर पर। लेकिन मैं यह भी नहीं कहता कि सजग कर्मों का फल भोगने से पहले ही दुख समाप्त हो जाता है।

भिक्षुओं, इस विषय में, लाभकारी (कुशल) (आत्म) जागरूकता से उत्पन्न शारीरिक कर्मों का तीन गुना फल होता है, जिसका परिणाम सुखद होता है। लाभकारी (कुशल) (आत्म) जागरूकता से उत्पन्न मौखिक कर्मों का चार गुना फल होता है, जिसका परिणाम सुखद होता है। लाभकारी (कुशल) (आत्म) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्मों का तीन गुना फल होता है, जिसका परिणाम सुखद होता है।

(1)— (10) "और हे भिक्षुओं, शारीरिक कर्मों का तीन गुना फल कैसे मिलता है... मौखिक कर्मों का चार गुना फल कैसे मिलता है... मानसिक कर्मों का तीन गुना फल कैसे मिलता है?... [सभी 10:217 के अनुसार]... जिसका परिणाम और नतीजा कष्टदायी होता है।"

भिक्षुओं, यह शारीरिक कर्मों की तीन गुना सफलता के कारण है... या यह मौखिक कर्मों की चार गुना सफलता के कारण है... या यह लाभकारी (कुशल) (आत्म) जागरूकता से उत्पन्न मानसिक कर्मों की तीन गुना सफलता के कारण है कि मृत्यु के बाद शरीर के टूटने पर, प्राणी एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।

भिक्षुओं, मैं यह नहीं कहता कि सजग कर्मों का फल भोगने से पहले ही उनका अंत हो जाता है, चाहे यह फल इसी जीवन में हो, अगले जन्म में हो या किसी अन्य अवसर पर। लेकिन मैं यह भी नहीं कहता कि सजग कर्मों का फल भोगने से पहले ही दुख समाप्त हो जाते हैं।

---

219 कर्म से उत्पन्न शरीर (करजाकाया)

भिक्षुओं, मैं यह नहीं कहता कि सजग कर्मों का अंत तब तक हो जाता है जब तक कि उनके परिणाम न भुगत लिए जाएं, चाहे वह इसी जीवन में हो, अगले जन्म में हो या किसी और अवसर पर। लेकिन मैं यह भी नहीं कहता कि दुख का अंत तब तक हो जाता है जब तक कि सजग कर्मों के परिणाम न भुगत लिए जाएं।

"यह श्रेष्ठ शिष्य, भिक्षुओं, जो लालसा से रहित, द्वेष से रहित, भ्रमित नहीं, पूर्णतः समझने वाला, सदा सजग (ध्यान/सती) है, प्रेम-कृपा से परिपूर्ण मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है, उसी प्रकार दूसरी दिशा, तीसरी दिशा और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए अपने समान, वह प्रेम-कृपा से परिपूर्ण, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित मन से संपूर्ण संसार में व्याप्त रहता है। वह इस प्रकार समझता है: 'पहले मेरा मन सीमित और अविकसित था, परन्तु अब यह असीम और सुविकसित है। कोई भी गणनीय कर्म शेष नहीं रहता या बना नहीं रहता।' 2186 [300]

भिक्षुओं, आपका क्या विचार है, यदि कोई युवक बचपन से ही प्रेम और करुणा के द्वारा मन की मुक्ति प्राप्त करने का प्रयास करे, तो क्या वह कोई बुरा कर्म करेगा? 2187

नहीं, भंते।

"क्या उसे कोई बुरा काम न करने पर भी कष्ट हो सकता है?"

"नहीं, भंते। भला जो व्यक्ति कोई बुरा कर्म नहीं करता, उसे किस कारण से कष्ट भोगना पड़ सकता है?" 2188

"एक स्त्री या पुरुष को प्रेम और करुणा के द्वारा मन की इस मुक्ति को विकसित करना चाहिए। एक स्त्री या पुरुष अपने साथ इस शरीर को लेकर नहीं जा सकते। मनुष्यों का मूल आधार मन है। 2189"

"[महान शिष्य] समझता है: 'मैंने अतीत में इस कर्म-जनित शरीर 2190 में जो भी बुरे कर्म किए हैं, वे सब यहीं भोगने के लिए हैं। वे आगे नहीं जाएंगे।' 2191 जब प्रेम-कृपा (मेट्टा) द्वारा मन की मुक्ति इस प्रकार विकसित हो जाती है, तो यह उस बुद्धिमान भिक्षु के लिए अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म नहीं) की ओर ले जाती है जो आगे की मुक्ति प्राप्त नहीं करता है। 2192

"यह श्रेष्ठ शिष्य, भिक्षुओं, जो लालसा से रहित, द्वेष से रहित, भ्रमित नहीं, पूर्णतः समझदार, सदा सजग (ध्यान/सती) है, करुणा से भरे मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है... परोपकारी आनंद से भरे मन से... उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्षा) से भरे मन से, इसी प्रकार दूसरी दिशा, तीसरी दिशा और चौथी दिशा में। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए स्वयं के समान, वह उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्षा) से भरे, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित मन से संपूर्ण विश्व में व्याप्त रहता है। वह इस प्रकार समझता है: 'पहले मेरा मन सीमित और अविकसित था, लेकिन अब यह असीम और पूर्ण विकसित है। कोई भी मापने योग्य कर्म (कर्म/कार्य) वहां शेष नहीं रहता या बना नहीं रहता।'" भिक्षुओं, आपका क्या विचार है, यदि कोई युवक बचपन से ही उदासीनता (भीतर में ध्यान केंद्रित करना/उपेक्खा) द्वारा मन की मुक्ति विकसित करे, तो क्या वह कोई बुरा कर्म करेगा?

नहीं, भंते।

"क्या उसे कोई बुरा काम न करने पर भी कष्ट हो सकता है?"

"नहीं, भंते। भला जो व्यक्ति कोई बुरा कर्म नहीं करता, उसे किस कारण से कष्ट भोगना पड़ सकता है?"

"स्त्री या पुरुष को उदासीनता (भीतर में विलीन होना/उपेक्खा) के द्वारा मन की इस मुक्ति को विकसित करना चाहिए। स्त्री या पुरुष अपने साथ इस शरीर को लेकर नहीं जा सकते। मनुष्यों का मूल आधार मन है।"

"[उत्कृष्ट शिष्य] समझता है: 'मैंने अतीत में इस कर्म-जनित शरीर में जो भी बुरे कर्म किए हैं, वे सब यहीं भोगने के लिए हैं। वे आगे नहीं जाएंगे।' जब इस प्रकार उदासीनता (भीतर में विलीन होना/उपेक्खा) द्वारा मन की मुक्ति विकसित हो जाती है, तो यह उस बुद्धिमान भिक्षु (सन्यासी) के लिए अनागामी (इस धरती पर पुनर्जन्म न होना) की ओर ले जाती है जो आगे की मुक्ति प्राप्त नहीं करता है।"

---

220 धम्म के विपरीत आचरण (अधम्मकारिया सं. अधर्म-क्रिया)

फिर एक ब्राह्मण भगवान (बुद्ध) के पास आया और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत के बाद, वह एक तरफ बैठ गया और भगवान (बुद्ध) से कहा:

"गुरु गौतम, ऐसा क्यों होता है कि शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, कुछ प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं?"

"हे ब्राह्मण, अधर्मी आचरण, धर्म के विपरीत आचरण के कारण ही कुछ प्राणी शरीर के क्षोभ के बाद मृत्यु के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

"गुरु गौतम, ऐसा क्यों है कि यहाँ कुछ प्राणी, [302] शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, एक अच्छे गंतव्य में, एक स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं?"

"हे ब्राह्मण, धर्म के अनुरूप आचरण करने के कारण ही कुछ प्राणी शरीर के नष्ट होने के बाद मृत्यु के समय एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

"गुरु गौतम ने संक्षेप में जो कहा है, उसका अर्थ मुझे विस्तार से समझ नहीं आया। कृपया गुरु गौतम मुझे धम्म इस प्रकार समझाएँ कि मैं उसका अर्थ विस्तार से समझ सकूँ।"

"तो फिर, ब्राह्मण, ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

“जी जी,” उस ब्राह्मण ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"ब्राह्मण, अधार्मिक आचरण, धम्म के विपरीत आचरण, शरीर के द्वारा तीन प्रकार का, वाणी के द्वारा चार प्रकार का और मन के द्वारा तीन प्रकार का होता है।"

"और हे ब्राह्मण, अधर्मी आचरण, धम्म के विपरीत आचरण, शरीर के मार्ग से तीन प्रकार से कैसे होता है? ... [यहाँ और नीचे, व्याख्याएँ 10:217 के अनुसार हैं] ... इस प्रकार अधर्मी आचरण, धम्म के विपरीत आचरण, मन के मार्ग से तीन प्रकार से होता है।"

"हे ब्राह्मण, ऐसे अधार्मिक आचरण, धम्म के विपरीत आचरण के कारण ही कुछ प्राणी शरीर के क्षोभ के बाद मृत्यु के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

"ब्राह्मण, धर्म के अनुसार आचरण, शरीर के तीन प्रकार से, वाणी के चार प्रकार से और मन के तीन प्रकार से होता है।"

"और हे ब्राह्मण, धर्म के अनुसार आचरण, शरीर के मार्ग से तीन प्रकार का कैसे होता है? ... [303] ... इस प्रकार धर्म के अनुसार आचरण, मन के मार्ग से तीन प्रकार का होता है।

"हे ब्राह्मण, ऐसे धार्मिक आचरण, धर्म के अनुरूप आचरण के कारण ही कुछ प्राणी शरीर के क्षोभ के बाद मृत्यु के समय एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

"उत्कृष्ट, गुरु गौतम! ... गुरु गौतम मुझे गृहस्थ अनुयायी के रूप में स्वीकार करें, जिसने आज से जीवन भर के लिए शरण ली है।"

द्वितीय. समानता (समन्ना-वाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

221

"दस गुणों से युक्त भिक्षुओं को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे दस गुण क्या हैं? (1) जीवन का नाश करने वाला, (2) बिना दी हुई वस्तुएँ लेने वाला, (3) यौन दुराचार में लिप्त, (4) झूठ बोलने वाला, (5) फूट डालने वाली बातें करने वाला, (6) कठोर बातें करने वाला, (7) व्यर्थ की बातों में लिप्त, (8) लालसा से भरा हुआ, (9) द्वेषपूर्ण मन रखने वाला और (10) गलत मत रखने वाला। इन दस गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। [304]

दस गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे दस गुण कौन से हैं? (1) वह जीव-जंतुओं का संहार नहीं करता, (2) वह बिना दी हुई वस्तुएँ नहीं लेता, (3) वह यौन दुराचार नहीं करता, (4) वह झूठी वाणी नहीं बोलता, (5) वह फूट डालने वाली वाणी नहीं बोलता, (6) वह कठोर वाणी नहीं बोलता, (7) वह व्यर्थ की बातों में नहीं पड़ता, (8) वह लालसा रहित होता है, (9) वह सद्भावनावान होता है, और (10) उसका दृष्टिकोण सही होता है। इन दस गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

222

"भिक्षुओं, जिनमें बीस गुण होते हैं, उन्हें नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे बीस गुण कौन से हैं? (1) एक स्वयं जीवन का नाश करता है और (2) दूसरों को जीवन का नाश करने के लिए प्रेरित करता है... (19) एक स्वयं गलत मत रखता है और (20) दूसरों को गलत मत रखने के लिए प्रेरित करता है। इन बीस गुणों वाले व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

बीस गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे बीस गुण कौन से हैं? (1) व्यक्ति स्वयं जीवन-विनाश से विरक्त रहता है और (2) दूसरों को भी जीवन-विरक्तश से विरक्त रहने के लिए प्रेरित करता है... [305]... (19) व्यक्ति स्वयं सही दृष्टि रखता है और (20) दूसरों को भी सही दृष्टि रखने के लिए प्रेरित करता है। इन बीस गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

223

"तीस गुणों से युक्त भिक्षुओं को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो। वे तीस गुण क्या हैं? (1) स्वयं जीवन का नाश करने वाला, (2) दूसरों को जीवन का नाश करने के लिए प्रेरित करने वाला, और (3) जीवन के नाश का समर्थन करने वाला... (28) स्वयं गलत मत रखने वाला, (29) दूसरों को गलत मत रखने के लिए प्रेरित करने वाला, और (30) गलत मत का समर्थन करने वाला। इन तीस गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे डाला जाता है मानो उन्हें वहाँ लाया गया हो।"

तीस गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे तीस गुण क्या हैं? [306] (1) व्यक्ति स्वयं जीवन-विनाश से परहेज करता है, (2) दूसरों को जीवन-विनाश से परहेज करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (3) जीवन-विनाश से परहेज करने का समर्थन करता है... (2.8) व्यक्ति स्वयं सही दृष्टिकोण रखता है, (29) दूसरों को सही दृष्टिकोण रखने के लिए प्रोत्साहित करता है, और (30) सही दृष्टिकोण का समर्थन करता है। इन तीस गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे ही पहुँचाया जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

224

"भिक्षुओं (सन्यासियों), चालीस गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है जैसे उसे वहाँ लाया गया हो। वे चालीस गुण क्या हैं? (1) व्यक्ति स्वयं जीवन का नाश करता है, (2) दूसरों को जीवन का नाश करने के लिए प्रोत्साहित करता है, (3) जीवन के नाश का समर्थन करता है, और (4) जीवन के नाश की प्रशंसा करता है... [307] ... {37) व्यक्ति स्वयं गलत मत रखता है, (38) दूसरों को गलत मत रखने के लिए प्रोत्साहित करता है, (39) गलत मत का समर्थन करता है, और (40) गलत मत की प्रशंसा करता है। इन चालीस गुणों से युक्त व्यक्ति को नरक में ऐसे ही डाल दिया जाता है जैसे उसे वहाँ लाया गया हो।"

चालीस गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो। वे चालीस गुण कौन से हैं? (1) व्यक्ति स्वयं जीवन-विनाश से परहेज करता है, (2) दूसरों को जीवन-विनाश से परहेज करने के लिए प्रोत्साहित करता है, (3) जीवन-विनाश से परहेज का समर्थन करता है, और (4) जीवन-विनाश से परहेज की प्रशंसा करता है... [308] ... (37) व्यक्ति स्वयं सही दृष्टिकोण रखता है, (38) दूसरों को सही दृष्टिकोण के लिए प्रोत्साहित करता है, (39) सही दृष्टिकोण का समर्थन करता है, और (40) सही दृष्टिकोण की प्रशंसा करता है। इन चालीस गुणों से युक्त व्यक्ति को स्वर्ग में ऐसे रखा जाता है मानो उसे वहाँ लाया गया हो।

225-228

"दस गुणों से युक्त भिक्षु, घायल और अपंग अवस्था में भी स्वयं को बनाए रखते हैं... स्वयं को अक्षुण्ण और अक्षुण्ण रखते हैं... बीस गुणों से युक्त भिक्षु... तीस गुणों से युक्त... चालीस गुणों से युक्त भिक्षु, घायल और अपंग अवस्था में भी स्वयं को बनाए रखते हैं... स्वयं को अक्षुण्ण और अक्षुण्ण रखते हैं..."

---

229 - 232

"दस गुणों से युक्त भिक्षुओं का शरीर के टूटने के साथ ही मृत्यु के बाद, कोई यहाँ दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, [309] नरक में पुनर्जन्म लेता है... कोई यहाँ अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेता है।" "बीस गुणों से युक्त भिक्षुओं... तीस गुणों से युक्त... चालीस गुणों से युक्त भिक्षुओं का यहाँ दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है... कोई यहाँ अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म लेता है।"

---

233 - 236

"दस गुणों से युक्त भिक्षुओं में से एक को मूर्ख समझा जा सकता है... दूसरे को बुद्धिमान समझा जा सकता है।" "बीस गुणों से युक्त भिक्षुओं में से... तीस गुणों से युक्त... चालीस गुणों से युक्त भिक्षुओं में से एक को मूर्ख समझा जा सकता है... दूसरे को बुद्धिमान समझा जा सकता है।"

III. कामवासना (राग) और इसी प्रकार की पुनरावृत्ति श्रृंखला [2195]

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

237 [2196]

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए दस चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे दस चीजें क्या हैं? अनाकर्षकता की अनुभूति, मृत्यु की अनुभूति, भोजन की अरुचि की अनुभूति, समस्त संसार में आनंदहीनता की अनुभूति, अनित्यता की अनुभूति, अनित्य में दुख की अनुभूति, दुख में अनात्म की अनुभूति, त्याग की अनुभूति, वैराग्य की अनुभूति और समाप्ति की अनुभूति। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन दस चीजों का विकास करना आवश्यक है। [310]

238

भिक्षुओं, राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए दस चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे दस चीजें क्या हैं? अनित्यता का बोध, अनात्म का बोध, भोजन के प्रति अरुचि का बोध, समस्त संसार में आनंदहीनता का बोध, कंकाल का बोध, कृमिग्रस्त शव का बोध, क्षीण शव का बोध, सड़ते हुए शव का बोध, फटे हुए शव का बोध और फूले हुए शव का बोध। राग का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन दस चीजों का विकास करना आवश्यक है।

239

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए दस चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे दस चीजें क्या हैं? सही दृष्टि, सही आशय, सही वाणी, सही कर्म, सही जीविका, सही प्रयास, सही ध्यान (सती/सजगता), सही समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन), सही ज्ञान और सही मुक्ति। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन दस चीजों का विकास करना आवश्यक है। 2197

---

240 — 266

भिक्षुओं, कामवासना (राग) की पूर्ण समझ के लिए... उसके पूर्ण विनाश के लिए... उसके त्याग के लिए... उसके विनाश के लिए... उसके लुप्त होने के लिए... उसके मिट जाने के लिए... उसके अंत के लिए... उसके त्याग के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए... इन दस चीजों का विकास करना चाहिए।

267-746

भिक्षुओं, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के लिए... पूर्ण समझ के लिए... पूर्ण विनाश के लिए... त्याग के लिए... विनाश के लिए... लुप्त होने के लिए... मिट जाने के लिए... समाप्ति के लिए... त्याग के लिए... घृणा, भ्रम, क्रोध, शत्रुता, निंदा, उद्दंडता, ईर्ष्या, कंजूसी, छल, धूर्तता, हठ, उग्रता, अहंकार, घमंड, नशा, आलस्य आदि का त्याग करना चाहिए। इन दस गुणों का विकास करना चाहिए।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह सुनकर भिक्षु प्रसन्न हुए और भगवान (बुद्ध) के इस कथन से उन्हें बहुत आनंद हुआ।

द बुक ऑफ द टेंस पूरी हो गई है।

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी और पाली-देवनागरी संस्करण ग्रंथों में अंतर्निहित हैं।

यह अंगुत्तरा निकाय का ग्यारहवाँ खंड है। यह भिक्खु बोधि का संशोधित संस्करण है।

महत्वपूर्ण सुत्त:

9.सद्ध (सं. श्रद्धा)

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN10)   अगला (परिवर्तन) >>>>

अंतर्वस्तु

1ग्यारहों की पुस्तक (एकदासकनिपाता)

1.1मैं आश्रित अनुभाग (निस्सायवग्गो)

1.1.11 क्या उद्देश्य? [2199] (किमाथिया सं. किम-अर्थ्या)

1.1.22 चेतन क्रियाएँ [2200] (चेतनकारण्य सं. चैतन्य-करणीय)

1.1.33 निकटवर्ती कारण (l) [2201] (उपनिषद1)

1.1.44 निकटवर्ती कारण (2) (उपनिषद 2)

1.1.55 निकटवर्ती कारण (3) (उपनिषद 3)

1.1.66 आपदा [2202] (ब्यासन)

1.1.77 धारणा 2204 (सन्ना सं. संज्ञा)

1.1.88. ध्यान (मानसिकारा)

1.1.99 सद्धा (संस्कार: श्रद्धा)

1.1.1010 मोर अभयारण्य [2213] (मोरा निवापा)

1.2II. स्मरण (अनुसतिवाग्गो)

1.2.111 महानामा (एल) [2214]

1.2.212 महानामा (2)

1.2.313 नंदिया

1.2.414 सुभूति

1.2.515 प्रेमपूर्ण दया [2222] (मेट्टा)

1.2.616 अत्थाकानगर [2224]

1.2.717 चरवाहा [2230] (गोपाला)

1.2.818 समाधि (स्वयं में लीन होना/सम्मोहन) (1)

1.2.919 समाधि (स्व-लीनता/समाधि) (2)

1.2.1020 समाधि (स्व-लीनता/समाधि) (3)

1.2.1121 समाधि (स्व-लीनता/समाधि) (4)

1.3तृतीय. समानता अनुभाग (समननवग्गो)

1.3.122-29 अनित्यता का चिंतन (अनित्य संस्कृत: अनित्य)

1.3.230 — 69

1.3.370 - 117

1.3.4118 - 165

1.3.5166 - 213

1.3.6214 — 261

1.3.7262 - 309

1.3.8310 — 357

1.3.9358 - 405

1.3.10406 — 453

1.3.11454 — 501

1.4IV. कामवासना (राग) और इसी प्रकार की पुनरावृत्ति श्रृंखला 2234

1.4.1502

1.4.2503 — 511

1.4.3512 - 671

ग्यारहों की पुस्तक (एकदासकनिपाता)

नमो तस्स्य भगवतो, अरहतो, सम्मा-सम-बुद्धस्स्य

उस भगवान को नमन, शत्रुओं का नाश करने वाले, सही मायने में पूर्णतः प्रबुद्ध (जागृत) भगवान।

मैं आश्रित अनुभाग (निस्सायवग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

1 क्या उद्देश्य? [2199] (किमाथिया सं. किम-अर्थ्या)

मैंने ऐसा सुना है। एक बार भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन, अनाथपिंडिका उद्यान में निवास कर रहे थे। तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

(1) "भन्ते, लाभकारी (कुशल) सद्‌गुणों का उद्देश्य और लाभ क्या है? (कुशल शील संस्कृत) "

(2) "आनंद, लाभकारी (कुशल) सद्‌गुणी आचरण का उद्देश्य और लाभ पश्चाताप न करना है (अविप्पतिसर संस्कृत: अविप्पति-सरना, अर्थात् विपत्ति न आना)।"

(3) "और हे भंते, पश्चाताप न करने का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"पछतावा न करने का उद्देश्य और लाभ आनंद (पामोज्जा) है।"

(4) "और हे भंते, आनंद का उद्देश्य और लाभ क्या है?" "आनंद का उद्देश्य और लाभ परमानंद है (पिति संस. प्रीति इ)।"

(5) "और हे भंते, आनंद (पीति) का उद्देश्य और लाभ क्या है?" "आनंद (पीति) का उद्देश्य और लाभ शांति (पसाद्धि) है।"

(6) "और हे भंते, शांति का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"शांति (पासद्धि) का उद्देश्य और लाभ सुख (सुख) है।"

(7) "और हे भंते, सुख का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"सुख (आनंद) का उद्देश्य और लाभ समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) है।"

(8) "और हे भंते, समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) का उद्देश्य और लाभ चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानना और देखना है (यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन)।

(9) "और हे भंते, यथार्थ-भूत-ज्ञान-दर्शन (यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन) के ज्ञान और दर्शन का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानने और देखने का उद्देश्य और लाभ मोहभंग (निब्बिडा) है।"

(10) और हे भंते, मोहभंग का उद्देश्य और लाभ क्या है?

"वैराग्य का उद्देश्य और लाभ वैराग्य (विराग) है।" [312]

(11) "और हे भंते, वैराग्य का उद्देश्य और लाभ क्या है?"

"वैराग्य का उद्देश्य और लाभ मुक्ति का ज्ञान और दर्शन है (विमुत्ति-नाना-दासन सं. विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन)।"

इस प्रकार, आनंद, (1)— (2) लाभकारी (कुशल) सद्गुणों का उद्देश्य और लाभ अविप्पति-सरना है; (3) अविप्पति का उद्देश्य और लाभ आनंद है; (4) आनंद का उद्देश्य और लाभ पीति है; (5) पीति का उद्देश्य और लाभ शांति है; (6) शांति का उद्देश्य और लाभ सुख है; (7) सुख का उद्देश्य और लाभ समाधि है; (8) समाधि का उद्देश्य और लाभ चीजों का उनके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन है; (9) चीजों के उनके वास्तविक स्वरूप के ज्ञान और दर्शन का उद्देश्य निब्बिदा है; (10) विघ्न का उद्देश्य और लाभ वैराग्य है; और (10) वैराग्य का उद्देश्य और लाभ मुक्ति का ज्ञान और दर्शन है। इस प्रकार, आनंद, लाभकारी (कुसला) सद्गुणपूर्ण आचरण उत्तरोत्तर सर्वोच्च सफलता की ओर ले जाता है।

---

2 चेतन क्रियाएँ [2200] (चेतनकारण्य सं. चैतन्य-करणीय)

(यह सूत्र अरहंतों पर लागू होता है)

(1)— (2) "भिक्षुओं (मठवासियों), एक गुणी व्यक्ति के लिए, जिसका आचरण गुणी हो, किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं है: 'मुझमें पश्चाताप न हो (अविप्पति-सरना)'। यह स्वाभाविक है कि जो गुणी हो, जिसका आचरण गुणी हो, उसमें पश्चाताप न हो।"

(3) "जिसके पास पछतावा नहीं है, उसे किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं है: 'मुझमें आनंद उत्पन्न हो।' यह स्वाभाविक है कि बिना पछतावे वाले व्यक्ति में आनंद उत्पन्न होता है।"

(4) "जो आनंदित है, उसे किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं है: 'मुझमें आनंद (पीति) उत्पन्न हो।' यह स्वाभाविक है कि जो आनंदित है, उसमें आनंद (पीति) उत्पन्न हो।"

(5) "आनंदित मन वाले व्यक्ति को किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती: 'मेरा शरीर शांत हो जाए।' यह स्वाभाविक है कि आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत होता है।"

(6) "शरीर से शांत व्यक्ति के लिए किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती: 'मुझे सुख का अनुभव करने दो'। यह स्वाभाविक है कि शरीर से शांत व्यक्ति सुख का अनुभव करता है।"

(7) "सुख में डूबे व्यक्ति को किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती: 'मेरा मन आत्म-मग्न (समाहित) हो जाए।' सुख में डूबे व्यक्ति का मन स्वाभाविक रूप से आत्म-मग्न (समाहित) होता है।"

(8) "स्वयं में लीन (समाहित/समाहित) व्यक्ति के लिए किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती: 'मुझे चीजों को वैसे ही जानने और देखने दो जैसे वे वास्तव में हैं।' यह स्वाभाविक है [313] कि स्वयं में लीन (समाहित/समाहित) व्यक्ति चीजों को वैसे ही जानता और देखता है जैसे वे वास्तव में हैं।

(9) "जो व्यक्ति चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानता और देखता है, उसे किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं होती: 'मुझे मोहभंग हो जाए'। यह स्वाभाविक है कि जो व्यक्ति चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानता और देखता है, वह मोहभंग हो जाता है।"

(10) "जो व्यक्ति मोहभंग हो गया है, उसे किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं है: 'मैं वैराग्य (विराग) हो जाऊं'। यह स्वाभाविक है कि जो व्यक्ति मोहभंग हो गया है वह वैराग्य (विराग) हो जाता है।"

(11) "जो व्यक्ति वैरागी है, उसे किसी सचेत क्रिया की आवश्यकता नहीं है: 'मुझे मुक्ति के ज्ञान और दर्शन को प्राप्त करना है (विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन)'। यह स्वाभाविक है कि जो व्यक्ति वैरागी है, वह मुक्ति के ज्ञान और दर्शन को प्राप्त कर लेता है।"

इस प्रकार, भिक्षुओं, (11)— (10) मुक्ति का ज्ञान और दर्शन वैराग्य का उद्देश्य और लाभ है; (9) वैराग्य निब्दिता का उद्देश्य और लाभ है; (8) निब्दिता चीजों के वास्तविक स्वरूप के ज्ञान और दर्शन का उद्देश्य और लाभ है; (7) चीजों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दर्शन समाधि का उद्देश्य और लाभ है; (6) समाधि सुख का उद्देश्य और लाभ है; (5) सुख शांति का उद्देश्य और लाभ है; (4) शांति परमानंद का उद्देश्य और लाभ है; (3) परमानंद आनंद का उद्देश्य और लाभ है; (2) आनंद पश्चातापहीनता का उद्देश्य और लाभ है; और (1) पश्चातापहीनता सद्‌गुणी आचरण का उद्देश्य और लाभ है।

"इस प्रकार, भिक्षुओं, एक अवस्था दूसरी अवस्था में प्रवाहित होती है, एक अवस्था दूसरी अवस्था को भर देती है, क्योंकि निकटवर्ती तट से दूरवर्ती तट तक जाने में समय लगता है।"

---

3 निकटवर्ती कारण (l) [2201] (उपनिषद1)

भिक्षुओं (सन्यासियों), (1) अनैतिक व्यक्ति के लिए, सद्‌गुणों से रहित व्यक्ति के लिए, (2) अविपत्ति-सरना (अविपत्ति-सरना) का निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब अविपत्ति न हो, तो अविपत्ति से रहित व्यक्ति के लिए, (3) आनंद का निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब आनंद न हो, तो आनंद से रहित व्यक्ति के लिए, (4) पीति (आनंद) का निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब पीति (आनंद) न हो, तो पीति से रहित व्यक्ति के लिए, (5) शांति (पसाद्धि) का निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब शांति न हो, तो शांति (पसाद्धि) से रहित व्यक्ति के लिए, [314] (6) आनंद का निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब आनंद न हो, तो आनंद से रहित व्यक्ति के लिए, (7) सही समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) का निकटवर्ती कारण नहीं होता। जब सही समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) न हो, तो (8) जब व्यक्ति में सही समाधि (स्व-लीनता/तल्लीनता) की कमी होती है, तो (यथा-भूत-नाना-दस्सना संस्कृत: यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन) का ज्ञान और दृष्टि उसके निकटवर्ती कारण से रहित हो जाती है। जब व्यक्ति में व्यक्तियों में व्यक्तियों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान और दृष्टि नहीं होती, तो (9) निब्बिदा (विरक्ति) उसके निकटवर्ती कारण से रहित हो जाती है। जब व्यक्ति में विरक्ति नहीं होती, तो (10) वैराग (विरग) उसके निकटवर्ती कारण से रहित हो जाती है। जब व्यक्ति में वैराग नहीं होती, तो (11) मुक्ति का ज्ञान और दृष्टि उसके निकटवर्ती कारण से रहित हो जाती है!

मान लीजिए एक पेड़ में शाखाएँ और पत्तियाँ कम हैं। तो उसकी शाखाएँ पूरी तरह से विकसित नहीं होतीं; न ही उसकी छाल, कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी पूरी तरह से विकसित होती हैं। ठीक उसी प्रकार, एक अनैतिक व्यक्ति के लिए, जो सद्‌गुणों से रहित है, पश्चाताप न करने की भावना (अविप्पति-सरना) का कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता। जब पश्चाताप न हो... तब मुक्ति के ज्ञान और दर्शन का भी कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता।

भिक्षुओं, (1) एक गुणी व्यक्ति के लिए, जिसका आचरण गुणी हो, (2) अविपत्ति-सरना (अविपत्ति-सरना) इसका निकटतम कारण है। जब अविपत्ति होती है, तो अविपत्ति रहित व्यक्ति के लिए, (3) आनंद इसका निकटतम कारण है। जब आनंद होता है, तो आनंद रहित व्यक्ति के लिए, (4) परमानंद (पीति) इसका निकटतम कारण है। जब परमानंद (पीति) होता है, तो परमानंद (पीति) वाले व्यक्ति के लिए, (5) शांति (पश्चात्य) इसका निकटतम कारण है। जब शांति होती है, तो शांति (पश्चात्य) वाले व्यक्ति के लिए, (6) सुख (सुख) इसका निकटतम कारण है। जब सुख (सुख) होता है, तो सुख (सुख) वाले व्यक्ति के लिए, (7) सही एकाग्रता इसका निकटतम कारण है। जब सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) होती है, तो सही समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) वाले व्यक्ति के लिए। (8) यथार्थ-भूत-नाना-दस्सना संस्कृत: यथा-भूत-ज्ञान-दर्शन का ज्ञान और दृष्टि उसके निकटवर्ती कारण को धारण करती है। जब किसी व्यक्ति को यथार्थ-भूत-दस्सना का ज्ञान और दृष्टि प्राप्त होती है, तो (9) निब्दिदा (वैराग्य) उसका निकटवर्ती कारण बन जाता है। जब विराग्य होता है, तो विराग्य से ग्रसित व्यक्ति के लिए (40) वैराग्य (विराग) उसका निकटवर्ती कारण बन जाता है। जब वैराग्य होता है, तो वैराग्य से ग्रसित व्यक्ति के लिए (11) मुक्ति का ज्ञान और दृष्टि (विमुक्ति-नाना-दस्सना संस्कृत: विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन) उसका निकटवर्ती कारण बन जाता है।

मान लीजिए एक वृक्ष है जिसमें शाखाएँ और पत्तियाँ हैं। फिर उसकी शाखाएँ पूर्ण रूप से बढ़ती हैं; उसकी छाल, कोमल लकड़ी और भीतरी लकड़ी भी पूर्ण रूप से बढ़ती हैं। ठीक उसी प्रकार, एक गुणी व्यक्ति के लिए, जिसका आचरण गुणी है, पश्चाताप रहित भाव (अविप्पति-सरना) उसका मूल कारण है। जब पश्चाताप रहित भाव होता है... तब मुक्ति का ज्ञान और दर्शन उसका मूल कारण होता है।

---

4 निकटवर्ती कारण (2) (उपनिषद 2)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित किया: [11:3 के समान, लेकिन सारिपुत्त द्वारा बोला गया।]

---

5 निकटवर्ती कारण (3) (उपनिषद 3)

वहाँ पूज्य आनंद ने भिक्षुओं को संबोधित किया: [11:3 के समान, लेकिन आनंद द्वारा बोले गए]

---

6 आपदा [2202] (ब्यासन)

भिक्षुओं, जब कोई भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं का अपमान और निंदा करता है, श्रेष्ठ भिक्षुओं की निंदा करता है, तो यह असंभव और अकल्पनीय है कि वह इन ग्यारह आपदाओं में से कम से कम एक का शिकार न हो। वे ग्यारह आपदाएँ क्या हैं? (1) वह वह प्राप्त नहीं करता जो उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है। (2) वह अपनी प्राप्त की हुई उपलब्धि से विमुख हो जाता है। (3) उसके अच्छे गुण निखरे नहीं हैं। (4) वह अपने अच्छे गुणों को बढ़ा-चढ़ाकर बताता है, या (5) असंतुष्ट होकर ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करता है, [318] या (6) कोई अपवित्र अपराध करता है, या (7) प्रशिक्षण त्यागकर निम्न लोक में लौट जाता है, (8) या किसी गंभीर बीमारी से ग्रसित हो जाता है, या (9) पागल होकर मानसिक रूप से विक्षिप्त हो जाता है। (10) वह भ्रमित अवस्था में मर जाता है। (11) शरीर के विखंडन के साथ, मृत्यु के बाद, वह दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेता है। जब कोई जो भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं का अपमान और तिरस्कार करता है, जो श्रेष्ठ भिक्षुओं की निंदा करता है, उसके लिए यह असंभव और अकल्पनीय है कि वह इन ग्यारह विपत्तियों में से कम से कम एक का शिकार न हो।

---

7 धारणा 2204 (सन्ना सं. संज्ञा)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, क्या कोई भिक्षु समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि (1) वह पृथ्वी को पृथ्वी के संबंध में न देखे; (2) जल को जल के संबंध में न देखे; (3) अग्नि को अग्नि के संबंध में न देखे; (4) वायु को वायु के संबंध में न देखे; (5) अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में न देखे; (6) अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) को अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में न देखे; (7) शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को शून्यता के आधार के संबंध में न देखे; (8) न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (अज्ञात/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) को न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (अज्ञात/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में न देखे; (9) इस संसार को इस संसार के संबंध में न देखे।" (1.0) दूसरे संसार के संबंध में दूसरे संसार का; (11) किसी भी देखी, सुनी, महसूस की, जानी, प्राप्त की, खोजी और मन द्वारा परखी गई किसी भी चीज़ का, लेकिन क्या वह फिर भी बोधगम्य होगा?

"वह कर सकता था, आनंदा।" [319]

"पर हे भंते, वह समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था कैसे प्राप्त कर सकता था?"

हे आनंद, यहाँ एक भिक्षु इस प्रकार बोध करता है: 'यह शांति है, यह उदात्त है, अर्थात् समस्त कर्मों का स्थिर होना, समस्त प्राप्तियों का त्याग, तृष्णा का नाश, वैराग्य, शांति, निर्वाण।' हे आनंद, इसी प्रकार एक भिक्षु समाधि की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि वह पृथ्वी को पृथ्वी से, जल को जल से, अग्नि को अग्नि से, वायु को वायु से, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र को अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र से, अनंत चेतना के क्षेत्र को अनंत चेतना के क्षेत्र से, शून्यता के आधार को शून्यता के क्षेत्र से, और... न तो बोध और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) का संबंध न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध के क्षेत्र (आयतन) से है; इस संसार का संबंध इस संसार से है; दूसरे संसार का संबंध दूसरे संसार से है; मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, खोजी और परखी गई किसी भी चीज के प्रति वह फिर भी बोधगम्य रहेगा।

तब पूज्य आनंद, भगवान (बुद्ध) के कथन से प्रसन्न और आनंदित होकर, अपने आसन से उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया, [320] उनकी ओर दाहिनी ओर रखते हुए उनकी परिक्रमा की, और पूज्य सारिपुत्त के पास पहुँचे। 2205 उन्होंने पूज्य सारिपुत्त से अभिवादन किया, और जब उनका अभिवादन और सौहार्दपूर्ण वार्तालाप समाप्त हो गया, तो वे एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"मित्र सारिपुत्त, क्या कोई भिक्षु ऐसी एकाग्रता की अवस्था प्राप्त कर सकता है कि वह पृथ्वी के संबंध में पृथ्वी के प्रति सजग न रहे... मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, प्राप्त की, खोजी और परखी गई किसी भी चीज के प्रति सजग रहे?"

"हाँ, मेरे दोस्त आनंद, वो कर सकता है।"

"पर हे मित्र सारिपुत्त, वह समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था कैसे प्राप्त कर सकता था?"

"हे मित्र आनंद, एक भिक्षु इस प्रकार बोध करता है: 'यह शांति है, यह उदात्त है, अर्थात् समस्त कर्मों का स्थिर होना, समस्त प्राप्तियों का त्याग, तृष्णा का नाश, वैराग्य, शांति, निर्वाण।' हे मित्र आनंद, इसी प्रकार एक भिक्षु समाधि की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि वह पृथ्वी के संबंध में पृथ्वी को न देख पाए... वह मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, प्राप्त की, खोजी या परखी गई किसी भी चीज को न देख पाए, परन्तु फिर भी वह बोधशील रहे।"

"यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है, मित्र, कि गुरु और शिष्य दोनों के अर्थ और शब्द एक दूसरे से मेल खाते हैं और सर्वोच्च अवस्था के संबंध में उनमें कोई भिन्नता नहीं है। 2206 अभी-अभी, मित्र, मैंने भगवान (बुद्ध) [321] से संपर्क किया और उनसे इस विषय में पूछा। भगवान (बुद्ध) ने मुझे ठीक उन्हीं शब्दों और वाक्यांशों में उत्तर दिया जिनका उपयोग पूज्य सारिपुत्त ने किया था। यह आश्चर्यजनक और अद्भुत है, मित्र, कि गुरु और शिष्य दोनों के अर्थ और शब्द एक दूसरे से मेल खाते हैं और सर्वोच्च अवस्था के संबंध में उनमें कोई भिन्नता नहीं है।"

---

8. ध्यान (मानसिकारा)

तब पूज्य आनंद भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, क्या कोई भिक्षु समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि वह आँख और रूपों, कान और ध्वनियों, नाक और गंधों, जीभ और स्वादों, शरीर और स्पर्शनीय वस्तुओं पर ध्यान न दे; कि (1) वह पृथ्वी, (2) जल, (3) अग्नि, (4) या वायु पर ध्यान न दे; (5) वह अंतरिक्ष की अनंतता के क्षेत्र (आयतन), (6) चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन), (7) शून्यता के आधार, (8) या न-बोध (सन्न/संज्ञा)-और न-बोध (अबोध) के क्षेत्र (आयतन) पर ध्यान न दे; (9) वह इस संसार पर ध्यान न दे; (10) वह परलोक पर ध्यान न दे; (11) वह मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, प्राप्त की, खोजी और परखी गई किसी भी चीज पर ध्यान न दे, फिर भी वह सजग रहे?"

"वह कर सकता है, आनंदा।" [322J]

"पर हे भंते, वह समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था कैसे प्राप्त कर सकता था?"

"यहाँ, आनंद, एक भिक्षु इस प्रकार ध्यान देता था: 'यह शांतिपूर्ण है, यह उदात्त है, अर्थात् सभी गतिविधियों का शांत होना, सभी प्राप्तियों का त्याग, तृष्णा का नाश, वैराग्य, निब्बान, निर्वाण।' हे आनंद, इसी प्रकार एक भिक्षु समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि वह आँख और रूपों, कान और ध्वनियों, नाक और गंधों, जीभ और स्वादों, शरीर और स्पर्शनीय वस्तुओं पर ध्यान न दे; वह पृथ्वी, जल, अग्नि या वायु पर ध्यान न दे; वह अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन), अनंत चेतना के आधार, शून्यता के क्षेत्र (आयतन), या न-बोध (सन्न/संज्ञा)-और-अबोध के आधार पर ध्यान न दे; वह इस संसार पर ध्यान न दे; वह परलोक पर ध्यान न दे; वह मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, खोजी और परखी गई किसी भी चीज पर ध्यान न दे, फिर भी वह एकाग्र रहेगा।

---

9 सद्धा (संस्कार: श्रद्धा)

एक बार भगवान (बुद्ध) नादिका [323] में ईंटों से बने हॉल में निवास कर रहे थे। तब पूज्य सद्धा 2208 भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उनसे कहा:

"हे सद्धा, एक शुद्ध नस्ल के घोड़े की तरह ध्यान करो, जंगली घोड़े की तरह नहीं।" और एक जंगली घोड़ा कैसे ध्यान करता है? जब एक जंगली घोड़े को चारागाह के पास बांध दिया जाता है, तो वह ध्यान करता है: 'चारा, चारा!' क्यों? क्योंकि जब एक जंगली घोड़े को चारागाह के पास बांध दिया जाता है, तो वह खुद से यह नहीं पूछता: 'आज मेरा प्रशिक्षक मुझे क्या काम देगा? मैं उसे संतुष्ट करने के लिए क्या कर सकता हूँ?' चारागाह के पास बंधा हुआ, वह बस ध्यान करता है: 'चारा, चारा!' इसी प्रकार, सद्ध, जो जंगली घोड़े के समान है, जब जंगल में, किसी वृक्ष की गोद में, या किसी खाली झोपड़ी में जाता है, तो उसका मन राग से ग्रस्त और पीड़ित रहता है, और वह यह नहीं समझ पाता कि वास्तव में यह उत्पन्न राग से मुक्ति का मार्ग है। भीतर राग धारण किए हुए, वह ध्यान, चिंतन, मनन और चिंतन करता है। 2209 उसका मन द्वेष, सुस्ती और आलस्य, बेचैनी और पश्चाताप, संदेह से ग्रस्त और पीड़ित रहता है, और वह यह नहीं समझ पाता कि वास्तव में यह उत्पन्न संदेह से मुक्ति का मार्ग है। भीतर संदेह धारण किए हुए, वह ध्यान, चिंतन, [324] मनन और चिंतन करता है।

वह (1) पृथ्वी पर निर्भर रहते हुए, (2) जल पर निर्भर रहते हुए, (3) अग्नि पर निर्भर रहते हुए, (4) वायु पर निर्भर रहते हुए, (5) अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भर रहते हुए, (6) अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भर रहते हुए, (7) शून्यता के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भर रहते हुए, (8) न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति के आधार पर निर्भर रहते हुए, (9) इस संसार पर निर्भर रहते हुए, (10) दूसरे संसार पर निर्भर रहते हुए, (11) मन द्वारा देखे, सुने, अनुभव किए, बोध किए, प्राप्त किए, खोजे और परखे गए प्रत्येक विषय पर निर्भर रहते हुए ध्यान करता है। ऐसा ध्यान उस व्यक्ति का होता है जो जंगली घोड़े के समान होता है।

"और हे सद्ध, एक उत्तम नस्ल का घोड़ा कैसे ध्यान करता है? जब एक उत्कृष्ट नस्ल का घोड़ा चारागाह के पास बंधा होता है, तो वह 'चारा, चारा!' का ध्यान नहीं करता। क्यों? क्योंकि जब एक उत्कृष्ट नस्ल का घोड़ा चारागाह के पास बंधा होता है, तो वह स्वयं से पूछता है: 'आज मेरा प्रशिक्षक मुझे क्या कार्य देगा? मैं उसे संतुष्ट करने के लिए क्या कर सकता हूँ?' चारागाह के पास बंधा होने पर वह 'चारा, चारा!' का ध्यान नहीं करता।" जिस प्रकार एक श्रेष्ठ नस्ल का घोड़ा अंकुश के प्रयोग को ऋण, बंधन, हानि और विफलता (विपत्ति) मानता है, उसी प्रकार एक श्रेष्ठ नस्ल का व्यक्ति जब जंगल में, वृक्ष की गोद में या किसी निर्जन कुटिया में जाता है, तो वह कामवासना (राग) से ग्रस्त और पीड़ित मन से नहीं रहता, और वह वास्तव में उत्पन्न कामवासना (राग) से मुक्ति को समझता है। वह द्वेष, सुस्ती और आलस्य, बेचैनी और पश्चाताप, और संदेह से ग्रस्त मन से नहीं रहता, और वह वास्तव में उत्पन्न संदेह से मुक्ति को समझता है।

वह ध्यान नहीं करता (1) पृथ्वी पर निर्भरता में, (2) जल पर निर्भरता में, (3) अग्नि पर निर्भरता में, (4) वायु पर निर्भरता में, (5) अंतरिक्ष की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भरता में, (6) चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भरता में, (7) शून्यता के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भरता में, (8) न-बोध (सन्न/संज्ञा)-और-अबोध के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भरता में, [325] (9) इस दुनिया पर निर्भरता में, (10) दूसरी दुनिया पर निर्भरता में, (11) जो कुछ देखा, सुना, महसूस किया, जाना, पहुँचा, खोजा या मन द्वारा परखा जाता है, उस पर निर्भरता में, और फिर भी वह ध्यान करता है।

जब वह इस प्रकार ध्यान करता है, तो देव (देवदूत/भगवान) इंद्र, ब्रह्मा और प्रजापति के साथ दूर से उस श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष की पूजा करते हुए कहते हैं:

"हे श्रेष्ठ पुरुष, आपको प्रणाम!

हे सर्वोच्च पुरुष, आपको प्रणाम!

हम स्वयं भी नहीं समझ पाते

कि आप किस पर निर्भर रहकर ध्यान करते हैं।" 2210

यह सुनकर पूज्य सद्ध ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "परन्तु, भंते, एक श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष कैसे ध्यान करता है? यदि वह पृथ्वी पर निर्भर होकर ध्यान नहीं करता... जो कुछ देखा, सुना, महसूस किया, जाना, प्राप्त किया, खोजा और मन द्वारा परखा जाता है, उस पर निर्भर होकर ध्यान नहीं करता, और फिर भी ध्यान करता है, तो वह ऐसा कैसे ध्यान करता है कि देव (देवदूत/भगवान)... दूर से ही उस श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष की पूजा करते हुए कहते हैं:

"हे श्रेष्ठ पुरुष, आपको प्रणाम!

हे सर्वोच्च पुरुष, आपको प्रणाम!

हम स्वयं नहीं समझ पाते

कि आप किस पर निर्भर रहकर ध्यान करते हैं?"

"यहाँ, सद्धा, एक उत्कृष्ट शुद्ध व्यक्ति के लिए, पृथ्वी के संबंध में पृथ्वी की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) लुप्त हो जाती है, 2211 जल के संबंध में जल की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) लुप्त हो जाती है, अग्नि के संबंध में अग्नि की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) लुप्त हो जाती है, वायु के संबंध में वायु की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) लुप्त हो जाती है, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में लुप्त हो जाती है, अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) चेतना के अनंत आधार के संबंध में लुप्त हो जाती है, [326] शून्यता के आधार की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) शून्यता के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में लुप्त हो जाती है, अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) लुप्त हो जाती है।" न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) और न ही अअनुभूति, अअनुभूति के क्षेत्र (आयतन) के संबंध में विलीन हो गई है; इस संसार की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) इस संसार के संबंध में विलीन हो गई है; दूसरे संसार की अनुभूति (सन्न/संज्ञा) दूसरे संसार के संबंध में विलीन हो गई है; जो कुछ भी मन द्वारा देखा, सुना, अनुभव किया, जाना, खोजा और परखा जाता है, उसके संबंध में अनुभूति (सन्न/संज्ञा) विलीन हो गई है।

"इस प्रकार ध्यान करते हुए, सद्ध, एक श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु पर निर्भर नहीं रहता; अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भर नहीं रहता, अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भर नहीं रहता, शून्यता के क्षेत्र (आयतन) पर निर्भर नहीं रहता, न तो अनुभूति (सन्न/संज्ञा) के आधार पर निर्भर नहीं रहता, न इस संसार पर निर्भर रहता, न परलोक पर निर्भर रहता; न ही मन द्वारा देखे, सुने, अनुभव किए, बोध किए, प्राप्त किए, खोजे या परखे गए किसी भी चीज़ पर निर्भर रहता है, फिर भी वह ध्यान करता है। 2212 और जब वह इस प्रकार ध्यान करता है, तो देव (देवदूत/भगवान) इंद्र, ब्रह्मा और प्रजापति के साथ दूर से उस श्रेष्ठ शुद्ध पुरुष की पूजा करते हुए कहते हैं:

"हे श्रेष्ठ पुरुष, आपको प्रणाम!

हे सर्वोच्च पुरुष, आपको प्रणाम!

हम स्वयं नहीं समझ पाते

कि आप किस पर निर्भर रहकर ध्यान करते हैं।"

---

10 मोर अभयारण्य [2213] (मोरा निवापा)

एक बार भगवान (बुद्ध) राजगृह में तपस्वियों के उद्यान, मोर अभयारण्य में निवास कर रहे थे। वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

भिक्षुओं में तीन गुण होते हैं, और वे देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ होते हैं: वे जो परम लक्ष्य तक पहुँच चुके हैं, बंधनों से परम सुरक्षा प्राप्त कर चुके हैं, परम ब्रह्मचर्य जीवन जी चुके हैं और परम उद्देश्य को प्राप्त कर चुके हैं। वे तीन गुण क्या हैं? (1) प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के सद्गुणों का समूह, (2) प्रशिक्षण से परे व्यक्ति की समाधि (स्व-लीनता/तल्ली) का समूह, और (3) प्रशिक्षण से परे व्यक्ति के ज्ञान (दिव्य ज्ञान) का समूह। इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ होते हैं: वे जो परम उद्देश्य को प्राप्त कर चुके हैं।

भिक्षुओं में तीन अन्य गुण होते हैं, और वे देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ होते हैं: वे जिन्होंने परम लक्ष्य प्राप्त कर लिया है। वे तीन गुण क्या हैं? (4) मानसिक शक्ति का चमत्कार, (5) मन-पढ़ने का चमत्कार, और (6) उपदेश का चमत्कार। इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ होते हैं: वे जिन्होंने परम लक्ष्य प्राप्त कर लिया है।

भिक्षुओं में तीन अन्य गुण होते हैं, और वे देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ होते हैं: वे जिन्होंने परम लक्ष्य प्राप्त कर लिया है। वे तीन गुण कौन से हैं? (7) सही दृष्टिकोण, (8) सही ज्ञान, और (9) सही मुक्ति। इन तीन गुणों से युक्त भिक्षु देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ होते हैं: वे जिन्होंने परम लक्ष्य प्राप्त कर लिया है।

"भिक्षुओं में दो गुण होते हैं, और वे देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ हैं: वे जिन्होंने परम पूर्णता प्राप्त कर ली है। वे दो गुण क्या हैं? (10) सच्चा ज्ञान और (11) आचरण। इन दो गुणों से युक्त भिक्षु देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ हैं: वे जिन्होंने परम निष्कर्ष प्राप्त कर लिया है, बंधन से परम सुरक्षा प्राप्त कर ली है, परम ब्रह्मचर्य जीवन जी लिया है और परम लक्ष्य प्राप्त कर लिया है।"

"ब्रह्मा सनमकुमार (सं. सनतकुमार) ने भी यह श्लोक कहा था:

" जिन लोगों के लिए कुल श्रेष्ठता क्षत्रिय को माना जाता है, उनके लिए क्षत्रिय श्रेष्ठ होता है ,

परन्तु सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण व्यक्ति

देवों और मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है।"

"हे भिक्षुओं, इस श्लोक का ब्रह्म सनम कुमार ने सुंदर पाठ किया है, बुरा पाठ नहीं; इसका उच्चारण सुंदर है, बुरा उच्चारण नहीं; यह लाभकारी है, हानिकारक नहीं, और मैं भी इसे स्वीकार करता हूँ। मैं भी यही कहता हूँ।"

" जिन लोगों के लिए कुल श्रेष्ठ है, उनके लिए क्षत्रिय श्रेष्ठ है ,

परन्तु सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण व्यक्ति

देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों में श्रेष्ठ है।"

II. स्मरण (अनुसतिवाग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

---

11 महानामा (एल) [2214]

एक बार भगवान (बुद्ध) कपिलवस्तु के बरगद उद्यान में शाक्यों के बीच निवास कर रहे थे। उस समय कई भिक्षु भगवान (बुद्ध) के लिए वस्त्र बना रहे थे, यह सोचकर कि तीन महीने (वर्षा ऋतु के निवास के) समाप्त होने पर वस्त्र तैयार हो जाने के बाद भगवान (बुद्ध) भ्रमण पर निकल पड़ेंगे। शाक्य महानामा ने यह सुना, भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, मैंने सुना है: 'बहुत से भिक्षु भगवान (बुद्ध) के लिए वस्त्र बना रहे हैं, यह सोचकर कि वस्त्र पूरा होने पर, वर्षा ऋतु के तीन महीने समाप्त होने पर, भगवान (बुद्ध) भ्रमण पर निकलेंगे। भंते, हम सब के अनेक कार्यों के बीच कैसे रहें?" 2215

"बहुत खूब, महानमा! तुम कुलवासियों के लिए यह उचित है कि तुम तथागत (बुद्ध) के पास जाओ और पूछो: 'भंते, हमारी तमाम व्यस्तताओं के साथ, हमें कैसे रहना चाहिए?'"

(1) "महानमा, आस्थावान व्यक्ति ही सफल होता है, आस्थाहीन व्यक्ति नहीं। (2) ऊर्जावान व्यक्ति ही सफल होता है, आलसी व्यक्ति नहीं। (3) सती ध्यान में स्थिर व्यक्ति ही सफल होता है, भ्रमित मन वाला नहीं। (4) समाधि में लीन व्यक्ति ही सफल होता है, असामहिता वाला नहीं। (5) बुद्धिमान व्यक्ति ही सफल होता है, मूर्ख व्यक्ति नहीं। इन पाँच गुणों में स्वयं को स्थापित करने के बाद, आपको छह अन्य गुणों का विकास करना चाहिए।"

(6) "हे महानामा, यहाँ तथागत (बुद्ध) का इस प्रकार स्मरण कीजिए: 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, मनुष्यों को वश में करने में अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।" जब कोई श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन तथागत (बुद्ध) पर आधारित होकर बिल्कुल स्थिर होता है। स्थिर मन वाला श्रेष्ठ शिष्य अर्थ में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म से संबंधित आनंद प्राप्त करता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में रहने वाले व्यक्ति का... मन आत्म-मग्न हो जाता है (समाहित अवस्था में)। इसे ही श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जो असंतुलित जनसंख्या के बीच संतुलन में रहता है, जो पीड़ित जनसंख्या के बीच निर्मल रहता है। धम्म की धारा में प्रवेश करने के कारण, वह बुद्ध की स्मृति का विकास करता है।

(7) "हे महानामा, तुम्हें धम्म को इस प्रकार याद रखना चाहिए: 'भगवान (बुद्ध) द्वारा धम्म की अच्छी तरह व्याख्या की गई है, यह प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, तात्कालिक है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, लागू करने योग्य है, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाना है।' जब कोई श्रेष्ठ शिष्य धम्म का स्मरण करता है, उस समय उसका मन काम (राग), घृणा या मोह से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन केवल धम्म पर आधारित, एकाग्र होता है। एकाग्र मन वाला श्रेष्ठ शिष्य धम्म के अर्थ में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म में प्रेरणा प्राप्त करता है और धम्म से जुड़ा आनंद प्राप्त करता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है।

आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि (समाधि) में लीन हो जाता है। इसे वह श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जो असंतुलित जनसंख्या के बीच संतुलित रहता है, जो पीड़ित जनसंख्या के बीच निर्मल रहता है। धम्म की धारा में प्रवेश करने के कारण, वह धम्म का स्मरण विकसित करता है।

(8) "हे महानामा, आपको संघ का स्मरण इस प्रकार करना चाहिए: 'भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का संघ अच्छे मार्ग का अभ्यास करता है, सीधे मार्ग का अभ्यास करता है, सच्चे मार्ग का अभ्यास करता है, उचित मार्ग का अभ्यास करता है; अर्थात्, चार युग्मों के व्यक्ति, आठ प्रकार के व्यक्ति - भगवान (बुद्ध) के शिष्यों का यह संघ दान के योग्य है, आतिथ्य के योग्य है, भेंट के योग्य है, आदरपूर्वक अभिवादन के योग्य है, संसार के लिए अतुलनीय पुण्य क्षेत्र है।" जब कोई श्रेष्ठ शिष्य संघ का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), घृणा (दोष/द्वेष) या भ्रम से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन संघ पर आधारित होकर केवल सीधा होता है। जिस श्रेष्ठ शिष्य का मन सीधा होता है, उसे अर्थ में प्रेरणा मिलती है, धम्म में प्रेरणा मिलती है, धम्म से जुड़ा आनंद प्राप्त होता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन आत्म-मग्न हो जाता है (समाहित अवस्था में)। इसे ही श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है, जो असंतुलित जनसंख्या के बीच संतुलन में रहता है, जो पीड़ित जनसंख्या के बीच निर्मल रहता है। धम्म की धारा में प्रवेश करने के कारण, वह संघ का स्मरण विकसित करता है।

(9) "हे महानामा, आपको अपने सदाचारी आचरण को याद करना चाहिए जो अटूट, दोषरहित, बेदाग, निर्मल, मुक्तिदायक, ज्ञानियों द्वारा प्रशंसित, अछूता और समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ओर ले जाने वाला है। जब कोई श्रेष्ठ शिष्य अपने सदाचारी आचरण को याद करता है, उस समय उसका मन काम (राग), घृणा या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन सदाचार पर आधारित होकर बिल्कुल सीधा होता है। जिस श्रेष्ठ शिष्य का मन सीधा होता है, उसे अर्थ में प्रेरणा मिलती है, धम्म में प्रेरणा मिलती है, धम्म से जुड़ा आनंद प्राप्त होता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति को सुख का अनुभव होता है। सुखी व्यक्ति का मन एकाग्र हो जाता है। इसे वह श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जो असंतुलित जनसंख्या के बीच संतुलन में रहता है, जो पीड़ित जनसंख्या के बीच अप्रभावित रहता है। धम्म की धारा में प्रवेश कर चुके व्यक्ति के रूप में, वह सदाचारी व्यवहार की याददाश्त विकसित करता है।

(10) "हे महानामा, आपको अपनी उदारता को इस प्रकार याद करना चाहिए: 'यह सचमुच मेरा सौभाग्य और लाभ है कि कंजूसी के कलंक से ग्रस्त जनसंख्या में, मैं कंजूसी के कलंक से मुक्त, उदार, खुले हाथों वाला, त्याग में आनंदित, दान के प्रति समर्पित, देने और बांटने में आनंदित मन से अपने घर में निवास करता हूँ।' जब कोई श्रेष्ठ शिष्य अपनी उदारता को याद करता है, उस समय उसका मन काम (राग), द्वेष या मोह से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन केवल उदारता पर आधारित, सीधा होता है। जिस श्रेष्ठ शिष्य का मन सीधा होता है, उसे अर्थ में प्रेरणा मिलती है, धम्म में प्रेरणा मिलती है, धम्म से जुड़ा आनंद मिलता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख का अनुभव करता है। सुख में रहने वाले व्यक्ति का मन शांत हो जाता है। आत्ममग्न (समाहित/समाहित)। इसे वह श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जो असंतुलित जनसंख्या के बीच संतुलन में रहता है, जो पीड़ित जनसंख्या के बीच अविचलित रहता है। धम्म की धारा में प्रवेश करने के कारण, वह उदारता का स्मरण विकसित करता है।

(11) "हे महानामा, तुम्हें देवताओं का स्मरण इस प्रकार करना चाहिए: "चार महान राजाओं द्वारा शासित देवता हैं, तावतिंसा देवता, यम देवता, तुषिता देवता, सृष्टि में आनंद लेने वाले देवता, दूसरों द्वारा सृजित चीजों को नियंत्रित करने वाले देवता, ब्रह्मा के साथ रहने वाले देवता, और इनसे भी उच्चतर देवता। मुझमें भी उन देवताओं के समान ही आस्था है, जिसके कारण जब वे यहाँ से चले गए, [332] तो वहाँ उनका पुनर्जन्म हुआ; मुझमें भी ऐसा ही सद्गुणी आचरण है... ऐसा ही ज्ञान... ऐसी ही उदारता... उन देवताओं (देवदूतों) के पास जो ज्ञान (पन्न) था, उसी के कारण जब वे यहाँ से चले गए, तो वहाँ पुनर्जन्म लिया। जब कोई श्रेष्ठ शिष्य अपने और उन देवताओं (देवदूतों) में निहित आस्था, सदाचार, ज्ञान, उदारता और ज्ञान (पन्न) का स्मरण करता है, तो उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/द्वेष) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन देवताओं (देवदूतों) पर आधारित होकर एकदम स्थिर होता है। स्थिर मन वाला श्रेष्ठ शिष्य अर्थ में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म से जुड़ा आनंद प्राप्त करता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का

अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि (सम्मोहन) में लीन हो जाता है। इसे ही श्रेष्ठ शिष्य कहा जाता है जो असंतुलित जनसंख्या के बीच संतुलन में रहता है, जो पीड़ित जनसंख्या के बीच अविचलित रहता है। धम्म की धारा में प्रवेश करने के कारण, वह देवताओं (देवदूतों) का स्मरण विकसित करता है।

---

12 महानामा (2)

[11:11 से शुरू होकर नीचे तक:] [333]

"महानामा, इन पांच गुणों में स्वयं को स्थापित करने के बाद, आपको छह और चीजों को विकसित करना चाहिए।"

(6) "हे महानामा, यहाँ आपको तथागत (बुद्ध) का इस प्रकार स्मरण करना चाहिए: 'भगवान (बुद्ध) ... प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं।' जब कोई श्रेष्ठ शिष्य तथागत (बुद्ध) का स्मरण करता है, उस समय उसका मन कामवासना (राग), द्वेष (दोष/बुद्ध) या मोह (मोह) से ग्रस्त नहीं होता; उस समय उसका मन तथागत (बुद्ध) पर आधारित होकर बिल्कुल स्थिर होता है। स्थिर मन वाला श्रेष्ठ शिष्य अर्थ में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म में प्रेरणा प्राप्त करता है, धम्म से संबंधित आनंद प्राप्त करता है। जब वह आनंदित होता है, तो परमानंद (पीति) उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शरीर से शांत व्यक्ति सुख (सुख) का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि (समाधि) में लीन हो जाता है। हे महानामा, आपको चलते, खड़े होते, बैठते और लेटते समय बुद्ध के इस स्मरण को विकसित करना चाहिए। आपको इसे तब भी विकसित करना चाहिए जब आप काम में व्यस्त रहते हुए और बच्चों से भरे घर में रहते हुए।

(7) "फिर से, महानामा, आपको धम्म का स्मरण करना चाहिए

(8) . . . संघ ... (9) आपका स्वयं का सदाचारी आचरण . . . (10)

...आपकी अपनी उदारता... (11) इस प्रकार देवता (देवदूत)... जब एक

जब कोई श्रेष्ठ शिष्य अपने भीतर और उन देवताओं में विद्यमान आस्था, सदाचार, उदारता और दिव्य ज्ञान का स्मरण करता है, तब उसका मन कामवासना, द्वेष या मोह से ग्रस्त नहीं होता; तब उसका मन देवताओं पर केंद्रित होकर एकदम स्थिर होता है। स्थिर मन वाला श्रेष्ठ शिष्य धर्म के अर्थ में प्रेरणा पाता है, धर्म में प्रेरणा पाता है और धर्म से जुड़ा आनंद प्राप्त करता है। जब वह आनंदित होता है, तब परमानंद उत्पन्न होता है। आनंदित मन वाले व्यक्ति का शरीर शांत हो जाता है। शांत शरीर वाला सुख का अनुभव करता है। सुख में लीन व्यक्ति का मन समाधि में लीन हो जाता है। महानाम, चलते, खड़े होते, बैठते और लेटते समय आपको देवताओं का स्मरण करना चाहिए। कार्य करते समय और बच्चों से भरे घर में रहते हुए भी आपको इसका स्मरण करना चाहिए।

---

13 नंदिया

एक बार भगवान (बुद्ध) कपिलवस्तु के बरगद उद्यान में शाक्यों के बीच निवास कर रहे थे। उस समय भगवान (बुद्ध) श्रावस्ती स्थित वर्षावास में प्रवेश करना चाहते थे। शाक्य नंदीय ने यह सुना और तब [335] उनके मन में यह विचार आया: "मैं भी श्रावस्ती स्थित वर्षावास में प्रवेश करूँगा। 2216 वहाँ मैं व्यापार करूँगा और समय-समय पर भगवान (बुद्ध) के दर्शन करूँगा।"

फिर भगवान (बुद्ध) श्रावस्ती में वर्षावास में प्रवेश कर गए। शाक्यन नंदीय भी श्रावस्ती में वर्षावास में प्रवेश कर गए, जहाँ वे व्यापार में लगे रहे और समय-समय पर भगवान (बुद्ध) के दर्शन करते रहे। उस समय कई भिक्षु भगवान (बुद्ध) के लिए वस्त्र बना रहे थे, यह सोचकर कि वस्त्र पूरा होने पर, वर्षावास के तीन महीने पूरे होने पर, भगवान (बुद्ध) भ्रमण पर निकल पड़ेंगे। शाक्यन नंदीय ने यह सुना, भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा:

"भंते, मैंने सुना है: 'बहुत से भिक्षु भगवान (बुद्ध) के लिए वस्त्र बना रहे हैं, यह सोचकर कि वस्त्र पूरा होने पर, वर्षा ऋतु के तीन महीने समाप्त होने पर, भगवान (बुद्ध) भ्रमण पर निकलेंगे। भंते, हम सब अपने-अपने कामों में व्यस्त हैं, ऐसे में हम कैसे रह सकते हैं?"

"शाबाश, शाबाश, नंदिया! तुम कुलवासियों के लिए यह उचित है कि तुम तथागत (बुद्ध) के पास जाओ और पूछो: - 'भंते, हमारी तमाम व्यस्तताओं के साथ, हमें कैसे रहना चाहिए?'"

(1) नंदीय, आस्थावान व्यक्ति ही सफल होता है, आस्थाहीन व्यक्ति नहीं। (2) गुणी व्यक्ति ही सफल होता है, अनैतिक व्यक्ति नहीं। (3) ऊर्जावान व्यक्ति ही सफल होता है, आलसी व्यक्ति नहीं। (4) सती ध्यान में स्थिर व्यक्ति ही सफल होता है, भ्रमित मन वाला नहीं। (5) समाधि में लीन व्यक्ति ही सफल होता है, असामंजस्य वाला नहीं। (6) बुद्धिमान व्यक्ति ही सफल होता है, मूर्ख नहीं। इन छह गुणों में स्वयं को स्थापित करने के बाद, पाँच बातों के विषय में आंतरिक सती ध्यान स्थापित करें।

(7) "हे नंदीय, यहाँ तथागत (बुद्ध) का इस प्रकार स्मरण करो: [336] 'भगवान (बुद्ध) एक अरहंत हैं, पूर्णतः प्रबुद्ध हैं, सच्चे ज्ञान और आचरण में निपुण हैं, सौभाग्यशाली हैं, जगत के ज्ञाता हैं, वश में किए जाने वाले व्यक्तियों के अद्वितीय प्रशिक्षक हैं, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के गुरु हैं, प्रबुद्ध हैं, भगवान (बुद्ध) हैं। अतः तुम्हें तथागत (बुद्ध) पर आधारित आंतरिक सती (ध्यान) स्थापित करनी चाहिए।"

(8) "हे नंदीय, तुम्हें धम्म का इस प्रकार स्मरण करना चाहिए: 'भगवान (बुद्ध) द्वारा धम्म की अच्छी तरह व्याख्या की गई है, यह प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है, तात्कालिक है, देखने के लिए आमंत्रित करता है, व्यावहारिक है, और बुद्धिमानों द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया जाना है।' अतः तुम्हें धम्म पर आधारित आंतरिक रूप से सती (ध्यान) स्थापित करनी चाहिए।"

(9) "फिर, नंदिया, तुम्हें अच्छे मित्रों को इस प्रकार याद करना चाहिए: 'यह सचमुच मेरा सौभाग्य और लाभ है कि मेरे पास अच्छे मित्र हैं जो मुझ पर दया करते हैं, जो मेरा भला चाहते हैं, जो मुझे प्रोत्साहित और शिक्षित करते हैं।' इस प्रकार तुम्हें अच्छे मित्रों पर आधारित आंतरिक सती (ध्यान) स्थापित करनी चाहिए।"

(10) "हे नंदिया, तुम्हें अपनी उदारता को इस प्रकार याद करना चाहिए: 'यह सचमुच मेरा सौभाग्य और लाभ है कि कंजूसी के कलंक से ग्रस्त जनसंख्या में, मैं अपने घर में कंजूसी के कलंक से मुक्त, उदार, दानशील, त्याग में प्रसन्न, परोपकारी, दान देने और साझा करने में प्रसन्न मन से निवास करता हूँ।' इस प्रकार तुम्हें उदारता पर आधारित आंतरिक जागरूकता स्थापित करनी चाहिए।"

(11) "हे नंदीय, तुम्हें देवताओं (देवदूतों) का इस प्रकार स्मरण करना चाहिए: 'वे देवता (देवदूत) जो भोजन पर निर्भर रहने वाले देवताओं से परे, मन से बने शरीर में पुनर्जन्म लेकर आए हैं, वे अपने आप में कुछ भी शेष कार्य या किए गए कार्य को बढ़ाने की आवश्यकता नहीं देखते। जिस प्रकार एक स्थायी रूप से मुक्त भिक्षु अपने आप में कुछ भी शेष कार्य या किए गए कार्य को बढ़ाने की आवश्यकता नहीं देखता, 2217 उसी प्रकार वे देवता (देवदूत) भी हैं जो भोजन पर निर्भर रहने वाले देवताओं से परे, मन से बने शरीर में पुनर्जन्म लेकर आए हैं।' 2218 [337] इस प्रकार तुम्हें देवताओं (देवदूतों) पर आधारित आंतरिक सती (ध्यान) स्थापित करनी चाहिए।

"नंदिया, जो इन ग्यारह गुणों से युक्त एक श्रेष्ठ शिष्य है, वह अकुशल (बुरे) गुणों (धम्म) का त्याग करता है और उन्हें ग्रहण नहीं करता। जिस प्रकार उल्टा किया हुआ घड़ा गिरा हुआ पानी वापस नहीं लेता, और जिस प्रकार अनियंत्रित आग सूखे जंगल को जलाते हुए आगे बढ़ती है और वापस उस जगह नहीं लौटती जहाँ वह जल चुकी है, उसी प्रकार, इन ग्यारह गुणों से युक्त एक श्रेष्ठ शिष्य अकुशल (बुरे) गुणों का त्याग करता है और उन्हें ग्रहण नहीं करता।"

---

14 सुभूति

तब पूज्य सुभूति भिक्षु सद्धा के साथ भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब भगवान (बुद्ध) ने पूज्य सुभूति से कहा:

"इस भिक्षु का नाम क्या है, सुभूति?"

"उनका नाम सद्धा भंते है। वे आस्थावान एक पुरुष गृहस्थ अनुयायी के पुत्र हैं, 2220 और उन्होंने आस्था के कारण गृहस्थ जीवन छोड़कर संन्यासी जीवन में प्रवेश किया है।"

"मुझे आशा है कि आस्थावान भिक्षु साधक के इस पुत्र, भिक्षु सद्धा, जिसने गृहस्थ जीवन छोड़कर आस्था के कारण संन्यासी जीवन में प्रवेश किया है, आस्था की अभिव्यक्तियों को प्रदर्शित करेगा।" 2221

"यही समय है, हे भगवान (बुद्ध)! यही समय है, हे सुगत (भगवान बुद्ध)! भगवान (बुद्ध) को आस्था की अभिव्यक्तियों की व्याख्या करनी चाहिए। अब मैं पता लगाऊंगा कि यह भिक्षु आस्था की अभिव्यक्तियों को प्रदर्शित करता है या नहीं।"

"तो सुनो, सुभूति, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी, भंते," पूज्य सुभूति ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा: [338]

(1) "हे सुभूति, यहाँ एक भिक्षु गुणी है; वह पतिमोक्ख द्वारा संयमित, सुचारु आचरण और अच्छे आचरण से युक्त, सूक्ष्म दोषों में भी खतरा देखता है। प्रशिक्षण नियमों का पालन करते हुए, वह उनका अभ्यास करता है। यह आस्था से संपन्न व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है।"

(2) "एक भिक्षु ने बहुत कुछ सीखा है, वह सीखी हुई बातों को याद रखता है और उन्हें संजोता है। वे शिक्षाएँ जो आरंभ में, मध्य में और अंत में अच्छी हों, सही अर्थ और शब्दों के साथ, जो पूर्णतः पूर्ण और शुद्ध ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन) की घोषणा करती हों—ऐसी शिक्षाओं को उसने बहुत सीखा है, मन में संजोया है, मौखिक रूप से सुनाया है, मानसिक रूप से उनका अध्ययन किया है और दृष्टि से भलीभांति समझा है। यह भी आस्थावान व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है।"

(3) "फिर, एक भिक्षु के अच्छे मित्र, अच्छे साथी, अच्छे सहपाठी होते हैं। यह भी आस्था से संपन्न व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है।"

(4) "फिर, एक भिक्षु को सुधारना आसान होता है और उसमें ऐसे गुण होते हैं जो उसे सुधारना आसान बनाते हैं; वह धैर्यवान होता है और आदरपूर्वक उपदेश ग्रहण करता है। यह भी आस्थावान व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है।"

(5) "फिर, एक भिक्षु अपने साथी भिक्षुओं के लिए किए जाने वाले विभिन्न कार्यों को करने में कुशल और मेहनती होता है; वह उन्हें ठीक से करने और व्यवस्थित करने के लिए उनके बारे में सही निर्णय लेता है। यह भी आस्था से संपन्न व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है। [339]

(6) "फिर, एक भिक्षु धम्म से प्रेम करता है और अपने कथनों में प्रसन्नता का भाव रखता है, धम्म और अनुशासन के प्रति उच्च आनंद से परिपूर्ण होता है। यह भी आस्था से संपन्न व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है।"

(7) "फिर, एक भिक्षु ने हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का त्याग करने और लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को प्राप्त करने के लिए ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाई है; वह बलवान है, प्रयास में दृढ़ है, लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं करता है। यह भी आस्थावान व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है।"

(8) "फिर, एक भिक्षु बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, अपनी इच्छा से ही चार ध्यान (सम्मोहन अवस्थाएँ) प्राप्त कर लेता है, जो उच्च मन का निर्माण करते हैं और इसी जीवन में सुखद निवास स्थान हैं। यह भी आस्था से संपन्न व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है।"

(9) "फिर, एक भिक्षु अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों का स्मरण करता है... [जैसा कि 6:2 §4 में है]... इस प्रकार वह अपने अनेक पूर्व जन्मों के निवासों का उनके स्वरूपों और विवरणों सहित स्मरण करता है। [340] यह भी आस्थावान व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है।"

(10) "फिर, पवित्र और मनुष्य की दृष्टि से परे दिव्य दृष्टि से, भिक्षु प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते हुए, हीन और श्रेष्ठ, सुंदर और कुरूप, भाग्यशाली और दुर्भाग्यशाली देखता है... [जैसा कि 6:2 §5 में है]... और वह समझता है कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है। यह भी आस्थावान व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है।"

(11) "फिर, दोषों के नाश के साथ, एक भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा इसी जीवन में मन की दोषरहित मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का स्वयं अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है। यह भी आस्थावान व्यक्ति में आस्था की अभिव्यक्ति है।"

जब यह कहा गया, तो पूज्य सुभूति ने भगवान (बुद्ध) से कहा: "भंते, विश्वास से परिपूर्ण व्यक्ति में विश्वास की ये अभिव्यक्तियाँ, जिनका उल्लेख भगवान (बुद्ध) ने किया है, इस भिक्षु में देखी जाती हैं, और वह उन्हें प्रदर्शित करता है।"

(1) "यह भिक्षु, भंते, गुणी है... [341] वह उनमें प्रशिक्षण देता है।

(2) "उसने बहुत कुछ सीखा है... और दृष्टि से अच्छी तरह से समझ लिया है।"

(3) "उसके अच्छे दोस्त हैं, अच्छे साथी हैं, अच्छे सहपाठी हैं।

(4) "उसे सुधारना आसान है और उसमें ऐसे गुण हैं जो उसे सुधारना आसान बनाते हैं; वह धैर्यवान है और सम्मानपूर्वक निर्देश ग्रहण करता है:

(5) "वह कुशल और मेहनती है... ताकि उन्हें ठीक से निष्पादित और व्यवस्थित कर सके।"

(6) "वह धम्म (मार्ग) से प्रेम करता है... धम्म और अनुशासन के संबंध में।"

(7) "उसने ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जगाया है... लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को विकसित करने के कर्तव्य का त्याग नहीं किया है।"

(8) "वह बिना किसी परेशानी या कठिनाई के, इसी जीवन में अपनी इच्छा से चारों ध्यान प्राप्त कर लेता है।"

(9) "वह अपने अनेक भूतपूर्व निवासों (पूर्व पुनर्जन्मों) को याद करता है... उनके पहलुओं और विवरणों के साथ।"

(10) "वह प्राणियों को मरते और पुनर्जन्म लेते देखता है... और वह समझता है कि प्राणियों का उनके कर्मों के अनुसार क्या हाल होता है।"

(11) "दोषों के नाश के साथ, इस भिक्षु ने प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) द्वारा, इसी जीवन में, स्वयं ही निर्मल मन की मुक्ति, पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा मुक्ति का अनुभव किया है, और उसमें प्रवेश करके वह उसमें निवास करता है।"

"भंते, आस्था से परिपूर्ण व्यक्ति में आस्था की ये अभिव्यक्तियाँ, जिनका उल्लेख भगवान (बुद्ध) ने किया है, इस भिक्षु में देखी जाती हैं, और वह उन्हें प्रदर्शित भी करता है।"

"बहुत बढ़िया, सुभूति! तो फिर, सुभूति, तुम इस भिक्षु सद्धा के साथ रह सकते हो, और जब तुम तथागत (बुद्ध) के दर्शन करना चाहो, तो उन्हें अपने साथ ले आना।"

---

15 प्रेमपूर्ण दया [2222] (मेट्टा)

भिक्षुओं, जब प्रेम-कृपा (मेट्टा) द्वारा मन की मुक्ति का अनुसरण, विकास और संवर्धन किया जाता है, उसे एक माध्यम और आधार बनाया जाता है, उसे क्रियान्वित किया जाता है, सुदृढ़ किया जाता है और विधिवत रूप से संपन्न किया जाता है, तो ग्यारह लाभों की अपेक्षा की जा सकती है। वे ग्यारह कौन से हैं?

(1) व्यक्ति को अच्छी नींद आती है; (2) वह प्रसन्नतापूर्वक जागता है; (3) उसे बुरे सपने नहीं आते; (4) वह मनुष्यों को प्रसन्न करता है; (5) वह आत्माओं को प्रसन्न करता है; (6) देवता उसकी रक्षा करते हैं; (7) आग, विष और हथियार उसे चोट नहीं पहुँचाते; (8) उसका मन शीघ्र ही समाधि में लीन हो जाता है; (9) उसके चेहरे का रंग शांत होता है; (10) वह बिना भ्रमित हुए मरता है; और (11) यदि वह इससे आगे नहीं बढ़ता है, तो वह ब्रह्मलोक की ओर अग्रसर होता है।

"जब, हे भिक्षुओं, प्रेम और करुणा द्वारा मन की मुक्ति का बार-बार अनुसरण, विकास और पोषण किया जाता है, उसे एक माध्यम और आधार बनाया जाता है, उसे क्रियान्वित किया जाता है, सुदृढ़ किया जाता है और विधिवत रूप से संपन्न किया जाता है, तो इन ग्यारह लाभों की अपेक्षा की जा सकती है।"

---

16 अत्थाकानगर [2224]

एक बार पूज्य आनंद वैशाली के निकट बेलुवा गमक में निवास कर रहे थे। उस समय अठकनगर (2225) के गृहस्थ दशमा व्यापारिक कार्य से पाटलिपुत्त आए थे। उन्होंने मुर्गे के उद्यान में एक भिक्षु से संपर्क किया और पूछा, "भंते, पूज्य आनंद अब कहाँ हैं? मैं उनसे मिलना चाहता हूँ।"

"वह वैशाली के पास बेलुवागमका में गृहस्थ के रूप में रह रहा है।"

जब गृहस्थ दशमा ने पाटलिपुत्त में अपना काम पूरा कर लिया, तो वह वैशाली के पास बेलुवागमक में पूज्य आनंद के पास गए। उन्होंने पूज्य आनंद को प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए, [343] और उनसे कहा:

"भंते आनंद, क्या भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, जो सब कुछ जानते और देखते हैं, द्वारा उचित रूप से प्रतिपादित कोई ऐसी वस्तु है, जिसे यदि कोई भिक्षु लगन, उत्साह और दृढ़ संकल्प के साथ ग्रहण करे, तो उसका अमुक्त मन मुक्त हो जाए, उसके अविभाजित दोष नष्ट हो जाएं, और वह बंधन से अब तक अप्राप्य, अतुलनीय मुक्ति प्राप्त कर ले?"

"हाँ, गृहस्वामी।"

"और यह क्या है?"

(1) "हे गृहस्थ, इंद्रिय सुखों से विरक्त, अकुशल अवस्थाओं से विरक्त, भिक्षु प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है, जो एकांत से उत्पन्न आनंद और प्रसन्नता से युक्त है, जिसमें विचार और चिंतन शामिल हैं। वह इस पर विचार करता है और इसे इस प्रकार समझता है: 'यह प्रथम ध्यान व्यक्ति के चरित्र (संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होता है। परन्तु जो कुछ भी व्यक्ति के चरित्र (संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होता है, वह क्षणभंगुर है, और उसका अंत निश्चित है।'" यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, तो वह दोषों का नाश प्राप्त करता है। परन्तु यदि वह धम्म के प्रति उस राग (कामना) के कारण, धम्म में उस आनंद के कारण दोषों का नाश प्राप्त नहीं करता, तो पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, वह स्वतः पुनर्जन्म लेता है, और उस लोक से कभी वापस लौटे बिना ही वहाँ अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

"यह एक ऐसी बात है जिसका उचित प्रतिपादन भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, जो जानते और देखते हैं, ने किया है, जिससे यदि कोई भिक्षु इसमें लगन, उत्साह और दृढ़ संकल्प के साथ निवास करता है, तो उसका अमुक्त मन मुक्त हो जाता है, उसके अविभाजित दोष नष्ट हो जाते हैं, और वह अब तक अप्राप्य, बंधन से पूर्णतम मुक्ति प्राप्त कर लेता है। [344]

(2) "हे गृहस्थ, विचार और चिंतन के शांत होने पर भिक्षु द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में प्रवेश करता है और उसमें निवास करता है... (3) ...तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... (4) ...चौथी ध्यान (सम्मोहन अवस्था) में... वह इस पर विचार करता है और इसे इस प्रकार समझता है: 'यह चौथी ध्यान (सम्मोहन अवस्था) व्यक्ति के चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होती है। परन्तु जो कुछ भी व्यक्ति के चरित्र/व्यवहार (संस्कार/संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होता है, वह क्षणभंगुर है, और उसका अंत निश्चित है।' यदि वह इस बात पर दृढ़ रहे, तो वह दोषों का नाश प्राप्त कर लेता है। परन्तु यदि वह धम्म के प्रति राग (कामना) और धम्म में आनंद के कारण दोषों का नाश प्राप्त न कर पाए, तो पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ वह स्वतः पुनर्जन्म लेता है और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए वहीं अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

"यह भी एक ऐसी बात है जिसका उचित रूप से भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, जो जानते और देखते हैं, द्वारा व्याख्या की गई है, इस प्रकार कि यदि कोई भिक्षु इसमें निवास करता है... तो वह बंधन से अब तक अप्राप्य, अतुलनीय सुरक्षा प्राप्त करता है।"

(5) "हे गृहस्थ, भिक्षु प्रेममयी मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है, उसी प्रकार दूसरी, तीसरी और चौथी दिशा में भी। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए, वह प्रेममयी (मेट्टा) मन से व्याप्त होकर, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित, संपूर्ण संसार में व्याप्त रहता है। वह इस पर विचार करता है और इसे इस प्रकार समझता है: 'प्रेममयी (मेट्टा) द्वारा मन की यह मुक्ति व्यक्ति के चरित्र (संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होती है। परन्तु जो कुछ भी व्यक्ति के चरित्र (संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होता है, वह क्षणभंगुर और क्षीण होता है।" यदि वह इस बात पर दृढ़ रहे, तो वह दोषों का नाश प्राप्त कर लेता है। परन्तु यदि वह धम्म के प्रति राग (कामना) और धम्म में आनंद के कारण दोषों का नाश प्राप्त न कर पाए, तो पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ वह स्वतः पुनर्जन्म लेता है और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए वहीं अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

"यह भी एक ऐसी बात है जिसका उचित रूप से भगवान (बुद्ध) [345] अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति, जो जानते और देखते हैं, द्वारा व्याख्या की गई है, इस प्रकार कि यदि कोई भिक्षु इसमें निवास करता है ... तो वह बंधन से अब तक अप्राप्य अतुलनीय सुरक्षा प्राप्त करता है।"

(6) "हे गृहस्थ, भिक्षु करुणा से भरे मन से एक दिशा में व्याप्त रहता है... (7) ...परोपकारी आनंद से भरे मन से... (8) ...उदासीनता (भीतर समाहित/उपेक्खा) से भरे मन से, इसी प्रकार दूसरी दिशा, तीसरी दिशा और चौथी दिशा में। इस प्रकार ऊपर, नीचे, चारों ओर और हर जगह, और सभी के लिए स्वयं के समान, वह उदासीनता (भीतर समाहित/उपेक्खा) से भरे, विशाल, उदात्त, असीम, शत्रुता रहित, द्वेष रहित मन से संपूर्ण संसार में व्याप्त रहता है। वह इस पर विचार करता है और इसे इस प्रकार समझता है: 'समभाव द्वारा मन की यह मुक्ति व्यक्ति के चरित्र (संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होती है। लेकिन जो कुछ भी व्यक्ति के चरित्र (संस्कार) और आत्म-जागरूकता क्षणभंगुर है, जिसका अंत निश्चित है। यदि वह इस बात में दृढ़ रहे, तो वह दोषों का नाश प्राप्त कर लेता है। परन्तु यदि वह धम्म के प्रति राग (कामना) और धम्म में आनंद के कारण दोषों का नाश प्राप्त न कर पाए, तो पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ वह स्वतः पुनर्जन्म लेता है और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए वहीं अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

"यह भी एक ऐसी बात है जिसका उचित रूप से भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, जो जानते और देखते हैं, द्वारा व्याख्या की गई है, इस प्रकार कि यदि कोई भिक्षु इसमें निवास करता है... तो वह बंधन से अब तक अप्राप्य, अतुलनीय सुरक्षा प्राप्त करता है।"

(9) "हे गृहस्थ, रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करके, इंद्रियों के प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के लुप्त होने पर, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देकर, 'अंतरिक्ष अनंत है' का बोध करते हुए भिक्षु अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। वह इस पर विचार करता है और इसे इस प्रकार समझता है: 'अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) की यह प्राप्ति व्यक्ति के चरित्र (संस्कार/संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होती है। परन्तु जो कुछ भी व्यक्ति के चरित्र (संस्कार/संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होता है, वह अनित्य है, और उसका अंत निश्चित है।' यदि वह इसमें दृढ़ रहता है, तो वह दोषों का नाश प्राप्त करता है। परन्तु यदि वह धम्म के प्रति राग (कामना) के कारण, धम्म में आनंद के कारण दोषों का नाश प्राप्त नहीं करता, तो पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ, वह स्वतः पुनर्जन्म लेता है, और उस लोक से कभी वापस लौटे बिना ही वहाँ अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

"यह भी एक ऐसी बात है जिसका उचित रूप से भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्ण रूप से प्रबुद्ध, जो जानते और देखते हैं, द्वारा व्याख्या की गई है, इस प्रकार कि यदि कोई भिक्षु इसमें निवास करता है ... तो वह बंधन से अब तक अप्राप्य, अतुलनीय सुरक्षा प्राप्त करता है।"

(10) "हे गृहस्थ, अनंत अंतरिक्ष के आधार को पूर्णतः पार करके, 'चेतना अनंत है' का बोध करते हुए, वह अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है... (11) ...अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का बोध करते हुए, वह शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है। वह इस पर विचार करता है और इसे इस प्रकार समझता है: 'शून्यता के क्षेत्र (आयतन) की यह प्राप्ति व्यक्ति के चरित्र (संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होती है। परन्तु जो कुछ भी व्यक्ति के चरित्र (संस्कार) और (आत्म)जागरूकता द्वारा निर्मित और उत्पन्न होता है, वह अनित्य है, और उसका अंत निश्चित है।'" यदि वह इस बात पर दृढ़ रहे, तो वह दोषों का नाश कर लेता है। परन्तु यदि वह धम्म के प्रति राग (कामना) और धम्म

में आनंद के कारण दोषों का नाश न कर पाए, तो पाँच निम्न बंधनों के पूर्ण नाश के साथ वह स्वतः पुनर्जन्म लेता है और उस लोक से कभी वापस न लौटते हुए वहीं अंतिम निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

"यह भी एक ऐसी बात है जिसका उचित प्रतिपादन भगवान (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध, जो सब कुछ जानते और देखते हैं, ने किया है, जिससे यदि कोई भिक्षु इसमें लगन, उत्साह और दृढ़ संकल्प के साथ निवास करे, तो उसका अमुक्त मन मुक्त हो जाता है, उसके अनसुलझे दोष नष्ट हो जाते हैं, और वह अब तक अप्राप्य, बंधन से पूर्णतम मुक्ति प्राप्त कर लेता है।" 2227

यह सुनकर अत्थकनगर के गृहस्थ दशमा ने पूज्य आनंद से कहा, “भंते आनंद, जैसे किसी छिपे हुए खजाने का एक द्वार खोजते हुए किसी व्यक्ति को अचानक उस खजाने के ग्यारह द्वार मिल जाते हैं, वैसे ही मैं भी अमरता (अमृत) का एक द्वार खोजते हुए अचानक अमरता (अमृत) के ग्यारह द्वारों के बारे में जान गया। 2228 जैसे किसी व्यक्ति के घर में ग्यारह द्वार हों और जब उस घर में आग लग जाए, तो वह उन ग्यारह द्वारों में से किसी भी द्वार से सुरक्षित बाहर निकल सकता है, वैसे ही मैं भी अमरता (अमृत) के इन ग्यारह द्वारों में से किसी भी द्वार से सुरक्षित बाहर निकल सकता हूँ। भंते, अन्य संप्रदायों के ये सदस्य अपने गुरुओं से शुल्क लेते हैं, तो मैं पूज्य आनंद को दान क्यों न दूँ?”

तब अत्थकनगर के गृहस्थ दशमा ने पाटलिपुत्त और वैशाली से भिक्षुओं का संघ एकत्र किया और अपने हाथों से उन्हें विभिन्न प्रकार के उत्तम भोजन कराकर तृप्त किया। उन्होंने प्रत्येक भिक्षु को वस्त्रों का एक जोड़ा और पूज्य आनंद को तीन वस्त्रों का एक सेट भेंट किया। और उन्होंने पूज्य आनंद के लिए पाँच सौ 2229 मूल्य का एक आवास बनवाया।

---

17 चरवाहा [2230] (गोपाला)

"गायिका (भिक्षु) होने के कारण, एक ग्वाला पशुओं के झुंड की देखभाल और पालन-पोषण करने में असमर्थ होता है। वे ग्यारह कारक कौन से हैं? यहाँ, (1) ग्वाले को रूप का ज्ञान नहीं होता; (2) वह विशेषताओं को पहचानने में अकुशल होता है; (3) वह मक्खियों के अंडे नहीं निकाल पाता; (4) वह घावों पर पट्टी नहीं बांध पाता; (5) वह शेड में धुआं नहीं कर पाता; (6) उसे पानी के स्थान का ज्ञान नहीं होता; (7) उसे पीने का अनुभव नहीं होता; (8) उसे रास्ते का ज्ञान नहीं होता; (9) वह चरागाहों के बारे में अकुशल होता है; (10) वह दूध दुहता रहता है; और (11) वह उन बैलों का विशेष आदर नहीं करता जो झुंड के मुखिया और सरदार होते हैं। इन ग्यारह कारकों के कारण, एक ग्वाला पशुओं के झुंड की देखभाल और पालन-पोषण करने में असमर्थ होता है।"

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, ग्यारह गुणों से युक्त भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और पूर्णता प्राप्त करने में असमर्थ है। वे ग्यारह गुण क्या हैं? [348] यहाँ, (1) भिक्षु को रूप का ज्ञान नहीं है; (2) वह विशेषताओं में अकुशल है; (3) वह मक्खियों के अंडे नहीं निकाल पाता; (4) वह घावों पर पट्टी नहीं बांध पाता; (5) वह झोपड़ियों में धुआं नहीं कर पाता; (6) वह पानी के स्थान को नहीं जानता; (7) वह यह नहीं जानता कि पानी पीना क्या होता है; (8) वह मार्ग को नहीं जानता; (9) वह चरागाहों में अकुशल है; (10) वह दूध दुह लेता है; और (11) वह उन वरिष्ठ भिक्षुओं के प्रति कोई विशेष आदर नहीं दिखाता जो लंबे समय से संन्यासी जीवन में चले गए हैं, संघ के पिता और नेता हैं।"

(1) "और भिक्षु को रूप का ज्ञान कैसे नहीं होता? यहाँ, भिक्षु यह नहीं समझता कि वास्तव में क्या है: 'सभी प्रकार के रूप चार महातत्वों और चार महातत्वों से व्युत्पन्न रूप हैं।' इसी प्रकार भिक्षु को रूप का ज्ञान नहीं होता।"

(2) "और भिक्षु (साधु) गुणों में अकुशल कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु इसे इस प्रकार नहीं समझता है जैसा वास्तव में है: 'बुद्धिमान व्यक्ति अपने कर्मों से पहचाना जाता है; बुद्धिमान व्यक्ति अपने कर्मों से पहचाना जाता है।' इसी प्रकार भिक्षु गुणों में अकुशल होता है।"

(3) "एक भिक्षु मक्खियों के अंडे चुनने में कैसे असफल हो जाता है? यहाँ, एक भिक्षु कामुक इच्छा के उत्पन्न विचार को सहन करता है; वह उसे त्यागता नहीं, दूर नहीं करता, समाप्त नहीं करता और मिटाता नहीं है। वह दुर्भावना के उत्पन्न विचार को सहन करता है... हानि पहुँचाने के उत्पन्न विचार को... बुरे हानिकारक (अकुशल) विचारों को जब भी वे उत्पन्न होते हैं; वह उन्हें त्यागता नहीं, दूर नहीं करता, समाप्त नहीं करता और मिटाता नहीं है। इसी प्रकार एक भिक्षु मक्खियों के अंडे चुनने में असफल हो जाता है।"

(4) "एक भिक्षु घावों पर मरहम लगाने में कैसे असफल हो जाता है? यहाँ, किसी आकृति को आँख से देखकर, भिक्षु उसके चिह्नों और विशेषताओं को पकड़ लेता है। यद्यपि, जब वह अपनी दृष्टि को असुरक्षित छोड़ देता है, तो लालसा और निराशा की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, फिर भी वह उस पर संयम नहीं बरतता; वह दृष्टि की रक्षा नहीं करता; वह दृष्टि को नियंत्रित करने का प्रयास नहीं करता। कान से ध्वनि सुनकर... [349]... नाक से गंध सूंघकर... जीभ से स्वाद चखकर... शरीर से स्पर्शित वस्तु का अनुभव करके... मन से किसी मानसिक घटना को जानकर, वह उसके चिह्नों और विशेषताओं को पकड़ लेता है। यद्यपि, जब वह अपने मन को असुरक्षित छोड़ देता है, तो लालसा और निराशा की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, फिर भी वह उस पर संयम नहीं बरतता; वह मन की रक्षा नहीं करता; वह दृष्टि को नियंत्रित करने का प्रयास नहीं करता।" मन की शक्ति। इसी तरह एक भिक्षु घावों पर मरहम लगाने में विफल रहता है।

(5) "एक भिक्षु कुँवों में धुआँ करने में कैसे असफल होता है? यहाँ, एक भिक्षु दूसरों को धम्म का विस्तारपूर्वक उपदेश नहीं देता जैसा उसने सुना और सीखा है। इसी प्रकार एक भिक्षु कुँवों में धुआँ करने में असफल होता है।"

(6) "और एक भिक्षु को जलस्रोत का ज्ञान कैसे नहीं होता? यहाँ, एक भिक्षु समय-समय पर उन भिक्षुओं के पास नहीं जाता जो विद्वान हैं, विरासत के उत्तराधिकारी हैं, धम्म के विशेषज्ञ हैं, अनुशासन के विशेषज्ञ हैं, रूपरेखाओं के विशेषज्ञ हैं, और उनसे यह नहीं पूछता: 'यह क्या है, भंते? इसका क्या अर्थ है?' तब वे पूजनीय भिक्षु उसे वह प्रकट नहीं करते जो प्रकट नहीं हुआ है, अस्पष्ट बातों को स्पष्ट नहीं करते, और उसके अनेक उलझनों को दूर नहीं करते। इसी प्रकार एक भिक्षु को जलस्रोत का ज्ञान नहीं होता।"

(7) "और एक भिक्षु को यह कैसे नहीं पता होता कि पीने का क्या अर्थ है? यहाँ, जब तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन का उपदेश दिया जा रहा होता है, तब भिक्षु को अर्थ में प्रेरणा नहीं मिलती, धम्म में प्रेरणा नहीं मिलती, धम्म से संबंधित आनंद नहीं मिलता। इसी प्रकार एक भिक्षु को यह नहीं पता होता कि पीने का क्या अर्थ है।"

(8) "एक भिक्षु मार्ग को कैसे नहीं जानता? यहाँ, एक भिक्षु अष्टांगिक मार्ग को उसके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता। इसी प्रकार एक भिक्षु मार्ग को नहीं जानता।"

(9) "और एक भिक्षु चरागाहों में कैसे अकुशल होता है? यहाँ, एक भिक्षु ध्यान (सती) की चार अवस्थाओं को उनके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता। इसी प्रकार एक भिक्षु चरागाहों में अकुशल होता है। 2231

(10) "और एक भिक्षु कैसे दूध निचोड़ता है? यहाँ, जब निष्ठावान गृहस्थ एक भिक्षु को वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन लेने के लिए आमंत्रित करते हैं, तो एक भिक्षु बिना किसी संकोच के स्वीकार करता है। इस प्रकार एक भिक्षु दूध निचोड़ता है।"

(11) "और एक भिक्षु उन वरिष्ठ भिक्षुओं के प्रति अतिरिक्त आदर कैसे नहीं दिखाता जो दीर्घकालीन संन्यासी बन चुके हैं, संघ के पिता और नेता? यहाँ, एक भिक्षु उन वरिष्ठ भिक्षुओं के प्रति शारीरिक, मौखिक और मानसिक रूप से प्रेम और दया का भाव प्रकट नहीं करता जो दीर्घकालीन संन्यासी बन चुके हैं, संघ के पिता और नेता। इसी प्रकार एक भिक्षु उन वरिष्ठ भिक्षुओं के प्रति अतिरिक्त आदर नहीं दिखाता जो दीर्घकालीन संन्यासी बन चुके हैं, संघ के पिता और नेता।"

"इन ग्यारह गुणों से रहित भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और पूर्णता प्राप्त करने में असमर्थ है।"

भिक्षुओं में ग्यारह गुण होते हैं; एक ग्वाला पशुओं के झुंड की देखभाल और पालन-पोषण करने में सक्षम होता है। वे ग्यारह गुण कौन से हैं? यहाँ, (1) ग्वाले को रूप का ज्ञान होता है; (2) वह चरित्र-विज्ञान में निपुण होता है; (3) वह मक्खियों के अंडे चुनकर निकालता है; (4) वह घावों पर पट्टी बांधता है; (5) वह बाड़ों में धुआं करता है; (6) वह पानी के स्थान को जानता है; (7) वह जानता है कि पानी पीने का क्या अर्थ होता है; (8) वह रास्ते को जानता है; (9) वह चरागाहों में निपुण होता है; (10) वह दूध को पूरी तरह से नहीं निकालता; और (11) वह उन बैलों का विशेष आदर करता है जो झुंड के मुखिया और नेता होते हैं। इन ग्यारह गुणों से युक्त होने के कारण, एक ग्वाला पशुओं के झुंड की देखभाल और पालन-पोषण करने में सक्षम होता है।

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, ग्यारह गुणों से युक्त भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और पूर्णता प्राप्त करने में सक्षम होता है। वे ग्यारह गुण कौन से हैं? [351] यहाँ, (1) भिक्षु को रूप का ज्ञान होता है; (2) वह विशेषताओं में निपुण होता है; (3) वह मक्खियों के अंडे चुनता है; (4) वह घावों पर पट्टी बांधता है; (5) वह झोपड़ियों में धुआँ करता है; (6) वह जलस्थान को जानता है; (7) वह जानता है कि पानी पीना क्या होता है; (8) वह मार्ग को जानता है; (9) वह चरागाहों में निपुण होता है; (10) वह दूध नहीं सुखाता; और (11) वह उन वृद्ध भिक्षुओं के प्रति विशेष आदर दिखाता है जो लंबे समय से संन्यासी जीवन में जा चुके हैं, संघ के पिता और नेता हैं।

(1) "भिक्षु को रूप का ज्ञान कैसे होता है? यहाँ, भिक्षु इसे इस प्रकार समझता है: 'सभी प्रकार के रूप चार महातत्वों और चार महातत्वों से व्युत्पन्न रूप हैं।' इस प्रकार भिक्षु को रूप का ज्ञान होता है।"

(2) "भिक्षुओं में निपुणता कैसे प्राप्त होती है? यहाँ, भिक्षु इसे इस प्रकार समझते हैं: 'बुद्धिमान व्यक्ति अपने कर्मों से पहचाना जाता है; बुद्धिमान व्यक्ति अपने कर्मों से पहचाना जाता है'। इसी प्रकार भिक्षु गुणों में निपुण होते हैं।"

(3) "भिक्षु मक्खियों के अंडे कैसे चुनता है? यहाँ, भिक्षु कामुक इच्छा के किसी भी विचार को सहन नहीं करता; वह उसे त्याग देता है, दूर करता है, समाप्त करता है और मिटा देता है। वह दुर्भावना के किसी भी विचार को सहन नहीं करता... हानि पहुँचाने के किसी भी विचार को... बुरे हानिकारक (अकुशल) विचारों को जब भी वे उत्पन्न होते हैं; वह उन्हें त्याग देता है, दूर करता है, समाप्त करता है और मिटा देता है। इसी प्रकार भिक्षु मक्खियों के अंडे चुनता है।"

(4) "एक भिक्षु घावों पर मरहम कैसे लगाता है? यहाँ, किसी आकृति को आँख से देखकर, भिक्षु उसके लक्षणों और विशेषताओं को नहीं पकड़ता। क्योंकि यदि वह अपनी दृष्टि को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, इसलिए वह उस पर संयम बरतता है; वह दृष्टि की रक्षा करता है; वह दृष्टि के संयम का पालन करता है। कान से ध्वनि सुनकर... नाक से गंध सूंघकर... जीभ से स्वाद चखकर... शरीर से स्पर्शित वस्तु का अनुभव करके... मन से किसी मानसिक घटना को जानकर, वह उसके लक्षणों और विशेषताओं को नहीं पकड़ता। क्योंकि यदि वह मन की दृष्टि को अनियंत्रित छोड़ दे, तो लालसा और उदासी की बुरी (अकुशल) अवस्थाएँ उस पर हावी हो सकती हैं, [352] इसलिए वह उस पर संयम बरतता है; वह मन की रक्षा करता है; वह मन के संयम का पालन करता है। इसी प्रकार एक भिक्षु भिक्षु घावों पर पट्टी बांधता है।

(5) "और भिक्षु (भिक्षु) झोपड़ियों में धुंआ कैसे करते हैं? यहाँ, भिक्षु दूसरों को धम्म का विस्तारपूर्वक उपदेश देते हैं जैसा उन्होंने सुना और सीखा है। इसी प्रकार भिक्षु झोपड़ियों में धुंआ करते हैं।"

(6) "और भिक्षु को जलस्रोत का ज्ञान कैसे होता है? यहाँ, समय-समय पर भिक्षु उन भिक्षुओं के पास जाता है जो विद्वान हैं, विरासत के उत्तराधिकारी हैं, धम्म के विशेषज्ञ हैं, अनुशासन के विशेषज्ञ हैं, रूपरेखाओं के विशेषज्ञ हैं, और उनसे पूछता है: 'यह क्या है, भंते? इसका क्या अर्थ है?' तब वे पूजनीय भिक्षु उसे वह प्रकट करते हैं जो प्रकट नहीं हुआ है, अस्पष्ट बातों को स्पष्ट करते हैं, और अनेक उलझनों को दूर करते हैं। इस प्रकार भिक्षु को जलस्रोत का ज्ञान होता है।"

(7) "और एक भिक्षु को कैसे पता चलता है कि पीने का क्या अर्थ है? यहाँ, जब तथागत (बुद्ध) द्वारा घोषित धम्म और अनुशासन का उपदेश दिया जा रहा होता है, तो भिक्षु को अर्थ में प्रेरणा मिलती है, धम्म में प्रेरणा मिलती है, धम्म से जुड़ा आनंद प्राप्त होता है। इसी प्रकार एक भिक्षु को पता चलता है कि पीने का क्या अर्थ है।"

(8) "और भिक्षु मार्ग को कैसे जानता है? यहाँ, भिक्षु अष्टांगिक मार्ग को उसके वास्तविक स्वरूप में समझता है। इसी प्रकार भिक्षु मार्ग को जानता है।"

(9) "और एक भिक्षु चरागाहों में कैसे कुशल होता है? यहाँ, एक भिक्षु ध्यान (ध्यान/सती) की चार स्थापनाओं को उनके वास्तविक स्वरूप में समझता है। इसी प्रकार एक भिक्षु चरागाहों में कुशल होता है।"

(10) "और एक भिक्षु कैसे दूध नहीं सुखाता? यहाँ, जब निष्ठावान गृहस्थ एक भिक्षु को वस्त्र, भिक्षा, आवास और बीमारों के लिए औषधियाँ और भोजन लेने के लिए आमंत्रित करते हैं, तो एक भिक्षु संयम से स्वीकार करता है। [353] इस प्रकार एक भिक्षु दूध नहीं सुखाता।

(11) "एक भिक्षु उन वरिष्ठ भिक्षुओं के प्रति अतिरिक्त आदर कैसे प्रदर्शित करता है जो दीर्घकालीन संन्यासी जीवन में चले गए हैं, जो संघ के पिता और नेता हैं? यहाँ, एक भिक्षु उन वरिष्ठ भिक्षुओं के प्रति शारीरिक, वाणी और मानसिक रूप से प्रेम और करुणा (मेट्टा) का प्रदर्शन करता है जो दीर्घकालीन संन्यासी जीवन में चले गए हैं, जो संघ के पिता और नेता हैं। इस प्रकार एक भिक्षु उन वरिष्ठ भिक्षुओं के प्रति अतिरिक्त आदर प्रदर्शित करता है जो दीर्घकालीन संन्यासी जीवन में चले गए हैं, जो संघ के पिता और नेता हैं।"

"इन ग्यारह गुणों से युक्त भिक्षु इस धम्म और अनुशासन में वृद्धि, प्रगति और पूर्णता प्राप्त करने में सक्षम होता है।"

---

18 समाधि (स्वयं में लीन होना/सम्मोहन) (1)

तब कई भिक्षु भगवान (बुद्ध) के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और उनसे कहा: 2232

भाहते, क्या कोई भिक्षु समाधि की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि (1) वह पृथ्वी को पृथ्वी के संदर्भ में न देखे; (2) जल को जल के संदर्भ में न देखे; (3) अग्नि को अग्नि के संदर्भ में न देखे; (4) वायु को वायु के संदर्भ में न देखे; (5) अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) को अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) के संदर्भ में न देखे; (6) अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) को अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) के संदर्भ में न देखे; (7) शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को शून्यता के आधार के संदर्भ में न देखे; (8) न सबोध (सन्न/संज्ञा) और न अबोध (अज्ञात) के क्षेत्र (आयतन) को न सबोध (सन्न/संज्ञा) और न अबोध (अज्ञात) के क्षेत्र (आयतन) के संदर्भ में न देखे; (9) इस संसार को इस संसार के संदर्भ में न देखे? दुनिया; (10) दूसरी दुनिया के संबंध में दूसरी दुनिया का; (11) किसी भी चीज़ का जिसे मन द्वारा देखा, सुना, महसूस किया, जाना, पहुँचा, खोजा और परखा गया हो, लेकिन वह फिर भी बोधगम्य होगा?

"वह कर सकता था, भिक्षुओं।" [354]

"पर हे भंते, वह समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था कैसे प्राप्त कर सकता था?"

हे भिक्षुओं, यहाँ एक भिक्षु इस प्रकार बोध करता है: 'यह शांति है, यह उदात्त है, अर्थात् समस्त कर्मों का स्थिर होना, समस्त प्राप्तियों का त्याग, तृष्णा का नाश, वैराग्य, निर्वाण।' हे भिक्षुओं, इसी प्रकार एक भिक्षु समाधि की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि वह पृथ्वी को पृथ्वी से, जल को जल से, अग्नि को अग्नि से, वायु को वायु से, अनंत अंतरिक्ष के गोले को अनंत अंतरिक्ष के आधार से, अनंत चेतना के गोले को अनंत चेतना के गोले से नहीं देख पाता। शून्यता के क्षेत्र (आयतन) का शून्यता के क्षेत्र (आयतन) से संबंध; न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (अज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) का न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (अज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) से संबंध; इस संसार का इस संसार से संबंध; दूसरे संसार का दूसरे संसार से संबंध; मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, खोजी और परखी गई किसी भी चीज के प्रति वह बोधगम्य रहेगा।

---

19 समाधि (स्व-लीनता/समाधि) (2)

वहाँ भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "भिक्षुओं!"

“आदरणीय महोदय!” उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं, क्या कोई भिक्षु समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि (1) वह पृथ्वी के संबंध में पृथ्वी के प्रति सजग न हो [355] . . . (11) मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, प्राप्त की, खोजी और परखी गई किसी भी चीज़ के प्रति वह सजग रहे?"

"भंते, हमारी शिक्षाएं भगवान (बुद्ध) में निहित हैं, भगवान (बुद्ध) द्वारा निर्देशित हैं, भगवान (बुद्ध) की शरण लो। यदि भगवान (बुद्ध) इस कथन का अर्थ स्पष्ट कर दें तो अच्छा होगा। उनसे सुनकर भिक्षु इसे याद रखेंगे।"

"तो सुनो, भिक्षुओं, और ध्यान से सुनो। मैं बोलूंगा।"

"जी भंते," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। भगवान (बुद्ध) ने यह कहा:

"भिक्षुओं, एक भिक्षु समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि वह पृथ्वी के संबंध में पृथ्वी के प्रति सजग न रहे... वह मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, प्राप्त की, खोजी और परखी गई किसी भी चीज के प्रति सजग न रहे, लेकिन फिर भी वह सजग रहेगा।"

"पर हे भंते, वह समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था कैसे प्राप्त कर सकता था?"

"यहाँ, भिक्षु इस प्रकार बोध करते हैं: 'यह शांति है, यह उदात्त है, अर्थात् सभी गतिविधियों का शांत होना, सभी प्राप्तियों का त्याग, तृष्णा का नाश, वैराग्य, निब्बान।' इसी प्रकार, भिक्षु समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकते हैं कि वे पृथ्वी के संबंध में पृथ्वी के प्रति सजग न रहें [356] ...वे मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, प्राप्त की, खोजी और परखी गई किसी भी चीज़ के प्रति सजग न रहें, परन्तु वे फिर भी सजग रहें।"

---

20 समाधि (स्व-लीनता/समाधि) (3)

फिर कई भिक्षु पूज्य सारिपुत्त के पास आए और उनसे अभिवादन किया। अभिवादन और सौहार्दपूर्ण बातचीत समाप्त होने पर वे एक तरफ बैठ गए और पूज्य सारिपुत्त से कहा:

"मित्र सारिपुत्त, क्या कोई भिक्षु ऐसी एकाग्रता की अवस्था प्राप्त कर सकता है कि (1) वह पृथ्वी के संबंध में पृथ्वी के प्रति सजग न हो ... (11) वह मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, प्राप्त की, खोजी और परखी गई किसी भी चीज़ के प्रति सजग न हो, लेकिन फिर भी वह सजग रहे?"

[इसके बाद जो लिखा है वह 11:18 के समान है।] [357]

---

21 समाधि (स्व-लीनता/समाधि) (4)

वहाँ पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित किया:

"मित्रों, क्या कोई भिक्षु समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकता है कि (1) वह पृथ्वी के संबंध में पृथ्वी के प्रति सजग न हो ... (1 1) वह मन द्वारा देखी, सुनी, महसूस की, जानी, प्राप्त की, खोजी और परखी गई किसी भी चीज के प्रति सजग न हो, लेकिन फिर भी वह सजग रहे?"

"हे मित्र, हम दूर-दूर से पूज्य सारिपुत्त से इस कथन का अर्थ जानने आए हैं। यदि पूज्य सारिपुत्त इस कथन का अर्थ स्पष्ट कर दें तो अच्छा होगा। पूज्य सारिपुत्त से सुनकर भिक्षु इसे याद रखेंगे।"

"तो फिर, मित्रों, ध्यान से सुनो और गौर करो। [358] मैं बोलूंगा।"

"जी हां, मित्र," उन भिक्षुओं ने उत्तर दिया। पूज्य सारिपुत्त ने यह कहा:

[इसके बाद का भाग 11:19 के समान है।]

तृतीय. समानता अनुभाग (समननवग्गो)

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

22-29 अनित्यता का चिंतन (अनित्य संस्कृत: अनित्य)

"गायिका (भिक्षु) होने के कारण, एक ग्वाला पशुओं के झुंड की देखभाल और पालन-पोषण करने में असमर्थ होता है। वे ग्यारह कौन से हैं? यहाँ, (1) ग्वाले को रूप का ज्ञान नहीं होता; (2) वह विशेषताओं को पहचानने में अकुशल होता है; (3) वह मक्खियों के अंडे नहीं निकाल पाता; (4) वह घावों पर पट्टी नहीं बांध पाता; (5) वह शेड में धुआं नहीं कर पाता; (6) उसे पानी के स्थान का ज्ञान नहीं होता; (7) उसे पीने का अनुभव नहीं होता; (8) उसे रास्ते का ज्ञान नहीं होता; (9) वह चरागाहों के बारे में अकुशल होता है; (10) वह दूध दुहता रहता है; और (11) वह उन बैलों का विशेष आदर नहीं करता जो झुंड के मुखिया और सरदार होते हैं। इन ग्यारह कारकों के कारण, एक ग्वाला पशुओं के झुंड की देखभाल और पालन-पोषण करने में असमर्थ होता है।"

"इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, ग्यारह गुणों से युक्त भिक्षु, आँख में अनित्यता (अनिच्छा/अनित्य) को देखते हुए ध्यान में नहीं रह सकता... आँख में दुख को देखते हुए ध्यान में नहीं रह सकता... आँख में अनात्म को देखते हुए ध्यान में नहीं रह सकता... आँख में विनाश को देखते हुए ध्यान में नहीं रह सकता... आँख में लुप्त होते हुए ध्यान में नहीं रह सकता... आँख में समाप्ति को देखते हुए ध्यान में नहीं रह सकता... आँख में त्याग को देखते हुए ध्यान में नहीं रह सकता..."

30 — 69

"...कान में...नाक में...जीभ में...शरीर में...मन में..."

---

70 - 117

"...रूपों में...ध्वनियों में...गंधों में...स्वादों में...स्पर्श वस्तुओं में...घटनाओं (धर्म) में..."

---

118 - 165

"...दृष्टि चेतना में... कान चेतना में... नाक चेतना में... जीभ चेतना में... शरीर चेतना में... मन चेतना में..."

---

166 - 213

"...आँखों के संपर्क में... कानों के संपर्क में... नाक के संपर्क में... जीभ के संपर्क में... शरीर के संपर्क में... मन के संपर्क में..."

---

214 — 261

"...आँखों के संपर्क से उत्पन्न वेदना में... कानों के संपर्क से उत्पन्न वेदना में... नाक के संपर्क से उत्पन्न वेदना में... जीभ के संपर्क से उत्पन्न वेदना में... शरीर के संपर्क से उत्पन्न वेदना में... मन के संपर्क से उत्पन्न वेदना में..."

---

262 - 309

"...रूपों की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में... ध्वनियों की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में... गंधों की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में... स्वादों की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में... स्पर्शनीय वस्तुओं की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में [360]... घटनाओं (धम्म) की अनुभूति (सन्ना/संज्ञा) में..."

---

310 — 357

"...रूपों के प्रति जागरूकता में... ध्वनियों के प्रति जागरूकता में... गंधों के प्रति जागरूकता में... स्वादों के प्रति जागरूकता में... स्पर्शनीय वस्तुओं के प्रति जागरूकता में... घटनाओं (धम्म) के प्रति जागरूकता में..."

---

358 - 405

"... रूपों के लिए लालसा (तन्हा / तृष्णा) में ... ध्वनियों के लिए लालसा (तन्हा / तृष्णा) में ... गंध के लिए लालसा (तन्हा / तृष्णा) में ... स्वाद के लिए लालसा (तन्हा / तृष्णा) में ... स्पर्श वस्तुओं के लिए लालसा (तन्हा / तृष्णा) में ... घटना (धम्म) के लिए लालसा (तन्हा / तृष्णा) में ..."

---

406 — 453

रूपों के बारे में चिंतन में... ध्वनियों के बारे में चिंतन में... गंधों के बारे में चिंतन में... स्वादों के बारे में चिंतन में... स्पर्शनीय वस्तुओं के बारे में चिंतन में... घटनाओं (धम्म) के बारे में चिंतन में...

---

454 — 501

"...रूपों की परीक्षा में... ध्वनियों की परीक्षा में... गंधों की परीक्षा में... स्वादों की परीक्षा में... स्पर्शनीय वस्तुओं की परीक्षा में... घटनाओं (धम्म) की परीक्षा में..."

IV. कामवासना (राग) और इसी प्रकार की पुनरावृत्ति श्रृंखला 2234

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेजी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

502

भिक्षुओं, कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए ग्यारह चीजों का विकास करना आवश्यक है। वे ग्यारह चीजें क्या हैं? प्रथम ध्यान (सम्मोहन अवस्था), द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था), तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था), चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था),

प्रेम (मेत्ता) द्वारा मन की मुक्ति, करुणा (करुणा) द्वारा मन की मुक्ति, परोपकारी आनंद (परोपकार) द्वारा मन की मुक्ति, अनंत अंतरिक्ष का क्षेत्र (आयतन), अनंत चेतना का क्षेत्र (आयतन), और शून्यता का क्षेत्र (आयतन)। कामवासना (राग) का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए इन ग्यारह चीजों का विकास करना आवश्यक है।

---

503 — 511

"भिक्षुओं, कामवासना (राग) की पूर्ण समझ के लिए... उसके पूर्ण विनाश के लिए... उसके त्याग के लिए... उसके विनाश के लिए... उसके लुप्त होने के लिए... उसके मिट जाने के लिए... उसके अंत के लिए... उसके त्याग के लिए... कामवासना (राग) के त्याग के लिए... इन ग्यारह चीजों का विकास करना है।" [361]

---

512 - 671

भिक्षुओं, प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) के लिए... पूर्ण समझ के लिए... पूर्ण विनाश के लिए... त्याग के लिए... विनाश के लिए... लुप्त होने के लिए... मिट जाने के लिए... निवारण के लिए... त्याग के लिए... घृणा के लिए... मोह के लिए... क्रोध के लिए... शत्रुता के लिए... निंदा के लिए... उद्दंडता के लिए... ईर्ष्या के लिए... कंजूसी के लिए... छल के लिए... धूर्तता के लिए... हठ के लिए... उग्रता के लिए... अहंकार के लिए... घमंड के लिए... नशा के लिए... आलस्य के लिए... इन ग्यारह चीजों का विकास करना चाहिए।

भगवान (बुद्ध) ने यही कहा। यह सुनकर भिक्षु प्रसन्न हुए और भगवान (बुद्ध) के इस कथन से उन्हें बहुत आनंद हुआ।

ग्यारह अध्यायों की पुस्तक पूरी हो गई है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय >> अंगुत्तर निकाय ने

भिक्कु बी.बोधि के संस्करण और उनकी व्याख्याओं में परिवर्तन किया।

अंकगणितीय प्रवचन (अंगुत्तरा निकया)

(उंगलियों पर गिनने वाला भाग)

नोट: पाली शब्द के 'c' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

<<<< पिछला (AN11)

भिक्कू बी. बोधि के संस्करण में हुए परिवर्तन और उनकी व्याख्याएँ

आभार : भिक्कु बी. बोधि को बहुत-बहुत धन्यवाद कि अंगुत्तरा निकाय का संपूर्ण अनुवाद अब मानव जाति के लिए उपलब्ध है, जो आधुनिक अंग्रेजी में उपलब्ध नहीं था, जिसके आधार पर यह प्रयास किया गया है।

परिवर्तन की आवश्यकता : बुद्ध की शिक्षाओं का उद्देश्य शरीर के विकारों को दूर करना, आध्यात्मिक जागृति लाना और इस प्रकार पुनर्जन्म के चक्र को तोड़ना, अर्थात् मुक्ति (निर्वाण/मोक्ष) प्राप्त करना है। पश्चिम में विकसित भाषाओं में ऐसे शब्द बहुत कम हैं जो इस लक्ष्य को पूरा कर सकें, जो शाब्दिक रूप से संसार से परे, अर्थात् पारलौकिक प्रकृति का है, जबकि भारत और पूर्वी देशों के स्थानीय शब्द ऐसे शब्दों से समृद्ध हैं। इसलिए, जब पाली पाठ का पश्चिमी भाषाओं में अनुवाद किया जाता है, तो परिणाम उद्देश्य की पूर्ति नहीं करता है। अतः, नीचे दिए गए कुछ शब्दों का प्रयोग/प्रतिस्थापन किया जाता है और कभी-कभी मूल पाली शब्दों को भी शामिल किया जाता है ताकि इसे समझना आसान हो और यह भिक्षुओं, ध्यानियों और बुद्ध के मार्ग के अभ्यासकर्ताओं सहित सभी के लिए उपयोगी हो सके।

समरूपता बनाए रखने के लिए, इस वेबसाइट (tipitaka.org से) पर उपलब्ध पाली संस्करण पीडीएफ के अनुसार सूत्रों के क्रम संख्या में परिवर्तन किया गया है।

हे भगवान, सौभाग्यशाली >>> भगवान (बुद्ध)

तथागत >>> तथागत (बुद्ध)

सजग, सजगता >>> सतर्क, सतर्कता (पाली अप्पमद, संस्कृत अप्रमद के लिए)

असावधानी, असावधान >>> आलस्य, आलस्य

धम्म >>> बुद्ध का मार्ग

अस्वास्थ्यकर, अकुशल >>> हानिकारक (अकुशल)

लाभकारी, कुशल >>> लाभकारी (कुशल)

एकाग्रता >>> समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन)

चिंतन >>> विचारों के भीतर और बाहर अवलोकन का ध्यान

सचेतनता >>> ध्यान/ध्यान (पाली सती, संस्कृत स्मृति)

ज्ञान >>> दिव्य ज्ञान (पाली पन्ना, संस्कृत प्रज्ञा, प्रत्यक्ष-ज्ञान से), या ध्यान की समाधि अवस्थाओं के दौरान प्राप्त दिव्य ज्ञान।

घटना >>> धम्म, धम्म शब्द का अर्थ प्रयोग के आधार पर घटना, मार्ग, गुण आदि हो सकता है।

आध्यात्मिक जीवन >>> ब्रह्मचर्य (संयमित पवित्र जीवन)

बेघरपन >>> संन्यासी/तपस्वी जीवन

मानसिक शक्ति >>> जादू (पाली इद्धि, संस्कृत रिद्धि)

कुलीन >>> कुलीन (आर्य)

घुमक्कड़ >>> तपस्वी

दंड >>> हिंसा (दंड के लिए)

दान >>> दान देना

शांति >>> समभाव (समथा)

अंतर्दृष्टि ध्यान >>> विपश्यना ध्यान

नाम (नाम और रूप में प्रयुक्त) >>> मन (पाली नाम)

संघ >>> भिक्षुओं का संघ

सक्का >>> पाली सक्का संस्कृत शक्र (स्वर्ग में देवताओं के राजा इंद्र)

भावना >>> संवेदनाएँ (वेदना)

सुख >>> प्रसन्नता (सुख)

परमानंद >>> परमानंद (पीति)

बोध >>> बोध या अनुभूति (पाली सन्ना, संस्कृत संज्ञा)

पूर्व निवास >>> पूर्व जन्मों के निवास

आनंद >>> आनंद (पाली पमोज्जा)

अमरता >>> ध्यान में प्राप्त मुक्ति की अवस्था (पाली अमाता, संस्कृत अमृत)

प्रेम >>> करुणा (पाली मेट्टा, संस्कृत)

अस्तित्व >>> अस्तित्व (कारण, पाली भावो, पुनर्जन्म का कारण)

जन्म-प्रवेश >>> जन्म-प्रवेश (अधिकतम 7 पुनर्जन्म, पाली सोतपत्ति)

एक बार लौटने वाला >>> एक बार लौटने वाला (अधिकतम 1 पुनर्जन्म, पाली सकदागामी)

अनागामी >>> अनागामी (कोई सांसारिक पुनर्जन्म नहीं, अनागामी)

इच्छा>>>पाली संखरा, संस. संस्कार

प्रसार >>> 5-इंद्रिय-धोखा (पापंका सं. प्रपंच)

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> अंगुत्तर निकाय >> एएन1-विस्तृत

नोट: पाली भाषा में 'C' का उच्चारण 'Ch' की तरह होता है, जैसे 'China' में।

———————————————————————

पाली भाषा से अंगुत्तरा निकाय (ईश्वर की पुस्तक) का श्लोक-दर-श्लोक अनुवाद।

———————————————————————

अंतर्वस्तु

1(1) एककनिपाता की पुस्तक

1.1(एएन 1.I) (रूप आदि के प्रति आसक्ति) अनुभाग (रूपादिवग्गो)

1.2(एएन 1.II) बाधा खंड का परित्याग (निवारण-पहाना-वाग्गो)

1.3(1.III) बोझिल (अकममानिया-वाग्गो)

1.4(1.IV) अदम्य धारा (अदंता-वाग्गो)

1.5(1.वी) स्पाइक सेक्शन (पनिहिताच्चा-वाग्गो)

1.6(1.VI) चित्त (चेतना) प्रकाशमान है।

1.7(1.VII) ऊर्जा की उत्तेजना आदि खंड (विरियारंभदी-वाग्गो)

1.8(1.VIII) अच्छी दोस्ती आदि खंड (कल्याणमित्तदि-वाग्गो)

1.9(1.IX) आलस्य आदि धारा (पामदादी-वाग्गो)

1.10(1.एक्स) दूसरा सुस्ती आदि खंड (दुतिया-पमादादी-वाग्गो)

1.11(1.XI) बुरा-धम्म खंड (अधम्म-वाग्गो)

1.12(1.बारहवीं) गैर अपराध धारा (अनापत्ति-वाग्गो)

1.13(1.XIII) एक व्यक्ति अनुभाग (एकपुग्गला-वाग्गो)

1.14(1.XIV) अग्रणी (शिष्य) अनुभाग (एटाडग्गा-वाग्गो)

1.14.1i. पहला उप-अध्याय (भिक्षु) 188-197

1.14.2ii. द्वितीय उप-अध्याय 198-208

1.14.3iii. तीसरा उप-अध्याय 209-218

1.14.4iv. चौथा उप-अध्याय 219-234

1.14.5वी. पांचवां उपअध्याय (नन/भिक्कुनिस) 235-247

1.14.6vi. छठा उप-अध्याय (पुरुष गृहस्थ अनुयायी) 248-257

1.14.7vii. सातवाँ उप-अध्याय (महिला गृहस्थ अनुयायी) 258 — 267

1.15(1.XV) असंभव 149 (अत्थाना)

1.16(1.XVI) एक बात 159[एकधम्म]

1.16.1i. पहला उपअध्याय

1.16.2ii. दूसरा उप-अध्याय

1.16.3iii. तीसरा उप-अध्याय 172

1.16.4iv. जंबुद्वीप (भारत) पुनरावृत्ति श्रृंखला [चौथा उप-अध्याय] 322 365

1.17(1.XVII) आत्मविश्वास उत्पन्न करने वाले गुण अनुभाग

1.18(1.XVIII) फिंगर स्नैप सेक्शन (अपराच्चरासंघातवग्गो)

1.19(1.XIX) माइंडफुलनेस (ध्यान) शरीर की ओर निर्देशित (कायगाता-सती-वाग्गो)

1.20(1.XX) मृत्युहीन धारा 214 (अमाता-वाग्गो सं. अमृत वर्ग)

(1) एककनिपाता की पुस्तक

(एएन 1.I) (रूप आदि के प्रति आसक्ति) अनुभाग (रूपादिवग्गो)

(अर्थ : रूप-रूप, सद्दो-आवाज, गंधो-गंध, रसो-स्वाद, फोत्थब्बो-स्पर्श)

नमो (श्रद्धांजलि) तस्सा (उसको) भगवतो (भगवान/ईश्वर), अरा (शत्रु अर्थात मृत्यु) हतो (पराजित करने वाला),

सम्मा (सही ढंग से), सम्बुद्धस्स (पूर्णतः जागृत, बुद्ध)

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा संबुद्धस्स

॥ नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स॥

---

1. मैंने ऐसा सुना है—एक समय भगवान (बुद्ध) सावत्थी में जेतवन में अनाथपिंडिका के मठ में ठहरे हुए थे। तब भगवान (बुद्ध) ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा— "भिक्षुओं।" "जी भगवान," उन भिक्षुओं ने भगवान (बुद्ध) को उत्तर दिया। तब भगवान (बुद्ध) ने कहा—

भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई रूप ज्ञात नहीं है जो स्त्री के रूप की तरह किसी पुरुष के मन को मोहित कर ले। हे भिक्षुओं, स्त्री का रूप किसी अन्य रूप की तुलना में पुरुष के मन को अधिक मोहित करता है।

1. Evaṃ me sutaṃ|| ||

एकं समयं भगव सावत्थियं विहारति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स अरमे।|| ||

तत्र खो भगव भिक्खु अमांतेसि:|| ||

"भिक्खवो" ति.|| ||

"भदंते" ति ते भिक्खु भगवतो पचसोसुऽ|| ||

Bhagavā etad avoca:|| ||

"नाहं, भिक्खवे, अण्णां एक-रूपं पि समनुपासामि||

यं एवं पुरिसस्सा चित्तं परियादय तिथति||

यथयिदाṃ, भिक्खवे, इत्थि-रूपाṃ|| ||

इत्थि-रूपाṃ, भिक्खवे, पुरिसस्सा चित्तं परियादया तिथति" ति.|||

1. मैंने सुना है - एक समय भगवान (बौद्ध) अनाथपिंडिका के मठ में जेतवन में सात्विकता में रुके थे। तब भगवान (बौद्ध) ने भिक्षुओं को प्रकट किया - "भिक्षुओं।" "हां, भगवान," भिक्षुओं ने भगवान (बुद्ध) को उत्तर दिया। तब भगवान (बुद्ध) ने कहा -

भिक्षुओं, मुझे इसके बारे में किसी भी तरह से पता नहीं है कि एक महिला के रूप में एक पुरुष के मन को पकड़ लिया जाता है। एक स्त्री का रूप, साधु, किसी अन्य रूप की तरह पुरुष के मन को पकड़ लेता है।

1. एवं मे सुतं — एकं समयं भगव सावथ्यं विहारी जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खु अम्नतेसी - "भिक्खवो"ति। "भदन्ते"ति ते भिक्खु भगवतो पच्चश्चसोसुं। भगवा एतदवोच -

"नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकरूपमपि समनुपस्सामि यं एवं पुरिस्स्स चित्तं परियादाय तिट्ठति यथैदं, भिक्खवे, इत्थिरूपं। इत्थिरूपं, भिक्खवे, पुरिस्स्स चित्तं परियादाय तिट्ठति'ति। पथमं.

टिप्पणियाँ: इत्थि = स्त्री(संस्कृत-इस्त्री); रूप=रूप/आकार; भिक्खु/भिक्खवे=भिक्षु; पुरिसा=मनुष्य; चित्त=मन; तत्र=वहां

---

2. “भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई आवाज़ नहीं पता जो किसी पुरुष के मन पर स्त्री की आवाज़ की तरह प्रभाव डालती हो। हे भिक्षुओं, स्त्री की आवाज़ किसी अन्य आवाज़ की तरह पुरुष के मन पर प्रभाव डालती है।”

2. "नाहौ, भिक्खवे, अण्णां एक-सद्दाम पि समनुपासामि||

यं एवं पुरिसस्सा चित्तं परियादय तिथति||

यथायिदाṃ, भिक्खवे, इत्थि-सद्दो|| ||

इत्थि-सद्दो, भिक्खवे, पुरिसस्सा चित्तं परियादया तिट्ठति" ति.|||

2. भिक्षुओं, मुझे ऐसी किसी भी आवाज के बारे में नहीं पता है जो किसी महिला की आवाज की तरह पुरुष के मन को पकड़ ले। एक महिला की आवाज, साधुओं, किसी अन्य आवाज की तरह एक आदमी के मन को पकड़ना है।

2. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकसद्दमपि समनुपस्सामि यं एवं पुरिसस्स चित्तं परियादाय तिट्ठति यथयिदं, भिक्खवे, इत्थिसद्दो। इत्थिसद्दो, भिक्खवे, पुरिसस्स चित्तं परियादाय तिट्ठति'ति। दुतीयं।

टिप्पणियाँ: सद्दो=आवाज(संस. शब्द)

---

3. "भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई गंध नहीं पता जो स्त्री की गंध की तरह किसी पुरुष के मन पर इतना गहरा प्रभाव डालती हो। हे भिक्षुओं, स्त्री की गंध किसी अन्य गंध की तरह किसी पुरुष के मन पर गहरा प्रभाव डालती है।"

3. "नाहं, भिक्खवे, अण्णां एक-गंधं पि समनुपासामि॥

यं एवं पुरिसस्सा चित्तं परियादय तिथति॥

यथैयिदौ, भिक्खवे, इत्थि-गंधो॥ ॥

इत्थि-गंधो, भिक्खवे, पुरिसस्सा चित्तं परियादया तिट्ठति" ति.।॥

3. भिक्षुओं, मुझे किसी भी गंध का पता नहीं है जो किसी महिला की गंध की तरह एक आदमी के मन को पकड़ती है। एक महिला की गंध, साधु, किसी अन्य गंध की तरह एक आदमी के मन को पकड़ना है।

3. "नहं, भिक्खवे, अञ्वं एकगन्धमपि समनुपस्सामि यं एवं पुरिस्स्स चित्तं परियादाय तिट्ठति यथयिदं, भिक्खवे, इत्थिगन्धो। इत्थिगन्धो, भिक्खवे, पुरिस्स्स चित्तं परियादाय तिट्ठति'ति। ततीयं।

टिप्पणी: गंधम/गंधो = सुगंध

---

4. "भिक्षुओं, मुझे किसी ऐसे स्वाद का ज्ञान नहीं है जो स्त्री के स्वाद की तरह किसी पुरुष के मन पर हावी हो सके। भिक्षुओं, स्त्री का स्वाद किसी अन्य स्वाद की तरह किसी पुरुष के मन पर हावी हो जाता है।"

4. "नाहं भिक्खवे, अण्णां एक-रसम पि समनुपासामि॥

यं एवं पुरिसस्सा चित्तं परियादय तिथति॥

यथैयिदौ, भिक्खवे, इत्थि-रसो॥ ॥

इत्थि-रसो, भिक्खवे, पुरिसस्स चित्तं परियादया तिट्ठति" ति.।॥

4. भिक्षुओं, मुझे किसी भी स्वाद के बारे में नहीं पता है जो एक महिला जैसा स्वाद पुरुषों के मन को पकड़ लेता है। एक महिला का स्वाद, साधु, किसी अन्य स्वाद की तरह एक आदमी के मन को पकड़ लेता है।

4. "नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकरसम्पि समनुपस्सामि यं एवं पुरिसस्स चित्तं परियादाय तिट्ठति यथयिदं, भिक्खवे, इथिरसो। इथिरसो, भिक्खवे, पुरिसस्स चित्तं परियादय तिट्ठति"ति। चतुर्थं।

टिप्पणी: रसम/रसो = स्वाद

---

5. "भिक्षुओं, मुझे किसी ऐसे स्पर्श का ज्ञान नहीं है जो स्त्री के स्पर्श की तरह मनुष्य के मन पर गहरा प्रभाव डालता हो। हे भिक्षुओं, स्त्री का स्पर्श किसी अन्य स्पर्श की तरह मनुष्य के मन पर गहरा प्रभाव डालता है।"

5. "नाहं भिक्खवे, अण्णां एक-फोटहब्बम पि समनुपासामि॥

यं एवं पुरिसस्स चित्तं परियादया तिट्ठति यथयिदां,॥

भिक्खवे, इत्थी-फोथब्बाṃ॥ ॥

इत्थि-फोथब्बाṃ, भिक्खवे, पुरिसस्सा चित्तं परियादया तिथति" ति.॥

5. भिक्षुओं, मुझे कोई भी स्पर्श का पता नहीं है जो किसी पुरुष के दिमाग को पकड़ लेता है जैसे कि किसी महिला का स्पर्श। एक महिला का स्पर्श, साधु, किसी अन्य स्पर्श की तरह पुरुष के मन को पकड़ लेता है।

5. "नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकफोत्थब्बमपि समनुपस्सामि यं एवं पुरिसस्स चित्तं परियादय तिट्ठति यथयिदं, भिक्खवे, इत्थिफोत्थब्बो। इत्थिफ़ोट्ठब्बो, भिक्खवे, पुरिस्स्स चित्तं परियादाय तिट्ठति'ति। पञ्चमन्।

नोट: photthabbam=स्पर्श

---

6. "भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई रूप ज्ञात नहीं है जो स्त्री के मन को पुरुष के रूप की तरह मोहित कर सके। भिक्षुओं, पुरुष का रूप स्त्री के मन को किसी अन्य रूप की तरह मोहित कर लेता है।"

6. "नाहं, भिक्खवे, अण्णां एक-रूपं पि समनुपासामि॥

यं एवं इत्थिया चित्तं परियादय तिथति॥

यथयिदाṃ, भिक्खवे, पुरिसा-रूपाṃ॥ ॥

पुरिसा-रूपाऽ, भिक्खवे, इत्थिया चित्तं परियादया तिथति" ति.॥ ॥

6. भिक्षुओं, मुझे इसके बारे में कभी नहीं पता कि एक महिला का दिमाग एक पुरुष की तरह पकड़ लेता है। एक आदमी का रूप, साधु, किसी अन्य रूप की तरह एक महिला के मन को पकड़ लेता है।

6. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकरूपमपि समनुपस्सामि यं एवं इत्थिया चित्तं परियाद्य तित्थति यथयिदं, भिक्खवे, पुरिसरूपं। पुरिसरूपं, भिक्खवे, इथिया चित्तं परियादाय तिट्ठति'ति। छट्ठं.

---

7. "भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई ध्वनि ज्ञात नहीं है जो किसी स्त्री के मन पर पुरुष की ध्वनि की तरह प्रभाव डालती हो। भिक्षुओं, पुरुष की ध्वनि किसी अन्य ध्वनि की तुलना में स्त्री के मन पर अधिक प्रभाव डालती है।"

7. "नाहौ, भिक्खवे, अण्णां एक-सद्दाम पि समनुपासामि॥

यं एवं इत्थिया चित्तं परियादय तिथति॥

यथायिदाभि भिक्खवे, पुरिसा-सद्दो॥ ॥

पुरिसा-सद्दो, भिक्खवे, इत्थिया चित्तं परियादया तिट्ठति" ति.॥

7. भिक्षुओं, मुझे ऐसी किसी भी ध्वनि का पता नहीं है जो किसी महिला के दिमाग को पुरुषों की आवाज की तरह पकड़ती हो। एक आदमी की आवाज, भिक्षुओं, किसी अन्य ध्वनि की तरह एक महिला के मन को पकड़ना है।

7. "नाहं, भिक्खवे, अञ्ञं एकसद्दमपि समनुपस्सामि यं एवं इत्थिया चित्तं परियादाय तिट्ठति यथयिदं, भिक्खवे, पुरिससद्दो। पुरिससद्दो, भिक्खवे, इथिया चित्तं परियादाय तिट्ठति"ति। सत्तमं।

---

8. "भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई गंध नहीं पता जो किसी स्त्री के मन पर पुरुष की गंध की तरह प्रभाव डालती हो। भिक्षुओं, पुरुष की गंध किसी अन्य गंध की तुलना में स्त्री के मन पर कहीं अधिक प्रभाव डालती है।"

8. "नाहं, भिक्खवे, अण्णां एक-गंधं पि समनुपासामि॥

यं एवं इत्थिया चित्तं परियादय तिथति॥

यथयिदाभि भिक्खवे, पुरिसा-गंधो॥ ॥

पुरिसा-गंधो, भिक्खवे, इत्थिया चित्तं परियादया तिट्ठति" ति.॥

8. साधुओं, मुझे ऐसी किसी गंध का पता नहीं है जो किसी महिला के मन को किसी पुरुष की गंध की तरह पकड़ ले। एक आदमी की गंध, भिक्षुओं, किसी अन्य गंध की तरह एक महिला के मन को पकड़ लिया जाता है।

8. "नहं, भिक्खवे, अञ्ञं एकगन्धमपि समनुपस्सामि यं एवं इत्थिया चित्तं परियादाय तिट्ठति यथयिदं, भिक्खवे, पुरिसगन्धो। पुरिसगंधो, भिक्खवे, इथिया चित्तं परियादय तिट्ठति"ति। अट्ठमन्।

---

9. "भिक्षुओं, मुझे किसी ऐसे स्वाद का ज्ञान नहीं है जो किसी स्त्री के मन को पुरुष के स्वाद की तरह मोहित कर सके। भिक्षुओं, पुरुष का स्वाद किसी स्त्री के मन को किसी अन्य स्वाद की तरह मोहित कर लेता है।"

9. "नाहं, भिक्खवे, अण्णां एक-रसम पि समनुपासामि॥

यं एवं इत्थिया चित्तं परियादय तिथति॥

यथैयिदौ, भिक्खवे, पुरिसा-रसो॥ ॥

पुरिसा-रसो, भिक्खवे, इत्थिया चित्तं परियादया तिट्ठति" ति.॥

9. भिक्षुओं, मुझे किसी भी स्वाद का पता नहीं है जो किसी महिला का दिमाग किसी पुरुष के स्वाद की तरह पकड़ लेता है। एक आदमी का स्वाद, साधु, किसी अन्य स्वाद की तरह एक महिला का मन पकड़ लेता है।

9. "नहं, भिक्खवे, अञ्ञं एकरसम्पि समनुपस्सामि यं एवं इत्थिया चित्तं परियादाय तित्थति यथयिदं, भिक्खवे, पुरिसरसो। पुरिसरसो, भिक्खवे, इथिया चित्तं परियादाय तिट्ठति"ति। नवमं.

---

10. “भिक्षुओं, मुझे किसी ऐसे स्पर्श का ज्ञान नहीं है जो किसी स्त्री के मन पर पुरुष के स्पर्श की तरह प्रभाव डालता हो। भिक्षुओं, पुरुष का स्पर्श किसी स्त्री के मन पर ऐसा प्रभाव डालता है जैसा कोई और स्पर्श नहीं डाल सकता।” प्रथम खंड का अंत - प्रपत्र

10. "नाहौ, भिक्खवे, अण्णां एका-फोटहब्बम पि समनुपासामि॥

यं एवं इत्थिया चित्तं परियादय तिथति॥

यथायिदाभिक्खवे, पुरिसा-फोठहब्बाm॥ ॥

पुरिसा-फोथब्बाm, भिक्खवे, इत्थिया चित्तं परियादया तिथति" ति.॥

[Rūpadi-vaggo paṭhamo]

10. भिक्षुओं, मुझे किसी भी स्पर्श का पता नहीं है जो किसी महिला का दिमाग पुरुषों के स्पर्श की तरह पकड़ लेता है। एक आदमी का स्पर्श, साधु, किसी अन्य स्पर्श की तरह एक महिला के मन को पकड़ लेता है।

दस. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकफोत्थब्बमपि समनुपस्सामि यं एवं इत्थिया चित्तं परियादाय तिट्ठति यथयिदं, भिक्खवे, पुरिसफोत्थब्बो। पुरिसफोट्ठब्बो, भिक्खवे, इत्थिया चित्तं परियादाय तिट्ठति"ति। दसमं.

रूपादिवग्गो पतमो।

(एएन 1.II) बाधा खंड का परित्याग (निवारण-पहाना-वाग्गो)

(निवारण-आवरण/परतें, पहाना-हटाना, वाग्गो-खण्ड)

11। "भिक्षुओं, मुझे आकर्षण के लक्षण के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिससे अजन्मी कामुक इच्छा उत्पन्न हो और उत्पन्न होकर इतनी अधिक बढ़े और फैले। क्योंकि जो व्यक्ति आकर्षण के लक्षण पर लापरवाही से ध्यान देता है, उसकी अजन्मी कामुक इच्छा उत्पन्न होती है और बढ़ती ही जाती है।"

11. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्नो वा कामच्छंदो उप्पज्जति उप्पन्नो वा कामच्छंडो भयोभवाय वेपुलया संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, सुभनिमित्तम्. सुभनिमित्तं, भिक्खवे, अयोनिसो मनसि करोतो अनुप्पन्नो सेवा कामच्छन्दो उप्पज्जति उप्पन्नो च कामच्चन्दो भयोभावाय वेपुलया संवत्तति। पथमं.

11. भीखू (भिक्षु), मुझे एक और चीज भी दिखाई नहीं दे रही है जिसके कारण अन्न उचक (यौन) की चाहत पैदा होती है और उचक (यौन) की चाहत पैदा होती है और आकर्षण के निशान के रूप में बहुत अधिक वृद्धि होती है। जो आकर्षक, आनंद उचक (यौन) इच्छा के निशान के प्रति प्रतिस्पर्धा से प्रकट होता है और उचक (यौन) इच्छा बढ़ती है और विफल हो जाती है। "

11. " नहं , भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प संज्ञाओ वा कामच्छन्दो उप्पजदजति उप्प संज्ञाओ वा कामच्छन्दो भयोभावाय वेपुलादलाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, सुभनिमित्तं। सुभनिमित्तं, भिक्खवे, अयोनिसो मनसि करोतो अनुप्प न्याज्यो चेव कामच्छन्दो उप्पजदजति उप्प न्याज्यो च कामच्छन्दो भयोभावाय वेपुललाय संवत्ति"ति। पथमं.

---

12. "भिक्षुओं, मुझे घृणास्पद वस्तु के चिह्न के अलावा कोई और ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती जिससे अनचाही दुर्भावना उत्पन्न होती हो और बढ़ती हो। 24 क्योंकि जो व्यक्ति घृणास्पद वस्तु के चिह्न पर लापरवाही से ध्यान देता है, उसमें अनचाही दुर्भावना उत्पन्न होती है और बढ़ती है।"

12. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्नो वा ब्यापदो उप्पज्जति उप्पन्नो वा ब्यापादो भयोभावाय वेपुलया सवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, पतिघनिमित्तम्. पतिघनिमित्तं, भिक्खवे, अयोनिसो मनसि करोतो अनुप्पन्नो सेवा ब्यापादो उप्पज्जति उप्पन्नो च ब्यापादो भयोभावया वेपुल्लया संवतति'ति। दुतियां.

12. "नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प न्योग्यो वा ब्यापदो उप्पजदजति उप्प ननो वा ब्यापदो भयोभावाय वेपुलदालाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, पतिघनिमित्तं। पतिघ्निमित्तं, भिक्खवे, अयोनिसो मनसि करोतो अनुप्प संज्ञाओ चेव ब्यापदो उप्पजदजति उप्प संज्ञाओ च ब्यापदो भयोभावाय वेपुललाय संवत्ति"ति। दुतीयं।

---

13. "भिक्षुओं, मुझे असंतोष, सुस्ती, आलसी अंगड़ाई, भोजन के बाद की सुस्ती और मन की आलस्य के अलावा कोई और ऐसी चीज नहीं दिखती जिससे अनचाही सुस्ती और आलस्य उत्पन्न होती हो और बढ़ती और फैलती हो। 23. सुस्त मन वाले व्यक्ति के लिए अनचाही सुस्ती और आलस्य उत्पन्न होती है और बढ़ती और फैलती है।"

13. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्नं वा पतलामिद्धं [थिनामिद्धं (सि. स्या. कं. पि.)] उप्पज्जति उप्पन्नं वा पतलामिद्धं भयोभवाय वेपुलाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, अरति तंदी [तंदी (का.)] विजंभिता [विजंभिका (सी. स्या. कं. पि.)] भट्टसम्मदो चेतासो च लिणट्टं. लिनाचित्तस, भिक्खवे, अनुप्पन्नससेवा थिनमिद्धं उप्पज्जति उप्पन्नंच थिनमिद्धं भिय्योभवाय वेपुलया संवत्तति"। ततियाँ।

13. "नहं, भिक्खवे, अञ्जनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प प्रयोगं वा थिनमिद्धं [थिनमिद्धं (सी० स्या० कं० पी०)] उप्पजदति उप्प संज्ञां वा थिनमिद्धं भय्योभावाय वेपुलमदं संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, आरती तंदी [तंदि (क०)] विज्महिता [विजंभिका (सी०) स्या० कं० पि०)] भट्टसम्मदो चेतसो च लीन्ततं। लीनचित्तस्स, भिक्खवे, अनुप्प सान्याञ्चेव थिनमिद्धं उप्पजदजति उप्प सान्याञ्च थिनमिद्धं भय्योभावाय वेपुलल्लाय संवत्ति"ति। ततीयं।

---

14. "भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई दूसरा कारण नहीं दिखता जिससे अनवजह बेचैनी और पश्चाताप उत्पन्न हो और उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप इतना बढ़ जाए जितना कि अशांत मन से। 26 अशांत मन वाले व्यक्ति में अनवजह बेचैनी और पश्चाताप उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप इतना बढ़ जाते हैं।"

14."नाहं, भिक्खवे, अण्णां एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्नं वा उद्धच्चाकुक्कुक्कं उप्पज्जति उपप्पन्नं वा उद्धच्चाकुक्कुक्कं भय्योभवाय वेपुलया संवत्तति यथैयिदं, भिक्खवे, चेतासो अवुपासमो। अवुपसंतचित्तस्स, भिक्खवे, अनुप्पन्नससेवा उद्धच्चाकुक्कुक्कं उप्पज्जति उप्पन्नञ्च उद्धच्चाकुक्कुक्कं भिय्योभवाय वेपुलया संवत्तति। Catuttham.

14. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प साइनं वा उध्दचकु त्रकुचदचं उप्पजदजति उप्प नयनं वा उध्दचचकु क्त्रकुचचं भयोभवाय वेपुललाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चेतसो अवुपसमो। अवूपासन्तचित्तस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइनञ्चेव उद्धचदचकु त्रकुचचं उप्पजदजति उपप ग्यानजदच उद्धचदचकु त्रचचं भय्योकुभावाय वेपुलदल्लय संवत्तति"ति। चतुर्थं।

---

15. "भिक्षुओं, मुझे लापरवाही से ध्यान देने के अलावा और कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जिससे अनचाहा संदेह उत्पन्न होता हो और बढ़ता-फैलता हो। 27 क्योंकि जो लापरवाही से ध्यान देता है, उसमें अनचाहा संदेह उत्पन्न होता है और बढ़ता-फैलता है।"

15. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा विकिसिच्चा उप्पज्जति उप्पन्ना वा विकिसिच्चा भयोभवाय वेपुलया संवत्तति यथायिदं," भिक्खवे, अयोनिसोमनसिकारो। अयोनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्पन्ना सेवा विकिसिच्चा उप्पज्जति उप्पन्ना च विकिसिच्चा भिय्योभवाय वेपुलया संवतति"ति। पंचमं.

15. "नहं , भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नागा वा विचिकिच्छा उप्पजदजति उप्पा नागा वा विचिकिच्छा भयोभावाय वेपुल्दलाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अयोनिसोमनसिकारो। अयोनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्प नासा चेव विचिकिच्छा उप्पजदजति उप्प संज्ञा च विचिकिच्छा भयोभावाय वेपुललाय संवत्ति"ति। पञ्चमन्।

---

16. "भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई दूसरी चीज नजर नहीं आती जिससे अजन्मी कामुक इच्छा उत्पन्न न हो और उत्पन्न हुई कामुक इच्छा का त्याग हो, सिवाय उस अप्रियता के चिह्न के। जो व्यक्ति अप्रियता के चिह्न पर ध्यान देता है, उसकी अजन्मी कामुक इच्छा उत्पन्न नहीं होती और उत्पन्न हुई कामुक इच्छा का त्याग हो जाता है।"

16. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्नो वा कामच्छन्दो नुप्पज्जति उपन्नो वा कामच्चन्दो पहियति यथयिदं, भिक्खवे, असुभनिमित्तम्। असुभनिमित्तं, भिक्खवे, योनिसो मनसि करोतो अनुप्पन्नो सेवा कामच्चन्दो नुप्पज्जति उप्पन्नो च कामच्चन्दो पहियति'ति। छठां.

16. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प न्यानो वा कामच्छन्दो नुप्पजदजति उप्प नागानो वा कामच्छन्दो पहियति यथयिदं, भिक्खवे, अशुभनिमित्तं। असुभनिमित्तं, भिक्खवे, योनिसो मनसि करोतो अनुप्प न्याज्यो चेव कामच्छन्दो नुप्पजदजति उप्प नागानो च कामच्छन्दो पहियति"ति। छट्ठं.

---

17. "भिक्षुओं, मुझे प्रेम-कृपा (मेत्ता) द्वारा मन की मुक्ति के अलावा और कोई ऐसी चीज दिखाई नहीं देती जिससे अनचाही दुर्भावना उत्पन्न न हो और उत्पन्न दुर्भावना का त्याग हो जाए। जो व्यक्ति प्रेम-कृपा द्वारा मन की मुक्ति पर ध्यान देता है, उसकी अनचाही दुर्भावना उत्पन्न नहीं होती और उत्पन्न दुर्भावना का त्याग हो जाता है।"

17. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्नो वा ब्यापादो नुप्पज्जति उप्पन्नो वा ब्यापादो पहियति यथयिदं, भिक्खवे, मेत्ता चेतोविमुत्ती। मेट्टं, भिक्खवे, सेतोविमुत्तिन योनिसो मनसि करोतो अनुप्पन्नो सेवा ब्यापादो नुप्पज्जति उप्पन्नो च ब्यापादो पहियति'ति। सत्तमं.

17. "नहं, भिक्खवे, अञ्जनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प न्यानो वा ब्यापदो नुप्पजदजति उप्प संज्ञाओ वा ब्यापदो पहियति यथयिदं, भिक्खवे, मेत्ता चेतोविमुत्ती। मेत्तं, भिक्खवे, चेतोविमुत्तिन योनिसो मनसि करोतो अनुप्प न्यानो चेव ब्यापदो नुप्पजदजति उप्प साइनो च ब्यापदो पहियति"ति। सत्तमं।

---

18. "भिक्षुओं, मुझे उत्तेजना, दृढ़ता और परिश्रम के तत्व के अलावा और कोई ऐसी चीज नहीं दिखती जिसके कारण अनवजह सुस्ती और उनींदापन उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न सुस्ती और उनींदापन का त्याग होता है। 33 क्योंकि जिसने ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) को जागृत कर लिया है, उसमें अनवजह सुस्ती और उनींदापन उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न सुस्ती और उनींदापन का त्याग हो जाता है।"

18. "नहं, भिक्खवे, आननं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्नं वा पतलीमिद्धं नुप्पज्जति उप्पन्नं वा पतलीमिद्धं पहियति यथयिदं, भिक्खवे, आरंभधातु निक्कमधातु परक्कमधातु। अरद्धविरियस्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्नसेव थिनमिद्धं नुप्पज्जति उप्पन्नञ्च थिनमिद्धं पहियति'ति। अठहमं.

18. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प प्रयोगं वा थिनमिद्धं नुप्पजदजति उप्प नागां वा थिनमिद्धं पहियेति यथयिदं, भिक्खवे, अराधातु निकर्मधातु परार्कमधातु। अर्धविरियस, भिक्खवे, अनुप्प वैज्ञानिकञ्चेव थिनमिद्धं नुप्पजदजति उपप्प संज्ञाच थिनमिद्धं पहियति"ति। अट्ठमन्।

---

19. "भिक्षुओं, मुझे मन की शांति के सिवा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिससे अनचाही बेचैनी और पश्चाताप न उत्पन्न हो और उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप का त्याग हो जाए। 35 शांत मन वाले व्यक्ति में अनचाही बेचैनी और पश्चाताप उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न बेचैनी और पश्चाताप का त्याग हो जाता है।"

19. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्नं वा उद्धच्चाकुक्कुक्कं नुप्पज्जति उपप्पन्नं वा उद्धच्चाकुकुक्कं पहियति यथयिदं, भिक्खवे, चेतासो vupasamo. वुपसंतचित्तस, भिक्खवे, अनुप्पन्नससेवा उद्च्चक्कुक्कुक्कं नुप्पज्जति उप्पन्नञ्च उद्धच्चाकुक्कुक्कं पहियति'ति। नवमं.

19. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सीनं वा उध्दचकु त्रकुचदचं नुप्पजजति उप्प नयनं वा उधचचकु त्रकुचदचं पहीयति यथयिदं, भिक्खवे, चेतसो वूपसमो। पाससन्तचित्तस्स, भिक्खवे, अनुप्प सान्याञ्चेव उद्धचदचकु त्रकुचदचं नुप्पजदजति उप्प सज्ञनदच उध्दचदचकु त्रकुचदचं पहियति"ति। नवमं.

---

20. "भिक्षुओं, मुझे ध्यानपूर्वक ध्यान देने के अलावा और कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जिससे अनचाहा संदेह उत्पन्न न हो और उत्पन्न संदेह दूर हो जाए। 37 क्योंकि जो ध्यानपूर्वक ध्यान देता है, उसका अनचाहा संदेह उत्पन्न नहीं होता और उत्पन्न संदेह दूर हो जाता है।"

20. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा विकिसिच्चा नुप्पज्जति उप्पन्ना वा विकिसिच्चा पहियति यथायिदं, भिक्खवे, योनिसोमनासिकारो। योनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्पन्ना सेवा विकिसिच्चा नुप्पज्जति उप्पन्ना च विकिसिच्चा पहियति'ति। दशमं.

निवारणप्पाहनवग्गो दुतियो।

20. "नाहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नागाना वा विचिकिच्छा नुप्पजदजति उप्प नागा वा विचिकिच्छा पहियति यथयिदं, भिक्खवे, योनिसोमनासिकारो। योनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्प नासा चेव विचिकिच्छा नुप्पजदजति उप्प नागा च विचिकिच्छा पहियति"ति। दसमं.

निरणप्पहनवग्गो दुतियो।

(1.III) बोझिल (अकममानिया-वाग्गो)

(अकम्मानिया-कठोर/जिद्दी)

21. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अविकसित होने पर इतनी अनियंत्रित हो। अविकसित मन अनियंत्रित होता है।"

21. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं एवम् अभविताम् अकम्मनीयं होति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं [यथयिदं चित्तं (सि. पि.) एवमुपरिपी]। चित्तं, भिक्खवे, अभावितं अकम्मनीयं होति'ति। पथमं.

21. "नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं अभावितं अकम्मनीयं होति यथैदं, भिक्खवे, चित्तं [यथयिदं चित्तं (सी० पी०) एवमुपरिपि]। चित्तं, भिक्खवे, अभावितं अकम्मनीयं होता"ति। पथमं.

---

22. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो विकसित होने पर इतनी सुगम हो। विकसित मन ही सुगम होता है।"

22. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपसामि यम एवं भवितां कम्मनियां होति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भवितं कम्मनियां होति'ति। दुतियां.

22. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं भवितं कम्मनीयं होति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भावितं कम्मनीयं।"ति। दुतीयं।

---

23. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिसका अविकसित होना इतना बड़ा नुकसान पहुंचाता हो। अविकसित मन बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

23. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं अभवितां महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अभावितं महतो अनत्थय संवत्तति। ततियाँ।

23। "नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं वंचितं सोथ अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अभावितं महतो अनथय संवत्तति।" ततीयं।

---

24. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिसका विकास इतने महान कल्याण की ओर ले जाता हो। एक विकसित मन महान कल्याण की ओर ले जाता है।"

24. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं भवितां महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भवितं महतो अत्थय संवत्तति। Catuttham.

24. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं भवितं महोथ अथाय संवत्तति यथैदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भावितं मोटो अत्थय संवत्तति"। चतुर्थ।

---

25. "भिक्षुओं (मठवासियों), मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज दिखाई नहीं देती जो अविकसित और अप्रकट होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो: मन, जब अविकसित और अप्रकट होता है, तो बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

25. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं अभावितं आपतुभूतं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अभावितं अपतुभूतं महतो अनत्थय संवतति'। पंचमं.

25. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं अभावितं अपातुभूतं मतो अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अभावितं आपतुभूतं महतो अनथय संवत्ति"ति। पञ्चमन्।

---

26. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती जो विकसित और प्रकट होने पर इतना महान लाभ प्रदान करती हो। मन, जब विकसित और प्रकट होता है, तो महान लाभ की ओर ले जाता है।"

26. "नाहं, भिक्खवे, आननं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं भवितां पतिभूतं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भवितं पतुभूतं महतो अत्थय संवत्तति। छठां.

26. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं भवितं पातुभूतं, मतो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भावितं पातुभूतं मोटो अत्थय संवत्ति"ति। छट्ठं.

---

27. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अविकसित और अविकसित होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो। मन, जब अविकसित और अविकसित होता है, तो बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

27. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं अभावितं आबहुलिकतं महतो अनत्थय सांवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अभावितं अबाहुलिकतं महतो अनत्थय संवतति'। सत्तमं.

27. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं अभावितं अबहुलीकातं श्रीमति अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अभावितं अबहुलीकातं महतो अनथय संवत्ति"ति। सत्तमं।

---

28. "भिक्षुओं, मुझे मन के सिवा कोई और ऐसी वस्तु नहीं दिखती जिसका विकास और साधना करने से इतना महान लाभ प्राप्त होता हो। मन का विकास और साधना करने से महान लाभ प्राप्त होता है।"

28. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं भवितं बहुलिकतं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भवितं बाहुलिकतं महतो अत्थय संवत्तति। अठहमं.

28. " नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं भावितं बहुलीकातं मतो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भवैतं बहुलीकातं मोटो अत्थय संवत्ति"ति। अट्ठमन्।

---

29. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अविकसित और अविकसित होने पर इतना कष्ट देती हो। मन, अविकसित और अविकसित होने पर, कष्ट देता है।"

29. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं अभवितां अबहुलिकतम् दुक्खाधिवाहं होति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं।" चित्तं, भिक्खवे, अभावितं अबाहुलिकतं दुक्खाधिवाहं होति'ति। नवमं.

29. "नाहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं अवकितं अबहुलीकातं दुक्खादिव्हं होति यथैदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अभावितं अबहुलीकातं दुक्खदिहं होता"ति। नवमं.

---

30. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती, जिसे विकसित और पोषित करने से इतना सुख प्राप्त होता हो। मन, जब विकसित और पोषित होता है, तो सुख प्रदान करता है।"

30. "नाहं, भिक्खवे, आननं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं भवितं बहुलिकतम् सुखाधिवहं होति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भवितं बहुलिकतं सुखाधिवहं होति'ति। दशमं.

Akammaniyavaggo tatiyo.

30. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं भवैतं बहुलीकातं सुखधिवाहं होति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भवैतं अनेकातं सुखधिवाहं।"ति। दसमं.

अकम्मनियावग्गो तातियो।

(1.IV) अदम्य धारा (अदंता-वाग्गो)

(अदांता अनटेम्ड/वाइल्ड)

31. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अनियंत्रित होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो। अनियंत्रित मन बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

31. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं अदंतं महतो अनत्थय सांवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अदन्तं महतो अनत्थय संवत्तति। पथमं.

31. " नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं अदन्तं सोथ अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अदन्तं महतो अनथय संवत्तति"। पथमं.

---

32. "भिक्षुओं, मुझे मन के सिवा कोई और वस्तु दिखाई नहीं देती जिसे वश में करने से इतना महान लाभ प्राप्त होता हो। वश में किया हुआ मन महान लाभ की ओर ले जाता है।"

32. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपसामि यम एवं दंतं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, दंतं महतो अत्थय संवत्तति। दुतियां.

32. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं दंतं महोथ अथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, दंतं महतो अथय संवत्तति"। दुतीयं।

---

33. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती, जिस पर सावधानी न बरतने से इतना बड़ा नुकसान हो सकता है। एक असुरक्षित मन बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

33. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवम् अगुत्तं महतो अनत्थय सांवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तम्। चित्तं, भिक्खवे, अगुत्तं महतो अनत्थय संवत्तति। ततियाँ।

33. "नाहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं अगुत्तं सीता अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अगुत्तं महतो अनत्थय संवत्तति"। ततीयं।

---

34. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिसकी रक्षा करने से इतना बड़ा लाभ होता हो। एक संरक्षित मन बड़े लाभ की ओर ले जाता है।"

34. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं गुट्टं महतो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, गुत्तं महतो अत्थय संवत्तति। Catuttham.

34. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं गुत्तं महोथ अथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, गुत्तं मोटो अत्थय संवत्तति"ति। चतुर्थं।

---

35. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो असुरक्षित होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो। असुरक्षित मन बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

35. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं अरक्खितं महतो अनत्थय सांवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अरक्खितं महतो अनत्थय संवतति'। पंचमं.

35. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं अरखितं महोथ अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अरखितं सीता अनथय संवत्ति"ति। पञ्चमन्।

---

36. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी वस्तु नहीं दिखती जिसकी रक्षा करने से इतना महान लाभ प्राप्त होता हो। संरक्षित मन महान लाभ की ओर ले जाता है।"

36. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं रक्खितं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, रक्खितं महतो अत्थय संवत्तति। छठां.

36. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं रक्खितं महोथ अथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, रक्खितं महतो अत्थय संवत्ति"ति। छट्ठं.

---

37. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अनियंत्रित होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो। अनियंत्रित मन बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

37. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपसामि यम एवं असवुतम् महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तम्। चित्तं, भिक्खवे, असंवुतां महतो अनत्थय संवत्तति। सत्तमं.

37. " नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं अस्नवुतं सीता अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अस्नवुतं महतो अनथय संवत्तति"। सत्तमं।

---

38. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जिसे संयमित करने से इतना महान लाभ प्राप्त होता हो। संयमित मन महान लाभ की ओर ले जाता है।"

38. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवम् संवुतं महतो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, संवुतं महतो अत्थय संवत्तति। अठहमं.

38. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं संवुतं महोथ अथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, संवुतं महतो अथय संवत्तति।" अट्ठमन्।

---

39. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अनियंत्रित, बेकाबू, असुरक्षित और बेकाबू होने पर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाती हो। अनियंत्रित, बेकाबू, असुरक्षित और बेकाबू होने पर मन ही बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

39. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं अदंतं अगुत्तं अरक्खितं असवुतं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं. चित्तं, भिक्खवे, अदंतं अगुत्तं अरक्खितं असन्वुतं महतो अनत्थय सांवत्तति'। नवमं.

39. " नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं अदन्तं अगुत्तं अरखितं अस्नवुतं सीता अनंताय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, अदन्तं अगुत्तं अरखितं अस्नवुतं मोटो अनथय संवत्तति"। नवमं.

---

40. "भिक्षुओं, मुझे मन के सिवा कोई और वस्तु दिखाई नहीं देती, जिसे वश में करने, संरक्षित करने और नियंत्रित करने से इतना महान लाभ प्राप्त होता हो। मन, जब वश में करने, संरक्षित करने, संरक्षित करने और नियंत्रित करने से प्राप्त होता है, तो महान लाभ की ओर ले जाता है।"

40. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं दंतं गुट्टं रक्खितं सवुत्तं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, दन्तं गुट्टं रक्खितं संवुतं महतो अत्थय संवत्तति'। दशमं.

Adantavaggo catuttho.

40. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं दन्तं गुत्तं रक्षितं संवुतं मोटो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, दन्तं गुत्तं रक्खितं संवुतं महोथ अत्थय संवत्तति"। दसमं.

अदन्तवग्गो चतुत्थो।

(1.वी) स्पाइक सेक्शन (पनिहिताच्चा-वाग्गो)

41. "भिक्षुओं, मान लीजिए कि पहाड़ी धान या जौ की एक बाली गलत दिशा में गिरी हो और उसे हाथ या पैर से दबा दिया जाए। यह असंभव है कि वह हाथ या पैर को छेदकर खून निकाले। इसका कारण क्या है? क्योंकि बाली गलत दिशा में गिरी है। ठीक उसी प्रकार, यह असंभव है कि भटके हुए मन वाला भिक्षु अज्ञान को भेदकर, सच्चे ज्ञान को जागृत करके निर्वाण प्राप्त कर ले। इसका कारण क्या है? क्योंकि मन भटका हुआ है।"

41. "सेयथापि, भिक्खवे, सलिसुकं वा यवसुकं वा मिच्चापनिहितं हत्थेन वा पदेन वा अक्कांतं हत्थम् वा पदं वा भेच्छति [भिज्जिसति (स्या. कं. का.), भज्जति (सि.) मोग्गलानाब्यकरणं पासितब्बां] लोहितं वा उप्पदेसति नेतं थनं विज्जति। इसलिए किस्सा हेतु? मिच्छपाणिहितत्ता, भिक्खवे, शुकस्सा। एवमेवं खो, भिक्खवे, सो वात भिक्खु मिच्छपाणिहितेन सित्तेन अविज्जं भेच्छति, विज्जं उप्पदेसति, निब्बाणं सच्चिकारिस्सति नेतं ठानं विज्जति। इसलिए किस्सा हेतु? मिच्छपाणिहितत्ता, भिक्खवे, चित्तस'ति। पथमं.

41. "सेयथापि, भिक्खवे, सलिसुकं वा यवसुकं वा मिच्छपनहितं हत्थेन वा पदेन वा अत्रकांतं हत्थं वा पदं वा भेच्छति [भिज्डिज्स्ति (स्या० कं० क०), सेज्दजति (सी०) मोग्गललानब्यकरणं पास्सित्बं] लोहितं वा उप्पादेस्सति नेतं ठानं विज्जति। तं किस्से? मिच्छपनिहितत्ता, भिक्खवे, सुकस। एवेमेवं खो, भिक्खवे, सो वत भिक्खु मिच्छपनिहितेन चित्तेन अविजजं भेच्छति, विजजं उप्पादेस्स्ति, निब्बानं सच्चिक्रिस्सति नेतं ठानं विज्दजति। तं किस्से? मिच्चापनिहितत्ता, भिक्खवे, चित्तस्स"ति। पथमं.

---

42. "भिक्षुओं, मान लीजिए कि पहाड़ी धान या जौ की एक सुव्यवस्थित बाली को हाथ या पैर से दबाया जाए। संभव है कि वह हाथ या पैर को छेद दे और खून निकल आए। इसका कारण क्या है? क्योंकि बाली सुव्यवस्थित है। इसी प्रकार, एक सुव्यवस्थित मन वाला भिक्षु अज्ञान को भेदकर सच्चे ज्ञान को जागृत कर निर्वाण प्राप्त कर सकता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका मन सुव्यवस्थित है।"

42. "सेयथापि, भिक्खवे, सलिसुकं वा यवसुकं वा सम्मापनिहितं हत्थेन वा पदेन वा अक्कांतं हत्थम् वा पदं वा भेच्छति लोहितं वा उपपादेसतिति ठाणमेतं विज्जति। इसलिए किस्सा हेतु? सम्मापनिहितत्ता, भिक्खवे, शुकस्सा। एवमेवं खो, भिक्खवे, सो वात भिक्खु सम्मापनिहितेन चित्तेन अविज्जं भेच्छति, विज्जं उपपादेसति, निब्बाणं सच्चिकारिस्सतिति थनामेतं विज्जति। इसलिए किस्सा हेतु? सम्मापनिहितत्ता, भिक्खवे, चित्तस'ति। दुतियां.

42. "सेयथापि, भिक्खवे, सलिसुकं वा यवसुकं वा सम्मापनिहितं हत्थेन वा पदेन वा अत्रकान्तं हत्थं वा पादं वा भेच्छति लोहितं वा उप्पादेस्सतिति तन्मेतं विज्जजति। तं किस्से? सम्मापनिहितत्ता, भिक्खवे, सुकस्स। एवेमेवं खो, भिक्खवे, सो वत भिक्खु सम्मापनिहितेन चित्तेन अविजजं भेच्छति, विजजं उप्पादेस्स्ति, निब्बानं सच्चिक्रिस्सतिति ठाणमेतं विज्दजति। तं किस्से? सम्मापनिहितत्ता, भिक्खवे, चित्तस्स"ति। दुतीयं।

---

43. "हे भिक्षुओं, मैंने अपने मन से एक मानसिक रूप से भ्रष्ट व्यक्ति के मन को घेर लिया है और मैं समझता हूँ कि यदि यह व्यक्ति इस समय मर जाए, तो वह नरक में ऐसे पहुँच जाएगा जैसे उसे वहाँ लाया गया हो। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका मन भ्रष्ट है। मानसिक भ्रष्टता के कारण ही शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, कुछ प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

43. "इधाहं [इदाहं (सि.)], भिक्खवे, एकक्कं पुग्गलं पदुथचित्तं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि - 'इमामहि सी अयं समाये पुग्गलो कलां करेया, यथाभट्टं निक्खितो एवं निराये'। इसलिए किस्सा हेतु? चित्तं हिस्सा , भिक्खवे , पदुत्थं । "चेतोपादोसहेतु पना, भिक्खवे, एवामिधेकस्से सत्ता कायस्सा भेदा परं मरण अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ति"। ततियाँ।

43. "इधाहं [इदाहं (सी०)], भिक्खवे, एकचदचं पुग्गलं पदुत्थचित्तं एवं चेतसा चेतो परिच्छत् पजानामि - 'इम्महि चे अयं समये पुग्गलो कालं करेय, यथाभट्टं निखित्टो एवं निरये'। तं किस्से? चित्तं हिस्स, भिक्खवे, पदुत्थं। "चेतोपदोसहेतु पण, भिक्खवे, एवमिधेचच्छे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निर्यं उपपज्जन्ति"। ततीयं।

---

44. "हे भिक्षुओं, मैंने एक शांत मन वाले व्यक्ति के मन को अपने मन से घेर लिया है और मैं समझता हूँ कि यदि [9] यह व्यक्ति इस समय मर जाए तो उसे स्वर्ग में ऐसे पहुँचाया जाएगा जैसे उसे वहाँ लाया गया हो। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका मन शांत है। 42 मन की शांति के कारण ही शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, कुछ प्राणी यहाँ एक अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

44. "इधाहं, भिक्खवे, एकक्कं पुग्गलं पसनचित्तं एवं चेतासा चेतो परिच्च पजानामि - 'इमामहि सी अयं समाये पुग्गलो कालं करेया, यथाभट्टं निकखित्टो एवम् सग्गे'. इसलिए किस्सा हेतु? चित्तं हिस्सा, भिक्खवे, पसन्नं। "सीतोपसदहेतु पना, भिक्खवे, एवामिधेकाचे सत्ता कायस्सा भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति"। Catuttham.

44. "इधाहं, भिक्खवे, एकचं चं पुग्गलं पस न्याचित्तं एवं चेतसा चेतो परिचत्तं पजानामि - 'इम्महि चे अयं समये पुग्गलो कलं करेय, यथाभातं निखित्तो एवं सग्गे।' तं किस्से? चित्तं हिस्स, भिक्खवे, पस संज्ञां। "चेतोपसाधेतु पण, भिक्खवे, एवमिधेकच्छे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति"। चतुर्थं।

---

45. "भिक्षुओं, मान लीजिए कि एक तालाब है जिसका पानी मैला, गंदा और कीचड़युक्त है। तब किनारे पर खड़ा एक अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति उसमें तैरते और आराम करते हुए सीप, कंकड़, मछलियों के झुंड को नहीं देख सकता। इसका कारण क्या है? क्योंकि पानी मैला है। ठीक उसी प्रकार, एक मैले मन वाले भिक्षु के लिए न तो अपना भला जान सकता है, न दूसरों का भला जान सकता है, न ही दोनों का भला जान सकता है, और न ही श्रेष्ठ भिक्षुओं के योग्य ज्ञान और दृष्टि में कोई असाधारण विशिष्टता प्राप्त कर सकता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका मन मैला है।"

45. "सेयथापि, भिक्खवे, उदकरहदो अविलो लुदितो कलालिभूतो तत्थ चक्खुमा पुरिसो तीरे थितो न पस्सेया सिप्पिसंबुकम्पि [सिप्पिकासंबुकम्पि (का.)] सक्खराकाथलमपि मच्छगुम्बमपि कैरंतमपि तिट्ठन्तमपि. इसलिए किस्सा हेतु? अविलत्ता, भिक्खवे, उदकस्सा। एवमेवं खो, भिक्खवे, सो वात भिक्खु अविलेन सित्तेन अट्टत्थं वा न्नास्सति परत्थं वा न्नास्सति उभयत्थं वा न्नस्सति उत्तरि वा मनुस्साधम्मा अलमारिआनादासनविसेसं सच्चिकारिस्सति नेतां ठाणं विज्जति। इसलिए किस्सा हेतु? अविलत्ता, भिक्खवे, चित्तसा'ति। पंचमं.

45. "सेयथापि, भिक्खवे, उदकरहदो अविलो लुळितो कल्लिभूतो तथा चखुमा पुरिसो तीरे थितो न पपेय्य सिप्पिसम्बुकम्पि [सिप्पिकसम्बुकम्पि (क०)] सक्खरकथलम्पि मच्छगुम्बम्पि चरणन्तम्पि तिथन्तन्तम्पि। तं किस्से? एविलत्ता, भिक्खवे, उडकस। एवेमेवं खो, भिक्खवे, सो वत भिक्खु एविलेन चित्तेन अट्टत्थं वा न्स्सिस्त पार्थं वा न्स्सिस्त उभयत्थं वा न्स्सिस्त उत्तरिं वा मनुस्सम्मा अलमरियानदस्सन्विसेसं सच्चिक्रिस्सति नेतं ठानं विज्दजति। तं किस्से? एविलत्ता, भिक्खवे, चित्तस"ति। पञ्चमन्।

---

46. "भिक्षुओं, मान लीजिए कि एक साफ, शांत और निर्मल जल का तालाब है। उस पर अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति किनारे पर खड़ा होकर सीपियाँ, कंकड़-पत्थर और मछलियों के झुंड को तैरते और विश्राम करते देख सकता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि जल निर्मल है। ठीक उसी प्रकार, निर्मल मन वाले भिक्षु के लिए अपने भले, दूसरों के भले और दोनों के भले को जानना और श्रेष्ठ लोगों के योग्य ज्ञान और दृष्टि में असाधारण विशिष्टता प्राप्त करना संभव है। 44 इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका मन निर्मल है।"

46. "सेयथापि, भिक्खवे, उदकरहदो एको विप्पसन्नो अनाविलो तत्थ चक्खुमा पुरिसो तीरे थितो पस्सेया सिप्पिसंबुकम्पि सक्खराकथलामपि मच्छगुंबमपि कारंतमपि तिथंतमपि। इसलिए किस्सा हेतु? अनाविलत्ता, भिक्खवे, उदकस्सा। एवमेवं खो, भिक्खवे, सो वात भिक्खु अनाविलेन सित्तेन अट्टत्थं वा न्नास्सति परत्थं वा न्नास्सति उभयत्थं वा न्नस्सति उत्तरि वा मनुस्साधम्मा अलमारिआनादासनविसेसं सच्चिकारिस्सति ठाणमेतं विज्जति। इसलिए किस्सा हेतु? अनाविलत्ता, भिक्खवे, चित्तस'ति। छठां.

46. "सेयथापि, भिक्खवे, उदकरहदो अच्छो विप्पस सान्यागो अनाविलो तथा चखुमा पुरिसो तीरे थितो पपेय्य सिप्पिसम्बुकम्पि सक्खरकथलमपि मच्छगुंबमपि चरन्तमपि तिट्ठन्तमपि। तं किस्से? अनाविलत्ता, भिक्खवे, उडकस। एवेमेवं खो, भिक्खवे, सो वत भिक्खु एनाविलेन चित्तेन अट्टत्थं वा न्स्सति पार्थं वा न्स्सिस्त उभयत्थं वा न्स्सिस्त उत्तरिं वा मनुस्सम्मा अलमरियानदस्सोनविसेसं सच्चिक्रिस्सतिति थनमेतं विज्दजति। तं किस्से? अनाविलत्ता, भिक्खवे, चित्तस्स"ति। छट्ठं.

---

47. "भिक्षुओं, जिस प्रकार चंदन को लचीलेपन और सुगमता के मामले में सर्वश्रेष्ठ वृक्ष माना जाता है, उसी प्रकार मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी वस्तु नहीं दिखती जो विकसित और सँवारी जाने पर इतनी लचीली और सुगम हो। एक विकसित और सँवारी हुई मन लचीला और सुगम होता है।"

47. "सेयथापि, भिक्खवे, यानि कनिचि रुक्खजातं फंदनो तेसं अग्गमक्खयति यदिदं मुदुताया सेवा कम्मणतया च। एवमेवं खो अहं, भिक्खवे, नान्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यं एवं भवितं बहुलिकतं मुदु च होति कम्मनञ्च यथायिदं चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भवितं बहुलिकतं मुदु च होति कम्मनञ्च होति'ति। सत्तमं.

47. "सेयथापि, भिक्खवे, अर्थात कनिचि रुक्खजातानं फंदनो तेसं अग्गमक्खयति इददं मुदुताय चेव कम्मञ्चताय च। एवमेवं खो अहं, भिक्खवे, नानदं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं भावितं बहुलीकातं मुदु च होति कम्मंनदं च यथैदं चित्तं। चित्तं, भिक्खवे, भवैतं अनेकातं मुदु च होति कम्मञञ्च होताति। सत्तमं।

---

48. "भिक्षुओं, मुझे मन के अलावा कोई और ऐसी वस्तु नहीं दिखती जो इतनी जल्दी बदलती हो। 45 मन कितनी जल्दी बदलता है, इसका उपमा देना आसान नहीं है।"

48. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यं एवं लहुपरिवतं यथायिदं चित्तं।" यावांचिदं, भिक्खवे, उपमापि न सुकार याव लहुपरिवतं चित्त'न्ति। अठहमं.

48. " नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं लहुपरिवत्तं यथायिदं चित्तं। यावञ्चिदं, भिक्खवे, उपमापि न सुकरा याव लहुपरिवत्तं चित्त'न्ति। अट्ठमन्।

---

49. "हे भिक्षुओं, यह मन प्रकाशमान है, परन्तु यह आकस्मिक दोषों से दूषित है।"

49. "पभस्सारामिदं, भिक्खवे, चित्तं।" तन्चा खो आगन्तुकेहि उपक्किलसेहि उपक्किलिट्ठ'न्ति। नवमं.

49. "पभस्सरमिदं, भिक्खवे, चित्तं। तंदच खो आगन्तुकेहि उपोक्त्रिकिलेसेहिं आक्रांति उपकिलिट्ठ"न्ति। नवमं.

---

50. "हे भिक्षुओं, यह मन प्रकाशमान है और यह आकस्मिक दोषों से मुक्त है।"

50. "पभस्सारामिदं, भिक्खवे, चित्तं। तन्चा खो आगन्तुकेहि उपक्किलसेहि विप्पमुत्त'न्ति। दशमं.

पणिहिताच्चवग्गो पञ्चमो ।

पचास. "पभस्सरमिदं, भिक्खवे, चित्तं। तञ्च खो आगन्तुकेहि उपात्रकिलेसेहि विप्पमुत्त"न्ति। दसमं.

पनिहितअच्छवग्गो पंचमो।

(1.VI) चित्त (चेतना) प्रकाशमान है।

51. "हे भिक्षुओं, यह मन प्रकाशमान है, परन्तु यह आकस्मिक दोषों से दूषित है। अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति इसे इसके वास्तविक स्वरूप में नहीं समझता; अतः मैं कहता हूँ कि अशिक्षित सांसारिक व्यक्ति के मन का कोई विकास नहीं होता।"

51. "पभस्सारामिदं, भिक्खवे, चित्तं। तन्चा खो आगन्तुकेहि उपक्किलसेहि उपक्किलीथं। तं अस्सुत्वा पुथुज्जनो यथाभूतं नप्पजानाति। तस्मा 'असुत्वतो पुथुज्जनस्सा चित्तभवन नत्थि'ति वदामि'ति। पथमं.

51. " पभस्सरमिदं , भिक्खवे , चित्तं। तंदच खो आगन्तुकेहि उपक्राकिलेसेहि हड़ताली उपकिलिट्ठं। तं अस्सुत्वा पुथुज्जनो यथाभूतं नप्पजानाति। तस्मा 'अस्सुतवतो पुथुज्जंसस्स चित्तभावन नत्थी'ति वदामि"ति। पथमं.

---

52. "हे भिक्षुओं, यह मन प्रकाशमान है और आकस्मिक दोषों से मुक्त है। ज्ञानी शिष्य इसे यथार्थ रूप में समझता है; अतः मैं कहता हूँ कि ज्ञानी शिष्य के लिए मन का विकास संभव है।"

52. "पभस्सारामिदं, भिक्खवे, चित्तं। तन्च खो आगन्तुकेहि उपक्किलसेहि विप्पमुत्तम्। तं सुतव अरियासवको यथाभूतं पजानाति। तस्मा 'सुतावतो अरियासावकस्सा चित्तभवना अट्ठी'ति वदामि'ति। दुतियां.

552. " पभस्सरमिदं , भिक्खवे , चित्तं। तञ्च खो आगन्तुकेहि उपक्राकिलेसेहि विप्पमुत्तं। तं सुतवा अरियसवको यथाभूतं पजानाति। तस्मा 'सुतवतो अरियसावकस चित्तभावन अट्ठी'ति वदामि"ति। दुतीयं।

---

53. "भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु क्षण भर के लिए भी प्रेम और करुणा (मेत्ता) का भाव धारण करे, तो वह ध्यान (सम्मोहन) से रहित भिक्षु कहलाता है, जो गुरु की शिक्षाओं का पालन करता है, उनकी सलाह मानता है और देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ नहीं करता। 49 तो फिर, जो इसे विकसित करते हैं, वे कितने अधिक प्रशंसनीय होंगे!"

53. "अच्चरासंघातमत्तमपि सी, भिक्खवे, भिक्खु मेट्टाचित्तम् [मेत्तं चित्तं (सि.), मेत्तचित्तं (स्या. कं. पि. का.)] असेवती; अयं वुच्चति, भिक्खवे - 'भिक्खु अरितत्ज्जहनो विहारति सत्थुसासनकारो ओवदपतिकरो, अमोघं रथपिंडं भुञ्जति'। को पाना वदो ये नं बहुलिकारोंती! ततियाँ।

553. "अच्छरासङ्घटमत्तमपि चे, भिक्खवे, भिक्खु मेत्ताचित्तं [मेत्तं चित्तं (सी०), मेत्तचित्तं (स्या० कं० पी० क०)] आसेवती; अयं वुचदचति, भिक्खवे - 'भिक्खु अरितत्झानो विहारति सत्थुसासंकरो ओवादपतिकरो, अमोघं रथपिण्डं भुञ्जति।' को पण वादो ये नं बहुविक्रोन्ति"ति! ततीयं।

---

54. "भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु पल भर के लिए भी प्रेम और करुणा (मेत्ता) का भाव विकसित कर ले, तो वह ध्यान (सम्मोहन) से रहित भिक्षु कहलाता है, जो गुरु की शिक्षाओं का पालन करता है, उनकी सलाह मानता है और देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ नहीं खाता। तो फिर, जो इसे विकसित करते हैं, वे कितने महान होंगे!"

54."अच्चरसंघघटमत्तमपि सी, भिक्खवे, भिक्खु मेत्तचित्तं भवेति; अयं वुच्चति, भिक्खवे - 'भिक्खु अरितत्ज्जहनो विहारति सत्थुसासनकारो ओवदपतिकरो, अमोघं रथपिंडं भुञ्जति'। को पाना वदो ये नं बहुलिकारोंती! Catuttham.

554. "अच्छरासङ्घातमत्तमपि चे, भिक्खवे, भिक्खु मेत्ताचित्तं भवेति; अयं वुचदचति, भिक्खवे - 'भिक्खु अरितत्झानो विहारति सत्थुसासंकरो ओवादपतिकरो, अमोघं रथपिण्डं भुञ्जति।' को पण वादो ये नं बहुविक्रोन्ति"ति! चतुर्थं।

---

55. "भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु क्षण भर के लिए भी प्रेम और करुणा (मेत्ता) की भावना में लीन हो जाए, तो वह ऐसा भिक्षु कहलाता है जो ध्यान (सम्मोहन) से रहित नहीं है, जो गुरु की शिक्षाओं का पालन करता है, जो उनकी सलाह मानता है, और जो देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ नहीं खाता। तो फिर, जो इसे विकसित करते हैं, वे कितने अधिक महान होंगे!"

55. "आच्चरासंगहतमट्टमपि सी, भिक्खवे, भिक्खु मेत्तचित्तं मनसि करोति; अयं वुकाति, भिक्खवे - 'भिक्खु अरितत्ज्जहनो विहारति सत्थुसासनकरो ओवदपतिकरो अमोघं रथपिंडं भुञ्जति'। को पाना वदो ये नं बहुलिकारोंती! पंचमं.

55. "अच्छरासङ्घातमत्तमपि चे, भिक्खवे, भिक्खु मेत्ताचित्तं मनसि करोति; अयं वुच्चचति, भिक्खवे - 'भिक्खु अरितत्झानो विहारति सत्थुसासंकरो ओवादपतिकरो अमोघं रत्थपिण्डं भुञ्जति।' को पण वादो ये नं बहुविक्रोन्ति"ति! पञ्चमन्।

---

56. भिक्षुओं, जो भी अकुशल गुण हानिकारक हैं, जो अकुशल गुणों में भाग लेते हैं और उनसे संबंधित हैं, उन सभी का अग्रदूत मन है। 50. मन पहले उत्पन्न होता है, उसके बाद अकुशल गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं।

56. "ये केचि, भिक्खवे, धम्म अकुशला अकुशलभागिया अकुसलपक्खिका, सब्बे ते मनोपुब्बंगमा। मनो तेसं धम्मनं पथमं उप्पज्जति, अनवदेव अकुसला धम्म'ति। छठां.

56. "ये केचि, भिखवे, धम्मा अकुसला अकुसला भागिया अकुसलपखिका, सब्बे ते मनोपुब्बङगमा। मनो तेसं धम्मनं पथमं उप्पजदजति, अन्वदेव अकुसला धम्म"ति। छट्ठं.

---

57. "भिक्षुओं, चाहे वे किसी भी प्रकार के हानिकारक (अकुशल) गुणों का सेवन करें, लाभकारी (कुशल) गुणों का उपयोग करें और लाभकारी (कुशल) गुणों से संबंधित हों, इन सभी का अग्रदूत मन है। मन पहले उत्पन्न होता है, उसके बाद लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं।"

57. "ये केचि, भिक्खवे, धम्म कुसल कुसलभागिया कुसलपक्खिका, सब्बे ते मनोपुब्बंगमा। मनो तेसं धम्मनां पथमं उप्पज्जति, अनवदेव कुसल धम्म'ति। सत्तमं.

57. "ये केचि, भिखवे, धम्मा कुसला कुसलभागिया कुसलपखिका, सब्बे ते मनोपुब्बङगामा। मनो तेसं धम्मनं पथमं उप्पजदजति, अन्वदेव कुसला धम्म"ति। सत्तमं।

---

58. "भिक्षुओं, मुझे आलस्य के समान कोई ऐसी चीज दिखाई नहीं देती जो अजन्मे अकुशल गुणों को उत्पन्न करे और उत्पन्न लाभकारी गुणों को कम करे। 51 आलस्य में अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी गुण कम हो जाते हैं।"

58. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा अकुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उपपन्ना वा कुशाला धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, पमादो। पमत्तस्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा अकुशला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च कुसल धम्म परिहयन्ति"। अठहमं.

58. "नहं, भिक्खवे, अञ्जनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सना वा अकुसला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पा नजा वा कुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, पमादो। पमत्तस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव अकुसला धम्म उप्पजजंति उप्प नन्या च कुसला धम्म परिहन्ति'ति। अट्ठमन्।

---

59. "भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई चीज दिखाई नहीं देती जो जागृति की तरह अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को उत्पन्न करे और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुणों को कम करे। जो जागृत होता है, उसके लिए अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

59. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा अकुशला धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, अप्पमादो।" अप्पमत्तस्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च अकुशला धम्म परिहयन्ति"। नवमं.

55. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सीन वा कुसला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पा नागान वा अकुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, अप्पमादो। अप्पमत्तस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव कुसला धम्म उप्पजजन्ति उप्प नयना च अकुसला धम्म परिहन्ति"ति। नवमं.

---

60. "भिक्षुओं, मुझे आलस्य के समान कोई ऐसी चीज दिखाई नहीं देती जो अकारण हानिकारक (अकुशल) गुणों को उत्पन्न करे और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुणों को कम करे। आलसी व्यक्ति में अकारण हानिकारक (अकुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

60. "नाहं, भिक्खवे, आननं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा अकुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उपपन्ना वा कुसल धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, कोसज्जाम्। कुसितास्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा अकुशला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च कुसल धम्म परिहयन्ति"। दशमं.

अच्चरासंगघातवग्गो चट्टहो।

60. "नहं, भिक्खवे, अञ्जनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सना वा अकुसला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पा नपा न वा कुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, कोसजजं। कुसीतस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव अकुसला धम्म उप्पजंति उप्प नयना च कुसला धम्म परिहन्ति"ति। दसमं.

अच्चरासङ्घातवग्गो छट्ठो।

(1.VII) ऊर्जा की उत्तेजना आदि खंड (विरियारंभदी-वाग्गो)

61. "भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जागृत होने पर अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुण कम हों। जिस व्यक्ति में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जागृत हो जाती है, उसमें अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

61. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा अकुशला धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, वीर्यारम्भो [वीरियारम्भो (सि. स्या. कं. पि.)]। अरद्धविरियस्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा कुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च अकुशला धम्म परिहयन्ति"। पथमं.

61. "नहं , भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सत्या वा सला धम्म उप्पजजंति उप्प संज्ञा वा अकुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, वीरियारंभो [विरियारंभो (सी० स्या० कं० पी०)]। अर्धविरियस, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव कुसला धम्म उप्पजंति उप्प नयना च अकुसला धम्म परिहन्ति"ति। पथमं.

---

62. "भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई भी चीज दिखाई नहीं देती जो अजन्मे अकुशल गुणों को उत्पन्न करे और उत्पन्न लाभकारी गुणों को कम करे, जैसा कि प्रबल इच्छा करती है। 52 प्रबल इच्छा वाले व्यक्ति में अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी गुण कम हो जाते हैं।"

62. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा अकुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा कुसल धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, महिच्छता।" महिच्छस्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा अकुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च कुसल धम्म परिहयन्ति। दुतियां.

62. "नहं, भिक्खवे, अञ्जनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सना वा अकुसला धम्म उप्पजजंति उप्पा नजा वा कुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, महीच्छता। महीचस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव अकुसला धम्म उप्पजंति उप्प नयना च कुसला धम्मा परिहयन्ति"ति। दुतीयं।

---

63. "भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हों, जैसा कि इच्छाओं की कमी से होता है। 53 जिन लोगों की इच्छाएं कम होती हैं, उनके लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

63. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा अकुशला धम्म परिहयन्ति यथायिदं, भिक्खवे, अप्पिच्चता। अप्पिच्चस्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा कुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च अकुशला धम्म परिहयन्ति"। ततियाँ।

63. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सत्या वा कुसला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पा नागा वा अकुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, अप्पिच्छता। अप्पिच्छस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव कुसला धम्म उप्पजंति उप्प नयना च अकुसला धम्म परिहन्ति"ति। ततीयं।

---

64. "भिक्षुओं, मुझे असंतोष के कारण अजन्मे अकुशल गुणों का उत्पन्न होना और लाभकारी गुणों का क्षय होना भी दिखाई नहीं देता। 54 जो व्यक्ति संतुष्ट नहीं है, उसमें अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न होते हैं और लाभकारी गुण क्षय होते हैं।"

64. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा अकुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा कुसल धम्म परिहयन्ति यथायिदं, भिक्खवे, असन्तुष्टिता। असंतुथस्स, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा अकुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च कुसल धम्म परिहयन्ति। Catuttham.

64. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नासा वा अकुसला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पा नागा वा कुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, असन्तुत्थिता। असंतुट्ठस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव अकुसला धम्म उप्पजंति उप्प नागा च कुसला धम्मा परिहन्ति"ति। चतुर्थं।

---

65. "भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हों, जैसा कि संतोष से होता है। 55 जो संतुष्ट है, उसके लिए अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

65. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उपपन्ना वा अकुशला धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, सन्तुष्ठिता. सन्तुथस्स, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा कुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च अकुशला धम्म परिहयन्ति"। पंचमं.

65. "नाहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नागा वा कुसला धम्म उप्पजंति उप्पा नागा वा अकुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, सन्तुत्थिता। सन्तुट्ठस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव कुसला धम्म उप्पजंति उप्प नयना च अकुसला धम्म परिहन्ति"ति। पञ्चमन्।

---

66. "भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई चीज नजर नहीं आती जो अस्वाभाविक (अकुशल) गुणों को उत्पन्न करे और उत्पन्न हुए लाभकारी (कुशल) गुणों को कम करे, सिवाय लापरवाही से ध्यान देने के। क्योंकि जो लापरवाही से ध्यान देता है, उसके अस्वाभाविक (अकुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हुए लाभकारी (कुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

66. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा अकुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा कुशाला धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, अयोनिसोमनसिकारो. अयोनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्पन्ना सेवा अकुशल धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च कुसल धम्म परिहयन्ति"। छठां.

66. "नहं , भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नयना वा अकुसला धम्म उप्पजदजंन्ति उप्प नसना वा कुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, अयोनिसोमनसिकारो। अयोनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्प साइना चेव अकुसला धम्म उप्पजंति उप्प संज्ञा च कुसला धम्म परिहयन्ति"ति। छट्ठं.

---

67. "भिक्षुओं, मुझे ध्यानपूर्वक ध्यान देने के समान कोई ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती जो अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को उत्पन्न करती हो और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुणों को कम करती हो। जो ध्यानपूर्वक ध्यान देता है, उसके अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

67. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उपपन्ना वा अकुशला धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, योनिसोमनासिकारो. योनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्पन्ना सेवा कुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च अकुशला धम्म परिहयन्ति"। सत्तमं.

67. " नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नागा वा कुसला धम्म उप्पजदजंति उप नागा वा अकुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, योनिसोमनसिकारो। योनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्प नासा चेव कुसला धम्म उप्पजजन्ति उप्प नागा च अकुसला धम्मा परिहन्ति"ति। सत्तमं।

---

68. "भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण कम हों, जैसा कि पूर्ण ज्ञान की कमी से होता है। जो पूर्ण रूप से ज्ञानी नहीं है, उसके लिए अजन्मे हानिकारक (अकुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

68. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा अकुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा कुसल धम्म परिहयन्ति यथायिदं, भिक्खवे, असंपजन्नं। असंपजनास्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा अकुशला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च कुसल धम्म परिहयन्ति"। अठहमं.

68. "नहं, भिक्खवे, अञ्जनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सना वा अकुसला धम्म उप्पजजंति उप्पा नजा वा कुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, असमपजञ्च। असम्पजंसस, भिक्खवे, अनुप्प संज्ञा चेव अकुसला धम्म उप्पजजन्ति उप्प संज्ञा च कुसला धम्म परिहन्ति"ति। अट्ठमन्।

---

69. "भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हों, जैसा कि पूर्ण ज्ञान (संपजन्न) से होता है। 56 पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने वाले के लिए, अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

69. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा अकुशला धम्म परिहयन्ति यथायिदं, भिक्खवे, सम्पाजान्नं। संपजनास्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा कुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च अकुशला धम्म परिहयन्ति"। नवमं.

69. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सत्या वा अप्पजं कुसला धम्म उप्पजजंति उप्पा नागां वा अकुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, संपजंन्ति उप्पा नं। संपजंसस, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव कुसला धम्म उप्पजंति उप्प नयना च अकुसला धम्म परिहन्ति"ति। नवमं.

---

70. "भिक्षुओं, मुझे बुरी मित्रता के समान कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अव्यक्त हानिकारक (अकुशल) गुणों को उत्पन्न करे और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुणों को कम करे। बुरे मित्रों के साथ रहने वाले व्यक्ति में अव्यक्त हानिकारक (अकुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

70. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा अकुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा कुसल धम्म परिहयन्ति यथायिदं, भिक्खवे, पापमित्तता. पापमित्तस्स, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा अकुशला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च कुसल धम्म परिहयन्ति"। दशमं.

वीर्यरम्भादिवग्गो सत्तमो।

70. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सत्या वा अकुसला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पा नागा वा कुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, पापमित्तता। पापमित्तस्स, भिक्खवे, अनुप्प संज्ञा चेव अकुसला धम्म उप्पजंति उप्प संज्ञा च कुसला धम्म परिहन्ति"ति। दसमं.

वीरीयारंभादिवग्गो सत्तमो।

(1.VIII) अच्छी दोस्ती आदि खंड (कल्याणमित्तदि-वाग्गो)

(कल्याण-शुभकामनाएं; मित्र-दोस्त)

71. "भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई भी गुण दिखाई नहीं देता जो अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को उत्पन्न करे और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुणों को कम करे, जैसा कि अच्छी मित्रता करती है। अच्छे मित्रों के साथ रहने वाले व्यक्ति के अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हो जाते हैं।"

71."नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा अकुशला धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, कल्याणमित्तता. कल्याणमित्तस्स, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा कुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च अकुशला धम्म परिहयन्ति"। पथमं.

71. " नहं , भिक्खवे, अञ्चंदं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सत्या वा कुसला धम्म उप्पजजंन्ति उप्प संज्ञा वा अकुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव कुसला धम्मा उप्पजंति उप्प नयना च अकुसला धम्मा परिहन्ति"ति। पथमं.

---

72. "भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न हों और लाभकारी गुण नष्ट हों, जैसा कि अकुशल गुणों का अनुसरण और उनका अनासक्ति करना होता है। अकुशल गुणों का अनुसरण और लाभकारी गुणों का अनासक्ति करना अजन्मे अकुशल गुणों को उत्पन्न करता है और लाभकारी द्वैत को नष्ट करता है।"

72. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा अकुसाला धम्म उप्पजंति उपपन्ना वा कुशाला धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगो अकुशलनं धम्मनां, अननुयोगो कुसलानां धम्मनां। अनुयोग, भिक्खवे, अकुशलानं धम्मनां, अनुयोग कुसलानां धम्मनां अनुप्पन्ना सेवा अकुशला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च कुसल धम्म परिहयन्ति। दुतियां.

72. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सीन वा अकुसला धम्म उप्पजजंति उप्पा नागा वा कुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगो अकुसलानं धम्मनं, अन्नुयोगो कुसलानं धम्मनं। अनुयोगा, भिक्खवे, अकुसलानं धम्मनं, अन्नूयोगा कुसलानं धम्मनं अनुप्प साइना चेव अकुसला धम्म उप्पजंति उप्प संज्ञा च कुसला धम्म परिहयन्ति"ति। दुतीयं।

---

73. "भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण कम हों, जैसा कि लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करने और हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण न करने से होता है। लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करने और हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण न करने से अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न हानिकारक (अकुशल) गुण (धम्म) कम हो जाते हैं।"

73."नाहं, भिक्खवे, आननं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा अकुशला धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगो कुसलानां धम्मनां, अननुयोगो अकुशलाणं धम्मनां। अनुयोगा, भिक्खवे, कुसलानां धम्मनां, अनुयोगा अकुशलानां धम्मनां अनुप्पन्ना सेवा कुसाला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च अकुशला धम्म परिहयन्ति। ततियाँ।

73. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नासा वा कुसला धम्म उप्पजजंति उप्पा नागा वा अकुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगो कुसलानं धम्मनं, अन्नुयोगो अकुसलानं धम्मनं। अनुयोगा, भिक्खवे, कुसलानं धम्मनं, अन्नुयोगा अकुसलानं धम्मनं अनुप्प साइना चेव कुसला धम्म उप्पजंति उप्प संज्ञा च अकुसलानं धम्म परिहन्ति"ति। ततीयं।

---

74. "भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई चीज नजर नहीं आती जो अनादि ज्ञान के तत्वों को न तो उत्पन्न होने देती है और न ही उत्पन्न ज्ञान के तत्वों को विकास द्वारा पूर्णता तक पहुंचने देती है, सिवाय लापरवाही से ध्यान देने के। क्योंकि जो लापरवाही से ध्यान देता है, उसके अनादि ज्ञान के तत्व न तो उत्पन्न होते हैं और न ही उत्पन्न ज्ञान के तत्व विकास द्वारा पूर्णता तक पहुंचते हैं।"

74."नाहं, भिक्खवे, आननं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा बोज्झांगा नुप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा बोज्झांगा न भवनापपुरीं गच्छन्ति यथयिदम्, भिक्खवे, अयोनिसोमनसिकारो। अयोनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्पन्ना सेवा बोज्झांगा नुप्पजंति उप्पन्ना च बोज्झांगा न भवनापपुरीं गच्छन्ती"ति। Catuttham.

74. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सन्या वा बोज्झङ्गा नुप्पजजंन्ति उप्प सञ्चा वा बोज्झन्गा न भावनापारिपूरिं गच्छन यतिथयिदं, भिक्खवे, अयोनिसोमनसिकारो। अयोनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्प नागा चेव बोज्झङ्गा नुप्पजदजंन्ति उप्प नञ्या च बोज्झन्गा न भावनापरिपूरिं गच्छंन्ति"ति। चतुर्थं।

---

75. "भिक्षुओं, मुझे ध्यानपूर्वक ध्यान देने के अलावा कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जो ज्ञान के अजन्मे तत्वों को उत्पन्न करती हो और ज्ञान के उत्पन्न तत्वों को विकास द्वारा पूर्णता तक पहुंचाती हो। [15] जो ध्यानपूर्वक ध्यान देता है, उसके ज्ञान के अजन्मे तत्व उत्पन्न होते हैं और ज्ञान के उत्पन्न तत्व विकास द्वारा पूर्णता तक पहुंचते हैं।"

75."नाहं, भिक्खवे, आननं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा बोज्झांगा उप्पजंति उप्पन्ना वा बोज्झांगा भवनापपुरीं गच्छन्ति यथायिदम्, भिक्खवे, योनिसोमनासिकारो। योनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्पन्ना सेवा बोज्झांगा उप्पजंति उप्पन्ना च बोज्झांगा भवनापपुरीं गच्छन्ती"ति। पंचमं.

75. "नहं, भिक्खवे, अञ्जनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सन्या वा बोज्झङ्गा उप्पजजंन्ति उप्प सञ्चा वा बोज्झङ्गा भावनापरिपूरिं गच्छन्ति यथायिदं, भिक्खवे, योनिसोमनासिकारो। योनिसो , भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्प न्याणा चेव बोज्झङ्गा उप्पजजंति उप्प् न्याना च बोज्झङ्गा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति"ति। पञ्चमन्।

---

76. "हे भिक्षुओं, सगे संबंधियों का देहांत नगण्य है। सबसे बुरी हानि तो पन्ना (दिव्य ज्ञान) की होती है।"

76. "अप्पामत्तिका एसा, भिक्खवे, परिहनि यदिदं नातिपरिहनि।" एतं पतिकिट्ठं, भिक्खवे, परिहानिनं यदिदं पणनापरिहणि'ति। छठां.

76. "अप्पमत्तिका एसा, भिक्खवे, परिहानि यदिदं ज्ञातिपरिहानि। एतं पतिकिट्ठं, भिक्खवे, परिहानिनं यदिदं पञ्चपरिहनि"ति। छट्ठं.

---

77. "हे भिक्षुओं, रिश्तेदारों की संख्या में वृद्धि नगण्य है। सबसे अच्छी वृद्धि तो पन्ना (दिव्य ज्ञान) में ही होनी चाहिए। इसलिए, हे भिक्षुओं, आपको इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: 'हम पन्ना (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि करेंगे।' आपको इसी प्रकार अभ्यास करना चाहिए।"

77. "अप्पामत्तिका एसा, भिक्खवे, वुद्धि यदिदं नातिवुद्धि। एतदग्गं, भिक्खवे, वुद्धिनां यदिदं पन्नवुद्धि। तस्मातिहा, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं - 'पन्नवुद्धिया वद्धिस्समाति।' इवन्हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बा'न्ति। सत्तमं.

77. "अप्पमत्तिका एसा, भिक्खवे, वुद्धि यदिदं नातिवुद्धि।" एतदग्गं, भिक्खवे, वुद्धिनं यदिदं पञ्चवुद्धि। तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं - 'पञ्चवुधिया वद्धिस्समा'ति। इव्हि वो, भिक्खवे, सिखितब्ब"न्ति। सत्तमं।

---

78. "हे भिक्षुओं, धन की हानि नगण्य है। सबसे बुरी चीज जो खोनी चाहिए वह है पन्ना (दिव्य ज्ञान)।"

78. "अप्पामत्तिका एसा, भिक्खवे, परिहनि यदिदं भोगपरिहनि।" एतं पतिकिट्ठं, भिक्खवे, परिहानिनं यदिदं पणनापरिहणि'ति। अठहमं.

78. "अप्पमत्तिका एसा, भिक्खवे, परिहानि यदिदं भोगपरिहानि। एतं पतिकिट्ठं, भिक्खवे, परिहानिनं यदिदं पञ्चपरिहनि"ति। अट्ठमन्।

---

79. "हे भिक्षुओं, धन की वृद्धि महत्वहीन है। सबसे उत्तम चीज जिसमें वृद्धि करनी चाहिए वह है पन्ना (दिव्य ज्ञान)। इसलिए, हे भिक्षुओं, आपको इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: 'हम पन्ना (दिव्य ज्ञान) में वृद्धि करेंगे।' आपको इसी प्रकार अभ्यास करना चाहिए।"

79. "अप्पामत्तिका एसा, भिक्खवे, वुद्धि यदिदं भोगवुद्धि। एतदग्गं, भिक्खवे, वुद्धिनां यदिदं पन्नवुद्धि। तस्मातिहा, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं - 'पन्नवुद्धिया वद्धिस्समाति।' इवन्हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बा'न्ति। नवमं.

79. "अप्पमत्तिका एसा, भिक्खवे, वुद्धि यदिदं भोगवुद्धि। एतदग्गं, भिक्खवे, वुद्धिनं यदिदं पञ्चवुद्धि। तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं - 'पञ्चवुधिया वद्धिस्समा'ति। एवञ्हि वो, भिक्खवे, सिखितब्ब''न्ति। नवमं.

---

80. "भिक्षुओं, यश का खोना तुच्छ है। सबसे बुरी चीज जो खोनी पड़ती है वह है पन्ना (दिव्य ज्ञान)।"

80. "अप्पामत्तिका एसा, भिक्खवे, परिहनि यदिदं यसोपरिहनि। एतं पतिकिट्ठं, भिक्खवे, परिहानिनं यदिदं पणनापरिहणि'ति। दशमं.

80. "अप्पमत्तिका एसा, भिक्खवे, परिहानि यदिदं यसोपरिहानि। एतं पतिकिट्ठं, भिक्खवे, परिहानिनं यदिदं पञ्चपरिहनि''ति। दसमं.

---

81. "हे भिक्षुओं, यश बढ़ाना तुच्छ है। ज्ञान (पन्न) बढ़ाना सर्वोत्तम है। इसलिए, हे भिक्षुओं, आपको इस प्रकार अभ्यास करना चाहिए: 'हम ज्ञान (पन्न) बढ़ाएंगे।' इसी प्रकार आपको अभ्यास करना चाहिए।"

81. "अप्पामत्तिका एसा, भिक्खवे, वुद्धि यदिदं यशोवुद्धि। एतदग्गं, भिक्खवे, वुद्धिनां यदिदं पन्नवुद्धि। तस्मातिहा, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं - 'पन्नवुद्धिया वद्धिस्समाति।' इवन्हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बा'न्ति। पथमं.

कल्याणमित्तदिवाग्गो अट्ठमो।

81. "अप्पमत्तिका एसा, भिक्खवे, वुद्धि इदिदं यसोरुद्धि। एतदग्गं, भिक्खवे, वुद्धिनं यदिदं पञ्चवुद्धि। तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं - 'पञ्चवुधिया वद्धिस्समा'ति। एवञ्हि वो, भिक्खवे, सिखितब्ब''न्ति। पथमं.

कल्याणमित्तादिवग्गो अट्ठमो।

(1.IX) आलस्य आदि धारा (पामदादी-वाग्गो)

(पमादा की असावधानी/आलस्य)

82. "भिक्षुओं, मुझे आलस्य से अधिक हानि पहुँचाने वाली कोई भी वस्तु दिखाई नहीं देती। आलस्य अत्यंत हानि पहुँचाता है।"

82."नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, पमादो। पमादो, भिक्खवे, महतो अनत्थाय संवत्तति'। दुतियां.

28. "नाहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महोथ अनत्थाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, पमादो। पमादो, भिक्खवे, महतो अनथय संवत्तति''ति। दुतीयं।

---

83. "भिक्षुओं, मुझे जागरूकता के अलावा ऐसी कोई चीज नजर नहीं आती जो इतनी बड़ी भलाई की ओर ले जाए। जागरूकता बड़ी भलाई की ओर ले जाती है।"

83. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, अप्पमादो।" अप्पमादो, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवत्तति'। ततियाँ।

83. "नाहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अप्पमादो। अप्पमादो, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवत्तति"ति। ततीयं।

84-85. "भिक्षुओं (मठवासियों), मुझे आलस्य के समान कोई ऐसी चीज दिखाई नहीं देती जो इतनी बड़ी हानि का कारण बनती हो... (85) ... जो ऊर्जा के जागरण (प्रयास/वीर्य) के समान कोई बड़ी भलाई का कारण बनती हो।"

84. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, कोसज्जाम्। कोसज्जं, भिक्खवे, महतो अनत्थय संवत्तति। Catuttham.

85. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासमि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, वीर्यारंभो। वीर्यारंभो, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवत्तति। पंचमं.

84. "नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महोथ अनत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, कोसज्जजं। कोसज्जं, भिक्खवे, महतो अनंताय संवत्तति"ति। चतुर्थं।

85. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, वीरियारंभो। वीरीयारंभो, भिक्खवे, महतो अत्थय संवत्तति"ति। पञ्चमन्।

---

86. ". तीव्र इच्छा . . . (87) . . . इच्छाओं की कमी . . ."

86. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, महिच्छता। महिच्छता, भिक्खवे, महतो अनत्थय संवत्तति'। छठां.

87. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अट्ठाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, अप्पिच्चता।" अप्पिच्चता, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवत्तति'। सत्तमं.

86. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं मोटो अनत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, महीच्छता। महीच्छता, भिक्खवे, महतो अनथय संवत्तति"ति। छट्ठं.

87. "नाहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अप्पिच्छता। अप्पिच्छता, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवत्तति"ति। सत्तमं।

---

88. ".1. असंतोष (89) . . . संतोष ..."

88. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, असंतुष्टहिता।" असन्तुट्ठिता, भिक्खवे, महतो अनत्थय सांवत्तति'। अठहमं.

89. "नाहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, संतुथित:। सन्तुष्टिता, भिक्खवे, महतो अत्थय संवत्तति। नवमं.

88. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं मोटो अनत्थाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, असन्तुत्थिता। असंतुट्ठिता, भिक्खवे, महतो अनत्थाय संवत्तति"ति। अट्ठमन्।

89. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, सन्तुत्थिता। सन्तुट्ठिता, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवत्तति"ति। नवमं.

---

90. "...लापरवाही से ध्यान देना... (91) ...सावधानी से ध्यान देना..."

90. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, अयोनिसो मनसिकारो। अयोनिसोमनसिकारो, भिक्खवे, महतो अनत्थय सांवतति'ति। दशमं.

91. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, योनिसो मनसिकारो। योनिसोमनासिकारो, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवतति'ति। एकादशमं.

90. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अयोनिसो मनसिकारो। अयोनिसोमनसिकारो ,भिक्खवे ,मोटो अनथय संवत्तति"ति। दसमं.

91. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महतो अट्ठाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, योनिसो मनसिकारो। योनिसोमनासिकारो, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवत्तति"ति। एकादसमं।

---

92. ". . . पूर्ण समझ का अभाव (संपजन्ना) . . . (93) . . . पूर्ण समझ।"

92. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, असंपजान्नम्। असंपजान्नं, भिक्खवे, महतो अनत्थय सांवत्तति'। द्वादशमं.

93. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, संपजान्नम्। सम्पजान्नं, भिक्खवे, महतो अत्थय सांवत्तति। तेरसामं.

92. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं मोटो अनत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, असम्पजञ्च। असमपञ्जञ्चं, भिक्खवे, महतो अनत्थाय संवत्तति"ति। द्वादसमं।

93. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, संपजञ्च। संपञ्जनं, भिक्खवे, मतोथा अत्थय संवत्तति"। तेरसं।

---

94. "... बुरी दोस्ती . . . (95) . . . अच्छी दोस्ती ..."

94. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, पापमित्तता। पापमित्तता, भिक्खवे, महतो अनत्थय संवत्ति'ति। कुद्दसामं.

95. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अट्ठाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तता, भिक्खवे, महतो अत्थय संवत्तति। पन्नरसामं.

94. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं मोटो अनत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, पापमित्तता। पापमित्तता, भिक्खवे, महतो अनत्थय संवत्तति"ति। चुद्दसमन्।

95. "नहं , भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महतो अत्थाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तता, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवत्तति"ति। प सयनरसमं।

---

96. "...हानिकारक (अकुशलनम्) गुणों का अनुसरण और लाभकारी (कुशलनम्) गुणों का अनुसरण न करना... (97) ... लाभकारी (कुशलनम्) गुणों का अनुसरण और हानिकारक (अकुशलनम्) गुणों का अनुसरण न करना। लाभकारी (कुशलनम्) गुणों का अनुसरण और हानिकारक (अकुशलनम्) गुणों का अनुसरण न करने से महान लाभ प्राप्त होता है।"

96. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगो अकुशलनं धम्मनां, अनुयोगो कुशलानां।" धम्मणं. अनुयोगो, भिक्खवे, अकुशलनं धम्मनां, अनुयोगो कुशलाणं धम्मनां महतो अनत्थय संवत्तति'। सोऽसासमाम्।

97. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं महतो अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगो कुसलानां धम्मनं, अनुयोगो अकुशलनं धम्मणं. अनुयोगो, भिक्खवे, कुसलानां धम्मनां, अनुयोगो अकुशलानां धम्मनां महतो अत्थया संवतति"। सत्तारसमं.

Pamādādivaggo navamo.

96. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महोथ अनत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगो अकुसलानं धम्मनं, अन्नुयोगो कुसलानं धम्मनं। अनुयोगो, भिक्खवे, अकुसलानं धम्मनं, अनुयोगो कुसलनं धम्मनं सीता अनथय संवत्तति"ति। सोळसमं।

97. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं महोथ अत्थाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगो कुसलानं धम्मनं, अन्नुयोगो अकुसलानं धम्मनं। अनुयोगो, भिक्खवे, कुसलानं धम्मनं, अनुयोगो अकुसलानं धम्मनं सीता अथय संवत्तति"ति। सत्तरसमं।

पमादादिवग्गो नवमो।

(1.एक्स) दूसरा सुस्ती आदि खंड (दुतिया-पमादादी-वाग्गो)

98. "आंतरिक कारकों में, हे भिक्षुओं, मुझे आलस्य के समान कोई ऐसा कारक नहीं दिखता जो इतना बड़ा नुकसान पहुंचाता हो। आलस्य बड़ा नुकसान पहुंचाता है।"

98. "अज्जत्तिकं, भिक्खवे, अंगन्ति करित्वा नाण्णां एकांगमपि समनुपासामि यम एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, पमादो।" पमादो, भिक्खवे, महतो अनत्थाय संवत्तति'। पथमं.

98. "अज्जत्तिकं, भिक्खवे, अंगन्ति कारित्वा नानदं एकङगम्पि समनुपस्सामि यं एवं महोथ अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, पमादो। पमादो, भिक्खवे, महतो अनथय संवत्तति"ति। पथमं.

---

99. "भिक्षुओं, आंतरिक कारकों में मुझे एक भी ऐसा कारक नहीं दिखता जो सतर्कता के समान महान कल्याण की ओर ले जाता हो। सतर्कता ही महान कल्याण की ओर ले जाती है।"

99. "अज्जत्तिकं, भिक्खवे, अंगन्ति करित्वा नाण्णां एकांगमपि समनुपसामि यं एवम् महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, अप्पमादो।" अप्पमादो, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवतति"। दुतियां.

99. "अज्झत्तिकं, भिक्खवे, अङ्गन्ति कारित्वा नानदं एकङगम्पि समनुपस्सामि यं एवं महोथ अत्थय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अप्पमादो। अप्पमादो , भिक्खवे , महतो अट्ठाय संवत्तति"ति। दुतीयं।

---

100. "आंतरिक कारकों में, भिक्षुओं, मुझे आलस्य के समान कोई ऐसा कारक नहीं दिखता जो इतना बड़ा नुकसान पहुंचाता हो... (101) ... जो ऊर्जा के जागरण (प्रयास/वीर्य) के समान कोई बड़ा लाभ पहुंचाता हो..."

100. "अज्जत्तिकं, भिक्खवे, अंगन्ति करित्वा नाण्णां एकांगमपि समनुपसामि यम एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, कोसज्जाम्। कोसज्जं, भिक्खवे, महतो अनत्थय संवत्तति। ततियाँ।

100. "अज्झत्तिकं, भिक्खवे, अंगन्ति कारित्वा नानदं एकङगम्पि समनुपस्सामि यं एवं महोथ अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, कोसजदजं। कोसज्जं, भिक्खवे, महतो अनंताय संवत्तति"ति। ततीयं।

---

101. "अज्जत्तिकं, भिक्खवे, अंगन्ति करित्वा नान्यां एकांगमपि समनुपासामि यम एवं महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, वीर्यारम्भो। वीर्यारंभो, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवत्तति। Catuttham.

101. "अज्झत्तिकं, भिक्खवे, अङ्गन्ति कारित्वा नानदं एकङगम्पि समनुपस्सामि यं एवं महोथ अथाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, वीरियारंभो। वीरीयारंभो, भिक्खवे, महतो अत्थय संवत्तति"ति। चतुर्थं।

---

102. "...प्रबल इच्छा... 103 ...इच्छाओं की अल्पता..."

104. . . असंतोष .'. . 105 . . . संतोष . .

106. . . लापरवाही से ध्यान देना . . . (107) . . . सावधानीपूर्वक ध्यान देना ..."

108. . . पूर्ण बोध का अभाव (संपजन्ना) . . . 109 . . . पूर्ण बोध (संपजन्ना)..."

102-109. "अज्झट्टिकं, भिक्खवे, अंगन्ति करित्वा नान्यां एकांगमपि समनुपसामि यं एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, महिच्छता...पे...अप्पिच्चता... असन्तुऽहिता... सन्तुऽहिता... अयोनिसोमनसिकारो... योनिसोमानसिकारो... असम्पजान्नं... संपजान्नं... द्वादशमम्।

102-109. "अज्झत्तिकं, भिक्खवे, अङ्गन्ति कारित्वा नानदं एकङगम्पि समनुपसामि यं एवं महोथ अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, महीच्छता...पे०... अप्पिच्छता... असन्तुट्ठिता... सन्तुत्थिता... अयोनिसोमनसिकारो... योनिमानसिकारो... असम्पञ्चत... संपञ्जन... द्वादसमं।

---

110. "भिक्षुओं, बाह्य कारकों में मुझे ऐसा एक भी कारक नहीं दिखता जो बुरी मित्रता जितना बड़ा नुकसान पहुंचाता हो...."

110. "बहिरं, भिक्खवे, अंगन्ति करित्वा नान्यां एकांगमपि समनुपासामि यम एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, पापमित्तता। पापमित्तता, भिक्खवे, महतो अनत्थय संवत्ति'ति। तेरसामं.

110. "बाहिरं, भिक्खवे, अङ्गन्ति कारित्वा नाज्जं एकङगमपि समनुपस्सामि यं एवं महोथ अनथय संवत्तति यखवे, भिक्खवे, पापमित्ततः। पापमित्तता, भिक्खवे, महतो अनत्थय संवत्तति"ति। तेरसं।

---

111. "भिक्षुओं, बाह्य कारकों में मुझे ऐसा एक भी कारक नहीं दिखता जो अच्छी मित्रता के समान महान लाभ की ओर ले जाता हो।"

111. "बहिरं, भिक्खवे, अंगन्ति करित्वा नान्यां एकांगमपि समनुपासामि यं एवम् महतो अत्थय सांवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तता, भिक्खवे, महतो अत्थय संवत्तति। कुद्दसामं.

1. "बहिरं, भिक्खवे, अङ्गन्ति कारित्वा नानदं एकङ्गम्पि समनुपस्सामि यं एवं महतो अत्थाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तता, भिक्खवे, महतो अट्ठाय संवत्तति"ति। चुद्दसमन्।

---

112. "भिक्षुओं, आंतरिक कारकों में मुझे एक भी ऐसा कारक नहीं दिखता जो हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करने और लाभकारी (कुशल) गुणों का अनुसरण न करने जितना बड़ा नुकसान पहुंचाता हो..."

112. "अज्जत्तिकं, भिक्खवे, अंगन्ति करित्वा नान्नं एकांगमपि समनुपासामि यम एवं महतो अनत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, अनुयोगो अकुशलनम् धम्मनां, अनुयोगो कुसलानां धम्मनां। अनुयोगो, भिक्खवे, अकुशलनं धम्मनां, अनुयोगो कुशलाणं धम्मनां महतो अनत्थय संवत्तति'। पन्नरसामं.

112. "अज्जत्तिकं, भिक्खवे, अंगन्ति कारित्वा नानदं एकङगम्पि समनुपासामि यं एवं महोथ अनथय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगो अकुसलानं धम्मनं, अन्नुयोगो कुसलानं धम्मनं। अनुयोगो, भिक्खवे, अकुसलानं धम्मनं, अनुयोगो कुसलनं धम्मनं सीता अनथय संवत्तति"ति। प सयनरसमं।

---

113. . . . जो लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करने और हानिकारक (अकुशल) गुणों का अनुसरण न करने के समान ही महान कल्याण की ओर ले जाता है। लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करना और हानिकारक (अकुशल) गुणों (धम्म) का अनुसरण न करना महान कल्याण की ओर ले जाता है।

113. "अज्जत्तिकं, भिक्खवे, अंगन्ति करित्वा नाण्णां एकांगमपि समनुपासामि यम एवम् महतो अत्थय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, अनुयोगो कुसलनं धम्मणं, अनुनुयोगो अकुशलनं धम्मणं। अनुयोगो, भिक्खवे, कुसलानां धम्मनां, अनुयोगो अकुशलानां धम्मनां महतो अत्थया संवतति"। सोऽसासमाम्।

113. "अज्झत्तिकं, भिक्खवे, अंगन्ति कारित्वा नानदं एकङगम्पि समनुपासामि यं एवं महोथ अट्ठाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगोसल कुआनं धम्मनं, अन्नुयोगो अकुसलानं धम्मनं। अनुयोगो, भिक्खवे, कुसलानं धम्मनं, अनुयोगो अकुसलानं धम्मनं सीता अथय संवत्तति"ति। सोळसमं।

---

114. "भिक्षुओं, मुझे आलस्य के समान कोई ऐसी चीज नहीं दिखती जो अच्छे धम्म (मार्ग) के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हो। आलस्य अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनता है।"

114. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं सद्धम्मस्स सम्मोसाया अंतरधानाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, पमादो। पमादो, भिक्खवे, सद्धम्मस्सा सम्मोसाया अंतरधानाय संवतति'ति। सत्तारसमं.

114. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं सद्धम्मस्स सम्मोसाय अंतधानाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, पमादो। पमादो, भिक्खवे, सद्धम्मस्स सम्मोसाय अंतधानाय संवत्तति"ति। सत्तरसमं।

---

115. "भिक्षुओं (मठवासियों), मुझे ऐसा कोई भी साधन दिखाई नहीं देता जो सजगता के समान अच्छे धम्म की निरंतरता, अवनति और अपव्यय की ओर ले जाता हो। [18] सजगता अच्छे धम्म की निरंतरता, अवनति और अपव्यय की ओर ले जाती है।"

115. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासमि यो एवं सद्धम्मस्स थितिया असम्मोसया अनंतराधानाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, अप्पमादो।" अप्पमादो, भिक्खवे, सद्धम्मस्सा थितिया असम्मोसाय अनंतराधनाय संवतति"। अथारसमम्।

115. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं सद्धम्मस्स ठितिया असम्मोसाय अनंतार्धनाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अप्पमादो। अप्पमादो , भिक्खवे , सद्धम्मस्स थितिया असमममोसाय अनंतार्धनाय संवत्तति"ति। अट्ठारसमं।

---

116. "भिक्षुओं (मठवासियों), मुझे आलस्य के अलावा कोई ऐसी चीज नजर नहीं आती जो अच्छे धम्म के पतन और लुप्त होने का कारण बनती हो..."

116. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं सद्धम्मस्स सम्मोसाया अंतरधानाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, कोसज्जं।' कोसज्जां, भिक्खवे, सद्धम्मस्सा सम्मोसाया अंतरधानाय संवत्तति। एकुनाविसतिमम्।

116. "नहं , भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं सद्धम्मस्स सम्मोसाय अंतधानाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, कोसजदजं। कोसज्जं, भिक्खवे, सद्धम्मस्स सम्मोसाय अंतधानाय संवत्तति"ति। एकूनवीसतिमं।

---

117. . . . जिससे ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) के जागृत होने के कारण अच्छे धम्म का निरंतर बने रहना, उसका क्षय न होना और उसका लुप्त न होना सुनिश्चित होता है...

117. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं सद्धम्मस्स थितिया असम्मोसाया अनंतराधनाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, वीर्यारम्भो। वीर्यारम्भो, भिक्खवे, सद्धम्मस्सा तीथिया असम्मोसाय अनंतराधनाय संवतति'ति। विसातिमम्.

---

117. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं सद्धम्मस्स ठितिया असम्मोसाय अनंतार्धनाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, वीरियारंभो। वीरीयारंभो, भिक्खवे, सद्धम्मस्स ठितिया असमममोसाय अनंतार्धनाय संवत्तति"ति। वैसतिम्।

118. "...प्रबल इच्छा ...119... इच्छाओं की कमी . ."

120 ... असंतोष... 121... संतोष...

122. . . लापरवाही से ध्यान देना . . . 123. . . सावधानीपूर्वक ध्यान देना . . ."

124. "... पूर्ण समझ का अभाव (संपजन्ना)... 125 ... पूर्ण समझ..."

126. "...बुरी दोस्ती... 127 ...अच्छी दोस्ती ..."

128. "...हानिकारक (अकुसल) गुणों (धम्म) का अनुसरण करना और लाभकारी (कुसल) का अनुसरण न करना, योग्यता प्रदान करता है...

118-128. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं सद्धम्मस्सा सम्मोसाया अंतरधानाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, महिच्छता...पे...अप्पिच्चता...असंतुथिता... सन्तुष्टिता... अयोनिसोमनसिकारो... योनिसोमानसिकारो... असमपजान्नं... संपजान्नं... पापमित्तता... कल्याणअमित्तता... अनुयोगो अकुशलनं धम्मनां, अननुयोगो कुसलानां धम्मणं. अनुयोगो, भिक्खवे, अकुशलनं धम्मनां, अनुयोगो कुशलाणं धम्मनां सद्धम्मस्सा सम्मोसाया अंतरधानाय संवत्तति"। एकत्तिनसतिम्।

118-128. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं सद्धम्मस्स सम्मोसाय अण्टार्धनाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, महीच्छता...पे०... अप्पिच्छता... असन्तुत्थिता... सन्तुट्ठिता... अयोनिसोमनसिकारो... योनिसोमनासिकारो... असमपञ्चदन्न... संपज्जनदं... पापमित्तता... कल्याणमित्तता... अनुयोगो अकुसलानं धम्मनं, अनुयोगो कुसलानं धम्मनं। अनुयोगो, भिक्खवे, अकुसलानं धम्मनं, अन्नुयोगो कुसलानं धम्मनं सद्धम्मस्स सम्मोसाय अंतधानाय संवत्तति"ति। एक्तिस्तन्सतिम्।

---

129 . . . लाभकारी(कुसल) गुणों की खोज और हानिकारक(अकुसल) गुणों(धम्म) की खोज। लाभकारी (कुसल) गुणों (धम्म) का अनुसरण और हानिकारक (अकुसल) गुणों (धम्म) का अनुसरण न करने से अच्छे धम्म की निरंतरता, गैर-गिरावट और गैर-लुप्ति होती है।"

129. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यो एवं सद्धम्मस्स थितिया असम्मोसया अनन्तराधनाय संवत्तति यथायिदं, भिक्खवे, अनुयोगो कुसलानाम्" धम्मणं, अनुनुयोगो अकुशलनं धम्मणं। अनुयोगो, भिक्खवे, कुसलानं धम्मणं, अनुयोगो अकुशलानं धम्मणं सद्धम्मस्सा थितिया असम्मोसाया अनंतराधनाय संवतति"। चतुक्कोऽटिकं निहितं। बत्तीसतिमम्.

129. "नाहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि यो एवं सद्धम्मस्स ठितिया असम्मोसाय अनन्तार्धनाय संवत्तति यथयिदं, भिक्खवे, अनुयोगो कुसलानं धम्मनं, अन्नुयोगो अकुसलानं धम्मनं। अनुयोगो, भिक्खवे, कुसलानं धम्मनं, अन्नुयोगो अकुसलानं धम्मनं सद्धम्मस्स थितिया असम्मोसाय अनन्तार्धनाय संवत्ति"ति। चतुर्कोटिकं नित्थितं। बात्तिसंस्तिमं।

---

130. "भिक्षुओं, जो भिक्षु अधर्म (गलत मार्ग) को धर्म के रूप में समझाते हैं, वे अनेक लोगों के हितैष, अनेक लोगों के दुःख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और पीड़ा, देवताओं और मनुष्यों के लिए कर्म करते हैं। 61 ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धर्म को लुप्त कर देते हैं।"

130. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अधम्मं धम्मोति दिपेंती ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्ना बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अनत्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्नानम् . बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुन्नं पासवंती, ते सीमं [तेपिमां (सि.)] सद्धम्मं अंतरधापेंती"। तेत्तिसतिमम्.

33. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अधम्मं धम्मोति दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनअहिताय पतिप सन्या बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अनथय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं [तेपिमं (सी०)] सद्धम्मं अंतधापेन्ति"ति। तेत्तिंसतिमं।

---

131 — 139

(131) "भिक्षुओं, वे भिक्षु जो धम्म (मार्ग) को गैर-धम्म के रूप में व्याख्या करते हैं... (132) ... अनुशासनहीनता को अनुशासन के रूप में... (133) ... अनुशासनहीनता के रूप में... (134) ...जो तथागत (बुद्ध) द्वारा कहा और उच्चारित नहीं किया गया है, उसे उनके द्वारा कहा और उच्चारित किया गया है... (135) ...जो तथागत (बुद्ध) द्वारा कहा और उच्चारित किया गया है, उसे उनके द्वारा कहा और उच्चारित नहीं किया गया है... (136) ...जो तथागत (बुद्ध) द्वारा अभ्यास नहीं किया गया है, उसे उनके द्वारा अभ्यास किया गया है... (137) ...जो तथागत (बुद्ध) द्वारा अभ्यास किया गया है, उसे अभ्यास नहीं किया गया है।" उसके द्वारा... (138) ... जो तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित नहीं किया गया है, (139) ... जो तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित नहीं किया गया है, वह अनेक लोगों के लिए हानि, अनेक लोगों के लिए दुःख, अनेक लोगों के लिए विनाश, हानि और पीड़ा, देवताओं और मनुष्यों के लिए कष्ट का कारण बनता है। ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धम्म (मार्ग) को लुप्त कर देते हैं।

131. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु धम्मं अधम्मोति दिपेंती ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्न बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अनत्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सनम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुनं पासवंती, ते सीमं सद्धम्मं अंतरधापेंती।' कैटुत्टिनसतिमम्।

132-139. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अविनायम विनयोति दिपेंती...पे...विनयम् अविनायोति दिपेंती...पे...अभासीतं अलपितां तथागतेन भासीतं लपितां तथागतं दीपेंति...पे...भासीतां लपितां तथागतेन अभासीतं अलपितां तथागतेनाति दीपेंती...पे... अनाचिनं तथागतेन अचिनं तथागतेनाति दीपेंती...पे... अचिनं तथागतेन अनाचिनं तथागतेनाति दिपेंती...पे... अपानत्तं तथागतेन पण्णात्तं तथागत दिपेंती...पे... पन्नत्तं तथागतेन अपान्नत्तं तथागत दिपेंती ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्ना बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अनत्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानाम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुनं पासवंती, ते सीमं सद्धम्मं अंतरधापेंती।' द्वाचत्तलिसातिमम्।

Dutiyapamādādivaggo dasamo.

131. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु धम्मं अधम्मोति दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनअहिताय पतीप सीनाया बहुजनसुखाय, बहुनो जनसस अनथय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं अंतधापेंति"ति। चतुत्तिंसतिमं।

1 सप्ताह-15. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अविनयं विज्ञोति दीपेन्ति...पे०...विनं अविन्योति दीपेन्ति...पे०... आभासितं अल्पितं तथागतेन भासितं लापितं तथागतेनति दीपेन्ति...पे०... भासितं लापितं तथागतेन आभासितं अल्पितं तथागतेनति दीपेन्ति...पे०... अनाचिनं तथागतेन अचिन्नं तथागतेनाति दीपेन्ति...पे०... अचिन्नं तथागतेन अनाच्चिन्नं तथागतेनाति दीपेन्ति...पे०... अपञ्जत्तं तथागतेन पञ्जत्तन तथागतेनाति दीपेन्ती...पे०... पञ्चत्तं तथागतेन अपञ्जनत्तं तथागतेनाति दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु हितायताय पाटिप न्याबासुखाय, बहुनो जनस्स अनथय अहिताय दुःखाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं अंतधापेंति"ति। द्वाचतालिसतिमं।

दुतियपमादादिवग्गो दासमो।

(1.XI) बुरा-धम्म खंड (अधम्म-वाग्गो)

140. "भिक्षुओं, वे भिक्षु जो बुरे धर्म (गलत मार्ग) को बुरे धर्म के रूप में समझाते हैं, वे अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, देवताओं और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए कार्य कर रहे हैं। ये भिक्षु बहुत पुण्य कमाते हैं और इस अच्छे धर्म को कायम रखते हैं।"

140. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अधम्मं अधम्मोति दीर्पेति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्न बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अत्थाय सुखाय देवमनुस्सनम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु पुन्नं पासवंती, ते सीमां सद्धम्मं थापेंती"ति [थापेंती (का.)]। पथमं.

140. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अधम्मं अधम्मोति दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतीप सीनाय बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु पुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं योगेन्ति"ति [थपेन्तिति (क०)]। पथमं.

---

141 — 149

(141) "भिक्षुओं, वे भिक्षु जो धम्म (मार्ग) को धम्म के रूप में समझाते हैं... (142) ... बुरे अनुशासन को बुरे अनुशासन के रूप में... (143) ... अनुशासन को अनुशासन के रूप में... (144) ... जो तथागत (बुद्ध) द्वारा नहीं कहा और नहीं बोला गया है, उसे उनके द्वारा नहीं कहा और नहीं बोला गया है... (145) ... जो तथागत (बुद्ध) द्वारा कहा और बोला गया है, उसे उनके द्वारा कहा और नहीं बोला गया है... [20] (146) ... जो तथागत (बुद्ध) द्वारा अभ्यास नहीं किया गया है, उसे उनके द्वारा अभ्यास नहीं किया गया है... (147) ... जो अभ्यास किया गया है... तथागत (बुद्ध) द्वारा बताए गए आचरणों का पालन किया जाता है... (148) ... तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित न किए गए आचरणों का पालन किया जाता है... (149) ... तथागत (बुद्ध) द्वारा निर्धारित आचरणों का पालन किया जाता है, वे हैं अनेक

लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों, देवताओं और मनुष्यों के भले, कल्याण और सुख के लिए कार्य करना। ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धर्म का पालन करते हैं।

141. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु धम्मं धम्मोति दीपेंति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्न बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अत्थाय सुखाय देवमनुस्सानम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु पुन्नं पासवंती, ते सीमं सद्धम्मं थपेन्ती'ति। दुतियां.

142-149. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अविनायम अविनायोति दिपेंती...पे...विनयं विनयोति दिपेंती...पे... अभासीतं अलपितां तथागतेन अभासीतं अलपितां तथागतेनाति दिपेंती...पे... भसीताम् लपितां तथागतेन भासीतं लपितां तथागतेनाति दीपेंती...पे... अनाचिनं तथागतेन अनाचिनं तथागतेनाति दीपेंती...पे... अचिनं तथागतेन अचिनं तथागतेनाति दिपेंती...पे... अपान्नट्टं तथागतं तथागत दिपेंती...पे... पन्नट्टं तथागतेन पन्नत्तं तथागत दिपेंती ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्ना बहुजनसुखाय, बहुनो जनसा अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानाम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु पुन्नं पासवंती, ते सीमं सद्धम्मं थपेन्ती'ति। दशमं.

Adhammavaggo ekādasamo.

141. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु धम्मं धम्मोति दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतीप स्याना बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु पुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं योगेन्ति"ति। दुतीयं।

142-252. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अविनयं अविन्योति दीपेन्ति...पे०...विज्ञनं विनयोति दीपेन्ति...पे०... आभासितं अल्पितं तथागतेन आभासीतं अल्पितं तथागतेनति दीपेन्ति...पे०... भासितं लापितं तथागतेन भासितं लापितं तथागतेनति दीपेन्ति...पे०...अनाचिनं तथागतेन अनाचिनं तथागतेनाति दीपेन्ति...पे०... अचिन्नं तथागतेन अचिन्नं तथागतेनाति दीपेन्ति...पे०... अपञ्जत्तं तथागतेन अपञ्जत्तन तथागतेनाति दीपेन्ति...पे०... पं.... पं. अथाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु पुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं योगेन्ति"ति। दसमं.

अधम्मवग्गो एकादसामो।

(1.बारहवीं) गैर अपराध धारा (अनापत्ति-वाग्गो)

150.

“भिक्षुओं, जो भिक्षु अहिंसा को अहिंसा बताते हैं, वे अनेक लोगों के हित में कार्य करते हैं, अनेक लोगों को दुखी करते हैं, अनेक लोगों, देवताओं और मनुष्यों के विनाश, हानि और पीड़ा का कारण बनते हैं। ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धर्म को लुप्त होने का कारण बनते हैं।”

150. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अनापत्तिम अपत्तिति दिपेंती ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्ना बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अनत्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सनम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुनं पासवंती, ते सीमं सद्धम्मं अंतरधापेंती।' पथमं.

150. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अनापत्तिं आप्तिति दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनअहिताय पतीप सन्या बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अनात्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं अंतधापेंति"ति। पथमं.

---

151 — 159

(151) "भिक्षु (मठवासी), वे भिक्षु जो अपराध को अपराध नहीं बताते... (152) ... एक हल्के अपराध को गंभीर अपराध बताते हैं... (153) ... एक गंभीर अपराध को हल्के अपराध बताते हैं... (154) ... एक घोर अपराध को घोर अपराध नहीं बताते... (155) ... एक ऐसे अपराध को जो घोर नहीं है, घोर अपराध बताते हैं... (156) ... एक उपचार योग्य अपराध को अउपचार योग्य अपराध बताते हैं... [21] (157) ... एक अउपचार योग्य अपराध को उपचार योग्य अपराध बताते हैं (158) ... एक ऐसे अपराध को जिसका निवारण संभव है, बिना निवारण वाले अपराध बताते हैं... (159) ... एक ऐसे अपराध को जिसका निवारण संभव नहीं है, निवारण योग्य अपराध बताते हैं, वे अनेक लोगों के नुकसान, अनेक लोगों के दुख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और पीड़ा के लिए कार्य कर रहे हैं। देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य। 66 ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धम्म (मार्ग) को लुप्त कर देते हैं।

151. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अपत्तिं अनापत्ति दीपेंति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्ना बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अनत्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सनम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुनं पासवंती, ते सीमं सद्धम्मं अंतरधापेंती।' दुतियां.

152-159. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु लहुकम अपत्तिं गरूका अपत्तिति दिपेंती...पे... गरुकम अपत्तिम लहुका अपत्तिति दिपेंती...पे... दुतथुल्लाम अपत्तिम अदुथुल्ला अपत्तिति दिपेंती...पे... अदुत्थुल्लं अपत्तिं दुत्थुल्ला अपत्तिति दिपेंती...पे... सवसेसं अपत्तिं अनावसेसा अपत्तिति दिपेंती...पे... अनावसेसं अपत्तिं सवसेसा अपत्तिति दिपेंती...पे... सप्पटिकम्मम अपत्तिम अपत्तिति दिपेंती...पे... अप्पटिकम्मम अपत्तिम सप्पाटिकम्मा अपत्तिति दिपेंती ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्ना बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अनत्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानाम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुनं पासवंती, ते सीमं सद्धम्मं अंतरधापेंती।' दशमं.

151. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु दर्शनं अनापत्तिति दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनअहिताय पतीप सन्या बहुजनसुखाय, बहुनो जनसस अनथय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं अंतधापेंति"ति। दुतीयं।

152-169. "ये ते, भिक्खुवे, भिक्खु लहुकं मंत्रं गुरुका आप्तिति दीपेन्ति...पे०... गुरुकं व्यंजनं लहुका आप्तिति दीपेन्ति...पे०... दुट्ठुलं लं लक्ष्यं अदुत्थुलंदला आप्तिति दीपेन्ति...पे०... अदुत्थुलं दंतं दुत्तथुलांदला आप्तिति दीपेन्ति...पे०... सावसेसं स्वप्नं अनवसेसा आपति दीपेन्ति...पे०... अनवसेसं खिलौने सवसेसा आप्तिति दीपेन्ति...पे०... सप्पटिकम्मं खिलौनें अप्पटिकम्मा आपत्तीति दीपेन्ति...पे०... अप्पटिकम्मं इच्छां सप्पटिकम्मा आपत्ती दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनअहिताय पटिप सान्निहा बहुजनसुखाय, बहुनो जनसस अनथय अहिताय दुक्खाय देवमनुससानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु अपुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं अंतधापेंति"ति। दसमं.

160

भिक्षुओं, जो भिक्षु अपराध न करने की व्याख्या करते हैं, वे अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, देवताओं और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए कार्य कर रहे हैं। ये भिक्षु बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं और इस उत्तम धर्म का पालन करते हैं।

160. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अनापत्तिं अनापत्ति दीपेंति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्ना बहुजनसुखाय, बहुनो जनसा अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सनम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु पुन्नं पासवंती, ते सीमं सद्धम्मं थपेन्ती'ति। एकादशमं.

160. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अनापत्तिं अनापत्तिति दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतीप सीनाय बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु पुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं योगेन्ति"ति। एकादसमं।

---

161 -169

(161) "भिक्षु (मठवासी), वे भिक्षु जो किसी अपराध को अपराध के रूप में समझाते हैं... (162) ... हल्के अपराध को हल्के अपराध के रूप में समझाते हैं... (163) ... गंभीर अपराध को गंभीर अपराध के रूप में समझाते हैं... (164) ... घोर अपराध को घोर अपराध के रूप में समझाते हैं... (165) ... जो अपराध घोर नहीं है उसे घोर अपराध नहीं समझाते... (166) ... उपचार योग्य अपराध को उपचार योग्य

अपराध के रूप में समझाते हैं... (167) ... अउपचार योग्य अपराध को अउपचार योग्य अपराध के रूप में समझाते हैं... (168) ... निवारण योग्य अपराध को निवारण योग्य अपराध के रूप में समझाते हैं... (169) ... बिना निवारण वाले अपराध को बिना निवारण वाले अपराध के रूप में समझाते हैं, वे अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, अनेक लोगों के भले, कल्याण और खुशी के लिए कार्य कर रहे हैं।" देव (देवदूत/देवता) और मनुष्य। ये भिक्षु बहुत पुण्य कमाते हैं और इस उत्तम धर्म का पालन करते हैं।

161. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु अपत्तिं अपत्तिति दिपेंती ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्ना बहुजनसुखाय, बहुनो जनसा अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सनम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु पुन्नं पासवंती, ते सीमं सद्धम्मं थपेन्ती'ति। द्वादशमं.

162-169. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु लहुकं अपत्तिं लहुका अपत्तिं दिपेंती... गारुकां अपत्तिं गरुका अपत्तिति दिपेंती... दुतहुल्लां अपत्तिं दुत्थुल्ला अपत्तिति दिपेंती... अदुतहुल्लां अपत्तिं अपत्तिं अपत्तिं दिपेंती... सवसेसं अपत्तिं सवसेसा अपत्तिति दिपेंती... अनावसेसं अपत्तिं अनावसेसा अपत्तिति दिपेंती... सप्पटिकम्मं अपत्तिं सप्पाटिकम्मा अपत्तिति दिपेंती... अप्पतिकम्म अपत्तिं अप्पातिकम्मा अपत्तिति दिपेंती ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतिपन्ना बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानाम्। बहुंच ते, भिक्खवे, भिक्खु पुन्नं पासवंती, ते सीमं सद्धम्मं थपेन्ती'ति। विसतिमं.

Anāpattivaggo dvādasamo.

161. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खू दर्शनं आप्तिति दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पाटिप सयना बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु पुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं योगेन्ति"ति। द्वादसमं।

162-169. "ये ते, भिक्खवे, भिक्खु लहुकं द्युमं लहुका आप्तिति दीपेन्ति... गरुकं द्वालं गरुका आप्तिति दीपेन्ति... दुत्थुल दल्लं स्वप्नं दुड्डुलदला आप्तिति दीपेन्ति... अदुत्थुल दल्लं सिद्धिं अदुत्थुल्ला आप्तिति दीपेन्ति... सवसेसं वादं सावसेसा आप्तिति दीपेन्ति... अनवसेसं दीलं सवसेसा आपत्तीति दीपेन्ति... सप्पटिकम्मं खिलौनें सप्पटिकम्मा आप्तिति दीपेन्ति... अप्पटिकम्मं खिलौनें अप्पटिकम्मा आपत्तीति दीपेन्ति ते, भिक्खवे, भिक्खु बहुजनहिताय पतीप स्याना बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं। बहुञ्च ते, भिक्खवे, भिक्खु पुञ्जन पस्वन्ति, ते चिमं सद्धम्मं योगेन्ति"ति। वैसतिम्।

अनापत्तिवग्गो द्वादसमो।

(1.XIII) एक व्यक्ति अनुभाग (एकपुग्गला-वाग्गो)

170

भिक्षुओं, एक ऐसा व्यक्ति है जो अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों की खुशी, संसार के प्रति करुणा, देवताओं और मनुष्यों के भले, कल्याण और सुख के लिए संसार में अवतरित होता है। 67 वह एक व्यक्ति कौन है? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध। यही वह एक व्यक्ति है जो संसार में अवतरित होता है... देवताओं और मनुष्यों के भले, कल्याण और सुख के लिए।

170. "एकपुग्गलो, भिक्खवे, लोके उप्पज्जमानो उप्पज्जति बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सनम्। काटामो एकापुग्गलो? तथागतो अरहं सम्मासंबुद्धो। अयं खो, भिक्खवे, एकपुग्गलो लोके उप्पज्जमानो उप्पज्जति बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सन'न्ति।

170. "एकपुग्गलो, भिक्खवे, लोके उप्पजदजमानो उप्पजदजति बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकंपाय अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं। कत्मो एकपुग्गलो? तथागतो अरहं सम्मासम्बुद्धो। अयं खो, भिक्खवे, एकपुग्गलो लोके उप्पजदजमानो उप्पजदजति बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सान"न्ति।

171-174

"भिक्षुओं (मठवासियों), संसार में एक व्यक्ति का प्रकटीकरण दुर्लभ है... (172)... संसार में एक ऐसा व्यक्ति प्रकट होता है जो असाधारण है... (173)... एक व्यक्ति की मृत्यु पर अनेक लोग शोक मनाते हैं... (174) 68... संसार में एक ऐसा व्यक्ति प्रकट होता है जो अद्वितीय, अतुलनीय, बेजोड़, बेमिसाल, बेमिसाल, अद्वितीय, बेजोड़ है, 69 दो पैरों पर चलने वाले प्राणियों में श्रेष्ठ है। 70 वह एक व्यक्ति कौन है? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध। यही वह एक व्यक्ति है जो संसार में प्रकट होता है, जो... दो पैरों पर चलने वाले प्राणियों में श्रेष्ठ है।" 171. "एकपुग्गलस्सा, भिक्खवे, पातुभावो दुल्लभो लोकस्मिं. कटामास्सा एकपुग्गलास्सा? तथागतस्स अरहतो सम्मासंबुद्धस्स। इमास्सा खो, भिक्खवे, एकपुग्गलस्सा पतुभावो दुलाभो लोकस्मि'न्ति।

172. "एकपुग्गलो, भिक्खवे, लोके उप्पज्जमानो उप्पज्जति अचरियामानुसो। काटामो एकापुग्गलो? तथागतो अरहं सम्मासंबुद्धो। अयं खो, भिक्खवे, एकपुग्गलो लोके उप्पज्जमानो उपज्जति अचरियामानुसो'ति।

173. "एकपुग्गलस्सा, भिक्खवे, कालकिरिया बहुनो जनस्सा अनुतप्पा [अनुतप्पा (सि.)] होती। कटामास्सा एकपुग्गलास्सा? तथागतस्स अरहतो सम्मासंबुद्धस्स। इमास्सा खो, भिक्खवे, एकपुग्गलस्सा कालकिरिया बहुनो जनस्सा अनुतप्पा होति'ति।

174. "एकपुग्गलो, भिक्खवे, लोके उप्पज्जमानो उप्पज्जति अदुतियो असाहायो अप्पतिमो अप्पतिसामो अप्पतिभागो अप्पतिपुग्गलो असामो असामासामो द्विपदानं अग्गो। काटामो एकापुग्गलो? तथागतो अरहं सम्मासंबुद्धो। अयं खो, भिक्खवे, एकपुग्गलो लोके उप्पज्जमानो उप्पज्जति अदुतियो असाहायो अप्पतिमो अप्पतिसामो अप्पतिभागो अप्पतिपुग्गलो असामो असामासामो द्विपदानं अग्गो"ति।

171. "एकपुग्गलस, भिक्खवे, पातुभावो दुल्लभो लोकस्मिं। कैटमास एकपुग्गलस? तथागतस्स अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। इमस्स खो, भिक्खवे, एकपुग्गलस पातुभावो दुल्लभो लोकस्मि"न्ति।

217. "एकपुग्गलो, भिक्खवे, लोके उप्पजदजमानो उप्पजदजति अचरियाननुसो। कत्मो एकपुग्गलो? तथागतो अरहं सम्मासम्बुद्धो। अयं खो, भिक्खवे, एकपुग्गलो लोके उप्पजदजमानो उप्पजदजति अचरियाननुसो"ति।

173. "एकपुग्गलस, भिक्खवे, कालकिरिया बहुनो जनस्स अनुतप्पा [अनुतप्पा (सी०)] होती है। कैटमास एकपुग्गलस? तथागतस्स अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। इमस खो, भिक्खवे, एकपुग्गलस कालकिरिया बहुनो जनस्स अनुतप्पा होता"ति।

174. "एकपुग्गलो, भिक्खवे, लोके उप्पजदजमानो उप्पजदजति अदुतियो अप्पतिमो अप्पतिमो अप्पतिभागो अप्पतिपुग्गलो असमो असमामो दिपदानं अग्गो। कत्मो एकपुग्गलो? तथागतो अरहं सम्मासम्बुद्धो। अयं खो, भिक्खवे, एकपुग्गलो लोके उप्पजदजमानो उप्पजदजति अदुतियो अप्पतिमो अप्पतिमो अप्पतिभागो अप्पतिपुग्गलो असमो असमासमो द्विपदानं अग्गो"ति।

175-186

"भिक्षुओं (मठवासियों), एक व्यक्ति का प्रकटीकरण महान दृष्टि का प्रकटीकरण है... (175) महान प्रकाश का प्रकटीकरण... (176) महान प्रकाश का प्रकटीकरण... (177) महान दीप्ति का प्रकटीकरण... (178) छह अतुलनीय चीजों का प्रकटीकरण... (179) चार विश्लेषणात्मक ज्ञान की प्राप्ति... (180) अनेक तत्वों का भेदन... (181) तत्वों की विविधता का भेदन... (182) सच्चे ज्ञान और मुक्ति के फल की प्राप्ति [23]... (183) धारा-प्रवेश (7 पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के फल की प्राप्ति... (184) एक बार लौटने के फल की प्राप्ति (1 पुनर्जन्म (सकदागामी)... (185)... अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म न होना) के फल की प्राप्ति... (186)... अरहंतत्व के फल की प्राप्ति। वह कौन है? तथागत (बुद्ध), अरहंत, पूर्णतः प्रबुद्ध। यही वह व्यक्ति है जिसका प्रकटीकरण महान दृष्टि का प्रकटीकरण है... अरहंतत्व के फल की प्राप्ति।

175-186. "एकपुग्गलास्स, भिक्खवे, पतुभाव महतो चक्खुस्सा पतुभावो होति, महतो अलोकस्स पतुभावो होति, महतो ओभास्सस पतुभावो होति, चन्नं अनुत्तरियानं पतुभावो होति, चतुन्नं पतिसंभिदानं सच्चिकिरिया होति, अनेकधातुपटिवेधो होति, नानाधातुपटिवेधो होति, विज्जाविमुत्तिफलासच्चिकिरिया होति, सोतापत्तिफलासच्चिकिरिया होति, सकादागामिफलासच्चिकिरिया होति, अनागामिफलासच्चिकिरिया होति, अरहतफलासच्चिकिरिया होति। कटामास्सा एकपुग्गलास्सा? तथागतस्स अरहतो सम्मासंबुद्धस्स। इमास्सा खो, भिक्खवे, एकपुग्गलास्स पातुभावो होति, महतो अलोकस्सा पातुभावो होति, महतो ओभासस्सा पातुभावो होति, चन्नं अनुतारियानं पतुभावो होति, चतुन्नं पतिसंभिदानं सच्चिकिरिया होति, अनेकधातुपटिवेधो होति, नानाधातुपटिवेधो होति, विज्जाविमुत्तिफलासच्चिकिरिया होति, सोतापत्तिफलासच्चिकिरिया होति, सकादागामिफलासच्चिकिरिया होति, अनागामिफलासच्चिकिरिया होति, अरहतफलासच्चिकिरिया होति"ति।

175-186. "एकपुग्गलस्स, भिक्खवे, पातुभावा मठ चाखुस्स पातुभावो होती है, महंत आलोकस्स पातुभावो होती है, सीता ओभास्स पातुभावो होती है, छ साइनं अनुत्तरायनं पातुभावो होती है, चतु दर्शनं पतिसमभिदानं सच्चिकिरिया होती है, अनेकधातुपतिवेधो होती है, नानाधातुपतिवेधो होती है, विजजाविमुत्तफिलसचिकिरिया होती है। होती है, सोतापट्टफलसचिकिरिया होती है, सकदागमिफलसचिकिरिया होती है, अनागमफलसचिकिरिया होती है, अरहत्तफलसचिकिरिया होती है। कैटमास एकपुग्गलस? तथागतस्स अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। इमस्स खो, भिक्खवे, एकपुग्गलस पातुभावा महतो चखुस्स पातुभावो होती है, महतो आलोकस्स पातुभावो होती है, छ साइनं अनुत्तरायनं पातुभावो होती है, चतु साइनं पतिसमभिदानं सच्चिकिरिया होती है, अनेकधातुपतिवेधो होती है, नानाधातुपतिवेधो होती है, विजजाविमुत्तसिफचिकिरिया होती है। होती है, सोतापट्टफलसचिकिरिया होती है, सकदागमिफलसचिकिरिया होती है, अनागमफलसचिकिरिया होती है, अरहत्तफलसचिकिरिया होती है।

187

भिक्षुओं, मुझे एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं दिखता जो तथागत (बुद्ध) द्वारा स्थापित धम्म के अद्वितीय चक्र को सारिपुत्त की तरह उचित रूप से गतिमान रखता हो। सारिपुत्त तथागत (बुद्ध) द्वारा स्थापित धम्म के अद्वितीय चक्र को उचित रूप से गतिमान रखता है।

187. "नहं भिक्खवे, आननं एकपुग्गलमपि समनुपासामि यो एवं तथागतेन अनुत्तरं धम्मचक्कं पवत्तितं सम्मदेव अनुप्पवत्तेति यथायिदं, भिक्खवे, सारिपुत्तो। सारिपुत्तो, भिक्खवे, तथागतेन अनुत्तरं धम्मचक्कं पवत्तितं सम्मदेव अनुप्पवत्तेति"।

एकपुग्गलवग्गो तेरसामो।

आठ7. "नहं भिक्खवे, आनंदं एकपुग्गलमपि समनुपस्सामि यो एवं तथागतेन अनुत्तरं धम्मच त्रैकं पवत्तितं सम्मदेव अनुप्पवत्तेति यखवे, सारिपुत्तो। सारिपुत्ततो, भिक्खवे, तथागतेन अनुत्तरं धम्मचत्रकं पवत्तितं सम्मदेव अनुप्पवत्तेति"ति।

एकपुग्गलवग्गो तेरसमो।

(1.XIV) अग्रणी (शिष्य) अनुभाग (एटाडग्गा-वाग्गो)

i. पहला उप-अध्याय (भिक्षु) 188-197

(188) "भिक्षुओं, मेरे भिक्षु शिष्यों में वरिष्ठता क्रम में सबसे श्रेष्ठ अन्नकोंडन्ना हैं।" 74

188. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सवाकानं भिक्खुनं रत्तान्नुणं यदिदं अणनासिकोण्णनो" [अन्नताकोण्णणोति (का.), अण्णाकोण्णण्णो (सि. स्या. कां. पि.)]।

188. "एतदग्गं , भिक्खवे, मम सावकानं भिक्खूनं रत्तञ्जूनं इदिदं अञ्जनासिकोण्डञ्चो" [अञ्जनात्कोण्डञ्चोति (क०), अञ्जञ्चकोण्डञ्चो (सी० स्या० कं० पी०)]।

---

(189) "...महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने वालों में सारिपुत्त हैं।" 75

189. ... महापन्ननं यदिदं सारिपुत्तो।

189. ... महापञ्जानं यदिदं सारिपुत्तो।

---

(190) "...मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) रखने वालों में महामोग्गलाना भी शामिल हैं।" 76

190. ...इद्धिमन्तानां यदिदं महमोग्गलानो।

190. ... इधिमन्तानं यदिदं महामोग्गलानो।

---

(191) "...तपस्या प्रथाओं का प्रतिपादन करने वालों में महाकस्सपा भी शामिल हैं।" 77

191।

191. ...धुतवदानं [धुतङ्घधारणं (कत्थचि)] यदिदं महाकस्पो।

---

(192) "...दिव्य दृष्टि रखने वालों में अनुराधा भी शामिल है।" 78

192. ...दिब्बाचक्कुकानं यदिदं अनुरुद्धो।

192. ... दिब्बचक्खुकानं यदिदं अनुरुद्धो।

---

(193) "...प्रतिष्ठित परिवारों में से भद्दिया कलिगोधायपुत्त हैं।" 79

193. ...उच्चाकुलिकाणं यदिदं भद्दियो कादिगोधायपुत्तो।

193. ...उच्चाकुलिकानं यदिदं भद्दियो काळिगोधायपुत्ततो।

---

(194) "...मधुर आवाज वालों में लकुंतका भद्दिया भी शामिल हैं।" 80

194।

194. ... मंजुस्सरं इदिदं लकुंडक [लकुंटक (स्या० कं०)] भद्दियो।

---

(195) "...सिंह की दहाड़ रखने वालों में पिंडोला भारद्वाज भी शामिल हैं।" 81

195. ...सिहानादिकानं यदिदं पिण्डोलाभारद्वाजो।

195. ...सीहनादिकानं यदिदं पिण्डोलभारद्वाजो।

---

(196) "...धम्म (मार्ग) पर बोलने वालों में पुरिना मंतानिपुत्त भी शामिल हैं।" 82

196।

196. ... धम्मकथिकाणं यदिदं पुन्नो मन्तानिपुत्तो।

---

(197) "...संक्षेप में कही गई बात का विस्तृत अर्थ समझाने वालों में महाकच्चना भी शामिल हैं।"

197।

197. ... संखितेन भासितस्स वित्थरेन अथं विभजन्तानं इदिदं महाकच्छनोति।

---

ii. द्वितीय उप-अध्याय 198-208

(198) "भिक्षुओं (मठवासियों), मेरे उन भिक्षु शिष्यों में जो मन से शरीर का सृजन करते हैं, उनमें सबसे श्रेष्ठ चुल्लपंथक हैं।" 83

198. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सवकाणं भिक्खुनं मनोमयं कायं अभिनिम्मिनंतनं यदिदं कुपंथाको" [कुलपंथाको (सि. स्या. कं.)। पी.आई.)].

198. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सावकानं भिक्खुनं मनोमयं कायं अभिनिम्मिनतानं इदिदं चूळपन्थको" [चुल्ललपंथको (सी० स्या० कं० पी०)]।

---

(199) ". . . मानसिक रूपांतरण में कुशल लोगों में कुल्लापंथक शामिल हैं।"

199।

199. ...चेतोवित्तकुसलानं यदिदं चुळपन्थको।

---

(200) "...धारणा (सन्ना/संज्ञा) के रूपांतरण में निपुण लोगों में महापंथक भी शामिल हैं," 84

200।

200. ... संज्ञवित्तकुशलानं यदिदं महापंथको।

---

(201) "...उनमें से एक सुभूति हैं जो बिना किसी संघर्ष के निवास करते हैं।" 85

201. ...अरणविहारिनं यदिदं सुभूति।

201. ...अरणविहारेणं यदिदं सुभूति।

---

(202) ...दान के योग्य लोगों में सुभूति भी शामिल हैं।"

202. ...दक्खिनेयानां यदिदं सुभूति।

202. ... दक्षिणेयायनं यदिदं सुभूति।

---

(203) "...वनवासियों में रेवता खदिरावनिया हैं।" 86

203।

203. ... अर्ञ्जानकनं इदिदं रेवतो खदिरवानियो।

---

(204) "...ध्यान करने वालों में कंखारेवत भी शामिल हैं।" 87

204. ...झायिनं यदिदं कंखरेवतो।

204. ... झायिनं यदिदं कङ्खारेवतो।

---

(205) "...ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाने वालों में सोना कोलिविसा भी शामिल है।" 88

205।

205. ... अर्धविरियनं इदिदं सोनो कोळिविसो।

---

(206) "...इनमें उत्कृष्ट वक्ताओं में सोना कुटिकन्ना भी शामिल हैं।" 89

206. ...कल्याणवक्कराणं यदिदं सोनो कुटिकणो।

206. ...कल्याणवा त्राटकानां यदिदं सोनो कुटिकन्नो।

---

(207) "...लाभ प्राप्त करने वालों में सिवाह भी शामिल है।" 90

207. ...लाभिनं यदिदं सीवली।

207. ... लाभीनं यदिदं सीवली।

---

(208) "...विश्वास के माध्यम से संकल्पित लोगों में वक्काली भी शामिल हैं।" 91

208. ...सद्धाधिमुत्तनं यदिदं वक्कलिति।

208. ...सद्धधिमुत्तनं यदिदं वकलाति।

---

iii. तीसरा उप-अध्याय 209-218

(209) "भिक्षुओं (भिक्षुओं), मेरे भिक्षु शिष्यों में से जो प्रशिक्षण की इच्छा रखते हैं, उनमें सबसे आगे राहुल हैं।"

209. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सवाकाणं भिक्खुनं सिक्खकामनां यदिदं राहुलो"।

2020. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सावकानं भिक्खुनं सिक्खकामानं यदिदं राहुलो।"

---

(210) "...उन लोगों में से जो आस्था के कारण [सन्यासी जीवन में] चले गए हैं, उनमें रत्थपाल भी शामिल हैं।" 93

210. ...सद्धपब्बजीतानां यदिदं रथपालो।

210. ... साधपब्बजितानं इदिदं रत्थपालो।

---

(211) "...भोजन टिकट लेने वालों में सबसे पहले कुंडाधना का नाम आता है..." 94

211।

211. ...पथमं सलकं गंहन्तानं यदिदं कुंडधानो।

---

(212) "...प्रेरित काव्य रचने वालों में वांगिसा भी शामिल हैं।" 95

212. ... पतिभवनवंतानं यदिदं वांगीसो।

212. ... पतिभवनवंतानं यदिदं वङ्गिसो।

---

(213) ". . . सभी मामलों में विश्वास जगाने वालों में उपसेना वाहगंतपुत्त हैं;" 96 .

213।

33. ... समन्तपासादिकानं यदिदं उपसेनो वङ्गन्तपुत्ततो।

---

(214) "...आवास आवंटित करने वालों में डब्बा मल्लपुत्त भी शामिल हैं।" 97

214. ...सेनासनपन्नपकानां यदिदं दब्बो मल्लपुत्तो।

214. ... सेनासनपञ्चपकानं यदिदं दब्बो मल्लपुत्तो।

---

(215) "...देवताओं (देवदूतों) को प्रसन्न करने वाले और उन्हें प्रिय लगने वालों में पिलिन्दवच्छ भी शामिल है।" 98

215. ...देवतानां पियामानापानं यदिदं पिलिन्दवच्चो।

215. ...देवतानं पियमनापानं यदिदं पिलिन्दवच्छो।

---

(216) "...प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) शीघ्र प्राप्त करने वालों में बहिया दारुचिरिया है।" 99

216. ...हिप्पपाभिन्नां यदिदं बहियो दारुचिरियो।

216. ... खिप्पाभिञ्जानं यदिदं बहियो दारुचिरियो।

---

(217) "...बहुभाषी लोगों में कुमार कस्सपा भी शामिल हैं।" 100

217. ...चित्तकथिकानां यदिदं कुमारकस्सपो।

217. ... चित्तकथिकानं यदिदं कुमारकस्पो।

---

(218) "...विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त करने वालों में महाकोत्थिता भी शामिल है।" 101

218।

218. ...पतिस्मभिदपट्टानां यदिदं महाकोट्ठितोति

---

iv. चौथा उप-अध्याय 219-234

(219) "मेरे भिक्षु शिष्यों में, जो विद्वान हैं, उनमें सबसे श्रेष्ठ आनंद हैं।" 102

219. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सवाकाणं भिक्खुनं बहुसुतानं यदिदं आनंदो"।

219. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सावकानं भिक्खुनं बहुसुतानं इदिदं आनन्दो।"

---

(220) "...अच्छी याददा वालों में आनंद भी शामिल है।"

220. ...सतिमंतानां यदिदं आनंदो।

220. ...सतिमन्तानं यदिदं आनन्दो।

---

(221) ...तेजी से समझने वालों में आनंद भी शामिल है।" 103

221. ...गतिमन्तानां यदिदं आनन्दो।

221. ...गतिमन्तानां यदिदं आनंदो।

---

(222) "...दृढ़ संकल्पियों में आनंद भी शामिल है।" 104

222. ...धितिमन्तानां यदिदं आनन्दो।

222. ...धितिमन्तानं यदिदं आनन्दो।

---

(223) "... निजी परिचारकों में आनंद है।"

223. ...उपत्थाकानं यदिदं आनंदो।

230. ...उपट्ठकानं यदिदं आनन्दो।

---

(224) ... बड़े दल-भंगिमाओं वाले लोगों में उरुवेला कस्सपा भी शामिल है।" 105

224. ...महापरिसनं यदिदं उरुवेलकास्सापो।

224. ... महापरिसनं यदिदं उरुवेलकसपो।

---

(225) "...परिवारों में विश्वास जगाने वालों में कलुदयी भी शामिल हैं।" 106

225।

225. ... कुलप्पासादकानं यदिदं कळुदद।

---

(226) "...अच्छे स्वास्थ्य वालों में बक्कुला भी शामिल है।" 107

226. ...अप्पबधानं यदिदं बकुलो [बक्कुलो (सि. स्या. कं. पि.)]।

226. ... अप्पाबाधानं यदिदं बाकुलो [बकुलो (सी० स्या० कं० पी०)]।

---

(227) "...पूर्व जन्मों को याद करने वालों में शोभिता भी शामिल है।" 108

227. ...पुब्बेनिवासं अनुसरंतानां यदिदं शोभितो।

227. ... पुब्बेनिवासं अनुशासनं इदिदं सोभितो।

---

(228) "...अनुशासन के समर्थकों में उपाली भी शामिल हैं।" 109

228. ...विनयधारणं यदिदं उपालि।

228. ...विनयधारणं यदिदं उपलि।

---

(229) "...भिक्षुओं को उपदेश देने वालों में नंदका भी शामिल हैं।" 110

229. ...भिक्खुनोवादकनं यदिदं नन्दको।

229. ... भिक्खुनोवादकानं इदिदं नन्दको।

---

(230) "...इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करने वालों में नंदा भी शामिल हैं।" 111

230. ... इन्द्रियेसु गुत्तद्वारं यदिदं नन्दो।

230. ...इंद्रयेसु गुत्तद्यानं यदिदं नन्दो।

---

(231) "...भिक्षुओं को उपदेश देने वालों में महाकप्पिन भी शामिल हैं।" 112

231. ...भिक्खुवदकानं यदिदं महाकप्पिनो।

301. ... भिक्खुओवदकानं यदिदं महाकप्पिनो।

---

(232) "...अग्नि तत्व में निपुणता रखने वालों में सागाता भी शामिल है।" 113

232. ... तेजोधातुकुसलानां यदिदं सगतो।

332. ...तेजोधातुकुशलानं यदिदं सगातो।

---

(233) "...वाक्पटु प्रवचन प्राप्त करने वालों में राधा भी शामिल हैं।" 114

233. ...पतिभानेयकाणं यदिदं राधो।

233. ... पतिभनेय्याकानं यदिदं राधो।

---

(234) "...मोटे वस्त्र पहनने वालों में मोगराजा भी शामिल है।" 115

234. ...लुखचिवरधारणं यदिदं मोघराजति।

134. ...लखचिवर्धरानं यदिदं मोगरा जाति।

वी. पांचवां उपअध्याय (नन/भिक्कुनिस) 235-247

(235) "भिक्खु (भिक्षु), वरिष्ठता में मेरे भिक्खुनी (नन) शिष्यों में सबसे अग्रणी महापजापति गौतमी हैं।" 116

235. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सविकानं भिक्खुनिं रत्तन्नुणं यदिदं महापजापतिगोतमि"।

305. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सविकानं भिक्खुनीनं रत्तनद्नूनं इदिदं महापजापतिगोतमी।"

---

(236) "...महान पन्ना (दिव्य ज्ञान) प्राप्त करने वालों में खेमा है।" 117

236. ... महापन्ननं यदिदं खेमा।

306. ... महापञ्जानं यदिदं खेमा।

---

(237) "... मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) वाले लोगों में उप्पला वन्ना है।" 118

237. ...इद्धिमंतीनं यदिदं उप्पलवन्ना।

237. ... इधिमन्तिनं यदिदं उप्पलवन्ना।

---

(238) "...अनुशासन का पालन करने वालों में पटाकारा भी शामिल हैं।" 119

238. ...विनयधारणं यदिदं पटाचारा।

238. ...विनयधारणं यदिदं पटाचारा।

---

(239) "...धम्म पर बोलने वालों में धम्मदिन्ना भी शामिल हैं।" 120

239. ...धम्मकथिकानां यदिदं धम्मदिन्ना।

309. ... धम्मकथिकानं यदिदं धम्मदीनदाना।

---

(240) "...ध्यानियों में नंदा भी शामिल हैं।" 121

240. ...झायिनं यदिदं नंदा।

240. ... झायिनं यदिदं नन्दा।

---

(241) "...जो ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) उत्पन्न करते हैं उनमें सोना भी शामिल है।" 122

241. ... अरद्धविरियांणं यदिदं सोना।

241. ...अर्द्धवीरियानं यदिदं सोना।

---

(242) "...दिव्य दृष्टि रखने वालों में सकुला भी शामिल है।" 123

242।

242. ... दिब्बचक्खुकानं इदिदं बकुला [सुकुला (सी० स्या० कं० पी०)]।

---

(243) "...प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन) शीघ्र प्राप्त करने वालों में भद्दा कुंडलकेश है।" 124

243. ...हिप्पपाभिन्नां यदिदं भद्द कुंडलकेसा।

243. ... खिप्पाभिञ्जानं यदिदं भद्दा कुण्डलकेसा।

---

(244) "...पूर्व जन्मों को याद करने वालों में भद्दा कपिला भी शामिल हैं।" 125

244. ...पुब्बेनिवासं अनुसरंतीनां यदिदं भद्दा कपिलानि।

244. ... पुब्बेनिवासं अनुशासनं इदिदं भद्दा कपिलानि।

---

(245) "... उन लोगों में से जो महान प्रत्यक्ष ज्ञान (अभिन्न) प्राप्त करते हैं, भद्दा कक्काना हैं," 126

245. ...महाभिन्नप्पत्तनं यदिदं भद्दक्ककचना।

245. ...महाभिञ्चप्पत्तनं यदिदं भद्दकच्छना।

---

(246) "...मोटे वस्त्र पहनने वालों में किसागोतामी भी शामिल है।" 127

246. ... लुकाचिवरधारणं यदिदं किसागोतमि।

246. ...लुखचिवर्धारणं यदिदं किसागोतमि।

---

(247) "...विश्वास के माध्यम से संकल्पित लोगों में सिगालामाता भी शामिल है।" 128

247.

247. ...सद्धधिमुत्तनं यदिदं सिङ्गलकमातााति [सिघलमातााति (सी० स्या० कं० पी०)]।

---

vi. छठा उप-अध्याय (पुरुष गृहस्थ अनुयायी) 248-257

(248) "मेरे पुरुष गृहस्थ अनुयायियों में से, शरण लेने वाले पहले भिक्षु (भिक्षु) तपस्सा और भल्लिका हैं।" [26] 129

248. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सवाकानं उपासकनं पाठं शरणं गच्छंतानां यदिदं तपुस्साभल्लिका [तपसुभल्लिका (सी. पी.)] वनिजा"।

248. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सावकानं उपासकानं पथमं सरणं गच्छन्तानं इदिदं तपुस्साभल्ललिका [तपसुभल्ललिका (सी० पी०)] वाणीजा"।

---

(249) ...दानदाताओं में गृहस्थ सुदत्ता अनाथपिंडिका भी शामिल हैं।" 130

249. ... दयाकाणं यदिदं सुदत्तो गहपति अनाथपिण्डिको।

249. ... दायकानं यदिदं सुदत्तो गहपति अनाथपिंडिको।

---

(250) "...धम्म पर बोलने वालों में मच्चिकासंद का गृहस्थ चित्त भी शामिल है।" 131

250. ... धम्मकथिकाणं यदिदं चित्तो गहपति मच्छिकासांदिको।

250. ... धम्मकथिकानं यदिदं चित्तो गहपति मच्छिकासंदिको।

---

(251) "...दूसरों को आकर्षित करने और उनका भरण-पोषण करने के चार साधनों का उपयोग करने वालों में अलावी का हत्थका भी शामिल है।" 132

251।

251. ...चतुहि सङ्गहवत्तुहि परिसं सङ्घनहंतानं इदिदं हत्थको आळवको।

---

(252) ...उत्कृष्ट दान देने वालों में महानमा शाक्य है।" 133

252. ...पणितदायकानं यदिदं महानमो सक्को।

252. ...पणित्दायकानं यदिदं महानमो सफ्रको।

---

(253) "...जो लोग प्रसन्नतापूर्वक दान करते हैं उनमें वैशाली का गृहस्थ उगा भी शामिल है।" 134

253. ... मनपदायकानं यदिदं उग्गो गहपति वेसालिको।

253. ...मनपपकानां यदिदं उग्गो गहपति वेसालिको।

---

(254) "... संघ के सेवकों में गृहस्थ उग्गता है।" 135

254।

254. ...सङ्घुपत्थाकनं यदिदं हत्थिगंको उग्गतो गहपति।

---

(255) "...अटूट विश्वास रखने वालों में सूरा अंबत्था भी शामिल हैं।" 136

255।

255. ... अवेचप्पस नयनानं यदिदं सुरम्बट्ठो [सूरो अम्बत्थो (सी० स्या० कं० पी०) सुरेबन्धो (क०)]।

---

(256) "...लोगों पर विश्वास रखने वालों में जीवक कोमरभच्च भी शामिल हैं।" 137

256. ...पुग्गलप्पसन्नानं यदिदं जीवको कोमारभक्को।

256. ... पुग्गलप्पस नयनानां यदिदं जीवको कोमरभच्चो।

---

(257) "...जिन पर भरोसा किया जाता है उनमें गृहस्थ नकुलपिता भी शामिल हैं।" 138

257. ...विशासकानां यदिदं नकुलपिता गहपतिति।

257. ...विस्सासकानं यदिदं नकुलपिता गहपतिति।

---

vii. सातवाँ उप-अध्याय (महिला गृहस्थ अनुयायी) 258 — 267

(258) "भिक्षुओं (सन्यासियों), मेरी महिला गृहस्थ अनुयायियों में सबसे पहले शरण लेने वाली सुजाता है, जो सेनानी की पुत्री है।" 139

258. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सविकानं उपासिकाणं पथं शरणं गच्छन्तिनां यदिदं सुजाता सेनियाधिता" [सेनानि धिता" (सि. स्या. कं. पि.)].

258. "एतदग्गं, भिक्खवे, मम सविकानं उपासिकाणं पथमं शरणं गच्छनतीनं इदिदं सुजाता सेनियधीता" [सेनानी धीता (सी० स्या० कं० पी०)]।

---

(259) "... दानदाताओं में विशाखा मिगारमाता भी शामिल हैं।" 140

259. ... दैयिकाणं यदिदं विशाखा मिगरामाता।

259. ... दयाकानं यदिदं विशाखा मिगरमाता।

---

(260) "... विद्वानों में खुज्जुत्तारा भी शामिल हैं।" 141

260. ...बहुसुतानं यदिदं खुज्जुत्तरा।

260. ... बहुसुतानं यिददं खुज्जुत्तरा।

---

(261) "...उन लोगों में जो प्रेम और करुणा (मेट्टा) में निवास करते हैं, उनमें समवती भी शामिल हैं।" 142

261. ...मेत्ताविहारिनं यदिदं समावति।

261. ...मेत्ताविहारिनं यदिदं समावती।

---

(262) "...ध्यानियों में उत्तरा नंदमाता हैं।" 543

262. ...झायिनं यदिदं उत्तरानंदमाता।

262. ... झायिनं यदिदं उत्तरानंदमाता।

---

(263) "...उत्कृष्ट दान देने वालों में कोलियन पुत्री सुप्पावासा भी शामिल है।" 144

263. ...पणितदायिकाणं यदिदं सुप्पवासा कोलियधिता।

263. ... पणितदायिकानं यदिदं सुप्पवासा कोलियधीता।

---

(264) "...बीमारों की सेवा करने वालों में महिला अनुयायी सुप्पिया भी शामिल है।" 145

264. ... गिलानुपत्थाकिनां यदिदं सुप्पिया उपासिका।

264. ... गिलानुपत्थाकीनं यदिदं सुप्पिया उपासिका।

---

(265) ... अटूट विश्वास रखने वालों में कटियानी भी शामिल हैं।

265. ...एवेक्कप्पसन्नानं यदिदं कटियानि।

265. ...अवेच्चप्पस न्याणां इदिदं कटियानि।

---

(266) "...जिनके साथ घनिष्ठ संबंध हैं उनमें गृहिणी नकुलमाता भी शामिल हैं।" 147

266. ... विशासिकाणां यदिदं नकुलमाता गहपतनि।

266. ...विस्सासिकानं यदिदं नकुलमाता गहपतानी।

---

(267) ...जिनका विश्वास सुनी-सुनाई बातों पर आधारित है, उनमें कुलाघरिका की महिला अनुयायी काली भी शामिल है।" 148

267।

267. ... अनुस्सवप्पस नारायणं यदिदं काळी उपासिका कुलघरिका [कुलघरिका (क०)] ति।

(1.XV) असंभव 149 (अत्थाना)

268

"यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि दृष्टि में सिद्ध कोई (प्रबुद्ध) व्यक्ति किसी भी सशर्त घटना (संहार/संस्कार/भावना) को स्थायी मान सकता है; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है [27] कि कोई सांसारिक व्यक्ति किसी सशर्त घटना (संहार/संस्कार/भावना) को स्थायी मान सकता है; ऐसी संभावना है।" 150

268. "अठाणमेतम्, भिक्खवे, अनवकासो यं दितिहिसाम्पन्नो पुग्गलो कान्सि [किन्चि (का.)] संखारं निक्कतो उपगच्छेया। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं पुथुज्जणो कैञ्चि संखरं निक्कतो उपगच्छेया। हानामेतं विज्जति'ति।

268. "अट्ठानमेतं , भिक्खवे, अनवकासो यं दिट्ठिसम्प स्यानो पुग्गलो कन्दिचि [किञ्चचि (क०)] सङ्खारं निच्चदचतो उपगच्छेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं पुथुज्जनो कांचचि सङ्खारं निच्चदचतो उपगच्छेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

269

भिक्षुओं, यह असंभव और अकल्पनीय है कि दृष्टि में सिद्ध पुरुष किसी भी सत्वभूत घटना (संहार/संस्कार/भावनाओं) को सुखद समझे; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि सांसारिक पुरुष कुछ सत्वभूत घटनाओं (संहार/संस्कार/भावनाओं) को सुखद समझे; ऐसी संभावना है।

269. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनावकासो यं दितिथिसंपन्नो पुग्गलो कांची संखारं सुखतो उपगच्छेया।" नेतं ठाणं विज्जति. ढानांच खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं पुथुज्जनो कांची संखारं सुखतो उपगच्छेया। हानामेतं विज्जति'ति।

269. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं दिट्ठिसम्प स्यानो पुग्गलो कांचि सङ्खारं सुखतो उपगच्छेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं पुथुज्जनो कांचि सङ्खारं सुखतो उपगच्छेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

270

"भिक्षुओं, यह असंभव और अकल्पनीय है कि ज्ञान में निपुण व्यक्ति किसी भी चीज़ को आत्मा मान सके; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि सांसारिक व्यक्ति किसी चीज़ को आत्मा मान ले; ऐसी संभावना है।" 152

270. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनावकासो यं दितिथिसंपन्नो पुग्गलो कांची धम्मं अत्ततो उपगच्छेया। नेतं ठाणं विज्जति. ढानांच खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं पुथुज्जणो कांची धम्मं अत्ततो उपगच्छेया। हानामेतं विज्जति'ति।

270. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं दिट्ठिसम्प सानज्यो पुग्गलो कंचि धम्मं अत्तत्तो उपगच्छेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं पुथुज्जजनो कंचि धम्मं अत्तत्तो उपगच्छेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

---

271 — 276

(271) "यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति अपनी माता का वध कर सकता है... (272) कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति अपने पिता का वध कर सकता है... (273) कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति किसी अरहंत का वध कर सकता है... (274) कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति घृणा के भाव से तथागत का रक्त बहा सकता है... (275) कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति संघ में फूट डाल सकता है... (276) कि सिद्ध दृष्टि वाला व्यक्ति बुद्ध के अतिरिक्त किसी अन्य को गुरु मान सकता है; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि कोई सांसारिक व्यक्ति बुद्ध के अतिरिक्त किसी अन्य को गुरु मान सकता है; ऐसी संभावना है।" 153

271. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनावकासो यं दितिथिसंपन्नो पुग्गलो मातरं जीवित वोरोपेय। नेतं ठाणं विज्जति. तनानच खो, भिक्खवे, विज्जति यं पुथुज्जनो मातरं जीवित वोरोपेय। हानामेतं विज्जति'ति।

272. "अत्थानमेतं, भिक्खवे, अनावकासो यं दितिथिसंपन्नो पुग्गलो पितरं जीवित वोरोपेय। नेतं ठाणं विज्जति. ठाणञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं पुथुज्जनो पितरं जीवित वोरोपेय। हानामेतं विज्जति'ति।

273. "अत्थानमेतम्, भिक्खवे, अनावकासो यं दितिथिसंपन्नो पुग्गलो अरहंतां जीवित वोरोपेय। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं पुथुज्जनो अरहंतां जीवित वोरोपेय। हानामेतं विज्जति'ति।

274. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं दितिथिसंपन्नो पुग्गलो तथागतस्स पदुत्थचित्तो लोहितं उप्पादेय्य। नेतं ठाणं विज्जति. हानांच खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं पुथुज्जनो तथागतस्स पदुत्थचित्तो लोहितं उप्पादेय्य। हानामेतं विज्जति'ति।

275. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनावकासो यं दिट्ठिसमपन्नो पुग्गलो संघं भिंडेय। नेतं ठाणं विज्जति. ठाणञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं पुथुज्जनो संघं भिंडेय। हानामेतं विज्जति'ति।

276. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनावकासो यं दितिथिसंपन्नो पुग्गलो अन्नं सत्थारं उद्दिसेय।' नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं पुथुज्जनो अण्णां सत्थारं उद्दिसेय। हानामेतं विज्जति'ति।

271. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं दिट्ठिसम्प सानज्यो पुग्गलो मातरं सजीव वोरोपेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो, भिक्खवे, विज्दजति यं पुथुज्जनो मातरं सजीव वोरोपेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

272. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं दिट्ठिसम्प सानज्यो पुग्गलो पितरं सजीव वोरोपेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं पुथुजज्जनो पितरं सजीव वोरोपेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

273. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं दिट्ठिसम्प सानज्यो पुग्गलो अरहंतं सजीव वोरोपेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्मजति यं पुथुज्जनो अरहंतं सजीव वोरोपेय।ठाणमेतं विज्जति"ति।

274. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं दिट्ठिसम्प सानज्यो पुग्गलो तथागतस्स पदुत्थचित्तो लोहितं उप्पादेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं पुथुजज्जनो तथागतस्स पदुत्थचित्तो लोहितं उप्पादेय।ठाणमेतं विज्जति"ति।

275. "अट्ठानमेतं , भिक्खवे, अनवकासो यं दिट्ठिसम्प संज्ञाओ पुग्गलो सङ्घं भिन्देय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं पुथुज्जनो सङ्घं भिन्देय।ठाणमेतं विज्जति"ति।

276. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं दिट्ठिसम्प वैज्ञानिको पुग्गलो अञ्जन सथारं उद्दिसेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं पुथुज्जनो अञ्जन सथारं उद्दिसेय।ठाणमेतं विज्जति"ति।

277

"यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि दो पूर्णतः प्रबुद्ध बुद्ध अरहंत 154 [28] एक ही विश्व व्यवस्था में समकालीन रूप से प्रकट हो सकें; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि एक पूर्णतः प्रबुद्ध बुद्ध अरहंत एक ही विश्व व्यवस्था में प्रकट हो सकें; ऐसी संभावना है।" 155

277. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनावकासो यं एकिस्सा लोकधातुया द्वे अरहंतो सम्मासंबुद्धा अपुब्बं अचरिमं उप्पज्जेय्युं। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं एकिस्सा लोकधातुया एकोवा अरहं सम्मासंबुद्धो उप्पज्जेय्य। हानामेतं विज्जति'ति।

277. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं एकिस्सा लोकधातुया द्वे अरहंतो सम्मासंबुद्धा अपुब्बं अचरिमं उप्पजदजेय्युं। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं एकिस्सा लोकधातुया एकोव अरहं सम्मासम्बुद्धो उप्पजदजेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

278

"भिक्षुओं, यह असंभव और अकल्पनीय है कि एक ही विश्व व्यवस्था में दो चक्र-चालक सम्राट एक साथ उत्पन्न हो सकें; ऐसी कोई संभावना नहीं है। 156 परन्तु यह संभव है कि एक ही विश्व व्यवस्था में एक चक्र-चालक सम्राट उत्पन्न हो सके; ऐसी संभावना है।"

278. "अट्ठानमेतम्, भिक्खवे, अनवकासो यं एकिस्सा लोकधातुया द्वे राजणो चक्कवत्ती अपुब्बं अचरिमं उप्पज्जेय्युम्।" नेतं ठाणं विज्जति । न्हाणंच खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं एकिस्सा लोकधातुया एको राजा चक्कवत्ती उप्पज्जेय्य। हानामेतं विज्जति'ति।

278. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं एकिस्सा लोकधातुया द्वे राजानो च त्रकवत्ती अपुब्बं अचरिमं उप्पजदजेयुं। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं एकिस्सा लोकधातुया एको राजा चकवक्ति उप्पजदजेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

---

279 -283

(279) "यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि कोई स्त्री पूर्णतः प्रबुद्ध बुद्ध अरहंत हो सकती है... (280) ...कि कोई स्त्री चक्र चलाने वाली सम्राट हो सकती है... (281) ...कि कोई स्त्री सक्का (इंद्र) का पद धारण कर सकती है... (282) ...कि कोई स्त्री मार का पद धारण कर सकती है... (283) ...कि कोई स्त्री ब्रह्मा का पद धारण कर सकती है; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि कोई पुरुष ब्रह्मा का पद धारण कर सकता है; ऐसी संभावना है।" 157

279. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनावकासो यं इत्थि अरहं अस्स सम्मासंबुद्धो। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणञ्च खो, एतां, भिक्खवे, विज्जति यं पुरिसो अरहं अस्स सम्मासंबुद्धो। हानामेतं विज्जति'ति।

280. "अट्ठानमेतम, भिक्खवे, अनवकासो यं इत्थि राजा अस्स चक्कवत्ती। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणंच खो एतां, भिक्खवे, विज्जति यं पुरिसो राजा अस्सा चक्कवत्ती। हानामेतं विज्जति'ति।

281-283. "अठानामेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं इत्थी सक्कट्टं कारेया...पे... मरत्तं कारेया...पे... ब्रह्मत्तं कारेया। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणंच खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यम पुरिसो सक्कत्तं कारेया...पे... मरत्तं कारेया...पे... ब्रह्मत्तं कारेया। हानामेतं विज्जति'ति।

279. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं इत्थि अरहं अस्स सम्मासम्बुद्धो। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो, एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं पुरिसो अरहं अस्स सम्मासम्बुद्धो। ठाणमेतं विज्जति''ति।

280. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं इत्थि राजा अस्स च त्रकवत्ती। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यां पुरिसो राजा अस्स चकरावत्ती। ठाणमेतं विज्जति''ति।

21-283. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं इत्थि स त्रक्तं करेय...पे०... मार्त्तं करेय...पे०... ब्रह्मत्तं करेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं पुरिसो सर्कक्तं करेय...पे०... मार्त्तं करेय...पे०... ब्रह्मत्तं करेय। ठाणमेतं विज्जति''ति।

---

284 -286

(284) "हे भिक्षुओं, यह असंभव और अकल्पनीय है कि शारीरिक दुराचार से वांछित, मनभावन, सुखद परिणाम प्राप्त हो सके... (285) ... कि मौखिक दुराचार से वांछित, मनभावन, सुखद परिणाम प्राप्त हो सके... (286) ... कि मानसिक दुराचार से वांछित, मनभावन, सुखद परिणाम प्राप्त हो सके; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि मानसिक दुराचार से अवांछित, अप्रिय, अप्रिय परिणाम प्राप्त हो सके [शारीरिक दुराचार से... मौखिक दुराचार से...]; ऐसी संभावना है।"

284. "अत्थानमेतम, भिक्खवे, अनावकासो यं कायदुच्चरित्स्स इत्थो कंतो मनापो विपाको निब्बत्तेय्य। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणंच खो एतां, भिक्खवे, विज्जति यं कयादुच्चरित्स्सा अनिथो एकान्तो अमानपो विपाको निब्बत्तेय्य। हानामेतं विज्जति'ति।

285-286. "अथानामेतम्, भिक्खवे, अनावकासो यम वासिदुच्चरित्स्स...पे... यं मनोदुच्चरित्स्स इत्थो कान्तो मनापो विपाको निब्बत्तेय्य। नेतं ठाणं विज्जति. न्हानांच खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं मनोदुच्चरितास्स अनिथो अकान्तो अमानपो विपाको निब्बत्तेय्य। हानामेतं विज्जति'ति।

284. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं कयदुच्चचरितस्स इत्थो कन्तो मनापो विपाको निब्बटेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं कयदुच्चचरितस्स अनित्थो अकांतो अम्नापो विपाको निब्बटेय। ठाणमेतं विज्जति''ति।

285-286. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं वचिदुच्चचरितस्स...पे०...यं मनोदुचचरितस्स इत्थो कन्तो मनापो विपाको निब्बटेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं मनोदुच्छचरितस्स अनित्थो अकांतो अम्नापो विपाको निब्बटेय। ठाणमेतं विज्जति''ति।

287— 289

(287) "यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि शारीरिक अच्छे आचरण से कोई अवांछित, अप्रिय परिणाम उत्पन्न हो सकता है [29] . . . (288) . . . कि मौखिक अच्छे आचरण से कोई अवांछित, अप्रिय परिणाम उत्पन्न हो सकता है ... (289) . . . कि मानसिक अच्छे आचरण से कोई अवांछित, अप्रिय परिणाम उत्पन्न हो सकता है; ऐसी कोई संभावना नहीं है। लेकिन यह संभव है कि मानसिक

अच्छे आचरण से वांछित, सुखद परिणाम उत्पन्न हो सकता है [शारीरिक अच्छे आचरण से . . . मौखिक अच्छे आचरण से . . .]; ऐसी संभावना है।" 153

287. "अत्थानमेतम्, भिक्खवे, अनावकासो यं कायासुचरितस्स अनिथो अकान्तो अमानपो विपाको निब्बत्तेय्य। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं कायासुचरितस्स इत्थो कंतो मनापो विपाको निब्बत्तेय। हानामेतं विज्जति'ति।

288-289. "अत्थानमेतम्, भिक्खवे, अनवकासो यम् वसीसुकारित्सा...पे... मनोसुचरितस्स अनिथो अकांतो अमानपो विपाको निब्बत्तेय्य। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणंच खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं मनोसुचरितस्स इत्थो कंतो मनापो विपाको निब्बत्तेय। हानामेतं विज्जति'ति।

287. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं कायसुचरित्सस अनित्थो अकांतो अम्नापो विपाको निब्बटेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं कायसुचरितस्स इत्थो कन्तो मनापो विपाको निब्बटेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

288-289. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं वचिसुचरित्स्स...पे.... मनोसुचरित्स्स अनित्थो अकांतो अम्नापो विपाको निब्बटेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं मनोसुचरितस्स इत्थो कन्तो मनापो विपाको निब्बटेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

---

290 - 292

(290) "यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि शारीरिक दुराचार में लिप्त व्यक्ति, शरीर के विखंडन के कारण, मृत्यु के बाद, किसी अच्छे स्थान, किसी स्वर्गलोक में पुनर्जन्म ले सके... (291) ... कि मौखिक दुराचार में लिप्त व्यक्ति, शरीर के विखंडन के कारण, मृत्यु के बाद, किसी अच्छे स्थान, किसी स्वर्गलोक में पुनर्जन्म ले सके... (292) ... कि मानसिक दुराचार में लिप्त व्यक्ति, शरीर के विखंडन के कारण, मृत्यु के बाद, किसी अच्छे स्थान, किसी स्वर्गलोक में पुनर्जन्म ले सके; ऐसी कोई संभावना नहीं है। परन्तु यह संभव है कि शारीरिक दुराचार ... मौखिक दुराचार ... में लिप्त व्यक्ति, मानसिक दुराचार में लिप्त व्यक्ति, शरीर के विखंडन के कारण, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में पुनर्जन्म ले सके... बुरी नियति, निम्न लोक में, नरक में; ऐसी संभावना है।"

290. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं कायदुच्चरितसामंगी तन्निडाना तप्पक्कया कायस्सा भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जेय्य। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणंच खो एतां, भिक्खवे, विज्जति यं कायदुक्करितसामंगी तन्निडाना तप्पक्कया कायस्सा भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपतां निरयं उपपज्जेय्या. हानामेतं विज्जति'ति।

291-292. "अठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यम् वसीदुच्चरितसामंगी...पे... यं मनोदुच्चरितसामंगी तन्निदाना तप्पक्कया कायस्सा भेदा परं मरणा सुगतिं" सग्गं लोकं उपपज्जेय्य। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणंच खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं मनोदुच्चरित्समंगी तन्निदाना तप्पक्कया कायस्सा भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपतां निरयं उपपज्जेय्या. हानामेतं विज्जति'ति ।

290. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं कायदुच्चचरितसमङ्गी त संज्ञा तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपजदजेय। नेतं ठानं विज्जति। तन्नदच खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं कायदुच्चचरितसमङ्गी त संज्ञाना तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपयं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जजेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

291-292. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं वचिदुच्चचरितसमङ्गी...पे....यं मनोदुच्चचरितसमङ्गी त संज्ञाना तप्पचदचया कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जजेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं मनोदुच्चचरितसमङ्गी त संज्ञादाना तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपज्जजेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

---

293 -295

(293) "यह असंभव और अकल्पनीय है, भिक्षुओं, कि शारीरिक अच्छे आचरण में संलग्न कोई व्यक्ति, उस कारण से, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म ले (294) ... कि मौखिक अच्छे आचरण में संलग्न कोई व्यक्ति, उस कारण से, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म ले ... (295) ... कि मानसिक अच्छे आचरण में संलग्न कोई व्यक्ति, उस कारण से, शरीर के विखंडन के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म ले; ऐसी कोई संभावना नहीं है। लेकिन यह संभव है [30] कि कोई व्यक्ति [शारीरिक अच्छे आचरण में ... मौखिक अच्छे आचरण में ...] मानसिक अच्छे आचरण में संलग्न हो, उस कारण से, इसलिए, शरीर के नष्ट होने के बाद, मृत्यु के बाद, एक अच्छे गंतव्य में, स्वर्ग लोक में पुनर्जन्म होना संभव है।

293. "अट्ठनामेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं कायासुचरितसमंगी तन्निडाना तप्पक्कया कायस्सा भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपताम्" निरयं उपपज्जेय्य। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणंच खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यं कायासुचरितसामांगी तन्निडाना तप्पक्कया कायास्सा भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जेया। हानामेतं विज्जति'ति।

294-295. "अठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं वसीसुचरितसामंगी...पे... यं मनोसुचरितसामंगी तन्निडाना तप्पक्कया कायस्सा भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जेय्य। नेतं ठाणं विज्जति. न्हाणंच खो एतं, भिक्खवे, विज्जति यम मनोसुचरितसामंगी तन्निडाना तप्पक्कया कायस्सा भेदा परं मरण सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जेय्य। हानामेतं विज्जति'ति।

293. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं कायसुचरितसमङ्गी त संज्ञादाना तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निर्यं उपपज्जजेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं कायसुचरितसमङ्गी त संज्ञादाना तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जजेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

294-295. "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं वचिसुचरितसमङ्गी...पे....यं मनोसुचरितसमङ्गी त संज्ञा तप्पच्चया कायस भेदा परं मरणा उपायं दुग्गतिं विनिपातं निर्यं उपजजेय। नेतं ठानं विज्जति। ठनञ्च खो एतं, भिक्खवे, विज्दजति यं मनोसुचरितसमङ्गी त संज्ञा तप्पच्चया कयस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जजेय। ठाणमेतं विज्जति"ति।

(1.XVI) एक बात 159[एकधम्म]

i. पहला उपअध्याय

296

भिक्षुओं, एक ऐसी चीज है जिसका विकास और अभ्यास करने से केवल निब्बिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण प्राप्त होता है। 160 वह एक चीज क्या है? बुद्ध का स्मरण। 161 यही वह एक चीज है जिसका विकास और अभ्यास करने से केवल निब्बिदा... निर्वाण प्राप्त होता है।

296. "एकधम्मो, भिक्खवे, भावितो बाहुलिकतो एकान्तनिब्बिदया विरागया निरोधाय उपसामय अभिनयाय सम्बोधाय निब्बानया संवत्तति। काटामो एकधम्मो? बुद्धनुस्सति. अयं खो, भिक्खवे, एकाधम्मो भावितो बाहुलिकतो एकांतनिब्बिदया विरागया निरोधाय उपसामय अभिनयाय संबोधाय निब्बानया संवतति"।

296. "एकधम्मो, भिक्खवे, भावितो बहुलिकतो एकांतनिब्बिदय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिज्ञानाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति। कतमो एकधम्मो? बुद्धानुस्स्ति। अयं खो, भिक्खवे, एकदम्मो भावितो बहुलिकतो एकांतनिब्बिदय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिज्ञानाय सम्बोधाय निब्बानय संवत्ति"ति।

297

(297) "भिक्षुओं, एक ऐसी चीज है जिसका विकास और अभ्यास करने से केवल निब्दिदा, वैराग्य, शांति, प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञानोदय और निर्वाण प्राप्त होता है। वह एक चीज क्या है? धम्म का स्मरण... संघ का स्मरण... सद्गुणों का स्मरण... उदारता का स्मरण... देवताओं का स्मरण... श्वास का ध्यान... मृत्यु का ध्यान... शरीर का ध्यान... शांति का स्मरण... यही वह एक चीज है जिसका विकास और अभ्यास करने से केवल निब्दिदा और निर्वाण प्राप्त होता है।"

297. "एकधम्मो, भिक्खवे, भावितो बाहुलिकतो एकान्तनिब्बिदया विरागया निरोधाय उपसामय अभिनयाय संबोधाय निब्बानया संवत्तति। काटामो एकधम्मो? धम्मानुस्सति...पे... संघनुस्सति... सिलानुस्सति... चगनुस्सति... देवतानुस्सति... अनापानस्सति... मरणस्सति... कायगतासति... उपासमनुस्सति। अयं खो, भिक्खवे, एकदम्मो भावितो बाहुलिकतो एकांतनिब्बिदया विरागया निरोधाय उपसामय अभिनयाय संबोधाय निब्बानया संवत्तति।]

297. "एकधम्मो, भिक्खवे, भावितो बहुलिकतो एकांतनिब्बिदय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिज्ञानाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति। कतमो एकधम्मो? धम्मनुस्स्ति...पे०... सङ्घानुस्स्ति... सीलानुस्स्ति... चगानुस्स्ति... देवतानुस्स्ति...अनापानस्सति... मरणस्सति... कायगतस्सति... उपसमानुस्सति। अयं खो, भिक्खवे, एकदम्मो भावितो बहुलिकतो एकांतनिब्बिदय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिज्ञानाय सम्बोधाय निब्बानय संवत्ति"ति।

---

ii. दूसरा उप-अध्याय

298

भिक्षुओं, मुझे ऐसा कोई भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न हों और उत्पन्न होकर इतनी वृद्धि और विस्तार हो जितना कि गलत दृष्टिकोण से होता है। गलत दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होकर बढ़ते और विस्तार होते हैं।

298. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपसामि येन अनुप्पन्ना वा अकुशला धम्म उप्पज्जन्ति उपपन्ना वा अकुशला धम्म भयोभवाय वेपुलया संवत्तन्ति यथयिदं, भिक्खवे, मिच्छदिथि। मिच्छादिथिकास्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा अकुशला धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च अकुशला धम्म भयोभवाय वेपुलया संवत्तन्ति।

298. "नहं, भिक्खवे, अञ्जनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नागा वा अकुसला धम्म उप्पजजंति उप्पा नागा वा अकुसला धम्म भयोभावाय वेपुलादालय संवत्तन्तिथयिदं, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठि। मिच्छादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव अकुसला धम्म उप्पजजंति उप्प नायना च अकुसला धम्मा भयोभावाय वेपुलल्लाय संवत्तन्ति"ति।

299

"भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न हों और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण इतने अधिक बढ़ें और फैलें जितना सही दृष्टि से होता है। [31] सही दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए, अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) बढ़ते और फैलते हैं।"

299. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा कुसल धम्म भयोभवाय वेपुलया संवत्तन्ति यथयिदं , भिक्खवे , सम्मादिथि । सम्मादिथिकस, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति उप्पन्ना च कुसल धम्म भयोभवाय वेपुलया संवत्तन्ति।

299. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नागा वा कुसला धम्म उप्पजजंति उप्पा नागा वा कुसला धम्मा भयोभवाय वेपुलाल्लाय संवतन्ति यथयिदं, भिक्खवे, सम्मादिट्ठि। सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव कुसला धम्म उप्पजजंति उप्प नयना च कुसला धम्मा भयोभावाय वेपुलल्लाय संवत्तन्ति"ति।

300

भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न न हों और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण इतने अधिक कम हो जाएँ जितना कि गलत दृष्टिकोण। 165 गलत दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए, अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) कम हो जाते हैं।

300. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा कुसल धम्म नुप्पज्जन्ति उपपन्ना वा कुसल धम्म परिहयन्ति यथायिदं, भिक्खवे, मिच्छादिथि. मिच्छादिथिकस, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा कुसल धम्म नुप्पज्जन्ति उप्पन्ना च कुसल धम्म परिहयन्ति"।

300. " नहं , भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नागा वा कुसला धम्म नुप्पजदजन्ति उप्प नागा वा कुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठि। मिच्छादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव कुसला धम्मा नुप्पजजंति उप्प नयना च कुसला धम्मा परिहयन्ति"ति।

301

भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिससे अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न न हों और उत्पन्न अकुशल गुण कम हो जाएँ, सिवाय सही दृष्टि के। 166 सही दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न अकुशल गुण कम हो जाते हैं।

301. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा अकुसाला धम्म नुप्पज्जन्ति उप्पन्ना वा अकुसाला धम्म परिहयन्ति यथयिदं, भिक्खवे, सम्मादिति. सम्मादिथिक्कस्सा, भिक्खवे, अनुप्पन्ना सेवा अकुशला धम्म नुप्पज्जन्ति उप्पन्ना च अकुशला धम्म परिहयन्ति"।

301. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प सना वा अकुसला धम्म नुप्पज्जन्ति उप्पा नपा वा अकुसला धम्म परिहन्ति यथयिदं, भिक्खवे, सम्मादिट्ठि। सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, अनुप्प साइना चेव अकुसला धम्म नुप्पजजंति उप्प नागा च अकुसला धम्मा परिहयन्ति"ति।

302

"भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई भी चीज नजर नहीं आती जिससे अनपेक्षित गलत विचार उत्पन्न हो और उत्पन्न गलत विचार इतना बढ़ जाए जितना कि लापरवाही से ध्यान देने से। लापरवाही से ध्यान देने वाले व्यक्ति के लिए अनपेक्षित गलत विचार उत्पन्न होता है और उत्पन्न गलत विचार बढ़ता ही जाता है।" 167

302. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा मिच्छदिथि उप्पज्जति उपपन्ना वा मिच्छदिथि पवद्धति यथयिदं, भिक्खवे, अयोनिसोमनसिकारो। अयोनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्पन्ना सेवा मिच्छादिथि उप्पज्जति उपपन्ना च मिच्छादिथि पवधति"ति।

302. "नहं, भिक्खवे, अञ्जनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नयना वा मिच्छादिट्ठि उप्पजदजति उप्पा नगा वा मिच्छादिट्ठि पवन्नति यथयिदं, भिक्खवे, अयोनिसोमनसिकारो। अयोनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्प नासा चेव मिच्छादिट्ठि उप्पजदजति उप्प नागा च मिच्छादिट्ठि पवन्नति"ति।

303

"भिक्षुओं, मुझे ऐसी कोई भी चीज दिखाई नहीं देती जिससे अजन्मा सही दृष्टिकोण उत्पन्न हो और उत्पन्न सही दृष्टिकोण में इतनी वृद्धि हो जितनी कि सजग ध्यान से होती है। सजग ध्यान से देखने पर अजन्मा सही दृष्टिकोण उत्पन्न होता है और उत्पन्न सही दृष्टिकोण में वृद्धि होती है।" 168

303. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन अनुप्पन्ना वा सम्मादिथि उप्पज्जति उपपन्ना वा सम्मादिथि पवधति यथयिदं, भिक्खवे, योनिसोमनासिकारो. योनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्पन्ना सेवा सम्मादिथि उप्पज्जति उप्पन्ना च सम्मादिथि पवधति"ति।

303. "नहं, भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन अनुप्प नासा वा सम्मादिट्ठि उप्पजदजति उप्पा नागा वा सम्मादिट्ठि पवन्नति यथयिदं, भिक्खवे, योनिसोमनसिकारो। योनिसो, भिक्खवे, मनसि करोतो अनुप्प नासा चेव सम्मादिट्ठि उप्पजदजति उप्प नागा च सम्मादिट्ठि पवन्नति"ति।

304

भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता जिसके कारण शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, प्राणी दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं, सिवाय गलत दृष्टि के। गलत दृष्टि रखने वाले प्राणी, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, दुख के लोक में, बुरे गंतव्य में, निम्न लोक में, नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।

304. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन [येनेवं (सि. स्या. कां. पि.)] सत्ता कायस्सा भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ति यथायिदं, भिक्खवे, मिच्छदिथि। मिच्छादिठिया, भिक्खवे, समानागत सत्ता कायस्सा भेदा परं मरण अपायं दुग्गतिं विनिपतं निरयं उपपज्जन्ति"।

304. "नहं , भिक्खवे, अञ्चनं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन [येनेवं (सी० स्या० कं० पी०)] सत्य कायस भेद परं मरणा अपायं यग्नतिं विनिपातं निर्यं उपपज्जन्तिथयिदं, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठि। मिच्छादिट्ठिया, भिक्खवे, सम नासागता सत्य कायस भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निर्यं उपपज्जन्ति"ति।

305

"भिक्षुओं, मुझे ऐसा एक भी कारण नहीं दिखता [32] जिसके कारण शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, प्राणी अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं, सिवाय सही दृष्टि के। सही दृष्टि रखने वाले प्राणी, शरीर के टूटने के बाद, मृत्यु के बाद, अच्छे गंतव्य, स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

305. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि येन सत्ता कायस्सा भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति यथायिदं, भिक्खवे, सम्मादिति. सम्मदिठिया, भिक्खवे, समानागत सत्ता कायस्सा भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति"।

305. "नाहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि येन सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति यथैदं, भिक्खवे, सम्मादिट्ठि। सम्मादिट्ठिया, भिक्खवे, सम अज्ञानता सत्य कायस भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति"ति।

306

भिक्षुओं, गलत दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए, उसके द्वारा उस दृष्टिकोण के अनुसार किए गए सभी शारीरिक कर्म, वाणी कर्म और मानसिक कर्म, और उसकी सभी आत्म-जागरूकता, लालसा, प्रवृत्ति और संस्कार, सभी अवांछित, अप्रिय और हानि एवं पीड़ा की ओर ले जाते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका दृष्टिकोण गलत है। मान लीजिए, भिक्षुओं, नीम, खीरा या करेला का एक बीज नम मिट्टी में बोया गया। मिट्टी और पानी से वह जो भी पोषक तत्व ग्रहण करता है, वे सभी उसके कड़वे, तीखे और अप्रिय स्वाद का कारण बनते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि बीज खराब है। इसी प्रकार, गलत दृष्टिकोण वाले व्यक्ति के लिए, सभी अवांछित, अप्रिय और हानि एवं पीड़ा की ओर ले जाते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि उसका दृष्टिकोण गलत है।

306. "मिच्छदिथिकस, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलस्सा यान्सेव कायकम्मं यथादिथि समत्तं समादिन्नं याञ्च वाचिकम्म...पे... याञ्च मनोकम्मम् यथादिथि समत्तं समादिन्नं या च चेतना या च पत्तन यो च पणिधि ये च संखारा सब्बे ते धम्म अनित्थाय एकान्ताय अमानपाय अहिताय दुक्खाय सांवत्तन्ति. इसलिए किस्सा हेतु? दितिहि हिसा [दितिहि हि (सि. स्या. कां. पि.)], भिक्खवे, पपीका। सेयथापि, भिक्खवे, निम्बाबीजं वा कोसाताकिबीजं वा तित्तकलाबुबिजं वा अल्लाया पथविया [पठाविया (सि. स्या. कं. पि.)] निकखिटं यानसेवा पथविरसं उपादेयति यञ्च अपोरसं उपादेयति सब्बं तं तित्तकट्टया कटुकट्टय असतत्तय सवत्तति। इसलिए किस्सा हेतु? बिजं हिस्सा [विजं (सि. स्या. कं. पि.)], भिक्खवे, पापकम्। एवमेवं खो, भिक्खवे, मिच्छादिथिकस पुरिसपुग्गलास्सा यान्सेव कायकम्मं यथादिथि समत्तं समादिन्नं याञ्च वसीकम्मम्...पे... यञ्च मनोकम्मम् यथादिथि समत्तं समादिन्नं या च चेतना या च पत्तन यो च पणिधि ये च संखारा सब्बे ते धम्म अनित्थाय एकान्ताय अमानपाय अहिताय दुक्खाय सांवत्तन्ति. इसलिए किस्सा हेतु? दितिहि हिस्सा, भिक्खवे, पापिका'ति।

306. "मिच्छदिट्ठिकस्स, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलस्स यंदचेव कायकम्मं अतादिट्ठी समत्तं समादि साइनं यञ्च वचिकम्मं...पे.... यञ्च मनोकम्मं यथादिट्ठि समत्तं समादि साइनं या च अना या च पथना यो च पणिधि ये च सक्खरा सब्बे ते धम्म अनित्थाय आकांताय अमापाय अहिताय दुक्खाय संवत्तन्ति। तं किस्से? दिट्ठी हिस्स [दिट्ठी हि (सी० स्या० कं० पी०)], भिक्खवे, पापिका। सेयथापि, भिक्खवे, निंबबीजं वा कोसाताकिबीजं वा तित्तकलाबुबीजं वा अल्ललय पथ्विया [पठ्विया (सी० स्या० कं० पी०)] निखित्तं यञ्चेव पथ्विरसं उपादेयति यञ्च अपोरसं उपादेयति सब्बं तं तित्तकट्टय कटुकट्टय असत्तय संवत्तति। तं किस्से? बीजें हिस्स [विजं (सी० स्या० कं० पी०)], भिक्खवे, पापकं। एवेमेवं खो, भिक्खवे, मिचादिट्ठिकस्स पुरिसपुग्गलस यञ्चेव कायकम्मं यथादिट्ठी समत्तं समादि साइनं यञ्च वचिकम्मं...पे.... यञ्च मनोकम्मं यथादिट्ठी समत्तं समादि साइनं या च अना या च पथना यो च पनिधि ये च सङ्खारा सब्बे ते धम्म अनित्थय अकांताय अमानपाय अहिताय दुःखाय संवत्तन्ति। तं किस्से? दिट्ठी हिस्स, भिक्खवे, पापिका"ति।

307

भिक्षुओं, सही दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए, वह जो भी शारीरिक कर्म, वाणी कर्म और मानसिक कर्म करता है, और जो भी उसकी (आत्म)जागरूकता, लालसा, झुकाव और चरित्र (संस्कार) होते हैं, वे सब वांछित, वांछनीय और सुखद, कल्याण और सुख की ओर ले जाते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि दृष्टि अच्छी है। मान लीजिए, भिक्षुओं, गन्ने, पहाड़ी चावल या अंगूर का एक बीज नम मिट्टी में बोया गया। मिट्टी और पानी से वह जो भी पोषक तत्व ग्रहण करता है, वे सब उसके मीठे, सुखद और लजीज स्वाद की ओर ले जाते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि बीज अच्छा है। इसी प्रकार, सही दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए... सब कुछ वांछित, वांछनीय और सुखद, कल्याण और सुख की ओर ले जाता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि दृष्टि अच्छी है।

307. "सम्मादिथिकस, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलस्सा यान्सेव कायकम्मं यथादिथि समत्तं समादिन्नं याञ्च वाचिकम्मं...पे... याञ्च मनोकम्मम् यथादिथि समत्तं समादिन्नं य च चेतना या च पत्तन यो च पणिधि ये च संखारा सब्बे ते धम्म इत्थाय कंतया मनपय हिताय सुखाय सांवत्तन्ति. इसलिए किस्सा हेतु? दितिहि हिस्सा, भिक्खवे, भद्दिका। सेयथापि, भिक्खवे, उच्छुबिजं वा सलिबिजं वा मुद्दिकाबिजं वा अल्लाया पथविय निकखिटं यानसेवा पथविरसं उपादीयति यञ्च अपोरासं उपादीयति सब्बं तं मधुरट्टय सताट्टय असेकनकट्टय संवत्तति। इसलिए किस्सा हेतु? बिजं हिस्सा, भिक्खवे, भद्दकं। एवमेवं खो, भिक्खवे, सम्मादिथिकस पुरिसपुग्गलस्सा यान्सेव कायकम्मं यथादिथि समत्तं समादिन्नं

याञ्च वाचिकम्म...पे... याञ्च मनोकम्मम् यथादिथि समत्तं समादिन्नं य च चेतना या च पत्तन यो च पणिधि ये च संखारा सब्बे ते धम्म इत्थाय कंतया मनपय हिताय सुखाय सांवत्तन्ति. इसलिए किस्सा हेतु? दितिहि हिस्सा, भिक्खवे, भद्दिका'ति।

307. "सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलस्स यञ्चेव कायकम्मं अतादिट्ठी समत्तं समादि दृश्यं यञ्च वचिकम्मं...पे.... यञ्च मनोकम्मं यथादित्थि समत्तं समादि साइनं या च अना या च पत्थना यो च पणिधि ये च सङ्खारा सब्बे ते धम्म इत्थाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तन्ति। तं किस्से? दिट्ठी हिस्स, भिक्खवे, भद्दिका। सेयथापि, भिक्खवे, उच्छुबीजं वा सालिबिजं वा मुद्दिकाबीजं वा अलदालय पथ्वि निखित्तं यञ्चेव पथ्विरसं उपादेयति यञ्च अपोरसं उपादेयति सब्बं तं मधुरताय सातत्ताय असेचनकत्तय संवत्तति। तं किस्से? बीजें हिस्स, भिक्खवे, भद्दकं। एवमेवं खो, भिक्खवे, सम्मादिट्ठिकस्स पुरिसपुगलस्स यञ्चेव कायकम्मं यथादिट्ठी समत्तं समादि साइनं यञ्च वचिकम्मं...पे.... यञ्च मनोकम्मं अतिदिट्ठी समत्तं समादि दर्शनं या च स्वयं या च पथना यो च पनिधि ये च सङ्खारा सब्बे ते धम्म इत्थय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तन्ति। तं किस्से? दिट्ठी हिस्स, भिक्खवे, भद्दिका"ति।

---

iii. तीसरा उप-अध्याय 172

308

भिक्षुओं, एक ऐसा व्यक्ति है जो संसार में अनेक लोगों के हितैष, अनेक लोगों के दुःख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और कष्ट के लिए, देवताओं और मनुष्यों के लिए उत्पन्न होता है। वह कौन है? वह एक ऐसा व्यक्ति है जिसका दृष्टिकोण गलत है और जिसकी सोच भ्रामक है। वह अनेक लोगों को अच्छे धर्म से दूर ले जाता है और उन्हें बुरे धर्म में स्थापित करता है। यही वह व्यक्ति है जो संसार में अनेक लोगों के हितैष, अनेक लोगों के दुःख, अनेक लोगों के विनाश, हानि और कष्ट के लिए, देवताओं और मनुष्यों के लिए उत्पन्न होता है।

308. "एकपुग्गलो, भिक्खवे, लोके उप्पज्जमानो उप्पज्जति बहुजनहिताय बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अनत्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सनम्। काटामो एकापुग्गलो? मिच्चादिथिको होति विपरीतदस्सणो। तो बहुजानं सद्धम्मे वुट्ठपेत्वा असद्दम्मे पतिट्ठपेति। अयं खो, भिक्खवे, एकपुग्गलो लोके उप्पज्जमानो उप्पज्जति बहुजनहिताय बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अनत्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सन"न्ति।

308. "एकपुग्गलो, भिक्खवे, लोके उप्पजदजमानो उप्पजदजति बहुजनअहिताय बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अनंताय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानं। कत्मो एकपुग्गलो? मिचादिथिको होति विपरीतदस्सनो। सो बहुजनं सद्धम्मा वुत्थापेत्वा असद्धम्मे पतित्थापेति। अयं खो, भिक्खवे, एकपुग्गलो लोके उप्पजदजमानो उप्पजदजति बहुजनअहिताय बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अनंताय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सान"न्ति।

309

भिक्षुओं, एक ऐसा व्यक्ति है जो अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों के सुख, अनेक लोगों के भले, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए संसार में प्रकट होता है। वह एक व्यक्ति कौन है? वह सही दृष्टिकोण और उचित परिप्रेक्ष्य वाला व्यक्ति है। वह अनेक लोगों को बुरे धर्म से दूर करके अच्छे धर्म में स्थापित करता है। यही वह एक व्यक्ति है जो अनेक लोगों के कल्याण, अनेक लोगों के सुख, अनेक लोगों के भले, देवों (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के कल्याण और सुख के लिए संसार में प्रकट होता है।

309. "एकपुग्गलो, भिक्खवे, लोके उप्पज्जमानो उप्पज्जति बहुजनहिताय बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अत्थाय सुखाय देवमनुस्सानाम्। काटामो एकापुग्गलो? सम्मादिथिको होति अविपरितादस्सणो। तो बहुजानं असद्दम्म वुट्ठपेत्वा सद्धम्मे पतिट्ठपेति। अयं खो, भिक्खवे, एकपुग्गलो लोके उपपज्जमानो उपज्जति बहुजनहिताय बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्सा अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सन"न्ति।

309. "एकपुग्गलो, भिक्खवे, लोके उप्पजदजमानो उप्पजदजति बहुजनहिताय बहुजनसुखाय, बहुनो जनसस आठाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं। कत्मो एकपुग्गलो? सम्मादिट्ठिको होति अविपरितादस्सनो। सो बहुजनं असद्धम्मा वुट्ठपेत्वा सद्धम्मे पतित्थापेति। अयं खो, भिक्खवे, एकपुग्गलो लोके उपपजदजमानो उप्पजदजति बहुजनहिताय बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सान"न्ति।

310

"भिक्षुओं, मुझे गलत मत से बढ़कर कोई और निंदनीय बात नहीं दिखती। गलत मत ही सबसे निंदनीय बात है।"

310. "नहं, भिक्खवे, अन्नं एकधम्ममपि समनुपासामि यम एवं महासवज्जं यथायिदं, भिक्खवे, मिच्छदिति। मिच्छादिथिपरमणि, भिक्खवे, महासावज्जनि"ति [वज्जनिति (सि. स्या. कं.)]।

310. "नहं, भिक्खवे, अञ्चं एकधम्मपि समनुपस्सामि यं एवं महासावज्जं यथयिदं, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठि। मिच्छादिट्ठीपरमाणि, भिक्खवे, महासावजदजानि"ति [वजदजानीति (सी० स्या० कं०)]।

311

"भिक्षुओं, मुझे मक्खली जैसा कोई और व्यक्ति नहीं दिखता जो इतने सारे लोगों की हानि, इतने सारे लोगों के दुख, इतने सारे लोगों के विनाश, हानि और इतने सारे लोगों, देवताओं (देवदूतों/देवताओं) और मनुष्यों के कष्ट के लिए इतना अधिक कार्य कर रहा हो। 175 जिस प्रकार नदी के मुहाने पर लगाया गया जाल अनेक मछलियों के लिए हानि, कष्ट, विपत्ति और आपदा लाता है, उसी प्रकार मक्खली भी मानो "लोगों के लिए एक जाल" है 176 जो अनेक प्राणियों की हानि, कष्ट, विपत्ति और आपदा के लिए संसार में उत्पन्न हुआ है।" [34]

311. "नहं, भिक्खवे, अनन्यं एकपुग्गलमपि समनुपासामि यो एवं बहुजनहिताय पतिपन्नो बहुजनसुखाय, बहुणो जनस्स अनत्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानाम्" यथयिदं, भिक्खवे, मक्खलि मोघापुरिसो। सेय्यथापि, भिक्खवे, नदीमुखे खिप्पं [खीपं (सि. स्या. कां. पि.)] उड्डेय्या [ओढेय्या (सि.), उज्जेय्या (का.)] बहुनां मच्छणं अहिताय दुक्खाय। अनयाया ब्यासानया; एवमेवं खो, भिक्खवे, मक्खलि मोघापुरिसो मनुस्साखिप्पं मन्ने लोके उप्पन्नो बहुणं सत्तनं अहिताया दुक्खाय अन्याय ब्यासनाय'ति।

311. "नहं, भिक्खवे, अञ्जन एकपुग्गलमपि समनुपासामि यो एवं बहुजनअहिताय पाटिप स्यानो बहुजनसुखाय, बहुनो जनस्स अनंताय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानं यथायिदं, भिक्खवे, मक्खलि मोघपुरिसो। सेयथापि, भिक्खवे, नदीमुखे खिप्पं [खिपं (सी० स्या० कं० पी०)] उड्डेय्य [ओड्डेय्य (सी०), उज्जेय (क०)] बहुअनं मच्छनं अहिताय दु:खाय अनयाय ब्यासनाय; एवमेवं खो, भिक्खवे, मक्खलि मोघपुरिसो मानुस्सकिप्पं मञ्जे लोके उप्प संज्ञाओ बहूनं सत्यानं अहिताय दुक्खाय अन्याय बिसनाया"ति।

312

भिक्षुओं, जो व्यक्ति गलत ढंग से व्याख्या किए गए धम्म और अनुशासन में दूसरों को प्रोत्साहित करता है, जिसे वह प्रोत्साहित करता है, और जो इस प्रकार प्रोत्साहित होकर उसके अनुसार अभ्यास करता है, वे सभी बहुत पुण्य उत्पन्न करते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म गलत ढंग से व्याख्या किया गया है।

312. "दुरक्खते, भिक्खवे, धम्मविनाये यो च समदपेति [समदापेटि (?)] यंचा समदपेटि यो च समदपितो तथात्तय पतिपज्जति सब्बे ते बहुं अपुनं पासवंती। इसलिए किस्सा हेतु? दुरक्खत्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा'ति।

312. "दुर्खते, भिक्खवे, धम्मविनये यो च समादपेति [समदापेति (?)] यञ्च समादपेति यो च समादपिटो तत्थय पतीपज्जति सब्बे ते बहुं अपुञ्जन पस्वन्ति। तं किस्से? दुरखत्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा"ति।

313

भिक्षुओं, जो व्यक्ति सुस्पष्ट धम्म और अनुशासन में दूसरों को प्रोत्साहित करता है, जिसे वह प्रोत्साहित करता है, और जो इस प्रकार प्रोत्साहित होकर उसके अनुसार अभ्यास करता है, वे सभी बहुत पुण्य अर्जित करते हैं। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म सुस्पष्ट है।

313. "स्वक्खते, भिक्खवे, धम्मविनाये यो च समदपेति यञ्च समदपेति यो च समदपितो तथात्तय पतिपज्जति सब्बे ते बहुं पुन्नं पासवंती।' इसलिए किस्सा हेतु? स्वक्खात्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा'ति।

333. "स्वाक्खते, भिक्खवे, धम्मविन्ये यो च समादपेति यञ्च समादपेति यो च समादपितो तत्तय पतीपजदजति सब्बे ते बहुं पुंजं पस्वन्ति।' तं किस्से? स्वाक्खात्ता, भिक्खवे, धम्मस्स"ति।

314

"भिक्षुओं, जिनके धर्म और अनुशासन की व्याख्या ठीक से नहीं की गई है, उनमें संयम का ज्ञान दान देने वाले को होना चाहिए, न कि दान प्राप्त करने वाले को। 177 इसका कारण क्या है? क्योंकि उस धर्म की व्याख्या ठीक से नहीं की गई है।"

314. "दुरक्खते, भिक्खवे, धम्मविनये दयाकेन मत्ता जनितब्बा, नो पतिग्गहकेन। इसलिए किस्सा हेतु? दुरक्खत्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा'ति।

314. "दुर्खते, भिक्खवे, धम्मविणये दायकेन मत्ता जनित्ब्बू, नो पतिगाहकेन। तं किस्से? दुरखत्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा"ति।

315

"भिक्षुओं (सम्भावों) को सुस्पष्ट धम्म और अनुशासन के साथ संयम का ज्ञान होना चाहिए, दान देने वाले को नहीं। 178 इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म (मार्ग) सुस्पष्ट है।"

315. "स्वक्खते, भिक्खवे, धम्मविनये पतिग्गहकेन मत्ता जनितब्बा, नो दयाकेन। इसलिए किस्सा हेतु? स्वक्खात्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा'ति।

315. "स्वाक्खते, भिक्खवे, धम्मविनये पतिगाहकेन मत्ता जानीतब्बू, नो दइकेन। तं किस्से? स्वाक्खात्ता, भिक्खवे, धम्मस्स"ति।

316

"भिक्षुओं, जो कोई भी गलत ढंग से व्याख्या किए गए धम्म और अनुशासन में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाता है, वह दुख में रहता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म गलत ढंग से व्याख्या किया गया है।"

316. "दुरक्खते, भिक्खवे, धम्मविनाय यो अरद्धवीरियो सो दुक्खं विहारति।" इसलिए किस्सा हेतु? दुरक्खत्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा'ति।

316. "दुर्खते, भिक्खवे, धम्मविणये यो अर्धविरियो सो दुक्खं विहारति। तं किस्से? दुरखत्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा"ति।

317

"भिक्षुओं, जो कोई भी सुस्पष्ट धम्म और अनुशासन में आलसी होता है, वह दुख में लीन रहता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म सुस्पष्ट है।"

317. "स्वक्खते, भिक्खवे, धम्मविनये यो कुसीतो सो दुक्खं विहारति। इसलिए किस्सा हेतु? स्वक्खात्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा'ति।

317. "स्वाक्खते, भिक्खवे, धम्मविन्ये यो कुसीतो सो दुःखं विहारति।" तं किस्से? स्वाक्खात्ता, भिक्खवे, धम्मस्स"ति।

318

"भिक्षुओं, जो भी धर्म और अनुशासन की गलत व्याख्या में आलसी होता है, वह सुख में रहता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि उस धर्म की गलत व्याख्या की गई है।"

318. "दुरक्खते, भिक्खवे, धम्मविनये यो कुसीतो सो सुखं विहारति।" इसलिए किस्सा हेतु? दुरक्खत्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा'ति।

318. "दुर्खते, भिक्खवे, धम्मविन्ये यो कुसिटो सो सुखं विहारति।" तं किस्से? दुरखत्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा"ति।

319

"भिक्षुओं, जो कोई भी सुस्पष्ट धम्म और अनुशासन में ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) लगाता है, वह सुखी रहता है। इसका कारण क्या है? क्योंकि वह धम्म सुस्पष्ट है।"

319. "स्वक्खते, भिक्खवे, धम्मविनय यो अरद्धवीरियो सो सुखं विहारति। इसलिए किस्सा हेतु? स्वक्खात्ता, भिक्खवे, धम्मस्सा'ति।

319. "स्वाक्खते, भिक्खवे, धम्मविन्ये यो अर्धविरियो सो सुखं विहारति।" तं किस्से? स्वाक्खात्ता, भिक्खवे, धम्मस्स"ति।

320

"भिक्षुओं, जिस प्रकार मल की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है, उसी प्रकार मैं अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की थोड़ी सी मात्रा की भी प्रशंसा नहीं करता, यहाँ तक कि एक पल के लिए भी नहीं।" 179

320. "सेयथापि, भिक्खवे, अप्पमट्टकोपि गुथो दुग्गन्धो होति; एवमेवं खो अहं, भिक्खवे, अप्पमत्तकम्पि भवाँ न वनेमि, अंतमसो अचरसंगहतमत्तमपि।"

320. "सेयथापि, भिक्खवे, अप्पमत्तकोपित गूथो दुग्गन्धो होति; एवमेवं खो अहं, भिक्खवे, अप्पमत्तकमपि भवं न वन्नेमि, अंतमसो अचरसङ्घातमत्तमपि।"

321

"भिक्षुओं (मठवासियों), जिस प्रकार मूत्र की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है... लार की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है... मवाद की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है... [35]... रक्त की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है, उसी प्रकार मैं अस्तित्व (भाव/पुनर्जन्म का कारण) की थोड़ी सी मात्रा की भी प्रशंसा नहीं करता, यहाँ तक कि एक उंगली चटकाने के लिए भी नहीं।"

321. "सेयथापि, भिक्खवे, अप्पमत्तकम्पि मुत्तं दुग्गंधं होति... अप्पमत्तकोपि खेदो दुग्गंधं होति... अप्पमत्तकोपि पुब्बो दुग्गंदहो होति... अप्पमत्तकम्पि लोहितं दुग्गंधं होति; एवमेवं खो अहं, भिक्खवे, अप्पमत्तकम्पि भवाँ न वनेमि, अंतमसो अचरसंगहतमत्तमपि।"

321. "सेयथापि, भिक्खवे, अप्पमत्तकम्पि मुत्तं दुग्गन्धं होति... अप्पमत्तकोपि खेलो दुग्गन्धं होति... अप्पमत्तकोपि पुब्बो दुग्गन्धो होति... अप्पमत्तकम्पि लोहितं दुग्गन्धं होति; एवमेवं खो अहं, भिक्खवे, अप्पमत्तकमपि भवं न वन्नेमि, अंतमसो अचरसङ्घातमत्तमपि।"

---

iv. जंबुद्वीप (भारत) पुनरावृत्ति श्रृंखला [चौथा उप-अध्याय] 322 365

322 "जिस प्रकार, इस जंबूद्वीप (भारत) में भिक्षुओं (भिक्षुओं) के लिए रमणीय उद्यान, उपवन, भूदृश्य और कमल के तालाब अल्प हैं, जबकि पहाड़ियाँ और ढलानें, पार करने में कठिन नदियाँ, ठूंठ और काँटों वाले स्थान और ऊबड़-खाबड़ पहाड़ अधिक संख्या में हैं, उसी प्रकार शुष्क भूमि पर जन्म लेने वाले प्राणी अल्प हैं; जल में जन्म लेने वाले प्राणी अधिक संख्या में हैं।"

322. "सेयथापि, भिक्खवे, अप्पमत्तकं इमस्मि जम्बुदीपे अरामरामणेय्यकं वनरामणेय्यकं भूमिरामणेय्यकं पोक्खरणिरामणेय्यकं; अथ खो एतदेव बहुतारं यदिदं उक्कुलाविकुलं नदिविदुग्गं खणुककंडकथनं [खणुकंडकधानं (सि. पि.)] पब्बतविसामं; एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये थलाजा, अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये ओडका"।

32. "सेयथापि, भिक्खवे, अप्पमत्तकं इमस्मिं जम्बूदीपे आरामरामणेय्यकं वनरामणेय्यकं भूमिरामणेय्यकं पोखरणिरामणेय्यकं; अथ खो एतदेव बोरं यदिदं उकूलविकूलं नदीविदुग्गं खानुकंटकट्ठानं [खानुककंदकधानं (सी० पी०)] पब्बतविसमं; एव मेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्य ये थलजा, अथ खो एतेव सत्य वोरा ये ओडका"।

---

323 "...इसी प्रकार, मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी अल्प हैं; मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेने वाले प्राणियों की संख्या अधिक है। ...इसी प्रकार, मध्य प्रांतों में पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी अल्प हैं; बाहरी प्रांतों में असभ्य विदेशियों के बीच पुनर्जन्म लेने वाले प्राणियों की संख्या अधिक है।" 184

323. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये अन्नत्र मनुस्सेहि पच्चाजयन्ति।

...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये मज्झिमेसु जनपदसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये पक्कन्तिमेसु जनपदसु पच्चजयंती अविनातारसु मिलक्खेसु [मिलक्खुसु (का.)]।

33. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्य ये मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति; अथ खो एतेव सत्य बीरा ये अञ्चत्र मनुस्सेहि पच्चाजयन्ति।

... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्य ये मज्झिमेसु जिलेसु पच्चजायन्ति; अथ खो एतेव सत्य बिरा ये पच्चान्तिमेसु जिलासु पच्चाजयन्ति अविञ्चनतारेसु मिलक्खेसु [मिल्क्खुसु (क०)]।

---

324 "...इसी प्रकार, बुद्धिमान, समझदार, चतुर और अच्छी तथा बुरी बातों का अर्थ समझने में सक्षम प्राणी अल्प हैं; जबकि मूर्ख, बेवकूफ और मंदबुद्धि प्राणी अधिक हैं, जो अच्छी और बुरी बातों का अर्थ समझने में असमर्थ हैं।"

324। अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये दुप्पन्न जाजा एदामुगा न पतिबला सुभाषितदुब्भासीतस्सा अत्थमन्नतुः।

324. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्या ये पंचवन्तो अजळा अनेळमुगा पाटिबला सुभासीदुब्भासीतस्स अथममञ्चतुं; अथ खो एतेव सत्ता बिरा ये दुप्पञ्जा जळा एळमुगा न पाटिबला सुभासिदुब्भासीत्स्स अथममन्दनातुं।

---

325 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जिन्हें पन्ना (दिव्य ज्ञान) की श्रेष्ठ दृष्टि प्राप्त है; उन प्राणियों की संख्या कहीं अधिक है जो भ्रमित और अज्ञान में डूबे हुए हैं।" 185

325। अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये अविज्जगत सम्मुधा।

325. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्य ये अरियेन पञ्चाचखुना सम सिद्धांत; अथ खो एतेव सत्ता बीरा ये अविज्जगता सम्मुल्हा।

---

326 . . इसी प्रकार तथागत (बुद्ध) के दर्शन पाने वाले प्राणी अल्प हैं; उन्हें न देख पाने वाले प्राणियों की संख्या कहीं अधिक है।

326. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये लभन्ति तथागतं दस्सानाय; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये न लभन्ति तथागतं दस्सान्या।

326. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये लभन्ति तथागतं दस्सनाय; अथ खो एतेव सत्या बीरा ये न लभन्ति तथागतं दास्सनाय।

---

327 . . इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जिन्हें तथागत (बुद्ध) द्वारा प्रतिपादित धम्म और अनुशासन सुनने का सौभाग्य प्राप्त होता है; [36] इससे कहीं अधिक वे हैं जिन्हें इसे सुनने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता है।"

327. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये लभन्ति तथागतप्पवेदितं धम्मविनयं सवानाय; अथ खो एतेव सत्ता बहुतारा ये न लभन्ति तथागतप्पवेदितं धम्मविनयं सवानाय।

327. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये लभन्ति तथागतप्पवेदितं धम्म्विनयं सवनाय; अथ खो एतेव सत्य बीरा ये न लभन्ति तथागतप्पवेदितं धम्मविनयं सवनाय।

---

328 "...इसी प्रकार, धम्म को सुनकर उसे मन में धारण करने वाले प्राणी अल्प हैं; धम्म को सुनकर उसे मन में धारण न करने वाले प्राणी अधिक संख्या में हैं।"

328. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये सुत्वा धम्मं धारेंति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये सुत्वा धम्मं न धारेंति।

328. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्या ये सुत्वा धम्मं धारेन्ति; अथ खो एतेव सत्ता बीरा ये सुत्वा धम्मं न धारेन्ति।

---

329 ". : . इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो मन में रखे गए उपदेशों के अर्थ की जांच करते हैं; वे अधिक संख्या में हैं जो मन में रखे गए उपदेशों के अर्थ की जांच नहीं करते हैं।"

329। अथ खो एतेव सत्ता बहुतारा ये धातनं धम्मनां अत्थं न उपपरिक्खन्ति।

329. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये धातानं [धतानं (सी० स्या० कं० पी०)] धम्मणं अथं उपपरिक्खन्ति; अथ खो एतेव सत्या बीरा ये धातानं धम्मनं अथं न उपपरिक्खन्ति।

---

330 "...इसी प्रकार, वे प्राणी अल्प हैं जो धम्म का अर्थ और उसे समझते हैं तथा उसके अनुसार अभ्यास करते हैं; वे अधिक संख्या में हैं जो धम्म का अर्थ और उसे नहीं समझते तथा उसके अनुसार अभ्यास नहीं करते।" 186

330। अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये अत्थमन्नया धम्ममन्याय धम्मनुधम्म न पतिपज्जन्ति।

330. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये अथममञ्चाय धम्ममञ्जाय धम्मनुधम्मं पतिपजदजन्ति; अथ खो एतेव सत्या बिरा ये अत्तमञ्चया धम्ममञ्चया धम्मनुधम्मं न पतिपज्मजन्ति।

---

331 "...इसी प्रकार, वे प्राणी अल्प हैं जो तात्कालिकता उत्पन्न करने वाली चीजों के प्रति तात्कालिकता की भावना विकसित करते हैं; उन प्राणियों की संख्या अधिक है जो तात्कालिकता उत्पन्न करने वाली चीजों के प्रति तात्कालिकता की भावना विकसित नहीं करते हैं।" 187

331। अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये संवेजानियेसु ठाणेसु न संविज्जन्ति।

331. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये संवेजेनियेसु थानेसु संविज्जन्ति; अथ खो एतेव सत्य बीरा ये संवेजेनियेसु थानेसु न संविज्जन्ति।

---

332 "...इसी प्रकार, वे प्राणी भी अल्प हैं जो तात्कालिकता की भावना से प्रेरित होने पर सावधानीपूर्वक प्रयास करते हैं; वे अधिक संख्या में हैं जो तात्कालिकता की भावना से प्रेरित होने पर सावधानीपूर्वक प्रयास नहीं करते हैं।"

332. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये संविग्गा योनिसो पदहन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये संविग्गा योनिसो न पदहन्ति।

332. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये संविग्गा योनिसो पधान्ति; अथ खो एतेव सत्या बीरा ये संविग्गा योनिसो न पधन्ति।

---

333 "इसी प्रकार, वे प्राणी अल्प हैं जो समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), मन की एकाग्रता (एकगचित्त, संस्कृत: एकग्रचित्त), जो मुक्ति पर आधारित है, प्राप्त करते हैं; वे अधिक संख्या में हैं जो समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन), मन की एकाग्रता, जो मुक्ति पर आधारित है, प्राप्त नहीं करते हैं।" 188

333। अथ खो एतेव सत्ता बहुतारा ये ववस्सग्गरमणं करित्वा न लभन्ति समाधि न लभन्ति चित्तस्सेकगगतम्।

333. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्या ये ववस्सग्गार्मणं कारित्वा लभन्ति समाधिं [चित्तस्स समाधिम (सी०)] लभन्ति चित्तस्सेकगगतं [चित्तस्सेकग्गं (सी०)]; अथ खो एतेव सत्या बीरा ये ववस्सग्गार्मणं कारित्वा न लभन्ति समाधिं न लभन्ति चित्तस्सेकगतं।

---

334 . . इसी प्रकार, स्वादिष्ट भोजन का उत्तम स्वाद प्राप्त करने वाले प्राणी अल्प हैं; ऐसे प्राणी कहीं अधिक हैं जिन्हें ऐसा भोजन प्राप्त नहीं होता, बल्कि वे कटोरे में परोसे गए जूठे टुकड़ों पर ही जीवन यापन करते हैं।

334. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये अन्नग्गरसग्गनं लभिनो; अथ खो एतेव सत्ता बहुतारा ये अन्नग्गरसग्गनं न लाभिनो, उंचेन कपालभतेन यापेंती।

334. ...एवेमेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्य ये अग्निगारसग्गानं लाभिनो; अथ खो एतेव सत्य बीरा ये अग्ग्रसग्गानं न लाभिनो, उच्छेन कपालभतेन यापेन्ति।

---

335 "...इसी प्रकार, अर्थ का स्वाद, धम्म का स्वाद, मुक्ति का स्वाद प्राप्त करने वाले प्राणी अल्प हैं; अर्थ का स्वाद, धम्म का स्वाद, मुक्ति का स्वाद प्राप्त न करने वाले अधिक हैं। 189 अतः, भिक्षुओं, आपको इस प्रकार स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए: 'हम अर्थ का स्वाद, धम्म का स्वाद, मुक्ति का स्वाद प्राप्त करेंगे।' [37]

335। अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये अत्थरसास्सा धम्मरसास्सा विमुत्तिरसास्सा न लभिनो। तस्मातिहा, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बाम् - अत्थरसास्सा धम्मरसास्सा विमुत्तिरसास्सा लभिनो भविस्सामति। एवनहि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बन्ति।

335. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्या ये अथरसस्स धम्मरसस्स विमुत्तिरसस्स लाभिनो; अथ खो एतेव सत्य बिरा ये अथरसस्स धम्मरसस्स विमुत्तिरसस्स न लाभिनो। तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं – अथरसस्स धम्मरसस्स विमुत्तिरसस्स लाभिनो भविस्सामाति। एवञ्हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बन्ति।

336-338 "हे भिक्षुओं, जिस प्रकार इस जंबूद्वीप (भारत) में रमणीय उद्यान, उपवन, प्राकृतिक दृश्य और कमल के तालाब अल्प हैं, जबकि पहाड़ियाँ और ढलानें, दुर्गम नदियाँ, कंद और काँटों वाले स्थान और ऊबड़-खाबड़ पर्वत अधिक हैं, उसी प्रकार मनुष्य के रूप में मृत्यु के बाद मनुष्य के बीच पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी अल्प हैं। मनुष्य के रूप में मृत्यु के बाद नरक में, पशु जगत में, व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेने वाले प्राणी अधिक हैं।" 191

336-338. "सेयथापि, भिक्खवे, अप्पमत्तकं इमस्मि जम्बूदीपे अरामरामणेय्यकं वनरामणेय्यकं भूमिरामणेय्यकं पोक्खराणिरामणेय्यकं; अथ खो एतदेव बहुतारं यदिदं उक्कुलाविकुलं नदीविदुग्गं खणुककंटकठनं पब्बतविसमाम्। एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये मनुस्सा काटा मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति, अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये मनुस्सा काटा निराये पच्चाजयन्ति...पे... तिरच्चनयोनिय पच्चाजयन्ति...पे... पेट्टिविशाये पच्चाजयन्ति"।

336-338. "सेयथापि, भिक्खवे, अप्पमत्तकं इमस्मिं जम्बूदीपे आरामरामणेय्यकं वनरामणेय्यकं भूमिरामणेय्यकं पोखरणिरामणेय्यकं; अथ खो एतदेव ब्यारं इदिदं उकूलविकोलं नदीविदुग्गं खानुकंटकट्ठानं पब्बतविसमं। एव मेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्य ये मनुषा चुता मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति, अथ खो एतेव सत्ता बीरा ये मनुषा चुता नीरये पच्चाजयन्ति...पे०... त्रिच्चानोनिया पच्चाजयन्ति...पे०... पेट्टितविसये पच्चाजयन्ति।"

339-341 : ...इसी प्रकार, वे प्राणी भी अल्प हैं जो मनुष्य के रूप में मृत्यु के बाद देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे प्राणी कहीं अधिक हैं जो मनुष्य के रूप में मृत्यु के बाद नरक में ... पशु जगत में ... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेते हैं।'

339-341. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये मनुस्सा काटा देवेसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये मानुषा कटा निराये पच्चाजयन्ति... तिरच्चनयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टिविशाये पच्चाजयन्ति।

339-341. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्य ये मनुष्सा चुता देवेसु पच्चाजयन्ति; अथ खो एतेव सत्ता बीरा ये मनुषा चुता निराये पच्चाजयन्ति... तिर्चानयोनिया पच्चादजयन्ती... पेट्टितविसये पचदजायन्ति।

342-344 "...इसी प्रकार, वे प्राणी भी अल्प हैं जो देवों (देवदूतों/देवताओं) के रूप में मृत्यु के बाद देवों (देवदूतों/देवताओं) के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे प्राणी कहीं अधिक हैं जो देवों (देवदूतों/देवताओं) के रूप में मृत्यु के बाद नरक में ... पशु जगत में ... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेते हैं।"

342-344. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये देवा काटा देवेसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये देवा काटा निराये पच्चाजयन्ति... तिरच्चनयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टितविशाये पच्चाजयन्ति।

342-344. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्या ये देवा चुता देवेसु पच्चादजयंती; अथ खो एतेव सत्या बीरा ये देवा चुता निराये पच्चाजयन्ति... तिरछानोनिया पच्चादजयन्ती... पेत्त्विसये पच्चादजयन्ती।

345-347 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो देवों (देवदूतों/ईश्वरों) के रूप में मृत्यु के बाद मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे अधिक संख्या में हैं जो देवों (देवदूतों/ईश्वरों) के रूप में मृत्यु के बाद नरक में... पशु जगत में... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेते हैं।"

345-347. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये देवा काटा मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये देवा काटा निराये पच्चाजयन्ति... तिरच्चनयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टितविशाये पच्चाजयन्ति।

345-347. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्य ये देवा चुता मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति; अथ खो एतेव सत्या बीरा ये देवा चुता निराये पच्चाजयन्ति... तिरछानोनिया पच्चादजयन्ती... पेत्त्विसये पच्चादजयन्ती।

348— 350 "...इसी प्रकार, वे प्राणी भी अल्प हैं जो नरक से निकलने के बाद मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे अधिक संख्या में हैं जो नरक से निकलने के बाद नरक में ही पुनर्जन्म लेते हैं... पशु जगत में... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में।"

348-350. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये निराया काटा मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये निरया कटा निराये पच्चाजयन्ति... तिरच्चनयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टितविशाये पच्चाजयन्ति।

348-350. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्ता ये निराया चुता मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति; अथ खो एतेव सत्या बीरा ये निराया चुता निराये पच्चाजयन्ति... तिरछानोनिया पच्चादजयन्ती... पेत्त्विसये पच्चादजयन्ती।

351— 353 . .इसी प्रकार, वे प्राणी भी अल्प हैं जो नरक से मृत्यु के बाद देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे अधिक संख्या में हैं जो नरक से मृत्यु के बाद नरक में ही पुनर्जन्म लेते हैं... पशु जगत में... . . . . . व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में।"

351-353. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये निराया काटा देवेसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये निरया कटा निराये पच्चाजयन्ति... तिरच्चनयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टितविशाये पच्चाजयन्ति।

351-353. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये निराया चुता देवेसु पच्चाजयन्ति; अथ खो एतेव सत्या बीरा ये निराया चुता निराये पच्चाजयन्ति... तिरछानोनिया पच्चादजयन्ती... पेत्त्विसये पच्चादजयन्ती।

354— 356 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो पशुलोक से मृत्यु के बाद मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। वे अधिक संख्या में हैं जो पशुलोक से मृत्यु के बाद नरक में... पशुलोक में... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेते हैं।"

354-356. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये तिरच्चनयोनिय काटा मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये तिरच्चनयोनिय कटा निराये पच्चाजयन्ति... तिरच्चनयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टितविशाये पच्चाजयन्ति।

354-356. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्य ये तिर्यंचनयोनिय चुता मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति; अथ खो एतेव सत्ता बीरा ये तिर्यंचनोनिया छुता निराये पच्चाजयन्ति... तिर्यंचनोनिया पच्चाजयन्ति... पेट्टितविसये पच्चाजयन्ति।

357-359 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो पशुलोक से मृत्यु के बाद देवों (देवदूतों/देवताओं) के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। अधिक संख्या में वे हैं [38] जो पशुलोक से मृत्यु के बाद नरक में ... पशुलोक में ... व्यथित आत्माओं के क्षेत्र में पुनर्जन्म लेते हैं।"

357-359. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये तिरच्चनयोनिय काटा देवेसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये तिरच्चनयोनिय कटा निराये पच्चाजयन्ति... तिरच्चनयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टितविशाये पच्चाजयन्ति।

357-359. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्या ये तिर्यंचनयोनिय चुता देवेसु पच्चाजयन्ति; अथ खो एतेव सत्ता बीरा ये तिर्यंचनोनिया छुता निराये पच्चाजयन्ति... तिर्यंचनोनिया पच्चाजयन्ति... पेट्टितविसये पच्चाजयन्ति।

360-362 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो पीड़ित आत्माओं के लोक से मृत्यु के बाद मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। ऐसे प्राणी कहीं अधिक हैं जो पीड़ित आत्माओं के लोक से मृत्यु के बाद नरक में... पशु जगत में... पीड़ित आत्माओं के लोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

360-362. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये पेटीविसया काटा मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये पेट्टितविसाय कटा निराये पच्चाजयन्ति... तिरच्चनयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टितविशाय पच्चाजयन्ति।

360-362. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्या ये पेत्त्विसया चुता मनुस्सेसु पच्चाजयन्ति; अथ खो एतेव सत्या बीरा ये पेत्त्विसया चुता निराये पच्चाजयन्ति... तिर्चानयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टितविसये पच्चाजयन्ति।

363-365 "...इसी प्रकार वे प्राणी भी अल्प हैं जो पीड़ित आत्माओं के लोक से मृत्यु के बाद देवताओं (देवदूतों/ईश्वरों) के बीच पुनर्जन्म लेते हैं। उनसे कहीं अधिक वे प्राणी हैं जो पीड़ित आत्माओं के लोक से मृत्यु के बाद नरक में... पशु जगत में... पीड़ित आत्माओं के लोक में पुनर्जन्म लेते हैं।"

363-365. ...एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पाका ते सत्ता ये पेटीविसया काटा देवेसु पच्चाजयन्ति; अथा खो एतेव सत्ता बहुतारा ये पेट्टितविसाय कटा निराये पच्चाजयन्ति... तिरच्चनयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टितविशाय पच्चाजयन्ति।

363-365. ... एवमेवं खो, भिक्खवे, अप्पा ते सत्या ये पेत्त्विसया चुता देवेसु पच्चाजयन्ति; अथ खो एतेव सत्या बीरा ये पेत्त्विसया चुता निराये पच्चाजयन्ति... तिर्चानयोनिय पच्चाजयन्ति... पेट्टितविसये पच्चाजयन्ति।

एकदमपाळी सोळसामो।

(1.XVII) आत्मविश्वास उत्पन्न करने वाले गुण अनुभाग

366-381 "भिक्षुओं (साधुओं), यह निश्चित रूप से एक प्रकार का लाभ है, अर्थात्, (378) वनवासी होना, (379) भिक्षा से प्राप्त भोजन पर जीवन यापन करना, (380) चिथड़े के वस्त्र धारण करना, (381) केवल तीन वस्त्र धारण करना, 193 (382) धम्म पर वक्ता होना,

(383) अनुशासन का पालन करने वाला होना, (384) महान विद्वत्ता, (385) दीर्घकालीन होना, (386) उचित आचरण होना, (387) अनुचरों का होना, (388) एक बड़ा अनुचर होना, (389) अच्छे परिवार से आना, (390) सुंदर होना, (391) एक उत्कृष्ट वक्ता होना, (392) कम इच्छाएँ रखना, (393) अच्छा स्वास्थ्य होना।"

366-381. "अद्दमिदं, भिक्खवे, लाभानं यदिदं अरण्यिकट्टं [अरणिनकट्टं (सब्बत्था)] ...पे... पिंडपतिकट्टं... पंसुकुलिकट्टं... तेसिवरिकट्टं... धम्मकथिकट्टम्... विनयधरट्टम् [विनयधरकट्टम् (स्या. कं. पि. का.)] ... बहुसच्चम्... थावरेयम्... अकाप्पसम्पदा... परिवारसम्पदा... महापरिवार... कोलापुट्टी... वनपोक्खरता... कल्याणवक्करनाता... अप्पिच्चता... अप्पाबधा'ति।

सोसासा पसादकारधम्म नियतिता ।

पसादकारधम्मवग्गो सत्तरसमो।

366-381. "अधमिदं , भिक्खवे, लाभानं यदिदं आरञ्चिकत्तं [अर्नदञ्चटं (सब्बत्थ)] ...पे○... पिण्डपातिकत्तं... पंसुकुलिकट्टं... तेचीवरिकत्तं... धम्मकथिकत्तं... विणधरत्तं [विनयधरकट्टं (स्या○ कं○ पी○ क○)] ... बहुसदचं... थवेरेयं... अकप्पसम्पदा... परिवारसम्पदा... महापरिवार... कोलपुट्ति... वनपोखरता... कल्याणवा त्राटकता... अप्पिचचता... अप्पाबधता"ति।

सोळस पसादकरधम्मा निन्थिता।

पसादकरधम्मवग्गो सत्तरसमो।

(1.XVIII) फिंगर स्नैप सेक्शन (अपराच्चरासंघातवग्गो)

382

भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु पल भर के लिए भी पहली ध्यान अवस्था (सम्मोहन) प्राप्त कर लेता है, तो वह ध्यान से रहित भिक्षु नहीं कहलाता, जो गुरु की शिक्षाओं पर अमल करता है, उनकी सलाह मानता है और देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ नहीं खाता। तो फिर, जो लोग ध्यान का अभ्यास करते हैं, वे और भी अधिक ध्यानशील होंगे!

382. "अच्चरासंगहतमत्तमपि सी, भिक्खवे, भिक्खु पठमं झाणं भवेति, अयं वुक्कति, भिक्खवे - 'भिक्खु अरित्तज्झाणो विहारति, सत्थुसासनकारो ओवदपतिकारो, अमोघं' रथपिण्डं भुञ्जति'। को पाना वदो ये नं बहुलिकारोंती!

328. "अच्छरासङ्घातमत्तमपि चे, भिक्खवे, भिक्खु पतमं झणं भवेति, अयं वुचदचति, भिक्खवे - 'भिक्खु अरित्तजझानो विहारति, सथुसासनकरो ओवादपतिकरो, अमोघं रथपिंडं भुंजदजति।' को पण वादो ये नं बहुविक्रोन्ति"ति!

---

383 — 389

भिक्षुओं, यदि कोई भिक्षु पल भर के लिए भी द्वितीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) ... तृतीय ध्यान (सम्मोहन अवस्था) ... चतुर्थ ध्यान (सम्मोहन अवस्था) ... प्रेम और करुणा से मन की मुक्ति ... करुणा से मन की मुक्ति ... परोपकारी आनंद से मन की मुक्ति ... उदासीनता (भीतर ध्यान/उपेक्षा) से मन की मुक्ति प्राप्त कर लेता है, तो वह ध्यान से रहित भिक्षु नहीं कहलाता, जो गुरु की शिक्षाओं पर अमल करता है, उनकी सलाह मानता है और देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ नहीं करता। तो फिर, जो लोग इसका अभ्यास करते हैं, वे कितने अधिक गुणवान होंगे!

383-389. "अच्चरासंगहतमत्तमपि सी, भिक्खवे, भिक्खु दुतियां झाणं भवेति...पे... ततियां झाणं भवेति...पे... चतुत्थं झाणं भवेति...पे... मेत्तं सेतोविमुत्तिन भवेति...पे... करुणां सेतोविमुत्तिन भवेति...पे... मुदितम सेतोविमुत्तिन भवेति...पे... उपेक्खं सेतोविमुत्तिन भवेति...पे...।

383-389. "अच्छरासङ्घातमत्तमपि छे, भिक्खवे, भिक्खु दुतियां झाणं भवेति...पे०... तत्यां झणं भवेति...पे०... चतुत्थं झणं भवेति...पे०... मेत्तं चेतोविमुत्तिं भवेति...पे०... करुणं चेतोविमुत्तिं भवेति...पे०... मुदितं चेतोविमुत्तिं भवेति...पे०...उपेक्खं चेतोविमुत्तीं भवेति...पे०...।

390-393

"...शरीर में शरीर को देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है, [197] उत्साही, पूर्णतः बोधशील, सती (ध्यान करते हुए), संसार के प्रति लालसा और निराशा को दूर करते हुए... संवेदनाओं में वेदना को देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है... मन में मन को देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है... घटनाओं में धम्म को देखते हुए (अनुपसी में) निवास करता है, उत्साही, पूर्णतः बोधशील, सती (ध्यान करते हुए), संसार के प्रति लालसा और निराशा को दूर करते हुए...

390-393. काये कायनुपासि विहारति अतापि संपजानो सतिमा विनेय लोके अभिज्जदोमानस्सम्; वेदानासु वेदानानुपासि विहारति...पे...चित्ते चित्तनुपासि विहारति...पे...धम्मेसु धम्मनुपासि विहारति अतापि सम्पाजानो सतीमा विनेय लोके अभिज्जदोमानस्सम्।

390-393. काये कायनुपासि विहरति अतपि संपजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झादोमनसं; वेदनासु वेदनानुपासि विहारति...पे०... चित्ते चित्तनुपासि विहारति...पे०... धम्मेसु धम्मनुपासि विहारति अबपि संपजानो सतिमा विनेय लोके अभिज्झादोमंससं।

394-397

"... उत्पन्न न हुए अकुशल गुणों (धम्म) के उत्पन्न न होने की इच्छा उत्पन्न करता है; प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, मन लगाता है और प्रयास करता है... उत्पन्न हुए अकुशल गुणों (धम्म) के त्याग की इच्छा उत्पन्न करता है; प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, मन लगाता है और प्रयास करता है... (408) उत्पन्न न हुए लाभकारी गुणों (कुशल) के उत्पन्न होने की इच्छा उत्पन्न करता है; प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, मन लगाता है और प्रयास करता है... उत्पन्न हुए लाभकारी गुणों (धम्म) के रखरखाव, उनके क्षय न होने, वृद्धि, विस्तार और विकास द्वारा पूर्णता की इच्छा उत्पन्न करता है; प्रयास करता है, ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) जगाता है, मन लगाता है और प्रयास करता है..."

394-397. अनुप्पन्नं पापकाणं अकुशलनं धम्मणं अनुप्पदाय छंदं जनेति वयमति वीर्यं [विरियां (सि. स्या. कं. पि.)] अरभति चित्तं पग्गनहति पदहति; उप्पन्नानं पापकाणं अकुशलनं धम्मणं पहानय चंदं जनेति वयमति वीर्यं आरभति चित्तं पग्गनहति पदहति। अनुप्पन्नानं कुसलानां धम्मनां उप्पादाय छंदं जनेति वयमति वीर्य्यं आरभति चित्तं पग्गनहाति पदहति; उप्पन्नानं कुसलानां धम्मनां थितिया असम्मोसया भयोभावाय वेपुलाय भवनाय पारिपुरिया चंदं जनेति वयमति वीर्यं आरभति चित्तं पग्गनहति पदहति.

394-397. अनुप्प साइनानं पापकानं अकुसलानं धम्मनं अनुप्पादय छंदं जनेति वयामति वीरियं [विरियं (सी० स्या० कं० पी०)] आरभति चित्तं पग्गनहति पधाति; उप्प संज्ञानं पापकानं अकुसलानं धम्मनं फाणय छंदं जनेति वयमति वीरियं अरभति चित्तं पग्गनहति पधाति। अनुप्प साइनानं कुसलानं धम्मनं उप्पादाय छंदं जनेति वयमति वीरियं अरभति चित्तं पग्गनहति पदहति; उप्प साइनानं कुसलानं धम्मानं थितिया असम्मोसाय भयोभावाय वेपुलल्लय भावनाय पारिपुरिया छंदं जनेति वयामति वीरियं आरभति चित्तं पग्गनहति पधाति।

---

398 — 401

"...इच्छा और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का

आधार विकसित करता है... मन और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है... अन्वेषण और प्रयास के कारण समाधि (स्व-लीनता/सम्मोहन) प्राप्त करने वाली मानसिक शक्ति (जादू/इद्धि) का आधार विकसित करता है..."

398-401. छंदसमाधिपधानसंखरसमन्नागतं इद्दीपादं भवेति... वीर्यसमाधिपधानसंखरसमन्नागतं इद्दीपादं भवेति... चित्तसमाधिपधानसंखरसमन्नागतं इधिपादं भवेति... विमानसामधिपधानसंखरसमन्नागतं इधिपदं भवेति...

398-401. छन्दसमाधिपधानसंङ्खारसं इधिपादं भवेति... वीरियसमाधिपधानसंङ्खारसं इधिपादं भवेति... चित्तसमाधिपधानसंङ्खारसं इधिपादं भवेति... वीमासमाधिपधानसङ्खारसं इधिपादं भवेति...।

---

402 — 406

... आस्था की शक्ति विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति विकसित करता है... ध्यान (सतीत्व/ध्यान) की शक्ति विकसित करता है... समाधि (आत्म-लीनता/सम्मोहन) की शक्ति विकसित करता है... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति विकसित करता है...

402-406. सद्धिन्द्रियं भवेति... वीर्यिन्द्रियं भवेति... सतीन्द्रियं भवेति... समाधिन्द्रियं भवेति... पणिनिन्द्रियं भवेति...।

402-406. सद्धिन्द्रियं भवेति... वीरिन्द्रियं भवेति... सतिन्द्रियं भवेति... समाधिन्द्रियं भवेति... पञ्चिन्द्रियं भवेति...।

---

407 - 411 आस्था की शक्ति विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति विकसित करता है... ध्यान (सती/ध्यान) की शक्ति विकसित करता है... समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) की शक्ति विकसित करता है... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति विकसित करता है...

407-411. सद्दाबलं भवेति... वीर्यबलं भवेति... सतिबलं भवेति... समाधिबलं भवेति... पणनाबलं भवेति...

407-411. सद्धाबलं भवेति...वीर्यबलं भवेति... सतिबलं भवेति... समाधिबलं भवेति... पञ्चबलं भवेति...।

---

412 - 418

"...सती ध्यान (ध्यान/सती) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है...धर्म (घटनाओं के विवेक) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है...वीर्य (ऊर्जा/वीर्य) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है [40]...पीति (आनंद) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है...शांति के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है...समाधि (आत्म-लीनता/सन्यास) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है...उदासीनता (भीतर लौटना/उपेक्ष/उपेक्ष) के ज्ञानोदय कारक को विकसित करता है..."

412-418. सतिसंबोझंगं भवेति... धम्मविकयसंबोज्झांगं भवेति... वीर्यसम्बोज्झांगं भवेति... पितिसम्बोज्झांगं भवेति... पसद्धिसम्बोज्झांगं भवेति... समाधिसंबोझंगं भवेति... उपेक्खासम्बोज्झांगं भवेति...

412-418. सतिस्म्बोज्झङ्गं भवेति... धम्मविचसम्बोज्ङ्गं भवेति... वीरियसम्बोज्झङ्गं भवेति... पीतिस्म्बोज्झङ्गं भवेति... पस्सद्धिसम्बोज्ङ्गं भवेति... समाधिसम्बोज्ङ्गं भवेति... उपेक्खासम्बोज्ङ्गं भवेति... उपेक्खासम्बोज्ङ्गं भवेति... भवेति...।

---

419 -426

"...सही दृष्टिकोण विकसित करता है...सही इरादा विकसित करता है...सही वाणी विकसित करता है...सही कर्म विकसित करता है...सही आजीविका विकसित करता है...सही प्रयास विकसित करता है...सही ध्यान (सती/सजगता) विकसित करता है...सही समाधि (आत्म-लीनता/समाधि) विकसित करता है..."

419-426. सम्मादिथिं भवेति... सम्मासंकप्पं भवेति... सम्मावाचं भवेति... सम्माकमन्तं भवेति... सम्माजीवम् भवेति... सम्मावायम् भवेति... सम्मासतिं भवेति... सम्माससमाधिं भवेति...।

419-426. सम्मादिट्ठिं भवेति... सम्मासङ्कप्पं भवेति... सम्मावाचं भवेति... सम्माकम्मन्तं भवेति... सम्माजीवं भवेति... सम्मावायमं भवेति... सम्मासतिं भवेति... सम्मासमाधिं भवेति...।

427— 434

"... आंतरिक रूप से रूपों को समझने वाला, बाहरी रूप से सीमित, सुंदर या बदसूरत रूपों को देखता है, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, इस प्रकार बोध करता है: 'जान, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को समझने वाला, बाहरी रूप से असीम, सुंदर या बदसूरत रूपों को देखता है, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न समझने वाला, बाहरी रूप से सीमित, सुंदर या बदसूरत रूपों को देखता है, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न समझने वाला, बाहरी रूप से असीम, सुंदर या बदसूरत रूपों को देखता है, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न समझने वाला, बाहरी रूप से नीले रंग के, नीले रंग के, नीले आभा वाले, नीले रंग के, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न समझने वाला, बाहरी रूप से पीले रंग के रूपों को देखता है, पीले रंग का, पीले रंगत वाला, पीले रंग से आभास युक्त, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न देख पाने वाला, बाह्य रूप से रूपों को देखता है, लाल रंग के, लाल रंग के, लाल रंगत वाले, लाल रंग से आभास युक्त, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ'... आंतरिक रूप से रूपों को न देख पाने वाला, बाह्य रूप से रूपों को देखता है, सफेद रंग के, सफेद रंगत वाले, सफेद रंग से आभास युक्त, और उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, वह इस प्रकार बोध करता है: 'मैं जानता हूँ, मैं देखता हूँ...'

427-434.[दि. नि. 2.173; मा. नि. 2.249; एक। नि. 8.65] अज्झट्टं रूपसानि बहिधा रूपाणि पस्सति परित्तानि सुवन्नदुब्बानानि। 'तानि अभिभूय जानामि पसामि'ति - इवांसनि होति... अज्झट्टं रूपसनि बहिद्ध रूपाणि पस्सति अप्पमानानि सुवन्नादुब्बानानि। 'तानि अभिभूय जानामि पसामि'ति - इवांसानि होति... अज्झट्टं अरूपासानि बहिधा रूपाणि पस्सति परित्तानि सुवन्नदुब्बानि। 'तानि अभिभूय जानामि पसामि'ति - इवांसानि होति... अज्झट्टं अरूपासानि बहिद्ध रूपाणि पस्सति अप्पमानानि सुवन्नादुब्बानानि। 'तानि अभिभूय जानामि पसामि'ति - इवांसानि होति... अज्झट्टं अरूपानि बहुत्धा रूपाणि पस्सति नीलानि नीलावन्नानि निलानिदासनानि निलानिभासानि। 'तानि अभिभूय जानामि पसामि'ति - इवांसनि होति... अज्झट्टं अरूपानि बहुत्धा रूपाणि पस्सति पीतानि पीतवन्नानि पितनिदासनानि पीतानिभासानि. 'तानि अभिभूय जानामि पसामि'ति - इवांसानि होति... अज्झट्टं अरूपसानि बहिधा रूपाणि पस्सति लोहितकानि लोहितकावन्नानि लोहितकानिदासनानि लोहितकानिभासानि। 'तानि अभिभूय जानामि पसामि'ति इवांसनि होति... अज्झट्टं अरूपसानि बहिधा रूपाणि पस्सति ओदातानि ओदातवनानि ओदातानिदासनानि ओदातनिभासानि. 'तानि अभिभूय जानामि पसामि'ति - इवांसानि होति...।

427-434. [दी० नि० 2.173; म० नि० 2.249; अ० नि० 8.65] अज्झत्तं रूपसंज्ञि बधिधा रूपाणि पस्सति परितानि सुवन्नदुब्बन्नानि। 'तानि अभिभ्युय जानामि पसमाति'- एवंसञ्जनी होति... अज्झत्तं रूपसञ्जि बधिधा रूपाणि पस्सति अप्पमनानि सुवन्नदुब्बन्ननि। 'तानि अभिभ्युय जानामि पसमाति' - एवंसञ्जनी होति... अज्झत्तं अरूपसञ्जी बधिधा रूपाणि पस्सति परितानि सुवन्नदुब्बन्ननि। 'तानि अभिभ्युय जानामि पसमाति'- एवंसञ्जनी होति... अज्झत्तं अरूपसञ्जी बधिधा रूपाणि पस्सति अप्पमानानि सुवन्नदुब्बन्ननि। 'तानि अभिभ्युय जानामि पस्सामी'ति - एवंसञ्जनी होति...अज्झत्तं अरूपसञ्जी बधिधा रूपाणि पस्सति नीलानि नीलवन्नानि नीलनिदस्सनानि नीलनिभासानि। 'तानि अभिभ्युय जानामि पसमाति'- एवससंज्ञी होति... अज्झत्तं अरूपसंज्ञी बधिधा रूपाणि पस्सति पीतानि पीतवन्नानि पीतनिदस्सनानि

पीतनिभासानि। 'तानि अभिभ्युय जानामि पसमाति'- एवंसंज्ञी होति...अज्झत्तं अरूपसंज्ञी बधिधा रूपानि पस्सति लोहितकानि लोहितकवन्नानि लोहितकनिदस्सनानि लोहितकनिभासानि। 'तानि अभिभ्युय जानामि पस्सामी'ति एवंसञ्जनी होति... अज्झत्तं अरूपसञ्जी बधिधा रूपाणि पस्सति ओदातानि ओदातवन्नानि ओदातनिदस्सनानि ओदातनिभासानि। 'तानि अभिभ्युय जानामि पस्सामी'ति - एवंसंज्ञी होति...।

---

435 -442

...रूप धारण करने वाला रूपों को देखता है... [41] आंतरिक रूप से रूपों को न देखने वाला बाहरी रूप से रूपों को देखता है... केवल 'सुंदर' पर केंद्रित है... रूपों की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर पूर्ण विजय प्राप्त करने के साथ, इंद्रिय-प्रभाव की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) के दूर होने के साथ, विविधता की धारणाओं (सन्ना/संज्ञा) पर ध्यान न देने के साथ, 'अंतरिक्ष अनंत है' को समझते हुए, अनंत अंतरिक्ष के आधार में प्रवेश करता है और निवास करता है... अनंत अंतरिक्ष के क्षेत्र (आयतन) पर पूर्ण विजय प्राप्त करने के साथ, 'चेतना अनंत है' को समझते हुए, अनंत चेतना के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है... चेतना की अनंतता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, 'कुछ नहीं है' का बोध करते हुए, वह शून्यता के क्षेत्र (आयतन) में प्रवेश करता है और निवास करता है... शून्यता के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, वह न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (अबोध) के आधार में प्रवेश करता है और निवास करता है... न तो बोध (सन्न/संज्ञा) और न ही अबोध (सन्न/संज्ञा) के क्षेत्र (आयतन) को पूर्णतः पार करके, वह बोध (सन्न/संज्ञा) और संवेदना (वेदना) की समाप्ति में प्रवेश करता है और निवास करता है...

435-442. रूपि रूपाणि पस्सति... अज्झट्टं अरूपाणि बहिधा रूपाणि पस्सति सुभन्तेव अधिमुत्तो होति... सब्बसो रूपासानणां समतिक्कमा पतिघासन्यानां अथंगमा ननत्तसंन्याणं अमानसिकारा अनंतो अकासोति आकाशानचायतनं उपसम्पज्जा विहारति... सब्बासो आकाशानचायतनं समतिक्कम्मा अनंतं विनिनान्ति विनानाञ्चायतनम् उपसंपज्ज विहारति... सब्बसो विन्ननचायतनं समतिक्कम्मा नत्थि किञ्चिति अकिंचनन्यातनं उपसम्पज्ज विहारति... सब्बासो अकिंचनचायतनं समतिक्कम्मा नेवासंन्यानासंन्यातनं उपसंपज्ज विहारति... सब्बसो नेवासंन्यानासंन्यातनं समतिक्कम्मा संनावेदयितनिरोधं उपसंपज्ज विहारति...।

4-42. रूपि रूपाणि पस्सति... अज्झत्तं अरूपसञ्जनि बधिधा रूपाणि पस्सति सुभन्तेव अधिमुत्तो होति... सब्बसो रूपसञ्जानं समतित्रकमा पतिघसञ्जानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्जानं अमानसिकरा अननो अकासोति आकासानंदचायतनं उपसम्पज्जज विहारति... सब्बसो आकासानञ्चायतनं समति त्रैकम्म अनन्तं विञ्चञ्चञान्ति विञ्चञ्चायतनं उपसम्पजज विहरति... सब्बसो विञ्चञ्चञ्चायतनं समति रेखकम नत्थि किञ्चति अकिञ्चञ्चआयतनं उपसम्पज्मज विहारति... सब्बसो अकिञ्चञ्चञ्चायतनं समति रिकम्म नेवसंज्ञानसञ्जन्यातनं उपसम्पजदज विहरति... सब्बसो नेवसंजनसंज्ञायतनं समति स्ट्रोकम संज्ञवेदयितनिरोधं उपसम्पजज विहरति...।

---

443 — 452

... पृथ्वी कसीना का विकास करता है... 200 जल कसीना का विकास करता है... अग्नि कसीना का विकास करता है... वायु कसीना का विकास करता है... नीला कसीना का विकास करता है... पीला कसीना का विकास करता है... लाल कसीना का विकास करता है... सफेद कसीना का विकास करता है... आकाश कसीना का विकास करता है... चेतना कसीना का विकास करता है...

443-452. पथविकसिणां भवेति... अपोकाशिणां भवेति... तेजोकाशिणां भवेति... वयोकाशिणां भवेति... नीलकाशिनां भवेति... पीताकाशिणां भवेति... लोहितकासिनं भवेति... ओदतकसिनं भवेति... आकाशकसिनां भवेति... विनाशकसिनं भवेति...

443-452. पथ्वीक्सिणं भवेति... आपोकसिणं भवेति... तेजोसिनं भवेति... वायोक्सिणं भवेति... नीलकैसिनं भवेति... पीतकसिनं भवेति... लोहितकसिनं भवेति... ओदाक्षिणं भवेति... आकाशासिनं भवेति... विज्ञानं कसिनं भवेति...।

---

453 — 462

"...अनाकर्षकता की अनुभूति विकसित करता है...मृत्यु की अनुभूति विकसित करता है...भोजन की अरुचि की अनुभूति विकसित करता है...संपूर्ण संसार में आनंदहीनता की अनुभूति विकसित करता है...अनित्यता की अनुभूति विकसित करता है...अनित्य में पीड़ा की अनुभूति विकसित करता है...पीड़ा में अनात्म की अनुभूति विकसित करता है...त्याग की अनुभूति विकसित करता है...वैराग की अनुभूति विकसित करता है...निरस्तता की अनुभूति विकसित करता है...

453-462. असुभासन्नं भवेति... मरणासन्नं भवेति... अहारे पतिकुलसन्नं भवेति... सब्बलोके अनाभिरतिसन्नं [अनाभिरतसन्नं (सि. स्या. कं.)। पि.)] भवेति... अनिच्चासन्नं भवेति... अनिच्चे दुक्खासनं भवेति... दुक्खे अनत्तसंन्यां भवेति... पहनासनं भवेति... विरागसंन्यां भवेति... निरोधसनं भावेति....

453-462. असुभसञ्जनं भवेति... मृणासञ्जनं भवेति... आहारे पतिकुलसञ्जनं भवेति... सब्बलोके अनाभिरतिसञ्जं [अनाभिरतसञ्जन् (सी० स्या० कं० पी०)] भवेति... अनिच्च्चसञ्चं भवेति... अनिच्छेच्छे दु:संञ्चं भवेति... दुक्खे अनत्तसञ्चं भवेति... पहंसंज्ञं भवेति... विरागसंजं भवेति... निरोधसंजं भवेति...।

---

463 — 472

... अनित्यता (अनित्यता/अनित्यता) की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... अनात्म की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... [42] मृत्यु की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... भोजन की अरुचि की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... संपूर्ण संसार में आनंदहीनता की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... कंकाल की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... कृमिग्रस्त शव की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... पीले पड़े शव की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... फटे हुए शव की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... फूले हुए शव की धारणा (सन्न/सन्न्य) विकसित करता है... :"

463-472. अनिच्चासनं भवेति... अनत्तसंन्यां भवेति... मरणासंन्यां भवेति... आहारे पतिकुलसंन्यां भवेति... सब्बलोके अनाभिरतिसंन्यां भवेति... अष्टिकासंन्यां भवेति... पुावकासंन्यां (का.)] भवेति... विणिलकासंन्यां भवेति... विच्चिद्दकसंन्यां भवेति... उद्धुमतकसंन्याम् भावेति....

463-472. अनीचदसञ्जनं भवेति... अनत्तसञ्जनं भवेति... मरणसञ्जनं भवेति... आहारे पतिकूलसञ्जनं भवेति... सब्बलोके अनाभिरतिसञ्चं भवेति... अट्ठिक्सञ्जनं भवेति... पुळवकसञ्जनं [पुळुवकसञ्जन (क०)] भवेति... विनीलकसञ्जञ्च भवेति... विच्छिद्दकसञ्चं भवेति... उद्दुमातकसंज्ञं भवेति...।

---

473 -482

बुद्ध का स्मरण विकसित होता है... धम्म का स्मरण विकसित होता है... संघ का स्मरण विकसित होता है... सद्गुणों का स्मरण विकसित होता है... दान देने का स्मरण विकसित होता है... देवताओं का स्मरण विकसित होता है... श्वास का ध्यान (सामंजस्य/सती) विकसित होता है... मृत्यु का ध्यान (सामंजस्य/सती) विकसित होता है... शरीर के प्रति सजगता (सामंजस्य/सती) विकसित होती है... शांति का स्मरण विकसित होता है...

473-482. बुद्धानुस्सतिम् भवेति... धम्मानुस्सतिम् भवेति... संघानुस्सतिम् भवेति... सिलानुस्सतिम् भवेति... चगननुस्सतिम् भवेति... देवतानुस्सतिम् भवेति... अनापानस्सतिम् भवेति... मरणस्सतिम् भवेति... कायगतसतिम् भवेति... उपसामनुस्सतिम् भवेति...।

473-482. बुद्धनुस्स्तिं भवेति... धम्मनुस्स्तिं भवेति... सङ्घानुस्स्तिं भवेति... सीलानुस्स्तिं भवेति... चागनुस्सतिं भवेति... देवतानुस्स्तिं भवेति... अनापानस्सतिं भवेति... मरणस्सतिं भवेति... कायगतसस्तिं भवेति... उपसमनुसस्तिं भवेति...।

---

483 - 492

"...प्रथम ध्यान के साथ आस्था की क्षमता विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की क्षमता विकसित करता है... ध्यान (सती) की क्षमता विकसित करता है... समाधि (आत्म-लीन/सन्यास) की क्षमता विकसित करता है... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की क्षमता विकसित करता है... आस्था की शक्ति विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति विकसित करता है... ध्यान (सती) की शक्ति विकसित करता है... समाधि (आत्म-लीन/सन्यास) की शक्ति विकसित करता है... पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शक्ति विकसित करता है..."

483-492. पथमज्झानसहगतं सद्धिन्द्रियं भवेति... वीर्यइन्द्रियं भवेति... सतीन्द्रियं भवेति... समाधिन्द्रियं भवेति... पणिन्द्रियं भवेति... सद्धिन्द्रियं भवेति... वीर्यबलम् भवेति... सतिबलं भवेति... समाधिबलं भवेति... पन्नबलं भवेति...।

483-492. पतमज्झांसाहगतं सद्धिन्द्रियं भवेति... वीरिन्द्रियं भवेति... सतिन्द्रियं भवेति... समाधिन्द्रियं भवेति... पञ्चिन्द्रियं भवेति... सद्धबलं भवेति... वीरियबलं भवेति... सतीबलं भवेति... समाधिबलं भवेति... पञ्चनद्रियं भवेति...।

493-562

"... दूसरे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) के साथ... ... तीसरे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) के साथ... चौथे ध्यान (सम्मोहन अवस्था) के साथ... प्रेमपूर्ण दया (मेत्ता) के साथ... करुणा के साथ... परोपकारी आनंद के साथ... उदासीनता (अंदर ही अंदर समाहित/उपेक्खा) के साथ... विश्वास की क्षमता विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की क्षमता विकसित करता है... सती (ध्यान) की क्षमता विकसित करता है... समाधि (आत्म-लीन/सम्मोहन) की क्षमता विकसित करता है... दीप्ति (दिव्य ज्ञान) की क्षमता विकसित करता है... विश्वास की शक्ति विकसित करता है... ऊर्जा (प्रयास/वीर्य) की शक्ति विकसित करता है... सती (ध्यान) की शक्ति विकसित करता है... समाधि (आत्म-लीन/सम्मोहन) की शक्ति विकसित करता है... दीप्ति (दिव्य ज्ञान) की शक्ति विकसित करता है।" मैं भिक्षुओं से कहता हूँ, "वह भिक्षु कहलाता है जो ध्यान (सम्मोहन अवस्था) से रहित न हो, जो गुरु की शिक्षाओं का पालन करे, जो उनकी सलाह माने और जो देश का भिक्षाभोजन व्यर्थ न करे। तो फिर, जो लोग इसका अभ्यास करते हैं, वे और भी अधिक बुद्धिमान होंगे!"

493-562. "दुतियासहगतं...पे... ततियाज्झानसहागतं...पे... चतुत्थज्जहनसहगतं...पे... मेत्तासहगतं...पे... करुणासहगतं...पे... मुदितासहगतं...पे... उपेक्खसहगतं सद्धिन्द्रियम् भवेति...वीर्यिन्द्रियं भवेति...सतिन्द्रियं भवेति...समाधिन्द्रियं भवेति...पाणिन्द्रियं भवेति...सद्धबलं भवेति...वीर्यबलं भवेति...सतिबलं भवेति... समाधिबलं भवेति... पणनाबलं भवेति। अयं वुच्चति, भिक्खवे - 'भिक्खु अरितत्ज्जहनो विहारति सत्थुसासनकारो ओवदपतिकरो, अमोघं रथपिंडं भुञ्जति'। को पाना वदो ये नं बहुलिकारोंती!

अपराच्चरासंगघातवग्गो अट्ठरसामो।

493-562. "दुतियज्झानसहगतं...पे०... ततियाज्झांसहगतं...पे०... चतुत्थज्झांसहागतं...पे०... मेसहगतं...पे०... करुणासहगतं...पे०... मुदितासहगतं...पे०... उपेखासहगतं सद्धिन्द्रियं भवेति...वीर्यिन्द्रियं भवेति...सतिन्द्रियं भवेति...मधीन्द्रियं भवेति... पञ्चिन्द्रियं भवेति...सद्धबलं भवेति...वीर्यबलं भवेति...सतिबलं भवेति...समाधिबलं भवेति...पञ्जानबलं भवेति। अयं वुचदचति, भिक्खवे - 'भिक्खु अरितत्झानो विहारति सत्थुसासंकरो ओवादपतिकरो, अमोघं रथपिण्डं भुञ्जति।' को पण वादो ये नं बहुविक्रोन्ति''ति!

अपराच्चरासङ्घातवग्गो अत्थारसमो।

(1.XIX) माइंडफुलनेस (ध्यान) शरीर की ओर निर्देशित (कायगाता-सती-वाग्गो)

563

"भिक्षुओं, जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपने मन से विशाल सागर को समाहित कर लेता है, उसमें सागर में गिरने वाली सभी धाराएँ समाहित हो जाती हैं, ठीक उसी प्रकार जो कोई भी शरीर को लक्षित करते हुए सती (यानी विपश्यना) का अभ्यास और विकास करता है, वह सच्चे ज्ञान से संबंधित सभी लाभकारी (कुशल) गुणों (धम्म) को समाहित कर लेता है।" 203

563. "यस्सा कसासि, भिक्खवे, महासमुद्दो चेतसा फूटो अंतोगधा तस्स कुन्नदियो या काचि समुद्दंगमा; एवमेवं, भिक्खवे, यस्सा कस्सासि कायगता सति भविता बहुलिकता अंतोगधा तस्स कुसल धम्म ये केचि विजयभागिया'ति।

563. "यस्स कास्स, भिक्खवे, महासमुद्दो चेतसाचि फूटको अंतोग्धा तस्स कु सिनगदियो या काचि समुद्दङ्गमा; एवमेवं, भिक्खवे, यस कस्स्चि कायगता सति भविता बहुलिक्ता अंतोग्धा तस्स कुसला धम्म ये केचि विज्दभागिया"ति।

564-570

भिक्षुओं, एक बात, जब विकसित और पोषित की जाती है, (576) तो वह तीव्र तत्परता की भावना उत्पन्न करती है 200 ... (577) महान कल्याण की ओर ले जाती है (578) बंधन से महान सुरक्षा की ओर ले जाती है ... (579) सती ध्यान और पूर्ण बोध की ओर ले जाती है ... (580) ज्ञान और दृष्टि की प्राप्ति की ओर ले जाती है ... (581) इसी जीवन में सुखद निवास की ओर ले जाती है ... (582) ज्ञान और मुक्ति के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है। वह एक बात क्या है? शरीर के प्रति निर्देशित सजगता। यही वह एक बात है, जब विकसित और पोषित की जाती है, तो ज्ञान और मुक्ति के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है।

564-570. "एकाधम्मो, भिक्खवे, भावितो बाहुलिकतो महतो संवेगया संवत्तति...महतो अट्ठाय संवत्तति...महतो योगक्खेमाय संवत्तति...सतिसंपजान्या संवत्तति... नानादासनप्पाटिलाभाय संवत्तति...दिट्ठधम्मसुखविहारय संवत्तति... विज्जाविमुत्तिफलासच्चिकिरियाय संवत्तति। काटामो एकधम्मो? कायगता सति. अयं खो, भिक्खवे, एकाधम्मो भावितो बाहुलिकतो महतो संवेगया संवत्तति...महतो अत्थाय संवत्तति...महतो योगक्खेमाय संवत्तति...सतिसंपजान्या संवत्तति... णनादस्सणप्पतिलाभाय संवत्तति...दिट्ठधम्मसुखविहारय संवत्तति... विज्जाविमुत्तिफलासच्चिकिरियाय संवत्तति।"

564-570. "एकधम्मो, भिक्खवे, भावितो बहुलिकतो सीता संवेगाय संवत्तति...महत्त अत्थाय संवत्तति...महात्मा योगखेमाय संवत्तति...सतिसमपञ्जन्याय संवत्तति... आनंददाससंप्पतिलाभाय संवत्तति... दिट्ठधम्मसुखविहारय संवत्तति... विजजाविमुत्तिफलसचिकिरियाय संवत्तति। कतमो एकधम्मो? कायगता सति। अयं खो, भिक्खवे, एकधम्मो भावितो बहुलिकतो महोथ संवेगाय संवत्तति... महोता अथय संवत्तति... महता योगखेमाय संवत्तति... सतिसमपञ्जन्याय संवत्तति... नन्दस्सन्प्पतिलाभाय संवत्तति... दिट्ठधम्मसुखविहारय संवत्तति... विजदजाविमुत्तिफलसचिकिरियाय संवत्तति।

571

भिक्षुओं, जब एक चीज विकसित और पोषित होती है, तो शरीर शांत हो जाता है, मन शांत हो जाता है, विचार और परीक्षा शांत हो जाते हैं, और सच्चे ज्ञान से संबंधित सभी लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्ण हो जाते हैं। वह एक चीज क्या है? शरीर पर केंद्रित सती (ध्यान)। [44] जब यह एक चीज विकसित और पोषित होती है, तो शरीर शांत हो जाता है... और धम्म के सच्चे ज्ञान से संबंधित सभी लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) विकास द्वारा पूर्ण हो जाते हैं।

571। कटमस्मिं एकधम्मे? कायगताय सत्या। इमस्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भविते बाहुलिकते कायोपि पसंभाति, चित्तमपि पसंभाति, वितक्कविचारपि वुपसंमन्ति, केवलापि विजयभागिय धम्म भवनपरिपुरिम् गच्छन्ती"ति।

571. "एकधम्मे, भिक्खवे, भावैते बहुलिकते कायोपि पसंमबति, चित्तमपि पसंमबति, वित्क्रमविचारपि वूपसम्मन्ति, केवलापि विजजाभागिया धम्म भावनापारिपुरिं गच्छन्ति। कतमस्मिं एकधम्मे? कायगताय सटिया। इमस्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भविते बहुलिकते कायोपि पसंमबति, चित्तमपि पसंमबति, वितर्कविचारपि वूपसम्मन्ति, केवलापि विजादभागिया धम्म भावनापारिपूरिं गच्छन्ति"ति।

572

भिक्षुओं, जब किसी एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न अकुशल गुण त्याग दिए जाते हैं। वह एक चीज क्या है? शरीर पर केंद्रित सती ध्यान। जब इस एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो अजन्मे अकुशल गुण उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न अकुशल गुण त्याग दिए जाते हैं।

572. "एकधम्मे, भिक्खवे, भविते बाहुलिकते अनुप्पन्ना सेवा अकुशला धम्म नुप्पज्जन्ति, उप्पन्ना च अकुशला धम्म पाहियन्ति। कटमस्मिं एकधम्मे? कायगताय सत्या। इमस्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भविते बहुलिकते अनुप्पन्ना सेवा अकुशला धम्म नुप्पज्जन्ति, उपप्पन्ना च अकुशला धम्म पहियंती।

572. "एकधम्मे, भिक्खवे, भविते बहुलिकते अनुप्प नागा चेव अकुसला धम्म नुप्पज्जन्ति, उप्प नागा च अकुसला धम्म पहियन्ति। कतमस्मिं एकधम्मे? कायगताय सटिया। इस्स्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भविते बहुलिकते अनुप्प सना चेव अकुसला धम्म नुप्पजजंति, उप्प सयना च अकुसला धम्म पहिअन्ति"ति।

573

भिक्षुओं, जब किसी एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण बढ़ते और फैलते हैं। वह एक चीज क्या है? शरीर पर केंद्रित ध्यान। जब इस एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो अजन्मे लाभकारी (कुशल) गुण (धम्म) उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न लाभकारी (कुशल) गुण बढ़ते और फैलते हैं।

573. "एकधम्मे, भिक्खवे, भविते बाहुलिकते अनुप्पन्ना सेवा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति, उप्पन्ना च कुसल धम्म भयोभावाय वेपुल्लया संवत्तन्ति। कटमस्मिं एकधम्मे? कायगताय सत्या। इमस्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भविते बाहुलिकते अनुप्पन्ना सेवा कुसल धम्म उप्पज्जन्ति, उप्पन्ना च कुसल धम्म भयोभवाय वेपुल्या संवत्तन्ति।

573. "एकधम्मे, भिक्खवे, भविते बहुलीकते अनुप्प संज्ञा चेव कुसला धम्म उप्पजजंन्ति, उप्प नयना च कुसला धम्म भयोभावाय वेपुलल्लय संवत्तन्ति। कतमस्मिं एकधम्मे? कायगताय सटिया। इमस्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भविते बहुलिकते अनुप्प नयना चेव कुसला धम्म उप्पजजंन्ति, उप्प नयना च कुसला धम्म भयोभावाय वेपुलल्लय संवत्तन्ति"ति।

574

भिक्षुओं, जब किसी एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, (586) तो अज्ञान का त्याग हो जाता है... (587) सच्चा ज्ञान उत्पन्न होता है... (588) 'मैं हूँ' का अहंकार त्याग दिया जाता है... (589) अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं... (590) बंधन टूट जाते हैं। वह एक चीज क्या है? शरीर पर केंद्रित सती ध्यान। जब इस एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो अज्ञान का त्याग हो जाता है... सच्चा ज्ञान उत्पन्न होता है... 'मैं हूँ' का अहंकार त्याग दिया जाता है... अंतर्निहित प्रवृत्तियाँ जड़ से उखड़ जाती हैं... बंधन टूट जाते हैं।

574. "एकधम्मे, भिक्खवे, भविते बाहुलिकते अविज्जा पहियति, विज्जा उप्पज्जति, अस्मिमानो पहियति, अनुसाया समुघताम् गच्छन्ति, संयोगना पहियंती। कटमस्मिं एकधम्मे? कायगताय सत्या। इमस्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भविते बहुलिकते अविज्जा पहियति, विज्जा उप्पज्जति, अस्मिमानो पहियति, अनुसाया समुघतां गच्छन्ति, संयोगना पहियंती।

574. "एकधम्मे, भिक्खवे, भविते बहुलिकते अविजज्जा पहियति, विज्जजा उप्पजदजति, अस्मिमानो पहियति, अनुसया समुग्घातं गच्छन्ति, कोम्बा पहियंती। कतमस्मिं एकधम्मे? कायगताय सटिया। इमस्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भविते बहुलिकते अविज्जा पहियति, विज्जजा उप्पजदजति, अस्मिमानो पहियति, अनुसाया समुग्घातं गच्छन्ति, संयोजना पहियंती।

575 -576

भिक्षुओं, एक बात, जब विकसित और अभ्यास की जाती है, (591) तो वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा भेद की ओर ले जाती है... (592) अनासक्ति के माध्यम से निर्वाण की ओर ले जाती है। 211 वह एक बात क्या है? शरीर पर केंद्रित सती ध्यान। यही वह एक बात है, जब विकसित और अभ्यास की जाती है, तो वह पन्ना (दिव्य ज्ञान) द्वारा भेद की ओर ले जाती है... अनासक्ति के माध्यम से निर्वाण की ओर ले जाती है।

575-576. "एकाधम्मो, भिक्खवे, भावितो बाहुलिकतो पणनापभेदाय संवत्तति... अनुपादपरिनिब्बानया संवत्तति। काटामो एकधम्मो? कायगता सति. अयं खो, भिक्खवे, एकाधम्मो भावितो बहुलिकतो पणनापभेदाय संवत्तति... अनुपादपरिनिब्बानया संवत्तति।

575-576. "एकधम्मो, भिक्खवे, भावितोभेदिकतो पञ्जानपाय संवत्तति... अनुपादापरिनिब्बानाय संवत्तति। कतमो एकधम्मो? कायगता सति। अयं खो, भिक्खवे, एकधम्मो भावितो बहुलिकतो पञ्जापभेदाय संवत्तति... अनुपादापरिनिब्बानाय संवत्तति"ति।

577 -579

भिक्षुओं, जब किसी एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, (593) तो अनेक तत्वों का ज्ञान प्राप्त होता है... (594) तत्वों की विविधता का ज्ञान प्राप्त होता है... (595) अनेक तत्वों का विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त होता है। 212 वह एक चीज क्या है? वह शरीर पर केंद्रित सती ध्यान है। जब इस एक चीज का विकास और अभ्यास किया जाता है, तो विभिन्न तत्वों का ज्ञान प्राप्त होता है... तत्वों की विविधता का ज्ञान प्राप्त होता है... विभिन्न तत्वों का विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त होता है।

577-579. "एकधम्मे, भिक्खवे, भविते बहुलिकते अनेकधातुपतिवेदो होति... नानाधातुपतिवेदहो होती... अनेकधातुपतिसंभिदा होती। कटमस्मिं एकधम्मे? कायगताय सत्या। इमस्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भविते बहुलिकते अनेकधातुपतिवेदो होति... नानाधातुपतिवेदहो होती... अनेकधातुपतिसंभिदा होती'ति।

577-579. "एकधम्मे, भिक्खवे, भविते बहुलीकते अनेकधातुपतिवेधो होती है... नानाधातुपतिवेधो होती है... अनेकधातुपतिसमाधिदा होती है। कतमस्मिं एकधम्मे? कायगताय सटिया। इमस्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भविते बहुलीकते अनेकधातुपतिवेधो होती है... नानाधातुपतिवेदो होती है... अनेकधातुपतिसमाभिदा होती है।

580 — 583

भिक्षुओं, एक ही बात है, जब उसका विकास और अभ्यास किया जाता है, तो वह (596) धारा-प्रवेश (सात पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है... (597) एक बार लौटने (एक पुनर्जन्म, सकदागामी) के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है... (598) अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म नहीं) के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है [45]... (599) अरहंतत्व के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है। वह एक बात क्या है? वह शरीर पर केंद्रित सती ध्यान है। यही वह एक बात है, जिसका विकास और अभ्यास करने पर धारा-प्रवेश (सात पुनर्जन्म, सोतपत्ति) के फल की प्राप्ति होती है... एक बार लौटने के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है... अनागामी (पृथ्वी पर पुनर्जन्म नहीं) के फल की प्राप्ति की ओर ले जाती है। अरहंत पद के फल की प्राप्ति के लिए।"

580-583. "एकाधम्मो, भिक्खवे, भावितो बाहुलिकतो सोतापत्तिफलसाच्चिकिरियाया संवत्तति... सकादागामिफलसाच्चिकिरियाया संवत्तति... अनागामिफलसाच्चिकिरियाया संवत्तति... अरहतफलासच्चिकिरियाया संवत्तति. काटामो एकधम्मो? कायगता सति. अयं खो, भिक्खवे, एकाधम्मो भावितो बाहुलिकतो सोतापत्तिफलसाच्चिकिरिया संवत्तति... सकादागामिफलसाच्चिकिरिया संवत्तति... अनागामिफलसाच्चिकिरिया संवत्तति... अरहत्तफलसाच्चिकिरियाय सांवत्तति'ति।

580-583. "एकधम्मो, भिक्खवे, भावितो बहुगुणितो सोतापट्टफलसचिकिरियाय संवत्तति... सकादागमलसिफचिकिरियाय संवत्तति...अनागमसिफचिकिरियाय संवत्तति... अरहत्तफलसच्छिकिरियय संवत्तति। कतमो एकधम्मो? कायगता सति। अयं खो, भिक्खवे, एकधम्मो भावितो बहुलिष्टो सोताप्तफलसच्छिकिरियाय संवत्तति... सकदागामिलसच्छिकिरियाय संवत्तति... अनागमिफलसच्छिकिरियाय संवत्तति... अरहत्तफलसच्छिकिरियाय संवत्तति"ति।

584 -599

भिक्षुओं, एक बात, जब विकसित और पोषित की जाती है, तो (600) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की प्राप्ति की ओर ले जाती है... (601) बुद्धि के विकास की ओर... (602) पन्ना (दिव्य ज्ञान) के विस्तार की ओर... (603) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की महानता की ओर... (604) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की विविधता की ओर... (605) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की विशालता की ओर... (606) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की गहराई की ओर... (607) अतुलनीय पन्ना (दिव्य ज्ञान) की अवस्था की ओर... (608) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की व्यापकता की ओर... (609) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की प्रचुरता की ओर... (610) शीघ्रता की ओर ले जाती है। पन्ना (दिव्य ज्ञान)... (611) पन्ना (दिव्य ज्ञान) के उत्तोलन की ओर... (612) पन्ना (दिव्य ज्ञान) के आनंद की ओर... (613) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की शीघ्रता की ओर... (614) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की तीक्ष्णता की ओर... (615) पन्ना (दिव्य ज्ञान) की भेदन क्षमता की ओर। 213 वह एक चीज क्या है? शरीर पर केंद्रित सती ध्यान। यही वह एक चीज है, जिसे विकसित और पोषित करने पर पन्ना (दिव्य ज्ञान) की भेदन क्षमता प्राप्त होती है।

584-599. "एकधम्मो, भिक्खवे, भावितो बाहुलिकतो पणिनापतिलाभाय संवत्तति... पणनावुड्ढिया सवत्तति... पणनावेपुलया सवत्तति... महापनातया सवत्तति... पुथुपन्नतया संवत्तति... विपुलपन्नतया संवत्तति... गंभीरपन्नतया संवत्तति... असंमंतपन्नतया [असमत्थापन्नटया (स्या. का.), असमत्तपन्नतया (का.), असमन्तपन्नतया (टीका) पति। मा. आस्था. 2.3.1 पासितब्बां] संवत्तति... भूरिपनत्याय संवत्तति... पणनाबहुल्लाय संवत्तति... सिघपन्नतया संवत्तति... लहुपनातया संवत्तति... हसापन्नटया [हसुपन्नटया (सि. पि.)] सांवत्तति... जवनापन्नटया संवत्तति... तिक्खपन्नटया संवत्तति... निब्बेधिकापन्नटया संवत्तति। काटामो एकधम्मो? कायगता सति. अयं खो, भिक्खवे, एकधम्मो भावितो बाहुलिकतो पणिनापतिलाभाय संवत्तति... पणनावुड्ढिया संवत्तति... पणनावेपुलया सवत्तति... महापन्नतया संवत्तति... पुथुपनतया संवत्तति... विपुलपन्नतया संवत्तति... गंभीरपन्नतया संवत्तति... असंमंतपन्नतया संवत्तति... भूरिपनतया संवत्तति... पन्नबहुल्लया संवत्तति... सिघपन्नतया संवत्तति... लहुपनतया संवत्तति... हसापनतया संवत्तति... जवनापन्नतया संवत्तति... तिक्खपन्नतया संवत्तति... निब्बेधिकापन्नतया सांवत्तति'ति।

कायागतासतिवग्गो एकुनाविसतिमो।

5-5-5. "एकधम्मो, भिक्खवे, भावितो बहुलिकतो पञ्चापतिलाभाय संवत्तति... पञ्चावुधिया संवत्तति... पञ्चावेपुलदाय संवत्तति... महापञ्चताय संवत्तति... पुथुपञ्चताय संवत्तति... विपुलपञ्जताय संवत्तति... महपञ्चताय संवत्तति... असमन्तपञ्चताय [असमत्थपञ्चताय (स्या० कं०), असमत्पञ्चताय (क०), असमन्तपञ्चताय (टीका) पति० म० अट्ठ० 2..31 पास्सित्बं] संवत्तति... भूरिपञ्चताय संवत्तति... पञ्चबाहुल्लाय संवत्तति...घ सीपञ्जन्ताय संवत्तति... लहुपञ्जन्ताय संवत्तति... हस्पञ्जनताय [हसुपञ्जन्ताय (सी० पी०)] संवत्तति... जवनपञ्चताय संवत्तति... तिक्खपञ्चताय संवत्तति... निब्बेधिकपञ्चताय संवत्तति। कतमो एकधम्मो? कायगता सति। अयं खो, भिक्खवे, एकदम्मो भावितो पञ्चापतिलाभाय संवत्तति... पञ्चावुधिया संवत्तति... पञ्चावेपुललाय संवत्तति... महापञ्चनताय संवत्तति... पुथुपञ्चताय संवत्तति... विपुलपञ्चताय संवत्तति... विपुलपञ्चताय संवत्तति... असामन्तपञ्चताय संवत्तति... भूरिपञ्जनताय संवत्तति... पञ्चाबौल्लाय संवत्तति... सीघपञ्जनताय संवत्तति... लहुपञ्चताय संवत्तति... हस्पनपञ्चताय संवत्तति... जवनपञ्चताय संवत्तति... तिक्खपञ्चताय संवत्तति... निब्बेधिकपञ्चताय संवत्तति"ति।

कायगतासतिवग्गो एकूनविसतिमो।

(1.XX) मृत्युहीन धारा 214 (अमाता-वाग्गो सं. अमृत वर्ग)

600

"भिक्षु (सन्यासी), वे अमरता (अमृत) का सेवन नहीं करते जो शरीर पर केंद्रित सती ध्यान का अभ्यास नहीं करते। वे अमरता (अमृत) का सेवन करते हैं जो शरीर पर केंद्रित सती ध्यान का अभ्यास करते हैं।"

600. "अमतं ते, भिक्खवे, न परिभुञ्जन्ति ये कायगतासतिं न परिभुञ्जन्ति। अमातं ते, भिक्खवे, परिभुञ्जन्ति ये कायगतासतिं परिभुञ्जन्ति'।

600. "अमतं ते, भिक्खवे, न परिभुञ्जन्ति ये कायगतसतिं न परिभुञ्जन्ति। अमातं ते, भिक्खवे, परिभुञ्जन्ति ये कायगतसतिं परिभुञ्जन्ति"ति।

601

भिक्षुओं, जिन्होंने शरीर को समर्पित ध्यान (सती) नहीं किया है, उन्हें अमरता (अमृत) प्राप्त नहीं हुई है। जिन्होंने शरीर को समर्पित ध्यान (सती) किया है, उन्हें अमरता (अमृत) प्राप्त हुई है।

601. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अपरिभुत्तं येसं कायगतसति अपरिभुत्ता। अमातं तेसं, भिक्खवे, परिभुत्तं येसं कायगतसति परिभुत्त'ति।

601. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अपरिभुत्तं येसं कायगतसति अपरिभुत्ता। अमातं तेसं, भिक्खवे, परिभुत्तं येसं कायगतसति परिभुत्ता"ति।

602

"भिक्षु (मठवासी), वे अमरत्व (अमृत) से विमुख हो जाते हैं जो शरीर पर केंद्रित सती ध्यान से विमुख हो जाते हैं। वे अमरत्व (अमृत) से विमुख नहीं होते जो शरीर पर केंद्रित सती ध्यान से विमुख नहीं होते।"

602. "अमतं तेसं, भिक्खवे, परिहीनं येसं कायगतसति परिहिना। अमातं तेसं, भिक्खवे, अपरिहीनं येसं कायगतसति अपरिहिण'ति।

260. "अमतं तेसं, भिक्खवे, परिहीनं येसं कायगतसति परिहीना। अमातं तेसं, भिक्खवे, अपरिहीनं येसं कायगतसति अपरिहीन"ति।

603

"भिक्षुओं ने अमरता (अमृत) की उपेक्षा की है, जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान का त्याग किया है। [46] जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान का त्याग किया है, उन्होंने अमरता (अमृत) का पालन किया है।"

603. "अमतं तेसं, भिक्खवे, विरद्धं येसं कायगतसति विरद्ध। अमातं तेसं, भिक्खवे, अराधं [अविरद्धं (का.)] हांं कायगतसति आराधना'ति।

603. "अमतं तेसं, भिक्खवे, वृद्धं येसं कायगतसति वृद्धा। अमातं तेसं, भिक्खवे, अर्धं [अविर्द्धं (क०)] येसं कायगतसति अर्ध"ति।

604

"भिक्षु (संतों), वे अमरत्व (अमृत) के प्रति आलसी होते हैं जो शरीर पर केंद्रित ध्यान (सती) के प्रति आलसी होते हैं। वे अमरत्व (अमृत) के प्रति आलसी नहीं होते जो शरीर पर केंद्रित ध्यान के प्रति आलसी नहीं होते।"

604. "अमतं ते, भिक्खवे, पमादिंसु ये कायगतसतिं पमादिंसु। अमातं ते, भिक्खवे, न पमादिंसु ये कायगतासतिं न पमादिंसु"।

604. "अमतं ते, भिक्खवे, पमादिंसु ये कायगतसतिं पमादिंसु। अमातं ते, भिक्खवे, न पमादिंसु ये कायगतसतिं न पमादिंसु"।

605

"भिक्षुओं (संतों) ने अमरता (अम्रता/अमृत) को भुला दिया है, जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान को भुला दिया है। उन्होंने अमरता (अम्रता/अमृत) को नहीं भुलाया है, जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान को नहीं भुलाया है।"

605. "अमतं तेसं, भिक्खवे, पमुथं येसं कायगतसति पमुत्था। अमातं तेसं, भिक्खवे, अप्पमुत्थं येसं कायगतसति अप्पामुत्था'ति।

605. "अमतं तेसं, भिक्खवे, पमुत्थं येसं कायगतसति पमुत्था। अमातं तेसं, भिक्खवे, अप्पमुट्ठं येसं कायगतसति अप्पमुत्था"ति।

606

"भिक्षुओं ने अमरत्व (अमृत) की प्राप्ति नहीं की है, जिन्होंने शरीर को समर्पित ध्यान (सती) का अभ्यास नहीं किया है। जिन्होंने शरीर को समर्पित ध्यान (सती) का अभ्यास किया है, उन्होंने अमरत्व (अमृत) की प्राप्ति की है।"

606. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अनासेवितं येसं कायगतसति अनासेविता। अमातं तेसं, भिक्खवे, असेवितं येसं कायगतसति असेविता'ति।

606. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अनासेवितं येसं कायगतसति अनासेविता। अमातं तेसं, भिक्खवे, असेवितं येसं कायगतसति असेविता"ति।

607

"भिक्षुओं ने अमरत्व (अमृत) का विकास नहीं किया है, जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान (ध्यान/सती) का विकास नहीं किया है। जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान (ध्यान/सती) का विकास किया है, उन्होंने अमरत्व (अमृत) का विकास किया है।"

607. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अभवितां येसं कायगतसति अभाविता। अमातं तेसं, भिक्खवे, भवितां येसं कायगतसति भविता'ति।

607. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अभावितं येसं कायगतसति अभाविता।" अमातं तेसं, भिक्खवे, भवितां येसं कायगतसति भविता"ति।

608

"भिक्षुओं ने अमरत्व (अमृत) की साधना नहीं की है, जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान का अभ्यास नहीं किया है। जिन्होंने शरीर के प्रति सती ध्यान का अभ्यास किया है, उन्होंने अमरत्व (अमृत) की साधना की है।"

608. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अबाहुलिकतं येसं कायगतसति अबाहुलिकता। अमातं तेसं, भिक्खवे, बहुलिकतं येसं कायगतसति बहुलिकता'ति।

608. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अबहुलीकातं येसं कायगतसति अबहुलिकता। अमातं तेसं, भिक्खवे, बहुलीकातं येसं कायगतसति बहुलिकाता"ति।

609

"भिक्षुओं (सन्तुओं) ने अमरत्व (अमृत) को प्रत्यक्ष रूप से नहीं जाना है, जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान का प्रत्यक्ष अनुभव नहीं किया है। जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान का प्रत्यक्ष अनुभव किया है, उन्होंने अमरत्व (अमृत) को प्रत्यक्ष रूप से जाना है।"

609. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अनाभिन्नता येसं कायगतसति अनाभिनाता। अमातं तेसं, भिक्खवे, अभिनीतं येसं कायगतसति अभिनीत'ति।

609. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अनभिञ्जनातं येसं कायगतसति अनभिञ्जनता। अमातं तेसं, भिक्खवे, अभिज्ञातं येसं कायगतसति अभिज्ञाता"ति।

610

"भिक्षुओं ने अमरत्व (अमृत) को पूरी तरह से नहीं समझा है, जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान को पूरी तरह से नहीं समझा है। जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान को पूरी तरह से समझ लिया है, उन्होंने अमरत्व (अमृत) को पूरी तरह से समझ लिया है।"

610. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अपरिणातं येसं कायगतसति अपरिणाता। अमातं तेसं, भिक्खवे, परिण्णातं येसं कायगतसति परिण्णाता"ति।

610. "अमतं तेसं, भिक्खवे, अपरिञ्जनातं येसं कायगतसति अपरिञ्जनाता। अमातं तेसं, भिक्खवे, परिञ्ज्ञातं येसं कायगतसति परिञ्चता"ति।

611

"भिक्षुओं (संतों) ने अमरत्व (अम्रत/अमृत) को नहीं जाना है, जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान को नहीं जाना है। जिन्होंने शरीर पर केंद्रित सती ध्यान को जाना है, उन्होंने अमरत्व (अम्रत/अमृत) को जान लिया है।"

द बुक ऑफ द वन्स पूरी हो चुकी है।

611. "अमतं तेसं, भिक्खवे, असच्चिकतां येसं कायगतसति असच्चिकता। अमातं तेसं, भिक्खवे, सच्चिकतां येसं कायगतसति सच्चिकता"ति। (...) [(एकाकनिपातस्स सुत्तसहस्सं समत्तं।) (सि. स्या. कं. पि.)]

(इदमावोच भगव। अत्तमना ते भिक्खु भगवतो भासीतं अभिनन्दुन्ति।) [( ) एत्थनतारे पाथो सी। स्या. कां. पी.आई. पोत्थकेसु नत्थि]

Amatavaggo vīsatimo.

एकाकनिपतपसि नियतिता।

611. "अमतं तेसं, भिक्खवे, असच्छिकतं येसं कायगतसति असच्छिकता। अमातं तेसं, भिक्खवे, सच्चिकतं येसं कायगतसति सच्चिकता"ति। (...) [(एकनिपातस्स सुत्तसहस्सं समत्तं।) (सी० स्या० कं० पी०)]

(इदमवोच भगवान। अत्तमना ते भिक्खु भगवतो भासीतं अभिन्नदुन्ति।) [( ) एत्थन्त्रे पाठो सी० स्या० कं० पी० पोत्थकेसु नत्थि]

अमातवग्गो विसतिमो।

एकनिपातपाळि निश्चितिता।